Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

112856

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

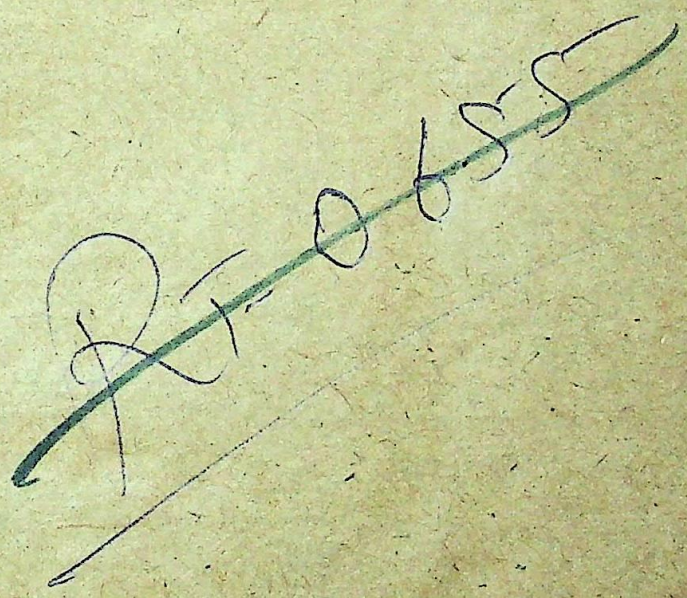

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

112856

फरवरी १९४६

वार्षिक मूल्य ६॥)
एक प्रति ॥-)

112856

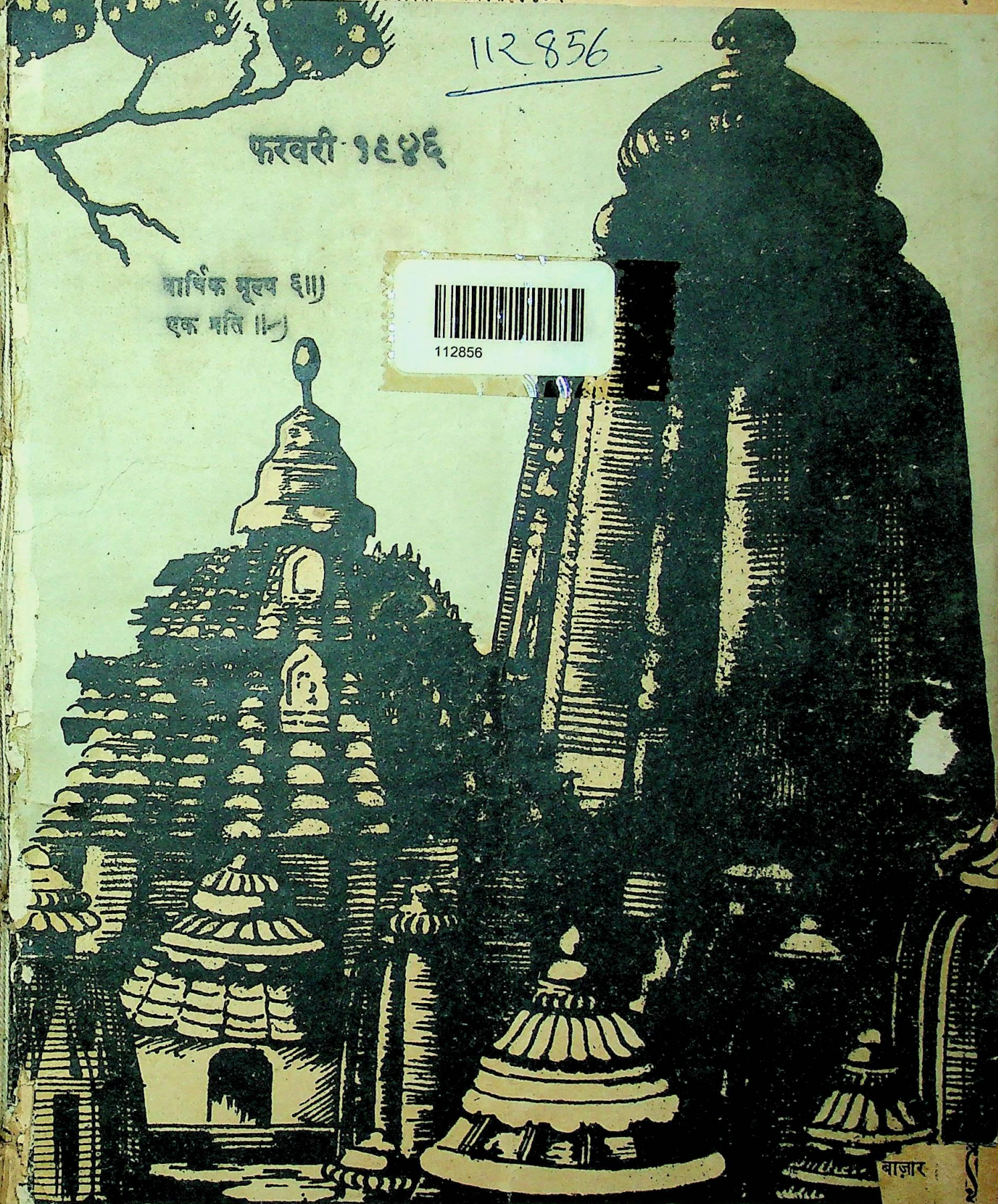

बाज़ार

बरेली—यूनाइटिड कमर्शियल सिंडीकेट, भूर। जबलपुर—बाबूलाल राजाराम चौरसिया, गोविंदगंज।
राजनंदगाँव-रामनारायण हरीदास सोनी। जोधपुर—मेडिकल स्टोर्स, सराफ़ा बाज़ार।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बालों को लम्बे तथा मनमोहक

बनाने के लिए

कामिनिया आयल (रजिस्टर्ड)

का व्यवहार करें।

यह बालों के लिए सर्वोत्तम उपचार है।

बालों को शीघ्रतापूर्वक बढ़ाता है।

बालों का झड़ना बन्द कर उन्हें काला, चिकना, चमकीला तथा मनमोहक बनाता है। एक बार की परीक्षा पर्याप्त होगी।

खुशबू का राजा

ओटो दिलबहार (रजिस्टर्ड)

अपनी मीठी तथा मनमोहक सुगन्ध के लिए विख्यात। दो-चार बूँद कपड़ों पर डाल देने से कपड़े अधिक समय तक सुगन्धित बने रहेंगे।

एक दूसरा सुगन्धित केश-तेल

दिलबहार हेयर आयल (रजिस्टर्ड)

यह तेल अत्यन्त सुगन्धित है तथा बालों की उपयोगिता के लिए 'कामिनिया आयल' के बाद इसका ही नम्बर है। बालों को बढ़ाने के लिए यह विशेष लाभदायक है। एक बार अवश्य परीक्षा करें।

एँग्लो इण्डियन ड्रग एंड केमिकल कं०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

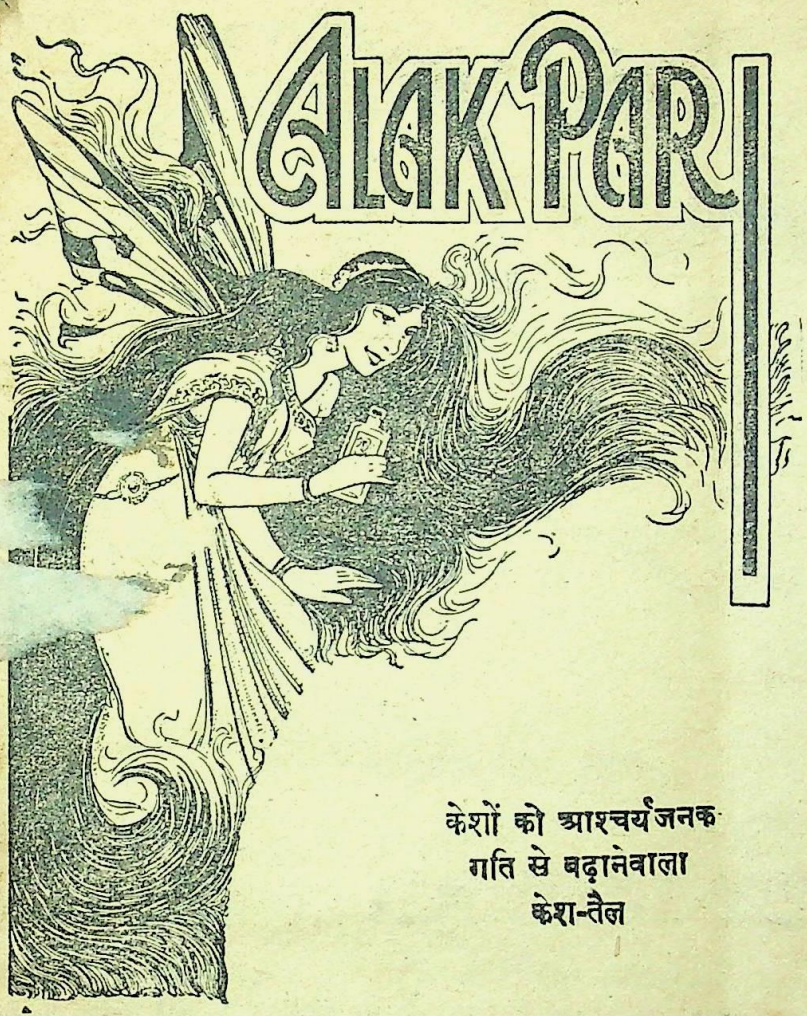

केशों को आश्चर्यजनक
गति से बढ़ानेवाला
केश-तैल

शुद्ध बादामरोग़न पर बना

अलकपरी

केशों में प्रतिमास ३-४ इञ्च वृद्धि।
६ महीने में एड़ी-चुम्बी केश।

'अलकपरी' का कोर्स

पहले सप्ताह में रूसी-खुश्की दूर हो जाती है।
दूसरे सप्ताह में केशों का झड़ना और उनके सिरों का फटना रुकता है।
तीसरे सप्ताह में नये केश उगते दिखाई देते हैं।
चौथे सप्ताह के अन्त तक केश ३-४ इञ्च बढ़ जाते हैं।
फिर प्रतिमास इसी औसत से बढ़ते रहते हैं।

६ महीने में केश एड़ी-चुम्बी बन जाते हैं।

मूल्य एक शीशी का २॥) है जो एक महीने को काफ़ी होती है। डाक-ख़र्च व पैकिङ्ग पृथक्। ६ से अधिक शीशियाँ डाक से नहीं भेजी जायँगी। अधिक के लिए ५) पेशगी भेजिए और अपने रेलवे स्टेशन का नाम लिखिए।

प्रतिष्ठित महिलाओं की सम्मतियाँ—

'अलकपरी' से बहुत लाभ है। १ शीशी और तुरन्त भेजिए।
१५-७-४५ कृष्णाकुमारी, धर्मशाला (पंजाब)।

Alak Pari is proving of much use to me. Please send me three more bottles.
4-8-45 Mrs. S. Mandal, 45, The Mall, Lahore.

'अलकपरी' में केशों को बढ़ाने के लिए विद्युत् की शक्ति वर्त्तमान है। मैंने इसे केशों के लिए आश्चर्यजनक गुणकारी पाया है। कृपया ३ शीशियाँ तुरंत भेजें।
७-८-४५ सत्यवती देवी, पासना, जौनपुर।

'अलकपरी' की ५ शीशियाँ इस्तेमाल कीं। बहुत लाभकारी तेल है। कृपया ३ बोतलें शीघ्र भेजें।
३०-८-४५ शान्तिकुमारी, कोटखाई, शिमला

व्यवस्थापिका—'अलकपरी', नया कटरा, इलाहाबाद।

हमारे एजेन्ट—

नई दिल्ली—रायल स्टोर्स, ३३, गोल बाज़ार।
मेरठ—त्यागी ब्रदर्स, बेली बाज़ार।
बरेली—यूनाइटिड कमर्शियल सिंडीकेट, भूर।
राजनंदगाँव-रामनारायण हरीदास सोनी।
आगरा—प्रियादास घनश्यामदास परफ़्यूमर्स, काश्मीरी बाज़ार।
लखनऊ—सालिग्राम मेहरोत्रा, ६, अमीनाबाद पार्क।
जबलपुर—बाबूलाल राजाराम चौरसिया, गोविंदगंज।
जोधपुर—मेडिकल स्टोर्स, सराफ़ा बाज़ार।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कमज़ोर और कृष बच्चे डोंगरे-बालामृत के इस्तेमाल से ताक़तवर, पुष्ट और चुस्त बनते हैं।

निर्बल, निश्चेतन और निराश क्यों रहते हो ?

भोजन को पचानेवाला, ख़ून को बढ़ानेवाला, पाण्डु और अन्य रोग के बाद की निर्बलता को नष्ट करनेवाला

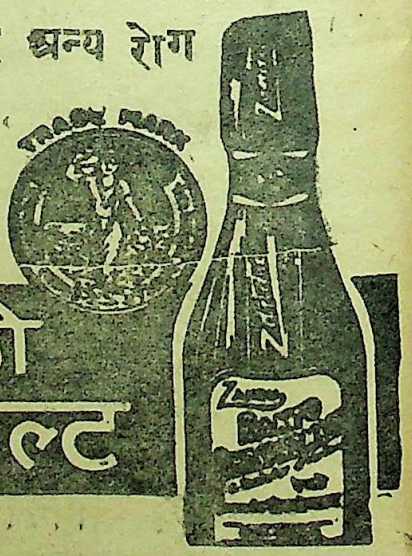

झंडु रक्तो फोस्फोमाल्ट

सुमधुर शक्तिवर्धक, अमूल्य औषधि अवश्य सेवन करें

झण्डु फ़ार्मास्युटिकल वर्क्स लि०, बम्बई नं० १४

इलाहाबाद के चीफ़ एजेन्ट—एल० एम० घोलकिया एण्ड ब्रादर्स, ४६ जान्स्टनगंज।

दिल्ली और यू० पी० के सोल एजेन्ट—कान्तिलाल आर० पारीख, चाँदनी चौक, देहली।

यू० पी० एजेंट—कान्तिलाल आर० पारीख, चांदनी चौक, दिल्ली।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भावी भारतकी आवश्यक होगी संतान—शरीरसे हृष्ट पुष्ट एवं मस्तिष्कसे तेज। देश के लिये ऐसी संतानोत्पत्ति के लिये होनेवाली माताओंकी स्वस्थताकी नवीन कोटिका प्राप्त होना है। स्वस्थ मातृत्व तथा अशोका परस्पर सम्बन्धित है, क्योंकि स्त्रियोंके विशेष रोगों से संघर्षमें माताओंका अशोका सच्चा मित्र सिद्ध होगा।

मातृजातिकी सेवामें

सी॰ के॰ सेन की

अशोका

सी॰ के॰ सेन एण्ड कं॰ लि॰

जवाकुसुम हाउस कलकत्ता

AA-2-H

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

AC 1

निर्धारित सीमा तक अधिक से अधिक ख़रीदिये

गवर्नर रिज़र्व बैंक कहते हैं।

सर चिन्तामन देशमुख
सी.आई.ई. गवर्नर, रिज़र्व बैंक आफ़ इण्डिया।

"थोड़ी आय वाला व्यक्ति जो भविष्य के लिये कुछ बचाना चाहता है उसके लिये गवर्नमेण्ट आफ़ इण्डिया के नेशनल सेविंग्ज़ सर्टिफ़िकेट्स के अतिरिक्त और कोई उत्तम तथा सुरक्षित मद रुपया लगाने की नहीं है। वास्तव में ये सर्टिफ़िकेट्स इतने उपयोगी हैं कि एक व्यक्ति को ५,०००) से अधिक मूल्य के सर्टिफ़िकेट्स नहीं बेचे जाते। मेरी तो सम्मति यही है कि इस निर्धारित सीमा तक अधिक से अधिक मूल्य के सर्टिफ़िकेट्स ख़रीदिये।"

C. D. Deshmukh

संक्षिप्त विवरण

(१) आप ५), १०), ५०), १००), ५००), १०००) या ५०००) के मूल्य के नेशनल सेविंग्ज़ सर्टिफ़िकेट्स ख़रीद सकते हैं।

(२) एक व्यक्ति ५०००) से अधिक मूल्य के नेशनल सेविंग्ज़ सर्टिफ़िकेट्स नहीं ख़रीद सकता। ये इतने उपयोगी हैं कि इनका राशन करना ही उचित समझा गया है। हां दो व्यक्ति मिलकर १०,०००) के सर्टिफ़िकेट्स मोल ले सकते हैं।

(३) १२ वर्ष में इनका मूल्य ५०% बढ़ जाता है। प्रत्येक रुपया १॥) बन जाता है।

(४) इस प्रकार अवधि पूरी होने पर ४-१/६% वार्षिक ब्याज मिलता है।

(५) इस ब्याज पर इन्कम टैक्स नहीं लगता।

(६) ये २ वर्ष पश्चात भुनाये जा सकते हैं। (५) का सर्टिफ़िकेट १-१/२ वर्ष पश्चात ही भुनाया जा सकता है) परन्तु वास्तविक लाभ इसी में हैं कि १२ वर्ष से पहिले इन्हें न भुनायें।

(७) जिनकी बचत थोड़ी है वह १), ॥), ।) वाले सेविंग्ज़ स्टाम्पस ख़रीद सकते हैं। ५) के स्टैम्पस जमा होने पर एक नेशनल सेविंग्ज़ सर्टिफ़िकेट मिल जायेगा।

(८) सर्टिफ़िकेट्स और स्टाम्पस डाकखानों, सरकार द्वारा अधिकृत एजण्टों अथवा सेविंग्ज़ ब्यूरो से प्राप्त हो सकते हैं।

आप अपनी बचत से ५०% लाभ उठाइए

नेशनल सेविंग्ज़ सर्टिफ़िकेट्स ख़रीदिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महात्माजी का चमत्कार

प्रेमबटी ने अपनी ख़ूबी से सारी दुनिया में तहलक़ा मचा दिया।

कांग्रेस की राय

(प्रेमबटी वास्तव में एक अद्वितीय औषधि है, पहिले हमें इस औषधि पर इतना विश्वास न था, किन्तु जब हमने इसका वयं परीक्षण किया तब हम इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि यह औषधि विज्ञापन में दिये गये तमाम रोगों की केवल एकमात्र अचूक ौषधि है। हम आशा करते हैं कि भविष्य में यह कम्पनी इससे भी उत्तम औषधियों का निर्माण कर जनता को लाभ हुँचायेगी।—कांग्रेस देहली)

भारत के योगियों ने वनों और पर्वतों की कन्दराओं में रहकर वह चमत्कार दिखलाये हैं जिससे बड़े-बड़े वैज्ञानिक और वकित्सक हैरत में आ गये हैं। आधुनिक चिकित्सकों को जब कोई रोग की औषधि से सफलता नहीं मिलती तब वह लाइलाज ोषित कर देते हैं। परन्तु महात्मा लोग जड़ी-बूटियों की सहायता से मुर्दे को भी जिला देने का दावा करते हैं। भाइयो, इसे ध्यान से पढ़ो तथा अपने इष्ट मित्रों को सुनाओ। यह लेख जो लिखा गया है, कोई गप्प नहीं है बल्कि मेरे जीवन की चन्द टनायें हैं जो आपके सम्मुख रखता हूँ। मेरा जन्म एक धनी परिवार में हुआ। अपने पिता का लाड़ला पुत्र होने के कारण ैभव और व्यसन में घिरा रहता था, लेकिन फिर भी मैं सुखी नहीं था। कुसङ्गत में पड़कर मुझे जरियान और प्रमेह रोग हो गया। ले तो एक दो साल मैंने लोकलाज के कारण अपना भेद छिपाये रखा परन्तु रोग ने भयानक सूरत अख़्तियार कर ली, अब मैं बड़ा उठा, संसार में चारों ओर अँधेरा मालूम होने लगा तब मेरी आँखें खुलीं। इलाज शुरू किया गया, बड़े-बड़े डाक्टरों, कीमों, वैद्यों के फ़ीस रूप में रुपये और क़ीमती दवाइयों के ख़रीदने में पानी की तरह रुपया बहाने लगा, फिर भी मैं निराश ही रहा ब मैं घबरा उठा और चारों तरफ़ से अन्धकार दिखलाई देने लगा और सोचने लगा कि इस दुःखमय जीवन से मर जाना बेहतर है।

पर यह बीस साल पहले की बात है। अब आज मैं ख़ुश हूँ। आज उस परमात्मा की कृपा से आरोग्य हूँ और तीन स्वस्थ बच्चे भी हैं जो बिलकुल आरोग्य हैं।

हुआ क्या! मुझमें इतना परिवर्तन कैसे हो गया! यह जानकर आपको आश्चर्य होगा कि मैंने एक दवा सेवन की! दवा मैंने सेवन की, वह एक महान् त्यागी परोपकारी साधु की बनाई हुई थी, जो समय काटने के लिए गाँव से कुछ दूर एक के खेड़े पर रम रहे थे। यह मेरा सौभाग्य था कि और लोगों के साथ मैं भी दर्शनों के लिए जा पहुँचा। दैवी शक्ति से दुःखी जीवन के पिछले अध्याय उनके हृदय-पट पर खिंच गये और मेरी आँखों ने हृदय का सारा भेद अपने आप उस महान् ृष पर प्रकट कर दिया। मेरी कच्ची उम्र पर महात्मा को दया आई और उन्होंने मुझे कुछ जड़ी-बूटियाँ एकत्र करने की आज्ञा । मैंने वैसा ही किया और तब उनके सम्मुख ही मुझे उनके आदेश और निजी देख-रेख में 'प्रेमबटी' तैयार करनी पड़ी। यपि मुझसे ४० दिन लगातार 'प्रेमबटी' का सेवन करने को कहा गया था, तथापि केवल बीस दिन के सेवन से ही मुझमें परिवर्तन गया। मेरी कमज़ोरी और तमाम गुप्त बीमारियाँ जड़ से दूर हो गईं। पीले और उदास मुख पर लाली दौड़ने लगी, आँखों उन्माद झूमने लगा और हृदय में जवानी का जोश उमड़ आया। महात्माजी के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के साथ ही अपने दे को पूरा करने के लिए दुःखी जनों के निमित्त पिछले बीस साल से लगातार मैं इस प्रयोग को मुफ़्त बाँट रहा हूँ। यह अनेक -पत्रिकाओं में भी छप चुका है। मुझे हर्ष है कि इस अमृत-तुल्य प्रयोग ने सैकड़ों की प्राण-रक्षा की, हज़ारों को मौत के मुँह से काला और लाखों का इससे भला हुआ। महात्मा-प्रदत्त 'प्रेमबटी' का नुस्ख़ा इस प्रकार है; नोट कर लें—

शुद्ध त्रिफला ५ तोला, त्रिकुट चूर्ण ५ तोला, शुद्ध सूर्यतापी शिलाजीत ५ तोला, शुद्ध बङ्ग भस्म ६ माशा, असली सूर्य- केसर ३ माशा, असली अकरकरा ६ माशा, असली नेपाली कस्तूरी ३ रत्ती। इन सब औषधियों को कूट-छानकर खरल में लकर ऊपर से शीतल चीनी का तेल २० बूँद, सन्दल तेल २० बूँद, बिरोजे का तेल २० बूँद एक-एक करके मिलाये। उसके द ताज़ी ब्राह्मी बूटी के अर्क़ में १२ घण्टा घोंटकर झरबेरी बेर के बराबर गोलियाँ बनावें और छाया में सुखा लें। एक-एक गोली ह-शाम पाव भर गाय के दूध में एक तोला शक्कर मिलाकर सेवन करें। इसकी प्रशंसा हम अपने ही मुँह से नहीं करते बल्कि -बड़े वैद्यों, डाक्टरों, हकीमों, सेठ साहूकारों तथा रईसों, ज़मींदारों, सरकारी आफ़िसरों तक ने इसकी सराहना की है। वैद्यराज जमुनादत्त शर्मा, झोंकर का कहना है कि यह बटी धातु का पतलापन, २० प्रकार के प्रमेह के लिए अक्सीर है।

'प्रेमबटी' में कोई हानिकारक चीज़ नहीं पड़ती और गुणकारी चीज़ें नुस्ख़े से ही प्रकट हैं। यह औषध वीर्य का पतलापन, ों प्रकार के प्रमेह, पेशाब के साथ चूने की तरह वीर्य का जाना, पाख़ाने के समय धातु का जाना, स्वप्नदोष, सुस्ती, कमज़ोरी, नामर्दी, ण्टीज़, मधुमेह, सूज़ाक, जवानी में बुढ़ापे की-सी हालत हो जाना, असली ताक़त की कमी, स्मरण-शक्ति कमज़ोर पड़ जाना तथा ों के भी प्रदर-सम्बन्धी रोग दूर करके अत्यन्त ताक़त देती है और नस-नस में नवजीवन का सञ्चार करती है। अन्त में उन ोगों को जिन्हें फ़ुरसत नहीं मिलती या शुद्ध औषधि प्राप्त नहीं कर सकते यह प्रयोग स्वयं बनाकर दाम के दाम में भेजने की वस्था की है। ४० दिन के लिए पूरी ख़ुराक विधिवत् ८० गोलियों का मूल्य ५॥=) ६० और २० दिन के लिए ४० गोलियों दाम ३=) डाकख़र्च ।॥-)

पता—बाबू श्यामलालजी रईस, प्रेमबटी आफ़िस नं० (S. A.) धनकुट्टी, कानपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फटवे जाने के नुकसान को रोकये
...इस तरह धोइये

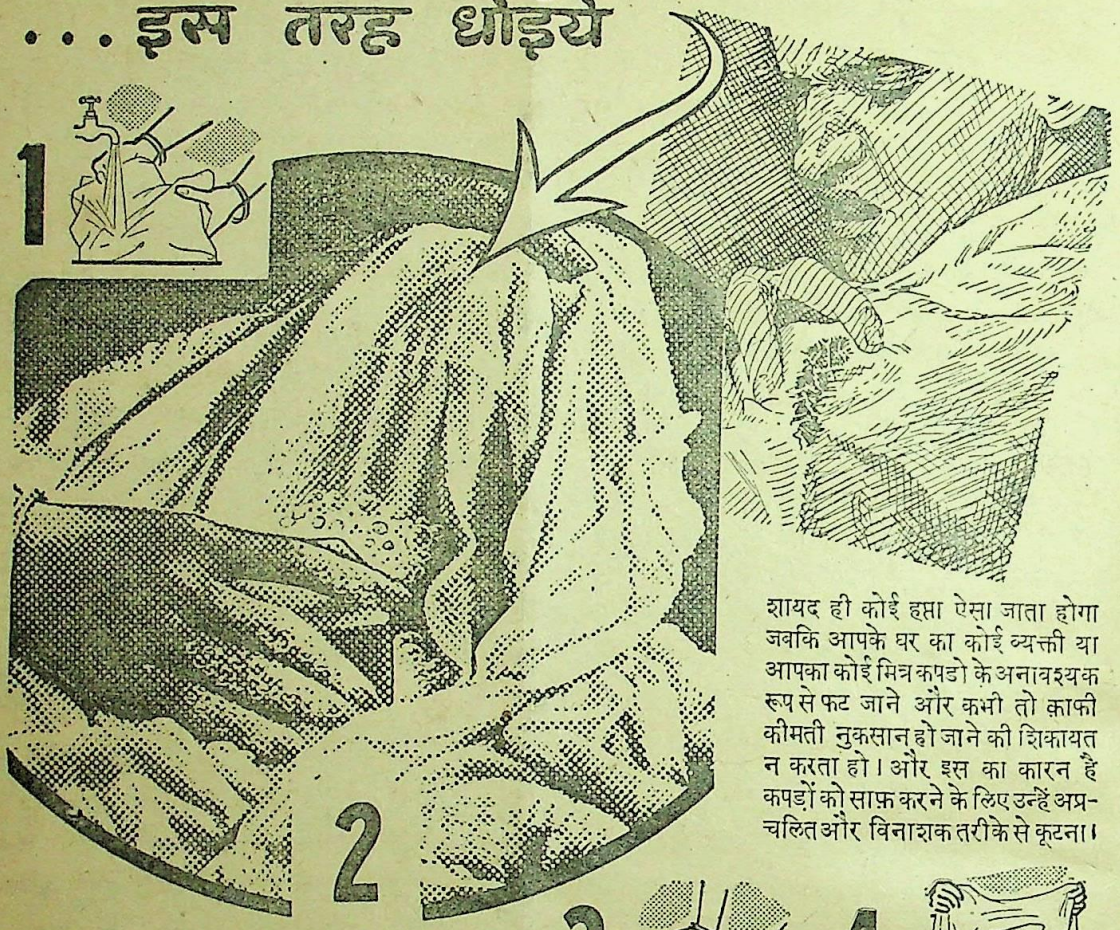

शायद ही कोई हफ़्ता ऐसा जाता होगा जबकि आपके घर का कोई व्यक्ती या आपका कोई मित्र कपडो के अनावश्यक रूप से फट जाने और कभी तो क़ाफी कीमती नुकसान हो जाने की शिकायत न करता हो। और इस का कारन है कपड़ों को साफ़ करने के लिए उन्हें अप्रचलित और विनाशक तरीके से कूटना।

हाँ यदि आपने इस तरीक़े पर अमल किया जो निम्नाकित चित्रों द्वारा समझाया गया है, और निमिन लीखित हिदायतों काभी भी ठीक-ठीक पालन किया तो आप निस्सन्देह अपने कपड़ों पर विना कोई क्षति पहुँचाये साफ़-सुथरा रख सकेंगे

(१) जिस कपड़े को धोना हो उसे पहले खूब भिगो लीजिए। यह आप नल के नीचे, टब में, तलाब में कर सकते हैं—इससे कोई फर्क नहीं पड़ता।

(२) जब कपड़ें को खूब भिगो चुकें तो सारे कपड़ें में सनलाइट साबुन मलें। जो भाग अधिक मैला हो वहाँ सनलाइट जरा ज्यादा मलें।

(३) साबुन लगे हुइ कपड़े को हाथों से धीरे-धीरे गूँथिये। (इसे कूटिये नहीं) तबतक गूँथिये (ठीक उसी तरह जैसे रोटी का आटा गूँथा जाता है) जब तक साबुन की झाग कपडे के हरेक तन्तु में प्रवेश पाजाए। कपडें को जोर से रगड़ने की या बुरी तरह कूटने की आवश्यकता ही नहीं है। सनलाइट का "स्वयंकाम करनेवाला" फेन सरलता से सारे मैल को बाहर निकाल देगा—यदि आपको यह विश्वास हो जाये कि गूँथने से यह फेन कपड़े के मैल में घुस चुका है। इस शक्तिशाली फेन में जो साबुन है वह मैल को छूते ही तत्काल फुला देता है। फेन उसे जजब कर लेता है ऐसे जब आप कपड़े को खूब धोएँगे तो फेनके साथ सब मैल निकल जायेगा।

(४) फेन-जिसमें कि अब सारा मैल आचुका है—छुटाने के लिए कपडे को खूब मलकर धो डालिए।

ऐसे सनलाइट के तरीक़े से धोए हुए कपडे बहुत समय तक चलते है।

सनलाइट साबुन कपड़ों की बचत करता है

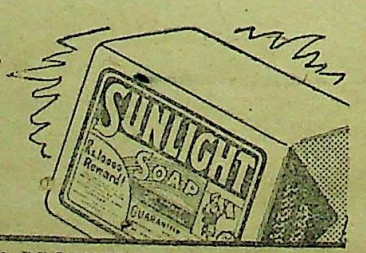

S. 75 - 23 HI

LEVER BROTHERS (INDIA) LIMITED

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री रत्नागिरी जी का अद्भुत चमत्कार

जिसने समस्त संसार को चकित कर दिया

रक्त, बल, वीर्य, उत्साह तथा उमङ्ग ही जीवन सफल बना सकती है।

ध्यान देने योग्य अमूल्य उपहार

अपूर्व कायापलट (रजिस्टर्ड)

निःस्वार्थ संसारसेवी भारतीय महात्माओं ने औषध-विज्ञान को अपनी महान् खोजों और अमूल्य रत्नों से अलंकृत किया है। आधुनिक चिकित्सक मर्ज़ और मरीज़ जब दोनों को लाइलाज घोषित करके शर्मिन्दा नहीं होते, वहाँ इन्हीं महात्माओं की बिना दाम की जड़ी-बूटियाँ मुर्दों को भी जिला सकने में समर्थ हुई हैं। ऐसी सच्ची घटनायें आये दिन एक न एक पढ़ने और सुनने में आया करती हैं।

बीस वर्ष पूर्व कल्लाती पहाड़ी पर विचरण करनेवाले स्वामी रत्नागिरी जी महाराज की सेवा एक बूढ़ा ग्वाला करने लगा। गिरिराज को एक दिन उस वृद्ध की कमज़ोरी पर दया आ ही गई और उन्होंने निम्नलिखित योग की ६ मात्रायें उस बूढ़े को दीं। नासमझी के कारण छहों मात्रायें एक साथ खा जाने से उस वृद्ध ग्वाले में अपूर्व शक्ति आ गई और रत्नागिरी जी के परिश्रम-पूर्वक इलाज करने पर भी बुढ़ापे के बावजूद उसे तीन विवाह करने पड़े। इस पर राजा, रईस, नवाब और रसिक जन महान् योग को जानने के लिए आतुर हो उठे। नवाब बहावलपुर के ससुर हाजी हयात मोहम्मदख़ाँ साहब ने बाबा जी की बहुत सेवा करके इसे प्राप्त कर लिया और लाहौर के पं० ठाकुरदत्त शर्मा को बतलाया। शर्मा जी ने इसे प्रथम तथा दो अन्य लिखकर तीनों से उत्तम बाजीकरण बतलानेवाले को एक हज़ार रुपये का नक़द इनाम देने की घोषणा की। इसे आज बीस वर्ष के लगभग हो गये किन्तु अभी तक कोई पुरस्कार विजय नहीं कर सका। मथुरा के ख्यातिप्राप्त बाबू हरिदास जी ने अपनी चिकित्सा-चन्द्रोदय में छपवाया और हमने भी स्वयं बनाकर सैकड़ों दुर्बल, नपुंसक, वीर्य-विकारी रोगियों पर बरता। तत्काल आश्चर्य-चमत्कार देख जन-साधारण के लाभार्थ अनेक पत्र-पत्रिकाओं में छपवा दिया। आप भी बनाकर लाभ उठावें।

योग—शुद्ध बुरादा फ़ौलाद २० तोला, शुद्ध श्वेत मल्ल ४ तोला, शुद्ध कपूर १॥ माशा, एक घण्टा घृतकुमारी (ग्वारपाठा) घोटकर, मिट्टी के कुज्जे में मज़बूत बन्द कर पाँच सेर कण्डों की आग दें। दुबारा एक तोला हरताल वर्की शुद्ध १॥ माशा घृत शुद्ध में तीसरी बार गन्धक आमलासार शुद्ध १ तोला घृत १॥ माशा में चौथी बार शुद्ध संस्कारित पारद १ तोला, घृत १॥ माशा को ऊपर की भाँति १६ आँच दे। फिर उसको, घृत में डालकर बराबर इन्द्रवधू डाल दे और नीचे आग जलावे, जब इन्द्रवधू जलकर राख हो जावे तो हवा देकर उड़ा दे। बस अपूर्व कायापलट तैयार है। चार-चार चावल सायं मक्खन, मलाई के साथ खावें ऊपर मिश्री-मिला दूध पीवें।

मथुरा के हरिदास जी लिखते हैं—इस योग के सेवन से एक हफ़्ते में एक आदमी का वज़न चार पौंड बढ़ गया, दूसरे का चेहरा लाल सुर्ख़ हो गया। भूपाल के वैद्यराज पं० बालकृष्ण शर्मा ने ३५० रोगियों पर बरता और आशा से अधिक गुणकारी पाया। रत्नाकर-सम्पादक श्री छोटेलाल जैन आयुर्वेदाचार्य ने गृहचिकित्सा पथ-प्रदर्शक में छापा कि इतना प्रचण्ड गुणकारी योग दूसरा नहीं देखा। श्री धर्मेन्द्र विद्यावतंस सिद्धान्त-शास्त्री अधिष्ठाता गुरुकुल बरला ज़िला मुज़फ़्फरनगर ने लिखा है—"अपूर्व कायापलट" नामक औषध सेवन कर रहा हूँ। जैसी प्रशंसा वैसा ही गुण है। बहुत लाभ हुआ। श्री चिरञ्जीलाल जैन आयुर्वेदशास्त्री मालिक कल्याण औषधालय बाह (आगरा) का कहना है कि मैंने २२५ रोगी अपूर्व कायापलट द्वारा जो कि धातु-विकार, नपुंसकता, बवासीर, रक्त-विकार आदि रोगों से ग्रसित थे, पूर्ण स्वस्थ किये।

हमारा दावा है कि केवल सात दिन सेवन से शरीर में रक्त दौड़ता नज़र आयेगा। २१ दिन में चेहरा लाल काश्मीरी सेब की तरह चमकने लगेगा। ४० दिन में नपुंसकता, मधुमेह, डायबटीज़, निर्बलता दूर हो जाती है। स्त्रियों के प्रदर दूर हो गर्भधारण शक्ति आती है। जिगर व मेदे की शक्ति बढ़ाकर भूख दूनी करता है। कफ, तिल्ली की ख़राबी, खाँसी, नजला, ज़ुकाम, बदन दुखना, ख़ून का पतलापन, आँखों का पीलापन, चिनगारी-सा उड़ते दीखना, बार-बार थूक गिरना, दमा तथा हर तरह की कमज़ोरी तुरन्त दूर कर नव-जीवन का संचार करता है। जाड़ा, गरमी, बरसात सभी मौसमों में एक-सा लाभ करता है। योग भली भाँति समझाकर लिखा है। फिर भी यदि आप न बना सकें तो बनी-बनाई १६ आँच दी हुई ४० दिन की ८० मात्रा डाक-ख़र्च सहित ६॥=) में हम भेज देंगे। डाक-ख़र्च माफ़, पैकिंग, मनीआर्डर-फ़ीस अलग। कोई बात समझ में न आवे तो जवाबी कार्ड भेजकर उत्तर मँगा लें।

पता—रूपबिलास कम्पनी,

(रसायनशाला) नं० ४२७, धनकुट्टी, कानपुर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाइयो!...

चर्म-स्वास्थ्य के लिये रैक्सॉना प्रयोग कीजिये

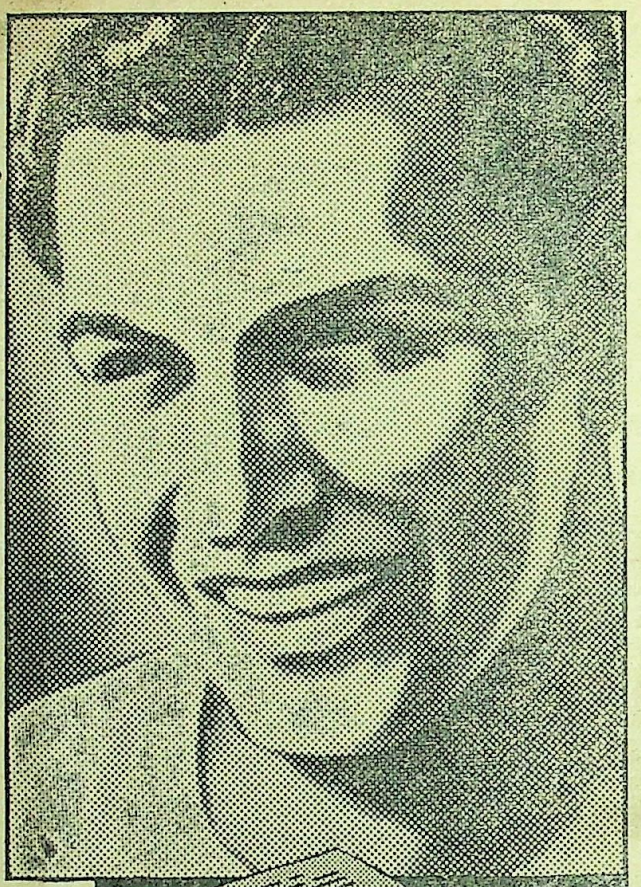

जल्दी में यह धारण मत न बनाइये कि रैक्सॉना केवल स्त्रियों के रंग को निखारने वाला एक नया साबुन है। चर्म स्वास्थ्य का महत्त्व जाननेवालों सब के लिए रैक्सॉना एक ज़रूरी टॉयलेट साबुन है। यह ऐसा ताज़गी और स्फूर्तिदायक साबुन है जिसे इस्तेमाल कर के पुरुषों को आनन्द आता है। इस आकर्षक, हरे, और शीघ्र फेन देनेवाले साबुनका ये सबसे बड़ा लाभ है कि यह स्वास्थदायक और चर्म-किटाणुविनाशक 'कैडिल' से बनाया गया है। रैक्सॉना का शीघ्र बननेवाला ज्यादा फेन स्फूर्ति और स्वास्थदायक 'कैडिल' को शरीर के प्रत्येक रुओं में—जहाँसे सब चर्मरोग और दाग प्राय: शुरू होते हैं— पहुँचा देता है ऐसे आपकी सारी त्वचा किटाणुरहित, मुलायम, और साफ़ हो जाती है। अब आप जान सकते हैं कि नियमित रूप से रैक्सॉना का प्रयोग करने से आप निश्चित ही अपने चर्म को स्वास्थ और सुरक्षित रख सकते हैं। इसलिए इस हरे, और शीघ्र फेन देने वाले साबुन को इस्तेमाल करना शुरूकर दीजिए—और करते रहिए।

नोट—यह याद रखिए कि शारीरिक सौन्दर्य का एक मात्र आधार है चर्म-स्वास्थ। और एक पुरुष कोभी चर्म को आकर्षक बनाने का उतना ही अधिकार है जितना कि एक स्त्री को।

रैक्सॉना बच्चे के लिए आदर्श साबुन है। रैक्सॉना का कैडील शरीर के दर्दों को मिटता है और शरीर को सुखे पनसे बचाता है।

★ रैक्सॉना में मिलाया गया कैडिल किटाणु-विनाशक, स्वास्थ-दायक और ताजगी देनेवाले तेलों का मिश्रण है जोकि चर्म को स्वास्थरखने में बहुत गुणकारी सिद्ध हुआ है। साइंसदानों ने भी इसके गुणों के कारण इसकी सराहना की है।

रैक्सॉना मरहम प्रयोग कीजिये।

फुन्सी, फोड़े, ऐकजीमा, मुँहासे, आँख की कलौंस, झुर्रियाँ, ददौरे आदि सभी चर्म रोगों में रैक्सॉना मरहम लगाये। यद्यपि अभी सप्लाई कम है फिरभी बहुत से दूकानदारों के यहाँ यह तिकोने टिन मिल सकते हैं।

RP. 22-22-40 HI

REXONA PROPRIETARY LIMITED

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेख-सूची

१—नाथ-सम्प्रदाय—श्री पूर्ण गिर गोस्वामी, बी० ए० ९७
२—तुम्हारा रूप—श्री दुर्गाशङ्करप्रसाद सिंह ... १०९
३—रुपए का भविष्य—श्री अवनीन्द्रकुमार, विद्यालङ्कार ११८
४—हे कालकूट पीनेवाले! (कविता)—प्रोफेसर चन्द्रप्रकाश वर्मा, एम० ए० ... ... १२१
५—निस्सीम सीमा—प्रोफेसर तारा डी० पोतदार, एम० ए० ... ... १२२
६—गीत (कविता)—श्री 'युगल' ... १२५
७—चन्द्रगुप्त मौर्य—एक अध्ययन—प्रिंसिपल श्रीराम शर्मा, एम० ए०, एफ० आर० एस० (लन्दन) ... १२६
८—सन्तुमई—श्री धर्मवीर, एम० ए० ... १३१
९—केवल (कविता)—पण्डित नारायणलाल कटरियार १३४
१०—कविराज सदानन्द और उनका जैमुनि पुराण—श्री भगवतीप्रसाद सिंह, बी० ए० ... १३५
११—संसार-चक्र—पण्डित दुर्गाशंकर व्यास, बी० ए० १४१
१२—कर्जन म्यूजियम में—रावत चतुर्भुजदास चतुर्वेदी, क्यूरेटर तथा सेक्रेटरी भरतपुर-राज्य-म्यूजियम १४३
१३—'वाकिंग क्लब'—श्री बनवारीलाल चौधरी ... १४९
१४—तार की कसरत—श्री अनन्त गोपाल शेवड़े, एम० ए० १५१
१५—विचार-विमर्श १५४
१६—विविध-विषय १६२
१७—अश्रु-हास १६८
१८—सामयिक साहित्य १७०
१९—सम्पादकीय नोट... ... ... १७५

चित्र-सूची

१—नाथ-सम्प्रदाय सम्बन्धी ५ चित्र ९८,१०१-०२,१०५-०६
२—कर्जन म्यूजियम में सम्बन्धी ११ चित्र १४४-१४८
३—हिटलर १६४
४—प्रोफेसर ओलिवर लाकोम १६५

नई पुस्तक

कामायनी-अनुशीलन

महाकवि 'प्रसाद' का महाकाव्य 'कामायनी' बहुत प्रसिद्ध है। पर यह सबकी समझ में नहीं आता। इस पर अनेक समीक्षकों के विचार पत्रों में प्रकट हुए हैं। इसी ग्रन्थ का अनुशीलन इस पुस्तक में लेखक रामलालसिंह, एम० ए०, बी० टी०, साहित्यरत्न ने कामायनी का ऐतिहासिक तत्त्व, प्रकृति-वर्णन, चरित्र-चित्रण, श्रद्धा, भाषा तथा भावाभिव्यक्ति, छंद-विधान, रस-संचार, कामायनी का मनस्तत्त्व, दार्शनिक तथ्य, युग की अभिव्यक्ति, प्रेम-रहस्य आदि शीर्षकों में बड़ी मार्मिकता से किया है। अच्छे कागज पर छपी कोई ढाई सौ पृष्ठों की सजिल्द पुस्तक का मूल्य २)

मैनेजर बुकडिपो, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हलवे का स्वाद खाने से मिलता है।

हमारे यहाँ की बनी क्रीमोला टाफ़ी
फ़्रूट ड्राप्स तथा
रेशमी मिठाइयों का स्वाद लीजिए।
सभी दूकानों में मिलती हैं

निर्माता—इण्डस्ट्रियल रिसर्च हाउस,
इंडियन प्रेस बिल्डिंग,
इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादक—देवीदत्त शुक्ल : उमेशचन्द्र मिश्र

फरवरी १९४६ माघ २००२; भाग ४७, खण्ड १ संख्या २, पूर्ण संख्या ५५४

नाथ-सम्प्रदाय

श्री पूर्ण गिर गोस्वामी, बी० ए०

नाथों का इतिहास केवल धार्मिक पद्धतिविशेष की दृष्टि ही महत्त्वपूर्ण नहीं अपितु सांस्कृतिक और साहित्यिक क्षेत्र में ी अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। सन्त-साहित्य का, और इसमें भी विशेषरूप से निर्गुण-काव्य का, अध्ययन तो नाथ-रम्परा और सिद्धान्तों के समुचित मनन बिना अपूर्ण ही रहेगा। ाच तो यह है कि नाथ-सम्प्रदाय ही निर्गुण-धारा की पूर्व-ीठिका है। इतिहास को साक्षी बनाएँ, तो यह जानकर आश्चर्य ोगा कि योगियों का विकास-काल केवल सौ-सवा सौ वर्ष की ावधि में ही समाप्त नहीं होता। कम-से-कम चार शताब्दियों ा जीवन-काल तो मानना ही पड़ता है।* १००० विक्रमी १४०० विक्रमी संवत् तक इस सम्प्रदाय का बोल बाला हा। योगियों (नाथों) की अनेक परम्पराएँ और सिद्धान्त तो समय-क्रम से ह्रास को प्राप्त हुए किन्तु उनमें से कुछ का अस्तित्व निस्सन्देह बहुत समय तक रहा। योगियों की वह विचारणा जो उनके ह्रास के पश्चात् भी बच रही थी, बीज-रूप से निर्गुण-धारा में अनेक आकारों में पनप उठी। ऐसी स्थिति में यह कह देना अनुचित न होगा कि योग-मत और निर्गुणवाद की मौलिक पृष्ठभूमि एक ही थी।

हमारे सांस्कृतिक और साहित्यिक निर्माण में इतना महत्त्व-पूर्ण स्थान रखने पर भी योगियों के सम्बन्ध में हमारी अनु-सन्धित्सा अब तक उपेक्षित-सी ही रही है। फलस्वरूप किंवदन्तियाँ और पौराणिक कल्पनाएँ तथ्यों को अपने धुँधले इन्द्रजाल से ढकती चली जा रही हैं। इस विषय पर प्रकाश डालनेवाले यत्र-तत्र प्रकाशित हुए थोड़े से फुटकर लेख ही हैं।

---

* कहने का भाव यह नहीं कि इसके पूर्व योग या योगियों ा अभाव रहा है। किन्तु सम्प्रदाय-विशेष के रूप में इस ा का विशेष आविर्भाव संवत् १००० वि० से ही हुआ। ोग-विद्या का अस्तित्व बहुत प्राचीन काल से माना जाता । अन्य कलाओं के समान योग के जन्मदाता भी शङ्कर ही माने जाते रहे हैं। 'विवेक-मार्तंड' में कहा

योगशास्त्रं पठेन्नित्यं किमन्यैः शास्त्रविस्तरैः।
यत् स्वयं चादिनाथस्य निर्गतं वदनाम्बुजात्॥

'योग-बीज' के अनुसार शिव पार्वती से कहते हैं—

बद्धा येन विमुच्यन्ते नाथमार्गमतः परम्।
तमहं कथयिष्यामि तव प्रीत्या सुरेश्वरि॥
नानामार्गैस्तु दुष्प्राप्यं कैवल्यं परमं पदम्।
सिद्धमार्गेण लभ्येत नान्यथा शिव भाषितम्॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यद्यपि योग के सब ग्रन्थों में 'नाथ' और 'सिद्ध' शब्द का तात्पर्य एक ही माना जाता है किन्तु जब इन शब्दों का सम्बन्ध 'सम्प्रदाय' के साथ हो तो निश्चय ही दो भिन्न-भिन्न वर्गों का प्रतिनिधित्व होगा। चौरासी सिद्ध जिस सिद्धसम्प्रदाय के प्राण माने जाते थे वह नाथ-सम्प्रदाय से सर्वथा भिन्न रहा है। नाथों में नवनाथ ही प्रसिद्ध हैं जिनके नाम क्रमशः निम्न हैं—

गोरक्षनाथ, ज्वालेन्द्रनाथ, कारिणनाथ, गहिनीनाथ, चर्पट-नाथ, रेवणनाथ, नागनाथ, भर्तृनाथ तथा गोपीचन्द्रनाथ।

चौरासी सिद्धों के नाम भी क्रमशः इस प्रकार हैं*—

१ लूहिपा, २ लीलापा, ३ विरूपा, ४ डोम्भिपा, ५ शबरीपा, ६ सरहपा, ७ कंकालीपा, ८ मीनपा, ९ गोरक्षपा, १० चोरङ्गिपा, ११ वीणापा, १२ शान्तिपा, १३ तन्तिपा, १४ चमरिपा, १५ खड्गपा, १६ नागार्जुन, १७ कराहपा, १८ कर्णरिपा, १९ थगनपा, २० नारोपा, २१ शलिपा, २२ तिलोपा, २३ छत्रपा, २४ भद्रपा, २५ दोखन्दिपा, २६ अजोगिपा, २७ कालपा, २८ धोम्भिपा २९ कङ्क-णपा, ३० कमरिपा, ३१ डेङ्गिपा, ३२ भदेपा, ३३ तन्धेपा, ३४ कुकुरिपा, ३५ कुसूलिपा, ३६ धर्मपा, ३७ महीपा, ३८ अचिन्तिपा, ३९ भलहपा, ४० नलिनपा, ४१ भूसुकुपा, ४२ इन्द्रभूति, ४३ मेकोपा, ४४ कुठालिपा, ४५ कर्मारिपा, ४६ जालन्धरपा, ४७ राहुल-पा, ४८ घर्बरिपा, ४९ धोकरिपा, ५० मेदिनीपा, ५१ पङ्कजपा, ५२ घंटापा, ५३ जोगीपा, ५४ चेलुकपा, ५५ गुण्डरिपा, ५६ लुचिकपा, ५७ निर्गुणपा, ५८ जयानन्त, ५९ चर्पटीपा, ६० चम्पकपा, ६१ भिखनपा, ६२ भलिपा, ६३ कुमरिपा, ६४ जवरिपा, ६५ मणिभद्रा, ६६ मेखला, ६७ कनखला, ६८ कलकलपा, ६९ कन्तलिपा, ७० धहुलिपा, ७१ उधलिपा, ७२ कपालपा, ७३ किलपा, ७४ सागरपा, ७५ सर्वभक्षपा, ७६ नागबोधिपा, ७७ दारिकपा, ७८ पुतुलिपा, ७९ पनहपा, ८० कोकालिपा, ८१ अनगपा, ८२ लक्ष्मीकरा, ८३ समुदपा और ८४ भलिपा।

वैसे तो गौतम बुद्ध के जीवन-काल में ही गान्धारी विद्या, आवर्तनी विद्या तथा इसी प्रकार के अन्य पूजा-प्रकारों का प्रचलन था, किन्तु बुद्ध ने इस प्रकार की अलौकिक विद्याओं का महत्त्व स्वीकार न किया। तथापि बुद्ध की मृत्यु के पश्चात् जैसे-जैसे समय बीतता गया, उन पर पौराणिक कल्पनाएँ अधि-काधिक बनती गईं। उन कल्पनाओं में चमत्कारपूर्ण शक्तियों पर विश्वास प्रकट किया जाता था। समय-क्रम से उनके सिद्धान्तों पर भी पौराणिकता का आवरण चढ़ना आरम्भ हुआ और वैपुल्यवादियों के प्रभाव से बौद्ध ग्रन्थों के सूत्रों में कुछ विशिष्ट शक्तियाँ मानी जाने लगीं। सूत्रों से धरणियों का निर्माण होना आरम्भ हुआ। धीरे-धीरे मन्त्रों का प्रचार बढ़ा। इस प्रकार विकसित वैपुल्यवाद ही मन्त्रयान और वज्रयान का मूल स्रोत माना जा सकता है। 'मञ्जुश्री-मूल-कल्प' नाम ग्रन्थ से पता चलता है कि वास्तव में वैपुल्यवादियों ने ही वाम मार्ग का भी श्रीगणेश कर दिया था। यद्यपि इस ग्रन्थ मन्त्र-तन्त्रों का वर्णन है तथापि यह उस विकासावस्था का द्योत नहीं है जिसके प्रवर्तक वज्रयानी लोग थे। मन्त्रयान विशेष प्रचार ४०० ई० से कहा जा सकता है। महायान वैपुल्यवाद का विकास दक्षिण भारत में विशेष रूप से हुआ कारण कि उस समय उत्तरी भारत में शैव राजाओं का प्रभु था। ये लोग बौद्धों से द्वेष करते थे। गुप्त राजाओं क काल भी लगभग नवीं शताब्दी तक उत्तरी भारत में रहा गुप्त लोग तो कट्टर वैदिक ही थे; अतः महायानियों की दा गलनी उत्तर में कठिन थी।

इधर दक्षिण के राजा (आन्ध्र शासक) बौद्ध मतावलम्ब थे; अतः इनकी सहायता से नागार्जुन ने अपने तन्त्र-मन्त्र का कार्य आरम्भ किया। श्री पर्वत पर मन्त्रविद्या का केन्द्र स्थापि किया गया। संस्कृत के प्राचीन ग्रन्थों में इस पर्वत का स्पष्ट निर्देश मिलता है। आन्ध्रराजाओं की राजधानी भी पहले प्रतिष्ठानपुर (पैठण) में थी, इस समय धान्यकटक थी। धान्यकटक और श्री पर्वत पास ही पास हैं। आन्ध्र

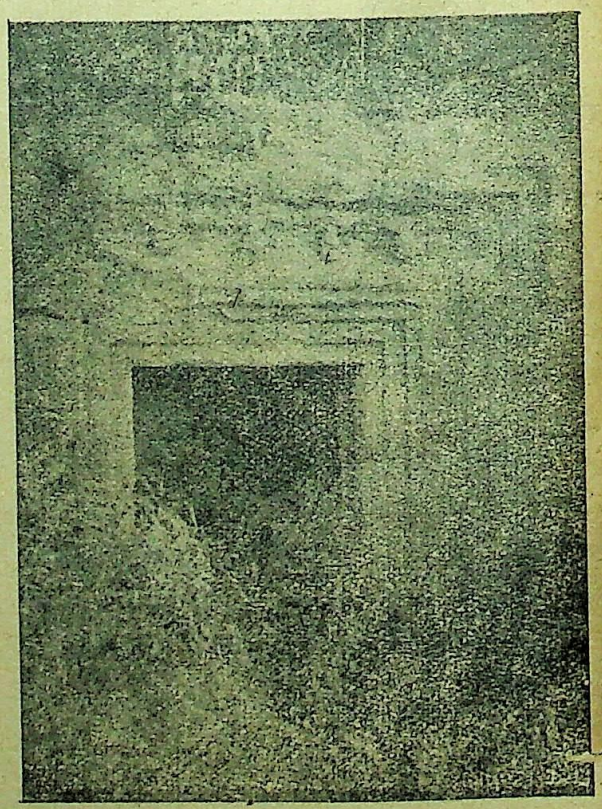

विक्रमशिला विश्वविद्यालय का एक दृश्य

राजाओं ने धान्यकटक में एक बौद्ध-विश्वविद्यालय भी स्थापि किया था। श्री पर्वत सिद्धों का आवास था। नागार्जुन भी

* देखिए 'गङ्गा' के पुरातत्त्वाङ्क में 'मन्त्रयान, वज्रयान और चौरासी सिद्ध' (राहुल सांकृत्यायन)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिद्ध नागार्जुन के नाम से प्रसिद्ध हैं। सातवीं शताब्दी से वज्र यान का उग्र रूप आरम्भ होता है।

ई० सन् ७५० के लगभग बिहार में पाल-वंश के राजाओं का प्रभुत्व जमा। ये बौद्ध मतावलम्बी थे। इनके कारण वज्रयान के विकास में बड़ी सुगमता हुई। इनकी राजधानी उदन्तपुरी थी। इन्होंने विक्रमशिला नाम का बौद्ध-विश्वविद्यालय स्थापित किया। अब क्या था, मन्त्रयान, तन्त्रयान एवं वज्रयान को एक सुदृढ़ आधार मिल गया। विक्रमशिला में इस प्रकार सभी विद्याओं का प्रचार होने लगा। यही वह समय था जब कि वामतन्त्र और शक्तिमार्ग अपनी चढ़ती पर थे। सिद्धों का अभ्युत्थान और विकास इस समय विशेष उग्ररूप से हुआ।

सम्भवतः सबसे प्रथम सिद्ध सरह था जिसका समय श्री राहुल सांकृत्यायन के अनुसार ७५० ई० के लगभग है। अन्तिम सिद्ध सम्भवतः कालपाद था। आठवीं शती से १२वीं शती तक इन सिद्धों का समय माना जा सकता है। सिद्धों की परम्परा भले ही यहाँ पूरी समाप्त न हुई हो (ऐसा होना कठिन भी है) किन्तु मुख्य चौरासी सिद्धों की अवधि यहीं समाप्त हो जाती है। ऐसा कोई प्रमाण नहीं मिलता जिसके आधार पर इनका समय आगे बढ़ाया जा सके। तिब्बती जनश्रुतियाँ तो इन्हें पूर्व की ओर ही अधिक ले जाती हैं।

इन सिद्धों में सभी जातियों के लोग रहते थे। बहुत से राजकुमार और अच्छे-अच्छे कुलों की कन्याएँ तक इस सम्प्रदाय में सम्मिलित थीं। उदाहरण में—भूसुकुपा (नालन्दा का राजकुमार), कमरिपा (उड़ीसा का राजकुमार), मेखलापा (अगचेनगर के गृहपति की कन्या), लक्ष्मीकरा (सम्भलनगर की राजकुमारी), आदि की गणना सिद्धों में की जाती है। जाति-पाँति का कुछ भी विचार न होता था। ब्राह्मणों से लेकर शूद्र तक दीक्षित हो सकते थे।

बौद्धधर्म के शून्यवाद के प्रतिक्रियास्वरूप हिन्दूधर्म का स्थूल कर्मकाण्ड बड़े विकृतरूप में उपस्थित हुआ। वाममार्ग के कुछ सिद्धान्त समझने पर उस समय की स्थिति समझ में आ जायेगी। अभी ठीक-ठीक नहीं कहा जा सकता कि वाम पन्थ या कौलपन्थ का विकास किस प्रकार हुआ, किन्तु वज्रयान को प्रौढ़ावस्था में इसकी साधना-पद्धति अतिघृणित रूप को प्राप्त हो चुकी थी। भैरव-भैरवियों के सम्मिलित उद्योग से कैवल्य या सिद्धत्व की प्राप्ति अति सरल थी, आवश्यकता थी केवल योनिसाधना के नाम पर इन्द्रियों की अनियन्त्रित उपासना की।

तन्त्रों में स्पष्ट ही लिखा है कि उपासना के समय साधक और साधिका भैरवी का स्वरूप धारण कर लेती है। साधक कर्तव्य है कि साधिका भैरवी की प्रत्येक अभिरुचि—कायिक, मानसिक एवं वाचिक—को पूर्ण करे—

कायेन मनसा वाचा सुन्दरीं यश्च तोषयेत्।
स भवेत् साधकश्रेष्ठो मातृणाञ्च भवेत् प्रियः॥
(कौलावलीनिर्णयः)

कहने का तात्पर्य यह कि युवती की आवश्यकता कौल सम्प्रदाय में प्रतिपग पर थी। इस समय शक्ति की उपासना—जो निश्चय ही किसी समय अपने सात्त्विक रूप में रही होगी—अपनी घोर विकृति पर थी। कुमारी का माहात्म्य यहाँ तक बढ़ चुका था—

कुमारिका भवेत् देवी शिवोऽपि च कुमारिका।
कुमारी योगिनी साक्षात् कुमारी सर्वदेवता॥
(कौ० निर्णयः)

तस्याः पूजनमात्रेण त्रैलोक्यस्य पूजनं भवेत्।
सुकुमारी महादेवी त्रिधा मूर्तिर्व्यवस्थिता॥
(कौ० निर्णयः)

स्त्री-मात्र की प्रधानता स्वीकृत थी, यहाँ तक कि स्व और पर का भी कोई भेद न था। भैरवीचक्र के समय तो कुल-शील और मर्यादा को एक ओर रख देने का आग्रह था ही। सङ्कोच-मात्र दिखाने से भी देवी रुष्ट हो सकती थी। उपासकों का सिद्धान्त केवल एक था और वह यह कि नारीमात्र भैरवी है और पुरुष-मात्र भैरव।

कौलों के प्रसिद्ध गुरुओं के नाम हैं—प्रह्लादानन्दनाथ, सनकानन्दनाथ, कुमारानन्दनाथ, विशिष्टानन्दनाथ, क्रोधानन्दनाथ, सुखानन्दनाथ, ज्ञानानन्दनाथ और बोधानन्दनाथ।

निश्चय ही शाक्तधर्म कबीर के समय तक अपना निकृष्टतम रूप प्राप्त कर चुका था। इसी कारण कबीर ने अनेक स्थलों पर शाक्तों की भरपेट निन्दा की है—

साषित सुनहा दूनों भाई। वो नींदै वो भौंकत जाई।
का सुनहा के सुमृत सुनायें। का साषित पैं हरिगुन गायें।
का कऊआ को कपूर खवायें, का विसहर कौं दूध पिलायें॥
—कबीर-ग्रन्थावली पृ० १६३

चन्दन की कुटकी भली, ना बबूर की अबराउँ।
बैश्नों की छपरी भली, ना साषत का बड़ गाउँ॥
—कबीर-ग्रन्थावली, पृ० ५२

कुल-ग्रन्थों में सुरा-सुन्दरी और मांस की व्यापकता है। कहीं-कहीं पर इन तीनों का प्रयोग प्रतीकवत् किया गया है किन्तु बहुत-से स्थानों (जिनमें से कुछ का निर्देश हम ऊपर कर चुके हैं) प्रतीक मानना अर्थ का अस्वाभाविक आरोप कर देना है। इन ग्रन्थों की भाषा बड़ी रहस्यमयी मानी जाती है जिसे हर कोई नहीं समझ सकता है। दीक्षा देते समय शिष्य को उपदेश दिया जाता है कि वह इस विद्या को गुप्त रक्खे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

*'कुलार्णव तन्त्र' में कहा गया है—

"कुल-मार्ग उतना ही भयावह है जितना कि एक भयङ्कर सिंह की गर्दन से आलिङ्गन करना, विषधर सर्प से खेलना या नङ्गी तलवार की तीखी धार पर चलना।"

कौलपन्थ के विद्यार्थी को यह समझने में देर न लगेगी कि इसमें वेद तथा अष्टाङ्गयोग का बहुत कुछ समन्वय है, किन्तु क्रिया-पक्ष में प्रवृत्तिमार्गी होने से धीरे-धीरे इसमें दोषों की बाढ़ आती गई और अन्ततः वह दिन भी आया जब कि यह हिन्दू-धर्म का एक अतिस्थूल, विकृत और गलित रूप रह गया†। यद्यपि लक्ष्य योग तथा तन्त्र का एक ही अवधूतपद (मोक्ष की सिद्धावस्था) की प्राप्ति है तथापि तान्त्रिक बहिरङ्ग उपासना की प्रधानता के कारण प्रवृत्तिमार्गी कहलाए किन्तु योगी अन्तरङ्ग उपासना को ही प्रधानता देते रहे। फलतः प्रवृत्तिमार्गियों का दल वाममार्गी बन गया और विशुद्ध योग-प्रक्रिया को अपनाने-वाला दल नाथ-सम्प्रदाय के नाम से विख्यात हुआ। सिद्धों का उद्गम वाम-पन्थ से ही हुआ जान पड़ता है। सम्भव है कि सिद्धों का मार्ग आरम्भ में उतना सदोष न रहा हो जितना कि कालान्तर में हुआ। नाथों पर तन्त्रों का प्रभाव अवश्य था किन्तु अत्यल्प मात्रा में। नाथ लोगों ने सिद्धों की वह सरणि कभी न अपनाई जो चमत्कारों को ही अपना विशेष आलम्बन बनाए हुए थी।

‡'योगिसम्प्रदायाविष्कृति' में मत्स्येन्द्रनाथ, गहिनीनाथ, ज्वालेन्द्रनाथ, कारिणपानाथ, चर्पटनाथ, रेवणनाथ, नागनाथ, भर्तृनाथ और गोपीचन्द्रनाथ को क्रमशः जिन नव नारायणों का अवतार माना गया है वे निम्न हैं—

कविनारायण, करभाजननारायण, अन्तरिक्षनारायण, प्रबुद्ध नारायण, पिप्पलनारायण, चमसनारायण, आविर्होत्रनारायण, हरिनारायण और द्रुमिलनारायण।

योगियों में यह प्रवाद प्रचलित है कि गोरक्षनाथ शङ्कर से अभिन्न उन्हीं के अवतार थे।* यद्यपि मत्स्येन्द्रनाथ गोरक्षनाथ के गुरु थे तो भी अपनी आध्यात्मिक शक्ति के कारण गोरक्षनाथ योगियों के मुख्य आचार्य माने जाने लगे।

यद्यपि 'योगिसम्प्रदायाविष्कृति' में गोरक्षनाथ की सृष्टि वि० सं० ४५० में हुई बताई जाती है तथापि इस समय को सिद्ध करने के लिए कोई सुदृढ़ प्रमाण नहीं मिलता। डा० फर्कुहर ने गोरक्षनाथ का समय संवत् १२५७ माना है। डा० शहीदुल्ला के अनुसार इनका समय ६६५ ई० के लगभग है। डा० बड़थ्वाल ने संवत् १०५० के लगभग इनका समय निश्चित किया है। इधर कुछ विद्वानों का मत है कि गोरख कबीर के समकालीन थे। यह इस आधार पर कहा जाता है कि कबीर और गोरख का वाक्सङ्घर्ष ग्रन्थों में मिलता है। केवल इस तर्क के आधार पर गोरख का समय पन्द्रहवीं शताब्दी का प्रारम्भ मानना असङ्गत ठहरता है। कारण कि इस प्रकार के संवाद की परम्परा सन्त-साहित्य में प्रायः पाई जाती है। अपने-अपने पक्ष का प्रभुत्व जमाने के लिए भिन्न-भिन्न मतावलम्बी अपने मुख्य आचार्यों के साथ ऐसी बातें जोड़ दिया करते थे। सिक्ख के प्राचीन साहित्य में एक इस प्रकार का वर्णन आता है जिसमें कबीर नानक से शास्त्रार्थ में हार जाते हैं। इसी प्रकार गोरक्ष और कृष्ण के संवाद भी योगियों के साहित्य में मिलते हैं जहाँ कृष्ण भगवान् अन्त में गुरु गोरक्षनाथ की स्तुति करते पाए जाते हैं। इस प्रकार के संवाद केवल मनःप्रसूत होते थे; इनका कोई ऐतिहासिक आधार नहीं मिलता।

'हिन्दी-साहित्य में योग-प्रवाह' नामक लेख में डा० बड़थ्वाल ने जो उक्तियाँ दी हैं वे बहुत कुछ अंशों में मान्य हैं। यद्यपि कुछ ऐसे भी साक्ष्य हैं जिनके आधार पर गोरक्ष का समय बहुत पीछे की ओर ले जाया जा सकता है। किन्तु जब तक ये प्रमाण न मिलें, इनका समय संवत् १०५० के लगभग मानना ही अधिक उचित होगा। हिन्दी का जो प्राचीनतम रूप गोरख की बानियों में मिलता है, उससे भी यह समय ठीक ठहरता है।

गोरक्षनाथ का नाथपन्थ ईश्वरवादी है। उसमें अनीश्वरवाद के लिए कोई स्थान नहीं है। भगवान् आदिनाथ शङ्कर ही पन्थ के मूल प्रवर्तक माने जाते हैं। जिन विद्वानों की यह धारणा

---

* "The Kularnava Tantra says that the path of Kula is as dangerous as it is to embrace the neck of a ferocious tiger or to play with a poisonous snake or to walk along the sharp edge of a naked sword."

(Introduction) Tantrik Texts Vol. XIV (A. Avalon).

† तान्त्रिकानुष्ठानस्य फलमपि योग एव। योगिनां पूर्वावस्थायामपि योगित्वमुत्तरावस्थायामपि योगित्वमेव न त्ववस्थाभेदाद् गौणमुख्यभावः तन्त्रादि यस्य कस्यापि सापेक्षं, परन्तु तान्त्रिकाणां पूर्वावस्था तन्त्रानुष्ठानं बहिरङ्गमुपासनं, योगिनां त्वन्तरङ्गमुपासनम्। इयं रीतिः। तान्त्रिकः प्रथमतो बहिरङ्गपूजनं स्थूलशक्तेः करोति पश्चादवधूतपदे प्राप्तेऽन्तरङ्गपूजनं सूक्ष्मशक्तेः कुण्डलिन्याः करोति अतः कारणात् तान्त्रिकाणामपि तात्पर्यमवधूतपदे एव।

—गोरक्षसिद्धान्तसंग्रहः

‡ चन्द्रनाथ योगी-द्वारा हिन्दी में अनुवादित।

* कहते हैं कि एक बार गोरक्षनाथ ने गुरु जी की श्रद्धा की 'बड़ों' के स्थान पर अपनी आँखें निकालकर दे दी थीं। इस पर प्रसन्न होकर मत्स्येन्द्रनाथ ने आशीर्वाद दिया जिससे गोरक्षनाथ योगिसमाज के अग्रणी और प्रथमाचार्य माने जाने लगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि नाथ-सम्प्रदाय बौद्धों से विकसित हुआ, वे सम्भवतः चौरासी सिद्धों और नाथों में कोई मौलिक अन्तर नहीं समझते। यदि नाथ लोग सिद्धों के दिखाए मार्ग को ही अपना साधन चुनते तो उनको कोई भी महत्त्व न मिलता। किन्तु सिद्ध लोग निश्चय ही धार्मिक ह्रास के द्योतक थे और वज्रयान की शाखा-शाखाओं में अपना विश्वास रखते थे।

नाथों की बानियों में 'शून्य' और 'निर्वाण' जैसे कई शब्द आते हैं जिनसे कुछ लोग यह अनुमान लगा बैठते हैं कि बौद्धों का 'शून्य' और 'निर्वाण' नाथों को भी प्रभावित कर चुका था। योगियों ने इस प्रकार के शब्द बौद्ध धर्म से ही नहीं, और भी बहुत सम्प्रदायों से लिए, किन्तु उनका प्रयोग सर्वत्र अपनी परम्परा के अनुकूल अर्थ में ही किया है। योग-शास्त्र के अनुसार ब्रह्मरन्ध्र में पहुँचकर साधक ब्रह्म का साक्षात्कार कर लेता है। इसका अनुभव सुनिफल कहकर पुकारा गया है—

उतरषण्ड जाइवा सुनिफल खाइवा
ब्रह्म अगनि पहरिवा चीरं।
नीझर झरणैं अमृत झरिया
यूँ मन हूवा थीरं॥
— गोरखबानी पृ० २४

यहाँ उतरषण्ड का अर्थ 'ब्रह्मगुहा' लेना होगा और 'सुनिफल' का अभिप्राय उस अवस्था की अनुभूति से है।

सुनि ज माई सुनि ज बाप।
सुनि निरञ्जन आपै आप॥
सुनि कै परचै भया सथीर।
निहचल जोगी गहर गम्भीर॥
(गो० बा०)

यहाँ 'सुनि' का तात्पर्य असम्प्रज्ञात समाधि है। उस स्थिति को प्राप्तकर लेने के पश्चात् योगी निश्चल अवस्था को प्राप्त कर लेता है।

बसती न सुन्यं सुन्यं न बसती अग अगोचर ऐसा।
गगन-सिषर महिं बालक बोलै ताका नाँव धरहुगे कैसा॥
(गो० बा०)

उस निर्गुण-सगुणातीत ब्रह्म को जो केवल अनुभवगम्य है, किस नाम से पुकारा जा सकता है? यह तो अपनी-अपनी सुविधा की बात है कि कुछ मनुष्य उसे निर्गुण और कुछ सगुण पुकार लेते हैं। वास्तव में वह है तो निर्गुण और सगुण दोनों से परे—और भी न जाने क्या-क्या!

आसन, प्राणायाम एवं षट्चक्रभेदन इस सम्प्रदाय की मुख्य पद्धतियाँ हैं। किन्तु अन्तिम स्थिति समाधि है। उपर्युक्त तीनों तो साधक के लिए प्रारम्भिक बहिरङ्ग क्रियाएँ

गुरु नानक

मानी जाती हैं। रस-विद्या का निर्देश भी योग-ग्रन्थों में मिलता है।

"छटै छमासे काया पलटंत नागबङ्ग बनासपती जोगी"

नाग (शीशे की भस्म), बङ्ग (राँगे की भस्म) और वनस्पति के प्रयोग से योगी लोगों को वर्ष में दो-एक बार काया-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कल्प करना चाहिए। योगियों की परम्परा है कि वे नीरोगता और शारीरिक उपयुक्तता को भी आध्यात्मिक साधना में उपेक्षा से नहीं देखते। उक्ति प्रसिद्ध है कि 'शरीरेण जिता सर्वे शरीरं योगिभिर्जितम्'। शारीरिक विकारों और दुर्बलताओं का हमारे मानसिक जगत् से बहुत सम्बन्ध है। *कभी-कभी देखा जाता है कि मनुष्य प्रयत्न करने पर भी, दैहिक दुर्बलता के फलस्वरूप, अपनी भावनाओं के संस्कार करने में असमर्थ रह जाता है। आसन, प्राणायाम आदि की महत्ता इसी कारण योगियों ने स्वीकार की।

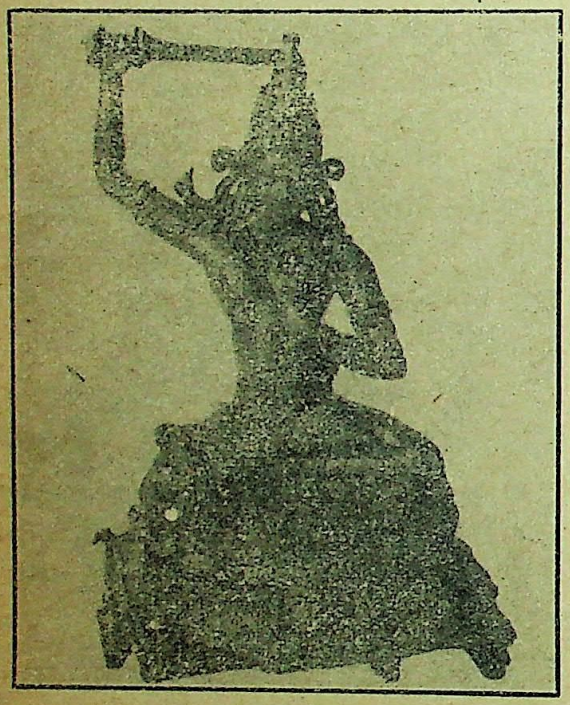

नाथ-सम्प्रदाय की कर्णमुद्रा युक्त
एक प्राचीन मूर्त्ति, मञ्जुश्री

समाधि की स्थिति में भी रसायन-विद्या की आवश्यकता पड़ती थी। योगियों की जीवनचर्या के अध्ययन से पता चलता है कि समाधि का उसमें महत्त्वपूर्ण स्थान है। योगिसम्प्रदाया-विष्कृति के आख्यानों से ज्ञात होता है कि ये लोग प्रायः बारह-बारह वर्षों तक समाधिस्थ रहा करते थे और इस लम्बी अवधि तक अपनी शारीरिक देख-भाल के लिए शिष्य को नियत कर दिया करते थे। समाधि की अवस्था में देहाध्यास तो रहता नहीं जिससे स्वयं अपने जड़ शरीर की रक्षा बाहर के अनिष्टों से कर सके; दूसरे इस दशा में देह के समस्त कार्य-व्यापार बन्द रहते हैं; कुछ समय पश्चात् उसके जीर्ण-शीर्ण होने का भय रहता है; फिर बारह वर्ष का समय भी कम नहीं होता। रसायन द्वारा शिष्य गुरु के शरीर को सुरक्षित रखता था।

कौल-पद्धति पर हम पीछे कुछ प्रकाश डाल चुके हैं। उ प्रयास प्रवृत्ति से निवृत्ति की ओर जाने का था, जो यदि असा नहीं तो कठिनतम अवश्य था। भले हो साधक अपनी उ स्थिति पर पहुँचकर स्त्री के सान्निध्य से भी पतित न हो सा साधना की अपरिपक्व अवस्था में ही नारी का विशेष संसर्ग एक-न-एक दिन इन्द्रियों के उद्दाम आवेश में बहा देगा। गोरक्षनाथ ने कामिनी का विरोध करना आवश्यक समझा—

कदै न सेवै सुन्दरी सनकादिक के साथि।
जब तब कलङ्क लगाइसी काली हांडी हाथि॥
कामनी बहता जोग न होई,
जहाँ उपजै तहाँ फिरि आवटै, च्यन्तामनि चित एता॥
बांमा अङ्गे सोइबा जमचा भोगबा सङ्गे न पीवणां पाणीं।
इमतौ अजरावर होइ मछिन्द्रं, बोल्यौ गोरष बांणीं॥

—गोरखबा

नारी स्वभावतः ही पुरुष के लिए आसक्ति का विषय उसी प्रकार नारी के लिए पुरुष भी। कैसा ही सिद्ध पुरुष आसक्ति का उपकरण पास रहने पर कभी-न-कभी उसके की आशङ्का रहती ही है। फिर गोरख ने जो कुछ कहा, साधारण स्त्री पुरुषों के लिए नहीं, प्रत्युत योगमार्ग में 'अवधुओं' के लिए ही।

कबीर पर भी इस परम्परा का बहुत कुछ प्रभाव नारी के सम्बन्ध में सारा निर्गुण सम्प्रदाय ही एक मत है—

एक कनक अरु कामनीं विषफल कीएउ पाइ।
देखैं ही थैं विष चढ़ै खाँयें सू मर जाइ॥
(कबीर-ग्रन्थावली, पृ० ४०
सुन्दरि थैं सूली भली, बिरला बचै कोइ।
लोह निहाला अगनि में जलि बलि कोइला होइ॥
नर नारी सब नरक है जब लग देह सकाम।
कहै कबीर ते राम के, जे सुमिरैं निहकाम॥

—कबीर-ग्रन्थावली, पृ०

बौद्ध धर्म का उदाहरण हमारे सामने ही है। बुद्ध नहीं चाहते थे कि स्त्रियाँ उनके सङ्घ में शामिल हों, किन्तु शिष्य आनन्द के कहने से किसी प्रकार उन्होंने स्त्रियों को भिक्षुणी बनने की अनुज्ञा दे दी। मैं समझता हूँ कि बज्र में कालान्तर में जो व्यभिचार बढ़ा उसका कारण भिक्षुणियों

---

* जीवन्मुक्तः सदा स्वस्थः सर्वदोषविवर्जितः।
विरक्ता ज्ञानिनश्चान्ते देहेन विजिताः सदा॥
ते कथं योगिभिस्तुल्या मांसपिण्डाः कुदेहिनः।
—गोरक्षसिद्धान्तसंग्रहः

ऐसी बात नहीं थी कि गोरक्ष को स्त्री-जाति के प्रति घृणा हो। घृणा थी केवल कामिनी के विलासमय पक्ष से—

रूपे रूपे गुरुदेव बाघनी भोले भोले।
जिन जननी संसार दिखाया ताकौं ले सूते षोले॥
(गोरखबानी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

। कहने की आवश्यकता नहीं कि स्त्रियों के प्रवेश ने बौद्ध र्म के मूल को बहुत खोखला कर दिया था। प्रसिद्ध योगी रपटनाथ ने स्त्री में आसक्त सिद्धों को खूब फटकारा है—

नाथ कहावें सकहि न नाथि
चेलापञ्च चलावें साथि।
माँगे भिच्छा भरि भरि खाहिं;
नाथ कहावैं मरि मरि जाहिं॥
बाकर कूकर कीङ्गुर हाथि
बाली भोली तरुणी साथि।
दिन करि भिच्छ्या रात्यूं भोग,
चरपट कहै विगोवै जोग॥

अपने समय में प्रचलित सिद्ध-समाज के दोष गोरख की ी दृष्टि से छिपे न रह सके। वे अपने सिद्धान्तों के इतने थे कि उनके विरुद्ध थोड़ी भी उपेक्षा उन्हें सहन न थी। इक द्रव्यों के सेवन तक का कड़ा निषेध किया गया—

ाफू पाय भांगि भसकावै, ता मैं अकलि कहाँ ते आवै।
ढ़ताँ पित्त उतरताँ बाई, तातैं गोरष भाँगि न पाई॥
ोगी होइ पर निंद्या भषै, मद मांस अरु भाँगि जे भषै।
कोतरसै पुरिषा नरकहि जाई, सति सति भाषन्त श्रीगोरषराई॥

ब्रह्मचर्य के निरन्तर पालन से ऊर्ध्वरेता बनने की प्रेरणा थों के उपदेशों में सर्वत्र मिलती है—

अरधै जाता उरधै धरै, काँम दगध जे जोगी करै।
तजै अल्यङ्गन काटै माया, ताका विसनु पषालै पाया॥

—गोरखबानी

साधना-प्रधान होने के कारण योग-मार्ग में जाति-पाँति का भाव स्वीकृत न था।

योगियों के मत से सृष्टि दो प्रकार की है, पहली नाद-परम्परा और दूसरी बिन्दु-परम्परा की। उनकी धारणा है कि दिनाथ शूलपाणि ही इन दोनों परम्पराओं के नियामक हैं। द-परम्परा से हमारा तात्पर्य शिष्य-क्रम से है और बिन्दु-परम्परा गार्हस्थ्य वंश-क्रम से। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि पक्ष नाद अर्थात् गुरुमन्त्र पर अवलम्बित है तो दूसरा र्यज सृष्टि पर। निस्सन्देह पहला प्रकार (नाद-क्रम) ही है क्योंकि उसमें निवृत्ति या श्रेय-पक्ष ही एक मात्र ध्येय ता है। किन्तु दूसरी कोटि में संसार की सभी प्रेय वस्तुओं प्रति आकर्षण रहता है। नाद का सम्बन्ध सूक्ष्म ज्ञान से है र बिन्दु का सम्बन्ध स्थूल माया से। नाथ लोग नादानुयायी अतः उन्हें बिन्दु-परम्परागत मायाप्रधान संसार से वैराग्य ा आवश्यक है। इस प्रकार वैराग्य को मूल मान कर नाथों साधना-क्रम चलता है।* नाद से नव नाथों की उत्पत्ति हुई, ऐसा योग-ग्रन्थों में उल्लेख है, बिन्दु से सदाशिव की। सदाशिव भैरव से विष्णु, विष्णु से ब्रह्म, सूर्य, चन्द्र, इत्यादि की उत्पत्ति हुई। योग के अनुसार सृष्टि की परम्परा किस प्रकार निर्मित हुई, इसका स्पष्टीकरण 'सिद्धसिद्धान्तपद्धति' विस्तार से है।

योग की सबसे ऊँची अवस्था असम्प्रज्ञात समाधि है। गोरक्ष और उनके अनुयायी नाथों के जीवन-वृत्त से यह स्पष्ट हो जाता है कि वे शिष्य को क्रमशः अभ्यास कराते-कराते अन्ततः असम्प्रज्ञात तक पहुँचा देते थे। शिष्य बनाने के पूर्व उसकी योग्यता-अयोग्यता को अच्छी तरह परख लिया जाता था। अन्तिम अवस्था के पूर्व तक उसे बड़ी सावधानी से योगमार्ग की शिक्षा दी जाती थी। सम्प्रदाय-मात्र बढ़ाने को विचार से हर किसी को अपने मत में ये लोग नहीं लेते थे। निस्सन्देह यह असम्प्रज्ञातावस्था पतञ्जलि के अष्टाङ्गयोग की सब से पूर्ण अवस्था है। असम्प्रज्ञात के भी दो भेद होते हैं—एक भव-प्रत्यय और दूसरा उपाय-प्रत्यय। भव-प्रत्यय को जड़ समाधि भी कहा जाता है जो कैवल्य के इच्छुकों को कदापि इष्ट नहीं है। अस्तु, नाथों ने भी सारा श्रम उपाय-प्रत्यय के लिए ही किया, भवप्रत्यय के लिए नहीं। सुयोग्य गुरु की प्रेरणा से उपयुक्त पात्र शीघ्र ही योग में निष्णात हो जाया करते थे।

योग के ग्रन्थों में 'नाथ' शब्द का तात्पर्य पूरा सिद्धत्व या पूर्णत्व प्राप्त किया हुआ महापुरुष है। 'गोरक्षसिद्धान्तसंग्रहः' में लिखा है कि "अस्माकम्मते शक्तिः सृष्टिं करोति शिवः पालनं करोति कालः संहरति नाथो मुक्तिं ददाति"। अर्थात् हमारे मत में शक्ति सृष्टि करती है, शिव पालन करते हैं और नाथ मुक्ति देता है।* 'नाथ' शब्द से यह ध्वनि भी निकलती है कि जिसने अपनी इन्द्रियों को नाथ लिया हो, अर्थात् वश में कर लिया हो। 'राजगुह्य' में नाथ का अर्थ इस प्रकार समझाया गया है—

"नाकारोऽनादिरूपं थकारः स्थाप्यते सदा।"

---

* नाथाद् द्विप्रकारा सृष्टिर्जाता नादरूपा बिन्दुरूपा च। दरूपा शिष्यक्रमेण बिन्दुरूपा च पुत्रक्रमेण। नादान्नवनाथा जाता बिन्दुतः सदाशिवो भैरवो जातः। पुनः शब्दसृष्टिप्रकारमाह—एका सूक्ष्मरूपिणी। द्वितीया स्थूलरूपिणी। सूक्ष्मरूपिणी प्रणवो महागायत्री योगशास्त्रमिति। स्थूलरूपिणी ब्रह्मगायत्री वेदत्रयीति। पुनर्योगशास्त्रतस्तन्त्रशास्त्रं जातं वेदात् स्मृत्यादि शास्त्रं जातम्। पुनर्नवनाथानां पश्चाद् द्वादशसिद्धाश्चतुरशीतिश्च द्वादशपन्थानोऽनन्तसिद्धाश्च जाताः। पुनर्योगात् शेषयोगसांख्ययोगादयोऽनेकयोगा अनेकभेदैर्जातास्तेन योगेन ज्योतिषन्यायादिकं शास्त्रं श्रुतितः स्मृतिशास्त्र व्याकरण पुराणोपपुराणा अनेकेतिहासा जाताः।

—गोरक्षसिद्धान्तसंग्रहः

* भवेयं मनुष्यो यदैकस्तु राजा यदा जन्तुरेको भवेयं मृगेन्द्रः।
यदा शास्त्रमेकं तदा योग एव यदादेव एकस्तदा नाथ एव॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* 'अवधूत' का व्यवहार भी लगभग इसी अर्थ में होता है। 'सिद्धसिद्धान्तपद्धतिः' के अनुसार अवधूत का लक्षण है—"सर्व्वान् प्रकृतिविकारानवधुनोतीत्यवधूतः"। अर्थात् जो प्रकृति के समस्त विकारों को दूर कर सके वही अवधूत है।

वेदों में प्रतिपाद्य प्रणव का महत्त्व योग में सर्वत्र मान्य है। शैवमत में भी प्रणव का महत्त्व उसी प्रकार माना गया है। शैवों के मूल स्रोत भगवान् शङ्कर हैं और नाथों के भी। इसी प्रकार के कुछ अन्य सिद्धान्त भी हैं जो नाथों और शैवों में समान रूप से मिलते हैं। योगियों का प्रयोजन स्थूल वेद में उतना नहीं है जितना कि उसके सारतर प्रणव में। अतः योग-पद्धति में ग्रन्थों की व्यर्थ उलझन से बचकर सारमात्र ग्रहण करने की शिक्षा दी गई है। 'कावेपयगीता' में एक उदाहरण दिया गया है कि एक बार दुर्वासा मुनि अनेक प्रकार के शास्त्रों सहित महादेव जी के पास आए। इस पर भरी सभा में नारद जी ने उन्हें भारवाही गर्दभ की उपाधि दी। इस पर क्रोध से सब पुस्तकों को लवणसागर में डालकर दुर्वासा मुनि महादेव जी से अध्यात्मविद्या सीखने लगे। यह अध्यात्मविद्या और कुछ नहीं, योगविद्या ही थी। कहा भी गया है—

गृहे गृहे पुस्तकभारभाराः पुरे पुरे पण्डितयूथयूथाः।
वने वने तापसवृन्दवृन्दा न ब्रह्मवेत्ता न च कर्म्मकर्ता॥

"घर-घर में पुस्तकों का भार है, नगर-नगर में पण्डितों के समुदाय हैं। वन-वन में तापसों के झुण्ड हैं किन्तु न कोई ब्रह्मज्ञानी है और न कोई कर्मयोगी ही।"

"कहते हैं कुछ शास्त्र मोक्ष के रक्षक हैं और कुछ व्यवहार के। जो मोक्ष के रक्षक हैं वे योग-शास्त्र हैं और जो व्यवहार के रक्षक हैं वे श्रुति-स्मृति आदि हैं।"

योगशास्त्र में पुरुष के बत्तीस लक्षण बताए गए हैं—(१) निरालम्ब (२) निर्भ्रम (३) निवासी (४) निःशब्द (५) निर्मोह (६) निर्बन्ध (७) निःशङ्क (८) निर्विषय (९) सर्वाङ्गी (१०) सावधान (११) सन् (१२) सारग्राही (१३) निष्पञ्च (१४) निस्तरङ्ग (१५) निर्द्वन्द्व (१६) निर्लेप (१७) अयाचक (१८) अवाञ्छक (१९) अमान (२०) अस्थिर (२१) शुचि (२२) संयमी (२३) शान्त (२४) श्रोता (२५) सुहृत (२६) शीतल (२७) सुखद (२८) स्वभाव (२९) लय (३०) लक्ष्य (३१) ध्यान (३२) समाधि।

योग-साधना अवस्था-भेद से चार प्रकार की मानी गई है—पहली आरम्भावस्था, दूसरी घटावस्था, तीसरी परिचयावस्था और चौथी निष्ठावस्था। निष्ठावस्था विकास की पूर्णावस्था है। योगी अपने पूर्ण स्वरूप में प्रतिष्ठित होकर निरञ्जन के साथ तादात्म्य स्थापित कर लेता है। इस पद को प्राप्त कर साधक परम आनन्द का अनुभव प्राप्त करता है जिसकी अभिव्यक्ति वाणी का परे है। जो अनाहतनाद घटावस्था में उठना आरम्भ होता है इस समय लय की दशा में हो जाता है। योगी अनन्त शान्ति को धारण कर लेता है। इस समय के अनिर्वचनीय सुख ज्ञान अनुभवी को ही हो सकता है। राग-अभिनिवेश, मा ममता आदि जड़ तत्त्वों से आक्रान्त सामान्य मनुष्य उ अनुमान नहीं लगा सकता। शिष्य की अथक साधना गुरु की अनन्त कृपा से ही यह स्थिति मिलती है। निष्ठाव में पहुँचकर चित्स्वरूप की पूर्ण उपलब्धि हो जाती है।

किंवदन्ती है कि योगियों को आदिनाथ महादेव ने अ स्वरूप से विभूषित किया। इस समाज के मुख्य चिह्न हैं— कुण्डल,* सेली और शृङ्गीनाद। ये चिह्न भिन्न-भिन्न अर्थ प्रायों के प्रतीक हैं, जैसे शृङ्गीनाद धारण करने का अर्थ है योगि का नाद-परम्परागत होना। कुण्डल धारण करने के का बाद में ये ही लोग कनफटा भी कहलाने लगे। बोल-चाल 'आदेश' और 'अलक्ष्य' शब्दों का विशेष व्यवहार होता है।

योगी लोग स्वभाव से ही भ्रमणशील रहे हैं; जिसके दो का हैं, एक वैराग्य और दूसरा योग-धर्म की वृद्धि। इनका नियम कि शिष्य को असम्प्रज्ञात समाधि में निष्णात कर उसे मुमु के हितार्थ स्वतन्त्र घूमने की अनुज्ञा दे देते थे। समय था जब कि इस सम्प्रदाय के लोग भारत के कोने-कोने व्याप्त थे और अपने अथक परिश्रम से योग का महत्त्व स्था कर रहे थे। गोरक्षनाथ ने जीवन-पर्यन्त पर्यटन किया योग्य साधकों को अपने सम्प्रदाय में दीक्षित किया। एक स्थ पर बिना विशेष कारण के अधिक समय तक ये लोग नहीं ठ थे। इनका जो कुछ भी साहित्य आज प्राप्त है उसे देखने प्रत्यक्ष हो जाता है कि इनकी वाणी में अनेक भाषा के श का समन्वय है। कबीर, गोरख, चर्पटनाथ इत्यादि सन्तों भाषा सधुक्कड़ी कहलाती है। सधुक्कड़ी भाषान्तर्गत सा की प्रवृत्ति सदैव जनता के अधिकाधिक निकट रहने की रही संस्कृत को छोड़कर हिन्दी भाषा को अपनाना इसी कारण लोगों ने अच्छा समझा कि वह विशाल जन-समुदाय तक पहु सकती थी। इसके पूर्व योग के ग्रन्थ संस्कृत में रहे,

* वचने वचने वेदास्तीर्थानि च पदे पदे।
दृष्टौ दृष्टौ च कैवल्यं सेाऽवधूतः श्रियेऽस्तु नः॥
एकहस्ते धृतत्यागो भोगश्चैककरे स्वयम्।
अलिप्तत्यागभोगाभ्यां सेाऽवधूतः श्रियेऽस्तु नः॥ (गो०सि०सं०)

* "……Siva, the Lord of the yogis……is often represented in a posture of deep meditation with similar rings pendant in his ears, as in the image in the Dunar Lena at Elura, or in the vestibule of the Elephanta Cave.

"Notes on Kanphata yogis"——— Indian Antiquary Vol. VII.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

र्णावस्था तो अधिकांश जनता ने समझा नहीं और यदि कुछ समझा जन ने तो अर्थ का अनर्थ कर दिया। बुद्ध की पहुँच जनता तक साधक की के द्वारा हुई और नाथों की हिन्दी के द्वारा। हमारी भाषा क्त वाणी का प्राचीनतम रूप इनके साहित्य में मिलता है। अतः होता है दी के आदिकवि बनने का श्रेय इन लोगों को ही है।

शान्तरक्ष भाष्यकार भगवान् शङ्कर बौद्धों को परास्त कर अद्वैत की य सुख य-दुन्दुभि से समस्त भारत में ईश्वरवाद की प्रतिष्ठा

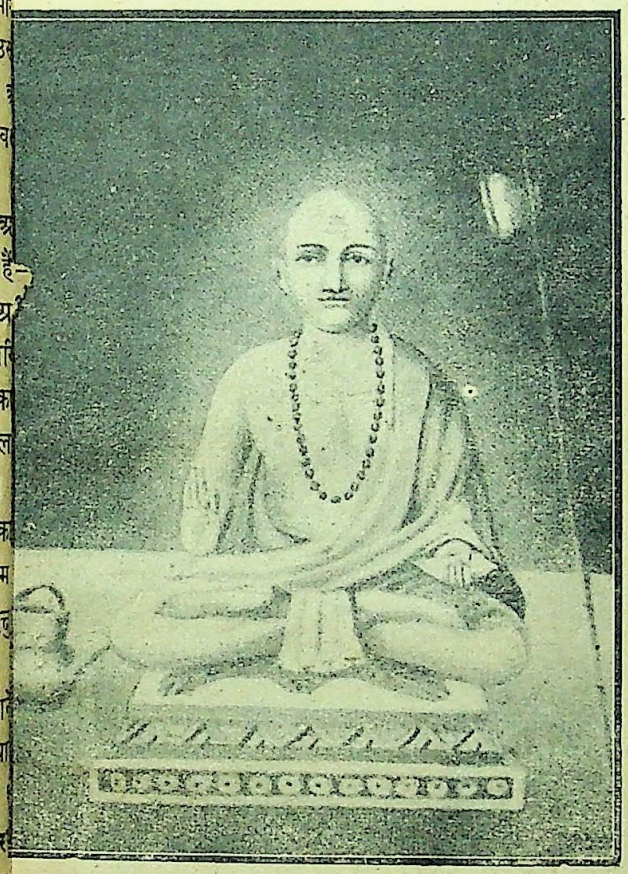

श्री आदि शङ्कराचार्य

चुके थे। नाथों ने भी ईश्वरवाद का प्रचार किया। गोरख समय में नैपाल में बौद्धों का बोलबाला था। बौद्धमत का नीय पतन नैपाल और तिब्बत में नए-नए रङ्ग दिखा रहा ऐसे ही समय में गोरख ने नैपाल-भ्रमण किया। वहाँ कि बौद्धों का अनीश्वरवाद तन्त्र-मन्त्र का सहारा पाकर में कलुषित आचार-व्यवहार को प्रधानता दे रहा है। मांस आदि तामसिक अभिरुचि का उन्होंने कड़ा विरोध । योगिराज की विरोधी शक्ति के आगे वहाँ के शासक ी हार माननी पड़ी। यही नहीं, उसे पदच्युत कर एक उपयुक्त ब्राह्मण-कुमार को गोरख ने गद्दी पर बैठाया।*

जनश्रुतियों से ज्ञात होता है कि नैपाल में मत्स्येन्द्रनाथ भी ये। वहाँ दो प्रकार के मत्स्येन्द्रनाथ माने जाते हैं, एक ठुलो और दूसरे सानु। ठुलो का अभिप्राय बड़े से है और सानु का छोटे से। वहाँ अब तक मत्स्येन्द्री नामक जाति पाई जाती है। उसके उत्सवों आदि में मत्स्येन्द्रनाथ का महत्त्व है। किंवदन्ती है कि योग का रहस्य सबसे पहले महादेव जी ने पार्वती को सुनाया था। मत्स्येन्द्रनाथ ने यह उपदेश मछली के रूप में सुना। इस अनुचित कार्य के कारण उन्हें शाप मिला, जिससे उनका उद्धार गोरक्षनाथ ने किया। किन्तु दूसरे ग्रन्थों में शाप का कोई प्रसङ्ग नहीं आता। इसके विपरीत यह मिलता है कि महादेव जी ने मत्स्येन्द्रनाथ को कविनारायण का अवतार समझकर योग-विद्या में पारङ्गत बनाया।

एक बार मत्स्येन्द्रनाथ सिंहलद्वीप की रानी पद्मावती में आसक्त हो गए थे किन्तु गोरक्षनाथ के प्रयत्न करने पर उनका उद्धार हुआ। हाल ही में मत्स्येन्द्रनाथ की लिखी संस्कृत की किसी कौलीय पुस्तक का पता चला है। इससे प्रतीत होता है कि उनके पतन का कारण कौलीय प्रवृत्ति का बढ़ जाना था। गोरक्षनाथ ने कौलीय पद्धति को भले प्रकार देख लिया था, अतः उस ओर भूलकर भी दृष्टि-विक्षेप न किया। योगिराज गोरक्ष को अपनी सात्त्विक पद्धति पर कितना विश्वास था, यह नीचे के पद्य से स्पष्ट हो जाता है—

सबद हमारा षरतर षांडा, रहणि हमारी साची।
लेषै लिखी न कागद माडी, सो पत्री हम बाची॥
(गो० बानी)

पद्मावती में आसक्त मत्स्येन्द्र को गोरख बार-बार सचेत करते हैं—

सुणौं हो मछिंद्र गोरष बोलै, अगम गवंन कहूँ हेला।
निरति करी नैं नीकां सुणिज्यौ, तुम्हें सतगुरु मैं चेला॥
(गो० बानी)

आख्यान बहुत बड़ा है, कहने की आवश्यकता नहीं। हाँ, इतना अवश्य जान लेना चाहिए कि मत्स्येन्द्र को सांसारिक वृत्ति से हटाकर पुनः वैराग्य के पथ पर लगाना गोरक्ष के लिए ही सम्भव था; अन्य किसी महात्मा में उस समय यह दुरूह कार्य करने की शक्ति न थी।

गोरक्ष के समकालीन बहुत से प्रसिद्ध योगी हो चुके हैं जिनमें गहिनीनाथ, चर्पटनाथ, चौरङ्गीनाथ और गोपीचन्द्रनाथ का नाम विशेष उल्लेखनीय है। महाराष्ट्र के सन्त ज्ञानेश्वर भी गोरक्षनाथ के शिष्य-प्रशिष्यों की परम्परा में आते हैं। उन्होंने अपनी गुरु-परम्परा इस प्रकार दी है—

आदिनाथ, मत्स्येन्द्रनाथ, गोरक्षनाथ, गहिनीनाथ, निवृत्तिनाथ, और ज्ञानेश्वर। कहने की आवश्यकता नहीं कि गोरक्षनाथ अपने जीवनकाल में ईश्वर के तुल्य माने जाने लगे थे और प्रत्येक सम्प्रदायवाला किसी-न-किसी रूप से उन्हें अपने से सम्बन्धित करने में अपना गौरव समझता था। एक उदाहरण ऐसा भी मिलता है जिससे सिद्ध होता है कि एक बार कुछ तान्त्रिकों और

* 'योगिसम्प्रदायाविष्कृति' के अनुसार।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कापालिकों ने गोरक्षनाथ से अपना अगुआ बनने की प्रार्थना की किन्तु उनकी आचार-भ्रष्टता देखकर गोरक्ष ने यह पद स्वीकार न किया। स्पष्ट है कि कापालिक लोग एक प्रभावशाली व्यक्तित्व की आड़ में लोगों के विश्वास-पात्र बनना चाहते थे।

चौरङ्गीनाथ गोरक्षनाथ के प्रसिद्ध शिष्य थे। कहा जाता है कि वे स्यालकोट के राजा के पुत्र थे। उस समय उनका नाम कृष्ण था। 'पूरन भगत' के नाम से साधारण जनता में जो कथा प्रचलित है वह इन्हीं चौरङ्गीनाथ से सम्बन्ध रखती है। ग्रामीण समाज में अनेक प्रकार के स्वाँग इत्यादि इनके नाम पर खेले जाते हैं। लगभग सभी लोग जानते होंगे कि किस प्रकार अपनी विमाता की दुर्बुद्धि के कारण इन्हें हाथ-पैर काटकर कुएँ में डाल दिया गया था। किन्तु गोरक्ष की अलौकिक अनुकम्पा से पुनः अङ्ग-प्रत्यङ्ग सहित ये जीवित हो उठे। इस घटना के प्रभाव से ये चौरंगीनाथ कहलाए जाने लगे। तत्पश्चात् इन्होंने योगिराज का शिष्यत्व ग्रहण किया और योग्य गुरु के योग्य शिष्य प्रमाणित हुए।

क्षणिक यौवन और तज्जन्य उल्लास को शाश्वत मान बैठे लिए वह तैयार न थी। अपने पुत्र-वात्सल्य की वास्तवि उसने तभी समझी जब कि वह अपने ही हाथों—अपने ही पु से—पुत्र को अमरत्व के पद पर प्रतिष्ठित कर दे। उसने इस आशय को पुत्र के आगे प्रकट किया। परन्तु मैनावती इस इच्छा का अर्थ कुछ और ही लगाया गया। मैनावती सारा वैराग्य, सारी अमरत्व की भावना योगी ज्वालेन्द्रना उपदेशों पर ही निर्भर थी। अतः उसी का काम तमाम की ठानी गई। समाधि में लीन ज्वालेन्द्रनाथ को कु फेंक दिया गया। परन्तु परिस्थिति बदल गई। राज्याधिका ने सोचा कि महान् योगी ज्वालेन्द्रनाथ के शिष्य कम शक्तिस न होंगे, इस घटना को सुनते ही वे राज्य में भीषण विपत्ति उ कर सकते हैं। अन्त में गोरक्षनाथ जी की शरण ली उन्होंने स्थिति को सँभाल लिया। इधर ज्वालेन्द्रनाथ योग-बल से कुएँ में जीवित बैठे थे। गोरक्षनाथ ने गोपीचन्द्र

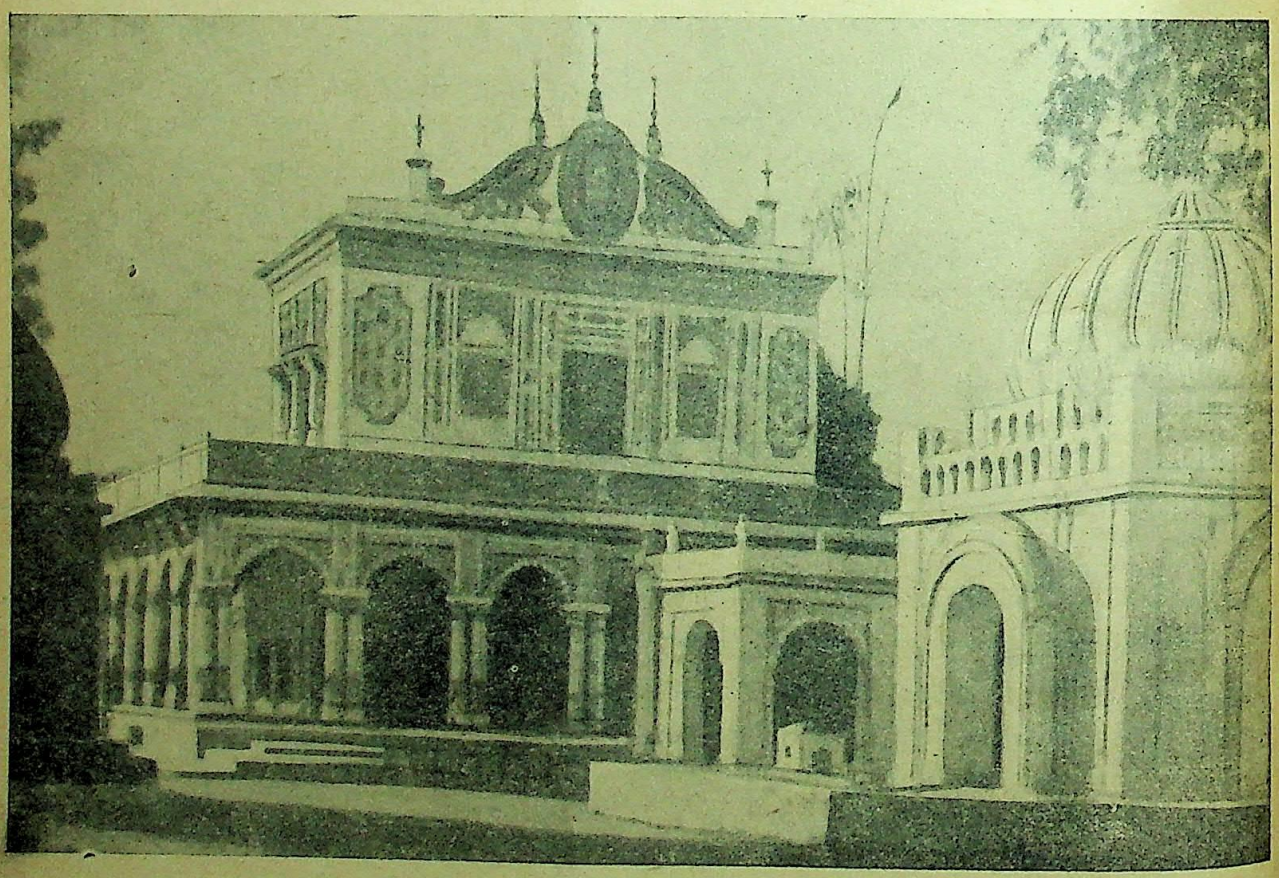

गुरु गोरक्षनाथ का मन्दिर—गोरखपुर

योगी गोपीचन्द्रनाथ भी राजकुमार थे। अपनी माता के कहने से इन्होंने योग में दीक्षा ली थी। इनके गुरु ज्वालेन्द्रनाथ थे। इनका वृत्त कुछ विचित्र-सा मिलता है। माता का नाम मैनावती था। वह इन्हें प्राणों से अधिक समझती थी। अपने पुत्र के रूप-लावण्य पर वह मुग्ध थी। किन्तु उसके चिन्तन का स्तर साधारण स्त्रियों से बहुत ऊँचा उठा हुआ था।

समानता रखनेवाली दो प्रतिमाएँ बनवाईं। क्रमशः पश्चात् दूसरी प्रतिमा को कुएँ पर खड़ा करवाकर गोपीच दोनों बार ज्वालेन्द्रनाथ से बाहर आने की सविनय प्रार्थना परन्तु ज्वालेन्द्रनाथ के शाप से दोनों बार दोनों प्रतिमाएँ हो गईं। तीसरी बार स्वयं गोपीचन्द्रनाथ को कुएँ पर किया गया और योगिराज से बाहर आने की सविनय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राई गई। आशुतोष महादेव के-से उदार स्वभाववाले योगिराज जिनका प्राणान्त करने का अपराध गोपीचन्द्र कर चुका था, स बार प्रसन्न होकर कहा कि 'अच्छा, यदि मेरे दो बार के ाप से तुम भस्म नहीं हुए तो अमर ही हो जाओ'। किंवदन्ती कि तभी से गोपीनाथ अमर हो गए। इस प्रकार मैनावती अभिलाषा उसके समक्ष ही फलीभूत हो गई। गोपीचन्द्र ओर जनता का, और विशेषतया ग्रामीण समाज का, विशेष ाकर्षण है और इसी प्रकार के अनेक उपाख्यान आज तक चलित हैं।

नाथ निस्सन्देह अलौकिक शक्ति-सम्पन्न हुआ करते थे। ग-प्रक्रिया में पारङ्गत साधक तो शक्ति और सामर्थ्य का केन्द्र ही जाता है। सिद्धों और नाथों में एक बड़ा भेद यह है जहाँ सिद्धों ने अपने चमत्कारों का प्रायः बाजारू उपयोग ा है वहाँ नाथों ने अपनी शक्ति का उपयोग आपद् धर्म और हित के अवसरों पर ही किया*। सिद्धों के लिए सिद्धियाँ य थीं किन्तु नाथों का ध्येय कैवल्य की प्राप्ति था। इन दो भिन्न रुचियों के कारण एक के लिए जनता के हृदय में आदर पन्न हुआ और दूसरे के प्रति घृणा एवं भय।

शक्ति के सदुपयोग का कितना ध्यान रक्खा जाता था, यह चे के उदाहरण से स्पष्ट हो सकेगा।

एक बार नगर से दूर एक निर्जन स्थान पर दूरङ्गतनाथ मक एक योगी ने बारह वर्ष के लिए समाधि में प्रवेश किया। पने शिष्य को शरीर की सुरक्षा के लिए नियत किया। कुछ न तक तो शिष्य नगर से भिक्षा प्राप्त करता रहा, किन्तु जब गों ने देखा कि यह तो नित्य-प्रति ही माँगने के लिए आता तो भिक्षा देना बन्द कर दिया। शिष्य को बारह वर्ष तक सी स्थान पर रहना आवश्यक था, अतः उसे विवश होकर कड़ियाँ बेंचकर जीवन-निर्वाह करना पड़ा। समाधि के टूटने जब दूरङ्गतनाथ को समस्त घटनाएँ यथाक्रम ज्ञात हुईं तो सका हृदय क्षुब्ध हो उठा। नागरिकों की अनुदारता के रण शिष्य को जो इतना कष्ट हुआ, उसके लिए उसने समस्त न (नगर) नष्ट करने की ठान ली। क्रोध के आवेश में मस्त पट्टन के स्थान पर समस्त पट्टनों को नष्ट होने का शाप दे या। अब क्या था, समस्त नगरों का धुआँधार होना आरम्भ आ। संयोगवश गोरक्षनाथ उधर से आ निकले; उन्होंने न्तर्ज्ञान से समस्त वार्ता जानकर अग्नि को शान्त कर दिया और ङ्गतनाथ को इस अनुचित क्रोधावेश में आ जाने के कारण यश्चित्त करने के लिए कहा। योगियों की मर्यादा भङ्ग करने के प्रायश्चित्त स्वरूप उसे छत्तीस वर्ष तक कठिन तपश्चर्या करनी पड़ी। योगियों की यह प्रवृत्ति निस्सन्देह प्रशंसनीय थी।*

प्रचलित जनश्रुतियों के अनुसार मत्स्येन्द्रनाथ के बाईस शिष्यों में से, जिनमें गोरक्षनाथ सबसे अधिक ख्यातिप्राप्त थे, धर्मनाथ भी एक थे। धर्मनाथ के सम्बन्ध में भी कुछ वैसी ही घटना बताई जाती है जैसी कि दूरङ्गतनाथ के सम्बन्ध में। कच्छ में आकर उसने तपस्या की थी। धर्मनाथ ने वहाँ पर मठ बनाया और कनफटा सम्प्रदाय चलाया।

† धर्मनाथ के शिष्य गरीबनाथ ने भूज नामक स्थान पर, जो भाडली से १८ मील दूर है, तप करना आरम्भ किया। इस समय जाट लोग बड़े शक्तिशाली थे। जाटों के बच्चे उसकी तपस्या में विघ्न डालते थे। जामरायधन ने, जिसका शासन संवत् १२३१ से १२७१ तक रहा, जाटों को मार भगाया। इस प्रकार गरीबनाथ का समय बारहवीं शताब्दी होना चाहिए। दूसरी धारणा के अनुसार गरीबनाथ का समय हमीर के शासन-काल में पड़ता है। हमीर का शासन संवत् १५२८ से आरम्भ होता है। इस आधार पर गरीबनाथ का समय पन्द्रहवीं शताब्दी के लगभग माना जा सकता है। धर्मनाथ के अनुयायी पञ्जाब और नैपाल में अब भी हैं। गरीबनाथ को भाडली, थारण्डो और कोटडो नामक गाँव पुरस्कार में मिले थे जहाँ इनके उत्तराधिकारी आज तक हैं। इसके दो शिष्य ओरनाथ और पन्थनाथ थे। पन्थनाथ का शिष्य हुआ भिखारीनाथ। भिखारीनाथ को रावखेंगर जी ने संवत् १५४५ में पहला पीर बनाया। भिखारीनाथ का शिष्य प्रभातनाथ हुआ जिसे संवत् १६६५ में एक गाँव दान में मिला। पीर हमजानाथ को, जो पच्चीसवाँ उत्तराधिकारी था, संवत् १९२० में हिज हाईनेस राव प्रागमल ने गद्दी पर बैठाया। धीणोधार पर्वत के पास एक मन्दिर है जिसमें धर्मनाथ की मूर्ति कुण्डलसहित है। वहाँ एक धूनी भी मिलती है जिसके सम्बन्ध में कहा जाता है कि वह कभी नहीं बुझती। वहाँ स्त्रियों के जाने का कड़ा निषेध है। धीणोधार का प्रमुख पीर कहलाता है।

डा० बड़थ्वाल ने गरीबनाथ के सम्बन्ध में कुछ दूसरा ही मत दिया है—

"नैणसी ने अपनी ख्यात में इनका उल्लेख किया है। उसने लिखा है कि सिद्ध धूँधलीमल का आश्रम धीणोद में था। गरीबनाथ धूँधलीमल का शिष्य था। इसका आश्रम लाखड़ी में था। इस समय लाखड़ी का राजा घोघाकरन था। गरीबनाथ के शाप से घोघाओं का नाश हुआ और धूँधलीमल के आशीर्वाद

* ऐसे अनेक उदाहरण हैं जिनसे पता चलता है कि अश्रद्धालुओं और अविश्वासियों को आध्यात्मिक क्षेत्र में प्रवृत्त करने के लिए नाथों ने अपना शक्ति-कौशल दिखाया और उद्देश्य में सफल हुए।

* "History of the Kanphatas of Kachh" में यह वृत्त कुछ हेर-फेर के साथ मिलता है।

†"History of the Kanphatas of Kachh" (Indian Antiquary Vol. VII).

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से जाड़ेचा भीम लाखड़ी का राजा हुआ। प्रभास पाटन के शिलालेख से इसका समय संवत् १४४२ ठहरता है।"

यद्यपि पहले दिए हुए कथन और डा० बड़थ्वाल के कथन में बहुत अन्तर है किन्तु गरीबनाथ का समय हमीर के शासनकाल में भी मान लेने पर पन्द्रहवीं शताब्दी का प्रारम्भ ही निश्चित होता है। अतः गरीबनाथ को बारहवीं शताब्दी में न मानकर पन्द्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में मानें तो अधिक उपयुक्त होगा।

* 'पीर' शब्द का प्रचलन नाथों और सिद्धों में कब और कैसे हुआ, अभी ठीक-ठीक नहीं कहा जा सकता। फिर भी इतना तो निश्चित है कि मुसलमानों के प्रभाव से यह शब्द आया। पञ्जाब में 'पीर' शब्द का प्रचलन अधिक है।

जाति-पाँति का भेद न रखने के कारण योग-सम्प्रदाय में सभी जाति के लोग थे। कई यवन नाथों में प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके हैं। अजपानाथ और बाबा रतन हाजी दोनों मुसलमान थे। अजपानाथ का निवास अरब में था। वहाँ उसने बहुत से मुसलमानों को योगमार्गी बनाया। गोरक्षनाथ के प्रिय शिष्यों में से अजपानाथ भी था। बाबा रतन हाजी को मुसलमान लोग गूगा का गुरु मानते हैं।

गोरक्षनाथ का भ्रमण सुदूर देशों तक हुआ था। भारतवर्ष के भिन्न-भिन्न स्थानों में तो ये आजीवन पर्यटन करते ही रहे। चीन और अरब में भी इनकी यात्राएँ हुईं। वहाँ भी इनके अनुयायी थे।

नाथों की स्मृति दिलानेवाली अनेक जातियाँ एवं उत्सव आज भी वर्तमान हैं जिनका गम्भीर अध्ययन और अनुसन्धान इस विषय में सहायक होगा। नैपाल में हरिणों को गोरखाण्ड† या गोरखाङ्ग कहा जाता है।

जेहलम प्रान्त में गोरक्षटीला नामक एक प्रसिद्ध पहाड़ है। कहा जाता है कि गोरक्ष यहाँ आकर ठहरे थे। सूर्यमल्ल और सुखिराम नामक दो मुमुक्षुओं को आपने यहाँ शिक्षा दी थी।

जम्बू राज्य में गोरखिया नामक एक प्रसिद्ध ग्राम है। पर एक निर्धन ब्राह्मण पर प्रसन्न होकर गोरक्षनाथ ने उसे धान्य से समृद्ध किया था।

रोहतक में खिडवाली ग्राम से आध मील दक्षिण की एक तालाब है। गङ्गदत्त नामक ब्राह्मण को चौरङ्गीनाथ इसी तालाब पर अपना शिष्य बनाया था। यह तालाब भी देववाला जोहड़ के नाम से प्रसिद्ध है। इस पर चौरङ्गी जी की धूनी है। माघ मास की चतुर्दशी को लोग पूजते हैं।

आधुनिक मिर्जापुर में चुनार गढ़ में भर्तृनाथ जी की धूनी बताई जाती है।

गोरखा जाति का नाम गोरख के नाम पर ही पड़ा।

इन योगियों की गुफाएँ अब भी बहुत से स्थानों में पाई हैं। हरिद्वार में भी इसी प्रकार की एक बड़ी गुफा मिलती है।

गोरखपुर गोरक्षनाथ का निवासस्थान रह चुका है। आधुनिक नाम गोरक्ष की स्मृति में ही है। स्थानाभाव से उन सब स्थानों या स्मृति-चिह्नों को नहीं गिनाया जा सकता किसी-न-किसी प्रकार नाथों से सम्बन्धित रहे।

इस सम्प्रदाय में गुरु को बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान गया है—

साच का सबद सोना की रेख
निगुराँ कौं चाणक सगुराँ को उपदेस।
गुर का मूंड्या गुण में रहै,
निगुरा भ्रमै औगुण गहै॥
(गोरखबानी)

गगनमँडल में ऊँधा कूवाँ तहाँ अमृत का बासा
सगुरा होइ सु भरि भरि पीवै निगुरा जाइ पियासा॥
(गोरखबानी)

किन्तु गुरु मात्र कर लेना ही पर्याप्त नहीं। जिसके हमें अपनी बागडोर सौंपनी है उसके खरेपन की जाँच उतनी ही आवश्यक है। माया के दुस्तर आवर्त में अन्धकार में—लिपटा हुआ जीव छटपटाता है और चाहता किसी एक ऐसे शूर का आश्रय, जो उसे प्रकाश में ला उसके अन्तश्चक्षु खोल सके—

राति गई अधराति गई बालक एक पुकारै।
है कोई नगर में सूरा बालक का दुःख निवारै॥
(गोरखबानी)

मुमुक्षु का कर्तव्य है कि ऐसे ही समर्थ गुरु की शरण जो स्वयं ब्रह्मानुभूति में लीन हो चुका हो। यदि इस प्रक गुरु नहीं मिलता तो निगुरा रहना ही अच्छा है। ऐसी में पड़ने की आवश्यकता नहीं कि न भोग ही मिल सका न योग ही। इसी डर से कबीर ने कहा है—

---

* The successors to Garakh's Goddi at the Tilla of Salnath or Bal Gudai--which place is mentioned by Nizam-Uddin Auliya, 12th and 13th centuries; by Damodar, the 16th century author of His romance in verse; by the 17th century biographers of Nanak; by Ain—i—Akbari; by Nizam—Ud—Din Ahmad; by Farishta; even by Alexander's historians, from the 5th century or so—have been known as pirs which is a Muhammadan title.—— Kabir—his Biography (Mohan Singh).

†गोरक्ष का वन्य पशुओं से स्वाभाविक प्रेम था, अतः हरिणों ऐसा नाम पड़ा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कबीर सतगुर नाँ मिल्या, रही अधूरी सीष।
स्वांग जती का पहरि करि घरि घरि माँगै भींष॥
(कबीर ग्रन्थावली)

इतना तो मानना पड़ता है कि ज्ञानमार्गी जिस सत्य की कल्पना मात्र किया करते थे, योगियों ने उसे अपने जीवन से अभिन्न कर दिखाया। ऐसे योगियों के दर्शन भाग्य से ही होते हैं—

सुणि गुणवन्ता सुणि बुधिवन्ता अनन्त सिधां की वाँणीं।
सीस नवावत सतगुरु मिलिया जागत रैणि विहांणीं॥
(गोरखबानी)

अन्यत्र किसी लेख में हम यह दिखाने का प्रयत्न करेंगे कि नाथों ने हिन्दी की निर्गुण-काव्य-धारा के निर्माण में कितना योग दिया। नाथों का पूरा-पूरा महत्त्व तभी समझ में आ सकेगा।

तुम्हारा रूप

श्री दुर्गाशङ्करप्रसाद सिंह

आज देवबेला में अकस्मात् नींद खुल गई। अभी एक क्षण पूर्व प्रगाढ़ निद्रा में अपनी सुखमा भाभी का स्वप्न देख रहा था, जिसने कभी मेरे प्रेम की भावुकता में अपने जीवन की आहुति दे डाली थी। निर्मल आकाश में चन्द्रमा हँस रहा था। शीतल-मन्द मलयानिल के स्पर्श से एक ओर तो मेरा सारा शरीर सिहर ही रहा था पर दूसरी ओर हृदय में मन की कोमल अनुभूतियाँ भी खूब गुदगुदा रही थीं। मन में विचारों और संस्मरणों की बाढ़ ऐसी उठी थी कि उसी में मैं तब तक डूबता-उतराता रहा, जब तक सूर्योदय नहीं हो गया। विलक्षण संसार है। उसके सामने वर्तमान भूत बनकर जितना प्रिय और मधुर बन जाता है उतना यदि अपने वर्तमान रूप में प्रतीत होता तो उसका मूल्य उसकी दृष्टि में कितना अधिक होता। पर ऐसा जो होता नहीं है। यही तो विवशता है। अपने भूत विचारों का क्रम इतना मधुर और बलवान् था कि उसको अङ्कित करने के मोह को संवरण नहीं कर सका।

सुखमा की उमर बीस वर्ष की थी। उसी अल्प-अवस्था में वह एक वर्ष सुहाग-सिन्दूर धारण कर और एक मृत कन्या को जन्म देकर विधवा हो गई थी। चन्द्रशेखर बाबू ६ सन्तान और एक वृद्धा पत्नी के रहते उसे ब्याहकर घर लाए थे। अब सुखमा के घर में उसकी वृद्धा सौत, पाँच कन्याएँ और एक उद्धत स्वभाव का दस वर्षीय बालक रह गए। सुखमा को अपने पति के वियोग का दुःख उतना असह्य नहीं था जितना कि अपने वय का भार, जो उसे साल भर के बाद ही से अदमनीय प्रतीत होने लगा। वर्षी के दिन दूसरे घर के एक वयोवृद्ध-सज्जन ने उसके पास संवेदना का पत्र भेजते हुए उपदेश दिया था, "मैं आशा करता हूँ कि तुम जिस उच्च वंश में जन्म लेकर जिस उच्च वंश में आई हो, उन दोनों वंशों का मुख अपने भविष्य के आचरणों से उज्ज्वल रक्खोगी।" इसको बेवकूफ ग्राहक ने सुखमा को तब दिया था जब पति के वार्षिक श्राद्ध के उपरान्त नहला-धुलाकर उससे आँगन में गौरी-गणेश का पूजन कराया जा रहा था। पत्र पढ़ उसको अञ्चल की खूँट में बाँधते हुए जब वह सजल और कातर दृष्टि से आकाश की ओर निहार रही थी तभी आचार्यासन से पण्डित जी ने कहा,—"स्नानं समर्पयामि"। वह सचेष्ट हो यन्त्रवत् हाथ चलाने लगी।

इस घटना को आज पाँच वर्ष बीत गए। इन दिनों में विपत्ति की मारी सुखमा ने अपनी सौत को ही माता-पिता तथा पति समझा। उसीके आज्ञानुसार उसका रहन-सहन, उठना-बैठना, खाना-पीना, पहनना-ओढ़ना सब होता रहा। उसकी वृद्धा जीजी भी उसको सुख पहुँचाने में कोई कसर नहीं रखती थी। सुखमा की श्वेत धोती मलिन न होने पाए, बाल बिना गूँथे न रह जाएँ, उसको रूखा-सूखा भोजन कोई न परोस दे, कोई कटु वाक्य न कह दे, इसका ध्यान जीजी को सदा बना रहता। वह स्वयं रसोई पकाती, पहले सुखमा को खिलाती, और तब अपने बच्चों को भोजन दे स्वयं भोजन करती। उसके लम्बे-लम्बे काले घुँघराले बालों को गूँथती और उसे अपने साथ लेकर सोती। मानो वह उसकी अपनी छोटी बहन हो। सुखमा भी जीजी और उसके बाल-बच्चों की सेवा में अपने को लीन रख-कर अपने शरीर के भीतरी शैतान को धीरे-धीरे भूलने-सी लगी थी। परन्तु इधर जब से पट्टीदार के स्कूल में पढ़नेवाले आधे दर्जन जवान लड़के जो, रिश्ते में उसके देवर लगते हैं, पढ़ाई छोड़कर घर पर ही रहने लगे हैं और उससे हँसी-मजाक करने लगे हैं, तब से उसके मन में जैसे कोई भूली-सी बात रह-रहकर पुनः स्मरण होने लगी है। जब हँसी-मजाक का सिलसिला चलता है तब बातों ही बातों में उसके कपोल न जाने क्यों सहसा लाल पड़ जाते हैं। पर तुरन्त ही वह कुछ चिन्तित-सी चिढ़ी और उदास-सी होकर एक ओर किसी बहाने चली जाती है। उस समय यदि कोई पुनः छेड़ता या मजाक करता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो वह विष के समान ऐसा तीखा उत्तर देती कि बात करनेवाला भीतर ही कट मरता। पर उसकी बात इतनी नपी-तुली होती थी कि उसका उत्तर देना मजाक करनेवाले के लिए असम्भव हो जाता था। उस रात में जब वह जीजी के साथ सोती तो उसके अञ्चल को भीगा देख जीजी उठ बैठती और उससे अनेकानेक वार्ता करके उसके हृदय के घाव पर मरहम चढ़ाना चाहती। इस पर सुखमा जीजी की गोद में सिर रख सिसक सिसककर रोती, पर मुख से एक शब्द भी नहीं निकालती। इस तरह उसका एक साल और बीत गया।

अब मैं बी० ए० की परीक्षा देकर घर पर रहने लगा था। मेरी परम प्रिय पत्नी हिमवती अपने मायके गई हुई थी। मैं विरह की लम्बी रातें अक्सर जगकर या पत्नी को लम्बे-लम्बे पत्र लिखकर बिताने लगा। रिश्ते में मैं भी सुखमा का छोटा देवर लगता था। पर उमर में तो उससे ५-६ वर्ष बड़ा ही था। मुझसे बातें करते समय सुखमा अकसर उदास हो जाया करती थी। और जब मैं इसका कारण पूछता तो वह आँखों में आँसू भरकर कह देती, "रहने दो, छोटे भैया! इस दुखिया की गाथा को सुनकर तुम क्या करोगे?" जब हम दोनों एकान्त में मिल जाते तब वह अपलक मुझे निहारने लगती। और मेरे उसकी ओर देखने पर भी वह अपनी दृष्टि मेरे मुख पर से नहीं हटाती। मैं मुस्कुराकर पूछता, "मेरे मुख में क्या देखती हो, भावज?" वह जैसे स्वप्न से जगी हो, चौंककर कहती, "क्या पूछते हो?" और जब मैं पुनः उसी प्रश्न को दुहराता तो वह धीरे से मुस्कुराकर कह देती—"तुम्हारा रूप।"

यह सिलसिला इतने दिनों तक जारी रहा कि मैं उसको 'तुम्हारा रूप' कहकर अक्सर दूसरों के सामने भी चिढ़ाने का प्रयत्न करता। पर वह चिढ़ती नहीं, केवल मुस्कुराकर चुप रह जाती। उसकी जीजी के सामने भी मैंने ऐसा कई बार कहा। और उसकी सीधी-सादी वृद्धा जीजी इसको देवर-भौजाई का मजाक समझकर हँसती और कहती, "जाने दो, कुँवर! ऐसा भी कोई कहता है? बड़ी भौजाई का छोटा देवर उसका रूप नहीं देखता।" फिर सुखमा की ओर घूमकर हँसते हुए पूछती, "क्यों बहन! तुम्हारे रूप में क्या है जो कुँवर 'तुम्हारा रूप' 'तुम्हारा रूप' चिल्लाया करता है?" सुखमा मुस्कुराकर चुप हो जाती और आकाश की ओर देखने लगती। उस समय वह या तो अपने अन्तर्द्वन्द्व पर विजय पाने के लिए सुस्ताकर आत्म-बल सञ्चय करना चाहती या भीतर की अग्नि पर आँखों का जल भीतर ही भीतर छिड़ककर उसे बुझाने का प्रयत्न करती। पर मुझमें इन मनोवैज्ञानिक बातों को समझने की योग्यता शायद नहीं थी। इसीसे तो इसका अर्थ कुछ न समझकर वैसे ही बड़बड़ाता हुआ अण्ट-सण्ट बका करता और सुखमा वैसे ही मुझे निहारा करती। कालेज में यद्यपि उच्च-शिक्षा प्राप्त की थी, पर अपनी उद्धत और उद्दण्ड प्रकृति पर नियन्त्रण रखने की शिक्षा किसी प्रोफेसर ने मुझे वहाँ नहीं दी थी; क्योंकि 'विद्या ददाति विनयं' वाली विद्या तो वहाँ पढ़ाई नहीं जाती। इससे उस विधवा की मानसिक व्यथा और समझ लेना मेरे लिए तब तक सम्भव नहीं हुआ जब तक एक विशेष घटना नहीं घटी। जब वह घटना संघटित हो और मैं एक बार उसको समझ गया तो उसके बाद से उसे मनोभावों को इस सफाई और शीघ्रता से समझने लगा, कृत्य कालेज में प्रोफेसर के लेक्चर को सुनते-सुनते ही हृदयङ्गम लेता था।

(२)

उस दिन सत्यनारायण की कथा थी। मेरी अन्धी माता मेरी परीक्षा में उत्तीर्ण होने की मनौती में कहवाई थी विधिवत् पीत वस्त्र पहनकर मैंने कथा सुनी थी। हर अध्याय अन्त में जब शङ्ख बजता था तब सुन्दर स्वादिष्ठ पकवानों ओर देखकर पण्डितजी से यही पूछता, "अब कितने अध्याय हैं?" सुखमा भी निकट ही अन्य महिलाओं के साथ बैठी बड़े ध्यान से सुन रही थी। वह रह-रहकर मेरे मुख की देखती जाती थी। एक बार अध्याय के अन्त में जब वह और अपलक निहार रही थी तब मैंने हँसकर धीरे से "इधर क्या देख रही हो, सुखमा भावज?" इस पर उसका पुरातन पेटेण्ट उत्तर तत्क्षण मुँह से निकला, "तुम्हारा कुँवर।" आज उसने मुझको छोटे भैया न कहकर कुँवर नाम से ही सम्बोधन किया। उसके इस सम्बोधन-स्वर मुझको 'एक विशेष मधुरिमा, विशेष सौन्दर्य और आकर्षण ज्ञात हुआ जिससे मेरे शरीर में एक विलक्षण सिहरन गति से दौड़ गई। यह क्यों? सो तो शायद बताने में असमर्थ ही था। हाँ, अब बताने योग्य हूँ। पर अब आवश्यकता ही नहीं। इसी के साथ सुखमा भी तो, सहसा सिहरनयुक्त गुदगुदी के उठ आने से जैसे कोई कर काँप उठता है वैसे ही अपने हृदय की किसी अज्ञात से सिहर और काँपकर, चौंक उठी थी। और उसके बाद उसके मुख पर उत्तेजना की एक लाल-सी लहर भी दौड़ थी। यह मुझे आज अपनी कल्पना में साफ-साफ स्मरण है। पर तब इसपर मेरा विशेष ध्यान गया था या नहीं, सो कह सकता।

कथा समाप्त हुई। सभी प्रसाद ले इधर-उधर खाने लगे। मैंने भी एक दोने में पञ्जीरी ले ली और अपने लड़कपन स्वभाव से कभी हाथ से और कभी जीभ से ही चाटकर खाता हुआ मण्डप में इधर-उधर घूमने लगा। इतने में सुखमा दिखाई पड़ी। मैंने उस समय जीभ पर पञ्जीरी ली थी। उसे खाकर उसको प्रसाद दिखाते हुए मजाक पूछा, "सुखमा भाभी, तुम प्रसाद नहीं खाओगी?" उत्तर वह कुछ बोली नहीं। वह पूर्व की तरह मन्द-मुस्कान से और अपलक निहारने लगी। उसी क्षण मैंने मजाक ही के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
112856

र अपनी जीभ पर पञ्जीरी को उठाते हुए जीभ उसकी ओर दिखाकर सङ्केत किया। सच कहता हूँ, मेरा उस समय का वह कृत्य केवल हँसी ही के रूप में था और इसमें रञ्चमात्र भी दूसरी कोई भावना नहीं थी। सारा मण्डप नर-नारियों से भरा था। यदि कोई दूसरी हेय भावना होती तो ऐसा कृत्य मुझसे क्या, किसी निर्लज्ज से भी प्रतिपादित करते नहीं बनता। न मालूम सुखमा को क्या हो गया। उसने तुरन्त मेरी ओर मुँह बढ़ाया और अपने अधरों के सहारे मेरी जीभ से पञ्जीरी पोंछ ली। मैं तुरन्त सचेत होकर आश्चर्य भरी दृष्टि से इधर-उधर देखने लगा कि किसी ने देखा तो नहीं। पर सुखमा के मुख पर न तो आश्चर्य था और न भय या पश्चात्ताप का कोई चिह्न। हाँ, एक वस्तु ऐसी अवश्य दिखाई पड़ी कि जिसको देखकर मैं डर गया; और वह थी उसके मुख पर की खेलती हुई आन्तरिक प्रसन्नता, जिसको मैंने पूर्व में कभी इतने स्पष्ट और निःसङ्कोच रूप में नहीं देखा था। मैं भयभीत-सा चुप हो गया। पर सुखमा ने बड़ी सहज दृष्टि के साथ मुस्कराकर प्रसाद का दोना मेरे हाथ से ले लिया और वैसे ही मस्त हो चाट-चाटकर पञ्जीरी खाने लगी जैसे मैं खा रहा था। मैं इस घटना से इतना डर गया कि हफ्तों सुखमा के सामने जाने की हिम्मत नहीं हुई। पर मैंने सुखमा को, या उसके उस दिन के इस कृत्य को, विस्मरण कर दिया हो, सो बात नहीं थी। रह-रहकर उसका अपलक निहारना तथा मेरी जीभ से पञ्जीरी चाट लेना स्मरण हो आते और मेरे हृदय को मथकर अजीब तरह से उन्मत्त-सा कर देते। बार-बार सुखमा के पास जाने का हौसला बाँधता पर किसी अज्ञात शक्ति से पाँव न मालूम क्यों दरवाजे के बाहर जाने के बजाय कमरे की ओर ही घूम जाते। इसी तरह पूरा एक मास बीत गया।

(३)

एक दिन अकस्मात् एकान्त में रात्रि समय सुखमा से मेरी भेंट हो गई। कतिपय साधारण बातों के उपरान्त सुखमा का बायाँ हाथ अपने दाहिने हाथ में लेकर दबाते हुए मैंने कहा, "मुझको इतना आगे बढ़ाकर अब क्यों पीछे धकेल रही हो, सुखमा? क्या इसका उत्तर तुम्हारे पास कोई है?"

इस प्रश्न से सुखमा के कपोल रक्त-रञ्जित हो गए। पर प्रश्न का कोई प्रत्युत्तर दिए बिना ही उसने आकाश में खिले हुए राकेश की ओर निहारा। मुझे ऐसा लगा कि उसके चमकते हुए विशाल नेत्रों को देखकर चन्द्र भगवान् मानों हँसने लगे और उनके हँसते ही उनकी असंख्य किरणें एक ही साथ पृथ्वी पर अवतरित हो सुखमा के सुन्दर मुख को घेरकर चिर-परिचिता सहेलियों की तरह उससे हाथापाई करने लगीं। पर सुखमा का सुन्दर मुखारविन्द मरीचिकाओं के इस हास-परिहास में सहयोग देने के स्थान पर मानो रो रहा था और रुदन कर रही थी उसकी आकृति, उसकी आँखें, उसकी शोभा तथा पीठ पर की बिखरी केशराशि। पर तब भी कला निधि की उच्छृङ्खल किरणें इस रुदन पर उपहास का अट्टहास करते अघाती नहीं थीं। अपने कवि स्वभाव नेत्रों से इस कल्पित दृश्य को देखकर मैं विस्मय में पड़ गया; परन्तु पूर्व इसके कि मैं कुछ और पूछूँ या कहूँ, सुखमा ने आकाश से दृष्टि हटाई और अपने भीगे हुए अपलक नेत्रों को मेरे आश्चर्यचकित मुँह पर टिकाकर वैसे ही निहारने लगी जैसे पूर्व अवसरों पर किया करती थी। उसकी उदासीनता से विषय का क्रम बदलने के अभिप्राय से मैंने अपने उसी पुराने पेटेण्ट प्रश्न को दुहराया, "इधर क्या देखती हो, सुखमा भाभी?" और उसने भी अपना वही पेटेण्ट उत्तर भरे कण्ठ को साफ करके दुहरा दिया, "तुम्हारा रूप।" और इसी के साथ उन्मादिनी की तरह खिलखिलाकर वह हँसने लगी। पर मैं अन्धा हो गया था। उसकी इस विक्षिप्त हँसी को प्रोत्साहन का संकेत मानकर पागल-सा उधर ही को झुक पड़ा जिधर को सुखमा का मुख था। पर मानो इस आक्रमण से बचने का उपाय उसने पहले ही सोच रक्खा था। वह उठकर खड़ी हो गई और मेरे उत्तप्त गालों पर हल्का-सा चपत जमाते हुए ममता से भरे पर उपदेश सूचक स्वर में कहने लगी, "पागल न बनो, कुँवर।" मैंने हाथ की मिठाई छीने हुए बच्चे की तरह रुआसी आकृति से उसको निहारा और रुँधे कण्ठ से पूछा, "क्या सचमुच मैं पागल हूँ, सुखमा भाभी!" उसने दूसरा चपत दूसरे गाल पर लगाते हुए एक वयोवृद्धा माता की प्रताड़नावाली आकृति से कहा, "हाँ तुम जरूर पागल हो गए हो, कुँवर। तुम जैसे सयाने ऐसी बातें नहीं सोचते।" इतना कहकर उसने मेरे मुख के चारों ओर अपना दाहिना हाथ फेरा और बड़े आदर से उसे चूमकर कहा, "कुँवर! तुम नहीं जानते, मैं विधवा हूँ न!"

मैं रोना-सा मुँह किए उसे अनिमेष ताकता रहा और वह भी मुझे एकटक निहारती रही। मेरी अस्थिरता से आहत होकर या क्यों, उसकी विशाल आँखों से टप-टप करके दो बूँद पृथ्वी पर गिरकर चूर हो गए। फिर उसने कुछ स्वस्थ होकर भरे कण्ठ से कहा, "तुम मेरे व्यवहारों पर आश्चर्य करते होगे, कुँवर, और सोचते होगे कि मैं विलक्षण कठोरहृदया हूँ।" यह कहकर उसने मुझे देख यह जानना चाहा कि उसके इस कथन का प्रभाव मेरे ऊपर कैसा पड़ा। पर मैं तो पहले ही से सचेत हो उठा था, बोला, "छिः! छिः! कौन ऐसा पापी होगा जो तुमको ऐसा समझेगा, सुखमा।"

सुखमा चुप हो रही। मैं भी मौन हो थोड़ी देर उसकी ओर देखता रहा। फिर अधीर होकर कहा, "सुखमा भाभी! एक बात पूछूँ, बताओगी?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसने कुछ सोचा फिर आकाश के चन्द्रमा को निहारा और फिर मेरी ओर देखकर गीले स्वर में कहा, "पूछो, बताऊँगी।"

मैंने कहा, "सचमुच ?"

उसने दृढ़ स्वर में कहा, "मैं तुमसे झूठ नहीं बोलती।"

मैंने आजिजी भरे स्वर में कहा, "भाभी, तुम्हारे व्यवहार क्या हैं ? तुम क्या हो और क्यों मुझे ऐसा खेल खिला रही हो कि जिससे मैं जीकर भी मरा-सा हो रहा हूँ ? यही मेरी समझ में नहीं आता।" मैं उदास हो हँसते हुए चन्द्रमा को देख देख भीतर ही खीझने लगा।

सुखमा इस प्रश्न से चुप हो गई। उसने कुछ विचार कर मेरी ओर देखा और हँसकर कहा, "तुम्हारा असली रूप देखने के लिए ही तो, कुँवर जी ?" इस उत्तर में श्लेष है, यह समझकर भी मैंने सुदूर क्षितिज पर के एक डूबते हुए तारे पर अपनी दृष्टि गड़ा दी। पर सुखमा मुझे निहारती ही रही। थोड़ी देर ठहरकर उसने हँसकर पुनः कहा, "तुम थोड़ी देर और उधर ही देखते रहो, कुँवर, कि इस बीच इस क्षीण प्रकाश में भी मैं तुम्हारा रूप देख सकूँ।"

मैंने खीझ कर कहा, "तुम देख लो मेरा रूप, मैं तुम्हारा रूप थोड़े ही देख सकता हूँ।"

सुखमा को चोट पहुँचाने के लिए ही मैंने यह वाक्य कहा था। पर वह घायल नहीं हुई। वह पूर्ववत् हँसती हुई मुझे उसी निश्छल भाव से निहारती रही जिससे उसने पूर्व बातें कही थीं। मैं हार गया; विवश हो अपना माथा उसके चरणों पर रखते हुए कहा, "क्षमा करो, भाभी ! मैं अपराधी हूँ।"

सुखमा झुक कर मेरा मस्तक पकड़ कर बैठ गई। बलपूर्वक मेरे सिर को उठाकर अपनी गोद में रखते हुए उसने कहा, "क्यों ऐसा अधीर हो रहे हो, कुँवर ? मुझे नरक में न भेजो। किसी दिन तुम स्वयं ही मुझको और मेरे व्यवहारों को जानकर मुझे क्षम्य समझोगे।"

मैं सुखमा की गोद में सिर रक्खे उसकी ओर निहारने लगा और सुखमा मेरे बालों को सहलाती हुई बड़े प्रेम से मुझे ताकती रही। मैंने कहा, "सुखमा !" और उसके मुख से निकला, "कुँवर !" चारों आँखों ने केवल इन दो शब्दों के उच्चारण मात्र से ही अपने हृदय के भावों को व्यक्त करके एक दूसरे को समझा दिया। मिनटों हम दोनों चुप रहे, मानों दोनों एक दूसरे को पूर्ण रूप से इसी बीच समझ चुके थे। वह मेरे माथे को अपनी गोद से धीरे से हटाती हुई खड़ी हुई और प्रेमपूर्ण स्वर में बोली, "तुम कब ससुराल जा रहे हो ?"

मैंने कहा, "कल या परसों।"

उसने कहा, "उन्हें जरूर लिवा लाना, नहीं तो वहाँ उनकी दवादारू नहीं हो सकती। अच्छा, जाओ। बहुत देर हो गई। जीजी इन्तजार करती होंगी।" इतना कहकर बिना उत्तर की प्रतीक्षा किए ही वह वहाँ से चली गई।

(४)

पत्नी को ससुराल से लिवाकर जब मैं घर लौटा तो सुख उनसे मिलने नहीं आई। दो-चार दिन बाद जब सुखमा एकान्त में भेंट हुई तो उसने पूछा, "बहू से मेरे सम्बन्ध बातें हुई थीं ?"

मैंने कहा, "नहीं।" यह लज्जा की बात मैं उनसे कहने लगा ?"

उसने कहा, "लज्जा ! छिः ! इसमें लज्जा कैसी ! पाप करती तब तो लज्जा थी। और तुम कैसे आदमी हो अपनी पत्नी से ऐसी बातें भी छिपाते हो ?"

मैं अकचकाकर उसकी ओर देखने लगा। पर उस आकृति वैसी ही गम्भीर और प्रेम से परिपूर्ण थी। मैं थो देर उस सौम्य और देवी-सी पवित्र मूर्त्ति को निहारता रहा बोला, "सुखमा भाभी, मैं अभी तुमसे झूठ बोल रहा था मैंने सभी बातें आद्योपान्त उनको बता दी हैं।"

सुखमा गम्भीर हो गई, बोली, "तब उन्होंने क्या कहा ?"

मैं थोड़ी देर चुप रहा। पर सुखमा मौन के कारण स्यात् जान गई। उसने कहा, "उन्होंने जो कहा है वह जानती हूँ। तुम यदि झूठी बात गढ़कर समझाना चाहे तो मैं उसको मानूँगी नहीं।"

मैंने कहा, "जाने दो, उन बातों को सुनकर तुम्हें दुः होगा। फिर उनके कहने से तुम्हारे लिए कोई खास ल भी तो नहीं है।"

सुखमा ने कहा, "क्यों, कुँवरजी ! मुझको उनसे दू समझते हो क्या, कि उनकी बातें तो नहीं कहते और मेरी बातें उनको बता आए।"

उसकी आँखें भर आईं और वह वहाँ से जाने लगी। उसको रोककर कहा, "जब मैंने तुम्हारे सम्बन्ध की सभी कह सुनाईं तो उन्होंने बिना किसी द्वेष या घृणा के साफ श में मुझसे कहा, "मुझे इसके लिए न दुःख है न ग्लानि। प्रेम में इतनी उदारता है कि मैं किसी के प्रेम की कद्र कर सक पर एक भय मुझको होता है, और वह यह कि जीजी के कन्या हुई थी। ऐसा न हो किसी भयङ्कर परिणाम का सामना करना पड़े।"

सुखमा यह सुनकर चुप हो गई। थोड़ी देर तक सोचती रही। फिर बोली, "बहू बड़ी उदार हैं।" यह कर वह तेजी से कमरे के बाहर चली गई। दरवाजे पर पहु कर उसने घूमकर कहा, "ठहरना, अभी आती हूँ।"

जब वह लौटकर कमरे में आई तो उसके हाथ में पत्र था। उसको मुझे देते हुए उसने कहा, "इसे पढ़ो इसे तुम्हारे पिताजी ने मुझे तब लिखा था जब मैं अपने की वर्षी मना रही थी।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंने पत्र लेकर आद्योपान्त पढ़ डाला। यह वही पत्र था सका जिक्र पूर्व हो चुका है। सुखमा ने कहा—"देखा अपने माज को। वह पाप से घृणा नहीं करता बल्कि उसके उस ल से, जो निष्पाप है, घृणा करता है। उससे उसके निजी ार्थ को जो धक्का लगता है, उसी से उसे उससे घृणा है। तुम्हारे ताजी पुरुष हैं, इससे इसी बात को उन्होंने दुहराया तो सही, पेच के साथ। पर बहू स्त्री है। वह समझती है कि पुरुष-ाज कितने पानी में है। उसने साफ कह दिया। अपनी त भी बताए बिना नहीं रही। सच पूछो तो बहू को ही इसमें ा मानना था। पर उसने स्त्री होने के कारण स्त्री-हृदय पीड़ा को समझा और दया करके या अपनी उदार भावना से रित होकर उसे उसी क्षण क्षमा भी कर दिया। पर पुरुष-ाज की कठोर निर्दयता को तो वह जानती है! इसी से मुझे ने सावधान भी कर दिया। तुम क्यों मेरे पीछे पड़े हो, ? तुम भी पुरुष हो। तुम्हारे हृदय के भीतर भी यही बैठा हुआ फुफकार रहा है।"

वह खत मेरे हाथ से लेकर जल्दी से कमरे के बाहर चली । मैंने चाहा कि उसको रोककर अपनी सफाई दूँ, पर न लूम क्यों मेरा कण्ठ अवरुद्ध-सा हो गया और वह धीरे-धीरे आँखों से ओझल हो गई। जब मैं लौटकर पत्नी के कमरे गया तो उनको ज्वर के ताप में बेहोश पाया। यह देख मैंने न्त डाक्टर को बुलवाया। उसने सन्निपात का प्रकोप बता सावधान रहने की चेतावनी दी। मुझे काठ मार गया। फिर हिम्मत बाँधकर बड़ी लगन से सेवा करने लगा।

लगातार कई दिनों तक एक समान सेवा करते-करते मैं थक ा। रात-रात भर अकेले जगना, उनके झिझककर उठ बैठने उन्हें अकेले पकड़कर सँभालना, समय पर दवा देना और सर-सदा बरफ की थैली रक्खे रहना आदि काम एक आदमी को ा देने के लिए काफी थे। फिर भी मैं दृढ़ था और रञ्च-मात्र पत्नी के पास से नहीं हटा। जब उन्हें नींद-सी मालूम होती मैं भी आँखें मूँदकर तन्द्रा में अचेत हो जाता। इसी दिन बीतने लगे। चौदहवें दिन सुखमा आई। वह कर अपनी जीजी यानी मेरी धर्म-पत्नी हिमवती की खाट के बैठ गई। मैं वहीं था। सुखमा के इस विपत्ति में ने दिनों तक न आने से मेरे हृदय में उसकी ओर से कुछ और निःस्पृहता-सी उत्पन्न हो गई थी। मैं उसे प्रकट होने रोक भी नहीं सका। कहा—"भला आज स्मरण तो हुआ?" मेरे प्रश्न की उपेक्षा कर उसने उसी पूर्व स्नेह-पूर्ण मुद्रा से ओर निहारकर पूछा—"अब पहले-से कैसी हैं?"

मैंने झल्लाकर कहा—"तुमको इससे क्या मतलब?"

सुखमा ने गम्भीर मुद्रा में कहा—"मेरी जीजी हैं और लब तुमको होगा? उठो जाओ; मुँह-हाथ धोकर जरा सो । मैं यहाँ बैठी हूँ।"

मैं चुप बैठा रहा। हिमवती सन्निपात में अर्थ-हीन बातें रह-रहकरकह रही थीं। हमारी बातों को उन्होंने सुना या नहीं, यह तो नहीं कह सकता। पर आँखें खोलकर पहले उन्होंने मुझे निहारा और फिर सुखमा को देखा। उनकी आँखों में पहले तो जल भर आया फिर सहसा अग्नि-सा तेज चमक उठा। बस, तकिए पर माथा पटककर उन्होंने कहना शुरू किया—"मैं दूसरी हूँ! दूसरी अपनी हैं!! अपनी की बात दूसरी से कहना मना है—मना है!!!" और खिलखिलाकर हँसने लगीं। हँसी की शुष्कता डरावनी थी। मैंने माथे पर बर्फ की थैली रखनी चाही, पर हिमवती ने उसे छीनकर दूर फेंकते हुए कड़े शब्दों में कहा—"रहने दो इस कृपा को।"

सुखमा चुपचाप यह सब देख रही थी। मेरी आँखों से आँसू गिर रहे थे और हिमवती वैसे ही अनेक अर्थ-हीन वाक्य दुहराती चली जा रही थीं। इतने में डाक्टर आया। उसने देख-दाखकर थोड़ी देर सोचा और फिर एक दवा देकर कहा—"किसी से कहिए इसे पिला दे। आप खुद न पिलाइए। इनको अकेला छोड़ आप लोग बाहर बैठें।" मैं तो हट गया, पर सुखमा वहीं बैठी रही।

तीन-चार घण्टों के बाद जब मैं लौटा तो हिमवती शान्त स्वर में सुखमा से बातें कर रही थीं। पर स्वर इतना क्षीण था कि साफ सुन नहीं पड़ता था। मैं दबे पाँव आया था। वार्ता सुन-कर चुप खड़ा हो गया। हिमवती के चुप होने पर सुखमा ने कहा—"बहू, मान लो कि किसी की किसी सुन्दर चीज पर किसी की आँखें बलात् पहुँच जाएँ तो इसमें उसका दोष तो तब न होगा जब वह सुन्दर वस्तु को छुए या चुराकर ले भागे। आँखों के धर्म को कोई कैसे रोक सकता है, बहन?"

हिमवती ने कोई उत्तर नहीं दिया। सुखमा कहती गई—"तुम स्त्री हो। तुम स्त्री के हृदय के भाव सहज ही जान सकती हो। फिर उस स्वाभाविक निर्बलता को रोक न सकने के कारण ही क्या मैं हेय हो गई?"

हिमवती ने कुछ कहा, पर क्या कहा, यह मैं स्वर क्षीण होने के कारण साफ नहीं सुन सका। सुखमा ने कहा—"यह तो मैंने पहले ही सोच रक्खा था कि तुम्हारा प्रेम इतना अनुदार नहीं। पर बहू, मैं समाज की सताई आजन्म दुखिया होकर भी इतनी पापिन अभी नहीं बनी हूँ कि किसी के घर डाका मारूँ और उसकी आँखों के आगे ही उसके उदार भावों का नफा उठाऊँ। उसकी जीवन-गठरी को छीनकर ले भागूँ।"

हिमवती ने कहा—"यह मैंने कब कहा कि आप मेरी गठरी लिए जा रही हैं?"

सुखमा ने कहा—"कहा नहीं, पर आखिर तुम्हारे भी तो हृदय है न? केवल बुद्धि और विवेक तथा उदार भावनाओं की प्रेरणा से ही तो संसार का हृदय-धारी जीव जीवित नहीं रह सकता। भले ही इन समाज-मान्य आचारों की सहायता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से सहज स्वाभाविक भावनाएँ दबा दी जाएँ और जीवधारी के भाव-प्रधान हृदय का गला घोंट दिया जाए। पर मरते समय तो हृदय एक बार चीखे बिना नहीं मानेगा, बहू? हृदय की खाद्य-वस्तु तो भावुकता है न? बुद्धि और विवेक नहीं। इसी भावुकता के बल से तो हृदय जीता है, बहू।"

सुखमा चुप हो गई, मानो उसका कण्ठ भर आया हो। हिमवती भी चुप हो रहीं। सुखमा ने खाँसकर फिर कहना शुरू किया—"बहू, भगवान् के घर तुम अच्छी कमाई करके आई थीं इससे सुन्दर गठरी सुहाग-अञ्चल में बाँध रक्खी है। यह तुम्हारा है, इसको सहेजकर रक्खो। इसको पराया समझकर बेकार क्यों प्राण दे रही हो। भले ही मेरा मन इस पर लुब्ध हो, पर मेरा धर्म तो इसे छूने का नहीं है और न मैंने अपना धर्म छोड़ने का हौसला ही किया है।" सुखमा ने खाँसने के बहाने अपना कण्ठ साफ किया और कुछ सुस्ताकर आगे कहा—"समाज ने न जाने मेरे किस पाप के कारण मेरे हाथ-पाव बाँध, गले में फाँसी डाल, मुझे फाँसी की टिकठी पर खड़ा कर रक्खा है। वह न तो डोरी खींचकर मेरा प्राणान्त ही करता है और न हाथ-पाँव खोलकर मुक्त ही। और ऊपर से तुर्रा यह कि रात-दिन अच्छी-बुरी सभी चीजों का प्रलोभन दे-देकर हृदय में वासना की अग्नि भी धधकाया करता है।" सुखमा सिसकने लगी।

हिमवती ने शान्त स्वर में कहा—"जीजी, आपकी सभी बातें सत्य हैं। सत्य मानिए मैं आपसे रञ्च-मात्र भी असन्तुष्ट या अप्रसन्न नहीं हूँ। मेरी सभी सहानुभूति आपके साथ है। पर जीजी, जो कुछ भी मेरी चेतावनी थी वह इस क्रूर समाज को देखकर आपकी भलाई की ही कामना से थी।"

सुखमा ने कहा—"यह तो मैं माने लेती हूँ। पर तुम यहाँ आते ही इस तरह बीमार पड़कर मरणासन्न क्यों हो गईं? तुम कितना भी समझाओ, बहन, पर मुझसे तुम्हारे मर्मस्थल के घाव छिपे नहीं रह सकते! मैं स्त्री हूँ, पुरुष नहीं; जिनके पास स्त्री की सुन्दरता देखने को आँखें तो होती हैं पर उसके हृदय के नासूरों को परखते समय रतौंधी छा जाती है। तुम बातों में चाहे जितना भी छिपाओ, पर तुम्हारे जिस मर्मस्थल से रक्त बह रहा है उसको बिना यहाँ आए ही मैंने देख लिया था और उसी नासूर को पूरा होने के लिए समय देने के अभिप्राय से ही मैं आज तक तुम्हारे पास आ भी नहीं सकी थी।"

हिमवती ने धीमे स्वर में कहा—"मैं उनकी शपथ खाकर कहती हूँ, जीजी, मेरी इस रुग्णता का कारण आप नहीं हैं।"

सुखमा की त्रस्त-सी क्षीण आवाज सुनाई पड़ी—"सच कहती हो, बहू?"

इतने में रामू 'मा! मा!! देख बाबूजी यहाँ खड़े हैं' कहता हुआ आँगन से चिल्लाने लगा। मैं खाँसकर चोर की तरह भीतर घुसा। मुझे देखते ही सुखमा उठ खड़ी हुई। मुझे सम्बोधन करके कहा—"कुँवर, बैठो। अब इनकी तबीयत ठीक है। मैं जरा तुलसी को दीप दिखाती आऊँ।"

(५)

हिमवती की चारपाई पर बैठकर उनके माथे पर हाथ रखते हुए मैंने कहा—"हिम!"

हिम ने मेरी ओर आँखें करके मुझे एक बार निहारा और नेत्र बन्द कर लिए। मैं चुपचाप उनके बालों को सहलाता रहा। पाँचेक मिनट रुककर धीरे से फिर पूछा—"हिम, अब कैसी हो?"

पर हिम अब भी चुप ही रहीं। थोड़ी देर और ठहरकर जब तीसरी बार आर्द्र स्वर में मैंने वही प्रश्न दुहराया तो हिम ने अपनी विशालकाय पलकों को खोला। नेत्रों के खुलते ही दो बड़ी बूँदें ढुलकने लगीं। मैंने बड़े प्रेम के साथ उनको पोंछा और माथे पर हाथ फेरते हुए सान्त्वना के स्वर में कहा—"हिम, हिम!! तबीयत खराब हो जाएगी।"

हिम की आँखें मेरे मुख पर टिक गईं। मैंने उनकी आँखों में अपनी आँखें डालकर आर्त स्वर में कहा—"हिम, जिस अपराध के कारण तुम ऐसी हो रही हो वह मुझे बता दो। मैंने तुम्हारी सभी बातें सुन ली हैं। इतना कहते-कहते दोनों हाथ हिम के पावों पर पहुँच गए और मेरा सिर उधर झुक ही रहा था कि इतने में हिम घबड़ाकर उठ बैठीं। मेरे हाथों को पकड़कर माथे से लगाते हुए उन्होंने कहा—"नरक में न डालो, नाथ!" और वे मेरे पाँवों पर लोट गईं।

मैंने उनके मस्तक को उठाकर अपनी गोद में रख लिया। अपना मुख मेरी गोद में छिपाए हुए वे सिसक-सिसककर रोने लगीं। इधर मेरे अर्धसम्पुट नेत्र भी अविरल आँसू ढारने लगे।

जब हम दोनों का हृदय-भार हल्का हुआ तब मैंने पूछा—"हिम, अपने हृदय की बातें मुझे बता दो। मैं अपने अपराध के लिए क्षमा-प्रार्थी हूँ।

हिम चुपचाप छत की ओर देखने लगीं। मिनटों की चुप्पी के बाद मेरे मुख से एक निराश की आह निकली। उसी से हिम का ध्यान टूटा। उन्होंने कहा—"तुम उस दिन जीजी की कोई बात कहते-कहते सहसा यह कहकर रुक गए कि किसी की गोप्य बात किसी पर प्रकट नहीं करनी चाहिए। भला बताओ तो, तुम्हारे सामने अब मैं दूसरी हो गई!"

मेरे ऊपर जैसे बिजली गिर पड़ी हो। अब मुझे याद आया कि बातों-ही-बातों में मैंने कितनी बड़ी भूल और नासमझी कर डाली है। मैंने इस भूल के लिए हिम से क्षमा-याचना की। उन्होंने इसका विरोध करते हुए कहा—"मुझे नरक में न डालो, नाथ! मैं तुम्हारी दासी हूँ। मुझसे क्षमा-याचना कैसी? तुम मेरे देवता हो।" इतना कहकर वे मेरे पैरों पर गिर पड़ीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुझे रुलाई आ गई। पैरों पर से उठाकर उन्हें हृदय से गा लिया। थोड़ी देर बाद सँभलकर कहा—"सचमुच मैंने ल की है, हिम। सच पूछो तो वे बातें कुछ नहीं थीं। क दिन जब हँसी-हँसी में मैंने रूप की गोराई की प्रशंसा की ब उसने व्यंग्य के स्वर में कहा था—'तुम्हारे मृत भाईजी ने भी प निगोड़ी गोराई की प्रशंसा की थी। पर आप चले गए र आज वही गोराई इस जीवन का काँटा बन रही है।" सके उपरान्त सुखमा भाभी एक क्षण भी वहाँ नहीं ठहरी। रे हाथों से अपना हाथ छुड़ाकर सजल-नेत्र हो वहाँ से उठकर मरे में चली गई और मैं अपने कमरे में आकर अपने त्य से भाभी को दुःख पहुँचाने की बात पर पछताने लगा। बात इतनी ही सी थी, हिम, जिसको उस रात मैं तुमसे कहने रहा था, पर अपनी मूर्खतावश न कहकर तुम्हें कष्ट या।"

हिम चुपचाप सुनती रहीं। उन्होंने कुछ कहा नहीं, केवल— इम स्त्रियाँ कितनी जल्दी पुरुषों पर विश्वास कर बैठती हैं" इकर एक दीर्घ निश्वास खींची और थोड़ी देर तक कुछ सोच- पुनः कहा—"ऐसी बातें तो तुम लोगों के लिए नगण्य हैं; हम स्त्रियों के लिए, जिनके जीवन का एकमात्र आधार ही है, जीवन-मरण की समस्याओं से किसी प्रकार कम हीं हैं।"

महीनों के उपचार और सेवा के बाद जब हिम अच्छी हुईं मुझे ज्ञात हुआ कि उन्होंने अपने शरीर को कष्ट पहुँचाने र तपाने के लिए नहीं, बल्कि मरण सुख प्राप्त करने के हेतु ही ना-दारू, खाना-पीना, सब बन्द कर रक्खा था। और यह घटित हुए बिना भी नहीं रहता यदि सुखमा बीच में न आ ती और उस दिन की बातें मैं न सुन लेता। एक छोटी- बात को इतना महत्त्व देकर प्राणान्त तक करने की ठान ना स्त्री-प्रेम का विलक्षण स्वभाव है। इसमें क्या रस और है यह स्त्री के सिवा कौन बता सकता है?

विगत घटना के बाद से सुखमा भाभी के पास न तो मैं धिक जाता और न वह ही मेरे निकट आने का अधिक प्रयत्न रती। कभी-कभी रास्ते में या किसी कार्यवश भेंट हो जाने पर कुछ खिंचा-सा मिल लेता था। पर तब भी सुखमा का -रहकर मेरे मुख की ओर पूर्ववत् एकटक निहारना नहीं भूलता । लेकिन अब वह सुअवसर देखकर ही, दूसरों की आँख चाकर ही, ऐसा करती थी। पहले जैसा निःसंकोच भाव से और च्छन्द रूप से नहीं। जब वह मुझे निहारती थी तब मैं अपने तरी भावों को दबाकर अपना पुराना पेटेण्ट 'प्रश्न इधर क्या ती हो, भावज?' पूछना नहीं भूलता था और न वह ही अपने ण्ट उत्तर 'तुम्हारा रूप' को दुहराने से बाज आती थी। परन्तु उसके चेहरे पर, उसके अङ्ग-प्रत्यङ्ग पर, उसकी प्रत्येक भाव-भङ्गी में, मुझे एक विलक्षण निस्तेजता दृष्टिगोचर होती थी जो उसके स्वास्थ्य की क्षीणता को साफ बता रही थी। पर इसको वह किसी प्रकार भी मुझ पर प्रकट होने देना नहीं चाहती थी। मैं साफ देखता था कि उसका मुख रक्तवर्ण होने के स्थान पर पीत-वर्ण हो गया है; शरीर हृष्ट-पुष्ट होने के बजाय कृश और निर्बल तथा सूखा-सा मालूम होता है; ओष्ठ जो बिम्बाफल के समान सदा अरुण रहा करते थे अब सूखे-से तथा झाँवरा रङ्ग धारण किए हुए हैं; दस कदम चलते ही वह थककर बैठ जाती है और सुस्ताने लगती है। पर इतना होने पर भी जब वह मेरे रूप को निहारने लगती है तब न जाने उसके नेत्रों में कहाँ से तेज, उसके कपोलों पर न जाने कहाँ से अरुणिमा और अधरों में न मालूम कहाँ से ऐसी प्रसन्नतायुक्त स्फूर्ति आ जाती है कि मैं उसके पूर्व सौन्दर्य की समता उसमें देखे बिना नहीं रहता हूँ। मैंने दो-एक बार उसके स्वास्थ्य की क्षीणता की चर्चा करके उसकी दवा की व्यवस्था के बारे में पूछताछ करनी चाही और डाक्टर से दिखाने की बात भी चलाई, पर इस प्रश्न पर सुखमा विशेष दुःखित होकर कुछ ऐसी अन्यमनस्क-सी आकृति बना लेती कि मैं डरकर इस प्रसङ्ग को जहाँ-का-तहाँ छोड़कर प्रसङ्ग बदल देता। सुखमा के प्रति मेरे हृदय में उस दिन की हिमवाली घटना के बाद से जो एक पार्थक्य की अस्पष्ट अनुभूति जाग्रत् हो चुकी थी उसको शायद हम दोनों ही जान गए थे। पर इसके अनुकूल मेरा व्यवहार सुखमा के प्रति जारी रहने पर भी वह इसको अपने हृदय से एक क्षण के लिए भी शायद स्पष्ट रूप से स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं थी; क्योंकि मैं देखता था कि मेरे प्रति उसके आन्तरिक आकर्षण में रञ्चमात्र भी कमी नहीं आई थी। पर यह जान-कर भी मैं अपनी बेवकूफी से बाज नहीं आता था। कभी-कभी अपनी स्पष्टवादिता और सचाई के अभिमान में दर्प के साथ सुखमा से मैं कह बैठता था—"भाभी, मेरे पूर्व कृत्यों के लिए मुझे क्षमा करना। वह शरीर का मोहमात्र था, आत्मा का प्रेम शायद उसमें नहीं था।"

मेरी इस बात से सुखमा के मर्मस्थल पर कितनी भारी चोट पहुँचती थी, यह मुझ जैसे बुद्धू को तब तक नहीं ज्ञात हुआ जब तक सुखमा के दुःखपूर्ण जीवन-नाटक का पटाक्षेप सदा के लिए नहीं हो गया। मैं तो यह कहकर अपनी स्पष्टवादिता पर गर्व करके अपने इस विश्वास से हृदय में सन्तोष धारण करता कि मैं किसी स्त्री को अन्धकार में नहीं रखता, छलना से अपने मोह को प्रेम का रूप देकर उसे समझाने की चेष्टा नहीं करता, बल्कि अपने हृदय की परिस्थिति स्पष्ट करके उसके सामने असद् व्यवहार का दोषी नहीं बनता। परन्तु मेरे इस कथन पर सुखमा थरथराकर बैठ जाती थी और सिर घूमने का बहाना करके आँखें बन्दकर अपना माथा पकड़ लेती थी। उसका रहस्य मुझ मूढ़ की समझ में तब आया जब उसका प्रतिकार करना मेरे हाथों के बाहर की बात थी। ओह! अब स्मरण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होता है—उस समय उसके मुख की आकृति कितनी वेदनापूर्ण, रहस्यमयी और डरावनी हो जाती थी। और मैं मूर्ख चुपचाप उसके सामने भूला-सा खड़ा हुआ उसके उपचार के लिए डाक्टर बुलाने की सलाह उसी से करता था। मेरा ऐसा पूछना उसके हृदय के घावों पर कितनी तीव्र वेदना के साथ नमक छिड़कता होगा, इसका कुछ भी ख़याल तब मुझे नहीं होता था। यह तो आज मेरी समझ में आ रहा है! पर अब ऐसा समझना भी तो मेरे लिए बेकार है। पुरुष के अज्ञात अत्याचारों से इस तरह कितने नारी-जीवन नष्ट हो गए हैं और नित्य हो रहे हैं, इसकी यदि गणना की जाए तो मेरा अनुमान है कि कम-से-कम दस प्रतिशत ऐसे पुरुष अवश्य निकलेंगे जिन्होंने कम-से-कम एक स्त्री-हृदय पर तो निश्चय ही चोट पहुँचाई होगी, जिससे उसके जीवन की हरियाली सदा के लिए मुरझा गई होगी। इसी के साथ खूबी यह भी है कि कर्ता पुरुष को अपने इस कृत्य का ज्ञान दो-चार प्रतिशत भी मुश्किल से ही होता है। नारी-हृदय की सहन-शक्ति की पराकाष्ठा यही तो है कि हँसते-हँसते वह सब सह लेती है पर मुख से 'उफ' तक नहीं निकालती। 'जल-भुन के खाक हो जा मुतलक धुआँ न निकले' की लोकोक्ति यहीं चरितार्थ होती है।

इसी समय जब कलकत्ता से पिताजी ने तार-द्वारा मुझे बुला भेजा तब इच्छा न होने पर भी जाना ही पड़ा। जब हिम के यहाँ से दही का टीका लगवाकर पान का बीड़ा ले सुखमा के आँगन में बिदा लेने गया तो सुखमा को चारपाई पर सोया हुआ पाया। उसकी बड़ी जीजी वहीं बैठी पंखा झल रही थी। मैं सुखमा की चारपाई पर बैठकर उसकी तबीयत के बारे में बड़ी भावज से पूछ-ताछ करने लगा। मालूम हुआ कि एक हफ्ता से उसे बुखार और जोर की खाँसी है। खाया-पिया कुछ नहीं जाता। बड़ी बेचैनी रहती है। मैं ये सब बातें बड़ी भावज से सुन रहा था और सुखमा आँखें बन्द किए चुपचाप चित चारपाई पर पड़ी सुन रही थी। मेरा आना उसने जाना था या नहीं, यह मुझे उस समय ज्ञात नहीं हुआ। जब उसकी बीमारी की सब बातें सुनकर और दवा-दारू की व्यवस्था जानकर उसकी बड़ी जीजी से अपने १ मास के लिए बाहर जाने की बात कही, तब सुखमा ने आँखें खोलकर मुझे निहारते हुए पूछा—"कहाँ जाते हो, कुँवरजी?"

मैंने सुखमा की ओर घूमकर बड़े ही मीठे स्वर से उसके मन का हाल पूछते हुए उसके माथे पर अपना हाथ रख दिया।

सुखमा चित से घूमकर करवट हो गई। अपना दाहिना हाथ मेरी जाँघ पर रखकर उसने धीरे से कहा—"भीतर बड़ी बेचैनी है। छाती में बड़ा दर्द हो रहा है, कुँवरजी।"

इतना कहकर उसने आँखें बन्द कर लीं और मैंने देखा कि उसके चारों कोनों से बड़ी-बड़ी बूँदें निकलकर उसके क्षीणकाय पीतवर्ण कपोलों पर ढुलकने लगीं। मुझे भी करुणा आ गई। मैं थोड़ी देर उसके हाथ पर अपना हाथ रक्खे चुपचाप उसे निहारता रहा। फिर धीरे से कहा—"मुझे खबर नहीं दी? कहाँ दर्द है देखूँ।"

सुखमा ने बिना किसी सङ्कोच या लोकलाज के ढीली कुर्ती के बटन खोले और मेरा दाहिना हाथ कुर्ती के नीचे अपने हृदय पर रखते हुए कहा—"यहाँ, जगह बड़ी पीड़ा है।"... उसका कण्ठ बन्द हो गया, अविरल अश्रु गिरने लगे और अपलक दृष्टि से वह मुझे निहारने लगी। इतनी स्पष्टता से इस खुली तरह से आज तक व्यवहार में उसका आचरण कभी नहीं हुआ था। पर न मालूम उसे क्या हो गया था। मैं चुपचाप उसकी निहारता हुआ उसके मुख के भावों की गम्भीरता और तथा स्वच्छता को देखता और अपने हाथ के नीचे धक्' चलते हुए उसके नन्हें से हृदय की क्षीण गति परखता रहा। कई मिनट ऐसे ही बीत गए। न मालूम बड़ी जीजी उठकर वहाँ से चली गई थी। अब मुझे हुई तो मैंने धीरे से कहा—"घबड़ाओ न, भाभी! सब हो जाएगा।"

सुखमा को जैसे चोट-सी लगी। पर तब भी उसने उत्तर नहीं दिया। उसने अपना दाहिना हाथ उठाकर दाहिनी हथेली के पृष्ठभाग पर रक्खा और उसे जोर से हृदय पर दबाकर आँखें बन्द किए अश्रुपात करने लगी।

फिर उसने आँखें बन्द कर लीं। आधे घण्टे से भी वैसे ही बीत गया। पर इस बीच न तो मैंने कुछ कहा न सुखमा ने ही। इतनी देर तक वह किस स्वर्गलोक में कर रही थी, नहीं कह सकता। इतने में दौड़ता हुआ आया और हाँफते-हाँफते कहने लगा—"बाबूजी, गाड़ी आ छोटे काका बुला रहे हैं। चलिए, मुझे भी स्टेशन तक चलिए।"

इतनी बातें एक ही साँस में उसने कहीं और सुख सुख-स्वप्न में बाधा डाली। सुखमा ने आँखें खोल मुझे निहारना शुरू किया मानो सदा के लिए आज ही देख लेना चाहती हो। थोड़ी देर वैसे ही अपलक देखती फिर दो बूँद आँसू गिराकर तथा एक बार बड़े जोर से दोनों हाथों से मेरी हथेली को अपनी छाती पर दबाकर स्वर में बोली—"जाओ कुँवर, इस दुखिया को याद रख उसने मेरे हाथ को छाती से हटाकर चूमा और उठ गई। मुझे करुणा आ गई पर वह इसकी ओर जरा भी दिए बिना ही कहती गई—"जाओ कुँवर, देर होती है। भूलना नहीं।" इतना कहकर वह खड़ी हो गई। खड़ा हो गया। पाँव छूकर प्रणाम करके जब मैं उठने तब उसने मेरा मुख पकड़कर अपनी ओर खींचा और बार से मेरे दोनों कपोलों को बड़े प्रेम से चूमकर कहा—"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हारा यह रूप सदा अमर रहे।" और इस वाक्य के साथ ही क विलक्षण करुण तथा वेदनापूर्ण मुस्कराहट उसके मुख पर लने लगी। मैं बिना कुछ बोले हुए आँखों में आँसू के भ को सँभालता हुआ कमरे से बाहर हुआ।

(६)

अपने पिताजी के पास पहुँचते ही मेरी दाहिनी आँख के ाल में एक बड़ा-सा फोड़ा निकल आया। दो मास तक मैं ससे परेशान रहा। एक दिन सहसा सुखमा की मृत्यु का र मिला। पट्टी बाँधे ही जब उसके श्राद्ध में शरीक होने के ए घर आया तो हिम ने उसकी बीमारी का सारा विवरण ाया। मैं बड़ी भावज से मिलने गया। बहुत रोने-धोने बाद उन्होंने कहना शुरू किया—"कुँवर, तुम नहीं आए। न अन्त समय तक रो-रोकर तुम्हारी ही याद करती रहीं। का समय था। खटोले पर धूप में निकाल रक्खा था। सा दूध भी पिला रक्खा था। आराम करने को छोड़कर ह धोने गई। लौटकर दातुन ले ही रही थी कि जोर से ! सबसी आई। दौड़कर पास पहुँची तो वह खून की कै कर ी थी। आँखें उसकी चढ़ी थीं। दोनों आँखों से आँसू उसने र के साथ बह रहे थे। जैसे ही खून का गिरना बन्द हुआ, उठाकर ने मुझे निहारकर कहा—"जीजी! कुँवर कहाँ हैं? उनका जोर से न्दर मुख कहाँ है? वे लम्बे घुँघराले केश कितने सुन्दर गी। ाते हैं। उन्हें एक क्षण के लिए बुला दो.....।" बस ना कहते-कहते बड़ी भावज रोने लगीं। इशारा करके बताया से भी फिर तुरन्त कै आई और वह मिनटों के लिए अचेत हो कुछ कह ई। कुछ स्वस्थ होकर फिर कहना शुरू किया—"जब तीसरा ोक में न हुआ तो बहन निराश हो गई। उसका शरीर काँप ा हुआ ा था; आँखें स्थिर-सी हो रही थीं। हाथ-पाँव शिथिल पड़ ड़ी आ र थे। केवल साँस भर चल रही थी और रह-रहकर मुख से ान त कल रहा था—"कुँवर, मेरे कुँवर, मेरे कुँवर—तुम्हारा रूप—" रोने लगीं। मैं भी अपने सारे संयम को तोड़कर रोने लगा। र सुख होंने कुछ स्वस्थ होकर पुनः कहना शुरू किया—"जब मैंने खो न के कान के पास मुँह ले जाकर पुकारकर 'राम राम' न ही देखती इने को कहा तब उसकी आँखें खुलने की चेष्टा में कुछ जोर से र्घ-सी हो उठीं। मुँह से अस्फुट शब्द निकला—"राम- दबाकर म—कुँवर—कुँ...व...र...।" याद रख बस कुँवर, बहिन के प्राण-पखेरू उड़ गए। देवी थी र उठ । कौन कहता है कि वह सौत थी; वह तो मेरी छोटी जरा भी न थी।" ी है। गई। मैं उठ और बा हा—"

बड़ी भावज पागल-सी होकर बकने और रोने लगीं। मैं पत्थर की मूर्ति बना सब सुनता और समझता रहा। जब वहाँ से उठकर तालाब पर तिलाञ्जलि दे रहा था तो पण्डित जी तो उधर "प्रथम तिलाञ्जलि तथा दीयते स्वधा" आदि मन्त्र का उच्चारण कर रहे थे और इधर मैं सुखमा भाभी के अन्तिम मिलन का कल्पित दृश्य सामने देखकर मस्तक नवा उससे अपने अपराधों के लिए क्षमा माँग रहा था। उसके बाद घाट पर से घर तक मैं क्या सोचता रहा, क्या अनुभव करता रहा तथा रह-रहकर अपनी सजल आँखों के सामने क्या देखता रहा, यह सब कहना मेरे लिए अब उस देवी का उपहास करना है—"इस महान् नारी-हृदय को मैंने पहले क्यों नहीं पहचाना?" बस एक यही प्रश्न रह-रहकर हृदय और बुद्धि से जवाब तलब कर रहा था और मैं हत्यारा-सा इसे सुनकर मूक बना चुपचाप श्राद्ध का सारा काम कर रहा था।

यही तो अपने 'रोमांटिक' जीवन की कहानी है। पर आज इतने दिनों बाद जब मैं फिर उन सुन्दर भावनाओं के अस्तित्व को, उस प्रेम को, अपने हृदय और मस्तिष्क में खोजता हूँ तो उन्हें लाख चेष्टा करके भी उस रस के साथ, उस करुणा और सौन्दर्य के साथ, कहीं बैठा हुआ नहीं पाता। काल के ब्लाटिंग-पेपर ने उसकी उस मधुर स्मृति को ऐसा सुखा दिया है कि आज बीस वर्ष बाद जब स्वप्न देखकर उसे अङ्कित करने लगा तब भी एक रोमान्स भरी कहानी के सिवा दूसरी किसी भी दया या करुणा की भावना का उदय इस हृदय में नहीं हुआ। यही दुनिया है। यही उस भावुकता का मूल्य है जिसके पीछे संसार के ९० प्रतिशत जनों के जीवन दुखी, दिवालिया और सार-हीन हैं। और यही है हमारे कृत्यों पर महाकाल का महा उपहास। सुखमा भाभी यदि समझ और बुद्धि से काम लेकर मेरी तरह आज जीवित होती और इसे पढ़ती तो शायद उसे भी यही ज्ञात होता।

नारी जाति! आज के इस उन्नत युग में तुझे भी पुरुषों की तरह समझ से काम लेना होगा। भावुकता की सीमा को सीमित करके भावुकता के पीछे अपने जीवन को मटियामेट करनेवाली पुरातन प्रथा से हाथ धोना होगा; तभी तू अपने को उठा सकेगी, अन्यथा नहीं। पुरुष जाति, तुम्हारी ऐसी आहुतियों को त्याग कहकर मुँह से प्रशंसा के पुल बाँध दे, या नेत्रों से आँसू की नदी भले बहा दे, पर उसके बुद्धि-प्रधान हृदय में इसकी कदर करने की जगह नहीं है। वह तो इसे भावुकता और क्षणिक आवेश ही मानती है। इससे तू भी अब सचेत हो जा.....!

——

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रुपए का भविष्य

श्री अवनीन्द्रकुमार, विद्यालङ्कार

वाशिङ्गटन में ब्रिटेन और संयुक्त-राष्ट्र अमेरिका के बीच चल रही आर्थिक सन्धि-चर्चा का भारत के रुपए से गहरा सम्बन्ध है। आज रुपया स्टर्लिंग पौंड से नत्थी है। इन दोनों का दामन-चोली का सङ्ग है। यदि डालर-स्टर्लिंग विनिमय-दर में कुछ अन्तर आया, यद्यपि ब्रिटिश अर्थ-शास्त्रियों और ब्रिटेन के अर्थ-सचिव मि० डाल्टन ने इस आशंका का निराकरण किया है और स्टर्लिंग को क्षमताशाली बताया है कि वह वर्तमान दर को बनाए रखने में समर्थ है, तब रुपए के मूल्य में अन्तर आएगा। यदि अमेरिका की दी गई शर्तों पर ब्रिटेन कर्ज लेने से इन्कार कर दे, जैसी कि सम्भावना है, और ब्रिटेन अपना निर्यात-व्यापार बढ़ाने के लिए स्टर्लिंग पौंड का मूल्य कम कर दे, तो भारतीय रुपया इस प्रभाव से मुक्त न रह सकेगा। प्रश्न यह है कि क्या यह वाञ्छनीय है कि भारतीय रुपया स्टर्लिंग से प्रभावित हो और उसका अनुसरण करे? अबीसीनिया स्टर्लिंग-क्षेत्र से निकलकर डालर क्षेत्र में चला गया है। क्या भारत भी पौंड से अपना सम्बन्ध तोड़कर डालर क्षेत्र में चला जाए? रुपया-पौंड-सम्बन्ध भारत की आर्थिक पराधीनता और दासता का सूचक है। दूसरे भारत के औद्योगिक विकास के लिए उसको मैशीनरी और प्लाण्ट की जरूरत है। ब्रिटेन अमेरिका से दुगुनी कीमत माँगने पर भी भारत की इस आवश्यकता को पूरा नहीं कर सकता और सम्भवतः अगले दो-तीन साल और पूरा न कर सके। दूसरी ओर अमेरिका आर्डर देने के तीन मास के अन्दर माल देने को प्रस्तुत है। इस अवस्था में रुपए का पौंड से गठबन्धन करना कहाँ तक उचित है?

अधिक कीमत

सब भारतीय अर्थ-शास्त्री इस बात में सहमत हैं कि वर्तमान परिस्थिति में सरकार ने रुपए का जो विनिमय-मूल्य १ शि० ६ पें० निश्चित कर रक्खा है, वह ज्यादा है। वह १ शि० ४ पें० से अधिक न होना चाहिए। यदि भारतीय रुपए का मूल्य १ शि० ४ पें० कर दिया जाए तो भारतीय माल को विश्व के बाजार में बेचने के मार्ग में आज जिस अलाभजनक स्थिति का सामना करना पड़ता है वह दूर हो जाएगी और भारतीय माल अन्य देशों के मुकाबले मुद्रा का कृत्रिम रूप से अधिक दाम बढ़ाने के कारण ही महँगा न होगा। इसी तरह विदेशी माल रुपए का भाव चढ़ा होने से आज भारतीय बाजार में जो सस्ता बिकता है, वह सस्ता न बिकेगा और भारतीय माल से वह सरलता से प्रतियोगिता न कर सकेगा।

अपरिवर्तित नीति

मुद्रा का विनिमय-मूल्य अनेक तत्त्वों को ध्यान में रखकर निश्चित किया जाता है। इनमें एक है, अपने देश में हि मुद्राओं की क्रय-शक्ति। मुद्रा का विनिमय-मूल्य जनता की शक्ति की समरसता में होना चाहिए। यदि वह जनता की शक्ति की समरसता में न होगा तो सरकारी हस्तक्षेप के जनता को हानि पहुँचेगी और उसको तकलीफ उठानी पड़ भारत की ऐसी ही दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति रही है। युद्ध-का संयुक्त-राष्ट्र अमेरिका के अन्दर चीजों का मूल्य ३५ प्रतिशत ग्रेट-ब्रिटेन में ७० प्रतिशत बढ़ा, पर भारत में ३५० प्रतिश देश के अन्दर चीजों के मूल्य के उतार और चढ़ाव के अनु विनिमय-मूल्य में भी उतार-चढ़ाव आना चाहिए था। सरकार ने अपनी मुद्रा-नीति में युद्ध-काल में किसी प्रका परिवर्तन नहीं किया।

निर्मूल भय

ब्रिटेन अपना निर्यात-व्यापार बढ़ाने के उद्देश्य से विनि दर को ऊँचा करने के लिए भारत सरकार पर दबाव डालेंगे' इसकी आशङ्का इस समय नहीं है। एक तो अभी और तीन साल तक उन्मुक्त व्यापार तथा उन्मुक्त और निजू साहस सम्भावना नहीं है, क्योंकि कंट्रोल बना रहेगा और आयात-नि व्यापार सरकारी कंट्रोल या नियन्त्रण के अन्दर होगा। विनिमय-दर को ब्रिटेन की आवश्यकता के अनुसार स्थिर का प्रश्न ही नहीं उत्पन्न होता। पिछली लड़ाई के बाद रुपए मूल्य बढ़ाकर २ शि० तक कर दिया गया था और इस भारत का अनुकूल रोकड़ सब गायब हो गया था। इस नीति के कारण ब्रिटिश माल का आयात घटने के बजाय अधिक बढ़ गया था, जब कि जरूरत थी उसके घटने जिससे भारतीय उद्योग विकसित हो सकें। पर इस बार सम्भव नहीं है। रुपए का मूल्य और ऊँचा बढ़ाना सरक लिए सम्भव नहीं है। जनमत प्रबल और जागरूक अन्ताराष्ट्रीय मुद्रानिधि के सदस्य विनिमय-दर में जो परि करेंगे वह एक पद्धति और प्रणाली से करेंगे और यह छि रहेगा। भारत का स्टर्लिंग पावना इतना अधिक है कि कौंसिल बिल'-द्वारा उसको खत्म नहीं किया जा सकता। तीय उद्योग भी अब गर्भावस्था या बाल्यावस्था में नहीं भारत-सरकार ने आर्थिक योजना और योजनापूर्ण अर्थ तन्त्र की नीति को अपना लिया है। इसलिए रुपए की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्टर्लिंग का मूल्य गिराकर ब्रिटेन के लिए भारत के साथ
ना निर्यात-व्यापार बढ़ाना सरल नहीं रहा है, इसलिए
निमय-दर का पिछली लड़ाई के बाद इस बार बढ़ाना तो सम्भव
ीं है। पर हमारी वर्तमान आवश्यकता तो विनिमय-दर को
ाने की है। प्रश्न यह है कि क्या यह सम्भव है?

कानून में परिवर्तन

इंडिया एक्ट १९३५ के अनुसार विनिमय-दर '१ रु० बराबर
शि० ६ पें०' ठहराया गया है। इसको बदलने के लिए
ला काम यह करना चाहिए कि रिजर्व बैंक को यह अधिकार
या जाए कि वह बदलती स्थिति के अनुसार अपने विवेक से
निमय-दर में परिवर्तन कर सके। इस उपाय से रुपया अन्य
ों की मुद्राओं के मूल्य की समानता में रह सकेगा। १ शि०
पें० हर हालत में विनिमय दर रखने का परिणाम यह हुआ
भारत से बड़े परिमाण में सोने का निर्यात हुआ और रिजर्व
पर बहुत दबाव पड़ा और भारत के निर्यात-व्यापारियों को
क बाधाओं का सामना करना पड़ा।

१९३१ में ग्रेट-ब्रिटेन ने स्वर्णमान का परित्याग कर दिया
इसके बाद से पौंड-स्टर्लिंग का विदेशी मूल्य बराबर बदलता
और चूँकि रुपया पौंड से नत्थी था, उसका मूल्य भी
बर बदलता रहा और भारत की स्थिति और आवश्यकता
उसका कोई सम्बन्ध नहीं था। इस कारण भारत के उत्पादकों
निर्यात-व्यापारियों पर अनुचित कठोरता लादी गई। 'होम
चार्जेज' को चुकाने के लिए रुपए-पौंड का गठबन्धन आवश्यक
भा गया था। विदेशी विनिमय की विभिन्नता का भारत
'होम चार्जेज' के चुकाने में सामना न करना पड़े,
कारण उस समय दिया जाता था। यह भी कहा जाता था
रुपए का स्टर्लिंग मूल्य कम करने से भारत में कर अधिक
ाना पड़ेगा, जिससे भारत सरकार ब्रिटिश सरकार के प्रति
ने दायित्व को पूरा कर सके।

पर स्टर्लिंग ऋण का प्रत्यावर्तन हो गया है। अब भारत
दार नहीं, महाजन देश है। इसलिए पौंड स्टर्लिंग के
के पहिए से रुपए को अब बाँधे रखना कोई उचित कारण
रहा है। इसलिए रुपए को स्वतन्त्र कर देना चाहिए और
स्टर्लिंग के बन्धन से उसको मुक्त कर देना चाहिए।

घटाने की जरूरत है

भारतीय खेतिहरों और किसानों के हित में रुपए का विदेशी-
निमय मूल्य घटाने की जरूरत है। कपास, तेलहन, खाल,
ड़ा आदि का हम उस समय तक निर्यात करने के लिए बाध्य
जब तक कि भारत के उद्योग समस्त उत्पादन को खपाने के
य नहीं होते। यदि विदेशी बाजार में इनका मूल्य गिर
, या अन्य देश अपनी मुद्राओं का विनिमय-मूल्य घटा दें,
इन चीजों के रुपए मूल्य की रक्षा के लिए रुपए का विनिमय-
मूल्य घटाना आवश्यक होगा। विदेशी प्रतियोगिता की तीव्रता को कम करने और भारतीय उद्योगों को विकास का अवसर देने के लिए भी रुपए का विदेशी विनिमय-मूल्य घटाना जरूरी है।

निस्सन्देह विनिमय-दर घटाने से आयात कच्चे माल और मैशीनरी का दाम बढ़ेगा और उसी मात्रा से तैयार माल के उत्पादन का मूल्य भी बढ़ जाएगा। भारतीय उद्योग फिलहाल मैशीनरी और आवश्यक कच्चे माल के लिए आयात पर निर्भर है। इसलिए उनके आने में एक बड़ी बाधा होगी। पर यह बाधा बहुत कुछ दूर हो जाएगी; क्योंकि आयात माल का दाम भी बढ़ जाएगा। उपभोक्ताओं को जरूर अधिक दाम देना पड़ेगा। पर यह अपरिहार्य है। देश के औद्योगिक विकास से साधारण जनता की आमदनी भी बढ़ेगी, इसलिए उसको यह बढ़ी कीमत देना अखरेगा नहीं।

रुपया-स्टर्लिंग सम्बन्ध

भारत की अर्थ-नीति और मुद्रा-नीति आज तक ब्रिटेन के अनुसार चलती रही है और जो ब्रिटेन के लिए अच्छा समझा गया वह भारत के लिए भी अच्छा समझा गया। ब्रिटिश स्टर्लिंग के इस साम्राज्य का अन्त होना आवश्यक है। रुपया अब और अधिक दिन स्टर्लिंग का ज्ञापक न रहना चाहिए। इंग्लैंड यदि स्वर्णमान का परित्याग करे तो भारत भी 'ह्वाइट युगल' के आदेश से करे, यह स्थिति अपमानजनक ही नहीं है, हानिकारक भी है और इसका अन्त जल्दी-से-जल्दी होना चाहिए।

भारतीय मुद्रा-नीति की पेचीदा समस्या स्टर्लिंग-रुपया गठ-बन्धन है। १९०७-०८ में भारत के सिर पर 'स्टर्लिंग विनिमय-मान' लादा गया। पर १९३१ तक ब्रिटेन ने स्वर्णमान का सर्वथा परित्याग नहीं किया था, इसलिए रुपया भी प्रकारान्तर से स्वर्ण-मान पर समझा जाता था और उसको स्वर्ण का समर्थन प्राप्त था। १९३१ में इंग्लैंड ने स्वर्णमान का परित्याग कर दिया। ब्रिटेन सुदूर भविष्य में भी स्वर्णमान को पुनः अपनाने का इरादा नहीं रखता। इसलिए भारत को सोचना चाहिए कि स्टर्लिंग से रुपए का गठ-बन्धन रक्खा जाए या नहीं। रुपया भी स्टर्लिंग और डालर के समान एक स्वतन्त्र मुद्रा क्यों न बनकर रहे?

युद्धकाल में साधारण व्यापार बन्द था और उसके लिए आवश्यक मुद्रा जुटाने की साधारण प्रणाली भी बन्द थी। विनिमय का नियन्त्रण था और भारत का विदेशी व्यापार अधिकतर ब्रिटिश गवर्नमेंट से था जो कि भारत का माल बड़े परिमाण में खरीदती थी। फल यह हुआ कि विनिमय-नियन्त्रण-द्वारा यद्यपि अनुपात कायम रक्खा गया, मगर दोनों देशों की मुद्राओं और मूल्य की सतह में कोई सम्बन्ध नहीं था। व्यापार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और पुराने आर्थिक सम्बन्ध सर्वथा बदल गए, फिर भी पुरानी विनिमय-दर कायम रक्खी गई।

स्थिर विनिमय-दर

साधारणतः स्थिर विनिमय-दर दो अवस्थाओं में रक्खी जाती है, या तो स्थिर विनिमय-दर की आवश्यकता हो या कुछ अवस्थाओं में स्वर्ण की कमी हो। स्वर्णमान निकट भविष्य में अपनाने की बात विचार-कोटि की नहीं है। इसलिए विनिमय-दर की स्थिरता देश की विशेष स्थिति और आवश्यकता से सम्बन्ध रखती है। यदि कोई देश अपनी राष्ट्रीय आमदनी का एक बड़ा भाग निर्यात-व्यापार से प्राप्त करता है, तो उसके लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वह अपनी लागत के ढाँचे को ऐसा बनाए जो बाहर के देशों के अनुकूल हो। इस अवस्था में निश्चित या स्थिर विनिमय-दर रखना सर्वथा वाञ्छनीय है। दूसरी अवस्था यह है कि देश की सरकार को प्रतिवर्ष मुद्रा में भुगतान करना पड़ता हो और बजट सम्बन्धी कठिनाई को दूर करने के लिए, जो कि विनिमय-दर के बराबर बदलते रहने से उत्पन्न होती है, विनिमय-दर को स्थिर रखना चाहती हो। विनिमय-दर को स्थिर रखने का निश्चय कर लेने पर यह प्रश्न गौण हो जाता है कि देश की मुद्रा का सम्बन्ध किस से जोड़ा जाए। साधारणतः फिर देश की उस मुद्रा से सम्बन्ध जोड़ा जाता है जिसमें अधिक मात्रा में भुगतान करना पड़ता है।

स्थिर विनिमय-दर आवश्यक नहीं

देश बड़ा हो और राष्ट्रीय आमदनी का बड़ा भाग देश के अन्दर से ही प्राप्त होता हो, तो फिर स्थिर विनिमय-दर की उसको आवश्यकता नहीं है। यदि स्थिर विनिमय-दर रखने का आग्रह किया जाता है तो आन्तरिक मूल्य-सतह, आमदनी की सतह और उत्पादन-लागत का स्तर भी विदेशी मूल्य-लागत के ढाँचे पर निर्भर रखना चाहिए। आन्तरिक आर्थिक तन्त्र में बाह्य प्रभाव से बार-बार परिवर्तन होने की सम्भावना रहती है। इस अवस्था में विनमय-दर की स्थिरता की अपेक्षा आन्तरिक स्थिरता अधिक पसन्द की जाती है।

भारत की अवस्था को देखने से स्पष्ट हो जाएगा कि इस देश को पराश्रित मान और निश्चित व स्थिर विनिमय-दर की आवश्यकता यदि पहले थी तो वह अब नहीं रही है। भारत के लिए निर्यात-व्यापार अत्यधिक महत्त्व का था और भारत सरकार को 'होमचार्जेज' के रूप में भारी मात्रा में ब्रिटिश सरकार को स्टर्लिंग में भुगतान करना पड़ता था। इसलिए विनिमय-मान का भारत-द्वारा स्वीकार किया जाना स्वाभाविक था। पर अब अवस्था बदल गई है। आन्तरिक व्यापार का महत्त्व अब बढ़ गया है। यह अभी और बढ़ेगा और राष्ट्रीय आमदनी का बड़ा स्रोत आन्तरिक व्यापार होगा। इसके मुकाबले विदेशी व्यापार मध्यम पड़ जाएगा। स्टर्लिंग कर्ज के प्रत्यावर्तन भारत को अब प्रति वर्ष ब्रिटेन को बड़ी मात्रा में स्टर्लिंग अन्दर भुगतान नहीं करना है। इसलिए भारत को अब अ स्वतन्त्र मान रखना चाहिए और उसका उद्देश्य यह चाहिए कि आन्तरिक स्थिरता रहे और कोई व्यक्ति बेक हो। स्थिर विनिमय-दर रखने की कोशिश करने की आवश्य नहीं है। संक्रमणकाल में भी भारत की मुद्रानीति इस की होनी चाहिए जिससे भारतीय उद्योगों को प्रोत्साहन मिले

घातक होगा

युद्ध-काल में भारत अलग पड़ गया। अमेरिका ब्रिटेन ने जो यान्त्रिक व टेकनिकल प्रगति की है, वह भार नहीं हुई। इन परिवर्तनों को अपनाने के लिए भारत को चाहिए। यदि इस अवस्था में रुपया-स्टर्लिंग का गठ-ब कायम रहे और व्यापार और विनिमय पर से नियन्त्रण उ लिया जाए तो भारतीय बाजार में विदेशी सस्ते माल की भर हो जाएगी और भारतीय उद्योग उनकी प्रतियोगिता में न सकेंगे। इस अवस्था में रुपए-स्टर्लिंग का गठ-बन्धन घा सिद्ध होगा। यदि विनिमय-दर नीचा भी किया गया सुरक्षित सतह ढूँढ़ना कठिन हो जाएगा। दूसरी बात कि विनिमय-नियन्त्रण दूर कर दिया गया तो इस बात की अधिक सम्भावना है कि युद्ध-काल में जिन लोगों ने अपरि मात्रा में रुपया जोड़ा है वे उपभोक्ताओं के उपयोग और व्य का सस्ता माल बड़ी मात्रा में आयात करें और स्टर्लिंग पा इस प्रकार छीज जाए। इस अवस्था में विनिमय-नियं लाभदायक सिद्ध होगा।

स्वर्णमान

आन्तरिक मुद्रा के दृष्टिकोण से विचार करने पर मा होगा कि भारत को स्टर्लिंग विनिमय-मान की जगह वि स्वर्णमान की जरूरत है। इस युद्ध ने भारत का संयुक्त अमेरिका और सोवियत रूस से व्यापार होने की सम्भावना बहुत अधिक बढ़ा दिया है। इसलिए हमारी मुद्रा-निधि स्वर्ण की मात्रा आज की अपेक्षा अधिक रखने की जरूरत भारत के पास युद्धोत्तर व्यापार के लिए डालर-निधि बड़ी में होनी चाहिए। आज भारत का डालर 'साम्राज्य-डा भाण्डार' में मिला दिया गया है। भविष्य में यह स्थिति उ न हो, इस दृष्टि से भी भारत का रुपया स्टर्लिंग से स्व रहना चाहिए।

ब्रेटनवुड कान्फरेंस

भारत ब्रेटनवुड में पिछले साल हुई अन्ताराष्ट्रीय मु कान्फरेंस में सम्मिलित हुआ था। वह अन्ताराष्ट्रीय मुद्रा-निधि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दस्य भी है। उसका सदस्य होने पर भी यदि भारतीय द्रा स्वाधीन नहीं हुई तो वह कब होगी ? अन्ताराष्ट्रीय मुद्रा-धि का सदस्य होने से पहले जो देश जो विनिमय-दर निश्चित रेगा वही मानी जाएगी। उसके बाद उसमें परिवर्तन करने के लए उसकी स्वीकृति आवश्यक है। इसलिए स्वर्ण मान धारित करने और उसको अपनाने के प्रश्न को भविष्य पर ाड़ा जा सकता है, मगर रुपए का मूल्य कम करने और विनिमय-र को नीचा करने के प्रश्न को नहीं टाला जा सकता। प्राथमिक ीर तैयार माल के अन्दर भारत यदि प्रतियोगिता में टिकना ाहता है तो उसको विनिमय-दर नीचा करना चाहिए और रुपए का मूल्य कम करना चाहिए। स्थिति इस समय यह है कि संयुक्तराष्ट्र अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया और ब्रिटेन में कीमतों के चढ़ने की सम्भावना है, जब कि भारत में कीमतों के गिरने की सम्भावना है। ऊँचा सन्तुलन इसी तरीके से कायम रक्खा जा सकता है कि हम कीमतों को कुछ गिरने दें और बाहरी कीमतें कुछ बढ़ें और आयात और निर्यात का नियन्त्रण उचित रीति से किया जाए और अन्तर को अंशतः रुपए का मूल्य गिराया जाए। भारत के औद्योगीकरण की दृष्टि से भी यह आवश्यक है कि रुपए का मूल्य नीचे गिराया जाए। यह तात्कालिक कार्य है, इसमें विलम्ब करने की जरूरत नहीं है।

हे कालकूट पीनेवाले !

प्रोफेसर चन्द्रप्रकाश वर्मा, एम० ए०

हे कालकूट पीनेवाले, प्रलयङ्कर, अब कैलास छोड़।

(१)

णिधर के फण लोहू-लुहान धरणी का अतुलित भार देख,
ह अब करवट लेता ही है वह फेन भरी फूत्कार देख,
ारिधि अशान्त उद्भ्रान्त और लहरों का वह चीत्कार देख,
धर के धुँधुआते मुख पर वह ज्वाला का शृङ्गार देख,
तभर का आमन्त्रण सहेज हिमगिरि पर का मधुमास छोड़।
कालकूट पीनेवाले, प्रलयङ्कर, अब कैलास छोड़ !

(२)

चुके हजारों दक्ष-यज्ञ, चल चुके हजारों मदन-बाण,
ब तक समाधि ! कैसी समाधि ! करना ही होगा दलित-त्राण;
तू पलट, पलट मत, शपथ तुझे वह दुष्ट-दलनवाला विधान,
स शीस नहीं यह कोटि-कोटि मुण्डों की माला ले महान्;
भ्रू मरोड़, आँखें तरेर, यह चिन्तन का उल्लास छोड़।
कालकूट पीनेवाले, प्रलयङ्कर, अब कैलास छोड़ !

(३)

म्बर कस, गाड़े त्रिशूल कुछ अन्तर से युग चरण रोप,
णियों के फण पर पटक-पटक दोनों कर कटि पर रख सकोप;
ल खेले तेरा जटा-जूट, हो क्रोध, दया का रहे लोप,
र तमक हुमक कुछ उचक धरा धँस जाए, नभ लटके, प्रकोप !
छ दृश्य हमें ऐसा दिखला, वह रम्य मोहिनी-रास छोड़।
कालकूट पीनेवाले, प्रलयङ्कर, अब कैलास छोड़ !

(४)

चे-ऊँचे प्रासाद देख तन धरे जहाँ हँसता अनङ्ग,
सके नयनों में खिलता है तेरे प्रति कैसा शाप, अङ्ग;
पद-प्रहार, भू लुण्ठित हो प्रभुता का, मद का, तुङ्ग शृङ्ग,
एक बार फिर घूम घूम पी ले रे पशुबल की उमङ्ग;
जगा हलाहल की तृष्णा, अब अमिय-बिन्दु की प्यास छोड़।
कालकूट पीनेवाले, प्रलयङ्कर, अब कैलास छोड़ !

(५)

तेरी काशी का महापुण्य बन गया महापातक, महेश,
तू देख रहा मिटता जाता तेरे सम्मुख तेरा स्वदेश;
मत देख अरे ! काश्मीर बहुत वह स्वर्गच्छवि वह दिव्य देश,
तीनों नयनों को खोल देख पृथु की पृथिवी के महा क्लेश;
भूखे मुख तुझे निहार रहे चल उनमें चलकर ग्रास छोड़।
हे कालकूट पीनेवाले, प्रलयङ्कर, अब कैलास छोड़ !

(६)

तू भूल गया रख इसे याद भौतिकता का संसार आज,
तेरी ईश्वरता प्रश्न बनी उस पर हैं विषम प्रहार आज;
मिथ्या, कल्पित, समझा जाता, तू, तेरे सब अवतार आज,
क्या अस्त्र पाशुपत तेरा वह सचमुच ही है बेकार आज ?
तू चिर वन्दित पूजित नर से, अब अपना यह विश्वास छोड़।
हे कालकूट पीनेवाले, प्रलयङ्कर, अब कैलास छोड़ !

(७)

भूखी मानवता देख आज निज नयन पोंछ हुंकार रही,
ये 'इनकलाब' की घड़ियाँ हैं वह कब की तुझे पुकार रही;
ज्वाला में घृत, दावा में बन तू पवन-धूम, मनुहार रही,
मजदूर-किसानों के सिर पर है झूल यहाँ तलवार रही;
भूखी मानवता आवाहन करती अगणित निश्वास छोड़।
हे कालकूट पीनेवाले, प्रलयङ्कर, अब कैलास छोड़ !

(८)

आँखों में भरकर महा आग, कैलास-प्रवासी, दौड़-दौड़,
घट-घट में भरने महा तेज, घट-घट के वासी, दौड़-दौड़;
पग-पग पर रच दे महातीर्थ, हे चिर संन्यासी, दौड़-दौड़,
काशी-वासी, अविनाशी, हे ताण्डव अभिलाषी, दौड़ दौड़;
अत्याचारी पिस जएँगे, तू पृथ्वी पर आकाश छोड़।
हे कालकूट पीनेवाले, प्रलयङ्कर, अब कैलास छोड़ !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निस्सीम सीमा

प्रोफेसर तारा डी० पोतदार, एम० ए०

वर्षाकालीन मेघों की गम्भीर गर्जना की भाँति योगिराज की वाणी उस नीरवता में गूँज उठी—

"कभी तूने धूप में झुलसते हुए नङ्गे बदन आदमियों को भी देखा है, लड़की। तू दुनिया में सब कुछ चाहती है—सुख, यश, मित्र, प्रेम, वात्सल्य, सभी कुछ। छः-छः पैसे के लिए दिन भर लहकती हुई धूप और लपटती हुई लू में काम करनेवाले उन गरीबों का ध्यान कर, जिन्हें कभी भरपेट भोजन नहीं मिलता, कभी तन भर कपड़ा नहीं मिलता—वे भी तो जीवित हैं; उन्हें जीवन भार न लगता होगा? उन्हें पागल होने की आशङ्का न होती होगी?"

और बादलों का हृदय चीरकर चमकनेवाली चपला की नाईं तड़प उठी सीमा—

"तुम भूलते हो, वैरागी; मैंने सब कुछ देखा है। कसाई के यहाँ कटते जानवरों को देखा है—निरीह पशुओं पर अत्याचार होते देखा है। छोटे-छोटे प्राणियों को बलवानों का शिकार होते देखा है। सब देखा है, वैरागी? गरीब—गरीबों का संसार तो मैंने बहुत अच्छी तरह निरखा परखा है। उसे उजड़ते भी देखा, बसते भी। उनके जीवन में कोई मिथ्या आडम्बर नहीं। दुश्मनी करते हैं तो खुलकर, मित्रता करते हैं तो खुलकर! कोई आड़ नहीं, कोई दिखावा नहीं। जो चाहिए उसके लिए प्रयत्न खुल्लम-खुल्ला करते हैं। जी चाहा तो गाँजा, चरस और मदिरा के नशे में अपने आपको डुबा दिया; बेसुरी तानें अलापकर दिल की भड़ास निकाली; चबेना चबाकर, फटी धोती सिरहाने रखकर किसी पेड़ तले विश्राम किया। उन्हें कष्ट होता है—पर शारीरिक अधिक, मानसिक कम; इतना कम कि नहीं के बराबर! अगर तुम यह कहो कि मानसिक यन्त्रणा शारीरिक यन्त्रणा के आगे निरी काल्पनिक वस्तु है, तो मैं यही कहूँगी कि तुम अनाड़ी हो, हाँ-हाँ अनाड़ी! तुमने कभी इस यन्त्रणा का अनुभव नहीं किया। तुम नहीं जानते कि दीवार से सिर टकरा देने की अनिवार्य इच्छा काल्पनिक यन्त्रणा का परिणाम नहीं। रात-की-रात आँखों में बिताना, बिस्तर पर करवटें बदलना और एक क्षण भी एक स्थान पर स्थिर न रह सकने की अक्षमता आ जाना काल्पनिक दुःख नहीं। सारे संसार में आग लगा देने को जी चाहता है, वैरागी। कौन जाने एटम बम्ब तैयार करनेवाले वैज्ञानिक को ऐसा ही कोई दुःख हुआ हो। ईश्वर की दया, धर्म और न्याय पर से विश्वास उठने लगता है। हाँ, कान पर हाथ रखने से क्या लाभ? सत्य को सुनने में हिचक क्यों? मेरे जैसे अनेक अभागे आपको मिलेंगे। संसार को छोड़कर आप संसार में रहने का आदेश देने आए हैं। संसार में रहकर देखिए, संसार का मार्ग कितना कंकरीला है! कितने बन्धन हैं! कितनी परतन्त्रता है! कितनी अवशता! उस बकरे को देखिए! कितनी कठोरता से बाँधा गया है उ गला—चिल्लाने में दम घुट रहा है बेचारे का! क्यों? क्यों? फिर भी हमें स्वतन्त्रता नहीं कि उस मनुष्य को दो लगाकर बता दें कि उस बकरे में भी जान है। उसे भी हो सकती है। उस घोड़े की पीठ लोहू-लुहान हो रही उस बोदे की नाक फट रही है! मुँह से फेस निकल फिर भी कई मन पत्थरों की गाड़ी घसीटे जा रहा है। किया इन निरीहों ने? नियति का क्या बिगाड़ा था इन ने? बोलो, वैरागी, चुप क्यों हो?"

"ईश्वर के राज्य में हस्तक्षेप करना पागलपन है, बावले हम उसकी गरिमा नहीं समझ सकते। हो सकता है यह पूर्वजन्म के पापों का फल हो।"

"बस करो, वैरागी! पाप के फल के विषय में न बोलो, तो मैं भाग जाऊँगी कहीं। मुझे चिढ़ हो गई है पाप-पु इस झमेले से। यह करो तो पाप, वह करो तो पाप! नि से आत्मा का दम घुट रहा है। सारी शक्ति इसी पाप-पु विचार में क्षय होती जा रही है। चेतना जवाब दे र मानसिक दुर्बलता ने इस भयानकता से आ दबोचा है किसी काम के योग्य न रहे। पूर्वजन्म का पाप, वह भी भोगो। इस जन्म का पाप, वह भी यहीं! मरने के बा होगा, यह भी अनिश्चित। जन्म के पूर्व क्या हुआ, अज्ञात! शङ्का? पाप! ईश्वर से डरो! समाज से आखिर क्यों? उसने क्यों हमें ऐसा खिलवाड़ बना रख सत्ताधीश हैं इसी लिए न? फिर हम उसे क्रूर कहने झिझकें? नहीं, वैरागी, मुझे कहने दो! मुझे यह हलका करना ही होगा। हमारी इच्छाएँ हमारे दुःख का होती हैं; तो उसने इच्छाएँ बनाईं क्यों? काम क्रोधादि की सृष्टि क्यों की? सद्गुणों को इतना निर्बल क्यों कि कुविचार उन पर सरलता से विजय प्राप्त कर लें? इसी न कि उसे संसार की नाट्यशाला चालू रखनी है? आवश्यकता थी इस नाटक की? यही न कि उसका बहलता रहे? देखते हो, वैरागी, किस तरह वाणी काँप र अणु-अणु में डर व्याप्त हो रहा है कि कहीं वह क्रोधित उद्दण्डता के लिए शासित न कर दे! मैं उस सत्ता का मानती हूँ। उसमें मुझे विश्वास है। मैं यह भी जान कि अनेक बार मैंने उसके गुण गाए हैं। उसकी दयालु अनुभव किया है। निसर्ग का पवित्र सौन्दर्य मुझे उस पहुँचा देता है। संसार की कटुता मुझे झकोरकर दूर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देती है। मैं असहाय हो रोती हूँ; क्रोधित होती हूँ; कुढ़ती हूँ; और तुम मुझे पागल समझते हो। मेरा इलाज करने के लिए यहाँ ले आए हो। मेरा इलाज करने के पहले अपना इलाज करो, योगिराज!"

योगी तीर की तेजी से बिना जवाब दिए चला गया--कुटी की ओर। आए हुए सज्जन से बोला—"अभी सुधरने के कोई चिह्न नहीं; पर अभी मैं निराश नहीं हुआ। जबरदस्त मानसिक अशान्ति से पीड़ित है वह। उसके जीवन की घटनाएँ देखते हुए ऐसा होना अस्वाभाविक भी नहीं।"

सज्जन बोले—"मुझे आप पर पूरा भरोसा है, गुरुदेव! मेरी अकेली लड़की है वह। उसकी माँ रो रोकर जान दे रही है।"

"तुम निराश न होओ, शीघ्र ही कुछ-न-कुछ किया जाएगा। धैर्य से काम लेना होगा। अच्छा, अब मेरी पूजा का समय हो गया है। बन्दे!"

उस दिन योगी की पूजा स्थिर चित्त से न हो सकी। सीमा के शब्द कानों में जहर उड़ेल चुके थे। सारी रात एक चट्टान पर बैठे बिता दी। प्रातःकाल मन कुछ शान्त था। सुन्दर और स्वस्थ चेले सहदेव को बुलाकर कुछ समझाया। सहदेव ने स्वीकृति में सिर झुका दिया।

× × ×

सीमा झाड़ के नीचे फूल बीन रही थी। कुछ हाथ में लेकर निहारती, कुछ बड़बड़ाती सी मुँह के पास ले जाती। फिर मुस्कुरा पड़ती और नीचे फेंककर उदास दृष्टि से उनकी ओर देखने लगती।

सहदेव दूर खड़ा देख रहा है—'आग के शोले' से उलझना! गुरुदेव की आज्ञा! गुरुदेव का दायाँ हाथ है सहदेव। आश्रम का सारा भार उसी पर है। गुरुदेव पर असीम श्रद्धा है उसकी। १९४२ के आन्दोलन में कालेज छूट गया। फिर वह गाँव में आकर गरीबों की सेवा करने लगा। वहीं गुरु जी से भेंट हुई और बस्ती से मीलों दूर इस आश्रम में आकर वह रहने लगा। उसका आदर्शवादी हृदय यहाँ बड़ा प्रसन्न रहता है।

वह सीमा को देख रहा था और सोच रहा था कि कैसा अजीब पागलपन है। खाना-पीना, पहनना-ओढ़ना सभी ठीक है। डाक्टरों ने कहा है कि इसे एक तीव्र प्रकार का 'हिस्टीरिया' है। कभी रोएगी, कभी हँसेगी। कभी तड़ातड़ लेक्चर झाड़ेगी! कैसी मीठी आवाज है! वाणी प्रभावशालिनी है और सौन्दर्य आकर्षक!

"सीमा!"

"क्या है?" सीमा ने सिर घुमाया और विचित्र प्रकार से सहदेव की ओर देखते हुए वह पास आई और बोली—

"कौन हो जी तुम? इस तरह नाम लेकर क्यों बुला रहे हो? सभ्य-समाज में यह अनुचित है। मैं हूँ मिसेज खन्ना—उम्र में भी शायद तुम मुझसे छोटे ही होगे, फिर भी नाम लेकर...?"

"सीमा, मैं सभ्य नहीं।"

"सभ्य नहीं! तब ठीक है। हाँ, क्या नाम है तुम्हारा?"

'सहदेव। तुम्हारा मित्र बनने की इच्छा से मैं यहाँ आया हूँ। चलो, वृक्ष तले बैठें, सीमा। क्या कर रही थीं तुम?"

सीमा शङ्कित दृष्टि से पूरे मिनट भर उसकी ओर ताकती रही। सहदेव की दृष्टि निःसङ्कोच थी। कुछ पनीले-से नेत्र, छोटी पुतलियाँ, उनमें सफेदी कुछ अधिक-सी, हलकी-सी नीलिमा।...

"क्या है?" आखिर पूछ बैठा सहदेव। सीमा न जाने क्या सोचती हुई बोली—

"कुछ नहीं चलो।"

पेड़ की सघन-सी छाया में सहदेव तने-से टिककर बैठ गया। कुछ फूल आसपास बिखरे थे। एक फूल को चुटकी में उठाकर उसने सूँघा। सीमा खड़ी थी। सहदेव कुछ क्षण राह देखकर बोला—"बैठो न, सीमा।"

"भोलेपन और सरलता का नाटक मैं खूब देख चुकी हूँ, सहदेव।" न मालूम क्यों सीमा कड़क उठी।

"क्या मतलब?" सहदेव सीधा बैठ गया।

"यही —" सीमा खड़े ही खड़े बोली—"कि यह नाटक हमारे शहरी समाज में भी खूब होता है। प्रगति और विकसित-मस्तिष्कता की आड़ में ऐसे खेल वहाँ भी होते हैं। फिर प्रेम का नाटक शुरू होता है, जो सिर्फ नाटक होता है। जहाँ प्रतिदिवस नए खेल, नए पात्र और नए नाटक। तुम भी प्रेम करने तो नहीं आए?"

सहदेव कुछ कहना चाहता था पर कुछ सोचकर चुप रहा।

सीमा और चिढ़ी—"बोलो, बोलते क्यों नहीं? जवाब क्यों नहीं देते?"

धीर-गम्भीर स्वर में सहदेव बोला "बैठ जाओ, सीमा।"

सीमा एक पल के लिए स्तब्ध-सी हो गई। फिर पहले से दूने आवेश से बोली—"नहीं, नवयुवक, पहले जवाब देना होगा तुम्हें। तुम सुन्दर हो, स्वस्थ हो, तेजस्वी हो। क्या तुम भी प्रेम का 'घृणित खेल' रचाने आए हो? अ हँ हँ – कुछ कहने का प्रयत्न न करो। मैं उसे घृणित' ही समझती हूँ। मैंने बड़ा घृणित रूप देखा है उसका।"

नदी के भीषण प्रवाह में हाथ अड़ाना कोई बुद्धिमानी नहीं ऐसा सोच सहदेव चुप रहा। सीमा आवेश में कहती चली गई—"तुम्हें कदाचित् विदित न हो कि मैं 'परित्यक्ता' हूँ। समाज की दृष्टि में मेरा विवाह हुआ ऐसे मनुष्य के साथ जिसकी पहली स्त्री तपेदिक से पीड़ित संसार के किसी कोने में साँसें गिन रही है। मेरे पति महोदय ने, असा हुआ, बेचारी को छोड़ दिया था, क्योंकि वह सुन्दरी और शिक्षिता न थी। तत्पश्चात् उन्होंने कई लड़कियों और स्त्रियों से प्रेम किया और फिर मुझसे विवाह।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सीमा की दृष्टि वृक्ष के तने पर जम गई थी मानो वहाँ पर अतीत का लेखा लिखा हो जिसे वह पढ़ रही हो। सहदेव घुटनों को हाथों से घेरे बैठा था। गर्दन ऊपर उठी थी; दृष्टि सीमा की ओर थी। चेहरा प्रायः भावशून्य था। वह लगातार सुने जा रहा था—

"विवाह के पश्चात् भी वे आधुनिक कन्हैया बने रहे। मेरी इन आँखों ने क्या नहीं देखा? वैसे तो स्त्रियों से सटना, उनके हाथों से खिलवाड़ करना, उनकी चूड़ियाँ सहेजना वे विलायत से सीख आए थे। कुछ कहने का प्रयत्न किया जाता तो कहते, तुम लोग बड़ी संकुचित दृष्टि रखते हो। जिस रात्रि मिसेस माथुर को उनके साथ देखा, मैं खून का घूँट पीकर रह गई। अगर कुछ कहती तो वही झूठी दलीलें सामने आतीं। और उन्हें ही क्या कहती! दूसरे पुरुष भी मुझसे आत्मीयता दिखाकर फिर प्रेम जताने का प्रयत्न करते थे। प्रेम—प्रेम—नहीं-नहीं, सहदेव, मुझे घृणा है ऐसे प्रेम से! कहीं तुम भी तो.....!"

सहदेव ने निस्सङ्कोच भाव से सीमा का हाथ जोर से पकड़कर उसे बैठाते हुए बड़े संयत और अधिकारयुक्त स्वर में कहा—"बैठो, सीमा;" और सीमा अपने स्वाभाव के विरुद्ध चुपचाप बैठ गई—कुछ विमूढ़, विस्मित और थकी-सी।

× × ×

समय बीतता गया और सहदेव को सीमा के पतिदेव के अन्य अनेक गुण मालूम होते गए। मौका पाकर आखिर एक दिन वह पूछ ही बैठा—"तो तुमने ऐसे व्यक्ति से विवाह क्यों किया था, सीमा?"

"वह भी एक कहानी है"—स्वर को अत्यधिक रूखा कर सीमा बोली—"मेरा भी दूसरा विवाह था यह।"

"ऐं?"

"हाँ, एन्ट्रेन्स पास हुई और मेरा विवाह हुआ। देवता-सा पति मिला। पर मैं अनोखा भाग्य लेकर आई थी। उनका विवाह उनकी इच्छा से नहीं हुआ था। वे किसी विजातीय लड़की से प्रेम करते थे। उन्होंने पहली ही रात मुझे सब कुछ बता दिया और मुझसे क्षमा माँगी। उनकी उदार-हृदयता पर मैं सर्वस्व चढ़ा चुकी थी; फिर क्षमा कैसी! उनकी सेवा में ही मैं अपना जीवन सार्थक समझती थी! हम एक साथ रहे। उन्होंने अपना कर्तव्य खूब निबाहा। मुझे प्रसन्न रखने की पूर्ण चेष्टा की। मैंने भी कोई कसर न रक्खी। वायु के एक मीठे झोंके की नाईं समय बीत गया। उसी दीवाली में उन्हें बुखार आया।...दीवाली में दिए न जले, दिल ही जला बैठी। दो माह तक आँखों के आँसू न थमे। मैं बीमार हो गई परन्तु न मरना था, न मरी। माँ-बाप ने एड़ी-चोटी का जोर लगाकर मुझे अच्छा किया; मुझे 'हिस्टीरिया' हो गया।

"लोगों ने पुनर्विवाह की सलाह दी। पिता सुधारक थे रईस भी; देर क्या थी! जीवन-नाटक पर एक परदा गि दूसरा उठा। वह भी गिर गया। अब नया दौर है।"

एक लम्बी साँस खींचकर चुप हो गई सीमा।

"चलो सार्वजनिक प्रार्थना का समय हो गया, सीमा। गुरुदेव 'गांधी की नीति' पर व्याख्यान भी देंगे।"

और दोनों चल पड़े आश्रम की ओर। बातें हो रही थीं

"कल गुरुदेव बड़ी प्रशंसा कर रहे थे तुम्हारी; स्त्रियों चरखा-वर्ग और शिक्षण-वर्ग दोनों को बड़ी जल्दी सम्हाल ह तुमने।"

"तुम प्रशंसा न करो, सहदेव। तुम तो मुझसे कहीं ज्या काम सम्हालते हो। व्यायाम-शाला, देहाती स्कूल, आश्र व्यवस्था और भी न जाने कितना।"

कुछ देर चुप रहकर सीमा बोली—"कितने महान् है योगिराज! नादानी में क्या-क्या कह गई उन्हें मैं, छिः छिः

"अनजाने का अपराध अपराध नहीं गिना जाता। चूक होती है। और जो चूक क्षमा न कर सके, वह म ही नहीं।"

"पर सचमुच मैं प्रसन्न हूँ यहाँ। यह आश्रम, यह व्यव देश के लिए यह लगन, ऐसे आश्रम काश हिन्दुस्थान के हर में खुल जाएँ।"

"हिन्दुस्थान के लिए ऐसे आश्रम नई चीज नहीं हैं, सी यह तो प्राचीन परम्परा का ही परिवर्तित रूप है।"

"सोचती हूँ, इसी ढाँचे पर कई आश्रम बन जाएँ। देश स्वस्थ युवकों की कमी न होगी। अशिक्षा का भयङ्कर भूत भा भागा फिरेगा। राष्ट्रीयता की लहर हृदय-हृदय में दौड़ उठे देश की एक पुकार पर हम सब दौड़ पड़ेंगे। खून बहा और फिर फिर...।" सीमा का मुख आवेश में लाल हो उ सहदेव चकित नेत्रों से वह पवित्र आभा देखने लगा।

प्रार्थना के लिए घड़ियाल बजा। दोनों राहगीर सभाम की ओर दौड़ पड़े।

प्रार्थना के पश्चात् सहदेव ने उस दिन की खास-खास उपस्थित जन-समुदाय को समझाई—

शिमला परिषद् भङ्ग हो गई। हिन्दू-मुस्लिम एकता आवश्यकता, आनेवाले चुनाव, इत्यादि।

दोनों में खासी बहस छिड़ गई। कार्यक्रम के पश्चात् नित्य की नाईं—गुरुदेव का आसरा लिया गया।

"मैं कहती हूँ, योगिराज, आजादी भीख में नहीं मि सकती। स्वतन्त्रता की देवी को रक्त का अभिषेक चा और हम गा रहे हैं वही पुराना राग। आपस में समझौता वह न कभी हुआ है और न होने को है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"गुरुदेव, सीमा कहती है कि अगर तुम गृहयुद्ध से घबराते तो विरोधियों को भाई समझकर जो हक वे चाहते हैं, दे । मैं कहता हूँ, भारत के खण्ड क्यों हों ?"

योगिराज चुप थे।

"खण्ड कैसे, योगिराज ? पैतृक सम्पत्ति का आपस में बँटवारा हीं होता ? भाई-भाई यदि अलग घरों में रहें तो भी भाई रहते हैं।"

"और आगे अगर उन्होंने देश की उन्नति में अड़ंगा गाया तो ?"

"तो जो आज करने में हिचक रहे हो, वही करना होगा। पात ! युद्ध ! राजनीति कठोर है, सहदेव।"

"नहीं, सीमा", योगिराज बोल उठे—"कुछ अंशों में तुम्हारा थन सत्य है। परन्तु मनुष्य यदि अपनी मनुष्यता को भूलता तो वह किसी वस्तु का अधिकारी नहीं रह जाता। युद्ध और पात मनुष्य की पशुवृत्ति के द्योतक हैं। इनका नामशेष होना अच्छा।"

"लेकिन..."

"लेकिन नहीं, सीमा, विश्व पर घनघोर घटाएँ छा रही हैं। र है प्रलय-वर्षा करके ये मानवता का नाम निशान ही न मिटा । छोटे-मोटे घरेलू झगड़े ही विश्वविद्रोह का भयङ्कर रूप रण कर लेते हैं। हमें सावधान रहना चाहिए।"

"फिर हिन्दू-मुस्लिम एकता ?"

"सिर्फ एक उपाय है—विश्व मैत्री का प्रचार। साधन हैं—हिंसा और त्याग।"

× × ×

"मैं कल ही शहर चली जाऊँगी, सहदेव।"

"लेकिन तुमने पिता से तो नहीं कहा।"

"वह मेरा स्वार्थ था।"

"लेकिन तुम्हारा काम ?"

"वह शीला सँभाल लेगी। मैंने उसे समझा दिया है।"

"परन्तु तुम्हें शहर अच्छा नहीं...।"

"हाँ, शहर से मुझे नफरत हो गई थी। पर अब मैं काम जा रही हूँ। कुछ काम कस्तूर बा निधि के सिलसिले में गुरुदेव ने सौंपा है। फिर चुनाव आ रहे हैं। कांग्रेस का काम करूँगी।"

"तुम्हें तो उसमें विश्वास न था।"

"बेवकूफी थी मेरी। कोई संस्था बिलकुल दोष-रहित नहीं रहती। फिर देश में एकता की आवश्यकता है। नाजुक मौका है। ऐसे समय में समष्टि का महत्त्व अधिक रहता है।"

सहदेव चुप रहा। फिर कुछ सोचकर बोला—"कहीं वहाँ तुम दुखी..."

"तुम्हें हो क्या गया है ? याद है, आश्रम दिखलाते हुए तुमने कहा था— तुम भी इस ओर ध्यान लगा सको तो अच्छा हो, सीमा। तुम दुःखित हो, पर संसार में कौन दुःखित नहीं ? रोते बैठे रहने से दुःख हलका नहीं होता। दुःख की दवा है ऐसा काम, जिससे अधिक-से-अधिक लोगों का भला हो। ऐसे ही काम को सेवा कहते हैं। सेवा निःस्वार्थ नहीं होती। उससे कर्त्ता को जो सन्तोष मिलता है उसी का लालच उसे उस मार्ग पर अटल रखता है। तुम भी इसी मार्ग पर चली जाओ। दुःख सहने की अक्षमता अपने आप नष्ट हो जाएगी।' इतनी जल्दी अपना उपदेश भूल गए, सहदेव ?"

"मैं भी चलूँ शहर ?"

"पागल तो नहीं हो गए हो ?"

सहदेव ने अपराधी की नाईं मस्तक झुका दिया। सीमा ने प्यार से उसकी बाँह पर हाथ रखते हुए कहा—"मैं तुम्हारी व्यथा समझ रही हूँ, पर यह मार्ग हम दोनों के लिए श्रेयस्कर नहीं। अब हमारा साथ न रहना ही अच्छा है। हम लोगों का ध्येय सेवा है। मोह हमारा भयानक शत्रु है। मुझे क्षमा करो, सहदेव; तुम्हारे लिए मेरे हृदय में हमेशा स्थान रहेगा। लेकिन हमारे मार्ग भिन्न हैं।"

सहदेव ने भर्राई आवाज में कहा—"सिधारो, सीमा ? कभी लौटोगी ?"

"जरूर, तुम्हारे और शीला के ब्याह में—वर-वधू को आशीष देने।"

"सीमा," सहदेव चीख पड़ा। सीमा जा रही थी—पहेली-सी – समझ से परे—निस्सीम सीमा।

गीत

श्री 'युगल'

मैं मेघ भरा व्याकुल अम्बर !
दो बूँद गिरी, सिंच गई धरा,
हरिताभ वसन वह लहर पड़ा;
मेरे उर में यह भरा मेघ
मुझको न सका कुछ सिंचित कर !
फैला असीम में प्यास लिए,
ज्वाला अभाव की आप पिए;
मेरे अधरों से लगा मेघ
तृष्णा न सका कुछ मेरी हर !
अपनी असीमता पर फूला,
बस शून्य रह गया मैं भूला;
मेरी बाहों में पड़ा मेघ
यह खो न सका मुझमें क्षण भर !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चन्द्रगुप्त मौर्य—एक अध्ययन

प्रिंसिपल श्रीराम शर्मा, एम० ए०, एफ० आर० एस० (लंदन)

भारतवर्ष के प्राचीन विख्यात शासकों में चन्द्रगुप्त मौर्य का नाम सदैव सम्मान से लिया जाएगा। उन्होंने मौर्यवंश की नींव डाल भारत के विस्तृत क्षेत्र पर ही नहीं अपितु बलख, बुखारा, बिलोचिस्तान और अफगानिस्तान पर भी चिरकाल तक शासन किया। चन्द्रगुप्त महाराजा महानन्द के सबसे बड़े पुत्र थे। उनकी माता का नाम मुरा था, जिसके नाम पर चन्द्रगुप्त और उनके वंशज मौर्य नाम से विख्यात हुए। महाराजा महानन्द की और भी कई रानियाँ थीं जिनसे उनके आठ राजकुमार और थे। दुर्भाग्य से चन्द्रगुप्त पुत्रों में तो सबसे बड़े थे और इसलिए राज्य के उत्तराधिकारी भी थे, परन्तु उनकी माँ महारानी मुरा किसी उच्च कुल से न थीं, इसलिए दूसरे राजकुमार सदैव उनसे द्वेष किया करते थे।

नवों राजकुमार इकट्ठे शिक्षा प्राप्त करते रहे। विद्या ग्रहण कर जब वे गुरु के आश्रम से पाटलीपुत्र लौट आए तब राजा ने उनकी योग्यता के अनुसार उन्हें काम सौंप दिए। 'होनहार बिरवान के होत चीकने पात' के अनुसार चन्द्रगुप्त की बाल्यकाल की ही बुद्धिमत्ता और पटुता की अनेक विचित्र कहानियाँ प्रसिद्ध हैं। कहते हैं, एक बार रोम के शासक ने महानन्द के दरबार में अपने एक दूत के हाथों एक पिंजरा भेजा, जिसके अन्दर एक कृत्रिम शेर बन्द था। पिंजरे पर ताला लगा था। बाहर से यह जानना कठिन था कि सिंह किस चीज का बना हुआ है। रोम के शासक ने कहला भेजा कि इस शेर को द्वार खोले बिना ही बाहर निकाला जाए। सारा मन्त्रि-मण्डल विस्मित था कि इस गुत्थी को कैसे सुलझाया जाए। अन्त में चन्द्रगुप्त को बुलाया गया। उसने इस बात का बीड़ा उठाया कि वह द्वार खोले बिना ही शेर को बाहर निकाल देगा। पिंजरा चन्द्रगुप्त के हवाले किया गया। उसने उसी समय आज्ञा दी कि इसके ऊपर घड़ों से पानी डाला जाए। आज्ञा का पालन हुआ। शेर खाँड़ का होता तो गल जाता और पिंजरे से बाहर निकल आता। परन्तु मनों पानी का उस पर कुछ प्रभाव न पड़ा। अब उसने दूसरी युक्ति की। उसने आज्ञा दी कि आग जलाई जाए। आग जलाकर उसके ऊपर पिंजरा रखने का प्रबन्ध किया गया और अन्त में उस बन्द शेर को आग पर तपाने के लिए रख दिया गया। आग खूब जल रही थी। आँख झपकने की देर थी कि शेर के अङ्ग ढीले पड़ने लगे। देखते-देखते उसका सिर गिरा और साथ ही पाँव भी अलग हो गए। फिर पेट की बारी आई और क्षण भर में वह शेर मोम का ढेर बनकर पिंजरे से बाहर चू पड़ा।

एक और जनश्रुति है। एक समकालीन राजा ने महाराजा नन्द के पास अपना दूत भेजा। उसके साथ तीन चीजें भेजी गईं। एक अँगीठी में आग दहक रही थी; एक बोरी में सरसों भरी पड़ी थी और एक मीठा फल अपनी मनोहारिणी सुगन्ध से सबको मुँह में पानी ला रहा था। सारी चीजें दरबार में पेश की गईं। राजा ने अपने अमात्यों से पूछा कि इस अनमिल उपहार के उत्तर में क्या भेजना चाहिए। यह तो वे बतलाते पहले यह पता होता कि इस अनमिल त्रिमूर्त्ति का क्या है। कई दरबारियों ने अपना मस्तिष्क लड़ाया परन्तु तसल्ली न हुई। जब सब हार चुके तब राजकुमार अपने स्थान से उठा और निवेदन किया कि—'राजा ने कोप की आग से उपमा दी है जो सब कुछ भस्म कर डालती सरसों की बोरी के अनगिनित दाने उसकी सेना की बतलाते हैं और मीठे फल से मैत्री के मधुर फल से है, महाराजा ने प्रत्युत्तर के लिए भी चन्द्रगुप्त से ही उसी समय उसने सम्मति दी कि पानी का एक घड़ा तीतर और एक बहुमूल्य हीरा उत्तर में भेजे जाएँ। कोपाग्नि को पानी शान्त करेगा। अनगिनत सरसों के दाने हमारे तीतर-रूपी वीरों-द्वारा थोड़ी ही चुन लिए जाएँगे और यदि मैत्री पर उतर आ महाराजा नन्द की मित्रता फल की तरह क्षणिक देनेवाली प्रमाणित नहीं होगी, अपितु हीरे की तरह बहुमूल्य रहेगी।

जनश्रुतियाँ असत्य हों या सत्य, पर राजकुमार ने छोटे-बड़े सबके दिलों में स्थान प्राप्त कर लिया था। वीरता और साहस अन्त में काम आए और वह सेना उत्तरदायित्वपूर्ण पद पर नियुक्त हो गया। दूसरे राज भाई उसकी उन्नति को सहन न कर सके और दुर्योधन उसे गिराने के उपाय सोचने लगे। सौभाग्य से वे शीघ्र ही निश्चय में सफल हो गए।

महाराजा नन्द बड़े शक्तिशाली शासक थे परन्तु किसी उनकी मन्त्री शकटार से अनबन हो गई। शकटार महाराज के विरुद्ध षड्यन्त्र रचने आरम्भ कर दिए। एक दिन सैर के लिए बाहर जा रहे थे कि एक ब्राह्मण दिया। काला-कलूटा, शिखा खुली हुई, हाथ में दाँ कुशा के पौधों को काट रहा है और साथ ही उनकी छाल दे रहा है। वे हैरान हो गए। पूछा, "क्या बात ब्राह्मण कहने लगा, "कल यहाँ एक कुशा ने मेरा डाला। मैं भी जब तक इस कुशा के वंश का सर्वना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लूँ, दम नहीं लूँगा।" शकटार प्रसन्न हो गया। अच्छा थी मिल गया। "यदि यह कहीं महाराजा नन्द से कुपित गए तो पौबारह हैं।" ब्राह्मण को तसल्ली दी। साथ लिनेवाले सेवक को आज्ञा दी कि इसी समय मजदूर लगाकर ह्मणदेव के इच्छानुसार कुशा के उस कष्टदायक स्थान को साफ र दिया जाए। चाणक्य शकटार के साथ हो लिया। मन्त्री ड़े से उतर आया, चाणक्य का सम्मान किया, आदरपूर्वक से घर लाया और अवसर की प्रतीक्षा करने लगा।

हर ओर चहल-पहल थी। नाना प्रकार के भोजन पक रहे थे। कर प्रबन्ध में व्यस्त थे। कमरे सजाए जा रहे थे। कुछ अतिथि चुके थे। जो शेष थे उनकी प्रतीक्षा हो रही थी। आज महानन्द यहाँ यज्ञ था। सभी बड़े बड़े विद्वान् पण्डित बुलाए गए। न्तु समस्या यह थी कि ब्रह्मा के आसन पर किसको प्रतिष्ठित या जाए। रीति तो यह थी कि सबसे बड़े विद्वान् पण्डित वह आसन दिया जाए। भय था कि यदि किसी अयोग्य उस जगह पर बिठाया गया तो दूसरे कहीं रुष्ट होकर उठ न एँ और इस तरह सब किया-कराया मिट्टी में मिल जाए। कटार अवसर ताड़ गया। चाणक्य को ब्रह्मा के स्थान पर ठला दिया गया। वे पात्र तो थे परन्तु अन्य ब्राह्मण इससे ष्ट हो गए। प्रत्येक का विचार था कि उसी के अधिकार को दा गया है। अन्त में सभी ने मिलकर निश्चय किया के उठ चलें।

चाणक्य विद्वान् तो थे परन्तु दरबार में अपरिचित थे। स पर उनके रूप-रङ्ग ने 'एक तो करेला दूसरे नीम चढ़ा' के नुसार उनकी कोपाग्नि पर तेल का काम किया। उधर जकुमारों ने भी अवसर भाँपकर महाराजा से जाकर कहा, महाराज, वहाँ तो रङ्ग में भङ्ग होनेवाला है। न जाने न्धकों ने कहाँ से एक काले-कलूटे पण्डित को लाकर ब्रह्मा आसन पर बिठा दिया है। इससे सभी अन्य ब्राह्मणों में लाहल मचा है और वे यज्ञ को अधूरा छोड़कर चले जानेवाले ।" जब मनुष्य के बुरे दिन आते हैं तो उसमें विचार-शक्ति नहीं ती। वह भले-बुरे के अन्तर को समझ नहीं सकता। यही शा महानन्द की थी। उसने सोचे-समझे बिना जाकर चाणक्य सिर के बाल पकड़वाकर उठवा दिया। एक ब्राह्मण का पमान हुआ। सब ओर से कोलाहल मच गया। प्रत्येक यही ह रहा था कि राज्य के विनाश के दिन निकट आ रहे हैं, तभी ाह्मणों का इस प्रकार खुले दरबार में अपमान किया जा रहा है।

इधर चाणक्य अपने साथियों के साथ चल पड़े और जाते- ते उन्होंने प्रतिज्ञा की कि जब तक नन्द-वंश की ईंट से ट न बजा लूँगा, इन खुले बालों की शिखा नहीं बाँधूँगा। णक्य की कोपाग्नि को शकटार ने और भड़काया। परिणाम- रूप चाणक्य, शकटार और चन्द्रगुप्त षड्यन्त्र के अपराध धर लिए गए और सभी को देश-निकाला दिया गया।

सन् ३२७ ई० से पहले की बात है, अलक्षेन्द्र महान् —मक-दूनिया का सम्राट् विश्व-विजय की लालसा लेकर घर से निकला। वह जहाँ गया, विजयलक्ष्मी उसके हाथ आई। एशियाई कोचक, इराक, अरब, ईरान, अफगानिस्तान एक-एक करके उसने जीत लिए। हिन्दूकुश पर आकर उसने सेना के दो भाग किए, एक टुकड़ी उत्तर की ओर बाख्तरिया, बलख इत्यादि जीतने को चल पड़ी और दूसरी टुकड़ी हिन्दूकुश को पार करके अटक के किनारे पहुँची। अटक के पार तक्षशिला की राजधानी थी। यहाँ राजा अम्भी राज करता था। उसका दूसरा भाई अम्भिसार काश्मीर का शासक था। मध्य पञ्जाब में एक अन्य जाति का शासन था। यवनों ने इनके राजा को पोरस (पुरु) के नाम से याद किया है, परन्तु दुर्भाग्य से इस शूरवीर का नाम इतिहास के पत्रों पर लिखा नहीं गया। पोरस तो इस जाति के पूर्व में होने के कारण राजा का यूनानी नाम ठहरा।

पोरस यहाँ सर्वरूपेण शासक था। इसकी सेना उग्र और शक्तिशालिनी थी। दोनों भाइयों की इसके आगे एक न चली। अथक प्रयत्नों के करने पर भी वे पोरस को जीत न सके। अब जो उन्होंने देखा कि अलक्षेन्द्र आ पहुँचा है तो उन्होंने विचार किया कि अलक्षेन्द्र की सहायता से पोरस का सिर कुचला जाए। इस अभिप्राय से उन्होंने अपने दूत अलक्षेन्द्र के दरबार में भेजे, उपहार भेंट किए और उसकी अधीनता स्वीकार कर ली। अलक्षेन्द्र ने तक्षशिला पर एक दरबार किया जिसका अभिप्राय यह था कि निकटवर्ती राजा उसकी सेनाशक्ति से प्रभावित होकर अधीनता स्वीकार कर लें। परन्तु उन दोनों भाइयों के सिवा और कोई भारतीय राजा उपस्थित न हुआ। स्वतः अपने अभिप्राय से मानों यह दरबार असफल ही रहा। हाँ, इनके अतिरिक्त दो और व्यक्ति भी वहाँ उपस्थित हुए और वे दोनों हमारे इतिहास से सम्बन्धित हैं, अतः उल्लेखनीय भी। इनमें से एक चन्द्रगुप्त थे और दूसरे चाणक्य। चन्द्रगुप्त अलक्षेन्द्र से मिले। अलक्षेन्द्र महानन्द पर आक्रमण करने की ठाने बैठा था। अतः राजकुमार चन्द्रगुप्त का उसने खूब आदर-सत्कार किया। चन्द्रगुप्त महानन्द से अत्यन्त रुष्ट था परन्तु मगध को अलक्षेन्द्र के हाथों में सौंपने के लिए तैयार नहीं था। चाणक्य और अलक्षेन्द्र की मुलाकात और सौदागरी अत्यन्त ही रोचक हुई होगी, परन्तु दुर्भाग्य से न तो किसी यूनानी ऐतिहासिक ने और न 'मुद्राराक्षस' के लेखक ने इस घटना पर प्रकाश डाला है। एक बात निश्चित है। चन्द्रगुप्त अपने ब्राह्मण मित्र के साथ वहाँ से लौट आए और उन्होंने प्रतिज्ञा की कि यवनों को भारतवर्ष से निकालकर ही दम लेंगे।

अलक्षेन्द्र ने बढ़कर जेहलम नदी के तट पर पोरस से लड़ाई की। दोनों ओर से वीरों ने खूब हाथ दिखाए। अलक्षेन्द्र भी पोरस का लोहा मान गया। यद्यपि विजय अलक्षेन्द्र की हुई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परन्तु वीर वीरों की योग्यता समझते हैं। उसने न केवल पोरस को उसका अपना प्रदेश ही लौटा दिया, उसकी रियासत में और भी विजित प्रदेश सम्मिलित कर दिए। जब अलक्षेन्द्र की सेना व्यास के तट पर पहुँची तो उसने आगे जाने से इन्कार कर दिया। सैनिकों को घर से निकले कई वर्ष हो गए थे। वे अपने बन्धु-बान्धवों के दीर्घ विरह से उकता गए थे। दूसरे पञ्जाब की लड़ाइयों ने उन्हें बता दिया था कि भारत को जीतना आसान नहीं है। उन्हें अटक से व्यास तक पहुँचने में आठ मास लग गए थे। इञ्च-इञ्च भूमि के लिए उन्हें लड़ना पड़ा था। इन कारणों से वे उद्विग्न हो गए थे। उनके आगे बढ़ने से इन्कार करने का एक और कारण था। महानन्द के अधीन मगध साम्राज्य के बारे में सुना जाता था कि वह एक महान् शक्तिशाली राज्य है। उसके पास दो लाख प्यादे बीस सहस्र सवार, दो सहस्र रथ और चार सहस्र जङ्गी हाथी थे। अलक्षेन्द्र की इच्छा थी कि वह सारे भारत को जीत ले। परन्तु महानन्द के पौरुष की कहानियों ने उसके सैनिकों को बौखला दिया। जब सेना ही आगे बढ़ने से इन्कार करे तो बेचारा सेनापति क्या कर सकता है? ज्यों-त्यों उसे लौटने की आज्ञा देनी पड़ी।

यहाँ से विदा होने के पूर्व अलक्षेन्द्र ने पोरस को अपने सभी विजित प्रदेशों का जो हिन्दूकुश से इस ओर वर्तमान थे, वाइसराय नियुक्त किया। फिल्प् को उसका सहायक नियुक्त किया गया।

कुछ काल बाद फिल्प् ने पोरस को धोखे से कत्ल करके अपने शासक बनने की घोषणा कर दी।

पोरस बहादुर था। वह बात का धनी था। सभी राजा उसका सम्मान करते थे। जब उसके कत्ल की सूचना उन तक पहुँची तो यूनानियों के विरुद्ध क्रोध की एक लहर दौड़ गई। सभी राजाओं ने मिलकर यवनों को देश बाहर करने का निश्चय किया। चन्द्रगुप्त ने चाणक्य की सहायता से पञ्जाब के सभी राजाओं को एकत्र किया और विदेशी शक्ति के विरुद्ध चलनेवाले इस आन्दोलन के स्वयं नेता बने। विजय-लक्ष्मी उनके हाथ लगी। उन्होंने दो वर्षों के अन्दर ही पञ्जाब को यवनों से मुक्त कर दिया। इस बीच चाणक्य उनके मन्त्री तथा सहायक रहे। चन्द्रगुप्त चाणक्य का बहुत सम्मान करते थे। उनकी सम्मति प्राप्त किए बिना वे कोई काम नहीं करते थे।

इधर मगध की रियासत में बहुत आकुलता फैली थी। राज्य का प्रबन्ध ऐसे लोगों के हाथों में चला गया था जो शासन-विधि से अपरिचित थे। प्रजा राज्य के कठोर नियमों से तङ्ग आ गई थी। परन्तु सेना इतनी शक्तिशालिनी थी कि वह विद्रोह का दमन कर देती थी। अन्त में जब जनता ने देखा कि चन्द्रगुप्त पञ्जाब में हैं और उनके पास एक भारी सेना भी है तब उन्होंने उन्हें निमन्त्रण दिया कि वे आकर उन्हें इस से छुटकारा दिलाएँ।

चन्द्रगुप्त यही चाहते थे कि अवसर मिले तो मगध-साम्रा से महानन्द को निकाल फेंकें। उन्होंने देखा कि प्रतिशो समय आ गया है। चाणक्य की अध्यक्षता में उन्होंने (ई० पूर्व) में मगध पर आक्रमण कर दिया। पञ्जाब के राजाओं ने उन्हें फिल्प् को पराजित करने में सहायता दी वे सब उनके साथ थे। इस महती सेना को लेकर चन्द्रगु महानन्द की सेना पर आक्रमण कर दिया। कुछ तो चन्द्र और उनके साथियों की सैनिक शक्ति और कुछ "घर का लङ्का ढाए" के अनुसार महानन्द की सेना ने भी चन्द्रगुप्त साथ दिया। जिस सेना के नाम से अलक्षेन्द्र पर भय छा था वह अब चन्द्रगुप्त की नीति का शिकार बनी। महा पराजित हुआ और चन्द्रगुप्त ३२३ ई० पू० में मगध सिंह पर प्रतिष्ठित हुए। चाणक्य इनके प्रधान-मन्त्री बने औ चन्द्रगुप्त ने भी सर्वस्व उनके हाथों में सौंप देना चाहा। प चाणक्य ने इसे स्वीकार नहीं किया और वे इस प्रयत्न में कि किसी प्रकार अन्तिम नन्द राजा के मन्त्री राक्षस को वश कर लें। वे चाहते थे कि राक्षस चन्द्रगुप्त का मन्त्री बने कि वे स्वयं वानप्रस्थ ग्रहण कर सकें। राक्षस इसे स्वीकार करता था। वह चन्द्रगुप्त की अधीनता को महानन्द के कृतघ्नता के समान समझ रहा था। उसने मगध से डेरा लिया और बाहर चला गया। परन्तु उसका सारा कु मगध में ही था। चाणक्य ने खोज लगाकर कुटुम्बियों बन्दी बना लिया। विवश होकर राक्षस को अपने आ चन्द्रगुप्त के हवाले करना पड़ा। बहुत समय तक चा और राक्षस में नीति-युद्ध होता रहा जिसमें सफलता चाण हाथ रही और राक्षस को मन्त्रिपद स्वीकार करना ही प चाणक्य ने वानप्रस्थ ले लिया और वे वनों को चले गए।

चाणक्य एक कर्मशील विद्वान् थे। चाणक्यनीति और प तन्त्र उनकी नीति-पटुता के अब भी उदाहरण स्वरूप हैं। शास्त्र ने, जिसमें उन्होंने अपना नाम कौटिल्य दिया है, उ स्थान संसार के नीतिज्ञों में ही नहीं नीति-विशारदों में भी अ कर दिखाया है। अर्थशास्त्र में चाणक्य ने शासन-वि पर व्याख्यात्मक ढङ्ग से प्रकाश डाला है। यह ग्रन्थ विधानों से परिचय कराने के अतिरिक्त चन्द्रगुप्त मौर्य की शा विधि पर भी पर्याप्त प्रकाश डालता है।

इधर चन्द्रगुप्त ने अवसर से लाभ उठाकर अपने आ पञ्जाब, युक्त प्रान्त, सिन्ध और बङ्गाल का शासक घोषित दिया और पाटलीपुत्र के स्थान से अपनी राजाज्ञाएँ जारी आरम्भ कर दीं।

चन्द्रगुप्त को सिंहासन पर बैठे अधिक समय न बीता कि उन्हें एक और विपत्ति का सामना करना पड़ा। अलक्षेन्द्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्यु के पश्चात् सेल्यूकस बलख और बुखारा, बिलोचिस्तान, काबुल और ईरान के प्रदेश का स्वाधीन शासक बन बैठा। सने शनैः-शनैः आस-पास के प्रदेश विजय करके अपने अधीन र लिए और इस तरह मध्य एशिया में एक शक्तिशाली साम्राज्य का स्वामी बन गया। सेल्यूकस ने चाहा कि जो कार्य अलक्षेन्द्र अधूरा छोड़ गया है उसे वह पूर्ण करे। इस अभि-राय से उसने ३०५ ई० पूर्व में पञ्जाब पर आक्रमण कर दिया। रन्तु इधर चन्द्रगुप्त भी बेसुध नहीं बैठा था। इसके पूर्व क सेल्यूकस की सेनाएँ उसके प्रदेश को तहस-नहस कर सकें, सने अपनी विशाल सैन्य का सञ्चालन किया और शीघ्रता से ल्यूकस की सीमा पर जा पहुँचा। सेल्यूकस को लेने के देने ड़ गए। भारत अब अलक्षेन्द्र के समय की तरह विभिन्न रियासतों में बँटा हुआ नहीं था, न कहीं गृह-युद्ध था और कहीं राजा अम्भी जैसे देश-द्रोही शासक थे। यही नहीं, गुप्त की सेना विधान में यूनानी दलबन्दी को मात करती । सेना का प्रबन्ध छः विभागों के अधीन था जो अलग-लग रथों, प्यादों, अश्वारोहियों, हाथियों, जहाजों, अन्न आदि र आवागमन के उत्तरदायी थे। सैनिक तीक्ष्ण अस्त्रों से सुसज्जित नहीं थे अपितु कवच आदि अनेक अङ्ग-रक्षकों से लैस थे। सेना के साथ घायलों की परिचर्या आदि के लिए ों की व्यवस्था थी। महानन्द की सेना में दो लाख प्यादे, स्सी हजार सवार, नौ हजार हाथी और आठ हजार रथ थे। न्द्रगुप्त की युद्ध-प्रियता ने इस संख्या को बढ़ाकर ४ लाख ादे, जिनमें रथों पर चढ़नेवाले भी सम्मिलित थे, तीस हजार वार और नौ हजार हाथी तक बढ़ा दिया था। सारांश यह जिस सेना से सेल्यूकस का वास्ता पड़ा उसकी स्थिति का चार उसे स्वप्न में कभी न आया था। बेचारा घबराकर गया। 'नमाज बख्शवाने गए थे, रोजे गले पड़े।' मरता या न करता! युद्धारम्भ से पूर्व ही उसने हथियार छोड़ दिए र सन्धि के लिए पत्र-व्यवहार आरम्भ हुआ। पर चन्द्रगुप्त , जो चाणक्य के शिष्य थे, उसे ऐसे कब छोड़नेवाले थे।

अन्ततः काबुल, गांधार, हिरात, बलख और बुखारा के प्रदेश न्द्रगुप्त के साम्राज्य में सम्मिलित हुए और सेल्यूकस ने अपनी ड़की चन्द्रगुप्त को ब्याह दी। चन्द्रगुप्त ने ५०० हाथी उपहार-रूप अपने श्वसुर को भेंट किए। इस युद्ध का परिणाम यह आ कि मौर्य्य-साम्राज्य की सीमा उत्तर में ईरान और मध्य-शिया तक जा पहुँची।

अब चन्द्रगुप्त का यशोविस्तार और भी हुआ। उन्होंने न गणकों को भी अपने अधीन कर लिया जो अब तक शेष थे। चाणक्य ने उन्हें एक गुरु-मन्त्र दिया था—"असन्तुष्टा जा नष्टाः सन्तुष्टाश्च महीभृतः"। वह चन्द्रगुप्त को स्मरण । उसी के अनुसार आचरण करते हुए वे अनतिकाल में ही रत के सार्वभौम सम्राट् के रूप में प्रतिष्ठित हुए। अब चन्द्रगुप्त संसार में अप्रतिरथ थे। अपनी सेना के अतिरिक्त सेल्यूकस की सेना भी जो एशियाखण्ड में अपने समय में अद्वितीय थी, उनके अधिकार में थी। इन सेनाओं की सहायता से भारत की सभी छोटी-छोटी रियासतें जीत ली गईं। इस प्रकार मौर्यध्वज भारत के अविच्छिन्न भू-भाग में फहराने लगा। मध्य-एशिया से लेकर बङ्गाल की पूर्वी सीमा तक और काश्मीर से लेकर मैसूर तक उनके शासन में था। सेल्यूकस के दूत मेगस्थनीज ने लिखा है कि उस समय चन्द्रगुप्त ११८ राजाओं के महाराजाधिराज थे।

चन्द्रगुप्त का साम्राज्य संसार भर में सुदृढ़तम साम्राज्य था। उनके पास छः लाख प्यादे, तीस सहस्र सवार और नौ सहस्र हाथी थे। रथ इसके अतिरिक्त थे। वे सारे उत्तर भारत पर स्वतन्त्र होकर शासन करते थे। उन्होंने मध्य एशिया के सबसे बड़े शासक को हरा दिया था। ऐसे युग में, जब कि योरप में सभ्यता का जन्म भी नहीं हुआ था, भारत में ऐसे साम्राज्य की स्थिति पर हम गर्व कर सकते हैं।

सेल्यूकस ने अपना दूत चन्द्रगुप्त के दरबार में भेजा। उसका नाम मेगस्थनीज था। उसने जो कुछ यहाँ देखा-सुना सब एक पुस्तक में एकत्र किया। दुर्भाग्य से अब वह पुस्तक अलभ्य है। उसके संदर्भ जिस परिभाषा में भी अन्य पुस्तकों से मिले हैं उन्हें एकत्र कर लिया गया है। यह ज्ञान का एक भाण्डार है। यद्यपि इसमें बहुत कुछ भुस भी भरा है, परन्तु फिर भी इसमें इतने मोती हैं कि हम आसानी से उनका चयन कर सकते हैं। इसमें चन्द्रगुप्त के साम्राज्य, उनकी राजधानी, लोगों के रीति-रिवाज, शासन-विधि, सेना इत्यादि की पर्याप्त जानकरी भरी पड़ी है।

जैन मत की कथा के अनुसार चन्द्रगुप्त जैनी थे। उनकी अवस्था कोई पचास वर्ष के लगभग होगी जब लगभग ३०० ई० पूर्व में भारत में भारी अकाल पड़ा। चन्द्रगुप्त ने उस समय राज्य की बागडोर अपने पुत्र बिन्दुसार को सौंप दी और स्वयं एक विख्यात जैनाचार्य की अध्यक्षता में दक्षिण की ओर चल पड़े। अन्त में वे रियासत मैसूर में रहने लगे। इस जगह आज तक उनका नाम बड़े सम्मान से लिया जाता है। कुछ साल के पश्चात् चन्द्रगुप्त का दिल इस संसार से उचट गया और वे जैनियों की निर्वाण-सिद्धि की रुचिकर विधि को अपनाकर अनशन व्रत धारण कर स्वर्गगामी हुए।

सेल्यूकस निकाटूर के दूत मेगस्थनीज ने महाराज चन्द्रगुप्त के युग की जो घटनाएँ लिखी हैं और 'अर्थशास्त्र' में राजनीतिक विषयों पर जिस प्रकार वाद-विवाद किया गया है उनसे भी भारत की शासन-विधि और सर्वसाधारण घटनाओं पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। इसके अतिरिक्त और भी कई साधन हैं जिनसे हमें महाराज चन्द्रगुप्त की शासन-विधि का पर्याप्त परिचय मिलता है। इन सभी साधनों को सामने रखते हुए हमें यह मानना पड़ेगा कि महाराज चन्द्रगुप्त का शासन-विधान काफी उन्नत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था। कई दृष्टिकोणों से तो यह मानना पड़ेगा कि महाराजा चन्द्रगुप्त के राज्यकाल में जिस प्रकार प्रजा की शान्ति और सुविधा का ध्यान रक्खा जाता था उसका उदाहरण संसार के इतिहास में १६वीं शताब्दी से पूर्व शायद ही कहीं मिले। सारा साम्राज्य चार या पाँच बड़े-बड़े प्रान्तों में बँटा हुआ था। पाटलीपुत्र के आस-पास के प्रदेश पर महाराज चन्द्रगुप्त की वैयक्तिक अध्यक्षता में शासन होता था। तक्षशिला का शासक स्यात् काश्मीर, पञ्जाब और उत्तरी-पश्चिमी सीमाप्रान्त, अफगानिस्तान और बिलोचिस्तान का शासक समझा जाता था। उज्जैन का गवर्नर राजपूताना और मध्यभारत का अध्यक्ष था। दक्षिण भारत का शासक स्यात् वर्तमान मैसूर में स्थित स्वर्णभूमि नामक स्थान से शासन-प्रबन्ध करता था।

चन्द्रगुप्त का प्रासाद गौरव और गरिमा में संसार भर में उत्तम स्थान रखता था। राजा खुले दरबार शासन करता था। राजा-रंक, भारतीय-अभारतीय सभी को हर वक्त राजा के पास आने की सुविधा थी। चन्द्रगुप्त इस विषय में इतने सतर्क थे कि वे मालिश के समय भी प्रत्येक फरयादी की पुकार सुनने के लिए तैयार रहते थे। प्रजा के सुख और सुविधा का उन्हें इतना ध्यान था कि एक सुव्यवस्थित विभाग केवल इसी कार्य पर नियत था कि वह दूरवर्ती तथा निकटवर्ती प्रजा की दशा का ठीक-ठीक ज्ञान सम्राट् को कराता रहे। अधिकारी-वर्ग की क्रूरताओं और अनियमित व्यवहारों का ब्योरा सम्राट् तक पहुँचाना इस विभाग का विशेष कर्तव्य था। पाटलीपुत्र में शासन-कार्य २६ विभागों के सुपुर्द था जो कि अपने-अपने काम के लिए महाराजा के प्रति उत्तरदायी था। कोई कोषाध्यक्ष था, कोई टकसालों का उपाधिकारी। एक उपज का उत्तरदायी था तो दूसरा वन्य-प्रदेश का। इधर व्यापार-विभाग का अध्यक्ष तो दूसरी ओर कपड़ा बुनने के शिल्प का अध्यक्ष। विदेश जानेवाले व्यक्तियों के लिए एक पृथक् विभाग था तो सरकारी तोपखाने के लिए दूसरा। घोड़ों, पालतू पशुओं, हाथियों, रथों, प्यादों और हथियारों की देख-भाल के लिए पृथक्-पृथक् विभाग थे। जलयान विभाग इस तथ्य का साक्षी है कि उस समय हिन्दुओं ने इस विषय में पर्याप्त उन्नति की थी। इन विभागों के लिए जो आज्ञाएँ प्रचलित थीं उनसे विदित होता है कि धातुओं की उन्नति में सहयोग देना, वनों का प्रबन्ध करना, व्यापार और कृषि के लिए सुवि पहुँचाना, सड़कों और मण्डियों की देखभाल करना—ये राज्य के आवश्यक कर्तव्यों में सम्मिलित थे। ऐसे समय, पश्चिम में रोगियों की सुख-सुविधा के लिए सरकारी अस्प का नाम तक सुनने में नहीं आता था, भारतीय सम्राट् क प्रथम कर्तव्य समझा जाता था कि वह प्रजा के लिए अस्प खोले और औषधीय सहायता के लिए उचित प्रबन्ध जिस समय पश्चिम अन्धकारावृत था, जब रोम और भी सभ्यता के पाठ में नौसिखिए ही थे, भारत के सम्राट् कार्यक्रम से सभ्यता का पाठ दूर-निकट पहुँचा रहे थे। दृष्टिकोण से दो बातें विचारणीय हैं। अलक्षेन्द्र महान् ने पर आक्रमण तो किया, परन्तु जैसा कि यूनानी ऐतिह बतलाते हैं, मगध के राजा नन्द की ख्याति ने उनके सैनिक भगा दिया और उन्होंने भारत से सुरक्षित लौटना ही समझा। सेल्यूकस ने आक्रमण किया तो उसे बिलोचिस्ता और उत्तरी-पश्चिमी-सीमाप्रान्त और अफगानिस्तान का विशेष भाग चन्द्रगुप्त के भेंट करना पड़ा। इन दोनों से विदित है कि उस समय भारत उन्नति के क्षेत्र में अग्रगामी था। गौरव-गरिमा में पाटलीपुत्र के प्रासाद को दे मेगस्थनीज की आँखें चौंधिया गई थीं। शिल्प के क्षे अर्थशास्त्र के पृष्ठ इस बात के साक्षी हैं कि उस समय शिल्प भारत में उन्नति पर थे। वाणिज्य के क्षेत्र में उस फारस, चीन, लंका, रोम, तिब्बत, नेपाल, इंराक और यून व्यापार और आयात-निर्यात होता था। प्रजा का शा पर्याप्त हाथ था। भिन्न-भिन्न व्यवसायी-दल काफी अ रखते थे। इन दलों में विधि-पूर्वक निर्वाचन-प्रणाली प्र थी। विवादास्पद तथ्यों का निर्णय बहुमत से किया जाता सारांश यह कि राजनीतिक क्षेत्र में ऐसे परीक्षण किए जा जिनके विषय में पश्चिमी संसार तब तक कुछ न जानता आवागमन के लिए राजमार्ग खुले थे जिन पर छायादा अपनी शान दिखा रहे थे। इसके अतिरिक्त पथिकों के अन्य सुविधाएँ भी थीं। झूठ बोलना भारतीय जानते नहीं थे। चोरी का यहाँ नाम तक न था। पराधीनता वालों के लिए सर्वथा विदेशी वस्तु थी। और यह सब समय था, जिस समय का इतिहास भी आज अधिक अन्धकार में पड़ा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्तुमई

श्री धर्मवीर, एम० ए०

(१)

खण्डोबल्लाल की बूढ़ी माता ने सात दिन का व्रत रक्खा किसी प्रकार लड़के और लड़की से, खण्डोबल्लाल और उसकी हिन सन्तुमई से, शनि का ग्रह टल जाए। राजज्योतिषी वाकर पण्डित ने बताया कि कष्ट का कम से कम आधा धार तो दूर हो गया है, बाकी के निवारण के लिए पूजा करनी गी। इसके अतिरिक्त सत्पुरुषों का आशीर्वाद प्राप्त करना हिए। परन्तु आशीर्वाद में भी सावधानता से काम लेना होगा। माता ने दुनिया देखी थी। इसलिए 'आशीर्वाद में भी धानता से काम लेना होगा', इसका अर्थ उसकी समझ में ाया। क्या आशीर्वाद भी कभी दुःख का कारण बन सकता ? वह आशीर्वाद ही क्या जिससे मनुष्य को खतरा हो ? यदि सा ही है तो आशीर्वाद और शाप में क्या फर्क रह गया ?

दिवाकर पण्डित से इस विषय में बुढ़िया ने तरह-तरह के ाल किए। लेकिन वह कोई सन्तोषजनक उत्तर न दे सका। पनी पोथी में उसने जो कुछ पढ़ा था वह सुना दिया। इसकी ाख्या वह कैसे करता जब कि स्वयं उसकी समझ में यह बात आई थी ? परन्तु ज्योतिष की बात को राज-ज्योतिषी भी नहीं समझता। आखिर ज्योतिष है ! बुढ़िया ने एक ढङ्ग से ताना ही तो दिया। दिवाकर पण्डित भी उसे अमृत समझकर गया। बुढ़िया ने अपने बाल धूप में बैठकर सफेद न किए । दिवाकर पण्डित को उसने गुस्सा न होने दिया। किन राजज्योतिषी करता क्या। उसने हार मानना ही क समझा।

माता के कहने पर खण्डोबल्लाल ने मकरसंक्राति के दिन जन के लिए सभी सरदारों को निमन्त्रण दिया। महाराज सेवा में वह स्वयं उपस्थित हुआ। माता के व्रत की बात वेदन की। महाराज इन सामाजिक बातों का महत्त्व चानते थे। इसलिए उन्होंने भी आना स्वीकार कर लिया।

नक्कारे बज रहे थे जब शाम को महाराज की सवारी ण्डोबल्लाल के बागीचे में पहुँची। कुँवारी लड़कियों ने हाराज की आरती उतारी। खास शाही चाँदनी लगी हुई । विभिन्न सरदार पहले ही बैठे हुए थे। थोड़ी देर में अँधेरा जायगा, इसलिए चारों ओर मशालों का प्रबन्ध किया गया । जब ये जलाई गईं तब सारा स्थान जगमगा उठा। सा मालूम देने लगा जैसे कोई छावनी उतरी हुई है।

पूजा के पश्चात् सब को वहाँ ले जाया गया जहाँ लकड़ी चौकियाँ बिछी हुई थीं। ठीक बीच में फूल सजे हुए । जब महाराज अपनी खास चौकी पर विराजमान हुए तब सरदार भी बैठ गए। कुछ तो फूलों की सुगन्ध, कुछ गुलाबजल का छिड़काव, इसके अतिरिक्त हर चौकी के दोनों तरफ अगर-बत्तियाँ। सारी जगह महक रही थी। घर की लड़कियाँ आकर थालियों में भोजन परसने लगीं। इन युवतियों में से एक लोगों को सबसे अधिक अपनी तरफ खींचती थी। वह न सिर्फ तरुणी थी बल्कि सुन्दरी भी। इसके अलावा उसमें शक्ति भी सबसे ज्यादा थी। फुर्ती इतनी थी कि किसी को इस बात का पता न चलता कि वह क्या चीज लाई और कब थाली में रख गई। उसके पाँव जमीन से छूते ही न थे। एक जगह पड़ते ही वह उन्हें उठाकर दूसरी जगह रख लेती। उसके सिर के पीछे बालों के अन्दर मोतियों के फूलों का जो गुच्छा गुँथा हुआ था वह हर एक की दृष्टि को अपने अन्दर जज्ब कर लेता। उसकी नजाकत और मुस्कराहट, दोनों, मिलकर अपना काम कर रही थीं।

यह खण्डोबल्लाल की बहिन सन्तुमई थी।

(२)

महाराज की तबीअत भी रँगीली ही थी। उन्होंने सन्तुमई को एक बार नहीं, दो बार नहीं, कई बार देखा। देखते, लेकिन जी न भरता। भोजन करना एक तरह से भूल ही गए। सरदार हैरान थे। इस कारण नहीं कि वे असली बात को समझते न थे, बल्कि इसलिए कि वे महाराज से किसी और बात की आशा करते थे। परन्तु महाराज किसी अन्य चीज में मस्त थे। उन्हें इसका कुछ पता न चला।

खण्डोबल्लाल दिल-ही-दिल में कुढ़ रहा था, लेकिन कुछ कर न सकता था। उसने सुन रक्खा था कि महाराज की तबीअत ऐसी-वैसी है, लेकिन उसे यह खयाल कभी सपने में भी न आया था कि ऐसे अवसर पर महाराज अपनी दुर्बलता को प्रकट होने देंगे।

विजया-दशमी पर हर बरस महाराज की तरफ से सरदारों को भोजन दिया जाता। खण्डोबल्लाल को महाराज ने अब की खास तौर पर बुलाया।

"अपनी बहिन सन्तु को भी लेते आना," महाराज ने आज्ञा दी।

खण्डोबल्लाल की आँखें जमीन में गड़ी हुई थीं। उसकी जबान पर ताला लगा हुआ था। वह बोलता कैसे ? दिल में तूफान उठ रहा था। परन्तु एक विचित्र-सी शक्ति उसको रोके हुए थी। यहाँ तक कि वह उसे मुँह खोलने की इजाजत भी न देती थी। खण्डोबल्लाल चाहता था कि सारी दुनिया को चकनाचूर कर दे क्योंकि अब इसमें मनुष्य नहीं रहते, पशु ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बसते हैं। लेकिन फिर वही शक्ति उसके इन विचारों को बहुत बुरी तरह से दबा देती।

"बोलते क्यों नहीं, खण्डोबल्लाल?" महाराज ने प्रश्न किया।

वह फिर चुप; मूर्त्ति की तरह खड़ा रहा। आँखें उसकी जमीन की तरफ थीं।

"आखिर बात क्या है?" अबकी महाराज ने जरा और ढँग से कहा।

खण्डोबल्लाल के लिए जरूरी हो गया कि जवाब दे। उसी शक्ति ने खण्डोबल्लाल का मुँह खोल दिया और उसके मुँह से ये शब्द निकले —"जो आज्ञा, महाराज!"

"तो तुम समझ रहे हो न कि मैंने क्या कहा है?" महाराज ने नरम होकर पूछा।

"हाँ महाराज!" मूर्त्ति का मुँह खुला।

"अच्छी बात है।" महाराज के ये शब्द सुनकर खण्डोबल्लाल ने मस्तक झुकाया और उलटे पाँव पीछे हट गया।

"लेकिन देखो!" महाराज ने जोर से कहा तो खण्डोबल्लाल वहीं खड़ा हो गया—"नव वर्ष के दिन हमने जो भोज किया था उसमें सभी सरदार आये थे। उनके परिवार के लोग भी उसमें सम्मिलित हुए थे। परन्तु तुम्हारी बहिन, सन्तु, न आई। इस लिए अब की यह भूल न होनी चाहिए। जाओ।"

(३)

बिजया दशमी में सिर्फ दस दिन बाकी रह गए। खण्डोबल्लाल को इस मुसीबत से छूटने का कोई उपाय नजर न आया।

घर-गृहस्थी छोड़कर संन्यासी हो जाऊँ? लेकिन यदि उधर से कोई और कदम उठा लिया गया तो? फिर इस प्रकार संन्यासी बनना कायरता नहीं है क्या? अपनी जिम्मेदारियों से भागना कायरता नहीं तो और क्या है?

क्यों न सारे परिवार को लेकर राज्य से बाहर हो जाऊँ? लेकिन राजा की बाँहें बहुत लम्बी होती हैं, वे तो मेरे जैसे आदमी को किसी जगह से भी पकड़कर ला सकती हैं।

तब?

सन्तु को जहर क्यों न दे दूँ? क्या तू ऐसा महापाप कर सकता है? यदि तू उसकी रक्षा नहीं कर सकता तो उसके जीवन का अन्त क्यों करता है?

उसका अन्त करने के पश्चात् मैं भी मर जाऊँगा। यह दूसरा पाप होगा। फिर बाकी परिवार कहाँ जाएगा?

इस प्रकार के कितने ही विचार उसके मन में आए। परन्तु वह कोई फैसला न कर सका। यही नहीं, इस बात की खबर वह अपनी बहिन को भी न दे सका। देता भी कैसे? उससे कहता भी क्या? इससे बेहतर तो यह था कि वह अपने मुँह पर कालिख मल ले।

लेकिन न तो तूने कोई तरीका ढूँढ़ा और न सन्तु से कहा कि वह इसका रास्ता निकाले। फिर विजया दशमी चली आ रही है। इसलिए क्या बनेगा तेरा?

मैं ही दुनिया से क्यों न हट जाऊँ? जहाँ ईश्वर अबलाओं की सहायता करता है वहाँ पर इसकी भी कमी लेकिन फिर तू किस मर्ज की दवा है? ईश्वर ने ही तो तुझे सहायता का साधन बनाकर भेजा है।

बाकी सिर्फ चार दिन रह गए। खण्डोबल्लाल की ने बड़ा भयङ्कर रूप धारण कर लिया। वह खाना-पीना गया। माता ने इसका कारण पूछा तो उसने कह दिया "पेट में दर्द है। एक-आध बार नहीं खाऊँगा तो अच्छा जायगा।"

लेकिन सन्तुमई कैसे मानती? बहिन भाई के पीछे पड़ उसने देखा, भाई का मन किसी बात में भी नहीं लग रहा उसने कोई दवा भी तो नहीं खाई। बहिन ने निश्चय कि कि बात मालूम करके दम लेगी।

"किसकी चिन्ता है, भैया?" उसने हँसते-हँसते पूछा

"किसी की नहीं।" भाई ने भी बनावटी हँसी-हँसते जवाब दिया।

"फिर इस तरह आत्म-हत्या क्योंकर रहे हो?"

"आत्महत्या! तुम क्या कह रही हो, सन्तु? क्या आत्महत्या है?"

"और क्या है? न खाना न पीना, न जीने में न में। यह दुनिया ही नहीं, मृत्यु है।"

"मृत्यु!"

"हाँ मृत्यु! माँ पूछती हैं तो आप बताते नहीं। हैं तो सफेद झूठ। मैं पूछती हूँ तो आप छिपाते हैं, ले छिपा सकते नहीं। भला मुझसे भैया भूले हुए हैं! आप आज कुछ और हो गए हैं? जल्दी बताइए दिल बात, नहीं तो मुझे भी आपका अनुकरण करना पड़ेगा। नहीं खाते तो मैं भी बगैर खाये कुछ दिन जिन्दा रह स हूँ। चलिए, दोनों इसकी दौड़ लगाते हैं।"

"सन्तु, तू क्या कह रही है?"

"वही जो आप सुन रहे हैं।"

"इसका मतलब?"

"वही जो इन शब्दों का हो सकता है। मैं कोई रह मयी भाषा तो बोल नहीं रही। यदि आप मेरी बात को मानते हैं तो मैं....."

"नहीं सन्तु, नहीं"; खण्डोबल्लाल नरम पड़ गया— हिम्मत जाती रही—"सन्तु, तू नहीं जानती कि मैं कैसी मु में फँसा हुआ हूँ।"

खण्डोबल्लाल की आँखों से मोटे-मोटे दो आँसू नि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"सन्तु, तूने ठीक कहा है। सचमुच मैं न मरने में हूँ जीने में। कुछ समझ में नहीं आता कि क्या करूँ। करूँ क्या करूँ?"

"आखिर बताते क्यों नहीं आप?" सन्तु ने कड़ककर कहा।

"सन्तु, सन्तु! तू किन कानों से सुनेगी? मैं किस जबान सुना सकता हूँ? अच्छा होता यदि आज तुम्हारे सामने इस तरह बोलने की शक्ति मुझसे छिन गई होती।"

"भैया, आपको क्या हो गया है? दिल की बात क्यों नहीं कहते? वह मेरे विषय में है तो झट से कहिए। आपकी मुसीबत को हल करके मैं यह दिखाऊँगी कि मैं खण्डोबल्लाल की बहिन हूँ।"

"तुम हार जाओगी सन्तु, हार जाओगी।" भाई ऐसे कहा जैसे उसकी हिम्मत का बाँध टूट गया हो।

"आपने क्या फैसला किया है?" उसे चुप देखकर सन्तुमई फिर चिल्लाई।

"बताता हूँ, सन्तु, बताता हूँ।"

"हाँ, तो कहिए, सन्तु भी नरम पड़ गई।"

भाई ने परदा उठाया, सारी बात नङ्गी होकर दोनों के सामने नाचने लगी।

"बस, यही बात है?" सन्तुमई का चेहरा तमतमाने लगा। वह गुस्से के मारे अंगार बन गई। लेकिन घृणा की हँसी हँसते हुए बोली—"इसका इलाज मेरे पास है।"

"क्या?"

"पहले आप तो कहिए कि क्या ऐसा आदमी भी हमारा महाराज हो सकता है?"

"सन्तु!" खंडोबल्लाल की उस शक्ति ने फिर जोर मारा—देखो सन्तु, तू उस आदमी के बारे में ऐसी कोई बात नहीं कह सकती जिसका सम्बन्ध स्वर्गीय छत्रपति महाराज से हो।"

"अच्छा, तो आप ही बताइए कि क्या अपनी प्रजा से कोई राजा इस प्रकार का व्यवहार कर सकता है?"

"इसका उत्तर देना मेरा काम नहीं। अष्ट-प्रधान ही इसका निर्णय कर सकते हैं। हममें से हर एक का काम इस समय इतना ही है कि उस आदमी की आज्ञा का पालन किया जाए जिसे स्वर्गीय छत्रपति महाराज के पवित्र सिंहासन पर बिठला दिया गया है।"

"तब आपका अष्ट-प्रधान क्या सोच रहा है?" सन्तु ने बीच में से उलहना दिया।

"उसे यह बात मालूम है। इसलिए यह पूछना बल्कि सोचना भी मेरा काम नहीं।"

"तब?" सन्तु ने सवाल किया।

"मैं क्या कहूँ?" खण्डोबल्लाल ने जवाब दिया।

"अच्छा, तो मुझे जवाब मालूम है।"

"क्या?" भाई ने पूछा।

"क्या! फिर बताऊँगी; कल बताऊँगी।"

"सन्तु, तू क्या करनेवाली है?" भाई ने मिन्नत करते हुए पूछा।

"भैया, मैं मरनेवाली नहीं हूँ। बस, यही डर था न आपको? इस बारे में निश्चिन्त रहिए। इससे ज्यादा मैं आज कुछ नहीं बता सकती।" सन्तु चुप हो गई।

(४)

गुलाब को हाथी ने पाँव-तले मसल डाला। उसकी सारी कान्ति जाती रही। मद्धम-सी खुशबू तो उससे आ रही थी, परन्तु सौन्दर्य नष्ट हो चुका था।

शाम को सन्तुमई ने थोड़ी-सी औषध ले ली। अन्दर की सफाई हो जाने से शरीर के अन्दर से बहुत-सा मल निकला। शौच-कूप में मिट्टी का बरतन भर गया। बीस बार जाने से मुख का सारा तेज जाता रहा।

अगले दिन सबेरे बहिन ने भाई को बुलाया।

"आज मैं महाराज के दर्शन करना चाहती हूँ।" बहिन ने भाई से कहा।

"तू? महाराज के दर्शन?"

"हाँ, मैं ही महाराज के दर्शन करना चाहती हूँ।"

"क्या तू पगली हो गई है?"

"नहीं, मैं सुजान बन रही हूँ।"

"मैं यह नहीं मानता।"

"देखो भैया!" बहिन ने एक बार फिर बिजली की तरह कड़ककर कहा—"आज तो आपको मुझे महाराज के सामने ले जाना ही होगा।"

"क्यों?" भाई ने बहिन के माथे पर हाथ फेरते हुए धीरे से कहा।

"आपकी मुसीबत, मेरी मुसीबत, परिवार की मुसीबत और महाराज की मुसीबत इसी तरह दूर हो सकती है।"

"तू बावली तो नहीं हो रही?"

"क्या बावले इस प्रकार की बातें किया करते हैं? लेकिन छोड़ो इन बातों को। मेरे लिए पालकी मँगवाओ। मैं महाराज के दर्शन करना चाहती हूँ। मुझे दरबार में जाना ही पड़ेगा।"

"इस अवस्था में तुम कैसे जा सकती हो?"

"इसी लिए तो पालकी मँगवाना चाहती हूँ।"

"पालकी का क्या करेगी? तू उसमें बैठ नहीं सकेगी।"

"पालकी आएगी और मैं उसमें तकिया लगाकर बैठूँगी। जल्दी करो भैया, मैं थक गई हूँ।"

"इसी लिए तो कहता हूँ कि..."

"मैं उठकर चल दूँगी। फिर आप पछताएँगे।"

यह धमकी अपना काम कर गई। घर के नौकरों में से कोई उसी समय पालकी सजाकर ले आए। सन्तुमई उसमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तकियों के सहारे बैठ गई। मिट्टी का वह बरतन भी उसने पास ही रख लिया ताकि अगर कहीं रास्ते में जरूरत पड़ जाए तो तकलीफ न हो।

पूना दो ही कोस था। कहारों को सन्तुमई ने बताया कि पूना में राजवैद्य के यहाँ जाकर इलाज कराना है इसलिए जल्दी चलो।

वे पालकी को लेकर हवा हो गए।

परन्तु जब वे शहर के निकट पहुँचे तो सन्तुमई की ओर से आज्ञा मिली कि पहले महाराज के दर्शन करने होंगे।

अब वे राजमहल में पहुँचे।

"महाराज से बिनती करो" पहरेदारों से कहा गया—"कि सरदार खण्डोबल्लाल की बहिन, सन्तुमई, दर्शन करना चाहती है।"

सभी चकित हो गए जब उन्होंने देखा कि सन्तुमई को महाराज ने एकान्त में ही बुला लिया है।

आज्ञा मिलने पर सन्तुमई को पालकी से बाहर निकालकर तकियों के बल लिटा दिया गया।

"सन्तु!" कहार बाहर चले गए तो महाराज ने पूछा—"तू यह क्या बन रही है? तुझे क्या हो गया है?"

"महाराज!" सन्तुमई ने हँसकर कहा—"मैं आपके लिए एक उपहार लाई हूँ।"

"वह क्या?" महाराज ने प्रसन्न होकर पूछा।"

"वह चीज जिस पर आप उस दिन इतने मस्त हो गए थे," सन्तुमई ने इशारे से कहा—"उस पालकी में रक्खी है। क्षमा कीजिए, मैं कमजोर हूँ इसलिए कृपया आपही वहाँ से उठा लीजिए।"

महाराज पालकी के पास गए तो उनकी नाक नीचे और होंठ इधर-उधर होने लगे। पालकी में मुँह डाला सख्त बदबू आई। झटपट सिर बाहिर निकाल लिया।

"इसका मतलब?" महाराज के तेवर बदल गए—"ए छोकरी, क्या तू जानती है कि तू किसका अपमान कर रही मेरा ही नहीं, छत्रपति महाराज के सिंहासन का भी अनादर रही है।"

"मुझे क्षमा किया जाय, महाराज!" यह कहकर एक पुड़िया खोली और चूर्ण अपनी जबान पर रख लिया।

जबान पर छाले पहले ही पड़े हुए थे। जहर थोड़ी में खून के अन्दर जा पहुँचा।

सन्तुमई का सिर पहले सिरहाने के सहारे टिका हुआ अब उसकी गरदन बाईं तरफ को लुढ़कने लगी।

"अबोध बालिका, तूने यह क्या किया है?" महारा उसके पास पहुँचे।

सन्तुमई की आँखें एक क्षण के लिए खुलीं। शाद अन्तिम सन्देश देने में अपनी मालकिन की सहायता चाहती थीं। सन्तुमई के मुँह से ये शब्द निकले—"बालिका ने क्या किया है? कर्त्तव्य मीठा था। उसके चुकाए हैं।"

थोड़ी देर बाद राजमहल से एक लाश निकली जिसके में दो आदमियों के सिवा किसी को कुछ न मालूम था कि मृत्यु कैसे हुई।

कहते हैं उस दिन के बाद महाराज ने जिस किसी प्र देखा, पहले उसकी चरण-रज का ध्यान किया।

केवल

पण्डित नारायणलाल कटरियार

तेरी माँग फूल की मेरे पास आज चिनगारी केवल।
आगे बढ़ो बहुत लम्बी है, यह हँसने-रोने की दुनिया,
गिरि पर चढ़ो बहुत लम्बी है यह जादू-टोने की दुनिया,
सुन्दर-सुन्दर सँकरी गलियों में सुन्दरता की आबादी,
सदा जगमगाती ही रहती यह चाँदी-सोने की दुनिया,
सींच रहा हूँ तीखे-तीखे काँटों की मैं क्या री केवल।
सारी रात किसी के मन में मूक चाँद खलता रहता है,
सारी रात किसी के मन में मूक चाँद जलता रहता है,
दामन छुड़ा अमा से उस पतली गोरी पूनम के पीछे
सारी रात किसी के मन में मूक चाँद चलता रहता है,
सुप्त पड़ी मेरे पैताने रहती है अँधियारी केवल।

तारों से कुछ कहकर मेरी वीणा की झङ्कार सो रही,
मुझसे कुछ कहकर ही मेरी असफल विकल पुकार सो रही,
डालों से कुछ कहकर काँटे चले गली की धूल छानने,
जग से कह कुछ विटप-ठूँठ पर है चुपचाप बहार सो रही,
जाग रहा हूँ एकाकी मैं लिए-दिए लाचारी केवल।
दिया घटा ने तप्त धरा को अपनी बूँद निशानी कहकर,
दिया शैल ने सरिताओं को अपना लहू रवानी कहकर,
मेरी चाहें खड़ी रहीं चौराहे पर आँचल फैलाए,
दिया भरी नदियों ने सागर को मन और जवानी कहकर,
दो क्षण में मिट जानेवाली मुझको मिली खुमारी केवल।
तेरी माँग फूल की मेरे पास आज चिनगारी केवल।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविराज सदानन्द और उनका जैमुनि पुराण

श्री भगवतीप्रसाद सिंह, बी० ए०

हिन्दी-साहित्य के आधुनिक इतिहासों में सदानन्द नाम के कवियों का नाम आता है। सबसे पहले मिश्र-बन्धुओं इस नाम के एक कवि का उल्लेख अपने 'विनोद' में किया था :—

"इस कवि के केवल तीन छन्द हमने देखे हैं। इसके जीवन-चरित्र का हमें कुछ भी वृत्तान्त ज्ञात न हो सका पर इसका समय १६८५ के आस पास है। इसकी कविता सरस और अच्छी है।"

इन सदानन्द का एक कवित्त भी उन्होंने उद्धृत किया है :—

सोहै सेत सारी मञ्जु मोतिन किनारवारी,
भीर मैं निहारी जाति सङ्ग सखियान के।
'सदानन्द' सुन्दरी न केाऊ सम रूप जाके,
आगन की आभा सी न आभा ससिभान के
दृगन की केार लागी कानन की छोर जैसी,
भृकुटी मरोर जोर जोरे धनुबान के।
धीरी चालवारी मुख बीरी लालवारी,
वह पीरी सालवारी रही नीरी अँखियान के॥

इस कवित्त के अतिरिक्त उनका और केाई ग्रन्थ न मिलने हम उनके जीवन सम्बन्धी घटनाओं पर अपना मत प्रकट नहीं र सकते।

दूसरे सदानन्द हैं 'रासा भगवन्तसिंह' के रचयिता, अठारहवीं ताब्दी के प्रसिद्ध वीर तथा काव्यप्रेमी असेाथर के राजा गवन्तराय खीची के आश्रित कवि। भगवन्तसिंह स्वयं कविता रते थे। उनके 'हनुमन्त पचीसी' नामक एक ग्रन्थ का उल्लेख ुक्ल जी' ने अपने 'हिन्दी-साहित्य के इतिहास' में किया है। हीं के आश्रय में रहकर सदानन्द ने प्राचीन वीरगाथा-पद्धति अपने आश्रयदाता का यशोगान 'रासा भगवन्तसिंह' में किया इस पुस्तक का विषय है एक इतिहास-प्रसिद्ध युद्ध, जो ा भगवन्तसिंह तथा अवध के नवाब बुर्हान-उल-मुल्क के बीच १७९३ में हुआ था :—

संवत् सत्रह त्रानवे, कातिक मङ्गलवार।
तिथि नौमी संग्राम भो, विदित सकल संसार॥
(रासा भगवन्तसिंह, छं० १०४)

उपर्युक्त युद्ध में ही दुर्जनसिंह के हाथ संग्रामभूमि में वन्तसिंह मारे गए थे। उक्त ग्रन्थ में भी सदानन्द ने ने विषय में कुछ नहीं लिखा है। उसकी वर्णन-शैली से ल इतना पता चलता है कि वे अपने आश्रय-दाता के सम-सामयिक थे और उन्होंने आँखों देखी घटनाओं का उल्लेख किया है। इस पुस्तक में वीरकाव्योपयुक्त १७ प्रकार के छन्दों का उपयेाग किया गया है। छन्द संख्या १०४ है। इसकी भाषा तथा वर्णनशैली पर आगे विचार किया जाएगा।

इधर प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज करते हुए मुझे सदानन्द नाम के ही एक कवि-द्वारा रचित 'जैमुनि पुराण' नामक एक प्रबन्ध-काव्य उपलब्ध हुआ है जिसमें ग्रन्थकार ने पाण्डवाश्वमेध की कथा बड़े साइज के ३१० पृष्ठों में एक उसी नाम के संस्कृत ग्रन्थ के आधार पर कही है। ग्रन्थ के मङ्गलाचरण में कवि ने अपना तथा अपने आश्रयदाता का थोड़ा-सा परिचय दिया है। उसी के आधार पर आगे हम कवि की जीवन-सम्बन्धी घटनाओं पर प्रकाश डालेंगे।

जन्म-स्थान

अपने जन्म-स्थान का वर्णन करते हुए सदानन्द लिखते हैं :—

मौरावैं परगन नगर, दरुबारो तेहि ठौर।
बसत सुबस तेहि ठौर ही, 'सदानन्द' कविमौर॥
(जैमुनि पुराण, पृ० १)

मौरावाँ उन्नाव जिले में एक प्रसिद्ध स्थान है। सदानन्द यहीं के रहनेवाले थे। 'दरुबारो' शब्द के अर्थ के विषय में मुझे यह भ्रम होता है कि मौरावाँ परगने में इस नाम का कोई गाँव था अथवा इसका तात्पर्य किसी तत्कालीन राजा के दरबार से है। इनके माता-पिता के विषय में कुछ वृत्तान्त मालूम न हो सका।

जाति

सदानन्द ने स्पष्ट रीति से कहीं अपनी जाति के विषय में नहीं लिखा है। पूरे ग्रन्थ में केवल तीन छन्द ऐसे हैं जिनके द्वारा इनकी जाति के निर्णय में सहायता मिलती है। आश्रयदाता के अपने प्रति किए गए उपकारों का वर्णन करते हुए ग्रन्थारम्भ में वे लिखते हैं :—

ग्राम दयेा अरु भूमि दै, बाजि बिबिध नगसाज।
पुनि सासन यहि दयेा, 'सदानन्द' कविराज॥
(जै० पु०, पृ० १)

श्री सेवा परसाद नृप, सुनी सकल चित लाय।
सदानन्द कविराज पर, कीन्ही कृपा बनाया॥
(जै० पु०, पृ०, ३१०)

ऊपर दोनों दोहों में 'कविराज' शब्द सदानन्द की काव्य-प्रतिभा का बोधक है अथवा उनकी जाति का, इस स्थल पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह एक विचारणीय बात है। अपने मूल अर्थ में 'कविराज' शब्द यद्यपि श्रेष्ठ कवियों का ही परिचायक था, परन्तु वीरगाथा काल से ही वीरकाव्यों के रचयिता चारणों तथा ब्रह्मभट्टों का उक्त काव्य-पद्धति पर एकाधिकार हो जाने से, 'कविराज' शब्द उस जाति-विशेष का वाचक हो गया, जिसका कार्य अधिकांशतः राजपूत राजाओं के आश्रय में रहकर उनके युद्ध तथा प्रेमकथाओं का वर्णन करके जीविकोपार्जन करना था। आज-कल बहुधा इस शब्द का प्रयोग इसी अर्थ में किया जाता है। इसके दुरुपयोग की सीमा यहाँ तक बढ़ गई है कि अनपढ़ बञ्जारे भी, जो एक विशेष लय से कवित्त पढ़कर भीख माँगते फिरते हैं, 'कविराज' नाम से सम्बोधित किए जाते हैं। उपर्युक्त दोहों में 'कविराज' शब्द दोनों अर्थों में प्रयुक्त हुआ है—मूल अर्थ में सदानन्द की काव्य-प्रतिभा का और रूढ़ अर्थ में उनकी जाति का परिचायक है। इसके और भी प्रमाण मिलते हैं।

ग्रन्थ के अन्त में भी कवि ने अपने आश्रयदाता की उदारता का वर्णन जिस प्रकार किया है, उससे हमारे सदानन्द के जाति-विषयक अनुमान की पुष्टि होती है।

अस्व बसन भूषन दयो, ग्राम नाम सुभ ठौर।
महापात्र सासन दियो, कह्यौ बहुरि कवि मौर॥

यहाँ पर 'ग्राम-नाम' से अभिप्राय आश्रयदाता के नाम के ग्राम से है। सदानन्द के आश्रयदाता थे गोंडा के राजा शिव-प्रसादसिंह। बहुत खोज करने पर 'सिवानगर' नामक एक गाँव का पता चला जो १८वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में गोंडा राज्यान्तर्गत ही था, परन्तु १८५७ ई० के गदर में उक्त महराज के पौत्र राजा देवीबख्शसिंह बागी हो गए। अतएव उनका राज्य अँगरेजी राज्य में मिला लिया गया। अब वह गाँव वर्तमान गोंडा जिले की उतरौला तहसील में है। उस गाँव में ब्रह्मभट्ट अथवा भाट लोगों की संख्या बहुत है। वे लोग इस बात का समर्थन करते हैं कि उनके पूर्वजों को वह गाँव गोंडा के राजा से माफी के रूप में मिला था। ऊपर लिखे हुए दोहे में एक दूसरा विचारणीय शब्द है 'महापात्र'। सदानन्द का तात्पर्य है कि 'महापात्र' की उपाधि उनको अन्य पुरस्कारों के साथ ही महाराज शिवप्रसादसिंह ने दी थी। यह उपाधि प्राचीन काल से ही बन्दीजनों, चारणों अथवा ब्रह्मभट्टों को उनकी काव्य-शक्ति पर प्रसन्न होकर काव्य-प्रेमी राजा-महाराजा देते रहे हैं। इसके प्रमाण-स्वरूप महापात्र नरहरि बन्दीजन का नाम उल्लेखनीय है। 'महापात्र' की उपाधि उन्हें अकबर के दरबार से मिली थी। जाति के वे बन्दीजन ही थे। सदानन्द की जाति के विषय में इतनी विवेचना कर चुकने के पश्चात् अब हम निश्चित रूप से कह सकते हैं कि वे ब्रह्मभट्ट जाति के थे।

आश्रयदाता

जैसा हम पहले कह चुके हैं, सदानन्द के आश्रयदाता राजा मंगलसिंह के पुत्र गोंडा के राजा शिवप्रसादसिंह थे। ये अवध में १८५७ ई० के गदर में अँगरेजों के विरुद्ध लेनेवाले, इतिहास-प्रसिद्ध विद्रोही राजा देवीबख्श प्रपितामह थे। स्थानीय इतिहासों में इनका राज्यका १८०० के लगभग लिखा हुआ मिलता है। राजा शि सिंह कई युद्धों के विजेता थे, जिनमें अमोढ़ा का युद्ध अधिक प्रसिद्ध है। इसमें उन्होंने अपने पिता मंगल छल से वध करनेवाले, अमोढ़ा राज्य के एक उत्तराधिक पराजित करके उसके राज्य पर अधिकार कर लिया था। वीर योद्धा होने के साथ ही साथ वे धर्मपरायण भी थे। शासन के आरम्भिक वर्षों में अनेक विजयों-द्वारा अपना अ दृढ़ करके उन्होंने राज्य में शान्ति स्थापित की। इसके अ उन्होंने अपने जीवन के शेष वर्ष तीर्थस्थानों के भ्रमण और अनेक धर्मानुष्ठानों के करने में बिताए। उस समय की अनेक असुविधाओं के होते हुए भी उन्होंने भारत के प्रसिद्ध तीर्थों का भ्रमण किया और उसके पश्चात् जब वे आए तो नगर के पश्चिम ओर एक बहुत विस्तृत जल खुदवाकर उसके मध्य में दो द्वीपों पर सभी तीर्थों की स्थ की। ये अब तक भग्नावस्था में वर्तमान हैं। सदानन्द शिवप्रसाद सिंह के दरबार में कब आए, इसके लिखित नहीं मिलते। इतना अवश्य कहा जाता है कि तीर्थाटन जब राजा साहब कानपुर उन्नाव होते हुए गोंडा लौट उसी समय उन्नाव के पास उनकी सदानन्द से भेंट हुई थी काव्य-प्रेमी महाराज उनको अपने साथ ही गोंडा ले आए ऊपर हमने सदानन्द के आश्रयदाता राजा शिवप्रसाद के विषय में जो कुछ लिखा है उसका अधिकांश गोंडा के डि गजेटियर से लिया गया है। अब हम उपर्युक्त तथ्यों का करनेवाले कुछ उपयुक्त उद्धरण सदानन्द के 'जैमुनि पु से देते हैं :—

दो०—मंगलसिंह नरेस सुत, नृप सेवा परसाद
आगिल कथा कहौं बहुरि, भयो जथा सम्बाद॥

× × ×

चौ०—सिवाप्रसादसिंह महि ईसा, कहत चरित पुनि नन्द कवि

× × ×

दो०—पाँच कोटि दानव प्रबल, करत भयावन रूप
माया छल बल युद्ध मैं, सुनु गोंडा मनि भूप।

कवि ने अपने आश्रयदाता की उदारता की ही नहीं देश की भी मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है जिसमें उसका फैला हुआ था।

दोहा—देस सुभग सुरुवार में, सुबस बसत सब लोग
सीलवन्त सरबग्य अरु*, बिस्नु भक्ति के जोग।

* 'बिस्नु भक्ति' से यहाँ कवि का अभिप्राय राममक्ति है जिसका अवध प्रान्त में, विशेषकर अयोध्या के आ एकाधिपत्य-सा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगे चलकर कवि ने अपने आश्रयदाता के शौर्य तथा पराक्रम का वर्णन प्राचीन परिपाटी के अनुसार बड़े रोचक ढङ्ग से किया है :—

दो०—जग प्रसिद्ध गोंडा नगर, दान धर्म मरजाद।
प्रबल बिसेनो इन्द्रभुव, नृप सेवा परसाद॥
तेग त्याग पूरन पुहुमि, रवि प्रताप सम सोय।
नन्द सुकवि तिन थापियो, यह जानत सब कोय॥

इस प्रकार शिवप्रसाद सिंह के पराक्रम तथा कीर्ति का गान करते हुए सदानन्द ने उस पुरस्कार का भी वर्णन किया है जो उक्त महाराज ने प्रसन्न होकर कवि को भेंट किया था :—

दो०—ग्राम दयो अरु भूमि दै, बाजि विविधि नग साज।
पुनि सासन यहि विधि दियो, सदानन्द कविराज॥

सदानन्द की जाति पर विचार करते हुए हम पहले कह चुके हैं कि उपर्युक्त दोहे में जिस ग्राम का उल्लेख है वह 'सनाम सुभ ठौर' के अनुसार 'सिवानगर' नामक ग्राम गोंडा के अन्तर्गत आज तक वर्तमान है।

सदानन्द ने यह भी स्वीकार किया है कि यद्यपि 'कविराज' की उपाधि उनके आश्रयदाता ने उन्हें पहले ही दी थी परन्तु 'जैमुनि पुराण' का निर्माण उन्होंने बाद में महाराज शिवप्रसाद सिंह की गुणग्राहकता तथा दानवीरता से प्रसन्न होकर किया—

दो० तब कवि निज मन मुदित ह्वै, कीनो यहै विचार।
राजनीति संजुत भगति, करौं कथा विस्तार॥

ज्ञानार्जन

समूचे ग्रन्थ में कहीं भी कवि ने एक भी ऐसी पंक्ति नहीं लिखी है जिसमें उसके विद्योपार्जन की ओर संकेत हो अथवा उसके काव्य-गुरु का उल्लेख हो। अपने पूर्ववर्ती प्रबन्ध-काव्य-लेखकों की तरह सदानन्द ने ग्रन्थारम्भ में अपनी काव्यशास्त्र अल्पज्ञता प्रदर्शित करते हुए अपने को पुस्तकज्ञान-शून्य बताया है—

दो०—हरि चरित्र अवगाह अति, पार न पावत वेद।
लघुमति मैं जानौं न कछु, छन्द अलंकृत भेद॥

ऐसी दशा में एक प्रबन्ध-काव्य लिखने की धृष्टता को क्षमा करने के लिए कवीश्वरों से प्रार्थना भी की गई है :—

दो०—दीपदान ते रबि जथा, अति प्रसन्न सुख साज।
लघु कविता लखि आदरैं, महा सुकवि सिरताज॥
जै कवि परम प्रवीन बहु, उर हरि प्रेम फुरान।
दूषन तजि भूषन सुदै, भूषित करब पुरान॥

सदानन्द के ज्ञानार्जन के बहिःसाक्ष्यों के अभाव में भी उनके काव्य का अनुशीलन करनेवाले इस बात पर विश्वास नहीं कर सकते कि वे काव्यशैली से परिचित नहीं थे। 'जैमुनि पुराण' की प्रांजल भाषा तथा उसकी मनोहर वर्णन-शैली ही इस बात की सूचायक है कि वे भाषा की गति विधि से पूर्णतया परिचित थे। इसके साथ ही पूरे प्रबन्धकाव्य में १६ प्रकार के छन्दों का उपयोग यह पुष्ट करता है कि कवि छन्दःशास्त्र का पूर्ण ज्ञाता था। भुजङ्गप्रयात, संखनारी, पद्धरी, मुक्तादाम तथा संजुता इत्यादि छन्दों की सहायता से किस प्रकार कवि ने वर्णित विषय का साधारणीकरण किया है यह "सदानन्द की काव्य-पद्धति" की विवेचना में स्पष्ट किया जायगा।

रचना-काल तथा लेखन-स्थान

'जैमुनि पुराण' का रचना-काल सदानन्द ने ग्रन्थ के मङ्गलाचरण में इस प्रकार दिया है :—

दो०—संवत दस अरु आठ सै, पुनि दस अधिक प्रमान।
सावन सितगुरु-पञ्चमी, कीन्हों ग्रन्थ बखान॥

× × ×

दो०—नगर और गोंडा नगर, देखि परे दुति मन्द।
तहाँ बैठि लेखन कियो, 'सदानन्द' आनन्द॥

इससे यह स्पष्ट है कि सं० १९१० की श्रावण कृष्णा गुरु पञ्चमी को सदानन्द ने गोंडा में ही लिखकर समाप्त किया।

अध्यायों के प्रसङ्गानुसार विभाजन तथा प्रत्येक अध्याय के अन्त में—

चौ०—शिवाप्रसाद महीपति बोले, सदानन्द कहु चरित अमोले।

× × ×

चौ०—श्री सरवार देस महँराजा, आगिल चरित ऐस सुभ साजा।

की तरह के वाक्यों के प्रयोग से तो यह विदित होता है कि कवि ने, अपने आश्रयदाता को ग्रन्थ निर्माण करते हुए थोड़ा-थोड़ा करके सुनाया।

दो०—श्री सेवा परसाद नृप, सुनी सकल मन लाय।
सदानन्द कविराज पर, कीन्हीं कृपा बनाय॥

अन्त में ग्रन्थ समाप्त हो जाने पर उन्हें पढ़ने के लिए समर्पित कर दिया।

"इतिश्री महाभारथे अस्वमेध महात्मने राजा युधिष्ठिर यज्ञ बर्ननं नाम छप्पन अध्यायः। श्रीमन्महाराजाधिराज सिवाप्रसाद सिंह पठनार्थे समर्पेषु सुभमस्तुः।"

परन्तु इसका एक और कारण हो सकता है। सम्भव है कवि ने जैमुनि का, जिन्होंने जनमेजय को उक्त कथा सुनाई है, अनुगमन करते हुए अपने को वक्ता - जैमुनि—के तथा शिवप्रसाद सिंह को श्रोता—जनमेजय—के स्थान पर रखकर ऐसा किया हो। कथा-प्रवाह में कहीं-कहीं यह बात स्पष्ट हो गई है :—

दो०—सुनु जनमेदय भूप अब, जैमुनि कहत प्रसङ्ग।
चले धाम जय काज कै, मन महँ परम उमङ्ग॥

× × ×

दो०—जनमेदय नरनाह ते, जैमुनि कथा चलाय।
जोबनाथ आगमन सुनि, धर्मराज सुख पाय॥

'सदानन्द' और 'नन्द कवि'

जैमुनि पुराण में सदानन्द ने अपने नाम के दो रूपों का प्रयोग किया है—'सदानन्द' और 'नन्द कवि' अथवा 'नन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'सुकवि'। मेरा यह विचार है कि ऐसा परिवर्तन केवल छन्दानुरोध से ही किया गया है। काव्य-प्रवाह में अनेक छन्दों के बीच 'सदानन्द' शब्द पूरा न बैठने के कारण कवि ने उसके दो भाग करके केवल अन्तिम ले लिया है और उसमें 'कवि' अथवा 'सुकवि' जोड़कर अपने उद्देश्य की पूर्ति की है।

सदानन्द तथा उनके आश्रयदाता का इतना परिचय दे लेने के पश्चात् अब हम इस विषय पर आते हैं कि पूर्व-कथित 'रासा भगवन्तसिंह' के रचयिता सदानन्द तथा 'जैमुनि पुराण' के लेखक 'सदानन्द कविराज' में क्या सम्बन्ध है। मेरा पहले ऐसा विचार था कि 'जैमुनि पुराण' के अतिरिक्त सदानन्द की और कोई पुस्तक उपलब्ध नहीं है। परन्तु इधर 'नागरी-प्रचारिणी पत्रिका' की पुरानी फाइलों को उलटते हुए मुझे बाबू ब्रजरत्नदास, बी० ए०, एल्-एल० बी०, का 'भगवन्तराय खीची' शीर्षक एक लेख मिला जिसमें उन्होंने असोथर के राजा भगवन्तराय खीची के आश्रित कवि 'सदानन्द'-द्वारा रचित एक खण्ड-काव्य 'रासा भगवन्तसिंह' को उद्धृत किया है। उसकी भाषा, वर्णन-शैली और कवि के आविर्भाव-काल पर विचार करते हुए मुझे दोनों काव्यों (जैमुनि पुराण तथा रासा भगवन्तसिंह) में जिन बातों में साम्य दिखलाई पड़ा, उनका उल्लेख हम नीचे करते हैं :—

१—दोनों कवियों का आविर्भाव-काल एक ही है।

२—दोनों वीरकाव्य-लेखक हैं। एक ने 'रासा भगवन्तसिंह' नामक एक खण्डकाव्य और दूसरे ने 'जैमुनि पुराण' नामक एक प्रबन्ध-काव्य की रचना की।

३—दोनों ने दो समान नामों से कविता की है—'सदानन्द' तथा 'नन्दकवि'।

४—दोनों ने एक ही भाषा अर्थात् पूर्वी अवधी में रचना की है।

आगे हम इन्हीं विषयों पर स्वतन्त्र रूप से विचार करेंगे।

आविर्भाव-काल

'जैमुनि पुराण' के रचना-काल का विवेचन करते हुए हम पहले कह चुके हैं कि सदानन्द कविराज गोंडा के महाराज शिवप्रसादसिंह के आश्रय में सं० १८१० के लगभग रहते थे। यही काल उक्त पुस्तक की रचना का भी है। 'रासा भगवन्तसिंह' के रचयिता सदानन्द ने भी ग्रन्थ के अन्त में उस घटना का समय दिया है जो उनके काव्य का विषय है।

दो०—संवत् सत्रह त्रानवे, कातिक मङ्गलवार।
तिथि नौमी संग्राम भो, विदित सकल संसार॥

इसका एक और भी पाठ दिया गया है :—

दो०—संवत् सत्रह सौ सतानवे, कातिक मङ्गलवार।
सित नौमी संग्राम भो, विदित सकल संसार॥

गणना करने पर प्रथम पाठ के अनुसार भगवन्तसिंह के जाने की तिथि १४ अगस्त सन् १७३५ ई० तथा द्वितीय से १८ अगस्त सन् १७४० ई० ठहरती है। इस पाठ कारण अन्तर केवल पाँच वर्ष का पड़ता है। यदि दूसरे को हम शुद्ध मानें तो दोनों पुस्तकों ('जैमुनि पुराण' 'रासा भगवन्तसिंह') की रचना में अन्तर केवल १३ पड़ता है, प्रथम पाठ से १७ वर्ष का। हमारे विचार से दोनों काव्यों की रचना एक ही सदानन्द ने की है। प्रश्न यह उठता है कि यदि ऐसा है तो दोनों ग्रन्थों के रचना में इतना अन्तर क्यों पड़ता है? इसका निराकरण इस हो जाता है कि 'रासा भगवन्तसिंह' में ऐसा कहीं उल्लेख है जिससे प्रकट होता हो कि यह सदानन्द की अन्तिम है। इसके अतिरिक्त सदानन्द कविराज के यथाप्राप्त जीव से भी यह पता चलता है कि गोंडा आने के पूर्व वे किसी के आश्रय में रहते थे। गोंडा के राजवंश के सम्पर्क राजा शिवप्रसाद सिंह के शासनकाल के अन्तिम दिनों में अ अपने आश्रयदाता के पिता मङ्गलसिंह के केवल नाम का उ उन्होंने किया है। उनके यश तथा वीरतापूर्ण कार्यों की संकेत तक नहीं किया गया। यही नहीं, स्वयं शिवप्रसाद के जीवन की महत्त्वपूर्ण घटनाओं का, जिनमें अमोढ़ा क तथा तीर्थाटन और तीर्थों की 'सागर' में स्थापना मुख्य वर्णन न करके उन्होंने अपने आश्रयदाता की धर्मभाव तृप्त्यर्थ एक पौराणिक कथा को अपने काव्य का विषय क यह एक विचारणीय बात है। विचार करने पर इ निष्कर्ष निकलते हैं। एक यह कि कदाचित् शिवप्रसाद आश्रय में वे उस समय आए हों जब उनके युद्धों का अ गया था और राज्य में शान्ति स्थापित हो चुकी थी। काव्य लिखने के लिए ऐसा ही समय उपयुक्त होता है। यह कि सदानन्द जिस समय गोंडा आए उस समय उनकी काफी हो चुकी थी। अपने आश्रयदाता का यशोगान एक धार्मिक विषय का चुनना ही इसका प्रमाण है। पुराण' का कथानक सदानन्द कविराज ने स्वयं चुना था। कथन की पुष्टि के लिए उक्त ग्रन्थ का निम्नाङ्कित दोहा किया जा सकता है :—

दो०—तब कवि निज मन मुदित ह्वै, कीनो यहै विचार।
राजनीति सञ्जुत भगति करौं कथा विस्तार॥

इन तथ्यों पर विचार करने पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँ हैं कि सदानन्द कविराज गोंडा आने के पूर्व किसी रा आश्रय में अवश्य थे जहाँ उन्होंने अपने जीवन का अधिक बिताया। सम्भव है, वह समय भगवन्तराय खीची बीता हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२ – वीरकाव्य-लेखक

एक धार्मिक विषय चुनते हुए भी सदानन्द कविराज ने अपनी प्रवृत्ति के अनुसार यह ध्यान रक्खा कि उसमें वीररस प्रधान हो। पाण्डवाश्वमेध का कथानक इसके लिए उपयुक्त था, अतएव वही काव्यरूप में लेखनीबद्ध हुआ। इसके साथ ही जब हम 'रासा भगवन्तसिंह' पर विचार करते हैं तो उसमें भी 'युद्ध-वर्णन', जो वीरकाव्य का एक प्रधान अङ्ग है, मुख्य पाते हैं। भेद केवल इतना है कि जहाँ 'रासा भगवन्तसिंह' में एक अन्य राजा के वीरतापूर्ण कार्यों की प्रशंसा में ग्रन्थ-रचना हुई, वहाँ सदानन्द कविराज ने 'जैमुनि पुराण' में विश्वविख्यात महाभारत के विजयी, पाण्डवों से सम्बद्ध अश्वमेध में भाग लेने-वाले यौवनाश्व, बभ्रुवाहन, चन्द्रहास तथा वृषकेतु, इत्यादि वीरों के शौर्य तथा पराक्रम के गीत गाए।

३—नाम-साम्य

वैसे तो दोनों ग्रन्थों में प्रयुक्त कवि के प्रसिद्ध नामों में साम्य है ही, काव्य में आए हुए नामों में भी समानता है। दोनों ग्रन्थों में 'सदानन्द' तथा 'नन्द कवि' अथवा 'नन्द सुकवि' के नाम से छन्दानुरोध के कारण भिन्न-भिन्न छन्दों में कविता की गई है। इसके उदाहरण दोनों ग्रन्थों से दिये जाते हैं :—

'रासा भगवन्तसिंह' से

भो०—यहि विधि जाइ नवाब जू, 'सदानन्द कवि' धीर।
सहित चमू यलगार ही, पहुँचे सुरसरि तीर॥

× × ×

क०—प्रात चले चतुरङ्ग चमूधर
रेनु उड़ी तम भानु छिपानो।
कम्पत कच्छ सबै अवनी
कहि 'नन्द कवी' मन इन्द्र डेरानो॥

'जैमुनि पुराण' से

—सिवाप्रसाद महीपति बोले, 'सदानन्द' कहु चरित अमोले।

× × ×

—केहि भाँति दान प्रमान अरु सनमानि दुजवर चेत सों।
'कविनन्द' बूझत जोरि कर, यह चरित कहु केहि हेत सों॥

× × ×

४—भाषा तथा छन्द-साम्य

उपर्युक्त दोनों ग्रन्थों की भाषा पूर्वी अवधी है। 'जैमुनि पुराण' तथा 'रासा भगवन्तसिंह' दोनों ग्रन्थों में उक्त भाषा की विशेषताएँ समान रूप से पाई जाती हैं उनके उदाहरण नीचे दिये जाते हैं :—

१—उकार-बहुला प्रवृत्ति

जै० पु० से—

(१) बोले कुस सुसुकाय मृदु, अब जूझे सब वीर।

× × ×

(२) छत्री ह्वै कै सोकु बढ़ावै,
नरकहु मँह सोइ ठवरु न पावै।

रा० भ० से—

यक विप्र कहै विधि दण्डु विताइकै
आपु कहैं अबहीं अबहीं।

इसके अतिरिक्त दोनों ग्रन्थों में अवधी की प्रकृति के अनुसार ऐसे शब्द प्रचुर मात्रा में मिलते हैं जो अयोध्या के आस-पास विशेष रूप से प्रयोग में लाए जाते हैं। कुछ ऐसे भी शब्द हैं जो उन्नाव तथा रायबरेली के अधिकांश भाग में बोली जानेवाली बैसवाड़ी के हैं।

रा० भ० से—

सुगले भ्रम भीति न साँस लई।
नृप साँग हनी उहि पार गई॥

जै० पु० से—

हरखी ऐस सुनत सुख पाई।

× × ×

हमहूँ करि तीरथ आउब वैस।

अवधी भाषा के इन प्रयोगों के अतिरिक्त उपर्युक्त दोनों ग्रन्थों में समान रूप से वीरकाव्य में प्रयुक्त होनेवाले द्वित्व वर्णों का पर्याप्त मात्रा में प्रयोग किया गया है।

जै० पु० से—

जहँ पत्थ वीर समत्थ स्थित दूत खबरि जनायऊ।
सुत सुमति वीर बबूरवाहन मिलन सादर आयऊ॥

× × ×

भु०—सुर्यो न वृषकेत मण्डी लराई।
तबै वीर बब्बूर सैना हलाई॥
भये झाँझरे बान कम्मान छेदे।
किते मण्डलं भानु को जाय भेदे॥

रा० भ० से—

असि हत्थ गहि समरत्थ ज्यों
किय पत्थ पौरुष ना चलौ।
भगवन्त है विकराल सिंह
अराति मृग सादति दलौ॥

× × ×

सज्जे सुबीर बज्जे निसान।
लज्जे सुरेस भज्जे गुमान॥
फुट्टो सुमेर टुट्टे अराति।
कुट्टो कितेक लिद्दे नसाति॥

भाषा के साथ ही यदि उपर्युक्त दोनों ग्रन्थों में प्रयुक्त छन्दों की समानता पर भी यहाँ हम विचार करते चलें तो अप्रासङ्गिक न होगा। जैमुनि पुराण में १७ प्रकार के तथा रासा भगवन्तसिंह में १६ प्रकार के छन्द प्रयुक्त हुए हैं :—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैमुनि पुराण	रासा भगवन्तसिंह
१—दोहा	,,
२—पद्धरी	,,
३—सङ्खनारी	,,
४—गीतिका	,,
५—त्रोटक	,,
६—भुजङ्गप्रयात	,,
७—त्रिभङ्गी	,,
८—चौपाई	कवित्त
९—चामर	लीलावती
१०—सोरठा	छप्पै
११—सञ्जुता	मत्तगयन्द
१२—सारङ्गिनी	कुण्डलिया
१३—कन्दो	रूप घनाक्षरी
१४—मुक्तादाम	चन्द्रकला
१५—तोमर	ससिवदना
१६—हरि गीतिका	सर्वकल्यान दण्डक
१७—पद्धटिका	

ऊपर दी हुई सूची के अनुसार जै० पु० तथा रा० भ० में सात छन्द समान रूप से पाये जाते हैं; शेष नौ छन्दों में विभिन्नता है उसका कारण मेरे विचार में यह जान पड़ता है कि कवि ने अपने आरम्भिक प्रयास में वीरकाव्य के लिए जिन १६ प्रकार के छन्दों को चुना उसमें जिन छन्दों में उसे पूर्ण सफलता मिली उन्हीं का दूसरी बार भी उपयोग किया गया शेष का त्याग कर अपनी नवीनता-प्रेमी प्रकृति के सन्तोषार्थ दूसरे ९ प्रकार के छन्दों का समावेश किया। इसे हम रीतिकाल का ही प्रसाद मानते हैं। हाँ केशव-प्रवृत्ति के विरुद्ध सदानन्द ने छन्दों का प्रयोग रसानुकूल भाषा तथा भावों को व्यक्त करने के लिए उपयुक्त स्थलों पर किया है, इस पर हम आगे विचार करेंगे।

पूर्वकथित दोनों ग्रन्थों की भाषा में बहुत कुछ समानता होते हुए भी कुछ विभिन्नता है। इस विषय में पहली बात जो खटकनेवाली है वह है रासा भगवन्तसिंह में फारसी शब्दों का अधिक प्रयोग। जैमुनि पुराण में फारसी के केवल सर्व-साधारण में प्रचलित शब्द आए हैं। नीचे दोनों ग्रन्थों में प्रयुक्त फारसी शब्दों के उदाहरण दिए जाते हैं—

जै० पु० से—

यह चूक पारथ रावरी, नहिं रञ्च-दोष बबूर को।
सुत रीति सादर राजनीति, विचारि सब हजूर को।

× × ×

हरौलं अनी लक्ष जोधा जरूरं।

रा० भ० से—

बिगो इद्धुराबी कुजा दुष्ट सेा है।
मिदानं न ई अस्त कुह बीच सेा है॥

× × ×

हमीं कर्द साहब अमा दान पावैं।
न ह्वै है चिरा रद अबी बाँधि लावैं॥

इस विभिन्नता का कारण पात्रानुकूल भाषा का प्रये जान पड़ता है। रा० भ० से फारसी शब्दावली-पूर्ण जो उद्धृत किया गया है वह नवाब सादत अली खाँ से कह गया है। फारसी उन दिनों भारत के कुलीन मुसलमा मातृभाषा थी। अतएव सम्भव है, कवि तत्कालीन मुसल समाज में प्रचलित उपर्युक्त भाषा का ग्रन्थ में प्रयोग कर लोभ न संवरण कर सके हों। अथवा वर्णन में स्वाभाविकता लाने के विचार से ऐसा किया हो। दोनों सङ्गत है। सदानन्द ने अपनी शैली के इस सिद्धान्त का जैमुनि पुराण में भी किया। पाण्डवाश्वमेध ऐसी लोक- पौराणिक कथा में पात्रों के परस्पर-वार्तालाप की योजना में करना एक उपहासास्पद बात होती, अतएव उसका करने में उन्होंने अपनी दूरदर्शिता का ही परिचय हिन्दी-साहित्य में ऐसे अनेक उदाहरण हैं, जहाँ लेख अपनी प्रारम्भिक कृतियों में पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग आगे उसकी अस्वाभाविकता का अनुभव करके त्याग दि 'प्रसाद' जी के 'प्रायश्चित्त' तथा 'चन्द्रगुप्त' की भाषा की करने पर यह बात स्पष्ट हो जाएगी।

पाठकों के समक्ष 'जैमुनि पुराण' तथा 'रासा भगवन्' को एक ही कवि (सदानन्द कविराज) की रचना प्रम करनेवाले जिन तथ्यों की विवेचना ऊपर की गई है अधिकांश साहित्य पर अवलम्बित है। ऐतिहासिक प्रमा मिलते हैं उनसे गोंडा तथा असोथर के तत्कालीन राजाओं उनके आश्रित कवियों में पारस्परिक सम्बन्ध की पुष्टि होती शिवसिंहजी ने असोथर के महाराज भगवन्तराय खीची के में रहनेवाले प्रसिद्ध कवि शम्भुनाथ मिश्र को गोंडा के तत्क राजा के बन्धु जगतसिंह के आश्रित कवि शिवकवि अर

---

* (शम्भुनाथ मिश्र कवि (सं० १८०३ में उदय)
ये महाराज भगवन्तराय खीची के यहाँ असोथर करते थे। शिवकवि आदि सैकड़ों मनुष्यों को इन्होंने क दिया। रसकल्लोल, रसतरङ्गिणी, अलंकारदीपक— ग्रन्थ इनके बनाए हुए हैं।

—'शिवसिंहसरोज' पृ० ४९

† शिवकवि अरसेला बन्दीजन जिला गोंडा के नि
(सं० १७९६ में उदय)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दीजन का काव्यगुरु बताया है और उनका समय भी सं० ९६ तथा सं० १८०३ के बीच निश्चित किया है। यही मय 'जैमुनि पुराण' तथा 'रासा भगवन्तसिंह' के लेखक के उदय भी है। इस पर 'सदानन्द के आविर्भाव-काल' पर विचार रते हुए हम पर्याप्त प्रकाश डाल चुके हैं। दो गुणग्राही या काव्यप्रेमी राजवंशों का परस्पर-सम्बन्ध उक्त कवियों-द्वारा ापित होने का प्रमाण उपर्युक्त घटना है। इसके आधार यह निस्सन्देह कहा जा सकता है कि सदानन्द कविराज सं० ९७ के आस-पास भगवन्तराय खीची की मृत्यु के पश्चात् डा के महाराज शिवप्रसादसिंह के आश्रय में आए। इन राज के गुणों की प्रशंसा तथा उदारता के विषय में शिवकवि से, जो बहुधा अपने काव्यगुरु असोथर-निवासी शम्भु कवि के पास आया-जाया करते थे, उन्होंने बहुत कुछ सुन रक्खा था। 'जैमुनि-पुराण' की रचना इन्हीं महाराज के आश्रय में रहकर सदानन्द ने सं० १८१० में की थी।

कविराज सदानन्द की जीवन-सम्बन्धी घटनाओं तथा कृतियों का इससे अधिक वृत्तान्त प्रयत्न करने पर भी उपलब्ध न हो सका। अतएव इस विषय को हम यहीं समाप्त करते हैं। उपर्युक्त कवि के दोनों ग्रन्थों का पूर्ण रूप से अनुशीलन करने के पश्चात् मुझे उनकी भाषा-शैली तथा वर्ण न-पद्धति में बहुत कुछ समानता दिखलाई पड़ी, अतएव मैं उनकी अभेद-स्थापना का लोभ संवरण न कर सका।

संसार-चक्र

पण्डित दुर्गाशङ्कर व्यास, बी० ए०

मेरे एक मित्र हैं जो अँगरेजी मिठाइयों की दूकान करते । दूकान में दस-पन्द्रह हजार का माल सदैव रहता है जिससे नकी मासिक आय चार-पाँच सौ रुपए हो जाती है। मित्र होदय स्वयं बड़ी शान से रहते हैं। पूरा अँगरेजी फैशन!

एक दिन मैं उनकी दूकान पर बैठा था। गर्मियों के दिन । दोपहर के चार बजे होंगे। धूप बहुत तेज थी। इतनी में ग्राहक कोई नहीं आ रहा था। हमारे मित्र की यह दत है कि जब ग्राहक न हों तब वे सिगरेट पीते रहते हैं। उस न भी वे अपने मुँह से धुँआ उगल रहे थे।

वे बातों-बातों में मुझसे कहने लगे—"व्यापार में बहुत ानन्द है। तुम नौकरियोंवाले हमारा क्या मुकाबला कर सकते ! पूरे महीना भर काम करने के बाद तब कहीं गिने-चुने ों का मुँह देख पाते हो। अगर कोई अचानक खर्च आ है तो दूसरों का मुँह ताकना पड़ता है। 'बिजनैस' के क्या हने! थोड़ी से 'इंवैस्टमैंट' से महीने में चार-पाँच सौ बड़ी ासानी से बना लेता हूँ। एक चीज रुपए की घर खरीद पड़ती तो ग्राहक से दो-तीन तो ऐसे ही वसूल हो जाते हैं। आजकल द्ध के दिनों में तो पाँचों घी में हैं। माल काफी स्टाक में । माल बाहर से आ नहीं रहा है; इसलिए एक रुपएवाले ब्बे का मोल दाँव लगने पर चार-पाँच भी कभी-कभी मिल ता है। एक रुपया कमाने में एक मिनट भी नहीं लगता र तुम सारा दिन दफ्तर में कलम घिसने के बाद कहीं एक- रुपए का मुँह देख पाते हो।"

अभी वे इस सम्बन्ध में कुछ अधिक कहना चाहते थे कि कान में एक लड़का 'छाबड़ी' उठाए प्रविष्ट हुआ। छाबड़ी में पूड़ियाँ थीं। लड़के की उम्र कोई बारह-तेरह वर्ष के लगभग होगी।

उसके एक हाथ में एक छोटी-सी छड़ी थी। छड़ी का सहारा लेते हुए उसने कहा—"बाबू जी! पूड़ी खाओगे?"

उस लड़के का इतना कहना था कि चमन बाबू आग्नेय नेत्रों से उसकी ओर देखने लगे और गरजकर बोले—"निकल जा मेरी दूकान से! किसने तुझे अन्दर बुलाया है?"

मैं हैरान-सा हो रहा था कि आखिर मामला क्या है कि मेरे मित्र को एकबारगी इतनी तेजी आ गई है। मैंने धीमे से पूछा—"मिस्टर चमन! यह तेजी कैसी! वह बेचारा अपनी पूड़ियाँ बेचने आया है और तुम उसे कुत्ते की तरह दुत्कार रहे हो! क्या वह आदमी का बच्चा नहीं है?"

मेरी इस झाड़ से चमन बाबू कुछ चौंक पड़े और कहने लगे—"यार! तुम नहीं जानते, यह हर रोज मेरे पास पूड़ी लेकर आ जाता है और पूड़ी खाने के लिए बार-बार कहता है। मैंने इससे दो-तीन बार एक-एक आने की पूड़ी मोल लेकर अवश्य खाई है; लेकिन अब यह तो मेरा पीछा ही नहीं छोड़ता। कल भी आ गया था। आज फिर आ गया है, कम्बख्त!"

इतने में चमन बाबू का एक लड़का वहाँ आ गया। उसकी उम्र भी करीब बारह-तेरह वर्ष की रही होगी। वह निकर, कोट, बूट, जुराबें और नीले रङ्ग की कमीज पहने था। बाल भी अच्छे बने हुए थे—माँग निकली हुई थी। और उसके हाथ में एक छोटी-सी हाँकी थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चमन बाबू के लड़के को देखकर उस छाबड़ीवाले लड़के ने मेरे मित्र को फिर एक बार कातरतापूर्ण दृष्टि से देखा और कहने लगा—"बाबूजी! छोटे बाबू को पूड़ी दिलवा दो।"

उधर छोटे बाबू की आँखें पूड़ियों पर गड़ी थीं; परन्तु चमन बाबू कह रहे थे—"मैंने तुम्हें एक बार कह दिया है कि मेरी दूकान से चले जाओ। तू अभी तक क्यों खड़ा है? हर रोज़ तेरी पूड़ियाँ खरीदने का क्या मैंने ठेका ले रक्खा है? भाग यहाँ से!" छोटा बाबू इस समय फल खाया करता है।"

चमन बाबू ने अब जो फटकार बताई उससे छाबड़ीवाले लड़के की अन्तर्ज्वाला प्रज्वलित हो उठी और वह सिसकियाँ भरने लगा। अश्रुकण फर्श पर टप-टप गिर रहे थे जिनमें गरीब की आत्मा को तड़पते हुए मैं स्पष्टतया देख रहा था।

मैंने छाबड़ीवाले को सिर से पाँव तक ध्यानपूर्वक देखा। वह खद्दर का कुर्ता पहने था और एक छोटी-सी खद्दर की धोती। पाँव से वह नङ्गा था—जूते नहीं थे। सिर पर छाबड़ी को सुविधापूर्वक उठाने के लिए एक मैला-सा कपड़ा गोल-सा बनाकर रख लिया था।

एक-दो मिनटों के पश्चात् लड़के ने आँसू पोंछे और दूकान से बाहर जाने के लिए उसके पाँव हिले ही थे कि मैंने उसे रोककर पुचकारा—"बेटा! चुप करो। रोओ मत। धीरज से काम लो।" फिर उसकी छाबड़ी को खुद पकड़कर नीचे रख दिया और उसे भी बैठ जाने को कहा। वह बैठ गया। मैंने उसकी पीठ पर हाथ फेरा और अत्यन्त प्यार से उसे पूछने लगा—"तुम पूड़ियाँ क्यों बेचा करते हो, बेटा? क्या तुम पढ़ने नहीं जाया करते?"

तब चमन बाबू ने मुझे कहा—"तुम किस पचड़े में पड़ गए। जाने दो, जिधर से आया है उधर चला जाएगा और अपनी पूड़ियाँ बेचता फिरेगा। हमें इससे क्या प्रयोजन कि वह पूड़ियाँ क्यों बेचता है?"

"आपका लड़का भी इसी वय का है" मैंने चमन बाबू को समझाते हुए कहा—"एक बार उसकी ओर देखो और फिर इस छाबड़ीवाले को देखो। कितना अन्तर है! अवश्य कोई न कोई रोमाञ्चकारी परिस्थिति होगी; अन्यथा क्या इस लड़के का दिल खेल-कूद के लिए नहीं करता होगा!"

"तुम्हारी फिलासफी तुम जानो", चमन बाबू कहने लगे—"मैं तो इतना ही जानता हूँ कि गरीबों के लड़के खेल-कूद नहीं सकते, वे मजूरी करने के लिए ही पैदा हुए हैं।"

मैंने घृणापूर्ण दृष्टि से बाबू साहब को देखते हुए कहा—"तुम्हें तो केवल दौलत की सनक सवार रहती है कभी किसी गरीब के दिल को भी टटोला करो।"

मैंने फिर छाबड़ीवाले लड़के के सिर पर हाथ फेरा और बड़े प्रेम से पूछने लगा—"बेटा! बताओ न तुम क्यों पूड़ियाँ बेचते फिरते हो?"

उस लड़के ने अत्यन्त श्रद्धापूर्वक एक बार कृतज्ञ मेरी ओर देखा और कहने लगा—"बाबूजी! मैं तीन से इसी तरह पूड़ियाँ बाजार में ले आता हूँ और बेंचकर पैसे बनते हैं अपनी माँ को दे देता हूँ। माँ रोज इन्हें मुझे पूड़ियाँ बनाकर देती है और जो पैसे बच जाते हैं, आटा-दाल लेकर हम दोनों अपना पेट पाल लेते हैं। कहती है कि अगर मैं पढ़ने जाऊँ तो पढ़ाई का खर्च से आए और फिर रोटी कैसे चले।"

जब लड़का इस प्रकार अपनी राम-कहानी सुना तब मैंने आँख की एक कोर से चमन बाबू की ओर दे वे धुआँ उड़ा रहे थे और कुटिल-मन्द हास्य उनके अधर नृत्य कर रहा था।

परन्तु जब मैंने कहा—"सुना चमन! आपका इस के प्रति व्यवहार कितना अन्यायपूर्ण था", तो वे सिगरे कश खींचते हुए बोले—"शङ्कर! तुम बहुत भोले हो। कहानियाँ सब झूठ-मूठ बनाई जाती हैं। इसकी माँ ने ऐसी पट्टी पढ़ा दी होगी ताकि इस तरह अपना मामला के सामने रखने से उनकी हमदर्दी ज्यादा हो जाय और शीघ्र बिक जाएँ।"

मैंने अपनी उँगली दाँतों तले दबा ली और सोचने कि ये धनवान् लोग कितने निष्ठुर और हृदयहीन होते हैं।

वह लड़का कभी मेरी ओर देखता और कभी चमन की ओर देख लेता था।

मैंने उसे प्यार करते हुए और यह आश्वासन देते हु मैं तुम्हारी पूड़ियाँ मोल ले लूँगा, फिर प्रश्न किया—"तु पिता कहाँ है और क्या काम करता है?"

छोटा-सा वह लड़का थोड़ी देर तक कुछ न बोल उसके होंठों पर जैसे मौन की सुदृढ़ मुहर लग गई हो।

मैंने उसे थपथपाया। सिर पर वात्सल्यपूर्ण हाथ वात्सल्य की गरिमा की अनुभूति से उसके अधर खुले— पिता।" उसने कहना आरम्भ किया—"अच्छी तरह याद नहीं, कैसे थे। माँ कहती है कि जब मैं चार साल तब वे काँग्रेस में काम करते हुए कैद हो गए थे और काल भेज दिए गए थे। वहाँ जेल में उन्हें साँप ने काट खा और वे वहीं मर गए थे।"

तब एकदम उस लड़के की आँखों से आँसू छलछला

ठीक उसी समय मेरी स्मृति के पट पर पाँच वर्ष पह एक खबर चक्कर काट रही थी जब हमारे नगर के एक नेता के कालेपानी की जेल में साँप के दंश से मर जा हड़ताल की गई थी।

मेरा रोम-रोम सिहर उठा। उस बालक से अब कुछ पूछने की हिम्मत नहीं रह गई थी। परन्तु उसकी माँ का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्य जानना चाहता था। इसलिए तमाम रही-सही शक्ति बटोरकर मैंने पूछा—"और तुम्हारी माँ क्या करती है?"

वह सहमी हुई आवाज में कहने लगा—"माँ अब बूढ़ी हो है। पहले दूसरों के घर काम करती थी। अब उससे जाया जाता। बस! मुझे पूड़ियाँ बना देती है।"

लड़के की इस आत्मकथा को सुनकर मेरे हृदय में आग चिनगारियाँ पैदा होने लगीं। एक बार तो हृदय-मण्डल समाज-सेवा के विरुद्ध भावनाएँ भी उद्वेलित हो उठीं। दों के परिवार की ऐसी दुरवस्था!

और दूसरे ही क्षण उन अमीरों के प्रति घृणा उत्पन्न हो थी जो यह कहते लज्जित नहीं होते कि ये गरीबों के दुख-की मनगढ़न्त कहानियाँ हैं।

मैं इस विषय पर सोचते सोचते विचार-निमग्न-सा हो रहा कि छाबड़ीवाले की आवाज ने मुझे जगा दिया।

"बाबूजी, पूड़ियाँ नहीं लोगे?"

मैंने गिना, उसकी छाबड़ी में कुल नौ पूड़ियाँ थीं। कुल चार आने की।

छाबड़ीवाला मुझसे पैसे लेकर, हाथ जोड़ता हुआ, ा गया।

उन पूड़ियों को हम तीनों ने जब खा लिया तब मैंने एक बार फिर अपने मित्र से कहा—"भाई, देखा! कितनी वेदना-मयी कहानी थी और आप बिना सोचे-समझे उस पर बिगड़ रहे थे।"

लेकिन चमन बाबू ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया—"भाई साहब! यह संसार-चक्र इसी तरह चला करता है। यदि हम लोग इन गरीबों पर भी रोब न झाड़ें तो और किन पर झाड़ें?"

चूँकि मैं स्वयं एक गरीब-श्रेणी से सम्बन्धित हूँ; इसलिए उनकी यह बात मुझे तीर की तरह चुभी और मैं फिर उनकी दूकान पर एक क्षण भी न बैठ सका।

मैं सड़क पर सोचता जा रहा था कि ये बड़े आदमी, छोटे लोगों की कितनी अवहेलना करते हैं और उनके प्रति किए गए तिरस्कार को 'संसार-चक्र' कहकर हँस देते हैं।

परन्तु मेरी अन्तरात्मा से एक हलकी-सी आवाज उठ रही थी—'संसार का यही चक्र किसी-न-किसी दिन अवश्य इन अमीरों को पीस डालेगा!'

——

कर्जन म्यूजियम में

रावत चतुर्भुजदास चतुर्वेदी, क्यूरेटर तथा सेक्रेटरी भरतपुर-राज्य-म्यूजियम

हम माथुर चतुर्वेदी हैं। इस नाते मथुरा हमारी जन्मभूमि माथुर चतुर्वेदी कहीं रहें, पर मथुरा से उनका स्नेह-बन्धन क्षण रहता है। मेरा आना-जाना भी मथुरा में लगा ही रहता पर इस बार का मेरा मथुरा जाना एक विशेष उद्देश्य से ा था।

मथुरा में 'कर्जन म्यूजियम' नाम का एक संग्रहालय है जो नी अनेक विशेषताओं के कारण दर्शनीय और अध्ययनीय है। तपुर-राज्य-संग्रहालय का अध्यक्ष होने के नाते भरतपुर सरकार मुझे गत जुलाई में यह आज्ञा मिली थी कि मैं उक्त म्यूजियम जाकर वहाँ की संगृहीत मूर्तियों का विशेष अध्ययन करूँ। तः जुलाई, १९४५ के अन्तिम दस दिन मुझे उक्त म्यूजियम में ीत करने पड़े थे।

'कर्जन म्यूजियम' के क्यूरेटर महोदय, मेरे पूर्व-परिचित अलीगढ़ की 'हिस्ट्री कांग्रेस' में मेरा उनसे प्रथम साक्षात्कार था। पर इस बार के मेरे प्रवास ने मुझे उनके और भी कर दिया।

'कर्जन म्यूजियम' साधारण रूप से मथुरा-कला का ही संग्रहालय है। मथुरा नगरी भारत की उन सर्वश्रेष्ठ स.त प्राचीन नगरियों में गिनी जाती है, जो मोक्ष देनेवाली मानी जाती थीं। यह नगरी आनन्दकन्द भगवान् कृष्ण की जन्मभूमि और लीला-भूमि है। इसी कारण यह हिन्दुओं का प्रख्यात तीर्थस्थान है। यहाँ प्रतिवर्ष लाखों की संख्या में तीर्थयात्री आया करते हैं। सम्भव है, इसी कारण बौद्ध भिक्षुओं और जैन मुनियों ने भी अपने मिशन की पूर्ति के लिए मथुरा को अपना धर्म-केन्द्र नियत किया हो।

कर्जन म्यूजियम में संगृहीत मूर्तियाँ स्पष्ट रूप से प्रकट करती हैं कि मथुरा बौद्धों-जैनों और हिन्दुओं का केन्द्र रहा था। इस कारण यहाँ की कला में तीनों धर्मों के देवी-देवताओं की मूर्तियों का समावेश है। इतिहास-वेत्ताओं का मत है कि ऐतिहासिक दृष्टि से मथुरा में ब्राह्मण-धर्म की अपेक्षा जैन-धर्म और बौद्ध-धर्म की बहुलता रही है। इसी कारण यहाँ जो मूर्तियाँ पाई जाती हैं वे अधिकांशतः बौद्ध और जैन-धर्मों से सम्बन्धित हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मथुरा गंगा-यमुना की अन्तर्वेदी की सभ्यता की प्रधान रंग-स्थली रही है। इस नगरी ने अनेक साम्राज्यों का उत्थान और पतन देखा है। युक्तप्रान्त का तो यह नगरी द्वार ही है। बाहर से जो विजेता भारत में आए वे मथुरा भी अवश्य पहुँचे। फलतः

रावत चतुर्भुजदास चतुर्वेदी

उन आक्रमणकारियों की संस्कृति का प्रभाव भी मथुरा की कला पर अवश्य पड़ा। इस प्रभाव की छाप अद्यावधि वर्त्तमान है।

कर्जन म्यूज़ियम की परिचय-पत्रिका में मथुरा-कला से सम्बन्धित मृण्मयी व पाषाण-निर्मित मूर्तियों का ऐतिहासिक विभाजन इस प्रकार किया गया है—

भगवान् बुद्ध और महावीर—ई० पू० छठी शताब्दी,
मौर्यकाल—३२५ ई० पू० से १८५ ई० पू० तक,
शुंगकाल—१८४ ई० पू० से ७२ ई० पू० तक,
क्षहरात वंश के महाक्षत्रप राजकुल और सुदास—१०० ई० पू० से ५७ ई० पू० तक,
शक-कुषाण-वंश—ई० प्रारम्भ से तीसरी शताब्दी तक,
कुजुला कैड फाइसिस और वेम कैड फाइसिस—७८ ई० तक।

कनिष्क—७८ ई० से १०२ ई० तक;
वासिष्क—१०२ ई० से १०७ ई० तक;
हुविष्क—१०६ ई० से १३८ ई० तक;
वासुदेव—१३८ ई० से १७६ ई० तक;
मध्यकाल—६०० ई० से १२०० ई० तक।

कर्जन म्यूजियम में रक्षित मूर्तियों के देखने से यह भी पता चला कि भरतपुर में प्राप्त होनेवाली मूर्तियों में और इन मूर्तियों में कोई विशेष अन्तर नहीं है।

इनके और उनके बनाव-कटाव, रूप-रंग व कद एक हैं। इससे यह भी प्रतीत होता है कि ये सब एक ही कारीगर बनाई हुई हैं। मैंने 'सरस्वती' में प्रकाशित अपने एक लेख में, जो कि एक शिलालेख की प्राप्ति पर था, लिखा कि यक्ष की मूर्तियाँ जैसी परखम से प्राप्त मथुरा में हैं, उसी की नोह गाँव में हैं, जो कि अब भरतपुर-म्यूज़ियम में आ हैं। इनके उतार-चढ़ाव में कोई विशेष अन्तर नहीं है। राज्य की तहसील दीग, जहाँ के भव्य भवन दर्शनीय हैं, चौरासी कोस की परिक्रमा के अन्तर्गत है। व्रज नाम के राज्य यहीं था; जिसके नाम पर यह प्रदेश व्रज कहलाय भरतपुर के नरेन्द्रों ने व्रजेन्द्र की उपाधि धारण की।

जैसा कि मैं ऊपर लिख चुका हूँ, मथुरा में समय-समय आक्रमणकारी जातियों के आक्रमण बराबर होते रहे। उनमें शक, पल्हव, हूण आदि जातियाँ थीं। यदि इनकी छाप कला पर भी पड़ी हो तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है; यहाँ यूनानी भावों को दर्शानेवाली मूर्तियाँ मिली हैं।

इन मूर्तियों में शुंगकाल की कला की दो मूर्तियाँ उल्लेखनीय हैं। इनके देखने से पता चलता है कि शुंगकाल में भी वेदिका और तोरण बनाए जाते थे। जिस प्रकार बाहर से वाली जातियों को भारतीय जन-समाज ने अपने में पचा

माता और पुत्र

उसी प्रकार भारतीय कला ने भी अन्य कलाओं की विशेषताओं को अपनाकर अपने निजी तथा स्वतन्त्र और भी बड़े चढ़े रूप में विकास किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह कहना अनुचित न होगा कि कुषाण-काल मथुरा-कला का स्वर्णयुग रहा है। इस युग की मूर्तियों में से कुछ के चित्र यहाँ दिए जाते हैं जिनके नम्बर क्रमशः ७, ६, ११, १२ और १८ हैं।

इस युग में नए-नए प्रकार के मंदिरों, तोरणों और वेदिकाओं के निर्माण की बहुतायत थी, जैसा चित्र नं० ६, ११ और १२ से विदित होगा।

बुद्ध की मूर्ति का निर्माण व उसका आविष्कार कुषाणयुग की एक सबसे बड़ी घटना है। शुंगकाल के शिल्पी बुद्ध की मूर्ति अंकित करते समय स्तूप, धर्मचक्र, बोधिवृक्ष आदि पवित्र चिह्नों का आश्रय लेते थे, जैसा कि चित्र नं० १० से विदित होता है। इस मूर्ति का निर्माण ईसवी प्रथम शताब्दी में हुआ था।

परिचय-पुस्तिका के अनुसार कुछ मूर्तियों का परिचय इस प्रकार है—

नं० १, परखम यक्ष-मूर्ति—यह वैसी ही है जैसी भरतपुर-राज्य के नोह गाँव में है। वह परखम गाँव से प्राप्त हुई है। कुछ विद्वान् इसे अजातशत्रु की मूर्ति बतलाते हैं। मथुरा की सबसे प्राचीन कला के प्रकट करनेवाली यह बृहत्काय और भारी मूर्ति मौर्यकाल की समझी जाती है। यह कानों में भारी कुंडल पहने में चपटी हँसुली (ग्रैवेयक) और तिकोना हार और नीचे धोती पहने हुए है। कुषाण-काल की बुद्ध और बोधिसत्त्व प्रतिमाओं का प्रावर रूप इन्हीं मूर्तियों की नकल है। इसकी चरण-चौकी पर मौर्यकालीन ब्राह्मी-लिपि में एक लेख भी है जिससे इसके बनाने-वाले कारीगर का नाम गोमित्र जान पड़ता है।

नं० २, यह मूर्ति स्तूप के चारों ओर की वेदिका या चहारदीवारी का सीधा खम्भा है। वेदिका को वेष्टनी भी कहते थे और इन खम्भों को संस्कृत में वेदिका या वेष्टनी-स्तम्भ और पाली में 'थम्भ' कहते थे। इस पर नृत्य-मुद्रा में खड़ी हुई एक स्त्री की मूर्ति है। उसके सिर पर भारी केशपाश है और जो कर्णकुण्डल, ग्रैवेयक, मुक्तामाला, हारावली, अंगद, कटक, रत्नजटित काञ्ची और चरणों में नूपुरवलय पहने हुए है। नीचे लम्बकर्ण और लम्बोदर यक्ष का अंकन है। ऊपर महाबोधि जातक की कथा है जिसमें भगवान् बुद्ध अन्य मतावलम्बी आचार्यों के साथ अपने धर्म की श्रेष्ठता पर शास्त्रार्थ कर रहे हैं।

नं० ३, वेदिका-स्तम्भ (५८६) समय लगभग ई० पूर्व प्रथम शताब्दी :—यह बौद्ध-साहित्य में आई हुई एक कथा से सम्बन्धित है।

चित्र नं० ५, स्त्री-मूर्ति (अफगानिस्तान) प्राचीन गान्धार देश की स्वात (प्राचीन सुवास्तु) नदी की घाटी में होनेवाले नीले पत्थर की मूर्ति, जो मथुरा में यमुना जी के किनारे के 'सप्तर्षि टीले' के पास मिली बताई जाती है। यह शरीर पर साड़ी और सिर पर पुष्प-माला पहने हुए है। यह गान्धार-कला का नमूना है। कुछ विद्वानों का मत है कि यह कुबेर की स्त्री हारीती देवी की मूर्ति है। इसका समय लगभग प्रथम शताब्दी ई० पूर्व है।

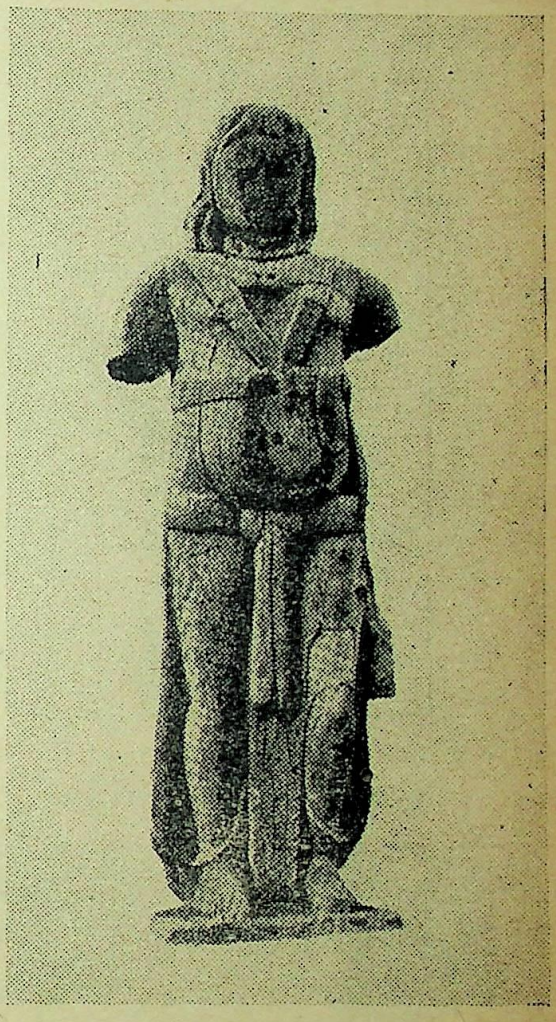

चित्र नं० १—परखम यक्ष

चित्र नं० ७, यह कुषाण-वंश के प्रतापी सम्राट् कनिष्क की मूर्ति मथुरा से आठ मील दूर पर स्थित माट गाँव से मिली थी। उस टीले को आज तक टोकरी टीला, जो तुरुष्क या तुषार का अपभ्रंश है, कहते हैं। मूर्ति के ऊपर ब्राह्मी अक्षरों में लिखा हुआ है—"महाराजा राजातिराजा देवपुत्रो कानिष्को।" सम्राट् उदीच्य वेष-भूषा में हैं अर्थात् चोगा, कोट, पायजामा और मोटे गिलगिट बूट पहने हुए हैं। उनके बाएँ हाथ में एक लम्बी तलवार है और सीधे हाथ में वे राजदण्ड पकड़े हुए हैं। कनिष्क का विशाल साम्राज्य काशी से तुर्किस्तान तक फैला हुआ था। उन्होंने अशोक के समान बौद्ध-धर्म का प्रचार किया था।

चित्र नं० १८, शिरस्त्राण पहने हुए किसी यूनानी योद्धा का सिर। समय—ईसा की पहली शताब्दी के लगभग।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चित्र नं० ३
वेदिका-स्तम्भ पर नृत्य करती हुई स्त्री

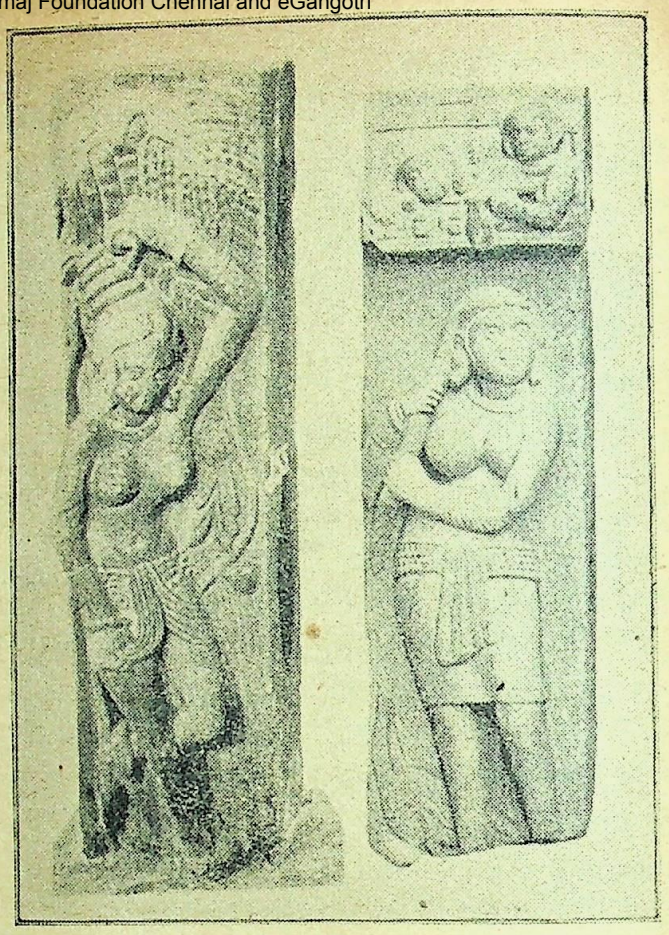

चित्र नं० १२ (अ) और (ब) अशोक दोहद सद्यःस्नाता

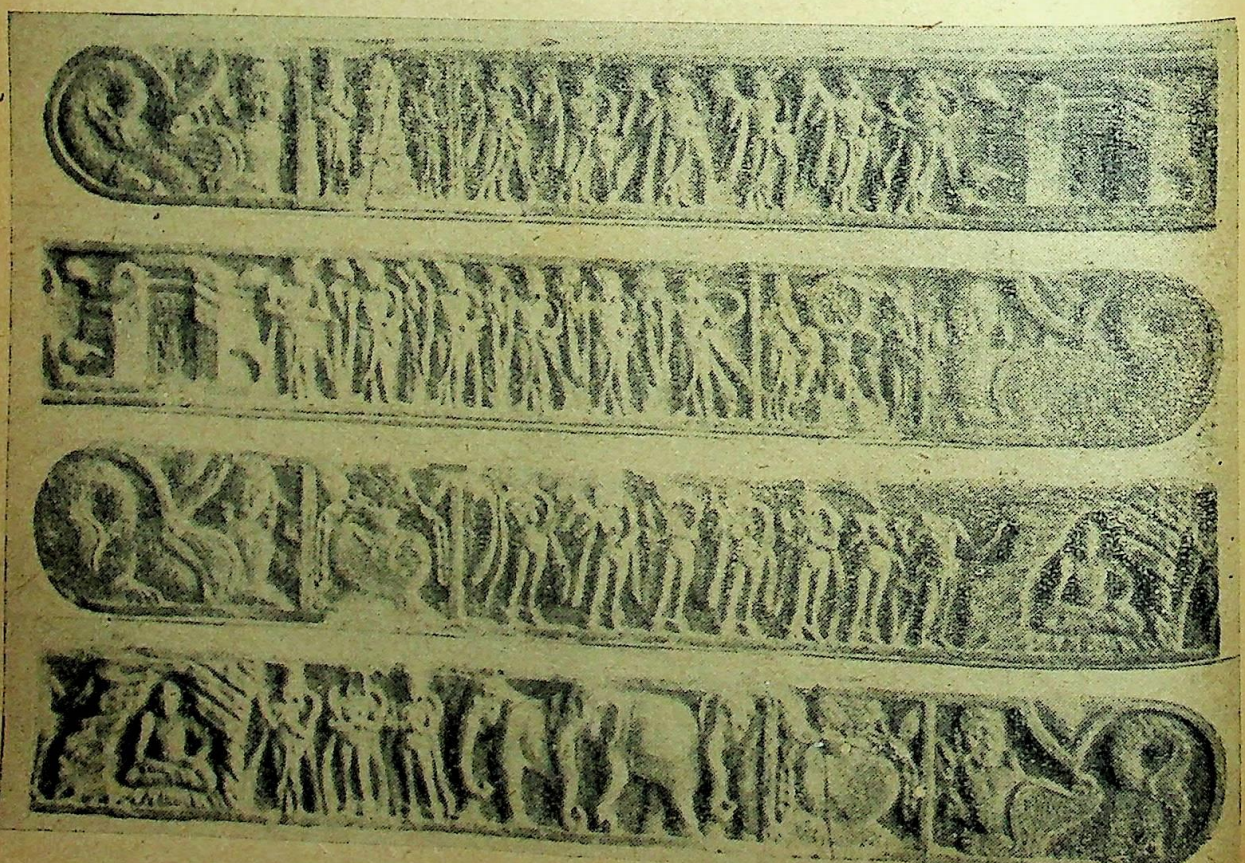

चित्र नं० ६ तोरण की धरनियाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

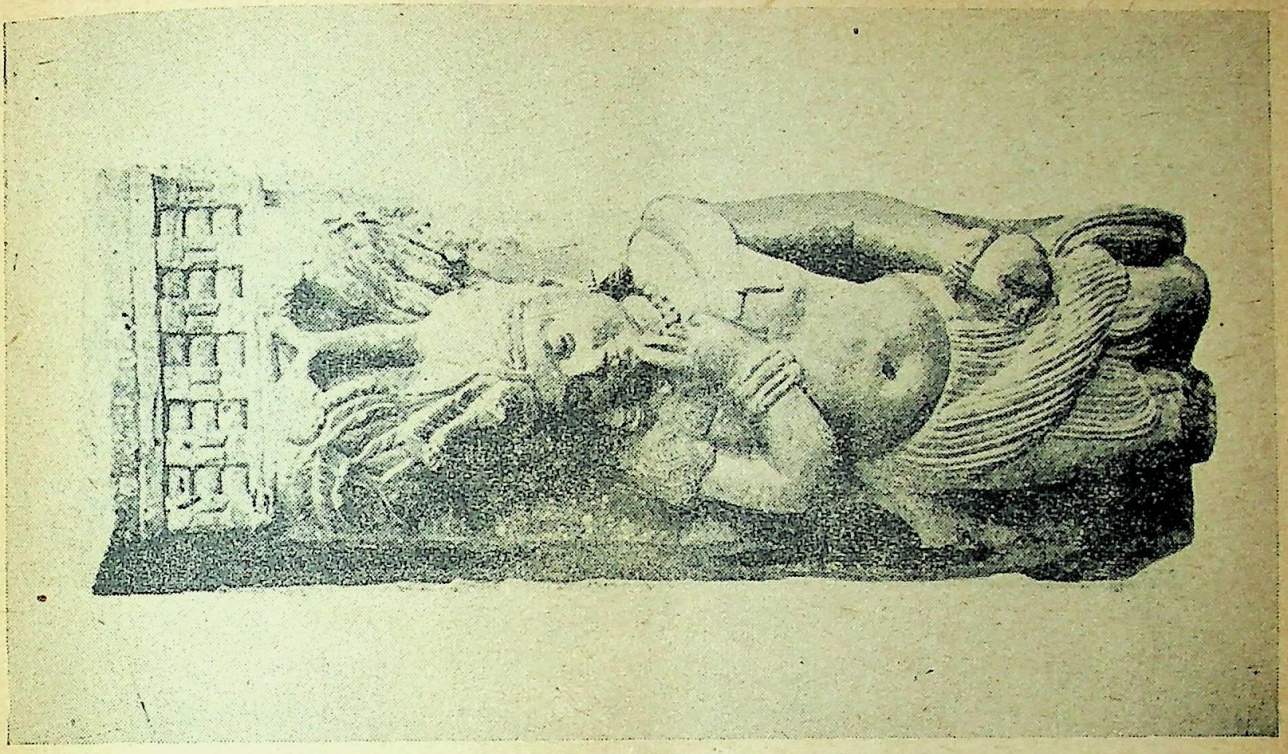

चित्र नं० ११—ऋष्यशृंग की मूर्त्ति

चित्र नं० ५—गंधार-कला में स्त्री-मूर्त्ति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

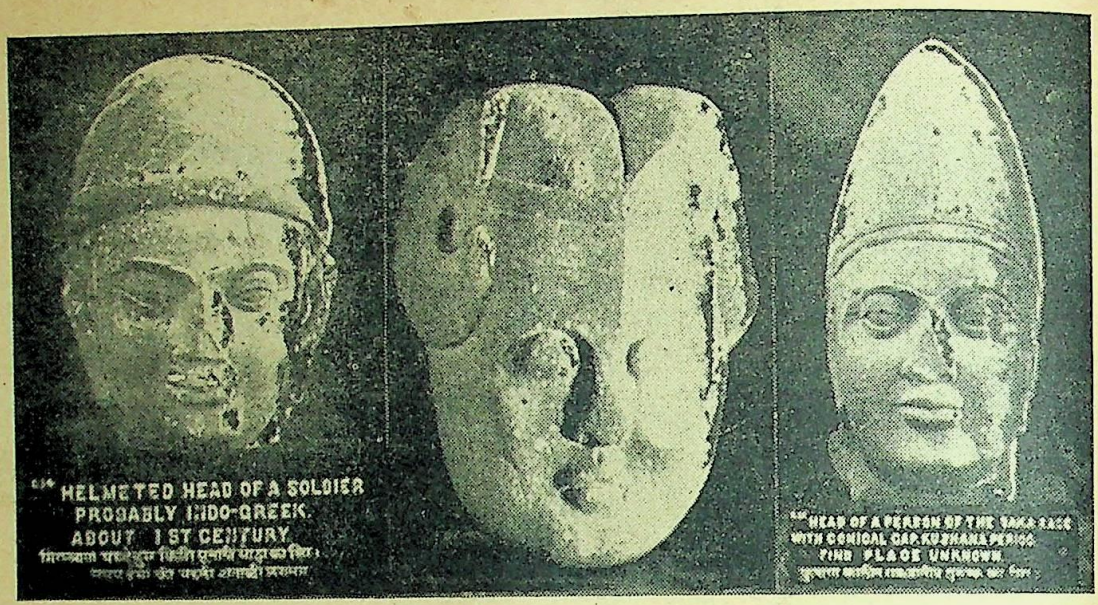

चित्र नं० १३—विविध सिर

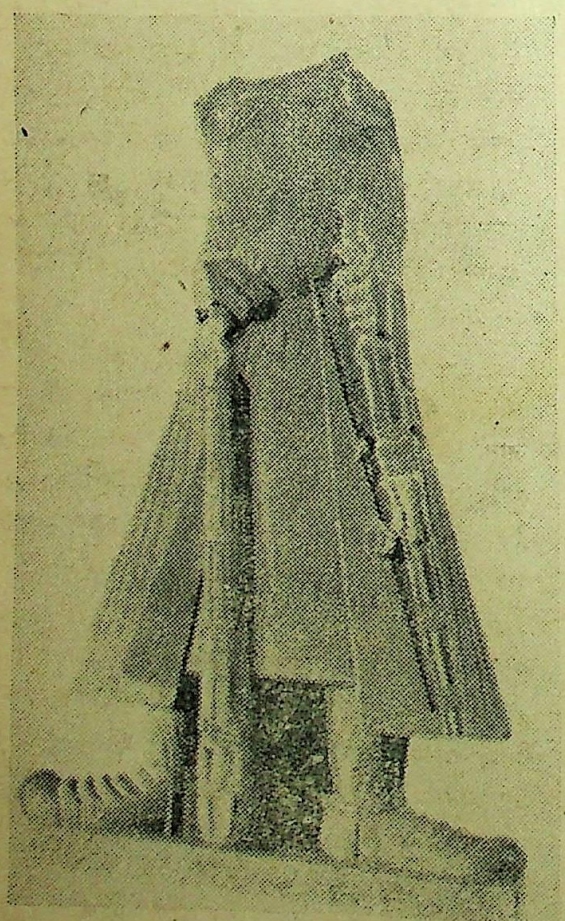

सम्राट कनिष्क

गुप्तकालीन बुद्ध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'वाकिंग क्लब'

श्री बनवारीलाल चौधरी

इने-गिने कुल तेरह लड़के थे जो ग्रीष्म की छुट्टियों में घर
ए थे। मैंने भी जीविकोपार्जन के हेतु, बेसहारे, बेकिनारे,
ते-अटकते यहाँ थाह पाई थी। नया-नया था, इस कारण लोगों
धिक परिचय न हो सका था। क्लब या और सार्वजनिक
ाओं के अभाव में सन्ध्या समय घूमने जाने के सिवा मेरे
और कोई चारा न था।

प्रतिदिन सन्ध्या समय ये लड़के भी अलग-अलग दो-दो, चार-
की टोलियों में घूमने जाते थे। यह विशृङ्खलता मुझे खटकी
उन्हें एक सूत्र में आबद्ध करने के निमित्त मैं धीरे-धीरे
में मिल गया। कुछ ही दिनों में हम चौदह समवयस्क लड़के
-साथ घर से निकलकर गंगोली महाशय के मकान के सामने
दान में एकत्र हो, अन्य मित्रों के आने तक, वहाँ रक्खे गिट्टी
रों पर बैठे-बैठे, गप्पें लगाया करते थे। सबके इकट्ठे होने पर
ी टोली उस आड़ी-टेढ़ी, ऊबड़-खाबड़ ग्रामीण राह से होती
महाराजपुर तक जाती थी।

यह एक नित्य का नियम था। कुछ दिनों तक हमारी इस
ने की टोली में खासी चहल-पहल रही। घूमना सरस बनाए
के लिए टोली का प्रत्येक सदस्य अपने जीवन के कुछ हास्य-
, कुछ गम्भीर और कुछ मीठे अनुभव सुनाया करता था।
का जीवन-प्रवाह, संगठन और एकमत देखकर लोग मजाक
से 'वाकिंग क्लब' कहने लगे और मैं बिना चुनाव और मत-
के इसका एक अनावश्यक प्रेसीडेण्ट और सेक्रेटरी एक ही साथ
लिया गया। पर हमारे सीमित अनुभवों की कहानियों की संख्या
ो सीमित ही हो सकती थी। हमारी अनुभूतियों का कोष भी
ही समाप्त हो गया और टोली के कार्यक्रम में क्रमशः दिन-
दिन नीरसता आने लगी। मुझे भय होने लगा कि कहीं
इस 'वाकिंग क्लब' का शीघ्र ही अन्त न हो जाए और साथ
न्त न हो जाए मेरी इस बिन माँगी 'प्रेसीडेंटशिप' और
टरीशिप' का। परन्तु अनायास ही एक दिन की मेरी भद्दी
ो ने क्लब के कार्यक्रम का रुख फिर से पलट दिया।

हम लोग उस दिन कुछ देर से लौटे थे तथा गंगोली महाशय
कान के सामने के हाते में न बैठकर ढोर-अस्पताल के दालान
गप-शप कर रहे थे। हम लोगों में से चुप थे केवल रामजी।
-पतले, लम्बी नाक पर भरकम चश्मा लगाए, ईश्वर की
महत्त्वपूर्ण कलाकृति, बूढ़े-से ये नौजवान, मालूम नहीं क्यों
अन्यमनस्क से बैठे थे। मुझे उनकी नीरवता खटकी और
ए उन्हें भी अपनी चौ-पों में शामिल करने के हेतु मैंने
—"रामजी, शायद तुम्हें यह दुःख होगा कि तुम ढोर क्यों
; अन्यथा बीमार मवेशियों के रजिस्टर में नाम लिखाकर
ढोर-अस्पताल के मरीजों की संख्या बढ़ाकर उसकी उन्नति कर नाम कमा जाते।" रामजी ने जवाब तो नहीं दिया पर और लोगों के सुर में अपना बे-सुरा सुर मिलाकर "ही ही" कर हँस पड़े। हम लोगों की हँसी पूरी भी न हो पाई थी कि हमारे साहब जैसे ही एक व्यक्ति दूर साइकिल पर आते दिखाई दिए। अपना साहब समझ मैंने शीघ्रता से उठकर आगे बढ़कर उन्हें अभिवादन किया। मेरा अभिवादन करना देखकर इस बार सबसे पहले रामजी बाबू ही खिलखिलाकर हँस पड़े। नमस्ते करने के बाद मैंने देखा कि साइकिल पर मेरे साहब नहीं, प्रत्युत एक भद्र महिला साहब की-सी पोशाक में आरूढ़ हैं।

अब तो हम लोगों को एक नया विषय मिल गया। रामजी का मत था कि जब आज की शिक्षा लड़कों के योग्य भी नहीं है तो लड़कियों को भी यही शिक्षा देना उचित नहीं है। उनके विचारानुसार लड़कियों को स्वतन्त्रतापूर्वक घूमने देना अवश्य ही देश को नरक के गर्त में ले डूबेगा।

यह अजीब लड़की, जो संयुक्तप्रान्त के किसी कालेज में बी०ए०, में पढ़ती है और अपने को पुरुषों के कपड़ों में सुसज्जित करती है, रामजी की टिप्पणी का विषय ही बन गई। परन्तु उसकी निन्दा-नुक्ताचीनी के बाद भी न मालूम क्यों हम लोगों का उसकी ओर आकर्षण बना ही रहा और हमारा घूमने का समय और रास्ता बिना किसी विशेष प्रयत्न या प्रस्ताव के अनायास ही उस लड़की के घूमने के समय और रास्ते से मेल कर बैठा।

इस घूमने के समय में हम लोगों की बातचीत का विषय बहुधा घूम-फिरकर उस लड़की की चर्चा ही बन जाता था। गुप्तजी स्त्री-स्वतन्त्रता के समर्थक हैं। भाग्यवश या दुर्भाग्यवश आपकी धर्मपत्नी डेढ़ हाथ का घूँघट निकालती हैं। निरक्षर भट्टाचार्य होने के कारण गुप्त जी को उनके इस आचरण के लिए झूठा बहाना भी दे देती हैं। गुप्त जी स्वयं कैसा भी आचरण करते हों, पर सामाजिक दृष्टि से नारी-स्वतन्त्रता-संग्राम के एक जबरदस्त पोषक होने का वे गर्व करते हैं। आखिर इसी बूते पर तो बेचारे को जब-तब महिला-सभाओं के अध्यक्ष के आसन पर आरूढ़ होने का सुख-सौभाग्य प्राप्त हो जाता है। जब-तब ये प्रगतिवादी महारथी अपने हृदय की विशालता का परिचय अपने व्याख्यानों-द्वारा हमारी मण्डली में देने का प्रयास किया करते हैं। प्रगतिवाद की सनक में एक दिन वे कह रहे थे, "आप आज की नारी को एक कोल्हू का बैल नहीं बना सकते, जिसे आँखें बाँधकर चक्कर लगवाते रहें। वह देवी, काली का रूप है, वह प्रलय कर सकती है और करेगी। उसको चौके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का अधिकार सौंप आप उसे बिना तनखाह की महराजिन नहीं बना सकते। वह अपने अधिकार पुरुषों से छीन लेगी; बराबरी से खड़ी होगी। उसमें परिवर्तन होंगे; आग सुलगेगी; क्रान्ति जागेगी। एक महाक्रान्ति की भयानक ज्वाला में हमारा रूढ़िवाद ध्वंस हो जाएगा।"

रामजी इस पर कभी भुँझलाहट प्रदर्शित करते, कभी रोष से उनका चेहरा तमतमा जाता। कभी-कभी वे अपने अन्तर के ज्वालामुखी को दबा कुछ अजीब-सी शक्ल बना भद-भद पैर पटककर चलने लगते, जो इस गम्भीर वातावरण में भी हमारी हँसी रोक सकने में समर्थ न हो पाता। परन्तु हम सभी जानते थे कि ऐसे नाजुक समय की हँसी रामजी को असह्य होगी। अपनी हँसी को बलात् रोकने के प्रयास में हम लोगों के मुँह से खों-खों की आवाज निकल ही जाती। सरबर मियाँ को एक बार जब हँसी रोकना असम्भव-सा ही हो गया तब वे विषय की धारा घुमाने के निमित्त रामजी के समान ही विकरालता धारण कर कहने लगे, "खों! खों! हाँ हाँ! ठीक है; बिलकुल ठीक है। पर हम इस लड़की की तारीफ तभी समझेंगे जब वह हमारे समान बाल भी कटाए।" हम लोग बातों में इतने व्यस्त थे कि हमें ख्याल ही न था कि वे देवी जी अपनी साइकिल पर अपने दोनों प्यारे कुत्तों के साथ हमारे पीछे-पीछे ही चल रही हैं। सरबर मियाँ की बात खत्म होते ही वे तेजी से आगे बढ़ गईं। अब हम लोग अपने निश्चित स्थान पर पहुँच चुके थे, इसलिए अधिक आगे न बढ़कर लौट आए।

दूसरे दिन फिर घूमते समय जब हमने उस लड़की को हमारे जैसे बाल कटाए देखा तो हमारे आश्चर्य का ठिकाना न रहा। मुझे एक हार्दिक दुःख हुआ, क्योंकि मैंने अनुभव किया कि उस लड़की ने महज जिद्द में ही ऐसा कर डाला है और उसे स्वयं अपने बालों के खोने का असीम दुःख है। मैंने देखा, मेरे अन्य मित्र भी इस घटना से दुःखित हैं। उस दिन फिर हम अपने निश्चित स्थान तक पहुँचने के पहले ही लौट आए। रास्ते में सबका मौन भंग करने के हेतु मैंने कहा, "देखिए, रामजी, भले ही हम जो चाहें कहें और करें, पर यह पूर्णतः सत्य है कि पुरुषजाति ने नारी का विश्वास खो दिया है। और यह बिलकुल स्वाभाविक भी है। हजारों पीढ़ियों से दबते-दबते आज नारी ऐसी स्थिति पर पहुँच गई है कि अब और अधिक दब सकने की गुंजाइश ही उसमें न रही। अब वह उसी शक्ति और विकलता से परिवर्तित हुई है। उसकी इस तेजी का सामना करना पुरुष-समाज के लिए सर्वथा असंभव ही है। एक घोर अविश्वास और चिढ़ लेकर वह कई बार ऐसे कार्य कर बैठती है जिनसे वह स्वयं ही जी-जान से घृणा करती है। आज उसे केवल आगे बढ़ने की धुन है। संभव है वह ध्वंस हो जाए। संभव है उसका पथ कंटकाकीर्ण हो। संभव है बहुतेरी स्त्रियाँ अपने निर्दिष्ट स्थान पर पहुँचने के पहले ही मार्गभ्रष्ट हो जाएँ और यह भी सम्भव है कि बहुतों को उस लम्बी मंजिल को तय कर पाने के पहले ही समाप्त हो पर यह निश्चित है, सत्य है, कि इन सब संघर्षों और बलि एक उत्तम लक्ष्य निहित है। उनमें से एक भी साथी मंजिल पर पहुँच पाने पर सभी अपने आपको सफल स मैं और भी कुछ कहना चाहता था पर उस लड़की को चुप हो गया। और इसके बाद कुछ मानसिक और कुछ अस्वस्थता के कारण घूमने न जा सका।

जिस रोज मैं फिर घूमने निकला, मुझे कुछ देर हो हमारे बैठने के मैदान में मित्र-मण्डली की जगह सड़क के कुली गिट्टियाँ फैला रहे थे। बहुत-से ढेर फैलाए जा और कुछ फैलाए जा रहे थे। मित्रों को आगे बढ़ा अकेला ही उस निश्चित रास्ते पर बढ़ने लगा। रास्ते में किसानों को छोड़ जो कि अपने सिरों पर अपने गट्ठर रखे एक निश्चय, एक ध्येय, लिए चल रहे थे, और किसी को देख सका। रास्ता छुट्टियों के पहले जैसा सुनसान प्रती रहा था। फिर अचानक मुझे ख्याल आया कि आज पाँच है। अवश्य ही वे सब लड़के और वह लड़की अपने-अपने में चले गए होंगे। इन सब मित्रों के अभाव में मुझे य ठठरी से छोड़कर फेंकी हुई रस्सी जैसा बेकाम और भयान पड़ रहा था। मैं निरुद्देश्य-सा आगे बढ़ा जा रहा था। मैं सागर में डूबा हुआ था। पिछले दिनों की सारी बातें कर मेरे स्मृति-पटल पर साफ दिखाई दे रही थीं। मुझे याद आने लगी उन क्षणों की, जब उस निर्भीक लड़की दिन बिना किसी संकोच के और किसी की परवाह के सब अपनी साइकिल मेरे हाथों में दे, मुझसे एक पुस्तक छीन जिसे पढ़ता हुआ मैं घूम रहा था। अपने साथ घूमने प्रस्ताव भी उसने किया था। फिर एक दिन अचानक वहीं रात्रि के समय मेरी धर्मपत्नी को आश्चर्य में डुबोती मेरे गृह में चली आई थी। वह साथ में कविता की दो मोटी 'यामा' और 'दीपशिखा' लाई थी। मेरे पाण्डित्य अन्दाज लगा वह चाहती थी कि मैं उसे कुछ कविता अर्थ समझा दूँ। कविताओं की अपेक्षा मुझे तो वह अधिक गूढ़ प्रतीत होती थी। अर्थ समझाते-समझाते अन्यमनस्क सा हो यही सोच रहा था कि खादी से सुसज्जित लड़की अपने आप में कौन-सा तूफान छिपाए है। उसके सुन्दर शरीर और उसके विचारों को देखकर मैं सिहर उ ईश्वर से प्रार्थना कर रहा था कि उस हठी लड़की को वह न बनाए। इसी विचार-शृङ्खला में मैं आबद्ध था। यह टूटी जब मैंने देखा कि नालों को पार करता हुआ मैं म के भी आगे बढ़ गया हूँ। लौटने में रास्ता और भी नीरस जान पड़ा। पर कोई क्या जाने कि कुछ ही दिन ऐसा न था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तार की कसरत

श्री अनन्त गोपाल शेवड़े, एम० ए०

जब हम सर्कस देखने जाते हैं तब अक्सर हमें तार की
त का खेल देखने को मिलता है। एक पतले तार पर युवती
छाते के जरिए कई तरह के कौशल दिखलाती है। कभी
ती है, कभी पैर के अँगूठे के बल पर खड़ी रहती है, तो
दौड़ती है। जब वह कोई खेल सफलता-पूर्वक कर
है तब हम ताली पीटकर उसकी वाहवाही करते हैं।
न अगर उसका तौल जरा भी गया तो ?—तो फिर वाह-
तो दूर रही, वह बेचारी धड़ाम से जमीन पर गिर पड़ेगी
सिर फोड़ लेगी, या मुमकिन है, जान से भी हाथ धो
। ऐसी दुर्घटना बचाने के लिए कई सर्कसवाले नीचे एक
ताने खड़े रहते हैं जिससे यदि वह गिरे तो उसी में गिरे।
खेल की तारीफ उस लड़की के तौल में है। तौल बिगड़ा कि
ा खत्म !

यही बात जीवन में भी सही है। हमारे जीवन पर विविध
यों का असर पड़ता है—जैसे भावना, तर्क, शरीर-बल, आत्म-
प्रेम, द्वेष, इत्यादि। प्रायः ये शक्तियाँ विरुद्ध दिशा में
ती हैं। जो इन शक्तियों का उचित समन्वय कर सकता है
हम सफल मानते हैं। और जो यह नहीं कर पाता है वह
नी में असफल तो होता ही है, साथ ही कई तरह की विप-
भी उठाता है। जब कोई पागल हो जाता है तो हम कहते
सके दिमाग का 'स्क्रू' ढीला हो गया है या दिमाग का तौल
गया है। साइकिल की सवारी करते-करते कोई दुर्घटना हो
तो हम कह उठते हैं, 'भाई, मेरी साइकिल का 'बैलेन्स'
गया इसलिए मैं गिर पड़ा।' यही बैलेन्स या सन्तुलन जीवन
फलता की सबसे आवश्यक शर्त है।

तार की कसरत का उदाहरण देने से मन में यह प्रश्न आ
है कि जीवन में सन्तुलन प्राप्त करना वस्तुतः मुश्किल
है। वह तो सर्कस की उस युवती की तरह दीर्घ प्रयत्न
अभ्यास से ही सध सकता है और फिर भी वह सबके बूते की
नहीं है। तब तो यह बड़ी कठिन बात है। सर्वसाधारण
यह बात कैसे प्राप्त हो सकती है ?

हाँ, सच बात कहना है तो यही कहना होगा कि यथार्थ में
न प्राप्त करना सरल नहीं है। इसके लिए सतत प्रयत्न करने
वश्यकता है। बिना साधना के यह वस्तु नहीं मिल सकती।
मिल जाती है तब दुनिया पुकार उठती है, 'बस, आदमी
यही है, इसी का आदर्श आनेवाली पीढ़ियाँ मानेंगी।' बुद्ध,
मुहम्मद, गांधी इसी प्रकार के महापुरुष हैं जिन्होंने अपने
का सन्तुलन अधिक से अधिक मात्रा में स्थिर किया है।

जो इतना ऊँचा नहीं उठ सकते, उन्हें निराश होने का कारण नहीं है। मुझ जैसे साधारण लोगों की तसल्ली के लिए यह सत्य जान लेना आवश्यक है कि इस तौल को प्राप्त करने के लिए हम जितना प्रयत्न करेंगे उसी परिमाण में हमें सफलता मिलेगी। भले ही हमें सोलह आने कामयाबी न मिले पर आठ आने, छः आने मिल ही सकती है! दो आने भी मिले तब भी हमारी कोशिश व्यर्थ नहीं गई। इसमें परी-देश के हंस जैसी बात नहीं है कि वह चुगेगा तो मोती चुगेगा, नहीं तो भूखा मरेगा। जो जितनी कोशिश कर सके उसे उतनी ही सफलता मिलेगी, उतना ही जीवन का आनन्द मिलेगा। इसी लिए इस तौल—समन्वय—की प्राप्ति के लिए यत्नशील होना प्रत्येक व्यक्ति के लिए वाञ्छनीय है।

इतिहास और साहित्य में ऐसे महारथियों के चित्र अंकित किए गए हैं जिन्हें विश्व-विजय की दुर्दम्य महत्त्वाकांक्षा थी। किन्तु इस तरह के सार्वभौमत्व की कल्पना मानव-जाति के धर्म या प्रकृति के नियमों से मेल नहीं खाती है और इसलिए वह सर्वतः एकांगी हो जाती है। एकांगी होने का अर्थ ही यह है कि उसका सन्तुलन बिगड़ गया है। उसका परिणाम अवश्यम्भावी पराजय ही है। ऊपरी तौर पर जो विजय दिखाई देती है उसी में अन्दर से पराजय का घुन लग जाता है, जिसका फल होता है—जितनी बड़ी महत्त्वाकांक्षा, उतना ही भयंकर सर्वनाश!

बादशाह सिकन्दर का यही स्वप्न था। पर जिस पंजाब की भूमि पर उसने भारत के महाराजा पुरु को पराजित किया था, कहा जाता है कि, उसी भूमि पर उसकी सेना ने विद्रोह का झंडा ऊँचा किया था और उसे वापस लौटना पड़ा था। उसी दिन से सिकन्दर का सूरज डूबने लगा था। रोम के सम्राट् ज्यूलियस सीजर की महत्त्वाकांक्षा भी असीम थी, किन्तु वह अपने ही विश्वस्त मंत्रियों-द्वारा दिन-दहाड़े मार डाला गया। नेपोलियन ने भी इसी प्रकार विश्व-विजय के स्वप्न देखे थे लेकिन उसे मास्को से जीर्ण और जर्जरित होकर लौटना पड़ा; जिसका पर्यवसान सेंट हेलिना के बन्दीवास में हुआ। ये सब उदाहरण यही बतलाते हैं कि जब महत्त्वाकांक्षा एक सीमा से परे चली जाती है तब औचित्य से उसका समन्वय नष्ट हो जाता है और उसका परिणाम विनाश होता है।

शेक्सपियर ने कुछ सुन्दर दुःखान्त नाटक (ट्रेजेडी) लिखे हैं। उनमें भी मूलतत्त्व यही है कि जीवन में जो ट्रेजेडी (भयंकर दुर्घटना) होती है उसका कारण है, जीवन के सन्तुलन का टूट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाना। हैलेट की असीम वेदना और असफलता का कारण है उसमें आचार और विचार के समन्वय का अभाव। जब वारा-न्यारा करने की सुवर्ण-सन्धि आती है तब वह तलवार चलाने के बजाय सिर खुजलाते हुए सोचने लगता है—'होना है, या नहीं, यह प्रश्न है।' आथेलो की दुर्घटना का कारण है आत्यन्तिक सन्देह। आथेलो ने एक बार अपनी पत्नी डेसडेमोना के चरित्र पर सन्देह करना शुरू किया तो वह इतनी दूर तक चला गया कि उचित अनुचित की सीमाएँ भी लाँघ गया। किसी भावना के अतिरेक का ही अर्थ है सन्तुलन का अभाव। और उसी का परिणाम है दुःख, वेदना! इसी प्रकार मैकबेथ और किंग लियर तथा गेटे के डा० फास्ट्स की 'ट्रेजेडियों' की कारण-मीमांसा की जा सकती है।

क्या साहित्य में, क्या इतिहास में, क्या जीवन में, यही चरम सिद्धान्त सत्य है कि विभिन्न शक्तियों के सन्तुलन में सुख और सफलता, तथा सन्तुलन-अभाव में क्लेश और असफलता समाई हुई है।

इन बड़े-बड़े विश्व-नायकों को छोड़ दें और हम अपने ही रोजमर्रा के साधारण जीवन पर दृष्टि डालें तो यही सत्य हमें दिखलाई पड़ता है। संसार को बहुरंगे चित्रों की प्रदर्शनी की उपमा दी जाती है क्योंकि उसमें इतनी भाँति के लोग मिलते हैं कि कोई दो आदमी समान नहीं होते। जितने व्यक्ति उतनी ही प्रकृतियाँ। कुछ लोग तो अत्यन्त भावनाशील होते हैं। उनका हृदय ही उनका राजा है। दूसरे नितान्त तर्कशील मिलते हैं, जिनकी नियन्त्रण-शक्ति है दिमाग। पहली श्रेणी के लोग भावना के आवेग में खून जैसे भयंकर कृत्य भी कर डालते हैं; दूसरे अपने पिता की मृत्यु के समय रुपया-आना-पाई का हिसाब करते दिखाई देते हैं। ये दोनों ही अन्तिम परिधियाँ गलत हैं। हमें भावना की जरूरत है और विचार की भी। भावनाओं को विचारों से सलाह ले लेनी चाहिए और विचारों को भावनाओं का आदर करना चाहिए। तभी मानव-जीवन श्रेयस्कर और सफल हो सकेगा।

यही बात ज्ञान और कर्म के बारे में है। कुछ लोग तो अध्ययन और पण्डिताई में उलझकर इस तरह के पुस्तक-कीट हो जाते हैं कि जिन्दगी के बड़े से बड़े प्रश्नों को भी वे यूक्लिड के सिद्धान्तों के अनुसार सुलझाने का प्रयत्न करते हैं। किसी सिद्धान्त या शिक्षा के तत्त्व से व्यवहार का 'जोड़' मिलाने के लिए वे तैयार नहीं होते। जो किताब में लिखा होगा या जो गुरु जी बतलाएँगे वही सच है, बाकी सब—?—प्रश्नचिह्न।

परमहंस रामकृष्ण के एक शिष्य की एक मनोरंजक कहानी है। परमहंस जी ने एक दिन अपने प्रवचन में कहा, 'सब प्राणियों में ईश्वर विद्यमान हैं, हमें उनका आदर करना चाहिए। बस एक शिष्य महोदय बाहर निकले तो सब प्राणिमात्र को—गधे, बैल, कुत्ते को भी—भगवान् समझकर नमस्कार करने इतने में एक हाथी, जो पागल हो गया था, चिंघाड़ता हुआ उसका महावत हाथी पर ही बैठा-बैठा उसे वश में लाने कर रहा था लेकिन उसे सफलता नहीं मिल रही थी। इस चिल्ला-चिल्लाकर लोगों को सावधान कर रहा था, "भागो-भागो! हाथी पागल है!" लेकिन हमारे शिष्य क्यों भागने लगे? वे हाथ जोड़कर और नतमस्तक होकर देव के सामने खड़े हो गए। पर देवता ने उनकी पूजा परवाह नहीं की। ऐसी सूँड़ फटकारी कि वे कई हाथ गिरे और खून से लथपथ हो गए। जब परमहंस ने पूछा भागे क्यों नहीं? तो जवाब मिला, "हाथी में ईश्वर मैं उस ईश्वर के सामने से कैसे भाग सकता था?"

स्वामी जी ने मुस्कराते हुए कहा, "पागल हाथी में था उसकी बात तो मान ली, लेकिन उस महावत में बसा जो तुझे सावधान कर रहा था, उसकी बात क्यों नहीं मानी

ऐसे ही पुस्तक-कीटों की जो श्रेणी पैदा हुई है उसे 'पढ़ कहते हैं। किताबें तो सब पढ़ ली हैं, लेकिन फिर भी कोरे बने हुए हैं। विचार सब दिमाग में है लेकिन उसमें पक्का ताला लगा हुआ है कि कहीं गलती से भी कोई प्रत्यक्ष जीवन और व्यवहार में काम नहीं आ पाता।

जो हर समय गहन विचार में लीन रहता है उसे 'फिलासफर' कहने लगते हैं। मतलब यह कि वह ख्याली दुनिया में तल्लीन रहता है। उसे बाहरी दुनिया खबर नहीं रहती। जो जितना ज्यादा बेखबर रहता उतना ही बड़ा विचारक मानने का कुछ प्रचलन-सा हो जिसके बारे में इस तरह का ख्याल होता है वह इसे अभि चीज मानता है। लेकिन विश्व का आदि विचारक (प्लेटो) ऐसा नहीं मानता। उसकी राय है कि जो जि चिन्तक—फिलासफर—है उसे उतना ही अधिक व्यवह भी होना चाहिए। यानी चिन्तन और व्यवहार का समन्व चाहिए। इसी विचार-प्रणाली के कारण उसने Philos as a. King (दार्शनिक ही शासक हो) की कल्प आविष्कार किया था। किन्तु आजकल तो दार्शनिक की इससे बिलकुल विपरीत है। फिलासफी के प्रोफेसरों के बारे लिए कई मजाक चल गए हैं। ऐसे ही एक प्रोफेसर बात है। वे शाम को अकेले घूमने गए—अकेले न जाएँ निक कैसे? लौटे तो अपने विचारों में इतने तन्मय थे की छड़ी तो उन्होंने बिस्तर पर लिटा दी और ऊपर ओढ़ा दिया और खुद कोने में जाकर खड़े रहे—उस जहाँ उनकी छड़ी रहती थी। इसी तरह अपनी तन्द्रा में कितनी देर खड़े रहे। जब दीवाल से सिर टकराया तब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुआ और वे अपनी हालत देखकर बड़े शर्मिन्दा हुए। तब जाकर उन्होंने छड़ी को कोने में टिकाया और खुद बिस्तर पर जाकर सोए। ऐसे लोग आपको कम नहीं दिखाई देंगे।

पर इनसे विपरीत आपको ऐसे आदमी भी मिलेंगे जो व्यवहार-कुशलता के सिवा और किसी बात का दावा नहीं करते। इसी स्वभाव की अन्तिम अवस्था है, स्वार्थ-परायणता, नीचता और औचित्य-अनौचित्य का एकदम अभाव। ऐसे पिता के बारे में क्या कहा जाए जो अपनी पन्द्रह वर्ष की कुँआरी कन्या को ५६ वर्ष के बूढ़े के साथ, जिसकी यह तीसरी शादी है, ब्याह देता है; क्योंकि इस सौदे में उसे ढाई हजार रुपये मिलते हैं।

यह काल्पनिक नहीं, सच्ची घटना है और ऐसे उदाहरण कम नहीं हैं। तारीफ यह कि उन पिता महोदय की आर्थिक दशा इतनी बुरी नहीं है कि रुपए के लिए उन्हें इतना हलका काम करना पड़े। एक सज्जन पुलिस-इन्सपेक्टरी से पेंशन-प्राप्त हैं; दान भी पा रहे हैं और बैंक में कुछ रकम भी है। लेकिन फिर भी उन्हें अपनी एकमात्र कन्या की भावनाओं का ख्याल नहीं। विदा के समय वे अपनी कन्या को पति को देव मानने की शिक्षा देने में भी नहीं चूके। स्वयं तो पितृ-धर्म का गला काट चुके किन्तु पुत्री को पतिव्रत-धर्म-पालन का उपदेश देते हैं। उनसे कहा गया तो कहने लगे कि भाई, दुनिया में 'सेंटिमेंटल' (भावना-शील) होने से काम नहीं चलता। व्यवहार में ऐसा तो करना ही पड़ता है। मैंने कोई नई बात तो की नहीं। लड़की चार-छः दिन रोएगी, लेकिन बाद में वह अपने पति पर श्रद्धा करने लगेगी। हिन्दू-स्त्री का तो यही धर्म है?

इस प्रकार अति के उदाहरण कई मिलते हैं। स्पष्ट है कि ऐसे एकांगी व्यक्तियों का जीवन दुःखपूर्ण और असफल हो जाता है तथा वे अपने आत्मीयों तथा मित्रों के कष्टों के लिए भी कारणीभूत होते हैं। दोनों ही अतिरेक त्याज्य हैं—गलत हैं। हमें सुवर्ण-मध्य ही खोजकर निकालना होगा। उसके बिना जिन्दगी सफल नहीं हो सकती। ध्येय और व्यवहार, ज्ञान और कर्म, भावना और तर्क—इन सब द्वन्द्वों का उचित समन्वय करना होगा। सन्त विनोबा ने ध्येय और व्यवहार की व्याख्या एक छोटे से समीकरण-द्वारा बड़ी सुन्दर रीति से की है। वे कहते हैं—"अन्तिम ध्येय-वाद = पुरुषार्थहीनता; अन्तिम व्यवहारवाद = हीन पुरुषार्थ।" इन दोनों खाइयों के बीच में से हमें जाने की जरूरत है। नहीं तो हम औंधे गिर पड़ेंगे।

लोकमान्य तिलक का कथन है कि स्वराज्य-प्राप्ति के लिए ज्ञान और कर्म की जोड़ी न टूटे। आज तक बुद्धिमानी और कर्मण्यता का मेल ही नहीं था। एक का मुँह पूर्व की ओर था तो दूसरे का पश्चिम की ओर। इसी लिए स्वराज्य के दर्शन नहीं हुए। जो बात स्वराज्य के लिए सही है वही तमाम जीवन के लिए भी ठीक है।

इसी लिए हमें यदि अपनी उन्नति या अपना उद्धार करना है तो ज्ञान और कर्म का, वृद्धों के अनुभव और युवकों के उत्साह का, स्त्रियों की बुद्धिमानी और पुरुषों की कर्तृत्व-शक्ति का, ब्राह्मणों के शास्त्र और अब्राह्मणों की कला का, हिन्दुओं की नीति और मुसलमानों की शक्ति का, भिक्षुओं के धर्म और गृहस्थों के कर्म का समुचय करना होगा। यही समन्वय या तौल सफलता की कुंजी है। यह है तो तार की कसरत जैसा कठिन, लेकिन फिर इसके फल भी उतने ही मीठे हैं! उतने ही सुन्दर!

ईसप की सचित्र कहानियाँ—अँगरेज़ी की Aesop's Fables नामक बहुत ही लोकप्रिय पुस्तक का यह हिन्दी अनुवाद है। इसकी कहानियाँ अत्यन्त मनोरंजक तथा शिक्षाप्रद हैं। मू० केवल १॥) दो रुपये ग्यारह आने।

शेख़ चिल्ली की कहानियाँ—इन कहानियों की प्रशंसा में इतना ही कह देना काफ़ी होगा कि ये शेख़चिल्ली की कही हुई हैं। मू० ॥।—) तेरह आने।

कथा-सरित्सागर—नीतिशास्त्र-सम्बन्धी संस्कृत के सुप्रसिद्ध ग्रन्थ का हिन्दी संस्करण। मू० २॥) दो रुपये ग्यारह आने।

नाट्य सुधा—(प्रथम और द्वितीय भाग) संस्कृत के प्रायः सभी प्रसिद्ध नाटकों के कथानक का संग्रह। मू० प्रत्येक भाग का १) एक रुपया।

सोने का झरना—बालोपयोगी सुन्दर कहानियों का संग्रह। मू० १) एक रुपये।

मैनेजर बुकडिपो—इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

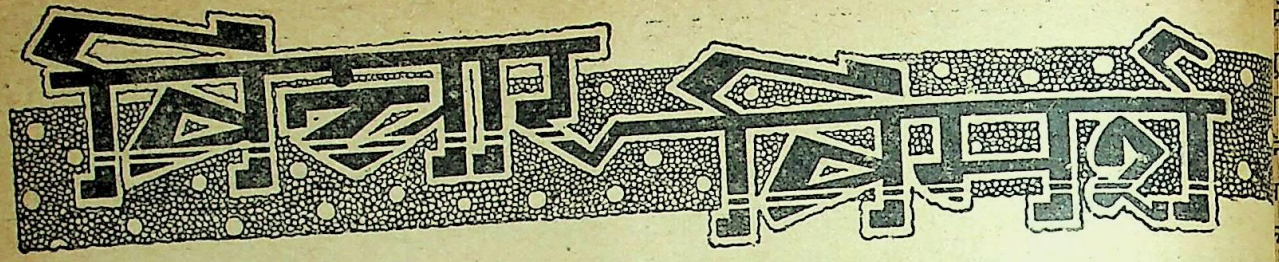

योरपीय युद्ध से कुछ शिक्षाएँ

श्री सन्तराम, बी० ए०

योरप का महायुद्ध समाप्त हो गया। परन्तु वह हमारे लिए अनेक बहुमूल्य शिक्षाएँ छोड़ गया।

इस महायुद्ध ने हमें सबसे बड़ी शिक्षा यह दी है कि 'लोकोत्तर मनुष्य' (सूपरमैन) का सिद्धान्त अतीव हानिकारक एवं बोदा है। जिस प्रकार हमारे यहाँ वर्ण-भेद के पक्षपाती अपनी प्रभुता का सिक्का जमाए रखने के लिए अपने को शुद्धरक्तवाले द्विज और दूसरों को मिश्ररक्तवाले वर्णसंकर शूद्र बताकर अपना उल्लू सीधा करते हैं, उसी प्रकार जर्मनी के नाजी भी अपने को विशुद्ध आर्य रक्तवाले और संसार की शेष सब जातियों को नीच एवं अपवित्र कहते थे। जिस प्रकार हमारे यहाँ द्विज को जन्मना लोकोत्तर और शूद्र को जन्मना नीच मानने से पन्द्रह करोड़ अछूत और सछूत शूद्र मनुष्यता से गिरकर मिट्टी में मिल गए हैं, उनमें आत्म-सम्मान नाम को भी नहीं रह गया है, उसी प्रकार नाजियों के उस 'आर्य रक्त' के सिद्धान्त के कारण यहूदी मिट्टी में मिला दिए गए। इस अमानुषिक अत्याचार का दण्ड नाजियों को मिलना स्वाभाविक था। जहाँ जहाँ भी कोई मनुष्य अपने को दूसरे मनुष्य से या कोई जाति दूसरी जाति से जन्मना श्रेष्ठ और उच्च समझने की भूल करती है वहाँ अन्त में उसकी ऐसी ही दुर्गति होती है। वर्ण-व्यवस्था की डींगें मारनेवाले हिन्दू सैकड़ों-सहस्रों वर्षों से दासता की शृङ्खला में जकड़े हुए जूते खा रहे हैं, परन्तु क्या मजाल जो इन्हें अपनी जन्मना उच्चता तथा नीचता के झूठे विचार को छोड़ने का ख्याल तक आ सके। कोई समझाए भी तो ये झट वेद के मंत्र पेश करने दौड़ते हैं कि ब्राह्मण भगवान् के मुँह से निकला है और शूद्र उसके पाँव से; इसलिए ब्राह्मण और शूद्र कभी बराबर नहीं हो सकते। जो हिन्दू रूस पर आँखें लगाए बैठे हैं, हाँ उस रूस पर जिसने जन्म की उच्चता और नीचता को ही नहीं, वरन् धनी और निर्धन के श्रेणीभेद को भी मिटा दिया है, वे भी हिन्दू-समाज में से ऊँच-नीच मूलक वर्णभेद को मिटाने से हिचकिचाते हैं। जिस प्रकार हमारे यहाँ द्विजों ने संस्कृत के प्रायः सभी ग्रन्थों में ब्राह्मण की श्रेष्ठता और शूद्र की निकृष्टता के उपदेश भरकर हिन्दू-जाति की बुद्धि को भ्रष्ट कर रक्खा है उसी प्रकार नाजियों ने भी अपने बालकों की पाठ्य पुस्तकों में जर्मनों को शुद्ध रक्तवाले और शेष सबको वर्णसंकर बनाकर समूची जर्मन जाति का बौद्धिक सन्तुलन बिगाड़ दिया था। इस पागलपन का शिकार बनकर जर्मनी ने जहाँ यहूदियों को अपना शत्रु बना लिया और डा० फ्रायड, विद्वान् तथा आईंस्टीन जैसे वैज्ञानिक को जर्मनी से भागना पड़ा, वहाँ अँगरेजों की बुद्धिमती जाति ने उन्हीं यहूदियों को अपनाकर अपनी शक्ति को बढ़ाया। यह बात ठीक वैसी है जैसे वर्ण-द्विजों ने अछूतों को दुतकारकर बहिष्कृत कर दिया, परन्तु मुसलमानों एवं ईसाइयों ने उनको अपनाकर अपनी शक्ति बढ़ाया। प्रसिद्ध नाटककार स्वर्गीय द्विजेन्द्रलाल राय ने ठीक ही कहा है कि हिन्दुओं का प्रतिनिधि प्रताप अपनों को पराया बना देता था, परन्तु मुसलमानों का प्रतिनिधि अकबर परायों को भी अपना बनाना जानता था। प्रताप की विफलता का प्रधान कारण यही था। खेद है कि हिन्दुओं ने अभी अपने इस बुरे स्वभाव का सुधार नहीं किया।

युद्ध से दूसरी शिक्षा यह मिलती है कि साँड़ों के लड़-भिड़कर मर जाना ही कोई प्रशंसा की बात नहीं। वीरता युद्ध में विजय प्राप्त करने में है। हमारे राजपूत वीर थे। प्राणों पर खेल जाना उनके लिए एक साधारण-सी बात थी। जो भी सामने आ जाय, बिना सोचे-समझे, सबके लड़ने को तैयार रहते थे। परिस्थिति प्रतिकूल होने पर भी, दूसरे उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा न करके, वे रण में डट जाते थे और मरकर या मारकर ही दम लेते थे। परिणाम यह है कि समूचे इतिहास में एक भी स्थान ऐसा नहीं मिलता जहाँ इनको कोई प्रशंसनीय विजय प्राप्त हुई हो। हमारे राजपूत सदृश अपने शुद्ध आर्य-रक्त पर अभिमान करनेवाले हिटलर महाशय भी सबको ललकारते फिरते थे। जो भी सम्मुख आए हमारे झट उसके गले पड़ गए। उसने घोषणा कर दी थी कि अगर साहस और वीरता है, मेरे सामने आ जाय; योरप का सारा भूभाग कहो मैं युद्ध के लिए खाली कर देता हूँ, आओ लड़ो। जोश में पहले तो वह आगे बढ़ता चला गया। परन्तु उसने स्टालिनग्राड पर एक बार ठोकर खाई, फिर न सँभल सका। इसके विपरीत अँगरेज जाति की बुद्धिमत्ता देखिए कि किस प्रकार रूस जैसे विरोधी और अमेरिका जैसे तटस्थ को अपने मतलब के लिए अपने साथ गाँठ लिया। डनकर्क ब्रह्मा में जब इन्होंने देखा कि उस समय लड़ना व्यर्थ है, किसी [illegible] समय की प्रतीक्षा में, वहाँ से निकल

CC-0 In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ोर बाद को पूरी तैयारी से प्रत्याक्रमण करके उन देशों पर
नः अधिकार प्राप्त कर लिया। हिंजड़ा मनुष्य, जो स्वयं कुछ
हीं कर सकता, स्त्रियों की भाँति ताने देकर ही समय की भड़ास
निकाला करता है। इसके विपरीत सच्चा वीर पुरुष शत्रु के
द्गुण और वीरता की प्रशंसा करने में तनिक भी संकोच नहीं
रता। हमारे भारतीय बन्धु, जो स्वयं तिनका भी नहीं तोड़ सकते
, भाँड़ों की तरह अँगरेजों की निन्दा और रूस एवं अमेरिका
ी चापलूसी करते रहे और अब तक कर रहे हैं। परन्तु
चाई यह है कि इस युद्ध में जैसी दूरदर्शिता, नीतिज्ञता, अध्य-
साय, धैर्य, सहिष्णुता और अवसर को पहचानने की बुद्धि
गरेज जाति ने दिखलाई है वैसी रूस में तो कहाँ, अमेरिका में
नहीं देख पड़ती। कहते हैं, श्री रामचन्द्र ने किष्किन्धा के
नरों की सेना बनाकर रावण जैसे महाबली शत्रु पर विजय
प्त की थी। परन्तु अँगरेजों ने सारे संसार के लोगों को—
रतीय, जूलो, हारण्टाट, चीनी, मिस्री, नीग्रो, पठान, अरब,
खा, सबको—अपने काम में सहायक बना लिया। यह कोई
धारण बात नहीं। अँगरेजों को गाली देना सरल है, पर उनके
द्गुण लेना कठिन। जो हिन्दू और मुसलमान, जो जाट और
निया, जो भंगी और ब्राह्मण, जो द्विज और शूद्र अपने देश के
म के लिए इकट्ठे न मिल सकते थे, वे अँगरेजों को विजयी
ाने के लिए एक साथ मिलकर काम करते रहे। कितना बड़ा
त्कार है! हमारे कांग्रेसी भाई गतिरोध की धमकियाँ ही देते
ह गए, अँगरेजों ने युद्ध जीत भी लिया।

इस युद्ध से तीसरी शिक्षा यह मिलती है कि अँगरेजों को
सने और बदनाम करने से ही हम स्वराज्य प्राप्त न कर सकेंगे।
पने प्रत्येक दोष, प्रत्येक त्रुटि, प्रत्येक अयोग्यता का उत्तर-
यित्व अँगरेजों पर डालते रहने से हम कभी स्वराज्य के
धिकारी न हो सकेंगे, अपनी त्रुटियों का सारा उत्तरदायित्व
रों पर डालने से हमें अपनी त्रुटियों को दूर करने का विचार
भी नहीं आ सकता और जब तक हमारे दुर्गुण दूर होकर हम
वे सद्गुण उत्पन्न नहीं होते, जो स्वराज्य लेने और लेकर उसे
ाए रखने के लिए आवश्यक होते हैं, तब तक स्वतन्त्रता के
ए हमारी सारी चिल्ल-पों व्यर्थ होगी। भाँड़ों की भाँति रूस
र अमेरिका का स्तोत्रगान और अँगरेजों की निन्दा कुछ
म न देगी। संसार अपने कार्यों में इतना व्यस्त है कि उसके
दूसरों के कष्ट अपने ऊपर लेने के लिए न समय है, न
च्छा है, और न शक्ति है। सानफ्रांसिस्को में श्रीमती विजय-
मी पण्डित जो मेमोरण्डम दे रही थीं और श्री० जे० जे० सिंह
रिका में जो प्रापेगण्डा कर रहे थे, वह उपयोगी और आवश्यक
। इसके लिए हम उनके आभारी हैं। परन्तु अमेरिका में
गण्डा-मात्र से हमें स्वराज्य मिल जाएगा, ऐसी आशा करना
शा-मात्र होगी। स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए विदेश में नहीं,
को स्वराज्य का पात्र बनाने के लिए घोर परिश्रम करना होगा।
केवल बातें बनाने से या अँगरेजों को अमेरिका की दृष्टि में बदनाम
करने से हम स्वाधीन न हो सकेंगे। अमेरिका अँगरेजों को क्या
कह सकता है जब उसका फिलिपाईन अभी स्वराज्य-भोगी नहीं,
जब वहाँ के नीग्रो अपने नागरिक अधिकारों का पूर्ण रूप से
उपयोग नहीं कर सकते। विदेशों में प्रापेगण्डा का लाभ तभी
होता है जब अपना देश भी कुछ तैयार हो। परन्तु हमारी दशा
ऐसी है कि अभी हमें रेल का टिकट तक खरीदना नहीं आता।
तीसरे दरजे का टिकट खरीदते समय धक्कमधक्का से हम पशुओं
को भी मात कर देते हैं।

श्री कन्हैयालाल मुंशी जैसे हमारे नेता अँगरेजों से कह रहे
हैं कि आपका युद्ध को जीतना तभी सार्थक होगा जब आप
अन्ताराष्ट्रीय निश्चितता और राष्ट्रीय स्वाधीनता स्थापित करें और
इसके लिए यह आवश्यक है कि ब्रिटेन और भारत के बीच जो
ऐतिहासिक अविश्वास चला आ रहा है उसे दूर किया जाय।
यह ठीक है कि यह अविश्वास दूर होना चाहिए। परन्तु क्या
मुंशी महाशय यह नहीं देखते कि भारत और ब्रिटन के बीच जो
अविश्वास वे बता रहे हैं उससे भी कहीं अधिक पुराना
अविश्वास स्वयं हिन्दुओं की विभिन्न जातियों और उपजातियों
में मौजूद है? शूद्रों और अछूतों के साथ सहस्रों वर्षों से जो
दुर्व्यवहार सवर्ण करते आए हैं उससे क्या परस्पर अविश्वास
उत्पन्न नहीं हुआ? यदि हुआ है तो उसे दूर करने के लिए कांग्रेस
ने क्या कुछ किया है? ब्राह्मण और ब्राह्मणेतर का झगड़ा,
भूमिहार और कायस्थ का झगड़ा, बनिए और जाट का झगड़ा,
सवर्ण और अवर्ण का झगड़ा, हिन्दू और मुसलमान का झगड़ा
अँगरेजों का उत्पन्न किया हुआ नहीं। यह उनसे भी बहुत पहले
का है। हाँ, यह दबा हुआ अवश्य था। अब राजनीतिक जागर्त्ति के
साथ जब जनता में आत्म सम्मान का भाव जाग्रत् हुआ है तो
राख के नीचे छिपी हुई वह आग भी प्रज्वलित हो उठी है।
अँगरेजों ने इसे उत्पन्न नहीं किया, उसका दुरुपयोग चाहे किया
हो। गलियों में झाड़ू देते हुए या जूठे बर्तन साफ़ करते हुए अपने
फोटो खिंचवाकर समाचारपत्रों में छपा देने से ही यह अविश्वास
दूर न हो जाएगा। हमारे साम्प्रदायिक झगड़ों और पाकिस्तान
की माँग का मूल कारण भी यह अविश्वास ही तो है। और यह
तब तक दूर न होगा जब तक वर्णभेद को जड़ से नहीं काट दिया
जाता। परन्तु जातिभेद को मिटाने के लिए आज कितने कांग्रेसी
नेता या स्वतंत्रता के पुजारी कितने सवर्ण नवयुवक यत्न कर रहे
हैं? जो नवयुवक अँगरेजों के विरुद्ध भाषण करके सहर्ष जेल जाने
को तैयार रहते हैं वे विवाह करते समय जात-पाँत के संकीर्ण क्षेत्र
के बाहर जाने का नाम सुनकर काँपने लगते हैं और कहते हैं कि
विवाह हमारे बस की बात नहीं, वह तो हमारे माता-पिता के हाथ
में है; हम उन्हें अप्रसन्न नहीं कर सकते। ऐसे सवर्ण नवयुवकों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर सन्देह होने लगता है। बात असल में यह है कि हमारे यहाँ राजनीतिक बातों में चार-छः मास की जेल ए या बी क्लास लेकर काट लेने से मनुष्य नेता बन जाता है। समाचारपत्रों में उसके चित्र छपने लगते हैं। उसके लिए असेम्बली का सदस्य वरन् कांग्रेसी सरकार में मन्त्री तक बनना सरल हो जाता है। सारा देश उसकी प्रशंसा के पुल बाँधते नहीं थकता। इसके विपरीत, जो व्यक्ति सामाजिक सुधार का काम करता है, जो जातिभेद को मिटाकर समाज को समता और बन्धुता के सूत्र में बाँधने का यत्न करता है, न तो उसका फोटो पत्रों में छपता है, न संसार उसकी प्रशंसा करता है, वरन् और तो दूर स्वयं उसके अपने आत्मीय जन भी आयुपर्यन्त उसे ताने देते रहते हैं। उसे जीवनपर्यन्त जीती चिता में जलना पड़ता है। वह अपना कर्त्तव्य पालन करता हुआ अन्त को प्रायः गुमनामी की दशा में ही संसार से चल देता है। परन्तु उसका वह काम ठोस होता है। वही किसी राष्ट्र को बनाता है। आज हमारे यहाँ सबसे बड़ा देशभक्त वह है जो अँगरेजों को कोसता है और सबसे बड़ा हिन्दू वह है जो मुसलमानों की निन्दा करता है। अँगरेजों और मुसलमानों के विरुद्ध हिन्दुओं को भड़काना बहुत आसान है। परन्तु हिन्दुओं को अपने दोषों को दूर करने—जात-पाँत और छूत-छात को छोड़ने—के लिए तैयार करना कठिन है। मुझे तो ऐसा लगता है कि हिन्दू गांधी जी के पीछे भी वहीं तक चलने को तैयार हैं जहाँ तक गांधी जी उनके अनुगामी हैं। अन्यथा गांधी जी के कहने से न तो वे जातिभेद को छोड़ने को तैयार हैं और न छूत-छात को।

अवस्था ऐसी हो गई है कि कांग्रेस के सामने अब कोई प्रोग्राम नहीं रह गया है। ब्रिटिश गवर्नमेण्ट ने उसके सब नाके बंद कर दिए हैं। उसकी सभी आशाओं पर पानी फेर दिया है। हारकर वह अब उन्हीं बातों को दुबारा करने लगी है, जिनको वह एक बार छोड़ चुकी थी। अदालतों, कालेजों और स्कूलों का बहिष्कार, असेम्बलियों का बहिष्कार, भाषा का प्रश्न, हिन्दू-मुस्लिम एकता, एक वर्ष में स्वराज्य-प्राप्ति—इनमें से किसी बात में इसे सफलता नहीं हुई और न हो सकती है। तकली चलाना और खादी पहनना भी आज केवल दूसरे साधनों से सहस्रों लाखों रुपए कमानेवाले धनी कांग्रेसियों का ही एक फैशन रह गया है। साधारण मनुष्य न तो दिन भर तकली चलाकर अपना पेट भर सकता है और न खादी पहनने की सामर्थ्य रखता है। सच्ची बात तो यह है कि जब तक विदेशी राज्य है, तब तक देश में किसी प्रकार का उद्योग-धन्धा पनप नहीं सकता। और अपना राज्य स्थापित करने के लिए पहले देश-वासियों को एकता के सूत्र में बाँधना परम आवश्यक है। परन्तु हम लोग प्रेम और एकता के परम शत्रु जातिभेद को मिटाने को तैयार नहीं। केवल अँगरेजी में धुआँधार भाषण करके, लेख लिखकर, रूस और अमेरिका से अपीलें करके ही स्वतन्त्रता प्राप्त कर लेना चाहते हैं, जो कि सर्वथा असम्भव है। इसलिए आवश्यकता है इस बात की कि हमारे नवयुवक नाम और नेम की लालसा छोड़कर अपना जीवन जातिभेद को मिटा लगाएँ, जिससे देश में समता, एकता, बन्धुता और स्व की भावना जाग्रत् हो। फिर इस समता और एकता के पर ही स्वराज्य का विशाल भवन स्थापित हो सकेगा।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि आत्म-सुधार का—अपनी को दूर करके अपने को स्वराज्य का पात्र बनाने का—का कठिन है। इसमें कोई लंबे-चौड़े प्रदर्शन नहीं हो सकते। लोगों को भड़काया नहीं जा सकता। इस मार्ग पर प्रग बहुत धीरे-धीरे होती है। फिर भी गन्तव्य स्थान पर पहुँचा ठीक मार्ग यही है। गलत रास्ते पर द्रुतगति से दौड़ते हुए सौ वर्ष में भी गन्तव्य स्थान पर नहीं पहुँच सकते। इसी महात्मा टालस्टाय ने कहा है कि आप कितने कोस चल यह बात उतने महत्त्व की नहीं जितनी कि यह बात कि किस दिशा में चल रहे हैं। कराँची की ओर मुँह करके दौड़ आप कभी कलकत्ता नहीं पहुँच सकते। इसलिए देश में सा समता और बन्धुता उत्पन्न करने की दिशा में थोड़ी उन्न व्यर्थ के प्रदर्शनों में जोर-शोर दिखाने से कहीं अधिक कीम

इस महायुद्ध ने एक बात और भी प्रमाणित कर वह यह कि प्रजातंत्र शासन-पद्धति में चाहे कितनी भी हों, फिर भी वह इस समय की सभी शासन-पद्धतियों से है। किसी एक डिक्टेटर या वर्ग का निरंकुश शासन जाति और राष्ट्र को उठाता नहीं, उसे गिराने का ही होता है। क्या मैं आशा करूँ कि हमारे देश-बंधु संसार महाभयंकर घटना से कुछ शिक्षा लेकर अपने को स्वराज्य बनाने का सच्चा यत्न करेंगे?

——

महाकवि कालिदास और अश्वघोष

श्री काशीनाथ रा० तिलक

कवि-कुल-तिलक कालिदास कब उत्पन्न हुए? उनकी भूमि कहाँ थी? उनके माता-पिता कौन थे? उनके परि कितने व्यक्ति थे? उन्होंने किस प्रकार और कहाँ विद्या उनका कहाँ विवाह हुआ और उससे कितनी सन्तानें हुईं? किस राजा का आश्रय ग्रहण किया और उनका जीवन कैसे इन प्रश्नों के हल करने का कोई साधन आज हमारे पास उस प्रकार के सारे साधन महाकाल के उदर में समा गए कवि ने अपने विषय में ऐसा मौन धारण किया है कि अप ग्रन्थ में अपना नाम तक नहीं लिया।

भले ही हम उनके जीवन-चरित से वञ्चित रहें, ग्रन्थों ने हमारे हृदय पर अपना अधिकार कर लि आज भारत में कौन-सा ऐसा संस्कृतज्ञ है कि जिसने ग्रन्थों का अवलोकन नहीं किया है। भारतीय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और के... मिट... और स्व... ता के ... । ...-अपनी ... ना—का... सकते। ...पर प्रा... र पहुँचा... ौड़ते हुए ...ते। इसी... स चल ... बात वि... रके दौड़... ा में सा... ड़ी उन... क कीम... त कर ... नी भी ... तियों से शासन का ही संसार ...वराज्य के

...घोष

उनकी ...के परि... विद्या ...ं हुई ? ...वन कैसे ...दे पास ... ा गए हैं कि अप... रहें, ...कर लि... जिसने ...तीय ...

उनके "अभिज्ञान-शाकुन्तल" को नाटकों में प्रथम न दिया है। "काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्यं शकुन्तलम्"—पद्य संस्कृतज्ञ विद्वानों की जिह्वा पर नाचता है। इतना ही हीं, उनकी कीर्ति पर लगाकर सात समुद्र पार योरप, अमेरिका दि में भी पहुँच गई। वहाँ के आलोचकों ने उनके ग्रन्थों को नी आलोचना की कसौटी पर कसा और उनको खरा पाया। ज भारत के गङ्गा या गोदावरी के तटों पर उनके ग्रन्थ जिस साह और प्रेम के साथ पढ़े जाते हैं उतने ही उत्साह और प्रेम साथ उनके ग्रन्थ थेम्स और रायन नदी के तटों पर भी पढ़े जाते जर्मनी के सुप्रसिद्ध नाटककार, कवि और आलोचक गेटे ने के 'शकुन्तला' को स्वर्ग और पृथ्वी का सन्धि-स्थान बतलाया किसी विद्वान् ने शिलालेख में उनका नाम उत्कीर्ण किया, सी ग्रन्थकार ने अपने ग्रन्थ में उनके वचन को उद्धृत किया, सी कवि ने उनके मेघदूत के प्रत्येक चरण को समस्या मानकर र्याभ्युदय काव्य की रचना कर डाली और दक्षिण के किसी कवि ने अपने को कालिदास से श्रेष्ठ बतलाया। उनके ग्रन्थ की उत्कृष्ट प्रतिभा-शक्ति के उदाहरण हैं; वे उनकी उर्वर ना-शक्ति के क्रीड़ा-स्थल हैं; वे प्रकृति देवी के दर्पण हैं; वे मार भावों के आकर हैं और वे हृदयस्थ भावों के द्वन्द्व-युद्ध चित्रपट हैं। उनकी भाषा प्रसाद गुणसंपन्न है और "उपमा लिदासस्य" वाली कहावत घर-घर सुनी जाती है।

कालिदास के समय के सम्बन्ध में विद्वानों में मतैक्य नहीं है। क्रमीय संवत् के पूर्व अनेक शताब्दियों से लेकर विक्रम के पश्चात् म शताब्दी तक किसी समय में उनका होना विद्वज्जन मानते अपने-अपने कथन की पुष्टि में इन विद्वानों ने प्रबल युक्तियाँ स्थित की हैं। इस लेख का प्रकृत विषय अश्वघोष के साथ लिदास की तुलना और तद्द्वारा उनके समय का निरूपण करना है।

अश्वघोष बौद्ध कवि हैं। उन्होंने बुद्ध-चरित और सौन्दरानन्द क दो महाकाव्य संस्कृत में लिखे हैं।

पाश्चात्य विद्वानों ने उनको कनिष्क का समकालीन माना कनिष्क का समय विक्रम संवत् १३५ है। अश्वघोष के 'बुद्ध-त' को पढ़ने से ज्ञात होता है कि कालिदास के काव्यों के साथ के काव्य का शब्दशः और अर्थशः विलक्षण साम्य है। यह त होता है कि एक ने अन्य का अति-अनुकरण किया है। -कभी दो कवियों में साम्य काकतालीय न्याय के अनुसार भी जाता है। यह बात एक-आध पद्य के विषय में तो घट सकती है, सम्पूर्ण ग्रन्थ के विषय में नहीं। इतना विलक्षण साम्य तो तभी सकता है—और वह भी अथ से इति तक—जब एक दूसरे नकल करे। यदि इन दोनों में से एक कवि का काल र्वाद रूप से सिद्ध किया जा सकता है तो अन्य कवि के काल निश्चित करने में अधिक सहायता मिलती है। यहाँ प्रथम इन कवियों के काव्यांशों की तुलना की जाएगी और फिर पीछे

जाएगा। इसलिए दोनों कवियों के भाव एक दूसरे के सामने उपस्थित किए जाते हैं—

'बुद्ध-चरित' में शुद्धोदन कुमार सिद्धार्थ या बुद्ध अपने पिता के पुर में प्रथम बार प्रवेश कर रहे हैं—जब कि उन्होंने प्रथम बार वृद्ध पुरुष का दर्शन कर यह जाना कि बुढ़ापा का आक्रमण सबके ऊपर एक न एक दिन अवश्यम्भावी है—और उनको देखने के लिए नगर की नारियों की भीड़ खिड़की में आकर एकत्र होती है और कवि अश्वघोष उनकी चेष्टाओं का वर्णन करते हैं।

'रघुवंश' में रघु कुमार अज स्वयंवर-स्थान से अपनी वधू के साथ राजप्रासाद में जाने के लिए नगर में प्रवेश करते हैं और पुर की सुन्दरियाँ उनके दर्शनार्थ झरोखों पर आकर खड़ी होती हैं और कवि कालिदास उनकी चेष्टाओं के वर्णन का प्रयास करते हैं। दोनों कवियों के वर्णन में विलक्षण साम्य होते हुए भी दोनों के वर्णन में इतना वैषम्य है कि वह वैषम्य ही एक कवि को अन्य कवि से श्रेष्ठ सिद्ध करता है। अश्वघोष कहते हैं कि अपने सेवक जनों के द्वारा कुमार के आगमन का वृत्तान्त सुनकर नगर की नारियाँ उनको देखने की इच्छा से, घर के बड़े-बूढ़ों की अनुज्ञा प्राप्त कर, वातायन की ओर बढ़ीं। कवि कालिदास ने इतना ही कहा है कि अज अपनी वधू के साथ राजमार्ग पर आ पहुँचे और उनको देखने के लिए नारियाँ दौड़ पड़ीं। उन्होंने (नारियों ने) किससे कुमार के आने का समाचार सुना, इस विषय में वे मौन हैं। उनका मौन ही उन्हें प्रकृति केर हस्यों का ज्ञाता बता रहा है। अर्वाचीन काल में जब कभी किसी नगर में महात्मा गांधी का आगमन होता है तब उनके आने की सूचना कौन किसको देता है, इसका पता ही नहीं चलता है। प्रकृति स्वयं ही इसका ढिंढोरा पीटती है। समस्त वातावरण उनके आगमन की सूचना से गूँज उठता है। यह रहस्य सहृदय रसिक जनों से छिपा नहीं है। जिन पुरुषों ने प्रकृति के इस रहस्य का अनुभव कर लिया है वे कवि कालिदास को अवश्य ही दाद देंगे। मैं अपने इस कथन की पुष्टि में तुलसीदास के बालकाण्ड से निम्नलिखित चौपाइयों को उद्धृत करता हूँ :—

एक कहइ नृप सुत ते आली। सुने जे मुनि सँग आए काली।
जिन्ह निज रूप मोहनी डारी। कीन्हें स्ववश नगर नरनारी।
बरनत छबि जहँ तहँ सब लोगू। अवशि देखिअहि देखन जोगू॥

जब कभी मुहल्ले में होकर किसी की बरात गुजरती है तब बाजों का शब्द सुनते ही घर की नारियाँ—बहुएँ-युवतियाँ—बिना सास या ननद के पूछे चट से उसको देखने के लिए दौड़ पड़ती हैं। वहाँ पूछने का अवकाश कौतूहल नहीं देता है और फिर भय यह है कि बरात के निकल जाने पर वर के दर्शन से वञ्चित रह जाना पड़ेगा। अतः कवि अश्वघोष के कथनानुसार घर के बड़े-बूढ़ों की अनुज्ञा प्राप्त कर देखने जाना यह मनुष्य-स्वभाव के विरुद्ध है।

(२) अब अश्वघोष उनकी चेष्टाओं का वर्णन करते हैं। जब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरक जाने से उनकी गति में विघ्न पड़ जाता है। उनके नेत्र निद्रा के बाद खुलने से चञ्चल से हो रहे हैं। समाचार सुनकर उन्होंने अपने अङ्गों में अलङ्कार और के और ही ठौर धारण कर लिए हैं। प्रासाद के सोपानों पर चढ़ते समय उनके पैरों की धमक ने या काञ्ची और नूपुर के रव ने घर के पक्षियों को चौंका दिया या उड़ा दिया और वे खिड़की पर सबसे पहले पहुँच जाने की जल्दी में एक दूसरे को धक्का देती गईं। इनमें से कुछ सुन्दरियों की गति को उनके पीन पयोधरों और विशाल नितम्बों ने जकड़ दिया, यद्यपि वे दर्शनों की प्यासी थीं और उन्हें उसके लिए जल्दी भी पड़ी हुई थी। एक दूसरी ने, जो शीघ्र चलने में समर्थ भी थी, अपनी चाल को तेज करने के स्थान में उसमें रोक लगा दी और वह लज्जा के वशीभूत होकर अपने अलंकारों का निगूहन करने लगी, जिन्हें उसके पति ने एकान्त स्थान में धृष्टतापूर्वक उसको पहनाया था। जहाँ वातायन में एक क्षण पूर्व शान्ति का राज्य था, वहाँ अशान्ति ने आकर डेरा डाल दिया; क्योंकि एक दूसरे को ठेलने के कारण वे एक पिण्डवत् प्रतीत हो रही थीं। सम्मर्दन से उनके कुण्डल कपोलों पर हिल रहे थे और 'कंकण किंकिणि नूपुर की ध्वनि' अशान्ति को और भी बढ़ा रही थी।"

जहाँ कालिदास ने एक घटना के वर्णन में एक श्लोक खर्च किया है वहाँ अश्वघोष ने एक श्लोक में तीन घटनाओं का समावेश कर दिया है। जब काञ्ची के सरक जाने से उनकी गति में विघ्न पड़ जाने की बात पढ़कर पाठक यह आशा करता है कि आगे कैसे उन्होंने उस विघ्न को धर दबाया, कि इस घटना से असम्बद्ध एक अन्य घटना का चित्र उसके सामने आता है। एक घटना का पूर्ण चित्र देखने की उसकी अभिलाषा अपूर्ण ही रह जाती है। 'उनके नेत्र निद्रा और जागर्ति के मध्य की दशा का अनुभव कर रहे हैं,' इस पर उसका ध्यान जमने भी नहीं पाता है कि 'कुमार के आगमन के वृत्त को सुनकर वे गहनों को और के और ठौर धारण कर लेती हैं,' यह कवि-कथन उसका ध्यान भंग कर देता है। सार यह है कि तीनों ही चित्र अपूर्ण और अतृप्तिकारक हैं।

जहाँ कालिदास ने नारियों की अन्धकार्यशून्य चेष्टाओं का वर्णन किया है वहाँ अश्वघोष ने कहा है कि वे खिड़की पर सबसे पहले पहुँच जाने की जल्दी में एक दूसरे को धक्का देती गईं। धक्का देने की उनके मन की प्रवृत्ति यह सूचित करती है कि उनके मन में कुमार को देखने की उत्सुकता का पूर्ण राज्य न था। दूसरे कवि का ध्यान कांची-स्वन से गृह पक्षियों के चौंकने की ओर भी है। नारियों की चेष्टाओं के वर्णन में उसकी वृत्ति तदाकार नहीं है।

जिस नारी ने चलने में समर्थ होने पर भी अपनी गति में एक-दम रोक-थाम कर दी और जो लज्जा से अपने पति के द्वारा एकांत में प्रदत्त विशेष अलंकारों का मार्ग में निगूहन करने लगी, उसमें भी उत्सुकता या लगन का अभाव था। लज्जा ने उत्सुकता को दबा दिया था।

'परस्पर उत्पीडन से एक पिण्ड के तुल्य प्रतीत हो नारियों के हिलते कुण्डल और कांची, नूपुर आदि की वातायन में अशान्ति उत्पन्न कर रही थी।' कवि के से यह व्यक्त होता है कि जब कुमारगत चित्तवृत्ति नारियों को इस अशान्ति का पता नहीं, तब कवि का गौण है और नारियों के चित्त से उसकी वृत्ति तदाकार है। अश्वघोष का यह वर्णन उस कवि के समान है जो के दर्शनार्थ जानेवाली नारियों के परस्पर वाग्युद्ध या धक्का इत्यादि बातों पर अपने विचार प्रकट करता है। इन न न राम-दर्शन की उत्सुकता है, न रामचरित के श्रवण उत्कट लालसा है। उनका लक्ष्य तो सबसे पीछे आकर आगे बैठना है। इस कवि को कोई दोष नहीं दे सकता कि वह नारियों को 'सोत्सुक' नहीं बतलाता है। यदि भी नारियों को 'सोत्सुक' न बतलाते तो उन पर यह दोष- कवि की-सी दृष्टि न रखने का दोष—घटित न हो सकता। कि वे कालिदास का अनुकरण करने चले, पर उनकी ने मार्ग में ही उनका साथ छोड़ दिया।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अश्वघोष की दृष्टि न तीक्ष्ण न सच्ची। वे अपने चित्र की बाह्य रूप-रेखा को बताने में न हुए, फिर उसमें रंग भरकर चमकाने की बात तो दूर

इसके विरुद्ध कालिदास की बाह्य रूप-रेखा न केवल है, उसमें जहाँ जितना रंग चाहिए, उतना ही भरा गया अधिक गहरा और न फीका। उनकी तूलिका चित्रपट सफाई से फिरी है कि उसने सजीव चित्र बनाकर पाठकों उपस्थित कर दिया है। उनका वर्णन देखिए "कोई नारी जूड़ा बाँध रही थी। अज के आने का समाचार सुन सहसा आलोक मार्ग की ओर चल पड़ी। वह एक हाथ केश-पाश को थामे हुए थी, जिसमें से एक-एक करके फूल गिरते जाते थे। उसे उसके बाँधने तक की फुरसत नहीं

"एक दूसरी नाइन के द्वारा पैरों में महावर लगवा नाइन के एक हाथ में उसके पैर का अग्रभाग था। दम झटका देकर उसके हाथ से अपना पैर छुड़ा लिया। गति छोड़कर वह गवाक्ष तक जो दौड़ गई तो वहाँ तक से आर्द्र महावर मार्ग में टपकता गया। एक तरुण नयनों में सुरमा लगा रही थी। दक्षिण नेत्र में उसने लिया था, और वह वाम नेत्र में अंजन लगानेवाली इतने में अज के आने का समाचार उसके कानों में पड़ा की तैसी हाथ में सलाई लिए हुए वातायन के पास पहुँ

"एक नारी सूत्र में मणियाँ पिरो रही थी। उसका पैर के अँगूठे में बँधा था। उसने उसे आधा ही था कि इतने में वह अज को देखने के लिए शीघ्रता हुई। डोरी टूट गई और प्रत्येक पद पर मणियाँ पृथ्वी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नारियों के गवाक्ष तक पहुँचने का वर्णन दोनों कवियों ऊपर दिया गया है। अब उनके वहाँ पहुँचने पर वातायन की शोभा हुई, उसका चित्र—दोनों कवियों का—नीचे दिया है—

"वातायन से निकले हुए नारियों के मुख-पंकज, जिनके कुण्डल दूसरे को छू रहे थे, इस प्रकार शोभा दे रहे थे मानो हर्म्य में ल जड़ दिए गए हों। यह अश्वघोष के १९वें पद्य का भाव है उन्होंने फिर २१वें पद्य में दुहराया है। उसमें कवि कोई नता उत्पन्न नहीं कर सका है। कालिदास की प्रतिभा यहाँ बाजी मार ले गई है। कमल का सांगोपांग रूप उपस्थित करते वे कहते हैं—

"गवाक्षों का अन्तर—मध्यभाग—उनके मुखों से व्याप्त हो गया उनमें मुख ही मुख दिखाई पड़ रहे थे। उनके मुखों से आसव गन्ध निकल रही थी और उनके नेत्र भ्रमर के समान चंचल इसलिए उनके मुखों को देखकर यह मालूम होता था कि हों में मानो सहस्र दल खिल रहे हैं।"

उपर्युक्त वर्णन को पढ़कर कौन ऐसा सहृदय पुरुष होगा। के मुख से सहसा यह न निकल पड़े कि "इसका नाम वर्णन यह है पूर्ण चित्र।"

कुछ विद्वानों का कहना है कि कालिदास ने अश्वघोष के अधूरे चित्र को अपनी प्रतिभा की तूलिका से पूर्ण चित्र में त कर दिया है।

इसके अनन्तर दोनों कवियों ने नारियों के कुमार के करने पर उनकी जो दशा हुई, उसका वर्णन किया अश्वघोष कहते हैं कि कुमार को मार्ग में देखनेवाली स्त्रियाँ पृथ्वी पर चलने की इच्छुक हैं और ऊर्ध्वमुख से इसको वाले पुरुष मानो आकाश में जाने के इच्छुक हैं। पर कालि- कहते हैं कि जब नारियाँ अज को अपने नयनपुट से पान कर थीं तब उनको अन्य विषयों की सुध या ज्ञान न रहा; क्योंकि शेष इन्द्रियों की वृत्तियाँ पूर्ण रूप से मानों चक्षु में प्रवेश ई थीं। दोनों के वर्णन में जमीन-आसमान का अन्तर है हृदय जनों से अविदित नहीं है। दर्शन के अनन्तर नारियों ख से जो उद्गार निकले हैं वे अपने-अपने प्रकरण के अनुसार क्त हैं। उनके विषय में कुछ अधिक कहने की आवश्यकता नहीं होती। पर राज्यलक्ष्मी को त्यागकर वह (कुमार) धर्म हण करेगा यह नारियों का कथन कुछ अटपटा और असा- प्रतीत होता है। अभी तो कुमार के मनरूपी क्षेत्र में का हल ही नहीं फिरा है।

अब यह प्रश्न उठता है—विद्वानों ने इसे उठाया भी है—कि नों कवियों में विलक्षण साम्य—शब्दशः और अर्थशः— न है तब अश्वघोष या कालिदास ने एक दूसरे की अवश्य ही की है। जिन विद्वानों का मत है कि कालिदास विक्रम के हुए हैं उनकी दृष्टि में कालिदास ने अश्वघोष के भाव-कुसुमों को चुनकर सुन्दर स्तवक तैयार किया है। पर यह बात मनुष्य-स्वभाव के विरुद्ध है। अनुकरण श्रेष्ठ का ही किया जाता है। आज तक किसी ने भी अपने से हीन जन को अपना आदर्श नहीं बनाया है। आदर्श सदा ऊँचा रहा है और रहेगा। ब्रह्म-तेज की श्रेष्ठता सिद्ध होने पर विश्वामित्र ने वशिष्ठ के समान ब्राह्मण बनना चाहा। बिहारी ने शालिवाहन, गोवर्द्धनाचार्य और अमरुक को अपनी सतसई के निर्माण में प्रमाण माना; क्योंकि इन कवियों का नाम शृङ्गाररस की रचना में सर्वमान्य हो रहा था। स्वयं कालिदास ने 'प्रथित यशस्वी' भास, सौमिल्ल और कविपुत्र को नाट्य-रचना में अनुकरणीय समझा। भास के नाटकचक्र कालिदास के 'प्रथितयशसां' विशेषण का समर्थन कर रहे हैं। पर अश्वघोष के काव्यों को किसी विद्वान् ने—भारत या योरप के—भी उत्तम नहीं बताया है। फिर इतने पर भी अश्वघोष को कालिदास का आदर्श बताना उन विद्वानों का दुराग्रह-मात्र है।

इन उद्धरणों से यह सिद्ध हो जाता है कि कालिदास अश्व-घोष के पूर्ववर्त्ती थे और वे विक्रम से पूर्व किसी शताब्दी में हुए होंगे।

भास कवि कालिदास के पूर्ववर्ती हैं। भास के 'स्वप्न-वासवदत्ता" नाटक के एक श्लोक को आर्य चाणक्य ने अपने अर्थशास्त्र में उद्धृत किया है। चाणक्य चन्द्रगुप्त मौर्य के सम-कालीन थे। चन्द्रगुप्त का समय विक्रम से पूर्व ३७७ है। अतः भास चाणक्य के पूर्ववर्ती हैं और तब कालिदास भास से लगभग १०० वर्ष या १२५ वर्ष पश्चात् हुए हों, यह संभव है। गणपति शास्त्री के सिद्ध किए हुए इस काल को—भास के काल को—कुछ विद्वान् असन्दिग्ध नहीं मानते हैं, पर उनके कथन का निरा-करण यह कहकर किया जा सकता है कि जब आज तक उक्त श्लोक 'स्वप्नवासवदत्ता' नाटक के अतिरिक्त अन्य किसी कवि के काव्य में नहीं मिला है और आगे चलकर जब तक वह किसी कवि का सिद्ध न हो जाय, और वह कवि भी भास का पूर्ववर्ती है यह न सिद्ध हो जाय, तब तक भास को चाणक्य का पूर्ववर्ती मानना ही अधिक युक्तियुक्त प्रतीत होता है।

यदि यह कहा जाय कि जब अश्वघोष अपने पूर्ववर्ती कालि-दास के सुन्दर चित्र के अपने नेत्रों के सम्मुख उपस्थित होते हुए भी तद्वत् चित्र बनाने में कृतकृत्य नहीं हुए तब तो यही कहना समुचित प्रतीत होता है कि कालिदास ने ही अपने पूर्ववर्ती अश्व-घोष के भद्दे चित्र को सुन्दर रूप में सजा दिया है और इस वृत्त से विक्रम के पश्चात् उनका समय आता है। तो इसके उत्तर में यह निवेदन है कि कोई कवि या लेखक अपने से पूर्ववर्ती प्रसिद्ध कवि के ही भावों को लेकर काव्य-रचना करता है, अथवा उस कवि के भावों में या वर्णन में उसे कोई त्रुटि प्रतीत हुई तो उसमें संशोधन कर नवीनता लाने की कोशिश करता है। पर यह

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कवि भी अपने पूर्ववर्ती कवि के सुन्दर चित्र को सजाने के स्थान में बिगाड़ बैठते हैं। इस बात के उदाहरण हिन्दी के सुप्रसिद्ध महाकवि बिहारी हैं, जिनकी नकल करनेवाले परवर्त्ती कवियों ने मुँह की खाई है।

उपरिलिखित दोनों कवियों के काव्यांशों की तुलना से यह सिद्ध हो गया है कि कालिदास का पलड़ा भारी है और सब विद्वान् इस विषय में सहमत हैं कि कालिदास भारत के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं। अनुकरण पूर्ववर्ती और विख्यात कवि का ही किया जाता है। यह मनुष्य का स्वभाव है। इसलिए मनुष्य-स्वभाव की अवज्ञा किए बिना अश्वघोष कालिदास के पूर्ववर्ती सिद्ध नहीं किए जा सकते हैं। अतः जब अश्वघोष का समय विक्रम संवत् १३५ निश्चित है तब कालिदास का समय स्वतः विक्रम के पूर्व पहुँच जाता है। कितना पूर्व, यह अनुमान के अतिरिक्त निश्चयपूर्वक कह सकना सम्भव नहीं है।

——

हिन्दी और फारसी

श्री रविशंकर शुक्ल

हिन्दी के कुछ विद्वानों का मत है कि राष्ट्र-भाषा के हेतु हिन्दी में संस्कृत और फारसी का सुन्दर समन्वय हो सकता है और इस प्रकार एक आदर्श राष्ट्र-भाषा का निर्माण होगा। हिन्दी के कुछ अन्य समर्थक यह कहते हैं कि यदि हमें विदेशी भाषाओं का सहारा लेना पड़े तो हम फारसी की सहायता लें। दोनों प्रकार के विचारों के व्यक्ति युक्ति यह देते हैं कि फारसी आर्य-भाषा है और हमें उससे द्वेष नहीं करना चाहिए।

इस सम्बन्ध में दो बातें विचारणीय हैं। प्रथम तो यह कि अकेली फारसी ही आर्य-भाषा नहीं है। अँगरेजी, ग्रीक, लैटिन, जर्मन इत्यादि भी आर्य-भाषाएँ हैं, इनको क्यों छोड़ दिया जाता है? उत्तर में शायद यह कहा जाएगा कि फारसी का संस्कृत से अन्य आर्य-भाषाओं की अपेक्षा वंशसामीप्य बहुत अधिक है। यह बात ठीक है, लेकिन न तो आज की फारसी 'जेन्दावेस्ता' की फारसी है और न भाषाएँ अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते समय वंश-वृक्ष का ख्याल रखती हैं। भाषाएँ उन विदेशी भाषाओं के शब्द ग्रहण कर लेती हैं जिनके सम्पर्क में वे राजनीतिक अथवा अन्य कारणों से आती हैं। हिन्दी में इसी कारण सैकड़ों अरबी के शब्द मौजूद हैं जिन्हें नहीं निकाला जा सकता और न निकालना चाहिए। अँगरेजी, ग्रीक, लैटिन आदि वंश के लिहाज से फारसी की अपेक्षा जरूर दूर हैं लेकिन पिछले दो सौ वर्षों में कम से कम अँगरेजी हमारे बहुत निकट आ गई है। हम फारसी की अपेक्षा अँगरेजी से कहीं अधिक परिचित हो गए हैं; वह फारसी की अपेक्षा कहीं अधिक प्रचलित है; आज देश में जो अँगरेजी का प्रभुत्व है वह फारसी का कभी नहीं था। हिन्दी पर आज तक अँगरेजी का इतना प्रभाव पड़ चुका है जितना फारसी का कभी नहीं पड़ा। जनता की भाषा में अँगरेजी के इतने शब्द घुस आए हैं जितने फारसी के कभी नहीं [illegible] शिक्षितों की बोल-चाल की भाषा में 'अशिक्षितों की [illegible] बात करना बेकार है क्योंकि उसमें कुछ भी नहीं है) [illegible] इतने अधिक शब्द आते हैं कि इतने फारसी के शब्द, [illegible] कौन कहे, आज तक की बोल-चाल की उर्दू में भी [illegible] और अँगरेजी के मेल से 'बाबू हिन्दुस्तानी' बनकर ऐसी [illegible] हो गई है जितनी उर्दू कभी नहीं हुई। इन सब बातों [illegible] अँगरेजी की अपेक्षा फारसी का वंश-सामीप्य रत्ती [illegible] नहीं रखता। यह स्पष्ट है कि भविष्य में भी हिन्दी [illegible] अपेक्षा अँगरेजी के सम्पर्क में कहीं अधिक आएगी और [illegible] या न चाहें, सैकड़ों अँगरेजी के शब्द हमारी भाषा में [illegible] आएँगे। ऐसी अवस्था में वंश-सामीप्य के आधार पर [illegible] भाषाओं की सूची में अँगरेजी की अपेक्षा फारसी को [illegible] महत्त्व देना अस्वाभाविक है और भाषा की स्वाभाविक [illegible] बाधक होगा। अँगरेजी शब्दों में और कई ऐसे गुण [illegible] सामने फारसी का वंश-सामीप्यवाला गुण बिलकुल तु[illegible] अँगरेजी से शिक्षित समुदाय फारसी की अपेक्षा कहीं [illegible] परिचित है और उसे अँगरेजी के शब्द फारसी के [illegible] अपेक्षा कहीं अधिक सरल प्रतीत होंगे। इतना ही [illegible] शब्दों को वह आज भी अपनी अपनी मातृ-भाषाओं [illegible] प्रकार प्रयुक्त करता है जिस प्रकार हिन्दीवाले 'बाबू हि[illegible] में। जब हम अरबी के प्रचलित शब्दों को रखने के लि[illegible] हैं तब अँगरेजी के शब्दों को, जो आज भी प्रचलित [illegible] समुदाय में ही सही), छोड़कर नितान्त नए फारसी [illegible] क्यों ढूँढ़ ढूँढ़कर लाएँ? अँगरेजी के शब्द सम्पूर्ण [illegible] एक समान प्रचलित हैं, इसलिए राष्ट्र-भाषा में इनके [illegible] और भी सुविधा होगी। सम्भवतः वही अँगरेजी के [illegible] प्रान्तीय भाषाओं को भी लेने पड़ेंगे और इसलिए ये [illegible] भाषा और प्रान्तीय भाषाओं में संस्कृत शब्दों की [illegible] अतिरिक्त बन्धन का काम करेंगे। यह बात फारसी के [illegible] होगी। अँगरेजी के शब्द सब धर्मावलम्बियों को भी [illegible] मान्य होंगे। फिर अँगरेजी अन्ताराष्ट्रीय भाषा है और [illegible] अँगरेजी के शब्द लेने से हम सभ्य संसार के अधिक [illegible] और हमें सुविधा भी अधिक होगी। आधुनिक विज्ञान [illegible] और कला का अँगरेजी खजाना है, फारसी नहीं। [illegible] से बहुत कुछ लेना है। सभी प्रान्तीय भाषाओं को [illegible] यह सदा नियम रहा है कि जिस भाषा या जिस देश [illegible] चीज सीखी जाती है उसी का शब्द भी ग्रहण किया [illegible] योरपीय देशों और अँगरेजी के मुकाबले में हमें [illegible] फारसी से क्या सीखना है? फिर फारसी का संस्कृत [illegible] सामीप्य है, हिन्दी से नहीं। हम फारसी और संस्कृत [illegible] कर एक भाषा बनाने नहीं जा रहे हैं। हिन्दी का [illegible] [illegible] सबसे अधिक पंजाबी, गुजराती, मराठी, बँगला [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाषाओं के सम्पर्क में भी हिन्दी फारसी, अँगरेजी आदि
अपेक्षा कहीं अधिक आएगी। इसलिए सबसे पहले हिन्दी
इन भाषाओं के साथ समन्वय क्यों नहीं होना चाहिए? फिर
सामीप्य के विचार से पहले अपभ्रंश का नम्बर आता है, फिर
कृत का और फिर संस्कृत का। बेचारी फारसी तो बहुत पीछे
इन सब बातों के होते हुए जब यह कहा जाता है कि हिन्दी
फारसी और संस्कृत का एक सुन्दर समन्वय किया जा सकता
या विदेशी भाषाओं में फारसी को महत्त्व दिया जाता है, तो
में सन्देह करने की कोई गुञ्जाइश नहीं रहती कि यह भारतीय
लमानों को, जो कल तक हिन्दू थे लेकिन आज अपने आप
फारस और अरब की सभ्यता का उत्तराधिकारी मानते हैं,
तौर से नहीं तो थोड़ा-बहुत खुश करने के लिए कहा जाता
'फारसी आर्य-भाषा है' आदि बातें केवल लोगों को भुलावे
डालने के लिए कही जाती हैं, असली कारण घोर साम्प्रदायिक
ना है। हमें इसका जमकर विरोध करना चाहिए। फारस
तुर्की के मुसलमानों की मिसालें हमारे सामने हैं। हम
-भाषा के लिए राष्ट्रीयता के धरातल को किसी हालत में
छोड़ सकते। आवश्यकता पड़ने पर हम सबसे पहले भारत
प्रान्तीय भाषाओं, आर्य अथवा अनार्य, से शब्द लेंगे, फिर
त और संस्कृत का खजाना टटोलेंगे और फिर भी यदि काम
ला तो विदेशी भाषाओं में अँगरेजी को फारसी से अधिक
तो कम-से-कम फारसी के बराबर महत्त्व देंगे।

इस सम्बन्ध में दूसरी विचारणीय बात यह है कि समन्वय
वर होगा किस प्रकार? क्या भाषा में भी साम्प्रदायिक प्रति-
धित्व का सिद्धान्त घुसेड़ा जाएगा और एक मेज के चारों ओर
कर हिन्दू और मुसलमान विद्वान् निर्णय करेंगे कि कौन-सा
संस्कृत का लिया जाए और कौन-सा फारसी का? क्या ऐसा
कभी संभव है? यहाँ यह बताना आवश्यक है कि ऊपर
न्वय के जो अर्थ लगाए गए हैं और जो सिद्धान्त निर्धारित किए
हैं, वे केवल नए आवश्यक शब्दों के संबंध में हैं। अर्थात्
दी का कोई प्रचलित शब्द किसी हालत में नहीं निकाला
सकता और न उसके स्थान पर विदेशी शब्द प्रतिष्ठित किया
सकता है। यदि समन्वयवादी समन्वय का अर्थ यह लगाते
जबरदस्ती हिन्दी में से आधे या किसी और अनुपात में संस्कृत
ब्द निकालकर उनकी जगह फारसी के या किसी और भाषा
शब्द रक्खे जाएँ और राजनीतिक संस्थाओं की तरह भारत
राष्ट्र-भाषा में भी हिन्दुओं और मुसलमानों का प्रतिनिधित्व
या जाए और उनका अनुपात निश्चित किया जाए तो हमें
की बुद्धि पर तरस आएगा। इस हालत में अच्छा होगा यदि
ष्ट्र-भाषा का स्वप्न देखना ही छोड़ दें।

यह भी स्पष्ट है कि सच्चे अर्थों में समन्वय हिन्दी के
पास से सम्बन्ध रखता है, उसकी छीछालेदार से नहीं, अर्थात्
हिन्दी को अपनी स्वाभाविक प्रकृति के अनुसार विकसित होने दिया जाए, आज की जो हिन्दी है उसको राष्ट्र-भाषा मानकर कार्य आरम्भ किया जाए। राष्ट्र-भाषा के विचार से हिन्दी में जो त्रुटियाँ हैं वे अपने आप दूर होती चली जाएँगी और हिन्दी अपने आप प्रान्तीय भाषाओं, संस्कृत, अँगरेजी, फारसी इत्यादि से आवश्यकतानुसार शब्द ग्रहण करती चली जाएगी। यह समन्वय इत्यादि का नारा ही क्यों लगाया जाता है? ये शर्तें रक्खी ही क्यों जाती हैं कि हिन्दी में इसका समन्वय हो, उसका समन्वय हो, तब वह राष्ट्र-भाषा मानी जाएगी? फारसी का सवाल उठता ही क्यों है? हमारे पास यह मानने के यथेष्ट कारण हैं कि समन्वयवादियों का समन्वय से यही अभिप्राय है कि हिन्दी का अंग-भंग किया जाए और भाषा के डाक्टर एक मेज के चारों ओर बैठकर हिन्दी की काँट-छाँट करें और उसे 'आदर्श-राष्ट्र-भाषा' बनाने के लिए उसमें फारसी, अरबी, उर्दू आदि की कलमें लगाएँ। वास्तव में समन्वयवादियों में और हिन्दुस्तानी-वालों में कोई अन्तर नहीं है। एक नाक सामने से पकड़ता है और दूसरा पीछे से। दोनों की बातों का निचोड़ यह है कि हिन्दी में संस्कृत के शब्द कम किए जाएँ और उनकी जगह अरबी-फारसी के शब्द भरे जाएँ जिससे मुसलमान खुश हो जाएँ और राष्ट्र-भाषा को स्वीकार कर लें; इससे ५/६ भारत को कठिनाई क्यों न पड़े। वे इसी को सच्ची राष्ट्रीयता समझते हैं। ऐसा न कहीं हुआ है, न यहाँ हो सकता है और न इस प्रकार 'आदर्श राष्ट्र-भाषा' या किसी भाषा का निर्माण हो सकता है। यदि इस प्रकार आदर्श भाषाएँ या लिपियाँ बन सकती होतीं तो संसार में आज एक से-एक बढ़कर सुन्दर भाषाएँ और लिपियाँ होतीं और उर्दू जैसी अवैज्ञानिक भाषा नष्ट हो गई होती। आदर्श भाषा वही है जो जीवन के साथ चलकर अपने आप बने। भारत की आदर्श राष्ट्र-भाषा भी कृत्रिम उपायों से हिन्दी-उर्दू को मिलाने से या संस्कृत और फारसी को मिलाने से नहीं हिन्दी को स्वाभाविक विकास करने का अवसर देने से बनेगी। हम तथाकथित राष्ट्र-वादियों को सचेत किए देते हैं कि यदि उन्होंने राष्ट्र-भाषा को साम्प्रदायिकता या झूठे समन्वय-वाद का अखाड़ा बनाया तो राष्ट्र-भाषा बनना तो दूर, स्वतंत्रता के रास्ते में एक और बाधा खड़ी हो जाएगी। या तो वे सच्ची और सीधी बात कहने और करने का साहस करें या वे राष्ट्र-भाषा के प्रश्न को बिलकुल छोड़ दें। समय अपने आप हिन्दी को राष्ट्र-भाषा बना देगा। यह स्वप्न देखना बिलकुल बेकार है कि जो हिन्दी सदियों तक कुचली जाने पर और उर्दू का अखण्ड साम्राज्य होने पर भी जीवित रही और जिसने अपनी आत्मा को आज तक कलुषित नहीं होने दिया, वह कल या अगले दस-बीस वर्षों में उर्दू से, जो भी पुष्ट हो चुकी है और हैदराबाद, पंजाब आदि विशाल क्षेत्रों में निष्कण्टक राज्य कर रही है और करती रहेगी, मिलकर एक हो जाएगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

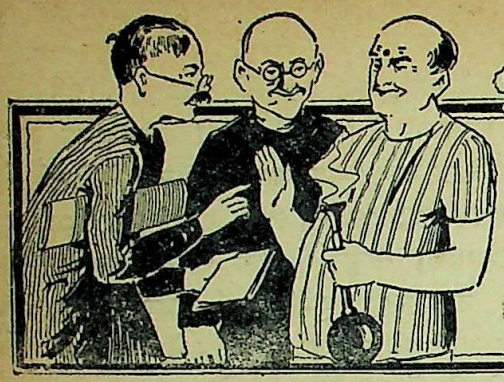

विविध विषय

मँगतू स्वराजी

चार-छः माह में एक बार हुजूर कमिश्नर साहब दलबल-हित पधारा करते थे। न मालूम क्यों वे आते थे। पर कहा यही जाता था कि 'निसपेक्सन' के लिए आते हैं। कमिश्नर साहब का 'निसपेक्सन' कैदियों की मौत थी। स्वराजी और उनमें भी आगे बढ़े हुए अथवा 'सी' से ऊपरवाले ही अपनी शिकायत उनके सामने रखने की हिम्मत करते थे। कभी-कभी तो ये भी ऊबकर इस निर्णय पर पहुँच जाते कि सब एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं; कोई सुनवाई होती नहीं; व्यर्थ आजिजी करनी होती है; शब्द खराब होते हैं। और कोई शिकायत न करता।

जेलवालों की छाती फूल जाती। क्या ही 'हाईक्लास' व्यवस्था है। बढ़िया 'डिसिप्लिन' है। लोगों के निर्णय का उलटा ही परिणाम होता। ऐसे ही एक समय हुजूर का 'इन्सपेक्शन राउंड' था। दो रोज पहले से ही कैदियों को कपड़े साफ रखने का हुक्म हो गया। सड़कों पर रोलर चलाए गए। शानदार छिड़काव हो गया।

अफसरगण अच्छी इस्तिरी किया हुआ ड्रेस पहन नियत दिन हाजिर हो गए। ऐसे अवसरों पर जिस किसी कैदी के कपड़े फटे हों उसे ज्यादा कर टट्टी के पीछे भेज दिया जाता था, जिससे वह सामने न पड़ जाय। और इन्सपेक्शन करनेवाले बड़े लोग भूलकर भी अपनी इच्छा से यहाँ-वहाँ जाकर हर चीज देखने की, पूछ-ताछ करने की, तकलीफ न करते थे।

आन्दोलन कही गई उत्तेजना में लोगों से जेलें भर दी गई थीं। ऐसे अवसरों पर 'डिसिप्लिन' जरा कम ही सध पाता है। 'जनरल डिसिप्लिन' खराब न हो जाय, इस डर से ऐसी सब 'आमद' एक बैरक में, एक साथ रख दी जाती है। हम कांग्रेसी इसे वरदान समझते हैं। क्रिमिनलों के साथ रहने में हम बड़ा कष्ट अनुभव करते हैं।

छोटे-बड़े सभी तरह के लोग चले आए थे। एक छोटी संख्या करीब-करीब बेघर-बारवालों की भी थी। उनमें से एक केवल लँगोटी लगाए बैठा चोंगी पी रहा था। राउंड इसी बैठक का था। जेल अफसर स्वराजियों के व्यवहार से अत्यधिक अप्रसन्न थे। 'एक' 'दो' पर खड़े होकर नीची नजर कर हिस्ट्री टिकट बतलाने की आदत इन स्वराजियों की न हो पाई थी। यही सबसे बुरी बात थी। अफसरों को लग रहा था, साहब न जाने क्या कहें। एकाएक साहब की नजर उस लँगोटिया पर पड़ गई जो चोंगी बुझाकर सिरहाने रखने की तजवीज कर रहा था। इशारे से उन्हें बुलवाया; पूछा—'क्या नाम है तुम्हारा ?' 'मँगतू'—हड़बड़ाए नजदीक आए हुए स्वराजी कैदी ने कहा।

'बाहर क्या करते हो ?'

दोनों हाथ जोड़े हुए स्वराजी ने कहा—'हुजूर नपैया हूँ।'

'निकालो साले को। गाँधी का सत्याग्रह क्या छिड़, गया गैरे नत्थू-खैरे सभी जेल चले आए। बाहर सालों को एक रोटी नहीं मिलती; जेल चले आए चैन की वंशी बजाने। निकालो अभी बाहर करो।'

स्वराजी नपैया विक्षुब्ध-सा एकटक देखता रहा, जमीन को, कभी आई हुई सेना को! दूसरे साथी आँखें मट लगे। गरीबी पर गालियाँ पड़ रही थीं। लौटकर स्वराजी कहा—'मालिक, होगा क्या निकालने से। कल फिर तुम्हें होगा। स्वराज की लड़ाई तो बन्द हुई नहीं।' दो कैदियों के नम्बरदार ने उसे बाहर कर दिया। अपना कंबल झाड़ता वह चलता बना। साहब लौट गए!

मैंने साथी से कहा—'तो क्या सचमुच ऐसे लोग अन्दर लाए जाएँगे ? क्या ही अच्छा होता यदि ऐसे ही लोगों की होती और ऐसे ही लोग स्वतन्त्रता के सैनिक होते!' बात पूरी न कर पाया था कि झल्लाकर साथी ने कहा—'कांग्रेस है कि यदि ऐसों की नहीं है तो ?'

मैं उन्हें देखता रहा। फिर मैंने कहना शुरू किया 'आँखें कर लेने से तो बुराई अच्छी नहीं हो जाती। सैनिक ऐसे नहीं हैं। वह दूसरी ही बात है कि ऐसे ही लोगों के हमारी सेना है; हमारी लड़ाई है।' यही मैं उन्हें समझा रहा कानाफूसी शुरू हो गई। मुश्किल से कोई दो घंटे बीते होंगे पेक्सन को! नम्बरदार ने 'आमद' लिखी है', आफिस से आ ने बतलाया। कोई स्वराजी आया है। प्रतीक्षा में मुश्किल से कटने लगा। उचक-उचककर हम हर आनेवाले को देखते! अब साथी आया—अब आया! आया वह अवश्य; सब स्वयं खुल-खुलकर हँसे जब देखा कि वह और कोई मँगतू ही है!

काश! एक बार और कमिश्नर का राउंड हो जाता।

—भारतचन्द्र, बी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं ले न सकी !

मैं ले न सकी उपहार,
प्यार मैं ले न सकी !

सुमन अंक में भर-भर सुषमा
प्रकृति सहज लाई समीप ।
झपकाती आँखें मदमाती
रजनी लाई ज्योति-द्वीप;
उठा मुझमें शंका का ज्वार;
मैं दूर हटी !
मैं ले न सकी !

अरमानों में प्रभा मिलाता
विहग-राग से सरव गगन ।
दुलराता-सा, जलद-पटों में
सजता जब आया सावन;
क्षितिज में था मेरा संसार;
मैं छली गई !
मैं ले न सकी !

तरु-शिखरों से कूद छाँह में
खिला धरा पर अमित हास ।
आँख-मिचौनी-सा, छिपता-सा
कोई आ जाता सकाश;
सहमती मैं कुछ सोच-विचार;
मैं भूल चली !
मैं ले न सकी !

मनुहारों से सजी आरती
परिचित, वह गुदगुदा हर्ष
हृदय मधुरिमा में सुन्दर-सा
कोई करता परामर्श;
विकल मैं करती स्नेह-सँभार ।
मैं शीर्ण हुई !
मैं ले न सकी !

रिक्त-कोष में कहाँ, मधुप रे !
करने आया मधु-विहार ?
तृषा बढ़ेगी, व्यथा मिलेगी
क्रूर !...अरे !...यह क्या दुलार ?
झुलस जाता वह रूप निखार ।
मैं शून्य बनी !
मैं ले न सकी !
मैं ले न सकी उपहार, प्यार
मैं ले न सकी !

—सुश्री कुसुमलता

लघु-परिचय

तुम.....मेरा तुमसे परिचय कब हुआ, जब जीवन में कुछ न था । अमल और भोला जीवन तुम्हारे पास रहने का आभास तक न पा सका और अकस्मात् जब बढ़ती हुई लहरें तुम्हारे स्पर्श से रोमांचित हुईं, मैं सिहर उठी—जाने इस सागर में कौन छिपा है । मुड़ते हुए मैंने तुममें उत्साह की झलक पाई । मैं कुछ न कह सकी । चंचल लहरें आगे बढ़तीं, पर तुमसे शरमाकर झिझकी-सी पीछे लौटतीं । तुम मुझे छेड़ते । मधुर कल-कल संकोच से सिमट जाता । मैं सकुची-सी तुम्हें देखती । मनहर के दर्शन को मैं चल पड़ती । मन मग्न हो चुका था । बल खाती लहरें तुम्हें वृक्षों के झुरमुट में निहारने लगतीं । खिल-खिलकर वे नाच उठतीं । मधुर-से नृत्य में कितना उल्लास छिपा रहता ? तुम पार थे । मैंने तुम्हें देखा था । कितने मधुर थे तुम । तुम्हें पाकर अब और पाने को क्या रह गया था ! मैं सौभाग्य पर फूली मग्न थी । भला, तुम इतने मधुर कैसे बन चले थे । नन्हीं-सी नीहारिकाएँ मुझे अपलक देखती रहतीं । पर, मुझे अवकाश कहाँ था ! रसभरे रसिया को पाकर मैं उसमें डूब चली थी । और एक दिन जब अलसाई हुई प्रातः किरण मुझे जगाने का प्रयत्न कर रही थी, मैं थकी-सी मस्ती में पड़ी थी । हलके से मैंने हृदय में रिक्तता का अनुभव किया । देखा तो कैसा सूनापन था ।

तुम.....तुम्हें न पाकर लहरें टकराने लगीं । मैं सुध-बुध बिसारे थी । समझ न पाती थी क्या हो चला है । मैं ऊब गई थी । निराशा में मैंने देखी—विशाल फैले हुए मैदान में मुरझाई पत्र-राशि । चेतनता लुप्तप्राय हो चुकी थी । उफ् ! विशाल जगत् विरहस्थल बन चला था । मैं मन मारे दूर क्षितिज को निहारने लगी । अपार गगन में कितनी रहस्यमयी शान्ति थी । बादल के हलके टुकड़े घूम रहे थे—निरुद्देश्य भावों-से । मैं भूल-सी गई । तभी देखा, तुम ही तो थे । जाने कहाँ उड़े जा रहे थे । नीचे देखने की तुम्हें इच्छा न थी । तभी से मैं तुम्हें निहार रही हूँ । आँखें एकटक आकाश पर लगी हैं । किनारे पर फूल बनी तुम्हें देख रही हूँ—शून्य में । मुझसे तो तुम्हारा परिचय नहीं, पर कभी इस हृदय में तुम्हारी ही झाँकी तो झलकी थी न ! तुम भूल चले हो । विस्मृता हूँ; पर भूल से तुम्हारी आँखें धरातल पर चली जाती हैं और मैं उनमें अपना परिचय पा जाती हूँ । सब भूल-सा जाता है । नीहारिकाएँ आ-आकर मुस्करा देती हैं—सहानुभूति में ।

—सोमा जलाली मिर्जा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिटलर चाँद में है

सामाचार-पत्रों में हिटलर से सम्बन्धित सम्माचार मोटे अक्षरों में प्रथम पृष्ठ पर ही प्रायः आते हैं। यदि दुर्भाग्य से ऐसा न हो सके तो उसके लिए कोई ऐसा उपाय अवश्य किया जाता है जिससे पाठकों के ध्यान में वह समाचार आ जाए। अर्थात् काले टाइप, १० एम, १२ एम, जो भी उपाय हो सकता है, उसकी शरण ली जाती है। सम्पादक साहब यदि अपने कर्त्तव्य को भूल भी जाएँ तो पाठक नहीं चूकते और उनकी नजर हिटलर की खबर पर अटक ही जाती है। मतलब यह है कि हिटलर अब भी जिज्ञासा का विषय बना हुआ है।

हिटलर

महायुद्ध के पूर्व हिटलर का महत्त्व जर्मन राष्ट्र में बहुत अधिक था। बाहरी दुनिया भी उसे महान् व्यक्ति के रूप में सम्मानित करती थी। साधारण जनता में उसके जीवन के संयम से सम्बन्धित केवल सत्य बातें ही नहीं, अपितु बहुत-सी किंवदन्तियाँ भी प्रचलित थीं। महायुद्ध के समय विद्युत्गति से की गई जर्मन-विजयों ने उसका नाम अलौकिक दैत्याकार पुरुषों में गिना दिया। फ्रांस की १५ दिन में पराजय, यूनान और फ्लेन्डर्स में अँगरेजों की दौड़, क्रीट में हवाई आक्रमण-द्वारा विजय और रूस के मोर्चे पर पहली विजयों से हिटलर अपराजेय समझा जाने लगा। [illegible] की पराजय के प्रारम्भ होने पर भी लोगों को यह विश्वास नहीं कि जर्मनी हार रहा है। यही समझा गया कि वह कोई चाल रहा है। जर्मनी ने उन्हीं दिनों 'वी टू, वी एम' बम [illegible] बिना वाहक के चलनेवाले हवाई जहाज ईजाद किए, एक व्यक्ति से चलनेवाली पनडुब्बियाँ आविष्कृत कीं, मुसोलिनि अँगरेजों की कैद से छुड़ाया। इन सब घटनाओं से यह प्रतीत था कि जर्मनी में अभी अपार शक्ति है। वह पीछे हट रहा खदेड़ा नहीं जा रहा है। सफल 'अपसरण' जर्मनी के वक्तव्य मुख में शोभा देता था। समझा यह जाता था कि वह पाकर आक्रमण करेगा।

परन्तु जर्मनी को अन्त में हार खानी पड़ी। रूस का झण्डा बर्लिन में गड़ गया, परन्तु हिटलर नहीं पकड़ा गया।

मित्रराष्ट्रों ने खोज प्रारम्भ की। एक-एक करके नेता बन्दी बनाए गए, यहाँ तक कि रिबनट्राप ने—जैसा समाचारों से मालूम होता है—बचने का कोई चारा न पाकर आत्मसमर्पण कर दिया। हिटलर का कोई सुराग नहीं कल्पना की गई कि वह बर्लिन के ढेरों के नीचे दबकर प्रा बैठा है, उसने आत्महत्या कर ली है, पर शान्ति हुई।

जर्मनी के साथ लड़ाई समाप्त होने पर जापान के साथ चल रही थी। मित्रराष्ट्रों ने समझा कि हिटलर जापान गया है। इस बीच कई अन्य अनुमान भी किए गए। उसे लैंड, स्पेन और अर्जेनटाइना भगाया गया। ये सब थोथे अ ही नहीं थे। इनके पीछे बड़ी-बड़ी गवाहियाँ पेश की जा हिटलर किसी जगह नहीं मिला। जापान के साथ लड़ाई हो गई और वहाँ भी उसका कोई सुराग प्राप्त न हुआ।

इस समय जर्मनी के गुप्त रेडियो में समाचार ब्राडका थे, जिनमें कहा जाता था कि 'जर्मनों को मित्रों के साथ लिए तैयार रहना चाहिए। इनमें फूट पड़ेगी।' मित्रों खूब प्रचारित किया और घोषणाएँ कीं कि मित्रों में फू हो सकती। परन्तु हिटलर के लिए, जिसके सम्बन्ध में जाता था कि वह मित्रों में फूट डलवाने का प्रयत्न कर खोज जारी रही।

अन्त में थककर यह निश्चय हुआ कि हिटलर मर चु उसने अन्तिम समय इवाब्राउन नामक स्त्री से शादी जिससे एक लड़का भी था। दोनों ने अन्त में अपमान के लिए एक-दूसरे को शूट कर दिया।

मित्रों का सन्देह दूर नहीं हुआ। जर्मनों के छुटपुट गुप्त से यही समझा जाता था कि ये हिटलर द्वारा कराई कार्यवाहियाँ हैं। हिटलर का भूत अवश्य इनके पीछे वह मौके की ताक में है। मित्रों में फूट पड़ने पर एकदम कर हमला करेगा।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३१ दिसम्बर १९४५ का समाचार है कि उसकी अन्तिम वसीयत मिल गई है। दूसरी अमरीकी सेना के सेनापति जनरल ट्रस्कौट से विदित हुआ कि यह वसीयत म्युनिख से ३० मील पर स्थित 'टेजेनेरेन्सी' ग्राम में मिली है। हिटलर के प्रचार-मन्त्री डॉ० गोयबल्स, उपप्रचार-मन्त्री मार्टिन बोर्मैन और हिमलर के स्लोवाक प्रतिनिधि हैन्स कवे और विलियम वर्डोफ के इस पर हस्ताक्षर हैं। इस पर १९ मई १९४५ तिथि पड़ी हुई है। इसमें हिटलर ने इवाब्राउन के साथ अपने विवाह को स्वीकृत किया है और लिखा है कि अन्तिम अपमान की अपेक्षा हम मृत्यु को पसन्द करते हैं। इसमें लड़ाई की जिम्मेवारी मित्रों पर थोपी गई है, जैसा कि हिटलर अपने समस्त युद्धकाल के समय में करता रहा था।

समस्त डाक्यूमेंटों पर २९ अप्रैल १९४५, जो कि जर्मनी की पराजय से कुछ समय पूर्व की तिथि है, पड़ी हुई है। इन सब से प्रतीत होता है कि हिटलर मर गया। अब वह जीवित नहीं है।

दूसरे समाचार से यह मालूम हुआ है कि जनरल ट्रूस्कौट ने डाक्यूमेंटों को पूर्ण रूप से प्रेस को नहीं दिया है और कहा है कि अभी अगली जाँच तक इन्हें गुप्त रक्खा जाएगा।

अभी तक शायद मित्रराष्ट्रों को हिटलर की मृत्यु में विश्वास नहीं हुआ है। उसका जीवित रहना चाहे असम्भव प्रतीत होता है परन्तु हिटलर-द्वारा फूट डलवाने का भय अभी बना हुआ ही है। एक मित्र ने जो इन विषयों में काफी जानकारी रखते हैं, यह कहा है कि हिटलर मरा नहीं है। वह चाँद में है। वह मित्रों में फूट का इन्तजार कर रहा है। देखना है, मित्रराष्ट्रों की इस पर क्या प्रतिक्रिया होती है। हमें तो विश्वास है कि जब तक मित्रराष्ट्रों में आपसी फूट का भय विद्यमान है, हिटलर जीवित रहेगा। वे उसे मरा हुआ नहीं समझ सकते। अभी तो चाँद में कहा जाता है। यदि वैज्ञानिक लोग वहाँ भी ढूँढ़ आएँ तो कहीं और पहुँचा हुआ समझा जाएगा। दुनिया ढूँढ़ ली जाएगी तो वह एक नई दुनिया बनाकर उसमें रहेगा। हिटलर जीवित रहेगा। और अभी वह विद्यमान है पृथ्वी के निकटतम मित्र चाँद में।

उसके मारने की एक ही तरकीब है, मित्रों का आपसी फूट का भय दूर हो जाए।

—वेदप्रकाश

वर्त्तमान फ्रांसीसी काव्य-धारा

कविता को लोग हृदय की वस्तु कहा करते हैं और वस्तुतः यह बात ठीक भी जान पड़ती है। लेकिन एक कलाकार का कहना है कि 'कविता आत्मा से निकली हुई संगीतधारा है।' आत्मा अमर है, अतः इससे निकली हुई कविताएँ भी अमरत्व लिए हुए प्रवाहित होती हैं। ऐसी कविता में आत्मा का गुण होना उतना ही स्वाभाविक है, जितना गुलाब में सौरभ और मिठाई में मिठास का होना। किन्तु कुछ जंगली गुलाब ऐसे भी होते हैं जिनमें सौरभ प्रायः नहीं के बराबर होता है। प्रायः कविताएँ भी ऐसी देखने में आती हैं जो आत्मा से नहीं निकलतीं, वरन् कृत्रिमता और शब्दाडम्बर लिए होती हैं। ऐसी निम्न कोटि की कविताएँ सभी भाषाओं में कुछ न कुछ हुआ करती हैं।

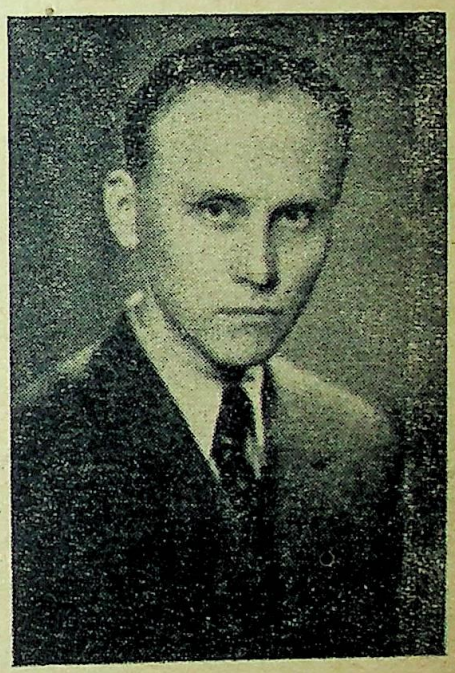

प्रोफेसर ओलिवर लाकोम

[आप फ्रांस के एक गण्य मान्य विद्वान् हैं। काव्य और कला आपके जीवन की साधना है। गत वर्ष बम्बई में आपने 'कला और जीवन' पर एक सारगर्भित भाषण किया था। पिछले दिनों जयपुर में लेखकों की जो सभा हुई थी उसमें आप फ्रेंच-प्रतिनिधि के रूप में सम्मिलित हुए थे। आप भारतीय संस्कृति के परम प्रशंसकों में हैं। इन दिनों आप कलकत्ते में 'फ्रेंच कौंसलेट आफिस' में संस्कृति-विभाग के प्रधान हैं।]

मैं वर्त्तमान फ्रांसीसी कविताओं में उन कविताओं को लेता हूँ जिनकी रचना विशेषकर फ्रांस पर जर्मन आक्रमण के समय से लेकर आज तक हुई है। सन् १९४० ई० में फ्रांस नात्सियों के भीषण आक्रमण का शिकार हुआ। स्वतंत्रता का प्रदीप बुझ गया। ऐसा मालूम हुआ मानो इस गहरी अमा-निशा का कोई अन्त नहीं। नित्य नए-नए अत्याचार, नए-नए हथकण्डे बेचारे फ्रांसीसी नागरिकों पर चलने लगे। स्वतंत्रता के पुजारी फ्रांसीसी पाशविकता से त्रस्त हो गए। किन्तु इस गम्भीर भयावनी निशा में भी आशा की ज्योति टिमटिमाती रही।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस आशा की ज्योति को जगमगाते रखने का जितना श्रेय फ्रांस के नेता जेनरल द-गाल को है उतना ही श्रेय फ्रांस के कवियों को भी है। मृत्युदण्ड की परवाह न करके फ्रांसीसी कवि क्रान्तिकारी कविताओं की रचना करते रहे। उस समय की कविताएँ उनके हृदय से निकले हुए, नहीं नहीं उनकी आत्मा से निकले हुए शोले हैं। वे मानो भयानक ज्वालामुखी के विस्फोट हैं। जर्मन उन्हें गोलियों से उड़ाने की धमकी देते हैं; कारागार में बन्द कर उनको भाँति-भाँति की यन्त्रणाएँ देते हैं, लेकिन फ्रांसीसी कवि फिर भी भयभीत नहीं होते, फिर भी वे स्वतन्त्रता के मस्ताने तराने गाने से बाज नहीं आते। मृत्यु! किस चिड़िया का नाम है मृत्यु! नात्सी हमारी बोटियाँ-बोटियाँ अलग कर दें किन्तु हम स्वतन्त्रता, समानता और बन्धुत्व के तराने गाएँगे। हम मृत्यु पर विजय प्राप्त कर अमरत्व का सन्देश देंगे। तोड़ डालेंगे हम दासता की बेड़ी को, फोड़ देंगे कारागार की इन दीवारों को—

"हम इन्हीं हाथों से कारागार के सीखचों को चूर करेंगे। हम इन्हीं हाथों से अपने बन्धुओं को मुक्त करेंगे।"

और भी—

"हे मित्र, यदि अपने कर्त्तव्य-पथ पर तुम्हें मृत्यु का आलिंगन करना पड़े, कोई चिन्ता नहीं। तुम्हारी रिक्त जगह को हम शीघ्र भर देंगे। (तुम्हारी जगह हम रिक्त नहीं रहने देंगे।)"

"उड़ा दो दुश्मनों को अपनी गोली से, यदि गोली अपने पास न हो तो भोंक दो छुरे इन दुष्टों के हृदय में।"

इन कविताओं के पढ़ने से सहज ही अनुमान किया जा सकता है कि पराधीनता की बेड़ी में जकड़े होने पर भी फ्रांस की आत्मा अमर थी। ज्वालामुखी की नाईं सारा राष्ट्र अन्दर ही अन्दर सुलग रहा था और एक-न एक दिन उसका भीषण विस्फोट होना अवश्यम्भावी था। दुश्मन ने शरीर को तो जकड़ रक्खा था किन्तु आत्मा को जकड़ने में उसको सफलता नहीं मिली थी। उसने स्वातंत्र्य-प्रेम की भावना को फ्रांसीसियों के हृदय से मिटाने की लाख कोशिशें कीं किन्तु उसकी सारी चेष्टाएँ निष्फल रहीं। स्वतन्त्रता की ज्योति निरन्तर फ्रांस की अन्तरात्मा में जलती रही। सैकड़ों वीर हँसते-हँसते शहीद हो गए। एक कवि 'शहीद' शीर्षक कविता में कहता है—

"जमीन पर गिरे हुए इनके ये रक्त कभी नहीं सूखेंगे। ये ठीक जिस स्थान पर धराशायी हुए हैं हम इन्हें वहीं रहने देंगे। प्रतिदिन हम इनको देखकर दाँत पीसेंगे। क्रोध से अधीर हो उठेंगे और हमारा रक्त खौल उठेगा!"

उसी कविता में आगे चलकर कवि कहता है।

"हमारे इन प्यारे शहीदों के शव इसी तरह नग्न भूमि के ऊपर पड़े रहेंगे। उनके रक्त से प्रिय मातृभूमि का अंक सिक्त होता रहेगा। उनके उसी रक्त से जंगली गुलाब के पौधे जिनमें क्रोध से लाल आँखें किए फूल खिलेंगे। इस भाँति शोणित से सिंचित क्रोधोन्मत्त वसन्त आएगा, और आएगा मादकता के साथ।"

आत्मा से निकली हुई कविता ऐसी ही होती इसमें ऐसी विद्युत् शक्ति होती है जो मृतप्राय धमनियों रक्त-संचार कर देती है। ऐसी ही कविताएँ राष्ट्र के जीवन में कारी परिवर्त्तन कर देती हैं। इसका सबसे ताजा और दृष्टान्त है फ्रांस का पुनरुत्थान। उसी 'शहीद' शीर्षक कवि अन्त में कवि कहता है।

"वह वसन्त इतना मधुमय होगा जिसका वर्णन किया जा सकता। उसमें पक्षियों का कलरव तथा संगीत ध्वनि उठती रहेगी और स्थान-स्थान पर बच्चे पुष्प चयन दृष्टिगोचर होंगे। उनके चतुर्दिक् लम्बे-लम्बे विटप मानो की ओर भुजा फैलाए प्रार्थना करते हुए से दीख पड़ेंगे।"

इस छोटी-सी कविता में मानो कला और कल्पना कूट-कूटकर भर दिया है। भाव-भाषा-सुषमा के साथ कल्पना होड़ बद रही है। सबसे मार्के की बात तो यह है कि कविता का आधार 'इन्द्र-धनुष की पँखुड़ियाँ' नहीं वरन् यथ की कसौटी है। कवि की अनुभूति ही उसका जीवन है। यही सर्वस्व है। कवि अपनी आँखों से मातृभूमि का अपमान देख उसके देखते-देखते हजारों गोली से उड़ा दिए जाते हैं, बहुमूल्य पुस्तकालय तथा पुनीत मन्दिर नष्ट कर दिए ज हर तरह से उसकी संस्कृति को मिटाने की कोशिशें की जा कवि त्रस्त होकर इस विनाश-लीला को देखता है, उसकी स्वतः चलने लगती है और उसका परिणाम है ये कविता उसके दिल के शोले हैं। ये ऐसे आँसू हैं जिसका एक अग्नि की स्फुलिंग की भाँति भस्मसात् करने की क्षमता रख

एक दूसरी कविता में कवि कहता है—

"ऐ मेरे अलजीरियन भाईवृन्द! सुनो हमारी आवाज, यही आशा का सन्देश है। मैं ज्यों ही गोली हूँ त्यों ही उस गोली के छूटने की प्रतिध्वनि आकर कहती 'फ्रांस! मैं मर रहा हूँ, इसकी कोई चिन्ता न करो; मातृभूमि का पुनर्जन्म हो रहा है'।"

स्वदेश-प्रेम का भाव किस सुन्दरता से कवि ने सीधे-सा में व्यक्त किया है।

Paul Eluard नामक एक फ्रांसीसी कवि जर्रे-जर्रे एक ही चीज देखता है, अर्थात् "स्वतन्त्रता"। वह अन्त तरह अपनी कविता समाप्त करता है—

"ऐ स्वतन्त्रते! मेरा जन्म केवल तुझे ही जानने तेरा ही नाम उच्चारण करने के लिए इस पृथ्वी पर हुआ

आधुनिक फ्रांसीसी कविताएँ स्वदेश-प्रेम से इतनी लबालब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के पढ़ने से हृदय में बरबस स्वातन्त्र्य-प्रेम लहराने लगता है। फ्रांसीसी कवि अपनी मातृभूमि को गौरव के आसन पर देखने लिए लालायित हैं। उनकी कविताओं में शृङ्गार का नाम नहीं, पि महायुद्ध से पूर्व की फ्रांसीसी कविताओं में शृङ्गार का बेतरह ल्य पाया जाता है। शृङ्गार-रस की कविताओं को मानो मान फ्रेंच-कवियों ने बिलकुल तलाक दे दिया है। कविता की पुकार है! जिस कविता में उस युग के संघर्ष की छाप वह कविता भाटों और भाँड़ों के गाने की वस्तु हो सकती र राष्ट्र के गौरव की वस्तु कदापि नहीं हो सकती है। ीन तथा परतन्त्र देश में हाला-प्याला का राग अलापने- अपने मुँह से अपने को कवि कहकर भले ही सन्तोष प्राप्त ले, किन्तु सच्चे आलोचक की दृष्टि में उसका कोई विशेष नहीं हो सकता। इस युग-धर्म को गेटे 'समय का प्रभाव' कहा था और गेटे जैसे महाकवि की दृष्टि से जिस कविता पर समय छाप नहीं, वह कविता कविता नहीं। वर्त्तमान फ्रांसीसी ताओं पर अपने युग की छाप है, अथवा यों कहें कि वर्तमान सी कविताएँ अपने युग की पुकार हैं तो इसमें कोई अत्युक्ति होगी।

दिल्ली के फ्रेंच-समाचार-आफिस द्वारा हाल ही में प्रकाशित फ्रेंच कविता-संग्रह की पुस्तक की भूमिका में लिखा है—

"चार साल की भीषण यातनाएँ तथा लांछनाएँ सहने पर भी सियों के हृदय में काव्य-प्रेम जाग्रत् है। निर्वासन तथा कारा- के भीषण कष्ट से अनेक फ्रांसीसी गुजरे हैं!"

उसी सिलसिले में भूमिका-लेखक लिखता है—

"उन वीर आत्माओं के लिए अपने भावों को कविता के रूप में व्यक्त करना नितान्त स्वाभाविक है, क्योंकि इसी तरह सृष्टि के आदि से ही लोगों ने अपने भावों को सर्वप्रथम प्रकाशित करने का मार्ग ढूँढ़ निकाला है।"

हम यही भाव फ्रांसीसी गद्य-लेखकों तथा कलाकारों में भी पाते हैं। फ्रांस के एक सबसे बड़े साहित्यिक, जिनका नाम प्रोफेसर ओलिवर लाकोम्ब है, इस समय भारत-भ्रमण कर रहे हैं। प्रो० लाकोम्ब एक उच्च कोटि के कलाकार भी है। आपका पुनीत उद्देश्य भारत तथा फ्रांस के बीच सांस्कृतिक सम्बन्ध सुदृढ़ तथा सुस्थापित करना है। इन पंक्तियों के लेखक को एक पत्रकार होने के नाते प्रो० लाकोम्ब से दिल्ली में मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। आप ऐसे प्रख्यात विद्वान् का भारत में आना सचमुच बड़े सौभाग्य की बात है।

ईश्वर करे, आपको अपने उद्देश्य में सफलता प्राप्त हो। फ्रांस के पुनरुत्थान में वहाँ के कवि, लेखक, दार्शनिक तथा कलाकार सभी का हाथ है। विशेषकर कवियों का—जिनकी अमर वाणी निराशा के निविड़ तिमिर में भी फ्रेंच गगन में गूँजती रही। नात्सियों-द्वारा मौत के घाट उतारे जाने पर भी उनके शरीर से निकलती हुई रक्त-धारा 'स्वतन्त्रता, समानता और बन्धुत्व' की रट लगाए रही।

क्या इसमें भी सन्देह है कि ऐसे कवियों की कविताएँ आत्मा से निकली हुई संगीत-धारा है।

— मंगलकिशोर पाण्डेय

सोहराब-रुस्तम—सोहराब के जन्म से पहले ही उसका सुप्रसिद्ध वीर रुस्तम विदेश चला गया था और पिता-पुत्र भेंट हुई एक युद्ध में प्रतिद्वन्द्वी के रूप में और उसी युद्ध में दोनों का मृत्यु हुई। इस पुस्तक में वही करुण-कहानी है। ।।। –तेरह आने।

फ़व्वारा—इस पुस्तक में बच्चों के उपयोग की कई सचित्र नियों का संग्रह किया गया है। पुस्तक रंग-बिरंगी स्याही से अक्षरों में छपी है। सजिल्द पुस्तक का मू० १।–) एक पाँच आने।

सचित्र बाल-आरव्योपन्यास—(चार भागों में) संसार की सब पुस्तकों से अधिक सुन्दर, मनमोहक, आश्चर्यमयी और चातुर्य-पूर्ण कहानियाँ इस पुस्तक में हैं। इसे पढ़ने से दुनिया की सैर का-सा आनन्द मिलेगा। मू० प्रत्येक भाग का ।।।–) तेरह आने।

अनोखी कहानियाँ—इस संग्रह में छोटी-बड़ी ग्यारह रोचक कहानियाँ सरल भाषा में लिखी गई हैं। सभी कहानियाँ सचित्र हैं। मू० ।– पाँच आने। इसका उर्दू संस्करण भी इसी मू० में मिलता है।

मैनेजर बुकडिपो—इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अश्रु-हास

धारावाहिक सामाजिक उपन्यास

श्रीमती निर्मला मित्र

फिर दिलीप के पास आकर उसे छाती से लगाकर बोली थीं, "तुम कभी इनके अहाते में न आना, बेटा, ये बाप-बेटी दोनों हद से ज्यादा बदतमीज हैं।"

रुचिरा अपमान से फूलते-फूलते बोली थी, "हाँ-हाँ, हैं। आने दो बाबू जी को, उसे थाने में बन्द कराके ही मानूँगी।"

इस पर चाची को बहुत क्रोध आ गया था और वे रुचिरा का मुँह दबा देने के लिए दौड़ी थीं। पर उसी क्षण दिलीप उनसे यों लिपट पड़ा था कि वे फिर एक पग भी आगे न बढ़ पाई थीं। केवल एक गहरा श्वास लेकर वे अवरुद्ध क्रोध से काँपती खड़ी रह गई थीं।

तीसरा अध्याय

इस प्रसंग की स्मृति से दिलीप के हृदय से भी एक निःश्वास निकल पड़ा। वह सोचने लगा कि क्या अब चाची से कभी भेंट नहीं हो सकती। उसका मन उस अभिलषित वेदना से व्यथित होकर कहने लगा, "नहीं, नहीं, अब चाची से इस लोक में भेंट होना सम्भव नहीं है। क्योंकि मैट्रिक करने के बाद दिलीप भारा-तुर मन लेकर चाची की खोज में उस जिले तक गया था। पर लाख ढुँढ़ाई करने पर भी चाची का पता उसे न मिल सका था। केवल बूढ़ी दाई रामरति से उसे यह सूचना मिल सकी थी कि डाक्टर साहब के छुट्टी लेकर चले जाने के बाद ही 'सुपरडन्ट' साहब भी बदलकर दूसरे जिले में चले गए थे।

दिलीप तब उत्साह से भरकर उससे पूछ बैठा था, "चाची भी उनके साथ थीं न?"

"ओ राम, कहाँ की तेरी चाची-वाची, बेटा, याद नहीं; बहू जी के मरने के दिन ही तो उसने अपनी स्त्री को त्याग दिया था।"

दिलीप के लिए यह समाचार कितना मर्मान्तक था! उसी के कारण तो निरीह चाची की पीठ पर हण्टरों की वर्षा हुई थी। और उसी के कारण तो चाची को अपने घर-द्वार से वंचित होना पड़ा था।

उसी समय वह बूढ़ी अपनी निष्प्रभ आँखें उठाकर दि के कटे घाव पर जैसे नमक छिड़कती हुई कह पड़ी थी, सुना था तूने, रुचिरा को भी किसी मेम के हवाले कर उसे उसने विलायत भेज दिया था। उस दिन उस तनिक-सी का रोना यदि तू देख सकता! क्या कहूँ, शायद पत्थर भी जाता, पर उस हत्यारे का दिल न पसीजा।"

अब इसके आगे दिलीप क्या पूछता! अतः वह स क्लेश हृदय में दबाकर उस जिले से उसी दिन लौट आ

आज कई साल बाद वह योरप से भारत लौटा है। प्रतिष्ठा और हुकूमत प्राप्त हैं। वह उन्नति के चरम शि पहुँचकर लौटा है। फिर भी आज उसका ऐसा कोई नहीं है जो उसकी उन्नति पर हृदय से हर्ष प्रकट मनाने के लिए परिजनों का रहना भी बड़े सौभाग्य की है। यह बात, यह कमी, दिलीप को आज पग-पग पर रही है। ज्यों-ज्यों उसकी यह अनुभूति गहरी होती त्यों-त्यों उसका हृदय खाली-खाली लगता जा रहा है। दिलीप इतना भी सोच लेता है कि यह आकाश-सदृश लेकर मैं ऐसा दायित्व-पूर्ण कार्य-भार सँभाल भी सकूँगा कारण, जिस पिता ने मातृहीन बालक को बड़े लाड़-प्यार कर उन्नति के लिए विदेश भेजा था, वह पुत्र-वत्सल पिता दिलीप की उन्नति से संतुष्ट होने के लिए इस संसार में है। वह चार साल पहले ही दिलीप की पढ़ाई का खर्च व महाजन, जो भी समझा जाय, रायबहादुर चुन्नीलाल ऊपर छोड़ दिवंगत हो चुका है।

दिलीप को स्मरण है, पिता ने जब पढ़ाई की इस व्यवस्था करने के सम्बन्ध में उसे लिखा था तब उस असहमति प्रकट करते हुए उन्हें तुरन्त ही लिखा था, "पढ़ना मुझे ठीक नहीं जँचता। आप आदेश दें तो आऊँ।"

मुमूर्षु पिता ने उत्तर में लिखा था, "दिलीप तुम न सोचना। मुझे विश्वास है कि तुम्हारे सरीखा मेधावी विफल नहीं हो सकता। और इधर रायबहादुर चुन्नीलाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दाशय और सज्जन व्यक्ति हैं कि कर्ज की बात मुँह खोलकर कभी कहेंगे।"

सुदूर विदेश में बैठा दिलीप इन सदाशय सज्जन के सम्बन्ध में सदैव सोचा करता था। उसके लिए यह निर्णय करना कठिन था कि क्यों उन्होंने दिलीप की पढ़ाई का खर्च अपने सिर पर सहर्ष ले लिया है। अपने पिता जी से इस सम्बन्ध में पूछने की भी इच्छा दिलीप की कई बार हुई थी। परन्तु बड़ों के सामने प्रबन्धिकारपूर्ण चपलतावाली कहावत उसके सामने बार-बार आ जाती थी और वह बार-बार कलम छोड़ हाथ सिकोड़कर बैठ जाता था।

पिता की मृत्यु के बाद रायबहादुर चुन्नीलाल स्वयं पत्रालापों में दिलीप के सामने आए। पहले ही पत्र में उन्होंने लिखा, "दिलीप, भविष्य में तुम अपने पिता के स्थान पर मुझे समझ सको तो मैं कृतकृत्य हो जाऊँगा।"

भला इससे बढ़कर स्नेह और अपनत्व-भरी भाषा और क्या हो सकती थी! दिलीप को भी इस स्नेहपूर्ण प्रस्ताव पर क्या आपत्ति हो सकती थी!

किन्तु फिर भी दिलीप के हृदय की वह जगह रिक्त ही रह गई। इस रिक्तता के कारण उसे अपना सारा जीवन ही शून्य का एक बड़ा बिन्दु ही लगता है।

माता-पुत्र के मिलन का जो दृश्य अभी-अभी दिलीप के सम्मुख आया है, दिलीप के लोभातुर मन के लिए वह कितना आकर्षक है। मातृ-स्नेह-बुभुक्षित दिलीप का मन तभी से जैसे उछल-मचलकर कह रहा है, "मिले, मिले, इस बन्धुहीन देश में कम से-कम मुझे वह स्नेहशीला चाची ही मिले।"

दिलीप के हृदय में यह आशा इसलिए और भी पल्लवित हो उठी क्योंकि दिलीप की माँ दिलीप की आँखों के सामने ही सदैव के लिए उठ गई थी। अतः माता की ओर से उसे एक निराश कल्पना थी ही कि वह जिस लोक में जा बसी है, वहाँ से दिलीप लाख बार सिर पटकने से भी वह पुनः लौटकर नहीं आ सकती। पर, वह पड़ोसिन चाची, जिसका जीवन इसी भारतवर्ष के इसी अज्ञात कोण में छिपा हुआ है, और जिसकी मृत्यु का भी कोई निश्चित प्रमाण नहीं है, तो कहीं न कहीं मिल ही सकती है। इस अलभ्य लाभ को प्राप्त करने के लिए दिलीप को एक बार अवश्य प्रयास करना चाहिए।

अन्ततः सब ओर से संकुचित होकर दिलीप के मन में अब यह आकांक्षा जड़ जमाकर बैठ गई कि उस दुर्भाग्यशीला चाची को पा सकना ही दिलीप के हृदय की परितृप्ति है। क्योंकि उसी को खो कर चाची ने अपना सर्वस्व खोया था। उस आजीवन-संगिनी की मलिन वेदना को दिलीप कैसे भूल सकता है!

चौथा अध्याय

"हुजूर साहब!"

एकाएक चौंककर दिलीप ने मुँह उठाया तो देखा, सरकारी वर्दी डाटे दो चपरासी उसके इन्तजार में पीछे खड़े हैं।

दिलीप की नजर उन पर पड़ते ही उन्होंने झुककर अदब से सलाम किया। फिर बोले, "बड़ी देर हो गई, हुजूर, सामान के उतारने में, आज कुली तक नहीं मिले।"

"तो क्या सामान केबिन में ही पड़ा है?"

"नहीं-नहीं, हुजूर, ऐसा कैसे हो सकता था। सामान सब उतर गया है। अब आप भी उतर चलिए।"

दिलीप उठकर खड़ा हो गया।

चपरासी चलते-चलते बोले, "वह देखिए, बड़े 'साब' नीचे ही खड़े हैं। भीड़ के मारे आज दम घुटी जा रही थी। इसी लिए हमने उन्हें ऊपर नहीं चढ़ने दिया।"

चपरासियों की बुद्धि की सराहना करते हुए दिलीप बोला, "ठीक किया; बूढ़े आदमी को कहीं धक्का-सक्का लग जाता।"

और दिलीप के इस समर्थन से मानो कृतकृत्य होकर वह चपरासी बोला, "हाँ हजूर, देखिए, आप भी इस बात को समझते हैं। पर इसके लिए 'मिस बाबा' बेतहाशा हम लोगों पर बिगड़ पड़ी थीं।"

दिलीप का ध्यान अब इस 'मिस बाबा' की ओर आकर्षित हुआ। वह सोचने लगा, यह शायद चुन्नीलाल जी की लड़की होगी, जिसकी चर्चा उनके पत्रों में खुलकर नहीं तो अप्रत्यक्ष रूप में अवश्य रहा करती थी। उसे स्मरण आया, एक बार वार्षिक छुट्टियों के अवसर पर जब दिलीप स्कैंडिनेविया में भ्रमण कर रहा था, शायद इसी की किसी सखी से मिलने के लिए चुन्नीलाल जी ने अनुरोध किया था, जो उन दिनों स्कैंडिनेवियन उपकथाओं के चयन के लिए भारतवर्ष से स्कैंडिनेविया पहुँची थी।

'लेक' पर भ्रमण करते समय दिलीप ने मिस एथेल डगलस को कई बार देखा था और वह उसे पहचान भी गया था। यही नहीं, वह जिस होटल में ठहरी हुई थी, उस होटल का नाम और उसका रूम-नम्बर भी दिलीप ने नोट कर रक्खा था। लेकिन आज मिलूँ, कल मिलूँ, करते-करते यह लज्जाशील युवक उससे मिल न सका था और छुट्टियाँ समाप्त भी हो गई थीं।

वस्तुतः किसी-किसी व्यक्ति में स्त्री-जनोचित संकोच बहुत बड़ी मात्रा में रहा करता है। दिलीप भी उसी मनःस्थिति का युवक है। भीतर चाहे ज्वालामुखी ही क्यों न धधकता हो, पर ऊपर से देखने पर उसका किसी को आभास तक न मिलेगा।

(क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कांग्रेस और लीग

युद्धकाल में अमेरिका के स्वर्गीय अध्यक्ष रूजवेल्ट के व्यक्तिगत प्रतिनिधि फिलिप्स भारत में कुछ समय तक रहे थे। अमेरिका लौटकर उन्होंने भारत के सम्बन्ध में एक रिपोर्ट अपनी सरकार को दी थी। वह रिपोर्ट अभी तक गुप्त थी जिसे लाहौर के श्री चम्मनलाल ने हाल में प्राप्त कर 'हिन्दी मिलाप' में छपवाया है। उसका आवश्यक अंश इस प्रकार है—

लीग लोगों की साम्प्रदायिक भावना को सदा उकसाती रही है। इसी का यह परिणाम है कि कांग्रेस प्रान्तों में जितने साम्प्रदायिक दंगे हुए उससे कहीं अधिक लीगी प्रान्तों— बङ्गाल व पञ्जाब—में हुए। पञ्जाब में तो साम्प्रदायिक दङ्गों की भरमार सबसे अधिक रही।

अपने २॥ वर्षीय कार्यकाल में इन्होंने अत्यन्त सावधानीपूर्वक अपने कार्य को निबाहा। इनकी सफलता से प्रभावित हो भारत-मन्त्री लार्ड जटलैण्ड को इन मन्त्रिमण्डलों के त्यागपत्र देने पर खेद प्रकट करना पड़ा। स्वयं युक्तप्रांतीय गवर्नर सर हैरीहैग ने साम्प्रदायिक प्रश्नों के सम्बन्ध में कांग्रेस की नीति की प्रशंसा की। बाद के भारत-मन्त्री एमरी ने भी साम्प्रदायिक मामलों में कांग्रेस की निष्पक्षता को स्वीकार किया है।

कांग्रेस का इन सब वर्षों में केवल एक ही उद्देश्य रहा है। वह है भारत की स्वतन्त्रता प्राप्ति। धारा सभाओं में प्रवेश तथा विधान को अपनाने का कार्य भी इसी बात को मद्दे नजर रखकर किया गया है। कांग्रेस समझती है कि ऐसा कर वह स्वतन्त्रता की दिशा में आगे कदम बढ़ा सकती है। इसी लिए प्रान्तीय कांग्रेस के सहयोग में कार्य करने का आदेश प्रान्तीय कांग्रेस मन्त्रिमण्डलों को दिया गया था। जिन्ना का यह अभियोग कि कांग्रेस दूसरी संस्थाओं को समाप्त करना चाहती है, इस आधार पर है कि कांग्रेस समस्त भारतीय जनता में अपने प्रसार की नीति पर अमल कर रही है। इस पूर्ण प्रसार का अर्थ लीग व अन्य साम्प्रदायिक संस्थाओं की समाप्ति होगी। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि कांग्रेस फासिस्ट संस्था बनना चाहती है। उसका एकमात्र उद्देश्य भारत को एकता के सूत्र में पिरोना है, ताकि भारतीय स्वतन्त्रता की प्राप्ति हो सके।

मुस्लिम नेता यह सिद्ध नहीं कर सके कि कांग्रेस-शासन से मुस्लिम हितों को खतरा है। कुछ वर्ष के प्रान्तीय स्वायत्त शासन से स्पष्ट है कि मुस्लिम लीग को एक दल के रूप में भारत के अधिकांश सूबों में सरकार पर कब्जा करने का अवसर नहीं मिल सकता। अल्पमत के रूप में वह अपनी केवल कुछ सूबों में सरकार बना सकती है। इसी प्रकार केन्द्र में भी यह बहुमत में नहीं आ सकती। मुस्लिम लीग की असली शिकायत यही है। इस के प्रकाश में ही उसकी कांग्रेस के प्रति शिकायतों व पाकिस्तान की माँग को देखना चाहिए।

आज लीग बनावटी एकता के आधार पर राजनैतिक पार्टी बनी हुई है। साम्प्रदायिक आधार पर और अलग चुनाव राजनैतिक चाल के आधार पर मुसलमानों के विभिन्न वर्गों इसने जुटा रक्खा है। इस बात के चिह्न प्रकट होने लगे एक ही वर्ग के मुसलमान उस वर्ग के हिन्दुओं से अधिक नता अपने में अनुभव करते हैं। मुसलमान अनुभव करते हैं कि इस वर्ग की एकता में सम्प्रदाय बाधक नहीं।

———

'विद्यार्थियों के आचरण-सूत्र'

महात्मा गांधी अब फिर पहले की ही तरह देश-व्यापी कार्य में संलग्न हो गए हैं। वे पहले ही की तरह सार्वजनिक भाषण तथा संगठन करने लगे हैं। विद्यार्थियों में व्यवस्था और विनय का भाव भरने के लिए उन्होंने बड़े महत्त्व के आचरण-सूत्र निर्धारित किए हैं जो 'प्रताप' में इस प्रकार

(१) विद्यार्थी दलबन्दी की राजनीति में भाग न लें, वे अन्वेषक विद्यार्थी हैं, राजनीतिज्ञ नहीं।

(२) उन्हें राजनैतिक हड़ताल नहीं करनी चाहिए। वीरों को आदर्श मानते हैं उनके आचरण का अनुकरण यदि उनके सम्मानित नेता को फाँसी लगती है अथवा जेल जाता है और सभी विद्यार्थी शोक का अनुभव करते प्रिंसिपल को सम्मति से कालेज बन्द रक्खे जा सकते हैं ऐसे अवसर पर प्रिंसिपल न सुने तो वे सभ्य ढङ्ग से जाना तब तक के लिए स्थगित कर दें, जब तक प्रबन्धक त्ताप करके वापस न बुलाएँ। किन्हीं अधिकारियों या न होनेवाले विद्यार्थियों के विरुद्ध बल-प्रयोग नहीं करना उन्हें यह विश्वास होना चाहिए कि यदि वे एका और रखते हैं तो उनकी जीत निश्चित है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

या २]

(३) वैज्ञानिक ढङ्ग से उन्हें यज्ञ के रूप में चर्खा कातना हिए और उसके आर्थिक, सामाजिक, नैतिक और राजनैतिक तुओं का अध्ययन करना चाहिए।

(४) उन्हें सदा खादी का व्यवहार करना चाहिए। विदेशी मशीन की बनी हुई वस्तुओं के स्थान पर गाँवों में बनी चीजों ही प्रयोग करना चाहिए।

(५) वन्दे मातरम् या राष्ट्रीय झंडे को स्वीकार करने के लिए ी पर जोर न डाला जाए। वे राष्ट्रीय झंडे के बटन स्वयं न सकते हैं।

(६) अपने हृदय में साम्प्रदायिकता या अस्पृश्यता की बू भी न रक्खें और अन्य धर्मावलम्बियों तथा हरिजन विद्यार्थियों अपने सगे-सम्बन्धियों की भाँति मिलें।

(७) पड़ोस के घायलों को प्राथमिक सहायता दें और पास गाँवों में सफाई करें और गाँव के बच्चों और प्रौढ़ों को शिक्षा दें।

(८) उन्हें राष्ट्र-भाषा हिन्दुस्तानी को उसके आज के दो —बोलने और लिखने की दो शैलियों—में सीखना चाहिए।

(९) वे जो कुछ नई बात सीखें उसे अपनी मातृभाषा में दित कर आस-पास के गाँवों में साप्ताहिक भ्रमण करते अपना ज्ञान-वितरण करें।

(१०) गुप्त रूप से कोई कार्य न करें। पवित्र, संयमित और य जीवन बिताएँ। कमजोर विद्यार्थियों का पक्ष सदा लेने तैयार रहें और प्राण देकर भी अहिंसात्मक ढङ्ग से हिंसात्मक ों का दमन करने के लिए तैयार रहें। देश में जब संघर्ष चरम ा पर पहुँच जाए उस समय यदि आवश्यकता हो तो शिक्षण-ाएँ छोड़कर देश की स्वतन्त्रता के लिए बलिदान होने को त रहें।

(११) बालिका-विद्यार्थियों के प्रति अपने व्यवहार में शिष्ट र विशुद्ध रहें।

उपर्युक्त निर्देशों की भूमिका में गांधी जी ने कहा है कि द्यार्थियों से मेरा निकट सम्पर्क रहा है। उन्होंने बड़ी सेवाएँ र त्याग किए हैं। वे भविष्य की आशा हैं। आजकल की स्वाभाविक शिक्षण-प्रणाली से होकर उन्हें गुजरना ही पड़ता विदेशी भाषा का भार और प्रलोभन दोनों उनके लिए हैं। जापान आदि देशों में उच्च वैज्ञानिक शिक्षा भी मातृ-षा में ही हो सकती है तो इस देश में क्यों नहीं हो सकती?

सरकार की कण्ट्रोल नीति

अखिल भारतीय शक्कर व्यवसायी-सम्मेलन का द्वितीय अधि-न हाल में कानपुर में हुआ था। इसके सभापति पंजाब के द्ध व्यवसायी श्री बिहारीलाल चानना बनाए गए थे। उन्होंने पद से जो महत्त्वपूर्ण भाषण किया है उससे शक्कर की सरकारी नियंत्रण-नीति पर ही नहीं किन्तु सरकार की सभी वस्तुओं के नियन्त्रण की नीति पर खासा प्रकाश पड़ता है। उनके व्याख्यान का सारांश 'प्रताप' में छपा है, जिसका अधिकांश यह है—

जिस व्यापारी को विदेशी सस्ती खाँड का आक्रमण खतम न कर सका, आज हम अपनी आँखों देख रहे हैं कि गवर्नमेन्ट के एक कण्ट्रोल आर्डर ने उसको खतम कर दिया है। सरकार की नीति केवल युद्ध के जीतने में ही काम करती रही और जनता के हितों की ओर उसने कोई ध्यान नहीं दिया। यदि जनता का हित सरकार के सम्मुख प्रधान होता तो बङ्गाल के भीषण अकाल का दृश्य, जिसके कारण ३० लाख के लगभग अकाल मृत्युएँ हुईं, उपस्थित न होता। मैं तो यहाँ तक कहने का साहस करूँगा कि मरनेवालों से जीती हुई आम जनता जो कि सिसक-सिसककर मर रही है, बदतर हालत में है। इस देश में जिसकी औसत दैनिक आय प्रतिव्यक्ति केवल कुछ पाई है और जिसमें एक बड़ी संख्या युद्ध से पहले ही आधी भूखी और नग्न रहती थी, युद्ध के समाप्त होने पर भी राशन के द्वारा जो भी अन्न और वस्त्र जिन कठिनाइयों के साथ प्राप्त हुआ उसकी सरकारी कीमत का हिसाब अगर लगाया जाए तो वह एक ऐसी समस्या है जिसका बड़े से बड़े अर्थ-शास्त्री भी जवाब नहीं दे सकते। अनाज की सरकारी दर १०) से लेकर ३०) तक और मोटे कपड़े की दर औसतन १२-१४ आने गज के हिसाब से एक साधारण परिवार के लिए कितनी आपत्तिजनक है, इसका अन्दाज आप खुद लगा सकते हैं। यह सन्देह होता है कि सरकार की नीति कण्ट्रोलों को लम्बा करने में अपनी खास मसलहतों को पूरा करने की है। अगर ऐसा न हो तो युद्ध की समाप्ति पर तत्काल सब कण्ट्रोल या तो वापस लिए जाते या इस विधि से उनमें तरमीम की जाती जिससे जनता सुख की साँस ले सकती और उसके अन्दर विश्वास की भावना पैदा होती।

यह तो समझ में आ सकता था कि सरकार भारतवासियों के मुँह से चीनी छीनकर रक्षा के कार्य के लिए भारत के अन्दर और बाहर इस्तेमाल करती, लेकिन सरकार के पास इसका क्या उत्तर है कि उसने भारत की चीनी को ईरान आदि देशों में एक विदेशी कम्पनी 'यूनाइटेड किंगडम कमर्शियल कार्पोरेशन' के जरिए ऊँची कीमत पर बेंचकर उसे मुनाफा दिलाया और इधर हजारों की तादाद में जो व्यापारी अपना जीवन-निर्वाह खाँड के धन्धे से किया करते थे, उनको बेरोजगार किया। इस ज्यादती के खिलाफ व्यापारी वर्ग ने भारत-रक्षा कानून के भय से युद्धकाल में आवाज नहीं उठाई। अब जब युद्ध समाप्त चुका है, यद्यपि भारत-रक्षा-कानून मौजूद है, इस आवाज के उठाने में एक मिनट लिए भी हम नहीं रुक सकते, क्योंकि हमारे लिए यह अपनी जिन्दगी और मौत का सवाल है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संसार की जनता का समर्थन चाहते हैं।

लंदन में अभी उस दिन राष्ट्र-संघ के सम्मेलन में ग्रेट ब्रिटेन के प्रधान मन्त्री एटली साहब ने उपस्थित सदस्यों का एक महत्त्व-पूर्ण भाषण-द्वारा स्वागत किया था। उस भाषण का एक महत्त्व का अंश इस प्रकार है—

अणुबम के आविष्कार ने आज सभी को भयाक्रान्त कर दिया है। मानवता के विनाश को रोकने के लिए आज हमें आपस की कटुता को दूर कर देना चाहिए। हम केवल सरकारों का ही समर्थन नहीं चाहते, वरन् सम्पूर्ण संसार की जनता का समर्थन चाहते हैं।

हमारा अन्तिम उद्देश्य स्पष्ट है। हमें केवल युद्ध का ही अन्त नहीं करना है। वरन् हमें एक ऐसे सुरक्षित विश्व तथा विश्व-स्वातन्त्र्य की सृष्टि करनी है जो कि न्याय तथा नैतिकता द्वारा शासित हो। शक्ति पर औचित्य की विजय हो तथा स्वार्थ-मय उद्देश्यों पर सार्वजनिक कल्याण की भावना विजय पाए।

('वर्तमान' से)

हिन्दुस्तानी और हिन्दी

श्री भदन्त आनन्द कौशल्यायन हिन्दी के सुलेखक ही नहीं किन्तु उसके प्रेमी भी हैं। इधर कुछ समय से वे हिन्दी की बड़ी संलग्नता के साथ सेवा कर रहे हैं। हिन्दी के गौरव की रक्षा के लिए वे जगह-जगह जाकर पाण्डित्यपूर्ण भाषण भी करते रहते हैं उनका ऐसा ही एक भाषण 'कर्मवीर' में छपा है जिसमें उन्होंने हिन्दी और हिन्दुस्तानी की बहुत सुन्दर विवेचना की है। उक्त अंश इस प्रकार है—

अँगरेजी और उर्दू के बाद इधर दो-तीन वर्ष से एक नई विचार-धारा ने अपना सिर उठाया है। उसका नाम है हिन्दुस्तानी विचार-धारा। जिस प्रकार किसी बोतल पर लगा हुआ लेबल बना रहे लेकिन उसके अन्दर की चीज बदल जाए वही हाल हिन्दुस्तानी लेबल का है। हम इस शब्द को हिंदी के साथ-साथ काम में लाते रहे हैं—जैसे 'हिंदी-हिंदुस्तानी' और यह हिंदी का पर्यायवाची भी रहा है, जैसे, हिंदी 'अथवा' हिंदुस्तानी। लेकिन इधर इस 'अथवा' में आमूल परिवर्तन हो गया है। पहले इसका मतलब था कि चाहे हिंदी कहो चाहे हिंदुस्तानी कहो, बात एक ही है। लेकिन अब इस 'अथवा' का अर्थ किया जा रहा है कि हिंदी और हिंदुस्तानी दोनों में से किसी एक का चुनाव करना होगा। यदि हिंदी का, तो हिंदुस्तानी का नहीं और हिंदु-स्तानी का, तो हिंदी का नहीं।

हमारे इस प्रान्तीय सम्मेलन के द्वार पर आप सबने देखा होगा, लिखा है 'जय हिंद'। यह इस समय का हमारा राष्ट्रीय उद्-घोष है। जिस प्रकार हम 'जय हिंद' कहते हैं उसी प्रक 'जय हिंदी' भी कहना चाहिए।

हम हिंदीवाले वर्षों से प्रचार करते आए हैं कि राष्ट्रभाषा है इसलिए प्रत्येक हिंदी को, प्रत्येक भारतवासी सीखना चाहिए। इस नई विचार-धारा ने, जिससे हमें रहना चाहिए, कहना आरम्भ किया है कि हिंदी हिंदुओं है और उर्दू मुसलमानों की। यह ठीक है कि हिंदी हिंदुओं भाषा है, किन्तु हिन्दुओं की नहीं और इसी प्रकार उर्दू भी मुस की ही नहीं। सर तेजबहादुर सप्रू उर्दू के प्रसिद्ध समर्थक हैं। मान नहीं काश्मीर के ब्राह्मण हैं। और अञ्जुमन तरक्कीये उर्दू पत्रिका 'हमारी जबान' के सम्पादक भी श्री ब्रजमोहन दत्तात्रे उर्दू लिपि में आपका गोत्र ठीक-ठीक लिखा ही नहीं जा कोई भाषा किसी धर्म की बपौती नहीं। जो लोग हिन्दुओं की भाषा कह-कहकर और उसी प्रकार उर्दू को मुस की भाषा कह-कहकर हिंदुस्तानी के द्वारा हिंदू-मुस्लिम ऐ सम्पादन की बात करते हैं—मुझे भय है कि इतिहास ऐसे को, साम्प्रदायिकता का असाधारण प्रचारक न सिद्ध करे।

हिंदी के राष्ट्रभाषा होने पर एक और आपत्ति उ रही है जिसमें उसके गुण को उसका दोष कहा जा रहा है जाता है कि ऐसी भाषा ही राष्ट्रभाषा हो सकती है 'जिसमें न के शब्द हों, न अरबी-फारसी के'। यदि हमारी राष्ट्रभाषा सब काम करने हैं जो आज दिन हम अँगरेजी के माध्यम हैं, तो ऐसी भाषा जिसमें 'न संस्कृत के शब्द हों न अरबी के' हमारे लिए तीन कौड़ी की भाषा होगी। निर्णय करना ही होगा कि विशेष शब्द आवश्यक ही नहीं वार्य होने पर कहाँ से लें? स्याम में बैंक को धनागार और नोट को धन-पत्र। हम भारत में यदि इसी प्रकार बोलें लिखें, तो उसमें किसी को क्यों आपत्ति हो सकती है?

एक और मजे की आपत्ति यह है कि लोगों की मा हिंदी में और लोगों की राष्ट्रभाषा हिंदी में अन्तर होना अर्थात् जो हिन्दी किसी की मातृभाषा है वह राष्ट्रभाषा सकती। स्काटलैंड और ब्रिटेन के लोगों से अँगरेजी सम्बन्ध कहा जा सकता है जो मराठी भाषा-भाषी अथवा भाषा-भाषी लोगों का हिंदी से। इँग्लिश इँग्लैंड के लो मातृभाषा होते हुए भी सारे ब्रिटेन की राज्य-भाषा है ब्रिटिश साम्राज्य की साम्राज्यभाषा। तो क्या एक तरह की अँगरेजों की मातृभाषा है और दूसरी तरह की अँगरेजी ब्रि राष्ट्रभाषा और तीसरी तरह की अँगरेजी ब्रिटिश साम्रा साम्राज्य भाषा? अँगरेजी अँगरेजी है। आप उसे मानकर सीखें, राष्ट्रभाषा मानकर सीखें या साम्राज्य भाषा सीखें। किंतु हम पराधीन हिंदियों को सुझाया जाता है कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो रूप होने चाहिएँ—एक मातृभाषावाला रूप, दूसरा राष्ट्रभाषा-ला रूप। सच्ची बात यह है कि मातृभाषा के अर्थ में तो हिंदी रत के कुल चार-पाँच जिलों की भाषा होगी; शेष समस्त भारत तो हिंदी राष्ट्रभाषा ही है। और उसका स्वरूप निश्चित है। में आज उसका प्रचार करना है; उसमें नए आवश्यक ग्रन्थों का र्माण करना है।

भारत और ब्रिटेन की सन्धि-योजना

र्तमान' लिखता है—

भारत-सरकार के रिफार्म आफिस में स्पेशल डयूटी पर ात आफिसर सर बी० नरसिंहराव ने सम्राट् की सरकार और ावित विधान-निर्मात्री परिषद् के बीच होनेवाली संधि से न्ध रखनेवाली समस्याओं का अध्ययन करना प्रारम्भ कर या है। इसी प्रकार का कार्य इण्डिया आफिस में भी प्रारम्भ गया है। ऐसा कहा जाता है कि सर नरसिंह की जाँच ण्डिया आफिस से स्वतन्त्र होगी और बाद में इण्डिया आफिस विशेषज्ञों और उनके बीच वार्ता का आदान-प्रदान होगा। नरसिंह उन सभी बातों पर विचार कर रहे हैं जो ब्रिटिश रकार से भारतीयों के हाथ में पूर्ण शासन-सत्ता सौंपने पर पस्थित होंगी। संधि-पत्र में वे सभी बातें आ जाएँगी जिनके लिए म्राट् की सरकार ने वचन दे दिए हैं। जातीय तथा धार्मिक ल्पसंख्यकों की रक्षा का विधान उसमें रहेगा, परन्तु इस प्रकार कोई प्रतिबन्ध न होगा जो भारतीय संघ को ब्रिटिश साम्राज्य के किसी राष्ट्र से अपना सम्बन्ध निर्धारित करने में बाधक । सारी शर्तें क्रिप्स-प्रस्तावों के आधार पर हैं। स्मरण रहे कि नरसिंहराव को जो कार्य दिया गया है वह अपनी तरह का ीन है। आयर्लैंड, मिस्र तथा दक्षिणी अफरीका से जो संधियाँ हैं वे ऐसी हैं जिनमें किसी में भी ब्रिटिश सरकार तथा विधान-र्मात्री परिषद् के बीच वार्ता नहीं हुई है। ऐसा अनुमान है वावेल-योजना के अन्तर्गत विधान-निर्मात्री परिषद् सन् ४६ पतझड़ के पूर्व न बुलाई जा सकेगी। प्रथम अड़चन प्रान्तीय तिनिधियों में विधान-निर्मात्री परिषद् का स्वरूप निश्चय करने बारे में आएगी और इसके बाद उक्त परिषद् का प्रातिनिधिक रूप निश्चित होने का प्रश्न आएगा। वर्तमान भारत-सरकार इस सम्बन्ध में अपना कोई विचार नहीं है। अतः सर नरसिंह प्रारम्भिक कार्य जातीय तथा धार्मिक अल्पसंख्यकों के प्रति ए पुराने वादों तक ही सीमित होगा। यदि आगामी अप्रैल अस्थायी राष्ट्रीय सरकार की स्थापना हो गई तो सारी स्थिति ही बदल जाएगी।

सीमान्त गांधी और मुस्लिम लीग

सीमान्त गांधी खान अब्दुल गफ्फार खान एक सच्चे लोक-सेवक हैं। सीमाप्रान्त में वहाँ के निवासियों को लोक-सेवा के भाव से उन्होंनेखूब सङ्गठित किया है। एक कट्टर मुसलमान होते हुए भी उनके हृदय में देश-भक्ति की भावना विशेष स्थान रखती है। वे मुस्लिम लीग की नीति से सन्तुष्ट नहीं हैं। पेशावर में प्रेस-प्रतिनिधियों को एक वक्तव्य देकर इस सम्बन्ध में उन्होंने अपनी स्थिति स्पष्ट कर दी है। उक्त वक्तव्य 'वर्त्तमान' में इस रूप में छपा है—

चाहे कोई इसे पसन्द करे या न करे, मेरी यह खूब अच्छी तरह सोची-समझी हुई धारणा है कि मुस्लिम लीग कांग्रेस के भारत को स्वतन्त्र करने के प्रयत्नों को तोड़ने के लिए ब्रिटिश साम्राज्यवाद-द्वारा बनाई गई है। चाहे कुछ भी क्यों न हो। सारी दुनिया मेरे खिलाफ क्यों न हो जाय, मैं अपने सच्चे विश्वास और आत्म-प्रेरणा के विरुद्ध नहीं जाऊँगा। यदि आवश्यक हुआ तो मैं अकेला रहकर भी अपना काम जारी रक्खूँगा।

जब तक लीग अपने अराष्ट्रीय और प्रतिक्रियावादी रुख में परिवर्तन नहीं करती, सामने आकर ब्रिटिश सरकार को भारत छोड़ने को चुनौती नहीं देती, तब तक कोई भी स्वतन्त्रता-प्रिय विद्रोही भावनाओं से भरा हुआ भारतीय लीग में आने की इच्छा भी नहीं करेगा। लीग ने सदैव भारत के हितों को हानि पहुँचाई है।

कुछ लीगी नेता मुझसे लीग में आने के लिए अपील करते हैं। मैं हजार बार कहता हूँ कि मैं लीग में नहीं आऊँगा। लीग में आने की अपेक्षा मैं मर जाना पसन्द करूँगा।

मुस्लिम लीगी ब्रिटिशों की आर्थिक सहायता और प्रचार से मुसलमानों के साथ छल कर रहे हैं। लीग की नीति आत्म-घातक है।

शीघ्र ही लीग समाप्त हो जाएगी। ऐसी संस्था जिसके पास कोई क्रियात्मक प्रोग्राम नहीं है, और जिसका अस्त्र केवल हिन्दुओं के प्रति घृणा करना ही है, शीघ्र ही नेस्तनाबूद हो जाएगी।

संस्कृत को राष्ट्र-भाषा बनाओ

चन्दननगर में अभी हाल में 'अखिल-भारतीय देव भाषा परिषद्' का सोलहवाँ अधिवेशन हुआ था उसके अध्यक्ष पं० बलदेव उपाध्याय ने अपने भाषण में इस बात की माँग की है कि संस्कृत भारत की राष्ट्र-भाषा बनाई जाए। उनके भाषण का सारांश 'जागृति' में छपा है जिसका कुछ अंश यह है—

संस्कृत भाषा का गौरव इतना अधिक है कि इसके परिमाण का ठीक ठीक अनुमान करना भी साधारण मनुष्य की शक्ति के बाहर है। संस्कृत को केवल धर्मभाषा बतलाना उसके विशाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महत्त्व को न्यून करना है। भारत के विभिन्न प्रान्तों के भिन्न भाषा-भाषी निवासियों में जो सांस्कृतिक एकता दीख पड़ती है उसका मूल कारण संस्कृत भाषा ही है। भारत में तो हिन्दू राजाओं के उत्कर्ष-काल में यह राजभाषा थी ही परन्तु भारत के बाहर भी जावा, सुमात्रा, बाली आदि देशों के हिन्दू राजाओं ने इसे अपनी राजभाषा बनाया था।

इन देशों की बोलियों में प्रचलित शब्द आधे से अधिक संस्कृत भाषा से लिए गए हैं। मलय प्रायद्वीप की भाषा (मलय) तथा जावा की कविभाषा चम्पा की 'चम' का मूल ही संस्कृत से सम्बद्ध नहीं है, अपितु इन भाषाओं की समृद्धि का सारा श्रेय संस्कृत को ही प्राप्त है। रामलीला और अर्जुनलीला हमारे ही आनन्द का विषय नहीं है, बल्कि वे जावा और बाली के निवासियों का भी मनोरंजन उसी प्रकार से करती हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि यह वाणी केवल भारतवर्ष के विभिन्न प्रान्तों को ही एकता के सूत्र में नहीं बाँधती बल्कि बृहत्तर भारत के निवासियों को भी, भाषा तथा आचार की भिन्नता होने पर भी सांस्कृतिक एकता प्रदान करने का आयोजन करती है।

प्राचीन भारत में यह वाणी जनसाधारण की बोलचाल की भाषा भी थी, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है। इसी लिए पाणिनि ने इसे भाषा शब्द से व्यवहृत किया है। राजा भोज के समय तो इसका बोलबाला था ही। अतः इसके लोकभाषा होने में किसी प्रकार का सन्देह नहीं हो सकता।

आजकल राष्ट्रभाषा की समस्या बड़ी जटिल हो गई है। कोई हिन्दी को, कोई उर्दू को तथा कोई दोनों भाषाओं की बेमेल खिचड़ी हिन्दुस्तानी नामधारी भाषा को भारत की राष्ट्रभाषा बनाना चाहता है। ऐसी अवस्था में मेरी यह दृढ़ धारणा है कि राष्ट्रभाषा बनने की योग्यता संस्कृत में ही विद्यमान है। भारत की प्रायः समस्त प्रान्तीय भाषाओं में संस्कृत के तत्सम शब्दों की प्रचुरता पाई जाती है। ऐसी दशा में यदि संस्कृत राष्ट्रभाषा बन जाए तो यह भारत के सभी प्रान्तों के लोगों के द्वारा आसानी से समझी जा सकती है। परन्तु इसके लिए महान् उद्योग करने की आवश्यकता है। संस्कृत भाषा को इतना सरल बना देना चाहिए कि सर्व-साधारण इसे सरलता से समझ सकें।

प्रतिनिधि-मण्डल को एक नेक सलाह

सर होमी मोदी भारत के प्रसिद्ध विचारवान् व्यक्तियों में जाते हैं। ब्रिटिश पार्लियामेंट का जो प्रतिनिधि-मण्डल समय भारत में भ्रमण कर रहा है, उसको उन्होंने एक बड़ी उचित सलाह दी है। उनका वह महत्त्वपूर्ण परामर्श समाचार पत्रों में छपा है, जो इस प्रकार है—

भारत अपने प्रति सच्चा है और उस पर सन्देह नहीं करना चाहिए। वह अपनी लक्ष्य-प्राप्ति के लिए और प्रतीक्षा नहीं कर सकता। शिष्ट-मण्डल को जानना चाहिए कि मतभेद कुछ है, हिन्दू और मुसलमान कोई भी गुलामी पसन्द नहीं करता।

देश के सामने प्रमुख प्रश्न ये हैं—(१) चुनावों के बाद प्रा में जनप्रिय सरकारों और केन्द्र में राष्ट्रीय सरकार की स्था (२) भारत का भावी विधान बनाने के लिए एक विधान-प का निर्माण।

यदि शिष्ट-मण्डल ठीक ढंग से आगे बढ़ेगा तो वह सूचना एकत्र करके भारत की आजादी में सहायक हो स जो सबसे बड़ा काम है, वह यह है कि वह विभिन्न दलों के का भेद न करे और इस प्रकार सम्भव है कि वह अस्थायी और विधान-परिषद् के प्रश्न पर समझौता कर ले।

यदि वे इस धारणा को ले लें कि इस स्थिति में स असंभव है तो क्या वे इस प्रकार यहाँ से यों ही लौट ब्रिटिश सरकार का यह कहना कि नए विधान के पूर्व दल एक मत हो जाएँ, कुछ हद तक ठीक था उसके लिए जोर देते जाने से उनके वादों पर सन्देह लगता है कि वे भारत को आजाद देखना चाह यदि वे इसे नहीं तोड़ना चाहते हैं तो निश्चय ही ब्रिटेन दिन भारत के विधान बनाने का भार अपने ऊपर लेना परन्तु यदि वह यह सोचे कि नहीं, जब सभी दल थककर मत हो जाएँगे तभी हम कुछ करेंगे और शिष्ट-मण्डल यही राय दे तो दोनों को यह समझ लेना चाहिए कि भार अब प्रतीक्षा करने की स्थिति में नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

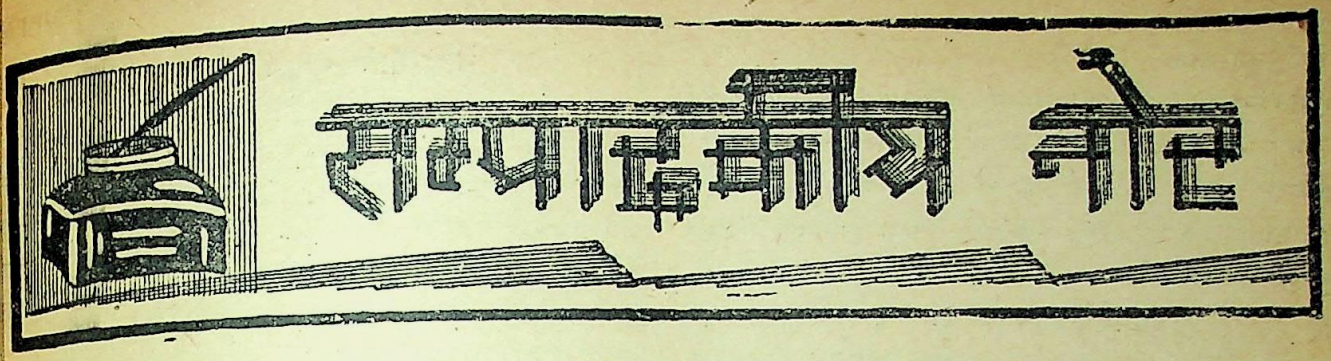

भारतीय समस्या का निराकरण

भारतीय समस्या के निपटारे का नहीं किन्तु उसके एक नू और सो भी दृढ़ पहलू के ग्रहण करने का समय दिन-प्रति- निकट आता जा रहा है। सम्बन्धित क्षेत्रों में उसका कार्य सावधानी के साथ किया जा रहा है, प्रकट रूप से भी और रूप से भी। 'वर्तमान' को पता लगा है कि भारत-सरकार के र में और विलायत में ब्रिटिश सरकार के इण्डिया आफिस एक विशेष अधिकारी के निरीक्षण में सरकारी कागज उलटे- ट जा रहे हैं और यह सोचा जा रहा है कि भारत—और ब्रिटेन के बीच सन्धि नामधारी जो कागज लिखा जाएगा, की रूप-रेखा कैसी हो। बाहर तो यह बार-बार कहा ही जा ा है कि ब्रिटिश सरकार ने क्रिप्स-प्रस्ताव वापस नहीं लिए हैं, ज्यों-के-त्यों कायम हैं। सरकार के इस कथन को सार्थक करने लिए भारत में उसके कूटनीतिज्ञ अधिकारी संलग्नता के साथ ना कार्य कर रहे हैं। इधर राष्ट्रीय भारत इस गति-विधि को न से देख रहा है। उसके नेता पाश्चात्य कूटनीति के वारों से नी रक्षा कर अपने उद्देश्य की पूर्ति किस प्रकार करेंगे इसका र वे सत्य और अहिंसा ही से दे रहे हैं। वे कूटनीति में ने दक्ष भी नहीं हैं। उनका सर्वप्रधान नेता उसकी आवश्यकता अनुभव तक नहीं करता। तथापि जो राजनीति का कुछ भी रखते हैं, वे तो जानते ही हैं कि ब्रिटिश सरकार के अधिकारी समय साम, दाम, दण्ड और भेद के प्रसिद्ध उपायों का प्रयोग नी सजगता के साथ कर रहे हैं। भारत-मन्त्री की घोषणा और कत्ते के वायसराय के भाषण ने जिस प्रकार भारत के उग्रता- ी नेताओं को राह पर ले आने में सफलता प्राप्त की है, उसे न नहीं जानता। उधर क्रिप्स प्रस्तावों के जीवित रहने से लीग सर्वेसर्वा जिन्ना साहब ने अब यह माँग पेश की है कि भारत के ान-निर्माण के लिए दो अलग-अलग सभाएँ संगठित की एँ—एक हिन्दू-भारत के लिए और दूसरी मुस्लिम-भारत के ए। ऐसी ही परिस्थिति में भारत को नया आत्म-शासन-विधान की व्यवस्था की जा रही है। कदाचित् भारत की इसी स्थिति का वास्तविक रूप जाँचने के लिए ब्रिटिश पार्लियामेंट प्रतिनिधि-मंडल भारत का भ्रमण कर रहा है। उसके प्रति- ये सभी विचार के नेताओं से भेंट कर वार्तालाप करते हैं और उनके विचारों को जानकर जब बाहर आते हैं, तब उनकी प्रशंसा ही करते हैं। अर्थात् यह भी ठीक वह भी ठीक।

परन्तु भारतीय परिस्थिति के सँभालने में जो राजनीतिक कौशल भारत के वायसराय लार्ड वेवेल तथा उसके प्रधान सेनापति सर क्लाड ऐचिनलेक ने दिखाया है और अपने कार्यकाल में उन्होंने अपनी जिस उदार नीति का परिचय दिया है, उसकी जितनी भी प्रशंसा की जाएगी, थोड़ी होगी। भारतीय नेताओं से सम्पर्क स्थापित करने की जिस बात को आज ब्रिटेन के श्री विलियम जी कोव आदि जैसे चतुर राजनीतिज्ञ महत्त्व देते हैं, उसी महत्त्व के कार्य को सफलतापूर्वक निर्वाह करके वायसराय महोदय ने देश के सभी प्रमुख नेताओं को अपने हाथ में कर लिया है, उन्हें अपना प्रशंसक और मित्र बना लिया है। प्रधान सेनापति ने भी भारतीय सेना में भारतीयकरण की नीति को प्रमुखता देकर पहले से ही काफी अधिक प्रसिद्धि प्राप्त कर ली थी। और अब आजाद हिन्द सेना के दंडित अफसरों को क्षमा-प्रदान कर वे सारे देश में प्रशंसनीय हो चुके हैं। यही दोनों सफल अधिकारी आगे चलकर ब्रिटिश सरकार की प्रस्तावित आत्मशासन-सम्बन्धी योजना को कार्य का रूप देने का भार ग्रहण करेंगे, जिसमें उन्हें पूर्ण सफलता अवश्य प्राप्त होगी। यह बात निश्चय के साथ कही जा सकती है। ब्रिटेन के कूटनीतिज्ञों ने जब पिछले महायुद्ध में जर्मनी और जापान जैसे पराक्रमी शत्रुओं को पूर्ण रूप से पराभूत करने में सफलता प्राप्त की है और जब वे उसके बाद संसार के अन्ताराष्ट्रीय क्षेत्र के राजनैतिक द्वन्द्व में सफलता के साथ अपने पौ बारह कर रहे हैं, तब भारत में, जहाँ सम्प्रदायवादियों के एक से एक सुदृढ़ गढ़ों में अपनी ढाई चावलों की खिचड़ी अलग पकाई जा रही है, अपनी लगाई हुई बाजी को जीत लेना आज की भारत की दयनीय परिस्थिति में उनके लिए बाएँ हाथ का खेल है। भारत, युद्ध-त्रस्त भारत, अन्न-वस्त्र से दुखी भारत, आज क्या चाहता है? इसकी व्यवस्था, देखना है, ब्रिटिश सरकार तथा भारतीय नेता किस प्रकार करते हैं, क्योंकि उसी पर भारत का भविष्य निर्भर करता है।

चीन के गृह-युद्ध का अन्त

यह बड़ी प्रसन्नता की बात है कि चीन के वर्गवादियों तथा चीन की राष्ट्रीय सरकार के बीच में जो 'भयानक युद्ध छिड़ा हुआ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था, वह बन्द हो गया है और अब वे दोनों परस्पर मिलकर चीन के लिए एक प्रजातन्त्रीय शासन-विधान बनाने के लिए परस्पर समझौता कर रहे हैं। इसका सारा श्रेय अमेरिका के राजदूत जनरल जार्ज मार्शल को है। ये पिछले दिनों वर्गवादियों के प्रतिनिधि जनरल चू एन लाई और राष्ट्रीय सरकार के प्रतिनिधि जनरल चांग चुन के बीच जो समझौते की बातचीत हो रही थी, उसमें मध्यस्थता कर रहे थे। उन दोनों प्रतिनिधियों की चार बैठकें हुईं, जिनमें जनरल जार्ज मार्शल ने मध्यस्थता का काम ऐसी संलग्नता और बुद्धिमत्ता से किया कि उक्त दोनों प्रतिनिधि गृह युद्ध बन्द करने को राजी हो गए। फलतः चीन का गृहयुद्ध बन्द कर दिया गया है और दोनों दलों के बीच समझौते की वार्ता प्रारम्भ हो गई है। उस दिन वर्गवादी प्रतिनिधि जनरल चू एन लाई ने जन-परामर्शदात्री कौंसिल की एक बैठक में भाषण करते हुए हृदयस्पर्शी शब्दों में घोषित किया है कि 'अठारह वर्ष की पीड़ाओं तथा भ्रातृघाती संघर्ष के पश्चात् अब हम चीनी गणतन्त्र के संस्थापक सनयात सेन के सम्मुख शपथ लेते हैं कि अब हमारे चीन में कभी गृह-युद्ध नहीं होगा।' इस घोषणा से सिद्ध होता है कि वर्गवादियों में सुबुद्धि का उदय हुआ है और वे गृह युद्ध बन्द कर राष्ट्रीय सरकार के साथ मिलकर चीन में प्रजातन्त्र की स्थापना करना चाहते हैं। विश्वास किया जाता है कि प्रजातन्त्रीय शासन-विधान की रचना करने में वर्गवादियों और राष्ट्रवादी सरकार के प्रतिनिधियों में उपयुक्त समझौता हो जाएगा, जिसके फलस्वरूप निकट भविष्य में चीन की राष्ट्रीय सरकार सारे चीन में एक प्रजातन्त्रीय सरकार की स्थापना करने में सफल-मनोरथ होगी। निस्सन्देह इस सम्बन्ध में उसे अमेरिका के राजनीतिज्ञों का पूर्ण साहाय्य प्राप्त होगा। ऐसा होने पर ही चीन का महाराष्ट्र अपने गौरव के अनुरूप संसार में ऊँचा उठ सकेगा। यदि चीन के सभी वर्गों में ऐक्य की स्थापना हो जाएगी और वे एक राष्ट्र के रूप में अपनी नव संगठित प्रजातन्त्रीय सरकार को उपयुक्त ढङ्ग से कार्य-संचालन करने देंगे तो एशिया का यह महान् राष्ट्र कुछ ही काल के भीतर संसार की महती शक्तियों के समान ही अपनी उच्च स्थिति प्राप्त कर लेगा। चीन क्या जनबल में और क्या प्राकृतिक साधनों की सम्पन्नता में और क्या अपने क्षेत्रफल की विशालता में संसार का एक सर्वश्रेष्ठ राष्ट्र है। दुःख यही है कि उसे अपने अनुरूप उन्नति करने का कभी अवसर ही नहीं मिला। चीनी राष्ट्र के नेताओं का यह परम कर्त्तव्य है कि वे निजी स्वार्थों को पीछे डालकर राष्ट्रीय स्वार्थ को आगे कर अपने राष्ट्र की समुन्नति के लिए यत्नवान् हों। और उनके राष्ट्र के सौभाग्य से आज उन्हें इसका अवसर भी प्राप्त हो रहा है। देखना है कि इस अवसर से वे कहाँ तक लाभ उठाते हैं।

मास्को-सम्मेलन का परिणाम

मास्को सम्मेलन राम-राम करके हो गया। ब्रिटेन, अमेरिका के राजदूत इस बार प्रसन्न-प्रसन्न अपने देशों को गए। इस सम्मेलन में कौन-कौन प्रश्न उठाए गए तथा किस प्रकार विचार हुआ, ये सब बातें किसी को नहीं सकीं। ब्रिटेन और अमेरिका के राजदूतों ने प्रेस के प्रतिनि जो वक्तव्य दिए उन्हीं से कुछ जाना जा सकता है कि सम्मेलन बातों पर विचार किया गया। वक्तव्यों से प्रकट होता है कि सभी बातें स्वीकार कर ली गई हैं, परन्तु किस रूप में तथा कि तक यह सब उनसे नहीं प्रकट होता। अणुबम के सम्बन्ध में है कि उस पर राष्ट्र-संघ की सुरक्षा समिति का नियन्त्रण रहेग प्रकार जापान के नियन्त्रण में रूस को भी समान अधिका जाएगा। अब रह गए ईरान और तुर्की आदि के प्रश्न, सम्बन्ध में उन वक्तव्यों में कुछ भी संकेत नहीं किया गया है प्रकार मध्य योरप के छोटे बड़े स्वाधीन राष्ट्रों के सम्बन्ध मतभेद था, उस पर भी कोई प्रकाश नहीं डाला गया है। अमेरिका यह कहते न सुना जाता कि उन देशों की वर्त कारें तब तक मान्य नहीं की जा सकतीं, जब तक उनका से नए निष्पक्ष निर्वाचनों के द्वारा संगठन नहीं हो जाता जो हो, मास्को-सम्मेलन में तीनों महत् शक्तियों के प्रतिनि मैत्री का भाव अवश्य रहा, जो कम महत्त्व की है। यदि इन तीनों महाशक्तियों में इसी प्रकार मैत्री बना रहा तो संसार की जटिल समस्याएँ किसी रूप में अवश्य निपट जाएँगी। परन्तु इन तीनों महाशक्ति अपना अपना प्रभाव क्षेत्र बढ़ाने का भाव अभी तक पूर्ववत् है और जब तक उनमें इस सम्बन्ध में आवश्यक समझौ हो जाता, तब तक संसार में सुव्यवस्था की आशा करना कल्पना के सिवा और कुछ नहीं है। परन्तु संसार आशा टिका हुआ है, अतएव यह आशा सदैव की जाएगी कि शक्तियों में अवश्य ही आवश्यक समझौता हो जाएगा। एक कारण यह भी है कि एक अमेरिका को छोड़कर पिछले महायुद्ध में गहरी चोट खा चुके हैं और उन्हें आर्थिक अवस्था सुधारने के लिए एक दूसरे के सहयोग आवश्यकता है। यही वह बात है, जो उन्हें एक दूसरे रखने को बाध्य कर रही है। मास्को सम्मेलन का यही हुआ है, जो अन्ताराष्ट्रीय दृष्टिकोण से बड़े महत्त्व का है।

केन्द्रीय असेम्बली का नया निर्वाचन

केन्द्रीय असेम्बली के हाल के निर्वाचन का परिणाम हो गया है। इस बार के चुनाव में कांग्रेस के ५६, मुस्लि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३०, स्वतन्त्र दल के ६, योरपीय सदस्य ८ तथा २ अकाली
लख चुने गए हैं। निर्वाचित सदस्यों की कुल संख्या एक सौ
है। असेम्बली की पूर्ण सदस्य-संख्या १४२ है जिसमें ४०
दस्य सरकार-द्वारा निर्वाचित होंगे। सरकार द्वारा निर्वाचित
न सदस्यों में ज्यादा-से ज्यादा २६ सरकारी अफसर होंगे।
स प्रकार नई केन्द्रीय असेम्बली का सङ्गठन होगा। इस असे-
ली में कांग्रेसी पिछली असेम्बली की अपेक्षा संख्या में ग्यारह
धिक पहुँचे हैं। इसी प्रकार मुस्लिम लीगी पहले की अपेक्षा
च अधिक हैं। इन दोनों का ही बल बढ़ा है और इसी प्रकार
मजद सदस्यों की संख्या पहले से दूनी हो गई है। अन्य दल
गण्य अवस्था को प्राप्त हो गए हैं। परन्तु इस निर्वाचन के परिणाम
यह नहीं जाना जा सकता कि भारतीय लोकमत का वास्तविक
प क्या है? निर्वाचन-क्षेत्र अति संकीर्ण होने के कारण एवम्
म्प्रदायवादी गढ़ों के अस्तित्व में आ जाने से राष्ट्रीयतावादी जनता
बलाबल नहीं प्रकट हो सकता तथापि कांग्रेसी सदस्यों की संख्या-
द्धि से यह तो प्रकट ही हो गया है कि हिन्दू-निर्वाचन-मण्डलों
राष्ट्रीय भावना व्यापक रूप से अपना प्रभाव रखती है। हिन्दू
हासभा के सदस्यों को बुरी हार खानी पड़ी है। यह इस बात
पूरा प्रमाण है कि वर्तमान संकीर्ण निर्वाचन-क्षेत्र में भी
ग्रेस का ही बोल-बाला रहा। उधर मुस्लिम निर्वाचन-क्षेत्र में
ग का पहले जैसा ही प्राधान्य कायम रहा। वा राष्ट्रीयतावादी
सलमानों ने यद्यपि लीग के उम्मेदवारों का अपने भरसक विरोध
या परन्तु उन्हें सफलता नहीं मिली। तथापि उनके उम्मेदवारों
जिस अनुपात से वोट प्राप्त हुए है, उससे प्रकट होता है कि
स्लिम निर्वाचन-क्षेत्रों में आवश्यक प्रचार होने से राष्ट्रीयतावाद
पना विशेष स्थान प्राप्त कर सकता है। वे हिन्दू निर्वाचन-क्षेत्र
हिन्दू महासभा आदि के उम्मेदवारों की भाँति धराशायी नहीं
ए हैं। यह पहले से ही जाना हुआ था कि इस निर्वाचन का
सा परिणाम होगा। सरकार ने अपनी संकुचित नीति के कारण
रतीयों को ऐसा मताधिकार ही नहीं दिया है कि केन्द्र में
प्रान्तों में सारे राष्ट्र के प्रतिनिधि निर्वाचित हो सकें। जब
क देश के सभी वयस्कों को मताधिकार नहीं दिया जाता एवं
ा से पृथक् निर्वाचन का विष-वृक्ष उखाड़कर नहीं फेंका जाता,
तक भारत में प्रजातान्त्रिक शासन संस्थाएँ सत्ता में नहीं
सकतीं। अब देखना है कि सरकार ये निर्वाचन करवाने के
द विधान-सम्मेलन का किस प्रकार सङ्गठन करती है, क्योंकि
इसी के द्वारा भारत को आत्मशासन प्रदान करने का वादा
र चुकी है।

इण्डोनेशिया का स्वतन्त्र्य-युद्ध

भारतीय द्वीपपुंज अर्थात् इण्डोनेशिया में जो सशस्त्र युद्ध
रहा है, उसके अन्त होने के लक्षण दिखाई देने लगे हैं। द्वीप-
पुञ्ज-निवासियों ने अपना ऐसा सुदृढ़ संगठन बना लिया है कि
अँगरेजी सेना की सहायता से भी डच लोग उन्हें दबा नहीं सके।
वस्तुतः वहाँ उनकी अपनी सुव्यवस्थित सरकार ही स्थापित है,
जिसके अध्यक्ष डाक्टर अब्दुर्रहमान सोयकानों, उपाध्यक्ष डा०
मुहम्मद हाटा, प्रधान मन्त्री डा० अमीर शरीफुद्दीन आदि-आदि
हैं। इस सरकार का केन्द्र-स्थान जावा द्वीप के जोगजगराता
नामक स्थान में है, जो बटाविया से ३०० मील दूर है। इस
सरकार ने भारतीय द्वीपपुञ्जों की स्वाधीनता की घोषणा कर दी
है और सारे द्वीपों पर अपनी सत्ता स्थापित करके वह डचों से
युद्ध कर रही है। अध्यक्ष डाक्टर सोयकानों ने उस दिन गजक-
तरा से भाषण ब्राडकास्ट करके अपनी सरकार की स्थिति को भले
प्रकार स्पष्ट कर दिया है। उन्होंने कहा है कि 'सात करोड़ इण्डो-
नेशियन एक शक्तिशाली राष्ट्र बनाएँगे, जो विश्व के गणतन्त्र-
वादी राष्ट्रों की आर्थिक और राजनीतिक सहायता करेगा। उन्होंने
अपनी स्वतन्त्रता पा ली है और प्राणपण से वे उसकी रक्षा करेंगे।'
उन्होंने अपने इन विचारों को कार्य का रूप ही नहीं दिया
है, किन्तु समर-भूमि में अपने निश्चय की दृढ़ता को भी सिद्ध
कर दिखाया है, जिसका आवश्यक प्रभाव डच सरकार के लेफ्टी-
नेण्ट गवर्नर जनरल डा० वान मूक पर भी पड़ा है। डा० वान मूक
द्वीपपुञ्ज की समस्या के सम्बन्ध में परामर्श करने के लिए हालैण्ड
गए हुए हैं, जहाँ उन्होंने एक भाषण करके अपने विचारों को
व्यक्त किया है। उन्होंने कहा है—

"जापानियों की पराजय और चीनी जनता की विजय ने
एशियाई जनता में एक जबर्दस्त आजादी की भावना पैदा कर
दी है, जो पहले की अपेक्षा अधिक गहरी और विस्तृत है। दूसरी
ओर हम लोग भी अब पहले की औपनिवेशिक व्यवस्था को घृणा
की दृष्टि से देखते हैं। यह घृणा एक प्रकार के आदर्शवाद की
लहर है। अतलांतिक अधिकारपत्र तथा संयुक्तराष्ट्रीय अधिकारपत्र
ने इस भावना को जन्म दिया है। आत्म-निर्णय और स्वतन्त्रता के
लिए प्रयत्न करनेवाले देशों के प्रति विश्व के अन्य देश भी
सहानुभूति रखते हैं। बम्बई, कोलम्बो और आस्ट्रेलिया में की
गई हड़तालों ने सिद्ध कर दिया कि विश्व में एक अन्ताराष्ट्रीय
भावना पैदा हो गई है और अब किसी देश को शक्ति-द्वारा
अधिकार में नहीं रक्खा जा सकता।

"डच तथा ब्रिटिश मन्त्रियों में इण्डोनेशिया को उसके पैरों
पर खड़ा करने के सम्बन्ध में मतभेद नहीं है। इण्डोनेशियनों और
डचों के मिलते ही इण्डोनेशिया का पुनर्निर्माण प्रारम्भ हो
जायगा।"

इस भाषण से प्रकट होता है कि डच सरकार भारतीय
द्वीपपुञ्ज के स्वतन्त्रतावादियों का दमन करने में सफल नहीं हो
सकी और अब वह उनसे समझौता करना चाहती है। परन्तु
द्वीपपुञ्ज के अध्यक्ष डाक्टर सोयकानों ऐसा कोई समझौता कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को तैयार नहीं हैं, जो उनकी पूर्ण स्वतन्त्रता में सहायक न होता हो। उन्होंने अपनी एक सरकार ही संगठित कर ली है, जिसने सारे द्वीपपुंज की स्वतन्त्रता भी घोषित कर दी है। तब डच सरकार के साथ उनका समझौता नहीं किन्तु समानता की सन्धि ही हो सकती है। यह एक ऐसी समस्या है, जिसके शान्तिपूर्वक हल होने में ही दोनों पक्षों का हित है। प्रसन्नता की बात है कि इसके लिए दोनों ही पक्ष काफी प्रयत्न भी कर रहे हैं।

——

सरकार का एक नया आर्डीनेंस

युद्धकाल में चोर बाजारों में लोगों ने गहरी रकमें फटकारी हैं। सरकार ने अपनी शक्ति भर इस बात का प्रयत्न किया कि लोग अधिक नफाखोरी से बाज आएँ, परन्तु वह अपने प्रयत्न में सफल नहीं हो सकी। लोगों ने अपना ढङ्ग नहीं छोड़ा और नफाखोरी का बाजार बराबर गर्म रहा। इससे सर्वसाधारण को जो कष्ट उठाना पड़ा है तथा गहरी आर्थिक हानि झेलनी पड़ी है, वह सर्वविदित है। अब सरकार ने नफाखोरों को राह पर लाने के लिए एक नए उपाय का अवलम्बन किया है। हाल में एक नया आर्डीनेंस निकालकर ५००) के, १०००) के, १०,०००) के नोटों को उसने गैरकानूनी घोषित कर दिया है। इस आर्डीनेंस का विवरण दैनिक 'प्रताप' में इस प्रकार छपा है—

'चोर बाजार से पैदा की गई चालू पूँजी को बड़े-बड़े पूँजीपतियों ने बड़े-बड़े नोटों के ही रूप में जमा कर रक्खा है। सरकार ने चोर बाजारी को रोकने के लिए तीव्र उपायों से काम लेना जरूरी समझा, इसी लिए यह आर्डीनेंस बनाया गया है। इसका मुख्य उद्देश्य यह भी है कि इस प्रकार की चालू पूँजी से सरकार अवगत हो सके तथा कर वसूल करनेवाले अधिकारी भी जान सकें। सरकार को सन्तोष है कि साधारण नागरिक पर इसका कोई असर नहीं पड़ेगा।'

यह परम सन्तोष की बात है कि सरकार अपने साधारण नागरिकों का विशेष रूप से ध्यान रखती है। क्या ही अच्छा होता, यदि सरकार अपने साधारण नागरिकों की सुविधा का विचार कर एक ऐसा भी आर्डीनेंस बनाने की उदारता दिखाती, जिसके अनुसार कण्ट्रोल की सरकारी दूकानों में कंकड़ और बजरी मिले हुए अन्न का विक्रय गैरकानूनी ही न घोषित हो जाता, किन्तु इसकी बराबर देख-रेख भी रक्खी जाती कि सर्व-साधारण को जो अन्न खरीदना पड़ता है, वह साफ-सुथरा तथा निर्दोष है।

——

कोरिया की दयनीय अवस्था

युद्धकाल में अमेरिका की ओर से कहा गया था कि जापान के पराजित हो जाने पर कोरिया स्वतन्त्र कर दिया जाएगा। परन्तु आज जब जापान पराजित हो गया है, कोरिया का कोई अस्तित्व नहीं है। कोरिया एक स्वतन्त्र राष्ट्र रहा है। इधर ने अपने अभ्युदय-काल में उस पर अधिकार कर उसे अधीन कर लिया था। तभी से बहुसंख्यक देशभक्त निवासी अमेरिका पहुँचकर अपने देश की स्वतन्त्र आन्दोलन करते रहे हैं। इस महायुद्ध के समय अमेरिका आश्वासन से उनका उत्साह बढ़ गया था और जापान पराजित करने में उन लोगों ने यथासंभव सहायता भी की परन्तु अभी तक ऐसा कोई लक्षण दिखाई नहीं दे रहा है कोरिया को पहले जैसी स्वतन्त्रता प्राप्त होगी। इस समय कोरिया में रूसी सेनाओं का अधिकार है और दक्षिणी कोरिया अमेरिका की सेनाओं का। दक्षिणी कोरिया में एक समस्या और है कि वहाँ वर्गवादियों और अवर्गवादियों में खासा कलह खड़ा हुआ है, जिसमें अमेरिकावाले वर्गवादियों के विरोधी का साथ दे रहे हैं। उधर उत्तरी कोरिया के निवासी भी असन्तुष्ट हैं क्योंकि रूस सरकार उन्हें स्वतन्त्र नहीं कर रही है। अभी हाल में जो सम्मेलन हुआ था, उसमें भी कोरिया की स्वतन्त्रता के सम्बन्ध में कोई निर्णय नहीं किया है। ऐसी दशा यदि कोरियावासियों में महाशक्तियों के प्रति विक्षोभ पैदा हो तो यह सर्वथा स्वाभाविक ही है। विजयी महाशक्तियों ने सर्वसाधारण क्या, कोरिया के सदृश अन्य पहले के स्वाधीन देशों के प्रति दोनों उदारता का व्यवहार कहाँ कब किया है? कोरिया तो अधिक संख्यक एशियाई देश ठहरा! पहले के कई एक योरपीय स्वतन्त्र देश अपनी जब अभी तक अपनी स्वतन्त्र स्थिति प्राप्त नहीं कर सके स्वाभाविक उस कोरिया को कैसे सरलता से स्वाधीनता मिल जाएगी। एक जमाने तक जापान की पराधीनता में पड़ा सिसकता रहा है। तो भी आज जैसी अन्तराष्ट्रीय स्थिति है, उसको स्थिति को रखकर कोरिया के देशभक्त नेता अपने देश को स्वतन्त्र कुछ का सुख-स्वप्न भले प्रकार देख सकते हैं। साथ ही उसे पूरा प्रयत्न भी कर सकते हैं। रह गया उसका स्वतन्त्र होना के सर्वथा रूस और अमेरिका की दया पर निर्भर है, क्योंकि समय यही दोनों देश कोरिया को दो हिस्सों में बाँटकर अधिकार किए हुए हैं।

——

तुर्की और रूस

इधर तुर्की और रूस में मनमुटाव अधिक बढ़ पहले महायुद्ध के अन्त में रूस ने तुर्की की काफी सहायता की थी। कहा तो यहाँ तक जा सकता है कि समय उसको रूस की सहायता न मिली होती तो कदाचित् ही आज का जैसा अपना अस्तित्व प्राप्त कर ऐसे ही तुर्की से आज रूस ऐसी माँगें कर रहा है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अस्तित्व को संकट में डाल सकती हैं। रूस उसके प्रसिद्ध जल-डमरुमध्य में अपना अबाध प्रवेश चाहता है। यही नहीं, वह उससे उसके दो प्रान्त भी ले लेना चाहता है। इसके लिए रूसी पत्रों में काफी अधिक कड़ा आन्दोलन हो रहा है। परन्तु तुर्की की प्रजातन्त्र सरकार ने रूस की माँगों को स्वीकार नहीं किया है। जलडमरुमध्य की माँग के सम्बन्ध में वह पहले ही स्पष्ट रूप से कह चुका है कि मांट्रो समझौते से सम्बन्धित राष्ट्रों की सम्मति के बिना वह उस सम्बन्ध में कुछ भी नहीं कर सकता। हाल में प्रान्तों की माँगों के सम्बन्ध में भी उसने अपनी स्थिति स्पष्ट कर दी है। उसके प्रधान मंत्री डा० शुक्रु सराजोग्लू ने अंकारा रेडियो से भाषण करते हुए कहा है कि 'तुर्की की सीमा पर बसे कार्स और अर्दहन प्रान्तों पर सोवियट यूनियन का कोई अधिकार नहीं है। रूस-तुर्की युद्ध के बाद सन् १८७८ ई० में ये प्रान्त रूस ने अपने में मिला लिए थे, किन्तु प्रथम महासमर के पश्चात् रूस और तुर्की में जो समझौता हुआ था, उसके अनुसार ये दोनों प्रान्त पुनः तुर्की में आ मिले थे। तुर्की को कार्स और अर्दहन के प्रान्त रूस-द्वारा दिए नहीं गए थे, बल्कि लौटाए गए थे।' परन्तु आज का प्रबल रूस तुर्की के प्रधान मंत्री की इस न्याय-पूर्ण उक्ति का स्वागत करने को तैयार नहीं दिखाई देता है। रूस के सर्वेसर्वा स्टालिन साहब की जन्मभूमि जार्जिया है और तुर्की के उक्त दोनों प्रदेशों के निवासियों में जार्जिया की भाषा बोलनेवाले अधिक संख्या में हैं। अतएव रूस तुर्की के जार्जिया-भाषी प्रदेशों को अपने जार्जिया प्रदेश का अंग समझ ले, तो उसके लिए यह अस्वाभाविक बात नहीं होगी। यही कारण है कि रूस बहुत कुछ स्टालिन साहब की मातृभूमि के विचार से उन प्रदेशों की माँग कर रहा है। और द्वितीय महायुद्ध के फलस्वरूप रूस की जो प्रबल स्थिति हो गई है, उसको देखते हुए यही जान पड़ता है कि तुर्की कुछ ही समय के उपरान्त ऐसा जोर डाला जाएगा कि वह चुपचाप उन दोनों प्रान्तों को रूस के हवाले कर दे। जैसे अमेरिका के कहने पर उसे अपने जलडमरुमध्य में रूस आदि को विशाधिकार देना स्वीकार करना पड़ा है, वैसे ही अपने उक्त दोनों प्रदेशों को भी उसे रूस को देना ही पड़ेगा, क्योंकि तुर्की में उतनी शक्ति नहीं है कि वह बिना किसी दूसरी महाशक्ति की सहायता के रूस के विरुद्ध शस्त्र ग्रहण कर सके। और आज ऐसी कोई शक्ति नहीं है, जो तुर्की के लिए रूस से लड़ाई मोल लेगी।

जापान की दण्ड-व्यवस्था

पराजित जापान आज ग्रेट ब्रिटेन और अमेरिका के सैनिक नियंत्रण में है। मास्को-सम्मेलन के समझौते के अनुसार इस नियंत्रण में अब रूस का भी भाग होगा और जापान का सैनिक-नियंत्रण ब्रिटेन, अमेरिका तथा रूस के एक कमीशन के हाथ में दिया जाएगा। कहा जाता है कि इस समझौते से जापान के वर्तमान अमेरिकन प्रधान मैक आर्थर साहब असंतुष्ट हैं और वे कदाचित् अब अपने पद से हट जाएँगे। चाहे जो हो, उनके अधिकार-काल में जापान पर अमेरिका की पूर्ण सत्ता स्थापित हो चुकी है, जिसके फलस्वरूप जापान की वर्त्तमान सरकार उनके हाथ की कठपुतली-मात्र ही रही है। इस नियंत्रण-काल में जापान किस स्थिति को पहुँच चुका है, इस पर थोड़ा बहुत प्रकाश ब्रिटेन के 'न्यूज आफ दि वर्ल्ड' ने डाला है। उसने लिखा है—

'जो जापान आज अद्भुत ढङ्ग से झुक गया है, वही कभी विश्व की सबसे विकट और खतरनाक समस्या बन जाएगा। जापान की गरीबी, बेकारी, अकाल और शायद प्लेग वहाँ उग्र राष्ट्रीयता को जन्म देने में सहायक होंगे, यहाँ तक कि आज भी उसके पुनर्जन्म के लक्षण दिखाई पड़ रहे हैं। दक्षिणीय भाग में हजारों जापानी सैनिक जहाजों-द्वारा बाहर से लाकर उतारे जा रहे हैं। रणक्षेत्रों से आए हुए अनेक सैनिक इतने रुग्ण और दीन-हीन अवस्था में हैं कि कठिनाई से जमीन पर चल-फिर सकते हैं। किन्तु दूसरे लोग भी हैं, जो युद्धकाल में काफी खुशहाल थे। और अब उनके भूखों मरने की नौबत आ रही है। चारों ओर लोगों में असंतोष फैल रहा है। ओसाका में निकाले हुए सैनिक संगठन करके भोजन की तलाश में हमले कर रहे हैं। खाद्य-गोदामों पर अमेरिकन चौकीदारों की हत्या की जा रही है। अमेरिकन सैनिकों की लाशें नदियों और नहरों में पाई जा रही हैं। जापानी अधिकारी जान-बूझकर इस स्थिति की उपेक्षा कर रहे हैं और आशा करते हैं कि इस रूप में वे अन्त में अधिकार करनेवाली सेनाओं के विरुद्ध जनता को उभार सकने में सफल होंगे। सर्वत्र जापानी उत्तरोत्तर उद्दण्ड और लापर्वाह होते जा रहे हैं। भय के स्थान पर क्षोभ उत्पन्न होता जा रहा है। अपराधों की संख्या बढ़ती जा रही है। कब्जा करने का काम भी अब शुरू हुआ है। जापानी माता-पिता अपने बच्चों को यह उपदेश दे रहे हैं, कि वे उदीयमान सूर्य के प्रतीक के सम्मुख सम्मानपूर्वक नतमस्तक हों, जो गत कई दिनों से हजारों जापानी गृहों पर लहराने लगा है। ये बातें तथा दूसरी प्रतिक्रियाएँ अत्यन्त महत्त्व रखती हैं।'

यह हाल है उस जापान का, जिसने द्वितीय महायुद्ध में अपने विकट पराक्रम का परिचय दिया था और अमेरिका, चीन तथा ब्रिटेन से भयानक युद्ध किया था। पराजित हो जाने पर आज वह नितांत दयनीय अवस्था को प्राप्त हो चुका है। अब विजयी राष्ट्रों को चाहिए कि वे जापान में ऐसी व्यवस्था करें, जिससे जापानी लोग भविष्य के शांत नागरिक बन सकें और उनमें ऐसा कोई भाव न पैदा हो, जिससे उनमें बदला लेने की प्रवृत्ति का जन्म हो। ऐसा करने से ही विश्व में शांति की स्थापना हो सकेगी। जापान ने जो भीषण अपराध किया है, उसका दण्ड उसे अवश्य मिलना चाहिए। परन्तु वह दण्ड ऐसा न हो, जो उसे सदा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बनाने के स्थान में शत्रु ही बनाए रहे। राजनीति में क्षमा का स्थान कम महत्त्वपूर्ण नहीं है, इस बात की ओर विजयी राष्ट्रों का ध्यान अवश्य ही होना चाहिए।

सरकार की नियंत्रण-सम्बन्धी नीति

सारे देश में सरकार ने भोजन-वस्त्र का वितरण अपने हाथ में ले लिया है। सरकार-द्वारा निश्चित दर पर भोजन और वस्त्र देश के बड़े-बड़े शहरों के निवासियों को दिया जाता है। उसकी इस नियन्त्रण नीति का ग्रामों पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा है। वहाँ उन लोगों को, जो खेती-बारी नहीं करते, भोजन-सामग्री प्राप्त करना एक कठिन समस्या बन गई है। वस्त्रों को प्राप्त करना सभी के लिए कठिन हो गया है। शहरों में बँधे कोटे के अनुसार भोजन और वस्त्र जैसे-तैसे मिल भी जाते हैं, परन्तु वे कैसे होते हैं, उनकी चर्चा करना अनावश्यक है। सरकारी दूकानों में जो अन्न मिलता है, उसमें इतना अधिक कूड़ा कर्कट मिला रहता है कि उनका साफ करना गृहस्थों के लिए एक नया काम हो गया है। तथापि लाचारी की दशा में यह सब कष्ट देशवासी चुपचाप झेल रहे हैं। माँ-बाप सरकार ने नियन्त्रण के चौकस नियम बना दिए हैं। इससे अधिक उसका और क्या कर्त्तव्य हो सकता है। वह समझती होगी कि उनका अक्षर-अक्षर पालन किया ही जाता होगा। तभी तो उसके उच्च अधिकारी अपनी नियन्त्रण-सम्बन्धी योजनाओं के ऊपर आवश्यक ध्यान देना तक उचित नहीं समझते। उस दिन कानपुर में जिला 'फूड एडवाइजरी कमेटी' की एक बैठक हुई थी। उसमें प्रान्तीय गवर्नर के सलाहकार श्री जे० ई० पैडले भी उपस्थित हुए थे। सदस्यों ने मि० पैडले से कहा कि राशनिंग का गेहूँ जो कम कर दिया गया है वह बढ़ाया जाय, मिट्टी के तेल का कोटा बढ़ाया जाय, चावल की स्थिति से काफी असन्तोष है तथा कपड़े की हालत को देखते हुए ऐसा मालूम पड़ता है कि मिलों में कपड़े का उत्पादन रोक दिया जाता है। इसकी सरकार-द्वारा जाँच हो और यदि जाँच में यह त्रुटि पाई जाए तो उचित कार्यवाही की जाए। मि० पैडले ने बताया कि गेहूँ कमी के कारण बढ़ाया नहीं जा सकता, चावल की स्थिति अच्छी होने का अनुमान है। मिलों के उत्पादन के सम्बन्ध में जाँच की जाएगी और मिट्टी के तेल का कोटा बढ़ा दिया जाएगा। शक्कर के सम्बन्ध में भी आपने स्थिति स्पष्ट की।"

कैसे हृदयस्पर्शी उत्तर हैं! युद्ध समाप्त हो चुका है, उसका कोई खतरा भी नहीं दिखाई दे रहा है, परन्तु हमारे अधिकारी युद्ध के पहले की स्थिति पुनः ले आना आवश्यक नहीं समझ रहे हैं! इससे अधिक इस देश के असहाय और दुःखी प्रजाजनों का दुर्भाग्य और क्या हो सकता है?

नए राष्ट्र-संघ की स्थापना का प्रारम्भ

जनवरी के दूसरे सप्ताह में लन्दन में अतिप्रत्याशित राष्ट्र-संघ की स्थापना का कार्य बड़े आडम्बर के साथ किया इस अवसर पर इक्यावन राष्ट्रों के प्रतिनिधि दल-बल के एकत्र हुए। कुल प्रतिनिधियों की संख्या दो हजार थी। सिवा चार सौ पत्रकार भी थे। प्रतिनिधियों को सम्राट् दावत दी थी। संघ के कार्य-संचालन के पूर्व ब्रिटेन के मन्त्री एटली साहब ने स्वागत भाषण किया था, जो महत्व था। उनके भाषण से इस बात का पता लगता है कि इस की संयोजक कमेटी की बैठकों में प्रतिनिधियों में काफी गरम बहसें हुई हैं, जो ऐसे सम्मेलनों के लिए सर्वथा स्वाभाविक सम्मेलन ने अपनी पहली ही बैठक में सुरक्षा समिति का करने का निश्चय किया। इस पर रूसी प्रतिनिधि ने यह किया कि इसके संगठन के लिए परस्पर विचार करने के समय देना चाहिए। परन्तु अमेरिका के प्रतिनिधि ने रूस प्रस्ताव का विरोध किया। मत लिए जाने पर चौंतीस बहुमत से रूसी प्रतिनिधि का प्रस्ताव गिर गया। उसके पक्ष ही वोट आए। आठ राष्ट्र निरपेक्ष हो गए। इस पर रूसी निधि ने सुरक्षा समिति के छः अस्थायी सदस्यों के लि राष्ट्रों के नाम पेश किए। वाद-विवाद के बाद उनमें से राष्ट्रों के नाम स्वीकार किए गए, जो ये हैं—ब्राजील, मेक्सिको और पोलैण्ड। शेष दो न्यूजीलैण्ड और नारवे के पर आस्ट्रेलिया और हालैंड चुने गए। इस सुरक्षा स पाँच महाशक्तियों के प्रतिनिधियों को स्थायी सदस्यता दी अर्थात् अमेरिका, रूस, ग्रेट ब्रिटेन, चीन और फ्रांस के प्र इसमें स्थायी सदस्य के रूप में हैं। शेष छः अस्थायी दो वर्ष के लिए रहेंगे, जिनका चुनाव सम्मेलन में किया ग इस प्रकार काफी वाद-विवाद के बाद सुरक्षा समिति का हुआ है। नए राष्ट्र संघ की यह सुरक्षा समिति ही संसा स्थायी शान्ति के लिए उत्तरदायी रहेगी। परमाणु बम नि समिति की देख रेख भी इसी समिति के अधीन रहेगी समिति संसार के राजनैतिक झगड़ों की जाँच करेगी। जो सुरक्षा-समिति का कहना नहीं मानेगा, उसे निकाल बाहर क लिए वह राष्ट्र-संघ से कह सकती है। इसकी एक सैनिक स कमेटी भी होगी। सेना-सम्बन्धी प्रस्ताव इसकी सलाह समिति में लाए जा सकेंगे और पास होंगे। इस प्रकार यह ही राष्ट्र संघ की मूलाधार होगी। यदि यह नया राष्ट्र-संघ और यह सर्वशक्तिसम्पन्न समिति सुचारु ढङ्ग से कार्य संचालन पाएँगी तो विश्व में निश्चय ही सुख-शान्ति की व्यव सकेगी। यदि महाशक्तियों ने यहाँ भी अपने स्वार्थों के खींचातानी का बाजार गर्म किया तो पिछले राष्ट्र-संघ की भी अन्त में विफलता का ही सामना करना पड़ेगा और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को पिछले महायुद्ध से भी अधिक भीषण लोक-संहारक युद्ध का आखेट बनना पड़ेगा। सम्मेलन के इस प्रथम अधिवेशन में ही यह बात भले प्रकार स्पष्ट हो गई है कि यहाँ भी रूस अल्पमत में है। संसार के अधिक राष्ट्र अमेरिका और ब्रिटेन के साथ ही दिखाई दे रहे हैं। यदि राष्ट्र-संघ की यही स्थिति बनी रही, यदि उसमें भी दलबन्दी का जोर रहा तो उसके पवित्र उद्देश्य कदाचित् ही पूरे हो सकेंगे। परन्तु ऐसी आशंका करना ठीक नहीं है। राष्ट्र संघ में दलबन्दी अधिक समय तक टिक नहीं सकेगी और मतभेदों के समाप्त हो जाने पर तथा वर्तमान कठिन प्रश्नों के सुलझ जाने पर राष्ट्र-संघ को ऐसा अवसर शीघ्र ही मिल जाएगा जब उसमें न्याय का ही बोलबाला हो जाएगा। सारा संसार शान्तिपूर्वक रहना चाहता है और जब राष्ट्र-संघ उसकी गारण्टी दे रहा है, तब उसके सदस्य ऐसी बात क्यों करने लगे कि उन्हें तथा उनके संसार को लोक संहारक युद्धों का सामना करना पड़े। यही एक बात है जो इस नए राष्ट्र-संघ को आकर्षक रूप देती है। अतएव युद्ध त्रस्त दुःखी संसार उसे आशा भरी दृष्टि से देख रहा है और परमात्मा से प्रार्थना करता है कि वह विश्व में स्थायी शान्ति स्थापित करने में सफल-मनोरथ हो।

देशी नरेशों में राष्ट्रीय भावना

भारत के देशी नरेशों में, जान पड़ता है, राष्ट्रीय भावना जाग्रत् हो चुकी है। इसका संकेत सबसे पहले रीवाँ के तेजस्वी नरेश महाराज गुलाबसिंह ने भारत सरकार द्वारा नियुक्त जाँच-कमीशन को स्वीकार करके किया था। दूसरा संकेत उन्हीं महाराज ने इस समय दिया, जब जाँच-कमीशन से निर्दोष सिद्ध होने पर बड़ी कशमकश के बाद वे अपने राज्य में आने पाए। पिछली विजयादशमी के अवसर पर उन्होंने अपने राज्य में उत्तरदायी शासन स्थापित करने की घोषणा की। और अब उस दिन नरेंद्र-मण्डल के चांसलर भोपाल के नवाब साहब ने नरेंद्र-मण्डल के अधिवेशन में एक प्रस्ताव पास करके यह घोषित किया है कि देशी नरेश भारतीयों की शासन सम्बन्धी आकांक्षाओं की पूर्ति में अपना सहयोग देने के लिए पूर्ण रूप से तैयार हैं। नरेंद्र-मण्डल के इस प्रस्ताव से यह भले प्रकार सिद्ध हो जाता है कि देशी नरेश भारतीय नेताओं की तरह भारतीय स्वाधीनता के पक्षपाती हैं। पक्षपाती ही नहीं किन्तु भारतीयों की वह माँग पूर्ण हो, इसमें देश के नेताओं का यथासंभव साथ देने को भी तैयार हैं। इस प्रकार का जो राजनैतिक जागरण देशी नरेशों में हुआ है, उससे यह भी विदित होता है कि वे अपने राज्यों में वैसा ही शासन प्रचलित करेंगे, जिसकी इस समय ब्रिटिश भारत में प्रचलित होने की आशा की जा रही है। अब तक देशी नरेशों ने अपनी शासन-व्यवस्था में भारतीय नौकरशाही का अनुकरण करके जो भूल की है, उसका उन्हें, जान पड़ता है, पूर्ण अनुभव हो चुका है। अपने प्रजावर्ग के पिछले दिनों के उग्र आन्दोलन से उन्होंने पूर्ण शिक्षा ग्रहण की है। यही कारण है कि अब उनके भी विचारों में काफी अधिक परिवर्तन हो चुका है, अन्यथा नरेंद्र-मण्डल में उक्त प्रकार का क्रान्तिकारी प्रस्ताव पास होने की कौन कहे, उपस्थित तक न किया जाता। परन्तु आज देश का राजनैतिक वायुमण्डल बहुत कुछ परिवर्तित हो चुका है और उसका प्रभाव हमारे इन राजाओं पर भी पड़ा है। इसमें सन्देह नहीं कि उन्होंने उपयुक्त समय पर अपनी राष्ट्रीय भावना का परिचय देकर अपने अनुरूप ही कार्य किया है। इससे उनके गौरव और मर्यादा की वृद्धि ही हुई है।

पश्चिमी एशिया की राजनैतिक परिस्थिति

पहले महायुद्ध की समाप्ति के बाद जब तुर्की साम्राज्य का अंगच्छेद हुआ था, तभी योरप की दो प्रधान महाशक्तियों का अर्थात् फ्रांस और ग्रेट ब्रिटेन का पश्चिमी एशिया में आधिपत्य स्थापित हुआ था। इस द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति के बाद अब उस क्षेत्र में दो अन्य महाशक्तियों का अर्थात् अमेरिका और रूस का आगमन हुआ है। रूस ने इस अंचल में अपना प्रभाव बढ़ाने के उद्देश्य से ईरान के अजरबैजाँ प्रदेश को एक स्वतन्त्र राज्य का रूप ग्रहण करने में सहायता दी है। उसके इस कार्य से ईरान तथा ईराक के अन्य भागों में कुछ फिरकों ने उसी प्रकार का भाव प्रकट करना शुरू किया है। इसी प्रकार रूस पश्चिमी एशिया के उत्तरी अंचल में अपना प्रभाव धीरे धीरे स्थापित कर रहा है। उधर अमेरिका अधिक मृदुल नीति ग्रहण कर और साऊदी अरब से समझौता करके मिट्टी के तेल के अपने कारबार को विस्तृत करने की योजना को कार्य का रूप दे रहा है। वह अपने तेल क्षेत्र से एक हजार मील लम्बी तेल की पाइप लाइन अरब के आर पार बना कर भूमध्यसागर के तटवर्ती एक बन्दरगाह तक ले जा रहा है। उसने अपने हितों की रक्षा के लिए एक बहुत बड़ा हवाई अड्डा भी स्थापित कर लिया है। इसके सिवा फिलिस्तीन में यहूदियों के बसाने के पक्ष में होने के कारण वह वहाँ की राजनीति पर अपना प्रभाव अलग डाल रहा है। सीरिया और लेबनान में फ्रांस पहले से ही डटा हुआ है। यद्यपि पिछले दिनों उसके प्रभाव को विशेष क्षति पहुँची है, तथापि अपने वहाँ के हितों से वह बराबर चिपका हुआ है। अँगरेज फिलिस्तीन, ट्रांसजोरडन, ईराक आदि में अपना जोर पूर्ववत् ही बनाए हुए हैं। इसी प्रकार ईरान में भी इँगलैंड और अमेरिका दोनों ही अपना प्रभाव रखते हैं। अब रह गए अफगानिस्तान और तुर्की, सो ये दोनों रूस तथा ब्रिटेन के प्रभाव क्षेत्रों के बीच में स्थित होने के कारण अभी तक किसी के प्रभाव विशेष में नहीं हैं। हाँ, यह जरूर है कि ये दोनों में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूस के भय के कारण अँगरेजों की ही सहायता पर निर्भर करते हैं। पश्चिमी एशिया की ऐसी राजनैतिक परिस्थिति का मूल कारण वहाँ का मिट्टी के तेल का विशाल भाण्डार है, जो अभी तक ब्रिटेन और अमेरिका के हाथ में था, परन्तु अब उसमें रूस भी हिस्सा बँटाना चाहता है। यह एक ऐसी परिस्थिति है, जिसे कोई भी स्वतन्त्रताभिमानी देश एक क्षण के लिए भी सहन नहीं कर सकता। पश्चिमी एशिया के उक्त सभी मुसलमान देश स्वतन्त्र होते हुए भी अपनी निर्बलता के कारण परतंत्र-से ही हैं, यद्यपि उनमें नव जागरण के लक्षण प्रकट हो चुके हैं, विशेष कर अरब देशों में जो अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए एक संघ का भी निर्माण कर चुके हैं।

अब जब नवीन राष्ट्र-संघ की स्थापना हो जाएगी तब बहुत संभव है कि ये सभी दुःखी राज्य उसके द्वारा अपने हितों की रक्षा करने का प्रयत्न करें। राष्ट्र-संघ की जो सुरक्षा-समिति स्थापित हो चुकी है, उसमें ईरान ने अजरबैजाँ प्रदेश के सम्बन्ध में अपना दावा पेश भी कर दिया है। इसी प्रकार सीरि लेबनान एवं फिलिस्तीन आदि के भी प्रश्न उठाए ज पश्चिमी एशिया के इन प्रश्नों का उक्त समिति द्वारा जो होगा, उससे प्रकट हो जाएगा कि विश्व में शांति की का दायित्व उठानेवाले इस नवीन राष्ट्र-संघ में कितनी है। राजनीतिज्ञों का यह कहना है कि पश्चिमी एशिया समय तीन महाशक्तियाँ जिस प्रकार के राजनैतिक दाँव पेंच रही हैं, उनसे विश्वशांति को खतरा हो सकता है। जो हो, इतना तो स्पष्ट ही है कि पश्चिमी एशिया के मुस्ल देशों की शान्ति इस समय जोखिम में है और वहाँ अशांति उग्र रूप यदि प्रकट नहीं कर रही है तो इसका कारण कि महाशक्तियों की राजनैतिक पैंतरेबाजी अभी उस सीम नहीं पहुँची है, वह केवल अपने अपने स्वार्थों की रक्षा तक सीमित है। यदि यह बात यहीं तक होकर रह जाए तो एशि के उक्त भूखण्ड के लिए यह सबसे महत्त्व की बात जाएगी।

उपदेश तथा सदाचार-संबंधी पुस्तकें

चरित्र-गठन—चरित्र-निर्माण के लिए जिन-जिन विषयों का ज्ञान अनिवार्य रूप से अपेक्षित है उन सभी पर इस पुस्तक में प्रकाश डाला गया है। मू० १।–) एक रुपया पाँच आने।

बाल-रवीन्द्रनाथ—कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ के जीवन की उन सभी घटनाओं का इसमें समावेश किया गया है, जिनकी जानकारी प्राप्त करना बालकों के लिए आवश्यक है। मू० ॥=)॥ साढ़े दस आने

भक्त शिशु—इस पुस्तक में अत्यन्त शैशवकाल में भगवान् के प्रति अपनी अपार भक्ति प्रदर्शित करके जीवन को धन्य करनेवाले ध्रुव, प्रह्लाद आदि कई भक्तों का चरित संगृहीत गया है। मू० १) एक रुपया।

बाल-द्विवेदी—आधुनिक हिन्दी-गद्य के निर्माता महावीरप्रसाद द्विवेदी का यह जीवन-चरित सरस्वती-सम्पादक पं० देवीदत्त शुक्ल ने विशेष रूप से बालकों के लिए लिखा है। मू० ॥=) ग्यारह आने।

प्रह्लाद—भक्तवर प्रह्लाद का संक्षिप्त और सरल भाषा लिखा गया जीवन-वृत्तान्त। मू० ।–) पाँच आने।

मैनेजर बुकडिपो—इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद।

Printed & Published by A. Bose, at the Indian Press, Ltd., Benares-Branch, Benares

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विवाहित स्त्री-पुरुषों के जानने योग्य

ऑपरेशन तथा इन्जेक्शन ज़रूरी नहीं है

अप्राकृतिक रहन-सहन तथा मिथ्या आहार-विहार के कारण हमारे देश की नारियाँ अधिकांश ऐसी मिलेंगी जो एक न एक रोग से ग्रस्त हो निराश जीवन व्यतीत कर रही हैं। अधिकतर गर्भाशय का मोटा हो जाना तथा उस पर चर्बी आ जाना एक आम हो गया है जो गर्भ धारण करने में बाधक होता है तथा अन्य भयंकर रोगों की जिससे उत्पत्ति भी होती है। ऐसी अवस्था में प्रायः ऑपरेशन कराने से भी बहुत कम रोगियों को सफलता प्राप्त होती है।

यदि आपको ऑपरेशन कराने में असुविधा है या ऑपरेशन की अपेक्षा औषधियों द्वारा कष्ट दूर करने के अधिक पक्ष में हैं शास्त्रोक्त अंगूरों का ताज़ा रस, अशोक, अर्जुन, दशमूल, त्रिफला तथा अन्य श्रेष्ठ औषधियों से प्रस्तुत—मूँगा जिसका प्रधान अंग —१५ वर्षों से प्रचलित **गौड़ की नारी-सुधा कॉर्डियल** सेवन करें।

नारी-सुधा एक माहवारी से दूसरी माहवारी तक सेवन करने से बिना ऑपरेशन गर्भाशय की चर्बी, उसका मुटापा तथा पेट बाँझपन नष्ट हो जाता है और सहज ही गर्भ की स्थिति हो जाती है। जहाँ इन्जेक्शन लिकोरिया (सफ़ेदे का गिरना) रोकने में सफल होते हैं वहाँ कुछ ही ख़ुराकों में यह सदैव के लिए ठीक हो जाता है। कमज़ोरी से गर्भाशय अपनी जगह से हट जाता है या गर्भपात होते रहते हैं—एक बोतल के सेवन से युक्त स्थान दृढ़ हो जाता है, फिर गर्भपात कभी नहीं होते। मासिक धर्म महीने में दो बार या दो महीने में एक बार के बजाय ठीक समय पर आकर हँसते-खेलते होने लगते हैं, जिससे हिस्टेरिया (बेहोशी) के दौरे होने बन्द हो जाते हैं। ख़ून भूख लगती है, ख़ून एक बड़ी मात्रा में बनने लगता है। दिल की धड़कन, कमर-टाँगों का ठहरा हुआ दर्द केवल चौथे दिन दूर हो जाते हैं। जापे का संकट सहन करने तथा बाद की कमज़ोरी शीघ्र दूर करने की यह विशेष औषधि है। **नारी-सुधा** की २६ ख़ुराकों की एक बोतल का मूल्य—पैकिंग, वी० पी० व्यय से पृथक्—तीन रु० पाँच आने है। आवश्यकता होने पर इस मासिक पत्रिका का हवाला देकर

कुमार कुमार एन्ड को०

पोस्ट बाक्स नं० ११९ देहली

मँगाइए—

ई २ शहरों में हम ऐजेन्सी स्थापन कर रहे
। नियमावली के लिए पत्र-व्यवहार करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सौंदर्य की दो पीढ़ियाँ

यद्यपि इसकी उम्र में बीस साल का फर्क है, फिर भी माँ के सौन्दर्य में उतनी ही ताज़गी और उसकी त्वचा उतनी ही गुलाबी और मुलायम है जितनी कि उसकी सोलह वर्षीय बेटी की। इसका भेद यह है कि माँ ने, अपनी माँ की सलाह पर, बचपन से ही पियर्स साबुन और साफ़ पानी से अपनी कोमल त्वचा की रक्षा की। आज उसकी सुन्दर बेटी उसी तरीके से अपनी त्वचा की रक्षा करती है। इसलिये बीस वर्ष के बाद उसकी त्वचा भी निस्संदेह उसी तरह सुन्दर और ताज़ा रहेगी जिस तरह आज उसकी माँ की त्वचा है।

चालीस साल से हिन्दुस्तान की सुन्दरियों ने पियर्स साबुन को ही इस्तेमाल किया है। स्वाभाविक शुद्ध और रेशमी झाग के कारण यह साबुन साधारण साबुनों से कहीं बेहतर है।

पियर्स साबुन

सौन्दर्य का सेवक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुधासिंधु-बालसुधा

एवं प्रख्यात निजी पेटेंट तथा शुद्ध आयुर्वेदिक औषधियों के निर्माता

सुख-संचारक कम्पनी, लि०,

सुख-संचारक बिल्डिंग, सुख-संचारक पोस्ट आफ़िस,

मथुरा

युक्त प्रांत में

अपने ढंग का एकमात्र विश्वसनीय विशालकाय कार्यालय

हमारी विशेषताएँ

१—हमारा अपना निजी ५५वर्षीय अनुभव।

२—औषधें वैद्यक की ऊँचे से ऊँची उपाधि प्राप्त विशेषज्ञ और अनुभवी वैद्यराज, उपवैद्यराज के निरीक्षण में निर्माण होती हैं।

३—अप्राप्य व दुष्प्राप्य खनिज एवं वनौषधियों के प्राप्त करने के संगठित साधन।

४—कड़ी, गठीली वनस्पतियों के चूर्ण-विचूर्ण करने, गोलियाँ, टिकियाँ बनाने व कार्क फिट करने और अन्य विभिन्न कार्यों के लिए आधुनिक पद्धति की मशीनें।

५—औषधियों का अधिक परिमाण में तैयार करने तथा इकट्ठा सामान मँगाने के कारण सस्ती और सर्वोत्तम तैयार होना।

विशेष विवरण के लिए बृहत् सूचीपत्र मुफ्त मँगाइए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिल्मस्टारोंकी तरह त्वचा की रक्षा कीजिये!

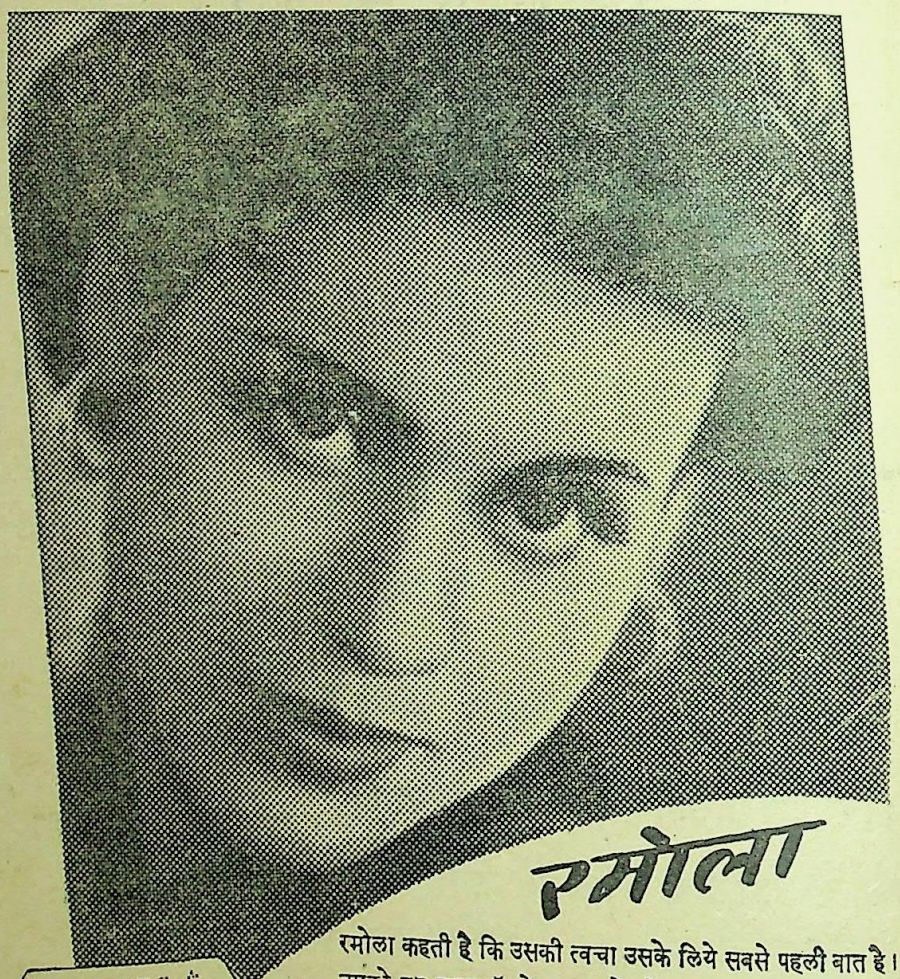

रमोला

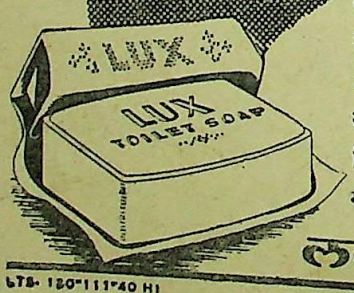

रमोला कहती है कि उसकी त्वचा उसके लिये सबसे पहली बात है। उसको वह लक्स टॉयलेट साबुन के रोज़ाना इस्तेमाल से बहुत ही निर्मल और मुलायम रखती है। "मेरे सौंदर्य प्रसाधन की यह सरल रीति है"—यह उसका कहना है, और साथ ही दावा है कि इस शुद्ध और खुशबूदार साबुनके तेज फेनसे किसी भी स्त्री की त्वचा मुलायम, सुकोमल और निर्मल हो सकती है।

लक्स टॉयलेट साबुन

LTS- 120-111-40 HI

LEVER BROTHERS (INDIA) LIMITED

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीम
टूथ पेस्ट

नीम टूथ पेस्ट भारतवर्ष क्या विदेशी जनता की प्रशंसा प्राप्त कर अपनी उपयोगिता पूर्णतया प्रमाणित कर चुका है।

अथवा

मार्गोफ्रिस

दंतमंजन

ये दोनों ही चीजें उच्च कोटि की हैं।

दी कलकत्ता केमिकल कं० लि०,

पण्डितिया रोड, कलकत्ता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप गर्मीसे परेशान क्यों हैं, जबकि विनोलियासे एक
स्नान कर लेनेपर आप शीतल हो जायेंगे ? अपने शरी
लसलसा क्यों रखते हैं, जबकि मक्खन. जैसे सफेद
साबुनका फेन आपको ताजा बना और रख सकता है ?
आप विनोलियाकी सुगंधको हमेशा आनन्ददायक
प्रफुल्लित करनेवाला पायेंगे। मस्तिष्क और शरीर पर
टानिककी तरह इसका असर होता है।

विनोलिया व्हाइट रोज साबुन

VWR 17-221 HI

VINOLIA CO., LIMITED, LONDON, ENGL

प्रदर रोग स्त्रियों का भयानक शत्रु है

प्रदर रोग जिसको लोग लिकोरिया भी कहते हैं यह स्त्रियों की सुन्दरता और जवानी को नष्ट करनेवाला भयानक शत्रु है। वश बेचारी रोग को छिपाये रहती हैं और दिन-रात घुला करती हैं। यह उनकी भूल है। भयानक रोग का इलाज कराने में ल नहीं करना चाहिये, इस बीमारी से स्त्रियों के गुप्त शरीर से लाल, काला, धुमैला या श्वेत रंग का बदबूदार पानी या निकलता रहता है। महीना ठीक समय पर नहीं होता है जिसके कारण कमर, रीढ़, सिर में दर्द, शरीर में जलन, मन मलीन, बैठने में थकावट, भूख का कम लगना, बदन दुबला और कमज़ोर हो जाना, मूर्छा, बेहोशी आदि रोग हो जाते हैं और सन्त होती है और यदि होती भी है तो दुबली और कमज़ोर होती है। ऐसी अवस्था में भारतविख्यात वैद्यरत्न सत्यदेव ने अ प्रदान करनेवाली २५ वर्ष की आज़मूदा **नारी-संजीवन** नामक दवा का आविष्कार किया जिसके द्वारा आज तक सहस्रों स्त्रि इस भयानक रोग के पंजे से छुड़ाया है। इस नारी-संजीवन के सेवन से तमाम बीमारियाँ दूर होकर स्त्रियाँ सुन्दर और तन्दुरुस्त और सन्तानें सुन्दर, बलवान्, दीर्घायु पैदा होती हैं। यदि आवश्यकता हो तो आज ही पत्र डालकर एक डिब्बा नारी-संज मँगाकर इसके अपूर्व गुणों का चमत्कार देखें। क़ीमत एक डिब्बा ३=) ; डाकख़र्च माफ़ ; पैकिंग ख़र्च अलग।

मँगाने का पता—

रूपविलास कम्पनी नं० ४२७ धनकुट्टी
कानपु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेष नमूने

जे. के. का नाम भारतीय टेक्सटाइल मिलों में अपनी उत्कृष्ट बुनाई और छपाई के कारण सारे भारतवर्ष में प्रख्यात है। अत्यंत आकर्षक नमूनों और रंगो के होते हुए भी जे. के. के कपड़े १५% से २०% तक अधिक मजबूत होते हैं।

साड़ियाँ, कमीज के कपड़े मलमलें, छपे हुए कपड़े लट्ठे, चादरें, और सूती कैनवस इत्यादि।

जे. के. काटन स्पीनिंग एन्ड वीविंग मिल्स कम्पनी लीमिटेड, कानपूर.

यह जे. के. इन्डरवी है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या आपके सभी आहार स्फूर्तिदायी होते हैं?

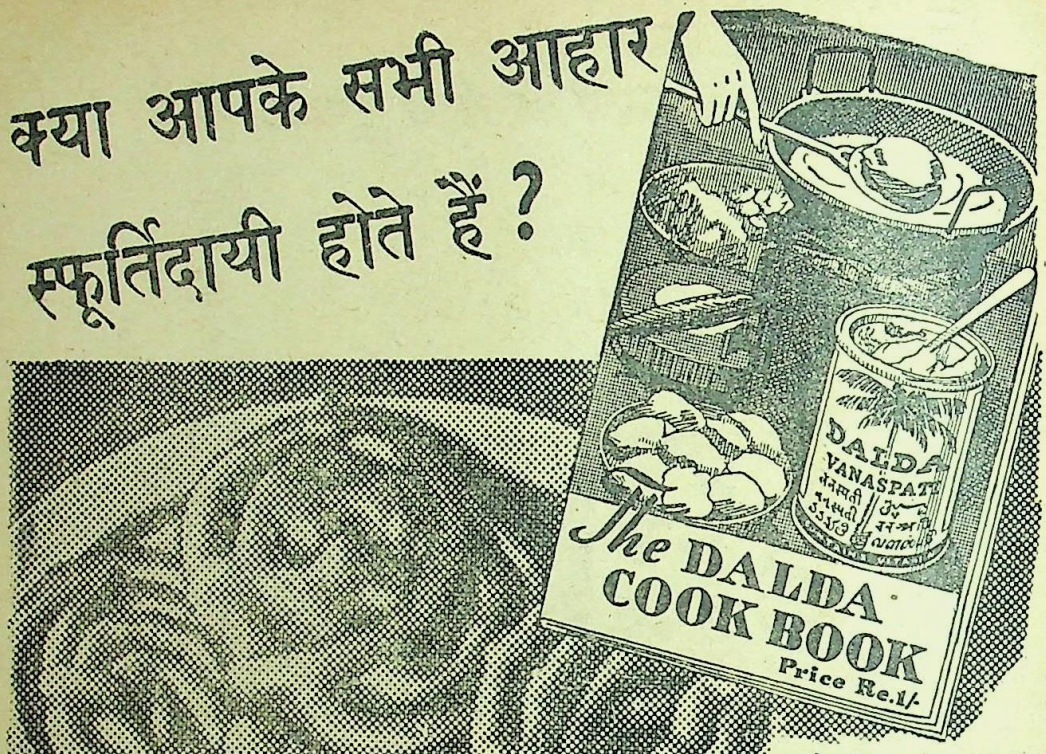

सबसे बढिया शक्तिदायी चीजें कौनसी हैं इसकी जानकारी हरएक स्त्रीको होनीही चाहिये । डाल्डा कुक बुक (अंग्रेजी) में आहार के बारेमें लाभकारी बातें और १५० से अधिक आहारोंका बयान किया गया है । Dept. D121 P. O. Box No. 353, Bombay के पते पर चार आने के पोस्टल स्टाम्प भेजियेगा ।

जी, हां — उन्हींमेसे तो शक्ति पायी जाती है । लेकिन यह बात नहीं कि सभी आहारोंमेसे उतनीही शक्ति पायी जाती है । कई ज्यादा स्फूर्तिदायी होते हैं तो कई कम स्फूर्तिदायी । इसी लिये हमारा आरोग्य हमेशा खतरेमें रहता है । कई मनपसन्द आहार इस हिसाब से बिलकुल बेकार होते हैं और उनको पसन्द करनेवालोंको खेलने या काम करनेसे थकावट मालूम होये बिना नही रहती । सौभाग्य की बात है कि हरएक आहार को हम जीवन-सत्व संपूर्ण डाल्डामें बनाकर ज्यादा स्फूर्तिदायी बना सकते हैं । यह रसोई की बढिया चीज प्रकृतिके सर्वोत्तम स्फूर्तिदायी अन्नांश देती है । बहुतसी चीजोंमें न मिलनेवाली शक्ति उसमें है जिससे आपके हरएक आहार को वह स्फूर्तिदायी बना देती है ।

पोषक-तत्व संपन्न

डालडा स्फूर्ति के लिये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिर्फ उत्तम दवा ही
आपके फेफड़ों के लिये गुणकारी है

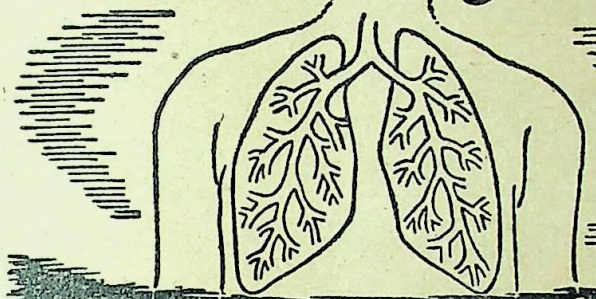

सिरोलीन
'रुचि'
शरदी और खांसी के लिये

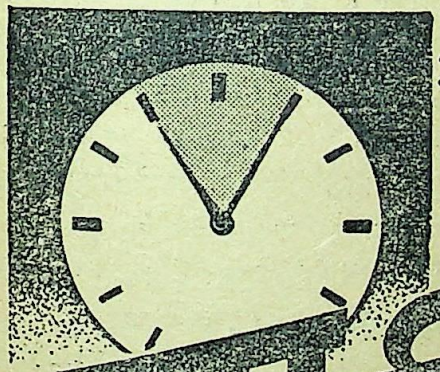

सभी दर्दके सामने
'वि'-विजय-क्षण

सारिडन
लेनेके १० मीनीट बाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजज्योतिषी

जगत्-प्रसिद्ध ज्योतिषी और तान्त्रिक पण्डित हरिश्चन्द्र शास्त्री, ज्योतिष-तीर्थ,

अध्यक्ष अखिल बङ्गाल ज्योतिष-संघ,

ज्योतिष-गृह, १४१।१ सी, रशा रोड, कालीघाट, कलकत्ता।

हजारा पार्क के ठीक पूर्व में, फोन—९७८।

ये महान् ज्योतिषी न केवल पूर्वीय और पाश्चात्य ज्योतिष के ही प्रकाण्ड पण्डित हैं, प्रत्युत हस्त रेखाशास्त्र (सामुद्रिक विद्या) के भी पहुँचे हुए पारखी हैं। जो भी आपके निकट सम्पर्क में आए हैं, वे आपकी अलौकिक आध्यात्मिक शक्ति के उन आश्चर्यजनक परिणामों से पूर्णतः सन्तुष्ट हैं, जो आपने महामाया श्री सिद्धेश्वरी की भक्ति कर और उन्हें प्रसन्न कर प्राप्त की है।

योग और तन्त्र द्वारा आपने, ग्रहों के दुष्परिणामों को दूर कर देने तथा पेचीदे कानूनी मुकदमों और असाध्य बीमारियों से रोगी को स्वस्थ कर देने में निश्चित सफलता प्राप्त करने की असाधारण शक्ति प्राप्त कर ली है।

आपकी आश्चर्यजनक कवचों द्वारा निश्चित सफलता मिलती है

शान्ति कवच :—मन की शान्ति, पारिवारिक प्रसन्नता, असाध्य रोगों पर विजय, दुर्घटनाओं से रक्षा, अकाल-मृत्यु से आग और चोरी का भय-उन्मूलन तथा परीक्षाओं में इससे सफलता मिलती है। इस कवच को पहननेवाला सभी परिशानियों जाता है, क्योंकि इससे दुष्ट ग्रहों की शान्ति हो जाती है। साधारण का मूल्य ५) रु०; विशेष (शीघ्र लाभकारी) का २०) रु०

बगला कवच :—रोजगार-धन्धे में सफलता, अभिलाषा की पूर्ति, राजसम्मान, नौकरी में तरक्की, व्यापार में उन्नति, धन और सभी पर अपना प्रभुत्व रखना इस कवच से प्राप्त होता है। अनेक व्यक्तियों ने बहुत ही निराशाजनक और पेचीदे मुकदमों में इस कवच से सफलता प्राप्त की है। साधारण का मूल्य १२) रु०; विशेष (शीघ्र प्रभावकारी) का ४५) रु०।

नृसिंह कवच :—स्त्रियों की सभी तरह की बीमारियाँ इससे ठीक हो जाती हैं। मृत बच्चे को बलपूर्वक गर्भ से निकलने से जो दोष रह जाते हैं उन्हें दूर करना, बाँझ स्त्रियों के भी पुत्र प्राप्त होना, मासिक धर्म सम्बन्धी दोषों के ठीक कर देने कवच के प्रभाव हैं। साधारण का मूल्य १०) रु०, विशेष (शीघ्र प्रभावकारी) २६) रु०।

आकर्षिणी कवच :—जिस व्यक्ति को पाने की इच्छा हो (स्त्री या पुरुष) पूर्णतः अधिकार में आ जाता है जिससे वञ्छित कार्य कराया जा सकता है। साधारण का मूल्य १२) रु० विशेष (शीघ्र प्रभावकारी) ५०) रु०।

उन आदरणीय महानुभावों में से कुछ के नाम, जिन्हें व्यक्तिगत रूप से आपकी भविष्यवाणी, फलित ज्योतिष की ठीक १ तथा सामुद्रिक और तान्त्रिक शक्तियों का परिचय मिल चुका है :—

महाराजाधिराज बर्दवान; हिज हाईनेस राजा धेनकानल (उड़ीसा), नेपाल के राना कर्नल गोविन्द शमशेर जंग बहादुर; श्री चाण्डलेर, इँगलैंड; श्री० लीलाराम मैगूगम, हैदराबाद, सिन्ध; श्री बुलबुल देसाई, डायरेक्टर, अमर पिक्चर्स; श्री सुरेन्द्रनाथ आगरा; श्री जी० आर० मदन, लाहौर, श्री के० वेंकट राव, विजगापट्टम; श्री फजलुलहक, भूतपूर्व प्रधान मन्त्री, बङ्गाल; श्री बा चौखानी, अध्यक्ष, भारत लक्ष्मी स्टूडियो, कलकत्ता; श्री रोहनीकुमार चौधरी, मन्त्री आसाम मन्त्रि-मण्डल; श्री० पी० आर० बार-एट-ला, पटना; श्री जी० डी० खेतान, व्यापारी कलकत्ता और भागलपुर, राय बहादुर सूरजदास वाइसराय, दिल्ली; जगत् नर्तक श्री उदयशङ्कर आदि :।

समस्त पत्र-व्यवहार अँगरेजी में किया जाना चाहिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्वकाल में प्रातःकालीन सूर्य की रश्मियों के बीच राजघराने की एक रमणी प्रस्तर-निर्मित एकान्त ताल के शीतल जल में स्नान कर रही है। उसके शरीर पर मधुर, सुगन्धयुक्त तेल का लेप करने के पूर्व दासी उसे उसकी बुकनी से प्रस्तुत उबटन लगाती थी; क्योंकि इस प्राचीन काल में साबुन का किसी ने नाम भी नहीं सुना था। आजकल हमाम साबुन की सुविधायें और आनन्द सभी को प्राप्त हैं। हमाम साबुन के मुलायम घने फेन में मैल दूर करने एवं ताज़गी पहुँचानेवाले जो तत्व वर्तमान हैं, उनकी कल्पना स्वप्न में भी उस सुन्दर रमणी ने अपने हरम के उद्यान में नहीं की थी।

हमाम

आपके नहाने के लिए बड़ा साबुन

टाम्को सेल्स डिपार्टमेन्ट, जवाहर स्क्वायर, इलाहाबाद।
दी टाटा आयल मिल्स कं० लि०, टाटापुरम् और बम्बई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आटोमेटिक पाकेट पिस्तौल

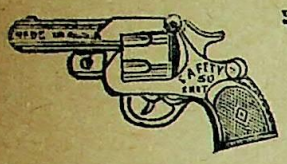

शक्ल और आवाज में बिल्कुल असली पिस्तौल। चोर, डाकुओं और भयावह जानवरों से बचने के लिए सर्वोत्तम जब खतरे की सम्भावना हो, इसकी आवाज से शत्रु को कँपा सकते हैं। लाइसेन्स की बिल्कुल आवश्यकता नहीं है। कीमत नं० ५५, ५ रु० नं० ६६, ६ रु० नं० ७७, ७ रु० स्पेशल ८ रु० सर्वोत्तम ९ रु०। पैकिंग तथा पोस्टल खर्च १) स्पेशल १० पैकेट और अन्य ५ पैकेट मँगाने पर कारतूस मुफ्त। हर एक आर्डर के साथ सुन्दर १ डमी कलाई घड़ी और २ लाइट मुफ्त भेजी जायेंगी।

जाड़े के लिए अच्छे स्वेटर

पहनने में बहुत बढ़िया, गरम और मुलायम है। हर एक डिजाइन का मिल सकता है। मूल्य नं० (१) का पूरे साइज और पूरे आस्तीन का ५॥=) अच्छा ६॥) बिना आस्तीन का ४) और बढ़िया ७॥)। छोटे साइज का नं० (१) २।=) बढ़िया ३) डाक-खर्च १) दो एक साथ लेने से डाक-खर्च माफ। दो से ज्यादा लेने पर २) मनी आर्डर द्वारा एडवान्स भेजिए। आर्डर भेजते वक्त अपने सीने की नाप भेजें।

इंडियन ब्रांच स्टोर पोस्ट बक्स नं० १२२०४ कलकत्ता

रजिस्टर्ड पीयूष रसायन

ग्राम्य वातावरण में बहुमूल्य औषधियों तथा हरित वनस्पतियों के स्वरस द्वारा निर्मित होकर बीसों प्रकार के प्रमेह-स्वप्न-दोष (ख्वाब), बहुमूत्र, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात तथा स्त्रियों के पेशाब मुकाम से बहनेवाले स्राव एवं प्रदर रोगों को शर्तिया नष्ट करनेवाली एकमात्र अद्भुत एवं अचूक औषधि है। १५ रोज की दवा का दाम सिर्फ ३) पेशगी मूल्य आने से डाक-खर्च माफ।

भगवतीप्रसाद शर्मा विशारद (रजिस्टर्ड पीयूष कार्यालय) तिर्वा दहिगवाँ, पो० बालामऊ प्रा० हरदोई।

सफेद कोढ़ का दुश्मन

इस महाराष्ट्रीय प्रसिद्ध दवाने हजारों कोढ़ के रोगियों को मुक्त किया। भगवानजी पानाचन्द जी पाचोर पूर्व खानदेश इनके पुत्र का कोढ़ आराम होने पर उन्होंने हमको ५१ रुपया इनाम दे दिया। सारे शरीर पर सफेद कोढ़ के दाग हों वह ऐसे नष्ट हो हो जाते हैं कि कोढ़ कहाँ था इसका पता भी नहीं लगता। मूल्य १० रु०, पो० ख० ११ आ० १० रुपया मनी आर्डर से भेजने से दवा रजिस्ट्री से भेजी जायगी।

वैद्य बोरकर बन्धु मंगरूलपीर, जि० आकोला (बरार)

जीवन-क्रान्ति

यह समाजिक उपन्यास है। इसमें सेठ-साहूकारों तथा आदमी कहे जानेवाले व्यक्तियों की हृदयहीनता, पुलिस अन्य अधिकारियों के हथकंडों और मुट्ठी गरम करने के निरपराधों को अपराधी ठहराकर कारागार के कष्ट भो लिए विवश करने के मायाजाल का आकर्षक वर्णन है। में अत्याचारी के हृदय-परिवर्तन का अपूर्व चित्रण है। पृष्ठ ४००। सजिल्द प्रति का मूल्य केवल २) दो रुपये।

साहित्यालोचन

इसका संशोधित संस्करण छपकर तैयार है। इसमें के प्राचीन आचार्यों के साहित्य-सम्बन्धी सिद्धान्तों के आ पाश्चात्य साहित्यकारों तथा साहित्य-मर्मज्ञों के मत का वि बहुत ही मौलिक ढंगसे कराया गया है। ४०० पृष्ठों की पुस्तक का मूल्य ५।—) पाँच रुपये पाँच आने।

अपनी बात

मनुष्य के चरित्र में जो दुर्बलताएँ होती हैं उन्हें दूर क किस प्रकार जीवन को उन्नत बना सकता है, यही बात इस में ओजपूर्ण भाषा में, निजी अनुभव के आधार पर, ले लिखी है। यह पुस्तक प्रत्येक युवक को पढ़नी चाहिए। ।।।) बारह आने।

गांधी-मीमांसा

इस पुस्तक में पं० रामदयाल तिवारी बी० ए०, एल् बी० ने गांधी जी के व्यक्तित्व और सिद्धान्तों की तर्कपूर्ण विवेचना की है। इसे आद्योपान्त पढ़ जाने पर गांधीवा रूप से हृदयंगम हो जाता है। विद्वानों ने मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। पृष्ठ-संख्या ८५०। सुन्दर सजिल्द प्रति ४) चार रुपये।

आलोचनादर्श

इसके लेखक डा० रामशंकर शुक्ल 'रसाल' एम० ए पुस्तक महत्त्व की है। इसमें समालोचना का अन्य शा सम्बन्ध, साहित्य-समालोचना, आलोचना, सुरुचि और दृ आलोचना का ऐतिहासिक विकास आदि पर भली भाँति डाला गया है। अध्ययन, अध्यापन और रचनाकार्य के के लिए यह पुस्तक बड़े काम की है। ३०० पृष्ठों की पुस्तक का मूल्य २) दो रुपये।

मैनेजर बुकडिपो

इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थापना] जुकाम, सर्दी पर अकसीर उपाय !! १९२६

हैजा, मलेरिया, इन्फ्लुएंजा, टाइफाइड
आदि बीमारियों में बचानेवाला।
१ औं० शीशी ॥), दर्जन ५॥=), डा० ख़० अलग

कॅलिप } सूचीपत्र मुफ़्त { युकॉलिप
न बाम } { दाद का मरहम

खांडालेकर बन्धु, बम्बई ४.

प्रकाशित हो गई

मार्क्स का दर्शन

[लेखक—भूपेन्द्र सान्याल]

(स्वर्गीय शचीन्द्रनाथ सान्याल के भाई, अखिलभारतीय कांग्रेस कमेटी के सदस्य, युक्तप्रान्तीय ट्रेड यूनियन के भूतपूर्व उपसभापति, 'समाजवाद की ओर' आदि के प्रणेता।) मूल्य २) रु०

प्रकाशक, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद।

(REGISTERED)

हृदय की सर्दी (सर्दी और कफ)—लापरवाही करने से मामूली हृदय की सर्दी फेफड़े की सूजन (ब्रांकैटिस) हो जायगी। इससे बचे रहने का रास्ता बड़ा आसान है। थोड़ा-सा अमृतांजन लेकर छाती पर मलिए। बस, उसकी गरमी सीधे हृदय तक पहुँचती है और कफ को पिघला देती और तुरंत आराम मिलता है।

अमृतांजन—हमेशा गरमी से गरमी आराम पहुँचाता है।

अमृताञ्जन लिमिटेड, बम्बई और मद्रास

शाखा :—कलकत्ता, कराची, दिल्ली

छ यह प्रसिद्ध साहित्य-सेवी श्री पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी, बी० ए० के बढ़िया निबन्धों का संग्रह है। इसमें २० न्ध हैं जो भाषा, भाव और विवेचन की दृष्टि से विलक्षण हैं। इस वर्ष की अनुपम रचना है। पृष्ठ-संख्या २०० से ऊपर। केवल १॥) एक रुपया आठ आने।

जर बुकडिपो, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

क्यों आपने अभी तक नहीं पढ़ा ?

'शामूँ की माँ'

की उदारत का शिक्षाप्रद, सरल, सादा और सुन्दर संस्कृतिमय करुण एवं मधुर कथात्मक चित्र। ३०० पृष्ठों की पुस्तक की त सिर्फ १) एक रुपया। मगाने का पता—

० वि० गृह प्रकाशन : ६२४ सदाशिव, पुणें।

दर्जी-विज्ञान

यह पुस्तक सरल हिन्दी में शिल्प-कला के सुप्रसिद्ध प्रोफेसर द्वारा प्रकाशित हुई है। सिलाई कटाई सीखने के लिए यह सचित्र और वैज्ञानिक ढँग की नई पुस्तक है। विद्वान् लेखक ने यह सिद्ध कर दिखाया है कि इस पुस्तक के सामने किसी भी गुरु की आवश्यकता नहीं है। इसके ३ भाग हैं, तीनों भागों का लागत मूल्य ४॥) है।

पता—हिन्दू टेलरिंग कालेज, पीलीभीत।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न्यूटेक्स

कृपया ध्यान दें

अब आप केवल ३ मिनट में भद्दे तथा अनावश्यक बालों को बिना छुए, पाउडर पेस्ट के लगाये, जिनसे बाल और जल्दी तथा घने निकलते हैं, बड़ी सरलता पूर्वक नष्ट कर सकते हैं। न्यूटेक्स ब्राण्डस्टीट के एक आविष्कारक का सनसनीपूर्ण आविष्कार है जिसने कई वर्ष तक स्थायी तथा सुखद तरल पदार्थ के आविष्कार में व्यतीत कर दिया। उसकी खोज का परिणाम जायज था जो कि अब न्यूटेक्स में मिलाया जाता है और जिससे बालों की जड़ें एक बड़े सस्ते, सुन्दर तथा सुरक्षित रूप से बहुत जल्द साफ हो जाती हैं, किसी भी प्रकार की जलन नहीं होती और न गन्ध ही आती है।

सभी औषध-विक्रेताओं के यहाँ मिलती है। आप नीचे पते से मँगावें।

न्यूटेक्स (इंडिया) कं०,

प्रिंसेस स्ट्रीट, बम्बई।

पागलपन की अचूक औषधि

पागल बटी

अनिद्रा, चित्तभ्रम, विचारवायु, मगज़ की अस्थिरता, उन्माद वगैरह को दूर करके मगज शान्त व बुद्धिमान् बनाने के लिए अनेकों रोगियों पर परीक्षित, विश्वसनीय, चमत्कारिक औषधि है। की० ४८ गोलियों की डि० रू० ३)

मदनमंजरी फार्मेसी जामनगर काठियावाड़

इलाहाबाद एजेंट—मदनस्टोर्स कैमिस्ट जोन्स्टन रोड

बनारस एजेंट राधेलाल एन्ड सन्स बैटरीवाला, चौक

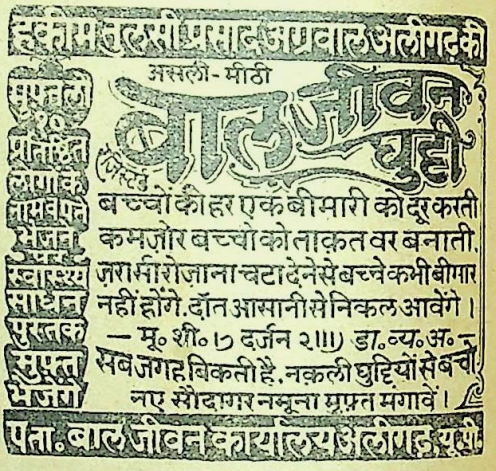

अब मैं अपने पति की प्रिय बन गई

रूप-विलास (रजिस्टर्ड)

जब मैं विवाह के अवसर पर अपने पति-गृह गई तब मेरे पतिदेव हमारे भद्दे तथा काले चेहरे को देखकर मुझसे घृणा करने लगे। मैंने अपनी सहेलियों की सलाह से **रूप-विलास** का उबटन लगाना शुरू किया। कुछ ही दिनों बाद मेरा चेहरा गुलाब के फूल की भाँति दमकने लगा और आज मैं अपने पति की प्रिय बन गई। इसके लगाने से मुँहासा, झाँई, चेचक, काले-काले दाग, फुंसी, खुश्की, बदरौनकी, झुर्रियाँ वगैरह जल्द आराम होती हैं और थोड़े ही दिनों के लगाने से मलीन मुख चमकदार होकर चेहरे पर गुलाबी छटा दमकने लगती है। यदि आप अपना चेहरा खूबसूरत बनाना चाहते हैं तो २५ वर्ष का प्रचलित जगत्प्रसिद्ध रजिस्टर्ड **रूप-विलास** उबटन लगाइए। विवाह-शादियों पर वर-वधू का सौन्दर्य बढ़ाने के लिए यह बहुत ही उपयोगी साबित हुआ है और इसकी खुशबू इतनी प्यारी है कि तबियत को मस्त करती है। कीमत एक डिब्बा २-) तीन डिब्बा ५॥) डाक-खर्च माफ, पैकिंग खर्च अलग।

रूप-विलास कम्पनी धनकुट्टी नं० ४२७ कानपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

..और उसने
लाइफबॉय की
आदत भी सीखी है!

सूई के हर एक टाँके के साथ वह एक गुणवन्ती नन्हीं बालिका बनने की शिक्षा ले रही है। उसकी माता जानती है कि वह एक स्वस्थ बालिका भी होगी, क्योंकि उसने प्रतिदिन लाइफ़बॉय सोप के प्रयोग की आदत भी सीख ली है। यह आदत उसे स्वास्थ्य और शक्ति के गुप्त शत्रु गन्दगी के ख़तरे से बचाती है।

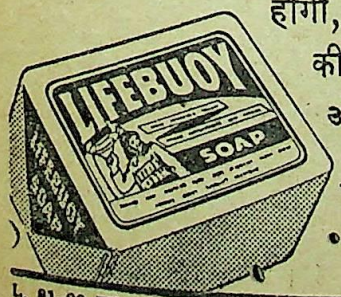

लाइफबॉय का व्यवहार करना
एक ज़रूरी आदत है

L. 81-23 HI

LEVER BROTHERS (INDIA) LIMITED

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वार्षिक बाल-सखा

अपनी सन्तान को सन्तुष्ट रखने का यत्न सभी माता-पिता करते हैं। सन्तान को प्रसन्न देख माता-पिता के आनन्द का ठिकाना नहीं रहता। बच्चों को प्रसन्न रखने के लिए बढ़िया भोजन, कपड़े और खेल-कूद का सामान अपनी हैसियत के अनुसार सभी जुटाते हैं। लेकिन उनको सन्तुष्ट रखने का सबसे उत्तम साधन है उनको अच्छा साहित्य पढ़ने को देकर उनकी बुद्धि को विकसित करना।

इस काम में माता-पिताओं की सहायता करने के लिए हमने बाल-सखा का 'वार्षिक अङ्क' निकालना आरम्भ कर दिया है। यह बारह अङ्कों से पृथक रहता है। सन् १९४६ के वार्षिकाङ्क में ऐसी सामग्री रहेगी, जिसको पढ़कर बालक फूले नहीं समायेंगे। बढ़िया कविताएँ, अच्छी कहानियाँ, वैज्ञानिक लेख, देश-विदेश की यात्रा, भ्रमण, उपन्यास और हास-परिहास आदि की ऐसी सामग्री रहेगी जिसको पढ़ने से बालकों का ज्ञान-वृद्धि होगी और मनोरञ्जन तो होगा ही। इसे बालक मिठाई और खिलौने से भी अधिक पसन्द करेंगे। चित्रों की अधिकता रहेगी ही।

वार्षिक बाल-सखा की माँग बहुत रहती है। कुछ घरों में तो एक से अधिक प्रतियाँ ली जाती हैं। इसमें अच्छे कागज के ३०० से भी अधिक पृष्ठ रहेंगे। लगभग चौथाई भाग रङ्गीन छपेगा। हिन्दी में यह वार्षिकाङ्क अनोखी वस्तु होगी। इसलिए आप अपने वार्षिक अङ्क की प्रति के लिए अभी से रजिस्टर में नाम लिखा लीजिए जिससे प्रतियों के बिक जाने पर आपको निराश न होना पड़े।

मासिक बाल-सखा का वार्षिक मूल्य ३) एक प्रति का मूल्य ।)
बालसखा के वार्षिकांक का मूल्य ३) सर्वसाधारण से
मासिक बालसखा के ग्राहकों से रियायती मूल्य २॥)
रियायती मूल्य के लिए अपना ग्राहक नंबर अवश्य लिखिए।

मैनेजर :—बाल-सखा, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग

हिन्दी साहित्यः बीसवीं शताब्दी

(नवीन संस्करण)

वर्तमान साहित्य की वैज्ञानिक समीक्षा करनेवाली प्रमुख पुस्तक

महावीरप्रसाद द्विवेदी, रामचन्द्र शुक्ल, मैथिलीशरण गुप्त, प्रेमचन्द, प्रसाद, निराला, पन्त, महादेवी वर्मा, जैनेन्द्र कुमार आदि साहित्यिकों पर विवेचनात्मक १९ लेख।

लेखक—अध्यापक श्री नन्ददुलारे वाजपेयी

भूमिका में वर्तमान साहित्य का परिचय और प्रत्येक धारा के कवियों तथा लेखकों का समीक्षात्मक उल्लेख है। पुस्तक में काव्य, कला और साहित्य के स्थायी प्रतिमानों के आधार पर इस शताब्दी के प्रमुख साहित्यिकों की मीमांसा की गई है। वर्तमान युग की सभी रचना-धाराओं का सन्निवेश इस पुस्तक में है।

साहित्यिक और कलात्मक विवेचन की यह पुस्तक उच्च श्रेणी के विद्यार्थियों और साहित्यिकों के लिए अनिवार्य है। मूल्य पाँच रुपये।

इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग

के एजेंट—इंडियन बुकडिपो, लखनऊ

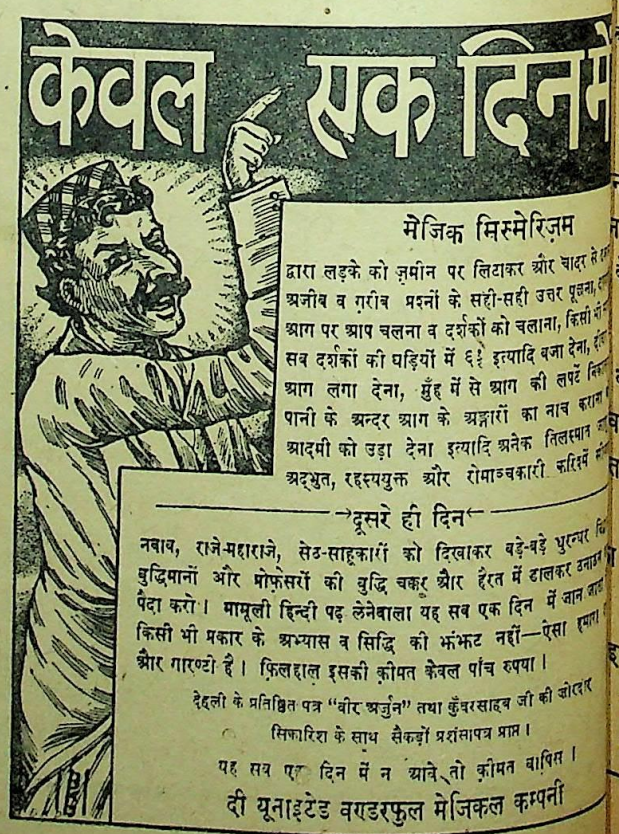

द्वारा लड़के को ज़मीन पर लिटाकर और चादर से ढक अजीब व ग़रीब प्रश्नों के सही-सही उत्तर पूछना, आग पर आप चलना व दर्शकों को चलाना, किसी की सब दर्शकों की घड़ियों में ६½ इत्यादि बजा देना, रुमाल आग लगा देना, मुँह में से आग की लपटें निकालना, पानी के अन्दर आग के अङ्गारों का नाच कराना, आदमी को उड़ा देना इत्यादि अनेक तिलस्मात अद्भुत, रहस्ययुक्त और रोमाञ्चकारी क्रियायें

नवाब, राजे-महाराजे, सेठ-साहूकारों को दिखाकर बड़े-बड़े धुरन्धर विद्वानों और प्रोफ़ेसरों की बुद्धि चकर और हैरत में डालकर उनमें पैदा करो। मामूली हिन्दी पढ़ लेनेवाला यह सब एक दिन में जान जाता किसी भी प्रकार के अभ्यास व सिद्धि की झंझट नहीं—ऐसा इसमें और गारण्टी है। फ़िलहाल इसकी क़ीमत केवल पाँच रुपया।

देहली के प्रतिष्ठित पत्र "वीर अर्जुन" तथा कुँवरसाहब जी की जोरदार सिफ़ारिश के साथ सैकड़ों प्रशंसापत्र प्राप्त।

यह सब एक दिन में न आवे तो क़ीमत वापिस।

दी यूनाइटेड वण्डरफुल मेजिकल कम्पनी

विभाग नम्बर २६, मुरादाबाद यू० पी०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नई पुस्तकें

शैतान का खेल

सचित्र पुस्तक है। इसमें एक बोतल में बन्द भूत का रञ्जक क़िस्सा है। यह भूत उस व्यक्ति की सब इच्छाएँ करता था जिसके कब्जे में यह बोतल रहती थी। इस ल को कब्जे में रखने में और तो सब सुबीता था, एक ही ठनाई थी कि मरते समय जिसके अधिकार में बोतल रहती उसे क में गिरना पड़ता। यह बोतल जितने में मोल ली जाय से कम दाम में बेचने की शर्त थी। इस प्रकार यह बोतल त लोगों के पास रही, पर सभी इसे दूसरों के हाथ बेचने फ़िक्र में रहते थे, यद्यपि उन्हें किसी चीज की कमी न थी। रोचक कहानी है। एक बार हाथ में लेने पर बिना त किये पुस्तक छोड़ने को जी नहीं चाहता। बढ़िया ज, उत्तम छपाई। मूल्य केवल ।।।) बारह आने।

विचित्र जीव-जन्तु

यह भी सचित्र पुस्तक है। इसमें दुनिया के एक से एक ब जीव-धारियों का सरल भाषा में वर्णन है। इसके पढ़ने ानकारी बढ़ती और मनोरञ्जन होता है। बालकों के लिए बहुत ही उपयोगी है। मूल्य केवल ।=) छः आने।

विष-पान

यह सुकवि सोहनलालजी का सुन्दर रचना है। इसमें समुद्र- न से उत्पन्न विष की पौराणिक कथा का कविताबद्ध मनोहर न है। छपाई-सफाई सुन्दर है। आवरण-पृष्ठ पर शङ्करजी का, को पीने का, भावपूर्ण चित्र है। मूल्य १) एक रुपया।

पूजागीत

यह युगकवि सोहनलालजी की ऐसी रचना है जिसमें प्रसन्नता, ता, प्रभावोत्पादकता रहने से पढ़नेवाले को कविता का रस ा है। इसमें एक से एक बढ़कर ५६ गीतों का संग्रह इस पूजागीत का बहुत आदर है। कविता-प्रेमियों को संग्रह अवश्य करना चाहिए। मूल्य केवल २) दो रुपये।

झरना

इसमें पण्डित सोहनलालजी की बालकोपयोगी २३ कविताएँ मातृभूमि, जय-जय स्वदेश, हवा का झोंका, तुम बढ़ो ही अकेले, सुनहली धूप, लहर, सब पर जल बरसाता बादल, दूर्वा का गीत और नीम का पेड़ आदि सुन्दर कविताएँ हैं। अच्छे कागज पर अच्छी स्याही में छपी पुस्तक का मूल्य ।।।) केवल बारह आने।

अमर जीवन

(दो भागों में)

इसमें संसार के सुप्रसिद्ध व्यक्तियों—कवीन्द्र रवीन्द्र, अल्फ्रेड नोबेल, हेनरी फोर्ड, जगदीशचन्द्र बसु, महात्मा गाँधी, ताता, सर सैयद अहमद और आशुतोष मुकर्जी आदि के जीवनचरित का संक्षेप में वर्णन है। मूल्य प्रत्येक का ।=) छः आने।

अमर ज्योति

कहानियों का संग्रह है जिसमें अनुशोचना, तावीज, चरित्रम्, नहीं, अमर ज्योति आदि तेरह सुन्दर कहानियाँ हैं। इन कहानियों से पढ़नेवालों का मनोरञ्जन इस कारण होगा कि लेखक ने किसी मतवाद का आग्रह न करके कथा का चित्रण किया है। पूँजीपतियों और मजदूरों के सङ्घर्ष, साम्राज्यवाद या समाजवाद आदि की उलझन में पाठक को नहीं पड़ना पड़ेगा। मूल्य केवल १) एक रुपया।

देवयानी

यह नाटिका कुमारी तारा वाजपयी की रचना है। इसमें शुक्राचार्य की बेटी देवयानी के कन्यात्व का आदर्श बड़ी सफलता से उपस्थित किया गया है। कथा महाभारत से ली गई है। इसमें आर्यों के व्यापक वैवाहिक सम्बन्ध के इस एक अपवाद—क्षत्रिय वर और कन्या ब्राह्मणपुत्री—का स्पष्टीकरण बड़ी सतर्कता से हुआ है। पुस्तक अपने ढङ्ग की अनूठी है। मूल्य केवल १) एक रुपया।

जीवन-कण

यह आशुकवि जगमोहननाथ अवस्थी की सुन्दर रचनाओं का संग्रह है। आपकी रचनाओं में निर्भयता है, राष्ट्रीयता है और कवि की ईमानदार छटपटाहट है। इस संग्रह की कविताएँ समाज की भयङ्कर परिस्थितियों और घोर वातावरण के कारण जीवन को पहेली मानकर लिखी गई हैं। इसमें वैषम्य, भिखारिन, जेल, दीपावली आदि श्रेष्ठ २२ रचनाएँ संगृहीत हैं। सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल ॥=) दस आने।

मैनेजर बुकडिपो—इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूबिया

इस में रूस की जारशाही के समय की दशा का चित्रण बड़ी सुन्दरता से किया गया है। पति-पत्नी के प्रेम का अनोखा चित्र-सा खींचा गया है। पुस्तक में कई चित्र हैं। जिल्द के ऊपर रङ्गीन चित्र है। मूल्य २) दो रुपये।

बड़ी दीदी

यह नामी उपन्यास-लेखक शरद बाबू की रचना है। इसमें सामाजिक दशा का चित्रण है। किसी भले घर का लड़का रूठकर घर से चल दिया और दूर गाँव में जाकर एक मालदार विधवा युवती को पढ़ाने की नौकरी करने लगा। दोनों के मन में प्रेम का उदय हुआ तो मास्टर अपने घर चला गया। बाद को एक अकल्पित ढङ्ग से उस विधवा से इस पुराने मास्टर की भेंट हुई जहाँ पुरानी बीमारी से उसका प्राणान्त हो गया। बड़ा ही भावोत्पादक कथानक है। मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने।

वञ्चिता

यह रोमाञ्चकारी ऐतिहासिक उपन्यास है। अकबर के जमाने की घटना के आधार पर इसकी रचना हुई है। इसमें बड़ी-बड़ी गुत्थियाँ हैं। दरबार के दाँव-पेंच, जासूसी चालें और प्रलोभन के बखेड़े हैं। विजय ने मित्र चम्पालाल के प्राण बचाने का पूरा उद्योग किया, किन्तु जरा-सी देर ने काम बिगाड़ दिया। इससे दोनों मित्र साथ ही 'जल जङ्गल' हाथी के पैर से कुचले जाकर परलोक के यात्री बने। बेचारी नन्दा अपने प्रियतम विजय से वञ्चिता होकर उसकी याद में घुल-घुलकर जीवन बिताने को रह गई। मूल्य ३॥) तीन रुपये आठ आने।

चन्द्रशेखर

यह सुप्रसिद्ध उपन्यास-लेखक बाङ्किम बाबू की प्रसिद्ध रचना है। इसकी कथा बड़ी विचित्र है। घटना है बङ्गाल के अन्तिम नवाब मीर कासिम के समय की। नवाब और अँगरेजों के बीच हुए सङ्घर्ष का भी वर्णन इसमें है। कथा के नायक चन्द्रशेखर का उदार चरित्र अनूठा है। यह लेखक का बहुत ही प्रशंसित उपन्यास है। मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने।

माधवी-कङ्कण

यह सुप्रसिद्ध बाबू रमेशचन्द्र दत्त का लिखा ऐतिहासिक उपन्यास है। इसमें मुग़लों के समय की दशा के चित्रण के साथ-साथ प्रेमी-प्रेमिका की बड़ी विचित्र कथा है। यह उपन्यास बहुत लोकप्रिय है। इसका नया संस्करण अभी तैयार हुआ है। मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने।

देशान्वेषण की सरल कथाएँ

इसमें उन ३२ कर्मवीरों के अन्वेषण-कार्यों का [illegible] जिन्होंने अपनी जान जोखिम में डालकर अङ्गीकार कि[illegible] कार्य को पूरा किया। तेरहवीं शताब्दी के मार्कोपोलो [illegible] उन्नीसवीं शताब्दी के कप्तान एर्मेडसेन और कप्तान [illegible] तक की दुर्गम यात्राओं का वर्णन इस पुस्तक में है। [illegible] पुस्तकों के पढ़ने से साहस बढ़ता और विविध जानकारी [illegible] मूल्य ।॥-) केवल तेरह आने।

सचित्र महाभारत

यह स्वर्गीय आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी का [illegible] प्रसिद्ध ग्रन्थ है जिसके कई संस्करण हाथोंहाथ बिक गये [illegible] सम्पूर्ण महाभारत की कथायें बड़ी सुन्दर भाषा में दी [illegible] इसके पढ़ने से महाभारत की बहुत-सी बातें मालूम हो [illegible] अच्छा कागज, बढ़िया छपाई और सुन्दर जिल्द। [illegible] पृष्ठ के चित्र हैं जिनमें से ११ रङ्गीन हैं। बड़े आकार [illegible] तीन सौ से ऊपर पृष्ठ हैं। मूल्य केवल ६) छः रुपये।

विश्व-कवि रवीन्द्रनाथ

हिन्दी में विश्वकवि रवीन्द्रनाथ के विषय में अब तक [illegible] पुस्तकें लिखी गई हैं उनमें यह सबसे बड़ी है। इसमें र[illegible] की अन्तिम रचनाओं तक की चर्चा आ गई है। अनेक [illegible] से पुष्परस लाकर यह मधुचक्र बनाया गया है। र[illegible] कवि, लेखक, नाट्यकार, कहानी और उपन्यासों के ले[illegible] कुछ थे। उनको समझने में यह पुस्तक बड़ा काम देगी [illegible] के नामी पत्रों और विद्वानों ने इस पुस्तक की मुक्त कण्ठ [illegible] की है। सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल ५) पाँच रुपये।

बाघ और भालू की कहानी

यह बालकों के बड़े काम की है। इसमें एक दशी [illegible] एक विदेशी भालू की कहानी है। दोनों कहानियाँ बाल [illegible] पन्यास की तरह विचित्र तो हैं पर कल्पित नहीं हैं। इनको [illegible] बालक-बालिकाएँ जीव-जन्तुओं के काम-काज और उनकी [illegible] दारी का कुछ परिचय पावेंगी। मनोरञ्जन तो होगा ही। [illegible] सचित्र है और दो रङ्गों में छपी है। मूल्य केवल ।=) छः

फ्रांस का इतिहास

इसमें ईसा पूर्व २२५ से लेकर सन् १९२० ईसवी [illegible] इतिहास है। इसमें वहाँ की राज्यक्रान्ति के राजवंश [illegible] प्रणाली, स्वतन्त्र राजतन्त्र, शतवर्षीय युद्ध, योरप [illegible] प्रसार, राजवंश के उद्धार, सन् १८४८ की क्रान्ति, [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

र प्रजातन्त्र आदि का वर्णन उत्तमता से किया गया है। तक में चित्र भी हैं। अच्छे काग़ज़ पर छपे साढ़े चार सौ की सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल ४) चार रुपये।

स्वदेश-विदेश-यात्रा

यह श्रीयुक्त सन्तरामजी, बी० ए० और श्रीमती रामेश्वरी रू की प्रसिद्ध रचना है। देश-देशान्तर की यात्रा करने से क लाभ होते हैं। व्यवहार-ज्ञान और सामान्य बुद्धि की वृद्धि ती है। परन्तु पर्यटन का सुबीता सबको सुलभ नहीं होता। की रुचि भी थोड़े लोगों को होती है। ऐसे लोगों को ा-विषयक पुस्तकें पढ़ने से बड़ा लाभ हो सकता है। इस क में कश्मीर और कुल्लू की सैर तथा आस्ट्रेलिया की ा का वर्णन है। पुस्तक सचित्र है। अच्छे काग़ज़ पर पौने दो सौ पृष्ठों की पुस्तक का मूल्य केवल १।≡) रुपया ग्यारह आने।

आल्हा

आल्हा का थोड़ा-बहुत किस्सा सभी हिन्दी-प्रेमी जानते हैं, पर का ब्योरेवार वर्णन थोड़े लोगों को ही मालूम होगा। चतुर्वेदी काप्रसाद शर्मा की कृपा से यह कथा हिन्दीवालों को सुलभ गई है। इसमें परमाल-का ब्याह, संयुक्ता का स्वयंवर, माड़ौ लड़ाई, आल्हा और मलखान का ब्याह, दिल्ली की लड़ाई, यूँ गढ़ का युद्ध आदि कितनी लड़ाइयों और विवाहों का न है। बड़े आकार के सवा तीन सौ से ऊपर पृष्ठों की सजिल्द क का मूल्य केवल ३।-) तीन रुपये पाँच आने।

जानवरों की मजेदार कहानियाँ

इसमें मोर और कौआ, लोमड़ी और गधा, चालाक बुढ़िया, की चिड़िया, सिंह और गीदड़, राजकुमार और सोने की या, चिड़िया और बुढ़िया तथा चालाक गीदड़ की कहानियाँ इनको पढ़कर लड़के और लड़कियाँ सभी प्रसन्न होते हैं। रङ्गीन आवरण-पृष्ठ है। मूल्य केवल ।।≡) ग्यारह आने।

सच्चा सेवक

छोटा-सा नाटक है जिसमें सेवक के गुण सुन्दरता से दिखाये हैं। यह नाटक अभिनय करने के लिए लिखा गया है खेला भी गया है। स्कूलों में उत्सव के समय छात्र इसका प अभिनय करके प्रशंसा पाते हैं। मूल्य ।-) पाँच आने।

तुलसी-रत्नावली

इसका संकलन, प्रिंसिपल केदारनाथ गुप्त, एम० ए० ने किया है। इसमें गोस्वामी तुलसीदासजी के अमूल्य ग्रन्थों—रामचरित-मानस, विनयपत्रिका, कवितावली, दोहावली, गीतावली आदि—से रत्न चुने गये हैं। अनेक ग्रन्थों से अमूल्य रत्नों का संग्रह करना सचमुच बड़ा कठिन काम होता है। जो लोग गोस्वामी जी के समस्त ग्रन्थ न तो ले सकते हैं और न उनका अध्ययन कर सकते हैं उनको इस संग्रह से बड़ा लाभ होगा। मूल्य केवल १।) एक रुपया आठ आने।

माँ और बच्चा

इसके लेखक नामी चिकित्सक डाक्टर बोधराज चोपड़ा, एम० बी०, सी-एच० बी० (एडिनबरा) हैं। यह पुस्तक अपने ढङ्ग की अनुपम है। इसके ११ प्रकरणों में छोटे बच्चों की मृत्यु और उसके कारण, गर्भिणी माता, जन्म के समय से बालक की रक्षा, बच्चों को दूध पिलाना, दूध पिलाने वाली दाई, दूध छुड़ाना आदि आवश्यक विषयों की शिक्षा दी गई है। स्त्रियों की मृत्यु और रोगों को कम करने तथा छोटे बच्चों को मृत्यु से बचाने की दृष्टि से पुस्तक लिखी है। यों लेखक ने मनुष्यमात्र का उपकार किया है। अच्छे कागज पर छपी ढाई सौ से भी अधिक पृष्ठों की सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल २) दो रुपये।

गोस्वामी तुलसीदास-संक्षिप्त रामचरितमानस (सचित्र)

यह रामचरितमानस का संक्षिप्त संस्करण है। संक्षेप ऐसी चतुराई से किया गया है कि कहीं भी कथा-भाग टूटने नहीं पाया। मँझोले आकार के ३०० पृष्ठों में यह समाप्त हुआ है। पुस्तक सचित्र और सजिल्द है। मूल्य १) एक रुपया।

अयोध्याकाण्ड (मूल)

रामायण-प्रेमियों के सुभीते के लिए यह काण्ड अलग प्रकाशित किया गया है। यह पुस्तक अनेक स्थानों के शिक्षाविभाग-द्वारा स्वीकृत है। इससे यह विद्यार्थी तथा साधारण जनता सभी के काम की चीज है। मूल्य १) एक रुपया। सटीक मूल्य २।≡) दो रुपये ग्यारह आने।

सुन्दरकाण्ड (मूल)

रामायण-प्रेमियों के सुभीते के लिए यह काण्ड असली रामचरितमानस से अलग छापा गया है। मूल्य ।≡)सात आने।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अरण्यकाण्ड (मूल)

रामायण-प्रेमियों के सुभीते के लिए यह काण्ड भी असली रामचरितमानस से अलग छापा गया है। मूल्य ।≡) सात आने।

विनयपत्रिका (सटीक)

गोस्वामी तुलसीदास की रचनाओं में विनयपत्रिका का स्थान बहुत उच्च है। इसमें गोस्वामीजी के विनय-सम्बन्धी पद्यों का संग्रह है। इसके टीकाकार हैं पण्डित रामेश्वर भट्ट। मूल्य ४) चार रुपये।

कुण्डलिया रामायण

गोस्वामी तुलसीदासजी की यह अमर रचना पिछले दिनों खोज में मिली है। इसमें उनकी अन्यान्य रचनाओं की भाँति सरस कुण्डलिया छन्दों में रामचरितमानस के सातों काण्डों की कथा दी गई है। मूल्य ४) चार रुपये।

मानससूक्तावली

रामचरितमानस में आये हुए कण्ठस्थ करने के योग्य चौपाइयों और दोहों का संग्रह। मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने।

संक्षिप्त पद्मावत

(रायबहादुर बाबू श्यामसुन्दरदास, बी० ए० द्वारा सम्पादित) मलिक मुहम्मद जायसी के पद्मावत का संक्षिप्त संस्करण। मूल्य २।-) दो रुपये पाँच आने।

संक्षिप्त सूरसागर

इसमें महाकवि सूरदास के पदों का संग्रह है। इसका एक-एक पद भक्ति तथा प्रेम के रस से ओतप्रोत है। मूल्य ३।-) तीन रुपये पाँच आने।

चारण

इस पद्यमय पुस्तक में प्राकृतिक दृश्यों के मनोरञ्जक वर्णनों के अतिरिक्त राजपूताना के कुछ प्रसिद्ध वीरों का गुणगान किया गया है। मूल्य ।-) पाँच आने।

वीणा-ग्रन्थि

हिन्दी के युगान्तरकारी श्री सुमित्रानन्दन पन्त की दो पुस्तकों का सम्मिलित संस्करण। वीणा मौलिक कविताओं का संग्रह है। और ग्रन्थ में कवि ने एक छोटे-से कथानक को अपनी कल्पना द्वारा विकसित कर एक खण्डकाव्य की रचना की है। मूल्य २) दो रुपये।

भैरवी

इसकी राष्ट्रीय कवितायें राष्ट्र-प्रेमियों के गौरव हैं। यहाँ तक कि पण्डित जवाहरलाल नेहरू तक पसन्द किया है और खादी-प्रतिष्ठानों में इसकी हज़ारों प्रतियाँ हैं। विद्वानों की सम्मति है कि भैरवी 'गांधीयुग' का काव्य है। मूल्य २॥≡) दो रुपये ग्यारह आने।

वासवदत्ता

हिन्दी का एक आधुनिक काव्य। इस की विद्वानों ने मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। मूल्य २) दो

हिन्दी के लब्धप्रतिष्ठ कवि
ठाकुर गोपालशरणसिंहजी की कृतियाँ

माधवी

माधवी का यह नया संस्करण बड़ी ही सजधज के साथ और बड़े आकार में प्रकाशित हुआ है। मूल्य २) दो

ज्योतिष्मती

इस संग्रह में ठाकुर साहब की नवीन प्रकार की संगृहीत की गई हैं, जो हिन्दी-साहित्य में अपना विशेष रखती हैं। ख़ास कर इसमें संग्रह किये गये छोटे-छोटे बहुत ही मधुर और भावपूर्ण हैं। मूल्य २।-) दो पाँच आने।

मानवी

इस संग्रह में प्रकाशित कविताओं के द्वारा ठाकुर ने भारतीय नारी के सुख-दुःखमय जीवन का बड़ा ही और मार्मिक चित्रण किया है। मूल्य २।-) दो रुपये पाँच

संचिता

इस संग्रह में ठाकुर साहब ने अपनी सन् १ लेकर सन् १९३९ तक की सब प्रकार की रचनाओं का किया है। इस एक ही पुस्तक के द्वारा ठाकुर साहब के जीवन के क्रम-विकास का उत्तमतापूर्वक अध्ययन किया है। संग्रह में कुल ७१ कवितायें हैं। मूल्य ३) तीन

सुमना

'सुमना' ठाकुर साहब का सबसे नवीन संग्रह है ५३ गीत हैं जिनमें प्रकृति के प्रति उनका असीम अनुराग शब्द-द्वारा व्यञ्जित होता है। इस प्रकार के सरस गीत हिन्दी-साहित्य में अन्यत्र न मिलेंगे। मूल्य २) दो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

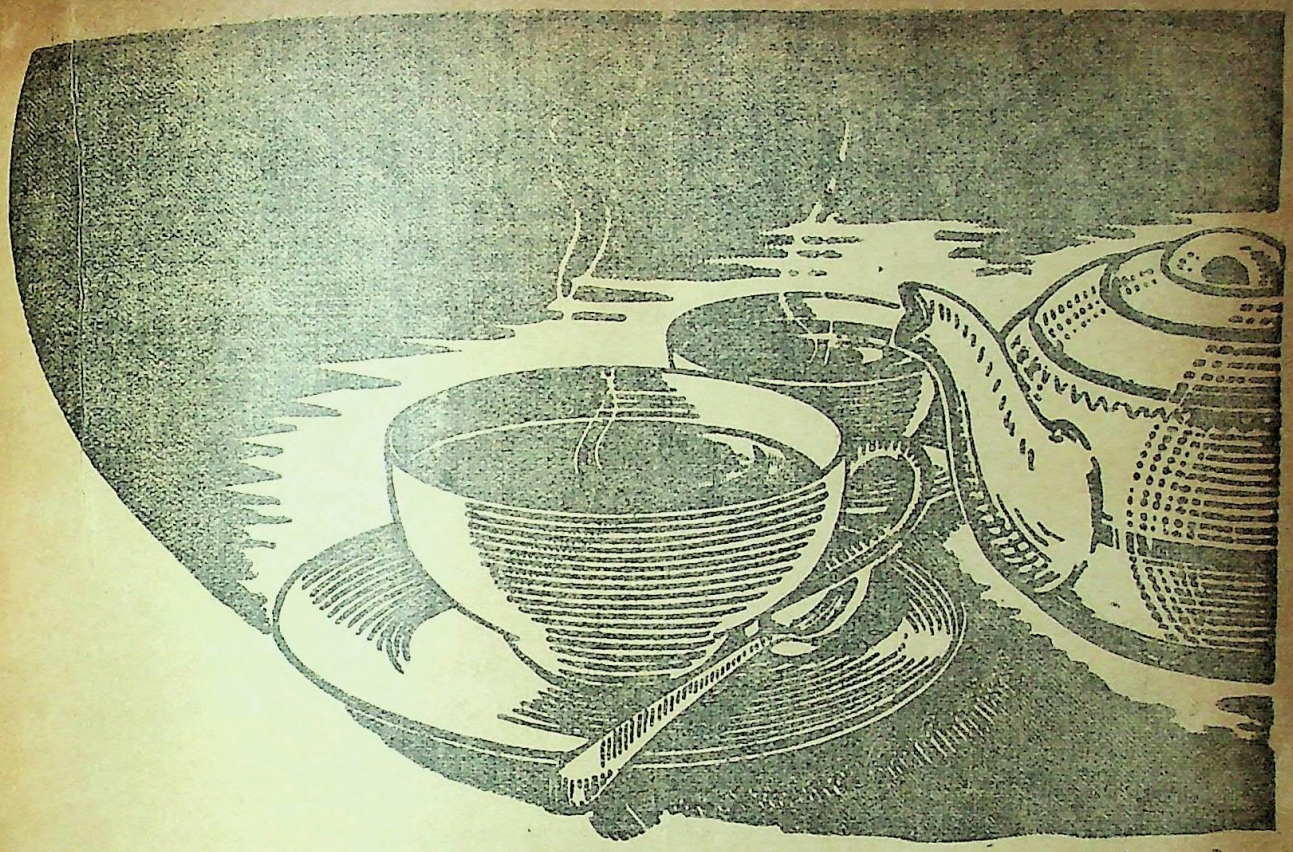

तेज व बढ़िया सुगन्ध, गहरा रंग और
कम दाम इन सबने मिलकर लिपटन
की व्हाइट लेबुल को बाजार भर
की सर्वश्रेष्ठ चाय बना रक्खा है।

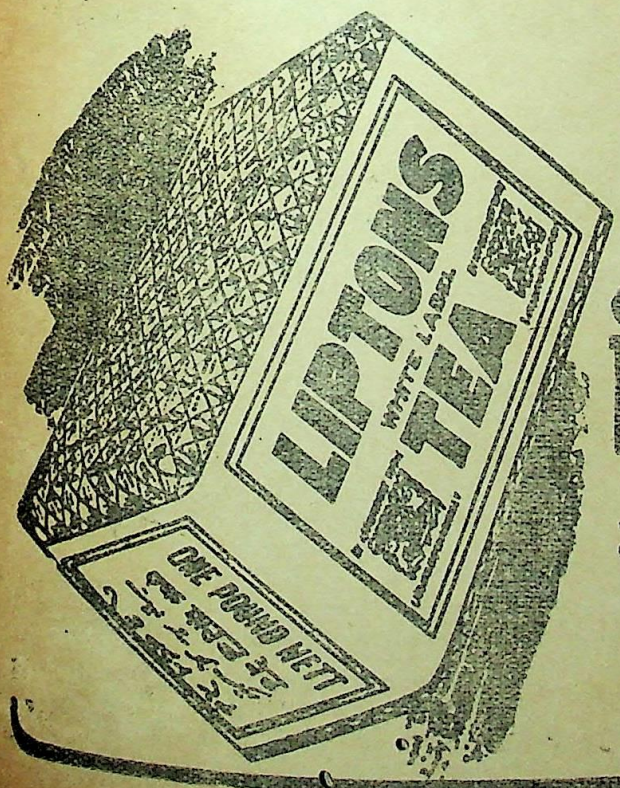

लिपटन की
व्हाइट लेबुल चाय

सर्वोत्तम भारतीय पत्ता चाय

LTK 84 W

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

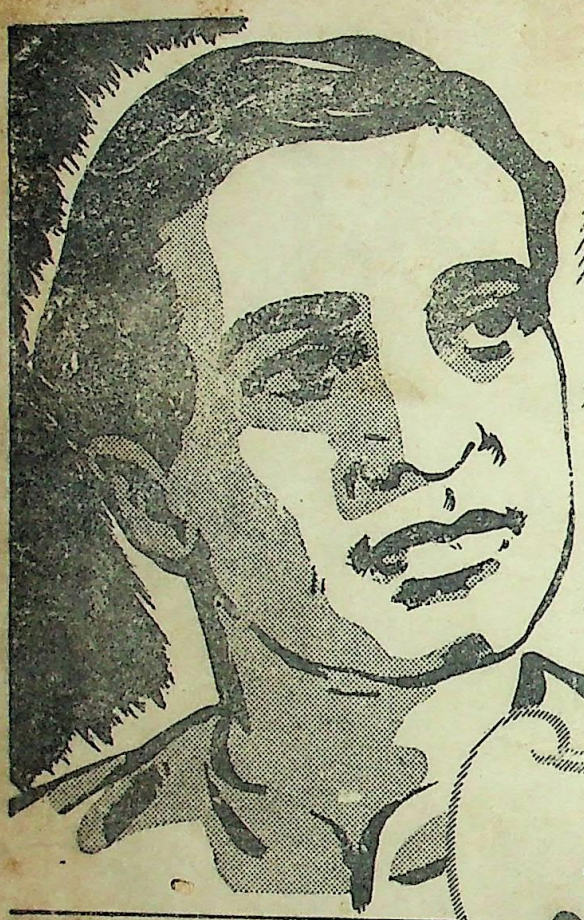

कुन्दनलाल सैगल का जन्म १९०६ ईस्वी में श्रीनगर में हुआ था। कुछ दिनों तक भारत सरकार और एन. डब्ल्यु. रेलवे में काम करने के बाद १९३१ ईस्वी में आप न्यु थियेटर्स में आये और तभी से अपने मनमुग्धकर गानों व सुरीली आवाज से आपने देशवासियों को मोह रखा है। परन्तु शायद 'तानसेन' में ही आपकी प्रतिभा, कला की चरम सीमापर पहुँच सकी है।

सैगल के

गाते समय...

दुनियाँ भर के बड़े बड़े कलाकार चाय की खूबियों के प्रेमी हैं। ऐसा कोई पेय नहीं जो मन को कला की ओर इतना ज्यादा टान ले जाय। सैगल के सुरीले गले की आवाज सुनिये: "लोग पूछते हैं चाय मुझे क्यों इतनी अच्छी लगती है। वे यह क्यों नहीं पूछते कि मैं कैसे गाता हूँ, कैसे अभिनय करता हूँ, कैसे आनन्द में मग्न हो जाता हूँ? मुझे एक प्याला चाय पिलाइये फिर सुनाता हूँ।"

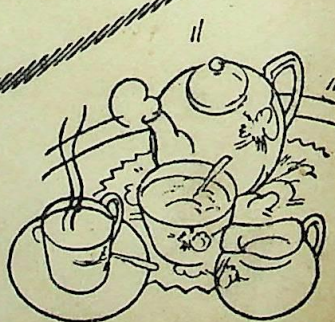

प्रेरणा लाने वाली...

चाय

इण्डियन टी मार्केट एक्सपैन्शन बोर्ड द्वारा प्रचारित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वार्षिक मूल्य ६॥)
एक प्रति ॥-)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri
CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बालों को लम्बे तथा मनमोहक

बनाने के लिए

कामिनिया आयल (रजिस्टर्ड)

का व्यवहार करें।

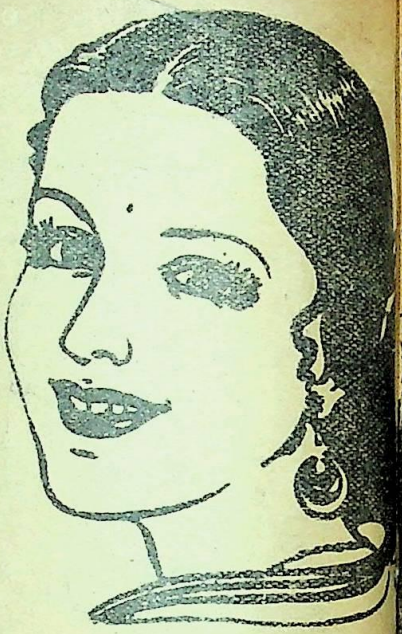

यह बालों के लिए सर्वोत्तम उपचार है।

बालों को शीघ्रतापूर्वक बढ़ाता है।

बालों का झड़ना बन्द कर उन्हें काला, चिकना, चमकीला तथा मनमोहक बनाता है। एक बार की परीक्षा पर्याप्त होगी।

खुशबू का राजा

ओटो दिलबहार (रजिस्टर्ड)

अपनी मीठी तथा मनमोहक सुगन्ध के लिए विख्यात। दो-चार कपड़ों पर डाल देने से कपड़े अधिक समय तक सुगन्धित बने रहेंगे

एक दूसरा सुगन्धित केश-तेल

दिलबहार हेयर आयल (रजिस्टर्ड)

यह तेल अत्यन्त सुगन्धित है तथा बालों की उपयोगिता के लिए 'कामिनिया आयल' के बाद इसका ही नम्बर है। बालों को बढ़ाने के लिए यह विशेष लाभदायक है। एक बार अवश्य परीक्षा करें।

एंग्लो इण्डियन ड्रग एंड केमिकल कं०,

२८५ जुमा मसजिद, बम्बई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

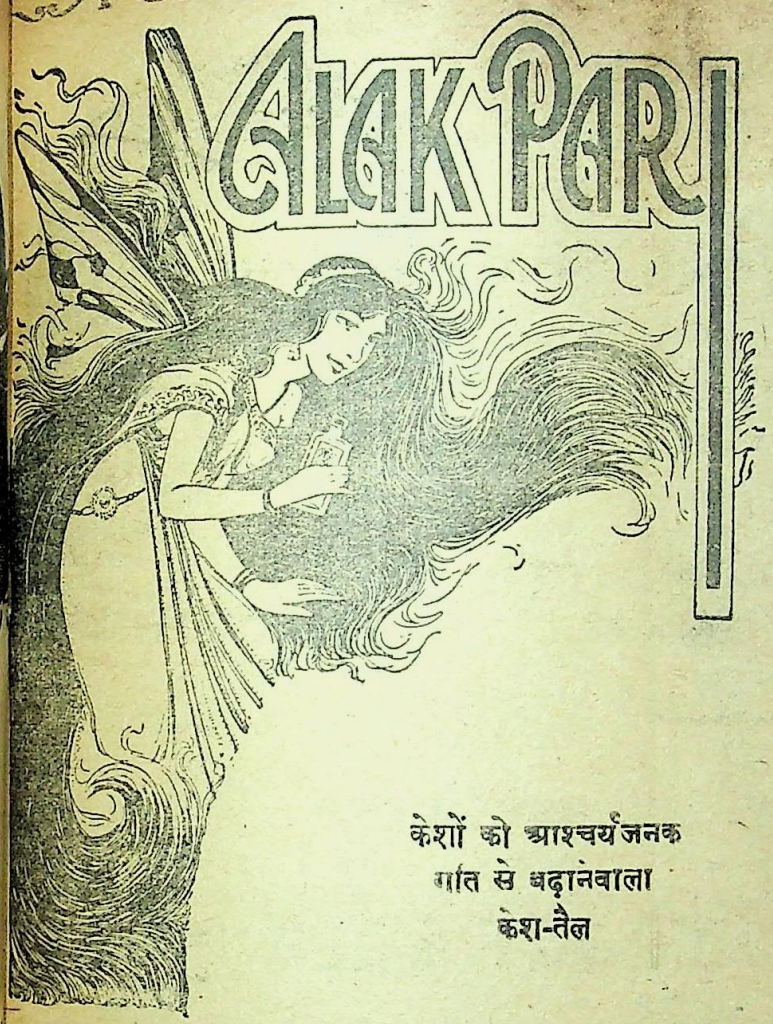

केशों को आश्चर्यजनक
गति से बढ़ानेवाला
केश-तैल

शुद्ध बादामरोगन पर बना

अलकपरी

केशों में प्रतिमास ३-४ इञ्च वृद्धि।
६ महीने में एड़ी-चुम्बी केश।

'अलकपरी' का कोर्स

पहले सप्ताह में रूसी-खुश्की दूर हो जाती है।
दूसरे सप्ताह में केशों का झड़ना और उनके सिरों का फटना रुकता है।
तीसरे सप्ताह में नये केश उगते दिखाई देते हैं।
चौथे सप्ताह के अन्त तक केश ३-४ इञ्च बढ़ जाते हैं।
फिर प्रतिमास इसी औसत से बढ़ते रहते हैं।

६ महीने में केश एड़ी-चुम्बी बन जाते हैं।

मूल्य एक शीशी का २॥) है जो एक महीने को काफी होती है। डाक-खर्च व पैकिङ्ग पृथक्। ६ से अधिक शीशियाँ डाक से नहीं भेजी जायँगी। अधिक के लिए ५) पेशगी भेजिए और अपने रेलवे स्टेशन का नाम लिखिए।

प्रतिष्ठित महिलाओं की सम्मतियाँ—

'अलकपरी' से बहुत लाभ है। १ शीशी और तुरन्त भेजिए।
१५-७-४५ कृष्णाकुमारी, धर्मशाला (पंजाब)।

Alak Pari is proving of much use to me. Please send me three more bottles.
4-8-45 Mrs. S. Mandal, 45, The Mall, Lahore.

'अलकपरी' में केशों को बढ़ाने के लिए विद्युत् की शक्ति वर्त्तमान है मैंने इसे केशों के लिए आश्चर्यजनक गुणकारी पाया है। कृपया ३ शीशियाँ तुरंत भेजें।
७-८-४५ सत्यवती देवी, पासना, जौनपुर।

'अलकपरी' की ५ शीशियाँ इस्तेमाल कीं। बहुत लाभकारी तेल है। कृपया ३ बोतलें शीघ्र भेजें।
३०-८-४५ शान्तिकुमारी, कोटखाई, शिमला

व्यवस्थापिका—'अलकपरी', नया कटरा, इलाहाबाद।

हमारे एजेन्ट—

नई दिल्ली—रायल स्टोर्स, ३३, गोल बाज़ार।
मेरठ—त्यागी ब्रदर्स, बेली बाजार।
बरेली—यूनाइटिड कमर्शियल सिंडीकेट, भूर।
राजनंदगाँव—रामनारायण हरीदास सोनी।
आगरा—प्रियादास घनश्यामदास परफ्यूमर्स, काश्मीरी बाजार।
लखनऊ—सालिग्राम मेहरोत्रा, ६, अमीनाबाद पार्क।
जबलपुर—बाबूलाल राजाराम चौरसिया, गोविंदगंज।
जोधपुर—मेडिकल स्टोर्स, सराफा बाजार।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कमज़ोर और कृष बच्चे डोंगरे-बालामृत के इस्तेमाल से ताक़तवर, पुष्ट और चुस्त बनते हैं।

निर्बल, निश्चेतन और निराश क्यों रहते हो ?

भोजन को पचानेवाला, खून को बढ़ानेवाला, पाण्डु और अन्य रोग के बाद की निर्बलता को नष्ट करनेवाला

झंडु रक्तो फोस्फोमाल्ट

सुमधुर शक्तिवर्धक, अमूल्य औषधि अवश्य सेवन करें

झण्डु फार्माक्यु टिकल वर्क्स लि०, बम्बई नं० १४

इलाहाबाद के चीफ एजेन्ट—एल० एम० घोलकिया एण्ड ब्रादर्स, ४६ जान्स्टनगंज।

दिल्ली और यू० पी० के सोल एजेन्ट—कान्तिलाल आर० पारीख, चांदनी चौक, देहली।

यू० पी० एजेंट—कान्तिलाल आर० पारीख, चांदनी चौक, दिल्ली।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और उसने लाइफबॉय की आदत सीखी है!

वह अपनी माँ का हाथ बटाने लगी है और धीरे-धीरे जीवन की कला भी सीख रही है। किन्तु लाइफ़बॉय के रोज़ाना इस्तेमाल का सबक दे कर माँ ने उसकी बड़ी मदद की है। इस तरीके से मैल के ख़त्रों से — जो हर घर में खुशी और तंदुरुस्ती को लगा रहता है — उसे सुरक्षित कर दिया है।

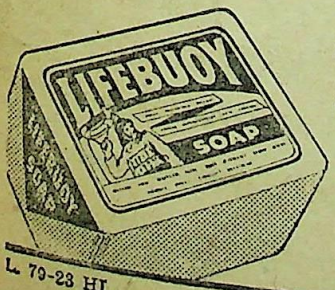

लाइफबॉय का व्यवहार करना एक फ़ौरी आदत है

L 79-23 HI

LEVER BROTHERS (INDIA) LIMITED

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या आपके सभी आहार स्फूर्तिदायी होते हैं?

सबसे बढ़िया शक्तिदायी चीजें कौनसी हैं इसकी जानकारी हरएक स्त्रीको होनीही चाहिये। डालडा कुक बुक (अंग्रेजी) में आहार के बारेमें लाभकारी बातें और १५० से अधिक आहारोंका बयान किया गया है। Dept. D121 P. O. Box No 353, Bombay के पते पर चार आने के पोस्टल स्टाम्प भेजियेगा।

जी, हां — उन्हींमेंसे तो शक्ति पायी जाती है। लेकिन यह बात नहीं कि सभी आहारोंमेंसे उतनीही शक्ति पायी जाती है। कई ज्यादा स्फूर्तिदायी होते हैं तो कई कम स्फूर्तिदायी। इसी लिये हमारा आरोग्य हमेशा खतरेमें रहता है। कई मनपसन्द आहार इस हिसाब से बिलकुल बेकार होते हैं और उनको पसन्द करनेवालोंको खेलने या काम करनेसे थकावट मालूम होये बिना नहीं रहती। सौभाग्य की बात है कि हरएक आहार को हम जीवन-सत्व संपूर्ण डालडामें बनाकर ज्यादा स्फूर्तिदायी बना सकते हैं। यह रसोई की बढ़िया चीज प्रकृतिके सर्वोत्तम स्फूर्तिदायी अन्नांश देती है। बहुतसी चीजोंमें न मिलनेवाली शक्ति उसमें है जिससे आपके हरएक आहार को वह स्फूर्तिदायी बना देती है।

पोषक-तत्व संपन्न **डालडा** स्फूर्ति के लिये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महात्माजी का चमत्कार

प्रेमबटी ने अपनी खूबी से सारी दुनिया में तहलका मचा दिया

कांग्रेस की राय

(प्रेमबटी वास्तव में एक अद्वितीय औषधि है, पहिले हमें इस औषधि पर इतना विश्वास न था, किन्तु जब हमने इसका ं परीक्षण किया तब हम इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि यह औषधि विज्ञापन में दिये गये तमाम रोगों की केवल एकमात्र अचूक धि है। हम आशा करते हैं कि भविष्य में यह कम्पनी इससे भी उत्तम औषधियों का निर्माण कर जनता को लाभ चायेगी।—कांग्रेस देहली)

भारत के योगियों ने वनों और पर्वतों की कन्दराओं में रहकर वह चमत्कार दिखलाये हैं जिससे बड़े-बड़े वैज्ञानिक और कित्सक हैरत में आ गये हैं। आधुनिक चिकित्सकों को जब कोई रोग की औषधि से सफलता नहीं मिलती तब वह लाइलाज त कर देते हैं। परन्तु महात्मा लोग जड़ी-बूटियों की सहायता से मुर्दे को भी जिला देने का दावा करते हैं। भाइयो, इसे न से पढ़ो तथा अपने इष्ट मित्रों को सुनाओ। यह लेख जो लिखा गया है, कोई गप्प नहीं है बल्कि मेरे जीवन की चन्द ायें हैं जो आपके सम्मुख रखता हूँ। मेरा जन्म एक धनी परिवार में हुआ। अपने पिता का लाड़ला पुत्र होने के कारण न और व्यसन में घिरा रहता था, लेकिन फिर भी मैं सुखी नहीं था। कुसङ्गत में पडकर मुझे जरियान और प्रमेह रोग हो गया। ने तो एक दो साल मैंने लोकलाज के कारण अपना भेद छिपाये रखा परन्तु रोग ने भयानक सूरत अख्तियार कर ली. अब मैं ा उठा, संसार में चारों ओर अँधेरा मालूम होने लगा तब मेरी आँखें खुलीं। इलाज शुरू किया गया, बड़े-बड़े डाक्टरों, मों, वैद्यों के फीस रूप में रुपये और कीमती दवाइयों के खरीदने में पानी की तरह रुपया बहाने लगा, फिर भी मैं निराश ही रहा मैं घबरा उठा और चारों तरफ़ से अन्धकार दिखलाई देने लगा और सोचने लगा कि इस दुःखमय जीवन से मर जाना बेहतर है।

पर यह बीस साल पहले की बात है। अब आज मैं खुश हूँ। आज उस परमात्मा की कृपा से आरोग्य हूँ और तीन स्वस्थ बच्चे भी हैं जो बिलकुल आरोग्य हैं।

हुआ क्या! मुझमें इतना परिवर्तन कैसे हो गया? यह जानकर आपको आश्चर्य होगा कि मैंने एक दवा सेवन की! दवा मैंने सेवन की, वह एक महान् त्यागी परोपकारी साधु की बनाई हुई थी, जो समय काटने के लिए गाँव से कुछ दूर एक के खेड़े पर रम रहे थे। यह मेरा सौभाग्य था कि और लोगों के साथ मैं भी दर्शनों के लिए जा पहुँचा। दैवी शक्ति से दुःखी जीवन के पिछले अध्याय उनके हृदय-पट पर खिंच गये और मेरी आँखों ने हृदय का सारा भेद अपने आप उस महान् पर प्रकट कर दिया। मेरी कच्ची उम्र पर महात्मा को दया आई और उन्होंने मुझे कुछ जड़ी-बूटियाँ एकत्र करने की आज्ञा मैंने वैसा ही किया और तब उनके सम्मुख ही मुझे उनके आदेश और निजी देख-रेख में 'प्रेमबटी' तैयार करनी पड़ी। पि मुझसे ४० दिन लगातार 'प्रेमबटी' का सेवन करने को कहा गया था, तथापि केवल बीस दिन के सेवन से ही मुझमें परिवर्तन या। मेरी कमजोरी और तमाम गुप्त बीमारियाँ जड़ से दूर हो गईं। पीले और उदास मुख पर लाली दौड़ने लगी, आँखों न्माद झूमने लगा और हृदय में जवानी का जोश उमड़ आया। महात्माजी के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के साथ ही अपने को पूरा करने के लिए दुःखी जनों के निमित्त पिछले बीस साल से लगातार मैं इस प्रयोग को मुफ्त बाँट रहा हूँ। यह अनेक पत्रिकाओं में भी छप चुका है। मुझे हर्ष है कि इस अमृत-तुल्य प्रयोग ने सैकड़ों की प्राण-रक्षा की, हजारों को मौत के मुँह से ला और लाखों का इससे भला हुआ। महात्मा-प्रदत्त 'प्रेमबटी' का नुस्खा इस प्रकार है; नोट कर लें—

शुद्ध त्रिफला ५ तोला, त्रिकुट चूर्ण ५ तोला, शुद्ध सूर्यतापी शिलाजीत ५ तोला, शुद्ध बङ्ग भस्म ६ माशा, असली सूर्य-केसर ३ माशा, असली अकरकरा ६ माशा, असली नेपाली कस्तूरी ३ रत्ती। इन सब औषधियों को कूट-छानकर खरल में कर ऊपर से शीतल चीनी का तेल २० बूँद, सन्दल तेल २० बूँद, बिरोजे का तेल २० बूँद एक-एक करके मिलाये। उसके ताजी ब्राह्मी बूटी के अर्क़ में १२ घण्टा घोंटकर झरबेरी बेर के बराबर गोलियाँ बनावें और छाया में सुखा लें। एक-एक गोली -शाम पाव भर गाय के दूध में एक तोला शक्कर मिलाकर सेवन करें। इसकी प्रशंसा हम अपने ही मुँह से नहीं करते बल्कि बड़े वैद्यों, डाक्टरों, हकीमों, सेठ-साहूकारों तथा रईसों, जमींदारों, सरकारी आफिसरों तक ने इसकी सराहना की है। वैद्यराज मुनादत्त शर्मा, झोंकर का कहना है कि यह बटी धातु का पतलापन, २० प्रकार के प्रमेह के लिए अक्सीर है।

'प्रेमबटी' में कोई हानिकारक चीज़ नहीं पड़ती और गुणकारी चीजे नुस्खे से ही प्रकट हैं। यह औषध वीर्य का पतलापन, प्रकार के प्रमेह, पेशाब के साथ चूने की तरह वीर्य का जाना, पाखाने के समय धातु का जाना, स्वप्नदोष, सुस्ती, कमजोरी, नामर्दी, टीज, मधुमेह, सूजाक, जवानी में बुढ़ापे की-सी हालत हो जाना, असली ताकत की कमी, स्मरण-शक्ति कमजोर पड़ जाना तथा ी के भी प्रदर-सम्बन्धी रोग दूर करके अत्यन्त ताकत देती है और नस-नस में नवजीवन का सञ्चार करती है। अन्त में उन यों को जिन्हें फ़ुरसत नहीं मिलती या शुद्ध औषधि प्राप्त नहीं कर सकते यह प्रयोग स्वयं बनाकर दाम के दाम में भेजने की स्था की है। ४० दिन के लिए पूरी खुराक विधिवत् ८० गोलियों का मूल्य ५॥=) रु० और २० दिन के लिए ४० गोलियों म ३=) डाकखर्च ॥।-)

पता—बाबू श्यामलालजी रईस, प्रेमबटी आफिस नं० (S. A.) धनकुट्टी, कानपुर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फटरवे जाने के नुकसान को रोकये ...इस तरह धोइये

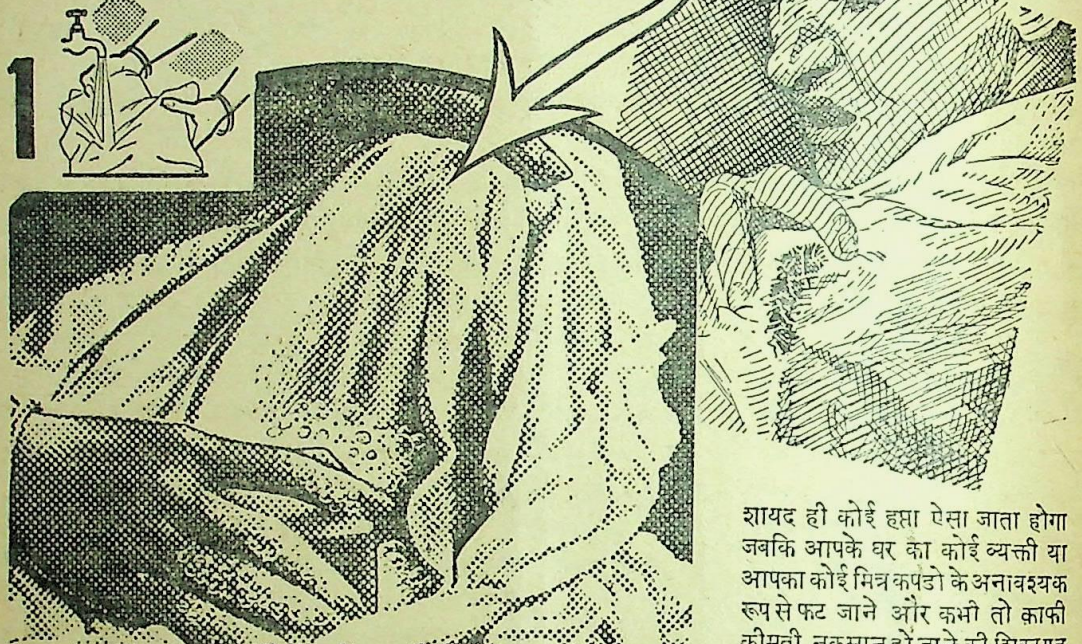

शायद ही कोई हफ्ता ऐसा जाता होगा जबकि आपके घर का कोई व्यक्ती या आपका कोई मित्र कपडो के अनावश्यक रूप से फट जाने और कभी तो काफी कीमती नुकसान हो जाने की शिकायत न करता हो। और इस का कारन है कपड़ों को साफ़ करने के लिए उन्हें अप्रचलित और विनाशक तरीके से कूटना।

हाँ यदि आपने इस तरीके पर अमल किया जो निम्नाकित चित्रों द्वारा समझाया गया है, और निमिन लीखित हिदायतों काभी भी ठीक-ठीक पालन किया तो आप निस्सन्देह अपने कपड़ों पर बिना कोई क्षति पहुँचाये साफ़-सुथरा रख सकेंगे

(१) जिस कपड़े को धोना हो उसे पहले खूब भिगो लीजिए। यह आप नल के नीचे, टब में, तलाब में कर सकते हैं-इससे कोई फर्क नहीं पड़ता।

(२) जब कपड़ें को खूब भिगो चुकें तो सारे कपड़ें में सनलाइट साबुन मलें। जो भाग अधिक मैला हो वहाँ सनलाइट जरा ज्यादा मलें।

(३) साबुन लगे हुइ कपड़े को हाथों से धीरे-धीरे गूँथिये। (इसे कूटिये नहीं) तबतक गूँथिये (ठीक उसी तरह जैसे रोटी का आटा गूँथा जाता है) जब तक साबुन की झाग कपडे के हरेक तन्तु में प्रवेश पाजाए। कपडें को जोर से रगड़ने की या बुरी तरह कूटने की आवश्यकता ही नहीं है। सनलाइट का "स्वयंकाम करनेवाला" फेन सरलता से सारे मैल को बाहर निकाल देगा-यदि आपको यह विश्वास हो जाये कि गूँथने से यह फेन कपड़े के मैल में घुस चुका है। इस शक्तिशाली फेन में जो साबुन है वह मैल को छूते ही तत्काल फुला देता है। फेन उसे जज्ब कर लेता है ऐसे जब आप कपड़े को खूब धोएँगे तो फेनके साथ सब मैल निकल जायेगा।

(४) फेन-जिसमें कि अब सारा मैल आचुका है-छुटाने के लिए कपडे को खूब मलकर धो डालिए।

ऐसे सनलाइट के तरीके से धोए हुए कपडे बहुत समय तक चलते है।

सनलाइट साबुन कपड़ों की बचत करता है

S. 75 - 23 HI

LEVER BROTHERS (INDIA) LIMITED

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री रत्नागिरी जी का अद्भुत चमत्कार

जिसने समस्त संसार को चकित कर दिया

रक्त, बल, वीर्य, उत्साह तथा उमङ्ग ही जीवन सफल बना सकती है।

ध्यान देने योग्य अमूल्य उपहार

अपूर्व कायापलट (रजिस्टर्ड)

निःस्वार्थ संसारसेवी भारतीय महात्माओं ने औषध-विज्ञान को अपनी महान् खोजों और अमूल्य रत्नों से अलंकृत किया है। आधुनिक चिकित्सक मर्ज और मरीज़ जब दोनों को लाइलाज घोषित करके शर्मिन्दा नहीं होते, वहाँ इन्हीं महात्माओं की बिना दाम की जड़ी-बूटियाँ मुर्दों को भी जिला सकने में समर्थ हुई हैं। ऐसी सच्ची घटनायें आये दिन एक न एक पढ़ने और सुनने में आया करती हैं।

बीस वर्ष पूर्व कल्हाती पहाड़ी पर विचरण करनेवाले स्वामी रत्नागिरी जी महाराज की सेवा एक बूढ़ा ग्वाला करने लगा। महाराज को एक दिन उस वृद्ध की कमजोरी पर दया आ गई और उन्होंने निम्नलिखित योग की ६ मात्रायें उस बूढ़े को दीं। नासमझी के कारण छहों मात्रायें एक साथ खा जाने से वृद्ध ग्वाले में अपूर्व शक्ति आ गई और रत्नागिरी जी के श्रम-पूर्वक इलाज करने पर भी बुढ़ापे के बावजूद उसे तीन ब्याह करने पड़े। इस पर राजा, रईस, नवाब और रसिक जन इस योग को जानने के लिए आतुर हो उठे। नवाब बहावलपुर के ससुर हाजी हयात मोहम्मदखाँ साहब ने बाबा जी की बहुत सेवा करके इसे प्राप्त कर लिया और लाहौर के पं० ठाकुरदत्त शर्मा को बतलाया। शर्मा जी ने इसे प्रथम तथा दो अन्य योगों सहित तीनों से उत्तम बाजीकरण बतलानेवाले को एक हजार रुपये का नकद इनाम देने की घोषणा की। इसे आज बीस वर्ष के लगभग हो गये किन्तु अभी तक कोई पुरस्कार विजय प्राप्त कर सका। मथुरा के ख्यातिप्राप्त बाबू हरिदास जी ने अपनी चिकित्सा-चन्द्रोदय में छपवाया और हमने भी स्वयं बनाकर सैकड़ों दुर्बल, नपुंसक, वीर्य-विकारी रोगियों पर बरता। तत्काल चमत्कार देख जन-साधारण के लाभार्थ अनेक पत्र-पत्रिकाओं में छपवा दिया। आप भी बनाकर लाभ उठावें।

योग—शुद्ध बुरादा फौलाद २० तोला, शुद्ध श्वेत मल्ल १ तोला, शुद्ध कपूर १॥ माशा, एक घण्टा घृतकुमारी (गीकर, मिट्टी के कुज्जे में मजबूत बन्द कर पाँच सेर कण्डों में फूंके। दुबारा एक तोला हरताल वर्की शुद्ध १॥ माशा शुद्ध में तीसरी बार गन्धक आमलासार शुद्ध १ तोला १॥ माशा में चौथी बार शुद्ध संस्कारित पारद १ तोला, १॥ माशा को ऊपर की भाँति १६ आँच दे। फिर उसको ई में डालकर बराबर इन्द्रबधू डाल दे और नीचे आग जलावे, जब इन्द्रबधू जलकर राख हो जावे तो हवा देकर उड़ा दे। बस अपूर्व कायापलट तैयार है। चार-चार चावल सायं मक्खन, मलाई के साथ खावें ऊपर मिश्री-मिला दूध पीवें।

मथुरा के हरिदास जी लिखते हैं— इस योग के सेवन से एक हफ्ते में एक आदमी का वजन चार पौंड बढ़ गया, दूसरे का चेहरा लाल सुर्ख हो गया। भूपाल के वैद्यराज पं० बालकृष्ण शर्मा ने ३५० रोगियों पर बरता और आशा से अधिक गुणकारी पाया। रत्नाकर-सम्पादक श्री छोटेलाल जैन आयुर्वेदाचार्य ने गृहचिकित्सा पथ-प्रदर्शक में छापा कि इतना प्रचण्ड गुणकारी योग दूसरा नहीं देखा। श्री धर्मेन्द्र विद्यावतंस सिद्धान्त-शास्त्री अधिष्ठाता गुरुकुल बरला जिला मुजफ्फरनगर ने लिखा है—"अपूर्व कायापलट" नामक औषध सेवन कर रहा हूँ। जैसी प्रशंसा वैसा ही गुण है। बहुत लाभ हुआ। श्री चिरञ्जीलाल जैन आयुर्वेदशास्त्री मालिक कल्याण औषधालय बाह (आगरा) का कहना है कि मैंने २२५ रोगी अपूर्व कायापलट द्वारा जो कि धातु-विकार, नपुंसकता, बवासीर, रक्त-विकार आदि रोगों से ग्रसित थे, पूर्ण स्वस्थ किये।

हमारा दावा है कि केवल सात दिन सेवन से शरीर में रक्त दौड़ता नजर आयेगा। २१ दिन में चेहरा लाल काश्मीरी सेब की तरह चमकने लगेगा। ४० दिन में नपुंसकता, मधुमेह, डायबटीज, निर्बलता दूर हो जाती है। स्त्रियों के प्रदर दूर हो गर्भधारण शक्ति आती है। जिगर व मेदे की शक्ति बढ़ाकर भूख दूनी करता है। कफ, तिल्ली की खराबी, खाँसी, नजला, जुकाम, बदन दुखना, खून का पतलापन, आँखों का पीलापन, चिनगारी-सा उड़ते दीखना, बार-बार थूक गिरना, दमा तथा हर तरह की कमजोरी तुरन्त दूर कर नव-जीवन का संचार करता है। जाड़ा, गरमी, बरसात सभी मौसमों में एक-सा लाभ करता है। योग भली भाँति समझाकर लिखा है। फिर भी यदि आप न बना सकें तो बनी-बनाई १६ आँच दी हुई ४० दिन की ८० मात्रा डाक-खर्च सहित ३॥) में हम भेज देंगे। डाक-खर्च माफ, पैकिंग, मनीआर्डर-फीस अलग। कोई बात समझ में न आवे तो जवाबी कार्ड भेजकर उत्तर मँगा लें।

पता—**रूपाबिनास कम्पनी,**

(रसायनशाला) नं० ४२७, धनकुट्टी, कानपुर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या यह अत्यन्त शीतल नहीं कर देता!

हाँ और वैसे ही ताजगी भी लाता है!

और भी—यह प्रफुल्लित रखता है!

विनोलियाको नियमित रूपमें इस्तेमाल करनेवाले इन वि
प्रेमी लोगोंसे पूछिये, और वे आपको बतायेंगे कि यह
आश्चर्य्यजनक आरामदायक साबुन है—और गर्मीके
कितना आरामदायक है। इसका मक्खन-जैसा सफेद फेन
ताजा कर देता है। इसकी विशिष्ट सुगंध आनंदित और
रखती है। वे लोग कहते हैं कि श्रान्त मस्तिष्क और नसों
यह टॉनिककी तरह काम करता है।

विनोलिया व्हाइट रोज साबुन

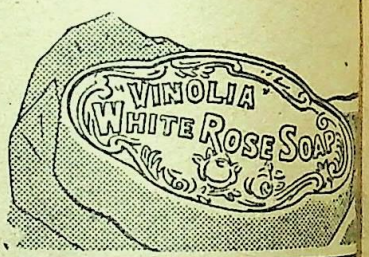

VWR. 18-221 HI

VINOLIA CO., LIMITED, LONDON, ENG

प्रदर रोग स्त्रियों का भयानक शत्रु है

प्रदर रोग जिसको लोग लिकोरिया भी कहते हैं यह स्त्रियों की सुन्दरता और जवानी को नष्ट करनेवाला भयानक शत्रु है। वश बेचारी रोग को छिपाये रहती हैं और दिन-रात घुला करती हैं। यह उनकी भूल है। भयानक रोग का इलाज कराने में ल नहीं करना चाहिये, इस बीमारी से स्त्रियों के गुप्त शरीर से लाल, काला, घुमैला या श्वेत रंग का बदबूदार पानी या निकलता रहता है। महीना ठीक समय पर नहीं होता है जिसके कारण कमर, रीढ़, सिर में दर्द, शरीर में जलन, मन मलीन, बैठने में थकावट, भूख का कम लगना, बदन दुबला और कमज़ोर हो जाना, मूर्छा, बेहोशी आदि रोग हो जाते हैं और सन्त होती है और यदि होती भी है तो दुबली और कमज़ोर होती है। ऐसी अवस्था में भारतविख्यात वैद्यरत्न सत्यदेव ने अ प्रदान करनेवाली २५ वर्ष की आजमूदा **नारी-संजीवन** नामक दवा का आविष्कार किया जिसके द्वारा आज तक सहस्रों इस भयानक रोग के पंजे से छुड़ाया है। इस नारी-संजीवन के सेवन से तमाम बीमारियाँ दूर होकर स्त्रियाँ सुन्दर और तन्दुरुस्त और सन्तानें सुन्दर, बलवान्, दीर्घायु पैदा होती हैं। यदि आवश्यकता हो तो आज ही पत्र डालकर एक डिब्बा नारी-संजी मँगाकर इसके अपूर्व गुणों का चमत्कार देखें। कीमत एक डिब्बा ३=); डाकखर्च माफ; पैकिंग ख़र्च अलग।

मँगाने का पता—

रूपविलास कम्पनी, नं० ४२७, धनकुट्टी
कानपु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेख-सूची

१—संहार की ओर—डाक्टर एस० सी० लेले २७९
२—आत्म-बलिदान—श्री योगेन्द्रनाथ सिनहा ... २८५
३—संयुक्त राष्ट्र-सङ्घ का लन्दन-अधिवेशन—श्री आशाराम, एम० ए० ... ... २९१
४—गति-गीत (कविता)—श्री गोपाल शर्मा, बी० ए० ... ... २९५
५—भागना कहाँ—श्री दौलतराव परशुराम ... २९६
६—ओ देवदार (कविता)—श्री प्रभाकर माचवे, एम० ए०, साहित्यरत्न ३०१
७—सिन्ध की राजनीति—श्री शिवकुमार, विद्यालङ्कार ३०२
८—पानी का बदला—श्री प्रभासकुमार ... ३०६
९—गीत (कविता)—श्री 'नीरव', एम० ए० ३११
१०—प्रवासी की आत्म-कथा—श्री स्वामी भवानीदयाल संन्यासी ३१२
११—भाषा का विकास—श्री राममूर्त्ति मेहरोत्रा, एम० ए०, बी० एड्० ... ... ३१९
१२—आधुनिक मराठी उपन्यास की रूपरेखा श्री बालाजीराव जोशी, बी० ए० ... ३२३
१३—भेद का निवारण—श्री वामनराव चोरघड़े ३२६
१४—एंग्लो-अमरीकी आर्थिक करार और भारत—श्री अवनीन्द्रकुमार विद्यालङ्कार ... ३२८
१५—सूनापन (कविता)—श्री तेजनारायण काक, एम० ए० ... ... ३३४
१६—अश्रु-हास—श्रीमती निर्मला मित्र ... ३३५
१७—विचार-विमर्श ३४१
१८—विविध विषय ३५२
१९—नई पुस्तकें ३५९
२०—सामयिक साहित्य ३६२
२१—सम्पादकीय नोट ३६७

चित्र-सूची

प्रवासी की आत्म-कथा सम्बन्धी ५ चित्र ... ३१२-१४, ३१७-३१८

जीवन-क्रान्ति

यह सामाजिक उपन्यास है। इसमें सेठ-साहूकारों तथा बड़े आदमी कहे जानेवाले व्यक्तियों की हृदयहीनता, पुलिस तथा अन्य अधिकारियों के हथकंडा और मुट्ठी गरम करने के लिए निरपराधों को अपराधी ठहराकर कारागार के कष्ट भोगने के लिए विवश करने के मायाजाल का आकर्षक वर्णन है। अन्त में अत्याचारी के हृदय-परिवर्तन का अपूर्व चित्रण है। पृष्ठ-संख्या ४००। सजिल्द प्रति का मूल्य केवल २) दो रुपये।

साहित्यालोचन

इसका संशोधित संस्करण छपकर तैयार है। इसमें संस्कृत के प्राचीन आचार्यों के साहित्य-सम्बन्धी सिद्धान्तों के अतिरिक्त पाश्चात्य साहित्यकारों तथा साहित्य-मर्मज्ञों के मत का दिग्दर्शन बहुत ही मौलिक ढङ्ग से कराया गया है। ४०० पृष्ठों की सजिल्द पुस्तक का मूल्य ५।-) पाँच रुपये पाँच आने।

गांधी-मीमांसा

इस पुस्तक में पं० रामदयाल तिवारी बी० ए०, एल्-एल० बी० ने गाँधी जी के व्यक्तित्व और सिद्धान्तों की तर्कपूर्ण सुन्दर विवेचना की है। इसे आद्योपान्त पढ़ जाने पर गांधीवाद पूर्ण रूप से हृदयङ्गम हो जाता है। विद्वानों ने मुक्त कंठ से इसकी प्रशंसा की है। पृष्ठ-संख्या ८५०। सुन्दर सजिल्द प्रति का मूल्य ४) चार रुपये।

आलोचनादर्श

इसके लेखक डा० रामशङ्कर शुक्ल 'रसाल' एम० ए० हैं। पुस्तक महत्त्व की है। इसमें समालोचना का अन्य शास्त्रों से सम्बन्ध, साहित्य-समालोचना, आलोचना, सुरुचि और दृष्टिकोण, आलोचना का ऐतिहासिक विकास आदि पर भली भाँति प्रकाश डाला गया है। अध्ययन, अध्यापन और रचना-कार्य करनेवालों के लिए यह पुस्तक बड़े काम की है। ३०० पृष्ठों की सजिल्द पुस्तक का मू० २) दो रुपये।

मैनेजर बुकडिपो—इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हलवे का स्वाद खाने से मिलता है।

हमारे यहाँ की बनी क्रीमोला टाफ़ी
फ्रूट ड्राप्स तथा
रेशमी मिठाइयों का स्वाद लीजिए।
सभी दूकानों में मिलती हैं।

निर्माता—इण्डस्ट्रियल रिसर्च हाउस,
इंडियन प्रेस बिल्डिंग,
इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादक—देवीदत्त शुक्ल : उमेशचन्द्र मिश्र

अप्रेल १९४६ चैत्र २००३; भाग ४७, खण्ड १ संख्या ४, पूर्ण संख्या ५५६

संहार की ओर

डाक्टर एस० सी० लेले

विश्व पर अपना साम्राज्य स्थापित करने के लिए जो षड्यन्त्र वर्त्तमान समय में बड़े जोर से चल रहे हैं, उनके प्रधान केन्द्र दो हैं—(१) पश्चिमी एशिया और (२) दक्षिणी अमरीका। पश्चिमी एशिया में रूसी भालू अपनी शक्ति पूर्ण रूप से लगा रहा है। कुछ अंश तक इसको सफलता भी मिल चुकी है। ईरान को अपने अङ्गगत करके या उसे उपनिवेश का रूप देकर और इस प्रकार हिन्द महासागर में घुसकर सम्पूर्ण एशिया पर—विशेषतः दक्षिणी एशिया पर—अपना प्रभुत्व स्थापित करना और फिर उसके बल पर विश्व-विजय करना, यह रूसी आक्रमण का लक्ष्य है। रूस इस अन्तिम ध्येय की ओर निश्चित रूप से व दृढ़तापूर्वक बढ़ रहा है। विश्व-विजय के लिए वायुयान-दल के साथ-साथ जहाजी बेड़े की भी अत्यधिक आवश्यकता होती है। द्विखण्ड-व्यापी रूसी साम्राज्य का आक्रमण का यह अङ्ग अधिक पुष्ट नहीं है। अतः उस अङ्ग को भी प्रबल व शक्तिशाली बनाने के लिए रूस भरसक प्रयत्न कर रहा है। स्टेलिन का रूस अपनी समुद्री शक्ति बढ़ाने के लिए सन् १९३९ से प्रयत्नशील है। 'प्रवदा' के २० मई १९३९ के अङ्क में इस सम्बन्ध में एक लेख छपा था, जिसके एक अंश का भाव इस प्रकार है—"हम महत् समुद्री शक्ति हैं। हमारे पास एक शक्तिशाली जहाजी बेड़ा ऐसा होना चाहिए जो शत्रु को उसी के समुद्र में पछाड़ सके। इसी अभिप्राय से हम एक शक्तिशाली समुद्री बेड़े का निर्माण कर रहे हैं।"

मुरमोन्स्क तथा ब्लाडीवोस्टक,- इन दो स्थानों में जहाजी बेड़ा बढ़ाने का कार्य प्रारम्भ हो चुका है। परन्तु युद्धनौकाओं के लिए जिस प्रकार के बन्दरगाह की आवश्यकता होती है, वैसा उत्तम बन्दरगाह रूस के पास एक भी नहीं है। बोलशेविकों ने जिस अन्यायी जारशाही को नष्ट-भ्रष्ट किया, उसके पास भी वैसा बन्दरगाह नहीं था। जहाजी बेड़े को प्रबल बनाने के लिए ऐसे बन्दर-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्राह की आवश्यकता होती है, जो बरफ से सदैव सम्पूर्ण मुक्त हो। रूसी साम्राज्य में इस प्रकार का हिम-विमुक्त बन्दरगाह न कभी था, न अब है। ऐसे बन्दरगाह की प्राप्ति के लिए रूसी साम्राज्य सदैव से प्रयत्नशील रहा है। प्रबल नौकादल न होने के कारण रूस शक्ति होने पर भी स्पर्धा-क्षेत्र में आगे न बढ़ सका। और इसका एकमात्र कारण था 'हिम-विमुक्त' बन्दरगाह का सम्पूर्णाभाव। फलतः ऐसे बन्दरगाह के लिए रूस सदा लालायित रहा। ऐसे एक बन्दरगाह के लिए रूस ने अनेक साहस व षड्यन्त्र किए। रूस का सारा आधुनिक इतिहास 'हिममुक्त' बन्दरगाह के इस विकट प्रश्न पर केन्द्रीभूत है। वर्त्तमान रूसी आक्रमण की कुञ्जी है—'हिममुक्त बन्दरगाह'। ऐतिहासिक काल में कुस्तुन्तुनिया को जीतकर भूमध्यसागर में प्रवेश करने की रूस ने अत्यधिक चेष्टा की थी। रूसी प्रयत्नों को विफल करने का कार्य किया ब्रिटिश साम्राज्य ने। अतः रूस को पराभव स्वीकार करना पड़ा। इस दिशा में ब्रिटिश साम्राज्य रूसी साम्राज्य का सदा विरोध करता रहा है। द्वितीय महायुद्ध के मित्रों के पक्ष में समाप्त हो जाने पर भी इस परिस्थिति में विशेष अन्तर नहीं आया है। यही नहीं, अपितु पारस्परिक अविश्वास बढ़ता ही जा रहा है। इस अविश्वास के बढ़ने का परिणाम होगा विश्वयुद्ध। प्रसिद्ध लेखक ग्रेगर बीनस्टाक (Gregor Bienstock) ने रूसी साम्राज्य के भविष्य के सम्बन्ध में निम्नलिखित पंक्तियाँ लिखी हैं, जो चिन्तनीय हैं। ये पंक्तियाँ उन्होंने अपनी प्रख्यात पुस्तक 'योरप एण्ड वर्ल्ड पालिसी' में सन् १९३६ में लिखी थीं—"आज ब्रिटेन और रूस के बीच प्रतिस्पर्द्धा की भावना प्रच्छन्न रूप में है। पर यह किसी समय तीव्र हो सकती है। काकेशश से पामीर तक का क्षेत्र इन दोनों महत् शक्तियों का प्रभावक्षेत्र है, जहाँ इन दोनों में सङ्घर्ष होता रहता है। संसार में सौ वर्ष पुरानी शत्रुता यदि कहीं विद्यमान है तो वह रूस और ब्रिटिश साम्राज्य के बीच है।" महत्त्वपूर्ण आर्थिक और अंशतः राजनैतिक केन्द्रों का एशिया की ओर बदला जाना विशेष परिस्थितियों में शत्रुता की इस भावना को और भी तीव्र कर सकता है। जारशाही के रूस में और ब्रिटेन में समस्त विवादास्पद क्षेत्रों के सम्बन्ध में एक सन्धि हो गई थी, जो उन दोनों साम्राज्यों की मैत्री का आधार थी। आज इस प्रकार की कोई सन्धि अस्तित्व में नहीं है, जो लन्दन और मास्को के बीच एशिया सम्बन्धों को निर्धारित कर सके। इस दृष्टि से सोवियट रूस ने जापान को पराजित कर दिया और उसके फल-स्वरूप यदि पूर्वीय एशिया में रूस की प्रभुता स्थापित हो गई, तो इससे ब्रिटिश साम्राज्य को भारी खतरा उत्पन्न हो जाएगा। समस्त एशियायी विशेषतः पूरी मध्य एशिया से और मध्यपूर्व से समस्याएँ तब प्रबल हो उठेंगी और ब्रिटेन के अधिकृत क्षेत्रों में रूस का दबाव बहुत बढ़ जाएगा, साथ ही विजयी सोवियट रूस ग्रेट ब्रिटेन के एशियायी उपनिवेशों में क्रियाशीलता का आधार बन जाएगा। अतः एक अँगरेज की दृष्टि में पूर्वी एशिया में रूस या जापान की प्रबलता समान रूप से भयानक है।

रूस आज विजयी हुआ है। अनुभवी सेना, युद्ध विशारद तथा सर्वश्रेष्ठ सेनानी आज रूस के पास हैं। रूस का आर्थिक शक्ति-केन्द्र तथा उत्पादन-केन्द्र आज साइबेरिया में हैं; और रूस आजकल ईरान में मार्ग हिन्दमहासागर में घुसने पर तुला भी है। भविष्यकाल विश्वयुद्ध के बीज इस प्रकार आज बोए जा रहे तथा जानते हुए संसार के सारे राष्ट्र उस प्रलयङ्करी की ओर अग्रसर हो रहे हैं।

आज अकेला ब्रिटिश साम्राज्य रूस के साथ युद्ध कर सकता; अतः अमरीका को घसीटकर योरप राजनैतिक क्षेत्र में लाने की भरसक चेष्टा ब्रिटेन कर है। इस प्रयत्न में भी ब्रिटेन को यश मिलने सम्भवना बहुत कम ज्ञात होती है। कुस्तुन्तुनिया ईरान की खाड़ी के बन्दरगाहों व कराची पर रूस की न लगी हो सो बात नहीं। कराची अधिक दूर कुस्तुन्तुनिया का प्रश्न अधिक विकट हो गया है; ईरान घुसना या ईरान को अपना अङ्कित बनाना, ये दोनों सहज-साध्य हैं, सुलभ हैं; अतः रूसी रीछ उस मार्ग दृढ़तापूर्वक बढ़ रहा है।

रूस व ईरान का सम्बन्ध बहुत प्राचीन है; ई का कश्यप (काम्पियन) समुद्रीय किनारा कतिपय तक रूस के अधीन था। पहला रूसी क्रान्तिक "स्टेकाराजिन" ईरान के कश्यप-समुद्र-समीप के भा छिपकर रहता था; व जार की सेना वापस जाते पुनश्च, अपनी गुफा में से निकलकर ऊधम मचाना आ करता था। वोल्गा नदी में से चुपचाप अपनी लेकर, वह अकस्मात् किसी नगर पर आक्रमण कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और लूट-मार करके अपनी गुफा में, ईरान के उत्तरी भाग में, कश्यप समुद्र के किनारे पर छिप जाता था। ईरान का कास्पियन किनारा सन् १७३२ पर्यन्त रूस के अधीन था। इसके बाद वह भाग ईरान को लौटाया गया। सन् १७३२—१८३० पर्यन्त के एक शतक में रूसी आक्रमण बहुत धीमे-धीमे हो रहा था। योरप में फ्रेंच-क्रान्ति व नेपोलियन की आँधी चल रही थी; उस आँधी में योरपीय राष्ट्रों के साथ रूस भी फँस गया था। नेपोलियन की हार होने के बाद रूसी साम्राज्य का आक्रमण पुनरपि शुरू हुआ। सन् १८३० में जार ने मध्य एशिया जीतने का 'श्रीगणेश' किया। इस समय रूसी साम्राज्य की पूर्व सीमा यूरल-नदी के मुख से लेकर ओरेंबर्ग होते हुए सेमिपालातिन्स्क पर्यन्त थी। इस बृहत् सीमा का संरक्षण छोटे-बड़े मजबूत किलों तथा कतिपय सैनिक केन्द्रों आदि के द्वारा किया गया था। सन् १८३९-४० में रूस ने खीवा के खान के साम्राज्य पर धावा किया। सन् १८३९ में प्रान्ताधिपति काउंट पेरोवस्की के नेतृत्व में यह कार्य आरम्भ हुआ। इस आक्रमण के लिए तीन सहस्र पदाति, व दो सहस्र कोसेक अश्वदल तथा तोपें आदि सामान इकट्ठा किया गया था। यह सेना लेकर काउंट पेरोवस्की, सन् १८३९ के नवम्बर में ओरेंबर्ग छोड़कर खीवा के साम्राज्य की ओर बढ़ा। ६०० मील का रेगिस्तान उल्लङ्घन करके खीवा पहुँचना अति विकट कार्य था; इस विकट कार्य को सुगम करने के लिए काउंट पेरोवस्की ने व्यवस्था भी अच्छे ढङ्ग से की थी। अन्नादिक तथा बारूद आदि सामान लाने के लिए एक विशेष दल नियुक्त किया था। इस दल में सहस्रावधि ऊँट थे। परन्तु खीवा के भयानक रेगिस्तान में, अत्यधिक शीत के कारण, पेरोवस्की के अधिकांश ऊँट मर गए, अतः अन्नादिक सामान का अभाव हो गया और पेरोवस्की को पराभूत होकर ओरेंबर्ग वापस आना पड़ा। खीवा तो बहुत दूर रहा, पेरोवस्की "उस्टउर्ट" (Ust-Urt) के प्लेटो तक न पहुँच सका। यह उस्टउर्ट भाग कश्यप व अरल समुद्र के बीच में है; काउंट पेरोवस्की १८४० के जून में ओरेंबर्ग पहुँचा।

रूस के इस अयशस्वी आक्रमण से इँग्लैंड में एक सनसनी सी फैल गई। ब्रिटिश साम्राज्य के ठेकेदार चिन्तित हो गए और वहाँ रूस-विरोधी षड्यन्त्र का निर्माण होने लगा। इस समय मेजर टॉड नामक ब्रिटिश राजदूत हिरात में रहता था। इसने कै० जेम्स अपटन व कै० रिचमांड शेक्सपीयर को खीवा भेजा। मि० मैकनाथन महोदय ने तो खीवा तथा बुखारा के प्रतिगामी राज्यों को सहायता देने के लिए सैन्य भेजने की सूचना मि० बर्न्स (Burns) को दी थी। किन्तु बर्न्स महोदय इस धोखे को पहचानते थे। उनके द्वारा इस धोखे की सूचना मिलने पर मैकनाथन महोदय ने अपना विचार स्थगित कर दिया। काउंट पेरोवस्की की पराजय से रूसी सरकार ने हतोत्साह होकर चुप बैठना पसन्द नहीं किया; किन्तु द्विगुणित उत्साह से पुनरपि आक्रमण की तैयारी होने लगी। सन् १८४४ में किरघीज लोगों का सारा प्रदेश रूसी साम्राज्य में मिलाया गया। सन् १८४७ में सरदारिया नदी के मुख का प्रदेश रूसी सेना ने जीत लिया व वहाँ आरालस्क नामक एक दृढ़ दुर्ग भी बना दिया। इस दुर्ग को मुख्य केन्द्र बनाकर रूसी आक्रमण चारों ओर धड़ाके से होने लगा।

मध्य एशिया में इस समय दो सुलतान—जिनको खिलाफत का पेशवा कहा जाता था—राज्य करते थे। उनके पास प्रबल सेनाएँ थीं। लूट-मार करना उनका कार्य था। खीवा व बुखारा के राज्यों का परिचय उस समय के लेखकों ने 'अंधेर नगर' कहकर दिया है। ये दोनों मुस्लिम राज्य "अंधेर नगर" के सच्चे रूपचित्र थे। इन खानों के बन्दी-गृहों में ४०० से अधिक रूसी स्त्री-पुरुष सड़ रहे थे। मनुष्यों का क्रय-विक्रय वहाँ होता था। लूट और हत्या आदि की विपुलता थी। इसके अतिरिक्त रेगिस्तानी संस्कृति ने संसार में और कुछ किया भी नहीं।

सन् १८५३ में रूस ने "अकमसजिद" "(Ak-Masjid) पर आक्रमण करके उसे जीत लिया। सन् १८५४ में "बर्नोई" (Vernoe) नाम का एक अभेद्य दुर्ग बाँधा गया और वहाँ, पाँच सहस्र उपनिवेशी सैनिक (Military Colonist) रक्खे गये। इस किले को और दृढ़ करके आक्रमण केन्द्र बनाया गया। और इस दुर्ग के बल पर सन् १८५५ से १८६८ तक मध्य एशिया का अधिकांश भाग रूस ने जीत लिया। सन् १८७६ के लगभग 'खोकंद' विभाग भी रूसी साम्राज्य में मिलाया गया।

रूसी साम्राज्य का विस्तार जैसे-जैसे होता जाता था, उसी प्रकार उस विस्तीर्ण साम्राज्य का नियन्त्रण करने के लिए रचनात्मक कार्य भी किए जाते थे। सन् १८६६ में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूसी सेना ने क्रास्नोवस्क पर आक्रमण करके उसे जीत लिया। आज जो लौहमार्ग "सेंट्रल एशियन रेलवे" नाम से ख्यात है, उसका आरम्भ क्रास्नोवस्क से होता है। इस नगर के बाद रूसी सेना ने चिकिशलिअर (Chikishaliar) नामक महत्त्वपूर्ण स्थान बलपूर्वक लिया। यह स्थान "अत्रेक" (Atrek) नदी के मुख के पास है; यह स्थान व 'यामूत्तुर्कोयनों का' प्रदेश वास्तव में ईरान के वर्चस्व क्षेत्र में था। किन्तु रूस ने बलपूर्वक उस पर आक्रमण करके उसे जीत लिया। ईरान ने, इस आक्रमण के बारे में, अपने राजदूत के द्वारा पूछ-ताछ की; रूस ने विनम्र भाव से उत्तर दिया कि "यह आक्रमण प्रदेश जीतने की इच्छा से नहीं किया गया; किन्तु व्यापार-वृद्धि के उद्देश्य से तथा संरक्षण के उद्देश्य से कुछ सेना भेजी गई है; इस सेना ने उक्त प्रदेश में शान्ति-स्थापन का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है; अतः उस पर आपत्ति करना उचित नहीं।"

सन् १८७३ में जनरल कोफमन ने अकस्मात् भारी आक्रमण करके खीवा का राज्य पूर्ण रूप से जीत लिया। इस विजय के बाद रूसी सेना तुर्कोयनों के प्रदेश में आक्रमण करने लगी; यह प्रदेश ईरान के उत्तर में आता है। इस प्रदेश में तुर्कोयनों का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण व अजेय समझा जानेवाला स्थान था। इस महत्त्वपूर्ण स्थान का नाम है—"जीओटेक"। जीओटेक पर प्रथम आक्रमण १८७९ में जनरल लोपाकिन के नेतृत्व में हुआ। किन्तु तुर्कोयन नेता मकदूमअली ने बड़ी वीरता से रूसी सेना के साथ युद्ध करके उसको हरा दिया। जनरल लोपाकिन भागकर रूसी प्रदेश में आ गया। इस युद्ध से अधिकांश रूसी सेना मारी गई। तुर्कोयनों को लूट भी बहुत मिली। इस घटना के बाद 'जीओटेक' जीतने के लिए सुप्रसिद्ध सेनापति स्कोबेलोंफ की नियुक्ति हो गई। जीओटेक जीतने के लिए सेनापति स्कोबेलोंफ ने सात सहस्र पदाति तथा ६० बड़ी-बड़ी तोपें एकत्र कीं; आक्रमण की तैयारी परिपूर्ण होते ही जनरल स्कोबेलोंफ ने जीओटेक पर भयानक आक्रमण किया। जीओटेक का किला बहुत मजबूत था; इसके परिवेश की मोटाई नीचे के भाग में ३२ फुट व ऊपरी भाग में २५ फुट से अधिक थी। किले में वीर मकदूमअली व उसकी विजयी सेना विश्राम कर रही थी। इस सेना ने रूसी सेना को एक बार हराया भी था, अतः उसका साहस बढ़ चुका था। इस सेना के पास आधुनिक शस्त्रास्त्र भी थे; किले के परिवेश में स्थान-स्थान पर तोपें भी लगाई गई थीं। तथा युद्ध की अन्य तैयारी भी थी। किन्तु भयप्रद हार होने के पश्चात् रूसी सेना फिर आक्रमण करने में समर्थ न होगी, ऐसा मकदूमअली तथा उसके सहकारियों का विश्वास था; अतः वे युद्ध के लिए सुचारु रूप से तैयार न थे। इधर जनरल स्कोबेलोंफ जैसा अति साहसी व युद्धविद्या-विशारद नेता रूसी सेना को मिला था; साथ ही पिछले पराभव का बदला लेने की इच्छा से सारी रूसी सेना तैयारी कर रही थी। ये बातें मकदूमअली को अज्ञात थीं। एक दिन अकस्मात् जनरल स्कोबेलोंफ की भयानक सेना यमदूत की भाँति जीओटेक पर आ धमकी। मकदूमअली ने वीरता से युद्ध किया, किन्तु उसकी सेना तितर-बितर हो गई व रूसी सेना किले में घुस गई और जीओटेक पर रूसी झण्डा फहराने लगा। जीओटेक से आगे बढ़कर रूसी सेना ने "मर्व" नामक महत्त्वपूर्ण स्थान जीत लिया। आज यह 'मर्व' रूसी राज्य का तथा रूसी सेना का महत्त्व-पूर्ण केन्द्र है। 'मर्व' से आगे बढ़कर रूसी सेना ने ईरान व अफगानिस्तान के बीच के प्रदेश पर भी अपना अधिकार जमाया।

जनरल स्कोबेलोंफ की विजय से अँगरेज बहादुर चौकन्ने हो गए। जनरल स्कोबेलोंफ सदैव कहा करता था—"रूस मध्य एशिया में जितना ही शक्तिशाली होगा, इँग्लैंड भारत में उतना ही निर्बल हो जाएगा और इसी लिए योरप में उसी अनुपात से उसका प्रभाव कम हो जाएगा।"

रूस के वर्तमान राजनैतिक उद्योग इस महान् सूत्र के अनुसार चल रहे हैं।

ईरान को अपना अङ्गगत बनाना उपर्युक्त सूत्र का एक महान् अङ्ग है। इस कार्य को पूर्ण करने के उद्देश से रूस सन् १८८० से आज तक उद्योगशील रहा है। १९३९ के युद्ध में रूस के विजयी होने तथा पूर्व में जापान का आकस्मिक पतन होने के कारण रूस का एशिया के क्षेत्र में विरोध करनेवाला अँगरेजों के अतिरिक्त कोई नहीं है। अतः रूस को पश्चिमी एशिया में मनमानी करने का सुवर्ण अवसर मिला है। रूस उससे उचित लाभ उठा भी रहा है। ईरान को अङ्गगत बनाने के कार्य का एक प्रधान कार्य भाग अजरबैजान को स्वायत्त बनाने के निमित्त से परिपूर्ण हो चुका है। इसके बल पर आगे का कार्य यथावकाश किया जाएगा, इसमें कोई सन्देह नहीं।

ईरान की वर्तमान अवस्था अत्यन्त चिन्तनीय है; सैन्यबल की दृष्टि से ईरान रूस के सामने नगण्य सा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थशक्ति में भी ईरान अधिकांश परावलम्बी है। ईरान में योरपीय राष्ट्र घुसे हैं जो उसे सर्व प्रकार से चूसते हैं; इँग्लैंड, बेलजियम, रूस आदि राष्ट्रों के हित ईरान से सम्बद्ध हैं। तेहरान की ट्रामवे बेलजियम की है; पेट्रोल में ब्रिटिश पूँजी लगी है। अजरबैजान का अधिकांश भाग रूसी पूँजी से व्याप्त है। ईरान को अङ्कगत बनाने के लिए जो प्रयत्न अब तक हुए हैं, उनमें ब्रिटिश कूट-नीतिज्ञों का भाग अधिक है। सन् १८९१ में ब्रिटिश पूँजीपतियों ने कूटनीति के बल पर ईरानी तमाखू का सम्पूर्ण ठेका लिया; ईरानी तमाखू का व्यापार करने के उद्देश्य से इँग्लैंड में एक कारपोरेशन स्थापित किया गया। इस कारपोरेशन की पूँजी थी, ६५०००० पौंड। तमाखू के व्यापार में प्रतिवर्ष पाँच लक्ष पौंड लाभ होगा ऐसा कार-पोरेशन ने अन्दाज लगाया था; इस लाभ का $\frac{1}{2}$ भाग ईरान के उस समय के सम्राट् नासिरुद्दीन शाह को देना निश्चित हुआ था। इस वार्षिक लाभ की लालसा से शाह नासिरुद्दीन ने तमाखू का सम्पूर्ण ठेका ब्रिटिश कारपोरेशन को दिया था। परन्तु ईरानी जनता इसके विरुद्ध थी। इस विरोध में से एक बलशाली जनान्दोलन का निर्माण हुआ। जनता का यह आन्दोलन दिन प्रतिदिन बढ़ता गया और अन्त में तमाखू का ठेका स्थगित किया गया। ठेका भङ्ग होने से भी ब्रिटिश पूँजीपतियों का लाभ हुआ; क्योंकि हर्जाने में ईरान को पाँच लाख पौंड देने पड़े। ईरान के कोष में किञ्चिन्मात्र धन न था; अतः प्रतिशत ६ सूद देकर कर्जा लिया गया; इस प्रकार ईरानी जनता के ऊपर प्रतिवर्ष सूद के रूप में ३०,००० पौंड का बोझा लादा गया। इसका परिणाम यह हुआ कि नासिरुद्दीन शाह को अपनी जान से हाथ धोना पड़ा। ईरान में षड्यन्त्रकारियों की कमी नहीं; कुप्रसिद्ध हसन-सब्बाह निर्मित हत्या-परम्परा आज भी विद्यमान है और 'फिदाई' अपने खञ्जर का उपयोग करने में सदा तत्पर रहते हैं। ऐसे ही एक फिदाई ने—जिसका नाम था 'मिर्जा मुहम्मद रजा'—१ मई १८९६ को शाह नासिरुद्दीन का वध किया था। इस घटना के बाद ८ जून को मुजफरुद्दीन शाह ईसन के सिंहासन पर आरूढ़ हुए। त्रस्त जनता कुछ वर्ष पर्यन्त स्वस्थ रही, परन्तु यह स्वस्थता क्षणिक थी। दलित जनता फिर उभड़ी। उसकी माँग थी 'कॉंस्टिट्यूशनल गवर्नमेंट'। तेहरान में विराट् प्रदर्शन हुए। परिणाम यह हुआ कि प्रजा को 'कॉंस्टिट्यूशनल गवर्नमेंट' दी गई और ७ अक्टूबर १९०६ को ईरान की 'मजलिस' का विधिपूर्वक आरम्भ हुआ। १७ जनवरी १९०७ को मुजफरुद्दीन की मृत्यु पर मुहम्मद अली मिर्जा सिंहासनारूढ़ हुए। राज्यारोहण के समय शाह ने 'कॉंस्टि-ट्यूशनल गवर्नमेंट' न तोड़ने की शपथ ली थी। किन्तु शाह ने उसके अनुसार कार्य नहीं किया। वे प्रायः जन-विरोधी कार्य करते थे। अताब नामक एक व्यक्ति, जो क्रान्ति और जनता का विरोधी था, प्रधान मन्त्री बनाया गया था। इसने जनता को अधिक सताया। फलतः प्रजा की रोषाग्नि में उसकी भी आहुति डाल दी गई। राजा-प्रजा में एक प्रकार का सङ्घर्ष आरम्भ हुआ। जनता का सङ्गठन क्रान्तिवादी दल ने किया; इस दल की अनेक गुप्त संस्थाएँ काम करती थीं। इन संस्थाओं के सदस्यों को 'फिदाई' कहते थे। कहने की आवश्यकता नहीं कि जनद्रोही अनेक अधिकारी इन फिदाइयों के द्वारा मौत के घाट उतारे गये थे। इधर ईरान में यह गृहयुद्ध चल रहा था, उधर योरपीय राष्ट्र विशेषतः इँग्लैंड और रूस ईरान का आपस में बँटवारा करने के भयङ्कर कार्य में व्यस्त थे। सन् १९०७ में ३१ अगस्त को रूस व ब्रिटेन में एक समझौता हुआ। इसके अनुसार ईरान के तीन भाग किए गए। उत्तरी ईरान रूसी वर्चस्व क्षेत्र में, दक्षिणी ईरान ब्रिटिश वर्चस्व क्षेत्र में और दोनों के बीच का प्रदेश स्वतन्त्र ईरान नाम से पूर्ण स्वतन्त्र रक्खा गया। इस बँटवारे के अतिरिक्त प्रायः सब शासन-विभाग में परकीय लोगों का प्रभुत्व स्थापित हो गया। कस्टम-विभाग रूस के अधीन रहा; इसमें कुछ बेलजियन अधिकारी थे; किन्तु वे रूस के इशारे पर नाचते थे। तेहरान की ट्रामवे बेलजियम की थी। ईरान की तेल की खानें ब्रिटिश पूँजी खरीद चुकी है, ईरान का अधिकांश व्यापार रूस व ब्रिटेन के अधिकार में है। ईरान का धन दो विदेशी बैंकों के अधीन है। एक बैंक रूस का है, दूसरी ब्रिटिश कारपोरेशन का। इस प्रकार सारा ईरान योरपीय राष्ट्रों के हित-सम्बन्धों से बँधा पड़ा है। अब अमरीका भी ईरान में घुसना चाहता है; किन्तु रूस जहाँ तक हो सकेगा, यह बात होने नहीं देगा।

रूस ईरान के द्वारा हिन्द महासागर में घुसना चाहता है। ईरान में से घुसना सुलभ है। ईरान के उत्तर भाग के लोग रूस के भक्त हैं। ईरान के अन्य भाग में बखत्यारी जाति के लोग रहते हैं; इस जाति के अनेक गुट्ट या सङ्घ हैं। सङ्घ-नायक या सङ्घ के प्रमुख को 'खान' कहते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ये खान रूस के पक्षपाती थे व हैं भी। सन् १९०७ पर्यंत ईरान में रूस का एक पृथक् "कोसक ब्रिगेड" रहता था। इस ब्रिगेड ने ईरान का उत्तरी भाग पूर्ण रूप से छान डाला था। इस ब्रिगेड के बहाने अनेक रूसी गुप्तचर ईरान में स्वच्छन्दतया घूमते फिरते थे। आज भी ईरान में रूसी सेना है और उसके अधीन ईरान का उत्तरी भाग है। अजरबैजान में जो विद्रोह हुआ था उसके पीछे रूसी गुप्तचर विभाग का सर्वशक्तिमान् हाथ था। आज अजरबैजान ईरान से विभक्त-सा हो गया है। यह विभक्तता, यदि ईरानी मन्त्रिमण्डल रूस-विरोधी चेष्टा अल्प रूप में भी करेगा तो बढ़ जाएगी और उसमें से क्रान्ति की ज्वाला निकलने लगेगी। वह ज्वाला ईरान को रूस का अङ्गगत बनाने का कार्य पूर्ण करेगी। ईरान का रूस के अधीन बनना ब्रिटिश साम्राज्य के लिए अतीव भयप्रद है।

ब्रिटिश साम्राज्य सन् १९१४-१८ के योरपीय युद्ध में विजयी हुआ तथा १९३९ के भीषण युद्ध में भी विजयी हुआ। इन दोनों विजयों का प्रधान कारण था अमरीका। सन् १९३९ के युद्ध में रूस अजेय राष्ट्र सिद्ध हो चुका है। हिटलर के जर्मनी का नाश करने के कार्य में इँग्लैंड को रूस तथा अमरीका का साहाय्य मिला था। जर्मनी नष्ट हुआ, किन्तु रूस अत्यन्त बलवान् हो गया। जार के समय में रूस को रोकने के लिए इँग्लैंड आस्ट्रिया को सहायता दिया करता था; अब समय बदल गया है। अब रूस को रोकने के लिए योरप में कोई राष्ट्र बचा नहीं; अतः इँग्लैंड को रूस के विरुद्ध खड़ा होना पड़ रहा है। रूस के संभाव्य आक्रमण को रोकने के उद्देश से इँग्लैंड ने ग्रीस में अपनी सेना घुसाई तथा फिलिस्तीन के यहूदियों के विद्रोह का बहाना लेकर वहाँ भी उत्तमोत्तम ब्रिटिश सेनाएँ व उत्तमोत्तम युद्ध-सामग्री एकत्र की गई। फ्रांस के साथ जो सन्धि की गई है उसका उद्देश्य भी रूस के संभाव्य आक्रमण को रोकने के अतिरिक्त और कुछ नहीं हो सकता। अरब लीग को बढ़ाने तथा ट्रान्सजार्डन को स्वातन्त्र्य देने का अभिप्राय भी सम्भवतः यही है।

उधर रूस ने ईरान में अपने पैर अच्छी तरह जमा लिए हैं। फ्रांस में कम्यूनिस्ट पक्ष ने फ्रेंच शासन की बागडोर अपने हाथ में ली है। इजिप्ट से ब्रिटिश सेना हटाने की माँग दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। ग्रीस में समाजवादी दल फिर विद्रोह की तैयारी कर रहा है। मुसलमानी जनता को खुश करने के लिए समरकन्द की यात्रा पर की रोक रूस ने हटा ली है। भारत का कम्यूनिस्ट दल मुस्लिम लीग को जो भरसक सहायता देता है इसके पीछे रूस की प्रेरणा नहीं, सो बात नहीं। अमरीका को रोकने के लिए भी रूस बहुत कुछ कर रहा है; अमरीका में हड़तालों की आँधी निर्माण करने की चेष्टा हो रही है। कनाडा व अमरीका में रूसी गुप्तचर सर्वत्र विचरण करने लगे हैं; कनाडा में कुछ रूसी गुप्तचर पकड़े भी गए हैं। कम्यूनिस्ट दल के द्वारा रूस के उद्योग यत्र-तत्र सर्वत्र धीरे-धीरे चल रहे हैं। इन सब चेष्टाओं का अन्तिम परिणाम युद्ध के सिवा और क्या होगा?

अमरीका भी रूस के विरुद्ध अपनी तैयारी कर रहा है। साइबेरिया का एक भाग अलग करके पैसिफिक साइबेरिया के नाम से एक स्वतन्त्र राज्य निर्माण करने की चेष्टा अमरीका-द्वारा की गई थी; परन्तु जर्मनी की हार होने के कारण यह कार्य पूरा न हो सका। जापान के पतन से रूस सम्पूर्णतया निर्भय हो गया है। अब प्रशान्त में रूस का भी प्रवेश हो चुका है। रूस से भविष्य में युद्ध करना होगा, यह बात अमरीका भली भाँति जानता है; अतः अभी से उसकी तैयारी हो रही हो तो उसमें कोई आश्चर्य नहीं। स्टालिन के साम्राज्य का आक्रमण ईरान से होना अधिक सम्भव है। अतः उसको रोकने के लिए अमरीका कटिबद्ध हो रहा है। सऊदी अरब में अमरीका ने हवाई अड्डे निर्माण किए हैं। सर्वोत्तम हवाई अड्डा ईरानी खाड़ी के दक्षिणी किनारे पर सऊदी अरब के "धरान" नामक स्थान में बनाया गया है; इसके अतिरिक्त और दो हवाई अड्डे सीरिया व फिलिस्तीन में बनाए गए हैं; यहाँ दूरगामी विमान रक्खे गए हैं। अड्डों का सारा काम अमरीकन सेना के द्वारा किया जाता है। पेट्रोल के लिए भी पाइप लाईन डाली जा रही है। उसका संरक्षण भी अमरीका के जिम्मे है। इस प्रकार अमरीका भी रूस के विरोध में इँग्लैंड के साथ-साथ खड़ा हो गया है। इँग्लैंड-अमरीका व रूस में आपसी वैमनस्य, द्वेष और अविश्वास शीघ्रतया बढ़ रहे हैं। एक पक्ष दूसरे पक्ष को हराने की तैयारी सावधानी से कर रहा है। इस तैयारी के द्वारा विश्व-युद्ध के बीज बोए जा रहे हैं। संसार, जान-बूझकर भयानक व प्रलयकारी विश्व-युद्ध की ओर जा रहा है।

——

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आत्म-बलिदान

श्री योगेन्द्रनाथ सिनहा

रोलाराय ने पुकारा—पूनी।

बगल के कमरे से पतली आवाज आई—आई।

रोलाराय बिस्तर पर लेटे हुए थे। सन्ध्या हो रही थी। पूर्णिमा आकर बिस्तर के पास कुर्सी पर बैठ गई। कुछ देर तक कोई कुछ न बोला। कमरे में सिर्फ़ एक आवाज़ थी—किसी के सिसक-सिसककर रोने की। पूर्णिमा ने देखा, रोलाराय की स्त्री उनके पास दूसरे बिस्तर पर पड़ी रो रही है। उसने रोलाराय से पूछा—भाभी क्यों रो रही हैं?

रोलारायजी चुप एकटक ऊपर की ओर देखते रहे। हाथ में बड़े यत्न से बँधी हुई पट्टी थी। देखने से तो ऐसा लगता था मानो कठिन लड़ाई से वीर-आहतों की लिस्ट में नाम लिखाकर अभी-अभी लौटे हों, पर थी केवल उँगली की चोट। पूर्णिमा ने फिर पूछा—भाभी क्यों रो रही हैं?

रोलाराय ने बिना आँख उठाए झुँझलाकर कहा—अगर तुम्हें अभी तक यही नहीं मालूम हुआ कि क्यों रो रही हैं, तो तुम्हारे यहाँ आने का कोई प्रयोजन नहीं। जा सकती हो।

पूर्णिमा एक-दो मिनट चुप बैठी रही। फिर उठकर चली गई।

कुछ देर के बाद रोलाराय ने फिर पुकारा। पूर्णिमा फिर आकर बैठी। रोलाराय ने इस बार करवट बदली और धीरे-धीरे बोले—देखो पूनी, मेरा विश्वास था तुम अब तक सब समझ गई होगी। तुम खुद देख रही हो कि इनका स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता। इनके पीछे अपनी मिट्टी कहाँ तक खराब करूँ? मैं इनके लिए काशी में एक मकान ठीक कर रहा हूँ। ख़र्च जितना चाहें, लें। मैं इन्हें सर्वस्व देने को तैयार हूँ। पर ये इसी प्रस्ताव पर रो रही हैं।

कुछ देर की निःस्तब्धता के बाद रोलाराय फिर बोले—पूनी, तुम्हीं मेरे इस निराशा-भरे जीवन-अन्धकार में प्रकाश ला सकती हो, केवल एक शब्द बोलकर। आज उसी की आशा से तुम्हें बुलाया है। बोलो।

पूर्णिमा की अवस्था थी तेज नाचती हुई चर्खी में बैठे हुए मनुष्य की। एक क्षण के भीतर इतने दृश्य नेत्रों के सामने आए और निकल गए कि मानस-पट पर किसी का चित्र अङ्कित नहीं हो सका। सिर घूम रहा था। मूक बैठी रही, निष्प्रभ मानस-नेत्रों से अजाना प्रदेश देखती हुई।

कई क्षण के बाद रोलाराय ने दाहिना हाथ धीरे-धीरे बढ़ाकर पूर्णिमा की उँगलियाँ पकड़ीं और विनीत कातर स्वर में बोले—पूनी, बोलो। तुम्हारे एक शब्द पर मेरे जीवन का अन्धकार या प्रकाश निर्भर है। आज तुम्हें "हाँ" कहना ही पड़ेगा।

पूर्णिमा मानो अचानक होश में आई। उँगलियों के स्पर्श से उसका बदन सिहर गया। अब उसकी अवस्था थी उस मनुष्य की, जो अँधेरे में निश्चिन्त बढ़ता जाता हो, पर अचानक क्षणिक बिजली के प्रकाश में अपने को विषैले सर्प के मुँह में पाए। घबराकर उठ बैठी और लड़खड़ाती जबान से बोली—आप मुझसे ये बातें क्यों पूछते हैं? मेरे तो माँ-बाप मौजूद हैं।

रोलाराय ने रूप बदला। उत्तेजित हो रूखे स्वर में बोले—मैं तुम्हारे पैरों पर नहीं गिर रहा हूँ, पूर्णिमा देवी, और न कोई जबरदस्ती ही है। मैं तुम्हें अपने अतुल धन और कोमल हृदय की रानी बनने का अवसर दे रहा हूँ। इतने दाम पर तुम्हारी जैसी सैकड़ों को रास्ता चलते खरीद सकता हूँ। पर तुम्हारी ओर प्रेम से अधिक दया खींचती है। मर्जी तुम्हारी है, लो या छोड़ दो।

पूर्णिमा पत्थर की मूर्त्ति-सी खड़ी रही। फिर झपटकर अपने कमरे में चली आई।

बाहर आकाश में काली घटा छा गई थी। हवा हू-हू कर चल रही थी। अचानक बिजली कड़की और ऐसी प्रलय की आँधी आई, जैसे खिड़की और दरवाजे टूट-टूटकर आकाश में उड़ जाएँगे। पर पूर्णिमा के हृदय की आँधी इससे भी तीव्र थी। घृणा और क्रोध से उसका रोम-रोम काँप रहा था। इस बाहर की आँधी में उसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शान्ति और सहानुभूति मिली। परमात्मा मानो वह उत्तर अपने मुँह दे रहे हों, जो दुर्बलता और असहायता से वह स्वयं सीधे न दे सकी थी। समाज में ऐसे नर-पिशाच भी हैं! छिः !!

[२]

रोलाराय जी आपादमस्तक खद्दर-धारी थे। और खद्दर को ये उसी तरह अस्त्र समझते थे, जैसे सिपाही अपनी बन्दूक या सङ्गीन को समझता है। बड़े सम्पन्न जमींदार थे, पर जब कांग्रेस की आँधी उठी तो देशभक्ति और त्याग का झण्डा ले आगे बढ़े। जेल जाकर कांग्रेसी 'हाजी' भी हो आए। एसेम्बली में जब कड़ाके की वक्तृता देते तो आश्चर्य होता कि ब्रिटिश साम्राज्य अभी तक किस तरह टिका हुआ है। पर जब कांग्रेस ने एसेम्बली का बहिष्कार किया तो ये अपना सत्यानाश करने पर राजी न हुए। गैर-कांग्रेसी मिनिस्टरी में उन्हें पार्लियामेंण्टरी सेक्रेटरी का पद मिल गया। लोग कहते हैं कि इस स्थान से इन्होंने यथोचित लाभ उठाया। भगवान् जाने, पर इनके भाई-बन्धु बड़ी-बड़ी ठीकेदारियों में फूलने-फलने तो लगे ही थे। बाजार में पेट्रोल इत्यादि मुफ्त मिल जाया करता था और नजराने की चीजों की गिनती करना तो छोटापन है। प्रत्येक समुचित अवसर पर अपने पद-पराक्रम से काम लेते। पचास के लगभग उम्र थी। शरीर मोटा, नाटा, स्वनाम-धन्य, पर दौड़-धूप में थकते न थे। आँखें थीं गोल-गोल, एक अजीब असुन्दर चाञ्चल्य से भरी। मुर्गी जब कूड़ों के ढेर से दाने ढूँढ़ती है, उस समय उसकी आँखें इसी तरह गोल और चाञ्चल्य भरी होती हैं, पर उनमें ऐसी असुन्दरता नहीं होती। रोलाराय के नोकदार मुँह को देखकर शृङ्गार रस की याद किसी को भले ही न आए, पर धन और प्रभुता का प्रेम के बाजार में ऊँचा स्थान है। जिन लोगों ने रोलाराय को सुन्दरियों से हँसते-बोलते देखा है, वे कहते हैं कि उन्हें एक क्षण के लिए उन नरभोजी राक्षसों की याद आ जाती है, जो खाने के पहले शिकार को देखकर मुस्कराते हैं।

पूर्णिमा एम० ए० क्लास की छात्रा थी, असाधारण सुन्दरी। शारीरिक रूप-लावण्य से परे उसकी असाधारणता थी आँखों की निर्मल ज्योति में, उसके अधरों की शिशु-मुस्कान में। इतनी शिक्षित होने पर भी, इस आधुनिक विभ्रान्त शिक्षा-प्रणाली के वातावरण में रहते हुए भी, वह इतनी निर्बोध थी, जैसे देहात की सीधी-सादी लड़की स्कूल में पढ़ रही हो। रहती थी लड़कियों के होस्टल में। जहाँ और लड़कियाँ अवकाश के समय यही पञ्चायत करतीं कि किसके पास प्रेम-पत्र आया है या किसके ब्याह की क्या सम्भावना है, वहाँ पूर्णिमा अकेली बैठी पढ़ती रहती या अपने मेल की दो-एक लड़कियों से शिक्षा-सम्बन्धी बातें करती। वह गम्भीर थी और उसके गुणों के कारण सभी लड़कियाँ उस पर श्रद्धा करतीं। उसका रोब-दाब मानतीं। सङ्गीत में निपुण थी, गला मीठा और दर्दभरा; पर एक बार कालेज के किसी उत्सव में पूर्णिमा का नाम जबरदस्ती दे दिया गया, तो वह डर के मारे यही मनाने लगी कि उत्सव ही न हो। आखिर उत्सव नहीं हुआ तो उसका पसीना सूखा।

पूर्णिमा के पिता साधारण औकात के आदमी थे। मामूली नौकरी थी और सात-आठ बच्चों का पालन-पोषण। पूर्णिमा पहली सन्तान थी, इसलिए प्रकृतिवश पिता का लाड़-प्यार इस पर सर्वाधिक केन्द्रीभूत था। पिता की यह एक सुन्दर पुतली थी, पर व्यवहार में पिता ही इसकी पुतली थे। पूर्णिमा की शादी की बात पहली बार चली थी, जब वह दस वर्ष की थी, एक जमींदार के घर। पिता डोल गए थे, पर हितैषियों ने बाल-विवाह को रोका। पूर्णिमा ने मैट्रिकुलेशन पास किया। उस समय वह १८ वर्ष की थी। हर तरह से एक सुयोग्य और भाग्यशाली पुरुष की स्त्री होने के उपयुक्त थी। पर हमारे अभागे समाज में तो कन्या की शादी नहीं होती, होती है उसके पिता की या पिता के धन की। लड़की तो निमित्त मात्र है। लड़की पद्मिनी या सरस्वती होते हुए भी यदि गरीब मा-बाप की हो तो कोई न पूछेगा। यदि शादी हुई तो नितान्त अयोग्य पात्र से। लड़की सूर्पनखा भी हो, पर पिता धनी हों तो अच्छे-से-अच्छा पात्र मिल सकता है।

पूर्णिमा को पिता ने कालेज में भर्ती कराया। उसने इंटर पास किया, फिर बी० ए०। बराबर पारितोषिक पाती रही। ब्याह की बात बीच-बीच में चलती, उस समय पिता कहते—ब्याह हो तो अच्छे घर में; इतना पढ़ा-लिखाकर भी अगर लड़की ऐसे ही घर में जाए जहाँ उसे अपने हाथों बर्तन मलने पड़ें, तो इससे कहीं अच्छा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि अविवाहित रहे। लड़कियाँ इतनी असहाय क्यों होंगी? पूनी को कानून पढ़ाऊँगा, एसेम्बली का मेम्बर बन सकती है, मिनिस्टर भी राजनीतिक क्षेत्र में लड़कियाँ हैं ही कहाँ?

[३]

रोलाराय से पूर्णिमा का परिचय तब हुआ जब वह एम० ए० की छात्रा थी और होस्टल में रहती थी। उसी होस्टल में उसकी एक सहपाठिनी ललिता भी थी। रोलाराय ललिता के काका होते थे, गाँव के नाते से। जमींदार थे, कलकत्ते में रहते थे। ललिता के माँ-बाप ने उन्हें कलकत्ते में ललिता का स्थानीय अभिभावक बना दिया था। एक दिन ललिता ने पूर्णिमा से कहा—पूनी, मुझे काका के घर जाना है। अकेली कैसे जाऊँ? चल न, तूभी घूम आ।

उस दिन से रोलाराय ललिता की देख-भाल अधिक यत्न से करने लगे। हर रविवार को या और छुट्टी के दिन मोटर और अपनी पत्नी को लेकर लड़कियों के होस्टल में पहुँच जाते और ललिता और पूर्णिमा को घर ले आते। पूर्णिमा से कहते—जब ललिता का काका हूँ तो तुम्हारा भी काका हुआ। यह घर अपना ही समझो। दावतें होतीं, ऐसे-ऐसे पकवान बनते जो बेचारी होस्टल की लड़कियों को मुअस्सर न हो सकते थे। शाम को मोटर पर सैर और सिनेमा। कुछ दिन के बाद ही पूर्णिमा का जन्मदिन आया। वह दिन रोलाराय के लिए मानो धर्मगुरु का शुभ जन्मदिन हो। बड़ी तैयारियाँ कीं और पूर्णिमा को कीमती भेंटें दीं।

पूर्णिमा को इस वसन्त कुसुम-अभ्यर्थना में आधिक्य न मालूम होता था, सो बात नहीं। उसने कितने ही मानव-चरित्र-विश्लेषण पढ़े थे, कहानियों और उपन्यासों से मनोविश्लेषण सीखा था। पर इस समय उसकी दशा उस असहाय मृगी की-सी थी जो बहेलियों के फन्दे से भयभीत होते हुए भी पुष्करिणी की ओर दबे पाँव बढ़ती जाती है। लाख चरित्र-बल होते हुए भी, फैशन के जुल्म से, जिसका केन्द्र आज-कल कालेज हो गया है, कौन बच सकता है? जब होस्टल की और लड़कियाँ जालिम साड़ियाँ पहनकर निकलतीं तब पूर्णिमा के मन में आकांक्षा और निग्रह के बीच दुर्दम द्वन्द्व छिड़ जाता। जब और लड़कियाँ बन्धु-बान्धव की मोटरों पर बैठ पिकनिक या अच्छे-अच्छे सिनेमा में जातीं तो पूर्णिमा को अकेली अपनी कोठरी में बैठे जीवन निस्सार और अर्थहीन लगता। पार्टियों में या कालेज के उत्सवों में जब दूसरी लड़कियाँ अपनी कीमती हाथ-घड़ियों को अकारण प्रकाशित करतीं तो पूर्णिमा अपनी चूड़ी देख शर्म से गड़ जाती। पर पिता की हैसियत इतनी न थी कि एक अच्छी साड़ी भी खरीद दें। साधारण मासिक खर्च देते तो उनकी कमर टूट जाती थी। ऐसी समस्या में पड़े थे कि आर्थिक दुरवस्था के कारण पूर्णिमा को कालेज में रख भी न सकते थे और निकाल भी न सकते थे। और संसार-चक्र से अनभिज्ञ पूर्णिमा का अबोध हृदय यह न जानता था कि अकारण कोई दाना नहीं छींटता।

एक बार कालेज की लम्बी छुट्टी हुई तो रोलाराय ने पूर्णिमा से कहा—चलो, मैं और ललिता मोटर से तुम्हें घर पहुँचा आएँ। मोटर की लम्बी सैर के उल्लास ने और इस शान से घर पहुँचने के गर्व ने पूर्णिमा के मन को धीरे से आगे ठेला, पर वह सँभलकर ठिठक गई। झट उत्तर दिया—ना, आप इतना कष्ट क्यों कीजिएगा? मैंने बाबूजी को बुलाया है, उनके साथ ट्रेन से चली जाऊँगी। पर रोला राय न माने। कहा—मुझे खुद सरकारी काम से उधर जाना है, केवल तुम्हें पहुँचाने नहीं जा रहा हूँ?

पूर्णिमा के मा-बाप तो रोलाराय को देख निहाल हो गए। इतना सम्पन्न और प्रतिभाशाली महापुरुष अपनी दीन कुटिया में अपना बनकर आए, इससे बढ़कर सौभाग्य क्या हो सकता है? पूर्णिमा के घर कुर्सियाँ-मेजें न थीं, उसके माता-पिता अस्तव्यस्त हो रहे थे। पर रोलाराय बिना किसी झिझक के तुरन्त चटाई पर बैठ परिवार में घुल-मिल गए। पूर्णिमा को इस काया-पलट पर विशेष आश्चर्य हो रहा था। कारण, एक बार जब उसे और ललिता को गरीब मुहल्ले में एक सहपाठिनी के घर जाना था और ललिता ने कहा था—काका, हम लोग माधवी के घर से होते चलेंगे, तो रोलाराय ने नाराजगी के साथ उत्तर दिया था—मैं उस गली में अपनी मोटर नहीं ले जा सकता। उस मुहल्ले में तुम लोगों का भी जाना मुझे अच्छा नहीं लगता। अपनी मर्यादा का भी तो ध्यान रखना चाहिए।

दुर्गापूजा का त्योहार आया तो रोलाराय ने पूर्णिमा के घर-परिवार के सभी लोगों के लिए अच्छे-अच्छे कपड़े भेजे। एक बार मा बीमार पड़ीं तो कई दिन पूर्णिमा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की अनुपस्थिति में भी उसके घर रहकर सेवा-शुश्रूषा करते रहे। पिता जब कलकत्ते जाएँ तो स्थायी निमन्त्रण रहा करे रोलाराय के यहाँ। पूर्णिमा के पिता इतने सरल थे कि सभी को अपने-जैसा कच्चा और अकपट समझते थे। दोस्ती इतनी बढ़ी कि, लोग कहते हैं, मिलने पर दोनों गले लिपटकर सोते।

[४]

रोलाराय ने मौका देखकर मा से प्रस्ताव किया था, पूर्णिमा के साथ अपने ब्याह का। मा ने पति से कहा था। दोनों ने मिलकर बहुत दिन तक सोचा-समझा। खुली आँखों तो ऐसे ब्याह-सम्बन्ध में कोई मा-बाप जल्दी सम्मति न देंगे, खासकर ऐसी लड़की का जिस पर सारा स्नेह और सारी अभिलाषाएँ केन्द्रीभूत हों। पर जवान लड़की मा-बाप की छाती का बोझ होती है, उसके न हटने तक साँस भी लेना दुस्सह हो जाता है। फिर रोलाराय के निःस्वार्थ सौजन्य की ओर उनका ध्यान जाता। मनुष्यों में देवता सुनते थे, देखा न था। उम्र कुछ अधिक है अवश्य, पर पुरुष की उम्र नहीं देखी जाती—"सट्ठा तो पट्ठा" मशहूर है। अड़चन यही है कि इनकी एक पत्नी मौजूद है। इसका भी क्या किया जाए, राजाओं की तो कई रानियाँ होती ही हैं। फिर उस घर में घुसने पर हमारी पूनी की ही तो तूती बोलेगी। जब रोलाराय जैसे बड़े आदमी के साथ सम्बन्ध हो जाएगा तो और लड़कियों की शादी में सुविधा होगी, लड़कों को भी अच्छी अच्छी नौकरियाँ मिल जाएँगी आसानी से। पर ऊपर से मा ने जैसे टालते हुए कहा—अरे आजकल—मा-बाप को कौन पूछता है? लड़कियों का मत ही तो सब कुछ है।

रोलाराय ने उत्तर दिया—आपका आशीर्वाद होने पर पूनी राजी ही है।

इसके कुछ ही दिन पहले पूर्णिमा को खसरा हुआ था। इस छुआ-छूत की बीमारी के लिए होस्टल में न तो चिकित्सा का कोई इन्तजाम था, न इस अवस्था में वहाँ रहकर खुद कोई इन्तजाम करने की अनुमति ही थी। बेचारी पूर्णिमा बड़ी उलझन में पड़ी। घर जाए तो चिकित्सा कैसे हो और इतनी जल्दी जाए भी तो किसके साथ? कोई दूसरा उपाय न देखकर उसने रोला काका के पास खबर भेजी। वे अपनी पत्नी के साथ आए और मोटर पर घर ले गए। घर पर पूरे यत्न से पूर्णिमा की देख-भाल की। सब काम छोड़कर उसी के पास बैठे रहते। पूर्णिमा को यत्न का यह आधिक्य बहुत अखरता था। एक प्रिय स्वजन को उसने लिखा था—मेरा यह पता देखकर आप आश्चर्य करेंगे पर मैं यहाँ लाचार होकर ही आई हूँ। मेरी बिन्दु-मात्र भी इच्छा यहाँ आने की न थी, पर कारण यह हुआ, इत्यादि। इसी अवसर पर पूर्णिमा जब अच्छी हो गई थी तो रोलाराय ने उसके साथ ब्याह का प्रस्ताव किया था। इस प्रस्ताव को सुन उनकी सहधर्मिणी उनके बगल में फूट-फूट कर रो रही थीं। पूर्णिमा को ऐसा लगा जैसे आशङ्कित शिकारी पत्तों की आड़ छोड़ अब सामने बन्दूक ले उसकी छाती पर निशाना साधे खड़ा है। घृणा, भय और क्रोध से वह काँपने लगी। उसे क्षणिक आवेग हुआ कि दोमञ्जिले से कूदकर आत्मरक्षा करे। इस घर में उसे अपने सर्वनाश की अग्नि दहकती हुई दीख पड़ी। यह भी अपने को मनुष्य कहता है जो अपनी निरपराध, निस्सहाय, जीवन-सङ्गिनी के विलाप को ताल बना दूसरी स्त्री के साथ प्रणय का सुर अलाप रहा है! उसे अपनी भूल पर असह्य सन्ताप होने लगा—मैंने क्यों इतनी नासमझी की कि इस परिस्थिति पर पहुँचना पड़ा? क्यों मैंने इस नर-पिशाच का जाल पहले ही नहीं देखा! फिर अपनी गरीबी पर ध्यान गया, अपनी विवशता पर भी जिसने प्रलोभनों की ओर ठेला; अपनी छिपी आकांक्षाओं पर भी पूर्णिमा खड़ी-खड़ी सिसक-सिसककर रोने लगी।

उसी दिन वह होस्टल चली आई। शपथ ली कि आज से इस नर-पशु की परछाईं भी न देखूँगी। सोचते-सोचते उसकी विरक्ति ने सम्पूर्ण पुरुष-समाज को समेटा। कौन जाने जिसे आदर्श पति समझूँ वह भी पीछे रँगा सियार न निकले? इससे उसके स्वतन्त्र जीवन का सङ्कल्प और भी दृढ़ हो गया।

[५]

पूर्णिमा ने एम० ए० पास किया। अब तक वह कालेज के आशा रञ्जित जगत् में रही थी, अब उसे संघर्ष-मय जीवन में पदार्पण करना पड़ा। जिन प्रश्नों को वह अब तक पढ़ाई की आड़ में टालती जाती थी वे सब द्विगुण चीत्कार के साथ सामने आ खड़े हुए। पर आशा और उत्साह से भरी पूर्णिमा इसके लिए तैयार थी। एक अच्छी-सी नौकरी कर लूँगी, मा-बाप की आर्थिक सहायता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करूँगी और भाई-बहनों को पढ़ाऊँगी-लिखाऊँगी। सुखमय स्वतन्त्र जीवन होगा। घर जाकर नौकरी के लिए कई जगह दरखास्तें भेजीं। परन्तु आशा से विपरीत बहुत दिनों तक कहीं से हाँ-ना का उत्तर भी न आया। इन दिनों उसे घर पर ही रहना पड़ा। अभी तक जब वह होस्टल से घर आती तो मेहमान बनकर, पर अब घर की मालकिन की भाँति रहना पड़ा। मा चिर-रोगिणी थीं, घर का कोई काम खुद न देख सकती थीं। अभी तक जिस दुरवस्था पर दृष्टि न पड़ी थी, अब वह पूर्णिमा की आँखों के सामने आने लगी। खाने-पीने की तकलीफ, अपनी पीठ की बहन भी सयानी हो गई, उसके लिए न शिक्षा का प्रबन्ध, न ब्याह का। देश में खास तरह से महँगी भी हो गई थी जिससे पिता की छोटी आमदनी बड़े दालान के एक कोने के टिमटिमाते चिराग की तरह थी। बेकार चुपचाप बैठना भी पूर्णिमा के लिए एक नया अनुभव था। हजार बेसर-पैर की बातें मन में आतीं और चली जातीं। धीरे-धीरे उसकी उत्फुल्ल आशाएँ निराशा में परिणत होने लगीं। जीवन कभी-कभी निस्सार अर्थहीन लगने लगता। निर्मम सूर्य उगता और डूबता। चाँद मानो उसकी ओर देखकर निर्दय हँसी हँसता।

खैर, कुछ दिनों के बाद एक स्कूल में हेडमिस्ट्रेस की नौकरी के लिए बुलावा आया। पूर्णिमा ने प्रसन्नता और कृतज्ञता के साथ पद स्वीकार किया। पूर्ण उत्साह और परिश्रम से उसने काम आरम्भ किया पर कुछ ही दिनों में वहाँ का वातावरण उसे अरुचिकर मालूम होने लगा। उसे साफ दीखने लगा कि उसके रूप का मूल्य अधिकारियों के सामने उसकी शिक्षा या कार्य-कुशलता से अधिक है। यदि वह रूप का सौदा करने को तैयार हो, तब तो यहाँ टिकेगी, फलेगी, फूलेगी, नहीं तो यहाँ उसका स्थान नहीं। सेक्रेटरी के गन्दे और भद्दे सङ्केतों से वह सिहर जाती और अपनी कोठरी में लौट बहुधा अकेली बैठी रोया करती। अन्त में उसे नौकरी छोड़कर लौटना पड़ा।

इस बीच में रोलाराय पूर्णिमा की मा के पास कई बार आए थे। पिता के साथ भी उनकी घनिष्ठता बढ़ती गई। उस दिन की घटना को पूर्णिमा ने किसी से न कहा था, और रोला राय खुद किसी से क्यों कहते? पूर्णिमा को फिर बेकार बैठना पड़ा और उसका मानस-दिगन्त फिर तमसाच्छन्न रहने लगा। मा की बीमारी इधर और बढ़ गई। आर्थिक अभाव से दवा उचित रूप से न हो सकती थी। शेष समस्याएँ भी भैरवी रूप में सामने खड़ी ही थीं।

एक दिन मा ने दबे-दबे इशारे से कहा कि रोला राय उतना बुरा पात्र नहीं है, उससे ब्याह कर लेने से डूबता परिवार पार लग सकता है। माँ की दृष्टि गई पूर्णिमा से छोटी जवान बेटी की ओर, अपनी असहायता पर और घर की दरिद्रता और अन्धकारमय भविष्य पर। पूर्णिमा एक क्षण अवर्णनीय मिश्रित भावोद्गार के चतुर्दिक् चपेट में असहाय मौन बैठी रही, पर दूसरे ही क्षण तुरन्त उत्तेजित हो बोली—मा, यदि ऐसी अनुचित और अमङ्गल की बातें कहोगी तो मैं डूब मरूँगी या ऐसी जगह चली जाऊँगी जहाँ मेरा मुँह तुम लोग फिर न देख पाओगी।" इतना कह वह उठी और दूसरे कमरे में जा बिलख-बिलख कर रोने लगी।

मा यह देखकर चकित हुईं और घबड़ा उठीं। पूर्णिमा यों रोती न थी, विपत्तियाँ झेलते-झेलते वह कठोर हो गई थी; पर जब संसार की ओछी निर्ममताओं से उसकी अन्तरात्मा बिंध जाती तब उसकी अश्रुधारा को रोकना दुरूह था। मा एक झोंके से उठीं और टलमलाती हुई पूर्णिमा के कमरे में जा उसका पैर पकड़ कहने लगीं—नहीं, रानी बेटी, ऐसा न करो। मैं क्षमा माँगती हूँ। मैं नहीं जानती थी कि तुम उससे इतनी घृणा करती हो। पात्र भी घृणा ही करने लायक है। जब एक स्त्री के साथ ऐसा बर्ताव कर रहा है तो दूसरी के साथ इससे भी जघन्य सलूक करेगा ही। क्या कहूँ, मेरी मति मारी गई है। तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ, क्षमा करो।

पूर्णिमा के आँसू आँचल से पोंछते हुए फिर बोलीं—तुम जानती हो, पूनी, तुम्हीं को देखकर मैं अब तक जीवित हूँ। तुम्हारे पिता ने तुम्हें लड़की कभी न समझा, अपना बड़ा लड़का समझकर पाला-पोसा है। तुम्हीं घर का सरताज हो। तुम्हारे मङ्गल से ही परिवार का मङ्गल है, हमारी आत्मा की शान्ति है। पर मति-भ्रष्ट को क्या कहा जाए!"

पूनी को गोद में खींच फिर आँसू पोंछकर बोली—ना, रानी बेटी, ना; छिः!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[६]

पूर्णी अब कलकत्ते में ही एक सम्बन्धी के घर रहकर नौकरी के लिए चेष्टा करने लगी। मदद करनेवाले तो बहुतेरे आ खड़े हो जाते पर तुरत ही उनकी नियत स्पष्ट हो जाती और उनसे घृणा होने लगती। सच्चा सहायक कोई न मिला। उड़ीसा के रजवाड़ों से गवर्नेस या रानी की सहेली के पद के लिए बुलावा आया। एक नौजवान राजा ने कलकत्ते में पूर्णिमा से मुलाकात भी की। पर उन रजवाड़ों की कहानियाँ सुन पूर्णिमा के रोंगटे खड़े हो गए। ऐसी गन्दी हवा में तो एक दिन में उसका दम घुट जाएगा। अन्त में रेडियो में उसे नौकरी मिली। वहाँ बड़े उत्साह से काम आरम्भ किया और प्रण किया कि यहाँ अपने को निभाऊँगी। एक-दो महीने काम भी खूब मन से किया पर यहाँ का भी वातावरण ऐसा निकला जिसमें एक सच्चरित्र, शिक्षित और भावुक महिला के लिए अभी तक कोई स्थान नहीं। समाज में भी कनफुसकियाँ सुनाई दीं—शरीफ घर की लड़की, इत्यादि।

मा की बीमारी जोर पकड़ती ही गई। इस बीच पूर्णिमा की तीन साल की बहन भी बीमार पड़ी। घर की समस्या और जटिल हुई। पूर्णिमा घर आई, पर घर में न रहा जाए, न घर से जाते बने। गरीबी का भैरव नृत्य आँखों के सामने था। इसी समय परिवार के एक प्रिय सम्बन्धी अतिथि बनकर आए। घर में कुछ भी न हो फिर भी अतिथि को अच्छा दिखाने का प्रयत्न सभी करते हैं। मगर सब करने पर भी पूर्णिमा को लाज से गड़ जाना पड़ता था। एक दिन सुबह घर के भीतर से झगड़ने की आवाज आई। पूर्णिमा दालान में सम्बन्धी को पानी देने आई थी। दोनों कान लगाकर सुनने लगे। एक औरत जोर-जोर से गालियाँ देते हुए कह रही थी—तुम लोगों को लाज भी नहीं लगती कि तीन-तीन महीने से घर का किराया बाकी है और देने का नाम नहीं? मैं अभी तक तुम लोगों को शरीफ समझकर तरह देती आई, पर आज चेताकर जाती हूँ, एक हफ्ते के भीतर किराया दे दो नहीं तो घर से निकल जाओ।

सम्बन्धी ने पूछा—यह कौन औरत है?

पूर्णिमा कुछ उत्तर न दे दालान से चली गई।

उसी दिन दोपहर को बिना किसी से कुछ कहे-सुने पूर्णिमा ने अपना छोटा सूटकेस उठाया और घर से चली गई। कलकत्ते पहुँच सीधी रोलाराय के घर आई। रोला राय उसे अपने घर आते देख पहले तो चकराए फिर दबे और सतर्क आनन्द से बोले—आओ पूर्णिमा, कहाँ से आ रही हो?

पूर्णिमा खुले दरवाजे पर ही मूक खड़ी रही। उसका विषम गाम्भीर्य देख रोला राय का अस्फुट आनन्द एक अज्ञात भय में परिणत हो गया। इतनी निश्चल और गम्भीर मूर्ति उन्होंने उसकी कभी न देखी थी। उसकी आँखें छलछलाई हुई थीं, और अधर काँप रहे थे। उसकी दृष्टि मानो रोला राय के शरीर को छेदकर किसी दूर दिगन्त पर पड़ रही हो। रोला राय ने दबी आवाज में डरते डरते कहा—क्यों पूर्णिमा, इस तरह क्यों खड़ी हो? भीतर आओ न।

पर पूर्णिमा उसी शोकार्त और दृढ़ भाव से खड़ी रही। उसकी आँखें उसी तरह दिगन्त में गड़ी रहीं। उसके अधर काँपते हुए खुले और आँसुओं के बीच से एक हल्की सी आवाज आई—मैं आपसे शादी करने को तैयार हूँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संयुक्त राष्ट्र-सङ्घ का लन्दन-अधिवेशन

श्री आशाराम, एम० ए०

'सरस्वती' के पाठकों को संयुक्त राष्ट्र-सङ्घ के सैन-फ्रांसिसको अधिवेशन का हाल मालूम है। वह अधिवेशन अमरीका देश के वातावरण में हुआ था। वहाँ धन-धान्य की कमी न थी। और जैसा कि उक्त लेख में कहा जा चुका है, उस अधिवेशन की सफलता में अमरीका को दिलचस्पी थी।

यह अधिवेशन ऐसे देश में हुआ जिसका गौरव पतनोन्मुख है, जहाँ जनता का जीवन दूभर हो गया है, जिस देश के आयात निर्यात घट चुके हैं और विदेश में लगी हुई पूँजी अमरीका के हाथ बिक चुकी है। कहने को ब्रिटेन आज भी साम्राज्य है और इस साम्राज्य में सूर्यास्त नहीं होता, इसके पास संसार का सबसे बड़ा भू-भाग (एक चौथाई) है, परन्तु वस्तु-स्थिति यह है कि अधिकांश देश स्वतन्त्र हो चुके हैं अथवा स्वतन्त्र होने का प्रयत्न कर रहे हैं। सारांश यह कि आज संसार में केवल दो शक्तियाँ रह गई हैं—अमरीका और सोवियट राज्य।

परन्तु राजनीति का खेल ही निराला है, इतिहास का भी। ब्रिटिश साम्राज्य दुर्बल है परन्तु फिर भी मध्य और निकट पूर्व, भूमध्यसागर, भारतवर्ष, दक्षिणी और उत्तरी अफ्रीका, दक्षिणी पूर्वी एशिया आदि क्षेत्रों पर उसका राजनीतिक आधिपत्य है। इधर सोवियट देश अपने व्यापारिक और स्वरक्षा-हितों के कारण पूर्वी भूमध्यसागर में प्रवेश करना चाहता है और निकट और मध्य पूर्व में सोवियट-सहायक और सोवियट-समर्थक शासन चाहता है। इन भू-भागों पर ब्रिटेन का अधिकार है। यदि ब्रिटेन सोवियट शासन के अधिकारों को मान ले तो अवश्य ही समझौता हो सकता है। यह असम्भव भी नहीं है कि निकट भविष्य में इन प्रदेशों में सोवियट और ब्रिटेन दोनों के ही सहायक शासन स्थापित हों। परन्तु आज ऐसा नहीं है।

अमरीका का अपना स्वार्थ है। अभी तक अमरीका को उक्त प्रदेशों से अलग रहना पड़ा है। कदाचित् ब्रिटेन ने अमरीका को कुछ व्यापारिक सुविधाएँ देने का वचन दिया है। परन्तु अमरीका इन सुविधाओं से सन्तुष्ट नहीं है। अतएव वह तटस्थता का रवैया अपना लेता है और सोवियट-ब्रिटिश सङ्घर्ष से अलग हो जाता है। पिछले दिनों ऐसी आशङ्का हुई थी कि ब्रिटेन और अमरीका मिलकर सोवियट राजनीति का विरोध करेंगे। परन्तु मास्को कान्फरेंस में कदाचित्, सोवियट और अमरीका ने अपने भेदभाव मिटा दिए और इस प्रकार समरस्थल में केवल ब्रिटेन और सोवियट देश रह गए।

यदि लन्दन कान्फरेंस आज से छः मास पूर्व होती तो उसके असफल होने में कोई सन्देह न था। कारण, उस समय तीन महत् शक्तियों के बीच मनमुटाव बढ़ चुका था। सैन फ्रांसिसको की सफलता का कारण था अमरीका के प्रभुत्व का प्रश्न। परन्तु उसके बाद अमरीका अणुबम का प्रयोग कर चुका था। यद्यपि बर्लिन कान्फरेंस के समय भी अमरीका के पास अणुबम था, फिर भी जापान को परास्त करना शेष था और एकता की आवश्यकता थी। जापान की पराजय के बाद, लन्दन कान्फरेंस की असफलता का मूलकारण अणुबम था। अमरीका समझता था कि इस अविष्कार के भय से सोवियट शासन उसको कुछ राजनीतिक सुविधाएँ दे देगा। परन्तु जिस समय मोलोतोव को इसका भान हुआ वे कान्फरेंस छोड़कर चले गए।

उसके बाद संसार की शान्ति के लिए प्रबल इच्छा, सैनिकों की घर लौटने की माँग, श्रमजीवियों की हड़तालें आदि ने शासकों को इकट्ठा होने और समझौता करने के लिए बाध्य किया। मास्को कान्फरेंस इन शक्तियों का ही परिणाम थी। परन्तु जैसा कि कहा जा चुका है, और जैसा कि सभी ब्रिटिश पत्र भी मानते हैं, इस कान्फरेंस में केवल अमरीका और सोवियट शासन के सम्बन्धों पर ही निर्णय हुआ। ब्रिटेन की समस्याएँ अपूर्त रह गईं। और जब श्री बेविन ने अपना गोरखधन्धा रखने का प्रयत्न किया तब श्री बर्न को वाशिङ्गटन चलने की सूझ गई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संयुक्त राष्ट्र-सङ्घ के ५० सदस्यों का स्वागत स्वयं सम्राट् ने किया और कान्फ्रेंस का उद्घाटन प्रधान मन्त्री ने किया। सम्राट् ने शान्ति-स्थापन के लिए अपील की और श्री एटली ने अणुशक्ति-युग की ओर ध्यान आकर्षित किया। इसके बाद अनेक प्रतिनिधियों ने अपने-अपने राष्ट्र के दृष्टिकोण को प्रकट किया। श्री बर्न ने भी अणुबम-युग की ओर सङ्केत करते हुए शान्ति की आवश्यकता पर जोर दिया। श्री लाई (नार्वे) ने नाजीवाद की आशङ्का प्रकट की; पोलैंड के प्रतिनिधि ने समाजवाद का हल रक्खा और श्री बेविन् और बीदो (फ्रांस) ने अपने औपनिवेशिक देशों को सङ्घ-समिति के सुपुर्द करने का वचन दिया।

कान्फ्रेंस अनेक दिन तक सोवियट प्रतिनिधि श्री विशिन्सकी की प्रतीक्षा करती रही। उनकी अनुपस्थिति में श्री ग्रोमीको ने भाषण देते हुए सङ्घ को सहयोग देने का वचन दिया। उन्होंने शान्ति भङ्ग करनेवाली शक्तियों की ओर सङ्केत किया और उपनिवेशों की स्वतन्त्रता की माँग की।

प्रारम्भ से ही सोवियट ने चुनावों में भाग लिया और अनेक सिद्धान्तों पर विवाद किया। सभापति के चुनाव में उसने खुले रूप से वोट देने की नीति का प्रतिपादन किया। तत्पश्चात् उसने श्री स्वाक के विरुद्ध श्री लाई का प्रधान पद के लिए समर्थन किया परन्तु २३ वोट के विरुद्ध २८ से उसकी हार हुई। हाँ, प्रधान मन्त्री के पद पर सोवियट उम्मीदवार ही चुना गया। सोवियट सरकार ने गुप्त वोट का विरोध इसलिए किया कि वह यह सिद्ध करना चाहती थी कि यद्यपि छोटे राष्ट्रों के अधिकारों की दुहाई दी जाती है परन्तु वास्तविकता यह है कि लगभग बीस लैटिन अमरीकी राष्ट्र सदैव अमरीका के साथ वोट देते हैं और शेष में से अधिकांश ब्रिटेन के प्रभाव में हैं। अतएव राजनीतिक समस्याओं को सुलझाने की कुञ्जी केवल तीन महती शक्तियों के हाथ में है। अन्य राष्ट्रों के अधिकारों की दुहाई देना केवल सोवियट-विरोधी वोट बढ़ाकर उसके ऊपर दबाव डालने की एक युक्ति है।

वास्तविक सङ्घर्ष स्वरक्षा परिषद् में शुरू हुआ। सबसे पहला प्रश्न ईरान का था। इस देश में ब्रिटेन और सोवियट रूस की सेनाएँ पड़ी हुई हैं। फारसी-शासन ने ब्रिटेन का पक्ष लिया है और वह सोवियट के विरुद्ध रहा है। अतएव जब यह प्रश्न उठाया गया तो तुरन्त ही सोवियट ने इसमें ब्रिटिश षड्यन्त्र की गन्ध पाई और उसके विरुद्ध अनेक प्रश्न रख दिए। ग्रीस (यूनान), इण्डोनेशिया (जावा, सुमात्रा, आदि) और यूगोस्लाविया, सीरिया का प्रश्न भी ब्रिटेन के विरुद्ध था। इसके अतिरिक्त मिस्र, भारतवर्ष आदि के प्रश्न रक्खे जाने को थे।

× × ×

सन् १९४२ की सन्धि के अनुसार ब्रिटेन, सोवियट राष्ट्र और ईरान ने मिलकर स्वीकार किया था कि युद्ध-काल के छः मास बाद तक ब्रिटेन और सोवियट शासन को ईरान में सेनाएँ रखने का अधिकार होगा। यद्यपि अभी युद्ध के बाद छः मास की अवधि समाप्त नहीं हुई और लाल सेनाओं को उत्तरी ईरान में रहने का अधिकार है तथापि इस विचार से कि सोवियट सेनाएँ उत्तरी ईरान के अजरबेजान प्रान्त में विद्रोह की भावनाएँ फैलाती हैं और वे ईरानी सेनाओं को अधिकृत क्षेत्र में जाने से रोकती हैं अतएव स्वरक्षापरिषद् से प्रार्थना है कि वह इस प्रश्न को अपने हाथों में ले और जाँच के लिए एक कमेटी भेजे जिससे कि ईरान के प्रभुत्व और राजसत्ता को क्षति न हो और वहाँ शान्ति रह सके।

× × ×

सोवियट शासन ने इसकी सुनवाई का विरोध किया। उसका कहना था कि ईरान को यह प्रश्न प्रथम स्वयं सोवियट सरकार से करना चाहिए, आपस में समझौते का प्रयत्न करना चाहिए और जब सारे प्रयत्न विफल हो जाएँ तब राष्ट्रसङ्घ से प्रार्थना करनी चाहिए। सोवियट इस प्रकार के वार्तालाप के लिए सदैव तैयार है और इस प्रकार की बातचीत से लाभ भी हुआ है। उसका यह भी कहना था कि नवम्बर मास के अन्त तक ईरान देश को सोवियट शासन के विरुद्ध कोई विशेष शिकायत न थी। रही उत्तरी प्रदेशों की स्वतन्त्रता सो वह वहाँ की जनता का अधिकार है। शान्ति स्थापित करने के लिए कुछ टुकड़ियाँ ईरान सरकार ने भेजी थीं और उनको सोवियट ने उत्तरी प्रान्तों में जाने दिया था, साथ ही उत्तर में ईरानी सरकार की पर्याप्त पुलिस और सेनाएँ थीं। परन्तु जब अजरबेजान की जनता की स्वतन्त्रता की माँग को कुचलने के लिए और भी सेनाएँ भेजने का प्रयत्न किया गया तब लाल सेना ने उन सेनाओं को इसलिए रोका कि वहाँ पर शान्ति के भङ्ग होने और स्वतन्त्रता के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुचले जाने का भय था। ईरानी सरकार प्रतिक्रियावादी है और वह न केवल उत्तरी अजरबेजान की स्वाधीनता ही छीनना चाहती है वरन् सोवियट-विरोधी प्रचार भी करती है। परन्तु ये सब प्रश्न आपसी बात-चीत से हल किए जा सकते हैं।

श्री बेविन ने सोवियट शासन का विरोध करते हुए जाँच कमेटी की माँग की और छोटे-से स्वतन्त्र राष्ट्र का पक्ष लिया। अन्त में श्री स्टेटीनियस की सहायता से एक प्रस्ताव पास किया गया जिसके अनुसार ईरान और सोवियट से आपस में बात करने की प्रार्थना की गई।

× × ×

सोवियट शासन ने ग्रीस का प्रश्न उठाया। उसका कहना था कि यद्यपि युद्ध के समय जर्मनी को परास्त करने के लिए ब्रिटिश सेनाओं की ग्रीस में आवश्यकता थी, परन्तु आज वे केवल प्रतिक्रियावादी राजकीय और फासिस्ट शक्तियों को सहायता देती और प्रगतिशील शक्तियों की कुचलती हैं। इस कारण शान्ति भङ्ग होने की आशङ्का है।

ब्रिटेन की ओर से श्री बेविन ने उत्तर देते हुए कहा कि ब्रिटेन संयुक्त-राष्ट्रों की आज्ञा से ग्रीस में गया था। ब्रिटेन ने वहाँ पर शान्ति स्थापित करने का प्रयत्न किया है। सेनाओं को वहाँ से अलग होने की आवश्यकता नहीं वरन् वहाँ और भी सेनाएँ भेजने की जरूरत है। फिर बेविन ने यह भी कहा कि जब कभी ब्रिटेन, पोलैंड, बल्गेरिया आदि का प्रश्न उठाता है उसी समय सोवियट भी ग्रीस आदि देशों का प्रश्न उठा देता है। वह अपने एजेंट कम्यूनिस्टों-द्वारा साम्राज्य-विरोधी प्रचार कराता है। सोवियट राज्य भूल जाता है कि युद्ध काल में दो देश मित्र थे और ब्रिटेन का मजदूर-शासन प्रगतिशील शक्तियों का सहायक है। सोवियट राजदूत विशिन्सकी ने भी बीते दिनों की याद दिलाई, सोवियट-विरोधी प्रचार की ओर सङ्केत किया और अपनी माँग रक्खी।

ब्रिटेन चाहता था कि उसको पापमुक्त किया जाए। सोवियट देश के अतिरिक्त सभी देश उसका समर्थन कर चुके थे। परन्तु अन्त में अमरीकी राजदूत ने इस प्रकार के प्रस्ताव पास होने में रोक लगा दी। अतएव अन्त में प्रश्न को वाद-विवाद के बाद ज्यों-का-त्यों छोड़ दिया गया।

× × ×

यूक्रेन के प्रतिनिधि मैनुइल्सकी ने इण्डोनेशिया (पूर्वी द्वीपसमूह, जावा सुमात्रा आदि) का प्रश्न उठाया। उनका कहना था कि ब्रिटिश सेनाओं के व्यवहार से शान्ति-भङ्ग होने की स्थिति पैदा हो गई है। ब्रिटेन ने पोट्सडाम कान्फरेंस के निर्णय के विरुद्ध जापानी सेनाओं-द्वारा इंडोनेशिया की सेना का दमन किया है, वहाँ के राष्ट्रीय आन्दोलन को दबाया है और एक युद्ध की परिस्थिति पैदा कर दी है जिससे कि शान्ति-भङ्ग होने की पूरी-पूरी आशङ्का है। अतएव यह आवश्यक है कि एक जाँच कमेटी भेजी जाए जो कि स्थिति की छान-बीन कर सके और शान्ति-स्थापन के लिए मार्ग दिखा सके।

ब्रिटेन और हालैंड ने इसका घोर विरोध किया ब्रिटेन का कहना था कि प्रशान्त महासागर के सैन्य नेतृत्व की ओर से ब्रिटेन को यह कार्य सौंपा गया था। इस कार्य में हालैंड का पूर्ण सहयोग ब्रिटेन को प्राप्त है। ब्रिटेन ने योरपीय नागरिकों की रक्षा के लिए शस्त्रास्त्रों और जापानी सैनिकों का प्रयोग किया, जनता अथवा राष्ट्रीयता को कुचलने के लिए नहीं। उन्होंने यह भी कहा कि यूक्रेन और सोवियट प्रतिनिधियों ने पत्रों के वर्णनों का सहारा लिया है और वे झूठे समाचारों के सहारे गलत नतीजों पर पहुँचे हैं। उनको हालैंड अथवा ब्रिटेन की सरकारों से ठीक समाचार प्राप्त करने चाहिएँ। हालैंड के प्रतिनिधि ने यह भी कहा कि सेनाओं का केवल शान्ति-स्थापन के लिए प्रयोग किया गया है। आवश्यकता अधिक सेनाओं की है, कम की नहीं।

इन तर्कों को लेकर सोवियट और यूक्रेन राजदूतों ने फिर कहा कि उनके पास ठीक समाचार प्राप्त करने का और क्या रास्ता है, सिवा इसके कि जाँच कमेटी की माँग की जाए। जब ऐसी कमेटी पोलैंड, ग्रीस और रोमानिया भेजी जा सकती है तब इंडोनेशिया में क्यों नहीं भेजी जा सकती? रही सरकारों-द्वारा समाचार प्राप्त करने की बात। यह स्पष्ट है कि वह समाचार इंडोनेशिया की जनता के दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व नहीं कर सकता। जहाँ तक सैनिकों-द्वारा शान्ति-स्थापन का सम्बन्ध है, इस प्रकार के तर्क सदैव ही सुने जाते हैं। इस शब्द के अर्थ आज "जनता का दमन" हो गए हैं।

चीन और मैक्सीको ने भी विवाद में सोवियट का साथ दिया परन्तु मत-गणना के समय केवल पोलैंड और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोवियट दो ही इंडोनेशिया की जनता के समर्थक रह गए।

× × ×

पूर्वी भूमध्य सागर का अर्थ है यूनान, तुर्की, सीरिया, फिलस्तीन, ट्रांसजोर्डेन देशों का तट। ब्रिटिश साम्राज्य इस तट को अपने लिए सुरक्षित रखना चाहता है। भय है कि कहीं स्वेज नहर और लाल सागर हाथ से निकलने पर भारतवर्ष ही स्वतन्त्र न हो जाए। और भारतवर्ष आज भी ब्रिटेन के लिए सोने की चिड़िया है। इसी कारण ग्रीस, फिलस्तीन, मिस्र आदि देशों पर ब्रिटेन का प्रभुत्व है, और इसी कारण वह तुर्की, सीरिया आदि देशों को अपने साथ रखना चाहता है।

सीरिया प्रदेश तुर्की साम्राज्य का एक प्रान्त था। परन्तु गत महायुद्ध के बाद वह फ्रांस का अधिकृत देश बन गया। अनेक आन्दोलन भी हुए, परन्तु उसे स्वतन्त्रता न मिली। महायुद्ध आया और जर्मनी का सामना करने के लिए ब्रिटिश सेनाएँ भी सीरिया में बस गईं। सीरिया चाहता है कि इन विदेशी सेनाओं से उसको छुटकारा मिले और वह स्वतन्त्र हो जाए। वहाँ के सभी राजनीतिक दलों में ऐक्य है और वे सब मिलकर फ्रांस और ब्रिटेन की सेनाओं से मुक्ति चाहते हैं। अतएव उक्त देश के प्रतिनिधियों ने स्वरक्षा परिषद् से प्रार्थना की कि वह ब्रिटिश और फ्रांसीसी सेनाओं को सीरिया से हटने पर बाध्य करे।

सीरिया की इस माँग का समर्थन मिस्र देश ने किया। सोवियट और पोलैंड के प्रतिनिधि भी साथ थे। परन्तु ब्रिटेन और फ्रांस का कहना था कि जब तक कि इस पूरे क्षेत्र की रक्षा का प्रबन्ध नहीं हो जाता और जब तक कि सीरिया उनसे राजनैतिक और आर्थिक समझौते नहीं करता तब तक सेनाएँ नहीं हटाई जाएँगी। सोवियट राजदूत ने सीरिया की माँग के सम्बन्ध में भाषण देते हुए कहा, "गृहस्वामी अभ्यागत से मकान खाली करने के लिए कहता है। मालिक को अपने मकान पर पूरा अधिकार है।" सीरिया के प्रतिनिधि ने कहा—"जब तक ये सेनाएँ देश से नहीं हटाई जातीं, हमारी स्वतन्त्रता सङ्कट में है।" परन्तु इन सब दलीलों के होते हुए भी प्रश्न टल गया।

यूगोस्लाविया ने भी राष्ट्र-सङ्घ की स्वरक्षा समिति के सामने अपनी शिकायत रक्खी। उसका सारांश यह था—"ब्रिटेन ने उत्तरी इटली में पोलैंड की सेनाओं को शस्त्रास्त्र से सुसज्जित कर यूगोस्लाविया की सीमाओं पर भेजा है। सीमाओं पर बहुत-से ऐसे भी सैनिक हैं जो कि जनरल मैखालोविच (टीटो का विरोधी) के अनुयायी हैं। इन सेनाओं की उपस्थिति के कारण एक ऐसी स्थिति पैदा हो गई है कि शान्ति भङ्ग होने का भय है।" ब्रिटेन ने इस लाञ्छन को स्वीकार करने से इन्कार किया और प्रश्न जहाँ-का-तहाँ रह गया।

इस अधिवेशन में अनेक और प्रश्नों पर भी विचार हुआ। अणुबम के प्रश्न पर विचार करने के लिए एक कमेटी बना दी गई, युद्ध के कारण पीड़ित देशों की सहायता के लिए जो प्रबन्ध है उसमें अधिक रुपया व्यय करने का प्रस्ताव पास हुआ। सङ्घ का बजट भी पास हुआ। संसार में अकाल की सम्भावना की जाती है, इस सम्बन्ध में भी वाद-विवाद हुआ और देशों से प्रार्थना की गई कि वे पीड़ित क्षेत्रों की सहायता करें। इस सम्बन्ध में भारतीय प्रतिनिधि श्री मुदालियर की अपील उल्लेखनीय है। उन्होंने कहा—"सोवियट रूस में आज राशन प्रथा बन्द की जा रही है। आज सोवियट के पास अन्न का बाहुल्य है। हम उससे भारत की सहायता करने की अपील करते हैं। युद्ध-काल में भारत ने सोवियट देश तथा अन्य देशों की गेहूँ चीनी, चाय आदि अनेक खाद्य पदार्थों से सहायता की थी। आज हमारी बारी है।"

× × ×

इस बार फिर अन्ताराष्ट्रीय मजदूर सङ्घ के प्रतिनिधित्व का प्रश्न उठाया गया। सोवियट शासन और फ्रांस आदि के अतिरिक्त और किसी ने इसका समर्थन नहीं किया और प्रस्ताव रद्द हो गया। परन्तु अधिकृत क्षेत्रों का प्रश्न उपनिवेशों के लिए बड़ा ही महत्त्वपूर्ण था। आशा की जाती थी कि इस बार अधिकारी देश अपना दृष्टिकोण स्पष्ट कर स्वतन्त्रता की घोषणा करेंगे अथवा यह प्रश्न विश्व-सङ्घ के सुपुर्द कर देंगे। परन्तु श्री बेविन, बीदो आदि के वक्तव्यों से ऐसी कोई आशा नहीं की जा सकती। उक्त देश उपनिवेशों को अपने अधिकार में रखना चाहते हैं। दक्षिणी अफ्रीका के प्रतिनिधियों ने तो यह स्पष्ट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूप से कह भी दिया। जब इस प्रश्न पर समिति में विवाद हुआ तो बेल्जियम के प्रतिनिधि ने कहा कि "सम्भव है, कुछ देश कभी स्वतन्त्रता प्राप्त करने योग्य न हों। ऐसी स्थिति में स्वतन्त्रता का वचन देना भी खतरे से खाली नहीं।" सोवियट प्रतिनिधि इस प्रश्न को तै करना चाहते थे। परन्तु बहुमत ने इसको आक्टोबर तक के लिए टाल दिया।

× × ×

भारतीय पत्र और अनेक विदेशी पत्र भी सङ्घ के अधिवेशन से अत्यन्त असन्तुष्ट हैं। वे कहते हैं—"आखिर, क्या लाभ हुआ? दुनिया जहाँ-की-तहाँ है। स्वतन्त्रता और सिद्धान्तों की दुहाई देकर इनका ही गला काटा जाता है।"

यह तो स्पष्ट है कि सङ्घ की इस बैठक से स्वर्ण-युग का आविर्भाव नहीं हुआ। परन्तु ईरान की सरकार बदल गई और मास्को में वार्तालाप चल रहा है। ग्रीस के प्रश्न पर बातचीत हुई है। इंडोनेशिया को औपनिवेशिक स्वराज्य का वचन दिया गया है। सीरिया से बातें शुरू होंगी और पोलैंड से समझौता किया जाएगा। मिस्र ने भी एक धमकी देते हुए सन्धि को बदलने पर ब्रिटिश सरकार को मजबूर किया है। इस प्रकार इतिहास-चक्र स्थिर नहीं है। वह चल रहा है, पर धीमी गति से।

गति-गीत

श्री गोपाल शर्मा, बी० ए

असफल होकर फिर व्यस्त हुआ।
गिर-गिर पिपीलिका-सा अब तो—
मैं चढ़ने का अभ्यस्त हुआ।
यह तो गति है इसमें बाधा,
गिरना, उठना, है साधारण।
यह तो पथ है सामान्य सभी,
दुर्गम गिरि, सरिता, मरुथल, वन।
बहता रहता व्रण से शोणित
मुँह पर न कभी आती सिकुड़न।
मन में लेकर विश्वास सुदृढ़,
तन में लेकर बस अथक लगन—
खँडहर समेटकर नींव पड़ी
मैं जय का स्तम्भ प्रशस्त हुआ।
अनुभव की आग छुपा उर में
अपना पथ करता आलोकित,
जुगनू-सा खोज रहा मैं वह
जिससे मेरा जीवन स्पन्दित।
मैं हूँ सैनिक जिस पत्थर से
मेरी कृपाण होती कुण्ठित
उस पत्थर ही पर धार फेर
मैं तीव्र उसे करता समुचित।
धारा में बाधा ठेल सदा
निर्झर मैं प्रतिपल स्वस्थ हुआ।
गलती करना है मानव-गुण,
गलती जीवन की स्फूर्ति प्रमुख।
सीधी गति में है प्राप्य न वह
भूलों से भिड़ गिरने का सुख।
गलती है पर्वत की चोटी
देखें सब ओर जहाँ पर रुक,
कर लें विश्राम, मनन कुछ पल
बन उतर पड़ें नूतन, उत्सुक।
सुख का उसको क्या मूल्य जो कि
जीवन में कभी न त्रस्त हुआ?
अपने पन का है गर्व किन्तु
आवश्यक है ही स्वस्ति-वचन,
गाण्डीव, गात्र, दोनों दृढ़ हैं
अनिवार्य किन्तु है मधुसूदन।
कुछ हो रहस्य, रोमाञ्च मधुर,
कुछ चमत्कार का सम्मिश्रण,
सारे प्रयत्न मेरे ही हों
फल में हो एक अलौकिक पन।
तब समझ सकूँगा हुआ धन्य
आशय स्थिर और समस्त हुआ।
असफल होकर फिर व्यस्त हुआ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भागना कहाँ

श्री दौलतराव परशुराम

अकेली हो जाने की सम्भावना समक्ष होते ही कुमुद पर एक भय-सा उतर आता—निस्सहाय होने का सा भाव। वह अपने को खोई हुई-सी समझने लगती। उसका दिल धड़कने लगता, मन जाने कैसा होने लगता। आज, ९ अगस्त १९४२ को, महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू और अन्य नेताओं के गिरफ्तार होने का समाचार पाते ही वह अनुभव करने लगी कि वह पुराना भय फिर जाग्रत् हो रहा है, धीरे धीरे अन्तर पर उतर रहा है। अनन्त अब चला जाएगा—'महाराष्ट्र' के ऐसे निर्भीक, स्पष्ट-भाषी सम्पादक को वे अवश्य कैद कर लेंगे और वह अकेली रह जाएगी। अनिश्चित काल के लिए, बिलकुल अकेली रह जाएगी।

उसका विचार सही था। उस दिन सन्ध्या के समय अनन्त ने भी ऐसा ही कहा। उसके पार्श्व में बैठा हुआ, उसका हाथ अपने हाथ में थामे, वह उसे सारी स्थिति समझाने लगा। उसका स्वर चिन्तातुर भारी-सा था—"मैं जानता हूँ यह आसान नहीं होगा, कुमुद," उसने कहा—"तुम्हीं को, हम सब से ज्यादह, सारी अदल-बदल और व्यवस्था करनी होगी। तुम्हें वे जिम्मेवारियाँ अपने ऊपर लेनी होंगी जिनका तुमने कभी विचार भी न किया होगा। मैं यों तुम्हें छोड़कर न जाता, प्रिये, खासकर जब मैं ही अब तक तुम्हारी रक्षा, तुम्हारी देख भाल करता आया हूँ—पर क्या करूँ? अब इतना समय भी नहीं कि तुम्हें प्रत्येक बात सिखाऊँ।"

कुमुद ने उसके वक्ष में मुँह छिपाकर शक्ति सञ्चारित करने का प्रयत्न किया। "नहीं, नहीं, अनन्त। तुमने जो किया वह ठीक था। इसी से तो तुम्हारे प्रति मेरा स्नेह बढ़ता चला आया है—क्योंकि तुमने सर्वदा मेरी देख भाल की है—हर तरह। मेरी और उषा और भानु की। यही कारण है कि अब यह कठिन जान पड़ता है। मुझे गर्व है—मैं तुमसे सहमत हूँ; पर—पर मैंने शायद इस नई स्थिति को ग्रहण नहीं कर पाया है; बस, इतना ही।"

अनन्त ने उसका हाथ दबाकर उसे आश्वासन देने की कोशिश करते हुए कहा—"दूसरी भी कई स्त्रियाँ अकेली हो जाएँगी; कुमुद! अनेक को वे काम सीखने पड़ेंगे जो पहले पुरुष करते थे; अनेक को कठिन परिश्रम भी करना होगा। यह भी तो सोचो। वे सब तुम्हारी ही तरह होंगी।"

वह इस बात पर कुछ न बोली; पर जब अनन्त ने कहा—"आज ही कल में वे मुझे ले जाएँगे।" तो उसका भय फिर उसके हृदय में धड़कन पैदा करने लगा। वह एक अज्ञात आशङ्का का अनुभव करने लगी।

"लक्ष्मी तो रहेगी न?" अनन्त पूछ रहा था। उसकी आँखें स्नेह और भावना से छलक रही थीं; जैसे बच्चों के सम्बन्ध में बात करते समय वे हमेशा हुआ करती थीं।

"नहीं, एक सप्ताह के बाद वह चली जाएगी।"

"सचमुच? खैर, उनके लिए दूसरी कोई नर्स ढूँढ़ निकालना। सावधानी से खर्च करेगी तो इसके लिए कुछ रुपए अवश्य बच रहेंगे। लक्ष्मी-सी नर्स तो कभी न मिलेगी, पर बच्चों की देख-भाल करने में तुम्हें दूसरी किसी स्त्री की सहायता अवश्य चाहनी होगी। तुम्हें प्रत्येक बात का ध्यान रखना होगा! प्रत्येक बात का! तुम इससे भाग न सकोगी।"

उसका कण्ठरोध हो आया; और एक क्षण के लिए कुमुद को उस पीड़ा का आभास हुआ जो अनन्त को हो रही होगी। वह अपनी दोनों बेटियों को चाहता था। और अब वह दीर्घकाल के लिए जा रहा है। लक्ष्मी भी चली जायगी। और इसका अर्थ यह हुआ कि बच्चों की सँभाल के लिए रह जाएगी केवल कुमुद—कुमुद जो अब तक स्वयं दूसरों पर निर्भर रहती आई है।

जाने क्यों, अनन्त को चिन्तातुर देखकर, कुमुद का निज का भय कुछ हलका पड़ने लगा—अनन्त को आश्वासन देने का भी विचार हुआ। "मैं सब देख लूँगी, अनन्त!" उसने कहा। "तुम चिन्ता न करो। प्रत्येक बात की मैं व्यवस्था कर लूँगी। विश्वास रक्खो।"

पर एक घण्टे के बाद सहसा दरवाजे की घंटी बजी तो कुमुद का विश्वास दृढ़ न रह सका। उसने भान किया कि समय आ पहुँचा है—पुलिस आ गई है। वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संख्या ४]

वहीं खड़ी रही जिससे आगन्तुक की आवाज सुन सके, और जब निश्चय हुआ कि वह पुलिस इन्स्पेक्टर ही है, तो वह डूबते हुए दिल से उठी और ऊपर जाकर काँपते हाथों से अनन्त का बैग तैयार करने लगी।

बैग में वस्त्र और आवश्यक वस्तुएँ व्यवस्थापूर्वक रखते हुए उसने उच्च स्वर में बोलते हुए इन्स्पेक्टर की सभी बातें सुनीं। वह बैठक की तलाशी ले रहा था। "आपका किताबों का बड़ा अच्छा 'सिलेक्शन' है, मिस्टर प्रभावलकर!" वह कह रहा था—"ये बड़ी नायाब चीजें हैं। मैंने जो कुछ आपके बारे में सुना था वह बिलकुल सही है। मैं आपकी तारीफ करता हूँ।" कुछ समय तक वह चुप रहा; शायद वह दूसरी कुछ वस्तुओं की परीक्षा कर रहा था। फिर उसने कहा "यही काफी होगा। और कुछ देखने की जरूरत नहीं। हम आपको ज्यादा तकलीफ नहीं देना चाहते। अब आप भोजन वगैरह कर लें। हम एक घंटा ठहरेंगे...या आपको ज्यादह वक्त की जरूरत होगी?" उसने क्षण भर ठहरकर पूछा।

"नहीं, नहीं" अनन्त का कण्ठस्वर सुनाई दिया। "एक ही घण्टा काफी होगा।"

इसके बाद अनन्त ऊपर आया। कमरे के द्वार पर खड़ा होकर वह कुमुद की ओर देखने लगा। दोनों की आँखें मिलीं; और एक क्षण के लिए—एक क्षण जो वर्ष के समान था—वे एक दूसरे की छवि को नेत्रों से पीने लगे। फिर अनन्त उसके समीप आया और वह उससे लिपट गई। अन्तिम बार वह उसकी बाँहों के आलिङ्गन के सुख का अनुभव करने लगी। घण्टे के बाद—एक अमूल्य घण्टे के बाद—वह चला जाएगा, और फिर न जाने कब उसे उसकी बाँहों का स्वर्ग प्राप्त हो! कुमुद के दिल में दर्द की एक कसक-सी उठी। उसकी आँखों में अश्रु उमड़ आए।

कुछ क्षण के बाद अनन्त से अलग होकर उसने अपने आँसू पोंछ डाले और कहा—"अच्छा, अब तुम भोजन कर लो। तुम्हारा बैग तैयार है। और कुछ चाहिए तो कहना, तो वह भी डाल दूँगी। तब तक जाकर उषा और भानु को ले आऊँ।"

नौकर को बुलाकर उसने अनन्त का भोजन लाने के लिए कहा; और फिर वह पिछले द्वार की ओर बढ़ी। इतने में टेलिफोन की घंटी बज उठी और उसे वापस आना पड़ा।

टेलिफोन उठाने पर ज्ञात हुआ कि श्रीमती खाण्डावाला बोल रही हैं। शहर की आत्मनियुक्त संचालिका। वे हमेशा चन्दे माँगतीं, मजलिसें करतीं या लोगों का हित करती रहती थीं। कुमुद को क्रोध हो आया; इस वक्त भी मिसेज खाण्डावाला की निरर्थक बातें सुननी होंगी! वह रिसीवर वापस रख देती, पर अनन्त खड़ा था और उसे अविनय अच्छा नहीं लगता था। कुमुद ने कहा, "हाँ, मैं हूँ; कुमुद प्रभावलकर।"

मालूम हुआ कि शहर के मुख्य प्राइमरी स्कूल के दो अध्यापक कैद कर लिए गए थे। उनकी जगह भरना अत्यावश्यक था। मिसेज खाण्डावाला ने कुमुद का नाम दे दिया था। दूसरी भी एक अध्यापिका उसने खोज निकाली थी। कुमुद का नाम उसने इसी लिए दिया था कि उसके मतानुसार कुमुद के पास काफी समय था। वह कुछ काम भी नहीं करती थी और दोनों लड़कियों के लिए उसके घर नर्स भी थी। वह आसानी से यह काम उठा सकती थी।

कुमुद का वश चलता तो वह मिसेज खाण्डावाला का मुँह नोच लेती। पर स्थिति ऐसी आसान नहीं थी। उसने दबी हुई आवाज में कहा—"पर मेरी नर्स जा रही है, मिसेज खाण्डावाला! अब दोनों लड़कियों की देख-रेख मुझे ही करनी होगी।"

"यह तो और भी खूब! दोनों को स्कूल में अपने साथ ले जाना और जब तक तुम अपने घण्टे लो तब तक उन्हें छोटी कक्षाओं में छोड़ देना।"

"मैं पढ़ाना नहीं जानती, मिसेज खाण्डावाला! मैं नहीं समझती कि मैं यह भार उठा सकूँगी। कोई दूसरी अध्यापिका—"

"नहीं, नहीं; ऐसा नहीं हो सकता। तुम खुद-ब-खुद जान जाओगी। मुश्किल कुछ नहीं होगा। तो मैं स्कूल की कमेटी से कह दूँगी कि तुमने स्वीकार कर लिया है।"

कुमुद इस वक्त बड़े असमञ्जस में थी, क्या करे? वहाँ मिसेज खाण्डावाला का आग्रह, यहाँ अनन्त खड़ा सुन रहा है। किसी प्रकार का निर्णय करना उसके लिए कठिन था। वह यह भार उठाना नहीं चाहती थी; कहीं कोई भूल हो जाए तो?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसी समय अचानक उसके अन्तर में प्रकाश की किरण पड़ी। ऐसी सुन्दर व्यवस्था, और इससे पहले उसे कभी विचार ही नहीं हुआ था। अब वह कुछ भी कह सकती है। सब कुछ स्वयं ही सीधा हो जाएगा। "अच्छा मिसेज खाण्डावाला," उसने कहा। "अगले सोमवार से मैं काम शुरू करूँगी। अनन्त आध घण्टे बाद जेल को जा रहा है। इसके बाद गृह-व्यवस्था के लिए मुझे कम-से कम एक सप्ताह चाहिए। आप निश्चिन्त रहें, मैं सोमवार को स्कूल में पहुँच जाऊँगी।"

रिसीवर नीचे रखकर वह अनन्त की ओर मुड़ी। इस वक्त वह उसे न बताएगी पर बाद में पत्र लिखकर सब कुछ समझा देगी। यह बताने से कहीं आसान होगा। एक सप्ताह के बाद वह बम्बई से कोसों दूर होगी और फिर मिसेज खाण्डावाला कुछ न कर सकेंगी।

अनन्त ने गर्व के साथ कहा—"सो मेरी कुमुद अब अध्यापिका बनेगी। वह स्वतन्त्र होगी।"...वह इतना प्रसन्न था कि कुमुद कठिनता से इसे सहन कर सकी। "अब तुम सचमुच ही आत्मनिर्माण कर सकोगी। किसी प्रकार की रुकावट इसमें न होगी। और मुझे यह देख कर गर्व होगा। मैं खुशी में फूला न समाऊँगा।"

वह उससे कह नहीं सकती थी, इसी से बात टालने के लिए उसने कहा—"मैं बच्चों को जाकर बुला लाती हूँ।"

उषा और भानु—छः और चार वर्ष की - कमरे में आईं तो गम्भीर थीं—बालकों की तरह और हँसने के लिए तैयार। पर यहाँ हँसी का अवसर ही नहीं था। अनन्त ने दोनों को, कुमुद के साथ, जी भर के देखा; उसके अन्तर में इन तीनों के लिए इतना स्नेह था कि जितना भी समय वह उन्हें देख सके वह काफी नहीं था। जब तक वह भोजन करता रहा, तीनों उसके सामने बैठी रहीं—दोनों लड़कियाँ माँ की एक-एक तरफ, उससे सटी हुईं।

अब वह क्षण आ गया था, और कुमुद अकेली थी। अनन्त को पुलिस लारी में ले गई थी और कुमुद, उषा और भानु छज्जे पर खड़ी उस तरफ देख रही थीं जिधर लारी गई थी।

कुछ ठहरकर कुमुद अन्दर गई और ठण्ठी साँस लेकर तार (टेलिग्राम) लिखने को बैठ गई। जिस समय पुलिस की लारी आँखों से अदृश्य हुई थी उसी समय अनन्त के पीछे होनेवाली रिक्तता और निस्सहायता का विचार करके उसने अपना कर्तव्य दृढ़ कर लिया था। उसने कठपुतली की तरह तार का फार्म उठाया, उस पर अँगरेजी में निर्धारित शब्द लिखे :—

"अनन्त अभी सत्याग्रह आन्दोलन में गिरफ्तार हो गया है। उसके जाने से यहाँ सब कुछ बहुत अखर रहा है? बच्चों के साथ मैं वहाँ चली आऊँ? तीन-चार दिन में रवाना हो सकूँगी। उत्तर शीघ्र देना। कुमुद।"

कलम नीचे रक्खी तो घर का विचार आया। माँ और पिता जी उसे पाकर कितने प्रसन्न होंगे! इसका तो अंशमात्र भी सन्देह नहीं था कि उनका उत्तर क्या होगा। वे सहर्ष उसे बुला लेंगे। और फिर उसे तनिक भी भार न उठाना पड़ेगा। माँ ही सब कुछ देख-सुन कर ठीक कर लेंगी। बच्चों की देख-रेख भी स्वयं ही होती रहेगी।

पर क्या अनन्त को यह पसन्द आएगा? कदापि नहीं। वह तो यह सुनकर प्रसन्न हुआ था कि कुमुद अध्यापिका बन रही है। उसने तो यही कहा था—"तुम्हें जिम्मेवारियाँ उठानी होंगी। तुम इससे भाग नहीं सकतीं।"

सचमुच ही वह जिम्मेवारियाँ उठा ले तो? वास्तविक रूप में वह सीखने लगे तो?...पर नहीं, यह वह कैसे कर सकती है? जिसने कभी कुछ नहीं किया, कुछ नहीं जाना, वह अब ऐसा गुरु भार कैसे उठा सकेगी?

उसे तार पर कितने पैसे व्यय करने होंगे, यह निर्णय करने में भी कठिनाई हुई। एक्स्प्रेस तार, रात के भाग, कुल कितना देना होगा? ऐसे मांथापच्ची के काम हमेशा अनन्त ने ही किए थे। अन्त में तङ्ग आकर कुमुद ने नौकर को बुलाया और पाँच रुपए देकर कहा—"यह तार ले जाओ। जितना भी लगे दे आना। पर तार जल्दी ही जाए।"

उसने हिसाब लगाकर देखा, पूना से उत्तर सवेरे तक आ जाना चाहिए। पिता जी जवाब देने में विलम्ब कदापि न करेंगे। मध्य रात्रि के समय उठकर भी तार आफिस को जाएँगे।...

तार का नाम सुनकर उषा दौड़ आई। "तार किसे भेज रही हो' माँ?" उसने उत्सुकतापूर्वक पूछा।

"हम बड़ी माँ के पास जाएँगी, उषा?" कुमुद ने कहा, "वहीं चलकर रहेंगी—जब तक बाबूजी आएँ। क्यों, तुम्हें यह बात पसन्द नहीं?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संध्या ४]

"नहीं," उषा ने कहा—"मैं वहाँ नहीं जाऊँगी। मैं यहीं रहूँगी। पिताजी यह घर मेरे हाथों में सौंप गए हैं। मुझे उसकी देख-भाल करनी होगी।"

"पर यह तो कोई दूसरा भी कर सकता है, उषा! सिर्फ तुम्हीं तो नहीं हो।"

किन्तु उषा न मानी। उसने कहा—"पिताजी यह मुझसे ही कह गए हैं दूसरे किसी की जरूरत नहीं।" वह अपनी जिद पर कायम रही और अन्त में मा के शरीर पर अपनी छोटी मुट्ठियों से प्रहार करती हुई रो पड़ी। कुमुद ने उसे बाँहों में उठा लिया और उसके कमरे में ले जाकर बिस्तर पर सुला दिया। उसकी पीठ पर थपकियाँ देती हुई, लोरी गाकर, वह उसे सुलाने की कोशिश करने लगी।

कुछ देर बाद, उस कमरे का लैम्प बुझाकर कुमुद चुपके से बाहर निकली। भानु इस बीच में भोजन करके ऊपर आ गई थी और अब वह भी सो रही थी। कुमुद को स्वयं खाने की बिलकुल इच्छा न थी। उसके पैर खुद-ब-खुद उसे अनन्त के कमरे की ओर ले गए। वहीं उसे इस शून्यता के बीच में आश्रय मिलेगा; चैन मिलेगा।

अनन्त को जाने से पहले अपने कमरे की व्यवस्था करने का अवकाश नहीं मिला था; इसी से सभी चीजें वैसी ही पड़ी थीं। प्रत्येक को छूकर कुमुद अनन्त के स्पर्श की स्मृति बुलाने की चेष्टा करने लगी। इसी में व्यस्त, भूत की लड़ियों में उलझी हुई, वह सहसा अनन्त की तस्वीर के सामने जा पहुँची। ऊपर दृष्टि उठाकर देखा तो अनन्त गम्भीर-विचारपूर्ण नेत्रों से उसकी ओर देख रहा था। कुमुद को भान हुआ जैसे वह कह रहा हो—"तुम्हें जिम्मेवारियाँ उठानी होंगी, कुमुद। इससे तुम भाग नहीं सकतीं।"

वह एक अज्ञात आशङ्का का अनुभव करने लगी। क्या वह भूल कर रही है? क्या उसे यह सब कुछ न करना चाहिए? उसने मूक प्रश्न भरी दृष्टि से अनन्त की ओर देखा—"क्या मैं भाग रही हूँ?" उसने मौन भाषा में पूछा—"क्या मैं सीखने से इनकार कर रही हूँ? मुझे अब दूसरों की सहायता न लेनी चाहिए?"...

वह अनन्त के उत्तर की प्रतीक्षा करने लगी। और क्षण भर में अनन्त ने,—अनन्त जो उसके अन्तरतम प्रदेश में था—जवाब दिया—"मैं पहले ही कह चुका हूँ, कुमुद, तुम्हें भारी जिम्मेवारियाँ उठानी होंगी। तुम ठोस वस्तु की बनी हुई हो, तुममें अस्तित्व है, जिसने अभी तक विकास नहीं पाया। तुम आज तक दूसरों पर निर्भर रहती आई हो, पर तुममें वह सार भी है कि स्वयं सब कुछ कर सको। अब अवसर है और तुम अपना व्यक्तित्व प्रमाणित कर सकती हो। तुम अपने पाँवों पर खड़ी होगी तो मुझे अत्यन्त प्रसन्नता होगी। मुझे गर्व होगा।"

कुछ ठहरकर उसने मानो फिर कहा—"मुझे याद है, मैंने कहा था कि कुछ भी हो, कुमुद ही सर्वप्रथम रहेगी। अब भी मैं वही बात कह सकता हूँ। तुम्हारे और मेरे बीच में अभी तक कुछ नहीं आ सकता। यह तुम किसी दिन स्वयं समझ लोगी। और यह जो कुछ मैंने किया है वह हम दोनों ही के लिए उत्तम है। मैं इस संग्राम से बाहर नहीं रह सकता क्योंकि देश का भी हमारे ऊपर कुछ अधिकार है। और तुम्हारे विकास के लिए भी यह आवश्यक है कि तुम निराधार छोड़ दी जाओ। तभी तुम अपना कायापलट कर सकोगी।"

कुमुद ने मानो सम्मति जताते हुए अपना सिर झुका लिया। उसकी आत्मा पर शान्ति का सा प्रभाव पड़ रहा था, एक अद्भुत प्रकार का शैथिल्य उसे घेर रहा था। वह धीरे-धीरे ढुलक रही थी, उसका मन क्रमशः शून्य होता जा रहा था। तन्द्रा-जैसी अवस्था में वह सोफे पर बैठ गई और एक क्षण में निद्रामग्न हो गई।

सवेरे लक्ष्मी ने आकर उसे जगाया। आँखें खोलकर देखा तो दिन काफी चढ़ चुका था। वह झटपट उठ बैठी और पूछा—"कोई तार आया क्या, लक्ष्मी?"

"नहीं। पिताजी आए हैं।"

कुमुद उछल पड़ी—"क्या सचमुच? कहाँ हैं वे? कब आए?"

लक्ष्मी ने धीरतापूर्वक कहा—"अभी दस बजे की गाड़ी से आए हैं। इस वक्त स्नान कर रहे हैं।"

कुमुद लक्ष्मी के सामने इस प्रकार अपना हर्ष प्रकट करने से लज्जित हो रही थी। वह उठी और नित्यकार्य में व्यस्त हो गई।

दस मिनट बाद वह भोजन-गृह में पिता के लिए चाय बना रही थी कि सहसा अनन्त का विचार आया, अब वह क्या कर रहा होगा? पुलिस-स्टेशन से अवश्य ही उसे सवेरे जेल को ले गये होंगे। अब वह बैठा पढ़ रहा होगा, या—या—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह इसी उलझन में थी कि नौकर ने आकर कहा—"एक महिला आपसे मिलना चाहती हैं, मालकिन। वे बैठक में हैं।"

बैठक में जाकर देखा कि एक भद्र महिला—लगभग पच्चीस वर्ष की—अपने चारेक वर्ष के बेटे के साथ बैठी उसकी प्रतीक्षा कर रही है। नमस्कार कर उस महिला ने कहना आरम्भ किया—"आप शायद मुझे नहीं जानतीं। मैं आपके सब-एडीटर केसरकर की पत्नी हूँ। कल रात को उन्हें गिरफ्तार कर ले गए। अब मैं निस्सहाय हूँ। जाने से पहले वे कह गए कि मैं आपसे सहायता माँगूँ। उनका विश्वास था कि आप मुझे अवश्य मदद देंगी।"

कुमुद दुविधा में पड़ गई। इससे वह क्या कहे? "ठीक है," उसने कहा—"जो कुछ मुझसे हो सकता वह मैं अवश्य करती। पर बात यह है—"

वह पूरी बात कह भी न पाई थी कि श्रीमती केसरकर ने कहा—"आप कृपया यह न समझें कि मैं आपके ऊपर भार होकर रहूँगी। मैं केवल आपसे यह चाहती हूँ कि आप मुझे अपने साथ रहने दें। इससे अधिक कुछ नहीं। मैं आपकी दोनों बेटियों की देख-रेख भी कर लूँगी। आपको किसी नर्स की जरूरत है न?"

कुमुद को याद आया कि लक्ष्मी छः दिन के बाद जा रही है। "हाँ," उसने कहा—"हाँ, मुझे नर्स की जरूरत तो है।" फिर वह सोचने लगी। अन्त में मन्द, खेद-भरे स्वर में कहा—"पर बात यह है कि मैं यह घर छोड़ने का विचार कर रही थी। पिताजी मुझे पूना ले जाने के लिए आए हैं और वहाँ मुझे नर्स की आवश्यकता न होगी।"

'पिताजी' शब्द का उच्चारण करने से ही उसे पिता की चाय की याद आ गई। उनसे अब तक भेंट भी नहीं हुई। वे स्नानादि समाप्त कर ही चुके होंगे। वह उनके पास जाने का विचार कर रही थी कि वे स्वयं "बेटा, कहाँ हो?" कहते हुए अन्दर चले आए। कुमुद उनसे गले लगकर मिली और पूछा—"पिताजी, आप खुद चले आए?"

पिताजी ने कहा—"हाँ, सोचा तुम्हें लिवा लाने के बहाने बम्बई का चक्कर लगा आऊँ।"

पर उनका कण्ठस्वर कुछ और कह रहा था। कुमुद ने चिन्तित स्वर में कहा—"और कोई कारण तो नहीं है, पिताजी?"

पिताजी कुछ हिचके, फिर स्पष्ट कह दिया—"हाँ, कुछ तकलीफ होगी, बेटा, इसी से मैं स्वयं आया हूँ कि तुम्हें सारी स्थिति भली-भाँति समझा दूँ।"

"तकलीफ? आपका मतलब क्या है, पिताजी?" कुमुद ने पूछा।

पिताजी ने धीरे-धीरे कहना आरम्भ किया—"हमने घर का आधा हिस्सा काँग्रेस कमिटी के सुपुर्द कर दिया था कि वे उसमें सत्याग्रह आश्रम स्थापित करें। हमारे पास अब केवल तीन कमरे हैं। सो जब तुम्हारा तार मिला तो मैंने उनसे जाकर कहा कि उन्हें घर छोड़ना पड़ेगा। मेरी उमा और भानु के लिए सारा घर चाहिए। काँग्रेसवालों ने एक सप्ताह का अवकाश माँगा है। सो मैं तुम्हें जताने आया था कि कुछ दिन चलकर उन तीन कोठरियों ही से सन्तुष्ट रहना पड़ेगा। बाद में फिर सारा घर ही तुम ले लेना।"

कुमुद यह सुनकर क्षण भर के लिए मौन हो गई। इसके बाद वह कुछ कहने जा रही थी कि उसकी दृष्टि श्रीमती केसरकर के ऊपर पड़ी। इस बीच में वह उसे भूल ही चुकी थी। उसका किञ्चित् म्लान चेहरा देखा तो सहसा अनन्त के शब्द याद हो आए—"दूसरी भी कई स्त्रियाँ अकेली हो जाएँगी, कुमुद। यह भी तो सोचो। वे सब तुम्हारी ही तरह होंगी।"

"मेरी ही तरह होंगी।...तब वे भी मेरी तरह भयभीत हो रही होंगी? वे भी दूसरों का आश्रय चाहती होंगी! जैसे ये श्रीमती केसरकर हैं!..."उसका कण्ठ सहसा घुटने लगा, उसे एक अद्भुत पीड़ा का आभास होने लगा।

उसे पिछली रात अनन्त से की हुई बातचीत याद आई। क्लान्ति से उसे नींद आ गई थी, इसी से उसकी बुद्धि ने अनन्त की बात ग्रहण नहीं की थी। पर अब सब कुछ मानस-पट पर उतर आया।

"तुम्हारे विकास के लिए यह आवश्यक है कि तुम निराधार छोड़ दी जाओ।" अनन्त ने कहा था—"यही अवसर है जब तुम अपना व्यक्तित्व प्रमाणित कर सकती हो। तुम अपने पाँवों पर खड़ी होगी तो मुझे अत्यन्त प्रसन्नता होगी। मुझे गर्व होगा।"

अनन्त प्रसन्न होगा।...सहसा कुमुद के लिए प्रत्येक बात स्पष्ट हो गई। उसने मौन तोड़कर पिताजी से कहा, पिताजी, "आप तनिक भी चिन्ता न करें। सत्याग्रह आश्रम आप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संख्या ४]

वहीं रहने दें और खुद तीन ही कमरे लिए रहें। यही ठीक होगा।"

पिताजी ने आश्चर्यान्वित होकर कहा—"यह तुम कहती क्या हो बेटा? तुम जो हमारे यहाँ चल रही हो?"

कुमुद ने दृढ़तापूर्वक कहा—"मैं यहीं रहूँगी, पिताजी! आप मुझे विचलित करने की कोशिश न करें। आप कुछ न कहें। मैंने निश्चय कर लिया है।"

पिताजी क्षण भर उसकी तरफ देखते रहे—मूक, मर्मभेदी दृष्टि से। फिर धीरे से उन्होंने कहा—"तुम्हीं जानो, कुमुद! जो कुछ तुम कर रही हो वह तुम स्वयं समझती हो। आजकल हमें बहुत कुछ सीखना है।"

अनन्त चला गया था, फिर भी कुमुद को ऐसा भान हुआ जैसे वह उसके पार्श्व में ही हो। यही तो उसकी आशा थी। इसी से तो वह प्रसन्न होगा।

कुमुद श्रीमती केसरकर की ओर देखकर मुस्कराई, मानो से, जैसे कह रही हो, 'अब जरा भी चिन्ता की जरूरत नहीं, बहन! सब कुछ ठीक हो जाएगा।'

अपने कर्तव्य का निर्णय उसने क्षण भर पहले ही किया था, पर सारा अधिकार जैसे अभी से उसमें समा गया था। वह दरवाजे के पास गई और लक्ष्मी को पुकारकर उषा और भानु को बुलाने के लिए कहा।

दोनों आईं तो उन्हें वह श्रीमती केसरकर के पास ले गई। उसके बेटे की ओर सङ्केत करके कहा—"उषा, भानु, यह तुम्हारा नया मित्र होगा। वह लक्ष्मी के कमरे में रहेगा। क्यों, पसन्द है न?"

उषा ने नेत्र विस्फारित करके कहा—"अब हमें पूना नहीं जाना होगा। माँ?"

कुमुद ने स्थिरतापूर्वक कहा—"नहीं, बेटा, हम यहीं रहेंगी। तुम अब इस घर की देख-रेख कर सकोगी।"

दोनों मूक भाव से इस बात को समझने की चेष्टा करती रहीं। फिर श्रीमती केसरकर की ओर देखकर पूछा—"ये हमारी नई माँ होंगी, माँ?"

कुमुद ने श्रीमती केसरकर की कृतज्ञतापूर्ण आँखों में देखकर कहा—"हाँ, बेटा, ये नई माँ हैं। और जब बाबूजी आएँगे, तो जानती हो, वे क्या पूछेंगे?—वे पूछेंगे कि ऐसी अच्छी माँ कहाँ से पाई? फिर तुम क्या कहोगी?"

उषा और भानु दोनों विचारमग्न हो गईं। पर शीघ्र ही भानु के चेहरे पर प्रकाश की रेखा दौड़ गई। "हम कहेंगी, हमारी माँ ले आई," उसने अपनी अबोध वाणी में कहा—"हमारी अच्छी माँ।"

ओ देवदार

श्री प्रभाकर माचवे, एम० ए०, साहित्यरत्न

ओ देवदार!
राजसी, ऊर्ध्वगति, महाकार!
प्राचीन वृक्ष!
नभ के समक्ष—
जो लक्ष-लक्ष
पृथ्वी के पीड़ित प्राणों की कहते हो
क्या नीरव गुहार?
यूनानी स्थापत्य-स्तम्भ-से,
एकाकी ओ' निरवलम्ब से,
ओ मलाबार औ' महापञ्चनद तक
विस्तारित देवदार!

दक्षिण-उत्तर
रहे निरुत्तर।
कङ्कड़-पत्थर
कई मिट गए पर्वत-डुङ्गर,
यहाँ सभ्यताएँ उठकर फिर
मिली मृत्तिका में निस्सार
धन्य कुमारी-कञ्चनगङ्गा के ओ पहरेदार!
अहे हिमाञ्चल की रोमावलि!
हो प्रणम्य शत बार!
ओ देवदार!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिन्ध की राजनीति

श्री शिवकुमार, विद्यालङ्कार

सिन्ध पाकिस्तान-योजना का प्रधान अंग है। सिन्ध-असेम्बली के चुनाव में इसी लिए मुस्लिम लीग ने बड़े जोर-शोर के साथ हिस्सा लिया था। चुनाव के परिणाम प्रकट हुए और हमने देखा कि यदि मुस्लिम लीग पार्टी के २८ उम्मीदवार सफल हुए तो कांग्रेस के २०, सैयद-दल के ४, मौलाबख्श-दल के ३, मजदूर १, और योरपियन-दल के ३। इस चुनाव के अनन्तर प्रश्न यह उत्पन्न हुआ कि सिन्ध में स्थायी मन्त्रि-मण्डल कैसे स्थापित किया जाए।

राष्ट्रपति का प्रस्ताव

सिन्ध में स्थायी मन्त्रि-मण्डल स्थापित करने के लिए सबसे पहले राष्ट्रपति मौलाना अबुल कलाम आजाद ने कांग्रेस की ओर से एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया। उन्होंने सिन्ध की अतीत परिस्थिति को देखते हुए यह प्रस्ताव किया कि कांग्रेस और मुस्लिम लीग दोनों मिलकर मन्त्रि-मण्ड बनाएँ। राष्ट्रपति का सुझाव निस्सन्देह व्यावहारिक और राजनीतिज्ञता से परिपूर्ण था। सन् १९३७ के चुनावों के बाद कांग्रेस हाईकमाण्ड पर यह आरोप लगाया गया था कि यदि उसने चौ० खलीकुज्जमाँ आदि के प्रस्ताव को मानकर संयुक्तप्रान्त में मुस्लिम लीग के साथ मिलकर संयुक्त मन्त्रि-मण्डल बनाया होता तो मुस्लिम लीग और कांग्रेस दोनों एक दूसरे से इतनी दूर न होतीं, जितनी कि आज हैं। यदि वैसा हो जाता तो १९३९ में कांग्रेस-द्वारा मन्त्रि-मण्डलों को ठुकरा देने के बाद मुस्लिम लीग मुक्ति दिवस भी न मनाती। उस आक्षेप को राष्ट्रपति भूले न थे। इसलिए उन्होंने सिन्ध के लिए उक्त प्रस्ताव कांग्रेस की ओर से पेश कर दिया। किन्तु सिन्ध की मुस्लिम लीग ने शिमला-सम्मेलन के अभिप्राय को फिर दोहरा दिया। उस सम्मेलन में लार्ड वैवल ने कांग्रेस को हिन्दू संस्था बताया था। सिन्ध मुस्लिम लीग भी लार्ड वैवल के चरण-चिह्नों पर चलकर एक हिन्दू संस्था के रूप में कांग्रेस के साथ मन्त्रि-मण्डल बनाने को तैयार थी, राष्ट्रीय संस्था के रूप में नहीं। राष्ट्रपति ने कहा था कि कांग्रेस में राष्ट्रवादी मुसलमान भी हैं और हिन्दू भी। इसलिए मन्त्रि-मण्डल में राष्ट्रवादी मुसलमानों को भी स्थान दिया जायगा। लेकिन मुस्लिम लीग ने इस चीज को स्वीकार नहीं किया। कांग्रेस को पदों का कोई लोभ नहीं। वह तो सिन्ध की सर्वसाधारण जनता का भला चाहती थी। यदि उसके प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया जाता तो सिन्ध में स्थायी मन्त्रि-मण्डल स्थापित हो जाता।

सिन्ध जैसे प्रान्त के लिए स्थायी मन्त्रि-मण्डल की नितान्त आवश्यकता है। इसके अभाव में इस प्रान्त को किन विपत्तियों का सामना करना पड़ेगा, इसके लिए हमें जरा विगत मन्त्रि-मण्डल के शासन-काल का सिंहावलोकन करना होगा। उन दिनों सिन्ध में हरेक व्यक्ति की जान व माल अरक्षित था। उसी के काल में हमने भयङ्कर हिन्दू-मुस्लिम दङ्गे देखे और देखा अल्लाबख्श जैसे समझदार राजनीतिज्ञों का खून। उन दिनों पुलिस और पुलिस-अधिकारी अपने कर्तव्यों को भूल गये थे। उनकी गति-विधि को नियन्त्रित करने के लिए कराची में कोई दबङ्ग मन्त्री न था। युद्धकालीन परिस्थिति के कारण एक-एक पुलिस अफसर ऐंठ में घूमता था। उसे जनता के दुःख की कोई चिन्ता न थी। ज़िला-अधिकारियों का दिमाग भी आसमान पर चढ़ गया। उन्होंने देख लिया कि प्रान्त के न्याय व व्यवस्था-मन्त्री का अस्तित्व उन्हीं पर निर्भर है। वे अपने आपको समूचे मन्त्रि-मण्डल का विधाता समझते थे। उन्हें मालूम था कि यदि उन्होंने डरा-धमकाकर वोटरों को चुनाव-स्थल पर वोट देने के लिए न भेजा होता तो यह तथाकथित मन्त्रि-मण्डल न बन सकते। वे सर हिदायतुल्ला तथा समूचे मन्त्रियों को अपना अहसानमन्द समझते थे। वे अपने आपको मनमानी करने का पूर्ण अधिकारी समझते थे। अभिप्राय यह है कि उन दिनों न्याय व व्यवस्था के स्थान पर पुलिस-अफसरों व जिला-अधिकारियों की स्वेच्छाचारिता का दौर-दौरा था। अधीनस्थ अधिकारी जनता के प्रति अपना कर्तव्य पालन करते रहे, इसी लिए कांग्रेस की ओर से राष्ट्रपति ने संयुक्त मन्त्रि-मण्डल बनाने का प्रस्ताव प्रस्तुत किया था।

गवर्नर का अवैधानिक कार्य

सिन्ध के दुर्भाग्य से कांग्रेस और मुस्लिमलीग में समझौता न हो सका। फल-स्वरूप कांग्रेस, राष्ट्रवादी मुस्लिमों और सैयद दल की एक संयुक्त पार्टी स्थापित हो गई। इस संयुक्त पार्टी की सदस्य-संख्या भी मुस्लिमलीग के बराबर २८ हो गई। इसलिए आशा थी कि सिन्ध के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संख्या ४]

गवर्नर इस संयुक्त पार्टी के नेता श्री जी० एम० सैयद को मन्त्रि-मण्डल बनाने के लिए आमन्त्रित करेंगे। लेकिन भारत के समस्त विधानशास्त्री ही नहीं, अपितु सर्वसाधारण जनता भी उस समय दाँतों-तले अँगुली दबाने लगी, जब यह पढ़ने में आया कि सिन्ध के गवर्नर ने मुस्लिम लीग पार्टी के नेता सर गुलाम हुसेन हिदायतुल्ला को मन्त्रि-मण्डल बनाने के लिए आमन्त्रित किया है।

संख्या बराबर नहीं थी

सिन्ध के गवर्नर ने अपने कार्य को युक्तिसङ्गत बताने के लिए जो वक्तव्य प्रकाशित किया, उसमें उन्होंने कहा था कि सिन्ध असेम्बली में संयुक्त दल और मुस्लिम लीग पार्टी के सदस्यों की संख्या समान है, और क्योंकि मुस्लिम लीग पार्टी ही एकमात्र ऐसी पार्टी है, जिसे चुनाव में सब से अधिक वोट मिले, इसलिए उसके नेता को मन्त्रि-मण्डल बनाने के लिए आमन्त्रित किया गया है।

सर्वप्रथम गवर्नर का यह कथन ठीक नहीं था कि सिन्ध-असेम्बली में संयुक्त दल की सदस्य-संख्या मुस्लिम लीग दल के समान है। यह ठीक है कि यदि संयुक्त दल के सदस्यों की संख्या २८ थी तो मुस्लिम लीग के सदस्यों की संख्या भी २८ थी। लेकिन गवर्नर को यह ज्ञात होना चाहिए था कि मुस्लिम लीग स्पीकर-पद को अपना उम्मीदवार खड़ा करने की घोषणा कर चुकी थी। लेकिन संयुक्त दल अपनी ओर से किसी व्यक्ति को उक्त पद के लिए उम्मीदवार खड़ा करने को तैयार न था। स्पीकर को असेम्बली में वोट देने का अधिकार नहीं होता। उसे तो कास्टिंग वोट अथवा निर्णायक वोट देने का अधिकार होता है। इस तरह यदि संयुक्त-दल के सदस्यों की संख्या २८ थी, तो मुस्लिम लीग दल की २७। इस अवस्था में लीग पार्टी के नेता को मन्त्रि-मण्डल बनाने के लिए आमन्त्रित करना उचित नहीं था।

चुनाव में नहीं असेम्बली में अधिक वोट

सिन्ध के गवर्नर ने अपने वक्तव्य में बताया कि क्योंकि चुनाव में लीग पार्टी को सब से अधिक वोट मिले, इसी लिए उन्होंने लीग-पार्टी के नेता को मन्त्रि-मण्डल बनाने के लिए आमन्त्रित किया। हम नहीं कह सकते कि सिन्ध के गवर्नर ने ऐसी परम्परा किस प्रजातन्त्री देश में देखी। लेकिन जहाँ तक हमें ज्ञात है और किसी भी देश में किसी ऐसी पार्टी के नेता को मन्त्रि-मण्डल बनाने के लिए नहीं बुलाया जाता। जिस चुनाव में वोट अधिक मिले हों। चुनाव में अधिक वोट प्राप्त करना एकदम गौण चीज है। यदि सिन्ध के गवर्नर के मन्तव्य को स्वीकार कर लिया जाय तो आज से पहले इँग्लैंड में मजदूर-दल का मन्त्रि-मण्डल कदापि न बन सकता। स्वर्गीय रैम्ज़े मैकडानल्ड ने जब अपना मजदूर-दली मन्त्रि-मण्डल बनाया था तब चुनाव में अनुदार दल ही को सबसे अधिक वोट प्राप्त हुए थे, मजदूर-दल को नहीं। फिर भी यदि वे अपना मन्त्रि-मण्डल बना सके तो इसका एकमात्र कारण यह था कि उन्हें ब्रिटिश पार्लियामेंट में आनुदार दल से अधिक वोट प्राप्त थे। सिन्ध के गवर्नर को भी यह देखना चाहिए था कि असेम्बली के सदस्यों का बहुमत किसके साथ है। विधान के अनुसार जिस पार्टी को असेम्बली में सबसे अधिक समर्थन प्राप्त हो, मन्त्रि-मण्डल उसी का बनना चाहिए।

सिन्ध की संयुक्त-पार्टी को देखा जाए तो यह कहा जा सकता है कि उस प्रान्त के सभी दलों का प्रतिनिधित्व प्राप्त है। सिन्ध के हिन्दुओं, मुसलमानों, जमींदारों, मजदूरों महिलाओं और व्यापारियों के प्रतिनिधि इसमें शामिल हैं। इस पार्टी में ऐसे भी लोग हैं, जिनके पास न जमीनें हैं और न बड़ी-बड़ी जायदादें। इसलिए इसी पार्टी को सिन्ध के आर्थिक व राजनीतिक जीवन का प्रतिनिधि कहा जा सकता है, और किसी को नहीं।

इसके विपरीत लीग पार्टी सिर्फ जमींदारों की पार्टी है। वह एकदम साम्प्रदायिक है। उसे सैयद दल और मौलाबख्श दल के अल्पसंख्यक मुसलमानों का विश्वास प्राप्त नहीं है। प्रान्त के ४३ प्रतिशत मुस्लिम वोटरों ने अपने कीमती वोट मुस्लिम लीग के विरुद्ध डाले हैं। २७ प्रतिशत हिन्दू व दूसरे अल्पसंख्यक भी लीग के विरुद्ध हैं। सिन्ध-असेम्बली की ४ विशेष सीटों पर चुने गए सदस्य भी लीग के साथ नहीं। जिस पार्टी को सिन्ध के जीवन का इतना कम प्रतिनिधित्व प्राप्त है, उसे मन्त्रि-मण्डल बनाने के लिए आमन्त्रित करना न्यायोचित नहीं था।

आदेश-पत्र का आदेश

सिन्ध गवर्नर को अपना मन्त्रि-मण्डल बनाते हुए आदेश-पत्र (Instrument of Instruction) में दिए गए आदेश को अपनी आँखों से ओझल न करना चाहिए था। आदेश-पत्र में कहा गया है—"अपना मन्त्रि-मण्डल नियुक्त करते समय हमारा गवर्नर अपने मन्त्रियों का चुनाव इस प्रकार करेगा—वह उस व्यक्ति से, जो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसकी राय में असेम्बली में स्थायी बहुमत को अपने साथ ले सकेगा, परामर्श करके उन व्यक्तियों को मन्त्रि-मण्डल में लेगा जिन्हें सामूहिक रूप में धारा-सभा में विश्वास प्राप्त हो सकेगा। जहाँ तक क्रियात्मक होगा, इन व्यक्तियों में महत्त्वपूर्ण अल्पसंख्यक जाति के सदस्य भी सम्मिलित होंगे। यह कार्य करते हुए गवर्नर को यह ध्यान रखना होगा कि समस्त मन्त्रियों में सामूहिक रूप से अपना उत्तरदायित्व सँभालने की भावना होनी चाहिए।"

आदेश स्पष्ट है। सिन्ध के गवर्नर ने सर्वप्रथम ऐसे व्यक्ति को लिया जिसे असेम्बली में स्थायी बहुमत प्राप्त न था। जिसके मन्त्रि-मण्डल में महत्त्वपूर्ण अल्पसंख्यक जाति का कोई प्रतिनिधि नहीं उसका मन्त्रि-मण्डल साम्प्रदायिक है। उस मन्त्रि-मण्डल का पुराना रिकार्ड इतना खराब है कि उसे सामूहिक रूप में धारासभा का बहुमत प्राप्त न होगा। स्पष्ट है कि सिन्ध के गवर्नर ने अपना मन्त्रि-मण्डल नियुक्त करते हुए आदेश-पत्र के महत्त्वपूर्ण आदेशों को ताक पर धर दिया।

रिक्त स्थानों की पूर्त्ति कैसे होगी ?

सिन्ध मन्त्रि-मण्डल में इस समय दो स्थान रिक्त हैं। प्रश्न यह है कि इनकी पूर्त्ति कैसे होगी ? गवर्नर की ओर से प्रकाशित विज्ञप्ति में कहा गया है कि यह कोशिश की जा रही है कि अल्पसंख्यक जाति के दो सदस्यों को मन्त्रि-मण्डल में ले लिया जाए। सरकारी विज्ञप्ति का यह अंश उपहासास्पद है। प्रश्न यह है कि यह कोशिश कौन कर रहा है ? स्वयं प्रधान मन्त्री सर गुलामहुसैन हिदायतुल्ला अथवा उनके शुभचिन्तक सिन्ध के गवर्नर ? यदि दोनों ही कोशिश कर रहे हैं, तो प्रश्न यह है कि उनकी दृष्टि किस पर है। सरकारी विज्ञप्ति से स्पष्ट है कि सर गुलामहुसैन हिदायतुल्ला को मन्त्रि-मण्डल का निर्माण करने के लिए आमन्त्रित करते समय गवर्नर ने यह मान लिया कि मजदूरों के प्रतिनिधि श्री नारायणदास आनन्दजी बेचर तटस्थ सदस्य हैं। किन्तु वे तो श्री जी० एम० सैयद को लिखकर दे चुके थे कि वे संयुक्त-दल का साथ देंगे। जब श्री जी० एम० सैयद गवर्नर से मिलने गए थे तब वे उनका पत्र साथ ले गए थे। श्री बेचर ने सर हिदायतुल्ला को भी यह लिखित नहीं दिया था कि वे लीग के साथ रहेंगे या तटस्थ रहेंगे। पर न जाने क्यों गवर्नर ने श्री बेचर को तटस्थ मान लिया ?

भविष्य में भी नहीं

सिन्ध गवर्नर और सर हिदायतुल्ला को भूल जाना चाहिए कि भविष्य में ही शायद श्री बेचर मन्त्रि-मण्डल में सम्मिलित हो जाएँ। उन्हें मालूम होना चाहिए कि श्री नारायणदास बेचर पुराने कांग्रेसी हैं। सिन्ध के जिन मतदाताओं ने उन्हें मत दिए, उनमें हिन्दू, मुसलमान और सभी शामिल हैं। चुनाव में कांग्रेस ने उनका समर्थन किया था। उनके अधिकांश मतदाता कांग्रेसी हैं। सर हिदायतुल्ला उन्हें हिन्दू समझकर अपने मन्त्रि-मण्डल में नहीं ले सकते। वे मजदूरों के प्रतिनिधि हैं, हिन्दुओं के प्रतिनिधि नहीं। श्री बेचर एक हिन्दू की हैसियत से कभी मन्त्रि-मण्डल में शामिल न होंगे।

तो फिर क्या सर हिदायतुल्ला की नजर श्री सिरुमल कृपालदास पर लगी हुई है ? निस्सन्देह नवाबशाह के हिन्दू मतदाताओं ने उन्हें चुनकर भेजा है। किन्तु श्री कृपालदास काफी समझदार हैं। वे अपने प्रान्त की जनता के हितों की रक्षा करना चाहते हैं। वे जानते हैं कि चुनाव में कांग्रेस ने उनका खुले आम विरोध किया। किन्तु अपने प्रान्त व देश के हित को सामने रखते हुए वे यह घोषित कर चुके हैं कि वे कांग्रेस के साथ रहेंगे। वे देश-भक्त हैं। सर हिदायतुल्ला को समझ लेना चाहिए कि वे और श्री बेचर कांग्रेस का साथ न छोड़ेंगे। ये दोनों अच्छी तरह समझते हैं कि यदि वे मन्त्रि-मण्डल में शामिल हो गए तो उनकी आवाज कोई न सुनेगा। नक्कारखाने में तूती की आवाज सुनता भी कौन है ? पहले भी श्री गोकुलदास और श्री हेमनदास की किसने सुनी थी ? वे दोनों हिन्दू मन्त्री थे। लेकिन उनसे सलाह लिए बिना ही लीगी मन्त्रि-मण्डल ने 'सत्यार्थ-प्रकाश' पर पाबन्दी लगा दी थी। इसलिए कोई हिन्दू सदस्य अब सर हिदायतुल्ला के मन्त्रि-मण्डल में शामिल होने की मूर्खता न करेगा। इस चीज को लेकर सिन्ध में एक प्रथम दर्जे का वैधानिक सङ्कट पैदा हो जाय तो कोई आश्चर्य नहीं।

योरपियन दल

स्पीकर के अलग हो जाने से मुस्लिम लीग-पार्टी का एक सदस्य कम हो जाता है। इसका अभिप्राय यह हुआ कि सिन्ध में अल्पसंख्यकों का प्रतिनिधित्व करनेवाले मन्त्रि-मण्डल को बहुमतवालों पर थोप दिया गया है। कहा जा सकता है कि मुस्लिम लीग दल अल्पसंख्यक नहीं क्योंकि योरपियन दल के ३ सदस्य उसके साथ हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकिन इसे भी स्वीकार नहीं किया जा सकता। येारपियन दल के नेता ने गवर्नर को यह आश्वासन नहीं दिया कि उनका दल लीगी मन्त्रि-मण्डल का साथ देगा। इस दल की तटस्थता सर्वविदित है।

हो सकता है कि येारपियन दल और गवर्नर की मिली भगत हो। उसने भीतर-ही-भीतर गवर्नर को यह आश्वासन दे दिया हो कि यदि लीग मन्त्रि-मण्डल पर कोई आपत्ति आई तो वह उसकी रक्षा करेगा किन्तु सिन्ध के राजनीतिक क्षेत्रों में इस पर विश्वास नहीं किया जा रहा है। कारण यह है कि उनकी राय में येारपियन दल अभी तक उस व्यवहार को भूला नहीं, जो सर हिदायतुल्ला ने पहले उसके साथ किया था। उसे अभी तक याद है कि एक बार सङ्कट आने पर सर हिदायतुल्ला ने येारपियन दल के मि० रोजर थामस को अपने मन्त्रि-मण्डल में ले लिया था। उन्होंने शपथ भी ले ली थी। किन्तु अपना उल्लू सीधा करने के बाद जब मौका आया तो उन्होंने मि० थामस को अलग करके उनके स्थान पर हाजी मौलाबख्श को अपने मन्त्रि-मण्डल में ले लिया था। इस अवस्था में भी येारपियन दल लीगी मन्त्रि-मण्डल का विपत्ति में सहायक होगा, इस पर यकीन तो नहीं होता। वैसे राजनीतिक रङ्गमञ्च पर जो भी हो जाय, थोड़ा है।

लीगी मन्त्रि-मण्डल का भविष्य

सिन्ध में लीगी मन्त्रि-मण्डल स्थापित हो चुका है। निस्सन्देह प्रजातन्त्र के विधान के अनुसार वह अवैधानिक है। फिर भी विधान के मालिक गवर्नर की कृपा से वह कायम है। ऐसे मन्त्रि-मण्डल का भविष्य कदापि उज्ज्वल नहीं कहा जा सकता। गवर्नर को सिन्ध असेम्बली का अधिवेशन देर या अबेर में बुलाना ही होगा। यदि येारपियन दल सचमुच तटस्थ रहा और वह लीगी मन्त्रि-मण्डल की रक्षा को आगे न बढ़ा तो लीगी मन्त्रि-मण्डल का पतन अवश्यम्भावी है। पहिले अधिवेशन में ही संयुक्त दल की ओर से समूचे मन्त्रि-मण्डल और एक-एक मन्त्री के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव स्वीकृत हो जाना असम्भव नहीं। कारण यह है कि इस समय यदि लीग के सदस्यों की संख्या २७ होगी तो संयुक्त दल की २८।

तोड़-फोड़ की गुञ्जायश

अविश्वास का प्रस्ताव स्वीकृत होने की आशा इसलिए भी है कि स्वयं मुस्लिम लीग में भीतर-ही-भीतर फूट के बीज विद्यमान हैं। मुस्लिम लीग-दल के २८ सदस्यों में से १५ सदस्य बलोच हैं। यह दल अपने कम-से-कम दो व्यक्तियों को मन्त्रि-मण्डल में देखना चाहता है। वह यह भी चाहता है कि अधिक-से-अधिक पार्लियामेंटरी सेक्रेटरी उसी के हों। मीर गुलामअली इनके नेता हैं। सिन्ध-असेम्बली के आगामी बजट अधिवेशन तक हमें यह देखना होगा कि सर हिदायतुल्ला इस दल की इच्छाओं को कहाँ तक पूर्ण करते हैं। यदि इस दल की इच्छाएँ पूरी न हुईं तो इसका भी लीग के विरुद्ध झण्डा उठाना असम्भव नहीं।

मीर बुन्देअली खाँ लालपुर सिन्ध के प्रधान मन्त्री रह चुके हैं। ४-५ आदमी उनके साथ हैं और वे सब-के-सब किसी-न-किसी पद के भूखे हैं। यदि सर हिदायतुल्ला ने मीर बुन्देअली को मन्त्रि-मण्डल में लेने के बाद उन सबकी आकांक्षाओं को पूरा न किया, तो हो सकता है कि वे सब भी लीग को छोड़ दें।

सिन्ध के मुस्लिम नेता एक दूसरे को फूटी आँखों भी नहीं देखना चाहते। खानबहादुर खुरों यदि सर गुलाम-हुसैन हिदायतुल्ला और श्री जी० एम० सैयद से घृणा करते हैं तो सर हिदायतुल्ला खुरों व सैयद से। यदि श्री जी० एम० सैयद सर हिदायतुल्ला और खुरों को पसन्द नहीं करते तो मीर गुलामअली इन सबको ही घृणा की दृष्टि से देखते हैं। मुसलमानों की इस अहमहमिका से सिन्ध में कभी स्थायी मन्त्रि-मण्डल स्थापित नहीं हो सकता। कांग्रेस को भी यह समझ लेना चाहिए कि यदि उसने कुछ गैरकांग्रेसी मुसलमानों को अपने साथ कर लिया तो भी वह स्थायी मन्त्रि-मण्डल न बना सकेगी। बेअसूला सिन्धी मुसलमान मुस्लिम लीग के लिए जितना खतरनाक है, उससे कहीं अधिक वह कांग्रेस के लिए खतरनाक होगा। हमारा यह अभिप्राय नहीं कि श्री जी० एम० सैयद और हाजी मौलाबख्श व उनके साथी बेअसूले हैं। हम चाहते हैं कि वे सब अभी तक जिन सिद्धान्तों को लेकर कांग्रेस के साथ मिले हैं, उनपर अटल रहें। पहले स्वाधीनता और फिर पाकिस्तान, इस असूल को लेकर वे लोग कांग्रेस के साथ मिले हैं। उनकी सिद्धान्त-प्रियता की परख तब होगी, जब किसी भावी सङ्घर्ष के कारण कांग्रेस एक बार फिर पद-त्याग का निश्चय कर लेगी। सिद्धान्तप्रिय व्यक्तियों के बिना सिन्ध का मन्त्रि-मण्डल सदैव अस्थायी रहा करेगा, इसमें हमें रत्ती भर सन्देह नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पानी का बदला

श्री प्रभासकुमार

जेठ की तपती दुपहरी। सिर पर दहकता हुआ सूरज, नीचे आवाँ-सी जलती पथरीली जमीन। धूल, कङ्कड़ और तिनकों से भरी, आग की लपटों के समान झुलसाती, कपड़े खींचती, पत्थर मारती, गरजती लूह।

प्यास के मारे उसका कलेजा मुँह को आ गया। गला सूख गया। जीभ चटचटाने लगी। ओंठ खुल गए। शरीर ऐसा हो गया जैसे बरसों की सूखी जमीन हो पर अरावली की उन सूखी पहाड़ियों में आक्षितिज फैली तरसती ऊँची-नीची निर्जन घाटियों में आग उगलती बड़ी-बड़ी चट्टानों से बने जहाँ-तहाँ सिर निकाले छोटे-बड़े शिखरों, लूह से काँपते अपर-बल से झुकती और स्व-बल से ऊँची उठती शाखाओं वाले, चिल्लाते-चीखते झाड़ियों में फँसे हुए जहाँ-तहाँ अप्रयास ही जैसे पत्थरों में से फूट निकले ह्रस्व-दीर्घ ढाक के पेड़ों, और किसी के हाथ से कहीं कम और कहीं अधिक बिखर पड़ी-सी नष्ट-भाग विधवा के समान पड़ी सूखती विरल बेरियों के सिवा कुछ भी दिखाई नहीं देता था – पानी की एक बूँद भी नहीं।

थकान के मारे उसके पैर लरजने-से लगे। सिर जैसे भट्ठी के पास बड़ी देर से रक्खा हुआ हो। लूह के प्रहार से बारम्बार बन्द हो जाती, अधखुली खड़कती आँखों में से जैसे कोई चकाचौंध के बहाने ज्योति निकाले ले रहा था। निराशा से उसने चारों ओर देखा, पत्थरों पर सवार होकर, जहाँ तक दृष्टि जा सकती थी एड़ियाँ उचका-उचकाकर देखा पर उस दोपहर के अन्धकार में कहीं आशामय प्रकाश न दीखा। पानी तो क्या कहीं ऐसा स्थान भी नहीं था जहाँ पर आश्रय लेकर वह कुछ देर के लिए इस प्रचण्ड धूप और धक्के देती लूह से छुटकारा पा सकता! परिमित पत्रों वाले ढाक के पेड़ों की विरल छाया में किसी प्रकार नहीं बैठा जा सकता था। वहाँ धूप से नाम-मात्र की आड़ होने पर भी हवा के सङ्ग लिपटी आग की झपेटों से कैसे रक्षा होती! केवल प्यास के क्षण और दीर्घ हो जाते।

हारकर वह जिस पगडण्डी से आ रहा था उसी पर धीरे-धीरे निरुद्देश्य आगे बढ़ने लगा क्योंकि रुकना मौत को अवाञ्छित आत्मसमर्पण करने जैसा था और आगे बढ़ने पर कहीं पानी की आशा हो सकती थी।

पगडण्डी एक छोटे से शिखर पर चढ़कर नीचे उतरती थी। शिखर पर आकर उसने देखा कि काफी दूर पर एक गाँव-सा है और उसके पास ही कुएँ का कुछ चिह्न-सा। निराशा में आशा का उन्माद भर गया। शरीर की सारी थकान बल बन गई और वह हर्षोद्रेक से चीखकर, अत्यन्त अधीर हो, उस ओर भाग पड़ा। पथ-विपथ का ध्यान भी न रहा। वह जैसे पहाड़ों में नहीं समतल पर भाग रहा है। मानो वर्षों की बिछुड़ी किसी प्रेम-पुजारिन को अपने चिर-काङ्क्षित प्रिय की झाँकी मिल गई हो और वह अपनी सुध-बुध भूलकर अपने प्रिय के निकट पहुँचने को व्याकुल, भागी जा रही हो। ठोकरों से झुँझलाकर उसका जूता जाने कब कहाँ गिर गया। बेरों के काँटों में उलझकर परिधान तार-तार हो गए, बार-बार गिर पड़ने से मुख से रक्त बहने लगा, पैर लोहूलुहान हो गए पर उसे इसका आभास तक नहीं था। वह तो केवल मौत के पञ्जों से दूर जीवन की एकमात्र आशा की ओर बेतहाशा भागा चला जाता था।

पहाड़ियों से उतरकर पैर घनी करीर की झाड़ियों में से होकर भागने लगे। कुआँ भी पास आ गया। पर इतने भीषण ताप से एकाएक उन झाड़ियों की शीतल छाँह में आने से उसका सिर चक्कर खाने लगा, पैर लड़खड़ाए, आँखों से चिनगारियाँ छूटीं और वह वहीं पर हाँफकर गिर पड़ा धौंकनी सा पेट उठने-गिरने लगा। उसने उठने को हाथ-पैर हिलाए पर शरीर में इतना बल नहीं बचा था। अङ्ग-अङ्ग में जैसे कोई बैठा नाड़ियों को बाहर धकेल रहा हो। जैसे रोम-रोम से अभी रक्त के फ़ौवारे छूट निकलेंगे। विवश होकर उसने चाहा कि वह बाहों पर जमी पसीने की बूँदों को चाट ले पर वह अब हाथ भी नहीं उठा सकता था। अपने पसीने की बूँदें भी न पी सका। केवल बार बार जीभ निकाल अपने सूखे, काले पड़ते मटमैले होठों पर छाई बूँदों को ही चाट सका। थोड़ी देर बाद वह वहीं बेसुध हो गया। मुँह खुला, शरीर पर धूल और स्वेद, नीचे रेतीली जमीन और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऊपर चमचमाते गहरे आकाश के नीचे डरती-सी जरा-सी छाया।

इसे कहते हैं भाग्य! सलिल-स्रोत के पास ही एक अभागा प्यासा पड़ा है पर पानी का बूँद डालनेवाला कोई भी नहीं।

(२)

सुघड़ पत्थरों से कुशल हाथों-द्वारा बने उस पुराने कुएँ के दो ओर सटा हुई ऊँची पहाड़ियाँ थीं और दो ओर गर्मी से जलती पड़ती की समतल जमीन, जिसमें छोटी-सी एक बस्ती बसी हुई थी। पहाड़ियों के साथ ही एक सूखा नाला कुएँ के पास ही पत्थरों पर से उतरकर उस समतल में आ गया है जो कभी नाटे ढाक के कुञ्जों में से गुजरती, कभी करीर की घनी झाड़ियों से कतराती, कभी बासे की जड़ को लपेटती, फलों से लदे खजूरों की बगल से होती नन्हें दूबों का चक्कर काटती, बजरी की ऊबड़-खाबड़ सड़क-सा प्रतीत होता था।

कुएँ पर कोई नहीं था। किसे अपनी जान भारी थी जो इस चिलचिलाती धूप में अङ्गारों पर चलकर पानी भरने आता!

किन्तु आवश्यकता समय-असमय का विवेक नहीं रखती। थोड़ी देर बाद ही मैदान की छाती पर खिची हुई की रेखा-सी, गाँव से कुएँ तक आती सँकरी सुनसान पगडण्डी पर एक युवती बगल में कलसी दबाए कुएँ की ओर आती दिखाई दी। निखरा साँवला-सुन्दर मुख गर्मी से तमतमा रहा था। गालों पर पसीने की बूँदें रेखाएँ खींच रही थीं। गर्मी से बचने को जल्दी-जल्दी वह कुएँ पर आई और उसने कुएँ की जगत पर कलसी रक्खी।

कलसी भरकर बगल में दबाकर वह गाँव की ओर चली ही थी कि उसके कानों में एक हलका कराहने का शब्द पड़ा—इतना निराश कि किसी को प्रतीक्षा करते-करते इतनी देर हो गई हो कि स्वयं उसे अपने विश्वास पर ही अविश्वास हो गया हो। युवती ठिठक गई पर इस उत्ताप को देखकर उसे अनुमान करने में देर न लगी। कलसी वैसे ही दबाए वह करीर की झाड़ियों में आई तो धड़कते हृदय से उसने देखा कि एक मनुष्य बेहोश-सा पड़ा है, अप्रयास ही कभी-कभी उसके मुख से कराहने का-सा शब्द निकल पड़ता है, हाथ-पैर जैसे अन्ध-पीड़ा में हों ऐसे छटपटाते हैं और ओठ बुदबुदाते हैं शायद—'हाय! पानी, पानी...!'

आगन्तुका कलसी उतारकर युवक के निकट बैठ गई और अपनी ओढ़नी का आँचल कलसी में भिगोकर धीरे-धीरे युवक के मुख में निचोड़ने लगी। युवक मानो छटपटाकर उसे गटक लेता और चिरौंटे की-सी व्यग्र आतुरता से फिर मुख खोल देता।

शरीर में स्पन्दन हुआ। आँचल भिगोकर युवती ने उसका मुख पोंछ दिया। पलकें हिलीं; हाथ उठे और गिरे, पैर जमीन से रगड़े; सिर ने दो-तीन झटके खाए। मद की खुमारी में बुझी हुई-सी युवक की लाल आँखें एक-दो बार झपककर खुल गईं। कृतज्ञता जिज्ञासा से वह मौन-मूक उस युवती की ओर देखता रहा फिर स्वतः ही उसकी आँखें धीरे-धीरे झँप गईं और वह गाढ़ी नींद में समा गया।

युवती ने देखकर समझ लिया कि इस थके युवक की आँखें तीन चार घंटे से पहले नहीं खुल सकेंगी। जगाना ठीक न समझ वह उसे उसी अवस्था में छोड़कर उठ गई और कलसी खूब माँजकर पानी भरकर बस्ती की ओर चली गई।

(३)

सूर्यास्त में अभी देर थी। अङ्ग-अङ्ग की असह्य पीड़ा से हाय कहकर उस युवक ने जब आँखें खोलीं तो उस सर्वथा अपरिचित स्थान में अपने को इस प्रकार पड़ा देखकर उसे अचम्भा हुआ, साथ ही आतुरता से उसे देखती आँचल हिलाती एक युवती को समीप देखकर उसे जहाँ सन्तोष और हर्ष हुआ वहाँ आश्चर्य और भी अधिक बढ़ गया।

'मैं कहाँ हूँ? आप कौन हैं?'

'आप हमारे गाँव में हैं।'.....

'आपके गाँव में? मैं यहाँ कैसे आ गया?'

'यह मैं नहीं जानती।' युवती ने शान्त-मधुर स्वर में कहा—'दोपहर को यहाँ कुएँ पर पानी भरने आई थी तो आपको यहाँ प्यास के मारे तड़पता पाया। तब मैंने आँचल से आपको पानी पिलाया था और फिर आप सो गए और अब जागे हैं।'

युवक बेवकूफ-सा उस युवती की ओर देखता रहा। यह कहानी है या सच्ची घटना। पर फिर सहसा सारा दृश्य युवक की स्मृति में प्रतिभासित हो उठा जिसका आदि था निराश पानी की तड़पन से और अन्त था सपने में देखे-से एक करुणा-पूर्ण स्निग्ध सरल नारी-मुख से।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुख पर कृतज्ञता की शालीनता झलकने लगी। 'उफ़' के साथ थोड़ी सी करवट लेकर बोझीले स्वर में उसने शिष्ट आग्रह से जरा लजाते हुए कहा—'तब से आप यहीं बैठी हैं।'

'नहीं, पानी पिलाकर चली गई थी। अभी जरा देर पहले ही आई हूँ।'

'मुझे देखने ?'

'हाँ, मैंने सोचा कि नींद टूटने पर जहाँ आपके शरीर में असह्य पीड़ा होगी वहाँ आपको भूख भी काफी जोरों की लगेगी, साथ ही इतना निर्बल शरीर लेकर आप कहीं जा भी नहीं सकेंगे। अब आप मेरे घर चलकर एक-दो दिन विश्राम करें...'

'आप मुझे अपने घर ले जाएँगी ? जानती हैं, मैं कौन हूँ ?'

'इससे मुझे क्या ?'...

'मैं मुसलमान हूँ, बहन !' युवक ने कह ही दिया।

'जानती हूँ, आपके वेष से ही समझ गई थी।'...

'इतना ही नहीं, मैं मुगल-फौज का सिपाही हूँ जो सिर्फ आपके जात-भाइयों की आजादी छीनने को ही इन पहाड़ियों को घेर रही है, गाँव जला रही है, सितम ढाह रही है, जुल्म कर रही है—जानती हैं आप ?' युवक सहसा चुप होकर युवती की ओर देखने लगा।

युवती पर जैसे चिनगारियाँ बरस पड़ीं। संयम के प्रयास में उसका मुख लाल हो गया। अधर दाँतों के नीचे चला गया। कुछ देर बाद नीचे देखते हुए ही उसने कोमल स्वर में कहा—'आप कोई भी हों पर मनुष्य हैं और विपत्ति में हैं। मनुष्यता के नाते आपकी सहायता करना मेरा धर्म है।'

युवक आँखें फाड़े अप्रत्याशित उत्तर सुनानेवाली प्राणदात्री की ओर देखता रहा। दर्द भूलकर आधा अग्र-भाग दाहिने हाथ के सहारे उठाया पर फिर गिर गया। धीरे से बोला—'आपके यहाँ उसे क्या कहते हैं....सुर-सुर्गना—आप शायद स्वर्ग की मलका हैं।'

'नहीं भई। मैं तो इस गाँव की एक छोटी-सी औरत हूँ।'

युवक कुछ सोचने लगा। आँखों में भाव आते और चले जाते।—'आपने शायद किसी से कहा भी नहीं ?'

'हाँ भई ! यहाँ सब मुगलों से घृणा करते हैं; तुम्हें देखते ही मार डालते। मुगलों से मुझे भी घृणा है। वे मिट जाएँ तो मुझे बहुत खुशी होगी। पर इसे मैं मनुष्य का अपमान समझती हूँ कि किसी को इस प्रकार मरने डाला जाए। इसी लिए किसी से न कहकर स्वयं आई हूँ और स्वयं ही मुगल-मात्र से घृणा करते हुए भी मनुष्य के नाते आपका सत्कार करूँगी। अब आपको बहुत भूख लग रही होगी—आइए।'

'आपका नाम पूछ सकता हूँ ? मुझे रहीम कहते हैं।'

'मेरा नाम करुणा है।' युवती ने सङ्कोच से कहा।

'मैं आपका बहुत अहसानमन्द हूँ। ज्यादा तकलीफ देना नहीं चाहता। अब मुझे इजाजत दीजिए।'

'अभी आप इतने दुर्बल हैं कि उठ भी नहीं सकेंगे—जाएँगे कैसे ?'

'नहीं करुना बहन ! मुझे जाने ही दीजिए ! किसी-न-किसी तरह चला ही जाऊँगा। आपने मेरी जान बख्शी है। आप न आतीं तो शायद यहीं मेरी कब्र तैयार हो जाती। मैं ताजिन्दगी आपके इस अहसान को याद रक्खूँगा। अच्छा, अब इजाजत !'

यह कह अपने शरीर की सारी शक्ति लगा रहीम किसी-न-किसी प्रकार खड़ा तो हो गया पर तभी ऐसा लगा जैसे सारी हड्डियाँ तोड़ दी जा रही हों। आँखों के आगे तारे उठे और फिर अंधेरा आ गया। पैर ऐसे लरजने लगे जैसे कोई खपच्चियों को हिला रहा हो। बड़े जोर से किसी ने जमीन की ओर खींचा पर तभी किन्हीं कोमल हाथों ने उसे सँभाल लिया। साथ ही सहानुभूति की गहरी मिठास कानों में गूँजने लगी, 'देखिए, अभी आप किसी प्रकार नहीं जा सकेंगे एक-दो दिन आराम कीजिए फिर जहाँ चाहे चले जाइएगा।'

मना करने की रहीम में शक्ति नहीं रही थी और वह करुणा के सहारे बड़ी कठिनता से धीरे-धीरे चलने लगा।

(४)

अरावली की प्यासी पहाड़ियाँ, बासी नहीं, ताजे खून के घूँट भरती हैं। अनन्योपाय होकर राजपूत पहाड़ियों की ओट समा गए हैं जब कि मुगल उपत्यका में सदलबल अवस्थित हैं। कुछ करने के मद में और प्रतिहिंसा के उबाल में मुगल जब-तब पहाड़ियों में घुस जाते हैं, मार्ग के वृक्षों व गाँवों को जलाकर खाक कर डालते हैं और भाग-कर न बच सकनेवालों के खून से बस्ती को सींचते हैं। राजपूत भी चुप नहीं बैठते। न जाने कब और किधर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से निकल कर मुगलों की छावनी पर छापा मारते हैं और फिर पहाड़ियों की ओट समा जाते हैं।

साँझ का समय है। दिन भर प्रलय मचाकर अभी कुछ देर पहले ही मुगल सेना अपने डेरे को लौट गई है। गाँव अब गाँव नहीं रह गया है। बिना मनुष्यों का गाँव भी कैसा? एक भी झोंपड़ी साबित नहीं। चारों ओर से पहाड़ियों से घिरे उस छोटे-से समतल स्थान में राख, के स्तूपों, टूटी-फूटी झोंपड़ियों और विकृत शवों और मुण्डों के अतिरिक्त बस्ती का कोई चिह्न शेष नहीं रह गया है।

तो भी बस्ती जन-शून्य नहीं है। अपनी कृति को शान्ति से देखने की लालसा से थोड़े-से सैनिक वहीं रह गए हैं और वे जर्जर दीवारों पर चढ़कर अपनी हिंसक वृत्ति को सन्तोष दे रहे हैं।

सहसा अब्दुलकादिर चिल्लाया—'अमाँ मियाँ रहीम लकदीर खुल गई।'

रहीम अन्यमनस्क-सा बैठा कुछ विचार रहा था। यह सुनते ही चौंककर खड़ा हो गया। सचमुच करुणा ही थी! सिर पर लकड़ियाँ लिए भौंचक्की-सी अपने उजड़े गाँव को देख रही थी।

बिखरे हुए सैनिक दीवारों से कूद-कूदकर इकट्ठे हो गए और करुणा को घेरकर खड़े हो गए। रहीम भी भागनेवालों में सबसे पीछे और करुणा के पास पहुँचनेवालों में सबसे आगे था और ऐसा प्रतीत होता था कि सबसे पहले वह ही उस पर टूटेगा। सारे लोलुप अतृप्त सैनिकों के बीच उसके मुख पर भी धूर्तता के कम लक्षण नहीं थे। विशेष इतना ही था कि उसकी आँखें करुणा की ओर कम और साथियों की ओर अधिक थीं।

रहीम ने कहा—'लकड़ी लिए क्यों खड़ी हो। देखो कमर न लचक जाए।'

कहनेवाले की ओर देखते ही करुणा का लकड़ियों का गट्ठर आप-से-आप छूटकर गिर पड़ा—'तुम!'

अब्दुलकादिर बोल पड़े—'रहीम तुझे तो पहचान रही है!'

'तुम भी कैसी बातें करते हो, अब्दुल मियाँ! बन रही है बन।'

करुणा को जैसे किसी ने बिजली छुआ दी हो। क्रोध और घृणा के साथ भीषण आशङ्का से वह सिहर उठी—'आपको मैंने उस दिन इसी लिए पानी पिलाया था?'

मिर्जा कहकहाकर बोले—'क्यों बेटा रहीम!'

रहीम को जैसे किसी ने सोते से जगादिया। मुख पर आती बेबसी एकदम उड़ गई! कुटिल हँसी से बोला—'आपने कभी सपना देखा होगा! मैं भला किसी काफिर के घर पानी पीने क्यों जाता? क्यों मिर्जा!'

'बात तो ठीक कहते हो मियाँ।'

तभी पीछे से कोई चिल्लाया—'यार! माल बड़े जोर का है।'

रहीम के माथे की नसों में जैसे किसी ने आघात दे दिया हो। जड़ सी खड़ी करुणा चमक-सी उठी—'आप लोग हट जाइए मेरे सामने से वर्ना...'

बगल से ही कोई हँसता बोला 'अमाँ यार छोड़ो भी, अगर जूतियों से डरते होते तो मर्दानगी घर में न रख आते!'

सब हँस पड़े।

करुणा को ऐसा लगा जैसे आकाश अभी टूट पड़ेगा। हृदय में रौद्रता के साथ मरने-मारने की अभिलाषा प्रबल हो गई। उसका बस चले तो एक-एक को नोच ले।

रहीम करुणा की इस चरम अवस्था को देखकर व्यग्र हो उठा। निश्चय था कि यदि अभी करुणा बिखर पड़ी तो इस लोलुप सैन्य के बीच उसका पता भी न लगेगा। सहसा रहीम ने अपना कमरबन्द खोल करुणा को बाँध दिया—'मिर्जा तुम रहे गावदू। शेरनी को छेड़ने से पहले पिंजरे में डाल लेना चाहिए। खुली शेरनी से खतरा हो सकता है।'

और करुणा एक वृक्ष से बाँध दी गई।

उस आपाधापी में मुगल सैनिक कुछ निर्णय कर पाएँ, इससे पहले ही रहीम ने कहा—'एक बात है यार!'

'क्या?'

'इतनी खूबसूरती का हम क्या करेंगे।...'

'यानी?' कठोर आँखों से रहीम की ओर देखते अब्दुलकादिर ने प्रश्न किया।

'इसे सिपहसालार को दे दें तो इनाम भी पाएँगे और ओहदे भी मिलेंगे।'

मिर्जा बिगड़ पड़े—'इसे सिपहसालार को क्यों दे दें? क्या हमारे दिल नहीं है? हममें आदमियत नहीं है? नहीं कभी नहीं!'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहीम ने क्षणभर अप्रतिभ होकर दृढ़ता से कहा—'मिर्जा! यह मत समझना कि यह बात सिपहसालार तक नहीं पहुँचेगी। इतने आदमियों पर ऐसे अहम मामले में एतबार नहीं किया जा सकता। और फिर तुम अच्छी तरह जानते हो कि सिपहसालार के लुगत में 'रहम' लफ्ज कहीं नहीं लिखा है।' मिर्जा चुप हो गए। एक दूसरे की ओर देखकर सैनिक आतङ्कित हो गए।

मिर्जा को करुणा से डर लगता था। अब्दुलकादिर पर लोगों का विश्वास नहीं था। फलतः करुणा को सिपहसालार के सामने उपस्थित करने का काम अत्यन्त अनिच्छा रहने पर भी रहीम को ही सिर लेना पड़ा।

(५)

आधी रात का समय है। हिलने-डुलने में भी अशक्त करुणा एक खीमे में बँधी निस्सहाय पड़ी है। एक कोने में दीवट पर चढ़ा छोटा-सा निःशेषप्राय दीपक अपनी फीकी ज्योति से उस अन्धकार को और भी अधिक गम्भीर बनाए हुए है।

सहसा किसी के पैरों की स्थिर सावधान धीरे-धीरे बढ़ी आती बहुत हलकी चाप सुन पड़ी। करुणा के रोंगटे खड़े हो गए। अब, हाय, अब? त्राहि भगवान्, त्राहि देवि!

करुणा का साहस आसन्न भय की बेकली में और कोई उपाय न देखकर निर्भय हो गया—'कौन है?'

'मैं हूँ, रहीम।' धीमे स्वर में कहकर आगन्तुक पास आकर खड़ा हो गया।

करुणा को जैसे किसी ने धक्का दे दिया हो; ममता को निचोड़ कर सुखा दिया हो। घृणा से बोली—'तुम? इस समय कैसे?'

'कुछ कहने आया हूँ।'

आशङ्का निर्दय होकर चीख उठी—'कमीने! तुझे मुझसे ही कुछ कहते शर्म नहीं आती? उपकार का क्या संसार में इतना ही मोल है कि कृतज्ञता से भी आँखें फेर ली जाएँ।...'

'मेरी बात तो सुन लो?'

'चुप रह बदमाश! मैं तेरे मुख से अपना नाम भी नहीं सुनना चाहती। तुझे मैंने उस दिन इसी लिए गाँव-भाइयों का विरोध लेकर भी प्राण-दान दिया था? पर याद रखना जो प्राण-दान देता है, वह ले भी सकता है। तुझमें इतनी शक्ति नहीं कि मेरे आँचल का छोर भी छू सके। कुत्ता कहीं का? नहीं, नहीं; कुत्ते भी नमकहलाली में...'

'करुणा!' रहीम का रुँधा स्वर सुनकर करुणा बीच में ही हठात् रुक गई। स्याहीपुते-से उसके दयनीय मुख पर वेदना और विवशता की गहरी छाप थी।

रहीम ने करुणा के बन्धन खोल दिए और अपनी तलवार उसकी ओर बढ़ाकर बोला—'मेरी तलवार आपके कदमों में हाजिर है। आप सिर भी उड़ा देंगी तो मुझे उज्र न होगा। लेकिन मैं आपको किस प्रकार समझाऊँ कि रहीम कितना ही बुरा क्यों न हो, इतना अहसान-फरामोश नहीं कि आपके पाक-दामन पर दूर से भी छींटा डाल सके। मैं यहाँ किसी जलील ख्वाहिश से तड़पता नहीं आया हूँ बल्कि आपको इस कैद से छुड़ाने के लिए आया हूँ। सिर्फ चन्द घड़ियाँ ही और हैं। फिर खुदा ही जानता है कि क्या हो जाय। एक बार मुझ पर एतबार कर लें और खुदा के नाम पर यहाँ से निकल चलें।'

दीपक के काँपते प्रकाश में रहीम के भावोद्वेलित मुख को एकटक देख रही थी करुणा! पर उस समय इसको क्या हो गया था? और उसे वे शब्द याद कर सिहरन-सी महसूस हुई—

'तुमने उस समय मेरा इतना अपमान क्यों किया था?'

रहीम दो क्षण चुप रहा। 'मानता हूँ मैंने गुनाह किया है, बहन! पर उसके सिवा कोई और रास्ता भी नहीं था। तुम नहीं समझ सकतीं कि महीनों से घर से दूर छिटके हुए उन सिपाहियों की हवस क्या कुछ करने को तैयार हो जाती है यदि मैं उस वक्त तुम्हारे लिए एक भी लफ्ज कहता तो बच भी नहीं पाता। सिपाही हूँ, मरने से मुझे बिल्कुल खौफ नहीं है, पर उस वक्त मरने से बात और भी बिगड़ जाती। यह मैं ही जानता हूँ; बहन कि उस थोड़े से वक्त के लिए मुझे कितना ज्यादह दबाव डालना पड़ा और तब से अब तक लहमे भर को भी चैन से नहीं बैठ सका हूँ।'

'मुझे कहाँ चलना होगा?'

'मैं तुम्हें सिर्फ आजाद करके पहाड़ियों तक पहुँचा दूँगा फिर तुम अपने आप जहाँ जी चाहे चली जाना।'

'और आप?'

'मैं? मैं क्या?'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संख्या ४]

'मुझे यहाँ न पाकर सब आपको कष्ट नहीं देंगे ? आप भी मेरे साथ चले चलिए न।'

'मैं मजबूर हूँ, करुना बहन ! मैं दगा नहीं कर सकता ! अपने बादशाह और रसूल के खिलाफ कदम नहीं उठा सकता। इसके लिए सिपहसालार जो भी सजा तजवीज करेंगे, मुझे कबूल होगी।'

करुणा के हृदय में अपने इस भाई के प्रति एकाएक स्नेह उमड़ आया—'नहीं, मैं आपको इस प्रकार मरने नहीं दे सकती।'

'जिद न करो बहन, वक्त बहुत थोड़ा है। अगर किसी के कान में भनक भी पड़ गई तो फिर मुझे मौत से भी ज्यादा दर्द सहना पड़ेगा। तकदीर ने तुम्हें कहीं और के लिए बनाया है, मुझे कहीं और के लिए। सिपाही हूँ। सिपहसालार का हुक्म ही मुझे मानना चाहिए। फौज में नहीं छोड़ूँगा। न अपनी मौत के डर से, न तुम्हारी मुहब्बत की जिद से।'

दोनों चुपचाप खीमे से बाहर निकलकर चलने लगे। कहा किसी ने नहीं पर शायद दोनों के मन में निश्चय यही था कि यह जीवन की जीवन से बिदाई है।

(६)

सिपहसालार के दरबार में रहीम बँधा हुआ खड़ा था।

'रहीम !'

'हुजूर !'

'मैंने सुना है कि कल रात भर तुम किसी हसीना के साथ ऐश उड़ाते रहे जिसे तुम्हारे साथियों ने कैद किया था और...।

'यह गलत है, हुजूर।' सिर झुकाकर रहीम ने कहा।

'गलत है ?' सिपहसालार की बड़ी-बड़ी बाहर को निकली आँखें रहीम को जलाने लगीं—'तुमने उसको भगा दिया, यह भी गलत है ?'

रहीम चुप खड़ा रहा।

'तुम उसके इश्क में अन्धे हो गए थे, क्यों ?'

'हुजूर ! उस पाक-दामन पर ऐसे छींटें न फेंकें।'

'यह जबानदराजी ?' सिपहसालार की सहज-लोहित आँखें भक से जल उठीं। ओठ कठोर होते-होते जड़ हो गए। भुजाएँ कसकीं और सिर के एक झटके से रहीम के टुकड़े-टुकड़े कर दिए गए।

गीत

श्री 'नीरव', एम० ए०

मानव, मानव का गान बने।
नव लय, नव गति, चिन्तन नवीन
शब्दों का शासन बन्ध-हीन
यह मर्त्य स्वर्ग का चिर निर्धन
भावों का फिर धनवान बने।
जग प्राण, प्राण से हों उर्वर
पुलकित हो जीवन का स्तर-स्तर
तरु मर्मर-सा स्वर भर सबके
उर अम्बर में छविमान बने।

सो जाए जगती का निज पर
समता की ध्वनि में मृदु मन्थर
युग की आकांक्षाएँ लेकर
युग-युग का लोक-विधान बने।
मधु की छाया में चिर जाग्रत्
अधिकार प्रकृति का हो अविकृत
अति दीन-हीन परवश जर्जर
यह जगजीवन वरदान बने।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रवासी की आत्म-कथा

श्री स्वामी भवानीदयाल संन्यासी

दक्षिण अफ्रीका में सन १९१४ की जनवरी में बन्दी-मोचन के पश्चात् प्रिटोरिया से गान्धी जी का एक पत्र मिला जिसमें यह आदेश था कि मुझे सपत्नीक पिनिक्स-आश्रम में रहना चाहिए और "इंडियन ओपिनियन" के हिन्दी-अंश का सम्पादन करना चाहिए। मेरे मन की मुराद पूरी हो गई। जब जहाज से उतर-कर मैं गांधी जी के दर्शन के लिए पिनिक्स गया था

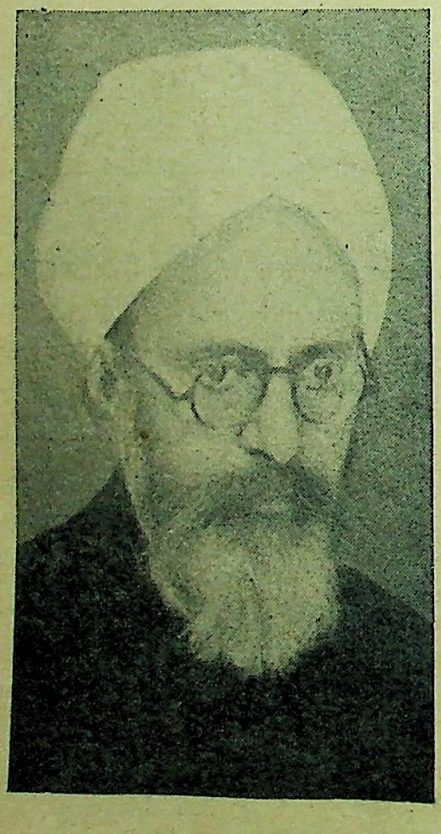

स्वामी भवानीदयाल संन्यासी

तभी से उस ऋषि-आश्रम में कुछ दिन प्रवास करने की मेरी आन्तरिक आकांक्षा थी, परन्तु परिस्थिति के प्रभाव से मैं अपनी इच्छा की पूर्ति नहीं कर सका था। इसलिए गांधी जी का सन्देश पाकर मेरे सन्तोष की सीमा नहीं रही। मैं फौरन पिनिक्स पहुँचकर अपने काम में लग गया।

पर जगरानी उस समय रुग्ण-शय्या पर पड़ी हुई थीं। जेल में ही उनका स्वास्थ्य भग्न हो गया था और वे रुग्ण शरीर लेकर बन्दीघर से निकली थीं। डरबन में अच्छे-अच्छे डाक्टरों से उनका उपचार कराया गया पर 'मरज बढ़ता गया ज्यों ज्यों दवा की' वाली कहावत ही चरितार्थ हुई। जब रोग अत्यन्त असह्य हो गया और डाक्टरों की सारी चेष्टाएँ विफल हो गईं तो बापू उनकी दशा पर दया कर उनको अपने साथ ही पिनिक्स लाए। बापू के आदेश से उनको आश्रम ले जाने के लिए हाथ से खींची जानेवाली गाड़ी स्टेशन पहुँच गई थी। बापू ने बहुत सँभालकर जगरानी को रेलगाड़ी से उतारा और ठेला गाड़ी पर लिटा दिया। इसके बाद बापू ने जो कुछ किया वह मेरे लिए तो कल्पनातीत घटना थी। वे स्वयं ठेला गाड़ी खींचने लगे और वह भी अकेले ही। हम लोगों में से कई आदमी बापू के हाथ से गाड़ी ले लेने के लिए आगे बढ़े, पर उन्होंने किसी को पास फटकने नहीं दिया और साफ कह दिया कि हमें सहायता की आवश्यकता नहीं है। उन्होंने अकेले ही ठेलागाड़ी खींचते हुए लगभग तीन मील की ऊबड़-खाबड़ मञ्जिल तय की।

मैं तो ग्लानि से गड़ा जा रहा था। जब बापू ने मुझे ठेलागाड़ी खींचने का अवसर नहीं दिया तो 'खिसि यानी बिल्ली खम्भा नोचे' की भाँति मैं बिगड़कर जगरानी से बोला—"तुम बापू से गाड़ी खिंचवाती हो, नरक में जाने का यह सबसे सीधा रास्ता है।" मेरी इस हृदय-हीनता पर उनकी आँखों से आँसू की धारा बह चली और वे व्यथित होकर बोलीं—"आप ठीक कहते हैं। इससे बढ़कर पापकर्म और क्या होगा? बापू से गाड़ी खिंचवाने की अपेक्षा तो मेरे लिए मौत अच्छी है। पर माँगे पर मौत भी कहाँ मिलती है? यदि धरती फट जाती तो मैं उसमें समाकर इस दुष्कर्म से बच जाती। मुझे तो नरक में भी जगह नहीं मिलेगी।" असल में जगरानी की व्याधि असह्य हो गई थी, उनमें उठ बैठने की भी शक्ति नहीं थी और वे जीवन-मरण के अधर में लटक रही थीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संख्या ४]

बापू ने रुग्णा जगरानी की परिचर्या का भार बा को सौंपा। उस समय कारावास के कष्ट से स्वयं बा का स्वास्थ्य काफी गिर गया था, फिर भी उन्होंने अपने शरीर की कोई परवाह नहीं की और अपनी अथक एवं स्नेहमयी सेवा-शुश्रूषा से जगरानी की जान बचा ली। गांधीजी की चिकित्सा से, जिसमें केवल मिट्टी की पुल्टिस बाँधी जाती थी और अखण्ड उपवास कराया जाता था, केवल एक सप्ताह में जगरानी का स्वास्थ्य सुधर गया—उनको नया जीवन मिल गया। क्षीणकाय

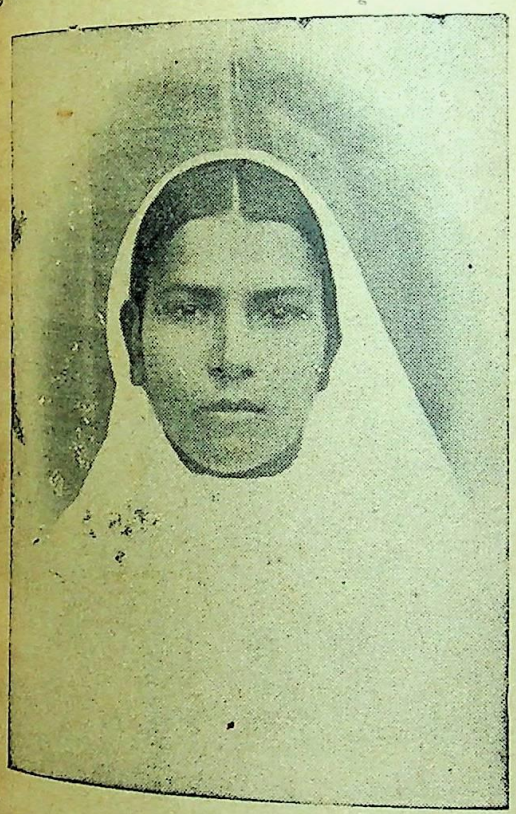

श्रीमती जगरानी देवी
(स्वामी भवानीदयाल की स्वर्गीया पत्नी)

और अस्वस्थ बा ने जिस लगन, परिश्रम और प्रेम से जगरानी की परिचर्या की, वह उनकी सहृदयता और स्नेहशीलता के अनुरूप ही था। बा का शरीर दुर्बल था सही, पर उनका हृदय बड़ा बलवान था। सेवा की वे सजीव मूर्ति थीं।

आश्रम के बहुमुखी कार्यों में व्यस्त होते हुए भी बापू वहाँ के डाक्टर भी थे और बा नर्स के रूप में खुशी से उनके काम में हाथ बँटाती थीं। बापू रोगियों का उपचार करते, उनके कपड़े धोते और मल-मूत्र तक साफ करते। उनका जीवन आत्म-संयम का साक्षात स्वरूप था; तन और मन को अपने अधीन करके उनसे वे इच्छानुसार काम लिया करते थे, पर मेरे लिए तो यह नितान्त नया नजारा था। इतने बड़े नेता इतने छोटे काम भी कर सकते हैं, यह सोचकर मैं स्तब्ध रह गया। मेरे सामने नेतृत्व का नया नमूना था, देश-सेवा की नई नजीर थी और थी मनुष्यता की नई कसौटी।

आश्रम की पाकशाला भी बापू और बा की ही निगरानी में चलती थी। भोजन पकाने, लोगों को परोसकर खिलाने और जूठे बर्तन माँजने में भी बापू और बा को कोई परहेज न था। बापू की विधि से डबल-रोटियाँ पकतीं थी, जो ऐसी कड़ी होती थीं कि उनको खाना मानो लोहे के चने चबाना था—किसी तरह उनको गले के नीचे उतारने के योग्य बनाने में दाँतों के छक्के छूट जाते थे। आस्ट्रेलिया का मैदा स्वास्थ्य की दृष्टि से उपयोगी नहीं जँचा, इसलिए बापू ने हाथ से आटा पीसने की व्यवस्था की। आटा पीसने में वे सबको मात कर देते थे। इससे जहाँ स्वास्थ्य की रक्षा होती थी वहाँ खर्च की बचत भी। अन्य प्रकार के व्यञ्जनों को बनाने में भी बापू की पाकविधियाँ काम में लाई जाती थीं। मिर्च, मसाला और घी के तो दर्शन भी दुर्लभ थे जिनसे भारतीयों की प्रिय कढ़ी, दाल और तरकारी चरपरी, रसनीय और स्वादिष्ट बनती हैं। वहाँ तो सभी प्रकार की सागभाजी पानी में उबाल दी जाती थी। ऊपर से जो चाहे, जैतून का कच्चा तेल (OLIVE OIL) मिला सकता था।

इस विधि से पानी में उबाली हुई साग-भाजी में भी 'अलोना' और 'सलोना' का भेद होता था। कुछ लोग अलोना खाते थे और कुछ लोग सलोना। किसी पर कोई दबाव नहीं था। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी इच्छा से भोजन पसन्द करने की आजादी थी। पर एक बार यह सङ्कल्प कर लेने पर कि कौन किस अवधि तक अलोना खाएगा, बापू इस बात की पूरी चौकसी रखते थे कि उसकी प्रतिज्ञा में अन्तर न आने पाए। इस विषय पर मुझसे जब पूछा गया तो मैंने साफ जवाब दिया कि मेरे लिए तो अलोनी शाक-भाजी गले के नीचे उतारना असम्भव है। वहाँ के सलोने भोजन से भी मेरी तृप्ति नहीं होती थी, इसलिए मैं सप्ताह में चार दिन पिनिक्स में रहता और शेष तीन दिन स्वादिष्ट भोजन के लिए डरबन में।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक दिन आश्रम में एक विलक्षण घटना हो गई। अलोना-दलवाले कुछ तरुण प्रवासी अपने स्वादहीन भोजन से ऊब गए। बापू को प्रसन्न करने के लिए वे प्रतिज्ञा तो कर बैठे थे—साधना के लिए कृत-सङ्कल्प हो चुके थे—पर उनकी वासना और रसना बगावत कर उठीं। उन्होंने डरबन से घी की पूरी-कचौरियाँ, बेसन की नमकीन बरी-पकौड़ियाँ, मसालेदार चरपरी तरकारियाँ और रसदार मिठाइयाँ चोरी से मँगवाईं और लुक-छिपकर पेट भर खाया। बापू से यह बात छिपाने के लिए सभी प्रतिज्ञाबद्ध थे, पर देवदास गान्धी अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ़ न रह सके। उन्होंने बापू के सामने अपना अपराध स्वीकार करते हुए सारा भण्डाफोड़ कर दिया।

शाम को प्रार्थना के पश्चात् बापू ने हर एक चटोरे से पूछा, पर किसी ने देवदास के कथन को सत्य नहीं बतलाया। सत्य की अवहेलना होते देखकर बापू का अन्तःकरण आकुलित हो उठा; मुख पर सत्य की अप्रतिम आभा एवं नेत्रों में दया और करुणा की ज्योति प्रदीप्त हो उठी—

"इसमें तुम लोगों का कोई दोष नहीं है; मुझमें ही सत्य का अभाव है। अभी मैंने अपने जीवन को सत्यमय नहीं बना पाया है। इसी से मेरे सामने सत्य प्रकट करने में तुम्हें सङ्कोच हो रहा है।" यह कहकर बापू दूसरों को दण्ड देने की अपेक्षा अपने ही गालों पर तड़ातड़ तमाचे लगाने लगे। ऐसा भासित हुआ कि धरती हिल रही है, आकाश फट रहा है। सभी के शरीर थरथर काँपने लगे, हृदय हठात् हिल

माता कस्तूरबा गांधी
(दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह के पश्चात)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गए। चटोरे लज्जित और व्यथित होकर खड़े हो गए और अपराध स्वीकार कर क्षमा के प्रार्थी हुए।

फिनिक्स के प्रवासी ठीक चार बजे सबेरे उठ जाया करते थे; पर बापू ने मेरी स्थिति पर दया कर यह रियायत कर दी थी कि मुझे छः बजे उठाया जाए। मध्याह्न में नहाने का ढङ्ग निराला ही था। प्रेस के पास एक कुआँ था। वहाँ अधिकांश आश्रमवासी इकट्ठे हो जाते। पहले सब नङ्ग-धड़ङ्ग होकर धूप खाते और फिर शीतल जल से नहाते। मुझे जेल में इस प्रकार कैदियों के साथ नग्न-स्नान करने का अभ्यास पड़ गया था, अतएव यहाँ भी विशेष झिझक नहीं हुई तभी से मुझे नग्न-स्नान की जो आदत पड़ी सो आज तक नहीं छूटी है। फर्क इतना ही है कि तब बाहर नहाना पड़ता था और अब स्नानागार का द्वार बन्द करके नहाता हूँ।

एक दिन की बात है। सत्याग्रह की समाप्ति पर अनेक प्रख्यात अँगरेज आश्रम पर आए हुए थे, खासकर बापू से भारतीय-समस्या पर सलाह-मशविरा करने के लिए। बड़े कमरे की लम्बी मेज के चौगिर्द लोग बैठे हुए थे, उनके बीच में बापू विराज रहे थे। बाहर बिलकुल सन्नाटा था, अन्दर गम्भीर राजनीतिक चर्चा चल रही थी। उसी समय अचानक मेरा बच्चा रामदत्त खेलते-खेलते ठोकर खाकर गिर पड़ा, फिर तो न उसने आव देखा न ताव—न माता के पास आया, न पिता के पास, चिल्लाते हुए वह बापू के पास पहुँचकर उनसे लिपट गया। वह विचार-सभा बाल-क्रन्दन से गूँज उठी, वार्तालाप का सिलसिला टूट गया। सबका ध्यान रोते हुए रामदत्त की तरफ खिंच गया। हम लोग तो सन्न रह गए। बालक इतनी ढिठाई कर सकेगा, इसकी हमें आशङ्का नहीं थी। जगरानी बच्चे को रोते देखकर चुप कराने के लिए दौड़ पड़ी थीं, पर उनके पहुँचने से पहले ही बच्चा बापू की गोद में पहुँच गया। यदि बापू की जगह मैं होता तो, बच्चे को डाँट-डपटकर हटा देता और उसके माँ-बाप को भी खरीखोटी सुनाने से बाज नहीं आता। पर मेरे और बापू के स्वभाव में उतना ही अन्तर ठहरा, जितना गङ्गा और गड़ही में होता है। बापू ने उस सभा की, जिसमें प्रवासी भारतीयों के भविष्य का नकशा खींचा जा रहा था, उतनी पर्वाह नहीं की, जितनी कि बच्चे की फरियाद सुनने और उसे पुचकारकर खुश करने की। बच्चे को गोद में लेकर थपकियाँ देते हुए बापू कमरे में टहलने लगे और साथ ही उस गम्भीर विचार में योग भी देने लगे। सबके प्रति अपने इस प्रकार के समान-बर्ताव और सद्वृत्ति के कारण महात्मा गांधी 'बापू' या पिताजी के नाम से पुकारे जाने लगे।

मैं सम्पादक बनकर फिनिक्स गया था। सन १९१३ के अन्तिम सत्याग्रह में हिन्दी और तामिल भाषियों ने आत्मोत्सर्ग का ऐसा उच्चतम परिचय दिया था कि उनके प्रति सम्मान प्रदर्शित करने के लिए बापू ने इंडियन 'ओपिनियन' में हिन्दी और तामिल अंश जोड़ दिया। हिन्दी अंश का काम मुझे सौंपा गया। उससे पहले मैं भागलपुर बिहार से निकलनेवाले मासिक "आर्यावर्त" का सहकारी सम्पादक रह चुका था, इसलिए मुझे अभिमान था कि सम्पादन-कला का मैं एक निष्णात विद्वान् हूँ। पर फिनिक्स में 'इंडियन ओपिनियन' के सम्पादकीय विभाग में प्रविष्ट होते ही मेरा सारा अहङ्कार चूर-चूर हो गया और मुझे पता लग गया कि मैं इस कला का अभी ककहरा भी नहीं जानता हूँ। इस समय 'इंडियन ओपिनियन' के सम्पादकीय-विभाग में गांधी जी और पोलक साहब जैसे विश्व-विश्रुत पत्रकार काम कर रहे थे। उनके चरणों के पास बैठकर मैंने सम्पादन-कला की शिक्षा पाई, जो मेरे भावी जीवन में अत्यन्त उपयोगी एवं लाभ-दायक सिद्ध हुई।

मैं अपनी सारी विद्या-बुद्धि लगाकर लेख तैयार करता, पर जब बापू को दिखाता तो मुझे अक्सर निराश होना पड़ता। वे उसमें से कुछ-न-कुछ दोष ढूँढ़ निकालते और मुझे दुबारा लिखने के लिए मजबूर करते। एक बार बापू ने जनरल स्मट्स की नीति और सेालमन कमीशन की प्रवृत्ति पर एक आलोचनात्मक अग्रलेख लिखने की आज्ञा दी। मैंने रात-रात जाग करके एक लम्बा और लच्छेदार लेख लिखा और सबेरे नजरसानी के लिए बापू के हाथ में देकर उनका मुँह जोहने लगा। बापू लेख पढ़कर पहले तो मुसकाए, फिर गम्भीर होकर बोले—"इसको लिखने में तुमने काफी मेहनत की है अवश्य, पर वह व्यर्थ गई। यह लेख 'इंडियन ओपिनियन' में अग्रस्थान पाने योग्य नहीं बन सका। इसमें शब्दाडम्बर के घटाटोप में भाव ऐसे प्रच्छन्न हो गए हैं कि वे साधारण हिन्दी-पाठक के लिए बोधगम्य नहीं रहे। थोड़े-से-थोड़े शब्दों में अधिक-से-अधिक बातें कहना ही लेखन-कला की विशेषता है। एक भी फालतू शब्द का उपयोग करना मानों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी कलम का दुरुपयोग करना है। जो कुछ कहना चाहो, सीधे ढङ्ग से सरल शब्दों में साफ-साफ करो, उसे शब्दालङ्कार के आवरण से ढँको मत।

"दूसरी बात यह है कि इस लेख में जनरल स्मट्स के विरुद्ध जो बातें कही गई हैं, क्या यही बातें तुम उनके मुँह पर कहने का साहस कर सकते हो? यदि हाँ, तो इससे शिष्टाचार का संहार होगा और यदि नहीं, तो फिर तुम्हें ऐसी बातें लिखने का क्या अधिकार है? जब किसी के विचार और व्यक्तित्व पर सार्वजनिक हित की दृष्टि से टीका-टिप्पणी करना आवश्यक समझो तो अपने मन में यह कल्पना कर लो कि वह व्यक्ति तुम्हारे सामने बैठा है और जो बात बिना किसी सङ्कोच के तुम उसके मुँह पर कह सकते हो वही बात लिखो भी, उससे एक शब्द भी अधिक नहीं। यह याद रखना चाहिए कि पत्रकार की हैसियत से तुम जिसकी टीका कर रहे हो, वह टीका उसकी दृष्टि से ओझल नहीं रह सकती। यह भी मत भूलो कि किसी की नीति, प्रवृत्ति और अभिमत की आलोचना जहाँ जनहित की दृष्टि से वाञ्छनीय है वहाँ किसी पर व्यक्तिगत आक्षेप करना सर्वथा अनुचित है। यदि किसी का व्यक्तित्व सार्वजनिक हित में बाधक हो रहा हो तो उसकी टीका करना पत्रकार का नैतिक अधिकार है।" बापू का यह सदुपदेश मेरे पत्रकार-जीवन का मुख्योद्देश्य बन गया।

मैंने पिनिक्स में बड़ी शान से अपना काम आरम्भ किया था, क्योंकि मुझे इस बात का अभिमान था कि एक इतिहास-प्रसिद्ध अखबार का सम्पादक कहलाने का सम्मान मुझे प्राप्त है। अधिकांश आश्रमवासी अखबार के लिए अँगरेजी, गुजराती, हिंदी और तामिल में टाइप बैठाया करते पर मैं अपनी कुर्सी से हिलना-डुलना पसन्द नहीं करता। जब पत्र-मुद्रण का दिन आता और सभी लोग बारी-बारी 'सिलेंडर मशीन' चलाते तब मैं भी सङ्कोच में पड़कर पन्नों की तह लगाने में लग जाता। पर मेरी यह स्थिति शीघ्र ही बदल गई। एक दिन बापू मेरी मेज के पास आए और यह कहकर चलेगए,—"तुमको घड़ी-दो घड़ी टाइप बैठाने का काम भी सीखना चाहिए"। बस, उस दिन से मेरी आधी सम्पादकी गायब हो गई।

अब मैं कुछ घंटे एडीटर बनकर लेख लिखता और कुछ घंटे कम्पोजीटर बनकर टाइप सेट करता। इसी से मेरा पिंड नहीं छूटा। अभी भाग्य में कुछ और भी बदा था। वहाँ एक बहुत बड़ी अखबार छापने की सिलेंडर मशीन थी, जो पहले 'स्टीम इंजिन' से चलती थी, बापू ने इंजिन को तो पेन्शन दे दी और सिलेंडर के चक्र में डंडा लगाकर हाथ से चलाने की व्यवस्था की। उन्होंने अपने लिए यह नियम बना लिया था कि सामने एक घड़ी रख लेते थे और लगातार घंटा भर स्वयं मशीन का चक्का चलाते थे। इस बीच में कई आदमियों की अदली-बदली हो जाती थी, क्योंकि कोई भी इतनी देर तक बापू के साथ ठहर नहीं सकता था। मैं चालाकी से काम लेता। जब अखबार छपने लगता तो छपे पत्रों की तह लगाने में जुट जाता। इस प्रकार मैं मशीन का चक्का घुमाने की कड़ी मेहनत से सहज ही बच जाता। मेरी यह कारगुजारी बापू की तेज निगाह से कब तक छिपी रहती। एक दिन उन्होंने मेरा नाम लेकर पुकारा। मैं सुनकर भी बहरा बन गया और अपने काम में ऐसा व्यस्त बन गया कि मानों कुछ सुना ही नहीं। वहाँ सभी नवयुवक मेरी इज्जत करते थे; इसलिए मेरे बदले उनमें से एक तरुण दौड़ गया किन्तु बापू मुझे कहाँ छोड़नेवाले थे! उन्होंने हँसते और मजाक करते हुए युवक से पूछा—"क्या तुम्हीं भवानीदयाल हो?" बेचारा नौजवान लज्जित होकर लौट पड़ा। अब क्या करता? कोई चारा नहीं रहा। लाचार होकर मुझे मशीन का चक्का घुमाने के लिए जाना ही पड़ा। चक्र के डंडे को एक तरफ बापू ने पकड़ा और दूसरी तरफ मैंने। लगी मशीन चलने। पाँच मिनिट में ही मेरी साँसों ने इस्तीफा दे दिया—दम उखड़ने लगा। मेरी हालत बापू से छिपी नहीं रही। उन्होंने दयार्द्र होकर पूछा—"थक गये न?"

"नहीं, अभी तो नहीं थका हूँ" कहकर मैंने अपनी कमजोरी छिपाने की कोशिश की और दो-तीन मिनिट और भी चक्का चलाया। पर मेरा दिल ही जानता था कि मेरे दम की क्या गति हो रही है। आखिर बापू को दया आ गई और उन्होंने मेरी रिहाई कर दी। इस प्रकार पिनिक्स में मेरी तरक्की होती गई, एडीटर से कम्पोजिटर बना और कम्पोजिटर से खासा मजदूर।

पिनिक्स में ही मुझे पहले-पहल साधु चार्ल्स फ्रियर एण्ड्रूज के दर्शन हुए। पहली झाँकी में ही उनके प्रति मेरे हृदय में श्रद्धा उत्पन्न हो आई। उनका बाह्य रूप आरसी की भाँति इतना स्वच्छ था कि उस पर उनके हृदय के सारे भाव झलक रहे थे। उनसे परिचय और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वार्तालाप होने पर मुझे निश्चय हो गया कि यह कोई साधारण पादरी नहीं है प्रत्युत एक ऐसा महापुरुष है, जो गरीबों का गर्व, दासता का दुश्मन, मजदूरों का मसीहा, किसानों का कर्णधार, स्वतन्त्रता का सन्देश-वाहक और भारत का भक्त बनकर विश्व में पूजित होगा।

सच बात तो यह है कि अँगरेजों के अन्याय, अधमता और अत्याचार देखकर मैं उस कौम को ही घृणा की दृष्टि से देखने लगा था, पर साधु सी० एफ० एण्ड्रूज के सत्सङ्ग से मुझे अपना विचार बदलने पर बाध्य होना पड़ा। वस्तुतः किसी देश या कौम के न सब व्यक्ति अच्छे ही होते हैं और न सब खराब ही—"उपजहिं एक सङ्ग जल माहीं। जलज जोंक जिमि गुण बिलगाहीं।" जहाँ हिरण्य-कश्यप पैदा हुआ था, वहीं प्रह्लाद भी; जिस भूमि पर रावण जन्मा था उसी पर विभीषण भी; जो नगर कंस का जन्मदाता है वही कृष्ण का भी। इसी तरह जिस इँग्लैंड के गोरे नेटाल में प्रवासी भारतीयों के साथ अमानुषिक अत्याचार कर रहे हैं उसी इँग्लैंड ने एण्ड्रूज जैसे पवित्रात्मा को प्रवासी भारतीयों की सेवा और सहायता के लिए प्रदान किया है।

उन दिनों दक्षिण अफ्रीका के अँगरेजों के अखबारों में साधु एण्ड्रूज की बड़ी कड़ी टीका हो रही थी—बेहूदा दिल्लगी उड़ाई जा रही थी। बात यह हुई कि जब एण्ड्रूज डरबन में जहाज से उतरे तो बन्दरगाह पर उन्होंने प्रवासी भारतीयों की भारी भीड़ पाई। पोलक से परिचय होने पर उन्होंने पूछा—"गाँधीजी कहाँ हैं?" मजदूर के रूप में महात्माजी वहीं

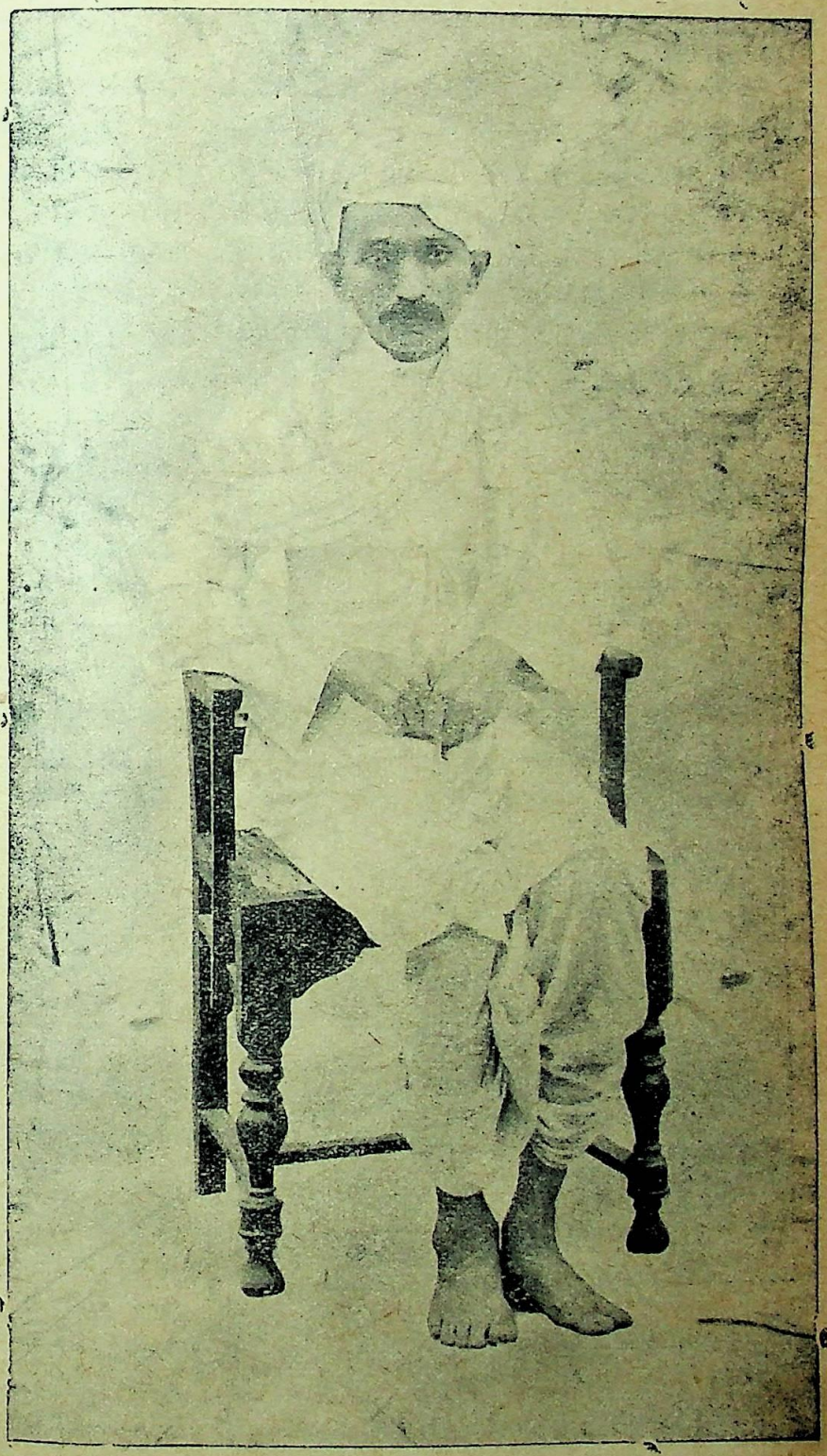

महात्मा गांधी (दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह के पश्चात्)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पोलक के पास खड़े थे। इसलिए एंड्रूज के पूछने पर बापू ने कहा—"मैं ही गांधी हूँ।" एंड्रूज ने झुककर भारतीय विधि से बापू के चरण छुए और हाथ जोड़कर नमस्कार किया।

यह दृश्य अँगरेज रिपोर्टरों के लिए असह्य हो गया। दक्षिण अफ्रीका के पत्रकार-संसार में भूकम्प हो उठा, अँगरेजों के मर्यादा-मयङ्क पर ग्रहण लग गया। वे क्रोधानल में जल-भुनकर खाक हो गए। अँगरेजी अखबारों में अभिमानी अँगरेजों को उभाड़ने के लिए इस घटना पर रङ्ग चढ़ाते हुए लिखा गया—"ईसाइयों के धर्मगुरु कहलानेवाले रेवरेण्ड महोदय गांधी के पैरों पर गिर पड़े, उन्होंने गांधी के चरण भी चूमे और उनके तलवे की धूल उठाकर बड़ी श्रद्धा-भक्ति से अपने माथे पर रगड़ी।"

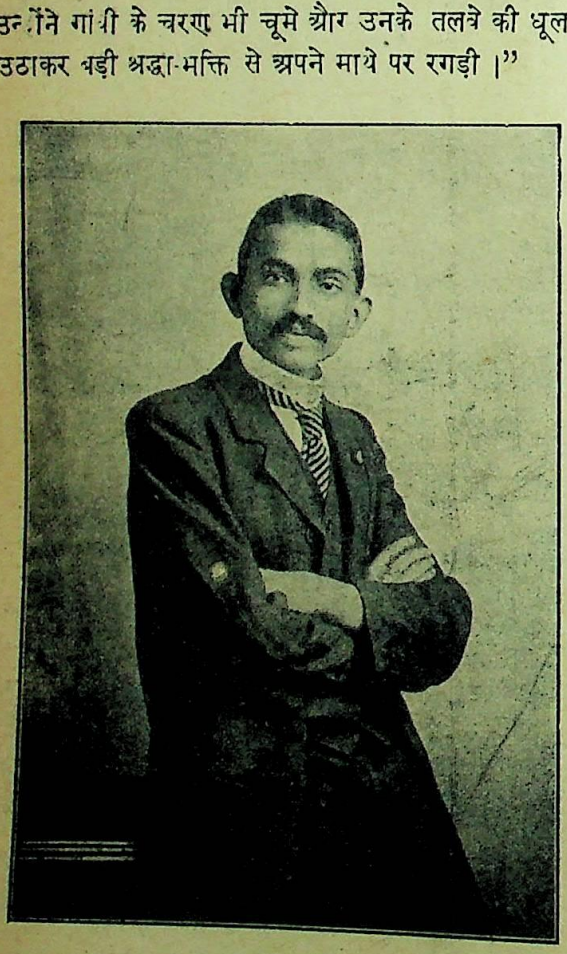

मिस्टर एम० के० गांधी, बैरिस्टर
(दक्षिण-अफ्रीका के सत्याग्रह से पूर्व)

एंड्रूज को इन वाहियात व्यंग्योक्तियों की पर्वाह ही क्या थी? वे तो बापू के व्यक्तित्व में अपने प्रभु ईसा मसीह का रूप देख रहे थे। एक दिन डरबन के अँगरेजों के गिरजा घर में एंड्रूज साहब प्रवचन करने गए और अपने साथ बापू को भी ले गए, पर हिन्दुस्थानी होने के कारण बापू को गिरजे के अन्दर जाने से रोका गया। ईसाई धर्माध्यक्षों की इस वर्ण-विद्वेषमूलक मनोवृत्ति और प्रवृत्ति पर एंड्रूज को बड़ा ही विस्मय और विषाद हुआ और उनकी आत्मा गिरजा पन्थियों से विद्रोह कर उठी। उन्होंने अपने वक्तव्य में स्पष्ट घोषणा कर दी कि "मैं दक्षिण अफ्रीका के सारे गिरजाघरों में मशाल लेकर हूँढ़ आया, पर कहीं अपने प्रभु ईसा को नहीं पाया। आखिर वे मुझे मिले तो सही, पर कहाँ? प्रभु ईसा के नाम पर निर्मित गिरजों में नहीं, प्रत्युत हिन्दुस्थानी सत्याग्रहियों के जीवन के उच्च उद्देश्य में, उनके सत्य और अहिंसा के सन्देश में, उन... त्याग और बलिदान के आवेश में।"

उस समय साधु एंड्रूज से मेरा जो स्नेह-सम्बन्ध स्थापित हुआ वह उनके जीवन की अन्तिम घड़ी तक अविच्छिन्न रहा। कई बार प्रवासी भारतीयों के प्रश्नों पर परस्पर सैद्धान्तिक मतभेद भी हुआ, पर व्यक्तिगत प्रेम-प्रवाह में कोई अन्तर नहीं पड़ा। प्रथम-मिलन में ही उनके महान् व्यक्तित्व का मुझ पर अमिट प्रभाव पड़ा। उन पर मेरी श्रद्धा हो गई और मुझ पर उनकी प्रीति। मैंने उनके चरित्र में कृष्ण के निष्काम कर्म का, बुद्ध के संयम, सत्य और अहिंसा का, ईसा की दया और क्षमा का अद्भुत संयोग पाया। उनको समझने में मुझसे भूल नहीं हुई थी क्योंकि कुछ ही वर्षों के बाद हिन्दुस्थान ने उनको 'दीनबन्धु' कहकर पुकारा और संसार ने मानवता का पुजारी कहकर।

साधु एंड्रूज के साथी श्री डबल्यू० डबल्यू० पियर्सन से भी मेरा परिचय हुआ था और उनके व्यक्तित्व और सुकृत्य से भी मैं प्रभावित हुए बिना न रहा। वह अँगरेज नरपुङ्गव इस संसार में नहीं रहे, पर प्रवासी भाइयों के इतिहास में उनका नाम अमर रहेगा। वे बङ्गभाषा के विशिष्ट विद्वान् थे। महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर के 'गोरा' का उन्होंने बँगला से अँगरेजी अनुवाद किया था। वे बड़े पुरुषार्थी और क्रियाशील व्यक्ति थे। उन्होंने नेटाल में गन्ने की कोठियों, चाय के बागों, कोयले की खानों और भिन्न-भिन्न स्थानों पर पहुँचकर उनकी दशा की पूरी-पूरी जाँच की थी और बहुत अच्छी रिपोर्ट तैयार की थी। वे नेटाल की यात्रा के बाद ऐण्ड्रूज साहब के साथ फिजी भी गए थे और उनकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संख्या ४]

रिपोर्ट प्रकाशित होने पर भारत में ऐसा तहलका मचा कि अर्द्धगुलामी—गिरमिट की प्रचलित प्रथा का अन्त आ गया।

उन्हीं दिनों हिन्दुस्थान-सरकार के प्रतिनिधि सर बेंजामिन राबर्टसन, राय साहब सरकार और श्री स्लेटर भी पिनिक्स पधारे थे। इनसे भेंट और बातचीत करके मैं इस परिणाम पर पहुँचा कि ये लोग मानों ब्रिटिश साम्राज्यवादरूपी विशाल मशीन के कलपुर्जे हैं, जो अपनी-अपनी जगह पर जड़े हुए हैं और परिमित परिधि में घूम रहे हैं। इनके पास न मानवी हृदय है और न उसमें परदुःख-कातरता का अभिव्यञ्जन। सोचा कि बेंजामिन राबर्टसन और स्लेटर भी अँगरेज हैं तथा एंड्रूज और पियर्सन भी अँगरेज हैं। एक ही जमीन पर जन्मे, एक ही वातावरण में पले, एक ही देश में शिक्षा पाई, पर इनके स्वभाव और चरित्र में कितना अन्तर है? एक ब्रिटिश साम्राज्यवाद की शोषण-नीति का रक्षक है तो दूसरा भारतीय स्वाधीनता का सन्देशवाहक। ठीक ही है, समुद्र में जहाँ सीप होती है वहीं सीपज भी।

पिनिक्स-प्रवास की स्नेहमयी स्मृतियाँ मेरे जीवन की स्थायी सम्पत्ति हैं। बापू भारत के वर्तमान युग की आत्मा हैं, इस युग का सन्देश उन्हीं की वाणी से निकल रहा है। उनका सहवास एवं सत्सङ्ग किसी के लिए भी सौभाग्य की बात है। यदि मैं उन दिनों की सारी स्मृतियों को लिखने लगूँ तो एक पोथी बन सकती है। मेरे जीवन की अन्य चिन्ताएँ मिटी नहीं थीं, पर बापू के सत्सङ्ग की कामना से उनको पास नहीं फटकने देता था। जब बापू और बा पिनिक्स से सदा के लिए बिदा लेने को प्रस्तुत हो गए तो मेरी चिन्ताएँ भी बलवती हो गईं और मैं भी पिनिक्स से जर्मिस्टन के लिए प्रस्थान कर गया।*

---

* "प्रवासी की आत्मकथा" नामक अप्रकाशित ग्रन्थ का एक अध्याय।

भाषा का विकास

श्री राममूर्त्ति मेहरोत्रा, एम० ए०, बी० एड्०

भाषा के विकास का विवेचन करने के पूर्व यह बताना आवश्यक है कि भाषा है क्या। 'भाषा' शब्द के कई अर्थ हैं—किसी देश विशेष की भाषा, उदाहरणार्थ चीनी, फ्रांसीसी, अँगरेजी, आदि, किसी प्रान्त विशेष की भाषा, उदाहरणार्थ बिहारी, बँगला, अवधी, व्रज, राजस्थानी, मराठी, गुजराती, आदि, किसी स्थान-विशेष की भाषा, उदाहरणार्थ नागरिक, ग्रामीण भाषाएँ आदि, किसी सम्प्रदाय विशेष की भाषा, जैसे कथकड़ी, सधुक्कड़ी, पण्डिताऊ, साहित्यिक, आदि, किसी जाति विशेष की भाषा जैसे गूजरों की भाषा, जाटों की भाषा, कायस्थों की छौरियाना जुबान, आदि, किसी व्यवसाय-विशेष की भाषा उदाहरणार्थ सुनारों, सर्राफों तथा अन्य दुकानदारों की भाषाएँ, गुप्त अथवा सांकेतिक भाषाएँ, यथा ठगों, चोरों, स्काउटों आदि की भाषाएँ, सी० आई० डी० की भाषा, सांकेतिक भाषा, तार की भाषा आदि, भाषा का कोई रूप-विशेष, जैसे साहित्यिक भाषा, सर्वसाधारण की भाषा, परिमार्जित भाषा, गठी हुई भाषा आदि, किसी विषय-विशेष की भाषा, यथा रेखागणित की भाषा, मनुष्य मात्र की भाषा, इत्यादि। यहाँ भाषा से हमारा आशय उसके साधारण अर्थ अर्थात् मनुष्य मात्र की भाषा से है। मनुष्य एक समाजबद्ध प्राणी है, वह सदा अपने मन की बात दूसरों पर प्रकट करने और दूसरों के मन की बात जानने की चेष्टा करता है। वह साधन जिसके द्वारा मनुष्य किसी वस्तु के विषय में मुख से परस्पर बात-चीत अथवा भाव-प्रकाशन करते हैं, भाषा कहलाता है। जब हमारा किसी बाह्य वस्तु से सम्पर्क होता है, तो एक लहर-सी उत्पन्न होती है जो कि त्वचा, चक्षु, कर्ण, जिह्वा, नासिका आदि बाह्य इन्द्रियों के द्वारा मस्तिष्क में पहुँचती है और हमें एक नवीन प्रकार का अनुभव होता है जिसे हम ध्वनि-सङ्केतों अथवा शब्दों-द्वारा मुख से प्रकट करना चाहते हैं। ये ध्वनि-सङ्केत या शब्द ही भाषा और इनके उच्चारण की क्रिया भाषण है। परन्तु भाषा का पद ग्रहण करने के लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इनका यों ही पशु-पक्षियों की भाँति बोल लेना भर ही पर्याप्त नहीं है, अपितु इनका सार्थक तथा सप्रयोजन होना भी नितान्त आवश्यक है। अतः भाषा के अन्तर्गत केवल मानव-समाज की भाषा ही आ सकती है, पशु-पक्षियों की बोली नहीं। भाषा मनुष्यों को ईश्वर की देन-विशेष है। परन्तु इसके यह माने नहीं हैं कि भाषा प्राकृतिक है और उस पर मानव-जाति का जन्मसिद्ध अधिकार है। यदि ऐसा होता तो मानव-समाज से पृथक् रहनेवाला जङ्गली मनुष्य भी प्राकृतिक भाषा सीख जाता, समस्त संसार के प्राणी एक ही भाषा बोलते और बच्चा भिन्न वातावरण अथवा समाज में परिपोषित होने पर भी अन्य भाषा न सीख पाता। परन्तु ऐसा नहीं है। राबिन्सन क्रूसो का फ्राइडे प्रारम्भ में कोई भाषा नहीं बोलता था, संसार में चीनी, जर्मन आदि अनेक भाषाएँ बोली जाती हैं और एक भारतीय शिशु अँगरेज धाय-द्वारा परिपोषित होने पर अँगरेजी सीखता है, हिन्दी नहीं। हम किसी भी देश या जाति की भाषा अपने पूर्वजों के अनुकरणमात्र से ही सीख सकते हैं। इस प्रकार भाषा प्राकृतिक नहीं है, अपितु मनुष्य की स्वयं अपने प्रयत्न-द्वारा अर्जन की हुई वस्तु है। भाषण के अतिरिक्त भाषा का कोई भी अङ्ग प्राकृतिक नहीं है। संक्षेप में भाषा की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

(१) भाषा विचारों और मनोभावों का बाह्य स्वरूप है। यदि विचार आत्मा है, तो भाषा शरीर है।

(२) भाषा किसी-न-किसी वस्तु के विषय में—चाहे वह भौतिक हो अथवा मानसिक—विचार प्रकट करती है।

(३) भाषा अर्जित सम्पत्ति है, प्राकृतिक नहीं और वह अनुकरण-द्वारा अर्जित की जाती है। अतः उसके लिए समाज का होना नितान्त आवश्यक है।

(४) मनुष्य भाषा को सदा परस्पर विचार-विनमय अर्थात् बातचीत करने में काम में लाता है। अतः भाषा का सप्रयोजन होना आवश्यक है।

भाषण प्राकृतिक और भाषा से अधिक प्राचीन होने के अतिरिक्त भाषा की जड़ है, अतः भाषा की उत्पत्ति जानने के पूर्व भाषण की उत्पत्ति जान लेना भी आवश्यक है। भाषण की प्रथम अवस्था, अर्थात् रोना-किल्ली मारना, प्रलापना, कूँ-कूँ गूँ-गूँ करना और किलकारी भरना तो प्रत्येक मनुष्य में जन्म से ही पाई जाती है। अब प्रश्न यह है कि उसका विकास किस प्रकार हुआ और उसे भाषण का रूप तथा पद कब और कैसे मिला। यद्यपि इसका ठीक-ठीक पता लगाना कठिन है, तो भी बच्चों की भाषा तथा भाषण से बहुत कुछ जानकारी मिलती है। जीव-विज्ञान के पण्डितों का मत है कि मानव जाति का विकास ठीक मनुष्य के विकास की भाँति ही हुआ है। जिस प्रकार एक अबोध अज्ञान शिशु यों ही स्वयं अपने मनोरञ्जन के लिए कुछ सहज तथा स्वाभाविक ध्वनियाँ निर्गत करता है और भूख-प्यास लगने और दुख-दर्द होने पर रोता-चीखता है, इसी प्रकार प्रारम्भ में आदिम मानव जाति भी कुछ सहज और स्वाभाविक ध्वनियाँ निर्गत करती रही होगी।

जब बच्चा तीन-चार मास का हो जाता है, तो वह मस्त होकर कूँ-कूँ, गूँ-गूँ आदि करने और किलकारियाँ भरने लगता है। इसी प्रकार आदिम मानव जाति भी यों ही स्वयं अपने मनोरञ्जन के लिए गुनगुनाया करती रही होगी। मनुष्य समाज-बद्ध प्राणी है, वह एक बड़ा भारी समाजी है, वह सदा साथी बनाना और परस्पर बातचीत करना चाहता है, अतः केवल यों ही निकलनेवाली सहज और स्वाभाविक ध्वनियों से ही काम नहीं चल सकता।

जब बच्चा पाँच-छः महीने का हो जाता है, तो रङ्गीन खिलौने या चमकती हुई वस्तुएँ देखकर उनकी ओर लपकने लगता है। इसी प्रकार प्रारम्भ में मानव जाति भी इंगितों-द्वारा अपना काम चलाती होगी।

जब बच्चा आठ-नौ मास का हो जाता है, तो वह बा-बा, मा-मा आदि ओष्ठ्य ध्वनियाँ निर्गत करने लगता है, परन्तु माँ-बाप उनको अपने लिए समझकर उत्तर दे देते हैं और बच्चे से बोलने लगते हैं। धीरे-धीरे बच्चा भी इन ध्वनियों को माँ-बाप के लिए प्रयोग करने लगता है। इस प्रकार सहज और स्वाभाविक ध्वनियों का अकस्मात् ही विभिन्न वस्तुओं तथा प्राणियों से सम्बन्ध हो जाता है अर्थात् वे अर्थ से सम्बन्धित होकर सार्थक ध्वनि-सङ्केत बन जाती हैं। इसी प्रकार 'पा-पा' का पिता अथवा पानी से, 'हप्पा' का खाने-पीने की वस्तु से, 'चा-चा' का चचा से, 'बुआ' का किसी स्त्री से सम्बन्ध हो जाता है। भाषा और भाषण का श्रीगणेश यहीं से होता है। चाचा, बुआ, बाबा, मामा, पापा आदि ध्वनिसंकेत ही भाषा और इनका व्यवहार करना अर्थात् बोलना ही भाषण है। इस प्रकार बच्चों की भाषा का प्रारम्भ अनुकरण और अकस्मात् सम्बन्ध-द्वारा होता है। मानव-समाज में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संख्या ४]

भी अधिक सम्बन्ध में आनेवाले मनुष्यों, पशु-पक्षियों और वस्तुओं को सहज ध्वनियों से अकस्मात् ही सम्बन्धित कर लिया होगा।

जब बच्चा डेढ़-दो वर्ष का हो जाता है, तो वह भौं-भौं, चूँ-चूँ, खों-खों, का-का (काग या काक), घुग्घू आदि अनुकरणमूलक अर्थात् नकल से बननेवाले शब्द और अहा, हा-हा, ओहो आदि विस्मयादिबोधक अर्थात् दुःख, शोक, प्रसन्नता आदि प्रकट करनेवाले शब्द तो सहज ही बना लेता है और कुत्ता, बिल्ली, घोड़ा, बन्दर, भाई या भय्या, बीबी, आदि शब्दों को समाज-द्वारा जान लेता है। इस प्रकार बच्चों को पुराने और पहले से बने-बनाए संसर्गों को अर्थात् विकसित भाषा को सीखना पड़ता है और उनको सिखानेवाले मनुष्य भी पहले से ही उपस्थित रहते हैं; परन्तु आदिम मानवजाति को इतनी सुविधा न थी। उसके सम्मुख न तो संसर्ग ही थे और न उनके सिखानेवाले मनुष्य ही। अब प्रश्न यह है कि उन्होंने सार्थक शब्दों की उत्पत्ति कैसे की और उनका वर्तमान अर्थों से सम्बन्ध कैसे हुआ? सम्भव है, कुछ अनुकरणमूलक और विस्मयादिबोधक शब्द योंही बन गए हों, परन्तु शेष शब्द-भाण्डार किस प्रकार निर्मित हुआ, यह बताना कठिन है। इस विषय में विद्वानों के कई एक मत हैं।

जब बच्चा लगभग दो वर्ष का हो जाता है, तो वह कुत्ते, बिल्ली, बन्दर, माँ-बाप आदि को देखकर तुत्ता, बल्ली, बन्नर, अम्मा, बाबू आदि कहने लगता है। परन्तु इसके यह माने नहीं हैं कि वह पहले शब्द सीखता है। वह सोचता तो वाक्यों अथवा विचारों में ही है, परन्तु प्रकट करने अर्थात् बोलने की शक्ति निर्बल होने के कारण वह अपने विचारों को वाक्यों में प्रकट नहीं कर पाता है, यद्यपि उसका आशय यही होता है कि देखो बिल्ली आई, अम्मा आओ, बाबू आए, आदि। इसी प्रकार 'भामी' से 'पानी लाओ', 'दूद' से 'दूध लाओ', 'दोदी' से 'गोदी ले लो', 'पैसिया' से 'पैसा दे दो', 'बज्जी' से 'बाजार चलो', 'घर' से 'घर चलो' आदि होता है। इस प्रकार बच्चा भाषा में प्रयोग चाहे शब्दों का करे, परन्तु वे होते वाक्यों के लिए ही हैं अर्थात् वह उनका भाषण वाक्यों के लिए ही करता है। अतः भाषा का चरम अवयव शब्द भले ही हों परन्तु भाषण का चरम अवयव वाक्य ही हैं। इसी प्रकार सम्भवतः आदिम मानव जाति भी प्रारम्भ में शब्दों को ही काम में लाती रही होगी।

जब बच्चा दो-तीन वर्ष का हो जाता है, तो वह दो-दो, तीन-तीन शब्दों को एक साथ बोलने लगता है जैसे 'अम्मा, कमीज, बाजार' अर्थात् अम्मा, कमीज पहना दो, बाजार जाऊँगा; 'बाबू, पैसा, चीज' अर्थात् बाबू पैसा दे दो, चीज लूँगा; 'बाबू, साम तत्ती' अर्थात् बाबू, श्याम तख्ती छूता है, इत्यादि। इसके अतिरिक्त वह अधूरे वाक्य भी बोलने लगता है, जैसे 'बाबू, पाल मारा' अर्थात् बाबू गोपाल ने मुझे मारा है, 'पूरी खा' अर्थात् मैं पूरी खाऊँगा, 'ताऊ, बीबीलो' अर्थात् ताऊ, बीबी रो रही है, 'बाबू, मन लगल' अर्थात् बाबू, लक्ष्मण लँगड़ छीनता है, 'बाबी, जाज' अर्थात् भाभी जहाज आया, 'बाबी, जूजू' अर्थात् भाभी जूजू आया, इत्यादि और 'दूध गिरी', 'बिल्ली गई', 'कुत्ता गई', 'चाचा गई', 'एबुद' (अर्थात् महमूद) गई, 'बिल्ली – बच्चा गई', 'बाबू आ गए', 'कन (अर्थात् किशन) आ गए', कन कापू (चाहे कापी हो या किताब) लाई, घोड़ा (घोड़ा हो चाहे गधा) आ, भावी गोदी आलो (ले लो), इत्यादि। सारांश यह है कि उसे अभी काल, लिंग, वचन, कारक, कारक—चिह्न, क्रिया-भेद, वस्तु-भेद आदि का ज्ञान नहीं होता। इसी प्रकार आदिकालीन मनुष्य भी वाक्य के अवयव अर्थात् शब्द पृथक्-पृथक् प्रयोग करने लगे होंगे। पहिले मूर्त वस्तुओं और सम्पर्क में आनेवाले प्राणियों के नाम बने होंगे, तत् पश्चात् धीरे-धीरे जातिवाचक व भाववाचक शब्दों का निर्माण भी हो गया होगा।

इस अवस्था में एक प्रवृत्ति और भी पाई जाती है। कभी-कभी बच्चा शब्दों की उच्चारण-सम्बन्धी कठिनाई के निवारणार्थ उनको लपकाकर भी कहता है। जैसे, गदहा (अर्थात् गधा), डण्डआ (अर्थात् डण्डा), बनरुआ (अर्थात् बन्दर ', देदय (अर्थात् दे दे), हअये (अर्थात् है), इत्यादि। इतना ही नहीं, कभी-कभी तो वह मस्त होकर 'चाचा आ गए, चाचा आ गए', 'झण्डा ऊँचा, झण्डा ऊँचा', 'राधे बिन्द' (अर्थात् राधे-गोविन्द)', 'जै बिन्दे पाल' (अर्थात् जय गोविन्दे जय गोपाल) आदि लय से गाया करता है। उसकी भाषा में स्वर और लय की अधिकता होती है और उसका भाषण बड़ा प्यारा लगता है, परन्तु ज्यों-ज्यों वह बड़ा होता जाता है और पूरे-पूरे वाक्य बोलने लगता है, त्यों-त्यों उसकी भाषा में स्वर और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लय की कमी होती जाती है। यहाँ तक कि जब वह तीन-चार वर्ष का हो जाता है, तो वह तनिक भी लय का स्वर नहीं बोलता और उसकी भाषा में व्यञ्जनों का आधिक्य और स्वरों की न्यूनता हो जाती है। बोलने की शक्ति निर्बल होने के कारण वह कभी-कभी हिचकिचा भी जाता है और पूरी बात नहीं कह पाता है, परन्तु पाँच वर्ष की अवस्था तक यह बात भी जाती रहती है। आदिम मानव-जाति में भी भाषा और भाषण का विकास इसी प्रकार हुआ होगा। भाषाओं का इतिहास और जङ्गली भाषाओं का अध्ययन करने से पता चलता है कि आदि-कालीन भाषाएँ सुर-प्रधान थीं अर्थात् उनमें लय सुर की अधिकता थी।

जब बच्चा पाँच साल का हो जाता है और स्कूल में जाकर सभ्यता के चक्कर में पड़ जाता है तो उसकी भाषा की स्वभाविकता नष्ट हो जाती है। वह पूर्ण तथा गठे हुए वाक्य बोलने लगता है और लपकाने की प्रकृति तो पूर्णतः नष्ट हो जाती है। इसी प्रकार आदिम काल में भी जब भाषा में शब्दों की कमी न रही होगी और परस्पर बात-चीत सुविधा-पूर्वक होने लगी होगी, तो व्याकरणाचार्यों ने उसके नियम बना दिए होंगे और इस पद्य-भाषा से गद्य-भाषा भी उत्पन्न हो गई होगी।

जिस प्रकार बालक दस-पाँच वर्ष स्कूल में शिक्षा-ध्ययन करने के पश्चात् साहित्यिक भाषा समझने लगता है और अपढ़ मनुष्यों से अच्छी भाषा बोलने लगता है, उसी प्रकार भाषा भी नियम बनने और व्याकरण में बँधने पर साहित्यिक हो जाती है और उसे शिक्षित मनुष्य प्रयोग में लाने लगते हैं। परन्तु सर्वसाधारण अशिक्षित मनुष्य उन नियमों और व्याकरण के बन्धनों की उपेक्षा करके अपनी डेढ़ चावल की खिचड़ी अलग पकाते हैं। इस प्रकार भाषा के दो रूप हो जाते हैं, एक साहित्यिक भाषा और दूसरी सर्वसाधारण की भाषा। इन दोनों रूपों में सदा ऐंचातानी होती रहती है और अपने-अपने समय पर सर्वसाधारण की प्रत्येक भाषा साहित्यिक और साहित्यिक भाषा मृत अर्थात् नष्टप्राय और नवीन बोल-चाल की भाषा उत्पन्न होती रहती है।

यहाँ यह न भूलना चाहिए कि बोल-चाल की भाषा और बोली में बहुत अन्तर है। बोल-चाल की भाषा किसी समय साहित्यिक भाषा हो सकती है, परन्तु बोली साहित्यिक भाषा कभी नहीं हो सकती। किसी स्थान-विशेष के मनुष्यों की घरू भाषा को बोली कहते हैं। इसका क्षेत्र बहुत संकुचित होता है। शाहजहाँपुरी, फर्रुखाबादी, खड़ी बोली का प्रारम्भिक रूप, बलिया, गाजीपुर, गोरखपुर आदि की गोरखपुरी बोली, सीतापुरी, आदि इसके उदाहरण हैं। यहाँ दो-एक स्थानों की बोलियों के उदाहरण देने से यह बात भली भाँति समझ में आ जाएगी। फर्रुखाबादी, "काल सूकवार को अमाउस हती, भोर गङ्गा हनान चलियौ, लाला अपन तो दूर हते", आदि; हरदोई की बोली, "उद् की दार में थोरो मिच्चा छोदओ, थोरी हद्दी छोदई और वह फुद्-फुद् होन लागी", आदि; सीतापुरी, "हम न जइबा, बड़ो नीक मनई है, खिलोना ले लीन है, आज बच्चा को जीउ नाई रहत है", आदि; बलिया की बोली, "कौनो चीठी बा? राउर कौनो चीठी ना बा, रउआँ कहा गईल रहलीं? हमार बबुआ सूतल बाटे", आदि; प्रयाग काशी विन्ध्याचल आदि के पण्डों की बोली, "तू कहाँ गया रहा", आदि; पटना के निकटवर्ती प्रदेश की बोली, "साहूकार पूछल कई डाकिया आयल हलई न? मौगी बैठल हलकई", आदि; जलालपुर, अकबरपुर आदि की बोली, "भोरा खता आवा रहा कि नाही?" "तोरी खुपड़ी पे टुपुआ जमइबा, आदि"? देहली व मेरठ के निकटवर्ती प्रदेश की बोली, "पैड़ों (अर्थात् पैरों) प.ड़ूँ, आ रिया है, उल्ली तरफ आ, पल्ली तरफ बैठ, इंगे, उंगे, धोरे, अपने तईं। लेकें नय्यां, बय्यर बानी, भला मानुष, आदि।" इन उदाहरणों से स्पष्टतः प्रकट है कि बोली से साहित्य का काम नहीं चल सकता।

— —

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिक मराठी उपन्यास की रूपरेखा

श्री बालाजीराव जोशी, बी० ए०

मराठी उपन्यास के आद्य प्रवर्तक स्वर्गीय हरि नारायण आपटे माने जाते हैं। आपटे ने दर्जनों सामाजिक और ऐतिहासिक उपन्यास लिखकर मराठी में सच्चे उपन्यास की नींव डाली और मराठी जनता में उपन्यास-कला के प्रति आस्था पैदा कर अनेक लेखकों को स्फूर्ति प्रदान की। आपटे के उपन्यास मुख्यतः सामाजिक और चरित्र-चित्रणात्मक हैं। मध्यमवर्ग की अनेक परिस्थितियों का चित्रण उन्होंने बड़ी कुशलता से किया है।

आधुनिक काल में मराठी उपन्यासों का क्षेत्र काफी विस्तृत हुआ है। विषय, शैली, पृष्ठभूमि, विचार-धारा तथा टेकनीक सभी बातों में मराठी उपन्यासों ने आगे कदम बढ़ाया है। मराठी उपन्यास-लेखक मनोविनोद और आह्लादप्रदान का मौलिक महत्त्व समझते हैं। परन्तु वे उपन्यास को एक बृहत् सामाजिक शक्ति मानते हैं। उनकी दृष्टि में उपन्यास अथवा ललित कला सामाजिक संस्कृति को विकसित और अग्रसर करने का एक महत्त्वपूर्ण साधन है।

आधुनिक मराठी उपन्यास के क्षेत्र में कुछ प्रमुख प्रवृत्तियाँ हैं, जिनके प्रचारक भी ऊँचे उपन्यास-लेखक हैं। उनमें से पहिली प्रवृत्ति है विशुद्ध कलावादिता की। इसके प्रचारक प्रो० फडके हैं। प्रो० फडके मराठी के लोकप्रिय और प्रभावशाली उपन्यास-लेखक हैं। उन्होंने दर्जनों सामाजिक उपन्यास लिखकर मराठी साहित्य को समृद्ध किया है। प्रो० फडके उपदेश, नीति, विचार-विमर्श या किसी खास मत के प्रचार को तुच्छ समझते हैं। कथावस्तु का कलात्मक प्रकटीकरण और 'टेकनीक' का नैपुण्य ही उनकी दृष्टि में बहुमूल्य चीजें हैं। प्रो० फडके के उपन्यास में वास्तवता कम और कल्पना ज्यादा मिलेगी। संसारतप्त मनुष्य की आत्मा को एक अलौकिक आनन्द देने और उसकी विषण्ण वृत्तियों को प्रसन्न करने की शक्ति उनमें है। प्रणय और विलासिता उनके उपन्यास के प्राण हैं। विशेषकर स्त्री की मृदुल भावनाओं का कोमल विश्लेषण करने में वे नितान्त कुशल हैं।

प्रो० फडके मार्मिक चरित्र-चित्रण और प्रकृति-वर्णन करने में अपना सानी नहीं रखते। 'दौलत', 'आशा', 'निरञ्जन', 'उन्माद', आदि उनके सुन्दर उपन्यास माने जाते हैं। मराठी जनता प्रो० फडके के उपन्यासों को बहुत पसन्द करती है। इधर प्रो० फडके जीवन और जगत् के मौजूदा सङ्घर्षों के चित्रण की ओर उन्मुख हैं। उनके 'समरभूमि' जैसे उपन्यासों में स्वदेश की राजनीति की चर्चा आई है। परन्तु, यह स्पष्ट है कि प्रो० फडके का मनःपिण्ड शृङ्गार और विलासितामय है। मराठी उपन्यास के क्षेत्र में प्रो० फडके जैसा 'टेकनीशियन' और 'ललित' लेखक दूसरा कोई नहीं है। उनके प्रत्येक उपन्यास में टेकनीक की नवीनता और चमत्कार अवश्यमेव प्रतीत होगा। उन्होंने अपनी प्रतिभा को विकसित करने के लिए बड़ा परिश्रम किया है।

मामा वरेरकर मराठी में प्रचारात्मक उपन्यास लिखने में निपुण हैं। मामा साहब चिरकाल से सामाजिक प्रश्नों पर सरस और विचारोत्तेजक उपन्यास लिखते आए हैं। "वरेरकर को दलित और पीड़ित जनता के प्रति विशेष आस्था है। उन्होंने इसी विषय पर हाल ही में कुछ सुन्दर उपन्यास लिखे हैं। परन्तु उनके लिखने का ढङ्ग प्रचारक की तरह प्रतीत होता है।

नए युग की नई विचार-धारा से मराठी उपन्यास का क्षेत्र अत्यधिक प्रभावित है। प्रगतिशीलता, समाजवाद, प्रजातन्त्र व वैज्ञानिक दृष्टिकोण, की धाराएँ, जो नए युग की विशेषताएँ हैं, हमारे उदीयमान लेखकों के लिए अधिक आदरणीय सिद्ध हो रही हैं। प्रो० फडके का स्थान यद्यपि निश्चल है फिर भी नए उपन्यास-लेखकों और साहित्यिकों का प्रतिनिधित्व श्री खाण्डेकर को प्राप्त हो रहा है। खाण्डेकर का दृष्टिकोण समाजवादी, स्वभाव दयार्द्र और प्रकृति सौजन्यपूर्ण है।

प्रो० फडके और खाण्डेकर में चिरकाल से झगड़ा चल रहा है। कुछ दिनों तक प्रो० फडके की जीत रही, किन्तु अब खाण्डेकर का पक्ष मजबूत होकर उदीयमानों पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गम्भीर प्रभाव डाल रहा है। खाण्डेकर अध्ययनशील और जिम्मेदार लेखक हैं। हालाँकि साहित्य उनकी जीविका का एकमात्र साधन है, फिर भी उन्होंने साहित्य के ऊँचे उद्देश्य को—जनशिक्षा और प्रबोध को—भ्रष्ट नहीं होने दिया है। खाण्डेकर की सृजनशक्ति आश्चर्यजनक है। अधिक लिखने में निःसारता की मात्रा स्वाभाविकतया आ जाती है। परन्तु खाण्डेकर इसके अपवाद हैं। खाण्डेकर व्यर्थ लिखते ही नहीं। उनकी प्रत्येक कृति में कुछ-न-कुछ विचारणीय मसाला अवश्यमेव रहेगा। खाण्डेकर का समाजवादी दृष्टिकोण केवल किताबी नहीं है—जैसा कि आजकल अक्सर देखा जाता है। सचाई और स्वाभाविकता उनका पहला गुण है। खाण्डेकर अपना जीवन कोकण के देहात में, गरीब जनता के साथ, बिताते आए हैं। उन्होंने अपनी एक आरम्भिक रचना में लिखा है, 'जिस दिन मैं कोकण में रहने के लिए गया, उसी दिन से मेरे जीवननिर्वाह के ढङ्ग में और नागरिक दृष्टिकोण में महत्त्वपूर्ण अन्तर पड़ गया, और मैं जीवन के यथार्थतम स्वरूप को देखने और समझने लगा।' कोकण के देहातों में खाण्डेकर ने गरीबों के जीवन का जो अनुभव किया, उसे उन्होंने अपनी तमाम कृतियों में कलात्मक ढङ्ग से चित्रित किया है। परन्तु हमें खेदवश यह कहना पड़ता है कि खाण्डेकर के समाजवादी दृष्टिकोण में उतनी वैज्ञानिकता और मूल-ग्राहिता नहीं है, जितनी अपेक्षित है। गरीबों का जीवन दुःखमय है—मञ्जूर है—परन्तु उनके प्रति संवेदना-मात्र प्रकट करने से उनके दुःखों का परिहार होना कठिन है। वैज्ञानिक समाजवाद, समाज की पुनर्निर्मिति, समता और प्रजातन्त्रवाद की ओर निश्चित सङ्केत करता है। हम यह नहीं कह सकते कि खाण्डेकर अभी इस सङ्केत से अनभिज्ञ हैं, परन्तु, इतना सच है कि इस सङ्केत का जोरदार प्रतिपादन उनकी कृतियों में नहीं हो पाया है।

खाण्डेकर सामाजिक उत्तरदायित्व व कर्तव्य को पूरी तरह से महसूस करते हैं। वे प्रो० फडके की तरह उपन्यास को दो घण्टे के अलौकिक मनोविनोद और आत्मविस्मृति का साधनमात्र नहीं समझते; प्रत्युत वे मानते हैं कि ललित लेखक प्रथमतः सामाजिक प्राणी होने के कारण समाज की बुराइयों को दूर करने और उसकी संस्कृति को विकसित करने की जिम्मेदारियों से बँधा है। खाण्डेकर ने प्रत्येक उपन्यास में प्रसिद्ध-अप्रसिद्ध, स्थूल-सूक्ष्म सभी तरह के प्रश्नों और समस्याओं पर विमर्श किया है। कलाकार की सहृदयता के साथ ही विचारक की कठोर विवेचकता और अन्तर्दृष्टि भी खाण्डेकर को प्राप्त है। 'पहिला प्रेम' में खाण्डेकर ने रोमैंटिक प्रेम की—जो कालेज के उन्मादपूर्ण वातावरण में शृङ्गारपूर्ण काव्य पढ़कर उत्पन्न होता है और नवयुवकों को विमोहित करता है—मखौल उड़ाई है। उनके मत में ऐसा प्रेम 'स्वप्निल' होने के कारण वास्तव में जीवनोपयोगी नहीं रहता। इस 'स्वप्निल' प्रेम के फलस्वरूप होनेवाली गम्भीर मनोव्यथाओं और तज्जनित सामाजिक हानियों की ओर खाण्डेकर ने जो सङ्केत किया है, वह मननीय है। एक दूसरे उपन्यास में खाण्डेकर ने तथाकथित अशारीरिक या आध्यात्मिक प्रेम-सिद्धान्त की हास्यास्पदता बताकर शारीरिक सुखोपभोग की सापेक्ष्य महत्ता और व्यावहारिक प्रेम का गौरव स्थापित किया है। खाण्डेकर उस सौन्दर्य को अत्यधिक पसन्द करते हैं जिसमें जीवन, व्यावहारिकता और स्वाभाविकता है। खाण्डेकर अपने उपन्यास को विषय और टेकनीक दोनों दृष्टियों से नवीन और आकर्षक बनाने का सफल प्रयत्न करते हैं। उनके 'क्रौंचवध' की, जिसका हिन्दी संस्करण हाल ही में निकला है, टेकनीक की दृष्टि से हिन्दी-साहित्यिकों ने भी सराहना की है। नए-नए टेकनीकों की योजना में प्रो० फडके की तरह खाण्डेकर भी कुशल हैं। खाण्डेकर के नायक (नायिकाएँ भी) विलासिता और निष्क्रियता के प्रतीक नहीं हैं, प्रत्युत वे कार्यकर्त्ता, सुशील, दलितोद्धारक और पुरोगामी विचारों के हैं। खाण्डेकर की भाषाशैली कल्पनाभिराम अधिक है। प्रो० फडके मराठी में सच्चे अर्थों में लालित्य के अवतार हैं। परन्तु हमारा विचार है कि, प्रो० फडके की भाषाशैली की तरह खाण्डेकर की शैली ने भी उदीयमानों पर महत्त्वपूर्ण असर डाला है। मराठी साहित्य को खाण्डेकर की प्रतिभा से अभी बड़ी-बड़ी आशा-आकांक्षाएँ हैं।

मराठी में प्रो० फडके और खाण्डेकर का साहित्यिक इतिहास मराठी-उपन्यास की प्रगति और विशेषताओं का ही इतिहास है। ये दोनों लेखक मराठी-साहित्य के दो ध्रुव हैं—एक दूसरे से कोसों दूर। उनके आघात-प्रत्याघातों से मराठी-उपन्यासों के रूप-विकास में बहुत सहायता प्राप्त हुई है। मराठी में इधर राजनीति-प्रधान उपन्यास लिखने का उपक्रम प्रारम्भ हुआ है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपक्रम का सुस्पष्ट प्रवर्तन श्री माडखोलकर जी ने किया है। माडखोलकर जी मुख्यतः पत्रकार हैं, वे प्रथम नागपुर के 'महाराष्ट्र' के सहायक सम्पादक थे, अब 'तरुण भारत' के प्रधान सम्पादक हैं। माडखोलकर जी मराठी के प्रतिष्ठित समालोचकों में गिने जाते हैं। कुछ वर्षों से उन्होंने उपन्यास लिखना भी शुरू किया है। वे गांधी-विरोधी हैं और उग्र राजनीति के उपासक और प्रचारक हैं। मुखवटे नामक एक उपन्यास में मध्यप्रान्त के प्रधान मन्त्री डा० खरे के पूरे प्रकरण की काल्पनिक ढङ्ग से चर्चा करके अन्त में उन्होंने यह बताया है कि सत्य और अहिंसा—यह गांधी जी का मुखावरण है, जो सिर्फ लोगों को फँसाने और लुभाने के लिए लगाया गया है। 'कान्ता' में पूर्ण रूप से उग्रवादी राजनीति का समावेश है। कला की दृष्टि से माडखोलकर के उपन्यास सफल नहीं हैं। एक लेख में उन्होंने स्वयं लिखा है कि मैं कला को वहीं तक महत्त्व देता हूँ जहाँ तक वह लेखक के मन्तव्य को ओजस्वी और आकर्षक बनाने में सहायक होती है। माडखोलकर के उपन्यासों में प्रकृतिवर्णनों की बहुतायत है। उन्मत्त प्रेम है, और उन्मुक्त काव्यात्मकता है।

मराठी के उच्च कोटि के उपन्यासकारों की इस लम्बी चर्चा में हम स्वर्गीय प्रो० वामन मल्हार जोशी को कदापि भूल नहीं सकते। प्रो० जोशी महाराष्ट्र के श्रेष्ठ विचारकों में थे। मृत्यु के पूर्व उनका अभिनन्दन-सम्मान किया गया था, जिसमें उनको, 'महाराष्ट्र के साक्रेटीस' की सर्वोच्च उपाधि दी गई थी। जोशी जी श्रेष्ठ, निबन्ध-लेखक, मार्मिक आलोचक, प्रगाढ़ साहित्यशास्त्री और मनोविज्ञान-वेत्ता और महान् दार्शनिक थे। परन्तु मार्के की बात यह है कि उन्होंने इने-गिने उपन्यास लिखकर अपनी ऊँची कलात्मक प्रतिभा और सादृश्यता का परिचय दिया। 'रागिणी' उनका ऐसा उपन्यास है, जिसने चिरकालिक लोकप्रियता और प्रतिष्ठा प्राप्त की है और उनको उपन्यास-क्षेत्र में प्रधान और विशिष्ट स्थान प्रदान किया है। जोशी जी मराठी में दार्शनिक उपन्यासों के प्रवर्तक और प्रचारक माने जाते हैं। 'रागिणी' को काव्य-शास्त्र-विनोद भी कहा जाता है। 'रागिणी' और तत्सदृश अन्य उपन्यासों में जोशी जी ने भिन्न-भिन्न विषयों पर विस्तृत विमर्श और ऊहापोह किया है। जोशी जी की दार्शनिक विचार-धारा की प्रमुख विशेषता यह है कि वे किसी खास पक्ष का सहारा नहीं लेते बल्कि हर एक प्रश्न के अनेक सम्भाव्य पहलुओं को निष्पक्ष रूप से प्रगट कर उन पर अनुकूल-प्रतिकूल विमर्श करते हैं—और इस तरह स्वयं ही निश्चित निर्णय न बताकर पाठक के सुस्त मस्तिष्क को ही विचारोत्तेजित करके उसी को अन्तिम निष्कर्ष निकालने की ओर प्रवृत्त करते हैं। जोशीजी में तटस्थ्य, समता, सत्य-प्रेम, सचाई, तर्कवाद और सत्यान्वेषण के एकमात्र उद्देश से स्वीकृत सन्देहवाद मौजूद है—जिससे उनकी उपन्यासीय दार्शनिक विचारधारा नियमित है। जोशी जी में पर्याप्त सदभिरुचि और उज्ज्वलता है। उनकी भाषाशैली में यद्यपि प्रो० फडके और खाण्डेकर जैसे विशुद्ध साहित्यिकों की तरह मादक लालित्य और कोमल सौन्दर्य नहीं है, फिर भी उसमें जरा भी रूक्षता और क्लिष्टता नहीं। उसमें विशुद्धि, उज्ज्वलता और निर्मलता है। गम्भीर विषय को सुबोध करके आकर्षक ढङ्ग से बताना कठिन काम है। जोशी जी को यह काम पूरी तरह से सिद्ध हो गया है। इस कारण जोशी जी के उपन्यास विचार और कला दोनों दृष्टियों से अभिराम सिद्ध होते हैं।

जोशीजी ने अपने उपन्यासों में राजनीति की चर्चा भी की है। परन्तु जहाँ तक होता है, वे किसी पक्ष का सहारा नहीं लेते। वे प्रश्न का हर पहलू प्रस्तुत कर, पाठक के विचारशील मस्तिष्क को ही सोचने और निर्णय करने में प्रवृत्त करते हैं। इसलिए उनके सभी तरह के विमर्श निष्पक्ष, निर्विकार और प्रभावोत्पादक होते हैं। जोशी जी वर्तमान समस्याओं और परिस्थितियों के प्रति जागरूक रह कर भी आदर्शवाद के प्रति अन्ततः उन्मुख देख पड़ते हैं। उनके चित्रित किए नायक (और नायिकाएँ) महाराष्ट्र के तत्सम्बन्धित आन्दोलनों के प्रतिनिधि माने जा सकते हैं। वे सच्चरित्र, देशभक्त, विचारक, पुरोगामी और कार्यकर्त्ता देख पड़ते हैं। बहुत से पात्रों में तो स्वयं जोशी-जी अप्रत्यक्ष रूप से मौजूद मालूम पड़ते हैं। जोशीजी मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करने में भी अत्यन्त प्रवीण हैं। वे महाराष्ट्र में मनोविज्ञान के अधिकारी पण्डित माने जाते हैं। उनका-सा सच्चा मनोविश्लेषण मराठी उपन्यास के मौजूदा क्षेत्र में अधिक परिमाण में नहीं पाया जाता।

आजकल ऐतिहासिक उपन्यास बहुत ही कम लिखे जाते हैं। हरि नारायण आपटे और प्रो० फडके (अल्लाहो अकबर) ने कुछ सुन्दर ऐतिहासिक उपन्यास लिखे हैं। प्रतीकवाद की पद्धति पर पु० य० देशपाण्डे, जो इधर गांधीवादी हुए हैं, ने 'सदाफुली' और 'कालीराणी'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नामक उपन्यास लिखे हैं। परन्तु हमें खेद है कि देश-पांडे जी को अभी उपन्यास की कला पूरी तरह से सिद्ध नहीं हुई है, क्योंकि उनका दृष्टिकोण समाजवादी और प्रगतिशील होकर भी उनकी भाषाशैली और वातावरण इतना दुर्बोध और विचित्र रहता है कि पाठक को कोई मजा नहीं मिलता।

मराठी उपन्यासों के टेकनीक आदि पर अँगरेजी साहित्य के नूतन आविष्कारों का अधिक असर पड़ा है।

मराठी का उपन्यास-क्षेत्र अन्य प्रान्तीय भाषाओं की तुलना में अधिक समृद्ध मिलता है। मराठी उपन्यास नवीनता का हिमायती है। इधर जो संज्ञा-प्रवाह-पद्धति निकली है, उसका भी प्रशंसनीय अनुकरण वा० सी० भर्टेकर तथा रांगणेकर (रणाङ्गण) आदि सज्जनों ने किया है। खाण्डेकर आदि के नेतृत्व में मराठी उपन्यासों की प्रवृत्ति समाजवादी विचारधारा की ओर बढ़ रही है। मजदूर जीवन पर श्री खण्डालीकर आदि के उपन्यास पढ़ने योग्य हैं। कौटुम्बिक उपन्यास लिखने में नारायण हरी आपटे आदि निपुण हैं। युद्ध तथा युद्धजनित परिस्थितियों पर भी अनेक सुन्दर उपन्यास लिखे गए हैं। मराठी उपन्यास-क्षेत्र में पुरुषों की भाँति महिलाएँ भी अग्रसर हैं, यह सन्तोष की बात है। हिन्दी की भाँति छायावादी गूढ़ताएँ मराठी उपन्यासों में नहीं मिलेंगी। जैसा कि हमने गत दिसम्बर की 'सरस्वती' में मराठी-काव्य पर लिखे लेख में बताया है। महाराष्ट्र की जनता कल्पना से प्रत्यक्ष को और 'स्वप्निलता' से व्यावहारिकता को अधिक पसन्द करती है, यह बात केवल काव्य प्रान्त ही पर नहीं, किन्तु पूरे मराठी-साहित्य पर लागू है। संक्षेप में मराठी उपन्यासों का स्वरूप साधारणतया सामाजिक और सामूहिक है और उनकी प्रवृत्ति आनन्दप्रदान के साथ ही लोक-शिक्षा और संस्कृति-विकास की ओर है।

भेद का निवारण

श्री वामनराव चोरघड़े

उनकी दृष्टि भयानक थी! खून, डकैती, मारपीट ये सब प्रकार के दुष्कृत्य उनकी लाल मस्त आँखों में समाए से मालूम पड़ते थे! जेल के अनुशासन के कारण वे पक्के निडर बन गए थे! निडर, बदमाश तथा पाषाण-हृदयी कैदी थे वे! उस 'बराक' में जाते ही मेरी छाती धड़कने लगी। इस देह की मुझे कुछ भीति नहीं। कोड़े खाकर इस शरीर पर की चमड़ी खून से लथपथ हो चुकी थी पर मेरे हृदय में धड़कन का नाम निशान तक न था। अतः उन प्रहारों से मेरी हृद्-भूमि इतनी मृदु बन गई कि थोड़ी वर्षा होने पर हरी हरियाली बढ़ जाती; किन्तु—

अधिकारियों ने मेरे हृदय पर आघात किया। राजकीय कैदियों में अशान्ति का प्रसार करने के बहाने मुझे चोर-डाकुओं के इस भाग में भेज दिया था।

वह वायुमण्डल! उससे मेरा हृदय दुःखित हो रहा था। वह कैदियों का चाल-चलन, निर्लज्जता एवं झगड़े—उन्हें झगड़ा करने के लिए किसी विशेष कारण की आवश्यकता न होती। किसी कैदी को वार्डर ने कुछ आज्ञा सौम्य शब्दों में दी तो सब उसकी ओर शैतान-सी नीली-पीली आँखें बना के घूरते। बिना कोड़ों के रास्ते पर चलनेवाले वे लोग नहीं थे!

मैं था राजबन्दी! हर समय मैं सीधा बर्ताव करना, अपना काम शान्ति से करना, सन्ध्या-समय पर नियमित रूप से प्रार्थना करना! वार्डर को कभी मुझ पर चिढ़ने का तथा लात-मुक्का प्रदान करने का अवसर तक न मिलता। बस! यही मुझसे द्वेष करने का उन्हें कारण मिलता! सब कैदियों के हृदय का दाह मुझे जलाने पर तुल रहा था। हर एक प्रकार से मुझे दोषी ठहराने का प्रयत्न किया गया। वह पीड़ा मुझे असह्य थी। उनके स्वभाव तथा बर्ताव से मैं इतना ऊब गया था कि परलोक के नरक की कल्पना इससे घृणित नहीं हो सकती—ऐसा मेरा विश्वास हो गया था।

वहाँ से मुझे हटा दिया जाय, इसलिए मैंने बहुत प्रयत्न किए। अर्थात् निवेदन तथा प्रार्थना सत्याग्रही के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संख्या ४]

लिए वर्ज्य थे ? इसी से एक माह का समय उसी नरक में बिताना पड़ा।

जनवरी की सर्दी ! अतः उस वर्ष ठण्ढी हवा भी शायद वह रही थी। किन्तु हमें तो यथाक्रम सुबह पाँच बजे उठना पड़ता। वहाँ पर दया दिखलानेवाला था ही कौन ? और करुणा दिखलाते भी क्यों ? दिन भर तो काम में काम करना पड़ता; किन्तु रात में भोजन के उपरान्त कोठरियों में सारा ब्रह्माण्ड याद आता !

कोठरियों की विशाल खिड़कियाँ लोहे की छड़ों से मजबूत बनाई गई थीं। शायद इधर-उधर की सारी ठण्ढ लेकर हवा अन्दर प्रवेश करती थी।

हर एक को दिए हुए दो कम्बल – वह भी कितने लोगों के, शायद हमारे पूर्वजों के उपयोग किए हुए—एक नीचे बिछाना तथा एक ऊपर से ओढ़ लेना एवं उसी के सहारे पेट से पैर सटाकर शरीर को उष्ण बनाना !

सोने के चबूतरे एकदम ठण्ढे रहते; हाथ लगाना तक कठिन ! साठ-साठ कैदी उन कोठरियों में रहते थे। उनके श्वासोच्छ्वास की जो उष्णता, बस वही उष्णता ! वार्डरों की आवाज तथा उनके बूटों की ध्वनि यही हमारा निद्रा-सङ्गीत !

विचारों की उष्णता से मेरा शरीर गरम रहा करता, परन्तु मेरी कोठरी में रहनेवाले दूसरे कैदियों को शायद ही विचार करना आता हो ? पूरे संसार की क्रूरता उन्हीं में समाई थी।

आर्त चीत्कारें करते हुए वे रात्रि बिताते। ठण्ढ से उनके शरीर थर्राते थे। रात भर शरीर को एक पिण्ड में परिवर्तित कर कुछ अस्पष्ट ध्वनि करते वे पड़े रहते !

कितने भी कठिन कष्ट सहकर टस-से-मस न होनेवाले कैदी प्रकृति के एक इशारे से पीड़ित हो दीन हो जाते। वह दीन-ध्वनि सुनते हुए मुझे रात बितानी पड़ती। उस समय मैं बार-बार सोचता—'आखिर ईश्वर ने मुझे हृदय दिया ही क्यों ?'

'अरे बाऽप !' मेरे पासवाला कैदी चिल्लाया। उसकी वह दयनीय दशा देखकर मुझसे न रहा गया।

'क्यों, क्या हुआ ?' मैंने धीरे से पूछा। 'जाड़े से मर रहा हूँ, भैया !' उसकी दन्त-ध्वनि सुनाई पड़ रही थी। उसने पहली बार मुझे 'भैया' कहकर पुकारा था। अब तक तो मेरी ओर देखकर गालियाँ सुनाने में ही उसे आनन्द मिलता था।

'एक काम करोगे ?' मैंने अनुकम्पा से पूछा।

'कौनसा ?'

'तुम मेरे पास आ जाओ। हम दोनों अपने कम्बल ओढ़कर सोएँगे। अच्छी नींद आएगी।'

वह क्या सोच रहा था, पता नहीं, किन्तु कुछ क्षण वह स्तब्ध रहा। फिर धीरे से बोला—'कल दण्ड मिलेगा तो कौन—?'

'अरे ! दण्ड की क्या बात है ! पत्थर फोड़ते समय टुकड़े लग जाने से भी तो खून बहता ही है !'

'वह तो ठीक है, बाबू, किन्तु मेरे लिए आपको सजा—' यह कहते समय उसका मानवत्व जाग्रत् हुआ। मेरे समझाते ही उसने एक क्षण का विलम्ब न किया; वह एकदम आया। उस सवा हाथ के चबूतरे पर हम एक दूसरे की गोद में सटकर सो गए। हमारे साथियों ने भी यही किया और 'वार्डर' की गालियाँ बरसने लगीं।

'भैया ! आपको जो दण्ड मिलेगा उसका दो गुना मैं अकेला ही सह लूँगा'—उसके हृदय का ईश्वर बोल रहा था।

अलग रहने के नियमों को तोड़कर हम एक हो गए थे। उस वक्त हमारी संस्कृति, हमारा धर्म, जाति तथा आचार-विचार—किसी का हमको स्मरण न हुआ। एक ही बिस्तर में हमारे श्वास मिलते। शरीर सुख से निद्रित थे। परन्तु हमारे हृदय जाग्रत् होकर शरीर के भीतर से बोल रहे थे !

[अनुवादक—श्री मधुकर लोही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एंग्लो-अमरीकी आर्थिक करार और भारत

श्री अवनीन्द्रकुमार विद्यालङ्कार

एटम बम के आविष्कार के बाद सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण घटना एंग्लो अमरीकी आर्थिक करार है। इस आर्थिक करार की पार्श्वभूमि में यही विचार काम कर रहा है कि बड़े राष्ट्रों की सुख-समृद्धि पर विश्व की सुख-समृद्धि निर्भर है। विश्व की दो बड़ी आर्थिक शक्तियों—संयुक्तराष्ट्रसङ्घ और ग्रेट ब्रिटेन-के आर्थिक तन्त्र की स्थिरता पर विश्व के आर्थिक तन्त्र की स्थिरता निर्भर है। मि० जार्ज सूले का कहना है कि—"आयात और निर्यात करने की क्षमता में संयुक्तराष्ट्र अमरीका और ग्रेट ब्रिटेन अन्य राष्ट्रों से इतना अधिक बढ़े हुए हैं कि वे जो कुछ निश्चय करेंगे वही विश्व का भावी आर्थिक तन्त्र होगा।" संयुक्त राष्ट्र ने चूँकि बहुदैशिक और विश्व आर्थिक तन्त्र को विस्तारित करने की नीति का अवलम्बन किया है अतः उसने युद्ध से जर्जरित और नष्ट-भ्रष्ट ब्रिटिश आर्थिक तन्त्र को पुरानी अवस्था में स्थापित करने की जिम्मेदारी अपने ऊपर ली है। संयुक्त राष्ट्र ने और दो कारणों से भी यह कर्ज दिया है। साम्राज्य तरजीह (इम्पीरियल प्रिफरेन्स) की चहार-दिवारी से घिरे स्टर्लिंग प्रदेश में डालर की प्रभुता स्थापित करनी थी। अमरीका ओटावा-पैक्ट के बनने के बाद से साम्राज्य तरजीह की प्राचीर को गिराने का इरादा किए हुए था। अब उसको इसका अवसर मिला। उसका दूसरा मनोरथ था कि ब्रिटेन ब्रेटन-वुड करार को स्वीकार करे। इसलिए कर्ज देने की यह शर्त रक्खी गई है। अमरीकी कांग्रेस की कर्ज देने की स्वीकृति इसी बिना पर माँगी जाएगी। कर्ज से कर्ज देने की शर्तें कम महत्त्वपूर्ण नहीं हैं। अतः उन पर अधिक मनोयोग से विचार करने की जरूरत है।

इस आर्थिक करार में ब्रिटेन का पलड़ा भारी रहा है। कर्ज लेनेवाले की अपेक्षा कर्ज देनेवाला अधिक गरजमन्द था। लार्ड हैलीफैक्स ने यह स्पष्ट कर दिया था :—"हमारे सामने दो मार्ग खुले हुए हैं। एक है कि हम अपने बाग में खेती करें और उपजाएँ, अर्थात् हम अपना व्यापार यथासम्भव स्टर्लिंग-प्रदेश में करें, जिससे कि हम बगैर डालर दिए खरीद सकते हैं, और डालर हमारे पास हैं नहीं। जहाँ तक हो सके हम उनसे खरीदें और उससे बाहर से जहाँ तक हो सके कम-से-कम खरीदें। इसका अर्थ है कंट्रोल, अवरोधक और प्रतिबन्ध; यह चाहे सर्वोत्तम हल न हो, पर एकमात्र मार्ग यही मालूम देता है; चाहे हम इसको पसन्द करें या न करें, हमको यह अपनाना होगा। दूसरा मार्ग है कि हम दोनों मिलकर देखें कि क्या हम अधिक उन्मुक्त और विस्तारशील विश्व-व्यापार के लिए कुछ कर सकते हैं।" यही नहीं, ब्रिटेन ने साम्राज्य तरजीह की प्राचीर को उसी मात्रा में गिराने का वचन दिया है. जिस सीमा तक अमरीका अपने देश के तट-कर और अवरोध की दीवारों को गिराएगा। ग्रेट ब्रिटेन ने यह भी दावा किया कि धुरीराष्ट्रों को हराने में संयुक्त राष्ट्र की अपेक्षा क्षमता और शक्ति के अनुपात में ब्रिटेन का भाग कम नहीं है। अतः ब्रिटेन को संयुक्त राष्ट्र ने अत्यन्त उदार शर्तों पर कर्ज दिया है।

लम्बी मुद्दत का कर्ज

ब्रिटेन को युद्ध-काल में उधार व पट्टे के अन्तर्गत दिया गया २५ अरब डालर संयुक्त राष्ट्र ने रद्द कर दिया। यही नहीं, ग्रेट ब्रिटेन में अमरीका का जो माल बचा पड़ा है और लड़ाई में काम नहीं आया है, वह भी उसने प्राप्त कर लिया है और उसके लिए ब्रिटेन को ६५ करोड़ डालर दिए गए हैं। इसके अतिरिक्त व्यापार के लिए ३७५ कोटि डालर दिए गए हैं। इतनी बड़ी रकम संयुक्त-राष्ट्र ने किसी एक राष्ट्र को एक साथ कर्ज में इससे पहले कभी नहीं दी। अमरीका-द्वारा दी गई कर्ज की रकम लगभग ब्रिटेन पर भारत के स्टर्लिंग पावना जितनी है। ऋण चुकाने की शर्तें भी अत्यन्त उदार हैं। वार्षिक किश्तें छोटी हैं। ३५.००००००० पौंड प्रतिवर्ष चुकाएगा। प्रथम महायुद्ध के बाद ब्रिटेन ने जिस ब्याज-दर से कर्ज लिया था उससे कम सूद पर इस बार उसको कर्ज मिला है। इस नए करार में पुराने कर्ज की बात का उल्लेख तक नहीं किया गया। कर्ज ३१ दिसम्बर, १९५१ के बाद पचास वर्षों में २ प्रतिशत सूद पर चुकाया जाएगा। यदि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संख्या ४]

किसी वर्ष अन्ताराष्ट्रीय मुद्रानिधि ब्रिटेन को यह प्रमाणपत्र दे दे कि उसके पास विनिमय रिजर्व अपर्याप्त है, तो उस वर्ष वह सूद देने से मुक्त हो जाएगा। पहले पाँच साल सूद नहीं देना होगा, अतः सूद की दर वस्तुतः १.६२ प्रतिशत रह जाती है। यह बहुत नहीं है और न कठोर कही जा सकती है; क्योंकि संयुक्तराष्ट्र अमरीका स्वतः अपने देश में इस कर्ज को देने के लिए १.६ प्रतिशत ब्याज पर ऋण लेगा। निस्सन्देह कर्ज देने में अमरीका का अपना लाभ है। सेना विसर्जित करनी है। विसर्जित सेना के सैनिकों को रोजगार में लगाना है। काम होने पर ही उनको लगाया जाएगा। उनके लिए तभी काम होगा जब उपभोक्ता उनके श्रम से उत्पन्न माल को लेने को उत्सुक हों। अँगरेज माल लेने को तैयार हैं, यदि उनके पास डालर हों। इसलिए ब्रिटेन को कर्ज देने में अमरीका का अपना हित है। इस कारण एक अँगरेज को यह अनुचित मालूम देता है कि अमरीकी कल कारखानों को चलता रखने और अमरीका की बेकारी और बेरोजगारी को दूर करने के लिए वह सूद पर कर्ज ले। पर वह भूल जाता है कि यदि वह कर्ज न लेगा तो उसको आधा पेट खाकर रहना पड़ेगा। चीनी, मांस और सब तरह की चर्बी का राशन एकदम आधा हो जाएगा। रोटी का राशनिंग भी पर्याप्त कम हो जाएगा। अमरीका ने ब्रिटेन को कर्ज देकर ये चीजें खरीदने के योग्य बनाया है और उसको भूखों मरने से बचाया है। ब्रिटेन को यह कर्ज देकर अमरीका ने उसको अपने विध्वस्त उद्योगों के पुनर्निर्माण का अवसर दिया है और दुनिया के बाजार में अपना खोया स्थान पुनः प्राप्त करने के लिए उचित सहारा दिया है।

अमरीका का लाभ

एंग्लो अमरीकी करार के कारण अमरीका को भी अनेक लाभ हुए हैं। पहला यह कि स्टर्लिंग-प्रदेश का अन्त हो जाएगा। साम्राज्य-डालर-भाण्डार का अन्त हो जाने से अन्ताराष्ट्रीय विनिमय का केन्द्र लन्दन न रहेगा। स्टर्लिंग प्रदेश के देश संयुक्त राष्ट्र से सीधा व्यापार कर सकेंगे और वे अपनी योजनाओं को पूरा करने के लिए अमरीका से प्लांट और मैशीनरी ले सकेंगे। पर ब्रिटेन की डालर-स्थिति भी इससे सुधर जाएगी, इसलिए सम्भव है कि डालर-भाण्डार और कुछ समय तक न तोड़ा जा सके। स्टर्लिंग-क्षेत्र से अभिप्रेत हैं वे देश जिनका 'डिफेन्स' (फाइनेन्स) (डेफीनेशन्स आफ स्टर्लिंग एरिया) (नं० २) आर्डर १९४४ में उल्लेख है, अर्थात् (क) कनाडा और न्यूफाउंडलैंड को छोड़कर सब डोमिनियन; (ख) सम्राट् के राज्य का और कोई भाग; (ग) राष्ट्र-सङ्घ की ओर से ब्रिटेन को जिन देशों का शासनादेश मिला हुआ है; (घ) ब्रिटिश संरक्षित या संरक्षित राज्य; (ङ) मिस्र, एंग्लो-मिस्र, सूडान और इराक; (च) आइसलैंड और फालोई द्वीपसमूह। स्टर्लिंग प्रदेश और संयुक्तराष्ट्र के बीच प्रत्यक्ष रूप से व्यापार होने का अर्थ साम्राज्य व्यापार तरजीह (इम्पीरियल ट्रेड प्रिफरेन्स) का अन्त होना है। साम्राज्य तरजीह के कारण अमरीका का इन देशों से खुला व्यापार नहीं है। अब करार होने के एक साल बाद स्टर्लिंग-क्षेत्र के देश कहीं और किसी के साथ व्यापार कर सकेंगे और विनिमय डालर प्राप्त कर सकेंगे। इस प्रकार अमरीका अपना माल उन देशों को निर्यात कर सकेगा जो पहले सम्भव न था। दूसरे शब्दों में संयुक्तराष्ट्र ने ब्रिटेन को अपने माल का खरीदार बनाने के लिए कर्ज दिया है, जिससे ब्रिटेन अमरीका का माल नगदी देकर खरीद सके।

ब्रिटेन को लाभ

ब्रिटिश कंजरवेटिव पार्टी ने एंग्लो-अमरीकी करार का हार्दिक स्वागत नहीं किया है। क्योंकि इससे स्टर्लिंग प्रदेश का अन्त होता है, स्वर्ण-मान को पुनः अपनाना पड़ता है और साम्राज्य-व्यापार तरजीह नीति को समाप्त करना पड़ता है। उसका यह भी कहना है कि अमरीका से इन शर्तों पर कर्ज लेने की जरूरत नहीं थी। क्योंकि अमरीका के निर्यात व्यापारी ब्रिटिश माल आयात करने-वाले व्यापारियों से सम्बन्ध जोड़ने को अत्यन्त उत्सुक हैं, (२) निजी रूप से उधार ले करके ब्रिटेन अपने लिए अत्यन्त आवश्यक माल खरीद सकता था। इस हालत में सूद की दर भी कम होती। पर उधार व पट्टा करार की ७वीं धारा को पूरा करने के लिए, जिसमें कहा गया है कि लड़ाई के बाद व्यापार और विनिमय के कंट्रोल का अन्त कर दिया जाएगा, नगदी न होने के कारण ब्रिटेन के लिए कर्ज लेना अनिवार्य था। ब्रिटेन इसके बिना उन्मुक्त अन्ताराष्ट्रीय व्यापार के चार्टर का पूर्ण रूप से समर्थन नहीं कर सकता था जो कि ब्रेटनवुड करार में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रिटेन स्वीकार कर चुका है। इसके अभाव में ब्रिटेन के सामने एक विकल्प था कि वह ब्रिटिश साम्राज्य के अन्दर ही व्यापार करे और उन्हीं से पैसा प्राप्त करे और अपना एक अलग आर्थिक ब्लाक बनाए। पर इसमें भी एक बाधा थी। लार्ड कीन्स ने ठीक कहा है—'हम जितना चुका सकते हैं उससे अधिक उन्हें हमें देना है। करार के आधार पर हमें रुपया कर्ज देकर वे हमसे कुछ पा नहीं सकते थे, क्योंकि वे हमसे जो खरीदना चाहते हैं वह हम उनको देने में असमर्थ हैं।'

प्रतियोगिता का भय

इस करार के कारण व्यापार उन्मुक्त हो सकेगा, यह सन्दिग्ध है। पर एक बात सम्भव दीखती है। ब्रिटेन ने अपना निर्यात व्यापार ७५ प्रतिशत बढ़ाने की योजना बनाई है। संयुक्त राष्ट्र ने ब्रिटेन को निर्यात-व्यापार बढ़ाने के लिए कर्ज दिया है। पर भविष्य में अमरीका और ब्रिटेन के निर्यात-व्यापारियों के बीच बाजार के वास्ते भीषण प्रतियोगिता सम्भव है।

स्वर्णमान से बन्धन

ब्रिटेन को डालर और स्वर्ण प्राप्य कराकर और ब्रिटेन के लिए डालर दे देना आवश्यक करके ब्रिटिश गवर्नमेंट को स्वर्णमान से बाँध दिया गया है और स्टर्लिंग क्षेत्र पर उसका पञ्जा शिथिल कर दिया गया है। आस्ट्रेलिया, या भारत या मिस्र जब अपना माल ब्रिटेन को बेंचते थे, तब वे बदले में पौंड या पौंड पावना पाते थे जो कि वे केवल स्टर्लिंग क्षेत्र में बेच सकते थे और मर्यादित सीमा में डालर मिलने से वे सीमित मात्रा में ही अन्यत्र बेच सकते थे। स्टर्लिङ्ग ब्लाक ने संयुक्तराष्ट्र को ब्रिटिश साम्राज्य के व्यापार के एक बड़े भाग से वञ्चित कर रक्खा था। १९४७ से स्टर्लिंग बाधाओं के टूट जाने से भारत आदि देश संयुक्तराष्ट्र या अन्यत्र से माल खरीद सकेंगे।

जकात-एकता

वस्तुतः एंग्लो-अमरीकी करार संयुक्तराष्ट्र-ब्रिटिश साम्राज्य जकात-एकता की ओर एक बड़ा कदम है। विदेशी व्यापार पर तट-कर के रूप में अन्य प्रकार के लगाए गए अवरोधों को दूर करने के लिए इस पैक्ट में कहा गया है। इसमें कार्टल (चीज की कीमत को ऊँचा रखने के लिए उत्पादकों का सङ्घ)-सदृश वैयक्तिक साहसों का अन्त करने की इच्छा व्यक्त की गई है। इसमें यह भी कहा गया है कि विश्व के बाजार और कच्चे माल तक समान रूप से पहुँचने के सिद्धान्त को वास्तविक बनाया जाए जिससे बहुत-से राष्ट्रों के विभिन्न गुणों का पूर्ण रूप से विकास हो और सामान्य हित को अधिक लाभ पहुँचे।' अटलांटिक चार्टर में यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया गया है। इस करार से संयुक्तराष्ट्र अमरीका ब्रिटिश साम्राज्य का व्यावसायिक साझेदार हो गया है। इस साझेदारी के फलस्वरूप अमरीका का साम्राज्य के विभिन्न भागों से निकट-सम्बन्ध स्थापित होगा। ६ दिसम्बर को संयुक्तराष्ट्र ने इटली से भी एक सन्धि की है और इसका उद्देश्य अटलांटिक चार्टर में निहित आर्थिक उद्देश्यों की पूर्ति करना बताया गया है। व्यावसायिक सम्बन्ध पुनः स्थापित करने और जकात कम करने की भी बात कही गई है। इस प्रकार संयुक्तराष्ट्र अमरीका ने महान् आर्थिक आक्रमण आरम्भ किया है। यह डालर राजनीति है।

विस्मयजनक

ब्रिटेन और अमरीका इन दो देशों के प्रतिनिधियों ने यह आर्थिक करार किया है, पर एक तीसरे देश भारत की ४० कोटि जनता के जीवन और सुख पर इसका भारी प्रभाव पड़ता है। यह विस्मयजनक है कि ब्रिटेन अमरीका से कर्ज लेने गया और अमरीका ने इस शर्त पर कर्ज दिया कि ब्रिटेन अपने महाजनों का उधार पूरा-पूरा न चुकाए। इस आर्थिक करार की एक शर्त है:—संयुक्तराष्ट्र अमरीका-द्वारा इस आर्थिक करार के स्वीकार कर लेने के एक साल बाद सब 'चालू' उत्पन्न स्टर्लिंग अन्ताराष्ट्रीय मुद्रा में परिवर्तित हो सकेंगे। अमरीका आगामी मार्च में इस आर्थिक करार को विधिवत् स्वीकार करेगा। ६ दिसम्बर को इस करार पर दस्तखत हुए थे। संयुक्तराष्ट्र ने इस करार पर अन्तिम स्वीकृति देने के लिए लगभग चार मास लिए हैं। इसका कारण यह प्रतीत होता है कि अमरीका चाहता है कि ब्रिटेन इस अवधि के अन्दर एंग्लो-अमरीकी आर्थिक करार की शर्तों के अनुसार अपने महाजनों से अपने ऊपर चढ़े कर्ज के बारे में समझौता कर ले।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संख्या ४]

रुपया कमजोर होगा

युद्ध-काल में जब कीमतें तेजी से चढ़ रही थीं तब सर जेरमी रेजमैन ने १९४३ में उनको ऊँचा चढ़ने से रोकने की बहुत कोशिश की पर वे लगभग निर्देशिका संख्या २४४ पर पहुँच ही गईं। इसका मतलब था कि आन्तरिक दृष्टि से रुपए की कीमत ७ आना से ज्यादा नहीं है। पर रुपए के साथ स्टर्लिङ्ग पावना बड़ी मात्रा में जमा था। फलतः बाह्य रूप में डालर के बाद रुपया सबसे अधिक मजबूत था। पर ब्रिटिश कर्ज के फैसले के बाद इस स्थिति को भारी खतरा पहुँचने की आशङ्का है। स्टर्लिङ्ग पावने की विशाल राशि के पीठ पर होने के कारण रुपया बाह्य रूप से बहुत मजबूत मालूम होता था, पर अब कमजोर हो जाएगा; क्योंकि एंग्लो-अमरीकी करार में स्टर्लिङ्ग पावने के २५ से ४० प्रतिशत भाग को बट्टेखाते में डालने को कहा गया है और कुछ भाग को—२५ से ४० प्रतिशत को—निधि (फण्ड) में परिणत करने के लिए कहा गया है, जो किश्तों में चुकाया जाएगा।

कुछ न बचेगा

कहा गया है कि एक साल बाद जो चालू विदेशी मुद्रा उत्पन्न होगी वह भारत को प्राप्त होगी। विदेशी व्यापार-द्वारा भारत को प्राप्त स्टर्लिंग भी विदेशी मुद्रा में बदला जा सकेगा। पर स्थिति यह मालूम होती है कि भारत के पास बदलने के लिए कुछ बचेगा ही नहीं। वैयक्तिक व्यापारिक चीजों के व्यापार में भारत का व्यापारिक सन्तुलन, जो उसके अनुकूल होता था, वह घटने के चिह्न दिखा रहा है। साम्राज्य-देशों से भारत का अनुकूल व्यापारिक सन्तुलन १९४३-४४ में चरम सीमा पर पहुँचने के बाद से बराबर घट रहा है। युद्ध की समाप्ति के बाद भारत के निर्यात-व्यापार में और अधिक कमी आई है। इसके विपरीत भारत का आयात व्यापार बढ़ रहा है। भारत के अनुकूल व्यापारिक सन्तुलन को साम्राज्य से बाहर के देशों के साथ का व्यापार १९३५-३६ और १९४३-४४ में कायम रक्खे हुए था। १९४४-४५ में वस्तुतः साम्राज्य से बाहर के देशों के साथ भारत का ४९ कोटि रु० तक प्रतिकूल व्यापार था। संयुक्तराष्ट्र अमरीका के साथ भी भारत का व्यापार प्रतिकूल जा रहा है। इस बात को प्रकट करने के लिए हम नीचे तीन तालिकाएँ दे रहे हैं:—

(तालिका नं० १)

साम्राज्य के साथ बिक्री के माल में भारत का व्यापारिक सन्तुलन

आर्थिक वर्ष	साम्राज्य को भारत का निर्यात	साम्राज्य से भारत को आयात	भारत का सन्तुलन पक्ष में + विरुद्ध—
	(करोड़ रुपयों में)		
१९४५-४६	५८·६८	४३·२१	+ १५·४७
(६ मास)			
१९४४-४५	१३७·८९	७८·००	+ ५९·८९
१९४३-४४	१२८·४६	५६·७५	+ ७१·७१
१९४२-४३	१२७·९५	६१·२५	+ ६६·७०
१९४१-४२	१५३·८०	१०५·५७	+ ४८·२३
१९४०-४१	१२०·४५	८९·९१	+ ३०·५४
१९३९-४०	११९·५१	९३·११	+ २६·४३
१९३८-३९	९०·२८	८८·५६	+ १·७२
१९३७-३८	९९·११	९५·२३	+ ३·८८
१९३६-३७	९१·३१	८३·७१	+ ७·६३
१९३५-३६	७३·३८	८५·९८	− १२·६०

(तालिका नं० २)

साम्राज्य से बाहर के देशों के साथ बिक्री योग्य माल में भारत का व्यापारिक सन्तुलन

आर्थिक वर्ष	साम्राज्य से बाहर के देशों को भारत से निर्यात	साम्राज्य के बाहर से भारत में आयात	भारत का सन्तुलन पक्ष में + विरुद्ध—
	(करोड़ रुपयों में)		
१९४५-४६	४३·३६	८०·००	−३६·६४
(६ मासों में)			
१९४४-४५	७३·१५	१२२·९८	− ४९·८३
१९४३-४४	७०·५७	६१·०३	+ ९·५४
१९४२-४३	६६·७५	४९·२५	+ १७·५०
१९४१-४२	९९·०८	६७·५८	+ ३१·५०
१९४०-४१	७८ २६	६७·०६	+ ११ २०
१९३९-४०	९४·०३	७२·१७	+ २१·८६
१९३८-३९	९८·९३	६३ ७१	+ १५·१६
१९३७-३८	९०·१०	९८·५६	+ १ ·५४
१९३६ ३७	१००·९५	५७·९९	+ ४२·९६
१९३५-३६	८०·८७	६३·७९	+ १७·०८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तालिका नं० ३

संयुक्त राष्ट्र अमरीका के साथ भारत का बिक्री के माल में व्यापारिक सन्तुलन

आर्थिक वर्ष	संयुक्तराष्ट्र अमरीका को भारत से निर्यात	संयुक्तराष्ट्र अमरीका से भारत को आयात	भारत का सन्तुलन पक्ष में + विरुद्ध −
		(करोड़ रुपयों में)	
१९४५-४६	२५·०६	४०·८१	−१५·७५
(६ मासों में)			
१९४४-४५	४४·७९	५०·४६	− ५·६७
१९४३-४४	४०·११	१८·५७	+२१·५४
१९४२-४३	२७·८०	१९·१२	+ ८·६८
१९४१-४२	५३·९८	३४·६१	+१९·३७
१९४०-४१	३१·९४	२७·००	+४४·९४
१९३९-४०	२७·१८	१४·८६	+१२·३२
१९३८-३९	१४·२९	९·७८	+ ४·५१
१९३७-३८	१८·७३	१२·८८	+ ५·८५
१९३६-३७	१९·०२	७·४५	+११·५७
१९३५-३६	१६·४७	८·३७	+ ८·१०

भयङ्कर प्रतियोगिता

संयुक्तराष्ट्र और ब्रिटेन अपना निर्यात व्यापार जिस तेजी से बढ़ा रहे हैं उससे इस बात का बहुत भय है कि अगले कुछ सालों में व्यापारिक सन्तुलन भारत के विपरीत रहेगा। अमरीका के साथ भारत का इस समय विपरीत व्यापारिक सन्तुलन है। स्टर्लिंग-प्रदेश से उसका इस समय जो अनुकूल व्यापारिक सन्तुलन है उसके अदृश्य होने का भय उपस्थित हो गया है। तट-कर को कम करके विश्वव्यापार बढ़ाने के लिए अन्ताराष्ट्रीय व्यापारिक कान्फरेंस होनेवाली है। फलतः भारत के उद्योगों को तीव्र अन्ताराष्ट्रीय प्रतियोगिता का सामना करना पड़ेगा।

स्टर्लिंग पावना बढ़ेगा नहीं

१४ दिसम्बर १९४५ को स्टर्लिंग पावना १६४३ कोटि रु० था। इससे मालूम होता है कि जापान के साथ लड़ाई समाप्त होने के बाद से १५४ कोटि रु० और बढ़ा है। यदि इस रीति से बढ़ता गया तो समझौते के समय स्टर्लिंग पावना २००० कोटि रु० होगा। इसी आधार पर इसका कुछ भाग बट्टे खाते में डाला जाएगा और कुछ भाग निधि (फण्ड) में परिणत हो जाएगा। इसलिए और अधिक स्टर्लिंग पावना का बढ़ना इष्ट नहीं है। ब्रेटनवुड करार को मानने का अर्थ है कि रुपया स्टर्लिंग के बीच विनिमय-दर १ शि० ६ पें० रहेगी। इसमें १० प्रतिशत स्वतः परिवर्तन किया जा सकता है और इसके आगे १० प्रतिशत अन्ताराष्ट्रीय मुद्रानिधि की स्वीकृति से किया जा सकेगा। यह भी भय है कि ब्रिटेन भारत से जो माल खरीदेगा वह निश्चित भाव किए गए मूल्य पर खरीदेगा पर भारत ब्रिटेन से जो माल खरीदेगा उसका मूल्य निश्चित न होगा। मुक्त विपक्ष कीमत के अनुसार भारत को उसका मूल्य देना होगा।

ब्रिटेन को ९३७० लाख पौंड कर्ज दिया गया है। अनुमान लगाया गया है कि अगले पाँच सालों में ब्रिटेन का प्रतिकूल व्यापारिक सन्तुलन कम-से-कम १२·५ कोटि पौं० या ५०० कोटि डालर का होगा। अतः ब्रिटेन संयुक्तराष्ट्र अमरीका से प्राप्त स्रोत में से भारत को कुछ न दे सकेगा। ब्रिटेन अधिक से अधिक हाल में सञ्चित स्वर्ण-स्रोतों में से हास्यास्पद रीति से अत्यन्त अल्प मात्रा में देकर पाँच साल तक चुप बैठ जाएगा, क्योंकि निधि-योजना के अनुसार १९५१ के बाद ही ब्रिटेन चुकाने को बाध्य है। ये पाँच साल भारत के लिए बहुत ही नाजुक हैं और इन्हीं वर्षों में उसको ब्रिटेन से कुछ न मिलेगा।

समझौते का आधार

स्टर्लिंग के परिवर्तित होने के योग्य होने के अनन्तर भारत का स्टर्लिंग पावना फँस जाएगा। अल्प मात्रा में ही खर्च किया जा सकेगा, जिस मात्रा में ब्रिटेन परिवर्तन करने योग्य स्टर्लिंग देगा। शेष स्टर्लिंग प्रदेश में भी बिक न सकेगा। स्टर्लिंग पावना के बारे में सन्धि-चर्चा का आधार भारत की तात्कालिक आवश्यकता होना चाहिए; भारत का भविष्य दूर की आवश्यकताओं के आधार पर न होना चाहिए। अगले पाँच सालों के अन्दर भारत किस मात्रा में पूँजी-माल व्यवहार में ला सकेगा, इस आधार पर ब्रिटेन से सन्धि-चर्चा चलानी चाहिए।

अन्ताराष्ट्रीय मुद्रा-समझौता

ब्रेटनवुड कान्फरेंस के समय भारतीय प्रतिनिधि-मण्डल ने स्टर्लिंग पावना का प्रश्न उठाया था और कहा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था कि अन्तराष्ट्रीय मुद्रा समझौता का एक भाग है। पर उस समय ब्रिटेन और संयुक्तराष्ट्र ने नहीं माना। मगर एंग्लो-अमरीकी आर्थिक करार में इस बात को मान लिया गया है। अब डालर और स्टर्लिंग मिलकर विश्व का आर्थिक भाग्य-निर्माण कर रहे हैं, क्योंकि उनका प्रभुत्व है। इसकी तुलना होर-लवाल पैक्ट से की जा सकती है, जिन्होंने अबीसीनिया इटली को देना तय कर लिया था। भारत जब ब्रिटेन का कर्जदार था, तब उस कर्ज को कम करने की बात किसी ने नहीं उठाई। अभी कांग्रेस ने केवल उसकी परीक्षा करने की बात कही थी, मगर ब्रिटेन ने, जिसने स्वतः संयुक्तराष्ट्र से लिए गए कर्ज का दर्शनी भुगतान किया था, और अब जो उधार व पट्टे में लिए गए ऋण को देने से जी चुरा रहा है, भारतीय विधान बनाते हुए इंडिया एक्ट १९३५ में संरक्षण लगाए थे जिससे ब्रिटेन का पाई-पाई कर्ज भारत से वसूल हो सके। आज भारत महाजन है। पर आज कर्जदार पर संरक्षण न लगाए जाकर महाजन पर संरक्षण लादे जा रहे हैं। भारत के निर्यात माल के लिए संयुक्तराष्ट्र का बाजार खोलने की कीमत के बदले भारत के स्टर्लिंग पावने को रद्द किया जा रहा है। इसके साथ नूतन विश्व-व्यापार चार्टर की बात की जा रही है। इससे भय है कि भारत की रही-सही आर्थिक स्वतन्त्रता और अधिक सीमित हो जायगी।

स्टर्लिंग पावना

आर्थिक क्षेत्र में भी राजनीतिक क्षेत्र के समान ब्रिटेन और अमरीका के बीच मैत्री हो गई है। दोनों की इस युक्ति के कारण स्टर्लिंग पावना पर ग्रहण लग गया है; क्योंकि ब्रिटेन के अर्थ-सचिव ने कहा है—"सम्बन्धित देशों से जिस विस्तृत आधार पर हम समझौता करना चाहते हैं, वह है विभिन्न परिस्थितियों के कारण इन सञ्चित रावनाओं में से हरेक का एक भाग चालू खर्च के बराबर तत्काल प्राप्य होगा और दूसरा भाग इसी प्रकार कुछ वर्षों की अवधि के अन्दर प्राप्य होगा। इन पावनाओं के मूल का और स्टर्लिंग प्रदेश के सामान्य हित का विचार करते हुए हम भावी अन्तराष्ट्रीय व्यापारिक लेन-देन के लिए वास्तविक आधार पर पहुँचकर हरेक देश से कुल स्टर्लिंग पावने की व्यवस्था के सम्बन्ध में स्वेच्छा से समझौता करेंगे।" क्या पिछले वाक्य से यह इङ्गित नहीं होता कि ब्रिटिश गवर्मेंट स्टर्लिंग पावने का एक भाग बट्टे खाते में डालने की भारत से प्रार्थना करेगा?

ब्रिटिश चांसलर आफ एक्सचेकर ने कहा है कि जमा स्टर्लिंग का "मित्रराष्ट्रों के खर्च का कुछ थोड़ा भाग नार्मल व्यावसायिक व्यय है और अधिकांश भाग प्रत्यक्ष सैनिक भुगतान है।" पर सचाई इससे भिन्न है। जहाँ तक भारत का सम्बन्ध है, हमारा स्टर्लिंग पावना विभिन्न रीतियों से बना है; जिसका कुछ भाग हमारा डालर और स्टर्लिंग पावना है, व्यापार द्वारा अर्जित हमारे वार्षिक डालर, वार्षिक पावने का भुगतान, स्टोर्स और भोजन सामग्री की प्रत्यक्ष खरीद, जो नागरिकों को भूखा रखकर खरीदा गया है—आदि से बना है।

ब्रिटेन पर भारत का १२०००००००० पौंड कर्ज है। इसके अतिरिक्त ब्रिटेन ने ३५०००००००० पौंड पूँजी का स्वामित्व भारतीय स्वामित्व को हस्तान्तरित किया है, जो कि युद्ध से पहले ब्रिटेन ने भारत में पूँजी लगा रक्खी थी। इसका अर्थ है कि सापेक्षिक स्थिति में १५०००००००० पौंड का परिवर्तन आया है। इस पावने के साधारणतः तीन भाग किए जा सकते हैं: १—साधारण व्यापारिक बचत, जो कि एक चौथाई है, २—सैनिक स्टोर्स और गोला-बारूद जो भारत में बनाया गया और जिसको ब्रिटिश या भारतीय फौज ने भारत के बाहर बरता और यह आधा होगा, और ३—शेष एक चौथाई वह है जो भारत के स्थानिक संरक्षण के सिवाय भारतीय सैनिकों और सेना ने ब्रिटेन की जो सेवा की है उसका व्यय है। ब्रिटेन के समान भारत ने भी धुरी राष्ट्रों के समान कुर्बानी की है। १९४५ की प्रारम्भिक गर्मियों तक ब्रिटेन का युद्ध जीतने पर १०३१००००० पौंड खर्च हुआ था और भारत का १७३००००० पौंड खर्च हुआ था। पर यह न भूलना चाहिए कि युद्ध से पूर्व भारत की राष्ट्रीय आमदनी प्रति आदमी ५ पौंड थी और औसतन् एक अँगरेज औसतन एक भारतीय से ३३ गुना अधिक धनी था। यदि ब्रिटेन संयुक्त राष्ट्र के मुकाबले कह सकता है कि उसने अपनी क्षमता और योग्यता के हिसाब से संयुक्त राष्ट्र से अधिक त्याग युद्ध-विजय के लिए किया है तो यह दावा भारत भी कर सकता है।

भारत ने ब्रिटेन को अधिक कीमत पर भी माल नहीं दिया। ब्रिटिश पार्लमेंटरी कमीटी ने इस सम्बन्ध में स्वीकार किया है:—"आपकी कमीटी को वे आँकड़े दिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गए हैं जिनसे भारत और ब्रिटेन की तुलनात्मक कीमतों का पता चलता है। ये आँकड़े, सूती वस्त्र, जनरल स्टोर्स से और गोला-बारूद समेत व्यापक मात्रा में स्टोर्स के दिए गए हैं। इन आँकड़ों से मालूम होता है कि भारतीय कीमतें कभी ही ऊँची थीं और कुछ स्टोर्स तो ब्रिटेन की कीमत से भी कम कीमत के हैं।" इससे स्पष्ट है कि सैनिक माल की खरीद से यदि किसी पार्टी को लाभ पहुँचा है, तो वह भारत नहीं इँग्लैंड है।

स्टर्लिंग पावने को कम करने के पक्ष में मि० चर्चिल का कहना है कि युद्ध का विजय करना दोनों का एक समान उत्तरदायित्व है, अतः अकेले ब्रिटेन को युद्ध-व्यय का भार न उठाना चाहिए। जहाँ तक भारतीय सीमा के युद्ध का सम्बन्ध है उसके खर्च की एक-एक पाई भारत ने दी है। साम्राज्य-रक्षा के भार का भी भाग भारत पर लादा गया है, यद्यपि यह भार ब्रिटेन को उठाना चाहिए था; क्योंकि ये लड़ाइयाँ ब्रिटेन ने अपनी विश्व-शक्ति की स्थिति को बनाये रखने के लिए लड़ी थीं। सर षणमुखम् चेट्टी का यह कथन सत्य है—"यह वस्तुतः वाहियात बात है कि एल-एलामीन में भारतीय सैनिक का वेतन देकर वस्तुतः ब्रिटेन भारत की रक्षा कर रहा था।"

बलि का बकरा

इस अवस्था में भारत स्टर्लिंग पावना का कम करना बर्दाश्त नहीं कर सकता। युद्धकाल में मित्रराष्ट्रों में से हरेक ने जीवन-निर्वाह के मानदण्ड को यदि ऊँचा नहीं किया है, तो उसको पूर्ववत् कायम रक्खा है; नये उद्योग स्थापित कर और पुराने उद्योग का विस्तार करके अपनी क्रय-शक्ति बढ़ाई है। पर भारत एकमात्र इसका अपवाद है, यह न भूलना चाहिए। भारत के नष्ट अर्थतन्त्र को सुधारने और आधुनिक औद्योगिक ढाँचे के निर्माण के लिए स्टर्लिंग पावने की कुल राशि सर्वथा अपर्याप्त होगी, यह स्मरण रखना चाहिए। भारत का यह दृष्टिकोण है। इस पर समझौते की गुञ्जाइश नहीं है। यदि फिर भी ब्रिटिश गवर्नमेंट समझौता करना चाहती है, तो उसको भारत में राष्ट्रीय गवर्नमेंट स्थापित होने देने की प्रतीक्षा करनी चाहिए।

वस्तुतः एंग्लो-अमरीकी आर्थिक पैक्ट पूर्वीय देशों के विवाह के समान है, जिसमें शक्तिशाली पार्टियाँ तरुण और कमजोर पीढ़ी का भाग्य निश्चित करती हैं। एंग्लो-अमरीकी पैक्ट विधान करता है कि ब्रिटेन अपना वर्तमान स्टर्लिंग पावना पर्याप्त मात्रा में कम कर दे। भारत को अपने आपको सौभाग्यशाली समझना चाहिए कि इस आर्थिक यज्ञ में बलिदान का बकरा बनाया गया है। ब्रिटेन के भूतपूर्व प्रधान मन्त्री ने शिकायत की है कि उधार व पट्टे के रूप में मिस्र और भारत से कुछ नहीं दिया गया है। मगर जो लोग लूट में लगे हुए हैं, उनको कौन उधार या पट्टे पर दे सकता है?

सूनापन

श्री तेजनारायण काक, एम० ए०

सूनापन मुझको खलता है।
कोई आए, इस आशा में, मेरा द्वार खुला रहता है।
प्रतिपल लगता कोई आता,
बिना मिले ही लौटा जाता,
मैं एकाकी ही रह जाता,
मेरे जीवन का सूनापन मुझको ही छलता रहता है।
प्रतिदिन उषा अकेली आती,
दोपहरी भी सूनी जाती,
सन्ध्या घनी उदासी लाती,
मेरे जीवन के पल-पल में सूनापन बढ़ता रहता है।
छाई रात तिमिर फैलाती,
बुझी पड़ी है जीवन-बाती,
सूनापन ही मेरा साथी,
एक अकेला तारा नभ में बुझ-बुझकर जलता रहता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अश्रु-हास

धारावाहिक सामाजिक उपन्यास

श्रीमती निर्मला मित्र

सातवाँ अध्याय

गिरधारी पिटकर भी 'मिस साब' की अवज्ञा न कर सका। वह जानता था कि मिस साहब की अवज्ञा का अर्थ होगा नौकरी से हाथ धोना। यद्यपि उसे वेतन आजकल नए साहब से ही मिल रहा है, फिर भी गिरधारी जानता है कि उसकी नौकरी की आधारभित्ति बड़े साहब—'मिस साब' के पिता – की कृपा पर ही आधारित है। बात यह है कि ये नए साहब बड़े साहब से डरते हैं। अतः यद्यपि इन छोटे साहब ने उस बँगले पर पत्र पहुँचाने से मना कर दिया है, फिर भी उसके पैर उस बँगले की ओर चल दिए—'मिस साब' की आज्ञा जो ठहरी!

बँगले के फाटक पर पहुँचकर गिरधारी ने देखा कि शहर के तरुण बैरिस्टर आनन्द राव टिपनिस का सोफर फाटक के बगल के बबूल के पेड़-तले खड़ा-खड़ा बीड़ी फूँक रहा है और उसकी कार भी पास ही खड़ी है।

गिरधारी को गेट के अन्दर घुसते देख वह हँसकर बोला—"क्या शादी का न्योता लेकर चले हो?"

गिरधारी ने हाथ का कागज हिलाया फिर बोला—"बड़े आदमियों का न्योता इन ओछे कागज के टुकड़ों पर नहीं होता, अब्दुल मियाँ, उसके लिए तो ऐसे कागज छपेंगे कि जिनकी छपाई के खर्च पर हमारा-तुम्हारा—सब सारी गिरस्ती के—साल भर पेट पालन हो जाता। यह तो एक आर्डर है—'मिस साब' के लिए।"

"अरे, तो भई जल्दी जाओ, नहीं तो मिस साब निकल आएँगी। आज बड़ी दूर का सफर है, हमारे साहब उन्हें साथ लाते ही होंगे।"

गिरधारी भागता हुआ बरसाती में जा पहुँचा और चिल्लाया—'मिस साब जी'।

आवाज सुनते ही मिस साहब का अर्दली मुकन्दराम दौड़ा आया और कागज लेकर अन्दर चला गया। उसके अन्दर पहुँचते ही बैरिस्टर टिपनिस ने, जो कि एक कुर्सी पर बैठे बातें कर रहे थे, उसके हाथ से कागज ले लिया और आश्चर्य से बोले—"क्या बात है, मिस राय, एकाएक उस साहब ने तुम्हें 'स्लिप' क्यों भेजा है?"

मिस राय, जो अब तक बैठी-बैठी मिट्टी के ढेले पर कुछ चित्रकारी बना रही थीं, अब तनिक मुँह उठाकर बोलीं—"खुला तो है ही, आप पढ़ लीजिए न।"

पत्र पढ़ते ही टिपनिस का गोरा मुँह गुस्से से तमतमा उठा। स्लिप को एक तरफ अवज्ञा से पटककर वे बोले—"बड़े आए कहीं के 'पोप', हुक्म भेजने चले हैं! खबरदार मिस राय, आप इस भिचभिचे से कभी न दबना, देखता हूँ वह क्या कर सकता है। बेटा इंडियन फेलो, डिग्री पा गए तो दिखाने लगे युरोपीयनों का-सा ठस्सा! देखा है आपने, फर्स्ट क्लास मजिस्ट्रेट होते हुए भी बेटा रहता है किस हालत से? न कार है, न टाँगा, न बग्गी। कोई स्वप्न में भी न कहेगा कि यह कोई विलायत पास आई० सी० एस्० है।"

मिस राय ने इस कटाक्ष का कुछ भी उत्तर नहीं दिया। वे धीरे से उठीं और चीनी मिट्टी के बरतन में मिट्टी से भरा हाथ धोया। फिर स्लिप को उठाकर पढ़ा और नौकर से पूछा—"उनका आदमी अभी तक खड़ा है क्या?" तटस्थ-मुद्रा से मुकन्द ने कहा—"हाँ, वह खड़ा तो जरूर ही होगा।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह सुनकर टिपनिस एकाएक ही जल उठे—"तो तुम उस आदमी से पत्रों का आदान-प्रदान करना चाहती हो, मिस राय ?"

'नहीं, पर मैं किसी प्रकार का झंझट बढ़ाना नहीं चाहती।"

"तुम्हारी यह सफाई बिलकुल वाहियात है, तुम इसे झगड़ा बढ़ाना क्यों समझती हो ? मैं दावे से कहता हूँ कि वह तुम्हारा कुछ भी न बिगाड़ सकेगा।"

"लेकिन मुझे यह भी खयाल रखना चाहिए कि सिविल लाइन्स में रात को मुँह से सीटी का बजाना भी अपराध में शामिल है।"

टिपनिस अब शब्द-शब्द पर पूरा जोर देते हुए कह उठे—"बेशक, यह सिविल लाइन्स है, मगर किसी इंडियन के लिए ऐसी पाबन्दी हम मान नहीं सकते।"

मिस राय का मुँह गम्भीर हो उठा। मिस्टर टिपनिस से बहस करना व्यर्थ समझकर वे सीधे मुकन्द से कह बैठीं—"उनके नौकर से कह दे मुकन्द कि आज से फिर कभी बाजा नहीं बजेगा।"

अब तो टिपनिस का सारा धैर्य जाता रहा। वे तड़ाक से कुर्सी छोड़कर उठ बैठे फिर परिपूर्ण क्रोध से मुख विकृत करते हुए बोले—"इसके मानी यह हैं कि तुमने उसका ही समर्थन कर दिया ?"

मिस राय अपने कमरे की तरफ बढ़ती हुई बोलीं—"क्या करूँ मिस्टर टिपनिस, मैं भी तो कानून के खिलाफ नहीं चल सकती हूँ न।" फिर पर्दे के अन्दर हो उन्होंने आहिस्ते से पर्दा डाल लिया।

मिस राय की इस प्रकार की उपेक्षा टिपनिस को अखर गई। कोई उपायान्तर न देख अब वे नेपथ्य की ओर ही बमक पड़े—"देखिए, मिसेस राय, आपकी यह पढ़ी-लिखी कन्या एक सामान्य अफसर की घुड़की से कैसी बिल्ली-सी दब रही है। अब आप देख लेना, इस बँगले में रहना भी वह हराम कर देगा, रोज एक-न-एक शिकायत लेकर उसका बैरा या बबर्ची पहुँचेगा और यह निरहङ्कार महिला उसके सारे नखरों को नतमस्तक हो झेलती जाएगी। मगर किसी मर्यादा-सम्पन्न मन के लिए तो यह रोब-दाब अधिक अपमान-जनक है।"

मिसेस राय रसोई में बैठी जलपान बनाती हुई इन दोनों की सारी बातें सुन चुकी थीं, और कन्या के आचरण से मन-ही मन क्रुद्ध भी हो चुकी थीं। अब क्रोध-प्रकाश करती हुई वे भी बोलीं—"सचमुच रुचि का यह बहुत बड़ा अन्याय है। तुम जब इतने बड़े कानूनदाँ होकर कहते हो कि इसमें कुछ नहीं हो सकता, तब उसे तुम्हारी ही बात माननी थी। खैर, मैं उसे समझा दूँगी कि आगे वह ऐसा कभी न करे। अब कुछ जलपान कर लो—अरे ओ मुकन्दी, कहाँ गया ? दालान में छोटा टेबल और कुर्सियाँ सजा दे।"

फुर्ती से मुकन्द ने दालान में मेज-कुर्सी लगा दी। मिसेस राय ने प्लेट लाकर टेबल पर सजा दिए। पर रुचिरा तब भी न आई। यह देख मिसेस राय चिढ़-सी पड़ीं, और मुकन्द को लक्ष्य कर बोलीं—"क्या हुआ रे मुकन्दी ? वह अभी तक निकली क्यों नहीं ? पूछ तो!"

मुकन्दी धीरे-धीरे बोला—"अम्माजी, वे तो पीछे के फाटक से घूमने निकल गई हैं।"

"ऐं ! पैदल ?"

"जी।"

मनोजा देवी को एकाएक ही जैसे काठ मार गया। ओहो ! टिपनिस के सामने प्लेट सजा है और रुचिरा घूमने चली गई ! बिना किसी से कुछ कहे-सुने। यह तो सरासर अपमान है। रुचिरा ऐसी मनहूसी कर सकती है, यह तो उन्हें स्वप्न में भी भान नहीं हुआ था। आत्म-धिक्कार और उससे भी अधिक लज्जा से मनोजा आँखें झुकाए केवल खड़ी ही रह गईं।

यद्यपि रुचिरा के आचरण से टिपनिस भी हृदय में ज्यादा तिलमिला उठा था, परन्तु मनोजा की स्थिति को हृदयङ्गम कर वे चुप रहे। मुकन्द कह पड़ा—"तो क्या उन्हें बुला लाऊँ, अम्मा ! वे ज्यादा दूर नहीं गई होंगी, यहीं नीचे नदी के रेत पर—"

कठिन मुख-मुद्रा से मनोजा भीषण स्वर में बोलीं—"बस-बस, रहने भी दे।"

कुर्सी छोड़कर टिपनिस उठ पड़े, फिर जैसे कुछ सान्त्वना देते हुए बोले—"मातेश्वरी, आप अपनी और अपनी लड़की को न समझिएगा। मैं ठीक जानता हूँ कि विदेश में गवर्नेस के हाथों की पली लड़की कभी भी जैसी आर्य-महिला नहीं बन सकती; चाहे आप हजार कोशिशें क्यों न करें।"

फिर जूतों की खट-खट आवाज करता हुआ वह जाकर कार पर बैठ गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संख्या ४]

मालिक जब कार से उतरकर अन्दर गए थे, तब उनके चेहरे पर कैसी प्रसन्नता थी और अब जब अन्दर से आकर फिर बैठे, तब सोफर अब्दुल को लगा, सिर्फ अब रोना बाकी है। अतः वह गाड़ी स्टार्ट करते हुए कनखियों से मालिक को देखकर धीरे-धीरे बोला—"गाड़ी क्या अम्बाझिरी रोड पर ले चलूँ ?"

"नहीं, जुम्मा तालाब।"

सोफर मन-ही-मन मुस्कराकर सोचने लगा—'आज तालाब में कहीं बाढ़ न आ जाए ?'

आठवाँ अध्याय

रुचि के इस प्रचण्ड हठीलेपन से क्षुब्ध होकर मनोजा देवी बरण्डे के खम्भे से पीठ लगाकर चुपचाप बैठ गई थीं। सन्ध्या अपना अँधेरा जाल फैलाकर चली गई थी। अब धीर-गम्भीर गति से रात भी उतर आई। पर उन्हें इसका अनुभव न हो सका। उनका मन उस समय सारे वर्तमान को बिसारकर अतीत और भविष्य के अनुसन्धान में लगा हुआ था। वे सोच रही थीं कि मेरी गोद से छुड़ाकर इस लड़की को मेरे स्वामी ने जो विदेश भेजकर पलवाया, सो क्या फिर एक बार मेरी छाती अच्छी तरह जलाने के लिए ही वे अपना प्रतीक तैयार कर गए! स्वाधीन देश की स्वाधीन हवा में पली लड़की यदि उनकी कोई बात मस्तक अवनत करके न सह सके तो इसमें दोष किसका है ?

सहसा उन्हें विलासपुर के दुःखमय जीवन की याद आ गई। बात-बात में योगेन्द्र का अमानुषी अत्याचार, जिसके काले-नीले कटे दाग आज भी उनके शरीर पर उभरे हुए हैं, अन्तिम दिनों में अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया था। 'क्या पड़ोसी के नाते दिलीप पर सौजन्य प्रकट करना मनोजा के लिए भूल थी ?' विशेषतः तब जब कि एक मातृहीन शिशु के लिए मनोजा अपना स्नेहातुर हृदय लेकर आगे बढ़ी ही थीं। तब योगेन्द्र का इतनी निर्दयता से पेश आना तो नितान्त अनुचित ही कहा जाएगा!

किन्तु तब योगेन्द्र को युक्ति-द्वारा यह समझाता कौन! किसका इतना साहस था कि मनोजा के उस हठीले स्वामी के सामने इस सम्बन्ध में जबान भी खोल सकता।

भारतीय नारी का जीवन ही स्वामी के पदतल में दासी बनकर पड़े रहने के लिए बना है। स्वामी के प्रभुत्व और अपने दासीत्व का प्रतिवाद वह वकील-बैरिस्टर लगाकर नहीं कर सकती। योगेन्द्र का चिर-वर्जन मनोजा को सिर झुकाकर ही अङ्गीकार करना पड़ा था। और चारा ही क्या था ?

लेकिन समय पलटा। जिस सात साल की लड़की को माँ से छुड़ाकर विदेश भेजना ही योगेन्द्र को उचित समझ पड़ा था, वही लड़की समझदार होने पर विदेश से ही विद्रोह कर बैठी। वह बार-बार पिता को लिख-लिखकर पूछने लगी—"मेरी मा कहाँ है ? मेरी मा कहाँ है ?"

योगेन्द्र कुछ दिन तो दबाता रहा, किन्तु जब लड़की की 'गवर्नेस' ने लिखा कि—"भारतीय छात्र टिपनिस की माता टिपनिस को जो पत्र भेजती है उन्हें देखकर आपकी लड़की बहुत विषण्ण रहती है, अतः आप उसकी माता का समाचार बराबर उसे देते रहें", तब योगेन्द्र को भी लिखना ही पड़ा कि—"तुम्हारी माँ अच्छी तरह हैं।"

इस एक पंक्ति ने रुचिरा को उत्साह से भर दिया और उस बार उसने अपने पिता को भेजे गए लिफाफे में मा को भी एक पत्र रख दिया।

इस पर योगेन्द्र ने उसे निरुत्साहित करते हुए लिखा, "माँ के लिए पत्र लिखना व्यर्थ है क्योंकि तुम जिस भाषा को जानती हो, तुम्हारी माँ उस भाषा से सम्पूर्णतः अनभिज्ञ हैं।"

आक्सफोर्ड के एक छात्रालय में बैठी रुचिरा उसी दिन से स्लेट-पेंसिल खरीदकर टिपनिस की सहायता से हिन्दी-वर्णमाला के अ-आ-क-ख सीखने लगी।

उसकी पढ़ाई जर्मनी से पी-एच० डी० कर लेने के बाद यद्यपि खत्म हो गई थी, फिर भी योगेन्द्र उसे शीघ्र भारत लौटने देना नहीं चाहता था। अतः उसने लिख दिया था कि "डिग्री प्राप्त करना ही विद्या की सार्थकता नहीं होती; ज्ञान सञ्चय करना अब तुम्हारा ध्येय होना चाहिए; अतएव तुम योरप भर में खूब भ्रमण करो; साल भर बाद जब टिपनिस भारत लौटेगा तब तुम भी उसी के साथ चली आना।"

रुचिरा टिपनिस के साथ के लिए रुक गई थी।

किन्तु पिता-पुत्री का मिलन शायद ईश्वर को अभिप्रेत नहीं था। एक रोज रुचिरा ने सुना कि घोड़े से गिरकर पिता दिवङ्गत हो गए हैं।

उस दिन सुदूर विदेश में इस अकेली लड़की को टिपनिस ने ही धैर्य बँधाया। उसने कहा कि—"आप जरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी विचलित न हों मिस राय, देश पहुँचकर मैं आपकी सारी साम्पत्तिक विपत्तियों को दूर कर दूँगा।"

किन्तु रुचिरा के मन में तब पिता के विपुल साम्पत्तिक हिसाब-किताब की जगह वही सौम्य और मृदुल माँ विराज रही थी। उसने आग्रह से पूछा—और मेरी माँ कहाँ मिलेगी?"

टिपनिस रुचिरा का मुँह ताकता खड़ा रह गया।

रुचिरा म्लान स्वर से बोली—"मुझे ठीक से स्मरण नहीं है, मिस्टर टिपनिस, पर बाबूजी ने उन्हें मायके भिजवा दिया था, यह कुछ-कुछ याद है।"

टिपनिस हँसकर बोला—"आप भी बड़ी भोली हैं, मिस राय, क्या मायके से कोई लौटकर नहीं आता? वे अवश्य आपको घर पर मिलेंगी।"

रुचिरा की आँखें डबडबा आईं। उसने कहा—"पर बाबूजी ने कभी उनके सम्बन्ध में मुझे साफ-साफ कुछ न लिखा। इसलिए मुझे शङ्का है कि वे दुनिया में जीवित भी हैं या नहीं।"

टिपनिस भी बहुत कुछ शङ्कातुर हो उठा। फिर भी रुचिरा को धैर्य देते हुए उसने कहा—"खैर, कोई चिन्ता नहीं। वहाँ पहुँचते ही हम लोग उनसे मिलने की चेष्टा करेंगे और तभी ज्ञात हो सकेगा कि वे जीवित हैं, या नहीं।"

इतना ही कहकर टिपनिस उस दिन रुक गया था। केवल एक आनन्दमय आभास उसके मुख-मण्डल पर झलक गया था।

भारत लौटकर टिपनिस ने अपना वादा पूरा किया। वह खेड़े गाँव पहुँचा जहाँ मनोजा का मायका था और जहाँ वह चिरकाल से पड़ी थी, और वहाँ से मनोजा को लाकर रुचिरा का सन्तोष-साधन किया।

मनोजा पहले ही से रुचिरा के पास आने से हिचकिचाती थीं। उनका संस्कार-बद्ध सनातन मन घृणा से संकुचित हो रहा था। पर उस समय भी टिपनिस ने उनका समाधान यह कहकर कर दिया था—"विलायत जाने से ही लोग क्रिस्तान नहीं बन जाते, माताजी। मुझे ही देख लीजिए। मेरी वेश-भूषा और भाषा में कोई क्रिस्तानीपन झलक रहा है क्या?"

टिपनिस उस दिन देशी धोती और कुरता ही पहने था। अतः मनोजा ने लज्जित होकर कह दिया था—"तुम तो बेटा हमारे यहाँ के लड़कों जैसे ही लग रहे हो।"

टिपनिस तब उत्साह से कह पड़ा था—"बस-बस, यही बात अपनी लड़की के सम्बन्ध में भी समझ लीजिए। वे गाउन नहीं पहनतीं; उन्होंने बाल नहीं कटवाए। उनके पिता उनके लिए साड़ियाँ यहीं से पार्सल कर देते थे।"

मनोजा मन-ही-मन बहुत कुछ आश्वस्त होकर टिपनिस के साथ रुचिरा के पास चली आई थीं। रहते-रहते उन्होंने दिल ही-दिल में यह भी समझ लिया था कि अपने समाज में इस लड़की के योग्य वर नहीं मिल सकता। अतः उचित यही होगा कि धनी-मानी बैरिस्टर टिपनिस के साथ ही उसका विवाह कर दिया जाए। उन्होंने यह भी देख लिया था कि टिपनिस का झुकाव भी रुचिरा की ओर है। तब निश्चय ही वह इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लेगा। इस प्रकार काफी ऊहापोह के पश्चात् रुचिरा के सम्बन्ध में जब उनका मन एक निष्कर्ष पर पहुँचा तभी यह मनहूस लड़की टिपनिस से मनमुटाव कर बैठी। इस विचार से मनोजा अत्यधिक क्षुब्ध हो उठीं।

इतने में ही उनके ध्यान को भङ्ग और दालान को आलोकित करता हुआ बिजली का बल्ब जल उठा। साथ ही रुचिरा का शब्द सुन पड़ा। वह कह रही थी—"तुम यहाँ गुड़मुड़ाकर कैसी बैठी हो, माँ?"

और क्या तुम्हारे भव्य आचरण से हर्षित होकर नाचती फिरूँ?" छुटते मुँह मनोजा ने जवाब दिया।

कुछ क्षण के लिए रुचिरा सकपकाई-सी खड़ी रही; फिर धीरे स्वर से बोली—"निस्सन्देह बाबूजी ने तुम पर बहुत अत्याचार किया था, पर मेरा आचरण कैसा?"

मनोजा पूर्ण रुखाई से बोलीं—"तुम्हारा व्यवहार उनसे बढ़कर मुझे अखर रहा है, यह तुम खुद ही समझ सकती हो।"

रुचिरा चुप खड़ी रही।

मनोजा बोलीं—"न कुछ कहा, न सुना; एकाएक तुम टिपनिस का अपमान कर बैठीं; मुँह का कौर परसा पड़ा रहा, भला यह भी कोई शिष्टता है?"

रुचिरा एक पटा खींचकर उस पर बैठती हुई बोली—"ओह, तब की बात; तो इसमें टिपनिस का अपमान कैसे हुआ?"

कुछ झिझककर मनोजा ने कहा—"अपमान कैसे नहीं हुआ! सरासर अपमान करती जा रही हो फिर भी कहती हो कि अपमान नहीं हुआ! तो क्या टिपनिस कैसे ही खीज पड़ा था?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रुचिरा एकाएक मुस्करा पड़ी। बोली—"पर मा यह भी तो सोचो कि जिस कानून के बल से इतना बड़ा ब्रिटिश राज्य चल रहा है, उसी राज्य की एक सामान्य प्रजा होकर मैं कानून के खिलाफ जिहाद करूँ ?"

माँ अब कुछ सकपका गईं। फिर भी बोलीं—"किन्तु उस टिपनिस-सरीखा कानूनदाँ कहता है कि उसके करे-धरे कुछ नहीं हो सकता, तब तू क्यों उसकी बात नहीं मानती ?"

रुचिरा क्षण भर चुप रही। फिर बोली—"यह ठीक है कि टिपनिस विलायत से कानूनदाँ बनकर आए हैं, परन्तु उधर भी क्या वह व्यक्ति केवल घोड़े की घास काटना सीखकर आया है ?"

रुचिरा के इस गहरे व्यंग्य से पहले तो मनोजा हत-प्रभ-सी हो गईं, फिर धीरे-धीरे अपने में जैसे बल सञ्चय कर बोलीं—"तेरी बात का मतलब क्या है रुचिरा ?"

"कुछ भी नहीं, पर मैं अपने पड़ोसी से बैर ठानना नहीं चाहती। इससे यदि कोई नाराज हो तो होता रहे।"

मनोजा को लगा, पति का वह कठिन रुख और प्रचण्ड हठीलापन रुचिरा के रूप में उसे फिर मिल गया है। इस बार का यह अभिमान कितना दुःखदायी होगा, इसकी कल्पना मात्र से उन्हें रोमाञ्च हो आया।

नवम अध्याय

दूसरी सन्ध्या को दिलीप अपने दालान में चहल-क़दमी करता हुआ सोच रहा था कि कल की दारुण घटना के कारण नलिनी निश्चय ही दो-चार दिन नहीं आएगी। न आए तो अच्छा ही है। कुछ दिन शान्ति से ही व्यतीत हो जाएँगे।

ठीक उसी समय गिरधारी माथे पर पट्टी बाँधे उसके सामने से निकला।

दिलीप पूछ बैठा—"क्या हुआ गिरधारी, माथे में पट्टी क्यों बँधी है ?"

यद्यपि नलिनी के पिता की सिफ़ारिश से ही गिरधारी को इस नए साहब के पास नौकरी मिली है और इसलिए उसे उस घराने का सदा कृतज्ञ रहना चाहिए। फिर भी कल पेपरवेट की चोट सिर पर भरं जोर लगने से आज उसका हृदय विद्रोह कर उठा। अतः उसने हिच-किचाहट के बिना ही कहा—"और क्या है, हुजूर, 'मिस साब' ने इनाम दिया है।"

"ओह" कहकर दिलीप चुप रह गया।

गिरधारी अपने आप ही कहता गया—"माना कि बेटी इकलौती है और पैसा काफी है, फिर भी तो बेटी को कुछ शऊर तो सिखाना था। देखिए न वे भी तो अपने पड़ोस में रहती हैं। खूब लिखी-पढ़ी हैं, लड़की कालेज की प्रिन्सिपल है। उनके यहाँ भी नौकर-चाकर, बैरा-बाबर्ची सब हैं। पर कभी हल्ला-गुल्ला, बहस-बकवास कुछ भी नहीं सुनाई पड़ता। और एक यह लड़की है जो जब-तब नौकरों को पीटती रहती है। सुना है, उसी दिन अपने साईस को पीटकर आई थी। गुस्सा कुछ बाकी रह गया होगा, वह हम अभागों पर उतार दिया।"

दिलीप बोला—"खैर, अब दर्द तो कम है न ?"

"अरे राम कहो ठाकुर जी, यह तो जैसे पक रहा है, हुजूर; दुपहर को गया था वहीं उन्होंने थोड़ा टिंक्चर लगा दिया है।"

"कहाँ ?"

"जहाँ कल मिस बाबा ने स्लिप लेकर भेजा था।"

दिलीप एकाएक चौंक पड़ा। फिर बोला—"अच्छा, तो कल तुम वहाँ वह स्लिप दे ही आए थे ?"

"क्या करता, मालिक, यह हत्यारा पेट जो न कराए वह थोड़ा। नहीं जाता तो नौकरी से अलग होना पड़ता।"

कुछ सोचकर दिलीप ने प्रश्न किया—"उन्होंने क्या जवाब दिया ?"

गिरधारी बोला—"वे तो सामने नहीं आईं, पर नौकर से कहला भेजा कि आज से कभी बाजा नहीं बजेगा।"

दिलीप बहुत देर तक न मालूम क्या सोचता रहा, फिर एकाएक पुकार बैठा—"गिरधारी।" गिरधारी दिलीप को अनमना देख आड़ में सरक गया था। अब "जी हुजूर" कर सामने आ गया।

दिलीप गम्भीर मुद्रा से बोला—"महीना पूरा होने पर तुम्हारा वेतन मैं दूँगा या वे बड़े साहब देंगे ?"

गिरधारी काँप उठा और धीरे-धीरे बोला—"आप ही देंगे, मालिक।"

"तब मेरे मना करने पर भी तुम उस बँगले में क्यों गए ?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब तो गिरधारी की हिलकी भर आई। पैर छूकर, गिड़-गिड़ाकर, हजारों मनौती-मिन्नतें करता हुआ कहने लगा—"हजूर को गरीबों की दशा सब मालूम है। पेट के लिए मजदूरों को जो नहीं करने की होती है वह भी करनी पड़ती है। अगर आपका हुक्म मानकर मैं न जाता तो क्या 'मिस साब' के गुस्से से मेरे बाल-बच्चों का पेट बच सकता था?"

पर इधर दिलीप का क्रोध पूरे वेग पर था। इस समय गरीब और उसके बाल-बच्चों के पेट की मीमांसा करना उसे अभीष्ट न था। अतः गिरधारी के उत्तर से तिलमिलाकर वे बोले—"अच्छा, तो आज से तुम उसी 'मिस साब' की अरदली में चले जाओ। मेरी हुक्म अदूली करनेवाले नौकरों से मैं कोई सरोकार नहीं रख सकता।"

"मगर तनिक यह भी तो सोचिए, हुजूर कि इसमें मेरे बाल-बच्चों की परवरिश का सवाल था!"

दिलीप दृढ़ स्वर से बोला—"पर तुम्हारे पेट की पूर्ति तो मैं करता था न?"

गिरधारी आँसू पोंछकर विनम्र स्वर से बोला—"लेकिन आप भी तो उन्हीं के दामाद हैं, हुजूर।"

दिलीप का जी धक् से बैठ गया। ओफ, शिक्षित व अशिक्षित जन-समुदायों के मन में जब यह बात जमकर बैठ गई है, तब भावी 'मेम साब' के हुक्म को साहब के हुक्म से बढ़कर मानना एक मूर्ख बैरा के लिए तो स्वाभाविक ही है! दिलीप इस छोटे-से संग्राम में निहायत अनहोनी हार खाकर निर्वाक् हो गया।

बहुत देर तक चुप खड़े रहने के बाद गिरधारी ने ही जैसे सहिष्णुता की सीमा तोड़ते हुए कहा—"गुनाह माफ हो, हुजूर।"

"ओह, ठहरो,"—फिर 'पर्स' खोलकर उसके हाथ में रुपए थमाता हुआ बोला—'प्रतिमास आकर वेतन ले जाया करो, पर मेरे यहाँ रहने की जरूरत नहीं।" फिर उसने जोर से पुकारा—"रहमत।" और रहमत जब तक आया, तब तक उसने पैड से कागज फाड़कर लिखा—"आपकी सङ्गीत-चर्चा पर हुकूमत का आघात देकर मैंने बर्बरता की पराकाष्ठा कर दी है। फिर भी मैं यह आशा रखता हूँ कि आप उदारतापूर्वक मुझे माफ कर देंगी।"

फिर गिरधारी के सामने ही मानो नलिनी को चैलेंज देता हुआ कह उठा—"रहमत, यह स्लिप इसी वक्त उस बँगले में पहुँचा दो।"

दसवाँ अध्याय

जब विषण्ण और म्लानमन गिरधारी ने राय बहादुर के सामने पहुँचकर अपनी नौकरी जाने का पूरा-पूरा हाल कह सुनाया तब राय बहादुर की पत्नी हद से ज्यादा चिढ़ पड़ीं। राय बहादुर को लक्ष्य कर वे व्यंग्य से बोलीं—"लो अब देख लो उस भिखमंगे का मिजाज, अरे मैं तो तीन साल पहले ही समझ चुकी थी कि जिसे देखा नहीं, परखा नहीं, उसके पीछे पैसा फेंकना मूर्खता नहीं, तो क्या है? अब यह सोचो कि अपने उतने पैसे उस कँगले से अब कैसे वसूल होंगे? उसके पास कुछ निजी सम्पत्ति भी तो नहीं है। घर के नाम से वही बालाघाटवाली टूटी टपरिया भर है, जिसका किराया कभी दस रुपए से अधिक न मिलेगा।"

दिलीप की दिनोंदिन बढ़ती बेरुखाई को देख राय बहादुर भी यद्यपि कुछ अचकचाने-से लगे थे, परन्तु पैसा ऐसी चीज होती है जिसके ब्याज की वसूली में ब्यौहार बड़े-से-बड़ा बलिदान भी कर बैठता है। अतः पत्नी के सुझाव का हृदय से अनुमोदन करते हुए भी वे प्रकट रूप में बोले—"आखिर तुम कहना क्या चाहती हो, मैं तो कुछ भी न समझ सका।"

श्रीमती का स्वर अब बहुत ऊँचा उठा; बोलीं—"मिस्टर, अब यह बनना तो तुम छोड़ दो, और साफ सुन लो कि अब बेबी के लिए दूसरा इन्तजाम करना होगा।"

श्रीमती की बात इतनी साफ थी कि दूसरी बार कुछ पूछने की जरूरत नहीं थी। किन्तु बनते को और बनने का नशा भी चढ़ जाता है। राय बहादुर जैसे कुछ भी न समझकर बोले—"अर्थात्?"

"अर्थात् मैं उस असभ्य को कभी अपनी 'अपटुडेट' लड़की नहीं दे सकती।"

(क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

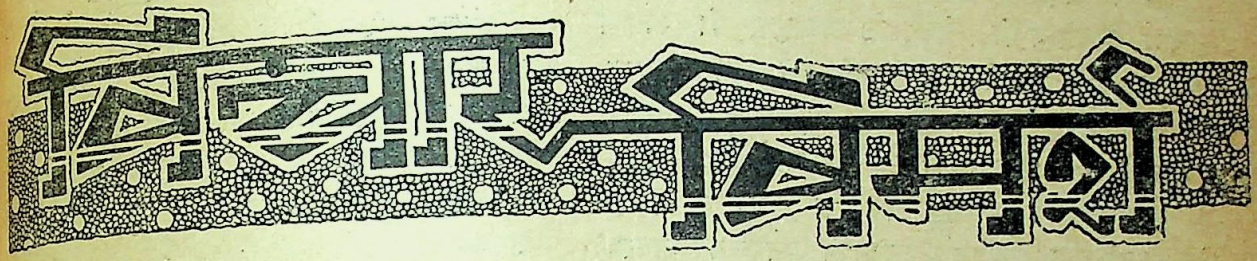

उभयालङ्कार

श्री चन्द्रकान्त बाली

अलङ्कार-साहित्य भारती-भण्डार के एक बड़े भाग को घेरे हुए है। नए और पुराने लेखकों ने इस दिशा में अभिनन्दनीय प्रयत्न किए हैं। इतना होने पर भी इस ओर 'प्रगति' नामक वस्तु का समागम नहीं हुआ। कारण चाहे कोई बताकर सन्तोष-लाभ किया जा सकता है, पर वस्तुस्थिति आलोचना के भयङ्कर अभाव की ओर ही सङ्केत करती है। आज कविता, नाटक, उपन्यास, गल्प तथा विविध विषयों की प्रगतिशीलता का श्रेय केवल मात्र आलोचना को ही प्राप्त है। आलोचना से दूर-दूर रहकर अलङ्कार-साहित्य विकसित हुआ है, अतः उसमें प्रगति नहीं आ सकी। उदाहरण रूप हम उभयालङ्कारों को उपस्थित कर सकते हैं। उभयालङ्कार की मौलिक भूल, जो कभी संस्कृत-साहित्य में उभरी थी, वह रीतिकाल में भी यथापूर्व रही और आज भी यथापूर्व है।

अलङ्कारों का परीक्षण करते हुए आचार्यों ने एक सिद्धान्त-सूत्र स्थिर किया है। अलङ्कार दो प्रकार के हैं—शब्द-सम्बन्धी अलङ्कार, शब्दालङ्कार; अर्थ-सम्बन्धी अलङ्कार, अर्थालङ्कार। इनकी एक-पक्षीय निर्णय-प्राप्ति के लिए एक कसौटी भी बनाई गई है। किसी पद्य में किसी शब्द के हटाने तथा उसके स्थान पर तदीय पर्याय-वाचक रखने से चमत्कार अखण्डित रहे तो अर्थालङ्कार; अन्यथा चमत्कार-नाश से शब्दालङ्कार होते हैं। शब्द-विपर्यय में चमत्कार की एक-सूत्रता अर्थावलम्बित है, अतः उसकी क्षति का होना असम्भव है। अर्थ-साम्य में चमत्कार-क्षति शब्द-विपर्यय से उभर आती है, अतः उस चमत्कार का आधार शब्द ही मान्य होता है। यही कसौटी है अथवा परीक्षण का सिद्धान्त-सूत्र है।

यह सिद्धान्त-सूत्र मनो-विनोदक वस्तु से ज्यादा कीमती नहीं; यदि मैं ऐसा कहने का साहस करता हूँ तो आचार्य-वर्ग 'छोटे मुँह, बड़ी बात' की आशङ्का करने लगेगा। पर वास्तव में इसे उभयालङ्कारों पर घटित करने से इसका प्रभाव स्वयमेव नष्ट हो जाता है।

उभयालङ्कारों की गड़बड़ कब से शुरू होती है, इसका निर्णय फिर कभी किया जाएगा। पर आचार्य-वर्य्य मम्मट जैसे अलङ्कार-विज्ञों ने महती भूल करके परम्परागत मिथ्या परिपाटी का परिपालन किया है, यह कम खेद की बात नहीं है। अलङ्कारों की इतिश्री करते हुए उन्होंने लिखा है—

स्फुटमेकत्र विषये शब्दार्थालंकृति-द्वयम्।
व्यवस्थितञ्च:.....
—काव्य-प्रकाश

अलंकृति-द्वयं से उन्होंने मामला गुड़-गोबर-गड़प्प कर दिया है। आगे चलकर वृत्ति में पुनः उसे दुहराते हैं—"स्फुटतया यदुभावपि" दोनों की सत्ता अलग और स्फुट मानी है। और इसे उदाहरण-द्वारा पुष्ट भी किया है। यथा—

स्पष्टोल्लत्किरण-केसरसूर्य्यबिम्ब-
विस्तीर्णकर्णिकमथो दिवसारविन्दम्।
—काव्य-प्रकाश

यहाँ 'किरण-केसर' में छेकानुप्रास और रूपक माना है। मैं श्री मम्मटजी से पूछता हूँ कि यहाँ उभयालङ्कार का कौनसा परमाणु मौजूद है। जब 'किरण-केसर' में अनुप्रास मानते हैं तो अर्थगौणता को मानना पड़ेगा। शब्द में अर्थ का क्या प्रयोजन? 'किरण-केसर'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की उपमानोपमेयता अर्थ-निर्भर है, न कि शब्द-निर्भर। दोनों की आधार-निर्भरता अलग-अलग है तो उभयालङ्कार कैसा? उभयत्व कैसा?

अगर थोड़ा-सा धन्यवाद दिया जा सकता है तो आचार्य विश्वनाथ को, जिसने उभयालङ्कार को स्वतन्त्र माना है। पर परम्परागत-परिपाटी -परिपालन के अमर-मोह में आचार्य विश्वनाथ ने भी "पुनरुक्तवदाभास" से अधिक उठने की चेष्टा नहीं की। आचार्य लिखते हैं—

शब्दार्थयोः प्रथमं शब्दस्य बुद्धिविषयत्वात्, शब्दालंकारेषु वक्तव्येषु शब्दार्थालंकारस्यापि 'पुनरुक्तवदाभासस्य' चिरन्तनैः शब्दालंकारमध्ये लक्षितत्वात् प्रथमं तमेवाह।

—साहित्यदर्पण

आचार्य डाँवाडोल हैं। चिरन्तनों ने उसे शब्दालङ्कार में गिना है। वे चिरन्तन कौन हैं? यदि यह भी स्पष्ट कर दिया जाता तो अच्छा होता। पर आचार्य ने उन्हें आलोचना से बचाकर स्वयं आलोचना का शिकार बनना स्वीकार किया है। दबी आवाज में पुनरुक्तवदाभास की 'शब्दार्थालङ्कारस्य' दूसरे शब्दों में 'उभयालङ्कारस्यापि' उभयालङ्कारता स्वीकार की है। आचार्य ने 'अपि' शब्द से अपने मनो-मन्दिर में गूँजनेवाली सत्य-प्रतिध्वनि को व्यक्त अवश्य किया है, पर चिरन्तनों के प्रति विद्रोह करने में अपनी कर्म-पङ्गुता को छिपाने की चेष्टा भी नहीं की।

पुनरुक्तवदाभास का लक्षण लिखकर—

आपाततो यदर्थस्य पौनरुक्त्येन भासनम्।
पुनरुक्तवदाभासः स भिन्नाकारशब्दगः॥

—साहित्यदर्पण

एक अलङ्कार की उभयाधार-निर्भरता को वृत्ति में जाकर खुलमखुल्ला स्वीकार किया है—

इति शब्दपरिवृत्तिसहत्वाऽसहत्वाभ्यामस्योभयालंकारत्वम्।

—साहित्यदर्पण

शब्दालङ्कारों में एक निर्भरता है—शब्द की। अर्थालङ्कारों में एक निर्भरता है—अर्थ की। उभयालङ्कारों में उभयनिर्भरता का सिद्धान्त किसने स्वीकार किया है?

अब जरा हिन्दी के आचार्यों की द्वार-देहरी चूम लें।

मेरी दृष्टि में हिन्दी-अलङ्कार के मर्मज्ञ विद्वानों में सेठ अर्जुनदास केडिया का पहला स्थान है। वे उभयालङ्कारों की व्याख्या में लिखते हैं—

कभी-कभी काव्य में एक ही स्थल में एक से अधिक अलङ्कारों का मिश्रण या संयोग देखने में आता है। उसे 'उभयालङ्कार' कहते हैं।

—भारती-भूषण

श्रीयुत केडियाजी ने नाम दिया है 'उभयालङ्कार' का, लक्षण में 'एक से अधिक अलङ्कारों का मिश्रण या संयोग' मानते हुए सेठजी वास्तविकता से इतने बुरी तरह गिरे हैं कि सँभल नहीं सके। इसका ज्ञान पाठक को शब्दालङ्कार संसृष्टि के उदाहरण में जाकर होता है। यथा—

चलिय चखनि पथ पूत करि हरैं हरैं धरि पाय।
चाहे मतकी चल, चलत, जहँ-तहँ जीव निकाय।

—भारती-भूषण

इसमें 'च' और 'प' का छेकानुप्रास है। हरैं-हरैं में वीप्सा और चल चलत से लाटानुप्रास है। मैं श्रीयुत केडिया जी से पूछता हूँ छेकानुप्रास, वीप्सा और लाटानुप्रास आपके मतानुसार शब्दालङ्कार हैं। इनमें अर्थालङ्कारों की महापंक्ति में से एक अदना-सा नमूना आप नहीं दिखा रहे हैं तो आप किस बल-बूते पर 'उभय' का नाम ले सकते हैं।

आचार्यवर्य ला० भगवानदीन जी दीन भी इसी पक्ष में खड़े हैं—

भूषन इक तैं अधिक जहँ, सेा उभयालङ्कार

—अलङ्कारमञ्जूषा

उदाहरण में आप भूषण कवि को उपस्थित करते हैं—

तुरमती तहखाने गीदर गुसुलखाने
सूकर सिलहखाने कूकत करीस हैं।
हिरन हरमखाने स्याही हैं सुतुरखाने
पाढ़े पीलखाने औ करंजखाने कीस हैं।
भूषण सिवाजी गाजी खग्ग सेा खपाए खल
खाने खाने खलन के खेरे भए खीस हैं।
खड़गी खजाने खरगोस खिलवतखाने
खीसैं खोले खसखाने खाँसत खबीस हैं।

—अलङ्कार-मञ्जूषा

श्रीयुत दीनजी ने यहाँ छेकानुप्रास, लाटानुप्रास और वृत्त्यनुप्रास सब पृथक्-पृथक् देखे हैं। मैं अब तक नहीं समझा, केवल वर्ण वृत्ति अलङ्कारों की पृथक् सत्ता है अर्थालङ्कारों का अभाव किस व्यञ्जना-द्वारा भरकर "उभय"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेषण सार्थक किया जाएगा। क्या छेकानुप्रास तथा वृत्त्यनुप्रास के लक्षण में कहीं अर्थ की सत्ता है? अगर है तो उनकी शब्दालङ्कारता कैसी? आप उभयालङ्कार के भेद इस प्रकार करते हैं—

१ शब्द+शब्द
२ अर्थ+अर्थ
३ शब्द+अर्थ

पहले दो भेदों में उभयता कैसे सिद्ध की जा सकती है?

प्रोफेसर श्रीयुत रामबहोरी शुक्ल, एम० ए०, साहित्यरत्न ने भी 'काव्यप्रदीप' में इसी प्रचलित परिपाटी का पालन किया है। उनकी शब्दालङ्कार-संसृष्टि और अर्थालङ्कार-संसृष्टि अपनी उभयपक्षता का खण्डन स्वयं कर रही हैं।

व्याकरणाचार्य पं० श्रीधरानन्दजी ने यद्यपि सङ्कर और संसृष्टि के सम्बन्ध में आए अलङ्कारों को उभयालङ्कार न कहकर—सम्मिलित अलङ्कार मानकर—तथ्यसिद्धान्त का उद्घोष किया है, पर उभयालङ्कार के प्रकाशन में वे भी पक्षपात से बच नहीं पाए हैं।

इस प्रकार नाना अलङ्कार-ग्रन्थों में उभयालङ्कार-सम्बन्धी भ्रम कई पीढ़ियों से अखण्ड धारा में चला आ रहा है। इसका कारण वही सिद्धान्त-सूत्र अर्थात् शब्द-विपर्यय की कसौटी में ठीक न घटित होनेवाले उभयालङ्कारों को केवल शब्दालङ्कार मान लेने पर यह दुरवस्था स्वयं उभर आई है।

वास्तव में उभयालङ्कार कुछ तो शब्दालङ्कारों में घुस गए हैं, कुछ अर्थालङ्कारों में। आलोचना-द्वारा अलङ्कार-द्वयी का मन्थन करके उभयालङ्कार नवनीत को अलग कर दिखाना है।

जो चमत्कार अर्थाभाव में केवल वर्ण-निर्भर हों, वे शब्दालङ्कार कोटि में मान्य हैं। यथा—छेकानुप्रास, वृत्त्यनुप्रास, श्रुत्यनुप्रास तथा लाटानुप्रास।

जो चमत्कार शब्द-सापेक्ष न रहकर केवल मात्र अर्थानुगामी हैं, उन्हें अर्थालङ्कार मानना चाहिए। यथा—उपमा, अर्थान्तरन्यास, काव्यलिङ्ग, आदि।

उभयालङ्कारों के लक्षण और भेद नए सिरे से करने चाहिएँ। अर्थात् जो चमत्कार शब्द और अर्थ दोनों पर समान रूप से निर्भर करते हैं, जिनके प्रकाशन में दोनों की सत्ता तुल्यबल से अनिवार्य ग्राह्य हो, वे चमत्कार उभयालङ्कार माने जाने चाहिएँ। यथा—यमक, पुनरुक्तवदाभास, श्लेष, काकु-वक्रोक्ति, वीप्सा, आवृत्ति-दीपक और निरुक्ति।

इन अलङ्कारों के लक्षणों में शब्द और अर्थ की समान सत्ता सर्वत्र स्वीकृत है। यथा यमक का ही लक्षण लीजिए—

वहै सब्द फिरि फिरि परै अर्थ औरई और।

—ला० भगवानदीन

जहाँ किसी शब्द व वाक्य की आवृत्ति हो और अर्थ भिन्न-भिन्न हों वहाँ यमकालङ्कार होता है।

—से० अर्जुनदास केडिया

अर्थे सत्यर्थभिन्नानां वर्णानां सा पुनः श्रुतिः।
यमकम्.....

—मम्मट

जिसमें शब्दों या शब्दांशों की आवृत्ति एक से अधिक बार होती है, लेकिन उनके अर्थ सर्वत्र भिन्न होते हैं उसे यमक अलङ्कार कहते हैं।

—श्री रामबहोरी शुक्ल, एम० ए०, साहित्यरत्न

जब.....शब्दों की आवृत्ति हुई हो तथा आवृत्त भाग या तो निरर्थक हों, यदि सार्थक हों तो भिन्न-भिन्न अर्थ वाले हों तब यमक अलङ्कार होता है।

—श्रीधरानन्द व्याकरणाचार्य

यहाँ केवल यमक के विभिन्न विद्वानों द्वारा निर्णीत लक्षणों से स्पष्ट है कि यमक में केवल शब्द ग्रहण मात्र से काम न चलेगा और न ही अर्थ ग्रहण से। दोनों सापेक्ष हैं। दोनों की सत्ता अनिवार्य एवं एक बिन्दुस्थ है। तब इसे केवल शब्दालङ्कार मानने का दुराग्रह क्यों?

पुनरुक्तवदाभास को साहित्य-दर्पण में उभयालङ्कार माना है। शेष आचार्यों ने भी उक्त अलङ्कार में शब्दार्थ-निर्भरता मानकर, जाने क्यों उसे शब्दालङ्कार माना है।

श्लेष, आवृत्तिदीपक और निरुक्ति के लक्षणों में, किसी अलङ्कार ग्रंथ को उठा कर देखिए, एकाङ्गी लक्षण अथवा एक-पक्षता, अथवा एक-निर्भरता न मिलेगी।

मेरे विचार में आचार्यों को इस दिशा में विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

——

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो-दो बातें

श्री टी० सीताराम शास्त्री

'देवनागरी' अक्षरों में एक छोटी-मोटी चिट्ठी भी लिखना लोग भूल चले थे। उर्दू का जोर बहुत बढ़ चला था। अचानक समय ने पलटा खाया। कुछ फारसी-अँगरेजी पढ़े हुए हिन्दू सज्जनों के हृदय में यह विचार उत्पन्न हुआ कि फारसी अक्षरों का चाहे कितना ही प्रचार हो जाए, सर्वसाधारण में फैलने के योग्य देवनागरी अक्षर ही हैं। स्वर्गीय राजा शिवप्रसाद की चेष्टा से काशी से 'बनारस अखबार' निकला। उसकी भाषा उर्दू तथा अक्षर देवनागरी थे। राजा शिवप्रसाद-द्वारा देवनागरी अक्षरों का बहुत कुछ प्रचार हुआ। पीछे काशीवालों ने भाषा के सुधार की ओर भी ध्यान दिया और 'सुधाकर' पत्र निकला। पर वह चेष्टा भी विफल हुई। अन्त में आगरा निवासी स्वर्गीय राजा लक्ष्मणसिंह ने 'शकुन्तला' का हिन्दी में अनुवाद किया। राजा साहब अपने 'रघुवंश' के हिन्दी-अनुवाद की भूमिका में लिखते हैं—

"हमारे मत में हिन्दी और उर्दू दो बोली न्यारी-न्यारी हैं। हिन्दी इस देश के हिन्दू बोलते हैं और उर्दू यहाँ के मुसलमानों और पारसी पढ़े हुए हिन्दुओं की बोल-चाल है, हिन्दी में संस्कृत के पद बहुत आते हैं उर्दू में अरबी-पारसी के, परन्तु कुछ आवश्यक नहीं है कि अरबी-फारसी के, शब्दों के बिना हिन्दी न बोली जाय और न हम उस भाषा को हिन्दी कहते हैं जिसमें अरबी-फारसी के शब्द भरे हों। इस उल्था में यह एक नियम रक्खा गया है कि कोई शब्द अरबी-फारसी का न आए।"

राजा साहब उर्दू-फारसी भली भाँति जानते थे तिस पर भी हिन्दी और उर्दू को केवल इसलिए दो न्यारी-न्यारी बोली बताते थे कि एक में संस्कृत के पद अधिक होते हैं और दूसरी में अरबी-फारसी के। यह भी विदित होता है कि उर्दू से उस समय कुछ शिक्षित हिन्दू घबराने लगे थे और समझने लगे थे कि अरबी-फारसी के शब्दों के बहुत मिल जाने से हिन्दी हिन्दी नहीं रह गई, कुछ और ही हो गई। हिन्दुओं के काम में वह नहीं आ सकती। ऐसे समय में गिरती हुई हिन्दी को उठाने के लिए भारतेन्दुजी का जन्म हुआ। भारतेन्दु ने हिन्दी के लिए क्या नहीं किया। उन्होंने हिन्दी में अच्छे-अच्छे पत्र निकाले और उत्तम-उत्तम लेखों, नाटकों, पुस्तकों आदि से इसको प्राणदान देकर इसका गौरव बढ़ाना आरम्भ किया और अल्प समय में ही युगान्तर उपस्थित कर दिया। जिस हिन्दी की ओर लोग आँख उठाकर भी न देखते थे वही सबकी आँखों का तारा हो चली। स्व० पण्डित प्रतापनारायण मिश्र के शब्दों में उनका उद्देश्य था—

निज भाषा निज धर्म निज, गौरव की सब कोय।
दिन दूनी बढ़ती करै, जनम सुफल तब होय॥

पर आज? हमारा उद्देश्य मानों—

निज भाषा निज धर्म निज, गौरव को सब खोय।
दिन दूनी घटती करैं, जनम सुफल तब होय॥

हो गया है। सबका नहीं तो कुछ का तो अवश्य है। 'आँख होते हुए भी सूझता नहीं, कान होते हुए भी सुनते नहीं, हाथ होते हुए भी बेहाथ हैं और पाँव होते हुए भी बेपाँव। समझ चल बसी, विचारों का दिवाला निकल गया, आस पर ओस पड़ गई। सूझ को पाला मार गया मगर कान पर जूँ तक नहीं रेंगती। मूल उद्देश यदि कुछ है तो बस यही कि 'घटं भित्वा पटं छित्वा देह केनापि प्रकारेण प्रसिद्ध पुरुषो भव।' अर्थात् चाहे घर के घड़े फोड़ने पड़ें, कपड़े फाड़ने पड़ें, लेकिन जैसे भी करें प्रसिद्धि प्राप्त करें।

मृत भाषा समुझैं संस्कृत कहँ,
वेदन गनैं असभ्य कलाम।
फिर का जानैं किमि मानैं हम,
विधि निषेध कलि कुत्सित काम॥
निजता निज भाषा निज धर्महिं
देत तिलौदक आठौं जाम॥

यही बात हिन्दी के सम्बन्ध में भी है :—

मृत भाषा समुझैं हिन्दी कहँ,
ग्रन्थन गनैं असभ्य कलाम।
फिर का जानैं किमि मानैं हम,
विधि निषेध कलि कुत्सित काम॥
निजता निज भाषा निज धर्महिं,
देत तिलौदक आठौ जाम।

× × ×

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संख्या ४]

छोड़ि नागरी सगुन आगरी, उर्दू के रँग राते।
देसी वस्तु बिहाइ विदेसिन, सेा सर्वस्व ठगाते॥
मूरख हिन्दू कस न लहैं दुख जिनकर ढंग यह दीठा।
घर की खाँड़ खुरखुरी लागै, चोरी का गुड़ मीठा॥

सचमुच घर की खाँड़ खुरखुरी लग रही है और चोरी का गुड़ मीठा लग रहा है; टट्टी की ओट में शिकार खेल रहे हैं। घर में चाहे अँधेरा रहे पर मस्जिद में दिया अवश्य जलाना चाहते हैं और जला रहे हैं। हिन्दुस्तानी की आड़ में उर्दू का प्रचार करना चाहते हैं। जिस उर्दू से हम घबराते थे उसी को आश्रय देना चाहते हैं। अपनी ही आँख में अँगुली कर रहे हैं; अपने ही पैरों कुल्हाड़ी मार रहे हैं; रत्नों का मूल्य कौड़ियों से आँक रहे हैं।

हिन्दुस्तानी के उन्नायकों में महात्मा गांधी का नाम लिया जा सकता है। इनके विचार से भारत की राष्ट्र-भाषा उर्दू या हिन्दुस्तानी होनी चाहिए। स्वर्गीय सैयद अमीर अली और गणेशशङ्कर विद्यार्थी की सम्मति में हिन्दी और उर्दू दोनों भाषाएँ एक हैं। डा० ताराचन्द तो हिन्दी का अस्तित्व ही नहीं स्वीकार करते। हिन्दी के प्राचीन समर्थक पण्डित सुन्दरलाल आजकल मुस्लिम साहित्य और संस्कृति के प्रचार-प्रसार में ही अपना पाण्डित्य सार्थक समझते हैं। आजकल वे नागरी लिपि के बदले रोमन को राष्ट्रलिपि मान लेने के पक्ष में हो गए हैं। अतएव ऐसा भासित हो रहा है कि हिन्दुत्व की हत्या हिन्दुओं के ही हाथों होगी। आर्य भाषा, साहित्य एवं संस्कृति पर हिन्दू जितना घातक प्रहार करते हैं उतना दूसरे नहीं करते। हिन्दू परभाषा, परसंस्कृति एवं पराए साहित्य के गीत गाने में अपना गौरव समझते हैं। सर तेजबहादुर सप्रू-जैसे प्रतिष्ठित हिन्दू हिन्दी के बदले उर्दू को राष्ट्रभाषा मानते हैं। इस प्रकार हिन्दू नेताओं से लेकर साधारण तक में हिन्दी के शत्रु पाए जाते हैं। हिन्दी के भक्तों को राष्ट्रभाषा की रक्षा के लिए सावधान हो जाने की आवश्यकता है। महात्मा गांधी हिन्दी और उर्दू दोनों को हिन्दुस्तानी भाषा कह सकते हैं पर यह समझ में नहीं आता कि कैसे, हिन्दी उर्दू और हिन्दुस्तानी एक ही भाषा है। हिन्दी संस्कृत का अपभ्रंश है और उर्दू यहाँ के मुसलमानों की भाषा और अरबी-फारसी का रूपान्तर है। स्वर्गीय राजा लक्ष्मणसिंह के मत से 'हिन्दी और उर्दू दो बोली न्यारी-न्यारी हैं। हिन्दी इस देश के हिन्दू बोलते हैं और उर्दू यहाँ के मुसलमानों और पारसी पढ़े हुए हिन्दुओं की बोल-चाल है। हिन्दी में संस्कृत के पद बहुत आते हैं और उर्दू में अरबी फारसी के परन्तु कुछ आवश्यक नहीं है कि अरबी-पारसी के शब्दों के बिना हिन्दी न बोली जाय और न हम उस भाषा को हिन्दी कहते हैं जिसमें अरबी-पारसी के शब्द भरे हों।' पाठक इन शब्दों पर ध्यान दें। उर्दू उर्दू है और हिन्दी हिन्दी। राष्ट्रीयता के नाम पर पकाई जानेवाली हिन्दुस्तानी रूपी खिचड़ी अत्यन्त भयानक है। वर्ण-सङ्करता फैलाई जा रही है। ऐंग्लो इण्डियन की तरह इंडो-उर्दू बनाया जा रहा है। यह इंडो-उर्दू हिन्दुस्तानी के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। हमें सावधान होने की आवश्यकता है। हिन्दुस्तानी के समर्थकों में अधिकांश महात्मा गांधी के अन्ध-अनुयायी हैं। उनकी धारणा है कि महात्माजी ईश्वर के अवतार हैं अतएव वे जो कुछ करते हैं, सोच-समझकर करते हैं। वे कभी गलती नहीं कर सकते। इसी विश्वास ने तो सब चौपट कर रक्खा है। अपने मस्तिष्क से नहीं सोचते। अन्ध अनुकरण किए चले जा रहे हैं। धर्म की आलोचना अवश्य हो जाएगी, धार्मिक अन्धविश्वासों का खण्डन अवश्य हो जाएगा, अन्ध-विश्वास एवं अन्धानुकरण का विरोध कर रहें हैं पर राजनीति एवं भाषा आदि के सम्बन्ध में स्वयं अन्धानुकरण करेंगे। वही भेड़ियाधसानवाली बात है। यदि किसी ने कह दिया कि कौआ कान ले गया तो पहले विचार कर अपना कान तो टटोलकर देखेंगे नहीं पर कौवे को मारने दौड़ेंगे। जो उन्होंने कह दिया वह तो मानों वेदवाक्य हो गया। वेद-वाक्य नहीं बल्कि बाइबिल-वाक्य। पुरुष है कुतूहल और प्रश्न और स्त्री है विश्लेषण, उत्तर और सब बातों का समाधान। पुरुष के प्रत्येक प्रश्न का उत्तर देने के लिए वह प्रस्तुत है। उसके अभावों को परिपूर्ण करने का उष्ण प्रयत्न और शीतल उपचार। अभागा मनुष्य सन्तुष्ट है बच्चों के समान। पुरुष ने कहा 'क' और स्त्री ने अर्थ लगा दिया 'कौआ'। बस वह रटने लगा। वही हाल है। हम महात्मा गांधी के विरोधी नहीं हैं। हम हैं विरोधी अन्धानुकरण के। हम उन्हें मनुष्य की हैसियत से अवश्य श्रेष्ठ मानते हैं—उनके त्याग एवं देशभक्ति के आगे सिर झुकाते हैं—पर हम यह नहीं मान सकते कि वे गलती नहीं कर सकते। 'मनुष्य अवश्य भूल करता है।' यह सिद्धान्त तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सब पर लागू है। कोई इसका अपवाद नहीं क्योंकि मनुष्य अपूर्ण है इसलिए उसके द्वारा सत्य का जो विकास होता है, अपूर्ण होता है। अतएव हमारा कर्तव्य है कि अपने मस्तिष्क से सोचें कि हम जो कर रहे हैं वह उचित है कि अनुचित। अपनी ही आँख में अँगुली करना, अपने ही पैरों कुल्हाड़ी मारना, घर में अँधेरा रहते हुए मस्जिद में दिया जलाना, रत्नों का मूल्य कौड़ियों से आँकना, कहाँ की बुद्धिमानी है? ऐसा करके क्या हम स्वयं उपहासास्पद नहीं हो रहे हैं? समष्टि में भी व्यष्टि रहता है। व्यक्तियों से ही जाति बनती है। विश्वप्रेम, सर्वभूत-हित-कामना परम धर्म है परन्तु इसका अर्थ यह नहीं हो सकता कि अपने पर प्रेम न हो। इस अपनत्व ने क्या अन्याय किया है जो इसका बहिष्कार हो? सोने के लिए नन्दन का अम्लान कुसुम बेच डालना कहाँ तक उचित है?

आज जो हम हिन्दी से हिन्दुस्तानी राष्ट्रभाषा बनाने चले हैं वह केवल मुस्लिम लीग के कुछ सदस्यों को सन्तोष देने के लिए। यही महात्मा जी का अभीष्ट है। एक ओर पाकिस्तान का प्रश्न है तो दूसरी ओर राष्ट्र-भाषा हिन्दुस्तानी बनाने का। क्या भाषा पर भी हमारा कुछ अधिकार नहीं? कुछ अधिकार है तो केवल अल्प-संख्यक मुसलमानों को? यह तो सरासर अन्याय है कि बहुसंख्यकों को कुछ भी अधिकार न हो और कुछ हो तो केवल अल्पसंख्यकों को।

हम हिन्दुस्तानी का समर्थन करते हुए यदि महात्मा गांधी के स्थान पर 'फ़क़ीर गांधी' या 'मौलाना गांधी' कहें तो बुरा न मालूम होगा? होगा पर हम अपना समर्थन करते हुए यदि कहें कि हिन्दुस्तानी का समर्थन करते हुए हमें 'महात्मा' शब्द पर आपत्ति है तो उद्दण्डता की सीमा हो जाएगी। हम दुष्ट समझे जाएँगे, देशद्रोही के नाम से पुकारे जाएँगे, अपमानित किए जाएँगे और यदि न्यायालय में भी उपस्थित होना पड़े तो भी कोई आश्चर्य की बात नहीं। कारण पाठक स्वयं समझ सकते हैं।

ईश्वर ने तो मानों भारत को समस्त संसार की एक प्रदर्शिनी बना दिया है। यहाँ भिन्न-भिन्न जल-वायु, भिन्न-भिन्न प्रकृति के मनुष्य और भिन्न-भिन्न भाषाएँ मिलेंगी। मरुस्थल की गर्मी लीजिए और ध्रुवों की शीतलता का अनुभव कीजिए। काबुल के मेवे यहाँ लीजिए। संसार में अप्राप्य फल यहाँ लीजिए। गोरे से गोरों को देखिए, काले से कालों को देखिए। जो चाहें सो लीजिए। भिन्न-भिन्न भाषाएँ चाहते हैं तो यहाँ भिन्न-भिन्न भाषाएँ भी मिलेंगी। यहाँ प्रायः प्रत्येक बारह कोस पर बोली बदलती जाती है। एक ही भाषा कुछ रूपान्तर के साथ एक दूसरी भाषा कहलाती है। एक ही भाषा बङ्गाल पहुँचते-पहुँचते बँगला, आसाम पहुँचते-पहुँचते आसामी, नेपाल पहुँचते पहुँचते नेपाली, पञ्जाब पहुँचते-पहुँचते पञ्जाबी, गुजरात पहुँचते-पहुँचते गुजराती, महाराष्ट्र पहुँचते-पहुँचते मराठी, मदरास पहुँचते-पहुँचते मदरासी और कर्नाटक पहुँचते-पहुँचते कन्नड हो जाती है। उसी में इतना परिवर्तन हो जाता है कि एक ही दृष्टि से पहचानना कठिन हो जाता है। पर मूल सूत्र सबका एक ही है। वह सूत्र क्या है? चाहे आप उसे किसी वेष में देखिए—पारसिनों की साड़ी और रूमाल पहने देखिए, घाँघरा-ओढ़नी पहने हुए मारवाड़िन के भेस में देखिए, काछा बाँधे हुए मराठिन के रूप में देखिए या बङ्गालिन के रूप में देखिए। किसी रूप में देखिए पर अनायास पहचान लेंगे कि यह तो हिन्दी है। बङ्गाल पहुँचकर 'लड्डू' का 'लोड्डू', 'आओ' का 'आशो' हो जाता है। आसाम पहुँचकर 'बैठो' का 'बोः' और नेपाल पहुँचकर 'में' का 'मा' हो जाता है। प्रायः सभी प्रान्त के लोग हिन्दी समझ लेते हैं और अधिकांश टूटी-फूटी हिन्दी बोल भी लेते हैं। किसी मुसलमानी महाल में चले जाइए और साधारण पढ़े-लिखे मुसलमानों से हस्ताक्षर कराना प्रारम्भ कीजिए तो आप देखेंगे कि कितने प्रतिशत हिन्दी में ही हस्ताक्षर करनेवाले होंगे। पर आज यदि हिन्दी और उर्दू के झगड़े के कारण न करें तो बात दूसरी है। पत्रालयों में चले जाइए तो वहाँ अधिकांश पत्र और उनके पते हिन्दी में ही होंगे। अत्यधिक समाचार-पत्र हिन्दी में ही निकलते हैं। पुस्तकों में किसी हिन्दी पुस्तक के समान किसी उर्दू पुस्तक की बिक्री नहीं होती। हाल ही की तो बात है। मैं एक मुसलमानी महाल से होकर जा रहा था। रास्ता भूल गया। मुझे मुख्य मार्ग (राजपथ) पर पहुँचना था। एक मुसलमान सज्जन अपने कुछ साथियों के साथ चले आ रहे थे। उनसे मैंने कहा—"मेहरबानमन, क्या जनाब मेहरबानी करके मुझे मेनरोड पर पहुँचने का रास्ता बतला सकते हैं। गर आप बतलावेंगे तो मैं आपका शुक्रिया अदा करूँगा।" इस पर उन्होंने कहा—"उर्दू में कहने की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोई आवश्यकता नहीं है। हिन्दी में कहिए। हम लोग समझ सकते हैं।" इतना कहकर उन्होंने मुझे रास्ता बतला दिया। कुछ मास पूर्व मैं एक पार्क में बैठा हुआ था। एक मुसलमान सज्जन वहाँ आए और बेंच पर बैठ गए। कुछ देर तक दोनों चुपचाप रहे। अन्त में उन्होंने मुझसे मेरा परिचय पूछा। इस पर मैंने उन्हें उर्दू में उत्तर देने का प्रयत्न किया। मुझे उर्दू बोलते सुनकर उन्होंने कहा—"आप उर्दू में क्यों बोल रहे हैं, हिन्दी में क्यों नहीं?" मैंने योंही कह दिया—"हिन्दी मुर्दा जुबान है और उर्दू है कौमी जुबान। इसी में बोलना चाहिए।" इस पर उन्होंने कहा—"आपका खयाल गलत है। हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा है। सबकी भाषा है, किसी जाति-विशेष की नहीं।" इसके पश्चात् जायसी, रहीम आदि के उदाहरण देकर उन्होंने कहा—"कोई ऐसी बात नहीं थी कि वे उर्दू के ज्ञाता न हों पर उन्होंने हिन्दी में ही अपनी रचनाएँ क्यों कीं?" नमाज का समय हो रहा था अतः उठकर जाते समय उन्होंने कहा—"याद रखिए, हिन्दी हमारी भाषा है और उसकी उन्नति करना हमारा कर्तव्य है। यह कौमी जबान है किसी एक जाति की नहीं।"

अभी हाल में मैं एक जादूगर की दूकान पर गया था। जादूगर मुसलमान था। उसने मुझसे कहा—"जादू में कुछ नहीं है। सब में केवल भेद होता है।" उपर्युक्त पंक्तियों से स्पष्ट है कि जब मुसलमान भी हिन्दी समझ सकते हैं और 'आवश्यकता' जैसे कठिन शब्द का व्यवहार कर सकते हैं तब क्यों हिन्दी राष्ट्रभाषा बनने के अयोग्य है। कई मुसलमानी दूकानों के परिचयपत्र तक हिन्दी में देखे जा सकते हैं। हमारा निजी अनुभव है कि मुसलमान आपस में हिन्दी में ही वार्तालाप करते हैं। हाँ, जो उर्दू के शब्द हिन्दी में अत्यन्त घुल-मिल गए हैं उनका प्रयोग अवश्य करते हैं। सर फेडरिक पिनकाट और डा० ग्रियर्सन जैसे अँगरेज तक जिस भाषा के प्रेमी थे वह क्या राष्ट्रभाषा बनने के अयोग्य है?

उर्दू या हिन्दुस्तानी के समर्थक प्रायः यही कहते हैं कि मुसलमान केवल उर्दू ही समझ सकते हैं, हिन्दी नहीं। जिस प्रकार उनके लिए 'महाशय' और 'महोदय' है उसी प्रकार 'जनाब' और 'हुजूर' है। जिस प्रकार उनके लिए 'दण्डवत्' है उसी प्रकार 'तस्लीम'। जिस प्रकार वे हिन्दी के कठिन शब्द नहीं समझ सकते उसी प्रकार उर्दू के भी नहीं। 'राउर' कहिए तो वे समझ जाएँगे पर 'महाशय' और 'हुजूर' कुछ कठिनता से समझेंगे। निदान भारत की यदि कोई एक भाषा हो सकती है तो वह हिन्दी ही है। हिन्दी ही राष्ट्रभाषा बनने योग्य है। अतएव हमारा कर्तव्य है कि हिन्दी की हम दिन दूनी और रात चौगुनी उन्नति करें। उसी को राष्ट्रभाषा बनाएँ और भारतेन्दु के—

निज भाषा निज धर्म निज गौरव की सब कोय।
दिन दूनी बढ़ती करैं, जनम सुफल तब होय॥

उद्देश्य को उद्देश्य बनाएँ और सोने के लिए नन्दन का अम्लान कुसुम न बेचें; रत्नों का मूल्य कौड़ियों से न आँकें, और स्वर्गीय पण्डित प्रतापनारायण मिश्र के कथनानुसार अपनी बोली न बिगाड़ें और...।

चहहु जो साँचो निज कल्यान। तौ मिलि सब भारत सन्तान॥
जपहु निरन्तर एक जबान। हिन्दी, हिन्दू, हिन्दुस्तान॥१॥
रीझै अथवा खिझै जहान। मान होय चाहै अपमान॥
पै न तजौ रटिबे की बान। हिन्दी, हिन्दू, हिन्दुस्तान॥२॥
भाषा, भोजन, भेष-विधान। तजै न अपनो सेा मतिमान।
बस समझौ सौभाग्य प्रमान। हिन्दी, हिन्दू, हिन्दुस्तान॥३॥
धनि है, धनि है, धनि वे प्रान। जौ इन हेतु होय कुर्बान॥
यही तीन सुख, सुगति निधान। हिन्दी, हिन्दू, हिन्दुस्तान॥४॥
तिहूँ लोक पर पूज्य प्रधान। करिहै तव त्रिदेविव त्रान।
सुमिरहु तीनहु समय सुजान। हिन्दी, हिन्दू, हिन्दुस्तान॥५॥
सरबसु जाय दीजिए जान। सब कुछ सहिए बनि पाखान।
पै गहि रहिय प्रेमपन ठान। हिन्दी, हिन्दू, हिन्दुस्तान॥६॥
तबहिं सुधरिहै जन्म निदान। तबै भलो करिहैं भगवान।
जब रहिहै निसि दिन यह ध्यान। हिन्दी, हिन्दू, हिन्दुस्तान॥७॥
जिन्हैं नहीं निजता कौ ज्ञान। वे जन जीवत मृतक समान।
यातें गहु यह मन्त्र महान। हिन्दी, हिन्दू, हिन्दुस्तान॥८॥

सप्तसिंधु

श्री हरिराम धस्माना

मेरे विचार से 'सरस्वती' के साधारण पाठक न तो "सप्तसिंधु" से परिचित हैं और न "धस्माना" से। इसका एकमात्र कारण यह है कि साधारण हिन्दु (इन्दु) को वेदों के अध्ययन करने का मौका ही नहीं दिया जाता है और न उसको उस तरफ झुकने को उत्साहित किया जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो भाष्य वेदों के मिलते भी हैं उनको पढ़ने से वेदों की तरफ श्रद्धा बढ़ती नहीं है। लोगों ने वेदों को इन्द्रजाल या जादूगर की पोटली सिद्ध करने के प्रयत्न किए हैं। सरल समय के सरलहृदय ऋषियों की रचनाएँ सरल ही होनी चाहिएँ। वैदिक रचनाओं का सरल भाव तभी हृदयङ्गम हो सकता है जब हम निश्चयपूर्वक, थोड़ा-बहुत ही सही, वैदिक कवियों के आश्रमों, मूलस्थान, उनके वंशजों, उनके जन्म-स्थान के रीति-रिवाजों व नदी-पर्वतों के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त कर सकें। हिमालय प्रदेश के भौगोलिक ज्ञान ने हमको बतलाया है कि प्राचीन वैदिक ऋषियों का देश वह पहाड़ी प्रान्त है जिसको ऋग्वेद में 'सप्तसिन्धु' कहा गया है। वहीं से हमारे बन्धु-बान्धव ईरान को गए। इस कारण उनके प्राचीन ग्रन्थों में हप्तहिन्दु, और हहूति इत्यादि नाम पाए जाते हैं। ईरानी भाषा में भी ८० फीसदी से अधिक शब्द संस्कृत अथवा वैदिक भाषा के ही हैं। वैदिक समय में हमारे मूलस्थान को सबसे प्रथम सप्तसिन्धु पदवी मिली :—

अजयोगा अजयः शूर सोमं,
अवासृजः सर्तवे सप्तसिन्धुन्।

ऋ० १,३२,१२

भावार्थ—जिस भूमि में सात नदियों का जल बहता है, वहाँ अजेयों में भी अजय वीरवर इन्द्र पूर्णचन्द्र जैसा प्रकाशमान हुआ।

हिरण्यस्तूप ऋषि ने यह वर्णन इन्द्र के वीरतापूर्ण कार्यों के सम्बन्ध में किया है। पाठक जानना चाहते होंगे कि ये सात नदियाँ कौन हैं और इनका पानी एक साथ कहाँ बहता है। इन नदियों के नाम हैं—

१. अलकनन्दा, २ श्वेत गङ्गा (धौली), ३ नन्दाग, ४ पिण्डर, ५ मन्दाकिनी, ६ गङ्गा (जाह्नवी), पुरुष्णि (नयार)। व्यासघाट में सप्तसिन्धव का जल आगे एक साथ बहता है और वहाँ से नदी को भी सप्तसिन्धु कहते थे। केदारखण्ड ग्रन्थ में व्यास घाट का नाम सप्तसामुद्रिक तीर्थ है (ग्रन्थकार ने सिन्धु के बजाय समुद्र कर दिया जैसी कि पौराणिकों की नीति है)। इसलिए उस स्थान में सप्तसिन्धु तीर्थ है।

२. सिन्धु शब्द ऋग्वेद में पाया जाता है, अतः बहुत से विद्वान् कह बैठते हैं कि आर्य जाति भारतवर्ष के बाहर के किसी प्रदेश से आकर पञ्जाब प्रान्त की सिन्धु नदी के तट पर बसी। एक भारतीय विद्वान् ने पंजाब की पाँच नदियों के साथ गढ़वाल की गङ्गा-यमुना की सन्धि करके 'सप्तसिन्धु' बना डाला है। ऐसे भ्रमपूर्ण अनुमानों का उत्तर ऋग्वेद में दिया गया है।

सरस्वति धरुणमायसी पूः।
....विश्वा अपो महिला सिन्धुरन्याः।
...शूचिर्यती गिरिभ्यआससमुद्रात्।

ऋ० ७,९५,१-२

इस सूक्त में सरस्वती और सिन्धु का सम्बन्ध सिद्ध किया गया है। सिन्धु है अलकनन्दा और सरस्वती है बदरीनाथ की सरस्वती जो सिवा वर्षा के अन्य समय गुप्त रहती है और वेद उसको "ऽसूर्या नदीनाम्" की पदवी देता है। (ऋ० ७,९६,१) मैयमेध ऋषि तो और भी स्पष्ट तौर पर कहते हैं कि सिन्धु नदी की २१ सहायक नदियाँ हैं। उनके नाम हैं—

इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति, शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्या। असिक्न्या मरुद्वृधे वितस्तयाऽऽर्जीकीये शृणुह्या, सुषोमया॥ तृष्टामया प्रथमं यातवे सजूः सुसर्त्वा रसया श्वेत्या त्या। त्वं सिन्धो कुभया गोमती क्रमु .. ऋ० १०,७५, ५-६

इन ऋचाओं के गंगा, यमुना, सरस्वती, सजू (सरयू), स्वेता (श्वेतगङ्गा) और गोमती के नाम आज दिन भी वही हैं जो वैदिक समय में थे। सिन्धु शब्द सप्तसिन्धु का छोटा नाम ही मानना पड़ता है। इन नदियों का जल पञ्जाब की सिन्धु नदी में नहीं मिलता है। इन नदियों का सम्बन्ध आर्यावर्त से है—क्योंकि—

आर्यावर्त पुण्यभूमिर्मध्यं विन्ध्यहिमालयोः। (अमरकोष)

इसलिए वैदिक सिन्धु पञ्जाब की सिन्धु नहीं हो सकती। दूसरी विचारणीय बात यह है कि वैदिक सिन्धु के तट पर पाँच तीर्थ (पञ्च प्रयाग) हैं, लेकिन पञ्जाबी सिन्धु पर वैदिक तीर्थ कोई नहीं है।

...पञ्च सृजतः। तीर्थे सिन्धोरधि स्वरे। ऋ० ८,७२,७

ये पाँच तीर्थ—विष्णुप्रयाग, नन्दप्रयाग, कर्णप्रयाग, रुद्रप्रयाग और देवप्रयाग—अलकनन्दा के ही तट पर हैं। इसलिए वैदिक सिन्धु अलकनन्दा है।

तीसरी बात यह है कि सिन्धु की महिमा और पवित्रता वैदिक विष्णु के कारण हुई है। विष्णु का धाम अलकनन्दा के तट पर है और इसी कारण उसको विष्णुपदी भी कहते हैं। लेकिन पञ्जाब की सिन्धु पर या किसी अन्य सरिता पर ऐसा धाम नहीं है। यही कारण है कि बदरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संख्या ४]

धाम का यात्री पञ्चप्रयागी करता हुआ विष्णु के स्थान को जाता है। वेद में पञ्जाब की सिन्धु की धार्मिक महत्ता है ही नहीं।

चौथी बात यह है कि चन्द्रकूट प्रान्त की पुरुणि (पूर्वि नयार) की छोटी-छोटी सहायक नदियों के नाम भी वेद में पाए जाते हैं, क्योंकि चन्द्रकूट ही चन्द्रवंशियों का जन्म-स्थान है—

सुषोमा—सुखौ—सुखई का गधेरा (स्रोत)

शृणुहि—शर्यणावति—जो शरण के डाण्डे से निकल-कर शरणग्राम होती हुई पूर्वीय नयार में मिलती है।

पस्त्यावति—पास्ता ग्राम से निकलकर पूर्वीय नयार से सङ्गम करती है।

कृष्णा—कृष्ण पर्वत (काला डाण्डा) का जल बहाती हुई पूर्वीय नयार से सम्बन्धित है।

इससे सिद्ध होता है कि सप्तसिन्धु देश गढ़वाल है।

ऋषिस्थान

विस्तार के भय से कुछ ही वैदिक ऋषियों का वर्णन यहाँ किया जाता है।

(क) जेता ऋषि का केवल एक ही सूक्त ऋग्वेद में हमको मिला है। यह सूक्त वीरों को प्रोत्साहित करनेवाला है। —ऋ० १।११

जेता जितार थे। वे रहते थे जेतास्थलि (जैंतोली) में और उनकी जागीर थी जेतास्थल स्यु (जैंतोल स्यु)। उनके वंशजों को जैंतोला राजपूत आज भी कहा जाता है।

(ख) हिरण्यस्तूप (ऋ० १, ३१-३५)। यह अंगिरा-वंश का है? उसका असली स्थान हिरण्यपक्ष (पिंगला पास्ता) गढ़वाल में था पर हेमन्त ऋतु में वह देवहूति के तट पर भी रहता था, जिस स्थान को उसी के नाम के कारण वर्तमान समय में पीलीभीत कहते हैं। यह चन्द्रवंशियों का उपदेशक, पुरोहित और धर्माचार्य था। उसने जो उपदेश इन्दुवंशी महाराज को दिया था उससे उत्साहित होकर चन्द्रवंशियों ने इस भूमण्डल पर दिग्विजय किया था। यह उपदेश, सूक्त के रूप में, ऋग्वेद के नवम मण्डल में सुरक्षित है और "अथानो वस्यसस्कृधि" नाम से प्रसिद्ध हो चुका है। यह सूक्त सामवेद और यजुर्वेद में भी पूरा-पूरा उद्धृत किया गया है।

(ग) पायु (ऋ० १०,८,७) ऋषि का स्थान पौड़ी है जो कि अब गढ़वाल का केन्द्र है। वैदिक समय में उसको और उसके वंशज पायवों को यातुधानों ने बहुत कष्ट दिया तब वे मामा-गृह को चले गए और तब से वेदों में इनको "पायव मामेतय" कहा गया है। देवासुर-संग्राम के सूक्त में भी इनको "मामकानां" कहा गया है। वर्तमान समय में ममगाईं कहते हैं।

ऋ० ४, ४; १३ और ऋ० १०, १०३, १०।

(घ) मन्यु (ऋ० १०, ८३)। इस "मन्युरिन्द्रो मन्युरेवास देवो" की कीर्ति को अमर किए हुए हैं मन्यु के वंशज मन्यारि जाति के क्षत्रिय और उसके नाम की जागीर मन्यार स्युँ। मन्यु इन्द्र था, सेनानी था और वह मन्यु तापस के नाम से वृद्धावस्था में प्रसिद्ध हो गया था। मन्युरिन्द्र की जागीर मन्यारस्युँ गढ़वाल में है। मन्यारि राजपूत आजदिन भी प्रतिष्ठित थोकदार हैं, यद्यपि सभी थोक-दारों की तरह राज्याधिकारहीन वे भी हो चुके हैं।

(ङ) हम ऊपर "सप्तसिन्धु" का अर्थ अपनी बुद्धि के अनुसार वर्णन कर चुके हैं। अब "धस्माना" शब्द की ओर पाठकों का ध्यान आकर्षित करते हैं। मह्यिं न त्वा वज्रिणं भृष्टिमन्तं पुरु धस्मानं वृषभं स्थिरप्सुत्।

—सामवेद ३२७

भावार्थ—तुझ इन्द्र को प्रसन्नता हुई थी कि हम अस्त्र-धारी तोपों के सञ्चालन करनेवाले धस्माना पूर्ण रूप से शत्रुओं का संहार करते हुए रण में वृषभ की नाईं निडर होकर स्थिर रहे। ऋग्वेद के समय में धृष्माणा के रूप में इस धस्माना शब्द का प्रचार था।

इन्द्रो यद् वज्री धृषमाणो अन्धसा
भिनद् वलस्य परिधिरिव त्रितः।

ऋ० १, ५२, ५।

भावार्थ—जिस प्रकार वज्र को धारण करनेवाले शत्रुओं को धर्षण करनेवाले धस्माना इन्द्र ने बल राक्षस की अँधेरी-सी गुफा को तीन तरफ से उजाड़ा। बल राक्षस का अधिकार जिस पट्टी में था उसका नाम है बाली कण्डारस्युं। यह पट्टी कँटीली झाड़ियों के साथ अब भी प्रसिद्ध है। बलने देववंशियों की गायों को चुराकर कटीली झाड़ियों के घेरे में छिपा दिया था और अहिगोपा (नागवंशी) रक्षक देख-भाल के लिए नियुक्त कर दिए थे।

हमारा अभिप्राय सप्तसिन्धु और धस्मानों का वैदिक सम्बन्ध प्रकाशित करना है। प्राचीन समय में हमारे मूलस्थान में तीन मुख्य शूर-वीर हुए थे। उनके नाम हैं—धृष्णु (धिष्णु), च्यवन और सुमित्र।

वेद कहता है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शूर इव धृष्णुश्च्यवनः सुमित्रः।
ऋ० १०, ६६, ५

धृष्णुः, च्यवनः और सुमित्रः जैसे शूर-वीर।

धृष्णु के वंशजों को वेद में धृष्णव भी कहा गया है; क्योंकि उसके वंशज आग्नेय अस्त्र-शस्त्रों का सञ्चालन करते थे। उनको अग्नेय धिष्ण्य (ऋ० ६,१०६) कहने की रीति भी चल पड़ी थी। इस तरह धृष्णु के वंशज धिष्णव और धृष्माण होते हुए वर्तमान समय में अपनी दीन-हीन दशा में भी धस्माना कहे जाते हैं। धृष्णु जहाँ रहता था उस स्थान को धस्मणि कहते हैं। और यह स्थान है सप्तसिन्धु के प्रसिद्ध ऋषि हिरण्यस्तूप के पिगला-पाखर की सीमा के अन्तर्गत। सप्तसिन्धु और धस्माना शब्द आर्यों के मूलस्थान को बतलाते हैं, जिसको परदेशी विद्वान् योरप के जङ्गलों में ले जाते हैं और कोई उसे साइबीरिया का बालुकार्णव देश बतलाते हैं। इस लेख में केवल जेता, हिरण्यस्तूप, पायु, मन्यु, धृष्णु जैसे वैदिक पुरुषों के स्थानों का परिचय दिया गया है जिससे यह बात ध्यान में आ जाय कि आर्यों का मूलस्थान आर्यावर्त के अन्तर्गत हिमालय प्रदेश का शिवलोक गढ़वाल है। बहुत-से अन्य वैदिक ऋषियों के स्थानों की भी खोज की गई है। मूलस्थान की विशेषताओं का वर्णन भी वेद में पाया जाता है।

वेद—विद्याओं का सागर

हम वेद को रत्नगर्भा मानते हैं। ऋग्वेद में वैदिक धर्म का वर्णन तो है ही, लेकिन उसमें हमारा प्राचीन इतिहास भरा पड़ा है। हमारे पूर्वज अपने शूरवीरों के वीरतापूर्ण कार्यों का वर्णन अपनी पद्य-रचनाओं में करते थे। उन रचनाओं को चम्वो नृत्य में, यज्ञों के अवसर पर गाते भी थे। सोमरस पान करके सङ्गीत का आनन्द भी वे लुटते थे। वृद्धावस्था में भारतवर्ष के आर्य अपना अन्तिम समय मूलस्थान में बिताते थे। ऐसे लोगों ने और उनके सहयोगियों ने इन पद्य-रचनाओं का संग्रह किया या कराया था। मूलस्थान शीतप्रधान देश होने से उषा, सूर्य और अग्नि के विषय में अधिक रचनाओं का होना स्वाभाविक ही था। हमारे पूर्वज अग्नि-पूजक थे। इसलिए पाँच हजार से भी अधिक ऋचाओं का विषय अग्नि है। वे अग्नि को ईश्वर का सुप्रतीक मानते थे।

सप्तसिन्धु देश में रहते हुए ही उन्होंने उपनिवेशों की स्थापना का कार्य आरम्भ कर दिया था। जब जङ्गली जातियाँ इस कार्य में बाधा पहुँचाने लगीं तब उन्होंने मूलस्थान के कृषकों में से मरुत् सेना को जन्म दिया। यह सेना उन ऋषियों की सहायता करने लगी। कालान्तर में इस सेना की शक्ति बहुत बढ़ गई। जो भूमिपति कृषकों पर अत्याचार करते थे उनको हटाकर इस सेना ने कृषकों के शुभचिन्तक राजाओं को प्रतिष्ठित किया। मरुत् (सिपाही) 'रुक्मवक्षसा' होते थे अर्थात् इनकी पोशाकों पर छाती के ऊपर सुवर्ण के बटन रहते थे। मरुतों की वीरगाथाओं का वर्णन लगभग ५०० ऋचाओं में पाया जाता है। इनके वंशजों को इस समय मरा-महरा कहते हैं। ब्रह्मावृत के एक प्रान्त में इनका राज्य भी रहा था। इतिहासज्ञ इन्हीं को मौर्यवंशी कहने लगे हैं। इनका शुद्ध नाम है 'मरः', अर्थात् जिनको अपनी आजीविका का उपार्जन पृथिवी के द्वारा कृषिकर्म करके करना पड़ता है। हमारे मूलस्थान का प्राचीनतम नाम सप्तसिन्धु (हप्तहिन्दु) तो प्रसिद्ध है ही, लेकिन ब्राह्मणवंश के ब्रह्मणस्पति इन्द्रों के राज्यों के पश्चात् चन्द्रवंशी राजा बुद्धिमान् बुध का उदय हुआ तब हमारा मूलस्थान भी उसी के नाम से 'बुध्न्या' करके प्रख्यात हो गया। अथर्ववेद के समय इसी नाम का प्रचार था।

बुध्न्या

स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः
अथर्व० ४,१,१

भावार्थ—वह बधान जिसकी उपमा का तिब्बत है। बधान और तिब्बत मिले हुए हैं और दोनों ऊँचे स्थान हैं।

इसी सूक्त में आगे कहा गया है—

स बुध्न्यादाष्ट्र जनुषोऽभ्यग्रं
अथर्व० ४, १, ५

भावार्थ—वह जनसमूह मूलस्थान से हथियारों से सुसज्जित होकर आगे चारों दिशाओं को फैला।

इस सूक्त में यह साबित किया गया है कि मूल स्थान ही से सभ्यता इस भूमण्डल पर चारों तरफ विस्तृत हुई। अर्थात् सभ्यता को जन्म न देनेवाले भी हमारे पूर्वज थे जो मूलस्थानों में रहते थे।

गढ़वाल के एक परगने को 'बधाण' अब भी कहते हैं। वैदिक समय के पश्चात् उसको शिवलोक, केदारखण्ड और बदरीखण्ड कहने लगे। मनुस्मृति में उसको ब्रह्मावृत नाम दिया गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिवः शिशुः

किसी स्थान को मूलस्थान साबित करने के लिए यह आवश्यक है कि उस स्थान में सोम नाम ओषधि की उत्पत्ति भी सिद्ध की जाए। क्योंकि हमारे वैदिक पूर्वज सोमरस पीते ही नहीं थे, सोमरस से यज्ञ भी करते थे। ऋषियों के आश्रमों में सोमरस छानने के तृपला, तिपाई आदि भी रहती थीं। वर्तमान समय में जब हम वैद्यों से सोम ओषधि के सम्बन्ध में वार्तालाप करते हैं तो वे कहते हैं कि सोमरस तो देवताओं का पेय था, अब वह उपलब्ध नहीं हो सकता। प्रायः कह दिया जाता है कि संहिताओं में सोम का वर्णन यों है कि शुक्लपक्ष में ज्यों-ज्यों चन्द्रमा की कलाएँ बढ़ती जाती हैं, सोम वनस्पति में भी एक-एक पत्ता बढ़ता है और पूर्णमासी को १५ पत्ते हो जाते हैं। कृष्णपक्ष में एक पत्ता प्रति दिवस झड़ने लग जाता है और अमावस को एक भी पत्ता नहीं रहता है। हमें दुःख है कि हम ऐसे वर्णनों पर विश्वास नहीं कर सकते जब तक कि कोई वनस्पति इस प्रकार की प्रत्यक्ष रूप में दिखाई न दे। ऋग्वेद में हमको सोम ओषधि का ऐसा आश्चर्यजनक वर्णन नहीं मिला है।

ऋग्वेद के अनुसार—

(१) ममृज्यन्ते दिवः शिशुम्। ऋ० ९, ३३, ५।

अर्थात् 'दिवः शिशु' को मरोड़ते हैं।

(२) एष स्य मधो रसोऽवचष्टे दिवः शिशुः।
य इन्दुवरिगाविशत्। ऋ० ९, ३८, ४।

अर्थात् इस सोम (जो दिवःपर्वत पर उगताहै) के रस की धारा द्रोण कलश में चट चट कर रही थी। जब मरोड़े हुए सोम को तृपला पर ऊनी कपड़ा (अव्यावारे ऋ० ९, ३८, १) या ऊर्ण को रखकर छान रहे थे तो उसके बूँदों के पड़ने से चट चट शब्द हो रहा था। 'दिवःपर्वत'—दीवा का डाण्डा—चन्द्रकूट प्रान्त का मुख्य पर्वत है। वहाँ सोम ओषधि उत्पन्न होने से चन्द्रकूट को सोमकूट भी कहा गया है और वहाँ के चन्द्रवंश को सोमवंश। सोम का गूदा चमकीला होने से उसे इन्दु भी कहते हैं। अतः चन्द्र, सोम और इन्दु ये तीनों शब्द पर्यायवाचक हैं। हमारे पूर्वज अपने मूलस्थान को दिवः और अपने को देव कहते थे।

(३) सोम वनस्पति सप्तसिन्धु देश में होती थी। इसी कारण वेद कहता है कि उसको सात माता हैं, जिसका आशय यह होता है कि वह मूलस्थान के सातों प्रान्तों में होता है :—

एतमु त्यं दश क्षिपो मृजन्ति सिन्धुमातरम्।

ऋ० ९, ६१, ७

अर्थात् जिसकी सिन्धु माता है उसको दशों उँगलियाँ मरोड़ रही हैं (निचोड़ रही हैं)।

जज्ञानन् सप्त मातरो। ऋ० ९, १०२, ४

अर्थात् सतमाताएँ जिसको पैदा करती हैं।

(४) वेद कहता कि सोम का जन्मस्थान मुञ्जावत पर्वत है—

सोमस्येव मौजवतस्य भक्षो। ...ऋ० १०, ३४, १

और महाभारत कहता है कि मुञ्जावत पर्वत हिमालय में है।

गिरेर्हिमवतः पृष्ठे मुञ्जवान्नाम पर्वतः

महाभारत १८,८,१

मञ्जुकूला स्रोत और मञ्ज्यूलि ग्राम चन्द्रकूट में ही हैं। अतः दिवः पर्वत और मुञ्जावत पर्वत दोनों चन्द्रकूट प्रान्त में हैं। इससे सिद्ध हुआ कि सोम वनस्पति का जन्मस्थान शिवलोक गढ़वाल ही है।

———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

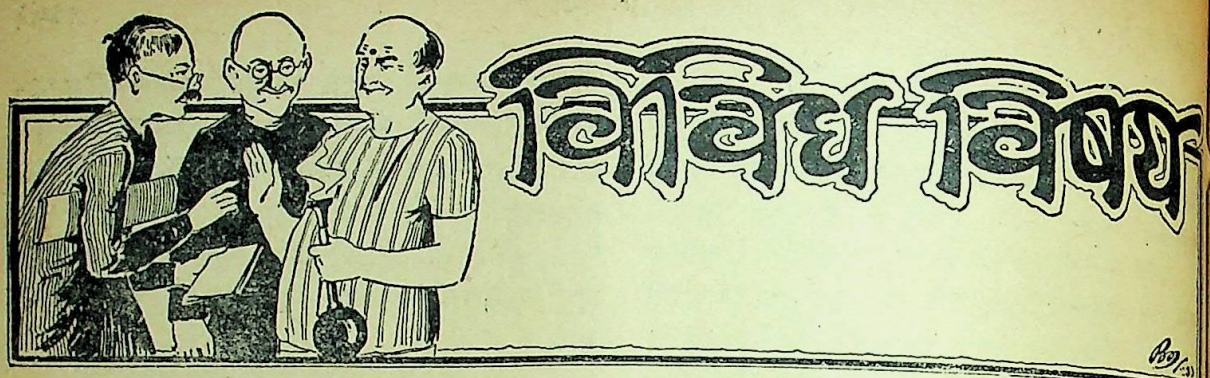

मराठी में एक महाग्रन्थ

राजा के लिए अर्थकोश का जितना महत्त्व है, उससे कहीं अधिक सर्वसाधारण के लिए ज्ञानकोश का है। अर्थकोश से ज्ञानकोश की यह विशेषता है कि व्यय से यह बढ़ता ही जाता है।

अपूर्वः कोऽपि कोशोऽयं विद्यते तव भारती।
व्ययतो वृद्धिमायाति क्षयमायाति सञ्चयात्॥

हिन्दी में कोशों की बड़ी कमी है। इस समय सबसे बड़ा कोश 'हिन्दी-शब्दसागर' ही देख पड़ता है। अन्य प्रान्तीय भाषाओं की ऐसी दशा नहीं है। बङ्गाली में श्री० दुर्गाचरण लाहिड़ी जी का विश्वकोश विद्यमान है। उसके कुछ खण्ड हिन्दी में भी प्रकाशित हुए थे; परन्तु वह काम अधूरा ही रह गया। मराठी में अनेक ज्ञान-कोश निकल गए हैं। जैसे—डाक्टर केतकर का महाराष्ट्र ज्ञानकोश, भारतवर्षीय चरित्रकोश, व्यावहारिक ज्ञानकोश इत्यादि। पश्चिमी भाषाओं में तो सब विषयों के समृद्ध ज्ञानकोश मिलते हैं। हिन्दी अभी इस क्षेत्र में आगे नहीं बढ़ रही है। जिस भाषा में सर्वाङ्ग-पूर्ण ज्ञानकोश नहीं, वह समृद्ध कैसे कही जा सकती है?

बड़ौदा के सरदार श्रीमन्त आबा साहब मुजुमदार महोदय इस समय व्यायाम ज्ञानकोश निकाल रहे हैं। यह अपने ढङ्ग की एक अपूर्व वस्तु है। आरोग्य और दीर्घायु चाहनेवाले स्त्री-पुरुषों के जीवन में व्यायाम का स्थान बहुत ऊँचा है। व्यक्ति, समाज अथवा राष्ट्र के हित की दृष्टि से देश के प्रत्येक स्त्री-पुरुष को अपने दैनिक जीवन-क्रम में किसी-न-किसी तरह के व्यायाम का समावेश कर लेना बहुत आवश्यक है। सरकारी शिक्षा-विभाग को भी अब व्यायाम की उपयोगिता प्रतीत होने लगी है और उसने सभी शिक्षा-संस्थाओं में अनिवार्य रूप से शारीरिक शिक्षा का उपक्रम भी किया है।

अपने देश की विभिन्न प्रान्तीय भाषाओं में ऐसे एक बड़े व्यायाम ज्ञानकोश का अभाव बहुत दिनों से अखर रहा था, जिसकी सहायता से व्यायाम जैसे महत्त्वपूर्ण विषय और उसके भिन्न-भिन्न अङ्गों की ठीक-ठीक और सम्पूर्ण शिक्षा मिल सके। किसी शास्त्रीय ज्ञान का प्रचार करना हो, तो सबसे पहले तत्सम्बन्धी साहित्य का निर्माण और प्रकाशन अत्यन्त आवश्यक होता है। इसी कमी की पूर्ति के लिए सरदार साहब ने यह साहसपूर्ण महान् आयोजन किया है। इसके द्वारा व्यायामप्रेमी आबालवृद्ध स्त्री-पुरुषों को व्यायाम-ज्ञान के सम्बन्ध में अच्छी सहायता मिल सकेगी।

इस अत्यन्त उपयुक्त सचित्र महाग्रन्थ का सुप्रसिद्ध और विशेषज्ञ विद्वानों की सहायता से पहले मराठी में सम्पादन और प्रकाशन हुआ और अब उसके हिन्दी और गुजराती संस्करण निकल रहे हैं। ग्रन्थ दस खण्डों में समाप्त हुआ है। उनमें से मराठी के आठ, हिन्दी का एक और गुजराती के दो खण्ड प्रकाशित हो गए हैं। शेष प्रकाशित हो रहे हैं। देशी व्यायाम के सम्बन्ध में हजार बारह सौ पृष्ठों का अँगरेजी में भी संस्करण निकालने का प्रबन्ध हो रहा है। दस खण्डों के विषयों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—१—देशी खेल, २—देशी मर्दाने खेल, ३—देशी कसरतें, ४—देशी व्यायाम, ५—स्वास्थ्य-विचार, ६—विदेशी खेल, ७—विदेशी मर्दाने खेल, ८—विदेशी कसरतें, ९—विदेशी व्यायाम और १०—स्पर्धाएँ। इन्हीं में व्यायाम का इतिहास, बालक-बालिकाओं के देशी-विदेशी खेल, क्रिकेट-फुटबाल, डण्ड-बैठक, सूर्य-नमस्कार, डम्बेल्स, बारबेल्स, मलखम्भ, सिंगल-डबल बार, फरी, गदका, कुश्ती, बाक्सिंग-फेन्सिंग, एथलेटिक्स-हाइजम्प-लांग जम्प, आहार, एटानामी, फिजिआलाजी, हाइजीन, फर्स्ट एड, सेनिटेशन, सेक्स-हाइजीन, लंघन चिकित्सा, आदि सैकड़ों विषयों का समावेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो गया है। इनसे मनोरञ्जन, शारीरिक बल-संवर्धन, शरीर को स्वाधीन कर लेना, प्रतिस्पर्धी को पराजित करना, शिकार आदि बातें सुगमता से आ जाती हैं।

रायल ८ पेजी आकार में कोश छपा है। प्रत्येक खण्ड की पृष्ठ-संख्या लगभग ५०० है और इतने ही (५००) प्रत्येक खण्ड में चित्र भी हैं। चित्रों से व्यायाम-शिक्षा सुगम हो गई है। ५ हजार पृष्ठ और ५ हजार चित्रों के इस महाग्रन्थ के प्रकाशन में ५० हजार रुपया व्यय होगा। फिर भी सब कोशों से इसका मूल्य बहुत कम रक्खा है। अँगरेजी और पूर्वोक्त मराठी कोशों के प्रत्येक खण्ड का मूल्य १०) से २०) तक है; परन्तु इस कोश के प्रत्येक खण्ड का मूल्य ७) ही है। 'हिन्दी व्यायाम' मासिक पत्र के ग्राहकों को ५) में ही दिया जाता है। कागज, छपाई, सफाई, बाइंडिङ्ग आदि अन्य कोशों से इसकी अच्छी है और चित्र संख्या सबसे अधिक है।

इतने बड़े आयोजन को निबाह ले जाना अकेले श्री० मुजुमदार साहब के लिए असम्भव था; परन्तु मराठी के सौभाग्य से उन्हें धनी राजा-महाराजाओं से प्रचुर आर्थिक सहायता मिली और परिश्रमी विशेषज्ञ लेखक भी मिल गए, इसी से वे इस महान् कार्य को पूरा कर सके। महाराजा बहादुर बड़ौदा, महाराजा बहादुर कोल्हापुर, श्रीमन्त राजा साहब मिरज, श्रीमंत आंग्रे सरकार पूना, श्री० राजा साहब इचल करंजी, श्री० राजा साहब सांगली, श्री० युवराज और सौ० युवराज्ञी महोदया मिरज, श्री० दादा साहब और सौ० वहिनी साहबा पटवर्धन, श्री० राजा साहब फलटन, श्री० राजा साहब जमखण्डी, श्री० राजा साहब मोर, श्री० राजा साहब कुरुन्दवाड़, श्री० राजा साहब रामदुर्ग, श्री० राजा साहब औंध, सर नारायण राव मण्डलीक, श्री० विवलकर आदि महानुभाव कोश के संरक्षक और सहायक हैं। बम्बई और मध्यप्रान्त के सरकारी विभागों ने मराठी खण्डों के लिए स्वीकृति दे दी है तथा युक्तप्रान्त की सरकार ने हिन्दी का खण्ड लन्दन के पुस्तकालय में भी भेजा है।

मराठी प्रकाशन के लिए जैसा सुभीता हुआ, वैसा हिन्दी खण्डों के लिए अब तक प्राप्त नहीं हुआ है। हिन्दी का कार्य-क्षेत्र विस्तृत है। यदि हिन्दी-भाषा भाषी धनिक और नरेश ऐसी ही सहायता करें, तो हिन्दी का प्रकाशन सफल हो सकता है। एक बात महत्त्व की है। कोश के सम्पादन, सजावट आदि में श्रीमन्त मुजुमदार जी की सहधर्मिणी श्रीमती सौ० लक्ष्मीबाई साहब का बड़ा हाथ रहा है। उनकी सहायता से सम्पादक का काम हलका हो गया है।

यह एक असाधारण महाग्रन्थ है। इसके सम्पादन और प्रकाशन के लिए मराठी, गुजराती और हिन्दी भाषा-भाषी जनता को श्रीमन्त के प्रति कृतज्ञ होना चाहिए और आपकी कृति से समुचित लाभ उठाना चाहिए। विशेष ज्ञातव्य के लिए सम्पादक से योजनापत्र मँगाकर पढ़ना चाहिए। पता इस प्रकार है :—श्रीमन्त द० चिं० मुजुमदार, रावपुरा, बड़ौदा।

—गोविन्द शास्त्री दुगवेकर

'दक्षिण-भारत हिन्दी-प्रचार-सभा' किधर ?

लगभग ३० वर्ष हुए, महात्मा गांधी ने एक राष्ट्र-भाषा और एक राष्ट्र-लिपि की आवश्यकता अनुभव की। उन्हें हिन्दी और देवनागरी क्रमशः राष्ट्र-भाषा और राष्ट्र-लिपि होने योग्य जँचीं। देश की भाषा-स्थिति पर निष्पक्ष भाव से विचार करके वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे। उस समय आज जैसा साम्प्रदायिकता का दौर-दौरा नहीं था। गांधी जी ने दक्षिण को उत्तर से राष्ट्र-भाषा के बन्धन में बाँधने के लिए 'दक्षिण-भारत हिन्दी-प्रचार-सभा' की स्थापना की। इस सभा का उद्देश्य, जैसा कि इसके नाम से भी प्रकट है, दक्षिण भारत में राष्ट्र-भाषा हिन्दी और राष्ट्र-लिपि देवनागरी का प्रचार करना था। सभा अपने उद्देश्य में पूर्ण सफल रही है। अपनी रजत-जयन्ती के अवसर पर आज 'दक्षिण-भारत हिन्दी-प्रचार-सभा' अपनी जिन्दगी के पिछले २५ वर्षों पर सन्तोष-भरी दृष्टि डाल सकती है। अब सभा की जिन्दगी का दूसरा दौर—हिन्दुस्तानीवाला दौर—आरम्भ होना चाहता है, अर्थात् सभा अब गांधीजी की राष्ट्र भाषा की नई परिभाषा के अनुसार दक्षिण में हिन्दी और उर्दू दोनों भाषाओं और देवनागरी और फारसी दोनों लिपियों का प्रचार करेगी, और राष्ट्र-भाषा सीखने के इच्छुक प्रत्येक दक्षिण-वासी को हिन्दी-उर्दू दोनों और दोनों लिपियाँ सीखनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पड़ेंगी।- इस दूसरे दौर के आरम्भ होने के अवसर पर सभा और हिन्दी के हितैषियों के विचार सभा के कार्य-कर्त्ताओं और सञ्चालकों के सामने रखना अनुचित न होगा।

यह तो स्पष्ट ही है कि गांधीजी ने राष्ट्र-भाषा की अपनी पहली परिभाषा अर्थात् हिन्दी मुसलमानों-द्वारा मान्य न होने के कारण ही दूसरी परिभाषा अर्थात् हिन्दुस्तानी की है। परन्तु क्या यह नई परिभाषा मुसलमानों को मान्य है? उत्तर है—'नहीं'। 'हिन्दु-स्तानी', 'हिन्दुस्तानी' केवल हिन्दू रट रहे हैं, हिन्दू ही आपस में हिन्दी और हिन्दुस्तानी के मसले को लेकर वाद-विवाद कर रहे हैं, और हिन्दुस्तानी प्रचारकों की फौज में सब हिन्दू ही हिन्दू हैं। मुसलमानों को इस हिन्दुस्तानी से भी कोई सरोकार नहीं। हिन्दुस्तानी की धूम हिन्दी और हिन्दू प्रान्तों में ही सुन पड़ती है। जहाँ-जहाँ मुसलमानों के हाथ में शक्ति है, अर्थात् काश्मीर, पञ्जाब, सीमा-प्रान्त, सिन्ध और हैदराबाद में, वहाँ सब शान्त हैं या यों कहिए वहाँ उन्होंने उर्दू-हिन्दुस्तानी और उर्दू लिपि को पहले से ही राष्ट्र-भाषा और राष्ट्र-लिपि—वास्तविक राष्ट्र-भाषा और राष्ट्र-लिपि—बना रक्खा है और उनमें उन्हें हिन्दी और देवनागरी जोड़ने की न जरूरत है और न यह उन्हें पसन्द है। यह ध्रुव सत्य है कि इन पाकिस्तानी प्रान्तों और रियासतों में राष्ट्र-भाषा के रूप में हिन्दी और देवनागरी को उर्दू और उर्दू लिपि के समकक्ष स्थान कभी नहीं मिलेगा और न वहाँ उर्दू और उर्दू लिपि के साथ-साथ हिन्दी और देवनागरी का सीखना सबके लिए अनिवार्य किया जाएगा। गांधी जी का हिन्दुस्तानी प्रचार भी महाराष्ट्र, बिहार, दक्षिण आदि हिन्दी और हिन्दू प्रान्तों तक ही सीमित है और रहेगा।

ऐसी स्थिति में हिन्दुस्तानी-आन्दोलन का केवल एक ही परिणाम होगा। वह है—असलियत में अर्थात् व्यवहार में केवल उर्दू का राष्ट्र-भाषा और केवल उर्दू-लिपि का राष्ट्र-लिपि हो जाना। क्योंकि जब पाकिस्तान के सब निवासी केवल उर्दू और उर्दू-लिपि और 'हिन्दुस्थान' के सब निवासी हिन्दुस्तानी प्रचार की बदौलत हिन्दी उर्दू दोनों भाषाएँ और दोनों लिपियाँ जानते होंगे तो 'कामन भाषा' और 'कामन लिपि' अपने आप उर्दू और उर्दू लिपि होंगी। किसी अखिल भारतीय सभा में जो मनुष्य सब को अपने विचार समझाना चाहेगा वह अपने आप उर्दू में बोलेगा, और जो लेखक अपनी पुस्तक समस्त भारत के लिए सुलभ करना चाहेगा वह अपने आप उर्दू और उर्दू लिपि में लिखेगा। एक राजनीतिक आन्दोलन के कारण उर्दू और उर्दू-लिपि का इस देश की राष्ट्र-भाषा और राष्ट्र-लिपि हो जाना कितना अस्वाभाविक, अप्राकृतिक एवं अन्यायपूर्ण होगा यह बतलाने की जरूरत नहीं। और उर्दू के राज्य में प्रान्तीय भाषाओं की और भारतीय संस्कृति की क्या दशा होगी यह समझने के लिए अब अँगरेजी के राज्य के कारण प्रान्तीय भाषाओं और भारतीय संस्कृति पर जो गुजर रही है उसे जान लेना काफी होगा। यदि 'दक्षिण-भारत हिन्दी-प्रचार-सभा' को यही अभीष्ट हो तो वह 'दक्षिण-भारत हिन्दुस्तानी प्रचार-सभा' (सभा का गान्धी जी-द्वारा प्रस्तावित नया नाम) बने और हिन्दी के प्रचारक हिन्दी का बाना उतारकर हिन्दुस्तानी का बाना धारण करें और दक्षिणवालों को उन्हीं के रूप से उर्दू और उर्दू लिपि सिखाएँ।

ताली एक हाथ से नहीं बजती। एकता और मेल दो व्यक्तियों में होता है। जब तक मुसलमानों को एकता अभीष्ट नहीं, तब तक केवल हिन्दुओं के हिन्दी और हिन्दुस्तानीवाले दो दलों का कोई समझौता कुछ अर्थ नहीं रखता। जब तक उर्दू प्रान्तों की सरकारें उर्दू के स्थान में अपनी दो लिपियों सहित 'हिन्दुस्तानी' को प्रतिष्ठित करने के लिए तैयार नहीं तब तक हिन्दी प्रान्तों में हिन्दी-उर्दू के समन्वय का अर्थ है केवल हिन्दी का नाश और उसका उर्दू में परिवर्तित हो जाना, और जब तक मुसलमानों को हिन्दुस्तानी का मूल-मन्त्र—दोनों शैलियाँ और दोनों लिपियाँ—मान्य नहीं, तब तक हिन्दी और हिन्दू प्रान्तों में दोनों शैलियों और दोनों लिपियों के प्रचार का अर्थ है उर्दू और उर्दू लिपि को राष्ट्र-भाषा और राष्ट्र-लिपि बनाना।

गान्धी जी की नई परिभाषा कितनी अव्यावहारिक—विशेष कर इस निरक्षर देश के लिए—और अवैज्ञानिक भी है, इसके विषय में कुछ नहीं कहूँगा। यह कहने की भी जरूरत नहीं कि 'दक्षिण-भारत हिन्दी-प्रचार-सभा' दक्षिणवालों पर हिन्दी और देवनागरी, जो उनके लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संशोधित सुगम हैं, के साथ-साथ उर्दू और उर्दू लिपि का बोझ डालकर उनके साथ विशेष अन्याय करेगी और उतनी सफलता भी कदापि प्राप्त न कर सकेगी जो उसने गत २५ वर्षों में की है। वह कदाचित् उतनी लोकप्रिय भी न रहेगी। एक बहुत बड़े नेता की बात भी प्रकृति से अधिक देर तक नहीं लड़ सकती। 'दक्षिण-भारत हिन्दी-प्रचार-सभा' अपना कलेवर बदलने से पहले एक बार ठण्डे दिल से फिर विचार कर ले।

—रविशङ्कर शुक्ल

— —

सम्राट् अकबर की जन्म-तिथि

चौसा[1] और कन्नौज[2] के युद्धों ने भारत का राज्य मुग़लों के हाथ से छीनकर सूर अफगानों के हाथ में दे दिया था। निर्वासित मुगल सम्राट् हुमायूँ राजपूताने की मरुभूमि की खाक छानने के पश्चात् अमरकोट में निवास कर रहे थे। अमरकोट के राना वीरसाल छोटे से राज्य के स्वामी थे, फिर भी उन्होंने हुमायूँ का प्रेम से स्वागत किया था। हुमायूँ अमरकोट में बाईस अगस्त से ११ अक्तूबर, १५४२ तक रहे थे।[3] इस समय उनकी पत्नी हमीदाबानू गर्भवती थी[4]। उन्हें वहीं छोड़कर ११ अक्तूबर को हुमायूँ सिन्ध के स्वामी शाहहुसेन अरघून के ऊपर आक्रमण करने के विचार से सिन्ध की तरफ बढ़े। पन्द्रह ही कोस बढ़े होंगे कि उन्हें तारदी बेग ने पुत्र-जन्म का सुसमाचार सुनाया। यही बालक भारत के सर्वश्रेष्ठ मुगल-सम्राट् अकबर थे।

अकबर की जन्म-तिथि के विषय में विद्वानों में मत-भेद है। तत्कालीन इतिहासकारों से हमें दो तिथियाँ मिलती हैं। प्रथम जौहर जिसके कथनानुसार "राजकुमार का जन्म शनिवार, शाबान १४ को हुआ था। १४ शाबान को चन्द्रमा बद्र कहा जाता है।..... जलालउद्दीन और बदरुद्दीन के यही अर्थ होते हैं[5]।"

दूसरा गुलबदन बेगम[6] और अबुलफजल[7] के कथनानुसार अकबर का जन्म रविवार राजब ५ (अक्तूबर १५) को हुआ था।

प्रथम इतिहास के ऊपर निर्भर होकर कविराज श्यामलदास[8] और विंसेंट स्मिथ[9] ने शाबान १४ को ही अकबर का जन्म-दिन निश्चित किया है। वे निम्न-लिखित कारणों से अपने विचारों की पुष्टि करते हैं—

(१) जौहर हुमायूँ का खास सेवक था और उनके साथ होने के कारण वह अकबर के जन्म-दिन को अच्छी तरह जान सकता था। उसके विपरीत गुलबदन और अबुलफजल उस स्थान पर उपस्थित नहीं थे।

(२) जौहर के कथनानुसार अकबर का नाम बद्रुद्दीन था और इसका कारण पूर्णमासी (बद्र) के दिन पैदा होना था। दोनों बातें मिलती हैं।

(३) अकबर हुमायूँ का प्रथम पुत्र था और हमीदा-बानू को हुमायूँ बहुत प्यार करता था। इस कारण हुमायूँ चाहता था कि अकबर को नजर न लगा सके।

१—यह युद्ध जून २६, १५३९ में शेर खाँ और हुमायूँ बादशाह में हुआ। डा० बैनर्जी—हुमायूँ बादशाह प्रथम भाग—२२८ पृष्ठ।

२—यह युद्ध मई १७, १५४० को हुआ था। इसमें हुमायूँ की पराजय हुई और शेरशाह ने अफगान साम्राज्य की नींव डाली।

३—डा० बैनर्जी, 'हुमायूँ बादशाह' द्वितीय भाग ७५।

४—हुमायूँ ने हमीदाबानू से अगस्त, १५४१ में विवाह किया था। उस समय हमीदाबानू की अवस्था १४ वर्ष की थी।

५—हुमायूँ बादशाह का एक खास सेवक था। वह उनके साथ उनके निर्वासन-काल में, एक थोड़े से समय को छोड़कर, बराबर रहा। उसने हुमायूँ-सम्बन्धी अपने संस्मरण लिखे हैं।

६—गुलबदन बेगम ने हुमायूँनामा लिखा है। आप हुमायूँ की बहन थीं।

७—अबुलफजल अकबर के मित्र, अकबरनामा और आईन अकबरी के रचयिता हैं। अकबरनामा के लिखने के लिए सम्राट् ने राज्य के हर एक व्यक्ति से जो कुछ वह प्राचीन समय के विषय में जानता हो, लिखने की आज्ञा दी थी। एक इतिहास-विभाग भी कायम किया गया था। अकबर स्वयं ही इसको देखते और जो अशुद्धि होती, ठीक करते थे।

८—Journal of Asiatic Society of Bengal 1886.

९—Akbar, the Great, Mogul—V. Smith page 14.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुमायूँ स्वयं एक बहुत अच्छा ज्योतिषी था। अपने दुश्मनों से अकबर को बचाने के लिए उसने दूसरी तिथि (रविवार रजब १५) सबको बताई। क्योंकि ग्रह न मालूम होने से कोई शत्रु जादू या मन्त्र से अकबर को हानि नहीं पहुँचा सकता था। (स्मिथ)

(४) अकबर ने स्वयं अपने को और भी पूज्य बनाने के लिए रविवार निश्चित किया क्योंकि रविवार सूर्य का दिन है। मुगल बादशाह भी अपने को सूर्य का वंशज बताते थे। इसके सिवा रजब एक पवित्र महीना भी है।

इसके पहले कि इन चार कारणों के ऊपर हम ध्यान दें, पहले हमें जौहर की तिथि को देखना है। जौहर के कथनानुसार अकबर का जन्म शनिवार पूर्णमासी १४ शाबान के दिन हुआ था। परन्तु जब हम गणना करते हैं तब हमें यह मालूम होता है कि १४ शाबान, पूर्णमासी अवश्य है पर बृहस्पतिवार है।[१०] इसके सिवा हमें मालूम है कि करीब-करीब सभी तत्कालीन विद्वान् मानते हैं कि अकबर का जन्म रविवार को हुआ था। स्वयं अकबर के पुत्र सम्राट् जहाँगीर ने अपनी आत्मकथा में लिखा है कि उन्होंने बृहस्पतिवार और रविवार को पशुओं की हत्या बन्द करने की आज्ञा दी, क्योंकि पहला उनके सिंहासन पर बैठने का दिन है और दूसरा उनके पिता का जन्म-दिन।[११]

अब प्रश्न होता है कि जौहर ने क्यों १४ शाबान को जन्मदिन लिखा? हमें मालूम है कि जौहर ने अपने संस्मरण बहुत रोज बाद लिखे थे। अतः सम्भव है कि उसे ठीक-ठीक याद न रहा हो। इसके विपरीत गुलबदन बेगम ने[१२] यद्यपि उतने ही समय बाद अपनी पुस्तक लिखी फिर भी वे अकबर की माता हमीदाबानू बेगम के सम्पर्क में थीं और हमीदाबानू अपने पुत्र के जन्म-दिवस को नहीं भूली होंगी। इस कारण हमें गुलबदन बेगम की लिखी तिथि अधिक सही मालूम होती है। अबुलफजल ने जब अपना इतिहास लिखा तब जौहर की पुस्तक भी उसके सामने थी; क्योंकि अबुलफजल के इतिहास के लिए ही जौहर ने अपने संस्मरण लिखे थे। अबुलफजल ने निश्चय ही छानबीन के बाद अकबर की जन्मतिथि हमें दी है।

ऐसा प्रतीत होता है कि 'बद्र' सोचकर ही जौहर ने यह तिथि लिख दी थी। उसने अपनी स्मृति पर निर्भर होकर अपनी पुस्तक लिखी। कोई नोट उसके पास नहीं थे।

हमें यह भी नहीं भूलना चाहिए कि जौहर ने बहुत 'बद्र तिथियाँ' अपनी पुस्तक में दी हैं।

फिर कहा गया है कि बुरी नजर से बचाने के लिए अकबर का जन्म-दिन बदल दिया गया था। पर और किसी भी तैमूर वंश के राजकुमार का नाम नहीं बदला गया। बाबर ने हुमायूँ का नाम नहीं बदला। अकबर स्वयं ज्योतिषशास्त्र पर विश्वास करता था। फिर भी उसने अपने पुत्र सलीम (जहाँगीर) की जन्म-तिथि नहीं बदली। यद्यपि हम जानते हैं कि सलीम उसे बड़ी मिन्नतों और आशा-प्रतीक्षा के पश्चात् मिला था।

मुगल काल के बादशाह और शाहजादे बहुत-सा दान-पुण्य जन्म-दिन पर करते थे। 'तुलादान' अकबर ने अपने वंश में प्रारम्भ किया था। अगर अकबर ने सब दान गलत जन्म-तिथि पर किए थे तो फिर सभी बेकार हुए। ज्योतिष शास्त्र पर विश्वास करनेवाले से हम ऐसी भूल की आशा नहीं कर सकते।

यह कहना कि अकबर ने अपना अर्थ निकालने के लिए गलत तिथि निश्चित की, ठीक नहीं जँचता। यह सिर्फ स्मिथ की कल्पना है।

गुलबदन और अबुलफजल की तिथि को और भी फारसी के इतिहासकारों ने माना है। अब तक की पुस्तकों पर निर्भर रहकर हम अकबर की जन्मतिथि रविवार अक्तूबर १५, १५४२ ही कह सकते हैं और यही अकबर की शुद्ध जन्म-तिथि है।

—प्रोफेसर हरिशङ्कर, एम० ए०

१०—हुमायूँ बादशाह—डा० बनर्जी, भाग २ पृ० ७६।

११ Tuzuk-i-Jahangir by Rogers page 9.

१२—गुलबदन बेगम ने अकबर की जन्मतिथि रजब, ४, ९४९ हिजरी लिखी है। गणना से यह पता चलता है कि रविवार होना चहिए। एक गणना से रजब ५ होता है पर दूसरी गणना से (अगर गत दिन दूसरे दिन सूर्य के उदय के समय समाप्त हो तो) रजब, ४ होता है। अगर आधुनिक गणना रक्खें तो रजब, ५ ही होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विद्यापति के गीत

मिथिला के मधुर ग्राम्य जीवन पर विद्यापति के गीतों का जैसा व्यापक प्रभाव पड़ा है वैसा किसी का नहीं। वहाँ, सोते-जागते, उठते-बैठते, बालक हो अथवा वृद्ध, सभी के मुख से विद्यापति के एक-आध छन्द अनायास ही निकल जाते हैं। विवाह आदि जीवन के विभिन्न अवसरों पर मिथिला की ग्रामकन्याएँ विद्यापति के छन्द गाते नहीं अघातीं। यहाँ तक कि राहचलते गड़ेरिये और चरवाहों के मुँह से भी विद्यापति की कोमल पदावली सुनकर अनायास ही दङ्ग रह जाना पड़ता है। इतने प्रचलित हैं कवि शेखर के गीत कि कोई उनसे अछूता बचा नहीं रह सकता। यह सच है कि रामायण इत्यादि महाकाव्यों ने हमारे जीवन को कर्मनिष्ठ बनाने में बहुत हाथ बँटाया है परन्तु साथ ही साथ विद्यापति सरीखे कवियों ने अपने गीतों से हमारे जीवन के अणु-अणु में जिस मधुर स्रोत को बहाया है वह वन्दनीय है। विद्यापति से केवल मिथिला या मैथिली को ही नहीं, बल्कि हमारे राष्ट्र और राष्ट्रभाषा को नवीन स्वर मिला है। विद्यापति ने अपने गीतों के लिए कोई पौराणिक या ऐतिहासिक आधार नहीं ढूँढ़ा। वे राधा-कृष्ण को ही नायक और नायिका मान और हमारे और आपके दैनिक जीवन के सरस भाग को लेकर ही आगे बढ़े और सीधी-सादी भाषा में जिस भाव को व्यक्त करना चाहा पूर्ण रूप से व्यक्त किया। उन्होंने जीवन की जिन विभिन्न परिस्थितियों को अपने गीतों-द्वारा प्रदर्शित किया वह महाकाव्य ही में सम्भव है। फिर भी जितना प्रभाव हम पर इन गीतों का पड़ता है उतना महाकाव्य का नहीं। विरह-वेदना, व्याकुलता और तल्लीनता इत्यादि भाव तो विद्यापति के पदों में कूट-कूटकर भरे ही हैं, इसके अतिरिक्त इनके पदों की प्रमुख विशेषता यह है कि उनमें सदैव कोमल भावनाओं का स्रोत बहता रहता है जिसमें उच्छृङ्खलता, पागलपन और मस्ती का नाम-निशान नहीं। जीवन की क्रमिक मनोवैज्ञानिक दशाओं का जितना सजीव चित्रण आपको विद्यापति के पदों में मिलेगा, अन्यत्र नहीं। पुरुष का नारी के प्रति अनुराग-आकर्षण पुरातन है और इसी दैवी आकर्षण से दोनों एक दूसरे के प्रति अनुरक्त रहते हैं। कवि इसी मिलन के वातावरण को कौतूहल, विश्वास, आशा और आकुलता का पुट देकर मधुर और आकर्षक बनाता है।

कवि के कृष्ण राधा के लिए कितने व्याकुल हैं, और उस उद्विग्नता का व्यापक दिग्दर्शन कितनी सरलता से कवि कराता है —

यमुना क तिर उपवन उदवेगल
फिरि फिरि ततही निहारि
गोरस बेंचत अब इत जाइत
जनि जनि पुछ वन मारि।

शृंगार की सरसता में पदों की सुकुमारता इतनी जान डाल देती है कि अलङ्कारों की ओर अन्य कवियों की रचनाओं की तरह हमारा ध्यान ही नहीं जाने पाता। हम तो उसके माधुर्य में इतने विभोर हो जाते हैं कि मस्तिष्क को व्यर्थ की दौड़-धूप के लिए अवकाश ही नहीं रहता। नायिका के ही मुख से सुनिए—

चाँदसार लए मुख घटना करु
लोचन चकित चकोरे।
अमिय धोय आँचर धनि पोंछलि
दहो दिसि भेल उँजोरे।
कामिनि केने गढ़ली,
रूप सरूप मोयँ कहइत असम्भव
लोचन लागि रहली।

सौंदर्य को कवि सीधे-सादे अलङ्कारों में लपेटकर इस बारीकी से हमारे सामने उपस्थित करता है कि हम सहज ही में उसके कल्पना-चित्र पर मुग्ध हो जाते हैं। पथ में जाती हुई सुन्दरी नायिका का चित्र कवि ने किस ढङ्ग से खींचा है, देखिए—

जाइत देखलि पथ नागरि सजनि गे
आगरि सुबुधि सेयानि।
कनकलता सनि सुन्दरि सजनि गे
बिहि निरमाओल आनि।
हस्ति गमन जकाँ चलइत सजनि गे
देखइत राज कुमारि।
जिन कर एहनि सोहागिनि सजनि गे
पाओल पदारथ चारि।

हृदय को आकर्षित करने के लिए कवि सहज सौन्दर्य का चित्रण तो करता ही है, परन्तु उसे मत्त करने के लिए वह नायिका के और निकट पहुँचना चाहता है। बहुत-से कवि अपनी इस भावना को विकृत कर अश्लीलता की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस सीमा को भी सन्तरण कर जाते हैं जहाँ पहुँचना मङ्गलमय नहीं। परन्तु विद्यापति में ऐसी बात नहीं। वे तो ऐसे अवसर का निर्वाह इस खूबी से करते हैं कि देखकर दङ्ग रह जाना पड़ता है—

ससन परस खसु अम्बर रे
देखल धनि देह।
नव जलधर तर सञ्चर रे
जनि बिजुरी रेह।
आज देखल धनि जाइत रे
मोहिं उपजल रङ्ग।
कनक लता जनि सञ्चर रे
महिं निर अवलम्ब।

प्रिय को देखने की आकुलता और परवशता में बँधे हुए मन की पीडा को विद्यापति ने जैसा चित्रित किया है, वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। साथ ही साथ मन में छिपे भावों को पग-पग पर उभारने में भी विद्यापति ने खूब सफलता पाई है। राधा को श्रीकृष्ण के देखने की इतनी आतुरता है कि वह गरुड़ की गति और सुरपति की तरह सहस्र चक्षु पाने पर भी सन्तुष्ट नहीं होती। इस प्रेमावेश को किसी सीमा में नहीं बाँधा जा सकता। प्रत्येक शब्द करुणा से सना दिखाई देता है—

सुरपति पाए लोचन माँगओं
गरुड़ माँगओं पाँखि,
नन्द क नन्दन हौं देखि आवओं
मन मनोरथ राखि।

अधिकतर कवि प्रेम की अन्तिम सीमा पर पहुँचकर हृदय की विकलता दूर करने के लिए नायक-नायिका से आत्मोत्सर्ग या आत्मसमर्पण करा देते हैं। परन्तु विद्यापति सदा एक संसारी की तरह मन की स्नेहशीला और सुन्दर प्रवृत्तियों का सच्चा चित्र खींचकर कल्पना के सहारे प्रेम, दया, माया, ममता, मधुरिमा और लज्जा तथा विश्वास की स्वाभाविकता पर कहीं आघात नहीं करते। वे उसे बिना छेड़छाड़ किए स्वयं प्रवाहित होने देते हैं—

कुञ्ज भवन सयँ निकसलि रे
रोकल गिरधारी।
एकहि नगर बस माधव हे,
जनि कर बटमारी।
छाड़ कन्हैया मोर आँचर रे
फाटत नव सारी।
अपजस होयत जगत भरि रे
जनि करिअ उघारी।

इसके अतिरिक्त किसी वस्तु के पाने की लालसा जब मन में उदित होती है तो मनुष्य की पलकों पर एक स्वप्न नृत्य करने लग जाता है। वह स्वप्न को सत्य समझकर उसके पीछे दौड़ता है और जब सफलता नहीं मिलती तब उसका हृदय चूर-चूर हो बिखर जाता है। मानव-जीवन में ऐसे अवसर सदा आया-जाया करते हैं। इस पर कवि की उक्ति सुनिए—

चानन भरम सेबलि हम सजनी
पूरत सब मन काम,
कण्टक दरस-परस भेल सजनी
सीमर भेल परिनाम।

जब तक प्रेम बुद्धि के बोझ से हृदय में दबा रहता है, लज्जा भी सदा उसका साथ देती रहती है। परन्तु जब उसी हृदय में वासना का प्रसार हो जाता है तब वह लज्जा को फटकारकर आत्मसमर्पण कर देता है। इसी लिए विद्यापति की नायिका से अब वंशी की ध्वनि अधिक नहीं सही जाती। अब तो वह बिना आत्म-समर्पण किए मान नहीं सकती। वह कहती है—

सुनु रसिया,
अब न बजाऊ विपिन बँसिया।
बार बार चरनारबिन्द गहि
सदा रहबि बन दसिया।
कि छलहुँ कि होयब से के जाने
वृथा होयत कुल हँसिया।
अनुभव ऐसन मदन भुजङ्गम
हृदय मोर गेल डँसिया।
नन्दनन्दन तुअ सरन न त्यागब,
बलु जग होए दुर जसिआ।

एक-दो या कुछ पद ही नहीं, विद्यापति के सभी पद सौन्दर्य-निरूपण और भाव-प्रदर्शन में अद्वितीय हैं। उनमें जिस माधुरी का समावेश कराया गया है वह एकान्त वासिनी नहीं, सार्वभौम है। इनके पद किसी युग-विशेष को नहीं, नित्य जगत् के प्रतिनिधि हैं। विद्यापति के पदों में विद्रोह, विषमता और कटुता कहीं लेश मात्र भी नहीं, उसमें तो हमें अबाध आत्मतृप्ति मिलती है। साथ ही-साथ उससे हमारे हृदय में मङ्गलमयी शान्ति की भी स्थापना हो जाती है।

—रघुबरसिंह, एम० ए०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

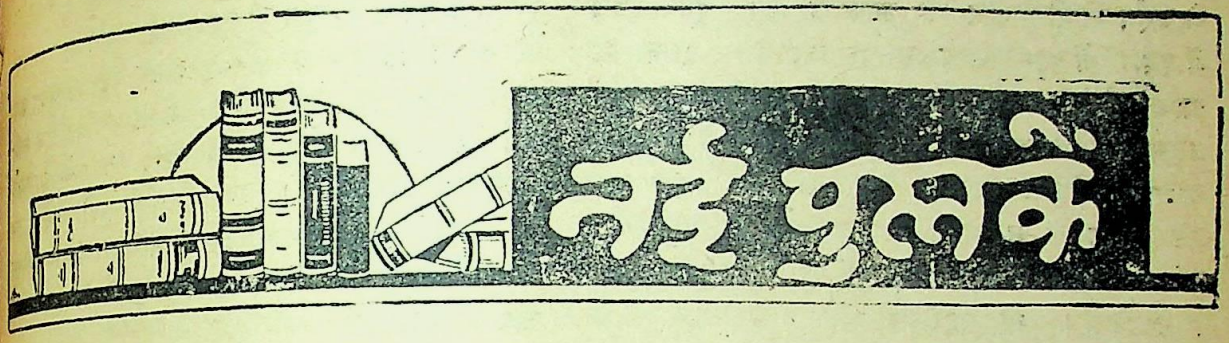

१—**खून के धब्बे**—लेखक, श्री मोहनसिंह सेंगर तथा प्रकाशक, प्रदीप कार्यालय, मुरादाबाद हैं। पृष्ठ-संख्या १३० और मूल्य १।) है।

प्रस्तुत कहानी-संग्रह में लेखक की ११ कहानियाँ दी गई हैं। सभी कहानियाँ विगत महायुद्ध से सम्बन्धित हैं और सैनिकों तथा अन्य युद्ध-पीड़ित व्यक्तियों के व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन का चित्रण करती हैं। युद्ध के आरम्भ से लेकर उसकी अन्तिम परिणति तक की घटनाएँ इन कहानियों के द्वारा क्रमिक रूप में पाठकों के सामने से गुज़र जाती हैं। परन्तु इन घटनाओं की योजना एक सीमित दृष्टिकोण से की गई है। लेखक का उद्देश्य फासिस्ट जर्मनी तथा बर्बर जापानियों की अमानुषिकता और नारकीय अत्याचारों का दिग्दर्शन कराके उसके प्रति पाठकों के मन में तीव्र घृणा तथा कम्युनिस्ट रूस और पीड़ित चीन की जनता के प्रति सहानुभूति उत्पन्न करना है। इस विचार से कहानियों में एकरसता कही जा सकती है, पर लेखक का रचना-कौशल, घटनाओं का सङ्कलन, शैली का आकर्षण तथा मानवता के प्रति उसकी व्यापक सहानुभूति के कारण कहानियों की एकरसता का पर्याप्त परिमार्जन हो जाता है। मनोरञ्जन के साथ ये कहानियाँ पाठकों का ध्यान राजनीतिक, सामाजिक तथा मानवता की अन्य व्यापक समस्याओं की ओर प्रेरित करती हैं। आशा है, 'खून के धब्बे' का स्वागत होगा।

२—**रातरानी**—लेखक, श्री शम्भूनाथसिंह तथा प्रकाशक, प्रदीप कार्यालय, मुरादाबाद हैं। पृष्ठ-संख्या ११४ तथा मूल्य १।) है।

इस कहानी-संग्रह में लेखक की ६ कहानियाँ हैं। प्रायः सभी कहानियों में दलित, निर्धन, पीड़ित समाज अथवा दलन, निर्धनता और पीड़ा के विरुद्ध सङ्घर्ष करने-वाले निम्न-मध्यवर्ग की करुण कथा कही गई है। अधिकांश कहानियाँ भाव-द्वन्द्व और मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत करती हैं। शैली रोचक और भाषा परिमार्जित है। लेखक के प्रथम प्रयास की दृष्टि से उसे इन कहानियों में प्रशंसनीय सफलता मिली है। रातरानी का कहानी-प्रिय पाठकों में निश्चय ही स्वागत होगा।

३—**पेलमैनिज़्म**—प्रकाशक, पेलमैन इन्स्टीट्यूट, पेलमैन हाउस, ब्लूम्जबरी स्ट्रीट, डब्ल्यू० सी० १ लन्दन है। पृष्ठ-संख्या ५६ है। पुस्तक अँगरेजी में है।

लन्दन की पेलमैन इन्स्टीट्यूट मानव-मस्तिष्क की ट्रेनिंग के लिए एक व्यापारिक संस्था है। देहली और कलकत्ते में भी इसकी शाखाएँ हैं। इस संस्था के सञ्चालकों का दावा है कि वे मनुष्य को उसके मस्तिष्क की अज्ञात और दबी हुई शक्तियों का उपयोग सिखाकर तथा उसकी अनेक मानसिक दुर्बलताओं को दूर करके उसे सफलता का मार्ग सुझा सकते हैं। प्रस्तुत पुस्तक इस विषय का चतुर्थ पाठ है जो मानसिक प्रवृत्तियों के नियन्त्रण और चित्त की एकाग्रता के सम्बन्ध में नियम और कतिपय अभ्यास बताता है। इस विषय में उत्सुकता रखनेवाले उक्त संस्था के साहित्य से लाभ उठा सकते हैं।

४—**श्री बदरीनाथ दर्शन**—लेखक श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारी और प्रकाशक श्री शान्तानन्दनाथ, श्री श्रवणनाथ ज्ञानमन्दिर, हरिद्वार हैं। पृष्ठ-संख्या ४१२ और मूल्य ५) है।

श्री ब्रह्मचारीजी ने इस पुस्तक में श्री बदरीनाथ-यात्रा का विवरण बड़े विस्तार और पूरे ब्योरे के साथ दिया है। पुस्तक तीन खण्डों में विभाजित है। प्रथम खण्ड में बदरीनाथ तथा तत्सम्बन्धी तीर्थों का माहात्म्य पौराणिक आख्यानों के आधार पर बताया गया है। यह खण्ड लगभग २०० पृष्ठों का है। इससे इसके विस्तार का अनुमान लगाया जा सकता है। पौराणिक कथाएँ यों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी अत्यन्त रोचक होती हैं और उस पर श्री ब्रह्मचारीजी के वर्णन की शैली और भी आकर्षक है। दूसरे खण्ड में इन तीर्थों का परिचय कराया गया है। इसका भी आधार भौगोलिक और पौराणिक है। अन्तिम खण्ड में ब्रह्मचारीजी की बदरीनाथ आदि उत्तराखण्ड के तीर्थों की यात्रा का सविस्तर विवरण दिया गया है। इस प्रकार इस पुस्तक से न केवल तीर्थ यात्रियों को ही विशेष जानकारी प्राप्त होगी, वरन् धार्मिक जिज्ञासुओं को भी लाभ होगा। श्री बदरीनाथ-दर्शन के पाठक को घर बैठे उत्तराखण्ड की यात्रा का आनन्द आ सकता है। ब्रह्मचारीजी ने यात्रा-सम्बन्धी प्रत्येक बात इतने विस्तार और प्रामाणिक ब्योरे के साथ दी है कि यात्रियों के लिए यह पुस्तक एक पथ-प्रदर्शक का काम दे सकती है।

पुस्तक की छपाई और गेट-अप भी अच्छा है।

—ब्रजेश्वर वर्मा

५—हमारा साथी रूस—सम्पादक, श्री एल० एस० मिश्र, बी० ए०; प्रकाशक, हिन्दुस्तानी बुकडिपो, लखनऊ; पृष्ठ-संख्या १२०; सचित्र पुस्तक का मूल्य दो रुपए।

योरप का दूसरा महायुद्ध समाप्त हो चुका है; लेकिन इस भयङ्कर रक्तदान में रूस के नर नारियों की जिस वीरता, धैर्य और त्याग की त्रिवेणी ने शत्रुओं को परास्त कर दिया, वह ऐतिहासिक बहादुरी कभी भुलाई नहीं जा सकती।

रूस की शक्ति तथा उसका मुल्की और फौजी इन्तजाम कितना उन्नत और सुसङ्गठित है और महायुद्ध में रूस-वासियों ने कहाँ, किस शौर्य का परिचय दिया, यही सच्ची घटनाएँ कहानियों के रोचक ढङ्ग पर इस पुस्तक में संगृहीत की गई हैं।

अपने देश पर मर मिटने की भावना से ओत-प्रोत रहनेवाले बहादुर रूसियों की ये गाथाएँ हमारे देश के बच्चों के लिए न केवल पठनीय, प्रत्युत अनुकरणीय भी हैं। छपाई-सफाई साफ-सुथरी और गेट-अप आकर्षक है। परन्तु भाषा में उर्दू शब्दों की इतनी भरमार है कि साधारणतः हिन्दी-भाषी पाठकों के लिए वह दुरूह सिद्ध होगी।

६—रँगे सियार (कहानी-संग्रह)—अनुवादक, पण्डित रूपनारायण पाण्डेय; प्रकाशक, हिन्दुस्तानी बुकडिपो, लखनऊ; दुरङ्गा आवरण; पृष्ठ-संख्या १२४; मूल्य सवा रुपया।

बङ्गभाषा की छः सुन्दर और लम्बी-लम्बी कहानियों के इस अनुवाद में बहुत ही सुन्दर और कलात्मक कहानियों का चयन किया गया है। संग्रह की लगभग सभी कहानियाँ अत्यन्त रोचक हैं। भाषा सरल और प्रवाह-पूर्ण है। कहानी-प्रेमियों के लिए यह संग्रह यथेष्ट मनोरञ्जक सिद्ध होगा।

इतना सब होने पर भी दो त्रुटियाँ इस संग्रह में बहुत खटकती हैं; एक तो जिन कथाकारों की ये कहानियाँ हैं, उनका संग्रह में कहीं कोई नामोल्लेख तक नहीं दिया गया. दूसरे प्रूफ की गलतियों से पुस्तक सराबोर है। आशा है, आगामी संस्करण में इन त्रुटियों को दूर करने का प्रयत्न अवश्य किया जाएगा।

७—जागरण (नाटक)—लेखिका, कुमारी प्रभा पारीक, बी० ए० और प्रकाशक, श्री जाफरी ब्रदर्स, अनवार अहमदी प्रेस, इलाहाबाद हैं। पृष्ठ-संख्या ६८ और मूल्य ॥।) है।

जागरण की आधुनिक बेला में नवीन विचारों की धारा इतनी तीव्रता से प्रवाहित हो रही है कि आज की नारी द्वार-देहरी की सीमाओं के भीतर रहकर अपने कार्य-क्षेत्र को सीमित रखने की भावनाओं को कुचलकर नवीनता और जागति का शङ्खनाद करने के लिए न केवल उत्सुक हो उठी है, प्रत्युत सक्रिय रूप में कुछ कर दिखलाने का भी परिचय देने लगी है।

प्रस्तुत नाटक में आधुनिक स्त्री-पुरुषों के ऐसे ही द्वन्द्वात्मक विचार-बिन्दुओं का चित्रण किया गया है—ऐसा चित्रण जिसका उद्देश्य है 'पुराने सब नियमों और बन्धनों को तोड़कर एक स्वतन्त्र स्त्री-राज्य स्थापित किया जाए। जब तक ऐसा न होगा, इन पुरुषों की अक्ल ठिकाने न आयेगी।'

इस उद्देश्य से हमारा मतभेद हो सकता है, लेकिन इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि नारियों को निष्क्रिय बनाने का पुरुषों ने जो एकाङ्गी रुख धारण किया, उसी की यह प्रतिक्रिया है।

कुमारी प्रभा पारीक ने सफलतापूर्वक इन बातों की पृष्ठभूमि पर इस नाटक की रचना की है। नाटक मनोरञ्जक और अभिनेय है।

८—पुकार (कहानी-संग्रह)—लेखिका, श्रीमती कमला त्रिवेणीशङ्कर और प्रकाशक, श्री लक्ष्मी प्रकाशन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन्दिर, गोरखपुर हैं। पृष्ठ-संख्या २२४ और मूल्य २॥) है।

हिन्दी-संसार की इनी-गिनी कुशल कहानी-लेखिकाओं में श्रीमती कमला त्रिवेणीशङ्कर का अपना विशिष्ट स्थान है। प्रस्तुत कहानी-संग्रह में आपकी अठारह छोटी-बड़ी कहानियाँ सङ्कलित की गई हैं। इन कहानियों में भारतीय समाज की विभिन्न समस्याओं का मार्मिक चित्रण किया गया है—ऐसा चित्रण जिसमें लेखिका की गहरी अनुभूति और बारीक अध्ययन का पुट है। अधिकांश कहानियों में नारी-जीवन का वह नाजुक चित्र उपस्थित किया गया है जिसमें उपपत्नी को अपना जीवन तिल-तिल कर होम कर देना पड़ता है। सन्देह नहीं कि नारी-जीवन का यह चित्रण अत्यन्त सफल हुआ है; लेकिन एक ही संग्रह में इसी प्रकार की अधिकांश कहानियों का समावेश, पाठकों को अपनी ओर आकृष्ट करने में सफल नहीं हो सकेगा। यद्यपि इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि किसी भी कलाकार के अन्तस्तल पर चोट करनेवाली बात ही उसके सृजन में विभिन्न रूप लेकर अवतरित होती और अपना महत्त्व रखती है, फिर भी एक ही ढङ्ग की अधिकांश कहानियाँ न देने का लोभ यदि संवरण किया जाता, तो इस संग्रह का अपेक्षाकृत अधिक महत्त्व बढ़ जाता। प्रूफ-सम्बन्धी अशुद्धियाँ भी संग्रह में काफी रह गई हैं।

इन कहानियों की सबसे बड़ी विशेषता है नारी-समाज का प्रतिनिधित्व। गार्हस्थ्य जीवन में भारतीय आदर्शों की रक्षा करते हुए नारी को कितने त्याग की आवश्यकता पड़ती है, कितनी उदार होने की उसे पग-पग पर जरूरत महसूस होती है और गृहदेवी के रूप में उसे कितनी विषम परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है, इन सारी समस्याओं का समाधान इन कहानियों में दिया गया है। यह बहुमुखी चित्रण ही श्रीमती कमला त्रिवेणीशङ्कर की सफलता है, जो पाठकों को उलझाने में और कहानियों की रोचकता में चार चाँद लगाने की क्षमता रखता है।

हमें विश्वास है कि भविष्य में श्रीमतीजी और भी अधिक कलात्मक एवं स्वस्थ कहानियाँ लिखकर अपनी कृतियों से माँ भारती का भाण्डार सम्पन्न करने में सफलता प्राप्त करेंगी।

—देवीदयाल चतुर्वेदी 'मस्त'

९ —सङ्गम - लेखक, श्री नारायण श्यामराव चिताम्बरे, बी० ए०; प्रकाशक, शिवाजी प्रकाशन-मन्दिर, लखनऊ; पृष्ठ-संख्या २००; मूल्य ३) रुपए।

प्रस्तुत आलोच्य पुस्तक में हिन्दी के नवोदित कहानी-लेखक श्री चिताम्बरेजी की सोलह मौलिक कहानियाँ संगृहीत हैं।

इन सोलह कहानियों में से तेरह कहानियाँ पूर्ण रूप से सामाजिक हैं—शेष तीन ऐतिहासिक घटनाओं के आधार पर लिखी गई हैं। यों तो आजकल नवोदित लेखकों-द्वारा सामाजिक कहानियाँ बहुतायत से लिखी जा रही हैं, किन्तु यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि श्री चिताम्बरेजी की इन कहानियों में उन औसत कहानियों से कुछ अधिक—कुछ विशेष—अवश्य है; इनमें उस तन्त्र का सफलतापूर्वक प्रयोग किया गया है, जो सामाजिक कहानियों के लिए अत्यावश्यक है।

लेखक महोदय ने अधिकांश कहानियों में मध्यम वर्ग का प्रश्रय लिया है। उन्होंने इस वर्ग की कुछ कुरीतियों और अप्रगतिशीलता का सुस्पष्ट विश्लेषण किया है। विधवा विवाह की आवश्यकता, वृद्धावस्था में नवोढ़ा से विवाह करने का निषेध आदि विषयों पर जोरदार आवाज उठाई गई है। किन्तु लेखक महोदय की सबसे बड़ी विशेषता नारी-समस्या का सफल अवलम्बन है। लगता है जैसे उन्होंने नारी के मानस का एकदम निकट से अध्ययन किया है और तभी वे 'नारी' और 'नारीत्व' की मनोविश्लेषणात्मक अभिव्यञ्जना कर सके हैं। समाज के अन्तरतम तक पहुँचकर वहाँ का दृश्य पाठकों के सम्मुख रखने में लेखक सफल हुए हैं इसमें सन्देह नहीं। और इस दृष्टि से उनकी ये सामाजिक कहानियाँ वास्तव में 'सामाजिक' कही जा सकती हैं।

संग्रह की तीनों ऐतिहासिक कहानियाँ भी देश-प्रेम, त्याग और स्फूर्ति के सन्देश से भरी हुई हैं।

भाषा के प्रवाह में कहीं-कहीं अस्पष्टता आ गई है।

छपाई अच्छी है। गेट-अप सुन्दर है, किन्तु कागज मामूली है और इस दृष्टि से पुस्तक के सजिल्द होते हुए भी तीन रुपए मूल्य कुछ अधिक जान पड़ता है।

आशा है, लेखक महोदय भविष्य में और भी सुन्दर कहानियाँ हिन्दी-संसार को भेंट करेंगे।

—गोविन्दराव मराठे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रभाषा का स्वरूप

मन्दार में बिहार-प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के १६वें अधिवेशन के अवसर पर राष्ट्रभाषा का स्वरूप निरूपण करते हुए बाबू राजेन्द्रप्रसाद ने जो भाषण किया है वह हिन्दी और हिन्दुस्तानी दोनों के समर्थकों के निकट समान रूप से ग्राह्य हो सकता है। उक्त भाषण का सारांश साप्ताहिक 'कर्मवीर' के अनुसार इस प्रकार है—

देश में इन दिनों राष्ट्रभाषा के सम्बन्ध में हिन्दी, उर्दू और हिन्दुस्तानी का जो विवाद उठ खड़ा हुआ है, उसके सम्बन्ध में भी मैं अपना विचार रखता हूँ। साहित्यिक जो भाषा लिखेंगे, वही भाषा आगे चल सकेगी। जो चीज जटिल हिन्दी अथवा जटिल उर्दू में लिखी जाएगी, वह आगे चलकर मर जाएगी। भाषा में जीव है, जीवन दान करने की शक्ति है। जिस साहित्य में सत्य और सुन्दरता है, वह अवश्य जीवित रहेगा। अच्छी-से-अच्छी भाषा में भी असुन्दर और असत्य चीजें चिरस्थायी नहीं हो सकतीं।

मैं इस विवाद को बढ़ाना नहीं चाहता। जो साहित्यिक हैं और अच्छी-से-अच्छी हिन्दी या उर्दू में अपने भावों को रख सकते हैं, वे उसी तरह रक्खें। भाव पर ही भाषा का जीवन निर्भर है। यदि हम सच्चा सुन्दर साहित्य निर्माण नहीं कर सकते तो भाषा की सारी कोशिश व्यर्थ है।

सम्मेलन जो करना चाहता है, उसे सोच-समझकर वह करे। इधर-उधर की चीजों पर ध्यान देकर अपनी और जनता की शक्तियों का ह्रास न करे। १९३० ईसवी में दण्डी यात्रा के समय कुछ लोगों ने महात्मा गान्धी से यह अनुरोध किया था कि आप अपने आन्दोलन के समय एक ऐसा भाषण कीजिए, जिसका रेकार्ड बनाया जाए ताकि देश के कोने-कोने में आसानी से आपके विचारों का प्रचार हो सके। गान्धी जी ने जवाब में कहा—यदि मेरी बात में सचाई है तो बिना रेकार्ड के ही लोग उसे सुन लेंगे। उसी तरह, जिस साहित्य में सचाई है, वह चाहे जिस भाषा में हो अवश्य जीवित रहेगा। अतएव मैं अपने को इस झगड़े से अलग रखना चाहता हूँ।

मैं साहित्यिक नहीं और न होने का दावा रखता हूँ। राष्ट्रभाषा-प्रचार के काम में मैं रहा हूँ। मैं हिन्दी को भारत की राष्ट्रभाषा मानता हूँ। इसके प्रचार के लिए मुझसे जो कुछ बन पड़ा है, मैंने किया है।

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के दो कार्य हैं :—(१) साहित्य-निर्माण और (२) राष्ट्रभाषा-प्रचार। उसी दूसरे काम में थोड़ा सहयोग करने के कारण मैं सम्मेलन के ऊँचे से-ऊँचे पद पर पहुँचाया गया हूँ। मैं हिन्दी का प्रचार—राष्ट्रभाषा का प्रचार - राष्ट्रीयता का मुख्य अङ्ग मानता हूँ। मैं चाहता हूँ कि वह भाषा ऐसी हो, जिसमें हमारे विचार आसानी से साफ-साफ स्पष्टतापूर्वक व्यक्त हो सकें। इस सम्बन्ध में हमें दो-तीन चीजों को ध्यान में रखना चाहिए—(१) राष्ट्रभाषा ऐसी होनी चाहिए, जिसे केवल बिहार के ही लोग न समझें; बल्कि और-और प्रान्तों में भी सुगमता से पहुँचा सकें। जब यह सवाल उठा कि बङ्गाल, गुजरात, तेलगु, मद्रास आदि प्रान्तों के लोगों के आसानी से समझने के लिए हमारी राष्ट्रभाषा का रूप कैसा हो, तब हम लोगों को सोचना पड़ा कि इन सब भाषाओं में संस्कृत का समावेश हो चुका है। इन संस्कृत शब्दों को, जिनका समावेश उपर्युक्त भारतीय भाषाओं में हो चुका है, हिन्दी से निकालना हम कदापि नहीं कर सकते। उन्हें निकालकर हम हिन्दी को उन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रान्तों के लोगों के लिए और कठिन बना देंगे। (२) साथ ही, उत्तरी भारत में बहुत-से लोग अरबी-फारसी मिश्रित भाषा का प्रयोग करते हैं। उन लोगों के लिए हिन्दी को संस्कृत के जटिल शब्दों से कठिन और दुष्कर बनाना भी ठीक नहीं। एक तरफ हम लोग अहिन्दी-भाषी प्रान्तों के लोगों को अपनी ओर खींचना चाहते हैं और दूसरी ओर हिन्दी-भाषी प्रान्तों के सभी लोगों को एक साथ बाँधकर ले चलना चाहते हैं। (३) नाम से हमें कोई झगड़ा नहीं। हिन्दी, या उर्दू या हिन्दुस्तानी किसी भी नाम का प्रयोग कोई करे, हमें आपत्ति न होगी। राष्ट्रभाषा वही भाषा हो सकती है जिसमें जो शब्द प्रचलित हो गए हैं, वे रहें। भाषा ऐसी चीज नहीं जो कमीटियों में प्रस्तावों से बने। समय और स्थिति के प्रभाव से ही राष्ट्रभाषा का निर्माण होगा। अगर मैं हिन्दुस्तानी का पक्षपाती हूँ, तो मेरी हिन्दुस्तानी का स्वरूप कठिन दुरूह उर्दू नहीं, और न कठिन संस्कृतमयी हिन्दी है।

साहित्य और राष्ट्रभाषा में अन्तर है। हो सकता है, साहित्य की भाषा कठिन हो। वैद्यक शास्त्र, 'सर्जरी', 'मेडिसीन' आदि के ग्रन्थों की भाषा कठिन होगी ही। उनमें कुछ अँगरेजी शब्दों का भी प्रयोग होगा ही। पर हिन्दी के पारिभाषिक शब्द हमारी संस्कृति के मुताबिक 'संस्कृत' के से ही लेने होंगे, कहीं-कहीं अँगरेजी से भी सहायता लेनी होगी।

समाचारपत्रों तथा बोलचाल की भाषा

समाचार पत्रों की भाषा उच्च साहित्य की भाषा से भिन्न होगी और बोलचाल की भाषा एक तीसरे प्रकार की होगी। बङ्गाल, गुजरात प्रभृति अहिन्दी प्रान्तों में इसी तीसरी कोटि की भाषा राष्ट्रभाषा के रूप में प्रचारित होगी। इसे दूसरी भाषाओं से कोई झगड़ा नहीं है। तेलुगु और फ्रांटियर (सीमा प्रान्त) के भाई भी जिसे समझ सकें, वही भाषा राष्ट्रभाषा है। साहित्य-सम्मेलन की ओर से इस राष्ट्रभाषा का जब विरोध होता है, तो मुझे बड़ा अफसोस होता है।

मिस्टर चर्चिल का अग्निमय भाषण

गत ५ मार्च को मिसूरी (अमरीका) में मिस्टर चर्चिल ने जो भाषण किया है उससे सारे संसार में खलबली मच गई है और लोग तृतीय महायुद्ध की आशङ्का से भयभीत हो गए हैं। उस भाषण का सारांश साप्ताहिक 'आज' के अनुसार इस प्रकार है—

युद्ध रोकने और विश्वसङ्गठन की दृढ़ता के लिए अँगरेजीभाषी राष्ट्रों का एक होना आवश्यक है। बन्धुत्व की इस एकता के लिए केवल मित्रता और आपसी समझौता ही आवश्यक नहीं वरन् सैनिक परामर्शदाताओं का घनिष्ठ सम्बन्ध भी होना चाहिए। शस्त्रास्त्रों के बनाने और युद्ध-सम्बन्धी शिक्षा प्राप्त करने के सिलसिले में दोनों के विशेषज्ञों को एक ऐसी योजना पर विचार करना चाहिए जिससे दोनों देशों के सैनिक अफसर एक दूसरे देश में जाया करें।

इसके साथ ही पारस्परिक सुरक्षा के लिए संयुक्त नौसेना और वायु-सेना का निर्माण होना चाहिए। इससे अमरीका की शक्ति दूनी हो जाएगी और ब्रिटेन भी लाभान्वित होगा। यों तो सामान्य नागरिकता का सिद्धान्त ही सबसे अधिक उपयोगी होगा; किन्तु इसे हम भविष्य के लिए छोड़ते हैं। दुनिया में अन्धकार-युग फिर लौट सकता है और आज की वैज्ञानिक उन्नति कल के समस्त मानव-समाज को नष्ट कर सकती है। पता नहीं सोवियट रूस और उसका अन्ताराष्ट्रीय कम्यूनिस्ट सङ्गठन क्या करे अथवा उसके विस्तार की सीमा क्या होगी। अणु-बम का रहस्य अभी किसी को नहीं बताया जाना चाहिए। पर देखा जा रहा है कि कम्युनिस्टों का दावा क्षण-प्रतिक्षण बढ़ता जा रहा है, और वे अधिनायकशाही नियन्त्रण की ओर कदम बढ़ा रहे हैं। रूस की करनी से आज का यूरोप वही नहीं रहा जिसके लिए हमने युद्ध किया। ब्रिटेन और अमरीका के अतिरिक्त कम्यूनिस्ट अथवा पाँचवें कालम के लोग सर्वत्र ईसाई सभ्यता के लिए खतरा उपस्थित कर रहे हैं। वर्साई की सन्धि के बाद का विश्व आज पुनः उपस्थित है।

यह कहना सर्वथा भूल है कि युद्ध समाप्त हो गया। मेरा विश्वास है कि तीसरा युद्ध अनिवार्य और आवश्यक है। ऐसा मैं इसलिए कह रहा हूँ कि हमारा भाग्य हमारे हाथ है और हममें यह शक्ति है कि हम भविष्य को सुरक्षित रक्खें।

यह ठीक है कि रूस युद्ध नहीं चाहता; वह तो केवल युद्ध का फल चखना चाहता है; साथ ही अपनी शक्ति और सिद्धान्त का विस्तार भी। खुश करने की नीति अच्छी नहीं होती। मैं जानता हूँ कि हमारे रूसी मित्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शक्ति के सबसे बड़े पुजारी और सैनिक शक्ति की हीनता को सबसे अधिक घृणित समझनेवाले हैं। फिर भी हमारा विश्वास है कि यदि पश्चिमी लोकतान्त्रिक राष्ट्र सटकर खड़े हो जाएँ तो कोई भी उन्हें छेड़ने अथवा शक्ति की आजमाइश करने का साहस न करेगा। इसके प्रतिकूल सुरक्षा की गारण्टी तैयार हो जायगी।

भारतीय पत्रों की समस्याएँ

प्रयाग में पिछले दिनों 'अखिल भारतीय-समाचार-पत्र-सम्पादक-सम्मेलन' का उत्सव धूमधाम से हुआ था। उक्त अवसर पर संस्था के मनोनीत सभापति और 'अमृत-बाजार पत्रिका' के सम्पादक श्री तुषारकान्ति घोष ने जो भाषण किया था उससे भारतीय-समाचारपत्रों की वर्त्तमान अवस्था और समस्याओं पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। आपके भाषण के मुख्य अंश का अनुवाद नीचे दे रहे हैं—

प्रेस और सूचना-विभाग को स्वतन्त्रता तभी मिल सकेगी जब कि सरकार और उसकी नीति में क्रान्तिकारी परिवर्तन हो। प्रेस-स्वतन्त्रता भारत की शान्ति के लिए उतनी ही आवश्यक है जितनी विश्वशान्ति के लिए। हमें प्रेस के लिए कोई शाही-चार्टर नहीं चाहिए। हम चाहते हैं कि पत्रों को सरकारी सनक पर अतिरिक्त यातनाएँ न दी जाएँ और जुर्माने न किये जाएँ। हम ब्रिटिश प्रेसों की भाँति आजादी चाहते हैं। साथ ही अमरीका और ब्रिटेन में भारतीय समाचारों पर लगी रोक को उठाने के लिए राष्ट्रीय-भारत-समाचार-विभाग की स्थापना की जाए।

सन् १९४६ के आर्डिनेन्स नं० १ के अनुसार पत्रों पर ११३ युद्ध आर्डिनेन्स लगाए गए। बाद में इसमें सुधार करके कहा गया कि अब अधिक जुर्माने न होंगे। या दण्ड अधिक सख्त न होंगे। यह सुधार चमकीला अवश्य है किन्तु सोना नहीं है। विश्वयुद्ध का अन्त हो गया, किन्तु सरकार का पत्रों से युद्ध समाप्त नहीं हुआ। समाचारों का दमन बङ्गाल अकाल के समय जैसा हुआ वह सभी जानते हैं।

सम्पादकों को चाहिए कि वे ब्रिटेन के सामाजिक चार्टर के अनुसार कार्य करें। इससे धनी, निर्धनी, युवा और वृद्ध सभी को लाभ पहुँचता है। मैं सम्पादकों के वेतन और पेंशन के सम्बन्ध में आप अपने कार्य-काल में ही कुछ कर सका तो अपने को बड़ा धन्य समझूँगा।

अगर चुनाव के बाद राष्ट्रीय सरकार कायम होती है तो प्रेस अवश्य आजादी की साँस ले सकेंगे और अगर कोई दूसरा आन्दोलन छिड़ा तो सबसे पहला वार प्रेस पर होगा। गत अगस्त आन्दोलन में नेताओं की गिरफ्तारी के बाद नृशंस अत्याचार हुए किन्तु पत्रों में एक पंक्ति भी छापने पर निषेध था। सरकार भारत-रक्षा विधान को तुरन्त वापस ले ले।

मेरे कई मित्र सम्पादकों ने कहा है कि अगर पत्रों में कहीं पूँजीवाद घुस गया तो पत्रकार-कला एक मिशन न रहकर एक पेशा हो जाएगा। मैं इससे परिचित हूँ किन्तु मुझे विश्वास है कि अगर हम लोग उत्साह के साथ मिलकर काम करेंगे तो हमारे देश के पत्रों से अमरीकन पत्रकार कला का यह प्रभाव समाप्त हो जाएगा।

मराठी साहित्य के भीष्म पितामह

साहित्य की अभिवृद्धि के लिए यह परमावश्यक है कि हम अन्य प्रान्तीय भाषाओं के साहित्य तथा साहित्यकारों से अपना सम्पर्क स्थापित करें। उस दिन काशी के पत्रकार-सङ्घ ने मराठी के एक प्रसिद्ध-साहित्यिक की अभ्यर्थना करके उचित कार्य किया है। उनका नाम है भार्गवराय कल 'मामा' वरेरकर इस अवसर पर प्रोफेसर सतीश कालेलकर ने उनका जो परिचय दिया वह 'जागृति' में इस प्रकार छपा है—

मामा वरेरकर ने मराठी साहित्य ही नहीं भारतीय साहित्य में नई परम्पराएँ स्थापित की हैं। आप पहले डाकखाने में कर्मचारी थे पर १९१८ में नौकरी त्याग दी और साहित्य को ही उपजीविका बनाया। आपने सबसे पहले "प्रगतिशील", जिसे मराठी में 'पुरोगामी' कहते हैं, सङ्घ स्थापित किया। आपने मराठी में ८२ पुस्तकें रची हैं। इसके अतिरिक्त सामयिक पत्रों में जो रचना छपी है वह भी ५ हजार पृष्ठों से कम नहीं है। इनमें उपन्यास, कहानी, लेख सभी हैं, पर मामा प्रमुख रूप से नाटककार ही हैं। आपने मराठी रङ्गमञ्च में जीवन-सञ्चार किया।

बम्बई में आपने शतसांवत्सरिक महोत्सव आयोजित किया। १४ दिन तक प्रतिदिन ८ हजार नर-नारी इसमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संख्या ४]

शामिल हुए। प्राचीनतम नाटककारों और अभिनेताओं को आप इसमें खींच लाए। इसमें एक लाख रुपया एकत्र हुआ जिसमें से ४२ हजार से आधुनिक ढङ्ग की रङ्गशाला बनाई जाएगी जहाँ प्रति वर्ष नाटक महोत्सव होगा। सन् '४२ की घटनाओं पर रचित आपका 'धरनी-धर' नाटक इस वर्ष इसमें अभिनीत होगा।

मामा ने पुरानी 'रायकीय नाटक' परम्परा भी, जिसमें पौराणिक कथावस्तु द्वारा आधुनिक राजनीति का चित्रण होता था, चलाई। सबसे बड़ा काम आपका मराठी साहित्य-परिषद् का पुनः सङ्गठन है। अभी तक सभापति का वरण स्वागत-समिति करती थी। अब आपने प्रादेशिक सङ्गठनों को यह अधिकार देकर परिषद् को पूर्ण प्रतिनिधि रूप दे दिया है।

हरिजन-समस्या के सम्बन्ध में

भारत की विकट समस्याओं में हरिजन-समस्या अपना विशेष स्थान रखती है। इसके समाधान के लिए इधर महात्मा गान्धी ने सबसे अधिक प्रयत्न किया है और अब जान पड़ता है कि कांग्रेस शासनाधिकार ग्रहण करने पर इस सम्बन्ध में अधिक प्रभावोत्पादक प्रयत्न करेगी। इस प्रकार का संकेत कांग्रेस के प्रमुख नेता सरदार वल्लभ भाई पटेल ने किया है। इस सम्बन्ध में किए गए उनके एक भाषण का सारांश 'दैनिक जागृति' में इस प्रकार छपा है—

भारत की स्वतन्त्रता में अस्पृश्यता एक रोड़ा है। दो सौ वर्ष भारत में राज्य करने के बाद भी ब्रिटिश सरकार यहाँ से अस्पृश्यता को अलग न कर सकी। जब कांग्रेस मन्त्रिमण्डल अपने हाथ में अधिकार लेगा तो उसका सर्वप्रथम कार्य अस्पृश्यता-निवारण होगा तथा वह हरिजनों के उत्थान के लिए सभी सम्भव प्रयत्न करेगा। हाथ में अधिकार हुए बिना कांग्रेस कर भी क्या सकती थी।

अस्पृश्यता को मार भगाने के लिए कांग्रेस-सरकार कड़ा कड़ा कानून पास करेगी।

अछूत वर्ग गुलामों का गुलाम है, हम स्वयं गुलाम हैं और अपने देशवासियों को गुलाम बनाये रखने का प्रयत्न कर रहे हैं। हिन्दू-राज से डरकर मुसलमान पृथक्करण चाहते हैं। इसी तरह डा० अम्बेदकर ने भी हिन्दुओं से पृथक् होने की चेष्टा की है। वे (डा० अम्बेदकर) सभी गाँवों में हरिजनों के लिए पृथक् स्थान और विशेषाधिकार चाहते हैं। जिस ब्रिटिश सरकार ने दो सौ वर्षों तक हरिजनों के अधिकारों की रक्षा करने में अपनी असमर्थता दिखाई वह अब अधिक दिन इस देश में न रह सकेगी। हरिजनों के अधिकारों की रक्षा के लिए अँगरेजों को भारत छोड़ना ही होगा।

डा० अम्बेदकर ने हरिजनों को शुद्ध करने तक की बात कही थी। मुझे मालूम नहीं, डा० किस धर्म के अनुयायी हैं।

अपने सम्प्रदाय के अधिकारों के लिए डा० अम्बेदकर की आकांक्षाएँ उचित हैं। किन्तु वे जिस प्रणाली से कार्य कर रहे हैं वह गलत है। उनकी प्रणाली हिन्दू और हरिजनों को गृह-युद्ध की ओर ले जा रही है और इससे किसी को भी लाभ न होगा।

आज तक अछूतपन का भूत भारत में नाच रहा है और इसका सारा दोष सरकार के सिर पर है। अछूतपन-निवारणार्थ बड़ौदा सरकार ने अच्छे कानून बनाए हैं। किन्तु फिर भी वहाँ अस्पृश्यता मौजूद है। जब तक सरकारी पदाधिकारी अस्पृश्यता में विश्वास करते रहेंगे तब तक वह इसी हालत में बनी रहेगी। जब कांग्रेस के हाथ में अधिकार आयेगा तो वह इस प्रकार के अवसरों को सहन न कर सकेगी। जो जहर डा० अम्बेदकर फैला रहे हैं वह स्वयं हरिजनों के लिए घातक सिद्ध हो सकता है। जब डा० अम्बेदकर ने कांग्रेस के विरुद्ध मोर्चा लेने को ठानी तो सरकार ने झट उन्हें केन्द्रीय सरकार में ले लिया।

'ब्रेटनवुड' समझौता और भारत

एसेम्बली के गत अधिवेशन में 'ब्रेटनवुड' समझौते पर काफी रोचक वाद-विवाद हुआ था, जिसका कुछ अंश हम 'दैनिक प्रताप' से यहाँ दे रहे हैं। यह स्मरण रखना चाहिए कि भारतीय अर्थशास्त्री इस समझौते का विरोध प्रारम्भ से ही करते रहे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थ-सदस्य सर आर्चीबल्डे रोलेंड्स ने भारत-द्वारा ब्रेटनवुड समझौते पर हस्ताक्षर करने के सम्बन्ध में सरकारी प्रस्ताव पेश करते हुए कहा कि यद्यपि भारत-सरकार ने समझौते पर हस्ताक्षर कर दिए हैं। परन्तु वह अपने दिए गए वचन के अनुसार असेम्बली के निर्णय को मान्य करेगी कि भारत अन्ताराष्ट्रीय बैंक और मुद्रानिधि सदस्य रहे या न रहे। परन्तु प्रथम ही सदस्य बनने से भारत को डाइरेक्टरों की कार्य-कारिणी में मनोनीत या निर्वाचित स्थान मिल जाएगा जिससे उसे नीति-नियन्त्रण में भाग मिल सकेगा। इससे भारत का अन्ताराष्ट्रीय सम्मान बढ़ेगा। उसे आवश्यकता पड़ने पर ऋण भी मिल सकेगा।

अर्थमन्त्री ने कहा कि यदि समझौते पर हस्ताक्षर न हों तो भी निन्दा का प्रस्ताव आता। इसलिए मैंने सोचा कि जब गलती ही होती है तो जलदी गलती क्यों न कर डालूँ।

मैं यूसुफ हारून के इस संशोधन से कि नौ आदमियों की कमेटी इस मामले की जाँच करने को बनाई जाए, सहमत हूँ पर उसमें एक यूरोपियन सदस्य अवश्य रहे।

प्रस्ताव पर पाँच संशोधन भी आए जिनमें एक मनुसूब्रेदार (कांग्रेस) का भी था। उन्होंने कहा कि जब तक हिन्दुस्तान का स्टर्लिंग पावने का प्रश्न तै नहीं होता तब तक भारत को कोई खास दिलचस्पी ब्रेटनवुड योजना से नहीं होगी ऐसा आश्वासन भू० पू० अर्थमन्त्री सर जेरेमी राइसमैन ने दिया था। फिर इतनी जल्दी क्यों की गई? हिन्दुस्तान ने मित्रराष्ट्र-पुनर्निर्माण सङ्गठन में आठ करोड़ रुपए दिए परन्तु भारत में अकाल पड़ने पर उसे क्या मिला? अर्थसदस्य भारत के अन्ताराष्ट्रीय सम्मान की बात करते हैं, पहले उसका घर में तो सम्मान हो।

हिन्दुस्तान का साम्राज्य में जैसा सम्मान होता है वैसा तो अफ्रीका में भारतीयों के साथ व्यवहार से प्रकट है। ब्रिटेन भारत का स्टर्लिंग पावना यों ही घोंट जाना चाहता है, जब कि यूनान को ब्रिटेन ने अभी साढ़े पाँच करोड़ पौण्ड कर्ज दिया है।

यूरोपियन दल के नेता श्री टामसन ने कहा कि हमारा दल निन्दा करने में सम्मिलित नहीं होगा।

श्री अन्नाथसायनम आयंगर ने पूछा—जब असेम्बली थी उस समय भारत सरकार ने उसकी राय क्यों न ली? रूस और आस्ट्रेलिया भी तो अन्ताराष्ट्रीय बैंक में शामिल नहीं हुए। भारत को भी कोई लाभ न होगा। जब तक कमेटी अपनी रिपोर्ट न दे, बैंक से कुछ व्यवहार न किया जाए।

श्री यूसुफ हारून ने पूछा कि जब भारत धन देने में छठा नम्बर रखता है तो बैंक कार्यकारिणी में उसे एक अतिरिक्त स्थान क्यों नहीं मिला? लीग पार्टी अभी निन्दा नहीं करना चाहती। वह एक कमेटी बनाने का प्रस्ताव रखती है।

प्रो० रङ्गा ने कहा कि अमरीका और ब्रिटेन अन्ताराष्ट्रीय बैंक और निधि के द्वारा अन्य देशों के आर्थिक विकास पर नियन्त्रण रखना चाहते हैं। यह बैंक भारत को पर्याप्त सहायता भी नहीं दे सकता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

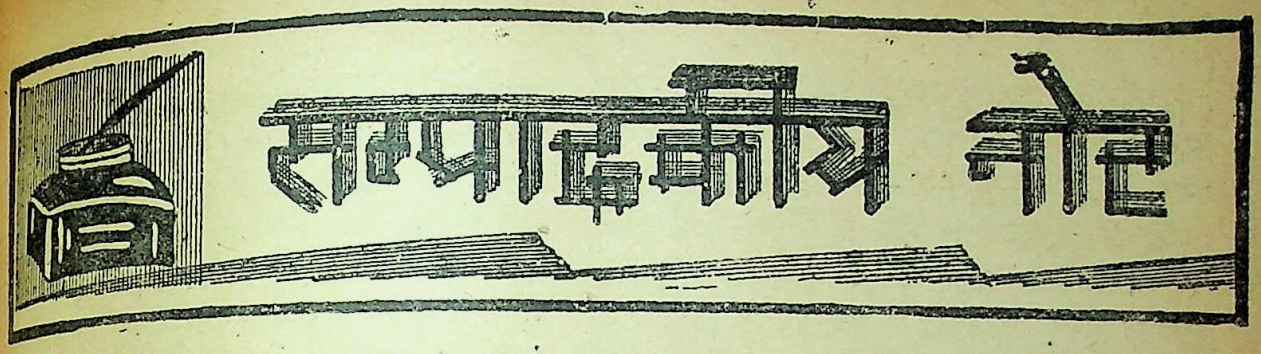

नया बजट

नए बजट के एक अंश—रेलवे बजट—पर 'सरस्वती' के गताङ्क में हम कुछ प्रकाश डाल चुके हैं। अब तक उसके अन्य अंश भी उपस्थित किए जा चुके हैं। सर आर्चीबाल्ड रोनाल्ड के कथनानुसार यह उनका पहला और अन्तिम बजट है। सम्भव है, उनका सङ्केत राष्ट्रीय सरकार की ओर हो जिसे केन्द्र में शासन-भार सँभालने का उत्तरदायित्व अनतिकाल में ही मिलनेवाला है और जो अधिकारारूढ़ होकर भारतीयों की सुविधा और सुख को ध्यान में रखती हुई आय-व्यय की व्यवस्था किया करेगी।

वर्त्तमान बजट में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे जनता के कष्टों और असुविधाओं में कोई कमी हो। लड़ाई का साँप मर गया है पर उसकी दुम अब भी फड़क रही है। फलतः देश की आर्थिक स्थिति का सामान्य स्तर पर आना अभी दो-एक साल तक सम्भव न हो सकेगा। और बजट भी तब तक असामान्य ही रहेगा।

१९४५-४६ के संशोधित बजट में अर्थ-सदस्य ने ५०५·६१ करोड़ रुपए का व्यय और ३६०·६६ करोड़ रुपए की आय रक्खी है। इस प्रकार १४४·९५ करोड़ का घाटा रहेगा। सैनिक व्यय लड़ाई बन्द हो जाने पर भी अधिक कम नहीं किया गया है, अर्थात् वह ३९४·२३ करोड़ की जगह २७६·४२ करोड़ रक्खा गया है और इस प्रकार शान्तिकाल होने पर भी उसमें केवल ११७·८१ करोड़ की कमी की गई है। यही व्यय नए वर्ष के लिए ३०२·७७ करोड़ अनुमान किया गया है। यहाँ पर यह समझ लेना भी आवश्यक है कि अब—शान्तिकाल हो जाने पर भी—सेना के लिए किया जानेवाला यह व्यय उद्देशपूर्व की अपेक्षा कम-से-कम चौगुना है।

मुल्की शासन पर होनेवाले व्यय का संशोधित अनुमान २२९·१९ करोड़ और नए साल के लिए मुल्की व्यय का अनुमान १११·९४ करोड़ है। युद्ध से पहले यह व्यय इसका केवल $\frac{१}{३}$ था। यह व्यय जनता के किसी लाभ के लिए नहीं होता।

करों की मद में कोई कमी नहीं की गई है। युद्ध से प्रारम्भ में कार्डों पर एक पैसा और लिफाफों पर दो पैसा युद्ध-कर के रूप में बढ़ाया गया था। उसमें किसी प्रकार की कमी नहीं की गई है। डाक-पार्सलों के महसूल में भी युद्ध-काल में वृद्धि की गई थी—अर्थात् १० तोला और २० तोला की इकाइयों को हटाकर केवल ४० तोला को इकाई मान लिया गया था और इस प्रकार हल्की-से-हल्की पार्सल पर भी ४० तोला का महसूल देना पड़ता था, फिर पहले चालीस तोला पर दो आने अतिरिक्त लेने की पद्धति चालू की गई और गत वर्ष प्रत्येक ४० तोले पर ६ आने लेने की रीति चालू की गई। यह सब युद्ध-कर के नाम से किया गया था। युद्ध समाप्त हो गया है पर इस कर के रूप में साधारण जनता और डाक-पार्सलों से व्यवसाय करनेवाले छोटे-मोटे व्यवसायियों का जो अतिरिक्त शोषण हो रहा था वह अब भी बन्द नहीं किया गया है। रेल से भेजे जानेवाली पार्सलों पर भी युद्ध-काल में लगाया हुआ 'अतिरिक्त महसूल' नहीं हटाया गया है। नमक पर से भी महसूल नहीं हटाया गया, हाँ सुपारी पर थोड़ा आयात-कर बढ़ा अवश्य दिया गया है जिससे वह और मँहगी हो जाएगी। इस प्रकार जीवन-निर्वाह के लिए अत्यावश्यक वस्तुओं के लिए जो व्यय आज करना पड़ता है, उसमें कमी की कोई सूरत नहीं हुई है।

एक मज़ेदार बात और है। जहाँ जनता के सिर पड़नेवाली चोट में कोई कमी नहीं की गई है वहाँ 'अतिरिक्त आयकर' में कमी करके योरप और अमेरिका के उद्योगपतियों और उनके पिछलगुए भारतीय व्यापारियों को विशेष सुविधा दी गई है। भारत में विदेशी व्यापार पनपे और फले-फूले, इसी उद्देश्य से ऐसा किया गया प्रतीत होता है। यहाँ यह भी बतला देना आवश्यक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है कि ब्रिटेन में अभी तक 'अतिरिक्त आयकर' में कोई कमी नहीं की गई है।

आयकर के द्वितीय और तृतीय विभाग में कुछ कमी की गई है पर उससे ऊपर के विभाग में वृद्धि करके उसका सन्तुलन कर लिया गया है। भवन-निर्माण उद्योग को प्रोत्साहन देने के अभिप्राय से कुछ विशेष सुविधाएँ दी गई हैं, पर इन सुविधाओं से लाभ उठाना जनसाधारण के भाग्य में नहीं है। इससे तो लाभ उन्हीं को होगा जिन्होंने युद्ध-काल में लाखों रुपए कमाए हैं।

इस विशाल बजट में ऐसी कोई योजना नहीं है जो भूखों मरती हुई भारतीय जनता को दोनों समय रूखी-सूखी रोटी दिला सके और उसके नग्न और अर्धनग्न शरीरों के लिए हाथ भर वस्त्र जुटा सके। हाँ, फौज से अलग हुए सैनिकों को काम देने के लिए नई सड़कें और इमारतें बनाने की बात अवश्य कही गई है। पर वह भी कार्यान्वित हो तब ठीक है, अन्यथा कहा तो बहुत कुछ जाता रहा है और आगे भी कहा जायगा।

संक्षेप में यह बजट 'धनियों को और धनी तथा गरीबों को और गरीब बनानेवाला है'।

——

राष्ट्रीय स्वास्थ्य-योजना

सन् १९४३ में भारतीय स्वास्थ्य की जाँच-पड़ताल के लिए हमारी दयामयी सरकार ने सर जोसेफ भोर की अध्यक्षता में २४ स्वास्थ्य-विशेषज्ञों की एक समिति नियुक्त की थी। उन दिनों प्रचलित होनेवाली तथा-कथित युद्धोत्तर-निर्माण-योजनाओं में यह योजना अन्यतम थी और इसका उद्देश्य भी प्रधानतः जनता के मस्तिष्क को वर्त्तमान की विभीषिकाओं से हटाकर सुदूर भविष्य के सुख-स्वप्नों में उलझाना मात्र था। भोर कमेटी ने पूरे २९ महीने बाद अपनी रिपोर्ट उपस्थित कर दी है। रिपोर्ट ४ भागों में विभक्त है और कुल मिलाकर १२०० पृष्ठों में पूरी हुई है।

इस रिपोर्ट में भारत की स्वास्थ्य-दशा की पूरी-पूरी पड़ताल की गई है। इसमें जो आँकड़े दिए गए हैं उनसे पता लगता है कि हमारे देश के स्वास्थ्य का स्तर गत १५० वर्ष की गुलामी में कितना नीचा हो गया है। जब अपने देश के एतत्सम्बन्धी आँकड़ों का मुकाबला हम अन्य देशों के आकड़ों से करते हैं तब दिल दहल उठता है। कमेटी के आँकड़ों के अनुसार इँग्लैंड में मृत्यु का औसत प्रति सहस्र १२·४ और अमेरिका में ११·२ है। भारत में यही औसत २२·४ है। बाल-मृत्यु की औसत इँग्लैण्ड में ५८, अमेरिका में ५४ और भारत में १६२ प्रति सहस्र है। आयुमान का औसत इँग्लैंड में ५८·७४ पुरुषों का और ६२·८८ स्त्रियों का है। अमेरिका में यही औसत क्रमशः ५९·१२ और ६२·६७ है। पर भारत में २६·९१ और २६·५६ है। अर्थात् भारत में यदि कोई २६ वर्ष के बाद जीवित रहता है तो वह दूसरों की उम्र को चुराकर ही!

कमेटी के कथनानुसार इस अभागे देश में प्रतिवर्ष २ लाख स्त्रियाँ प्रसूत-रोगों से मरती हैं; प्रतिवर्ष दस करोड़ मनुष्य मलेरिया से पीड़ित होते हैं जिनमें से २० लाख मर भी जाते हैं; प्रतिवर्ष २५ लाख व्यक्तियों को यहाँ क्षय रोग होता है और ५ लाख व्यक्ति प्रतिवर्ष इस रोग से यहाँ मरते हैं।

एक ओर ये आँकड़े हैं और दूसरी ओर वे आँकड़े हैं जो बतलाते हैं कि हमारी दयालु सरकार इस दिशा में अपने उत्तरदायित्व का पालन किस सतर्कता से कर रही है। रोगों की रोक-थाम और रोगियों की चिकित्सा के लिए वह प्रतिव्यक्ति प्रतिवर्ष पूरे १२ पैसे खर्च कर डालती है—अर्थात् प्रतिव्यक्ति प्रतिमास एक पैसा। इतनी उदारता क्या कम है! इस पर भी यदि भारतवासी कीड़े-मकोड़ों की तरह मरते रहें तो उनका दुर्भाग्य!

कमेटी ने स्वास्थ्य की इस अवनति का दोष देश की बढ़ी हुई गरीबी के सिर मढ़ा है जिसके कारण जनता को न अच्छा भोजन प्राप्त होता है और न साफ जल ही। गन्दे घर और परनालों की अव्यवस्था भी इसी मूल कारण के अन्तर्गत हैं। इसे देखते हुए भोर कमेटी ने सरकार से सिफारिश की है कि वह स्वास्थ्य-सम्बन्धी कार्यों में होनेवाले व्यय को बढ़ाकर प्रतिव्यक्ति प्रतिवर्ष १।।।) कर दे।

समिति ने इस सम्बन्ध में कुछ सिफारिशें और भी की हैं। उसकी सम्मति के अनुसार देश में डाक्टरों की संख्या ४७५०० से बढ़ाकर २३३६०५ कर देनी चाहिए। साथ ही—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संख्या ४]

होनी व्यवस्था होनी चाहिए कि उन व्यक्तियों को भी पूरी-पूरी डाक्टरी सहायता मिल सके जो इसके लिए कुछ व्यय नहीं कर सकते। उसकी सलाह है कि डाक्टरी सहायता और रोगों की रोकथाम के केन्द्र जहाँ तक सम्भव हो देहाती जनता के लिए स्थापित किए जाएँ। और इस कार्य के लिए सरकार को अपनी आय का १५ प्रतिशत तक व्यय करना चाहिए।

जहाँ तक रोगों की रोकथाम के प्रबन्ध का सम्बन्ध है, अब तक गाँवों की पूरी-पूरी उपेक्षा की गई है, सबसे अधिक कर का अधिकांश वहीं से प्राप्त होता है। अपनी रिपोर्ट में कमेटी ने सरकार का ध्यान इस ओर भी आकृष्ट किया है। उसने यह भी कहा है कि चिकित्सालय जनता के इतने निकट रहे हैं कि उनसे जब चाहे, सहायता ली जा सके।

कमेटी ने अपनी योजना को दो भागों में विभक्त किया है। एक दीर्घकालीन योजना—जो ४० वर्ष में पूरी होगी और दूसरी अल्पकालीन योजना—जो दस वर्ष में पूरी होगी।

४० वर्ष की योजना तो दूर-भविष्य की बात है। पर सर्वांगीण योजना का तुरन्त कार्य रूप में परिणत होना नितान्त आवश्यक है जिससे देश के स्वास्थ्य का मान और अधिक न गिरने पाए। अपनी प्रजा के स्वास्थ्य की ओर पूरा ध्यान देना सरकार का प्रथम कर्त्तव्य है और हमें विश्वास है कि हमारी लोकप्रिय नई प्रान्तीय सरकारें इसी दिशा में सबसे पहला कदम उठाएँगी और इस प्रकार अपनी सर्वप्रियता को पूर्ण रूप से प्रतिष्ठित करेंगी।

कमेटी की सिफारिशों में एक त्रुटि यह रह गई है कि उनमें देशी चिकित्सालयों को प्रोत्साहन देने की बात नहीं कही गई है। डिस्ट्रिक्ट बोर्डों-द्वारा स्थापित आयुर्वैदिक औषधालयों और यूनानी मतबों ने नाममात्र व्यय पर देहाती जनता की जो सेवा गत २० वर्ष में की है उसकी सरकारी अधिकारियों ने भी मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की है। प्रत्येक ४-५ गाँवों के बीच यदि ऐसा एक-एक औषधालय स्थापित करने की व्यवस्था कर दी जाए तो न केवल गाँववालों को उनकी मनचाही औषध प्राप्त होती रहे, सरकार को भी कम व्यय करना पड़े। आशा है, लोकप्रिय सरकारों का ध्यान इस ओर भी अवश्य आकृष्ट होगा।

संयुक्त प्रान्त में चुनाव का परिणाम

चुनाव के ये दिन साधारण जनता के लिए लगभग अग्निपरीक्षा के दिन थे। जहाँ तक साधारण चुनाव-क्षेत्रों का प्रश्न है, इसमें किसी को सन्देह नहीं था कि कांग्रेस भारी बहुमत से विजयी होगी और इसी लिए उधर से जनता एक प्रकार से निश्चिन्त-सी थी। कांग्रेस ने अपना चुनाव-आन्दोलन 'भारत छोड़ो' के नारे को आधार मानकर चलाया था। कांग्रेस के उम्मीदवारों को जिस अनुपात से वोट मिले हैं और उन्होंने अपने विपक्षियों को जिस तरह हराया है, उससे स्पष्ट प्रमाणित हो गया है कि देश की जनता कांग्रेस के साथ है और वह विदेशी शक्ति के हाथों से भारत को शीघ्रातिशीघ्र मुक्त देखने के लिए उत्सुक है। यही नहीं, वह कट्टरपन्थियों, सम्प्रदायवादियों और ऐसे महात्मा लोगों की परिस्थिति को भी अच्छी तरह समझ गई है जो स्वतन्त्रता के प्रवाह को तथाकथित 'धर्म' की आड़ लगाकर रोकना चाहते हैं।

मुस्लिम चुनाव-क्षेत्रों की सरगर्मी भी देखने योग्य थी। यह सरगर्मी अनेक स्थानों पर तो अपनी चरम सीमा पर पहुँच गई जिसके कारण देश के अनेक बड़े-बड़े नगरों में सामूहिक सङ्घर्ष के दृश्य देखने को मिले। लाठियों, ईंटों-पत्थरों और छुरों का आदान-प्रदान भी अनेक स्थानों पर सफलतापूर्वक हुआ और कहीं-कहीं तो पुलिस की नाक के ठीक सामने! पुलिस ने इस कार्य में प्रायः हस्तक्षेप नहीं किया, और यदि कहीं किया भी तो नाममात्र। वह शायद इसे भी चुनाव-आन्दोलन का एक प्रकार मानती थी और इसमें हस्तक्षेप न करने का उसके पास एक बहाना था उसके आकाओं का हुक्म, जिसमें कहा गया था कि सरकारी अधिकारी चुनाव-सम्बन्धी आन्दोलनों में किसी प्रकार की बाधा न डालें, जिससे जनता स्वेच्छापूर्वक और स्वतन्त्रतापूर्वक अपने मत का उपयोग कर सके। इस प्रकार का सबसे निकृष्ट उदाहरण कानपुर और प्रयाग की दुर्घटनाएँ हैं। कानपुर में श्री हरिशङ्कर विद्यार्थी और श्री रघुबरदयालु भट्ट की कार पर पुलिस की आँखों के सामने आक्रमण किया गया जिससे न केवल कार क्षत-विक्षत हो गई, विद्यार्थी जी और भट्ट जी के भी काफी चोटें लगीं। जब कुछ ही दूर पर सदलबल खड़े पुलिस-अधिकारी से इसकी शिकायत की गई तो उसने निहायत ठण्ढे दिल से और इत्मीनान के साथ जवाब दे दिया कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप तिरङ्गा झण्डा कार पर लगाकर इधर से क्यों निकले ? सम्भवतः उक्त पुलिस-अधिकारी ने अपने मन से ही उस स्थान को 'पाकिस्तान' समझ लिया था जहाँ पाकिस्तानी के अतिरिक्त अन्य किसी का प्रवेश निषिद्ध था। मुस्लिम लीग ने चुनाव-आन्दोलन 'इस्लाम खतरे में' और 'पाकिस्तान' के नारों से प्रारम्भ किया था। ये नारे आगे चलकर पर्याप्त विकसित हुए और लीगी प्रचारकों के दिली जोश-खरोश के ठीक परिचायक बन गए। इन नारों में से अधिकांश आवारा लड़कों के द्वारा अब भी दुहराए जाते हैं।

इतनी बाधाओं के रहते हुए भी राष्ट्रीय मुस्लिमों और कांग्रेसी मुस्लिमों का बारह स्थानों पर जीत जाना कम आश्चर्य की बात नहीं है। इन लोगों को चुनाव-आन्दोलन के लिए बहुत कम समय मिला और उनके मार्ग में तरह-तरह की अड़चनें भी खड़ी की गईं। इस तथ्य को देखते हुए उनको जो कुछ भी सफलता मिली है, उस पर निस्सन्देह गर्व किया जा सकता है। जो आँकड़े इस सम्बन्ध के मिले हैं, उनसे ज्ञात होता है कि मुस्लिम लीगियों को समस्त वोटों का $\frac{3}{5}$ मिला है, शेष $\frac{2}{5}$ भाग उनके और उनके 'पाकिस्तान' के विपक्ष में गया है। इससे यह समझा जा सकता है कि यदि चुनाव बालिग मताधिकार के आधार पर होता और राष्ट्रीय मुसलमानों व कांग्रेसी मुसलमानों को प्रचार के लिए भी पर्याप्त समय मिलता तो मुस्लिम लीग को प्रान्त में पैर टिकाना भी मुश्किल हो जाता।

युक्त प्रान्त में कांग्रेस की भारी बहुमत से विजय हुई है। फलतः यहाँ कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल की स्थापना अनिवार्य है। कांग्रेसी नेता मन्त्रिमण्डल के निर्माण करते समय मुस्लिम लीग को भी अवश्य आमन्त्रित करेंगे—यद्यपि यह अनिवार्य नहीं है। देखना है, लीग के कर्णधार कांग्रेस के साथ इस प्रान्त में भी सहयोग करते हैं या नहीं।

हमारा दारिद्र्य

श्रीमती निकोल ने जो पिछले दिनों ब्रिटिश पार्लामेंटरी शिष्टमण्डल के साथ यहाँ आई थीं और पूरे ५ सप्ताह तक भारत के विभिन्न भागों में भ्रमण करती रही थीं, भारत की दरिद्रता का निदान करते हुए लन्दन की एक सभा में कहा है—"भारत इसलिए दरिद्र है क्योंकि उसने दरिद्रता को स्वीकार कर लिया है।" यही नहीं, इस रोग की चिकित्सा भी उन्होंने बतलाई है जो इस प्रकार है—"भारतीय जनता के रहन-सहन का स्तर तब तक ऊँचा नहीं हो सकता जब तक उसे पर्याप्त शिक्षा नहीं दी जाती।"

अशिक्षा और दरिद्रता एक दूसरे पर आश्रित वस्तुएँ हैं, यह तथ्य श्रीमती निकोल ही नहीं, हम भारतीयों को भी विदित है। भारत के दारिद्र्य रोग का जो निदान उन्होंने किया है, उसके पीछे मनोवैज्ञानिक सत्य है। गत दो शताब्दियों से श्रीमती निकोल के देश-भाइयों की चरण-सेवा करते-करते यदि भारत ने दरिद्रता को स्वीकार कर लिया है तो इसमें अनोखी बात क्या है? शोषित और गुलाम देश के लिए और चारा ही क्या होता है!

रही शिक्षा की बात, यह नुस्खा भारतवासी भी जानते हैं। पर विवशता यह है कि वे उसे अमल में नहीं ला पाते। और विदेशी सरकार भारतीयों को शिक्षित या साक्षर बनाने में जो दिलचस्पी लेती रही है, उसके आँकड़े मौजूद ही हैं। २०० वर्ष के कठोर प्रयत्न के पश्चात् ब्रिटिश हुकूमत ने भारत में सब मिलाकर १२ प्रतिशत साक्षर बना पाए हैं—और साक्षर भी कैसे जो चिट्ठी को केवल पढ़ सकते हैं! इस देश में शिक्षा-प्रसार के लिए जो व्यय किया जा रहा है वह प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष पन्द्रह आने १० पाई है। उसमें से भी ७ आने १ पाई सरकार व्यय करती है और शेष का प्रबन्ध जनता द्वारा होता है। इस वस्तुस्थिति में यह कल्पना भी कैसे की जा सकती है कि भारतीय शीघ्र शिक्षित हो जाएँगे और वे अपने रहन-सहन के स्तर को ऊँचा बना सकेंगे।

हमारे शिक्षणालयों में अध्यापकों को जो वेतन दिया जाता है उसे देखकर कोई सभ्य देश लज्जा से सिर झुका लेगा। वस्तुस्थिति यह है कि इस देश में अध्यापकवर्ग ही सबसे कम वेतन पाता है। भारत भर में कुल मिलाकर २,३५,४८९ शिक्षा-संस्थाएँ हैं जिनमें से २,०६,१०१ गाँवों में हैं। इन गाँवों के स्कूलों में जो अध्यापक काम करते हैं उनका औसत वेतन २०) प्रतिमास है—अध्यापिकाओं का इससे भी कम! लड़ाई के दिनों में जहाँ मज़दूरों की भी मज़दूरी बढ़कर दो या तीन गुनी हो गई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संख्या ४]

वहाँ इन बेचारे अध्यापकों की तनख्वाहों में कोई विशेष वृद्धि नहीं हुई! श्रीमती निकोल ने अपने भाषण में प्रश्न किया है कि "इतना कम वेतन पानेवाले अध्यापक शिक्षादान-जैसा उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य कैसे सफलतापूर्वक कर सकते हैं?" भारत का मज़दूर संसार के सभी देशों के मज़दूरों की अपेक्षा कम मज़दूरी पाता है, जिसे कि प्रसिद्ध सोवियट पत्र 'त्रूद' ने भी स्वीकार किया है। पर भारतीय अध्यापक का औसत मासिक वेतन भारतीय मजदूर के मासिक वेतन से भी कम है। पर इसका उत्तरदायित्व किस पर है?

क्या भारतीय नहीं चाहते कि उनका अध्यापकवर्ग अधिक-से-अधिक पारिश्रमिक पाए जिससे वह निश्चिन्तता-पूर्वक शिक्षा-जैसे महत्त्वपूर्ण कार्य का सञ्चालन कर सके? पर चाहने से होता क्या है? कुञ्जी जिनके हाथों में है वे तो ऐसा नहीं चाहते?

आज का भारत ये सब बातें जानता है। उसे अपनी दयनता और दरिद्रता का ठीक ठीक ज्ञान है। वह अपनी कमियों और कमजोरियों को समझ रहा है। यही नहीं, वह अपने रोग का कारण अच्छी तरह समझता है और उसकी चिकित्सा भी जानता है। पर वह इस सबके लिए उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा में है जो अभी तक नहीं आया है पर जिसके आने में अब अधिक देर भी नहीं है।

पञ्जाब में साझे का मन्त्रिमण्डल

पञ्जाब जिन्ना साहब के पाकिस्तान का सबसे मजबूत किला माना जाता है। मुस्लिम लीग का वहाँ पूरा जोर है और उसे प्रचार करने का भी उस प्रान्त में पिछले दिनों खुला अवसर मिला है जिसका फल यह हुआ कि वहाँ की जनता में साम्प्रदायिकता की भावना प्रचुर मात्रा में व्याप्त हो गई है। जब तक वहाँ यूनियनिस्ट पार्टी के कर्णधार चौधरी सर छोटूराम जीवित रहे तब तक मुस्लिम लीग व्यवस्थापिका-सभा में अपने पैर न जमा सकी। पिछले दिनों तक वहाँ यूनियनिस्ट पार्टी का ही बोलबाला था और उसी का मन्त्रिमण्डल भी था, मलिक खिज्र हयात खाँ उसके प्रधान मन्त्री थे।

चौधरी सर छोटूराम की मृत्यु से पञ्जाब में यूनियनिस्ट दल का प्रभाव कितना कम हो गया है इसका पता इस बार के चुनाव में लगा है। जो उम्मीदवार वहाँ सफल हुए हैं उनमें अधिक संख्या मुस्लिम लीगियों की है, उसके पश्चात् कांग्रेसी और फिर यूनियनिस्ट हैं। उनके बाद सिखों का नम्बर आता है।

पञ्जाब की जैसी अवस्था इन दिनों है, वहाँ साम्प्रदायिकता की बेल जिस तेजी से पल्लवित हो रही है, उसे देखते हुए यही उचित था कि वहाँ यदि शुद्ध राष्ट्रीय मन्त्रिमण्डल नहीं बन सकता तो साझे का मन्त्रिमण्डल ही बनाया जाए। स्पष्ट है कि ऐसे वातावरण में प्रान्त के लिए साझे के मन्त्रिमण्डल ही अधिक उपयुक्त होते हैं; उनमें स्थायित्व होता है, वे साम्प्रदायिकता के प्रवाह में नहीं बह सकते, अतः प्रान्त की उन्नति और सेवा के कार्यों में किसी एक साम्प्रदायिक दल के मन्त्रिमण्डल की अपेक्षा अधिक दिलचस्पी ले सकते हैं।

यही विचार कर वहाँ की कांग्रेस पार्टी ने, जिसके नेता श्री भीमसेन सच्चर थे, यह प्रयत्न किया कि वहाँ कांग्रेस और लीग सम्मिलित मन्त्रिमण्डल स्थापित हो जाए। मौलाना आजाद ने भी कहा था कि यदि कांग्रेस-लीग का साझे का मन्त्रिमण्डल स्थापित हो सके तो प्रान्त के लिए यह बड़े सौभाग्य की बात होगी। बातचीत चलाई गई, पर सफलता न मिली। कारण, लीग की माँग यह थी कि कांग्रेस केवल हिन्दू मन्त्रियों को अपनी ओर से नामजद करे। सारे मुस्लिम मन्त्रियों का चुनाव लीग करेगी। यहाँ यह स्मरण रखना चाहिए कि शिमला कान्फरेंस भी मिस्टर जिन्ना के इसी दुराग्रह के कारण असफल हुई थी। कांग्रेस यदि इस शर्त्त को स्वीकार कर लेती तो इसका अर्थ यही होता कि वह अपने राष्ट्रीयता के ध्येय से गिर गई है और केवल एक हिन्दू साम्प्रदायिक संस्था रह गई है।

लीगी दल के इस दुराग्रह के कारण कांग्रेस को अन्य दलों से समझौता करने को बाध्य होना पड़ा। इस प्रकार वहाँ एक साझे का मन्त्रिमण्डल कायम हो गया है जिसके प्रधान नेता मलिक खिज्र हयात खाँ हैं। अन्य दलों को भी मन्त्रिमण्डल में समुचित प्रतिनिधित्व दिया गया है। निमन्त्रण तो लीग को भी दिया गया था, पर वह भला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साझे का काम क्यों पसन्द करने लगी, और वह भी अपने खास पाकिस्तानी किले में !

आशा है, पञ्जाब का मन्त्रिमण्डल स्थायी होगा और वह साम्प्रदायिकता को ताक पर रखकर प्रान्त के हितकार्यों में उत्साह और ईमानदारी के साथ अग्रसर होगा।

——

ईरान का सङ्कट

ईरान से गत २ मार्च को समस्त ब्रिटिश सेनाएँ हटा ली गई हैं। रूसी सेनाएँ फिर भी वहाँ डटी हुई हैं। यही नहीं, जैसा कि हाल के समाचारों से ज्ञात हुआ है, वे तेहरान की ओर प्रगति भी कर रही हैं। रूस के इस सैन्य-सञ्चालन से ईरान में भय और आतङ्क का वातावरण उत्पन्न हो गया है। पिछले दिनों ईरान के प्रधान मन्त्री सुल्तानेह के मास्को से निराश होकर लौट आने पर संसार को यह सन्देह होने लगा था कि ईरान के प्रति रूस का रुख अच्छा नहीं है। इधर की रूसी सेनाओं की गति-विधि ने इस सन्देह को यहाँ तक दृढ़ कर दिया है कि लोग तृतीय महायुद्ध की सम्भावनाएँ दृढ़ता से करने लगे हैं। ब्रिटेन और अमरीका इस प्रश्न को लेकर विशेष चिन्तित हो उठे हैं। ईरान का यह मामला सुरक्षा समिति की आगामी बैठक में ईरान-द्वारा, और यदि ईरान ने इसमें आगा-पीछा किया तो अमरीका-द्वारा, उठाया जानेवाला है।

ज्ञात तो यह होता है कि रूस यह सब इसलिए कर रहा है जिससे ईरान-सरकार उसकी धौंस में आकर उसे तैल-सम्बन्धी अतिरिक्त सुविधाएँ तुरन्त दे दे। रूसी पत्र 'इजवेस्तिया' ने इस ओर कुछ सङ्केत भी किया है। मास्को रेडियो का भी कहना है कि ईरान ने एक तीसरी शक्ति को तेल-सम्बन्धी विशेष सुविधाएँ देकर सन् १९२१ की सोवियट-ईरान सन्धि को भङ्ग किया है। यही नहीं, गत २५ वर्ष के भीतर ईरान ने अनेक बार ऐसी चेष्टा की है जिससे सोवियट और दूसरी महत् शक्तियों के बीच झगड़ा हो जाए।"

तैलकूप प्राप्त करने की इच्छा से हो या बन्दरगाह प्राप्त करने की इच्छा से या अजर बैजान की स्वतन्त्रता को दृढ़ बनाने की इच्छा से, पर रूस-द्वारा एक निर्बल राष्ट्र के साथ छेड़खानी किया जाना उचित नहीं कहा जा सकता। इससे एक तीसरे महायुद्ध का छिड़ जाना अनिवार्य है। रूस से लोगों को आशा तो यह थी कि वह निर्बल राष्ट्रों की स्वतन्त्रता का दम भरेगा। जब वही साम्राज्य-विस्तार पर तुल पड़ा और निर्बल राष्ट्रों को दबाने-धमकाने पर उतर आया तब उसमें और फासिस्ट राष्ट्रों के साम्राज्यवादियों में अन्तर ही क्या रहा? इस प्रकार तो वह संसार की नजरों से गिर जाएगा। यह ठीक माना जा सकता है कि पूँजीवादी राष्ट्रों के प्रति वह सतर्क रहे, पर इसके लिए उसे सम्पूर्ण निःशस्त्रीकरण का और सुरक्षा-समिति की शक्ति को बढ़ाने का प्रयत्न करना चाहिए, न कि निर्बल राष्ट्रों को दबाने का जघन्य कार्य!

पिछला इतिहास बतलाता है कि जब-जब किसी बड़ी शक्ति ने अपनी सीमाएँ मजबूत करने, स्वदेशरक्षार्थ सेनाएँ बढ़ाने और अपना प्रभावक्षेत्र बढ़ाने की बुरी नीयत से सैन्य-सञ्चालन करने का प्रयत्न किया है, तब-तब विश्वयुद्ध छिड़ गया है। एक महायुद्ध के शान्त होते न होते दूसरे महायुद्ध का आरम्भ हो जाना बड़ा अशुभ लक्षण है—और विशेषतः इस परमाणु बम के युग में।

——

मिस्टर चर्चिल और रूस

द्वितीय महायुद्ध के यशस्वी नेता मिस्टर चर्चिल ने युद्धोत्तर विश्व की कल्पना कैसी की थी, यह कह सकना कठिन है। पर यह निश्चित है कि वे जो कुछ चाहते थे वही नहीं हुआ। सम्भवतः उनकी कल्पना यह थी कि इस महायुद्ध के पश्चात् ब्रिटेन संसार की सर्वश्रेष्ठ शक्ति बन जाएगा। जर्मनी, जापान और इटली का पूर्ण पराभव हुआ अवश्य, पर इससे रूस संसार की सर्वश्रेष्ठ शक्ति बन बैठा और एशिया व एशिया के अन्य छोटे राष्ट्र धीरे-धीरे उसके प्रभावक्षेत्र में आने लगे। यही नहीं, मिस्टर चर्चिल के अपने देश में भी क्रान्तिकारी परिवर्त्तन हुए जिसके कारण उनका टोरी दल राजनीतिक अधिकारों से वञ्चित हो गया और मजदूर दल अधिकार में आ गया।

रूस की प्रभाव-वृद्धि ने ब्रिटिश साम्राज्य को खतरे में डाल दिया है, यह प्रत्येक व्यक्ति जानता है। मिस्टर चर्चिल जैसे ब्रिटेन-हितैषी इस परिस्थिति को चुपचाप सहन नहीं कर सकते। गत ५ मार्च को वेस्टमिस्टर कालिज मिसूरी में 'अँगरेजी भाषाभाषी भ्रातृसंघ' की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थापना की जो बात कही है और जिसका सारांश हम अन्यत्र दे रहे हैं उससे यही ध्वनि निकलती है कि इस बार वे इंग्लैंड और अमरीका का दृढ़ संङ्गठन करके रूस-विरोधी एक शक्तिशाली मोर्चा तैयार करना चाहते हैं। उनके इस भाव का कि 'अँगरेजी भाषाभाषी सङ्घ कोई सांस्कृतिक सङ्घ नहीं होगा, प्रत्युत इसका उद्देश्य अमरीका और ब्रिटिश साम्राज्य के सैनिक परामर्शदाताओं-द्वारा संयुक्त रूप से सम्भावित खतरों का अध्ययन, एक ही प्रकार के शस्त्रास्त्रों का प्रयोग, एक रूप की सैनिक शिक्षा और परस्पर सैनिक-शिक्षकों का विनिमय होगा'। सोवियट-द्वारा यही अर्थ लगाया गया है और स्टेलिन साहब ने इसे सोवियट के विरुद्ध पूँजीवादी शक्तियों का जेहाद' बतलाकर इसकी कुत्सा की है।

मिस्टर चर्चिल का यह वक्तव्य निस्सन्देह एक नए विश्व-सङ्कट को आमन्त्रित करने की क्षमता रखता है। ऐसा लगता है कि द्वितीय महायुद्ध में जो नरसंहार हुआ है उससे उन्हें सन्तुष्टि नहीं हुई है, अतः वे एक ऐसे तृतीय महायुद्ध का सूत्रपात करने की सोच रहे हैं जिसमें ब्रिटेन और अमरीका—पारस्परिक भ्रातृभाव से संबद्ध—एक ओर हों और वे मिलकर सोवियट को और उसके अन्ताराष्ट्रीय कम्यूनिस्ट सङ्गटन को छिन्न-भिन्न कर दें।

सन्तोष की बात है कि अमरीका और इँग्लैंड के विचारकों और प्रमुख पत्रों ने मिस्टर चर्चिल के इस भाषण के विरुद्ध क्षोभ प्रदर्शित किया है, साथ ही इँग्लैंड की मजदूर सरकार के प्रधान मन्त्री मिस्टर एटली ने भी इसकी प्रशंसा नहीं की है। यह उचित ही है। इस समय तीनों महती शक्तियों के मिल-जुलकर चलने और पारपस्परिक सद्भावना को कायम रखने में ही विश्व का कल्याण है, अन्यथा मिस्टर चर्चिल सरीखे राजनीतिज्ञ तो यही चाहेंगे कि तलवारों की धार तेज ही बनी रहे।

——

अनाम को औपनिवेशिक स्वराज्य

फ्रांस के कर्णधारों को अब ठीक-ठीक अनुभव हो गया है कि सेना और शक्ति के बल पर किसी देश को अधिक समय तक गुलाम बनाए रखना इस युग में सम्भव नहीं है। अँगरेजी और भारतीय सेनाओं की सहायता से भी जब इंडोनेशिया का स्वाधीनता-आन्दोलन दबाने में जब वे समर्थ न हो सके तब हारकर 'भागते भूत की लँगोटी' ही हाथ में रखने के मतलब से उन्होंने फ्रेंच इंडोनेशिया के पृथक्-पृथक् प्रान्तों को औपनिवेशिक स्वराज्य देना स्वीकृत कर लिया है। इस प्रकार प्रान्तों को पृथक्-पृथक् इकाई कर देने में भी एक राजनीतिक चाल है। फ्रेंच अधिकारी समझते हैं कि इस तरह वे विभिन्न प्रान्त परस्पर मिलने से रोके जा सकेंगे क्योंकि उनकी वैदेशिक नीति फ्रांस के हाथ में ही रहेगी जैसा कि अनाम की वियेतनाम नामक स्वतन्त्र सरकार के साथ समझौता होते समय तय हो चुका है। इस समझौते के अनुसार वियेतनाम दल की सरकार को 'फ्रेंच राष्ट्रसङ्घ के अन्तर्गत' स्वतन्त्र सरकार स्वीकार कर लिया गया है और अनाम को अपनी पृथक् सेना, राजकोष और पार्लियामेंट रखने का अधिकार होगा। केवल परराष्ट्रनीति पर उसे अधिकार न होगा क्योंकि वह 'फ्रेंच राष्ट्रसङ्घ' के अधीनस्थ रहेगा।

एशिया में इस समय स्वतन्त्रता की जो आग फैल गई है वह इस प्रकार के औपनिवेशिक पदों से अब बुझाई नहीं जा सकती, यह स्पष्ट और सर्वविदित है। वह तो अपनी गुलामी, शोषण और विदेशी साम्राज्यवाद का सर्वनाश करके ही बुझ सकेगी। फिर भी साम्राज्यवादी देश यह प्रयत्न तो करेंगे ही कि उनके अब तक के गुलाम यदि पूरे नहीं तो आधे गुलाम तो बने ही रहें। फ्रेंच राष्ट्रसङ्घ के अन्तर्गत पहले कम्बोडिया को और अब अनाम को औपनिवेशिक पद दिया जाना फ्रांस के इसी प्रकार के प्रयत्न का परिचायक है।

——

दक्षिण अफ्रीका के भारतीयों की समस्या

भारतीयों के विरोध की उपेक्षा करते हुए जनरल स्मट्स ने दक्षिण अफ्रीका की असेम्बली में 'घेटोबिल' उपस्थित कर दिया। यह भारतीयों के स्वाभिमान के लिए एक खुली चुनौती है। दक्षिण अफ्रीका के भारतीयों पर वहाँ की गोराशाही का यह तीसरा वैधानिक प्रहार है। पहला प्रहार 'प्रिटोरिया एग्रीमेंट' के रूप में हुआ था, जिसके अनुसार भारतीय प्रवासी दक्षिण अफ्रीका में भूसम्पत्ति खरीद तो सकते थे पर उस पर उनका स्वामित्व नहीं हो सकता था। यह कानून डरबन क्षेत्र में सीमित था, फलतः अन्य क्षेत्रों के प्रवासी भारतीयों पर इसका असर नहीं पड़ता था। उसके बाद दूसरा प्रहार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'पेर्गिंग एक्ट' के रूप में हुआ जिसके अनुसार प्रवासी भारतीयों को वहाँ भूसम्पत्ति खरीदने अथवा उस पर स्वामित्व प्राप्त करने के अधिकारों से वञ्चित कर दिया गया। यह तीसरा 'घेटोबिल' उक्त दोनों कानूनों से दो कदम आगे है। यह न केवल भारतीयों को उक्त दोनों अधिकारों से वञ्चित करता है, इसका क्षेत्र भी अधिक विस्तृत है, क्योंकि यह समस्त नेटाल और ट्रांसवाल पर लागू है।

इस अपमानजनक कानून के विरोध-स्वरूप भारत सरकार ने दक्षिण अफ्रीका से समस्त व्यापारिक सम्बन्ध-विच्छेद करने का जो निश्चय केन्द्रीय धारा-सभा में प्रतिनिधियों के बहुमत के अनुरोध के कारण किया है, वह सर्वथा उचित है। चाहिए तो यह था कि भारतीय हाई कमिश्नर को भी वहाँ से तुरन्त वापस बुला लिया जाता, पर सदस्यों के सतत अनुरोध करने पर भी भारत-सरकार इस सम्बन्ध में कुछ टाल-मटोल कर रही है। सम्भवतः वह इस प्रतीक्षा में है कि देखें भारत-सरकार के इस निश्चय की दक्षिण अफ्रीका की गोरी सरकार पर क्या प्रतिक्रिया होती है।

प्रतिक्रिया क्या होगी, यह राजनीतिज्ञों को अच्छी तरह ज्ञात है। दक्षिण-अफ्रीका से भारत का झगड़ा पुरानी बात हो गई है। इस सम्बन्ध में भारतीयों-द्वारा जब-जब यह माँग की गई कि दक्षिण-अफ्रीका की गोराशाही के विरुद्ध कोई प्रभावजनक कार्यवाही की जाए, तब-तब वहाँ की गोराशाही ने कह दिया कि—"ऐसी धमकियों का हम पर प्रभाव नहीं पड़ सकता। भारतीय हमसे दुश्मनी करके कोई लाभ नहीं उठा सकते। इससे दक्षिण-अफ्रीका के भारतीयों की समस्या सुलझेगी नहीं, उलटी और उलझ जाएगी और उन्हें हानि ही उठानी पड़ेगी।"

यही उधर से फिर कहा जा सकता है। पर इसके यह मानी नहीं हैं कि हम भारतीय अपमान का घूँट बराबर पीते रहें और अपना सिर नीचा किए रहें! पहले के संसार में और आज के संसार में अन्तर है। भारत अब स्वतन्त्रता के द्वार पर खड़ा है। 'संयुक्त राष्ट्रसङ्घ' में उसे भी समानता का दर्जा आज नहीं तो कल अवश्य प्राप्त होगा। जनरल स्मट्स को यह तो समझ ही लेना चाहिए कि उनकी रङ्ग-द्वेषवाली नीति, जो गोरों को कालों से श्रेष्ठ समझती है, संयुक्त राष्ट्रसङ्घ की नीति नहीं है और इस नीति का अवलम्बन करते हुए उनकी सरकार उक्त सङ्घ की सदस्य नहीं रह सकती। अवश्य ही यह प्रश्न भारत की ओर से 'संयुक्त राष्ट्रसङ्घ' में उठाया ही जाएगा।

'घेटोबिल' के सम्बन्ध में अफ्रीका की गोरी सरकार ने एक चालाकी भी की है, शायद संसार के राजनीतिज्ञों की आँखों में धूल झोंकने के लिए। वह यह कि बिल में ऐसी गुञ्जाइश रक्खी गई है कि 'सिनेट' में भारतीयों का प्रतिनिधित्व भी रहे। यह निश्चित है कि भारतीयों के प्रतिनिधियों के नाम पर जो व्यक्ति उक्त व्यवस्थापिका सभा में बैठेंगे वे काले दिल से भले ही हों—रङ्ग से गोरे ही होंगे। भारतीय ऐसे प्रतिनिधित्व को कैसे पसन्द कर सकते हैं, जब कि गोरे किसी काले को अपना प्रतिनिधि नहीं मान सकते!

'घेटोबिल' उपस्थित करने का कारण यह बतलाया गया है कि पिछले वर्षों में भारतीयों ने गोरे क्षेत्रों में इतने घर अपने अधिकार में कर लिए हैं कि यदि नियन्त्रण न किया गया तो वे क्षेत्र गोरे न रहकर काले हो जाएँगे। यह युक्ति समझ में नहीं आती। जब पूर्वीय योरप से आनेवाला एक यहूदी दक्षिण-अफ्रीका में कहीं पर स्वतन्त्रता से बस सकता है, सम्पत्ति खरीद सकता है और उस पर स्वामित्व के सम्पूर्ण अधिकार भी प्राप्त कर सकता है, तब एक भारतीय को उससे वञ्चित करने का प्रयत्न क्यों किया जा रहा है? क्या इसी लिए कि भारतीय अपने देश में गुलाम हैं और उसकी सरकार को उसके मान-अपमान की कोई चिन्ता नहीं है।

भारतीय सीधे और सभ्य नागरिक होते हैं। वे कभी अपने पड़ोसी को परेशान नहीं करते। मिल-जुलकर रहना उनका स्वभाव है। यह सब होते हुए भी ऐसे युग में जब कि संसार 'विश्वनागरिकता' का पाठ पढ़ रहा है और घटनाएँ प्रत्येक व्यक्ति को 'विश्व-नागरिक' बनने की ओर अग्रसर कर रही हैं, अफ्रीका के गोरों की यह पृथक्ता की नीति उनके लिए कहाँ तक कल्याणकारी होगी, इसका निर्णय समय ही करेगा और वह भी देर में नहीं, शीघ्र ही। जनरल स्मट्स को स्मरण रखना चाहिए कि श्रेष्ठता और उच्चता की इस काल्पनिक मनोवृत्ति ने हिटलर के जर्मनी और तोजो के जापान को पलक मारते धूल में मिला दिया है, फिर वे और उनकी 'संयुक्त सरकार' किस खेत की मूली हैं।

Printed & Published by A. Bose, at the Indian Press, Ltd., Benares-Branch, Benares.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विवाहित स्त्री-पुरुषों के जानने योग्य

ऑपरेशन तथा इन्जेक्शन जरूरी नहीं है

अप्राकृतिक रहन-सहन तथा मिथ्या आहार-विहार के कारण हमारे देश की नारियाँ अधिकांश ऐसी मिलेंगी जो एक न एक रोग से ग्रस्त हो निराश जीवन व्यतीत कर रही हैं। अधिकतर गर्भाशय का मोटा हो जाना तथा उस पर चर्बी आ जाना एक आम बात हो गया है जो गर्भ धारण करने में बाधक होता है तथा अन्य भयंकर रोगों की जिससे उत्पत्ति भी होती है। ऐसी अवस्था में प्रायः ऑपरेशन कराने से भी बहुत कम रोगियों को सफलता प्राप्त होती है।

यदि आपको ऑपरेशन कराने में असुविधा है या ऑपरेशन की अपेक्षा औषधियों द्वारा कष्ट दूर करने के अधिक पक्ष में हैं तो द्राक्षोक्त अंगूरों का ताजा रस, अशोक, अर्जुन, दशमूल, त्रिफला तथा अन्य श्रेष्ठ औषधियों से प्रस्तुत—मूँगा जिसका प्रधान अंग है—१५ वर्षों से प्रचलित **गौड़ की नारी-सुधा कॉर्डियल** सेवन करें।

नारी-सुधा एक माहवारी से दूसरी माहवारी तक सेवन करने से बिना ऑपरेशन गर्भाशय की चर्बी, उसका मुटापा तथा उत्पन्न वीभत्सपन नष्ट हो जाता है और सहज ही गर्भ की स्थिति हो जाती है। जहाँ इन्जेक्शन लिकोरिया (सफेदे का गिरना) रोकने में असफल होते हैं वहाँ कुछ ही खुराकों में यह सदैव के लिए ठीक हो जाता है। कमजोरी से गर्भाशय अपनी जगह से हट जाता है तथा गर्भपात होते रहते हैं—एक बोतल के सेवन से युक्त स्थान दृढ़ हो जाता है, फिर गर्भपात कभी नहीं होते। मासिक धर्म महीने में दो बार या दो महीने में एक बार के बजाय ठीक समय पर होकर हँसते-खेलते होने लगते हैं, जिससे हिस्टेरिया (बेहोशी) के दौरे होने बन्द हो जाते हैं। खूब भूख लगती है, खून एक बड़ी मात्रा में बनने लगता है। दिल की धड़कन, कमर-टाँगों का ठहरा हुआ दर्द केवल चौथे दिन दूर हो जाते हैं। जापे का संकट सहन करने तथा बाद की कमज़ोरी शीघ्र दूर करने की यह विशेष औषधि है। **नारी-सुधा** की २६ खुराकों की एक बोतल का मूल्य—पैकिंग, वी० पी० व्यय से पृथक्—तीन रु० पाँच आने है। आवश्यकता होने पर इस मासिक पत्रिका का हवाला देकर

कुमार कुमार एन्ड को०

पोस्ट बाक्स नं० ११९ देहली

कुछ २ शहरों में हम ऐजेन्सी स्थापन कर रहे हैं। नियमावली के लिए पत्र-व्यवहार करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

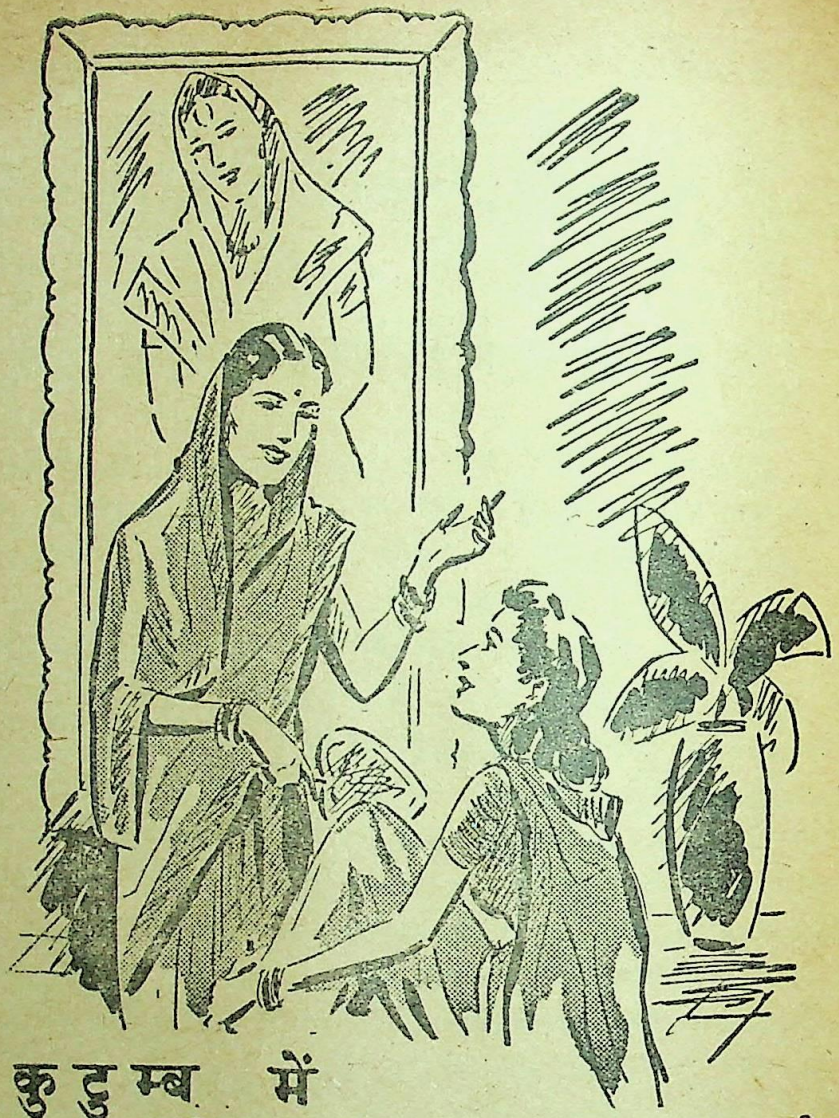

कुटुम्ब में सौन्दर्य कायम रहे

माताजी कह रही हैं: "मेरी माँ इतनी ही सुन्दर थी जितनी इस तस्वीर में दिखाई देती है। परन्तु कोई भी तसवीर नहीं बता सकती उसकी त्वचा कितनी कोमल और सुन्दर थी।" माताजी ने अपनी त्वचा उनकी माँ के तरह सुन्दर रखी। और चाहती है कि बेटी भी त्वचा के सौन्दर्य की उसी तरह रक्षा करे। उन्होंने लड़की को सौन्दर्य-रक्षा के कौटुम्बिक रहस्य को सावधानी से समझा दिया है जो है पिअर्स साबुन और स्वच्छ पानी का उपयोग। इस सबक के सहारे वे अं पीढ़ीयों तक कुटुम्ब में इस सौन्दर्य को कायम रख सकेंगी।

पिअर्स साबुन

सौन्दर्य का सेवक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुधासिंधु-बालसुधा

एवं प्रख्यात निजी पेटेंट तथा शुद्ध आयुर्वेदिक औषधियों के निर्माता

सुख-संचारक कम्पनी, लि०,

सुख-संचारक बिल्डिंग, सुख-संचारक पोस्ट आफिस,

मथुरा

युक्त प्रांत में

अपने ढंग का एकमात्र विश्वसनीय विशालकाय कार्यालय

हमारी विशेषताएँ

१—हमारा अपना निजी ५५वर्षीय अनुभव।

२—औषधें वैद्यक की ऊँची से ऊँची उपाधि प्राप्त विशेषज्ञ और अनुभवी वैद्यराज, उपवैद्यराज के निरीक्षण में निर्माण होती हैं।

३—अप्राप्य व दुष्प्राप्य खनिज एवं वनौषधियों के प्राप्त करने के संगठित साधन।

४—कड़ी, गठीली वनस्पतियों के चूर्ण-विचूर्ण करने, गोलियाँ, टिकियाँ बनाने व कार्क फिट करने और अन्य विभिन्न कार्यों के लिए आधुनिक पद्धति की मशीनें।

५—औषधियों का अधिक परिमाण में तैयार करने तथा इकट्ठा सामान मँगाने के कारण सस्ती और सर्वोत्तम तैयार होना।

विशेष विवरण के लिए बृहत् सूचीपत्र मुफ्त मँगाइए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिल्मस्टारोंकी तरह त्वचा की रक्षा कीजिये!

रमोला

रमोला कहती है कि उसकी त्वचा उसके लिये सबसे पहली बात है। उसको वह लक्स टॉयलेट साबुन के रोज़ाना इस्तेमाल से बहुत ही निर्मल और मुलायम रखती है। "मेरे सौंदर्य प्रसाधन की यह सरल रीति है"—यह उसका कहना है, और साथ ही दावा है कि इस शुद्ध और खुशबूदार साबुनके तेज फेनसे किसी भी स्त्री की त्वचा मुलायम, सुकोमल और निर्मल हो सकती है।

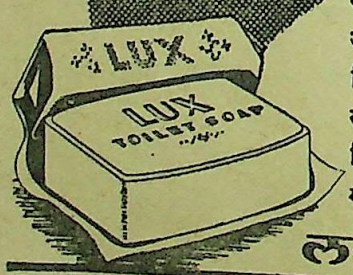

लक्स टॉयलेट साबुन

LTS-190-111-40 HI

LEVER BROTHERS (INDIA) LIMITED

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीम
टूथ पेस्ट

नीम टूथ पेस्ट भारतवर्ष क्या विदेशी जनता की प्रशंसा प्राप्त कर अपनी उपयोगिता पूर्णतया प्रमाणित कर चुका है।

अथवा

मार्गोफ्रिस
दंतमंजन

ये दोनों ही चीजें उच्च कोटि की हैं।

दी कलकत्ता केमिकल कं० लि०,

पण्डितिया रोड, कलकत्ता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न्यूटेक्स

कृपया ध्यान दें

अब आप केवल ३ मिनट में भद्दे तथा अनावश्यक बालों को बिना छुए, पाउडर पेस्ट के लगाये, जिनसे बाल और जल्दी तथा घने निकलते हैं, बड़ी सरलता पूर्वक नष्ट कर सकते हैं। न्यूटेक्स वगडस्टीट के एक आविष्कारक का सनसनीपूर्ण आविष्कार है जिसने कई वर्ष तक स्थायी तथा सुखद तरल पदार्थ के आविष्कार में व्यतीत कर दिया। उसकी खोज का परिणाम जायज था जो कि अब न्यूटेक्स में मिलाया जाता है और जिससे बालों की जड़ें तक बड़े सस्ते, सुन्दर तथा सुरक्षित रूप से बहुत जल्द साफ हो जाती हैं, किसी भी प्रकार की जलन नहीं होती और न गन्ध ही आती है।

सभी औषध-विक्रेताओं के यहाँ मिलती है। आप नीचे पते से मँगावें।

न्यूटेक्स (इंडिया) कं०,
प्रिंसेस स्ट्रीट, बम्बई।

पागलपन की अचूक औषधि

पागल बटी

अनिद्रा, चित्तभ्रम, विचारवायु, मगज की [illegible] उन्माद वगैरह को दूर करके मगज शान्त व बुद्धिमान [illegible] के लिए अनेकों रोगियों पर परीक्षित, विश्वसनीय, चमत्कारी औषधि है। की० ४८ गोलियों की डि० रु० ३)

मदनमंजरी फार्मेसी जामनगर काठियावाड़

इलाहाबाद एजेंट—मदनस्टोर्स केमिस्ट जोन्सटन

बनारस एजेंट राधे लाल एन्ड सन्स बैटरीवाला,

हकीम बलभद्रप्रसाद अग्रवाल अलीगढ़की

असली-मीठा

बालजीवन घुट्टी

बच्चों की हर एक बीमारी को दूर करती, कमज़ोर बच्चों को ताक़तवर बनाती, ज़रासी रोज़ाना चटा देनेसे बच्चे कभी बीमार नहीं होंगे. दाँत आसानीसे निकल आवेंगे। — मू० शी० ७ दर्जन २॥) डा० व्य० अ०

सब जगह बिकती है. नक़ली घुट्टियोंसे बचें, नए सौदागर नमूना मुफ़्त मंगावें।

पता. बालजीवन कार्यालय अलीगढ़

अब मैं अपने पति की प्रिय बन गई

रूप-विलास (रजिस्टर्ड)

जब मैं विवाह के अवसर पर अपने पति-गृह गई तब मेरे पतिदेव हमारे भद्दे तथा काले चेहरे को देखकर मुझसे घृणा करने लगे। मैंने अपनी सहेलियों की सलाह से **रूप-विलास** का उबटन लगाना शुरू किया। कुछ ही दिनों बाद मेरा चेहरा गुलाब के फूल की भाँति दमकने लगा और आज मैं अपने पति की प्रिय बन गई। इसके लगाने से मुँहासा, झाँई, चेचक, काले-काले दाग, फुंसी, खुश्की, बदरौनकी, झुर्रियाँ वगैरह जल्द आराम होती हैं और थोड़े ही दिनों के लगाने से मलीन मुख चमकदार होकर चेहरे पर गुलाबी छटा दमकने लगती है। यदि आप अपना चेहरा हसीन सूरत बनाना चाहते हैं तो २५ वर्ष का प्रचलित जगत्प्रसिद्ध रजिस्टर्ड **रूप-विलास** उबटन लगाइए। विवाह-शादियों पर वर-वधू का सौन्दर्य बढ़ाने के लिए यह बहुत ही उपयोगी साबित हुआ है और इसकी खुशबू इतनी प्यारी है कि तबियत को मस्त करती है। कीमत एक डिब्बा २-) तीन डिब्बा ५॥) डाक-खर्च माफ, पैकिंग खर्च अलग।

रूप-विलास कम्पनी धनकुट्टी नं० ४२७ कानपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वार्षिक बाल-सखा

अपनी सन्तान को सन्तुष्ट रखने का यत्न सभी माता-पिता करते हैं। सन्तान को प्रसन्न देख माता-पिता के आनन्द का ठिकाना नहीं रहता। बच्चों को प्रसन्न रखने के लिए बढ़िया भोजन, कपड़े और खेल-कूद का सामान अपनी हैसियत के अनसार सभी जुटाते हैं। लेकिन उनको सन्तुष्ट रखने का सबसे उत्तम साधन है उनको अच्छा साहित्य पढ़ने को देकर उनकी बुद्धि को विकसित करना।

इस काम में माता-पिताओं की सहायता करने के लिए हमने बाल-सखा का 'वार्षिक अङ्क' निकालना आरम्भ कर दिया है। यह बारह अङ्कों से पृथक् रहता है। सन् १९४६ के वार्षिकाङ्क में ऐसी सामग्री रहेगी, जिसको पढ़कर बालक फूले नहीं समायेंगे। बढ़िया कविताएँ, अच्छी कहानियाँ वैज्ञानिक लेख देश-विदेश की यात्रा भ्रमण, उपन्यास और हास-परिहास आदि की ऐसी सामग्री रहेगी जिसको पढ़ने से, बालकों की ज्ञान वृद्धि होगी और मनोरञ्जन तो होगा ही। इसे बालक मिठाई और खिलौने से भी अधिक पसन्द करेंगे। चित्रों की अधिकता रहेगी ही।

वार्षिक बाल-सखा की माँग बहुत रहती है। कुछ घरों में तो एक से अधिक प्रतियाँ ली जाती हैं। इसमें अच्छे कागज के ३०० सभी अधिक पृष्ठ रहेंगे। लगभग चौथाई भाग रङ्गीन छपेगा। हिन्दी में यह वार्षिकाङ्क अनोखी वस्तु होगी। इसलिए आप अपने वार्षिक अङ्क की प्रति केलिए अभी स रजिस्टर म नाम लिखा लीजिए जिससे प्रतियों के बिक जाने पर आपको निराश न होना पड़े।

मासिक बाल-सखा का वार्षिक मूल्य ३) एक प्रति का मूल्य ।)
बालसखा के वार्षिकांक का मूल्य ३) सर्वसाधारण से
मासिक बालसखा के ग्राहकों से रियायती मूल्य २॥)
रियायती मूल्य के लिए अपना ग्राहक नंबर अवश्य लिखिए।

मैनेजर :—बाल-सखा, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग

हिन्दी साहित्यः बीसवीं शताब्दी

(नवीन संस्करण)

वर्तमान साहित्य की वैज्ञानिक समीक्षा करनेवाली प्रमुख पुस्तक

महावीरप्रसाद द्विवेदी, रामचन्द्र शुक्ल, मैथिलीशरण गुप्त, प्रेमचन्द, प्रसाद, निराला, पन्त, महादेवी वर्मा, जैनेन्द्र कुमार आदि साहित्यिकों पर विवेचनात्मक १९ लेख।

लेखक—अध्यापक श्री नन्ददुलारे वाजपेयी

भूमिका में वर्तमान साहित्य का परिचय और प्रत्येक युग के कवियों तथा लेखकों का समीक्षात्मक उल्लेख है। पुस्तक में काव्य, कला और साहित्य के स्थायी प्रतिमानों के आधार पर इस शताब्दी के प्रमुख साहित्यिकों की आलोचना की गई है। वर्तमान युग की सभी रचना-धाराओं का सविवेचन इस पुस्तक में है।

साहित्यिक और कलात्मक विवेचन की यह पुस्तक उच्च श्रेणी के विद्यार्थियों और साहित्यिकों के लिए अनिवार्य है। मूल्य पाँच रुपये।

इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग
के एजेंट—इंडियन बुकडिपो, लखनऊ

केवल एकदिनमें

मेजिक मिस्मरिजम

लड़के को जमीन पर लिटा कर और चादर से ढक कर अजीब व गरीब प्रश्नों के सही सही उत्तर पूछना, दहकती आग पर आप चलना व दर्शकों को चलाना, किसी भी समय पर सब दर्शकों की घड़ियों में ६॥ इत्यादि बजा देना, दीवार में आग लगा देना, मुँह में से आग की लपटें निकालना, पानी के अन्दर आग के अङ्गारों का नाच कराना, बन्द लिफाफों के अन्दर का लिखा बता देना आदमी को उड़ा देना, बन्द सन्दूक में से आदमी का निकल जाना इत्यादि अनेक तिलस्मात जादू के अद्भुत, रहस्ययुक्त और रोमांचकारी करिश्में सीखकर,

—— दूसरे ही दिन ——

नवाब, राजे-महाराजे, सेठ-साहूकारों को दिखाकर—बड़े २ धुरन्धर विद्वानों बुद्धिमानों, विज्ञानवेत्ताओं और प्रोफेसरों की बुद्धि चक्कर और हैरत में डालकर ठनाठन रुपये पैदा करो। मामूली हिन्दी पढ़ लेने वाला यह सब गजब का जादू एक दिन में, हाँ केवल एक दिन में जान जाता है और किसी भी प्रकार के अभ्यास व सिद्धि की झंझट नहीं—ऐसा हमारा दावा और गारण्टी है। फिलहाल इस पूरे कोर्स की कीमत केवल पाँचरुपया। यह सब एक दिन में न आवे तो कीमत वापिस।

देहली के प्रतिष्ठित पत्र 'वीर अर्जुन' तथा कुँवर साहिब जी की ज़ोरदार सिफारिश के साथ सैंकड़ों प्रशंसा पत्र प्राप्त।

दी यूनाइटेड वण्डरफुल मेजिकल कम्पनी

विभाग नम्बर २६, मुरादाबाद यू० पी०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैजा, मलेरिया, इन्फ्लुएंजा, टाइफाइड
आदि बीमारियों में बचानेवाला।
१ औं० शीशी ॥), दर्जन ५॥=), डा० ख० अलग

युकॅलिप पेन बाम } सूचीपत्र मुफ्त { युकलिप दाद का मरहम

खांडालेकर बन्धु, बम्बई ४.

प्रकाशित हो गई

मार्क्स का दर्शन

[लेखक—भूपेन्द्र सान्याल]

(स्वर्गीय शचीन्द्रनाथ सान्याल के भाई, अखिल कांग्रेस कमेटी के सदस्य, युक्तप्रान्तीय ट्रेड यूनियन के भूतपूर्व सभापति, 'समाजवाद की ओर' आदि के प्रणेता।) मूल्य

प्रकाशक, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

हृदय की सर्दी (सर्दी और कफ)—लापरवाही करने से मामूली हृदय की सर्दी फेफड़े की सूजन (न्यूमोनिया) हो जायगी। इससे बचे रहने का रास्ता यही आसान है। बोड़ा-सा अमृतांजन लेकर छाती पर मलिए। बस, उसकी गर्मी सीधे हृदय तक पहुँचती है और कफ को ढीला करके दर्द को दूर कर देती है।

अमृतांजन—हमेशा सर्दी से सर्दी दर्द पहुँचाता है।

अमृतांजन लिमिटेड, बम्बई और मद्रास

शाखा :—कलकत्ता, कराची, दिल्ली

नई पुस्तक

कामायनी-अनुशीलन

महाकवि 'प्रसाद' का महाकाव्य 'कामायनी' बहुत प्रसिद्ध है। पर यह सबकी समझ में नहीं आता। इस पर अनेक समीक्षकों के विचार पत्रों में प्रकट हुए हैं। इसी ग्रन्थ का अनुशीलन इस पुस्तक में लेखक रामलालसिंह, एम० ए०, बी० टी०, साहित्यरत्न ने कामायनी का ऐतिहासिक तत्त्व, प्रकृति-वर्णन, चरित्र-चित्रण, श्रद्धा, भाषा तथा भावाभिव्यक्ति, छंद-विधान, रस-संचार, कामायनी का मनस्तत्त्व, दार्शनिक तथ्य, युग की अभिव्यक्ति, प्रेम निरूपण आदि शीर्षकों में बड़ी मार्मिकता से किया है। अच्छे कागज पर छपी कोई ढाई सौ पृष्ठों की सजिल्द पुस्तक का मूल्य २)

मैनेजर बुकडिपो, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

कुछ

यह प्रसिद्ध साहित्य-सेवी श्री पदुमलाल पुन्नालाल बी० ए० के बढ़िया निबन्धों का संग्रह है। इसके निबन्ध हैं जो भाषा, भाव और विवेचन की दृष्टि से विलक्षण यह इस वर्ष की अनुपम रचना है। पृष्ठ-संख्या २०० से मूल्य केवल १॥) एक रुपया आठ आने।

गांधी-मीमांसा

इस पुस्तक में पं० रामदयाल तिवारी बी० ए०, बी० ने गांधी जी के व्यक्तित्व और सिद्धान्तों की तर्कपूर्ण विवेचना की है। इसे आद्योपान्त पढ़ जाने पर गांधीवाद रूप से हृदयंगम हो जाता है। विद्वानों ने मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। पृष्ठ-संख्या ८५०। सुन्दर सजिल्द प्रति ४) चार रुपये।

मैनेजर बुकडिपो, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, Kangri Gurukul, Haridwar.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विद्यामन्दिर-प्रकाशन, मुरार (ग्वालियर)

की नवीन एवं श्रेष्ठ भेंट

हिन्दी-नाट्य-साहित्य के स्तम्भ, मध्यप्रान्त के जन-नेता, केन्द्रीय धारासभा के सदस्य

श्री सेठ गोविन्ददासजी

का महान् भावों से पूरित, श्रेष्ठतम एवं नवीनतम मौलिक नाटक

कर्ण

भव्य एवं कलापूर्ण मुखपृष्ठ के निर्माता, भारत के विख्यात चित्रकार

श्री कनुदेसाई

मुद्रण एवं गेट-अप के लिए याद रखें कि इसके मुद्रक हैं—

लॉ जर्नल प्रेस, इलाहाबाद

मूल्य केवल २)

अपनी प्रति शीघ्र अपने नगर के पुस्तक-विक्रेता से माँगें या सीधे हमें लिखें :—

विद्यामन्दिर-प्रकाशन, मुरार (ग्वालियर)

१५ कीमती चीजें सिर्फ ६) में

हर एक आदमी ६) में इन १५ कीमती चीजों को पा सकता है। १—बिजली का टार्च, २—एक सेफटी रेजर, ३—एक ब्लेड, ४—एक सेविङ्ग ब्रुश, ५—एक सेट बटन, ६—एक खुशबूदार साबुन, ७—एक शीशी ब्यूटी स्नो, ८—एक टिन टायलेट पौडर, ९—एक शीशी नाखून की पालिश, १०—एक रूमाल, ११—एक शीशी सेंट, १२—एक मनीबेग, १३—एक जेबी कंघा, १४—एक रोल्ड-गोल्ड निब बालपेन, १५ एक दवात। हर एक आदमी को एक डमी रिस्टवाच मुफ़्त मिलेगी। पैकिङ्ग और पोस्टेज १।) लगेगा।

आटोमेटिक पाकेट रिवाल्वर साइज व आवाज में असली के समान। ६ फायर एक साथ। लाइसेंस की जरूरत नहीं। नं० ४, ६॥), नं० ७, ७॥), सुपर, ८॥), स्पेशल ११), सबसे उम्दा १२) पैकिंग पोस्टेज बाक्स में २५ कारतूस व एक डमीवाच फ्री।

प्रोम प्रिंटिङ्ग पाकेट प्रेस—नाम, पता चिट्ठियाँ, लेबिल और कार्ड आदि इसके द्वारा घर पर ही बहुत साफ छापे जा सकते हैं। कीमत नं० १ का ३॥), नं० २ की ४) ; नं० ३ की ४॥) ; सबसे बढ़िया ८॥) पैकिंग और पोस्टेज ॥=) हर एक के साथ १ डमी रिस्टवाच और एक रोशनी मुफ़्त।

पता—विक्टोरिया वाच कम्पनी (P. A.)
पोस्ट बाक्स नं० १२२१६, कलकत्ता (सेक० ३१४)

आलोचनादर्श

इसके लेखक डा० रामशंकर शुक्ल 'रसाल' एम० ए० हैं। पुस्तक महत्त्व की है। इसमें समालोचना का अन्य शास्त्रों से सम्बन्ध, साहित्य-समालोचना, आलोचना, सुरुचि और दृष्टिकोण, आलोचना का ऐतिहासिक विकास आदि पर भली भाँति प्रकाश डाला गया है। अध्ययन, अध्यापन और रचनाकार्य करनेवालों के लिए यह पुस्तक बड़े काम की है। ३०० पृष्ठों की सजिल्द पुस्तक का मूल्य २) दो रुपये।

मैनेजर बुकडिपो
डियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग

प० रामचन्द्र वैद्यशास्त्री का
कामकल्याण

बीसों प्रमेह, स्वप्नदोष, शीघ्रपतन, निर्बलता और नपुंसकता का नाश कर इतना वीर्य-बल और उमङ्ग पैदा करता है जिसका रोकना कठिन हो जाता है। २० दिन की डिब्बी मूल्य २॥) डाक व्यय ॥।) एजेन्टों की आवश्यकता है, नियम माँगें।

मैनेजर—सुधावर्षक औषधालय,
नं० अलीगढ़ सिटी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

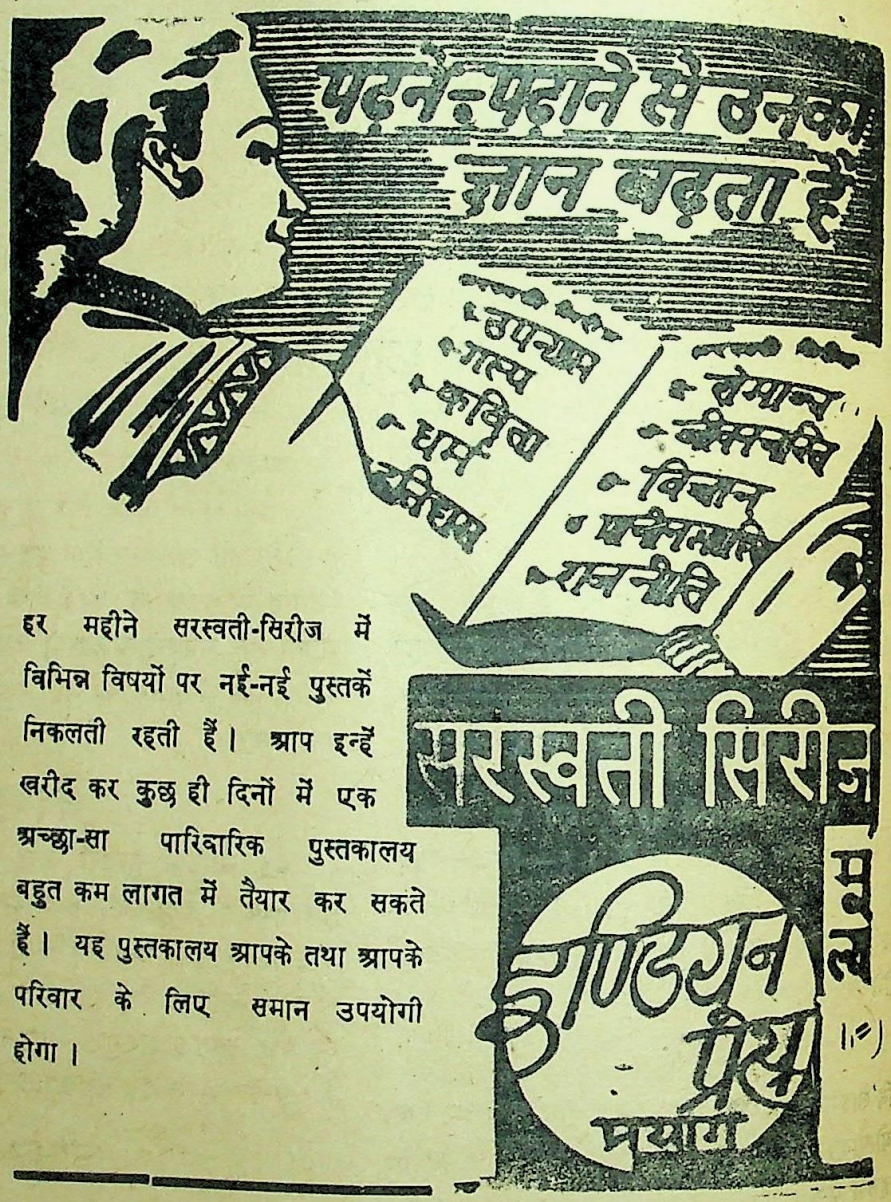

हर महीने सरस्वती-सिरीज में विभिन्न विषयों पर नई-नई पुस्तकें निकलती रहती हैं। आप इन्हें खरीद कर कुछ ही दिनों में एक अच्छा-सा पारिवारिक पुस्तकालय बहुत कम लागत में तैयार कर सकते हैं। यह पुस्तकालय आपके तथा आपके परिवार के लिए समान उपयोगी होगा।

सभी पुस्तक-विक्रेताओं तथा ह्वीलर के बुक स्टाल पर पुस्तकें मिल सकेंगी। विवरण के लिये हमारा सूची-पत्र मुफ़्त मँगावें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शैतान का खेल

सचित्र पुस्तक है। इसमें एक बोतल में बन्द भूत का दिलचस्प किस्सा है। यह भूत उस व्यक्ति की सब इच्छाएँ पूरी करता था जिसके कब्जे में यह बोतल रहती थी। इस बोतल को अपने में रखने में और तो सब सुबीता था, एक ही कठिनाई थी कि मरते समय जिसके अधिकार में बोतल रहती उसे नरक में जाना पड़ता। यह बोतल जितने में मोल ली जाय उससे कम दाम में बेचने की शर्त थी। इस प्रकार यह बोतल बहुत लोगों के पास रही, पर सभी इसे दूसरों के हाथ बेचने की फिक्र में रहते थे। यद्यपि उन्हें किसी चीज की कमी न थी। बड़ी रोचक पुस्तक है। एक बार हाथ में लेने पर बिना समाप्त किये पुस्तक छोड़ने को जी नहीं चाहता। बढ़िया कागज, उत्तम छपाई। मूल्य केवल ।।।) बारह आने।

विचित्र जीव-जन्तु

यह भी सचित्र पुस्तक है। इसमें दुनिया के एक से एक विचित्र जीव-धारियों का सरल भाषा में वर्णन है। इसके पढ़ने से जानकारी बढ़ती और मनोरञ्जन होता है। बालकों के लिए तो बहुत ही उपयोगी है। मूल्य केवल ।=) छः आने।

विष-पान

यह सुकवि सोहनलालजी की सुन्दर रचना है। इसमें समुद्र-मन्थन से उत्पन्न विष की पौराणिक कथा का कवितावद्ध मनोहर चित्रण है। छपाई-सफाई सुन्दर है। आवरण-पृष्ठ पर शङ्करजी के विष को पीने का, भावपूर्ण चित्र है। मूल्य १) एक रुपया।

पूजागीत

यह युगकवि सोहनलालजी की ऐसी रचना है जिसमें प्रसन्नता, सरलता, प्रभावोत्पादकता रहने से पढ़नेवाले को कविता का रस मिलता है। इसमें एक से एक बढ़कर ५६ गीतों का संग्रह है। पूजागीत का बहुत आदर है। कविता-प्रेमियों को इसका संग्रह अवश्य करना चाहिए। मूल्य केवल २) दो रुपये।

झरना

इसमें पण्डित सोहनलालजी की बालकोपयोगी २३ कविताएँ हैं। मातृभूमि, जय-जय स्वदेश, हवा का झोंका, तुम बढ़ो आगे बढ़ेंगे, सुनहली धूप, लहर, सब पर जल बरसाता बादल, दूर्वा का गीत और नीम का पेड़ आदि सुन्दर कविताएँ हैं। अच्छे कागज पर अच्छी स्याही में छपी पुस्तक का मूल्य ।।।) केवल बारह आने।

अमर जीवन

(दो भागों में)

इसमें संसार के सुप्रसिद्ध व्यक्तियों—कवीन्द्र रवीन्द्र, अल्फ्रेड नोबेल, हेनरी फोर्ड, जगदीशचन्द्र वसु, महात्मा गांधी, ताता, सर सैयद अहमद और आशुतोष मुकर्जी आदि के जीवनचरित का संक्षेप में वर्णन है। मूल्य प्रत्येक का ।=) छः आने।

अमर ज्योति

कहानियों का संग्रह है जिसमें अनुशोचना, तावीज, चरित्रम्, नहीं, अमरज्योति आदि तेरह सुन्दर कहानियाँ हैं। इन कहानियों से पढ़नेवालों का मनोरञ्जन इस कारण होगा कि लेखक ने किसी मतवाद का आग्रह न करके कथा का चित्रण किया है। पूजीपतियों और मजदूरों के सङ्घर्ष, साम्राज्यवाद या समाजवाद आदि की उलझन में पाठक को नहीं पड़ना पड़ेगा। मूल्य केवल १) एक रुपया।

देवयानी

यह नाटिका कुमारी तारा वाजपेयी की रचना है। इसमें शुक्राचार्य की बेटी देवयानी के कन्यात्व का आदर्श बड़ी सफलता से उपस्थित किया गया है। कथा महाभारत से ली गई है। इसमें आर्यों के व्यापक वैवाहिक सम्बन्ध के इस एक अपवाद - क्षत्रिय वर और कन्या ब्राह्मणपुत्री—का स्पष्टीकरण बड़ी सतर्कता से हुआ है। पुस्तक अपने ढङ्ग की अनूठी है। मूल्य केवल १) एक रुपया।

जीवन-कण

यह आशुकवि जगमोहननाथ अवस्थी की सुन्दर रचनाओं का संग्रह है। आपकी रचनाओं में निर्भयता है, राष्ट्रीयता है और कवि की ईमानदार छटपटाहट है। इस संग्रह की कविताएँ समाज की भयङ्कर परिस्थितियों और घोर वातावरण के कारण जीवन को पहेली मानकर लिखी गई हैं। इसमें वैषम्य, भिखारिन, जेल, दीपावली आदि श्रेष्ठ २२ रचनाएँ संगृहीत हैं। सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल ॥=) दस आने।

मैनेजर बुकडिपो—इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूबिया

इस में रूस की जारशाही के समय की दशा का चित्रण बड़ी सुन्दरता से किया गया है। पति-पत्नी के प्रेम का अनोखा चित्र-सा खींचा गया है। पुस्तक में कई चित्र हैं। जिल्द के ऊपर रङ्गीन चित्र है। मूल्य २) दो रुपये।

बड़ी दीदी

यह नामी उपन्यास लेखक शरद बाबू की रचना है। इसमें सामाजिक दशा का चित्रण है। किसी भले घर का लड़का रूठकर घर से चल दिया और दूर गाँव में जाकर एक मालदार विधवा युवती को पढ़ाने की नौकरी करने लगा। दोनों के मन में प्रेम का उदय हुआ तो मास्टर अपने घर चला गया। बाद को एक अकल्पित ढङ्ग से उस विधवा से इस पुराने मास्टर की भेंट हुई जहाँ पुरानी बीमारी से उसका प्राणान्त हो गया। बड़ा ही भावोत्पादक कथानक है। मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने।

वञ्चिता

यह रोमाञ्चकारी ऐतिहासिक उपन्यास है। अकबर के जमाने की घटना के आधार पर इसकी रचना हुई है। इसमें बड़ी-बड़ी गुत्थियाँ हैं। दरबार के दाँव-पेंच, जासूसी चालें और प्रलोभन के बखेड़े हैं। विजय ने मित्र चम्पालाल के प्राण बचाने का पूरा उद्योग किया, किन्तु जरा-सी देर ने काम बिगाड़ दिया। इससे दोनों मित्र साथ ही 'जल जङ्गल' हाथी के पैर से कुचले जाकर परलोक के यात्री बने। बेचारी नन्दा अपने प्रियतम विजय से वञ्चिता होकर उसकी याद में घुल-घुलकर जीवन बिताने को रह गई। मूल्य ३॥) तीन रुपये आठ आने।

चन्द्रशेखर

यह सुप्रसिद्ध उपन्यास-लेखक बङ्किम बाबू की प्रसिद्ध रचना है। इसकी कथा बड़ी विचित्र है। घटना है बङ्गाल के अन्तिम नवाब मीर कासिम के समय की। नवाब और अँगरेजों के बीच हुए सङ्घर्ष का भी वर्णन इसमें है। कथा के नायक चन्द्रशेखर का उदार चरित्र अनूठा है। यह लेखक का बहुत ही प्रशंसित उपन्यास है। मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने।

माधवी-कङ्कण

यह सुप्रसिद्ध बाबू रमेशचन्द्र दत्त का लिखा ऐतिहासिक उपन्यास है। इसमें मुगलों के समय की दशा के चित्रण के साथ-साथ प्रेमी-प्रेमिका की बड़ी विचित्र कथा है। यह उपन्यास बहुत लोकप्रिय है। इसका नया संस्करण अभी तैयार हुआ है। मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने।

देशान्वेषण की सरल कथाएँ

इसमें उन ३२ कर्मवीरों के अन्वेषण-कार्यों का वर्णन है जिन्होंने अपनी जान जोखिम में डालकर अङ्गीकार किये कार्य को पूरा किया। तेरहवीं शताब्दी के मार्कोपोलो से उन्नीसवीं शताब्दी के कप्तान एमेंडसेन और कप्तान तक की दुर्गम यात्राओं का वर्णन इस पुस्तक में है। पुस्तकों के पढ़ने से साहस बढ़ता और विविध जानकारी होती मूल्य ।॥-) केवल तेरह आने।

सचित्र महाभारत

यह स्वर्गीय आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी का प्रसिद्ध ग्रन्थ है जिसके कई संस्करण हाथोंहाथ बिक गये हैं। सम्पूर्ण महाभारत की कथायें बड़ी सुन्दर भाषा में दी इसके पढ़ने से महाभारत की बहुत-सी बातें मालूम हो अच्छा कागज, बढ़िया छपाई और सुन्दर जिल्द। अनेक पृष्ठ के चित्र हैं जिनमें से ११ रङ्गीन हैं। बड़े आकार के तीन सौ से ऊपर पृष्ठ हैं। मूल्य केवल ६) छः रुपये।

विश्व-कवि रवीन्द्रनाथ

हिन्दी में विश्वकवि रवीन्द्रनाथ के विषय में अब तक पुस्तकें लिखी गई हैं उनमें यह सबसे बड़ी है। इसमें की अन्तिम रचनाओं तक की चर्चा आ गई है। अनेक से पुष्परस लाकर यह मधुचक्र बनाया गया है। कवि, लेखक, नाट्यकार, कहानी और उपन्यासों के लेखक कुछ थे। उनको समझने में यह पुस्तक बड़ा काम देगी। के नामी पत्रों और विद्वानों ने इस पुस्तक की मुक्त कण्ठ से की है। सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल ५) पाँच रुपये।

बाघ और भालू की कहानी

यह बालकों के बड़े काम की है। इसमें एक देशी बाघ एक विदेशी भालू की कहानी है। दोनों कहानियाँ बाल-उपन्यास की तरह विचित्र तो हैं पर कल्पित नहीं हैं। इनको बालक-बालिकाएँ जीव-जन्तुओं के काम-काज और उनकी दारी का कुछ परिचय पावेंगी। मनोरञ्जन तो होगा ही। सचित्र है और दो रङ्गों में छपी है। मूल्य केवल ।=) छः

फ्रांस का इतिहास

इसमें ईसा पूर्व २२५ से लेकर सन् १९२० ईसवी इतिहास है। इसमें वहाँ की राज्यक्रान्ति के राजवंश प्रणाली, स्वतन्त्र राजतन्त्र, शतवर्षीय युद्ध, प्रसार, राजवंश के उद्धार, सन् १८४८ की क्रान्ति,

मैनेजर बुकडिपो—इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रजातन्त्र आदि का वर्णन उत्तमता से किया गया है। में चित्र भी हैं। अच्छे कागज पर छपे साढ़े चार सौ की सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल ४) चार रुपये।

स्वदेश-विदेश-यात्रा

यह श्रीयुक्त सन्तरामजी, बी० ए० और श्रीमती रामेश्वरी की प्रसिद्ध रचना है। देश-देशान्तर की यात्रा करने से लाभ होते हैं। व्यवहार-ज्ञान और सामान्य बुद्धि की वृद्धि है। परन्तु पर्यटन का सुबीता सबको सुलभ नहीं होता। रुचि भी थोड़े लोगों को होती है। ऐसे लोगों को विषयक पुस्तकें पढ़ने से बड़ा लाभ हो सकता है। इस में कश्मीर और कुल्लू की सैर तथा आस्ट्रेलिया की का वर्णन है। पुस्तक सचित्र है। अच्छे कागज पर ढाई सौ पृष्ठों की पुस्तक का मूल्य केवल १।=) सवा ग्यारह आने।

आल्हा

आल्हा का थोड़ा-बहुत किस्सा सभी हिन्दी-प्रेमी जानते हैं, पर ब्यौरेवार वर्णन थोड़े लोगों को ही मालूम होगा। चतुर्वेदी श्यामाद शर्मा की कृपा से यह कथा हिन्दीवालों को सुलभ है। इसमें परमाल का ब्याह, संयुक्ता का स्वयंवर, माड़ौ लड़ाई, आल्हा और मलखान का ब्याह, दिल्ली की लड़ाई, गढ़ का युद्ध आदि कितनी लड़ाइयों और विवाहों का है। बड़े आकार के सवा तीन सौ से ऊपर पृष्ठों की सजिल्द का मूल्य केवल ३ -) तीन रुपये पाँच आने।

जानवरों की मजेदार कहानियाँ

इसमें मोर और कौआ, लोमड़ी और गधा, की चिड़िया, सिंह और गीदड़, राजकुमार और सोने की चिड़िया और बुढ़िया तथा चालाक गीदड़ की कहानियाँ इनको पढ़कर लड़के और लड़कियाँ सभी प्रसन्न होते हैं। रङ्गीन आवरण-पृष्ठ है। मूल्य केवल ।।=) ग्यारह आने।

सच्चा सेवक

छोटा-सा नाटक है जिसमें सेवक के गुण सुन्दरता से दिखाये यह नाटक अभिनय करने के लिए लिखा गया है स्कूलों में उत्सव के समय छात्र इसका अभिनय करके प्रशंसा पाते हैं। मूल्य ।-) पाँच आने

तुलसी-रत्नावली

इसका संकलन, प्रिंसिपल केदारनाथ गुप्त, एम० ए० ने किया है। इसमें गोस्वामी तुलसीदासजी के अमूल्य ग्रन्थों—रामचरित-मानस, विनयपत्रिका, कवितावली, दोहावली, गीतावली आदि—से रत्न चुने गये हैं। अनेक ग्रन्थों से अमूल्य रत्नों का संग्रह करना सचमुच बड़ा कठिन काम होता है। जो लोग गोस्वामी जी के समस्त ग्रन्थ न तो ले सकते हैं और न उनका अध्ययन कर सकते हैं उनको इस संग्रह से बड़ा लाभ होगा। मूल्य केवल १।) एक रुपया आठ आने।

माँ और बच्चा

इसके लेखक नामी चिकित्सक डाक्टर बोधराज चोपड़ा, एम० बी०, सी-एच० बी० (एडिनबरा) हैं। यह पुस्तक अपने ढङ्ग की अनुपम है। इसके ११ प्रकरणों में छोटे बच्चों की मृत्यु और उसके कारण, गर्भिणी माता, जन्म के समय से बालक की रक्षा, बच्चों को दूध पिलाना, दूध पिलानेवाली दाई, दूध छुड़ाना आदि आवश्यक विषयों की शिक्षा दी गई है। स्त्रियों की मृत्यु और रोगों को कम करने तथा छोटे बच्चों को मृत्यु से बचाने की दृष्टि से पुस्तक लिखी है। यों लेखक ने मनुष्यमात्र का उपकार किया है। अच्छे कागज पर छपी ढाई सौ से भी अधिक पृष्ठों की सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल २) दो रुपये।

गोस्वामी तुलसीदास-संक्षिप्त रामचरितमानस (सचित्र)

यह रामचरितमानस का संक्षिप्त संस्करण है। संक्षेप ऐसी चतुराई से किया गया है कि कहीं भी कथा-भाग टूटने नहीं पाया। मँझोले आकार के ३०० पृष्ठों में यह समाप्त हुआ है। पुस्तक सचित्र और सजिल्द है। मूल्य १) एक रुपया।

अयोध्याकाण्ड (मूल)

रामायण-प्रेमियों के सुभीते के लिए यह काण्ड अलग प्रकाशित किया गया है। यह पुस्तक अनेक स्थानों के शिक्षाविभाग-द्वारा स्वीकृत है। इससे यह विद्यार्थी तथा साधारण जनता सभी के काम की चीज है। मूल्य १) एक रुपया। सटीक मूल्य २।=) दो रुपये ग्यारह आने।

सुन्दरकाण्ड (मूल)

रामायण-प्रेमियों के सुभीते के लिए यह काण्ड असली रामचरितमानस से अलग छापा गया है। मूल्य ।=) सात आने।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अरण्यकाण्ड (मूल)

रामायण-प्रेमियों के सुभीते के लिए यह काण्ड भी असली रामचरितमानस से अलग छापा गया है। मूल्य ।≡) सात आने।

विनयपत्रिका (सटीक)

गोस्वामी तुलसीदास की रचनाओं में विनयपत्रिका का स्थान बहुत उच्च है। इसमें गोस्वामीजी के विनय-सम्बन्धी पद्यों का संग्रह है। इसके टीकाकार हैं पण्डित रामेश्वर भट्ट। मूल्य ४) चार रुपये।

कुण्डलिया रामायण

गोस्वामी तुलसीदासजी का यह अमर रचना पिछले दिनों खोज में मिली है। इसमें उनकी अन्यान्य रचनाओं की भाँति सरस कुण्डलिया छन्दों में रामचरितमानस के सातों काण्डों की कथा दी गई है। मूल्य ४) चार रुपये।

मानससूक्तावली

रामचरितमानस में आये हुए कण्ठस्थ करने के योग्य चौपाइयों और दोहों का संग्रह। मूल्य १ –) एक रुपया पाँच आने।

संक्षिप्त पद्मावत

(रायबहादुर बाबू श्यामसुन्दरदास, बी० ए० द्वारा सम्पादित) मलिक मुहम्मद जायसी के पद्मावत का संक्षिप्त संस्करण। मूल्य २।–) दो रुपये पाँच आने।

संक्षिप्त सूरसागर

इसमें महाकवि सूरदास के पदों का संग्रह है। इसका एक-एक पद भक्ति तथा प्रेम के रस से ओतप्रोत है। मूल्य ३।–) तीन रुपये पाँच आने।

चारण

इस पद्यमय पुस्तक में प्राकृतिक दृश्यों के मनोरञ्जक वर्णनों के अतिरिक्त राजपूताना के कुछ प्रसिद्ध वीरों का गुणगान किया गया है। मूल्य ।–) पाँच आने।

वीणा-ग्रन्थ

हिन्दी के युगान्तरकारी श्री सुमित्रानन्दन पन्त की दो पुस्तकों का सम्मिलित संस्करण। वीणा मौलिक कविताओं का संग्रह है। और ग्रन्थ में कवि ने एक छोटे-से कथानक को अपनी कल्पना द्वारा विकसित कर एक खण्डकाव्य की रचना की है। मूल्य २) दो रुपये।

भैरवी

इसकी राष्ट्रीय कवितायें राष्ट्र-प्रेमियों के गौरव की हैं। यहाँ तक कि पण्डित जवाहरलाल नेहरू तक ने पसन्द किया है और खादी-प्रतिष्ठानों में इसकी हजारों प्रतियाँ हैं। विद्वानों की सम्मति है कि भैरवी 'गांधीयुग' का काव्य है। मूल्य २॥≡) दो रुपये ग्यारह आने।

वासवदत्ता

हिन्दी का एक आधुनिक काव्य। इस ग्रन्थ विद्वानों ने मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। मूल्य १) दो

हिन्दी के लब्धप्रतिष्ठ कवि
ठाकुर गोपालशरणसिंहजी की कृतियाँ

माधवी

माधवी का यह नया संस्करण बड़ी ही सज-धज साथ और बड़े आकार में प्रकाशित हुआ है। मूल्य २) दो

ज्योतिष्मती

इस संग्रह में ठाकुर साहब की नवीन प्रकार की संगृहीत की गई हैं, जो हिन्दी-साहित्य में अपना विशेष रखती हैं। खास कर इसमें संग्रह किये गये छोटे-छोटे बहुत ही मधुर और भावपूर्ण हैं। मूल्य २।–) दो पाँच आने।

मानवी

इस संग्रह में प्रकाशित कविताओं के द्वारा ठाकुर ने भारतीय नारी के सुख-दुःखमय जीवन का बड़ा ही और मार्मिक चित्रण किया है। मूल्य २।–) दो रुपये पाँच

संचिता

इस संग्रह में ठाकुर साहब ने अपनी सन् १ लेकर सन् १९३९ तक की सब प्रकार की रचनाओं का किया है। इस एक ही पुस्तक के द्वारा ठाकुर साहब के जीवन के क्रम-विकास का उत्तमतापूर्वक अध्ययन किया जा है। संग्रह में कुल ७१ कवितायें हैं। मूल्य ३) तीन

सुमना

'सुमना' ठाकुर साहब का सबसे नवीन संग्रह है ५३ गीत हैं जिनमें प्रकृति के प्रति उनका असीम अनुराग शब्द-द्वारा व्यञ्जित होता है। इस प्रकार के सरस गीत हिन्दी-साहित्य में अन्यत्र न मिलेंगे। मूल्य ३) दो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

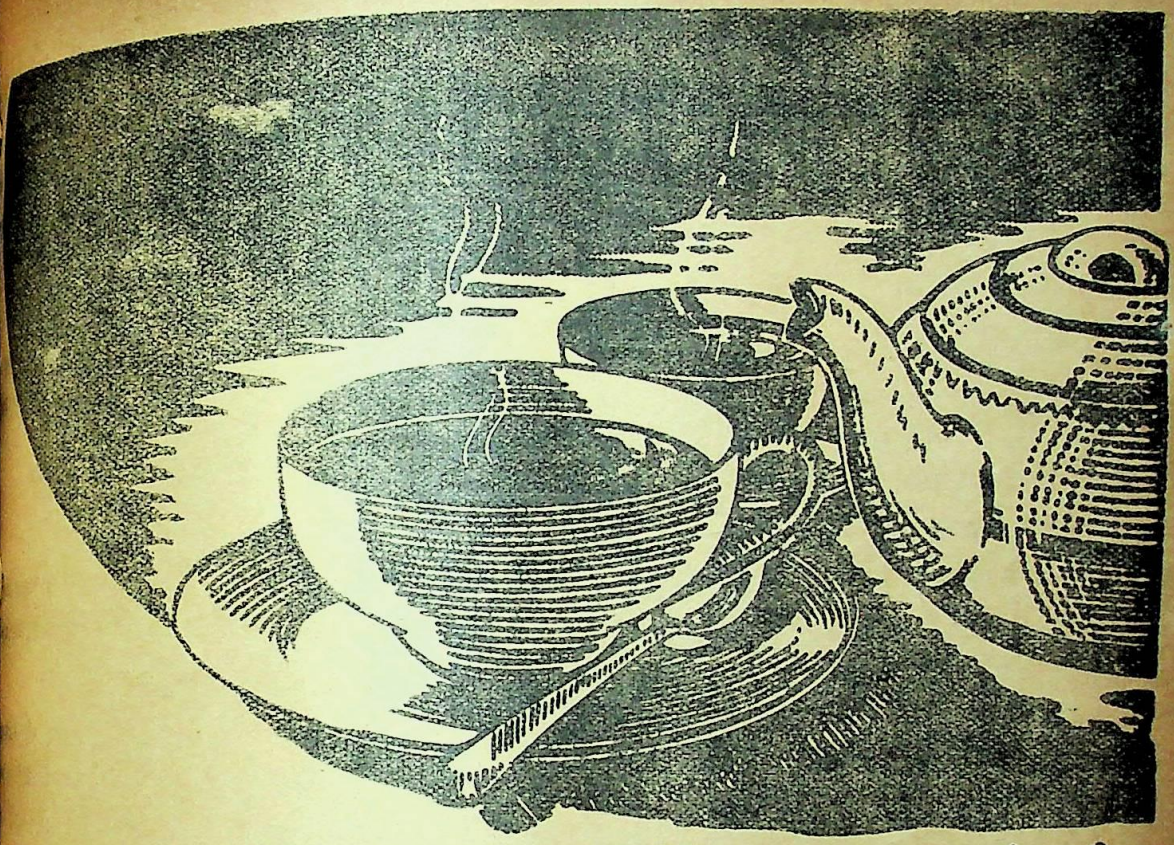

ताज़ा बढ़िया सुगन्ध, गहरा रंग और
कम दाम इन सबने मिलकर लिपटन
की व्हाइट लेबुल को बाजार भर
की सर्वश्रेष्ठ चाय बना रक्खा है।

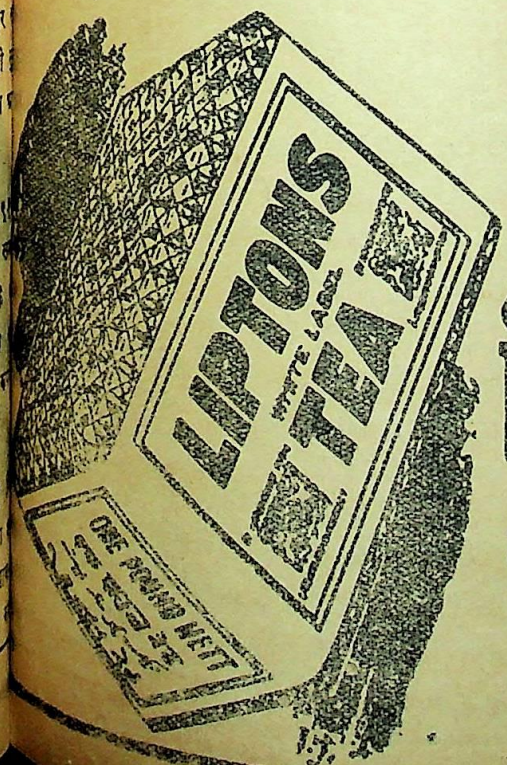

लिपटन की
व्हाइट लेबुल चाय

सर्वोत्तम भारतीय पेकी चाय

LTK 84 W

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८,०५,००,००० प्याले चाय

युद्ध जितना ही घमासान और जीवन जितना ही दुरूह हो रहा हो युद्धरत स्त्री पुरुषों को चाय की उतनी ही चाह होती है। इण्डियन टी मार्केट एक्सपैन्शन बोर्ड का हमेशा ही यह ध्येय रहा है कि जहाँ तक हो सके चाय सभों को खूब मिलती रहे। यह कार्य बहुत से तरीकों से किया जाता रहा है। घूमती फिरती चाय गाड़ियों द्वारा चाय बाँटना सबसे महत्वपूर्ण और सफल तरीका साबित हुआ है। पश्चिम में मिश्र से लगाकर पूरब में रंगून तक यानी मध्यपूर्व तथा भारत, आसाम और बर्मा, इन सब देशों में जहाँ भी चायगाड़ियों की ज्यादा जरूरत होती थी वहीं वे आराम व खुशी बाँटने पहुँच जाती थीं। व्यस्त बन्दरगाहों से लगाकर दूर दूर की छावनियों तक; मोर्चे के हजारों मील पीछे से तोपों की गरज के अन्दर तक; जहाँ कहीं भी जरूरत हुई चलती फिरती चाय-गाड़ियाँ ताजी गर्मागर्म चाय का स्रोत बहा देती थीं। ३० सितम्बर १९४५ तक सिर्फ चायगाड़ियों के जरिये ही बोर्ड ने ८ करोड़ ५ लाख प्याले चाय बाँट दिये हैं। जिनकी खिदमत हमने की उनकी दुआयें ही हमारा सबसे बड़ा ईनाम है।

इण्डियन टी मार्केट एक्सपैन्शन बोर्ड की चाय गाड़ियों की कहानी बड़ी ही रोचक और मनहर है 'मोर्चे पर चाय' नामक एक छोटी सी पुस्तिका हमने अभी निकाली है जिसकी एक प्रति, कमिश्नर, इण्डियन टी मार्केट एक्सपैन्शन बोर्ड, १०१, क्लाइव स्टीट, कलकत्ता से विनामूल्य मिल सकती है।

इण्डियन टी मार्केट एक्सपैन्शन बोर्ड द्वारा प्रचारित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अगस्त १९४६

वार्षिक मूल्य ६॥)

एक प्रति ॥-)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बालों को लम्बे तथा मनमोहक

बनाने के लिए

कामिनिया आयल (रजिस्टर्ड)

का व्यवहार करें।

यह बालों के लिए सर्वोत्तम उपचार है।

बालों को शीघ्रतापूर्वक बढ़ाता है।

बालों का झड़ना बन्द कर उन्हें काला, चिकना, चमकीला तथा मनमोहक बनाता है। एक बार की परीक्षा पर्याप्त होगी।

खुशबू का राजा

ओटो दिलबहार (रजिस्टर्ड)

अपनी मीठी तथा मनमोहक सुगन्ध के लिए विख्यात। दो-चार बूंद कपड़ों पर डाल देने से कपड़े अधिक समय तक सुगन्धित बने रहेंगे।

एक दूसरा सुगन्धित केश-तेल

दिलबहार हेयर आयल (रजिस्टर्ड)

यह तेल अत्यन्त सुगन्धित है तथा बालों की उपयोगिता के लिए 'कामिनिया आयल' के बाद इसका ही नम्बर है। बालों को बढ़ाने के लिए यह विशेष लाभदायक है। एक बार अवश्य परीक्षा करें।

एँग्लो इण्डियन ड्रग एंड केमिकल कं०,

२८५ जुमा मसजिद, बम्बई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

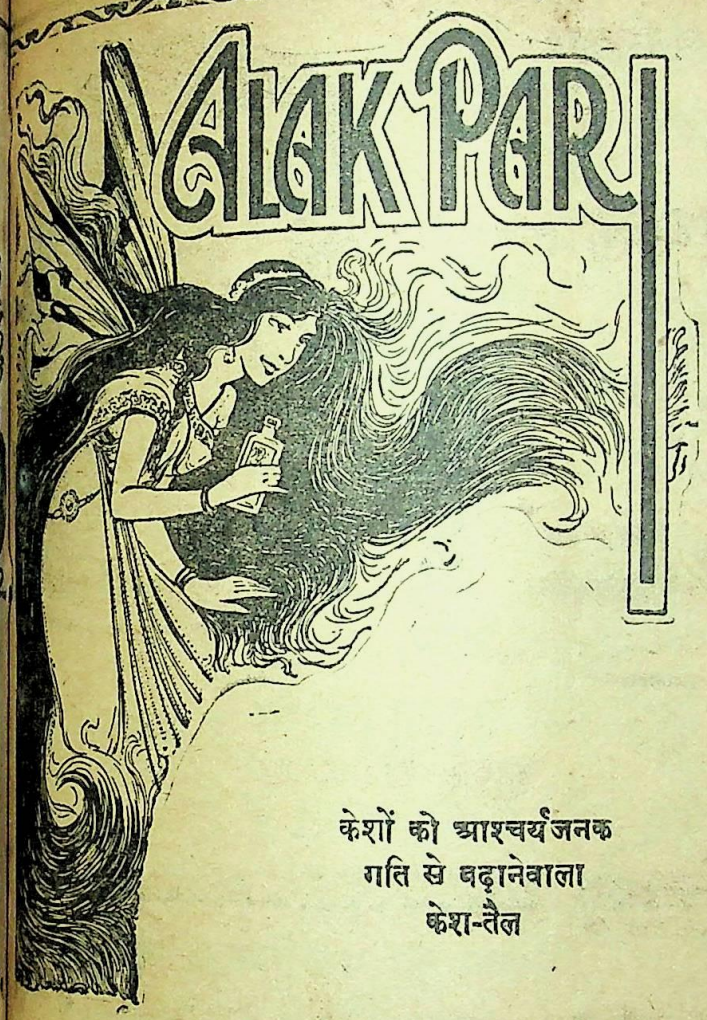

केशों को आश्चर्यजनक
गति से बढ़ानेवाला
केश-तैल

शुद्ध बादामरोगन पर बना

अलकपरी

केशों में प्रतिमास ३-४ इञ्च वृद्धि।
६ महीने में एड़ी-चुम्बी केश।

'अलकपरी' का कोर्स

पहले सप्ताह में रूसी-खुश्की दूर हो जाती है।
दूसरे सप्ताह में केशों का झड़ना और उनके सिरों का फटना रुकता है।
तीसरे सप्ताह में नये केश उगते दिखाई देते हैं।
चौथे सप्ताह के अन्त तक केश ३-४ इञ्च बढ़ जाते हैं।
फिर प्रतिमास इसी औसत से बढ़ते रहते हैं।

६ महीने में केश एड़ी-चुम्बी बन जाते हैं।

मूल्य एक शीशी का २॥) है जो एक महीने को काफी होती है। डाक-खर्च व पैकिङ्ग पृथक्। ६ से अधिक शीशियाँ डाक से नहीं भेजी जायँगी। अधिक के लिए ५) पेशगी भेजिए और अपने रेलवे स्टेशन का नाम लिखिए।

प्रतिष्ठित महिलाओं की सम्मतियाँ—

'अलकपरी' से बहुत लाभ है। १ शीशी और तुरन्त भेजिए।
१५-७-४५
कृष्णाकुमारी, धर्मशाला (पंजाब)।

Alak Pari is proving of much use to me. Please send me three more bottles.
4-8-45
Mrs. S. Mandal, 45, The Mall, Lahore.

'अलकपरी' में केशों को बढ़ाने के लिए विद्युत् की शक्ति वर्त्तमान है। मैंने इसे केशों के लिए आश्चर्यजनक गुणकारी पाया है। कृपया ३ शीशियाँ तुरंत भेजें।
७-८-४५
सत्यवती देवी, पासना, जौनपुर।

'अलकपरी' की ५ शीशियाँ इस्तेमाल कीं। बहुत लाभकारी तेल है। कृपया ३ बोतलें शीघ्र भेजें।
३०-८-४५
शान्तिकुमारी, कोटखाई, शिमला

व्यवस्थापिका—'अलकपरी', नया कटरा, इलाहाबाद।

हमारे एजेन्ट—

नई दिल्ली—रायल स्टोर्स, ३३, गोल बाज़ार।
मेरठ—त्यागी ब्रदर्स, बेली बाजार।
कलकत्ता—यूनाइटिड कमर्शियल सिंडीकेट, भूर।
बम्बई—रामनारायण हरीदास सोनी।
आगरा—प्रियादास घनश्यामदास परफ्यूमर्स, काश्मीरी बाजार।
लखनऊ—सालिग्राम मेहरोत्रा, ६, अमीनाबाद पार्क।
जबलपुर—बाबूलाल राजाराम चौरसिया, गोविंदगंज।
जोधपुर—मेडिकल स्टोर्स, सराफा बाजार।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कमज़ोर और कृश बच्चे डॉगरे-बालामृत के इस्तेमाल से ताक़तवर, पुष्ट और चुस्त बनते हैं।

निर्बल, निश्चेतन और निराश क्यों रहते हो ?

भोजन को पचानेवाला, खून को बढ़ानेवाला, पाण्डु और अन्य रोग के बाद की निर्बलता को नष्ट करनेवाला

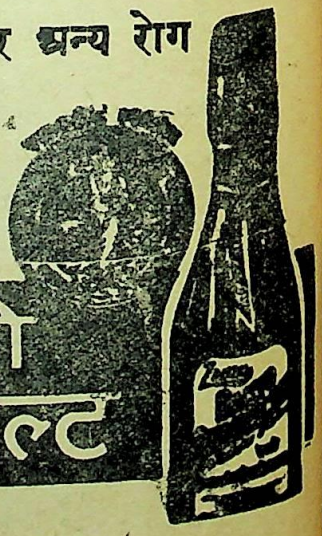

झंडु रक्तो फोस्फोमाल्ट

सुमधुर शक्तिवर्धक, अमूल्य औषधि अवश्य सेवन करें

झण्डु फार्मास्युटिकल वर्क्स लि०, बम्बई नं० १४

इलाहाबाद के चीफ एजेन्ट—एल० एम० घोलकिया एण्ड ब्रादर्स, ४६ जान्स्टनगंज।

दिल्ली और यू० पी० के सोल एजेन्ट—कान्तिलाल आर० पारीख, चाँदनी चौक, देहली।

यू० पी० एजेंट—कान्तिलाल आर० पारीख, चाँदनी चौक, दिल्ली।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निश्चय उसने लाइफबॉय की आदत सीखी है!

वह स्कूल जा रहा है। वहाँ से वह अपने साथ क्या लाएगा? नया ज्ञान, नये तरीके—और शायद किसी रोग के कीटाणु भी! माँ अपने छोटे बच्चे को सुरक्षित रहने की शिक्षा देकर बाहर भेजती है—सब से अच्छी शिक्षा लाइफ़बॉय साबुन का दैनिक इस्तेमाल है—जो गंदगी के उस ख़त्रे से रक्षा करता है जो स्वस्थ्य से स्वस्थ बच्चे को भी रोग लगा सकता है।

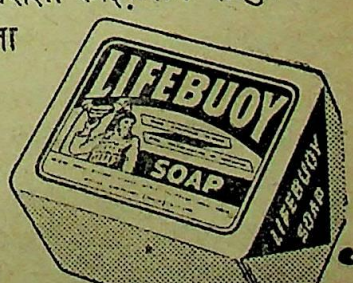

लाइफबॉय का व्यवहार करना एक ज़रूरी आदत है

L. 78-23 HI

LEVER BROTHERS (INDIA) LIMITED

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री रत्नागिरी जी का अद्भुत चमत्कार

जिसने समस्त संसार को चकित कर दिया

रक्त, बल, वीर्य, उत्साह तथा उमङ्ग ही जीवन सफल बना सकती है।

ध्यान देने योग्य अमूल्य उपहार

अपूर्व कायापलट (रजिस्टर्ड)

निःस्वार्थ संसारसेवी भारतीय महात्माओं ने औषध-विज्ञान को अपनी महान् खोजों और अमूल्य रत्नों से अलंकृत किया है। आधुनिक चिकित्सक मर्ज और मरीज़ जब दोनों को लाइलाज घोषित करके शर्मिन्दा नहीं होते, वहाँ इन्हीं महात्माओं की बिना दाम की जड़ी-बूटियाँ मुर्दों को भी जिला सकने में समर्थ हुई हैं। ऐसी सच्ची घटनायें आये दिन एक न एक पढ़ने और सुनने में आया करती हैं।

बीस वर्ष पूर्व कल्लाती पहाड़ी पर विचरण करनेवाले स्वामी रत्नागिरी जी महाराज की सेवा एक बूढ़ा ग्वाला करने लगा। योगिराज को एक दिन उस वृद्ध की कमजोरी पर दया आ ही गई और उन्होंने निम्नलिखित योग की ६ मात्रायें उस बूढ़े को दीं। नासमझी के कारण छहों मात्रायें एक साथ खा जाने से उस वृद्ध ग्वाले में अपूर्व शक्ति आ गई और रत्नागिरी जी के परिश्रम-पूर्वक इलाज करने पर भी बुढ़ापे के बावजूद उसे तीन विवाह करने पड़े। इस पर राजा, रईस, नवाब और रसिक जन महान् योग को जानने के लिए आतुर हो उठे। नवाब बहावलपुर के ससुर हाजी हयात मोहम्मदखाँ साहब ने बाबा जी की बहुत सेवा करके इसे प्राप्त कर लिया और लाहौर के पं० ठाकुरदत्त शर्मा को बतलाया। शर्मा जी ने इसे प्रथम तथा दो अन्य लिखकर तीनों से उत्तम बाजीकरण बतलानेवाले को एक हजार रुपये का नकद इनाम देने की घोषणा की। इसे आज बीस साल के लगभग हो गये किन्तु अभी तक कोई पुरस्कार विजय नहीं कर सका। मथुरा के ख्यातिप्राप्त बाबू हरिदास जी ने इसे चिकित्सा-चन्द्रोदय में छपवाया और हमने भी स्वयं बनाकर सैकड़ों दुर्बल, नपुंसक, वीर्य-विकारी रोगियों पर बरता। तत्काल लक्षण-चमत्कार देख जन-साधारण के लाभार्थ अनेक पत्र-पत्रिकाओं में छपवा दिया। आप भी बनाकर लाभ उठावें।

योग—शुद्ध बुरादा फौलाद २० तोला, शुद्ध श्वेत मल्ल १ तोला, शुद्ध कपूर १॥ माशा, एक घण्टा घृतकुमारी में घोटकर, मिट्टी के कुज्जे में मजबूत बन्द कर पाँच सेर कण्डों में फूँके। दुबारा एक तोला हरताल बर्की शुद्ध १॥ माशा कपूर शुद्ध में तीसरी बार गन्धक आमलासार शुद्ध १ तोला कपूर १॥ माशा में चौथी बार शुद्ध संस्कारित पारद १ तोला, कपूर १॥ माशा को ऊपर की भाँति १६ आँच दे। फिर उसको, कुमारी में डालकर बराबर [illegible]

जब इन्द्रबधू जलकर राख हो जावे तो हवा देकर उड़ा दे। अपूर्व कायापलट तैयार है। चार-चार चावल सायं मलाई के साथ खावें ऊपर मिश्री-मिला दूध पीवें।

मथुरा के हरिदास जी लिखते हैं—इस योग के सेवन से हफ़्ते में एक आदमी का वजन चार पौंड बढ़ गया, चेहरा लाल सुर्ख हो गया। भूपाल के वैद्यराज पं० शर्मा ने ३५० रोगियों पर बरता और आशा से अधिक पाया। रत्नाकर-सम्पादक श्री छोटेलाल जैन आयुर्वेदाचार्य गृहचिकित्सा पथ-प्रदर्शक में छापा कि इतना प्रचण्ड गुणकारी दूसरा नहीं देखा। श्री धर्मेन्द्र विद्यावतंस सिद्धान्त-शास्त्री प्रतिष्ठाता गुरुकुल बरला जिला मुजफ्फरनगर ने लिखा है—"कायापलट" नामक औषध सेवन कर रहा हूँ। जैसी प्रशंसा वैसा ही गुण है। बहुत लाभ हुआ। श्री चिरञ्जीलाल आयुर्वेदशास्त्री मालिक कल्याण औषधालय बाह (आगरा) का कहना है कि मैंने २२५ रोगी अपूर्व कायापलट द्वारा कि धातु-विकार, नपुंसकता, बवासीर, रक्त-विकार आदि से ग्रसित थे, पूर्ण स्वस्थ किये।

हमारा दावा है कि केवल सात दिन सेवन से शरीर में दौड़ता नजर आयेगा। २१ दिन में चेहरा लाल कारमीरी की तरह चमकने लगेगा। ४० दिन में नपुंसकता, डायब्टीज, निर्बलता दूर हो जाती है। स्त्रियों के प्रदर गर्भधारण शक्ति आती है। जिगर व मेदे की शक्ति भूख दूनी करता है। कफ, तिल्ली की खराबी, खाँसी, जुकाम, बदन दुखना, खून का पतलापन, आँखों का चिनगारी-सा उड़ते दीखना, बार-बार थूक गिरना, हर तरह की कमजोरी तुरन्त दूर कर नव-जीवन का संचार है। जाड़ा, गरमी, बरसात सभी मौसमों में एक-सा लाभ है। योग भली भाँति समझाकर लिखा है। फिर भी आप न बना सकें तो बनी-बनाई १६ आँच दी हुई ४० दिन ८० मात्रा डाक-खर्च सहित ६॥।=) में हम भेज देंगे। माफ, पैकिंग, मनीआर्डर-फीस अलग। कोई बात समझ आवे तो जवाबी कार्ड भेजकर उत्तर मँगा लें।

पता—रूपविलास कम्पनी

CC-0 In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाइयो!...

चर्म-स्वास्थ्य के लिये

रैक्सॉना

प्रयोग कीजिये

ज़ल्दी में यह धारण मत न बनाइये कि रैक्सॉना केवल स्त्रियों के रंग को निखारने वाला एक नया साबुन है। चर्म स्वास्थ का महत्त्व जाननेवालों सब के लिए रैक्सॉना एक ज़रूरी टॉयलेट साबुन है। यह ऐसा ताज़गी और स्फूर्तिदायक साबुन है जिसे इस्तेमाल कर के पुरुषों को आनन्द आता है। इस आकर्षक, हरे, और शीघ्र फेन देनेवाले साबुनका ये सबसे बड़ा लाभ है कि यह स्वास्थदायक और चर्म-किटाणुविनाशक 'कैडिल' से बनाया गया है। रैक्सॉना का शीघ्र बननेवाला ज्यादा फेन स्फूर्ति और स्वास्थदायक 'कैडिल' को शरीर के प्रत्येक रुओं में—जहाँसे सब चर्मरोग और दाग प्रायः शुरू होते हैं— पहुँचा देता है ऐसे आपकी सारी त्वचा किटाणुरहित, मुलायम, और साफ़ हो जाती है। अब आप जान सकते हैं कि नियमित रूप से रैक्सॉना का प्रयोग करने से आप निश्चित ही अपने चर्म को स्वास्थ और सुरक्षित रख सकते हैं। इसलिए इस हरे, और शीघ्र फेन देने वाले साबुन को इस्तेमाल करना शुरूकर दीजिए—और करते रहिए।

नोट—यह याद रखिए कि शारीरिक सौन्दर्य का एक मात्र आधार है चर्म-स्वास्थ। और एक पुरुष कोभी चर्म को आकर्षक बनाने का उतना ही अधिकार है जितना कि एक स्त्री को।

रैक्सॉना बच्चे के लिए आदर्श साबुन है। रैक्सॉना का कैडील शरीर के दर्दो. को मिटता है और शरीर को सुखे पनसे बचाता है।

★ रैक्सॉना में मिलाया गया कैडिल किटाणु-विनाशक, स्वास्थ-दायक और ताजगी देनेवाले तेलों का मिश्रण है जोकि चर्म को स्वास्थरखने में बहुत गुणकारी सिद्ध हुआ है। साइंसदानों ने भी इसके गुणों के कारण इसकी सराहना की है।

रैक्सॉना मरहम प्रयोग कीजिये।

फुंसी, फोड़े, ऐकजीमा, मुँहासे, आँख की कलौंस, झुर्रियाँ, ददौरे आदि सभी चर्म रोगों मे रैक्सॉना मरहम लगाये। यद्यपि अभी सप्लाई कम है फिरभी बहुत से दूकानदारों के यहाँ यह टिकोने टिन मिल सकते हैं।

LEVER BROTHERS (INDIA) LIMITED

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कलापी, उत्पादन के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी हासिल करने और कीमतें मालूम करने के लिए निम्न पते पर पत्र-व्यवहार कीजिए :—

कलापी स्टोर्स, स्वदेशी मार्केट, बम्बई २

SOLE AGENTS FOR ARYAN TOOTH BRUSH

अब मैं अपने पति की प्रिय बन गई

रूप-विलास (रजिस्टर्ड)

जब मैं विवाह के अवसर पर अपने पति-गृह गई तब मेरे पतिदेव हमारे भद्दे तथा काले चेहरे को देखकर मुझसे घृणा करने लगे। मैंने अपनी सहेलियों की सलाह से **रूप-विलास** का उबटन लगाना शुरू किया। कुछ ही दिनों बाद मेरा चेहरा गुलाब के फूल की भाँति दमकने लगा और आज मैं अपने पति की प्रिय बन गई। इसके लगाने से मुँहासा, झाँई, चेचक, काले-काले दाग, फुंसी, खुश्की, बदरौनकी, झुर्रियाँ वगैरह जल्द आराम होती हैं और थोड़े ही दिनों के लगाने से मलीन मुख चमकदार होकर चेहरे पर गुलाबी छटा दमकने लगती है। यदि आप अपना चेहरा खूबसूरत बनाना चाहते हैं तो २५ वर्ष का प्रचलित जगत्प्रसिद्ध रजिस्टर्ड **रूप-विलास** उबटन लगाइए। विवाह-शादियों पर वर-वधू का सौन्दर्य बढ़ाने के लिए यह बहुत ही उपयोगी साबित हुआ है और इसकी खुशबू इतनी प्यारी है कि तबियत को मस्त करती है। कीमत एक डिब्बा २—) तीन डिब्बा ५॥) डाक-खर्च माफ, पैकिंग खर्च अलग।

रूप-विलास कम्पनी धनकुटी नं० [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब सब सफ़ेद हो गया
—अधिक मैले भाग भी

प्रत्येक वस्त्र के कुछ ऐसे भाग हैं जो जल्दी मैले हो जाते हैं—और वही भाग हैं, जब कि उन्हें थोडा साबुन लगाने के बाद पानी में भिगोकर साफ़ करने के लिये ज़ियादा पटकने से हानि पहुँचती है।

सनलाइट के पद्धति से अपने कपडे धुलाइये और उन्हें पटके जाने के नुक़सान से दूर रहने दीजिये।

सनलाइट साबुन के भरपूर, स्वयं-क्रियाशील झाग से जब सौम्यता के साथ भीगे हुए वस्त्रों को निचोडते हैं और बाद में पखारने से वे बिलकुल सफ़ेद और साफ-सुथरे हो जाते हैं...आप के वस्त्र पंख के समान मुलायम हो जाते हैं जिस से यह शुद्ध साबुन उपयोग करनेवालों को खुशी होती है। सनलाइट आप के कपडों और उन के रंगों के लिये उत्तम है और आप के हाथों को सौम्य तथा कोमल रखता है।

यह सनलाइट के पद्धति से धोया हुआ है!

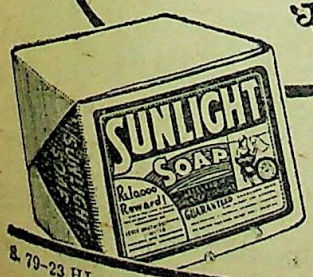

सनलाइट साबुन

LEVER BROTHERS (INDIA) LIMITED

8. 79-23 HI

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डालडा आप के दिलपसन्द भाजी को स्वादिष्ट करता है—और आप को स्फूर्ति भी देता है!

डालडा में पकाये हुए भोजन की "बचत" नहीं होगी! त्वरित् पाचन-योग्य और विटैमिन्-युक्त डालडा सादे भोजन को भी अपने मधुर स्वाद से परिपूर्ण करता है—और दैनिक आहार की एकरूपता से आप को मुक्त करता है। डालडा से पकावो और प्रसिद्ध पौष्टिक गुण-संपन्न इस विशुद्ध रसोई-साधन-द्वारा आप का आहार सुधारो। और याद रखो, डालडा साधारण रसोई-साधन नहीं—बल्कि वह परिवारों को तन्दुरुस्त रखता है और उन को अधिक स्फूर्ति देता है।

★ डालडा-पाकशास्त्र पुस्तक (केवल अंग्रेजी) की सहायता से अपने भोजन का प्रबन्ध कीजिये। इस में १५० से अधिक स्वादिष्ट भारतीय आहार के प्रकार निजी पौष्टिक गुणों के कारण चुने हुए समाविष्ट हैं। आप के कॉपी के लिये Dept. B421 P.O. Box No. 353, Bombay, के पते पर ४ आने के पो० स्टाम्पस् भेजियेगा।

HVM. 49-23 HI

THE HINDUSTAN VANASPATI MANUFACTURING CO., LTD.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पं० गौरीशङ्कर मिश्र, बी० ए०, एल्-एल० बी०

लिखित पुस्तकें

बलिदान-मन्दिर

इस उपन्यास की घटना बड़ी रोचक है। मनुष्य के चरित्र का उत्कर्ष किस प्रकार हुआ, वह लोकोपयोगी किस प्रकार हुआ और वास्तविक बलिदान क्या है, इसका बड़ा सुन्दर वर्णन इस उपन्यास में है। इसके पढ़ने से मनोरञ्जन के साथ-साथ आत्मसुधार की भी शिक्षा मिलती है। अच्छे टाइपों में छपी ढाई सौ पृष्ठों की सजिल्द पुस्तक का मूल्य १॥) एक रुपया आठ आने।

भक्त जयदेव

यह उपन्यास अपने ढङ्ग का एक ही है। इसमें 'हम भक्तन के भक्त हमारे' का प्रदर्शन बड़ी सुन्दरता से लेखक ने किया है। मूल्य केवल १॥) एक रुपया आठ आने।

कलियुगी दुनिया की सच्ची कहानियाँ

पहला भाग

वर्तमान युग प्रगति का कहा जाता है। इसी युग की कहानियाँ इस संग्रह में हैं। ये विलक्षण हैं और पढ़नेवालों को एक मीठी सलाह देती हैं। कहानियाँ एक से एक बढ़कर हैं। पृष्ठ-संख्या सवा सौ। मूल्य १।) एक रुपया चार आने।

शबरी अछूत ?

यह एक रोमाञ्चकारी नाटक है। मर्यादा-पुरुषोत्तम रामचन्द्रजी की प्रसिद्ध भक्त मीरा के कथानक के आधार पर इस नाटक की रचना हुई है। अछूत समस्या के युग में यह नाटक सचमुच अपनी विशेषता रखता है। बढ़िया छपी पुस्तक का मूल्य केवल ।॥) बारह आने।

मिलने का पता—इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

बाल-भारती

बालक-बालिकाओं के लिए कविता का अपूर्व ग्रन्थ

पंडित सोहनलाल द्विवेदी १९२१ से बालकों के लिए कविताएँ लिख रहे हैं। पिछले पच्चीसवर्षों से बराबर लिखते रहने के कारण ही, वे बालकों के एक सर्वश्रेष्ठ कवि बन सके हैं। अभी तक बालकों के लिए इनकी कई कविता-पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। देश के नेता और विद्वानों ने इन पुस्तकों की बड़ी प्रशंसा की है।

यह पढ़कर आपको बड़ी प्रसन्नता होगी कि हम द्विवेदी जी की अच्छी से अच्छी कविताओं को एक बड़ी कविता-पुस्तक में प्रकाशित कर रहे हैं। बालक-बालिकाओं के लिए इससे बढ़कर और सुन्दर हिन्दी में दूसरी पुस्तक न मिलेगी। इस पुस्तक का नाम **बाल-भारती** है।

छोटे बच्चे इसकी रंगीन तसवीरें देखकर और सरल कविताएँ पढ़कर अपना दिल खुश कर सकते हैं। बड़े बच्चे इसकी कवितायें पढ़कर, मनोरंजन के साथ साथ बहुत अच्छी बातें जान सकते हैं। माता-पिता भी इन कविताओं को पढ़कर, एक बार अपने बचपन का आनन्द उठा सकते हैं। इस प्रकार, इस एक ही पुस्तक से घर भर के लोग अपने समय को सुखपूर्ण बना सकते हैं।

बाल-भारती बड़ी सज-धज से छापी जा रही है। अनेकों रंगीन तथा सादे चित्रों से सजी इसकी कविताएँ पढ़ने में दूना आनन्द प्राप्त होगा। पृष्ठ-संख्या लगभग तीन सौ। मूल्य ३।)। 'बाल भारती' पाने के लिए पहले से ही सूचना दीजिए, क्योंकि काग़ज़ की कमी के कारण सीमित संख्या में ही यह प्रकाशित की जा रही है।

मैनेजर बुकडिपो—इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हलवे का स्वाद खाने से मिलता है।

हमारे यहाँ की बनी क्रीमोला टाफी
फ्रूट ड्राप्स तथा
रेशमी मिठाइयों का स्वाद लीजिए।
सभी दूकानों में मिलती हैं।

निर्माता—इण्डस्ट्रियल रिसर्च हाउस,
इंडियन प्रेस बिल्डिंग,
इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेख-सूची

सम्पादकीय ९७

दक्षिण अफ्रीका में श्वेताङ्ग-नीति का नग्न नृत्य—स्वामी भवानीदयाल संन्यासी ... १०५

झाँकी—श्री रामचन्द्र तिवारी ... ११०

पास्त जर्मनी में—श्री आशाराम, एम० ए० ११७

गीत (कविता)—श्री अतीत, बी० ए० ... १२०

बहुल—श्री प्रेमनारायण टण्डन, एम० ए० १२१

मेरी अलमोड़ा-यात्रा—श्री सन्तराम, बी० ए० १२६

विमल-दुर्बुद्धि—श्री हनुमन्त बख्शी ... १२९

सूरदास की आँखें—डाक्टर ब्रजेश्वर वर्मा, एम० ए०, डी० फिल्० ... ... १३१

शहीद का शव—प्रोफेसर श्रीनारायण अग्रवाल, एम० ए०, बी० कॉम० ... ... १३५

गीत (कविता)—श्री गङ्गाप्रसाद 'कौशल' ... १३७

डिग्री-कालेज लायलपुर में विविध परीक्षण—श्री विनयकुमार विद्यालङ्कार १३८

क्या न मुझे स्वीकार करोगी (कविता)—श्री छोटेलाल भारद्वाज १४०

भाषा-विषयक लक्ष्य—डाक्टर वा० वा० देवधर, एम० बी० बी० एस० ... ... १४१

अमलतास (कविता)—श्री प्रभाकर माचवे, एम० ए०, साहित्यरत्न १४४

बड़ी भूल—श्री भारती, एम० ए० ... १४५

एक प्रश्न—श्री जगदेव गुप्त 'कलाकार' ... १४७

तुम प्राणों के प्राण बनो (कविता)—श्री विश्वप्रकाश दीक्षित 'बटुक' १५२

राजस्थानी साहित्य की भाषा और उसके अप्रकाशित ग्रन्थ—चौधरी शिवसिंह मल्लाजी चोयल (सीरवी) १५३

हीरद-माला (कविता)—श्री मुकुल ... १५७

आदमी का बच्चा—श्री कृष्णचन्द्र शर्मा, एम० ए० १५८

विचार-विमर्श १६२

विविध विषय १७२

नई पुस्तकें १७८

सामयिक साहित्य १८०

चित्र-सूची

१—हिन्दी-प्रश्नपत्रों की कठिनता के विरुद्ध प्रदर्शन करनेवाली पञ्जाब-विश्वविद्यालय की कुछ छात्राएँ १०८-०९

२—आजाद हिन्द के कुछ टिकट ... ,,

३—एक गाँव की सभा में श्रीमती अरुणा आसफअली ,,

४-५—डरबन में भारतीय सत्याग्रहियों की भीड़ के दो चित्र ... ... ,,

६—श्री सन्तराम, बी० ए० ... १२६-२७

७—अलमोड़े का एक दृश्य ... ,,

८—अलमोड़े का एक बँगला .. ,,

९—रानीखेत की एक पहाड़ी सड़क ... ,,

१०—अलमोड़े का एक नयनाभिराम दृश्य ... ,,

११—शिल्पकार महिला-विद्यालय की कुछ छात्राएँ और अध्यापिकाएँ ... ... ,,

१२—रायबहादुर हरिप्रसाद टम्टा ... ,,

१३—श्री इन्द्रसिंह और कुमारी विद्यावती ... ,,

१४—टोकरियों में रक्खे हुए पैरीथ्रम के पौधे १३८-३९

१५—काँटेदार बुर्श के सिट्टे ... ,,

१६—एक पहाड़ी पर पैरीथ्रम की फुलवारी ,,

१७—काँटेदार बुर्श का एक खेत ... ,,

१८—कर्नल निरञ्जनसिंह गिल और कुछ प्रमुख सिख नेता १८०-८१

१९—अमेरिकन पत्रकार लुई फिशर एक अमेरिकन लेखिका के साथ ... ... ,,

२०—लखनऊ के मिलिटरी एकाउण्ट क्लर्कों के सत्याग्रह का दृश्य ... ... ,,

२१—अमेरिकनों के एक राष्ट्रीय उत्सव पर भारतीय वस्त्र पहनकर भारतीय सङ्गीत द्वारा जनता का मनोरञ्जन करनेवाले गायक ... ... ,,

२२—भरतपुर में खुदाई-द्वारा प्राप्त एक शिलालेख ,,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्त्री-रोगों का शर्त्तिया इलाज

सब से पहला ४० चालीस वर्षों का पुराना जगद्विख्यात

यशोदा देवी

आयुर्वेदिक स्त्री-औषधालय

कर्नलगंज, इलाहाबाद

स्त्री-चिकित्सा में जगद्विख्यात श्रीमती यशोदा देवी की

स्त्री पुरुषों के गुप्त रोगों पर लाखों बार परीक्षा की हुई देशी औषधियों का चमत्कार देखिये।

अब तक कई लाख स्त्री पुरुषों के गुप्त रोग दूर कर दिये गये हैं और बीसों हजार सन्तानहीन स्त्रियाँ सन्तानवती हो गई हैं।
एकबार रोगी का पूरा हाल लिखकर रोगों को दूर कराइये या रोगी स्त्री या पुरुष जो हो उसे यहाँ लाकर दिखलाइये।

रोगी और सन्तानहीन स्त्रियों को खुशखबरी

जो श्रीमतियाँ धनी मानी रानी महारानियाँ और सर्व साधारण कैसे ही नये पुराने कठिन से कठिन सर्व साधारण किसी भी गुप्त रोग से ग्रसित हों, वर्षों इलाज कराके अपनी सामर्थ्य के अनुसार खर्चकर हैरान परेशान हो निराश हो चुकी हों जिनका बड़े-बड़े नामी चिकित्सकों ने वर्षों इलाज करके भी रोग को न समझ पाया हो उस रोगी स्त्री और उसके पति को यहाँ भेज कर या रोग का पूरा हाल लिखकर घर बैठे ही इलाज कराकर रोग दूर कराइये।

श्रीमती यशोदा देवी की औषधियों से अब तक (४० वर्षों में) लाखों स्त्रियाँ आराम हो चुकी हैं और हजारों सन्तानहीन स्त्रियाँ सन्तानवती हो गई हैं कोई भी रोग हो पूरा हाल लिखिये।

रोग का पूरा हाल लिखकर घर बैठे ही इलाज करानेवाली सैकड़ा पीछे निन्नानवे स्त्रियों को फायदा होता है।

बड़ी-बड़ी धनी मानी श्रीमतियाँ अपने रोग का पूरा हाल लिखकर घर बैठे ही पारसल से औषधियाँ मँगाकर बड़े-बड़े नये और पुराने रोगों से आराम होकर छुटकारा पाचुकी हैं।

सब प्रकार की चिट्ठियाँ गुप्त रक्खी जाती हैं, संकोच न कर रोग का पूरा हाल लिखकर रजिस्टरी पत्र द्वारा भेजें और श्रीमती यशोदादेवी की देशी औषधियों का चमत्कार देखिये। कोई भी गुप्त रोग हो फायदा अवश्य होगा।

जिनके सन्तान नहीं होती या गर्भ रहकर गिर जाता है या पति के वीर्य की निर्बलता से कन्याएँ ही कन्याएँ उत्पन्न होती हैं जिनको पुत्र की इच्छा है और जिनके कभी गर्भ रहता ही नहीं वे भी अपने रोगों का और अपने पति का भी पूरा हाल लिखें स्त्री पुरुष दोनों का इलाज करके ठीक कर दिया जावेगा सन्तान होने लगेगी।

स्त्री-चिकित्सक—स्त्री-चिकित्सा का सचित्र मासिक पत्र ५०० स्त्रियों को मुफ्त भेजा जावेगा शीघ्र ही मँगाकर इसको पढ़ सुनकर स्त्रियाँ अपने गुप्त रोग समझ कर रोगों से बची रहती हैं।

पता—यशोदा देवी आयुर्वेदिक स्त्री-औषधालय आयुर्वेद भवन, कर्नलगंज, इलाहाबाद

तार का पता "देवी" इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादक—देवीदत्त शुक्ल : उमेशचन्द्र मिश्र

अगस्त १९४६ श्रावण २००३; भाग ४७, खण्ड २ संख्या २, पूर्ण संख्या ५६०

सम्पादकीय

युक्तप्रान्तीय सरकार की अन्न-संग्रह-योजना

लोकप्रिय और जनता के प्रतिनिधियों की सरकार अन्न-संकट-जैसी भीषण परिस्थितियों का सामना किस तत्परता और कुशलता से कर सकती है, इसका परिचय युक्तप्रान्तीय सरकार अन्न-संग्रह-योजना से लगता है। युक्तप्रान्त के प्रीमियर माननीय पण्डित गोविन्दवल्लभ पन्त ने १२ अप्रैल को लखनऊ रेडियो स्टेशन से ब्राडकास्ट करते हुए अन्न-संग्रह-सम्बन्धी सरकारी नीति का स्पष्टीकरण किया था। उसके बाद के दिन वर्षा की दृष्टि से अच्छे नहीं रहे। पूर्वा चलती रही और प्रान्त के अनेक भागों में थोड़ी-बहुत वृष्टि भी हुई। ऐसे परिवर्तनशील और अस्थिर वातावरण में अन्न-संग्रह जैसी योजना के सञ्चालन में कार्यकर्त्ताओं को अनेक असुविधाओं का सामना करना पड़ा। फिर भी ३१ मई-तक ही १२ लाख टन से अधिक रबी की फसल का अन्न सञ्चित हो चुका था। इसके बाद कार्य और तेजी से अग्रसर हुआ। एसोशिएटिड प्रेस को अन्न की इस सम्बन्ध की जो रिपोर्ट पत्रों में प्रकाशित हुई, उससे पता चला कि तब तक कुल मिलाकर २३२००० टन अन्न एकत्र हो चुका था। इसमें वह अनाज सम्मिलित है जो 'सर्वाई' के रूप में प्रान्तीय कृषि-विभाग के द्वारा किया गया है। इस प्रकार जून में प्रतिदिन का औसत [illegible] इसी से प्रमाणित होता है कि सरकार की अपील का किसानों और कार्यकर्त्ताओं पर एकसा प्रभाव पड़ा है और वे योजना को सफल बनाने के लिए प्राणपण से चेष्टा कर रहे हैं।

प्रान्त के अगणित शुभाकांक्षी जहाँ योजना को सफल बनाने के लिए और उसके द्वारा आगामी अन्न-सङ्कट की सम्भावना को दूर भगाने के लिए कृतसङ्कल्प दिखाई देते हैं, वहाँ समाज के कुछ ऐसे शत्रु भी हैं जो योजना की विफलता के लिए भरसक प्रयत्न कर रहे हैं। कहने की आवश्यकता नहीं कि ये वही लोग हैं जो चोर-बाजार और अनुचित मुनाफाखोरी के द्वारा अब तक अपना धन्धा चलाते रहे हैं और योजना के सफल होते ही जिनका मुँह काला हो जाएगा। इस पक्ष की ओर से योजना के विरोध में विचित्र तर्क उपस्थित किए जा रहे हैं। उनका कहना है कि "सरकार नगर-निवासियों के उदर भरने के लिए ग्रामीणों से अनाज छीन रही है।" वे किसानों को भड़का रहे हैं कि "सरकार तुम्हारा अन्न अभी सस्ते भाव पर खरीद रही है। आगे चलकर अनाज अवश्य महँगा होगा और तब तुमको घटी रहेगी, इसलिए अन्न अभी न बेचो और उसे अपने पास जमा रक्खो। जब अन्न के दाम खूब चढ़ जाएँ तब बेचने पर तुम्हें लाभ रहेगा।"

इन अभागे चोर-बाजारियों और अनुचित मुनाफाखोरों की चालों से जनता और किसान अच्छी तरह परिचित हैं। माननीय पन्तजी ने भी इन तर्कों का मुँहतोड़ उत्तर सरकार की

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओर से नैनीताल में हुई प्रेस कान्फरेंस में दे दिया था। यह कहना मूर्खता का परिचायक है कि सरकार शहरवालों का पेट भरने के लिए किसानों से अनाज ले रही है। अनाज गाँवों में ही पैदा होता है, शहर में नहीं। शहर अन्य उपयोगी वस्तुएँ पैदा करता है, जिनसे किसान का काम चलता है। यह तो एक प्रकार का आदान-प्रदान है जो सदा से होता आया है। यदि किसान अपनी उपज का एक विशेष अंश बेचेगा नहीं तो वह वस्त्र, मिट्टी का तेल, खेती के उपकरण तथा जीवन की अन्य अत्युपयोगी वस्तुएँ कैसे मोल लेगा और कहाँ से उसे लगान चलाने के लिए पैसा मिलेगा!

फिर योजना में किसान को अपनी सारी उपज सरकार को बेच देने को बाध्य नहीं किया गया है। न गल्ला बेचने के लिए किसान पर किसी प्रकार का अनुचित दबाव डालना ही लोकप्रिय सरकार को अभीष्ट हो सकता है। योजना की मंशा तो यह है कि किसान के पास अपने और अपने आश्रितों के खाने से जो कुछ अन्न बचता दिखाई दे उसका एक भाग—अर्थात् फालतू अन्न भी सब नहीं—वह सरकार के हाथ उचित मूल्य पर बेच दे। जिस किसान के पास अपने खर्च से अधिक अन्न नहीं है, उसे बेचने के लिए सरकार कभी बाध्य न करेगी। सरकार का यह अनुमान ठीक ही है कि कुछ अपवादों को छोड़कर, औसत किसान के पास अपनी उपज का अष्टमांश अवश्य बेचने को रहता है। इसी लिए उसने यह विचार प्रकट किया है कि किसान की उपज के अष्टमांश से अधिक की खरीद न की जाए। शेष सात हिस्से गाँव में ही रहने दिए जाएँ। इस दशा में अपना फालतू अन्न सरकार के हाथ बेचने में किसान को आपत्ति ही क्या हो सकती है!

अब यह अनुमान भी नहीं किया जा सकता कि प्रान्त में कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल होते हुए—ऐसा अकाल पड़ जाएगा कि अन्न बङ्गाल के अकाल के दिनों की भाँति रुपए तोला बिकने लगेगा और इस प्रकार अनुचित संग्रह करनेवालों की चाँदी हो जाएगी। प्रथम तो अन्न-सङ्कट इतने भीषण रूप में उपस्थित होने की सम्भावना ही नहीं है, क्योंकि वृष्टि अच्छी हुई है जिससे खरीफ की फसल में बहुत अन्न पैदा होगा; साथ ही ऐसे खाद्य भी उत्पन्न होंगे ही जो उदर भरने का काम दे देते हैं; फिर बाहर से भी गल्ला आ ही रहा है। अतः इस दृष्टि से भी अन्न को छिपा रखने से किसान लाभ में न रहेगा। कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलों के रहते हुए चोर-बाजार चल सकना और अनुचित मुनाफाखोरी हो सकना असम्भव है। इसके लिए सभी सम्भव प्रयत्न किए जा रहे हैं और चोर-बाजारियों की देखभाल करने के लिए स्थान-स्थान पर योग्य जनसेवक नियुक्त कर दिए गए हैं। ये जनसेवक यह भी देखते हैं कि कहीं किसान पर किसी प्रकार का अनुचित दबाव तो नहीं डाला जा रहा है।

युक्तप्रान्तीय सरकार ने गेहूँ का खरीद-भाव दस रुपए [illegible] आने मन निर्धारित किया है। सरकार की ओर से स्पष्ट [illegible] कह दिया गया है कि भाव इससे अधिक कदापि न बढ़ेगा, [illegible] कुछ घट भले ही जाए। पञ्जाब में गेहूँ का भाव ९) मन करीब है और सिन्ध में ८) मन। इनसे तुलना करने [illegible] युक्तप्रान्त के भाव काफी महँगे हैं, अतः किसान को और अधिक महँगाई आने की कल्पना भी नहीं करनी चाहिए।

रही चोर-बाजार की बात, उसको नामशेष कर देने के लिए लोकप्रिय सरकार प्रत्येक सम्भव प्रयत्न कर ही रही है और वह दिन अब दूर नहीं है जब प्रत्येक चोर-बाजारी को—समाज के ऐसे प्रत्येक शत्रु को—खोद-खोदकर अँधेरे बिलों से निकाला जाएगा और उसका समुचित सत्कार किया जाएगा।

प्रसन्नता की बात है कि प्रान्त का प्रत्येक जनसेवक [illegible] योजना को सफल बनाने का भरपूर प्रयत्न कर रहा है। मुस्लिम लीग के नेता भी पूरा सहयोग दे रहे हैं। वस्तुतः [illegible] एक ऐसा कार्य है जिसे धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक भेदभावों से दूर रहकर किया जा रहा है। इस वस्तुस्थिति से हमें विश्वास है कि यह योजना पूर्ण रूप में सफल होगी और प्रान्त में किसी प्रकार का अन्न-सङ्कट उपस्थित न हो सकेगा।

——

अरबों के विरोध में

ग्रेट ब्रिटेन और आयर्लैंड के यहूदियों का एक [illegible] जिसका नाम है 'जियोनिस्ट फेडरेशन आफ ग्रेट ब्रिटेन [illegible] आयर्लैंड'। पिछले दिनों लन्दन में इस सङ्घ का अधिवेशन बड़ी धूम-धाम से हुआ था जिसमें जोश-भरी वक्तृताओं और अनेक प्रस्तावों-द्वारा ब्रिटिश सरकार से माँग की गई थी कि वह एँग्लो-अमेरिकन कमेटी की सिफारिशों को अविलम्ब कार्यरूप में परिणत करते हुए एक लाख यहूदियों को फिलस्तीन में बसाने की व्यवस्था करे। ब्रिटिश सरकार इस माँग को कब और किस सीमा तक पूरा करेगी, यह तो नहीं कहा जा सकता पर यह स्पष्ट है कि यहूदियों की यह माँग उचित नहीं है और ग्रेट ब्रिटेन और अमेरिका को छोड़कर अन्य [illegible] शायद ही कोई ऐसा होगा जो इसका समर्थन करे।

यहूदियों को योरप के उन देशों से जहाँ वे बसे हुए आज से नहीं कई शताब्दियों से हटाना क्यों अनिवार्य है? यदि हटाना अनिवार्य ही है तो वे ले जाकर फिलस्तीन में क्यों बसाए जाएँ, अन्य देशों में क्यों नहीं; ये दो ऐसे प्रश्न जिनका उचित समाधान न तो एँग्लो-अमेरिकन कमेटी दे सकी है और न उक्त यहूदी सङ्घ के वक्ता और कर्णधार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[सन् १९...]

...नहीं है। ऐंग्लो-अमेरिकन कमेटी का कहना है कि 'योरपीय ...में बसे हुए यहूदियों की दशा अत्यधिक दयनीय हो रही ...। हिटलर और नाजियों ने यहूदियों के प्रति घृणा का जो ...बो दिया है वह अब एक विशाल वृक्ष का रूप धारण कर ...है और उसकी जड़ें और शाखा-प्रशाखाएँ समूचे योरप में ...चुकी हैं। इस वस्तुस्थिति में यहूदियों का कुशलक्षेम ...में है कि वे यथासम्भव शीघ्रता से योरपीय देशों से अलग ...क्योंकि योरपीय राष्ट्र यहूदियों की उपस्थिति को सहन ...कर सकते और इससे विश्व-शान्ति को किसी समय खतरा ...स्थित हो सकता है। योरप से बाहर जो भी देश हैं वे अन्य ...के प्रवेश के सम्बन्ध में बहुत अनुदार हैं। उनके ...ग्रेशन कानून' इतने कठोर हैं कि यहूदी वहाँ पर नहीं ...सकते। इस दशा में फिलस्तीन ही एकमात्र ऐसा भूभाग ...यहूदी बसाए जा सकते हैं। जन्मभूमि होने के नाते ...यहूदी का यह विश्वास है कि फिलस्तीन में उसे जो ...प्राप्त होगा, वह अन्यत्र नहीं हो सकता। प्रत्येक यहूदी ...स्तीन में जा बसने के लिए उत्सुक भी है।'

उक्त कमेटी का यह कथन यथार्थता पर आधारित नहीं है। ...का फिलस्तीन यहूदियों का स्वागत करने के लिए रत्ती ...भी तैयार नहीं है। 'फिलस्तीन अरब हाइर कमेटी' के ...श्री जमालहुसेनी ने साफ शब्दों में कह दिया है कि ...लोग यहूदियों को फिलस्तीन में पैर नहीं रखने देंगे, ...इसके लिए उन्हें कितना ही रक्त क्यों न बहाना पड़े।

...कटुता और उत्तेजना की इस चरमावस्था में यहूदियों को ...स्तीन में ला बसाने का क्या परिणाम होगा, यह सहज ही ...जा सकता है। तब क्या यह उचित नहीं होगा कि ...जहाँ बसे हैं, वहीं बसे रहें। कड़ाही से निकालकर ...में झोंकना कहाँ की बुद्धिमत्ता है! आज योरपीय राष्ट्र ...और नाजियों के प्रभाव से मुक्त हो चुके हैं। यहूदियों ...प्रति घृणा का प्रचार करनेवाला हिटलर अपने साथियों ...सहायकों समेत वहाँ पहुँच चुका है, जहाँ से वापस आना ...सम्भव है। तब योरपीय राष्ट्रों में फैली हुई यहूदियों के प्रति ...की भावना का उन्मूलन करने में मित्र-राष्ट्र अपनी शक्ति ...अपने प्रभाव का उपयोग क्यों नहीं करते? वे यह कैसे ...कर रहे हैं कि वर्ण-विद्वेष और जाति-विद्वेष की जिस ...भावना का प्रचार नाजी-दल ने योरप में किया था वह ...के अपदस्थ हो जाने पर भी युद्धोत्तरकालीन योरप में ...रहे? जहाँ योरप नाजीवाद की अन्य बुराइयों से साफ ...जा रहा है, वहाँ इस एक सबसे बड़ी बुराई की अवहेलना ...की जा रही है?

...'इमीग्रेशन कानून' की कठोरता की बात; सो कोई ...—जिसकी रचना मनुष्य आवश्यकता और समय के ...पर करता है—वेद-वाक्य या हदीस नहीं होता जो अपरिवर्तनीय हो। युद्धोत्तर संसार युद्धपूर्व संसार से सर्वथा भिन्न प्रकार का होने जा रहा है। दकियानूसी और पारस्परिक घृणा को प्रश्रय देनेवाले कानून और नियम क्या अब भी पूर्ववत् बने रहेंगे? मित्रराष्ट्रों का, उनके संयुक्त राष्ट्रसङ्घ का और उनकी सुरक्षा-समिति का ध्यान इस ओर क्यों आकृष्ट नहीं हो रहा है? क्यों वे इस राष्ट्रगत कोढ़ की चिकित्सा करने का प्रयत्न सबसे पहले नहीं करते?

फिर फिलस्तीन के ऊपर ही यह ज्यादती क्यों होना चाहिए? संसार में ऐसे अनेक देश हैं जो एक लाख यहूदियों को सरलता और सुविधा के साथ जगह दे सकते हैं। अमेरिका स्वयं एक ऐसा ही देश है। क्यों नहीं वह यहूदियों को अपनी भूमि पर बसा लेता? न्यूयार्क में जहाँ करोड़ों की आबादी है वहाँ एक लाख यहूदियों का एक छोटा-सा मुहल्ला और सही! इस छोटी-सी बात को लेकर मध्यपूर्व के बारूदघर में चिनगारी डालना और इस प्रकार विश्व शान्ति के लिए एक खतरा उत्पन्न कर देना विश्वशान्ति और सुरक्षा के ठेकेदारों को शोभा नहीं देता।

फिलस्तीन में किसी जाति को प्रवेश करने या बसने का अधिकार देना या न देना आज के युग में वहाँ के निवासियों की इच्छा पर छोड़ देना चाहिए। प्रजातन्त्र की नीति का तकाजा यही है—उसी प्रजातन्त्र का जिसकी दुहाई देते और प्रशंसा करते हुए ब्रिटेन और अमेरिका के राजनीतिज्ञ थकते नहीं। यह कैसा प्रजातन्त्र है कि योरप में बसनेवाले यहूदी या ब्रिटेन और अमेरिका एक दूसरे देश के 'इमीग्रेशन कानून' का निर्धारण करें और हिटलर और नाजीवाद ने जो पाप किए हैं उनका प्रायश्चित्त करने के लिए फिलस्तीन के अरबों को बाध्य करें?

यहूदियों की यह भी माँग है कि भूमि-परिवर्तन-सम्बन्धी कानून को वापस ले लिया जाए! इस सम्बन्ध में ऐंग्लो-अमेरिकन कमेटी का कथन है—"हम प्रत्येक ऐसे कानून या प्रतिबन्ध के विपक्ष में हैं जो यहूदियों और अरबों में से किसी को तरजीह देता हो।" फिलस्तीन सदियों से अरबों का है। ऐंग्लो-अमेरिकन कमेटी का प्रयत्न क्या यही नहीं है कि वहाँ के अरब बहुमत को अल्पमत में परिवर्तित कर दिया जाए और इस प्रकार एक शत-प्रतिशत अरब-राष्ट्र को यहूदी-उपनिवेश बना डाला जाए? अरब इस चालाकी को अच्छी तरह समझ रहे हैं और वे इसी लिए खड्गहस्त हैं। वे इस अत्याचार का विरोध करते हैं तो अँगरेज और अमेरिकन इसे उनका यहूदी-विरोध कहते हैं! आज की दुनिया ऐसी बुद्धू नहीं है जो उत्पीड़क और उत्पीड़ित में भेद न कर सके। आज सब अच्छी तरह समझते हैं कि अरब सताए जा रहे हैं और यहूदियों का पक्ष लिया जा रहा है।

भाषणों में यहूदी-नेताओं ने कहा है कि 'ब्रिटेन ने वचन दिया था कि वह फिलस्तीन को यहूदियों का 'राष्ट्रीय गृह' बना देगी। उस वचन का पालन करना ब्रिटेन का नैतिक दायित्व

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है।' पर न्याय का तकाजा यह है कि ब्रिटेन अपने वचन का पालन यहूदियों को आस्ट्रेलिया में बसाकर करे! यदि ब्रिटेन 'बालफोर घोषणा' को कार्यरूप में परिणत करने की चेष्टा करेगा तो अरब उसका विरोध अवश्य करेंगे। उनका पक्ष न्याय-सङ्गत होगा।

आज जो हवा बह रही है उसे देखते हुए फिलस्तीन की समस्या का ठीक हल केवल एक दिखाई देता है। वह यह कि फिलस्तीन में एक राष्ट्रीय सरकार की स्थापना कर दी जाए। एँग्लो-अमेरिकन कमेटी की यह दलील है कि 'फिलस्तीन ईसाइयों, मुसलमानों और यहूदियों की समान रूप से पवित्र भूमि है। इसलिए यह न तो ठीक होगा और न व्यावहारिक ही कि उसे अरब राज्य बनाकर अरबों के बहुमत के हाथ में यहूदी अल्पमत का भाग्य सौंप दिया जाए या उसे यहूदी-राज्य बनाकर अरबों के साथ अन्याय किया जाए।' पर किसी-न-किसी रूप में अब तक होता यही रहा है। गत २५ वर्ष से ईसाई ब्रिटेन वहाँ पर अधिकार किए है और इस तथ्य की उपेक्षा करते हुए कि फिलस्तीन अरबों और यहूदियों की पवित्र भूमि है, वह वहाँ की राजनीति का सञ्चालन अपने ढङ्ग से कर रहा है, जब कि प्रजातन्त्र के नियमानुसार राष्ट्र की राजनीति का सञ्चालन बहुमत की इच्छा के अनुसार होना चाहिए। क्या किसी देश-विशेष को केवल इसी अपराध के कारण प्रजातन्त्र की सुविधाओं से वञ्चित रखना चाहिए कि वह दो या अधिक धर्मावलम्बियों की पवित्र भूमि है?

अरब-यहूदी सङ्घर्ष के विषय में यही कहा जा सकता है कि वह ब्रिटिश राजनीति की देन है। यह सङ्घर्ष-भावना फिलस्तीन तक ही सीमित हो, यह बात नहीं है। अन्य अरब देशों में भी यह मौजूद है। सन् १९३७ में ही 'पील कमेटी' ने कहा था—"फिलस्तीन में अरब-यहूदी सङ्घर्ष होने से पूर्व अन्य अरब-जगत् में अरब यहूदी पार्थक्य के चिह्न नहीं के बराबर थे।"

यदि श्री एटली की सरकार फिलस्तीन के सम्बन्ध में अपनी इसी नीति पर दृढ़ रही तो अरबों और ब्रिटेन के सम्बन्धों में भी कटुता आ जाना अवश्यम्भावी है। यह परिस्थिति ब्रिटेन के लिए भी लाभदायक नहीं होगी। कारण, रूसी भालू मध्यपूर्व की इस स्थिति में अधिक दिलचस्पी लेता दिखाई दे रहा है। मास्को रेडियो पर गत पिछले दिनों एक आलोचक ने कहा था—"फिलस्तीन के मामले को केवल ब्रिटेन और अमेरिका के भरोसे ही नहीं छोड़ा जा सकता। उस पर समस्त राष्ट्रों के संयुक्त सङ्घ को विचार करना चाहिए। इस मामले का निपटारा यथा-सम्भव शीघ्र करना चाहिए। यह समझना भूल होगी कि बिना फिलस्तीन की जनता की सम्मति लिए एँग्लो-अमेरिकन कमीशन नियुक्त कर देने से ही समस्या सुलझ जाएगी। संयुक्तराष्ट्रों की सम्मति भी इस मामले में आवश्यक है। इँग्लैंड का शासकवर्ग फिलस्तीन को स्वेज नहर में अपने हित के लिए एक महत्त्वपूर्ण स्थान समझता है। इँग्लैंड ने पहले अरबों के साथ जो सन्धियाँ की थीं, अरब चाहते हैं कि उन सन्धियों में परिवर्तन किया जाए। ब्रिटेन के राजनीतिज्ञ यह प्रकट करने के लिए उत्सुक हैं कि वे अरबों के पक्ष में हैं। साथ ही वे यह भी दिखाना चाहते हैं कि फिलस्तीन में यहूदियों के बसाने का कार्य अनिच्छा से ही कर रहे हैं। ब्रिटेन अरबों से लड़ना नहीं चाहता अतः वह उनकी कोई सहायता भी नहीं कर सकता क्योंकि उसे अमेरिका की अप्रसन्नता का भय है।

— —

दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह

महात्मा गांधी के प्रसिद्ध अस्त्र का सर्वप्रथम प्रयोग दक्षिण अफ्रीका में हुआ था और वहीं उसे सफलता भी प्राप्त हुई थी। सत्याग्रह के उस जन्मस्थान में आज भारतीयों-द्वारा उसी का प्रयोग करना फिर आवश्यक हो गया है। वहाँ की यूनियन सरकार ने भारतीयों का विरोधी गलाघोटू कानून पास कर दिया है और अब वह व्यावहारिक रूप धारण करेगा। यह न केवल प्रवासी-भारतीयों के ऊपर अन्याय है, भारत के प्रत्येक निवासी के लिए यह एक खुली चुनौती है। इस चुनौती को दक्षिण अफ्रीका के प्रवासी भारतीयों ने स्वीकार कर लिया है। उन्होंने डरबन से सत्याग्रह का श्रीगणेश कर दिया है जो सफलता के साथ चल रहा है। भारत की पूर्ण सहानुभूति अपने भाइयों के साथ है, यह कहने की आवश्यकता नहीं है।

सत्याग्रह के नेता हैं नेटाल की भारतीय कांग्रेस के डाक्टर जी० एम० निकर। उन्होंने सर्वप्रथम २० सत्याग्रहियों के साथ वर्जित-प्रदेश में पहुँचकर पाँच खेमे गाड़ दिए। पूरी सरकार ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया तो उनका स्थान ग्रहण के लिए हजारों भारतीय स्त्री-पुरुष पहुँच गए। डरबन यूनियन के अन्य नगरों में भारतीयों ने जबर्दस्त हड़तालें यूनियन सरकार के निर्णय का विरोध किया। भारतीय अपना खून-पसीना एक करके नेटाल को हरा-भरा किया वहाँ के स्वार्थी गोरे बहुत दिनों से यह प्रयत्न कर रहे वहाँ से भारतीयों को निकाल बाहर किया जाए। हिन्दुस्तानियों की उन्नति को वे स्वार्थी गोरे फूटी आँखों को तैयार नहीं हैं। वे हिन्दुस्तानियों से अछूतों-जैसा कर रहे हैं। वहाँ हिन्दुस्तानियों को जीवन की अनेक से वञ्चित रक्खा जाता है। वे सामान्य नागरिक का भी उपभोग नहीं कर सकते। उनके बच्चे उच्च में गोरे-बच्चों के साथ बैठकर नहीं पढ़ सकते। वे गोरों सुरक्षित स्थानों में किराए पर मकान नहीं ले सकते। क्षेत्रों के अपने मकानों में नहीं बस सकते और नए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...उन क्षेत्रों में कोई जमीन-जायदाद भी मोल नहीं ले सकते। इतना ही नहीं, अभागे और उपेक्षित हिन्दुस्तानी उस ...पर से रेलवे के टिकट भी नहीं खरीद सकते, जहाँ से गोरे ...दते हैं। वे निर्वाचन के अधिकार से भी वञ्चित कर दिए ...हैं। इस परिस्थिति को कब तक सहन किया जा सकता था? सत्याग्रह प्रारम्भ करने के पूर्व सभी वैध उपायों से परिस्थिति ...सुलझाने का प्रयत्न करके देख लिया गया था। कहने-सुनने ...भारत-सरकार ने भी दबे शब्दों में दक्षिण अफ्रीका की यूनियन ...कार के इस निश्चय के प्रति अपना असन्तोष प्रकट किया था ...उसने अपने हाई कमिश्नर को भी वहाँ से वापस बुला लिया ...इससे अधिक एक विदेशी सरकार कर ही क्या सकती थी?

आज यदि भारत स्वतन्त्र होता तो क्या दक्षिण अफ्रीका की ...यन सरकार को इस प्रकार प्रवासी भारतीयों का अपमान ...ने का साहस होता? और क्या भारत इस कड़वे घूँट को ...चाप गले के नीचे उतार जाता? पर नहीं, भारत आज ...म बने रहने पर भी इस अपमान को सहन नहीं करेगा। ...विदेशों में अपने सम्मान की रक्षा अवश्य करेगा और इसके ...अपना सर्वस्व होम देगा।

पर दक्षिण अफ्रीकावासी सभी गोरे ऐसे कमीने नहीं हैं। ...में एशियावासियों के अधिकारों की रक्षा के लिए एक ...बनाई गई है जिसका सञ्चालन अँगरेज कर रहे हैं। ...की पूरी सहानुभूति हमारे प्रवासी भाइयों को प्राप्त है। यह ...बात का सङ्केत है कि वह दिन अब अधिक दूर नहीं है जब ...वहाँ की यूनियन सरकार को अपना निश्चय बदल देने के ...और अपने पाप का प्रायश्चित्त करने के लिए विवश होना ...। अन्यथा यह प्रश्न बहुत जटिल बन जाएगा जो विश्व-...न्ति के लिए एक भयानक खतरा सिद्ध होगा।

——

रियासतें और स्वतन्त्र भारत का विधान

बम्बई में पिछले दिनों देशी नरेश और उनके मन्त्रिगण ...हुए थे। उद्देश्य था मन्त्रिमण्डल मिशन की योजना के ...में नरेन्द्रमण्डल का निर्णय प्रकट करना। ठीक इन्हीं ...अखिलभारतीय देशी राज्यलोक-परिषद् का अधिवेशन ...जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता में दिल्ली में हुआ था। ...संस्थाओं का सम्बन्ध देशी रियासतों से है। एक देशी ...की संस्था है और दूसरी उन रियासतों की प्रजा की। ...रियासतों को भारत से अलग नहीं किया जा सकता। इसी ...भौम तथ्य के आधार पर मन्त्रिमण्डल मिशन से स्वतन्त्र ...का जो सङ्घ-विधान प्रस्तावित किया है उसकी कार्यकारिणी ...प्रान्तों का प्रतिनिधित्व भी रहेगा और देशी रियासतों का भी। यह सङ्घ अथवा 'यूनियन' रक्षा, वैदेशिक मामलों और यातायात के लिए जिम्मेवार होगा। इसके लिए उपयुक्त अर्थ-संग्रह का अधिकार भी सङ्घ को होगा। इन तीन सङ्घ-विषयक अधिकारों को छोड़कर देशी नरेशों के शेष अधिकार और विषय अक्षुण्ण रहेंगे।

मन्त्रि-मण्डल मिशन की ओर से नरेन्द्रमण्डल के वर्त्तमान अध्यक्ष को जो 'श्वेत पत्र' दिया गया था उसमें कहा गया है कि भारत में स्वतन्त्रता के स्थापित होते ही सर्वोच्च सत्ता का अन्त हो जाएगा। ब्रिटिश सरकार के लिए न तो यह आवश्यक ही है और न वाञ्छनीय ही, कि वह सर्वोच्च सत्ता के अधिकार किसी को हस्तान्तरित करे। इस दशा में देशी नरेशों के लिए दो विकल्प हैं। या तो वे सङ्घ-योजना में सम्मिलित हो जाएँ या यदि ऐसा सम्भव न हो सके तो भावी स्वतन्त्र सरकार के साथ विशेष प्रकार की सन्धियाँ कर लें।

नरेन्द्रमण्डल ने अपना जो निर्णय घोषित किया, उसके अनुसार वह मन्त्रिमण्डल मिशन की सर्वोच्च सत्ता-सम्बन्धी घोषणा का स्वागत करता है और उसने एक समझौता वार्ता समिति की नियुक्ति कर दी है जो भारत के प्रतिनिधियों से विचार-विनिमय करके शर्तें तय करेगी। पर उसने यह प्रकट नहीं किया कि रियासतें सङ्घ शासन में वस्तुतः किस रूप में सम्मिलित होना चाहती हैं।

स्पष्ट है कि मन्त्रिमण्डल मिशन ने अपनी योजना-द्वारा देशी नरेशों को अपने-अपने राज्यों में अनियन्त्रित अधिकार सौंप दिए हैं। सर्वोच्च सत्ता के अन्त के साथ-साथ उनका रहा-सहा भय भी दूर हो जाएगा। इस दशा में वे अपनी अधिकृत भूमि में अपनी मनमानी करने के लिए स्वतन्त्र हो जाएँगे। पर राजाओं की इस तानाशाही का यूनियन सरकार के कार्य-सञ्चालन पर भी प्रभाव पड़ेगा और उसे पद-पद पर कठिनाई का अनुभव होगा। देश की सुरक्षा और समृद्धि की जिम्मेवारी यूनियन पर होगी। उसके निर्वाह के लिए यूनियन को अन्ततः सर्वोच्च सत्ता के अधिकार हस्तगत करने पड़ेंगे। यह रियासतों के भी हित में ही होगा। रियासतों की जैसी भौगोलिक परिस्थिति है उससे यह आशा नहीं की जा सकती कि वे आजकल के समय में अपनी रक्षा की समुचित व्यवस्था कर सकेंगी और यातायात व विदेशी मामलों जैसे विषयों का सञ्चालन स्वयं ही सफलता के साथ कर सकेंगी।

यदि अपने भावी हितों का ध्यान रखते हुए और समय का ठीक-ठीक अनुसरण करने की इच्छा से देशी रियासतें यूनियन के साथ सङ्घ-सम्बन्ध स्थापित करने का निर्णय करती हैं तो यह विचारणीय होगा कि इसके लिए शर्तें क्या रक्खी जाएँ। इसके लिए नरेन्द्रमण्डल ने एक समिति बना दी है जो भारत के नेताओं की एक वैसी ही समिति के साथ विचार-विनिमय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करेगी। जहाँ तक हमारा अनुमान है, मतभेद केवल दो विषयों के सम्बन्ध में होगा। पहला तो यह कि अखिल भारतीय देशी राज्य लोक-परिषद् यह चाहेगी कि रियासतों की ओर से केन्द्रीय शासन-परिषद् में जो ९३ प्रतिनिधि भेजे जाएँगे उनका चुनाव जनता-द्वारा हो, अर्थात् वे राजाओं के नामजद प्रतिनिधि नहीं होने चाहिएँ। दूसरा यह कि रियासतों को अपनी शासन-व्यवस्था पूर्ण रूप से प्रजातन्त्रात्मक कर देनी चाहिए। यदि रियासतें ऐसा नहीं करतीं तो ब्रिटिश भारत के साथ उनका यूनियन में खप सकना कठिन होगा। स्वतन्त्रता का समान फल प्रत्येक भारतीय को मिलना आवश्यक है, वह चाहे ब्रिटिश भारत का नागरिक हो या देशी रियासतों का।

— —

धार्मिक असहिष्णुता

गत १६ मई को मन्त्रिमण्डल-मिशन ने कहा था—"हमारे तैयार किए हुए समझौते को यदि भारत के प्रमुख राजनीतिक दलों ने अङ्गीकार नहीं किया तो इससे भारत की बहुत बड़ी हानि होगी। देश में साम्प्रदायिक दङ्गे होंगे, लूट-पाट, अव्यवस्था और गृह-युद्ध के दृश्य दिखाई देंगे...इत्यादि। यह धमकी नहीं थी, यह सच है। कांग्रेस ने अन्तःकालीन सरकार की योजना को अङ्गीकार नहीं किया। इससे लीग का क्षुब्ध हो उठना स्वाभाविक था। वह क्षोभ अब साम्प्रदायिक दङ्गों के रूप में प्रकट हो रहा है।

कहने को इन दङ्गों को साम्प्रदायिक कहा जाता है और इनके मूल में 'धार्मिक असहिष्णुता" को माना-कहा जाता है। पर क्या यह बात सच है? शताब्दियों से एक साथ बसनेवाले और एक ही देश का अन्न-जल खाने-पीनेवाले हिन्दू-मुसलमान धार्मिक मामलों में आज इतने असहिष्णु क्यों हो गए हैं, जितने कि पहले कभी नहीं थे! फिर भारतीय तो—वे चाहे किसी धर्म के अनुयायी क्यों न हों—स्वभावतः सहिष्णुता की मूर्त्ति हैं। यदि यह बात न होती तो शताब्दियों तक गुलामी का जुआ वे अपने कन्धों पर चुपचाप कैसे वहन करते रहते! बङ्गाल के अकाल में ३०-४० लाख भारतीय एक-एक दाने के लिए तरस-तरसकर मर गए! उनमें मुसलमान भी थे और हिन्दू भी! अधिकांश व्यक्ति सरकारी गल्लागोदामों के बन्द फाटकों के बाहर या धनाधीशों की कोठियों के द्वार पर मरे! पर न तो लूट-पाट हुई और न अपने विशाल अन्नागारों की रक्षा के लिए सरकार को या उन धनाधीशों को एक भी गोली व्यय करनी पड़ी। मरनेवालों ने इस आपत्ति को 'भाग्य-दोष' कहकर अङ्गीकार कर लिया। विदेशी आलोचकों ने भी भारतीयों की इस अभूतपूर्व सहिष्णुता को देखकर दाँतों-तले उँगली दबाई। पर यही आदर्श सहिष्णुता मस्जिद के सामने बाजा बजने साधारण घात से जब काफूर हो जाती है, तब आश्चर्य होता विदेशी आलोचक कहते हैं कि भारतीय गुलामी को शताब्दि तक सह सकते हैं, भुखमरी को भी झेल सकते हैं, विदेशि द्वारा अपनी माँ-बहनों का अपमान होते देखकर भी आ नीची करके चुप रह सकते हैं, पर धर्म के मामले में जरा-सा व्याघात उत्पन्न होने पर—चाहे वह निराकाल्पनिक ही क हो—वे आपस में ही एक दूसरे का गला काटने के लिए हो जाते हैं!

उधर मन्त्रिमण्डल-मिशन ने भारत से पीठ फेरी और अहमदाबाद, ढाका तथा कुछ अन्य स्थानों में साम्प्रदायिक आरम्भ हो गए। अहमदाबाद और ढाका में दङ्गों का मस्जिद के सामने बाजे बजाने या जलूस निकालने के प्रश्न लेकर हुआ। दङ्गाई कहाँ तक नृशंस हो सकते हैं इसका इससे लगता है कि एक स्थान पर एक दङ्गाई ने एक पाँच के लड़के को पेट में छुरा भोंककर मार डाला। इस मनोवृ के मूल में धार्मिक असहिष्णुता नहीं है; भारतीय यह बात क तरह समझते हैं; विदेशी आलोचक इसे किसी रूप में लेते रहें

मस्जिद और बाजे का प्रश्न पुराना नहीं है। सन् १९ से पूर्व यहाँ के हिन्दू और मुसलमान एक दूसरे के त्योहारों पूर्ण उत्साह से भाग लिया करते थे। होली-दशहरा ताजियादारी में दोनों-सम्प्रदायों के प्रमुख व्यक्ति सम्मि होते और पारस्परिक सहयोग और सद्भावना प्रदर्शित करते उसी साल लार्ड मिंटो ने साम्प्रदायिक निर्वाचन को चालू और उसी साल से धार्मिक असहिष्णुता की वृद्धि होने लग असहिष्णुता की इस अग्नि में एक नई आहुति पिछले दि और दी गई है। अब उसकी आग की लपटें जहाँ-तहाँ दङ्गे और अछूत-सङ्घर्ष के रूप में दिखाई पड़ने लगी हैं। अ साम्प्रदायिक दङ्गों ने अब त्रिभुज का रूप धारण कर लिया सम्भव है, हमारे मालिक इसे भी आगे चलकर 'सनातन' क लगें, पर वस्तुतः इसकी जन्मतिथि बहुत इधर की है। सेम्युअल होर ने जिस दिन डाक्टर अम्बेदकर को अछूतों बिना ताज का बादशाह घोषित किया उसी दिन इस अछूत सङ्घर्ष का जन्म हुआ था। यदि हिन्दू-मुसलिम की अपेक्षा सवर्ण-अछूत दङ्गे कम होते हैं तो उसका केवल यही है कि जिन्ना साहब के नेतृत्व से अम्बेदकर का नेतृत्व कुछ 'जूनियर' है।

दङ्गाई और उनके नेता यह भली भाँति जानते हैं कि कैंचियों और छुरियों से जनता को कुछ काल के लिए भले ही कर लिया जाए, पर इनसे निर्णयात्मक लड़ाई नहीं जा सकती। न इस प्रकार पाकिस्तान बन सकता है न अखण्ड भारत। न इस प्रकार किसी जाति-विशेष

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[सन् १९

...त]

...गाई या उन्नति ही हो सकती है। हाँ, यह अवश्य है ...हले विदेशियों को हमारी दुर्बलता पर बेशर्मी की हँसी ...का अवसर अवश्य मिल सकता है। बेशर्मी की हँसी ...कर कि इस प्रकार के साम्प्रदायिक उपद्रव तथाकथित ...देशों में भी होते रहे हैं, और अब भी होते हैं। जर्मनों ...हूदी-विरोध और क्या था? आज दक्षिण अफ्रीका के ...भारतीयों के साथ जो व्यवहार कर रहे हैं उसे साम्प्रदायिक ...के अतिरिक्त और क्या कहा जा सकता है? पर उन ...के विरुद्ध किसी को यह कहने का साहस कभी नहीं हुआ ...ये लोग साम्प्रदायिक 'असहिष्णुता के शिकार हैं, अतः इन्हें ...न रहने का अधिकार नहीं है'; जब कि भारत के सम्बन्ध ...युक्ति बराबर दुहराई जा रही है।

...अपने दुर्भाग्य के इस घने अँधेरे में हमें आशा की एक ...दिखाई पड़ने लगी है। घोर सम्प्रदायवादी बुड्ढे नेता ...ही इन दङ्गों के विरुद्ध कभी एक शब्द न कहें—पर दोनों ...में कुछ ऐसे सुलझे दिमागवाले युवक मौजूद हैं—...अब आगे भी आने लगे हैं—जो इस धर्मान्धता के विरुद्ध ...आवाज उठाने लगे हैं। यशवन्तराव और रजबअली ...आहुतियाँ इसका प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। इन दोनों वीरों ने, ...गणेशजी की भाँति, साम्प्रदायिक तनातनी के सङ्कीर्ण ...पर, मानव को पशु बनने से रोकने के प्रयत्न में अपने ...विसर्जन किए हैं। आशा है, उनके स्थानों और उद्देश्यों ...पूर्ति के लिए हजारों हिन्दू-मुसलमान युवक आगे आएँगे ...समाज की इस भयानक राजनीतिक गन्दगी को अपने ...और सङ्गठित प्रयत्न से सदा के लिए धो बहाने में ...होंगे।

——

अध्यापकों की समस्या

...४ महीने हुए होंगे जब कि युक्त प्रान्त के अध्यापकों ने ...रूप से कुछ माँगें प्रान्तीय शिक्षा-विभाग के सम्मुख ...की थीं और यह निश्चय प्रकट किया था कि शिक्षा- ...की ओर से उन माँगों को यदि स्वीकार न किया गया ...अध्यापक हड़ताल कर देंगे। माननीय शिक्षामन्त्री- ...यह आश्वासन पाकर कि कांग्रेसी सरकार अध्यापकों की ...पर सहानुभूतिपूर्वक विचार कर रही है, बाद को ...मण्डल ने हड़ताल स्थगित कर दी थी। इस सम्बन्ध ...प्रान्तीय सरकार की ओर से अभी हाल में ही एक ...प्रकाशित हुई है जिसमें अध्यापकवर्ग को कुछ सुविधाएँ ...विज्ञप्ति के अनुसार सरकारी स्कूलों में देशी- ...अध्यापकों और अन्य अध्यापकों के वेतनों में अभी तक जो भारी अन्तर रहता चला आया है, वह दूर कर दिया जाएगा। अर्थात् अब सरकारी स्कूलों में अन्य अध्यापकों को जितना वेतन मिलेगा उतना ही हिन्दी या उर्दू पढ़ानेवाले अध्यापकों को भी मिलेगा। अर्ध-सरकारी स्कूलों में भी इस नियम का पालन होगा। या नहीं, इस सम्बन्ध में उक्त विज्ञप्ति में कोई स्पष्ट बात नहीं कही गई है। हाँ, यह आशा अवश्य की गई है कि इम्दादी पाठशालाओं के सञ्चालक सरकार की इस नीति से सहयोग करेंगे। जहाँ तक प्राइमरी तथा अन्य बुनियादी स्कूलों के अध्यापकों के वेतन का प्रश्न है, यह कहा गया है कि सरकार इस पर विचार कर रही है। फिर भी उन अध्यापकों का महँगाई का भत्ता बढ़ाने का सरकार ने निश्चय कर लिया है जिनका वेतन एक निश्चित रकम के भीतर है। यह भी कहा गया है कि 'शिक्षा-विधान' की धाराओं में कुछ परिवर्त्तन किए जाएँगे जिनके अनुसार अध्यापकों के लड़के और आश्रित उस इम्दादी संस्था में मुफ्त शिक्षा पा सकेंगे जिसमें वह (अध्यापक) काम करता है। ये रियायतें बहुत कम हैं, जैसा कि सरकार ने स्वयं उक्त विज्ञप्ति में स्वीकार किया है, पर आशा है कि आगे चलकर इनमें और भी वृद्धि की जाएगी।

जहाँ तक वेतन का सम्बन्ध है, हमारे देश का अध्यापकवर्ग सबसे अधिक उपेक्षित रहा है जब कि इस वर्ग की सेवाएँ अन्य सभी वर्गों की सेवाओं से कहीं अधिक हैं। वस्तुतः यही एक वर्ग ऐसा है जो जितना लेता है उससे कहीं अधिक देता है। नेहरू जी के कथनानुसार वर्त्तमान काल में महत् वही है जो जितना समाज से ले, उससे कहीं अधिक समाज को दे। अध्यापकवर्ग सदा से ऐसा ही करता चला आ रहा है, पर इसकी महती सेवाओं का मूल्याङ्कन इस अभागे देश में अभी तक नहीं हो सका है और न इसकी ओर किसी ने सम्यक् ध्यान ही दिया है। जब-जब अध्यापकवर्ग के वेतन का प्रश्न उठाया गया तब-तब रुपए की कमी का बहाना करके उसे टाल दिया गया।

कांग्रेस के सन् १९३९ में त्यागपत्र देने के पश्चात् से अब तक के ६ सालों के बीच युक्तप्रान्तीय सरकार की आय द्विगुण हो गई है। पर शिक्षा-विभाग के व्यय के मद में एक पाई भी नहीं बढ़ाई गई। युद्ध का काल था और प्रान्तीय शासन की लगाम सलाहकारों की सरकार के हाथ में थी। फलतः इसके सम्बन्ध में कुछ कहना-सुनना व्यर्थ था। पर आज जनता के प्रतिनिधि शासन का कार्य सँभाल रहे हैं। अध्यापकवर्ग यदि अब भी पूर्ववत् उपेक्षित रहा तो यह निस्सन्देह लज्जा की बात होगी।

जनप्रिय मन्त्रिमण्डल से जनता स्वभावतः यही आशा करती है कि उसके शासनकाल में शिक्षा, स्वास्थ्य और राष्ट्रोन्नति के अन्य महत्त्वपूर्ण कार्यों पर अधिक रुपया व्यय किया जाएगा। जनता की इस भावना को दृष्टि में रखते हुए हमारी प्रान्तीय कांग्रेस सरकार का सर्वप्रथम कर्त्तव्य यह होना चाहिए कि वह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विभिन्न प्रकार के बेसिक-अध्यापकों के वेतन के उचित मापदण्ड स्थापित कर दे और गैरसरकारी स्कूलों के सञ्चालकों को भी बाधित करे कि वे उन स्कूलों में काम करनेवाले अध्यापकों को उससे कम वेतन न दें। सरकार के चाहने मात्र से सब कुछ हो सकता है; आवश्यकता केवल चाहने की है। साथ ही यह भी आवश्यक है कि सरकार ने अध्यापकों के प्रति जो सहानुभूति प्रदर्शित की है उसका ठोस रूप बजट में भी अध्यापकों को देखने को मिले। तभी यह वर्ग सन्तुष्ट रह सकता है और अपनी अमूल्य सेवाएँ अविच्छिन्न और एकान्त भाव से समाज को समर्पित करता रह सकता है जिसके लिए वह अनादिकाल से प्रशंसित रहा है

——

युक्तप्रान्तीय सरकार और जमींदारी प्रथा

युक्तप्रान्तीय कांग्रेसी मन्त्रि-मण्डल के समक्ष इस समय जो अनेक जटिल समस्याएँ विद्यमान हैं, उनमें से जमींदारी प्रथा के उन्मूलन की समस्या भी एक है। सन् १७९३ ई० में लार्ड कार्नवालिस ने, अँगरेजी शासन को दृढ़ करने के ध्येय से जिस जमींदारी प्रथा को जन्म दिया था, वह हमारे देश को गुलामी की जञ्जीरों से उत्तरोत्तर जकड़ती गई। जमींदारों ने अपना स्वार्थ पूरा करने के लिए इन किसानों के साथ, समय-समय पर जो अमानुषिक अन्याय किए और उन्हें बुजदिल बनाने में योग प्रदान किया, उसी का यह परिणाम है कि हमारा भारत गुलामों का देश बन गया। भारतवर्ष में नब्बे प्रतिशत किसान हैं। देश की इतनी बड़ी जन-संख्या में बुजदिली भरने का पाप जिन्होंने किया हो, उन्हें आज कांग्रेसी मन्त्रि-मण्डलों द्वारा प्रस्तावित जमींदारी-प्रथा के उन्मूलन पर आश्चर्य नहीं होना चाहिए।

कांग्रेस हमारे देश की जनता का सर्वाधिक प्रतिनिधित्व करनेवाली संस्था है। देश को स्वतन्त्रता के निकट लाने के उसके प्रयत्न अपना सानी नहीं रखते। मानव के जन्म-सिद्ध अधिकारों का जहाँ तक सम्बन्ध है, कांग्रेस का यह पहला सिद्धान्त है। ऐसी दशा में नब्बे प्रतिशत जनता—किसानों—के साथ होनेवाले अन्यायों को मिटा देने का निश्चय करना, कांग्रेस के लिए स्वाभाविक ही है। यद्यपि अभी निश्चयात्मक रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता कि सदियों से लगान-वसूली की प्रथा चली आ रही है, उसमें कौन-सा गम्भीर परिवर्तन किया जाएगा।

लगान-वसूली का जहाँ तक सम्बन्ध है, सरकार जमींदारों को ही मध्यस्थ मानकर अपना कारबार चलाती थी। "अब जमींदारी प्रथा का अन्त कर दिया जाएगा, तो जमींदार का कोई मध्यस्थ न रह जाएगा और सीधे लगान-वसूली करने के लिए बहुत ही कार्यकुशल एवं ईमानदार कार्यकर्त्ताओं की आवश्यकता पड़ेगी। इन कार्यकर्त्ताओं को विशेष प्रकार की शिक्षा-दीक्षा देनी पड़ेगी। इतने पर भी प्रारम्भिक कुछ वर्षों में लगान-वसूली के आँकड़े सम्भवतः बहुत कम नजर आएँगे। लगान-मुक्ति, लगान में छूट तथा जमीन सम्बन्धी अधिकारों के अनेक मामले उपस्थित होंगे, जिन्हें सुलझाने में भी काफी समय लगेगा।

यद्यपि जमींदारी प्रथा की बुराइयों से इनकार नहीं किया जा सकता, फिर भी इसका सर्वथा और एकदम अन्त कर देना सम्भव नहीं है। सम्भवतः कांग्रेसी मन्त्रि-मण्डल प्रारम्भ में प्रयोग के रूप में ही प्रान्त के कुछ जिलों में जमींदारी प्रथा का खात्मा करेगा और उसके परिणामों की सतर्कतापूर्वक जाँच करेगा, फिर अगला कदम उठाएगा।

जिस लगान-वसूली के लिए जमींदारों और किसानों का सम्बन्ध तीक्ष्ण-से-तीक्ष्णतर होते गए और बकौल जमींदारों के उन्हें अन्याय करने पर विवश होना पड़ा, वही लगान-वसूली अब बिना किसी कटुता के कांग्रेस मन्त्रि-मण्डल जिस चतुराई और कौशल से करेगा, वह न केवल दर्शनीय, प्रत्युत स्तुत्य होगी। लगान-वसूली में इस क्रान्तिकारी परिवर्त्तन की सफलता उन समस्त अफसरों की लगन और सहायता पर निर्भर करेगी जो इस विभाग से सम्बद्ध हैं। आत्मीय प्रेरणा होने पर सफलता अपने आप हमारा वरण करती है। इसी तरह जहाँ आत्मीय प्रेरणा का ही अभाव रहता है, वहाँ सफलता हमसे कोसों दूर रहती है।

युक्तप्रान्त की तरह अन्य प्रान्तों के कांग्रेसी मन्त्रि-मण्डल भी इस प्रथा का उन्मूलन करने के लिए कृत-सङ्कल्प हैं। इस पावन अनुष्ठान में कांग्रेस मन्त्रि-मण्डलों की सफलता की हम कामना करते हैं।

——

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दक्षिण अफ्रीका में श्वेताङ्ग-नीति का नग्न नृत्य

स्वामी भवानीदयाल संन्यासी

जो अपने देश की दासता और परवशता-रूपी पाप का भोगने के लिए गुलाम बनकर विदेशों को चले गए थे, जिन्हों कई पीढ़ियाँ अँगरेजी उपनिवेशों को उन्नत बनाने में लगा चुकी हैं, जिन्होंने भाग्य की ठोकरें खाकर भी अपने राष्ट्र की मर्यादा को अक्षुण्ण बनाए रक्खा और जिनको विश्व की जातियों ने अपनी स्थिति सुधारने और आगे बढ़ने के लिए मजबूर किया है, आज उन्हीं में से ढाई लाख प्रवासी भारतीयों की स्थिति बनाने के लिए दक्षिण अफ्रीका में श्वेताङ्गों की जो शैतानी लीला हो रही है, उसे देखकर हिन्दुस्तान को अपनी पराधीनता पर आज जितना पश्चात्ताप हो रहा है, उतना पहले कभी नहीं हुआ था।

दक्षिण अफ्रीका के प्रवासी भारतीयों का सारा इतिहास ही त्याग और सङ्घर्ष का इतिहास है। जनरल स्मट्स की अत्याचार-नीति ही सत्याग्रह-संग्राम की जन्मदात्री है। सत्याग्रह को हार मानकर सन् १९१४ में जब स्मट्स ने महात्मा गांधी से समझौता किया था, जो गांधी-स्मट्स-समझौते के नाम से प्रसिद्ध हुआ, तब प्रवासी भारतीयों ने सन्तोष की साँस ली थी। उन्हें विश्वास हो गया था कि उनके बुरे दिन बीत गए, अब वे सुख-शान्ति से दक्षिण अफ्रीका में जीवन-यापन करेंगे।

गांधी-स्मट्स-समझौते के बाद ही विश्व का प्रथम महासमर छिड़ गया। संसार में यत्र-तत्र लड़ाई हो रही थी, पर दक्षिण अफ्रीका के प्रवासी भारतीय दीर्घ सङ्घर्ष के बाद शान्ति का सुख भोग रहे थे। इधर महायुद्ध समाप्त हुआ और उधर स्मट्स ने प्रवासी भारतीयों के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। १९१९ में उन्होंने प्रवासी भारतीयों को अछूत की भाँति दबाने के लिए पक्का इरादा कर लिया जो आज एक सदी के बाद कार्यान्वित हो पाया है। अतएव आज की विषम स्थिति को समझने के लिए सन् १९२० से स्मट्स की दक्षिण-नीति पर एक विहङ्गम-दृष्टि डालना आवश्यक है। सन् १९१९ में उन्होंने जो एशियाटिक जाँच कमीशन बैठाया था, उसकी रिपोर्ट सन् १९२० में प्रकाशित हुई थी। कमीशन ने दक्षिणी भारतीयों के लिए स्वेच्छापूर्वक प्रत्यागमन-योजना का समर्थन किया था और यह भी राय दी थी कि भारतीयों को धन-व्यय के सिवा कुछ पुरस्कार भी देकर नेटाल छोड़ने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए, पर उसने भारतीयों को अलग करने की योजना को समस्त देश के लिए घातक बतलाया था।

कमीशन की रिपोर्ट का कोई विशेष फल न हुआ। सन् १९२४ में जनरल स्मट्स की प्रेरणा से तत्कालीन आन्तरिक मन्त्री (Minister of Interior) श्री पेट्रिक डङ्कन ने पृथक्करण-योजना के आधार पर एक कानूनी मसविदा (Class Areas Bill) यूनियन पार्लियामेंट में पेश कर ही दिया। इस पर दक्षिण अफ्रीका के भारतीय तो चिन्तित, विचलित और आतङ्कित हुए ही, पर भारत का लोकमत भी क्षुब्ध हुए बिना न रहा। भारतीय राष्ट्रीय महासभा ने श्रीमती सरोजिनी देवी को प्रवासी भारतीयों के सहायतार्थ प्रतिनिधि बनाकर दक्षिण अफ्रीका भेजा। दक्षिण अफ्रीका में प्रचण्ड आन्दोलन हो रहा था कि ठीक उसी समय एक ऐसी घटना घटी, जिससे स्मट्स का सितारा डूब गया, उनके हाथ से शासन-सूत्र जाता रहा। बात यह हुई कि पार्लियामेंट के एक उपनिर्वाचन में स्मट्स की साउथ अफ्रीकन पार्टी के उम्मेदवार की राष्ट्रीय दल के उम्मेदवार के मुकाबले में बुरी तरह हार हुई और इसलिए जनरल स्मट्स ने प्रतिपक्षी दल की चुनौती स्वीकार कर लोकमत की परीक्षा लेने के लिए पार्लियामेंट ही भङ्ग करवा दी।

सन् १९२५ में नवीन निर्वाचन हुआ और उसमें जनरल स्मट्स की पार्टी की ऐसी लज्जाजनक पराजय हुई जिसकी उन्होंने स्वप्न में भी कल्पना नहीं की थी। जिस तरह इँग्लैंड की प्रजा ने द्वितीय विश्व-महासमर के अँगरेज अधिनायक मिस्टर चर्चिल का अहङ्कार धूल में मिला दिया, ठीक उसी प्रकार दक्षिण अफ्रीका के श्वेताङ्गों ने स्मट्स को पदच्युत करके ही दम लिया। जनरल हर्टजोग की नई राष्ट्रीय सरकार कायम हुई, जिसने सन् १९२७ में भारतवर्ष से सन्धि कर ली। वह सन्धि 'केपटाउन-एग्रीमेंट' के नाम से प्रसिद्ध है। जनरल हर्टजोग की सरकार के हाथ में पन्द्रह साल तक दक्षिण अफ्रीका के शासन की बागडोर रही और उन दिनों प्रवासी भारतीयों के प्रति ऐसा कोई व्यवहार नहीं हुआ जिसकी शिकायत की जा सके। जनरल हर्टजोग ईश्वरभक्त और धर्मनिष्ठ बोअर थे, स्मट्स की भाँति कूटनीतिज्ञ बोअर नहीं। उन्होंने बड़ी ईमानदारी से केपटाउन समझौते पर अमल किया और उनके शासन-काल में हमारे भाइयों को अपनी स्थिति सुधारने का अच्छा अवसर मिला।

सन् १९३९ में योरप में लड़ाई क्या छिड़ी मानो दक्षिण अफ्रीका के प्रवासी भारतीयों के भाग्य में आग लग गई। जनरल हर्टजोग ने राजसत्ता प्राप्त करने पर कुछ वर्षों के बाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दक्षिण अफ्रीका की हित-दृष्टि से जनरल स्मट्स को भी अपने मन्त्रि-मण्डल में शरीक कर लिया था और इनको न्याय-मन्त्री के पद पर प्रतिष्ठित किया था। हर्टजोग के सहयोगी तत्कालीन आन्तरिक मन्त्री डाक्टर मलान ने उनको बहुत समझाया कि स्मट्स को मन्त्रि-मण्डल में सम्मिलित करना मानों विषधर साँप को दूध पिलाना है, जो मौका पाते ही डँसे बिना न छोड़ेगा, पर हर्टजोग ने देशहित के विचार से अपने सहयोगी की सम्मति को स्वीकार न किया। परिणाम यह हुआ कि डाक्टर मलान इसके विरोध में मन्त्रि-मण्डल से अलग हो गए और यूनियन पार्लियामेंट में विरोधी दल के नेता बन गए।

जब इँग्लैंड ने जर्मनी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी तब दक्षिण अफ्रीका की पार्लियामेंट में भी इसकी चर्चा छिड़ी। जनरल हर्टजोग की अध्यक्षता में सचिव-मण्डल की जो 'कोकस मीटिंग' (Caucos Meeting) हुई उसमें येही निश्चय हुआ कि दक्षिण अफ्रीका का इस युद्ध में तटस्थ रहना ही श्रेयस्कर है। स्मट्स भी उस मीटिंग में शरीक थे। पर जब पार्लियामेंट में इस बात पर चर्चा शुरू हुई तो स्मट्स ने अपने सहयोगियों के साथ विश्वासघात कर डाला, गिरगिट की भाँति उनका रङ्ग बदल गया और वे उस दल में जा मिले, जो दक्षिण अफ्रीका को भी लड़ाई की आग में झोंकने को कटिबद्ध था। मत लिए जाने पर तीन-चार मतों के बहुमत से स्मट्स के पक्ष की विजय हो गई।

यदि हर्टजोग चाहते तो सरकार की इस पराजय के बावजूद भी अपने पद पर बने रहते, पर उन्होंने इस विषय पर लोकमत जानना आवश्यक समझा। इसलिए उन्होंने अपने मन्त्रि-मण्डल की ओर से इस्तीफा दाखिल कर गवर्नर जनरल से पार्लियामेंट भङ्ग करने तथा नवीन निर्वाचन की घोषणा करने की प्रार्थना की। पर दैवयोग से उन दिनों गवर्नर जनरल के पद पर स्मट्स के लँगोटिया यार पेट्रिक डङ्कन विराजमान थे। यहाँ भी जनरल हर्टजोग की देशभक्ति ही उनके मार्ग में काँटा बन गई। पहले इँग्लैंड से गवर्नर जनरल आया करता था, पर जब जनरल हर्टजोग दक्षिण अफ्रीका के प्रधान मन्त्री बने तो जहाँ उन्होंने 'वेस्ट मिनिस्टर का विधान' (Statute of Westminister) पास कराया, जिसके अनुसार स्वराज्य-प्राप्त उपनिवेश इँग्लैंड के अधीन नहीं रहे बल्कि ब्रिटिश राष्ट्र-सङ्घ के हिस्सेदार बन गए, वहाँ उन्होंने दक्षिण अफ्रीका के लिए इँग्लैंड से गवर्नर जनरल के आने की परम्परागत पद्धति को भी मिटा दिया और दक्षिण अफ्रीका-निवासी को ही गवर्नर जनरल चुनने की स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली। उन्होंने ही दलबन्दी का खयाल छोड़कर पेट्रिक डङ्कन को गवर्नर जनरल बना दिया था, पर पेट्रिक डङ्कन ने अपने पद की मर्यादा को तिलाञ्जलि देकर हर्टजोग के साथ विश्वासघात करना ही अपने दल के लिए कल्याणकर समझा। उन्होंने हर्टजोग के मन्त्रि-मण्डल का इस्तीफा तो मञ्जूर कर लिया, पार्लियामेंट को भङ्ग करने और नवीन निर्वाचन की घोषणा करने से साफ इनकार कर दिया और स्मट्स को आमन्त्रित कर उनको अपना मन्त्रि-मण्डल बना लेने का अधिकार दे दिया। स्मट्स के विश्वासघात से हर्टजोग ऐसे मर्माहत हुए कि कुछ ही दिनों के बाद इस संसार से चल बसे।

दक्षिण अफ्रीका का शासन-सूत्र ग्रहण करते ही पहले स्मट्स ने तत्कालीन भारतीय हाई-कमिश्नर सर रामराव के द्वारा भारतीयों से यह आश्वासन माँगा कि वे श्वेताङ्ग मुहल्लों में जमीन-मकान खरीदने का प्रयत्न न करेंगे। सर रामराव की प्रेरणा से प्रवासी भारतीय स्मट्स की इच्छानुसार आश्वासन देने पर बाध्य हुए। पर इससे भी उनको सन्तोष न हुआ। उन्होंने डरबन में म्युनिसिपैलिटी के श्वेताङ्ग सदस्यों और नेटाल इंडियन एसोसिएशन के भारतीय सदस्यों की एक कमेटी बनवाई जिसका नाम (तत्कालीन आन्तरिक मन्त्री लॉवरेंस के नाम पर) लॉवरेंस कमेटी पड़ा। इस कमेटी को यह काम सौंपा गया कि वह चौकीदारी का काम किया करे और इस बात की चौकसी भी रक्खे कि कहीं कोई भारतीय किसी श्वेताङ्ग मुहल्ले में जमीन न खरीदने पाए।

उन दिनों मैं दक्षिण अफ्रीका में ही था और वहाँ इंडियन कांग्रेस का नेतृत्व कर रहा था। मैंने उन भारतीयों की नीति और प्रवृत्ति का तीव्र प्रतिवाद किया था, जिन्होंने सर रामराव के बहकावे में आकर इस घृणित प्रस्ताव को अङ्गीकार कर लिया था। पर यह कमेटी भी स्मट्स को सन्तुष्ट न कर सकी।

जनरल स्मट्स अपनी भारतीय-विरोधी प्रवृत्ति पर काबू न रख सके। उन्होंने लॉवरेंस कमेटी के काम को असन्तोषजनक कहकर जस्टिस ब्रूम की अध्यक्षता में एक जाँच कमीशन नियत कर दिया। कमीशन ने सारे नेटाल प्रदेश का दौरा करके स्थिति का पता लगाया और अन्त में अपनी रिपोर्ट में सम्मति प्रकट की कि गौराङ्गों का आक्षेप सर्वथा निर्मूल है। भारतीयों ने गोरों की बस्ती में प्रवेश करने के लिए ऐसी प्रवृत्ति नहीं दिखलाई है जिस पर आपत्ति की जा सके। गिने मालदार एवं उच्च स्थिति के भारतीयों ने अवश्य गोरों के मुहल्ले में जमीन खरीदी है; पर इसलिए नहीं कि वे गोरों के पड़ोसी बनने की प्रतिष्ठा प्राप्त करना चाहते हैं बल्कि इसलिए कि वे या तो किसी श्वेताङ्ग को किराए पर देना चाहते हैं या स्वयं आराम से रहना चाहते हैं, क्योंकि भारतीय बस्तियों में डरबन की म्युनिसिपैलिटी ने नागरिक सुविधाओं से सर्वथा वञ्चित कर रक्खा है। उनसे टैक्स वसूल करने में कोई रियायत नहीं की जाती है पर उनके मुहल्लों में न पक्की सड़कें हैं और न तथा रोशनी की उचित व्यवस्था ही है। केपटाउन समस्त अन्यान्य श्वेताङ्गों की भाँति अपना रहन-सहन उच्च

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिम्मेदारी तो उन पर डाल दी गई है पर उसकी पूर्त्ति के लिए भारतीय बस्तियों में सभी साधनों एवं सुविधाओं का अभाव है। उनको अँगरेजों के अच्छे मुहल्ले में प्रवेश करने के लिए मजबूर करता है।

कमीशन की निष्पक्ष रिपोर्ट से अँगरेजों के आक्षेप और आशङ्काएँ निराधार सिद्ध हुईं। इस पर जहाँ उनको लज्जित होना चाहिए था वहाँ वे क्रोध से पागल हो उठे। डरबन के अँगरेजों को खुश करने के लिए जनरल स्मट्स ने झटपट जस्टिस ब्रूम की अध्यक्षता में दूसरा कमीशन बैठा दिया। इस कमीशन को सम्मति देने के अधिकार से वञ्चित कर दिया गया। उसे केवल यह काम सौंपा गया कि वह जाँच करके यह बतलाए कि सन् १९२७ के बाद भारतीयों ने श्वेताङ्गों से कितनी जमीनें मोल ली हैं, इससे अधिक और कुछ नहीं। इस पर उन क्षेत्रों को भी गोरी बस्ती में शामिल कर लिया गया जिनको ब्रूम कमीशन ने अपनी पहली रिपोर्ट में 'भारतीय बस्तियाँ' बतलाया था। सारे डरबन शहर और नेटाल प्रदेश को अँगरेजों की मौरूसी जागीर मान लेने पर कमीशन को यह मजबूर करना ही पड़ा कि भारतीयों ने गोरों से जमीनें अवश्य खरीदी हैं। पर कहाँ और किस वजह से, यह बतलाने का तो कमीशन को अधिकार था ही नहीं।

कमीशन की रिपोर्ट की आड़ में जनरल स्मट्स की सरकार ने यूनियन पार्लियामेंट में एक बिल पेश कर दिया, उस पर वाद-विवाद हुआ, उसका पहला, दूसरा और तीसरा वाचन नियमानुसार हुआ और अन्ततः बिल ने कानून का रूप धारण कर लिया। ये सारी बातें—कमीशन के चुनाव से लेकर कानून की मञ्जूरी तक—केवल एक मास के अन्दर हो गईं। इसी से अनुमान किया जा सकता है कि स्मट्स ने कितनी उतावली और जल्दबाजी से काम लिया था। यह कानून सन् १९४३ के अप्रैल में पास हुआ था जो 'पेगिङ्ग एक्ट' (Pegging Act) के नाम से विख्यात हुआ।

इस कानून से प्रवासी भारतीयों में बड़ा जोश और रोश हुआ। 'साउथ अफ्रीकन इंडियन कांग्रेस' तथा 'नेटाल इंडियन कांग्रेस' ने भारत में आन्दोलन करने का कार्य मुझे सौंपा। श्री अहमद मोहम्मद जादवत और डाक्टर लङ्का सुन्दरम्, एम० ए०, पी-एच० डी० की सहायता एवं सहयोग से भारतीय नेताओं और जनता के सिवाय भारत सरकार के अधिकारियों के सम्मुख भी दक्षिण अफ्रीका के प्रवासी भारतीयों की समस्या रखने में कोई बात उठा नहीं रक्खी। इस उद्योग का परिणाम यह हुआ कि एक भारत-व्यापी आन्दोलन उठ खड़ा हुआ। कांग्रेस-कर्मी तो उन दिनों सम्राट् के मेहमान थे और जेलों में उनका बसेरा था, पर हिन्दू महासभा और मुस्लिम-लीग, सावरकर और जिन्ना साम्प्रदायिक मतभेदों को बिसारकर भारतीयों के प्रश्न पर एकमत हो गए और उन्होंने अँगरेजों से स्पष्ट कह दिया कि हम अपने घर में कौरवों-पाण्डवों की भाँति भले ही लड़ते-झगड़ते रहें, पर विदेशियों के मुकाबले में समग्र भारतवासी एक हैं। भारत का लोकमत इस खयाल से अत्यन्त क्रुद्ध हो उठा कि एक ओर तो भारतीय सिपाही दक्षिण अफ्रीका को आक्रमण से बचाने के लिए उत्तरीय अफ्रीका में इटालियनों तथा जर्मनों से लड़ रहे हैं और अपने रक्त से अफ्रीका की जमीन को सींच रहे हैं और दूसरी ओर उनके ही देशवासियों को अछूतों की भाँति श्वेताङ्गों से अलग बसाने के लिए कानून बन रहे हैं। इससे बढ़कर भारत का अपमान और क्या हो सकता है?

विश्व का लोकमत भी स्मट्स के विरुद्ध हुए बिना न रहा। एक ओर तो कहा जाता था कि मानवीय स्वाधीनता तथा लोकतन्त्रात्मक शासन-पद्धति की रक्षा के लिए लड़ाई लड़ी जा रही है और दूसरी ओर स्मट्स वर्ण-विद्वेष की वेदी पर उन उच्च सिद्धान्तों की हत्या कर रहे थे। इससे कम-से-कम एशिया-वासियों में असन्तोष की लहर का उठना स्वाभाविक ही था, जो युद्धोद्योग के लिए सर्वथा विघातक थी। इसलिए एशिया के सिवा योरप, अमेरिका और अफ्रीका के अखबारों में भी स्मट्स की वर्ण-विद्वेष मूलक घातक नीति की कड़ी आलोचनाएँ होने लगीं, जिनकी उपेक्षा कर देना जनरल स्मट्स के बूते के बाहर की बात है। स्मट्स ने संसार की आँखों में धूल झोंकने के लिए यह घोषणा की कि 'पेगिङ्ग एक्ट' एक मियादी कानून है—दक्षिण अफ्रीका में शान्ति बनाए रखने के लिए एक अस्थायी व्यवस्था है। उनकी सरकार जस्टिस ब्रूम की अध्यक्षता में एक जुडिशियल-कमीशन बैठा रही है, जो प्रवासी भारतीयों की सारी समस्याओं की जाँच करेगा। वह कमीशन समस्याओं को हल करने के लिए जो उपाय बतलाएगा, उनके अनुसार सरकार भारतीयों के लिए स्थायी व्यवस्था करेगी।

फिर ब्रूम कमीशन बैठा। जाँच शुरू हुई। इसी बीच ब्रिटिश डोमिनियन के प्रधान मन्त्रियों की एक परिषद् लन्दन में होनेवाली थी। उसमें शरीक होने के लिए दक्षिण अफ्रीका से प्रस्थान करने से पूर्व स्मट्स ने नेटाल कांग्रेस के अधिकारियों को आमन्त्रित करके उनसे एक समझौता कर डाला, जो 'प्रिटोरिया का समझौता' कहलाया। इस समझौते का आशय यह था कि नेटाल की प्रान्तिक कौंसिल एक आर्डिनेंस बनाएगी, जिसके अनुसार एक बोर्ड की स्थापना होगी। उस बोर्ड के पाँच सदस्य होंगे, दो म्युनिसिपैलिटी के, दो भारतीयों के प्रतिनिधि और एक कानून का जाननेवाला कोई सरकारी कर्मचारी, जो इस बोर्ड का सभापति होगा। यही बोर्ड भविष्य में यह फैसला करेगा कि भारतीय किस क्षेत्र में बस सकते हैं और किस क्षेत्र में गौराङ्गों को किराए पर देने के लिए जमीन-मकान खरीद सकते हैं।

खेद की बात है कि हमारे प्रवासी भाई स्मट्स के चकमे में आ गए। जनरल स्मट्स धूर्त कूटनीतिज्ञ तो हैं ही, साथ ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वचन-भङ्ग करना उनका स्वभाव-सा बन गया है। महात्मा गांधी के साथ उन्होंने बार-बार विश्वासघात किया था, स्वर्गीय गोपालकृष्ण गोखले को वे वचन देकर मुकर गए थे और जनरल हर्टजोग को तो उन्होंने ऐसी दगा दी कि दक्षिण अफ्रीका का शासन-सूत्र उनके हाथ से जाता रहा और इसी व्यथा से उनका प्राणान्त भी हो गया। हमारे नेता यह सोचकर समझौता करने पर तैयार हो गए कि बोर्ड में दो भारतीय सदस्यों की विद्यमानता में उनके स्वत्वों का अपहरण न होने पाएगा, पर वे यह भूल गए कि प्रिटोरिया समझौते में वे उस पृथक्करण (Segregation) नीति को स्वेच्छापूर्वक स्वीकार कर रहे हैं जिसका हम सन् १९२४ से बराबर विरोध करते आए हैं।

उधर स्मट्स तो समझौता करके लन्दन चले गए और इधर नेटाल की प्रान्तिक कौंसिल ने उस समझौते की खुल्लम-खुल्ला हत्या कर डाली। उसने जो आर्डिनेन्स पास किया, वह समझौते की शर्तों के सरासर प्रतिकूल था। लन्दन से लौटने पर स्मट्स को मजबूर करना पड़ा कि नेटाल-कौंसिल का आर्डिनेंस प्रिटोरिया-समझौते के सर्वथा प्रतिकूल है। इसलिए उन्होंने गवर्नर जनरल को आर्डिनेंस को नामञ्जूर कर देने की सलाह दी। पर उस समझौते पर वे खुद भी कायम नहीं रहे, उन्होंने समझौते को रद्द कर डाला। नतीजा यह हुआ कि जिन कांग्रेस नेताओं ने स्मट्स से समझौता किया था उनको अपनी पद-प्रतिष्ठा से हाथ धोना और सार्वजनिक जीवन से वैराग्य लेना पड़ा। जनता ने उनको दूध की मक्खी की भाँति नेतृत्व से निकाल फेंका।

ब्रूम कमीशन की जाँच जारी रही। उसमें दो भारतीय सदस्य भी थे—श्री काजी और श्री नायडू। पर एक तरफ तो कमीशन की जाँच हो रही थी और दूसरी तरफ नेटाल की प्रान्तिक कौंसिल में भारतीयों के विरुद्ध आर्डिनेंस पर आर्डिनेंस पास हो रहे थे। इससे खिन्न होकर भारतीय सदस्यों ने इस्तीफा दे दिया। केवल अँगरेज सदस्यों ने कमीशन का काम चालू रक्खा। आखिर कमीशन ने यह राय दी कि पहले की भाँति फिर एक बार गोलमेज परिषद् होनी चाहिए, जिसमें भारत और दक्षिण अफ्रीका के प्रतिनिधि शरीक हों और परस्पर विचार-विमर्श करके प्रवासी भारतीयों के प्रश्न को हल करने के लिए उचित एवं न्याययुक्त उपाय ढूँढ़ निकालें।

जनरल स्मट्स ने कमीशन की राय को पसन्द किया और उसका समर्थन भी किया तथा प्रवासी भारतीयों को आश्वासन दिया कि वे यथासम्भव शीघ्र ही गोलमेज परिषद् की व्यवस्था करेंगे और भारतीय प्रतिनिधियों को आमन्त्रित करके प्रवासी भारतीयों की समस्याओं को सदा के लिए हल कर डालेंगे। इस बात की स्मट्स ने कई बार पुनरावृत्ति की थी, जिससे प्रवासी भारतीयों को सन्तोष हो गया था और वे गोलमेज परिषद् की प्रतीक्षा में बैठे थे।

अचानक इसी साल की २१ जनवरी को स्मट्स ने [illegible] पार्लियामेंट में अपनी सरकार के इरादे की जो घोषणा की [illegible] प्रवासी भारतीय प्रकम्पित हो उठे। उन्होंने अपनी [illegible] पृथक्करण नीति को कार्यान्वित करने के लिए एक कानून [illegible] डालने का अपना दृढ़ विचार प्रकट किया और कमीशन [illegible] सिफारिश को ठुकराकर अपनी वर्णविद्वेष-मूलक मनोवृत्ति [illegible] खुल्लमखुल्ला प्रदर्शन कर डाला। जनरल स्मट्स हाल ही [illegible] सानफ्रांसिस्को में संयुक्त राष्ट्रों के लिए मानवी-अधिकारों [illegible] चार्टर के गढ़ने का सौभाग्य प्राप्त कर चुके हैं; पर 'दिया [illegible] अँधेरा' की लोकोक्ति को उन्होंने पूर्णतया चरितार्थ [illegible] दिखाया।

जनरल स्मट्स की इस नई प्रवृत्ति से प्रवासी भारतीयों [illegible] सन्ताप की सीमा नहीं रही। फरवरी के प्रारम्भ में डेफरा [illegible] में 'साउथ अफ्रीकन इंडियन कांग्रेस' का अधिवेशन हुआ [illegible] उसमें यह निश्चय हुआ कि एक डेपुटेशन भारत भेजा [illegible] और दूसरा योरप तथा अमेरिका जाए। सबसे पहले स्मट्स [illegible] और उनके श्वेताङ्ग बन्धुओं की रङ्गद्वेषपूर्ण नीति, मनोवृत्ति [illegible] और प्रवृत्ति का विश्व के सामने भण्डाफोड़ किया जाए [illegible] उसके बाद अपने नैसर्गिक अधिकारों की रक्षा के लिए दक्षिण [illegible] अफ्रीका में सत्याग्रह का श्रीगणेश हो। इसी निश्चय के [illegible] अनुसार श्री सोराबजी रुस्तमजी के नेतृत्व में एक शिष्ट-मण्डल [illegible] भारत आया था और दूसरा श्री आश्विन चौधरी के नेतृत्व [illegible] इँग्लैंड गया है।

भारत आए हुए शिष्ट-मण्डल के सदस्यों तथा सर कावस [illegible] खाँ, श्रीमती सरोजिनी देवी, श्री शरत्चन्द्र बोस, सर होमी [illegible] तथा श्री हसम प्रेमजी के साथ मैंने गत १२ मार्च को वायसराय [illegible] लार्ड वेवल से मुलाकात की थी। वायसराय की सेवा [illegible] जो वक्तव्य पेश किया गया था वह दलित, पीड़ित और [illegible] व्यथित प्रवासी भारतीयों के हृदय की पुकार थी, भारत [illegible] अपमान एवं अपकीर्त्ति का शब्द-चित्र था। उसमें कहा गया [illegible] कि दक्षिण अफ्रीका में भारतीय न रेलगाड़ी में गोराङ्गों के [illegible] बैठ सकते हैं और न ट्रामगाड़ी में। वे न श्वेताङ्गों के होटल [illegible] में ठहर सकते हैं और न उनके चायघर में नाश्ता-पानी [illegible] सकते हैं। उनको न नाट्यशाला में प्रवेश करने का अधिकार [illegible] है और न सिनेमाघर में। डाकघर, तारघर, सरकारी दफ्तर [illegible] तथा रेलवे स्टेशनों पर उनके लिए गोरों से अलग स्थान [illegible] गए हैं। यहाँ तक कि न्याय की अदालतों में भी यही भेद-भाव [illegible] बना है। उनको न सरकारी नौकरी मिल सकती है और [illegible] म्युनिसिपैलिटी की नौकरी। उनके लिए अलग पाठशालाएँ [illegible] हैं। वे श्वेताङ्गों के कालेजों और विश्वविद्यालयों में दाखिल [illegible] नहीं रख सकते। नेटाल में अब तक भारतीयों के लिए [illegible] कोई सहूलियत थी तो वह यही कि वे जहाँ चाहें [illegible] खरीद सकते थे। उन्हें अपने निर्वाह के लिए या तो [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी-प्रश्नपत्रों की असाधारण कठिनता के विरुद्ध प्रदर्शन करने-वाली पंजाब-विश्वविद्यालय की कुछ छात्राएँ।

आज़ाद हिन्द के कुछ टिकट—नेता जी ने अपने जर्मनी-प्रवास के दिनों में कुछ तैयार कराया था। पर जर्मनी का आत्मसमर्पण हो जाने पर उपभोक्ताओं के हाथ में पहुँचने के बजाय ये मित्र-राष्ट्रों के हाथ में पड़ गये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

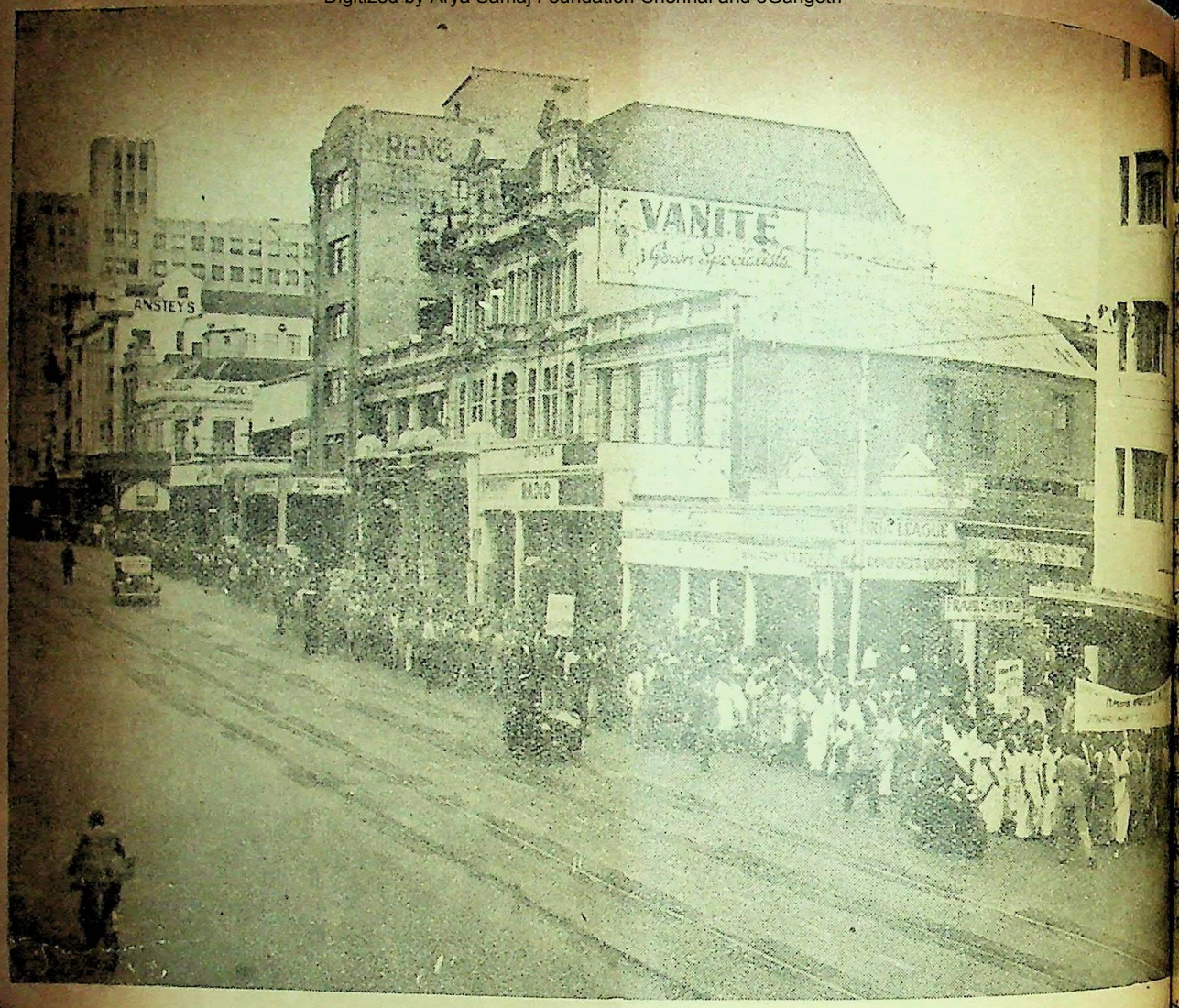

डरबन (दक्षिण अफ्रीका) की सड़कों पर सत्याग्रही भारतीय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...ास्त]

...ती पड़ती है या खेती अथवा कोई तिजारत। जमीन खरीदने ...सहूलियत होने के कारण भारतीयों की बहुत बड़ी संख्या ...दस एकड़ जमीन मोल लेकर खेती करती है और उससे ...और अपने परिवार का निर्वाह करती है। पर ...उनको इस सहूलियत से वञ्चित करने की कोशिश ...रही है।

...र आगा खाँ ने वायसराय महोदय से यहाँ तक कहा था ...दक्षिण अफ्रीका में प्रवासी भारतीयों के साथ जो दुर्व्यवहार ...रहा है वह ऐसा है जो बर्दाश्त नहीं किया जा सकता। ...में ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं कि इस प्रकार के ...हार के लिए स्वतन्त्र राष्ट्रों में युद्ध तक हो चुके हैं। पर ...वायसराय ने प्रवासी भारतीयों के प्रति सहानुभूति प्रकट ...हुए मार्के की केवल यही बात कही कि उनकी सरकार ...अफ्रीका से व्यापारिक सन्धि (Trade Agreement) ...करने का नोटिस दे चुकी है, पर नियमानुसार तीन मास ...पश्चात् ही व्यापार-विच्छेद का अवसर मिल सकेगा। ...कमिश्नर को दक्षिण अफ्रीका से वापस बुलाने के लिए वे ...तैयार न हुए। इसी से भारत सरकार की उपेक्षा-...का पता लग जाता है। यदि भारत की विदेशी सरकार ...निवेशिक गोरों के स्वभाव को जानकर भी अनजान न ...तो आज हमारे प्रवासी भाइयों को ऐसे बुरे दिन देखने ...पड़ते।

...गत ३१ मार्च को 'पेगिङ्ग एक्ट' की अवधि समाप्त हो गई। ...जनरल स्मट्स ने यूनियन पार्लियामेंट में 'एशियाटिक ...टेन्युर एंड रिप्रिजेंटेशन बिल (Asiatic Land Tenure ...Representation Bill) पेश किया और वह बहस-...के बाद पास भी हो गया। यह नया कानून प्रवासी ...के अस्तित्व को मिटाए बिना न रहेगा। पेगिङ्ग एक्ट ...और दायरा केवल डरबन शहर तक ही सीमित था ...वह श्वेताङ्गों तथा भारतीयों के बीच होनेवाले अचल ...के क्रय-विक्रय के व्यवहार को ही रोकता था, पर यह ...कानून तो नेटाल के नगरों तथा देहाती हलकों सहित समूचे ...पर लागू होगा और भारतीयों के लिए गौराङ्गों के सिवा ...सभी गैर-भारतीयों से अचल सम्पत्ति का व्यवहार नाजायज ...जाएगा।

...यह नया कानून ट्रांसवाल पर भी लागू होगा। ट्रांसवाल ...हिन्दुस्तानियों के लिए शहरों, कसबों और गाँवों में रहने ...व्यापार करने के लिए कुछ हलके अलग कर दिए जाएँगे। ...फल यह होगा कि भारतीयों को अपना रोजगार-धन्धा ...लिए निश्चित किए गए उन हलकों के अन्दर ही पूरी ...सीमित करना पड़ेगा। इस प्रकार व्यापार के केन्द्रों से ...देश की आबादी से उन अङ्गों से उनका सम्पर्क टूट जाएगा और फलतः उनके व्यापार को भारी धक्का लगेगा और उनको तबाही का सामना करना पड़ेगा।

इस कानून में यह व्यवस्था भी की गई है कि प्रवासी भारतीयों के जातिगत पृथक् निर्वाचन के द्वारा पार्लियामेंट में तीन सदस्य भेजने का अधिकार होगा, पर वे सदस्य श्वेताङ्ग होने चाहिएँ—कोई भारतीय नहीं। जनरल स्मट्स की इस उदारता पर कुछ लोगों को आश्चर्य हो रहा है, पर असल बात यह है कि स्मट्स प्रतिनिधित्व का यह ढोंग रचकर भारत-सरकार और भारतीय नेताओं की जबान बन्द कर देना चाहते हैं। भारत का यह दावा है कि जब तक दक्षिण अफ्रीका में प्रवासी भारतीयों को नागरिकता के अधिकार नहीं मिल जाते तब तक भारत उनको लावारिस की भाँति दूसरों की दया पर नहीं छोड़ सकता। इस दावा की जड़ काटने के लिए ही स्मट्स ने उनके प्रतिनिधित्व का यह प्रपञ्च रचा है। एक तो डेढ़ सौ सदस्यों की धारा सभा में तीन सदस्यों की आवाज नक्कारखाने में तूती की आवाज सिद्ध होगी और तिस पर उनका प्रतिनिधित्व करेंगे वही श्वेताङ्ग, जो उनको जड़-मूल से मिटाने के लिए बद्धपरिकर हैं।

जनरल हर्टजोग के जमाने में दो बार भारत और दक्षिण अफ्रीका के प्रतिनिधियों की गोलमेज परिषद् हो चुकी है और इसी लिए ब्रूम कमीशन ने भी गोलमेज परिषद् करने की राय और सलाह दी थी। पर जब प्रवासी भारतीयों के डेपुटेशन ने स्मट्स से गोलमेज परिषद् की माँग की तो उनको जवाब मिला कि चूँकि प्रवासी भारतीयों का प्रश्न स्मट्स का घरेलू प्रश्न है, अतएव वह इस मामले में भारत का हस्तक्षेप सहन नहीं कर सकते।

यह कानून प्रवासी भारतीयों के सर्वनाश के लिए अणुबम का काम देगा और साथ ही भारत अपनी प्रवासी सन्तान की हस्ती मिटते हुए देखकर भी कुछ बोलने के अधिकार से वञ्चित हो जाएगा। वास्तव में जनरल स्मट्स ने जो नया कानून पास कराया है और जिसके कारण दक्षिण अफ्रीका के शिष्ट-मण्डल को ताबड़तोड़ यहाँ आना पड़ा, वह उनका एक जबर्दस्त प्रयास है। एशिया वासियों को सदा के लिए पतितावस्था में रखने के अब तक जो प्रयास किए गए हैं उनमें यह सबसे बड़ा प्रयास है। इससे भारतीय जीवन के सभी क्षेत्रों में असाम्य एवं हीनता के भाव को फैलाने का कार्य आरम्भ होगा।

यही संक्षेप में दक्षिण अफ्रीका के प्रवासी भारतीयों की वर्तमान कहानी है। जनरल स्मट्स की सरकार का स्पष्ट इरादा है कि भारतीय दक्षिण अफ्रीका में न रहें और यदि रहें भी तो सर्वथा क्रीत दास होकर। अब से पचास वर्ष पूर्व प्रवासी भारतीय श्वेताङ्गों द्वारा होनेवाले प्रत्येक अपमान को सहन कर लेते थे। उन्होंने अपनी इज्जत गँवाई, बूटों की ठोकरें खाईं, अपनी बहू-बेटियों को अपमानित और लज्जित होते देखा, पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जबान न हिलाई। श्वेताङ्गों ने भारतीयों पर कौन-सा सितम नहीं ढाया, जिसे भारतीयों ने अपनी परवशता के कारण चुप-चाप सहन न किया हो! और आज भी किसी-न-किसी रूप में भारतीय अत्याचारों को सहन कर ही रहे हैं। पर आज अखिल विश्व की उमड़ती हुई मानवी-भावना की घोषणा है कि संसार की कोई जाति किसी दूसरी जाति की गुलाम बनकर रहना जीवन का सबसे बड़ा कलङ्क मानती है। इस मानवी-भावना से प्रवासी भारतीय कैसे वञ्चित किए जा सकते हैं? इसी लिए उन्होंने अपने देश की आन पर अड़ने और अपने राष्ट्र की शान पर मर मिटने का दृढ़ सङ्कल्प कर लिया है। भारत भी आज स्वाधीनता के दरवाजे पर खड़ा है। वह दक्षिण अफ्रीका के पचीस लाख गोरों के सामने झुकने और हीन स्थिति मञ्जूर करने को तैयार नहीं है। फलतः दक्षिण अफ्रीका और भारत में एक जोरदार आन्दोलन चल पड़ा है। आशा है कि भारत शीघ्र ही स्वतन्त्र हो जाएगा और स्वतन्त्र भारत दक्षिण अफ्रीका से इस अपमान का बदला चुकाए बिना न रहे। यदि इस समय प्रवासी भारतीयों की मातृभूमि आजाद होती, सर आगाखाँ का वचन व्यर्थ न जाने पाता। जनरल मोह... या जनरल शाहनवाज के सेनापतित्व में भारतीय सिपाही दक्षि... अफ्रीका पहुँच जाते और यूनियन सरकार को बता देते... प्रवासी भारतीय भी एक स्वतन्त्र देश के निवासी हैं, उ... छेड़खानी करना मानों आग से खेलना है। एक स्वतन्त्र... को विदेशों में अपनी मर्यादा, साख तथा स्वत्व के लिए... संरक्षणों की आवश्यकता होती है, उनको यूनियन सरकार... नतमस्तक हो स्वीकार करना पड़ता। पर दुःख है कि... प्रवासी भारतीयों का देश गुलाम है और प्रत्येक भारतीय के... से यह दर्द-भरी आवाज निकल रही है —

खुदा तालां बताओ मैं रहूँ कैसे कहाँ जाऊँ,
इधर तो हाय-तौबा है उधर भी लात-मुक्के हैं॥

— —

काकी

श्री रामचन्द्र तिवारी

लखनऊ
-६-३५

प्रिय विश्वे,

तुम्हारे जीजा का स्वास्थ्य अब सुधर रहा है। औषधि रोग पर विजयी होती ज्ञात होती है। डाक्टर कहता है कि बिलकुल ठीक होने में अभी तीन-चार मास लगेंगे। परमात्मा की बड़ी दया हुई; नहीं तो, सुनती हूँ कि, ऐसे लकवे के रोगी अच्छे नहीं होते। पढ़ाई-लिखाई में चित्त लगाना। अब तुम दिल्ली पहुँच गए हो। तुम्हारे लिए नगर नया है। स्मरण रखना कि परिवार का भविष्य तुम्हारे हाथ में है। तुम दो ही वर्ष के थे जब माँ का शरीरान्त हो गया था। पिताजी ने किस योग्यता और उत्साह से हम लोगों का पालन किया यह तुम नहीं समझ सकते।

पिताजी का तुम्हारे ऊपर अटल विश्वास था। मृत्यु के समय मैं ही उनके निकट थी। तुम बाग में खेल रहे थे। जब मैं रोने लगी तो उन्होंने कहा—"रो नहीं, अन्नो, धीरज रख।"

मैंने पूछा—"विश्वे को बुला दूँ?"

वे बोले—"नहीं, उसे खेलने दे। वह बहुत छोटा है। मृत्यु से अभी उसका परिचय कराने की आवश्यकता नहीं है, अन्नो।" उन्होंने मुझे विश्वास में लेते हुए कहा था—"विश्वे अत्यन्त होनहार है। उस पर दृष्टि रखना। एक दिन वह पि... के नाम को ऊँचा उठाएगा।"

इसके पश्चात् पिताजी कुछ क्षण के लिए मौन हो... उन्हें साँस लेने में कठिनता अनुभव हो रही थी। मैंने... कि उनके नयनों से आँसू बह चले हैं।

"क्या है, पिताजी?" मैंने पूछा।

उन्हें बोलने में कठिनता अनुभव हो रही थी। उ... मुझे निकट आने का सङ्केत किया। बोले—"अन्नो, जीवन की किसी बात का दुःख नहीं है। परमात्मा की... में किसी का वश नहीं चलता। पर रघुराज की माँ के... जो हुआ वह मैं नहीं चाहता था और उसके लिए मैं उ... न सका, यही एक दुःख है।"

"पिताजी!" मैं कुछ कहनेवाली थी। पर वे बोले... क्या कहेगी, बेटी, यह मुझे ज्ञात है। यही तो कहेगी... आपने सहायता दी पर काकी ने उसे स्वीकार नहीं किया। मैं जानता हूँ कि यह दृष्टिकोण अशुद्ध है। यदि उन्हें... सहायता अस्वीकार की तो इसमें उसका नहीं, मेरा अपमान... दुर्बलता मेरी है, मैं उसे अपनी सद्भावना का विश्वास न... सका। मेरे पास धन था, बुद्धि थी। मैं उस विधवा को, अपने सहोदर अनुज की विधवा को, अपना बनाकर न रख...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वे, इसके पश्चात् पिताजी बोल न सके।

विश्वे, अब तुम दिल्ली में हो। रघुराज की माँ का नाम ... घर पर वार्तालाप में सुना होगा। काका को मैंने देखा ... वे बम्बई में नौकरी करते थे और काकी उन्हीं के पास ... थी। मोटर-दुर्घटना में उनकी मृत्यु हो जाने के पश्चात् ... घर आईं। मैं उस समय आठ बरस की थी। काकी ... तीन बालक थे। बड़ा पुत्र मनोहर मुझसे दो वर्ष बड़ा था ... उससे छोटी थी सरला मेरे बराबर। गोद में था रघुराज।

विश्वे, मुझे कहते लज्जा आती है कि माँ का व्यवहार उनके ... अच्छा न था। वे आई थीं विपद् की मारी अपने श्वशुर ... में शरण लेने। पर यहाँ जैसे वे काँटों में गिर पड़ीं। ... दिन भर कार्य करतीं। रात्रि को सबसे पीछे सोतीं, प्रातः ... पहले उठतीं। उनके आते ही मिसरानी और महरी को ... ने छुड़ा दिया। वे बात-बात में कहतीं वैसे ही निबाह ... है, चार-चार जनों का खर्च।

विश्वे, मुझे वे क्षण नहीं भूलते जब कि मैं काकी की ... के निकट लेटी-लेटी रात्रि में उनका रुदन सुनकर पागल ... थी। काकी दिन भर कलेजे पर पत्थर बाँधकर काम ... और रात्रि को जब लेटतीं तो रोतीं।

यह भी उनके लिए कठिन हो गया। जब माँ को यह ... हुआ तो बोलीं, 'जिसे रोना है, घर से बाहर जाकर रोए। ... घर में अशकुन करने की आवश्यकता नहीं है।'

काकी का रुदन बन्द हो गया, पर वे सूखने लगीं। शरीर ... पड़ गया। तभी उनके जीवन पर एक भीषण वज्रपात ... उनकी समस्त आशाएँ मनोहर पर थीं। मनोहर ... और होनहार था। एक दिन काकी बैठी बर्तन माँज ... थीं कि मनोहर को कय हुई। वे उठकर उसकी ओर ... मुझे लज्जा आती है, विश्वे, तब माँ ने कहा था, 'पहले ... माँज दो, पीछे बेटे की टहल करना' और काकी पानी का ... मनोहर के सम्मुख भूमि पर रखकर 'बर्तन माँजने लौट ... सरला ने मनोहर का मुँह धुलाया। पर कुछ ही क्षण ... सरला को भी कय हुई। एकाएक माँ को लगा कि ... हैजा आ गया है। वे काकी को बुरा-भला कहतीं हम ... लेकर बाहर चली गईं। हम लोग पड़ोस में उनकी ... के यहाँ बैठे रहे। जब सन्ध्या समय पिताजी नहीं ... तो ज्ञात हुआ कि वे मनोहर और सरला को श्मशान ... गए हैं।

विश्वे, तुम कल्पना कर सकते हो कि काकी की क्या दशा ... होगी। उन्होंने तत्काल वह घर छोड़ दिया। पिताजी ने ... कोठरी किराए पर ले दी। वहीं वे पीसकर, सीकर, अपना ... चलाने लगीं। पिताजी से तनिक भी सहायता उन्होंने ... न की।

काकी का मेरे ऊपर विशेष प्रेम था। काकी विशेष पढ़ी-लिखी न थीं। एक दिन मैंने स्कूल में देखा कि काकी भी तीसरी कक्षा में विद्यार्थिनी है। वे सकुचाईं नहीं, पर, विश्वे, मैं लज्जा से गड़ गई। तुम जानते हो कि पिताजी नगर के समृद्ध और सम्मान्य व्यक्ति थे।

काकी का हृदय क्या है यह मुझे तब ज्ञात हुआ जब मेरे माता निकलीं। माता का प्रकोप कितना भयानक था, यह आज भी मेरे मुख पर देखा जा सकता है। माँ पहले तो मेरे निकट बैठतीं, पर पीछे पता नहीं उन्हें क्या हो गया, कदाचित् भयभीत हो गईं। उन्होंने मुझे बिल्कुल मिसरानी के भरोसे छोड़ दिया। वही दिन भर मेरे पास बैठी रहती, रात्रि को जब पिताजी दुकान से आते तो वे मेरी खोज-खबर लेते, पर वे व्यस्त व्यक्ति थे। रात भर जाग न सकते थे।

काकी को स्कूल में पता लग गया कि मेरे माता निकली हैं। मैं उनसे एक कक्षा आगे थी। स्कूल में हम परस्पर विशेष बोलती न थीं। घर में सभी चकित हो गए जब वे एक दिन चुपचाप आकर मेरे पास बैठ गईं। मिसरानी को उन्होंने उठा दिया। माँ को बुरा लगा होगा, पर वे बोलीं नहीं। पूरे डेढ़ मास तक उन्होंने अपनी शिक्षा की चिन्ता न कर मेरी सेवा की। रघुराज को वे वहीं छोड़ आती थीं। अपने पीने का पानी तक वे अपने साथ लाती थीं। हमारे घर का एक बूँद जल तक उन्होंने न लिया। वे चौबीस घण्टे में एक बार भोजन बनाने खाने जातीं और शेष समय मेरे पास बितातीं। यदि आज मैं यह पत्र लिखने को जीवित हूँ तो इसका श्रेय काकी को ही है।

मैं अच्छी हो गई। माँ ने, पिताजी ने, बहुत कहा कि वे पुनः घर में लौट आएँ; पर काकी ने अस्वीकार किया। मैं उसके पश्चात् स्कूल न गई। काकी को तभी मैंने अन्तिम बार देखा था। करुणा की ऐसी मूर्त्ति मैंने नहीं देखी। रह-रहकर जब मुझे वे स्मरण आती हैं तो नयन आँसुओं से भरे बिना नहीं रहते। परमात्मा ने जिनका हृदय सोने का बनाया है, उन्हें ही सबसे अधिक विपत्ति क्यों देते हैं!

सुनती हूँ कि इस भाँति वे अपने जन की परीक्षा लेते हैं, पर इस पर विश्वास करने में जी हिचकता है।

विश्वे, तुम दिल्ली में हो। सुनती हूँ कि काकी भी वहीं हैं। रघुराज अब लगभग बीस बरस का होगा। तुमसे दो-तीन बरस बड़ा है वह। काकी कदाचित् किसी स्कूल में शिक्षिका हैं। खोजना, यदि मैं पिताजी की इच्छा पूर्ण कर सकी तो उनकी आत्मा को शान्ति पहुँचेगी।

सप्रेम
तुम्हारी बहिन
अन्नो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रिय जीजी,

आज सन्ध्या समय अभी ऐसी घटना हो गई है कि मैं तुम्हें सूचित करने का लोभ संवरण नहीं कर सका हूँ। आज कालेज की हाकी टीम का नगर की एक टीम से मैच था। जीते हमीं लोग, पर वह इतना महत्त्वपूर्ण नहीं है तुम्हारे लिए।

जब मैच समाप्त हो गया और सब खेलनेवाले वस्त्र पहनने लगे तो मुझे अचानक ध्यान आया कि यह दूसरी ओर से जो रघुराज खेल रहा था और अच्छा खेल रहा था, वह रघुराज कहीं अपना ही रघुराज तो नहीं है। मुझे एक क्षण को लगा कि वह अपना ही रघुराज है। मेरा हृदय आनन्द से पुलकित हो गया जीजी, वास्तव में रघुराज बहुत अच्छा खेल रहा था। उसके नाम से मैदान गूँज रहा था।

मैंने सोचा, इतना भाग्यशाली मैं कहाँ कि रघुराज को इतनी सरलता से पा जाऊँ। फिर मैंने उससे परिचय करना विचारा। मैं उसके निकट गया, उसके कन्धे पर हाथ रक्खा, उसने घूमकर मेरी ओर देखा।

"मैं आपसे एक क्षण..."

वह मेरे साथ एक ओर चला आया। मेरी समझ में न आ रहा था कि अपना परिचय कैसे दूँ और उसका परिचय कैसे लूँ।

पहले वही बोला—"कहिए।"

"क्या आप मुरादाबाद के निवासी हैं?"

उसने मेरी ओर ध्यानपूर्वक देखा, बोला—"कहिए!"

"क्या आप मुरादाबाद...!"

"मैं बालक ही था तभी मुझे मुरादाबाद छोड़ देना पड़ा।"

मेरा हृदय काँप रहा था, मैं ध्यानपूर्वक उसके मुख की ओर देख रहा था। मैं सोच रहा था कि यहाँ हम दो भाई खड़े हैं। दोनों की धमनियों में एक ही पितामह का रक्त बह रहा है, और हम दोनों एक दूसरे से अपरिचित हैं। पर क्या पता यह वह रघुराज न हो। मुरादाबाद-निवासी अनेक रघुराज हो सकते हैं।

मैंने पूछा—"क्या आप डाक्टर देशभक्त को जानते हैं?"

उसने मेरी ओर चकित दृष्टिसे देखा, बोला—"क्यों! वे तो मेरे सगे ताऊ होते थे। पर बहुत दिन हुए, उनकी मृत्यु हो गई। आप उनसे कैसे परिचित हैं?" निःसन्देह रघुराज की रुचि अब मुझमें बढ़ गई थी। हम लोगों ने उनके साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया, पर मैंने अनुभव किया कि पिताजी को अपना ताऊ बताते समय उसकी दृष्टि गर्वित हो आई थी। एक क्षण मेरी समझ में नहीं आया कि मैं कैसे उसके प्रश्न का उत्तर दूँ। उसने प्रश्न दुहराया—"आप उनसे?"

मैंने कहा—"वे मेरे पिता थे।"

रघुराज जैसे चौंक पड़ा। मेरा हाथ उसने बलपूर्वक लिया और एकटक मेरी आँखों में देखता हुआ बोला "तो तुम हो विश्वनाथ! माताजी कभी-कभी कहा हैं कि तेरा एक छोटा भाई है। मुरादाबाद रहता है। समझता था कि तुम छोटे-से होगे। यहाँ कहाँ?"

मैंने कहा—"एम० ए० में हूँ, हिन्दू कालिज में।"

"ओ...।"

मुझे वहाँ पाकर उसे प्रसन्नता हुई, इसमें सन्देह नहीं बोला—"घर चलिए।"

मैं उसके घर गया। जिन काकी के विषय में तुमने लिखा था उन्हें मैंने देखा। बिल्कुल दुर्बल हो रही हैं। पहले एक पाठशाला में शिक्षिका थीं। उसी आय से उन्होंने जैसे-तैसे रघुराज को नवीं तक पढ़ाया। काकी का सीने रोग उभर आया। उन्हें नौकरी छोड़नी पड़ी। रघुराज पढ़ना छोड़कर कमाना आवश्यक हो गया। वह लिपि नौकर है। उसका विवाह हो गया है। दुबली-पतली पीली सी बहू है उसकी।

जीजी, काकी को मैंने प्रणाम किया तो उन्होंने जीवित रहने का आशीष दिया। मैं जीवित हूँ इससे वे सन्तुष्ट लगीं। मैं उनके घर गया यह उन्हें भाया नहीं। ऐसा मुझे लगा है। क्यों, यह मैं कह नहीं सकता।

और जीजी उनका मकान! तीन ऊँचे-ऊँचे मकानों के बीच में एक कुँवा-सा है। चार किराएदारों के परिवार उसी में रहते हैं। जीजी, सच कहता हूँ सूर्य की धूप दोपहर के समय भी नहीं पहुँच सकती। उस अन्धकूप में मनुष्य रहते हैं जैसे वर्षा के दिनों में कीड़े गढ़ों में बिलबिलाते हैं। ऐसे मकान में रहती हैं हमारी काकी, उन्हें यदि टी० न होता तो आश्चर्य की बात थी। यदि रघुराज की बीमार न हो तो यह भी आश्चर्य ही है। पर काकी कहती कि बहू बाप के घर से बीमार आई है। उसके बाप ने रघुराज ठग लिया है। एक रोगिनी पीछे बाँध दी है।

जीजी! क्या बताऊँ, कलुषित चक्र है। काकी रोती रघुराज की बहू रोती है और रघुराज को सब सहना पड़ता वह दिन भर काम करता है, किसी प्रकार रात्रि घर में बिता लेता है, पर हमारी काकी और रघुराज की बहू!

मैं सोचता हूँ कि क्या ये मनुष्य नहीं हैं। ये नर्क नरक में पड़ी हैं! पर रघुराज अधिक किराया नहीं दे और इन दिनों मकान मिलते भी नहीं हैं। रोग की नीचे उन्हें शोक की प्रतीक्षा में पड़े रहना होगा।

जीजी, मैं वहाँ केवल ही मिनिट बैठा पर मेरा हृदय

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...ता हूँ कि हम लोगों की त्याग और सेवा की भावुकता कितने ...ों तक इस अवस्था का भार सँभाल सकेगी।

...कल के लिए मुझे पाठ तैयार करना है, पर जब से काकी ...उस दशा में देख आया हूँ, उनका झुर्रियों-भरा ढला मुख ...सम्मुख बार-बार आ जाता है। मन में उठता है विश्वे वे ...काकी हैं, सगी काकी। उनसे निकट का और कोई सम्बन्धी ...नहीं है, और वे इस प्रकार इस दशा में रहती हैं। धिक्कार ...मुझे। पर तुम्हीं बताओ मैं क्या कर सकता हूँ।

जीजी, इतिहास की पोथियों का मौन निमन्त्रण अब असह्य-...हुआ जा रहा है।

तुम्हारा आज्ञाकारी
विश्वे

(३)

दिल्ली
-११-३७

...जीजी,

...परीक्षा-फल विशेष सन्तोषजनक नहीं रहा। मैं कक्षा में ...तो सरलता से आ गया, पर अङ्कों का प्रतिशत विशेष ...प्राप्त हुआ। वार्षिक में यथासम्भव प्रयत्न करूँगा।

...तुमने रघुराज के विषय में पूछा है। रघुराज वास्तव में ...संस्कृत मनुष्य है। मैं अपने को वैसा भाई पाकर धन्य ...हूँ। उसका आचरण, उसका वार्तालाप और उसका ...सभी आकर्षक है। पर सबसे अधिक मैं आकर्षित ...हूँ, उसके साहस और नेतृत्व-शक्ति से। मुझे पूर्ण ...है कि यदि उसकी शिक्षा के लिए धनाभाव न होता, ...अवश्य सेना में प्रवेश पा जाता और उन सैनिकों में ...जिनका नाम लेने में इतिहास अपने को गौरवान्वित ...है।

आप समझ गई होंगी कि रघुराज भाई के प्रति मैं विशेष ...से आकर्षित हो गया हूँ। मैं अच्छा हाकी खिलाड़ी ...चाहता हूँ। रघुराज भाई इस विषय में अच्छे शिक्षक ...जाते हैं। इस सम्बन्ध से मेरा पर्याप्त समय उनके सम्पर्क ...व्यतीत हुआ है। ज्यों-ज्यों मैं अधिकाधिक उन्हें जानता ...रहा हूँ, उनका स्थान मेरे हृदय में ऊँचा उठता जा रहा है। ...दिन हुए एक पत्र में मैंने तुम्हें लिखा था कि काकी के ...में मेरा जी घुटता है। अब वह दशा नहीं है। मकान ...है, पर अब वह मेरा परिचित हो गया है। मैं जानता हूँ ...रघुराज भाई वहाँ रहते हैं। मुझे वहाँ बैठा रहना तनिक ...बुरा नहीं लगता।

जीजी, मैं इतना निकट चला गया हूँ पर काकी की उदा-...अभी जीत नहीं पाया हूँ। मैं जाता हूँ, वे आदर-...

लगता है कि मेरे प्रति वे बिल्कुल खुली नहीं हैं। वे कदाचित् यह नहीं भुला पाई हैं कि मैं अपने माता-पिता का पुत्र हूँ। वे किसी को दोष नहीं देतीं। परमात्मा और भाग्य उनके लिए सब प्रकार से उत्तरदायी है। मुझे लगता है कि वे मेरी उपस्थिति को अपने घर में आशङ्का की दृष्टि से देखती हैं। वे समझती जान पड़ती हैं कि मैं अवसर पाते ही उनका अनिष्ट करने से न चूकूँगा। हाँ, पूरे वंश में तुम्हीं एक हो जो उनकी सहानुभूति की भाजन हो। एक दिन बात-बात में उनके मुख से निकल गया था—'बड़ी गरीब लड़की है अन्नो, सीतला ने चाँद-सी बिटिया का नास कर दिया।'

जीजी, आज जो यह पत्र लिखने बैठा हूँ तो एक घटना हो गई है। सम्भव है कि मैं अब उनके घर कभी न जाऊँ। काकी से मैं तनिक भी असन्तुष्ट नहीं हूँ। पर अब मैं उस घर भी नहीं जा सकता।

जीजी, कल मैं रघुराज को बुलाने के लिए उसके घर गया तो पाया कि रघुराज के पुत्र की तबीयत ठीक नहीं है। छः मास का शिशु; उसे निमोनिया हो गया है। पसली चल रही है। रघुराज था नहीं। काकी ने निमन्त्रित किया—"आओ बेटा, बैठो।"

मैंने पूछा—"काकी, किसी को दिखाया है, नन्हें को?"

"नहीं बेटा, इसमें किसी को क्या दिखाना? पसली है, सेंक देंगे। कल बाबाजी से झड़वा देंगे, ठीक हो जाएगी।"

मैंने कहा—"काकी, एक डाक्टर हैं निकट ही, अपने मित्र हैं। कहो तो उन्हें दिखलाऊँ।"

काकी ने आश्चर्य-भरे नयनों से मेरी ओर देखा फिर वे एकाएक जैसे मुझसे भयभीत हो गईं। बोलीं—"नहीं भैया, हम लोग डाक्टर का इलाज नहीं करते। अभी रघुराज कोयले लिए आता है। सर्दी भी तो कितनी हो रही है। सेंक देंगे, दो दिन में लोट-पोटकर ठीक हो जाएगा।"

मैंने उनकी कठोर मुख-मुद्रा देखी; प्रतिवाद का साहस न हुआ। मैं बैठा रहा और काकी भी अपने पौत्र को गोद में लिए बैठी रहीं।

शीघ्र ही रघुराज आ गया। वह कोयले लाया था कुछ, पर वे गीले निकले। काकी ने रघुराज की असावधानी पर उसे दो बातें सुनाईं और फिर स्वयं सूखे कोयलों की खोज में चली गईं।

जान पड़ता है कि उन्हें सूखे कोयले निकट नहीं मिले। मैं और रघुराज निरन्तर अग्नि जलाने का प्रयत्न करते रहे। पर कोयले थे कि उन्होंने अग्नि के सम्पर्क में आना अस्वीकार कर दिया था, और यह असहयोग की भावना इतनी तीव्र हो गई थी कि हम दोनों झुँझला उठे, विशेषतया मैं। घर में मिट्टी का तेल था नहीं। मुझसे रहा नहीं गया। मेरे गले में ...था। बच्चे की दम फूल रहा था और यह रोग मुझे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस कोठरी में भयावह रीति से घुमड़ता जान पड़ा। मैंने मफलर निकालकर अँगीठी में लगा दिया। आग जल निकली। तभी काकी आ गईं। दो मुट्ठी सूखे कोयले उनके हाथ की डलिया में थे।

उन्होंने मफलर को जलते जो देखा तो ठगी-सी खड़ी रह गईं। डलिया उनके हाथ से छूट गई। वे बोलीं—"रघुराज!"

"अम्मा!"

"यह क्या जल रहा है?"

"काकी, आग जल नहीं रही थी। कपड़ा पुराना था ..।"

"रघुराज!"

"अम्मा!"

"तूने विश्वे को मफलर क्यों जलाने दिया?"

रघुराज बोला नहीं। मैंने कहा—"काकी, आप चिन्ता न कीजिए। मफलर आपकी दया से...।"

"विश्वे, तुम इस घर में अतिथि हो, पर अतिथि होने से हमारा अपमान करने का अधिकार तुम्हें नहीं मिल जाता। पर बेटा तेरा अपराध क्या है! है तो तू अपने ही माता-पिता का पुत्र!"

जीजी, सच कहता हूँ, कि मैं इस प्रहार के नीचे तिलमिला गया। काकी कहती गईं—"यह सच है कि तुम मफलर जला सकते हो और हम हैं जो कोयला भी जलाने को नहीं पाते, पर तुम्हें अपना मफलर इस घर में जलाने की क्या आवश्यकता थी? हम निर्धन हैं तो इसका यह अर्थ नहीं कि तुम हमारा अपमान करो और हम...।"

मैंने काकी की ओर देखा। उनकी साँस वेग से चल रही थी। आँखें अङ्गार-सी लाल हो रही थीं। साँस का दौरा हो आया था। वे देख रही थीं एकटक मेरी ओर जैसे कि पूछ रही हों—"बोलो, हम निर्धन हैं तो क्या इससे तुम्हें हमारा अपमान करने का अधिकार मिल जाता है?"

उनकी ओर मैं देख न सका। जीजी, मुझे अब ज्ञात हो गया है कि हमारे और काकी के बीच जो खाई है उसका मुख्य कारण वह है जिसे हम धन के नाम से पुकारते हैं। काकी समझती हैं कि हम अपना धन दिखाकर उनका अपमान करना चाहते हैं। उनका यह वाक्य मुझे जीवन भर स्मरण रहेगा, "हम निर्धन हैं तो क्या इससे तुम्हें हमारा अपमान करने का अधिकार मिल जाता है?"

जीजी, तुम्हीं बताओ, इसके पश्चात् मैं वहाँ कैसे ठहर सकता था। मैं उठकर चला आया, रघुराज ने क्षमा-प्रार्थी नेत्रों से मेरी ओर देखा। पर मैं समझता हूँ कि इस विषय में रघुराज ही नहीं काकी भी निरपराध हैं। अपराध है तो हमारा अथवा उसका जिसने इस प्रकार धनी-निर्धन की दीवार मानव-मानव के बीच खड़ी की।

यह सब जानते हुए भी मेरा साहस अब उस घर में [illegible] का नहीं होता।

तुम्हारा आज्ञाकारी
विश्वे

(४)

लखनऊ
-४-३८

प्रिय विश्वे,

आशा है कि तुमने सिविल सर्विस के प्रश्न-पत्र ठीक [illegible] हैं। तुम्हारे पत्र से पर्याप्त आत्मविश्वास झलकता है। [illegible] पिताजी के शब्द स्मरण आ रहे हैं। होगा क्या यह परमात्मा के हाथ में है। मेरा आशीष और मेरी सदिच्छाएँ सदा तुम्हारे ही लिए हैं।

विश्वे, तुम फिर काकी के यहाँ नहीं गए। मैं समझती हूँ कि यह एक प्रकार से उचित ही हुआ और दूसरे प्रकार से अनुचित भी। काकी क्यों हमारी समृद्धि से ईर्ष्या करती हैं, पर फिर मैं सोचती हूँ काकी का अपराध उतना नहीं जितना हमारा है। हमें काकी की सहायता करनी चाहिए थी।

पर क्या काकी सहायता स्वीकार करतीं? तुम कहोगे नहीं। पर विश्वे, हमें भूलना न चाहिए कि काका की मृत्यु के पश्चात् काकी उसी सहायता की आशा करके मुरादाबाद [illegible] थीं। नहीं विश्वे, मैं अब स्पष्ट देख रही हूँ कि अपराध काकी का नहीं, हमारा है।

दिल्ली से जाने के पश्चात् तुमने लिखा था कि रघुराज [illegible] के पुत्र का शरीरान्त हो गया। अब मुझे पता लगा है कि भाभी भी नहीं रहीं। पुत्र को जन्म देते समय जो रोग [illegible] हो गया था वह उसे लेकर ही गया। काकी प्रायः विक्षिप्त हो गई थीं। रघुराज का मस्तिष्क भी जैसे अपनी स्थिरता खो बैठा था। उसने नौकरी छोड़ दी थी।

तुमने जो पता दिया था उस पर मैंने ५०) का मनीऑर्डर भेजा था। पर वह लौट आया। रघुराज ने उसे लेना अस्वीकार कर दिया। मैं जानती हूँ कि इस अस्वीकार के पीछे [illegible] हैं। तुम कह सकते हो कि काकी पुत्री का धन कैसे स्वीकार करतीं; पर विश्वे, मैंने वे रुपये तुम्हारे नाम से भेजे थे। क्या काकी तुम्हारे ऊपर अपना अधिकार नहीं मानतीं?

ठीक है, हमने कब उनका अधिकार अपने ऊपर [illegible] और मैं देखती हूँ कि अपराध फिर हमारा है। मैं जानती हूँ कि काकी हमें और तुम्हें प्यार करती हैं। वे जानती हैं हमारे भीतर एक ही रक्त है। पर वे एक ही स्थान से [illegible] हो अपनी हीनता स्वीकार नहीं करतीं। वे गर्वीली हैं। उनका आत्मसम्मान अटूट है। वे उस लौह-शलाका की भाँति [illegible] गर्मी में एक बार झुककर ठण्ढी पड़ गई है, और झुकना [illegible] जानती है। झुकना उनके लिए [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[सन् १९४३ ई० में लिखित]

विश्वे, मैं चाहती थी कि काकी को भूल जाऊँ। हम उन्हें भूल जाएँ यही उनके लिए अच्छा है और हमारे लिए भी। पर मैं विवश हूँ। मैं उन्हें भूल नहीं सकी हूँ। जब-जब मैं दर्पण के सम्मुख जाकर खड़ी होती हूँ, अपने मुख पर शीतला के चिह्नों पर दृष्टिपात करती हूँ, तो काकी बरबस मेरे समीप आकर बैठ जाती हैं। मैं ज्यों-ज्यों उन्हें हटाने का प्रयत्न करती त्यों-त्यों वे अधिक वेग से मेरे मनःपटल पर आ जाती हैं और वहीं स्थिर हो जाती हैं। वहाँ से हिलने का नाम नहीं लेतीं। विश्वे, मैं आँख मूँदकर भी उन्हें नयनों की ओट नहीं कर पाती।

पिछले मास मुनीमजी दिल्ली गए थे। मैंने उनसे कहा था कि जैसे भी हो, गुप्त रूप से काकी और रघुराज के विषय में पता लगाएँ। वे लौट आए हैं। उन्होंने पता लगाने का प्रयत्न किया है।

उनकी सूचना है कि काकी ने वह मकान छोड़ दिया है। वह नहीं कहाँ रहती हैं और क्या करती हैं। हाँ, मकान छोड़ने से कुछ दिन पहले रघुराज घर से भाग गया था। लोग कहते हैं कि वह सेना में भरती हो गया है। काकी मकान का किराया नहीं दे सकती थीं इसलिए उन्हें मकान छोड़ना पड़ा।

विश्वे, जब मैं सोचती हूँ कि ये मेरी काकी हैं जो धनाभाव से मकान छोड़ने को विवश हुई हैं, तो मेरी साँस घुटने लगती है। लगता है, नाना पुष्पों से सुगन्धित इस वाटिका की वायु मेरे फेफड़ों को फाड़ डालेगी। मैं व्याकुल हो जाती हूँ। इच्छा होती है कि स्वयं घर से निकलूँ और काकी को खोज-खोजकर ले आऊँ। पर तुम जानते हो कि यहाँ नारी को तनिक भी स्वतन्त्रता नहीं है। अपने घर और अपनी वाटिका से बाहर संसार में जो कुछ है वह हमारे लिए नहीं है। इस सीमा के बाहर निकलते ही इस कुल की मर्यादा खण्डित होने का भय लगा है। विश्वे, ऐसी बालू की भीत है हमारी मर्यादा। जल की मछली की भाँति हमें यहीं घूम-घूमकर अपने को बहलाना होता है।

विश्वे, देखना, तुम काकी को न भूलना। उनका पता लगाना। तुम्हारी प्रत्यक्ष कोई सहायता वे स्वीकार न करेंगी। उनकी वृद्धावस्था शान्ति से कट सके ऐसा प्रबन्ध परोक्ष रूप से करना। यदि तुम यह कर सकोगे तो समझना कि तुमने बड़ा उपकार किया है। अब तुम बड़े अफसर होने जा रहे हो। तुम दिन-रात फलो-फूलो। पर यह जो एक प्रार्थना की है उसे न भूलना। काकी के विषय में जो कुछ भी ज्ञात हो, तत्काल लिखना। भाभी को प्यार।

तुम्हारी

कानपुर
-१०-४३

प्रिय जीजी,

कई वर्ष पहले की बात है जब तुमने मुझे काकी का पता लगाने को लिखा था। जो कुछ मुझसे सम्भव था वह मैंने किया, पर काकी के विषय में कोई समाचार मुझे प्राप्त न हो सका। आज दोपहर तक मैं सोच लेता था कि काकी हमारे जीवन में अपनी छाया तजकर वास्तव में बहुत दूर निकल गई हैं। हम उनके दर्शन का सौभाग्य समाप्त कर बैठे हैं। पर, जीजी, आज दोपहर के समय जो घटना हो गई है उसने मुझे भयानक रीति से हिला दिया है। मुझे सन्देह होने लगा कि क्या मैं मनुष्यता पर दृढ़ता से स्थित हूँ। मेरी नैतिकता में घुन तो नहीं लग गया है?

जीजी, मैं ग्यारह बजे भोजन करके बैठक में आ बैठा। एक अभियोग का निर्णय लिखने की मानसिक प्रस्तावना कर रहा था कि मोटर के आगमन का स्वर सुनाई दिया। दिन भर सैकड़ों मोटरें कोठी के सामने से आती-जाती रहती हैं। कभी मैं उनका स्वर सुनकर चौंका नहीं। पर आज उस मोटर के स्वर में न जाने क्या बात थी कि मेरा ध्यान उस ओर लग गया।

मुझे निश्चय था कि कोई मेरे पास नहीं आ रहा है। मैं जानता हूँ कि सरकारी पदाधिकारियों में से कोई मेरे पास आने का साहस नहीं करता, और नगर के किसी व्यक्ति को मेरी सङ्गति इस समय कदापि रुचिकर नहीं हो सकती। क्योंकि जिन्हें आवश्यकता है वे जानते हैं कि गोयल सा'ब से निःशुल्क भेंट नहीं होती। चपरासी की पान की डिब्बी सदा रिक्त रहती है। उसे सभी को भरना होता है। काम यह बुरा नहीं है। पर कोई इसे सदिच्छा से नहीं करता।

मैं कल्पना करने लगा कि मोटर अब कोठी के निकट आई और आगे बढ़ गई। पर हृदय उत्सुक हो गया जब कि वह कोठी के सम्मुख ठहर गई। मैंने सोचा, सामने की कोठी में कोई आया होगा। पर मेरे भीतर किसी ने इस पर विश्वास न किया।

मैंने सुना एक वृद्धा नारी का स्वर "गोयल सा'ब हैं?"

"हैं!"

"उनसे कहो कि एक महिला आपसे पाँच मिनिट के लिए वार्तालाप करना चाहती है।"

"सा'ब ने अभी भोजन किया है। विश्राम कर रहे हैं, आप तीन घण्टे पश्चात् आइएगा।"

जीजी, मेरा हृदय धड़क रहा था। उन महिला के स्वर में कुछ था जिसने मुझे छू दिया था। मेरे जी में आया कि जाकर चपरासी को इतना मारूँ कि वह उठ न सके। पर क्या

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसके पश्चात् चपरासी ने भीतर आकर कहा—"हजूर, एक माँ जी आपसे मिलना चाहती हैं।"

उसके चेहरे पर मुस्कान थी, जैसे कि संसार में कहीं रोग-शोक का नाम भी न हो। मैंने उसकी ओर से दृष्टि फेर ली। कहा—"भेज दो।"

महिला भीतर आईं। वे अत्यन्त वृद्ध थीं। अत्यन्त सुन्दर चप्पल और मूल्यवान् साड़ी पहने हुए थीं। उनका मुखमण्डल था अत्यन्त स्वच्छ और केशराशि थी सुगठित। मैंने उनकी ओर देखा और सुना कि मोटर लौट गई है।

मैंने प्रश्न-वाचक दृष्टि से उनकी ओर देखते हुए कहा—"बैठिए।"

जीजी, मैं अपनी कार्य-योजना में बाधा पड़ने पर इतना विचलित हो गया था कि अपने सम्मुख बैठी काकी को न पहचान सका।

उन्होंने एक क्षण मेरी ओर देखा, फिर बोलीं—"मिस्टर गोयल।"

मैंने तब चौंककर उनके नयनों में देखा और पाया कि ये तो काकी हैं। जी में आया कि उठकर उनके चरणों में गिर जाऊँ और उनसे लगकर इतना रोऊँ कि फर्श गीला हो जाए। पर जीजी, यह मैं कर नहीं सका। मेरा अन्तर काँपा, भयभीत हो गया। मैंने बैठे-बैठे वैसे ही कहा—"काकी नमस्ते, आप बहुत दिनों में.....।"

पर उन्होंने मेरी बात सुनी नहीं। बोलीं—"मिस्टर गोयल, मैं एक आवश्यक कार्यवश आपके पास आई हूँ और शीघ्राति-शीघ्र जाना चाहती हूँ। पर कार्य बताने से पहले यह बताना चाहती हूँ कि मैंने ऐसा कोई कार्य नहीं किया है जिससे आपका अपमान हो।

"मैं आपके यहाँ मोटर में आई हूँ। मैंने वस्त्र स्वच्छ और मँहगे पहन रक्खे हैं, और आपके चपरासी को रईसों की भाँति मैंने पान खाने को रुपया दिया है। किसी प्रकार भी मेरा आपके पास आना आपके अपमान का कारण नहीं हो सकता।"

जीजी, क्या तुम समझ सकोगी कि काकी के इन वाक्यों ने मेरे हृदय की क्या दशा की। मुझे पता नहीं कि किस प्रकार वहाँ उनके सम्मुख स्थिर बैठा रहा।

इसके पश्चात् उन्होंने अपने बेग में से एक मफलर निकाला। मफलर बिलकुल वैसा था जैसा कि मैंने उनके घर उस दिन कई वर्ष पहले जलाया था। उसे मेरे सम्मुख मेज पर रखती हुई बोलीं—"बेटा, विश्वनाथ, मैं तुम्हारे माता-पिता का उपकार नहीं सहन कर सकी, तुम्हारा कर सकती इतनी सामर्थ्य मुझमें नहीं थी। यह अपना मफलर लो। तुम युग-युग जियो, फूलो-फलो बेटा, काकी का आशीष तुम्हारे साथ है।"

और वे उठ खड़ी हुईं।

मैंने कहा—"काकी, जलपान.....।"

"नहीं बेटा, अब मैं चलती हूँ। जीवन की [illegible] साध मैंने पूरी कर ली है। हाँ, यदि स्मरण रहे तो मेरा [illegible] काम कर देना। रघुराज सेना में भरती हो गया है, [illegible] वह मिले कभी तो मेरा आशीष उस तक पहुँचा देना। [illegible] कह देना कि उसकी माँ युद्ध-यात्रा से हठ-पूर्वक विचलित [illegible] की अब कभी चेष्टा न करेगी।"

जीजी, इससे पहले कि मैं रोक सकूँ वे उठीं, और बैठक [illegible] बाहर निकल गईं। मैंने पुकारा—"काकी!"

पर उन्होंने सुना नहीं। अपनी अवस्था और स्वास्थ्य [illegible] अनुसार वे अत्यन्त तीव्र गति से जा रही थीं। वे जिस [illegible] से आई थीं उधर ही लौट गईं। मैं दूर तक उनको [illegible] देखता रहा। दूर उस सड़क पर एक पुल था। मुझे लगा कि काकी थककर उसी पर बैठ गई हैं। जूते खोलकर उन्होंने नहर में डाल दिए हैं और फिर पुल की दीवार पर लेट गई हैं। जी में उठा कि दौड़ूँ, काकी नहर में न गिर पड़ें। उन्हें जोड़कर पैर छूकर घर ले आऊँ। वे यहाँ आईं और [illegible] बहू एवं पौत्री को देखकर न गईं। पर, जीजी, मेरे पैर [illegible] गए। मैंने देखा कि चपरासी खड़ा एकटक अपने [illegible] ओर देख रहा है। मैंने सम्मुख वृक्ष-खण्डित आकाश की [illegible] दृष्टि फेंकी और बैठक में चला गया।

जीजी, मुझे और कुछ दुखी नहीं कर रहा है। पर [illegible] रघुराज को सन्देश पहुँचाने का कार्य जो मुझे सौंप गई हैं उस [illegible] मैं भयभीत हूँ। मैं जानता हूँ जीजी, कि रघुराज कहीं [illegible] रघुराज सेना में भरती नहीं हुआ। उसने अपना नाम लिखा [illegible] उन अल्पसंख्यक वीरों में जो टिटहरी की भाँति सागर [illegible] का प्रयत्न कर रहे हैं, जो ब्रिटिश साम्राज्य के सशक्त उत्तर [illegible] जातीयता को उबार लेना चाहते हैं। और जीजी, इसमें [illegible] भाग भी कम नहीं है।

रघुराज बन्दी बनाकर मेरे सम्मुख ही लाया गया था। [illegible] मैंने ही उसके विरुद्ध अभियोग सुना और निर्णय दिया। [illegible] पहले सोचता रहा कि मैं ठीक न्याय न कर सकूँगा, इसलिए [illegible] रघुराज के अभियोग को दूसरे न्यायाधीश के पास भेज दूँ। [illegible] इसमें बताना होता कि रघुराज मेरा भाई है। जीजी, अधिकारी [illegible] को यह सत्य बताने का साहस मुझ में न था।

मैंने अभियोग सुना। निरन्तर सोचता रहा कि [illegible] को दण्ड अधिक नहीं दूँगा। पर जब निर्णय लिखने बैठा [illegible] मन में भय उदय हो गया। यदि मैंने रघुराज को दण्ड [illegible] दिया तो लोग यही समझेंगे कि अपने भाई के साथ [illegible] ठोकर मारकर कोमलता का व्यवहार किया। इस [illegible] भय के नीचे जानती हो जीजी मैंने क्या किया! मैंने रघुराज [illegible] अधिकाधिक दण्ड, दस वर्ष का कठोर कारावास [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...मैं अनुभव करता हूँ कि न्याय की तुला पर यह दण्ड ...नुचित है। पर, जीजी, मैं कायर जो हूँ। हम सभी—जिनके ...धन का, पद का, मोह है—कायर हैं। जी में आता है कि ...हत्या कर लूँ, नौकरी छोड़ दूँ। पर यह कुछ करने की ...मुझमें नहीं है। रघुराज-जैसा साहस मुझमें नहीं है। ...भी नहीं करूँगा। हाँ, यह निश्चित है कि आज मैं ...नहीं लिख सकूँगा। दो तीन दिन में लिख सकूँगा ...भी सन्देह है।

जीजी, अब इसमें सन्देह नहीं कि काकी हमारे जीवन से सदा के लिए निकल गई हैं। स्मृति के अतिरिक्त और कोई भय उनसे अब हमें नहीं है।

आशा है जीजा जी का स्वास्थ्य ठीक होगा। बच्चों को प्यार। सप्रेम।

आज्ञाकारी
विश्वे

परास्त जर्मनी में

श्री आशाराम, एम० ए०

आज जर्मनी की क्या दशा है, यह कहना कठिन है। ...कि, सही समाचार कम मिलते हैं और जो कुछ समाचार ...ते हैं वे स्वयं आपस में एक दूसरे को काट देते हैं। ब्रिटेन ...अमेरिका का चार्ज है कि रूस ने अपने भाग में फौलादी ...डाल दिए हैं इस कारण कोई समाचार नहीं मिलता। ...राज भी इसी प्रकार पश्चिमी मित्रराष्ट्रों पर लाच्छन ...है। अतएव, पाठक को लेखक की कठिनाइयों का ...रखना चाहिए।

× × ×

...परास्त होने के पूर्व जर्मन नाजियों ने कूटनीति में कुछ भी ...न रक्खा था। मित्रता और वैमनस्य के मानों उनके ...कुछ अर्थ ही न थे। जब पराजय के दिन समीप आए, ...समय भी जर्मनी के शासकों ने बचने की कुछ तरकीबें ...लीं। एक तो साफ थी। उन्होंने बहुत-सा रुपया, बड़े-...नेताओं और अफसरों, पूँजीपतियों तथा अन्य धनिक व्यक्तियों ...स्वीडन और स्विट्जरलैंड-जैसे—तटस्थ देशों में भेज ...। ये व्यक्ति आज भी अपने षड्यन्त्र रच रहे हैं और ...कर रहे हैं कि किसी विधि फिर से देश पर इनका राज ...हो जाए।

दूसरा प्रयत्न इन्होंने मित्रराष्ट्रों के बीच फूट डालने का ...और एक सीमा तक इनको सफलता भी मिली। जर्मन ...ने रूस का विरोध किया और पश्चिमी मोर्चे से हटने ...। धन-धान्य और नागरिकों को पूर्व से हटाकर पश्चिम की ...भेज दिया। यहाँ तक कि ब्रिटेन और अमेरिका ने अलग ...८ मई को सुलह भी कर ली। परन्तु सोवियट शासन ने ...न माना और मित्रराष्ट्रों की ओर से अन्तिम और सच्ची ...१० मई को की गई। मित्रराष्ट्रों के इन भेद-भावों की ...

जर्मन दल इस परिस्थिति से लाभ उठाकर नाजीवाद को पुनर्जीवित करना चाहते हैं। यह भी स्मरण करने योग्य है कि यद्यपि बिना शर्त आत्मसमर्पण की धाराओं के अनुसार जर्मनी को अपनी कोई सेना अथवा सरकार रखने का अधिकार न था परन्तु ब्रिटिश सैन्य-शासन ने कई सप्ताह तक जर्मन सैन्य-शासन को स्वीकार किया।

× × ×

इस पराजय को जर्मन जनता ने किस प्रकार स्वीकार किया? कहा जाता है कि अधिकांश तो अपने दुःख में फँसे थे। उस समय देश के सम्बन्ध में सोचने का किसी को अवकाश ही न था। हाँ, धनिकवर्ग ने ब्रिटिश और अमेरिकन सेनाओं का स्वागत किया, परन्तु सोवियट के विरुद्ध जर्मन नेताओं ने इतना अधिक प्रचार किया था कि लाल सेनाओं के सामने से जनता दूर भागती थी। यह भी सत्य है कि लाल सेनाओं ने शत्रु के साथ कठोरता का व्यवहार करने में कोई कसर न की थी। परन्तु फिर भी जैसा कि इलदा एहरुनबर्ग कहता है, लाल सेनाएँ नाजियों की भाँति बाल-वृद्ध-स्त्री आदि को बिना कारण मारती न थीं।

नाजी-विरोधी दलों ने मिलकर एक राजनीतिक संस्था तैयार की थी जिसको एन्टीफा (Anti-fa) कहा जाता था। यह संस्था नाजी सेनाओं को परास्त करने में मित्रराष्ट्रों की सहायता करती थी। परन्तु जब मित्रराष्ट्रों ने जर्मनी पर अधिकार स्थापित किया तो केवल सोवियट शासन को छोड़ किसी दूसरी सरकार ने इसको स्वीकार नहीं किया। यहाँ तक कि अन्य तीन भागों में इस दल के कार्य पर वे रोकें लगाई गईं जो कि नाजी दलों पर थीं। बहाना यह था कि मित्रराष्ट्र किसी दल को सहायता अथवा सुविधा नहीं देना चाहते। परन्तु, यथार्थ ...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने स्थानों पर ज्यों-के-त्यों रह गए और वे अन्य दलों अथवा नाजी-विरोधी व्यक्तियों को परेशान करने लगे। आज तक, उपर्युक्त तीनों भागों में नाजी पूँजीपति, अफसर आदि अनेक पदों पर आसीन हैं।

× × ×

सुलह की शर्तों के अनुसार यह निर्णय हुआ कि जर्मनी की सैन्यशक्ति को सदैव के लिए मिटा दिया जाए। इसका अर्थ यह हुआ कि जर्मन सेनाओं, उनके अफसर वगैरह को पदों से हटा दिया जाए, युद्ध-सामग्री या तो मित्रराष्ट्रों के बीच बाँट दी जाए अथवा शेष सामग्री को नष्ट कर दिया जाए। परन्तु, कहा जाता है कि, ब्रिटिश अधिकृत शासन में अभी तक इस निर्णय को व्यवहार में नहीं लाया गया। इकोनेमिस्ट (Economist) पत्र भी स्वीकार करता है कि १,२०,००० जर्मन सेनाएँ आज भी ब्रिटिश भाग में हैं। यह भी कहा जाता है कि युद्ध-सामग्री तक तैयार की जा रही है।

परन्तु युद्ध केवल सेनाओं से नहीं लड़े जाते। उनके पीछे आर्थिक शक्ति होती है। जहाँ तक औद्योगिक उन्नति का सम्बन्ध है, जर्मनी योरप के शिखर पर था। ऐसी परिस्थिति में केवल जर्मन सेनाओं को तोड़ देना और आर्थिक ढाँचे को अक्षुण्ण रखना भावी युद्ध को निमन्त्रण देना होता। इस कारण मित्रराष्ट्रों ने निर्णय किया कि जर्मनी की उत्पादन-शक्ति पर भी प्रतिबन्ध लगाए जाएँ। उन उद्योग-धन्धों को, जो युद्ध-सामग्री पैदा करते थे, या तो मित्र-राष्ट्र स्वयं आपस में बाँट लेंगे अथवा उनको बर्बाद कर देंगे। जहाज और हवाई जहाज, तेल और रबर के कारखाने जर्मनी नहीं चला सकता। इसके अतिरिक्त कुछ ऐसी भी मशीनें हैं जो आवश्यकता की वस्तु और युद्ध के साधन, दोनों ही बनाती हैं। जैसे मशीन बनाने की मशीनें, अथवा बड़े ट्रैक्टर आदि बनानेवाली मशीनें। बड़े ट्रैक्टर बनाने की जर्मनी को सुविधा न दी जाएगी। हाँ, मशीनें बनाने का अधिकार दिया जाएगा। परन्तु पहले की अपेक्षा केवल १० प्रतिशत। फौलाद भी युद्ध से पूर्व के अनुपात में केवल ३० प्रतिशत बनाने का अधिकार होगा। जो पूँजी जर्मनी दूसरे देशों में लगा चुका है वह मित्रराष्ट्र जब्त कर लेंगे। यह भी विचार किया जाता है कि शेष बड़े-बड़े कल-कारखानों को पूँजीपतियों के हाथ से निकालकर सरकार के हाथ में दे दिया जाएगा। सोवियट-अधिकृत भाग में यह सुधार किया जा चुका है। साथ ही वहाँ पर बड़ी-बड़ी जागीरें और जमींदारियाँ भी लगभग ७३ हजार कुटुम्बों के बीच बाँटी जा चुकी हैं। इस प्रकार लगभग ३० लाख एकड़ जमीन किसानों को मिल गई है।

इस समय जर्मनी में एक भयंकर अकाल फैला हुआ है। का उचित प्रबन्ध नहीं हो सका। इस कारण पर्याप्त मात्रा कोयला पैदा नहीं होता। कोयला न होने के कारण रेलें नहीं चलाई जा सकतीं और फौलाद नहीं पैदा किया जा सका बीज और पशुओं का प्रबन्ध ठीक न होने और ट्रैक्टरों कमी पड़ जाने के कारण खाद्य-सामग्री भी पैदा नहीं हो इसलिए पहले से आज चौथाई खाना मिलना भी कठिन हो है। हाँ, नए सुधारों के कारण सोवियट भाग में उद्योग-प्रारम्भ से ही चलना शुरू हो गए और आज उस भाग अकाल की परिस्थिति नहीं है।

× × ×

प्रारम्भ में एक और भी कठिनाई थी। हिटलर ने जो मजदूरों को बाध्य किया था कि ये जर्मनी में काम करें कि जर्मन जनता युद्ध में भाग ले सके। जब जर्मनी हुआ तो लगभग २ करोड़ मजदूर और विदेशी सिपाही में घूमने लगे। इनको सँभालना कठिन था, क्योंकि में कोई सरकार ही न रह गई थी। परास्त जर्मनी को राष्ट्रों ने चार भागों में बाँट दिया। बर्लिन पाँचवाँ भाग है पर चारों देश शासन करते हैं। इस विभाजन के कारण समस्याएँ पैदा हो गई हैं। पश्चिमी भाग में कल-कारखानों की बहुतायत है, पूर्वी भाग कृषि-प्रधान है। यदि मित्र की नीति में भिन्नता न हो तो एक भाग की आवश्यकताओं दूसरा भाग पूरा कर सकता है। परन्तु आज रूसी भाग पश्चिमी भाग को खाद्य-पदार्थ नहीं जाते और पश्चिमी भाग से कल-कारखानों का सामान पूर्वी भाग को नहीं यहाँ तक कि सुलह के समझौते के अनुसार पश्चिमी के २५ प्रतिशत कल-कारखाने सोवियट रूस को चाहिए थे, लेकिन ब्रिटेन और अमेरिका ने समझौते धाराओं का पालन नहीं किया।

ब्रिटेन और अमेरिका का कहना यह है कि यदि मशीनों से जर्मनी में मजदूरों की सहायता से सामान जाए तो वह इतना अधिक होगा कि न केवल जर्मन सुखी रह सकेगी, वरन् मित्रराष्ट्रों को भी पर्याप्त हर्जाना जाएगा। रूस इस बात को मानता है, लेकिन उसका है कि इस प्रकार जर्मनी की आर्थिक शक्ति अक्षुण्ण रह और वह भविष्य में फिर आक्रमण कर सकेगा। उसकी मशीनें मित्रराष्ट्रों के पास पहुँचा दी जाएँगी देश इतने शक्तिशाली हो जाएँगे कि जर्मनी आक्रमण के प्रयत्न में विफल होगा। इसी कारण फ्रांस और रूस के लगभग ५० लाख मजदूरों को भी अपने यहाँ रक्खे

× ×

जर्मन देश की सीमाएँ भी सिकुड़ गई हैं।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[सन् १९४५ ई० का जर्मनी का आत्मसमर्पण]

...रोप भर में फैले हुए थे। जब हिटलर ने इन देशों पर आक्रमण ...ी तो इन जर्मनों ने हिटलर की सहायता की। इस कारण ...ी जोरप के देश अपने यहाँ से जर्मनों को निकालकर जर्मनी ...हे हैं। इससे अनेक जर्मनों को कष्ट उठाना पड़ता है। ...न इन देशों के सामने भी कोई चारा नहीं। जेकोस्लो- ...किया और पोलैंड-वासी जर्मनों ने हिटलर का साथ देकर ...देशों को दास बनाया। आज ये देश जर्मनों को किस ...अपने घरों में रख सकते हैं!

...साथ ही पूर्वी प्रशा, ब्रेडेनबर्ग, साइलेशिया आदि प्रान्तों ...ी जर्मनी से छीनकर रूस, पोलैंड आदि देशों को दे दिया ...है। वास्तविकता यह है कि पूर्वी प्रशा सदैव ही बाल्टिक ...ी स्वतन्त्रता में बाधक था। इसी प्रकार पूर्वी जर्मनी के ...भी पोलैंड की स्वतन्त्रता में बाधक थे। कहा जाता है ...इन प्रान्तों को बलपूर्वक जर्मन बनाया गया था और इन ...के गाँवों में आज तक पोलैंड अथवा बाल्टिक देशों की ...भाषाएँ बोली जाती हैं। अतएव इन भागों का जर्मनी ...किया जाना उचित ही है। परन्तु इसके कारण, एक तो ...ी का क्षेत्रफल एक चौथाई कम हो जाएगा और दूसरी ...लगभग १२० लाख जनता को कष्ट होगा। परन्तु चारा ...क्या है? यदि जर्मनी की युद्ध छेड़ने की शक्ति को ...करना और पोलैंड आदि देशों के साथ न्याय करना ...तो जर्मनी की सीमाओं को ओडर नदी तक लाना ...पड़ेगा।

× × ×

...बर्लिन समझौते में जहाँ अन्य धाराएँ थीं वहाँ एक यह ...थी कि जर्मनी की नाजी-व्यवस्था को कुचल दिया जाएगा। ...के लिए बड़े-बड़े नाजी-नेताओं पर मुकदमे चलाए जाएँगे ...उनको दण्ड दिया जाएगा और छोटे नाजी सदस्यों को भी ...ऊँचे पदों और कल-कारखानों से हटाकर साधारण ढङ्ग के ...आदि कठिन काम में लगाया जाएगा अथवा मजदूर बना- ...बनाने के रूप में रूस, फ्रांस आदि मित्रराष्ट्रों के पास भेज ...जाएगा। यह नीति रूस के दबाव से स्वीकृत हुई थी ...रूस ने इसका अक्षरशः पालन किया। लगभग ४० ...जर्मन मजदूर रूस में काम करते हैं और दस लाख से ...जर्मन मजदूर फ्रांस में हैं। इसी प्रकार अन्य मित्रराष्ट्रों ...ने हटाकर उसका स्थान नाजी-विरोधी दलों के सदस्य को ...है। परन्तु, ब्रिटिश और अमेरिकन सरकारों का मत था कि ...प्रकार जर्मन-शासन न चल सकेगा। अतएव नाजियों ...धीरे-धीरे हटाया जाएगा।

...यह भी निर्णय किया गया था कि जर्मन-जनता को स्वयं ...उनकी सहायता ली जाएगी। इस नीति के अनुसार सोवियट भाग में स्थानीय काउंसिलें स्थापित हो गई हैं। सारे पूर्वी जर्मनी के लिए भी एक जर्मन कमेटी है। इस कमेटी में ४ सोशलिस्ट, २ कम्यूनिस्ट और २ अन्य दलों के प्रतिनिधि के अनुपात में प्रतिनिधित्व रक्खा गया है। परन्तु अन्य भागों में इस प्रकार के शासन स्थापित नहीं हुए।

बर्लिन समझौते के अनुसार ४ राजनीतिक दलों की स्वीकृति दी गई थी—सोशलिस्ट, कम्यूनिस्ट, क्रिश्चियन डेमोक्रेट और उदार दल। कहा जाता है कि सोवियट भाग के कम्यूनिस्ट दल को अधिक सुविधाएँ दी जाती हैं। परन्तु इस भाग में प्रत्येक दल अपने पत्र निकालता है। इस समय नाजी और उनके साथी उदार दल में सम्मिलित हो रहे हैं। अन्य तीन भागों में आज तक राजनीतिक पार्टियों को पूर्ण स्वतन्त्रता नहीं। यहाँ तक कि मजदूर सङ्घ बनाने तक में रुकावटें पैदा हो गई हैं। रूसी भाग में मजदूर सङ्घ बनाने की न केवल पूर्ण स्वतन्त्रता है वरन् उनको प्रोत्साहन भी दिया जाता है। कहा जाता है कि मजदूर सभा के पिछले चुनावों में सोशलिस्ट दल का बहुमत था परन्तु मजदूरों की 'वर्क्स काउंसिलों' (वे काउंसिलें जो कि उत्पादन और वेतन आदि से सम्बन्धित हैं) में कम्यूनिस्टों का बहुमत था। पश्चिमी देशों का मत है कि धीरे-धीरे जर्मनी का मजदूर आन्दोलन अन्य योरपीय देशों के आन्दोलनों की भाँति कम्यूनिस्टों के हाथ में चला जा रहा है।

पूर्वी जर्मनी में भी, अन्य देशों की ही भाँति, कम्यूनिस्टों ने नारा ऊँचा किया कि मजदूर-पार्टियों और मजदूरों की एकता के बिना प्रतिक्रिया का सामना नहीं किया जा सकता, अतएव सोशलिस्ट और कम्यूनिस्ट दलों को मिलकर एक हो जाना चाहिए। इस प्रस्ताव पर वोट भी लिए गए। सोवियट भाग में यह प्रस्ताव स्वीकार किया गया, परन्तु अन्य तीन भागों में अस्वीकार हुआ। हाँ, यहाँ पर ऐसे सोशलिस्टों का बहुमत था जो कम्यूनिस्टों से मिलकर काम करना चाहते थे। परन्तु सोशलिस्ट और कम्यूनिस्ट नेताओं ने मिलकर एक संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी बनाने का निर्णय किया और एक कमेटी की संरक्षकता में एक पत्र भी निकालना आरम्भ किया। कम्यूनिस्ट और सोशलिस्ट पत्रों के नाम बदल दिए गए। परन्तु इस निर्णय को अन्य तीन पश्चिमी सरकारों ने नहीं माना और इस नए संयुक्त दल को अवैधानिक उद्घोषित किया।

जर्मनी में स्कूल खुल गए हैं, कुछ विश्वविद्यालय भी। परन्तु केवल रूसी भाग को छोड़ अन्य प्रान्तों में समुचित प्रबन्ध नहीं है। ब्रिटिश संवाददाताओं का कहना है कि रूस ने करोड़ों नई नाजी-विरोधी पुस्तकें छपवा दी हैं और शिक्षकों का प्रबन्ध किया है। अन्य सरकारें भी शिक्षकों की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रिटिश संवाददाता स्वीकार कर रहे हैं कि आज ब्रिटेन, अमेरिका और फ्रांस-विरोधी विचार जर्मनी में जोर पकड़ रहे हैं। कारण है इन शासनों की अकर्मण्यता तथा नीति-विहीनता। पश्चिमी शासन नाजीवादी नहीं चाहते, परन्तु कम्यूनिस्ट से भी उतनी ही घृणा करते हैं। इन भागों में जर्मन अन्यमनस्क अथवा व्याकुल हो चले हैं। खाने को अनाज और रोटी नहीं, घर अभी तक बर्बाद पड़े हैं, भविष्य निराशामय है। ऐसी परिस्थितियों से लाभ उठाकर नाजीवादी दल और उनके साथी सङ्गठन का प्रयत्न कर रहे हैं। इसी कारण समय-समय पर नाजीवादी दलों के पकड़े जाने के समाचार मिलते हैं।

× × ×

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, इस समय प्रतिक्रियावादी जर्मन व्यक्ति मित्रराष्ट्रों की फूट से आशा लगाए बैठे हैं। दुर्भाग्यवश मित्रराष्ट्रों का मतभेद बढ़ता ही जाता है। यहाँ तक कि कुछ पत्रकारों का कहना है कि युद्ध की तैयारियाँ हो चुकी हैं। यह स्पष्ट है कि पश्चिमी भागों में जर्मन उद्योग धन्धे ज्यों-के-त्यों रख लिए गए हैं और उनको चलाए जाने का भी प्रयत्न किया जा रहा है। रूस को यह कहकर टाला जा रहा है कि ये कल-कारखाने ब्रिटिश और अमेरिकन पूँजीपतियों ने युद्ध के पूर्व ही खरीद लिए थे। यदि मित्रराष्ट्रों के पारस्परिक सम्बन्ध इसी प्रकार बिगड़ते गए तो पूर्वी और पश्चिमी जर्मनी बिना युद्ध के एक न हो सकेंगे।

गीत

श्री अतीत, बी० ए०

व्यर्थ खोजते हो तुम मेरे
अधरों पर मुसकान।

प्रात-समीरण धीरे-धीरे
उस मुकुलित उपवन के तीरे
आता था कलिका-चुम्बन को
झिझका-सा, समझाता मन को

धीरे-धीरे बीत चले दिन
कहाँ रहा फिर उसमें जीवन?
शैशव का साथी मलयानिल
बिछुड़ गया क्यों एक बार मिल?

आँखें भर मन को समझाया—
"अरे हठीले! मान"।
व्यर्थ खोजते हो तुम मेरे
अधरों पर मुसकान॥ १॥

रजनीचर, पङ्कजरिपु जी भर
क्षीर-उदधि में गरल मिलाकर
बहा रहा था जगती-तल में
संज्ञाहीन हुए सब पल में

उनको वीणा पर गा-गाकर
जगा रहा मैं हिला-हिलाकर,
बोल उठा सारस नीरव में—
"क्या न मिलेंगे फिर जीवन में?"

तार-तार वीणा के बिखरे
पूरा हुआ न गान।
व्यर्थ खोजते हो तुम मेरे
अधरों पर मुसकान॥ २॥

खिलकर पङ्कज मुरझा जाते
पक्षी लौट-लौट घर आते
रजनी बीती फिर प्रभात है
मन्द, सुरभिमय मलय वात है

पर मेरे असफल जीवन में
परिवर्तन तक तो बन्धन में
जग कहता—'निष्ठुरता तेरी
हँसकर हँसी ले गई मेरी'

फिर क्या मुझसे पूछ रहे तुम
बनकर के अनजान?
व्यर्थ खोजते हो तुम मेरे
अधरों पर मुसकान॥ ३॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सङ्कल्प

श्री प्रेमनारायण टण्डन, एम० ए०

[स्थान—घनी बस्ती के भीतर एक पक्के मकान का बैठका, जिसमें लम्बी दहलीज पार करके जाना होता है। बाहरी व्यक्तियों के पहुँचने के लिए परदा करने की जरूरत नहीं होती, दहलीज के कारण ऊँची आवाज आनेवाले को अवश्य देनी पड़ती है। बैठके में तीन दरवाजे हैं। एक दहलीज की ओर खुलता है और दूसरा ठीक उसी के सामने हवा के लिए है। ये दोनों नेपथ्य के दो द्वार होंगे; परन्तु आने-जाने के लिए सिर्फ एक ही काम में लाया जाएगा। तीसरा द्वार घर के अन्दर जाने के लिए है। यह सामने परदे पर होगा जिस पर परदा पड़ा रहेगा।]

बैठक में साज-सामान कुछ नहीं है। सामने एक तख्त है जिस पर कुछ बिछा नहीं है। उसकी एक ओर तीन साधारण कुर्सियाँ पड़ी हैं। दीवार सफेद पुती है। सामने की तरफ तीन चित्र हैं—एक, चर्खा कातते हुए महात्मा गांधी का, दूसरा, उनकी बाईं तरफ, दृढ़ आकृति में खड़े नेहरू जी का और तीसरा उनकी दाहिनी तुलसीदास का।

समय—रविवार का दिन। छुट्टी के कारण सब काम इत्मीनान से होते हैं। एक बज गया है पर अभी तक भोजन तैयार नहीं हुआ है।

पात्र—विजयचन्द—बत्तीस वर्ष का प्रौढ़ युवक। खुलता हुआ रङ्ग; कसरती शरीर। सैंडोकट बनियाइन पहने जिससे बाहों की मछलियाँ बात करनेवाले का ध्यान आकर्षित करती हैं। बङ्गाली ढङ्ग की धोती बाँधे, बाईं तरफ की कुर्सी पर बैठा है। एक पैर तख्त पर है और दूसरा नीचे रक्खी चप्पल पर। चप्पलवाला पैर कभी-कभी हिला देता है।

विजयचन्द एम० ए० पास है। स्थानीय स्कूल में हिन्दी का अध्यापक है। कई पुस्तकें लिखी हैं जिनसे वह स्वयं सन्तुष्ट-सा नहीं है।

कैलाशचन्द—तीस वर्ष की अवस्था; इकहरा शरीर। धोती, खद्दर का कुर्ता और जवाहर वेस्ट पहने। दाईं तरफ की कुर्सी पर बैठा है। सार्वजनिक और राष्ट्रीय कार्यों में विशेष रुचि लेता है।]

विजय—मेरा तो यह दृढ़ विचार है कि स्वतन्त्रता की देवी बलिदान लिए प्रसन्न नहीं होती। और बलिदान भी कैसों का नहीं; माता-पिता की आँख के जगमगाते तारों का; हाथवाली गौनही वधुओं के नव सुहागों का, समाज के और देश के लालों का।

कैलाश—परन्तु हमारे देश के नवयुवक तैयार हो सकते हैं कभी बलिवेदी पर चढ़ने के लिए?

विजय—इसमें तुम्हें कुछ सन्देह है?

कैलाश—सन्देह! विलासप्रियता के विनाशकारी रङ्ग में रँगे देश के जो युवक जीवन के साधारण व्यवहार में दायित्व की भावना से शून्य हैं, उनसे इस महान् कार्य-सिद्धि की आशा करना हास्यास्पद है।

विजय—(हँसकर) बड़े निराशावादी हो जी तुम! कभी तुमने यह भी सोचा है कि उनकी विलासप्रियता किस बात की द्योतक है?

कैलाश—यही कि वे सुख से पले हैं, सुकुमार हैं और चाहते हैं कि विलास के अधिकाधिक साधन हमें प्राप्त हो जाएँ।

विजय—जी नहीं, इससे पता चलता है कि वे प्रत्येक आकर्षक वस्तु की ओर खिंच सकते हैं और स्वतन्त्रता से बढ़कर आकर्षण किसमें होगा?

कैलाश—यह कोरी आदर्शवादिता है। विलास के भौतिक साधनों का संग्रह जिनके जीवन का लक्ष्य है, वे देश की स्वतन्त्रता के लिए सुख-सम्पत्ति का परित्याग कर सकेंगे? किसी बुद्धिमान् के मस्तिष्क में यह बात नहीं आ सकती।

विजय—(सर हिलाकर) ठीक कहते हो, किसी (जोर देता हुआ) बुद्धिमान् के मस्तिष्क में यह बात नहीं आ सकती।

कैलाश—हँस लीजिए आप चाहे जितना; परन्तु सत्य यही है।

विजय—भाई मेरे, हमारे युवकों की धन-ऐश्वर्य-लिप्सा उस वातावरण का फल है जिसमें वे पले हैं। उनके माता-पिता और सगे-सम्बन्धी धन को ही जीवन का सब कुछ समझते रहे और यही इन्होंने भी सीखा। हम पर, तुम पर, सभी पर, ऐसे वातावरण का थोड़ा-बहुत प्रभाव पड़ा है। पर आँख खुलती है ठोकर लगने पर ही।

[नेपथ्य से कोई आवाज देता है—'मास्टर साहब'।]

विजय—कौन? रमेश! चले आओ यहाँ।

[रमेश अठारह वर्ष का युवक; भरा हुआ स्वस्थ शरीर। धोती और आधी बाँह की कमीज पहने। दोनों महीन और बढ़िया कपड़े की हैं जिनसे पता लगता है कि वह धनी का पुत्र है। जेब में फाउनटेन पेन है और हाथ में एक कापी। दसवें दर्जे में पढ़ता है। प्रवेश करके वह 'नमस्ते' करता है। मास्टर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहब के सङ्केत से तख्त पर बैठ जाता है और सङ्कोच से बार-बार कैलाश की ओर देखता है।]

विजय—कहो, कैसे आए इस समय ?

रमेश—(पुनः कैलाश की ओर देखकर) मास्टर साहब, यह कविता है मेरी। सुधारकर किसी पत्र में छपवा दीजिए।

[कापी विजय की ओर बढ़ाता है। कैलाश की ओर मुस्कराते हुए एक बार देखकर विजय कापी हाथ में ले लेता है। कैलाश रमेश की ओर देखने लगता है।]

विजय—(कापी की ओर ही देखता हुआ) मैंने तो तुमसे कहा था कि शृङ्गार रस की कविताएँ मत लिखा करो।

रमेश—(उल्लास को दबाता हुआ सङ्कोच के स्वर में) जीSS पर मेरी बड़ी इच्छा है कि शृङ्गारी रचनाओं का एक संग्रह यह छप जाए। दाम सब मैं दे दूँगा; आप तय करा दीजिए किसी से। उसके बाद जैसी आज्ञा होगी, वैसा ही करूँगा।

विजय—पिताजी से पूछ लिया है तुमने ? चार-पाँच सौ का खर्च होगा ?

रमेश—(गर्व से) परवा मत कीजिए आप। उनसे पूछने की इसके लिए कोई जरूरत नहीं है।

विजय—(कैलाश की ओर कापी बढ़ाता हुआ) आप कर सकते हैं इसकी छपाई का कोई प्रबन्ध ?

[विजय एक बार रमेश की ओर देखकर कैलाश की ओर इस तरह ताकता है जैसे उसके मन की थाह ले रहा हो। कैलाश बे मन से कापी हाथ में ले लेता है और एक बार रमेश पर दृष्टि डालकर कविता देखने लगता है।]

रमेश—(उत्सुकतापूर्वक कैलाश से हाथ जोड़कर) बड़ी कृपा होगी मुझ पर आपकी।

कैलाश—(दृढ़ स्वर में) मैं जानना चाहता हूँ कि आप की ऐसी रचनाएँ देश की स्थिति से मेल खाती हैं ? इनसे देश का कुछ उपकार होगा ?

[रमेश कुछ उत्तर नहीं देता; एक बार मास्टर साहब की ओर देखकर सिर नीचा कर लेता है। बाहर से आवाज आती है—'मास्टर साहब !' विजय रमेश से बाहर जाकर पुकारनेवाले को लिवा लाने का सङ्केत करता है। रमेश का प्रस्थान।]

विजय—शृङ्गार रस की ये रचनाएँ किसी उद्देश्य से नहीं लिखी जातीं। अपने साथियों से ये लोग हँसी-मखौल करते हैं। उन्हीं में किसी को चिढ़ाने, किसी को रिझाने और किसी को बनाने के लिए ये लोग ऐसी कविता लिख मारते हैं।

कैलाश—तब तो यह कवित्वशक्ति का सरासर दुरुपयोग है। भला ऐसे युवक ..।

विजय—ऊँह ! कविता हो यह तब तो। कोरी तुकबन्दी है जनाब ! इसे देखकर आप यह न समझें कि ऐसी रचना करनेवाले देश के सेवक नहीं हो सकते। इनके दिलों में भी आग है; पर राख से ढकी हुई। कुरेदनेवाला चाहिए।

[रमेश का माधव के साथ प्रवेश। गोरे रङ्ग का अठा- वर्षीय युवक। शरीर इकहरा, हँसमुख मुद्रा, चौड़ा पैजा खद्दर का कुरता और जवाहर वेस्ट। हाथ में हिन्दी का दै पत्र लिए है। दोनों को वह 'नमस्ते' करता है और साहब के इशारे से तख्त पर बैठ जाता है।]

माधव—मास्टर साहब, अखबार में है कि आज नेहरू आ रहे हैं। शाम को उनका व्याख्यान होगा।

कैलाश—(प्रसन्नता से) आज ! तब तो इस मुर्दा शहर भी जान आ जाएगी। भारत माता का यह वरद पुत्र ओजपूर्ण वक्तृता देता है ! (विजय की ओर देखकर) समय चलिएगा ? दो घण्टे पहले चलिए; नहीं तो जगह जाएगी। (उत्तर की प्रतीक्षा न करके रमेश से) आप मेरे साथ, नेहरूजी का व्याख्यान सुनने। लौटने पर यदि कहेंगे तो आपका संग्रह छपवा दूँगा।

रमेश—(हर्ष से) संग्रह छपवा दीजिएगा ! देखिए, वादा कर रहे हैं।

कैलाश—अवश्य छपवा दूँगा। शर्त यह है कि आप साथ व्याख्यान सुनने चलें।

रमेश—चला चलूँगा आज; पर पिताजी की आज्ञा पड़ेगी। जाऊँ पूछ आऊँ उनसे ! अभी आता हूँ।

[रमेश का सोत्साह प्रस्थान। विजय दूसरे द्वार से 'आया मैं' कहकर घर के अन्दर जाता है।]

कैलाश—आपको इस शुभ समाचार के लिए धन्यवाद। नेहरूजी के प्रति बड़ी श्रद्धा है आपमें।

माधव—(हाथ जोड़कर) बन्धनों में जकड़े हम युवकों किसी भी नेता के प्रति क्या श्रद्धा हो सकती है ? उनकी भर हम सुन आते हैं और फिर, वही रोज का चर्खा ! (रुककर) इतना जोश भी मास्टर साहब की देन समझिए।

कैलाश—गनीमत हैं ये मास्टर साहब तुम्हारे। नहीं आजकल अध्यापकों से बढ़कर स्वार्थी तो शायद ही कोई हो 'ट्यूशन' हो अच्छी; पैसा मिले, फिर चाहे 'पेपर आउट' लीजिए, चाहे नम्बर बढ़वा लीजिए। फेल कर देने का दिखा-दिखाकर मजबूर कर देते हैं लड़कों को 'ट्यूटर' के लिए ये लोग।

विजय—(प्रवेश करके हँसता हुआ) हम लोगों कठिनाइयाँ भी मालूम हैं आपको ?

कैलाश—(दृढ़ता के साथ) भाई देखो, बुरा मानने बात नहीं है। इंडियन कैरेक्टर' को गिरानेवाले हमारे ही हैं और यह इसलिए कि स्वयं उनमें कोई 'कैरेक्टर' कोई 'स्पिरिट' नहीं।

विजय—(तटस्थ भाव से) ठीक हो सकती है तुम्हारी परन्तु देश के युवकों पर अध्यापक से अधिक प्रभाव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कैलाश—मैं इसे मानने को तैयार नहीं। अध्यापक बालकों की रुचि का परिष्कार करते हैं और यदि वे स्वयं ढङ्ग के हों तो विद्यार्थियों पर उनका प्रभाव स्थायी होगा। अभी आपके ये विचार ही (माधव की ओर सङ्केत करके) आपकी प्रशंसा कर रहे थे कि देश के प्रति इनका प्रेम आपकी ही देन है।

विजय—(माधव की पीठ पर हल्का घूँसा जमाकर) पागल कहीं का। पूछो, इसके दर्जे में पचीस लड़के हैं। मेरी बात का असर सिर्फ इसी पर क्यों पड़ा? दूसरे क्यों अपने रङ्गों में रँग जाते हैं? स्वाति की बूँद सीपी में पड़कर ही मोती होती है।

माधव—(विजय से) तो आप चलिएगा आज व्याख्यान में? आप तो आते-जाते नहीं हैं कभी।

विजय—मैं! (कुछ गम्भीर होकर) मैं नहीं जाऊँगा। तुम चले जाना अपने साथियों के साथ। इधर से होकर जाओ तो मैं भी (कैलाश की ओर सङ्केत करके) चले जाएँगे तुम्हारे साथ। कल व्याख्यान के सम्बन्ध में बातें होंगी। नेहरूजी की बातों पर मनन करना तुम।

[कैलाश माधव के हाथ से अखबार लेकर देखने लगता है। विजय की दृष्टि भी उसी ओर जमी है।]

विजय—(कैलाश को रोककर) चलो, भोजन कर लो पहले। एक बज चुका है।

कैलाश—(माधव की ओर पत्र बढ़ाता हुआ) हाँ, चलो। भूख भी लगी है मुझे। (जवाहर वेस्ट खोलकर दीवार में लगी एक कील पर टाँगकर मुस्कराता हुआ) क्या कपड़े उतारने लगे। मैं तो भाई इन बातों को मानता नहीं।

विजय—यह अपनी-अपनी रुचि है। इसमें झगड़ा किस बात का?

माधव—तो चलूँ मैं! तैयार होकर आ जाऊँगा थोड़ी देर में।

['अच्छी बात है।'—कहकर कैलाश विजय के साथ भीतर जाने को तैयार होता है। इसी समय बद्री के साथ रमेश का प्रवेश। कैलाश और विजय ठिठक जाते हैं।]

बद्री—अठारह वर्ष का साँवला युवक है। सिल्क का कुरता पहने है, सोने के बटन हैं। पैर की चप्पल भी चेचक के कुछ दाग मुँह पर हैं; परन्तु स्वास्थ्य अच्छा के कारण चेहरे पर कान्ति है। सोने की कमानी का चश्मा है। वह हाथ जोड़कर मास्टर साहब से 'नमस्ते' करता कैलाश की तरफ ध्यान भी नहीं देता।

कैलाश—(रमेश से खड़े-खड़े) कहिए, क्या आज्ञा है पिताजी की?

रमेश—जी हाँ, मैं चलूँगा आपके साथ। आप संग्रह छपवा लें।

विजय—अच्छी बात है। (बद्री से मुस्कराकर) कहिए, क्या तमाशा आया है आज?

(बद्री कुछ शर्माकर सिर नीचा कर लेता है; कैलाश की दृष्टि उस पर पड़ती है—कुछ कड़ी होकर। रमेश और माधव मुस्कराने लगते हैं, बद्री की ओर देखकर।]

विजय—रमेश और बद्री से) भोजन कर आए? (दोनों स्वीकृति-सूचक सिर हिलाते हैं) हम भी भोजन कर लें। तब तक बैठो तुम लोग।

[दोनों का भीतर के लिए प्रस्थान। रमेश और बद्री तख्त पर बैठते हैं।]

माधव—(खड़े-खड़े) तुम भी चलोगे आज, यह बड़ा अच्छा रहेगा। अखबार रक्खो तुम। मैं अभी आया।

[माधव का प्रस्थान। रमेश और बद्री आराम से दीवाल का सहारा लेकर तख्त पर बैठ जाते हैं।]

रमेश—(उल्लासपूर्वक) कविता का संग्रह छपने दो मेरा। तुम्हीं को समर्पण करूँगा। तुम्हारा और अपना, दोनों का फोटो छपवाऊँगा। कितना आनन्द रहेगा!

बद्री—देखो, मैं फिर कहता हूँ कि झूठ मत बोलो। मास्टर साहब से बात छिप नहीं सकेगी और यदि उन्हें पता लग गया तो समझ रखना, बस!

रमेश—(लापरवाही से) ऊँह, कुछ देर बक-झककर अपने-आप चुप हो जाएँगे। पिताजी से कह दूँगा, शाम को जरूरी काम से एक मित्र के यहाँ गया था।

बद्री—मुझे ये बातें पसन्द ही नहीं; मेरी राय में तो चलो तुम सिनेमा ठाठ से। व्याख्यान तो ऐसे रोज ही हुआ करते हैं।

रमेश—(समर्थन करता हुआ) है तो सचमुच यही बात। पता नहीं, इन नेताओं को...।

[कुछ आहट पाकर चुप हो जाता है और दोनों अन्दर की ओर देखने लगते हैं। किसी को आता न देखकर बद्री हँस पड़ता है।]

बद्री—(हँसी रोककर) चोर का दिल ही कितना, लाला जी। इसी से कहता हूँ, कि जो बात हो, खुलकर कहो। मुझे इन व्याख्यानों से चिढ़ है। इसी से जाता नहीं कभी सुनने इन्हें। जाऊँगा, तो कुछ असर भी नहीं पड़ सकता मुझ पर।

रमेश—चिकने घड़े जो ठहरे आप। क्या असर हो सकता है ऐसों पर?

बद्री—तुम रहे बस वही। मैं जानता हूँ कि ऐसे व्याख्यानों से लाभ नहीं होगा कुछ। इसलिए मेरी बात मानो। चलें तो चलो इनके साथ; पर दस मिनट बाद खिसक चलेंगे। वहाँ से और देखेंगे सिनेमा। बोलो, हो तैयार?

रमेश—यार, जी तो मेरा भी यही चाहता है; पर आज रहने दो। उन्होंने संग्रह छपवाने का वादा किया है सिर्फ इस शर्त पर कि मैं उनके साथ व्याख्यान सुनने चला चलूँ। (कुछ रुककर) पर इससे उनका मतलब क्या है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बद्री—शायद उन्होंने सोचा होगा कि नेहरूजी का व्याख्यान सुनकर तुम्हारे विचार कुछ बदल जाएँ।

रमेश—तब तो अवश्य जाऊँगा व्याख्यान सुनने। देखूँ, नेहरूजी के व्याख्यान में कितनी शक्ति है!

बद्री—अच्छा बतला सकते हो कि मास्टर साहब क्यों नहीं जाते कभी कोई व्याख्यान सुनने?

रमेश—मैंने इस सम्बन्ध में उनसे कभी चर्चा नहीं की। (हँसकर) वे भी शायद तुम्हारी तरह समझते होंगे कि ये सब बेकार की बातें हैं; कुछ होने-हवाने का नहीं इनसे। क्यों?

[माधव का प्रवेश। इस बार वह रेशमी सूट पहने है। जेब में रूमाल है, कलम है और कलाई पर घड़ी। हाथ में एक नोट-बुक भी है।

बद्री—इन्हें मालूम हो सकती है यह बात। क्यों माधव, बतला सकते हो कि मास्टर साहब किसी नेता का व्याख्यान सुनने क्यों नहीं जाते?

माधव—(गम्भीर होकर) निश्चित रूप से तो कुछ कह नहीं सकता; पर मेरा अनुमान यह है कि ऐसे व्याख्यानों का उद्देश्य जिन भावों को जगाना है वे यों ही उनके मस्तिष्क को सदा अशान्त करते रहते हैं।

बद्री—कुछ जँची नहीं यह बात। पहनते वे बराबर ठाठ से सूट-बूट हैं.....।

[सहसा कुछ आहट सुनकर चुप हो जाता है। तीनों भीतर की ओर देखने लगते हैं।]

बद्री—(पुनः धीमे स्वर से) आते होंगे मास्टर साहब। हटाओ इन बातों को।

माधव—(निर्भीकता से) तो इसमें डरने की क्या बात है? मैं आते ही उनसे इसका कारण पूछूँगा।

बद्री—मेरा नाम मत ले देना कहीं। अखबार देखा है तुमने? है कोई खास बात?

माधव—यही दिखाने तो लाया था। नेहरूजी के एक व्याख्यान ने लड़कियों में कितनी जागर्ति पैदा कर दी है, जरा पढ़ो तो इसे।

[पढ़ने की जगह बताकर अखबार बद्री की ओर बढ़ा देता है। रमेश भी उठकर उसके पास आ जाता है और मन ही मन पढ़ने लगता है।]

बद्री—(पढ़ता हुआ) आश्चर्य है यार! शृङ्गार की सभी विदेशी चीजों को त्यागने का शपथपूर्वक निश्चय! क्या निभ सकेगा इनसे?

माधव—(हँसकर) निभेगा नहीं तो क्या कोरा आवेश समझते हो तुम इसे? भाई जान! सुख-सेज पर पड़े-पड़े यदि किसी देश ने स्वतन्त्रता पा ली होती तो पृथ्वी को रक्त से बार-बार सींचने की आवश्यकता कभी न पड़ती।

बद्री—गजब कर दिया इन लड़कियों ने।

माधव—यही तो कहता हूँ कि जिस देश की सुकुमार [illegible] इतना त्याग कर रही हों, उस देश के हम युवक यदि उनसे [illegible] रहें, उनके आदर्श से भी शिक्षा न लें, तो हमारे लिए बस...।

रमेश—(बद्री की ओर सङ्केत करता हुआ मार्मिक मुस्कराकर) परन्तु आपको शायद मालूम नहीं कि इनमें बहुत [illegible] लड़के ऐसे भी हैं जिनका इस बात का दावा है कि नेहरूजी के व्याख्यान का जरा भी असर उन पर नहीं पड़ सकता।

बद्री—मुझ पर व्यंग्य कर रहे हो? तुमने मुझे सिनेमा का शौकीन भर समझा है?

रमेश—मैंने तो सिर्फ तुम्हारी बात दोहराई है।

बद्री—(शान्त स्वर में) वही तो कह रहा हूँ। मैं [illegible] में चार-पाँच 'शो' जरूर देखता हूँ, पर आज से मेरा निश्चय कि सिनेमा देखना बिल्कुल बन्द कर दूँगा। माधव! तुम [illegible] रहना। देश के स्वतन्त्र होने पर अब हम-तुम सब साथ सिनेमा देखने चलेंगे।

[रमेश और माधव सहसा सकपका जाते हैं। बद्री उनकी ओर देखकर जोर से हँस पड़ता है। माधव क्षण भर बाद सावधान होकर, बद्री का हाथ अपने दोनों हाथों में लेकर झकझोर देता है।]

माधव—(गद्गद कण्ठ से) तुम्हारे इस निश्चय के लिए मेरी हार्दिक बधाई। ईश्वर तुम्हें शक्ति दे कि तुम इस निश्चय पर दृढ़ रह सको। (रमेश से उसका हाथ पकड़कर) तुम गम्भीर क्यों हो गए? इनके हृदय में इस सद्विचार के उत्पन्न होने का कारण तुम्हीं हो। तुम्हें तो प्रसन्न होना चाहिए।

[रमेश कोई उत्तर नहीं देता। एक बार बद्री की ओर देखकर सिर नीचा कर लेता है। विजय का कैलाश के साथ प्रवेश। मास्टर साहब के हाथ में एक तश्तरी में सौंफ और इलायची है।]

विजय—(मुस्कराकर, कैलाश की ओर सङ्केत करता हुआ) इन्होंने तो पान खाए हैं; पर मैं अपने हाथ से तुम लोगों को पान देना उचित नहीं समझता। (सब मुस्कराने लगते हैं) इसलिए यह ले लो।

[बारी-बारी से सबकी ओर तश्तरी बढ़ाई जाती है। युवक सौंफ-इलायची लेकर हाथ जोड़ते हैं।]

कैलाश—(आराम से अपनी कुर्सी पर बैठता हुआ) क्या सलाह हो रही है?

माधव—(हर्षावेश से) बड़े हर्ष की बात है साहब, लोग देश की जागर्ति को लेकर बात कर रहे थे। कुछ प्रसङ्ग आ गया कि इन्होंने आज से उस समय तक सिनेमा देखने का प्रण कर लिया है जब तक भारत स्वतन्त्र न हो जाए।

कैलाश—(बद्री की पीठ थपथपाकर) यह तो बड़े हर्ष का विषय है। दूसरे युवकों को इससे शिक्षा लेनी चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[बद्री एक बार ससङ्कोच अध्यापक, कैलाश और रमेश की ओर देखकर दृष्टि नीची कर लेता है। रमेश का सिर भी झुका हुआ है। कभी-कभी वह बद्री की ओर देख लेता है।]

विजय—(बद्री के पास आकर उसका हाथ अपने हाथ में लेकर) जानते हो मैं कभी राष्ट्रीय व्याख्यान सुनने क्यों नहीं जाता ?

बद्री—(माधव की ओर देखकर धीरे से) जी, आज हम लोग आपसे यह पूछने ही वाले थे।

विजय—मैं स्वयं ही तुम्हें बतलाए देता हूँ। मैं जानता हूँ कि इन व्याख्यानदाताओं को क्या कहना है। शब्द और कहने का ढङ्ग सब का अलग-अलग है; सन्देश सबका सीधा-सादा है कि बहुत सो चुके, अब जागो और देश के प्रति अपने कर्तव्य का पालन करो। (कैलाश से) क्यों साहब, है न ठीक यह ?

कैलाश—हाँ, सार सबके व्याख्यानों का यही है।

विजय—सन्देश तो मैंने पा लिया है, परन्तु अभी तक यह निश्चय नहीं कर पाया कि अनेक विवशताओं से जकड़े रहने पर मैं किस प्रकार अपना कर्तव्य निभा सकूँगा। यह मेरी दुर्बलता है और मैं इससे परिचित हूँ।

कैलाश—परन्तु कठिनाइयाँ और विवशताएँ तो सबके साथ हैं। सब यही सोचने लगते तो इतने स्वदेशभक्त कैसे सामने आते ?

विजय—ठीक है; मैंने अभी कहा कि यह मेरी दुर्बलता है। अधिकांश देशभक्तों की आवाज देश के पीड़ितों की नहीं, उनके हिमायतियों की है। जिन दुःखों और कष्टों की चर्चा करके ये लोग देश में जागर्ति फैलाना चाहते हैं, वे इन्होंने कभी सुने नहीं, सहे नहीं; केवल सुने हैं या देखे हैं। इसी कारण विचार होते हुए भी इनकी आवाज अभी तक बहुत ज्यादा प्रभावशालिनी नहीं हो सकी है।

माधव—जागर्ति तो देश में काफी है; जहाँ-जहाँ नेता जाते हैं, कितने उत्साह से उनका स्वागत होता है !

विजय—देश के एक प्रतिशत लोगों में भी तो जागर्ति नहीं है अभी। और इसका एकमात्र कारण यह है कि अभी पीड़ितों ने सिर नहीं उठाया है। जिस दिन वे लोग दासता के बन्धन से मुक्ति पाना चाहेंगे सारा देश अनायास ही स्वतन्त्र हो जाएगा, निश्चित समझिए।

[विजय का स्वर ओजमय हो जाता है; सब उसकी ओर अकटक निहारने लगते हैं; रमेश की आँखें एक बार चमक जाती हैं।]

विजय—(पुनः कुछ शान्त होकर) और मैं चाहता हूँ कि अभी भी व्याख्यान सुनने से पहले मैं देश के पीड़ितों और भुक्त-भोगियों की श्रेणी में पहुँच जाऊँ। यों पीड़ित तो हम सभी हैं; हमारी पीड़ा झूठी है और वह मर्मस्थल की 'आह' निकालने में समर्थ नहीं।

कैलाश—(हँसकर) कष्ट मोल लेने जाने की क्या जरूरत है !

विजय—कष्ट तो आ सकते हैं, पर वह अद्भुत सहनशीलता कैसे आएगी जो पाप का घड़ा भरने की आशा में हँसते-हँसते सब कुछ सहने की क्षमता प्रदान करती है।

कैलाश—(एक लम्बी साँस लेकर) हमारे भाग्यवाद ने सिर्फ कष्ट सहना ही तो सिखलाया है हमें।

विजय—पर अभी मैं दुर्बल हूँ, कष्ट सह नहीं पाता। इसी लिए पीछे हूँ; कहीं आने-जाने की इच्छा नहीं होती। मेरी समझ में देश के नवयुवकों में इस प्रकार की सहनशीलता का बीज बोने के लिए सबसे सुन्दर उपाय वैसा ही निश्चय है जैसा अभी बद्री ने किया है।

[सभी की दृष्टि एक साथ बद्री पर पड़ती है। बद्री एक बार अकचकाकर विजय के हाथ जोड़ देता है। कैलाश रमेश ओर देखता है। रमेश की आँखें नीची हो जाती हैं।]

बद्री—(विजय से नम्रतापूर्वक) आप तो जरा-सी बात को न जाने कहाँ की कहाँ लिए जाते हैं !

विजय—नहीं, बद्री। सिनेमा-जैसे मनोरञ्जन के सर्वसुलभ साधन से वञ्चित रहने पर प्रतिदिन दासता का काँटा चुभकर तुम्हारे मर्मस्थल को पीड़ित करता रहेगा और तब एक दिन तुम अपने को स्वतः पीड़ितों की श्रेणी में खड़ा पाओगे। इस प्रकार के सङ्कल्प करके और उन्हें निभाकर ही देश के प्रति तुम ऋण से उऋण हो सकोगे।

माधव—मास्टर साहब, आज से मैंने सूट-बूट को तिलाञ्जलि दी; देशी वेश-भूषा और रहन-सहन ही मैं अपनाऊँगा।

[विजय उसकी बात सुनकर चौंक उठता है। 'शाबाश' कैलाश के मुँह से स्वतः निकल जाता है।]

विजय—(कैलाश से) तुम इसे कोरा आवेश तो नहीं समझते इन युवकों का ?

कैलाश—मैं जानता हूँ कि महान् सङ्कल्पों का जन्म आवेश में ही होता है। पर सारा युवकसमाज ऐसे सङ्कल्प कर सकेगा ?

विजय—नहीं, पर इनके पीछे तो चल ही सकता है। आवेश की ओजमयी शक्ति उन निर्जीवों को भी सजीव कर सकती है।

रमेश—(शृङ्गार-रस की कविताओं की कापी फाड़ता हुआ कैलाश की ओर देखकर) अब इसे छपवाने की आवश्यकता नहीं है।

बद्री—अरे, यह क्या किया तुमने ?

रमेश—(खड़ा होता हुआ) चलिए व्याख्यान सुनने। देर हो गई तो जगह न मिलेगी।

कैलाश—(विजय से) भाई, आज तो तुम्हें भी चलना चाहिए।

विजय—(गर्व से एक बार तीनों शिष्यों की ओर देखकर आँखों में हर्ष के आँ भरे) अवश्य चलूँगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरी अलमोड़ा-यात्रा

श्री सन्तराम, बी० ए०

जिस प्रकार कालान्तर के साथ मानव-शरीर की अवस्था बदलती रहती है—बचपन से यौवन और यौवन से वार्धक्य प्रकट हो जाता है, उसी प्रकार अनुभव की अपक्वता और परिपक्वता के अनुसार मनुष्य के विचार भी परिवर्तित होते रहते हैं। मैं कालेज में फारसी पढ़ा करता था। आर्यसमाज के सत्सङ्ग से ज्ञान हुआ कि राष्ट्रीय सङ्गठन के लिए प्रत्येक भारतवासी को, विशेषतः प्रत्येक हिन्दू को, आर्यभाषा हिन्दी अवश्य सीखनी चाहिए; जो आर्यभाषा नहीं जानता, वह "आर्य" कहलाने का अधिकारी कैसे हो सकता है! बस, हिन्दी सीखना आरम्भ किया। धीरे-धीरे यह हिन्दी-प्रेम इतना बढ़ा कि बी० ए० पास करने के बाद मैंने उर्दू का सर्वथा बहिष्कार कर दिया और सन् १९१४ में लाहौर से "उषा" नाम की मासिक पत्रिका निकाली। उस समय पञ्जाब में हिन्दी की बहुत दुर्दशा थी। पाठकों का बिलकुल अभाव-सा था। फलतः मुझे घाटा उठाना पड़ा और पत्रिका बन्द हो गई। पर इससे मेरा उत्साह भङ्ग नहीं हुआ। मैं दूसरे उपायों से हिन्दी की सेवा में लगा रहा। मैंने जालन्धर नगर से निकलनेवाली "भारती" का कोई दो वर्ष तक सम्पादन किया और हिन्दी में कई छोटी-मोटी पुस्तकें लिखीं और अनूदित कीं। वह मेरा यौवन-काल था। उन दिनों हिन्दी का प्रेम भूत की भाँति मेरे सिर पर सवार था। मैं इसे एक बड़ी राष्ट्रीय सेवा समझता था।

परन्तु एकाएक मेरे विचारों में परिवर्तन हो गया। मैंने देखा, हिन्दू-जाति दिन पर दिन इस्लाम और ईसाई मत का कौर बनती जा रही है। मेरा हिन्दी-प्रेम उसे मृत्यु-मुख में पतित होने से रोकने में असमर्थ है।

मैंने यह भी देखा कि हिन्दू रहने के लिए हिन्दी बोलना या हिन्दी पढ़ना आवश्यक नहीं। केवल हिन्दी ही आर्यभाषा नहीं, बँगला, मराठी, गुजराती और पञ्जाबी भी आर्यभाषाएँ ही हैं। मराठी या बँगला बोलनेवाला हिन्दू संयुक्त प्रान्त के हिन्दीभाषी हिन्दू से कुछ कम हिन्दू नहीं। बस, मैं हिन्दूजाति के ह्रास के कारणों पर विचार करने लगा। तब मुझे अनुभव हुआ कि ऊँच-नीच-मूलक जाति-भेद जब तक है तब तक हिन्दुओं का सामाजिक ही नहीं, आर्थिक और राजनीतिक उत्थान भी असम्भव है; जातिभेद के कारण ही हिन्दुओं का स्वराज्य नष्ट हुआ था और इसको नष्ट किए बिना उसका पुनः प्राप्त होना कठिन है। इस अनुभव के होते ही मेरी कर्मधारा बदल गई। तब से मैं जातिभेद के उच्छेद में लगा हूँ, हिन्दू-मात्र में गुण-कर्म-स्वभावानुसार रोटी-बेटी व्यवहार का प्रचार करता हूँ, जिससे यह प्राचीन आर्यजाति सङ्गठित होकर अपने अतीत गौरव को पुनः प्राप्त कर सके।

इसी सिलसिले में मुझे गत ३ फरवरी १९४६ को [illegible] से अलमोड़ा जाना पड़ा था। हमारे जात-पाँत-तोड़क मण्ड[illegible] के सहायक मन्त्री श्रीयुत इन्द्रसिंह का अन्तर्जातीय विवाह अलमोड़ा के जागीरदार और म्युनिसिपल बोर्ड के प्रेसिडेंट रायबहादुर हरिप्रसाद टम्टा की भतीजी कुमारी विद्यावती के साथ निश्चित हुआ था। मैं और श्री० इन्द्रसिंह ३ फरवरी की रात को लाहौर से चले। रास्ते में कुछ समय [illegible] ठहरना पड़ा। यहाँ गाड़ी बदलती है। यहाँ ४ फरवरी की रात को गाड़ी में सवार हो, सवेरे तड़के हम हलद्वानी जा पहुँचे। यद्यपि रेल का अन्तिम स्टेशन काठ गोदाम है, पर हमने उससे एक स्टेशन पहले, हलद्वानी में, ही उतर जाना उचित समझा। हलद्वानी और काठ गोदाम दोनों जगहों से अलमोड़ा के लिए मोटर मिलता है। प्रत्येक मुसाफिर का सामान तोला जाता है और फालतू बोझ का किराया अलग देना पड़ता है। हलद्वानी से अलमोड़ा ८५ मील है और एक सवारी का किराया ४।=) लिया जाता है। इसके अतिरिक्त अलमोड़ा नजर-समिति ।।) प्रति सवारी पोलटेक्स भी लेती है।

अपना सामान तुलवा और टिकट लेकर हम मोटर में सवार हुए। हमारे साथ कुछ सेवा-विभाग के युवक भी उसी मोटर में बैठे थे। मुझे मोटर में सवार होकर पर्वत पर जाना पसन्द नहीं। टेढ़े मेढ़े पहाड़ी मार्ग से जब मोटर पेट्रोल की दुर्गन्ध छोड़ता हुआ दौड़ता है तो मुझे मतली होने लगती है। काश्मीर जाते हुए मुझे ऐसा ही हुआ था। इसलिए अलमोड़ा के दृश्य देखने का चाव होते हुए भी मैं वहाँ नहीं जाना चाहता था। श्री० इन्द्रसिंह और अपने मित्र रायबहादुर हरिप्रसादजी के विशेष आग्रह पर ही मैंने जाना स्वीकार किया था। पर मुझे मतली होने का मेरा भय झूठ निकला। मार्ग काश्मीर के मार्ग के बराबर टेढ़ा-मेढ़ा न था। इसलिए मुझे किसी प्रकार का कष्ट नहीं हुआ। २६ मील चलने पर भुवाली नाम का स्थान मिला। यह सागर-तल से कोई तीन हजार फुट ऊँचा है। यहाँ राजयक्ष्मा के रोगियों के लिए एक बहुत अच्छा सेनेटोरियम अर्थात् आरोग्य-भवन है। भारत के दूर-दूर के स्थानों से [illegible] क्षय के रोगी आते हैं। यहाँ कई सुन्दर फलोद्यान हैं। [illegible] से १४ मील आगे जाने पर "गरम पानी" नामक स्थान मिलता है। यहाँ थोड़ी-सी दूकानें हैं। यात्री जलपान के लिए यहाँ [illegible] समय ठहर जाते हैं। यहाँ पानी का एक बहुत अच्छा [illegible] है। इसका जल गर्मी में ठण्ढा और शीतकाल में गरम [illegible] जाता है। यहाँ हमने अच्छी सिंकी हुई गरमागरम पूरी-[illegible] का खूब आनन्द लिया। शाक-भाजी और दही बहुत [illegible] था। भोजन करके मन तृप्त हो गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

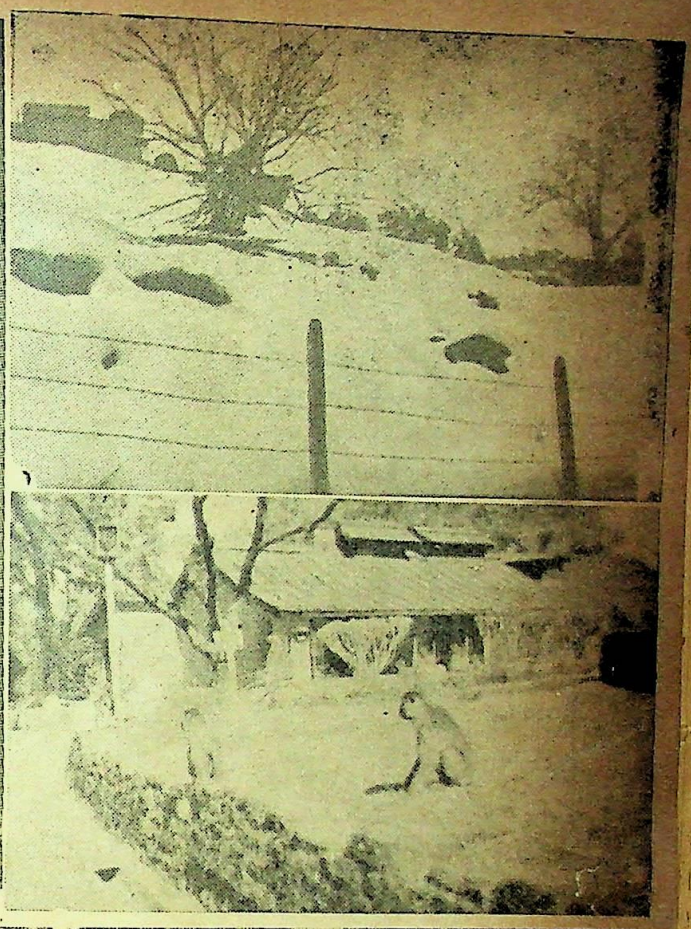

श्री सन्तराम, बी० ए०

नीचे—
अलमोड़े का एक नयनाभिराम दृश्य।

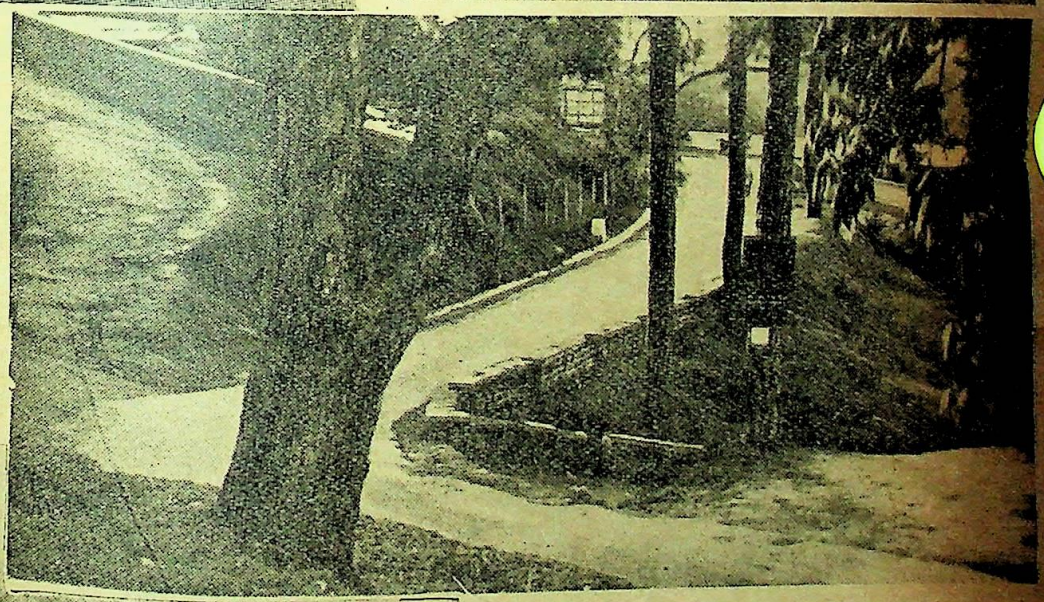

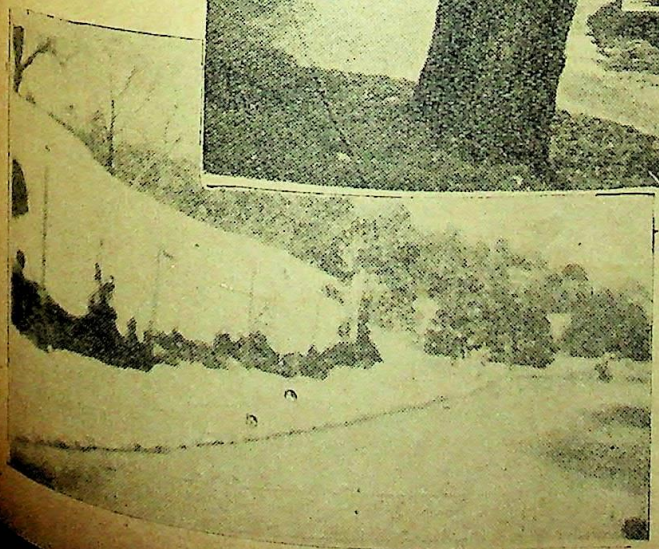

ऊपर से नीचे—
(१) अलमोड़े का एक दृश्य।
(२) अलमोड़े का एक बँगला—सामने बन्दर बैठे हैं।
(३) रानीखेत की एक पहाड़ी सड़क।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिल्पकार महिला विद्यालय की कुछ छात्राएँ और अध्यापिकाएँ।

रायबहादुर हरिप्रसाद टम्टा।

श्री इन्द्रसिंह और कुमारी विद्यावती, जिनका विवाह जात-पाँत तोड़कर अलमोड़ा में हुआ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खा-पीकर हम फिर मोटर में सवार हुए। संयोग से हमारे साथी सैनिक युवक सुशिक्षित और हिन्दी-प्रेमी थे। उनमें से एक 'सरस्वती' के पाठक भी थे। उन्होंने उसमें मेरे कई लेख पढ़े थे। जब उन्हें मेरा नाम मालूम हुआ तो वे बड़ा प्रेम दरशाने लगे। बातचीत करने पर उन लोगों के उदार विचार देख मुझे आश्चर्य एवं प्रसन्नता दोनों हुए। आश्चर्य इसलिए कि अलमोड़ा-गढ़वाल जैसे पिछड़े हुए पहाड़ी प्रदेश के जोशी ब्राह्मण-युवक जातिभेद को देश के लिए घातक बता रहे थे और इस बुराई को दूर करने के लिए मेरे साथ मिलकर काम करने को तैयार थे। मेरी प्रसन्नता का कारण यह था कि प्रवास ने उनको उदार-चरित बना दिया था और वे हिन्दुओं के साथ खान-पान करने को अपना पतन नहीं समझते थे। उनमें से एक सज्जन श्री जोशी सेना में किसी अच्छे पद पर थे। वे कह रहे थे कि ब्राह्मणों ने अछूतपन उत्पन्न करके पाप किया है। इसलिए मुझे अपने को ब्राह्मण कहते लज्जा होती है। इसके प्रायश्चित्त-स्वरूप मैं अब खुल्लम-खुल्ला सबके साथ खान-पान करता हूँ। हमारे साथ उस मोटर में तीन ईसाई लड़कियाँ भी बैठी थीं। वे अलमोड़ा में किसी मिशनरी स्कूल या कालेज में पढ़ती थीं। जोशी महाशय की बात सुनकर उनमें से एक बोल उठी—"ये बातें आप यहाँ मोटर में ही कह रहे हैं या घर पर जाकर अपने परिवार में भी कह सकेंगे? मैं जानती हूँ, हिन्दू युवक बाहर तो उदारता की बड़ी डींग हाँका करते हैं पर घर में वैसे ही कट्टरपन्थी बन जाते हैं।" जोशी महाशय को लड़की की बात काट गई। उन्होंने उत्तर दिया—"आपका कथन ठीक ही है। आपका सन्देह तभी दूर हो सकता है जब आप मेरे साथ मेरे मकान पर चलें और मेरा व्यवहार देखें। मेरे कहने मात्र से आपको विश्वास होना कठिन है। आप सच्ची हैं। हिन्दुओं में ऐसे ढोंगियों की भी कमी नहीं। पर अब युग बदल रहा है। देश-विदेश के पर्यटन और सैनिक जीवन ने हमारा मस्तिष्क ही बदल डाला है।"

इस प्रकार बातचीत में यात्रा कुछ मालूम ही नहीं हुई। ज्यों-ज्यों मोटर पहाड़ पर चढ़ रहा था, त्यों-त्यों चारों ओर चील के पेड़ों का वन खड़ा देख पड़ता था। वर्षा न होने से पर्वत सूखा था, धूल-सी उड़ती दीखती थी। हरियाली का अभाव था। घास-पात के सूख जाने से पर्वत नङ्गे खड़े थे। "गरम पानी" से १६ मील आगे जाने पर "रानीखेत" का पड़ाव मिला। यह एक अच्छा सुरम्य स्थान है। इसकी उँचाई ५००० फुट है। यहाँ छोटा-सा बाजार और होटल है। जन संख्या ८ सहस्र है। ग्रीष्मकाल में मैदानों के लोग यहाँ आकर रहते हैं। स्वास्थ्य के लिए अच्छा ठण्ढा स्थान है। यहाँ चौबटिया नामक सुन्दर स्थान में सरकारी फलोद्यान है। यहाँ सेब और चेरी प्रसिद्ध हैं।

रानीखेत में मोटर कुछ मिनिट ठहरा और फिर आगे चल पड़ा। रानीखेत से अलमोड़ा २९ मील है। सायङ्काल कोई चार बजे हम अलमोड़ा पहुँच गए। मोटर के अड्डे पर रायबहादुर हरिप्रसाद जी और उनके आत्मीय जन हमारे स्वागत के लिए आए हुए थे। उनके साथ हम रायबहादुर के "हरि-निवास" पर चले गए।

"हरि-निवास" मोटर की सड़क के ऊपर की ओर पर्वत की पीठ पर बना है। वहाँ खड़े होकर इर्द-गिर्द के पर्वतों का दृश्य बड़ा सुन्दर देख पड़ता है। यहाँ सूर्य की धूप खूब आती है। सड़क से ऊपर जाने पर पहले अतिथि-भवन है। यहाँ पर्वत को काटकर एक अच्छा मैदान बनाया गया है। अतिथि-भवन से कुछ ऊपर जाने पर शिल्पाकार महिला विद्यालय है। यहाँ शिल्पकार स्त्रियों को छोटे-छोटे शिल्प सिखाने का प्रबन्ध है। इस विद्यालय की सञ्चालिका और प्रधान शिक्षिका कुमारी और अब श्रीमती विद्यावती हैं। विद्यालय में कला-कौशल सीखकर निर्धन स्त्रियाँ अपनी रोटी कमा खाती हैं। विद्यालय उनको सूत, ऊन आदि देकर उनसे वस्तुएँ बनवाता है और उनको बेचकर उनसे जो लाभ होता है वह उन्हीं बनाने-वाली स्त्रियों को दे देता है। मैंने यहाँ हाथ से बनाई हुई ऊन, सूत और चमड़े की अनेक सुन्दर वस्तुएँ देखीं। सेही के काँटों की बनाई हुई एक छोटी-सी डिबिया बड़ी सुन्दर थी। विद्यालय-भवन के कुछ ऊपर रायबहादुर और उनके बन्धुओं के रहने के मकान हैं। बैठक के बाहर काफी खुला मैदान है। पर्वत पर ऐसा समतल खुला स्थान एक दुर्लभ वस्तु होती है। ६ फरवरी को सायङ्काल रा० ब० हरिप्रसादजी ने अपनी भतीजी के विवाह के उपलक्ष में एक बड़ी पार्टी दी। अतिथियों के लिए इसी मैदान में बैठने का प्रबन्ध किया गया। प्रीतिभोज में नगर के सभी हिन्दू, मुसलमान और ईसाई गण्य-मान्य सज्जनों, अधिकारियों और व्यापारियों के अतिरिक्त अलमोड़ा के डिपटी कमिश्नर श्री० अवल्डसन और उनकी धर्मपत्नी भी सम्मिलित हुए। इनमें कांग्रेसी और गैर-कांग्रेसी सभी तरह के लोग थे।

वसन्तपञ्चमी का दिन था और फरवरी की ६ तारीख। रात को श्री० इन्द्रसिंह और सुश्री विद्यावती टम्टा का विवाह आर्य मैरिज वैलिडेशनएक्ट के अनुसार सम्पन्न हुआ। यह विवाह अन्तर्जातीय के अतिरिक्त अन्तःप्रान्तीय भी था। संस्कार वैदिक रीति से हुआ।

अलमोड़ा कोसी और विश्वनाथ नाम की दो नदियों के बीच बसा है। अनेक पहाड़ी नगरों की भाँति यहाँ भी एक दूसरे के ऊपर दो बाजार बने हुए हैं। बाजार खासे लम्बे हैं। अलमोड़ा जिले की राजधानी है। समुद्र तल से यह ५२०० फुट की उँचाई पर अवस्थित है। जन-संख्या १५००० है। रानीखेत इससे अधिक ऊँचा और ठण्ढा है। शीतकाल में अलमोड़ा में तुषारपात होता है। रायबहादुर साहब के जिस मकान में मैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ठहरा था उसके आँगन में एक बड़ा पेड़ था। उस पर मधु-मक्खियों का छत्ता लगा था। मुझे यह देख बड़ा कौतूहल हुआ कि शीतकाल में हिम से बचने के लिए मक्खियों ने उसे गारे से पोत रक्खा था। बाहर से देखने पर वह ऐसा प्रतीत होता था, मानों किसी ने मिट्टी का कच्चा बरतन पेड़ पर बाँध रक्खा हो। ऐसी बात मैंने मैदानों में कभी नहीं देखी। प्रकृति प्राणियों को उनकी रक्षा के कैसे-कैसे उपाय सिखा देती है।

पहाड़ में देखने के लिए कोई चिड़ियाँ-घर या अद्भुतालय नहीं रहते। लोग वहाँ मकान और कारखाने देखने भी नहीं जाते। वहाँ के दर्शनीय पदार्थ तो प्राकृतिक दृश्य ही होते हैं। जिन्हें प्रकृति पर प्रेम है वे ही पर्वत का आनन्द ले सकते हैं। अलमोड़ा अच्छा सुन्दर दृश्य उपस्थित करता है। सारा पर्वत मीलों तक चीड़ के वन से भरा है। "समता"-सम्पादक श्री लक्ष्मीप्रसाद टम्टा को साथ ले मैं भ्रमणार्थ निकला। ऊपर के बाजार में से होते हुए हम अलमोड़ा नगर से कोई तीन मील ऊपर चले गए। वहाँ हमें राजयक्ष्मा के रोगियों के लिए बना हुआ एक छोटा-सा, पर बहुत सुन्दर आरोग्य-भवन मिला। यह चीड़ के घने वन के मध्य में स्थित है। इसकी प्रधान चिकित्सिका एक अँगरेज डाक्टरनी है। उससे मिलकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। बड़ी मधुर-भाषिणी, मिलनसार और परदुःख-कातर देवी हैं। ईसाई प्रचारकों का सेवा-भाव सचमुच अनुकरणीय है। पूछने पर मालूम हुआ कि यहाँ रोगी से चिकित्सा और भोजनाच्छादन का सारा खर्च केवल ३५) मासिक लिया जाता है। यह धन उस धन के सामने कुछ भी नहीं जो मुबाली जैसे आरोग्य-भवन अपने रोगियों से लेते हैं। इस ईसाई आरोग्य-भवन में एक्सरे फोटो और सर्जरी का भी अच्छा प्रबन्ध है।

नगर से नीचे की ओर वह स्थान है जहाँ कभी प्रसिद्ध नृत्याचार्य उदयशङ्कर का सांस्कृतिक केन्द्र था। जगह अच्छी खुली थी। दृश्य भी सुरम्य था। पर अब उदयशङ्करजी अलमोड़ा में अपना केन्द्र बन्द करके कहीं दूसरे स्थान पर चले गए थे। इसलिए हम उनके खाली पड़े मकान ही देख सके।

इसके निकट ही, कुछ और नीचे की ओर पातालदेवी नामक स्थान है। वहाँ एक बङ्गाली देवी, माता आनन्दमयी, का मठ है। सुना है, इधर माताजी के बहुत-से, स्त्री-पुरुष भक्त हैं। वे उन्हें अपना सर्वस्व तक दान कर देते हैं। माताजी आजकल वहाँ नहीं थीं। वे कहीं डेरा दून की ओर गई थीं। वहाँ कुछ अनाथ बङ्गाली बालिकाएँ "माँ, माँ" करके बाजे के साथ कीर्तन कर रही थीं। वहाँ एक वृद्ध बङ्गाली साधु मिले। वे अपने को महर्षि रमण के मतानुयायी बताते थे। पर माता आनन्दमयी की भी भूरि-भूरि प्रशंसा करते थे। पूछने पर मालूम हुआ कि माताजी केवल प्रभु-कीर्तन और भक्ति का उपदेश करती हैं और यथासम्भव दीन-दुखियों की सहायता करती हैं। पर खेद है, मुझे उनके दर्शन न हो सके।

अलमोड़ा के वनों में बन्दर बहुत हैं। वे कभी-कभी उपद्रव भी करते हैं। युद्ध के दिनों की बात है। [illegible] में अमेरिकन सिपाहियों का एक विश्राम-शिविर बना था। सिपाही लोग बारी-बारी से वहाँ कुछ दिन की छुट्टी काटने आया करते थे। एक दिन कुछ सिपाही शिकार करने निकले। जब वे वन में से होकर जा रहे थे तो बहुत-से बड़े-बड़े बन्दर उनके पीछे लग गए। वे कोलाहल के साथ चिड़चिड़ाते हुए वृक्ष की एक शाखा से झूलकर दूसरी शाखा पर पहुँच रहे थे। शिकारियों ने अनुभव किया कि इन बन्दरों की चिड़चिड़ाहट से शिकार को हमारे आने का पता लग जाएगा और वह भाग जाएगा।

शिकारियों ने सोचा कि यदि इनमें से एक बन्दर को [illegible] का निशाना बना दिया जाएगा तो ये सब भाग जाएँगे और हमारे शिकार में कोई बाधा न पड़ेगी। उन अमेरिकन सैनिकों को शिकार खिलाने के लिए साथ कुछ भारतीय पथ-प्रदर्शक भी थे। उन पथ-प्रदर्शकों ने सैनिकों को बन्दर को मारने से मना किया। परन्तु वे नहीं माने। एक सैनिक ने निशाना बाँधकर एक बड़े-से बन्दर पर गोली चला दी। बन्दर वृक्ष पर से गिरकर नीचे गिर पड़ा। इसके साथ ही तुरन्त समूचे वन में एक रहस्यमय निस्तब्धता छा गई। सैनिकों ने देखा कि भूरे बन्दर जल्दी-जल्दी परन्तु चुपचाप पेड़ों पर झूलते हुए उनसे परे हटते जा रहे हैं। किन्तु वानर-कुल के चार बड़े-बड़े जन्तु शीघ्रता से साथ पेड़ों पर से उतरकर अपने मृत साथी की लोथ के निकट पहुँचे। उनमें से किसी ने उसका सिर पकड़ा, किसी ने [illegible] और किसी ने बाँह। वे उसे शीघ्रता से उठाकर ले [illegible] अपने किसी साथी की इस प्रकार मृत्यु से जिस प्रकार मनुष्य खिन्न और दुःखी होते हैं, वैसे ही वे वानर भी शिकारियों पर एक विचित्र एवं खिन्न दृष्टि डाल रहे थे।

दूसरे दिन तीसरे पहर जब वे सिपाही फिर उसी मार्ग से [illegible] रहे थे, उन्होंने देखा तीन बन्दर एक पेड़ में उस स्थान के ऊपर बैठे हैं जहाँ वह वृद्ध बन्दर मारा गया था। जब बन्दरों ने सैनिकों को आते देखा तो वे चीखने-चिल्लाने लगे मानो वे अपने कुल के दूसरे बन्दरों को बुला रहे थे। सिपाही ने उनके निकट पहुँचकर बन्दूक का निशाना [illegible] और एक घुटना झुकाकर गोली चलाने लगा। इतने में वन भूरे बन्दरों से एकदम भर गया। वे प्रत्येक झाड़ी प्रत्येक पेड़ से उस सैनिक पर गिरने, उस पर झपटने और [illegible] और उसकी ओर दौड़ने लगे। पहले बन्दरों के धक्के से सैनिक को भूमि पर गिरा दिया और दूसरे उसकी हत्या के लिए दौड़े। यदि दूसरे सैनिक अपनी बन्दूकों और [illegible] से मारकर बन्दरों को न हटा देते तो वह उन बन्दरों से कभी जीता न बचता। इन बन्दरों ने छापा मारने में [illegible] कर दिया था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विमल-दुर्बुद्धि

श्री हनुमन्त बख्शी

[१]

बिस्तर पर बीमार पड़ी हुई विमला न जाने क्या-क्या सोच करती है—विवाह के बाद जब वह दुबारा ससुराल आई तब उसका पति अरुण जेलखाने में था। देश ही जिसके लिए धर्म और प्राण है उसके लिए घर जरूर एक संकुचित क्षेत्र है। पर है तो उसका कल्याण भी देश ही के कल्याण के भीतर। क्या घर घर की सुख-समृद्धि देश की वास्तविक उन्नति नहीं है? घर से उदास और विमुख रहना कहाँ तक उचित है! वे ही प्रशंसा के पात्र हैं जो घर को अँधेरा रखकर मन्दिर में दिया जलाते हैं?

जिस दिन अरुण जेलखाने से छूटा था, उस दिन शहर के प्रतिष्ठित स्त्री पुरुष बड़े उमङ्ग और प्रेम के साथ उसका स्वागत करने के लिए रेलवे स्टेशन गए थे। विमला भी वहाँ गई थी। बड़ी धूम-धाम से अरुण का स्वागत किया गया था। भिन्न-भिन्न रङ्ग की मालाओं से अरुण का शरीर ढँक गया था। अपने पुत्र की यह इज्जत देखकर उसकी माँ का हृदय भर उठा था और पति की इस प्रतिष्ठा को देखकर विमला का मुख लज्जामिश्रित सङ्कोच से लाल हो गया था। उसी समय विमला के गले में भी फूल की एक माला डालते हुए एक स्त्री ने कहा था—बेटी, तू बड़ी भाग्यशालिनी है जो तुझे ऐसा पति मिला।

भाग्यशालिनी? इस पत्नी-जीवन को वह अपना सौभाग्य क्यों न और कुछ? विवाह हुए तीन साल हो गए पर जिस पति को पाकर वह सौभाग्यवती बनी है उसकी पूजा व सेवा का अवसर ही उसे कब दिया गया है? कभी निश्चित होकर घण्टा के लिए भी वे उसके पास नहीं बैठ सके हैं! उनके मुख से दो प्रेम-भरे शब्द भी तो वह नहीं सुन पाई अपने घर के सुख-दुख भलाई-बुराई से उदासीन रहनेवाला देश की कल्याण-कामना में कैसे सतर्क रह सकता है? ऐसा हिसाब जो नहीं लगा सकता वह बड़ी-बड़ी समस्याओं को कैसे हल कर सकता है? विमला ने मन में सोचकर कहा—ये बातें मुझ बे पढ़ी-लिखी औरत की समझ में आ ही सकतीं।

[२]

जिस कमरे में विमला बीमार पड़ी हुई है उसी से लगा हुआ कमरा अरुण की बैठक है। वहाँ शहर के अन्यान्य कार्यकर्ता और स्वयंसेवक आया करते हैं और घण्टों बैठकर भिन्न-भिन्न कार्यक्रम पर बहस किया करते हैं। विमला के कानों में भी वह आवाज पड़ती है और उसका सिर भन्ना जाता है। घण्टों बकबक करते हुए वे लोग थकते भी क्यों नहीं? कहते हैं अरुण के भाषण में शक्ति है और शब्दों में जादू है, लोग सुनकर मन्त्रमुग्ध हो जाते हैं और उसी धाराप्रवाह में बह-से जाते हैं। विमला को तो कभी इसका शतांश भी अनुभव करने का अवसर न मिला। उन जादू-भरे शब्दों को सुनने के लिए वह सदा तरसती ही रह गई।

विमला तङ्ग आकर बोली—"माँ, मेरा बिस्तर इस कमरे से हटा दिया जाए।" और वैसा ही किया गया।

अरुण बाहर जाने की तैयारी में अपने कमरे में कुरता-टोपी पहनने आया। देखा, विमला का बिस्तर गायब! अरे, वह भीतर क्यों भेजी गई? अनिष्ट की आशङ्का से अरुण घबरा गया। माँ को पुकारकर अरुण ने कहा—"माँ, क्या विमला की तबीयत ज्यादा खराब हो गई है?" अरुण की इस घबराहट से भरी हुई आवाज को सुनकर विमला ने मन-ही-मन एक विचित्र आनन्द का अनुभव किया। माँ ने रसोईघर से ही जवाब दिया—"मैं क्या बतलाऊँ, भैया? भीतर जाकर तू ही न देख आ। आज दिनभर तो तड़पती रही है।"

पैरों की आहट पाकर विमला और ओढ़-आढ़कर सो गई। अरुण भीतर गए और उसके मस्तक पर हाथ रखकर देखा कि ज्वर तो साधारण ही है। वे बोले—"अभी ज्वर तो उतरा सा जान पड़ता है।" विमला ने अपने दोनों हाथों से उनके हाथ पकड़ लिए और बोली—"शायद कम हो गया होगा। १०४ था।" अरुण आश्चर्य से बोले—"१०४! कहाँ है थरमामीटर, अभी देखूँ भला।"

विमला ने कहा—"अभी तो ऐसी कोई जरूरत नहीं दीखती।" और उसने फिर उनका हाथ धीरे से पकड़ लिया जिससे वे कहीं जा न सकें।

अरुण भी उस कोमल बन्धन से अपने को मुक्त न कर सके। उन्हें लाचार होकर बिस्तर के सिरहाने बैठ जाना पड़ा।

विमला ने पूछा—"कहीं जा रहे हो?"

"हाँ, एक आवश्यक कार्यक्रम पर स्थानीय कांग्रेस मन्त्री से सलाह लेनी थी।"

"यदि बहुत ही जरूरी न हो तो थोड़ी देर बैठे रहिए। जी घबराता रहता है।"

"व्यर्थ क्यों घबराती हो? शरीर के साथ रोग तो लगा ही रहता है और उसे सहना ही पड़ता है। ईश्वर की कृपा से सब दूर हो जाएगा।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विमला कहना चाहती थी कि आप ही तो मेरे ईश्वर हैं, आप ही की दया चाहिए। पर कह न सकी। वह कुछ सोचकर बोली—"इतना ज्ञान और विश्वास हम बे पढ़ी-लिखी औरतों में कहाँ! लेकिन आपको देखते ही सारा भय दूर हो जाता है।" कहते-कहते विमला का चेहरा लज्जा से लाल हो गया।

अरुण ने हँसते हुए कहा—"सच?"

विमला फिर लज्जा से आँखें नीचे करती हुई बोली—"सच।"

यह मानो विमला का विशेष आग्रह था। अरुण को कुछ देर वहाँ रुकना ही पड़ा।

अरुण सोचने लगे—"विमल, तुम यह क्यों नहीं समझ पाती कि देश की पुकार में भी यह तुम्हारा ही प्रेम तो भरा हुआ है।"

[३]

अब रोज अरुण कुछ देर विमला के सिरहाने बैठकर उसके स्वास्थ्य के बारे में बातचीत करते। विमला उनकी गोद में अपना सिर रखकर और उनके हाथों को अपने हाथ में लेकर आँख मूँद लेती। वह मन-ही-मन अपने ज्वर को मानो पुकार-कर कहती—"ऐ मेरे प्रिय सहचर, न जाने किस शुभ घड़ी में तू मेरे लिए वरदान बनकर आया—तुझे अनेक धन्यवाद!"

जब अरुण ने देखा कि उचित व्यवस्था होने पर भी विमला का ज्वर दूर ही नहीं हो रहा है तो वे झुँझलाकर माँ से बोले—"माँ, डाक्टर आकर क्या देखते हैं और क्या खाक दवाई देते हैं?"

माँ बोली—"मैं भला क्या जानूँ भैया! वे तो कहते थे कि दवाई अच्छी-से-अच्छी दी जा रही है। पर न जाने क्यों फायदा ही नहीं करती। मैं भी तो बड़ी चिन्तित हूँ।"

अरुण ने तब विमला से पूछा—"क्यों? नियमपूर्वक दवाई पीती तो हो?"

पास ही रक्खी हुई घड़ी की ओर सङ्केत करके विमला बोली—"बराबर ठीक समय पर पीती हूँ। मैं तो स्वयं इस बुखार से आजिज आ गई हूँ।"

"अच्छा तो मैं खुद डाक्टर से कहूँगा"—कहकर अरुण चिन्तित भाव से विमला के कुम्हलाए मुख की ओर देखने लगे।

विमला ने कहा—"आप परेशान न हों—मैं बहुत जल्द अच्छी हो जाऊँगी—साधारण ज्वर तो है।"

[४]

विमला ने घड़ी की ओर देखा कि दवाई पीने का समय हो गया है। वह धीरे से बिस्तर पर से उठी; इतमीनान से एक खुराक दवाई गिलास में ढाली और फिर इधर-उधर देखकर चुपचाप खिड़की के बाहर फेंक दी। रोज का उसका यही नियम था। वह कहती—"ज्वर, तू मुझे बहुत ही प्रिय है तभी तो तेरे कारण उन्हें अपना सखी हूँ।"

माँ को पुकारकर विमला ने कहा—"माँ, एक बीड़ा पान तो दे दो। आज की दवाई तो और बहुत कड़ुवी है।"

माँ पान बनाने का सामान लेकर दौड़ी-दौड़ी आईं और विमला को झिड़कती हुई बोली—"पहले पान तैयार था फिर दवाई पीना चाहिए—नहीं तो किसी वक्त उलटी डालेगी—बुखार की दवाई कड़ुवी तो होती ही है।"

पान खाने के बाद विमला ने थरमामीटर लगाकर देखा ९९½°—अरे यह तो कम हो रहा है। बिना दवाई वह कुछ घबरा-सी गई। बिस्तर पर लेट गई और कुछ लगी। फिर माँ से बोली—"मैं तो अब अच्छी हूँ न साबूदाना और दूध खाते-खाते ऊब गई हूँ। आज रोटी खाने की इच्छा हो रही है, माँ।"

"डाक्टर साहब मना जो कर गए हैं।"

"तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ, माँ, उन्हें न बतलाना, सिर्फ रोटी पतली-सी।"

"तू बड़ी हठीली है—अभी ला दूँ? भूख लग रही है

"हाँ माँ—पर किसी से न कहना।"

भोजन कराने के बाद जब माँ चली गई तब विमला पड़ी सोचने लगी कि और क्या खाने से बुखार तेज हो सकता एक दिन उसकी माँ ने उसे बुखार की हालत में खटाई खा मना किया था।

विमला चुपके से भण्डारघर में गई और इमली ढूँढ़ने लगी। आहट पाकर माँ रसोईघर से बोली—"क वहाँ?" विमला ने जवाब दिया—"मैं हूँ माँ, बिल्ली में घुस गई थी दरवाजा बन्द करने आई हूँ।"

"मुझे क्यों न कहा? तू जा आराम कर।"

विमला को वहाँ दोनों चीजें मिल गईं। मुट्ठी भर इमली एक गिलास दही लेकर वह अपने कमरे में आई और जल्दी-खा गई। उसके बाद वह चुपचाप लेट गई। फिर सोच कहीं ओढ़कर सोने से पसीना आकर बुखार को न बढ़ने इसलिए वह उठ बैठी और कमरे में ही इधर-उधर टहलने

साँझ के समय विमला के शरीर में दर्द होने लगा आँखें जलने लगीं। थरमामीटर लगाकर देखा—१०२° वह बहुत खुश हुई।

अरुण जब बाहर से आए तो उन्होंने देखा कि विमला शरीर बहुत गरम है। वे सिरहाने बैठ गए और उसके पर प्रेम से हाथ फेरने लगे। फिर उसका मन बहलाने के इधर-उधर की बातें करने लगे।

विमला ने आनन्दविभोर होकर अपनी आँखें बन्द कर और मन-ही-मन ईश्वर से प्रार्थना करने लगी कि "हे ईश्व मुझे बुखार हमेशा बना रहे पर देखना, मैं कहीं बेहोश हो जाऊँ, मेरी चेतना-शक्ति हमेशा बनी रहे। बस, चाहती हूँ।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूरदास की आँखें

डाक्टर ब्रजेश्वर वर्मा, एम० ए०, डी० फिल्०

यह तो सर्वविदित है कि सूरदासजी अन्धे थे, परन्तु विद्वानों में इस बात पर मतभेद रहा है कि वे जन्मान्ध थे या बाद में अन्धे हुए? और बाद में अन्धे हुए तो किस परिस्थिति में? वल्लभ सम्प्रदाय के मान्य पण्डित गोस्वामी हरिराय ने सूरदास के लगभग सौ-सवा सौ वर्ष बाद उनके जीवन-वृत्त में लिखा है कि सूरदासजी के जन्मत ही सों नेत्र नाहीं हैं। और नेत्रन को ढकर गठेला कछू नाहीं; ऊपर भोंह मात्र है'। 'जन्मे पाछे जाके ताको आँधरा कहिए, सूर न कहिए। और ये तो सूर हैं'। भक्त लोग विश्वास कर सकते हैं कि नेत्रों का आकार होने पर भी सूरदासजी को भगवान् कृष्ण की असीम कृपा से उनके समस्त वैभव प्रत्यक्ष हो गया था और इसी कारण वे अपने काव्य में इतने सुन्दर और यथार्थ वर्णन कर सके। उनके विश्वास को तर्कों के प्रखर शरों से बचाने के लिए कोई साहित्यिक समालोचक कम-से-कम मौन-द्वारा उनका समर्थन करते पाए जाते हैं। प्रस्तुत लेख में हम इस विवाद में पड़ना चाहते*; हमारा उद्देश्य केवल सूरदास की उन आँखों का किञ्चित् परिचय देना है जो अत्यन्त सूक्ष्मता से वस्तुओं की परख करती थीं, और उसके अन्तरतम में प्रवेश करके भी अतृप्त रहती थीं। सूरदास की दृष्टि व्यापक थी, परन्तु स्थानाभाव से हम उसके केन्द्र-बिन्दु का परिचयमात्र करा सकते हैं।

ऐसा प्रायः होता है कि हम अज्ञानवश अपनी प्रच्छन्न शक्तियों को नहीं पहचान पाते। प्रतिकूल विचारों के भार से दबी हुई वे शक्तियाँ धीरे-धीरे क्षीण होती जाती हैं। कदाचित् ऐसा हाल सूरदासजी का था, जब वे गऊघाट पर अपने सेवकों के बीच में बैठे हुए, संन्यासी वेष में रहते और पतित-पावन भगवान् का भजन गाया करते थे। महाप्रभु वल्लभाचार्य ने उन्हें देखा और प्रथम परिचय में ही उन्होंने समझ लिया कि यह व्यक्ति असाधारण प्रतिभा-सम्पन्न है, इसकी प्रतिभा का सदुपयोग हो सके। उन्होंने सूरदासजी को अपने सम्प्रदाय में दीक्षित किया, जिसमें मनुष्य की ऐन्द्रिय संवेदनाओं को, उसकी स्वाभाविक प्रवृत्तियों को दबाया नहीं जाता, बल्कि उन्हें अधिक चेतनता देकर भगवद्भक्ति के द्वारा चरम उत्कृष्टता तक ले जाती है। महाप्रभु ने सूरदास के समक्ष नाना-रूपधारी कृष्ण का रूप और चरित्र खोलकर रक्खा। सूरदास की आँखें खुल गईं। अब तक वे अज्ञान के अन्धकार में थे, देखते हुए भी नहीं देखते थे, सुनते हुए भी नहीं सुनते थे। शिशु कृष्ण का रूप देखकर सूरदास का हृदय उमड़ आया और वे गा उठे—

मेरे माई स्याम मनोहर जीवन।
निरखि नैन भूले जु बदन छबि मधुर हँसनि पय-पीवन॥
कुन्तल कुटिल मकर कुण्डल भ्रु व नैन-बिलोकनि बङ्क।
सुधा-सिन्धु तैं निकसि नयौ ससि राजत मनु मृग-अङ्क॥
सोभित सुमन मयूरचन्द्रिका, नील नलिन तनु स्याम।
मनहुँ नछत्र-समेत इन्द्र-धनु सुभग मेघ अभिराम।
परम कुसल कोविद लीला-नट मुसुकनि मन हरि लेत।
कृपा कटाच्छ कमल-कर फेरत, सूर जननि सुख देत॥

सूरदास ने अनेक परिस्थितियों में यशोदा की आँखों से कृष्ण की छवि देखी और प्रत्येक परिस्थिति में उसके सूक्ष्म से सूक्ष्म मार्मिक स्थल को पहचानने में कभी भूल नहीं की। हठ करके रोते हुए कृष्ण के रूप में सूरदास की दृष्टि कहाँ ठहरती है और वे कैसी सरलता से उसकी ओर सङ्केत भर कर देते हैं:—

पलना झूलौ मेरे लाल पियारे।
सुसकनि की बारी हौं बलि-बलि हठ न करहु तुम नन्ददुलारे।
काजर हाथ भरौ जनि मोहन, हैहैं नैना अति रतनारे।
सिर कुलही, पग पहिरि पैजनी, तहाँ जाहु जहँ नन्द बबा रे॥
देखत यह विनोद धरनीधर मात-पिता बलभद्र ददा रे।
सुर-नर-मुनि कौतूहल भूले, देखत सूर सबै जु कहा रे॥

कृष्ण के इस छोटे-से सौन्दर्य-चित्र को सूरदास ने क्षणमात्र में माता, पिता, बलभद्र, धरनीधर, सुर, नर, मुनि किस-किसकी दृष्टि से देख डाला। उनकी आँखों में कृष्ण-दर्शन के समय समस्त विश्व की चेतनता पुञ्जीभूत हो जाती है। उलूखल-बन्धन से त्रसित माखन-चोर की नवीन शोभा को निरखने में कवि कैसी सूक्ष्म-दर्शिता का परिचय देता है:—

देखि री, नन्द-नन्दन ओर।
त्रास तैं तन त्रसित भए हरि, तकत आनन तोर।
बार-बार डरात तोकौं, बरन बदनहिं थोर॥
मुकुर-मुख दोउ नैन टारत, छनहिं छन छबि-छोर।
सजल चपल कनीनिका पल अरुन ऐसैं डोर।
रस भरे अरबिन्द भीतर भ्रमत मानौं भौंर॥

* सूरदास के जीवन—उनकी भक्ति तथा काव्य की विस्तृत आलोचना के लिए देखिए हिन्दी-परिषद्, विश्वविद्यालय, प्रयाग-प्रकाशित लेखक का सूरदास-नामक ग्रन्थ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लकुट के डर देखि जैसे भए स्रोनित और।
लाइ उरहि बहाइ रिस जिय तजहु प्रकृति कठोर॥
कछुक करुना करि जसोदा करति निपट निहोर।
सूर स्याम त्रिलोक की निधि भलैंहि माखन-चोर॥

कवि की आँखें क्षण-क्षण में बदलती हुई रूप-छवि का निरीक्षण करके अरुण पलकों के भीतर सजल चपल कनीनिका के डोलने पर ठहर जाती हैं तथा भय के कारण रक्तवर्ण हुए मुख-मण्डल को देखकर हृदय को द्रवित कर देती हैं।

बाल-कृष्ण की छवि को देखने में सूरदास की आँखों में स्नेह की आर्द्रता उमड़ आती है, उनकी ज्योति में चमक और जगमगाहट प्रतिभासित नहीं हो पाती। यह तो तभी होता है जब वे कृष्ण को गोपी की दृष्टि से देखते हैं। देखते ही उनकी आँखों में एक नई दृष्टि जाग उठती है और समस्त चराचर आलोकित हो जाता है—

मैं देख्यो जसुदा कौ नन्दन खेलत आँगन बारौ री।
ततछन प्रान पलटि गयौ मेरौ तन-मन ह्वै गयौ कारौ री॥
मोहिं भ्रम भयौ सखी, उर अपनैं,
चहुँ दिसि भयौ उज्यारौ री।

× × ×

हौं उन माहँ कि वौ मोहिं महियाँ परत न देह सँभारौ री।
तरु मैं बीज कि बीज माहँ तरु, दुहुँ मैं एक न न्यारौ री॥
जल-थल-नभ कानन घर भीतर जहँ लौं दृष्टि पसारौ री।
तित ही तित मेरे नैननि आगैं निरतत नन्द-दुलारौ री॥

× × ×

सूरदास की यह नवीन दृष्टि इतनी पैनी है कि वह कृष्ण के रोम-रोम को निरखकर उसके सौन्दर्य को उद्घाटित करने की चेष्टा करती है, और साथ ही उसमें इतनी ऐन्द्रियता और रूप की प्यास है कि वह स्वयं मोह-मादकता में विभोर होकर हार जाती है। कृष्ण के अङ्ग-अङ्ग का वर्णन करके सूरदास कहते हैं :—

कहँ लगि कहौं बनाइ अङ्ग छबि निरखत मति-गति हारी री।
सूर स्याम के एक रोम पर देउँ प्रान बलिहारी री॥

क्योंकि—

मुख देखत मोहिनी-सी लागी, रूप न बरन्यौ जाई री।

× × ×

सोभा-सिन्धु अङ्ग अङ्गनि प्रति बरनत नाहिंन ओर री।
जित देखौं मन भयौ तितहिं कौ मनौ भरे कौ चोर री॥
बरनौं कहा अङ्ग-अङ्ग-सोभा भरी भाव जल-रास री।
लाल गोपाल बाल-छवि बरनत कवि कुल करिहै हास री॥
जो मेरी अँखियन रसना होती कहती रूप बनाइ री।
चिर जीवहु जसुदा कौ ढोटा सूरदास बलि जाइ री॥

आँखों की ऐन्द्रियता हृदय में भरी भाव-जल-राशि के कारण सार्थक है। इसी कारण तो कवि की आँखें वाणी के अभाव से असन्तुष्ट होकर स्वयं रसनामय होने की असम्भव आकांक्षा करती हैं।

कृष्ण की माखन-चोरी से खीझकर गोपियाँ प्रायः यशोदा से उनकी शिकायत करती हैं, परन्तु उनकी आँखें माखन-चोर की अद्भुत छवि को देखने के लिए सदैव व्याकुल रहती हैं। श्याम को माखन खाते देखकर भी वे अनदेखी कर देती हैं और छिप-छिपकर उनकी रूप-सुधा का पान करती नहीं अघातीं।

गोपियों की आँखें पाकर सूरदास की दृष्टि में अद्भुत व्यापकता आ जाती है। वे कृष्ण के रोम-रोम की छवि को साथ ही अनेक आँखों से देख सकते हैं, परन्तु फिर भी उन्हें सन्तोष नहीं होता। आँखों के द्वारा अगाध-शोभा को हृदयङ्गम करने की चेष्टा में वे उसे भाँति-भाँति की कल्पनाओं की सहायता से चित्रित करना चाहते हैं, पर अन्त में उनकी दृष्टि को दृष्टि की सम्पन्नता के सामने हार माननी पड़ती है, और दृष्टि को भाव की अगाधता में खो जाना पड़ता है :—

देखौ माई सुन्दरता कौ सागर।
बुधि बिबेक-बल पार न पावत मगन होत मन नागर।
तनु अति स्याम अगाध अम्बु-निधि कटिपट पीत तरङ्ग॥
चितवत चलत अधिक रुचि उपजति भँवर परति सब अङ्ग।
नैन-मीन मकराकृत कुण्डल भुज सरि सुभग भुजङ्ग॥
मुक्ता-माल मिलीं मनौ द्वै सुरसरि एकै सङ्ग।

× × ×

देखि सरूप सकल गोपी जन रहीं बिचारि बिचारि।
तदपि सूर तरि सकीं न सोभा, रहीं प्रेम-पचिहारि॥

सूरदास की दृष्टि कृष्ण की सम्पूर्ण रूप-राशि को एक साथ नहीं निहार पाती, जिस अङ्ग पर उनकी आँख ठहर जाती है वहीं ठहरकर वे रूप रसपान करने लगती हैं। उनकी अनन्त कल्पनाओं की नई-नई योजनाएँ बनाता है, पर अन्त में उनकी दृष्टि का भाव आँखों में ही रह जाता है :—

राजति रोम-राजी रेख।
नील घन मनु धूम-धारा रही सूच्छम लेख॥
निरखि सुन्दर हृदय पर भृगु-पाद परम सुलेख।
मनहुँ सोभित अभ्र-अन्तर सम्भु-भूषन बेष॥
मुक्त-माल नछत्र-गन सम अर्द्ध चन्द्र बिसेष।
सजल उज्ज्वल जलद मलयज प्रबल बलिनि अलेख॥
केकि कच सुर-चाप की छबि दसन तड़ित सुरेख।
सूर प्रभु की निरखि सोभा तजे नैन निमेष॥

गोपियों के मन में जब कृष्ण को पति-रूप में प्राप्त करने की लालसा आ जाती है, तब उनकी आँखों में लज्जा उत्पन्न हो जाती है। अब वे कृष्ण को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...ती और न देखने का बहाना करती हैं। उनकी आँखों ...चञ्चलता, व्याकुलता और अशान्ति है।

गोकुल के ग्वैंड़े एक साँवरो सेा ढोटा माई
अँखियन के पैंड़े पैठि जी के पैंड़े पर्‌यो है।
कल न परत छन गृह भयो सम बन
तन मन धन प्रान सरबस हर्‌यो है॥
भवन न भावै माइ आँगन रह्यो न जाइ
करै हाइ हाइ देखो जैसेा हाल कर्‌यो है।
सूरदास प्रभु नीके गावत मधुर सुर
मानहु मुरली में पियूष रस भर्‌यो है॥

एक ओर यह विकलता है और दूसरी ओर घर-गाँव की ...नामी का डर है। जिस प्रकार गोपियाँ कृष्ण को लुक-...कर बङ्क-दृष्टि से देखना चाहती हैं, उसी प्रकार कृष्ण भी। ...ओर दृष्टियों की लुका-छिपी के सूरदास ने अनेक यथार्थ ...अङ्कित किए हैं, मानों वे स्वयं बारी-बारी दोनों ओर से ...हों। एक चित्र है :—

मेरी गैल न छाँड़ै साँवरो मैं क्यों करि पनिघट जाउँ री।
वहि सकुचनि डरपति रहौं मोहिं धरै न कोऊ नाउँ री॥
जित देखौं तित दीखै री रसिया नन्दकुमार री।
इत उत नैन चुराइ कै मोहिं पलकन करत जुहार री॥
लकुट लिए आगे चलै हो पन्थ सँवारत जाइ री।
मोहि निहोरो लाइ कै वह फिरि चितवै मुसुकाइ री॥
सेा कञ्चुकि अँचरा उचै मेरो हियरा तकि ललचाइ री।
जमुना जल भरि गागरी लै जब सिर चलत उचाइ री॥

× × ×

हौं सकुचनि बोलौं नहीं लोक-लाज की सङ्क री।

× × ×

निकट आइ मुख निरखि कै सकुचै बहुरि निहारि री॥

× × ×

जब कहुँ लग लागै नहीं तब वाको जिव अकुलाइ री।
तब हठि मेरी छाँह सेां वह राखै छाँह छुआइ री।
को जानै कित होत है री घर गुरुजन की सेार री॥
मेरो जिव गाँठी बँध्यो पीताम्बर की छोर री।

× × ×

इन बङ्क दृष्टि-निक्षेपों के परिणाम-स्वरूप गोपियों की ऐसी ...हो जाती है कि उन्हें सचमुच और कुछ दिखाई ही ...देता :—

...ली भवन मन हरि-हरि लीन्हों।
...द्वै जाति ठिठकि फिरि हेरति जिय यह कहति कहा हरि कीन्हों।
...गई भूलि जेहि आई आवत कै नहिं पावत चीन्हों॥

× × ×

...सूरदास प्रभु सेां चित अटक्यो आवत नहिं इत उतहि पतीन्हों।
घर गुरुजन की सुधि जब आई।
तब मारग सूझ्यो नैननि कछु जिय अपने तिय गई लजाई।
पहुँची आइ सदन ज्यों-त्यों करि नेक नहीं चित टरत कन्हाई॥

× × ×

यह खींचातानी की अवस्था अधिक दिनों तक नहीं रहती और गोपियों को लोक-लाज त्यागकर कृष्ण प्रेम में पागल हो जाना पड़ता है। वे अब दृष्टि भरकर कृष्ण को देख सकती हैं; उन्हें बना देखे आँखें तड़पती हैं। परन्तु सूरदास गोपियों की इन आँखों से कृष्ण को अधिक नहीं देख सकते। दर्शन न मिलने पर अशान्ति और दर्शन करते हुए आँख भरकर न देख सकना और सदैव अतृप्त रहना इसी में उन्हें सुख मिलता है। अतः वे राधा की आँखों में अपना भाव भर के कृष्ण-दर्शन करते हैं।

वस्तुतः राधा की आँखें ही सूरदास की आदर्श आँखें हैं। बचपन से ही उसकी आँखों में सूरदास ने एक अद्भुत आकर्षण और रहस्यपूर्ण गम्भीरता भरी है। यशोदा राधा की भर्त्सना करते हुए कहती है :—

राधा ये ढङ्ग हैं री तेरे।
वैसे हाल मथति दधि कीन्हें हरि मनु लिखे चितेरे।
तेरौ मुख देखत ससि लाजै और कहौ क्यों बाँचैं॥
नैना तेरे जलज-जीत हैं, खञ्जन तैं अति नाचैं।
चपला तैं चमकति अति प्यारी कहा करैगी स्यामहिं॥

× × ×

तथा—

मेरो कह्यौ नाहिं न सुनति।
तबहिं तैं इकटक रही ह्वै कहा धौं मन गुनति।

राधा की एकटक दृष्टि में कितना गम्भीर भाव है! इसी से यशोदा झुँझलाकर कहती है :—

चितैबो छाँड़ि दै री राधा।

× × ×

मृग-नैनी हरि कौ मन मोहति जब तू देखि दुहावै।
कबहुँक कर तैं गिरति दोहिनी, कबहुँक बिसरति नोई॥
कबहुँक बृषभ दुहत है मोहन ना जानौं का होई।

× × ×

राधा ने बचपन में जिसे अपने जलज-जीत नयनों से अनेक बार एकटक देखा था, हृदय में प्रेम प्रकट हो जाने पर वह उसकी ओर अच्छी तरह आँख उठाकर नहीं देख सकती। वह अपने प्रेम को छिपाती हुई सखियों से कहती है :—

कैसे हैं नन्द-सुवन कन्हाई।
देखे नहीं नयन भरि कबहूँ ब्रज में रहत सदाई।
सकुचति हौं एक बात कहत तोहिं सेा नहिं जात सुनाई॥
कैसेहुँ मोहिं देखावहु उनको यह मेरे मन आई।

× × ×

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सखियाँ राधा की बातें सुनकर आश्चर्य करती हैं और श्याम के दर्शन कराने का वचन देती हैं। वे राधा को चुनौती देती हैं—

दरशन ते धीरज जब रैहै तब हम तोहि बतैहैं।

राधा मन ही मन हँसती है और कहती है—

तुम उनको कहुँ देखे हैं की सुनी कहति हौ बात।

एक दिन राधा सखियों के साथ यमुना-स्नान कर रही थी कि श्याम 'नटवर भेष काछे' हुए आ गए। बस,

राधे निरखि भूली अङ्ग।
नन्दनन्दन रूप पर गति मति भई तनु पङ्ग॥
इत सकुच अति सखिन को उत होत अपनी हानि।
ज्ञान करि अनुमान कीन्हों अबहिं लैहै जानि॥
चतुर सखियन परखि लीन्हीं समुझि भई गँवारि।
सबै मिलि इत न्हान लागीं ताहि दियो बिसारि॥
नागरी मुख श्याम निरखत कबहुँ सखियन हेरि।
सूर राधा लखति नाहीं इन दई अब टेरि॥

राधा ने अपनी आँखों को रोकने की बहुत कुछ चेष्टा की, परन्तु वे न रुकीं। इधर सखियों ने भी देख लिया कि राधा किस प्रकार उनकी दृष्टि बचाकर कनखियों से श्याम का रूप-रस पी रही है। उन्होंने पूछा, 'अब तो कुँवर कन्हाई को देखा? तुम्हें दर्शन की बड़ी लालसा थी, वह आज पूरी हुई?' राधा ने इस प्रश्न को बहुत देर तक टालने का प्रयत्न किया। परन्तु सखियों ने उसे छोड़ा नहीं। बार-बार पूछने पर राधा ने सिर नीचा करके चरण-नख से धरती कुरेदते हुए कहा—

कहा कहति तुम बात अलेखे।
मोसों कहति श्याम तुम देखे तुम नीके करि देखे॥
कैसो बरन भेष है कैसो कैसे अङ्ग त्रिभङ्ग।
मों आगे वह भेद कहौ धौं कैसो है तनु रङ्ग॥
मैं देखे की नाहीं देखे तुम तो बार हजार।
सूर श्याम द्वै अँखियन देखति जाको वार न पार॥

राधा की चुनौती स्वीकार करके सखियों ने कृष्ण की छवि को अपने-अपने ढङ्ग से चित्रित किया। सूरदास ने इन अनेक चित्रों में गोपियों की दृष्टि से अनुपम सौन्दर्य भर दिया है। परन्तु वे इससे सन्तुष्ट न हो सके। उनकी आँखों में तो राधा का वह भाव भरा है, जब वह कहती है—

तुम देखे मैं नहीं पत्यानी।
मैं जानति मेरी गति सबही ह्वै साँच अपने मन आनी॥
जो तुम अङ्ग-अङ्ग अवलोक्यो धन्य धन्य मुख अस्तुति गानीं।
मैं तौ अङ्ग-अङ्ग अवलोकति दोऊ नैन भए भर पानी।
कुण्डल झलक कपोलनि आभा इतनेहि माँझ बिकानी।
एकटक रही नैन दोउ रूँधे सूर श्याम को नहिं पहिचानी॥

राधा की दृष्टि कुण्डल की झलक और कपोलों की आभा ही अटक जाती है। वह कहती है:—

कहा करौं अति सुख द्वै नयना उमँगि चलत पग पानी।
सूर सुमेर समाइ कहाँ धौं बुधि बासना पुरानी॥

राधा का भाव देखकर सखियों को विस्मय और हर्ष हुआ। उन्होंने राधा की प्रशंसा की। परन्तु राधा बार-बार अपनी असमर्थता और विवशता प्रकट करती है। कभी वह अपने को कोसती है, कभी विधाता को दोष देती है कि उसने रोम में लोचन क्यों न दिए। दो लोचन हैं, वे भी 'साक्षित' नहीं क्योंकि पल-पल में निमिष ओट कर लेते हैं। वह कहती है—

श्याम सों काहे की पहिचानि।
निमिष-निमिष वह रूप न वह छवि रति कीजै जेहि जानि।
यकटक रहत निरन्तर निशिदिन मन मति सों चित सानि।
एकौ पल सोभा की सीवाँ सकत न उर महँ आनि।
समुझि न परै प्रकट ही निरखत आनँद की निधि खानि।
सखि यह विरह सँयोग कि सम रस दुख सुख लाभ कि हानि।
मिटति न घृत ते होम अग्नि रुचि सूर सुलोचनि बानि।

सूरदास की आँखें उसी दृष्टि को प्राप्त करने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहीं जिसमें दर्शन से कभी तृप्ति नहीं होती और कदाचित् वे अपने प्रयत्न में कुछ न कुछ अवश्य सफल हुए। सूरदास के इहलीला-संवरण के कुछ क्षण पूर्व गुसाईं श्री विट्ठलनाथजी ने पूछा कि सूरदासजी, चित्त की वृत्ति कहाँ है? तब उन्होंने यह पद गाया—

बलि बलि बलि हौं कुमरि राधिका नन्दसुवन जासों रति मानी।
वे अति चतुर तुम चतुर-शिरोमणि प्रीति करी कैसे होत है छानी।
वे जु धरत तन कनक पीत पट सो तो सब तेरी गति ठानी।
ते पुनि श्याम सहज वे शोभा अम्बर मिस अपने उर आनी।
पुलकित अङ्ग अबहिं ह्वै आयो निरखि देखि निज देह सयानी।

× × ×

यह भावपूर्ण पद गाने के बाद सूरदासजी विभोर हो गए। पुनः गुसाईंजी ने पूछा कि सूरदासजी नेत्र की वृत्ति कहाँ है? तब सूरदासजी ने गाया—

खञ्जन नैन सुरँग रस माते।
अतिसय चारु चपल अनियारे पल पिँजरा न समाते॥
बसे कहूँ सोइ बात कही सखि रहे इहाँ केहि नाते।
सोइ संज्ञा देखति औरासी बिकल उदास कला ते॥
चलि चलि आवत श्रवण निकट अति सकुच ताटङ्क फँदाते।
सूरदास अञ्जन गुण अटके नतरु कबै उड़ि जाते॥

अपने अन्तिम समय में सूरदास की आँखें राधा के चञ्चल अनियारे खञ्जन-नयनों पर लगी थीं और उन्हीं का भाव-रूप में भरना चाहती थीं।

इस लेख में सूरदास की नेत्रवृत्ति का केवल केन्द्रीय बिन्दु दरसाने का प्रयत्न किया गया है। उनकी दृष्टि की व्यापकता उनकी आँख की परख को देखने के लिए उनके द्वारा किए कृष्ण, राधा और गोपियों के रूप-चित्रण तथा अन्य प्राकृतिक वर्णनों से परिचय करना चाहिए। परन्तु इतने उदाहरण ही आधार पर अनुमान किया जा सकता है कि गोस्वामी ने क्यों लिखा कि सूरदासजी 'आँधरा' नहीं 'सूर' थे। जैसी आँखें संसार के और किस कवि को प्राप्त हो सकीं?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शहीद का शव

प्रोफेसर श्रीनारायण अग्रवाल, एम० ए०, बी० कॉम०

उस रोज श्मशानभूमि नर-नारियों से खचाखच भरी थी। ...रखने को भी जगह नहीं। जिधर देखो नर-मुण्ड ही नर-...। सारा शहर मानो मरघट में ही इकट्ठा हो गया हो। ...बूढ़े, स्त्रियाँ, अमीर, गरीब, मजदूर, मालिक, सभी श्रेणी ...लोग मौजूद थे।

समीप ही नाला बह रहा था आक्रोश और रुदन करता ...। पास से रेलगाड़ी गुजरी; चिल्लाती चिंघाड़ती हुई। ...की 'घीस, घीस' आवाज और कर्णकटु सीटी मानो मातम ...रही हो। अन्दर बैठी भीड़ ने बाहर की तरफ नजर दौड़ाई। ...इतना बड़ा मजमा क्यों इकट्ठा हुआ है? क्या कोई धनिक ...महापुरुष चल बसे हैं? वे आपस में बतलाए और क्षण में ...में बहते तिनकों की तरह ही आँखों से ओझल हो गए।

आकाश में गिद्ध और कौवे मँडरा रहे थे। यदा-कदा उनमें ...कुछ सूखे पेड़ों पर, ठूँठों पर, आकर बैठ जाते और अपनी ...और गिद्ध दृष्टि से प्रेत की ओर निहारते। लालच-भरी ...डालते और फिर बेसुरी आवाज निकालकर बादलों से ...करने लगते। आकाश में—स्वर्ग में—विचरण करते ...भी उनकी निगाहें जमीन पर पड़ी गन्दगी को ढूँढ़ने की ...में रहतीं, वैसे ही जैसे बड़ा ओहदा पाने पर भी मनुष्य ...की तरह खिंचता रहता है। उनकी पैनी नजरों से शायद ...कोई उनके काम की चीज बचती। जब तब वे उस अगम्य ...से तीर की तरह—सनसनाती गोली के मानिन्द—झपट्टा ...और भूमि पर पड़ा मांस का टुकड़ा या चर्बी से सराबोर ...लेकर हवा हो जाते। उन्हें क्या पता दुनिया पर क्या बीत ...है? उनका संसार ही निराला है जिसमें हर्ष-शोक का ...दण्ड हम मानवों से बिलकुल विभिन्न, कदाचित् एकदम ...है।

चिता सजाई गई। अर्थी से लाश खोलकर धीरे-धीरे मोटे-...बबूल के कुन्दों पर रक्खी गई। कैसा नौजवान है? ...होता है, गहरी नींद सोया हुआ है। उस पर ये मन-मन ...मोटे ठूँठ कैसे रक्खे जाएँ?

सूर्य अन्तिम साँसें ले रहा था। उसका मौत के साथ ...श्रान्त संग्राम जारी था। और चेहरा थकावट और दुर्बलता ...वजह से पीला हो रहा था। आकाश खून से लथपथ, ...लाल-सुर्ख। उसकी लाल रोशनी पृथ्वी तक पहुँचकर ...चिल्लाकर कह रही थी कि 'मृत्यु' अमर है और जीवन ...। जिन्दगी शायद एक पानी के बुलबुले के समान है जो हवा के पहले ही झोंके में विलीन हो जाता है। भला ऐसे आग के धधकते गोले को भी जो पेट में रख ले, उसके सामने हाड़-मांस के नाचीज इन्सान की क्या हस्ती?

एक ने चिल्लाकर कहा—"अरे जल्दी करो; सूरज की साक्षी से अग्नि-संस्कार करना है।"

लोग जल्दी-जल्दी घास-फूस इकट्ठा करने लगे। किसी ने घी डाला, किसी ने राल। पल में ही चिता धाँय-धाँय कर जलने लगी। लपटें भूखे शेर की तरह शव को चाटती थीं और खाद्य की प्रसन्नता से अन्धे की तरह हवा में नाच रही थीं—बेसुर, बेताल। कभी-कभी चर्बी के जलने की दुर्गन्ध आती और तड़ाक से हड्डी टूटने की आवाज होती। लोग 'रामनाम सत्य है; मँगलू अमर हो गया' चिल्ला उठते। यह उद्घोष सन्ध्या की नीरवता को भङ्ग करता; पहाड़ों और पेड़ों से टकराता। पहाड़ और पेड़ भी प्रतिध्वनि कर इस नारे को दोहराते हुए समर्थन करते और फिर वह अनन्ताकाश में शनैः-शनैः विलीन हो जाता।

मैले-से कपड़े पहने एक हम्माल ने उस विशाल अग्नि-पुञ्ज में से एक चिनगारी निकाली और अपनी मिट्टी की चिलम पर रखकर साथी ढूँढ़ने के लिए अपने चारों तरफ नजर दौड़ाने लगा। उसे पेड़ के नीचे बैठे हुए छोटू, सुक्खू और भूरा दिखाई दिए जिन्हें उसने चिलम के इशारे से अपने पास आने का निमन्त्रण दिया। वे सब हड्डियों और खोपड़ियों को हटाते हुए गोलाकार बैठ गए और कश लगाना प्रारम्भ किया।

तलब की पूर्ति के साथ ही बातों का सिलसिला शुरू हुआ। एक ने आधी आँखें मींचते हुए कहा—"कैसा जवाँमर्द था। लाठियाँ बरसती रहीं पर उसने तनिक भी पर्वाह न की। चट्टान सा अपनी जगह पर डटा रहा। सारा शरीर लहू-लुहान हो गया। आखिर करीमखाँ के लट्ठ ने उसका भेजा फोड़ दिया और वह वहीं ढेर हो गया। उसने दारोगा से भी दो-दो बातें कीं और समझाया कि जनता अपने आप शान्त हो जाएगी। उन्हें लाठियाँ दिखाना आग में घी डालना है।"

दूसरे ने उसे रोकते हुए कहा—"चुप रहो, बको मत! ऐसा जवान क्या लाठियों से मरनेवाला था? वह अखाड़े का खिलाड़ी दर्जनों लटैतों को अकेला भारी था। वह तो कहो रिजर्व इन्सपेक्टर भारुचा ने अपनी जेब से चमचमाता पिस्तौल निकाला और उसको निशाना बना गोली दागी। वह शीशे की छोटी-सी गोली गले से होते हुए खोपड़ी के आर-पार निकल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गई। और वह वहीं कटे पेड़ की तरह धम्म से धरती माता की गोद में गिर गया और सदा के लिए सुख की नींद सो गया। सुबह जो जवान गेहूँ के पचीस बोरे बात की बात में फेंक देता था शाम को वही हाड़-मांस की गठरी भर रह गया। और दारोगा तक वह पहुँच भी सका था? वहाँ किसे बात करने की फ़ुरसत थी! घोड़ों की टापों ने और लोगों की भागदौड़ ने प्रलय मचा दिया था।"

तीसरे ने साथ दिया—"कुछ भी हो, परन्तु हुआ बुरा। कांग्रेसवाले क्या उसके बीबी-बच्चों को खाने को दे देंगे? घर में बेवा स्त्री, दो-दो दुधमुँहे बच्चे, बूढ़े माँ-बाप इनका क्या होगा? कमानेवाला तो वह अकेला ही था। बेचारे दर-दर के भिखारी हो गए। मँगलू ने गलती की जो वहाँ जा पहुँचा। उसी के जाने से थोड़ा ही स्वराज्य मिला जाता था। और जिस रोज मिलेगा उस रोज उसमें सभी को हिस्सा मिलेगा, चाहे किसी ने कुछ भी आँच न सही हो। और फिर कांग्रेस में तो बड़ों-बड़ों का बोल-बाला है। हम गरीबों की कौन पर्वाह करता है? उस रोज झामा सजा काटकर आया तो स्टेशन पर कोई उसे पहचाननेवाला भी नहीं था। बेचारा दो साल तक चक्की पीसता और पत्थर फोड़ता रहा। ज्वार की सूखी रोटियाँ मिलतीं और साग की जगह गालियाँ। यदि किसी रोज नमक-मिर्च माँग लेता तो वार्डर के जूते में कसे पैर की ठोकरें ऊपर से मिलतीं। अभागा लकड़ी होकर आया है। एक-आध साल चारपाई तोड़ने पर कहीं खाने-कमाने लायक होगा।"

बैठक के चौथे कुली ने जोर लगाया—"और इधर प्रताप सेठ को देखो। जेल में रहे तो ऊँचे दर्जे में। वहाँ भी मक्खन-मलाई के डब्बे पहुँच जाते। हफ्ते में चार-चार चिट्ठियाँ लिखते और दिन भर ताश और शतरञ्ज उड़ाते, मानो ससुराल में दावत खा रहे हों। छूटने के पेश्तर ही छापों में समाचार छपने लगे कि सेठजी देशभक्त, वीर, त्यागी—न मालूम क्या-क्या नाम जोड़े गए—फलाँ रोज रिहा होनेवाले हैं सो उनकी बड़ी धूमधाम से आवभगत होनी चाहिए। और उनके आने के दिन जैसे स्टेशन पर आदमियों की बाढ़ आ गई हो। मनों फूलमालाओं से लाद दिए गए। और वहीं किसी ने चाँदी का चरखा उनकी भेंट किया। बाद में पूरे पन्द्रह दिन पार्टियाँ उड़ती रहीं। आज इस सभा की तरफ से सत्कार है तो कल उस क्लब की ओर से कदर की जा रही है। परसों पिकनिक है तो तरसों वन-भोजन के लिए निमन्त्रण दिया जा रहा है। कहते हैं खाते-खाते सेठ साहब को अपच हो गया और अब वे हवा बदलने के लिए किसी पहाड़ी जगह जाने का इरादा कर रहे हैं।"

चिलम की तमाखू चाँदी होने आई थी। एक ने अँगूठे से आग दबाते हुए बात-चीत की गाड़ी को चलता रखने के विचार से जोर लगाया—"भाई, मुझे तो रह-रहकर मँगलू की नासमझी पर तरस आता है। उसे दुनिया का क्या तजुर्बा था; दुनिया देखी थी? जोश में आकर आग में कूद गया। उसकी मेहरिया की ज्यादा दुर्दशा होगी। अभी तो वह कुल बाईस साल की है। कितनी भोली, कैसी सीधी, कितनी समझदार, लज्जावती है! मैंने तो इतनी लजवन्ती स्त्री आज तक नहीं देखी। नीची जात में और न बड़े-बड़े महाजनों के बँगलों में ऐसी साक्षात् देवी थी, देवी। अब तो अभागिनी का छत्र ही छिन गया। और बूढ़े की तो जैसे कमर ही टूट गई। भगवान् नादानी की जो इतना आगे....."

पास ही मँगलू का पिता मुँह नीचा किए अपनी तक़दीर पर आँसू बहा रहा था। उसने यह सब सुना। उससे न रहा गया और वह उबल पड़ा—"तुम क्या कहते हो भैया! मँगलू ने नादानी की जो अपनी बलि दे दी? तुम जिसे नादानी कहो, हो उसे मैं समझदारी कहूँ तो तुम्हें अचरज होगा। परन्तु मैं तुमसे पूछता हूँ, इस साल अपने ही मुहल्ले में हैजे से कितने आदमी मर चुके हैं? बीस से कम न होंगे; और अच्छे जवान पट्ठे। बात करते-करते मक्खियों की तरह बिला गए। उनमें हमने क्या बचाव कर लिया? हाथ पर हाथ धरे बैठे देखते रहे, दो घड़ी रो लिए। दुनिया ने खयाल भी नहीं किया कि कौन गया और कैसे गया। परन्तु यही मँगलू की मौत में मरे हजार आदमी मौजूद हैं। सभी के चेहरे ऐसे उतरे हुए जैसे उन्हीं का अपना सगा-सम्बन्धी गुजरा हो। सारे शहर ने कितना मातम मनाया; कितनी हिम्मत बँधाई! यह सब इसी लिए न कि मेरा बेटा सुकारज में काम आया। नहीं तो मुझे कौन पूछता? मैं हूँ ही किस काबिल, किस बाग की मूली, कि लोग मेरी इतनी आवभगत करें।

बूढ़े की आँखों से आँसुओं की अविरल धारा बह रही थी, गला रुँध आया था। उसने आगे कहा—"सुना है, बङ्गाल में तीस लाख आदमी भूख और बीमारी के शिकार हुए। हजारों की तादाद में कीड़ों और मलेरिया के मच्छरों की तरह मौत के मुँह में जा रहे थे। मुझे ऐसी कुमौत पसन्द नहीं। चारपाई पर पड़कर मरने से तो गोली खाकर मरना हजार अच्छा है। जब बङ्गाल में यह वारदात हो रही थी तो मँगलू ने एक रोज कहा था—दादा, ये बङ्गाली भी कैसे काहिल हैं। कहते हैं दूकानों और सरकारी गोदामों में धान की कमी न थी, फिर ये तीस लाख आदमी टिड्डी-दल की तरह उन पर टूट न पड़े? जब रोजी नहीं मिलती तो लूटना पाप नहीं, धर्म है। यह कहाँ का न्याय है कि नफाखोरों और उनको देनेवाली सरकार की गोदामों में हजारों मन आटा और चावल सड़ते रहें और गरीबों को एक कौर रोटी भी न मिले! ये नाग की तरह इस धन पर हक जमाए बैठे हैं। इन्हें कुचलना होगा और यदि ये फुफकारेंगे और फन मारेंगे तो या तो इनके जहरीले दाँत तोड़ देंगे; या इस कोशिश में मर मिटेंगे।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri
CC-0. Vasishtha Tripathi Collection. Digitized by eGangotri
CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri
CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri
CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Digitized by eGangotri
CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Digitized by eGangotri
CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri
CC-0. Dr. Kanchan Kumari Collection. Digitized by eGangotri
CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[सन् १९

...रिया की ...
...साल के ...
...करार, ल...
...हीं देखी।
...गलों में ...
...छत्र ही ...
...ई। भँगलू
...अपनी त...
...उसने न...
...भैया! मँगलू
...नादानी ...
...गा। परन्तु
...हैजे से कि...
...र अच्छे ज...
...गए। उ...
...बैठे देखते ...
...किया कि ...
...मौत में ...
...से उतरे ...
...सारे शहर
...सब इसी ...
...ही तो मुझे ...
...मूली, कि ...
...रा वह रहा ...
...है, बङ्गला ...
...र हुए। ...
...च्छरों की ...
...पसन्द ...
...ना हजार ...
...ही थी तो ...
...सि काहिल ...
...ी कमी न ...
...न पर टूट ...
...नहीं, कि ...
...र उनका ...
...पाटा और ...
...मले! ...
...इन्हें कुत्ते ...
...ती या तो ...
...मिटेंगी।

[भगवत]

...ती खा सकते; इन्हें औरों के साथ बाँटकर खाना होगा। ...
...कहाँ अन्याय-अधरम है? और यदि इसे ही अन्याय कहें ...
...गोलियाँ दागकर हमारा मुँह बन्द करना चाहें तो यह ...
...हो सकता। हम बहुत बर्दाश्त कर चुके हैं, अब चाहे ...
...तोपें चलनी ही कर दिए जाएँ, हम डरपोक बनकर भूख ...
...कुत्तों की मौत मरना मञ्जूर नहीं कर सकते।

बूढ़ा कहता गया—भैया, मँगलू की वह बात मुझे ज्यों की ...
...याद है, बल्कि उसके जाने से उसकी बात और भी कीमती ...
...देने लगी है। मैंने उसकी उस वक्त सराहना की थी। ...
...में मेरे भी ऐसे ही अरमान थे; दो दो जवानों को अकेला ...
...देता था; ढाई मन का बोरा एक हाथ से उठाकर काँटे में तौल ...
...था। परन्तु किस्मत ने सब इच्छाओं को मिट्टी में मिला ...
...। मँगलू की नसों में मेरा ही खून दौड़ता था। वह ...
...मुझसे एक कदम पीछे कैसे रहता? मुझे गर्व है कि उसका ...
...देश के काम आया। अगले जन्म में वह राजा के यहाँ ...
...लेगा। हम अपनी जैसे-तैसे निबाह लेंगे।

थोड़ी दूरी पर खड़े प्रताप सेठ सारी बातें सुन रहे थे। ...
...गला भर आया। वे सोचने लगे—ओहो! इस गँवार ...
...में इतनी समझदारी? और इतना त्याग? हमें पण्डित-...
...ों से उपदेश लेने के बजाय इस हम्माल से सीखना चाहिए ...
...नैतिक की उदासीनता से अपने जिगर के टुकड़े की समष्टि ...
...लाई में आहुति दे देता है। और एक तरफ हम हैं जो ...
...करके, झूठ-सच, सफेद स्याह करके जिन्दगी भर इन्हीं भोले-...
...गरीबों का खून चूसते रहते हैं। इनका शोषण करते ...
...हैं जोंक की तरह; और फिर अन्त-समय में इन पापों से ...
भयभीत होकर एकाध धर्मशाला या मन्दिर बनवाकर मोक्ष पाना चाहते हैं, पापों का प्रक्षालन करने की सोचते हैं। उन्होंने नजदीक आकर बूढ़े से कहा—"दादा, मँगलू भैया मरा नहीं, जिन्दा है। वह तुम्हारे सामने खड़ा है। तुम उसे अपनी बुझी आँखों से देखने की कोशिश करो। आज से इस प्रताप को तुम अपना धर्म का पुत्र मानो। मेरी बाड़ी के द्वार तुम्हारे लिए हरदम खुले रहेंगे। कल ही से बच्चों समेत मेरे साथ रहने आ जाओ। मैं स्वयं निःसन्तान हूँ; अतः मँगलू के मुन्नों को ही अपना मानकर उन्हें पढ़ाऊँ-लिखाऊँगा और उन्हें राजा बनाऊँगा।"

नजदीक बैठे हुए लोग अवाक् रह गए। बहुतों को आश्चर्य हुआ, कुछ को अविश्वास! परन्तु हर्ष से पुलकित सभी हो उठे थे। एक ने मौन भङ्ग करते हुए कहा—"शहीद के खून में यह ताकत है कि रङ्क को राजा बना दे। वह हमारे हृदय की मलिनता धोकर हमें इस काबिल बना रहा है कि हिम्मत के साथ हँसते-हँसते हम हुतात्मा हो जाएँ।"

दूसरे ने कहा—"मँगलू का खून उस बीज का काम करेगा जिससे हजारों विशालकाय पेड़ पैदा हो जाते हैं जो बड़े-से-बड़े तूफान का मुकाबला आसानी से कर लें।"

× × × ×

तीसरे रोज प्रताप सेठ और बूढ़े पिता मरघट में भस्म व अस्थि चुनने आए। परन्तु नाले की बाढ़ ने पहले ही समेटकर उन्हें आत्मसात् कर लिया था। शायद नाला भी शहीद के शेषांशों को स्पर्श कर पावन होना चाहता था।

——

गीत

श्री गङ्गाप्रसाद 'कौशल'

निर्मम पाषाण मनाता हूँ,
...-रात वन्दना करता मैं, श्वासों के सुमन चढ़ाता हूँ।
जीवन की मैं आरती जला
अपनी प्रतिमा के पास चला
...पाषाणी पाषाण रही, मैं खड़ा-खड़ा बिलखाता हूँ।
कितने फिर मैंने स्तवन रचे
पर पाषाणी को नहीं जँचे
...करुणा क्रन्दन के ही बस, उसको मैं गीत सुनाता हूँ।
मैं मन भरकर रो लेता हूँ
पाषाणी को धो देता हूँ
अपने इन अश्रुकणों से भी; पर उसे शान्त कब पाता हूँ।
कब तक बोलेगी नहीं बता?
क्या सच्चे दिल का तुझे पता?
सब गया अरे! तू भी जाती, मैं सिर धुन-धुन पछताता हूँ।
कब तेरा यह पाषाण हृदय
होगा पाषाणी! द्रवित, सदय?
कितनी निर्ममता है देखूँ, मैं धूनी यहाँ रमाता हूँ!
निर्मम पाषाण मनाता हूँ!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृषि-कालेज लायलपुर में विविध परीक्षण

श्री शिवकुमार विद्यालङ्कार

लायलपुर कृषि-कालेज भारत में सुविख्यात शिक्षण-संस्था है। चिरकाल से इस कालेज को देखने की इच्छा थी। अपने साथी प्रो० पूर्णानन्द और डा० निरञ्जनदेव के आमन्त्रण पर हमें मई १९४६ में लायलपुर जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। लायलपुर प्राचीन नगर नहीं है। इसे ब्रिटिश काल में बसाया गया है। पञ्जाब के लेफ्टिनेंट गवर्नर मि० लायल ने इस प्रदेश के जङ्गलों को कटवाकर साफ कराया था। इसके निवासी एकदम असभ्य और जङ्गली थे। चोरी करना उनका पेशा था। प्रारम्भ में जब इस प्रदेश में रेलें चलीं तो उन्हें दिन-दहाड़े लूट लेना उन लोगों का बाएँ हाथ का खेल था। शेरकोट रेलवे जङ्क्शन उन चोरों का प्रधान अड्डा था। वहाँ से रात को गुजरनेवाली ट्रेनों का सही-सलामत गुजर जाना असम्भव होता था। हर रात को मुसाफिर-गाड़ियों के लूटे जाने की कोई न-कोई घटना अवश्य हो जाती थी। किन्तु लायलपुर नगर के बस जाने के बाद चारों ओर की हवा बदल गई। इस नगर को जिले का सदरमुकाम बनाया गया। कारोबार बढ़ने लगे। कई मिलें खुलीं। पञ्जाब के अनेक गाँवों व शहरों के लोग लायलपुर आकर बसने लगे। आसपास के देहातों के लोग अपने जीवन के लिए आवश्यक पदार्थ खरीदने के लिए लायलपुर आने लगे। उनकी रहन-सहन में परिवर्त्तन होने लगा। लायलपुर जिले में नवयुग का उदय हुआ और इसका प्रधान सन्देश-वाहक है वहाँ का कृषि-कालेज।

इस कृषि-कालेज में कृषि के सम्बन्ध में अनेक उपयोगी परीक्षण किए गए हैं। आज हम उनमें से कुछ महत्त्वपूर्ण परीक्षणों पर प्रकाश डालेंगे।

कृषि-कालेज में युद्ध के दिनों में कई महत्त्वपूर्ण परीक्षण किए गए हैं। भारत में युद्धकाल से पूर्व अनेक जड़ी-बूटियाँ विदेशों से आती थीं। उनमें से कुछ का स्थान हमारे देश की ओषधियों में इतना महत्त्वपूर्ण हो चुका है कि आम खयाल यह है कि वे भारत में पैदा होती हैं। मुलहटी यूनानी जुशाँदों व आयुर्वेदिक दवाइयों में बहुत काम आती है। आम खयाल यह है कि यह रत्ती की जड़ है। लेकिन असलियत यह है कि रत्ती की जड़ एक प्रकार का विष है। मुलहटी उसकी जड़ नहीं है। इसकी पैदावार ईरान में होती है। युद्ध के कारण कहीं इसका मिलना कठिन न हो जाए, इस विचार से कृषि-कालेज लायलपुर ने इसका पौधा भारत में लगाने का परीक्षण किया। यह परीक्षण सफल रहा है। वह दिन दूर नहीं, जब कि भारत अपनी मुलहटी की आवश्यकता को यहाँ ही पूरा करेगा। उसे ईरान का मुँह न ताकना पड़ेगा।

कसावा एक और पौधा है, जो ओषधि-निर्माण के काम आता है। यह विदेशी पौधा है। किन्तु अब आवश्यकता मैसूर व सीलोन में इसकी उपज होने लगी है।

साबूदाना भारत में बीमारों का पथ्य है। आम खयाल यह था कि यह भारत में ही पैदा होता है। मगर जब जा पर जापान ने अधिकार किया और भारत में इसका मिलना असम्भव हो गया, तब कृषि-कालेज लायलपुर की आँखें खुलीं उसने साबूदाने की खेती करने की कोशिश की। लेकिन उसे भारत में एक भी स्थान ऐसा नहीं मिला जिसका जलवायु जावा के जलवायु के समान हो और साबूदाने की खेती अनुकूल हो। अतएव यह परीक्षण असफल रहा।

अकरकरा भी एक प्रसिद्ध दवा है जो अनेक योगों में प्रयुक्त है। मञ्जनों में इसका योग प्रायः रहता है। यह वीर्य-वर्द्धक और स्तम्भक भी है। युद्ध से पूर्व यह दवाई इटली से आती थी। पहले इसका भाव दो पैसे तोला था पर आजकल ४) तोला है। ऐसी महँगी ओषधि को भारत में पैदा करने का परीक्षण कालेज ने किया। दो वर्ष के अथक परिश्रम के बाद यह परीक्षण सफल हुआ है और अब भारत में भी अकरकरा की खेती होने लगी है।

बैलेडोना का पौधा टिंचर बनाने के काम आता है। डिजीटेलस का पौधा टिंचर व इंजेक्शन के काम आता है। इनको भी भारत में उपजाया जा रहा है। अजवायन खुरासानी का नाम विलायती अजवायन भी है। इस नाम से ही पता चलता है कि यह विलायती है। यह पीपरमेंट व तेल के काम आती है। अन्य दवाइयों में भी पड़ती है।

ईसबगोल काफी प्रचलित ओषधि है। इसका पौधा जङ्गलों में पाया जाता है। किन्तु अब कालेज के प्रयत्न से इसे रेतीले मैदानों में पैदा किया जा रहा है। इसका मूल्य १८) रु० मन है।

बाबची फुलबहरी की बीमारी की हुक्मी दवाई है। दो पैसे का बाबची का बीज लेकर उसे मक्खन में मिलाकर कर देने से फुलबहरी जाती रहती है। यह भी बाहर से आती थी। अब उसके पौधे को भी भारत में उपजाया जा रहा है। चित्रक की छाल भी हाजमे की दवाइयों में पड़ती है। यह प्रायः यमुना के किनारे की ऊँची-नीची भूमि में होता है। अब खेती अब मैदानों में की जा रही है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पैरीथ्रम के बीज को पहले जखीरे में उगाया जाता है। जब बीज से पौधे निकल आते हैं तब उन्हें चित्र में प्रदर्शित टोकरियों में रखकर मरी आदि पहाड़ियों में रोपने के लिए ले जाया जाता है।

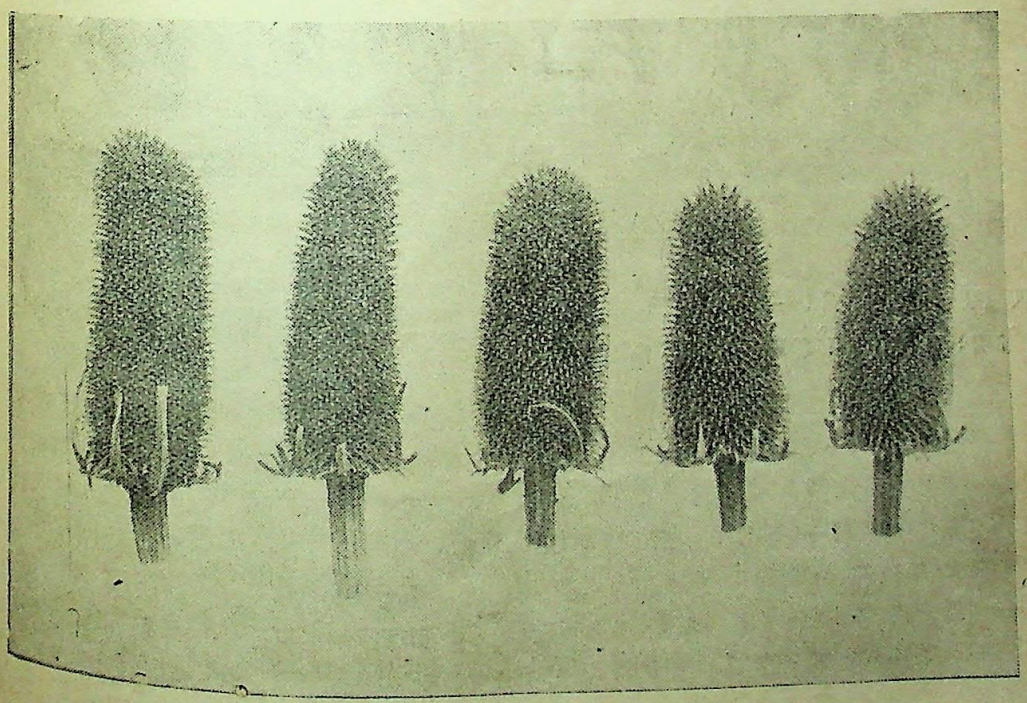

काँटेदार बुर्श के सिट्टे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

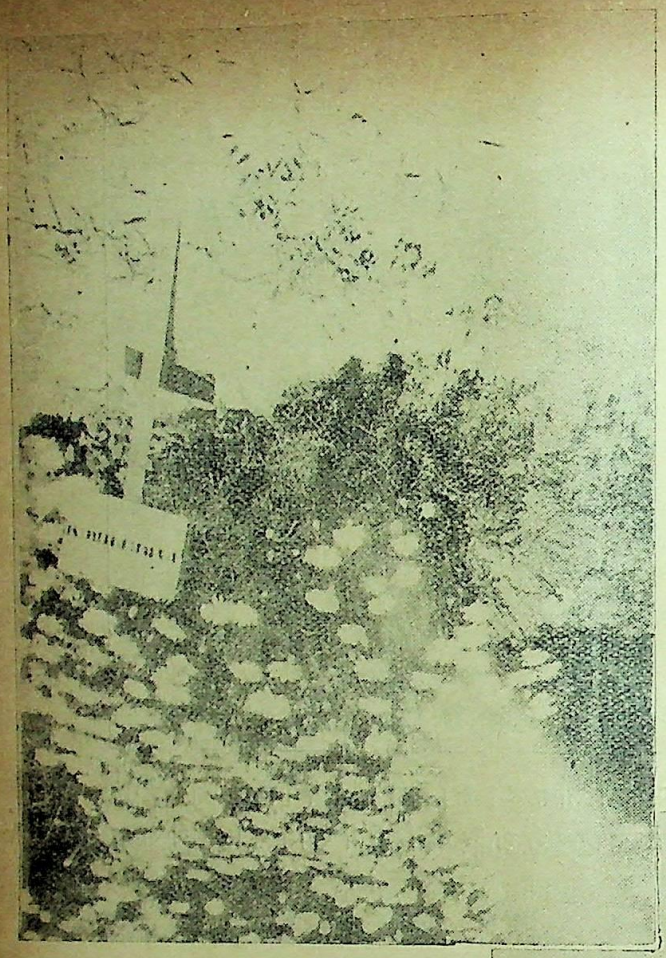

पैरीथ्रम की एक फुलवारी में पैरीथ्रम के खिले हुए फूलों का एक दृश्य। यह फुलवारी एक पहाड़ी पर है।

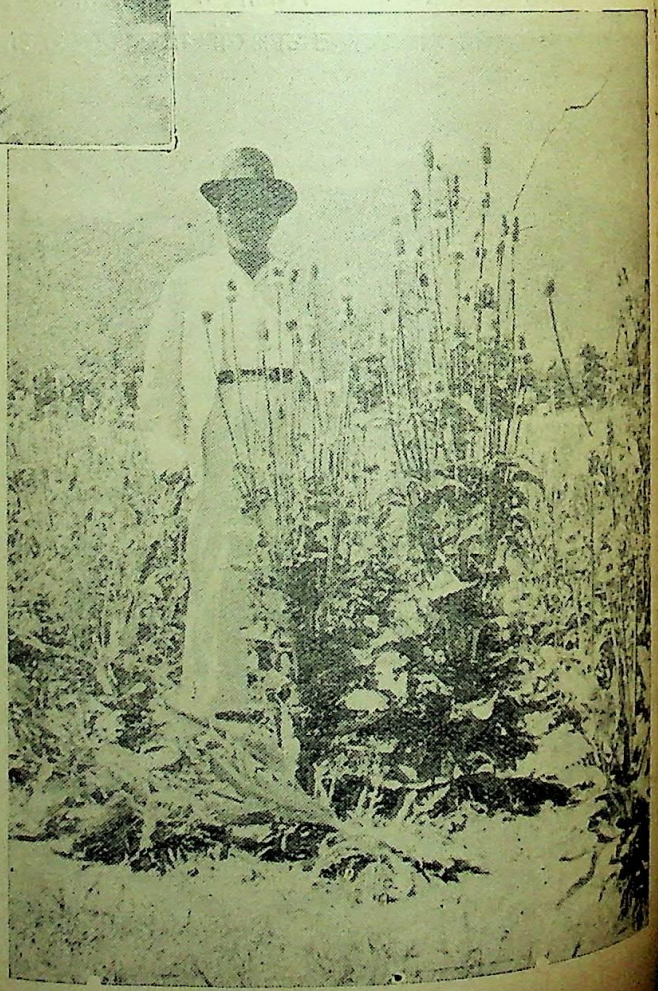

काँटेदार बुर्श का एक खेत—बीच में इस विभाग के अध्यक्ष श्री दुर्गादास सूरी खड़े हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परीथ्रम व काँटेदार बुर्श

दूसरे देशों के अनेक पौधे भारत में लाकर उपजाने के जो परीक्षण लायलपुर कृषि-कालेज ने किए हैं, उनमें सबसे सफल परीक्षण परीथ्रम और काँटेदार बुर्श के रहे हैं।

परीथ्रम का फूल कीड़े मारनेवाली दवाइयों के काम में आता है। फ्लिट (Flit) इसी पौधे के फूलों से तैयार किया जाता है। पहले फ्लिट जापान व अमेरिका से आता था। मगर अब परीथ्रम की खेती भारत में होने लगी है इसलिए फ्लिट भारत में भी तैयार होगा। परीथ्रम की खेती मरी, पालमपुर व कुल्लू में होती है। लाहौर के पास बुटा नामक स्थान में इसके फूलों से फ्लिट भी तैयार किया जा रहा है।

'काँटेदार ब्रुर्श' एक प्रकार का काँटेदार सिट्टा होता है। इस सिट्टे के दाँत इतने मजबूत होते हैं कि धातु के दाँत भी इतने मजबूत न होते होंगे। यह सिट्टा ऊनी कपड़े की गर्द निकालने के काम आता है। युद्ध से पहले यह जर्मनी, चीन और आस्ट्रेलिया से आता था। लेकिन इसकी खेती भारत के पहाड़ी इलाकों में हो रही है। इसकी खेती से किसान आजकल बड़ा मुनाफा कमा रहे हैं। इसको भारत में उपजाने के लिए लायलपुर कृषि-कालेज के वैज्ञानिकों को लगातार ८ वर्ष तक परीक्षण करने पड़े।

मछली-पालन

महात्मा गांधी ने आज से कुछ मास पूर्व भारत के वायसराय के नाम भारत की खाद्य-स्थिति सुधारने के सम्बन्ध में जो पत्र लिखा था, उसमें मछली-पालन की ओर भी उनका ध्यान आकृष्ट किया गया था। लायलपुर कृषि-कालेज में हमने देखा कि मछलियाँ किस तरह पाली जाती हैं। शीशे के बने हुए चौड़े-चौड़े और ऊँचे केसों में पानी भर दिया जाता है। इस पानी को समय-समय पर बदलने की व्यवस्था रहती है। ये केस ऊपर से बन्द रहते हैं। इसलिए इनमें कृत्रिम गैस पहुँचाने का प्रबन्ध किया जाता है। इसी गैस से पानी में मछलियाँ जीवित रहती हैं। जिस नमूने की मछली का पालन करना हो उसके अण्डे केसों में डाल दिए जाते हैं। उन अण्डों से जो मछलियाँ निकलती हैं, उन्हें एक तालाब में डाल दिया जाता है। इस तालाब से पञ्जाब की जो फौजी व सिविल संस्थाएँ मछलियाँ लेना चाहें, अधिकारियों से आज्ञा प्राप्त करके ले आ सकती हैं।

मछली-विभाग में हमें प्रधानतया तीन किस्म की मछलियाँ देखने को मिलीं। पहले प्रकार की मछली का नाम 'रोहू' है। यह काफी मांसल होती है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह जलीय घास पर जीवित रहती है, अपने से छोटी मछलियाँ खाकर नहीं। इसलिए मछली खानेवाले इस मछली को खाना बहुत पसन्द करते हैं।

दूसरे ढङ्ग की मछली चमकदार होती है। यह अमूमन् खेतों में मिलती है। इसे सिर्फ सजाने के काम में प्रयुक्त किया जाता है। शीशे का एक गोल अथवा चौकोर मर्तबान लेकर उसे साफ पानी से भर दीजिए। उसमें इस जाति की मछली को डाल दीजिए तो बड़ी सुन्दर दिखाई देती है।

तीसरे ढङ्ग की मछली हमने वह देखी जो बहुत छोटी होती है और जिसकी दुम पर एक काला बिन्दु होता है। यह मछली बड़े काम की होती है। यह तालाबों में पैदा होनेवाले अस्वास्थ्यकर कीड़ों को खा जाती है। जिन गाँवों अथवा शहरों के आसपास गढ़ों में पानी जमा हो जाता हो और उस पानी में मलेरिया के मच्छर पैदा हो जाते हों, उनमें इस किस्म की मछलियों को छोड़ दीजिए। बस यह समझिए कि मलेरिया का एक भी मच्छर जीवित न बचेगा। यह मछली मलेरिया के मच्छर की जानी दुश्मन है।

कोल्ड स्टोरेज

गर्मियों का मौसम था। मैं और मुझे कालेज दिखानेवाले सूद साहब दोनों परिश्रान्त थे। अपनी थकान मिटाने के लिए हम एक भवन में पहुँचे, जिसे 'कोल्ड स्टोरेज' कहा जाता है। इसके अध्यक्ष एक सरदार साहब हैं। सबसे पहले उन्होंने मई महीने में हम लोगों को माल्टा तराशकर खिलाया। माल्टा इतना ठण्ढा था कि इसके चूसते ही हमारी सारी गर्मी शान्त हो गई। उसमें किसी प्रकार की बदबू नहीं थी। उसे चूसने के बाद ऐसा लगता था, जैसे कि हमने एकदम ताजा माल्टा चूसा हो। इस माल्टे को चूसने के बाद हम समझ गए कि 'कोल्ड स्टोरेज' में क्या होता है।

आम वर्षा ऋतु का फल है। सन्तरा सर्दियों में मिलता है। लेकिन यदि हम सर्दियों में आम और वर्षा ऋतु में सन्तरा प्राप्त करना चाहें तो हमें 'कोल्ड स्टोरेज' की शरण में जाना पड़ेगा। मौसम के न होते हुए भी यदि हम कोई फल चखना चाहते हैं तो उसे सुरक्षित रखने का प्रबन्ध 'कोल्ड स्टोरेज' में किया जाता है।

लोहे की बड़ी-बड़ी आलमारियों में फलों से भरी पेटियाँ रख दी जाती हैं। बिजली की सहायता से 'फ्री आन' नामक गैस से विभिन्न फलों को विभिन्न तापमानों में ठण्ढक दी जाती है। फल स्वरूप मौसम के न होने पर भी कई फल सुरक्षित रह जाते हैं और वे गलते-सड़ते नहीं।

'कोल्ड स्टोरेज' के उपाध्यायों ने अब तक जो परीक्षण किए हैं, उनके अनुसार निम्न फल असली मौसम के बाद भी निम्न तापमान में निम्न समय तक सुरक्षित रक्खे जा सकते हैं:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेब—यह कई किस्म का होता है। इसकी हर किस्में ३२°-३५° फार्न हाइट तापमान में २१, २४ व २६ सप्ताह तक सुरक्षित रक्खी जा सकती हैं।

नाशपाती—यह भी कई किस्म की होती है। इसकी विभिन्न किस्में ३२°-३५° फार्न हाइट के तापमान में १७, २१ व २२ सप्ताह तक रक्खी जा सकती हैं।

आड़ू—आड़ू को मौसम के बाद ३२°-३५° एफ० तापमान पर ४ सप्ताह तक रक्खा जा सकता है। उसमें किसी किस्म की बदबू पैदा न होगी।

अङ्गूर—अङ्गूर की दो किस्में होती हैं हैथा व किशमिश। हैथा अङ्गूर को ३२°-३५° एफ० तापमान में ७ सप्ताह तक तथा किशमिश अङ्गूर को इतने ही तापमान पर ६ सप्ताह तक सुरक्षित रक्खा जा सकता है।

माल्टा—माल्टे की लगभग ४ किस्में होती हैं। [illegible] से बालेंशिया किस्म का माल्टा ३६°-३९° एफ० तापमान पर १९ सप्ताह तथा साधारण माल्टे को इसी तापमान पर [illegible] सप्ताह तक रक्खा जा सकता है। दो और किस्म के [illegible] को इसी तापमान पर १३-१३ सप्ताहों तक सुरक्षित रक्खा [illegible] सकता है।

सन्तरा—सन्तरे दो किस्म के पाए जाते हैं—पञ्जाबी [illegible] नागपुरी। पञ्जाबी सन्तरे को ३६°—३९° एफ० तापमान पर ५ सप्ताहों तक तथा नागपुरी को इसी तापमान पर [illegible] सप्ताहों तक रक्खा जा सकता है।

नीबू—योरपीय नीबू ३६°-३९° एफ० तापमान [illegible] ९ सप्ताहों तक सुरक्षित रक्खा जा सकता है।

आम—लँगड़ा आम ४५°-४८° एफ० तापमान [illegible] ५ सप्ताह तक सुरक्षित रक्खा जा सकता है।

— —

क्या न मुझे स्वीकार करोगी ?

श्री छोटेलाल भारद्वाज

क्या न मुझे स्वीकार करोगी ?
बलिदानों की इस बेला में
क्या न मुझे स्वीकार करोगी ?

× × ×

अयि शैवालिनि ! आज तुम्हारी
स्नेह-लहर से स्निग्ध हुआ हूँ ;
स्वर्ग-सुखों की स्वर्ण-चिता में
पहले-पहल विदग्ध हुआ हूँ;
लहरों की छवि में मन्दाकिनि !
क्या न मुझे स्वीकार करोगी ?
बलिदानों की इस बेला में
क्या न मुझे स्वीकार करोगी ?

कभी न मैंने प्राण ! अभी तक
सम्बल की भिक्षा पाई है;
भिक्षा में सम्मान मिटा दूँ
यह न कभी शिक्षा पाई है;
इस निःसम्बल स्वाभिमान-पथ
पर न मुझे क्या पार करोगी ?
बलिदानों की इस बेला में
क्या न मुझे स्वीकार करोगी ?

गोरे हाथों का कुंकुम अब
पुलक-पुलक मस्तक पर आया;
माँ के पय से रक्त बरसकर
आँखों में सुरूर बन छाया;
रण की इस उन्मद बेला में
क्या न मुझे तय्यार करोगी ?
बलिदानों की इस बेला में
क्या न मुझे स्वीकार करोगी ?

कर में खड्ग, हृदय में तुमको
रख जय समर जीतकर आऊँ
अहे विधात्री ! कम्पित स्वर में
नव जीवन के गीत सुनाऊँ।
प्रेम अमोल बनेगा जब, तब
क्या न मुझे तुम प्यार करोगी ?
बलिदानों की इस बेला में
क्या न मुझे स्वीकार करोगी ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाषा-विषयक लक्ष्य

डाक्टर वा० वा० देवधर, एम० बी० बी० एस०

विद्यापीठ के पाठ्यक्रम में मराठी भाषा को माध्यम स्वीकृत करने के कारण नागपुर विद्यापीठ को मराठी-साहित्य-सम्मेलन के अधिवेशन में धन्यवाद दिया। मैं उससे सहमत नहीं हूँ और इसकी भूमिका विशद करना चाहता हूँ। हिन्दुस्थान में सैकड़ों भाषाएँ और अनेकानेक बोलियाँ प्रचलित हैं। राष्ट्रभाषा के स्थान पर हमारी हिन्दी-हिन्दुस्थानी भी सर्वसम्मति से विद्यमान हुई है। दुनिया में एक जगद्भाषा भी प्रचलित करने की कोशिश की जा रही है। मैं पूछता हूँ कि प्रादेशिक बोलियाँ, प्रान्तीय भाषाएँ, हिन्दुस्थान की राष्ट्रभाषा और दुनिया की जगद्भाषा इनका परस्पर सम्बन्ध और क्षेत्र क्या है?

अपनी भाषा—मातृभाषा। पैदा होने से जिस भाषा की आवाज अपने कानों में पड़ती है, जो अपने में एकरूप होकर हमारे साथ-साथ फलती-फूलती और बढ़ती है, जिसका उच्चारण, व्याकरण, वाक्यचार अपने में आप-से-आप स्फुरित होते हैं और जो अपने से बिलकुल अभेद रूप अपने रोएँ-रोएँ में अनुभूत स्वयंभू भाषा है वही मातृभाषा, माँ की बोली है। सभी विदित है कि बोलचाल की भाषा और लिखित भाषा में कुछ-न-कुछ फर्क रहता है। कहते हैं कि बारह-बारह कोसों पर स्थान भिन्न होती है। प्रादेशिक बोलियाँ जो परस्पर कुछ भिन्नता रखती हैं वे जुटकर आपस में लेखन की भाषा निश्चित करती हैं और प्रत्यक्ष बोलचाल की भाषा में फर्क रहते हुए भी एक लिखित भाषा की स्थापना होती है। इससे लोक-व्यवहार आसान होता है।

हम जिसे मराठी भाषा—लिखित मराठी भाषा—कहते हैं वह पुणे की, 'केसरी' की, 'निबन्धमाला' की, 'काल' की मानी जाती है। कारवार की गोवे की कोंकणी, वऱ्हाड़, मध्यप्रान्त, मराठवाड़ा इन सबकी प्रादेशिक मराठी तथा देहातियों और अनपढ़ों की मराठी इनमें इतना बड़ा भेद होता है कि पुणे का आदमी यदि कोंकण में या वऱ्हाड में जाए तो वहाँ की बोली को ठीक नहीं समझेगा। यह सब होते हुए भी ये सब बोलियाँ अपने को मराठी ही कहती अपनी लिखने की भाषा मानती हैं। महाराष्ट्र की भाषा या महाराष्ट्र साहित्य शब्द इसी लिए सार्थक हैं। देश और काल के अनुसार भाषा में फर्क होना अनिवार्य है। तुलसीदास की हिन्दी या ज्ञानेश्वर की मराठी आज दुर्बोध होती जा रही है। इन्दौर, ग्वालियर, बड़ोदा, या कारवार, आदि दूर-दूर प्रान्तों की मराठी भाषा में भी फर्क होता है। यथा राजा राजा। इस न्याय से भी हिन्दुस्थानी भाषाओं में संस्कृत, फारसी, अरबी भाषाओं का प्राचीन काल में मिश्रण हुआ और आज अँगरेजी का असर उन पर पड़ता जा रहा है। छल-बल से, राजकीय दबाव से, कानून या गैरकानूनी कार्रवाई करके भाषा तबाह या कमजोर की जा सकती है। शिक्षा के माध्यम के पद से हटाकर तो किसी भी भाषा का गला घोंटा जा सकता है। निजाम रियासत में उर्दू और गोमान्तक में पोर्तुगीज के सिवा सभी भाषाओं की हालत बुरी है। वहाँ की मराठी में बहुतेरे उर्दू या पोर्तुगीज शब्द घुस गए हैं। यह अनिवार्य भी है। भाषा के सीमाप्रान्तों में तो दो भाषाओं का मिश्रण अपरिहार्य ही है। मराठी में गुजराती, हिन्दी, उर्दू, कानडी, पोर्तुगीज आदि भाषाओं का सीमाप्रान्तों में मेल हुआ है। सीमाप्रान्तों के मराठी-भाषा-भाषी लोग घर में मराठी में और बाहर दोनों भाषाओं में काम-धाम करते हैं। बाहर की पड़ोसिनी भाषा का असर घर की मराठी पर होगा ही। अँगरेजी तो भारत की सभी भाषाओं पर प्रभाव डाल रही है। मराठी के केन्द्र पूणा विभाग से जितना दूर हम जाएँ उतना मराठी के शुद्ध स्वरूप में अन्य भाषाओं का मिश्रण दिखाई देता है। जानकर या अनजान से यह मिश्रण बढ़ता ही जाता है, यहाँ तक कि सीमाप्रान्त लाँघने के बाद वही मिश्र भाषा धीरे-धीरे गुजराती, कानड़ी या हिन्दी बन जाती है। सीमा पर रहनेवाले लोग तो सीमा की दोनों तरफ की भाषाएँ सहज और आसानी से बोल और लिख भी सकते हैं। ऊपर दी हुई मातृभाषा की व्याख्या लेकर यह कहना कठिन होगा कि आखिर उनकी असली मातृभाषा क्या है। परम्परागत अभिमान से वे कहेंगे कि हमारी मातृभाषा अमुक है पर सच बात तो यही होगी कि दोनों भाषाएँ उनकी मातृभाषाएँ हैं। यह विभाग मराठी का है या कानड़ी का, यह मराठी का है या गुजराती का, यह मराठी का है या हिन्दी का—ये विवाद सीमाप्रान्तों में हमेशा चलते हैं। इसका भी कारण यही है कि वहाँ पर किसी भी एक भाषा का निर्विवाद प्राबल्य नहीं होता और प्रायः सभी लोग दोनों भाषाओं का उपयोग कर सकते हैं, करते भी हैं।

संयुक्त महाराष्ट्र का आन्दोलन सफल हुआ तो सब मराठी-भाषा-भाषी विभाग थोड़े ही समय में एकत्र और सङ्गठित हो जाएँगे, इसमें सन्देह नहीं। महाराष्ट्र विद्यापीठ भी शीघ्र स्थापित होगा परन्तु आज का प्रश्न यह है कि संयुक्त महाराष्ट्र और उसकी मराठी भाषा का स्वतन्त्र हिन्दुस्थान और उसकी राष्ट्रभाषा से कुछ वास्ता है या नहीं। जैसे कारवार से खानदेश और बम्बई से हैदराबाद तक सब प्रादेशिक बोलियों की पताकाएँ मराठी के झण्डे को प्रणाम करती हैं, वैसे ही मराठी को राष्ट्रभाषा के ध्वज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के आगे सिर झुकाना चाहिए या नहीं? यह भी सम्भव है कि कभी-न-कभी एक मानवी जगद्भाषा भी प्रचलित होगी। ऐसे समय पर जब दुनिया की सभी बोलियाँ और भाषाएँ उस जगद्-भाषा के सामने लीन हो जाएँगी तब सिर्फ मराठी को ही नहीं, राष्ट्रभाषा को भी उसको प्रणाम करना चाहिए या नहीं? सारांश यह कि 'मायबोली' को मातृभाषा का, मातृभाषा को राष्ट्रभाषा का और राष्ट्रभाषा को जगद्भाषा का लोहा मानना, उसका सम्मान करना उचित है या नहीं? इससे उनकी इज्जत और मान बढ़ता है या घटता है?

क्या इस बारे में कुछ मतभेद हो सकता है? विवाद हो तो इस पर होगा कि मायबोली, मातृभाषा आदि भाषोपभाषाओं की व्याप्ति और वर्चस्व कहाँ तक रहेगा और उनकी सीमा-रेखाएँ कहाँ होंगी। अपने हिन्दुस्थान में यह प्रश्न बहुत महत्त्वपूर्ण है। अशान्तता और मृतशान्तता में हमने शतकानुशतक व्यतीत किए हैं। दुनिया की घुड़-दौड़ में हम पीछे रह गए हैं। हमें जीवित रहना हो तो पाश्चात्य और पौरस्त्य देशों में जो ज्ञान आज मौजूद है वह एक क्षण में इस देश में ले आना चाहिए। सहस्रों युवक, शास्त्रवेत्ताओं, साहित्यिक, संशोधक, अर्थपति और राजकार्य-धुरन्धर इस काम में जुट जाने चाहिएँ। अनुवाद करो, रूपान्तर करो, अनुकरण करो या चोरी करो, पर इँग्लैंड, फ्रान्स, अमेरिका, जर्मनी, जपान, रूस आदि देशों में से ज्ञान-विज्ञान के घट भर-भरकर हिन्दुस्थान में आने चाहिएँ। एक काल था कि हिन्दुस्थान ने इन देशों को ज्ञानामृत पिलाकर सजीव बनाया; अब हिन्दुस्थान की इन देशों से सबक लेने की बारी आई है! ये दिन भी नहीं रहेंगे। कोई दिन सास के और कोई दिन बहू के होते ही हैं।

पर अपने पास समय है कहाँ? दुनिया के कई देश इतने आगे बढ़े हैं कि वे प्रायः दृष्टि के पथ से भी ओझल होते जा रहे हैं। अब दौड़ने में क्या रक्खा है? ऐसा नैराश्य और निष्क्रियता भी आ सकती है। पर हमको हिम्मत नहीं हारनी चाहिए। चालीस करोड़ जो एक दिल से और एक लक्ष्य से काम में लगें तो क्या नहीं कर सकेंगे? दुनिया के बराबर आगे भी बढ़ना हम अशक्य क्यों समझें? क्या जर्मनी, जापान, तुर्किस्तान और रशिया पहले से ही इतने ज्ञानविज्ञान-सम्पन्न थे?

क्या जर्मनी ने आपस के झगड़े मिटाकर और सङ्गठित होकर, या जापान ने दूसरे देशों से विशेषज्ञ लाकर, क्या तुर्किस्तान ने यूरपीय आचार-विचार अपनाकर, क्या रूसी जनता ने नया तत्त्वज्ञान बनाकर अपने-अपने देशों को संसार में प्रथम श्रेणी का नहीं बनाया? कितना समय लगा उनको? यही बीस से पचास साल! जो कार्य सात-आठ करोड़ आबादीवाले जर्मनी को सम्भव हुआ, कुरान को ही सब कुछ माननेवाले इस्लामी तुर्किस्तान को सम्भव हुआ, भात और मछली खानेवाले बौने जापान को सम्भव हुआ, विविध भाषाएँ, विविध धर्म, विविध संस्कृति से टूटे-फूटे हजारों मील फैले हुए सुस्त रूसी रीछ को सम्भव हुआ सो क्या अपने कर्तृत्ववान् हिन्दुस्थान को—जो द्वारा एक बार शिरोधार्य किए जानेवाले हिन्दुस्थान को—अब है? हमने आलस्य से अपना उच्च पद खो दिया तो युक्ति, बुद्धि और शक्ति से उसे फिर क्यों प्राप्त नहीं कर सकते?

हमारा अब पहला लक्ष्य है बौद्धिक, औद्योगिक सांस्कृतिक क्षेत्रों में अन्य देश जहाँ तक पहुँचे हैं वहाँ तक विद्युत् वेग से पहुँचना। दुनिया के उपलब्ध ज्ञान-भाण्डार एक साथ जैसे के वैसे अपने हाथ में आ जाएँ तो आगे बढ़ना हमारे लिए ठीक तरह जानते हैं। दुनिया के संशोधकों से वे अच्छी तरह मुकाबला करेंगे और उनसे सहकार्य करके हिन्दुस्थान को पीछे नहीं पड़ने देंगे। हमारे संशोधक किसी भी बात में कम नहीं हैं। सुसन्धि और स्वास्थ्य उनको मिलता तो दस-बीस सदी तक जारी हुई संशोधन-परम्परा खण्डित ही न होती। ज्ञान तथा विज्ञान के लिए हिन्दुस्थान को मारे-मारे फिरने की बारी भी नहीं आती। गतं न शोच्यम्! पर भविष्य में हमें क्या करना चाहिए? हमको आसान और सीधे पथ पर ही चलना चाहिए। और वह है दुनिया का ज्ञान-विज्ञान यथाशक्ति हिन्दुस्थान में ले आना। मौलिक संशोधन और स्वतन्त्र प्रज्ञा से वही या तत्सदृश ज्ञान हमारे संशोधक प्राप्त कर सकते हैं। उसमें देर लगेगी और दौड़ती दुनिया के बराबर आने में देर बिलकुल असमर्थनीय है। अन्य देशों को जो ज्ञान हासिल करने को पाँच छः सौ साल लगे उसे हमारे संशोधक और मजदूर निःसंशय सौ-दो सौ सालों में हस्तगत कर सकते हैं पर इतने तो सौ बरस की क्यों, सौ दिनों की भी फुरसत नहीं! कौन जानेगा कि सौ दिनों में जगत् कितना और भी आगे बढ़ेगा। जगत् में जो प्रगति हुई है उसे आत्मसात् करके दुनिया के संशोधकों के समकक्ष बैठना हमारे लिए अनिवार्य है।

अब सवाल यह है कि संसार में बिखरे हुए ज्ञानविज्ञान के स्रोत हिन्दुस्थान में कौन लाएगा? इसके लिए हमको देने माँगने होंगे! एक क्षण में हिन्दुस्थान में दुनिया के ज्ञान खींच लानेवाला भगीरथ हमको मिले तो वह भी चाहिए, पर यह अव्यवहार्य होगा और व्यवहार और शक्याशक्यता पर दृष्टि रखकर हमें कुछ काल निश्चित करना पड़ेगा। चाहो तो दस साल की आयोजना कहो! 'संसार की सभी भाषाओं में अद्यावधि ज्ञानविज्ञान की शाखोपशाखाओं का जो ग्रन्थ-भाण्डार है उसमें से चुने हुए उत्कृष्ट ग्रन्थों का भाषान्तर या रूपान्तर साल में करने के लिए हमें शास्त्रज्ञ चाहिए,' यह विज्ञापन हमें करना पड़ेगा। पर अब जटिल समस्या यह खड़ी होती है। हिन्दुस्थान में लिखित भाषाएँ भी दस-बीस प्रचलित हैं। जर्मन या रूसी ग्रन्थ का अनुवाद करना हो तो क्या वह दस-बीस भाषाओं में होगा? यह महँगा होगा, दिक्कत होगी, देर की, हिम्मत का और पैसे का अपव्यय होगा,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत]

है नहीं, हिन्दुस्थान की एकता की दृष्टि से यह अवाञ्छनीय है। हिन्दुस्थान एक राष्ट्र था, एक राष्ट्र है और एक राष्ट्र रहेगा। हिन्दुस्थान एक राष्ट्र है, इसी बात के सबब कि उसमें प्राचीन काल में संस्कृत, और पारतन्त्र्य के काल में उर्दू और अँगरेजी, और भविष्यकाल में राष्ट्रभाषा का प्रयोग आसेतुहिमाचल उच्चारण और लेखन के लिए रहा है, और रहेगा। प्राचीन काल में काशी के महामहोपाध्याय, काश्मीर के पण्डित और तेलङ्ग के अय्यर सभी ने अपने-अपने अध्ययन और संशोधन संस्कृत भाषा में ही किए। उसी तरह बनारस विद्यापीठ, अलीगढ़ विद्यापीठ और महाराष्ट्र विद्यापीठ सबको जुटकर एक ही राष्ट्रभाषा में ज्ञानविज्ञान का व्यवहार करना चाहिए। सबको हिल-मिलकर एक राष्ट्रभाषा का ही कोष भरना चाहिए, उसे ही समृद्ध करना चाहिए। उतना परिश्रम और बड़ी कार्यक्षमता इसी मार्ग से प्राप्त होगी। इसी एक राष्ट्र की दृष्टि से नागपुर विद्यापीठ ने मराठी माध्यम को जो मान्यता दी है, इसे मैं—'पुच्छ प्रगति' कहता हूँ और उसके अभिनन्दन में मैं सहमत नहीं हूँ।

अखिल मानवों की एक भाषा, कम से कम लिखने की भाषा, यह ध्येय अलबत्ता उच्च है। 'टॉवर ऑफ बेबल' के जमाने में अल्ला-ताला ने मानवों में भाषा-भिन्नता की फूट डाल दी और मनुष्यों को अलग-अलग बनाकर उनमें झगड़ोरी और झगड़े पैदा किए और अपने आसन को सुस्थिर किया। दुनिया के मानव एकत्र आकर, एक जबान होकर, एक ही भाषा का व्यवहार करके ईश्वर को शह पहुँचाएँ तो क्या हर नर का नारायण होने की बात नहीं होगी? इस दृष्टि से प्रयत्न हो रहे हैं और वे सफल भी होंगे, ऐसी आशा है। उस समय सभी प्रकार का उच्च ज्ञान उसी जगद्भाषा के ज्ञान-भाण्डार में सम्मिलित होगा। किन्तु इस बीच हिन्दुस्थान जैसे देश को अपने ज्ञानकण भिन्न-भिन्न प्रादेशिक भाषाओं में बिखरा नहीं देने चाहिएँ। जो अल्पस्वल्प मधु-बिन्दु मिलें वे एकत्र जमा होकर जाएँ तो संसार को एक बड़ा भारी ओतप्रोत भरा हुआ मधु-कलश दिखाया जा सकता है कि जिसकी मधुरता और सुगन्ध पर लुब्ध होकर अन्य देशों के ज्ञान-पिपासु विद्वान् लोग अपने प्यारे हिन्दुस्थान की ओर फिर आकर्षित होंगे। एक समय संस्कृत भाषा के छत्ते ने यह काम किया था, अब राष्ट्रभाषा को वह काम करना पड़ेगा। इसी लिए मैं आग्रह से कहता हूँ कि उच्च ज्ञान का, विद्यापीठीय शिक्षा का मधुरस इधर-उधर की भाषाओं में तितर-बितर नहीं करना चाहिए। उसे राष्ट्रभाषा की अमृतकलश में भरना उचित होगा। जब समय आएगा तब यह अपनी चालीस करोड़ की जननी अभिमान से ऊँचा रखती हुई अपने सुपुत्रों के सुयशों से भरा हुआ कलश मानवीय भाषा के दिव्य प्रासाद में सम्मान से रखेगी और शायद उसकी आभा से वह प्रासाद भी उज्ज्वल हो उठेगा।

प्रादेशिक और प्रान्तीय भाषाएँ भी अपना-अपना स्थान रखती हैं। इससे भी आगे बढ़कर मैं कहूँगा कि बोलचाल की जबान और जाति और कौम की बोली भी शिक्षा में महत्त्व की होती है। हम कितना भी क्यों न चाहें पर खण्डप्राय हिन्दुस्थान के चालीस करोड़ की राष्ट्रभाषा वही मातृभाषा होना प्रायः असम्भव है। छोटी-छोटी बोलियों को हम उपेक्षित करेंगे तो भी कुछ बोलियों का प्राथमिक शाखाओं में उपयोग करना अनिवार्य ही है। भले उनका लिखित भाषाओं में स्थान न हो, पर लिखित भाषा को समझाने में विशिष्ट बोलियों की जरूरत होगी ही।

सेकण्डरी विद्यालयों के पाठ्यक्रम में प्रान्तीय भाषा का माध्यम ठीक लगता है। राष्ट्रीय स्वाभिमान जाग्रत् होने के कारण माध्यम के स्थान पर से अँगरेजी जैसी परदेशीय भाषा उखाड़ फेंकी जा रही है। विद्यालयीन शिक्षाक्रम में राष्ट्रभाषा का अभ्यास जरूर होना चाहिए। इस पाठ्यक्रम में भी राष्ट्रभाषा का माध्यम रखने में कोई आपत्ति है या ऐसा करना मातृभाषा का अवमान है, ऐसी बात नहीं, लेकिन छात्रों की दृष्टि से मातृभाषा का माध्यम उनको आसान लगेगा और मैट्रिक परीक्षा तक मातृभाषा को माध्यम मानना हानिकर नहीं है।

हिन्दुस्थान एक राष्ट्र है, यह हमारा दावा यदि सच है, प्रान्तोपप्रान्तों में और विभागोपविभागों में भिन्न-भिन्न पाकिस्तान यदि हम नहीं चाहते तो उच्च-शिक्षा राष्ट्रभाषा में ही होनी चाहिए। अखिल हिन्दुस्थान के विद्यापीठों में प्राचीन काल में संस्कृत माध्यम था, अँगरेजों ने अँगरेजी माध्यम लादा, अब भविष्य में राष्ट्रभाषा का माध्यम ही सभी विद्यापीठों में जारी होना चाहिए। हिन्दुस्थान एक है, उसका तत्त्वज्ञान, ज्ञान-विज्ञान, सांस्कृतिक, सामाजिक और राष्ट्रीय हैसियत एक ही उच्च सतह पर है, यह विलोभनीय दृश्य दिखाना हो तो सभी हिन्दी विद्यापीठों के शिखर एक ही राष्ट्रभाषा के रङ्ग से चमकने चाहिएँ। यहाँ तक कि महाराष्ट्र विद्यापीठ, गुजरात विद्यापीठ और अलीगढ़ विद्यापीठ सर्वत्र राष्ट्रभाषा ही माध्यम होना चाहिए। एक ही भाषा में, एक ही लिपि में, हिन्दुस्थान के उच्च विद्यापीठीय ज्ञान परिवर्तित होने चाहिएँ। दूसरी भाषा नहीं, दूसरी लिपि नहीं।

अब तक मैंने राष्ट्रभाषा और राष्ट्रलिपि ये शब्द प्रयोग किए हैं। 'हिन्दी-हिन्दुस्थानी भाषा, और देवनागरी लिपि' ऐसा स्पष्ट उल्लेख मैंने जान-बूझकर टाला है। विद्यापीठीय और अन्य उच्च शिक्षा और उच्च ज्ञान हिन्दुस्थान में एक ही भाषा में और एक ही लिपि में अङ्कित होना चाहिए। यही मेरा आग्रह है, चाहे वह भाषा और लिपि मराठी, बङ्गाली या अन्य कोई क्यों न हो। मैं उसके खिलाफ नहीं। निदान इस लेख में उसकी चर्चा उद्दिष्ट नहीं। बहुसंख्यक लोगों की समझ में आनेवाली, हिन्दी-हिन्दुस्थानी राष्ट्रभाषा मानी जाती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, यह ठीक है। राष्ट्राभिमान-दर्शक और ध्वनिशास्त्र के नियमों से सुसम्बद्ध देवनागरी ही हिन्दुस्थान की एकमेव लिपि हो सकती है, इसमें भी आशङ्का नहीं होनी चाहिए। किन्तु इसमें देश के विद्वान् लोगों और विद्यापीठों का बहुमत ही हमको शिरोधार्य है। आखिर बात यह है कि राष्ट्रभाषा और राष्ट्रलिपि का राजमुकुट जिस किसी भाषा और लिपि के सिर पर रक्खा जाए उसी भाषा और लिपि के सहारे हिन्दुस्थान की चालीस करोड़ लेखनियाँ और लेखक अपना ज्ञान-विस्तार करें। सभी विद्यापीठों को उसी भाषा और लिपि में ज्ञान-विज्ञान का अध्ययन-अध्यापन करना चाहिए। उसे ही माध्यम मानना चाहिए।

आप कह सकते हैं हिन्दी-हिन्दुस्थानी भाषा मराठी या बँगला जैसी समृद्ध नहीं। कदाचित् यह सच भी होगा। पर इस झगड़े का आज समय नहीं। क्या हिन्दी, क्या मराठी, क्या बँगला सभी अँगरेजी या फ्रेंच के सामने किस झाड़ की पत्ती हैं। घुड़ दौड़ में हिन्दी का या मराठी का एक कान आगे है या पीछे, यह बात महत्त्व की नहीं। चाहें मराठी को राष्ट्र-भाषा कीजिए या बँगला को, किसी को भी राष्ट्रभाषा कीजिए और उसे समृद्ध कीजिए। आज वह कङ्गाल भी हो तो चालीस करोड़ ज्ञान-विज्ञान के कारीगर उसकी सेवा में लग जाने पर संस्कृत भाषा के एक काल के तेज से अब भी हमारी राष्ट्रभाषा जगमगा उठेगी और संसार उससे उजाला पाएगा।

मुसलमानों का पाकिस्तान इस राष्ट्रभाषा के क्षेत्र में भी ज्ञानतः या अज्ञानतः रोड़े अटकाया करता है। देवनागरी के मुकाबिले में अशास्त्रीय और पराई अरबी लिपि का उस आग्रह और अरबी-पर्शियन मिश्रित उर्दू जबान का फैलाव सूचित करता है। पञ्जाब के मुसलमान, मद्रास के मुसलमान सिन्ध के मुसलमान और मद्रास के मुसलमान, सभी इसी और लिपि को प्रोत्साहन दे रहे हैं और राष्ट्रभाषा हिन्दुस्थानी और देवनागरी लिपि का विरोध कर रहे हैं। राष्ट्रभाषा को द्वितीय स्थान देकर यदि हम अपनी-अपनी प्रादेशिक और प्रान्तीय भाषाओं को ही सजाने में लगे रहे तो वह समय दूर नहीं जब अपने आठ दस करोड़ अखण्ड अनुयायियों के बल पर अशास्त्रीय उर्दू-हिन्दुस्थान की राष्ट्रभाषा के सिंहासन पर बैठेगी, और उसके जोरदार आक्रमण से प्रान्तोपप्रान्तों में बिखरी हुई बीसों भाषाएँ और बोलियाँ परास्त हो जाएँगी।

इसी लिए मैं कहता हूँ कि एक समय जैसे विद्यापीठों में शिक्षा सिर्फ एक ही संस्कृत भाषा के माध्यम से होती थी उसी तरह अब सिर्फ हिन्दी-हिन्दुस्थानी के माध्यम से हिन्दी विद्यापीठों का कारोबार चलना चाहिए। विद्यापीठों में प्रान्तीय भाषाओं के माध्यम का उपक्रम और आग्रह घातक और अराष्ट्रीय है, खतरनाक है।

विद्यापीठों में जगद्भाषा के साथ राष्ट्रभाषा और राष्ट्रलिपि, विद्यालयों में राष्ट्रभाषा के साथ प्रान्त-भाषा और प्रान्त-लिपि और प्राथमिक पाठशालाओं में राष्ट्रभाषा-अविरोधी प्रान्त-भाषा के साथ-साथ प्रादेशिक भाषा और प्रादेशिक बोली—यही हिन्दुस्थान का भाषा-विषयक लक्ष्य होना चाहिए।

— —

अमलतास

श्री प्रभाकर माचवे, एम० ए०, साहित्यरत्न

फूल रहे अमलतास
पीले, सुन्दर, सुहास
निर्मल शिशु-सा अकाश
सोनजुही-सा प्रकाश
सब ओर एक नया आनन्द और मशा
ऋतुराज फेंक गया मधुगन्ध अष्ट दिशा
विस्तृत औ' नील-नील
गहरी ज्यों बिछी झील
उस पर यह रम्य, श्रील
पालों को दिए ढील
जाती है मन्द-मन्द एक दिशाहीन तरी
गाती नव प्रीत-गीत प्रेयसी-परी उतरी
फूल रहे अमलतास
फैलाते हैं सुवास,
सौरभ - उन्मद बतास,
ऊँचे औ' पास - पास,
नवल पीत चीवर के कई भिक्षु एक सङ्ग
करते हों 'सुत्त'-गनन, एकत्रित, पर असङ्ग।

———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़ी भूल

श्री भारती, एम० ए०

हजारा,

तुम्हारी वह पैनी, तीखी दृष्टि अब भी मुझे बींधे डालती है, वह मेरे अन्तस्तल की गहराइयों में इतनी उतर चुकी है, दिल के ज्वार के कण-कण में इतनी समा चुकी है कि किसी तरह पीछा ही नहीं छोड़ती। वह मेरे हृदय को एक लम्बे छुरे की तरह छेदे डालती है—जैसे भाले का कोई अन्त ही न हो और हृदय भी उसी के प्रस्तार के साथ बढ़ता जाता हो।

मैंने तुम्हें पहले-पहल अपने साथ क्लास में अपने दाईं ओर बैठे देखा। तुम सिर से लेकर पाँव तक खादी के कपड़े पहने हुए थे—तुम्हारे खादी के कपड़े मेरे आकर्षण का कारण अवश्य बने परन्तु तुम उन कपड़ों में निखरे हुए नहीं बिखरे हुए प्रतीत पड़ते थे। तुम्हारी अस्त-व्यस्त हालत को देखकर क्या कोई भी यह अनुमान लगा सकता था कि तुम किसी उच्च प्रतिभा के स्वामी नहीं, या तुममें कोई ऐसी असाधारण विशेषता नहीं जो किसी प्रकार कोई मूल्य रखती हो। तो; मैंने तुम्हें साधारण व्यक्ति समझा और यदि सच पूछो तो तुम्हें गाँव का गँवार और न जाने क्या-क्या सोच लिया—सोचता भी क्यों, तुम थे काले आदमी और मैं था.....गोरा तो नहीं, पर गोरा आदमी कहलाने के लिए जितने रङ्ग-ढङ्ग की जरूरत है उन्हें जरूर अपने साथ लिपटाए हुए था। मेरे सिर पर सुगन्ध-युक्त तेल से सने और ठीक प्रकार से कङ्घी किए गए बालों पर पोता गया सफेदा, शरीर पर ब्लू सर्ज का सूट, पैरों में चर-मर करता हुआ जूता, मुझे यह सब कुछ सोच लेने के लिए बाध्य कर रहा था। ऐसी दशा में यदि मैं तुम्हें घृणा से मुख भी मोड़ लेता तो कोई विशेष बात न थी। फिर भी मैं ऐसा न कर सका, नहीं कह सकता, क्यों!

फिर तुम दृष्टि से ओझल हो गए और हमारी दूसरी मुलाकात कालेज लान में हुई जो बहुत बुरी तरह समाप्त हुई। गरमागरम बहस हो रही थी—तुम मेरे विपक्षी होकर मुझे नीचा दिखाने की धुन में लगे हुए थे। मैं इस अपमान को सहन न कर सका। मैंने एक बार अपनी ओर देखा और फिर तुम्हें सिर से पाँव तक देखा। बस, इतना ही पर्याप्त था, मैं घृणा से उठा, मेरे अन्तर में हुङ्कार हो उठी; 'यह काला आदमी अपने को क्या है!' मेरा रोम-रोम चीत्कार कर उठा—प्रतिशोध और अधिकार की भावना से मैं भन्ना उठा। मेरा पक्ष क्रोध में आपको खो देने के कारण और भी निर्बल पड़ गया, मैं झल्लाया और वाहियात बकने लगा। तुम मुझे यों रङ्ग

अन्तर को देखा परन्तु शायद तुम समझ न सके और वहाँ से चल दिए। तुम्हारी इस दृष्टि को देखकर मैं सिहर उठा। वह मेरे अन्तर की गहराइयों में उतर गई, मैं निरस्त्र हो गया और स्तब्ध बना रहा।

इस पीड़ा का भार और भी बढ़ गया जब पता लगा कि तुम साधारण न होकर कुछ असाधारण-से हो। मेरे मित्र ने बताया कि किस प्रकार तुम अपने लिए न होकर दूसरों के लिए हो और तुम्हारी देश को छोड़कर कोई सत्ता नहीं है। मैं मित्र की बातें अधिक न सुन सका। मेरा सिर भारी हो उठा। मैं अपने किए कार्य के लिए पश्चात्ताप की आग में जलने लगा। तुम्हारी दृष्टि का तीखापन और पैनापन जागरूक हो असह्य हो उठा—वह दृष्टि मेरे साथ छाया की तरह लिपट गई और भूत की तरह मेरा पीछा करने लगी। मैं चैन से न टिक सका। उसकी झलक में मुझे एक विश्व-विभूति का आभास रह-रहकर पीड़ा देने लगा। मैं इससे भागना चाहता था, परन्तु इच्छा रहते भी भाग न पाता था। वह तुम्हारी न होकर मेरी अपनी हो गई थी। मुझे इससे कुछ स्नेह हो गया था कि इसे दूर नहीं हटा पाता था, फड़ककर रह जाता था।

हाँ—तो मैं पश्चात्ताप की अग्नि में जलने लगा। मेरी नजरें तुम्हें खोजती रहतीं परन्तु तुम मिल ही नहीं पाते थे। क्लास में तुम मास में तीन ही बार आ पाते थे, ठौर-ठिकाना कोई था नहीं, फिर मिल पाते तो कहाँ?

मैं तुमसे न मिल सका!

फिर एक बार उड़ती हुई खबर मिली कि तुम गिरफ्तार कर लिए गए हो। विश्वास न कर सका, परन्तु करना ही पड़ा जब बहुत परिश्रम करने पर भी तुम्हें कहीं न देख पाया। किसी ने बताया कि तुम झण्डे को फहराते समय सरकार के विरुद्ध एक जोरदार स्पीच देने के अभियोग में पकड़ लिए गए हो, उसने और भी बताया कि तुम्हारी स्पीच से लाठी चार्ज हो जाने का खतरा पैदा हो गया था, इसलिए तुम्हें बीच में ही रोक दिया गया और बन्दी बना लिया गया। मैं कुछ सोच न सका, किङ्कर्तव्यविमूढ़-सा होकर शून्य की ओर ताकने लगा। परन्तु तिस पर भी एक विचार मेरे दिमाग में चक्कर काट रहा था कि कैसा अच्छा होता कि लाठी चार्ज हो गया होता और उसमें मेरे बहुत-सी चोटें लगतीं, ताकि मैं कह सकता—"देखो मैया हजारा, तुम्हारे बोलने से मुझे इतने घाव लगे हैं। इनकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया गया है और मुझे क्षमा कर दो।"—परन्तु क्या कभी ऐसा हो सकता था ?

दूसरे दिन तुम्हें जमानत पर छुड़ा लिया गया। तुम कालेज आए परन्तु मैं तुम्हारे सामने न आ सका। न जाने, कुछ ऐसा था जो किसी तरह भी टिकने न देता था, मुझे खाए डालता था—मैं तुम्हारी 'किसी' से घबराता था।

क्लास में मैंने तुम्हें छिपी नजरों से देखा। तुम उसी तरह सफेद खादी के कपड़े पहने हुए और अपनी अस्त-व्यस्त हालत में निखरे हुए न होकर बिखरे हुए दीख पड़ते थे। प्रोफेसर साहब आए। उन्होंने तुम्हें देखा और शिक्षा देनी चाही, बोले—"देखो मि० हजारा सिंह, मेरी बात से यह तो अनुमान न लगा लेना कि मैं तुम्हारी राष्ट्रसेवा की इस लगन को पसन्द नहीं करता या इससे नाखुश हूँ। मैं तो यह ठीक समझता हूँ कि तुम इन झगड़ों में अभी न पड़ो, जिस कार्य के लिए घर से आए हो, उसे पूरा करो। अपने माता-पिता की कमाई और अपना कीमती समय यों ही मत जाने दो—ये बातें करने के लिए बाकी जीवन काफी पड़ा है।" सारी कक्षा के साथ मैंने भी प्रोफेसर साहब की इस बात को सुना, मेरा दिल तुम्हारे उत्तर की प्रतीक्षा में जोर-जोर से उछलने लगा। तुम अपनी उसी प्रकार सागर-सी गम्भीर मुद्रा को लिए बोले—"प्रोफेसर साहब, मेरे जीवन का चरम उद्देश्य यही है, मैंने सब चीजों का त्याग करके इसी की आराधना की है और करता रहूँगा। बाकी रही रुपए-पैसे की बात, वह मैं किसी से लेता नहीं हूँ। अपना कमाता हूँ और खाता हूँ।"

प्रोफेसर साहब ऐसा सुनकर सँभले और बोले—"क्यों, क्या तुम अपने घर से खरचा नहीं मँगाते ?"

तुम्हारा साथी उत्तर में बोला—"नहीं प्रोफेसर साहब, यह घर से कुछ भी नहीं मँगाता, स्वयं अपना गुजारा चलाता है। कल इसके पिताजी जमानत देने आए थे परन्तु इसने उनकी जमानत पर रिहा होने से इनकार कर दिया....."

मैं कुछ और न सुन सका, क्लास छोड़कर बाहर आ गया। मेरा समूचा हृदय आत्मग्लानि से भर उठा। मेरा अन्तर मुझे धिक्कारने लगा, फटकारने लगा। रह-रहकर मुझे यह आवाज नोचने लगी, 'हे स्वार्थी—तूने एक परमार्थ के लिए जीनेवाले पुरुष का अपमान किया है।' मैं इसी प्रकार पेच व ताब खा रहा था कि तुम क्लास से बाहर निकल पड़े और बाहर वृक्षों के नीचे टहलने लगे। मैं बरबस तुम्हारी ओर खिंच पड़ा। मैंने तुम्हारे कन्धे पर हाथ रक्खा और कहने के लिए ही कह दिया—"मुझे क्षमा कर दो हजारे भैया—मैंने उस दिन तुम्हारा अपमान कर बड़ी भूल की थी।"

तुम मेरी ओर घूमे—तुम्हारे चेहरे पर वही दृढ़ता और गम्भीरता विद्यमान थी। मेरे हाथों को अपने हाथों में लेते हुए बोले—"छिः, आदमी होकर कैसी बातें करते हो! ऐसा भी किया करते हैं ? मनुष्य भी कहीं क्षमा करते हैं ?"

मैं फूट ही तो पड़ा—"क्यों, क्या मनुष्य क्षमा नहीं करता ?"

तुम बोले—"नहीं, मनुष्य कभी क्षमा नहीं माँगा करता। उसकी निर्णयात्मकता का एकमात्र प्रमाण यही है कि वह अपने नियमों के लिए प्राण भी देने के लिए सदा तत्पर रहे। रही तुम्हारे उस उन्माद की बात, जिसे तुम बड़ी भूल कहते हो—उसका मुझे जरा भी दुःख नहीं, क्योंकि तुमने जीत के साथ कभी हारना नहीं सीखा। यह तुम्हारी कमजोरी है, इसे दूर करो। फिर क्षमा माँगने की आवश्यकता ही न पड़ेगी।"

मैं बोला—"फिर भी मुझे क्षमा करने के लिए क्षमा कर दो, भाई। मुझे शान्ति मिलेगी।"

तुम मुस्कराए। तुम्हारी आँखें एक दिव्य ज्योति से चमक उठीं। तुम बोले—"शान्ति, शान्ति याचना करने में नहीं, लेने में है और वह ली जाती है केवल अपने मार्ग पर दृढ़ रहकर उत्साह पूर्वक आगे बढ़ने से। और फिर जीवन में शान्ति नाम तो संघर्ष का है। सङ्घर्ष करते चलो। हम सबका उद्देश्य एक है। मार्ग भिन्न-भिन्न हैं तो क्या !"

मैं सब कुछ समझकर भी कुछ न समझ सका।

तभी घण्टी बजी और हम क्लास की ओर बढ़ गए।

मैं तुम्हारे निकट आता गया। तुम्हारा सान्निध्य पाकर मैं कुछ प्रसन्न होता। इसी प्रकार कुछ समय बीत गया। तुम अपनी ही चाल से चलते रहे। तुम्हारे कार्य का क्षेत्र और भी बढ़ गया, साथ-ही-साथ तुम्हारे दर्शन भी गूढ़ हो गए।

फिर एक दिन होस्टल में मैं अपने चार-पाँच मित्रों के साथ गप-शप लड़ाने में मस्त था कि तुम अपने दोनों हाथों में फल लिए हुए आते दिखाई दिए। फल अधिक थे, तुम्हारे हाथों में भी उन्हें सँभाल नहीं पा रहे थे। मैं यह देखकर हँस पड़ा। तुमने बोझ हलका करने के लिए कहा—"लो और फल खाओ।"

मैं रुका। मैंने सोचा, चार-पाँच मित्र खड़े हैं, इस इनकार कर देना ही भला है और शिष्टाचार भी यही कहता। मैं यही सोच रहा था कि एक सन्तरा लुढ़ककर जमीन पर गिर रहा और खाने के नाकाम हो गया। यह देखकर मैं हँस रह सका और हँसते हुए बोला—"बस भाई, हमसे तो नहीं खाया जाएगा; अब रहने दो।" यह कहकर मैं फिर लगा। परन्तु तुम्हारी आँखें अपना काम कर उठीं। तीखी पैनी दृष्टि—भेदकर मेरे अन्तरतम तक जा पहुँची।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और न ठहर सका और अपने कमरे की ओर बढ़ गया। इच्छा हुई कि तुम्हें बताऊँ कि मैं किसी प्रकार तुम्हारा अपमान नहीं करना चाहता था। मैंने यह सब कुछ शिष्टाचार के नाते ही किया। परन्तु मैं ऐसा न कर सका।

रात्रि को मैं चैन से न सो सका।

दूसरे दिन मुझे पता लगा कि तुम्हें फिर गिरफ्तार कर लिया गया है। मैं और भी आतुर हो उठा। एक बिजली-सी टूट पड़ी। मैं तुम्हें जेल में मिलने गया। सीखचों के अन्दर देख आँसू न रोक सका। तुम उसी प्रकार गम्भीर और बने थे। तुमने सीखचों के अन्दर से अपने हाथ बढ़ाकर आँसू पोंछते हुए कहा—'इन्हें इस तरह न बहाओ, मित्र, गिरकर तुम्हारे हृदय के तूफान को ठण्ढा कर देंगे, जिससे का अहित होगा।'

मैंने आँसू गिराने बन्द कर दिए परन्तु कुछ कह न सका और लौट पड़ा।

फिर पता चला कि नए आर्डिनेंस के अनुसार तुम मुझे कभी न मिल पाओगे। यह सुनते ही मेरे हृदय में विचारों का बवण्डर उठ खड़ा हुआ। मैं सोचने लगा कि मैं तुम्हें समझा पाता, बता पाता, परन्तु विवश था। तुम्हारी विश्व-विभूति की झलक देनेवाली दृष्टि फूट पड़ने को बाध्य कर रही थी—परन्तु मैं रोना नहीं चाहता था कि इससे कहीं मेरे हृदय का तूफान ठण्ढा न हो जाए। फिर मैं सोचता हूँ कि क्या ही अच्छा होता यदि मैंने तुम्हारी अन्तिम भेंट स्वीकार कर ली होती और अपने जीवन की यह दूसरी बड़ी भूल न की होती।

तुम्हारा
भारती

एक प्रश्न

श्री जगदेव गुप्त, 'कलाकार'

अरब की बात है, उस जमाने की जब अरब कबीलों में बँटे हुए थे। कबीला एक दल का नाम था जिसमें लोगों की एक बड़ी संख्या शामिल होती। प्रत्येक कबीला अपने-अपने मत के धार्मिक, सामाजिक और पञ्चायती बन्धन में बँधकर चलता। यों तो सभी आपस में मेल-मिलाप से ही रहा करते, एक का कुत्ता भी दूसरे के दल में चुपचाप पैर नहीं रख सकता था। आन-बान पर कबीले का एक बच्चा भी तेगें ले लेता।

जमाना जेहालत का था। सारा अरब शाह नोमान विन्मुंजिर की हुकूमत में था। राजधानी 'हीरा' में उसकी बादशाहत का झण्डा राजमहलों पर फहरा रहा था। बादशाह शराब, कबाब और हसीनों का शौकीन था। सुबह, शाम, दोपहर आधी उसकी महफिल भरी रहती। उसके अगल-बगल साकी अपने नूर में चमकते और परियों का वह अरबी नाच शाही मजलिसों में दूना-तिगुना शुरूर ढाल देता। नशे की मस्ती में आकर कभी-कभी बादशाह काबू के बाहर भी हो जाते और तब चार अभागे आदमियों की जिन्दगी से चिड़ियों का-सा शिकार खेलना उनके लिए मामूली-सी बात होती। शेर के पिंजरे में किसी को डालकर तमाशा देखा जाता, किसी के हाथ-पैर बाँधकर पानी में फेंक दिया जाता तो किसी को विषैले साँपों के बीच एक घेरावे के भीतर छोड़ दिया जाता। बादशाह का कौन रोता और किसकी जबान हिलने पाती।

परन्तु, कभी-कभी जब उनके दिमाग में तरी की हवा लगती तो बेशक दरबार में दङ्गल, खेल-कूद इत्यादि हुआ करते और बादशाह खुद अपने हाथों इनाम बाँटते। उन्हें शायरी से भी शौक था और दो-चार नामी शायर उनके दरबारी भी थे।

'खालिद' और 'अमर' बादशाह के दोस्त थे; बड़े दिली। सत्सङ्ग की घड़ियाँ इनके बिना सूनी हो जातीं। दोनों बादशाह के दाएँ-बाएँ बैठकर महफिल को रोशन करते और उनके मनोरञ्जन में भाग लिया करते। दरबार में लोग यही समझते कि खालिद और अमर दूसरा और तीसरा नोमान हैं।

× × ×

एक दिन बादशाह जब शराब की मस्ती में झूमने लगे तो उन्होंने अपनी दौलत का अन्दाजा दुनिया की दौलत से लगाने की कोशिश की। सोचते-सोचते जब वे गम्भीर हो गए तब सारी महफिल के होश उड़ गए। लोग एक दूसरे का मुँह तकने लगे कि आज कौन अभागा बेमौत मारा जाएगा। इस तरह सन्नाटा छा गया मानों सारी महफिल बेजान हो।

"खालिद!"—बादशाह के मुँह से आवाज आई। सभी बादशाह की ओर भयभीत हो ताकने लगे।

"मेरी दौलत का अन्दाजा लगा सकते हो, दोस्त?"—बादशाह ने पूछा।

"हुजूर की दौलत के सामने अरब में कौन है जो सर उठा सकता है?"—खालिद बोला।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"शाह नोमान की दौलत का कोई क्या अन्दाजा लगा सकता है?"—अमर ने कहा।

"नहीं, नहीं, मेरा मतलब यह नहीं, मेरे दोस्तो! मैं यह जानना चाहता हूँ कि दुनिया में नोमान की दौलत का भी कहीं मुकाबला है?"

"शाहे अरब! दुनिया इतनी बड़ी है कि इसमें ऐसे-ऐसे करोड़ों दौलतमन्द आसमान के टिमटिमाते छोटे-छोटे सितारों से नजर आएँगे।"—अमर बोला।

"और दुनिया के सामने एक ऐसे बादशाह की दौलत की क्या हस्ती! इतनी छोटी दौलत का अन्दाजा दुनिया की दौलत से कौड़ियों में भी तो लगाया नहीं जा सकता। दुनिया बहुत बड़ी है और इसकी दौलत भी बे-हिसाब है।"—खालिद ने कहा।

"यह क्या कहते हो, खालिद?"

"ठीक कह रहा हूँ हुजूर! दरबार के बड़े 'मोअर्रिख' से दरियाफ़्त कर लें।"—खालिद बोला।

"यह दौलत तो समुन्दर में सिर्फ एक कतरा पानी के बराबर है।"—अमर बोल उठा।

"जरा होश में आकर बातें करो, दोस्तो!"

"हुजूर, बिलकुल सही बात है।"

"और...यह मेरी शानो-शौकत!"

"दुनिया की शानो-शौकत से इसका क्या मुकाबला! आफताब के सामने दिया रखना है।"

"यह मेरा आलीशान बहिश्त का टुकड़ा?"

"आलम के एक कोने में कहीं एक तिनके के बराबर होगा।"

"यह हसीनो-जमील परियों का सब्ज बाग?—क्या यह भी कुछ नहीं?"

"नहीं, यह एक बड़े चमन में कहीं उगा हुआ एक कँटीला पौधा है जिसे कोई पूछता भी नहीं।"

"तो...यह सबका सब दुनिया के सामने फीका है? इनकी कोई जगह नहीं!"

"बिलकुल नहीं। यह सब दुनिया की शान का सिर्फ एक छोटा-सा नक्शा है। एक उड़ता हुआ पतङ्ग है जो कभी कटकर कहीं उड़ जा सकता है।"—अमर ने कहा।

"भला इसकी भी कोई जगह है?"—खालिद बोल उठा।

"अमर! खालिद!"—बादशाह की भौंहें तन गईं।

"हुजूर, तअज्जुब की बात नहीं।"—अमर बोला।

"होश-हवास दुरुस्त है?"—बादशाह ने कड़ककर पूछा।

"शाहे अरब! न तो यह मजाक है और न ये बातें"—अमर ने उत्तर दिया।

'शैतानो! यह क्या बक रहे हो? जानते हो किसके सामने हो? तुमने शाह नोमान की आज तौहीन है। मेरे सामने दुनिया की क्या हस्ती जो मुकाबला कर सके तुम्हारी बातें बर्दाश्त के बाहर की हैं।"

सारी महफिल बेहोश होने लगी।

एक प्याला होठों से लगाता हुआ बादशाह बोल उठा "ले जाओ इन नमकहरामों को अभी जिन्दा गड़वा दो।"

यह कहते हुए वह उठा और साकी का सहारा लेता हुआ अन्दर महल की ओर चला गया।

"बादशाह सलामत!"—अमर और खालिद साथ-साथ चिल्ला उठे। पर आवाज दीवारों से ही टकराकर रह गई।

× × ×

दूसरे दिन सुबह बादशाह की महफिल फिर आबाद हो गई। परियों के नाच के साथ पैमानों का दौर चला। अचानक बगल नजर घुमाकर बादशाह बोल उठा—

"अमर! खालिद! आज दोस्तों ने बड़ी देर की हाजिब! जाओ, अमर और खालिद को बोलो—बादशाह ने याद फर्माया है। जाओ...जल्द जाओ।

मगर हाजिब न हिला न डुला।

बादशाह गरजकर बोला—"देर क्यों? अभी हुक्म बजा ला।"

"जहाँपनाह! अमर और खालिद का नामो-निशान मिट गया।"

"क्या बकता है?"

"वे रात ही को जिन्दा दफन कर दिए गए।"

"किस बेरहम का यह फेल है? बताओ अभी उसका जिस्म बोटी-बोटी करवाकर चीलों को खिला दूँ।'

"जान बख्श दी जाए तो गुलाम अर्ज करे।"

"बोल, बेखटके बोल।"

"जो कुछ भी हुआ है, वह शाहे अरब का ही तामील हुआ है।"

"मेरा हुक्म?"

"हाँ, जहाँपनाह, पिछली रात हुजूर ने ही गुस्से में चढ़ाया और उसी वक्त.....।"

बादशाह के हाथ का प्याला छूटकर जमीन पर गिर पड़ा। इधर प्याला चूर-चूर तो उधर बादशाह का दिल टुकड़े-टुकड़े।

एक लम्बी उसास के साथ बादशाह के मुख से निकल पड़ा 'अमर, खालिद'। और फिर वह चिल्ला उठा—'यह नाच, साकी! हटो, भागो यहाँ से।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक-एक कर शराब के सभी शीशों और प्यालों को उसने तोड़ दिया और सिर पीट-पीटकर रोने लगा। जी भर रो लेने के बाद वह उठा और मातमी पोशाक में अपने मित्रों के मजार पर आँसू बहा लेने और माफी माँगने पैदल ही चल दिया। रो-धोकर उसने वजीर को हुक्म दिया कि एक महीने के भीतर ही दो सुन्दर बुर्ज उन मजारों पर तैयार हो जाएँ और उन्हें रोज दियों से प्रकाशित किया जाए।

प्रत्येक वर्ष बादशाह दो दिन मातम मनाता। खालिद के मातम के दिन उसके मजार पर पहुँचते ही जिस आदमी की शक्ल वह सबसे पहले देखता उसे वह सौ ऊँटनी, सौ बकरियाँ और सौ अशर्फियाँ देता। और अमर के मातम के दिन जिस आदमी पर उसकी पहली नजर पड़ती उसे वह उस शख्स के मजार पर ही कत्ल करवा देता। कई वर्षों से यही क्रम जारी रहा और कितने बेगुनाहों के खून से मजार सींचा गया। बादशाह की करतूत थी; कौन था जो चूँ भी कर सकता।

× × ×

बादशाह को शिकार का बड़ा शौक था। एक दिन शिकार में वह जङ्गलों में बहुत दूर निकल गया। साथ के शिकारी पीछे ही छूट गए। घोड़ा छुटा हुआ था। दस-दस कदम से शिकार बचकर निकल जाता। बादशाह को भी जिद चढ़ गई। उसने ठान लिया कि शिकार मारकर ही दम लूँगा। लेकिन, सूरज के छिपते-छिपते उसकी जिद ठण्ढी पड़ती गई। सारा जङ्गल, छूटे हुए शिकारियों की याद और वन की अनजान राहें उसके दिल में एक घबराहट पैदा कर रही थीं। घोड़ा अलग थक गया था। शाम हुई तो अँधेरे के साथ-साथ जङ्गल भी काला हो गया। लगाम थामकर बादशाह ने इधर-उधर आँखें घुमाईं। बहुत दूर पर झाड़ियों के बीच एक टिमटिमाता दिया दिखाई दिया। बादशाह के जीवन का वह आशा-दीप था। उसने उधर ही घोड़ा छोड़ दिया।

एक छोटा-सा खीमा था—बेर की कँटीली झाड़ियों की बाड़ी और खजूर के पत्तों का छप्पर। बाहर एक बकरी बँधी थी। इधर-उधर कई ऐसे खीमे थे। दिया टिमटिमा रहा था। चारों ओर एक विचित्र सन्नाटा था। अरब के एक कबीले की वह छोटी बस्ती थी। घोड़े की टाप सुनकर खीमे से एक युवक निकला। हट्टा-कट्टा, सुडौल शरीर, जैसे लोहे का बना था। शिकारी को उसने झुककर सलाम किया। और बोल उठा—"खैरमकदम (स्वागत)"

"थोड़ी-सी जगह—मैं मेहमान बनना चाहता हूँ।"

"आइए, यह सारा घर आपही का है। जो कुछ भी होगा, हाजिर करूँगा।"

युवक का नाम था हञ्जला। वह 'वनीतय' कबीले का एक युवक था। अरब में वैसे तो अनेक कबीले थे, लेकिन यह कबीला अपने अतिथि-सत्कार के लिए प्रसिद्ध था। इस कबीले के लोग मेहमानों को कलेजे तक अर्पण कर देते थे। युवक ने शिकारी के लिए अलग एक छोटा-सा खीमा खड़ा कर दिया। बादशाह थक गया था। लेटते ही उसे नींद आ गई।

इधर हञ्जला अपने अतिथि के खाने-पीने का प्रबन्ध करने लगा। अन्दर जाकर उसने बीबी से पूछा—"घर में कुछ है भी? एक मेहमान हैं!"

"बस, जो था सब खत्म हो गया।" बीबी ने उत्तर दिया।

"थोड़ा भी कुछ नहीं?"

"न।.....हाँ, थोड़ा आटा बचा होगा।"

"खरगोश का गोश्त, सुबह शिकारवाला?"

"सब खत्म।"

"तो आज क्या 'बनीतय' की फजीहत होगी?... अच्छा ला तो जरा छुरी; और तब तक तू रोटियाँ सेंक ले।'

"छुरी काहे को?"

"बकरी जिबह करूँगा।"

"एक ही बकरी है, परवरिश का जरिया ठहरी। इसे भी खत्म कर दोगे? चारों बकरियाँ तो तूने इसी तरह खत्म कर दी है।'

"करना ही होगा।"

"नहीं बकरी छोड़ दो। मेहमान सिर्फ रोटियों पर ही रात काट लेगा।"

"तब तो मेहमाननवाजी में बट्टा लग जाएगा। मेहमान कोई बड़ा आदमी मालूम पड़ता है। शिकार में भटककर इधर निकल आया है।"

हञ्जला ने बकरी जिबह की। मेहमान को रोटियाँ और कबाब में मिला। सत्कार में हञ्जला और उसकी बीबी हाजिर रहे। उस रात बादशाह को जो मजा सूखी रोटियों और सादे कबाब में मिला वह शाही दस्तरख्वान पर कभी न आया था। नींद भी ऐसी आई कि वह महल के गद्दे और खुशबूदार हवा भूल गया। जाने मेहमानदारी की मिठास थी या थकान का असर। सुबह को जब वह घोड़े पर सवार हुआ तो अपने गले का हार हञ्जला की बीबी को दे गया। उसने अपना पूरा परिचय दिया और एक दिन दरबार में हाजिर होकर कुछ बख्शीस ले आने को कहा। हञ्जला ने हाथ जोड़कर कहा—"जहाँपनाह, खुदा खुश है, और क्या चाहिए। गर्दिश के दिनों में कभी कुछ माँग लूँगा। हञ्जला को भूल तो न जाएँगे?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"हज्जला ! तेरी मेहमाननवाजी जिन्दगी भर याद रहेगी। तेरी एक माँग को पूरा करने का वादा करता हूँ।"

"शुक्रिया।"—हज्जला ने सिर झुका दिया।

× × ×

आज अमर का मातम-दिन था, वही दिन जब नोमान की नजरों में जल्लाद खड़ा रहता और जुबान पर जल्लाद की तेज तलवार। उस दिन किसी बेगुनाह की लहू से मजार धोया जानेवाला था। मातमी पोशाक में बादशाह धीरे-धीरे चला जा रहा था। दरबारी मुसाहबों का झुण्ड पीछे-पीछे चल रहा था। मजार के पास ही पेड़-तले एक आदमी सोया हुआ था। बादशाह की नजर उसी अभागे पर पड़ी। आज उसी के खून से मजार तर किया जाएगा। बादशाह बैठकर मजार पर आँसुओं की लड़ी चढ़ाने लगा। दरबारी कवियों ने लच्छे के लच्छे मातमी शेर पढ़े। दरबारियों की आँखें तो सूखी थीं पर रूमाल पल भर में ही पाँच-पाँच बार उन पर फिर जाते। एक ओर मातम का साक्षात् रूप था और दूसरी ओर इसका नाटक रचाया जा रहा था।

बादशाह के हुक्म से वह आदमी पकड़कर ला या गया। उसने बादशाह के सामने तीन बार सिर झुकाया।

"मजार पर सर झुका।"—बादशाह की आज्ञा हुई। उस आदमी ने सिर झुका दिया।

"जल्लाद ! अपना काम कर।"—बादशाह का हुक्म हुआ।

वह आदमी चौंक गया। सिर उठाया तो देखी उसने एक लम्बी तलवार, जो उसकी गरदन पर चमक रही थी। उसका चेहरा फक हो गया। और वह बोल उठा—'जहाँपनाह ! यह हज्जला है।'

"कौन हज्जला ?"

"कबीले-बनीतय का एक गुलाम। इसी नाचीज के खीमे में पहुँचकर हुजूर ने इसे.....।"

"छोड़ो उन बातों को। मैं कौल का पाबन्द हूँ। आज तेरे खून से दोस्त का मजार धोऊँगा।"

"मेहरबान ! मेहमाननवाजी का क्या यही सिला होता है ?"

"दोस्त के सामने एक 'मेहमाननवाज की कोई जगह नहीं।"

"खुदा को न भूलिए। बेगुनाह का खून खुदा को गवारा न होगा।"

"कौल से हटनेवाला आदमी खुदा के सामने सजा पाता है।"

"तो मरने के पहले मैं अपनी एक माँग पेश करूँ। आपने पूरी करने का वादा किया था ? याद है ?"

"हाँ, माँग ले। अपनी जान छोड़कर और सब कुछ माँग सकता है।"

"तो, नोमान बिन्मुज्जिर मेरी जान के सिवा और कुछ पूरा कर सकता है ?"

"हाँ।"

"कौल से बादशाह हटेंगे तो नहीं।"

"हरगिज नहीं।"

"अच्छा तो बादशाह सुन, कान खोलकर सुन। तेरा सर चाहता हूँ। मिलेगा ?"

"नहीं, तू किसी की जान नहीं माँग सकता। और कुछ माँग ले।"

"तो कल से बेगुनाहों का इस तरह खून बन्द कर मजार का कत्ल उठा दे। खुदा तेरे गमगीन दिल को तसल्ली देगा।"

"नहीं, यह भी नहीं होने का। मैं अपने कौल से नहीं सकता। खुदा नाखुश होगा।"

"तो क्या मेरी माँग को पूरा न करना कौल से हटना नहीं है ? खुदा का डर अब हट गया ?"

"दूसरा कुछ माँग ले। धन-दौलत, जर-जवाहिर जितना कह ऊँटों पर लदवा दूँ।"

"दुनिया की भलाई के सामने धन-दौलत की कीमत क्या है ?"

"तो मैं तुम्हारी इस माँग को पूरा नहीं कर सकता दोस्त के खून का बदला मैं खून से दे रहा हूँ। अपने गुनाह को धोकर दोस्त के रूह के सामने पाक होना चाहता हूँ।"

"यह तेरी भूल है, बादशाह सलामत। पाक होने बदले, तुम्हें मालूम है, तू गुनाहों का एक बड़ा पहाड़ खड़ा उसकी बगल में दोजख का एक गहरा कुआँ खोद रहा वह दिन पास ही है जब तू इस पहाड़ से उस कुएँ में दिया जाएगा। देख, ऐसी कुर्बानी बन्द कर; अब नेकी से साफ और पाक कर ले।"

"क्या बक-बक कर रहा है बदजात ! मुझे नसीहत रहा है ? जल्लाद ! 'अपना काम कर।"—बादशाह ने कर कहा।

"खुदा की मर्जी ! अच्छा तो एक बार बीवी मिल आने की इजाजत दे दे। यही मेरी माँग है।" हज्जला बोला।

"मजाक ! यह भागना चाहता है।" बादशाह बोल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[सन् १९

पेश करें

?"

और सब

सेवा और

सुन। तो

। और

बन्द कर

दल को तत्

कौल से

जर-जवाहर

त की

अपने पुत

पाक होने

पहाड़ खड़ा

खोद रहा

कुएँ में

नेकी

नसीहत

शाह ने

चार बीवी

मांग

बोल

[अप्रैल

जहाँपनाह, अगर यह कोई जामिन दे दे तो इजाजत दी जा सकती है।"—वजीर ने अपनी राय दी।

"मगर, यहाँ मेरा जामिन कौन होगा! बादशाह! तेरे शहर में मुझे यहाँ कौन जानता है? तुम्हारी शर्त ऐसी है कि मैं पूरा कर ही नहीं सकता। लेकिन मैं यकीन दिलाता हूँ, वापस न हूँगा।- खुदा की कसम।" हज्जला बोला।

"नहीं, बिना जामिन के इजाजत न मिलेगी।"

"मैं तो बेबस हूँ, बादशाह। ले अब गर्दन झुकी हुई है।" जल्लाद की तलवार उठ गई। इतने ही में मुसाहबों में से एक आवाज आई—"हज्जला! मैं तुझे पहचान गया हूँ। मैं जामिन में होऊँगा।"

लोगों ने देखा वह दरबारी कवि 'अजदअ' था।

"अजदअ! देख, समझ-बूझ ले। अगर यह न आया तो तेरे ही खून से मजार रङ्गा जाएगा। मञ्जूर है?"—बादशाह बोला।

"बन्दा कबूल करता है।" कवि ने सिर झुकाकर उत्तर दिया।

"सोच-समझ ले, अजदअ! जल्दीबाजी न कर। जान न गँवा और कहाँ का रहनेवाला।"

"खूब समझ लिया है, हुजूर!"

हज्जला ने कवि की आँखों में खुदा देखा। उसे एक दिन का समय मिला। दूसरे दिन सूरज छिपते-छिपते उसे हाजिर होना था।

अजदअ कड़े पहरे में डाल दिया गया और हज्जला शाही घोड़े पर सवार होकर जङ्गल की ओर निकल गया।

× × ×

हज्जला की बीवी आशा लगाए बैठी थी कि आज उसका शौहर बहुत-सी धन-दौलत, जर-जवाहरात और माल-मवेशियाँ लेकर आएगा। बादशाह के दरबार में गया था न? फिर कुछ दिन कटेंगे। रास्ते में उड़ती हुई धूल को देखकर उसकी आँखें नाच उठीं। समझी घोड़ा भी मिला होगा। उसी पर कुछ लदा होगा। अच्छा हुआ, एक घोड़े के बिना कुछ तकलीफ थी। किन्तु, उसे क्या मालूम था कि उसका शौहर सिर्फ एक दिन का मेहमान है। बेचारी हवाई किले बना रही थी कि घोड़ा खीमे के सामने आकर रुका। उसकी सारी खुशी न जाने कहाँ हवा हो गई। हज्जला का मुँह देखकर वह भयभीत हो उठी। हज्जला घोड़े से उतरकर बीवी से लिपट गया और खूब रोया।

दूसरे दिन सुबह को कबीले के लोगों ने देखा कि न हज्जला है, न उसकी बीवी। न खीमा का कोई पता है और न मवेशियाँ ही नजर आ रही थीं। क्या जाने रात ही को वे सब के सब कहाँ चले गए।

× × ×

बादशाह के दरबार में लोग सारे दिन हज्जला की राह देखते रहे। अब आया तब आया। पर, कहाँ हज्जला और कहाँ उसकी बू-बास।

सभी अजदअ की मूर्खता पर हँस रहे थे और ताने मार रहे थे। कोई आँसू भी बहा देता। जब दिन छिपने में थोड़ी देर बाकी थी तो बादशाह का मातमी दल मजार की ओर बढ़ा।

सङ्गीनी पहरेदारों के बीच बेचारा राजकवि जा रहा था। जब कोई उसकी करतूत पर हँसी उड़ाता और ताने मारता तो वह सिर्फ यही कहता कि मुझे खुशी है कि इस नाकामयाब जिस्म ने एक बेगुनाह की जान तो बचा ली। खुदा मालिक है।"

मजार पर धीरे-धीरे भीड़ बढ़ चली। 'हीरा' के आधे से भी अधिक लोग उमड़ पड़े। आज राजकवि के खून से मजार तर होगा। सभी की आँखें भागते हुए सूरज पर थीं। लोग कह उठते—अब गया। अब गया। बस अब चन्द पलक और। बेचारे अजदअ की हालत पर सूरज भी रो उठा। उसकी आँखें बड़ी-बड़ी और लाल हो गईं और अधिक ठहरने की शक्ति उसमें न रही। वह भाग चला। इधर बादशाह बोल उठे—'धोखेबाज अरबी ने राजकवि को फाँस लिया।' जब राजकवि ने देखा कि सूरज ने भी हिम्मत हार दी तो खुदा को याद कर उसने मजार पर अपनी गरदन झुका दी।

जल्लाद की तलवार भी बादशाह के हुक्म की ताक में तैयार हो गई। सिर्फ एक इशारे की देर थी कि किसी ने चिल्लाकर कहा—"जङ्गल की ओर से धूल उड़ाता कोई घुड़सवार आ रहा है।"

भीड़ में खलबली मच गई। देखते-देखते घोड़ा मजार पर आकर रुका। सवार और कोई नहीं हज्जला था। इसने देखा मजार पर राजकवि की गरदन झुकी हुई है और ऊपर जल्लाद की चमकती तलवार। राजकवि को उठाकर उसने छाती से लगाया, उसका हाथ चूमा और फिर अपनी गरदन मजार पर झुका ली।

जल्लाद तन गए। बादशाह अभी चुप था। लोग देख रहे थे कि उसके मुख से आवाज निकली नहीं कि हज्जला का सिर उड़ा। सभी की नजरें कभी बादशाह के मुख पर तो कभी हज्जला की गरदन और जल्लाद की तलवार पर उठतीं। बादशाह बोल उठा—"तलवार म्यान में डाल दो।"

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सारी भीड़ सन्न रह गई। बच्चे तमाशबीन निराश होने लगे। पर, बड़े लोगों के चेहरे पर खुशी की एक झलक दीख पड़ी।

"वजीर! तुम जानते हो, मुझे कभी यकीन न था कि हज्जला हाजिर होगा। जान सभी को प्यारी होती है। मौका पाकर फिर क्यों नाहक फँसने आएगा।" बादशाह ने कहा।

"बादशाह सलामत! सभी यही कहते थे और मैं भी तो यही समझता था।"—वजीर ने अर्ज किया।

"तो तुम बता सकते हो, हज्जला को कौन यहाँ खींच लाया है?"

"इसकी मौत, जहाँपनाह!"

"नहीं, गलत-बात है।"

"तो फिर, हुजूर क्या फरमाते हैं?"

"अजदअ से पूछो। इसके रोएँ-रोएँ में खुदा है। यही ठीक-ठीक बताएगा।" अजदअ बोला—"जहाँपनाह! हज्जला खुद बता दे, यही ठीक होगा। मैं तो अपनी बात बता सकता हूँ कि मैंने क्यों अपनी जान खतरे में डाल दी थी।"

बादशाह बोल उठे—"हज्जला! खुदा के फरिश्ते! बता वह कौन-सी चीज है जो तुझे यहाँ खींच लाई? मौत का डर भी न होने दिया!"

हज्जला—बादशाह! वह है मेरा दीन-व-ईमान; और एक खुदा का डर।

बादशाह ने हज्जला को उठाकर छाती से लगा लिया। तब वह बोल उठा—"अजदअ ने हज्जला में खुदा देखा, तभी वह अपनी जान उसके लिए दे रहा था। हज्जला मेरे लिए खुदा का फरिश्ता है, दीन-व-ईमान का पक्का और खुदा का बन्दा है। इसने ही मेरी आँखें खोल दीं। दीन-व-ईमान के सामने धन-दौलत, बादशाहत, शानो-शौकत सभी कुछ नहीं। चल आज सारे सलतनत में मुनादी दिलवा दे कि अमर के मजार का कत्ल बन्द कर दिया गया और इसके मातम के दिन भी सौ ऊँटनी, सौ बकरियाँ और सौ अशर्फियाँ बँटा करेंगी। और देख, महल में एक भी कतरा शराब का न रहने पाए। प्यालों को टुकड़े-टुकड़े कर दे और महफिल को स्याह रङ्ग से पुतवाकर उसमें ताले भर दे। ....और एक बात। तू बता सकता है वजीर कि हज्जला, अजदअ और मैं, इन तीनों में दुनिया के सामने अब कौन बड़ा है?"

"हुजूर की हुकूमत, शानो-शौकत के सामने किसी की क्या हस्ती जो मुकाबला कर सके।" वजीर ने उत्तर दिया।

"यह तुम्हारी सिर्फ खुशामद-परस्ती है, वजीर। देख कल शाम तक तू मुझे इस सवाल का ठीक-ठीक जवाब दे दे।"

——

तुम प्राणों के प्राण बनो

श्री विश्वप्रकाश दीक्षित 'बटुक'

तुम प्राणों के प्राण बनो!
मेरे मादक मौन पड़ी है युग से विरस तुम्हारी वीणा,
अपने जादू-भरे करों से छूकर कर दो इसे नवीना,
झंकृत तार-तार हो जाए तुम वह मधुमय गान बनो!
तुम प्राणों के प्राण बनो!!

शान्त पड़ा है अँधियारे में मृण्मय दीपक अरे तुम्हारा,
ज्योतिवन्त आ ज्योतित कर दो देकर अपना सरस सहारा,
भवजल-निधि में डूब चला हूँ, जीवन के जलयान बनो!
तुम प्राणों के प्राण बनो!!

खोल लुटा दूँ पद-चिह्नों पर अपनी सुधि की निधियाँ न्यारी,
भूलूँ शत-शत आलिङ्गन में अभिनन्दन की निधियाँ सारी,
जिसमें खोया रहूँ सदा मैं जीवन अनुसन्धान बनो!
तुम प्राणों के प्राण बनो!!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजस्थानी साहित्य की भाषा और उसके अप्रकाशित ग्रन्थ

चौधरी शिवसिंह मल्लाजी चोयल (सीरवी)

राजस्थानी साहित्य बड़ा ही समुज्ज्वल और पठनीय है। [illegible] की अन्य भाषाओं में भी साहित्य है और बड़ा गौरवपूर्ण [illegible] पर राजस्थानी का साहित्य अपने ढङ्ग का अनोखा ही है। [illegible] जो विशेषता और महत्त्व है वह न तो अन्य देशों के साहित्य [illegible] और न भारत की ही अन्य भाषाओं के साहित्य में। अन्य [illegible] की संस्कृति एवं साहित्य से राजस्थान की संस्कृति और [illegible] में विभिन्नता है।

मुसलमानों के भारत पर हमले होने के पूर्व समूचे भारत [illegible] उसके अन्तर्गत प्रान्तों में संस्कृत साहित्य और भाषा का [illegible] प्रचार व प्रसार था। आठवीं शताब्दी से, अर्थात् [illegible] (क्षत्रियों) का भारत के पच्छिमी प्रान्त राजपूताना में [illegible] बसना आरम्भ हुआ तब से, इस प्रान्त की भाषा राजस्थानी [illegible] डिङ्गल के नाम से प्रसिद्ध हुई।

डिङ्गल भाषा उच्च स्वर से बोली जाती है और यह भाषा [illegible] कर राजस्थानी कवियों की ही कही जा सकती है। इस [illegible] के राजस्थान में सहस्रों लेखक और कवि हो चुके हैं, [illegible] दुर्गाजी आढ़ा (चारण) को मैं विशेष आदर देता हूँ। [illegible] भूषण के पूर्व यानी अकबर बादशाह के समय में [illegible] आढ़ा विद्यमान थे। उन्होंने स्वतन्त्रता के अटल उपासक [illegible]-केसरी महाराणा प्रताप के विषय में "विरुद छिहत्तरी" [illegible] पुस्तक की रचना भी की थी, जिसको मारवाड़ के सुप्रसिद्ध [illegible]कार महामहोपाध्याय स्वर्गीय पण्डित रामकर्णजी आसोपा [illegible]पुर-निवासी ने अपने प्रेस से आज से कई वर्ष पूर्व प्रकाशित [illegible] था।

राजस्थानी भाषा में ख, श, ल, ञ आदि अक्षर बहुत कम [illegible] होते हैं। 'ख' के बदले 'ष' और 'ल' के बदले 'क' का [illegible] किया जाता है। इस भाषा में समय-समय पर अरबी, [illegible] और उर्दू के शब्दों का भी सम्मिश्रण होता आया है। [illegible] की पंक्तियों में दो अप्रकाशित छोटे ग्रन्थों से कुछ सन्दर्भ [illegible] जाते हैं, जिनसे पाठकों को उपर्युक्त बातें ज्ञात होंगी—

(१) मातृ-वन्दना (गीत राग गोडां जखड़ी)

राचा किम[1] मिटे रे वाचे वीसहथी[2] मूख वाच। सुरगिर [illegible] मिटे रे, सायर[3] किम मिटे जल शात ॥ १ ॥ किम मिटे [illegible] समन्द सायरा, धरा[4] किम मिटे अधरां धरे। विण[5]

१—किस प्रकार। २—जगदम्बा। ३—समुद्र। ४—पृथ्वी।

थंभ अम्बर[1] एह दीसे, पीठ कांमण की परे ॥ २ ॥ शाखीयां शीश हर, सूर साचा रात दिन भ्रमता रहे। किम मिटेयां मे पवन पांणी, वाच वीसहथी कहे ॥ ३ ॥ ब्रह्मा किण[2] किया रे आया कवल दल विच आप। ईश्वर किण किया रे जेहने[3] माय कहो कुण बाप ॥ ४ ॥ माय जेहने बाप कहो, कुण कवल दल अलगा किया। पद्म नाभे नलिन काटे भेष जिण नै कुण दिया ॥ ५ ॥ चत्र लष्य खांणी चौरासी जीवाँ लेख जिण रा किण लिया। किण यंड थापे पिण्ड किधा कहो (जी) ब्रह्मा किण किया ॥ ६ ॥ जिण दिन कुण हुता रे पांणी पवन नै आवास। धरती नां हुती रे ऊसर नां हुतो आकास ॥ ७ ॥ आकास ऊपर हुतो नांही, नीचा सायर था नहीं। नक्षत्र माल पयाल न हुता, मेर गिर न हुता मही[4] ॥ ८ ॥ हरिहर ब्रह्मा वेद अभ्रम भेव किण पाया हुता। माया न काया धूम धाया कहो, जिण दिन कुण हुता ॥ ९ ॥ हूइज हूंतियां रे सेह जे सुतियां जग। साय जुगत किया रे कामें वया जग ॥ १० ॥ मैं किया मुक्ता जोग जुगता मांगि मानु पतवरे। आपणा संतां मिले 'आई'[5] रिधि-सिधि देवा करे ॥ ११ ॥ कवि 'विदुर' वांणी मो सुहाणी, सुणौ मेरे संतियां। अनहद शब्द अनाद माया, हूइज जै जै हुंतियां ॥ १२ ॥

कवि 'विदुर'

इस पद्य में कवि ने जगज्जननी की वन्दना बड़े ही विनम्र शब्दों में की है। पृथ्वी को माता-रूप में मानकर कुशल कवि पृथ्वी पर स्थित वृक्ष, पहाड़, जल आदि प्रमुख पदार्थों की सूची देकर जगदम्बा के प्रति अपनी अटूट भक्ति प्रदर्शित करता है।

राजस्थान में अनेक कवियों ने अपनी कविता का विषय अधिकतर मातृ-वन्दना के रूप में ही निर्धारित किया है। राजस्थानी अथवा डिङ्गल भाषा में इस प्रकार की कविता बड़े ही महत्त्व की मानी जाती है।

(२) पिङ्गल कोष

यह छोटी-सी पुस्तिका डिङ्गल भाषा में जुगत पिङ्गल कवि-द्वारा रची हुई है। इसकी प्रति वि० सं० १८३६ में लिखे

१—आकाश। २—किसने। ३—जिसको। ४—पृथ्वी। ५—माता को भी कहते हैं और बिलाड़ा (मारवाड़) में 'आई माता' अथवा आईजी का एक बहुत बड़ा मन्दिर भी है जिसे 'आढेर' कहते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राम रासौ' नामक ग्रन्थ में लिखी हुई उपलब्ध हुई है। पद्य में डिङ्गल शब्दों का संक्षिप्त कोष है। इसमें पृथ्वी, सिंह, चन्द्रमा, सूर्य, आकाश, रवि, अन्धकार, हाथी, तलवार, मोर, घोड़ा, सोना और असत्य आदि के विषय में अनेक नामों की सूची कहीं पद्य में और कहीं गद्य में रची गई है। राजस्थानी अथवा मारवाड़ी भाषा में कई संस्कृत और हिन्दी ग्रन्थों के सरल भाषानुवाद हुए हैं किन्तु उक्त विषयों के ग्रन्थ अब अधिक मात्रा में उपलब्ध नहीं हो रहे हैं। इसका कारण यह है कि यवन-शासन-काल में कई ग्रन्थ तो नष्ट हो गए और कई ग्रन्थ दीमक के खा जाने से नष्ट हो गए। मारवाड़ के जालौर, पाली, सांभर, बिलाड़ा ओसिया आदि के जैन यतियों और ब्राह्मणों तथा अन्य लोगों ने कई हस्तलिखित ग्रन्थों की प्रतिलिपियाँ कराकर अपने संग्रहालयों में सुरक्षित रक्खी थीं।

पिङ्गल कोष के कुछ सन्दर्भ इस प्रकार हैं—

अथ धरती नाम ॥ ३० ॥

वसुधा[१], नृङ्गी[२], इला[३], भूम[४], भरथरी[५], मण्डारी[६]। खाख[७], जमी[८], दरदरी[९], धरण[१०], धरती[११], धूतारी[१२]। मही[१३], मूलारिणमण्ड[१४], मुगत[१५], महिषी[१६], रणवाली[१७], अचल[१८], उदे[१९], गिरधरा[२०], सधर[२१], सुन्दर[२२], सोहे लाली[२३] ॥ अवर[२४], धुलवग[२५], गहिरव[२६]; गिरद[२७], घास[२८], वीया[२९], भूपत घणा[३०]। कर जोड़ जुगत पिङ्गल कहै, तीस नाम धरती तणा ॥

अथ सिङ्घ नाम ॥ २४ ॥

वाघ[१] सिङ्घ[२] वरिहथ[३] सादूल[४], सिकारी[५], काहल[६], नल[७], कण्ठाल[८], कलुल[९], केहर[१०], अहङ्कारी[११], हीहर[१२], मन्द[१३], मृगराज[१४], पञ्चआवध[१५], पञ्चाइण[१६], कण्ठीर[१७], वलंकाल[१८], गुफावासी[१९], गयगञ्जण[२०], नाहर[२१], शक्तिवाहण[२२], भलो[२३], ईश्वरसिष्य[२४], इम जाँणिये। कर जोड़ जुगत पिङ्गल कहै, इतरा नाम कवि आंणिये।

अथ हस्ती नाम। २२ ॥

हस्ती[१], जवलि[२], गयन्द[३], इल[४], कुञ्जर[५], ओरापति[६]। गय[७], सबेर[८], वनाग[९], फील[१०], शारङ्गहै[११], फवत[१२], मातङ्गह[१३], मदमस्त[१४], लजजाति[१५] ॥ दन्ताहल[१६]। वारुण[१७], धेधीगर[१८], वयण्ड[१९], हाथी[२०], मेगल[२१], सूण्डाहल[२२] ॥ करि एम नाम कवियण कहै, अनुस्वारै पिङ्गल अखि। यह नाम सारी जांणी हिये लहो जोड़ मांहे लिंख ॥

अथ अन्धकार नाम ॥ २८ ॥

अन्धकार[१], वलितिमिर[२], तिमग[३], द्वादश[४], वग[५], उघ्रित[६]। मधित[७], तमि[८], अजुतार[९], भूस[१०], यत[११], निसरिज[१२], मूधित[१३], गूँध[१४], रागन्दह[१५], काल[१६], विलल[१७], विहराल[१८], कलन्दर[१९], दारु[२०], दर[२१], सम्पतङ्ग[२२], विपरीत[२३], रिसंवर[२४], वषत[२५], तन्त[२६], अन्त[२७], अन्धा[२८] के कहे नाम पिङ्गल परम अति नाम एह धारो हिये। अठाई ले परम गति पाइए ॥

अथ चन्द्र नाम ॥ २४ ॥

सशि[१], तल[२], सिन्दुरङ्ग[३], स्वेत[४], शीतल[५], विधुज[६], इन्दु[७], अङ्गरित रूप[८], चन्द[९], मृगधीत[१०], सुमानो, [११], मण्डण[११], सकलङ्क[१२], शरद[१३], सोने की नालो[१४], वालो[१५], बीजनवङ्ग[१६], कमल मण्डमण[१७], शिकरालो[१८], मानन्द[१९], मन्द[२०] मङ्गण[२१], मदर[२२], विकसत निसको तरण तर। जोड़ इम पिङ्गल कहै, जांणौ चन्द्र हु अतुरी बल ॥

अथ सूर्यनाम ॥ ३२ ॥

गयण मण्ड[१], तिगदिव[२], सवसण[३], अलिण[४], वस्व[५] दिन पर[५], तिमिरहरन[६], तिग[७], मंस[८], वंस[९], तिय[१०], हंस[११], बिभूषण[१२], भाशंकर[१३], भगवान[१४], भांन[१५], बिभकर[१६], बिभाकर[१७], शिवता[१८], हर[१९], मणिसूर[२०], मन्त[२१], गर्व[२२], म्हैर[२३], प्रभाकर[२४], ग्रहपति[२५], अरक[२६], आदित[२७], समखग[२८], धाम साखी[२९], धरण[३०], सूरज[३१], देवसुवर्ण[३२] वर्ण काशी वसुत असरन सरन.....

अथ तरवार नाम ॥ १२ ॥

खड़ग[१], खग[२], षुषधार[३], कङ्क[४], समसेर[५], असि[६], पहु[७], करीफ[८], करवाल[९] तुजड[१०], पीजड[११], वलितुसर[१२]।

अथ षड्द्रव्य नाम ॥ ८ ॥

भाव[१], पदारथ[२], समय धन[३], तन्त[४], वित्त[५], वसुदव्य[६], प्रवीन[७], अर्थ[८] इत्याद बहु, वस्त नाम ए सब ॥

अथ शुद्धजीव द्रव्य के ॥ ३० ॥ सवैया

परम पुरुष[१] परमेसर[२] परमजोति[३] परब्रह्म[४] पूरन[५] परधांन[६] है। अनादि[७] अनंत[८], अवगत[९], अबनाम[१०] अजनि[११], रहुन्द[१२], मुकुत[१३], मुकुन्द[१४], अमलान[१५] निराबाधे[१६], निगम[१७], निगम निरञ्जन[१८], निरविकार[१९] निराकार[२०], संसार सिरोमन[२१] सुजान है। सर्वदरसी[२२] सर्वज्ञ[२३] सिद्ध[२४] सांई[२५] शिवधनी[२६] नाथ[२७] ईश[२८] दीश[२९], भगवान है[३०] ॥

संसारी जीव द्रव्य नाम ॥ ३३ ॥

सच्चिदानन्द[१] चेतन[२] अलख[३] जीव[४] समय[५] सत्त[६] रूप[७] अबुद्ध[८] अशुद्ध[९] उपयोगी[१०] है। चेपूय[११] सत्त चिनमूरति[१३] धरमवन्त[१४] प्रानवन्त[१५] प्रांनी[१६] जन्तु[१७] भवभोगी[१८] है ॥ गुनधारी[२०] कलाधारी[२१] भेषधारी[२२] धारी[२३] अङ्गधारी[२४] सङ्गधारी[२५] जोगधारी[२६]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...[२८] अखण्ड[२९] हंस[३०] आत्मरांम[३१] करम को ...[३२] परम वियोगी[३३] है ॥

आकाश नाम ॥ १० ॥

...[१], अम्बर[२], गगन[३], अन्तरिष्य[४], जग धाम[५] । ...[६], वियत[७], नभ[८], मोघ पथ[९] ए अकाशि[१०] के नाम ॥

काल नाम ॥ ९ ॥

...[१] कृतान्त[२] अन्तक[३] त्रिदश[४] आवर्त्त[५] मृतथांन[६] । ...[७] आदित्यनयन[८] काल[९] नाम परवांन ॥

पुन्य नाम ॥ ८ ॥

पुन्य[१] सुकृत[२] उरध वदन[३], अकर रोग[४] सुभकर्म[५] । सुखदायक[६] संसार फल[७] भाग बहि[८] मुखधर्म ॥

पाप-नाम ॥ १२ ॥

पाप[१] अधोमुख[२] एन[३] अथा[४] कम्परोग[५] दुख धाम[६] । कलिल[७] कलुख[८] किल[९] विख[१०] दुरित[११] अशुभ कर्म[१२] के नाम ॥

मोक्ष नाम ॥ १० ॥

सिद्धखेत[१] त्रिभुवन मुकुट[२] शिवमुख[३] अवचल थांन[४] । मोक्ष[५] मोकत[६] वैकूण्ट[७] शिव[८] पञ्च[९] मुकत[१०] परवान ॥

बुद्धि नाम ॥ १३ ॥

...[१] धिखणा[२] सेमुखि[३] धी[४] मेधा[५] मति[६] बुद्धि[७] ...[८] मनिखा[९] चेतना[१०] आशय[११] अंस[१२] विशुद्धि[१३] ॥

विलक्षण पुरुष नाम ॥ २३ ॥

...[१] विलक्षण[२] विबुधबुध[३] विद्यावर[४] विद्वान[५] । ...[७] प्रवीन[७] पण्डित[८] चतुर[९] सुधी[१०] सुजम[११] मतिमान[१२] ॥ ...[१३] कोविद[१४] कुशल[१५] सुमन[१६] दक्ष[१७] धीमन्त[१८] । ...[१९] जनब्रह्म[२०] विज्ञ[२१] ताप[२२] गुनीजन[२३] सन्त ॥

मुनि नाम ॥ १२ ॥

...[१] महन्त[२] तपसी[३] भिक्षुक[४] चारित[५] धांम[६] । ...[७] तपोधन[८] सञ्जमी[९] व्रती[१०] साधु[११] रिखे[१२] नांम ॥

दर्शन नाम ॥ १२ ॥

दरस[१] विलोकन[२] देखनो[३] अवलोकन[४] दृग[५] चाल । ...[६] दृष्टि[७] निरखन[८] जवनि[९] चित्तवनि[१०] चाहन[११] भाल[१२] ॥

ग्यांन तथा चारित्र नाम ॥ ११ ॥

ग्यांन[१] बोध[२] अवगम[३] मुकत[४] जगत[५] जांनि जग भांन[६] । ...[७] चारित्र[८] आचर[९] निचरत वृति[१०] थिरवांन[११] ॥

साच नाम ॥ १२ ॥

...[१] सत्य[२] अमोघ[३] सत[४] निसन्देह[५] निरधार[६] । ...[७] उचित[९] तथ[१०] अमिथ्या[११] आद अकार[१२] ॥

झूठ नाम ॥ १२ ॥

अयथार्थ[१] मिथ्या[२] मृश[३] वृथा[४] असत्य[५] अलीक[६] । मुधा[७] मोघनि[८] फलवितथ[९] अनुचित[१०] असति[११] सन्देह[१२] अलीक ॥

मोर नाम ॥ ११ ॥

मयूर[१], नीलकण्ठ[२] केकी[३], बहर[४] शषि[५] शिखण्डी[६] होय[७] । किहन[८] अहखी[९] मोर[१०] तापिसोय[११] ॥

सिंघ नाम ॥ ९ ॥

पुण्डरीक[१] हर[२] पञ्चमुख[३] कंठीर[४] मृगराय[५] । सिंघगोल[६] वृषभान[७] के सहचर[८] पोहती[९] जाय ॥

अश्व नाम

वाजी[१], वाह[२], तुरङ्ग[३], हय[४] सेंधव[५] अबर्क[६] कांम[७] तरल[८] तुरङ्गमभीर[९] अत नेक न पइयेन घोड़ा ।

अथ उजाल नाम

शुक्ल सुभ्र पण्डुर विसद, अर्जुन सित अवदात ।
धवल नवल ऊँचे अटा, करत घटा सु बात ॥

अथ मान नाम

अहङ्कार, मद, दर्प, पुनि गर्व सम अभमांन ।
मांन राधका तू वर को, सब को करो कल्याण ॥

उत्तावल नाम

आसु झटि तदु तुर्ण, लघुक्ष सत्वर उताल ।
तुरत चली चातुर अली, अतुर दीख नंदलाल ॥

घर नाम

सदन सदम सहुत ग्रह, आल नील यश थांन ।
भवन भूप वृषभान के गह महचरी जांन ॥

अथ सुवर्ण नाम

कञ्चन कुनका त्रस्व, चामीकर तपनीय ।
अष्टापद हाटक पुरट, महारजत रमणीय ॥
सोने ही के सदन सवमणि, कूंगच सच देत ।
जिहां तिहां नर नार तिज, जाइ जिक जिक लेत ॥

किरण नाम

अंसुग भिस्त मयूख कर, गोम रीच वसु जोति ।
रसम परस शशि सूर की, जगमग-जगमग होति ॥

कवित छन्द मनोहर

मेरी[१] है मही[२] श्रीय[३] के रह्यो निडर[४] शेश[५] बहू, आय[६] भौंर[७] तज[८] सशि[९] शही कुं जांन[१०] है । आहे न बार[११]

१—मगण, २—देवता, ३—दाता, ४—नगण, ५—देवता, ६—घणी आवरदा रो दाता, ७—भगण, ८—दाता, ९—चन्द्रमा देवता, १०—यगण, ११—पाणी देवता ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वृद्ध[१] सब[२] हे पवन[३], भ्रम[४] ते रो[५] हिय सुन[६] सुभ धन नाशयांन[७] है॥ जरियो[८] री रिवरोग[९] फुनि[१०] रोस[११] ही की, आग[१२] जागै, प्राण कु निरोध करे[१३] काल करतांन है। आते नन्दगण सिध फल चाहे सो तो, रटो हर नाम देही तज्यो अभिमांन है॥

दूहा

ह[१] ड[२] ध[३] र[४] घ[५] न[६] र व[७] भं[८] आठ असू के दांन।
कवि पिंगल भाषा कहे, कवत आद मन्त्र आंन॥

साल्हौत्तर ग्रन्थ

यह छोटी-सी पुस्तिका राजस्थानी गद्य-भाषा में किसी अज्ञात लेखक-द्वारा लिखी हुई है। इस पुस्तिका की प्रति वि० सं० १७३२ में लिखी एक हस्तलिखित पुस्तक में उपलब्ध हुई है।

इसमें साल्हौत्तर ऋषि अथवा नकुल-द्वारा घोड़ों के विषय में अनेक ज्ञातव्य बातों के प्रति विवेचनात्मक विचार संगृहीत किए गए हैं। घोड़ें के रङ्ग-रूप और शुभ-अशुभ आदि लक्षणों का राजस्थानी भाषा में बड़ा सुन्दर विश्लेषण किया गया है। इस पुस्तिका का सम्बन्ध महाभारत से पाया जाता है।

यह वि० सं० १७३२ के पूर्व राजस्थानी (मारवाड़ी-डिङ्गल) की गद्य-भाषा-प्रणाली का एक सुन्दर नमूना है। उस समय गद्य का कैसा प्रचार था, यह अग्रलिखित "साल्हौत्तर ग्रन्थ" की भाषा-द्वारा सहज ही ज्ञात किया जा सकता है।

श्रीगणेशाय नमः

अथ साल्होत्तर ग्रन्थ लिखिंते

जैंवत पाण्डव राजा। जुधिष्टर च्यारि भाई[१]। सुधै जैकार हुवै[२]। निकुल सालोत्तर कीयौ[३]। सेा घोड़ां रै वास्तै। सार २ ग्रन्थ कीधौ[४]। आगै घोड़ां रे पांखां हूँती[५]। तरै घोड़ा आकास थी उतरता। मात लोक[६] में आंवता तरै इन्द्र विचार कियौ—इणि घेाड़ां चढ़ि नै मात लोक थी मनिष्य[७] अवसी सेा कासु कीजै। तरै सुभा मांहे साल्हौत्तर रिष्य बैठा था तिणनै इन्द्र महाराज कह्यौ। पांखां छेदक घोड़ा धरती ऊपर राखौ। जो आदमी चढ़ि नावै। तरै साल्हौत्तर रिष्य पर छैदी। तरै घोड़ा साल्हौत्तर नै कहयौ—पांखां कि वास्तै छैदी। तरै[८] सालौत्तर उषद[९] करि नै साजा किया। पछी घोड़ा तो स्वर्ग में राखिया। पछ छैदी मात लोग मैल्या[१]। घोड़ां माता[२] राखसी सेा राजा कहावसी। धरती भोगवसी। घोड़ां अरज कीधी—म्हाँ लोग मांहे रोग छै। तरै माता तरै होस्यां। तरै सालौत्तर कह्यौ—उषध करस्यां नै तिण महिने कहथा तकै २ करस्यां तिण थी[३] माता रैहसी रोग कोई व्यापसी नहीं। माता ऊपर मानवी चढ़िसी, करसी सेा तिण री फतै कहावसी[४]। लोग माहें वधसी[५]। पछ सरूपी तो इन्द्र असवारी में राख्या। छैदी मात लोक मैल्या। कतराहेक[६] पातालिना[७] लोक बसकरणै नै मैल्या। तरै साल्हौत रिष्य सेाले हजार ग्रन्थ करनै सार २ उषदां रा उपाव किया। सिषपणा ३ भणाया। इन्द्र सभा मईं राख्या—११ पाताल लोक में २ पछै सेाले हजार ग्रन्थ माहि थी सार २ निकुलजी तन्त्र कहे ग्रन्थ कीधौ—तिण मां है पहिली घोड़ां री जाति कहिये जाति ४—उत्तिम १ मध्यम २ अधम ३ नै ४ धमा धमा जाति च्यारि कही उत्तिमा तिवाग चालन्त् अध उत्तमा। माते स्वेत चालन्त् टूम चालन्त् धमा धमा॥ हमैं देसांर घोड़ां नाम छै इण घोड़ा जाति खुरासाणी, तूखारी, उत्तिम—तुरकी, गुजी, पोढ़ा केकाण हार समजाति उत्तिम राज, सुलि मध्यम गवर बावग : सिधूप राख : बीजा देसां रा[८] घोड़ा नीच : वाज पांणी पन्था : उत्तिम : पवन रा बेटा : इन्द्र रा बेटा : वैसाद्र रा बेटा : पन्था ब्रह्मा रा बेटा : वैसाद्र रा बेटा : खत्री[९] रा बेटा : बेटा वैस्य इन्द्र रा बेटा : सुद्र नम्रग कहिजै नै किम जांणी पोहपरा सरीषी[१०] वास हूवै तेथो ब्रह्म जाति जांणीजै सरीषी त्री जांणीजै : घृति सरीषी वास हूतै वैस्य जांणीजै वास हूतै सुद्र[११] है ववेकी है दयावन्त है सेा जाति ब्राह्मण वन्त होय। बलिवन्त होय समधर्म्म[१२] होई सेा। षत्री[१३] रिष्ट-दुष्ट होय सेा जाति सुद्र जांणिवौ :[१४] च्यारि जाति वरण :[१५] षत्री जाति ऊपरि राजा चढ़ै तो भलौ :[१६] वैस रा ऊपरि सुद्र चढ़ै तो भलौ : आप री जाति आप नुसषरी च्यारूँ जाति रां घोड़ा चढ़ै काम वस्येष[१८] राजा सुं मेल[२०] करै : ब्राह्मण जाति घोड़े चढ़ै तरैई जुध[२१]

१—देवदाता, २—शगण, ३—देवता, ४—मृगी रो दाता, ५—तगण, ६—भुनदेवता, ७—घनहीन करे, ८—जगण, ९—सूर्य्यदेवता, १०—रोग रो दाता, ११—रगण, १२—अग्निदेवता, १३—प्राण को हरण करनेवाला।

१—पाण्डव युधिष्ठिर सहित पाँच भाई थे, २—उन पाँचों का यश सर्वत्र छाया हुआ था, ३—नकुल ने घोड़ों के विषय में अनुसन्धान किया, ४—मुख्य-मुख्य विचार इकठा किए, ५—पूर्वकाल में घोड़ों के पङ्ख (पर) होते थे, ६—मृत्युलोक, ७—मनुष्य, ८—तब, ९—ओषधि।

१—भेजना, २—बलवान, ३—जिससे, ४—होना, ५—संसार में यश फैलेगा, ६—कितने ही, पाताल के, ८—अन्य देशों के, ९—क्षत्री, अथवा समान, ११—शूद्र, १२—स्वामिभक्त, अपभ्रंश, १४—जानना, १५—वर्ण, १६—शुभ, १८—कार्य-विशेष, १९—शास्त्र, २०—अध्ययन करना, २१—युद्ध का बिगड़ा हुआ शब्द।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाति रे घोड़े चढ़ि नै सलांमी उग रावण जाइतरै चढ़ै : सिकारि चढ़ै : सुद्र ऊपर सलांमी उग रावण जावत रै जाति पर चढ़ई सैल्य सिकारी सुद्र ऊपर चढ़ै : सदा नींद रहै : जुअरऊँ वागै तरै जागै : पाहौरै काकरौ आवै जरै जागै : रो आगम ह्वै तरै ऊँचो देखी नै हींसै छै नै खुर सुं धरती तरै फतै ह्वै और जुध नै तैयार करै जरै ऊधै लादि करै : आँसू नांखै : नोचो मुहडौ[1] करि नै हींसै[2] : असुभ : अचणक[3] अधीराती रा हींसै तरै भूडौ धरणी नै भार : नै परदेस नै हलावै : संज्या[5] रौ घोड़े पूँछ वासदेव रई असभ पाईगा माहै माखी[6] मुहाल घातै तरै असुभ : री पायगा सत सी पाठ कराविजै : ।

धूप-दीप कराविजै तो उदो ह्वै[7] : घोड़ा रा सात रङ्ग सुभ —सपेत २—कमेत ३—पीलो ४—सुरङ्ग ५—नीलो ६— ७—सोन्हैरी अै रङ्ग सुभ जाणिवौ[8] : सपेत[9] बुरफ रातो कुकुम सरीषौ, पीलौ हलद सरीषौ कमेत लाष सरीषौ लाषै री सुरङ्ग केसवाली, वालूछई स्याही सुं नीलौ कहिजै : जाम्बू सरीषौ रङ्ग सेा मुसकी कहिजै : घोड़ेा पीलौ होई : पग च्यारू सफेत होई: आंख्यां सफेत होई : घोड़ेा चक्र डाक कहिजै : राजा री असवारी लायक घोड़ेा पग च्यारू सफेत टीलै : सफेत तैनै मिलाकाष कहिजै : सुभ सषरौ[1] सफेत सषरौ होई : पग स्याह होई जै तै जमदूत कहिजै तै घोड़ेा न राखीजै : तकौ घोड़ेा पगे वालु छै छाती केसवाली.....।

साल्हौतर ग्रन्थ राजस्थानी भाषा का एक अनूठा रत्न है। इस भाषा का इससे अधिक पुराना गद्य-ग्रन्थ मेरे देखने में नहीं आया। सम्भव है, खेाज करने पर इसी प्रकार के कुछ अन्य ग्रन्थ भी मिलें जो इतिहास की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण सिद्ध हों।

राजस्थान में अनेक राजकीय प्राचीन संग्रहालय हैं जिनमें अनेक उल्लेखनीय ग्रन्थ मौजूद हैं। ये ग्रन्थ संस्कृत, पाली, प्राकृत, राजस्थानी (मारवाड़ी) और हिन्दी आदि के हैं। इन संग्रहालयों में जैसलमेर का जैन ग्रन्थ-भाण्डार सबसे अधिक प्राचीन कहा जा सकता है। जालौर (मारवाड़) में भी जैनधर्म की व अन्य धर्मों की कई हस्तलिखित पुस्तकें पाई गई हैं।

क्या मैं आशा करूँ कि हमारे राजस्थानी साहित्यसेवी प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों की ओर भी समुचित ध्यान देंगे ?

१—मुँह, २—आवाज करना, ३—अचानक का अंश, ४—स्वामी, ५—शाम को, ६—शहद की मक्खियाँ, ७—उद्धार होना या सङ्कट का नाश होना, ८—ये सात रङ्ग शुभ कहे गए हैं, ९—श्वेत या सफेद।

१—अच्छा।

नीरद-माला

श्री मुकुल

पावन बन अम्बर से नीचे, उतरी नीरद-माला !
अन्धकार में खुले दृगों ने, निर्जन प्रान्त बसाया;
बिजली के मिस शून्य क्षितिज को किसने आज हँसाया ?
घन-घूँघट की ओट छिपे विधु, लिए विश्व की व्रीड़ा;
मधुर-मधुर झिलमिल तारावलि, भूली करना क्रीड़ा !
स्निग्ध-पात ने हिल-हिल अपने, यौवन को दरसाया;
तुहिन-कणों ने उनपर सजकर, खूब खुमार चढ़ाया।
परदेशी प्रिय के स्वागत-हित, खड़ी द्वार पर बाला,
पावन बन अम्बर से नीचे, उतरी नीरद-माला !
जगी चेतना आज नियति की, नूतन आशा आई;
नव कलियों ने झूल डाल पर, कजली नई सुनाई।
ले पावन सिन्दूर सुहागिन, अपनी माँग सजाए;
नाच-नाचकर काली पुतली, पलकों में छिप जाए।
मधुर मिलन की बेला में अब, सावन करुणा लाया;
मालकोष की तान भुलाकर, प्रिय मलार को गाया।
करुणा-कलित हृदय ने फिर से, यौवन का रस ढाला;
पावन बन अम्बर से नीचे, उतरी नीरद-माला !

शुक, पिक, मोर, चकोर, पपीहे, कहते प्रणय-कथाएँ;
विरह-स्वप्न-स्मृति-विह्वल लिपटीं, तरु से ललित लताएँ।
किसलय, कलियों की किलकिञ्चित, देख किलक रह जाते;
मत्त मधुप पी-पीकर मधु को, क्षण भर नहीं अघाते।
मनसिज की मनहर मरीचिका, मन मन्थन करती क्यों ?
विरह-पुजारिन रोमावलि में, वीत-राग भरती क्यों ?
परिष्वङ्ग-उद्भ्रान्त-आर्त प्रिय, आया बन मतवाला
पावन बन अम्बर से नीचे, उतरी नीरद-माला।
उमड़-घुमड़ घन-घटा घहरकर, कहती एक कहानी;
अन्तराय के बाँध तोड़ सब, करती है मनमानी।
डोल-डोलकर मत्त प्रभञ्जन, लहर-लहर बह जाए।
मधुर मृदङ्ग बजाकर मृदु-मृदु, पावस रूप सजाए।
पञ्छी का उत्पतन गगन में, हर्षोल्लास बिछाए;
दृग-सीमा तक प्रयत प्रकृति का, हरिताञ्चल लहराए।
प्रावृट् ने वर्षण कर अपना, सुभग रूप कर डाला;
पावन बन अम्बर से नीचे, उतरी नीरद-माला !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदमी का बच्चा

धारावाहिक उपन्यास

श्री कृष्णचन्द्र शर्मा, एम० ए०

(गताङ्क से आगे)

जिस सदाशय से शैलेन्द्र से मिलने गया था, वह हवा हो गया। अगले दिन जब हम स्कूल में खाने के समय हौज पर पहुँचे तो मैं उससे उलझ पड़ा—नियमन का हटाना स्वातन्त्र्य का दूषित स्वरूप प्रस्तुत करना है। स्त्री-स्वातन्त्र्य वैसे भी शुभ नहीं। उनके समस्त अधिकारों में आपेक्षिक बुद्धि परमावश्यक है। स्त्री-लता का उन्नयन पुरुष-स्कन्ध के आधार पर ही सम्भव है।

शैलेन्द्र ने कहा—यही अपेक्षा-बुद्धि पुरुषों के विषय में भी बनी रहे तो कैसा?

किन्तु शास्त्र ऐसी व्यवस्था नहीं देता। विवाद-ग्रस्त स्थलों में वही एकमात्र प्रामाण्य है।

मैंने यह क्या कह डाला? कौन से शास्त्रों को देखकर यह मत निश्चय किया था। शैलेन्द्र ने उस निराधार घोषणा को स्वीकार करके कहा—किन्तु जो तुम्हारे शास्त्रों को प्रमाण नहीं मानता? फिर स्वतन्त्र बुद्धि की भी तो कुछ-न-कुछ उपयोगिता है। प्रमाण-दृष्टि उसे निरर्थक क्यों माने? व्यक्तिगत अनुभवों का महत्त्व कम नहीं।

मैं अन्धकार में ही था। फिर भी संस्कार विरोध के लिए प्रेरित कर रहे थे। मैंने कहा—नास्तिक की हम चिन्ता नहीं करते। शास्त्र उनकी समझ से परे की वस्तु है। दूसरे हमारी बुद्धि अन्धकारभेदिनी नहीं। शास्त्र-विधान का दीपक लेकर ही हम संशय का निवारण कर सकते हैं।

हम विवाद में व्यस्त थे। चील उड़ती हुई आई और झपट्टा मारकर मेरे हाथ की पूरी छीन ले गई। शैलेन्द्र हँस पड़ा था। मैं कहता ही गया—व्यक्तिगत अनुभवों में हम समय नष्ट क्यों करें जब कि पथप्रदर्शक पहले से ही प्रस्तुत है। तुम विचार-स्वातन्त्र्य के बहाने उच्छृङ्खलता का अनुमोदन करते हो। शास्त्र की व्यवस्था पशुवृत्ति के आधार-स्तम्भ पर खड़ी न होकर श्रेयस्कर विवेक का अनुशीलन करती है। सामाजिक और धार्मिक सत्यों के लिए उसका विधान एकमात्र विहित है।

अपनी बात समाप्त कर मैं आप ही खोया-सा रह गया। अपने प्रतिपाद्य से मैं स्वयं कितना परिचित? यह विरोध के लिए विरोध अथवा कुछ और? चीलों से आसमान भरा जा रहा था। शेष लड़के धीरे-धीरे अपना भोजन समाप्त कर चल दिए थे। मैं झगड़ता ही रहा। पढ़ाई का घण्टा बजा। शैलेन्द्र की ओर देखा। वह हँस रहा था। बोला—अरे अब उठो! आज भूखे ही रहे।

मैंने उठते हुए पूछा—पर तुम मुसकरा किस बात पर रहे थे। क्या तुम्हारा विरोध शेष है?

उसने कहा—हाँ, और उसका निराकरण तुम्हारे द्वारा सम्भव भी नहीं। मैं तो केवल यही सोच रहा था कि तुम्हें बोलना आता है!

और यही बोलना मेरे असन्तोष की अभिवृद्धि कर रहा था। कुछ भाव उठते हैं, जिह्वा उनकी अभिव्यक्ति कर डालती है। दुनिया बहरे कानों से सुन भर लेती है। पशुओं के पास इतने नहीं, पक्षियों के पास केवल कण्ठ है, वनस्पतियाँ अभिव्यक्ति में शायद हमसे भी अधिक असमर्थ! फिर भी उन सबके व्यापार में सन्तोष है। नहर के प्रवाह की मन्द ध्वनि कानों में आ रही थी। क्लास में बैठा हुआ भी पशुओं की विचित्र बोलियों की कल्पना करता रहा। पक्षियों का कलरव पवन के उठते-गिरता-सा गूँज रहा था। अध्यापक ने प्रश्न किया। मैं चुप ही बैठा रहा। 'आप ही से पूछता हूँ', क्या उन्हीं से? फिर भी मैं मौन था। 'सुनते नहीं, या बोलना नहीं जानते।' यह क्या, शैलेन्द्र तो कहता था कि मुझे बोलना आता है। नहीं, उसने मजाक किया होगा। मुझे गुम-सुम लड़के हँस पड़े थे और अध्यापक भी। मैं खीज से भर उठा फिर भी अवाक् ही रहा।

× ×

पादप माली की इच्छा के अनुसार बढ़ रहा है। फूल, रस और गन्ध धूप, जल और मिट्टी के योग से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर भी माली की स्वेच्छाचारिता और लापरवाही उनकी ...माली है। फल लगेंगे पर वह स्वाद न होगा। फूल खिलेंगे ...पँखुड़ियों के रङ्ग उभड़ न पाएँगे। इस पर भौंरे न टूटेंगे, ...बावला-सा गन्ध को लुटाता न फिरेगा। बाग की क्यारी ...की शोभा अवश्य बढ़ेगी।

और आदमी का बच्चा किस पाबन्दी से मुक्त! मेरा ...उपनयन संस्कार हो रहा है। शास्त्रोक्त विधि का पूर्ण पालन होगा। पण्डित पद्धति में प्रवृत्त है, मैं गुड्डा-सा बैठा हूँ। ...मेरी इच्छा है कि जो कुछ हो रहा है, जो कुछ मुझसे कराया जा रहा है उसे समझता भी चलूँ। किन्तु इतना अवकाश कहाँ? ...पिताजी भी डपट देते हैं। पण्डितजी के कथनानुसार बिना ...समझे ही प्रतिज्ञाओं का उच्चारण हो रहा है। इच्छा होती है कि बलपूर्वक इन कृत्रिम बन्धनों को तोड़ डालूँ। पर मेरी आज तक की शिक्षा, मेरे वंश-क्रमागत संस्कार, मैं विवश होकर ...हो जाता हूँ। यदि मेरी स्थिति में शैलेन्द्र होता!

मैंने उड़ान भरी--हृषीकेश का तपोवन। प्रकृति की गोद में जङ्गली फूलों-से खिले कुछ प्राणी। सूर्य प्यास जगाता है, ...बादल सींचते हैं, हवा साँस भरती है। कोई माली नहीं। ...कुछ अपने आप प्राकृतिक ढङ्ग से। पहाड़ी भेड़-बकरियों के पीछे दौड़ा-दौड़ा जा रहा हूँ। बकरी ने चार घास के तिनके ...लिये। उचककर गह्वर की ओर बढ़े तिकोने पत्थर पर चारों ...जमा लिए। सरलतापूर्वक इधर-उधर देखकर घास की ...पत्तियाँ टूँग लीं। लङ्गूर अपनी लम्बी पूँछ का फन्दा पेड़ की ...मोटी शाखा में डाले औटे खा रहा है। ठीक नीचे से पहाड़ी स्रोत बढ़ा जा रहा है। लङ्गूर मगन है। उसके काले मुख पर भी चमक है। उत्साहपूर्वक चीड़ की टहनियों को ...तोड़-तोड़कर स्रोत में बहा रहा है। वहीं ऊपर शिखा पर बैठे ...पक्षी बिना किसी भय के उसके वन्य उल्लास में योग दे रहे हैं। लङ्गूर उनकी चिरपरिचित बोलियों से उछाह में भरकर वृक्ष को ...मूल हिला देने की चेष्टा करता है। मुझे भी भूख लगी। ...बिदारीकन्द उखाड़े, पहाड़ी स्रोत में धोए। पत्तों से रगड़कर ...साफ किए और दाँतों से कुतर-कुतरकर खाने लगा। बन्दर ने ...मेरी नकल की। मुझे एक सहभोजी मिला। फीका, मीठा, ...कसैला स्वाद, फिर भी छककर खाया। लङ्गूर उचककर प्याल के ...पेड़ पर चढ़ गया। एक झकझोरे में पके-पके प्याल चू पड़े। ...मैं चुन-चुनकर खाने लगा। पहाड़ी लोमड़ियाँ भी बीन-बीनकर ...खाने लगीं!

बीच-बीच में मन्त्रोच्चारण की ध्वनि कानों में पड़ जाती है। ...मैं चौकन्ना होकर फिर भूल जाता हूँ। वही दृश्य—पहाड़ों पर ...दौड़ता-दौड़ता थक गया। तने का सहारा लेकर लेट गया। ...धूप थी, पर बादल छाँह करने लगे थे। मुझे नींद आ गई। ...सूखे पत्तों का बिस्तर, पत्थर का उपधान, झीमते हुए चीड़ के ...वृक्षों की कर्णप्रिय ध्वनियाँ, पक्षियों की मीठी बोलियाँ, कोई स्वर हृदय में गुदगुदी पैदा करे, कोई किसी अभाव की ओर सङ्केत कर स्मृतियों को जगाए और कोई कानों में मधुवर्षा करता हुआ तन्द्रित कर दे—कू-कू, टी-टी, टेंव-टेंव, चीं, काँव, बेऊँ, किट-किट, टीसी—मैं सो गया।

सोकर उठा। पास ही के रास्ते पर हाथी की गरम लीद पड़ी थी। चीते के पञ्जों के निशान खुदे थे, किसी पशु का टूटा सींग गिरा था। आदमी पत्थरों के साथ सोता रहा और दुनिया के सारे भय उस पर से उतर गए। बादल हट गए, सूरज छिप गया, सन्ध्या ने धूसर अलकें खोल दीं। मैं पथ पर अग्रसर हुआ।

बस नीलकण्ठ कुछ ही दूर। दो पहाड़ियों को पार करते ही तीसरी पर। पैरों में स्फूर्ति आ गई। किसी पहाड़ी की झोपड़ी में बासमती बन रही थी। उधर से हवा का सर्राटा आया और नासिका-पुटों को गमकाता हुआ उड़ गया। पण्डितजी ने गन्धद्रव्य प्रज्ज्वलित किए, पर उनकी गन्ध रुचिकर न लगी।

कर्मकाण्ड अभी पूरा न हो पाया था। मैं बैठा-बैठा थक गया था, मानो रात हुआ चाहती है। मेरी आँखों में स्वच्छन्द जीवन के चित्र खिंच रहे हैं। पहाड़ी हाँफते हुए आए—उधर मत जाओ, शेरनी बिगड़ी फिर रही है। मुझे रुकना पड़ा। अँधेरा बढ़ रहा था। सूखी लकड़ियाँ बटोर-बटोरकर ढेर इकट्ठा किया। फिर परस्पर रगड़कर अग्नि उत्पन्न की। भय की चिता जलने लगी। आज की रात इसी शिला पर। तारिकाएँ रजनीपट से झाँक-झाँककर मुझे देखने लगीं। मैं हँस पड़ा वे चमकने लगीं।

रात काली हुई। आकाश का आँगन तारों से भर उठा। पेड़, पत्थर, पशु और आदमी सभी ने करवट ली। दिन भर की थकी दुनिया आराम किया चाहती थी। मैंने भी कमर टेक दी। तारिकाएँ अब भी जगमगा रही थीं, पवन अब भी साँस ले रहा था। सोकर उठा तो प्राची का मुख आरक्त था शेष नीलपट नितान्त निरभ्र! पत्तियों पर ओस-कण बिखरे पड़े थे। प्रकृति के शृङ्गार-मौक्तिक! मेरे माथे पर पसीने की बूँदें चुहचुहा आईं। पण्डितजी कर्कश ध्वनि से मन्त्रोच्चारण कर रहे थे।

बटुक वेश में पलाश-दण्ड धारण किए भिक्षापात्र लिए खड़ा हूँ—'भिक्षां देहि'। माँ ने झोली उलट दी, पात्र पर फलों और प्रिय खाद्यों से भर गया। 'भीख!' मेरे कानों में किसी की उपहास-ध्वनि गूँज रही थी। 'कैसी भीख?' शैलेन्द्र के-से शब्द थे। 'यह कृत्रिम जीवन! इसी की व्यवस्था देते तुम्हारे शास्त्र? गत युगों की धुँधली छाया के आलिङ्गन की चेष्टा क्यों?' शैलेन्द्र के शब्दों में व्यंग्य था। मैंने आकुल होकर इधर देखा। कोई नहीं, केवल मुदित कुटुम्बी जन!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भीख ले गुरु के पास पहुँच रहा हूँ। शैलेन्द्र के आक्षेप पीछा-सा कर रहे हैं—शास्त्र-विधान का दीप, हुँ!! अन्धकार-भेदिनी दृष्टि, ह! ह! ह! त्रिकालदर्शी! यही न परम्परा की बेड़ियाँ! सब आदमी के दिमाग के फितूर, बच्चे को बहलाने के प्रयास! मैं अभी बच्चा!

× × ×

छोटी भाभी के आने का मेरे मन में कोई उछाह न था। बड़ी भाभी की स्वार्थपरायण उदासीनता और ईर्ष्यालु गम्भीरता ने 'भाभी' जैसे जीव के प्रति मेरे मन में कोई भी अच्छी धारणा शेष न छोड़ी थी। प्रयत्नतः मैं उनसे भागा करता और एक और के आ जाने पर घर में रहना असम्भव लगने लगा था।

मेरे मन में अनेकों भाव बिखरे पड़े हैं। उन्हें बटोर-बटोर-कर दृश्य खड़ा करना चाहता हूँ। प्रत्येक कहानी का कोई-न-कोई केन्द्र होता है। मेरे जीवन में अनायास ही इस केन्द्र की अनुभूति कैसे हुई यह स्मृतियों का विवरण है। उसे जानने के लिए लुप्तप्राय पदचिह्नों के आधार पर प्रत्यावर्त्तन करना सा पड़ रहा है।

छोटी भाभी जा रही हैं, मैं उन्हें एक बार देखने का लोभ संवरण न कर सका। दबे पैरों से उनके कमरे में पहुँचा। वे दर्पण में देखकर वस्त्र बदल रही थीं। मेरी ओर पीठ थी। सोचता था मुझे न देख सकेंगी। किन्तु दर्पण ने चोर की छाया पकड़ ली और वे आँचल सम्हालती हुई घूम पड़ीं। मैंने भागना चाहा, पर पैर बँधे-से रह गए। रूप की निर्मल स्रोत-स्विनी मेरी आँखों में बह रही थी। लहरियों-सी मुस्कान उठ-उठकर गिर रही थी। मेरे हाथ जुड़ गए—नमस्ते भाभी! प्रत्युत्तर में स्वेदपूर्ण मन्द हास। कुछ ही क्षण के परिचय के उपरान्त जब भाभी जाने लगी थीं तो घर भाँय-भाँय करता सा जान पड़ने लगा था। सूनेपन से घबराकर रोना चाहता था। भाभी से भी आँसू छिपे न रह सके थे।

भैया के द्विरागमन की उनसे भी अधिक मुझे उत्कण्ठा थी। अन्धकार में भटकते हुए को प्रकाश, प्रकाश में ठोकरें खाते हुए को सहारा, और असाध्य रोगी को धन्वन्तरि के दर्शन हुए। जब मैं आधिग्रस्त था तो छोटी भाभी ने अपने स्नेहाञ्चल का प्रसार कर मुझे ढक लिया था। मैं स्वस्थ हो चला था।

× × ×

मुझे सपने की-सी भ्रान्ति हो रही है—'भैया, आओ तो तुम्हारी चोटी गूँथ दूँ।' मैंने चिहुँककर खुली शिखा में ग्रन्थि दी। भाभी हँसती हुई कह रही हैं—'ठीक, तो देवरानी को ले आओ, उन्हीं का शृङ्गार किया करूँगी।' नटखट ऊर्मि का दृश्य मेरी आँखों में समा रहा था। उसमें और भाभी में क्या अन्तर? 'मैं तुम्हें पसन्द हूँ न भैया, मेरी जैसी देवरानी लाना।' छोटी भाभी-सी पत्नी, मैं कल्पना कर फूल उठा था। तत्क्षण ही वाणी में सङ्कोच फूट पड़ा था, तुम अभी ही तङ्ग करने को बहुत हो, भाभी।

भाभी मुक्त होकर हँसने लगी थीं। तभी माताजी जाने कहाँ से आ गई थीं। पूछा—क्या बात है बहू! विनय क्यों भीगा-सा खड़ा है।

सचमुच ही मैं अव्यवस्थित हो उठा था। कहीं भाभी भी कह दिया तो? भाभी के मौन के साथ मेरे प्राण बँधे वसन्त में कोयल-सी कूक उठी। मैंने सुना—'माँजी, विवाह तो कर लेने को राजी हैं, किन्तु मेरी जैसी रानी लाने घबराते हैं।' ये तो भाभी के ही बोल थे। माँ हँसती हुई गईं। मैंने बिगड़कर कहा—तुम बड़ी खराब हो, भाभी!

× × ×

छोटी भाभी भोजन करा रही हैं—दाल तो ठीक बनी भैया! साग में नमक-मिर्च कैसा है? ऐसे क्यों खा रहे हो अच्छा नहीं बना क्या भोजन? अचार लाऊँ, या रायता मँगा दूँ? यह क्या टुकड़ा तोड़ा नहीं और लगे पानी पीने। अब गिलास रख दो। पेट तो पानी से ही भर जाएगा खाओगे क्या? न, न, यह रोटी तो लेनी ही होगी। जा रहे हो। यह लापरवाही ठीक नहीं—

भाभी कह रही हैं—भैया, तुम तो विवाह न कराओ पर इस तरह तुम्हें सदा भोजन कौन कराएगा?

'तुम जो हो!'

'और तुम्हारे भैया को यह गवारा न हो तो?'

'मैं तुम्हें अपने साथ कहीं दूर ले चलूँगा?'

भाभी हँस पड़ीं, मैं झेंप गया। बोलीं—तब तो उन्हें से सतर्क हो जाना चाहिए।

भोजन की मिठास बढ़ती जा रही थी।

× × ×

एफ० ए० का परीक्षा-फल निकल गया था। छोटी भा के पास जाकर कहा—भाभी, रिजल्ट आ गया है। देख आऊँ

भाभी ने आशीर्वाद दिया। प्रथम श्रेणी की आशा द्वितीय श्रेणी में आया। हर्ष-दुःख की मिश्रित अनुभूति शिथिल-सा घर लौट आया। भाभी ने आते ही माँग लाओ, मिठाई लाओ, भैया।

पास हो गया हूँ भाभी!

मेरे स्वर में औदासीन्य था। पर उस समय तो इतना अधिक हर्ष हो रहा था कि मेरी मानसिक अवस्था समझ ही न सकती थीं। शुभ कामना करते हुए अपना हस्त मेरे सिर पर रख दिया। तभी बड़ी भाभी आ रही थीं। व्यंग्यपूर्वक बोलीं—यह कैसा लाड़ बरसाया जा रहा रानी जी!

भाभी ने सोल्लास कहा—सुना नहीं, जीजी तुमने कि पास हो गए हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैसा ही उत्तर मिला—तो कौन-सी नई बात हो गई ? श्रेणी में आए हो बाबू साहब ?

मेरे शरीर का रक्त निश्शेष हो चला था। घुटते गले से दिया—द्वितीय।

बड़ी भाभी मानों आसमान से गिर पड़ी थीं - तो क्या नहीं ? तुम तो सदा डींगें हाँका करते थे कि —

छोटी भाभी ने मेरे उतरते मुख को देखा। बात काटकर —इनकी सूरत तो देखो, जीजी, क्या हाल है। अपनी- बहुत की। फिर परीक्षा के दिनों में बीमार भी तो पड़ थे।

वे नाक-भौं सिकोड़कर बोलीं—मुझे यह व्यर्थ का बढ़ावा नहीं लगता, बहू !

वे चली गईं। मैं रो पड़ा। छोटी भाभी आहत-सी थीं। प्रकाश भैया ! मैंने आँसू पोंछ लिए थे।

× × ×

[२]

पेड़ सदा रात में बढ़ते हैं। फूल को खिलते समय भौंरे नहीं देख पाते। आदमी की कहानी भी सोते-सोते लिखी है। जब वह सतर्क होकर कलम लेकर बैठता है तो जीवन आलोचक-दृष्टि प्रबल हो जाती है। चित्रकार परिणाम- रेखाओं को मूर्त्त करता है। कहानीकार के घटना- में ऐसी ही योग-दृष्टि रहती है। मैं सोचता हूँ कि ही क्यों, ऐसा क्यों नहीं ? पर जैसा हो जाता है उसे कर लेने के अतिरिक्त कोई चारा नहीं। तरङ्ग के बिन्दु और धारा की प्रत्येक लहरी के आलेख की अपेक्षा प्रवाह को जान भर लेने की दृष्टि सहज है। जीवन-स्रोत और कोई न्याय उचित नहीं जँचता। पर्यवसान के में पीछे की ओर घूमकर एक ही दृष्टि में जितना देख वही जीवन की कहानी का विषय बना करता है। कार के व्यक्ति की छाप अवश्य ही विषय पर पड़ती है। विभेदक अभिज्ञान भी है। कलाकार की कहानी समझने शब्दों की यत्र-तत्र ध्वनि ही पर्याप्त होती है। मैं बात कह रहा हूँ। विकासचन्द्र के विवरण आदमी के की कहानी के संस्मरण हैं। जागरूक रहकर संस्मरणों कड़ियाँ बैठाना चाहता था। किन्तु जागरूकता से तत्समभाव, मूर्च्छना की एकतानता के द्वारा ही सम्भव है, नहीं आता पड़ता। बस भूल-भूलकर याद करने का ढङ्ग ही है।

स्टेशन पर ऊर्मि, रश्मि और शैलेन्द्र शर्मा मिलने आए मैं बी० ए० में प्रवेश लेने काशी विश्वविद्यालय के लिए कर रहा था। गाड़ी में चढ़ते-चढ़ते ऊर्मि ने हाथ पकड़ लिया था—नमस्ते भैया ! यह भागने का ढङ्ग अच्छा है।

शैलेन्द्र ने कहा—क्यों री ऊर्मि, लड़ने आई है क्या यहाँ भी ?

रश्मि बोली—और क्या ! मिल तो घर भी सकते थे। यहाँ तो उलाहना देने आए हैं।

साधारण-सी चर्चा मात्र थी। फिर भी मुझे स्मरण है। क्यों, यह परमात्मा ही जाने। बात बदली। शैलेन्द्र ने कहा—जरा वहाँ का एडमिशन का प्रासपेक्टस तो भेजना। सुना है, वहाँ लड़कियों के लिए मैथेमेटिक्स नहीं है। ऊर्मि को वहीं से इस वर्ष परीक्षा क्यों न दिलाएँ ?

ऊर्मि उछल पड़ी—ना बाबा, इस वर्ष नहीं। यह तो बीत ही चला। अगले साल देखा जाएगा।

अच्छा, अब सवार हो जाइए—रश्मि कह रही थी। मेरे स्थान बनाते न बनाते गार्ड ने सीटी दी और गाड़ी चल दी। मैंने खिड़की से सिर निकालकर देखा—तीन जोड़ी जुड़े हाथ ! शैलेन्द्र, स्वच्छन्द युवक; चेहरे पर उल्लास था। रश्मि, मधुर आलोक-पुञ्ज-सी; सर्वदा तरल। ऊर्मि, चञ्चल लहरी; नटखट। और छोटी भाभी !.....मेरी आँखें भर आईं। सबको छोड़े जा रहा था। मैत्री के बढ़े हुए हाथ को विवशतापूर्वक गिराने में कितना असह्य कष्ट ! भीगी आँखों के आगे दृश्य धुँधला पड़ गया। गाड़ी भागती गई।

× × ×

एक ही सूर्य और एक ही पृथ्वी। एक ही संस्कृति के एक से रूप-आकार के लोग। भाषा और व्यवहारों में भी एकता। किन्तु फिर भी उस जन-सागर में एकाकी और असहाय-सा भ्रान्त। छिछले पानी की मछली ऊर्मिल सागर में जा पड़ी। कुछ स्मृतियों के पाथेय पर ही एकान्त यात्रा पूर्ण कर रहा था। बन्द कमरा नङ्गा तख्त, ढेर-सी पुस्तकें, पहाड़-से दिन और अस्थिर चित्तवृत्ति ! रो-रोकर घड़ियाँ बिताईं और गिन-गिनकर दिन काटे। फिर दुर्गापूजा की छुट्टियाँ। रेल घर की ओर दौड़ी।

बड़ी भाभी कह रही हैं—क्यों विकास बाबू, छोटी भाभी को देखे बिना सरता न था जो तीन महीने भी घर से अलग बिता न पाए।

छोटी भाभी ने सुना। मन ही मन धधककर बुझ गईं। मैंने प्रणाम किया। सञ्चित स्नेह को बिखेरती-सी बोलीं—बहुत हार गए हो भैया ! ऐसी क्या पढ़ाई थी ?

भाभी पर दूसरा भरपूर प्रहार हुआ—अब तो मास एक रहेंगे भी, खिला-खिलाकर मोटा-ताजा कर लेना, बहू। मन की मन में न रह जाए।

(क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

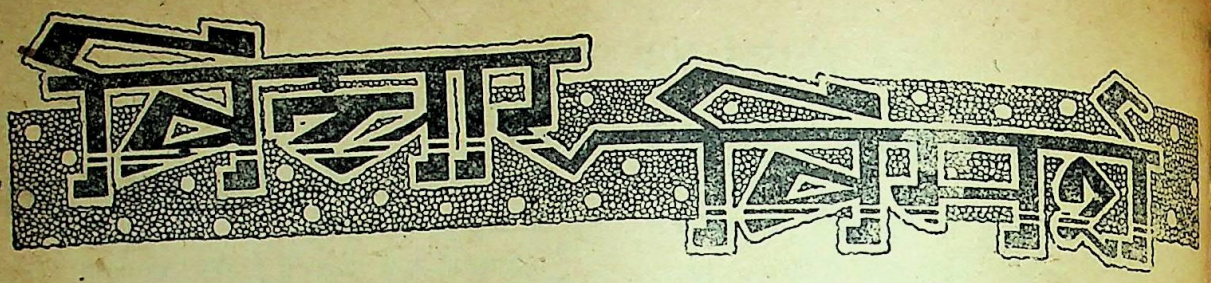

प्रान्तीय धारासभाओं का चुनाव

श्री भोलानाथ 'विमल'

प्रान्तीय एसेम्बलियों का चुनाव समाप्त हो गया। फल भी घोषित हो गया। जिसकी मुद्दत से प्रतीक्षा थी, वह आँखों के समक्ष है। करोड़ों रुपए इस चुनाव में बह गए। कांग्रेस, मुस्लिम लीग, राष्ट्रीय मुसलमान, जमायतुल-उलेमा, जमायतुल मोमिन, अहरार, खाकसार, हिन्दू महासभा, कम्यूनिस्ट, रेडिकल डेमोक्रेट, हरिजन फेडरेशन (अम्बेदकर ग्रूप), यूनियनिस्ट पार्टी, पन्थिक सिख, अकाली दल, योरपियन, एंग्लो-इण्डियन, भारतीय ईसाई, आदिवासी सभा, जमींदार सभा इत्यादि ने अपनी-अपनी किस्मतें आजमाईं, परन्तु सफल बहुत कम ही पार्टियाँ हुईं। हिन्दुस्तान की जनता ने बहुमत से कांग्रेस को सबसे बड़ी प्रतिनिधि संस्था स्वीकार किया। मुसलमानों ने अधिकतर प्रान्तों में मुस्लिम लीग को मुसलमानों की बड़ी जमायत साबित कर दिया। हिन्दू महासभा, हरिजन फेडरेशन (अम्बेदकर ग्रूप) और रेडिकल डेमोक्रेटों की जमानतें तक जब्त हो गईं और वे पूर्णरूपेण उजड़ गए। राष्ट्रीय मुसलमान, जमायतुल-उलेमा, अहरार, खाकसार, कम्यूनिस्ट, यूनियनिस्ट, मुस्लिम मजलिस तथा कृषक प्रजा पार्टी बहुत कोशिशों के बावजूद भी निर्बल पड़ गईं। पन्थिक सिख और जमायतुल-मोमिन ने औरों की अपेक्षा कम सीटें खोईं। परन्तु इन्होंने अपने प्राण जीवित रक्खे। योरपियन और एँग्लो-इण्डियन ने आपस में चुनाव लड़े ही नहीं। करीब-करीब सभी सीटें इनकी निर्विरोध ही गईं।

कांग्रेस का विरोध बहुत कम हुआ। कांग्रेस का विरोध करने में लोग थर्राते थे। जिन्होंने विरोध किया उनमें से अधिकतर व्यक्तियों ने अपनी जमानतें खोईं। कांग्रेसी नेताओं को भी १९३७ की अपेक्षा कम परिश्रम करना पड़ा। कांग्रेस ने सभी साधारण सीटों के अलावे दलित जातियों, पिछड़ी जातियों, सिख, मुस्लिम, भारतीय ईसाई, वाणिज्य व्यवसाय, जमींदार, विश्वविद्यालय, मजदूर और महिला क्षेत्रों से भी अपने उम्मीदवार खड़े किये थे, और बहुत कम सीटें खोईं। साधारण सीटें तो कांग्रेस को शत-प्रतिशत मिलीं। आसाम, सिन्ध, सीमा प्रान्त, पञ्जाब, बम्बई और बङ्गाल में कांग्रेस ने १९३७ की अपेक्षा इस बार (१९४६) बहुत अधिक उन्नति की। इसी कारण वह आसाम में इस बार शुद्ध कांग्रेस मन्त्रि-मण्डल बनाने में समर्थ हुई। और पञ्जाब में कांग्रेस अकाली सिख तथा यूनियनिस्ट दल संयुक्त मन्त्रि-मण्डल बनाने में बाजी मार ले गई। एक बात आश्चर्यजनक है कि १९३७ के चुनाव में कांग्रेस ने २६ मुस्लिम सीटें प्राप्त की थीं और इस बार उतनी ही मुस्लिम सीटें मिली हैं। कांग्रेस ने निर्विवाद से अपनी यह घोषणा साबित कर दी कि वह हिन्दुस्तान एकमात्र सबसे बड़ी राजनीतिक संस्था है। साथ ही चुनाव आँकड़ों से यह स्पष्ट हो जाता है कि वह किसी विशेष हिन्दू मुस्लिम सम्प्रदाय की भुलाई हुई संस्था नहीं है, वरन् रूप से हिन्दू, मुस्लिम, सिख, भारतीय ईसाई, हरिजन और असभ्य जातियों की एकमात्र राजनीतिक संस्था है, जो भारत आजादी के लिए युद्ध करती है।

मुस्लिम लीग ने सभी मुस्लिम सीटों के लिए अपने उम्मीद खड़े किये थे। लीग का सर्वत्र विरोध हुआ और बहुत जबर विरोध हुआ। समूचे चुनाव में लीग ने बहुत बड़ी गुण्डा की। सरकार ने भी गुप्त रूप से लीग को सहायता पहुँच लीग के करीब एक तिहाई विरोधियों की जमानतें जब्त हु यह एक आश्चर्यजनक [परन्तु स्वाभाविक!] बात है कि ने मुस्लिम बहुसंख्यक प्रान्तों से अधिक सफलता गैर मु बहुसंख्यक प्रान्तों में पाई। सम्पूर्ण रूप में लीग के खिलाफ वोट मिले। लीग किसी प्रान्त में भी बहुमत में नहीं है। में सबसे बड़ी पार्टी होने के नाते उसने मन्त्रिमण्डल का नि किया है, और सिन्ध में तो मुडी साहब की पक्षपातपूर्ण दृष्टि से मिनिस्ट्री की मसनद मिल सकी। परन्तु १९३ अपेक्षा निश्चय ही लीग इस बार एक कदम आगे बढ़ी इसका कारण है कि १९३७ से लेकर १९४५ तक लीग निर्विरोध अपना सङ्गठन करने का मौका मिला जब कि हिन्दुस्तान अपने जीवन-मरण के युद्ध में प्राणों की बाजी ल था। एक बात और सत्य है कि लीग जाग्रत वोटों (Fa Conscious Votes) से नहीं जीती है। मुसलमान राजनी रूप से अभी जाग्रत् नहीं हुए हैं, लीग की जीत इसका उदाहरण है। बहुत सम्भव है यदि मुसलमानों के वोट हो जायँ तो ऐसी जीत करारी हार में बदल सकती है।

ऊपर की पंक्तियों में मैंने चुनाव के निष्कर्ष दिए हैं। मैं आपके समक्ष आँकड़े ही पेश करता हूँ। इन आँकड़ों स्वयं ही बोलने दीजिए।*

---

* मैंने विभिन्न प्रान्तों के आँकड़ों को प्राप्त करने की चेष्टा की है; परन्तु खेद है कि आसाम, बम्बई और में कांग्रेस ने कितने उम्मीदवार अपनी तरफ से खड़े किए पूरी रिपोर्ट मुझे नहीं मिल सकी। मैंने बहुत खोज-बी 'करीब नम्बर' दिया है। इसलिए उन्हें कोष्ठ ( ) में है। कृपया पाठकगण क्षमा करेंगे। यदि कोई महाशय रिपोर्ट दे सकें तो उनका आभारी रहूँगा।—लेखक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रान्तीय/धारासभाओं की रचना

चार्ट नं० १

प्रान्तों के नाम	कुल स्थान	कुल साधारण स्थान	कुल सा० स्था० दलित जाति को सुरक्षित	पिछड़े जिलों और जातियों के	सिख	मुसलमान	एँग्लो-इंडियन	योरपियन	भारतीय ईसाई	वाणिज्य व्यवसाय	जमींदार	विश्वविद्यालय	मजदूर	साधारण	महिला सिख	महिला मुसलमान	महिला एँ० इं०	महिला भारतीय ईसाई
आसाम	१०८	४७	७	९	०	३४	०	१	१	११	०	०	४	१	०	०	०	०
सिन्ध	६०	१८	०	०	०	३३	०	२	०	२	२	०	१	१	०	१	०	०
सीमाप्रान्त	५०	९	०	०	३	३६	०	०	०	०	२	०	०	०	०	०	०	०
पञ्जाब	१७५	४२	८	०	३१	८४	१	१	२	१	५	१	३	१	१	२	०	०
बिहार	१५२	८६	१५	७	०	३९	१	२	१	४	४	१	३	३	०	१	०	०
यू० पी०	२२८	१४०	२०	०	०	६४	१	२	२	३	६	१	३	४	०	२	०	०
बम्बई	१७५	११४	१५	१	०	२९	२	३	३	७	२	१	७	५	०	१	०	०
मद्रास	२१५	१४६	३०	१	०	२८	२	३	८	६	६	१	६	६	०	१	०	१
बङ्गाल	२५०	७८	३०	०	०	११७	३	११	२	१९	५	२	८	२	०	२	१	०
उड़ीसा	६०	४४	६	५	०	४	०	०	१	१	२	०	१	२	०	०	०	०
मध्यप्रान्त [C. P.]	११२	८४	२०	१	०	१४	१	१	०	२	३	१	२	३	०	०	०	०
योग	१५८५	८०८	१५१	२४	३४	४८२	११	२६	२०	५६	३७	८	३८	२८	१	१०	१	१

प्रान्तीय धारासभाओं के चुनाव (१९४६) का परिणाम

चार्ट नं० २

प्रान्त के नाम	कुल स्थान	कुल मुस्लिम स्थान	कांग्रेस ने जीता	मुसलमान	मुस्लिम लीग ने जीता	राष्ट्रीय और गैर-लीगी ने	हिन्दू महासभा	कम्यूनिस्ट	रेडिकल डेमो०	हरिजन फेडरेशन (अम्बेडकर)	यूरोपियन	एँग्लो-इंडियन	सिख पंथिक	यूनियनिस्ट	स्वतन्त्र	मन्त्रिमण्डल
आसाम	१०८	३४	६०	०	३१	३	०	०	०	०	१	०	०	०	१३	कांग्रेसी
सिन्ध	६०	३४	२१	०	२७	८	०	०	०	०	३	०	०	०	१	लीगी
पञ्जाब	१७५	८६	५१	१	७५	१३	०	०	०	०	१	१	२२	२०	७	का०+सि०+यू०
सीमाप्रान्त	५०	३६	३०	१९	१७	२	०	०	०	०	०	०	१	०	०	कांग्रेसी
बिहार	१५२	४०	९९	१	३४	५	०	०	०	०	२	१	०	०	११	,,
यू० पी०	२२८	६६	१५३	४	५४	७	०	०	०	०	२	१	०	०	११	,,
बम्बई	१७५	३०	११८	०	३०	०	१	२	१	०	६	२	०	०	५	,,
मद्रास	२१५	२९	१६४	०	२८	१	०	२	०	०	७	२	०	०	११	,,
बङ्गाल	२५०	११९	८७	०	११५	७	१	४	०	०	२४	४	०	०	८	लीगी
उड़ीसा	६०	४	४७	०	४	१	०	१	०	०	०	०	०	०	३	कांग्रेसी नामजद
मध्यप्रान्त	११२	१४	९२	०	१३	१	१	०	०	१	१	१	०	०	२	,,
योग	१५८५	४९२	९३२	२५	४२८	४८	३	९	१	१	४७	१२	२३	२०	७२	

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रान्तीय धारासभाओं के १९३७ और १९४६ के चुनाव में कांग्रेस की जीत

चार्ट नं० ३

क्रम-संख्या	प्रान्त के नाम	कुल स्थान	१९३७ में कां० ने जीता	१९४६ में कां० ने जीता	१९३७ और १९४६ के चुनाव में जीत	१९३७ में मन्त्रिमण्डल	१९४६ के चुनाव बाद मन्त्रिमण्डल
१	आसाम	१०८	३३	६०	२७	कां० संयुक्त मन्त्रि०	कांग्रेसी
२	सिन्ध	६०	७	२१	१४	लीगी तथा स्व०	लीगी
३	सीमाप्रान्त	५०	१९	३०	११	कां०	कांग्रेसी
४	पञ्जाब	१७५	१८	५१	३३	यूनियनिस्ट	का० + सि० +
५	बिहार	१५२	९८	९९	१	कांग्रेसी	कांग्रेसी
६	यू० पी०	२२८	१३४	१५३	१९	,,	,,
७	बम्बई	१७५	८६	१२८	४२	,,	,,
८	मद्रास	२१५	१५९	१६४	५	,,	,,
९	बङ्गाल	२५०	५४	८७	३३	स्वतन्त्र तथा लीगी	लीगी
१०	उड़ीसा	६०	३६	४७	११	कांग्रेसी	कांग्रेसी
११	मध्यप्रान्त	११२	७०	९२	२२	,,	,,
११	योग	१५८५	७१४	९३२	२'८	८ प्रान्त कांग्रेसी	९ प्रान्त कांग्रे

प्रान्तीय एसेम्बलियों के चुनाव १९३७ और १९४६ में मुस्लिम क्षेत्रों के चुनाव का फल

चार्ट नं० ४

क्रम-संख्या	प्रान्तों के नाम	कुल मुस्लिम स्थान	१९३७ में लीग	१९३७ में दूसरे मुसल०	१९४६ में लीग	१९४६ में दूसरे मुसल०	अन्तर लीग	अन्तर दूसरे मुसल०
१	आसाम	३४	९	२६	३१	३	२२	२३
२	सिन्ध	३४	०	३४	२७	८	२७	१९
३	सीमाप्रान्त	३६	०	३६	१७	२१	१७	७
४	पञ्जाब	८६	१	८५	७५	१४	७४	३१
५	बिहार	४०	०	४०	३४	६	३४	२९
६	यू० पी०	६६	२७	३९	५४	१२	२७	१९
७	बम्बई	३०	२०	१०	३०	०	१०	१०
८	मद्रास	२९	११	१८	२८	१	१७	९
९	बङ्गाल	११९	४०	७९	११५	७	७५	३९
१०	उड़ीसा	४	०	४	४	१	४	३
११	सी० पी०	१४	०	१४	१३	१	१३	१३
११	योग	४९२	१०८	३८५	४२८	७४	३२०	२९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रान्तीय धारासभा के चुनाव (१९४६) में कांग्रेस की शानदार जीत

चार्ट नं० ५

क्रम-संख्या	प्रान्तों के नाम	कुल स्थान	कांग्रेस खड़ा करती है	कांग्रेस निर्विरोध जीतती है	लड़कर जीतती है	प्रतिशत जीत कुल सीट के अनुपात में	कैफियत
१	आसाम	१०८	(६३)	१३	४७	५५·५५	९० प्रतिशत विरोधियों की जमानतें जब्त
२	सिन्ध	६०	२१	६	१५	३५%	,,
३	सिमाप्रान्त	५०	४०	७	२३	६०%	,,
४	पञ्जाब	१७५	७८	९	४२	२९·१४	,,
५	बिहार	१५२	११०	४४	५५	६५·१३	,,
६	यू० पी०	२२८	१७८	७९	७४	६७·१	,,
७	बम्बई	१७५	(१३४)	२४	१०४	७३·१४	,,
८	मद्रास	२१५	१७४	६८	९६	७६ २७	,,
९	बङ्गाल	२५०	९०	१५	७२	३४·८	,,
१०	उड़ीसा	६०	५१	३४	१३	७८·३३	,,
११	सी० पी०	११२	(९४)	१८	७४	८२·१४	
११	योग	१५८५	८७६ + १५७ = १०३३	३१७	६१५	५८·८	

प्रान्तीय धारासभाओं के चुनाव (१९४६) में लीग की सफलता

चार्ट नं० ६

क्रम-संख्या	प्रान्तों के नाम	कुल मुस्लिम सीटें	लीग खड़ा करती है	लीगी निर्विरोध	लड़कर जीतती है	प्रतिशत जीत : कुल ए० सीट के अनुपात में	विवरण
१	आसाम	३४	३४	०	३१	२८·७	
२	सिन्ध	३४	३४	१	२६	४५%	लीग को कुल वोट मिले— १,८०,४२२ दूसरे मुसलमानों के वोट मिले—१,२६,६२४ पाकिस्तान के लिए—१,४५,४२० पाकिस्तान के विरोध में— २,७०,१३४
३	सीमाप्रान्त	३६	३८	१	१६	३४%	
४	पञ्जाब						
५	बिहार	८६	८४	२	७३	४२·८५	
६	यू० पी०	४०	४०	२	३२	२२·३६	
७	बम्बई	६६	६४	१	५३	२३·६८	
८	मद्रास	३०	३०	६	२४	१७·१४	
९	बङ्गाल	११	२९	१३	१५	१३·०२	१३ निर्विरोध में ९ विशेष सीटें
१०		११९	१२२	१०	१०५	४६%	११९ सीटों में ७ हार गईं। ३ त्रि० सी० पीछे मिलीं।
११	उड़ीसा						
११	सी० पी०	४	४	१	३	६·६६	
	योग	१४	१४	१	१२	११·६०	
		४९२	४९३	३८	३९७	२७%	

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रान्तीय धारासभाओं के चुनाव : १९३७ और १९४६ में विभिन्न पार्टियों की प्रतिशत सफलता

चार्ट नं० ७

क्र० सं०	प्रान्तों के नाम	१९३७ में					१९४६ में							
		कांग्रेस	लीग	यूनियनिस्ट	अन्य पार्टियाँ	निर्दल	कांग्रेस	लीग	यूनियनिस्ट	शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन	यूरोपियन	इण्डिपेन्डेन्ट-ईविनंग	यूनियनिस्ट विंग	स्वतन्त्र
१	आसाम	३०·५५	८·३३	२४·०७	३७·०३	५५·५५	२८·७	२·७७	०	०	०	०	०	१२·०३
२	सिन्ध	११·६६	०	५६·६६	३० %	३५%	४५%	१३·३३	०	०	०	५%	०	१·६
३	सीमा प्रान्त	३८%	०	४५%	१८%	६०%	३५%	५%	०	०	०	०	२%	०
४	पञ्जाब	७·४२	·५७	४८·५७	४३·४३	२६·१४	४२·८५	७·४२ [यूनि-यनिस्ट]	०	०	०	·५७	१२·५७	११·४२
५	बिहार	६४·६७	०	२६·३१	६-२१	६५·१३	२२·३६	३·८८	०	०	०	१·३१	·६५	०
६	यू० पी०	५८·७७	११·८४	१७·१	१२·३७	६७·१	२३·६८	३·०७	०	०	०	·८७	·४४	०
७	बम्बई	४६·१४	११·४२	५·७१	३३·७२	७३·१४	१७·१४	०	·५७	०	०	३·४२	१·१४	०
८	मद्रास	७३·६५	५·११	८·३७	१२·५६	७६·२७	१३·०२	·४६	०	·६२	०	०	३·२५	·६२
९	बङ्गाल	२१·६	१६%	३१·६	३०·६८	३·८	४६%	२·८	·४	१·६	०	०	६·६	१·६
१०	उड़ीसा	६०%	०	६·६६	३३·३३	७८·३३	६·६६	१·६६	०	१·६६	०	०	०	०
११	सी० पी०	६२·५	०	१२·५०	२५°/०	८२·१४	११·६०	८६	०	०	०	०	८६	०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रान्तीय एसेम्बलियों की कुल सीटों में कांग्रेस की जीत १९४६

चार्ट नं० ८

कुल स्थान	कांग्रेस खड़ा करती है	कांग्रेस निर्विरोध जीतती है	कांग्रेसलड़कर जीतती है	कुल जीत
१५८५	१०३३	३१७	६१५	९३२
स्थान के अनुपात में जीत	...	२०%	३८·८	५८·८
जितने खड़े करती उसके अनुपात में	...	३०·६७	५९·४२	९०·०९

प्रान्तीय एसेम्बलियों की कुल सीटों में लीग की जीत १९४६

चार्ट नं० ९

कुल स्थान	कुल मु० सीटें	लीग खड़ा करती है	लीग निर्विरोध जीतती है	लड़कर जीतती है	कुल जीत
१५८५	४९२	४९४	३८	३९७	४२८
स्थान के अनुपात जीत	....	..	२·३९	२४·६०	२७%
मु० सीट और खड़ा करती है के अनुपात में	...	...	७·७	७९·११	८६·८१

नोट—चार्ट में प्रान्तों के नाम उसी क्रम से दिए गए हैं क्रम से १९४६ में चुनाव हुए हैं।

——

कहानी का एक क्रान्तिकारी रूप

श्री हरिमोहनलाल श्रीवास्तव, एम० ए०,
एल० टी०, साहित्य-रत्न

कहानी क्या है ?

देश, काल और परिस्थिति के अनुसार छोटी कहानी को अपने विशिष्ट नाम से उत्कर्ष प्राप्त है। कहानी कहीं भी कैसी प्रगतिशील हो, परन्तु एक ही नियम और सिद्धान्त उस पर सर्वत्र शासन करते हैं। नपे-तुले शब्दों में सभी देशों के विद्वान् कहानी की परिभाषा करते हैं, किन्तु प्रत्येक में कुछ कमी रह जाती है। ऐसी स्थिति में कहानी को समझने के लिए किसी क्लिष्ट परिभाषा के झमेले में न पड़कर उसके मूल रूप की ओर ध्यान देना ही अभीष्ट है। कहानी छोटी है, और नाटक-उपन्यास आदि आख्यायिका के दूसरे अङ्गों से भिन्न उसकी सत्ता है। अपने सार्थक रूप में छोटी कहलानेवाली यह कृति केवल आकार में छोटी नहीं, वरन् यह छोटा आकार तो उस संकुचित एवं उदार प्रवृत्ति के कारण अनिवार्य है, जिसके वश में होकर कहानी का सृजन होता है।

उपन्यास और नाटक के क्षेत्र कहानी की अपेक्षा अधिक विस्तीर्ण हैं, और इसी हेतु कहानी की रचना अधिक कठिन है। थोड़े से थोड़े शब्दों के अपने परिमित क्षेत्र में रहने के कारण कहानी में तनिक-सी त्रुटि ऊपर दिखाई देती है, और इसी लिए उसका निर्माण सबका काम नहीं। वह सङ्केत की कला है, और इस नाते से आवश्यक का चयन एवं अनावश्यक का निराकरण उसका कार्य है। पूर्णता कहानी के लिए अवांछित है, परन्तु वह ऐसी कृति है, जिसे पढ़कर किसी कमी का अनुभव नहीं होता। कहानी मानव-जीवन के किसी एक आलोकपूर्ण अंश की झलक है, किन्तु वह वास्तविक जीवन का चित्र नहीं; केवल उसकी कलापूर्ण कृत्रिमता पर यथार्थ का आवरण होता है।

अपने किसी एक निश्चित उद्देश्य को लेकर चलनेवाली कहानी परस्पर सम्बद्ध महत्त्वपूर्ण घटनाओं की अनुक्रमणिका है, जो उन्हें किसी एक निर्दिष्ट परिणाम पर पहुँचाकर भाव या विचार को मुग्ध करती है। साधारण जीवन में जो कारण और कार्य का लौकिक सम्बन्ध है, उसे आदि से लेकर अन्त तक दिखाते हुए एवं अपने पूर्व-सञ्चित प्रभाव को प्रत्येक पंक्ति और वाक्य में व्यक्त करते हुए कहानी अपने उस एक-मात्र परिणाम पर जा लगती है। अतएव यह सिद्ध है कि छोटी कहानी संक्षेप तथा चयन की वस्तु है। वह घटनाओं का निर्जीव ब्योरा नहीं; उसका एक निर्वाचित परिणाम होता है, और वह प्रभाव के सामञ्जस्य को लेकर अपना सम्पूर्ण ध्यान उस अभीष्ट अन्त पर केन्द्रीभूत कर देती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक नया प्रयोग

आधुनिक कहानी के उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि छोटी कहानी का आविष्कार मानव की संक्षेप-प्रियता के कारण हुआ, और इसमें भी सन्देह नहीं कि छोटी कहानी के जन्मदाता एडगर एलेन पो के समय से संसार अब बहुत आगे बढ़ गया है; वह दिन-प्रति-दिन संक्षेप का प्रेमी होता जा रहा है—तब क्यों न वह छोटी से भी छोटी कहानी की माँग करे! कहा जा सकता है कि भारत पर अभी यह भूत उस हद तक सवार नहीं हो पाया है, जिस हद तक पाश्चात्य देशों पर, परन्तु हमें यह मान लेना होगा कि इस मार्ग पर भारत चल अवश्य पड़ा है।

हाँ तो, आज से प्रायः दस वर्ष पूर्व किसी अमेरिकन मासिक के एक स्तम्भ में 'Our five minute story' (पाँच मिनट की हमारी कहानी) की विज्ञप्ति देखकर मेरी प्रबल लालसा हुई कि मैं इससे भी कुछ आगे बढ़कर 'दो मिनट' की कहानियाँ या ऐसी ही कुछ चीज लिखूँ। 'अभ्युदय' में पण्डित कृष्णकान्त जी मालवीय-द्वारा वाल्टेयर के सुप्रसिद्ध शार्ट नावेल 'जेडिग' का अनुवाद देखकर उसके ढङ्ग पर 'लघु-उपन्यास' के सृजन के लिए मैं पहले ही आकृष्ट हो चुका था। अस्तु, अब कहानी-कला के विस्तृत विवेचन से मुझे अपनी वाञ्छित वस्तु का सुन्दर समर्थन समझ पड़ा और कहानी-साहित्य में एक नया प्रयोग करने की धुन मुझ पर सवार हो गई। कहानी के इस क्रान्तिकारी रूप के लिए मैं जहाँ तक सोच सकता था, मैंने अपना एक आदर्श निर्धारित किया, और अपनी एक स्वतन्त्र परिभाषा से भी उसे सम्पन्न किया :—"मानव-जीवन के किसी एक सुन्दर क्षण में जो घटित हुआ है उसके विविध कलापूर्ण चित्रण को 'छोटी कहानी' अथवा 'लघुकथा' कहते हैं।"

ये दस कहानियाँ

यथावकाश सृजन पानेवाली इन अभिनव कहानियों को 'साधना', 'कहानी', 'चाँद' आदि पत्रिकाओं में यदा-कदा प्रकाशित कराने के लिए मैं प्रयत्नशील रहा हूँ, और इस बीच में मुझे जब कभी अन्यान्य लेखकों द्वारा इस ढङ्ग के निकट पहुँचनेवाली सुन्दर कहानियों को देखकर हर्ष हुआ है। यहाँ मैं सहृदय पाठकों के मनोरञ्जन और उनके विचार के लिए दस स्वरचित कहानियाँ प्रस्तुत कर रहा हूँ, और आशा करता हूँ कि उन्हें ये प्रिय होंगी। इन कहानियों में कुछ सार-वस्तु है या नहीं, इसका निर्णय तो विज्ञ आलोचक ही करेंगे—अपनी ओर से मैं यही कह सकता हूँ कि जीवन के अपने थोड़े-बहुत अनुभव को सँवारकर चित्रित करने में मैं सतर्क रहा हूँ। यदि दो-एक स्थानों पर किसी को किन्हीं विदेशी कथानकों से साम्य दिखाई दे, तो मैं जाने और अनजाने सभी ऐसे सूत्रों के लिए पहले से ही आभार प्रकट करते हुए यह जताना चाहूँगा कि मैं 'स्टीवेन्सन' के अनुसार मौलिकता 'वस्तु' के स्थान पर 'विषय-प्रतिपादन' में समझने का पक्षपाती हूँ। साथ ही कहानी के उदीयमान नक्षत्रों से मेरा निवेदन है कि वे इधर भी कभी कुछ प्रकाश डालें, जिससे साहित्य के विकास के लिए नूतनता का निज का महत्त्व कहानी के श्रेष्ठ लेखकों द्वारा इस प्रकार की कहानियों के संग्रह की सामयिक आवश्यकता से कदाचित् ही इन्कार किया जा सके।

१—माँ

वह दिन! वह मधुमय दिवस! नहीं—मधु से भी उसका स्वाद था, जब पहली बार पुत्र को अपनी गोद में पा लीला की मुख-श्री एक बार खिल उठी थी। उसने कहा था—'मेरे प्यारे प्रेम! तुम मुझे माँ कहकर पुकारो; मैं तुम्हारी माँ हूँ।" किन्तु क्या यह प्रेमार्द्र आह्वान इस सरल शिशु के हृदय तक पहुँच सका था?

हाँ, उसी दिन—जब पतिदेव ने सफाई चाही थी—लीला ने कहा था :—"प्राणेश्वर, आप जिस व्यक्ति से प्रेम करते हैं, यदि उससे कोई अन्य प्राणी भी प्रेम करता है, तो क्या उस अन्य प्राणी के लिए आपके हृदय में प्रेम न होगा?"

और आज? आज प्रथम बार—अपने जीवन में प्रथम बार—लीला ने सुना वही प्यारा शब्द, जिसके सुनने के लिए वह सदा लालायित रहती थी—"माँ!" लीला की छाती भर आई। बोली—"बेटा!"

"माँ, तुम मे...री माँ हो।"—बस, वाणी रुक गई।

२—नवयुग

अब वे दिन कहाँ, जब उनकी सिर की पीड़ा से विह्वल हृदय में पीड़ा होती थी!

अब तो उसके प्रेम में भाव के स्थान पर अलङ्कार का आधिपत्य है। तब वह जीती थी पति के लिए, किन्तु अब ... ..शायद निज के लिए।

सतीश शून्य दृष्टि में मग्न था। सर्वत्र कण्टकमय उलझी हुई झाड़ियों के उस उपवन में कटु अनुभव के खेला हुआ यह खिलाड़ी कह रहा था—"मैंने देखा है, हृदय को शान्ति है, न आत्मा को उल्लास। मैं मरना चाहूँ, तो उस सरल पवित्र जीवन के लिए।...बोलो, तुम साथ दोगी?

वह चुप थी।—इसे खोना न चाहती थी, उसे होना चाहती थी।

उसने सुना—"अब जाना है, स्त्री-जाति एक बार पथ का अनुसरण करती है, उससे पीछे हटना नहीं जानती ....तुम नवयुग को कैसे छोड़ सकोगी!"

लिया ने सुना, और चरणों में सिर रख दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३—प्रेमाश्रु

कमल उस दृश्य को देखकर अवाक् रह गया। चन्द्रमा किरण प्रकाश में वह पड़ी थी—गरीब के हृदय में आशा एक किरण के समान।

हृदयदेश में करुणा की धार बाँध छोड़कर बह रही थी—दूसरी ओर। किन्तु आज.....? आज पुनः वह उसी पुरातन पथ पर आया चाहती थी।

मुख से निकला केवल इतना—"हा! क्या...?"

पश्चात्ताप से द्रवित आत्मा बोली—"सब तुमने किया!"

वह हतबुद्धि था।

अर्द्धसुप्त, अरुणिमामय करुणा की प्रतिमूर्ति के ओंठ हिले। —"हा ना...थ!" पर किसने सुना?

कमल बड़बड़ा रहा था—"प्रेम, सच्चा और महान् प्रेम अव्याहत गति से निरन्तर 'एक' की ओर प्रवाहित होता है। योग्य अथवा अयोग्य लक्ष्य का उसे ध्यान नहीं।...आवश्यक नहीं कि प्रेमी से प्रेम करे। प्रेमी प्रेम करता है; वह प्रेम करेगा।"

उसने आँखें खोलीं; और सुना—"नलिनी रानी! तुम्हा... अपराधी.....।"

उसने प्रियतम के नेत्रों में देखा, और कहा—"प्या..रे!" चार नयनों में प्रेमाश्रु छलछला रहे थे।

४—पुनर्विवाह

रमेश चाहता था वह मुझसे प्रेम करे। वह उसका पुजारी था; उसने उसे सोने के सिंहासन पर ला बैठाया था। किन्तु क्या प्रेम की प्रतीक्षा के लिए उसके हृदय में धैर्य था! प्रेम के उस पुजारी की एक साध थी—वह सुशील को प्यार न करे,—और यह एक दुष्ट कामना थी।

अभी कल उसने कहा था—"दूसरे के बालक का निर्वाह मेरे घर में कठिन है।.....मैं यह सब न सह सकूँगा।"

आज.....वह नवजात शिशु के लिए पड़ी थी। सुशील—बालक—भाई का हाथ अपने हाथ में लिए था।

रमेश आया। उसने बालक का हाथ पकड़ा।

बालक ने कातर नेत्रों से माँ को देखा। नेत्रों की मौन भाषा में कस्तूरी ने पति से कुछ कहा।

उसी क्षण बालक पृथ्वी पर आ पड़ा।

माता ने एक विकट चीत्कार की; छेड़ी हुई नागिन की तरह फुफकार उठी। उठने का एक शक्तिशाली कठोर प्रयास किया, और अन्त!

५—कैदी

कठिन कारागार से वह बाहर निकला तो उसने संसार में अपने को अकेला पाया। उसका अपना नाम भी तो खो गया था अब 'नम्बर ८१' था।

पुनः जेल चलने की इच्छा बलवती हुई, किन्तु उसका हृदय अधिक शक्तिशाली सिद्ध हुआ।

विश्वेश्वर के मन्दिर में भारी भीड़ देखकर वह भटकता हुआ बटोही भी जा खड़ा हुआ। लोग कीर्त्तन सुन रहे थे, और वह सोच रहा था:—"ईश्वर क्या है, आज समझ रहा हूँ। ईश्वर वह शक्ति है, जिसके इशारे पर संसार के प्राणी नाचते हैं।.....यदि 'विश्वम्भर' ने मुझे दो दिन से खाने को नहीं दिया, तो यह मेरे अपराधों का ही दण्ड है।"

अचानक एक लाल पगड़ीवाला वहाँ आ खड़ा हुआ, और बोला—"बदमाश, जेब काटेगा!" तुरन्त उसने 'नम्बर ८१' के हाथों में हथकड़ी भर दी।

कैदी हँस दिया।

६—उबाल

विलासिता की उत्ताल तरङ्गों में बहकर वह अपना सब कुछ वार चुका था, परन्तु एक खार के अतिरिक्त उसके हाथ कुछ न लगा। सोनेवाला जाग पड़ा उस समय, जब घर के कोने-कोने में आग लग चुकी थी।

वैभव और प्रणय का ठुकराया हुआ घनश्याम अपनी नवेली चम्पा के वक्षःस्थल पर छुरी दबा रहा था।

कातर नेत्रों से उस मराल सुन्दरी ने प्रश्न किया—"क्या सचमुच...तुम...?"

एक फीकी मुसकान घनश्याम के ओठों पर खेल गई। उसने कहा—"बस इसमें ही कल्याण है।" पलक मारते छुरी छाती के पार हो गई।

विकट अट्टहास के साथ छुरी निकालकर दीपक के धुँधले प्रकाश में रक्त-बिन्दुओं के रहस्यपूर्ण लेख को पढ़ने लगा। एक दृष्टि मृतक शरीर पर डालने के साथ ही उसके भावों और विचारों में एक उबाल आया, और वह घर से बाहर निकल गया।

किन्तु प्रेयसी की दो आँखें उसे यहाँ भी घूर रही थीं।

७—परित्यक्त

कपड़े का मोल-भाव करते हुए सरला ने आगत ग्राहक की ओर दृष्टिपात किया। सज्जन की दृष्टि भी हठात् उधर जा लगी।

उसकी आँखें नीची हो गईं। दूसरे क्षण उसने आगन्तुक के पैर पकड़ लिए। साथ की युवती चकित थी।

रामचन्द्र के हृदय का बाँध टूट गया।

मेले में कितनी ही आँखें उठ गईं।

आँसुओं से हृदय धोते हुए सरला ने कहा—"ना...थ! वह एक दुर्बलता थी...और...कुछ नहीं!"

"सरला, तुमने जो किया, उसके लिए तो मैं अपने को दोषी समझता हूँ। मेरे पास हृदय था, पर वह नहीं, जो तुम्हारे प्रेम को प्रोत्साहन देता; मस्तिष्क था, पर वह नहीं जो तुम्हारी आवश्यकताओं की ओर ध्यान देता। मुझे इसके लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुःख है; सन्तोष भी—तुमने उसे पा लिया, जिसका तुम्हारे मन पर अधिकार था।"

सरला के मन की बात मन में रह गई, किन्तु हृदय से एक बोझ टल गया था। परित्यक्त पतिदेव की अभिलाषा भी प्रयाग के इस अपूर्व समारोह में पूर्ण हो गई।

८—मोह-जाल

जब तक उस अनोखे बुड्ढे की सेवा बनी थी, तब तक वह सभी बच्चों से हँसता-खेलता था, किन्तु सेवा के छिन जाने के साथ ही उसने संसार के शिशुओं से मुँह मोड़ लिया।

ओम् में उसने कुछ ऐसी मोहिनी देखी, जिसने उसे उसके लिए स्नेह-विह्वल बना दिया।

उस दिन ओम् के बाबू जी कह रहे थे—"जब जी चाहता है, आकर बैठ जाते हो; अभी इसने नहाया भी तो नहीं। मैं तुमसे पूछता हूँ, तुम्हें यह इतना प्यारा क्यों है?"

बूढ़े के पास एक सुन्दर उत्तर था, किन्तु उसने उसे मुख से बाहर नहीं निकाला।

बाबूजी ने कहा—"जाओ, अब तङ्ग न करना।"

बूढ़े की एक अनोखी हँसी का उत्तर ओम् ने अपनी किलकारी से दिया, और वह उठ खड़ा हुआ।

मार्ग में वह बड़बड़ा रहा था—"मेरे ओम्! तुम अभी इस मोह-जाल से दूर हो। तुम्हारे हृदय में दिव्य ज्योति जग रही है; इसी लिए तो तुम सब से सच्चा प्रेम करते हो।"

९—भाई-बहिन

बहिन कठिन चिन्ता में ग्रस्त थी कि किस प्रकार शीघ्र ही भाई के उपकारों के बदले में कुछ रुपया देकर पितृ-परिवार को सङ्कट से बचाए।

विनीत तो अब अपनी बात कर चुका था। उसने पूछा—"ललिता, इन लड़कियों के विवाह की भी कहीं बातचीत की?"

उसने कहा—"भैया, खाने से ही नहीं बचता। जैसे होगा, यह राजो ही करेगा।"

"तब तो तुम बिचारे को और भी दबा दोगी। माता-पिता का कर्तव्य है कि वे सन्तान को सुखी बनाएँ।"

"माता-पिता कब सन्तान को सुखी नहीं बनाना चाहते पर उनके ऐसा करने में कमी रहती है, तो क्या वे परस्पर प्रेम-पूर्ण सहायता भी न करें!"

विनीत की भावुकता सजग हो गई। वह सोच रहा था, क्या यह उचित होगा कि मेरा सतीश मेरे पीछे कभी अपनी बहिन से सारा प्रेम-भाव भुलाकर अपने सिर आई हुई विपत्ति के निवारण के लिए किसी प्रकार कठोर व्यवहार करे।

वह वहाँ अधिक न टिक सका। जब वह वहाँ से चला, तो हुण्डी के भुगतान की चिन्ता और भी बढ़ी हुई थी, किन्तु यहाँ की इस आकस्मिक विपत्ति से छुटकारा मिल गया था।

१०—आत्म-ग्लानि

झरोखे में बैठी शीला को सूर्यदेव के प्रखर प्रकाश में कुछ की एक अलभ्य मुसकान दृष्टिगोचर हुई, किन्तु नीचे की ओर दृष्टिपात करते ही उसका मुख भय की आशङ्का से उदास हो गया।

कुछ अस्पष्ट शब्दों में कोई बड़बड़ा रहा था—"मुरेश वह नहीं, कोई और ही होगा। और हो भी तो क्या आश्चर्य और शीला! मेरी उस जीर्ण-शीर्ण कुटिया के दरिद्रतापूर्ण जीवन को ठुकराकर उसने इस भव्य प्रासाद के वैभव को अपनाया है, परन्तु मुझे इस विशाल मन्दिर की स्वादिष्ठ भिक्षा भरमा नहीं सकेगी।"

सहसा सुरेश ने कमरे में प्रवेश किया। शीला निश्चेष्ट पड़ी थी। मुख का आवरण हटाकर उसने कहा—"शीला!"

शीला के नीले अधर हठात् हिले—"सु...रे...श!"

सुरेश एक लाल द्रव पदार्थ की धारा को पैरों के निकट प्रवाहित होती देख स्तम्भित रह गया। वह कुछ समझ न सका, किन्तु मोह और पश्चात्ताप, प्रेम और ग्लानि की बहुरङ्गी छाया रह-रहकर शीला को अचेत बना रही थी।

——

हिन्दी-साहित्य में लक्षणग्रन्थ

श्री वेणीमाधव वर्मा, साहित्यरत्न

लक्ष्यग्रन्थों की रचना के पश्चात् लक्षणग्रन्थ लिखने की प्रवृत्ति स्वाभाविक है। लक्षणग्रन्थों में रस, रीति, अलङ्कार आदि काव्याङ्गों का विस्तृत विवेचन रहता है। काव्याङ्ग निरूपण की इस प्रवृत्ति के फल-स्वरूप संस्कृत साहित्य में अनेक लक्षणग्रन्थों की सृष्टि हुई और रस, रीति आदि का विवेचन अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँच गया। संस्कृत लक्षण-ग्रन्थकारों में भामह, उद्भट, दण्डी, आनन्दवर्धनाचार्य, विश्वनाथ, मम्मट और जयदेव आदि बहुत प्रसिद्ध हैं।

लक्षणग्रन्थ साहित्य में प्रयुक्त होनेवाली भाषा का [illegible] स्थिर करते हैं; काव्यगत चमत्कारों का स्वरूप निश्चित [illegible] शब्द-शक्तियों पर पूर्ण विचार कर आगे आनेवाले साहित्यिकों के लिए उत्तम कोटि की साहित्य-सर्जना के लिए मार्ग प्रशस्त करते हैं। इस प्रकार काव्याङ्ग-निरूपण होने पर साहित्य में विभिन्न वादों की उत्पत्ति होती है। उदाहरण-स्वरूप संस्कृत साहित्य के अलङ्कारवाद, रसवाद, ध्वनिवाद आदि को उपस्थित किया जा सकता है। इस प्रकार साहित्य का क्षेत्र विस्तृत हो जाता है और विभिन्न कलाकारों को अपने-अपने इष्ट मार्ग पर चलकर अपनी कल्पना के बल पर रचनाएँ करने का अवसर मिलता है।

प्रत्येक साहित्य के शैशव-काल में हम प्रायः भाव-पक्ष को ही प्रधानता पाते हैं। कला-पक्ष का उसमें इतना विकास नहीं मिलता। लक्षण-ग्रन्थों में कला का विवेचन हो जाने से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...न्त लेखकों और कवियों को अपनी रचनाओं में भाव और कला दोनों के सामञ्जस्य की सुगमता हो जाती है।

लक्षण-ग्रन्थों से जहाँ दृष्टि में व्यापकता, कला आदि से साहित्य-विकास में सहायता पहुँचती है, वहाँ लक्षणों के उदाहरण स्वरूप अनेक उच्च कोटि के उदाहरणों की रचना हो जाती है, जो अपनी भाव-शबलता, शब्द-सौष्ठव और चमत्कार के कारण साहित्य की स्थायी निधि में परिगणित होने लगते हैं।

अलङ्कार, रस, रीति आदि के विवेचन से काव्य में हृदय-ग्राहिता की शक्ति आ जाती है, जो उसे विश्व साहित्य में स्थान दिलाती है। शब्द-शक्तियों का पूर्ण विवेचन भाषा में शब्द-सौष्ठव का मार्ग खोल देता है। इस प्रकार उसमें गूढ़ और मार्मिक भावों की अभिव्यञ्जना करने के लिए क्षेत्र मिलते हैं।

साहित्य में जब अनेक लक्षण-ग्रन्थ लिखे जाते हैं, तब 'भिन्नरुचिर्हि लोकः' के सिद्धान्त के अनुसार उनमें हम मतों की विभिन्नता पाते हैं। एक लक्षण-ग्रन्थ-कार दूसरे की मान्यताओं का खण्डन कर अपने मत की स्थापना करता है। इस प्रकार पाण्डित्य-प्रदर्शन और गम्भीर विवेचन के लिए प्रेरणा मिलती है, जो साहित्य के विकास में सहायक सिद्ध होती है। कहना न होगा कि आचार्यत्व प्राप्त करने के प्रयत्न में संस्कृत साहित्य में कितने अनुपम रत्न प्रकाश में आए। किन्तु लक्षण-ग्रन्थों की रचना से जहाँ भाषा की व्यवस्था, शब्द-सौष्ठव और अर्थ-गौरव की सुविधाएँ होती हैं, वहाँ उससे एक बड़ी हानि इस बात की होती है कि लोग अन्धाधुन्ध अनुकरण कर साहित्य-क्षेत्र को सङ्कीर्ण कर देते हैं और अपनी सब शक्ति उन्हीं कुछ निर्धारित विषयों पर लगा देते हैं। इस प्रकार जब वाग्धारा कुछ बँधी हुई नालियों में प्रवाहित होने लगती है, तो अनुभव के बहुत-से गोचर और अगोचर विषय रस-सिक्त होकर सामने आने से रह जाते हैं और कवियों की व्यक्तिगत विशेषता की अभिव्यक्ति का अवसर बहुत ही कम रह जाता है। कुछ कवियों के बीच भाषा-शैली, पद-विन्यास, अलङ्कार विधान आदि बाहरी बातों का भेद हम थोड़ा-बहुत दिखा सकें तो दिखा सकें पर उनकी आभ्यन्तर प्रकृति के अन्वीक्षण में समर्थ उच्च कोटि की आलोचना की सामग्री बहुत कम पा सकते हैं।

हिन्दी के लक्षण-ग्रन्थ अपने आदर्श को पूर्ण रूप से पूरा नहीं कर सके। हम यह मानते हैं कि रीति-कालीन कवि भावुक, सहृदय और निपुण कवि थे, किन्तु उनका उद्देश्य कविता करना था न कि काव्याङ्गों का शास्त्रीय पद्धति पर निरूपण करना। यही कारण है कि इस काल में रसों (विशेषतः शृङ्गाररस) और अलङ्कारों के बहुत ही सरस और हृदयग्राही उदाहरण अत्यन्त प्रचुर मात्रा में प्रस्तुत हुए। ऐसे सरस और मनोहर उदाहरण संस्कृत के सारे लक्षण-ग्रन्थों से चुनकर इकट्ठे करें, तो भी उनकी इतनी अधिक संख्या न होगी। संस्कृत-साहित्य में कवि और आचार्य दो भिन्न-भिन्न श्रेणियों में रहे हैं किन्तु हिन्दी-क्षेत्र में यह भेद लुप्तप्राय होने के कारण आचार्यत्व के लिए जिस सूक्ष्म-विवेचन और पर्यालोचन-शक्ति की अपेक्षा होती है, उसका विकास नहीं हुआ। कवि लोग एक ग्रन्थ में अपर्याप्त लक्षण देकर अपने कवि-कर्म में प्रवृत्त हो जाते थे। इसलिए काव्याङ्गों का विस्तृत विवेचन, तर्क-द्वारा खण्डन-मण्डन, नए-नए सिद्धान्तों का प्रतिपादन आदि कुछ भी न हुआ। इसका एक कारण यह भी था कि उस समय गद्य का विकास नहीं हुआ था। पद्य में किसी बात की सम्यक् मीमांसा या उस पर तर्क-वितर्क नहीं हो सकता। इससे स्पष्ट है कि हिन्दी के लक्षण-ग्रन्थों की परिपाटी पर रचना करनेवाले जो सैकड़ों कवि हुए, वे आचार्य-कोटि में नहीं आते। उनके अपर्याप्त लक्षण साहित्य-शास्त्र का सम्यक् बोध कराने में असमर्थ हैं। शब्द-शक्ति का विषय दो ही चार कवियों ने नाममात्र को ही लिया है। काव्य के दो भेदों में से दृश्य काव्य का निरूपण बिल्कुल ही छोड़ दिया है।

यद्यपि हिन्दी के कवियों में केशव को छोड़कर अन्य सभी ने संस्कृत के परवर्ती आचार्यों के ग्रन्थों (कुवलयानन्द, चन्द्रालोक, साहित्यदर्पण) के आधार पर ही रचना की है तो भी जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, उनके लक्षणों और उदाहरणों में बहुत जगह गड़बड़ी पाई जाती है।

(१) केशव ने रूपक के तीन भेद दण्डी से लिए हैं:— अद्भुत रूपक, विरुद्ध रूपक, रूपक रूपक। इनमें से प्रथम का लक्षण भी स्वरूप व्यक्त नहीं करता और उदाहरण भी ठीक नहीं बन पड़ा है।

(२) भूषण क्या हिन्दी के प्रायः सब कवियों ने भ्रम, सन्देह और स्मरण अलङ्कारों के लक्षणों में सादृश्य की बात छोड़ दी है। इनमें भूषण के उदाहरण सबसे अधिक गड़बड़ हैं।

(३) शब्द-शक्ति का विषय दास ने थोड़ा-सा लिया है, किन्तु अस्पष्ट है। उपादान लक्षणा का लक्षण भी विलक्षण है और उदाहरण भी असङ्गत। जब कि काव्याङ्गों का स्वतन्त्र विवेचन ही नहीं हुआ, तब भाँति-भाँति के वाद कैसे प्रतिष्ठित होते?

रीति-काल में भाषा की भी व्यवस्था नहीं हो सकी। अधिकांश कवियों की रचना अव्यवस्थित पाई जाती है। भूषण की भाषा ओजपूर्ण है, किन्तु अनेक स्थलों पर सदोष है। शब्दों के स्वरूप निश्चित नहीं हैं। इस गड़बड़ी का कारण अवधी और व्रज भाषा भी थी। इस प्रकार हम देखते हैं कि हिन्दी के रीतिकालीन कवि अपने आदर्श को पूरा नहीं कर सके और संस्कृत के आचार्यों की कोटि में नहीं आते, जहाँ तक लक्षणों के विवेचन का सम्बन्ध है। उदाहरणार्थ साहित्य-दर्पणकार महापात्र विश्वनाथ ने काव्य की परिभाषा "वाक्यं रसात्मकं काव्यम्" दी है और काव्यप्रकाशकार मम्मट की काव्य की दी हुई परिभाषा का खण्डन किया है। इस प्रकार के खण्डन-मण्डन हिन्दी-रीति-काल में किसी ने नहीं किए हैं।

इसके अतिरिक्त हिन्दी में नायिका-भेद का इतना प्राबल्य है कि काव्य-सम्बन्धी अन्य सभी अङ्गों (रस, अलङ्कार के अतिरिक्त) का विवेचन एक तो है ही नहीं; जो है, वह भी नगण्य है। इस नायिका-भेद-वर्णन की प्रवृत्ति ने हिन्दी-साहित्य को किस प्रकार अपने संकीर्ण क्षेत्र से बाहर निकलकर सैकड़ों वर्ष तक फलने-फूलने का अवसर नहीं दिया, यह किसी हिन्दी-साहित्येतिहास-ज्ञाता से छिपा नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम

तुम बनकर आईं जीवन में
यौवन की उज्ज्वल प्रथम किरण,
तुमने बिखराए मूक भावनाओं
के पथ में हीरक-कण।
तुम बरस गईं माधुर्यमयी
अमृत-रस की बदली बनकर,
तुम सुखद स्वप्न की छाया-सी
छा गईं हृदय के आसन पर।
कल्पना-लोक की कुसुम-कलेवर
दिव्य अप्सरा के समान
तुम उतरीं गगन-मार्ग से गाती
मन्द स्वरों में मधुर गान।
प्रज्वलित किए तुमने अगणित
आशाओं के दीपक उज्ज्वल,
खिल पड़े अनेकों मानस के
अरमान-भरे कमनीय कमल।
मैंने देखा तब सन्ध्या के
अधरों पर अङ्कित मन्द हास,
मैंने देखा रजनी के अन्तर में
द्युति का लीला-विलास।
मैंने देखे तब क्षुद्र तारिकाओं में
शोभित शशि-मण्डल,
मैंने देखे तब कमल-वनों के
आनन पर अङ्कित अलि-दल।
पतझड़ के पीत पल्लवों में
प्रस्फुटित हुआ देखा वसन्त,
आतप के अन्तर में पाया
शीतलता का वैभव अनन्त।
देखे मैंने कण्टकित काननों में
विकसित नूतन निकुञ्ज,
कण-कण में पाया एक अलौकिक
सरस रूप का तेज-पुञ्ज।

—रामगोपाल विजयवर्गीय

——

मानवता का प्रथम प्रभात

बहुत दिनों की बात है, मनुष्य तब नङ्गा-धड़ङ्गा आज के बन्दरों की भाँति अपना जीवन व्यतीत करता था। उसमें सद्अविचार, बर्बरता और पशुता की ही प्रधानता थी। मानव पशु था, इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं।

उस दिन के मानव में और आज के मानव में धरती आसमान का अन्तर है। उस दिन का मानव जानता ही क्या था

बुद्धि का विकास होना प्रारम्भ हुआ। एक दिन सुनहला प्रभात, भगवान् भास्कर सदा की भाँति अपने रश्मि-से चिरपरिचित सोई हुई वसुन्धरा को जगाने अपने श्वेताश्व पर आरूढ़ इधर ही चले आ रहे हैं।

सुन्दरता की भी सीमा होती है। प्रकृति मुस्करा सूरजमुखी अनुभूतिपूर्ण नेत्रों से ताकती ही रह गई उस को—सन्ध्या के रूठे सरोज रश्मि-चुम्बन पा पुलकित हो पक्षियों ने कलरव किया।

तभी अचानक, खोई हुई प्रेरणा—विकास का रहस्य—मस्तिष्क में गूँज उठा। चारों ओर से विकास विकास की ध्वनि आने लगी—अविचारपूर्ण मानव में विचार का गया। मुझमें दूसरों की अपेक्षा कुछ विशेषता होनी चाहिए मानव ने सोचा। मन ने प्रकृति को विजित करने की ठानी

घोर सङ्घर्ष के पश्चात् मदान्ध मानव ने प्रकृति पर पाई। अदृश्य से एक प्रतिध्वनि आई—"विजयी! अजेय हो"।

विश्व रो रहा था और मदोन्मत्त मानव देख रहा था यह सब कुछ। आदिकाल से साथ रहते आए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...र्वत इत्यादि को भुला, स्नेह-विहीन हो मानव अन्ततः ...ही पड़ा विकास के नवीन पथ पर।

एक बात और कहनी है। कब की, सो ज्ञात नहीं। यह ...ज्ञात नहीं कि यह कहानी कब की कह रहा हूँ। काल ...एक बहुत बड़ा भाग व्यतीत हो गया; शेष होता जा रहा है ...होता ही जाएगा। फिर कहानी का काल निर्धारण कैसा? ...है कहानी सत्य; क्योंकि इतिहास की अपेक्षा कहानी सत्य ...प्रतिपादन अधिक करती है। और यह भी एक कहानी ...है।

हाँ! तो वैसा ही एक प्रभात था, प्रकृति अभी-अभी ...उठी थी, तभी अर्ध-निमीलित नेत्रों से देखा था उसने। ...ही पलकें गिर गईं। वास्तव में वह ऐसी ही थी घटना—...देख प्रकृति सिहर उठी; सूरज-मुखी नतशिर हो गई।

किन्तु मानव विकास का भूखा मानव भला कब मानता; ...भी कैसे सकता था? आज ही तो उसके अन्तरिक्ष से अचानक ...तीव्र ध्वनि उठी थी जो समस्त मानवता में परिव्याप्त हो ...। उसी का फल था वह—उसने स्वयं किया ही क्या? कुछ ...तो नहीं।

वह और कर भी क्या सकता था?

अन्ततः प्रेरणा के वशीभूत हो मानव के मस्तिष्क में कल्पना ...—मैं कितना सुन्दर हूँ। सूर्य की आभा यहीं पर तो ...रुक जाती है। चाँद रात्रि के पिछले पहर में तारक-दल ...—"मेरे सहचरो, विश्व की सुन्दरता किसमें है?" तभी ...अचानक उँगली उठा निश्चल भाव से कहते—"उनमें। ...के पुतलों में; मनुष्यों में!.....

और तभी मानव—विकास का पुतला बना जा रहा ...—जल-भुनकर राख हो गया। "संसार मेरा सौन्दर्य नहीं ...सकता,.....पर मेरी सुन्दरता और विश्व! समझ में नहीं ...क्या करूँ? जीवन और जगत्.....।" अचानक ...सुलझ गई—"अपनी सुन्दरता को सँजोकर ढक रखने से ...चल जाएगा।"

तभी से मानव ने पीपल, वट आदि वृक्षों के पत्तों का ...करना प्रारम्भ कर दिया। प्रकृति का रोम-रोम पीपल ...से खड़खड़ा उठा। एक झञ्झा उठा और विलीन ...गया। मानव ने प्रकृति पर विजय पाई अथवा.....!

—चन्द्रप्रकाश 'विशारद'

——

नौकर-पुराण

विप्लवकारी भीषण रक्त-समर का तो अन्त हो गया पर ...छोड़ी हुई कोटिशः समस्याओं में जकड़ा मानव अब भी कराह रहा है। भोजन-वस्त्र का अकाल, प्रत्येक वस्तु की महँगाई और बीमारियों आदि की मुख्य शिकायतों के अलावा एक आम शिकायत जो हम आजकल सुनते हैं वह है 'नौकरों का अकाल'। घर-घर में नौकरों का रोना मचा हुआ है। जहाँ जाइए, वहीं सबके मुँह चढ़े हुए हैं। कुटुम्ब का प्रत्येक प्राणी नौकर न होने का गुस्सा अपने सगे-सम्बन्धियों से तू-तू, मैं-मैं करके निकाल रहा है। मित्रों-सम्बन्धियों के यहाँ कदम रखते ही आपके सामने नौकर-काण्ड आरम्भ कर दिया जाता है।..... "कम्बख्त नौकर मिलते ही नहीं हैं,"....."कहाँ तक कोई अपनी हड्डियाँ गलाए?"....."यह भी कोई जिन्दगी है कि रात-दिन काम में पिसे रहो!"....."अजी साहब न पूछिए, कम्बख्तों के दिमाग आसमान पर हैं!"..... "यहाँ काम करते-करते पिसे जा रहे हैं, न कहीं आने के न कहीं जाने के,".....इत्यादि, इत्यादि। किसी सम्बन्धी की चिट्ठी खोलिए तो कुशल-समाचार के पश्चात् पहली लाइन होगी—"भई, कोई नौकर मिले तो जल्द रवाना करो।"

कटु तो अवश्य प्रतीत होगा, पर इन हाय-हत्या मचानेवालों से एक प्रश्न करना चाहता हूँ कि "साहब दिमाग इन नौकरों का चढ़ गया है या हम नौकर रखनेवालों का?" यदि ध्यान से देखा जाए, तो अधिकतर भारतीयों की आर्थिक अवस्था ऐसी है ही नहीं कि वे सेवक रख सकें। और फिर सच तो यह है कि जितना हम भारतीय, नौकरों पर निर्भर रहते हैं उतना और कोई देश नहीं। नोबेल पुरस्कार-विजयित्री प्रख्यात अमेरिकन लेखिका श्रीमती पर्ल० एस० बक ने अपने एक लेख में, जो कि अभी हाल में 'अमृतबाजार पत्रिका' में छपा था, कहा है कि "अमेरिका में अधिकतर लोग अपना सब काम अपने हाथ से करते हैं। खाना तो अमेरिकन गृहिणियाँ अपने हाथ से बनाती ही हैं, इसके अलावा अमेरिकन कुटुम्ब अपने बर्तन तक धोते हैं, फर्श धोते हैं और कपड़े भी स्वयं साफ करते हैं। नौकर-वर्ग तो अमेरिका में है ही नहीं। वे लोग किसी मनुष्य मात्र की दासता पर विश्वास नहीं रखते। यह है, अमेरिका के अधिकतर निवासियों का हाल। कुछ थोड़े-से लोग जो बहुत ही धनी हैं, वे लोग सेवक रखते हैं पर सहायक के रूप में—जैसे बच्चों के लिए गवर्नेस इत्यादि।" वे लोग अपने सेवकों से भारत-जैसा अभद्र और असभ्य व्यवहार नहीं करते और न उन्हें अपना गुलाम समझते हैं।

अभी थोड़े दिन हुए, इँग्लैंड से पार्लियामेंट के कुछ सदस्य भारत आए थे। उनमें एक महिला, श्रीमती निकल, भी थीं। भारतीयों की नौकरों पर निर्भरता देखकर उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ। यहाँ पार्टियों इत्यादि में उन्हें हर तरफ सेवक नजर आए। उन्होंने बताया कि इँग्लैंड में आजकल यदि कोई अपने मित्रों आदि को निमन्त्रण देना चाहे तो उसे सब काम स्वयं करना पड़ता है। वहाँ नौकरों की बिलकुल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुविधा नहीं है। इँग्लिश गृहिणियों को घर का काम अपने परिवारवालों की मदद से स्वयं करना पड़ता है। हम यह कह सकते हैं कि इँग्लैंड की अपेक्षा यहाँ परिवार बहुत बड़े होते हैं अतएव काम भारी होता है। पर साहब, काम भारी होता है तो परिवार भी तो भारी होता है; सब प्राणी काम में हाथ बँटाएँ तो काम चुटकियों में हो जाए। तो जनाब यह रही अमेरिका व इँग्लैंड की दशा। अब देखिए अपने भारत की विवशता! आती है न दया? याद रखिए, अमेरिका तथा इँग्लैंड भारत से कहीं सम्पन्न और स्वतन्त्र देश हैं।

भारत में सबसे अधिक खराब हालत अपने मध्यम वर्ग की है। कारण, अमीर तो अमीर ही हैं और बेचारे गरीबों को अपनी दाल-रोटी की फिकर सर ही नहीं उठाने देती! रह गए मध्यम वर्गवाले लोग। नौकरों की कमी ने सबको सताया पर जितना इन्हें परेशान किया, उतना किसी को नहीं। मध्यम वर्ग से मेरा मतलब है बाबू लोगों और 'साहब जमात' से, जो अधिकतर झूठी शान में रहते हैं तथा जिनकी स्त्रियाँ तनिक अधिक सुकुमार हो गई हैं और घर का काम छूना भी नहीं चाहतीं।

भारत अति गरीब देश है। यहाँ के मध्यम वर्ग की आर्थिक आय ही क्या? यहाँ ५०) रुपए क्या बल्कि ४०) रुपए पानेवाले भी मध्यम वर्ग के लोग हैं! फिर २००) या २५०) तक मध्यम वर्ग ही है। ५०) पानेवाले के यहाँ भी आपको एक बर्तन माँजनेवाला और झाड़ू देनेवाला अवश्य मिलेगा। इससे ऊपरवालों को तो कई सेवकों की आवश्यकता पड़ती है। जैसे बर्तन धोनेवाला, रसोइया तथा कम-से-कम एक ऊपर-नीचे का काम करनेवाला। धोबी का तो नाम ही लेना व्यर्थ है, वह तो आपको नौकरों तक के कपड़े धोता मिलेगा; फिर साहब लोगों का क्या कहना! आजकल बाबू लोग अपनी दाढ़ी भी हाथ से कम बनाते हैं अतएव नाई को भी एक स्थायी सेवक समझिए। यदि बुद्धि से काम लिया जाए तो एक सौ-डेढ़ सौ पानेवाला इतने नौकर नहीं रख सकता।

और फिर आजकल? पर झूठी शान! उसका क्या हो? दूसरों पर रोब कैसे बैठे? ध्यान देने की बात है कि इँग्लैंड व अमेरिका में जहाँ एक नौसिखिया मजदूर तक दस-बारह रुपए रोज कमाता है, वहाँ के मध्यम वर्गवाले क्या उच्च वर्ग तक के लोग भी अपना काम स्वयं करें; और भारतीय, भूखे भारतीय, नौकरों के लिए इतना बखेड़ा मचाएँ।

एक बर्तन माँजने के अलावा और कोई काम ऐसा नहीं नजर आता कि जिसके करने में नाक-मुँह सिकोड़ा जाए और हाय-तोबा मचाई जाए। मेरे विचार से तो नौकरों का अभाव एक प्रकार से हम लोगों के लिए लाभप्रद ही है। अपना काम खुद करने से धन की बचत के अलावा स्वास्थ्य भी निखर आएगा। तनिक देहाती भाइयों को देखिए, जो अपना काम स्वयं करते हैं, कितना सुन्दर स्वास्थ्य रहता है इनका, फिर आपके शहराती भाइयों को देखिए—रोग के कारण जिनका एक अभिशाप हो गया है। पुराने जमाने के बुड्ढों-बुढ़ियों को देखिए जो अभी तक इतना काम कर सकते हैं कि आजकल के युवक व युवतियाँ नहीं कर सकते। हम के युवक व युवतियाँ अधिकतर परिश्रम से दूर भागते कृत्रिमता उनकी नस नस में समा गई है। युवक बाजार में शर्माते हैं—कोई दोस्त देख लेगा। युवतियाँ भोजन बुसते हिचकती हैं—मुँह काला पड़ जाएगा।

नौकरों की तो हमें आवश्यकता ही नहीं पड़नी चाहि अधिक से अधिक एक बर्तन माँजनेवाला रख सकते हैं। भोजन बनाना, सौदा लाना व घर की सफाई का काम इतना विकट नहीं कि उसके लिए ऊधम मचाया जाए। खाना बनाना व घर को साफ-सुथरा रखने के काम तो ऐसे हैं जो प्रत्येक गृहिणी को रुचिकर प्रतीत होने चाहिएँ। की दृष्टि में भी—पुत्रवती होना, पाक-विद्या में प्रवीण गृह-कार्य की कुशलता तथा पति से प्रेम और प्रशंसा करना—ये ही चार बातें ऐसी हैं जिनमें कोई भी गृहिणी अनुभव कर सकती है। असल में स्त्री गृहिणी कहलाती इसी हेतु है कि वह गृह-कार्य में कुशल हो। और यदि महिला अपने भोजन-गृह में तथा गृहकार्य में नौकरों का देखना चाहती है तो वह गृहिणी कैसी? भोजन का या अरुचिकर होना तथा घर की सफाई या गन्दगी, कुशलता या मूर्खता के द्योतक हैं। तो जब गृह-कार्य कुशलता ही किसी स्त्री को चतुर गृहिणी तथा प्रवीण लक्ष्मी-जैसी सुन्दर उपाधियों से विभूषित करती है तो के अभाव में रोना ही क्या? यदि झूठी शान तथा एक ओर रखकर, प्रसन्नचित्त होकर, घर का सब काम कर लिया जाए तो इससे सन्तोष भी प्राप्त होता है। काम अपना ही काम है। नौकर, किराए के टट्टू, दूसरे काम क्या खाक मन लगाकर करेंगे? सिवाय पैसा खाने उनसे किसी काम से मतलब? और खासकर आजकल के से तो नमकहलाली कोसों दूर है। मालिक का जो भी न करें, थोड़ा है।

अतएव चतुर गृहिणियों से मेरा अनुरोध है कि यदि के दिमाग नहीं मिलते तो अपना दिमाग खराब करने की भी आवश्यकता नहीं है और न इतना परेशान होने की है। सब काम अपने हाथों कीजिए, क्योंकि गृह की आपसे है, न कि नौकरों से।

सायङ्काल काम से लौटा हुआ पति यदि घर में अपनी पत्नी के मुख पर प्रसन्नता और घर में उसकी देखेगा तो वह अपने को कितना भाग्यशाली मानेगा, सोचिए तो। इसके विपरीत यदि काम से पिसकर उसका स्वागत तरह-तरह की शिकायतों, गन्दगी से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[सन् १

रण जिनम
के बुहदों-बुढ़
र सकते हैं कि
कते। हम
से दूर भाग
बुचक बाजार
तियाँ भोजन
ं पड़नी चाहि
सकते हैं।
ाई का काम
या जाए।
काम तो ऐसे
चाहिएँ।
या में प्रवीण
और प्रशंसा
भी गृहिणी
हिणी कहला
और यदि
ौकरों का स
जन का स्व
दगी, गृहि
जब गृह-क
तथा प्रवीण
रती है तो
न तथा
सब काम
होता है।
ट्ट, हड़
य पैसा ल
ाजकल के
जो भी
कि यदि
करने की
होने की
क गृह की
में ठग
उसकी
मानेगा,
पकर
से मिल

रोते-चिल्लाते हुए बच्चों तथा मैली साड़ी में लिपटी अलसाई हुई आकृति से किया जाए तो वह अपने भाग्य को क्यों न कोसेगा?

वस्तुतः इस गृहकार्य-शिक्षा से मेरा यह तात्पर्य बिलकुल नहीं है कि केवल गृहिणी ही पूरा भार वहन करे और गृहस्वामी तथा घर के अन्य प्राणी मौजें उड़ाएँ। नहीं, ऐसा सोचना भी अनुचित है। कुटुम्ब के प्रत्येक प्राणी का कर्त्तव्य है कि घर के काम में योग दे। दफ्तर या काम से लौटने पर चाय-पानी के बेकड़ों काम बताकर और गृहिणी पर रोब जमाकर क्लब जाने चला जाना ही शेष नहीं रह जाता है। वरन्, पत्नी को सहायता देना ही अधिक आवश्यक है। यदि पति की अर्धाङ्गिनी है और गृहिणी है तो पति महोदय अपनी स्त्री के सुख-दुःख के बराबर के साझीदार हैं। घर का काम यदि पत्नी के जिम्मे है तो बाहर का काम पति के ऊपर है। यदि पत्नी रसोई में है और बच्चा चिल्ला रहा है तो बच्चे को पीटकर और पत्नी को बातें सुनाकर बाहर जाकर मित्र-मण्डली में गप्पें मारने लगना पति को शोभा नहीं देता। ऐसे समय बच्चे को बहलाकर पत्नी को सहायता देनी चाहिए। पति ही नहीं, पुत्र आदि व देवर, जेठ आदि को भी घर की औरतों से सहायता करनी चाहिए। यदि ईश्वर की कृपा से कुटुम्ब बड़ा है और बहुत-सी देवरानियाँ-जेठानियाँ, ननदें-भावजें इत्यादि हैं तो सबको आपस में हिल-मिलकर काम करना चाहिए। एक दूसरे से ईर्ष्या नहीं रखनी चाहिए। सास को केवल बहू को नहीं पीस देना चाहिए और न बहूरानी को ही यह शोभा देता है कि सास को काम करते हुए छोड़ पति के साथ सिनेमा या सैर-सपाटे के आनन्द उठाए जाएँ। दोनों को अपनी-अपनी अवस्था के अनुसार उचित काम बाँट लेने चाहिएँ और उचित आनन्द उठाने चाहिएँ। मतलब यह कि केवल औरतें काम करने के लिए नहीं बनी हैं। हर जगह गृहिणी को परेशान करने की आवश्यकता नहीं।

प्रत्येक प्राणी का, काम में हाथ बँटाने के अतिरिक्त, एक और होना चाहिए। वह है दूसरे के किए हुए कार्यों की उचित प्रशंसा। यदि कोई काम गलत हुआ है तो उसके करने वाले को दोष देने के बजाय उसे प्रेम से समझा देना अधिक उत्तम है। प्रशंसा पाने से मनुष्य का हौसला बढ़ जाता है और वह दुगुने उत्साह से कार्य करता है। और फिर पति के मुख से निकले हुए छोटी से छोटी प्रशंसा के शब्द भी पत्नी को प्रोत्साहित करने के लिए काफी हैं।

उपर्युक्त बातों को ध्यान में रखकर यदि सब अपना-अपना कर्त्तव्य करने लगें तो हम देखेंगे कि नौकरों का अभाव हम लोगों को तनिक भी नहीं खटकेगा। अब यदि इतना समझाने पर भी कोई महिला या महाशय अपना काम स्वयं करने से हिचकें तो उन्हें यह बता देना काफी होगा कि संसार के बड़े से बड़े पुरुष व देवियाँ तक अपना काम स्वयं करने से नहीं हिचकतीं। जब महात्मा गांधी-जैसे महान् पुरुष अपने काम को गौरवपूर्वक करते हैं तो हम-आप क्यों शर्माएँ?

और शर्माने का प्रश्न अलग रखकर हमें यह भी जान लेना चाहिए कि भविष्य में नौकरों की आशा बिलकुल ही त्याग देनी पड़ेगी। कारण, अभी तो खर्च इतना बढ़ गया है कि एक तो सब नौकर रख ही नहीं सकते और फिर निम्न जातियों में भी जागर्त्ति फैल रही है। असली भारत, कृषक और दलित भारत, तो अब उठ रहा है। जब स्वतन्त्रता प्राप्त कर वह बिलकुल खड़ा हो जाएगा तो सेवक-स्वामी का सम्बन्ध सदा के लिए स्वप्न हो जाएगा। निम्नवर्ग भी अपने-अपने हक माँग रहा है और अब अधिक दिनों तक पद-दलित नहीं रहना चाहता। वह चाहता है, एक स्वतन्त्र, स्वाधीन और स्वाभिमान-युक्त जीवन! और ऐसा होने में अब विलम्ब नहीं है। अतएव हम लोगों को अभी से सावधान होकर अपने काम करने में अभ्यस्त हो जाना चाहिए।

—सूर्यप्रकाश अदीब, एम० ए०, एल्-एल० बी०

——

दो गद्य-गीत

कौन

सुख-से उज्ज्वल कितने ही प्रभात बीत गए। दुःख-सी काली रातें बीत गईं। आकाश के ओस-बिन्दु वाष्प बन उड़ चुके; नीर-भरी काली बदली भी बरसकर उज्ज्वल हो चुकी। सागर की उत्ताल तरङ्गें उत्पात मचाकर पुनः हँसने-खेलने लगीं। पतझर के पीत पत्र उड़कर सावन की हरियाली बन आए। पर तुम्हारे अस्तित्व की भावना न मिटी और न बनी? तुम किस समय आते हो और कब चले जाते हो? तुम सुख-से उज्ज्वल हो या दुःख से काले? तुम सावन-से सरसते हो या पतझर-से उदास? तुम सागर-से उत्पाती हो या निद्रा-से शान्त। ग्रीष्म की कसक हो या मलयानिल की सिहरन? तुम कुछ भी न हो परन्तु रहस्य अवश्य हो।

उत्तर

उज्ज्वल धूप में हँसती हुई सन्ध्या के मलिन विषादमय रङ्ग की चादर के नीचे थकित-सी हो गई थी। सुधाकर ने अपने स्निग्ध कोमल करों में अनुराग भर जलधि का अन्तर छू दिया। थकित अलसाई लहरें उठकर नभ की ओर दौड़ने लगीं। सुधांशु ने अपनी रजतमयी मुस्कान को सागर के ऊपर डाल, समस्त सागर को अनुराग की भीनी आभा से ढक दिया। लहरें विक्षिप्त-सी हो ऊपर ही को दौड़ने लगीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकृति की इस आनन्दमयी प्रेम-क्रीड़ा को देखकर मेरे हृदय में युग-युग-व्यापी कथा कसक बन मुझे व्याकुल करने लगी। प्रातः समय भीनी गुलाबी आभा क्षितिज से आती हुई सरिता पर तैरती समस्त वसुन्धरा पर प्रतिबिम्बित हो जाती है। उसके सम्मोहक राग पर सब प्रसन्न मुद्रा में भर नृत्य कर उठते हैं। कोमल पादप पुष्पों से सज, मानव हृदय आशाओं से भर अपनी गति में थिरकन अनुभव करते हैं। जिसकी मलिन मुद्रा को देख सन्ध्या उन्मन-सी लौट जाती है। पश्चिमी क्षितिज का धुँधला-सा विषाद वृक्षों को ढक लेता है। सब ही हृदय नीरव हो जाते हैं.....वह कौन है? कहाँ छिपा है यह कौतूहल? किन्तु अब खीज ने मुझे विकल कर दिया। हृदय का वेग आँखों में आँसू बन छलछलाया। सीपी न जाने किस आकांक्षा से अपना मुख नभ की ओर उठाए थी। मैंने उसे उठाकर अपने आँसू से भर लहरों में प्रवाहित कर दिया—यह सोचकर कि सुदूर जानेवाली लहरें मेरे अश्रु-भरे सन्देश को कदाचित् पहुँचा सकें। एक लहर ने उठकर उनका स्वागत किया। वह भीत दूर-ऊँची उठकर मेरी सीपी को ले जाने लगी। परन्तु कुछ दिवस पश्चात् वह स्वयं गिरी और मेरे सन्देश भरी सीपी न जाने कहाँ विलीन हो गई। कदाचित् यही मेरे सन्देश का उत्तर था। यही साधक और साध्य का रहस्य। लहरें प्रति उज्ज्वल रात में चाँदी-सी बन अपने साध्य का पथ खोजती हैं, परन्तु प्रातः होते ही शिथिल हो गिर जाती हैं। दूर तक फैली वसुन्धरा नित्य ही मिलन-उल्लास में बढ़ती देखी है, परन्तु किसी ने मिलते नहीं देखा। मेरा हृदय आकांक्षा के प्रबल वेग से उद्वेलित हो उठा। क्या मुझे भी सदैव ही जन्म लेकर इस आकांक्षा को हृदय में लिए मर जाना होगा!

—कुमारी प्रभा पारीक, बी० ए०

छुई-मुई

माधव सूर्यनाथ के घर से लौटा तो माँ ने पूछा—हाँ बेटा, क्या-क्या लिया-दिया सगाई में।

माधव उदासीनतापूर्वक बोला—बहुत-सी चीजें थीं।

माँ निश्चित विवरण चाहती थीं। अतएव पूछा—रुपए कितने चढ़े तिलक पर।

वह चिढ़कर बोला—कह तो दिया कि कुछ ठीक-ठीक मालूम नहीं।

पुत्र की अनिच्छा ताड़कर माँ ने प्रसङ्ग बदलकर कहा—अच्छा तो हाथ-पैर धो लो, बेटा, भोजन तैयार है।

'अभी इच्छा नहीं'—यह कह वह अपने कमरे में चला आया। माँ मन-ही-मन क्षुब्ध हो उठी। कितनी ही देर प्रतीक्षा करने पर भी जब उसने भोजन का नाम नहीं लिया तो माँ ने पुकारा—बस, अब देर मत करो बेटा, थोड़ा ही आटा पोने को रह गया है। आकर गरम-गरम खा लेते।

[सख्या १

माधव ने पढ़ाई का व्यपदेश लिया और सामने पड़ी पुस्तक को अन्यमनस्कतापूर्वक उलटता-पुलटता बैठा रहा। माँ चुपचाप ही उसके पास आकर खड़ी हो गई। धीरे से कन्धे पर हाथ रखकर बोली—जब से कालेज की पढ़ाई पूरी की, जाने क्या हो गया। नित सूखता जा रहा है। पहलेवाली बात ही नहीं रही।

माधव झुँझलाकर बोला—सदा बचपन थोड़े ही रहेगा।

माँ ने स्थिरतापूर्वक उत्तर दिया—माँ-बाप के सामने तो बचपना ही रहता है। फिर अभी तेरी उम्र ही क्या है, तेरे-से छोटों के विवाह हो गए, पर तूने हामी नहीं भरी।

माँ ने उसके आगे की पुस्तक बन्द कर दी। माधव को रहा कि यह नया पाठ पूरा कर लेता। उन्होंने वैसा ही उसे दे दिया—जीवन भर नए पाठ ही तो पढ़ते हैं। वह उठना ही पड़ा। माँ ने खाना परस दिया और वह चुपचाप ही खाने लगा।

माँ ने पुनः चर्चा छेड़ी—अब तो सूर्य भी बहू बाल जाएगा। पढ़ाई में तो तुमने उसे परास्त कर दिया। यहाँ आकर हार गए।

माधव चिढ़कर बोला—मुझे खाने भी दोगी या नहीं?

माँ रुआसी होकर चुप ही रह गई।

× × ×

सूर्य का विवाह सम्पन्न हो गया। माधव रुग्ण होने के कारण बरयात्रा में योग न दे सका था। माँ बहू को देख प्रसन्न थी। आते ही माधव से बोली—बेटा, सूरज के तो खुल गए। बहू क्या है, चाँद का टुकड़ा है। एम० ए० पास भी है।

माधव को आश्चर्य हुआ। बोला—एम० ए० बड़े गधे हैं। कम-से-कम लड़का भी तो एम० ए० देखते।

तभी सूर्यनाथ मानो धरती से निकल पड़ा। हँसता बोला—पर डर क्या है माधव, डिग्री की लड़ाई होगी तो भिड़ा दूँगा।

सब हँस पड़े। माधव की झेंप दूर न हुई थी। बोला—मालूम पड़ता है, धन देखकर टूट पड़े।

सूर्य ने चुटकी ली—नहीं, देखा तो मुझे भी था।

माधव ने अभिभूत होते-होते भी कह दिया—पर वह भी कैसी एम० ए० है जो—

"अरे उसे दिखाने के लिए ही तो बुलाने आया हूँ। फरेब ही न हो।" सूर्य तो चलने को उद्यत था।

× ×

सूर्यनाथ परिचय करा रहे थे—ये मेरी धर्म-पत्नी एम० ए० और आप माधवप्रसाद शर्मा, एम० ए०।

माधव की झुकी दृष्टि उठी और नाम सुनते ही नमस्ते के लिए उठे हाथ गिर गए। ठीक यही दशा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्षण भर स्तम्भित-सी रह वह माधव की ओर देखती
माधव कह रहा था—अच्छा, जाता हूँ सूर्य। फिर आऊँगा।
सूर्य के रोकते-न-रोकते भी वह चला ही गया। वह
सोच रही थी कि भले आदमी, भाभी के हाथ की मिठाई तो
जाते। पर उसने सुना ही नहीं। पत्नी की खिन्न मुद्रा
देख सूर्य बोला—माधव बड़ा भावुक है। भावुक क्या जी,
चिड़चिड़ा होता जा रहा है। कालेज छोड़ते ही जाने क्या हो
गया। पहले तो कभी ऐसा न था। कहीं वहाँ किसी से दिल
तो नहीं लगा बैठा जान पड़ता है। मैं भी वहाँ पढ़ा हूँ। सहशिक्षा में
होता ही क्या है!

सुलेखा ने धीरे से कहा—पढ़ी तो मैं भी हूँ।

सूर्यनाथ को चुप ही रह जाना पड़ा।

× × ×

फिर माधव बुलाने पर भी सूर्यनाथ के घर नहीं गया। वह
अधिक अनमना होता जा रहा था। एक दिन माँ के
मुँह का प्रसङ्ग छेड़ने पर उसने निर्विरोध स्वीकृति दे दी।
सूर्य को भी पता लगा और उसने सुलेखा के कानों में डाल
दी। सुनते-सुनते सुलेखा का मुँह सफेद पड़ गया। सूर्य
पूछा—क्या बात है, उदास क्यों हो गईं।
बोली—सिर दर्द कर रहा है। वह वहाँ से हट गया।

एक दिन सूर्यनाथ माधव के घर बैठा उसकी पुस्तकें उलट-
रहा था। माधव किसी काम से बाजार गया था।
छोटी-सी कविताओं की पुस्तक देखकर वह उसकी ओर
आकर्षित हुआ। गेट-अप बड़ा सुन्दर था। मुखपृष्ठ की
ओर लिखा था—माधव को। और ठीक इसके नीचे
(एम० ए० प्रीवियस)।

सूर्यनाथ को समझते देर न लगी कि यह माधव का कालेज
उपहार है। पर उपहार का अभिप्राय? साथ ही 'सुलेखा'
के अक्षर उसे इतने बड़े दीखने लगे कि हठात् दृष्टि उधर
चली जाती और कदाचित् वह कुछ और सोच ही न पाता।
उसने पुस्तक को यथास्थान रख दिया तथा माधव की
प्रतीक्षा किए बिना ही चल दिया।

× × ×

माँ माधव से कह रही थीं—सुना नहीं बेटा! सूरज ने
किसी बात पर बहू को बहुत पीटा।
"पीटा!" माधव की आँखें लाल हो गई थीं। पूछा—
किस बात पर?
माँ—यह तो किसी को पता नहीं चला। बात-बात में
कुछ कहा-सुनी हो गई। इसी पर सूरज ने हाथ छोड़
दिया। कोई कहता है कि बहू का अधिक पढ़ा-लिखा होना
अखरता है। पर बेटा, वह तो ऐसा न था।
माधव उत्तेजित अवस्था में ही बोला—अच्छा माँ, तो मैं
घर हो आऊँ।
माँ रोककर बोली—अभी नासमझ है तू। वह दूसरे की
बहू है। तुझे बीच में नहीं बोलना चाहिए।
"दूसरे की ब्याहता!" माधव थका-सा कुर्सी पर बैठ गया।
कहना चाहता था।

उसी दिन सूर्यनाथ की माधवप्रसाद से सड़क पर ही भेंट
हो गई। सूर्य कतराकर निकल जाना चाहता था, पर माधव
उसे देखकर रुक न सका। सामने आते ही बोला—सूरज,
तुम्हारी बड़ी तारीफ हो रही है। क्या तुम्हारी शिक्षा निष्फल
और अनुदार.....

सूर्य ने बात पूरी होने ही न दी। कटु होकर बोला—
माधव, अब मैं धोखा नहीं खा सकता। शिक्षा का छद्म रूप मेरे
ऊपर प्रकट हो गया। तुम्हारी साधुता भी मुझे नहीं बहका
सकती। सुलेखा और.....

माधव ने मन-ही-मन पूरा कर लिया—और माधव!
उसने नहीं सुना कि सूरज क्या कह गया। वह तो सोच रहा
था उन दिनों की बातें जब सुलेखा उसके साथ पढ़ती थी।
और वे दोनों.....

"अच्छा सोचो, मेरे पास अवकाश नहीं"—कहकर सूर्यनाथ
चला गया। माधव लड़खड़ाता-सा घर लौट आया।

अगले ही दिन माधव की सगाई थी और फिर उसी सप्ताह
में विवाह भी। माँ शीघ्र ही इस कार्य से निवृत्त हो विदा
चाहती थीं। माधव की अस्थिर बुद्धि पर उन्हें विश्वास न था।

माधव उस दिन विचारों में बड़ा व्यस्त रहा। माँ से भी
कुछ कहते-सुनते न बन पड़ रहा था। बात उठाती हुई बोलीं—
कल के लिए सूरज से भी कह दिया न तुमने?

माधव तेज स्वर में बोला—उस पाजी का नाम मेरे सामने
मत लो।

माँ को कुछ भी कहने का साहस नहीं हुआ। चुप्पी साध
कर अलग हट गईं। माधव के मस्तिष्क में अन्धड़ उड़ता ही
रहा। स्मृति-पट पर बहुत से दृश्य बन-बिगड़ रहे थे। शायद
सुलेखा ही कह रही थी—भैया, सहशिक्षा ने मेरे मस्तिष्क और
हृदय में पुरुषवर्ग के प्रति असन्तोष ही उत्पन्न किया है। हमसे
निम्न श्रेणी के छात्र भी हमारे प्रति प्रेम प्रदर्शन करते फिरते हैं।
तुम उसके अपवाद मिले, जिससे मैं आज दिन एक अच्छी
सम्मति बनाने का आधार तो पा सकी हूँ।

रात हो रही थी। सगाई से पूर्व भी घर निस्तब्ध ही
था। खाट पर पड़े-पड़े माधव ने पार्श्व बदला। क्लास में जाने
का घण्टा बज गया था। पर सुलेखा कहती जा रही थी—पुरुष
स्वयं इच्छापूर्वक हमारे सम्पर्क में आता है। पर जब वह दूसरे
को भी सम्पर्क बढ़ाते देखता है तो सन्देह का आरोप कर बैठता
है। नारी की छुई-मुई से भी हीन दशा है। ऐसे सन्दिग्ध
वातावरण में तो मेरा दम घुटता है। प्रतिक्रिया के विचार
आते हैं, पर भैया तुम्हें देखकर.....

वह तब कहना चाहता था कि सुलेखा, मैं तुमसे प्रेम करता
हूँ। पर भैया शब्द ने रोक लगा दी। सुलेखा चली गई
थी। माधव सोचता रहा था—माधव उस पुरुषवर्ग का अपवाद
है जिसे सुलेखा घृणा करती है।

तब से माधव सुलेखा से तटस्थ ही रहा था। और आज
माधव के मित्र सूर्यनाथ ने सुलेखा को पीटा था। माधव
उद्विग्न होकर कमरे में घूमने लगा था।

अगले दिन सुबह माधव घर से गायब था। वह सिर्फ एक
पत्र सूर्यनाथ के नाम छोड़ता गया था।

—'भिक्खु'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

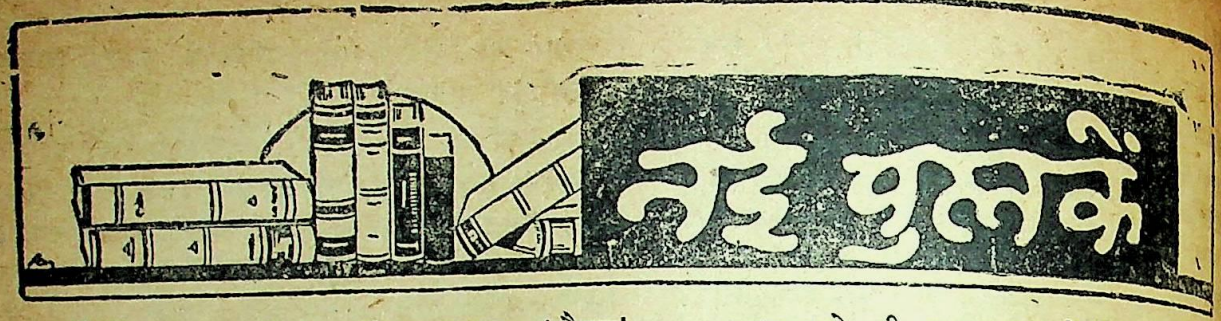

१—**गोविन्दगुप्त**—रचयिता, श्री गङ्गाप्रसाद 'कौशल' और प्रकाशक, सरला पुस्तक-माला, कदम कुआँ, पटना हैं। दुरङ्गा आवरण; पृष्ठ-संख्या १००; मूल्य ।।।) बारह आने और छपाई-सफाई सुन्दर है।

प्रस्तुत पुस्तक में लेखक ने गुप्त-कालीन हिन्दू-इतिहास का एक ऐसा अध्याय अङ्कित किया है, जिसमें चन्द्रगुप्त द्वितीय के पश्चात् उनके पुत्र कुमारगुप्त सम्राट् होकर भी लोकप्रिय नहीं हो सके थे। वे रात-दिन वैभव विलास में डूबे रहते थे। यही नहीं, एक रूपवती वेश्या को वे अपनी पट्टमहारानी तक बना चुके थे। इन्हीं कुमारगुप्त के अनुज गोविन्दगुप्त थे, जो वीर पुरुष थे। भारतीय संस्कृति की मर्यादा की रक्षा करना वे अपना कर्त्तव्य समझते थे।

गोविन्दगुप्त ने अपने जीवन-काल में पाटलिपुत्र के राज-सिंहासन पर कभी किसी उच्छृङ्खल अथवा अयोग्य व्यक्ति को आरूढ़ नहीं होने दिया और आक्रमणकारी हूणों से युद्ध-स्थल में स्वयं जूझते रहकर कभी विराम नहीं लिया।

कुमारगुप्त के वैभव-विलास, उनकी आमोदप्रियता और रासलीला का सरस और मोहक वर्णन करने में जहाँ 'कौशल' जी को सफलता मिली है, वहीं गोविन्दगुप्त की वीरता, उनके त्याग और उनकी मर्यादा का भी संयत और वीररस से ओत-प्रोत चित्रण करने में वे सफल हुए हैं। सदियों पहले की यह ऐतिहासिक गाथा रचयिता की सजीव वर्णन-शैली के कारण सजीव-सी होकर हमारे सामने नाचने लगती है।

कुमारगुप्त की अमर्यादित रङ्गीनियों से परेशान होकर उनके वृद्ध महामात्य कहते हैं—

एक बूँद भी रक्त रहेगा, जब तक मेरी काया में;
वृद्ध नहीं फँस सकता है कभी किसी की माया में।

तत्कालीन भारतीय वीरता का यह ऐसा प्रमाण है, जो अपने प्रभु को भी, मर्यादा का सीमोल्लङ्घन करने पर क्षमा नहीं कर सकती थी। आज-जैसे चाटुकार अथवा चापलूसों का वह युग नहीं था। उस युग में तो सत्य, धर्म और औचित्य के समक्ष दुनियादारी के समस्त स्वार्थ नगण्य थे।

गोविन्दगुप्त जब अपने दुश्मन—हूणों—का सामना करने के लिए जाते हैं, तब अपने सैनिकों को प्रोत्साहित करते हुए कहते हैं—

महाकाल के भी सम्मुख जा, दो-दो हाथ दिखाये हैं;
देश-प्रेम की बलिवेदी पर हँस-हँस शीश चढ़ाएँगे।

वीरगति को प्राप्त होते समय इस सिंह की आत्म देखिए—

जियो-जियो तुम सदा देश-हित,
स्वाभिमान रखकर जग में।
आर्य-रक्त की इज्जत रखना,
बहता है जो रग-रग में।

छन्दों की रचना अधिकांश स्थलों पर शृङ्गार, वीर, और वीभत्स रसों का उद्रेक करने में भी सफल हुई है। सरल और प्रवाहपूर्ण है। इतना सब होने पर भी कहीं कुछ पंक्तियाँ गद्य-मात्र रह गई हैं। उदाहरणार्थ पृष्ठ के निम्नांकित छन्द की दूसरी और चौथी पंक्ति देखिए—

किन्तु व्यर्थ अब हुआ दौड़ना,
वह तो प्राण खो चुकी थी।
राजपुत्र की प्यारी अरुणा
जलकर खाक हो चुकी थी।

प्रूफ की अशुद्धियाँ भी कहीं-कहीं प्रवाह में बाधक हो हैं। आशा है, आगामी संस्करण में ये दोष हटा दिए जा सब मिलाकर पुस्तक पठनीय और संग्रहणीय है।

२—**टीला** लेखक, श्री द्विजेन्द्रनाथ मिश्र 'निर्गुण' प्रकाशक, विद्याभास्कर बुकडिपो, बनारस हैं। दुरङ्गा आव पृष्ठ-संख्या १०२ और मूल्य एक रुपया है।

इस कहानी-संग्रह में निर्गुण जी की तीन कहानियाँ रावण, मुंशीजी और केला के तीन पेड़। तीनों लम्बी कह में ग्रामीण जीवन का जीता-जागता और हृदयस्पर्शी चित्र इन कहानियों के पात्र बोलते हुए व्यक्ति हैं—ऐसे व्यक्ति काल्पनिक नहीं, प्रत्युत सजीव कहे जा सकते हैं। इन की गति-विधि, इनके मानसिक अन्तर्द्वन्द्व और जीवन-सं उत्पन्न वातावरण त्रिवेणी के रूप में प्रवाहित हो रहा है। की विचार-धारा पर पाठक अनायास ही बहता चला और जहाँ यह धारा विषम चट्टानों से टकराकर छिन्न उठती है, वहाँ पाठक भी तिलमिला उठता है; पात्रों के से वह इतना प्रभावित हो जाता है कि लेखक की सफलता आप सिद्ध हो जाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री निर्गुण जी हिन्दी के श्रेष्ठ कथाकारों में से हैं; लेकिन कथाओं के प्रकाशन का क्षेत्र उन्होंने इतना परिमित-सा रखा है कि हिन्दी के बहुत-से पाठक उनकी श्रेष्ठता से अपरिचित कहे जा सकते हैं।

'शीला' हमारे कथा-साहित्य में समादृत होने का अधिकारी है।

—देवीदयाल चतुर्वेदी 'मस्त'

३—निर्माण—(द्वैमासिक पुस्तक)—सम्पादक, श्री राङ्गेय राघव; प्रकाशक, 'निर्माण' कार्यालय; १११४, बाग मुजफ्फरखाँ, दिल्ली; वार्षिक मूल्य छः रु०; प्रति अङ्क एक रुपया; पृष्ठ-संख्या १००; डबल क्राउन सोलह पेजी आकार।

हिन्दी-संसार के सुपरिचित कवि तथा कहानीकार श्री राङ्गेय राघव के सम्पादकत्व में 'निर्माण' का प्रकाशन अप्रैल '४६ से प्रारम्भ हुआ है। प्रथमाङ्क हमारे सामने है। सामग्री का चयन सम्पादक की कुशलता का सूचक है। लेखों में श्री रामचन्द्र गुप्त का 'साहित्य की नई दिशा' और पं० देवीदयाल चतुर्वेदी 'मस्त' का 'हिन्दी लेखक और उनका पारिश्रमिक' पठनीय और मननीय योग्य हैं। हिन्दी लेखकों के पारिश्रमिक की समस्या पर मस्त जी के लेख में न केवल मर्मस्पर्शी चित्रण प्रस्तुत लेखकों की वास्तविक कठिनाइयों पर गम्भीर प्रकाश डाला गया है। सर्वश्री अमृतराय और विष्णु की कहानियाँ मनोरंजक और उपादेय हैं। कविताओं का चयन बहुत सुन्दर हुआ है।

सम्पादक के शब्दों में 'निर्माण' का ध्येय है—"पूँजीवादी शक्तियों से दलित नए लेखक सिर उठाएँ और साहित्य पर स्थापित गुटबन्दियों के गढ़ों को तोड़ा जाए। न किसी आलोचकारी की धौंधली चले, न सस्ता साहित्य देनेवाले 'बड़े' नामों का जादू ही हम पर चल सके।"

साहस के साथ यदि 'निर्माण' अपने ध्येय पर अटल रहा, तो हमें विश्वास है, वह हिन्दी लेखकों की अपनी प्रिय वस्तु बनने का सौभाग्य प्राप्त करेगा।

४—सरिता (मासिक पत्रिका)—सम्पादक, श्री विजयकुमार; प्रकाशक, श्री विश्वनाथ, दिल्ली प्रेस, नई दिल्ली; वार्षिक मूल्य ७) सात रुपया; प्रति अङ्क ।।) आने; पृष्ठ-संख्या लगभग डिमाई अठपेजी आकार, तिरङ्गा और आकर्षक आवरण।

हिन्दी मासिक पत्र-पत्रिकाओं में पिछले आठ महीनों से 'सरिता' का प्रकाशन एक नई चीज़ है। अन्य मासिक पत्रिकाओं की तरह इसमें भी प्रतिमास लेख, कहानी, कविता के अतिरिक्त धारावाही उपन्यास तो रहता ही है, साथ ही फोटोग्राफ, रेखाचित्र तथा बाल-सरिता नामक तीन स्तम्भ भी इसमें नियमित रूप से दिए जाते हैं। महिलोपयोगी लेख भी इसके प्रत्येक अङ्क की विशेषता कहे जा सकते हैं। गेट-अप और छपाई में तो 'सरिता' अनेक मासिक पत्र-पत्रिकाओं से यथेष्ट आगे बढ़ गई है; परन्तु सामग्री के चयन में अभी यह बात नहीं कही जा सकती।

मार्च का अङ्क हमारे सामने है। इस अङ्क में कई कहानियाँ हैं; पर इनमें से दो-एक ही ऐसी हैं जिन्हें कलात्मक और सुन्दर कहा जा सकता है। लेखों में भी अनन्त गोपाल शेवड़े का 'अपना-अपना चश्मा' और श्रीमती हीरादेवी चतुर्वेदी का 'विवाहित जीवन का आनन्द' अपने-अपने विषय के गम्भीर लेख हैं। कविताओं में भी हरिकृष्ण 'प्रेमी' की ही कविता सुन्दर कही जा सकती है। सम्पादकीय विचार 'सरिता' में जाने क्यों नहीं दिए जाते।

सामग्री का चयन यदि अपेक्षाकृत अधिक कलात्मक दृष्टिकोण से किया जाए, तो हमें विश्वास है कि 'सरिता' हिन्दी की मासिक पत्रिकाओं में शीघ्र ही अपना विशेष स्थान बना लेगी। हम 'सरिता' के उत्कर्ष और चिरजीवी होने की कामना करते हैं।

५—कर्मयोग—सम्पादक, विद्याभूषण पं० मोहन शर्मा, विशारद; संयोजक, ठाकुर किशोरसिंह 'किशोर' और प्रकाशक, प्रकाश-मन्दिर, काशी, आर० एस० बनारस हैं। दुरङ्गा आवरण; पृष्ठ संख्या १०८; सजिल्द प्रति का मूल्य १॥) डेढ़ रुपया है।

प्रस्तुत कहानी-संग्रह में मध्यप्रान्त के बारह चुने हुए कहानी-लेखकों की एक-एक कहानी संगृहीत की गई है। इन कहानी-लेखकों में कुछ तो समस्त हिन्दी-संसार में प्रख्यात हैं और कुछ ऐसे भी हैं, जो सुन्दर कहानियाँ लिखते हैं, लेकिन प्रकाशन-क्षेत्र से बहुत दूर रहते हैं। सर्वश्री जहूरबख्श, देवीदयाल चतुर्वेदी 'मस्त', विनयमोहन शर्मा आदि कथाकारों की कहानियाँ कलात्मक और उपादेय हैं तथा संग्रह को मूल्यवान् बनाने में चार चाँद लगा रही हैं।

प्रान्तीय कथाकारों को प्रकाश में लाने का यह प्रयत्न सर्वथा स्तुत्य है। 'कर्मयोग' के पहले 'विद्रोही' नामक एक और कहानी-संग्रह प्रकाशित हो चुका है। इन दोनों कहानी-संग्रहों को सम्पादित और प्रकाशित करने के लिए श्री शर्माजी का प्रयत्न और उनकी लगन सराहनीय है। इन दो संग्रहों में भी मध्यप्रान्त जैसे प्रख्यात हिन्दी-सेवी प्रान्त के समस्त प्रतिभा-सम्पन्न कथाकारों का प्रतिनिधित्व सम्भव नहीं। आशा है, शर्माजी अपने इस अनुष्ठान में अनवरत प्रयत्नशील रहेंगे और प्रान्त के समस्त कथाकारों को प्रकाश में लाने की चेष्टा करेंगे। प्रान्तीय कथाकारों का सहयोग शर्मा जी को अपने-आप प्राप्त होगा ही। 'कर्मयोग' हिन्दी संसार द्वारा समादृत होने का अधिकारी है। यह संग्रह 'मोहिनी' कार्यालय, इटारसी (मध्यप्रान्त) से भी प्राप्त किया जा सकता है।

—पण्डित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रमिकवर्ग की बेचैनी

'उत्पादन पर जब तक पूँजीवादी संस्थाओं का एकाधिपत्य है तब तक श्रमिकवर्ग की बेचैनी दूर नहीं हो सकती' इस तथ्य का अनुभव अब प्रत्येक पूँजीवादी देश करने लगा है। द्वितीय महायुद्ध के समाप्त होते-न-होते समस्त संसार में श्रमिकवर्ग की बेचैनी अपनी चरम सीमा पर पहुँची दिखाई देने लगी है। देश या विदेश का ऐसा कोई समाचारपत्र आज न मिलेगा जिसमें श्रमिकवर्ग की सम्भावित हड़ताल के मोटे-मोटे शीर्षक न दिखाई दें। जब समस्त संसार के श्रमिकवर्ग की यह दशा है तब भारत का श्रमिकवर्ग—जो अपेक्षाकृत सबसे अधिक उपेक्षित, दरिद्र और साधनहीन है—पीछे कैसे रह सकता है! जब तक महायुद्ध चलता रहा, अनेक अस्थायी फैक्टरियाँ भी चलती रहीं, जो प्रधानतः युद्धोपयोगी वस्तुओं का निर्माण करती थीं। उस समय उन फैक्टरियों को मजदूरों की अत्यधिक आवश्यकता थी। इसलिए उन्होंने उन्हें मजदूरी की अच्छी दर पर रक्खा; महँगाई दी; बोनस दिए; काम सीखे हुए या नौसिखिए का भेद-भाव हटाकर भर्त्ती की गई; 'ओवर टाइम' का भत्ता दिया गया, और भी अनेक सुविधाएँ व आकर्षक प्रलोभन सामने रखकर मजदूरों को जुटाया गया। पर युद्ध समाप्त होते ही उन फैक्टरियों का काम भी हलका हो गया। तब उन्हें छँटनी करने की सूझी। देश की एक 'हार्नेस एण्ड सैडिलरी' की प्रमुख फैक्टरी के सम्बन्ध में ज्ञात हुआ है कि उसने अपने ६३ प्रतिशत मजदूरों की छँटनी कर दी है। शेष ३७ प्रतिशत जो रह गए हैं उनकी भी बुरी हालत है। उन्हें अनेक असुविधाओं का सामना करना पड़ रहा है। पर मिल के मालिकों को इसकी रत्ती भर भी परवाह नहीं है। विलायत से लाखों रुपए की आधुनिक ढङ्ग की मशीनें मँगाने के लिए उन्होंने अपना आर्डर भेज दिया है, पर उस करोड़ों के लाभ में, जो मजदूरों के परिश्रम से लाभ उठाकर उन्होंने इकट्ठा किया है, मजदूरों के लिए एक पाई नहीं है।

युद्धकाल में मजदूरों ने जो मजदूरी पाई वह सामान्यकाल की अपेक्षा अधिक अवश्य थी, पर इतनी अधिक नहीं थी कि मजदूर बढ़ी हुई महँगाई का सामना करता हुआ भविष्य के लिए कुछ सञ्चय भी कर सकता। वह जो कुछ कमाता रहा वह सब आटा-दाल-नमक के जुटाने में खर्च होता रहा। अब छँटनी का प्रश्न सामने आया तब उसने अन्धकारमय भविष्य रूप मजदूर के सामने उपस्थित कर दिया। कारण, कम न होकर बढ़ती पर है, अतः बेकार मजदूर के सामने का प्रश्न जीवन-मरण के प्रश्न के समान गम्भीर है। हड़तालों का सूत्रपात होता है।

हमारे देश में यों तो छोटी-मोटी अनेक हड़तालें हुईं, बड़े पैमाने पर सर्वप्रथम सङ्घटित हड़ताल नौ-सेना के कर्मचारि की हुई थी। उसके बाद पुलिस की हड़ताल, सूती मिल मजदूरों की हड़ताल, अनेक स्थानों पर भङ्गियों और हलव की हड़ताल, इक्के ताँगे-रिक्शेवालों की हड़ताल आदि आईं। रेल कर्मचारियों की हड़ताल इन सब में अधिक भ पूर्ण होती, पर सन्तोष की बात है कि उच्चाधिकारि अतिरिक्त सतर्कता और सूझ-बूझ से वह टल गई और प्रकार जनता पर एक भीषण सङ्कट आते-आते टल गया। विभाग के निम्न कर्मचारियों की हड़ताल इधर की सबसे सुसङ्गठित और महत्त्वपूर्ण हड़ताल थी जिसने देशव्या धारण कर लिया है और जिसके कारण वाणिज्य-व्यवसा हो गया था।

ये सुसङ्गठित और सर्वव्यापी हड़तालें प्रमाणित कर रही कि युद्धोत्तर संसार में जहाँ आत्मरक्षा और सङ्गठन की भा अन्य वर्गों में व्यापक रूप से दिखाई पड़ रही हैं, वहाँ मजदू पर भी इनका पूरा प्रभाव पड़ा है। द्वितीय महायुद्ध ने श्र वर्ग को चेतन कर दिया है। वह अपने आसपास के वात को सूँघकर पहचानने लगा है और अपने भविष्य के अत्यधिक सावधान हो गया है। यह बात एक ओर दे समष्टिगत जागर्ति की दृष्टि से वाञ्छनीय है, दूसरी ओर पूँ उत्पादन-प्रणाली के लिए पूर्णतया घातक है। अ समय दूर नहीं है जब इस प्रकार के उत्पादकों को अपन बदलने के लिए विवश होना पड़ेगा और अपने शोषण-य पुर्जों को ढीला करना पड़ेगा।

संसार के अन्य देशों के समान भारत के सामने भी पुनर्निर्माण का प्रश्न उपस्थित है। भारत का पूर्ण करण अनिवार्य है। यह महत्कार्य श्रमिकवर्ग के पूर्ण के बिना सम्पन्न नहीं हो सकता, चाहे इसके लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

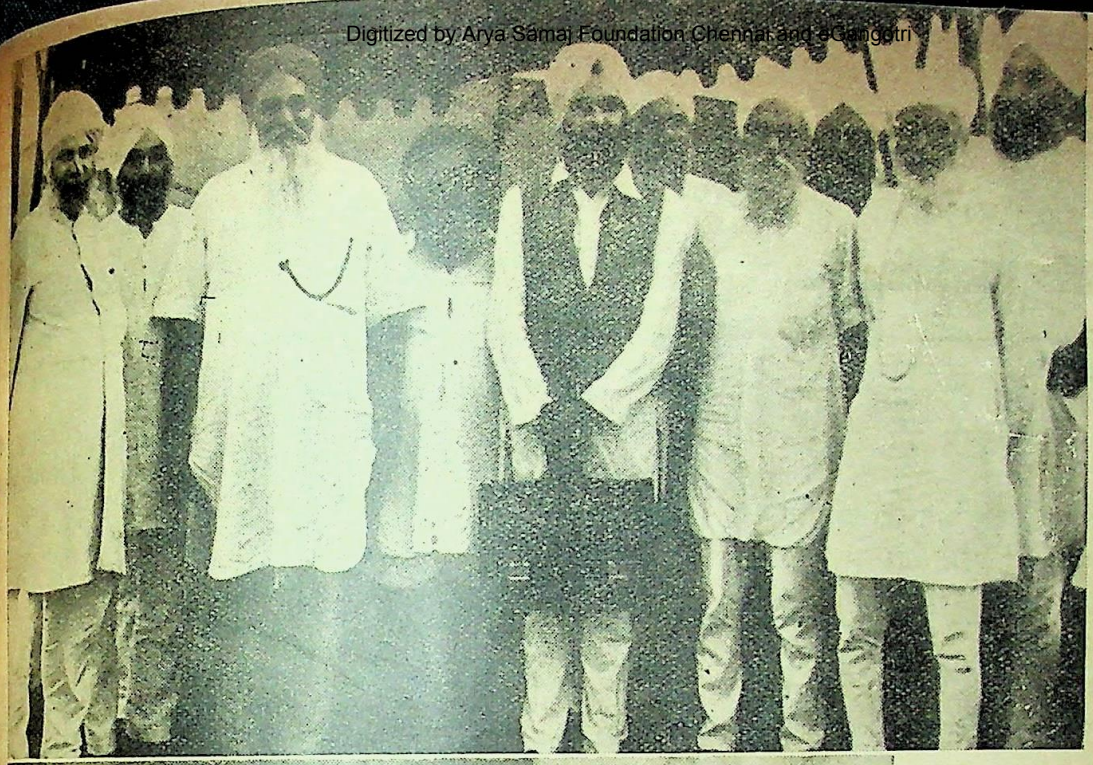

(ऊपर)
कर्नल निरंजनसिंह गिल कुछ प्रमुख सिख-नेताओं के साथ—

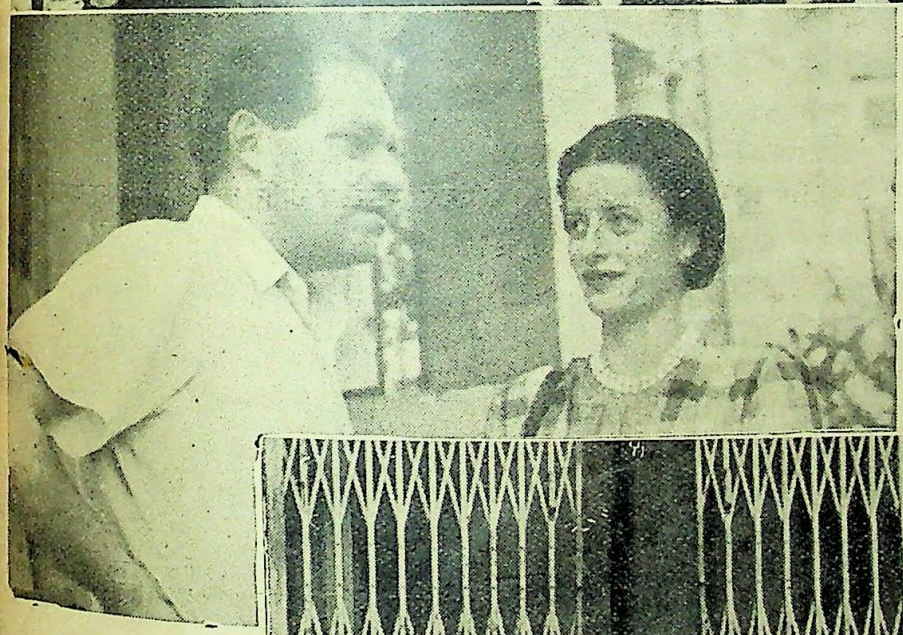

(बाईं ओर)
भारत में प्रसिद्ध अमेरिकन पत्रकार लुईफिशर, एक अमेरिकन लेखिका के साथ—

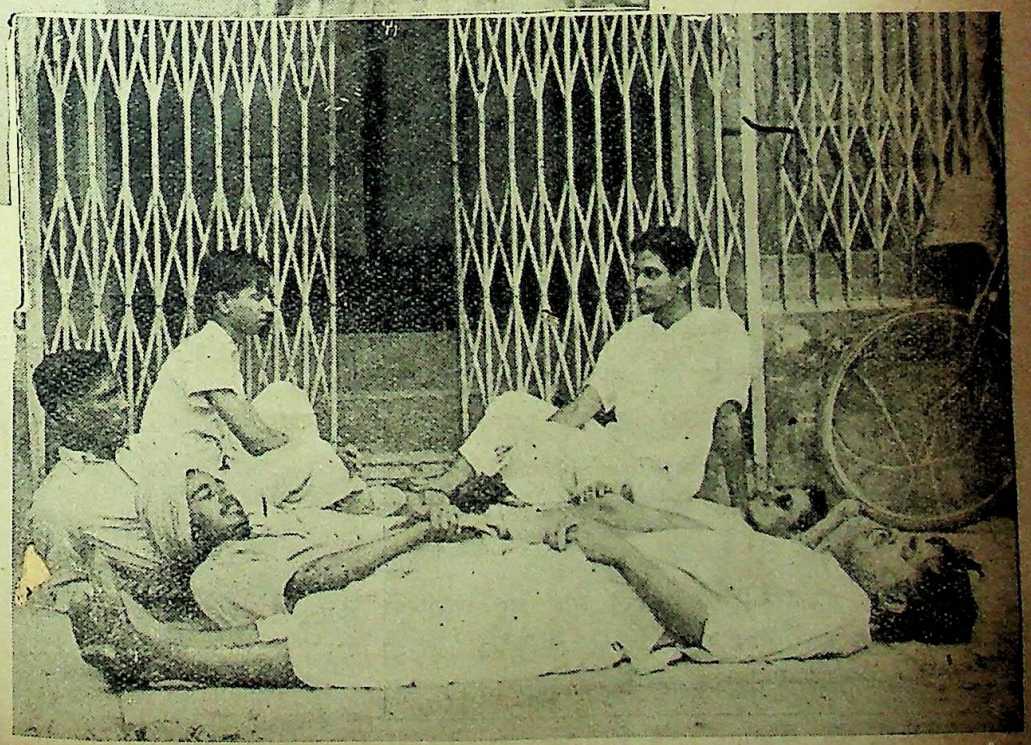

लखनऊ के मिलिटरी एकाउण्ट क्लर्क एक अधिकारी के द्वार पर सत्याग्रह कर रहे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

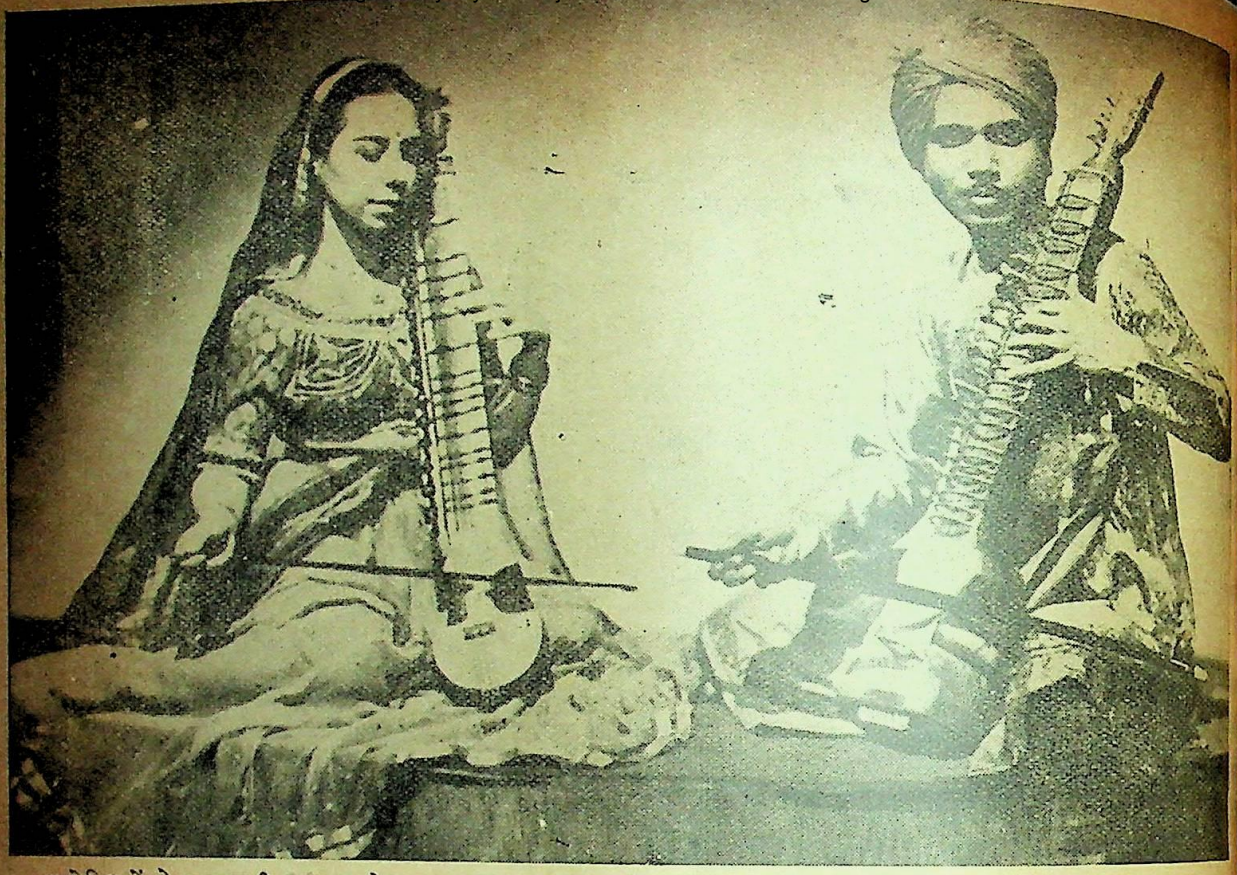

अमेरिकनों के एक राष्ट्रीय उत्सव के अवसर पर गायक भारतीय वस्त्र पहनकर भारतीय संगीत-द्वारा उपस्थित जनता का मनोरंजन कर रहे हैं।

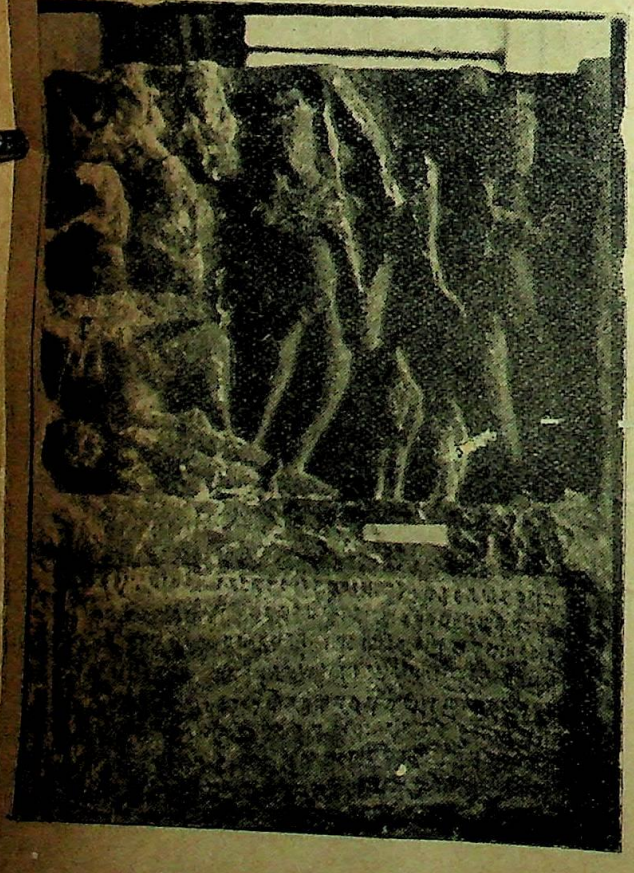

भरतपुर राज्य में खुदाई-द्वारा अभी हाल में प्राप्त एक शिला-लेख।

[भरतपुर राज्य म्यूजियम के क्यूरेटर श्री रावत चतुर्भुज-दास चतुर्वेदी-द्वारा कृपापूर्वक प्रेषित]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अगस्त]

किसने ही रुपए की मशीनें क्यों न मँगा ली जाएँ। पर दिन श्रमिकवर्ग से—जिसके सामने उत्तरोत्तर बढ़ती हुई महँगी, छँटनी, कटौती और बेकारी की समस्याएँ मुँह बाए खड़ी हों—पूर्ण सहयोग की आशा नहीं की जा सकती। इस वस्तु-स्थिति में वह निश्चित है कि सरकार को और पूँजीपतियों को मजदूरों से समझौता करना ही पड़ेगा।

मजदूरों की माँगें संक्षेप में इस प्रकार हैं—

(१) मजदूरी की मौलिक दर में वृद्धि की जाए। आजकल मजदूरी का जो निम्नतम परिमाण है वह एक मजदूर के पेट भरने को अपर्याप्त है।

(२) महँगाई के भत्ते में अधिक वृद्धि की जाए और त्योहार पर भी अधिक दिया जाए।

(३) मजदूरों के रहने के लिए फैक्टरी के भीतर और बाहर भी साफ और हवादार घरों का प्रबन्ध किया जाए। फैक्टरी में बीच के अवकाश के समय में भोजन और विश्राम करने के लिए साफ स्थानों का प्रबन्ध किया जाए और गर्मियों में पीने के लिए साफ और शीतल जल की व्यवस्था की जाए।

(४) उनके बच्चों के लिए मुफ्त शिक्षा आदि का समुचित प्रबन्ध किया जाए, जिससे वे निम्न कोटि के जीव न रहकर देश के योग्य नागरिक बन सकें।

ये माँगें सर्वथा उचित हैं और आज नहीं तो कल राष्ट्र को इन्हें पूर्ति करनी ही पड़ेगी; अतः क्यों न आज ही उनकी ओर पूरा ध्यान दिया जाए जिससे देश के इस महत्त्वपूर्ण वर्ग में बेचैनी की भावना अधिक प्रसार न कर सके। अमेरिका और इंग्लैंड में इन प्रश्नों की ओर आवश्यक ध्यान दिया जा रहा है। वहाँ मजदूरों के लिए साफ-सुथरे और स्वास्थ्यप्रद मकानों की व्यवस्था की जा रही है। प्रसिद्ध अर्थशास्त्री लार्ड बेवरिज ने मजदूर के बीमा की योजना भी बनाई है जिसके अनुसार पैदा होने से मरने तक की पूरी आयु का बीमा किया जाएगा। मजदूरों के लिए वहाँ औषधालय और उनके बच्चों के लिए शिक्षणालय भी स्थापित किए जा रहे हैं। हमारी कांग्रेस सरकारें भी इस प्रकार के प्रयत्न कर सकती हैं, जिससे कि जनता को उनसे आशा है। लोकप्रिय सरकारों का आज यह सर्वप्रथम कर्तव्य है—यदि वे देश का औद्योगीकरण अल्पकाल में ही कर डालने को वस्तुतः उत्सुक हैं—कि वे मजदूरों और मालिकों के बीच सम्मानपूर्ण समझौता कराने की दिशा में प्रभावशाली कदम शीघ्रातिशीघ्र उठाएँ जिससे यह व्यापक बेचैनी दूर हो और उद्योग-धन्धे उचित ढङ्ग से विकास कर सकें।

हिन्दू राजाओं को हटाने के लिए दुरभिसन्धि

काश्मीर की घटनाओं पर युक्तप्रान्तीय कांग्रेस कमेटी के सदस्य सर्वश्री शिवनाथ काटजू, हर्षदेव मालवीय और कमलाप्रसाद मोहिले ने संयुक्त वक्तव्य प्रकाशित किया है जो निम्नलिखित है—हम लोगों ने चिन्तापूर्वक काश्मीर की घटनाओं पर दृष्टि रक्खी है। हमें आशङ्का है कि स्थिति ऐसी बनाई जा रही है जिससे साम्प्रदायिक कटुता को प्रश्रय मिलेगा। पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने भी कहा है कि अमृतसर की सन्धि तोड़ने और वर्तमान शासक के काश्मीर छोड़ने की माँग करके शेख अब्दुल्ला उस रियासती प्रजा-सम्मेलन के उद्देश्यों का उल्लङ्घन कर गए हैं जिसके वे स्वयं उपाध्यक्ष हैं। फिर भी नेहरू जी का कहना है कि रियासत के अधिकारी अत्यन्त उत्तेजनाकारी नीति बरत रहे हैं। यदि यह आरोप मान भी लिया जाए तो भी प्रजा-सम्मेलन की स्वीकृति बिना ही शेख अब्दुल्ला द्वारा उक्त माँग की जाने का औचित्य समझना कठिन है। हम यह बता देना अपना कर्तव्य समझते हैं कि काश्मीर-नरेश और उनका वंश मुसलमान सम्प्रदायवादियों की आँख के काँटे हैं, कारण वे हिन्दू हैं। आज से लगभग १५ वर्ष पूर्व एक ऐसे ही अवसर पर ऐसे ही मुसलमान राजनीतिज्ञों के उपद्रव से तत्कालीन काश्मीर-नरेश गद्दी छोड़ने ही वाले थे। परन्तु तेजबहादुर सप्रू के प्रयत्न से उनकी रक्षा हो गई। उस आन्दोलन में जो, सर्वथा साम्प्रदायिक था, शेख अब्दुल्ला ने प्रमुख रूप से योग दिया था।

इसके पश्चात् शेख अब्दुल्ला ने राष्ट्रीयतावादी आन्दोलन का पल्ला पकड़ा। यद्यपि रियासत के अधिकारियों की यह शिकायत है कि अभी हाल ही में शेख साहब रियासती लीग से भी वार्ता कर रहे थे। हम यह अनुभव करते हैं कि शेखजी ने जो कुछ किया है वह उन मुसलमान सम्प्रदायवादियों के हाथ की कठपुतली बनकर जिनका उद्देश्य वर्तमान शासक-वंश को उलट देना है। इस सिलसिले में महाराज और युवराज पर ही नहीं बल्कि महारानी तक पर जो गन्दे आक्षेप किए गए हैं वे क्षमा के योग्य नहीं हैं। एक प्रतिनिधि शासन-विषयक रियासती प्रजा की माँग से हमारा वैर नहीं है, परन्तु जब ऐसी माँगों का चेहरा लगाकर नग्न साम्प्रदायिकता भटकने लगती है तो कहना ही पड़ता है कि यह बन्द होना चाहिए।

हमारे विचार से हिन्दू जनमत की यह माँग न्यायोचित होगी कि काश्मीर-नरेश और उनके परिवार की बात केवल इसलिए न की जाय क्योंकि वे हिन्दू हैं। काश्मीर के पीड़ितों से हमारी सहानुभूति है तथापि परिस्थिति देखते हुए उपद्रव की जिम्मेदारी उन लोगों पर भी है जो गलत नीति से प्रेरित होकर आन्दोलन करते हैं। प्रत्येक रियासत में जनप्रतिनिधि शासन की माँग कर पण्डित जवाहरलाल ने अच्छा ही किया है। हम समझते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं कि हैदराबाद और भोपाल जैसे अँधेरे कोने भी उक्त माँग के अन्तर्गत हैं। इन प्रमुख भारतीय रियासतों में आरम्भिक नागरिक अधिकारों का भी पता नहीं है। अभी हाल ही में हैदराबाद में अखिल हिन्दी साहित्य-सम्मेलन का अधिवेशन नहीं होने पाया और भोपाल में गोली चली थी, परन्तु रियासती प्रजा-सम्मेलन ने इस पर ध्यान नहीं दिया।

—•—

एक मर्मस्पर्शी पत्र

ट्रावन्कोर-निवासी मुहम्मद अब्दुल कादिर नाम के एक नवयुवक आजीविका की खोज में युद्ध के प्रारम्भ होने के कुछ पहले मलाया चले गए थे। मलाया के पतन के बाद वे 'आजाद हिन्द फौज' में भरती हो गए और उसी की ओर से एक सबमेरीन-द्वारा गुप्त प्रचार-कार्य के लिए भारत भेजे गए। यहाँ वे गिरफ्तार हो गए और उन्हें फाँसी पर लटका दिया गया। अपने जीवन की अन्तिम रात्रि में उन्होंने अपने वृद्ध पिता को एक अन्तिम पत्र लिखा था जो अत्यन्त मर्मस्पर्शी है। इस पत्र के प्रत्येक शब्द में एक स्वाधीनता-प्रेमी भारतीय युवक के हृदय का प्रतिबिम्ब दिखाई देता है, साथ ही इससे यह भी पता लगता है कि मृत्यु से कुछ ही घड़ी पूर्व एक सच्चे देश-भक्त के विचार कैसे होते हैं। यद्यपि भारतीय स्वाधीनता-आन्दोलन के इतिहास के अनेक पृष्ठ हँसते हुए मृत्यु का आलिङ्गन करनेवाले ऐसे-ऐसे महाप्राण वीरों के पत्रों से भरे पड़े हैं, फिर भी काकोरी षड्यन्त्र के अभियुक्तों के अन्तिम पत्रों के बाद यही एक पत्र हमारे देखने में ऐसा आया है जो हृदय में एक चिरस्थायी टीस उत्पन्न कर देता है। पत्र का शब्दशः हिन्दी-अनुवाद इस प्रकार है—

कारागार,
मद्रास, ६ सितम्बर, १९४३

प्यारे अब्बा,

मैं तुम्हें यह पत्र दो महीने पहले लिख चुका होता, पर कुछ परिस्थितियाँ बाधक रहीं। अब मैं अपने जीवन में अन्तिम बार कागज-कलम उठा रहा हूँ। अपने जीवनकाल में प्रायः हमें बाकयों से गुजरना पड़ता है। उनमें से कुछ अनेक प्रकार से दुःखपूर्ण और कष्टदायक होते हैं। इन्हें प्रलोभन के रूप में लेना चाहिए या उस परीक्षा के रूप में जो अल्लाह की जानिब से हमारे सामने रक्खी जाती है। गरीबी, विपदा, निराशा और प्राण-सङ्कट के भयानक अनुभव हमें होते हैं। ये अवसर प्रसन्नता प्रकट करने के लिए नहीं होते। उन्हें अल्लाह की मर्जी समझकर हमें अङ्गीकार करना होता है और अल्लाह में श्रद्धा-भाव रखते हुए उसकी इच्छा के आगे नतमस्तक होना पड़ता है।

पाक कुरान हमें सिखाता है कि कष्टसहिष्णुता अनेक धर्माचरणों में से एक है। प्रायः जीवन की क्षणिक परीक्षाओं के काल में अल्लाह मनुष्य में वीरतापूर्वक कष्ट सहने की क्षमता उत्पन्न करता है। वह ऐसी कोई चीज सामने आने ही नहीं देता जिसके सामने हम दृढ़ न रह सकें।

अब्बाजान, अल्लाह ने वरदान रूप मुझे शान्त और सुस्थिर चित्त प्रदान किया है। इस आपकी और मेरी असहायावस्था में न तो हमें असन्तुष्ट होना चाहिए और न अव्यवस्थित हो। यह तो उसकी मर्जी से एक जीवन को होम देने का क्षण है। मेरे लिए जीवन के प्रसङ्ग से और तुम्हारे लिए पुत्र-हानि के व्याज स्वरूप ईश्वर ने वर्तमान परीक्षा प्रस्तुत की है। मैं तैयार हूँ और प्रत्येक क्षण मेरी मानसिक शान्ति और शक्ति में वृद्धि दे रहा है।

मैं जानता हूँ, यह पत्र तुम्हारे पहले से ही सन्तप्त हृदय पर भीषण आघात भर करेगा। मैं तुम्हें कड़ाही से भट्ठी में झोंक रहा हूँ। मेरा जन्म और जीवन दोनों ही तुम्हारे लिए कष्टकर रहे। ठीक जन्म के मुहूर्त्त से लेकर आज तक विपदाएँ ही रहीं। तुमने आशा की थी मुझे अपने सामर्थ्य से अधिक शिक्षित करने की, मेरी रुचि के अनुसार शारीरिक उन्नति पटु करने की, अपने साधनों से भी अधिक समस्त सुख-सामग्री जुटाने की। मेरी अपनी आवश्यकताओं के निर्वाह और तुम्हारे किशोरावस्था के आनन्द तथा उज्ज्वल एवं समृद्ध भविष्य के लिए तुम्हारी चिन्ताओं और विपदाओं के ध्यान मात्र से मेरा हृदय विदीर्ण होने लगता है। मेरे लिए प्रवाहित तुम्हारे अश्रुओं के अक्षय्य स्रोत से मेरा अन्तरतम विगलित हो उठा। मलाया जाते समय तुम्हें आशा थी कि मैं अपनी तमाम दुष्प्रवृत्तियों को त्याग दूँगा। तुम्हें अन्त में मेरे द्वारा सान्त्वना एवं सहायता की आशा थी। मैं जानता हूँ कि तुम्हारी आशाएँ प्रशस्त थीं। किन्तु अब मैं कर ही क्या सकता हूँ? अल्लाह से पूछो! उससे प्रार्थना करो! ऐसी धर्म-पुस्तक कुरान की व्यवस्था है।

जो कुछ भी सफलता मैं इस स्वरूप जीवन में प्राप्त कर सका हूँ वह अल्लाह की दया और तुम्हारी अथक प्रार्थनाओं के परिणाम स्वरूप ही। मेरे जीवन की मूलभूत इच्छा तुम्हें हताश न करने तथा अपने द्वारा किसी भी प्रकार का कष्ट न पहुँचाने की रही। इस कामना की पूर्त्ति के लिए मैंने दैवी सहायता के लिए प्रार्थना की थी। आशाएँ और महत्त्वाकांक्षाएँ ही इस जीवन की प्रगति की प्रेरक हैं। किन्तु प्रायः वे विपन्न ही रहती हैं। कितना अच्छा होता यदि हमारी निखिल महत्त्वाकांक्षाएँ पूर्ण हो पातीं! जीवन-पथ से अज्ञात वस्तुओं के अनुसन्धान अग्रसर होते हैं। अचिन्तनीय वार्त्ताएँ घटित हो जाती हैं। इतने पर भी हम जीवन का अर्थ समझने के लिए नहीं रुकते। यह अपने आपमें रहस्य है। जितना अधिक हम विचार करते हैं, उतना ही अधिक उलझते जाते हैं। मनुष्य जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किन्तु क्या कोई यथार्थता है उसकी उन महत्त्वाकांक्षाओं की, परिणाम में ! मैं आश्चर्य करता हूँ। जीवन अल्लाह का एक ऐसा रहस्य है जिसका समाधान मानव-मस्तिष्क से परे है। जीवन के व्यवहार-क्षेत्र की प्रगति में हम कुछ भावों और आदर्शों से अत्यधिक ममत्वपूर्वक संलग्न रहते हैं। किन्तु सत्य और न्याय के विरुद्ध हम उन आदर्शों के निर्वाह एवं प्राप्ति के उद्योगों के लिए अपराधी ठहरते हैं।

यद्यपि मनुष्य की मृत्यु भी प्रत्येक पशु के समान ही निर्दिष्ट है तथापि जीवन की सलक्ष्यता और सार्थकता के कारण वह पशु-पद से ऊपर उठ जाता है। वह इसे ससंज्ञ और साभिप्राय बनाने का प्रयत्न करता है। समय-समय पर उसे आत्म-विस्मृति हो जाती है और अपने आदर्शों का दृढ़तापूर्वक अनुवर्त्तन करते हुए मृत्यु तक को ललकारता है। इस प्रकार वह सब कुछ करने तथा प्रत्येक परिणाम का निष्कपट एवं स्वार्थ भाव से सामना करने के लिए सन्नद्ध होता है। वह इस नश्वर शरीर की चिन्ता क्यों करे। कोई भी व्यवहारशील मनुष्य गम्भीरतापूर्वक इसका विचार नहीं करता। वह साक्षात् कर्म-परायण होता है।

अब्बा, मैं बहुत कुछ लिख गया हूँ, किन्तु नहीं जानता कि क्या ? मातृभूमि से बाहर भाग्य-शोध और भविष्य-निर्माण के प्रयत्न में मैंने पाँच वर्ष पूर्व अपने यौवन के प्रथम चरण में तुम्हारा प्रिय संरक्षण छोड़ा था। मेरे प्रस्थान करते समय तुमने बहुत अधिक की आशा की होगी। किन्तु तुम उसका कोई अंश न पा सके। परन्तु मुझे गर्व है कि मैं इससे लाभान्वित हुआ। कैसे ? जीवन के स्वल्पांश को समझकर। तुमनिर्धन और अशक्त थे; तुमने दरिद्रता और विपदा में मेरा लालन किया। तुमने मुझे दूर देश में विभिन्न परिस्थितियों एवं प्रतिकूल अवसरों में रहना सीखने के लिए भेजा। किन्तु मेरे मार्ग पर जा पड़ा जिसकी तुमने कल्पना भी नहीं की होगी। तुम्हारे प्रति अपना कर्त्तव्य कदापि नहीं भूला; मैंने सोचा था कि मैं अपने कर्त्तव्य से निवृत्त हो सकता हूँ। केवल अब मैं अनुभव करता हूँ कि यह मिथ्या लेखा था।

प्यारे वालिद, मैं कभी भी स्वार्थी और आपके प्रति अपने कर्त्तव्य-सम्बन्ध में विस्मरणशील न रहा। मैं इसे स्वयं जानता हूँ, भले ही अन्य न जानें। किन्तु परमात्मा मेरी निष्कपटता से अभिज्ञ है। वह मेरा और तुम्हारा कल्याण करेगा। तुमने मुझसे जो कामना की होगी उसका दस गुना वह तुम्हें देगा। हमारा सौभाग्य इसी पीढ़ी में सौभाग्य हो जाएगा।

पहली अप्रैल को मेरा फैसला सुनाया गया था। भारतीय दण्ड-विधान की १२१ ए धारा के अनुसार मुझे पाँच वर्ष के कठोर स-परिश्रम कारावास का दण्ड मिला और तृतीय व्यवस्था (Ordinance) के अनुसार मृत्यु-दण्ड मिला। हाई कोर्ट के एक योरपीय न्यायाधीश ने नियमानुसार मेरे अभियोग का पुनरालोकन किया। उसने मातहत अदालत के निर्णय को बहाल रक्खा और कहा, क्योंकि हम भारत पर शत्रु के आक्रमण की प्रतीक्षा करते रहे तथा नाजुक मौके पर भारत को सङ्कट में डाला अतएव हमारा अपराध अक्षम्य है। हमें मरना ही चाहिए। २६ अप्रैल को यह फैसला सुनाया गया था। फिर एक प्रार्थना-पत्र तैयार करके वायसराय की सेवा में भेजा गया।

प्यारे अब्बा, मैं जानता हूँ कि यह अरुचिकर संवाद आपको असीम वेदना पहुँचाएगा। मैं अल्लाह के नाम पर तुमसे यही प्रार्थना करूँगा कि तुम अपनी भावनाओं का निग्रह करना, अपने आपको शान्त रखना और मेरे लिए दुःखित न होना। इस असहाय क्षण में हमारा एकमात्र सहायक अल्लाह है।

प्यारे वालिद, मैं तुम सबसे सदा के लिए बिदा होता हूँ। कल प्रातःकाल यह जीवन-प्रदीप बुझ जाएगा, यह हाथ और न हिल पाएगा, यह हृदय सदा के लिए भावशून्य एवं गति-हीन हो उठेगा। इस क्षण मैं स्मृतिपट पर चल-चित्र के समान अपने भाई-बहनों और तुम सबकी स्मृति का आह्वान करता हूँ। इस पवित्र समागम-काल में मेरा हृदय तुम्हारे और अपने भाई-बहनों के हृदय के साथ धड़कता है। (मेरी कलम और अधिक लिखने में असमर्थ है, अतएव पेंसिल की सहायता लेता हूँ) मुझे विदित है कि मैं अपने भाइयों के प्रति अपने कर्त्तव्य का पालन नहीं कर सका हूँ। मैं उनमें से किसी की सहायता न कर सका। मैंने उस घड़ी सोचा था जब कि उनकी सहायता का क्षण मेरे हाथ में था। किन्तु वस्तुतः ऐसा न था। निस्सन्देह तुम्हें इस समय उन सबकी चिन्ता नहीं होगी।

प्यारे भाई अब्दुर्रहीम, तुम्हारा अग्रज, एकमात्र अग्रज, इस संसार को छोड़ रहा है। अपने जीवन के इस अल्प समय में मैंने अनेक प्रसिद्ध और सच्चे मित्रों को पाया है। वे तुम्हें सहोदरवत् दुलारेंगे और एक दिन उनका स्नेह मृत्यु-जन्य मेरे स्नेह के अभाव को दूर कर देगा। मैं तुम्हारे हाथों में अपनी प्रिय माँ और एकमात्र बहन को सौंपे जा रहा हूँ। तुम्हारे प्रेम-पूर्ण सद्व्यवहार मेरे अभाव को उन्हें भुला दें। ऐसा करो कि वे तुम्हारे स्नेह-स्रोत में मेरे मृत्यु-क्लेश को निमज्जित कर दें। यदि मेरी सेवाओं का कोई पुरस्कार तुम्हें मिले तो उसके द्वारा उन्हीं दोनों को लाभान्वित होने देना। मैं नहीं कह सकता कि मेरा प्राप्य पुरस्कार तुम्हें कब और किसके द्वारा मिलेगा। पर वह तुम्हें मिलेगा अवश्य। तुम्हें पुरस्कारदाता के अनुसन्धान की भी आवश्यकता नहीं होगी। वह तुम्हें प्राप्त हो ही जाएगा। अपने घनिष्ठ सम्बन्धियों के प्रति अपनी कोमल एवं अन्तिम आदर-भावनाओं के पहुँचाने का भार मैं तुम पर डाल रहा हूँ। उन सबने मुझे हृदय से प्यार किया है। उनसे मुझे भूल जाने के लिए कहना। मुझे प्यार करनेवाले सभी मित्रों और सम्बन्धियों को मेरा प्यार और अन्तिम आदर निवेदन। टी० एम० खादर फायलवान, परवर, अब्दुलमजीद, अलमदाद इस समय मलाया में हैं। मेरे वे अन्तरङ्ग सहयोगी रहे हैं। जिस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यश की मैंने लालसा की है वे उसके भावी सँभालनेवाले हो सकते हैं। मैंने अपने उन शुभचिन्तकों और मित्रों तथा सम्बन्धियों का नामोल्लेख नहीं किया है जो विविध दशाओं में मेरे सहायक रहे हैं।

घड़ी अर्द्धरात्रि के बारह बजाया चाहती है। मेरे मृत्यु-दिवस के प्रारम्भिक क्षण पूर्ण हो रहे हैं। टिटिहरी ने पङ्ख खोल दिए हैं। जुमे को, रमजान के सातवें दिन, प्रातःकाल पाँच और छः बजे के बीच, मैं मर चुकूँगा।

परम प्रिय पिता, माता, भाई, बहन, ज्ञात और अज्ञात अनेक सम्बन्धियो और मित्रो, मैं तुम सबसे विदा हो रहा हूँ। तुम्हारी सान्त्वना के लिए मेरे पास कुछ नहीं। हम स्वर्ग में मिलेंगे। मेरे लिए शोक मत करना। मेरे विनम्र जीवन-नाटक का आखिरी पर्दा कुछ ही क्षणों में गिरा चाहता है। अपनी आँखों से मेरी मृत्यु को देखकर किसी दिन तुम जानोगे कि मैंने कितनी शान्ति और वीरता से मृत्यु का आलिङ्गन किया। तब तुम्हें गर्व होगा; तब तुम्हें सच्ची प्रसन्नता होगी।

घड़ी बजा रही है।
मृत्यु प्रतीक्षा कर रही है।

सलाम वाले कुम,
तुम्हारा प्यारा बेटा,
(हस्ताक्षर) मुहम्मद अब्दुल कादिर।

——

दुर्भिक्ष के दुश्चिह्न

जिस दुर्भिक्ष की आशङ्का आज से कई महीने पहले ही की जाने लगी थी, उसके दुश्चिह्न भारत के अनेक प्रान्तों में दृष्टिगत होने लगे हैं। इस सम्बन्ध में साप्ताहिक 'संसार' लिखता है—

मसूरी में प्रार्थना के समय भाषण करते हुए अभी उस दिन महात्माजी ने कहा था कि देश में दुर्भिक्ष के दुश्चिह्न प्रकट होने लगे हैं। इसके लिए यदि प्रमाण की आवश्यकता हो तो बङ्गाल के कितने ही जिलों से मिलनेवाले समाचारों पर दृष्टिपात कर देखिए। इस स्थिति के कारणों की चर्चा करते हुए महात्माजी ने कहा था कि अन्नाभाव से ही लोग भूखा नहीं मर रहे हैं वरन् इसकी तह में व्यापक घूसखोरी, अत्यधिक लाभ उठाने तथा अनावश्यक संग्रह करने की प्रवृत्ति भी है, क्षेत्र-विशेष में राशि-राशि अन्न के रहते हुए भी लोगों के मरने की खबरें आई हैं। हमारी दृष्टि में स्थानीय अन्न-के कई कारणों में एक कारण अधिकारियों की अयोग्य लापरवाही और शिथिलता भी है। खाद्य-सङ्कट संयुक्तप्रान्त भी है किन्तु स्थिति इतनी खराब नहीं कि लोगों को दो छटाँक गेहूँ अथवा दो छटाँक चावल पाने में भी दिक्कत हो। क्या कारण है कि प्रान्त के ४६ जिलों में से अकेला बनारस ऐसा अभागा निकला जहाँ लगभग एक महीने तक लोगों को राशन की दूकान पर एक दाना भी गेहूँ का न मिल सका। यहाँ के राशन-व्यवस्था के अधिकारी यदि चाहते तो महीने महीने पहले ही गेहूँ मँगाने का प्रबन्ध कर सकते थे। विपत्ति होते देखकर वे तार पर तार भेज सकते थे, टेलीफोन कर सकते थे और खुद जाकर प्रान्त के उच्चाधिकारियों का आसन हिला सकते थे। पर उन्होंने अपना दोष दूसरों के मत्थे मढ़ने के सिवा और क्या किया? जो स्थिति गेहूँ के सम्बन्ध में उपस्थित हो चुकी है, काशी में प्रायः वही स्थिति अब चावल के सम्बन्ध में आना चाहती है। बहुत-सी दूकानों पर नम्बर दो का चावल भी (रुपये का डेढ़ सेरवाला) या तो दुष्प्राप्य है या घटिया का रह गया है। नम्बर ३ का चावल (२ सेर ६ छटाँक वाला) तो शायद दूकानों पर रह ही नहीं गया है और नम्बर ४ चावल को 'चावल' कहना ही हिमाकत है। एक भी आदमी को भूखा न मरने देनेवाले माननीय पन्तजी से हम बड़ी विनम्रता के साथ अनुरोध करना चाहते हैं कि वे जनता के सम्बन्ध रखनेवाली राशन-व्यवस्था के साथ खेलवाड़ करनेवाले स्थानीय अधिकारियों को भी यदा-कदा खबर ले लिया करें अन्यथा ये अहम्मन्य अफसर उन्हें प्रतिज्ञा भ्रष्ट और बदनाम किए बिना न छोड़ेंगे। अन्नस्थिति सन्तोषजनक हो जाने पर भी स्थान-विशेष के अधिकारियों की कृपा से उसमें इतना गोलमाल हो सकता है जिससे जनता त्राहि त्राहि कर उठती है। काशी की स्थिति इसी की ओर सङ्केत करती है। कांग्रेस सरकार इससे अविलम्ब शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए।

——

Printed & Published by A. Bose, at the Indian Press, Ltd., Benares-Branch, Benares.
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विवाहित स्त्री-पुरुषों के जानने योग्य

ऑपरेशन तथा इन्जेक्शन जरूरी नहीं है

अप्राकृतिक रहन-सहन तथा मिथ्या आहार-विहार के कारण हमारे देश की नारियाँ अधिकांश ऐसी मिलेंगी जो एक न एक रोग से ग्रस्त हो निराश जीवन व्यतीत कर रही हैं। अधिकतर गर्भाशय का मोटा हो जाना तथा उस पर चर्बी आ जाना एक आम हो गया है जो गर्भ धारण करने में बाधक होता है तथा अन्य भयंकर रोगों की जिससे उत्पत्ति भी होती है। ऐसी अवस्था में प्रायः ऑपरेशन कराने से भी बहुत कम रोगियों को सफलता प्राप्त होती है।

यदि आपको ऑपरेशन कराने में असुविधा है या ऑपरेशन की अपेक्षा औषधियों द्वारा कष्ट दूर करने के अधिक पक्ष में हैं तो शास्त्रोक्त अंगूरों का ताजा रस, अशोक, अर्जुन, दशमूल, त्रिफला तथा अन्य श्रेष्ठ औषधियों से प्रस्तुत—मूँगा जिसका प्रधान अंग ...१५ वर्षों से प्रचलित **गौड़ की नारी-सुधा कॉर्डियल** सेवन करें।

नारी-सुधा एक माहवारी से दूसरी माहवारी तक सेवन करने से बिना ऑपरेशन गर्भाशय की चर्बी, उसका मुटापा तथा ...बाँझपन नष्ट हो जाता है और सहज ही गर्भ की स्थिति हो जाती है। जहाँ इन्जेक्शन लिकोरिया (सफेदे का गिरना) रोकने में ...होते हैं वहाँ कुछ ही खुराकों में यह सदैव के लिए ठीक हो जाता है। कमजोरी से गर्भाशय अपनी जगह से हट जाता है ...होते रहते हैं—एक बोतल के सेवन से युक्त स्थान ...हो जाता है, फिर गर्भपात कभी नहीं होते। मासिक धर्म ...में दो बार या दो महीने में एक बार के बजाय ठीक समय पर ...हँसते-खेलते होने लगते हैं, जिससे हिस्टेरिया (बेहोशी) के ...होने बन्द हो जाते हैं। खूब भूख लगती है, खून एक बड़ी ...में बनने लगता है। दिल की धड़कन, कमर-टाँगों का ठहरा ...दर्द केवल चौथे दिन दूर हो जाते हैं। जापे का संकट सहन ...तथा बाद की कमजोरी ...दूर करने की यह विशेष ...है। **नारी-सुधा** की ...खुराकों की एक बोतल का ...—पैकिंग, वी० पी० व्यय से पृथक्—तीन रु० पाँच आने है। ...आवश्यकता होने पर इस मासिक पत्रिका का हवाला देकर

कुमार कुमार एन्ड को०

पोस्ट बाक्स नं० ११९ देहली

...२ शहरों में हम ऐजेन्सी स्थापन कर रहे ...नियमावली के लिए पत्र-व्यवहार करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सौंदर्य की [illegible] पीढ़ियाँ

यद्यपि इसकी उम्र में बीस साल का फर्क है, फिर भी माँ के सौन्दर्य में उतनी ही [illegible] और उसकी त्वचा उतनी ही [illegible] और [illegible] है जितनी कि उसकी [illegible] वर्षीय बेटी की। इसका भेद यह है कि माँ ने, अपनी माँ की [illegible] पर, बचपन से ही पियर्स साबुन और साफ पानी से अपनी कोमल त्वचा [illegible] रक्षा की। आज उसकी सुन्दर बेटी उसी तरीके से अपनी त्वचा की [illegible] करती है। इसलिये [illegible] उसकी त्वचा की [illegible] तरह सुन्दर और ताजा रहेगी जिस तरह आज उसकी माँ की त्वचा है।

बाईस साल से हिन्दुस्तान की सुन्दरी ने पियर्स साबुन को ही इस्तेमाल किया है। [illegible] और रेशमी [illegible] के कारण यह साबुन साधारण साबुनों से कहीं [illegible] है।

पिअर्स साबुन

सौन्दर्य का सेवक

[illegible]

A. & F. PEARS, ISLEWORTH, ENGLAND

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महात्माजी का चमत्कार

प्रेमबटी ने अपनी खूबी से सारी दुनिया में तहलका मचा दिया

कांग्रेस की राय

(प्रेमबटी वास्तव में एक अद्वितीय औषधि है, पहले हमें इस औषधि पर इतना विश्वास न था, किन्तु जब हमने इसका स्वयं परीक्षण किया तब हम इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि यह औषधि विज्ञापन में दिये गये तमाम रोगों की केवल एकमात्र अचूक औषधि है। हम आशा करते हैं कि भविष्य में यह कम्पनी इससे भी उत्तम औषधियों का निर्माण कर जनता को लाभ पहुँचायेगी।—कांग्रेस देहली)

भारत के योगियों ने वनों और पर्वतों की कन्दराओं में रहकर वह चमत्कार दिखलाये हैं जिससे बड़े-बड़े वैज्ञानिक और चिकित्सक हैरत में आ गये हैं। आधुनिक चिकित्सकों को जब कोई रोग की औषधि से सफलता नहीं मिलती तब वह लाइलाज घोषित कर देते हैं। परन्तु महात्मा लोग जड़ी-बूटियों की सहायता से मुर्दे को भी जिला देने का दावा करते हैं। भाइयो, इसे ध्यान से पढ़ो तथा अपने इष्ट-मित्रों को सुनाओ। यह लेख जो लिखा गया है, कोई गप्प नहीं है बल्कि मेरे जीवन की चन्द घटनायें हैं जो आपके सम्मुख रखता हूँ। मेरा जन्म एक धनी परिवार में हुआ। अपने पिता का लाड़ला पुत्र होने के कारण मैं धन और व्यसन में घिरा रहता था, लेकिन फिर भी मैं सुखी नहीं था। कुसङ्गत में पड़कर मुझे जरियान और प्रमेह रोग हो गया। पहले तो एक दो साल मैंने लोकलाज के कारण अपना भेद छिपाये रखा परन्तु रोग ने भयानक सूरत अख्तियार कर ली, अब मैं घबरा उठा, संसार में चारों ओर अँधेरा मालूम होने लगा तब मेरी आँखें खुलीं। इलाज शुरू किया गया, बड़े-बड़े डाक्टरों, हकीमों, वैद्यों के फीस रूप में रुपये और कीमती दवाइयों के खरीदने में पानी की तरह रुपया बहाने लगा, फिर भी मैं निराश ही रहा मन में घबरा उठा और चारों तरफ़ से अन्धकार दिखलाई देने लगा और सोचने लगा कि इस दुःखमय जीवन से मर जाना बेहतर है

पर यह बीस साल पहले की बात है। अब आज मैं खुश हूँ। आज उस परमात्मा की कृपा से आरोग्य हूँ और मेरे तीन स्वस्थ बच्चे भी हैं जो बिलकुल आरोग्य हैं।

हुआ क्या! मुझमें इतना परिवर्तन कैसे हो गया? यह जानकर आपको आश्चर्य होगा कि मैंने एक दवा सेवन की। जो दवा मैंने सेवन की, वह एक महान् त्यागी परोपकारी साधु की बनाई हुई थी, जो समय काटने के लिए गाँव से कुछ दूर एक ... के खेड़े पर रम रहे थे। यह मेरा सौभाग्य था कि और लोगों के साथ मैं भी दर्शनों के लिए जा पहुँचा। दैवी शक्ति से मेरे दुःखी जीवन के पिछले अध्याय उनके हृदय-पट पर खिंच गये और मेरी आँखों ने हृदय का सारा भेद अपने आप उस महान् ... पर प्रकट कर दिया। मेरी कच्ची उम्र पर महात्मा को दया आई और उन्होंने मुझे कुछ जड़ी-बूटियाँ एकत्र करने की आज्ञा दी। मैंने वैसा ही किया और तब उनके सम्मुख ही मुझे उनके आदेश और निजी देख-रेख में 'प्रेमबटी' तैयार करनी पड़ी। यद्यपि मुझसे ४० दिन लगातार 'प्रेमबटी' का सेवन करने को कहा गया था, तथापि केवल बीस दिन के सेवन से ही मुझमें परिवर्तन हो गया। मेरी कमजोरी और तमाम गुप्त बीमारियाँ जड़ से ... हो गईं। पीले और उदास मुख पर लाली दौड़ने लगी, आँखों में उन्माद झूमने लगा और हृदय में जवानी का जोश उमड़ आया। महात्माजी के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के साथ ही अपने वादे को पूरा करने के लिए दुःखी जनों के निमित्त पिछले बीस साल से लगातार मैं इस प्रयोग को मुफ्त बाँट रहा हूँ। यह अनेक पत्र-पत्रिकाओं में भी छप चुका है। मुझे हर्ष है कि इस अमृत-तुल्य प्रयोग ने सैकड़ों की प्राण-रक्षा की, हजारों को मौत के मुँह से निकाला और लाखों का इससे भला हुआ। महात्मा-प्रदत्त 'प्रेमबटी' का नुस्खा इस प्रकार है; नोट कर लें—

शुद्ध त्रिफला ५ तोला, त्रिकुट चूर्ण ५ तोला, शुद्ध सूर्यतापी शिलाजीत ५ तोला, शुद्ध बङ्ग भस्म ६ माशा, असली सूर्य-छाप केसर ३ माशा, असली ... करकरा ६ माशा, असली नेपाली कस्तूरी ३ रत्ती। इन सब औषधियों को कूट-छानकर खरल में डालकर ऊपर से शीतल चीनी ... बूँद, सन्दल तेल २० बूँद, बिराज ... तेल २० बूँद एक-एक करके मिलाये। उसके बाद ताजी ब्राह्मी बूटी के अर्क में १२ घण्टा घोंटकर झरबेरी बेर के बराबर गोलियाँ बनावें और छाया में सुखा लें। एक-एक गोली सुबह-शाम पाव भर गाय के दूध में एक तोला शक्कर मिलाकर सेवन करें। इसकी प्रशंसा हम अपने ही मुँह से नहीं करते बल्कि बड़े-बड़े वैद्यों, डाक्टरों, हकीमों, सेठ-साहूकारों तथा रईसों, जमींदारों, सरकारी आफिसरों तक ने इसकी सराहना की है। वैद्यराज श्रीजमुनादत्त शर्मा, झोंकर का कहना है कि यह बटी धातु का पतलापन, २० प्रकार के प्रमेह के लिए अक्सीर है।

'प्रेमबटी' में कोई हानिकारक चीज़ नहीं पड़ती और गुणकारी चीजें नुस्खे से ही प्रकट हैं। यह औषध वीर्य का पतलापन, ... प्रकार के प्रमेह, पेशाब के साथ चूने की तरह वीर्य का जाना, पाखाने के समय धातु का जाना, स्वप्नदोष, सुस्ती, कमजोरी, नामर्दी, ... मधुमेह, सूजाक, जवानी में बुढ़ापे की-सी हालत हो जाना, असली ताकत की कमी, स्मरण-शक्ति कमजोर पड़ जाना तथा स्त्रियों के भी प्रदर-सम्बन्धी रोग दूर करके अत्यन्त ताकत देती है और नस-नस में नवजीवन का सञ्चार करती है। अन्त में उन भाइयों को जिन्हें फुरसत नहीं मिलती या शुद्ध औषधि प्राप्त नहीं कर सकते यह प्रयोग स्वयं बनाकर दाम के दाम में भेजने की व्यवस्था की है। ४० दिन के लिए पूरी खुराक विधिवत् ८० गोलियों का मूल्य ५॥=) रु० और २० दिन के लिए ४० गोलियें का दाम ३=) डाकखर्च ॥।-)

पता—बाबू श्यामलाल जी रईस प्रेमबटी आफिस नं० (S. A.) धनकुट्टी कानपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वनमाला

आप से कहती हैं कि,

लक्स सौंदर्य साबुन ही

उस का निजी सौंदर्य का

कैसा सहज एवं सरल

उपाय है

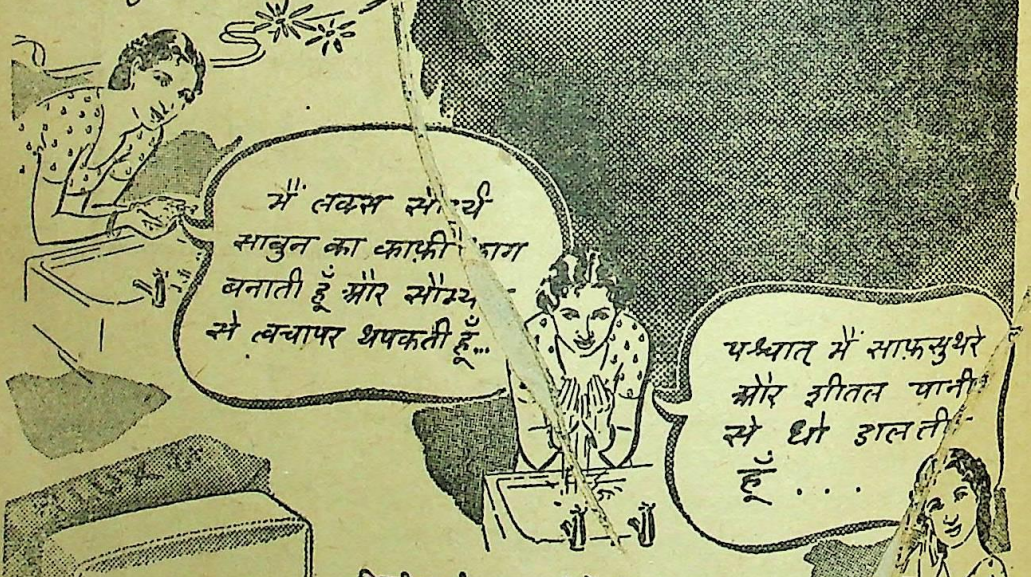

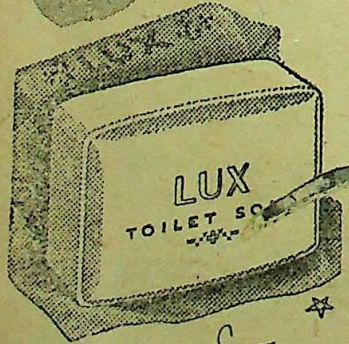

फिल्मी स्टार्स का
सौंदर्य साबुन

फिल्मी स्टार्स यह जानती हैं कि, लक्स सौंदर्य साबुन उन की त्वचा को निर्मल एवं पंखडीके समान कोमल बनाता है, वे उसपर निर्भर रहती हैं — उस का सौम्य और तरल झाग प्रत्येक त्वचा-रंध्रों में प्रवेश कर, रजःकण एवं अशुद्धता से साफ़ कर देता है। आप स्वयं वनमाला का सहज सौंदर्य-साधन का ३० दिनों के लिये अनुभव कीजिये — आप उस के मृदुता एवं शुद्धिकारक गुणों से हर्षित होंगे।

अन्त में मैं
स्वच्छता से
अपना मुख
नरम तौलिये से
पोंछ लेती हूँ

LTS. 135-23 40 HI

LEVER BROTHERS (INDIA) LIMITED

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीम
टूथ पेस्ट

नीम टूथ पेस्ट भारतवर्ष क्या विदेशी जनता की प्रशंसा प्राप्त कर अपनी उपयोगिता पूर्णतया प्रमाणित कर चुका है।

अथवा

मार्गोफ्रिस
दंतमंजन

दोनों ही चीजें उच्च कोटि की हैं।

दी कलकत्ता केमिकल कं० लि०,

पण्डितिया रोड, कलकत्ता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय गुलाब के उद्यान की समस्त प्रातः काल की नवीनता विनोलिया व्हाइट रोज़ साबुन द्वारा आप ला सकते हैं। इस का मृदु, भरपूर झाग सुकोमल त्वचा को सौम्यता से साफ़ करता है—और उस के सुगंध से आप के इतराफ़ एक मीठी महक लहराती है। आप के सौन्दर्य-वर्धन का इस से उत्तमोत्तम वा अत्युत्कृष्ट साबुन आप नहीं पा सकते। विनोलिया व्हाइट रोज़ को अपना प्रिय साबुन बना लो।

विनोलिया व्हाइट रोज साबुन

VWR. 19-23 HI

VINOLIA COMPANY LIMITED, LONDON, ENGLAND

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

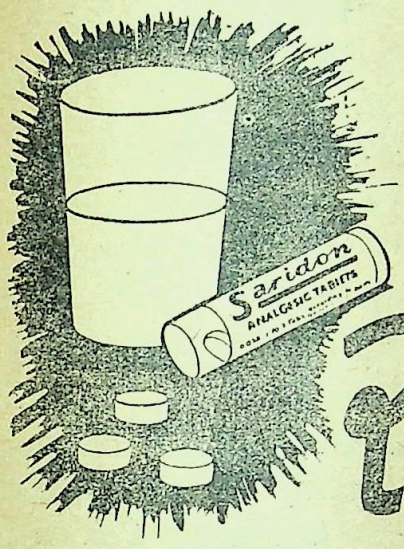

एक गिलास पानी
में एक-दो गोली

सारिडन

दस मिनट में ही सब दर्द दूर कर देती है

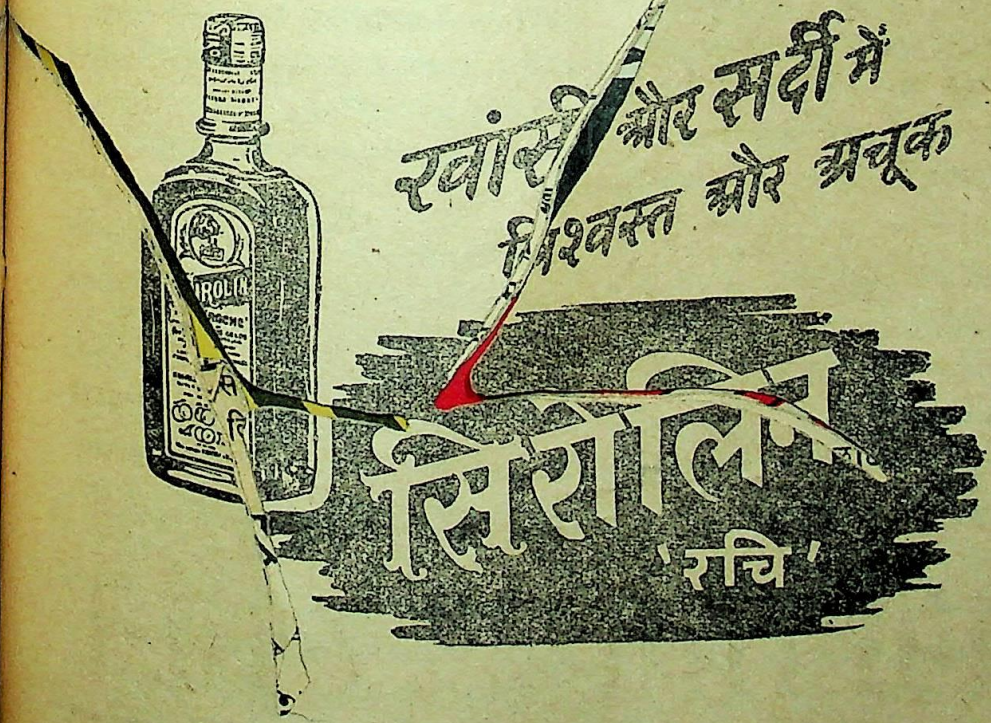

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

卐

प्रेममोहनी बटिका

अगर आप दवा करते-करते हैरान हो गये हों, तो हमारी यह प्रेममोहनी बटिका जरूर इस्तेमाल करिएगा। इसकी तारीफ करना फिजूल है, यह आपको सेवन करने से ही मालूम होगा कि वास्तव में क्या है। इसके सेवन से स्वप्नदोष, धातुक्षीणता, कमजोरी, मधुमेह, बीसों प्रकार के प्रमेह, पेशाब के साथ चूने की तरह वीर्य का जाना, पाखाने के समय धातु का निकलना, जवानी में बुढ़ापे की-सी हालत होना, असली ताकत की कमी, स्मरण शक्ति कमजोर पड़ जाना, हिस्टीरिया, उन्माद आदि रोगों को दूर कर अपूर्व ताकत लाती है। और स्त्रियों के लिए भी यही दवा प्रदर, रज, कमजोरी आदि को दूर कर ताकत पैदा करती है। आज ही मँगाकर लाभ उठाइए। मूल्य २० दिन की ४० गोलियों का ३।) और ४० दिन की ८० गोलियों की पूरी खूराक का ६।) डाक खर्च माफ पैकिंग ।–) अलग।

शाही आनन्द तिला

अगर आपको नामर्दी की शिकायत है तो इसी कम्पनी का चुना हुआ तिला इस्तेमाल करिएगा। केवल दो ही सप्ताह इस तिला का उपयोग करने से कामशक्ति में अपूर्व चेतनता आ जाती है। बचपन की अवस्था में लुक-छिपकर करी गई भूलों द्वारा जिनकी कामेन्द्रिय विकृत हो गई हो, उन्हें इस तिला के उपयोग से नव-यौवन प्राप्त होता है। किसी प्रकार के छाले पड़ने का भय नहीं है। एक शीशी में पूरी पन्द्रह दिन की दवा है जिसका मूल्य सिर्फ ३।) है। डाक खर्च माफ पैकिंग ।–) अलग।

१०००) रु० माहवार कमाइए

इस 'दौलत की खान' पुस्तक में १६२ हुनर छपे हैं, जिससे लोग लखपती हो गए, जो बेकार थे। इस पुस्तक में हर तरह के तैल, साबुन, बाल उड़ाने का साबुन, बाल काले करने का खिजाब, हर तरह के अचार, खमीर तम्बाकू, कुलफी की बर्फ, पेंटेट दवायें आदि बनाने के नुस्खा छपा है। इन्हें लोग हजारों खुशामद करने पर मरते वक्त तक नहीं बतलाते हैं। कीमत फी पुस्तक २।) डाक खर्च व पैकिंग माफ।

अमेरिकन पिस्तौल

यह पिस्तौल अमेरिका से बनकर आई है बिल्कुल असली पिस्तौल के मानिन्द मालूम होती है। इसे बखूबी कोट की जेब में रख सकते हैं। इससे फायर खाने हैं। घोड़ा दबाते ही चरखी खुद घूमती है। इसकी आवाज निहायत डरावनी है। चोर, डाकू, शत्रु और जंगली खूँखार जानवर इसकी शक्ल ही देखकर भाग जाते हैं। इसके रखने में सरकार से लाइसैन्स लेने की जरूरत नहीं पड़ती। बाज वक्त यह पिस्तौल जान-माल की रक्षा करने में बहुत अच्छी साबित हुई है। इसको हरएक मनुष्य रख सकता है। मूल्य मय ५० स्पेशल कारतूस के फी पिस्तौल ४।) डाक खर्च प्रति पिस्तौल १।) अलग कारतूस फी सैकड़ा १॥)

असली कलीद सट्टा

यदि आप सट्टा-लाटरी का शौक रखते हैं और लाटरी-सट्टा का नम्बर जानकर फायदा उठाना चाहते हैं, तो हमारी असली कलीद सट्टा नामक पुस्तक मँगाकर मालामाल बनिए। इसका नम्बर कभी खाली नहीं जाता। सिर्फ गुणा भाग करने से ही नम्बर निकल आता है। कीमत पुस्तक २।) डाक खर्च व पैकिंग माफ।

ओटो पुष्पलता

यह ओटो तमाम सैन्टों का सरताज है। लगाते ही आपकी तबीयत मस्त हो खुशबू से बाग-बाग हो जाएगी। इस ओटो को लगाकर आप जिस रास्ते निकल जाएँगे पास के लोगों को मालूम होगा कि यह खुशबू किस बगीचे से आ रही है। रूमाल में लगा लेने से महीनों खुशबू नहीं जाती है। कीमत प्रति शीशी ॥=) दर्जन का ५॥) डाक खर्च १।) एक दर्जन एक साथ मँगाने पर एक जोड़ी हाथ व गले के बटनों का सेट व एक बम्बई फैशन सेट की तरह चमकनेवाली अँगूठी एक फैन्सी रूमाल व एक खूबसूरत शीशा मय कंघी इनाम में मुफ्त दिया जाएगा इस ओटो का प्रचार करने की वजह से यह ऐलान निकाला है।

पता—इंडियन जनरल ट्रेडिंग कम्पनी नं० १० कानपुर

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छप गया ! छप गया !! छप गया !!!

वार्षिक बाल-सखा १९४६

जिस 'वार्षिक बाल-सखा' की आप मुद्दत से बाट जोह रहे थे, वह प्रकाशित हो गया। तीन सौ पृष्ठों में रङ्ग-बिरङ्गी स्याही से छापी गई अत्यन्त मनोरञ्जक और सचित्र सामग्री बालक-बालिकाओं को फौरन लुभा लेगी। तिरङ्गा आवरण और सात तिरङ्गे चित्र इस अङ्क की सुन्दरता में चार चाँद लगा रहे हैं।

पहले से ही इतने आर्डर आ चुके हैं कि बहुत थोड़ी प्रतियाँ शेष रह गई हैं। मँगानेवालों को शीघ्रता करनी चाहिए। इसका मूल्य तीन रु० है। 'बाल-सखा' के ग्राहकों के लिए रियायती मूल्य २॥) रु०। मनीआर्डर द्वारा मूल्य भेजिए। वी० पी० नहीं भेजी जायगी।

मैनेजर—'बाल-सखा', इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

---

३ घड़ियाँ ४५१ तोहफ़ों के साथ ३) में।

दो शीशी ओटो गुलाब या ४ डिब्बी जरदा ३) में ख़रीदनेवाले को १ डमी गोल्ड गिल्ट रिस्टवाच, १ सेफ्टी रेजर, १ ब्रुश, १ कंघा, १ आइना, १ बत्ती, १ साबुन, १ जोड़ (पैर की नाप भेजें), १ जोड़ जूते की डोरी, १ सेट [illegible], १ फ़ुट पोलिश, २ डमी रिस्टवाच, १ होल्डर [illegible], १ चम्मच, ५२ पत्ते ताश इतना स[illegible]। पैकिंग डाकख़र्च ।॥=)।

होम प्रिंटिङ्ग पाकेट प्रेस—नाम, पता, चिट्ठियाँ, ले[illegible]बल, प्रोग्राम आदि इसके द्वारा घर पर ही बहुत साफ़ [illegible]पे जा सकते हैं। कीमत नं १ की [illegible]; नं २ की ३॥); नं० ३ [illegible] की ४); ५॥); सबसे बढ़िया ६) पैकिंग और पोस्टेज।

मच्छरदानी

सुन्दर सिली मज़बूत बढ़िया सफ़ेद जाली से बनी।

चौड़ाई	उँचाई	बढ़िया	स्पेशल
३ फीट	३ फीट	६)	७॥)
३½ ,,	३½ ,,	६॥=)	८)
४ ,,	४ ,,	७॥=)	९=)
४½ ,,	४½ ,,	९॥)	१०॥=)
५ ,,	५ ,,	१२=)	१३॥=)
६ ,,	६ ,,	१३॥)	१५)
६ ,,	६ ,,	१५॥)	१७॥)

पैकिंग डाक-व्यय १।) कोई तीन एक साथ लेने पर डाकख़र्च माफ़।
[illegible] वाच कम्पनी, (S) पो० ब० नं० १२२१६ कलकत्ता (K. B.)।

IN SHADES TO MATCH YOUR SKIN

Asha

FACE POWDER

COVERS WELL
STAYS LONGER

MINAR LTD

ADDS CHARM TO YOUR LOVELINESS

साहित्यालोचन

इसका संशोधित संस्करण छपकर तैयार है। इसमें संस्कृत के प्राचीन आचार्यों के साहित्य-सम्बन्धी सिद्धान्तों के अतिरिक्त पाश्चात्य साहित्यकारों तथा [illegible] साहित्य-मर्मज्ञों के मत का दिग्दर्शन बहुत ही मौलिक ढङ्ग से कराया गया है। ४०० पृष्ठों की सजिल्द पुस्तक का मूल्य ५।-) पाँच रुपये पाँच आने।

मैनेजर—बुकडिपो,—इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद।

Public Domain. [illegible] Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शानदार दूसरा संस्करण

अवश्य मँगाइए संग्रह कीजिए

नेता जी की आजाद हिन्द फौज के वीरों के उन क्रांतिकारी गीतों का अनूठा संग्रह जो आज भी इंफाल और कोहिमा की घाटियों में गूँज रहे हैं।

जय हिन्द चलो दिल्ली

संपादक—श्रीउमाशंकर शुक्ल दाम १) डा० ख० ।)।

एजंटों की सर्वत्र जरूरत है

मंत्री—साहित्य सेवा सदन, वर्धा सी० पी०

काबूल काशमीर के उपहार मँगाएँ

शुद्ध हीरा हींग

प्रति १०० तोला १६), केसर असली ६) तोला, शिलाजीत २० तोला डिब्बी ५), अकसीर काबुल धात की दवा [illegible] ॥) पूरा सूचीपत्र मँगाइए।

पता—मैनेजर काबुल फ़्रांटियर स्टोर्स, हींग घर, डेरा इस्माइल खाँ, सरहदी सूबा।

अद्वितीय अद्भुत प्रकाशन

प्राकृतिक चिकित्सा

यह अपने विषय की अद्वितीय पुस्तक है। इसमें यह [illegible] किया गया है कि प्राकृतिक चिकित्सा ही क्यों सब में श्रेष्ठ है। [illegible] पुस्तक में आध्यात्मिक-चिकित्सा, सूर्य किरण-चिकित्सा, [illegible] विज्ञान, मर्दन-विज्ञान, आसन-प्राणायाम, वनस्पति विज्ञान [illegible] दूध, मठा, अंगूर, आम, संतरा ख़रबूजा, आदि फलों के [illegible] विस्तृत विवरण दिया गया है। साथ ही, रोग प्रकरण में [illegible] रोग के निदान, चिकित्सा और पथ्य-का सुन्दर और स्पष्ट [illegible] किया गया है। जिसके द्वारा प्रत्येक व्यक्ति स्वयं अपनी [illegible] दूसरों की पूर्ण सफलता के साथ चिकित्सा कर सकते हैं।

ऐसी परमोयोगी सचित्र पुस्तक का मूल्य केवल ७॥) है। [illegible] संख्या करीब छः सौ पृष्ठ के है।

कागज़ की कमी के कारण थोड़ी प्रतियें छपी हैं इस [illegible] जल्द से जल्द आर्डर देकर पुस्तक मँगा लें।

पुस्तक मँगाने का पता—

संचालक—प्राकृतिक आरोग्याश्रम बनारस।

प्रदर रोग स्त्रियों का [illegible]यानक शत्रु है

प्रदर रोग, जिसको लोग लिकोरिया भी कहते हैं, स्त्रियों की सुन्दर[illegible] और जवानी को नष्ट करनेवाला [illegible]यानक शत्रु है। [illegible] बश बेचारी रोग को छिपाये रहती हैं और दिन-रात घुला करती हैं। यह [illegible]नकी भूल है। भयानक रोग का इलाज कराने में लापर[illegible] नहीं करनी चाहिए। इस बीमारी से स्त्रियों के गुप्त शरीर से लाल, काल[illegible] धुमैला या श्वेत रंग [illegible] बदबूदार पानी या [illegible] निकलता रहता है। महीना ठीक समय पर नहीं होता है जिसके कारण कमर, [illegible]ढ़, सिर में दर्द, श[illegible] में जलन, मन मलीन, [illegible] बैठने में थकावट, भूख का कम लगना, बदन [illegible] और कमजोर हो जाना, मूर्छा [illegible] रोग हो जाते हैं और सन्तान [illegible] होती है और यदि होती भी है तो दु[illegible] और कमज़ोर होती है। ऐसी अवस्था में भारत-विख्यात वैद्यरत्न सत्यदेव ने अपूर्व [illegible] प्रदान करनेवाली २५ वर्ष की आजमूदा **नारी-संजीवन** नामक दवा का आविष्कार किया जिसके द्वारा आज तक सहस्रों स्त्रियों [illegible] इस भयानक रोग के पंजे से छुड़ाया है। इस नारी-संजीवन के सेवन से तमाम बीमारियाँ दूर होकर स्त्रियाँ सुन्दर और तन्दुरुस्त हो [illegible] और सन्तानें सुन्दर, बलवान्, दीर्घायु पैदा होती हैं। यदि आवश्यकता हो तो आज ही पत्र डालकर एक डिब्बा नारी-संजीवन [illegible] मँगाकर इसके अपूर्व गुणों का चमत्कार देखें। कीमत एक डिब्बा ३=); डाकख़र्च माफ; पै[illegible]ग खर्च अलग।

मँगाने का पता—

रूपविलास कम्पनी, नं० ४२७, धनकुट्टी,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केवल एक दिन में

मेजिक मिस्मरिजम

लड़के को जमीन पर लिटा कर और चादर से ढक कर अजीब व गरीब प्रश्नों के सही सही उत्तर पूछना, दहकती आग पर आप चलना व दर्शकों को चलाना, किसी भी समय पर सब दर्शकों की घड़ियों में ६॥ इत्यादि बजा देना, दीवार में आग लगा देना, मुँह में से आग की लपटें निकालना, पानी के अन्दर आग के अङ्गारों का नाच कराना, बन्द लिफाफों के अन्दर का लिखा बता देना आदमी को उड़ा देना, बन्द सन्दूक में से आदमी का निकल जाना इत्यादि अनेक तिलस्मात जादू के अद्भुत, रहस्ययुक्त और रोमांचकारी करिश्में सीखकर.

दूसरे ही दिन

नवाब, राजे-महाराजे, सेठ-साहूकारों को दिखाकर—बड़े २ धुरन्धर विद्वानों बुद्धिमानों, विज्ञानवेत्ताओं और प्रोफेसरों की बुद्धि चक्कर और हैरत में डालकर ठनाठन रुपये पैदा करो। मामूली हिन्दी पढ़ लेने वाला यह सब गजब का जादू एक दिन में, ही केवल एक दिन में जान जाता है और किसी भी प्रकार के अभ्यास व सिद्धि की झंझट नहीं-ऐसा हमारा दावा और गारण्टी है। फिलहाल इस पूरे कोर्स की कीमत केवल पाँच रुपया। यह सब एक दिन में न आवे तो कीमत वापिस।

देहली के प्रतिष्ठित पत्र 'वीर अर्जुन' तथा कुँवर साहिब जी की ज़ोरदार सिफारिश के साथ सैंकड़ों प्रशंसा पत्र प्राप्त।

दी यूनाइटेड वण्डरफुल मेजिकल कम्पनी

विभाग नम्बर ३०, मुरादाबाद यू० पी०

दमा निवारक

५० साल से दुनिया भर में मशहूर

श्वास कासारी अवलेह

दमा, श्वास, खांसी, छाती में दर्द व जलन, पसलियों की सूजन, जुकाम, सर्दी, कफ वगैरह को मिटाकर शरीर सशक्त बनाता है। मूल्य फी डि० २) रुपया।

मदनमंजरी फार्मेसी—जामनगर

इलाहाबाद एजेंट—मदन स्टोर्स जोन्स्टनगंज

बनारस—राधेलाल एन्डसन्स—चौक

प्यारी बहिन जी!

स्वास्थ्य ही जीवन है—नारी-जीवन का घुन मासिक धर्म की खराबी है

यदि किसी बहिन [illegible] पचास वर्ष से कम की आयु में या किसी बीमारी के कारण मासिक धर्म (माहवारी) का होना बन्द हो गया है अथवा [illegible] चलकर नहीं होता, [illegible] ठीक समय पर न होकर आगे-पीछे होता है तो ऐसी अवस्था में आप मेरी बड़ी उपयोगी लिपिरक्षित औषधि "मासिक धारा" मँगा कर सेवन करें। यह औषधि इतनी सफल हुई है कि इसकी केवल एक ही खुराक से महीनों का रुका हुआ मासिक धर्म बिना किसी कष्ट के खुल जाता है और तीन खुराक में रोगी रोग से मुक्त हो जाता है। मूल्य तीन खुराक ७) रुपया।

चाँद फल—यदि आप सन्तान पैदा करना चाहती हैं तो आप इस औषधि को मासिक धर्म हो जाने के बाद तीन दिन तक सेवन करें। ईश्वर की कृपा से आशा हो जाएगी और नौ मास बाद आप की गोदी में चाँद सा सुन्दर लड़का खेलेगा। इस औषधि के सेवन से सैकड़ों ऐसी बहिनों के बच्चे पैदा हुए हैं जो बीस और पच्चीस वर्षों से बैठी सन्तान को तरस रही थीं। मूल्य १८ खुराक तीन दिन के लिये ५।=) डाक व्यय पृथक।

प्रेमकुमारी अग्रवाल (नं० १६), टोहाना, जिला हिसार (पंजाब)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जुकाम सदीपर अकसीर उपाय
स्थापना १९२५
आरोंदा
सुरज १८६६ छाप
नीलगिरि तेल
हैजा, मलेरिया, फ्लूएंजा, टाइफाइड आदि बीमारियोंमें खानेयोग्य
प्रो. खांडालेकर बंधु बम्बई ४.

हकीम तुलसी प्रसाद जगवाल अलीगढ़ की
असली-मीठी
मुफ्त तो १० प्रतिष्ठित लोगों के नामवाले भजन स्वास्थ्य साधन पुस्तक मुफ्त भेजेंगे
बाल जीवन घुट्टी
बच्चों की हर एक बीमारी को दूर करती
कमज़ोर बच्चों को ताक़त वर बनाती
ज़रा सी रोजाना चटा देने से बच्चे की बीमार नहीं होंगे. दाँत आसानी से निकल आवेंगे।
— मू० शी० ७ दर्जन २॥) डा० व्य० अ०
सब जगह बिकती है, नक़ली घुट्टियों से बचें
नए सौदागर नमूना मुफ़्त मंगावें।
पता. बाल जीवन कार्यालय अलीगढ़ यूपी.

हृदय की सर्दी (सर्दी और कफ)—लापरवाही करने से मामूली हृदय की सर्दी फेफड़े की सूजन (ब्रांकैटिस) हो जायगी। इससे बचे रहने का रास्ता बड़ा आसान है। थोड़ा-सा अमृतांजन लेकर छाती पर मलिए। बस, उसकी गरमी सीधे हृदय पर पहुँचती है और कफ को पिघला देती और तुरन्त आराम मिलता है।

अमृतांजन—हमेशा जल्दी से जल्दी आराम पहुँचाता है।

अमृतांजन लिमिटेड, बम्बई और मद्रास

शाखा—कलकत्ता, कराची, दिल्ली

कामायनी-अनुशीलन

महाकवि 'प्रसाद' का महाकाव्य 'कामायनी' बहुत प्रसिद्ध है। पर यह सबकी समझ में नहीं आता। इस पर अनेक समीक्षकों के विचार पत्रों में प्रकट हुए हैं। इसी ग्रन्थ का अनुशीलन इस पुस्तक में लेखक रामलालसिंह, एम० ए०, बी० टी०, साहित्यरत्न ने कामायनी का ऐतिहासिक तत्त्व, प्रकृति-वर्णन, चरित्र-चित्रण, श्रद्धा, भाषा तथा भावाभिव्यक्ति, छन्द-विधान, रस-संचार, कामायनी का मनस्तत्त्व, दार्शनिक तथ्य, युग की अभिव्यक्ति, प्रेम-निरूपण आदि शीर्षकों में बड़ी मार्मिकता से किया है। अच्छे कागज पर छपी कोई ढाई सौ पृष्ठों की सजिल्द पुस्तक का मूल्य २)

कुछ

यह प्रसिद्ध साहित्य-सेवी श्री प[illegible]मलाल पुन्नालाल [illegible] बी० ए० के बढ़िया निबन्धों का संग्रह है। इसमें निबन्ध हैं जो भाषा, भाव और विवेचन की दृष्टि से विलक्षण [illegible] की अनुपम रचना [illegible] पृष्ठ-संख्या २०० से ऊपर मूल्य केवल [illegible] एक रुपया आठ आने।

गांधी-मीमांसा

इस पुस्तक में पं० रामदयाल तिवारी बी० ए०, एल-एल० बी० ने गांधी जी के व्यक्तित्व और सिद्धान्तों की तर्कपूर्ण [illegible] विवेचना की है। इसे आद्योपान्त पढ़ जाने पर गांधीवाद [illegible] रूप से हृदयंगम हो जाता है। विद्वानों ने मुक्त कण्ठ से [illegible] प्रशंसा की है। पृष्ठ-संख्या ८५०। सुन्दर सजिल्द प्रति का ४) चार रुपये।

मैनेजर बुकडिपो, इंडियन प्रेस लिमिटेड, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारी उत्तमोत्तम पुस्तकें

कविवर पं० सोहनलाल द्विवेदी-रचित काव्य-ग्रन्थ

भैरवी

इसकी राष्ट्रीय कविताएँ राष्ट्रप्रेमियों के गौरव की वस्तु हैं। यहाँ तक कि पण्डित जवाहरलाल नेहरू तक ने इन्हें पसन्द किया है और खादी प्रतिष्ठानों ने इसकी हजारों प्रतियाँ बेची हैं। विद्वानों की सम्मति है कि भैरवी 'गांधीयुग' का सर्वश्रेष्ठ काव्य है। मूल्य २॥=) दो रुपये बारह आने।

वासवदत्ता

हिन्दी का एक आधुनिक काव्य। इस काव्य की विद्वानों ने मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। मूल्य [illegible] रुपये।

पूजागीत

द्विवेदी जी की नवीनतम राष्ट्रीय कविताओं का संग्रह। [illegible] कविता जीवन में स्फूर्ति का सञ्चार करती है। [illegible] पीले कागज पर छपी हुई पुस्तक का मूल्य [illegible]

कुणाल

इसमें अशोक के पुत्र कुणाल की कथा करुणापूर्ण भाषा में बड़े रोचक ढङ्ग से लिखी गई है, जिसे पढ़ते हुए अशोक-कालीन भारतवर्ष का चित्र आँखों के सामने खिंच जाता है। मूल्य १।) एक रुपया चार आने। राजसंस्करण २॥)

विषपान

समुद्र-मन्थन की पौराणिक कथा के आधार पर कवि ने इस खण्ड-काव्य की रचना की है। भाषा में प्रवाह तथा ओज और पात्रों का सजीव चित्रण कवि की खास विशेषता है। मूल्य १) एक रुपया।

झरना

इसमें पण्डित सोहनलाल जी की बालकोपयोगी २३ कविताओं का संग्रह है। मातृभूमि, जय-जय स्वदेश, हवा का झोंका, तुम बढ़ो आगे ही अकेले, सुनहली धूप, लहर, सब पर जल बरसाता बादल, दूर्वा का गीत और नीम का पेड़ आदि सुन्दर कविताएँ हैं। अच्छे कागज पर अच्छी स्याही में छपी पुस्तक का मूल्य ॥।) केवल बारह आने।

सचित्र हिन्दी-महाभारत

महाभारत का [illegible]त्तरशः अनुवाद। अगणित रङ्गीन सादे चित्रों के कारण महाभारत का यह संस्करण जैसे ही नयनाभिराम है वैसे ही सीधी और सरल भाषा में लिखा हुआ होने के कारण छोटी बच्चों से लेकर बड़े-बूढ़ों तक के लिए उपयोगी है। मूल्य [illegible] सावित्री [illegible]

हिन्दी-महाभारत

इसमें महाभारत के अठारह पर्वों की कथा बहुत ही सरल और सरल भाषा में लिखी गई है। मूल्य ६) छः रुपये।

श्रीमद्भागवत

सरल भाषा में किया गया अविकल अनुवाद। महाभारत की तरह इसमें भी सादे और रङ्गीन चित्रों की भरमार है और सरल भाषा में लिखा हुआ होने के कारण आबालवृद्ध-सभी के लिए उपयोगी है। मूल्य १५।-) पन्द्रह रुपये पाँच आने।

ज्ञानेश्वरी-गीता

श्री स्वामी शङ्कराचार्य के मत के अनुसार गीता का मर्म समझाने के लिए महाराष्ट्र-प्रदेश के प्रसिद्ध सन्त श्री ज्ञानेश्वर जी महाराज के द्वारा की गई ज्ञानेश्वरी नामक टीका का हिन्दी-अनुवाद। मूल्य ५।-) पाँच रुपये पाँच आने।

नीति-रत्नमाला

धर्मशास्त्र से छाँट-छाँटकर एकत्र किए गए ललित और उपदेशप्रद श्लोकों का संग्रह। प्रत्येक श्लोक का विस्तृत हिन्दी-अनुवाद भी किया गया है। मूल्य ॥।-) तेरह आने।

चरित्र-गठन

सदाचारी बनने के लिए जिन-जिन गुणों का होना आवश्यक है, उन सबकी इस पुस्तक में विशद रूप से विवेचना की गई है। मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

[illegible] लिमिटेड इलाहाबाद

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दर्शन और जीवन

लेखक, श्री सम्पूर्णानन्द

इस पुस्तक में दर्शन के साथ जीवन का अनिवार्य सम्बन्ध दिखलाते हुए, प्रत्येक व्यक्ति को दर्शन क्यों पढ़ना चाहिए ? इस प्रश्न पर विवेचनात्मक प्रकाश डाला गया है। दर्शनशास्त्र के प्रेमियों के निमित्त पुस्तक संग्रहणीय है। मूल्य ३।-) तीन रुपये पाँच आने।

प्राणायाम विज्ञान और कला

डाक्टर शोजाबुरो ओटेब नामक सुप्रसिद्ध चिकित्सक के प्राणायाम-सम्बन्धी लगातार कई वर्ष के अनुभव का वर्णन। मूल्य १) एक रुपया।

आध्यात्मिकी

इस पुस्तक में हमारे ऋषि-मुनियों से लेकर नए से नए देशी और विदेशी आस्तिक और नास्तिक हर तरह के विद्वानों के मत का सार खींचकर रख दिया गया है। मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने।

वाल्मीकीय रामायण [सचित्र] दो भाग

महाभारत की तरह महर्षि वाल्मीकि का रामायण भी हिन्दू-संस्कृति का इतिहास है और यह महाभारत से भी प्राचीन है। संसार भर में कोई भी ऐसी सभ्य भाषा नहीं है जिसमें इस ग्रन्थ का अनुवाद प्रकाशित न हुआ हो। हिन्दी में इसका बढ़िय अनुवाद नहीं था, उसी कमी को पूरा करने के लिए हमने इसका अनुवाद सरल भाषा में प्रकाशित किया है। सारी पुस्तक उपन्यास की तरह पढ़ते जाइए, समझने में कहीं जरा भी कठिनाई नहीं पड़ेगी। मूल्य ६॥=) छः रुपये ग्यारह आने प्रतिभाग।

गोस्वामी तुलसीदास

गोस्वामीजी के प्रामाणिक जीवन तथा उनके ग्रन्थों का संक्षिप्त परिचय इस पुस्तक में दिया गया है। इसकी रचना हिन्दी के प्रसिद्ध विद्वान् बाबू श्यामसुन्दरदास ने की है। मूल्य १) रुपया।

इस्लामी दुनिया का सिरताज

इस पुस्तक के बारे में हिन्दी के प्रसिद्ध पत्र भारत का मत है, "पुस्तक में तुर्की साम्राज्य के अभ्युदय और पतन तथा नव टर्की राष्ट्र की स्थापना का कोरा इतिहास ही नहीं वर्णित किया गया है, बल्कि लेखक की राष्ट्रीय भावनाओं से ओत-प्रोत लेखनी ने उसमें एक नया जीवन डाल दिया है"। मूल्य २) दो रुपये।

सम्राट् पञ्चम जार्ज

स्वर्गीय सम्राट् पञ्चम जार्ज का जीवन-चरित तथा उनके शासनकाल का संक्षिप्त इतिहास। मूल्य ४) चार रुपये।

विश्व की विभूतियाँ

देश-विदेश के १२ सुप्रसिद्ध व्यक्तियों के चरितों का संग्रह। मूल्य २) दो रुपये।

पञ्चसती

इसमें भारत की सीता, सावित्री, दमयन्ती, शैव्या और चिन्ता इन पाँच सतियों का पवित्र चरित्र संगृहीत किया गया है। मूल्य ॥) आठ आने।

सती

इसमें दक्षसुता सती पार्वती की कथा [illegible] सुन्दर भाषा में लिखी गई है। मूल्य ।-) [illegible] साढ़े [illegible]

सीता-चरित्र

[illegible] जननी सीता जी का [illegible] विस्तृत [illegible] है जिसमें [illegible] राजनीति, धर्मनीति और गार्हस्थ्य नीति और मुहाविरे [illegible] शिक्षा का [illegible] है। [illegible] २।-)

[illegible] घाटी

लेखक, श्रीयुत [illegible] श्यामनारायण पाण्डेय

इसे पढ़ [illegible] काव्य [illegible] स्वास्थ्य दो हजार रुपये का देवपुरस्कार आदि से सम्बन्ध [illegible] इस पुस्तक [illegible] हल्दीघाटी के प्रसिद्ध युद्ध [illegible] कर सकेंगी। [illegible] का वर्णन [illegible] बड़े ही अनूठेपन से फड़कती [illegible] गया है [illegible] पुस्तक पढ़ते समय हल्दीघाटी [illegible] बातें [illegible] के सामने सिनेमा-फिल्म [illegible] भारत की [illegible] गी। मूल्य २॥=) दो रुपये ग्यारह आने [illegible] का संक्षिप्त जीवन [illegible]

मैनेजर बुकडिपो [illegible] इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदर्श महिला

इस पुस्तक में सीता, सावित्री, दमयन्ती, शैव्या और चिन्ता आदि पाँच देवियों की जीवन-घटनाओं का सजीव वर्णन किया गया है। मूल्य २॥=) दो रुपये ग्यारह आने।

शिशु-पालन

यह पुस्तक स्त्रियों के बड़े काम की है। इसमें प्रसूति-चर्या से लेकर बच्चों के पालन-पोषण के सम्बन्ध की सभी आवश्यक बातों पर प्रकाश डाला गया है। मूल्य २) दो रुपये।

माँ और बच्चा

बच्चों का पालन-पोषण करने तथा उन्हें स्वस्थ और सबल बनाने के लिए जिन-जिन बातों का जानना आवश्यक है वे सभी बातें इस पुस्तक में लिखी गई हैं। मूल्य २॥=) दो रुपये ग्यारह आने।

पतिव्रता

सती, सुनीति, गान्धारी, सावित्री और शकुन्तला इन पाँच पतिव्रताओं के चरितों का संग्रह। मूल्य ॥=) ग्यारह आने।

पतिव्रता गान्धारी

[illegible]ता गान्धारी का जीवन-चरित। [illegible]में [illegible] की प्रायः पूरी कथा का सारांश आ [illegible] तेरह आने।

[illegible]सावित्री

[illegible] द्वारा [illegible] बाटयो वट

अन्यान्य कलाकार भी [illegible] दिव्य कथा इस [illegible]ल्य ।-)॥ साढ़े

राजदुल[illegible] की कृतिय[illegible]

इस सामाजिक उपन्यास में [illegible]नकत्ते के [illegible] सम्बन्ध रखनेवाले उत्तर भारती[illegible] हिन्दुओं [illegible] अवस्था पर प्रकाश डाला गया है। मूल्य [illegible] दमयन्ती की [illegible] आने। [illegible] भाषा में लिखी

सुशीलाचरित

वास्तविक रूप से सुशीला बनने के लिए प्रत्येक महिला को एक बार यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिए। मूल्य २) दो रुपये।

सौभाग्यवती

स्त्रियों के लिए एक उपदेशपूर्ण पुस्तक। मूल्य ।-) पाँच आने।

रामचरितमानस

टीकाकार स्वर्गीय पण्डित रामेश्वर भट्ट

इस पुस्तक में भट्ट जी ने गोस्वामी जी की रचना का मर्म बहुत ही सरल और सुमधुर भाषा में समझाया है। इस संस्करण में इकरङ्गे और तिरङ्गे चित्रों की भरमार है। मूल्य ४॥=) चार रुपये ग्यारह आने।

हिन्दी के लब्धप्रतिष्ठ कवि ठाकुर गोपालशरण सिंह की काव्य-कृतियाँ

माधवी

माधवी का यह नया संस्करण बड़ी ही सज-धज के साथ और बड़े आकार में प्रकाशित हुआ है। मूल्य २) दो रुपये

ज्योतिष्मती

इस संग्रह में ठाकुर साहब की नवीन प्रकार की कविताएँ संगृहीत की गई हैं, जो हिन्दी-साहित्य में अपना विशेष स्थान रखती हैं। खासकर इसमें संग्रह किए गए छोटे-छोटे गीत बहुत ही मधुर और भावपूर्ण हैं। मूल्य २।- दो रुपये पाँच आने।

मानवी

इस संग्रह में प्रकाशित कविताओं के द्वारा ठाकुर साहब ने भारतीय नारी के सुख-दुःखमय जीवन का बड़ा ही सुन्दर और मार्मिक चित्रण किया है। मूल्य २।- दो रुपये पाँच आने।

सञ्चिता

इस संग्रह में ठाकुर साहब ने अपनी सन् १९१४ से लेकर सन् १९३९ तक की सब प्रकार की रचनाओं का समावेश किया है। इस एक ही पुस्तक के द्वारा ठाकुर साहब के कवि-जीवन के क्रम-विकास का उत्तमतापूर्व

मैनेजर बुकडि[illegible]

[illegible]यो इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अध्ययन किया जा सकता है। संग्रह में कुल ७१ कविताएँ हैं। मूल्य ३) तीन रुपये।

सुमना

'सुमना' ठाकुर साहब का सबसे नवीन संग्रह है जिसमें ५३ गीत हैं, जिनमें प्रकृति के प्रति उनका असीम अनुराग शब्द-शब्द द्वारा व्यञ्जित होता है। इस प्रकार के सरस भावपूर्ण गीत हिन्दी-साहित्य में अन्यत्र न मिलेंगे। मूल्य २) दो रुपये।

पद्यमाला

इस पुस्तक में अखिल भारतीय हिन्दी-साहित्य सम्मेलन के बारहवें अधिवेशन के सभापति हास्य-रसावतार स्वर्गीय पण्डित जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी, साहित्यभूषण की फुटकर कविताओं का संग्रह किया गया है। मूल्य १) एक रुपया।

मधुस्रवा

लेखक, राजाराम श्रीवास्तव, बी० एस-सी०, एल-एल० बी०

इस अनुपम और नवीन शैली की कविता-पुस्तक में जीवन में मधु बरसाने की पूरी-पूरी क्षमता है। आप भी इसकी रचनाओं को पढ़कर जीवन को रससिक्त बनाइए। मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने।

एकादशी

लेखक, श्रीयुत नत्थाप्रसाद दीक्षित 'मिलिन्द'

इस पुस्तक में मिलिन्द जी की १२ कमनीय कविताओं का संग्रह किया गया है। ये सभी कविताए पौराणिक आख्यायिकाओं के आधार पर नए ढङ्ग से लिखी गई हैं। मूल्य केवल १।-) एक रुपया पाँच आने।

दैत्यवंश

लेखक, श्रीयुत हरदयालुसिं[illegible]

इसमें हिरण्याक्ष से लेकर स्कन्द तक दैत्यवंश के प्रभावशाली नरेशों का वर्णन ब्रजभाषा के ललित छन्दों में पुरानी शैली के अनुसार किया गया है। इस पुस्तक पर देवपुरस्कार दिया जा चुका है। मूल्य ३।-) तीन रुपये पाँच आने।

मधूलिका

प्रगतिवादी कवि श्री रामेश्वर शुक्ल 'अञ्चल' की मनोरम कविताओं का संग्रह। मूल्य १॥) डेढ़ रुपये।

कविता-कलाप

हिन्दी के ख्यातनामा कवि स्वर्गीय पण्डित नाथूराम शङ्कर शर्मा, पण्डित कामताप्रसाद गुरु, बाबू मैथिलीशरण गुप्त तथा स्वर्गीय आचार्य पण्डित महावीरप्रसाद द्विवेदी की चुनी हुई सरस कविताओं का सचित्र संग्रह। मूल्य [illegible] चार रुपये।

द्विवेदी काव्यमाला

आचार्य पण्डित महावीरप्रसाद द्विवेदी की अमर कविताओं का पूर्ण संग्रह। मूल्य २॥≡) दो रुपये ग्यारह आने।

तक्षशिला काव्य

सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थान तक्षशिला के अतीत गौरव का वर्णन। इसमें ओज, प्रसाद तथा माधुर्य्य आदि काव्योचित गुणों का समुचित रूप से समावेश किया गया है। मूल्य ३) तीन रुपये।

किंकिणी

इस पुस्तक के लेखक श्री राजाराम श्रीवास्तव की उत्तमोत्तम फुटकर कविताओं का संग्रह किया गया है। कविताओं की भाषा इतनी मधुर और कल्पना की उड़ान इतनी आकर्षक है कि पाठक कुछ क्षण के लिए उसमें अपनी [illegible] बिना नहीं रहता। मूल्य ॥।) बारह आने।

लक्ष्मणशक्ति

इसी लेखक द्वारा रचित एक [illegible] का आधार रामायण का युद्ध का[illegible] हो गए [illegible]। भाषा सुलझी [illegible] आने।

नाटक

[illegible]णीसंहार नामक [illegible] रुपया पाँच [illegible] नाटकों का संग्रह है [illegible] लेखक, श्रीयुत [illegible] समस्याओं पर विचार [illegible] एक रुपया पाँच आने।

मैकब्यथ

(इस म[illegible] मिला है।) [illegible]र लाला [illegible]ताराम बी० ए०-द्वारा किया [illegible] पवित्र कहानी [illegible] कवि शे[illegible]सपियर के इसी नाम के नाटक [illegible] कविता में कि[illegible] मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने। के युद्ध की स[illegible] तरह खिंच जा[illegible]

[illegible]टेड, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नव-सतसई-सार

गोस्वामी तुलसीदास से लेकर श्री वियोगी हरि तक की नव सतसइयों का सारांश इस पुस्तक में दिया गया है। मूल्य २॥) दो रुपये ग्यारह आने।

सरस सुमन

इस पुस्तक में पवन, भानु, चपला, जुगनू और वसन्त पर पाँच सुन्दर कविताएँ संगृहीत की गई हैं। कवि प्रकृति-चित्रण में कितना कुशल है, इस बात का परिचय प्रत्येक कविता के द्वारा प्राप्त होता है। मूल्य ॥) ग्यारह आने।

गङ्गावतरण

हिन्दी के लब्धप्रतिष्ठ कवि श्रीयुत जगन्नाथदास रत्नाकर का लिखा हुआ यह एक खण्ड-काव्य है। संयुक्त प्रान्त की हिन्दुस्तानी एकाडमी ने इसकी उत्तमता पर मुग्ध होकर रत्नाकर जी को ५००) का पुरस्कार दिया है। मूल्य १।) एक रुपया चार आने।

उद्धवशतक

श्रीकृष्ण के वृन्दावन से मथुरा चले जाने पर गोपिकाओं ने अपनी वियोग-व्यथा का जो संवाद उद्धव के द्वारा उनके [illegible] उसी का वर्णन स्वर्गीय रत्नाकर जी ने अपनी [illegible]ों के द्वारा मौलिक ढङ्ग से किया है। मूल्य [illegible]

सुबहवतन

[illegible]नारायण 'चकबस्त' लखनवी की [illegible] गई उर्दू कविताओं का संग्रह। [illegible]विधा के लिए [illegible]ताओं में [illegible] है। मूल्य [illegible]

[illegible]क मूल्य ६॥)

एक प्रति ॥-)

[illegible]यापारिक क्षेत्र [illegible] की सामाजिक [illegible]-) एक रुपया

शुभदा

श्री शरच्चन्द्र के उपन्यासों से हमारे पाठक भली भाँति परिचित हैं। अतः विशेष विवरण देना व्यर्थ है। इसमें आपको पारिवारिक जीवन का मार्मिक चित्रण मिलेगा। मूल्य १॥) एक रुपया आठ आने।

शीलादेवी

शिक्षापूर्ण तथा चातुर्य्यमय घटनाओं से भरा हुआ मनोहर ऐतिहासिक उपन्यास। मूल्य २॥) दो रुपये ग्यारह आने।

नूतन चरित्र

एक मनोरञ्जक सामाजिक उपन्यास। मूल्य २) दो रुपये।

युद्ध और शान्ति

अनुवादक, श्री रुद्रनारायण अग्रवाल। टॉल्सटॉय के 'वार एण्ड पीस' नामक प्रसिद्ध रूसी उपन्यास का यह हिन्दी रूपान्तर है। इसमें लेखक ने मानव-जीवन का सम्पूर्ण चित्र, अपने समय के रूस की तसवीर और राष्ट्रों की खींच-तान बड़ी खूबी से चित्रित किया है और जीवन तथा मृत्यु के रहस्य का उद्घाटन किया है। मूल्य ५।-) पाँच रुपये पाँच आने।

बलिदान मंदिर

आत्म-त्याग की अपूर्व कथा। मूल्य २) दो रुपये।

रत्नद्वीप

प्रभात बाबू के इसी नाम के उपन्यास का हिन्दी अनुवाद है। मूल्य २॥) दो रुपये ग्यारह आने।

नवीन संन्यासी

इस उपन्यास में ग्राम्य और नागरिक जीवन का यथार्थ और सुन्दर चित्रण किया गया है। हास्य और विनोद की सामग्री भी पर्याप्त मात्रा में है। मूल्य ४॥) चार रुपये ग्यारह आने।

रामलाल

ग्रामीण समस्याओं से परिपूर्ण एक मौलिक सामाजिक उपन्यास मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने।

[illegible] सिमिटेड इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुलसी के चार दल

(प्रथम और द्वितीय भाग)

गोस्वामी तुलसीदास के रामलला नहछू, बरवै रामायण, पार्वतीमङ्गल तथा जानकीमङ्गल का आलोचनात्मक परिचय तथा इन चारों ग्रन्थों की अध्ययनपूर्ण टीका। मूल्य प्रथम भाग का ३) तीन रुपये, द्वितीय भाग का २॥≡) दो रुपये ग्यारह आने।

आचार्य महावीरप्रसाद जी की कुछ रचनाएँ

कालिदास की निरंकुशता

संस्कृत के सुप्रसिद्ध कवि कालिदास की कृतियों की आलोचना। मूल्य ॥) आठ आने।

आलोचनाञ्जलि

इस पुस्तक में स्वर्गीय आचार्य पण्डित महावीरप्रसाद द्विवेदी के आलोचनात्मक लेखों का संग्रह किया गया है। अधिकांश आलोचनायें संस्कृत के प्रतिष्ठित ग्रन्थों की हैं। मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने।

पञ्चपल्लव

इस पुस्तक में प्रभात बाबू की पाँच ऐसी कहानियों का संग्रह किया गया है, जिनमें भारत की धार्मिक, साहित्यि[illegible] और सामाजिक अवस्था का चित्रण विशेष रूप से किया गया है। मूल्य २) दो रुपये।

पत्र-पुष्प

इसमें प्रभात बाबू की सामाजिक समस्या, समाधान, पिल्ला, जासूसी का जञ्जाल, अद्वैतवाद, कन्यादान और सतीदाह नामक कहानियों का संग्रह किया गया है। मूल्य २) दो रुपये।

त्रिधा[illegible]

प्रभात बाबू की तीन कहानियों का संग्रह। मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने।

देशी और विलायती

प्रभात बाबू की चुनी हुई कहानियों का संग्रह। मूल्य ३।-) तीन रुपये पाँच आने।

पुष्करिणी

लेखक, श्रीयुत भगवतीप्रसाद वाजपेयी

यह हिन्दी के प्रसिद्ध कहानी-लेखक श्री भगवतीप्रसाद वाजपेयी की चौदह कहानियों का संग्रह है। इस [illegible] में सम्मिलित की गई सभी कहानियाँ एक से एक बढ़[illegible] हैं और इनमें पीड़ित मानवता के चीत्कार और जागरण [illegible] कलापूर्ण कथायें लिपिबद्ध की गई हैं। मूल्य २) दो रु[illegible]

बारह कहानियाँ

हिन्दी के लब्ध-प्रतिष्ठ कहानी-लेखकों की उच्च कोटि [illegible] रचनाओं का संग्रह। मूल्य १) रुपया।

सोहराब-रुस्तम

फारसी भाषा में शाहनामा नाम की एक बहुत [illegible] प्रसिद्ध पुस्तक है, जिसमें बहुत-से शूरवीरों की कहानि[illegible] लिखी गई हैं। यह कहानी उसी में से ली गई [illegible] मूल्य ॥।-) तेरह आने।

कथा-सरित्सागर

इस पुस्तक में आद्योपान्त बड़ी सुन्दर कथाएँ संगृ[illegible] हैं। प्रत्येक कथा अपने साथ कुछ न कुछ दृष्टान्त [illegible] है। मूल्य २॥≡) दो रुपये ग्यारह आने।

उत्सर्ग

छत्रपति शिवाजी की सहन-शीलता त[illegible] कमला[illegible] [illegible] देश के लिए किए गये अनुपम आ[illegible] त्याग का [illegible] [illegible]प में किया गया वर्णन। मूल्य १।-) एक रुपया पाँच [illegible]

वेणीसंहार नाटक

सं[illegible]कृत के वीररस-प्रधान [illegible]णीसंहार नामक [illegible] हिन्दी अ[illegible]वाद। मूल्य १[illegible] रुपया पाँच [illegible]

सो[illegible]

[illegible] नाटकों का संग्रह है [illegible] लेखक, श्रीयु[illegible] समस्याओं पर विचार [illegible] यह पु[illegible] [illegible]क रुपया पाँच आने। नाटकों में [illegible] गया है। [illegible]

मैकब्यथ

[illegible]र लाला [illegible]ताराम बी० ए०-द्वारा किया [illegible] कवि शे[illegible]सपियर के इसी नाम के नाट[illegible] रायबहा[illegible] मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने। जगत्-विख्या[illegible] अनुवाद।

[illegible]टेड, इलाहाबाद

मैनेजर बुकडिपो—इंडियन प्रेस, लिमि[illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेम-कसौटी

शेक्सपियर के 'रोमियो एण्ड जूलियट' नामक नाटक का हिन्दी अनुवाद। मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने।

पुरु और अलेक्जेण्डर

सुप्रसिद्ध वीर अलेक्ज़ेंडर से मोर्चा लेनेवाले भारत के राजवीर 'पुरु' के अद्भुत पराक्रम तथा शौर्य का नाटक रूप में चित्रण। मूल्य ।≡) ग्यारह आने।

राजा दिलीप नाटक

इसमें रघुवंश में वर्णित राजा दिलीप की कथा नाटक रूप में लिखी गई है। पुस्तक सचित्र है। मूल्य २) रुपये।

इतिहास और पुरातत्त्व-सम्बन्धी पुस्तकें

पूर्व-मध्यकालीन भारत

सन् १२०६ से लेकर सन् १५२६ ईसवी तक के भारत-का बहुत ही प्रामाणिक और खोजपूर्ण इतिहास। ४) चार रुपये।

अलबेरूनी का भारत

ज़नवी के समय में अलबेरूनी नामक एक भारतवर्ष में आया था और उसने यहाँ प्राप्त करके यह उत्तम ग्रन्थ लिखा था।) नौ रुपये एक आना।

निबन्धावली

कृत्यायन ने इस पुस्तक में -विदेश के र्मस्थान के योग किया

वार्षिक मूल्य ६॥)
एक प्रति ॥-)

हावीरप्रसाद स्थानों और न्नत अवस्था

हुएनसाँग का भ्रमण-वृत्तान्त

ईसा की सातवीं शताब्दी के भारतवर्ष में आये हुए हुएनसाँग नामक चीनी यात्री का भ्रमण-वृत्तान्त। इसमें भारत के मुख्य-मुख्य स्थानों का वर्णन है और यहाँ की उस युग की सामाजिक अवस्था पर भली भाँति प्रकाश डाला गया है। मूल्य ५।-) पाँच रुपये पाँच आने।

संसार का संक्षिप्त इतिहास

(प्रथम व द्वितीय भाग) अनुवादक, श्री मदनगोपाल, बी० ए० एल-एल० बी०। यह पुस्तक अँगरेज़ी के प्रसिद्ध इतिहास लेखक एच० जी० वेल्स के इतिहास का हिन्दी अनुवाद है। इसमें पृथ्वी के आदिकाल से लेकर जीसस के निर्माण के पूर्व तक की कथा सक्रम वर्णित है। द्वितीय भाग में जीसस के निर्माण से लेकर संसार के पुनर्निर्माण तक का वर्णन आ गया है। मूल्य प्रत्येक भाग का ४) चार रुपये।

यात्रा-वर्णन

स्वदेश-विदेश-यात्रा

लेखक, श्री सन्तराम, बी० ए० और श्रीमती रामेश्वरी नेहरू

इस पुस्तक में काश्मीर, कुल्लू और आस्ट्रेलिया की यात्रा का वृत्तान्त दिया गया है। इसके सभी अध्याय बहुत ही रोचक हैं। पुस्तक में चित्रों की भरमार है। यदि आप काश्मीर या कुल्लू की सैर के लिए जाना चाहते हैं तो चलने से पहले इस पुस्तक को अवश्य पढ़िए। मूल्य १॥≡) एक रुपया ग्यारह आने।

योरप-यात्रा में छः मास

इस पुस्तक को पढ़कर आप योरप की सभ्यता, वहाँ के भिन्न-भिन्न देशों की सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक अवस्था तथा मुख्य मुख्य स्थानों का हाल घर बैठे जान सकेंगे। मूल्य ४) चार रुपये।

लन्दन-पेरिस की सैर

संसार के सर्वश्रेष्ठ व्यापारिक नगर लंदन तथा अपने सौन्दर्य एवम् सुषमा से संसार के समस्त विलासियों को आकर्षित करनेवाले पेरिस की यात्रा का वर्णन। मूल्य २॥≡) दो रुपये ग्यारह आने।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विदेश की बात

योरप के प्रायः सभी मुख्य-मुख्य देशों की यात्रा का रोचक वृतान्त। मूल्य १॥=) एक रुपये ग्यारह आने।

ईरान

लेखक, महा पण्डित राहुल सांकृत्यायन

यह पुस्तक अतीत और वर्तमान ईरान का सजीव चित्र है। राहुल जी ने ईरान के इतिहास पर विद्वत्तापूर्ण प्रकाश तो डाला ही है साथ ही वर्तमान ईरान का भी, वहाँ की अवस्था से व्यक्तिगत रूप से परिचित होकर, विवरण दिया है। मूल्य १॥=) एक रुपया ग्यारह आने।

कवितावली

(टीकाकार रायबहादुर पण्डित चम्पाराम मिश्र, बी० ए०, एम० ए० एस-बी०) गोस्वामी तुलसीदास की कवितावली की एक बहुत ही विद्वत्तापूर्ण टीका। मूल्य २।-) दो रुपये पाँच आने।

विनयपत्रिका

(सटीक)—गोस्वामी तुलसीदास की रचनाओं में विनयपत्रिका का स्थान बहुत उच्च है। इसमें गोस्वामी जी के विनय-सम्बन्धी पद्यों का संग्रह है। इसके टीकाकार पण्डित रामेश्वर भट्ट। मूल्य ४) चार रुपये।

कुण्डलिया रामायण

टीकाकार सत्यनारायण पाण्डेय। कुण्डलिया छन्दों में लिखित गोस्वामी तुलसीदास-कृत रामायण, सुन्दर टीका-सहित। मूल्य ४) चार रुपये।

तुलसी रत्नावली

गोस्वामी जी के समस्त ग्रन्थों का मन्थन कर इसके विद्वान् सम्पादक ने कुछ रत्न ढूँढ़ निकाले हैं, उन्हीं का यह संग्रह है। दूसरे शब्दों में गोस्वामी जी की समस्त रचनाओं का यह निचोड़ है। मूल्य १॥) एक रुपया आठ आने।

संक्षिप्त पद्मावत

(रायबहादुर, बाबू श्यामसुन्दरदास, बी० ए० द्वारा सम्पादित)

मलिक मुहम्मद जायसी के पद्मावत का संक्षिप्त संस्करण। मूल्य २।-) दो रुपये पाँच आने।

संक्षिप्त सूरसागर

इसमें महाकवि सूरदास के पदों का संग्रह है। [illegible] एक-एक पद भक्ति तथा प्रेम के रस से ओतप्रोत है। [illegible] ३।-) तीन रुपये पाँच आने।

संक्षिप्त बिहारी

महाकवि बिहारी के दोहों का यह बहुत अच्छा संक[illegible] है। बिहारी की सतसई में जितने अधिक अश्लील दोहे [illegible] छाँटकर इसमें से निकाल दिये गए हैं। मूल्य २) दो रु[illegible]

चारण

इस पद्यमय पुस्तक में प्राकृतिक दृश्यों के मनोर[illegible] वर्णनों के अतिरिक्त राजपूताना के कुछ प्रसिद्ध वीरों [illegible] गुणगान किया गया है। मूल्य ।-) पाँच आने।

काव्यकला

साहित्यालोचन का यह संक्षिप्त संस्करण है। [illegible] का कथन है कि इस नवीन रूप में इस पुस्तक का [illegible] ऊँची श्रेणी के विद्यार्थी सफलता-पूर्वक कर सकते हैं। [illegible] साहित्य-शास्त्र के सभी अंगोपांगों का विवेचन तो है [illegible] साथ ही वे अंश निकाल दिये गये हैं जो जटिल [illegible] खंडन-मंडनात्मक हैं। इसके संकलनकार भी लेखक [illegible] पुत्र श्री गोपाललाल खन्ना हैं। मूल्य २) दो रुपये

नया प्रकाशन

नवयुवकों के लिए ह[illegible]

[illegible]त्याग का नाटक

लेखक पं० श्रीराम [illegible]

(नेशनल आर्गेनाइज़िंग क[illegible]

स्काउट एसोसि[illegible]

पुस्तक का विषय नाम से [illegible]णीसंहार नामक नाटक [illegible] टीज एण्ड [illegible]र्क, फ्लाइट [illegible] नाटकों का संग्रह है [illegible] सारजेंट ह[illegible] लेखक, श्रीयुत [illegible] समस्याओं पर विचार [illegible] पुस्तकें पढ़क[illegible] [illegible] [illegible] [

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मई १९४६

सरस्वती

वार्षिक मूल्य ६॥)

एक प्रति ॥-)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Ka

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बालों को लम्बे तथा मनमोहक

बनाने के लिए

कामिनिया आयल (रजिस्टर्ड)

का व्यवहार करें।

यह बालों के लिए सर्वोत्तम उपचार है।

बालों को शीघ्रतापूर्वक बढ़ाता है।

बालों का झड़ना बन्द कर उन्हें काला, चिकना, चमकीला तथा मनमोहक बनाता है। एक बार की परीक्षा पर्याप्त होगी।

सुगन्ध का राजा

ओटो दिलबहार (रजिस्टर्ड)

अपनी मीठी तथा मनमोहक सुगन्ध के लिए विख्यात। दो-चार बूँद कपड़ों पर डाल देने से कपड़े अधिक समय तक सुगन्धित बने रहेंगे।

एक दूसरा सुगन्धित केश-तेल

दिलबहार हेयर आयल (रजिस्टर्ड)

यह तेल अत्यन्त सुगन्धित है तथा बालों की उपयोगिता के लिए 'कामिनिया आयल' के बाद इसका ही नम्बर है। बालों को बढ़ाने के लिए यह विशेष लाभदायक है। एक बार अवश्य परीक्षा करें।

एँग्लो इण्डियन ड्रग एंड केमिकल कं०,

२८५ जुमा मसजिद, बम्बई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केशों को आश्चर्यजनक
गति से बढ़ानेवाला
केश-तैल

शुद्ध बादामरोगन पर बना

अलकपरी

केशों में प्रतिमास ३-४ इञ्च वृद्धि।
६ महीने में एड़ी-चुम्बी केश।

'अलकपरी' का कोर्स

पहले सप्ताह में रूसी-खुश्की दूर हो जाती है।
दूसरे सप्ताह में केशों का झड़ना और उनके सिरों का फटना रुकता है।
तीसरे सप्ताह में नये केश उगते दिखाई देते हैं।
चौथे सप्ताह के अन्त तक केश ३-४ इञ्च बढ़ जाते हैं।
फिर प्रतिमास इसी औसत से बढ़ते रहते हैं।

६ महीने में केश एड़ी-चुम्बी बन जाते हैं।

मूल्य एक शीशी का २॥) है जो एक महीने को काफी होती है। डाक-खर्च व पैकिङ्ग पृथक्। ६ से अधिक शीशियाँ डाक से नहीं भेजी जायँगी। अधिक के लिए ५) पेशगी भेजिए और अपने रेलवे स्टेशन का नाम लिखिए।

प्रतिष्ठित महिलाओं की सम्मतियाँ—

'अलकपरी' से बहुत लाभ है। १ शीशी और तुरन्त भेजिए।
१५-७-४५
कृष्णाकुमारी, धर्मशाला (पंजाब)।

Alak Pari is proving of much use to me. Please send me three more bottles.
4-8-45
Mrs. S. Mandal, 45, The Mall, Lahore.

'अलकपरी' में केशों को बढ़ाने के लिए विद्युत् की शक्ति वर्त्तमान है। मैंने इसे केशों के लिए आश्चर्यजनक गुणकारी पाया है। कृपया ३ शीशियाँ तुरंत भेजें।
७-८-४५
सत्यवती देवी, पासना, जौनपुर।

'अलकपरी' की ५ शीशियाँ इस्तेमाल कीं। बहुत लाभकारी तेल है। कृपया ३ बोतलें शीघ्र भेजें।
३०-८-४५
शान्तिकुमारी, कोटखाई, शिमला

व्यवस्थापिका—'अलकपरी', नया कटरा, इलाहाबाद।

हमारे एजेन्ट—

नई दिल्ली—रायल स्टोर्स, ३३, गोल बाज़ार।
मेरठ—त्यागी ब्रदर्स, बेली बाजार।
बरेली—यूनाइटिड कमर्शियल सिंडीकेट, भूर।
शकन्दराबाद—रामनारायण हरीदास सोनी।
आगरा—प्रियादास धनश्यामदास परफ्यूमर्स, काश्मीरी बाजार।
लखनऊ—सालिग्राम मेहरोत्रा, ६, अमीनाबाद पार्क।
जबलपुर—बाबूलाल राजाराम चौरसिया, गोविंदगंज।
जोधपुर—मेडिकल स्टोर्स, सराफा बाजार।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कमज़ोर और कृश बच्चे डोंगरे-बालामृत के इस्तेमाल से ताक़तवर, पुष्ट और चुस्त बनते हैं।

निर्बल, निश्चेतन और निराश क्यों रहते हो ?

भोजन को पचानेवाला, खून को बढ़ानेवाला, पाण्डु और अन्य रोग के बाद की निर्बलता को नष्ट करनेवाला

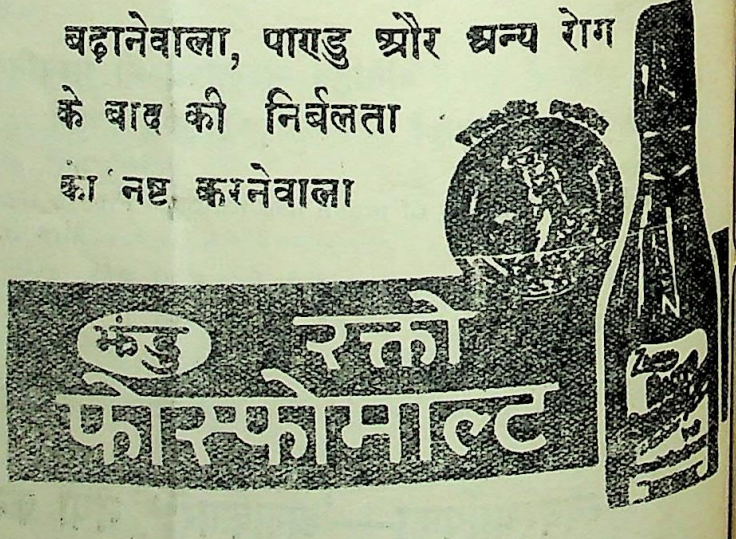

सुमधुर शक्तिवर्धक, अमूल्य औषधि अवश्य सेवन करें

झण्डु फार्माश्युटिकल वर्क्स लि०, बम्बई नं० १४

इलाहाबाद के चीफ एजेन्ट—एल० एम० धोलकिया एण्ड ब्रादर्स, ४६ जान्स्टनगंज।

दिल्ली और यू० पी० के सोल एजेन्ट—कान्तिलाल आर० पारीख, चांदनी चौक, देहली।

यू० पी० एजेंट—कान्तिलाल आर० पारीख, चांदनी चौक, दिल्ली।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निश्चय उसने लाइफबॉय की आदत सीखी है!

वह स्कूल जा रहा है। वहाँ से वह अपने साथ क्या लाएगा? नया ज्ञान, नये तरीक़े—और शायद किसी रोग के कीटाणु भी! माँ अपने छोटे बच्चे को सुरक्षित रहने की शिक्षा देकर बाहर भेजती है—सब से अच्छी शिक्षा लाइफ़बॉय साबुन का दैनिक इस्तेमाल है—जो गंदगी के उस ख़तरे से रक्षा करता है जो स्वस्थ से स्वस्थ बच्चे को भी रोग लगा सकता है।

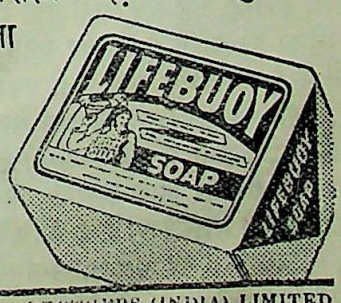

लाइफबॉय का व्यवहार करना एक ज़रूरी आदत है

L 78-23 HI

LEVER BROTHERS (INDIA) LIMITED

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महात्माजी का चमत्कार

प्रेमबटी ने अपनी खूबी से सारी दुनिया में तहलका मचा दिया।
कांग्रेस की राय

(प्रेमबटी वास्तव में एक अद्वितीय औषधि है, पहले हमें इस औषधि पर इतना विश्वास न था, किन्तु जब हमने इसका स्वयं परीक्षण किया तब हम इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि यह औषधि विज्ञापन में दिये गये तमाम रोगों की केवल एकमात्र अचूक औषधि है। हम आशा करते हैं कि भविष्य में यह कम्पनी इससे भी उत्तम औषधियों का निर्माण कर जनता की सेवा पहुँचायेगी।—कांग्रेस देहली)

भारत के योगियों ने वनों और पर्वतों की कन्दराओं में रहकर वह चमत्कार दिखलाये हैं जिससे बड़े-बड़े वैज्ञानिक भी चिकित्सक हैरत में आ गये हैं। आधुनिक चिकित्सकों को जब कोई रोग की औषधि से सफलता नहीं मिलती तब वह लाइलाज घोषित कर देते हैं। परन्तु महात्मा लोग जड़ी-बूटियों की सहायता से मुर्दे को भी जिला देने का दावा करते हैं। भाइयो, ध्यान से पढ़ो तथा अपने इष्ट-मित्रों को सुनाओ। यह लेख जो लिखा गया है, कोई गप्प नहीं है बल्कि मेरे जीवन की सच्ची घटनायें हैं जो आपके सम्मुख रखता हूँ। मेरा जन्म एक धनी परिवार में हुआ। अपने पिता का लाड़ला पुत्र होने के कारण मैं धन और व्यसन में घिरा रहता था, लेकिन फिर भी मैं सुखी नहीं था। कुसङ्गत में पड़कर मुझे जरियान और प्रमेह रोग हो गया। पहले तो एक दो साल मैंने लोकलाज के कारण अपना भेद छिपाये रखा परन्तु रोग ने भयानक सूरत अख्तियार कर ली, और घबड़ा उठा, संसार में चारों ओर अँधेरा मालूम होने लगा तब मेरी आँखें खुलीं। इलाज शुरू किया गया, बड़े-बड़े डाक्टरों, हकीमों, वैद्यों के फीस रूप में रुपये और कीमती दवाइयों के खरीदने में पानी की तरह रुपया बहाने लगा, फिर भी मैं निराश ही रहा। अब मैं घबरा उठा और चारों तरफ़ से अन्धकार दिखलाई देने लगा और सोचने लगा कि इस दुःखमय जीवन से मर जाना बेहतर है।

पर यह बीस साल पहले की बात है। अब आज मैं खुश हूँ। आज उस परमात्मा की कृपा से आरोग्य हूँ। मेरे तीन स्वस्थ बच्चे भी हैं जो बिलकुल आरोग्य हैं।

हुआ क्या! मुझमें इतना परिवर्तन कैसे हो गया! यह जानकर आपको आश्चर्य होगा कि मैंने एक दवा सेवन की। जो दवा मैंने सेवन की, वह एक महान् त्यागी परोपकारी साधु की बनाई हुई थी, जो समय काटने के लिए गाँव से कुछ दूर ईंट के खेड़े पर रम रहे थे। यह मेरा सौभाग्य था कि और लोगों के साथ मैं भी दर्शनों के लिए जा पहुँचा। दैवी शक्ति मेरे दुःखी जीवन के पिछले अध्याय उनके हृदय-पट पर खिंच गये और मेरी आँखों ने हृदय का सारा भेद अपने आप उस महा पुरुष पर प्रकट कर दिया। मेरी कच्ची उम्र पर महात्मा को दया आई और उन्होंने मुझे कुछ जड़ी-बूटियाँ एकत्र करने की आज्ञा दी। मैंने वैसा ही किया और तब उनके सम्मुख ही मुझे उनके आदेश और निजी देख-रेख में 'प्रेमबटी' तैयार करनी पड़ी। यद्यपि मुझसे ४० दिन लगातार 'प्रेमबटी' का सेवन करने को कहा गया था, तथापि केवल बीस दिन के सेवन से ही मुझमें परिवर्तन हो गया। मेरी कमजोरी और तमाम गुप्त बीमारियाँ जड़ से दूर हो गईं। पीले और उदास मुख पर लाली दौड़ने लगी, मैं में उन्माद झूमने लगा और हृदय में जवानी का जोश उमड़ आया। महात्माजी के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के साथ ही वादे को पूरा करने के लिए दुःखी जनों के निमित्त पिछले बीस साल से लगातार मैं इस प्रयोग को मुफ्त बाँट रहा हूँ। यह पत्र-पत्रिकाओं में भी छप चुका है। मुझे हर्ष है कि इस अमृत-तुल्य प्रयोग ने सैकड़ों की प्राण-रक्षा की, हजारों को मौत के मुँह निकाला और लाखों का इससे भला हुआ। महात्मा-प्रदत्त 'प्रेमबटी' का नुस्खा इस प्रकार है; नोट कर लें—

शुद्ध त्रिफला ५ तोला, त्रिकुट चूर्ण ५ तोला, शुद्ध सूर्यतापी शिलाजीत ५ तोला, शुद्ध बङ्ग भस्म ६ माशा, असली छार केसर ३ माशा, असली अकरकरा ६ माशा, असली नेपाली कस्तूरी ३ रत्ती। इन सब औषधियों को कूट-छानकर खरल डालकर ऊपर से शीतल चीनी का तेल २० बूँद, सन्दल तेल २० बूँद, विरोजे का तेल २० बूँद एक-एक करके मिलावे। बाद ताजी ब्राह्मी बूटी के अर्क में १२ घण्टा घोंटकर झरबेरी बेर के बराबर गोलियाँ बनावें और छाया में सुखा लें। एक-एक सुबह-शाम पाव भर गाय के दूध में एक तोला शक्कर मिलाकर सेवन करें। इसकी प्रशंसा हम अपने ही मुँह से नहीं करते बड़े-बड़े वैद्यों, डाक्टरों, हकीमों, सेठ-साहूकारों तथा रईसों, जमींदारों, सरकारी आफिसरों तक ने इसकी सराहना की है। श्रीजमुनादत्त शर्मा, झोंकर का कहना है कि यह बटी धातु का पतलापन, २० प्रकार के प्रमेह के लिए अक्सीर है।

'प्रेमबटी' में कोई हानिकारक चीज़ नहीं पड़ती और गुणकारी चीजें नुस्खे से ही प्रकट हैं। यह औषध वीर्य का पतलापन, बीसों प्रकार के प्रमेह, पेशाब के साथ चूने की तरह वीर्य का जाना, पाखाने के समय धातु का जाना, स्वप्नदोष, सुस्ती, कमजोरी, नस डाइबटीज, मधुमेह, सूजाक, जवानी में बुढ़ापे की-सी हालत हो जाना, असली ताकत की कमी, स्मरण-शक्ति कमजोर पड़ जाना, स्त्रियों के भी प्रदर-सम्बन्धी रोग दूर करके अत्यन्त ताकत देती है और नस-नस में नवजीवन का सञ्चार करती है। अन्त में भाइयों को जिन्हें फ़ुरसत नहीं मिलती या शुद्ध औषधि प्राप्त नहीं कर सकते यह प्रयोग स्वयं बनाकर दाम के दाम में भेजने की व्यवस्था की है। ४० दिन के लिए पूरी खुराक विधिवत् ८० गोलियों का मूल्य ५॥=) ८० और २० दिन के लिए ४० गोलियों के दाम ३=) डाकखर्च ॥।-)

पता—बाबू श्यामलालजी रईस, प्रेमबटी आफिस नं० (S. A.) धनकुट्टी, कानपुर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

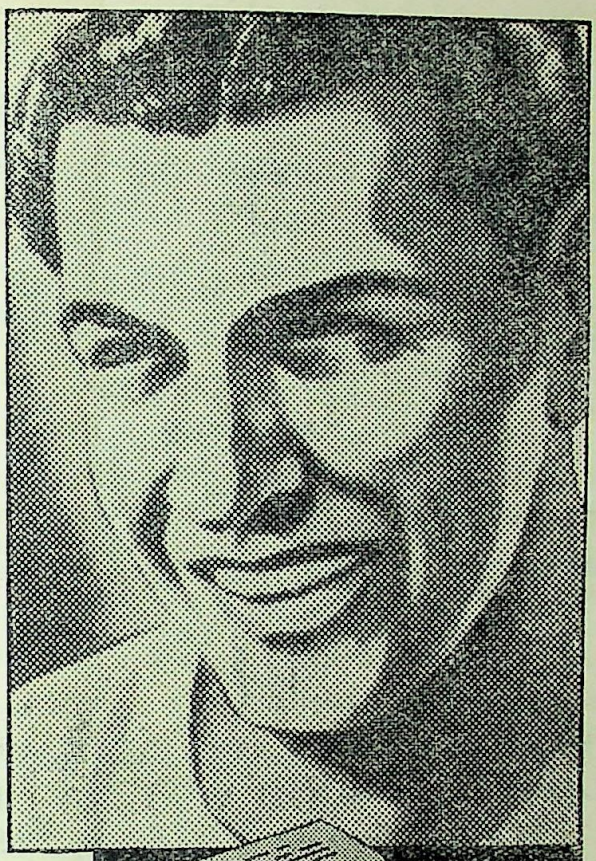

भाइयो!...

चर्म-स्वास्थ्य के लिये रैक्सॉना प्रयोग कीजिये

जल्दी में यह धारण मत न बनाइये कि रैक्सॉना केवल स्त्रियो के रंग को निखारने वाला एक नया साबुन है। चर्म स्वास्थ का महत्त्व जाननेवालों सब के लिए रैक्सॉना एक ज़रूरी टॉयलेट साबुन है। यह ऐसा ताज़गी और स्फूर्तिदायक साबुन है जिसे इस्तेमाल कर के पुरुषों को आनन्द आता है। इस आकर्षक, हरे, और शीघ्र फेन देनेवाले साबुनका ये सबसे बड़ा लाभ है कि यह स्वास्थदायक और चर्म-किटाणुविनाशक 'कैडिल' से बनाया गया है। रैक्सॉना का शीघ्र बननेवाला ज्यादा फेन स्फूर्ति और स्वास्थदायक 'कैडिल' को शरीर के प्रत्येक रुओं में—जहाँसे सब चर्मरोग और दाग प्रायः शुरू होते हैं— पहुँचा देता है ऐसे आपकी सारी त्वचा किटाणुरहित, मुलायम, और साफ़ हो जाती है। अब आप जान सकते हैं कि नियमित रूप से रैक्सॉना का प्रयोग करने से आप निश्चित ही अपने चर्म को स्वास्थ और सुरक्षित रख सकते हैं। इसलिए इस हरे, और शीघ्र फेन देने वाले साबुन को इस्तेमाल करना शुरूकर दीजिए—और करते रहिए।

नोट—यह याद रखिए कि शारीरिक सौन्दर्य का एक मात्र आधार है चर्म-स्वास्थ। और एक पुरुष कोभी चर्म को आकर्षक बनाने का उतना ही अधिकार है जितना कि एक स्त्री को।

रैक्सॉना बच्चे के लिए आदर्श साबुन है। रैक्सॉना का कैडील शरीर के दर्दों को मिटता है और शरीर को सुखे पनसें बचाता है।

★ रैक्सॉना में मिलाया गया कैडिल किटाणु-विनाशक, स्वास्थ-दायक और ताजगी देनेवाले तेलों का मिश्रण है जोकि चर्म को स्वास्थरखने में बहुत गुणकारी सिद्ध हुआ है। साइंसदानों ने भी इसके गुणों के कारण इसकी सराहना की है।

रैक्सॉना मरहम प्रयोग कीजिये।

फुन्सी, फोड़े, ऐकजीमा, मुँहासे, आँख की कलौंस, झुर्रियाँ, ददौरे आदि सभी चर्म रोगों में रैक्सॉना मरहम लगाये। यद्यपि अभी सप्लाई कम है फिरभी बहुत से दूकानदारों के यहाँ यह तिकोने टिन मिल सकते हैं।

RP. 28-23-40 HI

REXONA PROPRIETARY LIMITED

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री रत्नागिरी जी का अद्भुत चमत्कार

जिसने समस्त संसार को चकित कर दिया

रक्त, बल, वीर्य, उत्साह तथा उमङ्ग ही जीवन सफल बना सकती है।

ध्यान देने योग्य अमूल्य उपहार

अपूर्व कायापलट (रजिस्टर्ड)

निःस्वार्थ संसारसेवी भारतीय महात्माओं ने औषध-विज्ञान को अपनी महान् खोजों और अमूल्य रत्नों से अलंकृत किया है। आधुनिक चिकित्सक मर्ज और मरीज़ जब दोनों को लाइलाज घोषित करके शर्मिन्दा नहीं होते, वहाँ इन्हीं महात्माओं की बिना दाम की जड़ी-बूटियाँ मुर्दों को भी जिला सकने में समर्थ हुई हैं। ऐसी सच्ची घटनायें आये दिन एक न एक पढ़ने और सुनने में आया करती हैं।

बीस वर्ष पूर्व कल्हाती पहाड़ी पर विचरण करनेवाले स्वामी रत्नागिरी जी महाराज की सेवा एक बूढ़ा ग्वाला करने लगा। योगिराज को एक दिन उस वृद्ध की कमजोरी पर दया आ ही गई और उन्होंने निम्नलिखित योग की ६ मात्रायें उस बूढ़े को दीं। नासमझी के कारण छहों मात्रायें एक साथ खा जाने से उस वृद्ध ग्वाले में अपूर्व शक्ति आ गई और रत्नागिरी जी के परिश्रम-पूर्वक इलाज करने पर भी बुढ़ापे के बावजूद उसे तीन विवाह करने पड़े। इस पर राजा, रईस, नवाब और रसिक जन महान् योग को जानने के लिए आतुर हो उठे। नवाब बहावलपुर के ससुर हाजी हयात मोहम्मदखाँ साहब ने बाबा जी की बहुत सेवा करके इसे प्राप्त कर लिया और लाहौर के पं० ठाकुरदत्त शर्मा को बतलाया। शर्मा जी ने इसे प्रथम तथा दो अन्य लिखकर तीनों से उत्तम बाजीकरण बतलानेवाले को एक हजार रुपये का नकद इनाम देने की घोषणा की। इसे आज बीस साल के लगभग हो गये किन्तु अभी तक कोई पुरस्कार विजय नहीं कर सका। मथुरा के ख्यातिप्राप्त बाबू हरिदास जी ने इसे चिकित्सा-चन्द्रोदय में छपवाया और इसने भी स्वयं बनाकर सैकड़ों दुर्बल, नपुंसक, वीर्य-विकारी रोगियों पर बरता। तत्काल लक्षण-चमत्कार देख जन-साधारण के लाभार्थ अनेक पत्र-पत्रिकाओं में छपवा दिया। आप भी बनाकर लाभ उठावें।

योग—शुद्ध बुरादा फौलाद २० तोला, शुद्ध श्वेत मल्ल १ तोला, शुद्ध कपूर १॥ माशा, एक घण्टा घृतकुमारी में घोटकर, मिट्टी के कुज्जे में मजबूत बन्द कर पाँच सेर कण्डों में फूँके। दुबारा एक तोला हरताल वर्की शुद्ध १॥ माशा कपूर शुद्ध में तीसरी बार गन्धक आमलासार शुद्ध १ तोला कपूर १॥ माशा में चौथी बार शुद्ध संखकारित पारद १ तोला, कपूर १॥ माशा को ऊपर की भाँति १६ आँच दे। फिर उसको, कढ़ाई में डालकर बराबर इन्द्रवधू डाल दे और नीचे आग जलावे, जब इन्द्रवधू जलकर राख हो जावे तो हवा देकर उड़ा दे। अपूर्व कायापलट तैयार है। चार-चार चावल सायं मक्खन, मलाई के साथ खावें ऊपर मिश्री-मिला दूध पीवें।

मथुरा के हरिदास जी लिखते हैं—इस योग के सेवन से एक हफ्ते में एक आदमी का वजन चार पौंड बढ़ गया, दूसरे का चेहरा लाल सुर्ख हो गया। भूपाल के वैद्यराज पं० बालकृष्ण शर्मा ने ३५० रोगियों पर बरता और आशा से अधिक गुणकारी पाया। रत्नाकर-सम्पादक श्री छोटेलाल जैन आयुर्वेदाचार्य ने गृहचिकित्सा पथ-प्रदर्शक में छापा कि इतना प्रचण्ड गुणकारी दूसरा नहीं देखा। श्री धर्मेन्द्र विद्यावतंस सिद्धान्त-शास्त्री आदि ब्राता गुरुकुल बरला जिला मुजफ्फरनगर ने लिखा है—"अपूर्व कायापलट" नामक औषध सेवन कर रहा हूँ। जैसी प्रशंसा वैसा ही गुण है। बहुत लाभ हुआ। श्री चिरञ्जीलाल जैन आयुर्वेदशास्त्री मालिक कल्याण औषधालय बाह (आगरा) का कहना है कि मैंने २२५ रोगी अपूर्व कायापलट द्वारा ऐसे कि धातु-विकार, नपुंसकता, बवासीर, रक्त-विकार आदि जैसे से ग्रसित थे, पूर्ण स्वस्थ किये।

हमारा दावा है कि केवल सात दिन सेवन से शरीर में दौड़ता नजर आयेगा। २१ दिन में चेहरा लाल काश्मीरी की तरह चमकने लगेगा। ४० दिन में नपुंसकता, मधुमेह डायबटीज, निर्बलता दूर हो जाती है। स्त्रियों के प्रदर दूर गर्भधारण शक्ति आती है। जिगर व मेदे की शक्ति बढ़ा भूख दूनी करता है। कफ, तिल्ली की खराबी, खाँसी, नज़ला जुकाम, बदन दुखना, खून का पतलापन, आँखों का पीलापन चिनगारी-सा उड़ते दीखना, बार-बार थूक गिरना, दमा हर तरह की कमजोरी तुरन्त दूर कर नव-जीवन का संचार है। जाड़ा, गरमी, बरसात सभी मौसमों में एक-सा लाभ है। योग भली भाँति समझाकर लिखा है। फिर भी आप न बना सकें तो बनी-बनाई १६ आँच दी हुई ४० दिन ८० मात्रा डाक-खर्च सहित ६॥।=) में हम भेज देंगे। डाक-माफ, पैकिंग, मनीआर्डर-फीस अलग। कोई बात समझ आवे तो जवाबी कार्ड भेजकर उत्तर मँगा लें।

पता— रूपबिलास कम्पनी,

(रसायनशाला) नं० ४२७, धनकुट्टी, कानपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जे. के. का नाम भारतीय टेक्सटाइल मिलों में अपनी उत्कृष्ट बुनाई और छपाई के कारण सारे भारतवर्ष में प्रख्यात है। अत्यंत आकर्षक नमूनों और रंगों के होते हुए भी जे. के. के कपड़े १५% से २०% तक अधिक मज़बूत होते हैं।

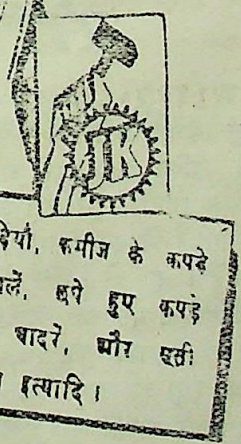

जे. के. काटन स्पीनिंग एन्ड वीविंग मिल्स कम्पनी लीमिटेड, कानपूर.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

A. C. 3

"मैं इन दो विशेष कारणों से नेशनल सेविंग्ज़ सर्टिफ़िकेट्स ख़रीदने के पक्ष में हूं:—(१) यदि हम जन साधारण के रहन-सहन में उन्नति चाहते हैं तो राष्ट्रीय निर्माण की योजनाओं को कार्यरूप देना आवश्यक है। इस कार्य में जनता में बचत का अभ्यास बड़ा ही उपयोगी सिद्ध होगा। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये अभी से जनता में बचत की महत्ता का प्रचार होना चाहिये ताकि अनूकुल समय आने पर यह बचत सौभाग्यशाली हिन्दुस्तान के निर्माण के काम में लाई जा सके। (२) ये नेशनल सेविंग्ज़ सर्टिफ़िकेट्स पूर्णतया सुरक्षित ही नहीं बल्कि आजकल की परिस्थिति में अच्छी आय भी देते हैं। मूलब्याज के लिये सरकार उत्तरदायी है और इन सर्टिफ़िकेट्स पर ४-१/६% प्रति वर्ष सामान्य ब्याज मिलता है जिस पर इन्कम टैक्स नहीं लगता।"

Nalini Ranjan Sarker

नलिनी रंजन सरकार

भूतपूर्व मेम्बर वाईसरायज़ एग्ज़ैकिटिव कौन्सिल, भूतपूर्व फ़ाइनैन्स मिनिस्टर बंगाल, प्रेज़ीडेण्ट हिन्दुस्तान कोआपरेटिव इन्श्योरन्स सोसायटी लिमिटेड।

संक्षिप्त विवरण

(१) आप ५), १०), ५०), १००), ५००), १०००) या ५०००) के मूल्य के नेशनल सेविंग्ज़ सर्टिफ़िकेट्स ख़रीद सकते हैं।

(२) एक व्यक्ति ५०००) से अधिक मूल्य के नेशनल सेविंग्ज़ सर्टिफ़िकेट्स नहीं ख़रीद सकता। ये इतने उपयोगी हैं कि इनका राशन करना ही उचित समझा गया है। हां दो व्यक्ति मिलकर १०,०००) के सर्टिफ़िकेट्स मोल ले सकते हैं।

(३) १२ वर्ष में इनका मूल्य ५०% बढ़ जाता है। प्रत्येक रुपया १॥) बन जाता है।

(४) इस प्रकार अवधि पूरी होने पर ४-१/६% वार्षिक ब्याज मिलता है।

(५) इस ब्याज पर इन्कम टैक्स नहीं लगता।

(६) ये २ वर्ष पश्चात भुनाये जा सकते हैं। (५) का सर्टिफ़िकेट १-१/२ वर्ष पश्चात ही भुनाया जा सकता है) परन्तु वास्तविक लाभ इसी में है कि १२ वर्ष से पहिले इन्हें न भुनायें।

(७) जिनकी बचत थोड़ी है वह १), ॥), ।) वाले सेविंग्ज़ स्टाम्पस ख़रीद सकते हैं। ५) के स्टैम्पस जमा होने पर एक नेशनल सेविंग्ज़ सर्टिफ़िकेट मिल जायेगा।

(८) सर्टिफ़िकेट्स और स्टाम्पस डाकखानों, सरकार द्वारा अधिकृत एजण्टों अथवा सेविंग्ज़ ब्यूरो से प्राप्त हो सकते हैं।

आप अपनी बचत से ५०% लाभ उठाइए

नेशनल सेविंग्ज़ सर्टिफ़िकेट्स ख़रीदिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्यम

प्रत्येक परिवार, शाला तथा कालेज के लिए अत्यन्त उपयुक्त सिद्ध होनेवाला मासिक पत्र

प्रत्येक अंक में घरेलू मितव्ययिता, आरोग्य, खोजपूर्ण खबरें, वैज्ञानिक जानकारी और उद्योग, व्यापार, बागवानी-विषयक लेख पढ़िए।

आजकल की महँगाई तथा धान्य-अकाल के इन दिनों में उद्यम सभी लोगों के लिए उपयोगी होगा।

आज ही वार्षिक मूल्य रु० ५-८-० भेजकर स्थायी ग्राहक बन जाइए।

उद्यम मासिक, धर्मपेठ, नागपुर

समाजवाद

ले०—माननीय सम्पूर्णानन्द, शिक्षा तथा अर्थ मन्त्री, युक्तप्रान्त।

समाजवाद अपने विषय की सर्वोत्तम पुस्तक है। हिन्दी साहित्य-सम्मेलन द्वारा श्री मंगलाप्रसाद तथा मुरारका पारितोषिक इसे प्राप्त हो चुका है। अपनी लोकप्रियताके कारण थोड़े ही समय में इसके तीन संस्करण समाप्त हो चुके। अब इसका परिवर्धित चतुर्थ संस्करण प्रकाशित हो रहा है। लेखक ने इस संस्करण में बहुत सी आवश्यक एवं उपयोगी बातें जोड़ दी हैं। परन्तु दाम प्रचारके विचार से कम रक्खा गया है। मूल्य २ रुपया मात्र।

श्री काशी विद्यापीठ पुस्तक-भंडार,

विद्यापीठ रोड, बनारस छावनी

आकर्षक तथा सुन्दर

फोटो एन्लार्जमेंट

अपने चित्रों के अत्यन्त कलापूर्ण तथा सजीव फोटो एन्लार्जमेंट कराने के लिए हमारे पास भेजिए। आपका चित्र कैसा भी पुराना हो, हम उसके सुन्दर कलायुक्त एन्लार्जमेंट करके भेज देंगे। बड़े करने की दरें, उनकी उत्तमता की तुलना में, बहुत कम हैं।

८½ इंच×६½ इंच ७) प्रति २० इंच×१५ इंच २२॥) प्रति
१२ इंच×१० इंच १२॥) प्रति २३ इंच×१७ इंच २५) प्रति
१५ इंच×१२ इंच १५) प्रति ३० इंच×२४ इंच ४०) प्रति
४० इंच×३० इंच ६२॥) प्रति

जो आर्डर पहले प्राप्त होता है, पहले उसे भेजा जाता है। तीन चौथाई मूल्य मनीआर्डर द्वारा पेशगी आना आवश्यक है। शेष वी० पी० द्वारा। एन्लार्जमेंट आपकी रुचि के अनुसार भेजे जावेंगे।

एकेडमी आफ़ आर्ट, मुरार (ग्वालियर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तन्दुरुस्त बच्चा

एक तन्दुरुस्त बच्चा दस बीमार बच्चों से बेहतर है।

अमूमन दो बरस से कम उम्र के बच्चे का दूध छूट जाना बच्चों की बीमारी का सबब है। बच्चे की तन्दुरुस्ती की कद्र करो और आज ही हमारे कारखाने की मशहूर दवा कंट्रोल आफ बर्थ मँगाकर इस्तेमाल करो। बच्चा दो बरस तक दूध पीकर एक दिन तन्दुरुस्त जवान बनेगा। कीमत फी शीशी २॥) महसूल डाक अलावा।

नजला

दायमी नजला वह मुहलिक मर्ज है जिससे दिमागी नशो व नुमाँ कुम्हलाकर रह जाती है। भला-चंगा इंसान दिमागी काम के मतलब का नहीं रहता। रफ़्ता-रफ़्तादायक नजला दर्द सर में बदल जाता है और तमाम दिमागी कूवतों का सत्यानाश कर देता है और इंसान कोई इल्मी काम नहीं कर सकता। इस मर्ज का तीर बहदफ इलाज है हमारे कारखाने की शुहरा-आफाक दवा 'बरीनी' जिसके इस्तेमाल से आपका दायमी नजला जाता रहेगा। कीमत फी शीशी ३) तीन रुपये सिर्फ। महसूल डाक-अलावा।

नामी मोडश केमिकल वर्क्स, ६२३ हवेली आजम खाँ, देहली।

प्रदर रोग स्त्रियों का भयानक शत्रु है

प्रदर रोग, जिसको लोग लिकोरिया भी कहते हैं, स्त्रियों की सुन्दरता और जवानी को नष्ट करनेवाला भयानक शत्रु है। लज्जा वश बेचारी रोग को छिपाये रहती हैं और दिन-रात घुला करती हैं। यह उनकी भूल है। भयानक रोग का इलाज कराने में लज्जा नहीं करना चाहिए। इस बीमारी से स्त्रियों के गुप्त शरीर से लाल, काला, घुमैला या श्वेत रंग का बदबूदार पानी या लेस निकलता रहता है। महीना ठीक समय पर नहीं होता है जिसके कारण कमर, रीढ़, सिर में दर्द, शरीर में जलन, मन मलीन, उठने बैठने में थकावट, भूख का कम लगना, बदन दुबला और कमजोर हो जाना, मूर्छा, बेहोशी आदि रोग हो जाते हैं और सन्तान होती है और यदि होती भी है तो दुबली और कमज़ोर होती है। ऐसी अवस्था में भारत-विख्यात वैद्यरत्न सत्यदेव ने अपूर्व प्रदान करनेवाली २५ वर्ष की आजमूदा **नारी-संजीवन** नामक दवा का आविष्कार किया जिसके द्वारा आज तक सहस्रों स्त्रियों इस भयानक रोग के पंजे से छुड़ाया है। इस नारी-संजीवन के सेवन से तमाम बीमारियाँ दूर होकर स्त्रियाँ सुन्दर और तन्दुरुस्त हो और सन्तानें सुन्दर, बलवान्, दीर्घायु पैदा होती हैं। यदि आवश्यकता हो तो आज ही पत्र डालकर एक डिब्बा नारी-संजीवन मँगाकर इसके अपूर्व गुणों का चमत्कार देखें। कीमत एक डिब्बा ३=) ; डाकखर्च माफ ; पैकिंग खर्च अलग।

मँगाने का पता—

रूपविलास कम्पनी, नं० ४२७, धनकुट्टी, कानपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेख-सूची

१—सम्पादकीय ३७५
२—व्यवसाय-वाणिज्य पर युद्ध का प्रभाव—प्रोफेसर श्रीनारायण अग्रवाल, एम० ए०, बी० कॉम०, कामर्स कालेज, वर्धा ३८३
३—तुम राजा मैं रंक—श्री दुर्गाशङ्करप्रसाद सिंह ३८८
४—जीवन (कविता)—श्री 'अज्ञात' ... ३९०
५—बीसवीं शताब्दी में उर्दू—मौलवी महेशप्रसाद, आलिम-फाजिल ३९१
६—हत्या—पण्डित श्रीराम शर्मा ३९५
७—लघिमा (कविता) —श्री नन्दकिशोर ... ३९९
८—प्रज्वलित इंडोनेशिया—श्री सन्त निहालसिंह ४००
९—मध्य-पूर्व का विग्रह केन्द्र—पण्डित देवीदयाल चतुर्वेदी 'मस्त' ४०६
१०—!!! (कविता)—श्री रांगेयराघव ... ४१२
११—सदानन्द की काव्य-पद्धति—श्री भगवतीप्रसाद सिंह, बी० ए० ... ... ४१३
१२—यह जेल है जेल—श्री 'अजेय' ४२२
१३—बाबू कालिनाथ राय—पण्डित आत्म-स्वरूप शर्मा ४२४
१४—रात में और प्रात में (कविता)—श्री तेजनारायण काक, एम० ए० ... ... ४२७
१५—पलायन—श्रीमती विद्या गुप्त ४२८
१६—किसानों का ऋण—प्रोफेसर प्रेमचन्द मलहोत्र ४३५
१७—गीत (कविता)—श्री गङ्गाप्रसाद 'कौशल' ४३७
१८—अश्रु-हास—श्रीमती निर्मला मित्र ... ४३८
१९—विचार-विमर्श ४४४
२०—विविध विषय ४५२
२१—नई पुस्तकें ४५९
२२—सामयिक साहित्य ४६३

चित्र-सूची

१—युक्तप्रान्त के कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल सम्बन्धी ६ चित्र ... ... ३७६ के सामने
२—आजाद हिन्द फौज और इंडोनेशिया सम्बन्धी ८ चित्र ३७६ और ३७७ के बीच में
३—दिल्ली की सन्धिवार्ता सम्बन्धी १ चित्र ३८० के सामने
४—हिज हाईनेस सर आगा खाँ ,, ,,
५—तिब्बत के शिष्टमण्डल के सदस्य ३८१ के सामने
६—डा० एल० सी० जैन और सर गुलामहुसेन हिदायतुल्ला (२ चित्र) ,, ,,
७—एशिया माइनर सम्बन्धी ७ चित्र ३८२ और ३८३ के बीच में
८—स्वर्गीय बाबू कालिनाथ राय ४२५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हलवे का स्वाद खाने से मिलता है।

हमारे यहाँ की बनी क्रीमोला टाफी
फ्रूट ड्राप्स तथा
रेशमी मिठाइयों का स्वाद लीजिए।
सभी दूकानों में मिलती हैं।

निर्माता—इण्डस्ट्रियल रिसर्च हाउस,
इंडियन प्रेस बिल्डिंग,
इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादक—देवीदत्त शुक्ल : उमेशचन्द्र मिश्र

मई १९४६ वैशाख २००३; भाग ४७, खण्ड १ संख्या ५, पूर्ण संख्या ५५७

सम्पादकीय

युक्तप्रान्त में कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल

हैलेटशाही का अन्त हो गया। दफ़ा ९३ का शासन-विधान समाप्त हो गया। गवर्नर के सलाहकारों का दौर-दौरा दूर हो गया। प्रान्तीय शासन की नकेल उन व्यक्तियों के हाथ में आ गई जो कल तक सरकार के विद्रोही थे; जिन्हें अपने ही प्रान्त की जेलों में सड़ाया जा रहा था; जिनकी आवाज जनता के कानों तक न पहुँच सके, इस-लिए एक ओर तो सरकार जेलों की दीवालों को और भी चौड़ी और भी अभेद्य, बनाने का प्रयत्न करती रहती थी और दूसरी ओर मशीनगनों और बन्दूकों की आवाज से जनता के कानों को सदैव के लिए बहरा कर डालने का।

आज शासन-सूत्र के सञ्चालक सच्चे जन-प्रतिनिधि हैं; वे जनता के विश्वासपात्र हैं, उसके अपने हैं, उसके दुःख-सुख के भागीदार हैं।

छः-सात वर्षों के इस लम्बे समय में जनता ने जो कुछ देखा और सहा, उसे थोड़े शब्दों में व्यक्त करना कठिन है। छाती पर पत्थर रखकर उसने नौकरशाही का उन्माद देखा; आँखें झुकाकर और लज्जा से गड़कर अपनी बहू-बेटियों पर अत्याचार होते देखे; हाय-हाय करने का भी अधिकार न पाकर उसने अपने सगे-सम्बन्धियों को गोली खाकर कुत्ते की मौत मरते देखा, इसलिए कि मारने-वाले को प्रति लाश, नौकरशाही की ओर से कुछ टके पुरस्कार-स्वरूप मिल जाते थे। मुट्ठी भर अन्न और हाथ भर वस्त्र के लिए उसे अदना-से-अदना सरकारी नौकरों की जूतियाँ साफ करनी पड़ीं, जनता का खून चूसकर मोटे बननेवाले साहूकारों और चोर-बाजारियों की जेबें भरनी पड़ीं। कानून का मनमाना प्रयोग हुआ; आर्डिनेंसों के बल पर शासन चला; सङ्गीनों की नोकों पर शान्ति उतारी गई। यह सब होता रहा 'सलाहकारों' की नाक के ठीक नीचे।

वे दिन जनता के लिए तपस्या के थे। वह बाहर तप रही थी और उसके नेता जेलों के भीतर तप रहे थे।

आज नेता बाहर हैं। वे ही आज शासन-सूत्र के सञ्चालक हैं। फलतः जनता का अत्यधिक आशावादी हो उठना स्वाभाविक है।

कांग्रेस के तपोनिष्ठ सेनानियों के लिए मन्त्रिपद कमाई करने का साधन नहीं है। वह उनके लिए काँटों की सेज है। वे अपना कर्त्तव्य समझते हैं। जनता की शिकायतों का, उसकी आवश्यकताओं का, उसकी मूक सहनशीलता का उन्हें प्रत्यक्ष अनुभव है। वे जनता के बीच रहनेवाले हैं, शिमला शैल के निवासी, दूसरे लोक के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीव नहीं। यदि ऐसा न होता तो ऐश्वर्य की गोद में पाली-पोसी हुई देवी मन्त्रिपद का उत्तरदायित्व ऊपर आते ही चैत की चिलचिलाती धूप में कानपुर की उन गलियों का पैदल चक्कर काटती न दिखाई देती, जहाँ प्लेग अपना विकराल जनपदध्वंसी रूप प्रकट कर रहा है; और अपनी आँखों यह देखने की चेष्टा न करती कि सरकारी पुर्जों में वह ढीलापन कहाँ पर है जिसके कारण हजारों रुपए पानी की तरह बहाए जाने पर भी जनता को सुख-शान्ति की नींद नसीब नहीं होती!

मन्त्रिमण्डल को न जाने कितनी समस्याएँ शीघ्राति-शीघ्र सुलझानी हैं। उन्हें देशभक्तों को कारागार-मुक्त कराना है; उन्हें बेदखल किसानों के आँसू पोंछने हैं; उन्हें अकाल से भयभीत जनता को धैर्य बँधाना और उसके पेट भरने का प्रबन्ध करना है; उन्हें उन मजदूरों की चिन्ता करनी है जो महँगाई के भार में पिसे जा रहे हैं, पर जिनकी मजदूरी में वृद्धि नहीं हो सकी है। साथ ही उन्हें रिश्वतखोरों के दाँत तोड़ने हैं, चोर-बाजारियों का मुँह काला करना है, सरकारी अफसरों को नम्रता और नागरिक शिष्टाचार का पाठ पढ़ाना है; उनके तालू से विष की पोटली निकाल फेंकना है, जिससे जनता उन्हें अपना सहायक और रक्षक समझ सके, हौआ नहीं। और यह सब कुछ मन्त्रिमण्डल को वर्षों में नहीं, कुछ महीनों में ही—कुछ दिनों में ही—कर डालना है।

मन्त्रिमण्डल का मार्ग सीधा और सरल नहीं है। उसके अधिकार अधूरे हैं। उसकी सरकार बहुमत की अवश्य है पर सर्वदल की नहीं। बहुमत की सरकार शक्तिशाली होती है; पर उतनी नहीं, जितनी कि सर्वदल की सरकार हो सकती है। यदि मुसलिम लीग के प्रान्तीय नेता मौलाना आजाद का निमन्त्रण स्वीकार कर लेते और शासन-कार्य में योग देने को तैयार हो जाते, तो प्रान्तीय सरकार अपेक्षाकृत अधिक सक्षम हो जाती! पर वे ऐसा क्यों करने लगे! उन्होंने अपने दिमाग जिन्ना साहब के पास गिरवी जो रख दिए हैं। फिर केन्द्र में अभी राष्ट्रीय सरकार नहीं है। इस वस्तु-स्थिति में प्रान्तीय शासनाधिकार अधूरा और सारहीन है और इच्छा होते हुए भी, सीमित अधिकारों में हाथ बँधे रहने के कारण, जनता को नाममात्र ही लाभ पहुँचाया जा सकता है। सिविल सर्विस का शासन-सञ्चालन में काफी हाथ है। उसके यन्त्र कितना और कैसा योग देंगे, यह भी निश्चित नहीं है।

इधर जनता की दशा उस रोगी की तरह है जो किसी कष्टकर व्याधि से ६-७ साल तक पीड़ित रहने के पश्चात् अपने विश्वासपात्र वैद्य के पास पहुँचा हो। रोग की अवधि को तो वह जैसे-तैसे काटता रहा, पर अब, वैद्य के पास पहुँचकर, उसे एक दिन का विलम्ब भी असह्य प्रतीत हो रहा है।

युक्तप्रान्त की जनता अपने नेताओं का, अपने सच्चे शुभचिन्तकों का, हृदय से स्वागत कर रही है और वह पुलकित शरीर और आनन्दाश्रुपूर्ण नेत्रों से द्रुतगति से सञ्चालित होते हुए उनके शासन-चक्र की गति-विधि को परखने की चेष्टा कर रही है।

युक्त-प्रान्तीय मन्त्रिमण्डल का कार्यारम्भ

प्रथम अप्रैल से पदभार ग्रहण करके युक्तप्रान्तीय मन्त्रिमण्डल ने अपूर्व तत्परता के साथ कार्यारम्भ कर दिया है। वर्त्तमान की ज्वलन्त समस्याओं को उसने सर्वप्रथम हाथ में लिया है। यह देखकर आश्चर्य होता है कि सरकारी मुहकमों में—जो अपनी टालमटूल और 'फाइल' करने की नीति के लिए प्रख्यात हैं—इतनी तेजी कैसे आ गई है। यहीं पर हमें शोषक सरकार और रक्षक सरकार की कार्य-प्रणाली का भेद स्पष्ट दिखाई देने लगता है। शोषक सरकार के मन्त्रिगण प्रथम तो शिखर-शैल से नीचे उतरते ही नहीं। यदि उतरते भी हैं तो गा-बजाकर और इतना शोर-गुल करके कि सरकारी मुहकमे और अमले पहले से ही तैयार हो जाते हैं और अपनी कमजोरियों को छिपाने का पूरा प्रबन्ध कर लेते हैं। अपराधियों को रँगे हाथों पकड़ने के लिए अचानक निरीक्षण के लिए पहुँच जाना उन मन्त्रियों के कार्यक्रम के विरुद्ध था पर लोकप्रिय सरकार के मन्त्री जेलों का निरीक्षण करने पहुँचेंगे तो अचानक—बिना किसी पूर्व-सूचना के। अस्पतालों को देखेंगे तो अचानक! महामारी-पीड़ित इलाकों को देखेंगे तो अचानक स्वयं और पैदल घूम-घूमकर। दङ्गे की जाँच करेंगे तो स्वयं और अविलम्ब पहुँचकर। यही नहीं, वे पूछ-ताछ का कार्य नौकरों पर नहीं छोड़ेंगे स्वयं साधारण-से-साधारण मनुष्य से मिलकर और बात-चीत करके मामले की असलियत पर पहुँचने का प्रयत्न करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

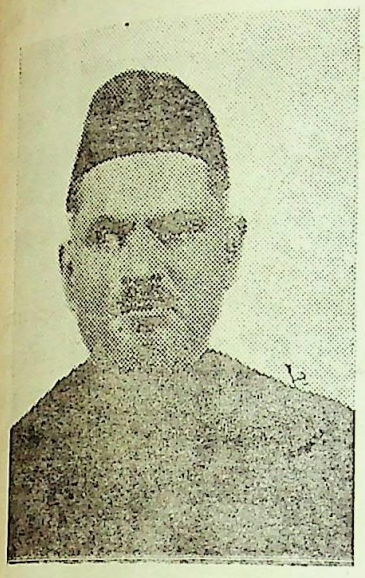

युक्तप्रान्त का
कांग्रेसी-मन्त्रिमण्डल

बाईं ओर—
माननीय हा० मु० इब्राहीम।
[माल-मन्त्री]

दाहनी ओर—
माननीय डा० सम्पूर्णानन्द।
[शिक्षा-मन्त्री]

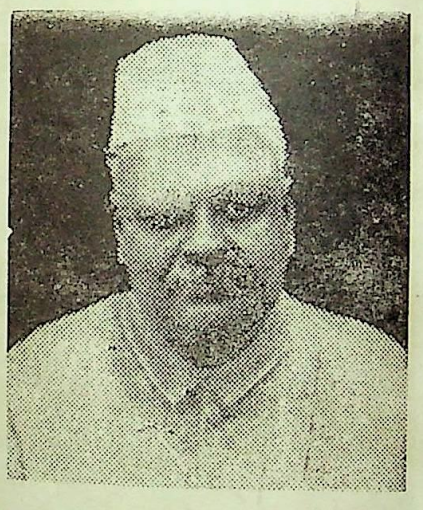

माननीय
पण्डित
गोविन्दवल्लभ पन्त
[प्रधान-मन्त्री]

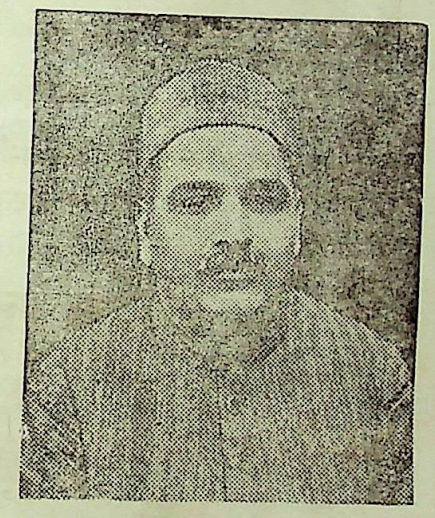

माननीय
श्री
रफीअहमद किदवई
[व्यवस्था-मन्त्री]

बाईं ओर—
माननीया श्री विजयलक्ष्मी पण्डित
[स्वास्थ्य-मन्त्री]

दाहनी ओर—
माननीय डा० कैलासनाथ काटजू।
[न्याय-मन्त्री]

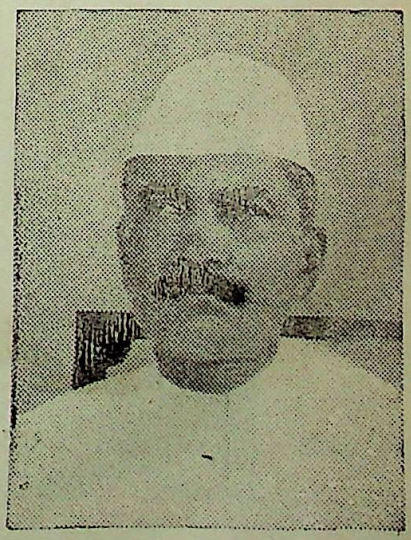

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

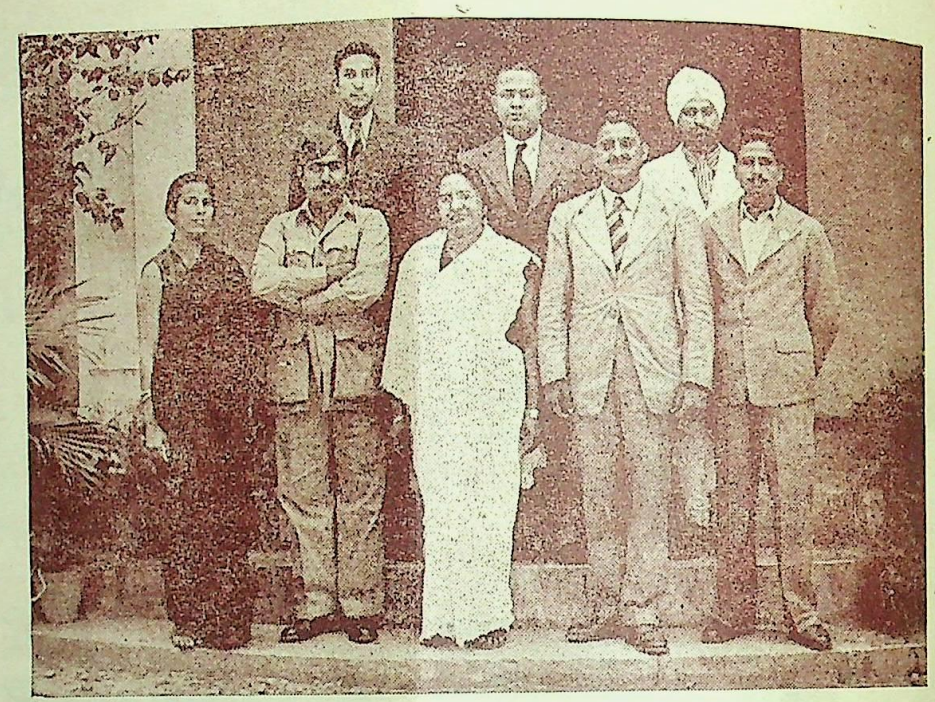

'आजाद हिन्द फौज' के कमाण्डर कर्नल एस० एम० हुसेन (बाईं ओर से दूसरे) और मेजर-जनरल शाहनवाज कुछ सम्बन्धियों के साथ

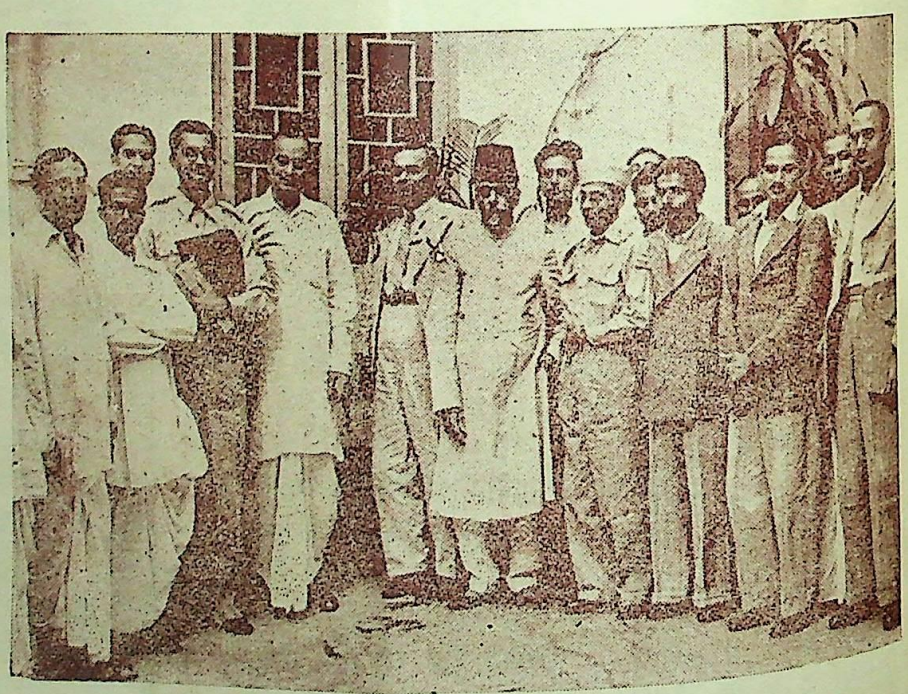

राष्ट्रपति मौलाना अबुलकलाम आजाद—मलाया को जानेवाले 'कांग्रेस मेडिकल मिशन' के साथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

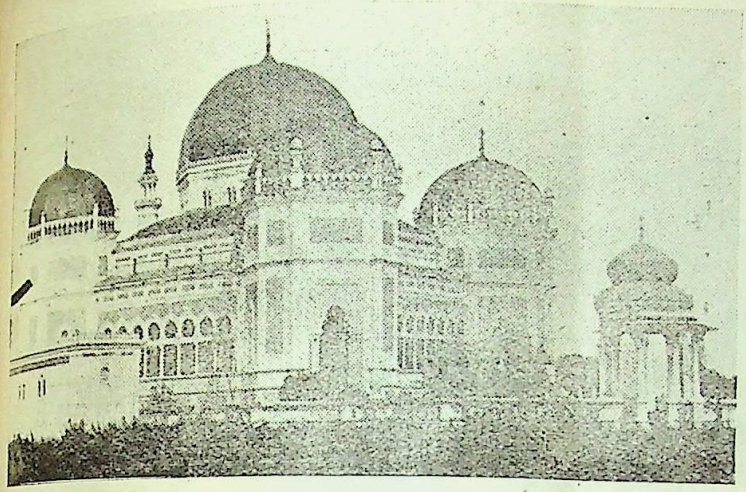

इंडोनेशिया की एक सुन्दर मसज्जिद

इंडोनेशिया के एक सम्भ्रान्त नागरिक

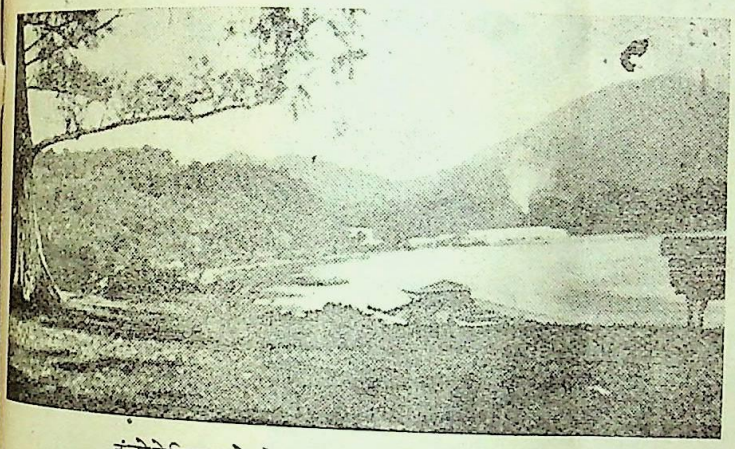

इंडोनेशिया के सेबांग बन्दर का एक दृश्य

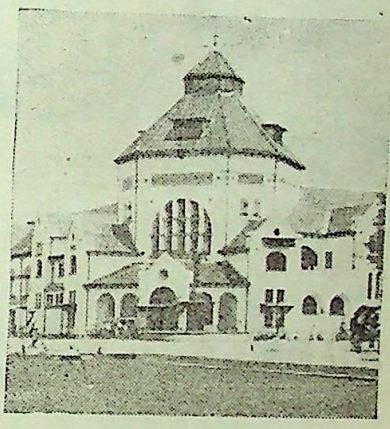

मडन का एक सुन्दर बैंक

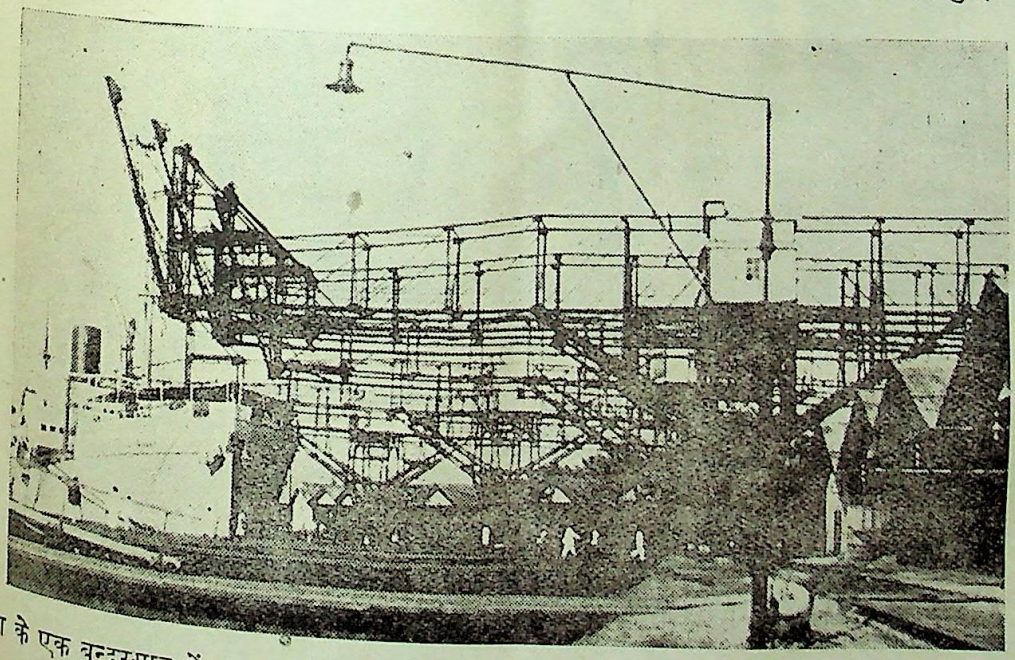

जावा के एक बन्दरगाह में घाट पर से जहाज में कोयला लादने की नितान्त आधुनिक ढङ्ग की एक मशीन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

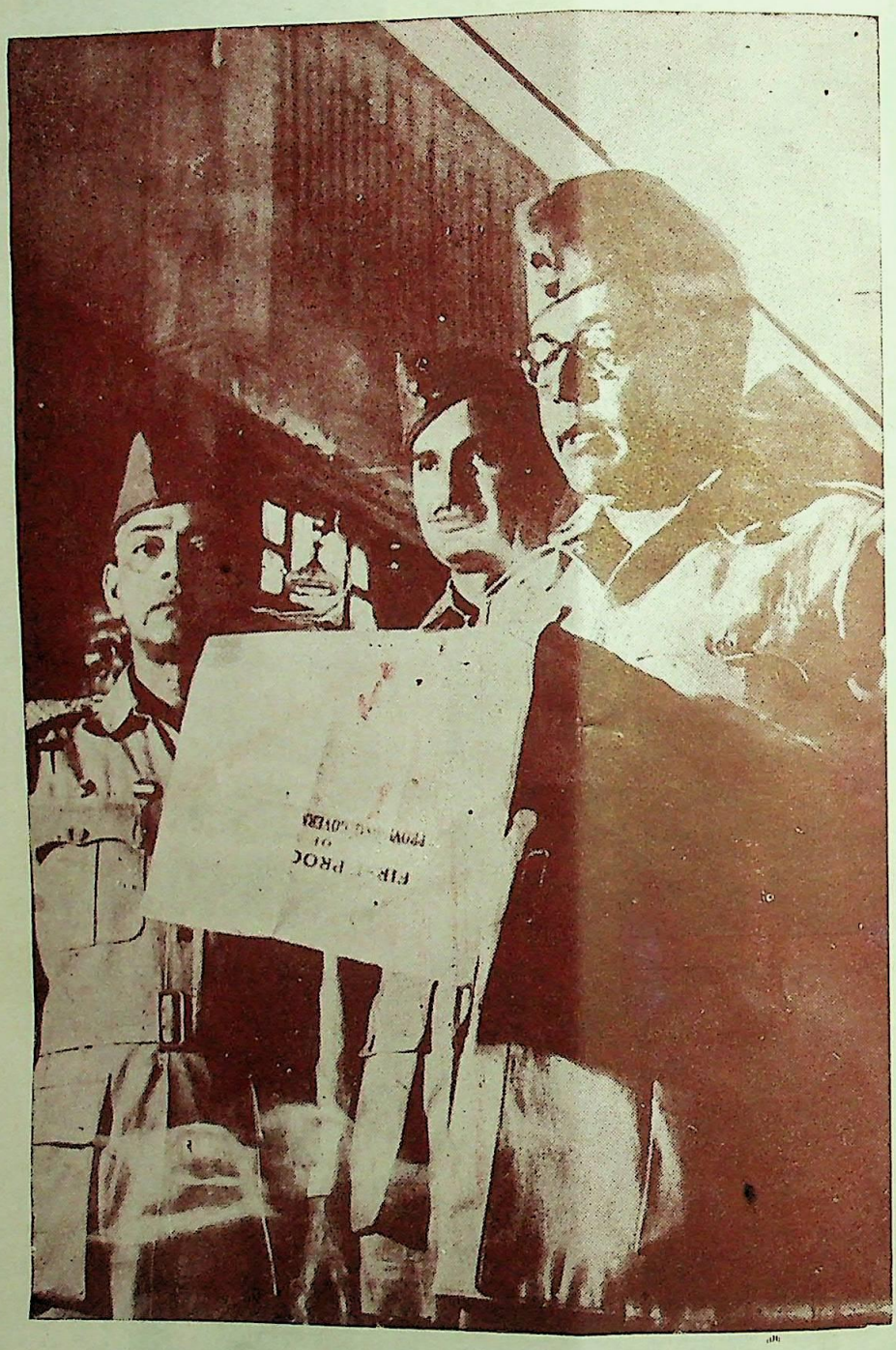

नेताजी
श्री सुभाषचन्द्र बोस

(रंगून में 'आजाद हिन्द फौज' की स्थापना के समय लिया हुआ चित्र)

नेताजी रंगून में आजाद हिन्द फौज के सम्बन्ध में अपना प्रथम घोषणापत्र पढ़ रहे हैं ! बाईं ओर से प्रथम जनरल ए० सी० चटर्जी और द्वितीय जनरल ज्ञानी हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्न की कमी का प्रश्न मन्त्रि-मण्डल के सामने सबसे महत्त्वपूर्ण है। पिछले कुछ महीनों से जनता का राशन आधा कर दिया गया है और यह कहा जा रहा है कि प्रान्त में ही नहीं, समूचे भारत में अकाल पड़ना अवश्यम्भावी है जिससे लाखों मनुष्यों के भूखों मर जाने की पूरी आशङ्का है। इस प्रश्न को प्रधान-मन्त्री माननीय पण्डित गोविन्द-वल्लभ पन्त ने स्वयं अपने हाथों में लिया है। अनेक ब्राडकास्टों और वक्तव्यों-द्वारा वे जनता को आश्वासन दिला रहे हैं कि प्रान्त में अकाल की वैसी सम्भावना नहीं है, जैसा कि ढोल पीटा जा रहा था। केवल कुछ पहाड़ी जिलों की हालत चिन्तनीय है। पर यह निश्चय है कि एक भी आदमी भूख से नहीं मरने दिया जाएगा। आशा है कि अब राशन की घटी हुई मात्रा की भी अविलम्ब पूर्ति कर दी जाएगी।

राजबन्दियों की मुक्ति भी एक आवश्यक कार्य था। पदारूढ़ होते ही मन्त्रिमण्डल ने सब बन्दियों के लिए जेल के फाटक खोल दिए हैं और अब तक लगभग सात सौ राजबन्दी मुक्त हो चुके हैं। जिन बन्दियों को छोड़ने में सलाहकारों की सरकार समझती थी कि उनके मुक्त होते ही अँगरेजी सरकार का तख्ता उलट जाएगा और ग़दर हो जाएगा, वे भी अब स्वतन्त्र हैं और फिर भी जनता और सरकार के सारे कार्य यथानियम चल रहे हैं।

साम्प्रदायिक तनातनी हमारे देश की एक अपनी विशेषता है। विशेषतः इस प्रान्त में जब कांग्रेस-सरकार अधिकारारूढ़ होती है तब साम्प्रदायिक दङ्गों और साम्प्रदायिक उपद्रवों की बाढ़ आ जाती है। कांग्रेसी मन्त्रिगण इस रोग का निदान अच्छी तरह कर लेते हैं और वे उसकी चिकित्सा भी जानते हैं। अभी मन्त्रिमण्डल को पदग्रहण किए पूरे तीन सप्ताह नहीं हुए और चार-चार स्थानों में साम्प्रदायिक दङ्गे हो चुके हैं या कराए जा चुके हैं। हमारे मन्त्रिगण अच्छी तरह समझते हैं कि इन दङ्गों या उपद्रवों को 'साम्प्रदायिक' नहीं कहा जा सकता; क्योंकि इनके मूल में 'साम्प्रदायिक' नहीं 'राजनीतिक' असहिष्णुता रहती है और ये इसी लिए रचे जाते हैं जिससे कांग्रेसी सरकार को कार्य करने में असुविधा हो और उसकी बदनामी हो।

इन तात्कालिक प्रश्नों के अतिरिक्त अनेक स्थायी प्रश्न अभी ऐसे पड़े हुए हैं जिनका हल शीघ्र ही निकालना होगा। हमारे मन्त्रिगण ने पिछले दिनों जनपदोपयोगी अनेक कार्यों का श्रीगणेश किया था, पर कारणवश पद त्याग कर देने के कारण वे कार्य सलाहकारों की सरकार के समय में या तो बन्द कर दिए गए या पीछे धकेल दिए गए क्योंकि उनके सामने भारत-रक्षा (?) के प्रश्न के सामने अन्य सभी प्रश्न गौण थे। शिक्षाप्रसार, निरक्षरता-निवारण, नशाबन्दी आदि ऐसे ही कार्य हैं। पिछले वर्षों में नशाखोरी को जो अभूतपूर्व प्रोत्साहन दिया गया है, वह किसी सरकार के लिए लज्जास्पद है। नशे के ठेकों के नीलामों की दर दस-दस गुनी बढ़ गई है। नशे की चीजों की बिक्री इतनी बढ़ी है कि उसके आँकड़े देखकर आश्चर्य होता है। जनता के नैतिक स्तर को गिराकर और उसके नैतिक ह्रास के मूल्य पर जो सरकार अपना कोष भरना चाहती है, उसे क्या कहा जाए।

सन् १९४२ के सरकारी दमन से पीड़ित परिवारों का प्रश्न अपना अलग महत्त्व रखता है। यदि कांग्रेस मन्त्रि-मण्डल के युग में भी उन्हें उचित सहानुभूति प्राप्त नहीं हुई तो कब होगी!

इसी प्रकार की अन्य भी अनेक समस्याएँ हैं जो अनतिकाल में ही कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल को निबटानी हैं। आशा है, उसके शासन-चक्र की रफ्तार तेज ही बढ़ती रहेगी और वह दृढ़तापूर्वक अपने सामने की बाधाओं को छिन्न-भिन्न करता हुआ दिन दूने वेग से अग्रसर होगा।

डच-इंडोनेशियन सन्धि

इंडोनेशिया की समस्याओं के सम्बन्ध में पाठक श्री सन्त निहालसिंह का विद्वत्तापूर्ण लेख 'सरस्वती' के इसी अङ्क में पढ़ेंगे। वहाँ की सन्धिवार्ता के नाटक का प्रथम और द्वितीय अङ्क समाप्त हो चुका है। अर्थात् इंडोनेशिया में जो वार्ता चल रही थी वह समाप्त हो चुकी है और डच प्रतिनिधि इस सम्बन्ध में लन्दन जाकर ब्रिटिश सरकार से भी परामर्श कर चुके हैं। अब तीसरा अङ्क हालैंड में प्रारम्भ होगा जिसके लिए इंडोनेशियन प्रतिनिधि हालैंड पहुँच चुके हैं।

अब तक सन्धिवार्ता किस अवस्था पर पहुँच चुकी है, इसका कुछ आभास जनरल वानमूक के उस भाषण से मिलता है, जो उन्होंने लन्दन में प्रेस कान्फरेंस के समक्ष

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गत १३ अप्रैल को किया था। उन्होंने बतलाया है—"हालैंड और इंडोनेशिया के बीच विधान-सम्बन्धी जो अन्तिम समझौता होगा, उसके अनुसार दो में से प्रत्येक देश साझे के स्वार्थों के सम्बन्ध में बराबरी के साझीदारों की तरह व्यवहार करेगा। पर एक निश्चित अवधि के बाद, यदि इंडोनेशिया चाहे तो, उसे पृथक् हो जाने का पूरा अधिकार होगा। वैदेशिक मामले और रक्षा-विभाग साझे के समझे जाएँगे पर स्थानीय रक्षा-विभाग इंडोनेशिया के नियन्त्रण में रहेगा। बटाविया के सम्बन्ध में भी हम एक-दूसरे के अधिक निकट आ गए हैं और अब सिद्धान्तों पर नहीं, तथ्यों पर वार्ता चलाने की परिस्थिति में हैं और यह प्रयत्न कर रहे हैं कि जो समझौता हो वह अपने ढङ्ग का सर्वोत्तम हो। इंडोनेशिया के कुछ भागों को विशेषतया जावा को उच्च कोटि के आत्मशासन के अधिकार दिए जाएँगे।"

इस सन्धिवार्ता की कुछ अपनी विशेषताएँ है जिनकी ओर हठात् ध्यान आकर्षित होता है और मन में सन्देह उत्पन्न होने लगता है कि कहीं यह सब नाटकमात्र तो नहीं है। पहली विशेषता तो यह है कि डाक्टर सोइकार्नो को और उनके दल को इस वार्ता में सम्मिलित नहीं किया गया है। पाठकों को ज्ञात होगा कि डाक्टर सोइकार्नो का इंडोनेशिया की राजनीति में वही स्थान है जो भारतीय राजनीति में गान्धी जी का है। गान्धी जी और कांग्रेस को अलग रखकर भारत के साथ की गई सन्धिवार्ता का जो मूल्य हो सकता है, निस्सन्देह वही मूल्य डाक्टर सोइकार्नो और उनके दल को अलग रखकर इंडोनेशिया के साथ की गई सन्धिवार्ता का है।

दूसरी विशेषता यह है कि एक ओर तो सन्धिवार्ता हो रही है और दूसरी ओर डच सैनिक जहाजों में भर-भरकर इंडोनेशिया में उतारे जा रहे हैं। इसका कारण पूछने पर वानमूक साहब ने बड़ी लापरवाही के साथ कह दिया कि 'यह तो एक फौजी सञ्चालन है जो एक बार प्रारम्भ होकर सहसा रुक नहीं सकता।' अच्छा फौजी सञ्चालन है! क्या यह फौजी सञ्चालन यह सिद्ध नहीं करता कि डच वास्तविक और शान्तिपूर्ण समझौते के इच्छुक नहीं हैं। वे केवल आतङ्क जमाकर इंडोनेशियनों पर बलपूर्वक समझौता लाद देना चाहते हैं!

यदि यह अनुमान ठीक है तो हम कह सकते हैं कि इस बार भी मित्रराष्ट्र अपनी उसी पुरानी भूल को दुहरा भर रहे हैं, जिसे वे इंडोनेशिया में एकाधिक बार कर चुके हैं। उदाहरणार्थ, प्रारम्भ में ही जहाँ चाहिए तो यह था कि जापानियों के आत्मसमर्पण के पश्चात् गत १७ अगस्त को डाक्टर सोइकार्नो-द्वारा प्रतिष्ठित राष्ट्रीय सरकार को स्वीकार कर लिया जाता, वहाँ ब्रिटिश सरकार ने भारतीय और ब्रिटिश सैनिकों से भरे हुए जहाज इंडोनेशिया में भेजकर मामले को अत्यधिक पेचीदा बना दिया। बहाना उस बार भी यही किया गया था कि ये सैनिक जापानियों के पूर्ण निरस्त्रीकरण के उद्देश्य से भेजे जा रहे हैं, जब कि वस्तुतः जापानी सैनिकों का प्रयोग उलटा इंडोनेशियनों के स्वाधीनता-प्रयत्न को दबाने के लिए किया गया था।

इस बार भी कहा गया है कि 'आन्तरिक व्यवस्था को ठीक रखने के लिए इंडोनेशिया के पुलिस-विभाग को अभी कुछ दिनों तक डच सैनिकों की आवश्यकता पड़ेगी, इसलिए डच सेना का वहाँ रहना आवश्यक है।' पर यह भी बहाना भर प्रतीत होता है। उचित यही है कि डच सेना को तुरन्त इंडोनेशिया से हटा लिया जाए और इस प्रकार समझौते की सद्भावना का पूरा-पूरा परिचय दिया जाए। अन्यथा कूटनीति से भरी ये चालें तृतीय-विश्वयुद्ध की भूमिका बन सकती हैं, जो पिछले युद्ध से कहीं अधिक विनाशक होगा और जिसमें विजय किसी पक्ष की हो, हालैंड का संसार के मानचित्र पर निशान भी शेष न रहेगा।

तृतीय विश्वयुद्ध की ओर

आशा यह की जा रही थी कि द्वितीय महायुद्ध समाप्त हो जाने पर कुछ समय के लिए संसार से शोषण और अत्याचार उठ जाएँगे और जनता को सुख और शान्ति की नींद सोने का अवसर मिलेगा। पर तीन विजय महत् शक्तियों में जो पैंतरेबाजी हो रही है उसे देख हुए यही मानना पड़ता है कि संसार शीघ्रतापूर्वक तृतीय विश्वयुद्ध की ओर ले जाया जा रहा है। पिछले दि सुरक्षा समिति की जो बैठक न्यूयार्क में हुई, उसमें स्पष्ट हो गया है कि मित्र-राष्ट्रों में मैत्री का कोई नैति आधार नहीं है। उनमें से प्रत्येक अपने निजी स्वा को देख रहा है। इस अपनी-अपनी खींचातानी में कि की परिस्थिति अधिकाधिक उलझन-भरी होती जा रही है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

योरपीय देशों में इन तीनों बड़े राष्ट्रों की पैंतरेबाजी अपनी चरम सीमा पर पहुँच चुकी है। जो देश रूस के प्रभाव-क्षेत्र में हैं उनमें वह उनकी राष्ट्रीयता को मिटाकर साम्यवाद फैलाने का भरसक प्रयत्न कर रहा है। वह यह भी प्रयत्न कर रहा है कि उन देशों की सीमाएँ तोड़ दी जाएँ और वे सोवियट सङ्घ में सम्मिलित हो जाएँ। जो देश इँग्लैंड और अमेरिका के हाथों में पड़े हैं उनमें भी अनेक प्रकार की शोषण-योजनाएँ चल रही हैं जो पूँजीवादी और साम्राज्यवादी मनोवृत्ति की उपज हैं। साथ ही ये दोनों देश साम्यवाद के प्रभाव-विस्तार से काफी चिन्तित भी दिखाई दे रहे हैं और इसके लिए वे जर्मनी को पुनरुज्जीवित करने का प्रयत्न कर रहे हैं। यही कारण है कि इनके अधिकृत देशों में नाजी पार्टी को गुप्त आन्दोलन चलाने का मौका मिल रहा है।

मध्यपूर्व में इन तीन बड़ों की प्रतिद्वन्द्विता और भी रङ्ग ला रही है। ईरान के प्रश्न को लेकर सुरक्षा-समिति की पिछली बैठक में गतिरोध ही उत्पन्न हो गया था। ईरान और रूस के बीच समझौता हो जाने से वह झगड़ा दूसरे ही रूप में समाप्त हो गया जिसमें विजय एक प्रकार से रूस की ही रही। अर्थात् वह ईरान में जो कुछ चाहता था, वह उसे मिल गया। इसी लिए अब उसने ईरान से अपनी सेनाएँ हटा लेने का कार्य प्रारम्भ कर दिया है। ईरान सरकार अजरबैजान की स्वाधीनता स्वीकार करने को तैयार हो गई है; यह भी रूस की ही विजय है, जिससे ब्रिटेन और अमेरिका की चिन्ता बढ़ गई है।

दर्दानियाल और स्वेज का प्रश्न भी कम पेचीदा नहीं है। यदि इन मामलों में भी रूस की चल गई तो ब्रिटेन और अमेरिका के लिए निस्सन्देह एक खतरा उत्पन्न हो जाएगा।

प्रशान्त का मामला और भी विकट है। 'न्यूज आफ दि वर्ल्ड' के संवाददाता ने निम्नाङ्कित संवाद भेजकर संसार को चौकन्ना कर दिया है—

"साइबेरिया-तट से ७०० मील दूर जापान के उत्तर में स्थित कुराइल द्वीप में, जो कि सोवियट के अधिकार में है, रूस ने सैनिक तैयारियाँ प्रारम्भ कर दी हैं। इस द्वीप में रूस सभी प्रकार की सैनिक सामग्री भारी मात्रा में पहुँचा रहा है। बड़े-बड़े हवाई अड्डे बनाए जा रहे हैं और तटों पर लम्बी मार की तोपें लगाई जा रही हैं जिनका मुँह अमेरिका-अधिकृत इलाकों की ओर है। शस्त्रागारों में जापानियों को काम दिया जा रहा है। कुराइल द्वीप-पुञ्ज में रूस को छोड़कर अन्य देशों का निवासी नहीं जा सकता। युद्धपोत तथा फौजी अफसर भी अधिकाधिक संख्या में वहाँ एकत्र किए जा रहे हैं।"

जापान में अणुबम का प्रयोग होने के बाद से ही प्रशान्त में रूस अतिरिक्त सावधानी से काम ले रहा है। यह परिस्थिति चिन्ताजनक है। पूर्व, मध्यपूर्व और योरप तीनों क्षेत्रों में काँटे से काँटा भिड़ा दिखाई दे रहा है। फलतः तीन क्षेत्रों में से किसी में, या तीनों में एक साथ, कब लोहा बजने लगेगा, यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता।

रूस-ईरान-समझौता

संयुक्त राष्ट्रसङ्घ की सुरक्षा-समिति के गत अधिवेशन में रूस और ईरान के झगड़े को लेकर गतिरोध उत्पन्न हो गया था और रूसी प्रतिनिधि समिति से रुष्ट होकर बाहर निकल आया था। इस वस्तुस्थिति में सुरक्षा-समिति ने इस मामले को आपसी निबटारे के लिए ६ मई तक के लिए टाल दिया था। उस समझौते की घोषणा अब हो गई है। समझौते में तय हुआ है कि रूस और ईरान दोनों के मिले जुले प्रबन्ध में एक तेल-कम्पनी खड़ी की जाएगी। जो तेल इस प्रकार तैयार होगा उसे बेचने और काम में लाने का दोनों राष्ट्रों को समान अधिकार होगा। रूसी सेनाएँ ६ मई तक ईरान को खाली कर देंगी।

अभी तक ऐंग्लो-अमेरिकी तेल-कम्पनियों का ईरानी तेल पर एकच्छत्र अधिकार था, जो झगड़े की असल जड़ थी। अब इसमें रूस का भी भाग हो गया है। मित्र-राष्ट्रों की शक्ति का सन्तुलन तेल के परिमाण पर ही निर्भर करता है।

इस क्षेत्र में तेल के अनुसन्धान करने का कार्य रूस ने बड़ी मुस्तैदी से आरम्भ कर दिया है जिससे ऐंग्लो-अमेरिकी कम्पनियाँ चिन्ता में पड़ गई हैं। हजारों की संख्या में रूसी इंजीनियर मशीनरी से लैस तेब्रिज में मौजूद हैं और वे केवल तेहरान से आदेश मिलने की प्रतीक्षा में हैं। अजरबेजान, अस्तराबाद और मजनद-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रान के इलाकों में तेल की खोज का कार्य प्रारम्भ भी हो चुका है। कहते हैं, वहाँ कुछ तैलकूप भी तैयार कर लिए गए हैं। अमेरिका की एक तेल-कम्पनी का अनुमान है कि इस इलाके में एक खरब अस्सी अरब बैरल तेल प्राप्त हो सकता है।

रूस का दाँत ईरान के इस तेल पर बहुत दिनों से था और सम्भवतः इसी उद्देश्य से उसने अपनी सेनाएँ भी ईरान में जमा रक्खी थीं। पाठकों को ज्ञात ही होगा कि ईरान ने रूस की तेल-सम्बन्धी इस माँग पर विचार करने से तब तक के लिए इनकार कर दिया था जब तक रूस अपनी सेनाएँ ईरान से न हटा ले। पर अन्ततः रूस की जिद् के आगे ईरान को झुकना पड़ा और अमेरिका और ब्रिटेन उसकी कुछ भी सहायता न कर सके।

समझौते की शर्तों में अजरबैजान की समस्या को यद्यपि ईरान की घरेलू समस्या स्वीकार किया गया है फिर भी यह कहा गया है कि वहाँ की जनता की इच्छा के अनुसार ही वहाँ की आर्थिक एवं वैधानिक उन्नति के सम्बन्ध के कानून बनाए जाएँगे।

ईरान की वर्त्तमान घटनाओं से सिद्ध हो रहा है कि वर्तमान संयुक्तराष्ट्र-सङ्घ भी पिछले राष्ट्रसङ्घ की भाँति निर्बल राष्ट्रों की सहायता करने में असमर्थ है और वहाँ भी जिसकी लाठी उसकी भैंस की नीति ही चलेगी।

— —

दिल्ली की सन्धिवार्ता

इन पंक्तियों के लिखे जाने (१६ अप्रैल १९४६) तक दिल्ली में चलनेवाली सन्धिवार्ता का पूर्वार्द्ध समाप्त हो चुका है। ब्रिटेन के मन्त्रिमण्डल ने अब तक भारत के विभिन्न वर्गों के प्रतिनिधियों से भेंट कर ली है और उनका दृष्टिकोण समझ लिया है। यही नहीं, सुदक्ष प्रतिनिधि सर स्टेफर्ड क्रिप्स निजी तौर पर भी भारतीय नेताओं से मिले हैं और उनका मन्तव्य जानने की उन्होंने भरपूर चेष्टा की है। अब काश्मीर के शीतल और शान्त वातावरण में बैठकर मण्डल इन सब वार्ताओं पर विचार करेगा और फिर वह लन्दन से जो योजना बनाकर लाया है उसमें अपने नए प्राप्त ज्ञान के आधार पर हेर-फेर करके अपनी योजना बनाएगा, जो अन्ततः प्रमुख दलों के सम्मुख स्वीकृति के लिए उपस्थित की जाएगी। यह सब अगले सप्ताह में ही होने जा रहा है।

वार्ता के प्रारम्भ होने से प्रथम भारत-मन्त्री ने प्रेस-प्रतिनिधियों के सामने जो वक्तव्य दिया था उससे यह जान पड़ता था कि मण्डल देश के प्रतिनिधियों को केवल आपस में लड़ाने के लिए और उनके बीच के मतभेद को और अधिक बढ़ाने के उद्देश्य से ही आया है, और इस सम्भावना से सारे देश में बेचैनी की एक लहर-सी फैल गई थी। पर यहाँ तक पहुँचते-पहुँचते वह बेचैनी दूर हो चुकी है और आशावाद अपने पैर फैलाता हुआ दिखाई दे रहा है। अब ऐसा प्रतीत होता है कि वातावरण समझौते के काफी अनुकूल बन गया है।

महात्मा गान्धी, मौलाना आजाद और उनकी देखा-देखी कांग्रेस के अन्य नेतागण भी मण्डल के कार्य और उद्देश्य के प्रति प्रारम्भ से ही पूर्णतया आशावादी रहे हैं। वे तो यहाँ तक कह चुके हैं कि यदि इस बार भी भारत और ब्रिटेन के बीच समझौता नहीं होता तब भारतीयों और अँगरेजों का राम ही मालिक है। उन्होंने इस बार भी सुझाव दिया है, जैसा कि वे पहले कई बार दे चुके हैं और कुछ दिन पूर्व कांग्रेस कार्य-समिति इस प्रकार का एक प्रस्ताव भी पास कर चुकी है, कि यदि अल्पमतों की समस्या आपसी प्रयत्नों-द्वारा न सुलझाई जा सके तो उसे अन्ताराष्ट्रीय पञ्चायत-द्वारा सुलझाया जाना चाहिए। सर स्टेफोर्ड क्रिप्स ने भी जिन्ना साहब की जिद को ध्यान में रखते हुए कह दिया है कि अल्पमतों की समस्या यदि हल न हुई तो उसे अन्ताराष्ट्रीय पञ्चायत के सामने रक्खा जा सकता है।

मिस्टर जिन्ना और उनकी मुसलिम लीग अपनी जिद पर अड़ी है। वह लाहौर-प्रस्ताव से एक इञ्च नहीं हटना चाहती। लीग के नेता सम्भवतः यह सोच रहे हैं कि अब भारतीय समस्या निर्णय के द्वार पर पहुँच गई है अतएव उन्हें अपनी माँगें जितनी बढ़ सकें, बढ़ा देनी चाहिएँ। इस प्रकार वे जो कुछ चाहते हैं उससे अधिक भी मिल जाने की सम्भावना है।

वे पारस्परिक समझौते की नीति पर विश्वास नहीं करते, क्योंकि उन्हें आशा है कि ब्रिटिश सरकार उनकी पीठ ठोंकने के लिए विवश है; इस दशा में उन्हें कांग्रेस से कोई समझौता करने की गर्ज ही क्या है!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिस्टर ए० वी० अलग्जेंडर, लार्ड पैथिक लारेन्स, लार्ड वेवेल और सर स्टेफर्ड क्रिप्स

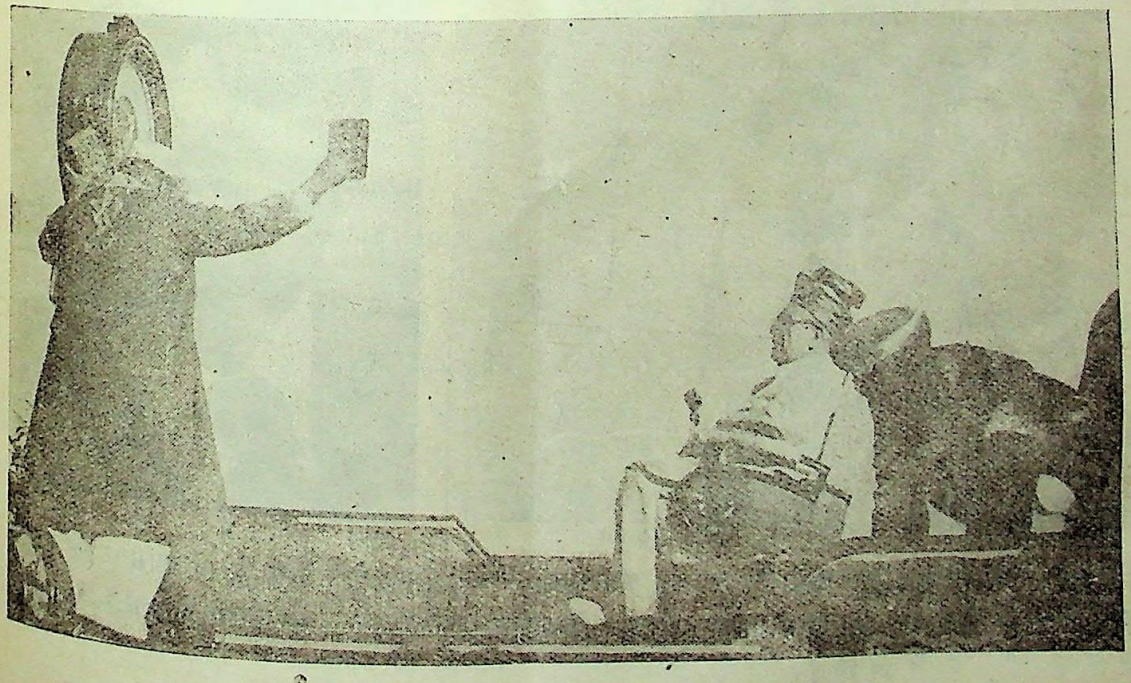

हिज हाईनेस सर आगाखाँ रजत-जयन्ती के अवसर पर हीरों से तुल रहे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तिब्बत के शिष्टमण्डल के सदस्य जो पिछले दिनों दिल्ली आए हैं।

पंजाब-विश्वविद्यालय के अर्थशास्त्र विभाग के अध्यक्ष डा० एल० सी० जैन जो 'अर्थशास्त्र-सलाहकार' के रूप में सरकार की ओर से जापान जा रहे हैं।

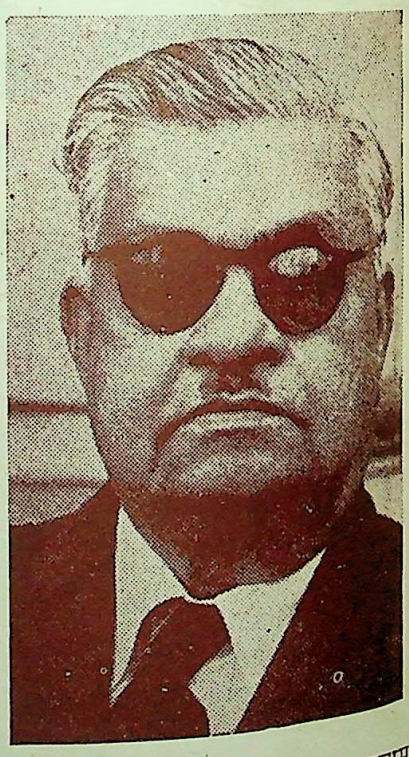

सिन्ध के मुस्लिम लीगी प्रीमियर सर गुलाम-हुसेन हिदायतुल्ला।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिल्ली में लीग की जो बैठक पिछले दिनों हुई थी और उसमें जो उत्तेजनाजनक भाषण किए गए थे, उनसे यही ध्वनि निकलती है।

जहाँ तक कांग्रेस का प्रश्न है, वह ऐसे किसी मसविदे को मानने के लिए तैयार है जो तथाकथित पाकिस्तानी क्षेत्र के अमुस्लिम निवासियों को अहितकर न हो। मौलाना आजाद ने एक इस प्रकार का मसविदा प्रस्तुत भी किया है। यह मसविदा देश की एकता पर आधारित है, पर इसमें प्रान्तीय इकाइयों को वैधानिक मामलों में पूरी-पूरी स्वतन्त्रता दी गई है। कांग्रेस प्रान्तों का विभाजन नए सिरे से करने को भी राजी है कि जिससे मुस्लिम आबादी-प्रधान भागों के पृथक् प्रान्त बनाए जा सकें।

समझौते की सबसे अधिक मजेदार बात देशी-नरेशों का रुख है। उन्होंने 'राजस्थान' की माँग का त्याग कर दिया है और वे स्वतन्त्र भारत के साथ कदम-से-कदम मिलाकर चलने के लिए तैयार हैं। सर सी० पी० रामास्वामी ने कह दिया है कि देशी नरेश स्वतन्त्र भारत को प्रभुसत्ता मानने के लिए तैयार हैं। नवाब भोपाल ने भी जिन्ना साहब को सलाह दी है कि वे कांग्रेस से समझौता कर लें। इस प्रकार देशी नरेशों के विचारों में आकस्मिक परिवर्तन होना निस्सन्देह एक शुभ लक्षण है। देखना है, अगला सप्ताह अपने अङ्क में क्या-क्या छिपाए है।

——

सेना का राष्ट्रीयकरण

जब तक सेना का राष्ट्रीयकरण न हो, भारत की स्वतन्त्रता का कुछ भी अर्थ नहीं है। आज भारतीय सेना के नाम से जो सेना है वह ब्रिटिश सेना का एक अङ्गमात्र है। वह नाम को भारतीय सेना है, पर उसके अफसर अधिकांश में अँगरेज हैं। इस समस्या की ओर भारत के राजनीतिज्ञों का ध्यान बहुत दिनों से आकर्षित हो रहा है और वे समय-समय पर सेना के राष्ट्रीयकरण की माँग भी उपस्थित करते रहे हैं। युद्ध-काल से पूर्व तो ब्रिटिश सरकार इस सम्बन्ध में चुप्पी साधे रहती थी, पर हाल युद्ध समाप्त होने के बाद जनरल सर क्लाड आकिनलेक ने एक घोषणा करते हुए सेना के राष्ट्रीयकरण की एक दीर्घकालीन योजना उपस्थित की थी। स्पष्ट है कि उस योजना में ऐसी कोई बात नहीं थी जिससे भारतीय जनता को सन्तोष हो सकता।

प्रधान सेनापति की उक्त योजना के प्रतिक्रिया-स्वरूप माननीय हृदयनाथ कुँजरू ने राज्यपरिषद् में एक प्रस्ताव रक्खा था जिसमें निम्न माँगें की गई थीं :—

(१) भारतीय सेना के राष्ट्रीयकरण के लिए एक अवधि निश्चित कर दी जाए।

(२) लेफ्टिनेंट और केप्टन के पदों पर अँगरेजों की नियुक्ति रोक दी जाए।

(३) कुछ समय के लिए बी० सी० ओ० को रोक दिया जाए।

(४) तरक्की की रफ्तार में तेजी करके भारतीय अफसरों की संख्या में वृद्धि की जाए जिससे वे उच्च पदों की स्थान-पूर्ति कर सकें।

(५) सेना का अल्पकाल में राष्ट्रीयकरण करने के लिए अन्य स्वाधीन देश जो उपाय करते हैं उनसे यहाँ भी काम लिया जाए।

पण्डित कुँजरू ने यह आश्वासन चाहा था कि दस वर्ष की अवधि में सरकार भारतीय सेना के राष्ट्रीयकरण को पूरा कर दे। पर उनकी यह माँग भी स्वीकार नहीं की गई। राज्यपरिषद् ने १२ के विरुद्ध २१ वोटों से उनका प्रस्ताव गिरा दिया।

वाद-विवाद होते समय प्रधान सेनापति ने कहा कि वे सेना के राष्ट्रीयकरण की योजना को स्वीकार तो कर लें पर भारतीय अफसर इतनी बड़ी संख्या में प्राप्य नहीं हैं जो उत्तरदायित्वपूर्ण पदों को सँभाल सकें। भारतीय सेना को ६ हजार अफसर चाहिएँ। युद्धकाल में ३ हजार अर्जियों पर विचार किया गया, पर उनमें से केवल एक हजार को चुना गया। ३ हजार अफसर पहले से थे। एक हजार कमीशन-प्राप्त अफसर हैं। इस प्रकार ४ हजार अफसरों की कमी फिर भी रह जाती है। देहरादून की संस्था वर्ष भर में पाँच-छः सौ से अधिक अफसर तैयार नहीं कर सकती।

प्रधान सेनापति महोदय ने जो कुछ बतलाया है उससे ज्ञात होता है कि ब्रिटिश नियम के अनुसार कार्य करते रहने पर अभी सेना के पूर्ण राष्ट्रीयकरण के लिए हजारों वर्ष का समय चाहिए। योग्य अफसर जब इतनी बड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संख्या में प्राप्त हो जाएँगे तब कहीं ब्रिटिश अफसरों की भर्ती रोकी जा सकेगी। न नौ मन तेल जुटेगा और न राधा नाचेंगी। पर दूसरी ओर जब हम देखते हैं कि श्री सुभाषचन्द्र बोस ने अत्यल्प काल में ही इतने अफसर तैयार कर लिए थे जिन्होंने उनकी खड़ी की हुई 'आजाद हिन्द फौज' के उत्तरदायित्वपूर्ण पदों का भार अत्यन्त योग्यता से सँभाला था, और वह भी ऐसे स्थान और समय में जब कि शिक्षण की सुव्यवस्था सम्भव नहीं थी, तब हमें सेनापति महोदय की योजना टाल-मटूल भर दिखाई देती है। जब आस्ट्रेलिया जैसे देश से १६ हजार वायु-सेना अल्पकाल में खड़ी की जा सकती है तब ४० करोड़ की आबादीवाले देश में ६ हजार अफसर उचित प्रयत्न करने पर क्यों नहीं तैयार किए जा सकते?

राजपरिषद् सरकार-द्वारा मनोनीत सदस्यों की संस्था होती है और उसमें सरकारी अफसरों व सरकार के पिट्ठुओं का बोलबाला रहता है। राष्ट्र का यदि कोई शुभचिन्तक वहाँ पहुँच भी जाता है तो वह राजनीति में नरम दल का समर्थक होने के कारण अपनी बात जोरदार ढङ्ग से उपस्थित नहीं कर पाता। न उसकी बात को वहाँ कोई महत्त्व ही दिया जाता है। ऐसी परिषद् से देश को किसी लाभ की आशा कभी करनी भी नहीं चाहिए। यदि माननीय कुँजरू का प्रस्ताव वहाँ गिर जाता है, तो यह नितान्त साधारण बात है और केवल यह सूचित करती है कि ऐसी परिषदों का राष्ट्रीयकरण पहले होना चाहिए, तब सेना के राष्ट्रीयकरण पर विचार हो सकता है।

बेदखली के मामले

जमींदार किसानों को किस हद तक अपना समझते हैं और उनके क्षेम-कुशल के लिए कितने चिन्तित रहते हैं, इसका ताजा नमूना है इस प्रान्त में गत ५ वर्षों में होनेवाली बेदखलियाँ। अपने अल्पकालीन शासन में किसानों को कुछ लाभ पहुँचाने के उद्देश्य से कांग्रेस मन्त्रिमण्डल ने 'हक आराजी बिल' नाम का एक कानून बनाया था। यह कानून जल्दी में बनाया गया था, फलतः इसकी व्यावहारिक त्रुटियों की ओर ध्यान देने का कांग्रेस को अवसर न मिल सका था। सन् १९३९ में कांग्रेस के पदत्याग कर देने पर गवर्नर के 'सलाहकारों' के हाथ में शासन की बागडोर आई। इस अवसर को जमींदारों ने बड़े महत्त्व का समझा और वे दौड़े-दौड़े तत्कालीन गवर्नर सर मारिस हैलेट के पास पहुँचे और उन्हें बतलाया कि कांग्रेस के बनाए कानून में एक ऐसा छिद्र रह गया है जिसके कारण किसानों को लेने के देने पड़ जाएँगे। गवर्नर महोदय ने न केवल उनकी अनुचित इच्छा को प्रोत्साहित किया प्रत्युत उन्होंने १०८ नए रेवेन्यू आफिसरों की भी नियुक्ति शीघ्रता से कर दी जिससे 'न्याय' के कार्य में अनावश्यक विलम्ब न हो।

यों हमारी अदालतें 'न्याय' का शीघ्रता से वितरण न करने के लिए प्रसिद्ध हैं, पर इन मामलों में उन्होंने गजब की जल्दी दिखलाई। केवल तीन वर्ष में—अर्थात् १९४१ से लेकर १९४४ तक—ढाई लाख से ऊपर बेदखली के मामलों का 'न्याय' किया गया, जिसके अनुसार लगभग आठ सौ एकड़ जमीन किसानों के हाथ से निकलकर जमींदारों के अधिकार में चली गई। १९४५ से अब तक के आँकड़े अभी प्राप्त नहीं हैं, पर मोटा अन्दाज लगाया जा सकता है कि पाँच वर्ष में सब मिलाकर सवा चार लाख से कम बेदखलियाँ न हुई होंगी।

यह है हमारे जमींदारों का प्रजा-वात्सल्य, जिसके बल पर वे किसानों को अपना सहायक बनाना चाहते हैं। इसी सिलसिले में सलाहकारों की सरकार के कार्य पर भी विचार कर लेना अनुचित न होगा। वे लोग पर्याप्त बुद्धिमान् थे और 'हक आराजी बिल' के मंशा को अच्छी तरह समझते थे। उनका कर्त्तव्य यह था कि यदि उस हक आराजी कानून में कोई त्रुटि ऐसी रह गई थी जो उसके निर्माताओं के मंशा के खिलाफ थी तो वे उस त्रुटि को दूर करके कानून में उचित संशोधन कर सकते थे, और किसानों को एक बड़ी विपत्ति से बचा सकते थे। पर वे ऐसा करते क्यों? उन्हें किसानों से क्या लेना था? उनका उद्देश्य तो किसानों के सामने कांग्रेस की कमियाँ खोल-खोलकर रखना था जिससे वे जमींदारों से आतङ्कित बने रहें और भविष्य में कांग्रेस का साथ न दें।

किसानों के सौभाग्य से कांग्रेस अब इस प्रान्त में पुनः अधिकारारूढ़ हो गई है। उसका ध्यान इस कानून की ओर सर्वप्रथम आकृष्ट हुआ है। शासनाधिकार हाथ में आते ही उसने बेदखली के समस्त मुकदमे स्थगित करने का आदेश जारी कर दिया है। यही नहीं, वह उन बेदखलियों पर भी पुनर्विचार करने जा रही है जो गत ५-६ वर्षों में हुई हैं। आशा है, हमारे किसानवर्ग को इससे सन्तोष होगा, साथ ही हमारा जमींदार वर्ग भी एक नया सबक सीख जायगा और यदि उसकी सत्ता बनी रही—जो कि कठिन दिखाई देता है—तो वह ऐसी भूलों की पुनरावृत्ति न करेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एशिया माइनर के एक नगर में मिट्टी के बर्तनों का बाजार

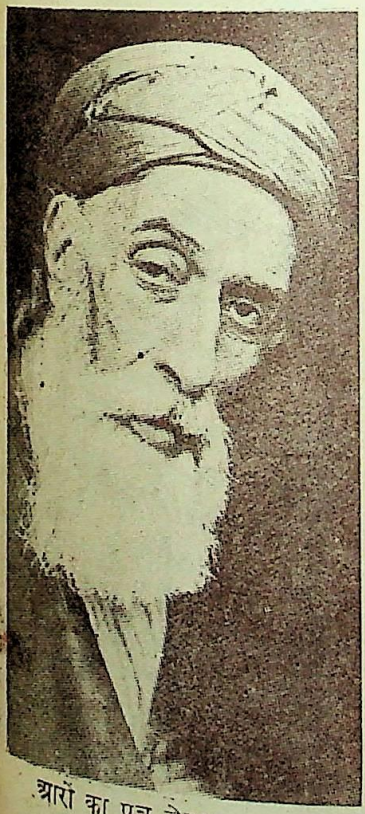

आरों का पुत्र जेकब

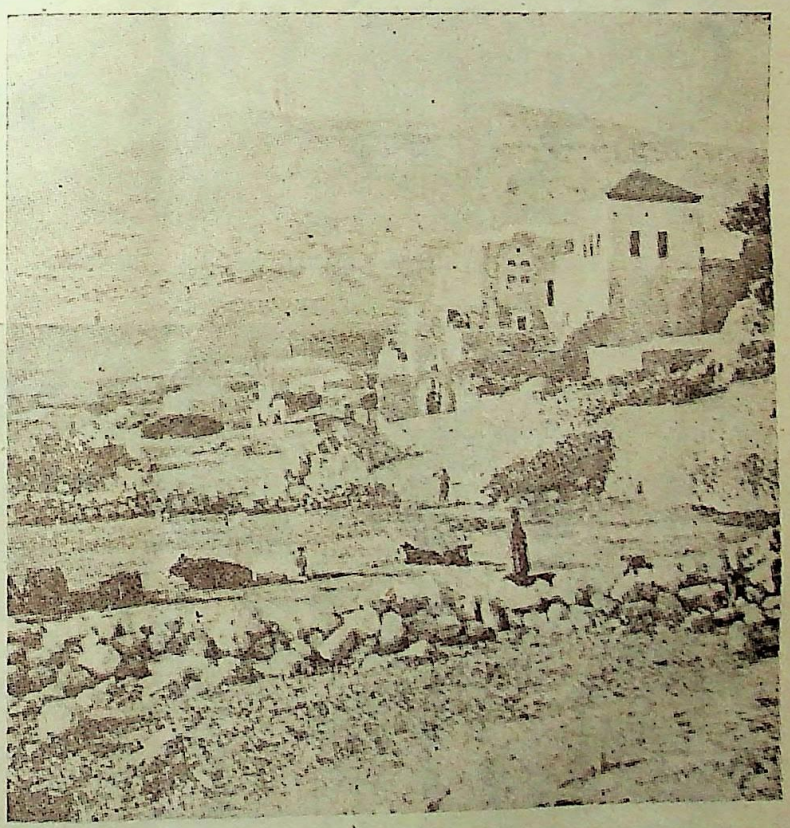

आस्कर गाँव — पीछे जेकब का कुआ है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एशिया माइनर के प्रख्यात नगर स्मर्ना में कारवान का एक दृश्य—इस नगर की प्रधान पैदावार को लाने-ले जाने का कार्य अब भी ऊँटों-द्वारा होता है, यद्यपि वहाँ रेलवे-लाइन बिछ चुकी है।

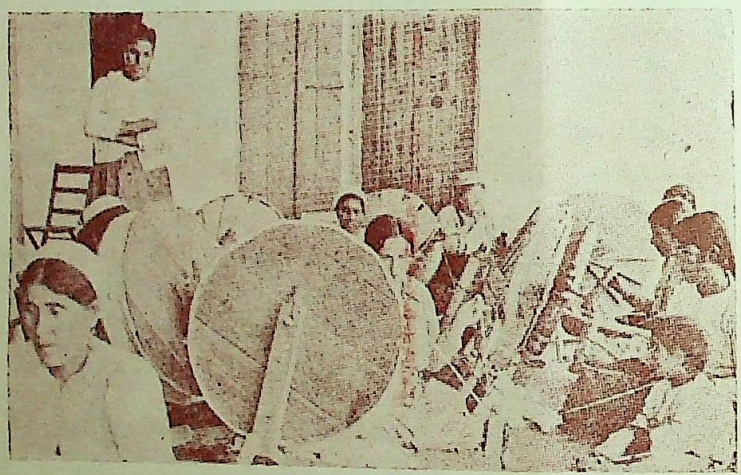

अदाना की महिलाएँ सूत कात रही हैं।

एशिया माइनर के बाजार में

एशिया माइनर के बाल-दम्पती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यवसाय-वाणिज्य पर युद्ध का प्रभाव

प्रोफेसर श्रीनारायण अग्रवाल, एम० ए०, बी० कॉम०, कामर्स कालेज, वर्धा

सितम्बर २, १९३९ का दिवस इतिहास में चिर-स्मरणीय रहेगा। उसी दिन इँग्लैंड और फ्रांस ने जर्मनी की ज्यादतियों से तङ्ग आकर जङ्ग का ऐलान कर दिया था। इस हिसाब से युद्ध का जीवन छः साल रहा। इस थोड़े से अर्से में कितने परिवर्तन, कितनी क्रान्तियाँ हुईं? उस समय किसे गुमान था कि युद्ध इतना भयङ्कर और सार्वभौमिक रूप धारण करेगा और अपनी लपट में बड़े-बड़े राष्ट्रों को भुलसा देगा?

इन छः वर्षों की छोटी-सी अवधि में संसार के सारे राष्ट्रों में और उनके जीवन के तमाम क्षेत्रों में इतने परिवर्तन, इतनी उथल-पुथल और ऐसी क्रान्ति हुई कि वह शान्तिकाल के ५० वर्षों में भी सम्भव न थी। विज्ञान, कला, कृषि, यातायात आदि के साथ ही साथ उद्योग, वाणिज्य, व्यवसाय के क्षेत्र में भी घोर और अभूतपूर्व चढ़ाव-उतार हुए और यह अनिवार्य एवं स्वाभाविक भी था। भला यह कैसे सम्भव था कि व्यापार, जो जीवन की तमाम भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति में अहोरात्र संलग्न रहता है, ऐसी जागतिक ज्वालाओं से अछूता रहता? फलतः भारतीय व्यापारियों और उद्योगपतियों को भी ऐसे जमाने से गुजरना पड़ा जिसकी उन्हें स्वप्न में भी कल्पना न थी।

युद्ध के प्रथम दो वर्ष भारत में अपेक्षाकृत शान्ति से बीते। चीजों की दर, यातायात का प्रबन्ध, माँग की पूर्ति, खाद्य और वस्त्र समस्या आदि प्रायः युद्ध-पूर्व जैसी ही रही। परन्तु फ्रांस के आकस्मिक और लज्जास्पद पतन के बाद और विशेषतः जापान के पर्लहार्बर पर आक्रमण एवं परिणाम-स्वरूप अमेरिका के युद्ध में शामिल होने के पश्चात् (७ दिसम्बर १९४१) परिस्थितियाँ द्रुत गति से बदलती गईं और युद्ध असली मानी में सार्वभौम हो गया। युद्ध का सबसे प्रथम चिह्न यहाँ जो दृष्टिगोचर हुआ वह था चीजों के नित बढ़ते हुए भावों के रूप में। आयात कम होने की और बाद में एकदम बन्द हो जाने की आशङ्का से व्यापारियों ने भाव अनाप-शनाप बढ़ा दिए और माल रोकना शुरू कर दिया। दूकानें और 'शो-रूम' माल से खचाखच भरे रहते हुए भी व्यापारी मुँहमाँगे दाम मिले बगैर बेचने से इन्कार करने लगे। सट्टेबाजों ने परिस्थिति और भी बदतर कर दी। वस्तुतः जापान की लगातार विजय और उसके ब्रह्मदेश पर अधिकार ने अँगरेजों के हथियारों और करेंसी पर से लोगों का विश्वास उठा दिया। सभी खरीदार हो गए; बेचवाल बहुत कम रहे। इसका एक परिणाम यह हुआ कि जिन बड़े-छोटे व्यापारियों के पास माल था, वे उसे दुगुने-तिगुने दामों में बेचकर रातोंरात मालामाल हो गए; लाखों-करोड़ों रुपए कमाकर धनकुबेर बन बैठे। परन्तु यह दिन-दहाड़े डाके का व्यापार बहुत दिन तक न टिक सकता था। इससे युद्ध के सफल सञ्चालन में बाधा उपस्थित होती थी। लोगों में भविष्य के प्रति अस्थिरता और अरक्षा की भावनाएँ बढ़ती थीं और उनके आत्म-विश्वास और मनोबल को चोट पहुँचती थी। इससे अर्थ-व्यवस्था में असन्तुलन होता था और जुवाबाजी को प्रोत्साहन मिलता था। सरकार ने भी इन युद्ध-जनित भयङ्कर परिस्थितियों का अनुभव किया। प्रारम्भ में तो वह भौंचक्का-सी होकर असहाय अवस्था में खड़ी देखती रही, परन्तु कुछ समय पश्चात् पाश्चात्य राष्ट्रों से अनुभव लेकर और अपने हृदय में साहस समेटकर वह मूल्य-नियन्त्रण करने और इस प्रकार नफाखोरी और माल को दबाकर रखने के विरुद्ध कानून बनाकर नफाखोरों और सट्टेबाजों से लोहा लेने के लिए क्षेत्र में उतर आई। खाद्य सामग्री, मिट्टी का तेल, शक्कर और वस्त्र-समस्या को हल करने के लिए उसने बड़े-बड़े शहरों में राशनिंग और स्टेंडर्ड क्लाथ की व्यवस्था की। बहुत-से धन्धों के लिए लायसेंस लेना जरूरी कर दिया। और ये लायसेंस बहुधा उन्हीं को दिए जाने लगे जो बड़े-बड़े नामधारी प्रतिष्ठित व्यापारी थे और जो सरकारी अधिकारियों से जान पहचान रखते थे तथा उन्हें पैसा खिला सकते थे। छोटे व्यापारियों को लायसेंस मिलना या कोटा मिलना मुश्किल हो गया और उनकी आजीविका छिन गई। इस प्रकार एक तरफ तो सरकारी अफसरों की घूसखोरी अपनी सीमा का अतिक्रमण कर गई और दूसरी तरफ ये दूध की मक्खी की तरह निकालकर फेंके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुए, कपड़े और अनाज के, छोटे-छोटे दूकानदार प्रकट रूप से व्यापार करने में असमर्थ होने के कारण चोर-बाजार को गर्म करने लगे। सरकारी अफसरों का पतन तो इतना हुआ कि ऊँचे से ऊँचे आई० सी० एस० अफसर तक उससे न बच सके और इसी लिए सरकार को घूसखोरी रोकनेवाले अफसरों की नियुक्ति करनी पड़ी जो स्वतः ही बाद में जिस काम को रोकने के लिए रक्खे गए थे उसी के दलदल में जा फँसे। इस परिस्थिति से त्राण पाने के लिए रोज "भारत कानून" के अन्तर्गत नियम बनाकर बड़े-बड़े दण्डों और ऊँची-ऊँची सजाओं का विधान किया गया। परन्तु राष्ट्रीय सरकार के बिना और जनता के सहयोग के अभाव में इस अन्याय का प्रतिकार असफल प्रमाणित हुआ। कलकत्ते के एक व्यापारी ने तो मुझसे यहाँ तक कहा कि हम तीन भाई कारोबार करते हैं, जिनमें से एक जेल जाने को हमेशा तैयार रहता है और पचीस-पचास हजार रुपए दण्ड देना या अफसरों को चटाना तो हम मामूली बात समझते हैं। क्योंकि इतना सब किए जाने के बाद भी चोर-बाजार में काम करना लाभदायक ही होता है।

परन्तु इन तमाम परिवर्त्तनों का सबसे बुरा असर पड़ा मध्यम और निम्न वर्ग के नौकरी-पेशा लोगों पर। मूल्यवृद्धि और अभावरूपी चक्की के दो पाटों के बीच वे पिसने लगे। जो युद्धोद्योग में लग गए उन्हें साधारणतः अच्छी तनख्वाहें मिल गईं परन्तु अधिकांश मजदूरवर्ग और मध्यमवर्ग की स्थिति में महँगाई-भत्ता और बोनस आदि मिलने के बावजूद भी विशेष सुधार नहीं हुआ। तिगुनी-चौगुनी कीमतों की तुलना में सवाया या ड्योढ़ा भी महँगाई का भत्ता कहाँ तक परिस्थिति सुधारता?

वर्तमान युद्ध का प्रभाव मोटे रूप से निम्नलिखित भागों में बाँटा जा सकता है :—

(१) 'स्टर्लिंग पावना' में बेहद वृद्धि; भारतवर्ष का कर्जदार राष्ट्र से साहूकार राष्ट्र में परिवर्तित होना।

(२) युद्धजन्य परिस्थितियों और विदेशी शासन के कारण बेहद मुद्रा-स्फीति और उसके कुपरिणाम।

(३) टैक्स, अतिरिक्त मुनाफाकर, इनकम टैक्स, सुपर टैक्स, कारपोरेशन टैक्स आदि में वृद्धि।

(४) विदेशी प्रतियोगिता की अनुपस्थिति में युद्ध-सञ्चालन के लिए नए उद्योगों का खुलना।

(५) रासायनिक एवं केमिकल कारखानों, मशीनों और दक्ष कारीगरों के अभाव में और यातायात की कठिनाइयों एवं सरकारी अड़ङ्गा नीति के कारण उद्योगों की वृद्धि में रुकावट।

(६) राष्ट्रीय और अन्ताराष्ट्रीय व्यापारी-सम्मेलन, चेम्बर्स आफ़ कामर्स आदि का सङ्कुटित होकर परिस्थितियों का मुकाबला करना।

(७) उत्पादन, वितरण, विनिमय, उपभोग, आयात, निर्यात आदि पर व्यक्तिगत साहस और व्यवस्था एवं उन्मुक्त व्यापार की जगह सरकारी प्रतिबन्ध एवं नियन्त्रण और निगरानी का दिन पर दिन बढ़ना। पूँजीपतियों के उद्योगों में सरकारी दखल की दिन- पर-दिन वृद्धि।

(१) १९३९ में भारतवर्ष इँग्लैंड का कर्जदार था। यह कर्ज करीब ४ अरब रुपए था और इस पर भारतवर्ष को लाखों रुपए 'होम चार्जेज' के रूप में ब्याज देना होता था। इस रुपए में से कुछ उत्पादक कामों के लिए, जैसे नहरें, रेलवे आदि के लिए, लिया गया था परन्तु अधिकांश अनुत्पादक कामों के लिए खास तौर से बर्मा और अफगानिस्तान आदि के विरुद्ध लड़ाइयाँ लड़ने और भारतवर्ष को अँगरेजों के लिए सुरक्षित रखने के लिए इस देश पर लादा गया था। इस कर्ज के बारे में एक मनोरञ्जक बात और है। जब-जब भारत सरकार को पैसे की जरूरत हुई उसने यह ऋण-कार्यालय इँग्लैंड में ही खोला, जिसका नतीजा यह होता था कि अँगरेज तुरन्त ही इसको खरीद लेते थे और हिन्दुस्तानियों को इसे खरीदने का मौका ही नहीं मिलता था या उनके हिस्से में बहुत ही कम आता था।

लन्दन का 'मनी मार्केट' सबसे बड़ा होने के कारण और रुपया और पौंड का गठबन्धन होने की वजह से भारतवर्ष इँग्लैंड के सिवा अन्य किसी विदेशी राज्य का आज तक ऋणी नहीं रहा; परन्तु वर्तमान युद्ध ने परिस्थिति एकदम बदल दी।

जापान से युद्ध लड़ने को लाखों अमेरिकन और अँगरेज सैनिक यहाँ आए। फौज में हिन्दुस्तानी सिपाहियों की भी बेहद वृद्धि हुई और अरबों रुपयों का खर्च फौजी मामलों में किया गया। यह सब भारत सरकार के मार्फत ब्रिटिश सरकार के कार्य के लिए हिन्दुस्तान में ही हुआ। यह खर्च ब्रिटेन ने सोने में या नगदी में भारत को अदा न करके 'स्टर्लिंग सेक्युरिटीज' के द्वारा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिया। भारतवर्ष से करोड़ों रुपए का कपड़ा, अनाज, जूट, तेलहन, चमड़ा और अभ्रक आदि ईराक, ईरान, सिलोन तथा अन्य विदेशी राष्ट्रों को भेजा गया। उनका भुगतान भी उन देशों के सिक्कों में या सोने-चाँदी में न करके अँगरेजों ने स्टर्लिंग पावना में ही किया, फल-स्वरूप वे इतने बढ़े कि पिछला कर्ज चुकता करने के बाद भी करीब १४ अरब रुपयों का कर्ज इँग्लैंड पर चढ़ गया।

इँग्लैंड इसे किस प्रकार अदा करेगा; यह प्रश्न अभी खटाई में पड़ा हुआ है। कुछ दिन पूर्व तो अँगरेज अर्थ-शास्त्रियों ने इस कर्ज को रद्द करने की—भारत को कुछ भी न देने की—बात कहनी शुरू कर दी थी; परन्तु भारतीय व्यापारियों ने जब सङ्गठित रूप से इसका विरोध किया और तुरन्त इस प्रश्न का फैसला करने की माँग की तो अँगरेज सरकार ने अनिच्छापूर्वक कहा कि यह कर्ज अदा तो किया जाएगा, परन्तु कब और किस रूप में, यह ऋणी राष्ट्र इँग्लैंड की मर्जी पर और उसकी सुविधा और परिस्थितियों पर छोड़ दिया जाए। बड़ा अनोखा न्याय है! साहूकार को अपनी रकम के बदले कोई अधिकार न देकर सारी सत्ता ऋणी राष्ट्र को सुपुर्द कर दी गई। यह है परवशता का अभिशाप! स्पष्ट है कि इँग्लैंड अब अपनी पुरानी मशीनों को, जो वहाँ अब कूड़े के ढेर में फेंकी जाने योग्य हैं, और उपभोग्य वस्तुओं को हिन्दुस्तान के मत्थे मढ़कर यह ऋण चुकाने की चेष्टा करेगा। परिणाम यह होगा कि एक तरफ तो विदेशी चीजें देशी चीजों की जमकर और सफलतापूर्वक प्रतियोगिता करेंगी और दूसरी तरफ भारत पुरानी मशीनों के कारण निम्न कोटि की और अधिक लागत की चीजें बनाकर देशी और विदेशी बाजार को खो बैठेगा। भारतीय व्यापारियों की माँग है कि स्टर्लिंग पावने को डालर में परिणत कर दिया जाए जिससे अमेरिका से मशीनें और अन्य चीजें, जो भारत में नहीं बनती हैं, मँगाई जा सकें, परन्तु इस दिशा में अभी तक कोई सफलता नहीं मिली है।

(२) 'स्टर्लिंग सेक्युरिटीज' की साख पर 'रिजर्व बैङ्क आफ इंडिया' ने धड़ाधड़ नोट छापने शुरू किए और ये नोट चलन में आए।

इनके कारण अभूतपूर्व मुद्रा-विस्तार हुआ, जिसकी वजह से कीमतें भी दुगुनी, तिगुनी और बाद में तो चौगुनी तक बढ़ गईं। कुछ चीजों के दाम तो दस गुना बीस गुना तक बढ़े। रोज एक करोड़ रुपए के हिसाब से कागजी मुद्रा चलन में आने लगी और उत्पादन जहाँ का तहाँ रुका रहा। लाखों टन अनाज और करोड़ों गज कपड़ा विदेशों को भेजा गया। ऐसी परिस्थिति में यहाँ अभाव होना और अकाल पड़ना निश्चित था और हुआ भी ऐसा ही। हमें बङ्गाल, मलाबार, उड़ीसा तथा बिहार आदि में ऐसी खाद्य-समस्या और वस्त्र-समस्या का सामना करना पड़ा जिसका हमें स्वप्न में भी अनुमान नहीं था और परिणाम-स्वरूप पचास लाख से अधिक आदमी भूख और मौत के शिकार हुए। परन्तु इँग्लैंड, अमेरिका, कनाडा और आस्ट्रेलिया में ये दृश्य उपस्थित नहीं हुए। वहाँ कीमतें मुश्किल से ४० या ५० प्रतिशत ऊँची गईं। जनता का सहयोग, सामयिक राशनिंग कण्ट्रोल और सरकार की सतर्कता की वजह से वहाँ न तो कीमतें ही विशेष बढ़ीं और न कहने लायक मुद्रा-स्फीति ही हुई। वास्तव में भारत के हितों का बलिदान कर ब्रिटेन ने अपने आर्थिक ढाँचे को युद्धजन्य परिस्थितियों की तान और बोझ से एक हद तक बचाए रक्खा।

(३) देश में इस मुद्रा-प्रसार के विरुद्ध भयङ्कर आन्दोलन हुआ। सी० एन० वकील, के० टी० शाह, जे० सी० कुमारप्पा आदि प्रसिद्ध अर्थ-शास्त्रियों ने इस नीति की निस्सारता और भयङ्करता पर पूर्ण प्रकाश डाला। उदाहरण-स्वरूप पिछले प्रथम युद्ध के बाद जर्मनी, आस्ट्रिया आदि देशों के बेहद बढ़े भावों के आँकड़े उपस्थित किए और सिद्ध किया कि किस प्रकार अधिक नोट छापने की वजह से उन नोटों की कीमत जिस कागज पर वे छपे थे उससे भी कम हो गई। गत महायुद्ध में जर्मनी में यह दशा हो गई थी कि एक रोटी खरीदने के लिए दस हजार मार्क का नोट देना पड़ता था, और तब भी रोटी मिल ही जाएगी इसकी कोई गारण्टी नहीं रहती थी। चीन में आज भी यह हालत है कि एक गज कपड़े की कीमत सौ रुपए तक देनी पड़ती है। यदि मुद्रण यन्त्र का उपयोग सरकार इसी तरह करती रही तो वह दिन दूर नहीं, जब भारत को भी इस विषम परिस्थिति का मुकाबला करना पड़ेगा। इस समस्या को हल करने के लिए सरकार ने निम्न उपायों का अवलम्बन किया—

(अ) इनकम टैक्स, सुपर टैक्स, कारपोरेशन टैक्स आदि में वृद्धि।

(ब) अतिरिक्त मुनाफा-कर, यानी युद्ध से पहले जो मुनाफा था उसे औसत और साधारण मुनाफा मानकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उससे अधिक मुनाफा युद्ध के कारण ही हुआ है यह मानना, और इसलिए सरकार का भी उसमें हिस्सा रखना। इस प्रकार अतिरिक्त मुनाफे में से पहले तो सरकार ने दो तिहाई लिया परन्तु बाद में बढ़ाकर अस्सी प्रतिशत से भी अधिक कर दिया।

(स) बिक्री कर—सुपारी, तम्बाकू, चाय, पेट्रोल आदि पर नया कर लगाकर तथा पोस्ट, टेलीफोन और तार की दरों में वृद्धि करके जनता के पास जो अधिक रुपया पहुँच गया है उसे खींचना और मुद्रा संकुचन करना। रेल-किराए में वृद्धि करने का सुझाव भी अर्थ-सदस्य सर जेरेमी रेजमैन ने बजट में रक्खा था, परन्तु सेण्ट्रल असेम्बली ने उसका बहुमत से तीव्र विरोध किया और सरकार पर यह आरोप लगाया कि वह स्वयं मुनाफाखोरी कर रही है। जनता की आवाज का आदर करते हुए अर्थ-सदस्य ने अपना प्रस्ताव वापस ले लिया।

(द) बचत के लिए प्रचार करना—लोगों में यह भावना पैदा करने की कोशिश की गई कि इस वक्त युद्ध-कर्ज में या सेविंग बैंक में जितना पैसा जमा किया जाए वही व्यक्ति और समष्टि के हित में है।

(इ) उपयोगी वस्तुओं का देश में उत्पादन बढ़ाना, आयात को प्रोत्साहन देना, निर्यात कम करना और विदेशी सैनिकों की संख्या भारत में कम-से-कम रखना। अस्तव में यह अन्तिम उपाय सबसे अधिक कारगर था। उद्योगपति श्री घनश्यामदास बिड़ला, सर होमी मोदी और सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास आदि ने इसी पर अधिक जोर दिया, परन्तु सरकार इस दिशा में कुछ भी करने के लिए तैयार न थी। उसने कुछ दिन "अधिक अन्न उपजाओ", "अत्यन्त जरूरत की ही चीजें खरीदो", आदि के नारे लगाए और मन्त्र जपे परन्तु व्यवस्थित योजना के अभाव में उससे विशेष काम न हो सका?

(४) तो भी युद्धोद्योग में मदद करने के लिए कुछ नवीन कारखाने खुले; साइकिल, कागज, चमड़ा, बिजली, लोहा, रेलगाड़ी के डब्बे आदि के उद्योग पनपे; विदेशी उद्योगों की होड़ न होने के कारण छोटे-छोटे मृतप्राय कारखाने भी फिर से समृद्ध हुए। कुछ ऐसी चीजें भी बनने लगीं जो पहले यहाँ बिलकुल नहीं बनती थीं। परन्तु यह वृद्धि भारत के क्षेत्रफल और जन-संख्या के खयाल से अन्य उपनिवेशों की तुलना में नगण्य थी। भारत सरकार ने तो ढिंढोरा पीटा कि हिन्दुस्तान को युद्ध से बेहद फायदा हुआ है, युद्ध उसके उद्योगों के लिए वरदान साबित हुआ है। किन्तु जे० आर० डी० टाटा एवं अन्य उद्योगपतियों ने इँग्लैंड जाकर सरकार को चुनौती दी कि सरकार अपनी विज्ञप्ति को आँकड़ों के द्वारा सिद्ध करे। सरकार ने उनकी इस चुनौती का अभी तक कोई उत्तर नहीं दिया है।

(५) उद्योग-वृद्धि में सबसे बड़ी कठिनाई थी मशीनों, कारीगरों एवं रासायनिक द्रव्यों की कमी। शान्तिकाल में इनके कारखाने सरकार ने खुलने नहीं दिए। दक्ष विद्यार्थियों को विशेष ट्रेनिंग देने की कोई व्यवस्था नहीं की और जब जरूरत हुई तो ये सब विदेश से अप्राप्य रहे। अतएव बेविन स्कीम के अन्तर्गत कुछ कारीगर ट्रेनिंग के लिए विदेश भेजे गए और रंग आदि के कुछ केमिकल कारखाने भी खुले परन्तु इनकी तादाद कम होने से इनका अभाव-प्रगति में रोड़ा बना रहा।

(६) युद्ध-जन्य परिस्थितियों से भारतीय व्यापारियों ने एक सबक सीखा और वह है सङ्गठन का महत्व। आजकल के कण्ट्रोल एवं नियन्त्रण के पेचीदा जमाने में एक व्यापारी की आवाज सरकार तक नहीं पहुँच सकती। अतएव जिले के, प्रान्त के और सारे राष्ट्र के व्यापारी यदि मण्डलों में सङ्गठित हो जायँ तो उनके विचार अधिक जोरदार ढङ्ग से अधिकारियों तक पहुँचाए जा सकते हैं और उनके हितों की रक्षा अधिक प्रभावशाली पैमाने पर हो सकती है। इसलिए प्रान्तीय 'चेम्बर्स आफ कामर्स' और 'ट्रेड एसोसियेशन' तथा 'इण्डियन मर्चेण्ट्स चेम्बर्स बम्बई', 'मारवाड़ी चेम्बर आफ कामर्स', 'सी० पी० और बरार चेम्बर आफ कामर्स' आदि का कार्यक्षेत्र विस्तृत एवं सुदृढ़ हुआ और उन्होंने और 'फेडरेशन आफ इण्डियन चेम्बर्स आफ कामर्स एंड इण्डस्ट्रीज' ने समय पर सरकार को सत्परामर्श दिया और अन्ताराष्ट्रीय परिस्थिति से अपने सदस्यों को परिचित रक्खा। नवम्बर १९४५ में न्यूयार्क के पास राई में ५३ राष्ट्रों के उद्योगपति गैर सरकारी तौर पर मिले। हिन्दुस्तान से भी प्रतिनिधि-मण्डल गया था जिसके नेता श्री चुनीलाल बी० मेहता और उपनेता श्री गगनविहारी मेहता थे। उन्होंने युद्धोत्तर अन्ताराष्ट्रीय व्यापार पर विचार-विनिमय किया और इस बात पर जोर दिया कि भारतवर्ष को अमेरिका से अलग व्यापारिक समझौता करना चाहिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और अधिक से अधिक व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित करना चाहिए। इस सम्बन्ध में स्टर्लिंग पावना को डालर में परिणत करने की आवश्यकता पर जोर दिया गया। हाल ही में टाटा, बिड़ला, सराफ, दलाल, लोकनाथन आदि दस प्रतिष्ठित उद्योगपति इँगलैंड और अमेरिका इसलिए गए कि वे वहाँ के उद्योगों का स्वयं निरीक्षण करें और देखें कि भारतवर्ष उनसे क्या सबक सीख सकता है और वहाँ के व्यापारी कहाँ तक बराबरी के नाते से सहयोग देने के लिए तैयार हैं। अब तक इन्होंने जो वक्तव्य निकाले हैं वे आशाप्रद हैं। परन्तु भविष्य में भारत-सरकार की क्या नीति रहती है, इसी पर इनका सब कुछ निर्भर है। सरकार ने वादे तो खूब किए हैं, आर्थिक योजनाएँ भी बनाई हैं, परन्तु वे कहाँ तक कार्य-रूप में परिणत की जाएँगी, यह भविष्य ही बतलाएगा।

'हैदरी मिशन' ने इँग्लैंड जाकर वहाँ के व्यापारियों से कुछ कण्ट्रैक्ट किये हैं। लाला रामरतन गुप्त, श्री शान्ति-प्रसाद जी जैन आदि आस्ट्रेलिया से वहाँ की व्यापारिक परिस्थिति और भारत का भविष्य में उस खण्ड से व्यवसाय आदि विषयों का अध्ययन और मनन करके लौटे हैं। उनकी रिपोर्टों के अनुसार आस्ट्रेलिया में यद्यपि भारतीय माल की काफी खपत है परन्तु उसकी अच्छाई की साख अभी तक वहाँ नहीं जमी है। दक्षिण अफ्रीका, ईरान, ईराक आदि का अनुभव भी इससे भिन्न नहीं। भारतीय माल काफी निम्न कोटि का और महँगा होता है। परन्तु इँग्लैंड और अमरीका का माल सीमित मात्रा में ही वहाँ पहुँचता है, इसलिए हमारे माल की किसी प्रकार खपत हो जाती है। परन्तु युद्ध समाप्त होते ही ये बाजार भारत से छिन जाएँगे। इतना ही नहीं, भारत के अपने बाजारों में विदेशी माल का तूफान आ जाएगा। इस स्थिति का मुकाबला भारत तभी कर सकेगा, जब वह नवीनतम मशीनों, अतिदक्ष कारीगरों, अनुसन्धान और उत्पादन के अभिनव ढङ्गों का अवलम्बन करे और साथ ही सरकारी संरक्षण और प्रोत्साहन-द्वारा नवजात उद्योगों को पाले-पोसे अन्यथा ये थोड़े से नाम मात्र के उद्योग, जो आकस्मिक परिस्थितियों का लाभ उठाकर पनपे हैं उसी प्रकार मुर्झा जाएँगे, जिस प्रकार सावन की कोमल घास अवर्षा के कारण मुर्झा जाती है।

(७) आज अधिकतर व्यापार सरकार के हाथ में चला गया है। जो व्यक्तियों-द्वारा चलाया जा रहा है उस पर भी पेचीदे नियन्त्रण का बेहद अधिकार है। इन वर्षों में हमारे व्यापारियों का नैतिक स्तर भी निराशापूर्ण रूप में नीचा रहा है। चाँदी की चमचमाहट में मानव-मूल्यों को वे भूल बैठे। लाखों कमाने की दौड़-धूप और लोलुपता ने उन्हें लाखों जीव अपहरण करने के अभिशाप का हिस्सेदार बनाया। इससे प्रभावित हो जनता साम्यवाद की तरफ द्रुतगति के साथ बढ़ रही है। रूस का बढ़ता हुआ प्रभाव इसमें सहायक है। हमारे व्यापारी बन्धुओं को भी समय की 'स्पिरिट' समझनी चाहिए। उनका कर्त्तव्य है कि वे सङ्गठित हों। आधुनिकतम ढङ्ग से उत्पादन करें, दक्ष कारीगरों की मदद लें और धनकुबेर बनें; परन्तु यह सब जनता-जनार्दन के हितों का बलिदान करके नहीं, बल्कि उनके कल्याण की भावना को हमेशा सामने रखकर। इसमें उनका व्यक्तिगत कल्याण भी है और राष्ट्र का अभ्युदय भी। राष्ट्रीय महासभा जिस उद्देश्य को लेकर बढ़ रही है उसमें वे सहयोग दें। जब तक विदेशी राजनीतिक और आर्थिक साम्राज्यशाही अपना नग्न नृत्य कर रही है तब तक व्यापारी-समृद्धि मृग-मरीचिका ही रहेगी। अतएव सङ्गठित होकर इस बकासुर से मोर्चा लेने में सहयोग देना ही उनके अभ्युत्थान में सहायक होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम राजा मैं रंक

श्री दुर्गाशंकरप्रसाद सिंह

आफिस में प्रवेश करके अदब के साथ कहा—"महाराज, क्या वे नोट्स मुझे आज मिल सकते हैं जिनके लिए आज्ञा हुई थी ?"

मेज की खुली हुई दराज से फाइल को निकालते हुए महाराज ने मेरी ओर देखा और कहा—"हाँ, पलँग कमरे की अटैशी में हैं।" फाइल को पेशकार को थमाते हुए उस पर महाराज आर्डर लिखाने लगे और मैं सामने चुपचाप खड़ा रहा। मिनटों बाद महाराज का ध्यान पुनः मेरी ओर आकर्षित हुआ। उन्होंने कहा—"तुम गए नहीं ? जाओ उसे ले लो।"

मैं फिर भी रुका ही रहा। उन्होंने फिर दुहराया—"जाओ—तुम वहाँ जा सकते हो, रमेश ! कोई हर्ज नहीं लड़के हो।" और वे पुनः हुक्म लिखाने लगे।

महाराज के स्वभाव में जैसा कि इधर दस वर्षों से मैंने देखा है, भावुकता नहीं थी। दया, करुणा, सरलता या सरसता जैसी वस्तु का उनके यहाँ सर्वथा अभाव था। मैं ताज्जुब करता था कि इतने बड़े ऐश्वर्य्य के अधीश्वर में यह रूखापन, यह सादगी, यह कठोरता कैसे, क्यों और कहाँ से आ गई। वे ईश्वर को, धर्म को, दया, न्याय, प्रेम या हृदय की कोमल अनुभूतियों को सुनना या पढ़ना नहीं चाहते थे। धनियों या होशियार विद्वानों से उन्हें एक प्रकार की चिढ़-सी थी। बहस-मुबाहसा, दलील और कानून यह सब उनके सामने कोई नहीं कर सकता था।

उनका हुक्म ब्रह्मवाक्य था। गरीबों की प्रार्थना वे सुनते थे, उनसे न्याय का बरताव वे करते थे, लेकिन जहाँ ये गरीब रोते थे या महाराज की दया या करुणा को जगानेवाली कोई बात कहते थे कि महाराज उनके खिलाफ हो उठते थे। दुनिया में न्याय के नाम पर न्याय करनेवाली बात को तो मानते ही नहीं थे। लेकिन फिर भी वे सदैव न्याय अन्य राजा-महाराजाओं से अधिक ही करते हुए देखे गए और जान-बूझकर कोई अन्यायसंगत कार्य्य, चाहे उससे रियासत को या स्वयं उनको ही भारी-से-भारी क्षति उठानी पड़े, करते हुए वे कभी नहीं पाए गए। मैं दस वर्षों तक कैसे उनका कृपापात्र बना रहा, यह स्वयं मेरी ही समझ में नहीं आ सका। अपने अच्छे दिनों को देखकर बुरे दिनों में आ फँसने को ही उनकी सहानुभूति का मुख्य कारण मानकर भी मैं उस पर विश्वास नहीं कर सकता था। और आश्चर्य करता था कि इतने रूखे, चिड़चिड़े मिजाज के होते हुए भी वे कैसे इस लम्बी अवधि में मुझसे एक दिन भी रुष्ट होकर नहीं बोले। इसको अपने व्यवहार की सावधानी मानते हुए भी उसे मैं अपवाद ही समझता था। मैं दबे-पाँव अदब से उनकी मेज से होकर शयनागार की ओर चल दिया।

जैसा सुना था कि महाराज तपस्वी की भाँति अपने कमरे में रहते हैं सो आँखों के सामने देखा। संगमरमर की फर्श पर एक सफेद जाजिम, उस पर छोटी पलंगी, दरी और दरी पर एक तकिया और बगल में रक्खी हुई छोटी चौकी पर कलम-दावात और सादे तथा लिखे कागज के कतिपय परचे और उनके पास ही चमड़े की छोटी अटैशी। बस इसके अतिरिक्त वहाँ और कोई सामान नहीं था। मैंने अटैशी खोली। रियासती कागजों की फाइलों तथा प्राइवेट चिट्ठी-पत्री से वह ठसाठस भरी थी। उन सबको बाहर निकाल-निकालकर मैं नोट्स ढूँढ़ने लगा। सब कागजों के नीचे नोट्स मिले और उसके नीचे सोने का कैबिनेट साइज का एक पिक्चर-केस दिखाई पड़ा। मैं उसको खोलने का लोभ संवरण नहीं कर सका। डरते हुए उसे खोल ही डाला। उसमें अनेकानेक रङ्गों से रञ्जित एक अत्यन्त सुन्दर चित्र था। मैं उसे देखने लगा। एक हृष्ट-पुष्ट लम्बे कद का युवक कीमती पर मलिन और फटे वस्त्रों में एक अश्वारोही के सामने कुछ माँगने की मुद्रा में अपना दाहिना हाथ आगे बढ़ाए खड़ा था। उसकी विशाल आँखों में दीनता, आजिजी और क्षमा-प्रार्थना थी। अश्वारोही तीक्ष्ण द्वेष, और क्रोध तथा घृणापूर्ण दृष्टि से उसे निहारता हुआ उसकी प्रार्थना को अस्वीकार करके अपने घोड़े की बाग मोड़कर वहाँ से जाने पर उद्यत था। चित्र बहुत ही कलापूर्ण था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युवकों की सुन्दरता और भाव-प्रदर्शन अद्वितीय थे। मैं उसको देखने में लीन ही था कि पीछे से महाराज ने कहा—"उसे न देखो। चोरी न करो।"

मैं डर के मारे काँपने लगा। महाराज किञ्चित् अप्रतिभ, किञ्चित् करुण और किञ्चित् रुष्ट-से होकर खिड़की के बाहर ताकने लगे। मैं काँपता हुआ कमरे के बाहर निकला।

(२)

दुःखितमन घर आया और अपनी पहली और सब से बड़ी गलती को अक्षम्य समझ हफ्तों दरबार नहीं गया। अपने एक मित्र से नित्य दरबार का हाल-चाल पूछता रहता और यह जानने का प्रयत्न करता कि महाराज के भाव मेरे प्रति कैसे हैं। किन्तु कई सप्ताह तक कोई खबर न पाकर मैं घबड़ा उठा। एक दिन आफिस में जाकर दर्शन करने और अपने अपराधों की क्षमा माँगने के लिए दृढ़संकल्प हो मैं घर से निकल पड़ा। नोट्स पर जो कुछ लिखने की आज्ञा थी उसे लिख चुका था और सोच लिया था कि उसी को पेश करके अपने तस्वीर देखने के अपराध को क्षमा कराऊँगा। फाटक पर पहुँचा तो वहाँ दूसरा ही दृश्य देखा। सैकड़ों आदमियों की भीड़ सदर फाटक पर एक ओर खड़ी थी। उस भीड़ के सामने बीच सड़क पर एक दुबले-पतले भिखमंगे की लाश पड़ी थी जिसकी आँखें भीतर धँस गई थीं तथा हड्डियाँ मांस के अभाव में बाहर निकल आई थीं। सम्भवतः उसने दरिद्रनारायण के प्रकोप से आत्महत्या कर ली थी। लाश एक मलिन पुराने चीथड़े पर रक्खी हुई थी। उसके हाथ खुले और फैले हुए थे। निर्जीव पलकें अब भी क्षीण पुतलियों पर खुली ही हुई थीं। चेहरा नारकीय यातना से क्लान्त और शिथिल-सा ज्ञात हो रहा था। कौतूहल-वश मैं कुछ पूछने ही वाला था कि देखा, सामने सदरदरवाजे से महाराज नंगे पाँव और नंगे सिर चले आ रहे हैं। मैं सहमकर खड़ा हो गया। सन्नाटा छाया था। महाराज शव के पास आए और खड़े हो उसे निहारने लगे। मिनटों वे एकटक उसको देखते रहे। सहसा उनकी आँखों से आँसू की दो बड़ी-बड़ी बूँदें निकलीं और पृथ्वी पर टप-टप करके गिर गईं। उन्होंने झुककर मृतक के दाहिने हाथ को उठाया और अपने दोनों हाथों से उसे जोर से दबाकर आहिस्ते से पुनः वहीं रख दिया। फिर उसकी मैली-कुचैली बिखरी केश-राशि में से एक लट कैंची से काटी और पास खड़े अफसर से रूखे कण्ठ से कहा—"इसके अन्तिम संस्कार राजसी सम्मान के साथ राज्य के समाधि-भवन में किए जाएँ।" यह कहकर जब उन्होंने सिर घुमाया तो सामने मुझे खड़ा देखा। मुझको देखते ही उनके चेहरे का रङ्ग गाढ़ा हो उठा। उन्होंने कठोर शब्दों में कहा—"तुम आज तक कहाँ थे? अन्दर आओ।"

महाराज आगे बढ़े। मैं उनके पीछे चला। महल के सदर दरवाजे पर पहुँचकर मैं रुकने लगा। उन्होंने कहा—"चले आओ।" मैं उनके पीछे हो लिया। महाराज चुपचाप अपने शयनागार में गए। मैंने भी उनका अनुसरण किया। उन्होंने सीधे जाकर अटैशी से उस तस्वीर को निकाला और मुझे देते हुए कहा—"इसमें और उस भिखमंगे की शक्ल में सादृश्य है।" महाराज की आँखें लाल थीं और उनमें आँसू उमड़ रहे थे। आवाज टूटी और भर्राई-सी थी, जो मेरे ही लिए नहीं, सारे देश और राज्य के लिए एक नई चीज थी। मैं विश्वास नहीं कर सका कि मैं महाराज को देख रहा हूँ। मैं तस्वीर लेकर देखता खड़ा रहा और 'हाँ' या 'ना' कुछ कह नहीं सका। कहाँ एक तेजस्वी हृष्ट-पुष्ट युवक की यह तस्वीर और कहाँ निस्तेज, दरिद्र, के काल की लाश। महाराज ने तस्वीर को मुझसे लेकर कहा—"तुम नहीं कह सकते। तुम इस कहानी को नहीं जानते। इसी युवक का वह मृतक कंकाल है जो आज से तीस वर्ष पूर्व इस युवक के रूप में जीवित था और यह युवक मेरा सगा भाई था।" महाराज का गला भर आया। जलसे उमड़ी हुई आँखें पथरा-सी गईं। मुक्ताकण झर-झरकर गिरने लगे। कुछ ठहरकर उन्होंने कहा—"हम दोनों एक साथ जन्मे थे। लालन-पालन सब साथ हुआ था। बीस वर्ष की अवस्था में बड़े महाराज का स्वर्गवास हुआ और मैं एक घंटा बड़ा होने के नाते गद्दी का मालिक बना। लोगों ने भाई को विद्रोह के लिए भड़काया। फल-स्वरूप मैंने भाई को देश-निकाले का दण्ड दिया। दो वर्ष बाद उससे एक एकान्त घोर जङ्गल में भेंट हुई। वह दुःखित था। उसके साथी उसे सोता छोड़कर चले गए थे। उसकी समझ में नहीं आता था कि क्या करें। मुझे देखते ही उसने मुझसे हाथ उठाकर क्षमा की भिक्षा माँगी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और मैंने द्वेषपूर्ण नेत्रों से उसे निहारकर उसे क्षमा देने से इनकार कर दिया। तब उसने कहा था—"·····।" महाराज का गला भर आया। वे रुक गए। आँखों से आँसू वेग-पूर्वक गिरने लगे। उन्होंने अपने भावों को दबाते हुए बल-पूर्वक कहा—"भई! तब उसने कहा था, 'अच्छा तो अब यह हाथ टुकड़ों के ही लिए उठेगा और अन्त समय तक उठता रहेगा। जाओ, बड़े महाराज के दो बेटे तुम राजा, मैं रंक।"

इतना कहकर महाराज चुप हो गए। शायद कुछ सोचने लगे। कई मिनट इसी तरह निकल गए। मुझमें इतनी हिम्मत कहाँ थी कि महाराज से ऐसे आवेश के अवसर पर कुछ बोलता। महाराज ने स्वयं ही सँभलकर कहा—"रमेश! ये हृदय की कमजोरियाँ हैं। मनुष्य तो सबल है। फिर ये कमजोरियाँ क्यों? जाओ, घर जाओ। उन नोटों की पूर्ति दफ्तर में लाना।"

— —

जीवन

श्री 'अज्ञात'

खुरदरी शिला थी, मटमैला पानी बरसा
थोड़ी-सी मिट्टी जमा हुई
उड़ती चिड़िया कर गई बीट
पीपल का पौधा उग आया।
खुरदरी शिला की छाती पर—
सौ साल पुराने मन्दिर के उस कन्धे पर—
पीपल का पौधा उग आया।
मैं रहा देखता खिड़की से,
कुछ ही दिन में—
वह पौधे से हो गया पेड़।
छोटी छोटी दो शाखाएँ—
फिर उनमें से
पतली दाँतन सी पाँच-सात टहनियाँ हुईं—
प्रियदर्शन!
उस पीपल का वह बाल-वृक्ष
मेरे समक्ष लहराता है।
जीवनीशक्ति का वह ध्वजपट फहराता है—
नयनाभिराम!
ज्यों हरितवसन कोई किशोर होकर सवार इठलाता हो
सौ साल पुराने मन्दिर के उस कन्धे पर!
मैं रहा देखता खिड़की से—
कुछ ही दिन में।
फिर धूसर घन से मटमैला पानी बरसा
हो गई जमा थोड़ी मिट्टी उस पीपल के भी कन्धेपर
उड़ती-उड़ती आई चिड़िया
कर गई बीट
उस पीपल के भी कन्धे पर।
मैं रहा देखता खिड़की से,
यह हुआ पेड़ पर पेड़ उगा कुछ ही दिन में
बरगद के पत्ते पहचाने!
सौ साल पुराना मन्दिर है
उसके कन्धे पर पीपल है
पीपल की छाती पर बरगद
मेरे समक्ष लहराता है।
मैं श्रद्धापूर्वक सोच रहा इस सृष्टि-स्थिति के बारे में—
जीवनी-शक्ति, तेरी जय हो!
पत्थर की छाती छेद-भेद
बर्फानी चोटी रौंद-राद
तू फूट निकलती जहाँ कहीं
थोड़ी-सी मिट्टी जमा हुई।
उड़ती चिड़िया कर गई बीट, मिल गया बीज,
तू अंकुर बनकर उग आती
तू लहराती
तृण-लता-गुल्म या पीपल या बरगद होकर!
वह कौन जो कि तुझसा क्षण भर भी रोक सके!
जीवनी-शक्ति तेरी जय हो!

— —

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बीसवीं शताब्दी में उर्दू

मौलवी महेशप्रसाद, आलिम-फ़ाज़िल

आज बीसवीं शताब्दी में अँगरेज़ी भाषा का जितना ज़ोर है वह स्पष्ट ही है। टटोलने पर यह पता लगना मुश्किल नहीं कि जो माता-पिता अँगरेज़ी नहीं जानते उनमें से कुछ के लड़के क्या लड़कियाँ भी अँगरेज़ी जानती हैं। तथापि उर्दू की भी जितनी उन्नति इस शताब्दी में हुई है अथवा हो रही है वह कुछ कम प्रशंसनीय नहीं।

कौन नहीं देखता कि प्रायः प्रत्येक मुसलमान के दिल में अपने धर्म के निमित्त बड़ी श्रद्धा होती है। कोई मुसलमान चाहे शिया हो या सुन्नी, अहमदी हो या किसी अन्य विचार का हो, वह .कुरान को अपना प्रधान धर्म-ग्रन्थ मानता है। अनेक प्रकार के विचारों व विज्ञान को सम्मुख रखकर .कुरान के अनेक अनुवाद तथा भाष्य उर्दू में हुए हैं :—

(१) मौलवी अब्दुल्ला चकड़ालवी-कृत अनुवाद अपने ढङ्ग का बिल्कुल निराला और बहुत बड़ा है।

(२) मौलवी अशरफ़अली थानवी (मृत १८४३ ई०) के अनुवाद का चलन बहुत ज़्यादा है।

(३) हमारे राष्ट्रपति मौलाना अबुल कलाम आज़ाद-कृत भाष्य का नाम 'तर्जुमान् .कुरान' है। यह तीन भागों में है।

(४) मौलवी अब्दुल हक़ हक्क़ानी मृत १९१६ ई०) का अनुवाद।

(५) मिर्ज़ा अबुलफ़ज़ल-कृत अनुवाद।

(६) अहमदी सङ्गठन के नेता मौलाना मुहम्मद-अली, एम० ए०-कृत भाष्य ब्यानुल् .कुरान के नाम से तीन भागों में है।

(७) मौलाना महमूदुल्हसन-कृत अनुवाद।

(८) मौलवी मक़बूल अहमद (शिया) साहब का अनुवाद।

(९) मौलवी वहीदुज़्ज़मान-कृत एक अनुवाद तस्वीलुल् .कुरान के नाम से है क्योंकि इसमें .कुरान की सारी बातें विषय के विचार से संगृहीत हैं। इसके सिवा मौलवी साहब का एक भाष्य तफ़सीर वहीदी के नाम से है।

(१०) आमफ़हम तफ़सीर के नाम से ख़ाजा हसन निज़ामी-कृत भाष्य।

(११) तफ़सीर सनाई के नाम से मौलवी सनाउल्ला अमृतसरी-कृत भाष्य।

(१२) ख़ाजा अहमद उद्दीन-कृत भाष्य ब्यानलिल् नास के नाम से है।

(१३) प्रोफ़ेसर अब्दुल हई साहब-कृत भाष्य कई खण्डों में है और भिन्न-भिन्न नामों का है।

(१४) कश्शाफ़ुल हुदा के नाम के मिस्टर याक़ूब हसन मद्रासी का भाष्य है।

(१५) शाहवलीउल्ला साहब के फ़ारसी अनुवाद का उर्दू रूपान्तर।

(१६) शाह रफ़ीउद्दीन का अनुवाद।

(१७) शाह अब्दुल् क़ादिर-कृत अनुवाद व भाष्य।

(१८) श्री सर सैयद महोदय-कृत भाष्य .कुरान की केवल २० सूरतों (भागों) का है।

(१९) नवाब मुहम्मद हुसैन .कुली ख़ाँ (शिया)-कृत अनुवाद।

(२०) मौलवी अम्मार अली (शिया)-कृत भाष्य।

(२१) भूपाल राज्य के नवाब सिद्दीक़ हसन ख़ाँ (स्वर्गीय सन् १८९८ ई०)-कृत अनुवाद।

(२२) दिल्ली के मौलवी नज़ीर अहमद का अनुवाद।

(२३) दिल्ली के मिर्ज़ा हैरत का अनुवाद।

(२४) मौलवी आशिक इलाही-कृत अनुवाद।

(२५) मौलवी फ़तेह मुहम्मद जालन्धरी-कृत अनुवाद।

(२६) सैयद अमीर अली-कृत भाष्य।

(२७) अरबी भाष्य तफ़सीर इत्तकान का अनुवाद।

(२८) फ़ारसी भाष्य तफ़सीर हुसैनी का अनुवाद तफ़सीर क़ादरी के नाम से है।

उपर्युक्त के सिवा कुछ और अनुवाद व भाष्य पूर्ण तथा अपूर्ण हैं और अनेक पुस्तकें जो धार्मिक जानकारी के निमित्त रची गई हैं उनका लेखा पृथक् है। निदान धार्मिक विचार-धारा के कारण उर्दू का प्रचार इस शताब्दी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में बहुत ज़्यादा हुआ है। हाँ, साथ-ही-साथ यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि ईसाई मत व आर्यसमाज की ओर से मुसलमानों के सम्बन्ध या विरोध में जो कुछ लिखा गया है उसके अभाव को दूर करने अथवा उक्त विरोधियों के विरुद्ध आन्दोलन करने के निमित्त भी उर्दू में ही लिखा जाना आवश्यक रहा है। पञ्जाब के श्री मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद साहब अहमदी सम्प्रदाय के विधाता हैं। इनके अनुयायी संसार के अनेक भागों में इस्लाम धर्म के प्रचारार्थ पहुँचे हैं और इस प्रकार उर्दू का भी प्रचार कुछ-न-कुछ बढ़ा है।

श्री सर सैयद महोदय ने कांग्रेस की नीति का विरोध किया। मुस्लिम लीग ने अपना प्रोग्राम लोगों के सम्मुख रक्खा। ख़िलाफ़त-आन्दोलन अपने समय में चला। ये सब बातें भी उर्दू में ही अधिक हुईं। परन्तु एक और बात जिससे उर्दू का प्रचार अधिक हुआ, वह हिन्दी व उर्दू का झगड़ा है। साधारण हिन्दी-प्रेमियों के सिवा नए व जोशीले आर्यसमाजियों ने जब हिन्दी को विशेष रूप से अपनाया तो उर्दूवालों को विशेषतः मुसलमानों को उर्दू के निमित्त अधिक चिन्ता हुई। इसी बात का फल है कि सन् १९०३ ई० में उस सुप्रसिद्ध संस्था की नींव पड़ी जो कि 'अंजुमन तरक़्क़ी उर्दू'* के नाम से विख्यात है, जिसका प्रधान कार्यालय अब दिल्ली में है और जिसके द्वारा उर्दू का कार्य बहुत हुआ है और अच्छे ढङ्ग पर हो रहा है। इस संस्था-द्वारा एक सौ से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। इसी संस्था की ओर से 'हमारी ज़बान' नाम का एक पाक्षिक पत्र निकलता है जो भारी संख्या में छपता है और उसका मूल्य केवल एक रुपया वार्षिक है। इसके सिवा 'उर्दू' नाम की एक त्रैमासिक पत्रिका भी अच्छे ढङ्ग पर प्रकाशित होती है और उसका भी क्षेत्र कुछ कम विस्तृत नहीं है। 'साइंस' नाम की उच्च कोटि की एक मासिक पत्रिका भी इसी संस्था की ओर से प्रकाशित होती है और अब जनवरी सन् १९४६ ई० से 'मआशियात' नामक उच्च कोटि की एक मासिक पत्रिका के प्रकाशन का प्रबन्ध हुआ है। इसमें खेती, शिल्प-कला व व्यापार आदि विषय के लेख व समाचार रहा करेंगे। अँगरेज़ी-उर्दू का जैसा अच्छा कोश इस संस्था के द्वारा प्रकाशित हुआ है वैसा अच्छा कोश अँगरेज़ी-हिन्दी का कब कहीं से निकलेगा—यह मैं नहीं कह सकता।

उक्त संस्था के उद्योग से ही दक्षिण भारत में भी उर्दू के निमित्त अनेक स्कूल व संस्थाएँ हैं। मुझे ऐसा मालूम हुआ है कि उन स्कूलों में कुछ ऐसे लोग भी उर्दू पढ़ते हैं जो मुसलमान नहीं हैं। मैं देखता हूँ कि जो लोग हिन्दी का भार उठाए हुए हैं उनके ऊपर राजनीतिक अथवा धार्मिक या कोई अन्य भार भी है और अंजुमन तरक़्क़ी उर्दू के प्राण मौलाना डाक्टर अब्दुल हक़ साहब ऐसे हैं जो अपने ऊपर केवल उर्दू का ही भार रक्खे हुए हैं। उनको रात-दिन, भीतर-बाहर जो कुछ सोचना या करना है वह केवल उर्दू के ही लिए है। आप काफ़ी बूढ़े हैं किन्तु उर्दू के हक़ में जवान ही हैं। मेरे विचार से उनकी टक्कर का कोई व्यक्ति हिन्दी के लिए काम करनेवाला नहीं है। उक्त संस्था के सिवा जो अन्य संस्थाएँ उर्दू के निमित्त विशेष रूप से कार्य कर रही हैं, उनमें से कुछ ये हैं :—(१) जामेया मिल्लिया दिल्ली, (२) दारुलमुसन्नफ़ीन आज़मगढ़, (३) भूपाल राज्य का प्रकाशन-विभाग, (४) हैदराबाद का अनुवाद व सम्पादन-विभाग, (५) रामपुर का प्रकाशन-विभाग, (६) उर्दू एकाडमी लाहौर, (७) क़ौमी कुतुबख़ाना लाहौर, (८) मक्तबा इब्राहीमिया हैदराबाद, (९) सबरस किताबघर हैदराबाद, (१०) ज़माना बुक डिपो कानपुर।

उक्त सब संस्थाओं तथा अनेक अन्य प्रकाशकों द्वारा उर्दू में भिन्न-भिन्न विषयों की पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। अनेक पुस्तकों के बहुत अच्छे संस्करण निकले हैं। अनेक ग्रन्थ सुन्दर चित्रों से सुसज्जित निकले हैं और अनेक ग्रन्थों के बहुत से संस्करण निकले हैं। उदाहरणार्थ जानना चाहिए कि मिर्ज़ा ग़ालिब के दीवान का एक अपूर्व सुसज्जित संस्करण निकला है और मौलाना हाली के मुसद्दस् के बहुतेरे संस्करण भिन्न-भिन्न स्थानों से बड़ी भारी संख्या में निकले हैं।

उर्दू में कविता की महत्ता कुछ कम नहीं। फलतः राष्ट्रीय, धार्मिक, ऐतिहासिक अर्थात् सभी प्रकार की कविताएँ हुई हैं। कविता के सिवा गद्य में भी कोई विषय

* इसके संरक्षक हैदराबाद दक्षिण के उत्तराधिकारी आला हज़रत सरकार निज़ाम साहब बहादुर हैं।—लेखक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसा नहीं रहा जिससे कि वह शून्य हो। वैज्ञानिक पुस्तकों की पूर्ति विशेष रूप से हैदराबाद के अनुवाद व प्रकाशन-विभाग द्वारा हुई है। बच्चों के निमित्त दिल्ली व लाहौर से उत्तम पुस्तकें निकली हैं। स्त्रियों के निमित्त भी नाना प्रकार की पुस्तकें कुछ कम नहीं निकली हैं।

जिन प्रान्तों अथवा विभागों के लोग उर्दू में लिखना-पढ़ना बहुत कम जानते थे वहाँ स्कूल खोले गए हैं। उनको उर्दू लिखना-पढ़ना सिखाया जा रहा है। जो लोग मज़दूरी करनेवाले हैं, दिन के समय लिख-पढ़ नहीं सकते, उनको उर्दू सिखाने के लिए अनेक स्थानों में रात्रि-पाठशालाओं का प्रबन्ध हुआ है। अनेक यूनीवर्सिटियों की परीक्षाओं में उर्दू को स्थान मिला है। परन्तु इस सम्बन्ध में सबसे अधिक महत्त्व की चीज़ हैदराबाद की उस्मानिया यूनीवर्सिटी है, जिसमें सारे विषय उर्दू में ही पढ़ाए जाते हैं। इस यूनीवर्सिटी में पढ़ाई का कार्य अगस्त सन् १९१९ ई० में आरम्भ हुआ था किन्तु इससे पूर्व सन् १९१७ ई० में अनुवाद व सम्पादन-विभाग स्थापित किया गया था। इस विभाग-द्वारा ३०० से अधिक पुस्तकें अब तक प्रकाशित हो चुकी हैं और लगभग इतनी ही तैयार की जा रही हैं। इस विभाग के निमित्त पिछले कुछ वर्षों में जो बजट रहा है, उसका विवरण इस प्रकार है :—

* सन् फसली	† उस्मानिया रुपया
१३३४	२४३०७५
१३३७	२४७९२६
१३३९	२५१२१३
१३४३	२६१४१५
१३४६	२४१७५०
१३४८	२४१६८७
१३५१	१५६७०५

उक्त आँकड़ों से अनुमान यह होता है कि लगभग पचास लाख अँगरेज़ी रुपए उक्त विभाग पर सन् १९१७ ई० से अब तक लग चुके हैं।

उस्मानिया विश्वविद्यालय के अन्तर्गत केवल पठन-पाठन के निमित्त जो भिन्न-भिन्न कालिज हैं और जिनमें उर्दू-द्वारा शिक्षा दी जाती है, उनके निमित्त दो वर्षों का बजट इस प्रकार था :—

सन् फ़सली	उस्मानिया रुपया
१३४८	१६३५३७१
१३५१	१८४०१२८

उर्दू टाइप के निमित्त भी हैदराबाद की ओर से काफ़ी उद्योग हुआ है। निदान अनुवाद व सम्पादन, पठन-पाठन और टाइप के निमित्त मेरे अनुमान से सम्भवतः तीन करोड़ अँगरेज़ी रुपए (सन् १९१७ ई० से लेकर अब तक) ख़र्च हुए हैं।*

उन्नीसवीं शताब्दी में विज्ञान के पठन-पाठन का ज़ोर इतना अधिक नहीं था जितना कि अब है। फ़ारसी पढ़ने का चलन अधिक था। उस फ़ारसी की बदौलत लोग उर्दू में भी अच्छे योग्य हुआ करते थे परन्तु विज्ञान की पढ़ाई से दूर रहने पर इंजीनियरिंग, डाक्टरी तथा इस प्रकार के कुछ अन्य उद्योग-धन्धों का पठन-पाठन सर्वथा असम्भव है। ऐसी दशा में फ़ारसी छोड़ देने से बहुत कम लोगों को केवल उर्दू की योग्यता सन्तोषजनक होती है। अनेक साधारण शब्द—तरक्क़ी, तालीम, मज़बूत आदि—को भी अनेक नए लोग अशुद्ध लिखा करते हैं।

"तारीख़ अदब उर्दू" अर्थात् उर्दू-साहित्य के इतिहास में मौलाना मुहम्मद असकरी साहब ने लिखा है :—

"ऐसे जवाहिर रेज़े जो संस्कृत और प्राकृत के ख़ज़ानों से ज़बान उर्दू के क़ब्ज़े में एक अरसे से चले आते थे फ़ारसियत के ग़लबे (प्रभुता) से अब ख़ारिज हो गए हैं"।

परन्तु देखने में यह आता है कि फ़ारसी के बदले अरबी का प्रभाव अधिक हुआ है। उदाहरणार्थ :—

---

* हैदराबाद राज्य में फ़सली सन् का चलन है। यह ६ या ७ आक्टोबर से आरम्भ होता है। ईसवी सन् से लगभग ५९० वर्ष छोटा होता है। अतः सन् १३३४ फ़सली वास्तव में आक्टोबर, सन् १९२४ ई० से आक्टोबर सन् १९२५ ई० तक ठहरता है।—लेखक।

† एक सौ अँगरेज़ी रुपया के बराबर एक सौ सोलह रुपया, दस आना और आठ पाई उस्मानिया होता है—लेखक।

* हैंडबुक आफ़ इंडियन यूनीवर्सिटीज़ (Handbook of Indian Universities) (इंटर यूनीवर्सिटी बोर्ड-द्वारा प्रकाशित) और उस्मानिया यूनीवर्सिटी के कलेंडरों से शिक्षा-विषयक अनेक बातों का पता लग सकता है।—लेखक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हत्या

पण्डित श्रीराम शर्मा

मेरे अन्तराल में यह कैसा विस्फोट हो गया कि कहीं कोई स्थान, कहीं कोई अवरुद्धता शेष नहीं रह गई! पलक मारते-मारते समूची सृष्टि विलीन हो गई। सर्वत्र शून्य, शून्य-ही-शून्य दिखाई देता है। वह कौन-सा पदार्थ था जो अपनी व्यापकता से इस महाशून्य को आवृत किए हुए था? जो था, वह अब चला कहाँ गया? चारों ओर साँय साँय! सङ्कीर्ण जेल की इस छोटी-सी कोठरी में इतनी सामर्थ्य नहीं कि वह मेरे शरीर की तरह मेरे ममत्व को, मेरी आत्मा को चारों ओर से घेरकर घनीभूत अन्धकार का निर्माण कर सके।

जेल की ये बड़ी-बड़ी दीवारें, ये बड़े-बड़े ताले, मोटे-मोटे सीखचे और ये हथकड़ी-बेड़ियाँ और ये विधि-विधान अपने में इतनी शक्ति नहीं रखते कि मुझ पर, जो वास्तव में मेरा 'मम' है, अपना भार डाल सकें, उसे घेरकर कुचल सकें।

मेरे चारों ओर लाख लाख संस्करण करके प्रकट होने-वाले किसके नेत्र हैं ये? लाख-लाख होते हुए भी दो और दो होते हुए भी लाख-लाख! इनमें एक घनिष्ठ परिचय, अनिवार्य आकर्षण क्यों है? ये मुझे अपनी ओर क्यों खींच रहे हैं? इन नेत्रों के साथ-साथ एक धुँधली-सी रेखा, अगणित रेखाओं का समूह अपने में लिपाए, मेरे मनश्चक्षुओं की असमर्थता के कारण प्रकट होकर भी लिप जाती है। यह रेखा-समूह मेरे दाएँ, बाएँ, सामने, जिधर दृष्टि जाती है, विस्तृत होता है, फैलता है, परिभ्रमण करता है, एकाकार होकर केन्द्रीभूत हो जाता है और फिर लुप्त हो जाता है। मेरा मन अपनी समग्र शक्ति लगाकर इन रेखाओं में समन्वय, सन्तुलन स्थापित कर पाता है, घण्टों में; और ये रेखाएँ एकत्र होकर भी बिखर जाती हैं। जैसे गुलदस्ता बनाने के लिए कोई फूलों को सँवारे और फूल अपने आप अथवा जरा-सा बहाना पाकर तितर-बितर हो जाएँ। माला सम्पूर्णता को पहुँचे और जरा सा खिंचाव पाकर धागा टूट जाए, फूल बिखर जाएँ! क्या क्षण भर के लिए इन रेखाओं को एकत्र करके मैं उस समष्टि का अवलोकन कर सकूँगा, जो इस समय अतीन्द्रिय लोक की वस्तु बन चुकी है?

कुछ सङ्कुचित-से, अर्थ-भरे ये वाचाल नेत्र! हृदय की अनन्त आकांक्षाओं को अपने तिल मात्र के दृष्टि-बिन्दु में समेटकर मेरी ओर ताकनेवाले ये नेत्र! उस दिन ऐसे ही तो थे ये! कितनी विवशता और असमर्थता है इन नेत्रों में! यदि वह आकृति प्रकट नहीं होती तो उसकी कृतियाँ मेरे सम्मुख क्यों प्रकट होती हैं?

मैं हत्यारा हूँ! हत्या करनेवाला हत्यारा होता है। मैंने हत्या की है, इसलिए मैं हत्यारा हूँ।

हाथ भर के फासले से अपने दोनों हाथों में दो सीखचों को पकड़कर बन्द कोठरी में खड़ा-खड़ा शशाङ्क सोच रहा है। उसके मस्तिष्क में प्रश्नों की अटूट शृङ्खला चल रही है। बीच-बीच में सिर उठाकर वह सामने की दीवार पर पुते हुए तारकोल की कालिमा को देखता है। कभी उसकी भुजाएँ तन जाती हैं, वह सारी शक्ति लगाकर सीखचों को अपनी ओर खींचता है और फिर अपनी निष्फलता से झुँझलाकर अपने बालों को पकड़कर गर्दन हिलाता है।

घटना का पूरा चक्कर काटकर उसका मन फिर वहीं लौट आता है, जहाँ से उसने सोचना शुरू किया था। उत्तरी ध्रुव से बाहर निकलने के लिए प्रस्थान करने पर भी मनुष्य पृथ्वी के अन्दर ही घूमता हुआ एक दिन अकस्मात् अपने को उसी उत्तरी ध्रुव की बर्फीली हवा में ठिठुरता हुआ पाएगा। उस घटना ने उसके मन को चारों ओर से कवच की तरह घेर लिया है, जिसमें से बाहर का कोई प्रभाव उसके हृदय तक नहीं पहुँच सकता। किन्तु उस कवच की जकड़ किसी प्रहार से कम दुःखद नहीं थी।

शशाङ्क गिनती के बाद जब रात में सो जाता तो रह-रहकर किसी के खाँसने की कर्कश ध्वनि सुनकर वह उठ बैठता और फिर सूनी दृष्टि से अपने चारों ओर फैले हुए अन्धकार को चीरकर कुछ देखने के लिए घण्टों व्याकुल बैठा रहता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह, जो उसकी जीवन-सहचरी बनकर आई थी, उसके साथ चल नहीं सकी। साथ चलने के लिए उसने गति शेष नहीं रक्खी।

उसका नाम था माया। माता-पिता की एकमात्र सन्तान। उसके बाह्य में कोई विशेष आकर्षण नहीं था। साँवला रङ्ग। छोटे-छोटे नेत्र। न जाने उन छोटे छोटे नेत्रों के किस कोने में असीम भोलापन, असीम निश्छलता भरी थी। उसकी आकृति एक दर्पण के समान था, जिसमें उसका हृदय प्रतिबिम्बित होता था। और फिर भी ऐसा लगता था, उसमें कुछ है, जो गोपनीय है, अप्रकट है।

ससुराल आने के तीन-चार दिन बाद उसे ज्वर आया और उस ज्वर ने अन्त तक उसका साथ दिया। वह ज्वर उस समय अधिक चिन्ता का विषय बन गया जब कि कुछ दिनों बाद डाक्टरों ने उस ज्वर को क्षय की संज्ञा दी। अच्छे-से-अच्छा उपचार हुआ, सेनिटोरियम में रक्खा गया, किन्तु क्षय जैसे अक्षयता का वरदान लेकर आई थी।

माया के निकट संसार का कोई अस्तित्व नहीं था। संसार की यह अज्ञानता थी कि वह अपने निकट माया का अस्तित्व मानता था। वह पलँग पर लेटी-लेटी दिन भर सोचा करती। अधिकांश समय उसकी आँखें बन्द रहतीं। दूर से देखने पर प्रतीत होता, कोई ध्यानमग्ना योगिनी है। अनुमान नहीं लगाया जा सकता था कि वह कुछ सोच रही है, निद्राभिभूत है अथवा उसे किसी चिन्ता ने स्पर्श किया है।

उसका एक पृथक् संसार था, जिसमें अन्य व्यक्ति को प्रवेश करने का अधिकार नहीं था।

कभी उसमें परिवर्त्तन दिखाई देता, अकस्मात्, अकारण! वह खाट छोड़कर इधर-उधर टहलती, घण्टों धूप में बैठी रहती। साड़ी पर बेल-बूँटे निकालने बैठती तो थकने का नाम न लेती। सास कहती—"रहने दो, बेटी! तुम्हारी तबियत खराब है, बेटी। ज्यादा मेहनत न करो।"

वह चट से उत्तर देती—"नहीं, माताजी, मैं अच्छी तो हूँ। आप लोग व्यर्थ ही चिन्ता करते हैं।"

उसने प्रत्येक उपचार को निर्विरोध ग्रहण किया था। समय पर अपने आप ओषधि ले लेती। घर का कोई बड़ा आदमी उसके सामने आता तो वह विनम्र होकर अभिवादन करती। छोटे बच्चों के प्रणाम को मुस्करा कर स्वीकार करती। जब उससे स्वास्थ्य-सम्बन्धी प्रश्न होता तो वह उत्तर देती—आप लोग मुझे बीमार क्यों समझते हैं? मुझे हुआ क्या है?

घर के बच्चों-बड़ों को आदेश था, कोई माया के पास देर तक न ठहरे। माया इस आदेश और इस आदेश की आवश्यकता से परिचित थी। वह ऐसा अवसर नहीं आने देती थी कि किसी को उसके पास जाने की आवश्यकता पड़े।

और शशाङ्क चाहता था, वह अपनी पत्नी के पास बैठे, उससे क्षण भर के लिए भी दूर न हो। किन्तु घरवाले उसे वहाँ जाने नहीं देते थे। घरवालों की आँख बचाकर किसी तरह वह माया के पास पहुँचता तो वह उसे उल्टे पाँवों लौटने के लिए विवश करती। कहती—क्यों आए हैं आप यहाँ? कोई देखेगा तो क्या कहेगा? और फिर मुसकराकर कहती जाइए न?

शशाङ्क उसकी मुसकान से मुग्ध हो जाता, किन्तु वह उसके आदेश को टाल नहीं सकता था।

अधिक सम्पर्क न रहने पर भी, खुलकर वार्त्तालाप न करने पर भी, शशाङ्क के जीवन का एकमात्र केन्द्र थी माया। माया के अतिरिक्त उसके लिए कुछ भी नहीं था। वह प्रतिभाशाली, शिक्षित युवक अपनी समस्त आकांक्षाओं को भूलकर स्वस्थ माया की कल्पना करता और कल्पना में ही अपनी माया को लेकर नव-सृष्टि का निर्माण करता।

जाड़े के दिन थे, माया आँगन में बैठी धूप सेवन कर रही थी। उसमें रक्त तथा मांस नाम मात्र को भी शेष नहीं थे, ऐसा लगता था, जैसे किसी ने ऊबड़-खाबड़ हड्डियों को एक चमड़े की चादर में ढीला-ढाला बाँधकर रख दिया है। मुख पर वही चिरपरिचित भोलापन था। वही निश्छलता थी। मुख के आकर्षण में विशेष अन्तर नहीं पड़ा था। शशाङ्क एक खम्भे के सहारे खड़ा माया को निहार रहा था। एकाएक शशाङ्क की आँखों से अविरल धारा बह निकली।

माया ने उसकी ओर देखा तो वह अपनी निर्बलता भूल गई। उठकर शशाङ्क के पास आई। शशाङ्क का हाथ पकड़कर वह उसे अपने कमरे में ले गई। अञ्चल से उसके आँसू पोंछते हुए माया ने हँसकर कहा—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"आप यह क्या पागलपन कर रहे हैं? पुरुष रोता है कभी! मेरी आँखों में भी कभी आपने आँसू देखे हैं?"

किन्तु शशाङ्क के आँसू रुकते नहीं थे, वह अपना सिर नीचा किए बैठा था। उसकी आँखों से टप्-टप् आँसू गिर रहे थे।

माया ने उसका सिर अपनी गोद में रख लिया। एक हाथ से शशाङ्क का सिर दबाते हुए दूसरे हाथ से उसे गुदगुदाकर उसने कहा—"हँसिए, आप हँसिए न! अच्छा आप हँसेंगे नहीं? तो फिर माताजी को बुलाती हूँ मैं!"

और माया स्वयं खिलखिलाकर हँस दी।

इस आग्रह में शक्ति थी, जिसने शशाङ्क के आँसू रोक दिए। वह रुआंसे मुख से मुसकराने का प्रयत्न करने लगा।

माया ने मीठी ताड़ना के स्वर में कहा—"अब फिर कभी ऐसा न कीजिए।"

यह कुछ क्षणों का साथ! शशाङ्क को प्रतीत हुआ, माया का सारा मौन, सारा रहस्य, सारा आवरण दूर हो गया है और वह निरावृत माया उसके हृदय में घुलकर एकाकार हो रही है।

माया अधिक बीमार हो गई। अब उससे मिलने के लिए शशाङ्क को कोई नहीं रोकता। उसे मिलने के लिए अवसर दिए जाते थे।

माया का कमरा बदल दिया गया। वह कमरा शशाङ्क के कमरे के पास ही था।

वह रात? वह रात क्या कभी भूली जा सकेगी? दस-साढ़े दस बजे शशाङ्क को खाँसने की ध्वनि सुनाई दी। खाँसी शब्द से उस क्रिया को पूरी तरह व्यक्त नहीं किया जा सकता। खाँसी का ढेर था जो एकबारगी ही मुँह से निकल जाना चाहता था। खाँसी की एक अटूट शृङ्खला, जो आरम्भ हुई तो पूरे पन्द्रह मिनिट पश्चात् विराम लेती। प्रति क्षण अनुभव होता, आगामी क्षण खाँसी रुक जाएगी और खाँसी के साथ ही हृदय की धड़कन भी। माया का बायाँ फेफड़ा अधिक व्याधि-ग्रस्त था। वह शय्या पर पड़ी-पड़ी हाँफ रही थी। उसकी साँस में भयानक घरघराहट थी, रोमाञ्चकारी गुञ्जन था।

शशाङ्क अनुभव करने लगा वह पलँग पर नहीं है, कमरे में नहीं है, किसी स्थूल वस्तु पर नहीं है। आकाश के किसी कोने में वह सिकुड़ा हुआ लटक रहा है। माया के कमरे में जाने का उसे साहस नहीं होता था। आधी रात गए वह माया के कमरे में गया और पलँग के एक कोने पर बैठकर धीरे-धीरे माया का माथा दबाने लगा।

माया न हिली, न डुली। उसी तरह लेटी रही। उसके मुख पर मुसकान दौड़ गई। आँखें बन्द किए वह दिव्य आनन्द का अनुभव कर रही थी। तीन-चार मिनिट बाद उसने अपने हाथ में शशाङ्क का हाथ पकड़ा, कुछ दबाया और उसी तरह बिना आँखें खोले वह बोली—"आप? आप आ गए यहाँ? किस तरह पहुँचे यहाँ तक? अच्छा किया—"

शशाङ्क स्तब्ध रह गया। वह कुछ सहमकर बोला—"माया, माया, क्या तुम कोई स्वप्न देख रही थीं? मैं हूँ! जरा आँखें तो खोलो!"

माया सन्न रह गई। उसकी मुसकान विलीन हो गई। उसने आँख खोलकर शशाङ्क की ओर देखा। उसकी दृष्टि स्थिर हो गई थी। शशाङ्क समझ नहीं सका कि इस दृष्टि में आश्चर्य है अथवा उत्सुकता।

काँपते हुए स्वर में माया ने कहा—आप हैं? फिर कुछ हँसने का प्रयत्न करते हुए वह बोली—"इतनी रात गए आप यहाँ क्यों आए हैं? आप अभी तक सोए नहीं!" अपनी बात समाप्त करके जैसे ही वह बाईं करवट ले, उसके मुँह से वेदना भरी आह निकली। वह करवट न ले सकी। और फिर खाँसी क्षण भर के लिए नहीं रुकी।

खाँसी रुकी तो शशाङ्क ने कहा—"माया, तुम जीवित कैसे हो? इतनी भयङ्कर खाँसी!" स्वर में सहानुभूति की अपेक्षा दया अधिक थी।

अपनी खरखराती हुई आवाज में मधुरता लाने का प्रयास करते हुए माया ने कहा—"आज की रात तो बहुत आराम से कट रही है। कोई विशेष बात नहीं है, अब आप जाइए।'

चारों तरफ सन्नाटा छाया हुआ था।

शशाङ्क स्तब्ध बैठा रहा। उठा नहीं, उसी तरह सहलाता रहा।

दूसरे दिन रात में, उसी समय वह माया के कमरे में पहुँचा। माया लेटी हुई छत की ओर ताक रही थी। चुपचाप। शशाङ्क के पहुँचते ही वह कुछ मुसकाई और बोली—"आइए, बैठिए!"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शशाङ्क के लिए यह स्वागत अनपेक्षित था। वह बैठ गया। उसके केशों पर हाथ फेरने लगा।

माया की आकृति में गम्भीरता छा गई। उसने गम्भीरता के साथ कहा—"आपका क्या मत है, स्त्रियों में आत्मा होती है या नहीं?"

"होती क्यों नहीं? स्त्री-पुरुष, गाय-बैल ये तो शरीर के भेद हैं। आत्मा तो एकरूप है। उसमें कोई भेद नहीं होता। देह, अथवा योनि कह लो, कर्मानुसार मिलती है।"

"अच्छा, आप यह बताइए, आत्मा में परिवर्त्तन होता है या नहीं?"

"नहीं, कुछ भी नहीं। आत्मा अपरिवर्त्तनशील, अनादि, अनश्वर और अविकृत है!"

"तब स्त्रियों में आत्मा नहीं होती! यदि स्त्रियों में आत्मा है, तो मैं कहूँगी—आत्मा कोई चीज नहीं। स्त्री के स्वामी, अभिभावक, पालक, उसकी अपनी कृति और सब कोई बदल जाते हैं। इन सबके साथ-साथ उसे भी बदलना पड़ता है। यह बदलना, यह परिवर्त्तन इतनी स्वाभाविकता के साथ होता है, कि मैं कहूँगी वह अपने आप बदलती है। उसका गृह, कुल, गोत्र, नाम सभी कुछ बदल जाते हैं। आप ही बताइए, उसमें अपरिवर्त्तनशील आत्मा कैसे रह सकती है?

शशाङ्क चुप बैठा रहा बिना उत्तर देने की कुछ चेष्टा किए ही। माया तकिए के सहारे बैठ गई। उसने अपने नेत्रों को सङ्कुचित किया। उसके हृदय की सम्पूर्ण शक्ति उस समय तिलमात्र के दृष्टि-बिन्दु में समाई हुई थी। उन नेत्रों में एक याचना थी, याचना के साथ भोलापन था। वह कुछ चौंकी।

सहमी हुई शशाङ्क को एकटक देखती हुई वह बोली—"आप मुझसे प्रेम करते हैं?"

शशाङ्क चुप।

"आप मुझसे प्रेम करते हैं?" फिर वही प्रश्न। पहले की अपेक्षा अधिक दृढ़ स्वर में।

"अब मैं अपने उत्तर को ध्वनि में व्यक्त नहीं कर सकता।" स्वर में कम्पन था।

"अच्छा, तब यह लीजिए।" कहकर माया ने अपने तकिए के नीचे से नङ्गा छुरा निकालकर शशाङ्क के हाथ में दे दिया।

छुरा बिजली के प्रकाश में चमक उठा। शशाङ्क के रोम-रोम में बिजली दौड़ गई। वह अपने आपको सँभाले, इतने में माया ने आवेशपूर्ण स्वर में कहा—"जो जितना प्रेम कर सकता है, वह उतनी ही घृणा भी कर सकता है, प्रेम स्रष्टा है, और संहारक भी। मैं आपके प्रेम में सर्जन नहीं, संहार देखना चाहती हूँ। लीजिए, एक क्षण की देर न हो। लीजिए।"

माया एकटक उसी याचनापूर्ण दृष्टि से शशाङ्क को ताक रही थी। उन नेत्रों में एक अनिवार्य आदेश था, जिससे शशाङ्क खिंचा जा रहा था। वह खड़ा हुआ। उसने छुरा हाथ में लिया। भुजा कुछ काँपी। किन्तु एक क्षण बाद, उसकी पूर्ण शक्ति से प्रेरित छुरा माया की रक्त-रिक्त छाती में घुस गया।

माया की गर्दन तकिए पर ढुलक गई। वह स्थिर हो गई। आह भी न निकली।

शशाङ्क छुरा निकालकर चला गया।

प्रातः जब शशाङ्क की आँखें खुलीं, उसने अपने को पुलिस थाने में पाया। उसे स्मरण हुआ, आधी रात के समय किसी अदृश्य शक्ति से खिंचा हुआ वह उस जगह आ गया था।

× × ×

उसके मुकदमे को सुनने के लिए अदालत खचाखच भरी रहती थी। प्रत्येक नेत्र उसकी ओर घृणा के साथ देखता। ये नेत्र उसे धिक्कारते हुए कहते—नीच! पापी! हत्यारा!

वह सुनता, लोग चर्चा करते थे—"इस हत्यारे को देखो, जिसने बीमार पत्नी से जल्दी छुटकारा पाने के लिए, दूसरे विवाह की शीघ्रता में, अपनी मरती हुई पत्नी को, रात के समय छुरे से मार दिया।"

हत्यारा! पापी!

एक दिन मुकदमा सुनने के लिए माया की माँ अदालत में आई। उसने एक बार शशाङ्क की ओर देखा और फिर घृणा से मुँह मोड़कर दूसरी तरफ देखने लगी।

इन घृणापूर्ण दृष्टियों के आघात से शशाङ्क कभी विचलित नहीं हुआ। इन हजारों नेत्रों को तिरोहित करते हुए उसकी ओर दो नेत्र ताकने लगते, जिनमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

याचना थी, निश्छलता थी। ये नेत्र उसकी ओर एक-टक देखते रहते।

× × ×

एक दिन वार्डन ने उसकी कोठरी का दरवाजा खोला। उसे निर्णय सुनाया जानेवाला था। उसे विश्वास था और वह चाहता था फाँसी की सजा हो।

वार्डन ने कहा—"तुम छोड़ दिए गए!"

"छोड़ दिए गए? क्यों?" शशाङ्क ने आश्चर्य के साथ पूछा।

"प्रत्यक्ष साक्षी के अभाव में आप निर्दोष सिद्ध हुए हैं।"

"अरे!" शशाङ्क के मुँह से एकाएक ही निकल गया! क्षण भर बाद ही वह खिलखिलाकर हँसा। हँसा, खूब हँसा।

जेल के प्रमुख द्वार से निकला तो शशाङ्क को कुछ दिखाई नहीं दे रहा था। मार्ग नहीं था, मकान नहीं थे, मनुष्य नहीं थे। उसे दिखाई दे रहे थे, वे ही दो याचनापूर्ण नेत्र। निमन्त्रण देते हुए से।

वह धीमे-धीमे चल रहा था। जेल के सामने से होती हुई जो सड़क नगर की ओर जाती थी, वह काफी ढालू थी। उस ढालू सड़क के बीचोंबीच शशाङ्क जा रहा था।

पीछे से, अपनी पूर्ण गति में दौड़ती हुई, फौजी लारी आ रही थी।

शशाङ्क आकाश की ओर देखते हुए हँस रहा था। उसे दो नेत्र, बृहदाकार में, दिखाई दे रहे थे जिनमें याचना थी, निमन्त्रण था।

ऐं ऐं ऐं..... .।

हार्न बजा—

भों, भों, भों।

फिर—

घुर्र, सर्र घप्प—

एक अट्टहास!

और फिर—

——

लघिमा

श्री नन्दकिशोर

ढोता जीवन की लघुता मन।
साँझ-सकारे
पल-पखवारे
केवल एक सहारा ले तन
ढोता जीवन की लघुता मन।
ढोता सागर की लघुता घन।
पङ्ख पसारे
धीरे-धीरे;
विजनवती का धरे आवरण
ढोता सागर की लघुता घन।
ढोता दिव-निशि की लघुता छन।
परिवर्तनमय
नित-नव छविमय

महाकाल का लेकर जीवन
ढोता दिव-निशि की लघुता छन।
ढोता भूधर की लघुता कण
पिसकर घिसकर
चलकर उड़कर
सुन-सुनकर धड़कन पर धड़कन
ढोता भूधर की लघुता कण
ढोता मैं लघुता का लघु-तन
आकुल होकर
डरकर दबकर
निराधार झञ्झा में पड़ कण
ढोता मैं लघुता का लघु-तन

——

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रज्वलित इण्डोनेशिया

श्री सन्त निहालसिंह

(१)

आजकल समाचारपत्रों के शीर्षकों में और रेडियो के ब्राडकास्टों में जितनी चर्चा इण्डोनेशिया की होती है उतनी और किसी देश की नहीं होती। फिर भी ऐसे कम मनुष्य होंगे जिन्होंने यह अनुभव किया होगा कि इस सारे शोर-गुल के पीछे, जो हठात् अपनी ओर ध्यान आकर्षित कर लेता है, ऐसे असन्तोष की भावना है जिसकी जड़ें बहुत गहरी हैं। इस असन्तोष को उभाड़ने-वाले कारण गुप्त भी हैं और पेचीदा भी। उनका समझ में आना कठिन है। उनसे निपटना और भी अधिक कठिन होगा।

इण्डोनेशिया के सम्बन्ध में कुछ जानने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हो चुका है। वहाँ के कुछ निवासियों से मेरा वार्तालाप भी हुआ है। वहाँ के शासकवर्ग के कुछ व्यक्तियों से भी भेंट और बातचीत करने का सुयोग मुझे मिल चुका है।

लगभग चालीस वर्ष हुए होंगे, जब मैंने इण्डोनेशिया और इण्डोनेशियनों के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करना प्रारम्भ किया था। १९०४ में जापान ने रूस के विरुद्ध जो युद्ध प्रारम्भ किया था और जिसमें उसे सफलता भी मिली थी, उसका उन्हीं दिनों अन्त हुआ था। जब मैंने एशियायी देशों में भ्रमण करना प्रारम्भ किया तब भारत के पूर्व में स्थित देशों की, और उन देशों के निवासियों की, समस्याएँ मेरे अध्ययन का विषय बनीं। उन्होंने मेरा ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर लिया।

उन दिनों इण्डोनेशिया और इण्डोनेशियनों के सम्बन्ध में मुझे जो दिलचस्पी पैदा हुई उसमें कभी कमी नहीं आई। प्रत्युत वह उत्तरोत्तर बढ़ती ही रही। प्रतिवर्ष कुछ न कुछ नवीन बातें मुझे इस सम्बन्ध की ज्ञात होती रहीं।

अपने इस दीर्घकालव्यापी और निकट के अध्ययन के आधार पर मुझे यह सन्देह हो रहा है कि यह अग्नि, जिसे जापान के युद्ध ने भड़का दिया है, इतना शीघ्र शान्त नहीं होगी, जितना शीघ्र उसे शान्त देखने के लिए प्रत्येक ठीक दिमागवाला व्यक्ति उत्सुक है। अग्नि की इन चिनगारियों को शक्ति या बुद्धि के प्रयोग-द्वारा दबा देने का कितना ही प्रयत्न क्यों न किया जाए पर वे अभी बहुत दिनों तक ज्वलन्त बनी रहेंगी और जब-जब उनको कोई समीपवाही राजनैतिक या आर्थिक वायु स्पर्श करेगी, तब-तब वे धधक उठेंगी।

बात वस्तुतः यह है कि इन द्वीपों पर पिछले दिनों जब तक जापान का अधिकार रहा है, तब तक जापान ने यहाँ इस आग को भड़काने के सिवाय और कुछ नहीं किया है। वह ईंधन, जिसमें जापानियों ने आग लगाई, उन्हें इकट्ठा नहीं करना पड़ा था। वह तो वहीं मौजूद था। इण्डोनेशिया के प्रत्येक भाग में वह प्रस्तुत था—बहुत बड़ी मात्रा में। दियासलाई छुआने से पूर्व उसके सुखाने की भी जरूरत नहीं थी। वह तो सूखा-सुखाया था। साथ ही वह प्रचण्ड ज्वलनशील भी था। किसी आकस्मिक संयोग की चिनगारी उसे दहकाने को पर्याप्त थी।

ऐसा क्यों था, यही सब बतलाने की चेष्टा मैं इस लेख में अपनी सम्मति के अनुसार करूँगा। मैं यह भी बतलाऊँगा कि असन्तोष की यह भावना उन प्रयत्नों के सामने, जो आजकल किए जा रहे हैं, शीघ्रता से, और पूर्ण-तया झुकने को क्यों तैयार नहीं है।

(२)

सब से पहले नाम के सम्बन्ध में

इण्डोनेशिया शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है—एक 'इण्डो' और दूसरा 'नेशिया'। 'इण्डो' इण्डिया (भारतवर्ष) के लिए है, जैसा कि हम आसानी से समझ सकते हैं। 'नेशिया' शब्द का समझना इस लोगों के लिए उतना सरल नहीं है। इस शब्द की व्युत्पत्ति ग्रीक-भाषा के 'नेसोस' (Nasos) शब्द से है, जिसका अर्थ है 'द्वीप'।

यह नाम—जैसा कि इसका व्यवहार हो रहा है—सर्वथा उपयुक्त है। जिस भूभाग के लिए इस संज्ञा का प्रयोग हो रहा है वह वस्तुतः एक द्वीप-समूह है, जो भारत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के पूर्व में बङ्गाल की खाड़ी के ठीक उस पार फैला हुआ है।

इन द्वीपों के सम्बन्ध में कुछ बतलाने के पूर्व यह बतलाना आवश्यक समझता हूँ कि इस संज्ञा का प्रचलन पिछले कुछ ही दिनों से हुआ है। जिन दिनों मैं स्कूल में पढ़ता था, यह शब्द नहीं सुनाई देता था। चार दशक पूर्व, जब मैंने एशिया का भ्रमण प्रारम्भ किया था, इन द्वीपों को 'डच ईस्ट इण्डीज' नाम से पुकारा जाता था। इस विचित्र नाम का 'सर्वथा त्याग' अब भी नहीं हुआ है। युद्ध के पूर्व जितने नक्शे और एटलसें छपी हैं, उन सबमें यही नाम मिलेगा। अनेक शब्द-कोशों-और विश्वकोशों में भी 'डच ईस्ट इण्डीज' शब्द मिलेगा।

कारण स्पष्ट है। ये द्वीप मिलकर डच जाति की 'इण्डीज' का निर्माण करते हैं। डच उस जाति का नाम है जो उत्तरी योरप के एक छोटे-से देश 'हालैण्ड' में रहती है। डचों को इसी लिए 'हालैण्डर्स' भी कहते हैं। पर वे लोग अपने देश को 'नेदरलैण्ड' और अपने को 'नेदरलैण्डर्स' कहलाना अधिक पसन्द करते हैं।

ये द्वीप मिलकर डचों की 'इण्डीज' कैसे बनाते हैं? उत्तर सरलता से दिया जा सकता है। १७ वीं शताब्दी के प्रारम्भ में, जब डचों ने बेटाविया पर अपना अधिकार स्थापित किया था, भारतवर्ष प्रत्येक योरपीय जाति के लिए 'स्वप्न-देश' बना हुआ था। अभिप्राय यह है कि उन दिनों योरप की प्रत्येक जाति भारतवर्ष पर अपना अधिकार करने का सुखमय स्वप्न देखा करती थी। योरप के प्रत्येक निवासी का यह विश्वास था कि भारत संसार में सबसे अधिक सम्पन्न देश है। अतएव वे इस भूमि के साथ व्यापार करने—और यदि सम्भव हो सके तो इस पर प्रभुत्व स्थापित करने—के लिए ललचाया करते थे।

डच योरप की एक अन्य जाति से ईर्ष्या करते थे। यह जाति थी पुर्तगालियों की, जिसने १६ वीं शताब्दी के अन्त में समुद्र-यात्रा की जोखिम उठाकर भारत के पश्चिमी किनारे पर पैर रखने भर को स्थान प्राप्त कर लिया था।

अँगरेज़ भी पुर्तगालियों से जलते थे। कारण एक ही था। उन्होंने १७ वीं शताब्दी के प्रारम्भ में पूर्व में पैर जमाने का संगठित प्रयत्न किया। उन्हें किस प्रकार सफलता मिली, यह हम भारतीयों को अच्छी तरह मालूम है।

(३)

लगभग उन्हीं दिनों डचों ने भी पूर्व में जमने का प्रयत्न किया। वे अपेक्षाकृत अधिक कुशल नाविक थे और दुस्साहसी भी। फलतः वे बङ्गाल की खाड़ी से आगे जा पहुँचे। मलाका के जलडमरूमध्य से आगे पहुँचने पर उन्हें ये द्वीप मिले।

इन द्वीपों में वह सम्पत्ति डचों की आशा से भी अधिक थी जिसकी उन दिनों योरप में बहुत अधिक माँग थी। योरप के निवासियों को मांस की रक्षा के लिए मसालों की दरकार थी, जो मसालों के अभाव में सड़ जाता था। मसालों की जरूरत उन्हें बड़े-से-बड़े परिमाण में थी और उनके लिए वे अधिक-से-अधिक मूल्य देने को तैयार थे। इस सौदे का व्यापार करना फलतः डचों के लिए बहुत लाभदायक था।

इस प्रत्याशित लाभ ने नेदरलैण्ड के दुस्साहसी नाविकों को प्रेरणा दी कि वे मसालों की इस अक्षय खानि पर अपना अधिकार जमाएँ। बाद में उन्हें इस भूभाग में अन्य अनेक उपयोगी वस्तुएँ भी मिलीं। अतएव वे इस भूभाग पर अपना अधिकार उत्तरोत्तर बढ़ाते रहे और धीरे-धीरे समस्त द्वीपपुञ्ज पर अधिकार कर बैठे।

'डच ईस्ट इण्डीज'—अभी मैं इसी नाम का प्रयोग करूँगा—बहुत विस्तृत क्षेत्र में फैले हुए हैं। सबांग नाम का एक टापू इनमें सबसे पच्छिम की ओर। यह लङ्का के पूर्वी किनारे से केवल इतना दूर है कि एक अच्छी रफ्तारवाला जहाज कुछ ही घण्टों में वहाँ पहुँचा देता है। कलकत्ता से यह केवल एक हजार मील है। इन द्वीपों में सबसे पूर्व का द्वीप फिलिपाइन द्वीप-समूह से मिला हुआ है। फिलिपाइन द्वीप-समूह अमेरिका के अधिकार में है। इस प्रकार 'डच ईस्ट इण्डीज' एक प्रकार के भारत से पूर्व में एशिया की पूरी लम्बाई में फैले हुए हैं।

इन द्वीपों में से कुछ बड़े हैं। जावा और मदुरा (मदुरा से मेरा अभिप्राय इसी नाम के एक द्वीप से है, मद्रास के इसी नाम के शहर से नहीं) का मिलित क्षेत्र-फल ५१,००० वर्गमील है। अर्थात् केवल ये दो द्वीप मिलकर ही योरप के उस देश से, जो इन पर शासन कर रहा है, चौगुने बड़े हैं।

यहाँ यह समझ लेना चाहिए कि हालैण्ड का क्षेत्र-फल १३,५१४ वर्गमील है और उन द्वीपों का क्षेत्रफल जिनपर उस देश के निवासी फिर से प्रतिष्ठित होने का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भरपूर प्रयत्न कर रहे हैं, ७३०,००० वर्गमील है—अर्थात् उनकी मातृभूमि का लगभग ५५ गुना।

'डच ईस्ट इण्डीज' केवल आकार-प्रकार में ही विस्तृत नहीं है, यहाँ बहुमूल्य सम्पत्ति भी है। भूमि अत्यधिक उपजाऊ है। सभी फसलें यहाँ बहुत बड़ी मात्रा में होती हैं। खनिज उपजें भी प्रचुरता से होती है।

यहाँ जनसंख्या भी प्रचुर है जो खेती आदि में लगी रहती है। गत जनगणना के अनुसार जावा और मदुरा की जनसंख्या ही ३॥ करोड़ थी। यहाँ के मनुष्य मजबूत और परिश्रमी होते हैं। मुझे निश्चयपूर्वक ज्ञात है कि डचों ने इन लोगों को ले जाकर कुछ ऐसे द्वीपों में बसाया है जिनमें अधिक आबादी नहीं थी। सुमात्रा उनमें से एक है। जावा-निवासी वहाँ भी अत्यधिक परिश्रम कर रहे हैं, इसके मेरे पास अनेक प्रत्यक्ष प्रमाण हैं।

(४)

डच शासक दूरदर्शी हैं। उन्होंने केवल इसी पर सन्तोष नहीं किया कि 'डच ईस्ट इण्डीज' के निवासी जिस तरह चाहें, खेती करते रहें। प्रत्युत उन्होंने उसकी दिशा ही बदल दी। उदाहरणार्थ योरप में अब मसालों की जरूरत उतनी नहीं रह गई थी जितनी कुछ शताब्दियों पूर्व थी। कारण, अब वहाँ मांस को सुरक्षित रखने के लिए बर्फ आदि का प्रयोग होने लगा था। अतएव डचों ने यहाँ खेती का प्रकार परिवर्त्तित कर दिया। उन्होंने ऐसी फसलों की खेती करानी प्रारम्भ की जो अधिक लाभदायक थीं।

इस प्रकार जिन नई फसलों को अधिक प्रोत्साहन दिया गया उनमें एक गन्ना था, दूसरी रबर और तीसरी चाय। विदेशी शासकों ने इन वस्तुओं की खेती की उन्नति की ओर बहुत ध्यान दिया। उन्होंने फसलों की, विशेषतया गन्ने की, नस्ल में सुधार करने के लिए डच विशेषज्ञ नियुक्त किए। धन और शक्ति, दो में से किसी के व्यय में कोताही नहीं की गई। परिणाम-स्वरूप चीनी की उत्पत्ति में 'डच ईस्ट इण्डीज' संसार का नेतृत्व कर रहा है।

इन फसलों की खेती अनेक दृष्टियों से लाभपूर्ण है। इनमें से कुछ पर विचार करना यहाँ आवश्यक प्रतीत होता है—

जहाँ बड़े पैमाने पर धन्धे प्रारम्भ किए जाते हैं वहाँ गोरे प्रभुओं को पूँजी लगाने का और प्रबन्ध करने का अवसर मिलता है। इस प्रकार उपजाऊ भूमि का अधिकांश 'देशी लोगों' के हाथ से निकलकर विदेशियों की मिलकियत बन जाता है। ऐसे क्षेत्रों पर डचों का, और कहीं-कहीं अँगरेजों का भी, एकच्छत्र अधिकार स्थापित है। उन्हें जो लाभ होता है वह कल्पनातीत है।

यहाँ यह स्मरण रखना आवश्यक है कि ऐसी फसलों को तैयार होने के पूर्व कुछ अनुक्रमों से गुजरना पड़ता है। खेत से काटने के बाद और बाजार में पहुँचने के पहले उन्हें सड़ने और खराब होने से बचाना होता है और उन्हें ऐसा रूप देना होता है जिससे उनके उतारने-चढ़ाने में अधिक असुविधा न हो।

गन्ना को ही लीजिए। गन्ने को चीनी के रूप में बदल देना होता है। इस कार्य के लिए मशीनों की जरूरत होती है और उन मशीनों को सञ्चालित करने-वालों की भी।

रबर के पेड़ों से सञ्चित किया हुआ दूध उसी रूप में निर्यात नहीं किया जा सकता। उसे जमाना होता है। उसका फालतू पानी निकालकर फिर उसे पेरकर पतली चादरों के रूप में बदल देना होता है और तब वह बाहर भेजने योग्य होता है। रबर की चादरों को जहाजों पर चढ़ाने-उतारने में असुविधा नहीं होती।

चाय की झाड़ियों से चुनी हुई पत्तियाँ यदि अनुभवी हाथों में न पड़ें तो सड़ जाएँ या फफूँद जाएँ। उन्हें कई अनुक्रमों से गुजरना होता है और तब कहीं जाकर वे गृहिणी के पास पहुँचने योग्य बन पाती हैं जो उनसे 'नशा-रहित पर दिल को ताजा बनानेवाला' पेय तैयार करती है।

(५)

जब मैं बच्चा ही था, जावा की चीनी ने हमारे भारत के चीनी-बाजार में उथल-पुथल मचा दी थी और इसका प्रभाव हमारे देश के चीनी-व्यवसाय पर बहुत अधिक पड़ा था। हमारे यहाँ चीनी को साफ करने की जो विधि प्रचलित थी वह अपेक्षाकृत महँगी थी और उससे चीनी भी उतनी साफ नहीं बन पाती थी जितनी साफ जावा से आई हुई चीनी होती थी। फल यह हुआ कि प्रतियोगिता में न ठहर सकने के कारण यहाँ के चीनी-व्यवसायियों ने चीनी का साफ करना ही बन्द कर दिया।

सन् १९२७ से १९३० तक मैं लङ्का में था। उन दिनों 'इण्डीज' के रबर और चाय के उत्पादकों ने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रख अख्त्यार किया था उसे लेकर चिन्ता की एक लहर-सी फैल गई थी। उस देश के 'प्लाण्टर्स' ने स्वेच्छा-पूर्वक इन वस्तुओं की उपज को घटाने का निश्चय कर लिया था। इस त्याग का कारण यह था कि इन दोनों वस्तुओं के भाव बहुत अधिक गिरने लगे थे, जिन्हें रोकने के लिए ही इस उपाय का अवलम्बन किया गया था। 'इण्डीज' के उत्पादक इस कार्य में सहयोग देने को राजी नहीं थे।

उन्हों ने 'डच ईस्ट इण्डीज' की खनिज सम्पत्ति से लाभ उठाने का भी वैसा ही प्रयत्न और उद्योग किया जैसा कि खेती से लाभ उठाने का किया था। मिट्टी के तेल का स्थान इसमें सबसे प्रथम आता है। प्रत्येक दशाब्दी में मिट्टी के तेल की निकासी बढ़ती ही गई। सन् १९३९ में ६,२६७,३९३ टन पेट्रोल का निर्यात किया गया था। इन उद्योगों ने हालैण्डवालों को पूँजी लगाने और कार्य करने का अवसर दिया। इससे उन्हें मशीनें भेजने का भी अवसर मिला। इन मशीनों में से अधिकांश उन्हीं के देश की बनी होती थीं और उन्हीं के जहाजों में लाई जाती थीं। इस प्रकार अनेक विभिन्न स्रोतों से होकर 'डच ईस्ट इण्डीज' का धन हालैण्ड में पहुँचता था।

इस आर्थिक शोषण को सम्भव बनाने के लिए डच शासकों ने सड़कें बनवाईं और रेल-लाइनें बिछवाईं जिससे देश के भीतरी भाग से तट पर माल पहुँचाना सरल हो गया। उन्होंने कृषि-सम्बन्धी, व्यापारिक और निर्यात-सम्बन्धी कार्यों के लिए आर्थिक सुविधाएँ देने की भी व्यवस्था की।

पूँजी के मामले में उन्होंने उल्लेखनीय बुद्धिमत्ता और सहकारिता का परिचय दिया। शहरों में उन्होंने बैंक खड़ी कर दीं। गाँवों में उन्होंने ऐसा प्रबन्ध कर दिया जिससे किसान आसानी से और कम ब्याज़-दर पर आर्थिक सहायता पा सकें। इस व्यवस्था ने किसानों को लालची और ख़ून चूसनेवाले महाजनों के चंगुल से बचा लिया। यह व्यवस्था मुझे बहुत उपयोगी प्रतीत हुई थी।

(६)

हालैण्डवासियों ने 'डच ईस्ट इण्डीज' में जो उन्नति की थी उससे उन्होंने लाभ भी अत्यधिक उठाया। उस लाभ को अंकों-द्वारा प्रकट कर सकना सम्भव नहीं है। जब मैं पहले-पहल वहाँ गया था तब शासन-विभाग का प्रत्येक महत्त्वपूर्ण पद डचों के लिए सुरक्षित था। उससे कम महत्त्व के पद उन लोगों को दिए जाते थे जो डच पिता और देशी माता से पैदा होते थे। यहाँ यह जान लेना आवश्यक है कि 'डच ईस्ट इण्डीज' में इन 'यूरेशियनों' के साथ जो व्यवहार होता था वह उस व्यवहार से कहीं अधिक अच्छा था जो तथाकथित 'एँग्लो-इण्डियनों' के साथ हमारे देश में अँगरेज़ों-द्वारा होता है। महायुद्ध आरम्भ होने तक यही परम्परा जारी रही। यद्यपि कहा बार-बार गया कि शासन-कार्य में जनता को भी योग देने का अधिकार दिया जाएगा फिर भी सारे महत्त्व के स्थान डचों के ही हाथ में बने रहे।

युद्ध छिड़ जाने के दिनों में भी छोटे-बड़े समस्त व्यापार प्रमुखतः हालैण्डवालों के, और कुछ अँगरेजों के और दूसरे विदेशियों के, हाथों में थे। यातायात पर भी उन्हीं का अधिकार था। निर्यात पर डचों का सीधा नियन्त्रण था। रेलों और जहाजों के सम्बन्ध में भी यही बात थी।

दूसरे प्रकार के कुछ लाभ और भी थे। युद्धपूर्व के दिनों में जो जहाज हालैण्डवालों के बनाए हुए 'डच ईस्ट इण्डीज' के बन्दरगाहों में इस देश की उपज को ले जाने के प्रयोजन से आते थे वे अफसरों, सिपाहियों और व्यापारियों को भी ले आते थे। साथ ही वे डच शिल्पियों को भी ले आते थे।

इन गत तीन शताब्दियों में इस उपनिवेश का कितना धन खिंचकर 'नेदरलैण्ड' में पहुँच गया, इसका ठीक-ठीक लेखा-जोखा कर सकना असम्भव है। इस माध्यम से हालैण्ड का जो अभूतपूर्व उद्योगीकरण हुआ, वह भी बहुत बड़ा लाभ ही है।

आकार और जनसंख्या को देखते हुए 'नेदरलैण्ड' उद्योग-धन्धों में बहुत अधिक अग्रसर है। वहाँ जहाज-निर्माण का धन्धा बहुत उन्नत है। भोज्य और पेय पदार्थों तथा मक्खन, चर्बी और तैलों का निर्माण भी वहाँ बहुत बड़े परिमाण में होता है। विभिन्न प्रकार की मशीनें तो वहाँ इतनी बनती हैं कि देखकर आश्चर्य होता है। कला-सम्बन्धी उद्योग-धन्धों में भी 'नेदरलैण्ड' ने ऐसी ही उन्नति की है। वहाँ का आम्स्टरडम शहर, जिसकी जनसंख्या १९३९ में आठ लाख थी, हीरा-तराशी का विश्व-विख्यात केन्द्र था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(७)

अपने 'इण्डीज़' के शोषण करने की अनवरत चेष्टा करते हुए भी डच अभी तक केवल इसके एक भाग से ही लाभ उठा पाए हैं, साम्राज्य का अधिकांश अभी तक अछूता ही है। सुमात्रा द्वीप, जो हमारे सबसे निकट है, अभी तक अविकसितावस्था में ही है। जावा के पूर्ववर्त्ती द्वीप, विशेषतः बोर्नियो, अभी तक छुए भी नहीं गए हैं। हाँ, उनसे थोड़ा मिट्टी का तेल अवश्य निकाला गया है।

इस वस्तुस्थिति के अनेक कारण हैं, जिनमें से ३ का उल्लेख यहाँ कर रहा हूँ—

(१) सम्पत्ति की विस्तृति, अतएव उसके लिए मनुष्य-शक्ति, पूँजी और मशीन-शक्ति की अधिक आवश्यकता;

(२) जावा से बाहर आबादी की विरलता। सुमात्रा की, जिसका क्षेत्रफल अन्य सम्बन्धित टापुओं को मिलाकर १,६५,००० वर्गमील है, आबादी अस्सी लाख से भी कम है।

(३) शासकवर्ग के सयानेपन के कारण उच्च शिक्षा की व्यवस्था का न होना; वहाँ ऐसी शिक्षा की व्यवस्था के लिए सुविधाएँ नहीं दी गईं जिसे पाकर नेता बना करते हैं।

'इण्डीज़' में बसनेवाले 'नेदरलैण्डर्स' से वार्त्तालाप करके मुझे ज्ञात हुआ कि ये कमियाँ आकस्मिक रूप से नहीं हुई हैं, इनके पीछे एक सुव्यवस्थित नीति है। शासकवर्ग का खयाल था कि उन्मुक्त शिक्षा पाकर इण्डोनेशियन सरकश हो जाएँगे।

बातचीत के सिलसिले में इण्डोनेशिया में बसे हुए कुछ डचों ने मुझसे यह भी कहा कि भारत में कालेज और विश्व-विद्यालय खोलकर अँगरेजों ने मूर्खता की है। उनके मत में यदि भारतीयों के इस विचार को प्रोत्साहित न किया जाता कि उन्हें अपने मामलों पर स्वयं निर्णय करने का अधिकार प्राप्त हो जाएगा और उन्हें उच्च शिक्षा देने की व्यवस्था न की जाती, तो भारत में जो अशान्ति आजकल दिखाई देती है वह न होती। वे दृढ़ निश्चय कर चुके हैं कि जो भूल भारत में अँगरेजों ने की है उससे वे सबक सीखेंगे और इण्डोनेशिया में वैसी ही भूल कदापि न करेंगे।

इस पालिसी के चलते हुए भी 'डच ईस्ट इण्डीज़' में असन्तोष के लक्षण एक पीढ़ी पूर्व से ही प्रकट होने लगे। इसे मूर्त्त रूप देनेवाले वे देशी लोग थे जिन्हें किसी-न-किसी प्रकार से उच्च शिक्षा प्राप्त हो गई थी। उनमें से अनेक को उच्च शिक्षा के लिए विदेश भी जाना पड़ा था।

पहले हालैण्डवालों ने कुछ रियायतों के बहाने आन्दोलन को दबा देने का प्रयत्न किया। ऐसा भाव प्रकट किया गया कि शासकवर्ग ने शासितवर्ग के साथ अधिकारों का बँटवारा कर लिया है। यह भी विश्वास दिलाया गया कि जनता ज्यों ही शासन-कला में निपुण हो जायगी, त्यों ही उसे और अधिक अधिकार दिए जाएँगे।

इन परिवर्तनों और वायदों के बावजूद असली शक्ति डचों के हाथों में ही रही। क़ानून बनाने और शासन-प्रबन्ध के सम्बन्ध में भी यही सत्य था। इन द्वीपों पर जापान का आक्रमण होने के बहुत पहले से ही यहाँ की जनता उन विधान-परिषदों से निराश हो चुकी थी जो उसके लिए बनाई गई थीं। वह अपने देश के प्रचलित नाम से भी घृणा करती थी। 'डच ईस्ट इण्डीज़' शब्द से ऐसी ध्वनि निकलती थी जैसे उस भूभाग पर और वहाँ के प्रत्येक निवासी पर डचों का पूर्ण स्वामित्व हो।

'इण्डोनेशिया' शब्द के सम्बन्ध में इस प्रकार की आपत्ति नहीं उठ सकती। यही कारण है कि इस शब्द ने, जो युद्ध से पूर्व यदा-कदा ही सुनाई पड़ता था, पुराने नाम को दबा दिया है।

क्या इस नाम-परिवर्त्तन का यह अर्थ है कि एशिया के इस भाग से डच-साम्राज्य का अन्त हो रहा है?

आजकल जो बातचीत चल रही है, उसके अनुसार तो उत्तर 'हाँ' में दिया जा सकता है। फिर भी युद्धोत्तर घटनाचक्र को देखते हुए कुछ सन्देह रह जाता है।

जापान के पराजय के पश्चात् ही इण्डोनेशिया के उन नेताओं को, जिन्होंने शक्ति प्राप्त कर ली थी, शत्रु के हाथ की कठपुतली कहकर बदनाम किया गया। यह भी कहा गया कि डाक्टर सोइकार्नो आक्रमणकारियों के सहयोगी हैं। उनके साथियों पर भी यही लाञ्छन लगाया गया। परन्तु आन्दोलन को शत्रु-द्वारा परिचालित सिद्ध करने की चेष्टा व्यर्थ हुई। कारण स्पष्ट है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इण्डोनेशिया की जनता अच्छी तरह समझती है कि यदि उसके कुछ नेताओं ने अधिकार के दिनों में जापान का पक्ष लिया तो इसका यह अर्थ नहीं कि वे जापानियों के हाथ के औजार थे। नहीं, कदापि नहीं। वे शुद्ध देशभक्त थे और देशभक्ति से प्रेरित होकर ही उन्होंने ऐसा किया था। वे आक्रमणकारियों का उपयोग अपने राष्ट्रीय ध्येय की प्राप्ति के लिए करना चाहते थे। उन्हें जापानियों के शासन से उतनी ही घृणा थी जितनी कि डचों के शासन से। वे स्वराज्य चाहते थे – सम्पूर्ण और अविभाज्य।

फिर वहाँ ऐसे भी नेता हैं जिन्होंने जापानियों के सन्धि-प्रस्ताव को ठुकरा दिया था। उनकी कार्यप्रणाली सदा से ऐसी ही रही थी। युद्ध के दिनों में भी उन्होंने जापानियों से सहयोग करना अस्वीकार कर दिया था। बोरप से लौटे हुए देशभक्त डाक्टर सुल्तान शारिअर इस वर्ग के प्रमुख नेता हैं। वे सदा जापान-विरोधी रहे हैं। पिछले कुछ दिनों से वे अपने देशवासियों के शक्तिशाली प्रतिनिधि बन गए हैं।

जापान की पराजय होते ही अपना नेता बदलकर इण्डोनेशियावासियों ने बुद्धिमत्ता का परिचय दिया है। शारिअर आगे आ गए हैं और सोइकार्नो पृष्ठभूमि में पड़ गए हैं।

आन्दोलन के सम्बन्ध में अधिक कुछ कहना अभी ठीक नहीं है। फिर भी मुझे विश्वास है कि इण्डोनेशियावासी तब तक दम न लेंगे जब तक कि डच उनके हाथ में पूर्ण शासन-संस्था की बागडोर न सौंप देंगे। ऐसा आनन्दपूर्ण अवसर कब आएगा, यह कहा नहीं जा सकता। हालैण्डवासी जानते हैं कि इण्डोनेशिया उनके हाथ की सोने की चिड़िया है। यह यदि हाथ से निकल गई तो इसका असर हालैण्ड के प्रत्येक शहर और प्रत्येक उद्योग-व्यवसाय पर पड़ेगा। फलतः जहाँ तक उनका वश चलेगा, वे इण्डोनेशिया पर अधिकार जारी रखने के लिए सब कुछ करेंगे। इण्डोनेशिया का अभाव डचों का घर-घर अनुभव करेगा।

इसी कारण मैं यह समझता हूँ कि 'भागते भूत की लँगोटी' ही पकड़ रखने का प्रत्येक सम्भव प्रयत्न किया जायगा। इसके लिए आकर्षक वादे किए जाएँगे और उनके द्वारा जनता को चकाचौंध में डालने का प्रयत्न किया जायगा। जो नेता इन प्रलोभनों में नहीं आएँगे उन्हें उग्रपन्थी अथवा 'असन्धेय' कहकर बदनाम करने का प्रयत्न किया जायगा। झगड़े को लम्बा करके जनता को थका डालने का प्रयत्न भी किया जाएगा। स्वतन्त्रता-आन्दोलन को अलग करने की भी चेष्टा की जायगी। संगठित मोर्चे के स्थान पर दलबन्दी दिखाई देगी।

सम्भव है, ये सभी उपाय निष्फल हों। यदि ऐसा ही हुआ तो हम अपनी आँखों एक साम्राज्य का अन्त देखेंगे जिसका आरम्भ सन् १६१९ में बेटाविया के लेने से हुआ था। 'नेदर लैण्ड्स ईस्ट इण्डिया कम्पनी' की स्थापना उससे १७ वर्ष पूर्व नेदरलैण्ड में हुई थी।

इण्डोनेशिया का युद्ध साम्राज्यवाद के विरोध में है। यह युद्ध धन, जन और खनिज सम्पत्ति के शोषण के विरोध में है। यह तानाशाही सत्ता के विरोध में है। शोषण के लिए राजनीतिक शक्ति का प्रयोग यहाँ किया गया है, इस लिए इण्डोनेशिया-निवासी राजनीतिक शक्ति को प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील हैं। वे यह भी चाहते हैं कि राजनैतिक शक्ति प्राप्त होने के बाद इण्डोनेशिया की सम्पत्ति व साधनों का उपयोग वहाँ के निवासियों के द्वारा और वहाँ के निवासियों के लिए ही हो।

——

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मध्य-पूर्व का विग्रह-केन्द्र

पण्डित देवीदयाल चतुर्वेदी 'मस्त'

दूसरा महायुद्ध समाप्त होते ही मध्य-पूर्व में रूस और अमरीका तथा ब्रिटेन के स्वार्थों में जो रस्साकशी होने लगी है, उसे कितने ही राजनीतिज्ञों ने तृतीय महायुद्ध का श्रीगणेश समझ लिया है। यद्यपि ईरान से अब रूस अपनी सेनाएँ हटा चुका है, फिर भी निश्चयपूर्वक यह नहीं कहा जा सकता कि भविष्य का पर्दा कैसा उठेगा और और क्या होगा। जो कुछ भी हो, इन राजनीतिक दाँव-पेचों के कारण आज सारी दुनिया की आँखें ईरान, तुर्की, यूनान आदि देशों की ओर टकटकी लगाकर देख रही हैं। ऐसी स्थिति में मध्यपूर्व के भू-भाग—एशिया माइनर—की सांस्कृतिक एवं भौगोलिक पृष्ठ-भूमि का एक रेखा-चित्र 'सरस्वती' के पाठकों के लिए, आशा है, सामयिक और उपादेय सिद्ध होगा।

भौगोलिक स्थिति

काले सागर के नैर्ऋत्य में ईजियन समुद्र (Ægeaa-Sea) के आसपास के भू-भागों का ही नाम एशिया माइनर है। इसमें एशिया महाद्वीप का पश्चिमी भाग और योरप महाद्वीप का पूर्वी भाग सम्मिलित है। दो महाद्वीपों का यह सङ्गम ऐतिहासिक और भौगोलिक दोनों दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है। यों प्रधान रूप से इसमें एशिया का ही भू-भाग है, एशिया की ही सांस्कृतिक छाप है; किन्तु यहाँ के निवासियों में, चाहे वे एशिया के हों अथवा योरप के, बहुत कुछ समानता है।

एशिया माइनर का पश्चिमी किनारा उसी तरह छिन्न-भिन्न और असम है जैसा कि योरपीय यूनान का — स्काटलैंड का। ईजियन सागर यहाँ के भू-भाग में स्थित समुद्र-तटवर्त्ती पहाड़ों को चीरते-फाड़ते भीतर तक चला गया है और ऐसा प्रतीत होता है मानो एशिया माइनर का भू-भाग हाथ के पञ्जे का रूप धारण कर चुका है। इसका परिणाम यह हुआ है कि एक भू-भाग से दूसरे भू-भाग तक पहुँचने के लिए समुद्री मार्ग काफी सुविधा-जनक और समय की बचत करनेवाला सिद्ध हुआ है। साल में अधिकांश समय यह ईजियन समुद्र प्रशान्त रहता है। जब कभी हवाओं की तीव्रता से इस समुद्र में हलचल भी होती है; लेकिन वह इतनी निश्चित और अल्पकालीन होती है कि किसी खतरे की उससे कोई आशङ्का नहीं की जाती। इसका फल यह हुआ है कि यहाँ के निवासी इतिहास के प्रारम्भ से ही नाविक हैं। पूर्वी से पश्चिमी किनारे पर पहुँचने के लिए २० से ६० मील तक की यात्रा करनी पड़ती है। सो भी पहाड़ी रास्तों के कारण यह यात्रा बहुत ही कष्टकर होती है। इसी लिए यहाँ के निवासी नावों द्वारा समुद्री मार्ग से आने-जाने और न केवल समय की बचत करने, अपितु यात्रा के कष्टों से भी दूर रहने, में अभ्यस्त हो चुके हैं।

ईजियन समुद्र और भूमध्यसागर में यत्र-तत्र अवस्थित छोटे-छोटे द्वीपों में रहनेवालों का जीवन अत्यन्त सङ्घर्षशील है। यों तो चमकीले सूर्य की धूप और खुली हवा में इनका जीवन आनन्दमय कहा जा सकता है; लेकिन इनके जीवन का अर्थ है क्रियाशील रहना, नई-नई खोज करते रहना और कभी-कभी खतरों का भी स्वागत करना—दुस्साहसपूर्ण कार्यों में अग्रसर होना।

इन द्वीपों का अधिकांश भू-भाग बञ्जर है। वहाँ कोई अनाज उत्पन्न नहीं होता। लोगों को भोजन की कमी का सदा सामना करना पड़ता है। कहीं-कहीं चट्टानी भूमि भी है। इस भूमि पर जब तक कृषि-उत्पादन के आधुनिकतम तरीकों का प्रयोग नहीं किया जाएगा, इस दिशा में किसी प्रकार की सफलता की आशा नहीं की जा सकती। इन्हीं परिस्थितियों ने यहाँ के निवासियों को स्वतन्त्र और साहसी बना दिया है।

पूर्वीय भूमध्य सागर में जो द्वीप-पुञ्ज हैं, उनका बाह्य दृश्य अत्यन्त आकर्षक है। यहाँ के सागर का रङ्ग अन्य समुद्रों की अपेक्षा अधिक नीला है। आकाश का हलका आसमानी रङ्ग और सन्ध्या बेला में बैञ्जनी और गुलाबी रङ्ग बहुत ही नेत्ररञ्जक प्रतीत होते हैं। द्वीप-पुञ्जों पर खड़ी पहाड़ियाँ भी इस किरण-बेला में अत्यन्त सुन्दर दीखती हैं। उस डूबते हुए सूर्य की स्वर्णिम किरणों में बीच समुद्र पर नाव चलाने में वहाँ अपूर्व आनन्द का अनुभव होता है।

ईजियन समुद्र के द्वीपों का सौन्दर्य भी अपना दावा नहीं रखता। इन द्वीपों के सौन्दर्य की सबसे बड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेषता यह है कि समय के परिवर्त्तन का कोई प्रभाव इस पर नहीं पड़ा। विज्ञान के उत्कर्ष की इस बीसवीं सदी में भी इन द्वीपों पर कहीं किसी वैज्ञानिक आविष्कार का कोई विशेष प्रभाव नहीं। सदियों पहले जो नैसर्गिक सौन्दर्य इन द्वीपों में दर्शनीय रहा होगा, वही आज तक है। कहीं-कहीं आधुनिकतम व्यवसाय की चहल-पहल, बिजली अथवा टेलीफोन आदि के तारों का जाल, रेल की सड़कें आदि की यत्किञ्चित् झाँकी भी दीखने लगी है, लेकिन इससे इन द्वीपों की सुन्दरता में कोई वृद्धि नहीं हुई; बल्कि यही कहना होगा कि वैज्ञानिक आविष्कारों की माया ने, इनके नैसर्गिक सौन्दर्य पर एक आवरण डालकर, उनके आकर्षण में बट्टा लगाने का ही काम किया है।

जहाँ कहीं इन वैज्ञानिक आविष्कारों की झाँकी दीखती है, वहाँ के निवासियों पर इनका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। उनका रहन-सहन वही पहले जैसा है। यहाँ तक कि नाव चलाने के तरीकों में भी सदियों पहले की झाँकी ही आज भी दर्शनीय है। छोटी-छोटी नावों को साधारण-पतवारों और पाल की सहायता से आज भी एक बन्दरगाह से दूसरे तक ये लोग खेते हैं।

व्यावसायिक केन्द्र

एशिया माइनर का यह भाग सदियों पहले न केवल अत्यन्त श्री-सम्पन्न, प्रत्युत दुनिया का व्यावसायिक केन्द्र भी था। अपने पड़ोसी मिस्र देश से भी कहीं अधिक श्री-सम्पन्न था एशिया माइनर। मिस्र देश की सम्पत्ति वहाँ के बादशाह के अधिकार में थी; लेकिन एशिया माइनर की सम्पत्ति सर्वसाधारण के पास थी। यों मिस्र में भी जनता सुखी थी और चैन से रहती थी; लेकिन एशिया माइनर के पश्चिमी भाग में प्रत्येक नागरिक व्यापार करने और स्वयं लाभ उठाने की दिशा में स्वतन्त्र था। मिस्र में यह बात नहीं थी। बादशाह के निरीक्षण और नियन्त्रण में ही वहाँ का उद्योग-व्यवसाय पनप रहा था। उस समय एशिया माइनर में रोमन-साम्राज्य था। लेकिन व्यक्तिगत व्यावसायिक स्वतन्त्रता की यह प्रथा बहुत पहले से ही एशिया-माइनर में चली आ रही थी। ईसवी सन् से दो शताब्दी पहले रोमन साम्राज्य का प्रभुत्व यहाँ हुआ था; लेकिन इससे भी पहले यहाँ व्यवसाय की उन्नति हो चुकी थी।

ईसवी सन् से ४६ साल पहले जूलियस सीजर ने रोमन साम्राज्य की नींव डाली थी। ईसके बाद ईसवी सन् से ३१ साल पहले से, १४ ईसवी सन् तक आगस्टस के राज्य-काल में व्यापार-व्यवसाय में कर वसूल करने की प्रथा का समावेश किया गया और यहाँ के निवासियों के लिए इस कर के आधार पर नई-नई सुविधाओं का आयोजन किया गया। रोमन बादशाहों के समय में इस भू-भाग के निवासियों की रहन-सहन का मापदण्ड यथेष्ट उच्च था। इतिहासकारों का कथन है कि ईसवी सन् की दूसरी शताब्दी में एशिया माइनर में उद्योग-व्यवसाय अपने चरम उत्कर्ष पर पहुँच चुके थे। यहाँ के निवासी परम सुखी थे। दुनिया का वैभव-विलास इन लोगों के चरणों पर लोटता था।

आज बीसवीं सदी में हम देखते हैं कि अमेरिका और इँगलैंड उन्नति के शिखर पर जा बैठे हैं! जीवन की सुविधाएँ वहाँ के नागरिकों को सहज-सुलभ हैं। ज्ञानार्जन के मार्ग वहाँ सर्वसाधारण के लिए सुगम हैं। लेकिन यह बात कितने ही लोगों को आश्चर्यजनक प्रतीत होगी कि एक समय था जब दुनिया के विभिन्न देशों के लोग एशिया माइनर में ही आकर यह सब देखते और सीखते थे। इवानिया उस समय दुनिया के लोगों का आकर्षण केन्द्र था। यहाँ के निवासियों के जीवन में वैभव-विलास की झाँकी देख दूसरों ने भी उसी प्रकार रहने का ढङ्ग सीखा। थोड़े-से परिश्रम से इवानिया में विभिन्न वस्तुओं का विपुल उत्पादन किया जाता था। अङ्गूर बहुतायत से यहाँ उत्पन्न होते थे। शराब भी उत्कृष्ट ढङ्ग की बनाई जाती थी। अङ्गूर, जैतून के फल और शराब का इतना उत्पादन इवानिया में होता था कि जहाज़ों-द्वारा दूसरे देशों को भी ये वस्तुएँ भेजी जाती थीं। मिस्र, इटली, उत्तरी अफ्रीका और स्पेन आदि देशों को आम तौर पर यहाँ से ये चीजें जाती थीं।

कुछ समय बाद एथेन्स भी व्यापारिक प्रगति के पथ पर अग्रसर हुआ और तब एथेन्स तथा इवानिया व्यापारिक केन्द्र हो गए। दूसरे देशों के उपयोग की भी वस्तुएँ निर्मित की जाने लगीं और व्यापार दिनोंदिन चमकता गया।

सिक्के

विस्तृत पैमाने पर व्यापार चलाने के लिए किसी सिक्के का माध्यम अनिवार्य हो जाता है। एतद्विषयक जानकारों ने पता लगाकर एशिया माइनर के सिक्कों को खोज निकाला है। सिक्के प्रचलित किए जाने की दिशा में एशिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माइनर को मूल प्रवर्त्तक कहा जा सकता है। एशिया माइनर के सिक्कों को देखकर ही अन्य देशों में भी सिक्कों का प्रचलन हुआ। यद्यपि उस युग के बहुत ही कम सिक्के प्राप्य हैं, फिर भी ब्रिटिश म्यूजियम में कुछ सिक्के सुरक्षित रक्खे गए हैं।

पहले-पहल ये सिक्के सोने-चाँदी के सम्मिश्रण से बनाए गए थे। ये सिक्के अपनी मूल अवस्था में लीडिया (Lydia) के पहाड़ी अञ्चल में प्राप्त हुए थे। इन पर कोई लेख अथवा लिपि अङ्कित नहीं है। धार्मिक और व्यापारिक चिह्न ही इन सिक्कों पर अङ्कित हैं इसका कारण स्पष्ट है। उस युग में धार्मिक महत्ता का ही बोलबाला था। यह भी कहा जा सकता है कि इन सिक्कों के आदि-प्रवर्त्तक मन्दिरों और मठों के पुजारी रहे हों। दूसरा कारण यह भी हो सकता है कि उस युग में मानव की दृष्टि में धर्म और व्यापार—ये ही दो वस्तुएँ सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण थीं। मारमोरा के सिक्के पर एक बड़ी मछली अङ्कित है। मारमोरा में उस समय मछली के ही व्यापार की प्रधानता थी, अतः स्वभावतः इन सिक्कों पर इसका चित्र खोदा गया है। ये सिक्के देखने में एक दम बेढङ्गे हैं। किसी सिक्के का आकार गोल है, तो किसी का अण्डाकार। सभी सिक्के बहुत ही मोटे बने हुए हैं।

भूमि और सिंचाई

बहुत कम भूमि ऐसी मिलेगी जो भूमध्यसागर अथ । ईजियन सागर के तटवर्त्ती देशों या द्वीपों में रहनेवालों के लिए अल्प परिश्रम से ही कृषि की पैदावार उत्पन्न करने योग्य कही जा सके। अधिक समय और परिश्रम के बिना वहाँ के ढालू मैदानों पर कृषि की फसलें उत्पन्न करना सम्भव नहीं। एशिया माइनर में नीचे भू-भाग दलदल का रूप धारण किए हुए हैं। मूसलधार वर्षा का सारा पानी पहाड़ों और ढालू मैदानों से बहकर इन दलदलों में जाकर समा जाता है। ऐसी दशा में इन ढालू मैदानों पर कृषि उत्पन्न करने के लिए पानी को रोक रखने की नितान्त आवश्यकता पड़ती है। इसके लिए इंजीनियरिङ्ग का ज्ञान होना चाहिए। दलदलों का पानी यदि सुखा दिया जाए, तो इन्हें भी यथेष्ट उपजाऊ बनाया जा सकता है। इन परिस्थितियों ने यहाँ के निवासियों को घोर परिश्रमी बना दिया है। और इनके अध्यवसाय का ही यह परिणाम है कि इतनी अनुपयुक्त तथा बञ्जर जैसी भूमि पर भी ये लोग कृषि की फसलें उत्पन्न करने में बहुत कुछ सफल हो सके। एशिया माइनर की खेती की फसलों को अपेक्षाकृत अधिक उन्नत किया जा सकता है, बशर्ते कि यहाँवाले आधुनिकतम आविष्कारों का प्रयोग करें और इंजीनियरिंग का सहारा लें। लेकिन आदिम युग से ये लोग भी कदाचित् भारतीय किसानों की तरह इस दिशा में बहुत कुछ भाग्यवादी बने हुए हैं—भगवान् के भरोसे ही उनका काम चलता है।

संस्कृति

एशिया माइनर की प्राचीन संस्कृति तात्कालिक आर्थिक स्तर पर निर्भर नहीं करती, प्रत्युत उसकी पृष्ठ-भूमि है अन्य अनेक देशों के सम्पर्क में उसका रहना और उन देशों की विचारधाराओं आदि से प्रभावित होना। यूनान का इतिहास जिस युग से प्रारम्भ होता है, उसके भी पहले के कुछ चिह्न ऐसे पाए गए हैं जिनसे तत्कालीन दैनिक रस्म-रवाजों, धार्मिक विचार-धाराओं, पोशाकों, रथों और घोड़ों के उद्योगों, युद्ध के शस्त्रों, सङ्गीत-वाद्यों आदि का बहुत कुछ पता चल जाता है। इन चिह्नों में पहला है, प्राचीन कवियों और लेखकों की रचनाओं में प्राचीन काल की कविताओं के उद्धरण, जो आज प्रायः अप्राप्य हैं। दूसरा चिह्न है, प्राचीन काल के चित्र और कलश आदि।

इवानिया की संस्कृति का प्रारम्भ लगभग वैसा ही कौतूहलप्रद है जैसा कि हमारे भारतवर्ष का। भारत में जिस प्रकार प्राचीन युग में मौखिक शिक्षा-दान दिया जाता था, ठीक वैसा ही इवानिया में भी होता था। वह शिक्षा हमारे वेदों की तरह यद्यपि अत्यन्त दुरूह थी; फिर भी वह एक से दूसरे के कानों में ही पहुँचती थी। दूसरे शब्दों में यह कहना चाहिए कि वह युग कानों का युग था—आँखों का नहीं। आज हम आँखों के युग में रहते हैं, अर्थात् जो ज्ञानार्जन हम करना चाहते हैं उसे पुस्तकों और ग्रन्थों में मुद्रित देखकर अर्जित कर लेते हैं। परन्तु प्राचीन युग में ग्रन्थ नहीं थे। उस समय की शिक्षा एक दूसरे से सुनकर ही ग्रहण की जाती थी। उसी में तत्कालीन संस्कृति का सागर सीमित रहता था।

ईसवी सन् से छः सदी पूर्व इवानिया में इस दिशा में एक नवीन लहर का प्रादुर्भाव हुआ। किसी तरह कानों के युग का अन्त हुआ अर्थात् उस समय ऐसे संग्रहालय स्थापित होने लगे थे जिनमें लकड़ी की पट्टियों पर लिखे अक्षरों में देश की संस्कृति को अङ्कित किया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया था। यद्यपि इन पटियों को आज की पुस्तकों की तरह स्वतन्त्रतापूर्वक लोगों में वितरित नहीं किया जा सकता था, फिर भी नवीनता तो थी ही। इस प्रकार लिखने का काम चल तो जरूर निकला; लेकिन इससे कोई विशेष लाभ नहीं हुआ। कारण, एक तो पटियों पर पुस्तक लिखना अत्यन्त कष्टसाध्य था, दूसरे उस समय लिखने का कोई नियम न होने से लिखनेवाले के मन पर था कि वह चाहे जैसा लिखे। बाएँ से दाएँ और दाएँ से बाएँ, जैसा मन में आता, लिखनेवाला वैसा ही लिखता जाता था। फिर एक व्यक्ति की लिपि पढ़ने में भी दूसरों को काफी दिक्कत का सामना करना पड़ता था। बहुत लोग तो उसे पढ़ने में सर्वथा असमर्थ रहते थे। यह कविता का युग था।

धीरे-धीरे यूनान में गद्य का प्रचलन हुआ और लिखने की परिपाटी का प्रारम्भ। लेकिन कविता जहाँ एक पीढ़ी से दूसरी को लगातार पुनरावृत्ति के माध्यम से सहज ही दे दी जाती थी, गद्य में यह सम्भव नहीं रहा। इस दशा में यूनान के प्रारम्भिक गद्य का भी लगभग वही रूप था जो हमारी प्रारम्भिक खड़ी बोली का, अर्थात् गद्य भी पद्य से बहुत कुछ मिलता-जुलता-सा था अथवा इस गद्य में विशेष प्रकार की कहावतों और मुहावरों का ही प्रचार था ईसप की जो कहानियाँ आज तक प्रचलित हैं, वे इसी काल की देन हैं।

यूनानी कविता

यूनानी कविता प्राचीन काल से लेकर मुद्रण-युग तक बहुत ही यत्नपूर्वक सुरक्षित रक्खी गई है। बहुत समय तक यूनान में यह सामान्य प्रथा थी कि रात में भोजन करने के बाद परिवार अथवा पड़ोस के लोग एकत्र होकर सामयिक और स्वरचित गीतों का पाठ करते थे। जिस व्यक्ति में जैसी योग्यता होती थी, उसी के अनुसार उसके गीतों की रचना होती थी। जो व्यक्ति स्वयं इस प्रकार की कविता नहीं रच सकता था, वह अपने पूर्वजों से विरासत में ली हुई और कण्ठस्थ की हुई कविताएँ सुनाकर अपना कर्त्तव्य पूरा किया करता था। इन कण्ठस्थ कविताओं में यूनान की प्राचीन संस्कृति की स्पष्ट झलक रहती थी।

यूनानी गीतों का सृजन इस प्रकार अनेक पीढ़ियों की देन है। गीतों के साथ-साथ सङ्गीत का भी समावेश प्रारम्भ से ही यूनान में उल्लेखनीय रहा है। काव्य और सङ्गीत का संयोग विचारों और अभिव्यक्तियों की पृष्ठभूमि पर अत्यन्त प्रभावशाली सिद्ध हुआ। यह कह सकना आसान नहीं कि इनमें कविता का महत्त्व अधिक था अथवा सङ्गीत का।

गीत सुनानेवाले के लिए यह आवश्यक था कि गीत के ताल-सुर के साथ भावों की अभिव्यक्ति भी अपने अङ्ग-प्रत्यङ्ग के सञ्चालन द्वारा स्पष्ट करता जाए। इसके लिए तत्कालीन यूनानी गीतिकारों अथवा कवियों को सङ्गीत की शिक्षा लेना अनिवार्य था। ऐसी दशा में उस युग के कवि को सङ्गीतज्ञ भी कहा जाता था और यह ठीक भी था। गीत सुनाते समय अनेक प्रकार के वाद्ययन्त्रों का भी प्रयोग किया जाता था। वीणा, बाँसुरी आदि का प्रयोग तो आम तौर पर किया जाता था। पुरुष और स्त्रियाँ दोनों ही इन बाजों को बजाते थे। युद्धभूमि के लिए प्रस्थान करते समय सैनिकों का अभिवादन एक विशेष प्रकार के वाद्य-द्वारा किया जाता था।

भोज-प्रथा

मकान के जिस कमरे में भोज दिया जाता था, वह अन्य कमरों की अपेक्षा अधिक लम्बा-चौड़ा होता था। निमन्त्रित व्यक्तियों के आने से पहले ही उस कमरे को झाड़-बुहारकर साफ कर दिया जाता था। गृहस्वामी और स्वामिनी अपने हाथ-पैर धोकर साफ कर लेते थे। पानी पीने के सब पात्र भी साफ कर लिए जाते थे। कमरे के मध्य में एक बड़ी-सी मेज रक्खी रहती थी जो फूल-मालाओं से आच्छादित रहती थी। शराब का बड़ा पात्र लबालब भरकर रख दिया जाता था। निमन्त्रित व्यक्ति फूलों के मुकुट पहने हुए आते और शराब का प्याला, जिसमें आधा पानी और आधी शराब रहती, एक से दूसरे को प्रदान किया जाता। लेकिन ऐसा करने के पहले देवताओं के नाम पर इस शराब और पानी के मिश्रण में से थोड़ा-सा धरती पर उँडेल देना नितान्त आवश्यक था। अनेक बहुमूल्य इत्र भी इन आगत व्यक्तियों के स्वागत-सत्कार के लिए प्रयुक्त होते थे। शहद और पनीर भी भोज में परोसने की प्रथा थी। मकान में सङ्गीत और गीतों का समाँ बँध जाता था। इसी बीच गायक आता था और सुर-ताल के साथ गीत गाकर उपस्थित व्यक्तियों का मनोरञ्जन करता था। इस गायक के साथ एक स्त्री भी होती थी, जो साथ-साथ गाती अथवा कोई बाजा बजाती थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नारियों का समानाधिकार

इवानिया तथा ईजियन सागर के द्वीपों में सामाजिक कार्यों में नारियों को पुरुष के साथ समान रूप से भाग लेने का अधिकार था। सभी कार्यों में तत्कालीन नारियाँ स्वच्छन्दतापूर्वक पुरुषों का हाथ बँटाती थीं। सबका जीवन कृत्रिमता से दूर सर्वथा स्वाभाविक था, सभी को व्यक्तिगत स्वतन्त्रता थी और तत्कालीन चरित्र तथा आदर्श भी स्तुत्य था। कहीं किसी प्रकार का कलुष नहीं था, अनाचार नहीं था। स्त्रियों को भी पुरुषों की तरह ही गीत लिखने और गीत गाने की शिक्षा दी जाती थी। प्रत्येक उत्सव में और गीत-प्रदर्शनों में कुछ-न कुछ नवीन गीतों की अपेक्षा की जाती थी। इसके लिए प्रतिभा के साथ-साथ शिक्षण-विशेष की आवश्यकता अनिवार्य थी। इस प्रकार यूनान ने अपनी कविता और अपने सङ्गीत को अक्षुण्ण बनाए रखने की दिशा में दुनिया के सभी देशों की अपेक्षा कहीं अधिक प्रयत्न किया। यही कारण है कि यूनान की युग-युग पुरानी संस्कृति आज जरा-जीर्ण होकर भी लुप्त नहीं हो सकी।

दर्शन-शास्त्र

सङ्गीत की शिक्षा देने के लिए प्राचीन काल में आम तौर पर यूनान में पाठशालाओं की स्थापना हो चुकी थी, जिनमें सङ्गीत-प्रेमी व्यक्तियों को अपनी रुचि के अनुसार कलाकार होने की सुविधाएँ प्राप्त थीं। कुछ समय बाद दर्शन-शास्त्र आदि की शिक्षा देने के लिए भी एतद्-विषयक पाठशालाएँ स्थापित की जाने लगीं। दर्शन-शास्त्र की प्रथम पाठशाला माइल्टस (Miletus) में थेल्स (Thales) द्वारा स्थापित किए जाने का पता लगा है। कहते हैं, थेल्स आजीवन अविवाहित रहा और दर्शन-शास्त्र के अध्ययन तथा पाठन में उसने अपना सारा जीवन लगा दिया। इसकी पाठशाला में न केवल दर्शन-शास्त्र, प्रत्युत फलित ज्योतिष, रेखागणित और भूगोल की भी शिक्षा दी जाती थी। दर्शन-शास्त्र का प्रारम्भ यूनान की मौलिक उपज थी जिसमें दुनिया की उत्पत्ति के अन्वेषण का प्रथम बार अध्ययन किया गया। अन्य विषयों की शिक्षा के लिए यूनान अपने पड़ोसी मिस्र देश से प्रभावित हुआ था।

थेल्स की दर्शन-शास्त्र-सम्बन्धी पाठशाला के प्रति तत्कालीन जन-साधारण की क्या धारणा थी, इसका एक मजेदार उदाहरण दिया जाता है। कहते हैं, इस शाला का एक अध्यापक आकाश के नक्षत्रों को ध्यानपूर्वक देखते-देखते इतना तन्मय हो गया कि वह पीछे की तरफ़ तो हटता गया; लेकिन उसकी दृष्टि आकाश में ही नक्षत्रों पर स्थिर रही। फल यह हुआ कि एक बड़े-से गड्ढे में यह अध्यापक गिर पड़ा। एक बुढ़िया यह सब देख, खिलखिलाकर हँस पड़ी। उसने कहा—जब तुम यह भी नहीं देख सकते कि तुम्हारे पैरों के नीचे कहाँ क्या है, तब तुम स्वर्ग में क्या है, इसे क्या समझ सकोगे?

यद्यपि इस पाठशाला में फलित ज्योतिष और भूगोल जिस रूप में पढ़ाए जाते थे, वह बहुत ही प्रारम्भिक था। उसमें कार्य-कारण का सर्वथा अभाव था। तत्कालीन भूगोल में पढ़ाया जाता था कि पृथ्वी चौकोर है। सूर्य उसकी प्रदक्षिणा करता और रात में ऊँचे-ऊँचे पहाड़ों की ओट में छिप जाता है।

भूमध्य-सागर के पूर्व में ऐसी अनेक पाठशालाएँ थीं। इन पाठशालाओं में शिक्षा की परिपाटी इसी ऊटपटाँग प्राचीन परम्परा पर निर्भर करती थी। किसी एक देवता को ऐसी पाठशाला का संरक्षक मान लिया जाता था जिसकी मूर्त्ति भी पाठशाला के प्रवेश-द्वार पर अथवा सामने के मैदान में स्थापित की जाती थी। कदाचित् ऐसा करना इसलिए आवश्यक समझा गया हो कि जन-साधारण से दूर एकान्त में रहकर पठन-पाठन अबाध रूप से सञ्चालित किया जा सके। एथेन्स में भी पाठशालाओं का यही रूप बहुत समय तक बना रहा।

अन्धविश्वास

दर्शन-शास्त्र तथा भौगोलिक विद्या की प्रारम्भिक दशा में एशिया माइनर में अन्धविश्वासों और धार्मिक कट्टरता का बोलबाला था। यूनान में तो प्रत्येक पहाड़ी पगडण्डी के मोड़ पर किसी-न-किसी समाधि अथवा मन्दिर का अस्तित्व था, जहाँ दैनिक जीवन के प्रत्येक कार्य की सफलता के लिए धार्मिक क्रियाएँ सम्पन्न की जाती थीं। वहाँ प्रत्येक जङ्गल, झरने और नदी में आत्मा का अस्तित्व माना जाता था।

साधारण-से-साधारण घटना के साथ भी सर्वसाधारण की धार्मिक कट्टरता विजड़ित थी। यूनान में डेलफी नामक स्थान में दूर-दूर से लोग पहुँचते थे। उनका विश्वास था कि डेलफी में ईश्वर भविष्यवाणी कर उन्हें भावी कार्यों की सफलता-असफलता का बोध करा देता है। डेलफी में कुछ पुजारिनें रहती थीं। इन्हीं के द्वारा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईश्वर की भविष्यवाणी लोगों के कानों तक पहुँचती थी। युद्ध में जाने के पहले तो ऐसी भविष्यवाणी का बहुत ही अधिक महत्त्व समझा जाता था। और, यह भविष्यवाणी निःशुल्क प्राप्त नहीं होती थी। इसके लिए लोगों को खासी भेंट चढ़ानी पड़ती थी। तत्कालीन राजा भी इस भवितव्य-वाणी पर विश्वास करते थे।

कभी-कभी ये भविष्यवाणियाँ असत्य सिद्ध हो जाती थीं और लोग शिकायत लेकर पहुँचते थे। पुजारिनें कभी-कभी अपनी गलती स्वीकार कर लेती थीं और पुनः भविष्यवाणी सुना देती थीं। इन शिकायतों का परिणाम यह हुआ कि धीरे-धीरे भविष्यवाणी में शब्दजाल का सुन्दर चित्रण होने लगा और उसके कई अर्थ होने लगे। ईसवी सन् से छः शताब्दी पहले धार्मिक विश्वासों की दुनिया में एक क्रान्ति हुई और बहुत-से अन्धविश्वासों की समाप्ति हो गई।

यूनानी सभ्यता

एशिया माइनर के सभी भू-भागों पर यूनानी सभ्यता का प्रभाव था। यह कहना अधिक उपयुक्त होगा कि एशिया-माइनर की तत्कालीन सभ्यता ही यूनानी सभ्यता का रूप थी। उस समय यूनान के राजाओं का प्रभुत्व न केवल यूनान में ही था, प्रत्युत समस्त एशिया-माइनर में व्याप्त था। यही क्यों, भूमध्य-सागर में यूनानी उपनिवेशों की भरमार थी। काला-सागर और ईजियन सागर में भी यूनानी उपनिवेशों का अस्तित्व था और इन समुद्रों के तटवर्त्ती भू-भाग भी यूनानी प्रभुत्व से मुक्त नहीं थे। इटैलियन, फ्रेंच, स्पेनिश समुद्री तट और अफ्रीका का अधिकांश समुद्री-तट भी यूनानी सभ्यता से प्रभावित था।

यद्यपि रोम के तत्कालीन व्यवस्था-सूत्रों पर ही शासन की बागडोर और समाज का निर्माण निर्भर करता था; लेकिन यह उल्लेखनीय है कि ऊपर कहे हुए भू-भागों और समुद्र-तटों पर शिक्षा और साहित्य का माध्यम यूनानी भाषा ही थी। कितने ही पाश्चात्य नगरों—मार्सेलीज आदि—का निर्माण एशिया-माइनर-द्वारा ही हुआ था। क्रिश्चियन इतिहास की लगभग तीन शताब्दियों का इतिहास, एशिया और योरप के बीच में स्थित इस एशिया-माइनर के ही प्रभाव का प्रतिबिम्ब है।

नागरिकता

एशिया-माइनर की आबादी अथवा दौलत के आँकड़े यद्यपि अप्राप्य हैं, फिर भी रोमन-काल में सिर्फ 'एशिया' नामक प्रान्त में २३० नगर होने के प्रमाण मिल चुके हैं। समस्त एशिया-माइनर में यह प्रान्त सर्वाधिक शिक्षित और सम्पन्न था। इसकी सभ्यता और नागरिकता का पता सिर्फ इसी बात से लगाया जा सकता है कि इन २३० नगरों में से प्रत्येक में अलग-अलग शासन था जिसकी अपनी विशेषताएँ होती थीं—एक-दूसरे से सर्वथा भिन्न। प्रत्येक नगर में अलग-अलग सिक्के प्रचलित थे। इन नगरों में सभी श्रेणियों के नगर थे; कोई बड़े कोई छोटे। लेकिन प्रत्येक नगर में उसकी अपनी म्युनिसिपैलिटी होती थी।

इतने श्रीसम्पन्न और सांस्कृतिक देश की व्यवस्था को सँभाले रहना आसान काम नहीं था। यह आवश्यक था कि उद्योग-व्यवसाय, कृषि अथवा शासन-सूत्रों में जहाँ कहीं जिस त्रुटि का आभास मिलता, उसे तत्क्षण दूर करने का प्रयत्न किया जाता। लेकिन ईस्वी सन् की तीसरी सदी में जब रोमन साम्राज्य छिन्न-भिन्न हो रहा था तब मध्य एशिया से जङ्गली जातियों ने एशिया-माइनर को अपना आम रास्ता बना लिया और कई शताब्दियों तक पर्शिया और मेसोपुटामिया के राजाओं से उनका लगातार युद्ध चलता रहा। इसके बाद अरबों के भी आक्रमण शुरू हुए और इस उथल-पुथल के सिलसिले में एशिया-माइनर के नगरों को भी लूट-खसोट तथा अन्य अनेक विध्वंसों का सामना करना पड़ा। जिन सुन्दर और सुविधाजनक सड़कों का निर्माण व्यापार करने के लिए भारी खर्च उठाकर किया गया था, वे इन आक्रमणों के फल स्वरूप धीरे-धीरे ध्वस्त हो गईं।

पश्चिमी एशिया में उस समय युद्ध का धार्मिक नियम था कि आक्रमणकारी किसी देश की फसलों को बरबाद कर वहाँ अकाल भले ही उत्पन्न कर दे; लेकिन वहाँ के वृक्षों को वह नष्ट न करे। कारण, फसलें तो पुनः बोई जा सकती हैं और दूसरे ही वर्ष उन्हें प्राप्त किया जा सकता है; परन्तु वृक्ष दो-एक वर्ष में तैयार नहीं हो सकते। वृक्षों पर किए गए परिश्रम का फल वर्षों के बाद कहीं मानव को प्राप्त होता है और उनकी उपयोगिता पर देश की सम्पत्ति निर्भर करती है, इस धार्मिक नियम का पालन भी कुछ ही दिनों तक हो सका। बाद में आक्रमणकारियों ने एशिया-माइनर के वृक्षों आदि को भी अपनी सुविधाओं के लिए काटकर फेंकवा दिया। इस प्रकार एशिया-माइनर का समस्त प्राचीन वैभव धीरे-धीरे नष्ट हो गया। आज न तो वहाँ उन्नत कृषि होती है, न पहले की तरह सोना, चाँदी, ताँबा आदि धातुएँ ही खोदी जाती हैं।

आज तो एशिया-माइनर के प्रदेशों में तुर्की, ईराक, ईरान आदि इने-गिने-से ही ऐसे भू-भाग हैं जिनमें यहाँ की प्राचीन सभ्यता और संस्कृति की आंशिक झलक देखी जा सकती है, अन्यथा समस्त एशिया-माइनर का पहले जैसा वैभव स्वप्न की एक कहानी से अधिक कुछ नहीं कहा जा सकता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

!!!

श्री रांगेयराघव

आज हे अमृत ! तुम्हें मैं
व्यर्थ ही यह कष्ट देता
जानता है मैं नहीं क्यों
लिख रहा हूँ गीत ऐसा,
मैं कभी निज व्यक्ति को
देना महत्त्व न चाहता हूँ
सोच कुछ पाता नहीं क्यों
मैं पराजित हो गया हूँ,
निकट लगकर भी सभी क्यों
दूर मुझसे हो रहा है,
कार्य्य कारण में बँधा
जीवन सभी कुछ ढो रहा है
किंतु मन की क्षीण ममता
कह उठी है आज मुझसे
एक बार विपन्नता की घोषणा कर
आज हाहाकार का अपना प्रबल स्वर
सुन सभी के दूर ऊपर,
बन सके शायद यही
कल्याण अग्रिम
आज तेरे विकट पथ का।
किन्तु यह भी व्यर्थ एक
विकार सा ही भग्न लगता
मूल्य जिसका कुछ नहीं
अथ इति न उसका भार रखता,
आह अमृत !
साँझ की छाया उतरती आ रही है
आज संस्कृति-खँडहरों का
सिसकता सङ्गीत मन के रन्ध्र में भर जाय या फिर
मैं करूँ पाषाण से ही प्यार बोलो ?
हो गया कितने पलों का
यह मलिन अवसाद सञ्चित ?
मैं भुलाना चाहता हूँ आज
यह दुःस्वप्न रञ्जित;
आज आज्ञा दो मुझे, कुछ दो मुझे
तुम स्नेह, आश्वासन घृणा
कुछ दो मुझे, कुछ दो मुझे,
आज फिर उद्भ्रान्त मेरा मन
हुआ है,
भावना अज्ञात का हल्का थपेड़ा
लग रहा है
मूल्य है जिसका नहीं तू देख
उसका अन्त कर दे,
सोचता हूँ क्या प्रबल यह व्यङ्ग
मेरे क्षुद्र जीवन पर कसा है,
जो कि मेरे विश्वमानव चेतना
को राक्षसी लिप्सा दिये यह
घट किए अपहृत खड़ा है,
आत्महत्या !!
कर सकूँगा आज यह
बर्बर प्रबल साहस कि
केवल भीरुता ?
घरौंदे का दास-सा अभिमान
होठों पर सके यदि खींच
केवल एक ही मुस्कान
मेरी मोहिनी का हो यही अवतार।
हो सकेगा आह भीषण युद्ध ?
अन्त तक साहस रहेगा शेष ?
शक्ति दो, आश्वास दो,
कुछ तो कहो, मुझसे कहो कुछ
दो मुझे अपने हृदय का
अल्पतम, कुछ दो मुझे,
हे !
सत्य की चिर शक्ति !
मैं न मुँह के बल गिरा।
उन आँधियों में दब कराहूँ,
चाहता हूँ, पसलियाँ चटकें
मुझे तब कठिन हो निज
रोकना मुस्कान।
आज मत कहना कि यह अति
रुद्ध उच्छृंखल तथा अभिमान पूरित
व्यक्ति मेरा—
और यदि है ही,
समझना आज मैं
संस्कार की उन रूढ़ियों से
एक क्षण को हो गया हूँ
पराजित ज्यों
हलाहल के उदय से
सब चराचर है मूर्च्छा में
चेतना से हीन—
निर्बल दीन—
जागे आज वह शिव
खोल दे करतल कि तल में
अमृत कलकल कर रहा है—
जाग !

———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सदानन्द की काव्य-पद्धति

श्री भगवतीप्रसादसिंह, बी० ए०

हिन्दी-साहित्य में यों तो अनेक प्रबन्धकाव्य लिखे गए परन्तु रचना-कौशल, प्रबन्ध-पटुता तथा रोचकता की कसौटी पर कसने से उनमें से अधिकांश नीरस प्रमाणित हुए। साधारण जनता की वृत्ति को रमानेवाले इतिहास-प्रसिद्ध कथानकों का आश्रय लेकर भी अधिकांश कवि अपनी अक्षमता के कारण उसमें रोचकता तथा काव्यसौष्ठव का समावेश न कर सके। केशव ऐसे काव्य-कला के आचार्य कवि का इस दिशा में असफल होना इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है कि प्रबन्धकार कवि के लिए अपने काव्य के चरितनायक के प्रति श्रद्धा ही एक ऐसी वस्तु है जिसके अभाव में काव्यशास्त्रज्ञ भी सफल प्रबन्धकार नहीं हो सकते। तुलसी के मानस की राम के प्रति अगाध श्रद्धा ही अवसर पाकर 'मानस' के रूप में प्रकट हुई।

जैमुनि पुराण की रचना करते हुए सदानन्द ने पूर्ववर्ती कवियों के प्रत्यक्ष अनुभव द्वारा सिद्ध इन दोनों सिद्धान्तों को अपने सामने रक्खा। प्रबन्धकाव्य का कथानक उन्होंने प्राचीन इतिहास से लिया जिसके लिए भारतीय-जनता के हृदय में पहले से ही पृष्ठभूमि तैयार थी। वर्णनशैली के लिए भी उन्होंने वीरकाव्य के लिए स्वीकृत प्राचीन वीरगाथा पद्धति का अनुसरण किया। 'रासा भगवन्तसिंह' जो उनकी प्रथम प्राप्त रचना है, इसी शैली पर रचा गया था परन्तु 'जैमुनि पुराण' ऐसे प्रबन्धकाव्य की रचना के लिए जिस विषय को चुना, उससे हिन्दू ही नहीं, भारत में रहनेवाले मुसलमान भी परिचित थे। ऐसा करते हुए रोचकता के विचार से उन्होंने पाण्डवाश्वमेध की कथा का वह रूप जो व्यास-द्वारा लिखित महाभारत के आश्वमेधिकपर्व में पाया जाता है, न लेकर, व्यास के शिष्य जैमिनि-द्वारा प्रणीत 'जैमिनि पुराण' में वर्णित कथावस्तु को छन्दोबद्ध किया। कवि की स्वतन्त्रता का उपयोग उन्होंने केवल विषय-निर्वाचन में किया। एक बार इस वृत्त को स्वीकार कर लेने पर आगे ग्रन्थ के भीतर इधर-उधर कुछ संवादों तथा युद्ध-वर्णनों के प्रसङ्ग में मामूली हेरफेर के अतिरिक्त कोई नई कल्पना नहीं की। इसका कारण मेरे विचार से यह प्रतीत होता है कि जैमिनि ने स्वयं महाभारत के आश्वमेधिक पर्व के भीतर अनेक नए राजाओं तथा देशों की कल्पना करके कथानक का रूप ही बदल दिया था, अतएव उसमें नई कल्पना के लिए स्थान ही नहीं था। यदि नवीनता के लोभ में ऐसा किया जाता तो वह ऐतिहासिक महाकाव्य न होकर एक छन्दोबद्ध उपन्यास का रूप धारण कर लेता। इसका एक अनर्थकारी प्रभाव यह पड़ता कि पाठक समूचे कथानक को कल्पित समझकर उससे स्थायी रसानुभूति के स्थान पर स्फुट काव्यों की तरह अल्पस्थायी काव्यानन्द ही प्राप्त कर सकते और इस प्रकार कवि एक प्रबन्धकार की हैसियत से अपने उद्देश्य में असफल होता।

'जैमुनि पुराण' की भूमिका में ही कवि इस तथ्य का आभास दे देता है कि वह प्रबन्ध-काव्य लिखने जा रहा है। प्राचीन परिपाटी के अनुसार देव-वन्दना तथा कवि-परिचय के पश्चात् मूल कथावस्तु का आरम्भ किया गया है।

जै गननायक गजवदन, गौरीनन्द अनन्द।
रिद्धि सिद्धि वरदानि वर, हरन सकल दुख द्वन्द॥
सङ्ख, चक्र, गद, पद्मधर, गिरधारी गोपाल।
परम पुरुष औतार मनि, धरनीधर नँदलाल॥
वन्दौं हरिहर चरन जुग, जोरि हाथ सिर नाय।
जाकी कृपा-कटाच्छ ते, महासुमति सरसाय॥
बानी जगरानी विदित, कीरति सबहिं सोहाय।
संसकिरित जैमुनि कथा, भाषा देहुँ बनाय*॥

ऊपर लिखे हुए दूसरे दोहे में श्रीकृष्ण की वन्दना करके कवि ने अपनी सूक्ष्म दृष्टि का परिचय दिया है। यहाँ सदानन्द ने श्रीकृष्ण के जिस स्वरूप का आह्वान किया है वह वृन्दावन में रास रचानेवाले 'कान्ह' का नहीं, महाभारत के सञ्चालक राष्ट्रों के नियामक 'शङ्ख, चक्र, गद, पद्मधर' श्रीकृष्ण है। पाण्डवाश्वमेध के मङ्गलाचरण में कृष्ण के इसी रूप की वन्दना उपयुक्त भी थी।

---

* जैमुनि पुराण (अप्रकाशित) मङ्गलाचरण।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपर्युक्त तत्त्वों के अतिरिक्त 'साहित्य-दर्पणकार' ने महाकाव्य की विवेचना करते हुए और कई लक्षणों का उल्लेख किया है। पाठकों की सुविधा के लिए उनका वर्णन हम नीचे करते हैं—

(१) सर्गों में निबद्ध हो।

(२) उसका नायक कोई देवता अथवा 'धीरोदात्त' के गुणों से युक्त कोई कुलीन क्षत्रिय हो, एक कुल में उत्पन्न अनेक राजा भी नायक हो सकते हैं।

(३) शृङ्गार, वीर और शान्त—इन तीनों में से कोई एक रस प्रधान हो, उसके अतिरिक्त और रस गौण होकर रहें।

(४) उसमें नाटक की सभी सन्धियाँ मिलती हों।

(५) उसकी कथावस्तु ऐतिहासिक हो, यदि अनैतिहासिक हो तो सज्जनाश्रित हो।

(६) धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—इन चार पदार्थों में किसी एक को फल-स्वरूप चित्रित किया गया हो।

(७) आरम्भ में नमस्कार, आशीर्वचन अथवा प्रतिपाद्य वस्तु का सङ्केत हो, कहीं-कहीं खलों की निन्दा और सज्जनों की स्तुति भी हो।

(८) सर्ग की रचना एक ही तरह के वृत्तों अथवा छन्दों में हो, किन्तु अन्त के कुछ वृत्त बदले हुए हों। कभी-कभी कई वृत्तों का एक ही सर्ग में समावेश किया जाता है।

(९) सर्ग न बहुत छोटे हों, न बहुत बड़े और इनकी संख्या आठ से अधिक हो।

(१०) सन्ध्या, सूर्य, चन्द्र, रजनी, प्रदोष, दिन, अन्धकार, प्रातःकाल, मध्याह्न, मृगया, पर्वत, वन, सागर, ऋतु आदि प्राकृतिक दृश्यों के तथा संयोग, वियोग, यज्ञ, युद्ध, विवाह आदि मानवी घटनाओं के और स्वर्ग, नरक, ग्राम, नगर इत्यादि स्थानों के, यत्र-यत्र वर्णन हों।

(११) उसका नाम कवि, काव्यगत वृत्त, नायक अथवा किसी अन्य के आधार पर हो।

* सर्गों के नाम भी घटनाक्रम के अनुसार हों।

जैसा हम पहले कह चुके हैं, जैमुनि पुराण का कथानक प्राचीन है अतएव उक्त पुस्तक में ऊपर लिखे गए महाकाव्य के अनेक लक्षणों की व्याप्ति की विस्तृत व्याख्या करना पिष्टपेषण मात्र होगा। इतिहास-प्रसिद्ध वृत्तों में जिनसे कवि रचना-सामग्री लेता तथा प्रेरणा ग्रहण करता है, बहुधा उपर्युक्त महाकाव्य के तत्त्वों का समावेश होता ही है। जैमुनि पुराण के विषय में यह कहाँ तक सत्य है, इसका निदर्शन हम आगे सदानन्द की रचनाशैली की समीक्षा करते हुए करेंगे। इसके साथ ही यदि हम उक्त ग्रन्थ में मार्मिक स्थलों का वर्णन तथा प्रसङ्गानुकूल भाषा पर भी विचार करते चलें तो अप्रासङ्गिक न होगा।

सदानन्द की वर्णनशैली की एक बहुत बड़ी विशेषता यह है कि समूचे ग्रन्थ में कहीं कथानक की शृङ्खला टूटने नहीं पाई है। कवि ने अध्यायों तक का विभाजन कथावस्तु के प्रसङ्गों के आधार पर किया है। 'जैमुनि-पुराण' को ५६ अध्यायों में विभाजित करते हुए कवि ने यह ध्यान रक्खा है कि प्रत्येक अध्याय का अन्त किसी प्रसङ्ग-विशेष के अन्त के साथ हो। अध्यायों का नामकरण भी उसी प्रसङ्ग के अनुसार किया गया है। अध्यायों की समाप्ति का यह ढङ्ग सर्वथा मनोवैज्ञानिक है। इसके कुछ उद्धरण नीचे दिए जाते हैं—

"इति श्री महाभारथे अस्वमेध महात्मने कृष्ण
हस्तिनापुर प्रवेशनो द्वादसऽध्यायः ॥ १२ ॥"

"इति श्री महाभारथे अस्वमेध महात्मने अर्जुन
जीवनो नाम वन्तिसऽध्यायः ॥ २९ ॥"

अध्यायों के आरम्भ में पूर्वापर सम्बन्ध स्थापित करने के लिए कवि ने दो उपायों से काम लिया है। किसी स्थान पर जैमिनि महाराज जनमेजय को आगे की कथा सुनाते हुए कथा-प्रवाह को अग्रसर करते हुए देखे जाते हैं, कहीं सदानन्द महाराज शिवप्रसाद सिंह को।

(१)

बूझत जनमेजय महिपाला,
हरि चरित्र कहु रिषै विसाला।
× × ×
जैमुनि पुनि इतिहास बखाना।
सुनु जनमेजय नृपति सुजाना॥

(२)

सिवा प्रसाद महीपति बोले।
सदानन्द कहु चरित अमोले॥
× × ×
सुनु सरवार भूप सुखदानी।
जैमुनि यहि विधि कथा बखानी॥

* साहित्य-दर्पण—पृ० ६-३१५ से ३२५ तक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'जैमुनि पुराण' के भीतर रामाश्वमेध की कथा का समावेश एक अन्तःकथा के रूप में कवि ने किया है। परन्तु मुख्य कथा से उसका सम्बन्ध इतनी चतुरता से जोड़ा गया है कि दोनों कथाओं के बीच का प्रसङ्ग नीरस नहीं होने पाया है, न पाठक के भाव-ग्रहण में किसी प्रकार की बाधा ही पहुँचती है। इसके फल-स्वरूप कथा का प्रवाह, यज्ञ के अश्व के समान ही अबाध गति से पाठकों को भावमग्न करता हुआ अपने इष्ट की ओर अग्रसर होता जाता है। कथा इस प्रकार है :—

बभ्रुवाहन से युद्ध करके पराजित होने के पश्चात् जब अर्जुन को यह विश्वास हो गया कि यह मेरा पुत्र है तो उन्हें अपने इस कृत्य पर बहुत पश्चात्ताप हुआ। उस समय उनको सान्त्वना देते हुए भीम ने कहा कि ऐसा एक युद्ध त्रेता में भी श्रीरामचन्द्र तथा उनके पुत्र लव, कुश के बीच हुआ था—

गी०—पितु-पुत्र युद्ध न भयो अस
यह आइकै चरचा उगं।
तब भीम भाषत रामसुत युग
समर कृत त्रेता जुगं॥

दो०—सो प्रसङ्ग सादर कहौं, सुनु जनमेदय भूप।
लौकुस कथा समस्त अब, रामायन अनुरूप॥

चौ०—रावण समर जीति रघुभूषन।
अवध चले प्रभु सहित विभीषन॥

....

इस प्रसङ्ग में एक बात और उल्लेखनीय है। कथा-प्रवाह को बढ़ाते हुए कवि को यह ध्यान नहीं रह गया है कि वह एक अन्तःकथा के रूप में ही रामाश्वमेध की कथा को लाया है, अतएव उक्त तथा का विस्तार आवश्यकता से अधिक हो गया है—समूचे ग्रन्थ के दशमांश में केवल उसी का वर्णन है। मेरे विचार में रामचरित की सर्वप्रियता तथा मनोरञ्जकता ही इसका कारण है जिसके वर्णन करने के लोभ में फँसकर कवि को अपने प्रबन्धकार रूप का स्मरण न रह गया।

कथा-सम्बन्ध के निर्वाह के लिए उपर्युक्त उदाहरण मेरे विचार में पर्याप्त होंगे। अब हम सदानन्द-द्वारा किए गए वस्तु-व्यापार-वर्णन पर आते हैं। जैमुनि-पुराण में ऐसे स्थल हैं—युधिष्ठिर-द्वारा अश्वमेध यज्ञ में निमन्त्रित श्रीकृष्ण की हस्तिनापुर जाने की तैयारी, मणिपुर की शोभा का वर्णन, बभ्रुवाहन-द्वारा अर्जुन का स्वागत और उद्दालक मुनि तथा उनकी स्त्री चण्डी का वार्तालाप। इनके अतिरिक्त सारा ग्रन्थ उन युद्धों के विस्तृत वर्णनों से भरा हुआ है जो दिग्विजय के लिए ससैन्य भ्रमण करते हुए पाण्डवों की सेना के अध्यक्ष अर्जुन और सुरथ, सुधन्वा, चन्द्रहास, मोरध्वज इत्यादि प्रतिस्पर्धी राजाओं के बीच हुए थे। पुस्तक के अप्रकाशित होने से सर्वसुलभ न होने के कारण हम उपर्युक्त ग्रन्थ से सदानन्द की वर्णनशैली के उदाहरण-स्वरूप उपर्युक्त घटनाओं से सम्बद्ध कुछ अंश उद्धृत करते हैं।

मणिपुर की शोभा का वर्णन

पुर रमनीय बरनि नहिं जाई।
मनहु उदित अमरावति आई॥
कनक कोट गढ़ लङ्क बनावा।
आयत विहद स्वर्ग लहि लावा॥
अति धर्मज्ञ मनोहर देसू।
बभ्रुबाह तहँ विदित नरेसू॥
देव सरिस नर बसत अनूपा।
अति प्रवीन जन्मेदय भूपा॥

गी०—धरमज्ञ साधु अगाध बुधि
सरवज्ञ सब विद्यावली।
तजि बैर भाव सुभाव कोमल
जीवजनु मुक्तस्थली॥
द्विज ब्रह्म जानत, क्षत्रियो
असि धर्म दान विधान जे।
लेखा प्रवीन समस्त वैस्यो
सुद्रकर्म प्रमान जे॥

दो०—धाम धवल धौराहरो धवल परम रमनीय।
उच्च अगार पगार अति, मोदु होत लखि जीय॥

चौ०—घर-घर सहज पतिव्रत बाला।
अति प्रवीन गुनवन्त विसाला॥
रूपरासि कल कोकिल बैनी।
पिय मन हरै इन्दु वर नैनी॥
करत कटाछ भाव सुख सोहैं।
मानुष कहा देव लखि मोहैं॥
सुभ्र महा पुर बरनि न जाई।
एक होम धूमहि मलिनाई॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और लोग सिगरे निकलङ्का ।
एक चन्द तहँ जुक्त कलङ्का ॥
सुभगति सब श्रुति धारन ही मैं ।
मन्द चाल तिय बाहन ही मैं ॥
बन्धन केश मृतुक चितसारी ।
कुटिल चाल सरि चलत बिचारी ॥

दो० – चरचा वेद पुरान जहँ, नाटक छन्द कवित्त ।
सदानन्द आनन्द मय, नर अरु नारि सुचित्त ॥

× × ×

यहाँ यह ध्यान देने की बात है कि रामचन्द्रिका के अयोध्या-वर्णन में, केशव द्वारा प्रयुक्त परिसंख्यालङ्कार का आश्रय लेते हुए, सदानन्द ने मणिपुर के वर्णन में नगर के नाम की सार्थकता को 'जड़ित मनी नग सुभग कँगूरे' से पुष्ट किया है – स्वाभाविकता लाने के विचार से ।

दृश्य-वर्णनों में मणिपुर-नरेश पार्थ-पुत्र बभ्रुवाहन-द्वारा अर्जुन के स्वागत का स्थल अत्यन्त रोचक है—

चौ०—धर्म धुरन्धर यह मन चीता ।
पिता भक्ति जग परम पुनीता ॥
गुरजन परिजन सुजन बुलाए ।
भेंट हेत गज बाजि बनाए ॥
चौर चीर मनि रत्न अमोला ।
मुक्त-युक्त हाटक- अनतोला ॥
कनक थार कर सिन्धुरगौनी ।
मङ्गल करत चलत रति ठौनी ॥
भीर अपार भूप दरबारा ।
आइ-आइ भट करत जोहारा ॥
बाजत सङ्ख सब्द सहनाई ।
भेरि झाँझ नौबति अधिकाई ॥
बीन मृदङ्ग ढोल सुर बाजै ।
मङ्गल-चारु सबहि बिधि साजै ॥
लीन्ह तुरङ्ग चले मति धीरा ।
महाबाहु जहँ अर्जुन बीरा ॥

गी०—जहँ पत्थ बीर समत्थ स्थित
दूत खबरि जनायऊ ।
सुत सुमति बीर बबूरवाहन
मिलन सादर आयऊ ॥

दो०—जहाँ पत्थ स्थित हुतो, आयो तहाँ बबूर ।
पायँ परसि जैदेव कहि; हाथ जोरि परिपूर ॥

भु०—सबै बिप्र आसीस दै जैति जंपैं ।
तबै डारि मोती सिरं फूल झंपैं ॥
पढ़ैं बिर्दु बन्दी बढ़ै राग रूरे ।
तिया मङ्गलाचार सों प्रेम पूरे ॥
लसै चारु शृङ्गार यों शोभ साजै ।
करैं आरती भारती देखि लाजै ॥
गहै थार सेा हाथ मोती चलावै ।
किधौं नायकं पत्थ मानी मनावै ॥
किधौं भूमि मैं मण्डली इन्द्र सेाहै ।
तहीं मैनका उर्वसी देखि मोहैं ॥
हरै चित्रिनी चित्र नैनं नचावैं ।
लखे सूर बीरं महामोदु पावैं ॥
दधीच्चावरं दूब सीसं चढ़ाए ।
तबै बीर बब्बूर बैनं सुनाए ॥
गहा मैं तुरै नाथ भूले तिहारो ।
क्षमा आपु कै कै बृपा केा सिधारो ॥

(जै० पु० पृ० १६०)

युद्ध-वर्णनों में भयानक, रौद्र तथा बीभत्स रसों के सामञ्जस्य-द्वारा सदानन्द ने संग्राम-भूमि के चित्रण में बड़ी सफलता प्राप्त की है :—

त्रिभङ्गी—कटि-कटि तेगनि तरफरि बेगनि,
भरि-भरि रेगनि जान जरैं ।
सिर बाहन खण्डे उदर बिहण्डे,
जे रन मण्डे धाक भरैं ॥
बहु रुण्डनि डोलैं मुण्डनि खोलैं,
हर-हर बोलैं मान धरैं ।
दै-दै करताली कच बिकराली,
झुकि-झुकि काली गान करैं ॥ १ ॥
धरु-धरु धुनि काननि सुनि गलितानानि,
अच्छ रिसाननि बीर बरैं ।
जे सन्मुख जुज्झे नहिं मन खिज्झे,
असि-रस सिज्झे भरि परैं ॥
तहँ गीधनि गीधे आमिष बीधे,
करकट सीधे कान करैं ।
दै-दै करतालीं कच बिकराली
झुकि-झुकि काली गान करैं ॥

प्रबन्धकार कवि की क्षमता की कसौटी है पात्रों-द्वारा अनुभूत भावों की सफल अभिव्यञ्जना । महाकाव्य का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्षेत्र विस्तृत होने के कारण कथानक के बीच ऐसे अनेक स्थल आते हैं जहाँ पात्र प्रेम, शोक, क्रोध इत्यादि भावों को प्रकट करते दिखाई देते हैं। सफल कलाकार ऐसे स्थलों का महत्त्व समझकर इस प्रकार चित्रित करता है जिससे पाठकों को उनके चरित्र की विशेषताओं का अध्ययन करने में सहायता मिलती है, साथ ही काव्य में सरसता और आकर्षण भी बढ़ जाता है। 'जैमुनि पुराण' के ऐसे स्थलों पर सदानन्द की लेखनी में अधिक ओज तथा सरसता आ गई है। असंख्य बन्धु-बान्धवों की हत्या-द्वारा प्राप्त विशाल राज्य के प्रति विरक्ति प्रकट करते हुए धर्मराज युधिष्ठिर की 'ग्लानि' का चित्र बड़े ही मार्मिक शब्दों में उपस्थित किया गया है—

छन्द पद्धरी

गज पुरी आइ मुनि व्यास नाम।
सुख पाय युधिष्ठिर कै प्रनाम॥
कर जोरि करत विनती असेष।
किय गोत्र-बद्ध उर पाप लेष॥
भो मृत्तु लोक अपजस अपार।
केहि भाँति होय स्वामी उधार॥
भीषमौ कर्न अरु द्रोन मारि।
पालियो हमैं जिन हेत धारि॥
गुरुजन समूह नहिं रह्यो कोय।
अब राजकाज केहि भाँति होय॥
पाछिलौ कर्म सर्वौ मे नास।
अब लहौं महानर्कहि को बास॥
हौं कस न गयो रनभूमि भागि।
निज गोत्रघात हत्या जु लागि॥
अति सोक तपनि तप दहै गाउ।
मृग चर्म पहिरि मुनि! बनहि जाउँ॥

आगे अर्जुन-द्वारा तिरस्कृत बभ्रुवाहन के क्रोध का वर्णन करते हुए कवि ने उसका कारण अर्जुन के उन क्रूर्य तथा अपमान भरे शब्दों को बताया है जो उन्होंने बभ्रुवाहन-द्वारा आयोजित आरती के समय कहे थे—

मम-पुत्र ना पुत्र तू है नटी को।
गरे ढोल बाँधै नचावै गटी को॥
मम पुत्र अभिमन्यु त्रैलोक्य मानै।
बड़ो सूर वीरं चकाबूह जानै॥

× × ×

तनै नृत्त की भाव कैसे मिटावै।
जोई कर्म जाको सोई धर्म भावै॥

माता के चरित्र पर लाञ्छन लगानेवाले अर्जुन के ये शब्द बभ्रुवाहन ऐसे पराक्रमी योद्धा के लिए असह्य थे—

लयो हाथ को दण्ड कै नैन लालं।
हनौ खेत में सर्व जोधा विसालं॥
तुरै छोड़ि दे मैं गहौं फेरि लै कै।
हनौ वीर भारे सबै सैन छै कै॥
तजौं धर्म सर्वं नहीं अत्र मण्डौं।
रनं भूमि जो माथ तेरो न खण्डौं॥
परौं नर्क निर्धर्क ना मोछ पावौं।
नहीं पत्थ को सीस भू में खसावौं॥
लहौं पाप ते दाप नीके निपाटौं।
महाबाहु जो सीस तेरो न काटौं॥
तुमै डारि भूमैं हनौ प्रान बानो।
नटी पुत्र मोको तबै पार्थ जानो॥
भिदौं बान सो बान रोमं तिहारो।
तबै जानबी नृत्यकी को कुमारो॥

(जै० पु० पृ० १६२)

इसी प्रकार बभ्रुवाहन-द्वारा पति का वध सुनकर गन्धर्वकन्या चित्राङ्गदा के विलाप में शोक की व्यञ्जना अत्यन्त हृदयस्पर्शी है :—

चौ०—रोवत चली जुगल तिय तहाँ।
पारथ समर लोथ रथ जहाँ॥
विलपहिं सीस मारि पछिताहीं।
विक्रम, तेज अखण्ड सराहीं॥
देखि देखि सिर रोवहिं नारी।
करुना भयो महारन भारी॥

इस अवसर पर बभ्रुवाहन को सामने खड़ा देखकर उन्होंने उसे धिक्कारते हुए कहा—

चौ०—सोमबंस सुत पालन हारा।
धन्य बबूर पिता जेहि मारा॥
अब जनि बदन देखावसि मोहीं।
निश्चय भयसि तात कर द्रोही॥
एक पुत्र भे विदित भगीरथ।
तारे पितर प्रगट जस तीरथ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक पुत्र तुम जगत प्रकासे।
पिता मारि सगरे कुल नासे॥
सुर दुरलभ सुख-गति जग माहीं।
बिन पति कहत बेद कछु नाहीं॥

गी०—बिन प्राननाथ अनाथ मैं
अब साथ निज पति को करौं।
सब भोग-भाग अपार सुख
सुत! दूरि कै सिगरे धरौं॥
जेहि बान पारथ सीस-खण्डन कीन्ह
तेहि सर मोहिं हनौ।
गति पाइ सुभ नृब्रान पथ
तब पुत्र कुल-दीपक गनौं॥
(जै० पु० पृ० १२८)

अन्तःकथा के रूप में आए हुए रामाश्वमेध के कथानक में सीताजी के पुनर्वनगमन का दृश्य भी अत्यन्त ही करुणापूर्ण है—

चौ०—सहमि गई सुनि राजकुमारी।
जनु हिम कमल बेलि मनु मारी॥
अधर सूख पुनि लेत उसासा।
मानहुँ राहु चन्द कहँ गासा॥
परी मुर्छि नहिं बोलत बाता।
ब्याकुल बदन सिथिल सब गाता॥

दो०—रोवैं खगमृग सर नभ
अरु सुर मुनि बिलखायँ।
गन गँधर्ब रिखि आदि दै
झङ्खत सीस डोलाय॥

सीताजी के दुःख से उनके सम्पर्क में आनेवाले चेतन जीव ही नहीं जड़ पदार्थ भी दुःखित थे—व्यक्तिगत वियोग-भावना को इस प्रकार विश्व-विरह का रूप देना एक सिद्ध-हस्त कवि का ही काम है।

प्रबन्धकाव्य के भीतर पात्रों के चरित्र के अध्ययन में सबसे अधिक सहायता संवादों से मिलती है। वार्तालाप में प्रयुक्त शब्द मनुष्य की अन्तर्भूत भावनाओं के शब्द-प्रतीक मात्र होते हैं, अतएव विशेष परिस्थितियों में उसके कथोपकथन उसके कार्य-कलापों तथा सिद्धान्तों के सबसे अधिक विश्वसनीय साक्षी होते हैं। इससे एक लाभ और होता है। कथानक की गति कुछ अधिक तीव्र हो जाती है अतएव अनेक अनावश्यक प्रसङ्ग जिनके द्वारा कथानक के प्रवाह में बाधा पड़ने की आशङ्का थी, छूट जाते हैं। परन्तु ऐसा तभी सम्भव है जब कवि कथानक की शृङ्खला की रक्षा में सतर्क तथा सावधान रहे, अन्यथा ऐसे स्थलों के समावेश का विपरीत प्रभाव भी पड़ सकता है। ऐसी दशा में कथोपकथन का आकार आवश्यकता से अधिक बढ़ जाने से कथा विशृङ्खल हो जाने का भय रहेगा। 'जैमुनि पुराण' के कवि ने भी अनेक स्थानों पर कथोपकथन की योजना की है, परन्तु अधिकतर वे कथा-प्रवाह में बहते ही दिखाई देते हैं। इसके फल-स्वरूप कथोपकथन बहुत लम्बे हो गए हैं। नीचे हम संक्षेप में कुछ कथोपकथनों को उद्धृत करते हैं—

धर्मराज युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण से मन्त्रणा करने के पूर्व ही भीम को अश्वमेध यज्ञ के पूरा कराने का भार सौंपा था। श्रीकृष्ण व्यंग्यपूर्ण शब्दों में भीम को उपर्युक्त पद के लिए अनुपयुक्त सिद्ध करते हुए कहते हैं—

सुनु जनमेदय हित की रचना।
कृष्ण कौतुकी बोले बचना॥
मन्त्री भीम महाबुधिवाना।
अति पण्डित अति रूप निधाना॥
निपट सञ्जमी स्वल्प अहारी।
परम पतिव्रत रकसिनि नारी॥

गी०—रकसिनी नारि हङ्कारि बैठत
ग्यान तिन सिगरो हरो।
थोरे गरास बिलोकि बिलसत
पेट कबहूँ ना भरो॥
ते सभा बैठे मन्त्र साजत,
मन्त्र राज प्रभा धरी।
सरवग्य भीम सु यज्ञ कारन
यज्ञ तुम कस ना करी॥

श्रीकृष्ण-द्वारा आरोपित अपने चरित्र के अनेक दोषों के उत्तर में उन्हीं त्रुटियों का श्रीकृष्ण के चरित्र पर आरोप भीम ने बड़े चुटीले शब्दों-द्वारा किया है:—

चौ०—कहँ लौं मान रावरो राखिय।
घर आए अस बात न भाषिय॥
× × ×
कस मम० निन्दा कीन्ह गोपाला।
तब गरज्यो करि नाद बिसाला॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहु भोजन कहँ ऐगुन दीजै ।
तासो कहौ मन्त्र नहिं कीजै ॥
तुम्ह ते उदर बिसाल काहि को ।
छुधाअर्थी दूसर न आहि को ॥

दो०—जल-थल जिनके पेट मँह,
अरु भीतर ब्रह्मण्ड ।
हँसत बिराने पेट को,
देखि चरित्र अखण्ड ॥

चौ०—घर रुकुमिनि तिय पद्मिनि बाला ।
ब्याहेहु रकसिनि चरित बिसाला ॥
प्रगट भालुका ससुर तुम्हारा ।
भल-भल कृष्ण लीन्ह अवतारा ॥
मदन मनोहर पूत रावरो ।
व्यापि करत संसार बावरो ॥
को हमरे सुत जैस तुम्हारे ।
करत अहहु उपहास हमारो ॥

'सदानन्द' की काव्यशैली के निदर्शन हेतु 'जैमुनि-पुराण' से जो अंश हम पीछे उद्धृत कर चुके हैं उनके अतिरिक्त कुछ प्रसङ्ग ऐसे भी हैं जो काव्य की दृष्टि से अधिक महत्त्वपूर्ण न होते हुए भी रोचक हैं ।

यज्ञ के लिए अश्व को लाने के हेतु गए हुए भीम तथा कर्णपुत्र वृषकेतु-द्वारा पराजित होने पर भद्रावती का राजा यौवनाश्व सपरिवार हस्तिनापुर चलने को उद्यत हुआ । इसकी सम्मति लेने के लिए जब वह अपनी वृद्धा माता के पास गया तो उसने इस प्रस्ताव के विरोध में 'हमारे कुल कोई न राम कहा' की दुहाई दी तथा कृष्ण-दर्शन एवं गङ्गा-स्नान की निस्सारता प्रकट करते हुए कहा :—

सुनियो न सुरसरि कान सो ।
कस दान कौन प्रमान सो ॥
ससुरे सँजोग भई जहाँ ।
चर्चा न धर्महु की तहाँ ॥
सीखी सिखावन बाप सों ।
कोउ पाप छाँड़त आप सों ।
मम पुर्ष पापन भोग वै ।
अरु जेठ देवर लोग वै ॥
सुनि पाइहैं दुख वै बड़ो ।
उर धर्म-अङ्कुर जो गड़ो ॥
जो रीति बस उदार में ।
सो करत सब संसार में ॥
दस पुर्ष मैं कीन्हें भले ।
श्रुति पन्थ नाहिन ते चले ॥
सतनेम की चरचा कहाँ ।
कुल धर्म ना हमरे सहा ॥
जहँ गङ्ग हरि उपदेस कौं ।
तजि देउँ मैं तेहि देस कौं ॥

उस वृद्धा के हृदय में नास्तिकता की भावना कुल-धर्म के अनुसार जड़ जमाए थी ही, हस्तिनापुर न जाने का एक और बड़ा कारण यह भी था :—

जो चलौं रानी साथ में ।
घर सौंपि केहि के हाथ में ॥
सब बहु द्रव्य चोराइहैं ।
नैहरन बाँधि पठाइहैं ॥

स्त्री-स्वभाव का कितना मनोवैज्ञानिक व स्वाभाविक चित्रण है ।

यही नहीं, कृष्ण तथा गङ्गा को लोगों के अकारण महत्त्व देने से उसे चिढ़ भी थी :—

पी छाँछ बड़ भे जौन हैं ।
तिन दरस फल कहु कौन है ?
जल गङ्ग आखिर पानि है ।
हरि ग्वाल जादव जानि है ॥

ऊपर दिए गए उद्धरण में वृद्धा की नास्तिक भावना पितृगृह में पिता-द्वारा तथा श्वशुर-गृह में उसके दस पतियों तथा अन्य दुराचारी कुटुम्बियों की देन थी । जिसका संसार के सत् पक्ष से कभी सम्पर्क ही न हुआ हो उसका भगवान् कृष्ण तथा कलिमल-हारिणी गङ्गा के दर्शन को भी पाप समझना अस्वाभाविक नहीं कहा जा सकता ।

'जैमुनि पुराण' के भीतर अनेक अन्तःकथाएँ भी आई हैं इसका उल्लेख हम पीछे कर चुके हैं । इनमें कुछ वर्णन की दृष्टि से बहुत रोचक हैं । प्रसिद्ध उद्दालक मुनि की स्त्री चण्डी के स्वभाव वर्णन में कवि ने कर्कशा स्त्रियों के स्वभाव का अच्छा चित्र उपस्थित किया है :—

उदालिक ब्याह करायहु ताहि ।
तबै तेहि लायो मन्दिर माहिं ॥
कहै मुनि ले तुव चण्डिय भेव ।
करो तुम पावक की निति सेव ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुने तब चण्डिय रोस उमाह।
'बहाउब पावक पानी माँह॥'
कह्यो रिषि "देहु कमण्डल आनि।
रहौ घर में तुम ही अनुमानि॥"
इती सुनि चण्डी उठी कछु दौरि।
दयो तब जाइ कमण्डल फोरि॥

स्त्री-पुरुष का यह कलह-चक्र रात्रि में भी विश्राम नहीं लेता था—

निसा मधि ब्राह्मन सोवत आहि।
कह्यो तब चण्डिय बैन सराहि॥
नहीं तिय-पुर्ष रसङ्गत भाव।
सेा सेज हमारी तजौ तुम जाव॥

इस निरन्तर गृह-कलह से उद्दालक जी सदैव दुखी रहा करते थे। धीरे धीरे वे बहुत दुर्बल हो गए। इसी बीच एक दिन कमण्डल ऋषि आए। उन्होंने उद्दालक से उनकी कृशता का कारण पूछा। उद्दालक के मुख से सारा वृत्तान्त सुनकर उन्होंने इस आपत्ति से छुटकारा पाने की यह सलाह दी :—

कर्‌यो तुम चाहहु कारज जौन।
न भूलेहु ताहि सुनावहु तौन॥
जोई करिबे नहिं कारज होय।
कहौ करिहैं हम आतुर सेाय॥
लगै जब तोहि तृषा मन जानि।
कहौ तेहि अग्र पियौं नहिं पानि॥

दूसरे दिन पिता का श्राद्ध था। उद्दालकजी ने कमण्डल ऋषि-द्वारा बताई गई तदबीर के प्रयोग का अच्छा अवसर समझकर अपनी स्त्री से कहा :—

अहै पितु श्राध कर्‌यो नहिं जात।
कहाँ कर तात कहाँ कर मात॥
न पिण्ड पराउब पानि न देउँ।
यहै किय ठीक भले मत लेउँ॥

मुनि की चाल चल गई। चण्डी ने चट पति के शब्दों का प्रतिवाद करते हुए कहा :—

यहै सुनि चण्डिय भूरि रिसाय।
'कराउब श्राध केा साज बनाय॥'
कहै तब बैन उदालक पूर।
'बोलाउब बाभन कुष्टी कूर'॥
कहै तब बैन तिया मुसकाइ।
'नहीं उर लाज निलज्ज हँसाइ'॥
महाद्विज पण्डित जौन कुलीन।
सुलच्छन भक्त हिये हरि लीन॥
तिन्हैं बरि भोजन अम्बर देउँ।
कराइ कै श्राध बड़ेा जस लेउँ॥

चण्डी ने अपने श्वशुर का श्राद्ध बड़ी कुशलता के साथ समाप्त किया। संयेाग वश पिण्ड प्रवाहित करने की क्रिया के समय उद्दालकजी को कमण्डल ऋषि के ये वचन याद न रह गए। सहसा उनके मुँह से अपना मन्तव्य ही निकल गया—

बोलाइ कै चण्डिय बोलत ताहि।
"सुरस्सरि पिण्ड करो परवाहि॥"
सुने बच नारि बड़ो उर दाह।
पँवारिसि पिण्डहि घूरेहि माँह॥

अब तो उद्दालक ऐसे तपोनिष्ठ जितेन्द्रिय मुनि के लिए भी क्रोधावेश को सँभालना असम्भव हो गया। उन्होंने उसी क्षण शाप दिया कि 'जा! दुर्बुद्धि, प्रस्तर स्वभाववाली, तू शिला हो जा।' फिर चण्डी के आर्त्तपूर्ण शब्दों में प्रार्थना करने पर उन्होंने मोक्ष का उपाय भी बतलाते हुए कहा कि तेरा उद्धार पाण्डवों के अश्वमेध के घोड़े को पकड़ने के अवसर पर अर्जुन के चरणों के स्पर्श से होगा। मुख्य कथा से उक्त कथानक का सम्बन्ध कवि ने इसी प्रकार स्थापित किया है।

यद्यपि पूरा काव्य वीररस-प्रधान है फिर भी शृङ्गार अनेक स्थलों पर उसके सहायक के रूप में लाया गया है। 'जैमुनि-पुराण' के भीतर ऐसे प्रसङ्ग हैं—स्त्रीदेश की अधीश्वरी प्रमिला तथा अर्जुन के बीच संग्राम, तथा माहिष्मती के राजा नीलध्वज की पुत्रवधू मदनमञ्जरी का उद्यान-विहार। ये स्थल वर्णन की दृष्टि से अत्यन्त सरस अतएव रोचक हैं।

'जैमुनि पुराण' में कुछ ऐसे भी प्रसङ्ग आए हैं जिनमें हम सदानन्द की उपदेशात्मक शैली का आश्रय लेते हुए पाते हैं। ऐसे स्थलों का साहित्यिक महत्त्व, इतिवृत्त प्रधान होने के कारण बहुत कम होता है, वे पाठकों को कुछ कर्तव्याकर्तव्य की विचार-सामग्री भले ही दे सकें। फिर भी प्रबन्धकाव्यों का क्षेत्र विस्तृत होने से इनका समावेश हम किसी न किसी रूप में बराबर देखते हैं। इसका कारण मेरे विचार से यह है कि प्रबन्धकाव्यों के चरितनायक प्रायः ऐसे महापुरुष होते हैं जिनका चरित्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संसार के लिए आदर्श अतएव अनुकरणीय समझा जाता है। इसलिए या तो उन महापुरुषों के मुख से कुछ कहलाया जाता है या कवि स्वयं उनके चरित्र के विशेष गुणों के प्रचारार्थ तत्सम्बन्धी सिद्धान्त-वाक्यों को यत्र-तत्र उद्धृत करते हैं। 'जैमुनि पुराण' में व्यासजी ने युधिष्ठिर से यज्ञव्रती राजा के धर्म तथा कर्म की चर्चा करते हुए इसी प्रकार के एक विशद वर्णन की योजना की है। स्त्रियों के लक्षण तथा स्वभाव का वर्णन करते हुए वे लिखते हैं—

यहि भाँति महामति भूप सुनो।
अब लच्छन और समस्त गुनो॥
रसना अरु तालू स्याम भले।
अँगुरी पद भारत भूमि चले॥
यहि भाँति अलच्छन हैं जेहि के।
मरि जायँ सबै ससुरे तेहि के॥
पद एक अँगुष्ट विसाल परै।
तेहि को पति ब्याहत आसु मरै॥
कहि बात कपोलन गाड़ परै।
तेहि के घर दारिद लाड़ करै॥

कुलवधुओं के लक्षण

.....

अब भाषत जौन वधू कुल को॥
लहि औसर देत वियाहि पिता।
पति प्रीति न दूसर भूलि हिता॥
घर बाहेर देखि न पाव केाऊ।
सब ही मृदु बोल सुनाव सेाऊ॥
ससुरौ अरु सासुहि सेवति है।
उर लाज लिए जस खेवति है॥
पुनि देवर जेठ जेठानिन को।
कटु बोलत ना घर प्रानिन को॥

भाषा-शैली

कविराज सदानन्द के 'जैमुनि पुराण' से 'रासा भगवन्तसिंह' की तुलना करते हुए हम उनकी भाषा पर पीछे विचार कर चुके हैं। और इसके पर्याप्त उदाहरण दे चुके हैं कि उनकी भाषा 'मानस' की तरह पूर्वी अवधी अर्थात् अवधी का वह रूप है जो गोंडा तथा फैजाबाद के जिलों में अयोध्या के निकटवर्ती भूभाग में नित्य की बोलचाल में व्यवहृत होता है। आगे हम उनकी भाषा के गुण दोषों की विवेचना करेंगे।

जैमुनि पुराण का मूल कथानक ऐतिहासिक तथा शैली वर्णन-प्रधान है, अतएव उसकी भाषा की सबसे बड़ी विशेषता है सर्वसुगमता। इस प्रसाद गुण के कारण ही सारा काव्य अत्यन्त रोचक है। परन्तु इससे ग्राम्यत्व का भ्रम न करना चाहिए। ग्रन्थ के मङ्गलाचरण से ही यह विदित हो जाता है कि उसका रचयिता काव्यशास्त्र का पण्डित है। काव्य के भीतर भी अनेक प्रचलित तथा अप्रचलित संस्कृत शब्दों का प्रयोग तथा अलङ्कार-योजना इसी तथ्य का परिचायक है। केवल 'घोड़ा' शब्द के लिए 'अश्व', 'हय' 'वाजि' 'तुषार' तथा 'प्लवङ्ग' इत्यादि पर्यायवाची शब्दों का प्रयोग भिन्न-भिन्न स्थलों पर पाया जाता है।

जहाँ तक शब्दों के शुद्ध रूप के प्रयोग का सम्बन्ध है, सदानन्द ने स्वच्छन्दता से काम लिया है। रीति-काल में भूषण, देव तथा बिहारी इत्यादि प्रौढ़ कवियों के हाथ में पड़कर भी साहित्य की भाषा का स्वरूप निश्चित न होने के कारण आगे के कवियों को उचित पथ-प्रदर्शन न मिल सका, अतएव १८वीं तथा १९वीं शताब्दी के व्रज तथा अवधी दोनों साहित्य-भाषाओं के कवियों की कृतियों में ये दोष बराबर विद्यमान रहे। शब्दों की मनमानी तोड़-मरोड़ तथा खिचड़ी भाषा का बाजार गर्म रहा। सदानन्द भी इस परम्परागत दोषपूर्ण भाषा-शैली के शिकार हुए। अपने ग्रन्थ में अवधी को प्रधानता देते हुए भी उन्होंने बैसवाड़ी के 'ऐस', 'जैस' इत्यादि शब्दों को बेखटके स्थान दिया अपनी मातृभाषा होने के कारण। यही नहीं, उर्दू के 'शुमार' 'हुजूर', 'फरमाये' आदि शब्द भी अजायबघर के जानवरों की तरह विचरते दिखाई देते हैं। अतएव सदानन्द की भाषा में व्याकरण के नियमों की अवहेलना, भरती के शब्दों की भरमार तथा पण्डिताऊपन के भी उदाहरण यत्र-तत्र मिलते हैं।

— —

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह जेल है जेल

श्री 'अजेय'

'जमादार ! ऐ जमादार साहब', दबी आवाज में एक कैदी ने पुकारा। रात अँधेरी थी। बैरिक में एक लालटेन टिम-टिम जल रही थी। मनहूस निस्तब्धता भङ्ग करते हुए नम्बरदार चिल्लाया—'एक...दो...६६ कैदी बन्द, ताला जँगला लालटेन सब ठीक है, जमादार साहेब ७ नम्बर।' इतना कहकर नम्बरदार उस कैदी की तरफ बढ़ा जिसने जमादार को पुकारा था और—'अबे क्या है साले' कहते हुए एक लात मारी।

कैदी चिल्ला उठा। फिर सम्हलकर बोला, 'मुझे बुखार .।' वह कह भी न पाया था कि नम्बरदार ने घूँसा लगाते हुए कहा, 'अबे साले जेल है जेल ! तेरे बाप का घर नहीं। चुपचाप पड़ा रह, नहीं तो हड्डी-पसली एक न मिलेगी।'

जमादार ने गरजते हुए नम्बरदार से कहा, 'क्यों बे हरामी, इन सालों को ठीक क्यों नहीं करता ?'

सच ही, यह जेल है। यहाँ मानवता, दया, करुणा और सहानुभूति की जगह नहीं। और हो भी क्यों। जेल सभ्य मनुष्यों के लिए नहीं। वह तो शासन का नरक है जिसका भय दिखाकर राज्य शान्ति और व्यवस्था कायम रखता है। यदि जेल को मनुष्यों के रहने लायक बना दिया जाए तो फिर शासन का अनुशासन न मानने-वालों को कैसे चेतावनी मिले। जेल को जो लोग सुधार-गृह समझते हैं वे गलती करते हैं। अगर जेल न हो तो जनता के हृदय पर शासन का आतङ्क कैसे कायम हो और वह भी जब शासन जनता की इच्छा के विरुद्ध जबरदस्ती उसके सीने पर चढ़ा बैठा हो। ऐसी सरकार बिना आतङ्क के अपने विरोधियों का मुँह बन्द ही नहीं करती। अपने आलोचकों को शान्त रखने और अपनी शक्ति का मन-माना प्रयोग करने के लिए यह आवश्यक है कि जनता को शासन के आतङ्क से डराए रक्खा जाए। राज्य की नींव का आधार जहाँ आतङ्क समझा जाता हो वहाँ जेल के सीखचों की भयानकता पर ही शान्ति और व्यवस्था का अस्तित्व रहता है।

एकाएक यतीन के मस्तिष्क में ये विचार चक्कर काटने लगे। अपने ढूले पर पड़ा शरीर की असह्य पीड़ा को कल्पना की चादर में मुँह ढाँपकर वह भुला देने का प्रयत्न कर रहा था। अतीत के चित्र उसके मस्तिष्क में चित्रपट की छाया की तरह दौड़ने लगे।

उसका बाल्यकाल, 'सभ्य घराना', माता-पिता का लाड़-प्यार। भाई, बहनों, साथियों का सुनहला संसार। पलों की तरह उसके वे दिन बीत रहे थे।

जवानी, उसकी प्रेमा। उसका कमल-सा अनिल। एक चलता हुआ कार-बार किस चीज की उसे कमी थी!

भाग्यचक्र पलटता है। कलकत्ते की पहली बमबारी। बज्रों के गिरने-सी आवाजें। हवाई जहाजों की घरघराहट। उस रात प्रलय का पूर्वचित्रण हो रहा था।

लाखों की चीख-पुकार। भगदड़। स्टेशन पर अपार भीड़। टिकट लेना असम्भव। सारे कार-बार, घर-गृहस्थी को बिदा देकर यतीन गोद में अनिल को लिए हुए प्रेमा के साथ खचाखच भरे हुए गाड़ी के डिब्बे में बैठ गया।

गाड़ी चल दी। आँसू-भरे नेत्रों से यतीन पीछे की तरफ ही देख रहा था। अपना घर-बार, धन व्यापार आज युद्ध की भट्टी में जलते देख उसका हृदय टीस उठा।

गाड़ी बनारस पहुँची। टिकट-चेकर ने डिब्बे में आकर टिकट माँगना शुरू किया। अधिकांश यात्री टिकट न होने के कारण उतार दिए गए। उन्हें पुलिस के दफ्तर में ले जाया गया। वहाँ उन लोगों की तलाशी का हुक्म हुआ। यतीन लज्जा से गड़ गया। वही यतीन, जो किसी समय अपने को सभ्य और सुशिक्षित समझता था, पुलिस की हिरासत में और अपनी स्त्री के सामने!

वह आगे बढ़ा। सब-इन्स्पेक्टर के निकट पहुँचकर उसने कहा, 'दारोगा जी, हम लोग कलकत्ते से जापानी बमबारी के कारण भगे हैं। वहाँ हम टिकट न ले सके। और न हमारे पास रुपए ही हैं। हमारा सब सामान वहीं छूट गया। ऐसे समय में सरकार को हमारी सहायता करनी चाहिए थी, न कि इस तरह परेशान।'

दारोगा का कहना—दूर हटाओ इन सालों को, क्या सरकार ने तुम्हारा ठेका ले रक्खा है—और एक कान्स्टेबिल का उसकी गर्दन पर हाथ लगाना। इस अपमान को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सह सकने के कारण यतीन का सिपाही को ढकेलना। फिर मारपीट, गिरफ्तारी, हाथों में हथकड़ी। प्रेमा की वह रोती सूरत, बच्चे की चीख-पुकार। और उनके बीच से उसका घसीटकर ले जाया जाना। मैजिस्ट्रेट के यहाँ आर्डिनेन्स का प्रहार। २ वर्ष की कड़ी सजा।

सम्बन्धियों की लाख कोशिशें बेकार। स्पेशल कोर्ट आर्डिनेन्स के ब्रह्मास्त्र के सामने अपील और जमानत के लिए कोई स्थान ही न था।

प्रेमा! अनिल! वह चीख उठा; उसकी आँखों के सामने अँधेरा था।

टन...टन. पचासा बजा। कैदी उठने लगे। यतीन को तेज बुखार था। बारिक का दरवाजा खुला। कैदी एक-दो की गिनती पर तुरत अपने दूलों के सामने जोड़े से बैठ गए।

यतीन न उठ सका। यह देखकर नम्बरदार आपे से बाहर हो गया। उसने यतीन्द्र की टाँग घसीटते हुए डाँटा, 'क्यों बे साले, रात भर शोर मचाता रहा और अब नखरा किए पड़ा है। गिनती भी देना हराम हो गया। बड़ा बाबू बना है कहीं का। जानता नहीं यह जेल है। यहाँ बड़े-बड़े बाबुओं की लीद निकाल ली जाती है।'

जमादार ने आगे बढ़कर नम्बरदार को एक तमाचा लगाते हुए कहा, 'क्यों बे हरामजादे। बहुत मोटाई चढ़ी है। कैदी सोते रहेंगे तो गिनती कब होगी? चल आज तेरी पेशी हो जाए। १२ दिन कट जाएँ तो मालूम हो। यतीन को डण्डे से मारते हुए जमादार ने कहा— 'क्यों बे नवाब के बच्चे, ९ बजे तक सोएगा? अभी तेरी आँखें नहीं खुलीं?'

तमाम कैदी थर-थर काँप रहे थे। यतीन कराहता हुआ उठने की कोशिश करने लगा। 'मुझे बुखार है' उसने धीरे से कहने की कोशिश की।

नम्बरदार गरज उठा, 'बुखार है तो क्या साले गिनती के लिए भी नहीं बैठ सकते।' इतना कहकर उसने एक डण्डा यतीन के पैरों पर जमाया। यतीन चिल्ला उठा। जमादार ने कहा, 'यह साला जेल को अपना घर समझकर आया है। इन सब सालों को अगर इतनी हिम्मत आ गई तो बलवा हो जाएगा। मारो इन सालों को। यह जेल है जेल।' इतना कहकर उसने यतीन को २-३ डण्डे लगाए और आसपास बैठे कैदियों को भी एक-आध। 'इन सालों की यही दवा है।' उसने कहा और गिनती पूरी कर चला गया।

यतीन चोटों से कराह रहा था। सरदी के दिन थे। उसकी चक्की की मशक्कत! अन्य कैदी बैरिक के बाहर निकले। बगल में कपड़ों की पोटली। हाथ में तसला और कटोरी। जेल था न! चोरों का घर।

यतीन भी किसी तरह बाहर आया। दो-चार कदम चला ही होगा कि उसे चक्कर आया। वह गिर पड़ा। दूसरे कैदियों को तरस आया। लेकिन वे करते क्या! वे भी उतने ही बेबस थे। उनके दिल मसोस उठे।

थोड़ी देर में वह फिर उठा। कोई पूछनेवाला न था। दूसरे कैदी के प्रति सहानुभूति दिखाना भी जेल में विद्रोह का षड्यन्त्र समझा जाता है। दो कैदी एक साथ खा नहीं सकते। आपस में बात नहीं कर सकते। क्योंकि यह जेल के अनुशासन के खिलाफ है।

धीरे-धीरे यतीन चक्कीखाने की तरफ गया। १५ सेर गेहूँ, जिसे वह कल सिर पर लादकर लाया था। पल्ली देखकर वह काँप उठा। पिछले दिनों कम पीसने पर डण्डों की मार याद कर वह सिहर उठा।

वह करे क्या? कुछ सोच न सका। थककर बैठ गया। कमान के नम्बरदार ने उसे बैठा देखकर कहा, क्यों बे मार भूल गई?'

एक दूसरे कैदी ने सहानुभूति दिखाते हुए दबी जबान में कहा, 'आज इसे बुखार है।'

'हाँ-हाँ, जानता हूँ बुखार है। तो तू ही इसका हिस्सा पीस दे।' नम्बरदार ने कहा, 'बड़ा साला हमदर्दी दिखाने चला है।'

यतीन यह सुन न सका। वही यतीन, जिसने गर्दन पर हाथ रखने के कारण सिपाही पर हाथ चला दिया था, अब मार को अपमान न समझकर पी जाता था; लेकिन अपने लिए दूसरे का अपमान उसे सहन न हुआ। उसने कहा, 'तुम मुझे मार सकते हो। लेकिन मेरे लिए दूसरे को गाली क्यों देते हो? मैं जेल में हूँ। मुझे मारो, गाली दो, लेकिन मैं यह नहीं बरदाश्त कर सकता कि मेरे लिए तुम दूसरे की बेइज्जती करो।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नम्बरदार आँखे तरेरते हुए बोला, 'बड़ा इज्जतदार बना है। बेहया कहीं का। जेल में इज्जत लेकर आया है।'

यतीन ने हिम्मत करके खड़े होकर कहा, 'चुप रहो। जाओ जमादार से कह दो। मैं चक्की नहीं पीसूँगा। उन्हें जो करना हो करें। बहुत जेल का भय दिखाते हो। जानते नहीं, मैं क्या चोरी या बदमाशी करके आया हूँ। तुम्हारी इस तरह की जिन्दगी से मैं मरना अच्छा समझता हूँ। देखता हूँ, तुम्हारे जुल्म मे कितनी ताकत है जो मुझे झुका ले।'

यतीन का चेहरा लाल हो गया। वह एक मिनट भी खड़ा न रह सका। गश ने उसे फिर गिरा दिया।

जेल अस्पताल में जमीन पर पड़ा यतीन बड़बड़ा रहा था।

...प्रेमा...अनिल...बदमाशो मुझे छोड़ दो...देखता हूँ तुम्हारे जुल्म में कितनी ताकत है...तुम आ गईं...क्या खूब...अच्छा आओ...अनिल तू रो रहा है। हा... हा...वह कभी रोने लगता। कभी गुस्से में आकर उठने की कोशिश करता।

शाम को डाक्टर ने आकर देखा। 'इसे सरशाम हो गया है' उसने लापरवाही से कहा—'सुबह तक हजरत कूच कर जाएँगे। इन्हें मरने के लिए अलग जगह नहीं मिली थी। कंपाउंडर को आदेश देते हुए—इसका मरने का फार्म भर देना—वह जाने लगा।

यतीन ने डाक्टर पर एक गहरी निगाह डाली और फिर आँखें बन्द कर लीं।

कौन जाने उसकी समझ में डाक्टर की बातें आ गईं या नहीं।

डाक्टर सहम गया।

बाबू कालिनाथ राय

पण्डित आत्मस्वरूप शर्मा

ट्रिब्यून पत्र के भूतपूर्व प्रधान सम्पादक बाबू कालिनाथ राय लाहौर के उप-नगर माडल टाउन में रहते थे। उनका स्वास्थ्य अच्छा न रहता था। दमे का रोग प्रायः उनके दम के साथ था। उन्होंने सरगर्म कार्य तो वर्षों से छोड़ रक्खा था। ट्रिब्यून के ट्रस्टियों की उन पर अपार कृपा थी। कई वर्षों के अनन्तर उन्हें वही एक सम्पादक मिले थे जिनका उनके साथ—मुहावरे के अनुसार—"कारूरा मिला हुआ था।" ट्रिब्यून के ट्रस्टियों को सदैव यह रोग रहा कि वे अन्यप्रान्तीय सम्पादक रखते रहे। इस पत्र के सम्पादक की कुरसी पर हमेशा से मदरासी और बङ्गाली ही विराजमान देखे गये हैं। पर जितना दीर्घ समय बाबू कालिनाथ राय ने इस कुरसी पर बिताया है उतना आज तक किसी भी सम्पादक महानुभाव ने नहीं बिताया। ट्रिब्यून के साथ उनका सम्बन्ध तीस वर्ष के लगभग रहा। हम आगे बताएँगे कि इनके पारस्परिक सम्बन्ध को दीर्घ करने में परिस्थितियों ने किस प्रकार सहायता की। पर भारत के समाचारपत्रों के इतिहास में यह निस्सन्देह एक असाधारण घटना है कि किसी सम्पादक का भृत्य-रूप में अपने स्वामियों के साथ इतना लम्बा सम्बन्ध प्रायः शान्ति-पूर्वक चलता गया हो।

बाबू कालिनाथ के ६ दिसम्बर सन् १९४५ को कलकत्ता में देहान्त से पत्रकार-जगत् में एक ऐसा अभाव हो गया है कि जिसकी पूर्ति प्रायः असम्भव है। पुराने अनुभवी पत्रकारों में सम्भवतः अब एक वही जीवित थे। उनकी गणना अँगरेजी पत्र-सम्पादकों की उस श्रेणी में थी जिसमें कभी बाबू सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी, श्री रङ्गा अय्यर, रामानन्द चैटर्जी और श्री सी० वाई० चिन्तामणि जैसे सज्जन थे। कालि बाबू ने अपना पत्रकार-जीवन "बङ्गाली" पत्र में बाबू सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी के अधीन आरम्भ किया था। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि जहाँ तक लेखक होने का सम्बन्ध है, वे बहुत उच्च-कोटि के लेखक थे। उनकी सारी उम्र अग्र-लेख लिखने में व्यतीत हुई थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्तिम दिन तक वे यही कार्य करते रहे। किसी दैनिक पत्र में अग्र-लेख—उसके विशाल ढाँचे का केवल एक अङ्ग है। समाचारों के संग्रह और प्रदर्शन आदि का भाग इसके अतिरिक्त है। कालि बाबू समाचारों के सम्बन्ध में जैसी भी सूझ अथवा कार्य-कुशलता रखते थे, इतनी बात सब प्रकार के सन्देहों से ऊपर है कि सम्पादकीय भाग को निभाने में वे कमाल करते थे। अग्र-लेख और सम्पादकीय टिप्पणियाँ लिखने में बहुत कम पत्रकार उनके दर्जे को प्राप्त करने का दावा कर सकते हैं। थोड़े से-थोड़े समय में अत्यन्त परिपक्व और गठे हुए विचार जनता के सम्मुख प्रस्तुत करने की वे असाधारण योग्यता रखते थे और उनके विचार भी प्रायः ऐसे थे जिन में पाठकों को निश्चित नेतृत्व प्राप्त होता था।

स्वर्गीय बाबू कालिनाथ राय

कालि बाबू का स्थान—कलकत्ता के लगभग एक सौ मील की दूरी पर—खुलना नामक नगर था। उन्होंने अपनी सारी उम्र खुलना से बाहर ही व्यतीत की। मृत्यु समय उनकी उम्र ६८ वर्ष की थी। यह उम्र अपने तौर पर अधिक नहीं। पर दमे के रोग और मस्तिष्क के अत्यधिक कार्य ने उन्हें समय से पूर्व दुर्बल और वृद्ध बना दिया था। कालि बाबू अधिक पत्रों में नहीं रहे। उन्होंने "बङ्गाली" पत्र में ही कार्य आरम्भ किया था। यह सन्देह की बात है कि वे उस पत्र के ओजस्वी सम्पादक सर सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी का कहाँ तक अनुसरण कर पाए। इन दोनों की लेखन-शैली में जहाँ तक भाषा का सम्बन्ध है, भारी भेद था। सुरेन्द्र बाबू छोटे-छोटे वाक्य लिखते थे और यह उनकी भाषा की एक विशेषता थी। कालि बाबू बहुत बड़े-बड़े वाक्य लिखने के अभ्यासी थे। उनके कई वाक्य तो १५ और १६ पंक्तियों में समाप्त होते थे। हाँ, एक बात में उन्हें कई अन्य पत्रकारों पर विशेषता प्राप्त थी और वह यह कि जहाँ उनकी स्मरण शक्ति अच्छी थी, वहाँ कई महान् लेखकों के सुन्दर वाक्य उन्हें कण्ठस्थ थे जिन्हें वे किसी भी समय अपने प्रयोग में ला सकते थे। बर्क जैसे राजनीतिक फिलासफरों के लेखों का उन्होंने बड़ा विस्तृत अध्ययन किया था और केवल अध्ययन ही नहीं, उन्होंने उनके लेखों को अपने भीतर एक प्रकार से पचा लिया था। कालि बाबू के लेख सदैव अत्यन्त युक्ति-युक्त होते थे। स्वभाव से वे अध्ययनशील थे और अँगरेजी की पुस्तकों के साथ वे बँगला की पुस्तकें भी बराबर पढ़ा करते थे। यह सत्य है कि तीस वर्ष से भी अधिक पञ्जाब में रहकर वे एक प्रकार से इस प्रान्त के स्थायी निवासी हो गए थे। पर उन्होंने अपना बङ्गाली होना कभी एक क्षण के लिए भी विस्मृत नहीं किया था। पञ्जाब की जनता से उनका मेल-मिलाप बिल्कुल नहीं था और सार्वजनिक सभाओं में वे कभी नहीं जाते थे। उनका सामाजिक जीवन जितना भी था, केवल अपने प्रान्तीय बन्धुओं तक सीमित था। उन्होंने पञ्जाब में किसी से घनिष्ठ मित्रता उत्पन्न नहीं की और न ऐसी मित्रता स्थापित करने की कभी चेष्टा ही की। वे आरम्भ से अन्त तक एक पक्के बङ्गाली थे, जिन्हें वस्तुतः स्थितियाँ ही किसी प्रकार पञ्जाब में ले आई थीं।

कालि बाबू बहुत गम्भीर थे और उन्होंने पञ्जाब में अपना निभाव बड़ी चतुराई और दक्षता से किया। यही कारण है कि वे इस प्रान्त में इतने दीर्घ समय तक, अपना मुख उज्ज्वल रखकर निर्वाह कर सके। वे दलबन्दी से ऊपर थे, पर उनमें यह दूरदर्शिता पर्याप्त से अधिक मात्रा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में विद्यमान थी कि किसका साथ देने में उन्हें लाभ अधिक और हानि की सम्भावना कम-से-कम है। 'ट्रिब्यून' के ट्रस्टियों के प्रेम-पात्र बने रहने में भी यह दूरदर्शिता उनके बहुत काम आई। हृदय के वे अत्यन्त कोमल थे, पर बहुत ऊँचे स्वर में बात-चीत करने की उन्हें प्रायः आदत थी। वे साधारण बात-चीत भी इतने जोर से बोलकर करते थे कि कई बार बाहर से सुननेवाले को यही सन्देह हो आता था कि वे किसी से विवाद कर रहे हैं अथवा लड़ रहे हैं। कानों से उन्हें कुछ ऊँचा सुनाई देता था और उनकी आवाज बहुत भारी और वजनदार थी। वे बोलते भी बहुत शीघ्र-शीघ्र थे।

उनका लेखन स्पष्ट नहीं था और उनके लिखे को केवल अभ्यास ही से पढ़ा जा सकता था। यही कारण है कि कितने ही वर्षों से वे अपने लेख हाथ से लिखने के स्थान में सीधा टाइप ही किया करते थे। टाइप पर उनके हाथ काफी सिद्ध थे अर्थात् उन्हें हाथ से लिखने की कोई आवश्यकता नहीं रही थी। वे टाइप ही पर अपना सारा कार्य भले प्रकार भुगता लेते थे। उनमें यह गुण था कि वे अपने विचारों को किसी समय पिचकाकर एक स्थान में एकत्र कर सकते थे। उनके सम्पादकीय कमरे के बाहर चल रहा कोई भी तूफान उनकी विचार-धारा को प्रभावित अथवा विचलित करने में असमर्थ था। चित्त की यह एकाग्रता उनमें मानो चरम सीमा पर पहुँची हुई थी।

कालि बाबू आवश्यकता से अधिक सावधान पत्रकार थे। उन्होंने अपने दीर्घ पत्रकार-जीवन में कभी कोई खतरा नहीं उठाया। उनके विचार धीमे थे, पर वे बात युक्ति-युक्त और टिकाऊ करते थे। उनके लेखों में बल होता था, पर वैसी ज्वाला नहीं, जैसी ज्वाला कि गर्म-दली लेखकों के लेखों में पाई जाती है। यही कारण है कि उनके सम्पादकत्व में 'ट्रिब्यून' कभी किसी आपत्ति में ग्रस्त नहीं हुआ, सिवाय एक समय के, कि जब सर माइकल ओ'डवायर के शासन में पञ्जाब पर मार्शल-ला की आम आँधी चली थी। यह सन् १९१९ की बात है कि जब सर मनोहरलाल, ला० हरकिशन लाल और डाक्टर गोकलचन्द नारङ्ग जैसे नरम विचार के व्यक्ति भी घसीट लिए गए थे। कालि बाबू को तब दो वर्ष कैद का दण्ड हुआ था, जो घटकर पीछे तीन ही मास रह गया था। कहा जाता है कि उन दिनों इनका प्रान्तीय सरकार के साथ कुछ लम्बा पत्र-व्यवहार हुआ था। जो भी हो; कालि बाबू जेल जाने में विश्वास रखनेवाले पत्रकारों में नहीं थे। इसलिए जब जेल से रिहाई के अनन्तर उनसे पञ्जाब प्रान्त छोड़ बङ्गाल चले जाने को कहा गया तो वे झट मान गए और कुछ समय बाद फिर अपने पुराने कार्य पर आ गए।

पञ्जाब में कालि बाबू पहले-पहल अँगरेजी में छपनेवाले दैनिक पत्र 'पञ्जाबी' के सम्पादक होकर आए थे। जब यह पत्र बन्द हो गया तो वे 'ट्रिब्यून' में चले आए और इसके साथ उनका सम्बन्ध अन्तिम श्वास तक रहा। इस पत्र के ट्रस्टियों के साथ उनकी अच्छी बनी रही। यह ट्रस्ट भारत के सब समाचारपत्रों में धनवान् और ठोस है। कालि बाबू को बहुत भारी वेतन मिलता रहा और ट्रस्टी उन्हें सब प्रकार की सुविधाएँ देकर अपने को धन्य-धन्य अनुभव करते रहे। दमे के रोग के कारण कालि बाबू को पञ्जाब का जलवायु बहुत अनुकूल था। उनके पञ्जाब को अपना घर बना लेने का यह भी एक कारण था। सुनते हैं, १५ अप्रैल सन् १९४३ को जब कालि बाबू बहुत दुर्बलता के कारण एक बार 'ट्रिब्यून' की सेवा से अलग हो गए तो उन्हें ११ सौ मासिक वेतन मिलता था। भारत में बहुत कम पत्रकार इतना वेतन लेते होंगे। 'ट्रिब्यून' के ट्रस्टियों पर कालि बाबू का कुछ ऐसा प्रभाव था कि अक्टूबर सन् १९४४ में उन्हें बङ्गाल से पुनः बुला लिया गया। इस बार वे अपनी मुँहमाँगी शर्तों पर आए। कहते हैं, उन्हें ट्रस्टियों ने दूना वेतन देना स्वीकार किया और कार्य केवल इतना ही सौंपा गया कि वे सप्ताह में चार बार अग्र-लेख लिख दिया करें। हम यह बताना भूल गए कि ट्रिब्यून के ट्रस्टियों ने सन् १९४३ में कालि बाबू के पत्र से अलग होने पर उन्हें चार सौ रुपये मासिक पेंशन देना भी स्वीकार किया था। यह पेंशन उस भारी रकम के अतिरिक्त थी जो उन्हें पत्र के प्राविडेंट फण्ड से प्राप्त हुई थी। पुनः लाहौर आने पर लाहौर के उप-नगर माडल-टाउन में कोठी, मोटर और नौकर-चाकर आदि सब ट्रिब्यून ही के थे। 'ट्रिब्यून' का उत्तरी भारत में एकाधिकार है। उसके मुकाबले पर अँगरेजी का अन्य कोई पत्र नहीं, इसलिए स्वभावतः जनता और सरकार, दोनों ही पर इसका भारी प्रभाव है। कालि बाबू का ऐसे पत्र के साथ सम्बन्धित हो जाना उनका महान् सौभाग्य था। इस प्रकार वे आप भी बढ़े और उन्होंने पत्र को भी बढ़ाया। यह कहना सत्य नहीं कि केवल कालि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाबू ने ही 'ट्रिब्यून' को बनाया, वास्तव में इन दोनों ने एक दूसरे को बनाया और दोनों ने ही अपने-अपने स्थान पर लाभ उठाया। धन की दृष्टि से कालि बाबू सन्तुष्ट रहे और सम्पादक की दृष्टि से 'ट्रिब्यून' सन्तुष्ट रहा कि वह सुरक्षित हाथों में है। कालि बाबू का जीवन अनुकरणीय उदाहरण है—उनके लिए, जो पत्रकार-जीवन को अधिक-से-अधिक उपयोगी बनाने के अभिलाषी हैं और जो इसे भारत में उन्नत दशा में देखना चाहते हैं। आर्थिक झञ्झटों से आजाद पत्रकार बहुत कुछ कर सकता है। कालि बाबू का जीवन यही कुछ बताता है।

रात में और प्रात में

श्री तेजनारायण काक, एम० ए०

१

कल वसन्त की शुभ्र-निशा में
वन-निकुञ्ज में सुख से
मैंने मदिरा-पात्र लगाया
प्रेयसि, तेरे मुख से।
मिला नयन मेरे नयनों से
तुमने कर में लेकर
चुम्बन-भरे बिम्ब-अधरों से
पान किया था हँसकर,
कल वसन्त की शुभ्र-निशा में
मधुर-पुलक से भरकर।
अवगुण्ठन कर दूर तुम्हारा
मुख से बेसुध होकर
कमल-सुकोमल तेरे कर को
मैंने रक्खा उर पर;
अर्ध-निमीलित नयन तुम्हारे
बोल मौन थे मुख के।
मैंने तेरी केश-राशि का
जूड़ा मुक्त किया था,
तेरे झुके हुए विधु मुख को
उर में छिपा लिया था;
हँसती रहीं सुहाग-भरी तुम
अपने मुकुलित-मुख से,
कल वसन्त की शुभ्र-निशा में
मधुर-मिलन के सुख से।

२

आज उषा की शान्त वायु में
निर्जन नदी-किनारे
किए स्नान, उज्ज्वल-वसनों में,
आती हो मृदु गति धारे;
वाम हाथ में तेरे सुरभित-
सुमन-मालिका सजती,
दूर-देव-मन्दिर में वंशी
उषा-राग में बजती,
इसी उषा की शान्त वायु में
निर्जन गंग-किनारे।
देवि, माँग में तेरी सज्जित
अरुणिम-सेंदुर-रेखा,
पड़ी हुई है वाम-बाहु में
शंख-वलय-शशि-लेखा
मङ्गलमयी मूर्त्ति-सी तुमको
आज प्रात में देखा।
रात प्रेयसी के सुरूप को
तुम आई थीं धरकर,
प्रात समय अब देवि-वेश में
सम्मुख आईं क्योंकर?
सम्भ्रम से मैं दूर खड़ा हूँ
अपना मोह बिसारे,
आज उषा की शान्त-वायु में
निर्जन नदी-किनारे। *

---

* रवीन्द्र की एक कविता का भावानुवाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकाङ्की नाटक

पलायन

श्रीमती विद्या गुप्त

पात्र-परिचय--१—राजा लक्ष्मण सेन—बङ्गाल का सेनवंशी अन्तिम राजा। २-३—धाविक, जयदेव—वृद्ध राजकवि। ४—सुलेखा—राजनर्तकी। ५—महा-प्रतिहार। ६—वादकवृन्द। ७—दूत। ८—सेविका। ९—गणक। १०—तान्त्रिक।

स्थान--बङ्गाल की राजधानी लक्ष्मणावती का राजोद्यान।

समय—नगर के मन्दिरों के कँगूरों तथा वृक्षों के उच्च शिखरों पर लोटती हुई स्वर्ण-रश्मियों को बटोरने में तन्मय सन्ध्या।

[राजोद्यान के एक लता-वितान में सङ्गमरमर की स्वच्छ सुन्दर छोटी-छोटी वेदियाँ बनी हैं। लता-वितान से कुछ ही दूरी पर एक सरोवर है जिसमें कमल खिले हुए हैं। एक वेदी पर राजा लक्ष्मणसेन शुभ्र परिधान में आसीन हैं। उनके हिम-श्वेत श्मश्रु से आच्छादित मुख-मण्डल पर वृद्धावस्था की शिथिलता का परिचय मिलता है। उनकी दृष्टि नभ में फैले सन्ध्या के स्वर्णाञ्चल पर जमी है। राजा के समीप ही वेदी पर राजकवि धाविक आसीन हैं, वे भी श्वेत वस्त्र पहने हैं। गले में पीत उत्तरीय है, स्कन्ध देश पर लहराती हुई केश-राशि है और आँखों की श्यामता में स्निग्धता है। वे सरोवर की लहरों में प्रतिबिम्बित सन्ध्या के लहराते दुकूल को देख रहे हैं।]

राजा लक्ष्मणसेन—सखे धाविक, सन्ध्या की इस अरुणिमा को देखो। नित्य नवीन शृङ्गार करके यह अभिसार को निकलती है और प्रातः आँसू बरसाती वापस चली जाती है। इसकी लालसा अनन्त है, आशा अश्लथ। काल की काली छाया से इसके अरुण कपोल मलिन नहीं होते। फिर मनुष्य ही काल से पराजित क्यों है?

धाविक—(मन्द स्मित से) देव! सन्ध्या के इस अनुराग में नारी के अपरिवर्तनशील हृदय की छाया है। नारी का प्रणय अमर है। उसकी प्रतीक्षा अनन्त और उसकी आकांक्षा सदैव यौवन-संकुल।

लक्ष्मण—सत्य है कवि! यह निष्ठा नारी-हृदय की ही विभूति है। पुरुष तो चञ्चल है—अपने विचारों में अस्थिर, अपनी ही प्रतिज्ञाओं में पराजित।

धाविक—किन्तु महाराज तो इस नियम के अपवाद हैं। सात वर्ष के इस सुदीर्घ शासन-काल में महाराज को किसी ने अपनी प्रतिज्ञा में दुर्बल नहीं देखा।

लक्ष्मण—(सन्तोष से वायु में उद्वेलित श्वेत दाढ़ी पर हाथ फेरते हैं) ठीक है कवि। जिस दिन मेरे किशोर हाथों में पूज्य पितृदेव ने एक अस्थिर, शत्रुओं से घिरे राज्य का भार छोड़ा था, उसी दिन मैंने प्रतिज्ञा की थी-अपने राज्य की सीमा को निष्कण्टक कर देने की। ऐसी ही एक सन्ध्या में भुवन-विजय की प्रतिज्ञा की थी। [अपनी शीर्ण भुजाओं की ओर सस्पृह देखते हुए] लेकिन इन भुजाओं में कितना बल था--कितनी शक्ति थी शत्रुओं के सिर गिरा देने की।

धाविक—महाराज! तभी तो इन मांसल भुजाओं के शौर्य पर कुवलयवती भूल गई थी अपने सौन्दर्य की गरिमा को—गन्धर्वलोक के ऐश्वर्य को—और सबसे बढ़कर नारी-जन्य सङ्कोच को। सन्ध्या के धुँधले प्रकाश में पवन की मन्द लहरों में, मुझे उसका विरहाकुल आह्वान अब भी स्पष्ट सुनाई पड़ता है महाराज!

लक्ष्मण—(आत्मश्लाघा से हँसकर) तुम्हारी वाणी विदग्धता अद्भुत है कवि! कल्पना की उड़ान में तुमने तो महाकवि कालिदास को भी पराजित कर दिया।

धाविक—महाराज! यदि कविकुलश्रेष्ठ कालिदास के सम्मुख सम्राट् विक्रमादित्य का व्यक्तित्व न होता तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या कभी उनकी प्रतिभा कल्पना की उन ऊँची उड़ानों में समर्थ होती? उसी प्रकार मेरी कल्पना का विकास भी महाराज के व्यक्तित्व में ही निहित है। "पवनदूत" तो एकमात्र कुवलयवती के ही प्रणयाकुल हृदय की करुण पुकार है—महाराज के कीर्ति-सौरभ का उसमें पूर्ण प्रसार कहाँ!

लक्ष्मण—(प्रसन्नता से) किन्तु, कुशल कवि! इन श्वेत केशों और शिथिल भुजाओं पर अब तो तुम्हारे काव्यलोक की कोई अप्सरा विमुग्ध नहीं होती।

धाविक—(चपलता से) देव! वाचालता क्षमा करें। अप्सराओं को भी लज्जित करनेवाली सुलेखा का सौन्दर्य महाराज के दर्शन से ही विकसित होता है।

लक्ष्मण अबोध है। (सहसा बाएँ अङ्गों के फड़कने से कुछ अस्थिर होकर) कवि, यह अपशकुन कैसा! सहसा मेरी बाईं आँख और भुजा क्यों फड़क उठीं? (विह्वल से उठ खड़े होते हैं।) कोई विपत्ति आनेवाली है क्या! (लताकुञ्ज में अधीर भाव से इधर-उधर टहलने लगते हैं।)

धाविक—(समीप आकर) परम प्रतापी, परम यशस्वी महाराज के हृदय में यह आशङ्का कैसी? अंगों में स्फुरण तो रक्त-गति के विकार से हो सकता है।

लक्ष्मण—(चिन्तित भाव से) तुम मेरे आशङ्कित हृदय का समाधान नहीं कर सके। धाविक! इस अपशकुन में मुझे विपत्ति की आशङ्का हो रही है। (शिथिल भाव से बैठ जाते हैं।)

धाविक—महाराज! आपके यशः-सौरभ से तो दिग्-दिगन्त व्याप्त हो रहे हैं। सीमान्त राज्यों को जीतकर कब से आपने अपने राज्य की सीमाएँ सुरक्षित कर दी हैं। जिसके पराक्रम का कीर्त्ति-स्तम्भ आज भी दक्षिण समुद्र को मुँह चिढ़ा रहा हो, जिसकी विरुदावली समुद्र के निरन्तर घोष में सुनाई पड़े और जिसके धर्म-प्रचारकों को हिमालय की हिम-मण्डित उत्तुङ्ग चोटियाँ अभिनन्दन करती हों, उस महान् धर्मध्वज राजाधिराज को चिन्ता किस बात की देव! (धाविक पुनः आसन ग्रहण करते हैं।)

लक्ष्मण—(आश्वस्त-सा) फिर भी कविराज! कलाकार को पूर्ण विश्राम देना राजनीतिक भूल हो सकती है। धर्म-राज्य की स्थापना के उत्साह में विधर्मी शत्रु को उत्तरापथ में प्रबल होते देखकर भी मैंने चिन्ता न की, किन्तु आज सहसा ही विस्तृत राजनीति सचेष्ट हो रही है। जो शत्रु हिमालय से सजग प्रहरी की आँखों में धूल झोंककर पश्चिमोत्तर प्रान्तों में राज्य-स्थापन कर सका, जिस शत्रु ने बङ्गाल के अगम नद पार कर पालवंश का ध्वंस किया, उसकी शक्ति उपेक्षणीय नहीं।

[चिन्ता से सरोवर की ओर देखते हैं]

धाविक—(श्वेत केशों पर हाथ फेरते हुए) महाराज का कथन युक्तिसङ्गत है।

लक्ष्मण—कुछ विदेशी अश्वों का व्यापार करने आए हैं—इधर बराबर ही विदेशी व्यापारी आ रहे हैं। पर मैंने उनकी गति-विधि तक पर नियन्त्रण रखने का आदेश न दिया—प्रत्येक व्यक्ति को स्वतन्त्रतापूर्वक जीवन-यापन की सुविधा दी। क्या यह राजनीतिक भूल नहीं है, कवि?

धाविक—(आवेगपूर्ण स्वर में) महाराज! आज आपका हृदय न जाने क्यों आतङ्कित हो उठा है। आपने इस कलिकाल में राम-राज्य की स्थापना की है। आपके राज्य में प्रत्येक व्यक्ति स्वतन्त्रतापूर्वक जीवन-यापन में समर्थ है। क्या यह गौरव की बात नहीं? विदेशी भी यहाँ अपने को प्रवासी नहीं समझते। सिंह और गौ के एक घाट पर पानी पीने की लोकोक्ति आपके ही राज्य में सिद्ध हो सकी है। अशोक के धर्मराज्य में भी कदाचित् प्रजा इतनी सन्तुष्ट न हो सकी होगी, राजन्!

लक्ष्मण—(प्रसन्न होकर) कवि! मेरे राज्य में प्रजा में कोई भेद-भाव न हो, यही मेरा चिरसाध्य लक्ष्य रहा है? विदेशी यहाँ क्षण भर को भी अपने को प्रवासी न समझें। यही मेरी अहर्निश चिन्ता रही है। धाविक, मेरा विचार है कि अल्पकाल के लिए आनेवाले विदेशी व्यापारियों की सुविधा के लिए एक अलग पान्थशाला बनवा दी जाए, जहाँ उन्हें प्रत्येक सुविधा हो।

धाविक—धन्य, महाराज, धन्य! आपके ही राज्य में ऐसी प्रजा-वत्सलता सम्भव है। शीघ्र ही इसकी व्यवस्था हो जानी चाहिए, देव!

लक्ष्मण—(चिन्ता की रेखा मुँह से दूर हो जाती है। आह्लाद और दृढ़ता से) कल ही अमात्य को अपने मन्तव्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से सूचित कर दूँगा कि वास्तु-विभाग के अध्यक्ष को इस कार्य के शीघ्र पूर्ण करने की आज्ञा भेज दी जाए।

धाविक—धन्य देव!

(महाप्रतिहार का प्रवेश—दाहिने हाथ में रजत-दण्ड स्थित हैं, मुख की प्रौढ़ता पर विनय और कर्तव्य-निष्ठा के चिह्न अङ्कित हैं, प्रदीप्त नेत्रों में सतर्कता है।)

महाप्रतिहार—(दाहिने हाथ के रजत-दण्ड को उठाकर अभिवादन करते हैं।) परम प्रतापी, परम यशस्वी, प्रजावत्सल, धर्म-ध्वज महाराज लक्ष्मणसेन की जय हो। महाराज! कविकुल-भूषण श्री जयदेव नदिया के विहार का पर्यवेक्षण कर अभी लौटे हैं और महाराज के दर्शन की आकांक्षा प्रकट करते हैं।

लक्ष्मण - शीघ्र उपस्थित करो।

(महाप्रतिहार का साभिवादन प्रस्थान)

लक्ष्मण—जयदेव विहार-पर्यवेक्षण से लौटे हैं—यात्रा से क्लान्त वृद्ध कवि का सन्देश संक्षिप्त ही होगा। (आकाश में कलरव करती हुई नीड़ों को लौटती विहग-पंक्ति की ओर देखकर) तुम भी श्रान्त होगे, कवि। अब विश्राम करो।

(धाविक उठकर अभिवादन करते हैं और दूसरे द्वार से जाते हैं।) दूसरी ओर से जयदेव का यात्रा के राजकीय परिधान में प्रवेश।

जयदेव—परम यशस्वी, कला-मर्मज्ञ महाराज लक्ष्मण सेन की जय हो।

लक्ष्मण—स्वागत कवे! आसन ग्रहण कर श्रम निवारण करो। (जयदेव राजा के दाहिनी ओर वेदी पर बैठते हैं।) कहो, तुम्हारी विहार-यात्रा तो सकुशल रही।

जयदेव—(मन्द स्मित से) महाराज! आपके राज्य में अमगल है ही कहाँ?

लक्ष्मण—(सन्तुष्ट होकर) कवि, अपने विहार-निरीक्षण का वृत्तान्त सुनाकर मुझे आह्लादित करो। कहो, विहार के आचार्यगण के शिक्षण-कार्य में कोई असुविधा तो नहीं? छात्रों का अध्ययन तो निर्विघ्न चल रहा है न?

जयदेव—महाराज! आपके राज्यकाल में विहार में आशातीत उन्नति हुई है। मैं कुलपति आनन्ददेव से मिला। उन्होंने महाराज के सुशासन की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा करते हुए धर्म-राज्य में सदा सक्रिय रहने का आशीर्वाद दिया है। अन्य आचार्य भी निरन्तर नए-नए ग्रन्थों के प्रणयन तथा अध्यापन में दत्त-चित्त हैं। महाराज इस वर्ष अनेक मौलिक ग्रन्थों की रचना हुई है जो धर्म-सम्बन्धी रचनाओं से ले विज्ञान के गहन अध्ययन तक विस्तृत हैं। नए-नए अन्वेषण और ग्रन्थों का प्रणयन बड़े सुचारु रूप से हो रहा है।

लक्ष्मण—(सन्तोष और प्रसन्नता की तरङ्गों से मुख-मण्डल प्रदीप्त हो उठता है।) सुकवे! ललित कलाओं की ओर तुमने छात्रों की कैसी रुचि पाई?

जयदेव—महाराज! नदिया के विहार में छात्रसङ्घ का अध्ययन केवल धार्मिक साहित्य और दर्शन तक ही सीमित नहीं है। ललित कलाओं में भी वे बड़े ही प्रवीण हैं। मेरे विचार से तो महाराज नदिया का विहार शीघ्र ही नालन्दा की ख्याति को प्राप्त कर लेगा।

लक्ष्मण—(हर्ष-भरे स्वर में) कवि, यही आकांक्षा तो मेरे जीवन का चरम साध्य रही है। धर्म और कला में मेरे देश के प्रत्येक नागरिक की अभिरुचि हो—यही देखने को मेरे वृद्ध नेत्र उत्कण्ठित हैं। अपनी सभा के पञ्च-रत्नों की छाया मैं प्रत्येक प्रजा के हृदय में देखना चाहता हूँ।

(सहसा ही लता-वितान के सामने के एक वृक्ष से लिपटी लता गिर पड़ती है—लक्ष्मण सेन और जयदेव भूमि-लुण्ठित लता को देखकर चौंक उठते हैं।)

लक्ष्मण—(विह्वलता से) पुनः अपशकुन! जयदेव आज यह दूसरी बार अपशकुन हुआ है। क्या नियति मेरे शान्तिपूर्ण राज्य के विरुद्ध कोई षड्यन्त्र रच रही है?

(अत्यन्त अस्थिर भाव से उठकर टहलते हैं। जयदेव भी चिन्तित भाव से भूमि-शायित लता की ओर देखते हैं।)

जयदेव—महाराज! चिन्तित न हों। गणक द्वारा शकुन-विचार कराकर दोष-परिहार की व्यवस्था हो जाएगी।

लक्ष्मण—(स्थिर होकर) ठीक है, कवि! (ताली बजाते हैं—महाप्रतिहार का ससम्भ्रम प्रवेश।)

महाप्रतिहार—(अभिवादन कर) आज्ञा देव!

लक्ष्मण—महाप्रतिहार, शीघ्र ही गणक त्रिलोचन देव तथा सिद्ध तान्त्रिक तारकनाथ को उपस्थित होने का सन्देश भेजो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(महाप्रतिहार अभिवादन कर 'जो आज्ञा देव' कहकर प्रस्थान करते हैं।)

लक्ष्मण—कवि, तुम यात्रा से क्लान्त होगे। अब जाओ; विश्राम करो।

जयदेव—महाराज, आपको इस उद्विग्न अवस्था में छोड़कर! नहीं महाराज, ऐसी आज्ञा न दें।

लक्ष्मण—(स्निग्ध कण्ठ से) नहीं, कवि, तुम विश्राम करो। तुम्हारे मुख पर श्रान्ति के चिह्न स्पष्ट हैं। मैं भी कुछ क्षण अकेले बैठकर आत्म-समाधान करना चाहता हूँ।

जयदेव—(चिन्तित भाव से) यदि महाराज मेरी उपस्थिति से कोई विशेष बाधा न समझें तो मैं महाराज के निकट ही रहूँ। महाराज को इस उद्विग्न अवस्था में अकेले छोड़कर जाने का विचार मुझे पीड़ित करता है।

लक्ष्मण - नहीं जयदेव! तुम अत्यन्त श्रान्त हो। गणक और तान्त्रिक अब आते होंगे। तुम्हें मैं प्रातः ही स्मरण करूँगा।

जयदेव—जैसी इच्छा, देव!

(प्रणाम कर जाते हैं। लक्ष्मण सेन क्षितिज में अवशेष रक्ताभ रेखा को विलीन होते देखते हैं और उद्विग्नता से टहलते हैं।)

लक्ष्मण—प्रकाश पर अन्धकार की विजय! यह कैसा नियति-चक्र है? यह बढ़ती हुई तमिस्रा अभी अपने निविड़ तम-भरे कलुष से संसार को ढक लेगी, और..... इस अन्धकार में पाप साकार होंगे, पुण्य निस्तेज। विधि का यह पागल विधान अपशकुनों के सृजन के समान ही दुरूह है। यदि यह बदला जा सकता।

(महाप्रतिहार का प्रवेश)

महाप्रतिहार—देव, आर्य गणक और आर्य तान्त्रिक सेवा में उपस्थित हैं।

लक्ष्मण—शीघ्र सादर ले आओ।

(महाप्रतिहार का अभिवादन कर प्रस्थान। तान्त्रिक और गणक का प्रवेश। तान्त्रिक लाल रेशमी वस्त्र तथा रक्ताभ पुष्पों की माला धारण किए हैं—कानों में बड़े-बड़े स्फटिक-कुण्डल हैं। श्मश्रु-विहीन मुख की रेखाएँ कठोर हैं। नेत्र अरुण हैं और धूसरवर्ण घुँघराले केश कन्धों तक फैले हैं। गणक रेशमी पीत परिधान पहने हैं, मुख पर अपेक्षाकृत सौम्य भाव है, नेत्रों में तेज है, बाल अधिकांश श्वेत हैं—सीधे और चिकने कन्धों तक फैले हुए। हाथ में समय के प्रभाव से विवर्ण हुए रेशमी वस्त्र में लिपटी पोथी लिए हैं।)

लक्ष्मण—आर्य गणक और शक्ति के उपासक पूज्य तान्त्रिक प्रणाम ग्रहण करें।

दोनों—(दाहिना हाथ उठाकर आशीर्वाद की मुद्रा में) कल्याण हो।

लक्ष्मण—आसन ग्रहण करें आर्य।

(दोनों स्फटिक-वेदियों पर बैठते हैं। राजा लक्ष्मण भी आसन ग्रहण करते हैं।)

लक्ष्मण—आर्य गणक! आज अनेक वर्षों के शान्त, निश्चिन्त जीवन के बाद सहसा ही दो बार अपशकुन होने से चित्त चञ्चल और आशङ्कित हो उठा है। आप विचार कर देखें कि सन्ध्या की अवशिष्ट किरण डूबने से किञ्चित् पूर्व बाएँ अङ्गों में स्फुरण तथा सम्मुख ही वृक्ष से च्युत लता का परिणाम क्या है और उसका परिहार कैसे हो?

गणक—राजन्! आपके शासन-काल के इन सुदीर्घ वर्षों में कदाचित् ही कभी अपशकुन पर गणना-विचार किया हो। मुझे तो जैसे यह विद्या ही विस्मृत हो गई हो। (पोथी खोलते हुए जीर्ण पत्रों को देखते हैं) दीमक ने पुस्तक के आधे से अधिक पृष्ठ समाप्त कर दिए हैं।

(अँगुलियों पर कुछ गिनते हुए ध्यानपूर्वक)

महाराज—सन्ध्या के अवसान-काल में इन अपशकुनों का होना अहित की सूचना देता है। (सोचकर) किन्तु सन्ध्या की अवशिष्ट किरण के डूबने से किञ्चित पूर्व—नहीं। उद्विग्नता का विशेष कारण नहीं। महाकाल भैरव और महाशक्ति की कृपा से सब दोष परिहार हो जाएगा। आर्य तान्त्रिक माँ शक्ति की पूजा करें।

तान्त्रिक—राजन्! चिन्ता न करो। माँ शक्ति की कृपा से सब मङ्गल होगा! मैं अभी माँ का रक्त जवा चढ़ाकर आवाहन करूँगा। माँ इस दास पर अवश्य अनुग्रह करेंगी।

दोनों आसन त्याग खड़े होते हैं। लक्ष्मण सेन भी विनीत भाव से खड़े होकर प्रणाम करते हैं।

लक्ष्मण—आर्य! आपके आश्वासन से मेरी चिन्ता दूर हुई।

दोनों—कल्याण हो राजन्!

(दोनों का प्रस्थान। अन्धकार की पतली चादर समस्त वातावरण को धूमिल बना रही है। दूर सघन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वृक्षों में कोई पक्षी कर्कश स्वर में बोल उठता है। लक्ष्मण सेन पुनः अस्थिर हो उठते हैं—मौन भाव से कभी आकाश में उदित तृतीया के चाँद की क्षीण रेखा को देखते हैं कभी सरोवर में मुद्रित कमलों को।)

(महाप्रतिहार का प्रवेश)

महा०— अभिवादन कर) देव! दिनकर की पराजय की घोषणा करता हुआ अन्धकार बढ़ता चला आ रहा है। दिन भर के थके पक्षी नीड़ों में विश्राम खोज रहे हैं। महाराज! केलिगृह क्लान्ति-निवारण के लिए आपकी प्रतीक्षा कर रहा है। राजनर्तकी सुलेखा महाराज की प्रतीक्षा में हैं।

लक्ष्मण—महाराज! आज की सन्ध्या मुझे रहस्यमयी-सी लग रही है—केलिगृह के अवरुद्ध वातावरण में जाने की इच्छा नहीं। सुलेखा को यहीं उपस्थित होने का आदेश दो।

महा०—जो आज्ञा देव।

(प्रणत होकर प्रस्थान करते हैं।)

लक्ष्मण—अन्धकार का यह आकर्षण क्यों? प्रकाश के प्रति अरुचि! मुझे अपने चारों ओर रहस्य का आवरण बुना-सा लग रहा है। (क्षितिज की ओर सचिन्त भाव से देखते हैं। सहसा ही लता-वितान असंख्य दीपों के प्रकाश से जगमगा उठता है। प्रतिहार का प्रवेश!)

महाप्रतिहार—देव! राजनर्तकी सुलेखा—महाराज की सेवा में उपस्थित होने की प्रार्थना करती है।

लक्ष्मण—प्रस्तुत करो।

(सुलेखा का वादकवृन्द सहित प्रवेश। चम्पक-कलिका-सी तन्वङ्गी सुलेखा की आकृति कलामयी है—विशाल नयनों में यौवन की मादकता लिए। उसके भीने हल्के नील परिधान में रजत-तारिका कढ़ी हैं। श्वेत पुष्पों के आभूषणों से वह सुसज्जित है। चरणों में नूपुरों की झङ्कार-भरी नृत्य की गति। प्रणाम के लिए हाथ उठाती है जैसे जाह्नवी की दो लहरें कल्लोल करती हुई आकर मिल जाएँ।

कुछ अन्य सेविकाएँ स्वर्ण-पात्रों में आसव आदि पेय पदार्थ लेकर प्रवेश करती हैं। एक सुन्दरी सेविका स्वर्ण-पात्र में आसव भर लक्ष्मण सेन की ओर बढ़ाती है। लक्ष्मण सेन पात्र लेते हुए सुलेखा से—)

लक्ष्मण—सुलेखा! आज तुम्हारी कला की परीक्षा है। मेरा मन अशान्त है। तुम अपने नूपुरों में कोई ऐसी मादक झङ्कार भरो जो मुझे इन ऐहिक व्याधियों से त्राण दे सके। तुम्हारे नृत्य की गति में मैं अपने को लीन कर देना चाहता हूँ।

सुलेखा—(मधुर विनीत कण्ठ से) देव! आपके उत्फुल्ल मुख-मण्डल को देख सकना ही मेरी कला का सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार है।

[सुलेखा वादकवृन्द को सङ्केत करती है—वाद्य-यन्त्र मधुर ध्वनि से बज उठते हैं, वह नृत्य प्रारम्भ करती है। नूपुरों की छमछम में एक विशेष लय- सङ्गीत भर जाता है। सुलेखा नृत्य की अङ्ग-भङ्गिमा में वर्तुलाकार लहरों का समूह बन जाती है। नृत्य समाप्त होने पर एक विशेष अङ्ग-भङ्गी से लक्ष्मण सेन को प्रणाम करती है।]

लक्ष्मण—सुलेखा! आज तुम्हारे नृत्य में न जाने क्यों मुझे वह अलौकिक रस न मिल सका जो इस लोक से परे कल्पना-लोक के उस सुदूर कोण में मुझे ले जाता जहाँ मैं निर्द्वन्द्व भाव से तुम्हारे नूपुरों की ध्वनि सुनता हुआ आत्मविभोर हो सकता। आज तुम्हारे नृत्य में वह स्वर्गिक सङ्गीत न गूँजा जो इन धमनियों में रक्त-प्रवाह की गति तीव्र कर देता—मेरे रोम-रोम में स्फुरण भर देता—जब मैं भूल सकता कि तुम नर्तकी हो और मैं बङ्गाल का राजा लक्ष्मण सेन।

सुलेखा—(सकपकाकर) महाराज, मैंने तो अपने भरसक चेष्टा की! न जाने क्यों आपके चिन्ताकुल मुख पर मैं प्रसन्नता की आभा न ला सकी। अवश्य ही मेरी कला सदोष है।

(सुलेखा का मुख म्लान हो जाता है। असफलता की ग्लानि में वह अपराधिनी-सी झुक जाती है)

लक्ष्मण—इसमें तुम्हारा अपराध नहीं, सुलेखे! तुम्हारी कला तो सदैव निर्दोष और पूर्ण है। आज न जाने क्यों मेरे मन में घोर क्रान्ति है—अन्तर क्षुब्ध है। सम्भवतः आसव की मादकता में यह चिन्ता डूब सके। सुलेखा, तुम अपने हाथ से मुझे आसव-पान कराओ और कोई ऐसी रोमाञ्चक तान छेड़ो जो इस उदासीनता की मलिन छाया को हटा सके।

सुलेखा—(आसव का पात्र भरकर लक्ष्मण सेन को सयत्न पान कराती हुई।) देव, मैंने गीत-गोविन्द के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को सङ्गीत की लय में विशेष यत्न से ढाला है। आज्ञा हो तो सुनाऊँ।

लक्ष्मण—(हर्ष से) सुलेखा! तुमने मेरे हृदय की बात कही। गीत-गोविन्द के पदों में अलौकिक माधुर्य है—अनूठा रस है—एक-एक शब्द में सम्मोहिनी है। सुनाओ—शीघ्र ही यह अमृत-सरोवर अपने कलकण्ठ से मेरे प्राणों में उँडेल दो।

(सुलेखा आसव का प्याला ढालती हुई मधुर कण्ठ से गाती है और लक्ष्मण सेन को आसव पान कराती है। वायु में उसकी स्वर-लहरी मानों थिरक उठती है।)

"विहरति हरिरिह सरस वसन्ते!
नृत्यति युवतिजनेन समं सखि
विरहजनस्य दुरन्ते।
....."

(लक्ष्मण सेन मुग्ध भाव से सुलेखा की ओर देखते हैं, मुख पर प्रसन्नता की आभा। घबराए हुए एक दूत का प्रवेश।)

दूत - महाराज! अपराध क्षमा हो! बड़ा भयङ्कर समाचार है। मुसलमान सेना नदिया तक आ पहुँची है। गाँवों को विध्वंस करते हुए नदिया के विहार पर भी आक्रमण कर दिया है। विहार के अधिपति को विहार के लौह-द्वार बन्द करवाने का आदेश देने तक का अवकाश न मिला। आचार्यों के मस्तक रक्त-सरिता में तैर रहे हैं। प्रतीत होता है, एक भी भिक्षु जीवित न रह सकेगा। मैंने अश्व की पीठ पर भागते हुए विहार का विशाल पुस्तकालय अग्नि की कराल लपटों में दूर से देखा है।

(सुलेखा के हाथ से आसव-पात्र छूट पड़ता है—वह मूर्छित-सी हो जाती है। वादक-गण वाद्य-यन्त्रों की आड़ में ही लुढ़क पड़ते हैं। लक्ष्मण सेन काँपते हुए खड़े हो जाते हैं।)

लक्ष्मण - विहार अग्नि की लपटों में—भिक्षु रक्त-सरिता में...प्रतिहार! शीघ्र सेनापति को सेना प्रस्तुत कर नदिया की ओर बढ़ने का आदेश दो। दूत, नगर के द्वार अवरुद्ध करने का सन्देश भेजो.....(सेविका से) शीघ्र मेरे शस्त्रास्त्र ला।

(दूत और सेविका का प्रस्थान)

लक्ष्मण - मेरी निरीह प्रजा के प्राण सङ्कट में हैं। आज इन वृद्ध शिथिल भुजाओं का पराक्रम धर्मद्वेषी शत्रु भी देख लें। (कम्पित पदों से घूमते हैं। भय से विवर्ण सेविका शस्त्रास्त्र लेकर आती है।)

(दूसरे दूत का सवेग प्रवेश)

दूत—महाराज सर्वनाश! अश्व के व्यापारियों के वेश में आए हुए शत्रु-दल ने नगर-द्वार के रक्षकों को मारकर सिंहद्वार पर अपना अधिकार कर लिया है—नगर में छिपे अनेक छद्मवेशी शत्रु हत्याकाण्ड मचा रहे हैं। सेनापति सन्ध्या से ही कहीं बाहर गए हुए हैं। सेना अस्त-व्यस्त है। दल के-दल शत्रु नगर में प्रवेश कर रहे हैं। महाराज, आप अपनी रक्षा का प्रबन्ध करें—गुप्त द्वार से निकल चलें। अश्व प्रस्तुत है।

लक्ष्मण—(क्रोध से) मैं अपने प्राण बचाने को भाग जाऊँ—निरीह प्रजा को शत्रु की तलवार की धार में कटते छोड़कर। धिक्कार है, दूत! मैं अपने अङ्ग-रक्षकों को लेकर शत्रु-दल को विध्वंस करते हुए प्राण दूँगा। (सेविका से)

ला - इन शस्त्रास्त्रों को मुझे दे। (सेविका काँपते हाथों से तलवार कमर में बाँधती है—राजा धनुष-बाण, भाला सम्हालते हैं।)

दूत—(काँपते हुए स्वर में दूर से आते हुए कोलाहल को सुनकर) महाराज! आक्रमणकारी प्रबल हो रहे हैं। (सुलेखा सचेत होकर सुनती है।) महाराज नगर-रक्षा असम्भव प्रतीत होती है। आप अपनी रक्षा करें।

(लक्ष्मण सेन उसे वक्र दृष्टि से देखते हैं।)

सुलेखा—(भय-विजड़ित किन्तु दृढ़ स्वर में लक्ष्मण-सेन से विनय करती है।) महाराज! आप अपनी रक्षा करें—'गीत-गोविन्द' की अनुपम निधि की रक्षा करें। नदिया के विहार के समस्त बुद्धि-वैभव के साथ कहीं यह निधि भी शत्रु के द्वारा विध्वंस न कर दी जाए। महाराज! आपके जीवन के साथ धर्म और कला का सम्बन्ध है, यह आप न भूलें।

लक्ष्मण—नर्तकी! मुझे अपने प्रजा के प्राणों का मूल्य देकर धर्म और कला की रक्षा भी अभीष्ट नहीं। महाप्रतिहार! मेरे अङ्ग-रक्षकों को शीघ्र युद्ध के लिए प्रस्तुत होने की आज्ञा दो। राज महल में जितने भी शस्त्र-सञ्चालन में पटु रक्षक हों उन्हें एकत्र करो—और अपने दण्डधरों के साथ तुम स्वयं राजमहल की रक्षा का भार लो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महा० --देव ! आपकी इस सेवा में इस शरीर का प्रत्येक रक्त-बिन्दु अर्पित है।

सुलेखा—(लक्ष्मणसेन के निकट आकर) वर्षों से तिरस्कृत शस्त्रों की धार कुण्ठित हो चुकी है। महाराज ! मुट्ठीभर सैनिकों का रक्त बहाने से भी प्रजा की रक्षा न हो सकेगी। देव, आपके प्राणों की रक्षा के साथ धर्म और देश के उद्धार की सम्भावना फिर भी बनी रहेगी। सामन्त राजाओं की सहायता से इस बर्बरता का बदला लिया भी जा सकता है।

दूत—महाराज ! राजनर्तकी के शब्दों में सत्य का तेज और विश्वास है। नगर-रक्षा की कोई आशा नहीं। (तीव्रतर होते कोलाहल को सुनते हुए) देव ! आप अपने प्राणों को धर्म की रक्षा के लिए, शत्रुओं को नष्ट करने के लिए, बचाने की चेष्टा करें। अभी समय है। गुप्त-द्वार से निकल चलें।

लक्ष्मण--(व्याकुल कण्ठ से) प्राण-रक्षा करूँ ? धर्म की रक्षा के लिए, गीत-गोविन्द की रक्षा के लिए ! यह कैसा मन्तव्य है, दूत ? मैं प्राण देकर भी अपनी प्रजा की रक्षा करना चाहता हूँ।

(प्रथम दूत का घबराए हुए प्रवेश)

दूत--देव, राजकीय शस्त्रागार अग्नि की लपटों में है। शत्रु-सेना बिना किसी प्रतिरोध के नगर में हत्या, लूटपाट और अग्निकाण्ड मचाए है। कुछ वृद्ध सैनिकों ने अवरोध की चेष्टा की थी पर वे विशृंखलित थे; रक्षा न हो सकी।

महाप्रतिहार—देव, आपके संकेत पर प्राण देने के लिए आपकी अंगरक्षक-सेना प्रस्तुत है !

सुलेखा--महाराज ! इन स्वामिभक्त सेवकों का व्यर्थ रक्त बहाने की अपेक्षा महाराज इनके प्राणों की रक्षा करें। महाराज, राजनीति में प्राण देना ही नहीं बचाना भी क्षात्रधर्म माना गया है।

लक्ष्मण--(आकाश से टूटते हुए नक्षत्र को देखते हुए पुनः काँपकर)। यह मेरी राजसत्ता का नक्षत्र टूट रहा है। मुट्ठी भर अंगरक्षक कुछ न कर सकेंगे। ठीक है दूत ! ठीक है नर्तकी !! (सेविका से) शीघ्र मेरे आवास से 'गीत-गोविन्द' ले आ। मैं प्राण-रक्षा करूँगा। मुट्ठीभर सैनिकों का रक्त बहाना व्यर्थ है।

दूत--देव ! कोलाहल बढ़ रहा है। शीघ्र गुप्तद्वार से निकल चलें। शत्रुओं की इस प्रवञ्चना से दण्ड देने के लिए, हिन्दू साम्राज्य की अखण्ड सत्ता की स्थापना के लिए, आप प्राण-रक्षा करें। विक्रमपुर अभी सुरक्षित है—वहीं चलकर शक्ति संग्रह करें।

(सेविका का पीले रेशमी वस्त्रों में लिपटे ग्रन्थ को लेकर प्रवेश। दूत उससे ग्रन्थ लेकर पुनः लक्ष्मण सेन से चलने का संकेत करता है।)

लक्ष्मण—कायर के समान भागकर प्राण बचाऊँ। इन्द्रियाँ शिथिल, अवसन्न हो रही हैं। पैर जड़ ! दूत, 'गीत-गोविन्द' लेकर तुम जाओ.....अपनी प्राण-रक्षा करो। महाप्रतिहार ! मेरे अंगरक्षक कहाँ हैं ?

महाप्रतिहार—लता-वितान के बाहर महाराज के आदेश की प्रतीक्षा में।

(नेपथ्य से राजा लक्ष्मण सेन की जय-ध्वनि)

दूत—महाराज ! आपकी प्राण-रक्षा के बिना भविष्य में हिन्दूधर्म-स्थापना की कोई आशा नहीं ! इस समय प्राणरक्षा ही कर्तव्य की पुकार है, महाराज ! महाप्रतिहार ! महाराज की अंगरक्षक-सेना राजपरिवार की सुरक्षा के लिए जीवित रहे। राजपरिवार को निरापद स्थान—विक्रमपुर में देखना ही उसका कर्तव्य है। महाराज चलें। अब विलम्ब न करें।

लक्ष्मण—अपशकुन सत्य हुए। इस उल्कापात ने मुझे और भी अवश, जड़ बना दिया है दूत !

दूत—महाराज ! विकल न हों। अभी समय है और भविष्य में आशा ! इधर आएँ, महाराज, अश्व आपकी प्रतीक्षा में है।

(आशङ्का से दुर्बल वृद्ध राजा के काँपते हाथ को पकड़कर बढ़ता है।)

लक्ष्मण—(घूमकर देखते हुए) युग-युग तक भविष्य में आनेवाली सन्तति को याद रहेगी यह पलायन की करुण कहानी ! निराश्रित प्रजा को शत्रु की तलवार के आश्रय में छोड़कर भाग जानेवाले असमर्थ राजा की निन्द्य कहानी।

(दूत के सहारे लता-वितान के बाहर जाते हैं। नर्तकी एकटक गमनशील राजा की ओर देखती जाती है)

[पटाक्षेप]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसानों का ऋण

प्रोफेसर प्रेमचन्द मलहोत्र

प्रत्येक व्यापार के लिए उधार लेना कोई असाधारण बात नहीं है। फिर किसानों के ऋण के प्रश्न पर विशेष ध्यान देने की क्या आवश्यकता है? किसी अर्थशास्त्र की पुस्तक में व्यापार में उधार लेकर लगाए हुए अर्थ के प्रश्न पर चर्चा नहीं की जाती, पर इसके विरुद्ध भारतवर्ष की अर्थ-शास्त्र की कोई ही ऐसी पुस्तक होगी जिसमें किसानों के ऋण के सम्बन्ध में कुछ-न-कुछ न मिलता हो।

कृषकों के ऋण की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं—

(१) जब इकट्ठा किया हुआ अथवा उधार लिया हुआ धन उत्पत्ति के कामों में लगाया जाता है तब उधार लिया हुआ रुपया मूल रकम से कहीं अधिक आय का कारण हो जाता है। इससे न केवल उधार पर ब्याज चुकाया जा सकता है बल्कि ऋण के रूप में लिया हुआ मूल धन भी लौटाया जा सकता है। पर किसानों का बहुत-सा ऋण उत्पादक कामों के लिए न होकर साधारण घरेलू खर्च के लिए लिया जाता है। इस कारण उधार न केवल चुकाना ही कठिन हो जाता है बल्कि ऋण लिया हुआ मूलधन दिन-प्रतिदिन बढ़ने लगता है। बैंकिंग इनक्वाइरी कमेटियों के अनुमान से यू० पी०, बङ्गाल और बम्बई के कुल किसानों के ऋण का ७० प्रतिशत और मद्रास में ६० प्रतिशत उत्पादक कामों के लिए नहीं लिया गया।

(२) किसानों का बहुत-सा ऋण बाप से बेटे, बेटे से उसके बेटे और ऐसे ही एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में चलता जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि यदि किसान एक बार ऋण में फँस जाता है तो वह सदा ही ऋणी रहता है। यह कहने में किसी प्रकार की अतिशयोक्ति नहीं समझी जानी चाहिए कि किसान ऋण में पैदा होता है, ऋण में ही जीता है और ऋणी ही मरता है।

(३) ऋणी बहुधा अपठित, गणित के ज्ञान से रहित तथा बहुत ही लापरवाही से खर्च करनेवाला पाया गया है। ऋण देनेवाला साहूकार बहुत ही गाँठ का पक्का, चालाक तथा सदा आँखों में धूल झोंकनेवाला सिद्ध हुआ है।

ग्रामीणों के ऋण का अनुमान

ब्रिटिश इंडिया की सेंट्रल बैंकिंग इन्क्वाइरी कमेटी ने ग्रामीणों के ऋण का अनुमान ९०० करोड़ रुपए लगाया था। इसके आधार पर मिस्टर डारलिंग ने कुल भारतवर्ष के ग्रामीणों के ऋण की रकम १००० करोड़ रुपए के लगभग मानी है। १९२९ से दुनिया में बाजार की मन्दी का समय आरम्भ हुआ। प्रत्येक वस्तु का मूल्य कम होने लगा। इससे ऋणियों के ऋण का बोझा और भी भारी हो गया। डा० पी० जे० थामस के दृष्टिकोण से १९३३ तक देहाती ऋण लगभग २२०० करोड़ रुपए तक पहुँच गया होगा। पिछले महायुद्ध में पृथ्वी से पैदा होनेवाली वस्तुओं का मूल्य बहुत बढ़ गया था, इससे ग्रामीणों के ऋण का भार बहुत हल्का हो गया था।

ऋण के कारण

साधारणतः ऋण लेने की आवश्यकता निम्नलिखित तीन अवसरों पर पड़ती है :—

(१) जब आय कम और अनिश्चित हो;

(२) जब खर्च आय से अधिक हो;

(३) जब व्यापार में लगाने के लिए धन की आवश्यकता हो। पर किसानों के सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि जैसे-जैसे रुपये के बाजार में उसका विश्वास बढ़ता जाता है, उसका ऋण भी बढ़ता जाता है। विशेषतया यह बात पञ्जाब में देखी गई थी कि जैसे-जैसे किसान की पृथ्वी का मूल्य बढ़ता गया, ऋण भी तैसे-तैसे ही बढ़ता गया। इस बात का विशेष विवरण मि० एम० एल० डारलिंग ने अपनी पुस्तक 'पञ्जाबी किसान की खुशहाली तथा ऋण' में दिया है कि पञ्जाब में खुशहाली के साथ-साथ ग्रामीणों का ऋण भी बढ़ता गया। इससे यह स्पष्ट है कि कृषक अपने भविष्य को नहीं देखता और अपना भला-बुरा आप ही नहीं सोच

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकता। इस दुर्गति से बचने के लिए यह अत्यावश्यक है कि किसान अपनी फिजूलखर्ची की आदत को छोड़ दे और अपनी आय तथा व्यय का हिसाब रखता हुआ धन बचाने का प्रयत्न करता रहे। जब तक किसान स्वयं ऋणमुक्त रहने का प्रयत्न नहीं करेगा तब तक सरकारी तथा अन्य हितचिन्तकों का प्रयत्न व्यर्थ सिद्ध होगा।

हाँ, ग्रामीणों के ऋण के साथ गाँव के साहूकारों का भी घनिष्ठ सम्बन्ध है और वे बहुत दूर तक ऋण के कारण हैं। बहुधा यह सुना गया है कि साहूकार ब्याज बहुत ही अनुचित तथा कड़ा लगाते हैं और उनका प्रयत्न सदा ही यह रहता है कि जो भी एक बार उनके जाल में फँस जाए वह बाहर न निकलने पाए। वह इन किसानों के रक्त की अन्तिम बूँद भी चूस लेना चाहता है। यह बात सही है कि साहूकार से ऋण लेने में किसानों को तनिक भी कठिनाई नहीं होती। साहूकार यह जानने का प्रयत्न भी नहीं करता कि ऋण किस प्रयोजन के लिए लिया जा रहा है। वह ऋण के माँगे जाने पर शीघ्र ही तिजोरी से निकालकर रुपए दे देता है। वह बहुधा ऋण-सम्बन्धी बातों को छिपाकर भी रखता है। बेचारे निर्धन किसान को सदा ऋण लेने की आवश्यकता भी रहती है। आज बैल मर गया तो कल वर्षा ठीक न होने के कारण फसल पूरी नहीं हुई और इस कारण उसका निर्वाह कठिन हो गया। कभी उसे विवाह पर खर्च करने के लिए, कभी कोई अन्य रस्म पूरी करने के लिए तथा कभी कचहरी में लड़ने-झगड़ने के लिए रुपए की आवश्यकता पड़ती है। बहुधा उसके अधिकार में जो भूमि होती है, वह इतनी कम और वह भी एक स्थान पर न होकर बिखरी हुई होती है कि बिना अथक परिश्रम किए तथा आय का अन्य साधन जुटाए किसान का ऋण-मुक्त रहना असम्भव हो जाता है। जो हो, गाँव में किसान की भी कुछ प्रतिष्ठा होती है और इस प्रतिष्ठा को जाने से बचाने के लिए किसान को बहुत भारी मूल्य देना पड़ता है। वह अपनी इज्जत इसी में समझता है कि वह अपनी आय से अधिक व्यय करे तथा उसके ऋणी होने का किसी को पता न चले। किसान को इस झूठे आदर-सम्मान से बचना चाहिए क्योंकि यही भावना अन्त में उसके दुःख और पतन का कारण बनती है।

ऋण के परिणाम

गाँव में ऋण ने किसान को मकड़ी के जाले की भाँति जकड़ रक्खा है। यह दशा न किसान के लिए, न खेती-बाड़ी के लिए और न देहात के आर्थिक जीवन के ही लिए अच्छी है। बल्कि किसानों को ऋण से मुक्त करना भारतवर्ष की खेती-बाड़ी तथा खेती करनेवालों की उन्नति के लिए असाधारण महत्ता रखता है। खेती-बाड़ी से जितनी अधिक उपज पैदा हो, यदि उसका बहुत-सा भाग किसान को न प्राप्त हो तो उसे खेती-बाड़ी को अच्छे ढङ्ग से करने की प्रेरणा कैसे मिल सकती है? ऋण के बदले में जमीन गिरवीं रखनी पड़ती है और यदि ऋण पुराना हो गया तो जमीन बेचनी भी पड़ती है। इस दशा में किसान एक मजदूर भर रह जाता है, जिसके पास अपनी भू-सम्पत्ति नहीं होती। यह पतन क्रमशः बढ़ता ही जाता है। इस प्रकार कोई देश, जिसके किसान ऋण से दबे हुए हैं, कभी उन्नति नहीं कर सकता।

जब जमीन साहूकारों अथवा बड़े-बड़े जमींदारों के हाथ में चली जाती है तब समाज में अशान्ति फैलने का भय बढ़ जाता है। धरती-रहित मजदूर सुगमता से आर्थिक अथवा राजनैतिक विद्रोह के लिए तैयार किये जा सकते हैं। बहुत से स्थानों में धरती-हीन किसानों की दशा गुलामों से किसी प्रकार भी अच्छी नहीं होती। कई एक प्रान्तों में यह रिवाज है कि ऋणी को ऋण के बदले में बिना कुछ मजदूरी लिए ऋणदाता की एक निश्चित समय तक सेवा करनी पड़ती है। यह भी गरीबी और लाचारी बढ़ाने का एक सीधा ढङ्ग है।

आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक दृष्टिकोण से किसानों का ऋणी होना एक विशेष रूप से हानिकारक है।

देहाती ऋण तथा गत महायुद्ध

१९४२ से चीजों का मूल्य विशेषतया चढ़ना आरम्भ हो गया था। १९४३ के पश्चात् खाद्य पदार्थों तथा कच्चे माल का मूल्य भी विशेष रूप से बढ़ा। इससे यह अनुमान लगाया जाने लगा कि ऋण का बोझ किसानों के कन्धों से हल्का हो गया है। गिरवीं रक्खी हुई धरती छुड़ा ली गई है। ऋण का अधिकांश या तो चुक गया है या अब चुकनेवाला है और अब किसान ऋण के सङ्कट से त्राण पा लेगा। पर देखा यह गया कि ये सारी बातें बड़े-बड़े जमींदारों के सम्बन्ध में तो सही निकलीं,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थात् जिनके पास अपनी आवश्यकता से अधिक उपज होती है, किन्तु छोटे-छोटे जमींदारों की दशा में अधिक परिवर्तन नहीं हुआ। अब भी विश्वस्त रूप से कहा नहीं जा सकता कि उनकी अवस्था युद्ध से कहाँ तक सुधर सकी है। वास्तविकता जो कुछ भी हो, पर इसमें सन्देह नहीं कि देहात में जो खुशहाली युद्ध के कारण दिखाई देती है उसका उचित प्रयोग यही है कि जब तक यह खुशहाली रहे, किसान किफायत से काम ले और इस प्रकार जो कुछ रुपया इकट्ठा हो उसे खेती-बाड़ी की उन्नति के लिए प्रयोग किया जाए, जिससे यह खुशहाली स्थायी रह सके।

ऋण-रोग का इलाज

अब अन्त में थोड़ा-सा ध्यान इस बात पर भी देना चाहिए कि किसान इस ऋण से मुक्त कैसे हो सकता है? इस सम्बन्ध में किसान को दो बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिए। एक तो यह कि ऋण से छुटकारा कैसे पाया जाए; दूसरी यह कि ऐसी तरकीब की जाए कि एक बार ऋणमुक्त हो जाने पर दुबारा फिर ऋण में न फँसना पड़े। सरकार ने किसान की रक्षा के लिए कई एक कानून बनाए हैं। साहूकारी और साहूकारों पर भी बहुत से बन्धन लगा दिए हैं। ऋण को कानून की सहायता से कम भी कर दिया है। ब्याज भी कम रखने का प्रयत्न किया गया है।

संक्षेप में किसानों को ऋणमुक्त करने के लिए सरकार की ओर से निम्न प्रयोग किए गए हैं —

(१) पुराना ऋण—पुराने ऋण में कमी कर के उसका निर्णय कर देना,

(२) उपजहीन आवश्यकताओं के लिए नए ऋण को रोकना,

(३) उपजाऊ व्यापार के लिए ऋण के प्राप्त करने में सुविधाएँ देने का प्रयत्न करना, अर्थात् पुराने ढङ्ग को बदलकर सन्तोषजनक नए ढङ्गों का प्रयोग करना।

(४) नए उधार तथा उधार की वृद्धि करनेवाली बातों की रोकथाम करना। इस सम्बन्ध में सरकार ने खेती करनेवालों की धरती के परिवर्तन पर कई बन्धन लगा दिए हैं। ऋणी किसान कई दशाओं में ऋण न चुकाने के दोष में कैद नहीं किया जा सकता। साहूकार की ऋण-सम्बन्धी हिसाब-किताब को पूरा रखने का आदेश दिया गया है जिससे वह खाते में गड़बड़ न कर सके।

(५) साहूकारों पर रुकावटें—प्रत्येक ग्रामीण साहूकार को अपने व्यापार के लिए स्वीकृति लेनी पड़ती है। इस स्वीकृति की यह माँग है कि जो भी ऋण-सम्बन्धी कानून हों उनको कार्यरूप में निभाना पड़ेगा।

(६) साहूकारों के अतिरिक्त अन्य साधनों से किसानों की आवश्यकताओं के लिए ऋण की माँग पूरी करने के लिए उचित सुविधाएँ देना।

किन्तु जब तक किसान अपने स्वभाव को न सुधारेगा, जब तक बचत के सिद्धान्तों को ले चलने का कार्यरूप नहीं देगा, जब तक खेती-बाड़ी को उन्नति की ओर प्रयत्न न करेगा, जब तक परस्पर सहयोग के सिद्धान्तों पर अमल न करेगा, जब तक ऋण से बाहर रहने की अत्यन्त कोशिश न करेगा, तब तक ग्रामीणों के ऋण के प्रश्न का कोई निश्चित समाधान नहीं हो सकता।

—

गीत

(श्री गङ्गाप्रसाद 'कौशल')

मैंने उसे नहीं अपनाया,
उसके मन की गहराई को मेरा मन कुछ माप न पाया!
देखी पाषाणों की कारा
शैल-अङ्क उन्नत बेचारा
असित शिलाओं के पीछे कब झर-झर झर निर्झर मुस्काया?
मेरा ही वह दृष्टि-दोष था!
अक्षय उसका सदा कोष था!!
प्रेम ने मन्द-मन्द मुस्काते, पवि-सा मेरा हृदय बनाया!
कारा की कठोरता निर्मम
कारा का पथ दुस्तर, दुर्गम
चकित थकित रह गए अरे! वे जब उर ने वह भाव बताया।
चंचल लोल लहरियाँ आईं
किसी वस्तु से वे टकराईं
तेज, वायु, मेदिनी, गगन, जल—पृथक्-पृथक् होता दिखलाया!
मैंने उसे नहीं अपनाया!

— —

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अश्रु-हास

धारावाहिक सामाजिक उपन्यास

श्रीमती निर्मला मित्र

"हूँ, पर मैं सोचता हूँ, अभी से इतनी उतावली दिखाने की जरूरत नहीं है। आखिर वह अपने हाथ का पुतला है। पैंतीस हजार रुपया कर्ज और उसके ब्याज का ब्योरा जब सामने धर दिया जाएगा, तब बच्चू की सारी अकड़ ठण्ढी पड़ जाएगी।"

"पर मैं नहीं चाहती कि उस अहमक से मेरा नाता जुड़े।"

"क्यों?"

"क्योंकि वह एक निपट गँवार है, ऊँचे घरानों के कायदे-कानूनों से बिलकुल अनभिज्ञ है। उसे दामाद बनाकर समाज में मैं क्या अपनी हँसी करवाऊँगी?"

रायबहादुर अब खीझ पड़े। बोले—"इसमें भला तुम्हारा क्या बिगड़ता है? जो पैसा पैदा करता है, वही जानता है कि कितने झूँठ-सच को बेहिचकिचाहट के हजम करना पड़ता है। जो पैसे मैं उस पर लगा चुका हूँ वे व्यर्थ तो जाने न दिये जाएँगे, यह भी तुम अच्छी तरह से समझ लो।"

श्रीमती भी अब बुरी तरह बिगड़ पड़ीं - "तो तुम्हारे पैसे के बदले मैं अपनी लड़की का जीवन एक जिद्दी के पल्ले बाँध मिट्टी कर दूँ?"

रायबहादुर सकपका गए; सच तो है दिलीप-सरीखा पति पाकर नलिनी का जीवन कब सुखी होगा! और पिता होकर लड़की का भविष्य बर्बाद कर देना क्या उनका कर्तव्य है।

अतः वे चिन्तित से होकर बोले—"तब तो मैं बड़े गड़बड़ में पड़ गया, रानी; क्या करूँ! तुम्हीं कुछ सूझ दो न!"

गृहिणी बोलीं—"करने-धरने को इसमें धरा ही क्या है। सिर्फ तुम उससे बेबी की शादी की बात तोड़ दो; अपने ऊँचे समाज में एक-से-एक लड़के पड़े हैं। जिसे बेबी पसन्द करेगी उससे उसका विवाह कर दिया जाएगा। अब रही अपने पैसे की बात, सो तुम उसे नोटिस दे दो, हर महीने अपने वेतन से कटवाता रहेगा।"

अन्धकार में भटकते हुए को जैसे अचानक प्रकाश मिल गया हो! रायबहादुर प्रसन्नता से खिल पड़े और पत्नी की बुद्धि की प्रशंसा करते हुए बोले—"बहुत खूब; बहुत खूब! तुम्हारी बुद्धि के क्या कहने?"

ठीक उसी समय नलिनी कालेज से लौटी और माता-पिता को एक जगह बैठे परामर्श करते देख बोली—"क्या हुआ, माँ, बाबूजी 'बहुत खूब बहुत खूब' क्यों कह रहे हैं?"

माँ बोली—"दिलीप से अपने घराने का सम्पर्क तोड़ देने की बात तय हो गई है।"

नलिनी हाथ की किताब टेबल पर रखते हुए बोली—"क्यों, उस मनहूस ने कुछ और किया है क्या?"

"अरे वह अपना बिगाड़ ही क्या सकता है! लेकिन उसकी गँवारों-जैसी प्रकृति अपने घराने में 'फिट' नहीं हो सकती, इसी लिए—"

"और इसी लिए मैं चाहती हूँ, बाबूजी, कि दिलीप को मरे ही हाथों में सौंप दिया जाए।"

रायबहादुर बेबी के इस कथन से स्तब्ध हो गए। माँ चिल्ला पड़ीं—"बेबी, तुम अभी अपना भविष्य नहीं समझ सकतीं। इस जिद्दी अकड़बाज के साथ तुम्हारी जिन्दगी कभी सुख से व्यतीत न हो सकेगी।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"किन्तु मा, जोखिम की पूरी सम्भावना रहते हुए भी खिलाड़ी जङ्गली शेर से खिलवाड़ करते हैं। उसमें उन्हें जो मजा आता है, वह मजा घरेलू कुत्तों को पुचकार लेने से नहीं हासिल हो सकता।"

पिता जी पहले ही स्तब्ध हो गए थे और अब तो वे जैसे पत्थर ही बन गए। माता जी भी अपने स्थूल शरीर पर लगातार पङ्खा झलने लगीं।

नलिनी बोली—"पता नहीं, कहाँ से इन संस्कारों का सृजन हुआ था! चैत, पूस, भादों, कातिक, अरे विवाह से इन मासों का सम्बन्ध ही क्या! और जितना भी विलम्ब होगा, उस प्रिंसिपल से उसका रिश्ता उतना ही जमता जाएगा। इसी लिए मैं यह भी जताए देती हूँ कि दिलीप-सा ही एक खिलौना मुझे खिलवाड़ के लिए चाहिए।" फिर सदर्प पद-चाप से श्वेत-प्रस्तर की रेलिंग दार सीढ़ियों से घूमती हुई वह ऊपर चढ़ आँखों से ओझल हो गई।

और इधर पति-पत्नी दोनों पाषाण-प्रतिमाओं-से मौन बैठे रह गए।

कई बार बैरा बेबी का जलपान आदि लेकर चढ़ा-उतरा। फिर बेबी भी 'टेनिस रैकेट' लेकर ग्राउंड में खेलने चली गई। किन्तु इस दम्पति की लज्जा मानो एक दूसरे के लिए ही कठिन बनकर अड़ी रही। दोनों आपस में एक दूसरे की तरफ देखते भी लजाने लगे।

आखिर समय को व्यर्थ बीतते देखकर ब्रजसिंह आगे बढ़ा। बाहर से खाँसकर उसने कहा—"गाड़ी निकालूँ साहब?"

उसके स्वर की सहायता से ही जैसे राय बहादुर का स्वर फूटा, पर उनका कण्ठ कँप-सा गया। बोले—"चलती हो कहीं?"

"नहीं।"

"किन्तु अब हम-तुम कर ही क्या सकते हैं, जब कि नलिनी ही उसे पसन्द कर बैठी है!"

"हाँ, तुम्हारी छाती तो ठण्ढी हुई; अब बँटवा दो लड्डू!"

रायबहादुर मुस्करा पड़े। बोले—"वह तो पीछे देखा जाएगा, फिलहाल पुरोहितजी को बुलवाकर तिथि तो ठीक कर लो।"

"परन्तु पुरोहित को लेकर एक ढोंग रचने की अब जरूरत भी क्या है! जब उसकी तकदीर में 'डाइवोर्स' का काला धब्बा बदा ही है तो सीधे रजिस्ट्री आफिस में दोनों को ले जाकर खड़ा कर दो और आपस में ही उन्हें निपटने दो।"

थोड़ी देर सोचकर रायबहादुर बोले—"सचमुच अब मैं भी शङ्कित हो रहा हूँ कि ऐसे विवाह का परिणाम कभी अच्छा नहीं हो सकेगा। मैं ठीक समझ रहा हूँ, बेबी कभी दिलीप को स्वामी की श्रद्धा नहीं दे सकेगी। और उधर दिलीप भी वैसा मर्यादाहीन पुरुष नहीं है। अतएव इनका विवाह होने से न होना ही अच्छा है।"

और भविष्य की प्रगाढ़ काली यवनिका के ऊपर उभरनेवाले दृश्यों को कल्पना के नेत्रों से देखने के लिए ही जैसे दोनों पति-पत्नी फिर से अपने-अपने में समाकर बैठ गए।

ब्रजसिंह आध घण्टा तक प्रतीक्षा में खड़ा रहकर लौट गया। उसकी समझ में न आया कि गेरिज से गाड़ी को निकालकर तैयार रक्खा जाए या नहीं। कारण, इन बड़े आदमियों के मिजाज का पारा भी मलेरिया के बुखार-सा मिनटों में चढ़ता-उतरता है। इस चढ़ाव-उतार का प्रभाव क्या पड़ेगा, इसकी उन्हें रत्ती भर भी परवाह नहीं रहती।

ग्यारहवाँ अध्याय

दिलीप का स्लिप लेकर रहमत आया तो, पर समस्या रुचिरा के शून्य दालान पर अटक रही। बात यह थी की रुचिरा के यहाँ भी कोई पुरुष अभिभावक नहीं था जिसके लिए बाहर का बरंडा कुर्सी टेबल आदि से सजा रहता।

रुचिरा भी एक अजीब फैशन की लड़की थी जो बाहर से अन्दर उठना-बैठना ज्यादा पसन्द करती थी। चित्रकारी या मिट्टी के माडल आदि बनाने में वह सदा संलग्न रहा करती थी। इसलिए मेली-मुलाकाती के नाम से उसके यहाँ प्रायः कोई नहीं आता था। केवल उसका विदेश का परिचित टिपनिस ही अकेला कभी कभी आया-जाया करता था। वह भी उसकी मा के आग्रह से। वह उसकी मा के पास ही रसोई के द्वार पर कुर्सी डालकर बैठ जाया करता था। कारण, उससे बात-चीत करनेवाली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनोजा ही अकेली थीं। मनोजा के दिन का ज्यादा हिस्सा रसोई में ही व्यतीत हुआ करता था क्योंकि वे क्रिस्तानी ढङ्ग के बैरा-बबर्चा आदि की छुआछूत से बचकर चलती थीं। अपने हाथ से रसोई पकाना और ततोधिक शुद्धता से परोसना उनके संस्कार-बद्ध मन के लिए स्वाभाविक था। बाहर के बरांडे में कभी निकलकर खड़ी होना भी वे स्त्री-धर्म की मर्यादा के प्रतिकूल समझती थीं। फलतः बाहर का बरामदा कुर्सी-मेज से सुशोभित न होकर खाली ही पड़ा रहा करता था।

रहमत पसोपेश में पड़ गया कि क्या करूँ, किसे बुलाऊँ।

इतने में द्वार पर पड़ा जापानी छींट का पर्दा हिला, और उसे तनिक सरकाकर मनोजा ने पूछा—"क्या है?"

रहमत ने अस्तव्यस्त भाव से सलाम करते हुए कहा—"हजूर से मिलना है।"

"क्यों?"

"उन्हें एक चिट्ठी देना है, माई जी।"

माई जी का चित्त कमल-सा खिल उठा। उन्होंने सोचा, निश्चय ही यह खत आनन्द राव टिपनिस का है। भला उतने ऊँचे मन का लड़का कहीं जरा-सी खटपट को अधिक महत्त्व दे सकता है! वे मन-ही-मन मनाने लगीं कि इन दोनों के दिलों की यह ऐंचातानी मिटे तो मैं विलम्ब न कर दोनों की शादी कर दूँ। और फिर सन्तोषपूर्वक तीर्थाटन को चली जाऊँ।

इसी भावना से मन ही-मन प्रसन्न होकर वे आग्रह के साथ कह पड़ीं—"साहब से कह देना कि अम्मा जी ने आज शाम को जरूर-जरूर बुलवाया है। मैं यहाँ उनके लिए खाना तैयार रक्खूँगी। याद से कह देना, समझे बेटा!"

"जी, पर इस खत का जवाब?"

"ओह खत—तो खत का जवाब तो वही आकर दे सकेगी।"

लेकिन मेरे साहब तो जवाब के लिए बाहर बरांडे में ही खड़े हैं।"

मनोजा देवी का हृदय धक् से हो गया—"तो खत टिपनिस साब का नहीं है?"

"नहीं अम्मा, इन पड़ोसवाले साब का है।"

मनोजा को जैसे आग ही लग गई हो। बुरी तरह झल्लाकर उन्होंने कहा—"क्या तेरे साहब ने यह सब दिल्लगी समझ रक्खा है?"

माई जी के वाक्य का मतलब न समझकर रहमत मुँह ताकता खड़ा रहा।

मनोजा बिगड़कर बोलीं—"उस कमीने से कह दे कि अब उल्टी गङ्गा बहेगी। मजिस्ट्रेट है तो वह अपने को क्या समझ बैठा है। मेरा दामाद मिस्टर टिपनिस अब सीधा अदालत करेगा। रोज-रोज मेरी लड़की को खत भेजकर लुभाना!"

मनोजा के इस स्पष्ट भाषण से रहमत पर मानों घड़ों पानी पड़ गया। वह नीचा सिर किए बरामदे के नीचे उतर गया।

मनोजा झमककर बोलीं—"अब कभी उस पाजी ने खत भेजने का चेष्टा की तो अदालत में जाना होगा। उस बदजात को लोफरी के लिए सीधा मेरा बँगला ही मिला। बदजात कमीना कहीं का—"

मनोजा गालियाँ देती रहीं; पर उन्हें सुनने का साहस रहमत को नहीं था। वह जल्दी जल्दी डग भरता हुआ अपने बँगले में जा पहुँचा। और अन्दर झाँककर बोल—"तोबा है हुजूर, कहाँ भेज दिया था आपने! यह सम्हालिए अपना खत! और टेबल पर उसने खत छोड़ दिया। कुछ न समझकर दिलीप ने पूछा—"क्या हुआ रहमत?"

"ऐ खुदा, उस बूढ़ी ने तो ऐसी-ऐसी बातें सुनाईं कि मालिक के सामने मैं उन लफ्जों का बयान नहीं कर सकता हूँ। उसका दामाद बैरिस्टर टिपनिस आप पर मुकदमा चलाएगा।"

"क्यों?"

"उनकी बेटी को लुभाने की तोहमत"। हर्ष भाग को पूरा करने में जैसे असमर्थ होने के कारण रहमत कहते-कहते अटक गया।

इधर दिलीप भी जैसे अचानक आघात पाकर धम् सोफे पर बैठ गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बारहवाँ अध्याय

उसी समय घोड़े पर सवार नलिनी ने दिलीप के बँगले के फाटक से प्रवेश किया। यह नितान्त संयोग की ही बात थी।

रहमत ने घोड़े की लगाम थाम ली। नलिनी उतरकर बोली—'साहब बहादुर कहाँ हैं?"

"सामने के कमरे में; उनकी तबियत ठीक नहीं है।"

नलिनी हँसती हुई बोली—"तुम्हारे साहब की तबियत को क्या बला लग गई है कि जब देखो तब खराब हो जाती है?"

"क्या जानूँ जी, अभी-अभी तो गश जैसा आ गया था।"

"अरे गश! अच्छा अस्तबल में घोड़ा बाँधकर तुम मेरी चिट्ठी डाक्टर पटवर्धन के पास ले जाओ। वे देखते ही चले आएँगे। अभी मैं लिखे देती हूँ।"

और नलिनी तड़ातड़ सीढ़ियाँ चढ़ कमरे में दाखिल हो गई।

उसने देखा, सचमुच दिलीप बीमार जैसा ही सोफे पर पड़ा हुआ है। नलिनी उससे एक शब्द भी न पूछकर डाक्टर को पत्र लिखने के लिए ज्यों ही टेबुल पर झुकी, त्यों ही उसकी नजर उसी स्लिप पर जा पड़ी। वह आग बबूला हो उठी। ऐसा लगता था जैसे उसके रक्ताभ चेहरे से चिनगारियाँ झड़ने लगी हों।

रहमत बाहर से ही बोला—"डाक्टर के लिए खत दीजिए, हजूर।"

नलिनी व्यंग्य करती हुई बोली—"यह रोग डाक्टर के बस का नहीं है, रहमत।"

"तब?"

"मैं स्वयं जाँच करती हूँ।" यह कहकर वह दिलीप की तरफ मुखातिब होकर बोली—"एकाएक बीमार कैसे पड़ गए?"

दिलीप ने कुछ उत्तर नहीं दिया। वह उधर को पीठ किए जैसा लेटा था वैसा ही पड़ा रहा।

नलिनी अब घूमकर इधर आई और उसी स्लिप को हिलाती हुई बोली—"मैं समझती हूँ, यह स्लिप ही तुम्हारी अन्तर्वेदना का आधार है?"

दिलीप का हृदय अब विद्रोह पर तुल पड़ा। वह सीधा कह बैठा—"जैसा तुम समझो।"

"तब मैं यह भी समझती हूँ कि उसके मनोनीत पति आनन्द राव टिपनिस के जूतों की ठोकर से वहाँ से यह स्लिप 'गेट आउट' हुआ है और तभी से यहाँ पर यह पतन और मूर्च्छा का पार्ट चल रहा है?"

असहनीय क्रोध से दिलीप उठ बैठा; फिर बोला—"मुँह सम्हालकर बात करो, मिस वर्मा।"

"जी नहीं, मैं तो आइन्दा से स्लीपरों से बातें किया करूँगी, क्योंकि तुम्हारे बाप का मेरे बाप पर कोई कर्ज नहीं है।"

दिलीप तड़प उठा—"ओफ, इसी लिए तुम— मुझे—"

पत्थर की फर्श पर हंटिंग बूटों से सदर्प प्रहार करती हुई नलिनी दृढ़ता से बोली—"हाँ, इसी लिए मैं तुम्हें अपने टुकड़ों पर पला हुआ जीव जैसा ही समझती हूँ।"

प्रचण्ड क्रोध के आवेश में दिलीप हड़बड़ाकर उठ बैठा और तीव्र वेग से नलिनी की तरफ चार पग बढ़ा। पर दूसरे ही क्षण वह ठिठककर दस कदम पीछे हट गया।

नलिनी भीषण प्रतिहिंसा से उसके कटे घाव पर जैसे नमक छिड़कती हुई बोली—"क्या हुआ, जनाब आली, क्या नमक याद आ गया?"

दिलीप ज्वलन्त आँखों से उसकी ओर ताकता हुआ चुप खड़ा रहा।

नलिनी विजयी योद्धा की भाँति विजय-गर्व से भरी टेबल पर बड़ी अदा से जा बैठी। फिर बोली—"दिलीप, तुम एक पक्के अभिनेता हो; लेकिन तुम्हारा यह रोब-दाब सिर्फ स्टेज पर ही शोभा दे सकता है, मेरे सामने उसकी कोई उपयोगिता नहीं है। क्योंकि मैं जानती हूँ कि तुम मेरे पिता की सोने की जञ्जीर से बँधे एक जीव विशेष हो। यह भी अब अच्छी तरह से समझ लो कि मेरी सीटी पर या मेरी जरा-सी पुचकार पर तुम्हें आजीवन वही सब कुछ करना होगा, जो कि उस जीव-विशेष को करना होता है और जो उसकी अपनी विशेषता है।"

"तो तुम भी यह भली भाँति समझ लो, मिस वर्मा, कि इस जीव से, इस जीवन में, यह सब कुछ सम्भव न हो सकेगा।"

निर्लज्ज अट्टहास करती हुई नलिनी बोली—"तो इस बला से बचने के लिए श्रीमान् ने क्या उपाय सोचा है?"

विपुल घृणा से मुँह फेरकर दिलीप बोला—"वह जब का तब देखा जाएगा।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मगर देखने का समय अब जनाब को मिलेगा कहाँ ? आगामी चार तारीख को, जिसके अब केवल पाँच दिन शेष हैं, हुजूर मेरे हो जाएँगे। यदि साहस हो तो इस बीच आत्म-हत्या-सा कुछ अभिनय आप कर सकते हैं। इसके लिए आपको अभी काफी अवसर है।"

फिर नलिनी मुँह से सीटी बजाती हुई यों निकल गई जैसे कभी उससे कोई तर्क-वितर्क हुआ ही नहीं हो।

दिलीप को लगा, इस राक्षसी के पाले पड़ने की अपेक्षा आत्म-हत्या ही सुखकर है। हाय-हाय, यदि विलायत के वे कई साल मय डिग्री के कहीं धो-फेंकने के होते तो निश्चय ही दिलीप इस कालिख को धो-फेंकने में किञ्चित् मात्र विलम्ब न करता। किन्तु अब तो बरबस ही यह फाँसी उसके गले में लटकाई जाएगी।

तो क्या पिताजी ने इस लड़की को आँखों नहीं देखा था! इसके घराने को नहीं परखा था, केवल रुपए के लिए अपने लड़के के जीवन को इस बर्बादी में फँसा जाना उनके पितृ-कर्त्तव्य की पराकाष्ठा थी।

कब के मरे पिता के नाम से आज दिलीप सच ही असहाय बच्चे की तरह रो पड़ा।

तेरहवाँ अध्याय

मनोजा देवी के मन में रहमत के साहब के खत वाली बात रह-रहकर चुभने लगी। यद्यपि रुचिरा अभी घर पर नहीं है, परन्तु पता लगने पर क्या वह नाराज नहीं होगी! नाराज हो तो हो, उसकी बला से!

चुपके-चुपके उस साहब से घनिष्ठता बढ़ाते जाना रुचिरा के जीवन के लिए नितान्त हानिकारक है और विशेषतया तब, जब कि टिपनिस-सरीखा एक धनी-मानी बैरिस्टर रुचिरा को जी-जान से चाहता है। यही नहीं, वह अपने महाराष्ट्र-समाज की भी परवा न करके रुचिरा को ब्याहना चाहता है। एक दिन उसने इतना तक कह डाला था कि "रुचिरा को पत्नी के रूप में पाना एक बड़े भाग्य की बात है। आप तो जब-तब विवाह की बात कहती हैं, माता जी, पर उनका क्या अभिमत है यह तो उनसे पूँछकर देखिए।"

पर उस दिन माता जी, यानी मनोजा देवी जी, बड़े गर्व से बोलीं थीं—"अरे, इस विषय पर उससे पूँछने-ताछने की क्या बात है, बेटा! रुचिरा अवश्य ही स्वाधीन देश की स्वाधीन हवा में पली लड़की है, परन्तु मैं यह देखकर सन्तोष करती हूँ कि किसी विषय में उसका स्वाधीन मत कुछ नहीं है। वह प्रत्येक विषय को मेरे निर्णय पर छोड़ देती है। ऐसी नम्र प्रकृति की लड़की के लिए वर-निर्वाचन भी मेरी समझ में मुझे ही करना होगा। तभी तो, मुझे पूरी आशा है कि, रुचिरा मेरे मत के खिलाफ कभी न जाएगी। और मैं भी तुमसे पक्के तौर पर कहती हूँ कि उसके विदेश के साथी तुम,—तुम्हीं उसका पाणिग्रहण कर उसके नारी-जीवन को सार्थक करो।

इस प्रत्याशित सत्य को पहले मनोजा देवी के मुँह से ही उघड़ता देख आनन्दराव जैसे एक बार ही महानिधि पा गया था। कृतज्ञता के आवेग से मनोजा के चरणों में गिरकर उसने कहा था—"आप मुझे आशीर्वाद दीजिए, माता जी, कि मैं उसे सर्व प्रकार से सुखी कर सकूँ।"

मनोजा भी उस दिन सन्तोष की श्वास लेकर निश्चिन्त हो गई थीं कि चलो मेरी सदा दुःखी लड़की को एक परिचित सहारा तो मिला।

उन्हें भय था कि उनके अपने समाज में क्रिस्तानों के बीच पली इस लड़की को ग्रहण करने के लिए शायद ही कोई आगे आए। कारण, आज के युग में पाश्चात्य रहन-सहन की ओर भारतीय युवक-युवतियों का रुझान कितना ही क्यों न बढ़ाता जा रहा हो, पर भारतीय युवक-समुदाय में ऐसी युवतियों के प्रति घृणा मिश्रित अवज्ञा का भाव ही धीरे-धीरे घर करता जा रहा है। सो मनोजा देवी के मन में टिपनिस के इस आह्लाद-पूर्ण आग्रह से पूर्ण सन्तोष हुआ था।

"किन्तु देखो", मनोजा सोच रही थीं—"यह हत्यारा साहब अब क्या-क्या गजब ढाने चला है। रोज-रोज रुचिरा के पास उसकी चिट्ठियाँ आना, उसके बैरा-खान-सामा आदि का आना-जाना सुमङ्गल-सूचक नहीं है। रुचिरा भी उस दिन खामखाह उसकी आज्ञा मान बैठी! क्या रुचिरा से उसकी कोई पहले की जान-पहचान है! यदि जान-पहचान है ही, तो किस बहाने से कहाँ पर कब और किस प्रकार से इनका परिचय हुआ—"।

ठीक उसी समय रुचिरा अपने बिल्ली के बच्चे को हाथों पर गेंद की तरह उछालती हुई आई और मनोजा के सामने स्टूल पर बैठ गई। फिर बोली—"मा, तुमने रात का खाना तो नहीं बनाया?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"नहीं, पर अब-अब बनाने जा रही हूँ।"

रुचिरा बोली—"आज मेरे लिए कुछ न बनाना।"

सन्देहपूर्ण स्वर से मनोजा बोली—"क्यों?"

"आज मेरी एक छात्रा का जन्म-दिवस है। अभी-अभी निमन्त्रण दे गई है। रात को गाड़ी लाकर लिवा ले जाएगी।"

आश्चर्य-मिश्रित क्रोध से भरी मनोजा एकाएक ही लड़की पर बिगड़ पड़ी—"नहीं-नहीं, रुचिरा स्त्रियों का रात का घूमना-फिरना मैं बिलकुल बरदाश्त नहीं कर सकती।"

आज तक मात' की इस अभव्य प्रकृति को रुचिरा ने न देखा था, सो वह अवाक् होकर खड़ी रही।

मनोजा अब खोलकर कहने लगी—"यद्यपि टिपनिस विलायत का लौटा लड़का है, तथापि भारतीय संस्कार उसकी अस्थि-मज्जा में समाया हुआ है। रात के वक्त वह अपनी वाग्दत्ता पत्नी को यत्र-तत्र विचरण करते देखना पसन्द नहीं करेगा। परन्तु वह बात भी अभी गौण है। आज मैंने उसे बुलाया है। वह मेरी आज्ञा शिरोधार्य कर आता ही होगा। तुम दोनों के विवाह की आज पक्की बात-चीत हो जाएगी।"

रुचिरा सन्न रह गई। उसे जैसे काठ मार गया।

उसकी गोद का बिल्ली का बच्चा दो-तीन बार 'म्याऊँ-म्याऊँ' कर आदर के अभाव से खिन्न मन होकर गोद से कूद अलग हो गया।

मनोजा बोली—"सन्तान को उपयुक्त बनाना पिता का कर्तव्य है। माता का कर्तव्य उसकी गृहस्थी बसा देने में निहित है।"

रुचिरा आतुर-सी कह उठी—"किन्तु मा—"।

मा कुछ झिझक से कह उठीं—"किन्तु किन्तु नहीं, बाबा, तुम लोग आजाद तबियत के बाल-बच्चे हो, तुम लोगों में विवाह तो अब उपहास समझा जाता है।"

"देखिए, माता जी, आपके आदेश पर मैं कितना शीघ्र हाजिर हो गया हूँ! कहिए क्या आज्ञा है?" कहते हुए टिपनिस ने झुककर मनोजा के पैर छुए।

बैठने के लिए कुर्सी की ओर सङ्केत करती हुई मनोजा बोलीं—"मैं सोचती हूँ बेटा, अब पक्की बात हो जानी चाहिए। व्यर्थ में विलम्ब करने से मेरी बड़ी हानि हो जाएगी। उधर अकाल पड़ने से मेरा तीर्थ-दर्शन रुक जाएगा। इसलिए आगामी मास में तुम दोनों का विवाह निपटा देना चाहती हूँ।"

टिपनिस आनन्द से गद्गद-सा होकर कह उठा—"मुझे आपकी बात सहर्ष स्वीकार है।"

ठीक उसी समय रुचिरा कठिन दृढ़ चित्त से सारे सङ्कोच का त्यागकर कह उठी—"परन्तु मिस्टर टिपनिस, अपना यह विवाह कभी नहीं हो सकेगा।"

रोष-युक्त स्वर से टिपनिस बोला—"क्यों?"

"क्योंकि यह विवाह अनमेल और असवर्ण विवाह समझा जाएगा।"

टिपनिस ने व्यंग्य किया—"तो क्या आप अपने को अभी तक स-वर्ण ही समझ रही हैं, मिस राय!"

निश्चय ही, जब कि मैंने चर्च में जाकर बपतिस्मा नहीं लिया है तब मैं अपने समाज का अङ्ग हूँ, और समाज-विरुद्ध काम मैं नहीं कर सकती।"

"पर आप यह क्यों भूल रही हैं, मिस राय, कि बपतिस्मा न लेकर भी आप समाज-पतित जीव हैं, क्योंकि आप योरप हो आई हैं। जब वर्त्तमान समाज में हमारा स्थान नहीं हो सकता, तब अपने इस असवर्ण विवाह पर टीका-टिप्पणी भी कोई क्यों करेगा?"

रुचिरा कठिन स्वर से कह उठी—"पर मेरा हृदय संस्कार-पूर्ण है। मैं अपने आप किसी कारण तीव्र अन्तर्द्वन्द्व का विषय नहीं बनूँगी।"

प्रचण्ड अवज्ञा से मुँह बिचकाकर टिपनिस बोला—"आपका मतलब क्या है, कुछ खोलकर कहने की कृपा करें।"

रुचिरा नम्र स्वर से बोली—"असवर्ण-विवाह करने के लिए मैं तैयार नहीं हूँ।" टिपनिस कुछ क्षण के लिए स्तब्ध हो गया। मनोजा को जैसे काठ मार गया।

मुकुन्दराय बोला—"गेट पर गाड़ी खड़ी है हजूर।"

(क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

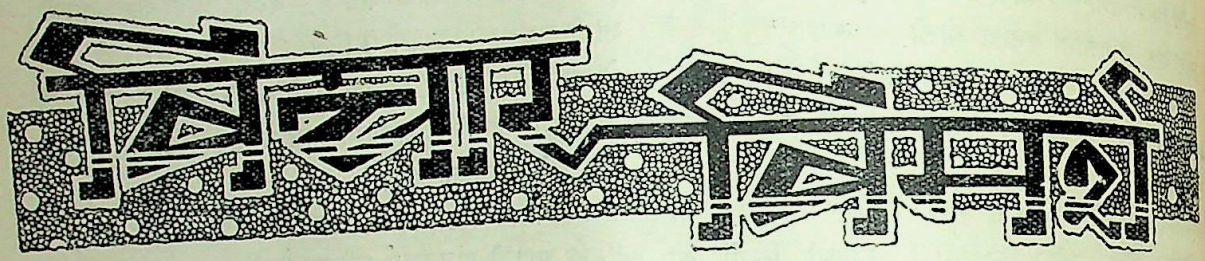

प्रसाद का कवि

श्री चन्द्रकान्त बाली

[दिसम्बर '४५ की सरस्वती में उक्त शीर्षक देकर पण्डित चन्द्रबली पाण्डेय एम्० ए० ने एक गम्भीर समस्या उपस्थित करते हुए हिन्दी-जगत् को कामायनी का नया दृष्टि-बिन्दु दिया है। ये पंक्तियाँ उसी से सम्बन्ध रखती हैं।]

प्रान्तदर्शी प्रसाद की प्रतिभा को परख पाना इस हेतु सुगम हो गया है कि हम भारतीयता के नाते उनके 'पौस्तक' ज्ञान को सचमुच 'प्रातिभ' ज्ञान मानते हैं। इसी लिए उनकी 'अनुमिति' को चरम 'अनुभूति' मानने को विवश हैं। "शब्दः प्रमाणम्" के अनुसार अनुभूति के चार दृढ़ स्तम्भ हैं—प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान और शब्द। प्रथम प्रमाणद्वयी में 'प्रत्यक्ष' की, अपर प्रमाण-द्वयी में 'शब्द' की विश्वसनीयता शास्त्रसिद्ध है। 'अतः शास्त्रं प्रमाणं ते' भगवान् का भी तो यही आदेश है। इसलिए जब कभी प्रसाद को विवेक की भूमि पर खड़ा किया जाएगा और उनकी आधार-शिला (पौस्तक ज्ञान ?) को ज्ञान की टाँकी से देखा जाएगा तो वह एकदम ठोस-ही-ठोस निकलेगी; एक स्या, कई ठोकरें खाकर भी अपने रूप में व्यवस्थित रहेगी। 'पौस्तक' ज्ञान की सबसे बड़ी और कड़ी परीक्षा यही है। एक ही ठोकर में छितरा जानेवाले ज्ञान को हम 'पौस्तक' ज्ञान नहीं मान सकते।

"हिम गिरि के उत्तुङ्ग शिखर पर"

प्रथम पद्य के प्रथम पाद में ही प्रसाद की प्रतिभा का प्रदर्शन प्रारम्भ होता है। सबसे पूर्व 'हिम' शब्द पर ध्यान दीजिए। काव्यारम्भ में 'ह' का प्रयोग वर्जित है। दग्धाक्षर-माला में 'ह' का भी परिगणन किया गया है। परन्तु 'हिमगिरि' को 'हिमालयो नाम नगाधिराजः' के नाते तथा शिव श्वशुर के नाते देव-स्वरूप मान लेने पर 'ह' का देवसंज्ञादि प्रयोग दग्धाक्षरत्व का समाधान कर देता है।

रहा हिम, कालिदास ने हिमालय में हिम की सत्ता 'सौभाग्यविलोपि' के रूप में स्वीकार की है; भले ही 'अनन्तरत्नप्रभवनशील' गुण-गरिमा में उसकी दाल न गले। इतने पर भी खैर नहीं। कठोरता के साथ दयालुता का प्रदर्शन कालिदास को खूब आता है। 'सौभाग्यविलोपि' हिम को वहाँ से हटाया तो जा सकता नहीं, चलो रहने दो, रहने के लिए एक 'परमिट' भी उसे दे दिया कि "किरणेष्विवाङ्कः"। शायद कालिदास भूल गए। वे अपनी रचना में "लक्ष्म लक्ष्मीं तनोति" किरण-समुदाय में सिर उठाए 'अङ्क' को शोभा-विधायक के रूप में पहले स्वीकार कर चुके हैं। अब सौभाग्य के साथ साथ शोभा भी बीच में आ टपकी है। इधर 'सौभाग्यविलोपि' सही, उधर शोभा-विधायक भी सही। चलो, अनन्त सौन्दर्य और माधुर्य के आधार किसी रमणी के मुख पर पड़े काले तिल पर फिदा होनेवाले सच्चे आशिक की तरह प्रसाद का कवि उपालम्भ का पात्र नहीं सराहना का पात्र है। हम कालिदास का धन्यवाद करते हैं कि उसने 'हिम' को 'सौभाग्यविलोपि' स्वीकार करके आखिर 'लक्ष्म' को 'लक्ष्मी-विधायक' मानने प्रसाद के लिए एक मार्ग निश्चित कर दिया है।

प्रसाद ने 'हिम-गिरि' न लिखकर 'हिम गिरि' लिखा है, सो अच्छा किया है। अगर कहीं 'हिम-गिरि' लिखा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाता तो यहाँ अर्थ का अनर्थ हो जाता। जो तथ्य 'हिम गिरि' लिखने में है, उसका सत्यानाश हो जाता। 'हिम-गिरि' एक योगरूढि शब्द है जो एक निश्चित अर्थ में सीमित कर देता है। यथा - गणेश। गणानामीशः, गणेशः। शिवपुत्रो गणेशः। गणेश एक ही निश्चित अर्थ का द्योतक है। ऐसे हिम-गिरि है। हिमगिरि हिमालय का ही द्योतक रहता, जैसा कि उसको योग-रूढ़िवेन होना चाहिए। पर यहाँ सीमित हिमालय अभीष्ट नहीं। अपितु हिमालय के आसपास की बर्फीली पहाड़ियाँ यहाँ अभीप्सित हैं। क्योंकि भौगोलिक अध्ययन करनेवाले बताते हैं कि पालम्पुर, कुल्लू से चलकर आगे एक 'मिनाली' आती है। यहीं मनु का मन्दिर अब तक खड़ा युगारम्भ के गीत गा रहा है। जैसे चन्दन के समीपतम रहनेवाले इतर तरुगण चन्दन कहलाते हैं, उसी प्रकार हिमालय-सम्बन्धित पर्वतमाला हिम गिरि के रूप में स्वीकार्य है। आखिर हिम केवल हिमालय की ही बपौती नहीं है। फिर हिमालय-सम्बन्धीकरण का भी पचड़ा बीच में है। इसलिए 'हिम-गिरि' न लिखकर 'हिम गिरि' लिखना ही ठीक हुआ है।

'उत्तुङ्ग शिखर', 'उत्तर गिरि के शिर से' जिस पहाड़ी चोटी का सङ्केत किया गया है, वह 'मिनाली' नाम से प्रसिद्ध है और अपनी आस-पास की चोटियों से सबसे ऊँची है। उसकी उँचाई अनुमानतः लगभग ९००० फुट है।

"बैठ शिला की शीतल छाँह"

इस पद्य में सबसे अधिक आपत्ति 'शीतल' पर है। कवि जब किसी शब्द का प्रयोग करता है, तो वह पहले काव्यात्मिका प्रक्रिया द्वारा उसे नाप-तोल लेता है। कवि के दो जगत् हैं—एक उसके नयनों के सामने नाच रहा होता है दूसरा उसके हृदय में स्वयं निर्मित हो रहा होता है। कवि अपनी केन्द्र-प्रतिगामी शक्तियों के द्वारा बाह्य जगत् में सञ्चरण करता है, फिर केन्द्र-अनुगामी शक्ति-द्वारा वहाँ से लौट आता है तथा अपने में लीन होकर उसका पुनर्निर्माण करता है। और ठीक इसी प्रकार केन्द्र-प्रतिगामी शक्तियों को लेकर वह लोकभाषा में प्रवेश करता है तथा वहाँ से केन्द्र-अनुगामी शक्तियों के द्वारा उसे अपने हृदय में लाकर काव्यमय रूप देता है। यही काव्यात्मिका प्रक्रिया है। कवि जब किसी भाव के अनुरूप शब्द-समूह में से एक शब्द चुन लाता है तो वह उसके लिए नियत हो जाता है। अतः वह यथार्थ होता है। उसका अनुवाद करना तथा उस अर्थ से उसे अलग करना कठिन हो जाता है। प्रसाद ने अपने जिस भाव को 'शीतल' शब्द से अभिव्यक्त किया है, उसके पर्यायवाचक के द्वारा या अभिधा-लक्षणादि द्वारा उसकी तह तक पहुँचना असम्भव है। वह तो केवल आस्वादनीय मात्र रह जाता है। वैसे तो ये भी वाक्य 'शीतल' शब्द विभूषित हैं—'शरच्चन्द्र की चाँदनी अति शीतल होती है'; 'तुम्हें देखकर आँखें बहुत शीतल हुई हैं'; 'गङ्गा-जल शीतल है'; 'शीतल वाणी', इत्यादि। इन सब शीतलों को एक ही छड़ी से साधा जाएगा? अगर ऐसा है, तो सचमुच अनर्थ है। प्रलय से बच निकले मनु शिला से टिककर बैठ गए हैं। वह शिला उन्हें सन्तोष, धैर्य, आशा, निश्चिन्तता आदि नाना भावों की जागर्ति देती है। वह उनकी प्राण-रक्षिणी है। इस प्रसङ्ग में जिस मनोवैज्ञानिक-आश्वासन-सूचना का सङ्केत 'शीतल' शब्द से प्रसाद ने दिया है, वह उनका सर्वोत्कृष्ट प्रातिभ प्रसाद है। वह व्यंग्य का पात्र नहीं, बधाई का पात्र है।

एक पुरुष भीगे नयनों से
देख रहा था प्रलय प्रवाह

'भीगे नयन' और 'प्रलय प्रवाह' ये दो शब्द भी कम अभिप्राय-प्रद्योतक नहीं। जिस मनु की मानसिक-विश्लेषणा को शीतल छाया में बैठने से सङ्केतित किया गया है, उसका सच्चा चित्र भीगे नयनों में आकर उतरा है। भीगने का अर्थ वेदनाजन्य अश्रु नहीं है। न प्रवाह से उठने-वाले शीकरकण के सम्पर्क का प्रभाव है। प्रसाद की वेदना इतनी सस्ती नहीं कि जो क्षण में अपने प्रतिनिधि अश्रु-कण से नयनों को आप्लावित कर दे। इधर फुहारकण भी इतने उतावले नहीं हो रहे थे कि मनु आएँ और वे उनके नयन भिगोकर अपनी सत्ता सफल करें। बात तो बिलकुल साफ है। मनु प्रवाह में बहते-बहते नियति-वश किनारे आ लगे थे, राम-राम करते उनकी जान बच पाई थी, आगे का जीवन यद्यपि अनिश्चित है, पर निराशित नहीं। भूत और भावी मानसिक तन्तुओं के सम्मिश्रण का जो महान् मन्थन उसके अन्दर है, उसका प्रकटीकरण भीगे नयनों से स्वयं हो रहा है।

इसी प्रकार प्रलय और प्रवाह के अलगाव से सृष्टि-विनाश तथा समुद्र की उत्ताल तरङ्गें अभीष्ट हैं। प्रलय का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्बन्ध केवल जल से नहीं है। जल के अतिरिक्त अन्य भूत भी तो प्रलय की लपेट में आ गए थे। दूसरा समस्त भू-मण्डल जल-मग्न है। इसलिए प्रवाह का विशेषतः उल्लेख करना अनिवार्य भी है।

नीचे जल था, ऊपर हिम था
एक तरल था, एक सघन।

सृष्टि के नव-निर्माण में 'देव-सृष्टि का ध्वंस' मनु पार्थिव परिस्थिति का निरीक्षण कर रहा है। जहाँ तक उसकी दृष्टि जाती है, पर्वत-प्रदेश पर और जल-प्रवाह पर, उसे दो रूपों में विभक्त एक ही तत्त्व दिखाई देता है। नीचे जल है, ऊपर हिम है; यहाँ ऊपर-नीचे का सम्बन्ध अर्श-फर्श-सा नहीं है और न दूध तथा मलाई के पर्त-सा ऊपर नीचे को जोड़ा गया है। इस 'ऊपर-नीचे' सम्बन्ध को कोई चित्रकार बड़े सुन्दर ढङ्ग से दिखा सकता है। चित्रकार चित्र उतारते समय नयन समानान्तर रेखा (Eye level) का बड़ा ध्यान रखते हैं। ऊपर की रेखा नयन-समानान्तर रेखा की ओर झुकती जाती है, नीचे की उस ओर उठती है। उनका मिलाप—जो कि वास्तव में नहीं होता—नयन-समानान्तर बिन्दु पर हो जाता है। प्रसाद का कवि जल और हिम को—जिनका आधार वस्तुतः अलग है—नयन समानान्तर बिन्दु पर मिला हुआ देख रहा है और अनुभव कर रहा है 'नीचे जल था, ऊपर हिम था'। इतने मधुर चित्रण को कोई न समझे, इसमें किसका दोष है? 'एक तत्त्व की ही प्रधानता' में प्रसाद का कवि दृढ़ दार्शनिक भूमिका पर खड़ा है। निराकार-साकार, जीवन-मरण, प्रकृति-पुरुष, जाने कितनी समस्याओं को एक साथ छूकर प्रसाद के कवि ने अपने 'पौस्तक ज्ञान' की अभूत-पूर्वता प्रदर्शित की है। उस एक तत्त्व को जड़ और चेतन रूप देनेवाली एक ही महाशक्ति है; अभाव और प्रभाव, निवृत्ति और प्रवृत्ति संसूचक जड़ता-चेतनता उस महाशक्ति पर निर्भर हैं। प्रकृति-पुरुष के सम्बन्धीकरण का मीठा अनुभव अथवा सांख्य-सार इसी एक पद्य में देखने को मिलता है।

उसी तपस्वी से लम्बे, थे
देवदारु दो-चार खड़े।

यह ठीक है, पर्वत की बहुत उँचाई पर भूर्जपत्रों के अतिरिक्त अन्य वृक्ष नहीं होते। पर देखने की बात यह है किसकी उँचाई और किस पर भूर्जपत्र या देवदारु। श्रीनिवासदास या कालिदास के प्रमाण यह प्रमाणित नहीं कर सकते कि नाटक या रघुवंश में जिस पर्वत-प्रदेश का वर्णन है, कामायनी में भी उसी प्रदेश का वर्णन है? यह अपराध क्यों हो रहा है? क्योंकि हमने हिम-गिरि को सीमित या निश्चित कर दिया है। अगर 'हिम गिरि श्रेणी' मान लें तो एक किनारे कालिदास खड़ा है, दूसरे किनारे प्रसाद का कवि खड़ा है। अपना-अपना वर्णन और अपना-अपना क्षेत्र। अगर हम श्रीनिवास के प्रमाण को सामने रखते हैं—"बीच में से देखो तो सर्द देश के बाज, बरास चील देवदारु आदि दिखाई देते हैं" तो हमारा अभीष्ट प्रदेश "मीनाली" ही इसका स्पष्ट उदाहरण अथवा लक्ष्य बनता है। समस्त पर्वतमाला पर तीन रेखाएँ अङ्कित करने से जहाँ मध्यरेखा का बिन्दु टिकेगा, वहीं मीनाली प्रदेश है। और वहाँ देवदारु की उत्पत्ति भूगोल-शास्त्र द्वारा सिद्ध है, जो प्रत्यक्ष देखी जा सकती है।

बँधी महावट से नौका थी ..
...और निकलने लगी मही।

'पर्वत प्रदेश पर वट-वृक्ष का अभाव है। कारण, वह शीत देश का वृक्ष नहीं, उष्ण देश का त्राता है।' यह बात बिना किसी ननु-नच के स्वीकार करने पर भी प्रसाद के कवि ने उसका समाधान अन्तिम चरण में कर दिया है। 'और निकलने लगी मही।' 'मही' नाम की वस्तु आ जाने पर उष्णता और उसके त्राता की सत्ता स्वयं सिद्ध हो जाती है। रहा, 'उत्तरगिरि के शिर से', अब जरा प्रसाद के कवि को काल-यापन का अवसर भी तो मिलना चाहिए। प्रलयकाल में उसकी नौका उत्तर-गिरि के शिर से टकराई और मनु उतर पड़े। समय व्यतीत करने के बाद क्या मनु नीचे न उतरे होंगे? हम काव्य पढ़ रहे हैं, महाभाष्य की पंक्ति या अष्टाध्यायी के सूत्र नहीं पढ़ रहे हैं। खुरच-खुरचकर अर्थ निकालने की आदत काव्य को बेमजा कर देती है।

जीवन में श्रद्धा और बुद्धि की समान सत्ता स्वीकृत है। कामायनी में यही कुछ करके दिखाया गया है। बुद्धि (इड़ा) के अभाव में श्रद्धा के पास जीवन (मनु) टिक न सका। श्रद्धा के बिना विवेक (इड़ा) के पास जाकर जीवन ने जूतियाँ ही प्राप्त कीं। श्रद्धा और विवेक के प्रसङ्ग से जीवन रहस्य और आनन्द उपलब्ध कर सकता है। प्रसाद का कवि जब स्वयं अपने काव्य में श्रद्धा और विवेक को मिलाने चला है, तब स्वयं एकपक्षी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कैसे रह सकेगा? कामायनी का अध्ययन श्रद्धा और विवेक के समन्वय से हो सकता है। और दोनों पक्षों का मान-समाधान बलपूर्वक प्राप्त होता है।

हम हिन्दीवाले !

श्री मदनगोपाल मिश्र

ब्रिटिश सरकार और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस दोनों का ही यह घोषित सिद्धान्त रहा है कि उनके प्रभुत्व में प्रत्येक भारतीय जन-समुदाय की भाषा सुरक्षित रहेगी। लेकिन इधर कुछ समय से ऐसा जान पड़ता है कि हिन्दी, जो हमारे देश की सबसे बड़ी जनसंख्या की भाषा है और जो प्रत्येक दृष्टिकोण से निष्पक्ष विचार करने पर राष्ट्रभाषा बनने के योग्य एक-मात्र भाषा सिद्ध होती है, इस सिद्धान्त का अपवाद हो गई है। इधर लगभग दस वर्षों से हिन्दी-पर अनेक कठिन प्रहार हुए हैं। सीमा-प्रदेश, पञ्जाब, काश्मीर, सिन्ध और हैदराबाद में हिन्दी के प्रति जो दुर्व्यवहार हुआ है, वह पाठकों को विदित ही होगा। लेकिन हिन्दी पर इधर जो सबसे भयानक आक्रमण हो रहा है वह है 'ऑल इंडिया रेडियो' का। 'हिन्दुस्तानी' शब्द की ढाल की आड़ में वह हिन्दी की हस्ती तक को संसार की आँखों के सामने से मिटा देना चाहता है। हिन्दीवालों की ओर से 'ऑल इंडिया रेडियो' की इस नीति का विरोध हुआ, यहाँ तक कि पण्डित रविशङ्कर शुक्ल ने जहाँ एक ओर 'लैंग्वेज पॉलिसी ऑफ आल इंडिया रेडियो' नामक पुस्तक लिखकर 'ऑल इंडिया रेडियो' की धींगा-धींगी पर से परदा उठाया, वहाँ दूसरी ओर 'राष्ट्रभाषा की समस्या और हिन्दुस्तानी आन्दोलन' नामक पुस्तक लिखकर बड़े-बड़े भारतीय नेताओं और विद्वानों तक को भ्रान्ति में डाल देनेवाले 'हिन्दुस्तानी' शब्द के छद्म रूप का भण्डाफोड़ किया। लेकिन 'आल इंडिया रेडियो' की नीति अब भी जहाँ-की-तहाँ है—उसके अधिकारियों ने हिन्दी-भाषा को बहिष्कृत करने का बीड़ा-सा उठा लिया है। हिन्दुस्तानी के जाल में फँसे हुए लोग अभी स्वतन्त्र हुए हैं कि नहीं, यह हमें अभी देखना है। उससे मुक्त होने के लिए सबसे अच्छा उपाय यह है कि वे पण्डित रविशङ्कर जी की पुस्तकों को पढ़ लें।

मैं तो प्रत्येक हिन्दी-प्रेमी और देश-भक्त का यह कर्तव्य समझता हूँ कि वह इस पुस्तक को पढ़े और हिन्दुस्तानी के धोखे से शीघ्र-से-शीघ्र सावधान हो जाए।

परन्तु, क्या हम हिन्दीवालों ने कभी यह भी सोचा है कि हमारी भाषा पर होनेवाले इन अत्याचारों के लिए स्वयं हमारा उत्तरदायित्व कहाँ तक है? हमारे किन अपराधों और हमारी किन त्रुटियों और निर्बलताओं के कारण हिन्दी इस अपमानित स्थिति में आ पड़ी है? हमने हिन्दी का मस्तक ऊँचा करने के लिए अभी तक किया क्या है? इन प्रश्नों का उत्तर हिन्दी-प्रेदेशों के केन्द्र संयुक्तप्रान्त पर ही नजर डालने से मिल जाएगा—

(१) पाँच प्रचलित अँगरेजी के समाचार-पत्र—लेकिन क्या इनमें से किसी का भी सम्पादक हिन्दी की गोद में तुतलाया और पला हुआ व्यक्ति है? यदि होता तो 'ऑल इंडिया रेडियो' की हिन्दी-विरोधी नीति एक पग भी आगे न बढ़ सकती। इनमें से किस समाचार-पत्र ने किसी हिन्दी-विरोधी नीति पर आन्दोलन किया है? यह विश्वास करने का मेरा जी नहीं चाहता कि अब तक अँगरेजी समाचार-पत्रों के सम्पादन की योग्यता रखनेवाला कोई हिन्दी का लाड़ला पैदा ही न हुआ।

(२) हमारे प्रान्त के सबसे बड़े जगद्विख्यात नेता को हमारी प्रमुख प्रान्तीय भाषा हिन्दी के प्रति कोई विशेष रुचि नहीं—शायद वह टूटी-फूटी ही हिन्दी लिख सकता हो। और उसकी इस उदासीनता ने हमारे अन्यप्रान्तीय नेताओं को अपनी भाषा के प्रति कहाँ तक उदासीन न बना दिया होगा! फिर हिन्दी को क्यों न ठोकरें लगाई जाएँ?

(३) हमारी कचहरियों और पुलीस के विभागों में हिन्दी पढ़े-लिखे वकील और अफ़सर अपनी और जनता की भाषा को छोड़कर एक ऐसी भाषा को निस्सङ्कोच अपना लेते हैं जिसे सुनकर किसी भी साधारण नागरिक को आश्चर्य हो सकता है। उदाहरणार्थ, 'प्रथम', 'द्वितीय' और 'तृतीय' तो दूर रहे, 'पहले', 'दूसरे' और 'तीसरे' के स्थान पर जब तक वे 'अव्वल', 'दोयम' और 'सोयम' नहीं लिख लेते, उन्हें चैन नहीं पड़ती—कितना करुण दृश्य।

(४) हमारे प्रान्त के सबसे बड़े बैरिस्टर, जो अपनी योग्यता के लिए केवल इसी प्रान्त में नहीं सारे भारतवर्ष में और लन्दन में भी विख्यात हैं, एक बार एक महाशय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से एक सभा में, जिसके वे सभापति थे, 'सभापति' शब्द से सम्बोधित किए जाने पर बेतरह बिगड़ उठे थे! संस्कृत और हिन्दी उनके लिए कितनी असहनीय है! प्रान्त की जनता की भाषा के प्रति उनका यह व्यवहार! इस प्रान्त के एक दूसरे नेता और ऐडवोकेट गान्धी जी के शब्दों में हिन्दी कठिनता से ही लिख सकते हैं। तो फिर हिन्दी का तिरस्कार क्यों न हो!—यद्यपि हम गान्धी जी को यह सूचित कर देना चाहते हैं कि हमारे बाप-दादों ने प्रतिकूल परिस्थितियों के प्रभाव में भले ही हिन्दी न पढ़ी हो, परन्तु उनके बच्चे अपने जीवन और देश से सामंजस्य रखनेवाली हिन्दी ही पढ़ते हैं और पढ़ेंगे। चारों ओर से हिन्दी पर किए जानेवाले प्रहार उनकी आँखें और भी खोल देंगे।

(५) भारतवर्ष में सिनेमा-कम्पनियाँ एक बड़ी संख्या में खुल गई हैं, लेकिन हिन्दी-प्रान्तों में हिन्दीवालों-द्वारा कोई कम्पनी क्या अभी तक खुली है? यदि नहीं, तो क्यों? और यही कारण है कि हिन्दी की आत्मा की पूर्णतः रक्षा करनेवाले चित्र बहुत कम बने हैं, यद्यपि सबसे उत्कृष्ट वे ही चित्र समझे गए हैं जिनमें इस रक्षा का ध्यान रक्खा गया है। ग्रामोफ़ोन-रिकार्ड-कम्पनियों में भी यही बात लागू है।

(६) हमारे प्रान्त के बड़े-बड़े शहरों में सिनेमा भवनों के मालिक शायद ही कोई हिन्दी वाले मिलें। सिनेमा के पोस्टरों आदि की भाषा अथवा उनमें किया जाने वाले हिन्दी का तिरस्कार हमें बराबर इसी बात का स्मरण दिलाते हैं। इस तिरस्कार की ओर हम टुकुर-टुकुर देखते हैं—उनका विरोध करने का भी बल हममें नहीं रह गया है।

(७) इस प्रान्त की शिक्षा संस्थाओं तथा अन्य विभागों में हमारे अन्य प्रान्तीय भाई विभिन्न पदों पर एक बड़ी संख्या में विद्यमान हैं। इनमें से कुछ ने हिन्दी की बहुमूल्य सेवा की है और अब भी कर रहे हैं, इस बात का हमें गर्व है। हिन्दी अब हमारी ही नहीं प्रत्येक सच्चे भारतीय की है; और फिर उन व्यक्तियों के, जिनकी भाषा हिन्दी की ही सगी बहिन हो और जो हिन्दी प्रान्तों में जीविकोपार्जन करते हों, हिन्दी के प्रति अनेक दृष्टि-बिन्दुओं से विशेष कर्त्तव्य हैं—(१) हिन्दी पर सङ्कट का अर्थ है संस्कृत पर घोर सङ्कट, फिर क्या संस्कृत की पुत्रियाँ—हिन्दी की अन्य बहनें—उससे बच सकती हैं? (२) हिन्दी प्रान्त में, हिन्दीवालों के बीच, उन्हीं के निमित्त, और उन्हीं के सहयोग से रहकर उनका यह धर्म हो जाता है कि वे अपनी भाषा के साथ-साथ हिन्दी को भी अपनाएँ। (३) केवल यही नहीं, भारतीयता के नाते उनका यह भी कर्तव्य हो जाता है कि वे हिन्दी के सन्देश को अपने-अपने प्रन्तों में पहुँचाएँ और उसके प्रति जनमत को जाग्रत् करें। हमें खेद है, उनमें से बहुतों का पूर्ण सहयोग हिन्दी को प्राप्त नहीं है, बहुत-से उसके प्रति उदासीन हैं, कुछ उससे स्पर्धा भी रखते हैं, यहाँ तक कि कुछ हिन्दीवालों को ही हिन्दी के प्रति निरुत्साहित करने में भी सङ्कोच नहीं करते। हिन्दीवालों का कर्तव्य है कि अपने इन पथ-भ्रष्ट भाइयों को रास्ते पर लाएँ और उन्हें हिन्दी के सन्देश की सत्यता में विश्वास दिलाएँ। यदि वे ऐसा नहीं करते तो उन्हीं का अपराध है। अन्य प्रान्तों की कोई भी भाषा अपने ही घर में इस प्रकार की अपमानित परिस्थिति में नहीं है। घर फूँक तमाशा देखने की नीति हिन्दीवालों को ही सह्य हो सकती है, औरों को नहीं।

(८) इस प्रान्त के अनेक ईसाइयों और अँगरेजों की शिक्षा-संस्थाओं में केवल उर्दू ही पढ़ाई जाती है, हिन्दी का उनमें स्थान नहीं। फिर भी हिन्दीवाले अपने बच्चों को उनमें पढ़ाते हैं, बिना इस बात का आन्दोलन किए हुए कि वहाँ हिन्दी पढ़ाने का भी प्रबन्ध होना चाहिए। इस प्रकार हिन्दीवालों के ही बच्चे अपनी मातृभाषा और अपनी संस्कृति से वञ्चित हो जाते हैं। आगे चलकर इन्हीं बच्चों के कर्मों पर मैंने उनके माता-पिताओं को झींकते हुए भी देखा है—परन्तु अपराध किनका?

अब कुछ आँखों-देखे दृश्यों पर विचार कीजिए—

(१) जनता की सरकार के समय की संयुक्त-प्रान्तीय असेम्बली के अधिवेशन की एक बैठक। एक सदस्य जी उठे हिन्दी में बोलना चाहा, हिन्दी के विरोधियों ने आपत्ति की और उनकी भाषा बिगड़ गई। एक हिन्दी वाले ही 'पार्लामेंटरी' सचिव उठे और उन्होंने बड़े जोश के साथ फारसी से लदा हुआ एक ऐसा भाषण दे डाला कि अधिकतर श्रोता मुँह बाए ही रह गए। हिन्दी के विरोधी तो अपनी भाषा में बोले ही—किसका साहस था कि कर जाए! उनके 'हिन्दी के विरोध का शायद समर्थन हुआ, और यदि कोई हिन्दीवाला आपत्ति कर देता तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसी क्षण उस पर शायद साम्प्रदायिकता, अराष्ट्रीयता, आदि के अपराध लगा दिए जाते। उर्दू तो ठीक, अँगरेजी तो भी ठीक, और हिन्दी तो राम-राम!—क्या खूब!!

(२) साक्षारता दिवस (कांग्रेस सरकार के समय में)—एक पार्क में एकत्र नगर की सारी शिक्षा-संस्थाओं के विद्यार्थी। अधिकतर हिन्दीवाले। कुछ मुसलमान सज्जनों ने भाषण दिया—उर्दू में, ठीक है ऐसा तो होता ही। अब उठे एक-एक करके हमारे दो नेता—दोनों हिन्दी के यशस्वी विद्वान् और लेखक। कुछ मनचले साहसी छोकड़ों ने आवाज़ लगाई 'उर्दू-उर्दू'—और यह लीजिए उर्दू—फिर क्या था, वे छोकड़े विजय से फूल गए और हिन्दीवाले विद्यार्थी मुँह बाए, मुँह ताकते रह गए। हमने मौलाना अबुलकलाम आजाद, श्री फखी अहमद किदवई आदि किसी भारतीय मुस्लिम नेता को हिन्दी में लिखते-बोलते न देखा है और न सुना है क्यों? क्योंकि उर्दू अपने नाम से अथवा हिन्दुस्तानी के नाम से उर्दू ही रहना चाहती है—हिन्दी अपने को चाहे नष्ट कर डाले।

(३) लखनऊ की बड़ी प्रदर्शिनी (१९३६)—एक पण्डाल के नीचे 'हिन्दुस्तानी ऐकेडमी' की एक बैठक में 'हिन्दुस्तानी' की समस्या हल हो रही थी। जा बैठा। देखता क्या हूँ कि 'आमफ़हम ज़ुबान' हिन्दुस्तानी का ही समर्थन करते हुए उर्दू वाले बड़े जोश-खरोश से फारसी चूँक रहे थे—और ढिलमिल हिन्दी वाले भी, जिनमें हिन्दी के कुछ दिग्गज विद्वान् भी थे, (कदाचित् तकल्लुफ में आकर) उर्दू में ही भाषण देने का प्रयत्न कर रहे थे। हिन्दुस्तानी तो कुछ थी ही नहीं, हिन्दी भी न रही, रह गई केवल कोरी उर्दू—न रहेगा बाँस और न बजेगी बाँसुरी। उठा, और इन हिन्दीवालों से कुछ कुपित, कुछ निराश, कुछ उन पर हँसता और कुछ इन अशुभ लक्षणों से आगे आनेवाले हिन्दी पर सङ्कट का अनुमान करता अपने घर चल दिया।

सारांश यह कि जब तक हिन्दीवाले स्वयं अपने ही इन अपराधों से मुक्त न होंगे, तब तक हिन्दी-माता अपने ऊपर दूसरों-द्वारा किए हुए अत्याचारों पर कम रोएगी, अपने ही पूतों की निष्कर्मता और कर्तव्यहीनता पर सिर पटकती रहेगी। यदि उसके ही बेटे ऐसे न होते तो कैसे कोई उसका अपमान कर सकता। अभी बहुत देर नहीं हुई है—क्या हम अपने हिन्दीवाले भाइयों और भारत-भक्तों से आशा करें कि वे अपनी मातृभाषा अथवा राष्ट्रभाषा का मस्तक ऊँचा उठाने में अपना तन-मन-धन अर्पित कर देंगे!

महाकवि शम्भु

श्री प्रभात मिश्र, शास्त्री, साहित्य-रत्न

संस्कृत-साहित्य समुद्र के समान विशाल और अगाध है। इस साहित्य-सागर के वाल्मीकि, व्यास, भास, कालिदास, भवभूति, भारवि जैसे सुप्रसिद्ध संस्कृत कविरत्नों से ही वर्तमान विद्वत्-समाज अब तक परिचित है। कुछ कविरत्नों का तो आधुनिक विद्वानों को नाम तक नहीं ज्ञात है। उन्हीं अज्ञात रत्नों मे 'महाकवि शम्भु' भी हैं।

इन महाकवि का जन्म पृथ्वीतल के स्वर्ग, प्रकृति की क्रीड़ाभूमि, काश्मीर में हुआ था। पुरावृत्तज्ञों से यह बात छिपी नहीं है कि कमनीय काश्मीर इस समय जितना अधिक अपने प्राकृतिक सौन्दर्य के लिए विश्व-विख्यात है, उससे भी कहीं अधिक विक्रम की द्विसहस्राब्दी के आरम्भ में अपने गहन विभिन्न-शास्त्रीय ज्ञान के लिए प्रसिद्ध रहा है।

इस भूमि में वेद के भाष्यकार सुप्रसिद्ध विद्वान् उव्वट, पतञ्जलि-महाभाष्य के टीकाकार वैयाकरण-केशरी कैयट, वाग्देवतावतार मम्मट, 'ध्वन्यालोक' के लेखक सहृदय-शिरोमणि आनन्दवर्धन, 'विक्रमाङ्कदेवचरित' महाकाव्य के प्रणेता, बिल्हण, ख्याति-प्राप्त ऐतिहासिक ग्रन्थ 'राज-तरङ्गिणी' के रचयिता कल्हण, व्यासावतार महाकवि क्षेमेन्द्र आदि बहुत-से विद्वान् समय समय पर पैदा हुए हैं।

अन्य संस्कृत कवियों के समान महाकवि शम्भु के काल-निर्णय के सम्बन्ध में अधिक असुविधा का अनुभव नहीं करना पड़ता; क्योंकि इस कवि के रचित दो ग्रन्थ हैं। 'राजेन्द्रकर्णपूर' और 'अन्योक्तिमुक्तालता'। ये दोनों ग्रन्थ 'निर्णयसागर' प्रेस बम्बई से 'काव्यमाला गुच्छक' के प्रथम द्वितीय भाग में पण्डित दुर्गाप्रसाद-द्वारा सम्पादित होकर प्रकाशित हो चुके हैं। 'राजेन्द्रकर्णपूर' के अध्ययन से ज्ञात होता कि 'शम्भु' काश्मीर-महाराज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'हर्षदेव' के सभापण्डित थे। कवि ने इन्हीं की प्रशस्ति में 'राजेन्द्रकर्णपूर' का प्रणयन किया था। यह बात इस ग्रन्थ के* उन्नीसवें और बयालीसवें पद्य की अन्तिम पंक्ति में प्रयुक्त 'श्रीहर्षपृथ्वीभुजः' और 'काश्मीरमीनध्वजः' से स्पष्ट सूचित होती है। †हर्ष का राज्यकाल ई० १०७३ से ११०१ तक था। इससे निर्विवाद सिद्ध है कि 'शम्भु' का जन्मकाल ग्यारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध के सन्निकट होगा। शम्भु को अपनी कृतियों की श्रेष्ठता पर बड़ा विश्वास था। उन्होंने 'राजेन्द्रकर्णपूर' के प्रारम्भ में और अन्त में अपनी कलापूर्ण कृतियों की प्रशस्ति में दो श्लोक लिखे हैं; वे परम रोचक और हृदय-ग्राही हैं।

प्रेमाणं विनिमील्य मल्लिकलिकाकर्णावतंसे रसम्;
मुक्त्वा मौक्तिककुण्डले कुरुत भोः! शम्भो गिरः कर्णयोः।
युष्माकं रतिकान्तकार्मुकलताक्रेकारकान्ते रुते;
सोत्कण्ठं कलकण्ठकण्ठकुहरोद्भूतेऽपि मा भून्मनः॥

मल्लिका की कलियों के बने हुए कर्णाभरण तथा मुक्ता-जटित कुण्डलों से अपने प्रेम को हटाकर—अर्थात् उन्हें कानों में न पहनकर—(ध्यानपूर्वक) शम्भु कवि की वाणी को उन कानों से सुनो। इसके सुनने पर रति-नायक कामदेव के धनुष-टङ्कार के झङ्कार के समान मधुर, कोकिल की काकली अथवा हंस की स्वर-माधुरी भी तुम्हारे मन को उत्कण्ठित न कर सकेगी।

पीयूषद्रवहारिणी सुमनसां भ्रूलास्यविस्तारिणी;
त्वत्सेवाभिरवापि काप्यभिनवा वाग्देवते! भारती।
अस्त्येका तु कृताञ्जलेर्जननि! मे शम्भोरियं प्रार्थना;
मद्वाचां क्वचिदस्तु वस्तुनिपुणः श्रोता सचेता जनः॥

वाग्देवते भारति! अमृत की मधुरता को मन्द करने-वाली तथा सहृदयों की भौंहों को आनन्द से नचा देनेवाली, किसी नूतन वाणी को मैंने प्राप्त किया है। किन्तु माँ! हाथ जोड़कर तुमसे मेरी एक प्रार्थना है कि मेरी उस वाणी को सुननेवाले जन काव्य के मर्मों के जाननेवाले तथा सहृदय ही हों।

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि शम्भु ने अपनी कविता-मधुरिमा में संसार के सारे सौन्दर्य-भाव को एक रूप में रखने का प्रयास किया था।

अब पाठक अपनी कविता के आगे कोकिल की काकली को भी तुच्छ समझनेवाले इस आत्मविश्वासी कवि की सहृदय हृदय-हारिणी सरस रचनाओं का कुछ रसास्वादन करें।

निर्यातं तगरैः स्थितं कुरवकैरुज्जृम्भितं चम्पकैः;
सञ्जातं वकुलैः स्मितं विचकिलैरुन्मीलितं पाटलैः।
किं रोलम्ब! विलम्बसे विहरणक्रीडां कुरु क्वापि ते;
किञ्चोदञ्चतु वञ्चिताम्रतरसः पाकाञ्चितः पञ्चमः॥

कवि भ्रमर को सम्बोधन कर कह रहा है—'तगर, खिल पड़े; कुरवक, कुसुमित हो गए; वकुल, विकसित हो गए, विचकिल (एक प्रकार की लता) हँस पड़ी, पाटल, (गुलाब) भी प्रफुल्लित हो चुके, हे भ्रमर! विलम्ब क्यों कर रहे हो? विहरण करो और सुधा से भी अधिक मधुर परिपक्व स्वर में (कोकिल के) पञ्चम राग की तरह सरस, मञ्जु गुञ्जन भी साथ-साथ में होता चले।

वसन्तश्री का यह मनोहर वर्णन कालिदास की याद दिलाता है—

मानं मुञ्च विपञ्चि! पञ्चमरवन्यक्कारपारङ्गमाः;
मा भूवन् कलकण्ठ! कण्ठकुहरे कुण्ठक्रमास्ते गिरः।
प्राप्तः पञ्चशरप्रपञ्चशरणं यद्भृङ्गभङ्गी गुरुः;
बन्धूक प्रिय बान्धवो धवलितश्यामाधवो माधवः।

हे वीणे! नाद की मधुरिमा से जनित अपने मान को तुम छोड़ दो। कोकिले! पञ्चम स्वर को तिरस्कृत करने में पारगामिनी ओजहीन, तुम्हारी वाणी भी अब मत हो, अर्थात् अब तुम भी कूकना बन्द कर दो; क्योंकि पञ्चशर कामदेव के व्यापार को प्रश्रय देनेवाले भ्रमरों के समाज को चपलता का उपदेश देनेवाला बन्धूक (दुपहरिया) का प्रियबन्धु, सुन्दरी श्यामा लता का स्वामी माधव (वसन्त) आ गया है।

---

* शेष! क्लेशमशेषमुत्सृज भज त्वं कूर्म! कर्मस्वकम्;
स्वैरं खेलतु सिन्धुसैकतलताकुञ्जेषु दिक्कुञ्जराः!
अभ्येतां सकुलाचलां सनगरां साम्भोनिधिं सापगाम्;
सद्वीपां च भुवं बिभर्ति हि भुजः 'श्रीहर्ष'पृथ्वीभुजः॥
तन्मूर्तं भुवने मुहूर्तममृतं मन्ये भृशं वासरम्;
सारं वेद्मि तदेव सैव च गुणैरायामिनी यामिनी।
श्रीवासो यशसां पदं सुमनसामप्यास्पदं सम्पदाम्;
यत्रागच्छति गोचरं नयनयोः 'काश्मीर'मीनध्वजः॥

† देखिए डाक्टर एम्० कृष्णमाचारी, एम० ए०, एम्० एल०, पी-एच० डी०, एम० आर० एस० लिखित "हिस्ट्री आफ् क्लासिकल संस्कृत लिट्रेचर" पृष्ठ १७६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस तरह संयत किन्तु सुसज्जित भाषा में लिखी 'अन्योक्ति-मुक्तालता' की सारी कविताएँ पाठकों के मन को मन्त्र-मुग्ध सी कर लेती हैं। वस्तुतः 'अन्योक्तिमुक्तालता' अन्योक्तिरूपी मुक्ताओं (मोतियों) की लता ही है।

'राजेन्द्रकर्णपूर' की अधिकांश कविताओं में कवि ने अपने आश्रयदाता 'श्रीहर्ष' की यशोगाथा का विशद वर्णन किया है। इससे पाठक यह न समझें कि इसमें सरस सूक्तियों का अभाव होगा। इस काव्य में भी बहुत-से श्लोक बड़े ही सुन्दर बन पड़े हैं।

उनकी कृतियों के परिशीलन से प्रकट होता है कि शम्भु का संस्कृत भाषा और भाव पर पूरा अधिकार था। किसी पद्य में कहीं एक भी पद भाषा-शैथिल्य का परिचायक नहीं है। भाषा के ये दास न थे। भाषा जैसे इनकी स्वयं दासी थी। उचित भी है। महाकवि शम्भु बने हुए कवि तो थे नहीं; ये भारतीय विश्वास के अनुकूल जन्मजात सिद्धसारस्वत कवि थे। इस दशा में भाषा का स्वयं दासी होना शम्भु के लिए आवश्यक है।

इन सब बातों के होते हुए भी शम्भु की कृतियों में एक दोष है; वह है शब्दाडम्बर। किन्तु इसका एक कारण है। हिन्दी के रीतिकालिक कवियों की भाँति संस्कृत के उत्तर-कालिक कवियों ने भी भाषा-चमत्कार की ओर अधिक ध्यान दिया था, अर्थ-सौष्ठव की ओर कम। इसी को हम दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि 'शब्दालङ्कार' की ओर अधिक ध्यान दिया गया और 'अर्थालङ्कार' की ओर कम। स्वभावतया अपने काल में प्रचलित काव्य-धारा से कोई कवि अछूता नहीं रह सकता। इसी से 'शम्भु' की कविताओं में 'शब्दालङ्कार' की छटा विशेष रूप से पाई जाती है। किन्तु इन्होंने शब्दालङ्कारों के चक्कर में पड़कर कहीं अर्थहीन शब्दों का प्रयोग नहीं किया, जैसा कि 'शब्दालङ्कार' के प्रयोक्ता कविगण बहुधा करते हैं।

कवि को 'प्रबन्ध-काव्य' की अपेक्षा 'मुक्तक-काव्य' में रस की सृष्टि करने में बड़ी कठिनता का सामना करना पड़ता है; क्योंकि उसे 'प्रबन्ध-काव्य' की तरह 'मुक्तक-काव्य' में अपनी प्रतिभा के प्रदर्शन का क्षेत्र विस्तृत नहीं मिलता। प्राचीन मुक्तक-काव्यों की सीमा एक ही छन्द तक सीमित रहने के कारण चार पदों के एक छन्द में रस की सृष्टि करने के लिए बड़ी सूक्ष्म शक्ति और प्रतिभा की आवश्यकता पड़ती है। यही कारण है कि संस्कृत में 'मुक्तक-काव्य' तो बहुतों ने लिखे; किन्तु रस-पूर्ण 'मुक्तक' न होने के कारण किसी को केवल 'मुक्तक-काव्य' लिखकर वाल्मीकि, भास, कालिदास, भवभूति, भारवि आदि कवियों के समान व्यापक कीर्त्ति नहीं प्राप्त हो सकी। परिगणित सौ छन्द लिखकर अमरता को प्राप्त होनेवाले महाकवि अमरुक ही इसके अपवाद हैं। इनके मुक्तकों की प्रशंसा करते हुए आचार्य आनन्दवर्धन ने यहाँ तक लिख डाला है कि "शृङ्गाररस की वृष्टि करनेवाले 'अमरुक' के मुक्तक प्रबन्ध-काव्य के समान हैं।"

उपर्युक्त विवेचन से सिद्ध है कि संस्कृत में रसपूर्ण मुक्तक लिखना गागर में सागर भरने के समान बहुत दुरूह रहा है। किन्तु 'शम्भु' के सुसङ्गठित पदबन्ध से मुक्त प्रत्येक छन्द रस-परिपाक में पूर्ण और सङ्गत है। प्राञ्जल और सुसङ्गठित भाषा के व्यवहार में 'शम्भु' ने बहुत अंशों में 'अमरुक' की समानता प्राप्त की है। शम्भु के प्रत्येक छन्द में प्रत्येक पद आभूषण में रत्न के सदृश जटित विदित होता है। यदि आप इनके छन्दों से एक भी पद हटा दें तो उसकी वही स्थिति हो जाएगी जो स्थिति एक रत्न निकाल देने से आभूषण की हो सकती है। 'शम्भु' के मुक्तक मुक्ता के समान महान्, मूल्यवान् और मनोमोहक हैं। उनके मुक्तकों का मूल्य आँकने के लिए काव्यकला-कोविद, कुशल मुक्तापारखी मर्मज्ञों की आवश्यकता है।

इस प्रसङ्ग में इतना और कह देना अनुपयुक्त न होगा कि 'शम्भु' कवि को इस लेख के द्वारा मैंने ही सम्मानित 'महाकवि' की महत्तम उपाधि से नहीं विभूषित किया, अपितु आज से सात सौ वर्ष पूर्व पच्चीस सर्ग का बृहत्काय महाकाव्य 'श्रीकण्ठचरित' लिखनेवाले महाकवि 'मङ्खक' ने अपने काव्य के पच्चीसवें सर्ग में इनके पुत्र वैद्यराज आनन्द की वन्दना करते हुए इनके नाम के साथ, महाकवि शब्द का प्रयोग किया था—

अशेषभिषगग्रण्यं, शरण्यं शास्त्रपद्धतेः।
ववन्देऽथ तमानन्दं, सुतं शम्भुमहाकवेः॥

अर्थात् विभिन्न शास्त्रों के ज्ञाता, वैद्य-शिरोमणि, 'महाकवि शम्भु' के परम प्रख्यात पुत्र 'आनन्द' को प्रणाम करता हूँ।

——

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

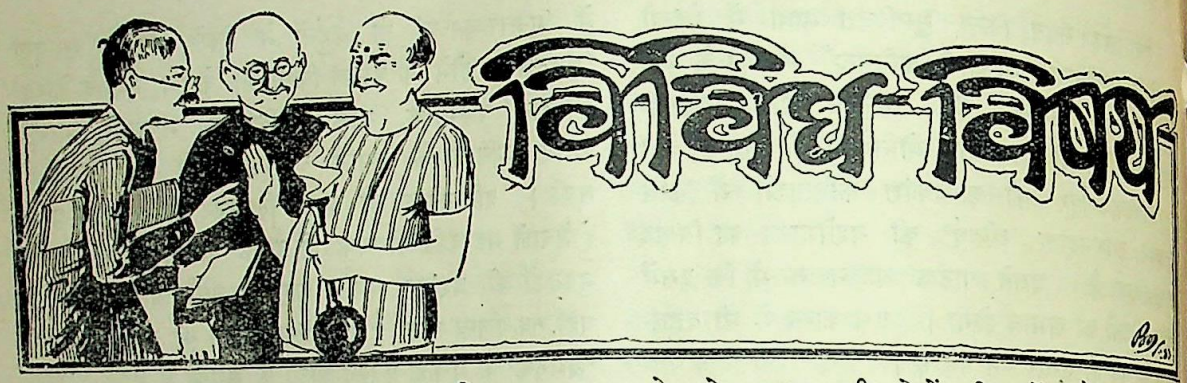

गजराज—एक अज्ञात कवि

आज से लगभग सत्तर वर्ष पूर्व हरदोई जिले के अहिरोरी गाँव में एक ऐसे कवि का जन्म हुआ था जिसका जीवन भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के जीवन का प्रतीक था, जिसका जीवन केवल कविता और देश के लिए था और जिसके जीवन के विषय में आज हम कुछ भी नहीं जानते। उस कवि का नाम था—ठाकुर गजराजसिंह। गजराज के समान कितनी ही निधियाँ धूल में पड़ी-पड़ी खो गई हैं, आज उनके अस्तित्व पर भी हमें संशय होता है। वे प्रोपेगैंडा, दलबन्दी और प्रकाशन से दूर माता-भारती की आराधना में लीन रहे। उन्होंने जाना भी नहीं कि पत्र-पत्रिकाओं में उनकी आराधना की चर्चा हो रही है या नहीं—और वे थे सच्चे आराधक, क्योंकि वह आराधना ही क्या जिसमें अहन्ता शेष रह जाए।

अहिरोरी चन्देल राजपूतों का अच्छा खासा गाँव है। उसका अपना इतिहास भी है। महोबा से कुछ चन्देल राजपूत कानपुर के शिवराजपुर गाँव से आकर बस रहे थे। उनमें से ठाकुर अभयसिंह ने हरदोई जिले के इक्यावन गाँव अहीरों से छीनकर अपनी विजय-स्मृति में अहिरोरी बसाया था। यह गदर के पहले की घटना है, जब कि लखनऊ के नवाब भी अहिरोरी के चन्देलों का मान करते थे। क्योंकि उन्होंने कभी खिराज न दिया था। गदर के बाद शिवराजपुर अन्य छोटे-मोटे राज्यों की तरह मटियामेट कर दिया गया और अहिरोरी अपना इतिहास अपनी सूखी आँखों में भरे अब भी पड़ी है, धूलि-धूसरित-सी। ठाकुर गजराजसिंह इन्हीं अभयसिंह के वंशज थे। भग्नावशेष के रूप में थोड़ी-सी जमींदारी बच रही थी। अब वह भी धीरे-धीरे मिट गई; शेष रह गई है केवल उनकी कविता, जिसे इर्द-गिर्द के चार-छः गाँवों के लोग आज भी खेतों-खलिहानों और चौपालों में गाते हैं।

'कवि सत्य' के समान 'जनसत्य' भी झूठा होता है। 'कवि पैदा होते हैं, बनाए नहीं जाते' भी एक जनसत्य है, इसलिए झूठ है। सचमुच यदि 'गजराज' को कवि बनानेवाले कुशल हाथ मिल जाते तो आज हम उन्हें भूले न होते; क्योंकि जो व्यक्ति तेरह वर्ष की अवस्था में ऐसी कविता लिख सकता है—

"पाय दुशासन त्यों अनुशासन जाय गही कर सुन्दर सारी।
भीषम, द्रोण, बृकोदर, अर्जुन सम्मुख दौपदी दीन निहारी।
भीर भरे 'गजराज' समाज सें जाय लग्यौ मन कुञ्जविहारी।
हे करुणाकर मो पत राखहु होत सभा बिच नारि उघारी।"

उसमें कवि का पुष्ट बीज था; आवश्यकता थी किसी कुशल कृषक की जो उसकी उचित देख-भाल कर सकता। वैसे भी बीज जमेगा किन्तु जङ्गल की किसी झाड़ी के समान।

गजराज एक वन-सुमन थे जो वन में ही खिले और वन में ही मुरझा गए; उस वन-सुमन का सौरभ चार-छः कदम की दूरी तक उड़कर आज हवा में घुल-मिलकर खो रहा है।

पन्द्रह वर्ष की अवस्था में वे चुपके से बुद्ध के समान घर से भागकर कानपुर में पण्डित देवदत्त शास्त्री के संरक्षता ने तपस्या करने लगे। तपस्या थी—अष्टाध्यायी और गीता का अनुशीलन। किन्तु कविता साथ ही रही। उस समय उसका रूप ऐसा था जैसा तरुण अवस्था से प्रायः दिखाई पड़ता है—

'गहब गुलाबन में बसि के गरूरी भयो
सेा अलि बबूरन बसाय यश लहिए।
मानस ते काढ़ि के मराल गजराज' चोंच
काँकरी चुनाय चित्त चाहे तौन कहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपने वियोग बीच वारिधि के बूड़े जौन
ताको हाथ हित कै जरूर नाथ गहिए।
चन्द्र ओर देखे विकल चकोर त्यों—
चकोर ओर देखे यह चन्द्र हू को चहिए।'

कानपुर से लौटकर कवि ने पण्डित ज्वालादत्त शर्मा की सहायता से, जो उन दिनों अहिरोरी में ही आकर बसे थे, एक कवि-समाज बनाया। भारतेन्दु बाबू का 'भारत-दुर्दशा' नाटक खेला गया और रामायण की छन्दों में रचना की गई जिसकी १८९३ ई० में ढाई सौ प्रतियाँ छपी थीं। आज वे अप्राप्य हैं। कितने ही गाँवों के लोगों को प्रेरणा मिली और वे साहित्यानुरागी बन गए यहाँ तक कि करीम जुलाहा भी कविता करते थे।

गजराज का जीवन-काल हिन्दी के उत्थान का काल था। यों तो हिन्दी का जन्म हर्षवर्धन का राज्यकाल माना जाता है परन्तु सच्चाई के अधिक निकट की बात है कि उस समय हिन्दी घुटनों के बल चल रही थी। उस समय 'सरस्वती' का जन्म न हुआ था; प्रसाद और प्रेमचन्द ने साहित्य में पदार्पण न किया था। उस समय 'गजराज' कानपुर के 'रसिक मित्र' बिसवाँ (सीतापुर) के 'काव्यसुधाकर' और नागपुर के 'हिन्दी केसरी' जैसी पत्रिकाओं में बराबर लिखा करते थे। पहली दो पत्रिकाएँ समस्यापूर्ति की पत्रिकाएँ थीं। जो दो कारण उनके विलीन होने के हैं सम्भवतः वे ही कारण 'गजराज' को उठा न सके—वे हैं : समस्यापूर्ति की बढ़ती हुई अलोकप्रियता और खड़ी बोली का उत्थान। 'गजराज' एक आशुकवि थे और जैसा मेरा कानपुर के दो-तीन आशुकवियों से परिचय होने के कारण अनुमान है कि आशुकविता धनाक्षरी और सवैयों का अभ्यास मात्र है, समस्यापूर्ति ही उसका उपयुक्त साधन है।

'गजराज' की भाषा अवधी-मिश्रित व्रजभाषा थी। ग्रामीणता उसका दोष नहीं प्रत्युत एक गुण था, जिसके कारण आज भी उनके सैकड़ों छन्द ग्रामीणों को जिह्वाग्र हैं। 'गजराज' की भाषा भारतेन्दु बाबू से मिलती-जुलती है, यह इस कारण और भी क्योंकि उन पर भारतेन्दु बाबू का काफी प्रभाव था। गजराज भारतेन्दु बाबू के एक प्रशंसक भक्त थे। पिङ्गल में गजराज को केशव के समान निपुणता प्राप्त थी। रामायण और वैजर्तपुराण के छन्दोबद्ध संस्करणों में केशवदास की 'रामचन्द्रिका' का रूप मिलता है। इसके अतिरिक्त राग-रागिनियाँ भी उन्होंने काफी लिखी हैं जिससे अनुमान लगाया जा सकता है कि उन्हें सङ्गीत से भी प्रेम रहा होगा।

विद्रोह जैसे यौवन का लक्षण है। गजराज विद्रोही तो न थे परन्तु युवावस्था में देश-प्रेम उनमें स्वतः फूट पड़ा था। वह समय था बङ्ग-भङ्ग का। नायिकाभेद को एक ओर रख दिया और रक्त की गर्मी ने माँग की देश-प्रेम की। कवि-कण्ठ से स्वतः फूट पड़ा—

"भयो यह कैसो देश हमारो ?
इक दिन रह्यो जगत में ऊँचो सब गुण-गणन अगारो।
सो परद्वार भीख माँगन को निज कर करत पसारो।
कहँ व्यापार, कला, कहँ कौशल, कहँ उद्योग सिधारो ?
आगे धरो थार भोजन को लात मर्मर को टारो ?
विद्या धनरु ज्ञान अरु गौरव अरु अधिकार सुखारो।
सात समुद्र पार सो सरबस बरबस जात उतारो ॥"

भारतेन्दु बाबू से कितना साम्य है! अन्तिम पंक्ति बरबस भारतेन्दु बाबू की उस पंक्ति की याद दिला देती है—"पर धन विदेस चलि जात यहै अति ख्वारी।" किन्तु गजराज भारतेन्दु बाबू से चार बूँद अधिक ही, केवल धन ही नहीं ज्ञान, गौरव और अधिकारों के लिए भी, रोते हैं। और स्वयं उनका यह कथन गलत हो जाता है—

"प्रभु मैं बहुत कछु अघ कीन।
जौन देस स्व-जन्म पायो, पालि तन कियो पीन।
तौन भारत होत गारत मैं न कछु मन दीन ॥"

वास्तव में कवि का शेष सारा जीवन देशप्रेम से सराबोर रहा। बङ्गभङ्ग के साथ ही कवि की दृष्टि पूरे देश पर पड़ी और फिर गाँव के वातावरण में एक स्पन्दन सा होने लगा। अछूतोद्धार में उन्होंने केवल बौद्धिक कार्य ही न किए अपितु आर्यसमाज के सच्चे भक्त होने के कारण भी इस दिशा में उनके कितने ही प्रयास लोगों को आज तक याद हैं। आज भी अछूत अपने 'आर्य महोदय' को भूले नहीं हैं। आज-कल की 'कल्चर सोसाइटियों' की भाँति उन्होंने अपने गाँव में एक 'सुरीति-प्रचारिणी सभा' स्थापित की थी, जिसने बायकाट आन्दोलन को बल दिया, मद्य-निषेध किया, शिक्षा-प्रसार किया। 'गजराज' स्त्री-शिक्षा के भी कट्टर पक्षपाती थे। देखिए नारी की महत्ता—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"नारिन ही ते भये पृथु से जिनके
यश आजु लौं लोक उदोत हैं।
त्यों 'गजराज' सुधीर के बीज
सुनारिन में नित सज्जन बोत हैं।
नारिन ही ते युधिष्ठिर से भये जो
जग-जाहिर धर्म के सोत हैं।
नारिन को कछु हीन न जानिए
नारिन ही से सदा नर होत हैं॥"

भावुक कवि में राष्ट्रीयता का ऐसा पक्का रङ्ग था कि आँखें चौंधिया जाती हैं;—

"कैसी भ्राता अचरज भरी बात है, क्षुद्र छोटि।
माता बंध्या-सदृश विलपै जन्मि के तीस कोटि!"

कितना मार्मिक प्रश्न है!

किन्तु 'गजराज' केवल भावुक कवि ही न थे। गृह-उद्योगों की ओर भी आपका विशेष आकर्षण था। करीम जुलाहा उनके कवि-समाज में थे, और उन्होंने जुलाहों को फिर से अपने व्यवसाय को प्रारम्भ करने की प्रेरणा दी। स्वयं भी सुलेखन कला में पण्डित गौरीशङ्कर भट्ट की सब लिपियों का सफल सुन्दर अनुकरण किया था, और हिन्दी के सुन्दर अक्षरों को ढलवाना चाहते थे। पीतल की निबें और कलमें तो स्वयं बना लेते थे।

कवि की असामयिक मृत्यु, जो सैंतीस वर्ष की ही अवस्था में हो गई थी, के सात वर्ष बाद १९२२ ई० में 'आरत भारती' नाम से ४० पृष्ठों का एक कवि की स्फुट रचनाओं का सङ्कलन निकला था, जिसकी केवल ५०० प्रतियाँ छपी थीं, और वे भी नाते-रिश्तेदारों में बँट गईं। मेरे पिताजी के पास 'आरत भारती' की पाँच प्रतियाँ हैं। इसकी भूमिका में यद्यपि सम्पादक ने उनकी सम्पूर्ण रचनाओं के प्रकाशन का वचन दिया था किन्तु, जैसा मैं जानता हूँ, आज तक उस ओर किसी का ध्यान न गया और अन्धकारमय भूत की काली-काली जिह्वाएँ एक तरुण आशुकवि की ख्याति को धीरे-धीरे निगल रही हैं।

—कुँवर आपौं, एम० ए०

दुनिया—जिसमें युद्ध न होंगे

आदमी वर्तमान से कभी सन्तुष्ट नहीं रहता, इसी लिए अतीत के गीत गाने का मोह और सुनहरे भविष्य की कल्पना का आनन्द उसकी परम्परागत बपौती रही है। अपने वर्तमान के प्रति यह असन्तोष-भावना ही विश्व को गतिशील बनाए है—समस्त सङ्घर्षों और तथाकथित 'प्रगतियों' का कारण है।

प्रत्येक क्रियाशील व्यक्ति अपने अतीत की स्मृति और वर्तमान के अनुभव की पृष्ठभूमि पर भविष्य का काल्पनिक महल बनाने के लिए तत्पर होता है, और प्रायः 'उसे' पाना चाहता है जो उसके जीवन में नहीं है। यही बात सामूहिक रूप से मानव-समाज पर लागू होती है। व्यक्ति, वर्ग या राष्ट्र—प्रत्येक, अपने दृष्टिकोण के अनुसार, अपने हित, स्वार्थ-पूर्ति अथवा उन्नति के लिए नए-नए साधनों और उपायों की कल्पना करता है, और अपनी अपनी क्षमता के अनुसार अपनी कल्पना को साकार देखने के लिए उत्सुक एवं प्रयत्नशील भी रहता है।

प्रत्येक प्रयत्न स्वार्थ-साधन की भावना से होता है। फलतः व्यक्ति, वर्ग या समाज और राष्ट्र के स्वार्थों की परस्पर टक्कर होते रहना अनिवार्य है। छोटे-छोटे घरेलू झगड़ों और आपसी विरोधों से लेकर विश्वव्यापी युद्धों तक के पीछे यही तथ्य रहा करता है, हमेशा से रहता आया है, और जब तक जगन्नियन्ता मानव-स्वभाव को बदल देने की आवश्यकता अनुभव नहीं करता, तब तक इन युद्धों का—मानव-जीवन के इन सङ्घर्षों का—अन्त होना सर्वथा असम्भव दिखता है।

युद्ध मानव-जाति के लिए आवश्यक नहीं, यह विश्व-शान्ति की योजनाओं के विधायकों का मत है। ये सब सिद्धान्त और योजनाएँ केवल तभी सार्थक हो सकती हैं जब आदमी स्वयं को विश्वरूपी सङ्गठन का अङ्ग अनुभव करे और उसके किसी भी अङ्ग की क्षति में अपनी ही क्षति देखे। यह कोई नया विचार नहीं है; मानव की सभ्यता के साथ ही 'विश्व-बन्धुत्व' का आदर्श भी दुनिया में आ चुका था। हमें यह भी तो देखने का कष्ट उठाना चाहिए कि सचमुच मानव ने इस आदर्श की ओर कम एकाध कदम उठाया है? या कि लक्ष्य से विपरीत दिशा में जाते हुए, हम स्वयं को ही धोखा देते आ रहे हैं!

प्रत्येक धर्मावलम्बी जब सैद्धान्तिक रूप से यह स्वीकार करते हुए भी कि 'हम सब एक ही ईश्वर की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है', आदमी के खून की नदियाँ बहाने पर तुला हुआ है और दुनिया के प्राचीनतम साहित्य से युद्ध-कथाओं का क्रम चला आ रहा है, तब भी मानव-समाज यह नहीं स्वीकार करना चाहता कि वास्तव में युद्ध मानव-स्वभाव-जनित है और जब तक यह स्वभाव नहीं बदलता, तब तक शान्ति-चर्चाओं और शान्ति-योजनाओं के बनने-बिगड़ने का क्रम युद्धों के साथ-साथ चलता ही रहेगा। मानव-स्वभाव मानव स्वयं बदल सकता है, भाग्यवादी तो इसे मान नहीं सकते। पुरुषार्थवादी शायद कोई उपाय खोज निकालें।*

आजकल युद्धोत्तर विश्व-निर्माण की योजनाओं का ज़ोर है। विदेशों में तो इस विषय पर काफी किताबें प्रकाशित हो चुकी हैं। जिसने पहले कभी राजनीति में विशेष दिलचस्पी नहीं ली और कभी दुनिया को एक इकाई मानकर उसके हित की बात नहीं सोची, युद्ध-काल में वह भी युद्धों का हमेशा के लिए अन्त कर देने के मसले पर अपनी राय रखता है। युद्ध के ताजे कटु अनुभवों का यह परिणाम अस्वाभाविक भी नहीं। पर स्वभाव के अनुसार ही, 'श्मशान-वैराग्य' की तरह विश्व-प्रेम का यह उफान शान्त होने में भी देर न लगेगी। ये सब प्रतिक्रियाएँ और योजनाएँ 'युद्धोत्तर' विश्व में होनेवाली बिलकुल स्वाभाविक बातें हैं, लेकिन वे 'युद्धहीन' विश्व का आधार बनने का आभास नहीं दे रही हैं।

मगर मैं निराशावादी नहीं हूँ; अलबत्ता मैं व्यावहारिक दृष्टिकोण से ही विचार करना पसन्द करता हूँ। विश्व-बन्धुत्व को मैं मानव-प्रगति का चरम लक्ष्य मानता हूँ। और यहाँ 'प्रगति' से मेरा मतलब 'सामूहिक उत्कर्ष के मार्ग से लक्ष्य की ओर अग्रसर होना' है। किन्तु मेरी धारणा है कि उस मार्ग का पथिक आज का मानव न होगा, बल्कि वह प्राणी होगा जो युद्ध करके अपनी समस्याएँ सुलझाने या स्वार्थ-सिद्धि की आदत छोड़ चुका होगा। उसे मैं 'महामानव' कहना ठीक समझता हूँ। महामानव का आविर्भाव नवीन विश्व-व्यवस्था का निर्माण करेगा। अनिवार्यतः नवीन विश्व की प्रत्येक बात वर्तमान संसार से सर्वथा भिन्न होगी। उसकी कुछ धुँधली-सी काल्पनिक रूपरेखा बनाने का प्रयत्न मात्र मैं यहाँ कर रहा हूँ।

प्राच्य और पाश्चात्य विद्वानों एवं दार्शनिकों ने समय-समय पर महामानव के गुणों अथवा स्वभाव का स्पष्ट सङ्केत किया है। यों तो कहना चाहिए कि जितनी भी उत्तम और निर्दोष बातों की कल्पना की जाती रही है और की जा रही है, वे यद्यपि मानव-जाति से सम्बन्ध रखती हैं, पर जब वर्तमान मानव में उनका अस्तित्व नहीं, तो उन सब गुणों से युक्त व्यक्ति महामानव ही हो सकता है। अनेक विद्वानों का कथन है कि जिस चीज की कल्पना की जा सकती है उसका अस्तित्व भी सम्भव है। आज की दुनिया के चमत्कारपूर्ण आविष्कार किसी समय पागल समझे जाने वाले कल्पनाशील व्यक्तियों की निःस्पृह साधना के परिणाम ही तो हैं।

त्रस्त और पतनोन्मुख मानव-जाति का पुनरुद्धार करने के लिए युग-पुरुषों का और विभिन्न क्षेत्रों में असाधारण प्रतिभा का प्रदर्शन कर लोक-कल्याण करनेवाले महान् व्यक्तियों का सभी देशों में अवतार होता आया है। सभी धर्मों और धर्मग्रन्थों में अवतारी पुरुषों का गुणगान है। हिन्दू धर्म-ग्रन्थों में सतयुग, द्वापर और त्रेता युगों का जो वर्णन है वह महामानव के अस्तित्व को न सही, उसकी कल्पना को तो एक भारी आधार दे ही देता है। जो किसी धर्म में विश्वास रखते हैं, उन्हें तो भरोसा है कि इस दुनिया (या इसकी बुराइयों) का अन्त होगा और तब समस्त प्राणी दूसरे लोक में पहुँचेंगे; अथवा नई सृष्टि होगी। इस नई सृष्टि को आप युग-परिवर्तन भी कह सकते हैं। चाहे किसी पुण्यात्मा के स्वर्ग या अन्य लोक में पहुँचने की बात हो और चाहे नए सिरे से सृष्टि का निर्माण होने का विश्वास हो, इन सबके निवासियों को मृत्युलोक के वर्तमान मानव से श्रेष्ठतर और सुखी ही माना जाता आ रहा है। शायद वही महामानवों की बस्ती हो।

*कुछ विद्वानों का मत है कि युद्ध करना मानव-स्वभाव नहीं; प्रारम्भिक मानव को अपनी आवश्यकता-पूर्ति के लिए तथा परिस्थिति से बाध्य होकर सङ्घर्ष करने पड़ते थे। अब मानव का बौद्धिक विकास हो चुका है और परिस्थितियाँ भी बदल चुकी हैं, इसलिए वह प्रारम्भिक-काल की सङ्घर्षप्रियता के संस्कारों को त्यागकर सुखी संसार के निर्माण की ओर इच्छाशक्ति का उपयोग कर सकता है।—लेखक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो ऐसी धारणाओं का उपहास करते हैं उन्हें इतना विश्वास तो रखना ही चाहिए कि जिस प्रकार अभी तक विशेष अवसरों पर युग-पुरुष अवतीर्ण होते रहे हैं, उसी प्रकार उनका जल्दी-जल्दी, और क्रमशः अधिक संख्या में जन्म लेना अनहोनी बात न होगी। और ज्यों-ज्यों उनकी संख्या बढ़ती जाएगी (परिणामतः उनका प्रभाव और उनके सुप्रयत्नों का परिमाण भी बढ़ेगा) त्यों-त्यों युद्ध-हीन, नवीन विश्व का स्वप्न भी साकार होता जाएगा। परन्तु इस नवीन विश्व और हमारे बीच अभी कितनी शताब्दियों का अन्तर है, यह कोई नहीं कह सकता। वर्तमान मानव-समाज की इच्छा-शक्ति महामानव के आविर्भाव और नूतन विश्व के निर्माण को सम्भव करने में बहुत सहायक हो सकती है।

सत्कल्पना की श्रेष्ठतम सृष्टि

महामानव शारीरिक दृष्टि से पूर्णतः दोषहीन तथा सौन्दर्य, स्वास्थ्य और शक्ति की साक्षात् प्रतिमूर्ति होगा।

वह असाधारण मेधावी, तेजस्वी और पुनीतात्मा होगा।

वह सरलता, कुशलता तथा चातुर्य का सर्वोत्तम मेल और वर्तमान जगत् के प्राणियों में पाए जानेवाले हृदय तथा मस्तिष्क के समस्त सद्गुणों का सुन्दर समन्वय होगा।

वह सुख-शान्ति की स्थापना तथा श्रेष्ठतम विश्व के निर्माण के लिए अवतरित होगा और सर्वदा अपने जीवन के उद्देश्य तथा कर्त्तव्य के प्रति सजग रहते हुए, उसकी पूर्ति के लिए स्वेच्छा और निश्छलता के साथ कार्यशील रहेगा।

वह प्रत्येक प्राणी को समानता और स्नेह की दृष्टि से देखेगा और स्वयं को, किसी स्वार्थ से सम्बद्ध न रहकर, अखिल-विश्व का एक उत्तरदायी नागरिक मानेगा।

स्वस्थ शरीर और स्वस्थ मन का स्वामी होने के कारण वह वर्तमान मानव की समस्त कमजोरियों से मुक्त रहेगा और इन्द्रियों पर पूर्ण नियन्त्रण रक्खेगा।

वह जरा-मृत्यु के भय से मुक्त होगा और अपने सुनिश्चित ध्येय की पूर्ति के बाद स्वेच्छा से शरीर-त्याग करेगा।

लोक-कल्याण के ध्येय की पूर्ति के लिए ही वह सुयोग्य 'जीवन-सहचरी' का वरण करेगा। (पत्नी के 'दासी' और 'स्वामिनी'-रूप तब न रहेंगे; मानवी तब विश्व-विधात्री मातृ-जाति के रूप में समस्त मानवीय प्रवृत्तियों की सञ्चालिका और मूलाधार होगी—वह अपने 'शक्ति' और 'लक्ष्मी' विशेषणों को सार्थक करेगी, आज की तरह वह निरी व्यभिचार की उपादान, बच्चे पैदा करने की मशीन या चञ्चल-प्रकृति 'तितली' बनकर मानव को पतन के गर्त की ओर ले जाने की चेष्टा न करेगी। वास्तव में मातृ-जाति के परिवर्तन पर ही विश्व का परिवर्तन निर्भर है।)

वह स्वयं से भी अधिक योग्य नागरिक विश्व को प्रदान करने के अपने एक प्रमुख दायित्व को वहन करने के हेतु, अत्यन्त संयत रूप से, कर्त्तव्य मानकर सृष्टि-उत्पादन के स्वाभाविक क्रम का पालन करेगा। सन्तति के पूर्ण विकास से लिए माता-पिता अपनी सामर्थ्य भर, समस्त सम्भव साधनों के साथ, यत्नशील रहेंगे।

अपने उत्पादक के प्रति कृतज्ञता-भाव रखते हुए, अपने उत्पादन के उद्देश्य का ज्ञान प्राप्त कर उसकी पूर्ति में रत रहना ही उसका 'धर्म' होगा और उसे वह सहज भाव से, नित्य कार्य की तरह सम्पन्न करेगा।

रूढ़ियों और दिखावों का उसके जीवन में कोई स्थान न होगा। वह पूर्णतः यथार्थवादी होगा। आवश्यकता की चीजें उसे सदैव सुलभ रहेंगी इसलिए वह कभी किसी वस्तु का अनावश्यक सञ्चय न करेगा। आवश्यकता-पूर्ति के बाद बची हुई वस्तु सार्वजनिक सम्पत्ति होगी।

अपनी स्वातन्त्र्य-प्रियता के कारण वह अपने प्रत्येक कार्य तथा रहन-सहन में अपने व्यक्तित्व की छाप रक्खेगा। अपनी सुविधा की दृष्टि से ही वह अपने वस्त्र, मकान इत्यादि बनवाएगा और उसके आसपास की प्रत्येक वस्तु में उसकी सुरुचि, कलाप्रियता तथा सूझ की झलक दिखाई देगी।

उसकी विवेक-बुद्धि इतनी तीव्र रहेगी कि स्वभावतः उसका प्रत्येक कार्य उचित और सुसम्पन्न हो। निर्मल हृदय और सदाशय होने के कारण भावी खतरे की सूचना उसकी आत्मा पहले से ही दे देगी और इस तरह वह कभी सङ्कटग्रस्त न हो सकेगा।

उपर्युक्त बातें महामानव के स्वरूप की कल्पना में शायद आपको आंशिक सहायता दे सकें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्दोष विश्व-व्यवस्था

महामानव-द्वारा नियन्त्रित विश्व में रोग, कष्ट, अत्याचार, अन्याय, आतङ्क आदि सामाजिक दोषों का अस्तित्व न रहेगा।

प्रत्येक नागरिक, स्थिति के अनुसार, कर्त्तव्यों के प्रति सजग रहेगा इसलिए प्रत्येक के अधिकार भी पूर्णतः सुरक्षित रहेंगे। गरीबी, भिखमङ्गी, पूँजीवाद आदि विषमताएँ सदैव के लिए लुप्त हो चुकेंगी।

प्रत्येक व्यक्ति प्रकृति के अनुकूल, संयत जीवन व्यतीत करेगा इसलिए ओषधि और चिकित्सक का महत्त्व बहुत कम हो जायगा। मानव-शरीर-विज्ञान-वेत्ताओं का कार्य होगा प्रत्येक व्यक्ति को शरीर की कार्य-पद्धति का ज्ञान कराना और स्वस्थ रहने के सम्बन्ध में आवश्यक सूचनाएँ देते रहना।

शिक्षा का उद्देश्य सुखी एवं श्रेष्ठ जीवन की कला सिखाना और मानव-धर्म तथा विश्व-प्रेम की ओर प्रेरित करना होगा; और यह शिक्षा किताबें रटाकर नहीं, विशाल विश्व की विस्तृत प्रयोगशाला में विशेषज्ञों द्वारा दी जाएगी।

प्रत्येक नागरिक की रुचि तथा प्रवृत्ति के अनुरूप कार्य ही उसे व्यवस्थापक-प्रतिनिधि-सभा की ओर से सौंपा जायगा, और कार्य-पद्धति की वैज्ञानिक शिक्षा देने का प्रबन्ध किया जायगा।

नगर और ग्रामों का भेद मिटा दिया जाएगा। विशेषज्ञों की सहायता से वैज्ञानिक ढङ्ग पर, सम्पूर्ण सुख-सुविधाओं से सुसज्जित, नगर तथा ग्रामों की समस्त अच्छाइयों से युक्त और उनके वर्तमान दोषों से मुक्त, सीमित आबादी की बस्तियाँ बसाई जाएँगी।

पुलिस, वकील, न्यायालयों और जेलों की कोई आवश्यकता न रह जाएगी, क्योंकि प्रत्येक नागरिक अपना कर्त्तव्य-पालन ही पुनीत धर्म मानेगा।

यह तो स्पष्ट ही है कि ऐसे विश्व में कला, विज्ञान और साहित्य सर्वोदय के लक्ष्य से नियन्त्रित और चरम उन्नति को पहुँचे हुए होंगे।

संक्षेप में कहा जाए, तो महामानव के नियन्त्रण में, दुःख और अशान्ति को उत्पन्न करनेवाली भूलों से नवीन विश्व सर्वथा मुक्त रहेगा। आज की दुनिया में से सारी विषमताएँ निकाल देने का जो परिणाम हो सकता है, वही 'नवीन विश्व' होगा। आज की दुनिया को यदि 'अन्धकार' की संज्ञा दी जाए, तो महामानव-द्वारा नियन्त्रित दुनिया 'प्रकाश' कहला सकती है। यदा-कदा प्रकाश की किरण के दर्शन हमें आशा बँधाते हैं कि वह दिन भी सम्भव है, जब सर्वत्र प्रकाश ही होगा।

—भोलेश्वर शुक्ल

भिखारी का 'गङ्गा-दहार'

चल गोरिया करे गङ्गा असननवाँ ॥ चल० ॥
सारी, चोली पेन्हिकर सब अभरनवाँ।
खाये खातिर बाँध नून, सतुआ, पिसनवाँ ॥ चल० ॥
बने त बना ल झटपट पकवनवाँ।
मिठरस चाहीं कुछ राह के भोजनवाँ ॥ चल० ॥
सुरसरि जल भरि हरि दरसनवाँ—
करि के, भिखारी कहे घुरे के मकनवाँ ॥ चल० ॥

गङ्गा-स्नान का प्रस्तुत चित्र भोजपुर इलाके का है; विशेषतः आरा, बलिया और छपरा का जहाँ की 'भोजपुरी' मातृभाषा है। कविवर भिखारी ठाकुर 'भोजपुरी' के ही सिद्धहस्त कवि हैं और अपनी कविता में वे लगभग अपने ही देश के चित्र अङ्कित किया करते हैं। भिखारी वैसे तो सारतः वैष्णव-हृदय हैं; मगर गङ्गा के बड़े ही भक्त हैं। गङ्गा के प्रति उनकी असीम श्रद्धा रहती है। इसका प्रधान कारण यह है कि उनकी जन्मभूमि गङ्गा के ही तट पर है और भिखारी गङ्गा के अलौकिक महत्त्व से खूब परिचित हैं। उनकी श्रद्धा और भक्ति गङ्गा के प्रति इतनी अटल है कि बाढ़ की कारुणिक दशा देखकर भी उसमें किसी प्रकार का विकार नहीं आ सका है प्रत्युत उनकी भक्ति और भी दृढ़ हो गई है। हिजरी सन् १३४१ साल की गङ्गा की भीषण बाढ़, जिससे छपरा विशेषतः आक्रान्त रहा, देख यद्यपि भिखारी का हृदय रो पड़ा है, फिर भी गङ्गा के प्रति जो उनकी पूज्य-बुद्धि है वह तनिक भी कम नहीं हो सकी है। 'गङ्गा-दहार' में भखारी उसका चित्रण इस प्रकार करते हैं—

तेरह सौ एकतालिस साल, सावन पुरनवाँसी काल;
शुकवा के लुकवा लगवलु हो गङ्गाजी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होई गइल रहे रात, ना मिलल लरिका के भात;
पनिया चुहनिया घुसल बा हो गङ्गाजी !
लागल बाटे छाट-पाट, लरिका सुतल खाट;
घर में अँगनवाँ दहात बा हो गङ्गाजी !
छपरी पर रोवत बानी, घर में अथाह पानी;
पीथुआ भरल बाटे देह पर हो गङ्गाजी !
बाकस उठत नाहीं, सब धन जेहि माहीं;
चारु ओर ताकिला अन्दरवा हो गङ्गाजी !
बकरी बिलार कहुँ, कुकुर सियार कहुँ—
आदमी करे पुकार डूबत बानी गङ्गाजी !
माई बाप करे शोर, नयना से गिरे लोर;
वृद्ध, युवा, बाल, नर नारी सब गङ्गाजी !
केहु कहे धन गइल, केहु कहे जन गइल;
केहु कहे तन के ठेकान नइखे गङ्गाजी !
देखला से, सुनला से, रोंके सिर धुनला से,
गुनला से कुछुओ लिखात नइखे गङ्गाजी !
घर-घर में भरल सुरसरिजी के बारी ।
अब-तब प्रान सुर-पुर पगु धारी ॥
डूब गइल सील, लोढ़ा, लोटा घइला थारी ।
भीत गिरल दहपलल चउकठ केवारी ॥
अन बिनु तन भइल भूख की बीमारी ।
छप्पर पर पेट धके रोवे नर-नारी ॥
बच्चा के गोदी में लेके महतारी ।
कहे चलि जात बानी राम की बेगारी ॥

घर में का अथाह पानी बढ़ते बढ़ते यहाँ तक बढ़ चला है कि लोगों का प्राण बचना मुश्किल दीखता है । प्रत्येक घर में लबालब पानी भर रहा है जिससे 'बारि बराबर बारि' का दृष्टिकूट ही मानो चरितार्थ हो रहा है । दीवालें गल-गलकर गिर रही हैं और घरों में लगे किवाड़ और उसके चौकठ आदि बह रहे हैं। जहाँ ऐसी मुसीबत आ पहुँची है वहाँ 'सील, लोढ़ा, लोटा, घइला, थारी' की कौन चिन्ता करता है ? वहाँ तो सबकी अपनी जान की ही पड़ी है। इतनी बरबादी और भयावह स्थिति के रहने पर भी जो ऊपर से लोगों को 'भूख की बीमारी' सता रही है वह अत्यन्त दर्दनाक है। इस पेट-पीड़ा से व्यथित होकर लोग छप्पर पर पेट पकड़-पकड़कर कराह रहे हैं। उन औरतों की दशा देखिए जो दुधमुँहे बच्चों को गोद से चिपकाए बेखटके 'राम की बेगारी' में खटने के लिए अकाल ही सुरपुर को प्रयाण कर रही हैं। बाढ़ पीड़ित अचानक ही जब किसी नौका को आते देखते थे तो साग्रह पुकार उठते थे—

हमरा के चढ़ाल हो भइया ॥ टेक ॥
छान्ह पर नाँहवार करे बाप मइया;
बाकस में बह गइल गहना रुपइया ॥ हो० ॥
बाछा के पाछा से बह गइल गइया;
देखत बानी एको ना लउकत उपइया ॥ हो० ॥
तन बिनु अनके बा होखत दोहइया;
कहाँ के दयाल तानल जात बाटे नइया ॥ हो० ॥

'गङ्गा-दहार' से बचे-खुचे लोगों ने किस-किस प्रकार कहाँ-कहाँ जा-जाकर अपनी जान बचाई, इसका विवरण कवि सीधे गङ्गाजी को ही सुनाता है—

घर गिरल तोहार लहरिया में गङ्गाजी ॥ टेक ॥
लोगवा भरल गुलटेनगञ्ज जाईकर—
राय साहेबजी की अटरिया में गङ्गाजी ॥
केहु खलपुरा, महराजगञ्ज केहु बाटे—
केहु बा लुफुसपुर नगरिया में गङ्गाजी ॥
केहु दरियावगञ्ज, केहु बा चिरामगढ़ ॥
केहु बाटे डोरिगञ्ज बजरिया में गङ्गाजी ॥
शेरपुर, घेघटा, केहु बा मखदुमगञ्ज—
चहला उड़ल फुलवरिया में गङ्गाजी ॥
घारू टोला, रउजा, रहत केहु तेलपा में—
चौवा चहत बा बघरिपा में गङ्गाजी ॥
सोझे पार होई-होई, जहँ-तहँ सब कोई—
गली-गली छपरा शहरिया में गङ्गाजी ॥
कुतुपुर के सुनी लीला, केहु जाके आरा जिला—
बबुरा रहल चौपरिया में गङ्गाजी ॥

—महेश्वरप्रसाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

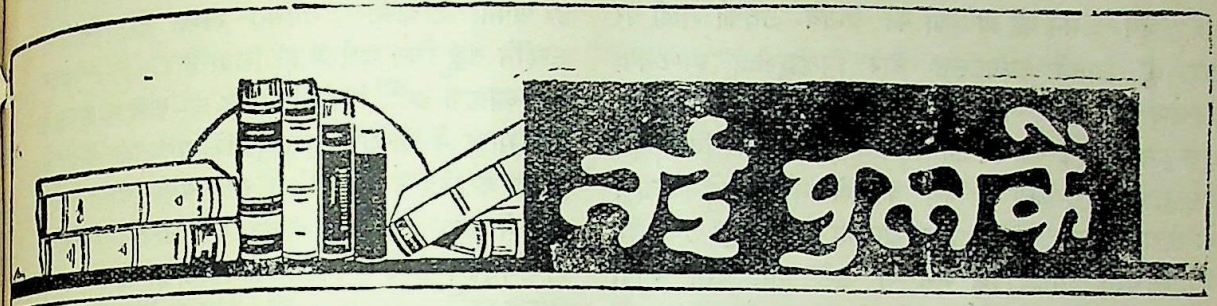

१—घास-पात—लेखक, श्री हरिशङ्कर शर्मा और प्रकाशक, रामप्रसाद एण्ड सन्स, आगरा व प्रयाग हैं। पृष्ठ-संख्या १६८ और मूल्य २।) है।

घास-पात लेखक की स्फुट कविताओं का संग्रह है। कवि महोदय वयोवृद्ध हैं और चिरकाल से हिन्दी की सेवा करते आए हैं। हिन्दी के पाठक उन्हें आर्यमित्र के भूतपूर्व यशस्वी सम्पादक और सम्माननीय कवि के रूप में जानते हैं। वे द्विवेदी-युग के उत्तरकाल के कवि हैं, जब कि काव्यक्षेत्र में प्रसाद-पन्त-निराला-द्वारा सञ्चालित नवीन धारा का प्रवाह वेग पकड़ रहा था। इस संग्रह की अधिकांश रचनाएँ कदाचित् उसी समय की रची हुई हैं। आज जब हिन्दी कविता द्विवेदी-युग की सरलता और आडम्बर हीनता को पार करके अनेक वादों-प्रवादों में होती हुई अत्यन्त प्रगति कर गई है, घास-पात की रचनाएँ एक विशेष संस्मरणात्मक आकर्षण रखती हैं। इन कविताओं की सानुप्रास भाषा के सौष्ठव, भावों की सरलता और निर्मलता, शैली की प्रौढ़ता में कवि के आडम्बरहीन, सुरुचिपूर्ण सुसंस्कृत व्यक्तित्व के दर्शन होते हैं। अधिकांश कविताएँ इतिवृत्तात्मक और वर्णनात्मक हैं, तो भी कवि के हृदय की सरसता और भावुकता उनमें पद-पद पर मिल जाती है। कविवर कर्मठ आर्यसमाजी और उद्भट सुधारक हैं, अतः उनकी ओजपूर्ण लेखनी ने प्रायः सदुपदेशों की भरमार कर दी है।

कवि ने अपने कविता-संग्रह को घास-पात नाम देकर अपने नम्र और विनयशील स्वभाव का परिचय दिया है। सुरम्य उद्यान में घास-पात की नगण्यता का कथन करके वे कहते हैं, 'वह पददलित एवं उपेक्षित होने पर भी, उद्यान की शोभावृद्धि में कुछ-न-कुछ सहायक सिद्ध होती ही है। हमारा विचार है कि उद्यान की शोभा-श्री के प्यारी लहलहाती, हरी-भरी घास-पात की कभी उपेक्षा नहीं कर सकते। आशा है कि हिन्दी के पाठक अपने वयोवृद्ध कवि के इस संग्रह का पर्याप्त स्वागत करेंगे। इसे निकालने के लिए प्रकाशक बधाई के पात्र हैं। छपाई शुद्ध और सुन्दर है।

२—अरुणोदय—लेखक, श्री मधुकर और प्रकाशक, पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' नागरीप्रचारिणी सभा, आगरा हैं। पृष्ठ-संख्या ११६ और मूल्य २) है।

अरुणोदय श्री दयालुशरण 'मधुकर' का प्रथम कविता-संग्रह है। संग्रह में कुल बीस कविताएँ हैं, परन्तु लेखक ने कोई सूची नहीं दी है। आरम्भ में ३७ पृष्ठों के सिंहावलोकन में देश की सामाजिक अवस्था पर क्रान्तिकारी सुधारक के दृष्टिकोण से विचार किया गया है। अधिकांश कविताओं का विषय इन विचारों से सम्बद्ध अवश्य है, पर क्या इस संग्रह में इस लम्बे निबन्ध की अनिवार्य आवश्यकता थी? हमारी समझ में तो कविताएँ स्वयं स्पष्ट हैं और उनमें जो कुछ कहा गया है, उसे समझने के लिए किसी भूमिका की आवश्यकता नहीं है।

आरम्भ में कवि कहता है—

माँग रहा है यह जग मुझसे
परीलोक के स्वप्न मनोहर,
माँग रहा है चन्द खिलौना।
पर इसके मन को बहलाकर
इस जीवन के कठिन सत्य में
उन स्वप्नों को कैसे ला दूँ।

और वह परीलोक के मनोहर स्वप्नों को सर्वथा भूलकर वास्तविक समस्याओं में उलझता है और उन्हीं के द्वारा अपने भावुक हृदय की संवेदनाएँ प्रकट करता है। लेखक की शैली और दृष्टिकोण व्यक्तिगत होते हुए भी उसका विषय व्यापक और समष्टिगत है। ये कविताएँ एक विचारशील नवयुवक-हृदय की अशान्ति और असन्तोष की द्योतक हैं। साथ ही उनसे मन की उद्विग्नता और निराशा-जन्य वेदना भी प्रकट होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं उनके लिए यह पुस्तक विशेष उपयोगी है। आशा है, उपर्युक्त पुस्तक की भाँति इसका भी पर्याप्त आदर होगा।

५—**हिमालय**—(मासिक साहित्य) सम्पादक, श्री शिवपूजनसहाय और श्री रामवृक्ष बेनीपुरी तथा प्रकाशक, पुस्तक-भण्डार, हिमालय प्रेस, पटना हैं। पृष्ठ-संख्या १०४, वार्षिक मूल्य १०) और प्रति अङ्क का मूल्य १) है।

'हिमालय' का प्रथम अङ्क इतना सुरुचिपूर्ण, पठनीय और आकर्षक है कि यह निस्सङ्कोच कहा जा सकता है कि यह हिन्दी के प्रथम कोटि के पत्रों में अग्रिम स्थान प्राप्त करेगा। यह बिहार की साहित्यिक चेतना का एक सुन्दर प्रतीक है। इस अङ्क में सबसे महत्त्वपूर्ण और रोचक लेख है देशरत्न डॉक्टर राजेन्द्रप्रसाद की आत्मकथा। देश से गण्यमान्य नेताओं में से महात्मा गान्धी और पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने भी अपनी-अपनी आत्म-कथाएँ लिखी हैं। परन्तु गान्धीजी ने उसे अपनी मातृ-भाषा गुजराती और पण्डित नेहरू ने अँगरेजी में लिखा है। यह स्वाभाविक ही है कि हिन्दी के परम हितैषी श्री राजेन्द्रप्रसाद अपनी आत्म-कथा अपनी मातृभाषा में लिखें। अन्य लेखों में आचार्य नरेन्द्रदेव, श्री फूलनप्रसाद वर्मा, श्री जगन्नाथप्रसाद मिश्र और श्री जानकी-वल्लभ शास्त्री के लेख विचारपूर्ण तथा श्री बेनीपुरी और श्री शिवपूजन सहाय के परिचयात्मक हैं। इनके अतिरिक्त 'चाङ-तिन-इह' शीर्षक एक कहानी कदाचित् किसी विदेशी कहानी का अनुवाद है जिसके लेखक और अनु-वादक का नाम न देना शोचनीय है। श्री दिनकर और श्री मनोरञ्जनप्रसाद की सुन्दर मौलिक कविताएँ तथा अँगरेजी कवि कीट्स की चार कविताओं के अनुवाद भी हैं। पुस्तकालोचन और सम्पादकीय विचारपूर्ण हैं। शैतान की छाया नामक श्री नवलकिशोर गौड़ का एक नए ढङ्ग का एकाङ्की नाटक भी है।

आशा है, आगामी अङ्कों में प्रथम अङ्क से भी अधिक रोचक पठनीय सामग्री रहा करेगी। आरम्भ में विषय-सूची न देना एक भारी भूल है जो आगामी अङ्कों से सुधार दी जानी चाहिए। हम 'हिमालय' की उन्नति और प्रचार की कामना करते हैं।

—व्रजेश्वर वर्मा

६—**झङ्कार**—सम्पादक, श्री रघुवीरशरण 'मित्र' और प्रकाशक, अखिल भारतीय राष्ट्रीय साहित्य प्रकाशन-परिषद्, मेरठ हैं; पृष्ठ-संख्या ६४ और मूल्य बारह आने है।

प्रस्तुत पुस्तक में मेरठ के सात कवियों—सर्वश्री मदन-गोपाल सिंहल, राजकिशोर कक्कड़, होमवती देवी, प्रभुदत्त स्वामी, त्रिलोकचन्द्र, सावित्री देवी और रघुवीरशरण 'मित्र'—की स्फुट कविताओं का सङ्कलन किया गया है। स्थानीय साहित्यिक सङ्गठन का यह प्रयास अनुकरणीय है। इन सात कवियों में से जहाँ कुछ नाम साहित्य-संसार के लिए सर्वथा सुपरिचित हैं, वहाँ कुछ ऐसे भी हैं जो अपरिचित कहे जा सकते हैं। कविताओं की भी यही विशेषता है। कुछ कविताएँ जहाँ उत्कृष्ट हैं, वहीं कुछ साधारण भी हैं। कवियों के चित्र भी दिए गए हैं। कविता-प्रेमियों के लिए यह संग्रह यथेष्ट मनोरञ्जक सिद्ध होगा।

७—**स्फुलिङ्ग**—रचयिता, श्री केशवप्रसाद विद्यार्थी और प्रकाशक, राजस्थान-साहित्य-मण्डल, अजमेर हैं। पृष्ठ-संख्या ३८ और मूल्य ॥) आठ आने है।

राजस्थान के तरुण कवि की छोटी-छोटी २४ कवि-ताओं का यह कविता-संग्रह भावों की दृष्टि से सचमुच स्फुलिङ्ग के अर्थ को सार्थक कर रहा है; लेकिन अभिव्यक्ति और छन्द की दृष्टि से कविताएँ अभी अपरिपक्व ही कही जाएँगी। आशा है, भविष्य में यह तरुण कवि अपनी सर्वाङ्गसुन्दर कविताओं को प्रकाशित करने में समर्थ होगा।

८—**प्रेम-पत्रावली**—रचयिता, श्री मदनमोहन गुप्त 'मदन' और प्रकाशक, विद्यार्थी पुस्तक-मन्दिर, मुजफ्फरपुर हैं। पृष्ठ-संख्या ५२ और मूल्य एक रुपया है।

पत्रों के रूप में अपनी 'रानी' की स्मृति में तरुण कवि ने अपने रसात्मक भावों को कविता का जामा पहनाया है। उसका छलकता हुआ रस आद्योपान्त हिलोरें ले रहा है। कवि का यह प्रथम प्रयास है, अतः कविता की कसौटी पर इसे कसन कवि के साथ अन्याय करना होगा। उसकी लगन प्रशंसनीय कही जा सकती है। आशा है, भविष्य में कवि सुन्दरतर कविताएँ लेकर हिन्दी-संसार को अपनी प्रतिभा का परिचय देगा।

९-१०—**अम्बरीष और शिवरात्रि**—रचयिता, श्री ब्रह्मदत्त तिवारी 'नागर' और प्रकाशक, शिवाजी बुकडिपो, लखनऊ हैं। पृष्ठ-संख्या प्रत्येक की ५४ और मूल्य भी प्रत्येक का आठ-आठ आने है।

अम्बरीष की कथा से प्रत्येक हिन्दू परिचित होगा। ओजपूर्ण कविता में कवि ने अम्बरीष की गाथा लिखकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रीयता के तरुण पुजारियों को उनके सामयिक कर्त्तव्य का ध्यान दिलाया है। प्राचीन गाथा में भी सामयिकता का ओजपूर्ण पुट देते हुए कवि कहता है :—

आज फूँक दो राजमहल तुम
आज फूँक दो ताजमहल।
आज स्वत्व के लिए जगत में
तज अपनी मुमताजमहल।
अपनी राधा, लैला, शीरीं
तजकर अपनी नूरजहाँ
निकल पड़ो घर से दीवानो
बनने को तुम शाहजहाँ।
रावी-तट के तूफानों में
हे सोए पाञ्चाल जगो।
हुगली-तट के मैदानों में
हे भूखे बङ्गाल जगो।

'शिवरात्रि व्रत' में स्वामी दयानन्द सरस्वती की वह गाथा है, जिसने उन्हें आर्य-समाज की स्थापना किए जाने की प्रेरणा दी थी। इस पुस्तिका की कविता में ऊँची भावनाएँ और सजीव संवाद हैं। भाषा भी प्रौढ़ पाठकों के लिए है। आर्य-समाज-प्रेमियों में इसका समुचित आदर होगा।

दोनों कविता-पुस्तकों में लेखक को सफलता प्राप्त हुई है।

११—**जयहिन्द**—रचयिता, श्री परदेशी, साहित्यरत्न और प्रकाशक, विश्व-प्रकाशन-मन्दिर-मन्दसौर हैं; पृष्ठ-संख्या ६४ है। मूल्य एक रुपया है।

श्री परदेशी के नाम से हिन्दी-संसार परिचित है। उनकी कविताएँ यथेष्ट मार्मिक होती हैं। प्रस्तुत संग्रह में उनकी २७ कविताओं का सङ्कलन किया गया है। सुभाष बाबू तथा उनकी आजाद हिन्द फौज से सम्बद्ध अनेक वीरों पर इसमें कविताएँ दी गई हैं। समस्त कविताओं में राष्ट्रीयता हुङ्कार रही है। कुछ कविताओं में क्रान्ति के शोले भी दहक रहे हैं। कवि का प्रयास सराहनीय है।

१२—**प्राकृतिक उपायों से स्वास्थ्य-प्राप्ति**—लेखक, श्री अवधविहारी लाल चाँदापुरी और प्रकाशक, गौतम ब्रदर्स एण्ड कम्पनी हैं। पृष्ठ-संख्या ६८; मूल्य छपा नहीं।

इस पुस्तक के लेखक ने जिन अनुभूत प्रयोगों से अनेक रोगों को दूर करने में सफलता प्राप्त की है, उनका विवेचन प्रस्तुत कर, प्राकृतिक उपायों का अवलम्बन कर स्वस्थ रहने के अभिलाषियों का बड़ा उपकार किया है। पुस्तक में अनेक नुसखे भी दिए गए हैं जिनसे सर्व-साधारण यथेष्ट लाभ उठा सकते हैं और तनिक-तनिक-सी व्याधियों के लिए वैद्य-डाक्टरों के घर जाने से बच सकते हैं। भाषा सरल और सर्वसाधारण के काम की है।

१३—**मुक्ति की मशाल**—रचयिता, श्री तेजनारायण काक, एम० ए० और प्रकाशक, यूनीवर्सल पब्लिशिंग हाउस, इलाहाबाद हैं; पृष्ठ-संख्या ६४ तथा डिमाई अठपेजी सजिल्द प्रति का मूल्य २) दो रु०।

आधुनिक सङ्घर्षशील युग का सजग कवि अब कल्पना की दुनिया में ही विचरकर सन्तोष नहीं कर लेता, प्रत्युत अपने आसपास के वातावरण से ही वह प्रभावित होता और अपनी भावनाओं को व्यक्त करता है। महायुद्ध की प्रलयङ्कर ज्वालाओं से विध्वस्त संसार का चित्र आज के कवि को कल्पना के चल पङ्खों पर उड़ने को नहीं, बल्कि वास्तविकता का चित्रण करने की प्रेरणा प्रदान करता है। प्रस्तुत कविता-संग्रह में श्री काकजी ने अत्यन्त जागरूक होकर विध्वंस की इन घड़ियों में 'मुक्ति की मशाल' लेकर सङ्घर्षशील-मानव का अन्धकारपूर्ण पथ प्रकाशित करने का प्रयत्न किया है। 'कवि विषधर' शीर्षक कविता में वह कह रहा है :—

बस्ती में भी देखी ज्वाला,
मैं क्रुद्ध बना विषधर काला।
मेरी जिह्वा पर उगा जहर
मेरी वाणी में जगा कहर।
जिसने छेड़ा, जिसने रोका,
वह वहीं तड़पकर शेष हुआ।
मैं बना गरल फुङ्कार उठा,
मेरे काटे की नहीं दवा।

कवि का यह विश्वास है कि मानव-समाज के सङ्कटन में प्रारम्भ से ही जो बहुत कुछ हेय और निकृष्ट रह गया है, उसे मानव ही नष्ट कर सकता है। इसके लिए प्रलयङ्कर जन-क्रान्ति का वह समर्थक है। विध्वस्त मानव-समाज के खँडहरों पर ही नवीन और सुखद समाज की सृष्टि की वह आशा करता है। मानव के प्रति उसने कर्त्तव्य-निष्ठा और संवेदनशीलता की जो अपेक्षा की है, वह स्तुत्य है। पुस्तक की सभी कविताएँ तो उत्कृष्ट नहीं बन सकी हैं, और अनेक कविताएँ जोश और गति से सर्वथा दूर छिटककर जा पड़ी हैं, फिर भी कवि का दृष्टिकोण सराहनीय है और जो थोड़ी-सी कविताएँ उत्कृष्ट हैं, उनके कारण पुस्तक पठनीय है।

—देवीदयाल चतुर्वेदी 'मस्त'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

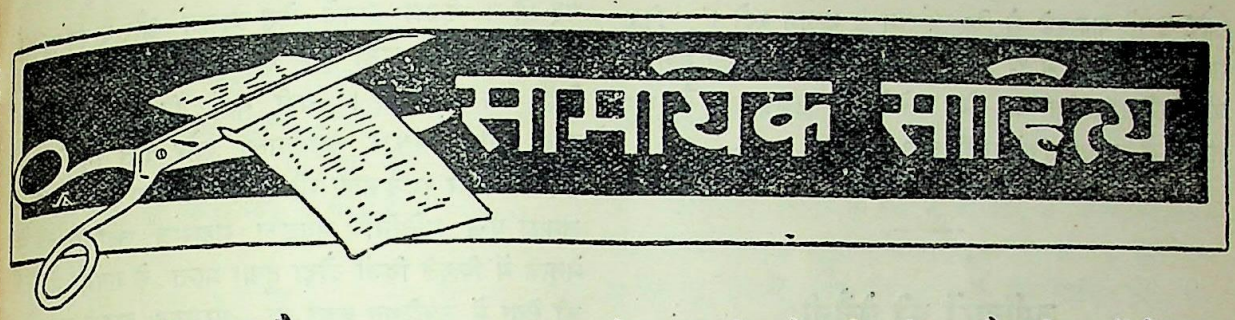

पाकिस्तान और रूस

मुस्लिम लीग की गत दिल्लीवाली बैठक में भाषण करते हुए सर फिरोज खाँ नून ने एक बड़ी मजेदार बात कह डाली है। आपका कथन है —"अगर हिन्दू हमें पाकिस्तान देते हैं तो वे हमारे मित्र हैं। अगर अँगरेज हमें पाकिस्तान देंगे तो वे हमारे मित्र होंगे। यदि इन दो में से कोई हमें पाकिस्तान नहीं देता तो रूस हमें पाकिस्तान देगा।"

सर फिरोज खाँ नून अब तक ब्रिटिश राज्य के पिछ-लगुए रहे हैं। उनके नाम के साथ लगी हुई 'सर' की उपाधि और उनके अब तक के कार्य इसके प्रमाण हैं। उनके मन में स्टेलिन की भक्ति क्यों उमड़ पड़ी है। पर समझ में आना कठिन है। सम्भवतः उनकी यह धमकी भर है जो कि ऐन मौके पर हिन्दुओं पर और उससे अधिक ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल पर अनुचित प्रभाव डालने के लिए दी गई है। इससे यह ध्वनि निकलती है कि लीग के कर्णधार खुले बाजार लीग की दोस्ती को नीलाम करने पर आ गए हैं, जो सबसे बढ़कर बोली बोले, वहीं उसे ले जाए।

इस धमकी का—स्टालिन के प्रति इस उमड़ते हुए अनुराग का—एक कारण और भी हो सकता है। शायद यह बात अब लीग की समझ में आ गई है कि एक पार्टी के रूप में वह अकेली पड़ गई है। वातावरण कुछ ऐसा बन रहा है कि भारतीय—जिनमें मुसलमान भी शामिल हैं—राजनीतिक उन्नति के लिए व्यग्र हो उठे हैं, वे लीग को साथ लेने को तैयार हैं, यदि ऐसा सम्भव हो, अन्यथा वे लीग को पीछे छोड़कर स्वयं आगे बढ़ जाने को भी तैयार हैं। ब्रिटिश प्रतिनिधि-मण्डल भी कुछ ऐसा रुख धारण करता दिखाई दे रहा है कि वह एक विशेष सीमा तक ही लीग को राजी करने और उसके सहयोग से शासनविधान बनाने का प्रयत्न करेगा। पर यदि उसके लिए ऐसा करना नितान्त और एकान्त असम्भव हो जाएगा तो वह लीग को छोड़ देगा और शेष दलों के साथ समझौता करके अग्रसर होगा। इस वस्तुस्थिति में—अन्तिम अवसर समझकर—लीग के नेताओं का धमकी देना स्वाभाविक ही है। इस धमकी में यह स्पष्ट सङ्केत भी विद्यमान है कि पिछले चुनावों में भारत की कम्यूनिस्ट पार्टी ने मुस्लिम लीग का समर्थन किया था, इसलिए उनके माध्यम से रूस के साथ गँठ-बन्धन कर लेना लीग के लिए कठिन न होगा।

हम नहीं जानते कि भारतीय कम्यूनिस्टों के सम्बन्ध में स्टेलिन के क्या विचार हैं। पर सर फिरोज खाँ नून के ये आकस्मिक उद्‌गार निस्सन्देह संसार को अचम्भे में डाल सकते हैं। इसमें सन्देह नहीं है कि स्टेलिन के नेतृत्व में जो पाकिस्तान बनेगा, वह लीग के लाहौर के प्रस्तावों से मेल कदापि न खाएगा, और न वह दिल्ली के गत प्रस्तावों के ही अनुरूप होगा। यही नहीं, उससे मिस्टर जिन्ना के 'सार्वभौम मुस्लिम स्टेट' के सुख-स्वप्न की आंशिक पूर्ति भी न हो सकेगी। रूस की सहायता से जो पाकिस्तान बनेगा, हमारी समझ से तो उसकी स्थिति इस्टोनिया या लेटविया की जैसी ही होगी जो अपनी सत्ता के लिए प्रतिक्षण सोवियट के मुखापेक्षी हैं, क्योंकि अपने पैरों पर खड़े रहने की उनमें शक्ति नहीं है। या फिर वह पाकिस्तान रूस के प्रभाव-विस्तार के कार्यक्रम का एक साधनमात्र बनकर रह जाएगा।

सर फिरोजखाँ नून ने अपना यह भाषण दिल्ली में किया है, और वह भी ऐसे अवसर पर और ऐसे मंच से जहाँ लीग के अनेक नेता उपस्थित थे। इससे यह सन्देह होता है कि क्या उनका यह भाषण लीग की वर्त्तमान परिवर्तित मनोवृत्ति का प्रतीक है! अभी कल तक तो लीग रूस को गालियाँ दे रही थी। जब रूस ने आजर-बैजान के मामले में हाथ डाला था तब लीग के ये ही नेता चीख-चीखकर रूस को आक्रमणकारी बतला रहे थे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और उससे कह रहे थे कि 'ईरान से अलग रहो!' फिर गत कुछ महीनों में ही ऐसा क्या हो गया है जो रूस के प्रति मुस्लिम लीग का प्रेम जोरों से उमड़ पड़ा है, यह समझ में न आ सकनेवाली बात है।

——

जमींदारों की बेचैनी

अँगरेजी का एक शब्द है पैरासाइट (Parasite) जिसका अर्थ है वह जीव या पौधा जो दूसरे की खुराक छीनकर खाता है। जोंक आदि कीड़ों तथा आकाश-बेल जैसी लताओं की गणना इन्हीं में होती है। हमारी समाजिक व्यवस्था में इसके ठीक उदाहरण जमींदार हैं। किसानों का खून चूसना और उससे ऐश-आराम की जिन्दगी बसर करना, इस वर्ग की ऐसी विशेषता है जिससे यह आसानी से पहचाना जा सकता है।

अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए यह वर्ग कितना नीचे उतर सकता है, इसकी दो ताजी मिसालें हमारे सामने हैं। एक तो हक आराजी बिल की एक साधारण-सी त्रुटि से—जिसे पद-त्याग के कारण कांग्रेसी मन्त्रि-मण्डल सुधार न सका था—लाभ उठाकर गत ३-४ वर्ष में सवा चार लाख किसानों का बेदखल किया जाना, और वह भी ऐसे मौके पर जब किसानों की खबर लेनेवाला कोई न था और दूसरा गत चुनाव के अवसर पर कांग्रेस का भरसक विरोध करना और देश की स्वतन्त्रता में रुकावट डालनेवाली प्रतिगामी संस्थाओं की तन-मन-धन से सहायता करना।

देश के नेता इस जमींदारी नामक अस्वाभाविक और अनावश्यक संस्था के दोषों से भली भाँति परिचित हैं और वे इसे मिटाकर किसानों को राहत देने का विचार आरम्भ से ही करते रहे हैं। इधर जमींदारों की बढ़ती हुई प्रतिगामिता के कारण राजनीतिक क्षेत्रों में यह अनुमान जोर पकड़ रहा है कि सम्भवतः इस प्रान्त का कांग्रेसी-मन्त्रि-मण्डल इस संस्था को अधिक समय तक सहन न कर सकेगा। इस सम्भावना ने प्रान्त के जमींदारों को आतङ्कित कर दिया है। उन्हें अपने पैरों के तले से जमीन खिसकती नजर आने लगी है। वे अच्छी तरह जानते हैं कि यदि किसान-कामधेनु उनके नियन्त्रण से बाहर हो गई तो न केवल उनके ऐश-आराम और दावत-पार्टियों में बाधा पड़ेगी, उन्हें भी अपना पेट भरने के लिए जुती मिट्टी मँझानी पड़ेगी। यही नहीं, फिर उन्हें मालिक, राजा और सरकार कहनेवाला और दाँत निपोरे बेगार देने को तैयार रहनेवाला भी कोई न रहेगा। इसी लिए उनका एक प्रतिनिधि-मण्डल महाराज जहाँगीराबाद के नेतृत्व में पिछले दिनों दौड़ा हुआ प्रान्त के गवर्नर महोदय की सेवा में उपस्थित हुआ था—सम्भवतः अपनी राजभक्ति की याद दिलाकर अभयदान प्राप्त करने के लिए। गवर्नर महोदय ने क्या आश्वासन दिया, इसके सम्बन्ध में अधिक कुछ भी ज्ञात नहीं है। जमींदार स्वयं को उस जमीन का मालिक मानते हैं। पर इतिहास इसका साक्षी है कि वे जमीन के मालिक न होकर एक प्रकार के ठेकेदार थे, जिनकी सृष्टि भारत सरकार ने १९५७ के गदर के बाद लगान की वसूली की सुविधा के लिए की थी। सरकार को यह भी विश्वास था कि ये ठेकेदार जनता पर ब्रिटिश हुकूमत का दबदबा बनाए रखने में बड़े कारगर साबित होंगे और इसी लिए उनकी मजदूरी की दर में, जो प्रारम्भ में केवल १२॥ प्रतिशत थी प्रत्येक बन्दोबस्त के बाद वृद्धि होती रही। यही नहीं, समय-समय पर उन्हें और भी प्रोत्साहन सरकार की ओर से मिलते रहे। अब तो मामला यहाँ तक पहुँच गया है कि वे अपने को देशी नरेशों के समकक्ष और सरकार का मित्र तथा अपनी अधिकृत भूमि का मालिक ही समझने लगे हैं।

जमींदारी की यह प्रथा केवल हमारे देश में ही, और विशेषतया हमारे सूबे में ही, इस रूप में पनप रही है जिसे ब्रिटिश राज्य की विलक्षणताओं में गिना जा सकता है। इस संस्था के आधार पर जहाँ-जहाँ सरकार को राजतन्त्र में योग देनेवाले कुछ निकम्मे 'हाँ हुजूर' और चापलूस प्राप्त हो जाते हैं वहाँ किसान पर लगान का भार लगभग दुगुना हो जाता है। किसानों के हित को सर्व-प्रथम स्थान देनेवाली जनता की सरकार आखिर इस संस्था को सहन भी कब तक और किस प्रकार कर सकती है जब कि यह पद-पद पर देश की राजनीतिक प्रगति को पीछे धकेलने का प्रयत्न करती ही दिखाई देती है।

इस वस्तु-स्थिति में यदि सचमुच प्रान्त की कांग्रेसी सरकार इस संस्था को उखाड़ फेंकना चाहती है, तो समझदार लोग उसके इस प्रकार के निश्चय का अनुमोदन ही करेंगे। साथ ही वे यह आशा भी करते हैं कि ऐसा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करते हुए सरकार वैसी ही सतर्कता, धैर्य और सावधानी का परिचय देगी जैसी किसी पुराने सड़े-गले नासूर की चिकित्सा करते समय एक कुशल डाक्टर दिखलाया करता है ताकि रोग का मूलोच्छेदन भी हो जाए पर रोगी की बेचैनी भी सीमा का अतिक्रमण न कर सके।

——

दक्षिण अफ्रीका और भारत

दक्षिण अफ्रीका के प्रवासी भारतीयों की विपत्ति का विवरण पाठक 'सरस्वती' के गत अङ्कों के इसी स्तम्भ में तथा अन्य समाचार-पत्रों में समय-समय पर पढ़ते रहे हैं। उन्हें यह भी ज्ञात है कि भारत-सरकार इस मामले में अभी तक टालमटोल की नीति का किस प्रकार अनुसरण करती रही है। प्रसन्नता की बात है कि लोकमत से बाधित होकर अब उसे यह निर्णय करना पड़ा है कि दक्षिणी अफ्रीका की यूनियन सरकार का वह मसविदा, जो 'घेटो बिल' के नाम से प्रसिद्ध है और जो वहाँ की व्यवस्थापिका सभा में उपस्थित है, ज्यों ही कानून के रूप में परिणत होगा त्यों ही उसे निर्णय के लिए 'संयुक्त-राष्ट्र-सङ्घ' के सामने उपस्थित कर दिया जाएगा।

साम्राज्य के अन्तर्वर्ती एक देश का साम्राज्य के ही अन्तर्वर्ती दूसरे देश के विरुद्ध इस तरह का अभियोग संयुक्त-राष्ट्र-सङ्घ के समक्ष पहली ही बार आ रहा है। अभी तक ऐसे मामले 'ब्रिटिश कामनवेल्थ' के भीतर ही निबटाए जा सकते थे। पर यह कोई अप्रत्याशित बात नहीं है। भारत और दक्षिणी अफ्रीका दोनों ही उस राष्ट्र-सङ्घ के सदस्य थे जो अब मर चुका है। अब ये दोनों देश नए राष्ट्र-सङ्घ के सदस्य हैं। विधान के अनुसार भी इन दोनों देशों का मामला विचारार्थ संयुक्तराष्ट्र-सङ्घ के समक्ष उपस्थित किया जा सकता है। चार्टर की प्रस्तावना में ही मानव के मौलिक अधिकारों, उसकी मर्यादा और उसके मूल्य, पुरुष और स्त्री के समानाधिकार और मनुष्य-मनुष्य की समानता को स्वीकार किया गया है। चार्टर के प्रथम अध्याय में ही स्पष्टतया कहा गया है कि "इस चार्टर का प्रधान लक्ष्य है अन्ताराष्ट्रीय शान्ति और सुरक्षा की प्रतिष्ठा और ऐसी बातों के विरुद्ध प्रभावशाली सामूहिक कार्यवाही करना, जो शान्ति के लिए खतरनाक हों, साथ ही शान्तिपूर्ण साधनों-द्वारा और न्याय के सिद्धान्तों और अन्ताराष्ट्रीय कानून के अनुसार अन्ताराष्ट्रीय विवादों को निबटाना।" घेटो बिल इन्हीं नियमों का तो उल्लङ्घन कर रहा है!

यही नहीं, चार्टर के ३५ वें अध्याय में स्पष्टतया कहा गया है—"संयुक्त राष्ट्रसङ्घ के प्रत्येक सदस्य को यह अधिकार है कि वह किसी ऐसे विवाद या परिस्थिति को, जो अन्ताराष्ट्रीय-सम्बन्ध-विच्छेद का कारण बन सकती है या ऐसा झगड़ा उत्पन्न कर सकती है, इस विचार के लिए 'सुरक्षा-समिति' के सामने उपस्थित करे कि क्या इस प्रकार के विवाद या झगड़े का चलना अन्ताराष्ट्रीय शान्ति और सुरक्षा के मार्ग में बाधक तो नहीं हो सकता।"

'घेटो बिल' से भारत और दक्षिणी अफ्रीका में कटुता उत्पन्न हो गई है। इस बिल को कानून का रूप मिला नहीं कि साम्राज्य के ये दोनों देश एक दूसरे के शत्रु बन जाएँगे। इन दोनों देशों का पारस्परिक व्यापारिक समझौता टूट ही चुका है। दक्षिणी अफ्रीका-स्थित भारतीय हाई कमिश्नर भी अब वापस आनेवाला ही है। अन्ताराष्ट्रीय शान्ति पर इन सब बातों का प्रभाव पड़ना अनिवार्य है। इस दशा में यह मामला पूर्वरूप से सुरक्षा-समिति के समक्ष विचारार्थ उपस्थित किए जाने योग्य है।

दक्षिणी अफ्रीका में यही तो हो रहा है कि वहाँ भारतीय मनुष्य को गोरे मनुष्य के बराबर नहीं समझा जा रहा है। यह मामला केवल दक्षिणी अफ्रीका के गोरों और कालों तक सीमित बना रहे, यह बात नहीं है। यह तो गोरी जाति की काली जाति के प्रति चुनौती है जिसका प्रभाव सारे संसार पर एक जैसा पड़ेगा। यदि संयुक्तराष्ट्र-सङ्घ उन दक्षिणी अफ्रीका प्रवासी भारतीयों के नागरिक अधिकारों की रक्षा करने में समर्थ नहीं है, जिन्होंने उस देश को खूँख्वार शेरों के जङ्गलों से बदलकर नागरिकों के रहने योग्य बनाने में अपना खून-पसीना एक किया है तो वह पहले राष्ट्रसङ्घ की भाँति अपनी प्रतिष्ठा को स्वयं नष्ट करेगा और संसार की दृष्टि में एक खोखली संस्था भर रह जाएगा।

दक्षिणी अफ्रीका के गोरों की सबसे बड़ी शिकायत यह है कि वहाँ के हिन्दुस्तानियों के रहन-सहन का मापदण्ड इतना नीचा है कि उससे गोरों के रहन-सहन के स्टैंडर्ड को खतरा उत्पन्न हो गया है। मनुष्य के प्रति मनुष्य की घृणा का इससे बुरा उदाहरण और क्या हो सकता है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय मजदूरों को वहाँ जो मजदूरी मिलती है, उससे उनके रहन-सहन के मापदण्ड को ऊँचा उठाने की आशा ही कैसे की जा सकती है! मानवोचित उपाय तो इसका यही है कि भारतीयों को उनके परिश्रम का उतना ही मूल्य दिया जाए, जितना गोरों को दिया जाता है तो वे भी निश्चय ही अपनी रहन-सहन गोरों की टक्कर की कर सकेंगे। 'केपटाउन' के समझौते में यही तय भी हुआ था। उस समझौते का पालन तो यूनियन सरकार ने किया नहीं, अब जब कि सरकार-द्वारा तरह-तरह की रुकावटें और कानून-सम्बन्धी बाधाएँ उपस्थित होते रहने पर भी भारतीयों ने अपने रहन-सहन के मापदण्ड को थोड़ा बहुत उठा पाया है तब वे इस प्रकार का भारतीय विरोधी कानून बनाने को तैयार हो गए हैं। यूनियन सरकार को भी इस बार सदा के लिए समझ लेना है कि १९४६ का भारत वह भारत नहीं है जो अपमान का घूँट चुपचाप पी जायगा।

युक्तप्रान्त के जमींदार

गत १७ अप्रैल के 'लीडर' में युक्तप्रान्त के जमींदारों के सम्बन्ध में एक पत्र छपा है जो जमींदारों की आँखें खोलने के लिए पर्याप्त है। यह पत्र एक ऐसे व्यक्ति का लिखा हुआ है जो गत चुनावों में एक जमींदार का एजेंट था और इस सिलसिले में जिसे यू० पी० के अनेक जमींदारों से मिलने का अवसर मिला था। पत्र स्पष्ट है अतः उस पर टीका-टिप्पणी करना अनावश्यक है। पत्र का शब्दशः अनुवाद नीचे दे रहे हैं—"एक ज़मींदार का 'इलेक्शन एजेण्ट' होने के नाते मुझे आगरा प्रान्त में भ्रमण करने का और इस सिलसिले में इस प्रान्त के जमींदारों के सम्पर्क में आने का मुझे सुयोग मिला है और अपने अनुभव के आधार पर मैं कह सकता हूँ कि इस वर्ग का जितना शीघ्र अन्त कर दिया जाए, उतना ही अच्छा होगा। बिना परिश्रम किए प्राप्त होनेवाली आमदनी ने उन्हें काहिल बना दिया है और वे समाज के लिए निकम्मे हो गए हैं। वे उत्पादन-सम्बन्धी कार्यों में अपना दिमाग लगाने के अयोग्य हैं, यद्यपि वे यह समझते हैं कि जीवन के नए तरीकों का इस्तेमाल करके वे अपनी आमदनी में बहुत कुछ वृद्धि कर सकते हैं। उन्हें सिर्फ अपनी आरामतलबी की फिक्र रहती है। संसार के मामलों के सम्बन्ध में उनका ज्ञान शून्य है। वे 'मुँह में चाँदी का चम्मच' लेकर पैदा होते हैं फलतः उनकी धारणा है कि कोई उनका कुछ बिगाड़ नहीं सकता। वे एक ऐसे संसार में विचरण कर रहे हैं जिसका अस्तित्व अब कहीं नहीं है। उनमें से प्रत्येक अपने पूर्वजों के गौरव और महत्ता के विषय में ही सोचता और बातें करता है जो अब से तीन शताब्दी पूर्व इस देश को अलंकृत कर रहे थे। तनिक-सी उत्तेजना पाकर ही वे किसी ऐसे राजा या नवाब के साथ अपने सम्बन्धों का उल्लेख करने लगते हैं जो मुगलकालीन भारत में वर्तमान था।

वे प्रायः कहा करते हैं कि यदि कांग्रेस ने जमींदारी प्रथा को तोड़ने का साहस किया तो वे, उससे लड़ जाएँगे। इस प्रसङ्ग में न तो वे उन अस्त्रों का ही नाम गिना पाते हैं जिनका प्रयोग वे उस सम्भावित जङ्ग में करेंगे, न वे उस शक्ति की चर्चा करना ही आवश्यक समझते हैं, जो उनके अधिकार में है। मेरे प्रश्न करने पर कि आखिर वे कांग्रेस से लड़ेंगे किस तरह, उनका उत्तर अस्पष्ट ही होता था। अपने काश्तकारों पर अब उनका कुछ भी रोब नहीं रह गया है।

परिचय-पत्र प्राप्त करने के प्रयत्न में प्रान्त के कुछ ताल्लुकेदारों के सम्पर्क में आने का सौभाग्य भी मुझे प्राप्त हुआ था। वे एक दूसरे ही प्रकार के लोग हैं। उन्हें अब भी यह विश्वास है कि वाजिद अलीशाह के दिन फिर लौटेंगे और तब उनका अच्छा जमाना भी आ जाएगा। उन्होंने मुझसे यह भी कहा कि उनका मामला काफी मजबूत है। उनकी ताल्लुकेदारी तोड़ी नहीं जा सकती, क्योंकि उनके अधिकार सन्धियों पर आधारित हैं जैसे कि भारत के स्वतन्त्र राजा-महाराजाओं के हैं जिन्हें कांग्रेस भी हानि पहुँचाना नहीं चाहती। ताल्लुकेदारों की इन सनदों को मैंने देखा है। मैं विश्वासपूर्वक कह सकता हूँ कि उन सनदों में 'विशेष-संरक्षण' जैसी कोई बात नहीं है। यही नहीं, वे किसी प्रकार के मुआविजे का भी दावा नहीं कर सकते। वे सब जागीरदार हैं और वे जागीरें उनको उस सेवा के बदले में दी गई थीं, जो उन्होंने भूतकाल में ब्रिटिश सरकार की की थी, या भविष्य में करनेवाले थे। वह भूमि उनकी मोल ली हुई नहीं है। वह तो एक प्रकार की 'माफी' है जो खिदमतगारों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को उनकी खिदमत के बदले दी जाती थी। इस दशा में मुआविजे का प्रश्न ही नहीं उठता! उस विशेष सुविधा का उपभोग वे काफी लम्बे समय तक कर चुके हैं और यदि कांग्रेसी सरकार को उनकी सेवाओं की अब आवश्यकता नहीं है, तो उनके पास उनकी ताल्लुकेदारियाँ बनी रहने देने का कोई कारण नहीं है। इन्हीं सनदों के आधार पर सरकार इन ताल्लुकेदारियों को आसानी से वापस ले सकती है, उसे मुआविजा देने की भी जरूरत नहीं है।

ताल्लुकेदारों का मामला इस प्रकार काफी कमजोर है पर उनकी आत्मतुष्टि अवश्य प्रशंसनीय है।

कुछ दशाओं में आगरा प्रान्त के जागीरदारों और माफीदारों की जीवन-दशा वैसी ही है जैसी कि इन ताल्लुकेदारों की है। ये सब लोग सरकार के धन से मोटे हो रहे हैं। वे 'विशेष संरक्षणों' का दावा करते हैं पर वे यह भूल जाते हैं कि दाता यदि किसी प्रदत्त वस्तु को वापस लेना चाहता है तो उसे उसके लिए दान पानेवाले को कुछ भी देना नहीं होता सिवाय उस साधारण व्यय के जो दान पानेवाले ने दान प्राप्त सम्पत्ति के विकास के लिए अपनी ओर से किया हो। इन जागीरों में से कुछ ऐसी हैं जो विशेष शर्तों पर दी गई हैं। इन शर्तों में से कोई पूरी नहीं की गई है। अतः बिना मुआविजा दिए ही इन्हें वापस न लिए जाने का कोई कारण नहीं रहता। पर यदि इन राजा लोगों के सामने इन बातों का जिक्र भी कर दिया जाए तो वे बिगड़ पड़ते हैं।

जिन लोगों ने जमींदारियाँ मोल ली हैं वे अधिक युक्तियुक्त हैं। उनका तर्क है कि ठीक हो या गलत, पर ब्रिटिश सरकार ने मूल्यवान् अधिकारों का निर्माण किया और उन्हें जमींदारों को हस्तान्तरित कर दिया। ये अधिकार क्रयमूलक थे और जिनके पास धन था, उन्होंने उन्हें मोल ले लिया। जिस तरह समाज के कुछ लोगों ने अपना धन व्यापार में लगाया, कुछ ने मकान बनवाने में, इसी तरह हमने अपनी पूँजी जमींदारियों में लगाई। अतः यदि हमें अपनी आजीविका के साधन से वञ्चित किया जा रहा है तो हमें इसका पूरा-पूरा मुआविजा भी मिलना चाहिए। ऐसे जमींदारों की संख्या आगरा प्रान्त में कम नहीं है, पर वे कांग्रेस से लड़ने की बात नहीं करते।

मेरी सम्मति में यदि कांग्रेस मुआविजा देकर जमींदारी-प्रथा को तोड़ने का विचार कर रही है तो जमींदारों को उस विचार का स्वागत ही करना चाहिए। उचित तो यह होता कि जमींदार स्वयं सङ्गठित होकर अपनी ओर से इस आशय का एक प्रस्ताव पास करते कि सरकार उचित मुआविजा देकर जमींदारी प्रथा को तोड़ दे। मौजूदा संसार में, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति अपनी रोटी स्वयं पैदा करने को इच्छा करता है, हमारे जमींदार एक 'असङ्गति' जैसे हैं। इस प्रकार एक नए जीवन के प्रारम्भ करने का सुयोग उन्हें प्राप्त होगा जिसमें वे परिश्रम-द्वारा अपनी आजीविका उपार्जित कर सकेंगे।"

साम्प्रदायिक उपद्रवों का प्रारम्भ

अलीगढ़, कासगञ्ज और सहारनपुर—युक्तप्रान्त के इन तीन स्थानों में, जो एक दूसरे से काफी दूर हैं, अल्पकाल में ही साम्प्रदायिक दङ्गों का होना किसी अन्य ही दिशा की ओर सङ्केत कर रहा है। इन दङ्गों में जान-माल की काफी हानि हुई है। आश्चर्य की बात है कि युक्तप्रान्त में कांग्रेस मिनिस्टरी के पदस्थ होते ही इस प्रकार के दङ्गे प्रारम्भ हो गए। कासगंज और सहारनपुर के उपद्रवों का पूरा विवरण उपलब्ध नहीं है, पर अलीगढ़ के उपद्रव का जो कुछ विवरण पत्रों में आया है उससे हम इसी परिणाम पर पहुँचे हैं कि दङ्गे से पहले वहाँ साम्प्रदायिक तनातनी का वातावरण नहीं था। फलतः साम्प्रदायिक विद्वेष को उक्त काण्ड के लिए जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता। कहा गया है कि उपद्रव के कुछ दिन पहले यूनीवर्सिटी की दीवालों पर कुछ पर्चे लगाए गए थे जिनमें राजनीतिक असन्तोष के आधार पर छात्रों को गृहयुद्ध के लिए उकसाया गया था। यही नहीं, उन्हीं दिनों वहाँ कुछ सभाएँ भी हुई थीं जिनमें वक्ताओं ने साम्प्रदायिक घृणा और उत्तेजना उत्पन्न करनेवाले भाषण किए थे। इन सब तथ्यों से सिद्ध होता है कि मुस्लिम यूनीवर्सिटी के छात्र इन दङ्गों के लिए एकान्ततः जिम्मेदार नहीं हैं। वे तो केवल साधनमात्र हैं जो अपनी कच्ची समझ और नई उम्र के कारण झट बहकाने में आ जाते हैं और उलटे-सीधे काम कर बैठते हैं। सूत्रधार कोई और ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है जो पर्दे की ओट बैठा हुआ सूत्र-सञ्चालन करता रहता है। और वह सूत्रधार ऐसा इसलिए कर रहा है क्योंकि वह उस दल से द्वेष रखता है जिसके हाथ में प्रान्त के शासन की बाग-डोर आई है। ऐसे उपद्रव प्रान्त में उत्पन्न भी हो सकते हैं, और इसी एक प्रान्त में नहीं, जहाँ-जहाँ कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल स्थापित हैं, उन सभी प्रान्तों में इस प्रकार के दङ्गे कराने की चेष्टा की जाएगी जिससे कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलों के कार्य में बाधा पड़े और उनकी अयोग्यता सिद्ध हो। पिछले दिनों भोपाल और बम्बई में होनेवाले दङ्गे इसकी सूचना दे रहे हैं।

इस सम्भावना का सामना करने के लिए कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलों को सदैव तैयार रहना होगा। यही नहीं, हिन्दू जनता का भी कर्त्तव्य है कि वह ऐसे गुण्डापन का सामना करने के लिए अपनी ओर से पूरी तैयारी रक्खे जिससे गुण्डों के अचानक हमला कर देने पर वह किंकर्त्तव्यविमूढ़ न हो जाए और अपनी जान-माल की रक्षा कर सके।

——

हिन्दी राष्ट्रभाषा

युक्तप्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के शिकोहाबाद में होनेवाले छठे अधिवेशन में अध्यक्ष पद से डाक्टर अमरनाथ झा ने जो भाषण किया है उससे राष्ट्रभाषा हिन्दी की विविध समस्याओं पर पूरा प्रकाश पड़ता है। भाषण का मुख्य अंश इस प्रकार है—

इस प्रान्त में राष्ट्रभाषा का प्रश्न कठिन नहीं है, यहाँ की भाषा तो हिन्दी है ही। परन्तु यहाँ की मातृभाषा हिन्दी है इस कारण से राष्ट्रभाषा और अन्य प्रान्त की भाषाओं के प्रति आपका कर्त्तव्य उत्तरदायित्वपूर्ण है।

हिन्दी-जगत् में जनपदीय भाषाओं के सम्बन्ध में बहुधा चर्चा हुआ करती है। भारतवर्ष एक बहुत बड़ा देश है और इसमें अनेक भाषाएँ सदा से प्रचलित है। इतनी भाषाओं का रहना और इन सबका हिन्दी को राष्ट्रभाषा मानना महत्त्व की बात है। कई भाषाएँ तो संस्कृत से अपनी तुलना करती हैं। कई में उच्च कोटि का साहित्य है। सैकड़ों वर्ष से इनमें साहित्य की रचना होती आई है। हिन्दी साहित्य-सम्मेलन की नीति प्रान्तीय भाषाओं के विरुद्ध नहीं है। परन्तु विवाद यों खड़ा हुआ है कि हिन्दी की कुछ सन्निकट भाषाएँ हैं, जिनसे स्वातन्त्र्य की आशङ्का है। पूछा जाता है कि क्या बुन्देलखण्डी, अवधी, राजस्थानी, व्रजभाषा हिन्दी से भिन्न हैं और क्या इनके प्रोत्साहन से हिन्दी की क्षति नहीं होगी? इस प्रश्न का स्पष्ट उत्तर यह है कि प्रत्येक व्यक्ति का यह जन्मसिद्ध अधिकार है कि वह अपनी मातृ-भाषा का अध्ययन करे और इसी में उसकी प्रारम्भिक शिक्षा हो। मातृभाषा प्रारम्भिक शिक्षा का माध्यम हो इस विचार से सभी शिक्षक सहमत होंगे—आजकल की शिक्षा-प्रणाली में इस सुधार की सबसे बड़ी आवश्यकता है। प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त करने पर किस भाषा-द्वारा शिक्षण हो यह प्रश्न दूसरा है। मेरी सम्मति यह है कि हिन्दी प्रान्तों में हिन्दी—राष्ट्रभाषा के रूप में—शिक्षा का माध्यम हो। प्रारम्भिक शिक्षा मातृभाषा द्वारा पा लेने पर विद्यार्थी को राष्ट्रभाषा सीखने अथवा राष्ट्रभाषा द्वारा सीखने में कठिनता नहीं होगी। इस पद्धति से मातृ-भाषाओं की रक्षा साथ-साथ राष्ट्रभाषा का भी हित है। हिन्दी का जो अब रूप प्रचलित है वह कुछ थोड़े भाग को छोड़कर कहीं के निवासियों की मातृभाषा नहीं है। परन्तु साहित्यिक और राजनीतिक क्षेत्र में यह इतना व्यवहार में है, सत्तर वर्ष से इसका इतना प्रचार हो गया है, इसकी भारतवर्ष की भाषाओं में इतनी प्रतिष्ठा हो गई है कि इसको सहज ही राष्ट्रभाषा का पद मिल गया है। राष्ट्र-भाषा में ही दूसरी और उच्च श्रेणी की शिक्षा होनी चाहिए परन्तु साथ ही अन्य भाषाओं में भी साहित्य-रचना होती रहे, यह वाञ्छनीय है। उदाहरण रूप में, व्रज-साहित्य इतना सुन्दर है और व्रजभाषा इतनी मधुर है कि इस साहित्य का भविष्य में अस्तित्व ही न रहे, इसको कौन साहित्य-प्रेमी अंगीकार करेगा? हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का कर्तव्य है कि इस साहित्य और इसी भाँति और साहित्य की भी उन्नति में सचेष्ट रहे।

राष्ट्रभाषा हिन्दी का स्वरूप वही होगा जिसमें समस्त भारतवर्ष के निवासी सुगमता से अपने विचारों को व्यक्त कर सकेंगे। इस देश की मुख्य भाषाओं में संस्कृत शब्दों का बाहुल्य है और संस्कृतमयी हिन्दी को ही सब प्रान्तों के रहनेवाले अपनाएँगे। रही समस्या उर्दू की, यह समस्या तो केवल संयुक्तप्रान्त और पञ्जाब की समस्या है और यहाँ भी शहरों तक ही सीमित है। देहातों में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो सबकी बोली एक ही है। यहाँ यह कहना अनुचित होगा कि जहाँ तक सम्भव हो प्रत्येक शिक्षित व्यक्ति हिन्दी और उर्दू दोनों पढ़े। उर्दू का साहित्य अच्छा है, उर्दू भाषा अच्छी है। उर्दू का ज्ञान होना उपकारक सिद्ध होगा। उर्दू एक बहुसंख्यक समाज की भाषा है। हिन्दी और उर्दू के ज्ञान से दोनों भाषाओं की वृद्धि हो सकती है। परन्तु यद्यपि प्रारम्भिक काल में उर्दू इस देश की यथार्थ भाषा थी और उर्दू के आदि-कवियों ने इस देश की संस्कृति सुरक्षित करने का प्रयास किया था, खेद के साथ कहना पड़ता है कि कालक्रम से उर्दू केवल फारसी का एक अङ्ग हो गई और उर्दू साहित्य में भारतीय जीवन और भारतीय संस्कृति की कहीं झलक नहीं आती है। फिर भी उर्दू को भी उन्नति करने का अधिकार है और इसकी गति को रोकना अनुचित है। हम इसकी समृद्धि चाहते हैं, हम चाहते हैं कि यह भी फूले-फले।

रही बात "हिन्दुस्तानी" की। यह कौन भाषा है, कहाँ की है, किसकी है? इसका साहित्य कहाँ है? इस भाषा में कौन लिखता है? अर्थशास्त्र, राजनीति, विज्ञान, दर्शन, इत्यादि विषयों पर ग्रन्थ किस भाषा में लिखे जाते हैं? हिन्दुस्तानी के गढ़ने का प्रयोजन क्या है? प्रचलित भाषाओं को विकृत करना कौन-सी बुद्धिमत्ता है? क्या हिन्दुस्तानी में भावुकता आ सकती है। क्या इसमें गूढ़ विषयों को व्यक्त करने की क्षमता है? हिन्दुस्तानी के जो थोड़े-से उदाहरण हम देख सके हैं उसको तो भद्दी उर्दू कहने में हमको सङ्कोच नहीं है। उर्दू के वाक्य में हिन्दी के एक-दो शब्द रख देना भाषाशैली के साथ परिहास करना है। हिन्दुस्तानी आन्दोलन से हिन्दी-संसार तो असन्तुष्ट है ही, उर्दू जगत् भी तो प्रसन्न नहीं है। उचित यही है कि हिन्दी और उर्दू दोनों की गति अविरुद्ध रहे।

हिन्दी का प्रचार अब तक अच्छा हुआ है, परन्तु और अधिक यत्न अपेक्षित है। समाचारपत्रों और मासिक पत्रों को सहायता और मिलनी चाहिए। इनकी ग्राहक-संख्या पर्याप्त नहीं है। हिन्दी पढ़नेवालों को चाहिए कि हिन्दी पत्रों के ग्राहक बनें। साथ ही पत्रों के सञ्चालकों का कर्त्तव्य है कि वे अपने पत्रों को इस योग्य बनाएँ कि किसी और भाषा के पत्रों के पढ़ने की आवश्यकता न रहे। हिन्दी के बहुत कम दैनिक पत्र ऐसे हैं जिनमें समस्त संसार के समाचार उसी दिन छपते हों जिस दिन अँगरेजी पत्रों में उनका प्रकाशन होता है। समाचारपत्रों की भाषा में भी संशोधन होना चाहिए। सरल से सरल भाषा का इनमें प्रयोग होना चाहिए, सर्व-साधारण जिसे समझ सके, जनता जिससे प्रभावित हो सके। अँगरेजी शब्दों और वाक्यों का अविकल अनुवाद बहुधा हास्यास्पद होता है। उदाहरणार्थ, इस वाक्य को लीजिए—"दिल्ली के ग्वालों ने असेम्बली भवन के सामने प्रदर्शन किया।" अथवा "कामायिनी—एक अध्ययन।" "उस दिन राष्ट्रपति ने बताया"—इन शब्दों से एक लेख आरम्भ किया गया है, किस दिन? इस प्रकार का अनुवाद अनावश्यक है। फिर, पत्रों में पढ़ने की सामग्री और होना चाहिए। रुचि भिन्न है और अनेक रुचियों की तुष्टि पर ध्यान देना उचित है। सम्पादकों को यह भी चाहिए कि अश्लील विज्ञापनों को प्रकाशित न करें। और जहाँ तक सम्भव हो संवाददाता ऐसे नियुक्त करें जो विश्वसनीय हों और यथाशक्ति पक्षपात-रहित हों। हिन्दी प्रचार का एक प्रधान अङ्ग यह भी है? कि प्रत्येक विषय पर प्रत्येक श्रेणी के विद्यार्थियों के उपयुक्त ग्रन्थ लिखे जाएँ। पुस्तकों के प्रणेताओं को उचित पारिश्रमिक मिलना चाहिए। अब समय आ गया है कि मौलिक पुस्तकों की रचना हो, अनुवादों से काम नहीं चल सकता है। ग्रन्थों के प्रकाशित हो जाने पर उच्च कोटि की शिक्षा भी हिन्दी द्वारा दी जा सकेगी। इसका ध्यान रहे कि उर्दू में भी इस प्रान्त में शिक्षा दी जाएगी और एक ही विषय का अध्यापन दो भाषाओं में, भिन्न-भिन्न कक्षाओं में, करना पड़ेगा। सम्भव है कुछ विद्यार्थियों के लिए कुछ दिनों तक अँगरेजी का भी सहारा लेगा पड़े। इन सबसे व्यय बढ़ जाने की सम्भावना है, परन्तु देशीय भाषा में शिक्षा से लाभ इतना होगा कि यह व्यय खलना नहीं चाहिए। विश्वविद्यालयों और अन्य साहित्यिक संस्थाओं को आपस में मिलकर पारिभाषिक शब्दावली प्रकाशित करनी चाहिए और ऐसे विषयों पर ग्रन्थ लिखवाने चाहिए जिनका उपयोग शिक्षा-विभाग कर सके।

बहुधा देखा जाता है कि हम यदि अँगरेज से मिलते हैं तो अँगरेजी में उससे बात करते हैं, रावलपिण्डी के निवासी से मिलते हैं तो उर्दू में बात करते हैं; परन्तु बङ्गाल, महाराष्ट्र अथवा गुजरात प्रान्त के रहनेवालों से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बङ्गाली, मराठी अथवा गुजराती में बात नहीं करते हैं। अँगरेज हमें "गुड मौर्निङ्ग" कहता है, उर्दूवाले सलामवालेकुम अथवा "आदाबअर्ज" कहते हैं, परन्तु हम इन्हें नमस्कार वा 'नमस्ते' कहते हिचकते हैं। हम "पण्डित साहब" कह जाते हैं, पर हमें "मौलवी जी" कहते सङ्कोच होता है। हमें अपनी भाषा के शब्दों का प्रयोग करते हुए आनन्द और गर्व होना चाहिए। जहाँ तक सम्भव हो, आपस की बातचीत हमें शुद्ध हिन्दी में करनी चाहिए। जिस प्रकार की खिचड़ी बोली का हमें अभ्यास पड़ गया है उसे छोड़ना चाहिए।

साहित्य के विषय में मैं केवल इतना निवेदन करूँगा कि लेखक पर किसी प्रकार का कृत्रिम नियन्त्रण अनुचित और हानिकारक है। उच्च कोटि की कला मानव के हृदय का बाह्य रूप है और किसी के हृदय पर किसका अधिकार है? कला मनुष्य की भावना से उत्पन्न होती है। भावना को वश में कौन ला सकता है? क्षुद्र नदी की धारा तो रोकी जा सकती है, सागर पर आधिपत्य कैसा?

इधर कुछ दिनों से हमें यह आदेश मिलने लगा है कि प्रत्येक विद्यार्थी को दो लिपियाँ सीखना आवश्यक होना चाहिए—हिन्दी लिपि और उर्दू लिपि। हिन्दी लिपि और उर्दू लिपि कोई लिपि नहीं है। नागरी लिपि और फारसी लिपि हैं। देश की और प्रधान लिपियाँ ये हैं—बँगला, गुजराती, गुरुमुखी, तामिल, तेलगू, कन्नाडा, मलयलम। इनमें देवनागरी की ही प्रधानता है। फिर यदि नागरी के साथ कोई और लिपि भी सीख सके तो अच्छा अवश्य है। परन्तु हमारी लिपि वैज्ञानिक दृष्टि से इतनी शुद्ध और व्यावहारिक दृष्टि से इतनी सरल है कि इसका त्याग हमारे लिए अनावश्यक, अहितकर और असम्भव है। प्रत्येक प्रान्त में नागरी और फारसी दोनों लिपियों को अनिवार्य बनाना बच्चों पर बहुत बड़ा बोझ डालना है। कुछ विद्वानों का मत है कि रोमन लिपि का भी प्रचार होना चाहिए। मैं इससे सहमत नहीं हूँ। रोमन में इतनी त्रुटियाँ हैं कि हम अपनी भाषा को इस लिपि में लिखकर अपने शब्दों का शुद्ध उच्चारण नहीं कर सकेंगे। देवनागरी की विशिष्टता यह है कि जैसी यह लिखी जाती है वैसा ही इसका उच्चारण होता है। यह विशेषता न रोमन में है और न फारसी में।

——

नमक-कर

'साप्ताहिक आज' लिखता है—संसार में भारत के अतिरिक्त ऐसा कोई भी देश न होगा जहाँ नमक पर सरकार का एकाधिकार हो और जिसके निवासियों को इसके लिए कर के रूप में गहरी रकम चुकानी पड़ती होगी। साम्राज्यवादी शोषण की यह पराकाष्ठा है। भारत-जैसे गरीब देश को भी जिसका भोजन और रहन-सहन के मामले में सबसे नीचा स्तर है, भोजन की इस आवश्यक वस्तु पर केवल इसलिए कर देना पड़ता है कि वह हड्डियों से निकालकर रुपया दे सकता है। संसार के पाँचवें भाग के निरीह मानवों पर लगाए गए इस कर की ओर गाँधीजी का ध्यान बहुत दिनों से लगा है। इसके लिए उन्होंने युद्ध भी किया है और लाखों व्यक्तियों के साथ जेल की यातनाएँ भी सही हैं। किन्तु लाख यत्न करने पर भी यह उठाया नहीं गया। गाँधीजी ने इधर इस सम्बन्ध में व्यक्तिगत प्रयत्न करना आरम्भ किया है और लार्ड वेवल से यह प्रार्थना की है कि वे नमक-कर उठाकर अपनी उदारता का परिचय दें; क्योंकि इसके रहते सद्भावना का सारा सन्देश फीका पड़ जाता है। नमक प्राकृतिक वस्तु है जो जनता के जीवन-यापन के लिए मुफ्त दी गई है। हमें आशा है कि वाइसराय गाँधीजी के सामयिक प्रतिनिधित्व का आदर करेंगे और यह अमानुषिक टैक्स अविलम्ब उठा लेने का आदेश दे देंगे।

——

Printed & Published by A. Bose, at the Indian Press, Ltd., Benares-Branch, Benares.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विवाहित स्त्री-पुरुषों के जानने योग्य

ऑपरेशन तथा इन्जेक्शन जरूरी नहीं है

अप्राकृतिक रहन-सहन तथा मिथ्या आहार-विहार के कारण हमारे देश की नारियाँ अधिकांश ऐसी मिलेंगी जो एक न एक रोग से ग्रस्त हो निराश जीवन व्यतीत कर रही हैं। अधिकतर गर्भाशय का मोटा हो जाना तथा उस पर चर्बी आ जाना एक आम रोग हो गया है जो गर्भ धारण करने में बाधक होता है तथा अन्य भयंकर रोगों की जिससे उत्पत्ति भी होती है। ऐसी अवस्था में प्रायः ऑपरेशन कराने से भी बहुत कम रोगियों को सफलता प्राप्त होती है।

यदि आपको ऑपरेशन कराने में असुविधा है या ऑपरेशन की अपेक्षा औषधियों द्वारा कष्ट दूर करने के अधिक पक्ष में हैं तो शास्त्रोक्त अंगूरों का ताजा रस, अशोक, अर्जुन, दशमूल, त्रिफला तथा अन्य श्रेष्ठ औषधियों से प्रस्तुत—मूँगा जिसका प्रधान अंग —१५ वर्षों से प्रचलित **गौड़ की नारी-सुधा कॉर्डियल** सेवन करें।

नारी-सुधा एक माहवारी से दूसरी माहवारी तक सेवन करने से बिना ऑपरेशन गर्भाशय की चर्बी, उसका मुटापा तथा बाँझपन नष्ट हो जाता है और सहज ही गर्भ की स्थिति हो जाती है। जहाँ इन्जेक्शन लिकोरिया (सफेदे का गिरना) रोकने में सफल होते हैं वहाँ कुछ ही खुराकों में यह सदैव के लिए ठीक हो जाता है। कमजोरी से गर्भाशय अपनी जगह से हट जाता है गर्भपात होते रहते हैं—एक बोतल के सेवन से युक्त स्थान दृढ़ हो जाता है, फिर गर्भपात कभी नहीं होते। मासिक धर्म में दो बार या दो महीने में एक बार के बजाय ठीक समय पर हँसते-खेलते होने लगते हैं, जिससे हिस्टेरिया (बेहोशी) के होने बन्द हो जाते हैं। खूब भूख लगती है, खून एक बड़ी में बनने लगता है। दिल की धड़कन, कमर-टाँगों का ठहरा दर्द केवल चौथे दिन दूर हो जाते हैं। जापे का संकट सहन तथा बाद की कमजोरी शीघ्र दूर करने की यह विशेष है। **नारी-सुधा** की २६ खुराकों की एक बोतल का —पेकिंग, वी० पी० व्यय से पृथक्—तीन रु० पाँच आने है। आवश्यकता होने पर इस मासिक पत्रिका का हवाला देकर

कुमार कुमार एन्ड को०

पोस्ट बाक्स नं० ११९ देहली

२ शहरों में हम ऐजेन्सी स्थापन कर रहे नियमावली के लिए पत्र-व्यवहार करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सौंदर्य की दो पीढ़ियाँ

यद्यपि इसकी उम्र में बीस साल का फर्क है, फिर भी माँ के सौन्दर्य में उतनी ही ताज़गी और उसकी त्वचा उतनी ही मुलायम है जितनी कि उसकी षोडश वर्षीय बेटी की। इसका भेद यह है कि माँ ने, अपनी माँ की सलाह पर, बचपन से ही पियर्स साबुन और साफ़ पानी से अपनी कोमल त्वचा की रक्षा की। आज उसकी सुन्दर बेटी उसी तरीके से अपनी त्वचा की रक्षा करती है। इसलिये बीस वर्ष के बाद उसकी त्वचा भी निस्संदेह उसी तरह सुन्दर और ताज़ा रहेगी जिस तरह आज उसकी माँ की त्वचा है।

चालीस साल से हिन्दुस्तान की सुन्दरियों ने पियर्स साबुन को ही इस्तेमाल किया है। स्वाभाविक सुगन्ध और रेशमी झाग के कारण यह साबुन साधारण साबुनों से कहीं बढ़कर है।

पियर्स साबुन

सौन्दर्य का सेवक

A. & F. PEARS, ISLEWORTH, ENGLAND

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेममोहनी बटिका

अगर आप दवा करते-करते हैरान हो गये हों, तो हमारी यह प्रेममोहनी बटिका जरूर इस्तेमाल करिएगा। इसकी तारीफ करना फिजूल है, यह आपको सेवन करने से ही मालूम होगा कि वास्तव में क्या है। इसके सेवन से स्वप्नदोष, धातुक्षीणता, कमजोरी, मधुमेह, बीसों प्रकार के प्रमेह, पेशाब के साथ चूने की तरह वीर्य का जाना, पाखाने के समय धातु का निकलना, जवानी में बुढ़ापे की-सी हालत होना, असली ताकत की कमी, स्मरण शक्ति कमजोर पड़ जाना, हिस्टीरिया, उन्माद आदि रोगों को दूर कर अपूर्व ताकत लाती है। और स्त्रियों के लिए भी यही दवा प्रदर, रज, कमजोरी आदि को दूर कर ताकत पैदा करती है। आज ही मँगाकर लाभ उठाइए। मूल्य २० दिन की ४० गोलियों का ३॥) और ४० दिन की ८० गोलियों की पूरी खूराक का ६।) डाक खर्च माफ पैकिंग ।–) अलग।

शाही आनन्द तिला

अगर आपको नामर्दी की शिकायत है तो इसी कम्पनी का चुना हुआ तिला इस्तेमाल करिएगा। केवल दो ही सप्ताह इस तिला का उपयोग करने से कामशक्ति में अपूर्व चेतनता आ जाती है। बचपन की अवस्था में लुक-छिपकर करी गई भूलों द्वारा जिनकी कामेन्द्रिय विकृत हो गई हो, उन्हें इस तिला के उपयोग से नव-यौवन प्राप्त होता है। किसी प्रकार के छाले पड़ने का भय नहीं है। एक शीशी में पूरी पन्द्रह दिन की दवा है जिसका मूल्य सिर्फ ३।) है। डाक खर्च माफ पैकिंग ।–) अलग।

१०००) रु० माहवार कमाइए

इस 'दौलत की खान' पुस्तक में १९२ हुनर छपे हैं, जिससे लोग लखपती हो गए, जो बेकार थे। इस पुस्तक में हर तरह के तैल, साबुन, बाल उड़ाने का साबुन, बाल काले करने का खिजाब, हर तरह के अचार, खानी तम्बाकू, कुलफी की बर्फ, पेंटेट दवायें आदि बनाने का नुस्खा छपा है। इन्हें लोग हजारों खुशामद करने पर मरते वक्त तक नहीं बतलाते हैं। कीमत फी पुस्तक २।) डाक खर्च व पैकिंग माफ।

अमेरिकन पिस्तौल

यह पिस्तौल अमेरिका से बनकर आई है बिल्कुल असली पिस्तौल के मानिन्द मालूम होती है। इसे बखूबी कोट की जेब में रख सकते हैं। इसमें ६ खाने हैं। घोड़ा दबाते ही चरखी खुद घूमती है। इसकी अवाज निहायत डरावनी है। चोर, 'डाकू', शत्रु और जंगली खूँख्वार जानवर इसकी शक्ल ही देखकर भाग जाते हैं। इसके रखने में सरकार से लाइसैन्स लेने की जरूरत नहीं पड़ती। बाज वक्त यह पिस्तौल जान-माल की रक्षा करने में बहुत अच्छी साबित हुई है। इसको हरएक मनुष्य रख सकता है। मूल्य सब ५० स्पेशल कारतूस के फी पिस्तौल ४।) डाक खर्च फी पिस्तौल १।) अलग कारतूस फी सैकड़ा १॥)

असली कलीद सट्टा

यदि आप सट्टा-लाटरी का शौक रखते हैं और लाटरी-सट्टा का नम्बर जानकर फायदा उठाना चाहते हैं, तो हमारी असली कलीद सट्टा नामक पुस्तक मँगाकर मालामाल बनिए। इसका नम्बर कभी खाली नहीं जाता। सिर्फ गुणा भाग करने से ही नम्बर निकल आता है। कीमत फी पुस्तक २।) डाक खर्च व पैकिंग माफ।

ओटो पुष्पलता

यह ओटो तमाम सैन्टों का सरताज है। लगाते ही आपकी तबीयत मस्त हो खुशबू से बाग-बाग हो जाएगी। इस ओटो को लगाकर आप जिस रास्ते निकल जाएँगे पास के लोगों को ताज्जुब होगा कि यह खुशबू किस बगीचे से आ रही है। रूमाल में लगा लेने से महीनों खुशबू नहीं जाती है। कीमत प्रति शीशी ॥=) दर्जन का ५॥) डाक खर्च १।) एक दर्जन एक साथ मँगाने पर एक जोड़ी हाथ व गले के बटनों का सेट व एक बम्बई फैशन सोने की तरह चमकनेवाली अँगूठी एक फैन्सी रूमाल व एक खूबसूरत शीशा मय कंघी के इनाम में मुफ्त दिया जाएगा इस ओटो की प्रचार करने का वजह से यह ऐलान निकाला है।

पता—इंडियन जनरल ट्रेडिंग कम्पनी नं० १० कानपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

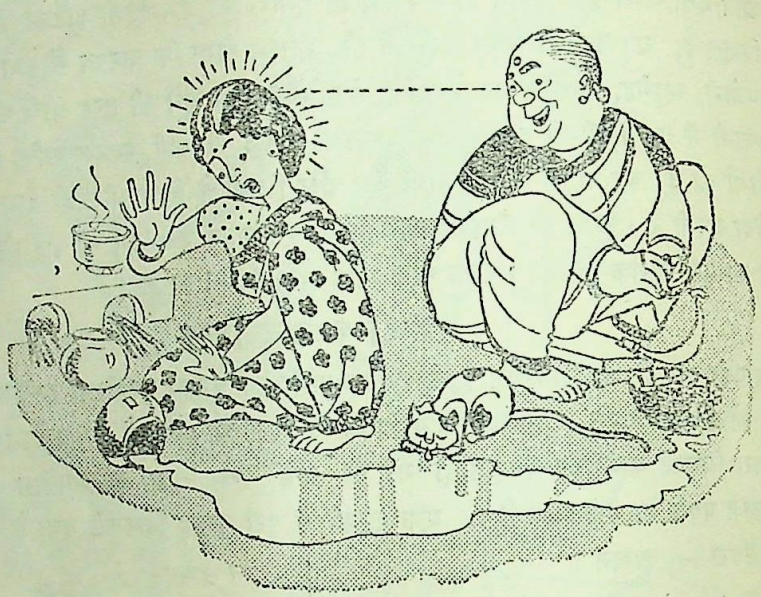

सास दयालु रहती है

जब आप

टामको कोकोनट

हेयर आयल व शैम्पू

का व्यवहार करती हैं

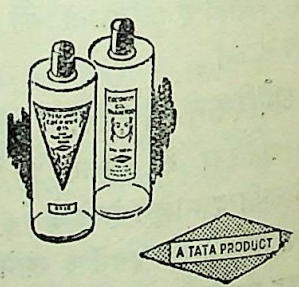

दी टाटा आयल मिल्स कम्पनी लिमिटेड

TH. 6034.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजज्योतिषी

जगत्-प्रसिद्ध ज्योतिषी और तान्त्रिक पण्डित हरिश्चन्द्र शास्त्री, ज्योतिष-तीर्थ,

अध्यक्ष अखिल बङ्गाल ज्योतिष-संघ,

ज्योतिष-गृह, १४१।१ सी, रशा रोड, कालीघाट, कलकत्ता।

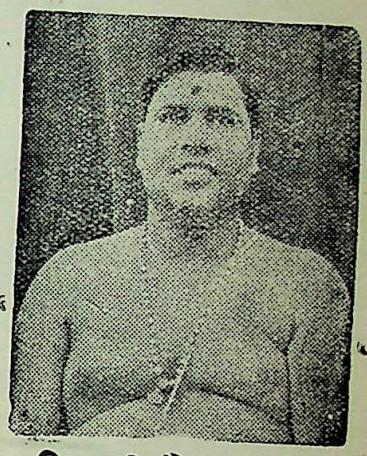

हजारा पार्क के ठीक पूर्व में, फोन—९७८।

ये महान् ज्योतिषी न केवल पूर्वीय और पाश्चात्य ज्योतिष के ही प्रकाण्ड पण्डित हैं, [illegible] हस्तरेखाशास्त्र (सामुद्रिक विद्या) के भी पहुँचे हुए पारखी हैं। जो भी आपके [illegible] सम्पर्क में आए हैं, वे आपकी अलौकिक आध्यात्मिक शक्ति के उन आश्चर्यजनक [illegible]णामों से पूर्णतः सन्तुष्ट हैं, जो आपने महामाया श्री सिद्धेश्वरी की भक्ति कर और उन्हें [illegible] कर प्राप्त की है।

योग और तन्त्र द्वारा आपने, ग्रहों के दुष्परिणामों को दूर कर देने तथा पेचीदे कानूनी [illegible]दमों और असाध्य बीमारियों से रोगी को स्वस्थ कर देने में निश्चित सफलता प्राप्त करने [illegible] असाधारण शक्ति प्राप्त कर ली है।

आपके आश्चर्यजनक कवचों द्वारा निश्चित सफलता मिलती है

शान्ति कवच :—मन की शान्ति, पारिवारिक प्रसन्नता, असाध्य रोगों पर विजय, दुर्घटनाओं से रक्षा, अकाल-मृत्यु से बचाव, [illegible] और चोरी का भय-उन्मूलन तथा परीक्षाओं में इससे सफलता मिलती है। इस कवच को पहननेवाला सभी परिशानियों से बच [illegible] है, क्योंकि इससे दुष्ट ग्रहों की शान्ति हो जाती है। साधारण का मूल्य ५) रु०; विशेष (शीघ्र लाभकारी) का २०) रु०।

बगला कवच :—रोजगार-धन्धे में सफलता, अभिलाषा की पूर्ति, राजसम्मान, नौकरी में तरक्की, व्यापार में उन्नति, धन में वृद्धि [illegible] सभी पर अपना प्रभुत्व रखना इस कवच से प्राप्त होता है। अनेक व्यक्तियों ने बहुत ही निराशाजनक और पेचीदे कानूनी [illegible] में इस कवच से सफलता प्राप्त की है। साधारण का मूल्य १२) रु०; विशेष (शीघ्र प्रभावकारी) का ४५) रु०।

नृसिंह कवच :—स्त्रियों की सभी तरह की बीमारियाँ इससे ठीक हो जाती हैं। मृत बच्चे को बलपूर्वक गर्भ से बाहर [illegible] से जो दोष रह जाते हैं उन्हें दूर करना, बाँझ स्त्रियों के भी पुत्र प्राप्त होना, मासिक धर्म सम्बन्धी दोषों के ठीक कर देना इस [illegible] के प्रभाव हैं। साधारण का मूल्य १०) रु०, विशेष (शीघ्र प्रभावकारी) २६) रु०।

आकर्षिणी कवच :—जिस व्यक्ति को पाने की इच्छा हो (स्त्री या पुरुष) पूर्णतः अधिकार में आ जाता है जिससे मन-[illegible] कार्य कराया जा सकता है। साधारण का मूल्य १२) रु० विशेष (शीघ्र प्रभावकारी) ५०) रु०।

[illegible] आदरणीय महानुभावों में से कुछ के नाम, जिन्हें व्यक्तिगत रूप से आपकी भविष्यवाणी, फलित ज्योतिष की ठीक २ गणना [illegible] सामुद्रिक और तान्त्रिक शक्तियों का परिचय मिल चुका है :—

महाराजाधिराज बर्दवान; हिज हाईनेस राजा धेनकानल (उड़ीसा), नेपाल के राना कर्नल गोविन्द शमशेर जंग बहादुर; श्री० ए० [illegible], इँगलैंड; श्री० लीलाराम मैगूराम, हैदराबाद, सिन्ध; श्री बुलबुल देसाई, डायरेक्टर, अमर पिक्चर्स; श्री सुरेन्द्रनाथ चौबे, [illegible]; श्री जी० आर० मदन, लाहौर, श्री के० बेंकट राव, विजगापट्टम; श्री फजलुलहक, भूतपूर्व प्रधान मन्त्री, बङ्गाल; श्री बाबूलाल [illegible], अध्यक्ष, भारत लक्ष्मी स्टूडियो, कलकत्ता; श्री रोहनीकुमार चौधरी, मन्त्री आसाम मन्त्रि-मण्डल; श्री० पी० आर० दास, [illegible], पटना; श्री जी० डी० खेतान, व्यापारी कलकत्ता और भागलपुर, राय बहादुर सूरजदास वाइसराय, दिल्ली; जगत्प्रसिद्ध [illegible] श्री उदयशङ्कर आदि।

समस्त पत्र-व्यवहार अँगरेजी में किया जाना चाहिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्वी देशों में अति प्राचीन तथा सर्वश्रेष्ठ....

'मृतसञ्जीवनी सुरा' प्राचीन आयुर्वेदिक योग पर निर्मित एक पुष्टिकारक औषध है। इसका अमोघत्व सहस्र-सहस्र उपभोक्ताओं द्वारा दीर्घकाल से सिद्ध किया जा चुका है। समय की कसौटी पर कसी जाने पश्चात् हमारी 'मृत-सञ्जीवनी सुरा' ने पूर्वी देशों में अति प्राचीन एवं सर्वश्रेष्ठ होने का अधिकार यथार्थ ही उपार्जन किया है।

SAKTI'S
MRITASANJIBANI
SURA

प्रत्येक अवस्था के लिए अति प्राचीन, बलवर्द्धक औषध!
अध्यक्ष माथुर बाबू का शक्ति-औषधालय ढाका।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वार्षिक बाल-सखा

(छप रहा है)

सन् १९४६ के वार्षिकाङ्क में ऐसी सामग्री रहेगी, जिसको पढ़कर बालक फूले नहीं समायेंगे। बढ़िया कविताएँ, अच्छी कहानियाँ, वैज्ञानिक लेख, देश-विदेश की यात्रा, भ्रमण, उपन्यास और हास-परिहास आदि की ऐसी सामग्री रहेगी जिसको पढ़ने से, बालकों की ज्ञान वृद्धि होगी और मनोरञ्जन तो होगा ही।

वार्षिक बाल-सखा की माँग बहुत है। हिन्दी में यह वार्षिकाङ्क अनोखी वस्तु है। पाठक थोड़ा धैर्य रक्खें।

मासिक बाल-सखा का वार्षिक मूल्य ३) एक प्रति का मूल्य ।)
बाल-सखा के वार्षिकांक का मूल्य ३) सर्वसाधारण से
मासिक बाल-सखा के ग्राहकों से रियायती मूल्य २॥)
रियायती मूल्य के लिए अपना ग्राहक नंबर अवश्य लिखिए।

मैनेजर :—बाल-सखा, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग

हिन्दी साहित्य : बीसवीं शताब्दी

(नवीन संस्करण)

वर्तमान साहित्य की वैज्ञानिक समीक्षा करनेवाली प्रमुख पुस्तक

महावीरप्रसाद द्विवेदी, रामचन्द्र शुक्ल, मैथिलीशरण गुप्त, प्रेमचन्द, प्रसाद, निराला, पन्त, महादेवी वर्मा, जैनेन्द्र-कुमार आदि साहित्यिकों पर विवेचनात्मक १९ लेख।

लेखक—अध्यापक श्री नन्ददुलारे वाजपेयी

भूमिका में वर्तमान साहित्य का परिचय और प्रत्येक युग के कवियों तथा लेखकों का समीक्षात्मक उल्लेख है। पुस्तक में काव्य, कला और साहित्य के स्थायी प्रति-मानों के आधार पर इस शताब्दी के प्रमुख साहित्यिकों की आलोचना की गई है। वर्तमान युग की सभी रचना-धाराओं का सन्निवेश इस पुस्तक में है।

साहित्यिक और कलात्मक विवेचन की यह पुस्तक उच्च श्रेणी के विद्यार्थियों और साहित्यिकों के लिए अनिवार्य है। मूल्य पाँच रुपये।

इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग
के एजेंट—इंडियन बुकडिपो, लखनऊ

केवल एकदिन में

मेजिक मिस्मरिजम

लड़के को जमीन पर लिटा कर और चादर से ढक कर अजीब व गरीब प्रश्नों के सही सही उत्तर पूछना, दहकती आग पर आप चलना व दर्शकों को चलाना, किसी भी समय पर सब दर्शकों की घड़ियों में ६॥ इत्यादि बजा देना, दीवार में आग लगा देना, मुँह में से आग की लपटें निकालना, पानी के अन्दर आग के अङ्गारों का नाच कराना, बन्द लिफाफों के अन्दर का लिखा बता देना आदमी को उड़ा देना, बन्द सन्दूक में से आदमी का निकल जाना इत्यादि अनेक तिलस्मात जादू के अद्भुत, रहस्ययुक्त और रोमांचकारी करिश्में सीखकर,

दूसरे ही दिन

नवाब, राजे-महाराजे, सेठ-साहूकारों को दिखाकर—बड़े २ धुरन्धर विद्वानों बुद्धिमानों, विज्ञानवेत्ताओं और प्रोफेसरों की बुद्धि चक्कर और हैरत में डालकर ठनाठन रुपये पैदा करो। मामूली हिन्दी पढ़ लेने वाला यह सब गजब का जादू एक दिन में, हाँ केवल एक दिन में जान जाता है और किसी भी प्रकार के अभ्यास व सिद्धि की झंझट नहीं—ऐसा हमारा दावा और गारण्टी है। फिलहाल इस पूरे कोर्स की कीमत केवल पाँच रुपया। यह सब एक दिन में न आवे तो कीमत वापिस।

देहली के प्रतिष्ठित पत्र 'वीर अर्जुन' तथा कुँवर साहिब जी की ज़ोरदार सिफारिश के साथ सैंकड़ों प्रशंसा पत्र प्राप्त।

दी यूनाइटेड वण्डरफुल मेजिकल कम्पनी

विभाग नम्बर २६, मुरादाबाद यू० पी०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कूटने से होनेवाले व्यर्थ नुक़सान को रोकिए। कपड़ों को इस प्रकार धोइये।

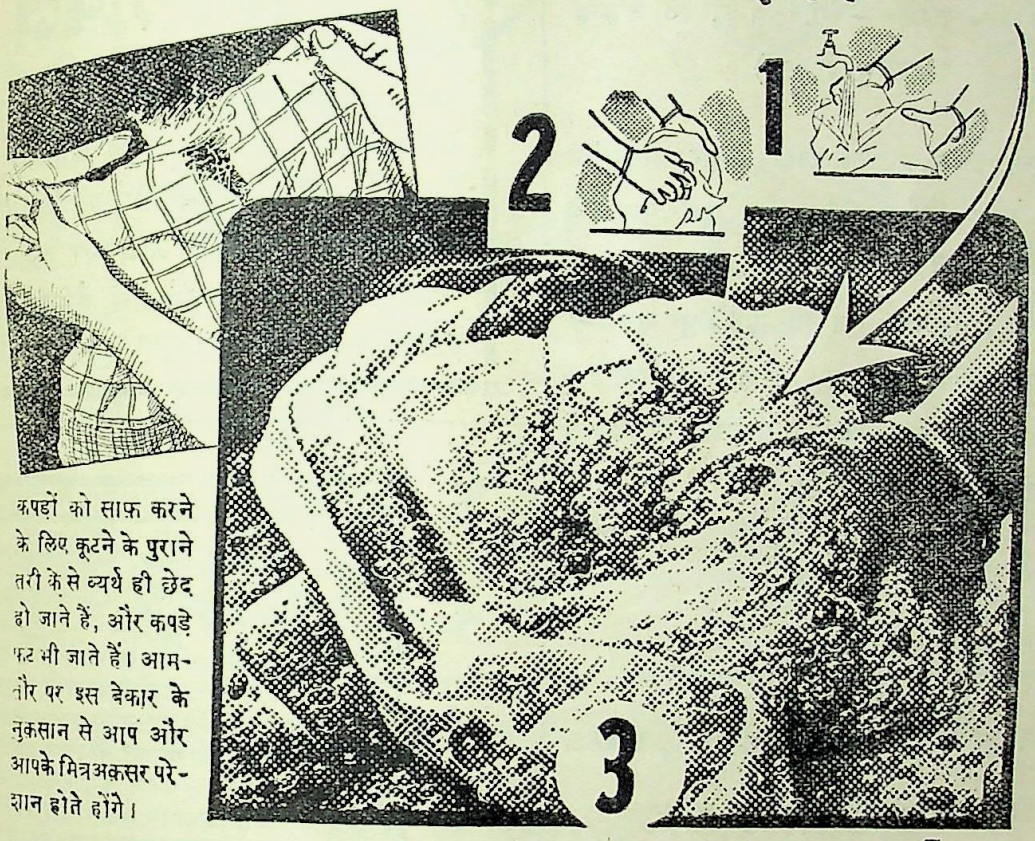

कपड़ों को साफ़ करने के लिए कूटने के पुराने तरीके से व्यर्थ ही छेद हो जाते हैं, और कपड़े फट भी जाते हैं। आम-तौर पर इस बेकार के नुकसान से आप और आपके मित्र अकसर परेशान होते होंगे।

इन अंकित चित्रों में दिये गये तरीकों को अपनाइये; निम्न लिखित हिदायतो का पालन किजिए; और आप यकिन रखिए की आपके कपड़े बिना नुकसान के वास्तव में साफ़ धुलेंगे।

(१) जिस कपडे को धोना हो उसे पहले खूब भिगो लीजिए। यह आप नल के नीचे, टब में, तालाब में या नदी में कर सकते हैं – इससे कोई फर्क नहीं पडता। (२) जब कपडे को खूब भिगो चुकें तो सारे कपड़े में सनलाइट साबुन मलें। जो भाग अधिक मैला हो वहाँ सनलाइट जरा ज़्यादा मलें। (३) साबुन लगे हुए कपडे को हाथों से धीरे-धीरे गूँथिये। (इसे कूटिये नही) तबतक गूँथिये (ठीक उसी तरह जैसे रोटी का आटा गूँथा जाता है) जब तक साबुनकी झाक कपडे के हरेक तन्तु में प्रवेश पाजाए। कपडे को जोर रगड़ने की या बुरीतरह कूटनेकी अवश्यकता ही नहीं है सनलाइट का "स्वयंकाम करनेवाला" फेन सरलता से सारे मैल को बाहर निकल देगा – यदि आपको यह विश्वास हो जाये की गूँथने से यह फेन कपडे के मैल में घुस चुका है। इस शक्तिशाली फेन में जो साबुन है वह मैल को घूते ही तत्काल फुला देता है। फेन उसे जजब कर लेता है। ऐसे जब आप कपडे को खूब धोएँगे तो फेन के साथ सब मैल निकल जायेगा। (४) फेन – जिसमें की अब सारा मैल आचुका है – छुटाने के लिए कपडे को खूब मलकर धो डालिए।

ऐसे सनलाइट के तरीके से धोए हुए कपडे बहुत समय तक चलते है।

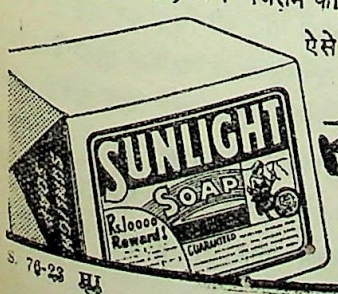

सनलाइट साबुन कपड़ों की बचत करता है

S. 76-23 HI

LEVER BROTHERS (INDIA) LIMITED

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मधुर चीजें

(लेखक—जी० एस० पाटणकर—संगीत-प्रवीण, ४७ ब्राह्मण-वाड़ी मुंबई १६)

शंकरा, दुर्गा, बसंत, अडाणा, पटदीप, बहार, मालगुंजी आदि बीस मधुर और लोकप्रिय राग इस पुस्तक में अङ्कित हैं। हर राग में एक झपताल, एक एकताल, एक त्रिताल दिया है। अच्छी तर्ज तथा नाद मधुर शब्दों से सजाया है और हरेक का साफ साफ नोटेशन भी दिया है। (मूल्य १।) रु० डाक-व्यय अलग) संगीतज्ञ प्रो० व्यास आदि संगीतज्ञों के उत्तम अभिप्राय।

पुस्तक मिलने का पता :—

नन्दन ब्रदर्स—३५ अमीनाबाद पार्क, लखनऊ

हिन्दी भवन—हास्पिटल रोड, लाहौर

हिरो ऐंड कंपनी—इलाहाबाद।

पागलपन की अचूक औषधि

पागल बटी

आनिद्रा, चित्तभ्रम, विचारवायु, मगज की अस्थिरता, उन्माद वगैरह को दूर करके मगज शान्त व बुद्धिमान् बनाने के लिए अनेकों रोगियों पर परीक्षित, विश्वसनीय, चमत्कारिक औषधि है। की० ४८ गोलियों की डि० रु० ३)

मदनमंजरी फार्मेसी जामनगर काठियावाड़

इलाहाबाद एजेंट—मदनस्टोर्स कैमिस्ट जोन्स्टन रोड बनारस एजेंट राधे लाल एन्ड सन्स बैटरीवाला, चौक

हकीम तुलसी प्रसाद अग्रवाल अलीपुर की

असली-मीठी

बाल जीवन घुट्टी

रजिस्टर्ड

बच्चों की हर एक बीमारी को दूर करती कमज़ोर बच्चों को ताक़त वर बनाती। ज़रा सी रोज़ाना चटा देने से बच्चे कभी बीमार नहीं होंगे। दाँत आसानी से निकल आवेंगे। — मू० शी० ७ दर्जन २॥) डा० व्य० अ० सब जगह बिकती है। नक़ली घुट्टियों से बचो। नए सौदागर नमूना मुफ़्त मगावें।

पता० बाल जीवन कार्यालय अलीपुर यू०पी०

अब मैं अपने पति की प्रिय बन गई

रूप-विलास (रजिस्टर्ड)

जब मैं विवाह के अवसर पर अपने पति-गृह गई तब मेरे पतिदेव हमारे भद्दे तथा काले चेहरे को देखकर मुझसे घृणा करने लगे। मैंने अपनी सहेलियों की सलाह से **रूप-विलास** का उबटन लगाना शुरू किया। कुछ ही दिनों बाद मेरा चेहरा गुलाब के फूल की भाँति दमकने लगा और आज मैं अपने पति की प्रिय बन गई। इसके लगाने से मुँहासा, झाँई, चेचक, काले-काले दाग, फुंसी, खुश्की, बदरौनकी, झुर्रियाँ वगैरह जल्द आराम होती हैं और थोड़े ही दिनों के लगाने से मलीन मुख चमकदार होकर चेहरे पर गुलाबी छटा दमकने लगती है। यदि आप अपना चेहरा खूबसूरत बनाना चाहते हैं तो २५ वर्ष का प्रचलित जगत्प्रसिद्ध रजिस्टर्ड **रूप-विलास** उबटन लगाइए। विवाह-शादियों पर वर-वधू का सौन्दर्य बढ़ाने के लिए यह बहुत ही उपयोगी साबित हुआ है और इसकी खुशबू इतनी प्यारी है कि तबियत को मस्त करती है। कीमत एक डिब्बा २—) तीन डिब्बा ५॥) डाक-खर्च माफ, पैकिंग खर्च अलग।

रूप-विलास कम्पनी धनकुट्टी नं० ४२७ कानपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Godrej गोदरेज का

चाबी छाप

'टॉयलेट' (नहाने के) साबुनों का

नया दाम

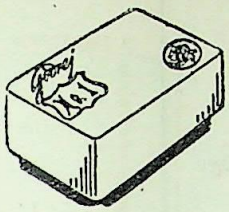
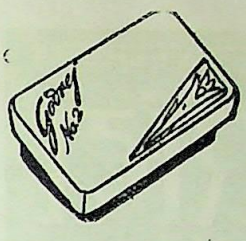

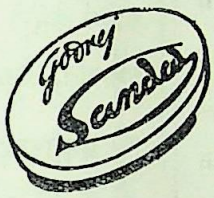

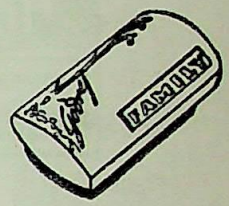

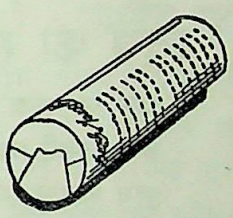

हर एक साबुन के चित्र के नीचे बट्टी का सबसे खुदरा दाम लिखा हुआ है। जहाँ चुंगी, octroi, टरमिनल टैक्स और कोई दूसरा कर लिया जाता है वहाँ साबुनों का दाम ज़रा अधिक होगा।

गोदरेज सोप्स, लि०,

हिन्द में वनस्पति 'टॉयलेट' (नहाने का) साबुन बनानेवाले अग्रगण्य निर्माता।

पं० गौरीशङ्कर मिश्र, बी० ए०, एल-एल्० बी०

लिखित पुस्तकें

बलिदान-मन्दिर

इस उपन्यास की घटना बड़ी रोचक है। मनुष्य के चरित्र का उत्कर्ष किस प्रकार हुआ, वह लोकोपयोगी किस प्रकार हुआ और वास्तविक बलिदान क्या है, इसका बड़ा सुन्दर वर्णन इस उपन्यास में है। इसके पढ़ने से मनोरञ्जक के साथ-साथ आत्मसुधार की भी शिक्षा मिलती है। अच्छे टाईपों में छपी ढाई सौ पृष्ठों की सजिल्द पुस्तक का मूल्य १॥) एक रुपया आठ आने।

भक्त जयदेव

यह उपन्यास अपने ढङ्ग का एक ही है। इसमें 'हम भक्तन के भक्त हमारे' का प्रदर्शन बड़ी सुन्दरता से लेखक ने किया है। मूल्य केवल १॥) एक रुपया आठ आने।

कलियुगी दुनिया की सच्ची कहानियाँ

पहला भाग

वर्तमान युग प्रगति का कहा जाता है। इसी युग की कहानियाँ इस संग्रह में हैं। ये विलक्षण हैं और पढ़नेवालों को एक मीठी सलाह देती हैं। कहानियाँ एक से एक बढ़कर हैं। पृष्ठ संख्या सवा सौ। मूल्य १।) एक रुपया चार आने।

शबरी अछूत ?

यह एक रोमाञ्चकारी नाटक है। मर्यादा-पुरुषोत्तम रामचन्द्र जी की प्रसिद्ध भक्त मीरा के कथानक के आधार पर इस नाटक की रचना हुई है। अछूत समस्या के युग में यह नाटक सचमुच अपनी विशेषता रखता है। बढ़िया छपी पुस्तक का मूल्य केवल ।॥) बारह आने।

मिलने का पता—इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जुकाम सर्दीपर अकसीर उपाय
स्थापना १९२६
आरोग्य
सूरज छाप १८६६
नीलगिरि तेल
हैजा, मलेरिया इन्फ्लुएन्ज़ा टाइफाइड आदि बीमारियोंमें बचानेवाला
प्रो. खांडालेकर बंधु बम्बई ४.

प्रकाशित हो गई

मार्क्स का दर्शन

[लेखक—भूपेन्द्र सान्याल]

(स्वर्गीय शचीन्द्रनाथ सान्याल के भाई, अखिलभारतीय कांग्रेस कमेटी के सदस्य, युक्तप्रान्तीय ट्रेड यूनियन के भूतपूर्व सभापति, 'समाजवाद की ओर' आदि के प्रणेता।) मूल्य ३)

प्रकाशक, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद।

हृदय की सर्दी (सर्दी और कफ)—लापरवाही करने से मामूली हृदय की सर्दी केवड़े के सूजन (ब्रांकाइटिस) हो जायगी। इससे बचने का रास्ता बड़ा आसान है। केवल अमृतांजन लेकर छाती पर मलिए। बस, सर्दी गरमी सीधे हृदय पर पहुँचती है और उसे बिलकुल ठंडे और सुख पहुँचाती है।

अमृतांजन—घरेलू दवा घरों में घर घर पहुँचती है।

अमृतांजन लिमिटेड, बम्बई और मद्रास

शाखा :—कलकत्ता, कानपुर, दिल्ली

नई पुस्तक

कामायनी-अनुशीलन

महाकवि 'प्रसाद' का महाकाव्य 'कामायनी' बहुत प्रसिद्ध है। पर यह सबकी समझ में नहीं आता। इस पर अनेक समीक्षकों के विचार पत्रों में प्रकट हुए हैं। इसी ग्रन्थ का अनुशीलन इस पुस्तक में लेखक रामलालसिंह, एम० ए०, बी० टी०, साहित्यरत्न ने कामायनी का ऐतिहासिक तत्त्व, प्रकृति-वर्णन, चरित्र-चित्रण, श्रद्धा, भाषा तथा भावाभिव्यक्ति, छंद-विधान, रस-संचार, कामायनी का मनस्तत्त्व, दार्शनिक तथ्य, युग की अभिव्यक्ति, प्रेम-निरूपण आदि शीर्षकों में बड़ी मार्मिकता से किया है। अच्छे कागज पर छपी कोई ढाई सौ पृष्ठों की सजिल्द पुस्तक का मूल्य २)

मैनेजर बुकडिपो, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

कुछ यह प्रसिद्ध साहित्य-सेवी श्री पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी बी० ए० के बढ़िया निबन्धों का संग्रह है। इसमें निबन्ध हैं जो भाषा, भाव और विवेचन की दृष्टि से बिलकुल यह इस वर्ष की अनुपम रचना है। पृष्ठ-संख्या २०० से ऊपर मूल्य केवल १।।) एक रुपया आठ आने।

गांधी-मीमांसा

इस पुस्तक में पं० रामदयाल तिवारी बी० ए०, एल-एल० बी० ने गांधी जी के व्यक्तित्व और सिद्धान्तों की तर्कपूर्ण विवेचना की है। इसे आद्योपान्त पढ़ जाने पर गांधीवाद रूप से हृदयंगम हो जाता है। विद्वानों ने मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। पृष्ठ-संख्या ८५०। सुन्दर सजिल्द प्रति ४) चार रुपये।

मैनेजर बुकडिपो, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नई पुस्तकें

शैतान का खेल

सचित्र पुस्तक है। इसमें एक बोतल में बन्द भूत का रोचक किस्सा है। यह भूत उस व्यक्ति की सब इच्छाएँ पूरी करता था जिसके कब्जे में यह बोतल रहती थी। इस बोतल को कब्जे में रखने में और तो सब सुबीता था, एक ही दिक्कत थी कि मरते समय जिसके अधिकार में बोतल रहती उसे नरक में गिरना पड़ता। यह बोतल जितने में मोल ली जाय उससे कम दाम में बेचने की शर्त थी। इस प्रकार यह बोतल बहुत लोगों के पास रही, पर सभी इसे दूसरों के हाथ बेचने की फिक्र में रहते थे, यद्यपि उन्हें किसी चीज की कमी न थी। बड़ी मजेदार कहानी है। एक बार हाथ में लेने पर बिना समाप्त किये पुस्तक छोड़ने को जी नहीं चाहता। बढ़िया कागज, उत्तम छपाई। मूल्य केवल ।।।) बारह आने।

विचित्र जीव-जन्तु

यह भी सचित्र पुस्तक है। इसमें दुनिया के एक से एक विचित्र जीव-धारियों का सरल भाषा में वर्णन है। इसके पढ़ने से जानकारी बढ़ती और मनोरञ्जन होता है। बालकों के लिए यह बड़ी ही उपयोगी है। मूल्य केवल ।=) छः आने।

विष-पान

यह सुकवि सोहनलालजी की सुन्दर रचना है। इसमें समुद्र-मन्थन से उत्पन्न विषकी पौराणिक कथाका कविताबद्ध मनोहर वर्णन है। छपाई-सफाई सुन्दर है। आवरण-पृष्ठ पर शङ्करजी का, विष को पीने का, भावपूर्ण चित्र है। मूल्य १) एक रुपया।

पूजागीत

यह युगकवि सोहनलालजी की ऐसी रचना है जिसमें प्रसन्नता, सजीवता, प्रभावोत्पादकता रहने से पढ़नेवाले को कविता का रस मिलता है। इसमें एक से एक बढ़कर ५६ गीतों का संग्रह है। पूजागीत का बहुत आदर है। कविता-प्रेमियों को इसका संग्रह अवश्य करना चाहिए। मूल्य केवल २) दो रुपये।

झरना

इसमें पण्डित सोहनलालजी की बालकोपयोगी २३ कविताएँ हैं। मातृभूमि, जय-जय स्वदेश, हवा का झोंका, तुम बढ़ो ही अकेले, सुनहली धूप, लहर, सब पर जल बरसाता बादल, दूर्वा का गीत और नीम का पेड़ आदि सुन्दर कविताएँ हैं। अच्छे कागज़ पर अच्छी स्याही में छपी पुस्तक का मूल्य ।।।) केवल बारह आने।

अमर जीवन

[दो भागों में]

इसमें संसार के सुप्रसिद्ध व्यक्तियों—कवीन्द्र रवीन्द्र, अल्फ्रेड नोबेल, हेनरी फोर्ड, जगदीशचन्द्र वसु, महात्मा गांधी, ताता, सर सैयद अहमद और आशुतोष मुकर्जी आदिके जीवनचरित का संक्षेप में वर्णन है। मूल्य प्रत्येक का ।=) छः आने।

अमर ज्योति

यह पुस्तक बाबू निशीथ कुमार राय, बी० ए० की कहानियों का संग्रह है जिसमें अनुशोचना, तावीज, चरित्रम्, नहीं, अमरज्योति आदि तेरह सुन्दर कहानियाँ हैं। इन कहानियों से पढ़नेवालों का मनोरञ्जन इस कारण होगा कि लेखक ने किसी मतवाद का आग्रह न करके कथा का चित्रण किया है। पूँजी-पतियों और मज़दूरों के सङ्घर्ष, साम्राज्यवाद या समाजवाद आदि की उलझन में पाठक को नहीं पड़ना पड़ेगा। मूल्य केवल १) एक रुपया।

देवयानी

यह नाटिका कुमारी तारा वाजपेयी की रचना है। इसमें शुक्राचार्य की बेटी देवयानी के कन्यात्व का आदर्श बड़ी सफलता से उपस्थित किया गया है। कथा महाभारत से ली गई है। इसमें आर्यों के व्यापक वैवाहिक सम्बन्ध के इस एक अपवाद—क्षत्रिय वर और कन्या ब्राह्मणपुत्री—का स्पष्टीकरण बड़ी सतर्कता से हुआ है। पुस्तक अपने ढङ्ग की अनूठी है। मूल्य केवल १) एक रुपया।

जीवन-कण

यह आशुकवि जगमोहननाथ अवस्थी की सुन्दर रचनाओं का संग्रह है। आपकी रचनाओं में निर्भयता है, राष्ट्रीयता है और कवि की ईमानदार छटपटाहट है। इस संग्रह की कविताएँ समाज की भयङ्कर परिस्थितियों और घोर वातावरण के कारण जीवन को पहेली मानकर लिखी गई हैं। इसमें वैषम्य, भिखारिन, जेल, दीपावली आदि श्रेष्ठ १२ रचनाएँ संगृहीत हैं। सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल ॥=) दस आने।

मैनेजर बुकडिपो—इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूबिया

इसमें रूस की जारशाही के समय की दशा का चित्रण बड़ी सुन्दरता से किया गया है। पति-पत्नी के प्रेम का अनोखा चित्र-सा खींचा गया है। पुस्तक में कई चित्र हैं। जिल्द के ऊपर रङ्गीन चित्र है। मूल्य २) दो रुपये।

बड़ी दीदी

यह नामी उपन्यास लेखक शरद बाबू की रचना है। इसमें सामाजिक दशा का चित्रण है। किसी भले घर का लड़का रूठकर घर से चल दिया और दूर गाँव में जाकर एक मालदार विधवा युवती को पढ़ाने की नौकरी करने लगा। दोनों के मन में प्रेम का उदय हुआ तो मास्टर अपने घर चला गया। बाद को एक अकल्पित ढङ्ग से उस विधवा से इस पुराने मास्टर की भेंट हुई जहाँ पुरानी बीमारी से उसका प्राणान्त हो गया। बड़ा ही भावोत्पादक कथानक है। मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने।

वञ्चिता

यह रोमाञ्चकारी ऐतिहासिक उपन्यास है। अकबर के जमाने की घटना के आधार पर इसकी रचना हुई है। इसमें बड़ी-बड़ी गुत्थियाँ हैं। दरबार के दाँव-पेंच, जासूसी चालें और प्रलोभन के बखेड़े हैं। विजय ने मित्र चम्पालाल के प्राण बचाने का पूरा उद्योग किया, किन्तु जरा-सी देर ने काम बिगाड़ दिया। इससे दोनों मित्र साथ ही 'जल जङ्गल' हाथी के पैर से कुचले जाकर परलोक के यात्री बने। बेचारी नन्दा अपने प्रियतम विजय से वञ्चिता होकर उसकी याद में घुल-घुलकर जीवन बिताने को रह गई। मूल्य ३॥) तीन रुपये आठ आने।

चन्द्रशेखर

यह सुप्रसिद्ध उपन्यास-लेखक बङ्किम बाबू की प्रसिद्ध रचना है। इसकी कथा बड़ी विचित्र है। घटना है बङ्गाल के अन्तिम नवाब मीर कासिम के समय की। नवाब और अँगरेजों के बीच हुए सङ्घर्ष का भी वर्णन इसमें है। कथा के नायक चन्द्रशेखर का उदार चरित्र अनूठा है। यह लेखक का बहुत ही प्रशंसित उपन्यास है। मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने।

माधवी-कङ्कण

यह सुप्रसिद्ध बाबू रमेशचन्द्र दत्त का लिखा ऐतिहासिक उपन्यास है। इसमें मुगलों के समय की दशा के चित्रण के साथ-साथ प्रेमी-प्रेमिका की बड़ी विचित्र कथा है। यह उपन्यास बहुत लोकप्रिय है। इसका नया संस्करण अभी तैयार हुआ है। मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने।

देशान्वेषण की सरल कथाएँ

इसमें उन ३२ कर्मवीरों के अन्वेषण-कार्यों का वर्णन जिन्होंने अपनी जान जोखिम में डालकर अङ्गीकार किये कार्य को पूरा किया। तेरहवीं शताब्दी के मार्कोपोलो से उन्नीसवीं शताब्दी के कप्तान एमेंडसेन और कप्तान तक की दुर्गम यात्राओं का वर्णन इस पुस्तक में है। पुस्तकों के पढ़ने से साहस बढ़ता और विविध जानकारी होती मूल्य ।॥-) केवल तेरह आने।

सचित्र महाभारत

यह स्वर्गीय आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी का प्रसिद्ध ग्रन्थ है जिसके कई संस्करण हाथोंहाथ बिक गये हैं। सम्पूर्ण महाभारत की कथायें बड़ी सुन्दर भाषा में दी गई इसके पढ़ने से महाभारत की बहुत-सी बातें मालूम हो जाती अच्छा कागज, बढ़िया छपाई और सुन्दर जिल्द। अनेक पृष्ठ के चित्र हैं जिनमें से ११ रङ्गीन हैं। बड़े आकार के तीन सौ से ऊपर पृष्ठ हैं। मूल्य केवल ६) छः रुपये।

विश्व-कवि रवीन्द्रनाथ

हिन्दी में विश्वकवि रवीन्द्रनाथ के विषय में अब तक पुस्तकें लिखी गई हैं उनमें यह सबसे बड़ी है। इसमें रवीन्द्र की अन्तिम रचनाओं तक की चर्चा आ गई है। अनेक से पुष्परस लाकर यह मधुचक्र बनाया गया है। रवीन्द्र कवि, लेखक, नाट्यकार, कहानी और उपन्यासों के लेखक कुछ थे। उनको समझने में यह पुस्तक बड़ा काम देगी। के नामी पत्रों और विद्वानों ने इस पुस्तक की मुक्त कण्ठ से की है। सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल ५) पाँच रुपये।

बाघ और भालू की कहानी

यह बालकों के बड़े काम की है। इसमें एक देशी बाघ एक विदेशी भालू की कहानी है। दोनों कहानियाँ बाल उपन्यास की तरह विचित्र तो हैं पर कल्पित नहीं हैं। इनको बालक-बालिकाएँ जीव-जन्तुओं के काम-काज और उनकी दारी का कुछ परिचय पावेंगी। मनोरञ्जन तो होगा ही। सचित्र है और दो रङ्गों में छपी है। मूल्य केवल ।=) छः

फ्रांस का इतिहास

इसमें ईसा पूर्व २२५ से लेकर सन् १९२० ईसवी इतिहास है। इसमें वहाँ की राज्यक्रान्ति के राजतंत्र प्रणाली, स्वतन्त्र शासनतन्त्र, शतवर्षीय युद्ध, धोरण प्रसार, राजवंश के उद्धार, सन् १८४८ की क्रान्ति,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

र, प्रजातन्त्र आदि का वर्णन उत्तमता से किया गया है। क में चित्र भी हैं। अच्छे कागज पर छपे साढ़े चार सौ की सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल ४) चार रुपये।

स्वदेश-विदेश-यात्रा

यह श्रीयुक्त सन्तरामजी, बी० ए० और श्रीमती रामेश्वरी क की प्रसिद्ध रचना है। देश-देशान्तर की यात्रा करने से क लाभ होते हैं। व्यवहार-ज्ञान और सामान्य बुद्धि की वृद्धि ी है। परन्तु पर्यटन का सुवीता सबको सुलभ नहीं होता। ही रुचि भी थोड़े लोगों को होती है। ऐसे लोगों को -विषयक पुस्तकें पढ़ने से बड़ा लाभ हो सकता है। इस क में कश्मीर और कुल्लू की सैर तथा आस्ट्रेलिया की का वर्णन है। पुस्तक सचित्र है। अच्छे कागज पर पौने दो सौ पृष्ठों की पुस्तक का मूल्य केवल १।≡) सवा ग्यारह आने।

आल्हा

आल्हा का थोड़ा-बहुत किस्सा सभी हिन्दी-प्रेमी जानते हैं, पर ा ब्योरेवार वर्णन थोड़े लोगों को ही मालूम होगा। चतुर्वेदी ायप्रसाद शर्मा की कृपा से यह कथा हिन्दीवालों को सुलभ ई है। इसमें परमाल का ब्याह, संयुक्ता का स्वयंवर, माड़ौ ड़ाई, आल्हा और मलखान का ब्याह, दिल्ली की लड़ाई, ूँ गढ़ का युद्ध आदि कितनी लड़ाइयों और विवाहों का है। बड़े आकार के सवा तीन सौ से ऊपर पृष्ठों की सजिल्द क का मूल्य केवल ३ –) तीन रुपये पाँच आने।

जानवरों की मजेदार कहानियाँ

इसमें मोर और कौआ, लोमड़ी और गधा, चालाक बुढ़िया, की चिड़िया, सिंह और गीदड़, राजकुमार और सोने की ड़िया, चिड़िया और बुढ़िया तथा चालाक गीदड़ की कहानियाँ इनको पढ़कर लड़के और लड़कियाँ सभी प्रसन्न होते हैं। र रङ्गीन आवरण-पृष्ठ है। मूल्य केवल ।।≡) ग्यारह आने।

सच्चा सेवक

छोटा-सा नाटक है जिसमें सेवक के गुण सुन्दरता से दिखाये है। यह नाटक अभिनय करने के लिए लिखा गया है ा खेला भी गया है। स्कूलों में उत्सव के समय छात्र इसका अभिनय करके प्रशंसा पाते हैं। मूल्य ।–) पाँच आने।

तुलसी-रत्नावली

इसका संकलन, प्रिंसिपल केदारनाथ गुप्त, एम० है। इसमें गोस्वामी तुलसीदासजी के अमूल्य ग्रन्थों- मानस, विनयपत्रिका, कवितावली, दोहावली, गीतावली से रत्न चुने गये हैं। अनेक ग्रन्थों से अमूल्य रत्नों करना सचमुच बड़ा कठिन काम होता है। जो लोग जी के समस्त ग्रन्थ न तो ले सकते हैं और न उन कर सकते हैं उनको इस संग्रह से बड़ा लाभ होगा। १।) एक रुपया आठ आने।

माँ और बच्चा

इसके लेखक नामी चिकित्सक डाक्टर बोधराज चोपड़ा, एम० बी०, सी-एच० बी० (एडिनबरा) हैं। यह पुस्तक अपने ढङ्ग की अनुपम है। इसके ११ प्रकरणों में छोटे बच्चों की मृत्यु और उसके कारण, गर्भिणी माता, जन्म के समय से बालक की रक्षा, बच्चों को दूध पिलाना, दूध पिलानेवाली दाई, दूध छुड़ाना आदि आवश्यक विषयों की शिक्षा दी गई है। स्त्रियों की मृत्यु और रोगों को कम करने तथा छोटे बच्चों को मृत्यु से बचाने की दृष्टि से पुस्तक लिखी है। यों लेखक ने मनुष्यमात्र का उपकार किया है। अच्छे कागज पर छपी ढाई सौ से भी अधिक पृष्ठों की सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल २) दो रुपये।

गोस्वामी तुलसीदास-संक्षिप्त रामचरितमानस (सचित्र)

यह रामचरितमानस का संक्षिप्त संस्करण है। संक्षेप ऐसी चतुराई से किया गया है कि कहीं भी कथा-भाग टूटने नहीं पाया। मँझोले आकार के ३०० पृष्ठों में यह समाप्त हुआ है। पुस्तक सचित्र और सजिल्द है। मूल्य १) एक रुपया।

अयोध्याकाण्ड (मूल)

रामायण-प्रेमियों के सुभीते के लिए यह काण्ड अलग प्रकाशित किया गया है। यह पुस्तक अनेक स्थानों के शिक्षाविभाग-द्वारा स्वीकृत है। इससे यह विद्यार्थी तथा साधारण जनता सभी के काम की चीज है। मूल्य १) एक रुपया। सटीक मूल्य २।≡) दो रुपये ग्यारह आने।

सुन्दरकाण्ड (मूल)

रामायण-प्रेमियों के सुभीते के लिए यह काण्ड असली रामचरितमानस से अलग छापा गया है। मूल्य ।≡) सात आने।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अरण्यकाण्ड (मूल)

इसमें रूपप्रेमियों के सुभीते के लिए यह काण्ड भी असली सुन्दरता से सिर्फ अलग छापा गया है। मूल्य ।≡) सात आने।

विनयपत्रिका (सटीक)

रङ्गीन चित्र सा खींचा ग स्वामी तुलसीदास की रचनाओं में विनयपत्रिका का द्भुत उच्च है। इसमें गोस्वामीजी के विनय-सम्बन्धी यह नो है। इसके टीकाकार हैं पण्डित रामेश्वर भट्ट। सामाजिक दश रुपये।

रूठकर घ

कुण्डलिया रामायण

गोस्वामी तुलसीदासजी की यह अमर रचना पिछले दिनों खोज में मिली है। इसमें उनकी अन्यान्य रचनाओं की भाँति सरस कुण्डलिया छन्दों में रामचरितमानस के सातों काण्डों की कथा दी गई है। मूल्य ४) चार रुपये।

मानससूक्तावली

रामचरितमानस में आये हुए कण्ठस्थ करने के योग्य चौपाइयों और दोहों का संग्रह। मूल्य १'-) एक रुपया पाँच आने।

संक्षिप्त पद्मावत

(रायबहादुर बाबू श्यामसुन्दरदास, बी० ए० द्वारा सम्पादित) मलिक मुहम्मद जायसी के पद्मावत का संक्षिप्त संस्करण। मूल्य २।-) दो रुपये पाँच आने।

संक्षिप्त सूरसागर

इसमें महाकवि सूरदास के पदों का संग्रह है। इसका एक-एक पद भक्ति तथा प्रेम के रस से ओतप्रोत है। मूल्य ३।-) तीन रुपये पाँच आने।

चारण

इस पद्यमय पुस्तक में प्राकृतिक दृश्यों के मनोरञ्जक वर्णनों के अतिरिक्त राजपूताना के कुछ प्रसिद्ध वीरों का गुणगान किया गया है। मूल्य ।-) पाँच आने।

वीणा-ग्रन्थि

हिन्दी के युगान्तरकारी कवि श्री सुमित्रानन्दन पन्त की दो पुस्तकों का सम्मिलित संस्करण। वीणा मौलिक कविताओं का संग्रह है। और ग्रन्थि में कवि ने एक छोटे-से कथानक को अपनी कल्पना द्वारा विकसित कर एक खण्डकाव्य की रचना की है। मूल्य २) दो रुपये।

भैरवी

इसकी राष्ट्रीय कविताएँ राष्ट्र-प्रेमियों के गौरव की वस्तु हैं। यहाँ तक कि पण्डित जवाहरलाल नेहरू तक ने इसे पसन्द किया है और खादी-प्रतिष्ठानों में इसकी हजारों प्रतियाँ बिक हैं। विद्वानों की सम्मति है कि भैरवी 'गांधीयुग' का काव्य है। मूल्य २॥≡) दो रुपये ग्यारह आने।

वासवदत्ता

हिन्दी का एक आधुनिक काव्य। इस काव्य की विद्वानों ने मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। मूल्य २) दो रुपे

हिन्दी के लब्धप्रतिष्ठ कवि
ठाकुर गोपालशरणसिंहजी की कृतियाँ

माधवी

माधवी का यह नया संस्करण बड़ी ही सज-धज साथ और बड़े आकार में प्रकाशित हुआ है। मूल्य २) दो रुपे

ज्योतिष्मती

इस संग्रह में ठाकुर साहब की नवीन प्रकार की कविता संगृहीत की गई हैं, जो हिन्दी-साहित्य में अपना विशेष स्थ रखती हैं। खास कर इसमें संग्रह किये गये छोटे-छोटे गी बहुत ही मधुर और भावपूर्ण हैं। मूल्य २।-) दो रु पाँच आने।

मानवी

इस संग्रह में प्रकाशित कविताओं के द्वारा ठाकुर ने भारतीय नारी के सुख-दुःखमय जीवन का बड़ा ही और मार्मिक चित्रण किया है। मूल्य २।-) दो रुपये पाँच

संचिता

इस संग्रह में ठाकुर साहब ने अपनी सन् १९ लेकर सन् १९३९ तक की सब प्रकार की रचनाओं का स किया है। इस एक ही पुस्तक के द्वारा ठाकुर साहब के जीवन के क्रम-विकास का उत्तमतापूर्वक अध्ययन किया जा है। संग्रह में कुल ७१ कवितायें हैं। मूल्य ३) तीन रु

सुमना

'सुमना' ठाकुर साहब का सबसे नवीन संग्रह है ५३ गीत हैं जिनमें प्रकृति के प्रति उनका असीम अनुराग शब्द-द्वारा व्यञ्जित होता है। इस प्रकार के सरस गीत हिन्दी-साहित्य में अन्यत्र न मिलेंगे। मूल्य २) दो रु

मैनेजर बुकडिपो—इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेज व बढ़िया सुगन्ध, गहरा रंग और
कम दाम इन सबने मिलकर लिपटन
की जाकूजा को बाजार भर की
सर्वश्रेष्ठ चाय बना रक्खा है।

लिपटन की जाकूजा चाय

सर्वोत्तम भारतीय चूरा चाय

LTK 84 J

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घर का सुख

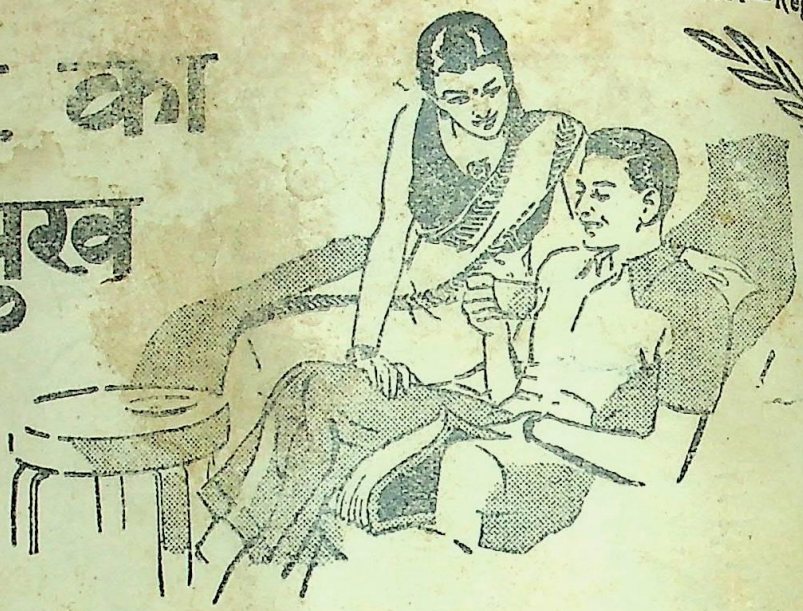

दिन भर आफिस में काम करने के बाद शरीर और मन थक-सा जाता है। इच्छा होने लगती है, अब घर चलकर शान्ति से एक प्याला चाय पी जाय तो जी में जी आय। चाय पीने के घण्टे भर के भीतर ही दिलो दिमाग तरो ताजा हो जाता है और नई ताकत मालूम पड़ने लगती है। आप और कोई भी पेय पीते तो ऐसा असर न होता। इतना होने पर भी अमीर और गरीब दोनों ही इसे आसानी से खरीद सकते हैं और इसका पूरा आनन्द उठा सकते हैं बशर्ते चाय अच्छी तरह से बनाई जाय।

अच्छी चाय बनाने का तरीका

१ केतली में चाय न सिझाइये। सिझाने का बर्तन अलग रखिये।

२ सूखी चाय डालते वक्त वह बर्तन सूखा व गर्म रहे : इससे चाय का रंग व स्वाद ठीक बनता है।

३ हर प्याले के लिये एक चम्मच, और बर्तन के लिये एक चम्मच ताजी, सूखी चाय की पत्ती उसमें डालिये।

४ उसी वक्त का उबला हुआ पानी डालिये—पहले का उबला, कम या ज्यादा उबला पानी मत डालिये। बुदबुदा उठने पर ही पानी उबलता है, उसके पहले नहीं।

५ चाय को पाँच मिनट से कम न सिझाइये।

६ प्यालों में चाय डालकर तब उसमें दूध व चीनी मिलाइये।

चाय
हर वक्त चाय का

इण्डियन टी मार्केट एक्सपैन्शन बोर्ड द्वारा प्रचारित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and

जुलाई १९४६

वार्षिक मूल्य ६॥)

एक प्रति ॥-)

सरस्वती

Public Collection Ha

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बालों को लम्बे तथा मनमोहक

बनाने के लिए

कार्मिनिया आयल (रजिस्टर्ड)

का व्यवहार करें।

वह बालों के लिए सर्वोत्तम उपचार है।

बालों को शीघ्रतापूर्वक बढ़ाता है।

बालों का झड़ना बन्द कर उन्हें काला, चिकना, चमकीला तथा मनमोहक बनाता है। एक बार की परीक्षा पर्याप्त होगी।

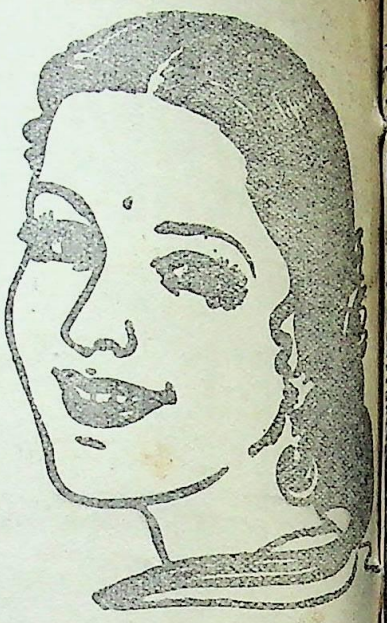

खुशबू का राजा

ओटो दिलबहार (रजिस्टर्ड)

अपनी मीठी तथा मनमोहक सुगन्ध के लिए विख्यात। तौलिए में कपड़ों पर डाल देने से कपड़े अधिक समय तक सुगन्धित बने रहेंगे।

एक दूसरा सुगन्धित केश-तेल

दिलबहार हेयर आयल (रजिस्टर्ड)

यह तेल अत्यन्त सुगन्धित है तथा बालों की उपयोगिता के लिए 'कार्मिनिया आयल' के बाद इसका ही नम्बर है। बालों को बढ़ाने के लिए यह विशेष लाभदायक है। एक बार अवश्य परीक्षा करें।

एँग्लो इण्डियन ड्रग एंड केमिकल कं०,

२८५ ठाकुरद्वार, बम्बई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केशों को आश्चर्यजनक
गति से बढ़ानेवाला
केश-तैल

शुद्ध बादामरोगन पर बना

अलकपरी

केशों में प्रतिमास ३-४ इञ्च वृद्धि।
६ महीने में एड़ी-चुम्बी केश।

'अलकपरी' का कोर्स

पहले सप्ताह में रूसी-खुश्की दूर हो जाती है।
दूसरे सप्ताह में केशों का झड़ना और उनके सिरों का फटना रुकता है।
तीसरे सप्ताह में नये केश उगते दिखाई देते हैं।
चौथे सप्ताह के अन्त तक केश ३-४ इञ्च बढ़ जाते हैं।
फिर प्रतिमास इसी औसत से बढ़ते रहते हैं।

६ महीने में केश एड़ी-चुम्बी बन जाते हैं।

मूल्य एक शीशी का २॥) है जो एक महीने को काफी होती है। डाक-खर्च व पैकिङ्ग पृथक्। ६ से अधिक शीशियाँ डाक से नहीं भेजी जायँगी। अधिक के लिए ५) पेशगी भेजिए और अपने रेलवे स्टेशन का नाम लिखिए।

प्रतिष्ठित महिलाओं की सम्मतियाँ—

'अलकपरी' से बहुत लाभ है। १ शीशी और तुरन्त भेजिए।
१५-७-४५
कृष्णाकुमारी, धर्मशाला (पंजाब)।

Alak Pari is proving of much use to me. Please send me three more bottles.
4-8-45
Mrs. S. Mandal, 45, The Mall, Lahore.

'अलकपरी' में केशों को बढ़ाने के लिए विद्युत् की शक्ति वर्त्तमान है। मैंने इसे केशों के लिए आश्चर्यजनक गुणकारी पाया है। कृपया ३ शीशियाँ तुरंत भेजें।
७-८-४५
सत्यवती देवी, पासना, जौनपुर।

'अलकपरी' की ५ शीशियाँ इस्तेमाल कीं। बहुत लाभकारी तेल है। कृपया ३ बोतलें शीघ्र भेजें।
३०-८-४५
शान्तिकुमारी, कोटखाई, शिमला

व्यवस्थापिका—'अलकपरी', नया कटरा, इलाहाबाद।

हमारे एजेन्ट—

नई दिल्ली—रायल स्टोर्स, ३२, गोल बाज़ार।
मेरठ—त्यागी ब्रदर्स, बेली बाजार।
बीकानेर—यूनाइटिड कमर्शियल सिंडीकेट, भूर।
राजनंदगाँव—रामनारायण हरीदास सोनी।
आगरा—प्रियादास घनश्यामदास परफ्यूमर्स, काश्मीरी बाजार।
लखनऊ—सालिग्राम मेहरोत्रा, ६, अमीनाबाद पार्क।
जबलपुर—बाबूलाल राजाराम चौरसिया, गोविंदगंज।
जोधपुर—मेडिकल स्टोर्स, सराफा बाजार।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कमज़ोर और कृश बच्चे डोंगरे-बालामृत के इस्तेमाल से ताक़तवर, पुष्ट और पुस्त बनते हैं।

卐

निर्बल, निश्चेतन और निराश क्यों रहते हो ?

भोजन को पचानेवाला, खून को बढ़ानेवाला, पाण्डु और अन्य रोग के बाद की निर्बलता को नष्ट करनेवाला

झण्डु रक्तो फोस्फोमाल्ट

सुमधुर शक्तिवर्धक, अमूल्य औषधि अवश्य सेवन करें

झण्डु फार्मास्युटिकल वर्क्स लि०, बम्बई नं० १४

इलाहाबाद के चीफ एजेन्ट—एल० एम० घोलकिया एण्ड ब्रादर्स, ४६ जान्स्टनगंज।

दिल्ली और यू० पी० के सोल एजेन्ट—कान्तिलाल आर० पारीख, चाँदनी चौक, देहली।

यू० पी० एजेंट—कान्तिलाल आर० पारीख, चाँदनी चौक, दिल्ली।

卐

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

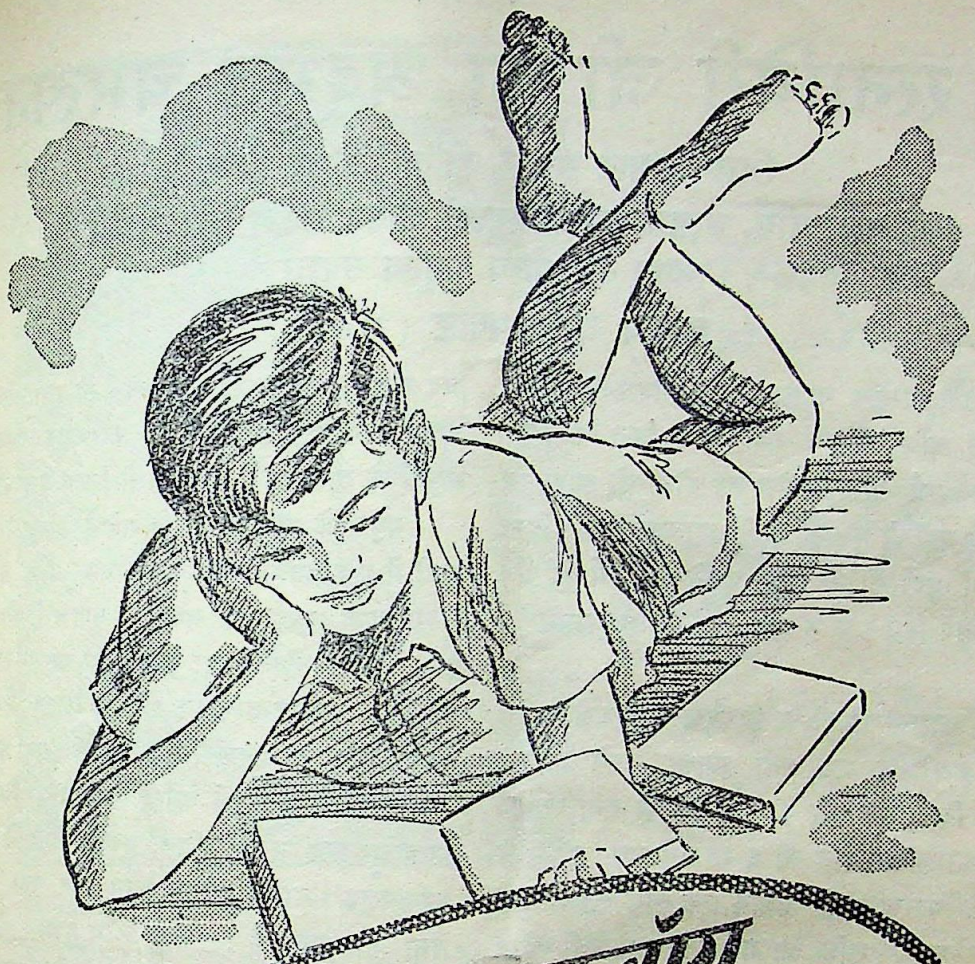

इसने लाइफबॉय उपयोग करने की आदत भी सीखी है!

अभी से यह बहुत सी बातें सीख रहा है परन्तु सब से ज्यादा फ़ायदामंद लाइफबॉय साबुन के दैनिक उपयोग की आदत है। इसकी माँ को इस बात का गर्व और खुशी होती है कि उसकी दी हुई शिक्षा से उसके लड़के की 'गन्दगी के ख़तरे' से जो हर जगह हमला के लिए मौजूद है उससे रक्षा होती है।

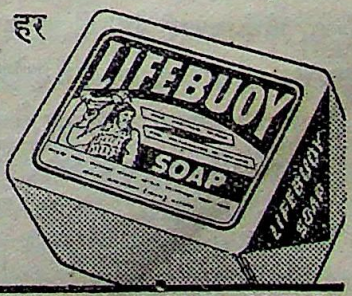

लाइफबॉय का व्यवहार करना एक ज़रूरी आदत है

L. 17-23 HI

LEVER BROTHERS (INDIA) LIMITED

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री रत्नागिरी जी का अद्भुत चमत्कार

जिसने समस्त संसार को चकित कर दिया

रक्त, बल, वीर्य, उत्साह तथा उमङ्ग ही जीवन सफल बना सकती है।

ध्यान देने योग्य अमूल्य उपहार

अपूर्व कायापलट (रजिस्टर्ड)

निःस्वार्थ संसारसेवी भारतीय महात्माओं ने औषध-विज्ञान को अपनी महान् खोजों और अमूल्य रत्नों से अलंकृत किया है। आधुनिक चिकित्सक मर्ज और मरीज़ जब दोनों को लाइलाज घोषित करके शर्मिन्दा नहीं होते, वहाँ इन्हीं महात्माओं की बिना दाम की जड़ी-बूटियाँ मुर्दों को भी जिला सकने में समर्थ हुई हैं। ऐसी सच्ची घटनायें आये दिन एक न एक पढ़ने और सुनने में आया करती हैं।

बीस वर्ष पूर्व कल्लाती पहाड़ी पर विचरण करनेवाले स्वामी रत्नागिरी जी महाराज की सेवा एक बूढ़ा ग्वाला करने लगा। योगिराज को एक दिन उस वृद्ध की कमजोरी पर दया आ ही गई और उन्होंने निम्नलिखित योग की ६ मात्रायें उस बूढ़े को दीं। नासमझी के कारण छहों मात्रायें एक साथ खा जाने से उस वृद्ध ग्वाले में अपूर्व शक्ति आ गई और रत्नागिरी जी के परिश्रम-पूर्वक इलाज करने पर भी बुढ़ापे के बावजूद उसे तीन विवाह करने पड़े। इस पर राजा, रईस, नवाब और रसिक जन महान् योग को जानने के लिए आतुर हो उठे। नवाब बहावलपुर के ससुर हाजी हयात मोहम्मदखाँ साहब ने बाबा जी की बहुत सेवा करके इसे प्राप्त कर लिया और लाहौर के पं० ठाकुरदत्त शर्मा को बतलाया। शर्मा जी ने इसे प्रथम तथा दो अन्य लिखकर तीनों से उत्तम बाजीकरण बतलानेवाले को एक हजार रुपये का नकद इनाम देने की घोषणा की। इसे आज बीस साल के लगभग हो गये किन्तु अभी तक कोई पुरस्कार विजय नहीं कर सका। मथुरा के ख्यातिप्राप्त बाबू हरिदास जी ने इसे चिकित्सा-चन्द्रोदय में छपवाया और हमने भी स्वयं बनाकर सैकड़ों दुर्बल, नपुंसक, वीर्य-विकारी रोगियों पर बरता। तत्काल लक्षण-चमत्कार देख जन-साधारण के लाभार्थ अनेक पत्र-पत्रिकाओं में छपवा दिया। आप भी बनाकर लाभ उठावें।

योग—शुद्ध बुरादा फौलाद २० तोला, शुद्ध श्वेत मल्ल १ तोला, शुद्ध कपूर १॥ माशा, एक घण्टा घृतकुमारी में घोटकर, मिट्टी के कुञ्जे में मजबूत बन्द कर पाँच सेर कण्डों में फूँके। दुबारा एक तोला हरताल बर्की शुद्ध १॥ माशा कपूर शुद्ध में तीसरी बार गन्धक आमलासार शुद्ध १ तोला कपूर १॥ माशा में चौथी बार शुद्ध संस्कारित पारद १ तोला, कपूर १॥ माशा को ऊपर की भाँति १६ आँच दे। फिर उसको, कढ़ाई में डालकर बराबर इन्द्रवधू डाल दे और नीचे [illegible] जब इन्द्रवधू जलकर राख हो जावें तो हवा देकर उड़ा दे। [illegible] अपूर्व कायापलट तैयार है। चार-चार चावल सायं [illegible] मलाई के साथ खावें ऊपर मिश्री-मिला दूध पीवें।

मथुरा के हरिदास जी लिखते हैं—इस योग के सेवन से [illegible] हफ्ते में एक आदमी का वजन चार पौंड बढ़ गया, दूसरे [illegible] चेहरा लाल सुर्ख हो गया। भूपाल के वैद्यराज पं० [illegible] शर्मा ने ३५० रोगियों पर बरता और आशा से अधिक गुण [illegible] पाया। रत्नाकर-सम्पादक श्री छोटेलाल जैन आयुर्वेदाचार्य [illegible] गृहचिकित्सा पथ-प्रदर्शक में छापा कि इतना प्रचण्ड गुणकारी [illegible] दूसरा नहीं देखा। श्री धर्मेन्द्र विद्यावतंस सिद्धान्त-शास्त्री [illegible] ष्ठाता गुरुकुल बरला जिला मुजफ्फरनगर ने लिखा है—"[illegible] कायापलट" नामक औषध सेवन कर रहा हूँ। जैसी [illegible] वैसा ही गुण है। बहुत लाभ हुआ। श्री चिरञ्जीलाल [illegible] आयुर्वेदशास्त्री मालिक कल्याण औषधालय बाह (आ[illegible] का कहना है कि मैंने २२५ रोगी अपूर्व कायापलट [illegible] कि धातु-विकार, नपुंसकता, बवासीर, रक्त-विकार आदि [illegible] से ग्रसित थे, पूर्ण स्वस्थ किये।

हमारा दावा है कि केवल सात दिन सेवन से शरीर [illegible] दौड़ता नजर आयेगा। २१ दिन में चेहरा लाल कार्[illegible] की तरह चमकने लगेगा। ४० दिन में नपुंसकता, [illegible] डायब्टीज, निर्बलता दूर हो जाती है। स्त्रियों के प्र[illegible] गर्भधारण शक्ति आती है। जिगर व मेदे की शक्ति [illegible] भूख दूनी करता है। कफ, तिल्ली की खराबी, खाँसी [illegible] जुकाम, बदन दुखना, खून का पतलापन, आँखों का [illegible] चिनगारी-सा उड़ते दीखना, बार-बार थूक गिरना, [illegible] हर तरह की कमजोरी तुरन्त दूर कर नव-जीवन का [illegible] है। जाड़ा, गरमी, बरसात सभी मौसमों में एक-सा [illegible] है। योग भली भाँति समझाकर लिखा है। फिर [illegible] आप न बना सकें तो बनी-बनाई १६ आँच दी हुई [illegible] ८० मात्रा डाक-खर्च सहित ६॥।=) में हम भेज देंगे। [illegible] माफ, पैकिंग, मनीआर्डर-फीस अलग। कोई बात [illegible] आवे तो जवाबी कार्ड भेजकर उत्तर मँगा लें।

पता—रूपविलास कम्पनी

(रसायनशाला) नं० ४२७, धनकुट्टी, [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

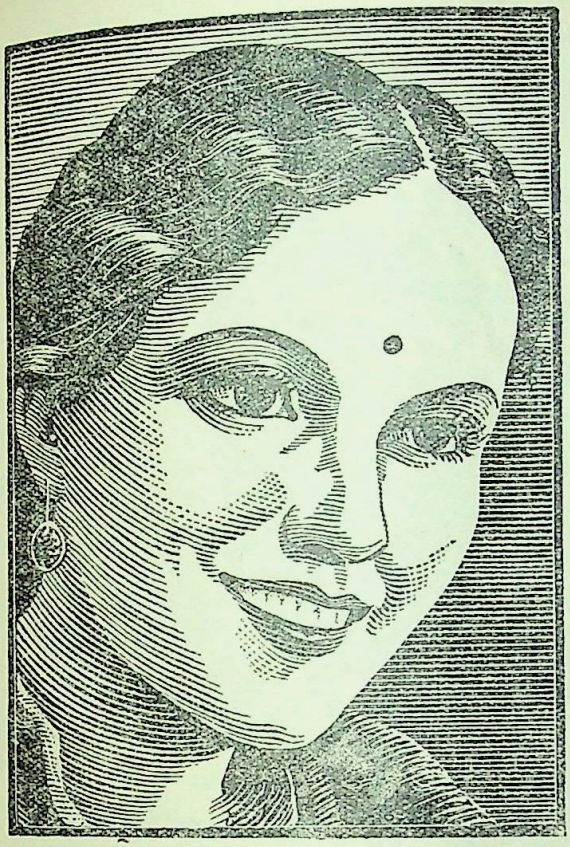

चर्म स्वास्थ्य से ही चर्म-सौन्दर्य बढ़ता है!

रैक्सॉना से चर्म स्वास्थ्य की रक्षा कीजिए

आपकी त्वचा तभी सुन्दर हो सकती है जबकि वह स्वास्थ हो और इसको स्वास्थ ही बनाए रखना चाहिए, नहीं तो वह सौन्दर्य शीघ्र जाता रहेगा। त्वचा को स्वास्थ और सुन्दर रखने के लिए ही सुन्दर, हरेरंग के और आसानी से फेन देने वाले टॉयलट साबुन रैक्सॉना का आविष्कार हुआ है। यह चर्म-किटाणुविनाशक 'कैडिल' की मिलावट से बनाया जाता है, जो कि ताज़गी और स्वास्थ्यदायक है। रैक्सॉना की झाग इस स्वास्थ्यदायक 'कैडिल' को शीघ्र ही शरीर के रुओं में पहुँचा देती है। जहाँ यह अपना काम करता है झाग शरीर पर जमा हुई धूल और पसीने को साफ़ करके त्वचा को स्वस्थ और सुरक्षित रखती है। चर्म-स्वास्थ्य के लिए सदैव रैक्सॉना से स्नान कीजिये।

बच्चों के लिए रैक्सॉना . . . रैक्सॉना की झाग इतनी कोमल और स्फूर्तिदायक होती है कि बच्चों की कोमल त्वचा के लिए तो यह आदर्श है। डाक्टर इस को इस्तेमाल करने की हिदायत करते हैं। याद रखिए रैक्सॉना का 'कैडिल' बच्चे की चर्म की फुन्सी फ़ोड़ों से रक्षा करेगा।

★ रैक्सॉना में मिलाया गया कैडिल किटाणु-विनाशक, स्वास्थ-दायक और ताज़गी देनेवाले तेलों का मिश्रण है जोकि चर्म को स्वास्थरखने में बहुत गुणकारी सिद्ध हुआ है। साइंसदानों ने भी इसके गुणों के कारण इसकी सराहना की है।

रैक्सॉना मरहम प्रयोग कीजिए। फुन्सी, फोड़े, ऐकज़ीमा, मुँहासे, आँख की कलौंस, झुर्रियाँ, ददौरे आदि सभी चर्म रोगों में रैक्सॉना मरहम लगाये। यद्यपि अभी सप्लाई कम है फिरभी बहुत से दूकानदारों के यहाँ तिकोने टिन मिल सकते है।

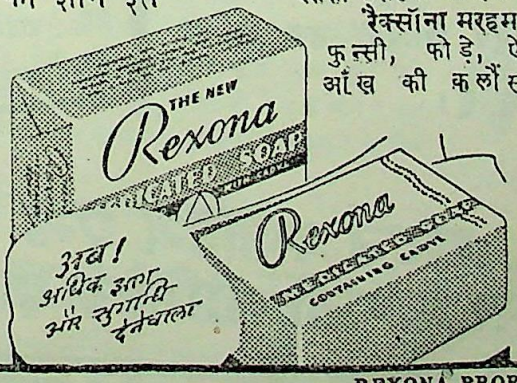

AP. 27-23 HL

REXONA PROPRIETARY LIMITED

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जे. के. का नाम भारतीय टेक्सटाइल मिलों में अपनी उत्कृष्ट बुनाई और छपाई के कारण सारे भारतवर्ष में प्रख्यात है। अत्यंत आकर्षक नमूनों और रंगों के होते हुए भी जे. के. के कपड़े १५% से २०% तक अधिक मजबूत होते हैं।

साड़ियाँ, कमीज़ के कपड़े मलमलें, छपे हुए कपड़े लट्ठे, चादरें, और बढ़ी कैनवस इत्यादि।

जे. के. काटन स्पीनिंग एन्ड वीविंग मिल्स कम्पनी लीमिटेड, कानपूर.

यह जे. के. इण्डस्ट्री है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस तरह धोने से पटखे जाने के नुकसान से बचाव होता है

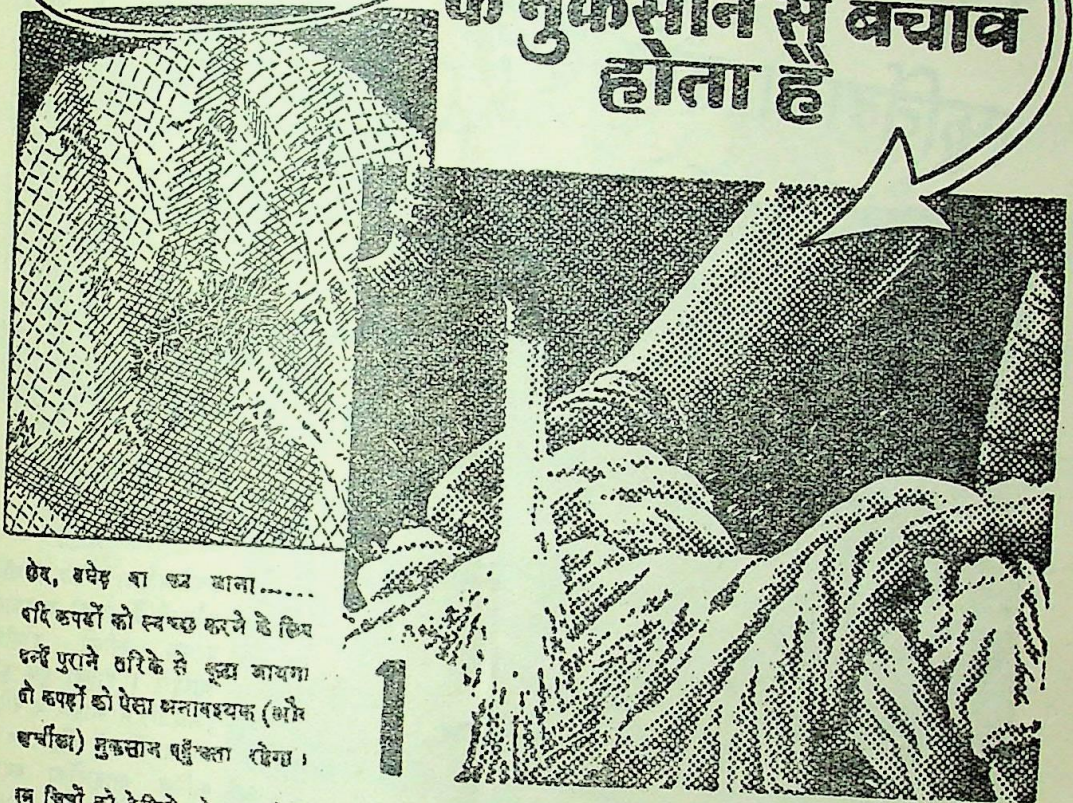

छेद, उधेड़ या फट जाना.....
यदि कपड़ों को स्वच्छ करने के लिए उन्हें पुराने तरीके से कूटा जायगा तो कपड़ों को ऐसा अनावश्यक (और खर्चीला) नुकसान पहुँचता रहेगा।

1

2

3

4

इन चित्रों को देखिये, वे आपको बिना नुकसान पहुँचाए कपड़ों को धोने का तरीका बताती हैं।

(१) जिस कपड़े को धोना हो उसे पहले खूब भिगो लीजिए। यह आप मल के नीचे, टब में, तालाब में या नदी में कर सकते हैं—इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। (२) जब कपड़े को खूब भिगो चुकें तो सारे कपड़े में सनलाईट साबुन मलें। जो भाग अधिक मैला हो वहाँ सनलाइट जरा ज्यादा मलें। (३) साबुन लगे हुए कपड़े को हाथों से धीरे-धीरे गूँथिये। (इसे कूटिये नहीं) तबतक गूँथिये (ठीक उसी तरह जैसे रोटी का आटा गूँथा जाता है) जब तक साबुन की झाक कपड़े के हरेक तन्तु में प्रवेश पाजाए। कपड़े को जोर से रगड़ने की या बुरीतरह कूटनेकी अवश्यकता ही नहीं है। सनलाइट का "स्वयंकाम करनेवाला" फेन सरलता से सारे मैल को बाहर निकाल देगा—यदि आपको यह विश्वास हो जाये की गूँथने से यह फेन कपड़े के मैल में घुस चुका है। इस शक्तिशाली फेन में जो साबुन है वह मैल को धूते ही तत्काल फुला देता है। फेन उसे जज़ब कर लेता है। ऐसे जब आप कपड़े को खूब धोएँगे तो फेन के साथ २ सब मैल निकल जायेगा। (४) फेन—जिसमें की अब सारा मैल आचुका है—छुटाने के लिए कपड़े को खूब मलकर धो डालिए।

ऐसे सनलाइट के तरीके से धोए हुए कपड़े बहुत समय तक चलते हैं।

सनलाइट साबुन कपड़ों की बचत करता है

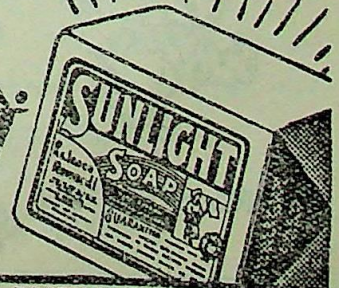

LEVER BROTHERS (INDIA) LIMITED

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या आपके सभी आहार स्फूर्तिदायी होते हैं?

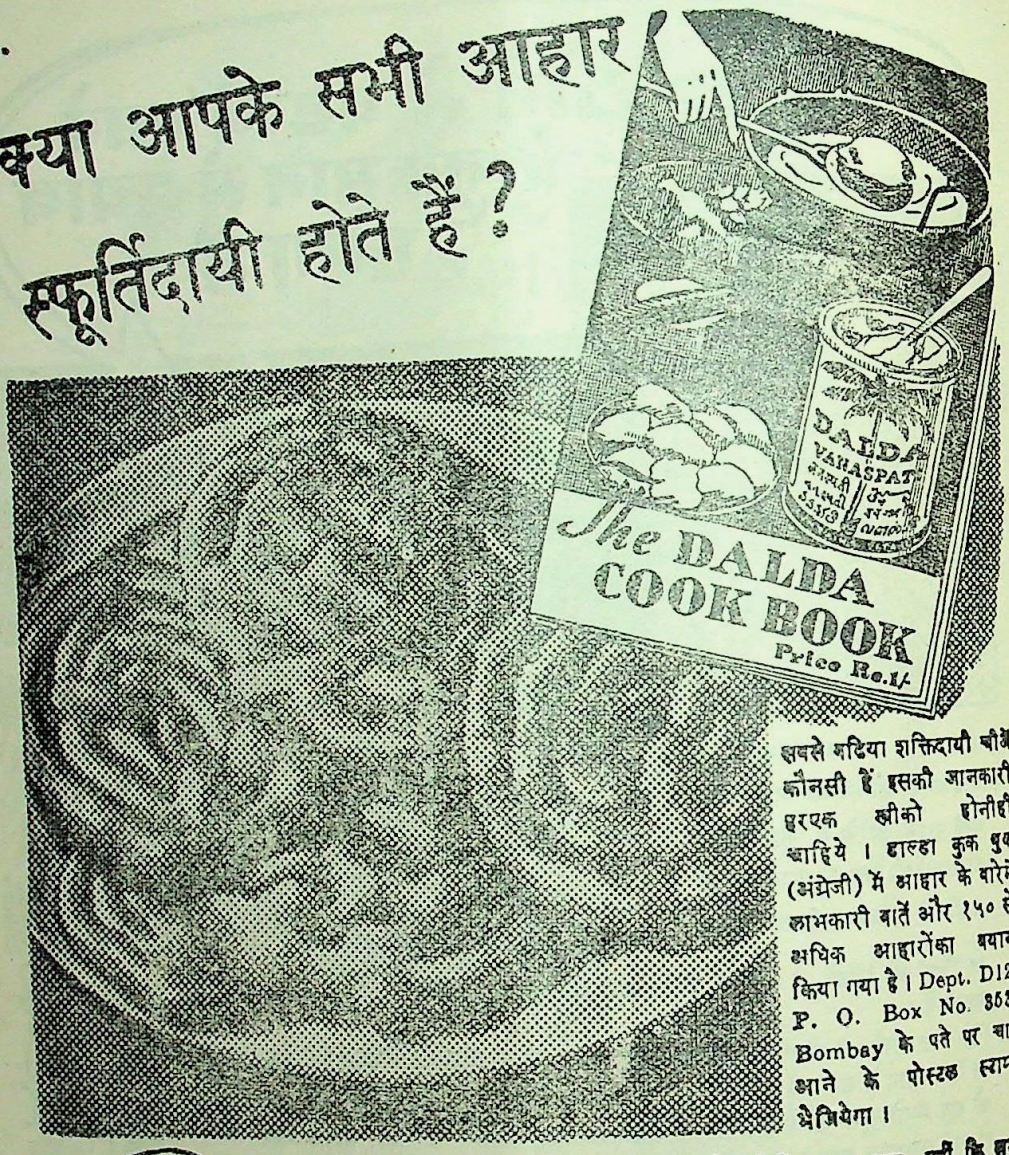

सबसे बढ़िया शक्तिदायी चीजें कौनसी हैं इसकी जानकारी हरएक स्त्रीको होनीही चाहिये। डालडा कुक बुक (अंग्रेजी) में आहार के बारेमें लाभकारी बातें और १५० से अधिक आहारोंका बयान किया गया है। Dept. D121 P. O. Box No. 353, Bombay के पते पर चार आने के पोस्टल स्टाम्प भेजियेगा।

जी, हां — इन्हींमेंसे तो शक्ति पायी जाती है। लेकिन यह बात नहीं कि सभी आहारोंमेंसे उतनीही शक्ति पायी जाती है। कई ज्यादा स्फूर्तिदायी होते हैं तो कई कम स्फूर्तिदायी। इसी लिये हमारा आरोग्य हमेशा खतरेमें रहता है। कई मनपसन्द आहार इस हिसाब से बिलकुल बेकार होते हैं और उनको पसन्द करनेवालोंको खेलने या काम करनेसे थकावट मालूम होये बिना नहीं रहती। सौभाग्य की बात है कि हरएक आहार को इस जीवन-सत्व संपूर्ण डालडामें बनाकर ज्यादा स्फूर्तिदायी बना सकते हैं। यह रसोई की बढ़िया चीज प्रकृतिके सर्वोत्तम स्फूर्तिदायी अन्नांश देती है। बहुतसी चीजोंमें न मिलनेवाली शक्ति उसमें है जिससे आपके हरएक आहार को वह स्फूर्तिदायी बना देती है।

पोषक-तत्व संपन्न **डालडा** स्फूर्ति के लिये

THE BURMAH VANASPATI MANUFACTURING CO. LTD.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कलापी, उत्पादन के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी हासिल करने और कीमतें मालूम करने के लिए निम्न पते पर पत्र-व्यवहार कीजिए :—

कलापी स्टोर्स, स्वदेशी मार्केट, बम्बई २

SOLE AGENTS FOR ARYAN TOOTH BRUSH

अब मैं अपने पति की प्रिय बन गई

रूप-विलास (रजिस्टर्ड)

जब मैं विवाह के अवसर पर अपने पति-गृह गई तब मेरे पतिदेव हमारे भद्दे तथा काले चेहरे को देखकर मुझसे घृणा करने लगे। मैंने अपनी सहेलियों की सलाह से **रूप-विलास** का उबटन लगाना शुरू किया। कुछ ही दिनों बाद मेरा चेहरा गुलाब के फूल की भाँति दमकने लगा और आज मैं अपने पति की प्रिय बन गई। इसके लगाने से झुँझासा, झाँई, चेचक, काले-काले दाग, फुंसी, खुश्की, बदरौनकी, झुर्रियाँ वगैरह जल्द आराम होती हैं और थोड़े ही दिनों के लगाने से मलीन मुख चमकदार होकर चेहरे पर गुलाबी छटा दमकने लगती है। यदि आप अपना चेहरा खूब-सूरत बनाना चाहते हैं तो २५ वर्ष का प्रचलित जगत्प्रसिद्ध रजिस्टर्ड **रूप-विलास** उबटन लगाइए। विवाह-शादियों पर वर-वधू का सौन्दर्य बढ़ाने के लिए यह बहुत ही उपयोगी साबित हुआ है और इसकी खुशबू इतनी प्यारी है कि अतिथि को मस्त करती है। कीमत एक डिब्बा २-) तीन डिब्बा ५॥) डाक-खर्च माफ, पैकिंग खर्च अलग।

रूप-विलास कम्पनी धनकुट्टी नं० ४२७ कानपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छप गया ! छप गया !! छप गया !!!

वार्षिक बाल-सखा १९४६

जिस 'वार्षिक बाल-सखा' की आप मुद्दत से बाट जोह रहे थे, वह प्रकाशित हो गया। तीन सौ पृष्ठों में रङ्ग-बिरङ्गी स्याही से छापी गई अत्यन्त मनोरञ्जक और सचित्र सामग्री बालक-बालिकाओं को फौरन लुभा लेगी। तिरङ्गा आवरण और सात तिरङ्गे चित्र इस अङ्क की सुन्दरता में चार चाँद लगा रहे हैं।

पहले से ही इतने आर्डर आ चुके हैं कि बहुत थोड़ी प्रतियाँ शेष रह गई हैं। मँगानेवालों को शीघ्रता करनी चाहिए। इसका मूल्य तीन रु० है। 'बाल-सखा' के ग्राहकों के लिए रियायती मूल्य २॥) रु०। मनीआर्डर द्वारा मूल्य भेजिए। वी० पी० नहीं भेजी जायगी।

मैनेजर—'बाल-सखा', इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

संस्कृत ग्रन्थों के बालोपयोगी हिन्दी-संस्करण

बाल पंचतन्त्र—इसमें भी नीति-सम्बन्धी कहानियाँ संगृहीत की गई हैं। पुस्तक क्या है, ज्ञान का भाण्डार है। मू० ॥।–) तेरह आने।

बाल-भोज-प्रबन्ध—राजा भोज के दरबार में विद्वानों का किस प्रकार आदर हुआ करता था, इसी सम्बन्ध के इस पुस्तक में कई रोचक और शिक्षाप्रद आख्यान संगृहीत किये गये हैं। मू० ॥।–) तेरह आने।

बाल-कालिदास—कालिदास के विभिन्न ग्रन्थों में जितनी भी उपदेशप्रद सूक्तियाँ आई हैं, वे सभी संगृहीत कर दी गई हैं। ऊपर मूल श्लोक है और नीचे हिन्दी-अनुवाद। मू० ॥) आठ आने।

बाल-रघुवंश—यह महाकवि कालिदास के रघुवंश का सारांश है। सारी पुस्तक बहुत ही सरल और रोचक भाषा में लिखी गई है। साथ ही कथा का भी कोई अंश नहीं छूटने पाया। मू० ॥≡) ग्यारह आने।

उपदेश-सम्बन्धी पुस्तकें

बाल-गीता—इस पुस्तक में गीता के अठारहों अध्यायों का सारांश सरल भाषा में लिखा गया है। मू० १ एक रुपया।

बाल-स्मृतिमाला—भिन्न-भिन्न ऋषियों ने मनुष्य को संयम और सदाचार के साथ जीवन व्यतीत करने के लिए जो नियम बनाये हैं, वे स्मृतियों के नाम से प्रसिद्ध हैं। इस पुस्तक में उन्हीं अठारह स्मृतियों का सारांश दिया गया है। मू० ॥।–) तेरह आने।

बाल-नीति-माला—यह संस्कृत के प्रामाणिक नीति-ग्रन्थों का सारांश है। इसे पढ़कर तथा इसमें लिखी हुई बातों का मनन करके बच्चे नीतिमान् और चतुर बन सकते हैं। मू० ॥।–) तेरह आने।

बालोपदेश—इसमें ऐसी-ऐसी शिक्षायें संगृहीत की गई हैं जो केवल बालक बालिकाओं के ही लिए नहीं बल्कि बड़े-बूढ़ों के लिए भी लाभदायक हैं। मू० ॥) आठ आने।

बाल-मनुस्मृति—मनुस्मृति के चुने हुए श्लोकों का सारांश मू० ॥) आठ आने।

मैनेजर बुकडिपो—इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेख-सूची

१—सम्पादकीय १

१—आक्रमण का षड्यन्त्र—डाक्टर एस० सी० लेले ९

३—फ़ारिनजाइटिस—प्रोफेसर तारा डी० पोतदार, एम० ए० ... ... १६

४—राजनीतिक जीवन सम्बन्धी कुछ संस्मरण—डाक्टर सत्यप्रकाश, डी० एस-सी० ... २०

५—विश्वास-घात—सरदार नानकसिंह ... २७

६—याद (कविता) ३०

७—फ्रांस में सांस्कृतिक क्रान्ति—श्री मङ्गलकिशोर पाण्डेय ३१

८—मैं (कविता)—श्री ज्वालाप्रसाद मिश्र, बी० एस-सी०, एल-एल० बी० ... ३३

९—प्रायश्चित्त—श्री का० न० रामन्ना शास्त्री ३४

१०—कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय की एक झाँकी—श्री हरिकेशव घोष ३८

११—ज्योतिषी ने कहा था—कुमारी अ० स्याल ४१

१२—वैदिक कविताएँ (कविता)-श्री चन्द्रकुँवर बर्त्वाल ४३

१३—साथी की याद (कविता)—श्री सत्यनारायण शर्मा ४८

१४—चीन पोथियाँ—श्री शम्भुप्रसाद बहुगुना, एम० ए०, डिप० साइ० ... ... ४९

१५—कणिकाएँ (कविता)—श्री प्रभाकर माचवे ५२

१६—संक्रमण-काल का बजट—श्री अवनीन्द्रकुमार विद्यालङ्कार ५३

१७—उलझी लड़ियाँ—श्रीमती हीरादेवी चतुर्वेदी ६३

१८—आदमी का बच्चा—श्रीकृष्णचन्द्र शर्मा, बी० ए० ... ... ६६

१९—कामनाएँ (कविता)—डाक्टर श्यामनन्दनसहाय वर्मा 'विकल', बी० ए० ऑनर्स, एम० ए०, पी-एच० डी० ... ... ७०

२०—विचार-विमर्श ७१

२१—विविध विषय ८१

२२—नई पुस्तकें ८८

२३—सामयिक साहित्य ९४

चित्र-सूची

१—राष्ट्रीय मुसलमान—हाफिज मुहम्मद इब्राहीम, शेख हिसामुद्दीन, शेख जाहिरुद्दीन और ख्वाजा अब्दुल मजीद ४-५ के बीच

२—शिमला में पाकिस्तानी बच्चों के बीच मि० जिन्ना ... ,,

३—सीमान्त गांधी और राष्ट्रपति नई दिल्ली में प्रेस-प्रतिनिधियों के साथ ... ,,

४—राष्ट्रपति—मन्त्रिमण्डल मिशन के साथ ,,

५—कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय का प्रधान द्वारपाल ... ३८-३९ के बीच

६—'ग्रेसी कार्नर' में प्रतियोगिता का एक दृश्य ... ,,

७—कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के छात्रभोज का एक दृश्य ... ,,

८—कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के २० कालेजों में से एक का सिंहद्वार ... ,,

९—सीमान्त गांधी, पं० नेहरू और सरदार पटेल मन्त्रिमण्डल मिशन के दो सदस्यों से बातचीत कर रहे हैं... पृष्ठ ९४-९५ के बीच

१०—रावलपिण्डी में हुए अखिल सिख-दल-सम्मेलन में सरदार अमरसिंह भाषण कर रहे हैं ... ,,

११—कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय का एक छात्र अपने अध्यापक के साथ... ,,

१२—कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के प्रोफेसर कलब में ... ,,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हलवे का स्वाद खाने से मिलता है।

हमारे यहाँ की बनी क्रीमोला टाफी
फ्रूट ड्राप्स तथा
रेशमी मिठाइयों का स्वाद लीजिए।
सभी दूकानों में मिलती हैं।

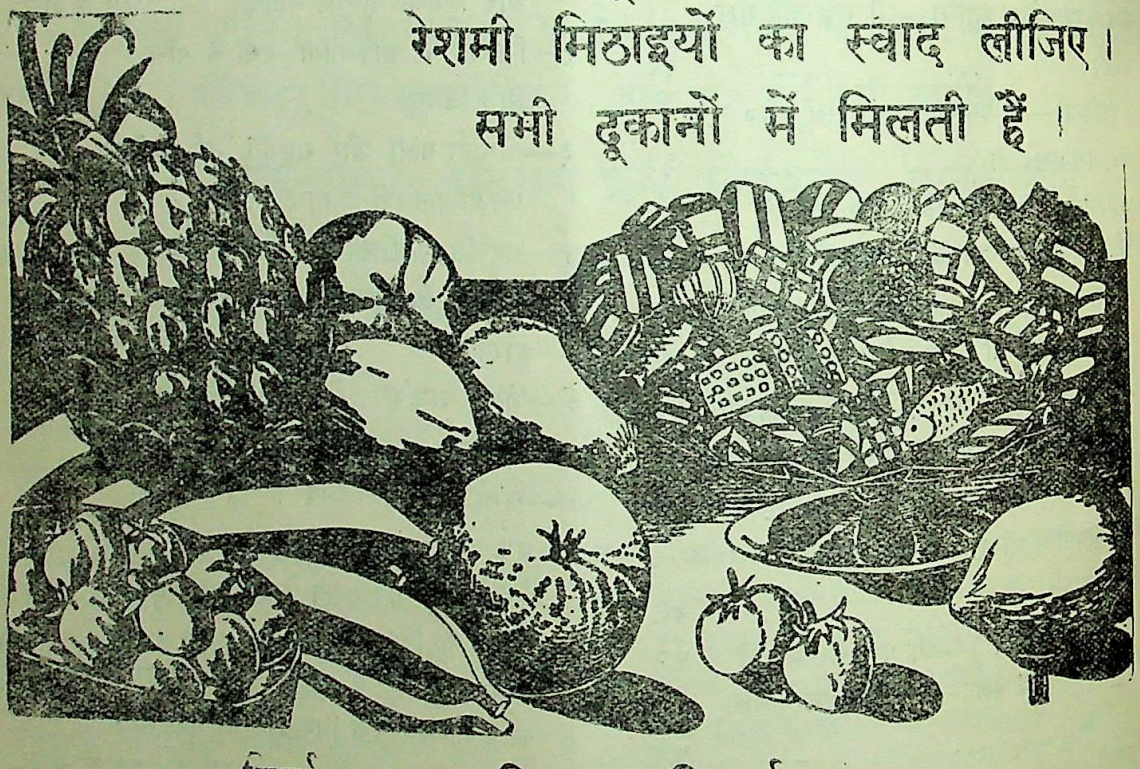

निर्माता—इण्डस्ट्रियल रिसर्च हाउस,
इंडियन प्रेस बिल्डिंग,
इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादक—देवीदत्त शुक्ल : उमेशचन्द्र मिश्र

जुलाई १९४६ ज्येष्ठ २००३; भाग ४७, खण्ड २ संख्या १, पूर्ण संख्या ५५९

सम्पादकीय

भारतवर्ष की साक्षी

श्री क्लेमेंट एटली ने ब्रिटिश मजदूर दल के गत वार्षिक अधिवेशन के अवसर पर भाषण करते हुए कहा था—"जैसी स्वाधीनता हम अपने लिए चाहते हैं, वैसी ही दूसरों के लिए भी। हम इस स्वाधीनता की घोषणा करते हैं। हम अपनी घोषणा को कार्यान्वित देखना चाहते हैं। भारतवर्ष इसका साक्षी है।"

भारत गत एक महीने से व्यावहारिक स्वराज्य का स्वप्न देख रहा है। इस सुख-स्वप्न का प्रारम्भ हुआ था मन्त्रिमिशन के भारत में पदार्पण के दिन से। अब उसका अन्त होने जा रहा है। इस बीच मन्त्रिमण्डल मिशन के कार्यों और ब्रिटेन के प्रधान मन्त्री की घोषणा में किस प्रकार का समन्वय रहा है इसका निरीक्षण कम रोचक नहीं है।

भारत में एटली साहब की घोषणा के पूर्व ब्रिटिश साम्राज्यवाद का फौलादी ढाँचा जैसा सुदृढ़ था, आज भी, घोषणा के बाद भी, वैसा ही सुदृढ़ बना हुआ है। मन्त्रिमण्डल मिशन के प्रस्तावित स्वराज्य के हो जाने पर भी वह वैसा ही सुदृढ़ बना रहेगा, इसमें कोई सन्देह नहीं है। ब्रिटिश सेनाएँ भारत के प्रत्येक प्रान्त में फैली हुई हैं। अन्तःकालीन व्यवस्था के स्थापित हो जाने पर भी वे फैली रहेंगी, क्योंकि उनके हटाए जाने की किसी निश्चित तिथि की घोषणा न तो प्रधान मन्त्री महोदय ने की, न भारतमन्त्री ने और न उनके मिशन ने। जब तक ब्रिटिश सेनाएँ जमी हैं, तब तक ब्रिटेन का साम्राज्यवादी पञ्जा दृढ़ है, इस सत्य से इनकार नहीं किया जा सकता।

मन्त्रिमण्डल मिशन भारत पर जो समझौता लादने का प्रयत्न कर रहा है वह वस्तुतः भारत को तीन ऐसे भागों में बाँट देने का प्रयत्न है जो कभी एक न बन सकेंगे। समस्त देश जब तक एक इकाई न हो जाए, तब तक स्वाधीनता का कुछ अर्थ ही नहीं होता। समस्त देश को अ, ब और स के विभागों में विभाजित करना और वह भी अनिवार्य रूप से, एक ऐसी योजना है जो प्रान्तों को भी स्वीकृत नहीं है और कांग्रेस तो उसकी 'अनिवार्यता' का विरोध कर ही रही है। इसी योजना ने प्रान्तों के आत्मनिर्णय के सिद्धान्त को उठाकर ताक पर रख दिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। राष्ट्रीय भावना-प्रधान सीमान्त प्रदेश को केवल इस अपराध के लिए कि वह मुसलमानों के बहुमत का प्रान्त है—'उत्तरी-पच्छिमी पाकिस्तान' से मिलाया जा रहा है और आसाम को, जहाँ मुस्लिम बहुमत भी नहीं है, 'उत्तरी-पूर्वी पाकिस्तान' का अङ्ग बनाया जा रहा है—भले ही पाकिस्तान का नाम नहीं लिया गया और एक स्वतन्त्र राष्ट्र के रूप में उसकी सत्ता स्वीकार करने से मन्त्रिमण्डल मिशन ने इनकार भी कर दिया है पर इसका अन्य अर्थ न तो उन प्रान्तों के निवासियों ने समझा है, न कांग्रेस ने और कायदे आजम साहब तो 'ब' और 'स' विभाग को खुले आम 'पाकिस्तान' कहने लगे हैं। एटली साहब की 'स्वाधीनता की यह घोषणा' सचमुच एक दिलचस्प चीज है और उसके पक्ष में भारतवर्ष की साक्षी भी खूब रही।

बङ्गाल और आसाम की धारा सभाओं में योरपीय सदस्यों का प्रतिनिधित्व स्वाधीनता और स्वराज्य का एक अच्छा-खासा मखौल है। महात्मा गांधी ने इस पर आपत्ति उठाई थी और अपनी भेंटों और पत्रों के द्वारा मन्त्रिमण्डल मिशन का ध्यान जोरदार ढङ्ग से इस ओर आकृष्ट किया था। कांग्रेस-कार्यकारिणी की ओर से जो अन्तिम पत्र मन्त्रिमण्डल मिशन को भेजा गया था उसमें साफ कह दिया गया था कि भारतीय प्रान्तों की धारा सभाओं में योरपीयों का प्रतिनिधित्व कानून के भी विरुद्ध है और प्रजातन्त्र की भावना के भी। १४ जून को प्रार्थना के उपरान्त महात्मा गांधी ने साफ शब्दों में कहा था—'योरपीय कहते हैं कि भारतीय धारा सभाओं में प्रतिनिधित्व का कानूनी अधिकार उन्हें प्राप्त है। पर कानून की दृष्टि से उनको इस प्रकार का कोई अधिकार नहीं है। उन्होंने यह भी कहा है कि यदि देश के प्रमुख राजनीतिक दल—कांग्रेस और लीग—कहें तो वे (योरपीय) अपना प्रतिनिधित्व छोड़ देने के लिए तैयार हैं; पर प्रार्थना करने और भीख माँगने का प्रश्न ही नहीं उठता। मन्त्रिमण्डल की घोषणा की कानून के विशेषज्ञों ने जो व्याख्या की है उसके अनुसार योरपीय प्रतिनिधियों का भारत की व्यवस्थापिका में कोई स्थान नहीं है।

योरपीय प्रतिनिधियों का भारत की धारा सभाओं में अब तक जो रवैया रहा है उसके बारे में दो मत नहीं हो सकते। वे सदा अपना मत भारत की स्वतन्त्रता के विपक्ष में देते आए हैं। इस वस्तुस्थिति में भारतीय धारा सभाओं में उनकी उपस्थिति भारत कब तक सहन कर सकता था! यदि योरपीय प्रतिनिधित्व को लेकर विधान-निर्मात्री परिषदें बनाई जातीं तो वे एक-एक न होकर तीन-तीन होतीं। प्रसन्नता की बात है कि स्वेच्छा से या किसी बाहरी दबाव के कारण अब योरपीय अपना प्रतिनिधित्व का अधिकार छोड़ देने को राजी हो गए हैं। इससे अन्तःकालीन सरकार की एक अड़चन अवश्य हट गई है।

कांग्रेस ने ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल मिशन की घोषणा का यह अर्थ लगाया था कि उसके अनुसार केन्द्र में जो कार्य-समिति स्थापित होगी वह एक सार्वभौम स्वतन्त्र संस्था होगी। उसका निर्णय अन्तिम होगा। पर आगे चलकर यह रहस्य खुला कि उक्त कार्यसमिति के निर्णय तब तक मान्य नहीं हो सकते जब तक उन पर ब्रिटिश पार्लियामेंट अपनी स्वीकृति की मोहर न लगा दे। इस पर भी एटली साहब कह रहे हैं—"हम स्वाधीनता की घोषणा कर रहे हैं; भारत इसका साक्षी है।"

आगे देखिए। एटली साहब ने कहा है—"मैं प्रजातान्त्रिक समाजवाद में विश्वास रखता हूँ—'सोशल डिमोक्रेसी' में।" न जाने कैसी है उनकी 'सोशल डिमोक्रेसी'। भारत की साक्षी तो उनके पक्ष में नहीं जा रही है। मन्त्रिमण्डल मिशन ने जो भी प्रयत्न किए वे भारतीय राजनीति में धर्म या मजहब की स्थिति को मुहत्तर बनाने के लिए ही। उन्होंने भारत के प्रान्तों के तीन समुदाय बनाए—'ए', 'बी' और 'सी'। इनका आधार केवल धर्म या मजहब है। 'ए' भाग हिन्दुओं का है, 'बी' और 'सी' मुसलमानों का। इस समुदायीकरण को एक नजर देखकर ही जिन्ना साहब हर्षोन्मत्त होकर पुकार उठे—"मैं 'बी' और 'सी' समुदायों को पाकिस्तान कहना पसन्द करूँगा।" 'बी' समुदाय में सीमाप्रान्त में राष्ट्रीय मुस्लिम रहते हैं। वे इस पाकिस्तान में सम्मिलित होना नहीं चाहते। पञ्जाब के हिन्दू भी इसका विरोध करते हैं और सिख तो विद्रोह करने पर भी आमादा हो गए हैं। पर समुदायीकरण की अनिवार्यता को मिटाना मन्त्रिमण्डल मिशन को स्वीकृत नहीं हुआ। यद्यपि मूल-प्रस्तावों में प्रान्तों को विशेष समुदायों में सम्मिलित होने या न होने की स्वाधीनता दी गई है, पर कम-से-कम कांग्रेस ने इसे इन्हीं अर्थों में लिया था। इस जबर्दस्ती को भी क्या 'सोशल डिमोक्रेसी' कहा जा सकता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है? क्या यह वही 'प्रजातान्त्रिक समाजवाद' है जिसमें एटली साहब की दृढ़ आस्था है?

आगे और देखिए। भारत के उस भाग को, जिसे देशी राज्य कहा जाता है, प्रजातन्त्रवादी रूप देने के लिए एटली साहब ने या उनकी अनुमति और आज्ञा से भेजे गए मन्त्रिमण्डल मिशन ने क्या किया? मन्त्रिमण्डल मिशन ने राजाओं को और भी छूट दे दी है कि वे अपने अधिकृत प्रदेशों में जो चाहें, करें। पोलिटिकल विभाग राजा लोगों को यही सलाह देता रहा है कि प्रजा की प्रजातन्त्र-सम्बन्धी भावनाओं को उगते ही मसल डाला जाए। सार्वभौम सत्ता के अपदस्थ होने की बात मन्त्रिमण्डल मिशन ने अवश्य कही, पर वह राजा लोगों पर यह दबाव न डाल सका कि वे अपने अधिकृत प्रदेशों में तुल्य प्रजातन्त्रवाद के आधार पर चलनेवाली शासन-व्यवस्था जारी कर दें। भारत के जिस यूनियन की कल्पना की जा रही है, उसमें भी रियासतों के प्रतिनिधित्व का रूप प्रजातन्त्रवाद के अनुसार नहीं है। यूनियन में रियासतों से जो प्रतिनिधि जाएँगे वे देशी राज्यों की प्रजा के द्वारा चुने हुए होंगे, इस प्रकार का कोई आश्वासन मन्त्रिमण्डल मिशन ने नहीं दिया। उसकी ओर से नरेन्द्रमण्डल के अध्यक्ष को जो श्वेत पत्र दिया गया उसमें शासन-व्यवस्था में सुधार करने की सिफारिश तो की गई है—जिसको नरेन्द्रमण्डल ने सहर्ष स्वीकार भी कर लिया है—पर शासन-व्यवस्था में प्रजा का सहयोग प्राप्त करने और शासन-परिषद् में प्रजा का प्रतिनिधित्व अनिवार्य करने पर जोर नहीं दिया गया है। साथ ही देशी राज्यों को यह छूट दे दी गई है कि वे अपने अधिकारों में से जितने चाहें, यूनियन को हस्तान्तरित कर दें और जितने चाहें स्वायत्त रक्खें। इसको और जो कुछ भी नाम दे दिया जाए, 'सोशल डिमोक्रेसी' कदापि नहीं कहा जा सकता।

कथन और कार्य की असमानता ब्रिटिश शासन-नीति के विरुद्ध एक पुराना अभियोग है। एटली साहब की सरकार भी अभी उस अभियोग से मुक्त नहीं हो सकी है। वह अपनी सफाई में भारत की गवाही पेश कर रही है। पर हमारी समझ से भारत की साक्षी सफाई पक्ष के अनुकूल नहीं पड़ेगी।

मुस्लिम लीग का निर्णय

लम्बे सोच-विचार और दीर्घकालीन प्रतीक्षा के उपरान्त मुस्लिम लीग ने अपना जो निर्णय ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल मिशन के प्रस्तावों के पक्ष में दिया उसका आभास हमें मिस्टर जिन्ना के गत भाषणों से ही मिल गया था। २१ मई को शिमला में उन्होंने कहा था—"मन्त्रिमण्डल मिशन ने पाकिस्तान के सार को स्वीकार कर लिया है।" उसके बाद लीग की कौंसिल के समक्ष भाषण करते हुए उन्होंने कहा था—"मन्त्रिमण्डल मिशन ने कांग्रेस को शकर से लपेटी हुई गोलियाँ दी हैं।" कांग्रेस भी अब तक जान चुकी है कि शकर की मात्रा उनमें बहुत ही कम है। इन वक्तव्यों का भाव यही है कि मिस्टर जिन्ना यह अच्छी तरह समझ गए थे कि इस शकर से लिपटी पाकिस्तान की गोली को कांग्रेस निगलेगी नहीं, और यदि निगल भी गई तो उसे हज्म न कर सकेगी। इस दशा में मुस्लिम लीग के लिए स्वाभाविक यही था कि वह मन्त्रिमण्डल मिशन की अन्तःकालीन शासन-योजना को स्वीकार कर लेती और संसार को यह दिखाने का प्रयत्न करती कि मुस्लिम लीग तो एकता के साथ शासन-योजना को कार्यान्वित करने के लिए तैयार है पर कांग्रेस ने हठधर्मी दिखाई और मिशन का प्रयत्न असफल करने का प्रयत्न किया।

राजनीति-विशारदों को लीग की इस स्वीकृति से कोई आश्चर्य नहीं हुआ। आश्चर्य तो तब होता जब लीग भी देश की वास्तविक भलाई और उन्नति को ध्यान में रखते हुए योजना को ठुकरा देती या कुछ ऐसी त्रुटियों के संशोधन पर जोर देती जिनके रहते हुए स्वतन्त्रता का ढोल पोला ही रहा जाता है। मिस्टर जिन्ना की गर्वोक्तियों से यह आभास मिला कि वे अपने को विजेता समझ रहे हैं। यह विजेता-भाव देश की उन्नति में सहायक नहीं, बाधक ही सिद्ध होगा। उनकी की हुई मन्त्रिमण्डल मिशन की प्रस्तावों की व्याख्याओं में देश के सच्चे नेताओं को दुरभिसन्धि की गन्ध मिली, फलतः वे उनके अधिक स्पष्टीकरण की अपेक्षा करने लगे।

शिमला में होनेवाले गत त्रिदल सम्मेलन में मुस्लिम-लीग का पक्ष उपस्थित करते हुए मिस्टर जिन्ना ने कहा था कि मुस्लिम लीग 'यूनियन' में अपना योग निम्न शर्तों पर दे सकती है—(१) 'बी' और 'सी' समुदायों में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्मिलित प्रान्तों की—जिन्हें वे पाकिस्तान कहना अधिक पसन्द करते हैं—अपनी एक पृथक् विधान-निर्मात्री परिषद् हो। (२) यूनियन की विधान-निर्मात्री एक हो, इस प्रश्न को विधाननिर्मात्री परिषद् के निर्णय के लिए छोड़ दिया जाए। (३) शासनकार्य-सञ्चालन के लिए यूनियन प्रान्तों के समुदायों से 'ग्रांट' के रूप में धन प्राप्त करे। उसे कर के द्वारा धन प्राप्त करने का अधिकार न दिया जाए। (४) केन्द्रीय धारा सभा में 'ए' समुदाय के जितने प्रतिनिधि हों, उतने ही 'बी' और 'सी' समुदायों के भी। अर्थात्, मुसलमानों के उतने प्रतिनिधि वहाँ रहें जितने गैर मुस्लिमों के। साथ ही किसी ऐसे विवादास्पद विषय पर, जिसका सम्बन्ध सम्प्रदाय-विशेष से हो, धारा सभा का निर्णय तब तक मान्य न समझा जाए जब तक कि सदस्यों का तीन-चौथाई मत उसके पक्ष में न हो। पर इन शर्तों की पूर्त्ति के लिए भी लीग ने कोई जोर नहीं दिया। इससे यही सिद्ध होता है कि या तो मिस्टर जिन्ना को अपनी इन शर्तों में कोई तत्त्व दिखाई नहीं दिया या उन्हें मन्त्रिमण्डल मिशन की ओर से कोई ऐसा आश्वासन मिल गया या प्रस्तावित विधान में ही कोई ऐसी बात दिखाई दे गई जिससे उनकी समस्त माँगों की पूर्त्ति हो सकती है और लीग ने अपना निर्णय प्रस्तावित विधान के पक्ष में दे दिया।

राजनीतिज्ञों का अनुमान यह भी है कि लीग की कौंसिल के गत अधिवेशन से पूर्व 'कायदे आजम' ने वायसराय महोदय से दो बार जो भेंट की थी उसमें उन्होंने वायसराय महोदय से यह स्पष्टीकरण चाहा था कि विधान-निर्मात्री परिषद् के अध्यक्ष के अधिकारों की सीमा क्या होगी। साथ ही उन्होंने एक ऐसी सङ्घ अदालत की भी माँग की थी जो साम्प्रदायिक और असाम्प्रदायिक प्रश्नों का निर्णय कर सके, अर्थात् यह प्रश्न साम्प्रदायिक है या नहीं, यह बतला सके। उन्होंने यह भी जानना चाहा था कि ऐसी प्रस्तावित सङ्घ-अदालत का निर्णय मानने के लिए धारा सभा का अध्यक्ष बाधित होगा या नहीं। वायसराय ने अपनी ओर से क्या आश्वासन दिया, यह आगे चलकर ज्ञात हो सकेगा।

प्रान्तों का अनिवार्य समुदायीकरण प्रस्तावित विधान की एक ऐसी बात है जिससे मुस्लिम लीग को सबसे अधिक सन्तोष हुआ है। जिन्ना साहब का विश्वास है कि इससे उन्हें उनके पाकिस्तान का सार रूप मिल गया है। इस अनिवार्य समुदायीकरण की जो व्याख्या लीग की ओर से की गई वह मन्त्रिमण्डल मिशन के प्रस्तावित विधान के मूलरूप के अनुकूल नहीं है। कानून के विशेषज्ञों ने उक्त विधान की व्याख्या करते हुए कहा है कि प्रत्येक प्रान्त को किसी समुदाय-विशेष में शामिल होने या न होने का अधिकार है। लीग की ओर से यह भी कहा गया है कि उनके तथाकथित पाकिस्तानी समुदाय ('बी' और 'बी') यदि आगे चलकर उचित समझेंगे तो यूनियन में शामिल रहेंगे, अन्यथा उससे पृथक् हो जाएँगे। प्रारम्भ में ही पृथक्ता की भावना को प्रश्रय देने का अर्थ यही हो सकता है कि लीग अलग होने के लिए, और उस उद्देश्य को लेकर बात-बात पर अड़ङ्गा खड़ा करने के लिए, यूनियन में योग देना चाहती है, मिलकर काम चलाने और इस प्रकार अपने सहयोग से समस्त भारतीय राष्ट्र को एक इकाई में ढालकर यूनियन की स्थिति को सुदृढ़ बनाने के ध्येय से नहीं। ध्येयों की विभिन्नता से यूनियन का काम एक दिशा में नहीं चल सकता और न वह भारत का कोई सामूहिक हित ही कर सकती है। इसी कारण कांग्रेस के नेता इस अनिवार्य समुदायीकरण के विरोधी है, क्योंकि वे समस्त देश को एक इकाई के रूप में सङ्गठित देखना चाहते हैं। लीग का यह निर्णय देश की राजनीतिक प्रगति को अग्रसर करेगा या उसकी राह का रोड़ा बनेगा, इसका निर्णय समय ही करेगा और वह भी शीघ्र ही।

——

सिखों का विरोध

मन्त्रिमण्डल मिशन की प्रस्तावित शासन-योजना से सिख बहुत अधिक विचलित हो उठे हैं। कुछ ही दिन पूर्व अमृतसर की एक सभा में एकत्र होकर उन्होंने शपथ ली थी कि वे अपना रक्त बहाकर भी प्रस्तावित विधान का विरोध करेंगे। सौ सिख नवयुवक सर्वप्रथम अपनी आहुति डालने के लिए कृतसङ्कल्प हैं। सिखों की शिकायत यह है कि ब्रिटिश प्रतिनिधियों ने उन्हें मुसलमानों के हाथों में सौंप दिया है। सम्भवतः इसका कारण यह है कि ब्रिटिश प्रतिनिधियों की सम्पूर्ण शक्ति कांग्रेस और लीग में समझौता कराने में लगी रही और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

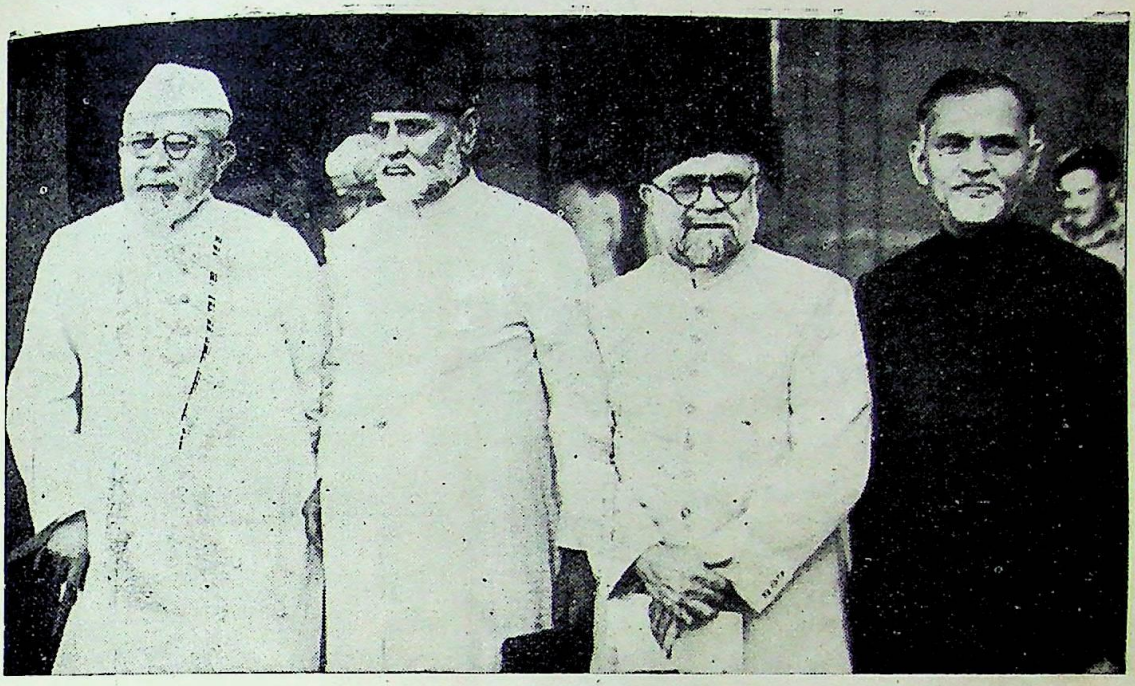

राष्ट्रीय मुसलमान
बाईं ओर से—हाफिज मुहम्मद इब्राहीम, शेख हिसामुद्दीन, शेख जाहिरुद्दीन और ख्वाजा अब्दुल मजीद

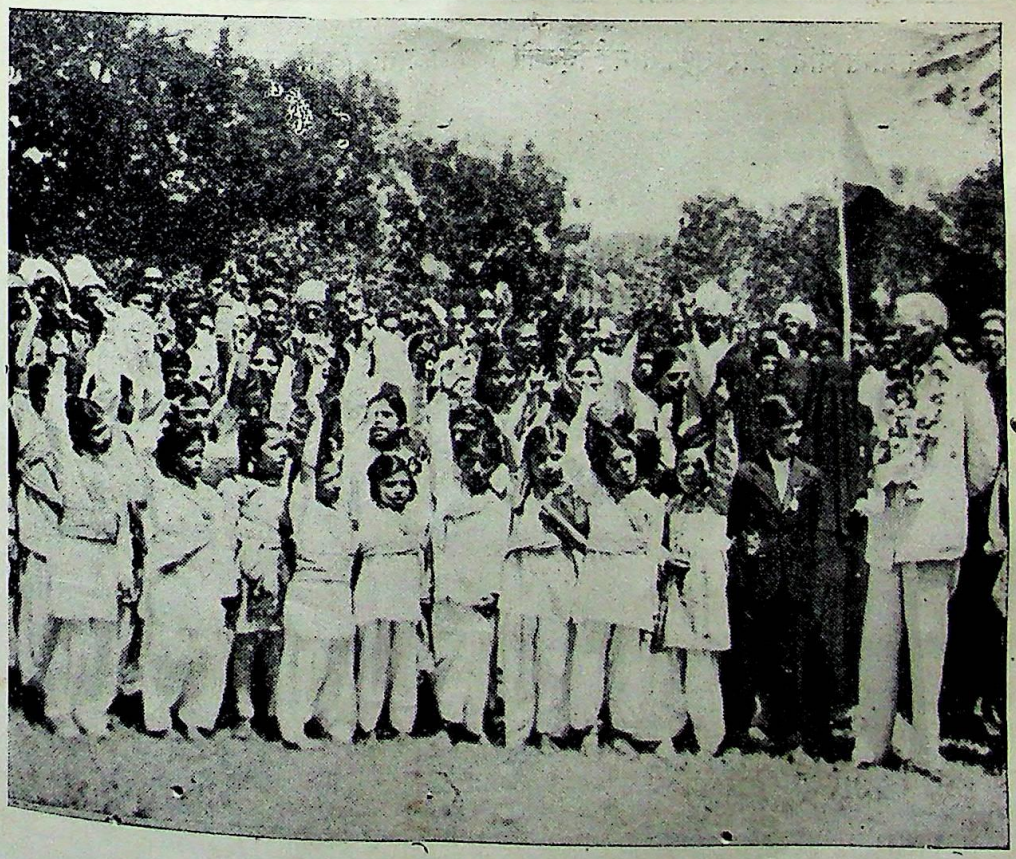

शिमला में पाकिस्तानी बच्चों के बीच मि० जिन्ना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

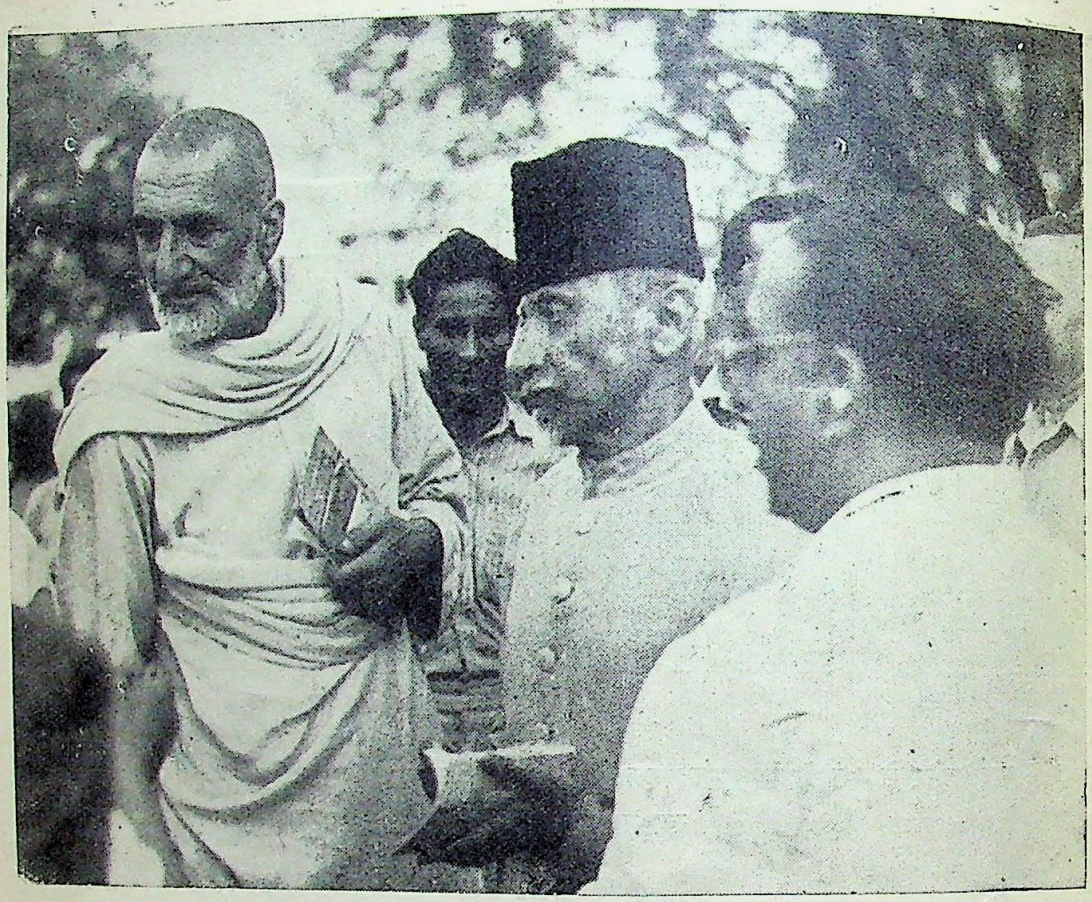

सीमान्त गांधी और राष्ट्रपति नई दिल्ली में प्रेस-प्रतिनिधियों के साथ

राष्ट्रपति—मन्त्रिमण्डल मिशन के साथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्हें दूसरे अल्पसंख्यकों, विशेषतः सिखों, की समस्या पर विचार करने का अवकाश नहीं मिला। इससे पूर्व विधान-निर्मात्री परिषद् बनाने का जब-जब प्रश्न उठा था तब सिखों की—विशेषतः पञ्जाब में—विशेष परिस्थिति को ध्यान में रक्खा गया था। सिख यह सदैव से कहते रहे हैं कि वे स्वतन्त्र भारत में अपनी वर्त्तमान स्थिति से सन्तुष्ट हो सकते हैं पर वे पाकिस्तानी राज्य के अन्तर्गत मुसलमानों की प्रधानता को सहन नहीं कर सकते। यदि पाकिस्तान दिया जाता है तो पूर्वी पञ्जाब के उस भाग को, जहाँ सिख बहुमत में हैं, पञ्जाब से पृथक् कर दिया जाना चाहिए और इस प्रकार एक स्वतन्त्र सिख राज्य बना दिया जाना चाहिए। जब मुसलमान केन्द्र में हिन्दुओं का प्राधान्य सहन नहीं कर सकते तब सिख पञ्जाब में मुस्लिम प्राधान्य कैसे सहन करें। विशेषतया उस दशा में जब कि पञ्जाब को पाकिस्तानी प्रान्त घोषित कर दिया जाएगा और उसका शासनविधान पाकिस्तानी प्रतिनिधियों की इच्छा के अनुरूप सञ्चालित होगा।

ब्रिटिश प्रतिनिधियों ने पाकिस्तान को उस रूप में स्वीकृत नहीं किया, जिस रूप में लीग उसे स्वीकृत कराना चाहती थी, यह ठीक है। यह भी ठीक है कि केन्द्र में भारत का शासन-प्रबन्ध एक यूनियन-द्वारा सञ्चालित होगा, जो कि लीग की माँग के अनुरूप नहीं है। पर यूनियन के हाथों में शासन के कुछ विशेष अधिकार ही रहेंगे—जैसे रक्षा, विदेशी मामले और यातायात। साथ ही विधान-निर्मात्री परिषद् का तीन भागों में विभक्त किया जाना और प्रत्येक विभाग को प्रान्तीय मामलों में पूरी स्वाधीनता होना पाकिस्तान का ही दूसरा रूप है। ब्रिटिश प्रतिनिधियों ने जो मसविदा तैयार किया है उसके अनुसार 'ब' समुदाय में सिखों के केवल ४ प्रतिनिधि रहेंगे, जब कि मुसलमानों के २२ और अन्य जातियों के ६। इस प्रकार इस विभाग की विधान-निर्मात्री में मुसलमानों का स्पष्ट बहुमत रहेगा। सिखों को भय है कि उनके स्वार्थ ऐसी विधान-निर्मात्री परिषद् के अन्तर्गत सुरक्षित नहीं रह सकते यदि उन्हें कोई विशेष संरक्षण नहीं दिया जाता। सिखों के विद्रोह का मूल कारण यही है।

विचार करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि मुसलमानों की प्रधानता में सिखों की परिस्थिति वैसी ही है जैसी कि मुसलमानों की हिन्दुओं की प्रधानता में कही जाती थी। यदि मुसलमान हिन्दुओं की प्रधानता को भय की दृष्टि से देखते हैं और अपने लिए विशेष संरक्षण चाहते हैं, तो सिखों को भी ऐसी माँग करने का पूरा अधिकार है। यदि ब्रिटिश प्रतिनिधियों का विधान 'ब' समुदाय की विधान-निर्मात्री परिषद् में सिखों को विशेष संरक्षण नहीं देता तो आगे चलकर ऐसी कठिनाई उपस्थित हो सकती है जिसका निराकरण कठिन होगा। हमें विश्वास है कि विशेष संरक्षण प्राप्त होने पर सिख प्रसन्नता के साथ 'ब' समुदाय की विधान-निर्मात्री परिषद् में योग देने को प्रस्तुत हो जाएँगे। यद्यपि उनके केवल ४ ही प्रतिनिधि वहाँ होंगे फिर भी ९ अन्य प्रतिनिधियों की सहायता से वे सिखों की हितरक्षा अच्छी तरह कर सकेंगे।

एक निवेदन हमें इस सम्बन्ध में पञ्जाब के मुसलमानों और सिखों से भी करना है। जिस प्रकार इतिहास ने भारतीय मुसलमानों को हिन्दू-प्रधान भूभाग में बसने के लिए बाध्य किया है उसी प्रकार सिख भी मुस्लिम-प्रधान भूभाग में बसने के लिए ऐतिहासिक कारणों से ही बाधित हुए हैं। दोनों जातियाँ शताब्दियों से एक दूसरे के साथ सहयोग और पारिवारिक भावनाओं के साथ बसती आई हैं और दो योग्य पड़ोसियों की भाँति परस्पर निर्वाह करती रही हैं। आज यदि वातावरण विषाक्त हो रहा है और एक सम्प्रदाय दूसरे सम्प्रदाय को अपना शत्रु समझ रहा है तो केवल इस कारण से कि किसी दूसरे ने अपने स्वार्थ की सिद्धि के लिए उनमें फूट और मतभेद के बीज बो दिए हैं। वातावरण ऐसा ही कदापि न बना रहेगा। एक देश में बसनेवाले और एक ही मिट्टी और अन्न-जल से पलनेवालों में एकता की भावना नैसर्गिक होती है, भले ही उनके धार्मिक विश्वास पृथक्-पृथक् हों। यही नहीं, उनके धर्म भी परस्पर आदान-प्रदान करते हुए एक दूसरे के बहुत निकट आ जाते हैं और उनमें दो सगे भाइयों की-सी पारस्परिकता उत्पन्न हो जाती है। दोनों जातियों की महत्ता और गौरव इसी में है कि वे तुच्छ स्वार्थों से ऊपर उठकर सामूहिक स्वार्थों की ओर अपना ध्यान केन्द्रीभूत करें और इस प्रकार विश्व के सामने एक सुन्दर आदर्श उपस्थित करें। संसार के अनेक देशों में देशभक्तों ने ऐसे उदाहरण सामने रख दिए हैं। प्रत्येक धर्म सहिष्णुता और पड़ोसी से प्रेम का उपदेश देता है, धर्मपुस्तकें भी यही उपदेश देती हैं और देश-प्रेम की माँग भी यही है। समय की माँग की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्त्ति करना ही सच्ची धार्मिकता और सच्ची राष्ट्रीयता है। इसी में सबका महत्तर स्वार्थ और चरम कल्याण निहित है।

——

कांग्रेस का निर्णय

अपने अन्तिम पत्र में कांग्रेस कार्यकारिणी ने मन्त्रि-मण्डल मिशन को सूचित कर दिया कि कांग्रेस अन्तः-कालीन सरकार की स्थापना में केवल निम्न शर्त्तों की स्वीकृति हो जाने पर ही योग देने को तैयार है—(१) विधान-निर्मात्री परिषद् को सार्वभौम स्वतन्त्र संस्था स्वीकार कर लिया जाए, (२) प्रत्येक प्रान्त को समुदाय-विशेष में सम्मिलित होने या न होने का अधिकार हो और (३) बङ्गाल और आसाम की धारा सभाओं में योरपीयों का प्रतिनिधित्व न हो। इन शर्त्तों के आधार पर मन्त्रि-मण्डल में १५ सदस्य रहें, जिनमें ५ मुसलमान हों और शेष दस दलितवर्ग, सिख जाति, भारतीय ईसाई जाति और पारसी जाति के प्रतिनिधि हों। मन्त्रिमण्डल में लीग को आधे पद देना कांग्रेस को स्वीकृत नहीं है।

इस पत्र से सन्धिवार्त्ता पर अन्तिम पटाक्षेप हो गया। इनमें से नं० (३) की बाधा तो अन्त में दूर हो गई, अर्थात् योरपीयों ने उक्त दो प्रान्तों में अपना प्रतिनिधित्व रखने का अधिकार वापस ले लिया, पर शेष दो बाधाएँ अटल बनी रहीं। सबसे बड़ी इनमें से 'समानता' (Parity) की थी। वायसराय समस्त सन्धिवार्ता में प्रतिनिधित्व की समानता को एक-न-एक रूप में उप-स्थित करते रहे। कभी उसे कांग्रेस-लीग-समानता का रूप दिया, कभी हिन्दू-मुस्लिम-समानता का और कभी सवर्ण हिन्दू-मुस्लिम-समानता का। उन्होंने यह भी प्रयत्न किया कि कांग्रेस और मुस्लिम लीग को मन्त्रिमण्डल में बराबर-बराबर पद दिए जाएँ। कांग्रेस समानता के इस सिद्धान्त को किसी रूप में स्वीकृत करने के लिए तैयार नहीं थी।

कांग्रेस की इन शर्त्तों को मन्त्रिमण्डल मिशन ने अस्वीकार कर दिया। इस प्रकार सन्धिवार्त्ता भङ्ग हो गई और मिशन का समझौते का प्रयत्न व्यर्थ हो गया। अब मन्त्रिमण्डल मिशन, जैसा कि उसने पहले ही घोषित कर दिया था, भारत में अन्तःकालीन शासन-व्यवस्था स्थापित करने की दिशा में दूसरा कदम उठाएगा। अब वह अपने मन की अस्थायी सरकार भारत में स्थापित करेगा। उस सरकार का क्या रूप होगा, उसमें किस दल को कितना प्रतिनिधित्व मिलेगा और देश के विभिन्न दलों पर उसकी प्रतिक्रिया क्या होगी, इस पर विचार करना अभी आवश्यक नहीं है।

——

बिलोचिस्तान और स्वराज्य

भारत को स्वराज्य-जैसी कुछ चीज मिलने जा रही है; ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल के प्रतिनिधियों ने साफ शब्दों में कहा था कि अँगरेजों ने भारत को छोड़ जाने का निश्चय कर लिया है। उनकी इस घोषणा पर भारत को पूरा विश्वास था। फलतः देश के कोने-कोने में राजनीतिक आशावाद और चेतनता की एक प्रचण्ड लहर व्याप्त हो गई। देश का प्रत्येक प्रान्त सचिन्त और सतर्क हो गया। वह सोचने लगा कि स्वतन्त्र और स्वायत्त शासित भारत में उसका पृथक् और सामूहिक स्थान क्या होगा। छोटे और पिछड़े हुए प्रान्तों के सामने यह प्रश्न और भी विशेष रूप में उपस्थित हो गया।

बिलोचिस्तान भी उन्हीं छोटे और पिछड़े हुए प्रान्तों में एक है। राजनीतिक विकास की दृष्टि से वह भारत के अन्य प्रान्तों से बहुत पिछड़ा हुआ है। इस सम्बन्ध में सन् १९०६, १९१६ और १६३५ में उसे बहुत कटु अनुभव हो चुके हैं। जब कि अन्य प्रान्त बिलोचिस्तान को पीछे छोड़कर स्वयं स्वाधीनता की दिशा में बहुत कुछ अग्रसर हो गए थे, उस अभागे प्रान्त को स्वायत्त शासन की प्रारम्भिक किश्तें भी न प्राप्त हो सकी थीं।

सामूहिक चेतना के इस युग में बिलोचिस्तान के प्रश्न को अधिक समय तक टाल सकना सम्भव नहीं है। वह शेष भारत के साथ सम्बद्ध है। यदि अँगरेज भारत को छोड़ रहे हैं तो अकेले बिलोचिस्तान में जमे रहना उनके लिए न सम्भव हो सकता है और न वांछनीय ही। अतः यदि सचमुच स्वराज्य मिलने जा रहा है तो अन्तःकालीन केन्द्रीय सरकार के समक्ष बिलोचिस्तान का प्रश्न सबसे पहले उपस्थित होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिन्ना साहब ने अपने पाकिस्तान की जो सीमाएँ निर्धारित की थीं, बिलोचिस्तान उन्हीं के भीतर आता है। जिन्ना साहब का पाकिस्तान अपने असली रूप में अस्तित्व में आएगा या नहीं और यदि आएगा तो उसका व्यावहारिक रूप कैसा होगा, इसका निर्णय तो समय करेगा। बिलोचिस्तान के निवासियों का इस समय उससे कोई विशेष लगाव नहीं है। इस समय उनकी चिन्ता यह है कि बिलोचिस्तान अपनी पृथक् सत्ता किस प्रकार कायम रख सके जिससे वह राजनीतिक, सांस्कृतिक और सामाजिक विकास करता हुआ देश के अन्य प्रान्तों के साथ कदम-से-कदम मिलाकर चल सके। इस सम्बन्ध में अब तक जो सुझाव राजनीतिज्ञों-द्वारा उपस्थित किए गए हैं, वे इस प्रकार हैं—

(१) बिलोचिस्तान की वर्तमान सीमाएँ जैसी हैं, भविष्य में भी वैसी ही बनी रहें।

(२) उसे सिन्ध के साथ जोड़ दिया जाए।

(३) उसे पश्चिमोत्तर सीमान्त प्रदेश में मिला दिया जाए।

(४) उसे तीन भागों में बाँट दिया जाए। बिलोची प्रधान भाग सिन्ध में मिला दिया जाए, पठानों का भाग सीमान्त प्रदेश में मिला दिया जाए और खत्री-प्रधान भाग पञ्जाब में सम्मिलित कर दिया जाए।

(५) चाघी बोलन, नसीराबाद, अराश्था मोहम्मद, मरी बगाई और खतरान के हिस्से—जो शुद्ध बिलोची आबादी है—डेरा गाजी खाँ तथा पञ्जाब और सिन्ध के वे भाग जिनमें बिलोची ही बसते हैं, एक में मिला दिए जाएँ और इस प्रकार एक पृथक् प्रान्त का निर्माण किया जाए जिसे सच्चे अर्थों में बिलोचिस्तान कहा जा सके। इस प्रान्त की आबादी २० से ३० लाख तक की होगी। इस प्रकार बिलोचियों का प्रदेश निकल जाने पर बिलोचिस्तान का जो पठानोंवाला प्रदेश बचे उसे सीमान्त प्रदेश के साथ मिला दिया जाए।

इन सुझावों में नं० (१) का सुझाव बिलोचिस्तान की अधिकांश जनता के मनोनुकूल है, इसमें सन्देह नहीं। भारत, अँगरेजी राज्य के गत डेढ़ सौ वर्षों से और उससे पूर्व अफगानों के शासनकाल में भी, वे लोग एक साथ रहते आए हैं। पर इसमें एक बहुत बड़ा दोष है और वह यह है कि वर्त्तमान बिलोचिस्तान आर्थिक दृष्टि से बहुत पिछड़ा हुआ देश है। यहाँ तक कि उसे वर्त्तमान काल में अपना व्यय चलाने के लिए प्रतिवर्ष एक करोड़ रुपए की सहायता केन्द्रीय सरकार से लेनी पड़ती है। इस दशा में यदि प्रान्त अपने शासन-प्रबन्ध को आधुनिक साँचे में ढालना चाहेगा और न्याय, स्वास्थ्य विभाग, उद्योग-धन्धे, कृषि और शिक्षा-विभाग को समयानुरूप उन्नत करना चाहेगा तो उसे कम-से-कम ४ करोड़ रुपए प्रतिवर्ष और चाहिए। १२ लाख की आबादीवाले प्रान्त को प्रतिवर्ष ५ करोड़ रुपए की सहायता देते रहना यूनियन सरकार को स्वीकृत होगा या नहीं, यह कौन कह सकता है। इस अवस्था में प्रान्त को अपनी आय में वृद्धि करने की आवश्यकता पड़ेगी।

बिलोचिस्तान की भूमि में खनिज, पेट्रोल, कोयला, क्रोम, गन्धक आदि भरे पड़े हैं, जिनके-द्वारा प्रान्त की आय में वृद्धि हो सकती है। पर प्रान्त की वर्त्तमान जन-संख्या इसके लिए अपर्याप्त होगी और उस दशा में मजदूर आदि बाहर से लाने पड़ेंगे। कुछ समय बाद वे बाहरी मजदूर अपनी समस्याएँ सामने रक्खेंगे, समान नागरिक अधिकारों की माँगें उपस्थित करेंगे और इस प्रकार बिलोचिस्तान की समस्या भी ब्रह्मा, लङ्का, फिलिस्तीन और दक्षिणी अफ्रीका की समस्या की तरह जटिल बन जाएगी। तीनों बिलोची रियासतों की समस्या इस समय ही उलझन-भरी है, आगे चलकर वह और भी जटिल हो सकती है।

दूसरे सुझाव में सिन्ध के साथ बिलोचिस्तान को मिलाने की बात कही गई है। इससे आर्थिक समस्या बहुत कुछ अंशों में हल हो जाएगी, इसमें सन्देह नहीं, पर संस्कृति और भाषा-सम्बन्धी प्रश्न बहुत झगड़े पैदा कर सकते हैं। सिन्ध के पास अपनी एक भाषा है जो अब तक पर्याप्त विकसित हो चुकी है। उसमें प्रचुर साहित्य है। अदालतों की समस्त कार्यवाही उसी में होती है। समूचे सिन्ध में वही शिक्षा का माध्यम है। क्या अपनी मातृभाषा को भूलकर सिन्धी को ग्रहण करना और उसकी वर्णमाला को सीखना बिलोचियों के लिए सम्भव हो सकेगा? इसके सिवा कुछ बिलोचियों को छोड़कर—जो 'बस्सी' और 'कच्ची' के भूभागों में रहते हैं—शेष बिलोची सभ्यता और संस्कृति की दृष्टि से सिन्धियों से सर्वथा भिन्न प्रकार के हैं। इसके सिवा सिन्धी अपेक्षाकृत अधिक धुनिक भी हैं और शिक्षित भी। वे बिलोचियों से मजदूरों का काम लेंगे, उनसे खेत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जुताएँगे, फावड़े-कुदाल चलवाएँगे और इस प्रकार सदैव अपना अधीनस्थ रक्खेंगे। भारत में नए युग का श्रीगणेश होने जा रहा है तो शोषण के नए-नए तरीके भी निकल सकते हैं। सरकारी काम इने-गिने रहेंगे और उनमें लाभ भी कम रहेगा। अधिक सम्भावना यह है कि सरकारी कामों के लिए शुरू-शुरू में मजदूरों का बहुत बड़ा अभाव रहेगा। उदाहरण के लिए शिक्षा-प्रसार का कार्य लिया जा सकता है। यदि सरकार राष्ट्रीय होती है तो वह सबसे पहले और सबसे अधिक उद्योग शिक्षा की उन्नति के लिए करेगी। वह अल्प काल में ही देश की सम्पूर्ण जनता को शिक्षित बना डालने में कुछ उठा न रक्खेगी। यदि प्रत्येक प्रान्त ने अपने शिक्षणालयों की संख्या दूनी भी कर दी - जो कि बहुत अधिक नहीं होगी - तो उनके लिए पर्याप्त अध्यापक क्या मिल सकेंगे? अस्पतालों, कल-कारखानों और जनोपयोगी अन्य कार्यों के विषय में भी यही कहा जा सकता है। खेती से अधिक मुनाफे की कल्पना भी नहीं की जा सकती। रह गए दो क्षेत्र—व्यापार और उद्योग-धन्धों के, जिनसे मुनाफे की आशा की जा सकती है; इन्हीं क्षेत्रों में आर्थिक शोषण की सम्भावना भी सबसे अधिक है। अब यदि सिन्ध और बिलोचिस्तान की भूमि से कोयला निकालने के लिए एक कम्पनी खड़ी की गई—जिसे उस भूमि से कोयला निकालने का पूर्णाधिकार प्राप्त हुआ और जिसका मूल धन १ करोड़ रुपए हुआ—तो ऐसी कम्पनी में बिलोचिस्तान के निवासी कितने 'शेयर' ले सकेंगे? और कोयला ही क्यों, अन्य खनिज, पेट्रोल, जङ्गली उपजों आदि के लिए भी अनेक कम्पनियाँ खड़ी की जाएँगी। इस वस्तु-स्थिति में अपनी भूमि की उपज से जो आय होगी उससे मजदूरी से अधिक बिलोचियों को और क्या मिलेगा? दूसरी ओर उनके साझीदार—सिन्धी—लाभ का अधिकांश ले जाएँगे।

अब तीसरा सुझाव लीजिए। यदि बिलोचिस्तान को सीमान्त प्रदेश के साथ जोड़ दिया गया तो पठानों को बहुत लाभ होगा। उन लोगों को भी इससे थोड़ा-बहुत लाभ होगा जो अपने को किसी जाति-विशेष का अङ्ग नहीं लगाते हैं। पर वे लोग जो अपने को 'पृथक् जाति' समझते हैं और अपनी भाषा को तथा अपनी संस्कृति को उन्नत बनाने का स्वप्न देख रहे हैं, यह योजना फूटी आँखों न भाएगी। आर्थिक प्रश्न भी किसी-न-किसी रूप में हल हो जाएगा। स्वतन्त्र पठानों के आक्रमण रोकने के लिए ४ करोड़ रुपए वार्षिक व्यय केन्द्रीय सरकार आज तक करती रही है। यदि यही धन केन्द्रीय सरकार भविष्य में पुनर्निर्माण और शिक्षा-प्रसार आदि के लिए व्यय करे तो उसे एक ऐसा सुसङ्गठित, समृद्ध और बलशाली प्रदेश प्राप्त हो जाएगा जो दो वीर जातियों का सम्मिलित प्रान्त होगा और उस सीमान्त पर भारत की बाहरी आक्रमण से रक्षा करने में पूर्ण शक्तिशाली होगा। दोनों की भाषा पश्तो है और संस्कृति भी एक ही है।

बिलोचियों को एकत्र करके एक पृथक् प्रान्त के निर्माण करने का पाँचवाँ सुझाव विशेष उपयोगी नहीं दिखाई दे रहा है। बिलोचियों में से जो जहाँ बस गए हैं वे उसी प्रान्त की भाषा बोलने लगे हैं और वहीं की संस्कृति को उन्होंने अपना लिया है। उन्हें फिर से नई बातों की ओर ले आना एक नया झगड़ा खड़ा करना है, जिसे बिलोची भी पसन्द नहीं करेंगे। फिर इससे उन खत्रियों के स्वार्थों पर भी आघात पहुँचेगा जिनकी वहाँ जमींदारियाँ आदि हैं और जो कई शताब्दियों से पीढ़ी-दर-पीढ़ी वहाँ रह रहे हैं। उनकी क्षति-पूर्ति करना कठिन होगा। बिलोची जाति केवल भारत में हो, तो उसे एकत्र करके एक स्वतन्त्र प्रान्त निर्माण करने की बात भी उठाई जाए। वह तो ईरान, अफगानिस्तान, सीमान्त, सिन्ध, पञ्जाब और बिलोचिस्तान में फैली हुई है। उनमें इस प्रकार का कोई आन्दोलन भी अब तक नहीं है। आगे की भगवान् जाने। सिन्ध और पञ्जाब के मुस्लिम बहुमतवाले प्रान्त भी यह नहीं चाहेंगे कि बिलोचियों के रूप में उनकी मुस्लिम आबादी का एक भाग हटा लिया जाए और उनका जातिगत अनुपात बिगड़ जाए।

इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए उचित यही प्रतीत होता है कि बिलोची युवक जनता और नेता प्रान्तों के वर्गीकरण के समय बिलोचिस्तान को सीमा प्रान्त से मिलाने की माँग उपस्थित करें और इस प्रकार दो सशक्त, समान संस्कृति और एक ही भाषा बोलनेवालों का एक ऐसा सङ्गठन बना लें जो स्वतन्त्र भारत का सुयोग्य रक्षक और प्रहरी सिद्ध हो सके।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आक्रमण का षड्यन्त्र

डाक्टर एस० सी० लेले

अखिल ज्ञात संसार में भयप्रद उथल-पुथल करने के पश्चात् जो अमानुषीय महायुद्ध स्थगित हुआ, उसका भरतवाक्य होने के पहले विजयी राष्ट्र, एक नए अतिभयङ्कर विश्वयुद्ध की ओर अतीव शीघ्रतापूर्वक बढ़ रहे हैं। सन् १९३९ के सर्वंकष व संहारकारी युद्ध में योरपीय युद्धरत राष्ट्रों में से जर्मनी व इटली का सत्यानाश हुआ; आधुनिक जर्मनी व इटली के निर्माणकर्ता हर हिटलर व सिनोर मुसोलिनी की पूर्णाहुति इस भयप्रद नरमेध के कुण्ड में डाली गई; योरप के अन्य छोटे-मोटे राष्ट्र भी उद्ध्वस्त हो गए। लक्षावधि मानवों की हत्या करने के बाद स्थगित होनेवाले इस महायुद्ध ने, रूस को योरप में सर्वोच्च स्थान दे दिया; और योरप के सारे राष्ट्र—एक-दो अपवाद छोड़कर—रूस के अङ्कित-से हो गए। जर्मनी व इटली के हारने से रूसी भालू को रोकनेवाला कोई राष्ट्र अब नहीं रहा। अतः योरप की भूमि रूसी भालू के सञ्चार के लिए सम्पूर्णतया मुक्त व भयरहित हो गई है। प्रशान्त-सागर की ओर भी वर्तमान समय में रूसी साम्राज्य का कोई शत्रु बाकी नहीं रहा। कोरिया की भूमि का कुछ अंश अमेरिकन सेना के हाथ में है; और अधिकांश रूसी सेना-द्वारा व्याप्त है। अमेरिका व जापान के युद्ध में जापान भस्मीभूत हुआ; वहाँ की भूमि आजकल अमेरिका के सैनिकों-द्वारा व्याप्त हो चुकी है। जापान के नष्ट हो जाने से रूसी साम्राज्य की पूर्व-सीमा अब निर्भय व सम्पूर्ण-तया सुरक्षित हो गई है। अकेला अमेरिका रूस का विरोध नहीं कर सकता; अकेला इँग्लैंड भी इस योग्य नहीं रहा है। अतः विश्वसाम्राज्य का देदीप्यमान सिंहासन अब रूस की कक्षा में आ चुका है। और रूसी भालू उस सिंहासन पर अपना अधिकार जमाने के लिए दृढ़तापूर्वक प्रयत्न कर रहा है; उस ओर बढ़ भी रहा है।

कोटि भास्कर के तेज-समान चमकनेवाला विश्वसाम्राज्य का सिंहासन व जर्मनी इटली को पराभूत करनेवाला बलिष्ठ रूसी भालू, इनमें कुछ अन्तर अब भी विद्यमान है; एक छलाँग मारकर उस सिंहासन पर आरूढ़ होने की इच्छा से वह बलिष्ठ तथा आक्रमणशील भालू तैयारी भी कर रहा है। यदि रूस-जर्मन-युद्ध में रूस की अपरिमित हानि न होती, व जर्मनी का सन् १९४१-४२ में ही पराभव होता तो अब तक विश्वसाम्राज्य का सिंहासन रूसी भालू को प्राप्त हो चुका होता। किन्तु भवितव्यता कुछ निराली-सी मालूम होती है। अनायास, वा बिना भीषण युद्ध विश्वसाम्राज्य का तेजस्वी मुकुट तथा रत्नमय सिंहासन, रूस को नहीं मिल सकता। विश्वसाम्राज्य का हिरण्यमय सिंहासन व साहसी रूसी भालू—इनके बीच में सतर्क सुदृढ़ तथा कूटनीति-निपुण "इँग्लिश-बुलडॉग" सावधानतया खड़ा हो गया है। इँग्लैंड को बचानेवाला अमेरिका ब्रिटिश-बुलडॉग की पीठ पर हाथ रखकर उसका उत्साह बढ़ा रहा है तथा उसको चेतावनी भी देता है। इस सुदृढ़ व दीर्घद्वेषी इँग्लिश बुलडॉग ने ऐतिहासिक काल में योरप में—पश्चिमी योरप में व तुर्किस्तान में घुसनेवाले रूसी भालू को सफलतापूर्वक रोका भी था। इस कार्य के लिए इँग्लैंड ने ऑस्ट्रियन साम्राज्य व खलीफा का साम्राज्य इनको अपनाया था; उनकी आड़ में इँग्लैंड ने अपनी सेना भेजकर इस रूसी भालू को यथेष्ट पीटा भी था और पिटवाया भी था। 'रूसी भालू' और "इँग्लिश बुलडॉग" इनका पारस्परिक वैरभाव दीर्घकालीन व सनातन है। "क्रिमियन युद्ध" इस सनातन वैर-नाटक का एक महत्त्वपूर्ण व चिरस्मरणीय प्रसङ्ग है। चालाक अँगरेजों ने शीघ्रातिशीघ्र उस युद्ध को समाप्त करके अपना साम्राज्य बचा लिया। भारतवर्ष में जिन्होंने सन् १८५७ में स्वतन्त्रता का भीषण युद्ध शुरू किया व करवाया था, उनके राजदूत इँग्लैंड गए थे। कुस्तुन्तुनिया में भारतीय राजदूतों की रूसी राजदूत से भेंट हुई थी और रूसी राजदूत ने भारतीय स्वतन्त्रता के युद्ध में सक्रिय सहायता देने का अभिवचन भी दिया था। भारत और रूस की इस मित्रता के कार्यान्वित होने के पहले अँगरेजों ने—टर्की के खलीफा के साथ मित्रता कर ली और क्रिमियन युद्ध छेड़कर रूस को सन्धि करने के लिए विवश कर दिया। इस प्रकार अपना साम्राज्य बचा लिया। क्रिमियन युद्ध में अँगरेजों व मुसलमानों की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मित्रता के बीज बोए गए और वर्तमान समय में उन बोए हुए बीजों के फल 'अरब-लीग', 'मुस्लिमलीग' व 'पाकिस्तान' के रूप में ब्रिटेन को मिले हैं। ब्रिटेन का साम्राज्य सुरक्षित बनाने के लिए अरबों तथा मुसलमानों ने यथाशक्ति साहाय्य भी दिया है। अस्तु।

'क्रिमियन युद्ध' इँग्लैंड ने रूस को रोकने के लिए जान-बूझकर छेड़ा था। इस युद्ध को छेड़ने का उद्देश था, रूस को भूमध्य-सागर की ओर बढ़ने से रोकना। यह उद्देश सफल भी हुआ। क्रिमियन युद्ध में रूस पीटा गया; अँगरेजों का पोषित तुर्किस्तान का खलीफा व उसका पतनशील व प्रतिगामी साम्राज्य बच गया; भूमध्यसागर यथापूर्व इँग्लिश अधिकार में रहा और एशिया-स्थित इँग्लिश साम्राज्य ज्यों का त्यों बना रहा।

क्रिमियन युद्ध में हार होने के फल-स्वरूप रूस जागतिक स्पर्धाक्षेत्र में पीछे पड़ गया और उसकी आकांक्षाओं पर पानी पड़ गया। इस पराभव ने रूस की राष्ट्रीय आत्मा को अत्यधिक दुःख दिया। यह पराभव-शल्य रूस की राष्ट्रीय आत्मा को वर्त्तमान समय में भी पीड़ा दे रहा है। उस पराभव का यथोचित बदला लेने की इच्छा ९० वर्ष व्यतीत होने के बाद भी बिलकुल ताजी है। इतना ही नहीं, उस भावना की तीव्रता और भी प्रबल हो चुकी है। 'बदला लेने' की भावना का संवर्धन करनेवाली प्रतिहिंसक व तामसी वृत्ति रूसी राष्ट्र के अङ्ग-प्रत्यङ्ग में भरी है। रूस का यह एक राष्ट्रीय स्वभाव-विशेष है। रूस का वर्त्तमान खाकी गणवेशधारी जार जोसेफ स्टेलिन इस राष्ट्रीय स्वभाव-विशेष का मूर्तिमान् प्रतीक है।

He (Stalin) is completely dominated by vindictive passion. He will lie on back and wait, ten, twenty, thirty years, secretly plotting to achieve an exquisitely appropriate revenge upon an enemy, and, when everything is ready he will spring. Believe me, I am not telling fairy stories, I have lived with him, roamed with him, camped with on the battle field. He is the most vindictive man on earth.*

स्टेलिन का यह शब्द-चित्र—रशियन राष्ट्रीय आत्मा का शब्द-चित्र—स्टेलिन के एक समय के मित्र लिओनिड पेट्रोव्हिच सेरेब्रि आकाव ने खींचा है। इस वर्णन का प्रत्येक अक्षर सत्यता से परिपूर्ण है। स्टेलिन का जीवन-चरित्र इस बात की गवाही देने के लिए पर्याप्त है।

१९वीं शताब्दी से लेकर आज पर्यन्त ब्रिटेन ही एक ऐसा राष्ट्र है कि जो सदैव रूस की महत्त्वाकांक्षाओं का घोर विरोधी रहा है। इस कार्य में कुछ अंश तक इँग्लैंड को सफलता भी मिली है। रूस को क्षीण करने की कार्यवाही इँग्लैंड प्रारम्भ से ही करता आ रहा है। सन् १९१४-१८ के योरपीय युद्ध में भी मित्रराष्ट्रों-द्वारा, विशेषतया इँग्लैंड द्वारा, रूस को यथोचित सहायता नहीं मिली थी। इतना ही नहीं, किन्तु क्रान्तिवादी दल के षड्यन्त्र का भय दिखाकर जर्मनी पर आक्रमण करने के लिए इँग्लैंड-द्वारा रूस को बाध्य कर दिया गया था। रूसी सेना ने कैसर की सेना पर आक्रमण व प्रत्याक्रमण किए; इन रूसी आक्रमण-प्रत्याक्रमणों से पश्चिमी योरप पर होनेवाले जर्मन आक्रमण कमजोर हो गए। फल-स्वरूप फ्रेंच तथा इँग्लिश सेनाएँ बच गईं। किन्तु जार के साम्राज्य का सर्वनाश हो गया और सुप्रसिद्ध 'रक्तक्रान्ति' तैयार हो गई। इस क्रान्ति को प्रारम्भिक अवस्था में ही नष्ट करने की भरसक चेष्टा इँग्लैंड ने की। इँग्लैंड व फ्रांस की संयुक्त सेनाएँ कृष्ण सागर में घुसीं और रूसी भूमि पर अधिकार जमाया गया। रशियन क्रान्तिवादियों की 'लाल सेना' स्वसंरक्षणार्थ आगे बढ़ी। युद्ध हुआ; अन्त में मित्रराष्ट्रों की हार हुई व इँग्लैंड-फ्रांस की सेनाएँ वापस बुला ली गईं। समाजवादी रूस के साथ मित्रराष्ट्रों को सम्मानपूर्वक सन्धि करनी पड़ी व साम्यवादी दल के शासन को—लेनिन की सरकार को—मान्यता भी देनी पड़ी। यह शल्य अँगरेजों को अस्वस्थ करता रहा; अतः ऊपर लिखी सन्धि होने के पश्चात् राजनीतिक दाँव-पेंचों का युद्ध शुरू हुआ।

सन् १९१४-१८ के योरपीय युद्ध में रूस में जिस क्रान्ति का जन्म हुआ वह क्रान्ति 'रक्तक्रान्ति' नाम से विश्वविख्यात

* स्टेलिन में बदला लेने की भावना बहुत अधिक है। अपने शत्रु से ठीक-ठीक बदला लेने के लिए वह दस, बीस, तीस साल तक बैठा-बैठा गुप्त योजनाएँ बनाता रहेगा और प्रतीक्षा करता रहेगा और जब पूरी तैयारी हो जाएगी, वह आक्रमण कर बैठेगा। विश्वास रक्खो कि मैं कोई कहानी नहीं कह रहा हूँ। मैं उसके साथ रहा हूँ, उसके साथ घूमा-फिरा हूँ, उसके साथ युद्धक्षेत्रों के पड़ावों में समय व्यतीत किया है। बदला लेने की भावनावाला व्यक्ति उससे बड़ा संसार में दूसरा नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। पूँजीपतियों की दृष्टि से अत्यन्त भयप्रद यह क्रान्ति योरप में न फैल जाए, इसके लिए, जिन पूँजीपतियों ने सन् १९१४-१८ का युद्ध तैयार किया था, उन्होंने उचित प्रबन्ध भी किया। इस रूसी क्रान्ति को रोकने के उद्देश्य से रूसी साम्राज्य की पश्चिमी सीमा पर, फिनलैंड, पोलैंड, लटेविया, एस्थोनिया, जेकोस्लोवाकिया आदि राष्ट्रों की एक शृङ्खला निर्माण की गई। पूजीपति राष्ट्रों की पूँजी उपर्युक्त राष्ट्रों में 'राष्ट्रसंवर्धनार्थ' ऋण के रूप में लाई गई। इस पराई पूँजी के बल पर राष्ट्रों का सङ्गठन किया गया। ऐसे सङ्गठित राष्ट्रों में पोलैंड अग्रसर था। सन् १९१४-१८ का युद्ध समाप्त होते ही इँग्लिश पूँजी द्वारा सङ्गठित पोलैंड ने रूस पर आक्रमण किया; रूस की सेना भाग गई। प्रसिद्ध रूसी नगर "कीव" पोलिश सेना के हाथ आ गया। फिर आक्रमणशील पोलिश सेना यूक्रेन में घुसने लगी। इस आक्रमणकारी पोलिश सेना को मार भगा देने का विकट कार्य किया मार्शल तुखाचेव्हस्की ने। मार्शल तुखाचेव्हस्की की विजयी सेना, पोलिश-सेना का पीछा करते-करते पश्चिमी योरप के पूर्व-द्वार पर—वार्सा नगर पर—आ धमकी। दूसरा एक रशियन सैन्य-विभाग "लौ" नामक पोलिश नगर पर आक्रमण कर रहा था। रशियन सेना के इस विभाग का नेतृत्व मार्शल बुडेनी व मार्शल व्हारोशिलाव करते थे व स्टेलिन थे उस सेना-विभाग के "पोलिटिकल कमिसार"। "लौ" नगर-स्थित पोलिश सेना बलवान् थी; खन्दकों के आश्रय से वह प्रतिकार कर रही थी। इस सेना को अग्निवर्षा की सहायता फ्रेंच सेना में का एक तोप विभाग करता था। युद्ध का सूत्र-सञ्चालन तथा नेतृत्व विश्वविख्यात सेनापति जनरल वेगाँ करते थे। विमानदल का एक बलिष्ट विभाग उस लौ स्थित पोलिश सेना को यथेष्ट सहायता देता था। रूसी सेना के पास विमानदल का अभाव था। अश्वदल अच्छा था; किन्तु खन्दक, तोप तथा विमान इन तीन आधुनिक साधनों के विरुद्ध उसका प्रभाव पड़ना असम्भव था। उक्त युद्ध में रूसी सेना पिट गई। पोलैंड का अन्तर्गत संरक्षण व व्यवस्था तथा रूसी गुप्तचरों को पकड़ना व उनके षड्यन्त्रों का पता लगाना आदि महत्त्वपूर्ण कार्यों का भार सुप्रसिद्ध 'अलाइड ब्यूरो' को सौंपा गया। इस 'अलाइड ब्यूरो' के डी० १३, ग्लोरिया, के १४ व हेर सूरिशेक" इन छद्म नामों से परिचित अन्ताराष्ट्रीय कीर्ति के गुप्तचरों ने पोलैंड के सर्वेसर्वा मार्शल पिलसुडस्की को बड़े महत्त्व की सहायता दी। रूसी गुप्तचरों ने मार्शल पिलसुडस्की की हत्या करने का एक षड्यन्त्र रचा था। उपर्युक्त गुप्तचरों ने मार्शल पिलसुडस्की की साहसपूर्वक रक्षा की तथा रशियन पिशाचगणों के अनेक भयानक षड्यन्त्र तोड़ दिए। व मार्शल पिलसुडस्की के विजय का पथ निष्कण्टक किया।

वार्सा नगर को जीतने की इच्छा से मार्शल तुखाचेव्हस्की अपनी सेना तैयार कर रहा था। सामने से तथा दाहिनी ओर से आनेवाले पोलिश आक्रमण को रोकने की व उस पर प्रत्याक्रमण करने की सारी व्यवस्था मार्शल तुखाचेव्हस्कीने सुचारु रूप से की थी। बाईं ओर से होनेवाले सम्भवनीय पोलिश आक्रमण को रोकने के लिए मार्शल तुखाचेव्हस्की ने, मार्शल बुडेनी तथा व्होरोशिलाव व कमिसार स्टेलिन को उचित सूचनाएँ तथा आज्ञाएँ दी थीं। 'लौ' नगर को छोड़कर लूब्लिन की ओर बढ़ने की स्पष्ट आज्ञा वरिष्ठ सेनापति मार्शल तुखाचेव्हस्की ने दी थी। उस आज्ञा की उपेक्षा स्टेलिन व उसके दोनों सहकारियों ने की। इसका परिणाम यह हुआ कि रूसी मर्मस्थान पर मार्शल पिलसुडस्की ने भयानक आक्रमण किया और रूसी सेना को मार भगाया।

इस क्रान्तिकारी लड़ाई में पराजय का सारा उत्तर-दायित्व स्टालिन पर था और मार्शल तुखाचेव्हस्की ने अपनी पुस्तक में स्टेलिन की कड़ी आलोचना की थी। दीर्घद्वेषी स्टेलिन ने समय आने पर बदला लिया। मार्शल तुखाचेव्हस्की की स्टेलिन ने हत्या करा दी।

रूसी सेना को मार भगानेवाले मार्शल पिलसुडस्की ने बलवान् पोलैंड का निर्माण किया। इस सङ्गठन कार्य में इँग्लैंड ने अधिक-से-अधिक धन दिया। वर्खस्तवासी चेम्बरलेन महोदय की पूँजी पोलैंड में फँसी थी और जर्मन लोगों का कहना है कि उस पूँजी को बचाने के लिए इँग्लैंड ने यह भयानक युद्ध छेड़ दिया।

वार्सा के रणक्षेत्र में रूसी सेना को पराभूत करने के अनन्तर मार्शल पिलसुडस्की ने रूसी भालू को रोकने की इच्छा से, बालटिक सागर से लेकर कृष्ण सागर पर्यन्त के प्रदेश के छोटे-छोटे राष्ट्रों का, पोलैंड के नेतृत्व में—वास्तव में ब्रिटिश पूँजीपतियों के नेतृत्व में—एक बलिष्ठ सङ्घ-राज्य (फेडरेशन) बनाने की चेष्टा की। परन्तु यह योजना कार्यान्वित होने के पूर्व, मार्शल पिलसुडस्की की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मृत्यु हो गई। पिलसुडस्की के पश्चात् पोलैंड का शासन-सूत्र जिन सज्जनों के हाथ में आया, उनमें पिलसुडस्की का-सा साहस, योग्यता तथा राजनीतिक दूर दृष्टि न थी; अतः पिलसुडस्की की योजना कार्यान्वित न हो सकी। अपितु पोलैंड राजनीतिक फन्दे में फँस गया, व अन्त में उसका सत्यानाश हो गया। वर्तमान समय में, बाल्टिक सागर से लेकर कृष्ण सागर पर्यन्त के प्रदेश में, आज जो राष्ट्र विद्यमान हैं, वे सब के सब रूस के प्रभाव में हो गए हैं; वहाँ रूस की विजयी सेना शिविर डाले पड़ी है; और पूरा योरप खण्ड रूसी भालू के सञ्चार के लिए सम्पूर्णतः मुक्त हो गया है। यही नहीं, योरप की भूमि पर रूसी भालू का अनिरुद्ध सञ्चार शुरू भी हो चुका है। बालकन राष्ट्रों में से ग्रीस को छोड़कर बाकी के सारे राष्ट्र आज रशियन सेना से आक्रमित (occupied) हैं। डेन्मार्क, हालैंड, बेलजियम व इटली में शासन-सूत्र कम्यूनिस्टों के हाथ में आ चुके हैं। फ्रांस में भी अँगरेजों का दोस्त जनरल डी गाल पीछे हट गया है। जिन्होंने १९४० में फ्रांस के साथ विश्वासघात किया था, अपने राष्ट्र का पराभव होने के लिए आवश्यक षड्यन्त्र किए थे व फ्रेंच सेना को देशद्रोह करने के लिए बाध्य किया था, वे कम्यूनिस्ट—जिनमें मारिस थोरे जैसे देशद्रोही-सम्मिलित हैं—फ्रांस के शासक बनकर भूतनाथ स्टेलिन के अग्रगामी दल का कार्य भली-भाँति कर रहे हैं। ऐबेरियन प्रायद्वीप में जनरल फ्रैंको व डा० सालाझार की सत्ता अबाधित रूप से शासन चला रही है। जनरल फ्रैंको के अतिरिक्त पश्चिमी योरप में रूस का विरोध करनेवाला दूसरा शासक विद्यमान नहीं है। इस रूस-विरोधी स्पेन को नष्ट करने के उद्योग में आजकल "ओगप्यू" (रूसी गुप्तचर विभाग के पिशाचगण,तथा उनको सर्व प्रकार का साहाय्य करनेवाले फ्रेंच कम्यूनिस्ट पूर्ण रूप से व्यस्त हैं।

जनरल फ्रैंको के रूस-विरोधी स्पेन को समाप्त करने का यह षड्यन्त्र नया नहीं; इस षड यन्त्र का सूत्रपात स्पेनिश गृह-युद्ध के समय में हो चुका है। स्पेनिश गृह-युद्ध में, जनता-विरोधी कम्यूनिस्ट दल को सहायता देने के निमित्त, स्टेलिन ने अपनी सेना तथा सेनापति भेजकर, जर्मन युद्धतन्त्र अपनाने का यशस्वी प्रयत्न किया। इस महत्त्वपूर्ण प्रयत्न के साथ-साथ स्टेलिन ने अपने दूतों के द्वारा स्पेनिश अराजक दल तथा ट्राटस्की को माननेवाला दल, इन दोनों को नष्ट करने का कार्य कर लिया। स्पेन में स्पेनिश गृहयुद्ध के निमित्त अराजक दल व ट्राटस्की-दल का सत्र किया गया। इस मनुष्य-सत्र के सम्बन्ध में गवाही देने के लिए 'प्रवदा' की निम्नलिखित पंक्तियाँ पर्याप्त हैं :—

"The purge in Catalonia already begun will be conducted with same energy, with which it was conducted in Soviet Russia", (I was Stalin's Agent Page. 121)

ट्राटस्की-दल तथा अराजक दल के साथ किस प्रकार बर्ताव करना चाहिए, इस बात की सूचना स्टेलिन ने निम्नलिखित शब्दों में अपने दूतों को तथा आगप्यू के पिशाचगणों को दी थी। स्टेलिन के महत्त्वपूर्ण शब्द इस प्रकार हैं :—

"And as far anarchists and Trotskyists even though they are anti-fascist soldiers, they are our enemies, they are counter revolutionists, and we have to root them out." (Ibid page 120)

स्पेन को अपना उपनिवेश बनाने के दृढ़ निश्चय से स्टेलिन के गण उद्योग करते थे। मास्को के इस भूतनाथ ने अपने भूत-पिशाचगणों को उस समय निम्नलिखित महत्त्वपूर्ण आदेश दिया था। स्टेलिन के शब्द इस प्रकार हैं :—

"After all it is our Spain, now part of Soviet front. We must make solid for us (Ibid p. 120)

और स्टेलिन के उपर्युक्त आदेशानुसार, स्पेन को रूसी उपनिवेश बनाने की इच्छा से ओगप्यू के पिशाचगणों ने अत्यन्त भयङ्कर तथा अमानुष कर्म किए। इस समय स्टेलिन का कूटनीति-निपुण मस्तिष्क जिस बात का सदैव विचार करता था, उसकी परिस्फुटता स्टेलिन के एक राजनीति-निपुण दूत व सहकारी क्रिव्हित्स्की ने अत्यन्त स्पष्टतया की है। यह क्रिव्हित्स्की, पश्चिम योरप में— विशेषतः डेनमार्क, हालैंड, फ्रांस व ऑस्ट्रिया हंगेरी में जो रूसी गुप्तचर काम करते थे, उनका सञ्चालन व मार्ग-दर्शन करने का अतिविकट व महत्त्वपूर्ण कार्य करता था। यह विकट कार्य उसने उत्तमतया किया भी था। स्टेलिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की सत्तालोलुप, साम्राज्यवादी, मानवता-विरोधी नीति तथा मित्रसत्रादि घृणास्पद कार्य आदि देखकर, मानव-मित्र क्रिव्हित्स्की का भावुक हृदय दहल उठा; उसने मित्रद्रोही व खाकी गणवेषधारी स्टेलिन की नौकरी की शृङ्खला तोड़ दी; व स्वतन्त्र जीवन व्यतीत करने की इच्छा से यह योरप छोड़कर अमेरिका चला गया। स्टेलिन के अनेक घृणास्पद कार्यों की पोल उसने "I was Stalin's Agent" नामक पुस्तक में खोली है। स्टेलिन ने जो अनेक पापकर्म व घृणास्पद कार्य किए हैं, उनका सत्य साधार समग्र वृत्तान्त उपर्युक्त पुस्तक में दिया गया है; उस सर्वमान्य पुस्तक में से कुछ अवतरण इस लेख में उधृत किए हैं।

क्रिव्हित्स्की की पुस्तक प्रसिद्ध होते ही भूतनाथ स्टेलिन तथा उसके भूतगण चिढ़ गए। स्टेलिन के आदेशानुसार ऑगप्यूने क्रिव्हित्स्की की हत्या करने के लिए कुछ पिशाच नियुक्त किए। इन पिशाचगणों ने अमेरिका में जाकर क्रिव्हित्स्की की हत्या की। और हिंसक स्टेलिन ने इस प्रकार बदला ले लिया।

क्रिव्हित्स्की की हत्या करने के बाद उस घृणास्पद कृत्य को छिपाने का भरसक प्रयत्न रूस-द्वारा किया गया। संसार के अधिकांश प्रगतिशील तथा कम्यूनिस्ट वृत्तपत्रों में "क्रिव्हित्स्की की आत्महत्या का असत्य वृत्तान्त" प्रसिद्ध करवाया गया था। कोमिंटर्न ने भी इस असत्य समाचार को प्रसूत करने की अधिक-से-अधिक चेष्टा की।

स्पेन-सम्बन्धी स्टेलिन की आन्तरिक इच्छा का भण्डाफोड़ क्रिव्हित्स्कीने अपनी पुस्तक में इन शब्दों द्वारा किया है :—"Stalin had consolidated his success in the plan to make Spain a depen. dancy of the Kremlin and was ready for another push forward" (Ibid p. 126) परन्तु स्पेन को अपना उपनिवेश बनाने की स्टेलिन की इच्छा परिपूर्ण न हो सकी। स्पेनिश गृहयुद्ध के समय हर हिटलर तथा मुसोलिनी सामर्थ्य-संपन्न थे; उन्होंने सेनापति फ्रेंको की अधिक-से-अधिक सहायता की व स्पेनिश कम्यूनिस्ट व उनकी सहायक रूसी सेना की रीढ़ तोड़ डाली। अतः स्पेन में स्टेलिन का साम्राज्य स्थापित न हो सका। परन्तु वर्तमान समय की अवस्था अत्यन्त भिन्न है। स्टेलिन ने अपने अपमान का बदला पूर्णरूपेण लिया है। सेनापति फ्रेंको के मित्र हर हिटलर तथा मुसोलिनी आज इस लोक में नहीं हैं। उन दोनों राष्ट्र-पुरुषों को उनके राष्ट्र सहित नष्ट करनेवाला भयानक रूसी भालू सन्तप्त होकर स्पेन को फाड़कर भक्षण करने की इच्छा से, छद्म वेष धारण करके, फ्रेंच कम्यूनिस्ट तथा स्पेनिश कम्यूनिस्टों को साथ लेकर स्पेनिश सीमा की ओर बढ़ रहा है। यही नहीं, स्पेन में घुसने के लिए अत्यधिक प्रयत्न भी कर रहा है।

वर्तमान समय की स्पेनिश सरकार को इँग्लैंड अधिक-से-अधिक सहायता दे सकता है; और दे भी रहा है। अमेरिका भी स्पेन को अपनाने के लिए प्रयत्न कर रहा है। स्पेन में इँग्लैंड की पूँजी लगी है; तथा भूमध्यसागर का पश्चिमद्वार जो अँगरेजों के अधिकार में है, वास्तव में स्पेन का है। यदि स्पेन रूस का अनुयायी बन जाता है, अथवा जनरल फ्रेंको का शासन समाप्त होकर कम्यूनिस्ट शासन हो जाता है, तो वह चीज इँग्लैंड के लिए अधिक हानिकारक हो सकती है। अतः इँग्लैंड स्पेन की रक्षा अवश्यमेव करेगा। वर्तमान समय में इँग्लैंड ने स्पेन की रक्षा करने के विचार से कदम भी उठाना आरम्भ किया है। फ्रांस के साथ गत वर्ष जो व्यापार सम्बन्धी सन्धि हुई थी उसे यथापूर्व चालू रखने के लिए इँगलैंड तैयार नहीं है। और इस सम्बन्ध की सूचना फ्रांस को अत्यन्त कड़े शब्दों में मिल भी चुकी हैं। उधर अमेरिका को भड़काने की चेष्टा स्वयं चर्चिल महोदय ने दृढ़ता-पूर्वक की है। रूस को रोकने के उद्देश्य से युद्ध के अन्तिम काल में प्रधान मन्त्री चर्चिल ने, संसार का तीव्र विरोध तथा कम्यूनिस्ट व समाजवादियों के अपशब्द तथा गालियाँ सहकर ग्रीस में—भूमध्यसागर के पूर्व प्रवेशद्वार में—अपनी उत्तमोत्तम सेना घुसेड़ दी थी, और ग्रीस पर अपना अधिकार जमा लिया था। मिस्र तथा पेलेस्टाईन व सिरिया में आज जो ब्रिटिश सैन्य विद्यमान है उसका कारण कुछ और है। उपर्युक्त देशों का संरक्षण व ब्रिटिश सेना का वहाँ रहना, इन दोनों का एक दूसरे से रत्ती मात्र सम्बन्ध नहीं है। यदि रूस का आक्रमण मध्य पूर्वीय प्रदेश में हो, तो उसको रोकने के एकमात्र उद्देश्य से, उपर्युक्त देशों में ब्रिटिश सेना का सङ्गठन किया गया है। तुर्किस्तान पर रूस का आक्रमण होना अधिक सम्भाव-नीय है। अतः टर्की की सहायता के लिए इँग्लैंड अवश्यमेव अपनी उत्तमोत्तम सेना भेजेगा। यह सेना भेजकर रूसी आक्रमण को रोकने का कार्य सुलभतया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो सकता है—सिरिया, पेलेस्टाईन व मिस्र से। अतः वहाँ ब्रिटिश सेना रक्खी गई है। यहूदियों का बलवा तथा अत्याचार आदि कारण केवल दिखावटी है; पेलेस्टाईन में जिस प्रकार के बलवे तथा आक्रमण हो रहे हैं, वैसे बलवे तथा आक्रमण निर्माण करने का कार्य ब्रिटिश गुप्तचर विभाग सहज ही कर सकता है। जिस कूटनीति निपुण ब्रिटिश इंटेलिजेन्स सर्विस ने, प्रिन्सेस अलेक्ज़िस तथा मेरी आदि ५-६ पण्याङ्गनाओं को भेजकर प्रबल व क्रान्तिवादी वफ्द पक्ष को धूल में मिला दिया था। ऐसा 'कर्तुमन्यथाकर्तुम्' शक्तिशाली ब्रिटिश गुप्तचर-विभाग क्या सामान्य बलवे तथा आक्रमण नहीं निर्माण कर सकता? अस्तु।

रूस के द्वारा जो षड्यन्त्र योरप तथा एशिया में हो रहा है उसका एकमात्र उद्देश्य है विश्व के ऊपर अपना साम्राज्य जमाना। इस साम्राज्य जमाने के लिए, प्रारम्भ में एशिया, योरप, तथा आफ्रिका पर रूस का प्रभुत्व होना अत्यन्त आवश्यक है; अतः उस दिशा से रूस उद्योग कर रहा है। इन उद्योगों में से भविष्यकालीन विश्व-युद्ध उद्भूत हो सकता है। इस प्रकार तीसरा विश्व-युद्ध होना अनिवार्य है। दो परम्परागत शत्रु आमने-सामने खड़े हो गए हैं और सावधानी से युद्ध की तैयारी भी कर रहे हैं। योरप, पश्चिमी एशिया, चीन व कोरिया में भालू के नख के आघात अँगरेजों व अमेरिकनों पर हो चुके हैं। ये प्रहार और बढ़ते ही जाएँगे। आगामी विश्व-युद्ध का क्षेत्र बनने का सम्मान मिलेगा "ग्रीस, बल्गेरिया, टर्की तथा ईरान" आदि देशों को। और इस भूभाग में परकीय सेनाएँ अड्डा जमाए बैठी भी हैं। विश्व-साम्राज्यार्थ होनेवाला यह इँग्लैंड व रूस का २०वीं शताब्दी का भीषण युद्ध, रूसी राजनीति-निपुण नेताओं की गृध्रदृष्टि ने १९वीं शताब्दी में देख लिया था।

"We regard a war between Russia and England in Asia, as a mere question of time"

यह भविष्यवाणी सन् १७९०-९२ में सुप्रसिद्ध रूसी लेखक केटकाव्ह ने की थी। दूसरा एक भविष्य का भेद करनेवाला वाक्य भी केटकाव्ह ने लिख छोड़ा है। केटकाव्ह नित्य कहता था कि, 'बीसवीं शताब्दी हमारी है'। २०वीं शताब्दी के प्रारम्भ के १७ वर्ष छोड़कर अब तक का इतिहास निर्माण करने का कार्य प्रधानतया रूस ने किया है, और आगामी ६० वर्ष का संसार का इतिहास भी रूस निर्माण करेगा, इसमें कोई सन्देह नहीं।

इस आगामी युद्ध की नान्दी व आरम्भ के एक-दो अंक सम्भवतः स्पेनिश रङ्गभूमि पर किए जाएँगे और युद्ध का मध्य भाग व उत्तर भाग सम्पन्न होगा एशिया की रङ्गभूमि पर। इन दोनों क्षेत्रों में रूस निर्भय उद्योग कर रहा है। फिनलैंड व नार्वे में रूस के षड्यन्त्र चल रहे हैं। परन्तु आगामी युद्ध के लिए नार्वे तथा फिनलैंड का महत्त्व नहीं के बराबर है। भविष्य-कालीन युद्ध की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण प्रदेश हैं बलगेरिया से लेकर अफगान की सीमा तक और इस प्रदेश में रूस ने अपना जाल अच्छी तरह से बिछा दिया है। ईरान में अजरबैजेन तथा कुर्दिस्तान को स्वतन्त्र राज्य बनाने का षड्यन्त्र प्रसिद्ध हो चुका है। टुडेह पक्ष ईरान का परीक्षण तथा निरीक्षण रूस के लिए कर रहा है। टर्की के दो प्रान्त अपने को वापस मिलना चाहिए, ऐसा प्रचार मास्को से हो रहा है। जिन दो प्रान्तों के लिए रूस ने आज माँग की है, वे प्रान्त सन् १९१४-१७ के योरपीय युद्ध में टर्की ने हड़प लिए थे। कार्स व अरदजार के दो प्रान्त टर्की में सम्मिलित करने के समय सार्वत्रिक मतगणना का नाटक किया गया था। रूस अब इस सार्वत्रिक मतगणना के नाटक में सिद्धहस्त हो चुका है। अतः सार्वत्रिक मतगणना निर्णय मान्य करने के लिए टर्की तथा टर्की के छिपे दोस्त तैयार नहीं हैं। अपने पड़ोसी राष्ट्रों पर सैनिक आक्रमण करने के पूर्व उन राष्ट्रों का साङ्गोपाङ्ग निरीक्षण-परीक्षण तथा भेद लेना, भेदिए स्थान-स्थान पर नियुक्त करके, उस राष्ट्र के विनाश की पूर्णरूपेण तैयारी करना, आदि कार्यों में रूस सर्वश्रेष्ठ है और था भी। सुप्रसिद्ध लेखक जोसेफ पोपोस्की ने स्पष्टतया कहा है कि :—

"Russian diplomacy is unsurpassed in the art of creating agitation and anarchy amongst neighbours on whom she has designs"
(Rival Powers in Central Asia P. O. Y)

ईरान में इस प्रकार के षड्यन्त्र अत्युच्च बिन्दु पर्यन्त पहुँच चुके हैं। ईरान के वर्तमान शासक-गण रूस के पक्षपाती हैं। ईरान में बखत्यारी जमात के लोग शूर व साहसी हैं; किन्तु वे सब रूस के पक्षपाती हैं। ईरान के टुडेह पक्ष का सञ्चालन मास्को से होता है। इस पक्ष ने हाल ही में इस्पहान में अपना केन्द्र स्थापन किया है। आज का ईरान अधिकांश में रूस का अङ्कित हो चुका है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्बल ईरान रूस के साथ युद्ध करने के लिए कदापि तैयार न होगा। ईरान के लिए युद्ध होगा; किन्तु वह युद्ध इँग्लैण्ड व रूस के बीच होगा। अतः इँग्लैण्ड व रूस इसलामी देशों को अपनाने की चेष्टा दृढ़तापूर्वक कर रहे हैं। मुसलमानों को खुश करने के लिए रूस ने समरकन्द की यात्रा पुनश्चे प्रारम्भ की है; तथा मुसलमानों के लिए एक खलीफा भी नियुक्त किया गया है। तुर्कोमन सोविएट का जो राष्ट्रीय ध्वज है उस पर हँसिया-हथौड़ा साथ-साथ "चाँद-सितारे" का मुस्लिम चिह्न अङ्कित किया गया है। अरब लीग को भी आगप्यू के द्वारा यथेष्ट सहायता मिल रही है। मिस्र, पेलेस्टाईन व सिरिया में भी रूसी गुप्तचरों ने अपना जाल बिछा दिया है। पेलेस्टाईन में यहूदियों-द्वारा जो आक्रमण-प्रत्याक्रमण हो रहे हैं, उनके पीछे, सम्भवतः—आग प्यूका सामर्थ्य-सम्पन्न हाथ है। भारतवर्षीय मुसलमानों को भड़काने की चेष्टा जोर से हो रही है। जनाब जिना को एक गुप्त चिट्ठी लिखनेवाले षड्यन्त्री लेखक महोदय ने तो स्पष्ट रूप से निम्नलिखित चेतावनी दी है :—

"A purely Moslem Axis will be established ranging from U. P. to Turkey. Russia two thirds of whose population, are Mahamedans, cannot go against the wishes of Moslems and cannot ignore the best interest of Mohamedans, Now this should be your final and determined decision that you will not accept anything short of Pakistan. When finally things are to shape like this, why shall we destroy *the Schemes of Russia and Mahomedan States fully in agreement with it**.

यह महत्त्वपूर्ण पत्र रूसस्थित अबदुल्ला-द्वारा लिखा गया है। रूस के द्रव्य पर अपनी जीविका चलानेवाले, रूसी की स्थापना की जाएगी। रूस भी—जिसकी आबादी एक तिहाई मुसलमान है—मुसलमानों की इच्छा के प्रतिकूल नहीं जा सकता और मुसलमानों के सर्वोत्तम स्वार्थों की उपेक्षा नहीं कर सकता। अब आपका अन्तिम और दृढ़ निश्चय यही होना चाहिए कि आप पाकिस्तान से कम कुछ भी स्वीकार न करें। जब वस्तुस्थिति अन्ततः इस प्रकार का रूप धारण करने जा रही है तब हम रूस और मुस्लिम राज्यों की इस सम्मत योजना को नष्ट क्यों करें?

कम्यूनिस्ट, मुस्लिम लीग के पाकिस्तान की माँग को पुष्टि देते हैं, इसका आभास अनायास उपर्युक्त पत्र-द्वारा मिलता है। श्री फीरोजखाँ नून आदि की घोषणाओं का अर्थ स्पष्ट करने के लिए उपर्युक्त पत्र पर्याप्त हैं। रूस ने अपने जाल-द्वारा मुसलमानों को उसकाया है। इँग्लैंड भी षड्यन्त्रों के मामले में पीछे नहीं है। अरबस्तान को इँग्लैंड ने पूर्ण रूप से अपनाया है। सुप्रसिद्ध इँग्लिश गुप्तचर 'सेंट जॉन फिल्बी महोदय ने अरबस्तान में अपना अड्डा जमा लिया है। ये महोदय अब मुसलमान भी बन चुके हैं। सुलतान इब्नसऊद से इनकी घनिष्ठ मित्रता है। टर्की को भी अँगरेजों ने उसकाया है। टर्की ने जो युद्ध की धमकी दे रक्खी है उसके पीछे ब्रिटेन का हाथ हो सकता है। अमेरिका भी इँग्लैंड को सहायता देने के निमित्त रणक्षेत्र में उतरने की तैयारी कर रहा है। कोरिया की रक्तरञ्जित भूमि पर रूसी व अमेरिकी सेनाएँ आमने-सामने शिविर डालकर सावधानी से डटी हैं।

इन सब बातों का अर्थ है, विश्वयुद्ध। टर्की ने भी युद्ध की तैयारी की है। अमेरिका ने ऐटम बम बनाने का कार्य धड़ाके से प्रारम्भ कर दिया है। ह्यू डिलेसा नामक डेमोक्रेटिक अमेरिकन सदस्य ने कहा है कि अमेरिका के पास १५०० ऐटम बम हैं तथा और भी बन रहे हैं। इँग्लैंड ने जो पोलिश सेना अपने नेतृत्व में निर्माण की थी, उसको पोलैंड वापस भेजने से इन्कार किया है। इस अनुभवी सेना की संख्या लगभग १॥ लक्ष के ऊपर है। जहाँ कहीं आवश्यकता हो वहाँ इस अनुभवी व शिक्षित सेना को इँग्लैंड भोंक सकता है। ये सारे समीप के भविष्यकाल में होनेवाले भीषणतम विश्वयुद्ध के चिह्न हैं। मुसलमानों में एक कयामत की कल्पना प्रचलित है। और इस कयामत के सम्बन्ध में लोकवार्ता यह है कि यह कयामत इस्लामी काल-गणना के अनुसार चौदहवीं शताब्दी में (मुस्लिम मतानुसार वर्तमान शताब्दी १४ वीं है) होनेवाली है। राजनीतिक बातों से यह मालूम होता है कि भविष्यकालीन विश्वयुद्ध के रूप में यह प्रलय—कयामत—इस्लामी राष्ट्रों पर सवार होनेवाली है। सूचक भविष्य से लाभ उठाने की समयसूचकता तथा राजनीति-निपुणता दिखाना परदास्य-जर्जरित राष्ट्र का प्रथम कर्तव्य है। यदि इस कर्तव्य की पूर्ति हो जाएगी तो सर्व अमृतमय हो जाएगा। मृत्योर्माऽमृतं गमय।

* यू० पी० से लेकर तुर्की तक एक शुद्ध मुस्लिम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फारिनजाइटिस

प्रोफेसर तारा डी० पोतदार, एम० ए०

"मुझसे किसी ने सुबह नहाने को कहा कि फौजदारी हो जाएगी, कहे देता हूँ मैं " बिगड़कर मैंने कहा।

"अरे बेटा, कल दसहरा है, साल भर का दिन!" अम्मा ने अधीनता से कहा।

"साल भर का हो चाहे छः महीने का—मैं नहीं नहाऊँगा, नहीं नहाऊँगा, नहीं नहाऊँगा—मुझे डाक्टर के यहाँ जाना है।"

"अरे तो नहा-धोकर जाना।"

"तुम्हें क्या? कह दिया नहा-धोकर जाना—आठ बजे बुलाया है उसने। बड़ा डाक्टर है। वक्त पर नहीं पहुँचा तो सार्टिफिकेट नहीं मिलेगा—।"

"पर——"

"पर—वर—कुछ नहीं,—" बात काटकर मैंने भी आखिरी अस्त्र फेंका—हिरोशिमा पर एटम बाम्ब—"सुबह मैं उठ नहीं सकता—हाँ हाँ नहीं उठ सकता—तुम्हारे तेल-उबटन में देरी हुई तो नहीं जाऊँगा डाक्टर के यहाँ। फिर बिट्टी भी आ चुकी मायके! रोते रहना मेरी बिट्टी मेरी बिट्टी करके।

"अरे भाई, जो जी आए कर—न लाएगा तो न ला लड़की को—क्या जोर है बिचारी का—पराया धन—भैया-दूज को दो बूद रो लेगी और काम-धन्धे में लग जाएगी अपने।"

मैं खिसक गया। अम्मा अपना पुरान नाइन को सुनाने लगी। नाइन ने भी कान के बड़े-बड़े झुमके हिला-कर 'हाँ मालकिन', 'और का', 'चित''चित', 'राम-राम' के ताल देना शुरू कर दिया।

जाते-जाते कथा का प्रारम्भ सुनाई ही पड़ गया—'ये अँगरेजी पढ़े लड़के × × ×' बुरा हो इस कमबख्त अँगरेजी का—मेरी तो घिग्घी बँध जाती है बड़े साहब के सामने बोलता भी तो—भगवान् बचाए—जाने क्या है! इतनी अँगरेजी मदरसे में पढ़ी, पहली से लेकर मैट्रिक तक—बल्कि ढाई महीने कालिज के भी जोड़ लीजिए, पर मजाल है कभी वह अँगरेजी बोले यह भला आदमी। वाक्य में कभी कर्त्ता गायब तो कभी क्रिया। आधे शब्द तो गले में कुलाटी खा जाते हैं हजरत के—आधों के उच्चारण अलग—आधी देर सिर्फ 'दिस दिस' की आवाज! आदमी 'पार-डन', 'वेग येार पारडन' न कहे तो क्या कहे—उसपर जनाब ओहदा मिल जाता है 'इडिएट' (बेवकूफ) का—और हमारी अम्मा भी—सुरेश ठीक ही कहता है, गुन-गाहक नहीं आजकल कोई।

मुझे तो ऐसा गुस्सा आता है कि बस। दफ्तर के पुलिन्दे जब घर पर काम करने ले आता हूँ तो सच कहता हूँ राग लगाकर रोनेवाले कुत्तों और "बायनट चार्ज" धड़ल्ले से करनेवाले मच्छरों से अच्छी खासी लड़ाई होते-होते बच जाती है। जी चाहता है कि "टियर गैस" छोड़ दूँ। मच्छरों और कुत्तों के आँसुओं से जो "सम-न्दर" बने (अगर शायर के आँसुओं से समन्दर बन सकता है तो इनसे क्यों नहीं?) उसमें तमाम आफिस की फाइलें—और उनके साथ गोरे-अधगोरे साहबों को भी डुबो दूँ। अजी देखिए, जमाना भी क्या आ गया है! सच कहे काम ही नहीं होता। ठीक ठीक वजह बताकर छुट्टी माँगिए—कभी मिल ही नहीं सकती। करना क्या पड़ता है! अच्छे खासे रहो पर बीमारी का बहाना। अपना नहीं तो अपने रिश्तेदारों का। अभी मेरे यहाँ भी कुछ ऐसा ही किस्सा था। बिट्टी को उसकी ससुराल से लाना था। छुट्टी के लिए एक मेडिकल सार्टीफिकेट की जरूरत थी। इतना अच्छा है कि डाक्टर लोग पाप-पुण्य के झगड़ों में नहीं पड़ते। पाँच रुपए में किसी एक बीमारी का नाम इतमीनान से खरीद लिया जा सकता है। और फिर डाक्टर झूठ थोड़े ही बोलते हैं। साढ़े तीन हाथ के शरीर में कुछ-न-कुछ दोष निकल ही आता है। हमारे ही आफिस में देखिए। बड़े साहब की बात छोड़िए—वे तो 'साठा में पाठा' के प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। जरा क्लर्कों की ओर निगाह डालिए। इक्कीस से इकतालिस तक की उम्र के लोग आपको मिलेंगे। चेहरे पर मुर्दनी छाई हुई, किसी का हाजमा खराब तो किसी को नींद न आने की शिकायत। किसी का दिल कमजोर तो किसी को कीड़ी या सफेद कैंचीछाप की इनायत-स्वरूप खाँसी और साँस की शिकायत। किसी की आँखों की रोशनी बिदा माँग रही है तो किसी को...अजी छोड़िए साहब, कहाँ तक बताऊँ। कहीं आप यह न समझ लें कि किसी अस्पताल के कम्पाउंडर से बातचीत कर रहे हैं। भगवान् की दया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है कि मैं हट्टा-कट्टा हूँ; याने मोटा-ताजा नहीं पर रोगराई से दूर। अस्तु।

मुझे काम पर लगे डेढ़ साल ही हुए हैं इसलिए पुराने क्लर्कों से मेल-जोल हो नहीं पाया है। उन लोगों की बातें भी हमेशा 'तरक्की और घर-बार की चिन्ताएँ' इन्हीं विषयों को लेकर होती हैं। मैं इन बातों से घबराता हूँ। इसलिए मेरा दोस्त अब भी सुरेश है जिससे कालेज के दो महीनों में मित्रता हो गई थी। सुरेश प्रथम वर्ष में रोक लिया गया। योग्यता ही कुछ ऐसी थी। उसे परवाह भी नहीं। नित नई शरारतों से अपना और दूसरों का मन बहलाया करता है। उसी के साथ मैं दूसरे दिन डा० बख्शी के यहाँ गया।

डा० बख्शी हमारे शहर के बड़े मशहूर डाक्टर हैं। हजारों की 'प्राकटिस' है—बड़े मिलनसार और हँसमुख। जिससे मेल हो जाए उसकी पाँचों घी में—जिनपर कोप-दृष्टि पड़े उनका साथ देने में भगवान् भी जी चुराए। बड़े-बड़े कांगरेसियों से लेकर ऊँचे-ऊँचे ओहदेदार बाएँ हाथ की मुट्ठी में। सुरेश के यहाँ फैमिली डाक्टर थे। सुरेश को देखते ही बोले—कहो सुरेश, इस साल क्या इरादा है।

"इरादा तो अपना हमेशा अच्छा ही रहता है, डाक्टर साहब! पर बात असल यह है कि हमारे प्रिन्सपल साहब ही कुछ ऐसे प्रसन्न हैं मुझसे—चाहते ही नहीं कि जल्दी कालेज से निकलूँ।"

"लेकिन साहबजादे इस रफ्तार से बढ़ते रहे तो ओवर-एज होते तक कालेज में ही पड़े रहोगे। फिर मिल चुकी सरकारी नौकरी।"

"डाक्टर साहब! नौकरी के लिए कौन पढ़ता है। प्लेटो तो कहता है, 'विद्या का लक्ष्य नौकरी नहीं बल्कि यह है कि हम ऐसी बातें सीखें जिससे हम अपना और दूसरों का जीवन सुखी बना सकें, दूसरों का दुख दूर करें और अपनी भलाई करें'। सुरेश इधर-उधर की गप्पें खूब हाँकता है। डा० साहब भी शायद यह गुण जानते हैं।"

"तभी तुम्हें 'गधों के उद्धार' की धुन समाई है। अच्छा खैर, कैसे आए?"

सार्टीफिकेट लेकर हम लोग चले। रास्ते में सुरेश से मैंने कहा—

"बड़ी बातें छाँट रहे थे। पढ़ाई नौकरी के लिए नहीं होती तो फिर नौकरियों के लिए डिग्री के अड़ङ्गे क्यों लगते हैं?"

"अधिकारियों में अक्ल कम है और क्या! नहीं तो हिन्दुस्तान में अँगरेजी का इतना महत्त्व क्यों रहता?"

मैंने ताव दिलाया—"पर भाई सुनने में बड़ी अच्छी लगती है अँगरेजी।"

"अरे यार नहीं, कौन कहता है। भाषा अच्छी है तो जिसका जी चाहे उसका अध्ययन करे। साहित्य पढ़े। योग्यता हो तो लिखे भी। पर जबरदस्ती क्यों?"

"वो कुछ कालेजों में मातृभाषा माध्यम होने का जिक्र था न यार।"

"अजी हाँ, वर्धा कामर्स कालेज ने योजना निकाली है; १९४७ से प्रारम्भ होने को भी है। पर अच्छी बातों को कम ही अपनाते हैं लोग। राजेन्द्र बाबू ने तो १९१७ में ही इस ओर प्रयास किया था। पर पटना यूनिवर्सिटी में सिर्फ हाईस्कूल तक सुधार हुआ। यही हाल हो रहा है मेरी बैसाखपुत्रवाली योजना का।"

"पूरे घनचक्कर हो तुम.....।"

सुरेश, जैसा मैं ऊपर कह आया हूँ, बड़ा अजब है। कालेज की सोशल गेदरिंग में धोबी का स्वांग रचा और सचमुच एक गधे पर गट्ठर रखकर पण्डाल में पहुँच गया। दो मिनट तक 'एक्सटेमपोर' स्पीच देनी थी। दो की जगह दस मिनिट तक गधों की हिमायत की। प्रेसीडेंट के बार-बार 'बेल' बजाने पर भी 'वन मिनिट मोर' कहकर वहीं डटे रहे। लड़कों के रिंगमास्टर थे ही, उन्होंने भी "बोलने दो—बोलने दो" के नारे लगाए। सुरेश बाबू ने कहा था—

"भाइयो और बहिनो, मध्यप्रान्त में बैसाखपुत्रों की स्थिति अत्यन्त शोचनीय हो रही है। उन पर हम इतना अत्याचार करते हैं, जितना कांग्रेसी सरकारों ने मुसलमानों पर, नाजियों ने यहूदियों पर या बरतानियावालों ने हिन्दुस्तानियों पर भी नहीं किया। दक्षिण अफ्रीका में यूनियन सरकार जो सलूक हम हिन्दुस्तानियों के साथ कर रही है, वही सलूक हम अपने इन 'भाइयों के' साथ करते हैं। इनके गुण तो देखिए—कितने सीधे और सहनशील, कितने ताकतवर और उपयोगी! समाज में इनकी कोई कदर नहीं—अरे गुन म हिरानो गुनगाहक हिरानो है। इन्हें हमने सिर्फ कुम्भकारों और 'वस्त्रशुचिर्भूतिकारों'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को सौंप दिया है। इनकी मेम साहबों का दूध जिसमें नीरो की स्त्री नहाती थी और जो सौन्दर्य का ऐसा रक्षक है कि उसे देख सौन्दर्य का तक्षक अर्थात् बुढ़ापा पास नहीं फटक सकता—आज हम किस काम में लाते हैं? कभी-कभी किसी बच्चे को पिला दिया और बस। अपमान की यह हद कि पिंजरापोल वाले भी इन्हें रखने से इनकार करें। कसाई भी इन्हें न खरीदें। भाइयो, दुनिया में कोई वस्तु बेकार नहीं होती। अन्य देश के लोग एटम बाम्ब जैसी भयानक वस्तु की उपयोगिता को खोजने में नहीं हिचकिचाते। और आप हैं कि इतनी छोटी-सी खोज नहीं कर सकते। इसके उपयोग ढूँढ़िए तथा अपना और उसका दोनों का भला करिए। इस 'माइनारटी' का विचार करिए और इसके हितों को सुरक्षित करने के लिए यदि सम्भव हो सके तो एक पृथक् फेडरेशन स्थापित कीजिए। सोचिए तो, कितने कम खर्च में यह रक्खा जा सकता है। दिन भर काम लीजिए, रात में छोड़ दीजिए; अपना पेट आप भर लेगा। जब ताँगे-रिक्शे इतने महँगे हो गए हैं, पेट्रोल मिलता नहीं, तब इसकी सवारी कितनी आनन्ददायक और सस्ती रहेगी! कहीं दावत में जाना है। मोटर के लिए पेट्रोल नहीं। रिक्शा मिल नहीं रहा। ताँगेवाला दुगुने-चौगुने दाम माँग रहा है। याद कीजिए बैसाखपुत्र को-छाता लगा लीजिए और पीठ पर चढ़कर चले जाइए। एक छोटी-सी रस्सी से घर के सामने बाँध दिया, खाना खाया और फिर वापस। चाल मन्थर। गिरने का डर नहीं। खतरा दिखाई दे तो पैर टेककर उतर जाइए। भाइयो, कहाँ तक फायदे बयान करूँ—"

इसी बीच विद्यार्थियों ने "बैसाखपुत्राधिपति की जय" के नारे लगा दिए सुरेश को रुकना पड़ा। पर तभी से वह गधों का पूरा हिमायती बन गया है। इसी लिए उसके बात निकालते ही मैंने रोक दिया, नहीं तो वह फिर एक लम्बी तकरीर कर जाता।

घर आ गया। मैंने सुरेश से बिदा ली। कोई आठ बजे खाना खाने बैठा ही था कि सुरेश भड़भड़ाते अन्दर पहुँचा।

"नन्हू! अगले सोमवार को बम्हनी चलना पड़ेगा?"

"क्यों?"

"ऐसे ही। काम है जरूरी।"

"पर मुझे छुट्टी कहाँ है?"

"आज का सार्टीफिकेट?"

"वह तो कल देना है। चिट्ठी को लाने जा रहा हूँ न।"

तो वैसे छुट्टी माँग लो अभी। चार-पाँच रोज में लौट आना अगले सोमवार को इस सार्टीफिकेट से काम चला लेना। बड़े बाबू की सिफारिश ले लो। छुट्टी मिल जाएगी।

"लेकिन तारीख?"

"मैं बदलवा दूँगा।"

"पर भलेमानस, काम क्या है?"

"वह कल ही बताऊँगा। शाम की गाड़ी से जाओगे न।"

"हाँ।"

"तो वह सार्टीफिकेट मुझे दे दो, मैं कल तारीख बदलवा लूँगा।"

जल्दी-जल्दी खाना खाकर उठा—सार्टीफिकेट सुरेश को दिया। सुरेश लेकर दरवाजे की ओर लपका। मुझे कुछ याद आया। मैं दौड़ा। पुकारकर पूछा

"सुरेश, एक मिनिट!"

"क्या है?"

"अरे यार, कौन-सी बीमारी का नाम लिखा है उसमें?"

"फारेनजाइटिस—"

"क्या होती है वह?"

सुरेश ने मुसकाकर कहा—"घोंघा हो पूरे, अरे यही हाथ-पाँव में दर्द, इत्यादि।"

बात बनाने का जितना प्रयत्न किया जाय, उतनी ही वह बिगड़ती है। अब यही देखिए न, कांग्रेस और लीग का समझौता करने का जितना प्रयास किया जाता है, उतना ही उनके आपस का फासला बढ़ता है। खैर, हमें क्या परबीती से, आपबीती ही सुनाएँ आपको।

दूसरे रोज तड़के उठते ही बड़े बाबू के यहाँ पहुँचा। सुरेश पर गुस्सा आ रहा था, कुछ अपने ऊपर भी। अगर सार्टीफिकेट होता तो सीधे दरख्वास्त के साथ न भेज देता! बड़े बाबू बिगड़े-दिल आदमी ठहरे कोई मद्रासी सूरत देखकर न मालूम क्यों नागपुरी सन्तरे की याद आ जाती। बड़े साहब तो 'साहबी हिन्दी' बोल भी लेते थे पर ये हजरत 'एल' 'एम' वाली अँगरेजी से ऐसा नाता जोड़े थे जो कभी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में भी न टूटता। पर 'बखत पड़े बाँका और गधे को कहो काका'। इनकी सिफारिश सार्टीफिकेट का काम दे सकती थी, इसलिए सुबह ही सुबह वहाँ जा पहुँचा। बाबू 'इडली काफी' पर हाथ साफ़ कर रहे थे।

"गुडमार्निंग सर—"

"गुडमार्निंग खरे, कैसे आए?"

"यों ही सर, तबियत खराब है, छुट्टी चाहिए।"

"छुट्टी तो—"

"सर, मेरी तबियत बहुत खराब है, फारिनजाइटिस हो गया।"

"क्या?" विस्मयपूर्वक प्रश्न दुहराया गया।

"जी हाँ, फारिनजाइटिस—टाँगे में आया हूँ।" रोनी सूरत बनाकर कराहते हुए कुछ झुक गया मैं।

"क्या होता है तुम्हें?" एक अस्पष्ट-सी स्मितरेखा का आभास दिखाई दिया जैसा बंसी में मछली फँसने पर मछलीमारों के मुँह पर देखा जाता है।

"जी, कमर टूटती है। हाथ-पैर में दर्द है। सिर फटा जाता है।" फटी-फटी आँखों से उसकी ओर निहारने का साहस करते हुए मैंने कहा।

"यह फारिनजाइटिस है, यह तुमसे किसने कहा?"

मैं कुछ सकपकाया—"डाक्टर ने।"

"किस डाक्टर ने?"

मेरी घिग्घी बँधने लगी "हैं एक..."

"देखो खरे, तुम वैसे भी नए आदमी हो। पहले तीन क्लर्क छुट्टी पर गए हैं। आदमियों की कमी है। और तुम झूठ बोल रहे हो।" कालिमा में लालिमा मिलकर नीलिमा-सी झलकने लगी चेहरे पर। फारिनजाइटिस गले की बीमारी है। तुम्हें छुट्टी नहीं मिल सकती। जा सकते हो।"

मुझे काटो तो खून नहीं—'त त' 'प प' कहकर मुड़ गया। बेकार टाँगे के पैसे खर्च हुए। धत्तेरे सुरेश की! अब बिना सार्टीफिकेट के खैर नहीं। क्या-क्या बीमारियाँ हैं और वाह रे उनके नाम। सार्टीफिकेट चाहिए और वह भी एम० बी० बी० एस० का। किसी बैद का क्यों नहीं चलता? पर हुज्जत का समय नहीं था। कुछ अम्माँ की चख-चख का डर और कुछ ताव—मैं छुट्टी लेने पर तुल गया।

भागा सुरेश के होस्टल की ओर। सुना, डाक्टर साहब के यहाँ गया है। सर पर पैर रखकर अस्पताल की ओर दौड़ा। सुरेश कागज डाक्टर की ओर बढ़ा रहा था। मैंने सिनेमा के हीरो की नाईं झपट लिया और घर वापस दौड़ा। सुरेश और डाक्टर मुँह बाए खड़े रह गए। जाते ही मैंने लिखी हुई दरख्वास्त में सार्टीफिकेट चिपकाया और दौड़कर सामनेवाले लेटरबाक्स में लिफाफा डालकर साँस ली।

दोपहर की मोटर से ही रवाना हो गया। सुरेश आया तो कहलवा दिया घर पर नहीं। ९ रोज बाद घर लौटा तो मालूम हुआ कि छुट्टी मंजूर हो गई थी। डाक्टर मिश्रा का सार्टीफिकेट जो था। पर सुरेश शाम को दो-चार दोस्तों सहित आ पहुँचा और 'फारेनजाइटिस स्पेशलिस्ट' के नाम से मेरा नया नामकरण कर दिया।

अब जब-तब मित्रवर्ग "फारेनजाइटिस" के नाम से मुझे चिढ़ाता है और मद्रासी बाबू तो इतना चिढ़ा है कि सुना है उसने तरक्कीवालों की लिस्ट से मेरा नाम ही हटा दिया है।

———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजनीतिक जीवन सम्बन्धी कुछ संस्मरण

[२]

डाक्टर सत्यप्रकाश, डी० एस-सी०

सन् १९२० में महात्मा गांधी के नेतृत्व में इंडियन नेशनल कांग्रेस ने ही नहीं, समस्त देश ने राजनीतिक क्षेत्र में अहिंसात्मक असहयोग के आन्दोलन का प्रयोग किया और यह आन्दोलन सन् १९२२ में वापस ले लिया गया। भारत के राजनीतिक सङ्घर्ष के इतिहास में जहाँ इस आन्दोलन की घटना अमर रहेगी, वहाँ इसके अतिरिक्त और भी ऐसे क्षेत्र हैं जिनकी पृष्ठ-भूमि में भी अनेक राजनीतिक कलाएँ चरितार्थ होती रही हैं। क्योंकि आरम्भ से अब तक मेरा सम्बन्ध आर्य्यसमाज से रहा है, आर्य्यसमाज के राजनीतिक जीवन से भी मैं परिचित रहा हूँ। साधारणतः भारत की राजनीति के इतिहास में इस जीवन की चर्चा नहीं की जाती है, और सामान्य जनता इससे परिचित भी नहीं है, अतः इन संस्मरणों का उल्लेख करना मैं अधिक उचित समझता हूँ। सम्प्रदायवादिता हमारे राजनीति के मार्ग में किस प्रकार उपस्थित हो गई, यदि इसको भी सच्चे रूप से समझना हो, तो आर्यसमाज की राजनीतिक स्थिति की अवहेलना नहीं की जा सकती है। मैं इस बात की उलझन में तो नहीं पड़ना चाहता कि आर्य्यसमाज विशुद्ध धार्मिक संस्था है या राजनीतिक अथवा साम्प्रदायिक। मेरी दृष्टि में तो यह मानव-संस्था है। इस संस्था में हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, योरपवासी सभी सम्मिलित हो सकते हैं, यदि वे समाज के आचार-विचार और नियमोपनियमों से सहमत हों। इस सम्बन्ध में नवम्बर सन् १८८३ के "आर्य्य मैगजीन" में किसी आक्षेप के उत्तर में निम्न पंक्तियाँ छपी थीं—

"Again it is asserted that the Arya Samaj is at present considered a Samaj of the Hindus. Poor fellow, he is not aware that there are also Mohamedan and European gentleman as members of the Samaj..."

मूलतः आर्य्यसमाज हिन्दुओं के जितने निकट था, उतना ही मुसलमानों और ईसाइयों के। पर धीरे-धीरे हिन्दुओं की साम्प्रदायिकता किस प्रकार इसमें बढ़ती गई, इसका इतिहास अलग है, जिसका उल्लेख करना यहाँ उचित नहीं समझता। जिस प्रकार कांग्रेस में सभी लोग सम्मिलित हैं (यद्यपि प्रधान संख्या हिन्दुओं की है), आरम्भ में ह्यूम सदृश अभारतीय भी जिस प्रकार कांग्रेस में थे, उसी प्रकार आर्य्यसमाज भी समस्त मानव-समाज का प्रतिनिधित्व करता था। भारत में अपने ढङ्ग की यह पहली संस्था थी जो सभी सम्प्रदायों की साम्प्रदायिकता और उनके अन्धविश्वास दूर करना चाहती थी। राजनीति भी मानव-विषय है, इस दृष्टि से राज-धर्म की चर्चा भी आर्य्यसमाज का आवश्यक विचारणीय विषय रहा है।

स्वामी दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश के छठे समुल्लास में राजधर्म की चर्चा की है। स्वामी दयानन्द के जीवन-काल की एक घटना है। बनारस में उन्होंने "राज-प्रजा-धर्म" पर कई व्याख्यान दिए। इन व्याख्यानों में से एक व्याख्यान सुनकर, एक अँगरेज अफसर ने यह कहा कि यदि स्वामीजी का यह व्याख्यान सन् १८५७ के विप्लव से पूर्व हुआ होता, तो सम्भवतः देश में विद्रोह होता ही नहीं। सम्भव है, उस व्याख्यान में अँगरेज अफसर ने प्रजाधर्म की चर्चा विशेष रूप से सुनी हो। पर बाद को बनारस के डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट ने स्वामीजी के इन व्याख्यानों पर प्रतिबन्ध लगा दिया। भारत के इतिहास में राजनीतिक व्याख्यानों पर प्रतिबन्ध लगाए जाने का यह पहला उदाहरण है। काशी के मैजिस्ट्रेट को सम्भवतः "राजा का धर्म क्या है" इस विषय के वर्णन में विद्रोह की गन्ध मिली हो। "पायनियर" अखबार ने स्वामीजी के पक्ष में कुछ लिखा। प्रान्तीय सरकार ने काशी के मजिस्ट्रेट को तार भेजा और व्याख्यान पर से प्रतिबन्ध हटा लिया गया।

स्वामी दयानन्द भारतीय सरकार के लिए एक पहेली थे। इस सरकार के अफसर ईसाई थे, अतः पौराणिक धर्म का खण्डन सुनते समय उन्हें सन्तोष होता था। कुछ हिन्दुओं में भी यह भ्रान्ति थी कि स्वामीजी की सरकार के एजेंट हैं, और हिन्दुओं को ईसाई बनाने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहते हैं। पर ईसाई और मुसलमानी मत का खण्डन सुनकर ईसाई भी उद्वेलित होने लगे। सन् १८५७ के देशव्यापी विप्लव में स्वामीजी उदासीन रहे। इतिहास इस विषय पर मौन है कि इस विद्रोह की प्रतिक्रिया स्वामीजी के जीवन पर क्या पड़ी। सम्भवतः यह वह समय रहा होगा जब वे साधुओं के मठों में विचर रहे होंगे, जहाँ पर देशव्यापी आन्दोलन का प्रभाव नहीं पहुँचा होगा। पर बाद को भी कहीं स्वामीजी ने इस आन्दोलन का उल्लेख नहीं किया।

स्वामी दयानन्द ने जिस निःस्पृहता के साथ भारतवर्षीय समस्त साम्प्रदायिक धर्मों की आलोचना की थी, उसका तात्कालिक प्रभाव यह पड़ा कि सभी लोग उनके विरोधी हो गए। उनकी मृत्यु के अनन्तर यह विरोध और बढ़ गया। इसके प्रमाण-स्वरूप हम यह पाते हैं कि सन् १८९९ में सहारनपुर जिले के तितरोन स्थान के कुछ मुसलमानों ने सहारनपुर के ज्वाइंट मजिस्ट्रेट कॉक्स (Cox, J. H.) की कचहरी में लाला चन्द्रभान के विरुद्ध यह अर्जी दी कि इन्हें एक विशेष मकान में समाज के अधिवेशन करने की आज्ञा न दी जाए क्योंकि उस मकान के पड़ोस में मुसलमानों के मकान हैं। पर मुसलमानों की यह अर्जी खारिज हो गई।

मुसलमानों की तो यह साम्प्रदायिक प्रवृत्ति थी ही, उधर कुछ सनातनधर्मियों ने दूसरे प्रकार से विरोध प्रदर्शित किया। सन् १९०२ में मेरे इसी प्रयाग नगर में अलाराम नामक एक व्यक्ति ने स्वामी दयानन्द के विरुद्ध व्याख्यान देने आरम्भ किए। उसने अपशब्दों का प्रयोग तो किया ही, साथ में यह भी कह डाला कि स्वामी दयानन्द और आर्य्यसमाज राजविद्रोही हैं, और सत्यार्थप्रकाश राजविद्रोह के आदेशों से भरा पड़ा है। व्याख्यानों में घृणित अपशब्दों का प्रयोग करने के कारण सरकार ने उसका दफा १०८ में चालान किया। इस मुकदमे के बयान में अलाराम ने यह सिद्ध करना चाहा कि आर्य्यसमाज का सङ्गठन ब्रिटिश सरकार के साथ विद्रोह करने से उद्देश्य से हुआ है। सत्यार्थप्रकाश से अनेक उद्धरण प्रस्तुत किए गए जिनसे यह सिद्ध करने का प्रयास हुआ कि आर्य्यसमाज ब्रिटिश राज्य को भारत से निकालना चाहता है। यह अभियोग भी समाप्त हुआ। धीरे-धीरे इस अभियोग की प्रतिध्वनि अन्य स्थलों से भी आने लगी। ये सब अभियोग जनता के किसी व्यक्ति की आड़ लेकर आरम्भ किए जाते थे, पर इनके अन्दर-ही-अन्दर राज्य के कर्मचारियों का षड्यन्त्र भी रहता था। एक बार एक अँगरेज मजिस्ट्रेट ने आर्य्यसमाज के एक कर्मचारी से यह कह डाला—"It is believed that the Aryas are not loyal and purposely boycott Britisish Officials", अर्थात् आर्य्यसमाजी राजभक्त नहीं हैं और जान बूझकर ब्रिटिश अफसरों के साथ असहयोग करते हैं।

इन्हीं दिनों कांगड़ी (हरिद्वार) में गुरुकुल की स्थापना हुई। समस्त प्राच्य विषयों के साथ-साथ धनुर्वेद की शिक्षा को भी पाठ्य-क्रम में स्थान मिला। गुरुकुल नगर से दूर एकान्त स्थल पर स्थापित किया गया था। फल यह हुआ कि यह कहा जाने लगा कि राजविद्रोह की सामग्री तैयार की जा रही है, और किसी हिंसात्मक आन्दोलन की नींव पड़ रही है। उस समय बिजनौर जिले का कलक्टर फोर्ड (Forde) था और हेवेट इस प्रान्त के लेफ्टेनेंट गवर्नर थे। उन्होंने शान्ति से काम लिया, नहीं तो किंवदन्तियों में गुरुकुल को विद्रोही सिद्ध करने के समुचित प्रयत्न हो रहे थे। महात्मा मुंशीराम को सर जॉन हेवेट ने बुलाया और परिस्थिति समझने का प्रयत्न किया। गुरुकुल से विपदा हट गई।

सर जॉन हेवेट के मन में आर्य्यसमाज के विरुद्ध फिर भी संशय तो बना ही रहा। ये अधिकारीगण कुशल नीतिज्ञ प्रसिद्ध रहे हैं। इनकी ऊपर और भीतर की नीति में सामञ्जस्य ढूँढ़ना बहुधा कठिन हो जाता है। फल स्वरूप पटियाला के देशी राज्य में एक विशेष षड्यन्त्र रचा गया जो आर्य्यसमाज के इतिहास में एक स्मरणीय घटना रहेगी। पटियाला में आर्य्यसमाज का अच्छा सङ्गठन था, और कई आर्य्यसमाजी व्यक्ति पटियाला राज्य के शासन-विभाग में अच्छे पद पर थे। उन लोगों के प्रयास से रियासत में सुधार के अच्छे कार्य आरम्भ हुए। इस समय पटियाला में वारबरटन महोदय का बोलबाला था। वह बुड्ढा व्यक्ति था—७० वर्ष से भी अधिक की उम्र का। लोग उसके व्यवहार से तङ्ग आ चुके थे। यह व्यक्ति आर्य्यसमाजियों के पीछे पड़ गया। सरकार तो ऐसा अवसर चाहती ही थी कि आर्यसमाज की राष्ट्रीय प्रवृत्तियों को दबा दे। वारबरटन की आड़ में सरकार ने एक अच्छा खासा अभियोग आरम्भ कर दिया। कहने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को तो यह पटियाला रियासत का मुकदमा था, पर इसके पृष्ठ में आश्रय समस्त भारतीय सरकार का था। ११ अक्टूबर सन् १९०९ को यह समाचार मिला कि राज-विद्रोह के अभियोग में पटियाला के अनेक प्रमुख आर्य्य-समाजी गिरफ्तार कर लिए गए हैं। इंडियन पेनेलकोड के दफा १२४ ए और १५३ ए में गिरफ्तारी की गई और लोगों के घरों की तलाशी ली गई। भारत के प्रमुख पत्रों में इस समाचार को सनसनीदार शीर्षक दिए गए। आर्य्य-समाज मन्दिर में ताला लगा दिया गया। चपरासी से लेकर प्रेसिडेंट तक लगभग ८४ व्यक्ति कैद में थे। लोगों के घरों से अन्य कागजों के साथ बाइबिल, रामायण और स्वामीजी के चित्र भी पुलिस उठा ले गई जिनके आधार पर मुकदमा चलाना था। अभियोग के लिए पटियाला-नरेश ने एक विशेष कोर्ट का उद्घाटन किया। पञ्जाब चीफ कोर्ट के एक प्रमुख वकील आर्थर ग्रे ने रियासत के पक्ष की पैरवी की। १७ दिसम्बर १९०९ को ग्रे की पहली वक्तृता हुई। यहाँ यह सम्भव नहीं है कि ग्रे की समस्त युक्तियों का प्रदर्शन किया जाए। उस समय एक अँगरेजी अखबार "पञ्जाबी" नाम से निकलता था। उसमें इस मुकदमे का पूरा हाल छपा है। "पायनियर" में भी ग्रे महोदय की वक्तृता का सारांश छपा था। ग्रे की आलोचनाएँ लगभग उसी प्रकार की थीं जिस प्रकार की अलाराम के मुकदमे की केवल इतना अन्तर था कि ये अधिक संयत भाषा में थीं और विस्तार से परिपुष्ट की गई थीं। ग्रे की कुछ युक्तियाँ इस प्रकार थीं—

(१) लाहौर में आर्य्यसमाज स्थापित होने के अनन्तर समाज की दो सभाएँ बनाई गईं। एक के सदस्य स्वामी दयानन्द द्वारा मनोनीत श्यामजी कृष्ण वर्मा थे (इनका उल्लेख मैं आगे करूँगा)। इन सज्जन ने पेरिस से एक वक्तव्य दिया था जिसमें कर्जन विली की हत्या का समर्थन किया गया था। इस समर्थन के अनन्तर भी आर्य्यसमाज से इनको पृथक् नहीं किया गया। (१८ दिसम्बर १९०९ की वक्तृता) (२) सत्यार्थप्रकाश में शत्रु की हत्या करना समर्थित है। सत्यार्थ-प्रकाश के शब्द हैं—"दुष्ट पुरुषों को मारने में हन्ता को पाप नहीं होता। नाततायि-वधे दोषो हन्तुर्भवति कश्चन (मनु० ८।३५१)।"

(३) केवल वेदज्ञ को ही राजा और राजसभासद होने का अधिकार है। (मनु० ७।४३)

(४) स्वराज, स्वदेश में उत्पन्न हुए वेदादि शास्त्रों के जाननेवाले...को मन्त्री करे (समु० ६, मनु० ७।५४), ऐसा विधान है।

(५) अवैदिक लोगों का धर्म राजधर्म नहीं हो सकता, वह अमान्य है। सत्यार्थप्रकाश के शब्द ये हैं—"जो अविद्या-युक्त, मूर्ख, वेदों के न जाननेवाले मनुष्य जिस धर्म (राजधर्म) को कहें उसको कभी न मानना चाहिए।)" ग्रे का अभिप्राय यह है कि यह वाक्य ब्रिटिश सरकार के कानून की अवज्ञा की ओर सङ्केत करता है, क्योंकि यह सरकार विदेशी होने के साथ-साथ अवैदिक भी है।)

(६) षष्ठ समुल्लास के अन्त में सत्यार्थप्रकाश में ये शब्द हैं—"हम प्रजापति अर्थात् परमेश्वर की प्रजा और परमात्मा हमारा राजा, हम उसके किङ्कर भृत्यवत् हैं। वह कृपा करके अपनी सृष्टि में हमको राज्याधिकारी करे।" स्पष्टतः यह प्रार्थना स्वराज्य-प्राप्ति की है।

(७) एकादश समुल्लास के आरम्भ में—"पारस-मणि पत्थर तो सुना जाता है, यह बात तो झूठी है, परन्तु आर्य्यावर्त्त देश ही सच्चा पारसमणि है कि जिसको लोहे-रूप दरिद्र विदेशी छूते के साथ ही सुवर्ण अर्थात् धनाढ्य हो जाते हैं।" इसकी व्यञ्जना यह है कि भारत की आर्थिक सम्पदा हरण करके इँग्लैंड धनाढ्य हो रहा है। अतः यह वाक्य राजविद्रोही है।

(८) अँगरेजों के प्रति स्वामीजी ने ११वें समुल्लास में लिखा है—"देखो! अपने देश के बने हुए जूते को आफिस और कचहरी में जाने देते हैं, इस देशी जूते को नहीं। इतने ही में समझ लेओ कि अपने देश के बने जूते की भी कितना मान-प्रतिष्ठा करते हैं, उतना भी अन्य देशस्थ मनुष्यों का नहीं करते। देखो! कुछ सौ वर्ष के ऊपर इस देश में आये यूरोपियनों को हुए और आज तक यह लोग मोटे कपड़े आदि पहिरते हैं, जैसा कि स्वदेश में पहिरते थे, परन्तु उन्होंने अपने देश का चाल-चलन नहीं छोड़ा और तुममें-से बहुत से लोगों ने उनकी नकल कर ली। इसी से तुम निर्बुद्धि और वे बुद्धिमान् ठहरते हैं।" स्पष्ट है कि ये शब्द स्वदेशी आन्दोलन की जान हैं और विदेशी माल के बायकाट की ओर सङ्केत करते हैं।

(९) ग्रे महोदय ने "आर्याभिविनय" ग्रन्थ से, जिसमें ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना आदि सम्बन्धी मन्त्र हैं, कुछ उद्धरण दिए हैं। ग्रे का कहना है कि जो आर्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस प्रकार की स्तुति करेंगे, वे राजभक्त नहीं रह सकते। उनका ब्रिटिश राज्य से विद्रोह करना स्वाभाविक है। आर्याभिविनय की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं जिन पर ग्रे को आपत्ति है—

(क) "आप 'वरुण' अर्थात् सर्वोत्कृष्ट होने से वरुण हो, सो हमको वर राज्य, वर विद्या, वर नीति देओ.....हम पर सहायता करो जिससे सुनीति-युक्त होके हमारा स्वराज्य अत्यन्त बढ़े।" (१।१८)

(ख) "वह ईश्वर आशीर्वाद देवे जिससे अपने शत्रु कभी न बढ़ें। (१।२२)

(ग) "हमारे लिए चक्रवर्ती राजा—आपकी करुणा से हमारा राज्य और धन सदा वृद्धि को प्राप्त हो।" (१।४३)

(घ) "अन्य देशवासी राजा हमारे देश में कभी न हों तथा हम लोग पराधीन कभी न हों।" (२।३१)

(ङ) "किसी एक मनुष्य को हम लोग राजा कभी न मानें।" (२।५२)

(१०) स्वामीजी ने गोरक्षा का समर्थन करके गो-वध करनेवाले अँगरेजों एवं अन्य विदेशियों के प्रति विद्वेष का भाव फैलाया, यह भी धारणा ग्रे महोदय की थी।

अस्तु, पटियाला के इस अभियोग ने आर्यसमाज के क्षेत्र में नई क्रान्ति उत्पन्न कर दी। जो आर्यसमाजी उस समय जेल में रक्खे गए थे, उनमें से अनेक तो रोगी थे, पर उनके इलाज का कोई प्रबन्ध न था। जेल से बाहर जो सम्बन्धी थे उनको भी यातनाएँ सहनी पड़ रही थीं—गणेशीलाल का बच्चा सदा के लिए अन्धा हो गया, लाला बैजनाथ की नवजात कन्या मर गई, और वधू मरते-मरते बची, पर उन्हें जमानत पर न छोड़ा गया।

यह सनसनीदार अभियोग १६ फरवरी १६१० को महाराजा पटियाला की ओर से वापिस ले लिया गया। इस अभियोग में महात्मा मुंशीराम जिज्ञासु (पश्चात् स्वामी श्रद्धानन्द) ने आर्य्यसामाजिकों की पैरवी का अच्छा प्रबन्ध किया था, जिसमें यह सिद्ध करने का प्रयास किया गया कि आर्यसमाज धार्मिक संस्था है, न कि राजनीतिक, और स्वदेशानुराग कोई पाप नहीं है, और न इससे अभिप्राय राजविद्रोह का है*।

यह स्मरण रखना चाहिए कि सन् १६१० वह समय था जब स्वदेश और स्वराज शब्द का प्रयोग ही विद्रोह-भावनाओं का द्योतक समझा जाता था। ग्रे ने अपने वक्तव्य में लाला लाजपतराय पर आक्षेप करते हुए यह कहा कि ये अपने लेख और व्याख्यानों में मेजिनी, गैरीबाल्डी, शिवाजी और स्वामी दयानन्द का उल्लेख करके नवयुवकों में विष फैला रहे हैं। अभिप्राय यह कि इन देशभक्तों का नाम लेना भी पाप था।

जैसा कि मैंने कहा, कि पटियाला का मुकदमा किसी रियासत-विशेष का मुकदमा न था, यह तो आर्य-समाज की राष्ट्रीय भावनाओं को दबा देने का प्रयास था। एक आफिसर कमांडिंग ब्रिगेड ने अपनी सेना में यह आज्ञा प्रकाशित की थी—"All ranks are forbidden to attend the meetings of Arya Samaj or any other political body." —एक इंडियन रेजिमेंट के अस्पताल-सहायक को अपने अफसर से यह आदेश मिला कि वह आर्य्यसमाज की सदस्यता से त्यागपत्र दे दे। इन्दौर के लक्ष्मण राव शर्मा से इन्सपेक्टर जनरल आव् पुलिस ने ये शब्द कहे- "I have a very high opinion about you and have no other complaint against you but I am very much displeased to see you taking part in such a seditious body". लक्ष्मण राव जी इन्दौर आर्य्यसमाज के सभापति थे। लार्ड मिंटो का जलूस जिस समय जोधपुर में होकर निकला, वहाँ की पुलिस ने आर्यसमाज मन्दिर पर से जबरदस्ती "ओ३म्" का झण्डा उतार लिया और आर्य्यसमाज का साइनबोर्ड हटा दिया। यह मन्दिर उसी रास्ते में था, जिस पर जलूस को जाना था।

स्पष्टतः सन् १६१० के लगभग तक कांग्रेस का प्रभाव देश पर कम था, पर आर्यसमाज एकमात्र जीती-जागती संस्था थी। देश के प्रत्येक बड़े नगर में इसका सङ्गठन था। हिन्दू समाज की अनेक कुरीतियाँ इसमें न थीं। यह प्रगतिशील संस्था थी और वैदिक धर्म का जो नगद आदर्श स्वामी दयानन्द ने प्रस्तुत किया था, उसकी प्रेरणा से आर्यसमाज के सदस्यों में स्वदेशानुराग भी था। भारत में अन्दर ही अन्दर सशस्त्र क्रान्ति-कारियों का दल प्रबल हो रहा था आर्यसिद्धान्तों की दृष्टि से हिंसात्मक आन्दोलन कभी पाप नहीं समझा गया है। संसार के सभी देशों ने हिंसात्मक साधनों द्वारा अपनी

* इस सम्बन्ध में महात्मा मुंशीराम जिज्ञासु और श्री रामदेवजी की पुस्तक "The Arya Samaj and its contractors—a Vindication." पढ़नी चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वतन्त्रता प्राप्त की है, अतः स्वभावतः आर्यसमाज के अनेक सदस्यों का झुकाव क्रान्तिकारी प्रवृत्तियों की ओर हो गया। ११ मई सन् १९०९ को लाला लाजपतराय का बर्मा को निर्वासन हुआ। लाला लाजपतराय, लाला हंसराज और पण्डित गुरुदत्त ये तीनों सहपाठी आर्य्यजगत् की विभूति थे। दूसरे व्यक्ति भाई परमानन्द थे जिन्हें भी आर्य्य-समाज से निष्ठा थी। ये फाँसी के तख्ते पर से झूलते-झूलते बचे और इन्हें 'कालापानी की सजा दी गई। महात्मा मुंशीरामजी का एक पुत्र हरिश्चन्द्र था। उसके ऊपर भी सरकार की आँख थी, पर आज तक पता न चला कि उसका जीवन किस प्रवाह में बहा। वह भारतवर्ष से कहीं बाहर भाग गया। यह गुरुकुल का अपने समय का सबसे अच्छा वक्ता और प्रतिभासम्पन्न युवक था। श्यामजी कृष्ण वर्मा का स्वामी दयानन्द से वही सम्बन्ध समझना चाहिए जो एनी बीसेंट का कृष्णमूर्ति से। स्वामी दयानन्द की इच्छा थी कि इसकी सहायता से विदेशों में वैदिक धर्म का प्रचार किया जाए। यह संस्कृत का अच्छा विद्वान् था और आर्य्यसमाज को इससे बड़ी आशाएँ थीं। पेरिस जाकर श्यामजी कृष्ण वर्मा क्रान्तिकारी दल के सङ्गठन में संलग्न हो गए। बाद को उन्होंने वहाँ फ्रेंच महिला से विवाह भी कर लिया, और अच्छी सम्पत्ति भी कमाई। अभी कुछ वर्ष हुए, फ्रांस में उनका देहान्त हो गया। भारत में रहकर जिन क्रान्तिकारी आर्य्यसामाजिकों ने काम किया उनमें पण्डित गेंदालाल दीक्षित का नाम अमर रहेगा। आपका जन्म आगरे के गाँव बटेसर में हुआ था, और औरैया के डी० ए० वी० स्कूल में शिक्षक थे। मन्मथनाथ गुप्त के शब्दों में—"पण्डितजी आर्य्यसमाजी थे। उन दिनों का आर्य्य समाज आज के आर्य्यसमाज से विभिन्न था। उसमें जीवन का स्फुरण था. तथा कुछ अंश तक वह क्रान्तिकारी शक्ति था। पण्डितजी के हृदय में देश की दुर्दशा पर क्षोभ था।" उन्होंने एक शिवाजी-समिति बनाई। साधारण जनता उन्होंने जब निर्जीव देखी. तो डाकुओं का सङ्गठन किया। इस काम में ब्रह्मचारी नामक एक व्यक्ति से उन्हें विशेष सहायता मिली। मातृवेदी नाम की एक टोली बनाई। ग्वालियर में डाकुओं के एक गिरोह के साथ ये पकड़े गए। बाद का इनका इतिहास बड़ा करुणाजनक है। ये मुखबिर होने के बहाने से पहरा ढीला होते ही भाग निकले। २१ दिसम्बर १९२० को दिल्ली के एक सरकारी अस्पताल में अज्ञातवास में इनकी मृत्यु हुई। अपनी रोती हुई पत्नी को इन्होंने मृत्यु से पूर्व इस प्रकार आश्वासन दिया था—"मेरा यह शरीर नष्ट हो जाएगा, किन्तु मैं मोक्ष नहीं चाहता। मैं तो चाहता हूँ कि बार-बार इसी भूमि में जन्मूँ और बार-बार इसी के लिए मरूँ।" पण्डित गेंदालाल दीक्षित के सम्पर्क का प्रभाव पण्डित रामप्रसाद बिस्मिल पर पड़ा जिनका नाम काकोरी षड्यन्त्र के साथ संलग्न है। मन्मथनाथ गुप्त के शब्दों में—"पण्डित रामप्रसाद ने लड़कपन से ही आर्य-समाजी शिक्षा पाई थी, बाद को भी वे कट्टर तो नहीं, किन्तु आर्य्यसमाजी जरूर बने रहे।" काकोरी षड्यन्त्र में एक और वीर आर्यसमाजी ने भाग लिया। वह रोशनसिंह था। २० दिसम्बर सन् १९२७ को इसी प्रयाग नगर के जेल में प्रातःकाल उन्हें फाँसी दे दी गई। आपने तख्ते पर चढ़ते समय 'ओ३म्' का उच्चारण किया और वन्दे मातरम् का उच्चारण करते हुए भारतमाता की जय का नारा लगाया। क्षणभर में काम तमाम हो गया। त्रिवेणी पर अन्तिम संस्कार वैदिक विधि से हुआ।

इस प्रकार श्यामजी कृष्ण वर्मा, हरिश्चन्द्र, लाजपत-राय, भाई परमानन्द, गेंदालाल दीक्षित, रामप्रसाद बिसमिल, रोशनसिंह आदि अनेक आर्य्य व्यक्तियों ने भारत के आतङ्कवाद के इतिहास में अपना नाम अमर कर दिया। भारत की अनेक कचहरियों में जो अभियोग हुए उनके आधार पर इन व्यक्तियों के कार्यों का थोड़ा-सा वृत्तान्त मिल सका है। स्वभावतः अन्य भी अनेक ऐसे व्यक्ति रहे होंगे जिन्होंने परोक्ष रूप से आतङ्कवाद का सक्रिय समर्थन किया, पर उनका इतिहास अब नहीं लिखा जा सकता।

आर्यसमाज के राजनीतिक जीवन का एक दूसरा पहलू भी था। महात्मा मुंशीराम, श्री रोशनलाल, महात्मा हंसराज प्रभृति अनेक गण्यमान्य व्यक्तियों ने इस प्रयत्न में सफलता प्राप्त की कि सामूहिक रूप से आर्यसमाज को राजनीतिक क्षेत्र से मुक्त रक्खा जाए। पटियाला के अभियोग में इस ओर के वकीलों ने यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया कि आर्यसमाज राजनीतिक संस्था नहीं है। महात्मा मुंशीरामजी का समाज के वातावरण पर बड़ा प्रभाव था। फल यह हुआ कि आर्यसमाज सदा के लिए आतङ्कवाद के षड्यन्त्रों से बच गया। यह अच्छा भी हुआ और बुरा भी। अच्छा इस अर्थ में कि आतङ्कवादी भी आज यह स्वीकार कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चुके हैं कि उनकी नीति से भारत को स्वतन्त्रता मिलना असम्भव है, आतङ्कवाद का दमन करना सरकार के लिए आसान बात थी, और इससे नैतिक पतन का होना स्वाभाविक था। आर्यसमाज के अधिकांश सदस्य सरकारी नौकर थे, और वे समाज से हाथ खींच लेते, और जो उन्नति समाज ने इन दिनों में की है, वह न हो पाती।

पर इसका एक दूसरा पहलू भी है। राजनीतिक क्षेत्र में आर्यसमाजियों की जो देन होनी चाहिए थी, वह पटियाला-केस के बाद कम हो गई। राजनीति के क्षेत्र में सामूहिक रूप से अहिंसात्मक असहयोग आन्दोलन आरम्भ करने का श्रेय महात्मा गांधी को ही है। संसार की राजनीति में इस अस्त्र का प्रयोग पहले कभी नहीं हुआ था। आर्यसमाज के सदस्यों ने सन् १९२१ के आन्दोलन में व्यक्तिगत रूप से बहुत भाग लिया। स्वामी श्रद्धानन्द के व्यक्तित्व का उन पर भी प्रभाव था। अहिंसात्मक बलिदान के लिए आर्यसमाज के सामने अनेक आदर्श थे—स्वामी दयानन्द का बलिदान, पं० लेखराय का बलिदान, श्री तुलसीराम का बलिदान, और बाद को स्वामी श्रद्धानन्द, पं० रामचन्द्र और राजपाल के बलिदान—ये सब व्यक्तिगत अहिंसात्मक बलिदान थे जिनमें आततायियों के हाथों से इन सब का खून हुआ, पर इन लोगों ने कभी प्रतिहिंसा की भावना प्रकट नहीं की। कांग्रेस के इतने दिनों के इतिहास में भी अग्रगण्य कांग्रेसियों के जीवन की इस प्रकार की एक भी बलि अब तक नहीं हुई। अपने घातकों के प्रति आर्यसमाज ने प्रतिहिंसा की भावना कभी प्रदर्शित नहीं की। अतः महात्मा गांधी का अहिंसात्मक आन्दोलन आर्यसमाज की प्रवृत्ति के अनुकूल था ही। गांधीजी की भारत की प्राचीन सभ्यता में निष्ठा, उनका सदाचार और संयम, वीतरागता और संन्यासी की-सी प्रवृत्ति—ये सब बातें आर्य संस्कृति में निष्ठा रखनेवालों के लिए आकर्षक थीं। मुझे याद है कि सन् १९२१ के आन्दोलन में एक बार गांधीजी ने आनन्द-भवन के मैदान में वक्तृता देते हुए स्वामी दयानन्द के आदर्श की सराहना की थी—स्वामी दयानन्द ने सत्य की प्राप्ति के लिए अपने परिवार से असहयोग किया। ईसा का भी उन्होंने उदाहरण दिया था जिसमें उनके उस वचन की ओर सङ्केत किया था जिसमें कहा गया था कि मैं पिता को पुत्र से अलग करने आया हूँ... इत्यादि।

इसी बीच में कुछ ऐसी घटनाएँ हो गईं जिनसे आर्यसमाज की भावनाओं को धक्का पहुँचा। सन् १९२१ की बात है—अप्रैल या मई का महीना होगा। मलाबार के मोपलाओं ने हिन्दुओं पर भीषण अत्याचार किए। हिन्दू-मुस्लिम-ऐक्य के वातावरण में इन अत्याचारों ने नई भावना उत्पन्न कर दी। महात्मा गांधी ने मोपलाओं के अत्याचारों की उतनी उग्र आलोचना नहीं की, जितनी आवश्यक थी। दबे शब्दों में उन्होंने हिन्दुओं की ही भर्त्सना की। उन्होंने यह भी तो न माना कि हिन्दुओं पर भीषण अत्याचार हुए हैं। श्रद्धेय बाबू राजेन्द्रप्रसाद की "इण्डिया-डिवाइडेड" पुस्तक में, जो अभी हाल में प्रकाशित हुई है, मोपला अत्याचारों के सम्बन्ध में निम्न वाक्य पढ़कर मुझे कुछ ग्लानि हुई—

"All this created bitterness amongst the Hindus, even in Northern India, who were influenced by reports of incidents which were *undoubtedly exaggerated*"

गांधीजी और उनके अनुयायियों की यह भयानक दुर्बलता रही है कि वे मुसलमानों के किए हुए अत्याचारों पर सहसा विश्वास नहीं करते हैं। आर्य्यसमाज ने मोपला अत्याचारों की सत्यता का पता लगाया। इनके वृत्तान्त अतिशयोक्ति नहीं, वस्तुतः सत्य थे। यह बात दूसरी है कि इन अत्याचारों के पृष्ठ में सरकार का हाथ भी रहा हो (सम्भवतः ऐसा था भी), पर गांधीजी का उदासीन रहना आर्य्यजगत् को प्रिय न लगा। स्वामी श्रद्धानन्द को इस घटना ने उद्वेलित कर दिया, और जेल से छूटते ही उन्होंने शुद्धि आन्दोलन की नींव डाली। साम्प्रदायिक प्रश्न को मैं इस जगह नहीं उठाना चाहता। मैं केवल यह बताना चाहता हूँ कि मोपला आन्दोलन के प्रति महात्मा गांधी की जो प्रवृत्ति थी उससे आर्य्यसमाज के सदस्यों को ठेस लगी।

कुछ दिनों के बाद एक और घटना हो गई। १ मई सन् १९२४ के 'यंग-इंडिया' में महात्मा गांधी का एक लेख "हिन्दू मुस्लिम टेन्शन, इट्स कॉज एंड क्योर" शीर्षक से निकला। इस लेख ने आर्य्यसमाजियों को उद्वेलित कर दिया। मुसलमानों के प्रति महात्माजी की जो सदा से दुर्बलता रही है उससे प्रेरित होकर इस लेख में उन्होंने स्वामी दयानन्द, आर्य्यसमाज, सत्यार्थप्रकाश और स्वामी श्रद्धानन्द के सम्बन्ध में ऐसे शब्दों का प्रयोग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया, जो सत्य, तर्क और नैतिक दृष्टि से उचित न थे। स्वामी श्रद्धानन्द के लिए लिखा—"His speeches are often irritating. He is hasty and easily ruffled. He inherits the traditions of the Arya Samaj," स्वामी दयानन्द के लिए लिखा—"He made his Hinduism narrow." सत्यार्थ-प्रकाश के लिए इस लेख में ये शब्द थे—"I have not read a more disappointing look rrom a reformer so great," आर्य्यसामाजिकों के ऊपर कृपा इस प्रकार की—"But having the narrow outlook and a pugnacious habit, they either quarrel with people of other denominations, or failing them, with one another. Shraddhanandji has a fair share of that spirit."

इस प्रकार के भावों की प्रत्यालोचना करना यहाँ असङ्गत है। यह लेख सर्वथा समयानुचित था। जिस उद्देश्य से (हिन्दू-मुस्लिम-ऐक्य) लिखा गया था उसको भी इससे लाभ नहीं पहुँचा। आर्य्यसमाज की दुनिया में एक बवंडर आ गया। मुझे अच्छी तरह स्मरण है कि भारत के लगभग सभी प्रतिष्ठित आर्य्यसमाजों में इसके विरुद्ध प्रस्ताव स्वीकृत किए गए। धुआँदार व्याख्यान हुए और लेख लिखे गए। मुझे जो बुरा लगा वह यह कि विरोध के इस आन्दोलन से अकांग्रेसी जनता को प्रसन्नता हुई। सरकार के पिट्ठुओं की बन आई। इस लेख ने आर्य्यसमाज के उस विश्वास को तोड़ दिया, जो उसका कांग्रेस या गांधीजी के प्रति था। सार्वदेशिक आर्य्य प्रतिनिधि सभा की ओर से एक डेपुटेशन भी गांधी जी से मिला। दिल्ली के लाला ज्ञानचन्द जी ने एक मोटी पुस्तक उर्दू और हिन्दी में इसी विषय पर प्रकाशित की। यह तो असम्भव ही था कि गांधीजी अपनी भावनाओं को बदल देते। उन्होंने १२ और १६ जून १९२४ के 'यंग इंडिया' में दो पत्र और प्रकाशित किए और फिर मौन साध लिया। इन पत्रों का परिणाम कांग्रेस और आर्य्य-समाज दोनों के लिए बुरा हुआ। आर्य्यसमाज कांग्रेस से यदि विरत न होता, और यदि आर्य्यसमाज के प्रमुख संन्यासी और अन्य नेता इसमें भाग लेते, तो हिन्दू-मुस्लिम-समस्या वह रूप धारण न करती जो बाद के इतिहास से स्पष्ट है। हरिजनों की समस्या भी एक नए ढङ्ग पर सुलझाई गई होती। आर्य्यसमाज का प्रमुख दृष्टिकोण साम्प्रदायिकता का विरोधी है, पर कांग्रेस के दृष्टिकोण ने अथवा उसकी कार्य-पद्धति ने साम्प्रदायिकता के बीज को भारत में इतना स्थायी कर दिया है कि उससे छुटकारा पाना कठिन है। आर्यसमाज को भी अपनी इस प्रवृत्ति से हानि पहुँची। कांग्रेस देश की अग्रगण्य संस्था है। राष्ट्रीयता की लड़ाई में यह सबसे आगे रही है। आर्य-समाज को प्रतिष्ठा मिल सकती थी, यदि देश के उत्थान के युद्ध में इसका समुचित हाथ होता। फल यह हुआ कि इतनी बड़ी संस्था का प्रतिनिधित्व कांग्रेस में उतना ही कम है जितना कि मुसलमानों का। मध्य प्रान्त के स्पीकर श्री घनश्यामसिंह गुप्त को छोड़कर कदाचित् ही कोई आर्यसमाजी किसी प्रान्त की कांग्रेसी सरकारों के प्रतिष्ठित पद पर आसीन हो।

एक महान् संस्था की राष्ट्रीयता का इस प्रकार दमन हो चुका है। आतङ्कवाद के युग में गवर्नमेंट ने इसका दमन किया और इस युग में कांग्रेस की हिन्दुत्व-विरोधी नीति ने इस विशाल संस्था की राष्ट्रीयता को पनपने नहीं दिया। यह न तो कांग्रेस के लिए अच्छा हुआ, न आर्य-समाज के लिए और न देश के लिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वास-घात

सरदार नानकसिंह

(१)

'दीपक' की लौ जो हजारों अन्धड़-तूफानों के बीच भी भर-भर जलती रही थी—विश्वास-घात रूपी पवन का एक हलका झोंका भी सहन न कर सकी—बुझ गई।

सारे गाँव में खबर फैल गई—'उसका हार्टफेल हो गया।'

× × ×

एक सुनसान जैसे गाँव में रहते हुए 'दीपक' को उसकी कविता ने उसे दूर-दूर तक प्रख्यात कर दिया था। लेकिन, अपने गाँव में उसका कोई मूल्य नहीं था। चारों ओर प्रकाश करनेवाला दीपक अपनी जगह अन्धकारमय ही रखता है। प्रकृति का शायद यही नियम है।

'दीपक' उपनाम उसके जीवन के ठीक अनुरूप ही था। दीपक स्वयं हर समय जलता रहता है। उसके स्थूल शरीर में कुछ भी सौन्दर्य नहीं होता। मैला, तेल में सना, चेचकिया, काला और बदसूरत चेहरेवाला दीपक, किन्तु उसकी आत्मा (लौ) में सौन्दर्य की कई निधियाँ छिपी रहती हैं। शायद इसी लिए शलभ उस पर अपना जीवन बलिदान कर देते हैं।

बाहर के लोग 'दीपक' को उसकी कविताओं से देखते थे और गाँव के लोग उसके शरीर से। उसकी करुणा-पूर्ण और हृदय-द्रावक कविताएँ पढ़कर लोग मस्ती में आकर झूमने लगते। उसका कोई वाक्य ऐसा नहीं होता था जो आँखों में आँसू और कण्ठ में उभार न ला दे। लोग ईर्ष्या करते थे—मालूम नहीं, दीपक कैसा भाग्यशाली होगा। किन्तु क्या वह सचमुच सौभाग्यशाली था? अपने अन्दर की आग से जलनेवाली वस्तु कभी सौभाग्यशाली हो सकती है?

यह एक अभागा था।

एक अनभीष्ट और निराश आत्मा।

दीपक का रङ्ग-रूप और शरीर का गठन ऐसा था जो किसी भी दृष्टि को अपनी ओर आकृष्ट नहीं कर सकता था। घर के और गाँव के लोगों के लिए दीपक एक अन्यथासिद्ध वस्तु थी। गली से गुजरते हुए स्त्रियाँ कई बार उसे देखकर मुँह फेर लेती थीं।

बत्ती समाप्त होने से पहले ही दीपक की आत्मा बुझ जाती यदि उसके पास दो चीजें न होतीं—एक कविता-धन और दूसरा उसका मित्र महेन्द्र।

कविता उसकी प्रेमिका थी, जिसके साथ वह हँसता, खेलता, रूठता और कभी-कभी उसकी नाजबरदारियाँ भी करता। वह जब कविता लिखने बैठता तो अपने को एक मस्ती की दशा में अनुभव करता और येही होती थीं उसके जीवन की शान्तिमय सुनहरी घड़ियाँ।

अथवा महेन्द्र के सामीप्य से उसे कुछ सान्त्वना मिलती थी।

फिर भी दीपक कभी-कभी उदास हो जाया करता था। वह उदासी दिनों से हफ़्तों तक उसपर छाई रहती थी।

उसका मित्र महेन्द्र एक धनी परिवार का बेटा था। हृष्ट-पुष्ट, सुन्दर-सुडौल और हँस-मुँख। उसकी मधुर मुस्कराहट कई अल्हड़ हृदयों के लिए पाश बन जाती थी। वह लाहौर के एफ० सी० कालिज में पढ़ता था और आजकल गर्मियों की छुट्टियाँ अपने गाँव में रहकर बिता रहा था। महेन्द्र की आत्मा मानों दीपक में एक हो चुकी थी। धनी होता हुआ भी वह निर्धन दीपक पर प्राण देता था। कभी-कभी जब वह दीपक को उदास देखता तो कहता—"काश! दीपक! कभी तुम अपनी शक्ति का अनुभव कर पाते! तुम नहीं जानते, संसार के लिए तुम कितनी बहुमूल्य वस्तु हो, लेकिन फिर भी तुम अपने भाग्य को कोसते रहते हो।"

महेन्द्र के यह पीड़ा और प्रेम भरे वाक्य दीपक की डाँवाडोल आत्मा को स्थिर अवश्य कर देते थे, किन्तु उसी प्रकार जैसे पिपासु को स्वप्न में पिलाया हुआ जल।

कईबार दीपक अपने से अपनी उदासी का कारण पूछता, किन्तु वह कभी भी न समझ सका कि कौन सी वस्तु की त्रुटि उसे उदास बनाए रखती है। जब कभी आँगन में लगे आम के पेड़ पर कोयल की 'कूहू' सुनाई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देती तो उसके युवक-हृदय में ज्वार-भाटा-सा आ जाता। चाँद की चाँदनी, बादल की घनघोर घटाएँ, पुष्प की सुगन्ध और प्रभात-पंछियों के मधुर गीत—ये चीज़ें किसी-किसी समय उसे विक्षिप्त नहीं तो अर्ध-विक्षिप्त अवश्य बना देती थीं। उसके शून्य एवं एकाकी हृदय में जैसे एक अन्धड़ आ जाता और वह बराबर सोचा करता—'यह क्या है—क्यों है?'

दीपक अपनी प्रत्येक कविता पहले महेन्द्र को सुनाकर फिर किसी पत्रिका में भेजा करता था। एक दिन उसने एक कविता लिखी, जिसका शीर्षक था—'मेरी आत्मा'। उसने सदा की भाँति यह महेन्द्र को सुनानी शुरू की। कविता का भाव यह था—

'ओ मेरी निराश तथा एकाकी आत्मा! तू क्या चाहती है? धन और ऐश्वर्य? लेकिन क्या तू नहीं जानती इसके चारों ओर स्वार्थ की गन्दगी और अहङ्कार की दुर्गन्ध से भरा हुआ गहरा दलदल है? तो फिर और क्या चाहती हैं, आदर? पर इसके पीछे ईर्ष्या के कुत्ते दाँत उभाड़े फिरते हैं। और क्या सौन्दर्य? आह! मेरी भोली आत्मा! इसकी झालरों पर विश्वास-घात का रङ्ग है। यह चिरस्थायी नहीं है। क्या—क्या—एक प्रेम छलकता हृदय? किसी सुन्दरी के कण्ठ-वीणा से निकली हुई प्रशंसा? मेरी अभागी आत्मा! बन्द कर इस बेसुरे राग को। अपनी और अपनी इस माँग की तुलना कर और देख, तू क्या माँग रही है? यह सब तेरे लिए नहीं बना है। तेरा संसार पृथक् है—इस संसार से बहुत दूर, एकाकी और शान्त संसार—सूना और निराश संसार...।"

महेन्द्र ने यह कविता सुनी और सुनकर तड़प उठा; किन्तु पहले की भाँति उसके मुख से श्लाघा-भरे वाक्यों के स्थान पर केवल ये शब्द निकले—"दीपक! काश में लड़की होता।"

और इसके बाद यह कविता 'जीवन' पत्र को भेज दी गई।

(२)

आज कई दिनों से दीपक के हृदय पर फिर वही उदासी की घटाएँ छाई हुई थीं। वही पुरानी और असाध्य बीमारी। महेन्द्र का कोई भी प्रयत्न सफल न हो सका।

इस समय वह महेन्द्र के घर, उसके सजे हुए कमरे में बैठा हुआ था। महेन्द्र अपने माता-पिता के डर से दीपक को कम ही अपने घर लाया करता था। शायद उसके माता-पिता को एक धनी-निर्धन अथवा सुन्दर और कुरूप का साथ पसन्द नहीं था। किन्तु, दीपक की तबियत आज कुछ अधिक खराब थी, इसलिए वह उसका मन बहलाने के लिए अपने घर ले आया था।

इसी समय बाहर से डाकिये ने दीपक का नाम पुकारकर एक लिफाफा अन्दर फेंका। "किसी समालोचक की ओर से प्रशंसा या किसी एडीटर की ओर से कविता की माँग होगी" यह सोचते हुए दीपक ने लिफाफा खोला। लेकिन, अन्दर से जो कुछ निकला उसे देखकर वह आश्चर्य-चकित रह गया। चिट्ठी की तह में सौ रुपये का एक नोट और किसी लड़की का एक फोटो था। महेन्द्र इस समय कमरे में नहीं था। दीपक ने धड़कते हुए हृदय से पत्र पढ़ना आरम्भ किया—

जमशेदपुर

५. ७. ४०

'मेरे दीपक!

क्या क्षमा नहीं करेंगे, यदि एक अनजान लड़की आपके नाम के साथ 'मेरे' विशेषण लगा रही है? क्या एक जिज्ञासु का अधिकार नहीं है कि वह अपने गुरुदेव को 'मेरा' कहकर सम्बोधित कर सके!

मैं चिरकाल से आपको गुरु-भावना से मानती आई हूँ। आपकी प्रत्येक कविता मेरी हृदय-पुस्तक पर लिखी हुई है। आपकी कविताओं ने मेरे जीवन को पलट दिया है। मैं एक धनी परिवार में जनमी और पली हूँ। लेकिन, आपकी कविताओं ने मुझे धनिकता से घृणा करा दी है। एक निर्धन कवि की धनी आत्मा ने मेरे अन्दर क्रान्ति पैदा कर दी है। मैं हमेशा अपने उस उदार-हृदय कवि की आत्मा में झाँक-झाँक कर देखती आ रही हूँ। किन्तु आपकी 'जीवन' पत्रिका में छपी हुई इस बार की कविता 'मेरी आत्मा' ने तो मेरी आत्मा को बाँध ही डाला है।

मैं समझ रही हूँ आपकी आत्मा क्या माँगती है और शायद मेरी आत्मा की माँग भी उसके साथ एक रस होकर वही कुछ माँग रही है। एक महान्-आत्मा का प्रेम!

ओ मेरे कवि! क्या आप सचमुच वही हैं जो आप मुझे 'मेरी आत्मा' में दीखे हैं? क्या आपकी आत्मा सचमुच वही माँगती है जो वस्तु आपके चरणों में भेंट करने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संख्या १]

के लिए किसी जिज्ञासु ने चिरकाल से सँभालकर रख छोड़ी है? तो लो मेरे गुरुदेव! इसे स्वीकार करो।

सम्भवतः मैं सुन्दरियों में नहीं हूँ। सम्भवतः मेरा स्वर वीणा-जैसा नहीं। किन्तु—किन्तु प्रेम छलकता हृदय—यह मेरे पास है और मैं आज इसे अपने गुरुदेव की भेंट करती हूँ, यदि स्वीकार हो।

क्या मेरी दर्शनाभिलाषा पूर्ण करने के लिए मुझे डलहौजी पहाड़ पर—जहाँ मैं अपनी माता जी के साथ जा रही हूँ—आकर मिल सकेंगे? मन कहता है आपका हृदय इतना कठोर नहीं होगा, जो आप मेरी मिलन-प्रार्थना को ठुकरा देंगे।

सप्रेम आपकी—रूपकुमारी,

सुपुत्री राय साहब दीनदयालु,
मैजिस्ट्रेट (फर्स्ट क्लास),
हाल ५७, ककरोटा रोड, डलहौजी"

पत्र पढ़ते हुए दीपक को पता न लगा कि किस समय महेन्द्र कमरे में आकर उसके पीछे खड़ा हो गया है, जिसकी आँखें बराबर उस फोटो पर गड़ी हुई थीं। बीस-बाईस साल की दुबली-पतली और सुन्दर आँखोंवाली महेन्द्र के हृदय में पैठती जा रही थी।

पत्र समाप्त करने के बाद दीपक के नेत्र और मुख पर अद्वितीय आभा थी। उसे अपना सिर घूमता हुआ प्रतीत हो रहा था।

महेन्द्र ने पीछे खड़े होकर चिट्ठी पढ़ ली थी। वह दीपक का कन्धा दबाकर बोला—"क्यों मिस्टर! मैं कहता न था, तुम्हारी किस्मत का सितारा चमकनेवाला है? देखो तो सही, जैसे कोई परी हिमाचल से उतर आई हो।" महेन्द्र की आँखें बराबर फोटो पर गड़ी हुई थीं।

अपने आन्तरिक विप्लव को दबाता हुआ महेन्द्र बोला—चलो, एक पन्थ दो काज। कल जाओगे? शायद मेरा भी विचार हो जाए। छुट्टियाँ भी अभी डेढ़ महीना बाकी हैं। पिताजी की बीमारी की वजह से नहीं जा सका था, लेकिन अगर तुम्हारा विचार जाने का हो.....।

वह बात करते-करते रुक गया। दीपक का चेहरा उतरा जा रहा था। उसपर सफलता की कान्ति केवल एक बार आकर एकदम लुप्त हो गई थी।

'हैं! क्या हुआ है?' महेन्द्र ने सहमेहुए स्वर में पूछा।

"कुछ नहीं," दीपक ने अपने को सँभालकर उत्तर दिया—"हाँ हाँ, अवश्य चलेंगे। अगर हो सका तो परसों ही।"

"लेकिन तुम प्रसन्न नहीं दीखते हो, दीपक?" महेन्द्र ने पूछा और उसकी दृष्टि बराबर फोटो पर थी।

"नहीं, मैं बिलकुल ठीक हूँ!" दीपक ने उसे टाल दिया।

और इसी घड़ी से पहाड़ पर जाने की तैयारियाँ होने लगीं। दूसरे दिन दोनों का डलहौजी जाने का प्रोग्राम निश्चित हो गया।

(३)

रात को जब महेन्द्र दीपक के पास आया तो उसने देखा, दीपक अपना बँधा हुआ सामान खोल रहा है।

'हैं! यह क्या?" महेन्द्र ने आश्चर्य से पूछा।

"कुछ नहीं, कहकर दीपक चुप हो गया और फिर बोला—महेन्द्र! एक बात मानोगे?"

"कहो।"

"वचन दो।"

"पहले कभी इनकार किया है?"

"महेन्द्र! तुम्हें अकेले ही डलहौजी जाना होगा। मैं शायद न जा सकूँ।"

"मैं शायद न जा सकूँ!" महेन्द्र ने उसके उतरे हुए चेहरे की तरफ देखते हुए पूछा—"इसका क्या मतलब?"

"मैं...मैं रूपकुमारी के सामने नहीं होना चाहता।"

"क्यों?"

"मैं उसे निराश नहीं करना चाहता। ऐसा करने से उसका कल्पना का संसार नष्ट हो जाएगा। मेरी सूरत देखते ही उसके सारे सपने टूट जाएँगे। उसकी आशाओं पर पानी फिर जाएगा। महेन्द्र! मैं उसे प्यार करता हूँ। मैं एक पुजारी की भाँति पवित्र भावना से उस देवी की पूजा करता हूँ। उसके भविष्य को नष्ट कर दूँ, यह मुझसे नहीं हो सकता।"

"दीपक...दीपक! यह तुम क्या कह रहे हो!" महेन्द्र ने एक बार दीपक की ओर और एक बार दीवाल पर लगे उस सुन्दरी के चित्र की ओर देखा।

"महेन्द्र!" दीपक ने शायद हृदय की पीड़ा को दबाकर कहा—"रूपकुमारी के पास जाकर तुम्हें ही मेरा पार्ट खेलना होगा। मेरी कविताओं की जितनी कापियाँ पड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं, सब तुम साथ लेते जाना, जिनकी सहायता से तुम अपने को 'दीपक' प्रकट करने में पूरी-पूरी तरह सफल हो सकोगे।"

और दूसरे दिन महेन्द्र को गाड़ी पर बिठाते हुए जब दीपक ने हाथ मिलाया तो महेन्द्र को यह हाथ हिम-सा शीतल लगा और उसने इसके कम्पन को भी स्पष्ट अनुभव किया।

(४)

डेढ़ महीना पहाड़ पर काटकर जब महेन्द्र वापस लौटा तो दीपक को देखकर विस्मित रह गया। दीपक इतना दुर्बल हो गया था कि पहचाना भी नहीं जाता था।

दूसरे दिन जब महेन्द्र दीपक की कोठरी में गया तो दीपक सोया हुआ था, जमीन पर एक खुला हुआ पत्र पड़ा था। पास ही एक लिफाफा था। महेन्द्र ने पत्र उठाकर पढ़ना शुरू किया—

"मेरे दीपक!

आह! डेढ़ महीना डेढ़ पल की भाँति बीत गया था, लेकिन वियोग के ये कुछ घण्टे शताब्दियों-से लम्बे हो गए हैं। क्या तुम मेरी दशा का अनुमान कर सकते हो? वे बीते पैंतालीस दिन, जिनका एक-एक पल सुखोल्लास में बीता था, उनकी याद मेरे हृदय में अन्धड़ पैदा कर रही है।

आह! आज मैं पश्चात्ताप के आँसू बहाती हुई सोचती हूँ कि मैंने यह क्या किया? तुमने मेरे आदर्श और सत्य-प्रेम को सांसारिकता का रूप देकर मेरे जीवन में एक भारी भय का अनुभव उत्पन्न कर दिया है। मैं बड़े अधीर हृदय से सोचती हूँ, इसका परिणाम क्या होगा?

आज मेरे हृदय में न वे काव्य-तरंगें हैं, न तुम्हारी वह पूजनीय प्रतिमा। तुम्हारा प्रेम आज भी उसी प्रकार हृदय में उमड़ रहा है, किन्तु...किन्तु।"

पत्र बहुत लम्बा था, किन्तु महेन्द्र इससे आगे न पढ़ सका। उसका शरीर पसीने में भीग गया। पहले उसने विचारा दबे-पैरों कमरे से निकलकर रात की गाड़ी से ही चुपचाप लाहौर चला जाए, लेकिन अन्दर से आत्मा ने धिक्कारा—"ओ मक्कार! ओ विश्वास-घाती! प्रायश्चित्त कर! प्रायश्चित्त कर।" और वह सोए हुए दीपक के पैरों पर सिर रखकर चिल्लाया—"दीपक, दीपक! मुझे क्षमा करो। मैं तुम्हारा चोर हूँ—तुम्हारी रूपकुमारी का डाकू।'

किन्तु, दीपक न हिला, न बोला।

× × ×

'दीपक' की लौ जो हजारों अन्धड़-तूफानों के बीच भी भर-भर जलती रही थी—विश्वास-घात रूपी पवन का एक हलका झोंका भी सहन न कर सकी—बुझ गई।

सारे गाँव में खबर फैल गई—'उसका हार्ट फेल हो गया।

—अनुवादक श्री पी० नारायण

याद

रोम-रोम में रमी हुई है, एक तुम्हारी याद।
सुरभित कर जीवन को हरती मेरा विपुल विषाद॥
आती हैं जब याद मुझे,
अपनी वे बीती घड़ियाँ।
तरल आँख से झरनेवाली,
सुख-दुख की वे मणियाँ॥
और तुम्हारा सिर पर कर धर हर लेना अवसाद।
रोम-रोम में रमी हुई है, एक तुम्हारी याद॥
स्मृति के सरल हिंडोले पर,
तुम प्रतिपल झूला करतीं।
सदा सुहागिन की कलिका-सी,
मन में फूला करतीं॥
चली गईं तुम दूर बना चिरसंङ्गी आज विषाद।
रोम-रोम में रमी हुई है, एक तुम्हारी याद॥

तुम्हीं एक मेरी थीं 'अपनी',
इतने विस्तृत जग में।
अब आलोक बना करती है
याद तुम्हारी मग में॥
अन्तर-पट से हट जाता है विस्तृत पट-अवसाद।
रोम-रोम में रमी हुई है जननि! तुम्हारी याद॥
जी होता है एक बार यदि,
मैं तुमको पा जाती।
"माँ" कहती, फिर कुछ,
ममता से भरे शब्द सुन पाती॥
यही बहुत होता, धुल जाता मन का अमिट विषाद।
रोम-रोम में रमी हुई है जननि! तुम्हारी याद॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फ्रांस में सांस्कृतिक क्रान्ति

श्री मङ्गलकिशोर पाण्डेय

संस्कृति एक बहुत व्यापक शब्द है और इसका सम्बन्ध हमारी उन कोमल भावनाओं से है जो युग युगान्तर से काव्य, कला-कौशल, दर्शन तथा विज्ञान के रूप में प्रस्फुटित होती चली आ रही हैं। संस्कृति को बौद्धिक जीवन का विकास कह सकते हैं; फिर भी संस्कृति का क्षेत्र बहुत व्यापक है। किसी भी राष्ट्र की चेतनता हम वहाँ की संस्कृति में देखते हैं। सांस्कृतिक परिवर्त्तन राजनीतिक तथा सामाजिक परिवर्त्तन का अग्रदूत कहा जाता है और सांस्कृतिक पतन राजनीतिक पतन की भूमिका है। राजनीतिक तथा सामाजिक जीवन नष्ट होने पर भी यदि सांस्कृतिक जीवन में चेतनता है तो उस राष्ट्र की उन्नति सम्भव है, किन्तु सांस्कृतिक जीवन नष्ट होने पर किसी प्रकार की उन्नति नितान्त असम्भव है। राष्ट्र की आत्मा वहाँ की संस्कृति में हुआ करती है इसी से कोई विजेता अपने विजित देश की संस्कृति को मिटाने के लिए सर्वप्रथम प्रयत्न करता है। संस्कृति का ज्ञान इतिहास से होता है, अतः विजेता की शनि-दृष्ट उस देश के इतिहास पर पड़ती है। ऐसी कहावत भी है कि यदि किसी देश को हमेशा के लिए-गुलामी की जञ्जीर में जकड़े रखना हो तो सब से पहिले वहाँ की इतिहास नष्ट कर देना चाहिए।

इतिहास में ऐसे अगणित दृष्टान्त भरे पड़े हैं, जिनसे उपर्युक्त कथन की सत्यता सिद्ध होती है। दूर न जाकर हम अपने ही देश के इतिहास पर दृष्टिपात कर सकते हैं। आज तक न मालूम कैसे-कैसे भीषण आक्रमण इस पुण्यभूमि पर हुए: ग्रीक, शक, कुशन, हूण यवन और पाश्चात्य जातियाँ। इन आक्रमणकारियों ने हमारे जीवन को नष्ट करने के लिए कुछ भी नहीं उठा रक्खा। स्वतन्त्रता का सर्वस्व लुटा, गले में गुलामी का तौक पड़ा, जौहर की चिताएँ जलीं और गुल हुईं— लेकिन फिर भी समय-समय पर हममें एक नई चेतनता आती गई जिससे कुछ काल के लिए विजेताओं को भी अग्रतिम होना पड़ा। सरस्वती नदी की विमल धारा के समान हमारे सांस्कृतिक जीवन का स्रोत अन्दर ही अन्दर प्रवाहित होता रहा। विजेता भ्रम में आ गए, समझा हमारी संस्कृति का खात्मा हो गया— उन्हें यह यकीन हो गया कि काफिर फिर कभी उठने का नहीं। सारांश यह कि हमारे समाज के नेताओं ने, दार्शनिकों तथा कवियों ने, हमारे सांस्कृतिक जीवन को परिपुष्ट रक्खा जिसके फल-स्वरूप आज हम जीवित हैं। कबीर की साखियाँ, चैतन्य का भक्तिरस सूर तथा तुलसी की अमर रचनाएँ ऐसे ही समय की देन हैं। इन्हीं की कृतियों में हमारे सांस्कृतिक जीवन का प्राण विद्यमान रहा, जिन पर हमारा सारा अस्तित्व निर्भर था।

सांस्कृतिक जीवन के महत्त्व को और भी स्पष्ट रूप से समझने के लिए हमारे सामने आधुनिक योरप और विशेषकर फ्रांस का दृष्टान्त मौजूद है। चूँकि फ्रांस सदा से ही क्रान्तिकारी उग्र विचारों की जननी रहा है, अतः हम इसके गत सात साल के इतिहास पर ध्यान दें। इसके पूर्व कि मैं मूल विषय पर प्रकाश डालूँ, यहाँ यह कह देना अत्युक्तिपूर्ण नहीं होगा कि फ्रांस को सदा से ही योरपीय संस्कृति का अग्रणी माना जाता है। फ्रांसीसी कला-कौशल, साहित्य-सङ्गीत, वेश-भूषा, आचार-व्यवहार और रहन-सहन आज भी सारे पाश्चात्य देशों में गौरव की वस्तु समझी जाती है। इँगलैंड के बड़े परिवार में आज भी फ्रांसीसी साहित्य जानना और फ्रांसीसी भाषा बोलना सभ्यता की पराकाष्ठा समझी जाती है। सारे योरप की यदि कोई एक भाषा है, या हो सकती है तो वह फ्रेंच ही है।

गत सैनफ्रानसिस्को कान्फ्रेंस के अवसर पर एक बात बड़ी मनोरञ्जक हुई। कुछ देशों ने ऐसा चाहा कि सम्मेलन की कार्यवाही केवल रूसी और अँगरेजी भाषा में ही हो। लेकिन इससे सभा में बड़ी खलबली पड़ गई क्योंकि सभा में जितने भी देश सम्मिलित हुए थे उनमें अधिकांश फ्रेंच ही बोलते और समझते थे। इसके सिवा कुछ टेकनिकल शब्दों को फ्रेंच के सिवा और किसी भाषा में व्यक्त करने में बड़ी कठिनाई मालूम पड़ी। फलतः यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निश्चय हुआ कि सम्मेलन की कार्यवाही अँगरेजी, फ्रेंच तथा रूसी भाषा में ही होना युक्ति-सङ्गत है और ऐसा हुआ भी। आज भी सांस्कृतिक क्षेत्र में फ्रांस अपने गौरवपूर्ण आसन पर आसीन है।

जब फ्रांस नात्सियों के आक्रमण का शिकार हुआ तो जर्मनों ने फ्रांसीसी संस्कृति को मटियामेट करने के लिए कुछ भी नहीं उठा रक्खा। नात्सी जानते थे कि जब तक फ्रांसीसी संस्कृति का नाश नहीं होता तब तक वहाँ शासन करना कठिन ही नहीं वरन् असम्भव है। नात्सियों को इसका निजी अनुभव था। उनके इतिहासकारों ने उन्हें यह बात अच्छी तरह समझाई थी। परिणाम यह हुआ कि नात्सियों ने फ्रांस में पैर रखते ही वहाँ के कलाकारों, कवियों, दार्शनिकों तथा विज्ञान-वेत्ताओं को कैद कर लिया; कुछ को मौत के घाट उतार दिया और अधिकांश को हृदय दहलानेवाले यन्त्रणापूर्ण कैम्प में बन्द रक्खा। किन्तु तो भी बहुत-से फ्रेञ्च चिन्ताशील व्यक्ति भूगर्भ में जा छिपे और वहीं से क्रान्ति फैलाने के यत्न में तत्पर हुए। नात्सियों ने समझा कि फ्रांस पस्त है और, ऐसा मालूम भी होता था, लेकिन फ्रांस एक भयङ्कर ज्वालामुखी की भाँति अन्दर-अन्दर सुलग रहा था। इस ज्वालामुखी के अन्दर आग सुलगानेवाले ने ही फ्रेंच विद्वान् तथा दार्शनिक थे जो जमीन के अन्दर खुफिया तौर से क्रान्तिकारी षड्यन्त्र में लगे थे। इन्हीं चिन्ताशील व्यक्तियों ने Resistance Movement (प्रत्याक्रमण आन्दोलन) जोरों से चलाया जिसका रोमाञ्चकारी इतिहास आज हमारे सामने है। अनेकानेक कष्ट झेलकर, मृत्यु की भी परवा न करके, इन निर्भीक लेखकों तथा विद्वानों ने अपनी मातृभूमि की स्वतन्त्रता की भावना प्रज्वलित रक्खी। "जीन प्रिवो" (Jean Prevot) जैसा ओजस्वी लेखक और उग्र विचारों का उपासक दुष्ट नात्सियों की गोली का शिकार बना। ब्रूहा (Bruhat) इउजेन ब्लोश (Eigene Bloch) लूई कारतां (Louis Cartan), कैमेय (Cavailtes) लौतमान (Laut Mann) तथा सोलोमान (Solomon), जैसे विज्ञानवेत्ता मौत के घाट उतार दिए गए। बोरेल (Borel), कौटन (Cotton) लेपिक (Lepicque) लौंजविन (Langevin), मौगिन (Manguin)-जैसे विद्वान् कैद कर लिए गए। मैक्स जैकोब (Max Jacob) जैसा कवि नात्सियों द्वारा सताया जाकर मृत्यु को प्राप्त हुआ। राष्ट्रीय कला-भवन से बहुत-सी अमूल्य वस्तुएँ चुराकर नात्सियों ने जर्मनी भेज दीं। इतना होने पर भी फ्रांसीसी कवियों तथा मननशील लेखकों ने गुप्त रूप से प्रत्याक्रमण आन्दोलन जारी रक्खा। प्रत्याक्रमण आन्दोलन में भाग लेनेवाले कवियों में पॉल वालेरी, (Paul Valiry), क्लौदराय (Claude Roy), पाल एलुवर (Paul Eluard) के नाम उल्लेखनीय हैं। इन चिन्ताशील कवियों की रचनाएँ राष्ट्रीय भावनाओं से ओतप्रोत हैं। राष्ट्र की सूखे नसों में रक्त प्रवाहित करनेवाली इनकी कमनीय काव्य कला स्वदेश प्रेम में सराबोर होती है। उनकी वाणी में वह अमरता है जिसको पढ़कर राष्ट्र निराशा के गम्भीर तिमिर में भी आशा का स्वप्न देखता है। उनका राग "हाला-प्याला" का नहीं होता। न तो उनकी कल्पना "इन्द्रधनुष की पखुड़ियों" पर ही छायावादी वेतान की तान भरती है। उनके काव्य से राष्ट्रीयता का उद्दाम निर्झर-धारा प्रवाहित होती है जिसे पढ़कर राष्ट्रीय भावना परिपुष्ट और बलवती होती है। पाल एलुवर की कोमल कान्त पदावली किसके हृदय को मर्माहत नहीं करती? क्लौद राय की कविता किस मनोहर ढङ्ग से राष्ट्रीय भावना को उद्दीपित करती है!

आजकल फ्रांसीसी गद्य-लेखकों में भी ठीक वैसे ही ओज पाया जाता है जैसा कि पुनर्निर्माण काल के लेखों में देखा जाता है। नात्सी आक्रमण ने उनके सामने जीवन का एक दूसरा ही पहलू उपस्थित किया है। उच्छृङ्खल बर्बरता किस पराकाष्ठा तक पहुँच सकती है, इस बात से योरप आज भली भाँति परिचित है। सभ्यता तथा संस्कृति को भविष्य में ऐसी भीषण बर्बरता से किस भाँति बचाया जा सकता है—इस प्रश्न को लेकर फ्रांस के बहुत-से चिन्ताशील व्यक्ति व्यस्त हैं। पुराने दृष्टिकोण तथा पुरानी रीति-नीति उनको व्यर्थ और फीके मालूम होते हैं। नए समाज की नींव नए आदर्श पर डालनी होगी, तभी समाज कायम रह सकता है। वे सिद्धान्त जो गत ४-५ साल की अग्निपरीक्षा में खरे उतरे हैं उन्हीं पर नये समाज का निर्माण करने से ही राष्ट्र अपने खोए हुए गौरव को प्राप्त कर सकता है।

फ्रांस आज नए सिद्धान्त तथा नए विचारों की दीक्षा ले रहा है। सदा की भाँति फ्रांसीसी तिरङ्गा आज भी बौद्धिक क्षेत्र में सबसे आगे है। पुराने सिद्धान्त फीके दारलाँ तथा लावाल के प्रतीक हैं; क्योंकि इन्हीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बदौलत फ्रांस को जर्मन आक्रमण-जैसी यातनाओं का सामना करना पड़ा। सांस्कृतिक क्रान्ति की एक लहर आज फ्रांस के एक छोर से दूसरे छोर तक फैली हुई है। सड़े-गले पुराने नियम प्रत्याक्रमण-आन्दोलन की भीषण अग्नि-ज्वाला में जलकर राख हो चुके हैं। पुराने युग का अन्त हो चुका है। अब फ्रांस नए युग से गुजर रहा है। "पेरिस" के "La Gazette des Letters" नामक साप्ताहिक पत्र में एक फ्रेंच लेखक लिखता है :—

"मेरे लिए जीवन का आरम्भ १९४० के जून से हुआ है। आज मैं जो कुछ जानता हूँ वह मैंने गत पाँच साल में सीखा है। इसके पहले जो कुछ मुझे सिखाया गया था, मेरे लिए बेकार है।"

जो बातें इस फ्रेंच विद्वान् ने अपने विषय में ऊपर के उद्धरण में प्रकट की हैं वही बातें इस समय फ्रांस के बौद्धिक क्षेत्र के विषय में कही जा सकती हैं।

फ्रांस इस समय पुरानी रूढ़ियों की होली जलाकर नूतन विचार के अबीर-गुलाल से खेल रहा है।

यदि सांस्कृतिक क्रान्ति सचमुच राजनीतिक और सामाजिक क्रान्ति की भूमिका है तो फ्रांस का वर्त्तमान इतिहास इस बात का प्रमाण है। आज फ्रांस में साम्यवादी सरकार का शासन है। दो महीने पहले कौन कह सकता था कि जेनरल द-गाल जैसे लोक-प्रिय नेता को इस्तीफा देना पड़ेगा! जेनरल द-गाल अपनी लोक-प्रियता के बावजूद भी नरम विचार के व्यक्ति हैं। फ्रांस की जनता ने नरम विचारों को तिलाञ्जलि दे दी है।

फ्रांस का भविष्य उन नेताओं के हाथ में है जिन्होंने सांस्कृतिक क्रान्ति के मर्म तथा महत्त्व को भली भाँति समझा है। यही कारण है कि जेनरल द-गाल के स्थान पर आज मो० फेलिक्स गूईं। (M. Felix Gouin) हैं।

—

मैं

श्री ज्वालाप्रसाद मिश्र, बी० एस-सी०, एल-एल० बी०

अपने में भी हो मस्त न मानव अपने को पहचान सका।
'मैं' मैंने कितनी बार कहा पर मैं कब 'मैं' को जान सका।
मैं एक हवा-सा आता हूँ; मैं एक हवा-सा जाता हूँ;
मैं इन्हें हँसाता आता हूँ; मैं उन्हें रुलाता जाता हूँ;
आना पड़ता है, आता हूँ; जाना पड़ता है जाता हूँ;
मैं क्या हूँ, कौन, कहाँ का हूँ? क्यों आता हूँ क्यों जाता हूँ?
औरों का पता लगाया पर मैं अपना पता लगा न सका।
'मैं' मैंने कितनी बार कहा पर मैं कब 'मैं' को जान सका॥
आँधी आई, तूफान चला, बिजली चमकी, बादल छाया;
सागर गरजा, सरिता उमड़ी, पर्वत मेरे पथ पर आया;
पग-पग पर मुझको शूल मिले, पग-पग पर सङ्कट मँडराया;
मुझसे लड़ती ही रही, प्रकृति मैं मुक्त पुरुष कब घबड़ाया;
मुझको अपने जीवन-पथ से कोई भी कभी हटा न सका।
'मैं' मैंने कितनी बार कहा पर मैं कब 'मैं' को जान सका॥
वह कहता है मसजिद मेरी यह कहता है मन्दिर मेरा,
वह कहता है ईंटें मेरी, यह कहता है पत्थर मेरा;
'मैं' के मन को समझाने का यह सुन्दर-सा साधन मेरा,
मुझको न दिखा इन रूपों में लेकिन वह परमेश्वर मेरा;
'सोहं' 'सोहं' कहकर भी मैं उसको अपने में पा न सका।
'मैं' मैंने कितनी बार कहा पर मैं कब 'मैं' को जान सका॥
यह 'मैं' जब से मुझमें आया मैंने कितना उत्पात किया;
इस 'मैं' के पीछे क्या जानें मैंने क्या-क्या दिन-रात किया;
कितना ही शोणितपात किया कितना ही झञ्झावात किया,
'मैं' को अपनाकर मानव ने दानव को आखिर मात किया,
'तत्त्वम् असि' यह कहकर भी वह अपने को कभी भुला न सका।
'मैं' मैंने कितनी बार कहा पर मैं कब 'मैं' को जान सका॥
उस आदिम युग से इस युग तक युग पर युग रच डाले मैंने,
अपने ही हाथों से मैंने सङ्कट के घन टाले मैंने,
जाने जीवन के कितने ही पहलू देखे-भाले मैंने,
अरमान न जाने कितने ही अपने दिल में पाले मैंने,
जो गया, गया वह चला गया वह तो फिरकर फिर आ न सका।
'मैं' मैंने कितनी बार कहा पर मैं कब 'मैं' को जान सका॥
यह घर मेरा वह घर मेरा किसको कह दूँ मैं घर मेरा,
यह रूप निपट नश्वर मेरा वह जीवन अविनश्वर मेरा,
मुझको कब तक भटकायेगा यह संसृति का चक्कर मेरा,
हूँ ढूँढ़ रहा क्या जाने कब पाऊँ मैं आखिर घर मेरा,
अपने इस दो दिन के घर को मैं अपना घर कब मान सका।
'मैं' मैंने कितनी बार कहा पर मैं कब 'मैं' को जान सका॥

—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रायश्चित्त

श्री का० न० रामन्ना शास्त्री

"क्यों भई, यह भीड़ कैसी है?" एक राहचलतू ने भीड़ के पास रुककर जिज्ञासा-युक्त वाणी में पूछा।

"सुनते हैं, एक स्त्री ने कुएँ में गिरकर आत्महत्या कर ली।" भीड़ में से एक ने जवाब दिया।

बिना पूछे ही किसी ने अस्पष्ट और धीमी आवाज में कहा—"यह भी सुना जा रहा है कि उस बिचारी को जबरदस्ती कुएँ में ढकेला गया है।"

इस तरह भीड़ में नाना तरह के लोग नाना तरह की बातें कर रहे थे। किसी को कोई निश्चित पता नहीं लग रहा था।

अदालत के सामने एक ही वकील मुजरिम से अपने तार्किक प्रश्नों द्वारा असली भेद का पता लगाने में सफल हो जाता है। क्योंकि, उसको इसका अभ्यास होता है और उसे इसी बात की शिक्षा मिली होती है। लेकिन, औसत बुद्धि और हैसियतवाले भीड़ के किसी सदस्य से इस तरह की वकीलाना खोज की आशा कम होती है। फिर भी, जैसे अनेक चनों के मिल जाने से ही भाड़ फूटता है, उसी तरह, भीड़ के विभिन्न बुद्धि और हैसियतवाले मिलकर कुशाग्र बुद्धि के वकील के तर्क को भी मात कर देते हैं और असली भेद की खोज लगा ही लेते हैं। किन्तु इसका यह मतलब नहीं कि भीड़ के सदस्य सन्दिग्ध बात का पता लगाने में सफल हो जाने के बाद उसपर कार्रवाई करने के लिए उद्यत हो जाते हों। उन्हें इस बात से क्या मतलब? एक तो उन्हें अपने घर गृहस्थी के काम से ही फुर्सत नहीं मिलती; दूसरे, फिजूल के झञ्झटों से दूर रहने की उनकी मनोवृत्ति। अगर कोई झञ्झट में पड़ने का साहस कर ही लेता है, तो उसका साहस क्षणिक और अस्थायी ही होता है। हाँ, यह प्रायः पाया जाता है कि ऐसे साहस के लिए कोई कदम उठाता है, तो उसका वे समर्थन अवश्य करते हैं—फिर वह समर्थन मूक ही क्यों न हो।

यही बात इस भीड़ की थी। घटना के कुछ देर बाद, भीड़ ने असली भेद मालूम कर लिया, कि स्त्री ने आत्महत्या नहीं की। उसे जबरदस्ती आँगन के कुएँ में ढकेला गया। कुआँ ऊबड़-खाबड़ होने की वजह से वह सीधे पानी तक नहीं पहुँची। भीतर की चट्टान के कँगूरे पर अटकी रही। लोगों ने उसे बाहर निकाला; मरी नहीं थी। काफी चोट आ जाने से बेहोश हो गई थी। धीरे-धीरे उसे होश आने लगा; लोग एक-एक करके जाने लगे। सबके हट जाते ही उसकी सास ने उसका गला घोंट दिया। वह मर गई। वह चीख भी न सकी। उसकी हत्या की गई। जान-बूझकर उसने प्राण नहीं दिए। यही चर्चा भीड़ में, पड़ोस में—यहाँ तक कि सारे मुहल्ले में हो रही थी। सारा मुहल्ला स्त्री के सद्गुण, सदाचार और पातिव्रत्य धर्म की प्रशंसा कर रहा था और पति, सास और ससुर को कोस रहा था। कोई कह रहा था—

"लोग शादी के नाम पर बैपार करते हैं। मनमाना दहेज माँगते हैं। दहेज के लालच में एक के बाद दूसरी पत्नी की हत्या करके शादियों पर शादियाँ करते चले जाते हैं। धिक्कार है ऐसे नर-पशुओं को....."

कोई कह रहा था—"समाज को कलङ्कित करनेवाले ऐसे पापी-चाण्डालों को तो एकदम जिन्दा दफना देना चाहिए। बिरादरीवाले क्यों अपनी लड़कियाँ ऐसे हत्यारों को देते हैं?"

समाज के अन्दर का यह दुराचार आज का नहीं है। सदियों से चला आ रहा है। समाज के सदस्य इस दुराचार को देख रहे हैं—उनकी सन्तान देख रही है। यह व्यापार समाज के कोने-कोने में हो रहा है; और नित्य प्रति हो रहा है। कहीं पत्नी को जहर पिलाकर मारा जा रहा है, कहीं कुएँ में ढकेलकर, तो कहीं मिट्टी का तेल छिड़ककर! समाज के समझदार और पढ़े-लिखे लोगों की आँखों के सामने यह सब हो रहा है। लेकिन, इस दुराचार और हत्या को रोकने के लिए उनके कदम नहीं उठते! वे डरते हैं—त्याग और बलिदान से घबराते हैं।

धन के लोभी—हत्यारे अपनी कलुषित करतूतों को ढाँकने के लिए इन निरीह अबलाओं पर आत्महत्या का दोष मढ़ते हैं। रूढ़िवादी नासमझ जनता इन स्वार्थियों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के बहकावे में आकर विश्वास कर लेती है। कुछ लोग सन्देह करते हैं। लेकिन, इनका सन्देह अधिक काल तक नहीं टिकता। कुछ दिनों के बाद ये घटनाएँ एक-दम भुला दी जाती हैं। समाज का नित्यक्रम चलता रहता है।

कुछ स्वार्थियों ने हत्या के इस प्रकार को भोंडा समझा। उन्होंने आधुनिक विज्ञान से अनुचित लाभ उठाया। उसे परिष्कृत रूप दिया ताकि सन्देहों से मुक्त रहें। पत्नियों के शरीर में इंजेक्शन द्वारा असाध्य व्याधि के कीटाणु पहुँचाते हैं। अबलाएँ घुल घुलकर मर जाती हैं। नुमाइशी प्रेम दिखाने के लिए इलाज भी करते हैं। इतने पर भी सन्देह फूट ही पड़ा, तो उस पाप के धन का कुछ अंश अधिकारियों को चढ़ा देते हैं। मामला रफा-दफा होता है। दूसरी जगह से दहेज ऐंठने के लिए रास्ता साफ हो जाता है।

ऐसी ही एक बात इस हत्या के मामले में हुई। मुहल्ले भर में बहनेवाली सन्देह की हवा का एक झोंका पुलिस-थाने की दीवारों से टकराया। पुलिसवालों को जेबें गरम करने का अवसर मिला। थानेदार साहब मय दल-बल के घटनास्थल पर पहुँचे। मृतक स्त्री के पति और ससुर से एकान्त में बातें कीं। अपने ही असर के कुछ मुहल्लों को पञ्च बनाया। पञ्चों ने शव को देखा। थानेदार ने अन्य लोगों के सामने पञ्चों से पूछा :—

"आप पञ्चों में किसी को हत्या का सन्देह है?"

"इसने तो कुएँ में गिरकर खुदकुशी की है। किसी ने इसकी हत्या नहीं की।" पञ्चों ने जवाब दिया।

"अच्छा तो आप लोग तसदीक करते हैं?"

"जी, यह तो बिलकुल स्पष्ट है।"

"अच्छा तो अब शव की अन्त्येष्टि-क्रिया कर दो।"

मृतक स्त्री के सास, ससुर और पति खुश हुए। पुलिस-वाले खुश हुए और खुश हुए पञ्च बननेवाले। लेकिन मुहल्ले में सन्देह और घृणा का वातावरण घना हुआ। कुछ लोगों को इस नाटकीय पञ्चनामे से रोष आया। ये लोग देवस थे—अकर्मण्य थे—साहसहीन थे किन्तु थे बेचैन!

× × ×

मृतक स्त्री का नाम सावित्री देवी था। सावित्री के पिता ठा० बलवीरसिंह किसी दूर के गाँव में रहते थे। उन्हें सिवा सावित्री के, और कोई सन्तान न थी। सावित्री की मा सावित्री को एक ही साल की छोड़कर परमधाम को सिधार चुकी थी। अतः पिता ने बड़े दुलार से उसका लालन-पालन किया था। उनकी आरम्भिक और अन्तिम इच्छा यही थी कि सावित्री जहाँ भी रहे, सुख से रहे। ब्याह के पहले भी उन्होंने सावित्री को सुखी रखने में कोई बात उठा नहीं रक्खी थी। ब्याह की धूम-धाम और दहेज के लिए उन्होंने अपने लगभग सब खेत बेंच दिए थे। अस्तु, उन्हें, जैसे ही अपनी पुत्री—सावित्री के कुएँ में गिरकर मर जाने का दुःखद समाचार मिला, वैसे ही वे एकदम सुन्न हो गए—उनके होश उड़ गए। उन्होंने बड़ी मुश्किलों से अपने आपको सँभाला और वे सावित्री के घर की ओर चल दिए। रास्ते में उनको सावित्री के मुहल्ले के एक-दो आदमी मिले। उन्होंने ठाकुर साहब को सावित्री की हत्या की कहानी सुनाई। उन्हें विश्वास नहीं हुआ। वे आगे बढ़े। रास्ते में सावित्री के मुहल्ले के और लोग मिले। उन्होंने भी यही किस्सा दोहराया। ठाकुर बलवीरसिंह समझदार थे। उन्होंने पुत्री-शोक की उद्विग्न अवस्था में भी अपने मस्तिष्क को विचलित नहीं होने दिया। उन्होंने समझा, मुहल्लेवाले, सम्भवतः किसी द्वेष अथवा दुश्मनी के भाव से सावित्री के ससुरालवालों पर मिथ्या आरोप लगा रहे होंगे। वे मुहल्ले में पहुँचे। प्रायः सभी मुहल्लेवालों ने सावित्री की हत्या की कहानी आरम्भ से अन्त तक सुनाई। अब उन्हें विश्वास हुआ। ससुराल की पिछली बातें एक-एक करके उनके सामने चल-चित्र के समान आने लगीं। सावित्री जब-जब उनके पास आती तो अपनी ससुराल की यन्त्रणाओं की शिकायतें करती। ठाकुर बलवीरसिंह उसे हिन्दू नारी के उच्च आदर्शों की शिक्षा देते। उसे ढाढ़स बँधाते। पिता की आज्ञाकारिणी पुत्री पिता के आदेशों पर चलती। ससुराल की मारपीट, गाली गलौज और उलाहनों को वह बर्दाश्त करती चली जाती। उन्हें पुत्री की एक-एक बात याद आने लगी। उनके सामने सावित्री की माँ की प्रतिमा सजीव होकर कहने लगी—

"देखो, सावित्री को तुम्हारे हवाले कर रही हूँ। इसको कोई तकलीफ न होने पाए।"

सावित्री की माँ की याद आते ही उनके मस्तिष्क में अनेक कल्पनाओं का ताँता बँध गया—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"सावित्री की हत्या से सावित्री की माँ की आत्मा बेचैन हो उठेगी। उसे शान्ति नहीं मिलेगी। सावित्री की हत्या की जवाबदेही मुझ पर भी है। समय रहते ही मैंने क्यों नहीं हस्तक्षेप किया? अब कोई उपाय है?.....हाँ, उपाय है। बस, एक ही उपाय है—प्रायश्चित्त—प्रायश्चित्त!!" मन ही मन बड़बड़ाते हुए वे वहाँ से चल दिए।

× × ×

प्रकृति का नियम कठोर है। उसके न्यायासन के सामने सभी राजा और रङ्क, अमीर और गरीब समान हैं—बराबर हैं। जब न्याय के अभिभाषक न्याय की अवहेलना करते हैं अथवा जनता के रक्षक अपने कर्तव्य-पथ से विमुख होकर जनता के भक्षण पर आमादा हो जाते हैं, तब जनता की प्राकृतिक भावनाएँ विक्षुब्ध हो जाती हैं—उद्विग्न हो उठती हैं। इन्हीं विक्षुब्ध भावनाओं को संसार के स्वार्थी मनोविकार कहते हैं—क्रोध कहते हैं। इसी क्रोध को वे सम्मोह की जननी और बुद्धि-भ्रष्टता की माता कहते हैं। संसार के स्वार्थी यह नहीं मानते कि इन तमाम मनोविकारों की सृष्टि करने का दायित्व उन्हीं के कन्धों पर है। क्योंकि उनमें साहस नहीं, वाणी में स्पष्टोक्ति का बल नहीं है।

मनुष्य का चोला प्रकृति के विभिन्न घटकों का सन्तुलित समूह है। उसके अन्दर मनोविकार प्राकृतिक है जो भौतिक वातावरण का प्रतिबिम्ब है—प्रतिक्रिया है। प्रकृति अपना कार्य सदा करती ही रहती है—कहीं व्यक्ति-द्वारा और कहीं व्यक्ति-समूह-द्वारा। जनता के इसी प्राकृतिक विक्षोभ ने अन्याय के प्रतीक फ्रांस के सोलहवें लूई का सिर कुचलकर रख दिया। इसी प्राकृतिक विक्षोभ ने जारशाही का उन्मूलन किया। मनुष्य के इसी प्राकृतिक विक्षोभ ने आज तक कितने ही अत्याचारियों को सदा के लिए सुला दिया। ठाकुर बलवीरसिंह भी प्रकृति की साधारण सन्तानों में से एक थे। उन पर अपनी पुत्री की बीभत्स हत्या की प्रतिक्रिया ने असर किया। उनका प्राकृतिक मनोविकार उत्तेजित हो उठा। वे अन्याय को धोकर न्याय को प्रस्थापित करने के लिए प्रेरित हुए।

उन्होंने घर छोड़ा। खेती-बाड़ी छोड़ी—यहाँ तक कि जीवन की सभी आशाएँ छोड़ दीं। वे संसार से विरक्त हो गए। उन्होंने दाढ़ी बढ़ाई, जटाएँ बढ़ाईं। शरीर में भभूत मली और धूनी रमाई।

जिस थानेदार ने रिश्वत लेकर सावित्री की हत्या को दबा दिया था, उसका पास ही के एक कस्बे में तबादला हो गया था। ठाकुर बलवीरसिंह उसी कस्बे में पहुँचे। यहाँ उन्हें कोई पहचानता न था। यों भी वे साधू बने हुए थे। उन्होंने अपनी धूनी थाने के पास ही लगाई। कस्बे की भावुक जनता साधू बाबा के दर्शन करती और उनके उपदेशामृत को ग्रहण करती। थाने के सिपाही साधू बाबा का आदर करते। इन्हीं सिपाहियों द्वारा साधू बाबा थानेदार की हलचलों की टोह लगाते।

एक दिन मालूम पड़ा कि थानेदार एक गाँव में किसी वारदात की तहकीकात करने के लिए जानेवाले हैं। गाँव जाने का रास्ता कच्चा था। बीच में छोटा सा जङ्गल भी पड़ता था। साधू बाबा पहले ही से उसी जङ्गली रास्ते पर पहुँच गए। पहुँचने के पहले वे अपने असली रूप में आ गए। दाढ़ी-जटा साफ करा दी।

जेठ-बैसाख की धूप थी। सूर्य भगवान् सारी शक्ति लगाकर पृथ्वी के प्राणियों को अपनी प्रखरता से तड़पा रहे थे। पक्षिगण छाँह के लिए हरी-भरी पत्तियों की आड़ ले रहे थे। थानेदार घोड़ा दौड़ाते हुए जङ्गल के अन्दर से गुजरने लगे। साँय-साँय करता हुआ एक पत्थर घोड़े के माथे के ठीक बीचोंबीच आ लगा। पत्थर की गति बड़ी तेज थी। क्योंकि वह हाथ से नहीं—गोफन से फेंका गया था। घोड़ा चिंघाड़ता हुआ धरती पर लोट-पोट हो गया। उसने सवार को अपनी पीठ पर से फेंक दिया। एक चीख के साथ थानेदार जमीन पर आ गिरे। सूर्य की असह्य तपन और भाड़ की बालू के समान गरम धरती। थानेदार चने के समान भुनने लगे। तिस पर घोड़े की पीठ से गिरने के कारण शारीरिक चोट की असह्य वेदनाएँ—बेहोश हो गए। उठने की शक्ति बिलकुल शिथिल पड़ गई। जब होश में आए तो उन्होंने अपने सामने एक आदमी को देखा। आदमी ने सहानुभूति दिखाते हुए कहा—

"अरे थानेदार साहब, आप! घोड़े से गिर गए।"

"तुम कौऽऽऽन—खैर जो भी हो, जरा पानी पिलाओ।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"जी, अभी पानी लाता हूँ, जरा छाँह में चलिए।"

"मैं चल नहीं सकता—चोट सख्त आई है।"

"कोई फिक्र न करें, मैं अपनी पीठ पर ले चलता हूँ।" कहकर बलवीरसिंह ने थानेदार को अपनी पीठ पर लाद लिया और उन्हें वे एक पेड़ की छाँह में ले गए।

थानेदार को इनके बर्ताव से पूरा विश्वास हो गया कि ऐसी मुसीबत और ऐसे निर्जन स्थान में सचमुच कोई हमदर्द पैदा हो गया। थानेदार ने कृतज्ञता प्रकट की। थानेदार को एक पेड़ के नीचे लिटाकर ठाकुर बलवीरसिंह ने अपने पास के छुरे से उनकी उँगलियाँ और नाक काट ली। थानेदार फिर बेहोश हो गए। बलवीरसिंह ने उनकी पिस्तौल और कारतूसें ले लीं। थानेदार के होश आने पर उन्होंने कहा—

"रिश्वत लेकर हत्याओं को दबा देने के जुर्म में यह छोटा-सा दण्ड है। लोग तुम्हारी कटी नाक को देखकर तुम्हारी रिश्वतखोरी की याद करेंगे।"

× × ×

थानेदार को सजा देने के बाद ठाकुर बलवीरसिंह शहर की ओर निकल पड़े। रास्ते में वे जरा भी सुस्ताए नहीं। जिस समय ठाकुर साहब सावित्री के मुहल्ले में पहुँचे उस समय रात के डेढ़-दो बजे होंगे।

पूर्णिमा की चाँदनी चमक रही थी। दिनभर की प्रखर तपन के बाद रात में हवा कुछ शीतल हो गई थी। मुहल्लेवाले कुछ छतों पर सो रहे थे और कुछ अपने आँगनों में। सावित्री के ससुर और पति भी अपने आँगन में सो रहे थे। सब ओर सन्नाटा छाया हुआ था।

ठाकुर बलवीरसिंह ने सावित्री के ससुर और पति को जगाया और पूछा कि सावित्री की सास कहाँ है।

सावित्री के ससुर को ठाकुर बलवीरसिंह के इतनी रात में एकाएक आने से कुछ आश्चर्य हुआ। उन्होंने ठाकुर साहब से चारपाई पर बैठने का आग्रह किया।

"नहीं, मैं बैठूँगा नहीं। मैं प्रायश्चित्त करने आया हूँ।"

"कैसा प्रायश्चित्त!"

बलवीरसिंह ने फौरन एक-एक करके सावित्री के ससुर, पति और सास को अपनी पिस्तौल का निशाना बनाया।

पिस्तौल की आवाज से सारा मुहल्ला जाग गया। हो-हल्ला शुरू हुआ। घटनास्थल पर भीड़ इकट्ठा हो गई। मुहल्ले-वालों ने ठाकुर बलवीरसिंह को पहचान लिया। वे भौंचक्के से खड़े रहे।

बलवीरसिंह ने पिस्तौल और कारतूस भीड़ के सामने फेंकते हुए कहा—

"मैंने आज प्रायश्चित्त किया है। सावित्री की माँ ने मरते समय सावित्री को मेरे सुपुर्द किया था। मैंने उसे इन हत्यारों के सुपुर्द किया। अब मैंने प्रायश्चित्त कर लिया। आप लोग चाहें तो मुझे पकड़ सकते हैं।"

भीड़ अवाक् होकर टुकुर-टुकुर देखती रही।

फिर थोड़ी देर रुककर बलवीरसिंह ने आगे कहा—

"मैंने उस थानेदार की भी नाक और उँगलियाँ काट लीं जिसने सावित्री की हत्या को रिश्वत लेकर दबा दिया था।"

ठाकुर साहब ने चलना शुरू किया। भीड़ ने उन्हें रास्ता दिया और आँखों से ओझल होते तक वह उनकी तरफ देखती रही।

भीड़ जब होश में आई तो एक ने कहा—

"ठाकुर बलवीरसिंह ने अपनी पुत्री की हत्या का बदला लिया है—हत्यारों की हत्या की है।"

किसी ने कहा—"नहीं, उन्होंने अपनी पुत्री के साथ के अन्याय को धोया है उन्होंने न्याय किया है।"

किसी ने कहा—"बलवीरसिंह तो कहते चले गए कि उन्होंने अपनी पत्नी की आत्मा को शान्ति देने के लिए प्रायश्चित्त किया है।"

——

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय की एक झाँकी

श्री हरिकेशव घोष

कुछ काल पहले एक मित्र ने मुझसे प्रश्न किया था—"कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के सम्बन्ध में आप अपने वे अनुभव क्यों नहीं लिख डालते जिनसे आप प्रभावित हुए हों? अनेक व्यक्तियों के लिए आपके ये अनुभव मनोरञ्जक सिद्ध होंगे और विश्वविद्यालय के छात्रों को उपादेय भी।"

"लिख दूँगा कभी!" मैंने हँसते हुए कह दिया था।

और, आज देखता हूँ कि वह समय आ पहुँचा है, जब मैं यह महसूस करता हूँ कि कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के सम्बन्ध में, मैं अपने अनुभव लिख डालूँ—वे अनुभव जो आज उतने मधुर नहीं रहे, जितने कि दस साल पहले थे। 'नेशनल ज्याग्रफिकल मैगजीन' में कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय पर एक लेख पढ़ रहा था कि मेरे मन में भी अपने अनुभवों को अङ्कित करने की एक अज्ञात प्रेरणा उद्भूत हुई।

सन् १६३५ ई० में, कोहरे से परिपूर्ण एक प्रभात में, लन्दन-स्थित मेरे एक मित्र मुझसे भेट करने आए। उनके साथ तीन अन्य भारतीय मित्र भी थे। इन सबके साथ ही मैं दुनिया का अत्यन्त प्रसिद्ध 'विश्वविद्यालय-नगर' देखने के लिए रवाना हुआ। घनीभूत कोहरा धीरे धीरे छिन्न-भिन्न हो गया और सूर्य की चमकीली किरणों ने पृथ्वी का स्वागत किया। इसी किरण-वेला में विश्वविद्यालय-क्षेत्र के निकट एक स्टेशन पर हम लोगों ने कदम रक्खा। वहाँ एक मित्र ने हम लोगों का स्वागत किया। पास ही एक रेस्तराँ था। मित्र के अनुरोध पर हम लोगों ने दोपहर का भोजन इसी रेस्तराँ में किया।

हम लोग उसी दिन वापस हो जाना चाहते थे, अतः भोजन के बाद ही हम लोग विश्वविद्यालय नगर की झाँकी देख लेने के लिए चल पड़े—उस विश्वविद्यालय-नगर की जिसमें अनेक ऐसे कालेज अवस्थित हैं, जिनमें इँग्लैंड के कितने ही महान् विद्वानों ने शिक्षा प्राप्त की और अपने देश को अपने बौद्धिक कार्यों से गौरवान्वित किया।

रेस्तराँ से बाहर आते समय जिस प्रथम व्यक्ति से मेरी भेट हुई उसे देख, क्षण भर के लिए मुझे महान् आश्चर्य हुआ। आश्चर्य का एक कारण था। यह भारतीय विद्यार्थी कलकत्ते में मेरा घनिष्ठ मित्र रह चुका था। यहाँ वह ग्रेजुएट होने के बाद अपनी शिक्षा जारी रखने के उद्देश्य से आया था और एक साल के बाद ही भारत वापस जानेवाला था। इस मित्र ने मुझे इस यात्रा में बहुत सहायता दी और अनेक ज्ञातव्य बातें भी समझाईं। उस सप्ताह में वहाँ कौन-कौन-सी विशेष महत्त्वपूर्ण बातें होनेवाली थीं, यह भी इसी मित्र ने मुझे बतलाया था।

लन्दन की यही यात्रा मेरी प्रथम और अन्तिम यात्रा थी। मैं जानता था कि पुनः लन्दन जाना मेरे लिए कठिन था। इसलिए स्वभावतः मैं इस सिलसिले में ही अधिक-से-अधिक बातों की जानकारी प्राप्त कर लेना चाहता था और वहाँ की महत्त्वपूर्ण गति-विधि से परिचित हो जाना चाहता था।

विश्वविद्यालय-नगर के परिभ्रमण में जो कुछ भी समय लगा, मेरे यह भारतीय मित्र बराबर मेरे साथ रहे। उनकी उत्सुकतापूर्ण उस मुद्रा को कभी मैं भूल नहीं सकता, जो इस प्राचीनतम विश्वविद्यालय के अनेक ऐतिहासिक चिह्नों और तथ्यों को विस्तारपूर्वक हम लोगों को बतलाने तथा समझाने में अपना सहयोग दे रही थी।

हम लोगों ने बृहत् और दोहरे फाटक को पार कर विश्वविद्यालय-क्षेत्र में प्रवेश किया। उन प्रभावोत्पादक और भव्य तथा विशाल इमारतों को हमने देखा-भाला जो विभिन्न शताब्दियों की स्थापत्य-कला का मूर्त्त रूप अपने वक्ष से चिपकाए खड़ी हैं।

कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के प्रोफेसरों का ब्रिटिश जनता में पर्याप्त सम्मान किया जाता है। इनकी तुलना में बहुत ही कम ऐसे प्रोफेसर होंगे जिनका देश में इस जैसा सम्मान किया जाता हो अथवा उनकी विद्वत्ता की धाक मानी जाती हो। कैम्ब्रिज में अठारह कालेज पुरुषों के लिए और दो स्त्रियों के लिए हैं विश्वविद्यालय में छात्रों के रहने आदि की व्यवस्था का जहाँ तक सम्बन्ध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय का
प्रधान द्वारपाल

'प्रेसी कार्नर' में प्रति-
योगिता का एक दृश्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

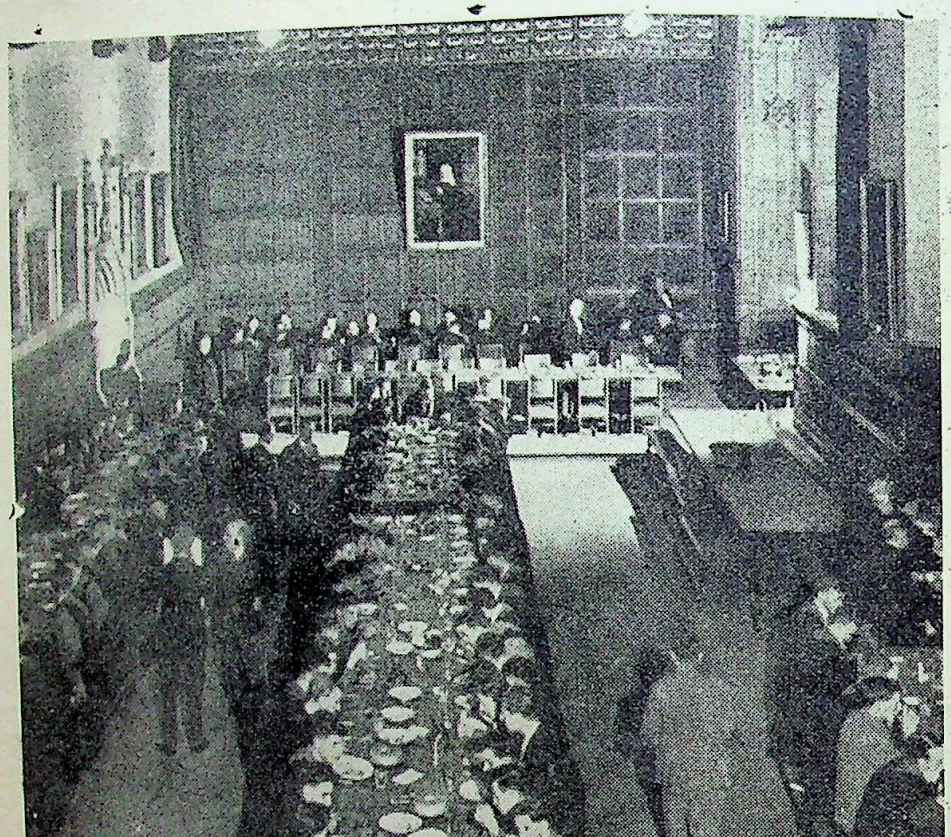

कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के छात्र-भोज का एक दृश्य

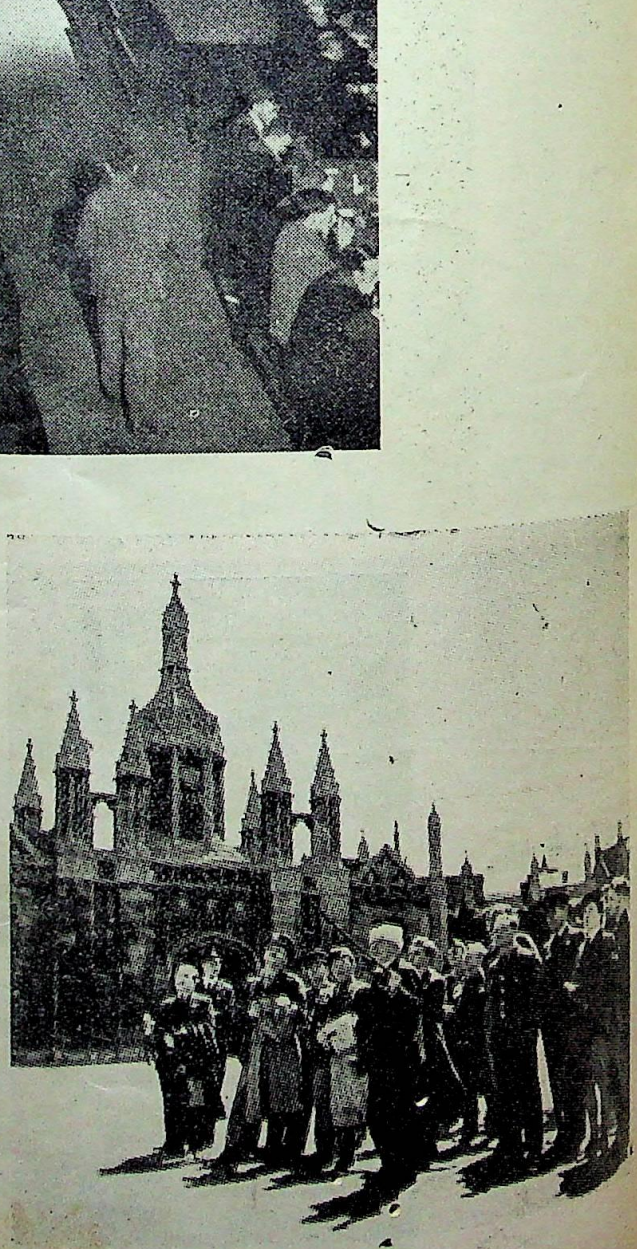

कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के २० कालेजों में से एक का सिंहद्वार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, कैम्ब्रिज एक आदर्श विश्वविद्यालय है। इस विश्वविद्यालय में सभी विषयों पर लेक्चर दिए जाने की व्यवस्था है। विज्ञान-सम्बन्धी आधुनिकतम प्रयोगशालाएँ इसमें हैं और सभी तरह की डिग्रियाँ इसके द्वारा प्रदान की जाती हैं।

यद्यपि इसके प्रत्येक कालेज का स्वतन्त्र अस्तित्व है और उसकी आर्थिक व्यवस्था भी पुष्ट है, फिर भी विश्वविद्यालय कभी-कभी किसी विशेष आर्थिक सहयोग के निवारण आदि के सिलसिले में इन कालेजों से विचार-विनिमय करता और इनसे मेल-जोल कायम रखता है।

कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी-प्रेस दुनिया का सबसे बड़ा प्रकाशन-गृह है। यद्यपि यह कैम्ब्रिज का ही एक अङ्ग है, लेकिन यह प्रकाशन-गृह स्वयं किसी संस्था से कम नहीं। प्रकाशन-गृह द्वारा जो लाभ होता है, वह कैम्ब्रिज की सुख-समृद्धि में ही प्रधानतः लगाया जाता है।

कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय की स्थापना कब, किस तिथि को हुई, इसका सही-सही पता किसी को नहीं। पहला कालेज सन् १२८४ ई० में स्थापित किया गया था। सार्वजनिक रूप से प्रतिवर्ष यथेष्ट दान इस विश्वविद्यालय को प्राप्त होता है। प्राप्त दान का सदुपयोग अनेक प्रकार से किया जाता है और विश्वविद्यालय के कोष में निरन्तर वृद्धि होती रहती है। लन्दन तथा अन्यत्र जमीन खरीदकर तथा किराए से अपनी इमारतें उठाकर इस कोष को सदा अधिकाधिक सम्पन्न बनाए रखने का ध्यान रक्खा जाता है।

कुछ मध्यकालीन कर्मकाण्डों और उत्सवों का आज भी यहाँ अस्तित्व है, जो अनेक लोगों को बे-तुका-सा लगता है। लेकिन मेरा विश्वास है कि सामाजिक जीवन, धूमिल-से रस्म-रवाजों की गति और देश के इतिहास को ऐसे ही प्रदर्शनों-द्वारा जीवित रक्खा जा सकता है। जो कुछ भी हो, ये प्रदर्शन दर्शनीय अवश्य हैं।

प्रत्येक छात्र को, जो किसी कालेज-विशेष में भरती किया जाता है, एक अध्यापक के साथ रहकर अध्ययन करना पड़ता है। यह अध्यापक ही छात्र के अध्ययन में अनन्य सहायक सिद्ध होता है। यदि छात्र अपनी परीक्षा में सफलतापूर्वक उत्तीर्ण नहीं होता, तो इसके लिए यह अध्यापक ही उत्तरदायी ठहराया जाता है।

एक सीनियर (बड़ा) अध्यापक होता है जो छात्रों के अभिभावक की भाँति उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति किया करता है। आम तौर पर अध्यापक आराम का जीवन बिताता है। कालेज में ही वह रहता है। छात्रों में वह बन्धुत्व की भावना जाग्रत् करता और कालेज के आदर्श को अक्षुण्ण बनाए रखने पर जोर देता है।

नवीन कालेजों का भी निर्माण किया जा सकता है, बशर्ते कि किसी दानी से इतना दान विश्वविद्यालय को प्राप्त हो, जिससे जमीन खरीदी जा सके और कालेज की इमारत खड़ी की जा सके।

इस विश्वविद्यालय-नगर की सीमा-रेखाएँ आम सड़कों से काफी दूर हैं। बीच में जो स्थान छूट गया है, उस पर अनेक दूकानें अवस्थित हैं। अनेक सुन्दर उपवन भी यहाँ हैं, जिनके आस-पास दिन में किसी भी समय आम जनता जा सकती और चहलकदमी कर सकती है।

प्रत्येक कालेज के प्रमुख प्रवेश-द्वार पर दरबान के रहने को एक निवास-गृह होता है। यह दरबान कालेज के प्रत्येक छात्र को पहचानता है और भारतीय दरबानों की तरह अशिक्षित अथवा अर्द्धशिक्षित नहीं होता। वह काफी शिक्षित और समझदार होता है। प्रतिदिन रात में दस बजे यह फाटक बन्द हो जाता है। इस वक्त तक प्रत्येक छात्र के वापस आ जाने की अपेक्षा की जाती है। यह एक सोचने की बात है कि इन दरबानों का निर्वाह उस बौद्धिक दुनिया के बीच कब तक हो सकेगा, जो सांस्कृतिक और ऐतिहासिक शिक्षा ग्रहण करने के मार्ग पर है। मुझे यह जानकर असीम आश्चर्य हुआ कि क्राइस्ट कालेज के दरबान ने एक बार हमारे कवीन्द्र रवीन्द्र को दस मिनट से अधिक समय तक और महात्मा गांधी को भी कुछ समय तक रोक रक्खा था और कितने ही तर्क-सङ्गत प्रश्न भारतवर्ष के सम्बन्ध में इनसे किए थे। 'डाइनिंग हाल' (भोजन करने के कमरे) में प्रतिदिन ये दरबान इस बात पर गौर करते हैं कि कालेज का प्रत्येक विद्यार्थी वापस आ गया है, या नहीं।

छात्र अपना लेक्चर छोड़ सकता है; लेकिन अपने अध्यापक की छाया से वह दूर नहीं रह सकता। ऐसा करते समय उसके मन में सदा यह भय समाया रहता है कि कहीं कालेज से उसे पृथक् न कर दिया जाए।

विशुद्ध अँगरेजी का यहाँ सदा ध्यान रक्खा जाता है; उसका सम्मान भी किया जाता है। क्या अर्थशास्त्र और क्या साहित्य, सभी में विशुद्ध अँगरेजी अपेक्षित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। फूहड़ अँगरेजी लिखने-बोलनेवाले को यहाँ कभी भरती नहीं किया जा सकता। ससम्मान उत्तीर्ण होने के लिए ऐसे छात्र को अपनी इन त्रुटियों को सुधारना अनिवार्य है। आम तौर पर अनेक छात्रों को यथेष्ट पुस्तकें खरीदनी पड़ती हैं और अपनी निजी लायब्रेरी (वाचनालय) स्थापित करनी पड़ती है। यों प्रत्येक कालेज में एक सम्पन्न वाचनालय रहता है, जिसमें विभिन्न विषयों की उत्तमोत्तम पुस्तकें रहती हैं और छात्रों के लिए सहायक सिद्ध होती हैं।

कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय प्रतिवर्ष अनेक ऐसे विदेशी छात्रों को भरती करता है, जो गणित-शास्त्र, शरीर-विज्ञान, औषध-विज्ञान आदि विषयों का गहरा अध्ययन करना चाहते हैं। विश्वविद्यालय का प्रधान सूत्रधार यद्यपि चांसलर (कुलपति) होता है, लेकिन समस्त कार्य-सञ्चालन वाइस-चांसलर द्वारा ही होता है। विश्वविद्यालय के विधान में उन सभी बातों का उल्लेख और स्पष्टीकरण है जिनके द्वारा उसे अपना प्रबन्ध स्वयं किस प्रकार करना चाहिए। यद्यपि इस विश्वविद्यालय में मित्रतापूर्ण वातावरण की परिपाटी चली आ रही है, फिर भी इसके विधान में छात्रों के व्यक्तिगत विकास और आदर्श के उल्लेख का अभाव है। इस सम्बन्ध में ऐसी अनिश्चितता को दूर करना अधिक उपयुक्त होगा।

आक्सफोर्ड की तरह कैम्ब्रिज-सङ्घ भी छात्रों के राजनीतिक जीवन में महत्त्वपूर्ण हाथ बँटाता है। आक्सफोर्ड की तरह तो नहीं, फिर भी यह सङ्घ इस बात का सदा ध्यान रखता है कि गम्भीर राजनीतिक और सामाजिक समस्याओं पर ऐसे वाद-विवाद का आयोजन किया जाए जिनसे छात्रों के दृष्टिकोण में अधिकाधिक व्यापकता का समावेश हो। सङ्घ के अध्यक्ष को छात्रों का सर्वाधिक सम्मान प्राप्त होता है।

आक्सफोर्ड और कैम्ब्रिज-सङ्घों को ही इसका श्रेय दिया जा सकता है कि उन्होंने अनेक ऐसे महान् राजनीतिज्ञों का निर्माण किया है जिन पर इँग्लैंड को गर्व से अपना मस्तक ऊँचा कर सकने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है।

प्रत्येक कालेज में एक स्वतन्त्र वाद-विवाद-सङ्घ होता है। उस सन्ध्या में हम लोग भी एक ऐसे ही वाद-विवाद-सङ्घ में चले गए थे और लगभग १५ मिनट तक वहाँ ठहरने का हमें अवसर मिल गया था। यद्यपि हम वहाँ चलनेवाले विवाद में प्रतिपादित विषय की गम्भीरता को भली भाँति नहीं समझ सके, कारण हम लोगों के लिए वह विषय सर्वथा असम्बद्ध और शृङ्खला-विहीन था; लेकिन इतना स्पष्ट रूप से समझ सके कि वक्तृता के बीज इन छात्रों में अत्यन्त कुशलतापूर्वक बोए जा रहे थे, जो निश्चय ही अङ्कुरित और पल्लवित होकर 'हाउस आफ़ कामन्स' तक किसी दिन अपना प्रभाव दिखलाने में समर्थ होंगे।

महिलाओं का प्रवेश अत्यन्त सीमित संख्या में किया जाता है। पाँच सौ से अधिक महिलाएँ प्रविष्ट नहीं की जातीं। प्रेम और मित्रता का व्यापार भी यहाँ चलता है; लेकिन कालेज में छात्रों के शैक्षणिक जीवन में इसे कोई महत्ता नहीं दी जाती। अमेरिकन देशों की तरह उच्छृङ्खलता के वातावरण को यहाँ प्रश्रय नहीं दिया जाता और इस दिशा में काफी सतर्कता से काम लिया जाता है। इसका परिणाम यह हुआ है कि प्रेमाभिनय की सीमा पार कर जानेवाले दृश्यों को देखने की घड़ी यहाँ नहीं आने पाती।

सबसे भली बात है यहाँ के अध्यापकों-द्वारा छात्रों के सामाजिक जीवन की गति-विधि पर नजर रखना। इस विश्वविद्यालय के कुछ छात्रों ने विश्व-व्यापी कीर्त्ति अर्जित की है। ऐसे महान् पुरुषों में सर आइजक न्यूटन, डार्विन, जान हर्वर्ड आदि के नाम सगर्व लिए जा सकते हैं।

सन्ध्या समय हम सब इस विश्वविद्यालय को देख और उसकी एक अमिट छाप अपने हृदयों पर अङ्कित किए लौट आए। इस विश्वविद्यालय का शान्त, गम्भीर और बौद्धिक वातावरण कभी भुलाया नहीं जा सकता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्योतिषी ने कहा था

कुमारी अ० स्याल

ये ज्योतिषी भी क्या-क्या गजब ढाते हैं, सुनिएगा। वह हमारे पड़ोस में लड़की थी न सुधा। अहा! कैसी अच्छी लड़की थी! माँ-बाप की इकलौती बेटी! रूप-गुण-सम्पन्न! माँ-बाप ने खूब प्यार से पाला-पोसा, पढ़ाया-लिखाया। चौदह साल की उम्र तक कौन्वेंट (Convent) में पढ़ी, फिर महिला कालेज में दाखिल हुई। सहेलियों का प्राण और प्रोफेसरों की 'फेवरिट'। सभा-सोसाइटियों की जान थी। न जाने कितने इनाम डिबेटों में लिए। कालेज के हर एक ड्रामे में हीरोइन बनती। पढ़ाई में भी जहीन। हमेशा फर्स्ट रही। फर्स्ट डिवीजन में बी० ए० किया।

बी० ए० पास हुई तो माँ-बाप के सामने एक और समस्या आ गई। अट्ठारह साल पूरे हो गए थे और उन्नीसवाँ लग गया था। अब सुधा की शादी की फिक्र होने लगी। सुधा ने भी सोच लिया था—जैसा कि सभी समझदार लड़कियाँ सोच लिया करती हैं—कि विवाह ही जीवन का अन्तिम लक्ष्य है। फिर क्यों व्यर्थ में पुस्तकों से माथापच्ची की जाए। माँ-बाप के धन और अपने गुणों के बल पर उसे यह विश्वास था कि शीघ्र ही उसका किसी अच्छे घर में रिश्ता हो जाएगा। उसने माँ से कहा कि पढ़ाई की ओर उसकी कोई विशेष रुचि नहीं, वह घर बैठकर सङ्गीत का अभ्यास करेगी। अब यदि जवान लड़की माँ-बाप से स्पष्ट कह दे कि उसकी न पढ़ने की सलाह है और न वह काम ही करना चाहती है तो माँ-बाप समझ जाते हैं कि अब लड़की के हाथ पीले कर देने चाहिएँ। वैसे भी सुधा के माँ-बाप को नाते-रिश्तेदारों ने इस विषय में काफी से ज्यादा सङ्केत दे दिए थे कि अब लड़की को ज्यादा देर घर बिठाए रखना अच्छा नहीं।

सो वर की तलाश होने लगी। मामला जितना आसान समझा था, उतना निकला नहीं। लड़का अच्छा है तो घर-बार नहीं। घराना ठीक है तो लड़का काला है। माँ को लड़का पसन्द होता तो बाप को नहीं। बाप को है तो सुधा नाक-भौं चढ़ाती। इस जाँच-पड़ताल में चार वर्ष बीत गए। इस बीच में सुधा राग-रागिनियों के सारे भेदों-विभेदों की समस्याएँ सुलझा चुकी थी। चित्रकला का भी खूब अभ्यास कर लिया था। घर भर में जहाँ देखिए, उसके हाथ के बनाए चित्र लटक रहे थे। दीवालों पर अब और चित्रों के लिए गुञ्जायश न थी। सारा दिन घर में खाली बैठे रहने से सुधा उकता गई। कोई जिन्दगी थी—एक-दो गीत गा लिए, कभी तूलिका लेकर बैठ गई, बहुत हुआ तो काफी-हाउस में आधा घण्टा बिता दिया।

अन्त में सुधा ने तङ्ग आकर माँ से कहा—मैं फिर पढ़ूँगी। अभी उसके मन में शायद शीघ्र विवाह की आशा थी क्योंकि उसने कहा कि वह बी० टी० करेगी। सिर्फ नौ महीने की तो पढ़ाई थी। माँ-बाप ने भी सोचा—खाली दिमाग शैतान का घर। लड़की सारा दिन अकेली बैठी रहती है। कालेज जाएगी तो इसकी तबीयत बहली रहेगी।

सो सुधा ट्रेनिंग कालेज में दाखिल हो गई। अपनी कक्षा की लड़कियों से वह साधारणतया तीन-चार साल उम्र में बड़ी थी। वह इस बात को कभी न भूली और न लड़कियाँ उसे भूलने ही देतीं। वे उसे 'बहिन जी' कहकर बुलातीं। वह चिढ़ जाती। उन सब ने उसी साल बी० ए० किया था। सब आपस में मिलतीं-जुलतीं, हँसतीं-खेलतीं! सुधा उनमें एक अपरिचित की तरह रहती।

आखिर नौ महीने हो गए। बी० टी० के प्रेक्टिकल्स् भी समाप्त हो चले, पर भावी वर के कोई लक्षण दिखाई न दिए। अब सुधा ने कहा—वह काम करेगी। आज से पाँच वर्ष पूर्व वह या उसके माँ-बाप इस बात को सोच भी न सकते थे। पर विवाह की बात जो आज से पाँच साल पहले कठिन थी, अब और भी दुरूह हो रही थी। बाहर नौकरी अच्छी मिलती पर यहाँ पैसे का सवाल तो था ही नहीं, सिर्फ वक्त काटने की समस्या थी। सो सुधा ने एक प्राईवेट स्कूल में प्रार्थना-पत्र भेज दिया और वहाँ ६०) रुपया महीने पर काम करने लगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो साल और बीते और वह स्कूल भी टूट गया। अब सुधा के सामने फिर सवाल पेश हुआ कि वह क्या करे। वर के लिए तलाश अब भी हो रही थी पर जरा धीमे वेग से। सुधा की तो अब जरा भी दिलचस्पी विवाह वगैरह में नहीं रही थी। उसने एम० ए० करने का निश्चय किया और एक दिन बिना माँ की अनुमति लिए स्थानीय कालेज में अपना नाम लिखा आई।

एम० ए० में सहशिक्षा थी। पढ़नेवालों की औसत उमर उन्नीस या बीस वर्ष थी। सुधा को अब २७वाँ लग रहा था। श्रेणी में उसे बड़े होने की मर्यादा का पालन करना पड़ता। प्रोफेसर लोग उससे सम्मानपूर्वक पेश आते। लड़के भी उससे बच-बचकर रहते। लड़कियों के लिए वह 'किल ज्वाय' थी, वे उसके सामने प्रोफेसरों और लड़कों का मजाक बनाने में हिचकिचातीं।

उन्हीं दिनों लाहौर में किन्हीं स्वामी सर्वदानन्द ज्योतिषाचार्य का आगमन हुआ। खूब धूम मची। पिछले जन्म का ब्योरा बताते थे और इस जन्म का भी ठीक-ठीक अनुमान लगाते थे। एक दिन सुधा की माँ भी बेटी की जन्मपत्री लेकर स्वामीजी के पास पहुँची। स्वामीजी जानते थे कि माँ-बाप कुँआरी लड़की की जन्मपत्री दिखाने क्यों आते हैं। कहने लगे—चिन्ता न करें। २६वें साल में वर स्वयं आएगा, उत्तर-पश्चिम से आएगा। सुधा की माँ ने स्वामीजी को ६०) रुपए दिए और प्रसन्नतापूर्वक घर चली आई।

एम० ए० की परीक्षा में एक महीना रह गया था। तैयारी की छुट्टियों से पहले सुधा की क्लास ने (लरिङ्ग होटल) में चाय पार्टी दी। पार्टी के बाद कुछ गाने वगैरह का प्रोग्राम था, बहुत देर हो गई। सुधा सीढ़ियों से नीचे उतरी और खड़ी होकर सोचने लगी कि कैसे घर जाए। माँ पिछले दो दिन से अमृतसर गई हुई हैं और पापा शायद क्लब से लौटे ही न हों। घर में किसको खयाल आएगा कि सुधा को लाने के लिए नौकर भेज दिया जाए। बाकी लड़के-लड़कियाँ कोई साईकल पर, कोई टाँगे में, कोई पैदल ही चल दिए और सुधा इसी उधेड़ बुन में लगी रही। जाना भी जेबरोड था। उधर का किसी लड़की का साथ भी नहीं था।

"आप कैसी खड़ी हैं?" पीछे से किसी ने पूछा। सुधा ने मुड़कर देखा तो सुरेश था, उसी की कक्षा का लड़का। सुधा उससे बिलकुल अपरिचित थी। केवल इतना जानती की कि उसका नाम सुरेश है और वह एम० ए० फाईनल में पढ़ता है। सुधा ने विवश होकर सुरेश को सारी परिस्थिति बताई तो उसने आग्रह किया वह उसे घर तक छोड़ आने का सम्मान दे। सुधा मान गई।

इस घटना के एक सप्ताह उपरान्त सुधा को एक पत्र, प्रेम पत्र ही कहिए, मिला। सुरेश ने लिखा था। सुधा को ऐसी बातों का अनुभव न था, वह घबरा गई। उसने पत्र फाड़कर फेंक दिया। फिर दूसरा पत्र आया, फिर तीसरा, फिर चौथा। अन्त में घबराई हुई सुधा ने माँ को बताया। माँ ने बाप से बात की। बाप को बहुत क्रोध आया। पहले तो वे सीधे प्रिंसिपल के पास जाने को तैयार हुए फिर सोचा, मुफ्त में लड़की की बदनामी होगी और चुप रह गए।

सुरेश के पत्र आते रहे। एक से एक लम्बा और प्रेम के भावों से ओतप्रोत। इस बीच सुधा के माँ-बाप पता लगवा चुके थे कि सुरेश पेशावर के एक धनी एडवोकेट का इकलौता बेटा है। सुधा की माँ ने सुना तो उसे खयाल आया कि हो न हो ज्योतिषी की भविष्य-वाणी सच्ची होनेवाली है। उत्तर-पश्चिम—पेशावर उत्तर-पश्चिम में ही तो है, स्वयं लड़का घर में आ रहा है। उसने सुधा से कहा—कभी-कभी सुरेश के पत्र का उत्तर क्यों नहीं दे देतीं? सुधा ने माँ के मुँह से यह सुना तो स्तम्भित रह गई। पर जब उसे भीतरी रहस्य का ज्ञान हुआ, उसने अपने मन में दुहराया—सुरेश ही उसका भविष्य है। भगवान् ने उसे उसके पास भेजा है। घर आई वस्तु का निरादर नहीं करना चाहिए।

पत्रों का आदान-प्रदान शुरू हो गया। परीक्षा समाप्त हो चुकी थी, सो सुरेश को कोई काम न था। घर में रुपया था इसलिए शीघ्र नौकरी ढूँढ़ने का भी कोई प्रश्न न था। लाहौर आ गया। अब सुधा और सुरेश इकट्ठे सिनेमा जाते, होटलों में खाना खाते और काफी-हाउस में काफी पीते।

एक लड़का और जवान लड़की इस तरह इकट्ठे फिरें और लोग बातें न बनाएँ, यह कैसे हो सकता था। सुरेश सुधा की घर-घर चर्चा होने लगी। कोई कहता—अमीर लड़का है, माँ-बाप ने डोरे डालने के लिए लड़की को खुला छोड़ दिया है। किसी-किसी का खयाल था कि यह सब उपद्रव लड़की को बड़ी उम्र तक कुँआरे विवाह रखने के कारण है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जननिन्दा की भनक कभी-कभी सुधा के माँ-बाप के कानों तक भी पड़ जाती। वे तिलमिलाते, पर यह सोचकर मन को सान्त्वना दे लेते कि ब्याह हो जाएगा तो सब चुप हो जाएँगे।

सुधा और सुरेश की मित्रता चल रही थी और सुधा का २६वाँ साल भी धीरे धीरे बीत रहा था और साथ ही साथ सुधा की माँ की चिन्ता भी प्रतिक्षण बढ़ रही थी। २६वाँ साल पूरा होने में एक महीना रह गया था। सुधा सुरेश के साथ 'स्टेंडर्ड' जाने के लिए कपड़े पहन रही थी कि नौकर ने एक निमन्त्रण-पत्र लाकर दिया। सुरेश का विवाह अमृतसर के एक प्रसिद्ध व्यापारी की लड़की से अगले सप्ताह हो रहा था।

सुधा ने वह कार्ड मेज पर रख दिया और अन्दर गले से रस्सी बाँधकर लटक गई।

२६ साल पूरे होने में अभी एक महीना बाकी था, पर एक महीना ठहरकर ज्योतिषी की भविष्यवाणी का तथ्य परखने का शायद उसमें साहस बाकी न रह गया था।

वैदिक कविताएँ

श्री चन्द्रकुँवर बर्त्वाल

(१)

ज्योति-नागिनी

मेघ-कुञ्ज में खेल रही है
एक ज्योति की काल-नागिनी।
बार-बार डसती बादल को
ज्योतित करती अन्धकार को
अशनि-तीक्ष्ण उद्दीप्त फणों से
वह प्रकाश की काल-नागिनी।
झरता है बादल झर-झर-झर
दंशन से क्षत-विक्षत होकर
छिन्न-भिन्न कर अन्ध पुञ्ज को
ज्योति बरसती दीप्त-हासिनी।
मेघ-कुञ्ज में खेल रही है
एक ज्योति की काल-नागिनी।

(२)

ज्योति-बाण

आकर्ण तान धनु सूरज ने
जलदेव वरुण पर अग्नि-बरण—
छोड़े, वे सब चुपचाप
चुभे, देने उनको पीड़ा महान्!
यों वरुण देव ने सही व्यथा
उन बाणों की, हँस हँसी तरल
अपने महलों की वापी से
चुन वर्ण वर्ण के फुल्ल कमल—
सप्रेम वरुण ने सूरज के
चरणों पर उन्हें किया अर्पण!
वे वर्ण-वर्ण के कमल उड़े—
छूने पूषण के पूत चरण।
वे रहे उमड़ते घन-नीले
काले, सुश्वेत, अभिताम्र कमल—
उन कमलों से भर गया गगन,
खो गया सूर्य औ' अम्बर-तल!
फैला वसुधा में कमलों के
पङ्खों का घोष मधुर कोमल!
बह उठी धरा के अधरों पर
सहसा-ही पवन मन्द शीतल!
रवि के चरणों को चूम, गिरे
वे मृदुल वारि-कण वन-भू पर
फिर सिमिट-सिमिट, झरने सरि बन
बह चले मनोहर कल-कल कर
वे बहे और हो गये लीन,
उस वापी के जल में जाकर,
जिसमें कुछ ही दिन पहले थे,
वे खड़े मनोज्ञ कमल बनकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३)

ज्योति-धान

सूरज ने सोने का हल ले
चीरा नीलम का आसमान,
किरणों ने कोमल हँस असंख्य
बोए प्रकाश के पीत-धान
वे उगे गगन में, पल भर में
पककर फैले इस धरणी पर,
गिरि, सरिता वन-वन में छाए
वे नभ के गीत पीत सुन्दर !
उनके रस को पीकर ही तो
आता है जगत्प्राण में बल
बढ़ते हैं धरणी के शिशु-तरु
होते सु रसीले, पककर फल !
सोने का हल लेकर सूरज
करता विदीर्ण प्रति दिवस गगन !
प्रतिदिन बोती हैं ज्योति-धान
भू की रक्षा के लिए किरण !

(४)

ज्योति-सुमन

गेहूँ की बालों की भाँति मनुष्य हृदय में,
जग पड़ते अनगिनत-भाव
काँपते पवन में।
किन्तु प्रेम की मृदुल कल्पनाएँ फूलों-सी
हो जातीं चुपचाप खड़ी उनके समूह में
लाल और नीले फूलों-सी !
लाल और नीले फूलो ! अपदार्थ कह तुम्हें—
कर देता है नष्ट निराई करनेवाला !
मूर्ख घृणा से भरकर तुम्हें कुचलने जाते।
और दीन राही भी देख तुम्हारे मुख को—
हो जाता है मोहित और प्रसन्न, वह भी तो—
अपने सर को हिला, घास, कह तुमको सुन्दर
कहीं चला जाता है ! पर ग्रामीण कुमारी
अपनी फूलों की माला के लिए तुम्हें ही
चुनती—आदर वही तुम्हारा है करती !
कर तुमसे चित्रित अपनी सुन्दर वेणी को
वह जाती है त्वरित-चरण उस ओर पवन में—
जहाँ मधुर कलरव करतीं कोमल बाँसुरियाँ—
और नाचते जहाँ प्रेम-विह्वल नर-नारी।
अथवा जाती वह एकान्त मधुर छाया में—
जहाँ सुनाई देती शत-शत वीणाओं से
बाँसुरियों से भी सुरम्य प्रेमी की वाणी।

(५)

इन्द्र

बजा तुम्हारा तूर्य गगन में
मेरे उत्सुक मन में !
सोह रहा बादल के मुख पर
रङ्ग-बिरङ्गा तूर्य मनोहर
पीछे से रथ-चक्र घर्घरित
उमड़ आ रही घटा-घन अमित
प्रभो ! तुम्हारी जय कहकर !

(६)

मेघ

मेघ गरजा !
घोर नभ में मेघ गरजा !
गिरी बरसा।
प्रलय-रव से गिरी बरसा !
तोड़ शैलों के शिखर—
बहाकर धारें प्रखर—
ले हजारों घने धुँधले निर्झरों को
कह रही है वह नदी से—
"उठ अरी उठ,
कई जन्मों के लिए तू आज भर जा"
मेघ गरजा।

(७)

घन-रव

मूर्छित हुई घास घन-रव से,
ऊपर नभ में गरजे बादल
भू पर मूर्छित घास सुकोमल,
पड़ी, लगी धरती के उर से।
चला पवन जब मन्द मनोहर
चूम घास के केश, वर अधर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह न प्रेम से हुई प्रकम्पित,
रही मरी-सी पड़ी धरा पर—
पवन धरा भर में मँडराया,
होकर विकल विरह से।

(८)

घन-गर्जन

सुन घन-गर्जन छितर दौड़ती
गो-समूह-सी बदली
ग्वाले की लकुटी-सी रह-रह
चमक रही है बिजली।
असफल होकर क्रोध कर रही
इधर-उधर दौड़ती पवन
ग्वालिन की ममता-सी झरती
घेर गगन वर्षा उजली!
प्रथम दिवस ये नव वसन्त के
धरा प्रेम से भरी हुई
छाया भरे पथों में पुष्पों की
पँखुरियाँ झरी हुई!
हरे-भरे शिखरों पर चरती थीं
नव गर्भवती गौएँ
छेड़ रहा था तान सुरीली,
ग्वाला भूम, बाँसुरी की!
सहसा दिशा-दिशा भर आई,
लगी पवन बहने गहरी
पड़ी भूमि पर काली-काली—
छाया नील बादलों की!
अस्त हुए सूरज, झुक आए
शिखर-शिखर पर मेघ घने
देख अचानक सघन अँधेरा—
देख चमकती बिजली
दिशा-दिशा को पूँछ उठाकर
गौएँ छितर भाग निकलीं!

(९)

बिजली

तोड़ दिया बिजली ने बादल,
कभी खींच खरतर असि-धारा
चीर रही वह कोमल बादल।
कभी जला चटकीली ज्वाला
जला रही वह कोमल बादल!
कभी अकेले शृङ्ग पर खड़ी
उसे नखों से चीर रही वह,
कभी भुजङ्गिनी-सी-द्रुत गति से,
उसके तन पर दौड़ रही वह!
यह शीशे-सा निर्मल बादल!
तोड़ दिया बिजली ने बादल'!

(१०)

पहली वर्षा

जग का ताप शान्त करने को उमड़ी वर्षा आई।
दिशा-दिशा से उठ-उठ मङ्गल की बदली लहराई।
उड़ी पवन, काँपे द्रुम-पल्लव
हुआ गगन में मधुर-मधुर रव
चौंकी चपला—दिशा-दिशा से मधुर झड़ी झर आई!
आर्द्र पल्लवों ने जीवन की
सजल रागिनी गाई।
खोले दूर्वा ने निज लोचन
हुए हरे सुरभे किसलय-वन
सरिता ने अञ्जलियाँ भर-भर अपनी तृषा बुझाई!
दिशा-दिशा से जीवन की कल-
ध्वनियाँ पड़ी सुनाई!
कहीं झर रहे हैं नव निर्झर
कहीं उड़ रहे विहग मनोहर
कहीं भरे आँसू पलकों में नव कोंपल उग आईं।
बैठ कहीं ग्वाले ने अपनी
मुरली मधुर बजाई
हरी भरी करने को धरती उमड़ी वर्षा आई।

(११)

वर्षा-सङ्गीत

आज कोलाहल विपिन में
आज जनपद शान्त!
लोचनों में आज घन-जल
हृदय में आनन्द
आज गृह के पास बजती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किस तरुण अभिसारिका की
किङ्किणी मृदु मन्द !
आज भैरव-रव गगन में
कुञ्ज में मल्लार
बरसता आवेश झर-झर
फैलता है प्यार !
आज सावन घन-गगन में
आज हरियाली अनन्त
किन्तु इस पुलकित हृदय में
प्रेम के इस प्रिय निलय में
मिल रहे शशि औ' वसन्त ।

(१२)

वर्षा का नवीन बादल

पत्ते-पत्ते, शाख-शाख पर
छिद्र-छिद्र में बैठा बादल—
यह नवीन वर्षा का बादल ।
लगा बरसने तरु झर-झर कर
बन नवीन वर्षा का बादल
लगी बरसने हरी दूब पर,
कोयल-सुर-सी बूँद सुकोमल
मोर पास पाकर जीवन-धन
हुआ खुशी से पागल ।

(१३)

वर्षा-छवि

हेर वर्षा छवि अपार !
केश में घन-पुञ्ज शोभित
तड़ित नयनों में तरङ्गित
पवन से अञ्चल विकम्पित
सिक्त तनु से वारि-धार
हेर वर्षा छवि अपार !
इन्द्र-धनु उर में प्रदोलित
चरण में वंशी विमोहित
कण्ठ में तन्त्री निपीड़ित
छलकता मल्लार
हेर वर्षा छवि अपार

(१४)

पावस की ऋतु

नभ में वर्षा की छवि छाई,
उर में पावस की ऋतु आई ।
मेघों के गद्गद स्वर सुनकर
उर में पावस की ऋतु आई ।
बरसी जब शृङ्गों पर वर्षा
उर में व्यथा जग गई सहसा ।
बरसी जब शृङ्गों पर वर्षा
उर में पावस की ऋतु आई ।
झरने चले नदी से मिलने
ले यौवन-उन्माद घने
तब मेरे उन्मद उर में भी
पिछली पावस की ऋतु आई !

(१५)

मेघ-लोचन

घिर रहे होंगे वहाँ भी ये उमड़ते मेघ-लोचन !
घूमते वन-पर्वतों पर
विरह से अश्रान्त जलधर
कर रहे होंगे वहाँ भी क्या धरा में पीर-सिञ्चन !
देखती शशिनी कहीं झुक नव-जलद की ओट से,
फैलती होगी प्रवालों में वहाँ भी एक सिहरन—
देख सावन-श्याम नभ में एक यौवन-विस्फुरण ।
काँपती होगी वहाँ भी वल्लरी क्या सजल-लोचन !
घिर रहे होंगे वहाँ भी ये उमड़ते मेघ-लोचन !
खो गई निश्वास मेरी आज के आकुल पवन में,
खोजते हैं ये विकल-दृग छिद्र इस काले गगन में ।
भर रहे हैं किन्तु तरु के पत्र-गृह में श्याम-घन
आज तरु-तरु बन सजल घन, कर रहे हैं वारि-वर्षण
घिर रहे होंगे वहाँ भी ये उमड़ते मेघ-लोचन
झुक गई घन-मेघ छाया मूँदने गिरि के नयन,
बन गए पथ सब अपरिचित, वाटिका कानन-सदन
कह रहा दयनीय मुझको यह निशा का स्नेह-वर्षण
झर रहे होंगे वहाँ भी ये उमड़ते मेघ-लोचन !

(१६)

गोमती के बाँध पर

बाँध ने रोका उसे बाँहें बढ़ाकर
शान्त चलती गोमती को याद आए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गये बचपन के दिनों के शैल वे,—
रोकते थे जो उसे बाँहें बढ़ाकर
और जिनको चूम वह थी दौड़ जाती
दूर निर्जन घाटियों में हँस मधुर !
याद आए गोमती को शैल वे
और सहसा हँस पड़ी वह
बाहुओं में बाँध की पड, भूल अपने को !
बन गई फिर कुछ क्षणों को वह वही
केश खोले पर्वतों के बीच हँसती
और भीषण नृत्य करती—
मदिरनयना गोमती !
वे गरजती उछलती चञ्चल तरङ्गें
जो शिलाओं पर कठिन आघात कर
मोतियों में बिखर जाती-काँपती—
दौड़ती जो हर्ष से वे ही तरङ्गें
लौट करने लगीं कलरव वक्ष में उसके
किन्तु कुछ ही देर में उसके चरण
थक गए—उसका क्षणिक उत्साह भी
श्रान्त होकर गिरा उसके वक्ष पर
मन्द चलती और रह-रह हाँपती—
सजलनयना गोमती बन, आह भर,
खो गई चुपचाप वह धूमिल क्षितिज में !

(१७)

पावस में मन्दाकिनी

आज मन्दाकिनी-जल में
खेलते हैं वरुण अपनी प्रणय-लीला !
घोर केश-समूह छितरा—
काटती अपने किनारे,
गगन को घन-घन कँपाती
पर्वतों को तोड़ बिखरा
गज-घटा से वन बहाती
आज कर्दम-धूमिला सरि
नाचती उन्मादिनी-सी ।
नाचते हैं वरुण जल में
लहर-लहरों में उठाए हाथ पीला !

(१८)

वर्षाकालीन नभ

कुछ बरसे बादल, कुछ छाए
कुछ मिट गए, नए कुछ आए !
रहा घिरा आकाश दिवस भर
रहा छोड़ता भू पर गुरु-स्वर
अपने अन्तर में सुनीलिमा—
में दिनकर की किरण छिपाए ।

(१९)

अन्तिम वर्षण

ये बादल हम थोड़ी देर बरस जाने दें
क्षणिक वेग में भूली हवा निकल जाने दें
कुछ तरु जो बन गए झुके भादौं-घन
उनके भी पाए जल बिन्दु टपक जाने दें ।
होने दें सुनील, सुन्दर यह सुखद गगन !
लटकी घास, पवन गति से हँसती न काँपती
भीगी केश-राशि-सी, उसके स्पर्श न जानती
घन-गर्जन से डरी पड़ी धरती के उर पर
जल की अविरल ध्वनि से वह उठती न जागती
किरणों से उठती लख लें हम उसे काँपती
जब सहसा थम जाता है वर्षा का नर्तन
चित्र-लिखित-सी रह जाती है लखती चितवन
आधा गीत बोल उड़ जाती जैसे कोयल—
जब छिप जातीं जल-परियाँ गा आधा गायन,
वह शोभा आँखों में आती इन्द्रधनुष बन
उसे देखकर सफल करें हम अपने लोचन ।
अपनी जन्मभूमि में लखकर अन्तिम वर्षण,
ले जाना तुम मुझे जहाँ चाहो जीवन-धन !
ये अधबरसे मेघ न घूमेंगे नयनों में,
काँप न पाएगा मेरे उर में दल कम्पन
यदि जाएँगे हम लखकर यह अन्तिम वर्षण ।

(२०)

यमेष वृणुते

जगती में आतीं ऋतु कितनी
पर मधु-ऋतु-सी और नहीं !
गातीं निशिदिन विहगी कितनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर परभृत-सी और नहीं !
उसी गगन में पली चाँदनी
तारे जिसमें भरे हुए
हुई मोहिनी वह क्यों इतनी
इस रहस्य को कौन कहे !
ओ सुन्दर के भीतर सुन्दर !
प्राणों की वाणी मोहन !
हे सुस्पष्ट ! हे सदा अगोचर
विश्व-सिन्धु-के अमृत-कण !
तुम्हें खोजते हैं जन कितने
निशि-दिन है पावन-धन ।
किन्तु किसी की-ही करते तुम
सफल साधना मन-मोहन !

(२१)

चरैवेति-चरैवेति

रोहित ! श्रम से जो श्रान्त नहीं
उसको लक्ष्मी भी लभ्य नहीं ।
है पाप पकड़ता आलस को
चलनेवाले का सखा इन्द्र ।
सदा चलो, सदा चलो !

जिसके पद चलते ही रहते,
उसके उरु में खिलते प्रसून ।
आत्मा फल पाती भूषित हो—
सो जाते थककर पाप-ताप !
सदा चलो, सदा चलो !
बैठे का भाग्य बैठ रहता ।
उठने वाले का उठ जाता ।
सोनेवाले का सो रहता—
चलनेवाले का चलता है ।
सदा चलो, सदा चलो !
कलि है निशि-दिन सोनेवाला
द्वापर है अँगड़ाने वाला
त्रेता, जो उठकर खड़ा हुआ;
सतयुग है नित चलनेवाला ।
सदा चलो, सदा चलो !
चलता नर ही मधु है पाता
चलता ही सुन्दर फल खाता
सूरज के श्रम को तो देखो—
निस्तन्द्र सदा चलता जाता ।
सदा चलो, सदा चलो ।

साथी की याद

श्री सत्यनारायण शर्मा

बैठे होगे तुम एकाकी नीरव सरिता-तट पर;
हे मेरे जग-जीवन-पथ के बिछुड़े साथी सुन्दर !
व्यथा-भार से टूट रहा होगा अन्तरतम कोमल;
और शिराएँ रह-रह करके उठती होंगी जल-जल !
आई होगी पदव्रज पश्चिम नभ में सन्ध्या-बाला;
खोल रही होगी धीरे-धीरे निशि की मधुशाला ।
पश्चिम-तोयधि में शीतल कर रवि की जीवन-ज्वाला,—
बढ़ा रहा होगा कोई मदपायी शशि का प्याला !
छलक-छलक उठता होगा उससे ज्योत्स्ना का आसव !
कुछ बूँदें अम्बर का विस्तृत करती होंगी वैभव !
कुछ शृङ्गारित करती होंगी सरिता की लहरों को,—
करके और अधिक ज्वालामय सायन्तन प्रहरों को !
विकच कुसुम-दल हतश्री करता होगा नीरव क्रन्दन !
शान्त हुआ जाता होगा प्रिय, मधुपाली का गुञ्जन !

मत्त शिखावल भूल चला होगा उन्मादक नर्तन,—
देख व्यथित सुकुमार ! तुम्हारा चिन्तातुर चन्द्रानन !
लहरें बहती होंगी प्रतिपल चरण तुम्हारे छूकर,—
जिनको रखकर बैठे होगे पाषाणों के ऊपर !
एक चिता-सी जलती होगी प्राणों में धू-धू कर !
मरघट-सा सूनापन होगा सरितटवर्त्ती भू पर !
शशि-मुख पर सुकुमार ! तुम्हारे होगी चिन्ता-छाया;
म्लान हुई जाती होगी जिससे वह कञ्चन-काया !
बहती होगी दुखित हवा कुछ कानों में कह-कहकर !
भर-भर आते होंगे आँसू आँखों में रह-रहकर !
उधर व्योम में पड़ी हुई होगी सन्ध्या विष पीकर !
पोंछ रही होगी निशि-बाला मस्तक के श्रम-सीकर !
इस उत्ताप-भरे जग-जीवन-पथ के साथी प्यारे !
बैठे होगे सरिता-तट पर एकाकी मन मारे !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीन पोथियाँ

(१) सतरङ्गिनी, (२) जीने के लिए, (३) एकाङ्किका

श्री शम्भुप्रसाद बहुगुना, एम० ए०, डिप० साइ०

हिन्दी में नई पोथियाँ नई सज-धज और विचार-धाराओं के वेग को लिए धड़ाधड़ प्रकाशित हो रही हैं। वेगवती नदी की भाँति, राह के रोड़ों से उलझती हुई भी सुलझकर आगे बढ़ सकनेवाली पुस्तकें अवलोकनीय अवश्य हैं। ऐसी ही पुस्तकों में से तीन यहाँ चुन ली गई हैं। पहली है बच्चन की सतरङ्गिनी, दूसरी है राहुल की 'जीने के लिए' और तीसरी है श्री चन्द्रकिशोर जैन की एकाङ्किका।

[१]

धार से कुछ फासले पर,
सित कफन की ओढ़ चादर
एक मुर्दा गा रहा था, बैठकर जलती चिता पर
स्वप्न था मेरा भयङ्कर !

अपने जीवन के अन्धकार में इस सीमा तक पहुँचे हुए बच्चन के स्वर आज अपनी नवीनतम कृति सतरङ्गिनी में कुछ बदल गए हैं। उसके जीवन में प्रकाश की सतरङ्गिनी किरणें सम्भवतः अपनी नई जीवनसङ्गिनी के स्नेह से आने लगी हैं—

जो अपरिचित सब जगह
अपमान अवहेला सहा जो,
ले रहा है कौन उसको
आज फिर अपनी शरण में
कौन जादू डालता है आज फिर मेरे नयन में

नवीन प्रेयसी में कभी जुगनू, कभी दीपक, कभी काली कोयल, कभी पी कहाँ पुकारनेवाला पपीहा और कभी नर्तन करती हुई नागिनी उसे नजर आती है। उसके स्वर सुनकर वह अनुभव करने लगता है कि उसमें भी अभी जीवन के चिह्न शेष हैं—

धड़कन गगन की-सी बनी
उठती जहाँ यह रात में
मेरा हृदय कुछ ढूँढ़ने लगता इसी के साथ में
यह सिद्ध करता है कि मैं
जीवित अभी मुर्दा नहीं
है शेष आकर्षण अभी
मेरे लिए अज्ञात में।

इन्द्रधनुष के प्रतीक में सतरङ्गिनी प्रेयसी बच्चन के जीवन की नवीन प्रेरक शक्ति बन रही है—

मेरे दृगों के अश्रुकण
को पार करती, किस नयन
की तेजमय तीखी किरन
जो हो रही चित्रित हृदय
पर एक तेरी सङ्गिनी
सतरङ्गिनी ! सतरङ्गिनी !

और इस इन्द्रधनुष की छाया में भीत विस्मित लोचनों से जगती को देखकर नेह का फिर-फिर आह्वान कर फिर-फिर नीड़ निर्माण करने का यत्न सतरङ्गिनी है, जिसमें प्राचीन खण्डहरों के अवशेषों के बीच नव नीड़ निर्माण के चिह्न दिखलाई देने लगे हैं। अवशेषों से आशा-विहङ्गम फिर बोलने लगा है—

हाय तिनकों से विनिर्मित, घोंसलों पर क्या न बीती !
डगमगाए जब कि कङ्कड़ ईंट पत्थर के महल घर
बोल आशा के विहङ्गम किस जगह पर तू छिपा था
जो गगन पर चढ़ उठाता गर्व से निज तान फिर-फिर

जीवन की अँधेरी रात का भय अभी छूटा नहीं है पर दीया बालने का खयाल उसे आने लग गया है—

है अँधेरी रात पर दीया जलाना कब मना

उसे दुःख है कि जब प्राण-पपीहे के पागल स्वर पत्थर-पानी को चीरकर आगे बढ़ गए तभी उसके जीवन के प्रभात की स्वाभाविक स्वर्गिक बोली खो गई।

मेरे जीवन के प्रभात की
स्वाभाविक स्वर्गिक बोली
डूब गई उस रव में जिसमें
गाती चिड़ियों की टोली।

अब इन्द्रधनुष की छाया में भरे हृदय से स्वर-साधन करने के अलावा उसे और कोई चारा नहीं रह जाता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राण-पपीहे का पागल स्वर
चीर चला पत्थर-पानी
एक विहङ्गम भरे हृदय से
करता बैठा स्वर-साधन
इन्द्रधनुष की छाया में।

किन्तु इस नवीन मार्ग में एकाएक अन्धकार नहीं है। कवि देखने लग गया है कि जगती में जीवन में जो कुछ भी सुन्दरतम है उसको मथकर नर-नारियों को सिहरा देनेवाली नवनीत सामने लानेवाली वस्तु प्रेम है—

प्रेम अजर, प्रेम अमर
जो कुछ भी सुन्दरतर
जगती में, जीवन में
लाता है मन्थन कर,
मन्थन से सिहर-सिहर
उठते हैं नारी-नर,

और मानव के अन्तर की उत्तमतर वस्तु को प्रकट करने का अवसर-जीवन है—

मानव के अन्तर में
जो कुछ उत्तमतर है,
उसके अभिव्यञ्जन का
जीवन यह अवसर है।

जो इस तपस्या में लगा है वही सुखी हो सकता है। अपने अश्रु-स्वेद और लोहू से स्वर्ग-बीज की स्वर्ग-बेलि दुनिया को असफलता अवहेलना की चिन्ता न करते हुए प्रेम और विश्वास के बल पर आगे बढ़कर मृत्यु को अपनाता हुआ भी सींच सकता है वही अमृत-फल दे सकता है—

दुनिया यह स्वर्ग-बेलि, दुनिया यह स्वर्ग-बीज
अश्रु-स्वेद-लोहू से, जिसको जब सींच-सींच
मनुज बढ़ा लेता है, अमृत-फल देता है,

पुरुष और स्त्री दोनों को ही इस तपस्या में तत्पर रहना है क्योंकि जीवन की धारा के रूप में वे अपनी सन्तान इस पृथ्वी पर छोड़ जाते हैं।

अपनी सारी विशेषताओं और सारी दुर्बलताओं सहित सतरङ्गिनी बच्चन की नवीनतम कृति है।

[२]

'जीने के लिए' उपन्यास और यात्रा-विवरण के ढाँचे में साम्यवादी सिद्धान्तों की तर्कपूर्ण व्याख्या और स्वयं राहुल की जीवन-कथा है। देवराज इसका प्रधान पात्र है जो कि एक सामान्य किसान के परिवार में पलकर भी अपने कुटुम्ब, गाँव तथा देश के हित के लिए सेना में भर्ती होकर अदम्य उत्साह से सेना-विज्ञान की शिक्षा पाता है और प्रथम महासमर में योरप में पहुँचकर अपने देश के लिए अपनी जान पर खेलकर अँगरेजों की जीत का अङ्ग बनता है। किन्तु इस जीत में भी वह अपने परतन्त्र देश की सोई हुई जनता को जगाने की बात एक क्षण के लिए नहीं भूलता।

अर्थशास्त्र के प्रकाण्ड पण्डित प्रो० ब्राउन की विचार-परम्परा का विद्यार्थी बनकर रूसी साम्यवाद का समर्थ प्रचारक बनता है।

प्रो० ब्राउन की लड़की जेनी उसकी प्रेमिका ही नहीं जीवन-सङ्गिनी बनती है और दूर रहकर भी किसानों, मजदूरों अथवा शोषित वर्ग के उत्थान में क्रियात्मक भाग लेती है।

सिद्धान्तों के लिए ये दोनों ही पति-पत्नी अपने निजी प्रेम को सीमित परिवार के घेरे से ऊपर उठाकर विश्व-प्रेम के विशाल क्षेत्र में पहुँचा देते हैं। अन्धभक्ति और अज्ञान-प्रचारक रूढ़ियों का खण्डन करके आर्थिक राजनीतिक स्वतन्त्रता के लिए ये दोनों प्राणी इँगलैंड और भारत में समय के अन्तर के साथ अपने प्राणों को राष्ट्रीय ही नहीं अन्ताराष्ट्रीय महायज्ञ में होम देते हैं।

घने सङ्कटों के बीच पड़कर जीवन की सचाई अधिक स्पष्ट रूप में दिखलाई दे सकती है। मिथ्या संस्कृति और सभ्यता, धर्म और अति भावुकता को त्यागकर मानव जब हृदय और मस्तिष्क की सहायता से मोह-निद्रा से उठकर परिस्थितियों से जूझेगा—तभी वह परतन्त्रता की बेड़ियों को तोड़कर स्वतन्त्रता की खुली हवा में साँस ले सकने में सफल होगा।

भारत को धर्म की, ईश्वर की, भाग्यवाद की उतनी आवश्यकता नहीं जितनी शुद्ध आर्थिक राजनीतिक सिद्धान्तों पर फलने-फूलनेवाले साम्यवाद की।

पूँजीपतियों की साम्राज्यवादी जोंक-नीति का अन्त एकमात्र साम्यवाद से हो सकता है—यही सन्देश राहुल ने 'जीने के लिए' में दिया है।

[३]

रेडियो स्टेशनों के ब्राडकास्टों ने भी हिन्दी के साहित्य को सम्पन्न किया है, यह बात रेडियो-ब्राडकास्ट-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विरोध के इस युग में आसानी से देखने-समझने में नहीं आ सकती। सम्मेलन और अन्य संस्थाओं का 'रेडियो-बायकाट' मूल रूप में भाषा की नीति का विरोध है इसलिए कम आशा होने पर भी इन संस्थाओं ने रेडियो ब्राडकास्टों से महत्त्वपूर्ण साहित्य की सृष्टि के लिए गुञ्जायश रक्खी है।

और मुझे यह देखते हुए हर्ष होता है कि जीवन-कला-मन्दिर सहारनपुर से प्रथम बार मार्च १९४४ में प्रकाशित श्री चन्द्रकिशोर जैन बी० ए० की एकाङ्किका—जिसमें विषकन्या, नेपोलियन के विजय-रहस्य, हीरे का टुकड़ा, इन्साफ, अस्पताल का कमरा, पहली भेंट और कानून सात एकाङ्की संगृहीत हैं – मूल रूप में रेडियो ब्राडकास्ट की ही देन हिन्दी-साहित्य को है। इस पुस्तक की प्रभावमयी स्वाभाविक हिन्दी किसी भी हिन्दी-हितैषिणी संस्था की चढ़ी हुई त्योरियों को शान्त कर देनेवाली है। भाषा ही नहीं, प्रत्येक एकाङ्की अपनी भावनाओं और विचार-धाराओं की सजीवता और कलागत विशेषताओं के कारण भी हिन्दी की शोभन सम्पत्ति है।

विषकन्या में सिद्धान्त और वास्तविकता, आदर्श और यथार्थ, कोरी नैतिकता और प्रेम के सङ्घर्ष के द्वारा दिखलाया गया है कि वासना का दमन असम्भव, अस्वाभाविक और अहितकर है किन्तु शमन सम्भव, स्वाभाविक और हितकर है। दमन में अमृत भी विष हो जाता है और शमन में विष भी अमृत।

इस एकाङ्की पर प्रसाद के स्कन्दगुप्त, भगवतीचरण वर्मा की चित्रलेखा और बच्चन की कृतियों की स्पष्ट छाप है।

नेपोलियन के विजय के रहस्य में आरम्भ से लेकर अन्त तक नेपोलियन की ओजस्विता, प्रतिभा, शक्ति और तेज के हृदय पर गहरा प्रभाव छोड़नेवाले दर्शन होते हैं। परिस्थितियों के अनुकूल ही भाषा में ओजस्विता और प्रवाह है।

हीरे का टुकड़ा नवाबी के अन्तिम दिनों में मराठों और बङ्गाली मसनद के सङ्घर्ष का करुण और चरित्रवान् चित्र है। प्यास से तड़पते बच्चे (सिराजउद्दौला) के लिए पानी के उद्योग में नवाब अलीवर्दीखाँ सब कुछ हार डाले मराठों को देने के लिए तैयार हो जाता है। हीरेखाँ प्राणों को बन्धक रखकर रसद-पानी लाता है। किन्तु नवाब का मित्र मुस्तफाखाँ भालेराव और तानाजी की सेना पर आक्रमण सन्धि के बाद भी कर देता है। मराठे इसे मीरखाँ की दगाबाजी समझते हैं किन्तु मीरखाँ मराठों के शिविर में प्रतिज्ञा के अनुसार पहुँच जाता है। तानाजी उसका अन्त कर देना चाहते हैं किन्तु 'हीरे का टुकड़ा' है कहकर भालेराव मीरखाँ की रक्षा कर लेता है।

प्रतिहिंसा की भावना से भरी हुई स्त्रियाँ पुरुषों की प्रतिद्वन्द्विता में आगे बढ़ने के लिए शासन-व्यवस्था में भी समानाधिकार ही नहीं पूर्णाधिकार प्राप्त करने में जिस दिन सफल हो जाएँगी उस दिन भी पुरुष पुरुष रहेगा और स्त्री स्त्री; यह बतलाने का उद्योग परिहास पूर्ण ढङ्ग से इन्साफ में किया गया है। कोर्ट में कोई पुरुष अपराधी बनाकर पेश किया जाता है। सब तरह के व्यंग्य स्युचित ढङ्ग से उस पर किए जाते हैं। उसके पक्ष की एक सत्य बात भी नहीं सुनी जाती और उसे फाँसी की सजा सुना दी जाती है। पीछे यह मालूम होने पर कि उसकी स्त्री के बच्चा होनेवाला है, उसे रिहा कर दिया जाता है।

जिस नारी को उपेक्षित कर मनुष्य छोड़ देता है वह अपने प्रेम के कारण पति के लिए महान् से महान् त्याग कर सकती है और नवीन आकर्षण घर की बरबादी भी कर सकता है। यह बात मनोवैज्ञानिक कलापूर्ण ढङ्ग से 'अस्पताल का कमरा' बतलाता है। मोटर ऐक्सिडेंट से घायल हुए किसी व्यक्ति से मिलने अस्पताल में दो स्त्रियाँ आती हैं। एक व्यक्ति की परित्यक्ता, उपेक्षिता पत्नी है और दूसरी नवीन प्रेमिका, जो कि अस्पताल के कर्मचारियों को अपना परिचय घायल व्यक्ति की पत्नी कहकर ही देती है। नवीन प्रेमिका और परित्यक्ता पत्नी में बातें होती हैं। बातों ही बातों में पत्नी को पता लग जाता है कि यह तरुणी उसके ही पति की प्रेमिका है और पति का भी इसके लिए आकर्षण तथा उसके लिए विकर्षण है। शून्य में निश्वास छोड़ती हुई पत्नी बाहर से लौट जाती है; केवल एक बार हसरत-भरी निगाह से इस प्रेमिका का अपने पति के कमरे की ओर जाना देखती है।

'पहली भेंट' में प्रेम और वैभव के बीच सङ्घर्ष, अतृप्त आकांक्षा की पूर्ति के लिए, प्रतिशोध और उत्सर्ग के रूप में दिखलाया गया है। प्रसेनजित् की रानी—शाक्य दासीपुत्री—कविशेखर की आँखों पर मुग्ध थी। वह हृदय में ज्वाला छिपाए प्रसेनजित् के यहाँ दिन बिताती है। एक दिन कवि शेखर वहाँ तब पहुँचता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब प्रसेनजित् घर से बाहर थे। इस समय रानी प्रस्ताव रखती है जिसे शेखर ठुकरा देता है। प्रतिशोध-स्वरूप रानी शेखर की आँखें निकलवाने का यत्न करती है। शेखर स्वयं अपनी आँखें निकाल रानी के पास भेंट-स्वरूप भिजवा देता है। ग्लानि से भरी रानी महल को छोड़ बुद्ध विहार में पहुँच जाती है और वहाँ अपना मस्तक छिन्न कर देती है। राजा को इस बीच पता लगता है कि रानी दासीपुत्री है। वह बदला लेने का यत्न करता है, किन्तु पहली भेंट का उपहार छिन्न मस्तक ही उसके हाथ लगता है।

कानून में बतलाया गया है कि अपराधों के लिए असमर्थ परिस्थितियाँ ही प्रधान कारण है। कानून अपराधी को सजा देता है। जेल भिजवाता है; किन्तु उसके जीवन का सुधार नहीं होता। उल्टे वह और भी भयङ्कर पतन की ओर जाता है। मनुष्य कहीं का नहीं रह जाता। प्रायश्चित्त के लिए कानून में कोई स्थान नहीं।

सातों एकाङ्कियों में नेपोलियन के विजय-रहस्य सबसे उज्ज्वल, स्पष्ट और भव्य तथा कानून सबसे गहरा, सबसे व्यापक और सबसे अधिक गम्भीर है।

कणिकाएँ

श्री प्रभाकर माचवे

१—बोला ईश्वर—आज तमाशा मैं देखूँगा,
बोला मानव—तेरा पाँसा मैं देखूँगा!
होड़ लगी दोनों की स्पर्द्धा में युग बीते,
इतिहास कहा इसको। दोनों मरते-जीते।
मैं जान न पाया जीता मानव अथवा ईश्वर?
जाना केवल 'मैं' यह तत्त्व रहा अविनश्वर!

२—विश्व के जो प्रश्न हैं अज्ञात
खोजता उनको नया विज्ञान!
बुद्धि क्या है? पंगु, जो गिरि लाँघती;
चाहिए विश्वास का अभिमान!

३—भाग्य से निर्मित नहीं है दैन्य,
दैन्य से करना न अब सन्तोष।
न्यस्त स्वार्थों से विनिर्मित सैन्य,
जूझता उनसे निहत्था रोष!!
कर्म के पथ हैं सभी अवरुद्ध;
मुफलिसी, दारुण निराशा, मृत्यु,
कहत, बेकारी, अनैक्य व युद्ध,
तिसपर ये गुलामी नित्य!!!

४—अब उतर चुका है आया था जो भावों का उद्दाम ज्वार,
अब सिकता-पथ पर गति-प्रेरित चलती जीवन की जिह्मधार!
मुग्धा कलिका के व्रीडारुण, कण्टकित हुए हैं गौर गात,
अब बचे हुए हैं ओस-चिह्न कुहरा सब पिघला, हुई प्रात!
अब कभी तुम्हारी दर्द-भरी, फिर भी उत्तेजक मधुर याद,
दुश्चिन्ताएँ हलकी करतीं, फिर बन जातीं बोझिल अगाध!

५—ओ महान्! तेरी सत्ता के आगे हूँ मैं प्रणत-मान।
चक्षुष्मत्ता है अन्ध। तुझी से परिचालित ये पञ्चप्राण।
मेरे मानस के महाकाश, ओ रे विराट्, ओ महादेश!
तुझमें खोया मैं ज्यों नभ में निश्शेष एक तारक विशेष।
मैं पृथ्वी की गोदी से उठ सततोर्ध्वगमनप्रिय वृक्षप्राण
माथे पर मेरे मुक्त वात चरणों में रजकण निस्स्वहाव।

६—ओ रे स्थिति-गति के आदिसूत्र! मैं अविश्रान्त हूँ प्रवहमान
हूँ प्रवहमान, फिर भी तेरी सत्ता की सब प्रेरणा मान,
क्षण भर अंतर्मुख जब होता, जीवन का कण-कण हो अशान्त
कब मैं जानूँगा ओ अजान! तू ही उद्गम मेरे प्रशान्त।
मैं घाट-घाट जो भटक रहा जीवन का ले रागार्द्र भार
किस रोज मुझे दोगे निजात? ओ महासिन्धु से ओ उदार

७—पूछा जो बार-बार—
कैसे तुम रेखाकार
करते हो स्वप्न-भार?
मौन खड़े चित्रकार!

८—मानव क्या तेरा इतिहास? ज्यादह आँसू, थोड़ा हास!
कुछ विकास, उतना ही ह्रास, सिन्धुतरङ्गों का-सा भास
यह उत्थान-पतन-क्रम रास, चलता है उदास-सोल्लास
प्रतिपल प्रतिदिन औ' प्रतिमास, मानव तेरा क्या इतिहास
वर्तमान बनता है भूत, भावी वर्तमान तत्काल
सभी परस्पर के हैं दूत, ऊँच-नीच का झूठा शूल!
'आज' और 'कल' बुद्धि-प्रसूत, सदैव मिलता यकसाँ फूल
फकत चाहिए आत्मा पूत, वर्तमान बनता है भूत।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संक्रमण-काल का बजट

श्री अवनीन्द्रकुमार विद्यालङ्कार

भारत सरकार के नए और अन्तिम ब्रिटिश अर्थ-सदस्य सर आर्चीबाल्ड रोनाल्ड का पहला और अन्तिम बजट शान्ति-काल का बजट है, पर उस पर भी युद्ध की छाया विद्यमान है। योरप में ७ मई को और सुदूरपूर्व में २ सितम्बर को महायुद्ध समाप्त हो गया था। मगर युद्ध-व्यय एकदम समाप्त नहीं हो गया। युद्धीय आर्थिक तन्त्र को शान्तिकालिक आर्थिक तन्त्र में परिणत होने में कम-से-कम दो-तीन साल लगेंगे। पर यह संक्रमण-काल का समय अधिक लम्बा न होना चाहिए। भारत एक गरीब देश है और औद्योगिक देशों की अपेक्षा इसकी विश्व-व्यापी युद्ध का भार और दबाव सहने की शक्ति कम है। अर्थ-सदस्य ने स्वतः माना है—"भारत ने पूर्ण मात्रा में कष्ट सहा है और युद्ध-जन्य आर्थिक परिणामों में कुछ दिशाओं के अन्दर अन्यों की अपेक्षा अधिक कष्ट सहा है।

युद्ध का सम्पूर्ण व्यय बजट में परिलक्षित नहीं होता, फिर भी बजट के आँकड़ों से जो कुछ प्रकट होता है, वह चौंका देनेवाला है। युद्ध से पहले केन्द्रीय बजट ८० कोटि रु० का होता था। १९४५-४६ का खर्च (संशोधित अनुमान) ५००·६१ कोटि है और आय है ३६०·६६ कोटि रु०। इस प्रकार १४४·९५ कोटि का घाटा दिखाया गया है। १९४६·४७ में भी कुल व्यय का अनुमान ३५५·७१ कोटि रु० किया गया है, जब कि आय २०७ कोटि रु० ही है और घाटा ४८·७१ कोटि रु० का बताया गया है। युद्ध से पहले भारत का सैनिक व्यय लगभग ५० कोटि रु० था, पर इन दोनों सालों में ही क्रमशः ३७६·४२ और २४३·७७ कोटि रु० रहा है। ये अङ्क कह रहे हैं कि रोलैंड-बजट युद्ध-बजट है। अर्थ-सदस्य ने इसके दो कारण बताए हैं। सेना का विसर्जन और युद्ध-सामग्री की उचित व्यवस्था में समय लगेगा। दूसरे सैनिक व्यय में सहसा भारी कमी होने का बाजार पर बुरा असर पड़ेगा और युद्धाकुञ्चन का आर्थिक स्थिति पर अस्वास्थ्यकारी प्रभाव पड़ेगा। पर अर्थ-सदस्य भूल गए कि मुद्रा-स्फीति या फुलाव की बढ़ी आमदनी समाज के एक विशिष्ट वर्ग तक ही सीमित है। यदि फुलाव की आमदनी समाज के निम्न स्तर तक पहुँची होती, तो बङ्गाल में १९४३ के अन्दर ३० लाख आदमी भूख से तड़पकर न मरते। अकाल में मरनेवालों की अण्टी नोटों से नहीं भरी थी। कीमतें आर्थिक सतह पर आएँ, इसके लिए अतिरिक्त क्रय-शक्ति को समाप्त करने की आवश्यकता है। अर्थ-सदस्य ने स्वतः बताया है कि युद्धारम्भ से जनवरी १९४६ तक विभिन्न सरकारी ऋणों में ११७८ कोटि रु० आया है और ३१ मार्च १९४६ तक भारत का स्टर्लिंग पावना १३३० लाख पौंड है। इससे स्पष्ट है कि उपभोक्ताओं के उपभोग की सामग्री के अत्यधिक सीमित परिमाण के मुकाबले अब भी मुद्रास्फीति का धन एक वर्ग के हाथ में है।

अराष्ट्रीय है

यह युद्धकालिक बजट के समान ही नहीं है, अपितु अराष्ट्रीय भी है। अर्थ-सदस्य ने वाग्जाल के घटाटोप से यह दिखाने की कोशिश जरूर की है कि उनके बजट बनाने का एकमात्र उद्देश्य गरीबी, दरिद्रता, निरक्षरता और बेकारी से युद्ध करना है। क्या यह वास्तविक बात है? सर बेवरिज का कहना है कि स्वाधीन समाज के अन्दर सबको काम व रोजी देने के लिए बजट केन्द्रीय स्थान रखता है। प्राप्य धन की परिभाषा में बजट न बनाना चाहिए—क्योंकि इसकी कोई सीमा नहीं है—बल्कि मानवीय सामग्री की परिभाषा में, कितने आदमियों को काम और रोजी देना और उत्पादन का क्या मानदण्ड कायम करना है, बनाना चाहिए। लोगों को बिलकुल काम न देने की अपेक्षा यह अधिक अच्छा है कि उनको गड्ढे खोदने और उनको भरने के काम पर लगा दे। मानवीय क्रिया-कलाप का उद्देश्य काम देना नहीं है, अपितु जीवन-निर्वाह का भौतिक मानदण्ड ऊँचा करना है और व्यापक आध्यात्मिक जीवन के लिए अवसरों का विस्तार करना है। इस उद्देश्य से खर्च और काम की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिशा निश्चित करनी चाहिए। व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह की अपेक्षा राज्य धन के नियन्त्रण करने में अधिक अच्छी स्थिति में है। गवर्नमेंट धन-द्वारा नियन्त्रित होने की अपेक्षा उसको नियन्त्रित करने में समर्थ है। इस नूतन दृष्टिकोण से रोलैंड-बजट को देखने पर हम क्या पाते हैं?

युद्ध-काल में जिन लोगों ने सबसे अधिक कष्ट सहा है, ब्रिटिश शासन में जो सबसे अधिक शोषित हुए हैं और सदा निचोड़े जाते रहे हैं उन गरीब किसानों और मजदूरों के लिए बजट में क्या कोई आश्वासन और सान्त्वना का शब्द है? अर्थ-सदस्य ने कहा है :—"मेरे सामने बैठे कुछ मान्य सदस्य आश्चर्य कर रहे होंगे कि प्रत्यक्ष-कर के क्षेत्र में गरीब आदमियों के लिए भी कुछ प्रस्ताव कर रहा हूँ। मैं, स्पष्ट है, कुछ नहीं कर सकता क्योंकि वह प्रत्यक्ष-कर नहीं देता। कम-से-कम वह प्रत्यक्ष रूप से नहीं देता।"

हृदयहीनता की सीमा क्या इससे भी परे हो सकती है?

भारतीय अर्थ-सदस्य होता तो वह पूछता :—

१—राष्ट्रनिर्माण के लिए बड़े परिमाण में धन की आवश्यकता है। वह कहाँ से प्राप्त होगा?

२—इन वर्षों में सबसे अधिक भार किस वर्ग पर रहा है?

३—अप्रत्यक्ष करों को घटाकर और सामाजिक सेवा का खर्च घटाकर सर्वप्रथम राहत किनको देना चाहिए?

४—अतिरिक्त आय-कर का अन्त कर जिस वर्ग को लाभ पहुँचाया गया है, क्या उसका पुराना इतिहास बताता है कि वे उद्योग को 'नैशनलाइज' करेंगे, प्लांट और साज-सज्जा में सुधार करेंगे, कार्य-क्षमता बढ़ाएँगे, उत्पादन-व्यय घटाएँगे, उत्पादन बढ़ाएँगे और कीमतों को घटाएँगे? या दिया गया रिलीफ लखपतियों को और अधिक धनी बनाएगा?

५—अब तक उदासीन रहते हुए भी वे अब उत्पादन-व्यय और कीमतें घटाने के लिए तैयार हैं, पर क्या वे पूँजीगत समान मैशीनरी और मिस्त्रियों की कठिनाई के कारण इस स्थिति में हैं?

इन प्रश्नों का उत्तर बताएगा कि अतिरिक्त आय-कर को हटाने की कोई आवश्यकता न थी। गांधीजी नमक-कर हटाने के लिए वर्षों से आग्रह कर रहे हैं। नमक-कर से सरकार को क्या आमदनी होती है :—

(करोड़ रुपयों में)

१९४४-४५	१९४५-४६ बजट	१९४५-४६ संशोधित	१९४६-४७ बजट
९·२९	९·३०	९·२१	९·३०

इसके विपरीत अतिरिक्त आय-कर से, जो ३१ मार्च १९४६ के बाद से नहीं रहा है, १९४५-४६ में ९० कोटि और १९४६-४७ में ७५ कोटि रुपयों की आमदनी होगी, विदेशी सरकार नमक-कर को हटाने के लिए तैयार नहीं है, पर अतिरिक्त आय-कर को हटाने के लिए तैयार है! यह क्यों? इसका कारण क्या है?

अतिरिक्त आय-कर को हटाने का समर्थन करते हुए अर्थ-सदस्य ने कहा है कि श्रीमन्तों के लाभ के लिए यह नहीं हटाया गया है। फिर १९४५-४६ में इस स्रोत से ९० कोटि और १९४६-४७ में ७५ कोटि रुपया प्राप्त होगा। केवल १५ करोड़ रुपया की ही कमी होगी। इस कर के बारे में अर्थ-सदस्य की राय है—"कर के समस्त सिद्धान्तों के अनुसार यह सर्वथा खराब है। अमल में यह रफ है। कर लगाने में यह अनुचित है और एक निश्चित सीमा के बाहर अकार्यक्षमता को प्रोत्साहन देता है।"

आदम स्मिथ के सिद्धान्तों की इस नूतन व्याख्या से सहमत होना कठिन है। यह कर उन्हीं लोगों पर पड़ता है, जो देने में समर्थ हैं। सरलता से यह वसूल हो सकता है और इस कर से आमदनी भी भरपूर होती है। लम्बी लड़ाई के कारण यारों को जो मुनाफा हुआ है, वह जनता का शोषण करके हुआ है। मुनाफाखोरों के साथ सहानुभूति नहीं दिखाई जा सकती। न उनको क्षमा किया जा सकता है और न वे क्षमायोग्य हैं। सम्भवतः अन्तिम योरपीय अर्थ-सदस्य ने सङ्कटकाल में ब्रिटिश शासन की निःसङ्कोच भाव से सहायता के प्रति कृतज्ञता प्रकाशित करने के लिए अतिरिक्त आय-कर दूर किया है। इसको हटाने का दूसरा कारण सम्भवतः ब्रिटिश उद्योगों को प्रोत्साहन देना है। क्योंकि यदि भारत ब्रिटेन से अधिकाधिक मात्रा में माल लेने के लिए प्रेरित किया जा सके तो ब्रिटिश उद्योग शीघ्र पुनः पहली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अवस्था में आ सकेंगे। पर यह सब होगा भारतीय कर-दाताओं के बल पर।

अर्थ-सदस्य के अनुमान के अनुसार यद्यपि इस कर के कारण नए वर्ष में १५ कोटि रुपयों की ही आय होगी पर यह कुल आय के ५ प्रतिशत से अधिक है। इसलिए इस कर का हटाया जाना साधारण बात नहीं है। अर्थ-सदस्य की इस बात में कोई सार नहीं है कि इस कर के बने रहने से उद्योगों के विकास में बाधा पहुँचती। यह बात उसी अवस्था में सत्य हो सकती है, यदि उद्योगों के विकास और उद्योगीकरण को सर्वतोभावेन मुनाफाखोर वैयक्तिक साहस पर छोड़ दिया जाए, जो बिना किसी योजना के सरकारी संरक्षण में उद्योग-धन्धे स्थापित करे। पर भारत इस तरह का बिना किसी योजना का आर्थिक और औद्योगिक विकास नहीं चाहता। और न वह इस कार्य को कुछ थोड़े-से पूँजीपतियों के हाथ में छोड़ने को तैयार है।

एक साल कर वसूल होगा, क्या यह कथन सन्तोष-प्रद है? सर आर्चीबाल्ड ने अपनी सफाई में कहा है :— "मैं बड़े कारखानेदारों और बड़ी कम्पनियों का पक्षपाती हूँ, यह कहना सर्वथा असत्य है। मेरा किसी कारखाने और किसी कम्पनी से प्रम्बन्ध नहीं है। मैं किसी कम्पनी का भागीदार नहीं, और इस सम्बन्ध में डाइरेक्टर नहीं हो सकता; यह बताने की जरूरत नहीं है।" प्रश्न यह नहीं है कि अर्थ-सदस्य ने वैयक्तिक लाभ के लिए ऐसा किया है। बात तो यह है कि यह कर ब्रिटेन को लाभ पहुँचाने के खयाल से हटाया गया है। इँग्लैंड ने निश्चय किया है कि उत्पन्न माल का २५ प्रतिशत निर्यात किया जाए और साल भर में पिछले वर्ष से निर्यात-व्यापार दुगना कर दिया जाए। इसलिए यह अनुमान निर्मूल नहीं कहा जा सकता कि अतिरिक्त आय-कर दूर करने, डिविडेंड पर नियन्त्रण रखने, कच्चे माल पर चुंगी माफ करने, कारखाने की इमारत बाँधने को उत्तेजना देने आदि की सब योजनाएँ ब्रिटिश निर्यात-व्यापार को बढ़ाने के उद्देश्य से की गई हैं। ब्रिटिश और भारतीय पूँजीपतियों का सहयोग और मेल अकारण और निरुद्देश्य नहीं है। सरकार यह कर न दूर कर इस स्रोत की आमदनी से भारत में जहाज बनाने के कारखाने स्थापित कर सकती थी, नई नहरें निकाल सकती थी और अन्य अनेक नए उद्योग-धन्धे स्थापित करके बेकारी को दूर कर सकती थी। मगर सरकार ने यह सरल मार्ग न ग्रहण करके भारत के भविष्य को वैयक्तिक साहस की सनक पर छोड़ दिया है। इसलिए यह बजट अराष्ट्रीय है।

दो कसौटियाँ

युद्ध की समाप्ति पर बने बजट की परीक्षा की दो कसौटियाँ हैं। बजट शान्तिकालिक आर्थिक तन्त्र में परिणत करने में कितना सहायक है; पुनःसंस्थापन और पुनर्निर्माण-कार्य को जल्दी से पूरा करने में कितना सहायक है। बजट काम, रोजी, रोजगार आमदनी और व्यय को किस सीमा तक कायम रखने में या उसको नीचे गिरने से रोकने में समर्थ है। समृद्धि और वैभव की कुञ्जी नूतन आर्थिक विचार-धारा के अनुसार कुल खर्च, सरकारी और वैयक्तिक; रोजगार की सतह आय के बीच का सम्बन्ध है। इनके बीच के घनिष्ठ सम्बन्ध से अर्थ-सदस्य परिचित हैं। अर्थ-सदस्य का अनुमान है कि १९४६-४७ में लगभग ६०० करोड़ रु० की खर्च में कमी होगी। १३० कोटि सैनिक व्यय में, ३० करोड़ मुल्की खर्च में और ४५० कोटि रु० भारत-ब्रिटिश सरकार द्वारा किए जानेवाले खर्च में। खर्च की इस कमी को पूरा करने का प्रश्न है। इस खर्च की कमी की वजह से यह भी सम्भव है कि कीमतें सहसा न गिरें, या मन्दी न आए और बेकारी न फैले। मगर निजू और सरकारी खर्च को प्रोत्साहन देने के खयाल से बजट बनाया गया है और इस पर इस दृष्टिकोण से विचार करना चाहिए, यह अर्थ-सदस्य का आग्रह है।

उद्योग जहाँ रोजी और आय का साधन है, वहाँ लाभ का भी विषय है। बजट में इस बात की व्यवस्था की गई है कि पूँजी लगानेवालों को प्रोत्साहन मिले, मगर साथ ही ज्यादा मुनाफ़ा न कमाया जाए, इस विचार से डिविडेंड की सीमा निर्धारित कर दी गई है। अतिरिक्त आय कर इस विचार से रद्द किया गया है। अगाऊ जमा किया गया अतिरिक्त आय कर रिफंड कर दिया जाएगा, पर वह डिविडेंड देने के काम नहीं आ सकता। वह इमारत, प्लांट और मैशीनरी को बदलने के लिए काम में लाया जा सकता है। घिसाई, निरुपयोगी और अनुसन्धान व्यय पर इन्कमटैक्स में रियायत दी गई है। सर जेरमी रेजमैन ने विगत वर्ष खोज के कार्य को निजू

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काम बताया था। इसलिए यह परिवर्तन उल्लेख योग्य है। नई इमारत पर १० प्रतिशत प्रारम्भिक घिसाई भत्ता, प्लांट और मैशीनरी पर २० प्रतिशत, वैज्ञानिक अनुसन्धान और शोध के चालू खर्च पर पूर्ण रूप से इन्कमटैक्स न लगेगा। निवास और उद्योगों के लिए बनाई जानेवाली इमारतों के सम्बन्ध में भी रिलीफ दिया गया है। उत्पादन-व्यय को कम करने के लिए आयात कच्चे माल पर जकात कम किया गया है। कम्पनियाँ अपनी महानिधि बना सकें, इस विचार से पूँजी के ५ प्रतिशत आय और कुल आय के ३० प्रतिशत पर सुपर टैक्स प्रति रुपया १ आना लगेगा, इससे अधिक पर सुपर टैक्स उत्तरोत्तर बढ़ती हुई दर से लगेगा।

क्या कोई योजना है ?

अर्थ-सदस्य के बजट-भाषण में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण बात 'इंडस्ट्रियल फाइनांस कारपोरेशन' और 'नेशनल 'इन्वेस्टमेंट बोर्ड' की स्थापना करने की घोषणा है। औद्योगिक प्रगति के लिए यह एक अच्छा आधार सिद्ध होगा। सुचारु रूप से विकसित औद्योगिक बैङ्कों के अभाव में औद्योगिक प्रगति सम्भव नहीं है। इसलिए औद्योगिक बैङ्क की स्थापना की ओर सरकार का ध्यान जाना शुभ ही है।

भारत सरकार ने अपनी औद्योगिक और खेती विषयक नीति की घोषणा की है। मगर नीति योजना नहीं है। सरकार योजना बनाने का वस्तुतः विचार रखती है, यह अभी देखना शेष है। विदेशी व्यापार, कीमत, उत्पादन, वेतन, मुनाफा, पूँजी विनियोग और उपभोग का पद्धतिपूर्ण रीति से कण्ट्रोल किए बगैर योजना सम्भव नहीं है। हरेक कच्चे माल का सारे देश में राशन करना होगा। औद्योगिक और खेती के उत्पादन का लक्ष्य निश्चित करना होगा, जो एक निश्चित अवधि में पूरा करना होगा। इन सब बातों का बजट में उल्लेख नहीं है। यह कार्य जनता की पूर्ण विश्वासभाजन राष्ट्रीय सरकार से ही सम्भव है। वर्तमान गवर्नमेंट से इसकी आशा नहीं की जा सकती।

युद्धोत्तरकालिक योजना

बजट में युद्धोत्तरकालिक योजना का जिक्र है। प्रान्तिक सरकारों की ६०० कोटि रुपयों की योजना है। केन्द्रीय सरकार की रेलवे, सड़क और मुल्की उड़ान आदि की है। भारत सरकार ने प्रान्तिक सरकारों को वचन दिया है कि वह सब स्वीकृत स्कीमों के लिए आवश्यक निधि की व्यवस्था करेगी। जो स्कीमें अपना खर्च आप निकाल सकती हैं, उनके लिए कर्ज के रूप में दिया जाएगा। अगाऊ देने के लिए ३५ करोड़ रुपया और उत्पादक योजनाओं के लिए १५ कोटि रुपया कर्ज देने के वास्ते अलग रक्खा गया है। केन्द्रीय सरकार की औद्योगिक विकास की स्कीमों के लिए रेलवे को छोड़कर २७ कोटि रुपया बजट में दिया गया है। बजट में निहित युद्धोत्तरकालिक योजना का यही चित्र है।

सर जेरमी रेजमैन ने बम्बई योजना के 'उत्पन्न धन' के सुझाव से नापसन्दगी जाहिर की थी और आशा प्रकट की थी प्रथम प्रभावोत्पादक पञ्चम युद्धोत्तरकाल के अन्दर १००० कोटि रुपया प्राप्त हो सकेगा और चौथे या पाँचवें साल करों से और कर्ज प्राप्त हो सकेगा पर अभी तो भारत सरकार का बजट ही घाटे का है। करों से १०० कोटि की अतिरिक्त आमदनी की आशा निकट भविष्य में तो पूरी होती हुई प्रतीत नहीं होती।

योजना के अभाव में हमारा नाश निश्चित है। आज की गम्भीर आर्थिक सङ्कट की स्थिति में योजना के सहारे ही हम जीवित रह सकते हैं। खाद्य अन्न की समस्या को ही लीजिए। हमारा देश कृषि-प्रधान देश है, मगर आज संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के सामने 'अन्नं देहि' 'अन्नं देहि' की रट लगा रहा है। यह वर्ष अपवाद नहीं है। खेती का चक्र चलता है, कभी फसल अच्छी होती है, कभी मध्यम और कभी खराब होती है। यदि खेतिहर देश साधारणतः जरूरत से ज्यादा अन्न उत्पन्न नहीं करेगा तो वह भूखों मरेगा। जब खेती वर्षा पर निर्भर है, और वर्षा कभी होती है कभी नहीं होती है तब समय-समय पर बार-बार दुर्लभता का होना अनिवार्य है। दुर्लभता और अकाल के बीच कुछ अंशों का ही अन्तर है।

अकाल कमीशन ने १९०१ में ९० लख टन अधिक अन्न का अनुमान लगाया था। वह आबादी के बढ़ने से समाप्त हो गया और आज हम दर-दर अन्न माँग रहे हैं और अपमान सह रहे हैं। निस्सन्देह हम इसका मूल्य देंगे। मगर इस मोल देने का अर्थ क्या है? अपने विशाल स्रोतों को, जिनका हम देश के औद्योगीकरण में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपयोग कर सकते हैं, हम इस तरह नष्ट करेंगे। स्टर्लिंग पावने का सर्वोत्तम उपयोग अनिवार्य मैशीनरी, टेकनिकल दक्षता आदि का आयात करने में किया जा सकता है। खेती के पुनस्संङ्गठन से हम अपनी अन्न की आवश्यकता पूरी कर सकते हैं। प्रति वर्ष विशाल परिमाण में अन्न आयात करने से हमारी टेकनिकल साज-सज्जा आयात करने की क्षमता को भारी नुकसान पहुँचेगा, जिसके बिना विशाल परिमाण में औद्योगीकरण सम्भव नहीं है। पर आज अवस्था क्या है? प्रान्त अपने-अपने क्षेत्र में स्वाधीन हैं और प्रान्तिक उत्तरदायित्व के क्षेत्र में केन्द्रीय सरकार हस्तक्षेप नहीं कर सकती। केन्द्रीय सरकार जब तक अन्न-नीति का सञ्चालन न करेगी तब तक अकाल पड़ने और लोगों के भूखे मरने की आशङ्का बराबर बनी रहेगी। योजना और प्रान्तिक स्वाधीनता ये दोनों परस्पर विरोधी बातें हैं। इससे स्पष्ट है कि सरकार के पास कोई योजना नहीं है।

बेकारी क्या दूर हो सकेगी?

बजट में योजना का अभाव है। अब प्रश्न यह है कि क्या बजट में निर्दिष्ट उपायों से बेकारी दूर हो सकेगी और पुनःसंस्थापन और पुनर्निर्माण का कार्य हो सकेगा? देश में बेकारी बढ़ने से क्रयशक्ति घटेगी। फलतः कीमतें गिरेंगी, जब कि उत्पादन-व्यय ऊँचा है और उसको बदली स्थिति के अनुसार ठीक करने का समय नहीं मिला है। फलतः आर्थिक क्रिया-कलाप कम हो जाएगा, बाजार में मन्दी आएगी और बेकारी बढ़ेगी। कीमतें यदि एकाएक न गिरकर धीरे-धीरे कम हों तो उत्पादन-व्यय कीमतों के गिरने के साथ चल सकेगा। बेकारी के साथ देश में अन्न और वस्त्र की भयङ्कर दुर्लभता है। इसके साथ सेना से अलग हुए लोगों में बेचैनी और असन्तोष भी फैल रहा है।

देश के अन्दर प्रत्यक्ष रूप से जो खर्च होता है उसका फल है काम, रोजगार। आयात भी रोजगार देता है, मगर केवल वितरण-सीमा तक। पूँजीवादी समाज में रोजगार का मुख्य स्रोत निजू व्यय है। पर यह माना जाता है कि यदि निजू व्यय में बहुत गिरावट आए, तो उसकी पूर्ति सरकारी खर्च से होनी चाहिए। यह उत्पादक कामों और लम्बी मुद्दत के कामों द्वारा हो सकता है। सरकारी खर्च और निजू खर्च में उचित सन्तुलन होना चाहिए। बजट में इस सम्बन्ध में जो खर्च दिखाया गया है, वह ६०० करोड़ रुपयों का है। यह युद्ध-व्यय के कम होने से जाता रहा है। युद्ध-व्यय की पूर्ति भारत में करों, कर्ज और उत्पन्न धन (मुद्रा-स्फीति या फुलाव) द्वारा की जाती रही है। खर्च में कमी का रोजगार पर, अविलम्ब असर पड़ेगा। केन्द्रीय सरकार ने खर्च में हुई कमी को पूरा करने के लिए अपनी सारी योजनाओं पर, जिसमें प्रान्तों को दी गई सहायता भी सम्मिलित है, १२५ करोड़ रुपया खर्च करने का बजट में निश्चय किया है। मगर योजनाओं और स्कीमों को देखने से सहज में ज्ञात हो जाएगा कि सरकार का सङ्कल्पित खर्च वस्तुतः न होगा। इस समय जो काम हाथ में है, वह निश्चित प्रोग्राम के अनुसार प्रगति नहीं कर रहा है। प्रान्तों के द्वारा बनाई गई योजनाएँ अभी इस अवस्था में नहीं पहुँची हैं जो अमल में अविलम्ब आ सकें। इसलिए प्रान्तिक खर्चों के समेत आर्थिक योजनाओं पर इस साल १०० कोटि रुपयों से अधिक न हो सकेगा।

५०० कोटि रुपयों की कमी

इस गणना के अनुसार ५०० कोटि रुपयों की सरकारी व्यय में हुई कमी को पूरा करने का भार निजू खर्च पर आ पड़ता है। यह विशाल है। ५० लाख आदमियों पर इसका असर पड़ेगा। यदि उनके आश्रितों को गिन लें तो संख्या २ करोड़ हो जाएगी। यदि बढ़े उत्पादन और बढ़ी कीमतों का खयाल करके प्रति व्यक्ति आमदनी इस समय हम १२० रुपया मानें, तो सरकारी खर्च में ५०० करोड़ रुपयों की कमी होने से प्रति व्यक्ति की औसतन आमदनी भी कम हो जाएगी और दस लाख व्यक्तियों की आबादी के एक चौथाई भाग का जीवन कठिनाई में पड़ जाएगा।

सरकार की धारणा है कि खर्च की यह कमी इन तीन उपायों से पूरी होगी—(१) बड़े परिमाण के उद्योगों के विस्तार और नूतनीकरण से। बजट के अनुसार निजू रोजगार का यह मुख्य स्रोत है। (२) फैक्टरी की इमारतें बनाने और निवास-गृह बनाने और (३) प्रान्तिक सरकारों द्वारा जन-मङ्गल की बनाई योजनाओं से। बजट बेकारी को दूर करने के लिए मुख्यतः विराट् संगठित उद्योगों पर निर्भर करता है। मगर इससे बेकारी की समस्या तत्काल दूर न होगी। औद्योगिक विकास होने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर यह दो प्रकार से रोजगार उत्पन्न करता है—(१) पूँजी माल उत्पन्न करके अर्थात् प्लांट और मैशीनरी तैयार करके और उद्योग के लिए आवश्यक इमारत तैयार करके, (२) उपभोक्ताओं के लिए माल तैयार करके। अत्यधिक औद्योगिक देशों में संक्रमण-काल में पूँजी स्थायी माल में लगाई जाती है। भारत के सम्बन्ध में यह बात लागू नहीं होती।

१—भारत में मैशीनरी बनाने के उद्योग का अस्तित्व नहीं है। मुख्य प्लांट और मैशीनरी आयात करनी होगी। इसलिए वर्तमान अवस्था में पूँजी माल उत्पन्न करके रोजगार उत्पन्न करना और बेकारी दूर करना सम्भव नहीं है।

२—विनिमय की कठिनाई के कारण हम पर्याप्त परिमाण में मैशीनरी का आयात नहीं कर सकते, इसलिए इच्छा रहते हुए भी हम उपभोक्ताओं के लिए आवश्यक माल तैयार करके बेकारी दूर नहीं कर सकते।

३—एक अन्य प्रतिबन्ध है भारत की मैशीनरी खपाने की अपनी क्षमता।

जब मैशीनरी मिलनी कठिन है तब फैक्टरी के लिए कोई इमारत बाँधेगा, यह सोचा ही नहीं जा सकता।

निवास-गृह

बेकारी दूर करने का दूसरा उपाय अब केवल निवास-गृहों का बनाना शेष रह जाता है। अर्थ-संदस्य का कहना है कि इस दिशा में जो कुछ खर्च होगा वह श्रम पर होगा। यह ठीक है और एक अच्छा हल है। पर इससे बेकारी बहुत अंशों में दूर न हो सकेगी। १—अधिक-से-अधिक साल भर में २५ करोड़ रुपयों के मकान बन सकेंगे पर सरकारी खर्च में कमी हुई है ५०० करोड़ रु० की। २—इमारतें बनाने की सामग्री ईंट, सीमेंट और विशेषतः इस्पात की कमी बड़ी बाधा है। ३—दक्ष मजदूरों, बढ़इयों, राजगीरों, मिस्त्रियों की कमी है। ४—जमीन की कीमतें अधिक बढ़ जाने से साधारण हैसियत के लोग निवास-गृह न बनवा सकेंगे। इसलिए निवास गृहों के बनाने के सम्बन्ध में सरकारी आशा पूरी न होगी।

इस समय जीवन-निर्वाह का मानदण्ड बढ़ाने का प्रश्न नहीं है, बल्कि जीवन को बनाए रखने का प्रश्न है। इसलिए जनता की तात्कालिक आवश्यकता की पूर्ति की ओर हमें अविलम्ब ध्यान देना चाहिए। इसलिए ऐसा काम हाथ में लेना चाहिए जिसके लिए आवश्यक श्रम और सामग्री देश के अन्दर उपलब्ध हो। श्रम को काम पर लगाते हुए ट्रेनिंग देने की जरूरत न हो। सामग्री सरलता से सुलभ हो। काम के लिए खास यान्त्रिक साज सज्जा की जरूरत न हो।

इस दृष्टि से खेती का विस्तार और खादी का उत्पादन ये दो ही कार्य हो सकते हैं। ७५० लाख टन अन्न उपजाने की हमको आवश्यकता है। युद्ध से पूर्व ५०० लाख टन अन्न उपजता था। ६०-७० लाख टन अन्न की कमी रह जाती है। यही बात वस्त्रों की है।

इन सब बातों पर विचार करने से स्पष्ट है कि औद्योगिक विस्तार के लिए निधि की कमी नहीं है अतः डा० जान मथाई—बम्बई योजना के निर्माताओं में से एक—का मत है कि औद्योगिक कम्पनियों की महानिधि बढ़ाने के लिए करों में किसी प्रकार की कमी करने की आवश्यकता नहीं थी, इसलिए हमारा कहना है कि अतिरिक्त आय-कर हटाने का यह समय नहीं था और यह ब्रिटेन के लाभ के लिए हटाया गया है।

कर-प्रस्ताव

इस वर्ष प्रत्यक्ष करों में २१·५० करोड़ रु० की कमी की गई है और अप्रत्यक्ष करों में केवल ५ लाख की कमी की गई है। १ जुलाई से कार्ड का दाम दो पैसा कर दिया गया है, इससे १६७ लाख, किरासिन तेल पर जकात डेढ़ आना से ६ पाई प्रति गैलन कर दिया गया है और इससे १५१ लाख, दियासलाई का दाम २ पैसा कर दिया गया है, और इससे १५० लाख, सुपारी पर एक्साइज ड्यूटी दो आने से घटाकर डेढ़ आना प्रति पौंड कर दिया गया है और इससे ५५ लाख, और कच्ची सिनेमा फिल्मों पर जकात ६ पाई से ३ पाई कर दी है और इससे २५ लाख रु० आय में कमी होगी। सुपारी के हाट-व्यवस्था और उत्पादन के लिए क्रमशः ३ लाख और ५ लाख रु० दिया गया है। इस प्रकार अप्रत्यक्ष करों में ५·४८ करोड़ रु० का रिलीफ दिया गया है। प्रत्यक्ष करों में २१·५० कोटि रु० का रिलीफ दिया गया है, और इसके मुकाबले अप्रत्यक्ष करों में दिया गया रिलीफ ५·४३ करोड़ ही रह जाता है। करों के मूल प्रस्ताव को देखना इस अनुचित न होगा :—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

	१९४५-४६ संशोधित	१९४६-४७ बजट
जकात	६५·००	६५·५५
केन्द्रीय एक्साइज	४६·६५	४६·७०
कार्पोरेशन टैक्स	८९·५५	६८·९१
इन्कम टैक्स	९९·४५	८०·३१
नमक	९·२५	९·३१
अफीम	१·०५	१·१८
मुद्रा और टकसाल	१६·८०	१६·६७
डाक व तार	१० ६७	२०·००
रेलवे	३२·००	७·३६
कुल आय	३६०·६६	३११·६५
प्रत्यक्ष कर	१८९·००	१४९·२२

१९४५-४६ में अतिरिक्त आय-कर से १८९ करोड़ रुपयों की आमदनी होने की आशा है, जो कि कुल आमदनी ३६१ करोड़ रुपयों का ५२ प्रतिशत है। १९४६-४७ में कुल ३१२ करोड़ रुपयों की आमदनी में इस स्रोत से १४९ करोड़ रुपया होगी। प्रत्यक्ष करों में ३१·५० करोड़ की कमी की गई है, और उसमें वृद्धि केवल ५ लाख की की गई है। घिसाई, शोध और निरुपयोगिता चीजों के लिए दी गई रियायतों को इसमें सम्मिलित किया जाए तो प्रत्यक्ष करों में दी गई छूट बहुत अधिक हो जाएगी। केन्द्रीय एक्साइज से १९३९-४० में ६५२ लाख रुपये मिलते थे और अब १९४६-४७ में ४६·७० करोड़ रुपयों की आशा है, जो आय का एक मुख्य स्रोत है। पर इसमें प्रतिगामी प्रवृत्ति दिखाई देने लगी है।

जनता पर भार

अर्थ-सदस्य ने नमक-कर हटाने में असमर्थता प्रकट की है, क्योंकि इससे सरकार को ९ करोड़ की आमदनी होती है और इसे छोड़ने के लिए वह तैयार नहीं है। १९४६-४७ में तम्बाकू के आयात से ८ करोड़, किरासिन के आयात से ४ करोड़, कपास से २·८० कोटि, और मैशीनरी के आयात से ३·७३ करोड़ रुपया आमदनी होने की आशा है। आन्तरिक उत्पादन पर लगी एक्साइज ड्यूटी भी जनता पर भार है। १९४६-४७ के बजट में एक्साइज ड्यूटी द्वारा चीनी से ६ करोड़, दियासलाई से ६ करोड़, तम्बाकू से २२ करोड़, वनस्पति घी से १·५ करोड़, सुपारी से १·६ करोड़ और नमक से ७·९८ करोड़ रुपया आमदनी की आशा की गई है। इस प्रकार ६६·६३ कोटि रुपयों का भार जनता पर इन अप्रत्यक्ष करों द्वारा डाला गया है। अर्थ-सदस्य ने, इससे स्पष्ट है कि, गरीब जनता का खयाल करके अपना बजट नहीं बनाया है।

उद्योगों को सहायता

उद्योगों को सहायता देने के लिए उनको आयकर (इन्कम टैक्स) में निम्न रियायतें दी गई हैं—

१—नए प्लांट पर घिसाई भत्ता २० प्रतिशत, और नई इमारत पर १० प्रतिशत। कोल-उद्योग में नवीन प्लांट पर ५० प्रतिशत छूट दी गई है।

२—खोज या अनुसन्धान पर किया गया पूँजी व्यय, इमारती व्यय व चालू खर्च आय-कर से मुक्त रहेगा।

३—निरुपयोगिता के भत्ता का विस्तार कर दिया गया है और इसमें विनाश या भङ्ग होने या इमारत के कारण भी आयकर से छूट मिल सकेगी।

४—घरेलू पैदावार को नुक्सान पहुँचाए बगैर उद्योगों के लिए आवश्यक कच्चा माल, प्लांट और मैशीनरी पर जकात में रियायत दी गई है। कोयला, ईंधन, तेल, बाँस आदि धातुओं और कच्चे माल पर, जो कि इस देश में उपलब्ध नहीं है या पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं है, जकात हटा दिया जाएगा या कम कर दिया जाएगा।

५—कम्पनियों के मुनाफे का जो धन डिविडेंड में नहीं बाँटा जाएगा, उसके साथ रियायत की गई है। जो राशि डिविडेंड में नहीं दी जाएगी, उस पर एक आना रिबेट देने का नियम पिछले दो साल से था। अब यह किया गया है कि कम्पनी की सुरक्षित धन समेत सारी पूँजी का ५ प्रतिशत और सारी आय का २० प्रतिशत डिविडेंड दिए जाने पर १ आना से अधिक सुपर टैक्स नहीं लगेगा। ५ प्रतिशत से अधिक डिविडेंड देने पर उत्तरोत्तर बढ़ती दर का सुपर टैक्स अमल में आवेगा। कुल आय के ३०-४० प्रतिशत पर प्रति रुपया २ आना से लेकर ६० प्रतिशत पर प्रति रुपया ७ आना होगा।

६—व्यवसाय और उद्योग के लिए बरती जानेवाली इमारत पर १५ प्रतिशत रिलीफ दिया गया है।

साधारण आमदनी के लोगों को आय के द्वितीय और तृतीय वर्ग में १ आना और २ आना क्रमशः कमी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की गई है और उपार्जित आय की आय-कर से छूट की राशि $\frac{१}{१०}$ से $\frac{१}{८}$ कर दी गई है।

स्वर्ण पर कर

स्वर्ण पर २५ रुपया प्रति तोला से समय-समय पर विभिन्न कर लगेगा। इसका कारण यह दिया गया है जिससे भारत में स्वर्ण की कीमत विश्व-मूल्य के लगभग बराबर रहे। चाँदी पर कर दुगना कर दिया गया है, पर वह बदलेगी नहीं निश्चित रहेगी। सट्टेबाजों के लिए स्वर्ण को अनाकर्षक बनाने के लिए यह तजवीज की गई है। पर प्रश्न यह है कि सट्टा क्यों होता है? इसके दो कारण हो सकते हैं। प्रथम यह कि भारत के भुगतान के रोकड़ की स्थिति बहुत अच्छी है या विदेशी विनिमय के लिए कुछ अवशेष नहीं है। यदि पिछली स्थिति हो तो स्वर्ण की माँग न रहेगी, क्योंकि विदेशी विनिमय न होने के कारण इसको खरीदने की जरूरत न रहेगी। दूसरी ओर यदि बचत हो, जैसी आशा की जाती है, तो भारत स्वर्ण के अलावा और किस रूप में भुगतान ले सकता है, और जब कि अर्थ-सदस्य मानते हैं कि हमारे अधिकार में जो विदेशी विनिमय है उसके बदले पूँजी माल नहीं आ सकता? चाँदी पर कम कर लगाने का मतलब यह प्रतीत होता है कि हमारे विदेशी विनिमय बचत का प्रवाह दोनों में कम मूल्यवान् धातु में हो। सरकार का इरादा कुछ भी हो, धातु के आयात पर कर लगाने से विदेशी मुद्रा के लिए भारतीय जनता की माँग बढ़ेगी; क्योंकि रुपया आज व्यवहारतः अपरिवर्तनीय है, इसकी पीठ पर स्टर्लिंग पावना है जो काम नहीं आ सकता। सरकार की इस स्वर्ण-नीति से स्टर्लिंग को बल और सहारा मिलेगा।

अन्तर

भारत सरकार और ब्रिटिश सरकार की औद्योगिक नीति का अन्तर ब्रिटेन की इस घोषित नीति से—जो कि सर जान एंडरसन ने की थी—स्पष्ट हो जाएगा—प्लांट और इमारतों को अन्य औद्योगिक देशों की बराबरी में अद्यतन बनाना महत्त्वपूर्ण है। भारतीय समस्या की सबसे बड़ी पहेली यह है कि भारत को खाली हाथ टैंकों और सुपर फाइटर्स से लड़ने के लिए कहा जाता है। उपकरणों के अभाव से हम ५५ मनुष्य-घण्टे एक काम के लिए लेते हैं, जब कि आवश्यक उपकरणों के होने पर अन्य देश उसी काम के लिए ४ मनुष्य-घण्टे लेते हैं। मैशीनरी मिल नहीं सकती, क्योंकि अर्थ-सदस्य के शब्दों में विश्व के स्रोत अपर्याप्त हैं। यह बात गलत है। डालर होने पर मैशीनरी संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, कनाडा, स्विट्जरलैंड, आस्ट्रेलिया से प्राप्त हो सकती है। इंग्लैंड में इमारतें बनाने के विषय में 'बर्ट कमिटी' ने एक सविस्तर योजना बनाई है, जिसका यहाँ अभाव है। इस सत्य की इस देश में उपेक्षा की गई है कि देश का उद्योग जिस सीमा तक कार्यक्षम होता है उसी सीमा तक देश की खेती उन्नत होती है, और अत्यधिक औद्योगिक देश में प्रति बीघा अधिकतम फसल होती है।

बचत आन्दोलन से मुद्रास्फीति कम नहीं हो सकती। इसके लिए 'इकानमिस्ट' के शब्दों में उपभोक्ताओं के लिए माल और पूँजी माल लगाने की जरूरत है। पर ६०० करोड़ रुपयों से २ वर्ग नहीं बनाया जा सकता। बम्बई-योजना ने ही आज की आमदनी को दुगना करने के लिए १०००० करोड़ रुपयों की आवश्यकता बताई थी।

आर्थिक समझौता

एंग्लो-भारत आर्थिक करार को और एक साल के वास्ते बढ़ा दिया गया है। १९४५-४६ में भारत का सैनिक व्यय ३७६·४२ कोटि रु० और ब्रिटिश सरकार का भाग ४८६ करोड़ रु० है। १९४६-४७ में यह क्रमशः २४३·७७ कोटि और ४२ कोटि रु० है। ब्रिटिश सरकार से भारत को सैनिक व्यय में कितना लेना है और इसके कारण भारत पर कितना भार और दबाव युद्धकाल में रहा है, यह निम्न तालिका से ज्ञात होगा—

(करोड़ रुपयों में)

१९३९-४०	४·००
४०-४१	५३·०
४१-४२	१९४·००
४२-४३	३२५·४८
४३-४४	३७७·८७
४४-४५	४३९·५३
(संशोधित)	
४५-४६	३४७·००
(संशोधित)	
४६-४७	४२·००
(बजट)	

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत के अन्दर ब्रिटिश युद्ध-व्यय की कमी के निम्न कारण हैं—

१—युद्ध बन्द हो जाने से समुद्र-पार से भारतीय सेना लौट आई है।

२—आग्नेय एशिया कमाण्ड अप्रैल १९४६ से भारतीय स्रोत से अपनी आवश्यकता की पूर्ति नहीं कर रही है।

३—ब्रिटिश सरकार-द्वारा भारतीय माल की माँग में कमी।

४—हैदरी योजना।

भारत में ब्रिटिश सरकार की एजेंसियाँ हैं और 'ब्रिटिश मिनिस्टरीज आफ सप्लाई एण्ड फूड' भारतीय बाजार से सीधा माल खरीदती हैं। १९४३-४४ में इन्होंने ७ करोड़ पौण्ड का माल खरीदा था। ब्रिटिश एजेण्टों को खरीदने का एकाधिकार प्राप्त है। भारत सरकार से भी कम दाम पर ये माल खरीदती हैं। खाद्य अन्न और सामग्री ब्रिटिश सरकार खरीदती है और इसका मूल्य कभी रुपए में और कभी स्टर्लिंग में चुकाती है। ब्रिटेन को ये जो अतिरिक्त व्यावसायिक लाभ प्राप्त हैं उनका अन्त होना चाहिए। ऐंग्लो-भारत आर्थिक समझौते की अवधि और एक साल बढ़ा करके स्टर्लिंग पावने के अन्तिम समझौते में बाधा डाली गई है।

संक्रमण-काल का व्यय

प्रान्तिक व्यय को मिलाकर सरकारी व्यय हाल के वर्षों में १२०० प्रतिवर्ष रहा है। प्रान्तों को छोड़ दें तो भारत सरकार १९४५-४६ में करों से ३६० कोटि और कर्ज से ३३४ कोटि रुपया जमा करना चाहती है। मुद्रा-कुंचन के अन्य सरकारी फण्ड भी हैं और ये भी मुद्रा-स्फीति पर प्रतिबन्ध रखते हैं। १९४५-४६ में इन सब में मिलाकर ४४० कोटि रुपया जमा हुआ था। इसलिए १९४५-४६ में आय समेत मुद्रास्फीति-प्रतिबन्धक राशि ८०० कोटि रुपया होगी। इसके मुकाबले खर्च इस प्रकार है :—

मुल्की व्यय—१२९·१९ करोड़ रुपया
सैनिक व्यय—३९१·३५ ,,

इसका अर्थ है कि सरकार का कुल व्यय १९४५-४६ के अन्त में ६०० कोटि रुपया होगा। वसूल होनेवाला युद्ध-व्यय ३४७ कोटि है और इसके कारण नोटों के चलन में १०० कोटि की वृद्धि हुई है। इसी पार्श्वभूमि को ध्यान में रखकर नए साल का खर्च देखना चाहिए। यहाँ यह भी स्मरण रखना चाहिए कि सरकार के पास पिछले साल २०० कोटि रुपया जमा भी हो गया है।

नए साल में सरकार करों से ३०७ कोटि, कर्ज से २५० कोटि, डाकखाने के सेविङ्ग बैंक से ६७ करोड़ की आशा करती है। इस प्रकार इन तीन मदों से ही उसके पास ६०० करोड़ रुपया हो जाएगा। सरकार इसको खर्च इस प्रकार करना चाहती है—

मुल्की प्रबन्ध	१११·९४ करोड़
सैनिक व्यय	२४५·३४ करोड़
कर्ज आदि के चुकाने में	१७३·१८ करोड़

इस प्रकार पूँजीगत और आयगत कुल व्यय ५२९·८६ करोड़ रुपया होगा। ब्रिटिश सरकार से युद्ध-व्यय के अन्दर ४२ कोटि रुपया वसूल करना होगा।

मुल्की विभाग के विभिन्न मदों पर इस प्रकार खर्च होगा—

(करोड़ रुपयों में)

रेलवे	२३
डाक-तार	६·२३
उद्योग	३·९८
मुल्की उड़ान	१·३९
तामीर	५३
प्रान्तों को	३५
कर्ज चुकाने में	७३·३६

उद्योग-धन्धों में प्रत्यक्ष रूप से भारत सरकार केवल ४ कोटि रुपया लगा रही है। उद्योगों के विकास को प्रान्तों और वैयक्तिक साहस पर छोड़ दिया है। प्रान्तों और वैयक्तिक साहस-द्वारा उद्योगों के विकास पर २०० कोटि से अधिक व्यय न होगा। इसलिए मुद्रा-स्फीति को रोकने का मुख्य भार प्रान्तों पर पड़ेगा। प्रान्तों को इसके लिए बजट में ३५ कोटि सहायता के रूप में और १५ कोटि रुपया कर्ज में देने के लिए रक्खा गया है। इमारतें और मकान बनाने में यदि प्रान्तिक सरकार लगान का १२॥ प्रतिशत मदद देगी तो केन्द्र भी १२॥ प्रतिशत मदद देगी। अगले दो सालों में बननेवाले मकानों पर आय-कर से भी छूट रहेगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रान्तों के पास अपनी योजनाएँ पूरी करने के लिए ७० करोड़ रुपया होगा और अगले छः वर्षों में १०० कोटि हो जाएगा और केन्द्र से उनको सहायता के रूप में २५० कोटि मिलेगा।

राष्ट्रीय ऋण

युद्ध के आरम्भ में भारत का राष्ट्रीय ऋण लगभग १२०५ कोटि था। वह बढ़कर २२५६ करोड़ रुपया हो गया और अगले साल बढ़कर २५०७ करोड़ होगा। भारत पर स्टर्लिंग कर्ज मार्च १९४६ को १७ करोड़ और मार्च १९४७ को १३ करोड़ रह जाएगा। इस प्रसङ्ग में स्टर्लिंग पावने को हम नहीं भूल सकते। वह भारत की सञ्चित पूँजी है और वह ब्रिटेन पर कर्ज है। भारत पर ब्रिटेन ने जो खर्च लादा वह ब्रिटेन को उठाना चाहिए था। पर वह भारत पर कर्ज कह करके लाद दिया गया। गदर का खर्च इसका एक उदाहरण है। ईस्ट इंडिया कम्पनी के लिए लन्दन में कर्ज लिया गया और अत्यधिक ऊँची सूद-दर पर लिया गया। यह सब वसूल कर लिया गया। इसलिए भारत यदि स्टर्लिंग पावना चुकाने के लिए ब्रिटेन से कहे तो कोई अचरज न होना चाहिए।

भारत पर इस समय आन्तरिक या सूदी कर्ज १९११ करोड़ (मार्च १९४६) है। इसमें से १५५७ करोड़ रुपया कर्ज और ट्रेजरी बिल के रूप में है और शेष अनफंडेड (कैश, और नेशन सेविंग सर्टिफिकेट, सेविंग बैंक डिपाजिट प्राविडेण्ट फण्ड) कर्ज है। यदि स्टर्लिंग पावना का १६८५ करोड़ रुपया निकाल दें, तो कर्ज केवल २२६ करोड़ रुपया रह जाएगा। राष्ट्रीय गवर्नमेंट २००० करोड़ कर्ज से अपना जीवन सम्भवतः आरम्भ करेगी। १९४६-४७ में सूद चुकाने में ३७ करोड़ रुपया दिया जायगा। दूसरी ओर कार्पोरेशन टैक्स, अतिरिक्त आय-कर समेत अन्य करों से इस साल १५८ करोड़ सरकार को मिलेगा। इसका अर्थ है कि श्रीमन्त कर, दाता सूद के रूप में दिए का २३ प्रतिशत वापस पा लेंगे। भारत सरकार का अधिकांश कर्ज उत्पादक है। रेलवे में ८१८ करोड़ रुपया, डाक-तार और अन्य में ५० करोड़ रुपया, १३० करोड़ रुपया कर्ज पर और अगाऊ। इस प्रकार १५९९ करोड़ रुपया कर्ज में से ५९७ करोड़ उत्पादक कर्ज है। इस प्रकार अनुत्पादक कर्ज केवल ८७० कोटि रुपया है जब कि युद्ध-पूर्व २०८ करोड़ रुपया था। राष्ट्र-रक्षा व्यय १६९ करोड़ रुपया में से कुछ निकल आएगा, इसलिए यह सारी राशि अनुत्पादक नहीं कही जा सकती।

नए साल में सरकार २५० कोटि का नया कर्ज लेना चाहती है, जब कि १९४५-४६ में ३३४ कोटि रुपया लिया था। अनफण्डेड कर्ज सम्भव है ६७ कोटि रुपयों से ७२ करोड़ रुपया हो जाए। सरकार के पास इस समय भी बचत में १३२ करोड़ रुपया है, मगर उसके पास कोई योजना नहीं है। सरकारी खर्च में ६०० करोड़ रुपयों की कमी हुई है। उसको पूरा करने के लिए सरकार को योजना बनानी चाहिए थी। यदि उद्योगों का विकास वैयक्तिक साहस पर छोड़ना है तो कर्ज नीति कर-नीति की विरोधी नहीं होनी चाहिए। इन दोनों को मिलकर साथ-साथ एक उद्देश्य से चलना चाहिए।

इस प्रकार सर आर्चीबाल्ड रोनाल्ड के बजट को किसी भी दृष्टि से देखिए, मालूम होगा कि यह बजट रोग, निरक्षरता और बेकारी को दूर करने के उद्देश्य से नहीं बनाया गया है। केवल शब्दोच्चार किया गया है और सरकार के पास इसके लिए लड़ाई समाप्त होने के लगभग एक साल बाद भी कोई योजना तैयार नहीं है। ऐसी सरकार का शीघ्र विदा होना ही आवश्यक है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उलझी लड़ियाँ

श्रीमती हीरादेवी चतुर्वेदी

सन्ध्या के झुटपुटे में रूपा अपने घर की खुली छत पर एकाकी बैठी है। देखते ही देखते सूरज की पीली किरणें क्षितिज के पार जाकर अदृश्य हो गईं। अब यह रहा-सहा धूमिल प्रकाश भी धीरे-धीरे गायब होता जा रहा है। नीलाकाश में कितने ही पञ्छी समानान्तर उड़ते हुए कहीं तेजी से भागे चले जा रहे हैं। घर के पार्श्व में खड़े हुए नीम के ऊँचे और सघन वृक्ष पर कितने ही पञ्छी चहचहा रहे हैं—शायद रैन-बसेरा करने की तैयारी कर रहे हैं। दूर किसी अमराई में कोयल चिल्ला रही है—कुहु-कुहु मुहु-मुहु।

रूपा के अन्तर्मन ने कहा—इस कोयल को कभी चैन नहीं। जब देखो तभी चिल्लाती रहती है। फिर भी मानव की अपेक्षा यह कोयल कहीं अधिक आजाद है और अधिक सुखी। वह अपने मन की पीर चिल्ला-चिल्लाकर हलकी तो कर लेती है। लेकिन मानव तो यह भी नहीं कर सकता। उसे अपने पास-पड़ोस की दुनिया का समाज की मर्यादा का और दुनियादारी का कितना ध्यान रखना पड़ता है! मानव अपने मन की पीर व्यक्त नहीं कर सकता। बहुत हुआ तो आँसुओं की माला के मनके बिखरा दिए और गीली आँखों की दोनों कोरों को चुपचुप पोंछ लिया। उसकी उलझी लड़ियाँ कभी सुलझ नहीं पातीं।

मानव और पञ्छी! कितना अन्तर है दोनों में! दिन भर पञ्छी कहीं भी रहें; लेकिन सन्ध्या का अन्धकार सिमटते ही, किसी भी वृक्ष की एक डाल पर ये पञ्छी रैन-बसेरा करने एकत्र हो जाते और दिन-भर का सारा अवसाद भूल जाते हैं। परन्तु मानव? वह तो वर्षों दूर-दूर रहा आता है। कमाने खाने की चिन्ता में मिलने-जुलने की भावना भी दूर छिटककर बिखर जाती है। रूपा दूसरों के लिए क्या कहे? वह स्वयं आज यही सब अनुभव कर रही है। आठ महीने बीत चुके; लेकिन रूपा के साजन ने, इस बीच आकर उससे मिलने की शायद आवश्यकता ही नहीं समझी!

साजन की स्मृति के सुनहरे तारों से रूपा उलझ रही थी कि सामने के आलीशान बँगले में ग्रामोफोन का रिकार्ड बज उठा—'पिया मिलन को जाना...।'

पूरा गीत रूपा ने ध्यानपूर्वक सुना। रिकार्ड जब बज चुका तो रूपा को लगा कि यह गीत कल्पना-मात्र नहीं है। यह तो वास्तविक अनुभूति है। प्रत्येक नारी के जीवन में ऐसा अवसर आता है जब वह पिया-मिलन की डगर पर अपने पग बढ़ाती; उल्लास और उमङ्ग की सरिता बहाती और सुखद जीवन का स्पर्श कर पुलक-विभोर हो जाती है।

रूपा के जीवन में अब तक ऐसे अनेक अवसर आ चुके हैं जब उसने स्वयं इसका अनुभव किया है। उस चाँदनी रात को रूपा कभी भूल नहीं सकती, जब अपने साजन के साथ नर्मदा की फेनिल लहरों पर नौका-विहार करते हुए वह बन्दर-कूदनी देखने गई थी।

नीले आकाश में तारे झिलमिला रहे थे। सोलहों कलाओं से युक्त पूनम का चाँद खिलखिला रहा था। और रूपा भी अपनी तरुणाई के प्रवाह में बहती जा रही थी। इस तरुणाई के प्रवाह का उसे स्वयं पता नहीं था। कभी इसका पता शायद चलता भी नहीं। लेकिन नाव जब नर्मदा की पावन लहरों पर बहते-बहते उस स्थल पर पहुँची, जहाँ दोनों तटों पर सङ्गमरमर की श्वेत चट्टानें आकाश को छूने का प्रयत्न कर रही हैं, तब रूपा के साजन ने कहा था—'रूपा! ये दूध-जैसी श्वेत चट्टानें इस चाँदनी में कितनी आकर्षक प्रतीत हो रही हैं!'

'क्यों न हो!' रूपा ने कहा, 'एक तो इन चट्टानों ने रूप ही सुन्दर पाया है, दूसरे इस चाँदनी का स्पर्श पाकर इनका यह रूप और भी अधिक निखर उठा है।'

'बिना स्पर्श के किसी का रूप नहीं निखरता रूपा!' कहा था रूपा के साजन शरद ने, 'हीरा कितना प्रकाशमान् और मूल्यवान् रत्न है, लेकिन उसका आकर्षक रूप भी किसी स्पर्श-विशेष के बाद ही बन पाता है।' फिर एक क्षण रुककर कहा, 'दूसरों की बातें जाने दो, रूपा। तुम्हारा अपना रूप भी तो किसी के स्पर्श से ही इतना निखर सका है कि तरुणाई का योग पाकर उसमें एक ऐसा प्रवाह दीख पड़ता है, जो अत्यन्त क्षिप्र और आकर्षक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बन गया है। तुम्हारे रोम-रोम से यह प्रवाह फूटा पड़ता है।'

'बस भी करो यह तारीफ!' रूपा ने गम्भीर दृष्टि से शरद को देखते हुए कहा था, 'वह मल्लाह क्या कहेगा यह सब सुनकर?'

'वह तो अपनी ही धुन में मस्त है, रूपा!' शरद ने धीमे स्वर में कहा, 'देखो न, वह अपने-आप कुछ गुनगुना रहा है। फिर, नाव के दूसरे छोर पर वह बैठा है और पतवार चला रहा है। उसे क्या पड़ा है तुम्हारी बातें सुनने से।'

'लेकिन मेरी तरुणाई का प्रवाह जो तुम्हारा स्पर्श पाकर गतिमान् हो उठा है, कोई अनहोनी बात तो नहीं है।' रूपा ने बन्द होते हुए प्रकरण को शायद फिर जारी करना चाहा।

'यह कौन कहता है कि अनहोनी बात है।' शरद ने अपनी बात की पुष्टि करते हुए कहा, 'मैं कह रहा था कि स्पर्श का प्रभाव अनोखा होता है।'

'एक बात है!' रूपा ने कुछ गम्भीरता के आवरण में कहा, 'इस स्पर्श का प्रभाव स्थायी नहीं होता। इन चट्टानों में जो आकर्षण चाँदनी के आलोक में है, वही दिन में अथवा अमावस की काली रात में कदापि न रहता होगा।'

'तुम ठीक कह रही हो, रूपा! लेकिन उस वक्त इनका अपना सौन्दर्य भी कम आकर्षक नहीं रहता। फिर, यह तो प्रकृति का नियम है कि सदा एक-सा रूप किसी का नहीं रहता। और यह परिवर्त्तन आवश्यक भी है। बिना परिवर्त्तन के इस दुनिया में कोई आकर्षण भी तो न रह जाएगा। तब शायद सुन्दर और असुन्दर की पहचान भी न रह जाएगी, रूपा!'

'परिवर्त्तन!' रूपा ने मन-ही-मन दोहराया था उस दिन नाव पर। इसके आगे वह कुछ न कह सकी। परिवर्त्तन की भावना ने उसे ऐसा कुछ परेशान-सा कर दिया था कि फिर प्रयत्न करने पर भी वह पहले-जैसी मुखर नहीं हो सकी थी। बन्दर-कूदनी देखकर शरद के साथ जब वह घर लौट रही थी, तब शरद ने कहा भी था, 'रूपा, तुम क्या सोच रही हो?'

'कोई खास बात नहीं!' रूपा ने कह दिया था और परिवर्त्तन की आशंका को साफ छिपा लिया था।

'तो क्या नींद सताने लगी है?'

'हाँ!' रूपा ने अपने मन की यथार्थ बात छिपाते हुए कह दिया था। अपनी डावाँडोल-सी मनोदशा को रूपा ने न केवल उस दिन छिपाया था अपने साजन से, बल्कि आज तक उसने कभी यह बात प्रकट नहीं होने दी। एक सर्वथा नवीन-सी बात उस दिन रूपा को ज्ञात हो गई थी न! रात-दिन वह यही सोचती रहती थी कि बिना परिवर्त्तन के इस दुनिया में कोई आकर्षण भी तो न रह जाएगा।

और, सचमुच एक परिवर्त्तन आ गया है रूपा के जीवन में भी। उस दिन जब शरद इस शहर से दूर और रूपा से भी दूर जा रहा था, तब ऐसी ही सन्ध्या-वेला में, इसी खुली छत पर, आकर कहा था उसने—'रूपा, मैं कलकत्ता जा रहा हूँ।'

'कलकत्ता!' आश्चर्य हुआ था रूपा को सुनकर।

'हाँ, रूपा!'

'क्या करोगे वहाँ जाकर?'

'नौकरी और क्या?'

'तो अब पत्रकार न रहकर किसी दूसरी नौकरी की धुन सवार हुई है?'

'नहीं!' शरद ने कहा था, 'पत्रकार ही रहूँगा। वहाँ के एक दैनिक में भरपूर वेतन मिल रहा है। सोचता हूँ, रात-दिन की परेशानियों से मुक्ति पाने का यह मौका हाथ से न जाने दूँ।' और कलकत्ते से आया हुआ नियुक्ति-पत्र रूपा के हाथ पर धर दिया था शरद ने।

नियुक्ति-पत्र देख, रूपा को भी जैसे दो सौ रुपए मासिक के लालच ने प्रभावित कर दिया। यहाँ रह-कर केवल अस्सी रुपए पर शरद को दिन-भर अपनी सेवाएँ देनी पड़ती हैं। कार्यालय से आने पर घर में नित्य ही सुबह शाम दूसरे पत्रों के लिए लिखते रहना पड़ता है, तब कहीं गृहस्थी का खर्च चल पाता है। रूपा को लगा कि अच्छा है, एक ही पत्र में काम करने से उसके साजन की मानसिक चिन्ताएँ सचमुच कम हो जाएँगी।

एक क्षण के बाद कहा रूपा ने, 'लेकिन एक बात है।'

'वह क्या?' बीच में ही टोक दिया शरद ने।

'कलकत्ते में दो सौ रुपये भी शायद पर्याप्त न हों।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'होंगे क्यों नहीं!' शरद ने कहा, 'प्रारम्भ में तुम्हें अपने साथ न ले चलूँगा। अकेला ही रहूँगा वहाँ। प्रतिमास तुम्हें सवा सौ रुपए भेजता रहूँगा! मन्नू के साथ इतने में तुम बहुत मजे में यहाँ रह सकोगी। मैं वहाँ पचहत्तर रुपये में अपना खर्च अवश्य चला लूँगा।'

रूपा को यह सुन आश्चर्य हुआ। वह एक बार कलकत्ता स्वयं देख आई है। यों ही घूमने के लिए गई थी। पाँच-सात होटलों के दरवाजे खटखटाने पर मुश्किल से एक होटल में एक छोटा-सा कमरा मिल सका था; सो भी सात रुपए दैनिक किराए पर। एक कप दूध आठ आने में मिलता था मन्नू के लिए। ऐसी दशा में एक व्यक्ति पचहत्तर रुपए में कैसे अपना खर्च चला सकेगा वहाँ? कहा उसने, 'लेकिन पचहत्तर रुपए में तुम अपना खर्च कैसे चलाओगे वहाँ? उस होटल की बात भूल गए क्या? सात रुपए दिन पर तो एक कमरा मिला था हमें। एक बार के खाने का दो थालियों का चार रुपए देना पड़ता था।'

'तुम भूल रही हो, रूपा! वह होटल था। मैं जब वहाँ नौकरी करूँगा, तो किसी होटल में इतना महँगा कमरा थोड़े ही लूँगा। किशोर को तो तुम जानती हो न! वही जो बहुधा होटल में हम लोगों से मिलने आ जाया करते थे। वे जिस कमरे में रहते हैं, उसका पचीस रुपए महीना किराया देते हैं। मैं भी ऐसा ही कोई कमरा खोज लूँगा। और, फिलहाल तो किसी मित्र के साथ ही रहने की चेष्टा करूँगा। उसका भी बोझ हलका हो जाएगा और मेरा भी।'

और, अपनी मानसिक चिन्ताओं की परवा न कर रूपा ने स्वीकृति दे दी थी कलकत्ता जाने के लिए। लेकिन उसने यह कल्पना भी न की थी कि आठ महीने गुजर जाने पर भी, शरद उसे अपने पास बुलाने का नाम न लेगा। अब तो जब कभी रूपा ने स्वयं यह बात लिखी है, तो शरद का उत्तर नकारात्मक ही आया है। शरद लिख देता है, 'तुम तो काफी समझदार हो, रूपा। स्वयं कलकत्ता देख भी चुकी हो। अब तक कोई मकान मुझे नहीं मिल सका है। एक मित्र के साथ रात को सो रहता हूँ उसके कमरे में। सिर्फ सोने के लिए उसे पन्द्रह रुपए देता हूँ महीने में। युद्ध समाप्त हो चुका है; लेकिन युद्ध-जन्य अभिशापों से हम लोगों को अब तक मुक्ति नहीं मिल सकी है। सुनते हैं, बहुत जल्द मकान खाली होंगे, और तभी तुम्हें तथा मन्नू को यहाँ ले आना सम्भव होगा। धीरज के साथ समय बिताओ, रूपा! यों तुम जब कहो, तुम्हें और मन्नू को यहाँ ला सकता हूँ। लेकिन दस-पाँच दिन भी घूमने का जो खर्च पड़ेगा, वह तुमसे छिपा नहीं है।'

अँधेरा काफी झुक आया था। लेकिन रूपा इन्हीं सब बातों में उलझी-सी बैठी है। वह सोच रही है कि कलकत्ता जाने की बात जिस दिन उसने अपने साजन से कही थी, उस दिन शायद बहुत बड़ी गलती उसने कर डाली थी। गलती जब हो ही चुकी है, तब उसका प्रायश्चित्त भी उसे ही करना होगा—करना ही पड़ रहा है। उसे लगा कि उसने जान-बूझकर अपने सुख को दुःख में परिणत कर लिया है। सोने के पिंजड़े में बन्द पक्षी दूसरों के आकर्षण का केन्द्र रहता है। लेकिन वह पक्षी स्वयं कितना परेशान और दुखी रहता है, इसका किसी को पता नहीं रहता। आज वह ठीक उस मैना की तरह है, जो किसी सोने के पिंजड़े में बन्द हो चुकी हो और अपने सारे सुख और सन्तोष से हाथ धो चुकी हो। रुपयों का जहाँ तक सम्बन्ध है, उसे भरपूर मिल जाता है प्रतिमास; लेकिन साजन से मिलने की और उनके समीप रहने की बात तो एकदम सपना हो चुकी है। हाँ, सपना!

रूपा अभी भी अपने इसी ताने-बाने को बुनती रहती; लेकिन मन्नू ने आकर उसका ध्यान भङ्ग कर दिया। अचानक आकर उसने, रूपा की पीठ पर अपने दोनों हाथ थपथपाते हुए, कहा—'माँ! अँधेरा हो गया है। तुमने लालटेन भी नहीं जलाई!'

'अभी जलाती हूँ बेटा!' रूपा ने कहा और उठकर लालटेन जलाने चली गई।

लालटेन का जगमग प्रकाश सारे घर में चमक उठा। लेकिन रूपा के अन्तस्तल का अन्धकार अब भी सघन था। उसकी उलझी लड़ियाँ अब भी जैसी की तैसी थीं। दूर किसी अमराई से अब भी कोयल कुहु-कुहु मुहु-मुहु चिल्ला रही थी!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदमी का बच्चा

धारावाहिक उपन्यास

श्री कृष्णचन्द्र शर्मा, बी० ए०

[१]

बचपन, जवानी और बुढ़ापा; विकास की तीन सीढ़ियाँ! बिखरे मनकों को गुम्फित करनेवाला एक सूत्र, लोग कहने लगे माला! असङ्कलित घटनाओं की कड़ियाँ जीवन-तन्तु के प्रवेश से संङ्घटित होकर कहलाई जाती हैं कहानी! आदमी के बच्चे की गाथा आदमी की कहानी है। आदमी दुनिया की कहानी दोहराता है। मेरे कुछ संस्मरण—

पिताजी के साथ दुकान पर जाने को मचल उठा। बहकाए में न आया, ठिनकता ही रहा। चट से एक तमाचा। दीवाल की ओर लुढ़क गया। एक कोर कनपटी के ऊपर सिर में गुब गई—लाल-लाल खून! माताजी सहम गईं। पिताजी बिगड़ रहे थे। मेरा उपचार हुआ। खाने को गरम-गरम जलेबियाँ मिलीं। अब मैं उस कष्ट को भूल चुका हूँ। चोट का निशान भले ही नहीं मिट पाया। तब मैं तीन वर्ष का था। माताजी बतलाती हैं कि तीसरा भी पूरा न हुआ था।

आज मैं इससे एक सिद्धान्त निकाल रहा हूँ कि आदमी की जीवन-यात्रा के आदि क्षण बहक से भरे होते हैं। बच्चा बहकाए में नहीं आता, अतएव मार पड़ती है। रोने लगता है तो बहलाते हैं! बच्चा मान जाता है। क्या अन्तर है इस बहकाने और बहलाने में?

विद्या का श्रीगणेश होता है। सर्वप्रथम संस्कार यही कि जिसे जैसा बताएँ वैसा मान लिया जाए। बच्चा विश्वास करने की आदत डालता है। फिर अनुकरण, बच्चे की यह प्रवृत्ति बल पकड़ती है। अध्यापक ने कहा—बोलो, 'अ'। बच्चों ने दोहराया—'अ'। वह कहता है—लिखो 'अ'। वे देते हैं ध्वनि को तदाकार! पढ़ाई का एक साधारण नमूना!

मेरे सामने पुस्तक खुली पड़ी है, 'सदा सच बोलो। झूठ पाप है।' मैं इनमें से किसी भी एक बात से परिचित न था। फिर भी सच, झूठ और पाप, ये तीन बातें सीखनी पड़ीं। हठात् पाप के संस्कार पड़ने प्रारम्भ हुए।

'तूने मिठाई चुराई?" चुराना, अर्थात् चुपचाप उठाना। यह भाष्य बाद का है। मैंने कहा—'नहीं।' 'मुँह पर यह क्या लगा है। झूठा कहीं का।' तड़ातड़ तमाचे! झूठ पाप है, अब उसके दण्ड का भी अनुभव हो गया।

अगले दिन सीखा—'माँ-बाप का कहा मानो'। परवशता का आदि अनुभव, आतङ्क की प्रथम अनुभूति और सापेक्ष्यवाद की पहली रेखा! उस दिन से स्वतन्त्र विचारों का संहार प्रारम्भ हो गया। पिताजी कहते हैं—ऐसा है। मैं सोचता हूँ कि ऐसा क्यों नहीं। किन्तु चटशालाओं में सहज जिज्ञासा का अवरोध कर बच्चों पर मनोवैज्ञानिक विजय प्राप्त की जाती है। मुझे स्मरण है कि माँ-बाप का कहा मानो। मैं विरोध नहीं करता। एक डर था और वह है दण्डविधान।

उस दिन से वनश्री उपवन की सीमाओं में बँध गई। जो कुछ सिखाया गया वही सीखा! सहस्रों वर्ष पुरातन संस्कृति का धुँधला प्रतिबिम्ब हम पर पड़ रहा था। मैं विगत के स्वप्न देखता हुआ आगत की उपेक्षा कर रहा था।

मेरे समवयस्क गुल्ली-डण्डा खेल रहे थे। जा मिला। लौटा तो देर से और धूल में भरा हुआ! झूठ नहीं बोला, फिर भी मार पड़ी। झूठ-सच का एक-सा दण्डविधान।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ दिन तक पुनः लीक पर चलता रहा। पतङ्ग उड़ते देखे तो कुछ बहका। आँख बचाकर छत पर जा दौड़ा। आँखें आसमान में, पैर अधर में और मन सभी से परे। डोर से हाथ कट गए। एक-दो जगह बन्दरों से भी झपेट में खरौंच लग गई। दर्द हुआ तो आप ही रोने लगा। माँ-बाप का कहा न मानने का फल!

घर ही कैसे जाऊँ? वहाँ जाते ही पिटाई होगी। मुझे याद आया कि सिब्बू ने एक बार इसी डर से भुतहे पेड़ पर रात बिताई थी। रामू गङ्गाजी में डुबकी मार गया था। भगेता कई रोज तक घर ही नहीं लौटा था। मैं इनमें से कुछ भी नहीं कर सकता था। जीने में ही दुबककर पड़ गया। उधर रात भर ढूँढ़ होती रही। सुबह मेहतरानी झाड़ू देने आई तो मुझसे ठोकर खा ही गई। पकड़ लिया गया। पर पिटने से बच गया था।

आत्मसमर्पण कर देना ही पड़ा। तख्ती, स्लेट, कापी और किताब, चार कलाओं की उपासना प्रारम्भ हुई। तख्ती और स्लेट छूट गई, कापी-किताब की संख्या बढ़ चली। चटशाला के बाद स्कूल। छोटी कक्षा से ऊँची कक्षा में और इसी तरह आगे! पशु अपनी खाल के कपड़ों से काम चला लेता है, पर मनुष्य नहीं। कृत्रिम आच्छादन की उसे सबसे पहले आवश्यकता पड़ती है। संस्कारों के पट पड़ते गए।

× × ×

टन नन, टन! स्कूल की दीवालें मुक्त उल्लास से निनादित हो उठीं। भिन्न-भिन्न रुचि, प्रकृति और मति का होने पर भी जो बाल-समुदाय एक ही हाँक में चल रहा था, स्वच्छन्दता का अनुभव करने लगा। सब अपने चुने-चुने साथियों से जा मिले। घर के रास्ते की ओर आप ही पैर बढ़ रहे थे। मैं भी अपने चिरसङ्गी शैलेन्द्र शर्मा के साथ हो लिया।

बक्फा हुआ था। हम दोनों अपना-अपना भोजन ले स्कूल के पीछे निकल नहर के पास ही एक बड़ी भारी सीती हौज की चौड़ी मुँडेर पर बैठकर खाने जम गए थे। हवा से चलनेवाले बड़े पङ्खे से हौज में नहर का पानी लाया जाता था। पर आज-कल पङ्खा ही बिगड़ा पड़ा था। खाते समय पहाड़ी और जङ्गली चीलें आ-आकर मँडराने लगती थीं। हम बीच-बीच में एकाध टुकड़ा हवा में उछाल देते थे। कोई न कोई चील सर्राटा भरती हुई टूटती और एक ही झपट्टे में टुकड़े को जमीन पर गिरने से पहले दबोचकर उड़ जाती। शैलेन्द्र ने कहा था—'विकास, जीवन में इस कला का सीखना भी परमावश्यक है।' पढ़ाई का घण्टा बज जाने से उस समय 'चील-झपट्टे' पर कोई बात भी नहीं बढ़ सकी थी।

कुछ ही दूर चल पाए होंगे कि शैलेन्द्र एक व्यक्ति की ओर सङ्केत करके हँसता हुआ बोला—देखो तो विकास, यह गँवार हाथ में मोटा लट्ठ लिए अपनी पत्नी को कैसे हाँकता हुआ ले जा रहा है। जब ये औरत को एकदम छिपाकर रखना चाहते हैं तो उन्हें सड़क पर ही क्यों लाते हैं। पुरुष स्त्री के अधिकारों के साथ वही चील-झपट्टे का-सा खेल खेला करता है। जब तक स्त्रियाँ सुशिक्षित न हो जाएँगी, उनकी यह दुर्दशा होती ही रहेगी। कुछ भी हो, देश और समाज के हित के लिए इन्हें बन्धन-मुक्त करना अत्यावश्यक है। पैरों में पड़े इन मोटे-मोटे चाँदी के कड़ों को तुम आभूषण कहोगे या बेड़ियाँ? क्या चाँदी-सोने के होने के कारण ही इनके प्रति धारणा में अन्तर आ जाता है?

मेरे संस्कार आहत हुए। शैलेन्द्र की बातों में विदेशीपन की बू आ रही थी। मैं विरोध किए बिना न रह सका—शैल, तुमने पश्चिमी आचरण और शील का पाठ पढ़ा है। नारी का अभारतीय आदर्श अपने आकर्षक आवरण के कारण ही अनुकरणीय नहीं। हमें अपने सांस्कृतिक इतिहास की गौरवपूर्ण रक्षा के लिए अपनत्व को नहीं मिटाना है। तुम शिक्षा के द्वारा परम्परागत भारतीय नारी का स्वरूप ही बदल दिया चाहते हो। शिक्षा स्वयं स्त्री-समाज के लिए हितकर सिद्ध नहीं हो सकती।

शैलेन्द्र का पक्ष कहाँ तक भ्रामक है और मेरा सांस्कृतिक सिद्धान्त सम्यक्, इसकी विवेचना-शक्ति मुझमें न थी। वेद-पुराण, धर्म और संस्कृति की अस्पष्ट धारणाएँ मेरे मस्तिष्क में थीं। पूर्वजों का धुँधला आदर्श आँखों के आगे झूलता रहता। मैं विचार करता तो पुरातनता की छाप से ग्रस्त होकर और मेरे तर्क अन्ध-विश्वास के पोषक बने रहते। मुझे उस परिपाटी और पद्धति से प्रेम था, जिसमें पलकर इतना बड़ा हुआ था। सङ्कीर्णता को आत्मीयता समझकर बलपूर्वक पकड़े था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शैलेन्द्र हँस पड़ा। बोला—मेरी समझ में नहीं आता कि तुमने व्यर्थ ही मुझे कैसे अभारतीय करार दिया। जीर्ण और जर्जर को पुरातनता के आवरण में परम्परा के बहाने श्लाघा देना विचार-शक्ति की दुर्बलता है। फिर यदि कोई दोष कालयोग से किसी पर लग ही जाए तो उसका अपनत्व के आधार पर निर्वाह भी उचित नहीं। सदियों से हम अनुदार शिक्षा पा रहे हैं। इसी के फल-स्वरूप किसी भी शिक्षा को अहितकर इसी दृष्टि से मान लेते हैं कि वह हमारे विचारों का क्रान्तिकारी परिमार्जन कर डालना चाहती है। शिक्षित नारियाँ निस्सन्देह और अधिक अपनी विडम्बना पुरुषों के हाथों न होने देंगी। सम्भवतः यही कारण है कि तुम शिक्षा उनके लिए अनावश्यक और अहितकर समझते थे।

मैंने विरोध किया—नहीं, हमारे यहाँ स्त्री पुरुष की अर्द्धाङ्गिनी है। हम उसे देवी-पद देते हैं, वासना की तृप्ति का साधन नहीं समझते। किन्तु तुम शिक्षा के व्याज से उस अमर्यादित व्यवस्था को लाना चाहते हो जिसके प्रभाव-स्वरूप स्त्री पर से वे समस्त नियन्त्रण हट जाएँ जो उसके शील की कभी भी रक्षा करते आए हैं। हमारे पूर्वज मूर्ख न थे। वे त्रिकालदर्शी थे। उनका विधान इस विषय में निस्सन्देह उचित है।

शैलेन्द्र ने कहा—त्रिकालदर्शी पुरुषों ने ऐसा सङ्कीर्ण विधान कदापि न किया होगा। गार्गी, लीलावती और राज्यश्री प्रभृति के उदाहरण इसकी स्पष्ट घोषणा करते हैं। यह तो मध्ययुग में यवनों के प्रभाव-स्वरूप भी सङ्कीर्णता प्रविष्ट हुई। अज्ञानवश पूर्वजों को इसका उत्तरदायी ठहराना हमारे अपने मत में ठीक नहीं! पुरुष की स्वेच्छाचारिता का समर्थन इस प्रकार मान्य नहीं!

मैंने चिढ़कर कहा—पर तुम्हें यह तो मान्य होगा ही कि शिक्षित स्त्रियों के चरित्र भी उज्ज्वल नहीं स्वीकार किए जा सकते।

शैलेन्द्र ने क्षोभपूर्वक कहा—इस वार्ता को यहीं छोड़ दो विकास। अब यह मेरी बहनों के चरित्र पर भी सन्देह प्रकट कर रही है।

मैं चुप रह गया।

× × ×

गङ्गा हिलकोरों से अपना उद्वेग प्रकट कर रही थी। मैं नहाने को प्रस्तुत कच्छा पहने घाट पर के एक ऊँचे बुर्ज पर खड़ा था। नीलाभ विपुल गभीर जल-राशि; सूर्यकर लहरों के हृदय में गुदगुदी उठा रहे थे। मछलियों की चमकीली पीठें जल के ऊपर आते ही झिलमिलाने लगतीं। सूर्य को बिना पानी के किसी ऊँचे मेघ-लव ने ढक लिया। नीलम की सरिता बह चली। नील श्रेणियाँ तट से मील से भी अधिक दूर होने पर नीली जल-राशि पर श्यामघन-सी प्रतिच्छायित हो उठी। मैंने उस अद्भुत दृश्य को देखा। उन्मुक्त आनन्द का कैसा विराट् स्वरूप। मानसिक ग्लानि विचलित हो उठी। बस छाल मार दी!

क्षण भर के लिए तो वरुणलोक में—सरिता के अन्तस्तल में—मग्न रहा। जब ऊपर उठा तो लहरियों के वलय मुझे वृत्ताकार होकर परिवृत किए थे। मछलियाँ इधर-उधर छिटक गई थीं। सब कुछ भूलकर तैरता रहा। हाथों से पानी चीरता और छाती के धक्के से आगे बढ़ता। लहरों के हाथों ही हाथों में इस पार से उस पार तक जा पहुँचा! थकित देह अर्द्धसिक्त सिकता पर खड़ा था। चारों ओर काई से हरे पत्थर, छोटे-बड़े सभी प्रकार के, पड़े थे। गरम हवा बालू के कण उड़ाती हुई मेरे गीले शरीर से लिपटकर ठण्डी ही हो जाती। सूर्य पर अभी बादलों के आवरण पड़े थे। हवा के मदमाते स्पर्श से गङ्गा की छाती बार-बार उभर आती थी। वक्र धारा में वेग बढ़ता ही जाता था। तट पर खड़ा-खड़ा मैं सोच रहा था कि कौन-सा किनारा वार और कौन-सा पार। केवल दृष्टि-भेद था। चाहे जन्म की दिशा से मृत्यु पर विचार करो अथवा मरण की दृष्टि से जीवन पर।

फिर किनारे-किनारे उत्तर की ओर दौड़ता चला गया। परले तट की ओर सीधी बढ़नेवाली धारा में छलाँग मार दी। द्रुत वेग से मैं बह रहा था। ऊँची-ऊँची लहरें आप ही मुझे उछाल-उछालकर परस्पर समर्पण करती जा रही थीं। तल के पत्थर धारा के वेग के साथ बह रहे थे। परस्पर की रगड़ से प्रकृत सङ्गीत की सृष्टि हो रही थी। चेतना खो रही थी। कुछ ही दूर आगे रेड़ा पड़ता था। द्रुत धारा ढोकों से टकरा-टकराकर उछलती हुई आनन्द और भय का एक साथ विस्तार करती थी। मैंने कुछ हाथ कसकर लगाए और दिशा में कुछ घुमाव किया। कुछ ही काल उपरान्त तट के छिछले पानी में क्लान्त होकर पड़ा था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घर लौटते ही माताजी की फटकारें पड़ीं—आज-कल बरसीला पानी आ रहा है। बीमार पड़ गए तो क्या होगा? रङ्ग काला पड़ता जा रहा है। घर तेल-साबुन लगाकर अच्छी तरह नहाओ तो कैसा। सूरत न निकल आए! फिर आजकल बढ़ी हुई गङ्गा का कोई ठिकाना। नित कोई न कोई डूबता ही रहता है।

क्या ही अच्छा होता जो मैं भी डूब जाता। कम से कम इस परवशता से तो बचता। वन्य पशु भी अपने बच्चों को पूर्ण स्वतन्त्रता देते हैं और ये आदमी.....। मैं सोच रहा था कि किसी पेड़ पर फूल बनकर क्यों न लगा, क्यारी में फूल-सा क्यों न खिला, झाड़ियों में झड़बाड़ ही क्यों न बना रहा? गङ्गा की लहर बनता, तल का रेता, तट का पत्थर या कोई भी जल-जीव। शैल-शृङ्ग की उठान क्यों न बन गया? पर्वत के उच्छ्वसित हृदय की एक सिकुड़न भी बन जाता! प्रकृति में कहीं भी तो इतने नियन्त्रण नहीं। फिर आदमी के बच्चे का ही क्या अपराध? सब कुछ मुझे अपने ढङ्ग से न सोचकर उस जनसमुदाय के अनुसार सोचना पड़ता है, जिसका मैं क्षुद्र सदस्य भर हूँ। मेरी इच्छा और प्रकृति पर भी माता-पिता का शासन है।

माँ कह रही थीं—अच्छा, अब चलकर खा लो।

मैं झुँझला उठा—मुझे भूख नहीं।

पिताजी ने सुन लिया। वे समझाने लगे—बेटा, इतने असहिष्णु नहीं होना चाहिए। माता-पिता का कर्त्तव्य ही कुछ कठोर होता है। वे सन्तान के प्रति उत्तरदायी हैं। फिर तुम तो विप्र कुमार हो। बात-बात में अनुदार दृष्टि रखकर धर्म का सद्भाव न समझ सकोगे।

मैं भोजन करता हुआ सोच रहा था—यह क्या, मैं जो कुछ स्वतः बनना चाहता हूँ, उसकी प्रेरणा कहीं से भी तो प्राप्त नहीं होती। शैलेन्द्र ने स्त्री-शिक्षा का समर्थन किया था? मैंने विरोध किया। क्यों? क्या वह मेरी स्वतन्त्र विचार-धारा थी? अथवा, समाज के लिए व्यवस्था देने की क्षमता मुझमें आ चुकी है? मैं देख रहा हूँ कि मेरी माँ, बहन और भाभी सभी तो अशिक्षित हैं। साधारण भाषा-ज्ञान ही तो उन्हें है। मुझे उन्हीं को अपना आदर्श मानना पड़ता है। जब मैं अपने आदर्श का समर्थन करता हूँ, तो मेरे मुँह से कौन बोलता है।

और रोटी? 'नहीं।' अभी तो कुछ भी नहीं खाया भैया तुमने। 'कह तो दिया नहीं।' मैं असम्मत था। प्रत्येक जगह बन्धन! पिताजी कहते हैं कि असहिष्णु नहीं होना चाहिए। और शैलेन्द्र! 'सदियों से हम अनुदार शिक्षा पा रहे हैं।'

'.. मेरी बहनों के चरित्र पर भी सन्देह...।'

हूँ। पुरुष का स्त्री पर शासन। मानवता के दो प्रमुख स्रोत, स्त्री और पुरुष। कौन विशिष्ट? कौन-सा तट वार या पार?

अपरिपक्व बुद्धि को मनोनीत स्वरूप देने के लिए दुनिया के पास बड़े-बड़े साँचे! सहज उन्मेष पर प्रतिबन्ध की छाप। पत्थरों को तराशा, पेड़ों को छाँटा, नदी-नालों को बाँधा, पहाड़ों में मार्ग बनाए और जङ्गलों में बस्ती बसाई। किसने? आदमी ने। और वही आदमी आदमी को तराशता है।

× × ×

मैं शैलेन्द्र के घर गया। पूछा—शैल है? शैलेन्द्र की छोटी बहन ऊर्मि खड़ी थी। बरंडी और घघरी में; काले चिकने केश पीठ पर बिखरे पड़े थे। पुतली-सी, खड़ी-खड़ी हँस रही थी। मुझे क्रोध आया—इतनी बड़ी और अभी तक कपड़े पहनने का भी शऊर नहीं। केवल शिक्षा।

हाँ! भैया को बुलाऊँ!

नहीं! मैं लौट रहा था! अपनी एक भूल स्वीकार करने आया था। पर अनुभव कर रहा था कि मेरी कोई भूल नहीं। सभी इतनी स्वच्छन्द!

ऊर्मि चिल्ला पड़ी—भैया, चोटीवाले भैया लौटे जा रहे हैं।

मेरा हाथ सहसा अपनी बड़ी चोटी पर गया। घूम-कर देखा ऊर्मि खड़ी खड़ी हँस रही थी। मैं बौखला उठा—बेशऊर!

शैलेन्द्र चट से आकर मुझे लिवा ले गया। ऊर्मि के पीछे-पीछे उसकी बड़ी बहन रश्मि ने भी प्रवेश किया। शैलेन्द्र हँसता हुआ बोला—बहुत नाम धरना सीख गई है तू ऊर्मि!

रश्मि ने बैठते-बैठते प्रतिवाद किया—नाम तो कोई बुरा न था शैल!

रश्मि शैलेन्द्र से भी बूढ़ी थी। सदा परीक्षाओं में व्यस्त रहती थी। इस वर्ष बी० ए० की तैयारी कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रही थी। उसके व्यवहारों में स्थिरता और शालीनता थी। अँगरेजी शिक्षा-समन्वित होने पर भी मैं उसे अच्छी दृष्टि से ही देखता था। पर ऊर्मि को देखकर तो घबड़ाहट ही चढ़ती थी। उससे मुझे विशेष चिढ़ थी।

मैंने कहा—क्यों जीजी, चोटी रखना भी पाप है क्या?

ऊर्मि ने उत्तर दिया—चोटी का इतना शौक था तो लड़की क्यों न हो गए? रखते हमारी तरह चोटी।

उसने आलुलायित केश झटक दिए। सब हँस पड़े। मैं अप्रतिभ-सा सोच रहा था।

रश्मि खाने के लिए फिरनी लाई थी। मैंने जूते उतारे, हाथ धोए और तब कहीं खाने बैठा। ऊर्मि ने कहा था—भैया, तुम तो पक्के ब्राह्मण हो। शैल भैया को तो कोई विचार ही नहीं। वे कहते हैं कि मेरा धर्म इतना नाजुक नहीं कि.....

रश्मि के सङ्केत से उसे चुप होना पड़ा था। मैं मन मारे खा रहा था। चम्मच से खाने में बड़ा अजीब-सा लग रहा था। तनिक-सी असावधानी हुई कि कपड़े खराब हो गए। ऊर्मि हँसने लगी। मैंने, आपे में न रहकर, शेष फिरनी उसी के ऊपर उछाल दी थी। फिर भी वह हँसती ही रही थी। तब वहाँ और कोई अवश्य न था।

हँसी के उपरान्त पुनः कमरे में निस्तब्धता छा गई। शैलेन्द्र मुझे गुम शुम देख सहमा जा रहा था। ऊर्मि ने पुनः चुटकी ली—कैंची ले आऊँ विकास भैया?

'क्या करूँगा?'

'वही जो शैल भैया ने कर रक्खा है।'

रश्मि कह रही थी—भैया, इसे तुम्हारे चोटी से न जाने क्यों चिढ़ है। इसका कहा न मान लो।

मुझे कोई उत्तर न सूझ रहा था। कह दिया—पिताजी घर में घुसने भी न देंगे।

ऊर्मि बाहर दौड़ी—अभी लाई भैया! पिताजी कुछ न कहेंगे! मैं सच ही कहती हूँ भैया।

मैंने निरीह दृष्टि से शैलेन्द्र की ओर देखा। उसने डपटकर कहा—चुपचाप बैठो ऊर्मि, नहीं तो.....

ऊर्मि कैंची न लाई। मैं भरसक चेष्टा करता कि अपने आपको हतप्रभ न होने दूँ। किन्तु ऐसे प्रसङ्ग आने पर मेरी शक्ति कुण्ठित हो जाती। शैलेन्द्र से तो सदा वाद-प्रतिवाद करने को सन्नद्ध रहता पर ऊर्मि से साक्षात्कार होने पर मैं अपनी किसी दुर्बलता का अनुभव करता। स्त्री के नाते मैं उसे महत्त्व देना न चाहता था, पर वह मेरी उपेक्षा के परे थी।

× × ×

कामनाएँ

डाक्टर श्यामनन्दनसहाय वर्मा 'विकल', बी० ए० ऑनर्स, एम० ए०, पी-एच० डी०

क्या बताएँ कामनाएँ एक आएँ एक जाएँ।
एक कहती कामिनी हो, कामिनी भी दामिनी हो
दामिनी उद्दामिनी हो, रागिनी हो यामिनी हो
मान करना जानती हो, मानिनी हो हम मनाएँ
क्या बताएँ कामनाएँ एक आएँ एक जाएँ
एक कहती देश का बन भक्त जग में नाम कर लें
एक कहती मोक्ष के हित निकल चारों धाम कर लें
एक कहती चल कहीं एकान्त में हरिगान गाएँ
क्या बताएँ कामनाएँ एक आएँ एक जाएँ
एक कहती एक प्याला और पी ले और पी ले
एक कहती मौत अच्छी, एक कहती और जी ले
एक कहती नरक ही में स्वर्ग के कुछ सुख उठाएँ
क्या बताएँ कामनाएँ एक आएँ एक जाएँ
एक कहती पाप मत कर एक कहती पाप कर ले
एक कहती पुण्य कर ले ताप तीनों आप हर ले
एक कहती झूठ हैं ये पुण्य-पापों की कथाएँ
क्या बताएँ कामनाएँ एक आएँ एक जाएँ
एक कहती सत्य है सब एक कहती खेल है रे!
दीप तब तक जल रहा है देख जब तक तेल है रे!
छोड़ जग के नेह-नाते, स्वप्नवत् सब कल्पनाएँ
क्या बताएँ कामनाएँ एक आएँ एक जाएँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

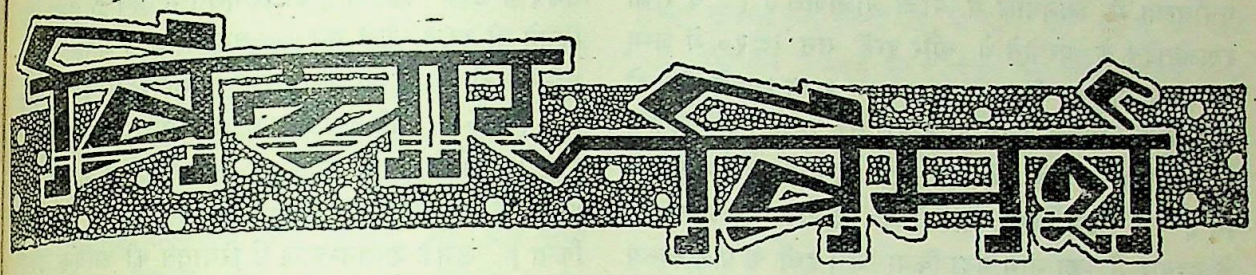

क्या कश्मीर बेचा गया था ?

पं० आत्मस्वरूप शर्मा

इस "भू-तल के स्वर्ग"—कश्मीर—के वर्तमान शासक महाराजा हरिसिंह के हाथों तक पहुँचने की कहानी रोमांचक है। यदि कश्मीर को भारत विशेषतः पञ्जाब से भिन्न देखा जाए, तो उस पर अनेक जातियों, शासकों और धर्मों का आधिपत्य रह चुका है। इतिहास की दृष्टि से अभी पञ्जाब का इतिहास इतने विस्तृत रूप में विद्यमान नहीं जितना कि कश्मीर का प्राप्य है। चीनी, ईरानी, तिब्बती, भारतीय, अँगरेजी, अमरीकी, फ़्रांसीसी और जर्मन—सभी देशों के लेखकों ने प्राचीन कश्मीर के इतिहास पर अपने लेखों और पुस्तकों में प्रकाश डाला है। चीनी यात्री ह्वेन सांग ने तो इसके विषय में लिखा ही था, अकबर के काल के इतिहास "आईने अकबरी" और जहाँगीर के समय के इतिहास "तुज़्के जहाँगीरी" में भी कश्मीर का वर्णन भरपूर पाया जाता है। "राजतरङ्गिणी" और "तारीखे-रशीदी" तो एक प्रकार से हैं ही शुद्ध रूप से कश्मीर का इतिहास।

महाराजा गुलाबसिंह को प्राचीन कश्मीर का और सर हरिसिंह को वर्तमान कश्मीर का निर्माता कहा जाता है। भारत के दीर्घ इतिहास में पूर्वोक्त ही राजनैतिक ख्याति के एक ऐसे शासक हुए हैं जिन्होंने भारत की भौगोलिक सीमाओं को बढ़ाने का यत्न किया था। उनसे पूर्व गुप्त शासकों यहाँ तक कि अकबर तक को तिब्बत पर चढ़ाई करने की नहीं सूझी थी। महाराजा गुलाबसिंह भारत की सीमा को हिमालय के उस पार तक ले गए थे।

कश्मीर के इतिहास का आरम्भ हिन्दू शासक 'गोनन्दा' के समय से हुआ प्रतीत होता है। इसके अनन्तर पहले बौद्ध राजाओं का और फिर श्वेत हूणों का शासन रहा। एक समय चीन के बादशाह का भी कश्मीर पर आधिपत्य था और ललितादित्य वास्तव में उसी की अनुमति से कश्मीर की गद्दी पर बैठा था। उत्तरोक्त ने अपने राज्य का विस्तार मध्य एशिया और दक्षिण-भारत में भी किया था। बारहवीं शताब्दी के आरम्भ में दालचा नामक एक तातारी ने कश्मीर पर आक्रमण किया। कश्मीर का प्रथम मुस्लिम शासक था तिब्बत का रेनचेन, जिसने, कहा जाता है कि, अन्तिम हिन्दू राजा की कन्या के साथ विवाह कराया था। यह सन् १३४१ की बात है। इसके अनन्तर सन् १३५९ से १५५२ तक पहले स्थानीय मुसलमान शासक कश्मीर पर राज्य करते रहे और फिर विदेशी मुसलमानों का शासन आरम्भ हुआ। मुगलों ने सन् १५८६ से १७५१ तक और अफगानों ने सन् १७५१ से १८१८ तक कश्मीर पर हुकूमत की है। मुगल-काल शान्ति और चैन का था पर अफगानों ने अपनी क्रूरता का प्रदर्शन करने में कोई कसर न छोड़ी थी। उस समय पञ्जाब के शासक—महाराजा रणजीतसिंह—ही कश्मीर-निवासियों के परित्राता सिद्ध हुए। उन्होंने सन् १८१९ में, जम्मू के राजा गुलाबसिंह के सहयोग से अफगानों को हराकर, कश्मीर को अपने राज्य में मिलाया था।

कश्मीर के साथ जम्मू का इतिहास घनिष्ठ रूप से बँधा हुआ है। एक समय जम्मू प्रान्त अनेक छोटी-छोटी स्वतन्त्र पहाड़ी रियासतों का केन्द्र था। वास्तव में इस प्रान्त का इतिहास राजा रणजीतदेव के गिर्द ही घूमा है। उनके उतार-चढ़ाव का काल १८ वीं शताब्दी का मध्य था। राजा रणजीतदेव की मृत्यु के पश्चात् राज्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का महान् नगर जम्बू-लोचन और उससे सम्बन्धित आस-पास का इलाका प्रायः विनाश को प्राप्त हो गया था। इसे पूर्वावस्था में लानेवाले थे राजा गुलाबसिंह। वे राजा रणजीतदेव के परपोते थे और इन्हें सन् १८२० में जम्मू का राजा नियुक्त किया गया था। राजा रणजीतदेव दो भाई थे। उनके छोटे भाई का नाम था—सूरत सिंह। इनके तीन परपोते—गुलाबसिंह, ध्यानसिंह और सुचेत-सिंह थे। इन तीनों भाइयों ने महाराजा रणजीतसिंह के दरबार में बड़ा नाम पैदा किया था। इसी के फल-स्वरूप पुञ्च का इलाका ध्यानसिंह को, रामनगर का इलाका सुचेतसिंह को और जम्मू का इलाका सन् १८२० में गुलाबसिंह को दिया गया था।

कश्मीर पर सिक्खों का शासन सन् १८१९ से सन् १८४५ तक रहा। यह सत्य है कि सिक्खों के शासन में लोग इतने दुःखी नहीं थे जितने कि अफगानों के समय में, पर सुख उन्हें फिर भी प्राप्त नहीं हो सका था। जनता की साधारण अवस्था अच्छी न थी और वह भारी करों तले कुचली हुई थी। इधर रिश्वत और नोचा-नोची का भी जोर था। महाराजा गुलाबसिंह अपने अधीन देश की अवस्था को बहुत ऊँचा ले गए। उन्होंने जम्मू के आस-पास के कई इलाकों को जीतकर अपने राज्य में सम्मिलित कर लिया और इस प्रकार जम्मू से लेकर लद्दाख तक एक विस्तृत डोगरा शासन की नींव डाली। महाराजा गुलाबसिंह न्यायप्रिय तथा बुद्धिमान् शासक थे। उनके शासनकाल में प्रजा की दशा में सुधार हुआ और लोग कुछ शान्ति अनुभव करने लगे। अँगरेजों की उनके साथ अच्छी बनती थी। सन् १८५७ के गदर में उन्होंने अँगरेजों को सहायता भी दी। सभराओं के सिक्ख-युद्ध में सिक्खों की पराजय के अनन्तर अँगरेजों के साथ राजा गुलाबसिंह ने एक पृथक् सन्धि कर ली जिस पर लाहौर में ९ मार्च सन् १८४६ को हस्ताक्षर किए गए। वस्तुतः इसी सन्धि के अनुसार वे कश्मीर के स्वतन्त्र शासक माने गए थे। १६ मार्च सन् १८४६ में अमृतसर में जिस सन्धि-पत्र पर हस्ताक्षर हुए, उसी के अनुसार वे "महाराजा" बनाए गए।

महाराजा गुलाबसिंह का अगस्त सन् १८५७ में ६६ वर्ष की उम्र में देहान्त हो गया था। उनके पश्चात् उनके पुत्र महाराजा रणवीरसिंह गद्दी पर बैठे और उन्होंने २८ वर्ष तक, सन् १८५७ से सन् १८८५ तक, कश्मीर पर शासन किया। ये उन्नतिशील शासक थे। इनके समय में डाक और तार का रियासत में प्रवेश हुआ और कितने ही स्कूल खोले गए। सन् १८६७ में जब पञ्जाब यूनिवर्सिटी बनाने की बात चली तो महाराजा रणवीरसिंह ने ६२५०० रुपये इस योजना के लिए अपनी ओर से दिए। उनके बाद महाराजा प्रतापसिंह ने कश्मीर का शासन सँभाला और सन् १८८५ से सन् १९२५ तक राज्य किया। उनके शासन-काल में रियासत की अधिक उन्नति हुई। भारत से बारामूला तक सड़क उन्हीं के उद्योग से बनी थी। उन्हीं के समय में कोहाला से श्रीनगर तक और जम्मू से श्रीनगर तक मोटर की सड़कें सम्पूर्ण हुईं। स्यालकोट से जम्मू तक रेल की टुकड़ी भी तभी खुली थी। दो प्रथम श्रेणी के कालेजों और सैकड़ों की संख्या में स्कूलों का बनाया जाना वस्तुतः शासक रूप में उन्हीं की दूरदर्शिता का प्रमाण था। आज महाराजा हरिसिंह के अधीन जम्मू-कश्मीर इससे भी बहुत आगे निकल गया प्रतीत होता है और रियासत की गणना भारत की अग्र-गामी रियासतों में है। आधुनिक कश्मीर आर्थिक दृष्टि से आगे से उन्नत दशा में है और वहाँ के दरिद्र निवासी कुछ न कुछ रुपए-पैसे का मुँह देखने लगे हैं। नागरिक स्वतन्त्रता, हाईकोर्ट और प्रजासभा—रियासत को उन्हीं की देन है। स्मरण रहे कि जम्मू-कश्मीर की कुल जन-संख्या में मुसलमान प्रजा की गिनती अत्यधिक है और ये लोग आर्थिक दृष्टि से हीन दशा में हैं। आज कश्मीर के, दूर-दूर के यात्रियों के लिए शान्ति-निकेतन बन जाने पर इन लोगों के लिए भी कई प्रकार के नए उद्योग-धन्धे खुल गए हैं और ये लोग पहले से भली दशा में रहने लगे हैं।

जम्मू-कश्मीर का इतिहास कहते हुए एक प्रचलित मिथ्या उक्ति का खण्डन आवश्यक है। कई इतिहास-लेखकों का मत है कि कश्मीर महाराजा गुलाबसिंह के हाथ बेचा गया और अँगरेजी सरकार ने इसके बदले में साढ़े सात लाख पौंड प्राप्त किए। यह मत सत्य नहीं है। जिस समय कश्मीर राजा गुलाबसिंह के अधीन आया, उस समय अँगरेजों को यह खयाल ही नहीं था कि एक दिन यह भूमि अत्यन्त सर्वप्रिय बनेगी और यहाँ लोग भागे आया करेंगे। इसके अतिरिक्त अँगरेज—राजा गुलाब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिंह को उनके सद्-व्यवहार के लिए कुछ इनाम भी देना चाहते थे। इस बात का अँगरेजों पर गहरा प्रभाव था कि राजा की सेना ने उन पर एक गोली तक भी नहीं चलाई थी। अँगरेज चाहते थे कि सिखों को दुर्बल किया जाए और इसका एक साधन यह भी था कि उन्हें कश्मीर से वञ्चित कर दिया जाए। यह सब होते हुए भी कश्मीर पर शासन करने में कुछ क्रियात्मक कठिनाइयाँ थीं। कश्मीर तक रेल नहीं पहुँचती थी और सीधी सड़कें भी न होने के बराबर थीं। सतलज से कश्मीर तक लगभग तीन सौ मील की दूरी, पहाड़ी इलाका और फिर महीनों हिमपात—ये सब अँगरेजों के कश्मीर के इलाके के लिए आकर्षण को ठण्डा करनेवाली बातें थीं।

उपर्युक्त सब कठिनाइयाँ लार्ड हार्डिञ्ज ने लार्ड एलनबरो के नाम अपने एक पत्र में स्वीकार की हैं। अँगरेज कश्मीर को अपने गले से उतारना ही चाहते थे—और यह मुख्यत: इसी लिए कि उन्हें यह लाभ का सौदा प्रतीत न होता था। यदि कश्मीर को अपने पास रखने में उन्हें कोई लाभ प्रतीत होता तो वे राजा गुलाबसिंह की वफादारी और उनके सद्-व्यवहार की भी कोई परवा न करते। "कश्मीर का संस्थापक—गुलाबसिंह" नामक पुस्तक में श्री एम० के० पानिकर ने कश्मीर बेचने के प्रश्न पर बड़ा अच्छा प्रकाश डाला है। वे लिखते हैं कि कश्मीर कदापि बेचा नहीं गया। उस समय के स्वतन्त्र शासक महाराजा दलीपसिंह के साथ लाहौर में जो सन्धि हुई थी उसकी धारा १२ स्पष्ट रूप से प्रकट करती है कि उक्त सन्धि पर हस्ताक्षर होने से पूर्व ही यह तय हो गया था कि लाहौर के राज्य के चारों ओर, रावी और सिन्धु नदियों के बीच के इलाके गुलाबसिंह को दे दिए जाएँ। ईस्ट इंडिया कम्पनी ने जुर्माने के रूप में १५ लाख पौंड की लालसिंह से माँग की थी। लालसिंह ने धन के रूप में जुर्माना देने के स्थान में जम्मू, कश्मीर और रावी तथा सिन्धु नदियों के मध्य के सब इलाके कम्पनी को दे डाले और इस प्रकार बड़ी चतुराई दिखाई। गुलाबसिंह के साथ, इस इलाके को देने का वचन तो पहले ही हो चुका था। इसलिए इन इलाकों को कम्पनी को दे डालने में वस्तुत: उनका कोई त्याग नहीं था। यह बात भले प्रकार समझ लेने की है कि अमृतसर की सन्धि जिस पर १६ मार्च सन् १८४६ को हस्ताक्षर हुए और जिसके अनुसार गुलाबसिंह को महाराजा स्वीकार किया गया, कोई पृथक् अथवा स्वतन्त्र लेख नहीं है। इसे वास्तव में लाहौर की सन्धि के साथ ही पढ़ा जाना चाहिए ताकि यह बात स्पष्ट हो सके कि कश्मीर बेचा नहीं गया था। लाहौर की सन्धि में, जो अमृतसर की सन्धि से सात ही दिन पूर्व लिखी गई, कहा गया था कि—"राजा गुलाबसिंह का उन सब इलाकों और पहाड़ी जिलों में स्वतन्त्र राज्य स्वीकार किया जाए। वे उनके और अँगरेजी सरकार के मध्य हुए पृथक् इकरारनामा के द्वारा राजा गुलाबसिंह को दिए जाएँ।" इस प्रकार प्रकट है कि कश्मीर आदि को राजा गुलाबसिंह के हवाले करने का निश्चय तो पहले ही हो चुका था।

ऐतिहासिक प्रमाण तो यह भी है कि राजा गुलाबसिंह ने यह सारा इलाका अपने बाहु-बल से जीता। कहा जाता है कि कश्मीर के आस-पास सीमाओं पर जितने भी उपद्रवी कबीले थे, उन्हें राजा ने अपने अधीन कर लिया और यह पहला अवसर था कि इतने विस्तृत इलाकों को एक शासक के अधीन लाकर उनमें प्रबन्ध की व्यवस्था की गई। एक मत यह भी है कि इस इलाके को रखने का अधिकार बेचा गया था और शर्त यही थी कि राजा गुलाबसिंह इसे जीत लें। कहा जाता है कि राजा गुलाबसिंह ने इस शर्त को पूरा करके ही कश्मीर को अपने अधीन किया था।

गुलाबसिंह-द्वारा प्राप्त कश्मीर के डोगरा राज्य को सन् १९४६ में पूरी एक शताब्दी हो रही है।

——

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुसलमानों में ख़ून का भेद

कहते और हम भी खुलकर कहना चाहते हैं कि मुसलमानों में 'ख़ून' का विचार नहीं, पर करें क्या कोई पोथी खोलकर सप्रमाण कह रहा है कि—

"हज़रत आयशा के पास क़बीला बनू तमीम की एक लौंडी थी। रसूलअल्लाह सलअम ने देखा तो फ़रमाया कि इसको आज़ाद कर दो; क्योंकि यह इसमाईल की औलाद में है। इससे साबित होता है कि ख़ुद आप अह्ल अरब का ग़ुलाम बनाना पसन्द नहीं फ़रमाते थे। लेकिन हज़रत उमर ने आम क़ानून बना दिया कि अरब का कोई शख़्स ग़ुलाम नहीं बनाया जा सकता। चुनांचे हज़रत अबू बकर के अहद ख़िलाफ़त में क़बायल मरतदा के जो लोग गिरफ़्तार हुए थे उनको उन्होंने इसी बिना पर आज़ाद कर दिया।

"इसलाम के पहले अरब के जो लोग लौंडी या ग़ुलाम बनाए गए थे उनकी निस्बत यह हुक्म दिया गया कि अगर किसी क़बीला का कोई शख़्स किसी क़बीला में ग़ुलाम बना लिया गया हो तो वह उससे बदले में दो ग़ुलाम बतौर फ़िदया[1] के देकर आज़ाद करा सकता है। इसी तरह एक लौंडी के एवज़ में दो लौंडी देकर आज़ाद कराई जा सकती है।" (उसवह सहाबा, मारिफ़ प्रेस, आजमगढ़, १९२२ ई०, पृ० १४०)

मौलाना अब्दुस्सलाम नदवी ने जो कुछ 'ग़ुलाम' के विषय में लिखा है उससे सिद्ध होता है कि स्वयं आँ हज़रत मुहम्मद साहब की दृष्टि में कोई अरब तो ग़ुलाम नहीं हो सकता पर किसी अरबेतर के होने में कोई चिन्ता नहीं। फिर क्या था, उनके ख़लीफ़ा ने हुक्म निकाल दिया कि एक अरब ग़ुलाम की जगह दो अरबेतर ग़ुलाम देकर उसे मुक्त करा लो। लो इसलाम में अरब और अरबेतर का विवाद छिड़ गया और स्वयं रसूल की कृपा से इसमाईल की सन्तान को महत्त्व मिल गया। इसलाम की एकता कहाँ गई?

कहते हैं कि 'ख़ून' सिर पर सवार रहता है और जब सिर पर सवार होता है तब किसी की सुनता भी नहीं। निदान इसलाम में हुआ भी यही। स्वयं अरब आपस में भिड़ गए। उम्मय्यावंश ने हाशिमी वंश का अन्त किया तो अब्बासियों ने उम्मय्या वंश का। परिणाम यह हुआ कि इसलाम क्षीण हो गया और एक दिन ऐसा भी आ गया कि स्वयं अरब तुर्की का ग़ुलाम हो गया और उसकी ख़िलाफ़त भी अरबी हाथ से निकलकर तुर्की हाथ में चली गई। ख़लीफ़ा उमर का फ़तवा धरा ही रह गया और शक्ति ने अपना हाथ दिखा दिया। अरब में उसमानी तुर्कों का ख़ुतबा पढ़ा गया।

मुहम्मद साहब ने 'अरब' को महत्त्व दिया तो अरब ने उनके वंश को। परन्तु उनकी सन्तान इतनी सबल न निकली कि ख़ूनी अरब का शासन-सूत्र सँभाल सकती। निदान करबला का हत्याकाण्ड हुआ और इसलाम दो फाँक में बँटकर न जाने कितने टुकड़ों में हो गया। खिलाफ़त रसूल के सम्बन्धियों से निकलकर उनकी पट्टी में चली गई और इसलाम में पट्टी की होड़ लगी रही। बढ़ने को चाहे जो बढ़ा पर पक्की प्रतिष्ठा मुहम्मदी ख़ून ही को मिली। फ़ातिमी इसलाम के पूज्य बने। यहाँ तक कि—

"इदरीसी हुकूमत की वजह से यहाँ जाबजा[2] सादात की बस्तियाँ हैं और उमूमन् यह लोग आज़ाद हैं। जहालत के सबब से इनकी अख़लाक़ी हालत निहायत पस्त[3] है। 'हदीदा' की मशरिक़ी[4] जानिब उनकी एक बस्ती है। उसमें तमामतर सादात आबाद हैं। तमाम अतराफ़ में उनकी ताज़ीम[5] परस्तिश[6] की हद तक होती है। ख़्वाह कैसा ही जाहिल सैयद क्यों न हो, लेकिन उसकी दस्तबोसी[7] हर शख़्स पर फ़र्ज़ है। इस सूरते हाल ने उनमें और ज़्यादा ख़राब आदतें पैदा कर दी हैं। सादात कशकोल[8] लेकर बाज़ार निकल जाते हैं और जिस दूकान से जो चाहते हैं बिला क़ीमत उठा लेते हैं। कोई रोक नहीं सकता। और वह ग़ल्ला, तरकारी, गोश्त और मिठाई से कशकोल भरके वापस आ जाते हैं। उनमें सियादत[9] का इतना ग़रूर है कि अगर कोई सैयद अह्ल[10] बैत के अलावा किसी और घराने में शादी कर ले और उसके बतन[11] से बच्चा पैदा हो तो उस औरत पर ज़रूरी है कि माँ होकर भी रोज़ाना अपने 'सैयदज़ादा' बेटे की दस्तबोसी और क़दमबोसी करे और लड़का उसको

१—प्रतिकार।

२—जगह जगह। ३—नीच। ४—पूर्वी ओर। ५—सम्मान। ६—पूजा। ७—हाथ चूमना। ८—भिक्षापात्र, खप्पर। ९—कुलीनता, बड़प्पन। १०—घराना। ११—गर्भ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लौंडी से ज़्यादा वक़अत न दे।" (अरब की मौजूदा हुकूमतें, मारिफ़ प्रेस आज़मगढ़, १९३४ ई०, पृ० ६५-६६)

शाह मुईनउद्दीन अहमद नदवी ने अरब के इदरीसी राज्य के जिस सैयदी आतङ्क का परिचय दिया है उसी को सामने रखकर जनाब सर सैयद अहमदख़ाँ बहादुर के इस दूरभरे अभिमान पर ध्यान तो दीजिए और फिर कहिए तो सही स्वयं इसलाम में यह पैग़म्बरी ख़ून कितना ग़ज़ब ढा रहा है। आप कहते हैं—"पहले तो हम घबराए कि यह साद उल्लाह साहब कौन हैं। वही हैं जिनको हमने दिल्ली में देखा है, और यह वही साद उल्लाह साहब हैं जिन्होंने लखनऊ में एक नेकबख़्त मुसलमान आल[१२] रसूल, इब्न अली, औलाद नबी के कुफ़्र और क़त्ल का फ़तवा देकर अशरा[१३] मुहर्रम में उनका सिर हनूमानगढ़ी के नेज़ा[१४] पर चढ़ाकर लखनऊ में लाना चाहा था तो हमारा दिल ठण्डा हो गया और समझे कि आल रसूल के क़त्ल व कुफ़्र पर फ़तवा देना उनका क़दीमी पेशा है।" (त० अ०, १२९० हि०, पृ० ३)

तो क्या आप जानना चाहते हैं कि स्वयं सर सैयद अहमदख़ाँ बहादुर किस ख़ून में हैं। लीजिए आप ही श्रीमुख से फ़रमाते हैं—

"अब हम इस ख़ुतबा[१५] के ख़ातमा में अपने पैग़म्बर का नसबनामा[१६] जिस तरह पर कि हमने तहक़ीक़ किया मुन्दर्ज करते हैं और जो कि मुझको भी इस बात का फ़ख़्र हासिल है कि मैं भी उसी आफ़ताबे[१७] आलमे[१८] ताब[१९] के ज़र्रों[२०] में से हूँ इसलिए अपने नसबनामा को भी उसके साथ शामिल कर देता हूँ ताकि जो रूहानी[२१] इरतिबात[२२] मुझको उस सरवर[२३] दो जहाँ से है और जो ख़ून का इत्तिहाद मुझमें और उस सरवर आलम में है और जिसके सबब लहमक[२४] लहमी व दमक[२५] दमी का हमारा मौरूसी ख़िताब है उस ज़ाहिरी इरतिबात से भी मुअ-ल्लिज़[२६] हो जावे।" (त० अ० १२९३ हि०, पृ० १२३)

श्री सर सैयद अहमदख़ाँ ने अभी-अभी जिस मौरूसी ख़िताब का उल्लेख किया है उसके सामने किसी की ताब क्या कि उनसे प्रश्न करे कि हज़रत! इसलाम में विरासत है भी और है तो किसकी अरब वा रसूल की। तो भी इतना तो हम देख ही सकते हैं कि समय आने पर वे स्वयं इस मौरूसी हक़ के विपरीत हो जाते और कहते हैं कि—

"अभी तक मेरी रगों में अरब का ख़ून गर्दिश करता है और फिर मेरा मज़हब यानी इसलाम, जिस पर मुझे पूरा और पक्का यक़ीन है, वह भी रेडिकल[२७] उसूलों को सिखलाता है और शख़्सी गवर्नमेंट से मुवाफ़िक़ नहीं और न लिमिटेड[२८] मानर्की[२९] को मानता है। बल्कि मौरूसी हकूमत नापसन्द करता है। एक प्रेज़ीडेंट जिसको लोग मुन्तख़ब करें उसी को इस्लाम पसन्द करता है और इस बात को पसन्द नहीं करता कि दौलत एक जगह इकट्ठी रहे। इसी उसूल के मुवाफ़िक़ इसलाम के बानी[३०] ने यह क़ायदा बनाया कि बाद फ़ौत हो जाने किसी शख़्स के उसकी जायदाद बहुत-से आदमियों में तक़सीम[३१] हो जावे क्योंकि कितनी ही ज़्यादा जायदाद क्यों न हो वह बाद दो नस्लों के यक़ीनन् बहुत से हिस्सों में तक़सीम हो जावेगी। पस मैं दोनों तरह क्या बलिहाज़ मज़हब और क्या बलिहाज़ ख़ून के रेडिकल हूँ।" (हयातजावेद, वही, पृ० २९७-९८)

किन्तु 'इसलाम' के भीतर भी कठिनाई यह आ पड़ी कि—"अह्ल अरब इस बात को पसन्द नहीं करते कि बजाय इसके कि वह ख़ुद अपने ऊपर हुकूमत करें कोई और उन पर हुकूमत करे। इस वक़्त तक अह्ल अरब आज़ाद हैं और अपने मशायख़[३२] के झण्डों के नीचे रहते हैं। वह अपनी आज़ादी को तमाम दुनिया की निअमतों से बेहतर जानते हैं, ऊँट चराते हैं, जौ पर ज़िन्दगी बसर करते हैं, ऊँटनियों का दूध पीते हैं और अपनी आज़ादी में ख़ुश रहते हैं।" (हयात जावेद, वही, पृ० २९७ द्वि० भाग)

इसमें तो सन्देह नहीं कि 'बद्दू' अरब किसी की नहीं सुनते और नागरिक अरब भी स्वतन्त्र रहना चाहते हैं पर कभी उनको पराधीन होना ही नहीं पड़ा, यह ठीक नहीं। अरब बहुत दिनों तक तुर्कों के अधीन रहा और अन्त में अपने 'ख़ून' के जोश में आकर और अँगरेज़ों की शह

१२—सन्तान। १३—मुहर्रम के दस दिन। १४—भाला। १५—प्रवचन। १६—वंशावली। १७—सूर्य। १८—संसार। १९—शक्ति, तेज। २०—कणों। २१—आत्मिक। २२—लगाव। २३—नायक। (दोनों लोक के नेता मुहम्मद साहब)। २४—मांस का मांस। २५—प्राण का प्राण। २६—प्रतिष्ठित।

२७—गत्यात्मक। २८—सीमित। २९—शाही शासन। ३०—संस्थापक। ३१—विभाजित। ३२—वृद्धों।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाकर अपने आपको 'इत्तहाद इसलाम' अथवा तुर्कों के शासन से अलग कर लिया और 'इत्तहाद अरब' के चक्कर में आकर 'इत्तहाद इसलाम' को खो दिया। सच पूछिए तो इसलाम को खोखला अरबी 'ख़ून' ने ही किया। यदि तुर्कों के राज्य को इसलाम से निकाल दिया जाए तो पता चले कि अरब का 'ख़ून' कभी का बोल चुका था और आज भी तुर्कों के सामने ठहर नहीं सकता। हमें भूलना न होगा कि यह तुर्की ख़ून ही था जिसने गिरते समय इसलाम की लाज रक्खी और यह 'तुर्क' शब्द ही है जो यूरोप में भी 'मुसलमान' का पर्याय बना और सन्धि-पत्र में भी स्थान पा गया। स्मरण रहे यह वह 'तुर्क' है जिसके सम्बन्ध में स्वयं 'अरब' का कहना है - "तुर्कों को छोड़ दो अगरचे भाई हुआ हो। वह अगर मुहब्बत करेगा तो तुझे खा जाएगा और दुश्मन होगा तो मार देगा।" (रोज़नामचा सियाहत, शम्सुल अनवार प्रेस मेरठ, सन् १६१२ ई०, पृ० १२१)

यह है 'तुर्क' का आतङ्क और यह है तुर्की ख़ून का प्रताप कि इसके सामने हाशिमी ख़ून हवा हो गया और स्वयं सर सैयद साहब को भी मुसलमानी भेद के लिए 'टर्किश लिबास' अपनाना पड़ा। तो भी अन्त में अरबी ख़ून से उसे धोखा हुआ और उसका सारा गौरव जाता-जाता कुछ रह गया। स्वयं अरब ने इस्लाम को तोड़ दिया और मसीही का साथ किया।

विदेशों में मुसलमानों के पतन का कारण चाहे कुछ भी रहा हो पर भारत में उनके पतन का कारण तो कुछ और है। सुनिए सर सैयद अहमदख़ाँ के ख़लीफ़ा नव्वाब मुहेसिन मुल्क सैयद मेहदीअलीख़ाँ बहादुर बतलाते हैं—

"चौथा सबब जो ख़ास हिन्दुस्तान के बदनसीब मुसलमानों के तनज़्ज़ुलात[३३] का सबब हुआ हिन्दुस्तान का वतन कर लेना और अपने असली वतन का छोड़ देना है। मुसलमान जब कि हिन्दुस्तान में आए उस वक़्त निहायत तरेमन्द[३४] और मुर्ग़ व मुफ़ेद और क़वी व तन्दुरुस्त थे। तबीयतें भी उनकी आज़ाद थीं। दिलों में भी उनके एक जोश था। रसूम की पाबन्दी से उनको ख़बर न थी। मगर जब हिन्दुस्तान को अपना वतन बना लिया, और उन क़ौमों से मिल गए जो कि उनसे क़ूवत में दिलेरी में आज़ादी में इल्म में, मुआशरत[३५] में कम थीं और छूत और परहेज़ और रस्मों की पाबन्दी और नंग[३६] ख़यालात उनके रग व रेशा में समा रहे थे तो रफ़्ता-रफ़्ता वह भी वैसे ही हो गए। उनकी असली हालतें बिल्कुल बदल गईं। वह ख़ून जो इब्राहीम की रगों का हममें था बदल गया। वह हड्डी जो इसमाईल के ख़ून से बनी थी बदल गई। वह दिल जिसमें हाशिमी जोश था बदल गया। ग़र्ज़ कि चमड़ा बदल गया, रङ्ग बदल गया, सूरत बदल गई, सीरत[३७] बदल गई, दिल बदल गया, ख़्याल बदल गया, यहाँ तक कि मज़हब भी बदल गया। तमाम वह जोश जो उठे थे उस रेतीले जङ्गल अरब से जिसने फ़ारस और तमाम रेंटूल[३८] एशिया को सरल सब्ज़[३९] व शादाब[४०] कर दिया था हिन्दुस्तान में आकर बे आब[४१] बङ्गाल में डूब गए।" (त० अ०, १२६० हि०, पृ० १५३)

सैयद मेहदी अली ख़ाँ के इस कथन में कितना तथ्य है इस पर विचार करने की आवश्यकता नहीं। हम नहीं समझते कि कभी इतिहास में इब्राहीम, इसमाईल और हाशिम ने भी कोई करतब दिखाया हो और किसी भूखण्ड पर अकण्टक राज्य स्थापित किया हो। मुहम्मद साहब ने जो कुछ किया अल्लाह के नाम पर किया अरब वा ख़ून के बूते पर नहीं। हिन्दुस्तान में अरब शासन बस कहने को रहा, करने को नहीं। फिर यह इब्राहीमी ख़ून, इसमाईली हड्डी और हाशिमी जोश का मरसिया कैसा? अरे! यदि हिन्दुस्तान को सर किया तो तुर्कों ने। उन्हीं तुर्कों ने जिन्होंने अल्लाह के घर को भी अपना लिया और इब्राहीमी ख़ून को नहीं तो इस्माईली हड्डी और हाशिमी जोश को तो अवश्य ही उन्हीं के घर में शान्त कर दिया। उन्हें छोड़ा ही नहीं कि 'बे आब बङ्गाल' में आ डूबते। यहाँ आ डूबने का सौभाग्य अरब को कभी नहीं मिला। और मिला भी तो वह 'रेतीला जङ्गली जोश' सिन्ध की रेतीली भूमि में समाकर रह गया। उससे तनिक भी आगे न बढ़ सका। सोचिए तो तनिक कहाँ सिन्ध और कहाँ बे आब बङ्गाल! खुलवाई फ़स्द किसने दौड़ा लहू किधर को!

किन्तु नहीं-नहीं, सैयद मेहदी अलीख़ाँ को तो इसका भी अभिमान है कि अपने मूल देश में इब्राहीमी ख़ून में

३३—अवनतियों। ३४—हृष्ट-पुष्ट। ३५—सामाजिक संघटन, मेल-जोल।

३६—घृणित, तुच्छ। ३७—गुण, स्वभाव। ३८—मध्य। ३९—हरा-भरा। ४०—सरस। ४१—बङ्गाल की खाड़ी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोई 'छूत और परहेज़' न था यह तो यहाँ आ बसने से उसमें जा घुसा। अच्छा यही सही, पर कृपया कहिए तो सही इब्राहीमी ख़ून के साथ यह बरताव किसका ख़ून कर रहा है। देखिए—

"ज़ैदी अपने अन्धे तास्सुब और यहूद की जबली[४२] सिफ़ाहत[४३] की वजह से उनको जानवर से ज़्यादा वक़अत नहीं देते। रास्ता चलते गालियाँ देते हैं, तमाम ज़ैदी मुसल्लह हैं। रास्ता में कहीं यहूदी नज़र आया ख़्वाह वह ग़रीब उनसे अलग ही चल रहा हो, लेकिन यह बन्दूक़ के कुन्दे पर हाथ रखकर उसको डाँट ज़रूर बताएगा कि कम्बख़्त यहूदी ख़ुदा तुझे ज़लील व रुसवा[४४] करे। रास्ता छोड़कर चल। यह सज़ा यहीं पर ख़तम नहीं होती बल्कि ज़ैदी गालियाँ बरसाता हुआ बढ़कर उसके मुँह थूक देता है और कहता है—अगर इमाम के अदल का डर न होता तो तुझको ज़बह कर डालता। यहूदियों के लिए बाज़ ख़ास क़वानीन हैं जो उनको मुसलमानों से मुमैयज़[४५] करते हैं। यह तर्ज़े अमल सिर्फ़ ज़ैदियों का है वरना हुकूमत के नज़दीक दोनों को एक सा हुक़ूक़ हासिल हैं।" (अरब की मौजूदा हुकूमतें, वही, पृ० ७४)

कहना नहीं कि ज़ैदी इब्राहीमी हैं, इसमाईली हैं, हाशिमी हैं और हैं सबसे बढ़-चढ़कर 'आल रसूल', 'इब्न अली', 'औलाद नबी' याने फ़ातिमी। फिर इनके दर्प को कौन रोके, इनके दम्भ को कौन देखे! क्या अन्यत्र भी किसी को यह दैवी रूप दिखाई देगा? यह 'छूत' नहीं, 'परहेज़' नहीं; अन्याय नहीं, घोर अत्याचार है अत्याचार। जो होता है 'रसूल' के 'ख़ून' के द्वारा। उसी रसूल के ख़ून के द्वारा जिसने स्वयं कभी यहूदी बाना धारण किया और उनके मज़हब से बहुत कुछ लिया। विश्वास न हो तो किसी अल्लामा से पूछ देखिए। लीजिए अल्लामा शिबली कहते हैं—"अरबों में ज़िना[४६] की कोई सज़ा मुक़र्रर न थी। यहूदियों में तौरात की रू से ज़ानी[४७] की सज़ा 'रज्म' यानी संगसार करना मुक़र्रर थी। लेकिन अक़्लाक़ी कमज़ोरी की बिना पर इस क़ानून को जारी नहीं रख सकते थे। अतराफ़ 'मदीना' में जो यहूद आबाद थे रज्म के बजाय उन्होंने यह सज़ा मुक़र्रर की थी कि मुजरिम के मुँह में कालिख लगाकर कूचा व बाज़ार में उसकी तशहीर[४८] करते थे। जब आँ हज़रत सलअम मदीना तशरीफ़ लाए तो उन्होंने एक मुजरिम का मुक़दमा आपकी ख़िदमत में पेश किया। ग़ालिबन् यह सन् ३ हि० के अन्दर का वाक़आ है। आपने इसतिफ़सार[४९] फ़रमाया कि तुम्हारी शरीअत में इस जुर्म की क्या सज़ा है। उन्होंने अपना रवाज बताया। आपने तौरात मँगवाकर उनसे पढ़वाया। उन्होंने रज्म की आयत पर उँगली रखकर छिपा दी। आख़िर एक मुसलमान यहूदी ने निकालकर वह आयत सुनाई। आपने फ़रमाया—"ख़ुदावन्द! यह तेरा हुक्म है जिसको इन लोगों ने मुरदा कर दिया है। मैं सबसे पहला शख़्स हूँ जो तेरे इस हुक्म को ज़िन्दा करूँगा।" चुनांचे आपने उसके संगसार करने का हुक्म दिया और वह संगसार किया गया। (सीरतुल नबी हिस्सा अव्वल मुजल्लद दोम, मारिफ़ प्रेस आज़मगढ़, सन् १३४१ हि०, पृ० १३६)

आँ हज़रत को इतने से ही सन्तोष न हुआ। उन्होंने कुछ दिनों तक किताबी बाना भी धारण कर लिया। सुनिए वही अल्लामा बताते हैं—

"मुशरिकीने अरबवालों में माँग निकालते थे। आँ हज़रत सलअम चूँकि कुफ़्फ़ार के मुक़ाबिला में अह्ले किताब की मुवाफ़िक़त पसन्द करते थे इब्तदाय में आप भी अह्ले किताब की तरह बाल छोटे हुए रखतेथे। फिर माँग निकालने लगे। यह समायल तरमज़ी की रवायत है। मालूम होता है कि जब मुशरिकीन का वजूद न रहा तो उनकी मुशाहबत का एहतमाल[५०] भी जाता रहा। इसलिए अख़ीर-अख़ीर ज़माना में माँग निकालने लगे।" (वही, पृ० १९८)

कहा जा सकता है कि जब स्वयं मुहम्मद साहब ने किताबी एकाकी को छोड़कर अरब एकाकी को महत्त्व दिया अर्थात् 'इत्तहाद अरब' को ठीक ठहराया तब अरब और रसूल के बच्चे अरबेतर को तुच्छ क्यों न समझें और क्यों न खुलकर ख़ून का जौहर दिखाएँ। ठीक है, पर अरब भी तो कुछ मसीही और कुछ मूसाई हैं, सभी तो मुहम्मदी नहीं हो गए? फिर उनकी उपेक्षा क्यों होगी! मुसलमानी ख़ून उनका ख़ून क्यों करेगा? मुहम्मद साहब ने तो सदा दोनों के साथ सद्व्यवहार किया फिर यह आज अत्याचार क्यों?

४२—पहाड़ी। ४३—व्यभिचार। ४४—तुच्छ, अपमानित। ४५—अलग, भिन्न। ४६—व्यभिचार। ४७—व्यभिचारी।

४८—प्रदर्शिनी। ४९—जानकारी के लिए। ५०—भय, आशङ्का।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यहूदी ही नहीं ईसाई के प्रति भी मुसलमान का भाव ठीक नहीं। विश्वास न हो तो दिल्ली के प्रसिद्ध सूफ़ी ख़्वाजा हसन निज़ामी के इस कथन पर ध्यान दीजिए और देखिए कि हवा का रुख़ किधर है। कहते हैं—

"मैंने नाम पूछा। बोला रज़्क़ अल्लाह। मैंने कहा मुसलमान हो। कहा अलहम्दुलिल्लाह[५१]। बहुत देर तक तुर्की पार्लमेंट पर गुफ़्तगू होती रही। यह पहला मुसलमान अरब था जिसने पार्लमेंट की मदह सना[५२] में आसमान ज़मीन के क़ुलाबे मिला दिए।

"कपड़े अच्छे-अच्छे लाया था। सेठ साहब ने कुछ थान पसन्द किए। मगर ख़रीदना दूकान पर जाकर मुलतवी रक्खा।

"जब यह शख़्स चला गया मालिक होटल ने कहा मरदूद[५३] ईसाई था। आपके सामने बिक्री के लिए मुसलमान बन गया। यह लोग बड़े चलते हुए होते हैं। इनका दीन ईमान पैसा है। सेठ साहब को बहुत ताज्जुब हुआ और फिर उन्होंने बाज़ार में उसके यहाँ से कपड़ा न ख़रीदा। मुसलमान दूकानों से लिया। अगरचे मुसलमानों के हाँ हमराही[५४] दल्लालों के सबब मामूल से ज़्यादा देना पड़ा ताहम उनको ख़ुशी थी कि मेरा पैसा मुसलमान को मिला। मैंने भी चन्द चोग़े ख़रीदे। (सफ़रनामा, वही, पृ० १४८)

पैसे की इस महिमा को सामने रखते हुए टुक इस पर भी तो ध्यान दीजिए। यह भी किसी ख़्वाजा का ही मत है। कुछ समझ-बूझकर लिखते हैं—"यहाँ (शाम) के यहूद व ईसाई अमूमन् अरब हैं और मुझको यह देखकर ताज्जुब और तास्सुफ़[५५] होता है कि ज़रपरस्ती और हवाये[५६] नफ़सानी ने उलूलअज़्म[५७] पैग़म्बरों की औलाद को भी इस दरजे तक पहुँचा दिया। या कम अज़ कम जो मंसूब[५८] वा आल इसराईल हैं और कभी ख़ुदा की मुंतख़िब क़ौम और नस्ल थे फ़वाहसात[५९] पर आमादा कर दिया है। मगर क्या वह पैग़म्बरों की औलाद है? मुझे इसमें बहुत शुबहा है क्योंकि नस्लें मख़लूत हो गईं और बदल गई हैं। (रोज़नामचा सियाहत, शम्सुल अनवार प्रेस, मेरठ; सन् १९१२ ई०, पृ० ३४४-४५)

चाहते तो हम भी यही हैं कि ख़्वाजा ग़ुलामुस्सक़लैन साहब की बात सच निकले पर करें क्या देखते हैं कि उधर कोई मुँह खोलकर दौड़-दौड़कर माँग रहा है और दुआ तक नहीं करने देता। पहचानकर कहिए तो यह कौन है—

"हर जगह मुसलमान मुल्कों में सायल[६०] कसरत से हैं, लेकिन इस क़दर पीछे पड़नेवाले लोग कहीं नहीं देखे गए। औरतें अपने जद[६१] (रसूल) की क़सम खाती हैं। कहती हैं कि तुम हमारे दादा की ज़ियारत को आए, इतना ख़र्च किया, हमको भी दो। दो मर्द, २-३ दिन के फ़ाक़े और २-३ भूके मुताल्लक़ीन[६२] को बताकर क़समें खाती हैं; क़समें खाने का मर्ज़ अरब व अजम में बेहद है। नीज़ ऐन इबादत के वक़्त उनकी जुस्तजू उनको अपने शिकार तक पहुँचा देती है।" (वही, पृ० ४८)

यदि यह भी अरब नहीं, पैग़म्बरी नहीं तो है कौन? कौन अपने 'दादा' के नाम पर यह अत्याचार कर रहा है कि 'इबादत' तक नहीं करने देता? किसी और में इतना साहस कहाँ? भीख माँगने में भी तो ख़ून ही काम करता है? देखिए न—

"भीख माँगने पर इसरार[६३] करने में अव्वल नम्बर अरबों का है। गोया अक्सर अरब इसलिए पैदा हुए हैं। इराक़ अरब व सामरा व युरूशेलम व शाम दोनों जगह यही कैफ़ियत देखी। दूसरे दर्जे पर ईरानी हैं, मगर वह माँगने में शिद्दत[६४] और हुकूमत नहीं करते। उसमानी तुर्कों में फ़क़ीर बहुत कम देखे गए और हैं तो पीछा नहीं करते। हिन्दुस्तान के मुसलमान गदागिरी में मुमताज हैं, मगर अपनी तादाद के लिहाज़ से न कि सख़्ती लहजा[६५] की वजह से। अगरचे हिन्दुस्तान के बाज़ लोग भी सख़्त बेहयाई से माँगते हैं।" (वही, पृ० ३५७)

सच है, भीख माँगने में भी जातीयता प्रकट हो जाती है। बेचारा हिन्दुस्तानी मुसलमान किस बूते पर बल दिखाए और किस आधार पर भीख माँगने में भी शिद्दत और हुकूमत करे? नहीं, यह तो अरब और विशेषत:

५१—अल्लाह की प्रशंसा है। ५२—प्रशंसा और स्तुति। ५३—परित्यक्त (घृणासूचक शब्द) ५४—सहगामी। ५५—खेद। ५६—वासना की लोलुपता। ५७—साहसी। ५८—सम्बद्ध। ५९—अश्लीलताओं।

६०—भिखमङ्गे। ६१—दादा। ६२—सम्बन्धियों। ६३—आग्रह। ६४—कड़ाई। ६५—स्वर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनमें भी रसूल-सन्तान ही को बदा है कि धौंस के साथ भीख माँगें और दीन यात्रियों को भाव-भजन भी न करने दें। किसी रसूल-सन्तान को अपने 'दादा' का कितना अभिमान है और उसका उसकी 'उम्मत' पर क्या अधिकार है इसे स्वर्गीय सर सैयद अहमद ख़ाँ बहादुर के मुँह से सुनें और देखें कि इसलाम में कहीं ख़ून का विचार है वा नहीं। आप अपने मित्र को बड़े तपाक से लिखते हैं—

"मैं कामिल यक़ीन करता हूँ और पूरे ईमान से कहता हूँ कि तुमने ग़लती की। क़यामत में ख़ुदा के सामने, रसूल के सामने कहूँगा कि ऐ मेरे दादा रसूले ख़ुदा! मैंने बग़ैर किसी ग़रज़ दीनी व दुनियवी के तेरी उम्मत की भलाई की कोशिश में कोई दरजा बाक़ी नहीं रक्खा था। जिन लोगों ने उसको बरबाद करना चाहा, मिन-जुमला उनके एक यह नव्वाब इन्तज़ार जंग हैं। आप देखिएगा कि मैंने निहायत नेकनियती से कहा था। ख़ुदा यक़ीनी आपको मुआफ़ करेगा। गो मेरी और मेरे दादा को तशफ्फी[६६] न होगी। बिल्लाह न होगी। बिल्लाह न होगी। सुम्मबिल्लाह[६७] न होगी।" (ख़तूते सर सैयद, निज़ामी प्रेस, बदायूँ (१९२४ ई०, पृ० १३६)

तो फिर किसी मुसलमान को केवल अल्लाह से सन्तोष नहीं हो सकता। उसे तो 'रसूल' और साथ ही उनकी 'सन्तान' का भी ध्यान रखना ही होगा। उसकी 'तशफ़्फ़ी' के बिना किसी का काम कैसे चल सकता है? फिर भला चाहे वह भीख माँगे चाहे कुछ और भी करे पर उसकी 'तशफ़्फ़ी' और उसकी प्रसन्नता का ध्यान तो प्रत्येक दशा में रखना ही होगा। 'आख़िरी कलाम' में मलिक मुहम्मद ने ख़ूब लिखा है और स्पष्ट दिखा दिया है कि क़यामत के दिन क्या होगा और बीबी 'फ़ातिमा' की आह कितनी प्रखर होगी। कहते हैं—

"पुनि रसूल कहँ आयसु होई।
'फातिम' कहँ समुझावहु सोई॥
मारै आहि अर्श जरि जाई।
तेहि पाछे आपुहि पछिताई॥
जौ नहिं बात क करै विषादू।
जानौ मोहिं दीन्ह परसादू॥
जौ बीबी छाँडहिं यह दोषू।
तौ मैं करौं उमत कै मोखू॥
नाहिं न घालि नरक महँ जारौं।
लौटि जियाइ मुए पर मारौं॥
अगिन-खम्भ देखहु जस आगे।
हिरकत छार होइ तेहि लागे॥
चहुँ दिसि फेरि सरग लै लावौं।
मुँगरन्ह मारौं, लोह चटावौं॥
तेहि पाछे धरि मारौं, घालि नरक के काँठ।
बीबी कहँ समुझावहु, जोरे उमत के चाँट॥४०॥"
(जायसी-ग्रन्थावली, द्वि० सं०, ना० प्र० सभा काशी)

तात्पर्य यह कि 'रसूल' के साथ 'रसूल की सन्तान' को भी मानना ही होगा। इसके बिना उद्धार कहाँ? किन्तु उधर से कोई और ही शब्द सुनाई दे रहा है। कहीं से कोई पुकारकर कहता है—

"दर हक़ीक़त जो चीज़ हमारे पेश नज़र है वह मुसलमानों की हुकूमत नहीं बल्कि 'इसलामी हुकूमत' है। उसी इसलाम की जो मजमूआ है दियानत[६८] अख़लाक़ और मदनीयते[६९] फ़ाज़िला के आलमगीर[७०] उसूलों का। यह इसलाम हमारी या किसी के बापदादा की मीरास नहीं है। इसका किसी से कोई ख़ास रिश्ता नहीं। जो इन उसूलों पर ईमान लाए और इन पर अमल करे वही इसलाम का अलमबरदार[७१] है। वह अगर नस्ल के एतबार से चमार या भङ्गी भी हो तो मुहम्मद रसूल अल्लाह की मसनदे[७२] ख़िलाफ़त पर बैठ सकता है। वह अगर नकटा हबशी ग़ुलाम भी हो तो अरब व अजम के शुरफ़ाय और सादात का इमाम बन सकता है। साढ़े तेरह सौ बरस से जिनके ख़ानदान में इसलाम चला आ रहा है वह अगर आज इन उसूलों से मुनहरिफ़[७३] हो जाएँ तो इसलाम में उनकी कोई हैसियत बाक़ी नहीं रहती। और कल तक जो शख़्स हिन्दू या ईसाई या पारसी था शर्क और बुतपरस्ती, शराब और सूद और क़िमारबाज़ी[७४] में मुबतला था, वही अगर आज इसलाम की फ़ितरी सदाक़तों को मानकर अमलन् उनका पाबन्द हो जाए तो

६६—तुष्टि। ६७—फिर। ६८—सचाई। ६९—नागरिकता। ७०—विश्वव्यापी। ७१—झण्डा उठानेवाला। ७२—गद्दी। ७३—विरोधी, प्रतिकूल। ७४—द्यूतक्रीड़ा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसके लिए इसलाम में इज़्ज़त और बुज़ुर्गी के ऊँचे से ऊँचे मरातिब[७५] तक पहुँचने का रास्ता खुला हुआ है।" (मुसलमान और मौजूदा सय्यासी कशमकश, हिस्सा सोम, दफ़्तर रिसाला तरजमानुलक़ुरान, दारुल इसलाम, पठानकोट, पञ्जाब, सन् १९४१ ई०, पृ० ११-१२)

मौलाना सैयद अबुल आला मौदूदी ने कृपा कर किताली इस्लाम के विषय में जो कुछ कहा है उसकी सत्यता में सन्देह नहीं पर इतिहास का इसलाम तो सदा से ही कुछ और रहा है। 'चमार' और 'भङ्गी' तो दूर रहे यहाँ का आज तक कोई शेख़, सैयद, मुग़ल और पठान तक भी तो ख़लीफ़ा न बन सका और यदि कहीं का कोई अरबेतर बना भी तो वही उसमानी तुर्क जिसके विरोध में अरब सदा लीन रहे और अन्त में उसके जेहाद को मिट्टी में मिलाकर स्वयं किसी 'शरीफ़' को ख़लीफ़ा बनाने में लीन हुए। माना कि हमारे देश का 'दरज़ी' भी 'ख़लीफा' बन गया पर उसके नाम का ख़ुतबा किस क़ाबा में पढ़ा गया? नहीं, हमें कदापि भूलना न होगा कि हिन्दुस्तान में इसलाम कभी किसी 'भङ्गी या चमार' को 'मुसलमान' न बना सका। अधिक-से-अधिक उसने यही किया कि उसने उसे भी अपने भीतर गिन लिया और मुसलमानों को फैलने और फूलने-फलने के लिए बढ़िया खेत बना दिया। याद रहे इसलाम के भीतर 'अशराफ़' ही मुसलमान हैं। आप चाहें तो 'अजलाफ़' और 'अरज़ाल' को भी मुसलमानों में गिन लें पर उनकी गणना ठेठ मुसलमानों में कभी नहीं हुई है। विश्वास न हो तो स्वर्गीय सर सैयद अहमद ख़ाँ बहादुर से पूछ देखें। उनकी घोषणा है कि 'मुसलमान इस देस के रहनेवाले नहीं हैं।' ये ठहरे ठेठ यहाँ के निवासी। फिर सङ्गति कैसे बैठ सकती है? नहीं यह अनहोनी कभी नहीं होने की। 'मुसलमान' केवल 'मुसलिम' नहीं, वह और भी तो कुछ है। फिर इसलाम के नाते सभी धान साढ़े सोलह पसेरी कैसे हो सकते हैं?

अजी छोड़िए हिन्दुस्तान को। इस विलक्षण देश से पार पाना सरल नहीं। पर देखिए तो इराक़ में क्या हो रहा है और कौन किस वेष में सामने आ रहा है। देखिए—

"अगर सैयद हों तो तुर्की टोपी पर सब्ज़ पट्टी बाँधते हैं जैसा कि नजफ़ व करबला वग़ैरह के ख़ुद्दाम[७६] के सर का लिबास होता है। अगर सैयद न हों तो सुफ़ेद काम की हुई पट्टी बाँधते हैं।" (इराक़ व ईरान, शम्सुलअसलाम प्रेस, छत्ताबाज़ार बेगन पल्ली; सन १९३१ ई०, पृ० १२९)

अच्छा तो नवाब मीर असद अली ख़ाँ बहादुर ने अपने 'सफ़रनामा' में यह भी दिखा दिया कि वेष में भी सैयदी शान अलग दिखाई देती है और सदा 'सब्ज़' नज़र आती है। जो हो, सैयद और असैयद की चिन्ता में हम अधिक समय नहीं गँवा सकते। हमें तो इब्राहीम की सन्तानों से बस यही कहना है कि "यहूद की क़ौम में जहाँ और सख़्त ऐब हैं वहाँ अपनी क़ौमियत और सरवत[७७] का क़ायम रखना और एक दूसरे की इमदाद करना उम्दा सिफ़ात हैं। अफ़सोस है कि क़ानून अदल उनमें नहीं। यानी ग़ैर यहूदी को लूटना, खाना और उस पर ग़लबा[७८] जिस तरह हो हासिल करना जायज़ समझते हैं। मुसलमानों में भी बहुत लोग (ख़्वाह शीया हों या सुन्नी हों, ग़ाज़ी हों या वहाबिया हों) इस तरीक़े पर अमल करते हैं। चूँकि यह तरीक़ा तमद्दुन और अदालत के ख़िलाफ़ है चन्दरोज़ा तरक़्क़ी के बाद परेशानी, जुअफ़[७९], बदख़लाक़ी पैदा हो जाती है। तरक़्क़ी का राज़ इस आयत में मौजूद है—एदलू होवल अक़रबो लित्तक़वा—कि अस्ल ख़ौफ़ ख़ुदा मुआशरत में मुंसिफ़ाना बरताव से मालूम होता है।" (रोज़नामचा सियाहत, वही, पृ० ३७८)

बस मेल जोल और न्याय से ही संसार की पौध चलती है हूरहार वा छीनझपट से नहीं।

७५—सोपान, पद।

७६—सेवक। ७७—वैभव। ७८—प्रधानता। ७९—दुर्बलता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कलायन विहार

ग्वालियर राज्य के अमझरा जिले के बाघ या बाग नामक ग्राम के पास से इसी नाम की एक नदी बहती है। इस नदी के किनारे अत्यन्त सुरम्य वातावरण में चट्टानें कुरेदकर बनाई गई वे बौद्ध गुहाएँ स्थित हैं, जो अपने भित्ति-चित्रों के कारण संसार-प्रख्यात हैं। उक्त नदी के कारण आज ये गुहाएँ सर्वत्र 'बाग' गुहाएँ कहलाती हैं। परन्तु बाग ग्राम के लोग इन्हें 'पाण्डवों की गुफा' कहते हैं। वास्तव में इनका मूल नाम न तो 'पाण्डवों की गुफा' है और न 'बाग गुहा'।

यहाँ पर स्थित एक आधुनिक देवी-मन्दिर का नाम 'बाघेश्वरी देवी' का मन्दिर है, परन्तु वह आधुनिक है और 'बाघेश्वरी' से 'बाघ' ग्राम, नदी एवं गुहाओं ने नाम नहीं ग्रहण किया, उल्टे बाघ ग्राम के देवी-भक्तों की अधिष्ठात्री तथा उनके द्वारा प्रतिष्ठापित होने के कारण इस देवी को 'बाघेश्वरी' नाम प्राप्त हुआ है।

फिर बाग नदी के किनारे स्थित इस बौद्ध विहार का मूल नाम क्या था, यह जिज्ञासा बहुत प्राकृतिक है। यह प्रश्न यद्यपि अत्यन्त कौतूहलवर्धक एवं मनोरञ्जक है, परन्तु इसका उत्तर सरल नहीं है, और वह साध्य भी न होता यदि इन गुहाओं के जीर्णोद्धार तथा सफाई के समय सन् १९२९ में ग्वालियर पुरातत्त्व विभाग के मन्त्री की दृष्टि उस ताम्रपत्र पर न पड़ती जो अब गूजरी महल में स्थित संग्रहालय की शोभा बढ़ा रहा है। इसका विस्तृत विवरण सन् १९२९ की पुरातत्त्व विभाग की वार्षिक रिपोर्ट में दिया गया है। परन्तु उसका सम्पूर्ण पाठ गत सोलह वर्षों में भी सामने न आने से इस महत्त्वपूर्ण बौद्ध-विहार-विषयक अनेक जानकारी प्राप्त नहीं हो सकी थी।

इस ताम्रपत्र में माहिष्मति के महाराज सुबन्धु द्वारा भगवान् बुद्ध के 'गन्धधूपमाल्यबलिसत्र' की योजना के लिए, 'भग्नस्फुटित' के संस्करण के लिए एवं 'आर्य भिक्षु संघ' के चारों दिशा से आकर ठहरने पर उनके 'चीवर पिण्ड पातग्लान प्रत्यय शय्यासन भैषज्य' के हेतु 'दासिलक पल्ली' नामक ग्राम का दान दिया गया है। इस ताम्रपत्र की चौथी और पाँचवीं पंक्ति से ज्ञात होता है कि यह दान 'दत्तटककारित कलयन विहार' को अर्थात् 'दत्तटक' द्वारा बनवाए हुए 'कलयन' नामक विहार को दिया गया है।

बाग में स्थित गुहाओं का बनवानेवाला यह 'दत्तटक' कौन है, यह सम्भवतः कभी ज्ञात न हो सकेगा। यह है व्यक्ति का ही नाम, ऐसा अवश्य कहा जा सकता है। 'दत्तभट्ट' 'दत्तादेवी' 'वाकाटक' आदि की तरह 'दत्तटक' भी व्यक्तिवाचक संज्ञा हो सकती है। यह दत्तटक कोई राजा, सामन्त या माण्डलिक नहीं था, ऐसा तो उसके नाम के उल्लेख की रीति से ही प्रकट है। उसके नाम के साथ कोई उपाधि, विरुद अथवा सम्मान सूचक शब्द नहीं है, अतएव यह कोई साधारण बौद्ध गृहस्थ या भिक्षु ही होगा। आज इस धर्मप्राण व्यक्ति के विषय में कुछ अधिक जानने का साधन हमारे पास नहीं हैं।

परन्तु यह बात तो सिद्ध होती ही है कि इस विहार का नाम 'कलयन विहार' था। इस कलयन का सम्बन्ध किस वस्तु से है, यह भी नहीं कहा जा सकता। सम्भव है इसकी 'कला' से विमुग्ध होकर इसके निर्माता ने इसका नाम 'कलायन (कला + अयन) विहार' रख दिया हो तथा ताम्रपत्र के उत्कीर्णक ने उसे गलती से 'कलयन' लिख दिया हो। ऐसी एक-दो अशुद्धियाँ इस ताम्रपत्र में हैं भी। परन्तु 'कलयन विहार' नाम लिखने में उत्कीर्णक की गलती मानकर चलना पूर्ण समीचीन भी नहीं है।

बाग में पहाड़ को काटकर गुहाएँ बनाई गई हैं। यह ताम्रपत्र दो नम्बर की गुहा के पास की एक कोठरी में मिला है। इससे एक शङ्का हो सकती है कि 'कलयन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विहार' केवल दूसरे नम्बर की गुहा का ही नाम हो। इस गुहा की प्रधान कोठरी में स्तूप भी है और इसके अलिन्दों में बुद्ध एवं बोधिसत्त्वों की विशाल प्रतिमाएँ भी हैं। सम्भव है, इसी एक गुहा (नं० २) को 'दत्त-टक' ने बनवाया हो। यदि शुद्ध रूप 'कलायन' माना जाए तब तो यह नाम सम्पूर्ण गुहाओं के लिए ही होगा क्योंकि वास्तविक कला तो ३, ४ और ५ नम्बर की गुहाओं में है। अतएव 'कलयन' नाम सम्पूर्ण गुहाओं युक्त विहार के लिए तथा 'दत्तटक' को सब गुहाओं का बनवानेवाला उक्त शङ्का के अधीन ही मानना पड़ेगा। यह भी सम्भव है कि गुहा नम्बर २ प्राचीनतम हो और उसी के आधार पर अन्य गुहा-समूह भी इसी कलयन विहार के अङ्ग माने गए हों और यही उनका सामूहिक नाम स्वीकार किया गया हो। एक बात निश्चित हो गई है कि इस विहार का कोई नाम था अवश्य। इसी प्रकार के नाम अजन्ता आदि स्थानों पर स्थित विहारों के भी होंगे जिनके प्रमाण, सम्भव है, भविष्य में प्राप्त हो सकें, और यह भी सम्भव है कि वे कभी भी जाने ही न जा सकें। ऐसी दशा में 'कल(ा)यन विहार' के नाम की जानकारी विशेष महत्त्व रखती है।

इस विहार को दिया गया ग्राम 'दासिलक पल्ली' भी इस विहार के आसपास ही कहीं स्थित होगा। परन्तु आज पन्द्रह-सोलह सौ वर्ष पश्चात् भी उक्त ग्राम की प्राचीन स्थिति पर कोई बस्ती शेष होगी और आज उसका नाम क्या होगा, इसकी कल्पना कर सकना भी असम्भव है।

—हरिहरनिवास द्विवेदी, एम० ए०, एल-एल० बी०

दर्शन-त्रयी

बर्फ़-जैसा उत्तर का वायु सूँ-सूँ करता चल रहा था। खिड़की और द्वार बन्द करके मैं बिस्तर पर लेट रहा। स्थान-परिवर्तन या मुसाफिरी के कारण आँखें मूँदकर पड़े रहने पर भी निद्रावश न हो सका। पास में ही मेरे मित्र खुर्राटे ले रहे थे। उनकी नासिका का शब्द सुनकर मुझे ईर्ष्या हुई। "कैसा सुखी जीवन!" मैंने कहा, और अशान्त हृदय को ठण्डा करने के लिए एक-दो तीन गिनने लगा।

चारों तरफ इतनी शान्ति थी कि मेरा अपना श्वासोच्छ्वास मैं खुद गिन सकता था। थोड़ी देर इस प्रकार पड़ा रहा कि एक करुण चीत्कार मेरे कान में पड़ा। मुक्त कण्ठ से कोई खड़खड़ हँस रहा हो, ऐसा मुझे लगा। बैठकर मैं विचार करूँ कि पुनः एक करुण चीत्कार हृदय को दहलाता सनसनाहट करता हुआ कर्णद्वार से अन्दर उतर गया। मध्यरात्रि का वातावरण थरथरा गया।

एकदम उठकर मैंने खिड़की खोली। मध्यरात्रि की गम्भीर और निर्जनतापूर्ण सड़क के दोनों तरफ के मकान सुनसान खड़े थे। दो मकानों के बीच से चोरी-छुपी से देखते कृष्णपक्ष के चन्द्र की किरणें पास में जलते म्युनिसपैलिटी के दीपक के प्रकाश के साथ मिलकर सड़क को किसी नवीन रङ्ग से रगँने का प्रयास कर रही थीं। मैं उस क्षीण प्रकाश में सड़क पर किसी कृष्ण वस्तु की रेखाओं को स्पष्ट करने के लिए आँखें गड़ा रहा था कि किसी ने मेरे कन्धे पर हाथ रक्खा। शरीर में एक क्षीण कम्प हो गया।

"नींद नहीं आती!" मेरे मित्र ने मधुरता से पूछा।

"तुम कैसे जग गए?" स्वस्थ होकर मैंने पूछा।

"खिड़की की खड़खड़ाहट से। इतनी रात गए खड़े-खड़े क्या कर रहे हो?" मैं कुछ कहूँ, तब तक वह चीत्कार कान में पड़ा। मृत्युवत् सोता हुआ एकान्त फिर काँप गया। "वह कौन है?" टेबल पर दियासलाई खोजने के लिए हाथ फिराते हुए मित्र से मैंने पूछा।

"अरे! वह पगली है। इधर आओ! तुम्हें उसकी बात सुनाऊँ। बहुत दयाजनक है। किन्तु उस खिड़की को बन्द कर दो। हवा बहुत ठण्डी है।"

मैं खिड़की बन्द करके टेबल के पास आरामकुर्सी पर लेट गया। लालटेन के पीले प्रकाश में गम्भीर लगते मित्र के मुँह को मैं एक दृष्टि से देखने लगा।

"कहिए!"

"यह पगली कानपुर के पास की है। उसके माँ-बाप ने सात सौ रुपए लेकर इलाहाबाद के एक प्रौढ़ ब्राह्मण के साथ उसे ब्याह दिया था। लोग कहते हैं कि ब्राह्मण की इलाहाबाद में बीसी है, पैसे की स्थिति ठीक है। न जाने वहाँ उसे क्या दुःख मिला कि वहाँ से अकेली यहाँ आ गई। इस लखनऊ में उसकी जैसी रूपवती युवती और भागकर आई हुई स्त्री को कौन आश्रय दे? कुछ दिन तक तो धर्मशाला में रही किन्तु शरीर-लोभी आदमियों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने उसे वहाँ हैरान किया और सड़क पर फेंक दिया। अच्छे आदमियों से ठुकराई जाने पर वह फुटपाथवासियों की जाति में मिल गई। उसकी अनाथता और गरीबी से लाभ उठाकर किसी दुष्ट ने उसे भ्रष्ट किया और ..

"बालक के उत्पन्न होते ही वह अपने मस्तिष्क पर काबू न रख सकी। पोषण और रक्षण के अभाव से वह बालक एक सप्ताह में ही जिस अगोचर मार्ग से आया था उसी मार्ग से चल दिया। बालक का शव जब उसके हाथ से छीना गया तब वह रोने के बदले हँस पड़ी। तब से लेकर वह निरन्तर हँसा करती है। बीच-बीच में चीत्कार भी करती है। उसकी दशा सचमुच दयाजनक है।"

मित्र के एक-एक वाक्य से मेरे मस्तिष्क में बिजली का धक्का लग रहा था। व्यवसाय के पत्थरों से दबी भूत की सृष्टि धक्के से एकाएक जग गई। छाती धक-धक् होने लगी। रोष, उद्वेग, परिताप इत्यादि के अनेक भाव मेरे हृदय को कष्ट देने लगे।

"वह प्रायः उन्नीस वर्ष की है?" मैंने पूछा। मन में स्मरणों की एक आँधी बहने लगी।

"बस, ठीक है;" मित्र ने कहा।

"निश्चय ही वह राधा ही होगी;" अपने आप मैंने कहा—"मैंने पहले-पहले कहाँ उसे देखा था? कब?..."

रात के दो-ढाई बजे होंगे। कज्जल-जैसे अँधेरे को छेदती हुई गाड़ी तालबद्ध गति से आगे बढ़ रही थी। डब्बे में मुसाफिर कपास के बोरों-जैसे एक पर एक पड़े थे। खिड़की के पास पैरों को सङ्कुचित कर मैं जैसे-तैसे बैठा था। ट्रेन के वेग और नींद के कारण मेरा सिर ट्रेन की पटिया से टक्कर खाता हुआ ट्रेन के सङ्गीत में नया सुर पूर रहा था। इस प्रकार अर्धजाग्रत् अर्धसुषुप्त अवस्था में मैं गाड़ी के साथ त्वरित गति से रास्ता तय कर रहा था। इतने में एक लम्बा निश्वास खींचकर गाड़ी खड़ी हो गई।

धड़धड़ की गति के अचानक बन्द हो जाने से मेरी आँखें खुल गईं। खोमचेवालों की आवाज और चीनी के प्यालों का रणकार मेरे कान में पड़ा। मैंने खिड़की खोल दी और स्टेशन का नाम पढ़ने को गर्दन बाहर निकाली। हमारी गाड़ी के साथ दूसरी तरफ एक और गाड़ी खड़ी थी। मेरी खिड़की के सामनेवाली खिड़की पर अनायास मेरी दृष्टि पड़ी। खिड़की के पास की बैठक पर एक चौदह-पन्द्रह वर्ष की लड़की बैठी थी। उसकी आँखों में निद्रा की बेहोशी नहीं थी, उसके मुख पर प्रवासजन्य थकावट नहीं थी, उद्वेग नहीं था। ऐसा निर्दोष, कलङ्क-रहित कपटशून्य चेहरा मैंने पहले कहीं न देखा था। गैस के प्रकाश में उसकी आँखों की पुतलियाँ शुक्र तारे के समान चमक रही थीं। उसके अधरों की मधुर रेखाओं से प्रसाद चू रहा था। सारे बदन पर सरलता झलक रही थी। उसके शरीर का विकास पूर्णतया अभी स्त्रीत्व तक पहुँचा न था। मुग्धत्व और यौवन के बीच अनिश्चितता से खड़ी उस बाला की कान्ति ने मुझे मुग्ध कर दिया। उसका सम्पूर्ण भाल कुङ्कुम और अक्षतों से अर्चित था। यह देखकर मुझे उसकी मुसाफिरी का इतिहास मालूम हो गया।

माता-पिता के प्रेमपूर्ण भावों को अलग करके, बचपन के निष्कपट साथियों को और कौमार्य की विमल स्वप्न-लीला को अन्तिम नमस्कार करके वह एक अनजान पुरुष के पीछे जा रही थी, अनजान घर में—अज्ञात भावी को स्पष्ट करने के लिए। कुमारिका से वह अब सौभाग्यवती बनी थी—किसी ने बनाई थी। "ऐसा कोमल पुष्प परिणीत जीवन के परिताप को सह सकेगा?" मैं स्वयं से प्रश्न कर बैठा। थोड़ी देर बाद उसे ज्ञात हुआ कि कोई उसे देख रहा है। उसने अचानक मेरी खिड़की की तरफ नजर डाली और फिर तुरन्त सशङ्क होकर अपने चारों तरफ देखने लगी।

सारे कम्पार्टमेंट में उसे छोड़कर और कोई जागता न था। सन्तोषकारक श्वास खींचकर वह खिड़की के आगे आई और खड़ी हो गई। उसे कुछ पास में आया देखकर मैंने भी जितना निकल सका, उतना शरीर का भाग बाहर निकाला। उसे देखते मेरी आँखें थकती ही न थीं, हृदय की प्यास बुझती ही न थी। जिन्दगी में प्रथम बार देखने पर भी उसकी आकृति मुझे जन्म-जन्मान्तर से परिचित लगी। उसके दर्शन मात्र से अन्तर में जलती हुई अग्नि एकदम शान्त हो गई। सुपरिचय में आई हुई और सुन्दर युवतियाँ जिस प्रभाव और सत्ता को मुझ पर जमाने में असमर्थ हुई थीं उसे यह अज्ञात बाला मुझ पर जमा चुकी। उसका आकर्षण इतना बलवान् था कि मेरी विचारशक्ति मूर्छितप्राय हो गई। अनेक दिनों से गई हुई चीज के मिल जाने पर जो आनन्दानुभव होता है, वह प्रायः मुझको हो रहा था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसकी आँखों की अगोचर गहराई में मैं उतरूँ कि अचानक उसकी गाड़ी सीटी के साथ चल दी। डब्बे खड़खड़ाहट के साथ एक के बाद एक निकल गए। पहिए के एक-एक चक्कर के साथ मेरे हृदय पर हथौड़े की चोटें लगने लगीं। छाती पर कोई तेज छुरी चलाता हो ऐसी वेदना उसके एक-एक पल दूर जाने पर मुझे होने लगी। दूर-दूर अन्धकार में डूबती उस अज्ञात मूर्ति को देखने के लिए जितना मुझसे बना, उतना मैंने किया। थोड़ी देर बाद गाड़ी का शब्द सुनाना बन्द हुआ। गार्ड के डब्बे का लाल दीपक भी धीरे-धीरे क्षीण होकर अन्त में अन्धकार में मिल गया। तो भी मेरी मत्त आँखें रेखा-शून्यता में अदृश्य गाड़ी को ढूँढ़ने का व्यर्थ प्रयास करती रहीं। जब अकेला होता, वह प्रसन्नवदना मेरी आँखों के आगे नाच उठती। जिसे मैंने पहले कभी देखा न था, जिसके साथ एक-दो मीठे शब्दों का लेन-देन भी न था, अवसर मिला न था, उसका मुझ पर इतना अगम्य और सर्वोपरि प्रभाव क्यों पड़ा, यह शङ्का ज्यों की त्यों है।

'किसी अज्ञात पर ऐसा भाव रखना योग्य नहीं' ऐसा कभी मन में लगता। अन्तर के संस्कार किसी समय रोकते, किन्तु अन्तर की गहराई से निकलती एक आवाज सभी मर्यादाओं को, व्यावहारिक दक्षता को, दबा देती थी। उस अनाहत नाद के निर्णय के आगे मेरा मस्तिष्क झुक जाता। कल्पना जैसा दौड़ाती, मैं दौड़ने लगा। मध्य रात्रि के धन्यदर्शन को याद करके मैं, फिर कभी उसे देखने का समय मिलेगा या नहीं, यह सोचता हुआ समय व्यतीत कर रहा था कि एक दिन अचानक उससे भेंट हो गई।

कार्यवशात् मुझे इलाहाबाद जाना पड़ा। पन्द्रह-सोलह दिन का कार्य होने से एक रूम भाड़े पर लेना पड़ा। खाने-पीने का सुभीता रहे, अतः एक लाज में ही रूम किराए पर लिया। मङ्गलवार की रात्रि थी। पास की घड़ी में १२ बजे प्रायः आधा घण्टा हो गया था। बिस्तर पर लेटा मैं कुछ जरूरी कागज-पत्र बाँच रहा था कि द्वार पर किसी ने धीरे टकोरा किया। बाँचना बन्द कर मैं आश्चर्यपूर्वक द्वार की तरफ देखने लगा। टकोरे एक के बाद एक बढ़ने लगे। इतनी रात गए कौन बुलाता होगा, यह सोचता हुआ मैं उठा। जैसे मैंने किवाड़ खोले कि एक घूँघटवाली स्त्री अन्दर आई। धीरे से उसने द्वार बन्द कर दिया। उसके अनियमित श्वासोच्छ्वास सुनकर मैंने अनुमान किया कि भय या उद्वेग से वह काँप रही है। मैं उसके आगमन के विषय में कल्पना दौड़ाता हुआ पलँग के एक कोने पर बैठ गया। उसने ग्राम्य घूँघट से मुँह निकाला, वह मेरी तरफ सौहार्द-दृष्टि से देखने लगी। अचानक चाबुक के लगने से जिस प्रकार मस्तक चक्कर खाने लगे वैसी मेरी स्थिति उसके मुख को देखकर हुई। उसके मुँह की एक-एक रेखा सुपरिचित थी। "उस रात देखा हुआ मुख" कर्ण में आवाज हुई। छाती धड़कने लगी। जिसकी याद में जवानी के अमूल्य ढाई वर्ष बिताए, वही थी। जहाँ उसे देखने की स्वप्न में भी कल्पना न की थी वहाँ उसकी उपस्थिति और वह इतनी निकट! ऐसे स्पृहणीय एकान्त में! अरण्य के घोर अन्धकार को जैसे सौदामिनी की चमक और भी घोर बना देती है, उस प्रकार उसके दर्शन से मेरी आँखों की दशा हुई।

"मुझे पहचाना?" जिन्दगी में प्रथम बार ही उसके शब्द कान में पड़े। पहले की अपूर्णता की जगह स्त्रीत्व की सम्पूर्ण छटा उसके मुँह पर खेल रही थी। आँखों की चमक और अगम्य गहराई वही थी। केवल पहले की विकसती प्रभा के बदले उसके सरोजवत् मुख पर कुछ विषाद की रेखाएँ थीं।

"तुम्हें न पहचानूँ, यह कैसे हो सकता है! किन्तु तुमसे यहाँ भेंट होने की मुझे आशा न थी। मैंने पहले-पहल जब देखा था तब तुम कानपुर से जा रही थीं और मैं कानपुर जा रहा था।" उसकी सारी देह-श्री को पीते हुए मैंने कहा।

उसके निष्कपटपन ने मेरा सारा क्षोभ हर लिया। मैं उठकर उसके और पास पहुँच गया। उसके हाथ मैंने अपने हाथों में लिए। कितने कोमल थे; कितने ठण्ढे थे! उसने कुछ भी विरोध न किया। अन्दर की सम्पूर्ण मधुरता को दृष्टि-द्वारा भरती वह मेरी चेष्टा को स्मित वदन से, कोई प्रौढ़ व्यक्ति किसी बालक के क्रीड़ापूर्ण कार्य को जिस भाव से देखे, उस भाव से देखती रही। मैं उससे कुछ वर्ष बड़ा होने पर भी उसके आगे कैसा नाबालिग-जैसा लग रहा था। वह छोटी थी तथापि कैसी गम्भीर और प्रौढ़ लग रही थी।

"तुम यहाँ कैसे?" उसका इतिहास जानने के हेतु मैंने पूछा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मैं इस लॉज के मालिक की पत्नी हूँ।" उसके शब्द सुनते ही उसके हाथ मेरे हाथ से छूट गए, एक धीर, गर्म निःश्वास हम दोनों के हृदय से निकल गया।

"इस मोटे रामशङ्कर की?" अशान्ति में मैंने पूछ दिया।

उसकी आँखों में आँसू भर आए। धोती के कोने से मैंने उसकी आँखें पोंछ दीं।

"अब तुम जाकर सोओ; सुबह और बातें करेंगे। रामशङ्कर जानेगा कि तुम यहाँ हो तो नाहक हैरान होना पड़ेगा।" मैंने कहा।

"उससे कुछ छिपा नहीं। उसी ने मुझे यहाँ भेजा है।"

"बोलो, तुम्हारे लिए मैं क्या कर सकता हूँ?"

"मेरे लिए.....मेरे लिए...मैं स्वेच्छा से यहाँ नहीं आई।" उसके वदन की रेखाएँ सख्त हो गईं। तुम्हें मेरे प्रति कैसा विचार आएगा! ओ प्रभु! इसके साथ मेरा लड़ा कहाँ से पड़ा कि ऐसी मध्यरात्रि में दूसरे के रूम में पैर रखने पड़े। उसका गला रुँध गया। छाती धौंकनी-जैसी ऊँची-नीची होने लगी, लाल-लाल गालों पर टप-टप आँसू पड़ने लगे।

अत्यन्त प्रयास से मैंने उसके अशान्त हृदय को शान्त किया। उसके बाद उसने अपनी छोटी-सी कहानी हृदय को छिन्न-भिन्न करनेवाले शब्दों में कही। सात सौ के लोभ में किस प्रकार उसके माँ-बाप ने खिलती कली को बींध दिया, यह जब उसने कहा तो मेरा हृदय और आँखें मेरे वश में न रहीं ...!

"इस जीते नरक से मुझे बचाओ। पैसे के लिए, वह मेरा पति होकर भी मुझे दूसरे के हाथ में सौंपता है, नहीं जानी तो लकड़ी की चोटें लगाता है; यह देखो न!" जाँघें तरफ का वस्त्र हटाते हुए उसने कहा, "यह सब सहते हुए भी अभी तक तो मैं अपने को बचा सकी हूँ। किन्तु मुझे लगता है कि यह यातना जो बहुत दिनों तक चलेगी तो मैं पागल हो जाऊँगी। तुम किसी तरह मुझे यहाँ से ले चलो। जब तक जीऊँगी तब तक मैं तुम्हें याद करूँगी।" उसने अपना मस्तक मेरे पैरों पर रख दिया और रो पड़ी।

"बहिन!" मेरा गला रुक गया, आँखें भींज गईं तथापि जैसे-तैसे मन को वश में रखकर मैंने कहा—"मैं जीता हूँ तब तक तेरी ओर कोई अँगुली तक न उठा सकेगा। ठीक है, दो दिन ऐसे भी आ जाते हैं।"

जब वह रूम से बाहर गई, उसके बदन पर से पहले की निराधारता-सूचक रेखाएँ नष्टप्राय हो गई थीं। इतने बड़े जगत् में मेरा कोई है, इस विचार ने उसके परिताप, उद्वेग, दुःख सब शान्त कर दिये थे।

बाकी के दिनों में हम कई बार मिले। रामशङ्कर तो यही जानता था कि राधा ने मुझ पर वशीकरण चलाया है। उसे जितना माँगता उतने पैसे मिलते जाते थे इस-लिए मन में फूलता था और हम दोनों पर खुश था। राधा को छुट्टी थी कि दौड़ती मेरे पास आ जाती। मैं उससे बातें करता और वह एक ध्यान और अनन्य श्रद्धा से सुनती। जैसे-जैसे सम्पर्क बढ़ता गया, हम दोनों के बीच की गाँठ मजबूत होती गई। जीवन में प्रथम बार ही मुझे बहिन का अभाव खटका।

जाने की अन्तिम रात्रि को राधा मेरे रूम में आकर खूब रोई—"तुम्हारे जाने के बाद यहाँ मेरा कोई नहीं रहेगा। तुम मुझे अपने साथ ले चलो।" मैंने उसे सामाजिक कठिनाइयाँ समझाईं। कुछ भी हो किन्तु उसके पति के पास से मैं उसे न ले जा सकूँगा यह समझाया और अन्त में 'वनिताविश्राम' में व्यवस्था कर मैं खुद आकर ले जाऊँगा' यह कहा तब मुश्किल से उसने मुझे जाने की छुट्टी दी। ताँगे में बैठने के पहले उसका आशीर्वाद लेने को मैंने अपना सिर उसके चरणों में झुकाया। ताँगे में सामान व्यवस्थित करते हुए रामशङ्कर को मेरे इस नामर्दपने पर हँसी आ गई।

'उसे अनाथ छोड़कर जा रहा हूँ' यह विचार आते ही उसके चरणों पर दो-चार आँसू पड़ गए। आँसू-भरी आँखों से उसने मुझे उठाया। "तुम्हारी आँखों में पानी? उठो उठो, मुझे भूलना नहीं" कहकर वह रसोईघर में चली गई।

"बाबू! राधी जल्दी भुलाई नहीं जा सकती।" वकालत के भाव से रामशङ्कर बोला—'कलदार आठ सौ देकर लाया हूँ। किसी वक्त यहाँ आना हो तो मेरा घर अपना ही जानिएगा।" मानव देह का रुपया-आना-पाई में हिसाब निकालनेवाले इस रसोइए को मैं मिश्र भाव से देखता रहा। लखनऊ आने के बाद प्रवृत्ति के चक्कर में ऐसा पड़ गया कि शान्ति से राधा के विषय में विचार न कर सका।

उसके पति के पञ्जे से उसे कैसे छुड़ाऊँ, इसकी सन्तोषकारक और व्यवहार में रक्खी जाय ऐसी योजना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं सोचूँ कि इसके पहले ही एक अगम्य भावी मुझे रङ्गून खींच ले गई और इस प्रकार राधा को दिया वचन अपूर्ण रह गया।

रङ्गून से आज ही लखनऊ में पैर रक्खा था। मेरे मित्र की कही पगली की बात से राधा की अवशेष स्मृति जाग्रत् हो गई। यदि यह पगली राधा ही हो तो उसे पगली बनानेवाला मैं ही हूँ। मैंने उसे लखनऊ ले जाने का वचन दिया, मेरे विश्वास से वह अकेली यहाँ आई और मेरी अनुपस्थिति में पशुवृत्ति की बलि हो गई! मेरा मस्तिष्क घूमने लगा। "मुझे नीचे जाकर निश्चय करना चाहिए" कहता हुआ मैं उठा। खूँटी पर लटकते कपड़ों से विचित्र छाया बनाती लालटेन प्रकाशित थी। मेरे मित्र पुनः निद्रित हो गए थे। धीरे से द्वार खोलकर मैं त्वरित गति से सीढ़ियाँ उतर गया।

जिन्दगी में भावी हमें तीसरी बार मिला रही थी। तीनों बार मध्य रात्रि थी, तीनों बार एकान्त था। पानी की लहरों द्वारा मिलाए दो काष्ठ के टुकड़ों जैसा हमारा मिलन आकस्मिक था, उसके पीछे कोई गूढ़ रहस्य छिपा हुआ था।

पैरों के आगे बढ़ने के साथ ही छाती की 'धक्' भी बढ़ती जाती थी। इलाहाबाद छोड़ने के बाद मैंने उसकी कुछ भी सुध न ली यह दंश हृदय को दुःख दे रहा था। उसकी इस स्थिति का सब पाप मेरे ऊपर है ऐसा दिल कहने लगा। "नहीं-नहीं! उसका और मेरा क्या? वह दूसरे की, दूसरी जाति की" मस्तिष्क के शिक्षित भाग ने शङ्का की।

भारी पैर और हृदय से उस तरफ फिरा। उसे अच्छी तरह देखूँ, इसके पहले ही निश्चय हो गया कि वह राधा है। परिताप से जलते हृदय सहित मैं उसके आगे अवाक् खड़ा रहा। मैंने सोचा था कि वह सो गई होगी, किन्तु वह पूर्णतया जाग्रत् थी। ऊपर आकाश में एक नजर से वह देखती हुई पड़ी थी। उसके बदन की एक-एक रेखा से मेरी आँखें संलग्न हो रही थीं। उसके शरीर पर का वस्त्र मैला और कीचड़युक्त था। असह्य गन्ध उसमें से निकल रही थी! उसके केश धूल, मैल और पसीने से भरे थे। मुख पर से चैतन्यता उड़ गई थी। दीपक वही था किन्तु बत्ती जल गई थी, तैल चुक गया था। उसको देखकर वर्षों पहले देखी आकृति याद आ गई, दोनों के बीच कितना अन्तर!

थोड़ी देर बाद उसकी आँखें मेरी ओर फिरीं। भयङ्करता से वह मेरी तरफ देखने लगी। "मेरा खून पीना है? पीओ-पीओ.." कहकर वह जोर से हँस पड़ी। मुझे रोमाञ्च हो गया। शरीर थरथरा उठा। निष्प्राण एकान्त पुनः भड़क उठा।

"राधा!" मैंने बहुत प्रयत्न से कहा।

शब्द सुनते ही विस्मृति और पागलपन के भार से दबी हुई पुरानी बातें—अनुभव, संस्मरणों को सजीव करने के लिए उसने आँखें बन्द कर दीं। उसके मुख पर सौम्यता प्रकट हो रही थी।

"राधा!" उसके सिर पर हाथ रखते हुए मैंने कहा।

"कौन है? मुझे अकेली मरने दो" उसने कहा और मेरी तरफ शङ्का और भय-भरी दृष्टि से देखने लगी।

"राधा! मुझे भूल गई?" फूँक मारते ही जाड़े के दिनों में जली हुई अङ्गारे की राख उड़ जाए और लाल अङ्गारा जगमग चमक उठे उस प्रकार उसकी मूर्च्छित आँखें सतेज हो गईं।

"कौन तुम? तुम मुझे.....अपने साथ लखनऊ ले जाने आए हो? पर तुम भाग जाओ। वह तुम्हें मार डालेगा!" उसके शब्द मुझे दंश-जैसे लग रहे थे।

"राधा! मैं तुझे ले जाने आया हूँ" उसका हाथ अपने हाथ में लेकर मैंने कहा।

"सच! अब तो नहीं भूलोगे न?"

"राधा! एक बार भूल हुई...अब नहीं होगी। मुझे माफ करो।"

"नहीं, ऐसे माफ नहीं करूँगी। ओह! पर मुझे कौन रक्खेगा?" वह अपने प्रकृत स्वरूप में आ रही थी।

"मैं हूँ न?"

"इस समय तो तुम्हें अकेले नहीं जाने दूँगी, नहीं जाने दूँगी। पर वह देखो! वह आ रहा है! उसके हाथ में जलती कर्छी है। मेरा हाथ छोड़ दो। मुझे भगने दो, नहीं तो वह मेरी जान लेगा। मुझे....."

"राधा! अब कोई तेरा नाम न लेगा। उठ तो, मेरे साथ चल, देखूँ।"

"तुम्हारे साथ?" फटे हुए स्वर से वह चिल्लाई और फिर कम्पित करनेवाला भयङ्कर अट्टहास!

"हाँ, मेरे साथ!"

"हा हा ह अ अ" भयङ्कर अट्टहास ने मेरा रोम-रोम खड़ा कर दिया। उसे बैठाने को मैंने उसका हाथ थोड़ा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खींचा। उसके अवयवों को कठिन होते देख मुझे डर लगा कि उसके हृदय पर कान रखने के बाद खबर पड़ी कि वह तो मुझे साथ लिए बिना ही अपने रास्ते चल दी थी!

—चण्डीप्रसाद नैथाणी

मैना

पीले पड़ते दिनकर की किरणें मैना के पीले मुँह पर पड़ रही हैं। भौंचक्की-सी वह यह सब देख रही है। सोई आँखों में कितने भावों की रेखा बनती-बिगड़ती है। लघु गृह में यह लघु-सा जीवन कितना भारी लग रहा है। लघुता में महत्ता सोई पड़ी है।

विगत जीवन की भूली छाया झाँककर आती और चली जाती है। भूला शैशव आँखों में उमड़ा आता है। उस सुनहले दिवस में माँ से चिढ़ा-चिढ़ा प्यार मिला और पिता से झिड़कन-भरा दुलार मिल सका था। स्वप्नों में मग्न भावी संसार मधुर खिंच आया था। निर्बन्ध हृदय अपने उल्लास पर हर्षित था। भारतीय थी वह। उसने देखा—पाने की आशा करना शायद भूल है। उत्सुक आँखों से उसने ऊपर देखा—रवि, शशि, पृथ्वी सब देते ही रहते हैं। पाते नहीं। फिर देना ही तो जीवन का लक्ष्य है, क्यों? पङ्ख फड़फड़ाकर वह पिंजड़े में घूम आई। उसने दे डाला—अपने नन्हें-से भाइयों को हृदय का नव दुलार और संसार को अपनी अबोधता का परिचय। वह बढ़ रही थी। सोचा, शायद संसार मुझसे कुछ और चाहता है जिसको देने से मैं प्रसिद्ध बनूँ—उन्मुक्त गगन में बिखेरती जाऊँगी अपना सुन्दर-सा गीत, जिससे संसार मुग्ध हो जाए। और मैं, विहरा कहलाऊँगी। मृदु और कोमल भावों में डूबा गीत गगन में गूँज उठा। ऐसी नन्हीं-सी मैना का ऐसा गीत। संसार ने देखा—गीत का मूल्य आँका गया—प्यारी-सी कड़ियों में बँधा हुआ बन्धन। और विहगकुमारी इस परिवर्तन पर विस्मित थी। मधुर बन्धन में बन्धन की स्वामिनी कुछ मुग्ध, चकित और कुछ अपने बीते स्वप्न की याद में जा रही थी। कञ्चन की रानी ने देखा उसके छोटे संसार में कर्तव्य बहुत है। सब उसे अपने साँचे में ढाल देना चाहते हैं। उस पिंजड़े के कोने में कोटरगत आँखोंवाली वृद्धाओं में सङ्घर्ष था। कुलवधू वह है जो नीड़ से बाहर न झाँके। और पिंजड़े के बाहर से कभी नई नवेली देख लेतीं—अपनी मर्यादा में आप लिपटी हुई मैना को देखकर खिलखिला देतीं।

उसने देखा—यहाँ भी तो देना ही देना है। वह देती रही—उन्मुक्त करों से अपने को लुटा-लुटाकर। पर संसार सन्तुष्ट न हुआ। मैना की आँखें भर आईं। और वह नीरस लगने लगी। कोमल भाव दबने लगे। मन की विविध रेखाएँ ढकती गईं और मूक मौन "देवी" की पूजा होने लगी। दुनिया ने देखा—इसके हृदय में विविध भाव जाने कहाँ सोए पड़े हैं। सुवर्ण के टुकड़े उसका मूल्य और सम्पत्ति बन गए।

मैना का कण्ठ रुँध चला।

धन गुण था और उसका मूल्य हीरे-मोती से अलंकृत कड़ियाँ मन्थर गति से वायु में कम्पन पैदा करने लगीं। वह अपने को भूल चली—मुक्ति के नाम से उसे भय लग रहा था। जकड़न में स्वतन्त्रता भयावह मालूम होने लगी। व्यक्तित्व जाने किस आड़ में बैठा रहा। सब कुछ खोकर यह प्यारा-सा बन्धन पाया और इसे ढीला करना शायद अपना सर्वस्व खो देना था।

हृदय मुक्त था नहीं। नीड़ मङ्गलमय न था, सुन्दरता जाने कहाँ खो गई थी। उत्फुल्ल मैना के मनहर गीत के स्थान पर दबा-दबा स्वर सुनाई देने लगा। डरती आँखें सबसे याचना करती गईं। और वह भी चलती गई।

मैना का सिर चकरा रहा था। अरे यह क्या... दूर क्षितिज के पास उस जैसी कुछ मैना—उसके भूले स्वर को दोहराने का अभ्यास कर रही हैं। उसने जोर से आँखें मींच लीं। धुँधलापन छा रहा था। गीत गूँज उठा—आँखें फाड़ वह देखने लगी—क्रान्ति की सन्देशवाहिका जागर्त्ति और न जाने क्या? पिंजड़े की रानी चकित थी। एक बार अपनी विभूषिता कड़ियों को देखा और फिर उन्हें देखती रह गई—एकटक।

—सोमा जलाली, मिरजा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

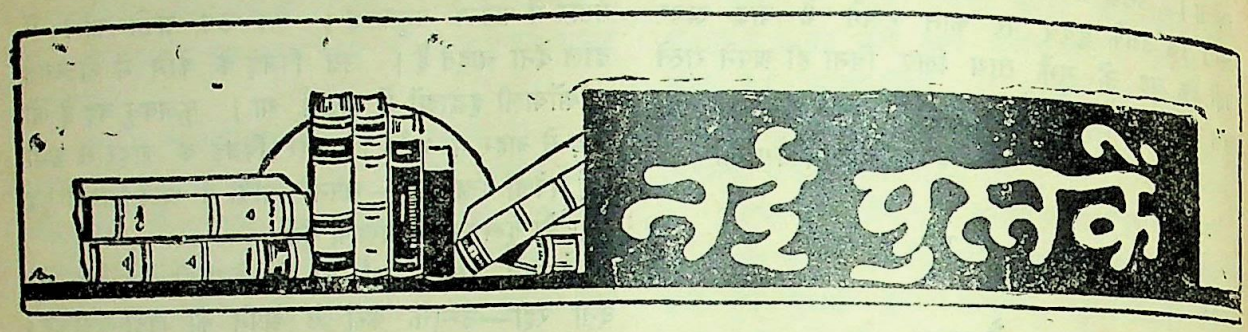

१—**हिन्दुओं की अवनति की मीमांसा**—लेखक, पण्डित रघुनाथ शास्त्री कोकजे; प्रकाशक, जोगल ऑण्ड सन्स ५७० शनवार पेठ, पुणें २; पृष्ठ १८० और मूल्य सादा कागज २) रुपया, सफेद कागज २॥) रुपया है।

जैसा कि नाम से ही प्रकट है, इस पुस्तक में हिन्दू-समाज के विभिन्न दुर्बल अङ्गों की आलोचना, उसके धार्मिक एवं सामाजिक शैथिल्य को दृष्टिकोण में रखकर, की गई है। साथ ही उसके दोषों के समुचित परिहार के उपायों पर भी विचार किया है।

हिन्दुओं के ह्रास के मूल कारण क्या हैं? प्रश्न देखने में जितना सरल है, उत्तर उतना ही कठिन। हिन्दू धर्म के विभिन्न अवयवों का समुचित विश्लेषण, उसकी परम्परा और ऐतिहासिकता का गम्भीर अध्ययन किए बिना हम किसी निश्चित निर्णय पर नहीं पहुँच सकते। वैदिक भावनाओं में ऐहिक और पारलौकिक आदर्शों का जितना सुन्दर समीकरण हमें मिलता है ग्यारहवीं और बारहवीं शताब्दी की सामाजिक मान्यताओं एवं रूढ़िगत विश्वासों के क्रमिक विकास को देखने से हमें यह स्वीकार करना पड़ता है कि उस समय हिन्दू-धर्म के उदात्त और सन्तुलित आदर्शों के स्थान पर रूढ़िगत विश्वासों की महत्ता के प्रति अनावश्यक मोह घर करता जा रहा था। यद्यपि शास्त्रों की दुहाई देकर सब कुछ किया जा रहा था तथापि आश्चर्य यह देखकर होता है कि इस प्रकार की दुहाई देनेवाले ब्राह्मण-वर्ग में पारम्परीय कर्मों के प्रति अपार आस्था ही अधिक थी, वास्तव में किसी शास्त्र-सम्मत दृष्टिकोण का व्यावहारिक रूप कम। उस समय का धर्म समाज, राजनीति एवं साधारण मानवत्व, इन सभी बातों के प्रति निरपेक्ष होता जा रहा था। इन्हीं सब मध्ययुगीन प्रवृत्तियों को देखते हुए कहा जा सकता है कि कभी हिन्दुओं ने समय की तिरस्कार किया था किन्तु आज समय इस जाति की उपेक्षा कर रहा है। तर्क-हीन परम्पराओं का बाह्य कलेवर इतना प्रबल हो चुका है कि हमारे चारों ओर का संसार हमें दम्भी और पाखण्डी तक मान बैठता है।

लेखक ने इन सब ह्रास के कारणों में जिस बात का मुख्यतया प्रतिपादन किया है वह है हमारी पावित्र्य की अतिरञ्जित कल्पना। 'हिन्दू धर्मशास्त्र तथा प्रायश्चित्त प्रकरण', 'पतित स्त्रियाँ और हिन्दू धर्मशास्त्र', 'धर्मभ्रष्ट' और 'कलिवर्ज्य-विचार' आदि परिच्छेदों में यह दिखाने का प्रयत्न किया है कि ये रूढ़ियाँ वास्तव में कितनी शास्त्र-सम्मत हैं। शास्त्रों में उचित प्रायश्चित्त-विधान होने पर भी अपने जाति-बन्धुओं को 'दूर हट' की सङ्कीर्ण प्रवृत्ति के कारण किस प्रकार समाज से बहिष्कृत कर दिया गया, इसे समझाना व्यर्थ है। ये ही लोग बहिष्कृत होकर चाहे अन्य धर्मावलम्बियों द्वारा अच्छे प्रकार अपना लिए गए हों। इस प्रकार अपमानित हुए व्यक्तियों में प्रतिशोध की मात्रा कम नहीं होती। फल यह हुआ कि वे ही बन्धु-बान्धव हमारा अस्तित्व नष्ट करने में कटि-बद्ध हो गए। 'काला पहाड़' हमारे इतिहास का—हमारी संस्कृति का—कलङ्क है। अपने आहत अङ्ग का सुचारु उपचार करने की अपेक्षा हमने उसे काट फेंकने में ही अपना हित समझा। धर्म के मूल सिद्धान्तों को न समझ-कर बाह्य आचार-विचारों पर अपने को सीमित कर हमने अपनी एकाङ्गिता का नगण्य प्रदर्शन किया।

"व्यक्तिगत भावनाओं का रूप भी सम्मिश्र तथा स्थल-काल-सापेक्ष होता है। समय और स्थान के कारण उसका भिन्न-भिन्न रूप दीख पड़ता है। ठीक इसी तरह हिन्दुओं में पाए जानेवाले विभिन्न दोषों की जड़ वास्तव में पवित्रता की अतिरिक्तता की भावना और आक्रमकों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की प्रसरणशीलता की भावना ही है। समय और स्थान के कारण उनका रूप भिन्न हो जाता है।"

लेखक ने इस बात की ओर सङ्केत किया है कि यह पाविन्द्य-कल्पना, जो अपने विकृत रूप में छूआछूत आदि विभिन्न सामाजिक अधःपतनों की कारण बनी, वास्तव में रामचन्द्रजी के समय से ही अङ्कुरित होने लगी थी। सीता-त्याग की घटनाओं को विश्लेषण-पूर्वक देखकर लेखक इसी उपर्युक्त निष्कर्ष पर आता है। अग्नि-परीक्षा में खरी उतरकर अपने को पति-प्राणा सिद्ध करने-वाली सीता के प्रति अविश्वास को हम भले ही विभिन्न पौराणिक कल्पनाओं में आवृत कर उसकी महिमा प्रदर्शित करें परन्तु उस समय की सन्देह-शील प्रवृत्ति का विषादमय चित्र हमारे अन्तस्तल पर खिंच ही जाता है। रामचन्द्र-जी से उपेक्षामय भाव पाने पर अपने सतीत्व के सम्बन्ध में वैदेही की यह उक्ति कितनी करुणार्द्र है—

मदधीनं तु यत्तन्मे हृदयं त्वयि वर्तते।
पराधीनेषु गात्रेषु किं करिष्याम्यनीश्वरी॥

"मेरा मन तो आपके हृदय में ही रहा। अब मेरा शरीर जब मेरे अधीन न रहा, बन्धन में पड़ा, तो मैं लाचार क्या कर सकती थी!" यद्यपि रामचन्द्रजी को सीता से प्रगाढ़ प्रेम था, व्यक्तिगत रूप से उन्हें कोई सन्देह न था परन्तु युग-प्रवाह ने उन्हें सीता-निर्वासन के लिए विवश कर दिया।

उपायों के प्रकरण में लेखक ने यद्यपि कुछ योजनाएँ रखने का प्रयास किया है किन्तु वह इस कार्य में अधिक सफल न हुआ। शास्त्रीय दृष्टिकोण से भ्रान्ति-निवारण का जहाँ तक प्रश्न है, लेखक का परिश्रम उपेक्षणीय नहीं है, किन्तु जहाँ वह नवीन कार्यक्रम के सम्बन्ध में कुछ कहना चाहता है वहाँ रचनात्मक दृष्टिकोण का अभाव है। वह एक अनुभव की बात है कि हिन्दू जनता में मानवता, समाजहित आदि की महत्ता केवल तर्क से उतनी मान्य नहीं होती जितनी कि शास्त्रीय नियमों की दोष-रहित विवेचना से।

"आम जनता बुद्धिवादी—बुद्धि से हर काम का मर्म समझनेवाली—नहीं होती। जनता को तर्क से एक-आध दोष जँचा दिया जाए तो वह मान जाती है, किन्तु उस दोष को दूर करने का उपाय तर्क से उसके गले के नीचे नहीं उतार सकते।" पुस्तक का विशेष मन्तव्य शास्त्रीय सिद्धान्तों द्वारा सामाजिक कुरीतियों का निरसन करना ज्ञात होता है। इस दृष्टि से निस्सन्देह यह पुस्तक महत्त्वपूर्ण कही जा सकती है।

प्रूफ और भाषा-सम्बन्धी बहुत-सी अशुद्धियाँ यत्र-तत्र मिलती हैं। अच्छा होता यदि लेखक हिन्दी के विद्वानों से इन दोषों का परिहार करा लेता।

२—प्लेटफार्म—लेखक, नरेन्द्रनारायण लाल; प्रकाशक, बिहार पब्लिशर्स लि०, कदमकुआँ, पटना; पृष्ठ-संख्या २८; मूल्य सात आने।

प्रस्तुत पुस्तक पन्द्रह गद्य-गीतों का एक छोटा-सा सङ्कलन है। कुछ गीतों के शीर्षक हैं 'प्लेटफार्म', 'मेरे निर्मम', 'भिखारी' इत्यादि जिनसे प्रकट है कि लेखक ने अपने गीतों में विभिन्न भावनाओं का पुट देना चाहा है। पुस्तक कैसी बन पड़ी है इस सम्बन्ध में इतना ही कहा जा सकता है कि भाषा में परिमार्जन एवं भावों में प्रौढ़ता की अपेक्षा है।

३—खाद्य और स्वास्थ्य—लेखक, डा० ओङ्कार-नाथ परती एम० एस-सी०, डी० फिल०, इलाहाबाद यूनीवर्सिटी; प्रकाशक, विज्ञान-परिषद् प्रयाग; पृष्ठ-संख्या ६३।

खाद्य हमारे जीवन का कितना आवश्यक अङ्ग है तथा स्वास्थ्य से उसका क्या सम्बन्ध है, प्रत्येक मनुष्य समझता और अनुभव करता है। हमारे भोज्य पदार्थों में किस-किस प्रकार के तत्त्वों का अस्तित्व है, एवं हमारे आहार में इन तत्त्वों का योग कितनी मात्रा में आवश्यक है, इन्हीं सब बातों का विचार यहाँ संक्षेप में किया गया है। विषय की प्रारम्भिक जानकारी के लिए पुस्तिका बहुत उपयोगी है।

४—खैयाम की मधुशाला—अनुवादक, श्री बच्चन (तीसरा संस्करण); प्रकाशक तथा विक्रेता, भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद। मूल्य दो रुपये।

इस तीसरे संस्करण की विशेषता यह है कि इसमें फिट्ज़जरेल्ड-कृत अँगरेजी रूपान्तर तो है ही, साथ है छप्पन पृष्ठों की एक विस्तृत भूमिका और अन्त में टिप्पणी भी, जिससे पुस्तक विशेष पठनीय बन गई है।

स्थूल रूप से देखें तो मानव-चिन्तना की दो दिशाएँ हैं—विराग और राग। व्यवहार-पक्ष में हम इन्हें प्रति-क्रिया और क्रिया कह सकते हैं। ये दोनों प्रवृत्तियाँ साधारण मानवी प्रकृति से सर्वथा अविच्छेद्य हैं। खैयाम में ये दोनों पक्ष हैं। पहला वह—जब मनुष्य जगत् की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नश्वरता, उसके वाद-विवाद अथच उसकी तर्क प्रणाली से घबराकर वैराग्य की ओर झुकता है। दूसरा पक्ष है—कुछ पाने की चेष्टा करना अथवा राग। यह राग भी द्विविध हो सकता है—एक स्थूल से सूक्ष्म की ओर और दूसरा स्थूल से स्थूल की ओर। इन दो प्रकारों को अलौकिक और लौकिक राग भी कहा जा सकता है। हाँ, तो खैयाम में लौकिक राग या स्थूल से स्थूल की ओर बढ़ने की प्रेरणा अधिक है। जिस स्थूल से वैराग्य उठा वहीं लीन भी हो गया। उसमें यह विश्वास घर कर लेता है—

मृत्तिका की प्याली की ओर
झुका तब तज सब वाद-विवाद,
कि खोले जीवन का कुछ भेद
कहीं इसका ही मादक स्वाद;
होठ से होठ लगा यह बोल
उठी, "जब तक जी, कर मधुपान;
कौन आया फिर जग में लौट
किया जिसने जग से प्रस्थान?"

और तब वह प्रयत्न करता है वर्तमान को अधिक से अधिक आनन्दपूर्ण बनाने का। इस आनन्द के दो मुख्य उपादान हैं—मदिरा और मदिराक्षी। ये उसकी विचार-धारा के दो सारभूत निर्णय हैं। यहीं से आरम्भ होता है खैयाम का विविक्त आदर्श।

मदिरा और मदिराक्षी के प्रति अन्तिम निष्ठा यही सूचित करती है कि कवि का दर्शन अपने को भूलने की चेष्टा में अधिक रत है; वास्तव में अपने में कुछ पाने की शक्ति कम रखता है। अतः कहा जा सकता है कि इस काव्य से जीवन में घड़ी दो घड़ी की मस्ती भले ही ले ली जाय इसे लक्ष्य नहीं बनाया जा सकता। इसमें पुरोगामी वृत्तियों का सर्वथा अभाव है। यह वह सङ्गीत है जिसमें स्वस्थ अनुभूतियों की प्रेरणा कम और ऐकान्तिकता अधिक है।

इतना सब होने पर भी इन रुबाइयों में जो आकर्षण है उसके प्रति सन्देह नहीं किया जा सकता। करुणा की आर्द्रता और शृङ्गार की मादकता ऐसी घुल-मिल गई हैं कि काव्य में एक अलौकिक सजीवता उत्पन्न हो जाती है जो हमें बरबस आनन्द-विभोर करने में क्षम है—चाहे हमारे सिद्धान्तों की अनुरूपता हो या प्रतिकूलता। कदाचित् ही कोई ऐसी समृद्ध भाषा हो जिसने खैयाम की मस्ती उधार न ली हो।

जहाँ तक अनुवाद का सम्बन्ध है, श्री बच्चन की सफलता असन्दिग्ध है। इसका एक प्रधान कारण स्वयं उनकी भावनाओं का इस रङ्ग में रँगा होना है। यद्यपि छन्द बदला गया है, परन्तु इससे मूल भावनाओं को प्रतिध्वनित करने में सहायता ही मिली है।

पुस्तक कागज आदि की दृष्टि से भी आकर्षक है।

—पूर्ण गिर गोस्वामी

५—**आजादहिन्द का तिरङ्गा झण्डा**—रचयिता, श्रीयुत विराज; प्रकाशक, सत्यभूषण 'योगी', साहित्यभवन, अस्पताल रोड, लाहौर; वितरक, पुस्तक-संसार, अस्पताल रोड, लाहौर, पृष्ठ-संख्या ७९; सजिल्द पुस्तिका का मूल्य १।)।

विराज जी के इस पुस्तिका-रूप प्रयत्न में तीन एकाङ्की संगृहीत हैं। आमुख का संक्षिप्त परिचय श्री हरिकृष्ण प्रेमी ने लिखा है। श्रीयुत विराज का राष्ट्रीय साहित्य-निर्माण का यह लघु एवं आरम्भिक प्रयत्न स्तुत्य है। स्वदेश की प्रकृति से लेखक का साक्षात् एवं निकट का परिचय जान पड़ता है। तीनों ही एकाङ्की 'तिरङ्गा झण्डा', 'सीमान्त का सन्तरी' एवं 'ध्वजपोत' इस प्रकृति-परिचय के साक्षी हैं। प्रथम एकाङ्की 'तिरङ्गा झण्डा' में लेखक ने भौगोलिक सङ्केतों में ही भारत राष्ट्र को सम्पूर्ण प्राकृतिक वैभव के सहित मूर्त्त किया है। लेखक का स्वदेश से परिचय मौखिक नहीं और यही राष्ट्रीयता की पहली माँग है। साथ ही तिरङ्गे के विविध रङ्गों की जैसी व्याख्या हुई है वह राष्ट्र-पताका के गौरव को ही प्रमाणित करती है। किन्तु इस एकाङ्की को नाटकीय महत्त्व नहीं दिया जा सकता। संवाद-शैली से ही कुछ कह भर दिए जाने को नाटक-तत्त्वोपेत कैसे मान लें। लेखक नाटककार से अधिक व्याख्याता के रूप में हमारे सम्मुख उपस्थित हुआ है। अतएव शास्त्रीय समीक्षा की दृष्टि इसमें न तो पाश्चात्य काव्यकला के प्राण व्यापार और सङ्घर्ष के तत्त्व को खोज पाती है और न भारतीय रस-तत्त्व को ही। शेष दोनों एकाङ्की इस दृष्टि से अधिक सफल हुए हैं। स्वतन्त्र भारत राष्ट्र की भूमिका में जो बलिदान की मधुर कल्पना नाटकीय आधार पर इनमें की गई है वह स्पृहणीय है। और सीमान्त का सन्तरी, उस राष्ट्र-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेवक का बलिदान अनुकरणीय है। राष्ट्र के सच्चे सैनिकों की कर्त्तव्य-निष्ठा का वह सजीव उदाहरण है। उसने राष्ट्र-ध्वज को झुकने न दिया, अतएव अन्त में वह उसके सम्मान में स्वयं झुका। सम्राट् समुद्र गुप्त आदि के अतीत काल का स्मृत्याभास इस दृष्टि से बहुत ही उपयुक्त हुआ है। रङ्गमञ्च की लघुता और साधनों की सीमा का ध्यान रखते हुए सूक्ष्म दृश्य का विधान प्रशंसित ही होगा। अन्तिम एकाङ्की 'ध्वजपोत' का अभिनय चित्रपट की सहायता से अधिक सुगम और मनोरञ्जक होगा। इस एकाङ्की में प्रणीत घटनाएँ रङ्गमञ्च पर प्रायः सम्भव नहीं, अतएव लेखक समस्त कार्यों की संवादों के माध्यम से विवृति करता चलता है। वह 'दूरबीन'-जैसे आधुनिक यन्त्र का भी प्रयोग करता है, किन्तु यह भी नाटक में गृहीत सूच्य दृश्य को भ्रम नहीं सिद्ध कर सकता। इन एकाङ्कियों में नाटकीय कौशल का अभाव है तो इसी से कि लेखक नाटकीय एवं रङ्गमञ्च की सुविधा से युक्त कथावस्तु का ग्रहण न कर सका। तथापि अभिनेय नहीं तो पाठ्य नाटकों का सम्पूर्ण गौरव तो इन कृतियों को प्राप्त ही है। आशा है, भविष्य में लेखक इसी वर्ग की श्रेष्ठ रचनाएँ प्रस्तुत करता हुआ रङ्गमञ्च की सीमाओं में सूच्य दृश्यों का समुचित उपयोग करते हुए भी कार्य की नाटकीय महिमा को विस्मृत न करेगा, क्योंकि सूच्य दृश्य कल्पना में सब कुछ रखते हुए भी शुद्ध संवाद ही होते हैं, जो कार्य का सम्पादन न करके उसका आभास मात्र दिला पाते हैं और कभी-कभी उपयुक्त संयोग भी उपस्थित कर जाते हैं।

६—**तथागत**—सम्पादक, श्री पूर्ण गिरि गोस्वामी 'नीरव'; प्रकाशक, श्री उमापतिराय चन्देल, साधना-परिषद् काशी; पृष्ठ-संख्या ५१; सजिल्द का मूल्य १।)।

सुन्दर छपाई और गेट-अप में प्रस्तुत इस कविता-संग्रह में परिषद् की ओर से लिखा सम्पादकीय तथा गद्य-काव्य की रीति-व्यक्त संक्षिप्त आलोचनात्मक कवि-परिचय भी विचारणीय हैं। सम्पादकीय में जो कला और विज्ञान-छायावाद तथा प्रगतिवाद पर विचार विनीत हुए हैं वे ठीक वैसे ही स्वीकार नहीं कर लिए जा सकते। जहाँ सम्पादक छायावाद को 'शाश्वतता' का भ्रम माने बैठा है, वहाँ 'सामयिक' प्रगतिवाद, जो 'पृथ्वी के कठोर धरातल को अपना चरम आदर्श माने है', उसके द्वारा पूर्ण न्याय नहीं प्राप्त कर पाता। साथ ही काव्यात्मकता और कलात्मकता के प्रति सङ्कर दृष्टि भी पाठक की विशेष सतर्कता की अपेक्षा रखती है।

इस संग्रह के अधिकांश कवि 'असीम सत्ता के प्रति आकर्षण', अज्ञात के प्रति मूक प्रश्न, 'अव्यक्त के प्रति भावनाओं का केन्द्रीकरण', 'अटूट आशा का सम्बल' और 'अनन्त जिज्ञासा' लेकर चले हैं। अद्वैतवादी तो वे जन्मना प्रतीत होते हैं। काव्य जो अपनी प्रेषणीयता में द्वैत की मर्यादा का निर्वाह करने को विवश है, इसके साथ यह अद्वैतवादी मजाक कहाँ तक सङ्गत है, समझ में नहीं आता। 'जीवन के शाश्वत सिद्धान्त' प्रकट करने-वाले 'चिरन्तन सत्य की अभिव्यक्ति' में व्यस्त तथा 'जिज्ञासा की उपत्यका पर चढ़कर विश्व को परखना' चाहनेवाले क्रान्तदर्शी कवियों की रचनाएँ भी प्रस्तुत संग्रह में संगृहीत हैं। यह जिज्ञासा की अथवा किसी भी उपत्यका पर चढ़ना हमें उतना ही असम्भव जान पड़ता है जितना कि कवि और कविता को दार्शनिक एवं सिद्धान्तों का प्रतिस्थापक मानते हुए किसी भी ऐसे काव्य पर शाश्वतता का आरोप करना। काव्य की सरल रसभूमि में दर्शन की आपत्तियाँ एवं सिद्धान्तों की उपपत्तियाँ आज के अज्ञात प्रेमी सुकुमार कवि के लिए ही कुछ सुलभ होकर आई हैं, इसका एक प्रमाण यह संग्रह भी है। फलतः हमारे ये कवि भी सूर-तुलसी न बनकर अटपटी वाणी के उच्चारण के द्वारा कबीर बनते जान पड़ते हैं। जहाँ रहस्यवादी रवीन्द्र का स्मरण दिलाया जाता है वहाँ हमें उनकी अपने को श्लाघा देने की प्रवृत्ति उच्छृङ्खल रूप से व्यक्त हुई जान पड़ती है। अतएव कह सकते हैं कि हमारा यह कवि अस्पष्ट वाणी-नियोग करता हुआ आत्मव्यामोह में पड़ा, भ्रम को रहस्य मान तत्त्व के निकट पहुँचने की अपेक्षा काव्य की रस-मर्यादा से भी दूर होता जा रहा है।

इस संग्रह के दार्शनिक कवि भी हमारी इन शिकायतों का समाधान कर हमें अपना कायल नहीं बना पाते। जहाँ शब्दाडम्बर को त्याग, रहस्यवादी बनने का मोह छोड़, उन्होंने जीवन की सच्ची अनुभूतियों को व्यक्त किया है वहाँ अवश्य ही इस संग्रह के नवोदित कलाकार प्रौढ़ काव्य-सृष्टि करते जान पड़ते हैं। साथ ही स्थूल एवं व्यक्त जीवन को लेकर लिखी गई कुछ कविताएँ भी इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संग्रह में हैं जिनमें हम मानते हैं कि कवि बोल रहा है, और उन्हीं में पाठक का हृदय भी रमता जान पड़ता है। यह रमणीयता काव्य की रसमयता के लिए अनिवार्य है, अतएव यह भी सत्य है कि प्रस्तुत संग्रह में कुछ उत्कृष्ट एवं रसबोध कराने में क्षम कविताएँ भी गृहीत हैं। जिस कविता में कथा-तत्त्व अपेक्षित मात्रा में आ पाया है वह प्रभावोत्पादकता में अधिक श्रेष्ठ बन पड़ी है। साथ ही प्रकृति-विलास से अनुप्राणित कुछ प्रगीत कोटि की रचनाएँ भी इस संग्रह की श्रेष्ठता प्रमाणित करती हैं। इतना ही नहीं, सामयिक जीवन की अति निकट से परिचिति करानेवाली कविता भी इस संग्रह से छूट नहीं पाई है। अतएव हम कहेंगे कि साहित्य-समाज में यह लघु संग्रह समादृत एवं पुरस्कृत होकर रहेगा। 'तथागत' नाम की सार्थकता का 'निर्वाण-गीत' को छोड़कर अन्य कोई कविता पुष्ट प्रमाण नहीं कही जा सकेगी। हाँ, इस नाम में भी कोई रहस्य हो तो बात दूसरी।

अन्त में इस संग्रह के कलाकारों के अकृत्रिम काव्याराधन की प्रशंसा एवं तन्मयता की प्रतिष्ठा करते हुए आग्रह करेंगे कि वे रहस्य-भावना को कुछ कम किन्तु शब्द की यथार्थ शक्ति को अधिक महत्त्व दें। इस आधार पर उनके उज्ज्वल भविष्य का विश्वास दिलाया जा सकता है। स्थान-सङ्कोच से क्विश होकर कुछ अपनी अति प्रिय तथा उत्कृष्ट पदावलियों को हम उद्धृत न कर सके। इसके लिए पाठक से क्षमा-याचना करते हुए एक बार इस संग्रह को अवश्य ही देख जाने का अनुरोध करते हैं।

७—**क्रान्तिदीप**—रचयिता, कमल साहित्यालङ्कार; प्रकाशक, श्री सी० डी० ढोंडी एण्ड सन्स, अध्यक्ष सि० मि० प्रेस, क्वेटा; पृष्ठ-संख्या ४४; मूल्य लिखा नहीं।

'क्रान्तिदीप' कमलजी की स्फुट कविताओं का लघु संग्रह है। गेट-अप साधारण है तथा पुस्तक की छपाई की उत्तमता की ओर भी ध्यान नहीं दिया जान पड़ता। वैसे पुस्तक सामान्यतः अच्छी है। कमलजी की अपनी विशेषता है कि आप बहुत ही परिष्कृत रुचि के कवि हैं तथा प्रस्तुत संग्रह में भी हिन्दी के अन्य तरुण गायकों के समान असंयमित नहीं होते पाए जाते। इस संग्रह की अधिकांश कविताएँ स्वदेश के प्रति अनुराग भाव व्यक्त करती हैं। आपने जहाँ वेदना का अनुभव किया है वह भी स्वदेश के निमित्त ही, अतएव आपकी प्रेम-पीड़ा भी अनुकरणीय है।

किन्तु अभी तक आपके क्रान्ति-गीतों का स्वर प्रखर नहीं हो पाया। प्रहार कर अथवा झँझोड़कर जगा देने की शक्ति उनमें नहीं। अच्छा हो यदि कमलजी की वाणी में कुछ कटुता भर उठे, वैसी ही कटुता जैसी कि किसी सर्जन के लिए आवश्यक होती है। फिर भी आपमें निश्चय की दृढ़ता है—

लक्ष्य पर मैं अग्रसर हूँ, धीर हूँ मैं वीरवर हूँ।]
तीव्रतर हूँ, तम निडर हूँ अग्नि हूँ मैं रवि प्रखर हूँ

और इसी आधार पर आपके और भी उज्ज्वल भविष्य की हमें आशा है।

—भिक्खु

८—**पाञ्चजन्य**—रचयिता, श्री आरसीप्रसाद सिंह; प्रकाशक, तारामण्डल, मुजफ्फरपुर; पृष्ठ-संख्या ९६ डिमाई अठपेजी; मूल्य दो रुपए।

'नई दिशा' में जहाँ कवि आरसी की नवीन मार्ग के अनुसन्धान की एक स्पष्ट छटपटाहट अङ्कित है, वहाँ 'पाञ्चजन्य' की कविताओं से प्रतीत होता है, मानों कवि आत्मानुभव के शिखर पर जा पहुँचा है। दोनों कविता-पुस्तकों के रचना-काल में भले ही समय की निकटता हो; किन्तु विचारधारा दोनों की एक दूसरे से बहुत दूर-दूर है।

जो लोग 'कला कला के लिए' का सिद्धान्त मानते हैं, उन्हें 'पाञ्चजन्य' की कविताएँ आत्म-विभोर न कर सकेंगी; लेकिन जो लोग कला को मानव-कल्याण का साधन समझते हैं, उन्हें 'पाञ्चजन्य' में अभिव्यक्त विचार-धारा में एक ऐसा सन्देश मिलेगा जो आत्म-सन्तोष तो प्रदान करेगा ही, साथ ही कवि की इस बात का भी समर्थन कराएगा कि—

मेघ का गर्जन, प्रपातों का अजस्र निनाद,
कोकिला की कूक, वीणा का मधुर संवाद।
एक ही वह शब्द अव्यय, एक ही उल्लास,
व्याप्त है जिससे जगत, पाताल से आकाश।

९—**अरुणिमा**—रचयिता, श्री प्रभुदयाल अग्निहोत्री; प्रकाशक, मारवाड़ी सेवा-सदन, अकोला (बरार); पृष्ठ-संख्या १७०; सजिल्द प्रति का मूल्य २॥)।

सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सङ्घर्षों के बीच से गुजरती दुनिया आज जिस निराशा, अन्धकार और

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्पीड़न के तीखे घूँट पी रही है, उससे 'अरुणिमा' का कवि अछूता नहीं रह सका है; लेकिन उसकी अनुभूतियों में घुटने टेक देने की कायरता नहीं है; प्रत्युत एक ऐसा अदम्य उत्साह और पुरुषार्थ है, जो राष्ट्रीयता का बाना लेकर अन्धकार को चीर देनेवाली 'अरुणिमा' का दर्शन करना चाहता है :—

हम रवि-पथ पर चढ़
जीवन का सन्देश सुनाने आए हैं,
हम प्राण चढ़ाने आए हैं।
... ...
प्राची आज शपथ दिनकर की
तुझे रात भर खुलकर रोना।
देख न वीरों की समाधि का
रहे कहीं पर सूखा कोना।

'अरुणिमा' की ५० कविताएँ कवि की किसी एक निश्चित विचार-धारा की सूचक न होकर, उसकी विभिन्न अनुभूतियों की द्योतक हैं—उस प्रभात की वेगवती जलधारा की तरह जिसमें प्रबलता है, तीव्रता है, चञ्चलता है; किन्तु गिरने के पूर्व—लक्ष्य-बिन्दु तक पहुँचने के पूर्व वह अपने अनियन्त्रित वेग को सँभाल नहीं पाता और अनेक रूपों में छिन्न-भिन्न होकर उसके जल-बिन्दु सतरङ्गी इन्द्रधनुष का दृश्य उपस्थित कर देते हैं। इन्द्र धनुष के रङ्गों की सुन्दरता जितनी आकर्षक होती है, 'अरुणिमा' का रङ्ग भी उतना ही सुन्दर कहा जा सकता है; किन्तु उसकी पृष्ठभूमि पर जिन जल-बिन्दुओं का अस्तित्व रहता है और उनकी स्थिरता जिस प्रकार डावाँडोल रहती है, वही स्थिति 'अरुणिमा' के गायक की है। वह जहाँ राष्ट्रीयता की वंशी बजाता है, वहाँ प्रेम के भी राग अलापता है। एक ओर जहाँ उसका पुरुषार्थ हिलोरें ले रहा है, वहीं एक निराशा भी उसके हृदय को डावाँडोल करती प्रतीत हो रही है। लेकिन इस भावातिरेक को हम कवि के उज्ज्वल भविष्य का एक शुभ चिह्न ही कहेंगे। इसी भावातिरेक से 'अरुणिमा' का कवि, रवि-पथ पर चढ़कर जीवन का वास्तविक सन्देश सुनाने की क्षमता प्राप्त कर सकेगा और उसकी अभिव्यक्ति में एक नियन्त्रित गति परिलक्षित हो सकेगी। तब उसकी भाव-धारा के जल-बिन्दु तीव्रता से दूर हटकर, एक ही धारा में सिमटते-विहँसते आगे बढ़ेंगे और मानव की युग-युग की प्यास बुझा सकेंगे।

प्रूफ की अशुद्धियाँ पुस्तक में जहाँ-तहाँ रह गई हैं। पृष्ठ ९८ के बाद चार पृष्ठ हमारी समालोच्य प्रति में एकदम नदारद हैं। अन्य प्रतियों में भी यदि यही बात है, तो पाठकों के लिए यह काफी झुँझलाहट की बात सिद्ध होगी।

१०—अभ्युदय (पाँचवाँ सुभाष अङ्क)—सम्पादक, पण्डित रामभरोस मालवीय; प्रकाशक, अभ्युदय प्रेस, प्रयाग; पृष्ठ-संख्या १५०; मूल्य ३)।

सहयोगी 'अभ्युदय' ने इधर नेताजी श्री सुभाषचन्द्र बोस के सम्बन्ध में ज्ञातव्य बातों से परिपूर्ण पाँच विशेषाङ्क प्रकाशित किए हैं। प्रस्तुत अङ्क भी अनेक ज्ञातव्य बातों एवं चित्रों से सुसज्जित है। सुभाष बाबू के भारत से बाहर जाने की पूरी कथा और सुभाष बाबू के अन्तिम दिन आदि लेख पठनीय हैं। कविताओं का चुनाव लेखों की तरह सुन्दर नहीं बन पड़ा है। फिर भी सब मिलकार अङ्क संग्रहणीय कहा जा सकता है। तीन रुपये मूल्य बहुत अधिक है।

—देवीदयाल चतुर्वेदी 'मस्त'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महात्मा गांधी और रोमन लिपि

गत सप्ताह के 'हरिजन' में रोमन लिपि के सम्बन्ध में महात्मा गांधी और श्री अय्यर के बीच होनेवाला एक मनोरञ्जक वार्त्तालाप प्रकाशित हुआ है। श्री अय्यर आजाद हिन्द फौज के एक सदस्य हैं और वे आजाद हिन्द फौज के सदस्यों के लिए एक 'न्यूज बुलेटिन' रोमन लिपि में प्रकाशित करना चाहते थे और इसी सिलसिले में परामर्श करने के लिए गांधी जी के पास गए थे।

प्रारम्भ में श्री० अय्यर ने कहा—कमेटी को रोमन लिपि का कोई खास मोह नहीं है। सिर्फ अपना काम चलाने के एक उपाय के रूप में उसने रोमन का इस्तेमाल करना तय किया है। अगर बुलेटिन रोमन लिपि में न छपाएँ, तो नागरी, उर्दू और तामिल तीन अलग-अलग लिपियों में उसे छपाना पड़ जाए और खर्च का कोई पार न रहे। इसके सिवा, उन्होंने यह भी कहा कि 'यह कोई नई बात नहीं है। जो तरीका चला आ रहा है, हम उसी का अनुसरण करते हैं। आजाद हिन्द फौजवाले जब हिन्दुस्तान की फौजों में थे, तभी से वे रोमन लिपि के आदी बन चुके थे। इसलिए जब उन्होंने दक्षिण पूरबी एशिया में अपना काम शुरू किया, तब भी वे उसी चीज को अपनाए रहे थे।'

गांधीजी—आज आप दक्षिण-पूरबी एशिया के मुल्कों में नहीं, बल्कि यहाँ हिन्दुस्तान में अपना काम कर रहे हैं, इस चीज को न भूलिए। मैं आपसे एक सवाल पूछता हूँ—'ये लोग अपने घरवालों को—औरतों और बच्चों को—तो खत लिखते ही होंगे। क्या वे सब खत रोमन लिपि में लिखे जाते हैं?'

श्री अय्यर—वाह! यह कैसे हो सकता है? खत तो सभी कोई नागरी या उर्दू या तामिल या हिन्दुस्तान की दूसरी किसी लिखावट में ही लिखते हैं।

गांधीजी—इसका मतलब यह हुआ कि सबको हिन्दुस्तान की एक न एक लिपि आती है। हमारे पास हमारी अपनी कोई लिपि न हो, और इस वजह से काम चलाने के लिए हम-आप रोमन लिपि का इस्तेमाल करने को तैयार हो जाएँ, तब तो बात समझ में आ सकती है। लेकिन हिन्दुस्तान की उर्दू और नागरी 'दो जानी-मानी लिखावटों के मौजूद होते हुए भी आप हिन्दुस्तानी के लिए रोमन लिपि का इस्तेमाल करने को तैयार हुए, इससे पता चलता है कि अँगरेजों ने हमारे दिल और दिमाग पर किस हद तक काबू जमा लिया है। अँगरेजों ने आपको जीता और उनको जीतने के लिए आपने उन्हीं की पोशाक पहनी, यानी दक्षिण-पूरबी एशिया में अपनी पत्रिका आपने रोमन लिपि में निकाली। अपनी तहजीबी यानी सांस्कृतिक गुलामी की इस निशानी को मिटाकर आपको अपनी पत्रिका रोमन के बदले हिन्दुस्तान की लिपियों में निकालने का आग्रह रखना चाहिए था। अँगरेजों को हम पर हुकूमत करनी थी। इसके लिए यह जरूरी था कि ब्रिटिश हाकिम और सिपाही हिन्दुस्तानी सीखें। दूसरा कोई चारा न था। इसलिए खासकर उनकी सहूलियत के खातिर हिन्दुस्तानी के लिए रोमन लिपि का उपयोग शुरू किया गया था। इस तरह एक तरफ उन्होंने खुद उर्दू लिपि के तरह-तरह के जुड़वाँ अक्षरों की दिक्कतों से छुटकारा पाया और दूसरी तरफ हमको अपने उन टाइपराइटरों, तार भेजने की मशीनों और छापे की कलों का शौक लगाया, जिनमें सिर्फ एक रोमन लिपि ही बरती जाती है और हम इसके शिकार बन गए। आज जब कि हम हिन्दुस्तान की सदियों पुरानी गुलामी को जड़-मूल से मिटाने के लिए छटपटा रहे हैं, हमें अपनी तहजीबी गुलामी की इस निशानी के रास्ते फिर लौटना न चाहिए। आप ब्रिटिश फौजों में इस खयाल से नौकरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

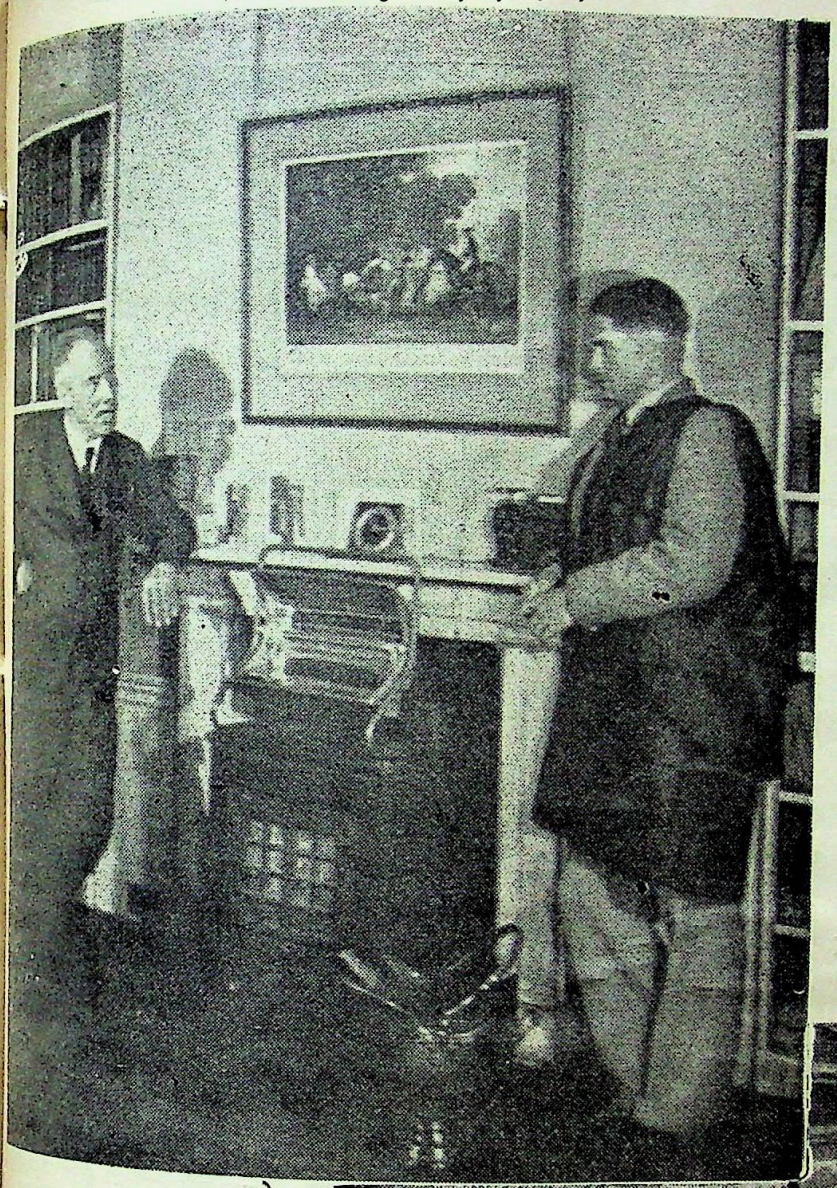

कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय का एक छात्र अपने अध्यापक के साथ

कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के प्रोफेसर क्लब में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

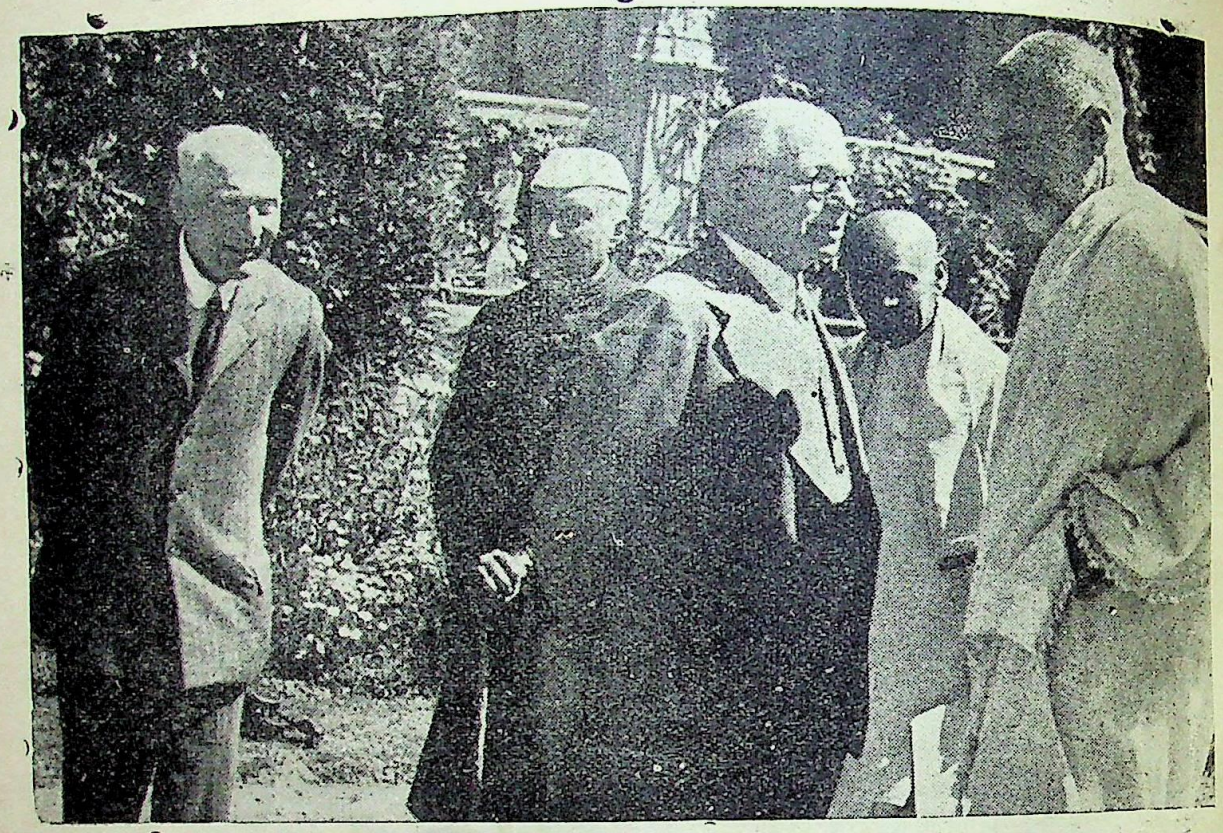

सीमान्त गांधी, पं० नेहरू और सरदार पटेल मन्त्रिमण्डल मिशन के दो सदस्यों से बातचीत कर रहे हैं।

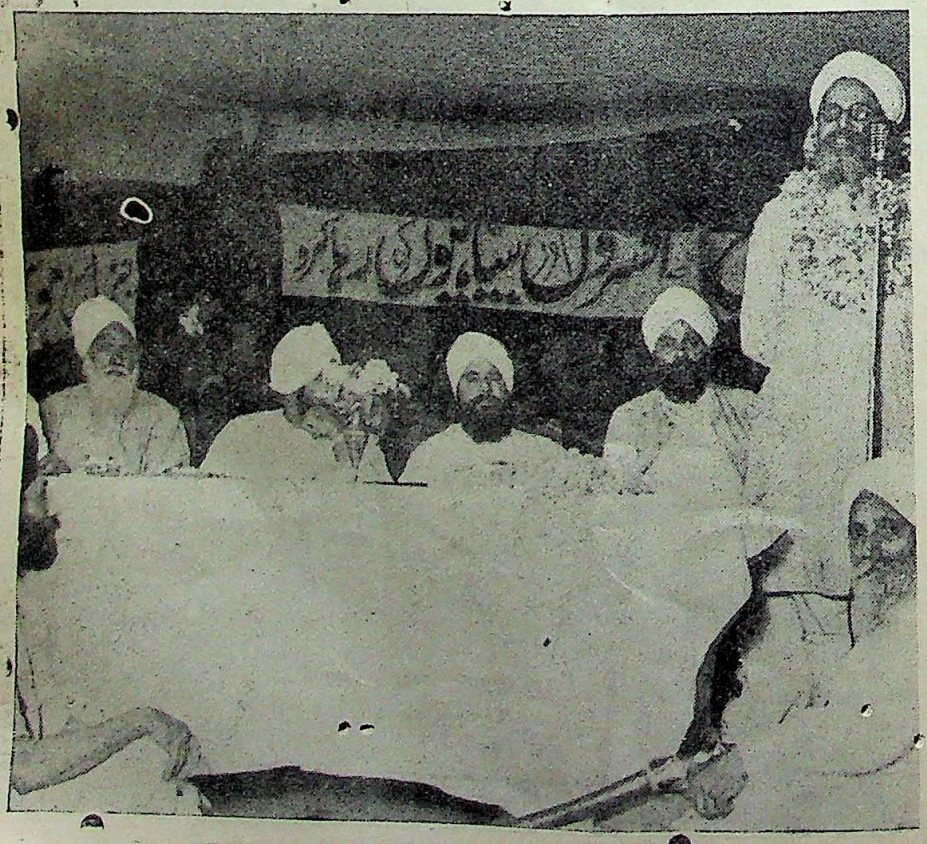

रावलपिण्डी में हुए अखिल सिख-दल-सम्मेलन में सरदार अमरसिंह भाषण कर रहे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करते थे कि वहाँ आपको तरह-तरह के तमगे और बिल्ले मिलेंगे, अच्छी-सी तनख्वाहें मिलेंगी, बड़ी-बड़ी पेंशनें मिलेंगी और जमीनें और जागीरें मिलेंगी। लेकिन आज आपको इन लालचों की जरूरत नहीं रही। आज तो आप सिर्फ इस खयाल से नौकरी करने निकले हैं कि आपको अपने देश की आजादी हासिल करनी है और उसकी इज्जत-आबरू बढ़ानी है। आप किसी आसान रास्ते की खोज में भी नहीं निकले हैं।

हिन्दुस्तान जल्दी ही आजाद होनेवाला है। यह न समझिए कि आजादी मिलने के बाद फौरन ही हिन्दुस्तान के लिए कोई लिपि या लिखावट तैयार हो जाएगी। जब आप और मैं ईमानदारी से और लगन से दोनों लिखावटों को सीखेंगे तभी उनमें से एक नई और सब के काम की लिखावट पैदा होगी। उससे पहले किसी हालत में नहीं। मुकम्मल आजादी की यह कम-से-कम कीमत है, जो हमें चुकानी होगी।

अपनी दलील को जोर देने के लिए गांधीजी ने दक्षिण अफ्रीका की मिसाल दी। वहाँवाले अपना सब काम-काज दो जबानों में चलाते हैं। सरकारी गजट दो जबानों में निकलता है। इसी तरह मदरसों में पढ़ाई जानेवाली पढ़ाई की किताबें भी दोनों जबानों में छपती हैं। और इन सबके बावजूद उनका राज दक्षिण अफ्रीका के टुकड़ों के नाम से नहीं, बल्कि 'यूनियन' के नाम से मशहूर है। अपने इस यूनियन की एकता को बनाए रखने के लिए उन्होंने हर एक सूबे की एक-एक के हिसाब से अपने यहाँ चार-चार राजधानियाँ रखी हैं। आजाद लोगों का और आजादी-पसन्द लोगों का यही रास्ता है।

——

दशांश मुद्रा-प्रणाली

केन्द्रीय धारा सभा ने दशांश मुद्रा-प्रणाली के मसविदे पर जनसाधारण की सम्मति जानने के लिए जनता में प्रचार करने का निश्चय किया है। इस पेचीदा आर्थिक प्रश्न पर कोई निर्णय देने के पहले जनता के लिए उसके विशेषताओं से परिचित हो जाना अत्यन्त आवश्यक है। इस सम्बन्ध का एक विवेचनात्मक लेख 'साप्ताहिक भारत' के गताङ्क में प्रकाशित हुआ है जिसका मुख्यांश इस प्रकार है—

दशांश पद्धति का रिवाज एक ऐसा रिवाज है, जो कभी रद नहीं हो सकता, और वह तब तक कायम रहनेवाला है जब तक दुनिया में मानव-जाति की हस्ती मौजूद रहेगी। इसलिए उसका जितना अच्छे-से-अच्छा उपयोग हो सके उतना किए बिना गति नहीं। दुगुनी, तिगुनी या चौगुनी, इस प्रकार गुणाकार से हासिल होने-वाली रकमों के बारे में तमाम दुनिया का यह खयाल मालूम पड़ा है कि पढ़े-लिखे और अनपढ़ सभी कोई दशांश पद्धति का ही इस्तेमाल करते हैं। मसलन्, बोलचाल में सब कोई १०, २० या १०० रुपये अथवा उतने ही मन या सेर या फुट या गज ही कहते हैं। लेकिन जब किसी भी एक एकाई वाली रकम के छोटे-छोटे हिस्से करने की बात आती है, तब चारों तरफ अन्धेर ही नजर आता है गोकि इस अन्धेर में भी एक अभावात्मक खासियत पाई जाती है, यानी शास्त्रीय मेट्रिक या दशांश पद्धति का पता चलने तक किसी भी इकाई के १० हिस्से करने की सर्व-सामान्य वृत्ति का अभाव पाया जाता है। जहाँ-जहाँ आधे या चौथाई हिस्से की तरफ के झुकाव का कोई सबूत नहीं मिलता, वहाँ भी अधिकतर तो तीसरे, छठे, बारहवें, अठाईसवें यानी १०वें को छोड़कर दूसरा कोई भी हिस्सा करने का झुकाव पाया जाता है। १०वाँ हिस्सा करने की बात कहीं पाई नहीं जाती यह सब होते हुए भी कि गणित शास्त्र की गिनतियों में दशमलव भिन्न का उपयोग आज सदियों से होता आ रहा है, कुछ ऐसा मालूम होता है कि आदमी की अनगढ़ बुद्धि एक के दसवें हिस्से का ठीक-ठीक आकलन करने में कभी समर्थ नहीं हुई।

इस बहस के सिलसिले में मुझे इस बात की याद दिलाई गई है कि दशमलव पद्धति का पता लगाने का गौरव हिन्दुस्तान के हिस्से आता है। लेकिन इसके साथ ही चौथाई या चतुर्थांश पद्धति को ढूँढ़ निकालने का गौरव भी हिन्दुस्तान के ही खाते लिखा जाना चाहिए। वजन और माप के कोष्ठकों की छोटी संख्याओं या छोटे हिस्सों का सूचन करने के बारे में चारों तरफ जो अन्धेर पाया जाता है उसमें किसी हद तक एकता या व्यवस्था कायम करने के लिए हिन्दुस्तान ने, जिस हद तक बन पड़ा है, चतुर्थांश पद्धति चलाई है। मसलन्, सिक्कों के सिलसिले में रुपए का जो सिक्का चलता है उसके एक के बाद एक छोटे हिस्सों का लेखा बताने के लिए चौथाई हिस्सेवाले सिक्के को चवन्नी, १६वें को एकन्नी और ६४वें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को पाव आने का नाम दिया गया है। इसी तरह वजन मापने में तोले के ३२ और सेर के १६ भाग किए गए हैं जो 'वाल' और छटाँक कहलाते हैं। एक ही तरह की छोटी इकाई को उसी तरह की बड़ी इकाई के साथ जोड़ने के लिए अक्सर चतुर्थांश और दशांश दोनों पद्धतियों का एक साथ इस्तेमाल किया जाता है। मसलन्, सेर के ८० तोले, मन के ४० सेर और खण्डी के २० मन वगैरह प्रमाण रक्खे गए हैं।

किसी चीज के एक के बाद एक आधे-आधे हिस्से बरते जाना साफ ही इतना आसान है कि उसका एक के बाद एक दसवाँ और दसवें का दसवाँ हिस्सा करने के मुकाबले आदमी की अक्ल को वह सहज ही सूझ जाता है। दशांश पद्धति के कानून का मसविदा बनानेवाले खुद ही अठन्नी और चवन्नी को भूले नहीं हैं। दशांश पद्धति का तर्क शुद्ध पूरा-पूरा अमल करने के लिए एक रुपये के दस दसैये (दसवें हिस्से के सिक्के) और हर एक दसैये के दस सेंट रखने की तजवीज पेश करनी चाहिए थी। 'हाफ रुपी' या 'आधा रुपया' नाम के बदले पाँच दसैया या ५० सेंट आने चाहिए थे और चवन्नी या पाव रुपए को बेमेल होने के कारण उखड़ जाना चाहिए था। लेकिन तजवीज यह है कि अठन्नी और चवन्नी को ज्यों का त्यों रखा जाए। इसलिए इस कानून को 'दशांश चलन-पद्धति कहा गया है। जो भी वस्तुतः कानूनी तजवीज की मंशा आखिर यही रह जाती है कि आज की तरह चवन्नी के चार आने और सोलह पैसे के छोटे सिक्के रखने के बदले उसके २५ बराबर भाग किए जाएँ। मसविदा तैयार करनेवाले तर्क शुद्धता की दृष्टि से अधूरे साबित हुए हैं इसमें उनका कोई अपराध नहीं है। क्योंकि उनकी योजना में तर्क-शुद्धता की दृष्टि से जो कमी पाई जाती है उसका मतलब सिर्फ इतना ही है कि तर्कशुद्ध सम्पूर्णता के लिए व्यवहार की सरलता और सहूलियत को छोड़ देने के लिए वे भी तैयार नहीं हैं।

इसी व्यावहारिक सरलता की दृष्टि को ध्यान में रखकर मैं यह आग्रह करता हूँ कि सेण्ट का सिक्का चलाने की तजवीज के बदले इसका कोई दूसरा बेहतर हल ढूँढ़ लिया जाए। इस बिल की अपनी टीका में मैं पहले यह साफ कर चुका हूँ कि दरमियानी वक्त में सेंट और आना—दोनों सिक्के एक साथ बरते जाएँगे। उस वक्त जिस आदमी को दाम चुकाते समय थोड़े सेंट और पुराने चलन के कुछ आने देने होंगे, उसको कुल मिलाकर ठीक कीमत से कुछ-न-कुछ ज्यादा ही देना पड़ जाएगा। इसके सिवा, मैं यह भी बता चुका हूँ कि आज तक फुटकर बिक्री की चीजों के दाम आनों में गिने जाते थे; जब वे सेंट में गिने जाने लगेंगे, तो अपने ही आप चीजें कुछ महँगी हुए बिना न रहेंगी। यहाँ मुझे एक और बात भी कह देनी है। देहात के उन अनपढ़ भाई-बहनों का खयाल कीजिए, जो अक्सर २० तक और शायद ही कभी १०० तक गिनना जानते हैं। वे ३५ सेंट, ४८ सेंट, ७२ सेंट वगैरह कीमतों के नाम सुनकर बड़ी उलझन में पड़ जाएँगे, जब कि करीब-करीब इन्हीं कीमतों को बतानेवाली ५।। आना, ७।।। आना और ११। आना जैसी रकमों को वे आसानी से समझ सकेंगे और पहचान सकेंगे। साथ ही, वे इन रकमों का जोड़ जबानी कर सकेंगे और झटपट यह समझ सकेंगे कि कुल कितने रुपए, आने और पैसे हुए; लेकिन सेंट का जोड़ वे बिना बाहरी मदद के कर नहीं सकेंगे और न झट इस बात को समझ पाएँगे कि उनके कितने रुपए और कितने सेंट हुए। यह सच है कि ज्यों-ज्यों तालीम फैलती जाएगी, त्यों-त्यों यह मुश्किल कम होती जाएगी। फिर भी जाहिर है कि यह कोई ऐसी न कुछ सी चीज नहीं कि इसकी इस वक्त अवगणना की जा सके।

Printed & Published by A. Bose, at the Indian Press, Ltd., Benares-Branch, Benares.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विवाहित स्त्री-पुरुषों के जानने योग्य

ऑपरेशन तथा इन्जेक्शन जरूरी नहीं है

अप्राकृतिक रहन-सहन तथा मिथ्या आहार-विहार के कारण हमारे देश की नारियाँ अधिकांश ऐसी मिलेंगी जो एक न एक रोग से ग्रस्त हो निराश जीवन व्यतीत कर रही हैं। अधिकतर गर्भाशय का मोटा हो जाना तथा उस पर चर्बी आ जाना एक आम रोग हो गया है जो गर्भ धारण करने में बाधक होता है तथा अन्य भयंकर रोगों की जिससे उत्पत्ति भी होती है। ऐसी अवस्था में प्रायः ऑपरेशन कराने से भी बहुत कम रोगियों को सफलता प्राप्त होती है।

यदि आपको ऑपरेशन कराने में असुविधा है या ऑपरेशन की अपेक्षा औषधियों द्वारा कष्ट दूर करने के अधिक पक्ष में हैं शास्त्रोक्त अंगूरों का ताजा रस, अशोक, अर्जुन, दशमूल, त्रिफला तथा अन्य श्रेष्ठ औषधियों से प्रस्तुत—मूँगा जिसका प्रधान अंग —१५ वर्षों से प्रचलित **गौड़ की नारी-सुधा कॉर्डियल** सेवन करें।

नारी-सुधा एक माहवारी से दूसरी माहवारी तक सेवन करने से बिना ऑपरेशन गर्भाशय की चर्बी, उसका मुटापा तथा ट बाँझपन नष्ट हो जाता है और सहज ही गर्भ की स्थिति हो जाती है। जहाँ इन्जेक्शन लिकोरिया (सफेदे का गिरना) रोकने में सफल होते हैं वहाँ कुछ ही खुराकों में यह सदैव के लिए ठीक हो जाता है। कमजोरी से गर्भाशय अपनी जगह से हट जाता है गर्भपात होते रहते हैं—एक बोतल के सेवन से युक्त स्थान दृढ़ हो जाता है, फिर गर्भपात कभी नहीं होते। मासिक धर्म महीने में दो बार या दो महीने में एक बार के बजाय ठीक समय पर हँसते-खेलते होने लगते हैं, जिससे हिस्टेरिया (बेहोशी) के होने बन्द हो जाते हैं। खूब भूख लगती है, खून एक बड़ी में बनने लगता है। दिल की धड़कन, कमर-टाँगों का ठहरा दर्द केवल चौथे दिन दूर हो जाते हैं। जापे का संकट सहन तथा बाद की कमजोरी शीघ्र दूर करने की यह विशेष औषधि है। **नारी-सुधा** की २६ खुराकों की एक बोतल का —पेकिंग, वी० पी० व्यय से पृथक्—तीन रु० पाँच आने है। आवश्यकता होने पर इस मासिक पत्रिका का हवाला देकर

कुमार कुमार एन्ड को०

पोस्ट बाक्स नं० ११९ देहली

बड़े २ शहरों में हम ऐजेन्सी स्थापन कर रहे हैं। नियमावली के लिए पत्र-व्यवहार करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

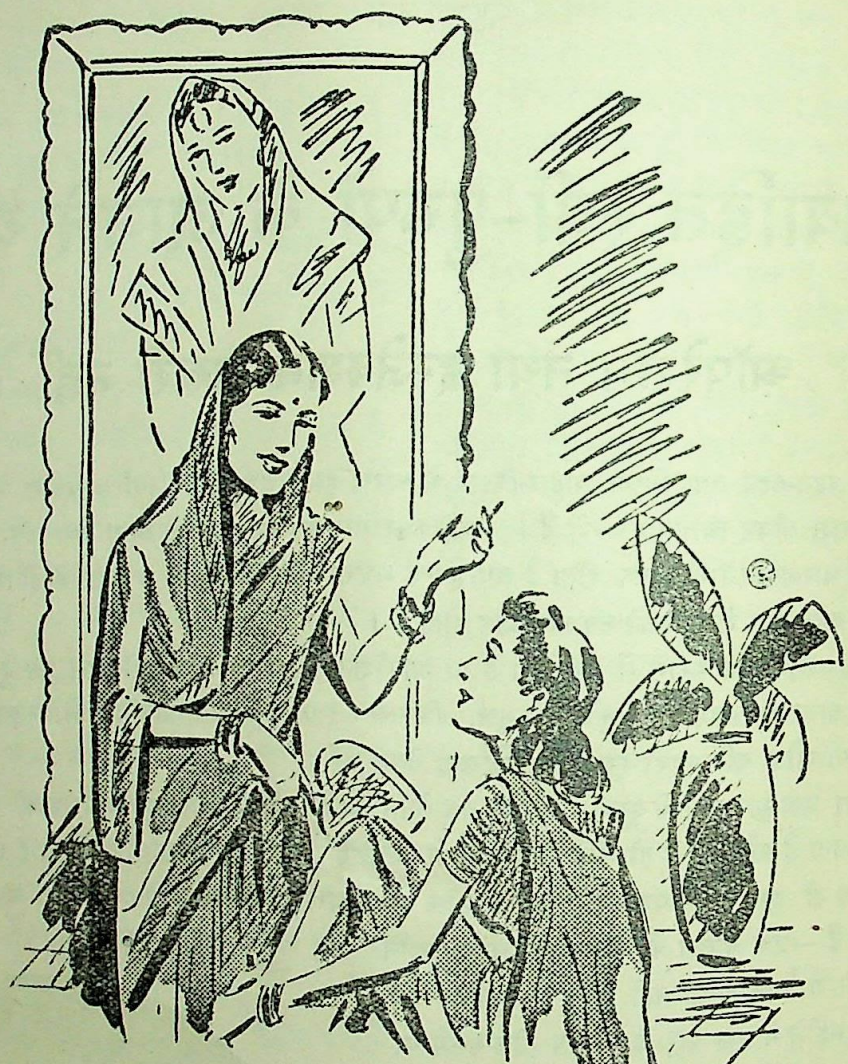

कुटुम्ब में
सौन्दर्य कायम रहे

माताजी कह रही हैं: "मेरी माँ इतनी ही सुन्दर थी जितनी इस तस्वीर में दिखाई देती है। परन्तु कोई भी तसवीर नहीं बता सकती उसकी त्वचा कितनी कोमल और सुन्दर थी।" माताजी ने अपनी त्वचा उनकी माँ के सदृश सुन्दर रखी। और चाहती हैं कि बेटी भी त्वचा के सौन्दर्य की उसी तरह रक्षा करे। उन्होंने लड़की को सौन्दर्य-रक्षा के कौटुम्बिक रहस्य को सावधानी से समझा दिया है जो है पिअर्स साबुन और स्वच्छ पानी का उपयोग। इस सबक के सहारे वे कई पीढ़ीयों तक कुटुम्ब में इस सौन्दर्य को कायम रख सकेंगी।

पिअर्स साबुन
सौन्दर्य का सेवक

A. & F. PEARS LTD. WORTH, ENGLAND

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महात्माजी का चमत्कार

प्रेमबटी ने अपनी खूबी से सारी दुनिया में तहलका मचा दिया

कांग्रेस की राय

(प्रेमबटी वास्तव में एक अद्वितीय औषधि है, पहले हमें इस औषधि पर इतना विश्वास न था, किन्तु जब हमने इसका परीक्षण किया तब हम इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि यह औषधि विज्ञापन में दिये गये तमाम रोगों की केवल एकमात्र अचूक औषधि है। हम आशा करते हैं कि भविष्य में यह कम्पनी इससे भी उत्तम औषधियों का निर्माण कर जनता को लाभ पहुँचायेगी।—कांग्रेस देहली)

भारत के योगियों ने वनों और पर्वतों की कन्दराओं में रहकर वह चमत्कार दिखलाये हैं जिससे बड़े-बड़े वैज्ञानिक और हकीम हैरत में आ गये हैं। आधुनिक चिकित्सकों को जब कोई रोग की औषधि से सफलता नहीं मिलती तब वह लाइलाज कह कर देते हैं। परन्तु महात्मा लोग जड़ी-बूटियों की सहायता से मुर्दे को भी जिला देने का दावा करते हैं। भाइयो, इसे ध्यान से पढ़ो तथा अपने इष्ट-मित्रों को सुनाओ। यह लेख जो लिखा गया है, कोई गप्प नहीं है बल्कि मेरे जीवन की चन्द घटनायें हैं जो आपके सम्मुख रखता हूँ। मेरा जन्म एक धनी परिवार में हुआ। अपने पिता का लाड़ला पुत्र होने के कारण ऐश और व्यसन में घिरा रहता था, लेकिन फिर भी मैं सुखी नहीं था। कुसङ्गत में पड़कर मुझे जरियान और प्रमेह रोग हो गया। मैंने तो एक दो साल मैंने लोकलाज के कारण अपना भेद छिपाये रखा परन्तु रोग ने भयानक सूरत अख्तियार कर ली, अब मैं घबरा उठा, संसार में चारों ओर अँधेरा मालूम होने लगा तब मेरी आँखें खुलीं। इलाज शुरू किया गया, बड़े-बड़े डाक्टरों, हकीमों, वैद्यों के फीस रूप में रुपये और कीमती दवाइयों के खरीदने में पानी की तरह रुपया बहाने लगा, फिर भी मैं निराश ही रहा मैं घबरा उठा और चारों तरफ़ से अन्धकार दिखलाई देने लगा और सोचने लगा कि इस दुःखमय जीवन से मर जाना बेहतर है पर यह बीस साल पहले की बात है। अब आज मैं खुश हूँ। आज उस परमात्मा की कृपा से आरोग्य हूँ और मेरे स्वस्थ बच्चे भी हैं जो बिलकुल आरोग्य हैं।

हुआ क्या! मुझमें इतना परिवर्तन कैसे हो गया! यह जानकर आपको आश्चर्य होगा कि मैंने एक दवा सेवन की। जो मैंने सेवन की, वह एक महान् त्यागी परोपकारी साधु की बनाई हुई थी, जो समय काटने के लिए गाँव से कुछ दूर एक टीले पर रम रहे थे। यह मेरा सौभाग्य था कि और लोगों के साथ मैं भी दर्शनों के लिए जा पहुँचा। दैवी शक्ति से मेरे दुःखी जीवन के पिछले अध्याय उनके हृदय-पट पर खिंच गये और मेरी आँखों ने हृदय का सारा भेद अपने आप उस महान् पुरुष पर प्रकट कर दिया। मेरी कच्ची उम्र पर महात्मा को दया आई और उन्होंने मुझे कुछ जड़ी-बूटियाँ एकत्र करने की आज्ञा दी। मैंने वैसा ही किया और तब उनके सम्मुख ही मुझे उनके आदेश और निजी देख-रेख में 'प्रेमबटी' तैयार करनी पड़ी। मुझसे ४० दिन लगातार 'प्रेमबटी' का सेवन करने को कहा गया था, तथापि केवल बीस दिन के सेवन से ही मुझमें परिवर्तन हुआ। मेरी कमजोरी और तमाम गुप्त बीमारियाँ जड़ से दूर हो गईं। पीले और उदास मुख पर लाली दौड़ने लगी, आँखों में आह्लाद झूमने लगा और हृदय में जवानी का जोश उमड़ आया। महात्माजी के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के साथ ही अपने कर्तव्य को पूरा करने के लिए दुःखी जनों के निमित्त पिछले बीस साल से लगातार मैं इस प्रयोग को मुफ्त बाँट रहा हूँ। यह अनेक पत्रिकाओं में भी छप चुका है। मुझे हर्ष है कि इस अमृत-तुल्य प्रयोग ने सैकड़ों की प्राण-रक्षा की, हजारों को मौत के मुँह से बचाया और लाखों का इससे भला हुआ। महात्मा-प्रदत्त 'प्रेमबटी' का नुस्खा इस प्रकार है; नोट कर लें—

शुद्ध त्रिफला ५ तोला, त्रिकुट चूर्ण ५ तोला, शुद्ध सूर्यतापी शिलाजीत ५ तोला, शुद्ध वङ्ग भस्म ६ माशा, असली सूर्य-केसर ३ माशा, असली अकरकरा ६ माशा, असली नेपाली कस्तूरी ३ रत्ती। इन सब औषधियों को कूट-छानकर खरल में डाल कर ऊपर से शीतल चीनी का तेल २० बूँद, सन्दल तेल २० बूँद, बिरोजे का तेल २० बूँद एक-एक करके मिलाये। उसके बाद ब्राह्मी बूटी के अर्क में १२ घण्टा घोंटकर झरबेरी बेर के बराबर गोलियाँ बनावें और छाया में सुखा लें। एक-एक गोली आध पाव भर गाय के दूध में एक तोला शक्कर मिलाकर सेवन करें। इसकी प्रशंसा हम अपने ही मुँह से नहीं करते बल्कि बड़े बड़े वैद्यों, डाक्टरों, हकीमों, सेठ-साहूकारों तथा रईसों, जमींदारों, सरकारी आफिसरों तक ने इसकी सराहना की है। वैद्यराज दत्तात्रेय शर्मा, झोंकर का कहना है कि यह बटी धातु का पतलापन, २० प्रकार के प्रमेह के लिए अक्सीर है।

'प्रेमबटी' में कोई हानिकारक चीज़ नहीं पड़ती और गुणकारी चीजें नुस्खे से ही प्रकट हैं। यह औषध वीर्य का पतलापन, २० प्रकार के प्रमेह, पेशाब के साथ चूने की तरह वीर्य का जाना, पाखाने के समय धातु का जाना, स्वप्नदोष, सुस्ती, कमजोरी, नामर्दी, धातु, मधुमेह, सूजाक, जवानी में बुढ़ापे की-सी हालत हो जाना, असली ताकत की कमी, स्मरण-शक्ति कमजोर पड़ जाना तथा और भी प्रदर-सम्बन्धी रोग दूर करके अत्यन्त ताकत देती है और नस-नस में नवजीवन का सञ्चार करती है। अन्त में उन सभी से जिन्हें फ़ुरसत नहीं मिलती या शुद्ध औषधि प्राप्त नहीं कर सकते यह प्रयोग स्वयं बनाकर दाम के दाम में भेजने की प्रार्थना की है। ४० दिन के लिए पूरी खुराक विधिवत् ८० गोलियों का मूल्य ५॥=) रु० और २० दिन के लिए ४० गोलियों का मूल्य ३=) डाकखर्च ॥।-)

पता—बाबू श्यामलालजी रईस, प्रेमबटी आफिस नं० (S. A.) धनकुट्टी, कानपुर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिल्मस्टारोंकी तरह त्वचा की रक्षा कीजिये!

रमोला कहती है कि उसकी त्वचा उसके लिये सबसे पहली बात है। उसको वह लक्स टॉयलेट साबुन के रोज़ाना इस्तेमाल से बहुत ही निर्मल और मुलायम रखती है। "मेरे सौंदर्य प्रसाधन की यह सरल रीति है"—यह उसका कहना है, और साथ ही दावा है कि इस शुद्ध और खुशबूदार साबुनके तेज फेनसे किसी भी स्त्री की त्वचा मुलायम, सुकोमल और निर्मल हो सकती है।

लक्स टॉयलेट साबुन

LEVER BROTHERS (INDIA) LIMITED

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

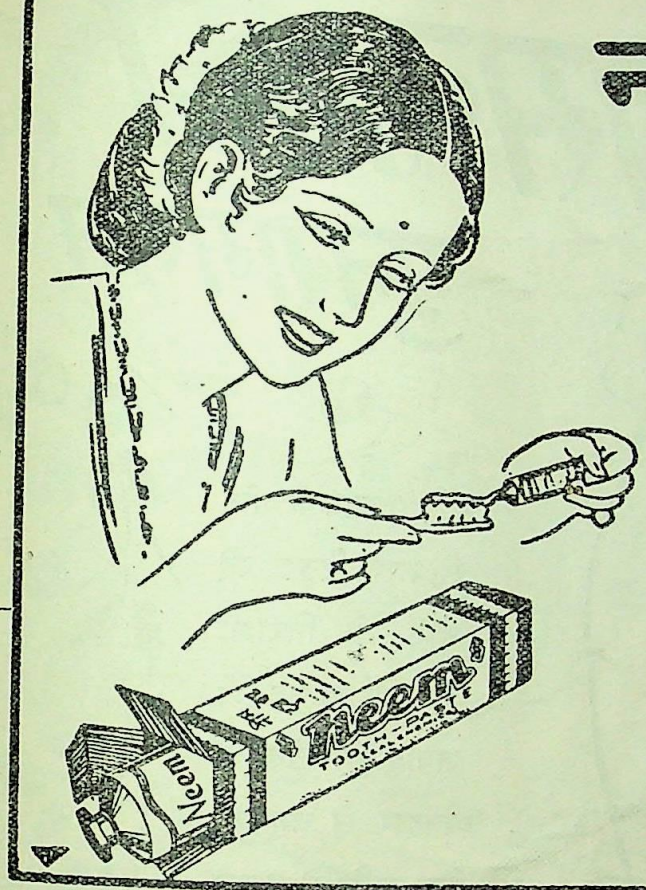

नीम
ट्रूथ पेस्ट

नीम ट्रूथ पेस्ट भारतवर्ष क्या विदेशी जनता की प्रशंसा प्राप्त कर अपनी उपयोगिता पूर्णतया प्रमाणित कर चुका है।

अथवा

मार्गोफ्रिस

दंतमंजन

ये दोनों ही चीजें उच्च कोटि की हैं।

दी कलकत्ता केमिकल कं० लि०,

पण्डितिया रोड, कलकत्ता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बसन्त का पुनरागमन

यदि गंजपन के शीत से आप ठिठुर रहे हों, तो निराशा की कोई बात नहीं। जबाकुसुम तेल के व्यवहार से चमकती हुई केश राशि के बसन्त का पुनरागमन हो सकता है।

जबाकुसुम

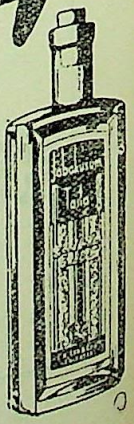

असली माल मिले, इसके लिए हमारे व्यापारियों या खुद हमसे खरीदना सुरक्षित है।

सर्वत्र अद्वितीय

'946

सी. के. सेन एण्ड कों, लिमिटेड, जबाकुसुम हाउस, कलकत्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

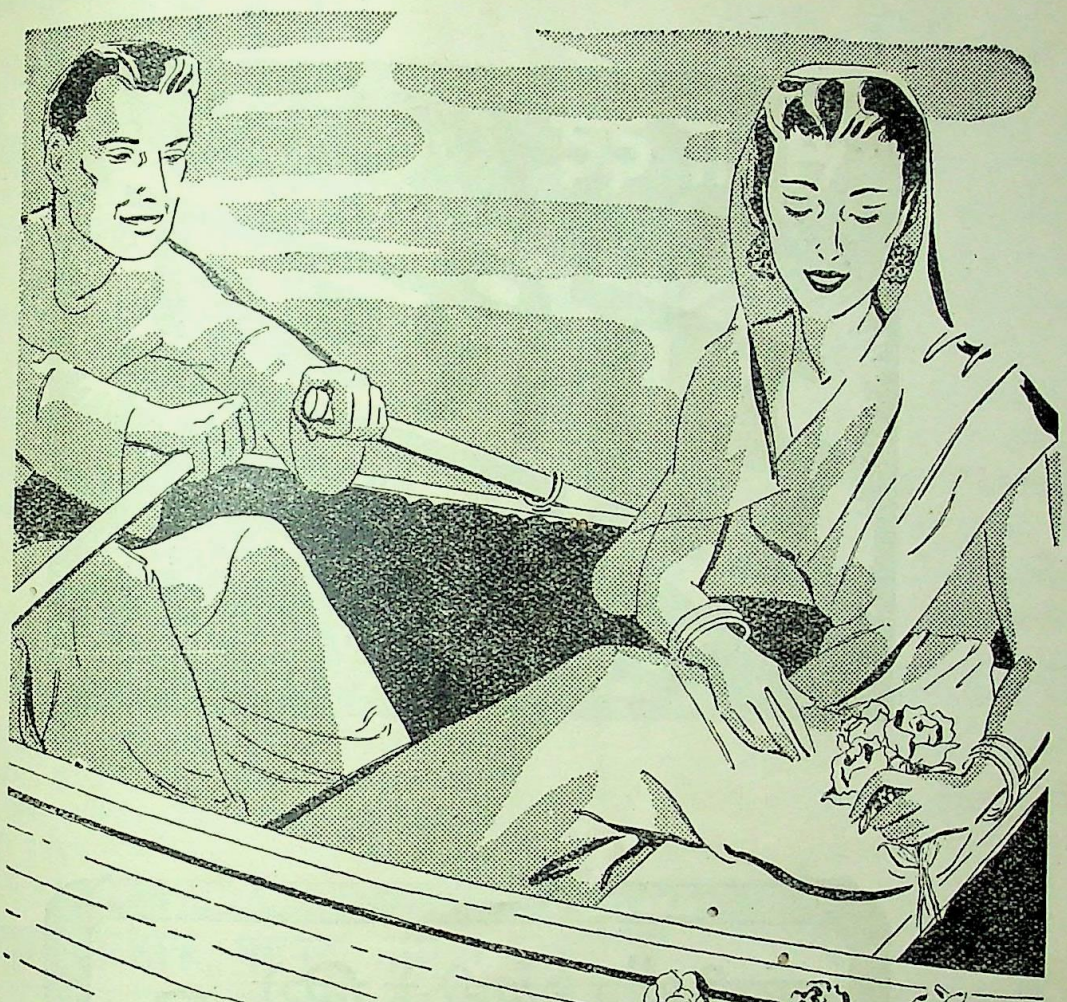

जब आप ताज़ा और सुन्दर भारतीय गुलाबों को शाम के सन्धिप्रकाश में सिर हिलाते देखते हैं, तब आप को अपना प्रिय साबुन विनोलिया व्हाइट रोज़ का स्मरण आयेगा। आप के सौन्दर्य-वर्धन के लिये इस से उत्तमोत्तम वा अत्युत्कृष्ट सुगन्धित साबुन नहीं हो सकता। मृदु एवं फेनदार विनोलिया अतिशय कोमल त्वचा को सौम्यतापूर्वक साफ़ करता है...और आप के अतराफ़ सुगन्ध की एक मीठी महक लहराती है।

विनोलिया व्हाइट रोज साबुन

YWR. 20-23 HI

VINOLIA COMPANY LIMITED, LONDON, ENGLAND

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभी दर्द
सारिडन
दुःखशामक टिकडियांसे
१० मिनटोंमें दूर हो जाते हैं.

खांसी और शरदी के लिये
वैज्ञानिक इलाज
सिरोलीन
'रोचे'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्यम

धान्य-अकाल निवारण

विशेषांक

ता० १५ अगस्त को प्रकाशित होगा !

* **देशके** प्रत्येक बड़े-बड़े नेता, सरकारी अधिकारी तथा ...य जनता अपने-अपने ढंग से धान्य अकाल निवारण के उपायों ...विचार कर योजना बना रहे हैं। आज देश के सामने धान्य-...ल के बराबर महत्त्व का विषय दूसरा कोई भी नहीं है। ...इस विषय पर पाठकों के लिए उपयुक्त जानकारी तथा ...भिन्न योजनाएँ तज्ञों से तैयार करवाकर इस विशेषांक में ...शित की जावेंगी।

* **ग्राहकों** को वर्ष में दो विशेषांक तथा खेती-बाग़वानी, ...धन्धे, व्यापार, आरोग्य आदि सम्बन्धी व्यवहारोपयोगी ...कारी से पूर्ण अंक प्रतिमाह १५ तारीख को नियमित भेजे ...हैं। शीघ्र ही वार्षिक मूल्य रु० ५॥) भेजकर ऐसे उपयुक्त ...क-पत्र के ग्राहक बन जाइए।

उद्यम मासिक, धर्मपेठ, नागपुर

...त्तरकालीन नकशों से अपने भूगोल की कक्षाओं को पूर्ण कीजिए

१९४६ में प्रकाशित

स्वस्तिक एटलस

...नवीन और विवादग्रस्त सीमाएँ, अनेक नए नगर ...मराठी, गुजराती और हिन्दी के पूर्ण विवरण ...।

...एजेण्ट :- **ब्लेकी एण्ड सन, फोर्ट बम्बई,**

स्वस्तिक ज्याग्रफिकल पब्लिशिंग ब्यूरो गिरगाँव, बम्बई

केवल स्त्रियाँ पढ़ें

स्त्रियों की सुन्दरता को नष्ट करनेवाला रोग केवल प्रदर (लिकोरिया) है। इस रोग में स्त्रियों के गर्भाशय से सफेद सफेद पानी हरवक्त चलता रहता है। और प्रायः पेशाब करते समय लम्बे लम्बे जाले भी निकलते रहते हैं। इससे स्त्री का शरीर घुन लगी हुई चीज की तरह खोखला और निश्शक्त हो जाता है। शरीर और चेहरे की रंगत बदल जाती है। ऐसी स्त्रियों को पहले तो गर्भ रहता ही नहीं और यदि रहता भी है तो डेढ़-दो महीने में ही गिर जाता है। इसलिए शीघ्र इसकी चिकित्सा की व्यवस्था करें। हमारी प्रसिद्ध और प्रशंसित औषधि **(बहारे-हुस्न)** रजिस्टर्ड के इस्तेमाल से ऐसी स्त्रियाँ इस रोग से मुक्त होकर नया जीवन प्राप्त कर सकती हैं। कीमत, १५ दिन के लिए, प्रति शीशी जिसमें ३० गोलियाँ हैं ४)। डाक-व्यय अलग।

मैनेजर—दी पंजाब यूनानी फार्मेसी

(रजिस्टर्ड) टोहाना

जिला—हिसार (पंजाब)

D. D.

पागलपन की अचूक औषधि

पागल वटी

अनिद्रा, चित्तभ्रम, विचारवायु, मगज़ की अस्थिरता, उन्माद वगैरह को दूर करके मगज शान्त व बुद्धिमान् बनाने के लिए अनेकों रोगियों पर परीक्षित, विश्वसनीय, चमत्कारिक औषधि है। **की० ४८ गोलियों की डि० रु० ३)**

मदनमंजरी फार्मेसी जामनगर काठियावाड़

इलाहाबाद एजेंट—मदनस्टोर्स कैमिस्ट जोन्स्टन गंज बनारस एजट राधेलाल एन्ड सन्स बैटरीवाला, चौक

हींग घर कार्यालय, डेरा इस्माइलखाँ

काबुल काशमीर के उपहार मँगाएँ

शुद्ध हीरा हींग

प्रति १०० तोला २०), केसर असली ५) तोला, शिलाजीत २० तोला डिब्बी ५), अकसीर काबुल धात की दवा २॥) पूरा सूचीपत्र मँगाइए। पता—काबुल फ्रांटियर स्टोर हींगघर डेरा इस्माइल खाँ सरहदी सूबा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेममोहनी बटिका

अगर आप दवा करते-करते हैरान हो गये हों, तो हमारी यह प्रेममोहनी बटिका जरूर इस्तेमाल करिएगा। इसकी तारीफ करना फिजूल है, यह आपको सेवन करने से ही मालूम होगा कि वास्तव में क्या है। इसके सेवन से स्वप्नदोष, धातुक्षीणता, कमजोरी, मधुमेह, बीसों प्रकार के प्रमेह, पेशाब के साथ चूने की तरह वीर्य का जाना, पाखाने के समय धातु का निकलना, जवानी में बुढ़ापे की-सी हालत होना, असली ताकत की कमी, स्मरण-शक्ति कमजोर पड़ जाना, हिस्टीरिया, उन्माद आदि रोगों को दूर कर अपूर्व ताकत लाती है। और स्त्रियों के लिए भी यही दवा प्रदर, रज, कमजोरी आदि को दूर कर ताकत पैदा करती है। आज ही मँगाकर लाभ उठाइए। मूल्य २० दिन की ४० गोलियों का ३॥) और ४० दिन की ८० गोलियों की पूरी खूराक का ६।) डाक खर्च माफ पैकिंग ।–) अलग।

शाही आनन्द तिला

अगर आपको नामर्दी की शिकायत है तो इसी कम्पनी का चुना हुआ तिला इस्तेमाल करिएगा। केवल दो ही सप्ताह इस तिला का उपयोग करने से कामशक्ति में अपूर्व चेतनता आ जाती है। बचपन की अवस्था में लुक-छिपकर करी गई भूलों द्वारा जिनकी कामेन्द्रिय विकृत हो गई हो, उन्हें इस तिला के उपयोग से नव-यौवन प्राप्त होता है। किसी प्रकार के छाले पड़ने का भय नहीं है। एक शीशी में पूरी पन्द्रह दिन की दवा है जिसका मूल्य सिर्फ ३।) है। डाक खर्च माफ पैकिंग ।–) अलग।

१०००) रु० माहवार कमाइए

इस 'दौलत की खान' पुस्तक में १६२ हुनर छपे हैं, जिससे लोग लखपती हो गए, जो बेकार थे। इस पुस्तक में हर तरह के तैल, साबुन, बाल उड़ाने का साबुन, बाल काले करने का खिजाब, हर तरह के अचार, खानी तम्बाकू, कुलफी की बर्फ, पेंटेट दवायें आदि बनाने का नुस्खा छपा है। इन्हें लोग हजारों खुशामद करने पर मरते वक्त तक नहीं बतलाते हैं। कीमत फी पुस्तक २।) डाक खर्च व पैकिंग माफ।

अमेरिकन पिस्तौल

यह पिस्तौल अमेरिका से बनकर आई है बिल्कुल असली पिस्तौल के मानिन्द मालूम होती है। इसे बखूबी कोट की जेब में रख सकते हैं। इसमें ६ खाने हैं। घोड़ा दबाते ही चरखी खुद घूमती है। इसकी आवाज निहायत डरावनी है। चोर, 'डाकू', शत्रु और जंगली खूँखार जानवर इसकी शक्ल ही देखकर भाग जाते हैं। इसके रखने में सरकार से लाइसैन्स लेने की जरूरत नहीं पड़ती। बाज वक्त यह पिस्तौल जान-माल की रक्षा करने में बहुत अच्छी साबित हुई है। इसको हरएक मनुष्य रख सकता है। मूल्य मय ५० स्पेशल कारतूस के फी पिस्तौल ४।) डाक खर्च प्रति पिस्तौल १।) अलग कारतूस फी सैकड़ा १॥)

असली कलीद सट्टा

यदि आप सट्टा-लाटरी का शौक रखते हैं और लाटरी-सट्टा का नम्बर जानकर फायदा उठाना चाहते हैं, तो हमारी असली कलीद सट्टा नामक पुस्तक मँगाकर मालामाल बनिए। इसका नम्बर कभी खाली नहीं जाता। सिर्फ गुणा भाग करने से ही नम्बर निकल आता है। कीमत फी पुस्तक २।) डाक खर्च व पैकिंग माफ।

ओटो पुष्पलता

यह ओटो तमाम सैन्टों का सरताज है। लगाते ही आपकी तबीयत मस्त हो खुशबू से बाग-बाग हो जाएगी। इस ओटो को लगाकर आप जिस रास्ते निकल जाएँगे पास के लोगों को ताज्जुब होगा कि यह खुशबू किस बगीचे से आ रही है। रूमाल में लगा लेने से महीनों खुशबू नहीं जाती है। कीमत प्रति शीशी ॥=) दर्जन का ५॥) डाक खर्च १।) एक दर्जन एक साथ मँगाने पर एक जोड़ी हाथ व गले के बटनों का सेट व एक बम्बई फैशन सेट की तरह चमकनेवाली अँगूठी एक फैन्सी रूमाल व एक खूबसूरत शीशा मय कंघी के इनाम में मुफ्त दिया जाएगा इस ओटो का प्रचार करने की वजह से यह ऐलान निकाला है।

पता—इंडियन जनरल ट्रेडिंग कम्पनी नं० १० कानपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पं० गौरीशङ्कर मिश्र, बी० ए०, एल्-एल० बी०

लिखित पुस्तकें

बलिदान-मन्दिर

इस उपन्यास की घटना बड़ी रोचक है। मनुष्य के चरित्र का उत्कर्ष किस प्रकार हुआ, वह लोकोपयोगी किस प्रकार हुआ और वास्तविक बलिदान क्या है, इसका बड़ा सुन्दर वर्णन इस उपन्यास में है। इसके पढ़ने से मनोरञ्जन के साथ-साथ आत्मसुधार की भी शिक्षा मिलती है। अच्छे टाइपों में छपी ढाई सौ पृष्ठों की सजिल्द पुस्तक का मूल्य १॥) एक रुपया आठ आने।

भक्त जयदेव

यह उपन्यास अपने ढङ्ग का एक ही है। इसमें 'हम भक्तन के भक्त हमारे' का प्रदर्शन बड़ी सुन्दरता से लेखक ने किया है। मूल्य केवल १॥) एक रुपया आठ आने।

कलियुगी दुनिया की सच्ची कहानियाँ

पहला भाग

वर्तमान युग प्रगति का कहा जाता है। इसी युग की कहानियाँ इस संग्रह में हैं। ये विलक्षण हैं और पढ़नेवालों को एक मीठी सलाह देती हैं। कहानियाँ एक से एक बढ़कर हैं। पृष्ठ-संख्या सवा सौ। मूल्य १।) एक रुपया चार आने।

शबरी अछूत ?

यह एक रोमाञ्चकारी नाटक है। मर्यादा-पुरुषोत्तम रामचन्द्रजी की प्रसिद्ध भक्त मीरा के कथानक के आधार पर इस नाटक की रचना हुई है। अछूत समस्या के युग में यह नाटक सचमुच अपनी विशेषता रखता है। बढ़िया छपी पुस्तक का मूल्य केवल ।॥) बारह आने।

मिलने का पता—इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

प्रदर रोग स्त्रियों का भयानक शत्रु है

प्रदर रोग, जिसको लोग लिकोरिया भी कहते हैं, स्त्रियों की सुन्दरता और जवानी को नष्ट करनेवाला भयानक शत्रु है। लज्जावश बेचारी रोग को छिपाये रहती हैं और दिन-रात घुला करती हैं। यह उनकी भूल है। भयानक रोग का इलाज कराने में लापरवाही नहीं करना चाहिए। इस बीमारी से स्त्रियों के गुप्त शरीर से लाल, काला, धुमैला या श्वेत रंग का बदबूदार पानी या लेस-सा निकलता रहता है। महीना ठीक समय पर नहीं होता है जिसके कारण कमर, रीढ़, सिर में दर्द, शरीर में जलन, मन मलीन, उठने-बैठने में थकावट, भूख का कम लगना, बदन दुबला और कमजोर हो जाना, मूर्छा, बेहोशी आदि रोग हो जाते हैं और सन्तान नहीं होती है और यदि होती भी है तो दुबली और कमज़ोर होती है। ऐसी अवस्था में भारत-विख्यात वैद्यरत्न सत्यदेव ने अपूर्व शक्ति दान करनेवाली २५ वर्ष की आजमूदा **नारी-संजीवन** नामक दवा का आविष्कार किया जिसके द्वारा आज तक सहस्रों स्त्रियों को इस भयानक रोग के पंजे से छुड़ाया है। इस नारी-संजीवन के सेवन से तमाम बीमारियाँ दूर होकर स्त्रियाँ सुन्दर और तन्दुरुस्त हो जाती हैं और सन्तानें सुन्दर, बलवान्, दीर्घायु पैदा होती हैं। यदि आवश्यकता हो तो आज ही पत्र डालकर एक डिब्बा नारी-संजीवन का मँगाकर इसके अपूर्व गुणों का चमत्कार देखें। कीमत एक डिब्बा ३=); डाकखर्च माफ; पैकिंग खर्च अलग।

मगाने का पता—

रूपविलास कम्पनी, नं० ४२७, धनकुट्टी,

कानपुर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

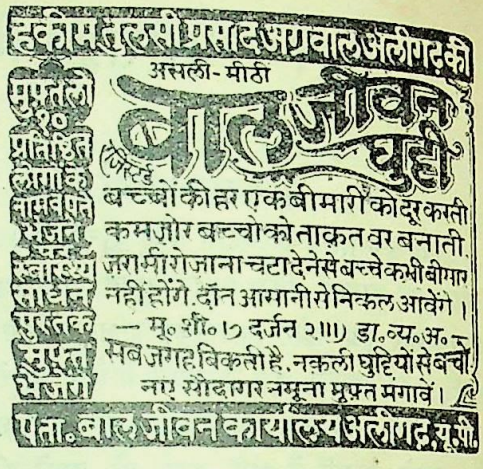

हृदय की सर्दी (सर्दी और कफ)—लापरवाही करने से मामूली हृदय की सर्दी फेफड़े की सूजन (ब्रांकैटिस) हो जायगी। इससे बचे रहने का रास्ता बड़ा आसान है। थोड़ा-सा अमृतांजन लेकर छाती पर मलिए। बस, उसकी गरमी सीधे हृदय पर पहुँचती है और कफ को पिघला देती और तुरन्त आराम मिलता है।

अमृतांजन—हमेशा जल्दी से जल्दी आराम पहुँचाता है।

अमृताञ्जन लिमिटेड, बम्बई और मद्रास

शाखा—कलकत्ता, कराची, दिल्ली

कामायनी-अनुशीलन

महाकवि 'प्रसाद' का महाकाव्य 'कामायनी' बहुत प्रसिद्ध है। पर यह सबकी समझ में नहीं आता। इस पर अनेक समीक्षकों के विचार पत्रों में प्रकट हुए हैं। इसी ग्रन्थ का अनुशीलन इस पुस्तक में लेखक रामलालसिंह, एम० ए०, बी० टी०, साहित्यरत्न ने कामायनी का ऐतिहासिक तत्त्व, प्रकृति-वर्णन, चरित्र-चित्रण, श्रद्धा, भाषा तथा भावाभिव्यक्ति, छन्द-विधान, रस-संचार, कामायनी का मनस्तत्त्व, दार्शनिक तथ्य, युग की अभिव्यक्ति, प्रेम-निरूपण आदि शीर्षकों में बड़ी मार्मिकता से किया है। अच्छे कागज पर छपी कोई ढाई सौ पृष्ठों की सजिल्द पुस्तक का मूल्य २)

कुछ

यह प्रसिद्ध साहित्य-सेवी श्री पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी बी० ए० के बढ़िया निबन्धों का संग्रह है। इसमें [illegible] निबन्ध हैं जो भाषा, भाव और विवेचन की दृष्टि से विलक्षण हैं। यह इस वर्ष की अनुपम रचना है। पृष्ठ-संख्या २०० से ऊपर। मूल्य केवल १॥) एक रुपया आठ आने।

गांधी-मीमांसा

इस पुस्तक में पं० रामदयाल तिवारी बी० ए०, एल-एल० बी० ने गांधी जी के व्यक्तित्व और सिद्धान्तों की तर्कपूर्ण [illegible] विवेचना की है। इसे आद्योपान्त पढ़ जाने पर गांधीवाद पूर्ण रूप से हृदयंगम हो जाता है। विद्वानों ने मुक्त कण्ठ से इसकी प्रशंसा की है। पृष्ठ-संख्या ८५०। सुन्दर सजिल्द प्रति का मूल्य ४) चार रुपये।

मैनेजर बुकडिपो,—इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारी उत्तमोत्तम पुस्तकें

सचित्र हिन्दी-महाभारत

महाभारत का अक्षरशः अनुवाद। अगणित रङ्गीन और सादे चित्रों के कारण महाभारत का यह संस्करण जैसे अद्भुत ही नयनाभिराम है वैसे ही सीधी और सरल भाषा में लिखा हुआ होने के कारण स्त्री बच्चों से लेकर बड़े-बूढ़ों तक के लिए उपयोगी है। मूल्य ७०) सत्तर रुपये।

हिन्दी-महाभारत

इसमें महाभारत के अठारहों पर्वों की कथा बहुत ही सुन्दर और सरल भाषा में लिखी गई है। मूल्य ६) छः रुपये।

श्रीमद्भागवत

सरल भाषा में किया गया अविकल अनुवाद। महाभारत की तरह इसमें भी सादे और रङ्गीन चित्रों की भरमार है और सरल भाषा में लिखा हुआ होने के कारण आबालवृद्ध-वनिता सभी के लिए उपयोगी है। मूल्य १५) पन्द्रह रुपये पाँच आने।

ज्ञानेश्वरी-गीता

श्री स्वामी शङ्कराचार्य के मत के अनुसार गीता का मर्म समझाने के लिए महाराष्ट्र-प्रदेश के प्रसिद्ध सन्त श्री ज्ञानेश्वर महाराज के द्वारा की गई ज्ञानेश्वरी नामक टीका का हिन्दी-अनुवाद। मूल्य ५।–) पाँच रुपये पाँच आने।

नीति-रत्नमाला

धर्मशास्त्र से छाँट-छाँटकर एकत्र किए गए ललित और हृदयग्राही श्लोकों का संग्रह। प्रत्येक श्लोक का विस्तृत हिन्दी अनुवाद भी किया गया है। मूल्य ।।।–) तेरह आने।

चरित्र-गठन

सदाचारी बनने के लिए जिन-जिन गुणों का होना आवश्यक है, उन सबकी इस पुस्तक में विशद रूप से आलोचना की गई है। मूल्य १।–) एक रुपया पाँच आने।

दर्शन और जीवन

लेखक, श्री सम्पूर्णानन्द

इस पुस्तक में दर्शन के साथ जीवन का अनिवार्य सम्बन्ध दिखलाते हुए, प्रत्येक व्यक्ति को दर्शन क्यों पढ़ना चाहिए? इस प्रश्न पर विवेचनात्मक प्रकाश डाला गया है। दर्शनशास्त्र के प्रेमियों के निमित्त पुस्तक संग्रहणीय है। मूल्य ३।–) तीन रुपये पाँच आने।

प्राणायाम विज्ञान और कला

डाक्टर शोजातुरो ओटेव नामक सुप्रसिद्ध चिकित्सक के प्राणायाम-सम्बन्धी लगातार कई वर्ष के अनुभव का वर्णन। मूल्य १) एक रुपया।

आध्यात्मिकी

इस पुस्तक में हमारे ऋषि-मुनियों से लेकर नए से नए देशी और विदेशी आस्तिक और नास्तिक हर तरह के विद्वानों के मत का सार खींचकर रख दिया गया है। मूल्य १।–) एक रुपया पाँच आने।

वाल्मीकीय रामायण [सचित्र] दो भाग

महाभारत की तरह महर्षि वाल्मीकि का रामायण भी हिन्दू-संस्कृति का इतिहास है और यह महाभारत से भी प्राचीन है। संसार भर में कोई भी ऐसी सभ्य भाषा नहीं है जिसमें इस ग्रन्थ का अनुवाद प्रकाशित न हुआ हो। हिन्दी में इसका बढ़िया अनुवाद नहीं था, उसी कमी को पूरा करने के लिए हमने इसका अनुवाद सरल भाषा में प्रकाशित किया है। सारी पुस्तक उपन्यास की तरह पढ़ते जाइए, समझने में कहीं जरा भी कठिनाई नहीं पड़ेगी। मूल्य ६।।=) छः रुपये ग्यारह आने प्रतिभाग।

गोस्वामी तुलसीदास

गोस्वामीजी के प्रामाणिक जीवन तथा उनके ग्रन्थों का संक्षिप्त परिचय इस पुस्तक में दिया गया है। इसकी रचना हिन्दी के प्रसिद्ध विद्वान् बाबू श्यामसुन्दरदास ने की है। मूल्य १) रुपया।

मैनेजर बुकडिपो—इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

CC-0.In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस्लामी दुनिया का सिरताज

इस पुस्तक के बारे में हिन्दी के प्रसिद्ध पत्र भारत का मत है, "पुस्तक में तुर्की साम्राज्य के अभ्युदय और पतन का तथा नव टर्की राष्ट्र की स्थापना का कोरा इतिहास ही नहीं वर्णित किया गया है, बल्कि लेखक की राष्ट्रीय भावनाओं से ओत-प्रोत लेखनी ने उसमें एक नया जीवन डाल दिया है"। मूल्य २) दो रुपये।

सम्राट् पञ्चम जार्ज

स्वर्गीय सम्राट् पञ्चम जार्ज का जीवन-चरित तथा उनके शासनकाल का संक्षिप्त इतिहास। मूल्य ४) चार रुपये।

विश्व की विभूतियाँ

देश-विदेश के १२ सुप्रसिद्ध व्यक्तियों के चरितों का संग्रह। मूल्य २) दो रुपये।

पञ्चसती

इसमें भारत की सीता, सावित्री, दमयन्ती, शैव्या और चिन्ता इन पाँच सतियों का पवित्र चरित्र संगृहीत किया गया है। मूल्य ।।) आठ आने।

सती

इसमें दक्षसुता सती पार्वती की कथा सरल, सुन्दर और मधुर भाषा में लिखी गई है। मूल्य ।–)॥ साढ़े पाँच आने।

सीता-चरित्र

जगज्जननी सीता जी का विस्तृत जीवन-चरित्र। यह राजनीति, धर्मनीति और गार्हस्थ्य नीति की कुञ्जी और शिक्षा का भाण्डार है। मूल्य २।–) दो रुपये पाँच आने।

सुशील कन्या

इसे पढ़कर बालिकाएँ स्वास्थ्य, सदाचार तथा नीति आदि से सम्बन्ध रखनेवाली सभी बातों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगी। मूल्य ॥≡) ग्यारह आने।

भारतीय विदुषी

भारत की चालीस प्राचीन तथा अर्वाचीन विदुषी देवियों का संक्षिप्त जीवन-वृत्तान्त। मूल्य ॥≡) ग्यारह आने।

आदर्श महिला

इस पुस्तक में सीता, सावित्री, दमयन्ती, शैव्या और चिन्ता आदि पाँच देवियों की जीवन-घटनाओं का सजीव वर्णन किया गया है। मूल्य २॥≡) दो रुपये ग्यारह आने।

शिशु-पालन

यह पुस्तक स्त्रियों के बड़े काम की है। इसमें प्रसूति-चर्या से लेकर बच्चों के पालन-पोषण के सम्बन्ध की सभी आवश्यक बातों पर प्रकाश डाला गया है। मूल्य २) दो रुपये।

माँ और बच्चा

बच्चों का पालन-पोषण करने तथा उन्हें स्वस्थ और सबल बनाने के लिए जिन-जिन बातों का जानना आवश्यक है, वे सभी बातें इस पुस्तक में लिखी गई हैं। मूल्य २॥≡) दो रुपये ग्यारह आने।

पतिव्रता

सती, सुनीति, गान्धारी, सावित्री और शकुन्तला इन पाँच पतिव्रताओं के चरितों का संग्रह। मूल्य ॥≡) ग्यारह आने।

पतिव्रता गान्धारी

कौरवों की माता गान्धारी का जीवन-चरित। इसमें प्रसंगवश महाभारत की प्रायः पूरी कथा का सारांश आ गया है। मूल्य ॥।–) तेरह आने।

सावित्री

जिस सावित्री के नाम पर घर-घर की बहू-बेटियाँ [illegible] सावित्री का व्रत करती हैं उसी सावित्री की दिव्य कथा [illegible] पुस्तक में अच्छे ढङ्ग से लिखी गई है। मूल्य ।–)॥ [illegible] पाँच आने।

दमयन्ती

इसमें पतिव्रता-शिरोमणि महारानी दमयन्ती [illegible] उपदेशप्रद कथा बड़ी ही सरल और रोचक भाषा में लिखी गई है। मूल्य ।–)॥ साढ़े पाँच आने।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुशीलाचरित

वास्तविक रूप से सुशीला बनने के लिए प्रत्येक महिला को एक बार यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिए। मूल्य २) दो रुपये।

सौभाग्यवती

स्त्रियों के लिए एक उपदेशपूर्ण पुस्तक। मूल्य ।–) पाँच आने।

रामचरितमानस

टीकाकार स्वर्गीय पण्डित रामेश्वर भट्ट

इस पुस्तक में भट्ट जी ने गोस्वामी जी की रचना का मर्म बहुत ही सरल और सुमधुर भाषा में समझाया है। इस संस्करण में इकरङ्गे और तिरङ्गे चित्रों की भरमार है। मूल्य ४॥=) चार रुपये ग्यारह आने।

कविवर पं० सोहनलाल द्विवेदी-रचित काव्य-ग्रन्थ

भैरवी

इसकी राष्ट्रीय कविताएँ राष्ट्रप्रेमियों के गौरव की वस्तु हैं। यहाँ तक कि पण्डित जवाहरलाल नेहरू तक ने इन्हें पसन्द किया है और खादी प्रतिष्ठानों ने इसकी हजारों प्रतियाँ बेची हैं। विद्वानों की सम्मति है कि भैरवी 'गांधीयुग' का सर्वश्रेष्ठ काव्य है। मूल्य २॥=) दो रुपये ग्यारह आने।

वासवदत्ता

हिन्दी का एक आधुनिक काव्य। इस काव्य की विद्वानों ने मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। मूल्य २) दो रुपये।

विषपान

समुद्र-मन्थन की पौराणिक कथा के आधार पर कवि ने इस खण्ड-काव्य की रचना की है। भाषा में प्रवाह तथा ओज और पात्रों का सजीव चित्रण कवि की खास विशेषता है। मूल्य १) एक रुपया।

पूजागीत

द्विवेदी जी की नवीनतम राष्ट्रीय कविताओं का संग्रह। प्रत्येक कविता जीवन में स्फूर्ति का सञ्चार करती है। फैंदरवेट रंगीन कागज पर छपी हुई पुस्तक का मूल्य २) दो रुपये।

कुणाल

इसमें अशोक के पुत्र कुणाल की कथा करुणापूर्ण भाषा में बड़े रोचक ढङ्ग से लिखी गई है, जिसे पढ़ते हुए अशोक-कालीन भारतवर्ष का चित्र आँखों के सामने खिंच जाता है। मूल्य १।) एक रुपया चार आने। राजसंस्करण २॥)

झरना

इसमें पण्डित सोहनलाल जी की बालकोपयोगी २३ कविताओं का संग्रह है। मातृभूमि, जय-जय स्वदेश, हवा का झोंका, तुम बढ़ो आगे ही अकेले, सुनहली धूप, लहर, सब पर जल बरसाता बादल, दूर्वा का गीत और नीम का पेड़ आदि सुन्दर कविताएँ हैं। अच्छे कागज पर अच्छी स्याही में छपी पुस्तक का मूल्य ॥।) केवल बारह आने।

हिन्दी के लब्धप्रतिष्ठ कवि ठाकुर गोपालशरण सिंह की काव्य-कृतियाँ

माधवी

माधवी का यह नया संस्करण बड़ी ही सज-धज के साथ और बड़े आकार में प्रकाशित हुआ है। मूल्य २) दो रुपये।

ज्योतिष्मती

इस संग्रह में ठाकुर साहब की नवीन प्रकार की कविताएँ संगृहीत की गई हैं, जो हिन्दी-साहित्य में अपना विशेष स्थान रखती हैं। खासकर इसमें संग्रह किए गए छोटे-छोटे गीत बहुत ही मधुर और भावपूर्ण हैं। मूल्य २।–) दो रुपये पाँच आने।

मानवी

इस संग्रह में प्रकाशित कविताओं के द्वारा ठाकुर साहब ने भारतीय नारी के सुख-दुःखमय जीवन का बड़ा ही सुन्दर और मार्मिक चित्रण किया है। मूल्य २।–) दो रुपये पाँच आने।

सञ्चिता

इस संग्रह में ठाकुर साहब ने अपनी सन् १९१४ से लेकर सन् १९३९ तक की सब प्रकार की रचनाओं का समावेश किया है। इस एक ही पुस्तक के द्वारा ठाकुर साहब के कवि-जीवन के क्रम-विकास का उत्तमतापूर्वक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अध्ययन किया जा सकता है। संग्रह में कुल ७१ कविताएँ हैं। मूल्य ३) तीन रुपये।

सुमना

'सुमना' ठाकुर साहब का सबसे नवीन संग्रह है जिसमें ५३ गीत हैं, जिनमें प्रकृति के प्रति उनका असीम अनुराग शब्द-शब्द द्वारा व्यञ्जित होता है। इस प्रकार के सरस भावपूर्ण गीत हिन्दी-साहित्य में अन्यत्र न मिलेंगे। मूल्य २) दो रुपये।

पद्यमाला

इस पुस्तक में अखिल भारतीय हिन्दी-साहित्य सम्मेलन के बारहवें अधिवेशन के सभापति हास्य-रसावतार स्वर्गीय पण्डित जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी, साहित्यभूषण की फुटकर कविताओं का संग्रह किया गया है। मूल्य १) एक रुपया।

मधुस्रवा

लेखक, राजाराम श्रीवास्तव, बी० एस-सी०, एल-एल० बी०

इस अनुपम और नवीन शैली की कविता-पुस्तक में जीवन में मधु बरसाने की पूरी-पूरी क्षमता है। आप भी इसकी रचनाओं को पढ़कर जीवन को रससिक्त बनाइए। मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने।

एकादशी

लेखक, श्रीयुत नत्थाप्रसाद दीक्षित 'मिलिन्द'

इस पुस्तक में मिलिन्द जी की १२ कमनीय कविताओं का संग्रह किया गया है। ये सभी कविताएँ पौराणिक आख्यायिकाओं के आधार पर नए ढङ्ग से लिखी गई हैं। मूल्य केवल १।-) एक रुपया पाँच आने।

दैत्यवंश

लेखक, श्रीयुत हरदयालुसिंह

इसमें हिरण्याक्ष से लेकर स्कन्द तक दैत्यवंश के प्रभावशाली नरेशों का वर्णन ब्रजभाषा के ललित छन्दों में पुरानी शैली के अनुसार किया गया है। इस पुस्तक पर देवपुरस्कार दिया जा चुका है। मूल्य ३।-) तीन रुपये पाँच आने।

मधूलिका

प्रगतिवादी कवि श्री रामेश्वर शुक्ल 'अञ्चल' की मनोरम कविताओं का संग्रह। मूल्य १।।) डेढ़ रुपये।

कविता-कलाप

हिन्दी के ख्यातनामा कवि स्वर्गीय पण्डित नाथूराम-शङ्कर शर्मा, पण्डित कामताप्रसाद गुरु, बाबू मैथिलीशरण गुप्त तथा स्वर्गीय आचार्य पण्डित महावीरप्रसाद द्विवेदी की चुनी हुई सरस कविताओं का सचित्र संग्रह। मूल्य ४) चार रुपये।

द्विवेदी काव्यमाला

आचार्य पण्डित महावीरप्रसाद द्विवेदी की अमर कविताओं का पूर्ण संग्रह। मूल्य २।।=) दो रुपये ग्यारह आने।

तक्षशिला काव्य

सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थान तक्षशिला के अतीत गौरव का वर्णन। इसमें ओज, प्रसाद तथा माधुर्य्य आदि काव्योचित गुणों का समुचित रूप से समावेश किया गया है। मूल्य ३) तीन रुपये।

किंकिणी

इस पुस्तक के लेखक श्री राजाराम श्रीवास्तव की उत्तमोत्तम फुटकर कविताओं का संग्रह किया गया है। कविताओं की भाषा इतनी मधुर और कल्पना की उड़ान इतनी आकर्षक है कि पाठक कुछ क्षण के लिए उसमें अपनी सुध-बुध भूले बिना नहीं रहता। मूल्य ।।।) बारह आने।

लक्ष्मणशक्ति

इसी लेखक द्वारा रचित एक खण्ड-काव्य। इसकी कथा का आधार रामायण का युद्ध काल है जिसमें लक्ष्मण मूर्छित हो गए थे। भाषा सुलझी हुई और मुहाविरेदार है। मूल्य ।।।) बारह आने।

हल्दीघाटी

लेखक, श्रीयुत श्यामनारायण पाण्डेय

(इस महाकाव्य पर दो हजार रुपये का देवपुरस्कार मिला है।) इस पुस्तक में हल्दीघाटी के प्रसिद्ध युद्ध की पवित्र कहानी का वर्णन बड़े ही अनूठेपन से फड़कती हुई कविता में किया गया है। पुस्तक पढ़ते समय हल्दीघाटी के युद्ध की सभी बातें आँखों के सामने सिनेमा-फिल्म की तरह खिंच जाएँगी। मूल्य २।।=) दो रुपये ग्यारह आने।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नव-सतसई-सार

गोस्वामी तुलसीदास से लेकर श्री वियोगी हरि तक नव सतसइयों का सारांश इस पुस्तक में दिया गया है। मूल्य २॥=) दो रुपये ग्यारह आने।

सरस सुमन

इस पुस्तक में पवन, भानु, चपला, जुगनू और वसन्त पर पाँच सुन्दर कविताएँ संगृहीत की गई हैं। कवि प्रकृति-वर्णन में कितना कुशल है, इस बात का परिचय प्रत्येक कविता के द्वारा प्राप्त होता है। मूल्य ॥=) ग्यारह आने।

गङ्गावतरण

हिन्दी के लब्धप्रतिष्ठ कवि श्रीयुत जगन्नाथदास रत्नाकर का लिखा हुआ यह एक खण्ड-काव्य है। संयुक्त प्रान्त हिन्दुस्तानी एकाडमी ने इसकी उत्तमता पर मुग्ध होकर रत्नाकर जी को ५००) का पुरस्कार दिया है। मूल्य १।) एक रुपया चार आने।

उद्धवशतक

श्रीकृष्ण के वृन्दावन से मथुरा चले जाने पर गोपिकाओं ने अपनी वियोग-व्यथा का जो संवाद उद्धव के द्वारा उनके पास भेजा था, उसी का वर्णन स्वर्गीय रत्नाकर जी ने अपनी सुन्दर कविताओं के द्वारा मौलिक ढङ्ग से किया है। मूल्य १) दो रुपये।

सुबहवतन

स्वर्गीय पण्डित ब्रजनारायण 'चकबस्त' लखनवी की देवनागरी अक्षरों में लिखी गई उर्दू कविताओं का संग्रह। उर्दू न जाननेवाले पाठकों की सुविधा के लिए कविताओं में आनेवाले कठिन शब्दों का अर्थ भी दिया गया है। मूल्य १=) दो रुपये ग्यारह आने।

अन्यान्य कलाकारों की कृतियाँ

राजदुलारी

इस सामाजिक उपन्यास में कलकत्ते के व्यापारिक क्षेत्र से सम्बन्ध रखनेवाले उत्तर भारतीय हिन्दुओं की सामाजिक दशा पर प्रकाश डाला गया है। मूल्य १।-) एक रुपया ग्यारह आने।

शुभदा

श्री शरच्चन्द्र के उपन्यासों से हमारे पाठक भली भाँति परिचित हैं। अतः विशेष विवरण देना व्यर्थ है। इसमें आपको पारिवारिक जीवन का मार्मिक चित्रण मिलेगा। मूल्य १॥) एक रुपया आठ आने।

शीलादेवी

शिक्षापूर्ण तथा चातुर्य्यमय घटनाओं से भरा हुआ मनोहर ऐतिहासिक उपन्यास। मूल्य २॥=) दो रुपये ग्यारह आने।

नूतन चरित्र

एक मनोरञ्जक सामाजिक उपन्यास। मूल्य २) दो रुपये।

युद्ध और शान्ति

अनुवादक, श्री रुद्रनारायण अग्रवाल। टॉल्सटॉय के 'वार एण्ड पीस' नामक प्रसिद्ध रूसी उपन्यास का यह हिन्दी रूपान्तर है। इसमें लेखक ने मानव-जीवन का सम्पूर्ण चित्र, अपने समय के रूस की तसवीर और राष्ट्रों की खींच-तान बड़ी खूबी से चित्रित किया है और जीवन तथा मृत्यु के रहस्य का उद्घाटन किया है। मूल्य ५।-) पाँच रुपये पाँच आने।

बलिदान मंदिर

आत्म-त्याग की अपूर्व कथा। मूल्य २) दो रुपये।

रत्नद्वीप

प्रभात बाबू के इसी नाम के उपन्यास का हिन्दी अनुवाद है। मूल्य २॥=) दो रुपये ग्यारह आने।

नवीन संन्यासी

इस उपन्यास में ग्राम्य और नागरिक जीवन का यथार्थ और सुन्दर चित्रण किया गया है। हास्य और विनोद की सामग्री भी पर्याप्त मात्रा में है। मूल्य ४॥=) चार रुपये ग्यारह आने।

रामलाल

ग्रामीण समस्याओं से परिपूर्ण एक मौलिक सामाजिक उपन्यास मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुलसी के चार दल

(प्रथम और द्वितीय भाग)

गोस्वामी तुलसीदास के रामलला नहछू, बरवै रामायण, पार्वतीमङ्गल तथा जानकीमङ्गल का आलोचनात्मक परिचय तथा इन चारों ग्रन्थों की अध्ययनपूर्ण टीका। मूल्य प्रथम भाग का ३) तीन रुपये, द्वितीय भाग का २॥=) दो रुपये ग्यारह आने।

आचार्य महावीरप्रसाद जी की कुछ रचनाएँ

कालिदास की निरंकुशता

संस्कृत के सुप्रसिद्ध कवि कालिदास की कृतियों की आलोचना। मूल्य ॥) आठ आने।

आलोचनाञ्जलि

इस पुस्तक में स्वर्गीय आचार्य पण्डित महावीरप्रसाद द्विवेदी के आलोचनात्मक लेखों का संग्रह किया गया है। अधिकांश आलोचनायें संस्कृत के प्रतिष्ठित ग्रन्थों की हैं। मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने।

पञ्चपल्लव

इस पुस्तक में प्रभात बाबू की पाँच ऐसी कहानियों का संग्रह किया गया है, जिनमें भारत की धार्मिक, साहित्यिक और सामाजिक अवस्था का चित्रण विशेष रूप से किया गया है। मूल्य २) दो रुपये।

पत्र-पुष्प

इसमें प्रभात बाबू की सामाजिक समस्या, समाधान, पिछा, जासूसी का जञ्जाल, अद्वैतवाद, कन्यादान और सतीदाह नामक कहानियों का संग्रह किया गया है। मूल्य २) दो रुपये।

त्रिधारा

प्रभात बाबू की तीन कहानियों का संग्रह। मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने।

देशी और विलायती

प्रभात बाबू की चुनी हुई कहानियों का संग्रह। मूल्य ३।-) तीन रुपये पाँच आने।

पुष्करिणी

लेखक, श्रीयुत भगवतीप्रसाद वाजपेयी

यह हिन्दी के प्रसिद्ध कहानी-लेखक श्री भगवतीप्रसाद जी वाजपेयी की चौदह कहानियों का संग्रह है। इस संग्रह में सम्मिलित की गई सभी कहानियाँ एक से एक बढ़कर हैं और इनमें पीड़ित मानवता के चीत्कार और जागरण की कलापूर्ण कथायें लिपिबद्ध की गई हैं। मूल्य २) दो रुपये।

बारह कहानियाँ

हिन्दी के लब्ध-प्रतिष्ठ कहानी-लेखकों की उच्च कोटि की रचनाओं का संग्रह। मूल्य १) रुपया।

सोहराब-रुस्तम

फारसी भाषा में शाहनामा नाम की एक बहुत ही प्रसिद्ध पुस्तक है, जिसमें बहुत-से शूरवीरों की कहानियाँ लिखी गई हैं। यह कहानी उसी में से ली गई है। मूल्य ॥।-) तेरह आने।

कथा-सरित्सागर

इस पुस्तक में आद्योपान्त बड़ी सुन्दर कथाएँ संगृहीत हैं। प्रत्येक कथा अपने साथ कुछ न कुछ दृष्टान्त रखती है। मूल्य २॥=) दो रुपये ग्यारह आने।

उत्सर्ग

छत्रपति शिवाजी की सहन-शीलता तथा कमला-बोरी के देश के लिए किए गये अनुपम आत्म-त्याग का नाटक रूप में किया गया वर्णन। मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने।

वेणीसंहार नाटक

संस्कृत के वीररस-प्रधान वेणीसंहार नामक नाटक हिन्दी अनुवाद। मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने।

सोहाग-बिन्दी तथा अन्य नाटक

यह पुस्तक कुछ एकांकी नाटकों का संग्रह है और भी नाटकों में सामाजिक समस्याओं पर विचार किया गया है। मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने।

मैकब्थ

रायबहादुर लाला सीताराम बी० ए०-द्वारा किया गया जगत्-विख्यात कवि शेक्सपियर के इसी नाम के नाटक का अनुवाद। मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने।

मैनेजर बुकडिपो—इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेम-कसौटी

शेक्सपियर के 'रोमियो एण्ड जूलियट' नामक नाटक का हिन्दी अनुवाद। मूल्य १।–) एक रुपया पाँच आने।

पुरु और अलेक्जेण्डर

सुप्रसिद्ध वीर अलेक्जेंडर से मोर्चा लेनेवाले भारत के अद्वितीय वीर 'पुरु' के अद्भुत पराक्रम तथा शौर्य का नाटक रूप में चित्रण। मूल्य ।≡) ग्यारह आने।

राजा दिलीप नाटक

इसमें रघुवंश में वर्णित राजा दिलीप की कथा नाटक रूप में लिखी गई है। पुस्तक सचित्र है। मूल्य १) रुपये।

इतिहास और पुरातत्त्व-सम्बन्धी पुस्तकें

पूर्व-मध्यकालीन भारत

सन् १२०६ से लेकर सन् १५२६ ईसवी तक के भारत-का बहुत ही प्रामाणिक और खोजपूर्ण इतिहास। मूल्य ४) चार रुपये।

अलबेरूनी का भारत

महमूद गजनवी के समय में अलबेरूनी नामक एक विद्वान पर्यटक भारतवर्ष में आया था और उसने यहाँ की अवस्था का ज्ञान प्राप्त करके यह उत्तम ग्रन्थ लिखा था। इन तीनों भागों का ९–) नौ रुपये एक आना।

पुरातत्त्वनिबन्धावली

महापंडित श्री राहुल सांकृत्यायन ने इस पुस्तक में संकलित किये गये निबंधों के लिखने में देश-विदेश के अनेक ही दुष्प्राप्य ग्रन्थों के अध्ययन तथा दुर्गमस्थान के भ्रमण से प्राप्त की गई अगाध ज्ञानराशि का उपयोग किया है। मूल्य २।≡) दो रुपये ग्यारह आने।

प्राचीन चिह्न

इस पुस्तक में स्वर्गीय आचार्य पंडित महावीरप्रसाद द्विवेदी ने अपने देश के कई पुराने नगरों, स्थानों और नदी आदि के विवरण तथा उनकी प्राचीन उन्नत अवस्था का वर्णन किया है। मूल्य १) एक रुपया।

हुएनसाँग का भ्रमण-वृत्तान्त

ईसा की सातवीं शताब्दी के भारतवर्ष में आये हुए हुएनसाँग नामक चीनी यात्री का भ्रमण वृत्तान्त। इसमें भारत के मुख्य-मुख्य स्थानों का वर्णन है और यहाँ की उस युग की सामाजिक अवस्था पर भली भाँति प्रकाश डाला गया है। मूल्य ५।–) पाँच रुपये पाँच आने।

संसार का संक्षिप्त इतिहास

(प्रथम व द्वितीय भाग) अनुवादक, श्री मदनगोपाल, बी० ए० एल-एल० बी०। यह पुस्तक अँगरेजी के प्रसिद्ध इतिहास लेखक एच० जी० वेल्स के इतिहास का हिन्दी अनुवाद है। इसमें पृथ्वी के आदिकाल से लेकर जीसस के निर्माण के पूर्व तक की कथा सक्रम वर्णित है। द्वितीय भाग में जीसस के निर्माण से लेकर संसार के पुनर्निर्माण तक का वर्णन आ गया है। मूल्य प्रत्येक भाग का ४) चार रुपये।

यात्रा-वर्णन

स्वदेश-विदेश-यात्रा

लेखक, श्री सन्तराम, बी० ए० और श्रीमती रामेश्वरी नेहरू

इस पुस्तक में कश्मीर, कुल्लू और आस्ट्रेलिया की यात्रा का वृत्तान्त दिया गया है। इसके सभी अध्याय बहुत ही रोचक हैं। पुस्तक में चित्रों की भरमार है। यदि आप कश्मीर या कुल्लू की सैर के लिए जाना चाहते हैं तो चलने से पहले इस पुस्तक को अवश्य पढ़िए। मूल्य १।≡) एक रुपया ग्यारह आने।

योरप-यात्रा में छः मास

इस पुस्तक को पढ़कर आप योरप की सभ्यता, वहाँ के भिन्न-भिन्न देशों की सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक अवस्था तथा मुख्य-मुख्य स्थानों का हाल घर बैठे जान सकेंगे। मूल्य ४) चार रुपये।

लन्दन-पेरिस की सैर

संसार के सर्वश्रेष्ठ व्यापारिक नगर लंदन तथा अपने सौन्दर्य एवम् सुषमा से संसार के समस्त विलासियों को आकर्षित करनेवाले पेरिस की यात्रा का वर्णन। मूल्य २।≡) दो रुपये ग्यारह आने।

मैनेजर बुकडिपो—इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विदेश की बात

योरप के प्रायः सभी मुख्य-मुख्य देशों की यात्रा का रोचक वृतान्त। मूल्य १॥=) एक रुपये ग्यारह आने।

ईरान

लेखक, महा पण्डित राहुल सांकृत्यायन

यह पुस्तक अतीत और वर्तमान ईरान का सजीव चित्र है। राहुल जी ने ईरान के इतिहास पर विद्वत्तापूर्ण प्रकाश तो डाला ही है साथ ही वर्तमान ईरान का भी, वहाँ की अवस्था से व्यक्तिगत रूप से परिचित होकर, विवरण दिया है। मूल्य १॥=) एक रुपया ग्यारह आने।

कवितावली

(टीकाकार रायबहादुर पण्डित चम्पाराम मिश्र, बी० ए०, एम० ए० एस-बी०) गोस्वामी तुलसीदास की कवितावली की एक बहुत ही विद्वत्तापूर्ण टीका। मूल्य २।-) दो रुपये पाँच आने।

विनयपत्रिका

(सटीक)—गोस्वामी तुलसीदास की रचनाओं में विनयपत्रिका का स्थान बहुत उच्च है। इसमें गोस्वामी जी के विनय-सम्बन्ध पद्यों का संग्रह है। इसके टीकाकार हैं पण्डित रामेश्वर भट्ट। मूल्य ४) चार रुपये।

कुण्डलिया रामायण

टीकाकार सत्यनारायण पाण्डेय। कुण्डलिया छन्दों में लिखित गोस्वामी तुलसीदास-कृत रामायण, सुन्दर टीका-सहित। मूल्य ४) चार रुपये।

तुलसी रत्नावली

गोस्वामी जी के समस्त ग्रन्थों का अध्ययन कर इसके विद्वान् सम्पादक ने कुछ रत्न ढूँढ़ निकाले हैं, उन्हीं का यह संग्रह है। दूसरे शब्दों में गोस्वामी जी की समस्त रचनाओं का यह निचोड़ है। मूल्य १॥) एक रुपया आठ आने।

संक्षिप्त पद्मावत

(रायबहादुर, बाबू श्यामसुन्दरदास, बी० ए० द्वारा सम्पादित)

मलिक मुहम्मद जायसी के पद्मावत का संक्षिप्त संस्करण। मूल्य २।-) दो रुपये पाँच आने।

संक्षिप्त सूरसागर

इसमें महाकवि सूरदास के पदों का संग्रह है। इसका एक-एक पद भक्ति तथा प्रेम के रस से ओतप्रोत है। मूल्य ३।-) तीन रुपये पाँच आने।

संक्षिप्त बिहारी

महाकवि बिहारी के दोहों का यह बहुत अच्छा संस्करण है। बिहारी की सतसई में जितने अधिक अश्लील दोहे थे, वे छाँटकर इसमें से निकाल दिये गए हैं। मूल्य २) दो रुपये।

चारण

इस पद्यमय पुस्तक में प्राकृतिक दृश्यों के मनोरञ्जक वर्णनों के अतिरिक्त राजपूताना के कुछ प्रसिद्ध वीरों का गुणगान किया गया है। मूल्य -) पाँच आने।

काव्यकला

साहित्यालोचन का यह संक्षिप्त संस्करण है। लोगों का कथन है कि इस नवीन रूप में इस पुस्तक का उपयोग ऊँची श्रेणी के विद्यार्थी सफलता-पूर्वक कर सकते हैं। इसमें साहित्य-शास्त्र के सभी अंगोपांगों का विवेचन तो है किन्तु साथ ही वे अंश निकाल दिये गये हैं जो जटिल और खंडन-मंडनात्मक हैं। इसके संकलनकार भी लेखक के पुत्र श्री गोपाललाल खन्ना हैं। मूल्य २) दो रुपये।

नया प्रकाशन

नवयुकों के लिए हवाई शिक्षा

लेखक पं० श्रीराम वाजपेयी

(नेशनल आर्गेनाइजिंग कमिश्नर हिन्दुस्तान स्काउट एसोसिएशन)

पुस्तक का विषय नाम से ही स्पष्ट है। स्क्वाड्रन लीडर टी० एस० विर्क, फ्लाइट लेफ्टिनेंट एस० वाई० रानाडे और सारजेंट हमजा के व्याख्यान सुनकर और इस विषय की पुस्तकें पढ़कर लेखक ने इस पुस्तक की रचना की है। हवाई जहाजों का युग है, इस कारण इस विषय की बहुत जानकारी हर एक भारतवासी को होनी चाहिए। आशा है, अपने विषय की इस अनोखी पुस्तक से पाठक लाभ उठावेंगे। पुस्तक सचित्र है। अन्त में शब्दकोष दे दिया गया है जिससे पाठकों को पुस्तक समझने में बड़ी सहायता मिलेगी। आवरण पृष्ठ रंगीन है। मूल्य केवल १) एक रुपया।

मैनेजर बुकडिपो—इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

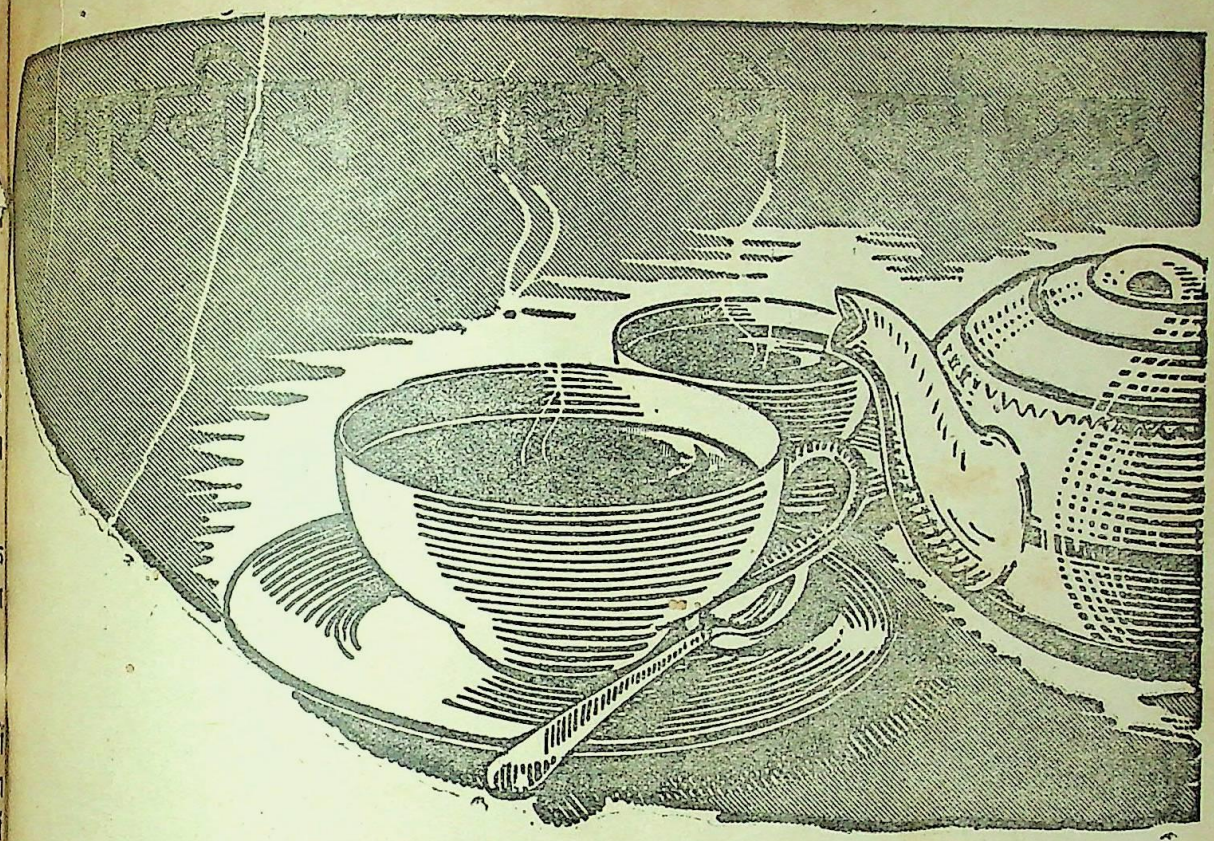

तेज व बढ़िया सुगन्ध, गहरा रंग और
कम दाम इन सबने मिलकर लिपटन
की जाकूजा को बाजार भर की
सर्वश्रेष्ठ चाय बना रक्खा है।

लिपटन की
जाकूजा चाय

सर्वोत्तम भारतीय पूरा चाय

LTK 84 J

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युद्ध छिड़ने पर राजभक्तों की तरह चाय भी रण-सज्जा से सुसज्जित हो गई।

सैनिक, नाविक व वैमानिक सबके साथ कंधे से कंधा भिड़ाकर चाय हर मोर्चे पर डटी रही। बीमारों व घायलों की देखभाल करती, भग्नहृदयों को उत्साह

दिलाती, घर से बिछुड़ों को धीरज बँधाती, जहाँ देखिये वहीं चाय दिखाई पड़ रही थी। घनघोर जंगलों और धधकते रेगिस्तानों में, कटकटाते शीत प्रदेश और चिल-चिलाते ग्रीष्म प्रदेशों में, थके और निर्जीव-से हो रहे लोगों को चाय से ही जरा प्रसन्नता मिलती थी।

यूरोप के विजयोत्सव में भी चाय सबसे आगे थी। इस दुःखदायी, विनाशकारी, विश्वव्यापी महायुद्ध के अन्त का दूसरा विजयोत्सव भी शीघ्र मनाया गया और उसमें भी चाय, लोगों के आनन्द को दुगुना कर रही थी। यद्यपि चाय ने अभी रण-सज्जा नहीं उतारी परन्तु

भविष्य के शान्तिमय व आराम के दिनों के लिये वह पूरी तैयारी कर रही है। वह दिन अब दूर नहीं जब चाय फिर अपना पुराना स्थान ग्रहण कर लेगी और रोजमर्रा की अनिवार्य वस्तु हो जायगी। आप भी उस दिन की तैयारी कर लीजिये ताकि शान्ति से चाय का आनन्द उपभोग कर सकें।

युद्ध की तरह शान्ति में भी

चाय का सहारा लीजिये

इण्डियन टी मार्केट एक्सपैन्शन बोर्ड द्वारा प्रचारित

IK 253

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

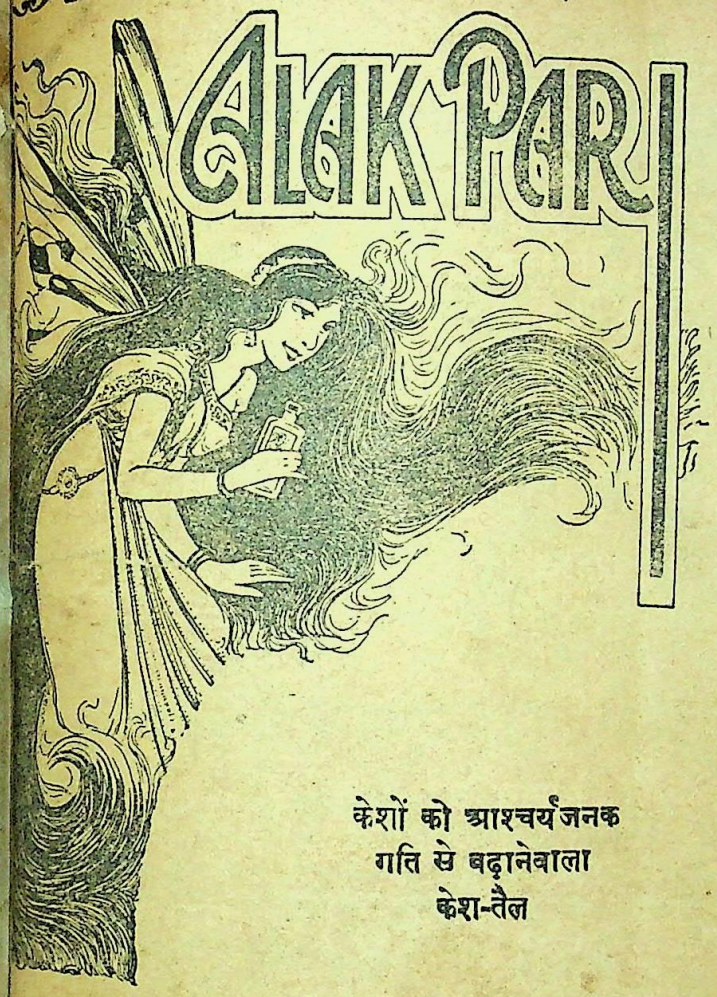

केशों को आश्चर्यजनक
गति से बढ़ानेवाला
केश-तैल

शुद्ध बादामरोग़न पर बना

अलकपरी

केशों में प्रतिमास ३-४ इञ्च वृद्धि।
६ महीने में एड़ी-चुम्बी केश।

'अलकपरी' का कोर्स

पहले सप्ताह में रूसी-खुश्की दूर हो जाती है।
दूसरे सप्ताह में केशों का झड़ना और उनके सिरों का फटना रुकता है।
तीसरे सप्ताह में नये केश उगते दिखाई देते हैं।
चौथे सप्ताह के अन्त तक केश ३-४ इञ्च बढ़ जाते हैं।
फिर प्रतिमास इसी औसत से बढ़ते रहते हैं।

६ महीने में केश एड़ी-चुम्बी बन जाते हैं।

मूल्य एक शीशी का २॥) है जो एक महीने को काफ़ी होती है। डाक-ख़र्च व पैकिङ्ग पृथक्। ६ से अधिक शीशियाँ डाक से नहीं भेजी जायँगी। अधिक के लिए ५) पेशगी भेजिए और अपने रेलवे स्टेशन का नाम लिखिए।

प्रतिष्ठित महिलाओं की सम्मतियाँ--

'अलकपरी' से बहुत लाभ है। १ शीशी और तुरन्त भेजिए।
१५-७-४५ कृष्णाकुमारी, धर्मशाला (पंजाब)।

Alak-Pari is proving of much use to me. Please send me three more bottles.
4-8-45 Mrs. S. Mandal, 45, The Mall, Lahore.

'अलकपरी' में केशों को बढ़ाने के लिए विद्युत् की शक्ति वर्त्तमान है। मैंने इसे केशों के लिए आश्चर्यजनक गुणकारी पाया है। कृपया ३ शीशियाँ तुरंत भेजें।
७-८ ४५ सत्यवती देवी, पासना, जौनपुर।

'अलकपरी' की ५ शीशियाँ इस्तेमाल कीं। बहुत लाभकारी तेल है। कृपया ३ बोतलें शीघ्र भेजें।
३०-८-४५ शान्तिकुमारी, कोटखाई, शिमला

व्यवस्थापिका—'अलकपरी', नया कटरा, इलाहाबाद।

हमारे एजेन्ट—

दिल्ली—रायल स्टोर्स, ३३, गोल बाज़ार।
—त्यागी ब्रदर्स, बेली बाज़ार।
—यूनाइटिड कमर्शियल सिंडीकेट, भूर।
राजनंदगाँव रामनारायण हरीदास सोनी।
आगरा—प्रियादास घनश्यामदास परफ़्यूमर्स, काश्मीरी बाज़ार।
लखनऊ—सालिग्राम मेहरोत्रा, ६, अमीनाबाद पार्क
जबलपुर—बाबूलाल राजाराम चौरसिया, गोविंदगंज।
जोधपुर—मेडिकल स्टोर्स, सराफ़ा बाज़ार।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कमज़ोर और कृष बच्चे डॉगरे-बालामृत के इस्तेमाल से ताक़तवर, पुष्ट और चुस्त बनते हैं।

निर्बल, निश्चेतन और निराश क्यों रहते हो ?

भोजन को पचानेवाला, ख़ून को बढ़ानेवाला, पाण्डु और अन्य रोग के बाद की निर्बलता को नष्ट करनेवाला

झंडु रक्तो फोस्फोमाल्ट

सुमधुर शक्तिवर्धक, अमूल्य ओषधि अवश्य सेवन करें

झण्डु फ़ार्मास्युटिकल वर्क्स लि०, बम्बई नं० १४

इलाहाबाद के चीफ एजेन्ट—एल० एम० घोलकिया एण्ड ब्रादर्स, ४६ जान्स्टनगंज।

दिल्ली और यू० पी० के सोल एजेन्ट—कान्तिलाल आर० पारीख, चाँदनी चौक, देहली।

यू० पी० एजेंट—कान्तिलाल आर० पारीख, चाँदनी चौक, दिल्ली।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

SOUTH INDIAN.. SERIES NO. 4

केशों की शोभा बिना
सारी सुंदरता
फीकी पड़
जाती है

इसीलिये केशोंको सजाने व संवारनेके नित्य नये तरीके निकलते आ रहे हैं और निकलते जायंगे। इस विशाल भारतवर्षमें विभिन्न रुचिके लोग हैं और आज ७० वर्षोंसे जवाकुसुम, हर तरहके लोगोंको पसन्द आता रहा है। हमारे देशमें धूल-धक्कड़के मारे बालोंकी जड़में गर्दा बैठ जाता है। फिर गर्मी इतनी तेज पड़ती है कि मस्तिष्कके स्नायु बहुत जल्द गर्म हो जाते हैं। इन दोनों कारणोंसे ही बालोंकी स्वाभाविक कमनीयता और मजबूती नष्ट होती है।

आयुर्वेदोक्त जड़ी-बूटियोंसे बना जवाकुसुम बड़ी आसानीसे मैलको निकाल देता है और बालोंकी जडको मजबूत बनाता है। इसके स्निग्ध स्पर्शसे मस्तिष्क शीतल हो जाता है।

७० वर्षकी सुप्रसिद्धिका समृद्ध

जवाकुसुम

केशोंकी शोभा बढ़ाता व मस्तिष्क शीतल रखता है

VM-4-H

सी० के० सेन एण्ड कं० लि०
जवाकुसुम हाउस — कलकत्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हर थाली से उन्हें ज्यादा स्फूर्ति दीजिये!

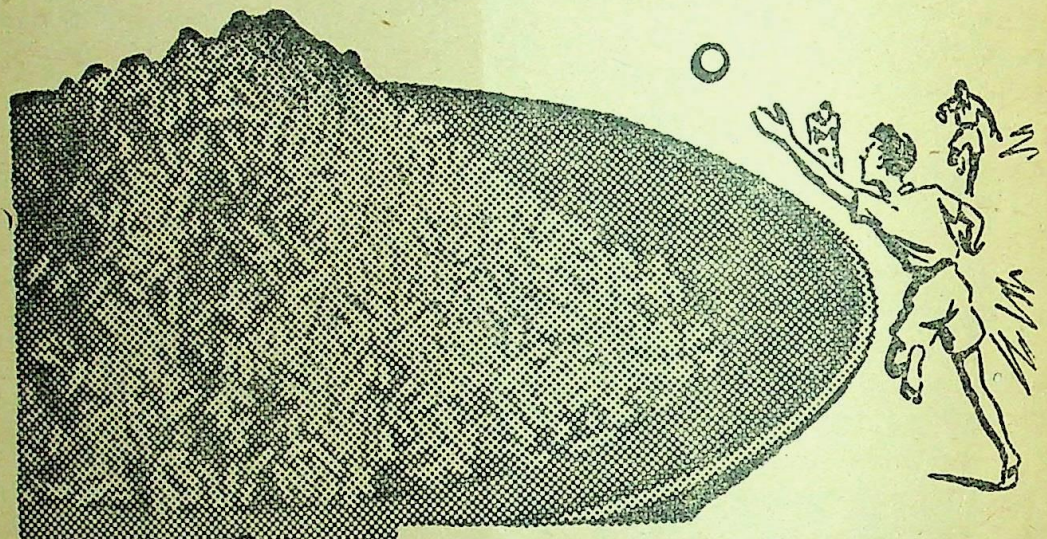

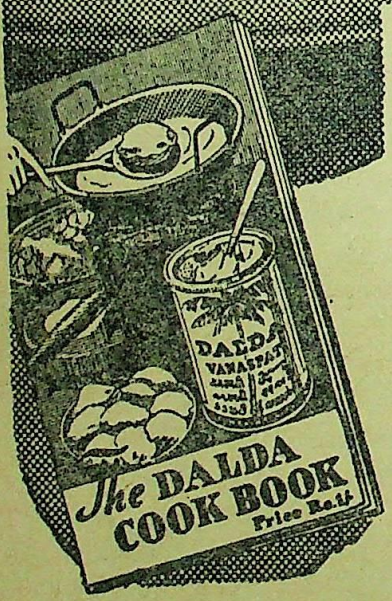

रसोई बनाने के पहले एक बात ध्यानमें रखना ज़रूरी है। बच्चोंको स्फूर्तिदायी चिजें—बहुत शक्ति देने वाली—खिलाना आवश्यक है। इधर यह भी जानना जरूरी है कि आहारों की स्फूर्तिदायी शक्तिमें मनीन—आसमान की तफावत होती है। हो सकता है कि बच्चे चाहे उतना खायें फिर भी उन्हें काफी स्फूर्ति न मिले—मा, प्राय: ऐसाही होता है। लेकिन याद रहे कि आहार की हर चिज जीवन-सत्वसंपूर्ण डालडामें तैयार करनेसे वह अधिक स्फूर्तिदायी होती है। जिस घरकी रसोई डालडामें बनती है उस घरमें स्फूर्ति की कभी रहनेकी कोई संभावना नहीं क्योंकि रसोई की सबसे बढिया शक्तिदायी चीजें कौनसी है इसकी जानकारी हर एक स्त्रीको होनी ही चाहिये। डाल्डा कुक बुक (अंग्रेजी) में आहार के बारेमें यह चीज प्रकृतिके बढ़ीया शक्तिदायी अन्नांश देती है जानकारी बातें और १५० से अधिक आहारोंका और आहारों को ज्यादा रसीले बनाती है। अगर्वा बयान किया गया है। Dept. E314 P. O. Box No. 353, Bombay के पते पर पत्र इसके वह केवल वनस्पति से बनती है। आने के पोस्टेज स्टाम्प भेजिये।

पोषक-तत्व संपन्न **डालडा** स्फूर्ति के लिये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महात्माजी का चमत्कार

प्रेमबटी ने अपनी ख़ूबी से सारी दुनिया में तहलक़ा मचा दिया।

कांग्रेस की राय

(प्रेमबटी वास्तव में एक अद्वितीय औषधि है, पहिले हमें इस औषधि पर इतना विश्वास न था, किन्तु जब हमने इसका परीक्षण किया तब हम इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि यह औषधि विज्ञापन में दिये गये तमाम रोगों की केवल एकमात्र अचूक औषध है। हम आशा करते हैं कि भविष्य में यह कम्पनी इससे भी उत्तम औषधियों का निर्माण कर जनता को लाभ पहुँचायेगी।—कांग्रेस देहली)

भारत के योगियों ने वनों और पर्वतों की कन्दराओं में रहकर वह चमत्कार दिखलाये हैं जिससे बड़े-बड़े वैज्ञानिक और चिकित्सक हैरत में आ गये हैं। आधुनिक चिकित्सकों को जब कोई रोग की औषधि से सफलता नहीं मिलती तब वह लाइलाज क़रार कर देते हैं। परन्तु महात्मा लोग जड़ी-बूटियों की सहायता से मुर्दे को भी जिला देने का दावा करते हैं। भाइयो, इसे ग़ौर से पढ़ो तथा अपने इष्ट मित्रों को सुनाओ। यह लेख जो लिखा गया है, कोई गप्प नहीं है बल्कि मेरे जीवन की चन्द घटनायें हैं जो आपके सम्मुख रखता हूँ। मेरा जन्म एक धनी परिवार में हुआ। अपने पिता का लाड़ला पुत्र होने के कारण ऐश और व्यसन में घिरा रहता था, लेकिन फिर भी मैं सुखी नहीं था। कुसङ्गत में पड़कर मुझे जरियान और प्रमेह रोग हो गया। पहले तो एक दो साल मैंने लोकलाज के कारण अपना भेद छिपाये रखा परन्तु रोग ने भयानक सूरत अख़्तियार कर ली, अब मैं घबरा उठा, संसार में चारों ओर अँधेरा मालूम होने लगा तब मेरी आँखें खुलीं। इलाज शुरू किया गया, बड़े-बड़े डाक्टरों, हकीमों, वैद्यों के फ़ीस रूप में रुपये और क़ीमती दवाइयों के ख़रीदने में पानी की तरह रुपया बहाने लगा, फिर भी मैं निराश ही रहा। दिल घबरा उठा और चारों तरफ़ से अन्धकार दिखलाई देने लगा और सोचने लगा कि इस दुःखमय जीवन से मर जाना बेहतर है। **पर यह बीस साल पहले की बात है।** अब आज मैं ख़ुश हूँ। आज उस परमात्मा की कृपा से आरोग्य हूँ और मेरे स्वस्थ बच्चे भी हैं जो बिलकुल आरोग्य हैं।

हुआ क्या! मुझमें इतना परिवर्तन कैसे हो गया? यह जानकर आपको आश्चर्य होगा कि मैंने एक दवा सेवन की! जो मैंने सेवन की, वह एक महान् त्यागी परोपकारी साधु की बनाई हुई थी, जो समय काटने के लिए गाँव से कुछ दूर एक पेड़ के नीचे पर रम रहे थे। यह मेरा सौभाग्य था कि और लोगों के साथ मैं भी दर्शनों के लिए जा पहुँचा। दैवी शक्ति से मेरे दुःखी जीवन के पिछले अध्याय उनके हृदय-पट पर खिंच गये और मेरी आँखों ने हृदय का सारा भेद अपने आप उस महान् पुरुष पर प्रकट कर दिया। मेरी कच्ची उम्र पर महात्मा को दया आई और उन्होंने मुझे कुछ जड़ी-बूटियाँ एकत्र करने की आज्ञा दी। मैंने वैसा ही किया और तब उनके सम्मुख ही मुझे उनके आदेश और निजी देख-रेख में 'प्रेमबटी' तैयार करनी पड़ी। उन्होंने मुझसे ४० दिन लगातार 'प्रेमबटी' का सेवन करने को कहा गया था, तथापि केवल बीस दिन के सेवन से ही मुझमें परिवर्तन होने लगा। मेरी कमज़ोरी और तमाम गुप्त बीमारियाँ जड़ से दूर हो गईं। पीले और उदास मुख पर लाली दौड़ने लगी, आँखों में फ़ानूस झूमने लगा और हृदय में जवानी का जोश उमड़ आया। महात्माजी के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के साथ ही अपने फ़र्ज़ को पूरा करने के लिए दुःखी जनों के निमित्त पिछले बीस साल से लगातार मैं इस प्रयोग को मुफ़्त बाँट रहा हूँ। यह अनेक पुस्तकाओं में भी छप चुका है। मुझे हर्ष है कि इस अमृत-तुल्य प्रयोग ने सैकड़ों की प्राण-रक्षा की, हज़ारों को मौत के मुँह से बचाया और लाखों का इससे भला हुआ। महात्मा-प्रदत्त 'प्रेमबटी' का नुस्ख़ा इस प्रकार है; नोट कर लें—

शुद्ध त्रिफला ५ तोला, त्रिकुट चूर्ण ५ तोला, शुद्ध सूर्यतापी शिलाजीत ५ तोला, शुद्ध बङ्ग भस्म ६ माशा, असली सूर्य-केसर ३ माशा, असली अकरकरा ६ माशा, असली नेपाली कस्तूरी ३ रत्ती। इन सब औषधियों को कूट-छानकर खरल में डाल कर ऊपर से शीतल चीनी का तेल २० बूँद, सन्दल तेल २० बूँद, बिरोजे का तेल २० बूँद एक-एक करके मिलाये। उसके बाद ब्राह्मी बूटी के अर्क़ में १२ घण्टा घोंटकर झरबेरी बेर के बराबर गोलियाँ बनावें और छाया में सुखा लें। एक-एक गोली सुबह शाम पाव भर गाय के दूध में एक तोला शक्कर मिलाकर सेवन करें। इसकी प्रशंसा हम अपने ही मुँह से नहीं करते बल्कि बड़े-बड़े वैद्यों, डाक्टरों, हकीमों, सेठ साहूकारों तथा रईसों, ज़मींदारों, सरकारी आफ़िसरों तक ने इसकी सराहना की है। वैद्यराज विश्वदत्त शर्मा, झोकर का कहना है कि यह बटी धातु का पतलापन, २० प्रकार के प्रमेह के लिए अक्सीर है।

'प्रेमबटी' में कोई हानिकारक चीज़ नहीं पड़ती और गुणकारी चीज़ें नुस्ख़े से ही प्रकट हैं। यह औषध वीर्य का पतलापन, जरियान के प्रमेह, पेशाब के साथ चूने की तरह वीर्य का जाना, पाख़ाने के समय धातु का जाना, स्वप्नदोष, सुस्ती, कमज़ोरी, नामर्दी, धातु, मधुमेह, सूज़ाक, जवानी में बुढ़ापे की-सी हालत हो जाना, असली ताक़त की कमी, स्मरण-शक्ति कमज़ोर पड़ जाना तथा और भी प्रदर-सम्बन्धी रोग दूर करके अत्यन्त ताक़त देती है और नस-नस में नवजीवन का सञ्चार करती है। अन्त में उन सभी को जिन्हें फ़ुरसत नहीं मिलती या शुद्ध औषधि प्राप्त नहीं कर सकते यह प्रयोग स्वयं बनाकर दाम के दाम में भेजने की कृपा की है। ४० दिन के लिए पूरी ख़ुराक विधिवत् ८० गोलियों का मूल्य ५॥=) रु० और २० दिन के लिए ४० गोलियों का मूल्य ३=) डाकख़र्च ॥।-)

पता—बाबू श्यामलालजी रईस, प्रेमबटी आफ़िस नं० (S. A.) धनकुट्टी, कानपुर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

1 कूटने से होनेवाले नुकसान को रोकिये।
यह है कपड़े धोने का सही तरीका

2

3

4

हर हफ़्ते कूट कर कपड़े साफ़ करने के पुराने तरीके से कपड़ो का अनावश्यक और मँहगा नुक़सान होता है— जैसे छेद होना या फट जाना।

इन अंकित चित्रों में कपड़े धोने का नया तरीका समझाया गया है। और उनके नीचे जो हिदायतें दी गई है उनसे आप देखेंगे कि किस प्रकार कपड़ों को बिना नुकसान दिये साफ़ किया जा सकता है।

(१) जिस कपड़े को धोना हो उसे पहले खूब भिगो लिजिए। यह आप नल के नीचे, टब में तालाब में कर सकते हैं— इससे कोई फर्क़ नहो पडता।

(२) जब कपड़े को खूब भिगो चुकें तो सारे कपडे में सनलाईट जरा ज्यादा मलें।

(३) साबुन लगे हुए कपड़े को हाथों से धीरे-धीरे गूँथिये। (इस कूटिये नहीं) तबतक गूँथिये (ठीक उसी तरह जैसे रोटी का आटा गूँथा जाता है) जब तक साबुन की झाग कपडे के हरेक तन्तु में प्रवेश न पाजाए। कपडे को जोर से रगड़ने की या बुरी तरह कूटने की आवश्यकता ही नहीं है। सनलाइट का "स्वयंकाम करनेवाला" फेन सरलता से सारे मैल को बाहर निकाल देगा-यदि आपको यह विश्वास हो जाये कि गूँथने से यह फेन कपडे के मैल में घुस चुका है। इस शक्तीशाली फेन में जो साबुन है वह मैल को छूते ही तत्काल फुला देता है। फेन उसे जज़ब कर लेता है। ऐसे जब आप कपड़े को खूब धोएँगे तो फेन के साथ सब मैल निकल जायेगा।

(४) फेन-जिसमें कि अब सारा मैल आचुका है-छुटाने के लिए कपड़े को खूब मलकर धो डालिए।

ऐसे सनलाइट के तरीके से धोए हुए कपडे बहुत समय तक चलते है।

सनलाइट साबुन कपड़ों की बचत करता है।

S. 77-23 HI

LEVER BROTHERS (INDIA) LIMITED

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री रत्नागिरी जी का अद्भुत चमत्कार

जिसने समस्त संसार को चकित कर दिया

रक्त, बल, वीर्य, उत्साह तथा उमङ्ग ही जीवन सफल बना सकती है।

ध्यान देने योग्य अमूल्य उपहार

अपूर्व कायापलट (रजिस्टर्ड)

निःस्वार्थ संसारसेवी भारतीय महात्माओं ने औषध-विज्ञान को अनेकों महान् खोजों और अमूल्य रत्नों से अलंकृत किया है। यूरोपियन चिकित्सक मर्ज़ और मरीज़ जब दोनों को लाइलाज घोषित करके शर्मिन्दा नहीं होते, वहाँ इन्हीं महात्माओं की बिना मूल्य की जड़ी-बूटियाँ मुर्दों को भी जिला सकने में समर्थ हुई हैं। ऐसी सच्ची घटनायें आये दिन एक न एक पढ़ने और सुनने में आया करती हैं।

बीस वर्ष पूर्व कल्लाती पहाड़ी पर विचरण करनेवाले स्वामी रत्नागिरी जी महाराज की सेवा एक बूढ़ा ग्वाला करने लगा। महाराज को एक दिन उस वृद्ध की कमज़ोरी पर दया आ ही गई और उन्होंने निम्नलिखित योग की ६ मात्रायें उस बूढ़े को दीं। नासमझी के कारण छहों मात्रायें एक साथ खा जाने से वृद्ध ग्वाले में अपूर्व शक्ति आ गई और रत्नागिरी जी के विधि-पूर्वक इलाज करने पर भी बुढ़ापे के बावजूद उसे तीन शादी करने पड़े। इस पर राजा, रईस, नवाब और रसिक जन इस योग को जानने के लिए आतुर हो उठे। नवाब बहावलपुर स्टेट हाजी हयात मोहम्मदख़ाँ साहब ने बाबा जी की बहुत ख़िदमत करके इसे प्राप्त कर लिया और लाहौर के पं० ठाकुरदत्त शर्मा को बतलाया। शर्मा जी ने इसे प्रथम तथा दो अन्य योगों से उत्तम बाजीकरण बतलानेवाले को एक हज़ार रुपया नक़द इनाम देने की घोषणा की। इसे आज बीस वर्ष के लगभग हो गये किन्तु अभी तक कोई पुरस्कार विजय नहीं कर सका। मथुरा के ख्यातिप्राप्त बाबू हरिदास जी ने चिकित्सा-चन्द्रोदय में छपवाया और हमने भी स्वयं बनाकर दुर्बल, नपुंसक, वीर्य-विकारी रोगियों पर बरता। तत्काल चमत्कार देख जन-साधारण के लाभार्थ अनेक पत्र-पत्रिकाओं में छपा दिया। आप भी बनाकर लाभ उठावें।

योग—शुद्ध बुरादा फ़ौलाद २० तोला, शुद्ध श्वेत मल्ल सिंदूर, शुद्ध कपूर १॥ माशा, एक घण्टा घृतकुमारी (गवार) के, मिट्टी के कुज्जे में मज़बूत बन्द कर पाँच सेर करण्डों में। दुबारा एक तोला हरताल वर्की शुद्ध १॥ माशा शुद्ध में तीसरी बार गन्धक आमलासार शुद्ध १ तोला ३॥ माशा में चौथी बार शुद्ध संस्कारित पारद १ तोला, ३॥ माशा को ऊपर की भाँति १६ आँच दे। फिर उसको, दारुहल्दी बराबर इन्द्रवधू डाल दे और नीचे आग जलावे, जब इन्द्रवधू जलकर राख हो जावे तो हवा देकर उड़ा दे। बस अपूर्व कायापलट तैयार है। चार-चार चावल सायं मक्खन, मलाई के साथ खावें ऊपर मिश्री-मिला दूध पीवें।

मथुरा के हरिदास जी लिखते हैं—इस योग के सेवन से एक हफ़्ते में एक आदमी का वज़न चार पौंड बढ़ गया, दूसरे का चेहरा लाल सुर्ख़ हो गया। भूपाल के वैद्यराज पं० बालकृष्ण शर्मा ने ३५० रोगियों पर बरता और आशा से अधिक गुणकारी पाया। रत्नाकर-सम्पादक श्री छोटेलाल जैन आयुर्वेदाचार्य ने गृहचिकित्सा पथ-प्रदर्शक में छापा कि इतना प्रचण्ड गुणकारी योग दूसरा नहीं देखा। श्री धर्मेन्द्र विद्यावतंस सिद्धान्त-शास्त्री अधिष्ठाता गुरुकुल बरला ज़िला मुज़फ़्फ़रनगर ने लिखा है—"अपूर्व कायापलट" नामक औषध सेवन कर रहा हूँ। जैसी प्रशंसा वैसा ही गुण है। बहुत लाभ हुआ। श्री चिरञ्जीलाल जैन आयुर्वेदशास्त्री मालिक कल्याण औषधालय बाह (आगरा) का कहना है कि मैंने २२५ रोगी अपूर्व कायापलट द्वारा जो कि धातु-विकार, नपुंसकता, बवासीर, रक्त-विकार आदि रोगों से ग्रसित थे, पूर्ण स्वस्थ किये।

हमारा दावा है कि केवल सात दिन सेवन से शरीर में रक्त दौड़ता नज़र आयेगा। २१ दिन में चेहरा लाल काश्मीरी सेब की तरह चमकने लगेगा। ४० दिन में नपुंसकता, मधुमेह, डायबटीज़, निर्बलता दूर हो जाती है। स्त्रियों के प्रदर दूर हो गर्भधारण शक्ति आती है। जिगर व मेदे की शक्ति बढ़ाकर भूख दूनी करता है। कफ, तिल्ली की ख़राबी, खाँसी, नजला, ज़ुकाम, बदन दुखना, ख़ून का पतलापन, आँखों का पीलापन, चिनगारी-सा उड़ते दीखना, बार-बार थूक गिरना, दमा तथा हर तरह की कमज़ोरी तुरन्त दूर कर नव-जीवन का संचार करता है। जाड़ा, गरमी, बरसात सभी मौसमों में एक-सा लाभ करता है। योग भली भाँति समझाकर लिखा है। फिर भी यदि आप न बना सकें तो बनी-बनाई १६ आँच दी हुई ४० दिन की ८० मात्रा डाक-ख़र्च सहित ६॥।=) में हम भेज देंगे। डाक-ख़र्च माफ़, पैकिंग, मनीआर्डर-फ़ीस अलग। कोई बात समझ में न आवे तो जवाबी कार्ड भेजकर उत्तर मँगा लें।

पता—रूपबिलास कम्पनी,

(रसायनशाला) नं० ४६७, धनकुट्टी, कानपुर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

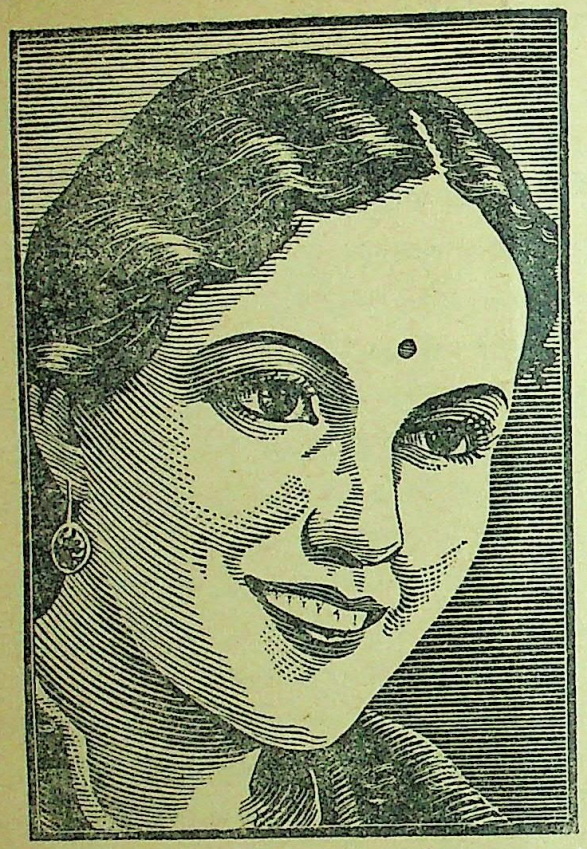

चर्म स्वास्थ्य से ही चर्म-सौन्दर्य बढ़ता है!

रैक्सॉना से चर्म स्वास्थ्य की रक्षा कीजिए

आपकी त्वचा तभी सुन्दर हो सकती है जबकि वह स्वास्थ्य हो और इसको स्वास्थ्य ही बनाए रखना चाहिए, नहीं तो वह सौन्दर्य शीघ्र जाता रहेगा। त्वचा को स्वास्थ्य और सुन्दर रखने के लिए ही सुन्दर, हरेरंग के और आसानी से फेन देने वाले टॉयलट साबुन रैक्सॉना का आविष्कार हुआ है। यह चर्म-किटाणुविनाशक 'कैडिल' की मिलावट से बनाया जाता है, जो कि ताज़गी और स्वास्थ्यदायक है। रैक्सॉना की झाग इस स्वास्थ्यदायक 'कैडिल' को शीघ्र ही शरीर के रुओं में पहुँचा देती है। जहाँ यह अपना काम करता है झाग शरीर पर जमा हुई धूल और पसीने को साफ़ करके त्वचा को स्वस्थ और सुरक्षित रखती है। चर्म-स्वास्थ्य के लिए सदैव रैक्सॉना से स्नान कीजिये।

बच्चों के लिए रैक्सॉना . . . रैक्सॉना की झाग इतनी कोमल और स्फूर्तिदायक होते है कि बच्चों की कोमल त्वचा के लिए तो यह आदर्श है। डाक्टर इस को इस्तेमाल करने की हिदायत करते हैं। याद रखिए रैक्सॉना का 'कैडिल' बच्चे की चर्म की फुन्सी फ़ोडों से रक्षा करेगा।

★ रैक्सॉना में मिलाया गया कैडिल किटाणु-विनाशक, स्वास्थ-दायक और ताज़गी देनेवाले तेलों का मिश्रण है जोकि चर्म को स्वास्थरखने में बहुत गुणकारी सिद्ध हुआ है। साइंसदानों ने भी इसके गुणों के कारण इसकी सराहना की है।

रैक्सॉना मरहम प्रयोग कीजिए। फुन्सी, फोड़े, ऐक जी मा, मुँहासे, आँख की कलौंस, झुर्रियाँ, दद्दोरे आदि सभी चर्म रोगों में रैक्सॉना मरहम लगाये। यद्यपि अभी सप्लाई कम है फिरभी बहुत से दूकानदारों के यहाँ तिकोने टिन मिल सकते है।

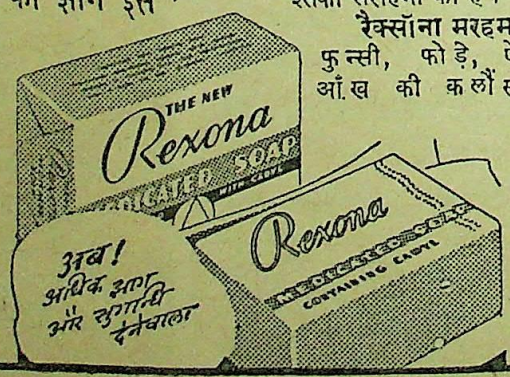

RP. 27-23 HL

REXONA PROPRIETARY LIMITED

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेख-सूची

१—लंका—आज—श्री सन्त निहालसिंह ... १
२—भूखा रोजेदार—पंडित श्रीराम शर्म्मा ... ७
३—ओ चन्दन—श्री प्रभाकर माचवे ... १०
४—पचमढ़ी अथवा विराटनगरी—पण्डित गोविन्द शास्त्री दुगवेकर ११
५—प्याऊ-पण्डत—पण्डित रामचन्द्र तिवारी ... १६
६—इस वर्ष—औद्योगिक अन्धकार—श्री परिपूर्णानन्द वर्मा २०
७—आदर्शवाद—श्री रामसरन शर्मा ... २३
८—गीत (कविता)—श्री 'नीरव' एम० ए० ... २५
९—रियासतों की वैधानिक प्रगति का प्रश्न—श्री राजमल लङ्डी, बी० ए० ... ... २६
१०—गीत (कविता)—श्री 'नीरव', एम० ए० ... ३१
११—सन्त-साहित्य का एक खोया हुआ रत्न—उमेशचन्द्र मिश्र ३२
१२—मौन साधना (कविता)—श्री महेन्द्र, बी० ए०, विशारद ३६
१३—बाघ के पेट में—श्री योगेन्द्रनाथ सिनहा ... ३७
१४—किसकी हँसी—श्री गौरीशङ्कर मिश्र, बी० ए० ४०
१५—परमाणु बम—प्रोफेसर ए० सी० बनर्जी, अध्यक्ष गणित-विभाग, प्रयाग विश्वविद्यालय ... ४१
१६—औझ-सुबह नित (कविता)—श्री गोपाल शर्मा, बी०ए० ४३
१७—कृषि-यज्ञ—श्री सेठ गोविन्ददास ... ४४
१८—दक्षिण अफ्रीका की वीरांगना—जगरानी देवी—श्री जगत-प्रकाश शर्मा, बी० एस-सी०, सिद्धान्तशास्त्री ... ५१
१९—ज्वार-भाटा—पंडित देवीदयाल चतुर्वेदी 'मस्त' ५७
२०—सामयिक विचार-प्रवाह ६१
२१—अश्रुहास—श्रीमती निर्मला मित्र ... ६८
२२—स्वर्णभद्र के सरस पुलिन पर (कविता)—श्रीअमिताभ गुप्त ७०
२३—नई पुस्तकें ७१
२४—विविध विषय ७६
२५—सामयिक साहित्य ८१
२६—सम्पादकीय नोट ८७

चित्र-सूची

१—लङ्का—आज सम्बन्धी ५ चित्र ... २-६
२—पचमढ़ी अथवा विराटनगरी सम्बन्धी ८ चित्र ११-१५
३—रियासतों की वैधानिक प्रगति का प्रश्न सम्बन्धी ७ चित्र २६-३०
४—सन्त-साहित्य का एक खोया हुआ रत्न सम्बन्धी १ चित्र ३२
६—दक्षिण अफ्रीका की वीरांगना—जगरानी देवी सम्बन्धी ६ चित्र ५१-५६

नई पुस्तक

कामायनी-अनुशीलन

महाकवि 'प्रसाद' का महाकाव्य 'कामायनी' बहुत प्रसिद्ध है। पर सबकी समझ में नहीं आता। इस पर अनेक समीक्षकों के ग्रन्थों में प्रकट हुए हैं। इसी ग्रन्थ का अनुशीलन इस में लेखक रामलालसिंह, एम० ए०, बी० टी०, साहित्यरत्न कामायनी का ऐतिहासिक तत्त्व, प्रकृति-वर्णन, चरित्र-चित्रण, भाषा तथा भावाभिव्यक्ति, छंद-विधान, रस-संचार, कामा- के मनस्तत्त्व, दार्शनिक तथ्य, युग की अभिव्यक्ति, प्रेम- आदि शीर्षकों में बड़ी मार्मिकता से किया है। अच्छे पर छपी कोई ढाई सौ पृष्ठों की सजिल्द पुस्तक का

मूल्य

पुस्तकिपो, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हलवे का स्वाद खाने से मिलता है।

हमारे यहाँ की बनी क्रीमोला टाफ़ी
फ़्रूट ड्राप्स तथा
रेशमी मिठाइयों का स्वाद लीजिए।
सभी दूकानों में मिलती हैं।

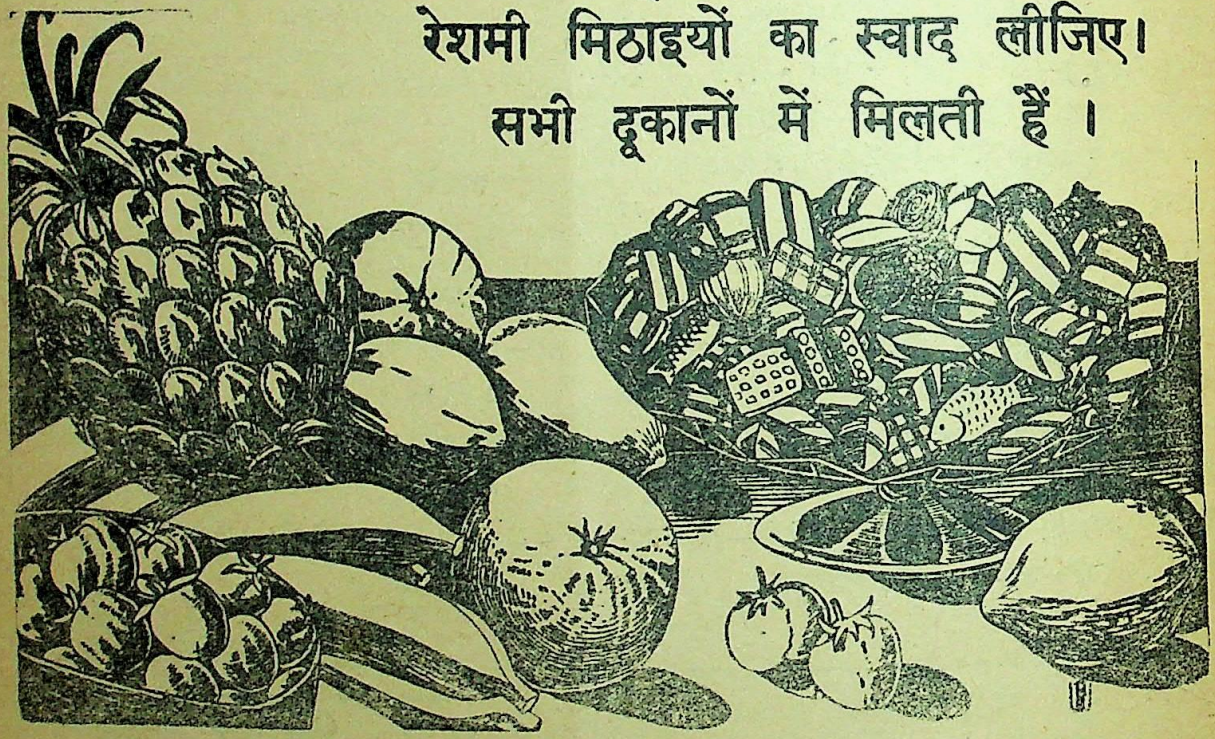

निर्माता—इण्डस्ट्रियल रिसर्च हाउस,
इंडियन प्रेस बिल्डिंग,
इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादक—देवीदत्त शुक्ल : उमेशचन्द्र मिश्र

जनवरी १९४६ पौष २००२; भाग ४७, खण्ड १ संख्या १, पूर्ण संख्या ५५१

लंका—आज

श्री सन्त निहालसिंह

हिन्दुओं में ऐसा कौन होगा जिसके मानसपटल पर लंका का नाम आते ही वे अगणित कहानियाँ चित्रित न हो उठें, जिन्हें बचपन में माँ-बाप से सुना था? अहिन्दुओं में भी ऐसे कम होंगे जिन्हें रामलीला में प्रतिवर्ष दिखाई जानेवाली उन घटनाओं का ज्ञान न हो। रामचरित्र के सम्बन्ध में वाल्मीकि अपना जो अमर काव्य छोड़ गए हैं, उसकी कथा प्रत्येक भारतीयों ने सुनी होगी। उस कथा का प्रचार गोस्वामी तुलसीदास के रामचरितमानस से हिन्दी-भाषियों के घर-घर में हुआ है।

लंका का प्रसंग आने पर मस्तिष्क में बालकपन से संचित वे कहानियाँ फिर ताजी हो उठती हैं। अब से हजारों वर्ष पूर्व लंका में भयानक युद्ध हुआ था उसकी प्रतिध्वनि लंका का नाम सुनते ही फिर कानों में गूँजने लगती है।

मानसपटल पर चित्रित हो उठनेवाली वे कहानियाँ और लंका में युद्ध की वह प्रतिध्वनि अन्त में उस समझौते में निमज्जित हो जाती हैं जो भगवान् रामचन्द्र ने हमारी मातृभूमि और दक्षिण जानेवाले उस मुक्ताकार द्वीप के बीच किया था। अपनी विजयी सेनाओं को उन्होंने वापस कर लिया था और लंका की गद्दी पर लंका के ही एक राजपुरुष—विभीषण—को अभिषिक्त किया था।

लंका के किसी अज्ञातनामा शिल्पी ने विभीषण का जो चित्र अंकित किया है वह अक्षय्य आनन्द के प्रतीक के रूप में अब भी वर्त्तमान है। वह मूर्ति जिस मन्दिर में रक्खी है वह उतना ही पुराना है जितना पवित्र है। वह मन्दिर उस जलधारा के तट पर है जिसे पुराने काल में 'कल्याणी गंगा' कहा जाता था। उस जलधारा-द्वारा उपजाऊ घाटी में रहनेवाली स्त्रियाँ और पुरुष अब उसे 'केलानी गंगा' कहते हैं।

शताब्दियों पूर्व लिखे गए उल्लेखों से पता लगता है कि उस घाटी का नाम 'नाग-द्वायना' था। 'राजवलय' के अनुसार विभीषण ईसा से २३८७ वर्ष पूर्व वहाँ का शासक था। गौतम का जन्म उससे १८४४ वर्ष उपरांत हुआ था। धार्मिक बौद्धों का विश्वास है कि गया में बुद्धावस्था प्राप्त करने के बाद बुद्ध जी दो बार उस प्रान्त में पधारे थे। एक अर्द्ध-गोलाकार स्तूप जिसे आजकल 'दा गोबा' कहा जाता है, उसी स्थान पर बना हुआ है जहाँ पर बुद्ध जी आकाश से अवतीर्ण हुए थे।

बौद्ध-धर्म आजकल लंका का प्रधान धर्म है। हिन्दू-धर्म भी बना हुआ है। इन दोनों धर्मों के माननेवाले अधिकांश व्यक्ति वे ही हैं जिनके पूर्वज भारत के विभिन्न भागों से जाकर लंका में बस गए थे। परिस्थिति यह है कि बौद्ध अधिकांशतः द्वीप के एक भाग में आबाद हैं और हिन्दू दूसरे भाग में। यह भी ध्यान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देने की बात है कि हिन्दुओं की आबादीवाला लंका का भाग बौद्धों की आबादीवाले भाग से प्राकृतिक व अन्य विशेषताओं की दृष्टि से सर्वथा भिन्न है।

लंका का उत्तरी भाग जिसे 'सिलोनी तामिलों' का देश कहा जा सकता है—वहाँ के निवासी अपने को इसी नाम से प्रसिद्ध करते हैं और लंका के अन्य विभागों के निवासी भी उन्हें इसी नाम से संबोधित करते हैं—एक प्रायद्वीप है। उसका नाम है 'जाफना'। स्थल की एक सँकरी पट्टी-द्वारा यह मुख्य द्वीप से जुड़ा हुआ है। इस संकीर्ण भूभाग को 'एलीफेण्ट पास' कहते हैं।

इस विचित्र नामकरण का कारण यह नहीं है कि उन प्राचीन दिनों में जब कि इस भूभाग में जंगल आजकल की अपेक्षा अधिक घने थे, हाथी बहुतायत से पाए जाते थे। कारण वस्तुतः यह है कि प्राचीन काल में किसी बहुत बड़ी चीज के लिए 'हाथी' शब्द का विशेषण के रूप में प्रयोग किया जाता था।

जाफना के निकट बहुत से छोटे-छोटे द्वीप हैं। इनमें सबसे बड़ा मनार है। मनार एक सँकरा और लम्बा द्वीप है जो भारत की ओर फैला हुआ है। उसका उत्तरी सिरा 'टाली मनार' भारतीय

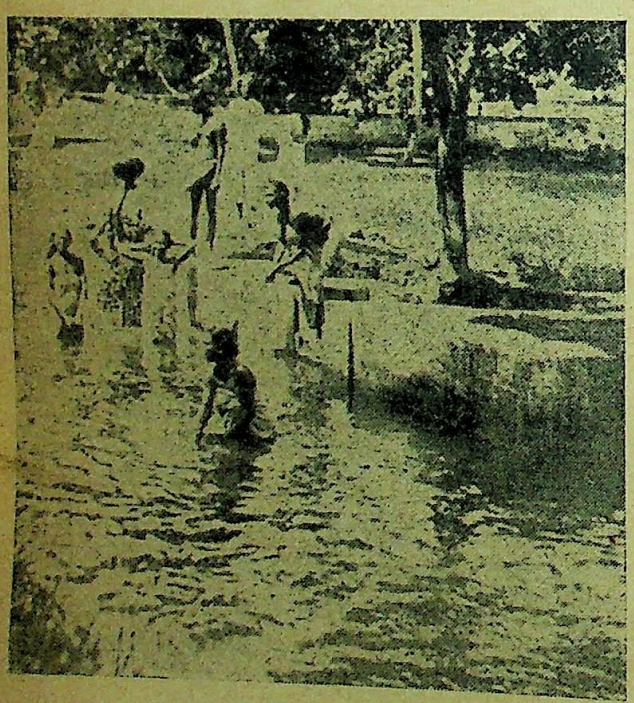

बौद्ध तीर्थयात्री मन्दिर-प्रवेश से पूर्व स्नान कर रहे हैं।

तट के धुर दक्षिणी स्थान धनुष्कोटि से कुछ ही मील दूर है। कहते हैं, नल और नील ने अपना पुल धनुष्कोटि से ही बनाया था। प्रसिद्धि है कि सीता परमेश्वरी का उद्धार करने के लिए रामचन्द्र की सेना इसी पुल पर होकर मुख्य द्वीप में गई थी।

आजकल लंका को जानेवाले प्रत्येक यात्री का ध्यान हठात् उन चट्टानों की ओर आकृष्ट होता है जो समुद्र में एक कतार में फैली हैं और जिनसे जहाज को बचाने के लिए मल्लाहों को री सावधानी रखनी पड़ती है। उन्हें देखकर प्रत्येक हिन्दू के मन में यही विचार आता है कि ए श्रीरामचन्द्र-द्वारा निर्मित सेतु के भग्नावशेष ही हैं।

पर भूगोल-विद्या-विशारदों का अनुमान कुछ दूसरा ही है। उनका कथन है कि हजारों वर्ष पूर्व लंका एक पतले भूभाग-द्वारा भारत से जुड़ी हुई थी। अब वह भूभाग जलमग्न हो गया है और ये चट्टानें उसी का अवशेष हैं। वैज्ञानिक परिभाषा में इस प्रकार के सम्बन्धक को 'स्थल-सेतु' कहा जाता है। इस अनुमान के समर्थन में वैज्ञानिक हजारों प्रमाण भी उपस्थित करते हैं।

इस सम्बन्ध में यह बतला देना भी आवश्यक है कि पिछले दिनों इंजीनियरों ने मनार को मुख्य द्वीप से एक पक्की सड़क-द्वारा जोड़ दिया है। इस सड़क पर पटरियाँ बिछा दी गई हैं जिन पर रेलगाड़ी दौड़ा करती है। इस कार्य से भारत और लंका के बीच का समुद्री मार्ग बहुत कुछ छोटा हो गया है।

जाफना प्रायद्वीप चौरस और सूखा है। वहाँ वृष्टि बहुत अल्प होती है। बंगाल की खाड़ी से आनेवाली मौसमी हवाएँ जब वे से चलती हैं तभी प्रायः वहाँ जल गिरता है। वहाँ सिंचाई के सहा कुछ खेती भी होती है। सिंचाई के तरीके पुराने हैं। आज भी इस दिशा में कुछ उन्नति नहीं हुई है। ढेंकली ही सिंचाई का प्रमुख साधन है। जहाँ तालाबों या छिछले जलाशयों से पानी लेना होता है वहाँ 'बेंड़ी' का प्रयोग होता है। खेती की कष्टसाध्यता के कारण उस स्थान के निवासियों का ध्यान उद्योग-धन्धों की ओर अधिक है। नारियल वहाँ की मुख्य उपज है। उसी के धन्धे में वहाँ निवासी दिन भर—और उजेली रातों में रात-रात भर—लगे रहे जाते हैं।

वे जितने मजबूत होते हैं, उतने परिश्रमी भी हैं। कारण यह है कि उन्हें जीवन की अत्यावश्यक सुविधाओं को जुटाने के लिए पीढ़ी-दर पीढ़ी कठोर परिश्रम करना पड़ता है। कठोर परिश्रम द्वारा जो अनाज पैदा किया जाता है वह बहुमूल्य होता है। अतिरिक्त उपज की बिक्री से प्राप्त रुपए के सम्बन्ध में भी यही सत्य है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि वहाँ के निवासी पूर्णरूप मितव्ययी हैं।

उनके पूर्वज भी जो दक्षिण भारत से वहाँ आ बसे थे, वे ही परिश्रमी और मितव्ययी थे। यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा सकता कि तामिल नाड से मूल-निवासी कब आकर वहाँ बसे थे। यह घटना निर्दिष्ट ऐतिहासिक काल से सम्भवतः बहुत अधिक पूर्व की है।

तामिलों की बस्ती द्वीप के पूर्वी भाग में भी है। इस प्रदेश से कुछ साहसी तामिल समय समय पर पच्छिम और दक्षिण देशों में भी गए हैं। ये लोग जैसे बुद्धिमान् हैं, वैसे ही अध्यवसायी भी। इसी कारण ये वहाँ अपने पैर जमाने में सफल हो गए हैं और उन्होंने उत्तर से अपने अन्य बन्धुओं को भी बुला लिया है।

तामिल और मलाबारी दक्षिण भारत से सीधे भी वहाँ पहुँचे हैं, कोलम्बो और दूसरे शहरों में। उनमें अधिकां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...पार या 'अदल-बदल' का व्यवसाय करते हैं। कुछ 'डाक' पर ...फेक्टरियों, कारखानों और घरों में भी काम करते हैं।

मजदूरों की एक बहुत बड़ी संख्या पाक के मुहाने से होकर ...ले जाई गई है जो वहाँ के बड़े-बड़े क्षेत्रों में काम करती ...उन क्षेत्रों में पहले काफी पैदा होती थी। अब वहाँ चाय, ...और कोको भी पैदा किए जाते हैं।

यदि ये भारतीय तामिल न होते तो लंका के अनेक कारखाने ...भी नहीं जा सकते थे। न उस पहाड़ी प्रदेश में जो लंका ...ध्य भाग है, सड़कें ही बन सकती थीं। आज भी यदि तामिल ...लंका को छोड़ दें तो वहाँ के अनेक कारखाने बन्द हो ...द्वीप के उत्तरी भाग में या पूर्वी भाग में, शहरों में या छोटे ...में या अन्य स्थानों में या कारखानों में जितने भी तामिल ...में से अधिकांश हिन्दू हैं। उनमें से कुछ वैष्णव भी हैं पर ...की संख्या अधिक है। वे सब त्रिमूर्ति शिव की अपेक्षा 'परम ...के अधिक उपासक हैं।

...हाँ के उपासना-मंदिरों की रचना बहुत कुछ ...भारत के मंदिरों के अनुसार है। मुख्य-...के इधर-उधर दो ऊँचे गुम्बद या 'शिकार' ...हैं जिन पर विविध अवतारों की मूर्तियाँ ...या उत्कीर्ण होती हैं। उन मूर्तियों के ...उनके ज्ञापक विशेष चिह्न—जैसे वाहन ...—भी रहते हैं।

...मध्यवर्ती प्रतिमा के ऊपर प्रायः एक 'शिकार' ...है। उस पर भी देवी-देवताओं के चित्र ...हैं। यह द्वारस्थित 'गोपुरम्' से मिलता-...ही होता है।

...उन शताब्दियों में जब कि लंका का सामु-...कटिबन्ध पुर्तगालियों और डचों के शासन ...बहुत से हिन्दू ईसाई बना लिए गए थे। ...दिनों उक्त शासनाधिकारी ईसाइयत के प्रचार ...बहुत यत्नशील थे। वे अनेक प्रकार की ...ओं का प्रलोभन देते थे और साधारण ...के लिए उन सुविधाओं का लोभ संवरण ...सकना कठिन था। कुछ लोगों को तरह-...दबाव डालकर भी ईसाई बनाया गया था।

...यह बात उल्लेखनीय है कि सन् १७९६ में डचों को ...अंग्रेज उक्त सामुद्रिक कटिबन्ध में अधिक प्रभावशाली हो ...और १८१५ के बाद से तो सम्पूर्ण लंका-द्वीप उनके ...र में आ गया था। उक्त प्रदेश में इस बीच भी ईसाइयों ...चार-कार्य पूरे वेग से चलता रहा, फिर भी गत वर्षों में ...प्रदेश के ईसाइयों की संख्या में कोई उल्लेखनीय वृद्धि नहीं ...।

...लंका का पश्चिमी और दक्षिणी भाग भी चौरस है, पर वह नम है। वहाँ काफी वृष्टि होती है। वहाँ वर्ष के एक भाग में अरब सागर और हिन्द महासागर की ओर से आनेवाली मौसमी हवाओं से वृष्टि होती है और दूसरे भाग में बंगाल की खाड़ी से आनेवाली हवाओं से। पहाड़ी भाग में वृष्टि अत्यधिक होती है। कहीं कहीं पर वृष्टि का औसत १५० इंच या उससे भी अधिक हो जाता है। चाय के क्षेत्र इसी भाग में अधिक हैं।

पश्चिमी और दक्षिणी भाग में समुद्र के किनारे-किनारे जो जमीन की चौड़ी पट्टी चली गई है उसकी जलवायु गर्म और नम है। फलतः वहाँ हरियाली अधिक मात्रा में है। समुद्र-तट पर नारियल के वृक्षों की पंक्तियाँ ऐसी लगती हैं मानो झालर लगी हो। दिन के विभिन्न भागों में उनका दृश्य कभी नीलमणि-सा लगता है, कभी पद्मपराग-सा और कभी गोमेद-सा। झंझा के झकोरों से प्रताड़ित नारिकेल-वृक्ष झुक जाते हैं और उनकी पत्तियाँ समुद्र-वीचियों का चुम्बन करने लगती हैं। उन वीचियों पर प्रवाल-द्वीपों से टकराकर उत्पन्न हुए समुद्रफेन का दृश्य परम मनोरम

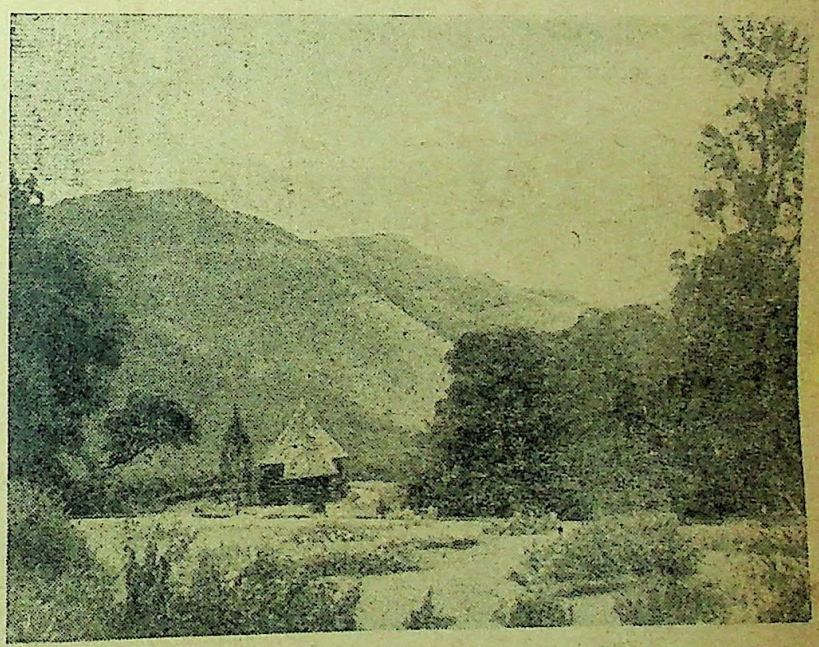

द्वीप के उच्चतम प्रदेश के ये बाग संसार के सर्वश्रेष्ठ उद्यानों में गिने जाते हैं। इनका नाम 'हंगाला' प्रसिद्ध है जो 'शंखगाल' का अपभ्रंश प्रतीत होता है। यह भी प्रसिद्धि है कि रावण की सेनाओं ने राम की सेनाओं को भयभीत करने के लिए यहीं पर शंखनाद किया था।

[चित्र के स्वत्व लेखक-द्वारा सुरक्षित]

होता है। दो नारिकेल-वृक्ष एक ही कोण पर झुके कदाचित् ही देखे जाते हैं। स्थल की नोकें समुद्र के भीतर घुसी हुई दृष्टिगोचर होती हैं, जो खाड़ी का दृश्य उपस्थित करती हैं। इन नोकों की सीमाएँ नारिकेल के वृक्ष बनाते हैं। लहराता हुआ ज्वारभाटा उन नारिकेल-वृक्षों से टकराता है। उसकी ऊँची लहरें दीवाल के समान दिखाई देती हैं। भँवर बनाता हुआ समुद्रफेन लौटकर फिर अपने बड़े भाग पर जा पड़ता है—अधिक बल प्राप्त करके किनारे पर दुगुने वेग से पुनः आक्रमण करने के लिए। मानो वह स्थल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का भीतर की ओर अधिक बढ़ना रोकने के लिए प्रयत्नशील है। पर इधर-उधर से बाधित होकर उसे फिर सिर झुकाकर समुद्र की शरण लेनी पड़ती है। रेल की लाइन बार-बार समुद्र-तट के समानान्तर दिखाई पड़ती है और कभी-कभी तट के अत्यधिक निकट भी। पर समुद्र के प्रबल प्रतिरोधपूर्ण हस्तक्षेप के कारण उसे फिर तट से दूर हटना पड़ता है।

तट से दूर, देश के मध्यभाग में, धान के हरे-भरे खेत दिखाई देते हैं। उनका रंग पन्ना के समान है। खेतों के बीच-बीच नारियल और सुपारी के वृक्ष हैं। कहीं-कहीं पहाड़ियों को काट-काटकर समतल कर लिया गया है जिससे वहाँ धान की खेती हो सके, जो लंकावासियों के जीवन के लिए अनिवार्य वस्तु है। खेत घुमावदार शृङ्खला में बनाए गए हैं। प्रत्येक शृङ्खला चारों ओर से ऊँची खाई से घिरी होती है। वह खाई जल-भाण्डार का काम देती है और साथ ही मेंड़ का भी। जब खेत में कीचड़ या पानी रहता है, इसी पर होकर चला जाता है। जब सिंचाई करनी होती है तब थोड़ी-सी मिट्टी किसी स्थान से हटा दी जाती है। अररराता हुआ जल गुरुत्वाकर्षण के नियम के अनुसार निम्नस्थ खेत में गिरने लगता है। इस प्रकार एक खेत से दूसरे खेत को सींचता हुआ जल विभिन्न स्तरों की अनेक छोटी-छोटी झीलें बना देता है। उन पर जब सूर्य की किरणें पड़ती हैं तब ऐसा लगता है मानो चाँदी के बढ़िया पालिशदार बड़े-बड़े दर्पण बिछे हों। उपयुक्त समय पर किसान इस पानी को खेत से बाहर निकाल देता है, खाद डालता है और आगामी फसल के लिए बीजनिक्षेप करता है। तब ऐसा लगता है मानो तराई की भूमि ने फ्राक पहना हो—ऐसा फ्राक, जिसमें विविध रंग की झालर की कई कतारें हैं।

उच्च भाग में भी प्रायः प्रत्येक पहाड़ी सिर से पाँव तक हरी दिखाई देती है। वृक्षावलि उस हरियाली की कलँगी का काम देती है। ढलाव पर चाय-बागान हैं। छोटे-छोटे नाले समुद्र की ओर दौड़ते दिखाई देते हैं जो जहाँ-तहाँ झरनों का रूप धारण कर लेते हैं।

उस प्रान्त के निवासी उतने मजबूत और परिश्रमी नहीं हैं जितने कि उत्तरी भाग के तामिल। पर उनका व्यवहार अपेक्षाकृत अधिक सभ्य है और बातचीत का ढंग अधिक मनोहर। उनके पूर्वज भी भारत से ही आए थे। वह मिट्टी जिससे वे बने हैं, हमारी मातृभूमि की ही है। उनकी धमनियों में प्रवाहित होने वाला रक्त भी शत-प्रतिशत भारतीय है।

वे अपनी उत्पत्ति बंगदेश की रानी सुप्पादेवी के पौत्र विजय से मानते हैं। उत्पत्ति के संबंध में एक मनोरंजक कहानी है। उन दिनों बंग में सिंह नाम का कोई वीरपुरुष था। सम्भवतः वह डाका डाला करता था। कहानी के अनुसार वह एक राजपुत्री को, जो पालकी पर कहीं जा रही थी, पकड़ ले गया। उसे ले जाकर उसने एक गुफा में रक्खा जो उस राजपुत्री के पिता के महल से बहुत दूर थी।

सिंह से राजपुत्री के एक पुत्र हुआ। उसका नाम था विजय। वह भी अपने पिता के समान ही पराक्रमी था और किसी का शासन नहीं मानता था। उससे तङ्ग आकर जनता ने माँग की कि उसे, उपद्रवी राजकुमार को, उसके साथियों सहित, देश-निकाला दिया जाय।

फलतः इस दुष्टदल को एक नौका पर सवार कराया गया और साथ में पर्याप्त खाद्य-सामग्री भी रख दी गई। नौका बहते बहते लंकाद्वीप से लगी। लंका के तट-रक्षकों से विजय का युद्ध हुआ। सफलता विजय के पक्ष में रही।

इस सफलता के मूल में एक नारी का भी हाथ था जो तट-रक्षकों के नेता की लड़की थी। विजय का पराक्रम देखकर वह उस पर आसक्त हो गई और उसने विजय को वे सारे गुप्त रहस्य बतला दिए जिन्हें जानकर विजय सरलता से उन रक्षकों को परास्त कर सका। धीरे-धीरे उसका समस्त द्वीप पर एकच्छत्र राज्य स्थापित हो गया।

उन निवासियों के गणनानुसार यह घटना २५ सौ वर्ष पुरानी

'कल्याणी गंगा' का निकटवर्त्ती मन्दिर
यह उसी स्थान पर निर्मित बतलाया जाता है
जहाँ बुद्ध भगवान् स्वर्ग से अवतरित हुए थे।
[चित्र के स्वत्व लेखक-द्वारा सुरक्षित]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर उनमें कुछ विशेषताएँ ऐसी हैं जो इस घटना की सत्यता
ट करती हैं। उनमें से एक है जात-पाँत का विभेद। एक वर्ग
है जो अपने को सर्वोच्च मानता है। यह वर्ग 'ग्वाइयागामा'
ाता है। बौद्ध भिक्षु भी इसके अपवाद नहीं हैं। पिछले दिनों
'ग्वाइयागामा' के एक छोटे-से समुदाय 'रादेल्ला' से बाहर
ई ही कोई बौद्ध--याजक बनाया गया हो। यद्यपि अब से ५०
हले एक नियम ऐसा बनाया गया था जिसके अनुसार
जाति में उत्पन्न व्यक्ति भी—जैसे ताड़ी चुआने का पेशा
वाली जाति के मनुष्य—बौद्ध-भिक्षु बन सकते हैं।

भारत की भाँति लंका में भी अब पेशे के अनुसार जाति का
नहीं रक्खा जाता है। एक सिंहाली महाशय जो आजकल
हैं, चूना बनानेवालों की जाति में उत्पन्न हुए थे। एक
नेता, यदि जात-पाँतवाली रूढ़ि प्रबल रहती तो,
ही बने रहते। उपर्युक्त दोनों नेता प्रभावशाली
त्व रखते हैं और प्रजातन्त्र में दोनों की एक-सी
है।

सिंहालियों में उनको छोड़कर, जिनके पूर्वज डच्चों
पोर्चुगीजों के शासनकाल में ईसाई बन गए थे, शेष
द्ध हैं। एक प्रभात को, जो बुद्धधर्मानुसार अत्यधिक
माना जाता है, वे एक लम्बा जलूस बनाकर निक-
बौद्ध-मठ में जाते हैं। स्त्रियाँ और पुरुष सब उस
श्वेत वस्त्रों से आच्छादित दिखाई देते हैं। प्रत्येक
ध में एक छोटी-सी टोकनी होती है जिसमें देवार्चन
ए पुष्प भरे होते हैं।

पड़ोसी-प्रेम उन लोगों में बहुत पाया जाता है। जब
भी अजनबी को अपने बीच पाते हैं तब उसके हाथ
दो-चार फूल अवश्य दे देते हैं और उससे अनुरोध
है कि वह उन फूलों को करुणामय बुद्धदेव के
पर चढ़ा दे। इस प्रकार, अपने विश्वास के अनुसार,
पड़ोसी की निर्वाण-प्राप्ति में वे सहायता करते हैं।
प-सत्कार की भावना भी इन लोगों में बहुत अधिक
जाती है।

इतने भले और मिलनसार होते हुए भी वे सीधे-सादे नहीं
कहीं किसी ने उनका अपमान किया या उन्हें उचित-अनुचित
उत्तेजित कर दिया कि उनका छुरे-जैसा तेज चाकू उसके
दिखाई पड़ता है।

जहाँ तक आत्म-सम्मान का प्रश्न है, चाय के क्षेत्रों में मज-
करनेवाले तामिल इसका निकृष्ट उदाहरण हैं। वे डरपोक
व्यू हैं। मैंने अपनी आँखों तामिल स्त्री-पुरुषों को मालिकों
मने, या अपने मित्रों और सम्बन्धियों के सामने, खुशामद के
भूमि पर लेटते देखा है। भारत के ये मजदूर अपने दैनिक-
में शेष द्वीप-वासियों से अलग-अलग रहते हैं। वे जिन
झोपड़ियों में रहते हैं वे 'प्राइवेट प्रापर्टी' पर बनी हैं। उस 'प्रापर्टी' की रखवाली पठान करते हैं, जिनसे डरपोक तामिल बहुत भयभीत रहते हैं।

'स्टेटों' के आस-पास के गाँवों में बसे हुए सिंहाली तामिलों से सम्पर्क बढ़ाने की रत्ती भर भी चेष्टा नहीं करते। वस्तुतः वे तामिलों से दूर-दूर ही रहते हैं। पिछले विधान से इन दोनों जातियों के बीच की खाई और भी चौड़ी हो गई है।

यह सत्य है कि इन दोनों जातियों के बीच भाषा और धर्म की चौड़ी दीवालें हैं। पर इनमें जो परस्पर उदासीनता और विद्वेष-भावना है उसके लिए भाषा और धर्म की भिन्नता-मात्र को ही कारण नहीं माना जा सकता।

वास्तविक कारण यह है कि गत शताब्दियों में तामिल नाड

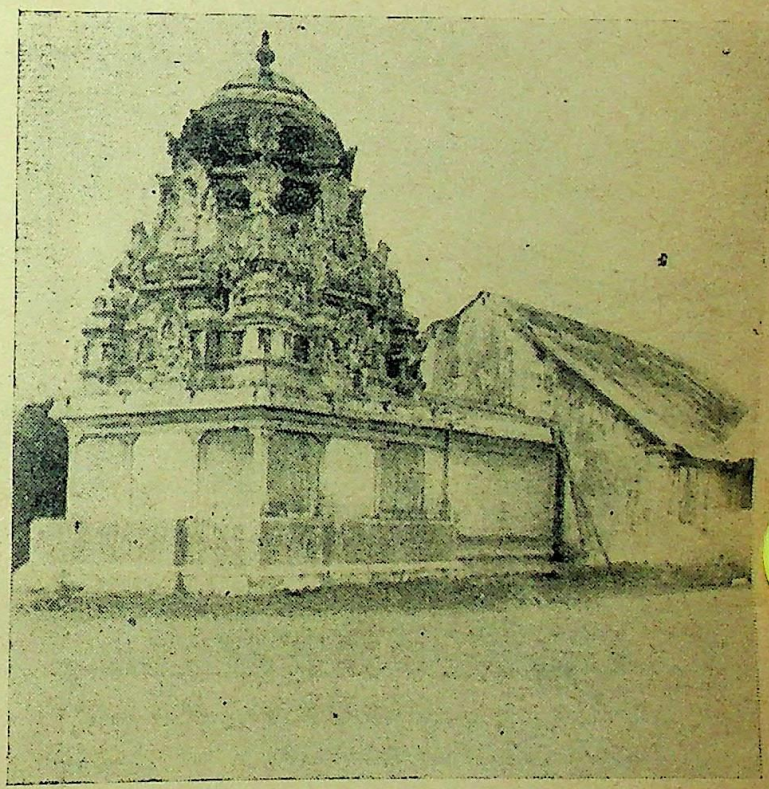

लंका का एक मन्दिर—यह मन्दिर दक्षिण भारत के मन्दिरों की शैली पर बना है। तामिल यहाँ पूजा करते हैं।

[चित्र के स्वत्व लेखक-द्वारा सुरक्षित]

की ओर से आक्रमण होते रहे हैं। कभी-कभी आक्रमणकारी लंका को अपने अधीन करने में सफल भी होते रहे हैं। सिंहालियों की ओर से भी उन दिनों ऐसे आन्दोलन चलाए जाते थे जिनका उद्देश्य उन आक्रमणकारियों को देश से बाहर निकाल देना और उनके आक्रमणों का उत्तर प्रत्याक्रमणों से देना था। उन दिनों घृणा का जो भाव जाग्रत हो उठा था वह अब तक वर्त्तमान है।

राजनैतिक जागर्ति ने भी इस कटुता में वृद्धि की है। सिंहाली पाँच लाख तामिलों का वहाँ रहना अपने लिए भय का कारण मानते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। तामिल जिस प्रान्त में बसे हैं उसकी आबादी विरक्त ही है। इस भय से कि कहीं तामिल बहुमत में न हो जायँ, सिंहालियों ने अधिकांश तामिल मजदूरों को वोट देने के अधिकार से वञ्चित रखवाने का भी पूरा प्रयत्न किया है।

इसके अतिरिक्त यह आन्दोलन भी चलाया जा रहा है कि पार्वत्य प्रदेशों में बसे भारतीयों की आबादी में कमी कर दी जाय। उक्त आन्दोलन उन्हीं प्रान्तों में सीमित हो, यह बात भी नहीं है। जो भारतीय कोलम्बो के 'डाक' में या दूसरे कारखानों या फैक्टरियों में काम कर रहे हैं उन्हें भी भारी विरोध का सामना करना पड़ रहा है। उनको उन कामों से हटाने के प्रयत्न किए जा रहे हैं जिनमें वे वर्षों से लगे हुए हैं और ऐसे प्रयत्नों को 'स्टेट काउंसिल' का समर्थन प्राप्त है। इस कारण भी दोनों जातियों में वैमनस्य की मात्रा बढ़ रही है।

वैधानिक सुधारों की नवीनतम योजना, यद्यपि उसे ब्रिटेन की

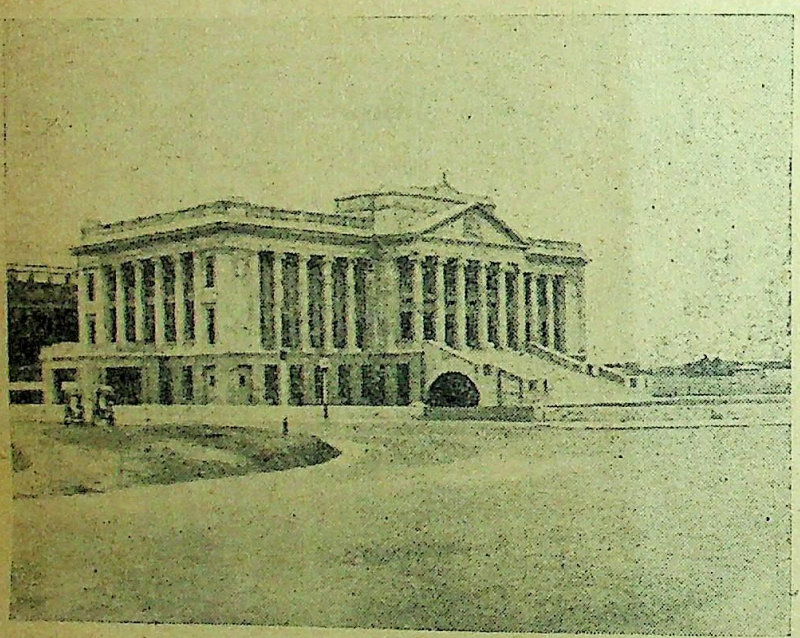

कोलम्बो में लंका की 'स्टेट काउंसिल' का भवन।

मजदूर सरकार ने स्वीकार कर लिया है, लंका में बसनेवाले भारतीयों की बहुसंख्या को वोट के अधिकार से वञ्चित रखने के लिए गढ़ी गई है। भारतीयों के अतिरिक्त अन्य सभी के लिए उसमें बालिग मताधिकार के अनुसार वोट देने का अधिकार दिया गया है। भारतीय स्वाभिमान की दृष्टि से यह भेद-भाव न केवल निन्दनीय है, कटु भी है।

उक्त योजना के निर्माताओं ने सन्देह-भावना से लाभ उठाकर सिंहालियों का समर्थन प्राप्त कर लिया है। यही नहीं, वे लंका-स्थित तामिलों और अन्य अल्प-संख्यकों—जैसे मुसलमानों और ईसाइयों—का समर्थन प्राप्त करने में भी चालाकी से सफल हो गए हैं। वह इस प्रकार कि अब पहलेवाली निर्वाचन-पद्धति, जिसमें जात-पाँत का कोई भेद-भाव नहीं था, हटा दी गई है। निर्वाचन-क्षेत्रों का भी नए सिरे से उद्घाटन किया गया है, जिससे कुछ विशेष वर्गों का पृथक् प्रतिनिधित्व सुरक्षित रह सके। इसके अतिरिक्त एक दूसरा 'चेम्बर' भी बनाया जा रहा है। यह होगा धनिकवर्ग के लिए और कुछ ऐसे ही दूसरे वर्गों के लिए, जो पृथक्-प्रतिनिधित्व चाहते हैं। ये चीजें न रहतीं तो 'स्टेट काउंसिल' उक्त वैधानिक योजना को स्वीकार ही नहीं करती। इस योजना से लंका-निवासियों को—वे चाहे सिंहाली हों या तामिल—बहुत थोड़े अधिकार प्राप्त होंगे।

प्रथमतः वे समस्त मामले जिनका सम्बन्ध सेना, जलसेना और वायुसेना से है, ब्रिटेन के नियन्त्रण में रहेंगे। यही नहीं, उन समस्त साधनों और स्थानों पर भी, जिनकी आवश्यकता युद्ध के लिए है, ब्रिटेन का ही नियंत्रण रहेगा।

यहाँ यह स्मरण रखना चाहिए कि लंका ब्रिटिश साम्राज्य की चौमुहानी पर स्थित है। उसके पश्चिम में दक्षिणी अफ्रीका है, उत्तर में भारतवर्ष; दक्षिण में आस्ट्रेलिया और पूर्व में मलाया, हांगकांग और ब्रिटिश बोर्नियो। ब्रिटिश साम्राज्य के इन भागों के समुद्री मार्गों की सुरक्षा के लिए लंका-वासियों को उक्त मामलों को ब्रिटेन के हाथों में छोड़ देना ही होगा।

अन्य देशों के साथ सम्बन्ध स्थापित करने में भी अब लंका-निवासी स्वाधीन नहीं हैं। इस नियम का अपवाद केवल भारतीय हैं—वे भी उस हद तक, जहाँ तक उनका भारत से लंका में जा बसने से सम्बन्ध है, या अपने भारत-स्थित मातृकुल से सम्बन्ध बनाए रखने से।

लंका-वासियों को अपने अन्य मामलों का प्रबन्ध करने की भी पूरी छूट नहीं दे दी जायगी। उनके ऊपर एक गवर्नर-जनरल रहेगा। जो विधान-निर्माण और शासन-प्रबन्ध की देखभाल करेगा। उसे हस्तक्षेप का भी पूरा अधिकार रहेगा।

इससे अधिक विवरण देना यहाँ अनावश्यक है। क्योंकि हम भारतीय अच्छी तरह जानते हैं कि स्वायत्तशासन-प्राप्त प्रान्तों में गवर्नर क्या कर सकता है, या क्या करता है। नए विधान के चालू होने पर लंका में भी वही सब कुछ होगा।

जहाँ तक मैं समझता हूँ, लंका की स्वाधीनता भारत की स्वाधीनता से सम्बद्ध है। हम भारतीयों को जब तक ऐसे अधिकार प्राप्त नहीं हो जाते जिनसे हम बिना किसी बाहरी शक्ति के हस्तक्षेप और बाधा के अपना प्रबन्ध स्वयं और स्वतंत्रतापूर्वक कर सकें तब तक लंका-निवासी भी स्वतंत्रता का उपभोग नहीं कर सकते। जहाँ तक कि लंका में राजनैतिक विकास हो रहा है, मुझे इसमें सन्देह नहीं है कि वहाँ के निवासी हमसे ऐक्य स्थापित करने के इच्छुक होंगे या वे कम-से-कम यह चेष्टा नहीं करेंगे कि जो भारतीय उनके बीच में हैं उनकी राजनैतिक मर्यादा दूसरों से हीन रहे।

सिंहाली और तामिल दोनों हमारे हाड़-मांस ही हैं। हमारा और उनका सांस्कृतिक संबंध है। हम दोनों के बीच कोई वास्तविक संघर्ष नहीं है। हम दोनों के स्वार्थ समान हैं। मैं नहीं समझता कि हमारे बीच भेद-भाव की कोई ऐसी दीवाल भी हो सकती है जो दुर्लंघ्य हो और जिसके कारण हम दोनों भाई हिल मिलकर साथ-साथ न रह सकें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूखा रोजेदार

पंडित श्रीराम शर्म्मा

उसके नाम के आगे न तो मौलवी, मौलाना, शेख या सैयद
ा जाता था और न उसके नाम के पीछे खान, अली या
। उसका नाम था 'मेहर'। हाँ केवल मेहर, मेहर अली भी
फिर उसके इस छोटे-से नाम के लेनेवाले भी कलकत्ता-जैसे
में उँगलियों पर गिने जा सकते थे, और इस पर भी एक
ारों उँगलियों पर चक्कर मार लेने के बाद अँगूठे महाशय
ारा घूमने की तकलीफ नहीं उठानी पड़ती थी। चाहे पाँच
ा बच्चा हो या अस्सी बरस का बूढ़ा, सब उसे इसी नाम से
थे। मेहर को अपने इस एकाकी और दिगम्बर नाम से
कोई घृणा या ग्लानि थी और न ही उसके साथ उसकी कोई
दिलचस्पी!

हर कहाँ का रहनेवाला है, उसका घर-बार कहाँ है, यह
ो मालूम नहीं; न किसी को आज तक मालूम करने की
हुई। एक दिन कहीं से घूमते-फिरते वह कलकत्ता के सुदीर्घ
बाजार में आ निकला था और वहीं उसने दस रुपए
किराए की एक कोठरी ले ली थी। आजकल जिन लोगों
ाज में बड़ा माना जाता है उनके बड़प्पन के मापदंड और
ने सौ वर्ष पहले के बड़प्पन के मापदण्ड में जमीन-आस-
का अन्तर हो गया है। पुराने जमाने का बड़प्पन अपनी
में लज्जा, नजाकत और मुहब्बत छोड़कर दुनिया से बिदा
ा है। ये गुण मेहर में भी दिखाई देते, और काफी
। इन गुणों से हम पहचान सकते हैं कि मेहर किसी
और सभ्य घराने में पैदा हुआ है, पूर्वजन्म में नहीं, इसी
।

लकत्ते में आने के बाद उसे बड़ी मुश्किलों से, बड़ी खुशा-
के बाद, एक ट्यूशन मिल गया था। कहने को तो यह एक
था लेकिन वहाँ एक छोटी-मोटी पाठशाला ही जुड़
थी। करीब-करीब एक दर्जन बच्चे-बच्चियों को पढ़ाना पड़ता
हर के पहुँचते ही सारे बच्चे उसे घेर लेते और प्रत्येक में
पहले पढ़कर राजा बनने के लिए कम्पटीशन शुरू होता!
कहता पहले मुझे पढ़ाओ और दूसरा कहता पहले
मास्टर एक और लड़के बारह। जिस लड़के को
नहीं पढ़ाया, वही रोता पहुँचा अम्मा के पास। मेहर
एक एक मिनट काटना मुश्किल हो जाता था।

तुतः बात यह है कि उसने जो कुछ पढ़ा था वह पढ़ाने के
नहीं। पढ़ते समय उसकी आशाएँ बहुत बड़ी-बड़ी थीं। पर
रह 'येषां काचि गतिर्नास्ति तेषां वाराणसी गतिः' है उसी
ाज जिसे कोई काम नहीं मिलता वह अध्यापक बनने का
प्राप्त करता है। इसी तरह बेचारे मेहर को भी मास्टर
मिल गया था।

इस ट्यूशन के पीछे उसे बहुत परेशानी उठानी पड़ती थी। सुबह पाँच बजते ही उसे उठना पड़ता था और उठते ही मुँह-हाथ धोकर पढ़ाने के लिए चल देना पड़ता था। उसका ट्यूशन था बालीगञ्ज में, कलकत्ते के नन्दनवन में सटपड़-सटपड़ करते करते कहीं साढ़े छः, पौने सात बजे तक बेचारा पहुँच पाता था। जिस दिन पन्द्रह-बीस मिनट देर से आँखें खुलीं, उस दिन तो आफत ही आ जाती थी। उसके विद्यार्थियों में से तीन-चार स्कूल भी जाते थे। उसके पन्द्रह-बीस मिनट देर से पहुँचने पर एक विद्यार्थी पढ़ने से रह जाता और मास्टर साहब को फटकार सुननी पड़ती। अन्दर से एक कर्कश ध्वनि आती, 'ये हिन्दुस्तानी लोग टाइम के पाबन्द नहीं। इन्हें यह पता नहीं कि १०-१५ मिनट की कितनी कीमत होती है।' कहना न होगा कि जिसका यह स्वर आता था वह योरप या अमेरिका का जीव न होकर हिन्दुस्तान का ही जन्तु था।

ऐसा अकसर हो जाता था। इसके लिए मास्टर साहब को मुआफी माँगनी पड़ती थी। प्रतिज्ञा करते कि "कल से ऐसा नहीं होगा।" परन्तु जीभ के इतना कहने पर आँखें, जब मौका लगता, इस प्रतिज्ञा को तोड़ देतीं।

कभी-कभी बच्चे पूछ लेते, "मास्टर साहब, आपको आने में देर क्यों हुई?" तो मास्टर साहब जवाब देते, "क्या करूँ भाई, पैदल आना पड़ता है। देर हो ही जाती है।"

इस पर लड़के बड़े आश्चर्य से पूछते, "क्या मास्टर साहब, आप इतनी दूर से पैदल ही आते हैं? आपके पैर नहीं दुखते?"

मास्टर साहब रुँधे कण्ठ से उत्तर देते, "हम जिस समाज में पैदा हुए हैं उसमें किसी सवारी पर बैठना गुनाह माना जाता है।"

मास्टर साहब का यह जवाब सुनकर बच्चों के मन में मास्टर के इस अजीब समाज के बारे में पूछने के लिए बहुत से सवाल पैदा होते थे, लेकिन वे बेचारे ज्यादा बात नहीं कर सकते थे। जरा बात की कि अन्दर से वही चिर-परिचित ध्वनि सुनाई देती, "मास्टर साहब, यह पढ़ाई हो रही है कि गप्पें मारी जा रही हैं! इस तरह बच्चे क्या खाक पढ़ेंगे!"

मास्टर साहब को यहाँ छः घण्टे देने पड़ते थे, पूरे छः घंटे! एक तरह से उन्हें लड़कों को पढ़ाने के बजाय घड़ी को पढ़ाना पड़ता था। किसी दिन पाँच मिनट पहले भी गए कि इसके लिए दूसरे दिन उनसे जवाब तलब किया जाता।

आए दिन इसी तरह के अपमान सहने पड़ते थे। मास्टर इसके लिए अभ्यस्त ही हो गए थे। यह बताने की आवश्यकता नहीं कि विद्यार्थी आए दिन होनेवाली इस बेइज्जती को देखते हुए अपने मास्टर की कितनी इज्जत करते थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेहर पढ़ा-लिखाकर बड़ी मुश्किल से २-२॥ बजे घर पहुँचता और वहाँ उसे फिर चूल्हे के साथ सरपच्ची करनी पड़ती। तब कहीं जाकर पेट में रोटी के टुकड़े पहुँचते। जैसे ही महीना खत्म होता, तनख्वाह आती। उसमें से दस रुपये तो मकान ही खा जाता। मेहर बाकी बचे हुए १५ रुपये में अपना निर्वाह करता। इस तरह वह अपनी जिन्दगी को धक्का दे रहा था।

× × ×

जब गवर्नमेंट ने अपरिवर्त्तनशील प्रबल काल-चक्र को भी एक घंटा पहले चलने के लिए बाध्य कर दिया तब तो मेहर की मुसीबतों का कोई ठिकाना न रहा। इधर दिन पर दिन बढ़ती हुई महँगी और अनाज की दुष्प्राप्यता से उस पर और आफत थी। न वक्त पर कोयला मिलता और न अन्न। अगर अन्न के पीछे पड़ा जाता तो पैसे नहीं मिलते और पैसे के पीछे पड़े तो अन्न नदारद!

कपड़े का तो पूछना ही क्या! बेचारे मेहर ने सात-आठ महीने से एक कमीज भी नहीं सिलवाई थी। ले-देकर एक कमीज साबित बच गई थी, उसी को धोकर सुखा लेता और पहनकर पढ़ाने जाता। जिस दिन कमीज न धुल सकती उसी दिन मैली कमीज को देखकर लड़के चिल्लाते, "मास्टर साहब गन्दे, हम तुम्हारे पास नहीं पढ़ेंगे।" मेहर मन मसोसकर रह जाता।

नए टाइम से उसे अब रोजाना ही देर होने लगी और महँगी तथा अन्न की दुष्प्राप्यता के कारण उसे अधिकतर एकादशी के व्रत का पुण्य-लाभ होने लगा।

इधर ट्यूशनवाले चेतावनी दे-देकर थक चुके थे और इस खोज में थे कि कोई दूसरा मास्टर मिले तो इसे जवाब दें। आखिर बड़ी दौड़-धूप करने पर ६-७ महीने बाद उन्हें सफलता मिल गई और मेहर को एक दिन इस घर से सदा के लिए बिदा लेनी पड़ी। जिस दिन उस नौकरी से जवाब मिला उस दिन उसे जितना दुःख हुआ उतना पिता के मरने पर भी नहीं हुआ था। दुःख इसलिए नहीं कि उसे उस ट्यूशन से सुख मिलता था और उसका सुख छिन गया था; दुःख इस बात का था कि अब दिन काटने का सहारा भी नहीं रह गया था।

२०-२५ दिन तक वह काम की तलाश में इधर-उधर चक्कर काटता रहा। पर उसे कोई काम नहीं मिला। मेहर ज्यादा पढ़ा-लिखा नहीं था, सो बात नहीं। उसको पिता ने काफी शिक्षा दिलाई थी और कई हजार रुपए खर्च करने पर उसे यूनिवर्सिटी से दो-तीन कागज के टुकड़े भी मिल गए थे, जिन्हें बड़े चाव से मेहर ने फ्रेम में जड़वाया था। वे कागज के टुकड़े उसके पास अब भी उसी तरह फ्रेम में जड़े हुए थे। अन्तर बस इतना हो गया था कि अब उन पर काफी धूल जम गई थी। वह जमाना अब नहीं है जब कि केवल उन कागज के टुकड़ों को ही दिखाकर कोई आदमी सहज ही में सौ-पचास रुपए की नौकरी पा लेता था। आजकल तो उन कागजों के साथ बहुत-सी चीजों की जरूरत पड़ती है, पन्द्रह-बीस रुपए की चपरासगिरी के लिए भी! मेहर उन फ्रेमों में जड़े हुए कागजों से अकसर लापरवाह रहा है और अब भी है। भूले-भटके भी वह उन पर नजर नहीं डालता। पर आज न जाने क्यों उसकी नजर उन पर पड़ी। उसकी आँखें क्षण-भर में लाल हो गईं। दाँत कटकटा उठे। वह उन फ्रेमों की तरफ लपका। दूसरे ही क्षण सारे फ्रेम निर्ममता के साथ नीचे पटक दिए गए। काँच खील-खील होकर सारे दालान में फैल गया। फिर उसने उन कागजों को टुकड़े-टुकड़े कर दिया और वह उन्हें तब तक फाड़ता रहा जब तक कि टुकड़े बन सके। इसके बाद उसने उन टुकड़ों को पैरों से रौंदकर शान्ति की साँस ली।

आज महीना पूरा हो गया है। कल मकानदार का किराया देना है। उसके पास तो खाने तक के लिए पैसे नहीं। फिर क्या मकानदार रहने देगा। नहीं, नहीं रहने देगा। यदि वह इस तरह रहने देता तो इतना बड़ा मकानदार न बन सकता। तो क्या कोठरी छोड़ देनी चाहिए? उसने चिन्ता में ही रात बिता दी और सूर्यनारायण के निकलने से पहले ही उसने इस कोठरी से सदा के लिए बिदा ले ली।

× × ×

जिस दिन उसने कोठरी छोड़ी उस दिन से ही रमजान का महीना शुरू हुआ। मेहर के लिए तो शाहबान भी रमजान की तरह ही बीता था। वह दिन भर इधर-उधर घूमता रहा। सन्ध्या होते ही उसने एक जगह बैठकर नमाज पढ़ी और नल का पानी पीकर रोजा खोला। फुटपाथ के किनारे पड़कर जैसे-तैसे रात बिताई। सुबह तीन बजे से ही कुछ मुसलमान 'सहरी करो', 'होशियार हो जाओ', 'सहरी करो' चिल्लाते हुए घूमने लगे। ऊँचे-ऊँचे घरों से टकराकर इन शब्दों की प्रतिध्वनि गूँज रही थी। मेहर होशियार तो था पर उसके पास सहरी करने के लिए कुछ न था। वह उठा उसने पास के ही नल से हाथ-पाँव धोए। भगवान् का ध्यान किया और फिर पेट भरकर पानी पिया। किसी तरह दिन निकला और बीत गया। मेहर ने फिर केवल पानी पीकर अपना रोजा खोला। धीरे-धीरे सारे शहर पर अन्धकार की चादर छा गई। मेहर के पैरों ने जवाब दे दिया। वह कहीं दूसरी जगह जाना चाहता था पर जा नहीं सका। सड़क पर इक्के-दुक्के आदमी आ-जा रहे थे। मेहर फुटपाथ के एक किनारे पर बैठ गया। वहाँ दस पन्द्रह भिखारी पहले से थे, कुछ पड़े हुए और कुछ बैठे हुए। बैठे हुए भिखारी खिचड़ी खा रहे थे। खाते-खाते जब खिचड़ी समाप्त हो गई तब वे लोग पत्ते चाटने लगे और चाटते-चाटते जब पत्तों में से भी स्वाद आना बन्द हो गया तब उन्होंने पत्तों को चबाकर निगल लिया।

जहाँ मेहर बैठा हुआ था वहीं एक भिखारिन अपने बच्चे को खिचड़ी चटा रही थी। मेहर के बैठते ही वह चिल्लाई, "चल यहाँ से, क्या मेरे बच्चे को नजर लगाएगा।" यह कहकर उ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मोड़ लिया और बच्चे के मुँह पर साड़ी का पल्ला डाल ा। साड़ी के तार-तार बिखरे हुए थे। सम्भवतः इन्द्राणी ने त को अमृत चटाते समय भी असुर-दृष्टि से इस तरह नहीं ा होगा। एक साधारण भिखारिन से तिरस्कृत होकर भी मेहर बोला नहीं। वह चुप रहा।

चारों ओर अँधेरा छाया हुआ था—घना अँधेरा। जिस में रात दिन से ज्यादा जगमगाती थी वहीं अब सन्ध्या से न्धकार का राज्य रहता है। चारों तरफ सुनसान था। ा नीरव था। पर इन भिखारियों की बस्ती में नींद ने प्रवेश किया था। एक तरफ एक बच्चा बड़ी देर से चिल्ला रहा र मा अपनी सूखी छातियों को, चमड़े के टुकड़ों को, बार-च्चे के मुँह में ठूँस रही थी और बच्चा उन्हें बाहर निकाल देता अन्त में क्रोध के मारे बच्चे ने छातियों को जोर से चबाया। ीख उठी। फिर उसने बच्चे को जोर-जोर से मारना शुरू । मार के साथ-साथ बच्चे का रोना भी बढ़ा। पर अन्त में ी जीत हुई, बच्चे की आवाज क्रमशः क्षीण हुई। वह सिस-लेने लगा और अन्त में चुप हो गया।

मेहर के पास ही एक नौ-दस बरस की बच्ची पड़ी थी, पास की मा भी। बच्ची रह-रहकर चिल्ला रही थी। मा उससे र चीखने का कारण पूछती, पर वह कोई जवाब न देती। में जब मा ने बहुत झुँझलाकर पूछा तब उस लड़की ने शुरू किया—"मैं हाथ में खिचड़ी लिए आ रही थी। जैसे एक चौराहे पर पहुँची वैसे ही तीन-चार कुत्ते मेरी तरफ दौड़ मैं जैसे-जैसे दौड़ी, कुत्ते भी उसी तेजी के साथ दौड़े। मैं एक ठोकर खाकर गिर गई। एक कुत्ते ने आते ही खिचड़ी पर मारा और दोनों कुत्ते मुझ पर झपटे। तीन-चार जगह ने काट खाया। इतने में कुछ लोगों ने लकड़ी मार-मारकर कुत्तों से बचाया। उन घावों में बहुत दर्द है, मा।" यह कहकर फूट-फूटकर रोने लगी और साथ में उसकी निरुपाय ी।

जिन बच्चों को आज खाना नहीं मिला था वे रह-रहकर रोते र सिसकियाँ ले रहे थे। बीच-बीच में चिल्ला उठते, "अम्मा ोर से भूख लगी है री। कुछ खिला दे।" और जोर-जोर से लगते। माताएँ भी बच्चों के साथ रोने लगतीं और कभी कर और कभी पीटकर बच्चों का मुँह बन्द करना ी।

किसी तरह दूर की घड़ी से दो बजने की ध्वनि आई। यहाँ किसे आती थी। सबके पेटों में भूख की आग सुलग रही कुछ धीमे-धीमे कराह रहे थे। रह-रहकर करवटें ली जा रही इसी समय आकाश से मूसलाधार पानी पड़ने लगा। लोग पड़ते छाया में जाने लगे। पाँच-छः स्त्रियाँ उठ नहीं सकती विवश थीं; वे वहीं पड़ी भीगती रहीं। मेहर भी उठकर एक दूकान की छाया में पड़ गया। अभी दस-पाँच मिनट भी नहीं बीते थे कि वहाँ छाया की तरह लड़खड़ाती हुई एक स्त्री आई और धड़ाम से गिर गई। मेहर उसके पास पहुँचा। उसने देखा, एक छोटा-सा बालक उसकी छाती को मुँह में दबाए चिपटा है। मेहर ने बड़ी कठिनाई से बच्चे के मुँह से स्तनों को छुड़ाकर उसे हटाया। बच्चे को हटाते ही वह स्त्री उठ बैठी और बोली, "अरे मेरे लाल को कौन छीनता है?" और वह फिर धड़ाम से गिर गई। मेहर ने उस बच्चे के पेट पर हाथ रखकर देखा, पेट का चमड़ा कमर से चिपक गया था। मेहर ने देखा, वह बच्चा मुश्किल से १५ दिन का होगा। पर उसमें बाल-सुलभ कोमलता का नाम भी नहीं था। वह पत्थर से भी कठोर था। मेहर ने बच्चे की नाक पर हाथ रखकर देखा। बच्चा संसार से बिदा हो चुका था।

स्त्री नीचे पड़ी भीग रही थी। मूसलाधार पानी बरस रहा था। मेहर ने उस स्त्री को उठाकर छाया में सुलाया और स्वयं भीगने लगा। दूकान में से आते हुए शून्य प्रकाश में उसने देखा कि वह स्त्री हड्डी का ढाँचा भर शेष रह गई है पर उसकी आँखें, नाक आदि सब अंग कभी सुन्दर रहे होंगे। मेहर को सोचते देर नहीं लगी कि वह स्त्री और कुछ भी हो पर भिखारिन नहीं है। इसी समय स्त्री का शरीर कुछ काँपा। उसका दाहिना हाथ थर्राया साथ ही कुछ उठा भी; पर फिर गिर गया और वह निश्चेष्ट हो गई, शायद सदा के लिए। मेहर वहीं भीगता रहा, निश्चल पत्थर की तरह।

दिन निकला। नित्य की तरह सड़क पर लोग चलने-फिरने लगे। मेहर की नजर रातवाली जगह पर गई। वहाँ पानी से अकड़ी ५-६ स्त्रियों की लाशें और पड़ी थीं। थोड़ी देर में कुछ लोग आए और उन लाशों को ठेले में डालकर चलते बने। उन लोगों के मुँह पर न घृणा थी और न विषाद, मानो इस कार्य में बचपन से अभ्यस्त हों। जब वे लोग मेहर की पासवाली स्त्री को घसीटते हुए ठेले तक ले गए तब मेहर की आँखों से बरबस दो बूँदें टपक पड़ीं।

आज मेहर का शरीर असमर्थ था। वह खड़ा नहीं हो पाता था। उसके रोम-रोम में चारों ओर बिच्छुओं के दंशन की पीड़ा थी। उसका शरीर जल रहा था। १०-११ बजे तक वह पास के पेड़ की छाया में पड़ा रहा। एकाएक उसके मन में आया—जामा मसजिद पहुँचना चाहिए।

वह बारह बजने के बाद रह न सका। चल पड़ा। पैर लड़खड़ा रहे थे पर वह आगे ही कदम बढ़ाता था। बिजली के खम्भों का सहारा ले-लेकर, ठहर-ठहरकर, हिम्मत बाँधकर कदम बढ़ाता। कदम-कदम पर हाँफने लगता, पर फिर भी आगे ही कदम रखता। वह कई जगह बैठा, उठा और चला। प्यास के मारे उसका मुँह सूख गया। जीभ पर काँटे पड़ गए। प्राण होंठों तक आ रहे थे। मस्तक चकरा रहा था। इसी समय उसकी नजर पास के नल पर पड़ी। नल खुला था। उसमें से धग-धग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करता हुआ पानी निकल रहा था। पैर एकाएक नल की तरफ बढ़े। वह दूसरे ही क्षण नल के पास था। उसके हाथ आगे बढ़े। पानी भरी अंजली मुँह की ओर चली। एकाएक हाथ काँपा और अंजली का पानी जमीन पर ढुलक गया। मेहर बड़बड़ाया, "नहीं, नहीं, यह नहीं हो सकता। मैं बीस बरस से रोजेदार हूँ, लगातार बीस बरस से। क्या आज मैं अपना व्रत तोड़ दूँगा? नहीं, यह नहीं हो सकता। एक घूँट पानी के लिए? नहीं, नहीं, एक घूँट अमृत के लिए भी नहीं!" वह सड़क की तरफ घूम गया। उसका माथा घूम रहा था। कलकत्ता के आकाश चूमनेवाले सात-सात मञ्जिल के मकान घूम रहे थे। आकाश घूम रहा था, जमीन सरक रही थी। उसके पैर लड़खड़ा रहे थे। उसे पता नहीं था कि वह कहाँ है? वह चला जा रहा था।

जामा मसजिद के पास पहुँचते-पहुँचते पाँच बज गए। जो मुस्लिम होटलें दिन भर सुनसान पड़ी थीं और जहाँ मक्खियाँ भिनभिनाती थीं, उनमें रोजेदार मुसलमान आ-आकर कुर्सियों पर जमने लगे। रेडियो बजने लगे। चहल-पहल दिखाई देने लगी। छौंक की सुगन्ध और मछली तलने की दुर्गन्ध आ रही थी। होटलों के बाहर बड़े-बड़े साइनबोर्डों पर लिखा था, "रमजान के लिए स्पेशल 'हरीस'।" लेकिन यह स्पेशल हरीस उन्हीं के लिए था जिनके पास रमजान के लिए स्पेशल पैसे भी हों! गिरता-पड़ता, सोता-बैठता आखिर मेहर जामा मसजिद पहुँच गया। अब उसके पाँवों ने साथ छोड़ दिया। बैठ-बैठकर लेट-लेटकर उसने मसजिद की सीढ़ियाँ पार कीं और ऊपर जाकर वह एक कोने में पड़ गया। धीरे-धीरे रोजेदार मुसलमानों का मसजिद में जमघट होने लगा। आनेवालों में बच्चे थे, जवान थे और बूढ़े भी थे। सब लोग अपने साथ तोशेदान भी ला रहे थे। किसी के लिए 'ग्राण्ड होटल' से खाना आ रहा था और किसी के लिए रायल होटल से। लोगों ने आते ही अपने-अपने दस्तरखान बिछाए और उन पर अपना-अपना खाना जमा कर बैठ गए। रोजेदारों की निगाह कभी घड़ी पर जाती थी और कभी खाने पर। घड़ी की सुई के साथ-साथ उनका मन भी भोजन के लिए घूम रहा था। बच्चे उछल-कूद मचा रहे थे। जवान गप-शप मार रहे थे और बूढ़े लोग अपनी-अपनी मालाएँ निकालकर घुमा रहे थे। एक कोने में पड़ा मेहर बड़बड़ा रहा था। उसकी तरफ देखने की किसे फुर्सत थी। एक तरफ फटे-पुराने मैले-कुचैले कपड़े पहने गरीब रोजेदार बैठे थे।

इसी बीच कुछ लोग अपने नौकरों पर थाल रखाए वहाँ पहुँचे। फिर क्या था, चारों तरफ से गरीब रोजेदारों ने उनको घेर लिया। धक्कम-धक्का होने लगा। हर एक इस बात की कोशिश में था कि भोजन पहले मुझे मिले। इतने में ही मेहर की आँखें खुलीं। वह उठा। उसके पैर भी लड़खड़ाते हुए उसी तरफ चल पड़े। उसने भी आगे बढ़कर हाथ पसारा। लेकिन उसका हाथ काँप गया। मुँह लज्जा के मारे झुक गया। वह पीछे हट गया।

इसी समय 'अल्लाह हो अकबर' की आवाज से मसजिद गूँज उठी। मसजिद की अपरिवर्तित घड़ी का छोटा काँटा ६ पर और बड़ा काँटा १५ के अंक पर पहुँचा। सर्वत्र सन्नाटा छा गया। सब लोग अपना-अपना भोजन करने लगे।

मेहर भी गिरता-पड़ता पानी के हौज की तरफ बढ़ा। हौज के किनारे पर पहुँचकर वह पानी लेने के लिए जैसे ही झुका, उसके पैर काँप गए। वह धड़ाम से हौज में गिर गया। आस-पास के कुछ आदमी हौज के पास पहुँचे। एक ने हौज में कूदकर उसे निकाला। १०–१५ मिनट के बाद मेहर के हाथों में कम्पन हुआ। धीरे-धीरे हाथ गाल के पास आए और उसके हाथ ने पहले बाएँ और फिर दाहिने गाल को छुआ। उसकी यह तोबा अपने कर्म के लिए थी अथवा हिन्दुस्तान जैसे बदनसीब देश में पैदा होने के लिए! कुछ मालूम न हो सका। कुछ क्षण बाद वह कुछ छटपटाया और सदा के लिए शान्त हो गया। लोगों ने कहा—"अरे कोई भूखा था। मर गया बेचारा। पुलिस को इत्तिला दे दो।"

थोड़ी देर बाद उठानेवाले आए और उसे उठा ले गए। लोग फिर अपना भोजन करने लगे। कोई अपने साग की तारीफ कर रहा था और कोई अपनी पकौड़ियों की। मानो वहाँ कुछ हुआ ही नहीं।

ओ चन्दन!

श्री प्रभाकर माचवे

ओ चन्दन
तुमको वन्दन!
पिस-पिस, निजत्व घिस-घिस, दे रस,
तापत्रय, रिस, कलुष, कुटिल, विष—
श्रमित शमित करते हो भव के बन्धन,
ओ पवित्र, ओ सफल मित्र, ओ चन्दन!
चिन्ता न तुम्हें जग में चलते हों कलह, क्रव्यादी, क्रन्दन
ओ चन्दन!

यह आल-जाल, गरलांग व्याल
गुंजलक डाल लिपटे कराल,
फिर भी अलिप्त, ओ स्थितप्रज्ञ, ओ चन्दन!
तेरी सुगन्ध किंचित् न मन्द। अभिनन्दन!
ओ सुर-तरुवर! इस पर भी हर
मलयागिरि पर, करुणा-कातर,
रहते तत्पर। तुम्हें न भाता नन्दन!
लो वन्दन! ओ चन्दन!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पचमढ़ी अथवा विराटनगरी

पण्डित गोविन्द शास्त्री दुगवेकर

पौराणिक मत से किसी समय समुद्र, पहाड़ आदि स्थावर भी मनुष्य की तरह चलते-फिरते, बोलते और गृहस्थी करते हिमालय ने अपनी कन्या शिव जी को ब्याही थी। श्री राम-जी को समुद्र रास्ता नहीं देता था। इस कारण उन्होंने उस क्रोध से धनुष ताना। तब घबड़ाकर समुद्र रामचन्द्र के गत हुआ और उसने अनेक उपायन अर्पण कर उनके रास्ता कर दिया। क्षीरसागर ने अपनी कन्या विष्णु को थी। विन्ध्याचल की भी ऐसी ही एक कथा है।

विन्ध्याचल और हिमाचल में एक बार स्पर्द्धा हुई कि दोनों न बड़ा है। दोनों बढ़ने लगे। विन्ध्याचल इतना ऊँचा कि सूर्य का मार्ग रुक गया और सब ओर अँधेरा छा गया। लोग—देवता भी—घबड़ाए और ब्रह्मा से इस विपत्ति-का उपाय पूछने लगे। ब्रह्मा ने कहा—'आप अगस्त्य से न करें। वे उसके गुरु हैं, चेले को समझा देंगे।' देवों की सुनकर अगस्त्य विन्ध्याचल के पास आए। गुरु जी को विन्ध्याचल ने उन्हें साष्टाङ्ग दण्डवत् प्रणाम किया। ने आज्ञा की कि जब तक मैं लौट न आऊँ, तब तक से ही पड़े रहो। गुरु जी दक्षिण दिशा में चले गए, सो लौटे और विन्ध्याचल तब से लेटा ही हुआ है। भारत में लम्बा और समृद्धिशाली दूसरा पर्वत नहीं है।

पर्वत के दो भाग नर्मदा नदी ने किए हैं। एक प्रकार से उसकी करधनी बनी है। नर्मदा के उत्तर का भाग विन्ध्या-र दक्षिण का ऋष्यमूक, ऋक्षवान् या सतपुड़ा कहाता है। युक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त, बुन्देलखण्ड, मेवाड़, मालवा, गुज-दि प्रान्तों के प्रायः सभी पर्वत उक्त दो भागों के ही शाखा-। इन पर्वतों में सब धातुएँ, सब रत्न, सब प्रकार के वृक्ष, र की वनस्पतियाँ और बड़े ही सुन्दर-सुन्दर दृश्य हैं। जल भी विपुल है। कितने ही देवस्थान और रमणीय स्थान ति ने ही बना दिए हैं। उन्हीं में से पचमढ़ी भी एक दर्श-न है। समुद्र-तल से लगभग दो हजार फुट ऊँचा होने ठंडा है और वहाँ सदा ही वसन्त-ऋतु बनी रहती है। ष्म-काल में मध्यप्रान्त के गवर्नर सदलबल यहाँ आकर । काली-गोरी फौज का भी अड्डा है। प्रवासी लोग घूमने हैं। नरसिंहगढ़ की राजमाता महोदया ने और मैहर-ने अपने प्रासाद बनवाए हैं। ग्रीष्म में जलवायु अच्छी ।

ई० आई० पी० रेलवे की जबलपुर-इटारसी लाइन के पिप-स्टेशन पर उतरकर मोटर से पचमढ़ी जाना पड़ता है। से पचमढ़ी ३२ मील है। १५ मील समतल भूमि है। छोटी-सी पहाड़ी नदी को पार करने पर पहाड़ी की चढ़ाई आरम्भ होती है। जहाँ-तहाँ बन्धा बनाकर उस पर से चक्करदार पक्की सड़क ले जाई गई है। चढ़ते समय ऊपर की सड़क के चक्कर ऐसे जान पड़ते हैं, मानो पहाड़ को करधनी पहना दी

था।

से ही पहाड़ की खाई की ओर कुछ दूर चढ़ाव-। यह

पक्का पहाड़ी रास्ता

गई हो और ऊपर से नीचे के चक्कर देखने से ऐसा प्रतीत होता है, मानो किसी ने बाग के पदपथ (फुटपाथ) निर्माण किए हों। यों तो सतपुड़ा सर्वत्र निसर्ग रमणीय है; किन्तु पचमढ़ी के आस-पास का पार्वत्य प्रदेश बड़ा ही मनोहर है। बनैली भयानकता का नाम नहीं। मीलों चले जाइए, जान पड़ता है कि, हम सुथरे-सँवारे सुन्दर विशाल बाग में घूम रहे हैं। आम, जामुन, आँवला, हड़, चन्दन आदि के वृक्ष कतार बाँधे मीलों तक लहलहा रहे हैं। उनके फल इतने अधिक होते हैं कि, बन्दर, लंगूर और अन्य चौपाए उनको खाकर समाप्त नहीं कर पाते। मीठे पानी के झरने जहाँ-तहाँ मधुर निनाद करते हुए कुटिल गति से साँप की तरह दौड़ा करते हैं। प्रपातों की शोभा अनुपमेय है।

मांडादेव की ओर जानेवाली पर्वतश्रेणी को महादेव पर्वत कहते हैं। नाम के अनुरूप ही इस गिरि का स्वरूप भी है। जान पड़ता है कि, विशालकाय शंकर जी समाधि लगाकर विराजे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुए हैं और उनकी जटाओं से गंगा जी की धाराएँ निकलकर धराधाम को प्लावित कर रही हैं। पास ही एक गिरि-शिखर तपस्वी के समान विराजमान है। उसके बाएँ कन्धे से चलकर नाभि से होता हुआ एक स्रोत दाहिनी जंघा में समा जाता है। उसने तपस्वी

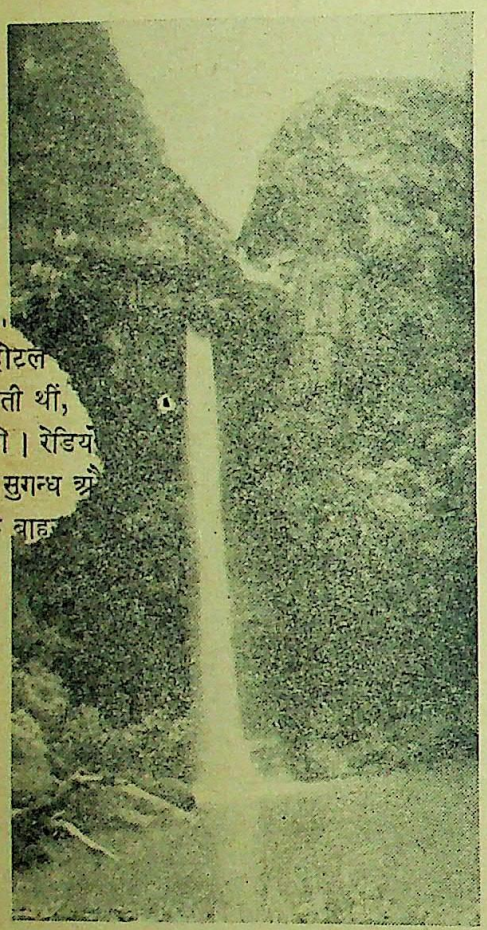

जनेऊ धारा

के जनेऊ की शोभा धारण की है, इस कारण उसे जनेऊ-धारा कहते हैं।

हमारी मोटर एक शिखर से दूसरे शिखर पर जब बाँध के पथ से जाती, तो बीच की गहरी खाइयाँ मन में कौतुक उत्पन्न करती थीं। उन खाइयों में छोटे-छोटे ग्राम बसे हैं और ग्रामों के आस-पास हरे-भरे खेत वायु के झकोरों से डोल रहे हैं। खेत ऐसे सजे-सजाए देख पड़ते हैं कि मानो गलीचे बिछाए गए हों। ग्रामों के मनुष्य और पशु लखनऊ के मिट्टी के खिलौने जैसे जान पड़ते हैं। हाल में ही पानी बरस चुका था और दिन ढल रहा था। वन-देवी मानो नहाकर स्वच्छ तथा प्रफुल्लित हो रही थी। ढलते सूर्य की कोमल सुनहली किरणें सब ओर फैल रही थीं, मानो प्रकृति-सुन्दरी ने जरदोजी सुनहली साड़ी पहनी हो। उसका फूलों का शृङ्गार तो देखते ही बनता था। वन चमेली, जूही, मालती, सरला, रजनीगन्धा, चम्पक आदि फूलों की वृक्षलताएँ फूल रही थीं और उनकी सुगन्ध सारे वनप्रान्त को आमोदित कर रही थी। सर्वत्र आनन्द और उल्लास था। अन्य अवसरों

में सुन्दरता है; परन्तु ऐसी उदात्तता और भव्यता कहीं नहीं देख पड़ती। यहाँ आकर कोई मनुष्य संसार के दुःखों दुर्बलताओं और हीन विचारों को घड़ी भर भूले बिना नहीं रह सकता। सृष्टि की सर्वव्यापी शक्तियों से उसका तुरन्त तादात्म्य हो जायगा।

कहते हैं, यहाँ एक प्रवासी चित्रकार आया था। उसने यहाँ के एक आकर्षक दृश्य की पार्श्वभूमि (बैक ग्राउण्ड) बनाकर एक युवती कृषक-कन्या का, जो धान रोप रही थी, चित्र उतारा और उसे पुर्तगाल की एक बड़ी प्रदर्शनी में भेजा। प्रदर्शनी के परीक्षक चित्र की प्राकृतिक सुंदरता पर मुग्ध हो गए और उन्होंने इसी चित्र को ५ हजार पौण्ड का प्रथम पुरस्कार दिया।

दिन डूबने से पहले ही हम नरसिंहगढ़ प्रासाद के द्वार पर पहुँच गए। फाटक के सामने ही अष्टभुजा दुर्गादेवी का छोटा-सा मन्दिर है। मोटर से उतरकर हमने भगवती को प्रणाम किया और प्रासाद के अतिथि-भवन में डेरा डाला। वहीं हमारे ठहरने का प्रबन्ध हुआ था। पहाड़ ठण्ढा है और शीतल-मन्द-सुगन्धित वायु अखण्ड बहती रहती है। इस कारण नींद अच्छी आती है और चित्त उल्लसित रहता है। रात में हम घोड़ा बेचकर सो रहे थे। प्रातः नित्यकृत्य से निवृत्त होकर हम पचमढ़ी देखने निकले। नरसिंहगढ़ भवन (कमधज कैसल) सबसे ऊँची टेकड़ी पर बना है और वहाँ से सतपुड़े के चारों ओर की सीनरी बड़ी ही सुहावनी जान पड़ती है। कैसल से पचमढ़ी २ मील नीचे है। एक घाटी उतरनी पड़ती है। सड़क की एक ओर पहाड़ और दूसरी ओर गहरी खाइयाँ हैं। मोटर से १० मिनट में हम पचमढ़ी बाजार पहुँच गए। बाजार छोटा-सा पर बहुत साफ-सुथरा है और सब आवश्यक वस्तुएँ मिलती हैं। आस-पास छोटी-सी पक्की बस्ती है। डाकखाना, हिन्दी-अंग्रेजी स्कूल, अस्पताल, सिनेमा हाउस, क्लब घर आदि आधुनिक पद्धति की प्रायः सब संस्थाएँ हैं। राजमाता (माजी साहबा) के मैनेजर ने कुछ सामान खरीदा और ११ बजे हम बाजार देखकर लौट आए।

अपराह्न में हम लोग गवर्नमेण्ट हाउस,—जहाँ गवर्नर साहब रहते हैं,—गवर्नमेण्ट गार्डन, बैरिक, बेदिंग टैंक (स्नान का तालाब) आदि स्थान देख आए। यहाँ सैनिकों को सैनिक-शिक्षा भी दी जाती है। इसके लिए खुदी हुई खाइयाँ, उनसे पार होने और आत्म-रक्षा करने तथा निशाना लगाने के लिए रक्खे हुए बालू से भरे हजारों बोरे, मोरचों के स्थान आदि देखकर साक्षात् रणभूमि की कुछ कल्पना हो सकी। मन में प्रश्न उठा—'युद्ध स्थान और समर-भूमि में अन्तर क्या है?' मन से ही उत्तर मिला 'जो केवल मारने का स्थान हो, वह वधस्थान और जो मरने मारने का स्थान हो, वह रण-स्थल कहाता है।' स्नान का तालाब देखने योग्य है। पहाड़ के ऊपर से एक छोटी-सी पहाड़ी नदी बह कर आती है, उसे एक पक्के तालाब में बाँध लिया गया है। तालाब का पानी सदा एक सतह में रहता है। तालाब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...र और नीचे दो फाटक बने हैं। जब पानी कम होता है, तब ...के फाटक को खोलकर नदी से ले लिया जाता है और अधिक ...है, तब नीचे के फाटक से निकाल दिया जाता है। पानी स्फटिक

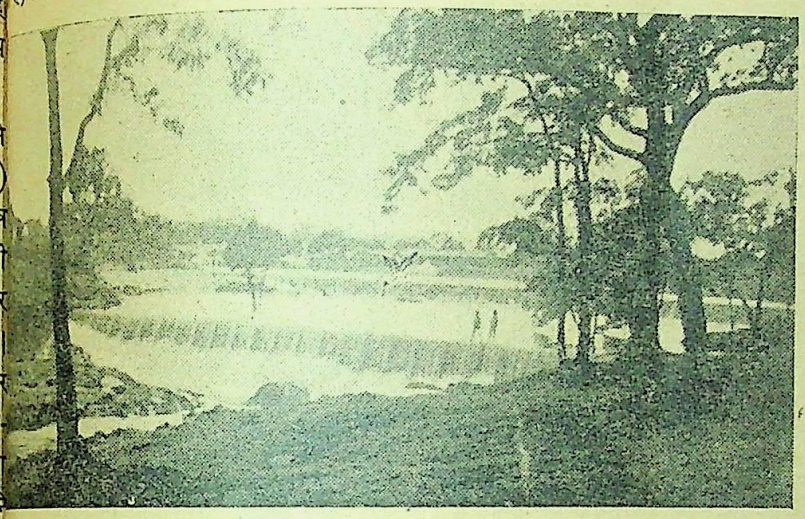

तैरने का तालाब

...निर्मल है। तालाब में उछल-कूद करने, गट्ठर साधने, तैरने ...के सब साधन विद्यमान हैं। स्त्रियों की जल-सन्तरण-शिक्षा ...व्यवस्था है। कपड़े बदलने के लिए ...पक्के कमरे बने हुए हैं। वहीं नदी ...शब्द करती और तालाब से होती हुई ...मील की दौड़ लगाकर एक बड़ी भारी ...कूद पड़ती है। जहाँ वह गिरती है, वहाँ ...उबलती-खौलती हुई चाशनी को ऊपर के ...खण्डों पर लेटकर देखना पड़ता है। खड़े ...देखने का प्रयास करने से झाईं आ जाती है ...चक्कर खाकर गिरने का भय रहता है। ...बीहड़ स्थानों को देखने के लिए जहाँ-...सुरक्षित स्थान बने हैं। क्योंकि अधिकांश ...योरपीय होते हैं। उनका सुभीता पहले ...पड़ता है। हिन्दुस्तान की भूमि में स्थित ...तालाब में हिन्दुस्तानियों को स्नान करने की आज्ञा ...है।

पंचपाण्डवा

...कहते हैं कि, पचमढ़ी और उसके आस-पास की भूमि में ही ...नगरी—विराट की राजधानी—बसी हुई थी और वहीं ...ने अज्ञातवास का वर्ष बिताया था। पहाड़ में कोलकर ...से तैयार कराया गया एक जीर्ण भवन दिखाया जाता ...में पांडव रहा करते थे। इसमें जनाना-मर्दाना की पृथक् ...तो है ही, किन्तु नौकरों के लिए भी अलग-अलग कोठ-...बनी हुई हैं। वास्तव में यह स्थान पर्वतमालाओं से ऐसा ...हुआ है कि एकाएक यहाँ का कोई पता नहीं पा सकता।

इसी पर्वत की कन्दराओं में सुप्रसिद्ध डाकू ताँतिया भील सालों छिपा रहा और अंग्रेज सरकार के हाथ नहीं आया। पीछे बहन के घर में धोखे से पकड़ा गया, यह बात और है; किन्तु सतपुड़े ने उसकी रक्षा ही की। सम्भव है कि, पाण्डवों ने आपत्ति के समय में इसी पर्वत की शरण ली हो। सतपुड़े की गाएँ मनोहरता और मक्खनदार दूध देने में प्रसिद्ध हैं। हो सकता है कि ऐसी गायों का विराट के यहाँ अच्छा संग्रह रहा हो और उस पर कौरवों की पापी दृष्टि पड़ी हो। इसी से वे गाएँ चुराने के लिए दिल्ली से इतनी दूर दौड़े आए हों। वास्तव में उन्हें तो पाण्डवों को खोज निकालना था।

जटाशंकर

पचमढ़ी ग्राम की सीमा से ही पहाड़ की ओर मुड़कर एक बड़ी खाई की ओर पगडण्डी रास्ता जाता है। कुछ दूर चढ़ाव-उतार है और फिर उतरते हुए ही जाना पड़ता है। यह घाटी नहीं, दो पर्वतों के बीच का उतार है। कहीं-कहीं एक शिला से दूसरी

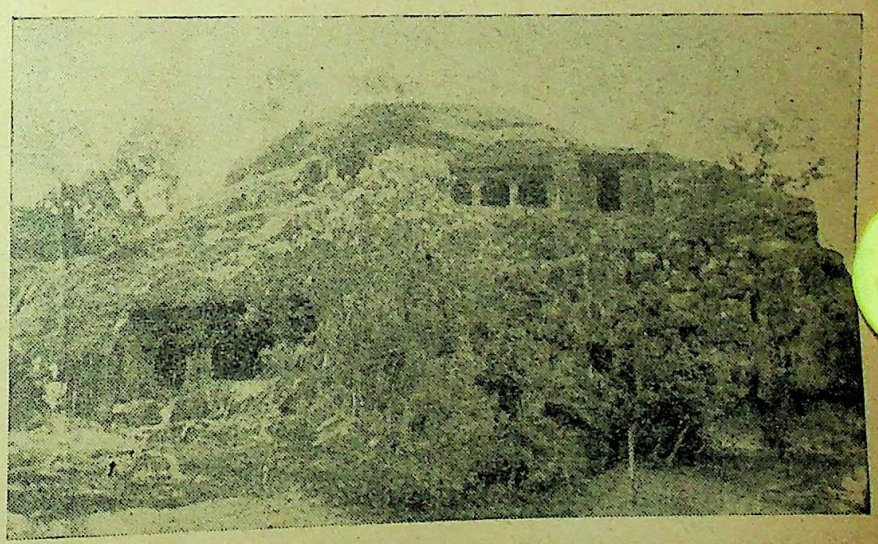

पाण्डव-गुफा

शिला पर बन्दर की तरह उछलकर जाना पड़ता है। दोनों शिलाओं के बीच में बड़ी दरारें होती हैं और उनमें पानी के सोते बहते रहते हैं। पैर चूका नहीं कि,—'गड़प!' कहीं-कहीं नालों पर कटे पेड़ों के तने डाल दिए हैं। उन्हीं पर से नाला पार करना पड़ता है। पानी से वे चिकने हो जाते हैं और आदमी के बोझ से हिलते भी हैं। उन पर चलने में नटों जैसी अच्छी कसरत करनी पड़ती है, बहुत बैलेन्स साधना पड़ता है। वहाँ 'भूल-चूक लेनी-देनी' का व्यवहार नहीं है। खाई के तल में आकर देखा कि एक गृहस्थ जैसे बाबा जी ने सुन्दर बगिया लगा रक्खी है और आँगन काढ़कर ३-४ पक्के कमरे भी बनवा लिए हैं। नई चाल का फर्नीचर भी है। उन्हीं बाबा जी को वहाँ का महन्त या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पण्डा समझिए। उन्होंने उस देवस्थान का बहुत सुधार किया है। बग्गिया से नीचे उतरने के लिए लोहे की सीढ़ियाँ बनी हैं। उनको उतरकर एक सँकरी गुहा में झुके-झुके घुस जाने पर एक कोने में

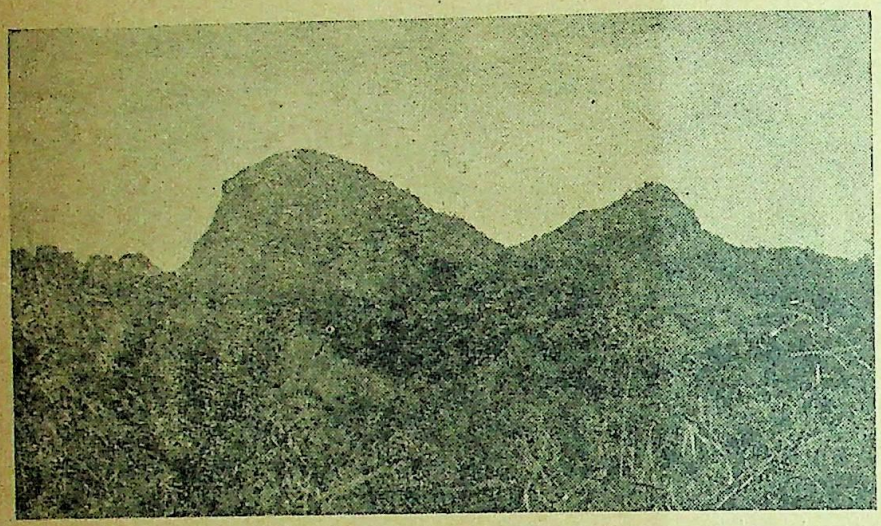

जटाशंकर

विराजे हुए जटाशंकर के दर्शन होते हैं। एक प्राकृतिक शिवलिंग पर दस फणाओं का नाग छाया है, ऐसी मूर्ति है। दीपक के बिना गुहा में जाया नहीं जा सकता। ठंढा इतना है कि वहाँ पहुँचते ही आँखें ढपने लगती हैं। शिवलिंग के नीचे ठंढे पानी का झरना बहता है।

माडादेव

जटाशंकर से माडादेव बहुत दूर होने के कारण आज दिन भर का वहीं कार्यक्रम रक्खा गया। साथ में पक्का भोजन रख लिया और प्रातःकाल के ७ बजे हम चल दिए। गुलाबी जाड़ा था। सब ने ओवरकोट पहन लिए थे। ३-३॥ मील पक्की सड़क है। वहाँ तक तो हमारी मोटर ने हमें पहुँचा दिया; परन्तु आगे जाने से साफ इनकार कर दिया। लाचार होकर ३-३॥ मील पैदल ही जाना पड़ा। उतरते-चढ़ते, घाटियाँ पार करते, उछलते-कूदते हम १०-१०॥ बजे माडादेव पहुँचे। अन्य सब सड़कों की तरह घाटियों की सड़कें भी पहाड़ काट-काटकर बनाई गई हैं। सड़क की दोनों ओर की पहाड़ी दीवारों में कितनी ही छोटी-छोटी गुहाएँ हो गई हैं, जिनमें बनैले पशु बसेरा लेते हैं। लुढ़क-ढुलककर गोल हुए पत्थर गुहाओं में पड़े हैं और उन पर ऊपर से पहाड़ी पानी चूता रहता है। इससे प्रतीत होता है कि मानो कोटिलिंगार्चन का रुद्राभिषेक होता हो। आस-पास के बाँस के जंगलों से उनकी रगड़ की ऐसी कर्ण-मधुर ध्वनि आती है, मानो श्रोत्रिय ब्राह्मण रुद्री का पाठ कर रहे हों। समतल भूमि में नीचे आए, तो देखा कि स्थान बहुत ही प्रशस्त और रमणीय है। एक गुहा में प्रवेश किया, जहाँ ठेहुनी से लेकर कमर तक पानी भरा रहता है। पानी ऊपर से चू-चूकर इकट्ठा होता है। उसका निकास भी किया गया है। गुहा बहुत लम्बी-चौड़ी और ऊँची है। पीछे की दीवाल में एक आला बना है, वे ही माडादेव हैं। गरी का भोग लगता है। बिना दिया जलाए भी इस गुहा में जाया जा सकता है। गुहा के बाहर कुआँ है, आँगन है। वहीं बैठकर हमने भोजन किया और थोड़ा विश्राम कर पार्वत्य-शोभा का आनन्द लेते हुए हम प्रासाद की ओर लौट पड़े।

अन्हौनी

यह 'अनलजल' का अपभ्रंश जान पड़ता है। यह स्थान पचमढ़ी से १५ मील से भी अधिक दूर है। ७-८ मील मोटर जाती है, आगे बैलगाड़ी से या पैदल जाना पड़ता है। हमने बैलगाड़ी कर ली थी। पहाड़ों की कई कतारें लाँघनी पड़ीं। सामने की कतार पार करने से ही पहाड़ समाप्त हो जाएगा, ऐसा प्रतीत होता; परन्तु एक कतार के पार करते ही दूसरी कतार सामने आ जाती और दो कतारों के बीच की समतल भूमि के हरे-हरे खेत वायु से खेलते हुए हरे समुद्र की शोभा धारण किए देख पड़ते। उनकी बारियाँ और अमराइयाँ बड़ी ही सुहावनी जान पड़तीं। उनमें से जाकर फिर पहाड़ी चढ़ाव और उतार! पहाड़ काट-काटकर बनाई गई सड़क पर हमारी मोटर दौड़ी जा रही थी। कटे पहाड़ों का दृश्य अपूर्व था। मोटर से बाहर देखने पर ज्ञात होता था कि

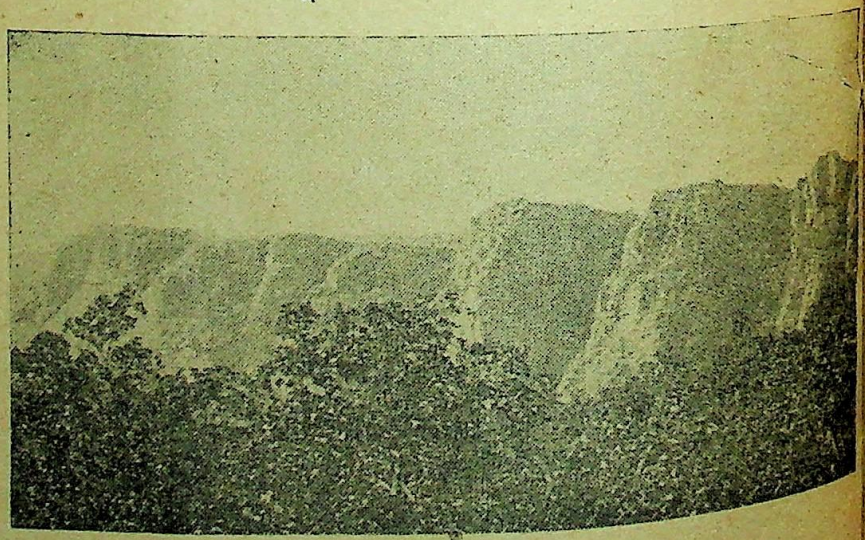

माडादेव

पहाड़ से बाहर निकले हुए ढोंके राक्षस की तरह मुँह बाए खीसें निकाले,—अपनी ओर दौड़े आते हैं और पीछे की ओ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाते हैं। मोटर से उतरकर हम बैलगाड़ी पर सवार हुए। दो मील भी नहीं चले होंगे कि एक बड़ा भारी साँप हमारी के पहियों के नीचे आ गया और र मर गया। बेचारा सड़क पार कर रहा साँप केले के खम्भे के बराबर मोटा और हाथ से अधिक लम्बा था। इतना मोटा लम्बा साँप हमने किसी अजायबघर में हीं देखा था। उसकी केंचुल हम साथ ए।

दोपहर में हम एक छोटे-से गाँव में पहुँचे, सीमा से एक छोटी-सी बलुही नदी रही थी। पानी घुटने बराबर ही था, बहुत ही निर्मल था। नदी के तट ७ शिवालय भग्न अवस्था में अपनी ता का स्मरण दिला रहे हैं। उन वीं और १३वीं शताब्दी के २-३ शिलालेख खुदे हैं, स्पष्ट होता है कि इस प्रान्त में गोंडों का शासन था और र गोंड राजाओं के बनवाए हुए हैं और इनका जीर्णोद्धार

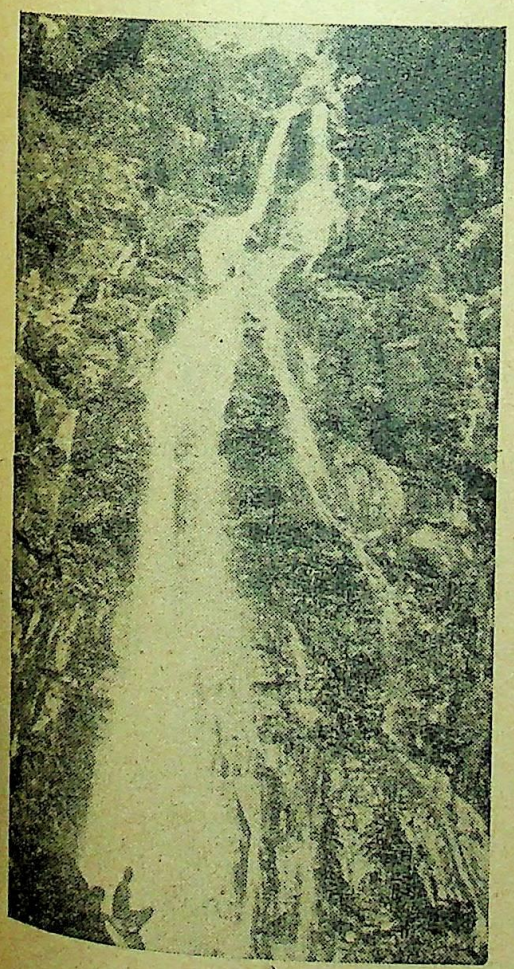

धोबी घाट

के वंशजों ने किया था। पुरातत्व के अन्वेषकों को यहाँ काम की सामग्री मिल सकती है।

मन्दिरों के आगे घाट-सा है। उसी के बगल में एक कुण्ड है, जो हौद के आकार का है। उसमें किसी पहाड़ी झरने से

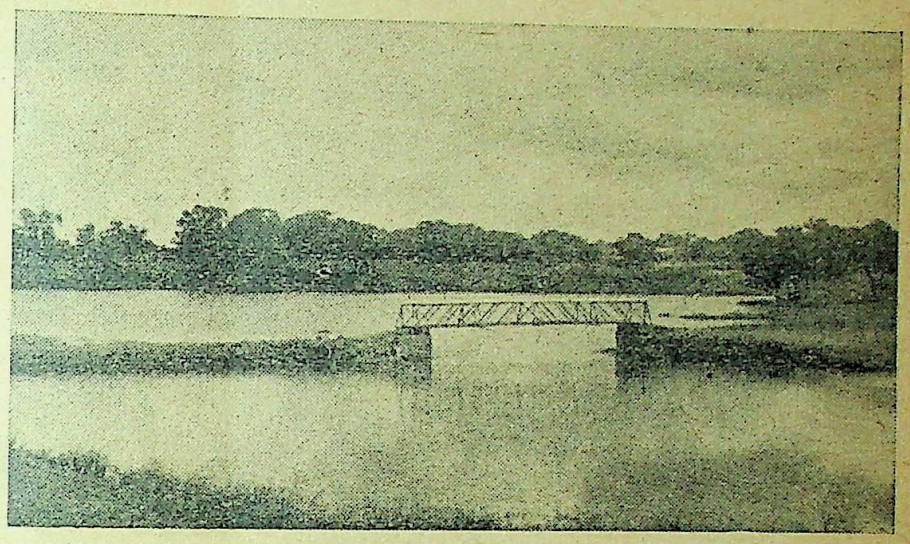

एक सुंदर झील

गरम पानी आता है। हौद के नीचे छेद बना है, उसमें से अतिरिक्त जल बहकर नदी में चला जाता है। हौद के पानी से गन्धक जैसी दुर्गन्ध निकलती है, इससे अनुमान होता है कि पास ही कहीं गन्धक की खान है। वहीं से झरने का पानी आता है, इस कारण गरम हो जाता है। कुंड के आस-पास चावल बेचनेवाले बैठे रहते हैं। दर्शक चावल खरीदकर रूमाल में गठियाते और कुंड में छोड़ देते हैं। ५ मिनट में भात बन जाता है। वह भात वहीं एकत्र भिखारियों को बाँट दिया जाता है। कुंड का जल नदी में आने से नदी का जल भी गरम हो जाता है। नदी में हमने अवगाहन स्नान किया, तो बड़ा आनन्द आया। जितना जिसे गरम जल चाहिए, उतना वह कुण्ड के निकट आ जाय या दूर हट जाय। नदी में पानी कम होने से पात्र में बैठकर ही हम नहाए। कहते हैं कि इस जल से खुजली, सेहुआँ आदि चर्मरोग ही नहीं, किन्तु कोढ़ तक अच्छा हो जाता है। कितने ही रोगी इस जल का उपचार करने के लिए महीनों इस गाँव में आकर बसते हैं। अन्य स्थानों की तरह यह स्थान भी विशेष चित्ताकर्षक है। भोजन साथ था। पूजा-पाठ करने के अनन्तर हमने भोजन किया और इस स्थान की अपूर्वता का कौतुक करते हुए हम बैलगाड़ी में सवार हुए। बैल भी गाड़ी को लेकर गले के घुँघरू बजाते हुए ठाठ से धीरे-धीरे चल पड़े।

यों तो पचमढ़ी के आस-पास किसी कोने में चले जाइए, दर्शनीय स्थानों की कमी नहीं है। जहाँ-तहाँ उत्तुङ्ग गिरिशिखर खड़े हैं। पैर में पैजनियाँ पहने जैसे बालक किलक-किलककर दौड़ते-लटपटाकर गिर पड़ते और फिर उठकर ठुमकने लगते हैं, वैसे ही पहाड़ी झरने लुढ़कते-पुढ़कते छुम-छुम शब्द करते हुए दौड़े जाते और गहरी खाइयों में कूद पड़ते हैं। झरनों का नर्तन और सूँ-सूँ शब्द करती हुई बहनेवाली वायु का गायन देख-सुनकर कौन ऐसा सहृदय मनुष्य होगा, जो उस वनश्री की शोभा से चकित और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्तम्भित न हो। परन्तु अपने निवासस्थान का थोड़ा परिचय दिये बिना पचमढ़ी का वर्णन पूरा नहीं हो सकता।

जो कोठी (कमधज कैसल) नरसिंहगढ़ की राजमाता ने खरीदी है, वह पहले भोपालवालों की थी। अब माजी साहबा ने हिन्दू ढंग की बनवा ली है। उसमें बहुत सुधार किया है और कितने ही आवश्यक नए मकान बनवा लिए हैं। माजी एक तपस्विनी राजमहिला हैं। एक हाथ में स्मरणी (माला) और दूसरे हाथ में पुस्तक, यही आपका ध्यान है। दिन-रात उपासना या अध्ययन में लगी रहती हैं। इतिहास, साहित्य और राजनीति की विशेषज्ञा हैं। वर्षों सफलता के साथ राज्य कर अवसर ग्रहण करने पर यहीं एकान्त में आपने अपना आसन जमाया है। आपने कई नाटक, और ऐतिहासिक लेख लिखे हैं, जिनमें से कुछ प्रकाशित भी हो गए हैं। विद्वानों का आप आदर करती हैं। आपके दर्शन कर एक प्रकार की हृदय में श्रद्धा होती है और प्रतीत होता है कि यही यहां की वनदेवियों की रानी हैं। आपके सौजन्य से ही सतपुड़े की वन-श्री—सौन्दर्य—हम देख सके। हमें यही अनुभव हुआ कि सतपुड़ा का सार-सर्वस्व पचमढ़ी में ही बटुर गया है।

प्याऊ-पण्डत

पण्डित रामचन्द्र तिवारी

ऊँची अट्टालिका की भूमि-चुम्बी मंजिल पर एक कोने में अँधेरी कोठरी है। उसी के बरामदे में वह प्याऊ है। ईंटों के बने अस्थायी चबूतरे पर पुराना टाट बिछाकर 'पण्डत' बैठते हैं। गंगासागर उनके सम्मुख मुँडेरी पर रक्खा रहता है। पण्डत के कर का तनिक-सा संकेत पाते ही जल पिपासु की अंजलि में गिरने लगता है।

प्याऊ के सम्मुख है नीम का वृक्ष, ऊँचा और छतनार; उसके आगे राजमार्ग, जिसके द्वारा देश की नवीन और पुरातन राजधानियाँ परस्पर सम्पर्क प्राप्त करती हैं। फिर हैं खेत, जिनमें कहीं-कहीं हरे धब्बे हैं; अधिक दूर आकाश के नीचे दृष्टिगोचर होती हैं ईंट के भट्टों की चिमनियाँ और वृक्षों के समूह, जिनका व्यक्तित्व रक्तिम-नीलवर्ण में घुलकर अपना आभास देने का प्रयत्न कर रहा है।

वाटर-गैस-चालित लारी के पहिए ब्रेक-संघर्ष से चीत्कार उठे। हलवाई के छोकरे ने मिठाइयों पर से मक्खियों को उड़ा देने का प्रयत्न किया। पण्डत जी ने बे-मन से गंगासागर झुकाया।

नीचे एक परिचित बालक नंग-धड़ंग, मिट्टी से पुता पानी पी रहा था। पण्डत जी की दृष्टि उस पर पड़ी। उनके मुखमण्डल पर असंतोष की छाया आ गई। ओंठ ऐंठ गए। नासिका चढ़ी और नयनों की तीव्रता के साथ ललाट पर सलवटों की संख्या में वृद्धि हो गई। उनका विशाल शरीर काँप उठा।

यह नीच और सीधे गंगासागर से जल पिए! बोले, "जा, अपने घर पी पानी!"

पर पानी पिलाना उन्होंने बन्द नहीं किया। वे भूले न थे वह दिन, जब जलूस नदी की बाढ़ की भाँति उमड़ आया था और अद्विजों को जल पिलाने की नलिका उसके प्रवाह में बह गई थी।

लारी से यात्री उतरे, प्यासे। पण्डत जी का असन्तोष बढ़ा। पानी पीने सब आ जाते हैं पर देने-लेने के नाम!

उनकी विरक्ति गंभीर हो गई। दानी से दो पैसे से अधिक प्राप्ति की आशा वे कभी नहीं करते थे। उनकी कल्पना की सीमा इकन्नी से आगे नहीं बढ़ पाती थी। वे इस संसार से जो उन्हें एक एक पैसा देने में भी संकोच करता है, असन्तुष्ट थे।

दृष्टि ऊपर उठी। एक ग्रामीण जल पीने को झुका। ओ मुख से लगाई। उसके जलते प्राण आशा कर रहे थे कि अ शीतल जल से वे हरे हो जायँगे। वे ललक रहे थे उस जल स्पर्श के निमित्त।

पण्डत के प्राण सहसा हरे हो गए। उनकी दृष्टि चम उठी। अवचेतन आशा बलवती हुई। देखा उस नर-समूह में सुन्दर युवा, जो अवश्य कोई सेठ होंगे। गौरवर्ण; उच्च ल पर सबसे अधिक पण्डत को प्रभावित किया उस पीली जंजीर जो उनके गले में पड़ी थी और उस स्वर्णिम घड़ी ने, जो उ कलाई पर बँधी थी।

पण्डत जी ने अस्पष्ट कल्पना की कि सेठ प्रसन्न हो गए उन्होंने वह सोने की जंजीर कण्ठ से उतार उन्हें दे दी है गद्गद हो उठे। अधरों पर मुस्कान आ गई।

झुकता गंगासागर उन्होंने रोक लिया।

ग्रामीण को कृत्रिम क्रोध से पीछे हटने का आदेश दिय ग्रामीण की आत्मा तिलमिला उठी। पण्डत की ओर उ आग्नेय नयनों से देखा, पर पण्डत के लिए जैसे उसका अस्ति ही नहीं था। उसका समस्त ध्यान सेठ के आदर-सत्कारार्थ केंद्रि था। उसकी दृष्टि उनके चरणों पर वार रही थी।

"आओ सेठ जी!" पण्डत ने विनीत निमन्त्रण दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेठ ने उस झुँझलाए ग्रामीण की ओर देखा तथा अन्य
जल-पिपासुओं की ओर। केवल चार व्यक्ति वहाँ थे। मन में लगा
और अधिक व्यक्ति क्यों नहीं हुए जो उनकी महत्ता देखते।
वे गंभीर गति से आगे बढ़े। प्याऊ के निकट खड़े होकर
पुकारा, "हीरा!"
पण्डत के प्राण विभोर थे। एक उत्साह और आशा से
भरा उनकी दृष्टि में आ गई। छाती उनकी फूल उठी थी, कंधे
तन रहे थे। उनकी दृष्टि ने कहा—वे साधारण नहीं हैं। इतने
बड़े सेठ से उनका सम्पर्क है। उनका अपना महत्व...!
"हीरा!"
पण्डत ने नौकर की प्रतीक्षा की। ग्रामीण ने नौकर की
प्रतीक्षा की। अन्य पिपासुओं ने नौकर की प्रतीक्षा की।
पण्डत ने मन में कहा—क्या हुआ! जब तक मैं सेठ को जल न
पिला लूँ सबको ठहरना होगा।
ग्रामीण ने असन्तुष्ट-नयन सेठ की ओर देखा। स्वर्णिम
वस्त्र पर दृष्टि पड़ते ही उसका असन्तोष शान्त हो गया। उसने
स्थिति स्वीकार कर ली।
एक पिपासु पहले सेठ से और फिर पण्डत से असन्तुष्ट हो
कर बोले, "पीजिए न! नहीं पीते तो दूसरों को पीने दीजिए।"
पण्डत बोले, "जरा ठहरो, अभी नौकर आया जाता है।"
पिपासु जान पड़ता है प्रतिष्ठित थे, कम से कम अपने को प्रति-
ष्ठित समझते थे। पण्डत के मुँह लगना उन्होंने अनुचित समझा।
वे वहाँ से चले गए। सोचते जा रहे थे कि प्याऊ पर भी
लाइन में खड़े होने का नियम डण्डे की शक्ति से लागू किया
जाना चाहिए।
पण्डत को लगा—इतना तेज! प्यासा जाता है तो चला
जाए! सैकड़ों आते हैं इस जैसे!
पर उसके अंतर में कहीं चोर था। बल-प्राप्ति के लिए
उसने सेठ की ओर देखा। सेठ मुस्कराए। पण्डत जी के हृदय
की कली-कली खिल उठी। एक सुगंधित वातावरण में वे विभोर
हो गए।
सेठ सच्चा सेठ है, ऐसा-वैसा नहीं है। नौकर साथ है; सोने
की जंजीर कण्ठ में है। इतनी देर उसके लिए ठहरा हूँ। सबसे
पहले पानी पिला रहा हूँ। कम से कम इकन्नी अवश्य देगा।
उसने कल्पना में श्वेत इकन्नी को गीली पीत-नीलम मुँडेरी पर
जाते देखा। कर से उसका स्पर्श किया।
आजकल कोई देता-लेता नहीं है। इकन्नी! उसका हृदय
कल्पना से धड़क उठा और धड़कता रहा।
नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। देगा, अवश्य देगा। इतना बड़ा
सेठ! स्वर्णिम जंजीर, यह ललाट!
उसे लगा कि इकन्नी उसे मिल गई है।
हीरा साबुन और तौलिया ले आया।
सेठ ने साबुन भिगोया। पण्डत ने प्रेम से जल डालना
प्रारम्भ किया। वह अपनी समस्त सेवा-भक्ति और कृतज्ञता उस
जल की धार के द्वारा सेठ के अर्पण कर रहा था। वह जता देना
चाहता था कि वह पानी पिलाने से कुछ अधिक उनके लिए कर
रहा है।

सेठ ने साबुन से मुख धोया, हाथ धोया, सावकाश! शीघ्रता
थी ही किस बात की। जल-पिपासु खड़े हैं, पर वे जितनी
अधिक देर खड़े रहें उतनी ही अधिक उनकी श्रेष्ठता प्रतिपादित
होती है।

गंगासागर का जल समाप्त हो गया।

पण्डत को लगा कि सेठ पानी अधिक बहा रहे हैं। यह प्याऊ
है, नल नहीं है। सम्मुख नल पर उसकी दृष्टि गई। प्याऊ पर जल-
प्राप्ति से निराश एक पिपासु वहाँ पानी पी रहे थे।

पर हाँ! जो एक आना देगा वह जल भी अधिक व्यय
करना चाहेगा। पण्डत ने सोचा यह ठीक ही है। उसने हृदय
को दृढ़ किया और जल की धार पुनः सेठ के हाथों पर गिरने
लगी।

सेठ ने जल पिया नहीं। हाथ-मुँह धोया, तौलिए से पोंछा; साबुन
मुँडेरी पर रक्खा और वहाँ से चले गए।

पण्डत ने सोचा, अब बटुवे से निकालेंगे दे जायँगे। उसकी
कल्पना इकन्नी से उतर अधन्ने पर आ गई। पर हाँ,
अधन्ना ही।

हीरा ने साबुन उठाया। पानी पिया; साबुन धोया और
प्रशंसात्मक दृष्टि से पण्डत की ओर देखता चला गया।

पण्डत ने सोचा, नौकर गया है उसके हाथ भेजेंगे। ग्रामीण
आगे बढ़ा। पण्डत उससे असन्तुष्ट हो गए, नाक चढ़ाई; पर जल
पिलाना प्रारम्भ किया।

हाँ, अब भेजेंगे! पैसा कोई अंटी में थोड़े ही बाँधे फिरते हैं।
अधन्ने के पार्श्व में पैसे का आविर्भाव हो गया। अधन्ना नहीं तो
पैसा ही। नहीं वे अधन्ना ही देंगे। सेठ हैं। सोने की जंजीर!

उसकी दृष्टि सेठ पर थी। सेठ थे कि अपना सामान सँभालने
में लगे हुए थे। पण्डत ने सोचा, सामान ठीक कर लें तो!

मन में उठा—अब तक नहीं दिया तो अब क्या देंगे। पर
अभी आशा थी।

उसने अपनी असन्तुष्ट दृष्टि सम्मुख पिपासुओं पर डाली।
सबसे सम्मुख थी एक ग्राम-वधू—षोडशवर्षीया काली धारी पर
सितारों की चमकदार गोट का लाल लहँगा अनन्त लहरदार, और
पीली-लाल धारी की गाढ़े की ओढ़नी, जिसमें स्थान-स्थान पर
काँच के लघु खण्ड श्यामल फूलों के अन्दर जड़े हुए। लगता था
कि वसंतिका थककर आकाश में लेट गई; जब उठकर आई तो
तारे शरीर में चिपके चले आए।

वधू के शीश पर ऊँचा जूड़ा और घूँघट सम्पूर्ण, एकदम
सम्पूर्ण। हाथों से ज्ञात हुआ कि चाहे जो हो यह नववधू तन्वंगी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं है। शरीर-रक्षक था उसका पति, जो अपनी द्वितीय विवाहिता को गौना कराए ले जा रहा था।

नववधू मंथर-गति से प्याऊ की ओर बढ़ी।

पण्डत ने देखा, पर दिखा नहीं। उसकी दृष्टि सेठ की ओर थी। निराशा ने जोर मारा, देना होता तो दे गया होता; अब क्या देगा?

बड़बड़ाया, आ जाते हैं जंजीर गले में डाल जैसे कि इनके बाप के नौकर हों। बाप के नौकर! उसने कहा। और स्वयं भय-भीत हो गया कहीं सेठ ने सुना तो नहीं।

सेठ ने उसकी ओर मुख किया, पर देखा नहीं, पण्डत की आत्मा ने पुनः बल प्राप्त किया।

हाँ, बाप के नौकर! सुनेगा तो क्या कर लेगा। लेने-देने को...

नववधू से पहले एक और सभ्य गंगासागर की धार के नीचे जा खड़े हुए। अवगुंठनवती उनसे जा टकराई। चौधरी के नयन रक्तिम हो आए। क्या करे? गाँव उसका नहीं है, और देखना तो उसकी बहू को भी चाहिए था। पर उसका घूँघट, नहीं, वह नहीं खुलेगा!

पण्डत के प्राणों में सेठ रम रहे थे। पानी की धार गिरी जा रही थी। सभ्य जल पी हट गए। वधू आगे गिरते-गिरते बची, एक हाथ से उसने दीवार का सहारा लिया।

धार गिर रही थी, वह वधू के शीश पर गिरी। पति क्रुद्ध हो गया। सँभला, बोला—"पण्डत, देख के पानी पिला।"

पण्डत ने असन्तुष्ट नीचे देखा। पीले वस्त्र की चमकदार गठरी। वधू की अंजलि उसे दिखाई न पड़ी। जल वह कहाँ डाले।

बोला, "घूँघट हटा न!"

पति के नेत्र रक्तिम हो आए। यह चार पैसे का भिखमंगा पण्डत उस जमींदार की बहू से कहे; "घूँघट हटा!" वह खून पी जायेगा।

बहू ने घूँघट ऊँचा किया।

पति ने वहाँ पानी नहीं पिया। वह नल पर चला गया। आग्नेय नयनों से पण्डत की ओर देखता रहा, और पण्डत उसी प्रकार से सेठ की ओर, जिसका सामान ताँगे में रक्खा जा रहा था

आशा दीर्घप्राणा होती है। बोली, सामान ताँगे में रख ले तब देगा।

भीतर से किसी ने कहा—तू ठगिनी है, अधिक झूठ न बोल।

दो नवयुवक आए। एक पानी पीने लगा।

ताँगा चला। पण्डत की आशा अकाट्य रूप से मिथ्या प्रमाणित हो गई। उसे विश्वास हो गया कि सेठ उसे इकन्नी का मनीआर्डर नहीं भेजेंगे।

समस्त ब्रह्मतेज उसने अपनी दृष्टि में केन्द्रित किया। शिव के तृतीय नयन की अग्नि उसमें जगानी चाही और ताँगे की ओर सड़क पर धीरे-धीरे लघुप्राय होते ताँगे की ओर देखा, देखता रहा। उस ताँगे में आग न लगी। सेठ साफ बचकर निकल गए।

और वह जल की धार पिपासु की अंजलि तज उसके शीश पर गिरने लगी। पिपासु ने शीश हटाने का प्रयत्न न किया। उसके साथी ने प्याऊ पर चढ़ पण्डत का हाथ पकड़ हिला दिया।

पण्डत जगे—"हुँ।"

नीचे देखा पिपासु पानी से तर खड़ा है, "ठीक से पी न!"

पिपासु हँ हँ करता सामने से हट गया "नहीं, अब मैं पानी न पिऊँगा। चमार ने छू लिया है तुम्हें।"

पण्डत चौंके। उनका हृदय काँपा। उन्होंने चर्मकार युवा की ओर देखा। स्वच्छ वस्त्र! हुँ! चमार चमार है। उन्होंने संकोच तज उसके पिता तथा बहनोई के पदार्थ अपनी सेवाएँ बारम्बार साग्रह अर्पित करनी प्रारम्भ कीं।

पिपासु ने कहा, "इन नीचों को लात ही.....!"

"अब?"

"शीघ्रता करो। नहा लो नल पर.....।"

पण्डत जी ने आग्नेय नयनों उस चमार-पुत्र की ओर देखा और उन लोगों की ओर, जो यह तमाशा देखने एकत्र हो गए थे। लगता था कि चमार पर सब क्रुद्ध हैं। पर पण्डत जी की गालियाँ हैं जो उस क्रोध को आच्छन्न किए हुए हैं, और उनके मुख का भाव-सञ्चय है जो उस क्रोध को मुस्कान में परिवर्तित किए जा रहा है। मुखमंडल पर ऐसी विचित्र रेखाओं का जमघट सौभाग्य से ही देखने को मिलता है। उनका कसरती बलिष्ठ शरीर इस स्पर्श से अब तक काँप रहा था।

पिपासु ने कहा—"तुम नहाओ, मैं तब तक गंगासागर माँज लेता हूँ।

जनमत अपने विरुद्ध उमड़ता देख चमार-पुत्र वहाँ से सरक गया।

पण्डत ने स्नान किया। क्रोधतप्त ब्रह्म शरीर पर जल छन्न छन्न बोल उठता था। गंगासागर धोया और प्याऊ पर चढ़ आए। उनकी प्रज्ज्वालक दृष्टि को नल-जल शीतल न कर पाया था। नेत्रों से बड़वाग्नि वर्षाते उन्होंने चमार-पुत्र की खोज की। वह कहीं दृष्टिगोचर न हुआ। ब्रह्मरोष ईंधन के अभाव में शांत होने लगा।

उन्होंने गंगासागर पानी से भरा। पिपासु ने शंका की, "पण्डत जी, घड़े भी तो छू गए होंगे।"

पण्डत पर यह प्रहार अत्यन्त कठिन था। उन्होंने तत्क्षण इसका विरोध किया।

"नहीं घड़े नहीं छुए गए।" उनका हृदय काँपा। क्या वास्तव में छुए गए हैं। वे भयभीत हो गए। गंगासागर उन्होंने माँज लिया पर घड़ों का क्या होगा? वे फेंकने पड़ेंगे। नवीन घड़े!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हाँ, नवीन घड़े ! पाँच रुपए। प्याऊ के घड़े चमार से स्पर्श हुए वे लाला के पास नहीं जा सकते। नहीं, घड़ों के लिए लाला कमल के सम्मुख जाने का साहस उसमें नहीं है। वे किसी प्रकार प्याऊ चला रहे हैं। तीन बार प्याऊ बन्द कर देने का विचार उन्होंने किया है पर पण्डत जी की धर्म की दुहाई जैसे-तैसे विजयी हो आई है। पर घड़े ?

उन्हें पूर्ण विश्वास था कि वे घड़े के लिए गए और लाला कहा—प्याऊ बन्द कर दो।

प्याऊ बन्द हो जाएगा तो वे क्या करेंगे ? स्वयं घड़े खरीदें ? असंभव ! आधा वेतन !

उन्होंने साग्रह विरोध किया, "नहीं बाबू जी, मुझे ठीक पता है, घड़े नहीं छुए गए। मैं यहाँ···।"

"पण्डत जी, यह धर्म का मामला है। ठीक-ठीक होना चाहिए।"

पण्डत जी ने कहा, "नहीं छुए गए।"

बाबू ने कहा, "छुए गए हैं।"

कुछ निर्णय नहीं हो पाया। केवल पण्डत का हृदय आशंका से धड़क रहा था। उसका मुख पीला पड़ता जा रहा था।

बाबू ने कहा, "पण्डत जी, मैं उस चमार को बुलाए लेता हूँ। धर्म की सौगंध देकर पूछना। यदि वह कह दे कि छू गए हैं···।"

उपस्थित भीड़ ने कहा, "हाँ, यह ठीक है। जब तक यह निर्णय नहीं होगा, कोई प्याऊ पर पानी नहीं पिएगा।"

पिपासु बाबू चमार को खोजने चले गए। पण्डत ने गंगासागर का स्मरण किया। शीश और नयनों से पिपासुओं को जल पीने के लिए निमंत्रित किया। कोई आगे न बढ़ा।

पण्डत को लगा, घड़े बदलने ही होंगे। हे भगवन् !

उन्हें एक मास आधे उदर संतोष करना होगा। होता वही है जो भाग्य में अंकित है। यदि आधी है तो पूरी कहाँ से मिलेगी।

बाबू चमार को अपने आगे जैसे हाँफते हुए ले आए। चमार भयभीत था। भीड़ देख उसने आगे बढ़ना अस्वीकार कर दिया। भय था कि धर्म की प्रचण्ड भावना कहीं उसका अंग-भंग कर दे।

भीड़ ने उत्सुक रोषित दृष्टि से उसे देखा। कुछ थे जिनके नथने फड़क उठे। कुछ के नयन लाल हुए। अधिक थे जो उसे देखना चाहते थे।

बाबू ने कहा, "आगे बढ़, कोई कुछ न कहेगा।"

पर चमार-पुत्र को जैसे उस पर विश्वास न होता था।

भीड़ ने देखा, इस व्यक्ति को साधारणतया चमार पहचानना कठिन है। इसका वर्ण श्यामल अवश्य है पर स्वच्छ है। वस्त्र हैं जो वहाँ उपस्थित कितने ही द्विजातियों से अच्छे हैं। वे ठगे-से रह गए।

यह और चमार ! कलजुग में जो न हो जाय वही थोड़ा है। बाबू ने पूछा, "क्यों बे, घड़े छूत हो गए थे न ?"

पण्डत जी ने चमार की ओर विनीत दृष्टि से देखा। वह आगामी मास भरपेट भोजन पाते हैं या नहीं, यह इस शूद्र के एक शब्द पर निर्भर करता था।

चमार युवा ने शीश नीचा कर लिया। वह बोला नहीं।

पण्डत जी सक्रिय हो गए। प्याऊ से नीचे उतर आए। संकेत से उस युवा को अपने निकट बुलाया।

डरते हुए उसने पूछा—"क्या है ?"

"ले यह अठन्नी ले, कह दे कि नहीं छुए गए।" उन्होंने वृक्ष की आड़ में अठन्नी चुपके से उसके हाथ में रख दी।

युवा प्रसन्न हो गया। वह आगे आया। भय जैसे भाग गया था।

"छुए गए थे ?" बाबू ने पूछा।

"नहीं, मैंने तो केवल पण्डत जी को जगाया था; घड़े तो पीछे दूर रक्खे हैं।"

पिपासु पानी पीने को झुक गए। प्याऊ पुनः चल निकला। फिर भी एक-आध थे जिन्होंने नल से पानी पीने में ही अपनी धर्म-रक्षा समझी !

जब प्याऊ की भीड़ समाप्त हो गई तो वह चमार और बाबू पुनः आए। पण्डत बैठे अपने भाग्य को कोस रहे थे। उन्होंने आग्नेय नयनों से चमार को देखा और कृतज्ञ होकर भी। यदि इसने अठन्नी लेकर भी कह दिया होता कि छू गए हैं तो वह क्या कर लेता।

चमार युवा पण्डत के निकट आया एक अठन्नी और दुअन्नी मुँडेर पर रख दी।

पण्डत के नयनों को विश्वास न हुआ।

"पण्डत उठा लो ये पैसे, हमारे-तुम्हारे समझने में कुछ भूल हो गई थी। यह लड़का पिछले जन्म में चमार था···।"

पण्डत के नयन आश्चर्य से खिल उठे। दृष्टि दुअन्नी पर मोर-सी नाच उठी।

मुख से निकला, "जजमान···।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस वर्ष—औद्योगिक अन्धकार

श्री परिपूर्णानन्द वर्मा

सन् १९४६ का वर्ष भारत के लिए विकट तथा कष्टप्रद समस्याओं का वर्ष होगा। राजनैतिक उथल-पुथल के साथ ही इस वर्ष हमें आर्थिक समस्याओं का भी गुरुतर रूप में सामना करना पड़ेगा।

आर्थिक समस्याओं की जटिलता का अनुमान तो अगस्त, १९४५ में प्रकाशित, रेजर्व बैंक आव् इंडिया के डाइरेक्टरों की रिपोर्ट से ही हो जाता है। ३० जून, १९४६ को समाप्त होनेवाले अपने वर्ष की रिपोर्ट में उन्होंने भारत की आर्थिक स्थिति का अच्छा विवेचन किया है। इस विवेचन का सरकारी महत्त्व होने के कारण इससे महत्त्वपूर्ण तथ्य प्राप्त हो सकता है। हम इस रिपोर्ट का उल्लेख प्रसङ्गवश आगे करेंगे।

यह लेख नवम्बर, ४५ में लिखा जा रहा है। इसलिए मेरे आर्थिक विवेचन में अगस्त-सितम्बर, ४५ तक के प्राप्त आकड़ों से ही काम चलाना होगा। किन्तु अनुमान के लिए ये संख्याएँ पर्याप्त होंगी। पता तो यह चलता है कि यदि रेलवे विभाग, पोस्ट तथा टेलिग्राफ आदि से होने-वाली सरकारी आमदनी का ब्यौरा शामिल न किया जाय तो सरकार को इसे सफल आर्थिक वर्ष कहने का सौभाग्य न प्राप्त होगा। सन् १९४५-४६ के आर्थिक वर्ष के प्रथम पाँच महीनों में सरकार ने आमदनी से ८६¼ करोड़ रुपया अधिक खर्च किया। सन् १९४४-४५ के पाँच महीनों में आय से ७३ करोड़ रुपए ही ज्यादा खर्च हुए थे। इसके विपरीत आमदनी भी ४५-४६ के पाँच महीनों में अधिक रही—२४⅔ करोड़ रुपए। सेना-विभाग का खर्चा बढ़ता ही जा रहा है, यद्यपि लड़ाई समाप्त हो गई है। पिछले पाँच महीनों में गत वर्ष के पाँच महीनों की अपेक्षा ३२⅔ करोड़ रुपया ज्यादा खर्च हुआ, यानी १५८⅓ करोड़ रुपया खर्च किया गया। सरकार के स्थायी ऋणकोष में भी १३७½ करोड़ रुपए की वृद्धि हो गई।

पर रेलवे-द्वारा आमदनी बढ़ती ही जा ही रही है। सन् १९४३-४५ का रेलवे का हिसाब जाँच-पड़ताल के बाद अगस्त, १९४५ में पूरा हुआ है। उसके अनुसार उस वर्ष में १८५½ करोड़ रुपए की आमदनी रही—रेलवे (भारतीय) के इतिहास में इतनी आमदनी कभी नहीं हुई थी। ३ नवम्बर, १९४५ तक प्राप्त आँकड़ों से पता चलता है कि १९४४-५५ की तुलना में १९४५-४६ में रेलवे विभाग को ५ करोड़ रुपए अधिक की आय रही। इस परिस्थिति में मैं पाठकों को गलत अनुमान नहीं करा रहा हूँ यदि ४५-४६ को रेलवे के इतिहास में सबसे अधिक आयवाला वर्ष समझा जाय। यह तो सरकारी माली हालत रही।

मुद्राचलन

२७ अक्टूबर, १९४४ को कुल चालू नोटों की संख्या अथवा कीमत ९,८२,१८,२०,०००) रुपए थी। रेजर्व बैंक की साप्ताहिक रिपोर्ट के अनुसार २६ अक्टूबर, १९४५ को कुल ११,६९,७७,४४,०००) रुपए के नोट चालू थे—यानी दो अरब रुपए की मुद्रा एक साल के भीतर बढ़ गई। स्टर्लिंग बैलेंस—यानी हिन्दुस्तान का लन्दन में जमा रुपया ऊपर लिखी तारीखों में क्रमशः ९,००,७४, ३२,०००) तथा १०,९३,७४,३४,०००) था—यानी एक वर्ष में लन्दन में हमारा एक अरब रुपया और भी फँस गया।

चालू नोटों का हेर-फेर तो ज्यादातर बैंकों के द्वारा होता होगा। शेड्यूल्ड (रेजर्व बैंक-द्वारा स्वीकृत) बैंकों के आँकड़ों से भी यही अनुमान लगता है। १ सितम्बर, १९३९ को भारतीय शेड्यूल्ड बैंकों के पास मुद्दती जमा रकम कुल १० २२, ४३४,०००) रुपए थी तथा चालू जमा (करेंट अकाउंट १३, ४३, ६४९,०००) रुपए। १९ अक्टूबर, १९४५ को यह रकम बढ़कर इस प्रकार हो गई—मुद्दती जमा—२६, २३ ६२९,०००) रुपए, चालू खाता—६५,८१, ०७४,००० रुपए। यानी क्रमशः तिगुने तथा पाँच गुने का फर्क हो गया है।

नया अँगरेजी वर्ष शुरू होने के समय हमारी ऊपर लिखी आर्थिक परिस्थिति है। उससे यह तो स्पष्ट ही कि :—

(१) सरकारी खर्च बढ़ रहा है,

(२) सैनिक खर्च बढ़ रहा है,

(३) बाजार में काफी रुपया फैला है और रुपए का मूल्य गिरा हुआ है,

(४) सरकारी आमदनी भी गिर नहीं रही है,

(५) किसी आर्थिक सङ्कट की सम्भावना नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्न क्या है ?

तब ऐसा कौन-सा प्रश्न है जो हमें हल करना है ? क्या रुपया बाजार में फैला रहना हमारी बढ़ती हुई क्रय-का द्योतक नहीं है ? क्या दस अरब रुपया लन्दन कर भी हम चैन से नहीं सो सकते ?

वास्तव में वर्त्तमान मुद्रा-वृद्धि एक कागजी माया-जाल अर्थशास्त्र के सिद्धान्तों का अपवाद है। भारत में त मुद्रा के पीछे, कागज की अपार राशि की तह में, ४४,४१,४५,०००) रुपए का सोना है। १०,४९,३२, ००) रुपए का सोना रेजर्व बैङ्क के हिसाब में और भी " के रूप में है, पर यह सोना भी भारत में नहीं, लन्दन आदि में पड़ा है। अतएव स्टर्लिंग सिक्यूरिटी जाना मिलाकर हमारा २१ अरब रुपया हमारे हाथ से है। इसलिए जिसके पास हमारा इतना खजाना वह जब चाहे, जरा से इशारे से हमारे रुपए के को चौपट कर सकता है। इसी लिए हमारे देश के लिक यह चाहते हैं कि हमारा रुपया हमारे अधिकार में य नहीं तो न जाने हमारे उद्योग-व्यवसाय की क्या ो। न तो हम स्वतन्त्रतापूर्वक विदेशी बाजार में जरूरत का सामान खरीद सकते हैं, न अपने उद्योग-ाय को ऐसा सङ्गठित कर सकते हैं कि हमारा माल के बाजार में सस्ता पड़े और हमारा विदेशी व्यापार पक्ष में रहे। आज इस सम्बन्ध में किसी की दो नहीं हैं कि देश का औद्योगिक विकास हुए बिना कभी का उद्धार न होगा और उन्नति की विश्व-व्यापी दौड़ ड़ा हुआ वह एक द्वितीय श्रेणी का राष्ट्र बना रहेगा।

लंदन से निराशा

भारतीय-उद्योग-व्यवसाय की वृद्धि के लिए यह जरूरी हमको जहाँ से भी मिल सके, अच्छी और नई मशीनें कर हम कल-कारखाने खोलें। अपनी जरूरत भरके माल पैदा करें और बाहर भी माल बेचें। पर हमारा तो लंदन में है और भारत का औद्योगिक मण्डल में यह चेष्टा करके हार गया कि उस रुपए का ग करने का अधिकार हमारा हो। चेष्टा यहाँ तक की उसमें से कुछ रकम अमेरिकन डॉलर में लगा दी हम अमेरिका से मशीनें खरीद लें। पर ब्रिटेन चाहता है कि हमें जो कुछ करना हो, उसके साथ और वह स्वयं सन् १९४८ तक हमारी जरूरत भर के सामान नहीं दे सकता। वह तो चाहता ही है कि कम से कम भारत का बाजार विलायती माल के लिए खुला रहे। अतएव वह हमें रुपया न देकर २० अरब का माल खरीदने के लिए बाध्य करेगा—हमारा बाजार चौपट हो जायगा।

कण्ट्रोल के निरर्थक विधान ने देश का व्यवसाय चौपट कर डाला है। लोगों को पहनने के लिए कपड़ा भी नहीं प्राप्त हो रहा है। ऐसे अवसर पर हमको अपनी औद्योगिक उन्नति करने का अवसर न देकर हमारे यहाँ अँगरेजी माल खपाना आसान है और समाचार है कि शीघ्र ही लंदन से 'उपयोगी सामग्री' का जहाज भारत आ रहा है।

'स्टर्लिंग बैलेंस' के बारे में अँगरेजी नीयत पर शुबह करने के अनेक कारण हैं। प्रसिद्ध ब्रिटिश अर्थशास्त्री लार्ड काइन तो यह मानने के लिए भी तैयार नहीं हैं कि हमारा इतना रुपया वहाँ जमा है। अगस्त, ४५ में लंदन के प्रसिद्ध पत्र 'फिनांशन टाइम्स' ने लिखा था कि इस लड़ाई में सबसे ज्यादा फायदा भारत को रहा है अतएव उसे ब्रिटिश उदारता के प्रति कृतज्ञ होना चाहिए और बेकार की जिद न करनी चाहिए। प्रसिद्ध ब्रिटिश पत्र 'इकोनोमिक्स' की भी यही राय है। किन्तु केवल राय तक ही बात न रही। ब्रिटिश सरकार ने योरप का बाजार तक हमारे लिए बन्द कर देने के लिए ऐसे-ऐसे समझौते किए कि उनका परिणाम हमारे लिए बड़ा बुरा होगा। ५ अक्टूबर, ४५ को 'फेडरेशन आव इंडिया चैम्बर्स आव कामर्स' के सेक्रेटरी ने रेजर्व बैंक के सेंट्रल बोर्ड आव् डाइरेक्टर्स के नाम एक पत्र लिखकर इस स्थिति को बड़े अच्छे शब्दों में स्पष्ट किया था। उसका कुछ अंश हम यहाँ पर देते हैं :—

"सम्राट् की सरकार ने फ्रांस, बेलजियम, स्वेडन, हालैंड आदि के साथ जो माली समझौता किया है उससे भारत के लंदन में जमा स्टर्लिंग बैलैंस की स्थिति और भी खराब ही होगी। इस समझौते के अनुसार ऊपर लिखे देशों के साथ पक्ष या विपक्ष में व्यापारिक सन्तुलन होने पर भी स्वर्ण या मुद्रा में भुगतान करना असम्भव हो जायगा।

"चूँकि यह समझौता समूचे स्टर्लिंग-क्षेत्र से सम्बन्ध रखता है अतः भारत की इससे बड़ी भयङ्कर हानि होगी। उसे केवल स्टर्लिंग में ही भुगतान मिलेगा और वह स्वर्ण तथा अपनी मुद्रा में दाम पाने का अधिकारी न होगा। परिणाम यह होगा कि यदि इन देशों में भारत का कुछ पावना होगा तो उसे ब्रिटिश सरकार अपनी स्टर्लिंग में जमाकर लेगी। अतएव भारत को कुछ भी न मिलेगा।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्धकार

इसलिए, जहाँ संसार औद्योगिक पुनर्निर्माण की सोच रहा है, भारत के सामने अन्धकार के अलावा क्या है? अपनी पिछली रिपोर्ट में रेजर्व बैंक ने भारतीय प्रतिनिधि-मण्डल की असफलता का हवाला देते हुए कहा था कि वे स्टर्लिंग के परस्पर बँटवारे का निर्णय 'मानिटरी कान्फरेन्स' में न करा सके। "ब्रिटिश सरकार से किसी प्रकार के समझौते में यह आश्वासन तो होना ही चाहिए कि भारतीय साधनों की उन्नति में जो बाधक त्रुटियाँ हुई हैं उनकी पूर्त्ति के लिए उसे एक निश्चित सामग्री प्राप्त हो सकेगी।"

पर अमेरिका तक दौड़ लगाने पर भी कोई रास्ता नहीं सूझ पड़ा। युद्ध-कालीन भारतीय व्यवसाय वास्तव में भारत के कच्चे माल का निरन्तर शोषण मात्र था। न तो हम कोई विदेशी बाजार प्राप्त कर सके—यानी उसे अपने लिए स्थायी बना सके—और न वास्तव में हमारे उद्योग-धन्धों की ही कोई उन्नति हुई। अब जब कि संसार के सभी उद्योगी राष्ट्र मैदान में आ गए हैं, हमारे लिए कोई रास्ता नहीं रह गया है। युद्ध के दिनों में दिखाई तो यह पड़ता था कि भारत का निर्यात बहुत बढ़ गया है, वह बहुत ज्यादा सामान बाहर भेजने लगा है, पर यह सब संख्या का खिलवाड़ मात्र है। जब बाहर से माल आना ही बन्द हो गया था तब यह पता कैसे चले कि वास्तव में कितने का व्यापार हमारे पक्ष में रहा। आयात-निर्यात का ब्यौरा बैठाकर ही ऐसा हिसाब लग सकता है। अभी हाल में ही 'इंडियन एक्सपोर्टर्स एसोसियेशन' के अध्यक्ष श्री० जी० बी० कोटक ने भारत सरकार से अपील की है कि केवल यही कहने से काम नहीं चलेगा कि जापान-द्वारा मुक्त बाजारों को भारत हथिया लेगा। उसके लिए अभी से चेष्टा करनी चाहिए। भारत का विदेशी व्यापार बढ़ाने के स्थान पर सरकार उसे घटा रही है। अभी हम ६,००,००० गज कपड़ा विदेश भेजते हैं। यदि कंट्रोल उठ जाय तो भारत की जरूरत पूरी करने पर भी इससे ज्यादा ही माल बाहर भेजा जा सकता है। पर सरकार ने सन् १९४६ से केवल ४,००,००० गज कपड़ा बाहर भेजने की आज्ञा दी है। हम आसानी से अपनी उत्पत्ति (वस्त्र) का ३ प्रतिशत बाहर भेज सकते हैं। हिन्दुस्तान से काफी चाय बाहर जाती थी। सरकार ने पूर्वी अफ्रिका में चाय की खेती बढ़ाने के लिए भारत से चाय का बीज बाहर भेजना शुरू किया है और भारत में चाय की खेती कंट्रोल में है। पिछले दस वर्षों में पूर्वी अफ्रिका में चाय की खेती के का[illegible] में आनेवाली जमीन में ५८·२३३ एकड़ की वृद्धि हुई पर इ[illegible] बीच में भारत में केवल ०·२९ प्रतिशत की वृद्धि हुई[illegible] जहाज माल भेजने के लिए हमारे लिए ही नहीं हैं। हमा[illegible] विदेशी व्यापार बढ़ेगा तो कैसे?

विदेशी माल आना बढ़ता जा रहा है। योरपी[illegible] महायुद्ध समाप्त होने के बाद से हमारे आयात में ७[illegible] प्रतिशत की वृद्धि हुई है पर निर्यात में केवल ६ प्रतिश[illegible] की। अमेरिका, मिस्र और ईरान के साथ हमारा व्यवसा[illegible] हमारे विपक्ष में होता जा रहा है—यानी आयात बढ़ रह[illegible] है और निर्यात घट रहा है। ऐसी परिस्थिति में हमा[illegible] औद्योगिक भविष्य अन्धकारमय न हो तो क्या हो।

एक विचारणीय विषय

उद्योग-व्यवसाय को बढ़ाने के लिए साधन चाहिए—[illegible]धन का तथा सामग्री का। मान लीजिए कि सामग्री मि[illegible] रही है पर स्टर्लिंग से कोई सहायता नहीं प्राप्त हो सकती[illegible] उस हालत में हमको अपने देश में ही बैंकों से रुपया प्रा[illegible] कर नए कल कारखाने खोलने पड़ेंगे। बैंकों के लिए भ[illegible] यह लाभप्रद सिद्ध होगा कि उनका रुपया लाभदायक सू[illegible] पर लगे। लड़ाई के जमाने में सरकारी हुण्डियों के बल प[illegible] बैंकों ने काफी फायदा उठाया है। पर अब तो उस फाय[illegible] का जमाना नहीं रहा। ऊपर हम शेड्यूल्ड बैंकों में ज[illegible] रकम का ब्यौरा दे आए हैं। उनके पास मुद्दती जमा ढ[illegible] अरब और चालू खाता साढ़े छः अरब मात्र है। अब [illegible] चालू खाते का रुपया फँसा नहीं सकतीं और मियादी [illegible] बल पर ही जो कुछ हो सकता है, सो होगा। सम्भव [illegible] कुछ परिस्थिति बदले और मियादी रुपया बढ़े, पर निक[illegible] भविष्य में इसकी सम्भावना नहीं दीख पड़ती। इसलि[illegible] जब तक कोई ऐसी संस्था भारत में नहीं बनती (जो सरका[illegible] पोषित हो) जिसके द्वारा सस्ते सूद पर नए उद्योग-व्यवसा[illegible] खोले जा सकें, रुपया न होने से लाखों काम रुके पड़े रहेंगे[illegible] ब्रिटिश सरकार ने इसी काम के लिए 'ब्रिटिश फाइनेंसि[illegible] कार्पोरेशन' खोल भी दिया है पर हमारी सरकार ने कु[illegible] नहीं किया है।

फाइनेंसिंग कार्पोरेशन

भारत सरकार के प्लैनिंग मेम्बर सर आर्देशर दलाल [illegible] अक्टूबर के शुरू में यह घोषणा की थी कि बड़े तथा छो[illegible] पैमानों पर खोले जानेवाले औद्योगिक कार्यों के लि[illegible] सरकार ने एक 'इंडस्ट्रियल फाइनेंसिंग कार्पोरेशन' स्थापि[illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का निश्चय किया है। उनसे यह भी पता चला कि
ार ने नई कम्पनियाँ खोलने की ६५१ आज्ञाएँ दी हैं
में कुल ३४ करोड़ ९० लाख की पूँजी लगेगी—इनमें
धिकांश युद्ध-कालीन प्रयत्न हैं।
र सर आर्देशर यह जानते हैं कि जब तक भारत को
विक शासनाधिकार नहीं मिलता, कुछ भी काम नहीं
हो सकता। उन्होंने स्पष्ट कहा था कि यदि भारत तथा ब्रिटेन का वैधानिक समझौता नहीं हो गया तो उसके विकास में बड़ी बाधा पड़ेगी।

और निकट भविष्य में मजदूर सरकार से हमको कुछ विशेष आशा भी नहीं है। अतएव हमें तो सन् १९४६ में भारत का औद्योगिक भविष्य अन्धकारमय ही दीखता है।

आदर्शवाद

श्री रामसरन शर्मा

आज से कई साल पहिले की बात है, तब महायुद्ध
न हुआ था और न जीवन की ये नई विकलताएँ
आने आई थीं। जीवन एक सीधे-सादे ढर्रे पर चलता
था। मध्यवित्त के लोग कालिज के बाद सरकारी नौकरी
पाने को महावरदान समझते थे।

इसी समय में इस कहानी का प्रारम्भ होता है।

प्रकाश तब कालिज में पढ़ता था, फोर्थ इयर में। खूब
जागकर किताबें पढ़ने के कारण परीक्षा में नम्बर अच्छे
पाया करते थे। पर तो भी माता-पिता को और स्वयं
उसी आगामी कल की चिन्ता खाया करती थी।
अच्छी नौकरी पा जाना ही उसका ध्येय था; पर
प्राप्त करना कितना कठिन था, इसे वह भली प्रकार
जानता था।

इसी कारण प्रकाश न कालिज के 'आवारा क्लब' का
मेम्बर था और न 'कालिज-पार्लिमेंट' का प्रमुख मेम्बर।
इससे उसे चिढ़ थी और उसे दूर रखने का उसने एक
उपाय सोच पाया था—जैसे हो अच्छे नम्बरों से परीक्षा
पास करके नौकरी करना।

यह बात न थी कि उसने संसार के विषय में कुछ
पढ़ा न हो। या उसके अपने कुछ आदर्श न हों।
किताबों के ढेर में से झाँककर उसने कालिज की तितलियाँ
देखी थीं, साथ ही उनके खर्चों का अनुमान भी कर
लिया था।

उसने मन में सोच लिया था कि वह विवाह किसी
सुशिक्षित पढ़ी-लिखी लड़की से ही करेगा। थोड़ा-सा
पढ़ी हो, समझ सकती हो, घर का काम चला सके—
इसका यह कि मेम साहब न होकर वह उसकी सौ-सवा सौ
की गृहस्थी की रानी हो।

परीक्षा भली भाँति पास करके प्रकाश चुपचाप सेक्रेटेरियट के इम्तहान में जा बैठा। डिप्टी-कलेक्टरी के सपने उसने देखे ही नहीं। फिर एक दिन शीघ्र ही वह नई देहली में बाबू बनने के योग्य मान लिया गया।

पिताजी ने यह सुनकर उसकी पीठ ठोंकी। माताजी ने हनुमान्‌जी के लड्डू बाँटे।

"अब तो तेरा ब्याह हो जाना चाहिए, प्रकाश," माता जी ने हँसकर कहा। "पर देख, कहे देती हूँ, मेम का मेरे यहाँ निबाह न होगा।"

प्रकाश ने सोचा, जैसे वही मेम को निभा सकेगा। उसने संयत भाव से कहा, "माँ, मुझे मेम नहीं चाहिए। कोई साधारण पढ़ी-लिखी, सीधी-सादी लड़की हो, बस।"

माँ का अन्तर खिल उठा, उसका पुत्र सचमुच ही सपूत था। इतनी अँगरेजी पढ़कर भी जरा न बिगड़ा था। पर ऊपर से मुँह बनाकर, आँखों में हँसी भरकर बोली—"वाह रे, अपने ब्याह के बारे में कोई बोलता है।"

प्रकाश ने वह हँसी नहीं देखी, हाथ की किताब झुकाकर उसने फिर कहा—"माँ, मैं कहे देता हूँ.....।" और तभी उसने माँ के मुख का भाव पढ़ लिया। तुरन्त ही बात बदल कर बोला—"अपने ब्याह में ही न बोलूँगा तो दूसरे के ब्याह में बोलने ही कौन न देगा?"

उसी रात को माँ ने पिता से पुलक-हुलसकर बेटे की बड़ाई की। बाप की सिकुड़ी छाती भी गर्व से फूल उठी। लड़का हो तो ऐसा हो।

बड़ी धूमधाम से प्रकाश का विवाह हो गया। प्रभा ने घर पर ही पढ़कर हाई स्कूल पास कर लिया था। सुन्दर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी थी और घर के काम में निपुण भी। प्रकाश सन्तुष्ट हो गया। माँ निहाल हो गई और पिता कृतकृत्य।

प्रकाश और प्रभा देहली आ गए। साथ में प्रकाश के माता-पिता भी। बेटे की कमाई का सुख देखना माँ-बाप की अभिलाषा की चरम सीमा होती है। पर देहली में प्रकाश के छोटे से 'ई' टाइप क्वार्टर का कुछ ही दिन सुख उठाकर वे दोनों चल बसे—अपने स्थान में घर में दो बच्चे छोड़कर। नीला और नलिन बड़े लाड़ से उन बच्चों के नाम रक्खे गए थे।

जीवन धीरे-धीरे दफ़्तर-घर और कभी-कभी सिनेमा के बीच आराम से चल रहा था कि तीन सितम्बर, १९३९ आ पहुँचा। लड़ाई समाचार पत्रों में हलचल मचाने लगी। पर जीवन पर उसका प्रभाव नहीं-सा ही पड़ा।

प्रकाश और प्रभा निश्चिन्त रूप से दिन काट रहे थे।

तभी एक दिन युद्ध ने सनसनी फैला दी, जापान के लड़ाई छेड़ते ही देश में मानों हाहाकार मच गया। चीजों के दाम दुगने, चौगुने, छःगुने हो गए। बाजारों से सामान उठकर ब्लैक मार्केट में जा पहुँचा।

जीवन की समस्याएँ दुरूह हो गईं। प्रकाश ने समाचार-पत्र बन्द कर दिया। सिनेमा छोड़ दिया। घी की जगह वनस्पति का प्रयोग होने लगा। बच्चे अब तीन हो गए थे। वे फटे हाल रहने लगे।

आर्थिक कठिनाइयों ने दोनों को कुछ चिड़चिड़ा भी बना दिया था। दिन भर की कतरब्योंत के बाद प्रभा कुछ थक जाती ही थी। अपनी दोपहर की चाय न पाने से प्रकाश भी शाम को कुछ खीझा रहता था। इस पर भी ऊपरी दिखावा उन्हें रखना ही पड़ता था।

उन्हीं दिनों प्रकाश के एक मित्र राजेन्द्र ने आफिस छोड़-ठेकेदारी आरम्भ कर दी। पिता ठेकेदार थे ही, दो-चार दिन में राजेन्द्र भी कमाने लगा। युद्ध के समय में ठेकेदारी की आमदनी का क्या ठिकाना। उसके चेहरे पर कुछ रङ्ग आ गया, कपड़े भी शानदार हो गए। जब-तब वह पुराने साथी के नाते प्रकाश के यहाँ भी आ जाता तो उसकी बातों से, आने मात्र से, उसके और प्रभा के मन में न जाने कैसी एक ईर्ष्या-सी उत्पन्न हो जाती।

"देखो तो कैसा फूल रहा है", प्रकाश कहता।

चाय के बर्तन धोते-धोते प्रभा कहती—"रुपए की गर्मी है।"

"बचा, पकड़े गए तो सब पता पड़ जाएगा। ब्लैक मार्केट के विरोध में सरकार बड़ी तत्पर है।"

"अजी, तब भी रुपया बचा लेगा।"

"ऐसा कहाँ का धन्नासेठ है; होगा यही दस-बीस हज़ार।"

प्रभा चुप हो जाती। प्रकाश भी। बातों में दस-बीस हजार को उड़ा देना बात और थी, पर दोनों के मन चाहते थे कि उनके पास भी इतना रुपया होता।

प्रकाश ने कुछ चेष्टा भी की, पर बात बस से बाहर जान पड़ी। व्यापार और ठेकेदारी की कला उसे आती ही न थी।

उधर गरीबी बढ़ रही थी। कपड़े फटते जा रहे थे। अनाज के भी लाले पड़ते थे। बच्चों को त्याग और वैराग्य की शिक्षा प्रायः देनी पड़ती थी। यह शिक्षा देते-देते प्रकाश का मन ग्लानि से भर उठता था। अपनी हीनता उसे पानी-पानी कर देती थी।

उसने फौज में जाने की सोची, मगर प्रभा ने इस प्रस्ताव को अपने आँसुओं से एकदम धो दिया, "ना बाबा, फौज-वौज का नाम नहीं। हम गरीबी में ही दिन काट लेंगे, कहीं जाने का काम नहीं। उसे तो केवल दो रोटियाँ और धोतियाँ चाहिएँ। इसके लिए कच्चे कुनबे को छोड़कर जोखों में डालना किसने बताया?"

बात टल गई। पर प्रभा के मन में खटका रह गया। उसने दम रोककर सब कुछ सहने की ठान ली। प्रकाश से कभी कुछ कहना ही नहीं; आधे पेट खाना और रहना। धोबी छुड़ा दिया, बच्चों के पैसे बन्द कर दिए, बर्तन स्वयं माँजने लगी। न वह प्रकाश को गरीबी का ध्यान न होने देगी। कहीं ऐसा न हो कि वे परेशान होकर चल ही दें।

प्रभा बीमार पड़ गई। बुखार आने लगा। पर उसने किसी से जिक्र ही न किया। दवा के दामों का प्रश्न था। चुपचाप बुखार में वह सारा काम करती, प्रकाश की सेवा भी रात को कर देती। कुछ सुनी-सुनाई की भी पर बुखार न छूटा।

तब एक दिन प्रकाश को पता चल ही गया। दिन प्रभा का बदन जल रहा था। रात के अँधियारे टटोलने पर प्रकाश को सन्देह हो गया। देखने पर निश्चय हो गया। फिर तो लाचार प्रभा को सब कुछ देना पड़ा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"अब तक क्यों नहीं बताया ?" प्रकाश ने पूछा।

"सोचा था, ऐसे ही ठीक हो जाएगा। फिर मुझे पता भी तो न चलता था।"

प्रकाश उस दिन रात को सो न सका। वह खूब समझ रहा था कि प्रभा ने बुखार की बात क्यों छिपाई। उसके पुरुषत्व का यह भारी अपमान था। पर वह ...ता भी क्या ? आमदनी बढ़ने की कोई सूरत दिखाई ...ती थी। खर्च बढ़ता जा रहा था।

प्रभा की रात भी बुरी कटी। वह क्या करे ? क्या ... पति की चिन्ता कैसे कम हो ? नीला, नलिन ... मुन्नी कैसे आराम से रहें ?

सबेरे के अँधियारे में वह थककर सो गई।

दूसरे दिन प्रकाश ने हृदय कड़ा करके राजेन्द्र से अपनी ...या बताई। क्या वह कोई राह बता सकेगा ?

"हाँ," राजेन्द्र ने कहा—"एक राह है।"

"क्या ?" प्रकाश ने उत्सुकता से पूछा।

"भाभी को नौकर करा दो।"

प्रकाश को चोट-सी लगी। स्त्री की कमाई, दफ्तर ... यह बात उसके आदर्श के विरुद्ध थी।

"यह मुश्किल है," उसने कहा।

"तब मैं और क्या बताऊँ।" राजेन्द्र लाचार था।

प्रकाश खिन्न मन से दफ्तर चला गया। वहाँ भी ...भर उसका मन भारी रहा। प्रभा नौकरी करे, यह उसे कुछ अनहोनी-सी, बुरी-सी, लगती थी। फिर ...में गैरों के साथ—उफ !

उसने देखा, उस दिन, एक दफ्तर में बहुत औरतें काम ... हैं, हँसती हैं, साथ-साथ घर जाती हैं। उनमें ...बात अनोखी है, यही वह देर तक समझने की चेष्टा करता रहा। शायद वे लोग भी प्रभा जैसी ही हों। उन्हें भी महँगाई ने मजबूर किया हो।

थका-सा वह घर लौटा। देखा तो प्रभा ने चाय बना रखी है, धोती भी एकदम साफ है।

"क्या बात है ? तबियत कैसी है ?" उसने मरी-सी हँसी से पूछा।

"ठीक है। चाय पियो।"

चाय पीते-पीते, उसने फिर पूछा—"बात क्या है, प्रभा ! यह बिसकुट, यह ठाट ! मामला क्या है ?"

"मामला," प्रभा की आँखें उस पर जमी थीं, "मामला यह है कि अगर तुम कहो तो मैं भी नौकरी कर लूँ।"

इस चोट को प्रकाश चुपचाप सह गया।

"देखो, कमला कर रही है और सरोज भी।" प्रभा कहती गई, "अब इस महँगाई में करें क्या ? अभी मुन्नी का कनछेदन होना है। स्कूल की फीस भी बढ़ रही है..... तुम कहो तो मैं नौकरी कर ही डालूँ।"

प्रकाश ने चारों ओर देखा। मन ने फिर प्रभा की तनख्वाह से जो परिवर्तन होगा, उसे सोचा। एक बार अपने पुराने विचारों को याद किया और फिर धीरे से कहा—"कर लो, क्या हर्ज है।"

प्रभा मुस्कुरा दी।

जीवन की गाड़ी उनकी अब भी चल रही है, पर अब प्रकाश कुछ दबा-सा रहता है। प्रभा अब बात-बात पर उसकी राय नहीं लेती, न झुक जाती है।

आनेवाले दिनों का चित्र दोनों के मन में एक-सा नहीं है। वही दो चित्र उनकी निधि हैं जिसे वे एक दूसरे से भी छिपाए रखते हैं। कौन-सा चित्र ठीक उतरेगा, कौन जाने।

——

गीत

श्री 'नीरव' एम० ए०

तुम दुखी संसार से।
दीनता से कर पसारे
ढो रहे हो शक्ति हारे
...क गया हूँ और मैं साथी तुम्हारे भार से।
धूल को भी रख न पाते
आँख अम्बर पर उठाते
...ति का उपहास कर तुम लड़ रहे अधिकार से।

कुछ अभावों बीच जीकर
थक गए दो घूँट पीकर
जान अधरों पर हलाहल कौन रखता प्यार से।
रोक अपने पल न पाए
जो मिटे मैंने मिटाए
पूर्णता मेरी अमिट इस हानि के उपकार से।

——

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रियासतों की वैधानिक प्रगति का प्रश्न

श्री राजमल सङ्घी, बी० ए०

आज जब कि प्रत्येक ओर से भारतीय वैधानिक गत्यवरोध को दूर करने के प्रयत्न किए जा रहे हैं, उस समय स्वभावतः ही हृदय में रियासतों-सम्बन्धी अनेक प्रश्न उठ खड़े होते हैं। इन रियासतों का क्या होगा? क्या रियासतों में रहनेवाली जनता का भी भविष्य में किए गए किसी वैधानिक हल में ध्यान रक्खा जायगा या उन्हें आज की ही भाँति देशी नरेशों के गुलामों की भाँति जीवन व्यतीत करने के लिए बाध्य होना पड़ेगा? क्या भविष्य में वह भी ब्रिटिश भारतीय जनता के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर भारत का सिर उज्ज्वल कर सकेगी? भारत के भावी विधान के लिए जब विधान-निर्मात्री-सभा के निर्माण का प्रश्न सामने आ रहा है, तब इन देशी रियासतों की स्वतन्त्रता का प्रश्न और भी अधिक महत्त्वपूर्ण बन जाता है। भारत की पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए हिन्दू-मुस्लिम एकता का प्रश्न जितना आवश्यक एवं तात्कालिक गिना जाता है, भारतीय इकाई को एक सूत्र में बद्ध किए रखने के लिए इन देशी रियासतों के हल का प्रश्न भी उससे कम आवश्यक नहीं है।

हैदराबाद के निजाम साहब

रियासतों की वैधानिक प्रगति का प्रश्न अत्यधिक उलझा हुआ प्रश्न है। यदि हमें अखण्ड भारत का सूत्रपात करना है तो हमें यह भी करना पड़ेगा कि देशी रियासतों को ब्रिटिश भारत के साथ प्रगतिशील बनाएँ। सच तो यह है कि किसी भारतीय प्रश्न को हम भारतीय रियासतों को साथ में लिए बिना हल नहीं कर सकते हैं। सम्पूर्ण भारत की स्वतन्त्रता में रियासती प्रजा की स्वतन्त्रता भी निहित है। अतः भारतीय वैधानिक प्रगति के प्रश्न को पूर्ण रूप से हल करने के पूर्व यह आवश्यक है कि देशी रियासतों से सम्बन्धित समस्त प्रश्नों पर भी विचार किया जाय। श्री जवाहरलाल जी नेहरू ने भी कहा है* "कांग्रेस रियासतों को नहीं भूली है। अब समय आ गया है जब कि रियासतों का ब्रिटिश भारत के साथ घनिष्ट सम्पर्क कायम किया जाना चाहिए।"

वर्तमान महायुद्ध ने हमें एक सर्वथा नवीन दुनिया उपस्थित कर दिया है। रूस और चीन की विजय संसार की आँखें खोल दी कि भविष्य में संसार को दास की जञ्जीरों में जकड़े रख लोहे के चने चबाना है। भा तीय स्वतन्त्रता का प्रश्न अ धिक आवश्यक बन गया यदि भारत को स्वतन्त्र न किया गया तो विश्व में शान्ति एवं स्वतन्त्रता स्थापना करना असम्भव होगा। स्वतन्त्र-भारत विश्व-मै में एक महत्तर शक्ति के रूप ही अवतरित होगा। जन-आन्दोलन से सर्वदा विमुख चलनेवाले प्रतिक्रि वादी देशी नरेशगण और म मन्त्रियों को भी यह प्र होने लगा है और उन अनुभव कर लिया है रियासती प्रजा को, जो अभी तक दासों की भ जीवन व्यतीत करती आ थी, जिसका संसार में जन्म लेना न लेना बराबर ही जिसके जन-आन्दोलन को सर्वदा ही निरंकुश रूप अमानवीय एवं नृशंस तरीकों से कुचल दिया जाता जिसकी आवाज को उठने से पहले ही दबा दिया जा है, आज भी १८वीं शताब्दी की भाँति भेड़ों की तरह खदे रहना असम्भव है। अब परिस्थितियाँ बदल गई और निरंकुशता एवं स्वेच्छाचारिता का दौर दौरा स

* ता० २० अक्टूबर को जयपुर की एक सार्वजनिक सभा में दिए गए भाषण से।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को ही है। फल यह हुआ है कि इन नरेशों ने भी
ने राज्यों में वैधानिक सुधारों की घोषणा कर दी है।
ही उनकी इस प्रकार की घोषणा का उद्देश्य जनता को
वे में रखकर वाहवाही लूटना मात्र हो। नरेन्द्र-
मंडल की कार्यवाही और उसके पत्रों में प्रकाशित बातों

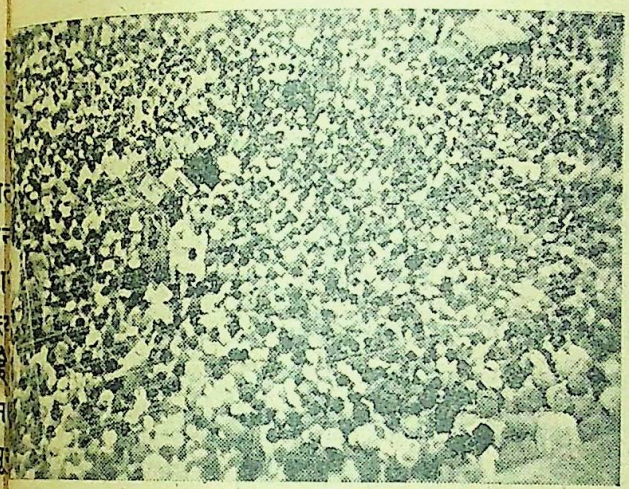

पुर में पण्डित जवाहरलाल नेहरू के स्वागत का एक दृश्य

कर प्रायः जनता भ्रम में पड़ जाती है। वह समझ
है कि देशी नरेश सच्चे सुधारों के लिए बड़े प्रयत्न-
हैं। पर
स्थिति कुछ
ही है।
निक सुधारों
घोषणा कुछ
सभी रिया-
द्वारा ही की
है। शेष
रियासतें
सी पुराने
पर चलती
रही हैं।
यहाँ यह
देखें कि
कथित सु-
का वास्त-
स्वतन्त्रता
सा लगाव
अनेक

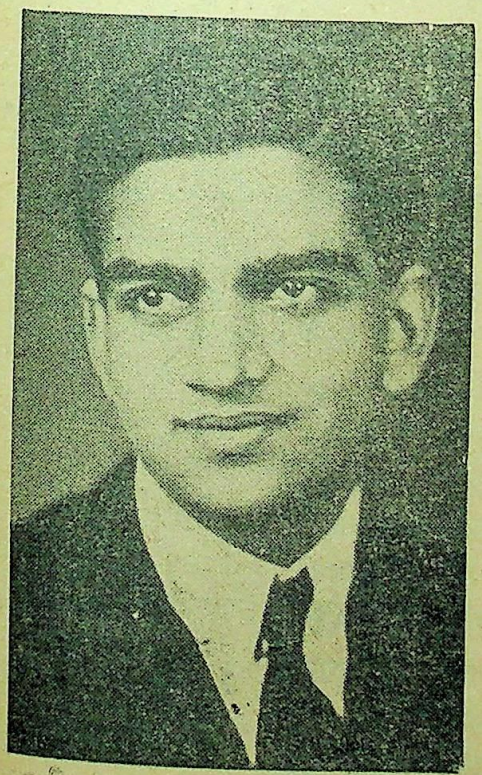

जयपुर के महाराज

वे प्राचीन शासन-व्यवस्था के नवीन संशोधित संस्करण मात्र हैं—जिनकी आत्मा है वही मध्ययुग में डूबी हुई और जिनका बाह्य एक धोखे की टट्टी। कुल ४० रियासतों में प्राचीन राजदरबार को अब केवल आधुनिक रूप देकर धारा-सभा और प्रतिनिधि-सभाओं में परिवर्तित कर दिया गया है जो एक प्रकार से केवल नरेशों की सलाहकार समितियों का ही कार्य कर सकती हैं या अपने दुःखों का रोना मात्र रो सकती हैं। पहले की भाँति अब भी अन्तिम निर्णय नरेशों के ही हाथ में है।

श्री राजगोपालाचार्य ने अपने नागपुर विश्वविद्यालय के दीक्षान्त भाषण में कहा था—"अनेक देशी राज्य अपनी प्रजा को वे सब अधिकार देने में असफल रहे ह जो कि ब्रिटिश भारतीय जनता को अनेक वर्ष पूर्व मिल चुके हैं।" जिस विधान में प्रजा को जितनी अधिक शक्ति राज्य-शासन में दी जायगी उतना ही अधिक वह विधान स्वतन्त्रता को लिए हुए होगा—इस कसौटी पर कसने पर यह स्वतः सिद्ध हो जायगा कि स्वतन्त्रता तो दूर, स्वतन्त्रता की ओर ले जाना तक उनका ध्येय नहीं है। इसके अतिरिक्त कुछ ही रियासतों में अभी तक केवल उतने ही सुधार दिए गए हैं जितने कि ब्रिटिश भारत को २६ वर्ष पूर्व 'मांटेग्यू-चेम्सफोर्ड योजना' द्वारा दिए गए थे। अतः देशी नरेशों का यह कथन, कि उनके राज्य-शासन में उनकी प्रजा का पूर्ण सहयोग है, शुद्ध सत्य से बहुत दूर है।

मैसूर रियासत में उसकी धारासभाओं को केवल अभी हाल ही में स्वयं अपना सभापति चुनने का अधिकार दिया गया है। अभी तक वहाँ गत ५० वर्षों में सभापति मनोनीत ही किया जाता था। प्रजा को बजट में काट-छाँट करने का और कुछ ही सीमा तक कानून बनाने का अधिकार दिया गया है। औंध राज्य का विधान सर्वश्रेष्ठ है। इसमें कुछ हद तक उत्तरदायी शासन की माँग को पूरा करने की चेष्टा की गई है। अभी कुछ समय पूर्व दशहरे के शुभ अवसर पर रीवाँ-महाराज ने भी अपने राज्य का ध्येय प्रजा को उत्तरदायी शासन की ओर ले जाने का बताया है। नेहरू जी ने उस सब की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। सबसे बड़ी और धनिक रियासत हैदराबाद वैधानिक प्रगति में अत्यधिक पिछड़ी हुई है। वहाँ साम्प्रदायिक भावनाओं का अब तक बोलबाला है।

सच तो यह है कि देशी राजा लोग अपने प्राचीन वैभव और रीति-रिवाजों से चिपटे रहना चाहते हैं। उन्हें भय है कि कहीं प्रजा को उत्तरदायी शासन की ओर बढ़ाने में उनके स्वयं के प्राचीन अधिकार न छीन लिए जायँ।

रियासतों के विधानों को देखने से यह भली भाँति विदित हो
ता है कि उनमें प्रतिनिधयात्मक शासन की बू तक नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनेक नरेश यहाँ तक डर रहे हैं कि कहीं इस नई दिशा में कदम बढ़ाने पर उनके अधिकारों और पद पर कुछ आँच न आ जाय। सम्भवतः इसी कारण वे आगे बढ़ने के स्थान में सदा पीछे हटने की ही चेष्टा करते दिखाई देते हैं। वे यदि कभी कुछ सुधार देने लगते भी हैं तो नहीं के बराबर ही। वे अपनी प्रजा को केवल निहत्था और

मैसूर के महाराज

निकम्मा ही बनाए रखना चाहते हैं। यही वह कारण है कि जिससे बाध्य होकर वे युग की आवाज के साथ आवाज नहीं मिला रहे हैं और अपनी तूती अलग ही अलाप रहे हैं। सबसे अधिक आश्चर्य यह है कि ये राजा लोग इस प्रकार के भाषण करते हैं और ऐसे वादे करते हैं कि जिनसे कोई उनकी देश-भक्ति में तिल भर भी अविश्वास नहीं कर सकता है। नरेन्द्र-मण्डल के चांसलर नवाब भोपाल ने अपने एक वक्तव्य में कहा था—"हम भारत की राजनैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक उन्नति में बाधक बनना नहीं चाहते।" २३ वर्ष पूर्व गत बीकानेर-नरेश ने भी उक्त पद से इसी तरह की बात कही थी—"ब्रिटिश भारत को उत्तरदायित्वपूर्ण शासनाधिकार दे दिया जाय तो हमें कोई आपत्ति नहीं, और हम ऐसे शासन-सङ्घ में सम्मिलित होने को तय्यार हैं।" इस प्रकार के भाषण किसी व्यक्ति के लिए उनके विचारों में पूर्ण विश्वास करने को पर्याप्त हैं। किन्तु यदि हम प्रश्न के दूसरी ओर भी देखें तो यथार्थता का पता लग जायगा। "राजा लोग कहते तो कुछ और हैं और करते हैं कुछ और ही।"* जब ब्रिटिश भारत में किसी प्रकार के उत्तरदायी शासन के लिए कोई हल रक्खा जाता है, उसी समय आकर राजा लोग अपनी सन्धियों को बीच में डाल देते हैं। वे सम्राट् से सीधा सम्बन्ध रखने का दावा करते हैं। उनका कथन है कि सन्धियाँ सम्राट् से हुई हैं, सर्वोच्च सत्ता ब्रिटिश सरकार ही है, भारत-सरकार नहीं। क्रिप्स-प्रस्ताव के समय नरेन्द्र-मण्डल की बैठक में एक प्रस्ताव द्वारा कहा गया था—"रियासतों के लिए कोई योजना उसी समय स्वीकृत होगी जब कि उनकी सन्धियों, समझौतों और सनदों-द्वारा या अन्य किसी प्रकार-द्वारा मिले अधिकारों की पूर्ण रूप से रक्षा की जायगी; उनमें कथित रियासतों के अस्तित्व, शासन और सत्ता को सुदृढ़ करना होगा और उन्हें सम्राट् या सम्राट् की प्रजा के साथ की गई प्रतिज्ञाओं को पूरा करने के लिए पूर्ण स्वतन्त्रता मिलेगी।" इस भाँति जिन

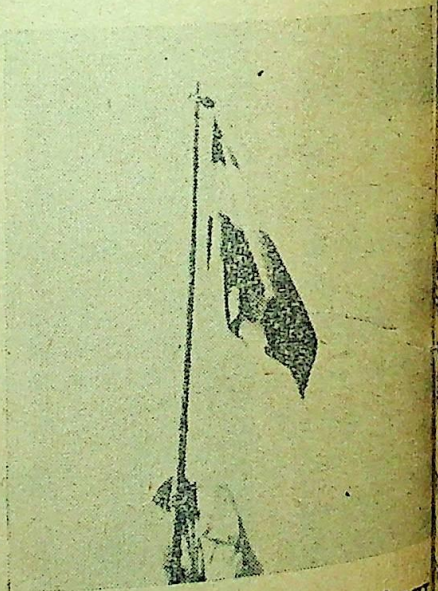

नेहरूजी जयपुर-राज्य-प्रजामण्डल की नगर कमिटी के दफ्तर पर झंडारोहण कर रहे हैं

* पण्डित जवाहरलाल नेहरू के जयपुर-भाषण से।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...ियों को बहुत समय पहिले ही उड़ा दिया जाना ...हिए था और जिनका कोई कानूनी रूप भी नहीं है, ... वर्ष बाद जिनका आज कोई मूल्य नहीं है, जिनमें ... अहमियत नहीं है,'* उनको बीच में डालकर ये ही ...के सच्चे भक्त नरेशगण स्वतन्त्र भारत की आकांक्षाओं ...ड़े अटकाने का कार्य करते हैं। नरेशों के इन सन्धियों ...सनदों-द्वारा प्राप्त अधिकारों की अनावश्यकता के बारे ...न्यत्र† पूर्ण रूप से विचार किया जा चुका है, उसका ...यहाँ पिष्ट-पेषण करना यद्यपि नितान्त अनावश्यक होगा, किन्तु फिर भी प्रो० कूपलैंड के विचारों से अवगत करा देना अनुपयुक्त न होगा—'परिस्थितियाँ अब बिलकुल भिन्न हैं और राजाओं के कौटुम्बिक अधिकारों की रक्षा के लिए एक या अधिक शताब्दी की सन्धियों में की गई प्रतिज्ञाओं में भी परिवर्तन आव...

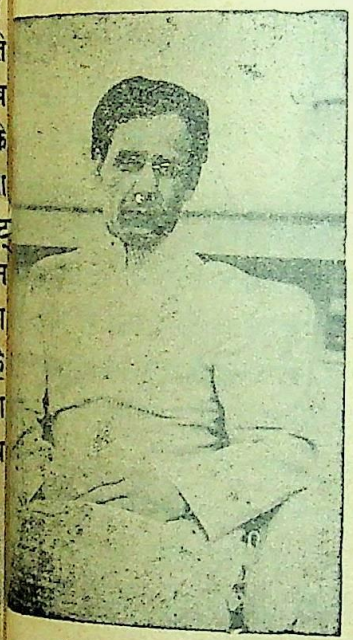

भोपाल के नवाब

...है।.....इस बीसवीं शताब्दी में तो यह आवश्यक ...वे विश्व-प्रचलित प्रजातन्त्रात्मक प्रणालियों को ही ...राज्यों में कार्यरूप में लाएँ।"‡

...यह स्पष्ट है कि देशी नरेश केवल विचारों में ही अग्रसर ...और वह भी सच्ची भावना से नहीं। उनके कार्य ...भी १८वीं शताब्दी के ही उदाहरणमात्र हैं। चाहिए ...कि नरेशगण अपना रवैया बदल दें और समय के ...अग्रसर होकर अपने राज्यों में भी उन्हीं वैधानिक ...ों का श्रीगणेश करें जिनका पूर्ण सफल परीक्षण ...संसार में बहुत पूर्व हो चुका है।

अब हम यहाँ एक-दो रियासतों के विधानों की संक्षिप्त रूप-रेखा देकर तत्सम्बन्धी समस्याओं पर विचार कर लेना चाहते हैं।

३—जयपुर—यहाँ द्वैत धारासभा-प्रणाली का उपयोग नहीं किया गया है। धारासभा को ही कानून-निर्माण का अधिकार है। प्रतिनिधि-सभा केवल विचार ही कर सकती है। धारासभा और प्रतिनिधि-सभा में क्रमशः ५१ और १२५ सदस्य होंगे। इनमें धारासभा में निर्वाचित सदस्यों की संख्या ३७ है जिनमें १२ आसन विशेष क्षेत्रों के हैं (इनमें ९ जागीरदारों के हैं)। संयुक्त निर्वाचन-पद्धति से चुनाव होंगे।

सभा को निम्नविषयों पर मत पास करने का कोई अधिकार नहीं है—

१—राजप्रासाद, जिसके अन्तर्गत वहाँ का सेवक-वर्ग, 'हिज़हाईनेस' का परिवार तथा राजप्रासाद की सेना है।

२—राजकीय सेवकों की सेवावृत्ति (पेंशन) एवं रोजीनदारों का रोजीना।

३—निम्न विषय व तत्सम्बन्धी व्यय—

(अ) 'हिज़हाईनेस' का 'हिज मेजेस्टी' भारत सम्राट् या सम्राट् के प्रतिनिधि से सम्बन्ध।

(आ) सन्धियाँ, रूढ़ियाँ व सहमतियाँ—जो कि वर्तमान में लागू हैं या जो 'हिजहाईनेस' महाराजा-द्वारा भविष्य में की जायँ।

(इ) कर्ज पर व्याज एवं कर्ज स्वीकार करने के समय स्वीकृत व्याज।

(ई) किसी भी कानून के अन्तर्गत या कानून-द्वारा निर्धारित व्यय।

(उ) राजकीय सेना पर खर्च।

(ऊ) आबकारी कर, जकास, भौम चौथान, या नमक खरी आदि के बदले जागीरदारों एवं भौमियों को दी जानेवाली रकम—जहाँ ऐसी रकम के लिए की गई माँग को सरकार-द्वारा स्वीकार किया गया हो या स्वीकार किया जाय।

(ए) प्रधान-मन्त्री, अन्य मन्त्रियों एवं राज्य के सर्वोच्च न्यायालय (हाईकोर्ट) के न्यायाधीशों का वेतन।

उपर्युक्त रूप-रेखा से विदित होगा कि कोई ऐसा प्रमुख विषय नहीं रह गया है जिस पर सभा में विचार हो सके।

प्रत्येक रियासत में उपर्युक्त विधान ही किसी-न-किसी रूप में चालू है।

---

* नेहरूजी के जयपुर-भाषण से।

† सन्धियों के विस्तृत वर्णन के लिए देखो मेरा लेख 'नरेन्द्र-...का त्याग-पत्र' 'सरस्वती' मार्च,' ४५

‡ सन् १९४४ में प्रकाशित 'भारतवर्ष की वैधानिक-समस्या' ...से।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभी रियासतों के विधानों का निरीक्षण करने के उपरान्त यह भली भाँति विदित हो जायगा कि अनेक रियासतों में 'निर्वाचन-पद्धति' का रूप अत्यधिक त्रुटिपूर्ण है। प्रथम तो संयुक्त निर्वाचन-पद्धति काम में लाई ही नहीं गई है (यदि है भी तो कुछ इनी-गिनी रियासतों में ही), द्वितीय प्रतिनिधित्व करने का रूप रियासतों की परिस्थितियों के प्रतिकूल होने के साथ देश के हित की दृष्टि में भी श्रेयस्कर नहीं है। वे वहाँ की जनता को केवल वर्गहितों, जातीय एवं विशेष हितों के सीमित क्षेत्रों में ही केन्द्रित रक्खेंगे और समस्त देश की इकाई में बाधक सिद्ध होंगे। हैदराबाद और पोरबन्दर के प्रतिनिधित्व के तरीके वहाँ की प्रचलित परिस्थितियों के सर्वथा प्रतिकूल हैं। इस भाँति की निर्वाचन एवं प्रतिनिधित्व की पद्धतियाँ निरङ्कुश शासन को बनाए रखने के ही तरीके हैं। औद्योगिक प्रतिनिधित्व (Professional representation), उन रियासतों के लिए जहाँ शिक्षा का अधिक प्रचार नहीं है, जहाँ औद्योगिक सङ्गठन अपनी चरम सीमा पर नहीं पहुँच गया है और जहाँ जन-जाग्रति अधिक नहीं हुई है, उचित नहीं है। वह तो वहाँ केवल वर्ग-भेद आदि को बढ़ाकर उसे अधिक उग्र रूप ही दे देगा और आपसी मतभेद को उभाड़ेगा। भारतवर्ष में औद्योगिक प्रतिनिधित्व का रखना वैसे भी उपयुक्त नहीं है, क्योंकि यह तो दूसरे रूप में जातीय मनोभावों की वृद्धि ही करेगा। कारण,

जयपुरमें पण्डित जवाहरलाल नेहरू आजाद मोर्चे में भाषण कर रहे हैं

भारत में विशेष उद्योग-धन्धे विशेष जातियों के अधिकार में हैं (लोहार केवल मुसलमान ही होते हैं और व्यापारीगण अधिकतर हिन्दू), और इस भाँति देश के हित की दृष्टि से यह उपयुक्त नहीं।

विशेष-हितों की रक्षा—रियासतों के विधानों में जो सबसे अधिक खटकनेवाली बात है, वह यह है कि उनमें सर्वदा ही विशेष हितों की रक्षा का ध्यान रक्खा गया है। जागीरदारों के हितों की रक्षा, राजाओं के विशेष हितों की रक्षा, अनुत्तरदायित्वपूर्ण (धारासभाओं के और जनता के भी प्रति) सेवक वर्ग के हितों की रक्षा, आदि अनेक विशेष हितों की रक्षा इनके विधानों की विशेषता है। जयपुर के दिए गए विधान की रूप-रेखा से यह स्पष्ट विदित हो जायगा। विशेष हितों के पीछे जनता का विधान में कोई भी अधिकार नहीं होता और जो कुछ होता है वह केवल छायामात्र ही होता है। इन विशेष हितों में सबसे अधिक विचारणीय विषय है जागीरदारों की समस्या जो अत्यधिक जटिल है। जागीरदारों के हितों की विशेष रूप से रक्षा की गई है। प्रायः प्रत्येक रियासत में इस वर्ग के अधिकार में रियासत का $\frac{3}{4}$ भाग है। यह वर्ग सर्वदा से ही जनता का स्वतन्त्रता-विरोधी रहा है। जागीरदारों की जन-संख्या का अनुपात अत्यधिक कम है। किन्तु फिर भी जागीरदारों को धारा-सभाओं में अधिक आसन दिए गए हैं और उस पर भी इनके हितों की रक्षा की गई है। जयपुर विधान की दी गई रूप-रेखा की धारा ३ के उपभाग ४ से यह स्पष्ट विदित हो जायगा। सरकार ने इस पत्र के बारे में लिखा है कि इस वर्ग का रियासत के कार्य में सदा ही उच्च हाथ रहा है, अतः विधान में इसे किसी प्रकार से कम प्रतिनिधित्व नहीं दिया जा सकता।

छोटी रियासतों का प्रश्न भी वैधानिक प्रगति में बाधक स्वरूप ही उपस्थित होता है। नेहरूजी ने अपने एक भाषण में कहा था—*"छोटी रियासतों का स्वतन्त्र अस्तित्व तो भविष्य में असम्भव ही होगा। उन्हें या तो आपस में मिलकर बड़ा सङ्गठन करना होगा अथवा समीपवर्ती बड़ी रियासतों में खप जाना पड़ेगा। इस प्रकार ही देश राज्य प्रान्तों के समान सत्ता पा सकेंगे।"

अब समय बदल गया है और जनता हाथ पर हाथ रखकर बैठनेवाली नहीं है। जब तक देशी रियासतों की जनता उत्तरदायी शासन नहीं ले लेगी, तब तक वह चैन से नहीं बैठेगी। स्वयं जवाहरलाल नेहरू ने अपने भाषण में कहा था—"अच्छा हो राजा व नवाब अपने रवैये में परिवर्तन कर डालें, अन्यथा उन्हें जबरदस्ती वैसा करना पड़ेगा .....जनता की माँग उत्तरदायी शासन के लिए

* जयपुर-भाषण से।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के अन्तर्गत राजा-नवाब भी इसी शर्त पर रह सकेंगे वे शासन-सञ्चालन की बागडोर जनता के प्रतिनिधियों हाथों में दे दें।" अच्छा तो यही है कि राजा-नवाब नेक सलाह को लेकर और रीवाँ के उदाहरण को अपने ख रखकर अपने राज्यों में उत्तरदायी शासन घोषित प्रदान कर दें। इससे उन्हें भयभीत होने की आव-ता नहीं है, क्योंकि यद्यपि ऐसा हो जाने पर उनकी न की जैसी निरंकुशता नहीं रहेगी किन्तु रियासती ा की दृष्टि में उनका सम्मान बहुत अधिक बढ़ गा और वह उन पर प्राण देने लगेगी। इससे उनकी विक शक्ति बढ़ेगी ही, क्योंकि उस दशा में वे दूसरों के की कठपुतली नहीं रहेंगे और जनता की अधिक सेवा । श्रद्धा और प्रेम ये दो ऐसी भावनाएँ हैं जो सर्वदा में रहने से हृदय में जड़ पकड़ लेती हैं और फिर हटना असम्भव हो जाता है। "एक राजा जीवन म्मीदवार रहता है और उसमें असमान रूप से अपने श्रद्धा और प्रेम उत्पन्न करने की पैतृक शक्ति होती इँगलैंड के राजा का पद आज किसी व्यक्ति से नहीं है, वरन् उसका आदर निरंकुश नेताओं और टरों से अधिक ही होता है। उसने कुछ खोया नहीं ही है। राजा लोग भी उत्तरदायी शासन देकर नहीं गँवाएँगे, बल्कि वे पहिले से अधिक आदरणीय लेंगे। जनता की सेवा करने का उन्हें तभी अवसर प्राप्त होगा। श्री राजगोपालाचार्य ने एक सार्वजनिक सभा में कहा था—"यदि मैं मैसूर का राजा होऊँ तो अपने प्रजाजनों को आज ही शासन-तन्त्र प्रदान कर दूँ।" यह कथन है एक यथार्थवादी राजनीतिज्ञ का जो राजाओं के लिए अत्यधिक हितकर है। राजाओं की यह दलील कि "एक ही कदम में वैधानिक शासन स्थापित नहीं हो सकता," ठीक हो सकती है, किन्तु पं० नेहरू के शब्दों में वस्तुतः "अमल में वे अब भी जहाँ के तहाँ हैं।"

केन्द्र में शीघ्र ही उत्तरदायी शासन की स्थापना होने की आशा है। साथ में प्रान्तों में उत्तरदायी शासनों की घोषणा की जायगी। कुछ ही समय में भारत का भावी विधान बनाने के लिए विधान-निर्मात्री सभा का सङ्गठन होगा। प्रत्येक प्रान्त से उसमें निर्वाचित सदस्य भेजे जायँगे। उस समय उसमें रियासतों से मनोनीत प्रतिनिधियों का जाना भारत की स्वतन्त्रता में केवल रोड़े अटकाने का ही कार्य करेगा। अतः यह आवश्यक है कि राजा लोग शीघ्र ही चेतें और अपने-अपने राज्यों में रीवाँ की भाँति उत्तरदायी शासन देने की घोषणा कर दें। अन्यथा जैसा कि पं० नेहरू ने कहा था—"विधान-निर्मात्री समिति की पुरानी माँग हमें तभी स्वीकार्य होगी, जब कि उसमें राज्यों के जन-प्रतिनिधि भी होंगे।" अ० भा० देशी राज्य लोक-परिषद् के जयपुर-अधिवेशन में पास एक प्रस्ताव-द्वारा की गई इसी भाँति की माँग के साथ सभी देशी रियासती प्रजा है। देखें भविष्य के गर्भ में क्या छिपा है।

* गरहम वैलस की 'ह्यूमन नेचर इन पोलिटिक्स' पुस्तक से।

गीत

श्री 'नीरव', एम० ए०

वे दिन सोने के बीत चुके
अब तम की रातें आती हैं
कितना भय ढोकर लाती हैं?
युग की आशाओं का छल हम अपने बल से जीत चुके।
यह जीवन चिर जागरण हुआ
मधु के स्वप्नों का हरण हुआ
के पदचिह्नों पर आए पीछे वह छोड़ अतीत चुके।

अनुचर न किसी के भूल हुए
गति के न कभी दो कूल हुए
उनसे मिलकर चलना होगा हम रह जिनके विपरीत चुके।
रहते उर भावभरे अपने
कर्तव्य बनाया है जग ने
इनका संघर्ष मिटा न कभी हम हो उससे भयभीत चुके।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्त-साहित्य का एक खोया हुआ रत्न

उमेशचन्द्र मिश्र

'भरतपुर स्टेट-म्यूज़ियम' के क्यूरेटर और सेक्रेटरी, हिन्दी के परम प्रेमी और उपासक तथा मेरे अनन्य मित्र श्री रावत चतुर्भुजदास चतुर्वेदी ने अथक परिश्रम-द्वारा इधर हिन्दी की अनेक दुर्लभ और प्राचीन पुस्तकें खोज निकाली हैं। हिन्दी-साहित्य के इतिहासों में इन पुस्तकों की चर्चा तो दूर,

'सहज सनेही' के लेखक मोहन कवि

नामोल्लेख भी सम्भवत: कहीं नहीं हुआ है, यद्यपि अपने भाषा-सौष्ठव, सरल और रुचिर छन्दोरचना तथा सुबोध वर्णन-शैली के कारण इन्हें साहित्य के इतिहास में अवश्य स्थान मिलना चाहिए था। यदि इन पुस्तकों को सुसम्पादित रूप में छापा जाय तो न केवल हमारे साहित्य की श्रीवृद्धि होगी, हिन्दी के इतिहास का वह कोना भी, जो अब तक अन्धकारपूर्ण है, उद्भासित हो उठेगा।

'सहजसनेही' नामक पुस्तक इनमें अन्यतम है जिसे चतुर्वेदी जी ने परिचय के लिए मेरे पास भेजने की कृपा की है। यह रचना मोहन कवि की है जिनका एक सुन्दर रङ्गीन चित्र भी पुस्तक के मुखपृष्ठ पर दिया गया है। इस चित्र की भव्यता से और पुस्तक की सुन्दर लिपि से यह स्पष्ट प्रमाणित होता है कि यह बड़ी सजधज से तैयार की गई थी और रक्खी भी कहीं हिफाजत से गई थी। अन्यथा वह महाकाल के वाहनों—चूहों, दीमक और कीड़ों-से तो सौ वर्ष तक अपनी रक्षा नहीं कर सकती थी।

सम्भव है, 'सहजसनेही' की अन्य प्रतिलिपियाँ भी हुई हों, पर उनके सम्बन्ध में कुछ कहा नहीं जा सकता। प्रस्तुत पुस्तक सम्भवत: मोहन कवि ने अपने हाथ से लिखी थी। कारण, इसके अन्त में प्रतिलिपिकार की वह परम्परागत क्षमा-याचना—'यादृशं पुस्तके दृष्टं तादृशं लिखितं मया। यदि शुद्धमशुद्धं वा मम दोषो न विद्यते'—नहीं है। न प्रतिलिपिकार ने कहीं अपना नाम ही लिखा है।

ग्रन्थकार ने अपना नाम मोहन कवि लिखा है और अपने गुरु का सीतल गिरि। अपना निवास-स्थान उसने मथुरा बतलाया है—

मोहन मथुरा मैं बसत कीनी कथा बनाय।
आपु रूप पूरन सकल समझ्यो सहज सुभाय॥

पर ग्रन्थ के आभ्यन्तर साक्ष्य से यह सिद्ध होता है कि इनका पूरा नाम मनमोहन था और मोहन कवि उपनाम था। ग्रन्थ में अनेक स्थलों में गुरु ने इनको सम्बोधित करते हुए मनमोहन कहा है—

यह विधि कैसे है समझावहु।
मनमोहन कहु मोहि सुनावहु॥

ऐसे आत्मज्ञानपूर्ण ग्रन्थ की रचना के लिए मथुरा ही उपयुक्त स्थल हो सकता था। क्योंकि उन दिनों समस्त भारतवर्ष में मथुरा का वही स्थान था जो देह में आत्मा का है—

देह सकल मैं ज्यों हैं देही।
त्यों मथुरा सब अङ्ग सनेही॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जहँ निरगुन सरगुन ह्वै नाचा।
षेल सकल महँ एकै साँचा॥

न ही नहीं, सहज सनेही की रचना के लिए समय उपयुक्त मिल गया था। जैसा कि कवि के कथन से दित होता है, उस समय सम्राट् जहाँगीर राज्य कर रहे देश में सर्वत्र शान्ति थी। कोई किसी के धर्म-कर्म आस्थाओं में बाधक नहीं हो सकता था—

सोरह सै सतसठ सतु अहा।
सावन परवा बुद्धि दिन गहा॥
जहाँगीर आदिल करि राजू।
अकबर तन साहिनि सिरताजू॥
राइ-रङ्क कीने समताई।
राज सुथिर उह सदा रहाई॥
आप आपु मग जौ जिहि भावै।
कोऊ काहू की न चलावै॥
सबई पन्थ मिलिहि करतारा।
ज्यों सरितानिधि मिलहि अपारा॥

गोस्वामी तुलसीदास जी ने अपने रामचरितमानस का न संवत् १६३१ में प्रारम्भ किया था, जैसा कि उन्होंने लिखा है। 'सहजसनेही' की रचना संवत् १६६७ में इस प्रकार यह ग्रन्थ रामचरितमानस का समकालीन है।

ग्रन्थ का नाम 'सहजसनेही' रखने का एक विशेष कारण लेखक के मतानुसार 'सहजसनेही' उन जीवन-मुक्तों हते हैं जिनके मन भय-क्रोध, मानापमान, ग्रहण-त्याग, सुख आदि के द्वन्द्वों से मुक्त हो जाते हैं और जो रिक व्यवहारों में शून्यवत् रहते हैं – सर्वथा, निर्लिप्त अनासक्त। सहज-सनेहियों का लक्षण मोहन कवि दों में इस प्रकार है :—

उस्तुति निंदा कछू न जानें।
हरष कोप सो मन नहिं आनें॥
देन लेन की सुरति न कोई।
इहि बिधि जग में डोलै सोई॥
इक दिसि सुन्दरि नारि विराजै।
इक दिसि ऊभो केहरि गाजै॥
दोनो सहजहि एक समाना।
इहि विधि मुकती रहै सुजाना॥

× × ×

धर्म काम कछु नाहीं जानें।
अर्थ विवेक नहीं कछु मानें॥
जिहँ बिधि भावै तिहि बिधि रहियै।
जीवन मुकति सो जोगी कहियै॥
ज्यौं भावै त्यों रहै जग डोलै इच्छारूप
मोहन सोई जानिये जीवन मुकति सरूप॥१४४॥

× × ×

कबहूँ जग सों करै बिलासा।
कबहूँ न्यारे रहै उदासा॥
भेंटे खुसी न बिछुर उदासी।
हुलस्यौ सब बिधि सदा प्रकासी॥
मोहन अपने हेत सों रहै सदा आनन्द
सपने परस न पावई जाहि कहत हें दन्द॥१९२॥

× × ×

छिन इक तिहि ठाहर विरमाये।
बहुरों एक देस में आये॥
सहज देस इच्छापुट नाऊँ।
आनँदरूप बसै सब ठाऊँ॥
तिहि पुर के वासी इकसारा।
कोऊ काहू ते नहीं न्यारा॥
एकै मतो एक ही रीती।
खेलहिं खेल आपनी प्रीती॥
जोई जोई भावै सोई सोई करहीं।
कान न काहू की जिय धरहीं॥
तौ पै सकुच करै मनु कोई।
जौ पै तिहुपुर दुसरौ होई॥
आप आप में मिलें रहाईं।
सहज सनेही बिछुरत नाहीं॥१८९॥

इस ग्रन्थ की रचना, जैसा कि ऊपर दिए गए उद्धरणों से सिद्ध हो गया होगा, चौपाई और दोहा छन्दों में हुई है। चौपाई को 'चौपई' और दोहा को 'दोहरा' लिखा गया है। एक दो सोरठा छन्द भी हैं। चौपई और दोहरों का क्रम रामचरितमानस के अनुसार ही है। दोहरों की संख्या कुल मिलाकर २०२ है, इससे ग्रन्थ के आकार का अनुमान लगाया जा सकता है।

पुस्तक का विषय आत्मज्ञान है। शिष्य जिज्ञासु है और गुरु परम आत्मदर्शी योगी। अनेक ग्रन्थों के अवलोकन से भी शिष्य की आत्मज्ञान की जिज्ञासा शान्त नहीं होती है। वह मुक्ति का सरल उपाय जानना चाहता है। सीतल गुरु उसके समस्त सन्देहों का निवारण करते हुए उसे आत्मा का सरल और सच्चा रूप दिखलाते हैं। ऐसे गुरु की उपलब्धि बड़े भाग्य से होती है —

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नमो नमो गुरु कौं सिर नाऊँ।
उपमा कौं दूजो नहिं पाऊँ॥
पन्थ बताय दयौ तत्काला।
आपुहिं दया करी किरपाला॥
जैसो गुरु तैसोई नाम।
सीतल गिरि सीतल विश्राम॥

शिष्य को वह सुयोग सहज ही प्राप्त नहीं हुआ। इस जिज्ञासा में उसकी उम्र का अधिकांश व्यय हो गया।

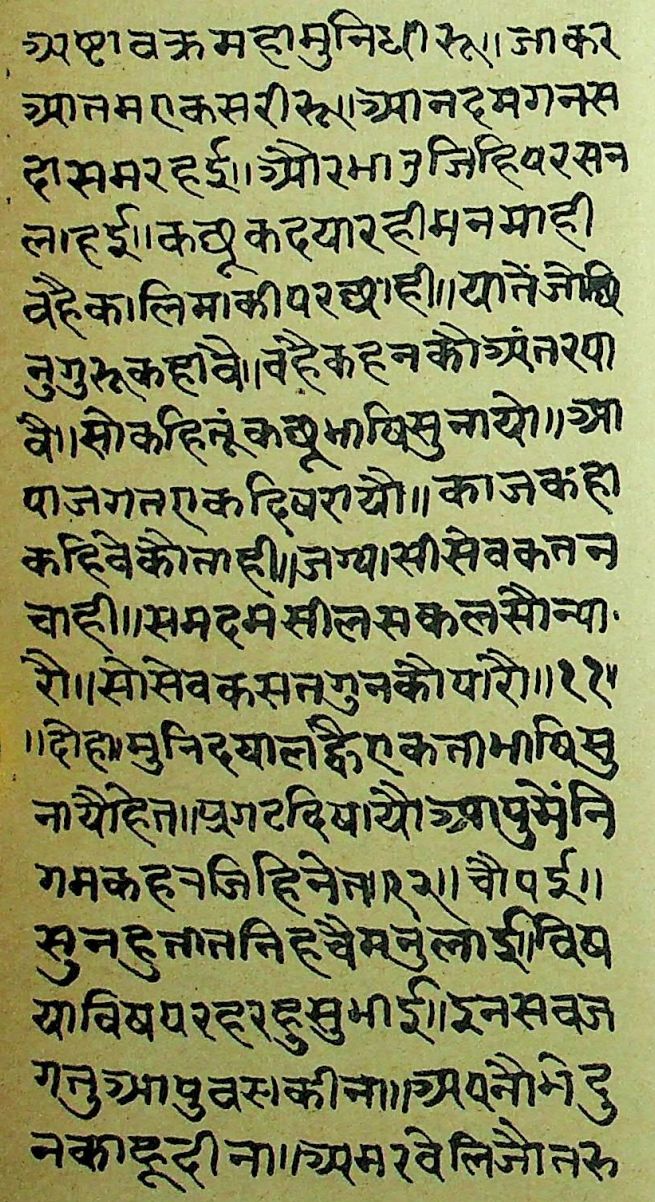

'सहजसनेही' का एक पृष्ठ

जब बुढ़ापा आ गया तब कहीं जाकर उसे आत्मबोध हुआ। मोहन कवि के शब्दों में ही इस कहानी को सुनिए और उनके इस छन्द की भाषा की वर्त्तमान खड़ी बोली से तुलना भी कीजिए। यह आपको बतलाएगा कि हिन्दी के कवि सन् १६१० ईसवी में भी खड़ी बोली का शुद्ध प्रयोग करते थे और यह कहना गलत है कि उन्होंने उर्दू की नकल करते हुए खड़ी बोली को ग्रहण किया है—

सत सत आतम किया बिचार।
जब पाया नगरी का द्वार॥
वा नगरी का खेल अपार।
त्रिभुवन जान किया मतसार॥
सत सत आतम परिचय भया।
पहिले बल इन्द्रियन का गया॥
जो संसार सारफल सोय।
माया भ्रमहिं भेद नहिं कोय॥

शिष्य को आत्मज्ञान की प्राप्ति हो गई। वह सांसारिक द्वन्द्वों से रहित हो गया। ग्रहण और त्याग की निवृत्ति हो जाने पर वह 'जीवनमुक्त' बन गया। पर कृपालु गुरु को इतने ही से सन्तोष कैसे हो सकता था! वे सर्वभूतानुकम्पा के लिए इस ज्ञान का विस्तार करना चाहते थे। वे उन गुरुगणों में नहीं थे जो ब्रह्मज्ञान या आत्मज्ञान को 'गुह्यात् गुह्यतरं परं' कहकर उसे गुप्त रखने का आदेश दें। वे चाहते थे कि सर्वसाधारण इसे प्राप्त करें। पर यह कैसे सम्भव हो सकता था! समस्त गीताएँ, समस्त धर्म-पुस्तकें संस्कृत में हैं। देववाणी सर्वसाधारण के व्यवहार की वस्तु नहीं, अतः उससे सब कोई लाभ नहीं उठा सकते। यही विचारकर परम कृपालु सीतल गिरि ने अपने शिष्य को आज्ञा दी कि वह इस प्रसङ्ग को किसी प्रामाणिक आधार पर भाषा में रचे, जिससे वह सर्वसुलभ हो सके—

सो सीतल गुरु भाषि सुनायौ।
सुनतहि जिय आपाप दुरायौ॥
ह्वै कृपालु तिहि आज्ञा दीनी।
भाषा सहज सनेही कीनी॥
× × ×
त्रतीय एकादस गीता सारू।
निगम अगम जो अहै विचारू॥
सोम तुलै मुनि भाषि सुनायौ।
मैं प्रसङ्ग भारथ महि पायौ॥
× × ×
कथा संसकृत सुनी सुहाई।
भाषा रचि चौपई बनाई॥
जब लौं भाषा नहीं बनावै।
तब लौं समुझि न कैहूँ आवै॥
कुलफ संसकृत टरै न टारी।
जब लौं भाषा होय न तारी॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूरन बानी देव की राजत परम अनूप।
मोहन भाषा नैन बिनु कैसे देषैं रूप॥

× × ×

मूल बिना जो कथा बखानै।
ना वह चलै न कोई मानै॥
ग्रन्थनि मिलत बात जो होई।
तिहि दूषन नहिं लावै कोई॥

× × ×

मन महँ ताके वचन सेां उपज्यौ अति अहलाद।
सहज कथा सीतल करी मोहन हित प्रहलाद॥

इस प्रकार महाभारत की अन्तर्वर्ती नी अष्टावक्रगीता 'सोमतुला संवाद' को आधार मानकर 'सहजसनेही' रचना की गई है। इस सम्बन्ध में महामुनि अष्टावक्र परिचय देते हुए मोहन कवि ने लिखा है—

अष्टावक्र महामुनि धीरू।
जाकर आतम एक सरीरू॥
आनँदमगन सदा सम रहई।
और भाउ जिहि परस न लहई॥

ग्रन्थ के प्रारम्भ में आत्मा का जिज्ञासु शिष्य गुरु से ज्ञासा करता है कि मुझे वह विधि समझाइए जिससे मा का बोध हो जाय—

जिहि विधि समुझै आपु में
सेा विधि कहि समुझाय।

गुरु उत्तर देते हैं—

सुनहु तात निहचै मनु लाई।
विषया विष परिहरहु सुभाई॥
इन सब जगत आपु बस कीना।
अपनौ भेदु न काहू दीना॥
अमर वेलि जौ तरु लपटाई।
आपु हरित दिन ताहि सुकाई॥
तासौं एक न पूजै आसा।
मृगतृष्णा ज्यौं मरै पियासा॥
विषय कुसुम की वासना छाड़ि चित्त सौं देहु।
सहज घ्राण वारिज हिये मनु मधुकर ह्वै लेहु॥

गुरु के इस उपदेश को सत्य स्वीकार करते हुए भी ष्य को सन्तोष नहीं होता। वह कहता है कि आप का कथन सत्य है, पर पञ्चतत्त्व का बना शरीर पञ्चतत्त्व निर्मित वासना-वस्तु का त्याग कैसे कर सकता है? उसकी अनुरक्ति तो सहज-स्वाभाविक है। वृक्ष और या, जल और तरङ्ग और आत्मा और विषय को पृथक् कैसे किया जाय? इसके उत्तर में गुरु आत्मा और विषयों की पृथक्ता का, उदाहरण देते हुए, निर्देश करते हैं और कहते हैं कि आत्मा इन विषयों से सर्वथा निर्लिप्त है। वह केवल दुरभ्यास और दृष्टिदोष के कारण विषय में लिप्त प्रतिभासित होती है। यह वेदान्त का 'अध्यासवाद' वेदान्तसूत्र के अनुसार यहाँ भी पाया जाता है। गुरु का कथन है कि ममुक्षु की जगत्-व्यवहार में ऐसी प्रवृत्ति होनी चाहिए जैसी जल में कमल की होती है, या सरोवर में चन्द्र-प्रतिबिम्ब की होती है। या जैसे अग्नि के बिम्ब की जल में होती है—

ऐसें तू जग मह सदा बसै निरन्तर बास।
जैसें पावक बिम्ब जल परसु न लागै तास॥

परन्तु शिष्य का मन इसे स्वीकार नहीं करता क्योंकि इससे वेद की 'अवग्या' होती है। इस पर गुरु कहते हैं—

सुनहु मीत यह वेदन रीति।
यह तेरे मन की परतीति॥
पाप-पुण्य सुख-दुख दोऊ नाहीं।
यह तेरे मन की अवगाही॥
ना ये भये न हैं नहिं होंहीं।
ये हैं छाँह भोर की त्यौंही॥

आत्मा तेा शुद्ध और ज्ञानस्वरूप है। उसे संसार की इन 'उरझनों' में नहीं 'उरझना' चाहिए।

"यदि आत्मा ऐसी है तेा मन साधनों में क्यों जाता है?"

ना कछु जप तप तीरथ अहई।
ना कछु जेाग जग्य महँ चहई॥
जौं लों भ्रम तौलों सब करई।
भ्रम छूटें का साधन धरई।
जैसें जेवरी साँप बखानै।
हाथ छुवें फिर जेवरी मानै॥
त्यों साधन सब हैं जग केरे।
मनु समझै नहिं आवहिं नेरे॥

परन्तु इस अध्यास का ठीक-ठीक ज्ञान तभी होता है जब मन 'वेदान्त' को ग्रहण कर ले। वह लोक-व्यवहार को ही नहीं लोक की सत्ता को भी भूल जाय। क्योंकि जब तक मिथ्या को भुलाया नहीं जाता, सत्य का ग्रहण नहीं होता—

जौं लों सकल न भूलई तौलों काज न होइ।
भूलें ते उपजै कहा मोहन जो है सेाइ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस प्रकार अनेक उदाहरणों, उपमाओं और अलङ्कारों का सहारा लेते हुए यह ज्ञानकथा आगे बढ़ती है। शिष्य शङ्काएँ उठाता है, गुरु उनका समाधान करता है। अन्ततः शिष्य को 'ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या' और 'सोऽहं' की पूर्ण प्रतीति हो जाती है और वह अनुभव करने लगता है—

हौं अकास पूरन इक सारा।
घट की नाईं जग व्यवहारा॥
मेरौ ज्ञान सदा सम रहई।
ना कछु छाड़ै ना कछु गहई॥
हौं समुद्र अति अपरम्पारा।
सम तरङ्ग जग को व्यवहारा॥
हौं निर्मल अति सीप समाना।
भ्रम गहि जग रूपौ करि जाना॥
दिन यह समुझि रहै मन मोरै।
छाड़ै गहै कौनु किन को रै॥
हौं सब जगत माहिं पर कासा।
अथवा जग मों आहि निवासा॥
हौं दिनेस परिपूर प्रकासा।
किरन जोति संसार निवासा॥
घटै बढ़ै मेरौ कछु नाहीं।
नहिं आबै नहिं कितहूँ जाही॥
यह सब जगत मेरियै कांती।
रूप अमृत है एकै भाँती॥
जहँ तहँ सहज कलोलइ मेरौ जग व्यवहार।
में ही कीनों आपुनें खेलन कों विस्तार॥

आत्मबोध की यह चरमवास्था पाकर शिष्य 'पश्यन्मुनि' बन जाता है—

सदा सोई सोवै नहिं जागै।
उघरें नैनन पलक न लागै॥
सान्ति भयौ देखै सकल आसा विमल समान।
सर्व वासना सों रहित ऐसै रहै सुजान॥

यह परम विस्मृतावस्था या पश्यन्मुनिता ही ज्ञान की चरम अवस्था है। उसे पा लेने पर फिर कुछ भी प्राप्तव्य नहीं रह जाता। गुरु की तब अपेक्षा नहीं रहती। ज्ञान प्राप्त हो जाने पर शिष्य गुरु को स्वयं से भिन्न अनुभव नहीं करता। अतः वह गुरु से कहता है कि "बस, अब गुरु-शिष्य-संवाद की आवश्यकता नहीं। मुझे ज्ञान प्राप्त हो गया। मैं आत्मस्वरूप को समझ गया। अब अधिक कष्ट करने की आवश्यकता नहीं; क्योंकि मैं आपको अपने से अभिन्न समझ रहा हूँ। जब द्वैत नहीं, तब कैसा वक्ता और कैसा श्रोता? कैसा गुरु और कैसा चेला?"—

जो है सो समझौ सकल सङ्का रही न एक।
अब जिन बोलहु परम गुरु गहि राखौ यह टेक॥

यह 'सहजसनेही' का संक्षिप्त परिचय है। पूरा परिचय तो तभी प्राप्त हो सकता है जब उसे मनन किया जाय। वस्तुतः यह ग्रन्थ हमारे सन्त-साहित्य का एक उज्ज्वल रत्न है जो अब तक विस्मृति के गर्त में पड़ा था। ऐसे रत्न का उद्धार करने के लिए न केवल भरतपुर का राज-संग्रहालय, उसके अध्यक्ष भी हिन्दी-प्रेमियों के निकट बधाई के पात्र हैं।

मौन साधना

श्री महेन्द्र, बी० ए०, विशारद

क्या चले दो मील पैदल आह, लघु-उन्माद लेकर,
क्या तपे हो अग्नि में तुम राख के बुझते कणों पर;
क्या मिटे हो तुम अभी तक शान्ति का संसार लाने,
क्या बढ़े हो शून्य-पथ पर दूर का आलोक पाने;
हैं कहाँ देखे अभी इस विश्व में तूफान निर्मम,
कब किए हैं पार तुमने पथ बिना पाथेय दुर्गम!
है सहा मरुभूमि का कब शीत और प्रताप भीषण;
कब किए अनुभव कठिन या दुःख से परिपूर्ण जीवन!
श्रम-कणों की धार फूटी क्या कभी इस फूल-तन से?
आपदाएँ हैं सही कब मुक्त, निर्भय, शान्त मन से!
ये चरण डगमग हिलेंगे जब कहोगे सह रहे हैं,
दुःख के कटु दुर्दिनों में जब कहोगे रह रहे हैं,
जान जाओगे तभी तुम साधना का मर्म क्या है,
मौन में क्या शक्ति, जीवन, इस जगत् का कर्म क्या है!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाघ के पेट में

श्री योगेन्द्रनाथ सिनहा

"साइकिल ठीक है ?"

"हाँ हजूर, जाने से जाएगा।"

"इसका क्या मतलब ?—जाने से जाएगा !"

"ब्रेक नहीं है"।

अभी हाल ही में मेरी जङ्गल-विभाग की नौकरी
भ हुई थी। पता नहीं रामचन्द्रजी को चौदह वर्ष
ास के बाद घर लौटने की कितनी उत्सुकता हुई थी,
तो बीस दिन या एक महीने के बाद घर लौटने को
यित हो उठता था। सो भी घर क्या, ईंट पत्थरों का
ही कहिए, जङ्गलिस्तान की राजधानी चाइबासा में,
क अर्ध-सुप्त शहरी गाँव है। मेरी पत्नी उन दिनों
घर थीं। यह नहीं कि उनकी पति-भक्ति सीता से
ो या वे अपने कोमल चरणों से काँटे को फूल न बना
थीं। पर मुझे याद नहीं कि वे क्यों अपने घर थीं।
ह याद है कि मेरे पत्नी-विरह का कारण उपर्युक्त
से कोई न था। पर यह नीरस चाइबासा भी
माल ढाता था! यहाँ आने की कितनी उद्विग्नता
थी! किस तरह दिन गिनता रहता था! ऐसे वन
-मुनियों ने तपस्या कर परमात्मा को पाया है। कहते
नीरवता में चित्त को शान्ति मिलती है। मिलती
पर मुझे तो कुछ दिनों के पड़ाव के बाद शान्ति मिलती
ान के कोलाहल में। खोंचेवालों के कर्कश चीत्कार
त सङ्गीत-माधुर्य मिलता था। इंजिन के भोंपे की
ज कोयल की कूक की तरह मीठी लगती थी, और
रेलगाड़ी का धुआँ क्रीड़ावती कामिनी की काली
ा। जङ्गल में हम प्रकृति का रूप धारण करने लगते
ाढ़ी बढ़ भी जाय तो बनाने का उत्साह नहीं। भाव
ते हैं किसी त्यक्ता सुन्दरी के—शृङ्गार करूँ तो किस
र ?

ड़े के दिन हैं। कड़ाके की सर्दी पड़ रही है। वन-
न्ध्या से ही कुहासे की चादर ओढ़ लिया करता है,
कुछ नहीं होता। वृक्ष-पल्लव मारे जाड़े के रो पड़ते
ारी रात आँसू की बूँदें टप-टप गिरा करती हैं।
ओस से भीग जाती है। सुबह उठने पर मालूम
जैसे रात वर्षा हुई थी। पर इस सर्दी में भी पास-
दकमहातु गाँव के 'हो' निवासी मस्त पड़े रहते हैं।
बदन में एक लँगोटी के सिवा कुछ नहीं, ओढ़ने-बिछाने का नाम नहीं। आग के पास स्त्री, पुरुष, बच्चे पड़े हुए गाढ़ी नींद ले रहे हैं। रात की निःस्तब्धता को चीरती हुई खेतों की ओर से हू-हा, ठन्-ठन्, टिन्-टिन् की आवाज आ रही है। कृषकों को सारी रात शोर-गुल मचाकर, ढोल और टीन पीट-पीटकर, मशालें जलाकर, फसल की रक्षा करनी पड़ती है। जङ्गली हाथी, साम्बर और हिरन एक रात में सारी फसल चट कर जाएं यदि इतनी खबरदारी न हो। दोनों पक्षों की सेनाएँ मोर्चे पर सदा भिड़ी रहती हैं। इन वन-वासियों का जीवन भी एक घोर महाभारत ही है।

आज सुबह और दिनों से जल्दी उठना पड़ा। चाइबासा जाना था। पड़ाव से ग्यारह मील दूर गोइलकेश स्टेशन से नौ बजे सबेरे गाड़ी छूटती थी। अँधेरा ही था, उसी समय कुलियों पर सामान लदवा उन्हें अरदली के साथ बिदा कर दिया। मुझे मँगनी की एक साइकिल मिल गई थी। मैं एक घण्टा बाद चला।

पड़ाव और स्टेशन के बीच घोर वन का अटूट तारतम्य; मनुष्य-निवास का चिह्न मात्र भी नहीं; एक पहाड़ के बाद दूसरा पहाड़, दूसरे के बाद तीसरा; मानों सारा संसार पहाड़ और वन में परिवर्त्तित हो गया हो। बीच-बीच में गहरी खाइयाँ हैं। गम्भीर निःस्तब्धता में केवल पार्वत्य नालों का कलकल शब्द ही रह-रहकर सुन पड़ता है। पर यह शब्द जब वन-यात्री के कानों में पहुँचता है और वह ठमककर सुनने लगता है तब इससे भी अधिक तीव्र ध्वनि उसे उस भयावह स्तब्धता की ही जान पड़ती है। दूसरा शब्द है ओस की बूँदों का—टप, टप, टप-टप; टप, टप-टप, टप;...। इन पहाड़ियों और जङ्गलों के आर-पार एक सड़क बनी हुई है। तमाम ऊँची-नीची, केवल चढ़ाई और उतार, साँप की तरह टेढ़ी-मेढ़ी, कहीं-कहीं ही पचीस गज से ज्यादा सामने दिखती। चढ़ाई पर साइकिल चढ़ती नहीं, उतार पर इतनी तेज भागती मानों पाताल पहुँचकर ही दम लेगी।

सूर्योदय हो चुका था; पर सूर्य की किरणें इस वन-खोह में अभी तक न पहुँची थीं। कुछ देर के बाद पश्चिम की ओर पहाड़ी के मस्तक पर सहमा हुआ-सा अरुणोदय दृष्टिगोचर हुआ। धीरे-धीरे धूप उतरकर फैलने लगी; पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जमीन पर पड़ती थी टुकड़े-टुकड़े होकर, छाँह के साथ मिलकर, मानों अकेली आते उसे डर लगता हो। इस छाया-प्रकाश ने एक मायावी चित्र बना दिया। असली नकली हो गया और नकली असली।

मैं साइकिल पर बढ़ा चला जा रहा था। जवानी के जोश और उद्दण्डता के साथ चाइबासा जाने की उमङ्ग थी। चढ़ाई पर तो जोर लगा साइकिल चढ़ा देता पर कठिनाई आती थी ढाल पर। ब्रेक नहीं था। दोनों पैरों को बढ़ा आगे के पहिए को दोनों ओर से कसकर दबाता, इसी से साइकिल कुछ काबू में रहती। प्रायः पाँच मील चलने के बाद मेरे कुली और अरदली मिले। उनसे कहा, जल्दी चले आओ, और मैं आगे बढ़ गया।

एक-डेढ़ मील के बाद एक बड़ा लम्बा उतार मिला। एक ओर ऊँची पहाड़ी, दूसरी ओर नीची खाई। साइकिल भागती चली जा रही थी। एक मोड़ से पार हुआ तो देखता क्या हूँ कि सामने कुछ दूर सड़क को रोके हुए कोई बड़ी-सी चीज पड़ी है। सोचने लगा, क्या हो सकता है? पत्थर का ढोका तो लुढ़ककर नहीं चला आया है, या वृक्ष की टूटी शाख है क्या? मैंने जोर से पैरवाला ब्रेक लगाया। कुछ क्षण के बाद उस पड़ी हुई वस्तु में हिलडोल मालूम हुई। अब साइकिल काफी नजदीक भी आ गई थी। हे भगवान्, देखता क्या हूँ कि एक विशाल बाघ सिर पहाड़ी की ओर और पूँछ खाई की ओर किए सड़क के आर-पार पड़ा है। वह सोचकर बैठा था कि जङ्गल के सब जानवरों को वह जानता है, उनका राजा है। मुझे देख वह अवश्य आश्चर्य करने लगा होगा कि अब यह नया जानवर कहाँ से आया? मुझे बेतहाशा अपनी ओर आते देख उसने विरक्ति से मेरी ओर सिर उठाया। मेरा कलेजा काँप उठा; काटो तो खून नहीं; पर साइकिल रुके तब तो? मैंने सारी शारीरिक शक्ति पैरों में डाल दी, प्राणपण से सामने का चक्का दबाने लगा। साइकिल तो रुकी नहीं, इसके बदले में घण्टी का तार दब गया और पैर से पिची घण्टी 'किरर्र...किरर्र...' करने लगी। बाघ ने देखा, यह हमला करनेवाला तो ललकारा देकर बढ़ा चला आ रहा है। वह सचेत हुआ। अब साइकिल बाघ के अत्यन्त निकट पहुँच गई थी। बाघ की समस्या थी—'आखिर यह बला है क्या? कहावत है जहाँ फिरिश्ते भी पैर देने में सहमते हैं वहाँ मूर्खगण दौड़कर घुस पड़ते हैं। यह कौन सा मूर्ख है?' इधर मेरी उलझन थी जीवन-मरण की। प्राणों का अन्त तो सामने ही था; पर मरूँ भी साइकिल रुके तब तो? सवाल था, साइकिल किधर से पार करूँ—बाघ की पीठ पर से, या उसके मुँह के सामने से या पूँछ के पास से? पीठ के ऊपर से पार करना तो असम्भव था, साइकिल अवश्य गिर पड़ती और क्रुद्ध बाघ चट मुझे खा जाता। उसके मुँह और पहाड़ी के बीच जगह कुछ अधिक थी, पूँछ और खाई के बीच बहुत कम। पर मुँह की ओर जाने में अधिक भय था, तुरत पकड़ ही लेता। मैं निर्णय कर भी न पाया था कि मेरी साइकिल भाग्य की अबाधित गति से बाघ से प्रायः दो गज की दूरी पर आ पहुँची और मैं—देखे संज्ञाहीन अवस्था में खाई की ओर, बाघ की पूँछ और खाई के बीच जो पतली-सी राह थी, उसी की ओर साइकिल मोड़ दी। गहरी खाई में गिरने पर भी मौत थी, पर वहाँ किसी तरह बच जाने की आशा भी की जा सकती थी; बाघ के मुँह में तो सन्देह का कोई स्थान न था। मेरी दृष्टि अब तक बाघ के सिर की ओर ही थी। मैंने देखा कि जैसे-जैसे मैं आगे बढ़ता आता था बाघ अपना सिर सड़क के बीच की ओर धीरे-धीरे घुमाता जाता था जिससे अपने कल्पित आक्रमणकारी को वह आँखों की ओझल न होने दे। उपमा दी जा सकती है तागे से लटकती सुई के साथ, जिसके एक किनारे लोह-चुम्बक घुमाया जाय। परिणाम यह हुआ कि बाघ की पूँछ भी कुछ हटी और खाई और पूँछ के बीच की गली कुछ चौड़ी हो गई। फिर भी पूँछ साइकिल में लगी और मेरे दाहिने पैर से लिपट-सी गई। पूँछ का छू जाना था कि बाघ मजबूत स्प्रिंगवाली चकरी के समान बिजली की गति से आर-पार घूम गया—जहाँ सिर था पूँछ चली गई, जहाँ पूँछ थी सिर आ गया।

मैं हवा की तरह सन्न से निकल तो गया पर साथ ही साथ मेरे होश-हवास भी उड़ गए; पैर भूल गए; बाघ अपना न रहा; पर साइकिल के हैंडिल में बज्रमूठ बँध गए। बहुकाल के दुश्शासन के उपरान्त साइकिल को और स्वतन्त्रता मिली थी, उसकी गति का माप किसको मिले। मेरे मन में एक विचित्र दुर्भावना का प्रादुर्भाव हुआ—बाघ ने मेरा सिर अपने मुँह में ले लिया है, उसके आगे के दो साइकिल के 'लगेज-कैरियर' पर हैं, और पिछले पैर साइकिल के पीछे-पीछे वह दौड़ता आ रहा है। कितना यत्न किया अपने को समझाने का, पर यह विश्वास क्षण-क्षण और भी जटिल होता गया। मेरी मानसिक अवस्था अवर्णनीय और कल्पनातीत हो गई। इस अजनबी विश्व की एक पृष्ठभूमि भी थी। पुरी जिले के जङ्गलों में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ी आँखों देखा था एक बाघ को, एक फारेस्ट गार्ड का सिर मुँह में ले, छलाँग मारकर भागते हुए। घना था। मनुष्य-भक्षी बाघों की बहुतायत थी। मैं एक के साथ बैलगाड़ी पर बैठा एक पड़ाव से दूसरे पड़ाव ओर जा रहा था। एक फारेस्ट गार्ड बन्दूक में गोली उसे कन्धे पर लिए आगे-आगे चल रहा था। सन्ध्या ही थी। एक छोटा नाला मिला। बैलगाड़ी नाले की उतर रही थी। हम लोगों ने फारेस्ट गार्ड को सचेत —देखो, शाम हो रही है और यह जगह भी खराब शियार रहना। फारेस्ट गार्ड ने कुछ गर्व से बन्दूक थ फेरा। बोला—बन्दूक भरी है, हजूर; क्या परवाह ठीक उसी समय एक बाघ दाहिनी ओर की झाड़ियों ला; फारेस्ट गार्ड के ऊपर गिरा; उसका सिर अपने मुँह में पकड़ा और दूसरी छलाँग में फारेस्ट गार्ड को दूसरी ओर की झाड़ियों में अदृश्य हो गया। सारा बिजली की चमक की तरह क्षणिक था। आँखों श्वास न हुआ। मलकर फिर देखा, पर फारेस्ट ापता था। डर से काँपते हुए हम लोग दूसरे पड़ाव हुँचे और गाँववालों का एक बड़ा दल बना, मशाल बन्दूक-भाले इत्यादि ले, फारेस्ट गार्ड की खोज में । सारी रात ढूँढ़ते रहे पर कोई पता न मिला। दिन फिर खोज की गई। फारेस्ट गार्ड तो न मिला, केवल बन्दूक, उसकी सरकारी पेटी, फटे कपड़े के कुछ और कुछ ताजी हड्डियाँ।

साइकिल घहराती हुई नाले तक पहुँच गई। साइकिल थ मैं भी गिरा और अचेत-सा हो सड़क के किनारे रहा। पड़ा-पड़ा सोचता था—'बाघ मुझे निगल गया बाघ के पेट में हूँ। हा दुर्भाग्य, यह कैसा अन्त!' र बाद आँख खुली, सामने साइकिल देखी। यह क्या साइकिल को भी बाघ निगल गया है? और ऊपर उठीं, सड़क देखी, पेड़ देखे। नहीं, मैं के पेट में नहीं हूँ। तब तो शायद जीवित हूँ। सिर टटोला, पैर दबाकर देखा, सब ठीक थे। हे मा, तेरी कैसी अपार दया है कि बाघ के पेट से मुझे ! आँखें चारों ओर घूमकर देखने लगीं। उस ई जिधर से मैं आया था। देखा, बाघ उठकर मेरी आ रहा है। फिर जान पर आफत! मैं उठकर भागा। क परमात्मा ने बचाया तो एक बार अन्तिम चेष्टा भी कर लूँ। पर भागता कहाँ? दोनों ओर अभेद्य समें भागकर बाघ से क्या पार पाता? सामने सड़क की विकट चढ़ाई; पीछे बाघ। कुछ दूर सड़क पर दौड़ने के बाद ही दम फूलने लगा। दूसरा उपाय न देख एक पेड़ पर चढ़ने लगा, पेड़ था सेमल का। सेमल के पेड़ में शाखाएँ निकलती हैं एक ही जगह से पाँच-छः, छाते की तरह, फिर पाँच-छः फुट के बाद दूसरा छत्र-स्वरूप डालियों का समूह। जूता पहने हुए सेमल वृक्ष के धड़ से लिपट खिसक-खिसककर किसी तरह पहली डाल पर चढ़ा। बड़ी वेदना मालूम हुई, जैसे शरीर को कोई सैकड़ों सुइयों से छेद रहा हो; पर रुकने का अवकाश कहाँ? वहाँ से देखा, बाघ साइकिल के पास आ उसे सूँघ रहा था। सूँघने के बाद उसे खींचा-ताना। जब देखा कि दुश्मन का अन्त हो गया है तो उसे छोड़ आगे बढ़ा। मैंने जमीन की ओर देखा। जमीन से इतना नजदीक लगा कि बाघ तो एक ही छलाँग में यहाँ तक पहुँच जाएगा। इसलिए मैं ऊपर की डाल पर चढ़ने लगा। शरीर की पीड़ा असह्य हो रही थी; सहिष्णुता की अन्तिम अवस्था थी; ऐसा लगा कि उस डाल तक कभी न पहुँच सकूँगा। पर प्राणों का सवाल था, किसी तरह मंजिल को पार किया। हाँ, यहाँ तक अब बाघ कूदकर नहीं पहुँच सकता। देखा, धीरे-धीरे बाघ मेरे नीचे से पार हो सड़क की मोड़ से अदृश्य हो गया।

जब तक बाघ दृष्टि-क्षेत्र में था, मेरी आँख निरन्तर उसी पर रही। उसके अदृश्य हो जाने पर शरीर पर दृष्टि पड़ी तो मैं स्वयं काँप उठा। सारा शरीर खून से तर, हाफ पैंट सराबोर, कमीज लद्-फद्, सारा खून ही खून! अब फिर मेरे मन में दुर्भावना उठी कि बाघ ने मुझे खा लिया है; नहीं तो यह रक्त कहाँ से आता? आह भगवन्, इतना करने पर भी बाघ आखिर खा ही गया!

पता नहीं; कितनी देर मैं बैठा रहा उसी डाल पर—निश्चल, निर्बल, कर्मज्ञानहीन; यही सोचता हुआ कि बाघ मुझे खा गया है। कुछ देर के बाद मनुष्य की आहट मिली। मेरी नींद-सी खुली। हैं, क्या मैं जीवित हूँ? देखा मेरे कुली और अरदली आ रहे थे। उन्हें देख मेरे प्राण-पखेरू फिर लौटे; मैंने तीसरा जन्म पाया। चिल्लाकर उन्हें बुलाना चाहता था; पर मुँह खुलता ही नहीं था। उन लोगों ने बाघ के पञ्जे के निशान सड़क पर देखे और चिल्ला उठे—'कुला मंडा, कुला मंडा' (बाघ का पञ्जा, बाघ का पञ्जा)। आगे बढ़े तो गिरी साइकिल मिली; पर मेरा कोई पता नहीं। अब वे लोग डरे कि शायद बाघ मुझे पकड़ ले गया। हाँ, अवश्य पकड़ ले गया, नहीं तो और क्या हो सकता है? सामान गिरा बेचारे दुःखित निराश हो बैठ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गए और अपनी भाषा में क्या-क्या बोलने लगे, जङ्गल की ओर इङ्गित कर। मैं लाख यत्न करता बोलने का कि मैं यहाँ हूँ, पर मुँह से एक शब्द न निकलता। अपनी ही मृत्यु पर शोक-प्रदर्शन का मैं स्वयं दर्शक बन असहाय बैठा रहा!

जगह की जाँच करने पर मेरे कीलदार जूते का दाग मिला। अरदली जूते साफ़ किया करता था, वह पहचानता था। उसने देखा, जूते का दाग साइकिल जहाँ पड़ी है उससे आगे भी है। इससे आशा जाग्रत् हुई। कुछ दूर तक यह दाग मिलता गया और साथ-साथ बाघ के पञ्जे का निशान भी। कुलियों ने फिर चिल्लाकर कहा—'गोम के निरियाना, गोम के निरियाना' (साहब भाग गया)। जूते का निशान पेड़ के पास तक आकर लुप्त हो गया पर बाघ का पञ्जा बढ़ता गया। अब फिर ढूँढ़नेवालों में निराशा फैल गई। क्या यहाँ से बाघ उठा ले गया? अब भी मेरी जबान न खुली। योंही इधर-उधर देखते-देखते एक आदमी की नजर ऊपर आई और मुझ पर पड़ी। मुझे देख सब हँस पड़े।

जब मुझे उतारने का सवाल हुआ तो सभी दङ्ग रह गए कि आखिर मैं चढ़ा कैसे था। छोटे और अधेड़ सेमल वृक्ष के धड़ में कड़े लम्बे और नोकीले काँटे होते हैं; इतने अधिक कि एक हाथ रखिए तो चार जगह छेद हो जाय। पर इन्हीं काँटों से लिपट, इन्हीं के सहारे, मैं पेड़ पर चढ़ा था। आश्चर्य नहीं कि मेरा शरीर ऐसा हो गया था जैसे उसमें एक सौ भाले लगे हों। रक्त सैकड़ों छेदों से बह रहा था।

चाइबासा पहुँच स्त्री को घटना का वर्णन लिखा। मेरा तार आया—नौकरी छोड़ दो। माँ ने, भाई ने, सभी ने समझाकर, अनुनय-विनयकर, लिखा था नौकरी छोड़कर घर चले आओ; यह नौकरी क्या जिसमें दिन-दहाड़े बाघ का कौर बनना पड़े?' स्त्री दो दिनों में घर से चली आई और मेरा हाथ पकड़कर इस्तीफा लिखवाया। मैंने भी ठीक कर ही लिया था, इस्तीफा लिख दिया।

पन्द्रह दिनों के बाद एक दिन बचा-खुचा आफिस का काम समाप्त करने बैठा तो देखा दरख्वास्त टेबुल पर पड़ी है। डाक में डालने के बदले भूल से वहीं पड़ी रह गई थी। साथ-साथ पुस्तकों के बीच एक और मर्दुमशुमारी की रिपोर्ट पर नजर पड़ी। अन्यमनस्क हो उसे निकाल पढ़ने लगा। दृष्टि पड़ी जङ्गली जानवरों से मनुष्य-मृत्यु वाले परिच्छेद पर। लिखा था—'कई दशाब्दियों के 'सेंसस' से पाया जाता है कि फारेस्ट आफिसर विरले ही जङ्गली जानवरों से मरते हैं।'

मैंने इस्तीफा फाड़कर फेंक दिया।

किसकी हँसी?

श्री गौरीशङ्कर मिश्र, बी० ए०

किसकी हँसी गगन पर छाई?
हँसा इधर मैं तुझे देख, तू
मुझे देख मुसकाई!
घेर आग से, खड़ा शैल कर, सागर को लहराया,
आँधी चली, चंचल चमकी, भू पर घन तम छाया।
मार्ग रोकने हेतु कला क्या उठा रखी थी तूने?
आग बुझा, गिरि लाँघ, सिन्धु तर, पर मैं तट पर आया।
हँसी नहीं, यह विकल सफलता—
की है सरस ढिठाई।
फँसा फाँस में जो तेरे, वह जीवन में छुटता क्या?
टूट चुका जो काँच, कभी वह तागे-सा जुटता क्या?
मुरझाया जो एक बार वह फूल कभी फलता क्या?
बुझ प्रदीप जो चुका, कभी वह पुनः स्वयं जलता क्या?
हँसी नहीं, तेरे रहस्य की—
वह निगूढ़ चतुराई।
मैं मुरझाया, किन्तु, देव-सिर चढ़कर आज तरा मैं;
मैं टूटा, पर मनुज-करों में जाकर चमक-भरा मैं;
बुझा हुआ मैं, पर प्रकाश को मेरे जग ने जाना,
जाने क्यों न नियति इसको! जी जाऊँ आज मरा मैं
यह हँसती है मेरी पीड़ा,
या तेरी निठुराई?
किसकी हँसी गगन पर छाई?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परमाणु बम

प्रोफेसर ए० सी० बनर्जी, अध्यक्ष गणित—विभाग, प्रयाग विश्वविद्यालय

जापानी महायुद्ध को शीघ्र समाप्त कर देनेवाले परमाणु (ऐटम बॉम्ब) का प्रारम्भ आज से सात वर्ष पहले ही हुआ था। सन् १९३९ की जनवरी में वैज्ञानिकों की कान्फरेंस अमेरिका में हुई थी, उसकी पहली ही बैठक में प्रोफेसर बोर और फर्मी ने एक आश्चर्यजनक नए प्रयोग का परिचय दिया। इस प्रयोग की खोज का श्रेय डाक्टर हान और डाक्टर स्ट्रासमैन को था। इन्होंने यूरेनियम धातु पर अति सूक्ष्मकण न्यूट्रनों से गोलाबारी की और विशेष के निरीक्षण से इन्हें पता चला कि यूरेनियम धातु के दो टुकड़े हो गए हैं, और यूरेनियम के स्थान पर अन्य पदार्थ, बेरियम धातु और क्रिप्टन गैस, रह गई हैं।

यदि तात्कालिक दृष्टि में इस खोज का महत्त्व हम नहीं समझ पाए हों तो इस रिपोर्ट पर ध्यान दीजिए, इस प्रयोग-द्वारा एक धातु को दूसरी धातु में बदला जा सकता है। वह दिन दूर नहीं जब हम लोहे को सोना बना सकेंगे। इससे बढ़कर महत्त्व की बात यह है कि अभी तक जो बृहत् शक्ति परमाणु के भीतर छिपी थी उसको मुक्त करने का उपाय हमें मालूम हो गया। इस प्रयोग में जितनी अधिक शक्ति पैदा होती है उतनी शक्ति और तरह से नहीं प्राप्त हो सकती। केवल एक सेर यूरेनियम के विस्फोट से पूरा कलकत्ता नगर विध्वंस हो सकता है। यदि इस शक्ति का सदुपयोग किया जा सके तो सहारा के मरुस्थल भी हरे-भरे हो जाएँ। इस प्रयोग के महत्त्व को भली भाँति समझने के लिए परमाणु की रचना का ज्ञान आवश्यक है। इसे हम संक्षेप में नीचे देते हैं।

इस बात का ज्ञान वैज्ञानिकों को बहुत पहले से था कि सभी पदार्थ अतिसूक्ष्म कणों-द्वारा बने हैं। इन कणों को ही परमाणु कहते हैं। यदि कोई पदार्थ लेकर हम उसके टुकड़े-टुकड़े कर डालें, फिर एक टुकड़ा लेकर उसे दो भागों में बाँटें, फिर एक भाग को असंख्य कणों में विभक्त करें, तो इसी तरह टुकड़े करते-करते हमें अन्त में एक परमाणु मिल जायगा। परन्तु वास्तव में यह प्रयोग नहीं किया जा सकता। किसी पदार्थ को हम परमाणुओं में विभाजित नहीं कर सकते क्योंकि परमाणु अतिसूक्ष्म होते हैं। हम उन्हें सूक्ष्म-दर्शक (माइक्रॉस्कोप) से भी नहीं देख सकते। उनकी सूक्ष्मता का अनुमान इसी से लग सकता है कि एक तोले सोने के खरबवें भाग में ३½ खरब परमाणु होते हैं। पहले वैज्ञानिक समझते थे कि परमाणु पदार्थों के सबसे छोटे कण हैं, इन्हें विभाजित नहीं किया जा सकता। तथा एक पदार्थ के परमाणु दूसरे पदार्थ के परमाणुओं से सर्वथा विभिन्न हैं; उन्हें एक दूसरे में परिणत नहीं किया जा सकता। पर इस शताब्दी के आरम्भ से मत बदल गया है। अब हम जानते हैं कि प्रत्येक परमाणु हमारे सौरजगत् का एक छोटा-सा नमूना है। परमाणु के केन्द्र में एक बीज (न्यूक्लियस) होता है और बीज के चारों ओर एक या अधिक विद्युत्कण (एलेक्ट्रन) चक्कर लगाते रहते हैं। जैसे पृथ्वी सूर्य के आकर्षण-द्वारा उसके चारों ओर परिक्रमा करती है, उसी प्रकार एलेक्ट्रन भी विद्युत्-आकर्षण के द्वारा बीज से बँधे रहते हैं और उसकी परिक्रमा करते हैं।

परमाणु के केन्द्रीय बीज में दो प्रकार के कण रहते हैं—एक तो प्रोटन और दूसरा न्यूट्रन। दोनों का वजन बराबर होता है। किन्तु प्रोटन में विद्युत् शक्ति रहती है और न्यूट्रन में उसका अभाव होता है। पदार्थों के गुण उनके प्रोटनों की संख्या-द्वारा निर्धारित हो जाते हैं। सबसे हलकी गैस हाइड्रोजन के परमाणु में केवल एक प्रोटन रहता है। लोहे के परमाणु में २६ प्रोटन और सोने के परमाणु में ७९ प्रोटन होते हैं। सबसे भारी परमाणु यूरेनियम का होता है जिसमें ९२ प्रोटन होते हैं। यदि किसी प्रयोग-द्वारा लोहे के परमाणु में प्रोटनों की संख्या २६ से बढ़ाकर ७९ की जा सके तो हम लोहे को सोने में बदल सकेंगे। इस प्रकार का प्रथम प्रयोग प्रसिद्ध वैज्ञानिक रदरफोर्ड ने किया था। उन्होंने नाइट्रोजन गैस को ऑक्सिजन गैस में परिणत कर दिया। इस प्रयोग के लिए विशेष यन्त्र की आवश्यकता होती है। इस यन्त्र में रेडियम धातु से निकलते हुए 'व' कणों से नाइट्रोजन पर गोलाबारी की जाती है। 'व' कण हीलियम गैस का परमाणु बीज है। इसमें २ प्रोटन और २ न्यूट्रन होते हैं। जब यह नाइट्रोजन के परमाणु से टकराता है तब इसमें से एक प्रोटन निकलकर नाइट्रोजन में घुस जाता है और तब नाइट्रोजन आक्सिजन बन जाता है।

रदरफोर्ड के प्रयोग के बाद अन्य कई वैज्ञानिकों ने भी इसी प्रकार के अन्य प्रयोग किए। किन्तु इन सब प्रयोगों में परमाणु बीज के प्रोटनों की संख्या में एक या दो से अधिक अन्तर नहीं पड़ता। इसका कारण है। बीज में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रोटन और न्यूट्रन एक प्रबल आकर्षण-द्वारा एक दूसरे से बँधे रहते हैं। इसलिए 'व' कण उन्हें अधिक तोड़-फोड़ नहीं सकते। पर ज्यों-ज्यों परमाणु का आकार बढ़ता जाता है त्यों-त्यों यह बन्धन क्षीण पड़ता जाता है। रेडियम धातु में यह बन्धन इतना क्षीण होता है कि उसमें से प्रोटन और न्यूट्रन अपने आप निकला करते हैं। यूरेनियम के परमाणु सबसे बड़े होते हैं; उनके न्यूट्रनों और प्रोटनों के बीच का बन्धन अधिक प्रबल नहीं होता। इसी लिए जब उन पर न्यूट्रन कणों से गोलाबारी की जाती है तब वे टूटकर दो टुकड़े हो जाते हैं। ये दो टुकड़े बेरियम और क्रिप्टन के परमाणु होते हैं। इन परमाणुओं का वजन क्रमशः यूरेनियम का $\frac{3}{5}$ और $\frac{2}{5}$ भाग होता है। यूरेनियम पर न्यूट्रनों से गोलाबारी करने पर बेरियम और क्रिप्टन के अलावा और भी वस्तुएँ मिलती हैं। होता क्या है कि बेरियम और क्रिप्टन के परमाणु भी थोड़ा-बहुत टूटते और बदलते हैं। इस प्रकार अन्य वस्तुएँ भी बन जाती हैं। यूरेनियम परमाणु के टूटने पर बहुत-से न्यूट्रन भी निकलते हैं। ये न्यूट्रन यूरेनियम के अन्य परमाणुओं पर आक्रमण करके उन्हें भी तोड़ सकते हैं। परमाणु के टूटने से बहुत-सी शक्ति निकलती है। इसी शक्ति के उपयोग से परमाणु बम इतना विध्वंसकारी बन सका है।

प्रश्न यह उठता है कि इतनी शक्ति आती है कहाँ से? इसका उत्तर हमें प्रसिद्ध वैज्ञानिक आइन्सटाइन के अन्वेषणों से मिलता है। पहले वैज्ञानिक यही समझते थे कि पदार्थ और शक्ति भिन्न वस्तुएँ हैं। पर आइन्सटाइन ने यह दिखला दिया कि यह मत गलत है। पदार्थ को शक्ति के रूप में बदला जा सकता है। यदि हमारे पास समुचित साधन हों तो इसी कागज को, जिसे आप पढ़ रहे हैं, शक्ति के रूप में बदला जा सकता है। विशेषता यह है कि थोड़े ही पदार्थ से अत्यधिक शक्ति निकाली जा सकती है। १ सेर कागज को यदि शक्ति में बदला जा सके तो उतनी ही शक्ति पैदा होगी जितनी २५,००,००,००० सेर कोयला जलाने से मिलती है। अभी तक हमारे पास कोई ऐसा साधन नहीं था जिससे पदार्थ से यह शक्ति निकाली जा सके। यूरेनियम विस्फोट प्रथम प्रयोग है जिसमें वैज्ञानिक इस परमाणु शक्ति का प्रयोग कर सके हैं। यूरेनियम टूटने पर जो पदार्थ बनते हैं उनका वजन यूरेनियम से कम होता है। यही कमी शक्ति के रूप में प्रकट होती है। दूसरे शब्दों में, जब यूरेनियम टूटता है तब उसका अधिकतर भाग तो बेरियम, क्रिप्टन, आदि के रूप में मिलता है, और एक छोटा अंश शक्ति में बदल जाता है। १ सेर यूरेनियम ५,००,००० मन बारूद के बराबर शक्ति देता है। यही कारण है कि परमाणु बम मामूली बमों से कहीं अधिक विनाशकारी है।

ऊपर की बातों से यह समझा जा सकता है कि परमाणु बम के भीतर दो चीजें रहती हैं—यूरेनियम और गोलाबारी आरम्भ करने के लिए न्यूट्रन उत्पादक वस्तु। न्यूट्रन उत्पादन के लिए रेडियम धातु रहती है जिसमें से बराबर 'व' कण निकला करते हैं। बम समय से पहले न फूट जाय इसलिए रेडियम को सिलिकन के पर्दे से ढक देते हैं। जब बम गिरता है तब पर्दा फट जाता है और 'व' कण निकलकर बेरिलियम धातु के ढोंके से टकराते हैं। इस टक्कर से बेरिलियम परमाणु टूटकर न्यूट्रन छोड़ते हैं जो, जाकर यूरेनियम परमाणुओं से भिड़ते हैं। ये परमाणु टूटकर स्वयं न्यूट्रन छोड़ते हैं जो अन्य यूरेनियम परमाणुओं को तोड़ते हैं। यह देखा गया कि दो-चार परमाणु टूटने के बाद यह क्रिया रुक जाती है। कारण यह है कि न्यूट्रनों का वेग बहुत बढ़ जाता है और जब तक इनकी गति मन्द नहीं की जाती तब तक ये यूरेनियम परमाणु नहीं तोड़ सकते। गति मन्द करने के लिए बम के भीतर यूरेनियम को पैराफिन मोम में मिलाकर रखते हैं। जब न्यूट्रन मोम में होकर जाते हैं, उनकी गति मन्द हो जाती है और तब वे परमाणुओं को तोड़ सकते हैं। इस तरह मोम मिला देने से टूटने की क्रिया रुकती नहीं है, बल्कि अति शीघ्रता से बढ़ती है और कुछ ही क्षणों में सब यूरेनियम टूटकर समाप्त हो जाता है।

एक बात और है। ऊपर बताया जा चुका है कि भिन्न पदार्थों के परमाणु बीज में प्रोटनों की संख्या भिन्न होती है। इसके विपरीत कुछ परमाणु ऐसे होते हैं जिनके बीज में प्रोटनों की संख्या तो वही होती है किन्तु न्यूट्रनों की संख्या भिन्न होती है। ऐसे परमाणुओं के रासायनिक गुण एक ही समान होते हैं पर बोझ में अन्तर होता है। एक ही पदार्थ के विभिन्न रूप हैं। यूरेनियम के इस प्रकार के तीन रूप मिलते हैं। केवल एक ही रूप, यू-२३५ (प्रोटन संख्या ९२, न्यूट्रन संख्या १४३, योग २३५), न्यूट्रनों की गोलाबारी से तोड़ा जा सकता है; अन्य रूप नहीं टूटते। मामूली यूरेनियम धातु में यू-२३५ की मात्रा बहुत ही थोड़ी होती है—यह केवल १४० वाँ भाग होता है। बहुत दिनों तक कोई ऐसी क्रिया ही नहीं मालूम थी जिससे यू-२३५ को अलग किया जा सके। अवश्य ही अब वैज्ञानिकों ने कोई उपाय निकाल लिया है जिससे काफी मात्रा में यू-२३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...किया जा सकता है। इसके बिना परमाणु बम ...ना असम्भव था।

१६ जुलाई, १९४५ को परमाणु बम की पहली परीक्षा ...मोगोर्डो (अमेरिका) में हुई। एक लोहे की मीनार के ...बम रक्खा गया और ५ मील दूर से बिजली के तार-...घोड़ा दबाया गया। सूर्य के प्रकाश से भी तीव्र प्रकाश ...; फिर घोर गर्जन। २५० मील दूर तक की खिड़कियाँ झनझना उठीं। लोहे की मीनार भाप बनकर उड़ गई और वहाँ पर भारी गड्ढा हो गया। इतना बड़ा विस्फोट पहले कभी नहीं देखा गया था। इसके बाद के प्रयोग तो जापानी नगरों पर हुए जहाँ एक-एक बम से पूरे शहर साफ हो गए।

[प्रोग्रेसिव क्लब में दिए गए व्याख्यान का भावानुवाद। अनुवादक, श्री चन्द्रिकाप्रसाद]

साँझ-सुबह नित

श्री गोपाल शर्मा, बी० ए०

साँझ-सुबह नित।
...वालय में जब कि अर्चना के कर्कश स्वर,
...ण्टे-झालर,
...ाग्रत् होते हैं;
...व अम्बर जाने किसी राग से क्यों--
...ता ताम्रायित ?
...र वह स्वर-संघटन,
...सी के चरण-प्रतारण से कम्पित,
...लुण्ठित हो जाता है तत्क्षण।
...ह जाते हैं पड़े पुष्प-नैवेद्य अस्वीकृत।
...व कानों में धीरे कोई मेरे कहता—
...चलो चलो तुम वहाँ,
...याग यह स्थान भयावह।'
...र नदी-गिरि-खेतों के प्रति—
...रता इङ्गित।
...हता है वह--
...ऊब चुका हूँ मैं घर-घर से,
...हुरुपियापन से,
...स स्वर्ण-जटित मन्दिर से—
...जसका द्वारोद्घाटन,
...क्ति-काल के आश्रित।
...ल-प्रार्थी हैं,
...लात्कार के लिए जहाँ जन,
...या माँगते पाप-जनित फल धोने भीषण।
...नकी इच्छाएँ केवल अपने तक सीमित।

चलो वहाँ--
नीहार ज्योति धर जहाँ पर्ण पर,
करता है तरु आरति मेरी।

मलय-ताल पर
जहाँ विहग का होता है—
मधु-कीर्तन ईप्सित।
चलो वहाँ !

अम्बर प्रबुद्ध कर देगा देकर प्राण-वायु,
जीवन की मूल अपेक्षा
घुटकर हुई असूर्यपश्या देहरी पर—
जो मूर्छित !

वहाँ तुम्हारी बड़ी समस्याएँ,
सुदूर तक लहराती राई—सी,
दीख पड़ेंगी सम्यक्।
सरिता-सी होंगी अबाधगति,
गिरि सी उन्नत।

चलो वहाँ !
बनकर समूह तुम,
अभय, स्वच्छमन,
करना नहीं याचना !

केवल लेने का प्रण।

तब मैं कह दूँगा 'तथास्तु'—
होकर आनन्दित।"
साँझ-सुबह नित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृषि-यज्ञ*

(एक पौराणिक एकाङ्की नाटक)

श्री सेठ गोविन्ददास

पात्र, स्थान, समय

मुख्य पात्र राम—प्रसिद्ध मर्यादापुरुषोत्तम; लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न-उनके भाई; सीता—रामकी पत्नी; त्रिजट—एक ब्राह्मण, सुकेशनी—त्रिजट की पत्नी; यज्ञदत्त, वररुचि—त्रिजट के सहपाठी ब्राह्मण।

स्थान—अयोध्या, उसका सरयू तट और समीपवर्ती वनस्थली। समय—त्रेतायुग।

उपक्रम

स्थान—अयोध्या का सरयू तट। समय—संध्या।

[बाईं ओर दूर पर अयोध्या के भवनों के बाहरी भाग दिखाई देते हैं। दाहिनी ओर सरयू बह रही है। अस्त होते हुए सूर्य के सुनहरी प्रकाश से सारा दृश्य आलोकित है। त्रिजट, यज्ञदत्त और वररुचि सरयू के पुलिन पर बैठे हुए बातें कर रहे हैं। तीनों की अवस्था लगभग २५ वर्ष की है। त्रिजट गेहुएँ वर्ण का कुछ ऊँचा और दुबला-पतला व्यक्ति है। यज्ञदत्त का वर्ण गौर है वह कुछ ठिगना और मोटा-सा है। वररुचि श्याम वर्ण का है, न बहुत ऊँचा और न ठिगना, न बहुत मोटा और न दुबला। तीनों ब्रह्मचारियों के वेष में हैं। सिर के तथा दाढ़ी-मूछों के काले बाल ब्रह्मचर्याश्रम में क्षौर न होने के कारण लम्बे हो गए हैं।]

यज्ञदत्त—(आश्चर्य से त्रिजट की ओर देखते हुए) कृषि! कृषि!.....त्रिजट, तुम कृषि करोगे, इसी लिए साङ्गोपाङ्ग वेद का अध्ययन करके वेदवेत्ता हुए हो? इसी लिए इतिहास और पुराण पढ़े हैं?

वररुचि—और साधारण वेद-वेदाङ्ग-वेत्ता नहीं, अवध के सर्वश्रेष्ठ गुरुकुल के सर्वोत्तम विद्यार्थी!

यज्ञदत्त—हाँ, सर्वश्रेष्ठ गुरुकुल के सर्वोत्तम विद्यार्थी! कल हमारा ब्रह्मचर्य समाप्त होकर समावर्तन संस्कार होगा और आज यह कृषि करने का निर्णय!

वररुचि—अध्ययन-अध्यापन, यजन-याजन, दान और प्रतिग्रह—ब्राह्मणों के छः कर्मों को छोड़कर निकृष्ट कर्म कृषि करने की तुम्हारी रुचि कैसे हुई?

त्रिजट—कृषि को तुम निकृष्ट कर्म मानते हो?

वररुचि—इसमें भी कोई सन्देह है? आपद्धर्म के रूप में ब्राह्मण क्षत्रिय का कर्म तो कर भी सकता है, परन्तु कृषि तो वैश्यों का कर्म है। ब्राह्मण के लिए कृषि निकृष्ट नहीं तो और क्या है?

त्रिजट—मैं उसे इस समय का सर्वश्रेष्ठ यज्ञ मानता हूँ।

यज्ञदत्त—कृषि यज्ञ!

वररुचि—आश्चर्य की बात कहते हो!

त्रिजट—यदि यज्ञ का ठीक अर्थ समझ लो तो मेरी बात पर आश्चर्य न होगा।

यज्ञदत्त—यज्ञ का अर्थ यज्ञ है; उसका और क्या अर्थ हो सकता है?

त्रिजट—यज्ञ शब्द यज् धातु से निकला है; यज् धातु का अर्थ है अर्पण करना।

यज्ञदत्त—तुम्हारा सहपाठी होने पर क्या मैं इतना भी नहीं जानता?

त्रिजट—नहीं-नहीं; परन्तु, यज्ञदत्त, क्या अर्पण करना, किसे अर्पण करना, यह प्रश्न है न। मैं यज्ञ अर्पण की उस कृति को मानता हूँ जो कोई व्यक्ति या समूह समाज के हित के लिए करता है। समय-समय पर समाज की आवश्यकताएँ परिवर्तित होती रहती हैं, अतः यज्ञ के प्रकार भी। इस समय मानव-समाज के लिए सबसे आवश्यक कृषि है अतः कृषि-यज्ञ ही इस समय का सबसे श्रेष्ठ यज्ञ है।.... ...यह यज्ञ ब्राह्मण न करेगा तो कौन करेगा? इस देश में नए-नए कार्यों को ब्राह्मणों ने ही किया है तथा उन्हें उत्तेजना दी है। हाँ, यदि ब्राह्मण स्वयं धनवान बनने के लिए या किसी भी प्रकार के स्वार्थ से इन कामों को करे तो वह पतित हो जायगा। मैं कृषियज्ञ करूँगा समाज के हित के लिए। मैं कृषि-सम्बन्धी प्रयोग कर नए नए आविष्कार करूँगा और अपने आविष्कारों को यज्ञरूप से समाज के अर्पण कर दूँगा।

यज्ञदत्त—(विचारते हुए) परन्तु जहाँ तुमने हल जोतना आरम्भ किया कि इतने महान् विद्वान् और चरित्रवान् होने पर भी पतित, पतित ब्राह्मण समझे जाने लगोगे।

---

* रामायण की एक कथा के आधार पर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वररुचि—हाँ, समाज की रुचि ही ऐसी है।

त्रिजट—तो उस रुचि को ठीक करना होगा। वह भी ब्राह्मण का ही कर्तव्य है।

[यज्ञदत्त और वररुचि मस्तक झुकाकर कुछ सोचने लगे हैं। त्रिजट उनकी ओर देखता है।]

यवनिका

पहिला दृश्य

स्थान—अयोध्या के निकट एक वनस्थली में त्रिजट का अलिन्द। समय—प्रातःकाल।

[बाईं ओर छोटे से अलिन्द का कुछ भाग दिखाई दे रहा है और दाहिनी ओर दूर तक वन तथा उसके बीच-बीच में अन्न से बोई हुई हरित भूमि। अलिन्द का घर बड़े गाँठोंवाले काष्ठ-स्तम्भों पर है। छावनी तृण और पत्तों की है। पीछे अलिन्द की मृत्तिका की भित्ति है जिसमें छोटे कुछ द्वार हैं। इन द्वारों से भीतर के छोटे-छोटे कक्षों के कुछ भाग दिखाई पड़ते हैं। यद्यपि कक्ष स्वच्छ हैं तथापि उनमें जो वस्तुएँ दिखती हैं, जैसे—खाट, पीठ, मूसल आदि, वे टूटी-फूटी तथा टेढ़ी-मेढ़ी हैं। अलिन्द और कक्षों की धरती गोबर से लिपी है। सबसे निकट के कक्ष की छत्तका के कई घर दृष्टिगोचर होते हैं। सारे दृश्य से उदासी टपकी-सी पड़ती है। त्रिजट सबसे निकटवाले कक्ष के द्वार के पास अलिन्द में बैठा है। उसके सामने यव, गेहूँ और तण्डुल के छोटे-छोटे ढेर लगे हैं और वह यव के कुछ कणों को हथेली पर लिए ध्यानपूर्वक देख रहा है। त्रिजट की अवस्था अब ५० वर्ष के लगभग जान पड़ती है। उसके चारों ओर कुछ श्यामता आ गई है और मुख तथा हाथों पर सूर्य के आतप के चिह्न दिखाई पड़ते हैं। शेष सब को छोड़ उसके सिर के केश अब छोटे-छोटे हैं, पर मूछें अब भी लम्बी हैं। सिर, दाढ़ी, मूछों और छाती के केशों में आधे के लगभग श्वेत हो गए हैं। शरीर में वह वैसा ही दुर्बल है। बाएँ स्कन्ध पर मोटा यज्ञोपवीत है। वह केवल अधोवस्त्र धारण किए है जो मैला होने पर भी यत्र-तत्र फट गया है। सुकेशनी उसके पास ही बैठी है। उसकी अवस्था लगभग ४० वर्ष की है। शरीर पर फटी हुई साड़ी है। मुख पर अधिक श्रम के चिह्न स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रहे हैं।]

सुकेशनी—हाँ, छोड़िए, इस समय छोड़िए, नाथ, परीक्षा। कृषि के ये भिन्न-भिन्न प्रयोग तो दो युगों से हो रहे हैं।

त्रिजट—और तुम भी यही समझती हो कि मुझे चौबीस वर्षों में कोई सफलता नहीं मिली। (यव के कणों को दिखाते हुए) इस प्रकार के यव पहले अवध में क्या, कहीं भी उत्पन्न नहीं होते थे; (यवों को ढेर में डाल, तिलों को उठाते हुए) न ऐसे तिल (तिलों को ढेर में डाल, तण्डुलों को उठाते हुए) और न ऐसे तण्डुल। बीज ही सुधरा है, यह बात नहीं; उत्पत्ति कितनी बढ़ी है। कितने प्रकार के खाद्यों का उपयोग होने लगा है। और भी कृषि में.....

सुकेशनी—पर हम तो दरिद्री ही रहे। हम तो आहार और बीज को छोड़ अपनी उत्पत्ति की वस्तुएँ विक्रय भी नहीं कर सकते। आहार के योग्य धान्य रख शेष आप बाँट देते हैं।

त्रिजट—हाँ, क्योंकि मेरा उद्देश्य व्यापार कर धनवान् बनना नहीं, समाज के लिए यज्ञ करना है।

सुकेशनी—क्षमा कीजिए, नाथ, इस यज्ञ ने हमें निर्धन रक्खा। इतना ही नहीं, हमें क्षत-वृत्ति बना दिया है।

त्रिजट—यह समाज की नासमझी के कारण, जो कभी न कभी दूर होकर रहेगी।

सुकेशनी—दो युगों में तो दूर हुई नहीं। भला हल-ग्राही ब्राह्मण को कौन यज्ञ के सातों प्रधान कर्मों के लिए होता, पोता, ऋत्विज नेष्टा, प्रशास्ता, अध्वर्यु या ब्रह्मा बनाएगा? कौन उससे अनुष्ठान, श्राद्ध, तर्पण इत्यादि कराएगा? कौन उसे दान देगा?

त्रिजट—कभी न कभी समाज के मत में परिवर्तन होगा।

सुकेशनी—यदि आप ऐसा मानते हैं तो भी उसके लिए आज से अधिक उपयुक्त अवसर न आएगा। राम वन को जाते हुए अपनी व्यक्तिगत सारी सम्पत्ति दान कर रहे हैं, इसी लिए इतनी देर से कह रही हूँ कि छोड़िए इस समय इस बीज-परीक्षा को और अयोध्या जाइए। कदाचित् आपको भी दान में इतना मिल जाए कि आजीवन हम और हमारी सन्तति बिना कुछ किए बैठे-बैठे सुख से खाया करें।

त्रिजट—इसी से तो सोच रहा हूँ कि जाना उपयुक्त होगा या नहीं। बिना कुछ किए बैठे-बैठे खाने से बुरा जीवन और कोई हो सकता है?

सुकेशनी—(अप्रसन्नता से) परिश्रम कर जो उत्पन्न करें वह स्वयं के उपयोग में न लाएँ।.....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्रिजट—(बीच ही में) उपयोग में तो लाता हूँ, पर उतना ही, जितना नितान्त आवश्यक है।

सुकेशनी—(और भी अप्रसन्नता से) तो हम कृतवृत्ति नहीं ?

त्रिजट—यदि हम आवश्यकताओं को और घटा लें तो कृतवृत्ति न रहेंगे।

सुकेशनी—(अब दुःख से) नाथ..... नाथ, मैंने तो सदा आपकी आज्ञा का अक्षरशः पालन किया है। हमारी आवश्यकताएँ क्या बहुत अधिक हैं ? परन्तु हमारे बच्चे..... वे बच्चे (नेत्रों में आँसू भरकर) नाथ, उनकी .....उनकी ओर भी देखना आपके किसी-न-किसी धर्म के अन्तर्गत तो आता ही होगा। (दीर्घ निश्वास मुख से निकलता है।]

[त्रिजट-सिर झुकाकर कुछ सोचने लगता है। सुकेशनी त्रिजट की ओर देखती है। कुछ देर निस्तब्धता।]

त्रिजट—अच्छा, प्रिये, जाता हूँ, राम से दान माँगूँगा; यदि उन्होंने भी इस समय के समाज की भावना के अनुसार हलग्राही ब्राह्मण को कुछ न दिया तब तो वर्तमान परिस्थिति ही चलती रहेगी। पर यदि उन्होंने कुछ दिया तो..... तो भी आजीवन हम और हमारी सन्तति बैठे-बैठे सुख से खाया करें, यह न होगा; क्योंकि अकर्मण्य जीवन मैं निकृष्ट मानता हूँ। राम से दान प्राप्त भी हो गया तो उसका ठीक उपयोग करना होगा।

सुकेशनी—(निराशा से) वह भी अपने श्रम की उपज के सदृश बाँट दिया जायगा।

त्रिजट—अपनी उपज मैं यों ही नहीं बाँटता, सुकेशनी, उचित पात्रों को देता हूँ। जो उस उपज से अपनी उपज सुधारें, उसे बढ़ाएँ। राम मुझे दान में क्या देते हैं, यह देखने के पश्चात् उसके उपयोग का निश्चय होगा।

[त्रिजट कक्ष में जाकर अपना उत्तरीय और दण्ड लेकर बाहर आता है तथा दाहिनी ओर जाता है। सुकेशनी चुपचाप जिधर वह गया है, उधर देखती रहती है।]

लघु यवनिका

दूसरा दृश्य

स्थान—अयोध्या के राजभवन में राम का प्रासाद। समय—मध्याह्न।

[दाहिनी ओर अलिन्द; बाईं ओर दूर पर बहती हुई सरयू और बीच में चैत्य का कुछ भाग दिखाई देता है। चैत्य के पीछे राजभवन के कक्षों की भीतरी भित्ति दिखा देती है। भित्ति में कुछ खिड़कियाँ हैं जो खुली हैं और जिन से सजे हुए कक्षों के कुछ भाग दिखते हैं। चैत्य की धरत खेत और श्याम पाषाणों से पटी है। अलिन्द की छ ऊँचे और स्थूल पाषाण के स्तम्भों पर स्थित है। इ स्तम्भों की चौकियों और भरणियों के पाषाणों पर खुदा का काम है। चौकियाँ कमलाकार हैं और भरणियों दोनों ओर गजमुख हैं। गजों की शुण्डें ऊपर उठक छत को छू रही हैं। अलिन्द के पीछे की भित्ति प सुन्दर चित्रकारी है। चित्र रघुवंश की अनेक ऐतिहासि घटनाओं के हैं। कहीं दिलीप गऊ की सेवा कर र हैं; कहीं उसी गऊ को सिंह दबाए हुए दिखता है औ दिलीप तथा सिंह का सम्भाषण चल रहा है; कहीं स्वयंव में इन्दुमती अज को वरमाला पहना रही है; कहीं रघु क दिग्विजय-प्रस्थान हो रहा है। कहीं रघु का युद्ध, कह रघु का यज्ञ, कहीं रघु के सर्वस्व दान और कहीं इस दा के पश्चात् मृत्तिका के पात्रों को सम्मुख रखे हुए रघु स्नातक कौत्स का अर्घ्य से सत्कार कर रहे हैं, ये दृश्य चित्रित हैं अलिन्द की छत पर भी चित्रकारी है और उससे झूमर आदि कई सजावट की वस्तुएँ झूल रही हैं। अलिन्द क धरती पर रंग-विरंगे पाषाण पटे हैं, जो बड़ी व्यवस्था से पाटे गए हैं। चारों ओर पाषाण के ही बेलबूटे तथा बी में फूल इत्यादि बने हैं। अलिन्द की धरती पर बैठने क गद्दी, तकियों से युक्त चौकियाँ तथा कई प्रकार की सजाव की वस्तुएँ हैं। अलिन्द में राम, सीता और लक्ष्मण खड़े हैं इनके सामने एक ओर त्रिजट, यज्ञदत्त और वररुचि हैं राम और लक्ष्मण ने वन-प्रस्थान के लिए राजसी वेष क त्याग वल्कल पहन लिए हैं। सीता अपनी राजसी वेष भूषा में ही हैं। यज्ञदत्त और वररुचि की अवस्था प्रौढ़ को पार कर चुकी है। उनके केश यत्र-तत्र श्वेत हो ग हैं। वे रेशमी अधोवस्त्र और उत्तरीय धारण किए हैं दान में मिला हुआ बहुत-सा सुवर्ण दोनों के निकट रख है। चैत्य में ब्राह्मणों की भीड़ दिख पड़ती है जो दान मिली हुई अपनी-अपनी भिन्न-भिन्न प्रकार की वस्तुओं को सँभाल रहे हैं।]

यज्ञदत्त—हाँ, राजपुत्र, हम तीनों सहपाठी थे।

वररुचि—अवध के सर्वश्रेष्ठ गुरुकुल में पढ़े थे।

यज्ञदत्त—और (त्रिजट की ओर सङ्केत कर) ये त्रिज उस गुरुकुल के सर्वोत्तम विद्यार्थी थे।

राम—अच्छा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वररुचि—परन्तु समावर्तन संस्कार के एक दिन पूर्व ने कृषि करने का निश्चय किया।

यज्ञदत्त—ये विद्वान् हैं। पर हलग्राही पतित ब्राह्मण के अधिकारी नहीं।

वररुचि—हाँ राजपुत्र, इन्होंने ब्राह्मणों के छहों श्रेष्ठ को त्याग निकृष्ट वैश्य-वृत्ति ग्रहण की है।

राम—(त्रिजट से) कहिए, आर्य!

त्रिजट—मैं इसी लिए चुप था, राजपुत्र, कि मेरे सहपाठी त्त और वररुचि मेरे विरुद्ध जो-जो कहना चाहें कह लें; तब मैं सब बातों का एक साथ उत्तर दे दूँगा। इनसे पूछ लीजिए कि इन्हें और कुछ कहना है।

राम—(यज्ञदत्त और वररुचि से) बोलिए, द्विजश्रेष्ठ!

यज्ञदत्त—हम त्रिजट के विरुद्ध कुछ भी कहना नहीं। हमारा उद्देश्य केवल इतना ही है कि चौदह वर्ष के वन-गमन के अवसर पर दिया गया आपका यह सर्वस्व त्पात्रों को ही मिले, जिससे आपका कल्याण हो। आपको सच्ची वस्तु-स्थिति से परिचित करा दिया; में कुछ नहीं कहना है।

वररुचि—(त्रिजट की ओर सङ्केत कर) और आप इन्हीं लें कि हमने जो कहा है वह सत्य है या मिथ्या।

राम कुछ न कह प्रश्न-सूचक दृष्टि से त्रिजट की ओर हैं।]

त्रिजट—राजपुत्र, मुझे अपने गुरुकुल का सर्वोत्तम र्थी बताकर चाहे मेरे दोनों सहपाठियों ने निष्पक्ष बात ी हो, परन्तु मैं हलग्राही ब्राह्मण हूँ, यह सर्वथा सत्य समावर्तन के पश्चात् मैंने कृषि करने का निर्णय और गत चौबीस वर्ष से मैं कृषि ही कर रहा हूँ, ी सत्य है। परन्तु कृषि को मैं नीच वृत्ति और वैश्यों वृत्ति नहीं मानता।

लक्ष्मण—तब?

त्रिजट—ऋग्वेद में कृषि करने की सभी को आज्ञा है, वल वैश्य करें यह ऋग्वेद नहीं कहता। साथ ही उसे सर्वश्रेष्ठ वृत्ति बताता है। उसमें चाहे अन्य के समान बहुत बड़ा लाभ न हो, पर लाभ निश्चित : उसमें अन्य वृत्तियों के समान छूत नहीं। ऋग्वेद न है—

अक्षैर्मा दीव्यः कृषिमिति कृषस्व वृत्ते रमस्व बहुमन्य-।

राम—हाँ, इस वाक्य से 'वह वैश्यों की ही वृत्ति है', सिद्ध नहीं होता। कोई वर्ण उसे कर सकता है।

त्रिजट—फिर, राजपुत्र, मैंने तो उसे समाज के लाभ के लिए यज्ञ रूप से किया है।

लक्ष्मण—कृषि यज्ञ रूप से?

त्रिजट—हाँ, राजपुत्र, यज्ञ रूप से।

लक्ष्मण—यह कैसे, आर्य?

त्रिजट—यज्ञ शब्द यज् धातु से निकला है। आपको यह बताने की आवश्यकता नहीं कि यज्ञ का अर्थ है अर्पण करना। अतः समाज के हित के लिए जो कुछ भी अर्पण किया जाता है, वह यज्ञ है। समाज की आवश्यकताएँ समय-समय पर परिवर्तित होने के कारण यज्ञ के प्रकारों में भी परिवर्तन होने चाहिएँ। जिस यज्ञ में समिधा काष्ठ का अग्नि में हवन होता है उसका आरम्भ इसलिए हुआ था कि उस समय पृथ्वी वनों से परिपूर्ण थी। वनों को काटकर वन-काष्ठ भस्म करने पर ही पृथ्वी निवास तथा अन्य उपयोगों के लिए प्राप्त हो सकती थी। समिधा के साथ घृत और तिल आदि वस्तुएँ तो आहुति में इसलिए डाली जाती हैं जिससे समिधा शीघ्र भस्म हो सके।

सीता—और अब इस यज्ञ की आवश्यकता नहीं रह गई?

त्रिजट—नहीं, राजबधू, आज भी इसकी आवश्यकता है, क्योंकि अभी वन आवश्यकता से अधिक हैं। परन्तु जन-संख्या बढ़ रही है; अतः इसी के साथ अब कृषियज्ञ की भी आवश्यकता है।

लक्ष्मण—ऐसा क्यों?

त्रिजट—क्योंकि मनुष्य शनैः-शनैः मांसाहार छोड़कर अन्नाहारी होता जाता है। उसकी पाशविकता नष्ट होने के लिए यह आवश्यक भी है। वनों के काटने का कार्य मानवों के साथ मिलकर देवों तक ने किया। इसका भी ऋग्वेद में उल्लेख है। देव परशु ले लेकर पृथ्वी पर आए और उन्होंने वनों को काटा, यह ऋग्वेद में स्पष्ट लिखा है। ऋग्वेद का वाक्य है—'देवासः आवन् परशन् आजिघ्रन् वना वृश्चन्तो अभिविड्भिरायत'। उस समय की आवश्यकता के अनुसार यदि परशु ग्रहण करना पतित कर्म न था तो इस समय की आवश्यकता के अनुसार हल ग्रहण करना पतित कर्म कैसे हो सकता है?

[राम यज्ञदत्त और वररुचि की ओर देखते हैं। दोनों कुछ न कहकर एक दूसरे की ओर देखने लगते हैं। सीता और लक्ष्मण कभी राम, कभी त्रिजट और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कभी यज्ञदत्त और वररुचि की ओर देखते हैं। कुछ देर निस्तब्धता।]

त्रिजट—फिर, राजपुत्र, मैंने कृषि समाज सेवा के लिए यज्ञ रूप से की है। और वह भी ऐसे वन्य-प्रदेशों में, जिससे कृषि वृत्ति वालों से मेरी कोई प्रतिस्पर्द्धा न हो। इतना ही नहीं, ऊसर भूमि को जोत-जोतकर मैं उर्वरा बनाता हूँ और इस राज्य की भी सेवा कर रहा हूँ। और ऐसी पृथ्वी से भी जो कुछ मैं उत्पन्न करता हूँ, उसे बेचता नहीं। आहार तथा बीज के लिए पर्याप्त धान्य रख शेष को मैं योग्य पात्रों में वितरण कर देता हूँ। मैंने अनेक प्रयोगों को कर बीज सुधारा है। नाना प्रकार के खाद्य बनाए हैं। और भी कृषि-सुधार के लिए न जाने कितनी योजनाएँ तैयार की हैं। मेरे इस प्रकार के वितरण से न जाने कितने कृषकों का बीज सुधरा है। मेरे बताये हुए खाद्यों से बहुत से कृषकों की उपज बढ़ी है। ये बातें कहाँ तक सत्य हैं, यह आप आर्य यज्ञदत्त और आर्य वररुचि से भी पूछ सकते हैं।

[राम—कुछ न कह प्रश्न-सूचक दृष्टि से यज्ञदत्त और वररुचि की ओर देखते हैं।]

यज्ञदत्त—हाँ, यह तो सत्य है।

वररुचि—मैं भी मानता हूँ कि सच है।

सीता—और ऐसा यज्ञ करनेवाला ब्राह्मण भी पतित माना जाता है?

त्रिजट—राजबधू, मैं प्रचलित यज्ञों में निमन्त्रित नहीं किया जाता; कोई मुझसे अनुष्ठान नहीं कराते; श्राद्ध नहीं, तर्पण नहीं; कोई मुझे दान नहीं देता।

यज्ञदत्त—हम विवाद में तो त्रिजट से नहीं जीत सकते, परन्तु इसमें हमें सन्देह नहीं है कि इनका ब्रह्मतेज हल ग्रहण करने से नष्ट हो गया है।

वररुचि—इसमें कोई सन्देह नहीं हो सकता।

त्रिजट—मुझमें ब्रह्मतेज है इसकी तो मैं परीक्षा दे सकता हूँ।

राम—(विचारते हुए) आर्य, आप ऐसे समय पधारे जब मैं सब कुछ दान कर चुका हूँ।

सीता—किन्तु, आर्यपुत्र, यदि आप इन्हें दान देने का निर्णय करें तो मैं अपने सारे आभूषण इन्हें दान में दे दूँगी।

त्रिजट—यह दान तो मुझे स्वीकृत न होगा। दान लेनेवाले को सदा यह विचारना चाहिए कि वह दान किससे लेता है और किस वस्तु का।

राम—(विचारते हुए) देखिए, मेरे पास केवल एक वस्तु दान के लिए शेष है।

त्रिजट—कौन-सी, राजपुत्र?

राम—मेरी सहस्र गाएँ।

त्रिजट—(अत्यन्त प्रसन्नता में) आहा! वे तो मेरे लिए बहुत उपयोगी सिद्ध होंगी। यदि मुझे ऐसा गोधन मिल जाय तब तो मेरा कृषियज्ञ.....

यज्ञदत्त—(बीच ही में) राजपुत्र, ये कभी सहस्र धेनुओं की सँभाल कर सकते हैं? उन गायों में से अधिकांश मर जाएँगी; आपको गो-हत्या लगेगी।

वररुचि—हाँ, हाँ।

राम—(विचारते हुए त्रिजट से) देखिए, आर्य, आपको पतित ब्राह्मण तो नहीं मानता और न दान के अयोग्य ही। पर इस समय मैं गोदान ही दे सकता हूँ। साथ ही में उतनी ही गाएँ आपको दूँगा, जितनी आप सँभाल और सेवा कर सकें।

त्रिजट—मैं सहस्र गायों की सेवा-सँभाल कर सकता हूँ।

राम—इसके लिए मैं प्रमाण चाहूँगा।

त्रिजट—जो प्रमाण आप चाहें मैं देने को प्रस्तुत हूँ।

[राम विचारमग्न हो जाते हैं। सब उत्सुकता से एकटक राम की ओर देखते हैं। कुछ देर निस्तब्धता।]

राम—आपमें कितनी गाएँ रखने की शक्ति है, यह जानने के लिए मैं चाहूँगा कि आप अपने दण्ड को फेंकें। जितनी दूर जाकर आपका दण्ड गिरेगा, उतने स्थान में जितनी गाएँ खड़ी हो सकती हैं, उतनी मैं आपको दे दूँगा।

त्रिजट—बहुत अच्छा। (अपने दण्ड को सँभाल बाईं ओर दूर पर सरयू के प्रवाह को देख, फिर दण्ड को देखते हुए) मेरा शरीर कृश है, शारीरिक बल से ही यदि तुझे फेंकूँ तब तो तू चैत्य में ही गिर पड़ेगा; परन्तु...परन्तु यदि मेरी आत्मा में बल है, यदि मैंने दो युगों से कृषि मनसा-वाचा-कर्मणा सच्चे यज्ञ रूप से की है, यदि मेरा ब्रह्मतेज नष्ट न होकर बढ़ा है, यदि मैंने अपने धर्म का यथा पालन किया है, तो...तो तू; हे दण्ड! सरयू के इस पा नहीं, उस पार गिरना।

(कुछ देर त्रिजट एकटक दण्ड को देखता रहता है राम को छोड़ सब लोग कुछ भौंचक से त्रिजट को देख हैं। त्रिजट सरयू की ओर दण्ड को फेंकता है। द आकाश-मार्ग से जाता हुआ दिखता है। राम को छो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यक्तियों के आश्चर्य की सीमा नहीं रहती जो उनकी बातों से व्यञ्जित होता है।]

त्रिजट—(राम से) राजपुत्र, भेजिए किसी को सरयू उस पार। वह देख आए कि मेरा दण्ड सरयू के उस पहुँचा या नहीं।

राम—द्विजवर्य, जिस वेग से वह दण्ड गया है, उससे में सन्देह ही नहीं रह जाता कि वह सरयू के उस पार गया होगा। एक सरयू क्या, यदि आपने आज्ञा होती तो वह न जाने कितनी सरयू को पार कर सकता जिसने अपने धर्म का यथार्थ पालन किया है, वह विश्व या नहीं कर सकता? क्षमा कीजिए, मैंने आपकी अकार परीक्षा ली। सहस्र गाएँ आपकी भेंट हैं।

यज्ञदत्त—(त्रिजट को आलिङ्गन कर गद्गद स्वर से) अपने सहपाठी को आज पहचाना। मुझे जो सुवर्ण पुत्र से मिला है, मैं तुम्हें भेंट करता हूँ।

वररुचि—(त्रिजट को आलिङ्गन कर गद्गद स्वर से) मैंने भी तुम्हें आज ही जाना। राजपुत्र ने जो सुवर्ण दिया है, वह भी मैं तुम्हें भेंट में देता हूँ।

त्रिजट—मित्रवर्य, मैं सुवर्ण का क्या करूँगा? गउएँ मेरे उपयोग की वस्तु हैं।

यज्ञदत्त—(विचारते हुए) देखो, इन गायों और इस वर्ण से अब हम तीनों उस कृषियज्ञ को बढ़ाएँगे, जो तुम रहे हो।

वररुचि—हाँ, हाँ, यह...यह ठीक है।

त्रिजट—मैं एकाकी था। ऐसे साथियों और ऐसे तीनों को पाकर मैं धन्य हुआ। (राम से) राजपुत्र, जब ह वर्षों के उपरान्त आप लौटेंगे तब तक यदि जीवित तो आपको अपने कृषियज्ञ की प्रगति दिखाऊँगा।

लघु यवनिका

तीसरा दृश्य

स्थान—अयोध्या के निकट की वनस्थली में त्रिजट के का अलिन्द।

समय—सन्ध्या।

[दृश्य वैसा ही है, जैसा पहले दृश्य में था। सुकेशनी इधर-उधर घूम रही है। बार-बार दाहिनी ओर के वन देखती है। उसकी मुद्रा से ज्ञात हो जाता है कि वह की प्रतीक्षा कर रही है। दाहिनी ओर से शीघ्रता- त्रिजट का प्रवेश।

त्रिजट—सुकेशनी! सुकेशनी!

सुकेशनी—(उसकी ओर बढ़ते हुए) नाथ!

त्रिजट—बहुत...राम से बहुत बड़ा दान लेकर आया हूँ।

सुकेशनी—(प्रसन्नता से) खुल गए भाग्य हम लोगों के।

त्रिजट—और जानती हो, दान में क्या मिला है?

सुकेशनी—बिना आपके बताए मुझे कैसे ज्ञात हो?

त्रिजट—कल्पना करो।

सुकेशनी—(विचारते हुए) रजत?

त्रिजट—नहीं, नहीं, इससे...इससे बहुत बड़ी वस्तु है।

सुकेशनी—सुवर्ण?

त्रिजट—नहीं, इससे भी बड़ी।

सुकेशनी—रत्न?

त्रिजट—इससे भी...इससे भी बड़ी।

सुकेशनी—तब क्या हो सकता है?

त्रिजट—और कल्पना दौड़ाओ।

सुकेशनी—आप ही बताइए, मेरी समझ में नहीं आता।

त्रिजट—गोधन, प्रिये, एक सहस्र गाएँ।

सुकेशनी—(आश्चर्य से) गोधन!.....एक सहस्र गाएँ!

त्रिजट—हाँ, गोधन, एक सहस्र गाएँ।

सुकेशनी—परन्तु...परन्तु नाथ, यह तो एक नवीन आपत्ति ले आए आप। इन एक सहस्र गायों की सेवा-सँभाल कौन करेगा?

त्रिजट—मैं और तुम।

सुकेशनी—तो...तो जितना काम अभी करना पड़ता था उससे भी अधिक काम हो गया। (कुछ रुककर) और...और इतने पर भी एक सहस्र गायों को हम सँभाल न सकेंगे।

त्रिजट—अब तो हमें साथी भी मिल रहे हैं। यज्ञदत्त, वररुचि दो पुराने सहपाठी मिले हैं। भविष्य में और प्राप्त होंगे।

सुकेशनी—परन्तु..परन्तु नाथ, जहाँ दूसरे सुख से सुवर्ण, मणि कुछ ले-लेकर गए होंगे, जन्म भर सुख से बैठे-बैठे खाएँगे, वहाँ आप यह...

त्रिजट—फिर वही बैठे-बैठे खाने की बात! मैंने तुमसे कहा था न कि मैं वैसे जीवन को निकृष्ट मानता हूँ, निकृष्टतम। धर्म के अनुसार वही जीवन श्रेयस्कर है जो श्रम से स्वेद बहाते हुए व्यतीत किया जाता है। एक उपनिषद् का वाक्य है—'अज्ञानां मार्जनं कृत्वा श्रमसंयमवारिणा।'

सुकेशनी—किन्तु हमारे बच्चे, नाथ!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्रिजट उन्हें भी कर्मण्य होना चाहिए, अकर्मण्य नहीं।

[नेपथ्य में गायों के रँभाने का शब्द सुन पड़ता है।]

त्रिजट—(शीघ्रतापूर्वक दाहिनी ओर जाते हुए) लो...लो, गोधन पहुँच गया। (प्रस्थान।)

[सुकेशनी एक दीर्घ निश्वास छोड़ती हुई दाहिनी ओर देखती है।]

यवनिका

उपसंहार

स्थान—अयोध्या के निकट की वनस्थली।

समय—सायङ्काल।

[बाईं ओर तो त्रिजट के गृह का वही अलिन्द है। दाहिनी ओर दूर-दूर तक लम्बे-लम्बे गृहों की पंक्तियाँ दिखती हैं। यद्यपि ये गृह कच्चे हैं तथापि हैं बहुत से। बीच में निकट ही एक छोटा-सा मण्डप बनाया गया है। मण्डप पत्रों और पुष्पों की बन्दनवारों से तथा मङ्गलकलशों से सुशोभित है। बीच में मृत्तिका निर्मित कुछ चौकियाँ हैं। बीच की चौकी पर राम विराजमान हैं। उनके निकट की दूसरी चौकी पर सीता। उसी पंक्ति में तीन चौकियाँ और हैं जिन पर भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न बैठे हुए हैं। और बाईं ओर भी ऐसी ही चौकियों के पंक्ति पर त्रिजट, सुकेशनी, यज्ञदत्त, वररुचि तथा त्रिजट के अन्य साथी पुरुष और स्त्रियाँ हैं। राम और लक्ष्मण की वेष-भूषा राजसी है। त्रिजट और यज्ञदत्त तथा वररुचि के केश अब सन के समान श्वेत हो गए हैं।]

भरत—(राम से) हाँ, महाराज, गत चौदह वर्षों में आपने भूभार उतारा, दुष्टों से पृथ्वी को रहित किया तो अवध में आर्य त्रिजट ने भी कम काम नहीं किया है। आप इन्हें एक सहस्र गउएँ दे गए थे। चौदह वर्षों में उनकी संख्या सवा लक्ष पहुँच गई है। जो वृषभ जन्मे उनसे योजनों ऊसर भूमि उपजाऊ बनाई गई। जहाँ अन्न, कार्पास, इक्षुदण्ड, शाक इत्यादि उत्पन्न किए जाते हैं। न जाने कितने नए-नए खाद्य बनाकर तथा सिंचन की व्यवस्था कर इन वस्तुओं की उपज का परिमाण बढ़ाया गया है। उद्यान लगाए गए हैं। उनसे फल और ओषधियों की अनेक जातियाँ उत्पन्न की जाती हैं। गोवंश का भी सुधार किया गया है। अब जो गाएँ होती हैं [illegible] पहले की गायों से बहुत अधिक दूध देती हैं। वृषभ [illegible] बहुत अधिक परिश्रमी होते हैं। कार्यकर्ताओं को उनकी [illegible] आवश्यकताओं की पूर्ति के अनुसार देकर शेष उत्पत्ति [illegible] भी बेंची नहीं जाती, वह योग्य पात्रों को बाँट दी जाती है।

राम—परन्तु पात्रापात्र का निर्णय कैसे होता है?

भरत—महाराज, कार्यकर्ताओं के त्यागमय जीवन और [illegible] कार्य का ऐसा प्रभाव है कि जो योग्य पात्र नहीं हैं, जिन्हें सचमुच आवश्यकता नहीं है, वे यहाँ अनुचित लाभ उठाने के लिए आते ही नहीं।

राम—अच्छा, यह यहाँ की विशेषता है कि बिना मूल्य के वस्तुएँ मिलने पर भी यहाँ से कोई अनुचित लाभ नहीं उठाता।

भरत फिर महाराज, आर्य त्रिजट को दान इतना मिलता है कि किसी भी कार्य के लिए यहाँ समृद्ध की कमी नहीं और व्यापारिक वृत्ति न रहने के कारण किसी के हृदय में किसी प्रकार की स्पर्द्धा की भावना भी नहीं है।

राम—तो आर्य त्रिजट, जिस प्रकार का कृषियज्ञ करना चाहते थे वैसा ही यज्ञ कर रहे हैं?

भरत—अब तो कृषियज्ञ के साथ-साथ अन्य यज्ञों का भी आरम्भ हो गया है। विद्याध्ययन के लिए गुरुकुल स्थापित हुआ है। परिश्रमालय और औषधालय इत्यादि चल रहे हैं।

राम—(त्रिजट से) तो, आर्य त्रिजट, आपने सब के सामने एक नए प्रकार का यज्ञादर्श उपस्थित किया। और ब्राह्मणों के छहों कर्मों, अध्ययन, अध्यापन, यजन, याजन, दान और प्रतिग्रह—का सुन्दर पालन भी आप कर रहे हैं। राम राज्य में सदा इस प्रकार के यज्ञों की प्रतिष्ठा रहेगी।

त्रिजट—परन्तु यह सब मैं राम कृपा से ही तो कर सका और कर रहा हूँ।

[कुछ देर निस्तब्धता]

त्रिजट—तो महाराज चलकर हमारी यज्ञशाला के भिन्न-भिन्न विभागों का तो निरीक्षण करें।

राम—(उठते हुए) अवश्य...अवश्य।

[शेष सब लोग भी खड़े हो जाते हैं।]

यवनिका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दक्षिण अफ्रीका की वीरांगना—जगरानी देवी

श्री जगतप्रकाश शर्मा, बी० एस-सी०, सिद्धान्तशास्त्री

सन् १९१३ में भारतवासी दक्षिण अफ्रीका से आई हुई उसी चाव से पढ़ते थे जिस चाव से पिछले दिनों महायुद्ध समाचार पढ़े जाते थे। प्रवासी भारतीयों का वह संग्राम संसार इतिहास में अद्वितीय था। उस लड़ाई में तोपें और बंदूकें नहीं थीं। वायुयानों से बम के गोले नहीं गिराए गए थे; तो भी लड़ाई थी और बड़ी जबर्दस्त लड़ाई। उस संग्राम ने संसार और खास कर भारत को, एक नया सबक सिखाया था और दिया था कि आत्मबल पाशविक शक्ति पर निश्चय ही प्राप्त कर सकता है। वहाँ के भारतीय मजदूरों की हड़ताल,

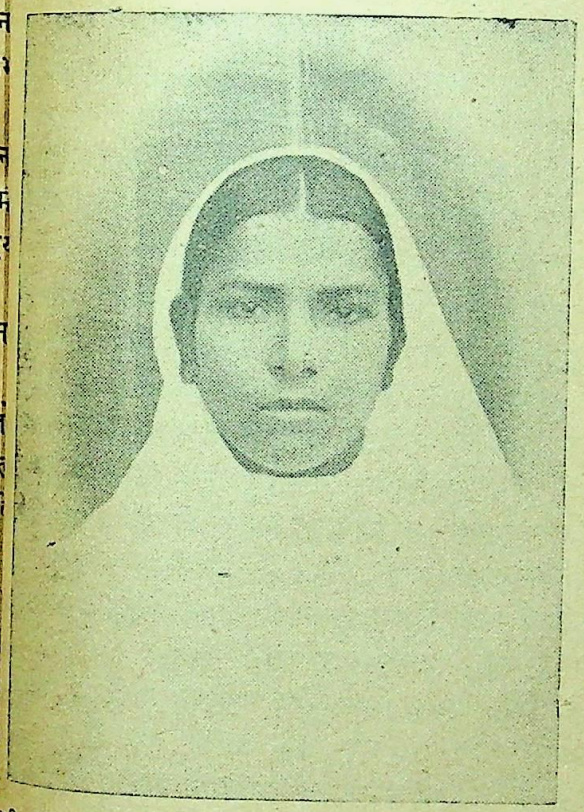

दक्षिण अफ्रीका की वीरांगना—स्वर्गीया जगरानी देवी

और वीरांगनाओं की जेल यात्रा, पाशविक शक्ति का नग्न और हत्याकांड की सनसनी-पूर्ण खबरें नित्य अखबारों में थीं। उनको पढ़कर भारतवासी जहाँ एक ओर ग्लानि से होते थे, गौरांगों के अत्याचारों पर क्रोध से लाल हो जाते थे, अपनी प्रवासी बहनों और भाइयों की वीरता पर फूले नहीं थे। स्वर्गीय गोखले बीमार और कमजोर होते हुए भी के नगर नगर में अलख जगाते फिरते थे और भारतीयों को ते थे कि अब दक्षिण अफ्रीका से जो कोयला और शक्कर यहाँ वह प्रवासी भारतीयों के रक्त से सनी होगी। भारत में महाराज उनका प्रतिनिधित्व कर रहे थे और उन्हें यहाँ से सहायता भिजवा रहे थे।

भारतवर्ष और प्रवासी भारतीयों के इतिहास में यह पहला था जब कि भारतीय महिलाओं ने चहारदीवारी से निकल कर महात्मा गांधी के नेतृत्व में जनोद्धार के लिए आत्मोत्सर्ग का अपूर्व परिचय दिया था। इन वीरांगनाओं में पंडित (अब स्वामी) भवानीदयाल की पत्नी स्वर्गीया जगरानी देवी भी थीं। उन्हीं का संक्षिप्त परिचय देने के लिए ये पंक्तियाँ लिखी जा रही हैं। एक साधारण स्थिति का व्यक्ति भी मनोबल और इच्छा-शक्ति के प्रताप से देश और राष्ट्र की कितनी बड़ी सेवा कर सकता है, इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है स्वर्गीया जगरानी देवी का जीवन-वृत्तान्त।

जगरानी देवी जी का जन्म बिहार प्रांतांतर्गत आरा जिले के रूखरा नामक एक ग्राम में ४ मई, १८९७ ई० को हुआ था। इनके पिता बाबू रामनारायणराव रूखरा के रईस और जमींदार थे और इनकी माता श्रीमती वचनकुँअरि पुराने ढंग की एक साधारण महिला थीं। उस गाँव में बीसवीं सदी की एक रश्मि भी नहीं पहुँचने पाई थी। सभी कन्याएँ 'लिख लोढ़ा और पढ़ पत्थर' की बढ़िया बानगी थीं। इनका शिक्षा और संस्कृति से कोई नाता-रिश्ता नहीं था। अविद्या की गोद में पलना, पर्दे के अन्दर रहना, गहनों से शरीर को लादना, छोटी उम्र में दुलहिन बनना और बच्चे पैदा करना यही स्त्री-जीवन की सार्थकता थी। जहाँ बालकों को शिक्षा देने की कोई व्यवस्था न हो, कुछ हिसाब-किताब जान लेना और कैथी लिपि में चिट्ठी-पत्री लिख लेना चुने हुए रईसों के बच्चों की शिक्षा की इतिश्री समझी जाती हो, वहाँ कन्याओं की शिक्षा की बात व्यर्थ है। निदान जगरानी को अक्षर-ज्ञान से भी वंचित रहना पड़ा। पुराने ढंग से इनका पालन-पोषण हुआ। अशिक्षित होते हुए भी इनका स्वभाव बड़ा सुन्दर था। ये कभी किसी से लड़ती-झगड़ती नहीं थीं और सबसे प्रेम-पूर्वक व्यवहार करती थीं। सबका काम कर देना और सभी को खुश रखने की चेष्टा करना इनका स्वाभाविक गुण था। अपने इस स्वभाव के कारण ये गाँव में सर्वप्रिय हो गई थीं।

उस समय किसी ने भी न सोचा होगा कि यही कन्या एक दिन इतिहास में अमर स्थान पा जाएगी।

विधि का विधान तो देखिए कि इनका विवाह केवल बारह वर्ष की अवस्था में, सन् १९०९ ई० में, सखरा के दस कोस पश्चिम में स्थित बहुआरा ग्राम के पंडित भवानीदयाल के साथ हो गया। पंडित जी अपनी पत्नी को देखकर जहाँ आनंदित हुए, वहाँ व्यथित भी। आनन्दित इसलिए कि उनको गौरवर्ण, रूपवती पत्नी मिली और व्यथित इसलिए कि वह निरक्षर भट्टाचार्य थी। पर पंडित जी भाग्य पर दोष मढ़कर संतोष करनेवाले व्यक्ति नहीं थे। उन्होंने पहले स्वयं पढ़ाना प्रारम्भ किया; पर जब देखा कि इसमें अनेक कठिनाइयाँ हैं तब बिजनौर जिले से पंडिता कौशल्या देवी को बुलाकर उनको शिक्षा देने का कार्य सौंप दिया। जगरानी की बुद्धि तेज तो थी ही, ये स्वल्प काल में हिंदी अच्छी तरह पढ़ने-लिखने लगीं। यही नहीं, वैदिक संध्या-प्रार्थना आदि भी इन्होंने कंठस्थ कर ली। पुस्तकों और अखबारों के पाठ से इनको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देश-काल का भी ज्ञान होने लगा। पति के संसर्ग से आर्यसमाज के सिद्धान्तों में इनकी अटल श्रद्धा हो गई।

इसके बाद ही सन् १९१२ के अंत में जगरानी जी अपने पति के साथ दक्षिण अफ्रीका गईं! डरबन के बन्दरगाह पर इनको चार दिन जहाज पर ही पुलिस के पहरे में रहना पड़ा। महात्मा गांधी और पोलक साहब के उद्योग से किसी तरह ये अफ्रीका की भूमि पर पैर रखने पाईं, फिर भी उनका पिण्ड नहीं छूटा। इन पर 'वर्जित प्रवासी' के अपराध में नैटाल की सुप्रीम कोर्ट और बालक्रस्ट तथा प्रिटोरिया की अदालतों में मुकदमा चला! इस मामले में इनको बड़ी हैरानी और परेशानी उठानी पड़ी और इन्हें वहाँ की श्वेताङ्ग-नीति का पूरा अनुभव हो गया।

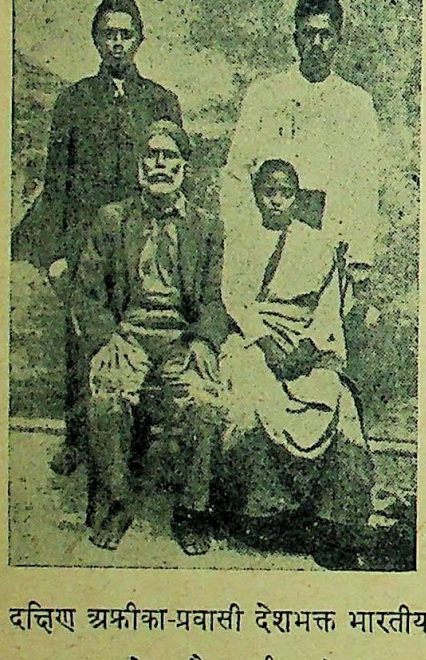

दक्षिण अफ्रीका-प्रवासी देशभक्त भारतीय

अन्ततः बहुत कष्ट उठाने और खर्च करने पर जगरानी जी को अपने पति के साथ दक्षिण अफ्रीका में रहने का अधिकार मिल सका!

अभी जगरानी वहाँ स्थिर भी नहीं होने पाई थीं कि सन् १९१३ के उत्तरार्द्ध में सत्याग्रह की चर्चा चल पड़ी। जस्टिस सरल ने अपने एक फैसले में भारतीय धर्म-विहित विवाह को कानून से नाजायज करार दे दिया! इससे भारतीय स्त्रियों में बड़ी खलबली मच गई! उसी समय एक और ऐसी घटना घटी जिससे प्रवासी भारतीयों के क्षोभ और असंतोष की सीमा न रही! बात यह थी कि सन् १९१२ में जब माननीय गोखले दक्षिण अफ्रीका गए थे तब दक्षिण अफ्रीका-सरकार के मंत्रियों—जनरल बोथा और जनरल स्मट्स—ने उनको वचन दिया था कि वह एक्ट, जिसके अनुसार सन् १८९५ के बाद आए हुए भारतीयों को सालाना ३ पौण्ड अर्थात् ४५) फी आदमी देना पड़ता है, पार्लियामेंट की आगामी बैठक में रद्द कर दिया जाएगा। गरीबों का कुछ भला कर सकने के कारण गोखले महाराज बड़े संतुष्ट हुए थे और स्वदेश लौटने पर बम्बई की सार्वजनिक सभा में भाषण करते हुए उन्होंने कहा था कि जनरल बोथा और जनरल स्मट्स के प्रतिज्ञानुसार गरीबों का रक्त चूसनेवाला ३ पौंडवाला टैक्स शीघ्र ही उठ जायगा। कुछ काल के बाद जब यूनियन पार्लियामेंट की बैठक हुई और एक सदस्य ने पूछा कि 'क्या यह सत्य है कि हमारे मंत्रियों ने पौंडवाले कर को रद्द करने का वचन माननीय गोखले को दिया है?' तो जनरल स्मट्स ने अपनी प्रतिज्ञा को ठुकराते हुए और सत्य का गला घोंटते हुए निर्लज्ज होकर कह दिया कि 'गोखले झूठ बोल रहे हैं; हमने उनको कोई ऐसा वचन नहीं दिया है!'

जनरल स्मट्स के इस नवीन विश्वासघात से प्रवासी भारतीयों में आशांति की आग धधक उठी! महात्मा गांधी ने जनरल स्मट्स को नोटिस दिया कि यदि वे तीन पौंड का टैक्स नहीं रद्द करते हैं, भारतीय धर्मानुकूल विवाह को कानून-विहित नहीं मानते हैं और इसके साथ ही अन्य शिकायतों को दूर नहीं करते हैं तो उनको विवश होकर सत्याग्रह का सूत्रपात करना पड़ेगा! जनरल स्मट्स ने महात्मा जी की माँग पर कोई ध्यान नहीं दिया। फलतः सत्याग्रह की लड़ाई छिड़ गई।

पहले महात्मा जी के आश्रम के १६ व्यक्ति जिनमें मातेश्वर कस्तूर बा भी थीं, कानून भंग कर जिले में गए! उधर ट्रांसवाल में पंडित भवानीदयाल भी सत्याग्रह की तैयारी कर रहे थे; पर माता कस्तूर बा के जेल जाते ही जगरानी जी को अपने पति के कार्य में सहयोग देने का अवसर मिल गया। ये पंडित जी से पहले कानून भंग कर जेल जाने को प्रस्तुत हो गईं। पर पंडित जी ने इनको समझाया कि इस मामले में उनकी सहमति से काम न चलेगा, सत्याग्रह के सूत्रधार गांधी जी की स्वीकृति आवश्यक है। जगरानी जी जोहान्सबर्ग पहुँचकर महात्मा गांधी से मिलीं और उनसे अपनी इच्छा प्रकट की! महात्मा गांधी ने इनको बहुत समझाया "कि यह युद्ध स्त्रियों के लिए बड़ा ही कष्टदायक है। जेल में न तो अच्छे कपड़े मिलेंगे और न अच्छा खाना; हबशियों की खुराक—मकई की लपसी—खानी पड़ेगी और मजदूर की भाँति कठोर काम करना पड़ेगा। फिर तुम जान-बूझ कर क्यों आफत मोल लेना और दुःख उठाना चाहती हो?"

जगरानी जी ने उत्तर दिया, "बापू! मैं सब बातों पर भली प्रकार विचार कर आपकी शरण में आई हूँ। कोई भी कष्ट मुझे अपने संकल्प से विचलित नहीं कर सकता। जेल के मोटे कपड़े मुझे रेशमी वस्त्रों से अधिक रुचिकर होंगे; मकई की लपसी मेरे लिए मोहनभोग से बढ़कर होगी। जिस कानून के अनुसार हजारों गरीब भारतीयों को ३ पौंड सालाना टैक्स देना अन्यथा जेल जाना पड़ता है और भारत की देवी रखेली समझी जाती हैं और उसके बच्चे दोगले, उस कानून की विद्यमानता में हमारे लिए अब दो घड़ी भर का आराम भी हराम है!" इसी से सोचा जा सकता है कि जगरानी जी ने स्वल्पकाल में केवल अक्षराभ्यास ही नहीं कर लिया था, अपने देश और राष्ट्र की अवस्था का यथेष्ट ज्ञान भी प्राप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिया था। महात्मा जी जगरानी जी की बात से बहुत प्रसन्न और उन्होंने जगरानी जी को तत्क्षण ही सत्याग्रह में सम्मिलित की स्वीकृति दे दी। ट्रांसवाल में उस समय १० और मद्रासी लाएँ सत्याग्रह में शरीक हुईं और जगरानी जी को मिलाकर ११ यों का एक दल तैयार हुआ। जगरानी जी महात्मा जी से लने घर से गईं तो फिर लौट कर घर नहीं आईं।

महात्मा जी की आज्ञा से इन ११ वीरांगनाओं का दल रेंज फ्री स्टेट' की सीमा की तरफ रवाना हुआ। दक्षिण फ्रीका के नियमानुसार एक प्रांत का भारतीय दूसरे प्रांत में प्रवेश कर सकता। सरकारी आज्ञा के बिना सीमा लाँघने पर जेल, ना और निर्वासन तक की सजा हो ती है। माता कस्तूर बा को इसी अप- में नैटाल से ट्रांसवाल की सीमा हते हुए गिरफ़्तार किया गया था और मास की कड़ी कैद की सजा दी गई पर जगरानी जी के दल ने ट्रांसवाल से स्टेट की सीमा पार करते हुए रकार को गिरफ़्तार करने की चुनौती दी उसको सफलता नहीं मिली। जनरल स की सरकार समझ गई कि स्त्रियों को में ठूँसने से संसार में यूनियन सरकार बड़ी अपकीर्त्ति होगी। माता कस्तूर बा ल की चार स्त्रियों को जेल भेजकर कार ने जो भूल की थी उसकी पुनरावृत्ति ा वह नहीं चाहती थी। इसलिए कानून करने पर भी इन स्त्रियों को गिरफ़्तार किया गया। ये बड़ी हताश हुईं और के शहर विरिनिगी में ठहर गईं। इनको एक कानून भंग करने पर न गया तब इन्होंने दूसरा कानून भंग का इरादा कर लिया। वहाँ बिना सेंस के फेरी लगाकर कोई चीज ना बड़ा भारी जुर्म है और अपराधी कठोर दंड मिलता है। अतएव नी जी आदि ने टोकरियों में फल लेकर शहर की फेरी लगाना बेचना शुरू कर दिया। पर जब सत्ताधिकारियों ने इनके अपराध पर भी ध्यान नहीं दिया तब तो इनकी निराशा की नहीं रही। एक सप्ताह वहाँ ठहरकर सत्याग्रही स्त्रियों त्ताधिकारियों को गिरफ़्तार करने के लिए ललकारा पर इनकी कामना पूरी नहीं हुई। महात्मा गांधी की आज्ञा से इन्हें फ्री की सीमा से लौटना पड़ा। पर चूँकि इन देवियों ने घर न ने की शपथ खा ली थी इसलिए इनका दल नैटाल की सरहद की ओर रवाना हुआ। जोहान्सबर्ग में श्री थम्बी नायडू और जर मिस्टन से पंडित भवानीदयाल भी अपने कुछ सह-योगियों को लेकर इस दल में शामिल हो गए। इस प्रकार ग्यारह स्त्रियों और आठ पुरुषों का यह दल संगठित हुआ। श्री थम्बी नायडू और पंडित भवानीदयाल दल के नेता नियुक्त हुए। यह दल जब ट्रांसवाल से नेटाल की सीमा पर पहुँचा तब बालक्रस्ट में गिरफ्तार हो गया। रात भर सबको थाने में रक्खा गया। न खाने-पीने को कुछ मिला और न ओढ़ने-बिछाने को। वहाँ गजब की सर्दी पड़ती है। सत्याग्रहियों ने राम-राम करते रात काट दी! सबेरे जहाँ अदालत में उपस्थित होने और सजा पाने की आशा बँधी थी वहाँ

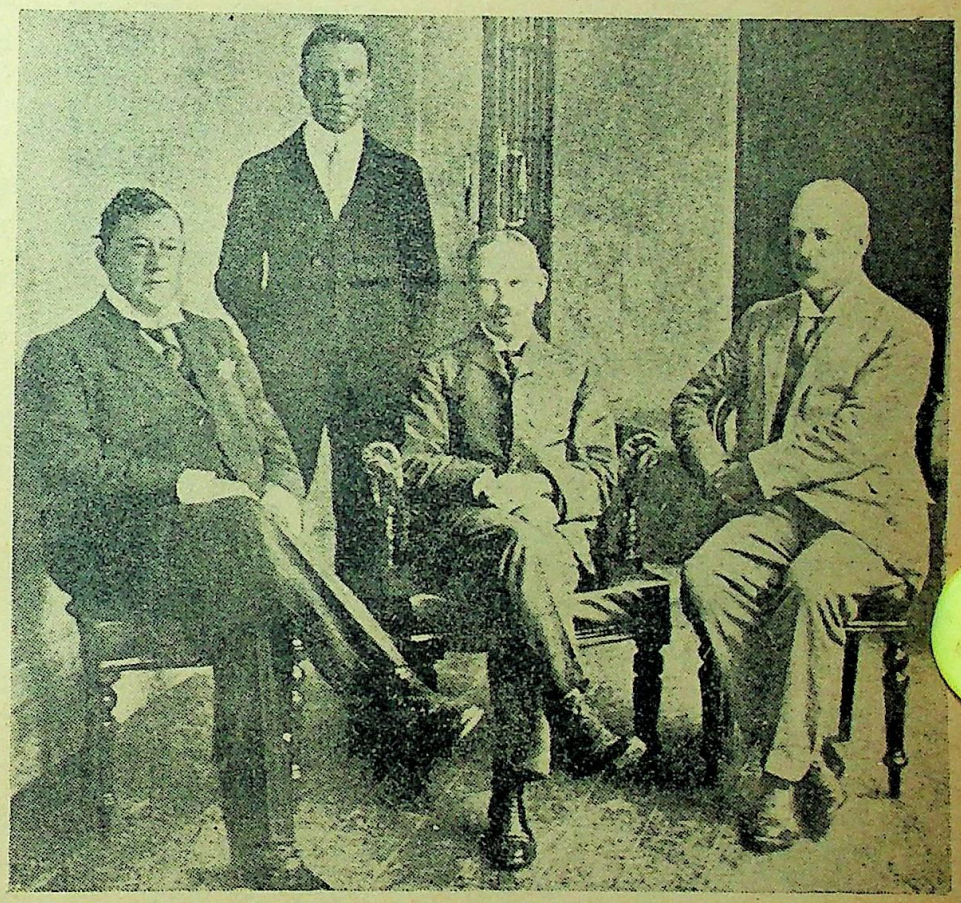

भारतीय जाँच कमीशन
मध्य में—सर विलियम सालोमन [प्रधान] आपकी दाहिनी ओर—मि० इवाल्ड इसीलेन और बाईं ओर—मि० जे० एस० विली बैठे हैं।
मिस्टर एडलर [सेक्रेटरी] खड़े हुए हैं।

जनरल स्मट्स का तार आ गया कि सबको छोड़ दो, सजा देने की जरूरत नहीं। थानेदार ने जब यह हुक्म सुनाया कि आप अब स्वतंत्र हैं, जहाँ चाहें जाएँ, तब इस दल पर मानो वज्र फट पड़ा। सबके मुख पर उदासी और निराशा छा आई। सत्याग्रही के लिए यह सचमुच निराशाजनक स्थिति थी। जेल जाना ही उसका एक-मात्र लक्ष्य होता है और सरकार की ओर से उसकी उपेक्षा होना उसके सत्याग्रह की बहुत बड़ी असफलता है! संयोगवश उसी दिन शाम को महात्मा गांधी अपने एक यहूदी मित्र श्री कैलनबेग के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ जोहान्सबर्ग से डरबन जा रहे थे। उसी गाड़ी से सत्याग्रहियों का दल भी बालक्रस्ट से एक स्टेशन आगे नैटाल की सीमा पर चार्लस्टन के लिए रवाना हुआ! महात्मा गांधी के डिब्बे में श्री थम्बी नायडू और पंडित भवानीदयाल जी बैठे और आगे के कार्यक्रम पर विचार होने लगा! केवल ५ मिनट में वह गाड़ी बालक्रस्ट से चार्लस्टन पहुँचनेवाली थी पर इसी दरम्यान यह निश्चय हो गया कि यदि नैटाल की सीमा पर चार्लस्टन में भी सत्याग्रहियों की गिरफ्तारी नहीं होती है तो उनको वहाँ से कुछ आगे न्यूकासल जाना चाहिए और मजदूरों को हड़ताल के लिए उभारना चाहिए। उस समय महात्मा गांधी को यह विश्वास न था कि अशिक्षित भारतीय मजदूर सत्याग्रह का मर्म समझेंगे और हड़ताल करने का साहस कर सकेंगे। यह निश्चित था कि हड़ताल नहीं हो सकती पर उस अपराध में सत्याग्रहियों की गिरफ्तारी अवश्य हो जायगी!

जोहान्सबर्ग से महात्मा गांधी की विदाई

[१] लोकमाता कस्तूर बा गांधी, [२] सत्यग्रहिणी श्रीमती रघुवर, [३] श्रीमती जगरानी देवी और उनके पुत्र रामदत्त वर्मा, [४] श्रीमती बन्धु, [५] श्रीमती ताई, [६] श्रीमती शिवप्रसाद, [७] महात्मा गांधी, [८] पंडित भवानीदयाल, [९] मि० हेनरी पोलक, [१०] श्री लालबहादुरसिंह, [११] मि० एच० कोलन बेक, [१२] मिस सोनेजा श्लेशीन, [१३] श्री पी० के० नायडू, [१४] श्री सुरेन्द्रराय मेठ और [१५] श्रीमती नन्दन।

चार्लस्टन पहुँचकर सत्याग्रहियों ने गिरफ्तारी के लिए अधिकारियों को ललकारा, पर किसी ने कुछ ध्यान नहीं दिया। अतः निश्चित कार्यक्रम के अनुसार यह दल न्यूकासल पहुँचा! वहाँ प्रवासी भारतीयों के दल का पूरा आगत-स्वागत किया गया। सार्वजनिक सभा हुई और श्री थम्बी नायडू का तामिल में तथा पंडित भवानीदयाल का हिन्दी में भाषण हुआ जिसमें वहाँ के निवासियों को उनका उद्देश्य और कार्यक्रम समझाया गया था।

सन् १९१३ की १४ अक्टूबर दक्षिण अफ्रीका के प्रवासी भारतीयों के इतिहास में एक अमर तिथि है। उसी दिन उस हड़ताल का सूत्रपात हुआ जिसने संसार को दिखा दिया कि इस गए-गुजरे जमाने में, इस गुलामी की हालत में भी, भारतीयों में कितना धैर्य, साहस, कष्ट-सहिष्णुता और आत्मबल है। जनरल स्मट्स को अहंकार मिटाकर महात्मा गांधी से समझौता करने के लिए विवश होना पड़ा। उस दिन शाम को इस दल ने रेलवे बारक में पहुँचकर भारतीय मजदूरों को समझाया कि जब तक तुम पर लगे हुए ३ पौंड के टैक्स को रद्द न किया जाय तब तक के लिए तुम सब काम-धंधा छोड़ कर हड़ताल कर दो! अभी सभा हो ही रही थी कि स्टेशन मास्टर पुलिस दल के साथ वहाँ पहुँच गया और श्री थम्बी नायडू तथा पंडित भवानीदयाल को गिरफ्तार कर ले गया। स्त्रियों ने गिरफ्तार होने की बड़ी कोशिश की पर उनको इसमें सफलता न मिली।

रात भर इन नेताओं को हवालात में रक्खा गया। दूसरे दिन मुकद्दमा चलाकर दो पौंड जुर्माना करके इनको छोड़ दिया गया। इन्होंने जुर्माना देने से साफ इनकार किया और जेल जाने का आग्रह किया। पर ईश्वर की इच्छा कुछ और ही थी, अतः मैजिस्ट्रेट ने इनकी बात न मानी। यदि उस दिन इनको जेल में ठेल दिया गया होता तो हड़ताल का भविष्य सन्देहजनक हो जाता। पर इनकी रिहाई ने हड़ताल की आग फैलाने में बड़ी सहायता पहुँचाई। न्यूकासल में हड़ताल पूर्ण सफल हुई। कोयले की खानों ने धुआँ उगलना बन्द कर किया; होटलों में बावर्चियों के बिना साहबों को अनशन व्रत करने की नौबत आ गई; रेल से माल उतारने और चढ़ाने के लिए मजदूर नहीं थे; अस्पताल में रोगियों को पथ्य-पानी देनेवाला कोई नहीं रहा, यहाँ तक कि भंगियों ने साहब का पाखाना कमाना बन्द कर दिया; सारा शहर बदबू से भर उठा। श्री थम्बी नायडू और पंडित भवानीदयाल ने समझा-बुझाकर किसी तरह अस्पताल के आदमियों को काम पर वापस भेजा। शेष सबको हड़ताल पर डटे रहने की सलाह दी। हड़ताल की आग वैलेगी और डैनहोसर से होती हुई ग्लंको और डंडी तक जा पहुँची। दस सहस्र भारतीयों ने अपने कन्धों से गुलामी का जुआ उतार फेंका।

उधर इन दस हजार हड़तालियों को खिलाना-पिलाना और सँभालना कठिन हो गया और महात्मा गांधी को तार दिया गया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे शीघ्र आकर उनका नेतृत्व करें। गांधी जी कुछ आवश्यक
यों से निबट कर दो-चार दिन बाद आना चाहते थे, पर
होंने श्री हेनरी पोलक को उसी दम न्यूकासल भेजा। पोलक
ह ने वहाँ पहुँचकर पंडित भवानीदयाल और जगरानी जी
बधाई दी और यह सलाह भी दी कि अब उनका वहाँ ठह-
ा उचित नहीं है। वहाँ रहकर गिरफ़्तार होने के बजाय उनका
ो बढ़कर देशव्यापी हड़ताल के लिए उद्योग करना अधिक
च्छा है। पंडित जी ने उसी दिन जगरानी जी के साथ न्यूकासल
ड़ देने का पक्का इरादा कर लिया। उधर सरकार भी चौकन्नी
गई। उसे अपनी भूल पर पश्चात्ताप हुआ और उसने नेताओं
गिरफ़्तार कर लेने और हड़ताल को दबा देने की हिदायत
। पोलक साहब से भेंट और बात-
करके ज्यों ही पंडित भवानी-
ल जी मकान से बाहर निकले,
ाजे पर ही पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट
मिकडानल्ड ने उनको गिरफ़्तार
लिया। शनिवार का दिन और
का तीसरा पहर; कचहरी उठ
थी पर खबर पाते ही मैजिस्ट्रेट
इजलास में आ पहुँचे और
ट मामला खत्म कर पंडित
ीदयाल को ३ मास के लिए जेल
हमान बना लिया।

पति के कारावास का दण्ड पाते
गरानी जी और भी उत्साह से
त्र में अग्रसर हुईं। अब सरकार
इन महिलाओं की स्थिति असह्य
गई। चौथे दिन जगरानी जी भी अपने दल के साथ
ार कर ली गईं। इनको ३ मास की कड़ी कैद की
मिली। सजा देते समय न्यायाधीश महोदय आपे से
हो गए, विवेक खो बैठे और उन्होंने क्रोध में आकर इन
ों को भद्दी-से-भद्दी गालियाँ देकर अपने जलते हुए कलेजे को
किया। मैजिस्ट्रेट के इस अपमानजनक व्यवहार से देश में
भी फैल गई; सभी छोटे-बड़े नगरों में सार्वजनिक सभाएँ
और न्यायालय को कलंकित करनेवाले उस मैजिस्ट्रेट के
न्दों का तीव्र प्रतिवाद किया गया।

गरानी जी ने कैद की अवधि न्यूकासल, पीटर
जबर्ग और डरबन के जेलखानों में बिताई। इनकी गोद में
साल का बालक रामदत्त भी था! पीटर मैरिट्जबर्ग की जेल
कुछ दिन माता कस्तूर बा के साथ रहीं। वहाँ जगरानी
ी जी के हिस्से के कपड़े धोया करतीं और माता जी इनके
रामदत्त को खिलाया करतीं। जेल में इनको बहुत कष्ट उठाने
ने जेल से निकलीं तो इनको पहचानना कठिन हो गया।

इनका रक्त-मांस गल-पचकर केवल अस्थि-पंजर रह गया था। पर बहुत पूछने पर भी इन्होंने कैद की कष्ट-कहानी सुनाना उचित न समझा। जब पंडित भवानीदयाल जी अपनी "कारावास की कहानी" लिखने लगे तो उन्होंने जगरानी जी से जेल-जीवन का परिचय पाने और उसे अपनी पुस्तक में लिखने की बड़ी चेष्टा की। पर उनको सफलता न हुई। पूछने पर यही जवाब मिलता कि "अभी तीन मास जेल में रह आना कौन बड़ी बात है। सुख-दुःख मन की कल्पना ही है। मैं क्या, मेरा जीवन क्या, और उसकी चर्चा करने से लाभ ही क्या?" इनके जेल-जीवन की कष्ट-कथा किसी को नहीं मालूम हो सकी।

जेल से छूटने पर यद्यपि इन्होंने कुछ नहीं बतलाया पर

कार्यकर्त्ताओं का एक दल; बीच में महात्मा गांधी बैठे हैं

इनका शरीर तो बतला रहा था कि इन्हें वहाँ कैसी यातनाएँ भुगतनी पड़ी हैं। डरबन में अनेक सभाओं की ओर से इनका सत्कार किया गया पर उनमें इनको कोई दिलचस्पी न थी। अस्वस्थ होकर जेल से निकलीं और बाहर आने पर ऐसी बीमार पड़ीं कि इनके जीवन का कोई भरोसा न रहा। डरबन के बड़े-बड़े डाक्टर उपचार करके हार गए पर कोई लाभ न हुआ। आखिर गांधी जी ने स्वयं इनका इलाज करने के लिए इन्हें फिनिक्स आश्रम आने के लिए आमंत्रित किया। ये फिनिक्स आईं। महात्मा जी स्वयं ठेलागाड़ी लेकर स्टेशन पर उपस्थित थे। जगरानी जी को उन्होंने सँभालकर गाड़ी से उतारा, ठेलागाड़ी में बिठाया और वे स्वयं स्टेशन से ढाई-तीन मील आश्रम तक ले गए। दूसरों से सहायता लेने से उन्होंने इनकार कर दिया। रुग्णा की परिचर्या का भार माता कस्तूर बा को सौंपा गया। माता जी भग्न स्वास्थ्य लेकर आई थीं फिर भी उन्होंने जगरानी की सेवा-शुश्रूषा में कोई बात उठा नहीं रक्खी। गांधी जी ने एक ही सप्ताह में अपने उपचार से जगरानी जी को चंगा कर दिया। उनका उपचार भी क्या?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिट्टी की पुल्टिस और अखंड उपवास; केवल पानी का आहार। आराम होने पर जगरानी जी ने कुछ काल बापू और बा के साथ आश्रम में व्यतीत किया।

नैटाल में २५ हजार मजदूरों ने हड़ताल कर दी थी। महात्मा जी से लेकर मामूली मजदूरों से सारे जेल भर गए थे। १० हजार आदमियों ने जेल को महल बनाया था! झक मारकर जनरल स्मट्स को समझौता करना पड़ा। ३ पौंड वाला खूनी कर रद्द हुआ; हजारों नर-नारियों का गुलामी से छुटकारा हुआ; भारतीय धर्मानुकूल विवाह कानून से विहित मान लिया गया और भारतीयों की अन्य माँगें भी स्वीकार की गईं। इस प्रकार उस महान् सत्याग्रह की समाप्ति हुई।

दक्षिण अफ्रीका की कुछ सत्याग्रही वीरांगनाएँ—श्रीमती एम० टामी, श्रीमती के० मुर्गुसा पिल्ले, श्रीमती वेकम मुर्गुसा पिल्ले, श्रीमती पी० के० नायडू, श्रीमती परुमल नायडू, चिन्सा माई पिल्ले, श्रीमती थम्बी नायडू, श्रीमती एन० पिल्ले, श्रीमती एन० एस० पिल्ले और श्रीमती जगरानी देवी

उस समय पंडित भवानीदयाल वहाँ से निकलनेवाले 'दि इण्डियन ओपीनियन' के हिन्दी-अंश का संपादन कर रहे थे। सन् १९१५ में उन्होंने डरबन शहर के निकट क्लेरइस्टेट में हिन्दी आश्रम बनाया। इस आश्रम में जगरानी जी ने शिक्षा-प्रसार का व्रत ग्रहण किया। वे आसपास के भारतीयों के बच्चों को एकत्र कर उन्हें हिन्दी पढ़ातीं और किसी से १ पैसा भी फीस नहीं लेती थीं। आज भी अनेक विद्यार्थी उनको श्रद्धा से स्मरण करते हैं। यहाँ इन्होंने ५ साल तक निःस्वार्थ भाव से काम किया। गरीबों और रोगियों की सेवा से उन्हें बड़ी तृप्ति होती थी।

सन् १९२२ में जगरानी जी के ही उद्योग से डरबन के निकट जेकब्स में प्रेस खुला और "हिन्दी" नामक साप्ताहिक पत्र निकालने की उद्घोषणा भी हुई। इस पत्र के लिए जगरानी जी ने उत्साह प्रकट करते हुए अपने पति के विचार दिखाए थे कि यदि अर्थाभाव के कारण और कोई व्यवस्था न हो सकी तो प्रति सप्ताह चार पृष्ठ मैं स्वयं कम्पोज कर दूँगी और छोटा ही अखबार निकलेगा, पर निकलना चाहिए अवश्य। पंडित भवानीदयाल ने प्रेस और पत्र निकालने की सभी व्यवस्था कर ली और मई का प्रथम सप्ताह 'हिन्दी' के प्रकाशन का समय भी निश्चित हो गया। पर ठीक इससे १ मास पूर्व आप असाध्य रूप से बीमार पड़ीं और ८ अप्रैल को इस लोक से सदा के लिए चल पड़ीं।

इनकी मृत्यु से पंडित भवानीदयाल का दिल टूट गया पर उन्होंने जगरानी जी की इच्छा-पूर्ति का पूर्ण संकल्प कर लिया। प्रेस का नाम उन्होंने देवी जी की स्मृति में 'जगरानी प्रेस' रख दिया और इस दुर्घटना से मर्माहत तथा बहुत बीमार होते हुए भी निश्चित समय पर ५ मई को उन्होंने 'हिन्दी' का प्रथम अंक निकाल दिया। यह अखबार ४ साल तक प्रवासी भारतीयों की सेवा करता रहा। इसके कई विशेषांक भी निकले। इसका प्रथम वार्षिकांक जगरानी जी की स्मृति में निकला था जिसमें देवी जी के संबंध में कई मार्मिक लेख और कविताएँ छपी थीं।

जगरानी जी पर पंडित भवानीदयाल का ऐसा सच्चा स्नेह था कि उन्होंने ३० साल की उम्र होते हुए भी और हितमित्रों के बहुत आग्रह करने पर भी पुनर्विवाह करने से इन्कार कर दिया और इनकी मृत्यु के ५ साल बाद संन्यास भी ले लिया। जगरानी जी अपने पतिदेव को रामदत्त और ब्रह्मदत्त दो पुत्ररत्न दे गई थीं।

ध्यान देने की बात यह है कि जगरानी जी ने भारत के तुच्छ ग्राम और अज्ञात कुल में जन्म पाया था और अविद्या की गोद में अपना बहूमूल्य बचपन बिताया था पर विवाह होने के बाद इन्हें ऐसा साथी और संयोग मिला कि न केवल इन्होंने विद्या प्राप्त कर ली, गांधी जी के नेतृत्व में अपने प्रवासी देशवासियों की सेवा करके बृहत्तर भारत के इतिहास में अपना नाम अमर बना लिया। इनके निधन पर श्री हेनरी पोलक के मुँह से ये उद्गार निकल पड़े: "She was a brave and patrioticwoman and true daughter of India." अर्थात् "वे थीं एक देशभक्त वीरांगना और भारत की सच्ची दुहिता।" दीनबंधु ऐन्ड्रूज ने उनके जीवन का विश्लेषण करते हुए यह निष्कर्ष निकाला था: "She lived and died for poor and oppressed." अर्थात् "वे दलितों और दरिद्रों के लिए जीवित रहीं और उन्हीं की सेवा में उनका प्राणोत्सर्ग भी हुआ।"

जगरानी जी का जीवन बहुत सरल था। ये कोई आ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहनती थीं और सादा श्वेत वस्त्र धारण करती थीं। सत्याग्रह के बाद उन्होंने रंगीन वस्त्र सर्वथा त्याग दिए थे। एक जोड़े से अधिक साड़ी भी नहीं रखती थीं। एक दिन एक अर्द्धनग्न महिला को देखकर उन्होंने अपनी एक साड़ी उसे पहना दी। कुछ दिन एक साड़ी पर गुजर करती रहीं; रात्रि के सोने के समय उसे धो लिया करती थीं। यह क्रम बहुत दिनों तक न चल सका। पंडित जी को पता चल गया। उन्होंने इस पर जगरानी को बहुत फटकारा और उसी दिन साड़ी की व्यवस्था कर दी। वे अपने पति को अपने पहनने-वस्त्रों के लिए कभी चिंता नहीं करने देती थीं। उन्होंने अपने जीवन का ढंग ऐसा सादा बना लिया था कि पंडित जी निश्चिन्त की ओर से निश्चिंत होकर प्रवासी भाइयों की सेवा कर सकें। स्वयं भी अपने देशवासियों की सेवा में संलग्न रहती थीं इसी लिए दीनबंधु ऐंड्रूज़ ने उनकी स्मृति पर पुष्पांजलि अर्पण करते हुए लिखा था—"Her motherley heart was torn by the suffering she witnessed and in her ceaseless endeavours to relieve their misery. She laboured on and at last in the midst of her labours met her death." अर्थात् "प्रवासी देश-वासियों की अधम अवस्था देखकर उनका मातृ-हृदय दुःख से चूर चूर हो जाता था और उनके कष्टमोचन के लिए वे अविश्रांत परिश्रम किया करती थीं। और इसी काम में उन्होंने मृत्यु का आलिंगन किया।" उनके जीवन का इससे सुंदर चित्र और कौन खींच सकता है!

ज्वार-भाटा

पंडित देवीदयाल चतुर्वेदी 'मस्त'

बादलों के छोटे-बड़े टुकड़े नीलाकाश में इधर-उधर तैर रहे थे। सूरज का तपता हुआ गोला इन बादलों के साथ आँखमिचौनी खेल रहा था। ऐसा प्रतीत होता था कि आकाश की नीलिमा में रह-रहकर एक ज्वार-भाटा परिलक्षित होने लगा है।

गाँव के बाहर धान का एक खेत लहलहा रहा था। इस खेत की मेड़ पर, महुए के पेड़ की सघन छाया में, पारू चुपचाप बैठी थी। ध्यानमग्ना की तरह वह सूरज की आँखमिचौनी देख रही थी। इसी बीच महुए की डालियों पर मैनाओं की कुछ जोड़ियाँ फुदककर जोरों से चहक उठीं। पारू का ध्यान अनायास ही उनकी इस चहचहाहट की ओर आकर्षित हो गया। और यह देखकर पारू के अन्तराल में किसी अतीत का विच्छिन्न-सा सुर एकबारगी गूँज उठा।

सच, पारू ने अब तक के अपने जीवन में न तो कभी किसी सुख का ही गहरा स्पर्श किया है और न वह जीवन की रंगीनियों को लेकर कभी कोई ताना-बाना बुनने की ही आदी है। सीधे-सादे-से विरामहीन जीवन में कभी ऐसा अवसर ही आता है? मजदूरी और भावुकता, दोनों में गहरा विरोध है। लेकिन परिस्थितियों के घटाटोप में कभी-कभी मानव के पल अनायास ही अतीत की स्मृतियों, वर्तमान की परेशानियों और भविष्य की गुत्थियों का एक ऐसा चित्र लाकर खड़ा कर देते हैं कि क्या मजदूर, क्या मालिक, क्या गरीब क्या अमीर, सभी को समान रूप से भावुकता की लहरों पर बहा ले जाते हैं।

बादलों के श्यामल टुकड़ों की ओट में जब कभी सूरज छिप जाता और पल दो पल के बाद ही पुनः धरती पर हवा के झोंकों से बीच-बीच में काँप उठनेवाले धान के खेतों को वह झाँकने लगता, तब पारू को प्रतीत होता कि उसका अपना जीवन भी तो ठीक इस सूरज-जैसा ही है, जो परिस्थितियों के बादलों की ओट में छिपकर कभी धूमिल और कभी प्रकाशित हो उठता है।

तभी पारू के अन्तर की भावुक नारी अर्द्धविदित रूप में यह स्वीकार कर बैठती कि सभी गरीबों के जीवन में शायद ऐसी ही आँखमिचौनी समान रूप से होती रहती है। यदि ऐसा न होता तो उसके अब तक के जीवन में अन्धकार और प्रकाश के इतने सारे खेल होते ही कैसे? किसी ज्वार-भाटा की तरह उसके जीवन की गति कभी ऊपर और कभी नीचे कैसे होती? पग-पग पर उसे अमीरों की गुलामी करने और उनकी झिड़कियाँ ही सुनते रहने की विवशता का अनुभव क्यों करना पड़ता?

माना कि आज वह स्वयं किसी अमीर की गुलामी नहीं कर रही है; लेकिन उसका पति तो जमींदार की नौकरी कर ही रहा है। और, पति जब किसी जमींदार की नौकरी कर रहा है, तब पत्नी—एक गरीब किसान-मजदूर की पत्नी—कैसे यह समझ ले कि वह किसी की गुलामी नहीं कर रही है। उसे क्या नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करना पड़ता ? धान के इस खेत की निराई और रखवाली तो जैसे पारू के ही पल्ले आ पड़ी है। वह इससे मुकर ही कब सकती है ?

धन्ना तो रात-दिन जमींदार साहब की लगान-वसूली ही किया करता है। इस काम से उसे कभी अवकाश ही नहीं मिलता। इतने पर भी जब सुनो तभी लगान वसूल न होने का रोना ! यों लगान-वसूली में इतनी उलझन कभी नहीं होती थी, जितनी इस साल हो रही है। पारू जानती है कि किसानों की हालत क्या है। वे बेचारे लगान दें, तो कहाँ से दें ? फसलों का यह हाल है कि पिछले कई सालों से कभी सूखा, कभी पाला, कभी गेरुआ तो कभी ओले ! इस दशा में फसलें कटते-कटते आधी तो क्या, चौथाई भी मुश्किल से तैयार हो पाती हैं। फिर, इनमें से किसान अपने बाल-बच्चों का पेट भरें या जमींदार का लगान अदा करें। बाजार की यह हालत है कि एक रुपए की चीज खुले-आम चार रुपए में बेची जा रही है। कहने को तो दुनिया की लड़ाई खत्म हो चुकी है, लेकिन पारू को आश्चर्य है कि बाजार में चीजों के दाम क्यों वैसे ही बढ़े-चढ़े हैं। वह अपनी बुद्धि के अनुसार बहुत कुछ कोशिश करने पर भी यह सब समझ नहीं पाती। कभी-कभी तो उसे लगता है कि लड़ाई खत्म हुई ही नहीं है। पता नहीं, किसने यह झूठ खबर उड़ा दी है। पारू की राय से तो उसी दिन लड़ाई खत्म समझी जाएगी, जब बाजार में बिकनेवाली चीजें उन्हीं सस्ती दरों पर उसे मिलने लगेंगी, जिन पर युद्ध आरम्भ होने के पूर्व मिलती थीं।

पारू का मन धनवानों के प्रति एक ईर्ष्या से भर-भर उठता। किसान-मजदूरों की बिगड़ती हुई हालत को देख-सुनकर उसका मन कहने लगता, जिनके घर में तिजोरियाँ भरी रक्खी हैं, उन्हें क्या चिन्ता और क्या परेशानी ! लेकिन गरीब किसान-मजदूर क्या करें ? उन्हें तो ले-देकर अपने खेतों की फसलों ही का एक सहारा रहता है न ! लेकिन विधाता भी गरीबों को ही अधिक से अधिक पीसना चाहता है। भगवान् के प्रति भी पारू का मन विद्रोह से भर उठता। लेकिन जिन संस्कारों के बीच उसने अपने जीवन की साँसें लेना सीखा है, वे भगवान् का विरोध करने की आज्ञा जो नहीं देते। इसीलिए वह इस स्थल पर आकर जैसे विवश-विपन्न होकर रह जाती।

पारू अपने विचारों की तीव्रवाहिनी लहरों के भँवर-जाल में और भी गहरी उतर जाने के लिए छटपटा रही थी कि इसी बीच नन्हें रो उठा और उसकी विचार-धारा का वेग सहसा अवरुद्ध हो गया।

वहीं खेत की मेड़ पर, महुए के पेड़ की एक मोटी-सी शाखा पर, एक मजबूत रस्से का झूला धन्ना ने डाल रक्खा था। इसी झूले पर नन्हें सो रहा था। पारू ने दौड़कर नन्हें को उठाया और उसे गोद में लेकर वह अपना सूखा-सा स्तन उसके मुँह में देकर दूध पिलाने का उपक्रम करने लगी। लेकिन नन्हें बीच-बीच में बराबर रो उठता था। कदाचित् नन्हें को दूध बराबर नहीं मिल रहा था। दूध बराबर मिलता तो वह सदा की तरह आज भी चुप न हो जाता ?

पारू ने परिस्थिति को समझने का यत्न किया—दूध क्यों नहीं निकल रहा है ? दो-चार क्षण तक तो वह कुछ समझ नहीं सकी। फिर एकाएक दूसरा कारण उसकी समझ में आ गया। आज उसका पति—धन्ना—अभी तक वापस जो नहीं आया है, और पारू ने दोपहर का भोजन अब तक नहीं किया है।

समय पर भोजन न करने से बहुधा उसके स्तनों में दूध कम हो जाता है। धन्ना पर उसे मन ही मन खीझ होने लगी। मेरे लिए नहीं, तो कम से कम इस नन्हें के लिए ही यदि 'वे' जल्द लौट आया करें, तो क्या जमींदार फाँसी पर लटका देगा ? नौकरी का मतलब यह नहीं कि हम अपने बाल-बच्चों की भी चिन्ता करनी छोड़ दें। फिर, जिस शरीर से इतनी दौड़-धूप की जाती है और चार पैसे की कमाई की जाती है, उसकी भी तो कोई चिन्ता करनी ही पड़ती है। न करने पर शरीर भी धीरे-धीरे जवाब देने लगता है। लेकिन नन्हें के बापू हैं कि इन सब बातों की तरफ कोई ध्यान ही नहीं देना चाहते ! अपने स्वामी के प्रति पारू एक आन्तरिक विद्रोह से भर उठी।

(२)

नीले आसमान में छाए हुए बादलों के टुकड़े क्रमशः सघन होते जा रहे थे। हवा एकदम बन्द हो चुकी थी। इससे उमस बढ़ती जा रही थी।

नन्हें को अपनी गोद में लिए हुए, पारू वहीं खेत की मेड़ पर इधर-उधर टहल रही थी और उसे बहलाने के लिए धीरे-धीरे किसी गीत की कड़ी गुनगुना रही थी। इसी बीच अपने कन्धे पर एक लम्बा-सा डण्डा रक्खे हुए धन्ना भी आ पहुँचा। आते ही उसने कहा—'आज मुझे बहुत देर हो गई, पारू !'

'सो तो तुम्हारा रोज का धन्धा है !' पारू ने अन्यमनस्क के स्वर में रूखा-सा उत्तर दिया।

'क्या करूँ, पारू !' धन्ना ने शान्त और गम्भीर स्वर में कहा। 'नौकरी जो ठहरी !'

पारू इस विलम्ब से यद्यपि आज बहुत ही क्षुब्ध थी और उसने सोच रक्खा था कि आज वह आते ही धन्ना को आड़े हाथ लेगी; लेकिन पति की यह विवश विपन्न-सी वाणी सुन उसे अपने पति पर तरस आ गया। सोचा, वह भी क्या करे बेचारा ? रात-दिन इसी तरह तो खटता रहता है, फिर भी पूरा नहीं पड़ता। न अपने तन-मन की फिकर, न परिवार की कोई फिकर !

अपने क्षुब्ध मन के उफान को यत्नपूर्वक ठण्ढा करते हुए पारू ने कहा—'यह नौकरी तो रोज-रोज इसी तरह परेशान करेगी। लेकिन एक बात है—मेरे लिए न सही, तो इस नन्हें के लिए ही तुम तनिक जल्द लौट आया करो।'

इसी बीच नन्हें फिर जोरों से रो उठा। पारू ने उसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कराने की कोशिश करते हुए कहा—'पहर भर से यह इसी रो रहा है। चुप ही नहीं होता। यह भी क्या करे? सिर पर चढ़ आया है, लेकिन अभी तक मैंने रोटी नहीं खाई, सो दूध निकल रहा है। इसीलिए तो कहती हूँ कि तनिक जल्द लौट करो।'

सिर पर बँधा हुआ तार-तार-सा अँगोछा एक तरफ रखते हुए दस पेबन्द लगी हुई बंडी उतारते हुए धन्ना ने कहा—'यह तुम्हारा जुल्म है, पारू! मुझ पर नहीं, इस नन्हें पर। मैं सौ बार कह चुका हूँ कि मुझे जब देर हो जाया करे, तब तुम अवश्य खा लिया करो, जिससे नन्हें कभी दूध की कमी मह-न करने पाए। लेकिन तुम हो कि अपनी जिद पर ही डटी चाहती हो।'

'और, तुमसे यह न होगा कि तनिक जल्द लौट आया करो!' ने कह दिया।

धन्ना अच्छी तरह जानता है कि पारू की इस रूक्षता में भी आत्मीयता हिलोरें ले रही है। उसकी इस रूखी-सी फटकार एक आग्रह सन्निहित है। वह चाहती है कि नन्हें की ओट में को भी जल्द रोटियाँ मिल जाया करें। कभी देर-अबेर न हुआ इसीलिए उसने फिर अपनी विवशता प्रकट करते हुए —"नौकरी में यह सम्भव नहीं, पारू! कभी किसी किसान से गया, कभी किसी से ऊँच-नीच होने लगी, तो फिर देर-का ध्यान ही कहाँ रह जाता है। और किसान-मजदूरों की लत हो रही है, सो तुम जानती ही हो।"

'एक बात मेरे दिल में है—बहुत दिनों से। लेकिन कहूँगी तुम शायद नाराज हो उठोगे।' पारू ने नन्हें के सिर पर हाथ सहलाते हुए कहा।

'कहती क्यों नहीं, क्या बात है?' धन्ना ने कहा—'मैं तेरी पर कभी नाराज नहीं होता।'

'परमात्मा ने हमें यह फूल-सा नन्हें दिया है। इसकी कुशल मारी कुशल है। धीरे-धीरे यह दो साल का हो रहा है। समय होता, तो मैं यह बात कभी न कहती। लेकिन देखती गाँव के किसान-मजदूर कितने तङ्ग हो रहे हैं। खाने के पड़ रहे हैं। फसलें चौपट हो रही हैं। कहने को तो लड़ाई हो चुकी है, लेकिन बाजार की महँगाई तो अभी वैसी ही रही है। ऐसी हालत में किसी पर जोर-जुल्म करना अच्छा। जमींदार को तो अपनी वसूली से मतलब है, लेकिन सबसे नते हो तुम। आखिर इस बुराई का नतीजा तो हमें ही ना पड़ेगा न? नदी में रहकर मगर से बैर करना ठीक नहीं। अरे, हमें तो इन गाँववालों के बीच में ही रहना है न? वक्त-बेवक्त हमारे काम आएँगे, तो यही गाँववाले।'

'तुम ठीक कहती हो, पारू!' धन्ना ने पारू का मर्म समझते कहा—'आज जाने क्यों यही बात मेरे मन में भी उमड़-रही है। नोखेलाल से वसूली करते समय आज जरा ऊँच-नीच बातें हो गईं। वह तो बेचारा कुछ नहीं बोला; सिर लट-काए बैठा रहा चुपचाप, लेकिन उसकी मेहरिया गरज उठी; कहने लगी—'महतो, तुम भी बाल-बच्चेवाले आदमी हो। जमींदार की नौकरी करके तुम किसी के बाल-बच्चों की भी परवा न करोगे, यह नहीं जानती थी। बच्चों का पेट भरने के लिए घर में अन्न के चार दाने नहीं हैं, फिर लगान कहाँ से दिया जाए? तुम्हारा धरम बोले, तो घर में मन दो मन जौ पड़ा है, उसे ही ले जाओ। हम और हमारे बच्चे भूखों मरेंगे, इससे तुम्हें क्या मतलब? भगवान् हमारा मालिक है।'

'फिर क्या किया तुमने?' पारू ने ध्यानपूर्वक अपने पति की गम्भीर मुद्रा को देखते हुए प्रश्न किया।

'मैं चुपचाप चला आया। बाल-बच्चों का नाम सुनते ही मुझे अपने नन्हें का फौरन ख्याल हो आया।'

'बहुत अच्छा हुआ यह।' पारू ने सन्तोष की एक साँस लेते हुए कहा—'और जमींदार का यह जोर-जुल्म भी बहुत दिनों तक न चल पाएगा। गरीबों की आह बहुत ही भयङ्कर होती है। 'मुई खाल की श्वास सों, सार भसम हुई जाय।'

'क्या अच्छा किया!' धन्ना ने कहा—'जमींदार ने जब यह सब सुना, तो बहुत बिगड़ रहे थे। कहीं नौकरी से ही हमें अलग न कर दें।'

'तुम भी जाने कैसी बातें करते हो!' पारू ने पत्नी-सुलभ सहानुभूति प्रकट करते हुए कहा—'नौकरी छीन लेंगे, तो क्या भाग्य भी छीन लेंगे हमारा? कर लेंगे कोई मजदूरी। पेट भरने के लिए कहीं दाना जुटा लेंगे। हम दोनों अभी नौकरी कर सकते हैं। आज भी तो हम दोनों को ही नौकरी करनी पड़ रही है। तुम्हें जमींदार ने वसूली करने के लिए नौकर रक्खा है। लेकिन मुझे तो बेगार में ही इस खेत का सारा काम करना पड़ता है। इतना काम कहीं दूसरी जगह करेंगे, तो चैन से पेट भरेंगे। न किसी की आधी बात कभी सुननी पड़ेगी, न किसी पर कभी कोई जोर-जुल्म करने पर नन्हें के लिए किसी का शाप सुनना पड़ेगा। अच्छा, अब तुम जाकर जल्द नहा डालो। बहुत देर हो चुकी है।'

(३)

धन्ना चुपचाप नदी की तरफ चल पड़ा—स्नान करने। पारू से आज उसने जो सहानुभूति पाई है, उससे उसका टूटता हुआ दिल फिर एक साहस से भर उठा। पारू सच कहती है, कहीं नौकरी कर लेंगे। लेकिन धन्ना के अन्तर्मन में एक प्रश्न उठा—नौकरी कर कहाँ लेंगे? खेत-खलिहानों में तो पूरे साल भर का कोई काम नहीं। घास काटने का काम भी चन्दरोजा ही रहता है। ले-देकर वही गिट्टी फोड़ने का काम कहीं करना होगा अथवा फिर इमारतें बनवानेवाले किसी ठेकेदार की नौकरी करनी पड़ेगी।

और, ठेकेदार की नौकरी करने का ध्यान आते ही धन्ना की आँखों में जैसे तितलियाँ नाच उठीं। उसे याद आया वह दिन, जब गिट्टी फोड़ने का काम वह स्वयं करता था, और वहाँ काम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करनेवाली स्त्रियों के साथ उस ठेकेदार का मजाक जब-तब देखा करता था। सुखिया को एक दिन सन्ध्या समय उस ठेकेदार ने छेड़ा भी था। लेकिन जब गाँववाले डण्डे ले-लेकर उसके तम्बू के पास पहुँचे, तो पनाह माँगने लगा था वह ठेकेदार। और, इस घटना के बाद फिर कभी उस ठेकेदार ने किसी स्त्री को छेड़ने की धृष्टता नहीं की थी। करता ही कैसे? अपनी खोपड़ी खुलवाना किसे अच्छा लगता है। अपनी जान किसे प्यारी नहीं होती!

धन्ना ने मन ही मन निश्चय किया कि वह पारू को कभी गिट्टी फोड़ने के काम पर अपने साथ न ले जाएगा। यदि उसे गिट्टी फोड़ने का काम करना ही पड़ा, तो पारू को वह उसके नैहर भेज देगा और अकेला ही वह काम करेगा। परन्तु उसी क्षण धन्ना को लगा कि पारू अपनी मा के पास जाकर कुछ निष्क्रिय थोड़े ही बैठी रहेगी। वहाँ जाकर फिर वह उसी ठेकेदार के यहाँ काम करने लगेगी, जहाँ पहले करती थी। और, इमारत बनानेवाला वह ठेकेदार भी तो पूरा घाघ है। पारू ने ही उसे सुनाया था कि एक बार उसने किस प्रकार पारू पर अपने डोरे डालने की कुत्सित चेष्टा की थी। तब पारू की मा बीमार थी। दवा-दारू के लिए रुपए-पैसों की जरूरत पड़ी, तो सप्ताह भर की मजदूरी पेशगी देकर, बल्कि एक रुपया अधिक देकर, उस दुष्ट ने पारू के प्रति अपनी कुत्सा प्रकट करनी चाही थी। लेकिन पारू ने भी उसे ऐसी फटकार सुनाई कि याद रखेगा जीवन-भर।

इन पैसेवालों के प्रति धन्ना के मन में नफरत हो उठी। पता नहीं, ये पैसेवाले स्त्रियों को क्या समझते हैं? शायद अपने मनो-रंजन का एक उपकरण-मात्र। जब जी चाहा, दिल बहलाया और फेंक दिया एक तरफ। धन्ना ने निश्चय किया कि ऐसी दशा में वह अपनी पारू को हरगिज कहीं न भेजेगा। वह स्वयं जहाँ नौकरी करेगा, वहीं पारू से भी नौकरी कराएगा—सो भी तब, जब कि उसके अकेले मजदूरी करने पर दोनों का पेट बखूबी न भर सकेगा।

तो भविष्य में अब वह जमींदार की नौकरी छोड़कर क्या करेगा? यह एक ऐसा प्रश्न था जो धन्ना के अन्तस्तल में किसी ज्वार-भाटे की तरह तरंगित हो रहा था। मानसिक बेचैनी से वह जैसे अभिभूत हो रहा था।

नदी में नहा-धोकर इन्हीं विचार-धाराओं पर तिरता हुआ धन्ना खेत की मेड़ पर जा पहुँचा। पारू ने पहले धन्ना को भोजन कराया, फिर रूखी-सूखी रोटियाँ गले के नीचे उतारकर उससे कहा—'नोखेलाल की मेहरिया अभी यहाँ आई थी।'

'अच्छा!' धन्ना ने साश्चर्य कहा—'क्या कह रही थी?'

'यही कि जमींदार की नौकरी कर महतो गाँववालों से वैर न पालें तो अच्छा हो। यह जमींदार आज तक कभी किसी का न हुआ। जब तक उसकी नौकरी करोगे, गाँववालों पर जोर-जुल्म करोगे, तब तक उसकी नजरों में भले रहोगे। जिस दिन वह देखेगा कि तुम उसके स्वार्थ-साधन में सहायक नहीं हो रहे हो, उसी दिन दूध की मक्खी की तरह तुम्हें अपनी नौकरी से हटा देगा। दुख-सुख में एक-दूसरे के साथी हम गाँववाले ही रहेंगे। फिर, बाल-बच्चेवालों को तो सदा दूसरों के शाप से बचना चाहिए, बहन।'

'ठीक कहा उसने!' धन्ना ने कहा—'तो पारू, अब हमें अपना डेरा इस खेत की मेड़ से उठाकर अपनी झोपड़ी में ले लेना चाहिए।'

'निश्चय कर लिया तुमने?' पारू ने प्रश्न किया। मानो उसे अब भी धन्ना की इस बात में अस्थिरता और अनिश्चय की छाया परिलक्षित हो रही हो।

'हाँ, पारू! हमें गाँववालों से मिल-जुलकर ही रहना होगा। पानी में रहकर मगर से बैर कैसा! फिर हम नन्हें के लिए सबका आशीर्वाद चाहते हैं, शाप नहीं।'

और, दूसरे दिन प्रातः बेला में धन्ना को जब सपरिवार अपने झोपड़े में, गाँववालों ने देखा तो उनके हर्ष का ठिकाना न रहा। नोखेलाल की पत्नी ने गाँव भर में यह खबर बिजली की तरह फैला दी कि धन्ना महतो ने जमींदार की नौकरी छोड़ दी। अब वह हम लोगों के बीच में रहेंगे—जमींदार के नौकर नहीं।

जमींदार ने जब यह सुना, तो उनकी त्योरियाँ चढ़ गईं। लेकिन किसी से कोई जबरदस्ती तो नौकरी करा नहीं सकता। इन गाँववालों और धन्ना का यह एकमत देख, उन्होंने अपने जोर-जुल्म की रफ्तार और भी तेज कर दी। तरह-तरह की ज्यादतियाँ इन गाँववालों पर नित्य ही कहर बरसाने लगीं। और जोर-जुल्म की रफ्तार में गाँववालों के साथ-साथ धन्ना और पारू भी जीवन में कैसा-क्या ज्वार-भाटा आया, इसका हमें पता नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

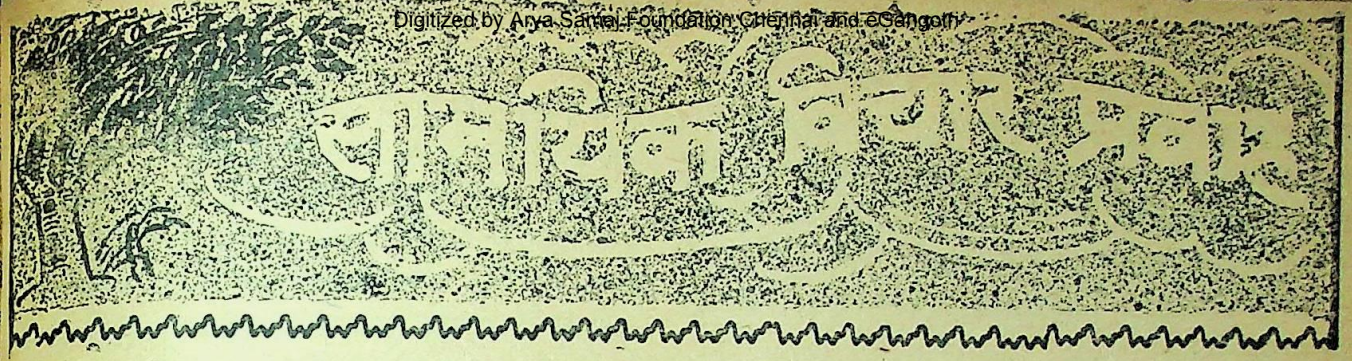

साहित्यिक निर्माण-योजना

श्री कालिदास कपूर, एम० ए०, एल० टी०

मुझे उदयपुर के साहित्य-सम्मेलन में सम्मिलित होने का अव
नहीं मिला। सम्मेलन के पिछले कई अधिवेशनों में सम्मिलित
का सौभाग्य प्राप्त है। मुझे इन अधिवेशनों में सम्मिलित
पर वही आनन्द मिलता है जो साधुओं को कुम्भ के मेले में
ता है। जिन साहित्यिकों से पत्र-व्यवहार ही था, जिनके नाम से ही
की कृतियों-द्वारा परिचित था, उनके दर्शन होते हैं; उनसे संलाप
अवसर मिलता है। सम्मेलन का यही प्रयोजन हो, तो भी हिन्दी
त्यिकों को इस वार्षिक पर्व में अवश्य सम्मिलित होना
ए।

परन्तु हिन्दी भाषा और साहित्य जिस परिस्थिति में हैं, युद्धो
भारत में उनके सामने जितना भारी सेवा का उत्तरदायित्व है,
देखते हुए सम्मेलन के वार्षिक अधिवेशन का काम मेले का
नहीं होता; उसका काम यह भी रहता है कि गत वर्ष निर्माण
प्रचार का क्या काम रहा, इस पर विचार-विनिमय हो; फिर
आगामी वर्ष निर्माण और प्रचार का क्या काम हो, इसकी ब्योरेवार
ना बनाई जाय।

मैं इस सम्बन्ध में 'हिन्दी-सेवी संसार' में लिख चुका हूँ। कई
त्रिकाओं में लिख चुका हूँ। सम्मेलन-कार्यकर्ताओं को भी यथा-
य अपने विचार की सूचना दे चुका हूँ; परन्तु मुझे इस बात
कोई सूचना नहीं है कि सम्मेलन ने निर्माण और प्रचार की
योजना बनाई भी है।

सुना है कि उदयपुर में गांधी जी के सम्मेलन से इस्तीफा
पर बहुत बहस रही। सम्मेलन ने हिन्दी को भारत की राष्ट्र-
ा मानने का प्रस्ताव भी, सर्वसम्मति से या बहुमत से, स्वीकार
लिया। परन्तु यदि ऐसे ही प्रस्ताव सभा के बाहर मान्य हो
तो हमारे देश में कोई समस्या ही न रह जाती। हम उन्नति
सर्वोच्च शिखर पर होते।

बात यह है कि उर्दू या हिन्दी के साहित्यिक यदि एक जगह
कर उर्दू या हिन्दी को भारत की राष्ट्र-भाषा मानने का प्रस्ताव
ते हैं तो उस प्रस्ताव ही के कारण किसी भाषा का कदम राष्ट्रीय पद
ओर नहीं बढ़ जाता। प्रश्न यह रह जाता है कि हम नित्य-प्रति
ी या उर्दू को उस पद तक पहुँचाने के लिए करते क्या हैं।

हिन्दी-भाषी माता-पिता यदि अपनी सन्तानों को हिन्दी पढ़ाते हैं तो इसलिए कि इस भाषा के साहित्य में उनकी संस्कृति सुरक्षित है और उनकी सन्तानों का इस संस्कृति पर उत्तराधिकार है। तामिल, महाराष्ट्र, आन्ध्र, बंगाली और आसामी क्यों हिन्दी पढ़ें? आगे बढ़िए; रूसी, जापानी, चीनी, अंग्रेज, जर्मन, फ्रांसीसी क्यों हिन्दी पढ़ें? ये कैसे प्रश्न हैं? किसी भारतीय से पूछिए कि वह अंग्रेजी क्यों पढ़ता है? उसका स्वाभाविक उत्तर होगा, नौकरी के लिए; क्योंकि अंग्रेजी भारत के शासकों की भाषा है। परन्तु किसी जापानी, चीनी, रूसी, जर्मन या फ्रांसीसी से पूछिए कि वह अंग्रेजी किसलिए पढ़ता है? इसलिए कि जिस ज्ञान की उसे खोज है वह उसे अंग्रेजी भाषा के ही अध्ययन से मिलता है। अंग्रेज वैज्ञानिकों ने और साहित्यिकों ने ही साहित्य के उस अंग-विशेष की पूर्ति अंग्रेजी में की है।

हिन्दी में क्या है जिसके लिए कोई अन्य भाषा-भाषी हिन्दी का अध्ययन करे? कबीर, सूरदास और तुलसीदास की कृतियों को छोड़िए। आधुनिक विज्ञान और साहित्य के क्षेत्र में हिन्दी के साहित्यिकों ने क्या किया है, जिसके लिए दौड़कर लोग हिन्दी पढ़ने आएँ? श्री गौरीशंकर हीराचंद ओझा कृत 'प्राचीन लिपि-माला' जिस पाए का ग्रंथ है, उस पाए के कितने ग्रंथ हिन्दी में हैं?

हिन्दी को राष्ट्रीय पद देने के पक्ष में केवल यही बात है कि वह भाषा, जो दिल्ली से काशी तक भारत के उस मध्यदेश की मातृ-भाषा है, जहाँ प्राचीन काल से अब तक भारतीय धर्म, राजनीति और संस्कृति केन्द्रीभूत रहे हैं, उसका हिन्दी अनुरूप उसके उर्दू अनुरूप से अधिक मान्य है।

हिन्दी और उर्दू का विरोध बहुत कम रह जाता है, जब हम यह मान लेते हैं कि दोनों एक ही साहित्य-रहित भाषा के विभिन्न साहित्यिक रूप हैं। उस भाषा का अपना कोई साहित्यिक रूप है नहीं। 'हिन्दुस्तानी एकेडेमी' अभी तक विफल रही। उसी प्रकार 'हिन्दुस्तानी-प्रचारसभा' भी विफल रहेगी, यद्यपि उसके पीछे महात्मा गांधी का शक्तिशाली व्यक्तित्व है। भावी भारत में कितना शीघ्र हिन्दी या उर्दू या दोनों राष्ट्रीय पद प्राप्त कर सकेंगी, यह इस बात पर निर्भर रहेगा कि किस भाषा का साहित्य कितना शीघ्र सर्वांगीण होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काशी की 'नागरी-प्रचारिणी सभा' और प्रयाग का 'हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन' भारत की सर्वोच्च हिन्दी-सेवी संस्थाएँ हैं। जिसका नामकरण प्रचार के लिए किया गया था, उसने बहुत कुछ ठोस साहित्यिक निर्माण का काम किया है। जिसकी स्थापना साहित्यिक संगठन के लिए की गई थी, वह थोड़ा-बहुत प्रचार का काम ही कर पाया है; निर्माण-सम्बन्धी काम उसका नहीं के बराबर है।

हिन्दी-साहित्य की सेवा के दो अंग हैं, निर्माण और प्रचार। निर्माण पहले, उसके पीछे प्रचार। साहित्य-निर्माण हो रहा है, परन्तु अनियमित; वह किसी राष्ट्रीय योजना के अनुसार नहीं हो रहा है। क्रियाशील योजना किसी पद-दलित राष्ट्र को कितना शीघ्र संसार के सर्वोच्च शिखर तक पहुँचा सकती है, इसका ज्वलन्त उदाहरण रूस ने हमारे सामने उपस्थित कर दिया है।

भारत का निकट भविष्य बहुत उज्ज्वल है। हम तैयार न हों तो भी अंतराष्ट्रीय प्रगति ब्रिटेन को इस बात के लिए विवश कर रही है कि वह भारत को स्वतंत्र कर दे। स्वतंत्रता स्वयं ही कोई सुख की वस्तु नहीं है। पिंजड़े में बन्द तोते को अपने जीवन की रक्षा करने के लिए कोई कठिन उद्योग नहीं करना पड़ता, उसके विरुद्ध स्वतंत्र तोते को बहुत दौड़ लगानी पड़ती है। उसे अपने परों और चोंच की शक्ति का प्रयोग करना पड़ता है। निश्चित है कि स्वतंत्रता हमारे दायित्व को बढ़ा ही देगी। एक साहित्य-सेवी की हैसियत से स्वतंत्र भारत की सेवा के सम्बन्ध में हमारा क्या दायित्व है, इसको समझने पर ही हमारे लिए या हमारी प्रतिनिधि साहित्यिक संस्थाओं के लिए क्रियाशील साहित्यिक योजना बनना सम्भव हो सकेगा।

पहला दायित्व—भारत की निरक्षरता को शीघ्रातिशीघ्र मिटाना है। निरक्षरता-निवारण में हिन्दी की देवनागरी लिपि जितनी सहायक हो सकती है, उतनी कोई और नहीं। क्योंकि इस लिपि का वैज्ञानिक सिद्धांत पर निर्माण हुआ है, और इस कारण जितनी शीघ्रता से इस लिपि-द्वारा अक्षर-ज्ञान प्राप्त हो सकता है, उतना और किसी लिपि-द्वारा नहीं। परन्तु इतना कह देने से ही काम नहीं चलेगा। हमें इस सम्बन्ध में प्रयोग करना है। उन प्रयोगों और उनके परिणामों को प्रकाशित करना है। इन प्रयोगों के करने पर हमें यह भी मालूम हो सकेगा कि देवनागरी लिपि में आधुनिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने की कितनी क्षमता है, उसमें क्या कमियाँ हैं, उन कमियों की पूर्ति किस प्रकार की जाय।

दूसरा दायित्व—जिस हिन्दी को हम पढ़ते-लिखते हैं वह इने-गिने लोगों की ही मातृ-भाषा है। अभी तक हिन्दी का व्याकरण लिखने में अंग्रेजी की ही नकल की जाती रही है। अब इस विषय पर भी खोज और प्रयोग करना है कि हिन्दी-व्याकरण का क्या रूप हो, जिसकी सहायता से बहुत शीघ्र अहिन्दी-भाषी बालक-बालिकाएँ, युवक-युवतियाँ, शुद्ध हिन्दी बोलना और लिखना सीख सकें।

तीसरा दायित्व—जीवित भाषा का रूप नित्य प्रति बदलता रहता है। इसलिए हिन्दी के रूप को स्थिर करने का प्रयत्न करना असम्भव है। परन्तु इस समय हिन्दी भाषा में जो कुछ अस्थिरता है, जितनी कुछ अराजकता है, वह हिन्दी की उन्नति में बहुत बाधक है। शब्दावली को सीमित करना असम्भव है और हानि-कारक भी है। परन्तु भाषा के बाह्य रूप को नियमित करना आवश्यक है। उसका व्याकरण संयत होना चाहिए। इस दायित्व की पूर्ति यों हो सकती है, कि हिन्दी के प्रधान प्रकाशकों और पत्र-पत्रिकाओं के सम्पादकों का एक सम्मेलन हो जिसमें इस विषय पर नियम बना लिए जाएँ और नियमों का पालन करना प्रकाशकों, सम्पादकों और शिक्षा-विभागों के लिए अनिवार्य कर दिया जाए। इस सम्मेलन की एक स्थायी समिति भी हो जो समय-समय पर आवश्यकतानुसार इस नियमावली में समुचित संशोधन करती रहे।

चौथा दायित्व—हिन्दी में बालोपयोगी और किशोरोपयोगी साहित्य की बहुत कमी है। हमें हिन्दी में ऐसे साहित्य का निर्माण करना है जिसके पढ़ने पर नवयुवक-युवतियों का पुस्तक-प्रेम बढ़े, उनकी ज्ञान-पिपासा जाग्रत् हो। बालोपयोगी साहित्य का सर्वांगीण होना उतना ही आवश्यक है जितना प्रौढ़ोपयोगी साहित्य का। यह साहित्य जितना कुछ प्रकाशित किया गया है, उसे एक जगह इकट्ठा किया जाए। योग्य शिक्षकों की एक समिति इस साहित्य की अच्छी तरह जाँच करे। जो अंश मान्य हों, उनकी शिक्षालयों और पुस्तकालयों को सूचना दी जाए, उनके प्रचार का प्रयत्न किया जाए। जिन अंगों की पूर्ति न हुई हो, उनके निर्माण का काम प्रकाशकों के सुपुर्द किया जाए। योग्य लेखकों की तलाश हो। जो कुछ काम होता चले उसकी सूचना पत्र-पत्रिकाओं-द्वारा बराबर जनता तक पहुँचाई जाया करे।

पाँचवाँ दायित्व—हमारे हिन्दी-साहित्य में अन्तःप्रान्तीय और अन्ताराष्ट्रीय संस्कृति-विषयक मौलिक ग्रंथों की बहुत कमी है। संस्कृति के ज्ञान से सहानुभूति होती है और सहानुभूति से संगठन का मार्ग खुलता है। स्वतंत्र भारतीय शासन का पहला काम होगा अन्तःप्रान्तीय संगठन, जो भारतीय राष्ट्रीयता को पुष्ट कर सके; फिर विश्व-संघ के लिए उद्योग और उसके नेतृत्व का प्रयत्न, क्योंकि ऐटम बम के बाद विश्व संघ का बनाया जाना अनिवार्य हो जाता है और इस विश्व-संघ का निर्माण मानवता की ही भित्ति पर हो सकता है, जिसके प्रथम (गौतम बुद्ध) और अन्तिम (महात्मा गांधी) उपदेशक भारतीय ही हैं। यदि हम हिन्दी को राष्ट्र-भाषा मानते हैं तो हिन्दी साहित्यिकों पर इस महान् उद्देश्य की पूर्ति में सहयोग देने का दायित्व आ जाता है। हिन्दी प्रान्तों के शिक्षालयों की मध्यम श्रेणियों में हिन्दी के साथ किसी प्रान्तीय भाषा और साहित्य का पढ़ना अनिवार्य हो। उसी प्रकार उच्च श्रेणियों में किसी विदेशी भाषा और उसके साहित्य का पढ़ना अनिवार्य हो। अभी तक हमारे लिए अंग्रेजी ही विदेशी भाषा है। परन्तु संसार में ब्रिटेन और संयुक्त राज्य के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तिरिक्त अन्य देश भी हैं। ये दूसरे देश हमसे बहुत निकट हैं। की भाषा और साहित्य का अध्ययन हमारे लिए अधिक श्यक है। यह तैयारी अब से बहुत पहले प्रारम्भ होनी चाहिए क्योंकि पढ़ाई प्रारम्भ होने के दस-पाँच वर्ष बाद ही हमें दी-भाषी युवकों में प्रान्तीय और विदेशी भाषाओं के विद्वान् ल सकेंगे। इन विद्वानों का काम यह होगा कि वे अहिन्दी न्तों और विदेशों में जाकर दस-बीस वर्ष रहें; उनकी भाषा में दी-साहित्य-गर्भित भारतीय संस्कृति का प्रचार करें और हिन्दी ान्तीय अथवा विदेशी संस्कृति पर मौलिक ग्रन्थ लिखें। इस के पश्चात् ही हम राष्ट्रीय संस्कृति और अंताराष्ट्रीय सहानुभूति सौहार्द का नेतृत्व कर सकेंगे। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए य-प्रणाली में समुचित परिवर्तन तुरन्त होना चाहिए। तभी पाँच वर्ष पश्चात् हम अन्तःप्रान्तीय और अंताराष्ट्रीय सांस्कृतिक मय करने योग्य हो सकेंगे।

छठा दायित्व—प्रौढ़ोपयोगी साहित्य में उपर्युक्त अंग की कमी तिरिक्त कुछ और विशेष अंगों की भी बहुत कमी है। इति-, संपत्ति-शास्त्र, राजनीति और आधुनिक विज्ञान पर स्कूल या मीजिएट कालेज तक की कुछ पाठ्यपुस्तकें तो अवश्य प्रकाशित हैं, परन्तु इनके आगे साहित्य-क्षेत्र बहुत कुछ सूना ही है। तक इस ओर ध्यान नहीं दिया जाता, जब तक हमारे विश्व-ालयों के अध्यापक हिन्दी में गम्भीर विषयों पर लिखने के प्रोत्साहित और बाध्य नहीं किए जाते, तब तक कितने भी ाव स्वीकृत करके हम हिन्दी को सर्वोच्च शिक्षा का माध्यम बना सकते। इस ओर उस्मानिया विश्वविद्यालय के उद्योग से साहित्य की जो सेवा हुई है, उससे हिन्दी-साहित्यिकों को कुछ क मिलना चाहिए था। कई वर्ष पहले राजपूताना और मध्य-त के राज्यों के उद्योग से हिन्दी-विश्वविद्यालयों की स्थापना ानी चाहिए थी, परन्तु ग्वालियर, इन्दौर, जयपुर और उदय-में सम्मेलन के अधिवेशन होकर भी हिन्दी-विश्वविद्यालय पित न हो सका। काशी-विश्वविद्यालय तक में हिन्दी समुचित ान न पा सकी; यह कितने खेद, कितनी लज्जा की बात है।

सातवाँ दायित्व—पाँचवें और छठे उत्तरदायित्व का निर्वाह के सम्बन्ध में यह बात प्रत्यक्ष होती है कि यद्यपि सर्वोच्च निक साहित्य के पाठक कम होते हैं, अतः लेखक को अपनी क की बिक्री से कोई पारिश्रमिक नहीं मिल सकता। ऐसे लेखकों दूसरे प्रकार से पुरस्कृत करना आवश्यक है। निर्माण कार्य की ति तब तक तीव्र नहीं हो सकती जब तक उसके साथ प्रचार का ा ही उद्योग न हो।

१—इस प्रचार-कार्य के जो साधन हैं, उनमें उस आधुनिक साधन जिसे रेडियो कहते हैं, हमारा कोई अधिकार नहीं है। परन्तु हम स्वतंत्र भारत की सेवा के लिए योजना बना रहे हैं, तो हमें रेडियो को सर्वोच्च स्थान देना होगा। रेडियो-द्वारा लाख गाँवों के निरक्षर देहातियों तक जिस सरलता से हम अपना संदेश पहुँचा सकते हैं, वह किसी और साधन के द्वारा नहीं। इसलिए स्वतंत्र भारतीय शासन का पहला काम यह होगा कि प्रत्येक गाँव में कम-से-कम एक रेडियो हो जिसके द्वारा वहाँ के निवासियों को आवश्यक सूचनाएँ, आदेश, संदेश और उपदेश पहुँच सकें। साथ ही रेडियो-द्वारा हिन्दी-भाषी जनता को प्रकाशित पुस्तकों पर नित्य समालोचनाएँ सुनने को मिला करें।

२—बोलते चित्रपट जिस खूबी के साथ हिन्दी भाषा का प्रचार अहिन्दी प्रान्तों में कर रहे हैं, यह बड़े कमाल की बात है। हिन्दी भाषा के समझनेवालों की संख्या अन्य देशी भाषा-भाषियों की अपेक्षा बहुत अधिक है। इसका अर्थ यह होता है कि जो कलाकार हिन्दी के चित्रपट के लिए काम करते हैं उन्हें अपेक्षाकृत पुरस्कार अधिक मिलता है। फिर इसका परिणाम यह होता है कि देश के सर्वोच्च कलाकार हिन्दी-चित्रपट के लिए ही काम करते हैं। चित्रपट के शौकीन हिन्दी न जानते हुए भी, इन कलाकारों की कला का आनन्द लेने के लिए, हिन्दी चित्रपट देखने-सुनने जाते हैं और धीरे-धीरे हिन्दी समझने लगते हैं। टूटी-फूटी बोलने भी लगते हैं। यों ये बोलते चित्रपट हिन्दी-साहित्य की सपरमैना का काम करते हैं। अभी इनके तैयार किए हुए क्षेत्र पर हिन्दी-प्रचारक अधिकार नहीं कर सके हैं, परन्तु निमंत्रण उन्हें मिल चुका है। इस अहिन्दी-भाषी जनता को, जिसे टूटी-फूटी हिन्दी बोलना आ गया है, हिन्दी पढ़ाने और उसके मध्य हिन्दी पुस्तकों का प्रचार करने का कार्य पहले की अपेक्षा अब सरल हो गया है। यदि हमारी साहित्यिक संस्थाएँ इन चित्रपटों के संचालकों का सम्मेलन करके उनसे चित्रपट के सिलसिले में हिन्दी-साहित्य का प्रचार करने का काम भी ले सकें तो साहित्य-सेवा का पुण्य लूटते हुए वे अपना लाभ भी बढ़ा सकेंगे।

३—दैनिक, साप्ताहिक और मासिक पत्र-पत्रिकाएँ भारतीय जनता के उस अंश का मनोरंजन करती हैं जो यथेष्ट पढ़ी-लिखी है। प्रचार-कार्य में इस अंश के कम होते हुए भी इसका महत्त्व है, क्योंकि जो पढ़े-लिखे लोग पत्र-पत्रिकाओं के लिए कुछ खर्च कर सकते हैं, उन्हीं को थोड़ा-बहुत पुस्तकों पर खर्च करने के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है। इसलिए पत्र-पत्रिकाओं-द्वारा प्रचार करना बहुत आवश्यक है। प्रसिद्ध पुस्तक-विक्रेताओं और प्रकाशकों की ओर से इंडियन लिटरेरी रिव्यू (Indian Literary Review) की टक्कर की सस्ती मासिक पत्रिका निकलनी चाहिए, जिसमें नई पुस्तकों का उल्लेख रहे और पुस्तकालयों के लिए योजनाएँ रहें।

४—अभी तक हिन्दी पुस्तक-विक्रेताओं का कोई संगठन नहीं है। हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन जैसी संस्था की ओर से हिन्दी पुस्तक-विक्रेताओं का संगठन होना चाहिए। ये पुस्तक-विक्रेता पारस्परिक सहयोग करके बहुत कुछ प्रचार-कार्य कर सकते हैं। इन्हें प्रचार का मार्ग बताना, उनके प्रचार-उद्योग में सहायता देना, हमारी साहित्य-सेवी-संस्थाओं का कर्त्तव्य होना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५—भारत जैसे देश में जहाँ जनता देहात में बिखरी हुई है, डाकखर्च पुस्तक-प्रचार में बहुत बाधक हो जाता है। इसलिए राष्ट्रीय शासन की ओर से, पुस्तकों के लिए डाक की वही रियायत होनी चाहिए जो पत्र-पत्रिकाओं को प्राप्त है।

६—प्रचार का सबसे महत्त्वपूर्ण साधन है पुस्तकालय। प्रत्येक पाठशाला में पुस्तकालय का होना अनिवार्य होना चाहिए। इस पुस्तकालय के संचालक का एक यही काम होना चाहिए। पुस्तकालय का संचालन इस प्रकार हो कि उससे विद्यार्थियों के अतिरिक्त गृहस्थ पाठक-पाठिकाएँ भी लाभ उठा सकें। चलित पुस्तकालय हों, उनके सहायतार्थ केन्द्रीय पुस्तकालय हों। सबसे बड़ी बात यह कि शिक्षालयों के साथ जो पुस्तकालय हों उनके संचालन में यह उद्योग किया जाय कि बालक-बालिकाएँ पुस्तक-प्रेम लेकर, निजी पुस्तकालय बनाने की आकांक्षा लिए हुए, शिक्षालय छोड़ें। यों प्रचार की जड़ें पुष्ट की जा सकेंगी।

७—योजनानुसार निर्माण-कार्य को अपना खर्च निकालने के लिए यह आवश्यक है कि देश में कम से कम ५०० ऐसे शिक्षालय और पुस्तकालय हों जो योजनानुसार प्रकाशित पुस्तकों के स्थायी ग्राहक हो जाएँ। यदि प्रत्येक ऊँचे दरजे की पुस्तक की १००० प्रतियाँ छपाई जाएँ और स्थायी ग्राहकों से छपाई का सब खर्च निकल आए तो प्रचार-द्वारा बाकी ५०० बेंचकर लेखक को पुरस्कृत किया जा सकता है।

किसी बात को दुहराना साहित्य में पुनरुक्ति दोष माना जाता है, परन्तु दुहराना ही प्रचार का मूलमंत्र है। एक बार से अधिक निवेदन कर चुका हूँ कि 'नागरीप्रचारिणी सभा' और 'हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन' के कर्णधार साहित्यिक निर्माण की योजना पर विचार करें और पारस्परिक सहयोग से ऐसी योजनाएँ बनाएँ जो कार्यान्वित हो सकें। उपर्युक्त लेख में बहुत कुछ पिछले विचारों को ही दूसरे शब्दों में दुहराया गया है। इसलिए पुनरुक्ति का दोषी होकर भी प्रचार के नाते फिर वही निवेदन है।

भरद्वाज-आश्रम

माननीय डाक्टर कैलाशनाथ काटजू

महर्षि-भरद्वाज के आश्रम का गङ्गा यमुना के संगम के समीप होना तो एक प्रसिद्ध और मानी हुई बात है। वाल्मीकि रामायण में भी इसकी चर्चा है। इस समय भरद्वाज-आश्रम का स्थान प्रयाग में पंडित मोतीलाल नेहरू के आनन्द-भवन के समीप माना जाता है। प्रयाग में जो लाखों यात्री हर साल आते हैं वे भरद्वाज-आश्रम के अवश्य दर्शन करते हैं। महामना पंडित मदनमोहन मालवीय की तो प्रयाग जन्मभूमि है। उनको तो भरद्वाज-आश्रम से बड़ा प्रेम है। वे आजकल इस चेष्टा में लगे हुए हैं कि भरद्वाज आश्रम की जगह एक बहुत बड़ा भवन या मन्दिर महर्षि भरद्वाज की स्मृति में बनाया जाए। इसकी एक योजना भी बनाई गई है जिसके लिए लाखों रुपया आवश्यक होगा और मुझे पूर्ण आशा है कि पूज्य मालवीयजी के कहने पर श्रद्धालु जन प्रसन्नता से धन देंगे। इस सुन्दर गगनचुम्बी भवन से प्रयाग की शोभा बहुत कुछ बढ़ जाएगी।

परन्तु मुझे कभी-कभी यह सन्देह होता है कि जिस स्थान के आजकल हम लोग महर्षि भरद्वाज का आश्रम मानते हैं वह वास्तव में महर्षि का निवास-स्थान था भी, या जैसे गंगा-यमुना के संगम की जगह बदलती गई वैसे श्रद्धालु जनों की दृष्टि में आश्रम का स्थान भी बदलता गया? रहा वह सदा संगम के समीप परन्तु वह धरती नहीं, न वह स्थान, जहाँ आजकल हम उसको मानते हैं।

यह तो एक प्रसिद्ध और मानी हुई बात है कि गंगा और यमुना दोनों के बहाव गत दो-चार हजार वर्षों में बहुत बदल गए हैं। पहले गंगा कन्नौज के नीचे बहती थी। फिर कन्नौज से १२ मील हट गई। अब फिर समीप आ रही है। तब भी लगभग ७ मील दूर है। ऐसा ही तीर्थस्थान सोरों पर भी है। सोरों पहले गंगाजी के किनारे था। अब गंगाजी वहाँ से ४ या ५ मील दूर हट गई हैं। तनिक दूर चलिए, सेन और गंगाजी के ऊपर पटना की नगरी महाराज अजातशत्रु ने बसाई थी। अब वह संगम पटने से १२ मील दूर हट गया है। ऐसे ही गंगा और यमुना का हाल है। यह मानी हुई बात है कि पहले गंगाजी लगभग आनन्द-भवन के नीचे बहती थीं। अब वहाँ से कई मील दूर चली गई हैं। इस विषय में वाल्मीकि-रामायण से जो जानकारी होती है उसकी चर्चा मैं इस लेख में करना चाहता हूँ। बहुत सम्भव है कि रामायण से मैंने जो फल निकाला है वह गलत हो। अगर ऐसा है तो मैं आशा करूँगा कि 'सरस्वती' के विद्वान् पाठक त्रुटि को बता देंगे।

वाल्मीकि-रामायण कब लिखी गई, यह कोई निश्चित रूप से कह नहीं सकता। हम हिन्दू तो यह मानते हैं कि यह पुस्तक हजारों वर्ष पूर्व की लिखी हुई है। सम्भवतः आर्यों के भारतवर्ष में आने के थोड़े ही दिन बाद यह लिखी गई होगी। शुरू से ही इसकी चर्चा है। हमारे ग्रंथों में इसका उल्लेख है। पाश्चात्य विद्वान् भी इसको कम से कम तीन-साढ़े तीन हजार वर्ष पहले की लिखी हुई पुस्तक मानते हैं। रामायण के अयोध्याकांड में प्रयाग की चर्चा आती है। इसके पहले के सर्गों में कवि ने बहुत ही सुन्दर छन्दों में बतलाया है कि अयोध्या से रथ पर बैठकर चलने पर श्री रामचन्द्रजी अनेक छोटे-छोटे राजाओं की सुशोभित राजधानियों में से गुजरते हुए गंगाजी के किनारे पहुँचे और जहाँ भगवान् ने श्री गंगाजी की मुक्त कंठ से स्तुति की है, वह देश भीलों के राजा गुह के राज्य में था।

परन्तु आदिकवि ने यह नहीं बतलाया कि श्री रामचन्द्रजी ने गंगाजी के तट पर किस स्थान पर निशा-निवास किया। शृङ्गवेरपुर की चर्चा इस प्रकार है—

"समुद्रमहिषीं गङ्गां सारसक्रौञ्चनादिनीम्।
आससाद महाबाहुः शृङ्गवेरपुरं प्रति ॥२-५०-२६॥"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(समुद्र की पटरानी और सारस एवं क्रौंच पक्षियों से कूजित गंगा के निकट शृङ्गवेरपुर को जाते हुए श्री रामचन्द्रजी पहुँचे।)

और अब यह बात जानी जाती है कि शृङ्गवेरपुर वही स्थान जो इन दिनों गंगाजी के किनारे सिंगरौर के नाम से प्रयाग से २ मील ऊपर है। परन्तु यह स्पष्ट नहीं है कि श्री रामचन्द्रजी शृङ्गवेरपुर पहुँचे या नहीं पहुँचे। यह भी बात जानने योग्य है कि सिंगरौर आजकल गंगाजी के प्रयाग की ओर आबाद है। मालूम नहीं, रामायण के समय शृङ्गवेरपुर गंगा के इस पार आबाद था उस पार।

श्री रामचन्द्रजी ने इस जगह नाव पर बैठकर गंगाजी को पार किया। कवि यह लिखता है कि पार करके श्री रामचन्द्रजी एक जन-रहित बहुत बड़े वन में प्रवेश किया और जानकीजी सहित दोनों भाई पैदल चले :—

"अथाब्रवीन्महाबाहुः सुमित्रानन्दवर्धनम्।
भव संरक्षणार्थाय सजने विजनेऽपि वा ॥९४॥
अवश्यं रक्षणं कार्यमदृष्टे विजने वने।
अग्रतो गच्छ सौमित्रे सीता त्वामनुगच्छतु ॥१२-५२-९५॥"

(और लक्ष्मणजी से कहा—देखो, चाहे निर्जन स्थान हो चाहे जन स्थान हो, तुम सीताजी की रखवाली में चौकसी रखना॥९४॥ को इस अनदेखे विजन वन में अवश्य रक्षा करनी उचित है। हे लक्ष्मण, तुम तो आगे चलो और तुम्हारे पीछे सीताजी ॥९५॥)

इस प्रकार द्वावे में प्रवेश कर दिन भर चलते-चलते रात हो और श्री रामचन्द्रजी एक वट-वृक्ष के नीचे जा टिके। दूसरे फिर दिन भर चले और सायंकाल जब दिन थोड़ा रह गया भगवान् रामचन्द्रजी ने लक्ष्मण से कहा :—

"प्रयागमभितः पश्य सौमित्रे धूममुद्गतम्।
अग्नेर्भगवतः केतुं मन्ये सन्निहितो मुनिः ॥५॥
नूनं प्राप्तास्म सम्भेदं गङ्गायमुनयोर्वयम्।
तथा हि श्रूयते शब्दो वारिणो वारिघट्टजः ॥३-५४-६॥"

(हे लक्ष्मण! देखो प्रयाग तीर्थ की ओर जो धुआँ उठ रहा है मानो भगवान् अग्निदेव की पताका फहरा रही है। इससे पड़ता है कि भरद्वाजजी का आश्रम यहीं कहीं पास है ॥५॥ हम लोग गंगा-यमुना के संगम के समीप निश्चय ही पहुँचे हैं; क्योंकि दोनों नदियों के जलों की टक्कर से उत्पन्न साफ सुनाई दे रहे हैं।)

इस कथन से अनुमान यही होता है कि कोई बड़ी आबादी या उन दिनों गंगा-यमुना के किनारे नहीं था; प्रत्युत एक बहुत वन था। उस वन में महर्षि भरद्वाज का आश्रम था। यह एक ध्यान में रखने की बात है कि कवि ने संगम को त्रिवेणी बताया। गंगा-यमुना का संगम कहा है। सरस्वती का नाम नहीं आता है। इससे अनुमान होता है कि यह स्थान श्री वाल्मीकि के समय में गंगा-यमुना का संगम कहलाता था, न कि त्रिवेणी। एक बात और भी है। प्रयाग, अक्षयवट और उसका मन्दिर भारतवर्ष में प्रसिद्ध है। तेरह सौ वर्ष हुए जब चीनी यात्री ह्वानसांग भारत में आया था तब वह प्रयाग से होकर गुजरा। वह कई महीने प्रयाग में रहा। उसने विस्तारपूर्वक कुम्भ-मेले की चर्चा की है। अक्षयवट का भी उसने आँखोंदेखा हाल लिखा है। उसका कथन है—'प्रयाग बस्ती के बीचोंबीच एक मन्दिर है। उसके हाते में एक पेड़ है जो सदाबहार अमर कहलाता है और जिसके ऊपर से चढ़कर साधु-संत नीचे कूदकर अपना शरीर त्याग करते हैं।' ह्वानसांग आगे लिखता है कि उसने पेड़ के चारों ओर बहुत-सी मानव-हड्डियाँ पड़ी पाईं। चार सौ वर्ष के बाद मुस्लिम यात्री इब्नबतूता भारत आया था और उसने एक बड़े पेड़ का उल्लेख किया है जो यमुना के किनारे था, जिसके नीचे बहुत बड़ा गहरा कुंड था और यात्री पेड़ पर चढ़कर कुंड में कूद कर अपना शरीर त्याग करते थे। अब इसमें मतभेद है कि वस्तुतः जिस वृक्ष को चीनी यात्री ने प्रयाग नगरी के बीचोंबीच देखा था वही वृक्ष चार सौ वर्ष उपरान्त यमुना के किनारे जा पहुँचा। कुछ विद्वान् कहते हैं कि यमुना का बहाव पलट गया; प्रयाग की बस्ती बह गई, परन्तु पेड़ रह गया। कुछ का कथन है कि चीनी यात्री का मन्दिर और अक्षयवट और इब्नबतूता का पेड़ भिन्न-भिन्न हैं। जो कुछ हो, रामायण में संगम के किनारे किसी अक्षयवट की चर्चा नहीं और न प्रसिद्ध मन्दिर की, न यही कि श्री रामचन्द्रजी ने किसी मन्दिर या वटवृक्ष के दर्शन किए। इन सब बातों से मेरा अनुमान यह है कि महर्षि वाल्मीकि के समय में जहाँ कहीं संगम रहा हो वहाँ कोई बस्ती नहीं थी। वहाँ केवल जंगल था और साधु-संत रहते थे।

श्री रामचन्द्रजी रात भर महर्षि के पास रहे। ऋषि ने बहुत सम्मान किया और उनसे कहा कि :—

"अवकाशो विविक्तोऽयं महानद्योः समागमे।
पुण्यश्च रमणीयश्च वसत्विह भवान्सुखम् ॥३-५५-२२॥"

(अतः इन दोनों महानदियों के संगम पर, इस एकान्त, पवित्र एवं रम्य स्थान पर आप सुखपूर्वक वास करें।)

परन्तु श्री रामचन्द्रजी ने उत्तर दिया कि यह वास-स्थान अयोध्यावासियों को अत्यन्त निकट पड़ेगा, मुझे यहाँ रहना उचित नहीं जान पड़ता। और फिर बोले कि :—

"एकान्ते पश्य भगवन्नाश्रमस्थानमुत्तमम्।
रमेत यत्र वैदेही सुखं हि जनकात्मजा ॥३-५४ २६॥"

(हे भगवान्! अतः मेरे रहने के लिए कोई ऐसा एकान्त और उत्तम स्थान बतला दीजिए जहाँ जानकीजी का मन लगे और (ये) सुखपूर्वक रह सकें।) इस पर महर्षि भरद्वाज यह वचन बोले कि :—

"दशक्रोश इतस्तात गिरिर्यस्मिन्निवत्स्यसि।
महर्षिसेवितः पुण्यः सर्वतः सुखदर्शनः ॥२८॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"गोलाङ्गूलानुचरितो वानरर्क्षनिषेवितः ।
चित्रकूट इति ख्यातो गन्धमादनसन्निभः ॥३-५४-२६॥"

(हे वत्स ! यहाँ से दस कोस पर तुम्हारे रहने योग्य एक पहाड़ है, जो महर्षियों से सेवित होने के कारण पवित्र है और उसके चारों ओर नयनाभिराम दृश्य हैं। उस पर्वत पर लंगूर, बन्दर और रीछ घूमा-फिरा करते हैं। उस पर्वत का नाम चित्रकूट है और उसकी शोभा गन्धमादन की तरह है।) (इस पर पाठक खूब ध्यान दें।)

और यहाँ ऋषिवर ने चित्रकूट की बड़ी प्रशंसा की है।

यह क्रोशः आजकल का कोस है और सब लोग जानते हैं कि संस्कृत का क्रोशः आजकल के दो मील के बराबर होता है। इस दृष्टि से रामायण के अनुसार भरद्वाज के आश्रम और संगम से चित्रकूट बीस मील दूर था। यह बड़ी गम्भीर बात है। चित्रकूट तो एक पहाड़ है। जहाँ रामचन्द्रजी का स्थान कामदनाथ-जी के नाम से प्रसिद्ध है और उसके निकट प्रयाग की ओर कोई और दूसरा पर्वत नहीं है जो चित्रकूट माना जाय। अब हम यदि चित्रकूट को स्थायी समझ लें तो यह अवश्य निष्कर्ष निकलता है कि वाल्मीकिजी के समय में चित्रकूट से संगम का अन्तर बीस मील था। यह बताना इस स्थान पर आवश्यक है कि वाल्मीकि-जी ने अयोध्याकांड में श्रीराम व सीताजी को कोई देवी-देवता का स्थान नहीं दिया है। वह इस कांड में एक साधारण स्त्री-पुरुष बतलाए गए हैं और वैसा ही उनका अपने आपस में और दूसरों के साथ व्यवहार है।

श्री रामचन्द्रजी ने वाल्मीकिजी के उपदेश को मान लिया और चित्रकूट जाना निश्चय किया। रात्रि को आश्रम में वास किया और दूसरे दिन प्रातःकाल चित्रकूट की ओर प्रस्थान किया। महर्षि भरद्वाज उनको कुछ दूर तक मार्ग बताने गए :—

"गङ्गायमुनयोः सन्धिमासाद्य मनुजर्षभौ ।
कालिन्दीमनुगच्छेतां नदीं पश्चान्मुखाश्रिताम् ॥४॥
अथासाद्य तु कालिन्दीं शीघ्रस्रोतसमापगाम् ।
तस्यां स्नानार्थचरितं पुराणं प्रेक्ष्य राघवौ ॥ ३-५५-५॥"

(हे मनुजश्रेष्ठ ! इस गंगा-यमुना के संगम से पश्चिम की ओर यमुना के किनारे-किनारे आप जाइए ॥४॥ आप लोग शीघ्र बहनेवाली गंगा में मिलनेवाली यमुना के किनारे-किनारे चलकर एक घाट देखेंगे, जो बहुत पुराना होने से टूटा-फूटा है ॥५॥)

"तत्र यूयं प्लवं कृत्वा तरतां शुभतीं नदीम् ।
ततो न्यग्रोधमासाद्य महान्तं हरितच्छदम् ॥६॥
विवृद्धं बहुभिर्वृक्षैः श्यामं सिद्धोपसेवितम् ।
तस्मै सीताऽञ्जलिं कृत्वा प्रयुञ्जीताशिषः शिवा ॥७॥"

(वहाँ पर घरनाई बनाकर तुम यमुना पार करना। तदन्तर उस पार जाने पर एक बड़ा बरगद का वृक्ष मिलेगा, जिसके हरे-हरे पत्ते हैं॥६॥ वह वटवृक्ष अनेक वृक्षों के बीच में है। उसके पत्तों का रङ्ग श्यामता लिए हुए हरा है और सिद्धों-द्वारा वह सेवित है। वहाँ पहुँचकर जानकीजी हाथ जोड़कर अपने शुभ मनोरथों के सफल होने के लिए प्रार्थना करें॥७॥

"समासाद्य तु तं वृक्षं वसेद्वाऽतिक्रमेत वा ।
क्रोशमात्रं ततो गत्वा नीलं द्रक्ष्यथ काननम् ॥८॥
पलाशबदरीमिश्रं रम्यं वृक्षैश्च यामुनैः ।
स पन्थाश्चित्रकूटस्य गतः सुबहुशो मया ॥३-५५-९॥"

(या तो उस पेड़ के नीचे ठहरकर कुछ देर विश्राम कर लेना अथवा आगे को चले जाना। वहाँ से एक कोस आगे जाने पर नीलवन दीख पड़ेगा ॥८॥ उस वन में साल, जामुन और बेरी के अनेक वृक्ष हैं। वही मार्ग चित्रकूट को जाता है और उस मार्ग से मैं कितनी ही बार चित्रकूट गया हूँ ॥९॥

"रम्यो मार्दवयुक्तश्च वनदावैर्विवर्जितः ॥३-५५-१०॥"

(यह मार्ग रमणीक, कोमल : अर्थात् काँटों-कंकड़ों से रहित अथवा रेतीला होने से कोमल है। उस वन में दावानल का भी भय नहीं है।)

आदेशानुसार श्री रामचन्द्रजी चले और सायंकाल एक नदी के किनारे पहुँचे। इस नदी को भी कविवर यमुना कह-कर पुकारते हैं। वहाँ से चित्रकूट बहुत निकट रह गया था। दूसरे दिन दोपहर को श्री रामचन्द्रजी ने चित्रकूट में प्रवेश किया। एक पहाड़ी पर उन्होंने अपनी कुटिया बनाई और वहाँ रहने लगे।

इन सर्गों में महर्षि वाल्मीकिजी ने मार्ग और स्थलों का ऐसे सरल और निश्चित रूप से वर्णन किया है मानो सब कुछ उनका आँखों देखा ही हो। एक स्थान का दूसरे स्थान से फासला बहुत अच्छी तरह से दिखलाया है। मालूम नहीं, गंगा और यमुना में हजारों वर्षों में क्या हेर-फेर हो गया है। आजकल राजापुर चित्रकूट से ठीक २० या २२ मील है। राजापुर श्री तुलसीदासजी की जन्मभूमि कही जाती है। मित्रों ने मुझे बताया है कि वहाँ से तीन-चार मील चलकर लालापुर नामक एक गाँव मिलता है जो वाल्मीकि-आश्रम के नाम से प्रसिद्ध है।

वाल्मीकि के छन्दों के अनुसार तो भरद्वाज ऋषि का आश्रम और संगम जहाँ आजकल राजापुर है, उसके समीप होना चाहिए। प्रयाग चित्रकूट से आजकल सड़क के मार्ग से जाने पर ७० मील से ऊपर है और बिलकुल सीधे कौए की तरह जाइए तब भी ६० मील से कम नहीं पड़ेगा। यह याद रहे कि भरद्वाज-आश्रम से चित्रकूट तक श्री रामचन्द्रजी सीताजी के साथ धीरे-धीरे चले और दस क्रोश का सफर डेढ़ दिन में तय किया। अगर आश्रम और संगम से चित्रकूट दस कोस से बहुत अधिक दूर था, तो कोई कारण नहीं दिखता कि क्यों वाल्मीकिजी ने उसको कम करके लिखा। इन सब बातों से यह अनुमान होता है कि श्री रामचन्द्रजी शृङ्गवेरपुर तक नहीं पहुँचे। रास्ते में ही अँधेरा हो गया और बीच में ही वे ठहर गए और उन्होंने गंगाजी को पार कर लिया। यह भी सम्भव है कि उस समय संगम राजापुर के आस-पास था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाल्मीकि ने भरद्वाज-आश्रम और चित्रकूट का एक और स्थान पर वर्णन किया है। भरतजी जब तक्षशिला से अयोध्या लौटकर आए और उनको श्री रामचन्द्रजी के वनवास का हाल मालूम हुआ तब वे उनको अयोध्या वापस लाने के लिए चित्रकूट गए थे और वे भी भरद्वाज-आश्रम में एक रात रहे थे। भरतजी ने भी भरद्वाज मुनि से चित्रकूट का हाल पूछा था। उसका उत्तर मुनि ने इस प्रकार दिया था—

"भरतार्धतृतीयेषु योजनेष्वजने वने।
चित्रकूटो गिरिस्तत्र रम्यनिर्झरकाननः ॥३-८२-१०॥"

(हे भरत, यहाँ से अढ़ाई योजन के अन्तर पर टूटे-फूटे पत्थरों वाले निर्जन वन में चित्रकूट नामक एक रमणीय पहाड़ है।)

पाठक देखेंगे कि इस जगह भी भरद्वाज मुनि ने अपने आश्रम से चित्रकूट १० क्रोश दूर बतलाया है। इस वास्ते कि एक योजन चार क्रोश का होता है। जिस तरह से वाल्मीकि ने संगम और चित्रकूट का वर्णन किया है उससे यह अवश्य प्रतीत होता है कि उनको इन स्थानों की पूर्ण जानकारी थी और वे संगम और चित्रकूट दोनों स्थानों में बराबर आते-जाते रहे थे। और यह बात भी मालूम होती है कि चित्रकूट से ८-९ कोस पर बघेरी ग्राम है उसके पास लालापुर नामक एक छोटी-सी पहाड़ी है। लालापुर, राजापुर और चित्रकूट के लगभग बीच में है। आमतौर पर यह माना जाता है कि वाल्मीकिजी का आश्रम लालापुर में ही था। यदि यह बात सत्य है तो इसमें कोई सन्देह नहीं कि वाल्मीकिजी संगम और चित्रकूट सैकड़ों दफे गए होंगे और वे दोनों का रास्ता भले प्रकार जानते होंगे। पाठकों को याद होगा कि तुलसीदासजी ने अपनी रामायण में श्री रामचन्द्रजी का भरद्वाज-आश्रम में एक रात्रि का रुकना तो वर्णन किया है, परन्तु मुनि से चित्रकूट जाने के बारे में कोई चर्चा नहीं की। चित्रकूट जाते हुए रामचन्द्रजी वाल्मीकि के आश्रम में ठहरे और वाल्मीकि-जी ने रामचन्द्रजी को चित्रकूट जाने की सलाह दी। तुलसीदास जी का जन्म सं० १६३१ में हुआ और मृत्यु १६८० में, जिसको लगभग २२२ वर्ष हुए। अब यह स्पष्ट है कि तुलसीदासजी के समय में वाल्मीकिजी का आश्रम चित्रकूट के पास होना एक प्रसिद्ध बात थी। यह भी मानी हुई बात है कि जब कोई लेखक किसी स्थान के बारे में इतिहास का वर्णन करता है तो अधिकतर जैसा उस स्थान को वह अपनी आँखों से देखता है, वैसा ही उसका रूप खींचता है। तुलसीदासजी के समय में आज का प्रयाग वर्तमान स्थान में प्रसिद्ध था। अकबर का बनाया हुआ किला बन चुका था; प्रयाग त्रिवेणी का संगम कहलाता था और यहाँ का अक्षयवट का मन्दिर भारतवर्ष में प्रसिद्ध था। इसी कारण तुलसीदासजी जब रामचन्द्रजी के समय के प्रयाग का वर्णन करते हैं तो उसी प्रयाग का चित्र देते हैं जिसे उन्होंने अपने समय में अपनी आँखों से देखा था। वहाँ त्रिवेणी थी; वहाँ अक्षयवट था—

"संगमु सिंहासनु सुठि सोहा, छत्र अषयवटु मुनि मनु मोहा।
चँवर जमुन अस गंग तरंगा, देखि होहिं दुख दारिद भंगा ॥"

यदि वाल्मीकि के समय में भी त्रिवेणी होती, अक्षयवट होता, तो वे भी इनकी चर्चा अवश्य करते। वाल्मीकि ने संगम को प्रयाग के नाम से लिखा है, परन्तु याद रहे कि उनका प्रयाग नगर नहीं है। प्रयाग कहते हैं तीर्थ को। बीसियों प्रयाग पहाड़ियों में हैं—देवप्रयाग, रुद्रप्रयाग, इत्यादि। गंगा-यमुना का संगम-विशेष सबसे बड़ा तीर्थ है, इस वास्ते केवल प्रयाग कहलाता है। जहाँ गंगा व यमुना मिलेंगी वही स्थान प्रयाग कहलाएगा। अर्थात् प्रयाग और संगम एक दूसरे से जुड़ी हुई चीजें हैं। यह न समझिए कि हमारा प्रयाग और वाल्मीकि का प्रयाग एक ही होने चाहिए। हजारों वर्षों की ये बाते हैं। इतने समय में नदियों का पलटना कोई आश्चर्य की बात नहीं। राजापुर तो तुलसीदासजी के कारण प्रसिद्ध है ही, अगर वह स्थान भरद्वाज ऋषि के आश्रम का भी प्राचीन समय में स्थान था, तो राजापुर की महिमा का क्या कहना!

अन्त में, मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि भरद्वाज मुनि की आत्मा प्रयाग-निवासियों की और प्रयाग-यात्रियों की सदा रक्षा करती है। ऋषि-मुनि अपने आश्रम को छोड़कर नहीं जाते हैं। उनकी छत्र-छाया बनी ही रहती है। इस कारण पाठक यह न समझें कि आजकल के प्रयाग का भरद्वाज-आश्रम आदरणीय नहीं है—वह तो अवश्य है ही। प्रश्न केवल यह है कि रामचन्द्रजी के समय में उसका स्थान कहाँ था? मुझे आशा है कि विद्वान् इस प्रश्न पर कुछ प्रकाश डालेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अश्रु-हास

धारावाहिक सामाजिक उपन्यास

श्रीमती निर्मला मित्र

पहला अध्याय

तीसरी मंजिल के डेक पर से अनेक कण्ठों की मिलित स्वर-लहरी एकाएक ही गूँज उठी, "जय जय भारत माता की जय।" दिलीप जो अब तक अपने केबिन के काउच पर पड़ा 'पोर्ट-होल' (खिड़की) के बन्द काँच पर सागर-तरंगों का सूर्य-किरणों से चक-मकाकर झागों के मुकुट से उचट-उचट पड़ना निर्निमेष नेत्रों से देख रहा था, हड़बड़ाकर उठ बैठा। उसे लगा, मानों यात्रियों को कोई महानिधि मिल गई है। तो क्या दिलीप की सत्रह साल की उम्र की छूटी वह पुण्य-भूमि—भारत-भूमि—आ गई! जिसके चिह्न-मात्र के दर्शन से—यात्रियों में हर्षातिरेक का जलद-मन्द्र उच्छ्वास सागर के कलोच्छ्वास को डुबाकर हिल्लोलित हो रहा है। तो अब दिलीप भी क्यों अन्दर रहे! सो वह भी अब केबिन छोड़कर ऊपर डेक-चेयर पर आ बैठा। उसने देखा, सारे यात्रियों की दृष्टि उस अदूर की तीर-भूमि को लक्ष्य कर निर्वाक् और स्तब्ध-मौन में समाहित हो गई है। मानों पाने का और पा लेने का जो सन्देह अब तक द्वन्द्व-दोला में शायित था, वह अब एकान्त निश्चितता में निरोपित हो चित्र और दृश्यों में परिणत होने लगा है। और फिर क्रमशः वह तीर-बेला, जिसके पाने की आशा से कम-से-कम तीन हजार यात्री दिन-प्रतिदिन व्याकुल और उन्मुख थे, धीरे-धीरे निकट आई। तट की वृक्षावलि की श्यामलता, बम्बई का हाईकोर्ट, आँखों के सामने उद्भासित हो उठे। गिरजे की उच्च चूड़ा और उसकी निकटवर्तिनी अपरूप सौधावलियाँ दृष्टिपथ में आईं और फिर धीरे-धीरे सम्हल-सम्हलकर 'प्रिन्सेस मेरी' जहाज बैलेर्ड पीयर से सटकर खड़ा हो गया।

बैलेर्ड पीयर में खड़े हजारों मिलनेवाले अपने-अपने आत्मीय बन्धुओं व परिवार सहित विदेश से समागत प्रिय की प्रत्याशा में ऊपर चढ़ने की सीढ़ी में ही ठेलमठेल मचाने लगे। झनझनाहट के शब्दों से लंगरों का गिरना, सामानों की उठावा-धरी और उसके साथ कुलियों की अपूर्व-अपूर्व भाषा में चीख-पुकार मिलकर जहाज-घाट जैसे एक क्षण में एक बड़े-से मेले में रूपान्तरित हो गया।

किन्तु दिलीप को जो कि इसी जहाज पर योरप से लौटा है—उतरने-चढ़ने की कोई चिन्ता नहीं है। क्योंकि अदन के बन्दरगाह में जहाज के लगते ही उसे रायबहादुर चुन्नीलाल वर्मा का तार मिल गया था। उसमें लिखा था, "तुम्हारी 'पोस्टिंग' हेड आफिस से मिलकर मैंने यहीं अपने इसी जिले में करवा ली है और बम्बई के जहाज-घाट पर तुम्हारे लिए मैं खुद मय चप-रासियों के हाजिर रहूँगा। उतरने के लिए तुम कोई कष्ट न करना।"

अतः दिलीप अपने असबाब आदि की ओर से एक प्रकार से निश्चिन्त-सा होकर अब कोलाहलमयी जनता की ओर देखने लगा।

दिलीप के अत्यन्त निकट एक वृद्ध पारसी महिला एक नव-युवक को छाती से लगा मिल रही थी। वह नवयुवक संभवतः उसका पुत्र था और विदेश से सफलता प्राप्त कर लौटा था। महिला की आँखों में उमड़े हुए अश्रु-जल के मोती-से दो बिन्दु थे जो कि आनन्द के क्षणस्थायी बूँद बनकर लड़के के झुके हुए ललाट पर टपक पड़े थे।

सहसा दिलीप का हृदय सन्न होकर अवसाद-ग्रस्त हो गया। उसे लगा—इस प्रकार मुझे छाती से चिपकाकर स्वागत करने के लिए इस दुनिया में अब मेरा कौन है! उसे उस घड़ी की याद आई, जब अतीत की एक अँधेरी रात में उसकी मा हिचकियाँ भरती हुई मृत्यु से जूझ रही थी—और उसके डाक्टर पिता भाँति-भाँति की दवाओं, इन्जेक्शनों और प्रयोगों में जीवन का बीज ढूँढ़ने में तल्लीन थे,—तात्पर्य यह कि तब भी वे अपनी जीवन-संगिनी को बचा लेने के लिए प्राणपण से चेष्टा कर रहे थे। और वह छोटा दिलीप—हाँ ग्यारह साल का दिलीप—तब मा के अपार कष्ट से भयभीत होकर आँखों पर हाथ रक्खे कमरे से बाहर निकल भागा था। वह भागकर पहुँचा था महरी रामरति की गोद में मुँह छिपाकर जी खोलकर रो लेने के लिए उसके कमरे में। उस समय अबोध और हतचेतन महीप को यह भी ज्ञात नहीं था कि महरी उस समय अपने कमरे में नहीं थी। वह तो उस समय बहूरानी के सिरहाने बैठी उनकी आँखों के पलकों पर हाथ फेर रही थी, जो कि एकदम ही स्थिर हो जाने के लिए मृत्यु की प्रचण्ड ऐंठन से खिंच-खिंचकर बार-बार उघड़ रहे थे।

महरी का आश्रय न पाकर दिलीप रात्रि की वायु के प्रबल हाहाकार से डरकर वहाँ से भी भागा था। उसे लगा था, जैसे ईशान-कोण से मृत्यु-राक्षसी रोंएँदार हाथ का नखदार पंजा उसकी माता के कलेजे को फाड़कर खून निचोड़ लेने के लिए शनैः-शनैः बढ़ा आ रहा है। फिर प्रचण्ड भय से चीत्कार कर दिलीप वहीं गिर पड़ा था।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri
CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर--फिर क्या होता !' दिलीप सोचने लगा। शोक से, ऊपर से उस थर-थर कँपानेवाली माह-पूस की ठंढ से फिर दिलीप बेहोश हो जाता। हाँ, निश्चय ही यदि ठीक समय दिलीप के चीत्कार से वह पड़ोसिन चाची मनोजा न आतीं तो दिलीप का परिणाम यही होता।

चाची के वक्षःस्थल के गरम आश्रय से दिलीप तो बच गया किन्तु चाची का अन्त जिस विशेषता से हुआ, उसकी टीस दिलीप के हृदय में आज भी ठनकती-सी जान पड़ रही है। वह किसी प्रकार के प्रलेपन से कभी नहीं मिट सकती !

चाची व पड़ोसिन मनोजा की छाती में मुँह छिपाए हुए दिलीप को यह अनुभव हो रहा था कि चाची की पीठ पर चैत प्रथा से घोड़े के चाबुक से लगातार प्रहार हो रहे हैं। हारों की सटासट की आवाज से बूढ़ी दाई रामरति भी दिलीप की माता के शव को अकेला छोड़ "ओ दई, ओ दई" दौड़ी आई थी।

फिर क्या हुआ, यह दिलीप को स्मरण नहीं है। होश आने पर उसने देखा था कि उसके पिता उसके पास खड़े कह रहे हैं, "दिलु, बेटा, मुँह खोलकर यह दवा तो पी ले।"

दूसरा अध्याय

माता की स्नेहमयी गोद की बिछुड़न से हो, या उस रात की उन विभीषिकाओं के दर्शन से हो, दिलीप तब पन्द्रह दिन तक बीमार पड़ा रहा था। उसी बीच चाची मनोजा एक रोज शाम के अँधेरे में छिपकर दिलीप के पास आई थीं। उसके सिर पर कोमल हाथ फेरकर वे बोली थीं, "अब तेरा जी कैसा दिलीप ?"

घबराया-सा दिलीप तब व्याकुलता से सिर्फ यही पूछ सका था, "उस रात को तुम्हें चाचा ने क्यों मारा था ?"

उस समय मनोजा दिलीप का हाथ अपने हाथ में उठाकर देख रही थीं। शायद वे सोच रही थीं कि इस बच्चे के सामने व्यर्थ की बातों की चर्चा क्यों की जाय।

किन्तु दिलीप का मन तो रोग-शय्या पर पड़े-पड़े भी उस काण्ड के कार्य के संबंध में जानने के लिए बार बार मचल रहा था। उसने स्वर में करुणा भर कर प्रश्न किया था, "उस दिन मैंने का तुमने क्या अपराध किया था, चाची ?"

उत्तेजना की व्याकुलता के कारण बालक के सिर से पसीना चू रहा देख मनोजा ने अपने आँचल से उसे पोंछा था; फिर पंखा झलते हुए बोली थीं, "अपराध की बात तू नहीं समझेगा, दिलीप, किसी आतुर शिशु पर सहानुभूति प्रकाश करना यदि अपराध है तो मैंने वही अपराध किया था।"

दिलीप तब मनोजा चाची के वाक्य का एक वर्ण भी नहीं समझ सका था।

चाची तब दिलीप के पीड़ित मुख और आतुर नेत्रों पर तरस खाती बोली थीं, "अरे दिलीप, पुलिस के आदमी बड़े सन्देही होते हैं। तेरे माध्यम से तेरे पिता से मेरा कोई संबंध न जुड़ जाए, इसी लिए तेरे चाचा की यह सतर्कता थी। यही नहीं, इस सतर्कता के कारण ही, वे मुझे अपने पत्नीत्व से भी वंचित कर चिरकाल के लिए मायके भेजे दे रहे हैं। तुम सबसे छूटकर मैं कल जा रही हूँ, दिलु।"

दिलीप का दिल तब धक् से रह गया था। वह रोकर बोला था, "मैं तुम्हें जाने नहीं दूँगा, चाची; हरगिज नहीं जाने दूँगा।"

तब चाची के नेत्रों से भी अश्रु ढरक पड़े थे। दिलीप को छाती से लगा वे कहने लगी थीं, "मेरे वश की बात होती तो मैं तुझे साथ ले चलती। पर करूँ क्या, तेरे पिता ही तो इन के सब से बड़े शत्रु हैं।"

दिलीप के पिता पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट योगेन्द्र के इतने बड़े शत्रु क्योंकर बन गए, यह बात चाची से पूँछने की दिलीप को तब हिम्मत नहीं हुई थी। इसकी समझ भी तब अधिक नहीं थी। पर आज जब दिलीप चाची के उन अस्पष्ट वाक्यों पर विचार करता है तब उसके मन में वे ही शब्द मार्मिकचित्रों-से प्रति भासित हो उठते हैं। दिलीप देखता है, सुदूर अतीत में उसी चाची को एक रूपसी प्रतिमावत्। चाची के उस अपार्थिव रूप को लेकर ही उनके स्वामी योगेन्द्र का अमानुषी अत्याचार जब देखो तब उनकी पीठ पर बरस पड़ता था।

तो क्या किसी की स्त्री रूपवती नहीं होती है ! और क्या पास-पड़ोसवाले सदा उस रूपसी को घूरा ही करते हैं !

हाँ, उस दिन की बात भी दिलीप के मन में हठात् आ गई जिस दिन स्त्रियों की एक पार्टी में दिलीप की मा ने चाची को भी बुला भेजा था। लेकिन चाची तब तक नहीं आ पाई थीं, जब तक दिलीप स्कूल से लौट आया था। दिलीप की मा ने व्यस्तता से कहा था, "जा तो रे दिलीप, जल्दी से अपनी चाची को लिवा ला। कहना, तुम्हारे लिए सारी निमन्त्रित महिलाएँ सामने खाना धरे हाथ सिकोड़े बैठी हैं।"

तब दिलीप उछलता-कूदता दौड़ा गया था। किन्तु चाची के घर में उसने जो काण्ड होते देखा था उससे वह स्तंभित रह गया था। चाची एक कोठरी में बन्द थीं। योगेन्द्र दालान में चहल-कदमी करता हुआ गरज रहा था, "खबरदार, किसी दिन उस मिचमिचे डाक्टर के यहाँ गई तो याद रख, तेरा सिर बन्दूक से धूल की तरह उड़ा दूँगा।"

और उसी शाम को अपने माता-पिता को दिलीप ने यों कहते सुना था कि, "हाँ, कोई-कोई ऐसे प्रचण्ड शक्की भी हुआ करते हैं।"

दिलीप की मा कह रही थी, "लेकिन उसका शक तुम्हारे ही ऊपर इतना ज्यादा क्यों है, यह तो मैं कुछ भी न समझ सकी।"

"वह इसलिए कि जब मैं कलकत्ता के मेडिकल कालेज में पढ़ता था, तब इसी लड़की से मेरे विवाह की कुछ बातचीत चली थी। किन्तु लड़की के पिता ने एक अनिश्चित आय के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डाक्टर के हाथ में लड़की देने के बजाय एक हुकूमतवाले अफसर को कन्या-दान करना उचित समझा था। परन्तु मेरी समझ में यह नहीं आता कि विवाह के पहिले लड़के-लड़कियों की तो कई जगह से बात-चीत आया-जाया करती है। इससे उन निर्दोष बिचारे और बिचारियों का भला क्या बनता-बिगड़ता है। न जाने योगेन्द्र इसे क्यों नहीं समझता है?" दिलीप के पिता ने कहा था।

दिलीप की मा तब मुस्कराकर बोली थीं, "ओह, तब तो योगेन्द्र का सन्देह ठीक ही है।"

उच्च हास्य कर पिता कह उठे थे, "वाह रे।"

"वाह रे क्यों? तुम दोनों का रूप क्या तुम्हीं दोनों के योग्य नहीं है? सचमुच ब्याह होता तो जोड़ी खूब बनती।"

और दिलीप के पिता फिर भय से कह उठे थे, "फिर भी तुम्हें यह न भूलना चाहिए कि मैंने कभी उस स्त्री के आँचल का कोना भी नहीं देखा है।"

तब दिलीप की मा न मालूम किस अनिर्देश्य भय से काँपती हुई बोली थीं, "नहीं-नहीं बाबा, उसकी स्त्री के आँचल का कोना भी तुम्हें कभी देखना न पड़े। योगेन्द्र जिस प्रकार का आदमी है, उससे भय होता है कि कहीं सन्देह-सन्देह ही में तुम्हारा किसी दिन खून न कर डाले।"

दिलीप के पिता तब 'हो-हो' करके हँस पड़े थे।

मा फिर भी गम्भीर रही थीं और उन्होंने कहा था, "मैं सोचती हूँ कि ऐसे खतरनाक आदमी के समीप रहना ठीक नहीं है। क्या तुम्हारी बदली कहीं और नहीं हो सकती! एक ब प्रयत्न करके देखिए न!"

उन्होंने इस सुझाव को उपेक्षा की दृष्टि से देखते हुए क था, "मुझे क्या पड़ी है? उसे डर हो तो वही क्यों न अप बदली दूसरे जिले में करवा ले।"

लेकिन तीन-चार मास के अन्दर ही दिलीप उन सारी बा को भूलकर एक दिन पेड़ से गद्दर अमरूद तोड़ने के लालच योगेन्द्र के अहाते में घुस पड़ा था और उसी समय चाची सात-आठ साल की लड़की रुचिरा चिल्ला पड़ी थी, "चोर-चो ओ रामू, दौड़—चोर सारे अमरूद तोड़े ले रहा है।"

और उसी समय रामू अरदली ने दौड़कर दिलीप का ह पकड़ लिया था।

अपने दालान में खड़ी वह छोटी रुचिरा तब फ्राक मटका खिलखिला पड़ी थी और ताली बजाकर बोली थी, "क्यों रामदी कैसा मजा आया; कँगले लोग फोकट के अमरूद लेने आते कंजूसों से पैसे से अमरूद मोल लेते नहीं बनता।"

उस समय अनन्योपाय दिलीप प्रचण्ड अवमानना से फू फूटकर रो पड़ा था। किन्तु तत्क्षण ही चाची चिक के अन्दर निकल आई थीं और रुचिरा के दोनों गालों में चट-चट थप जमा रामदीन से कहने लगी थीं, "पाजी, नालायक, छोड़ उसे

(क्रमशः)

स्वर्णभद्र के सरस पुलिन पर—

श्री अमिताभ गुप्त

मुग्ध खड़ा मैं देख रहा था,
प्रथम सांध्य श्रावण की सस्मित छवि अनुपम अवलेख रहा था।
स्वर्णभद्र के सरस पुलिन पर।
स्वर्णिम सैकतराशि-राजि पर,
चंचल स्वर्णिम लहर लहर पर, संध्या का रवि—
अपनी स्वर्णिम किरण-किरण से,
मन्द सजल नीरद का अंतर,
स्वर्णिम कर आकाश बृहत्तर
स्वर्णिम कर श्रावण की संध्या,
बिछा स्वर्णिमा की छवि भू पर
विदा ले रहा था हिल-मिलकर,
मूक पहाड़ों से—जो होकर चित्र-लिखित से निरख रहे थे,
स्वर्णभद्र की छवि दुकूल पर।
'पुनः-पुनः आना'—कहते थे श्याम शिखर दल;
'आऊँगी निश्चय, पर मुझको भूल न जाना';—
कहती थीं किरणें उत्तर में।
और उधर संध्या का रवि निज स्वर्ण-विभा ले,
दूर क्षितिज-सोपान पर शिथिल उतर रहा था।
स्वर्ण प्रहर था, दृश्य मुखर था;
मन्द-मधुर था पवन बह रहा;
पुरवैया की मदिर लहर में तिरते थे बादल दल-के-दल;
रोहिताश्व के तुङ्ग शिखर पर सुखद दृश्य था इधर घिर रहा—
और प्रतीची के प्रांगण में,
छिड़ा हुआ था मिलन-महोत्सव;
स्वर्णभद्र की कलकल ध्वनि थी,
मधुर गान खग-कुल का कलरव,
लुटा रही थी कुंकुम रोली
लाल गुलाल रङ्ग की झोली
केशर मधुर पराग मग्न हो—
प्रियतम दिनमणि के स्वागत में सांध्य सुन्दरी!
ऋजुतिर्यक्-गामिनि सरिता के बिन्दु-बिन्दु में—
प्रतिबिम्बित थी छवि संध्या की सुख-उमङ्ग की;
खड़ा कूल पर कवि सस्मित छवि देख रहा था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

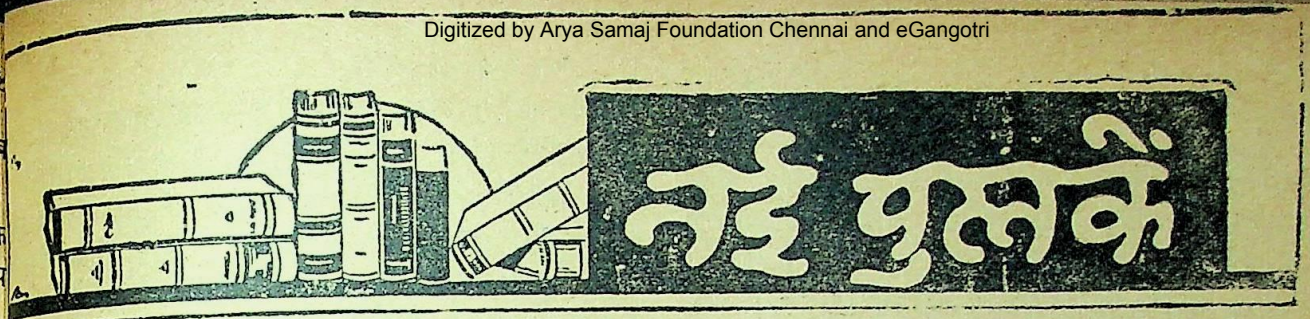

१—**रङ्गमहल**—लेखक, पं० देवीदयाल चतुर्वेदी 'मस्त'; प्रकाशक, हिन्दुस्तानी बुकडिपो, लखनऊ; पृष्ठ-संख्या ११६; मूल्य ।।) रु० ।

प्रस्तुत उपन्यास मस्तजी का तीसरा मौलिक, सामाजिक उपन्यास है। अब तक उनके छः उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं। 'रङ्गमहल' का कथानक सुलझा हुआ और रोचकता से पूर्ण है। उन स्वतन्त्रता के दीवाने तरुणों की मनोवृत्तियों और कार्य-कलापों का चित्रण 'रङ्गमहल' में किया गया है, जो क्रान्ति के मार्ग से विचलित होकर 'क्रान्ति का पथ' अपनाते हैं और अन्त में विफलता ही जिनके हाथ लगती है। इन प्रवृत्तियों के चित्रण में लेखक ने जीवन के प्रति तथा समाज और राजनीति के सम्बन्ध में भी अपना निजी दृष्टिकोण व्यक्त किया है और इस दृष्टि से 'रङ्गमहल' एक सफल उपन्यास है।

एक मजिस्ट्रेट की पुत्री—लता—इस उपन्यास की प्रधान पात्र है। लता का चरित्र-चित्रण करने में लेखक पूर्णतः सफल हुआ है। लता का अपना व्यक्तित्व है। वह निरी भावुक कुमारी नहीं, एक विचारक की स्वस्थ और सुलझी हुई वृत्ति उसमें विद्यमान है। अपने सुलझे हुए विचारों को अपनी मौलिक तर्क-शक्ति के आवरण में वह अवसर पड़ने पर बिना किसी हिचकिचाहट व्यक्त कर देती है और दूसरों को प्रभावित कर देने की क्षमता भी रखती है। वह जो कुछ निश्चय कर लेती है, उसे करके ही दम लेती है। उसे अपने निश्चय से डिगा देना आसान काम नहीं।

क्रान्तिकारी दल की सदस्या के रूप में लता का कार्य-कलाप भारतीय कुमारी के साहस और रोमांच का परिचायक है, और उपन्यास के कथानक को अत्यन्त क्षिप्रता के साथ उत्तरोत्तर बढ़ाने में भी सहायक सिद्ध हुआ है। लेकिन जब यह दल लता के पावन उद्देश्य से हटकर सिर्फ सरकारी अफसरों की हत्या करने के गर्हित कार्य पर उतर आता है, तब लता चतुराई से दल से पृथक् हो जाती है। दल से हट जाने पर भी कैप्टेन 'विलास गुप्ता' को वह भूलती नहीं है। लेकिन समर्पण नाम की वस्तु लता को कभी और कहीं स्पर्श नहीं कर पाती। किसी के ऊपर अतिक्रमण को वह नारी के लिए कल्याणकारी नहीं मानती। स्त्री-स्वातन्त्र्य का जो रूप आज हो रहा है, वह उसे पसन्द नहीं है। वह कहती है—'सो तो आजादी से घूमनेवाली लड़कियाँ भी आजादी का ऐसा दुरुपयोग करते देखी जाती हैं कि सुननेवाले चौंककर रह जाते हैं। इस सबके लिए न तो आजादी का ही दोष है, न आजादी का। दोष है उस शिक्षा का वातावरण का, जिसमें हम पलते हैं।'

पाश्चात्य नारी बनने और जासूसी करने के प्रश्न पर 'भारतीय नारी का जो रूप लता खींचती है, वह न केवल अनेक प्रश्नों का समाधान कर देता है, प्रत्युत मननशीलता के क्षेत्र में व्यापकता का समावेश भी कर रहा है।

कमलदास का जीवन बहुत ही करुण है। एक धूमिल उद्देश्य को लेकर भारत के अगणित बलिदानियों की तरह वह भी अपनी जीवन-लीला समाप्त कर देता है। मार्ग भिन्न होते हुए भी उसकी देशभक्ति पर सन्देह नहीं किया जा सकता। इसी 'गुप्ता' की पावन स्मृतियों की समाधि पर लता अपने जीवन का 'रङ्ग महल' निर्मित करती है—ऐसा 'रङ्गमहल' जिसकी पृष्ठभूमि पर समाज-विद्रोह के स्फुलिङ्ग धधक रहे हैं।

लता और कमलदास दोनों ही व्यक्तित्व पाठक के हृदय को स्पर्श कर लेने की क्षमता रखते हैं, उसके मन को छू लेते हैं और उपन्यास पढ़ चुकने के बाद भी एक सबल स्मृति छोड़ जाते हैं।

भाषा सरल, सुन्दर और प्रवाहपूर्ण है। प्रकृति का चित्रण करने में मस्तजी की लेखनी सजीवता का स्पर्श कर रही है। खेद है कि प्रूफ की अशुद्धियाँ इस उपन्यास में बहुत अधिक रह गई हैं।

—'पंडित'

२—**धर्म और दर्शन**—रचयिता तथा प्रकाशक, क्रमशः श्रीयुत बलदेव उपाध्याय, एम० ए०, साहित्याचार्य, प्रोफेसर संस्कृत तथा पाली विभाग, हिन्दू-विश्वविद्यालय, काशी और शारदा मन्दिर, बनारस हैं। अजिल्द पुस्तक की एक प्रति का मूल्य २॥) है। पृष्ठ संख्या लगभग २२५ है।

इस ग्रन्थ में लेखक महोदय ने भारत के प्राचीन और अर्वाचीन धार्मिक सम्प्रदायों का वर्णन सुचारु रूप से किया है। यह पुस्तक लेखक के 'भारतीय दर्शन' नामक पुस्तक की पूरिका है। इस पुस्तक में कुछ ऐसे धार्मिक सम्प्रदायों का वर्णन है जिन का नाम भी अनेक पाठकों ने न सुना होगा। उदाहरणार्थ, आजीवक सम्प्रदाय पाणिनि से भी प्राचीन है। महाराष्ट्र के सत्पन्थ और भानभाव सम्प्रदायों का तो नाम आलोचक ने इसी पुस्तक के द्वारा परिज्ञात किया है। पाश्चात्य देशों के समान यहाँ दर्शन धर्म का विघातक नहीं प्रतिपादक रहा है। इतना ही नहीं, जिस धर्म का दर्शन को दृढ़ आधार नहीं प्राप्त है, वह कालान्तर में नष्ट हो जाता है। पर हिन्दू-धर्म दर्शन की दृढ़ शिला पर स्थित है, इस कारण पाश्चात्यों के वैज्ञानिक सिद्धान्तों के आक्रमण से उसके गिर जाने का भय नहीं है। इस पुस्तक का 'भारतीय दर्शन का समन्वय' नामक अध्याय न केवल पठन, प्रत्युत मनन का विषय है। समन्वय ही भारतीय विद्वानों की विशेषता है। वे विरोध में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अविरोध ढूँढ़ निकालते हैं। पुस्तक अनेक दृष्टियों से पठनीय और उपादेय है।

३—**व्रत-चन्द्रिका**—लेखक और प्रकाशक, क्रमशः श्रीयुत गौरीशंकर उपाध्याय और शारदा मन्दिर, काशी हैं। अजिल्द पुस्तक का मूल्य १॥) है। पृष्ठ-संख्या लगभग डेढ़ सौ के है। इसके भूमिका-लेखक पंडित बलदेव उपाध्याय, एम० ए०, साहित्याचार्य, प्रोफ़ेसर हिन्दू-विश्वविद्यालय काशी हैं।

इस ग्रन्थ में हिन्दुओं के व्रतों और त्योहारों का संक्षिप्त प्रामाणिक विवेचन किया गया है। व्रत उस कर्म या नियम को कहते हैं जिसके द्वारा आत्मशुद्धि संपादन कर मनुष्य परमात्मा का चिन्तन करते हुए उसके साथ तन्मय होकर रहता है। शास्त्रों का विधान है कि व्रत के दिन मनुष्य को निराहार रहना चाहिए। इससे आत्मशुद्धि में सहायता मिलती है। कुछ लोग व्रतों की खिल्ली उड़ाते हैं, पर यदि ईश्वर में हार्दिक आस्था रखकर पूर्ण विश्वास तथा सत्यता के साथ उनका अनुष्ठान किया जाय, तो ऐहिक और पारलौकिक फल मिलने में कुछ भी संदेह नहीं रहता है। इसमें पुरुष और स्त्री दोनों ही के व्रतों का वर्णन किया गया है; इतना ही नहीं, इसको समसामयिक बनने के लिए लेखक ने आर्यसमाज के कतिपय उत्सवों को भी सम्मिलित कर दिया है। कहीं किसी व्रत की प्राचीनता वेद और ब्राह्मण ग्रन्थों के आधार पर भी सिद्ध की गई है। व्रत-सम्बन्धी काल का निर्णय भी पुराणों की सहायता से किया गया है। कहीं किसी व्रत की कथा भी दे दी गई है। न केवल व्रत के लौकिक स्वरूप, उसके महत्त्व की ओर भी लेखक ने जनता का ध्यान आकर्षित करने में कोई कसर नहीं रक्खी है। अर्थात् उसको राष्ट्रीय रूप देने की भी प्रार्थना की है। इस प्रकार की पुस्तक लिखने के लिए लेखक महोदय सचमुच बधाई के पात्र हैं।

—काशीनाथ रा० तिलक

४—**नये एशिया के निर्माता**—(सुनयातसेन, लेनिन और गांधी)—लेखक, श्री विजय वर्मा और प्रकाशक, नवयुग-ग्रंथ-कुटीर, बीकानेर हैं। पृष्ठ-संख्या १७६ तथा मूल्य २) है।

जैसा कि पुस्तक के नाम से सूचित होता है, लेखक ने उन तीन महापुरुषों के जीवन और सिद्धान्तों का विवेचनात्मक परिचय दिया है जिन्होंने पददलित एशिया में नवीन जागरण की लहर फैलाई और संसार के सबसे अधिक विस्तृत भू-भाग के निवासियों को अपना गौरव समझने की नवीन प्रेरणा दी। इस छोटी-सी पुस्तक में सुनयातसेन, लेनिन और गांधी के विषय में लेखक ने उन सभी बातों का समावेश करने का यत्न किया है जिनके द्वारा उनके प्रभावशाली व्यक्तित्व तथा उनके द्वारा चलाए हुए क्रांतिकारी आंदोलनों की प्रमुख शक्तियों का परिचय मिलता है। साथ ही पाठक के हृदय में इस विषय में अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त करने की जिज्ञासा भी पैदा होती है। महापुरुषों के व्यक्तित्व के विषय में लिखने के लिए व्यापक दृष्टिकोण और विशुद्ध सहानुभूति की आवश्यकता होती है। लेखक में ये दोनों बातें प्रचुर मात्रा में हैं। उसने अपनी सामग्री अने स्रोतों से इकट्ठी करके उसका सफलतापूर्वक समन्वय किया है हिन्दी में इस विषय की पुस्तकें इनी-गिनी ही हैं। हमारा विश्वा है कि हिन्दी के पाठकों में 'नये एशिया के निर्माता' का व्याप स्वागत होगा। ऐसे समय में जब कि एशिया के लगभग प्रत्ये देश में स्वतंत्रता और आत्म-गौरव की नवीन भावना क्रियात्म रूप में प्रबल हो रही है, ऐसी पुस्तकों का अधिकाधिक प्रच होना चाहिए। शैली रोचक और प्रवाहयुक्त है।

५—**विश्व-संस्कृति का विकास**—लेखक, श्री कालिदा कपूर तथा प्रकाशक, विद्या-मंदिर, चौक, लखनऊ हैं। पृष्ठ-संख्य १०७ और मूल्य १।) है। पुस्तक का परिचय श्री संपूर्णानंदजी लिखा है।

प्रस्तुत पुस्तक में लेखक ने आदिम काल से नवीन युग त मनुष्य की सभ्यता के विकास का दिग्दर्शन कराने का प्रय किया है। हिंदी में ऐसी पुस्तकों का नितांत अभाव है जिन साधारण पाठकों को विश्व के इतिहास का ज्ञान हो सके। अप समाज को समझने के लिए तथा उस समाज की उन्नति में यो देने के लिए प्रत्येक सजग नागरिक को संसार के विभिन्न भू-भा में बसनेवाले मानवों की सांस्कृतिक चेष्टाओं—सफलताओं औ विफलताओं—को समझने की आवश्यकता है। प्रस्तुत पुस्त संक्षेप में विश्व के सांस्कृतिक विकास की रूप-रेखा प्रस्तुत कर का प्रयत्न करती है। शैली रोचक और विषय का प्रतिपाद सर्वसाधारण के लिए उपयुक्त है। आशा है, पाठक-वर्ग इस स्वागत करेगा।

६—**नया साहित्य**—भाग एक—संपादक, सर्वश्री नरे शर्मा, अमृतलाल नागर, रमेश सिनहा तथा प्रकाशक, ज प्रकाशन-गृह, राजभवन, सैण्डहर्स्ट रोड, बम्बई ४ हैं। पृष्ठ संख १०८ और मूल्य एक रुपया है।

'नया साहित्य' शीर्षक के नीचे व्याख्यात्मक उपशीर्षक है 'देश की नई साहित्यिक चेतना का प्रतिनिधि'। 'भाग एक' प्रतीत होता है कि 'नया साहित्य' कोई सामयिक पत्रिका यद्यपि इस प्रकार का स्पष्ट संकेत पुस्तक में कहीं किया न गया है। उपरिलिखित संपादकों के अतिरिक्त इसका एक संपाद मंडल भी है जिसमें सर्वश्री यशपाल, रामविलास शर्मा, शिवदा सिंह चौहान, प्रकाशचंद्र गुप्त और पहाड़ी हैं।

'नया साहित्य' की सूची में लेख, कहानी, स्केच रिपोर्ट (?), कविता, उपन्यास, जीवन-चरित, आलोचना, सांस्कृति जागरण, सब्ज़ बाग तथा शोध और अनुसंधान शीर्षकों में उस भिन्न-भिन्न रचनाओं का वर्गीकरण दिया गया है। डाक्ट मोतीचंद का 'प्राचीन भारत में राशनिंग' उनके अध्ययन व परिचायक है। वस्तुतः इसमें दुर्भिक्ष-निवारण के प्राचीन उपाय का विवरण दिया गया है। डाक्टर रामविलास शर्मा का 'आ काव्य' शीर्षक लेख वाल्मीकीय रामायण का रोचक विवेचनात्म परिचय उपस्थित करता है। इनके अतिरिक्त उर्दू-साहित्य प्रगतिशील आन्दोलन और चीन का नया साहित्य शीर्षक ले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी परिचयात्मक हैं। 'आलोचना' में 'सात आधुनिक हिंदी कवि' कवियों का विस्तारपूर्वक प्रशंसात्मक परिचय दिया गया है। ही प्रकार 'धन की चोट और कलाकार' शीर्षक के अंतर्गत श्री शपाल के 'अभिशप्त' और श्री अज्ञेय के 'परंपरा' कहानी-संग्रहों का परिचय दिया गया है। 'जीवन-चरित' में 'प्रेमचन्द घर में' का परिचय है। सांस्कृतिक नव जागरण के अंतर्गत बंबई के म्युनिस्टों-द्वारा चलाए गए जन-नाट्य आन्दोलन का विवरण दिया गया है। 'सब्ज बाग' में आधुनिक सिनेमा की आलोचना और शोध और अनुसंधान में नागरी-प्रचारिणी सभा का रिचय दिया गया है। इनके अतिरिक्त सर्वश्री यशपाल, अश्क और लुई एडामिस की तीन कहानियाँ सर्वश्री प्रकाशचंद्र गुप्त और रांगेय राघव के दो स्केच, श्री अमृतलाल नागर के एक न्यास का अंश तथा सर्वश्री नवीन, निराला, केदारनाथ अग्रवाल, जोश, नरेन्द्र शर्मा और सफदर की दस कविताएँ। इस प्रकार 'नया साहित्य' में एक प्रकार की विचार-धारा होते भी विषयों की पर्याप्त विभिन्नता है। विषय-निर्वाचन की ति छपाई और गेट-अप भी सुरुचिपूर्ण है। आशा है 'नया हित्य' हिंदी में एक विशिष्ट स्थान प्राप्त करेगा।

७—**मन्वन्तर**—लेखक, श्री शंभूदयाल सकसेना और प्रकाशक नवयुग-ग्रंथ-कुटीर, बीकानेर हैं। पृष्ठ-संख्या छियानवे और य १॥) है।

'मन्वन्तर' सकसेनाजी की २१ कविताओं का संग्रह है। धिकांश कविताएँ अतीत के गौरव और नवयुग के जागरण से ध रखती हैं। कवि प्राचीनता का अन्धानुरागी नहीं है, वह ढ़ का घोर विरोधी और उच्च आदर्शों का भक्त है। इतिहास विषय में वह कहता है :—

भ्रांत यह अतिरंजित इतिहास !
व्यर्थ के गौरव गान,
दर्प से एक महान्,
अपर-मुख म्लान,
किसी को आर्य, अनार्य
किसी को यवन,
किसी को हूण, यहूदी, द्रविड़,
किसी को शीश,
किसी को चरण;
मनुज को मनुज न कहना आह !

× × ×

फाड़ फेंको इतिहास !
हमें तुमसे, तुमको हमसे करता जो दूर,
दे रहा वर्गवाद को जन्म,
घुटी के साथ,
न जिसके पास मिलन संदेश,
न जिसके पास प्रेम-सद्भाव
फूट ही जिसका मोहन मंत्र,
विभाजन प्राण !

'मन्वन्तर' शीर्षक कविता में अपने मन्वन्तर के गौरव-गान में कवि वैदिक काल से लेकर मध्यकाल तक की भारतीय संस्कृति का सिंहावलोकन करके अपना समन्वयात्मक दृष्टिकोण उपस्थित करता है, यथा—

दर-दर मंदिर-मस्जिद सुंदर,
पग-पग किसान-श्रमिकों के घर,
हिंदू-तुर्कों से भरे नगर
यह नहीं व्यष्टि का विश्व सृजन, गौरव समष्टि ने दान किया
अपने मन्वन्तर में हमने, अपनी संस्कृति को प्राण दिया।

× × ×

केशर, चंदन, रोली, अक्षत,
बहु धूप-दीप, घृत, पंचामृत,
गंगाजल बूँद-बूँद निस्सृत,
सार्थक श्रद्धा के चरणों में जो पत्र-पुष्प-फल दान किया
अपने मन्वन्तर में हमने अपनी संस्कृति को प्राण दिया।

× × ×

मुस्लिम आत्मा, हिंदू शरीर,
कह रहा ताज यह हृदय चीर,
हो गया एक मिल नीर-क्षीर,
यों अमर कला के प्रांगण में हमने नव स्वर्ण-विहान किया,
अपने मन्वन्तर में हमने अपनी संस्कृति को प्राण दिया।

इसी प्रकार सभी कविताओं में ओजपूर्ण शैली में नवीन सांस्कृतिक जागरण का पवित्र संदेश दिया गया है। आशा है, हिंदी-संसार मन्वन्तर का स्वागत करेगा।

—ब्रजेश्वर वर्मा, एम० ए०, डि० फिल्०

८—**तूलिका** (कविता-संग्रह)—रचयिता, श्री रामाधार त्रिपाठी 'जीवन'; प्रकाशक, मन्नन-साहित्य-मण्डल, गोरखपुर। पृष्ठ-संख्या १६४; मूल्य १॥) रु०।

स्वर्गीय पं० मन्नन द्विवेदी गज़पुरी की स्मृति में स्थापित किए गए मन्नन-साहित्य-मण्डल-द्वारा प्रकाशित यह कविता-संग्रह श्री जीवनजी की स्फुट कविताओं का संग्रह है। कविताओं की भाषा सरल और प्रवाहपूर्ण है। कवि के अन्तस्तल में सन्निहित सुकुमार भावनाओं के इस व्यक्तीकरण में हर्ष-विषाद, आनन्द-उल्लास और विरह-वेदना के जो चित्र प्रस्तुत किए गए हैं, वे यथेष्ट सुन्दर बन पड़े हैं। यद्यपि कुछ कविताओं में कवि उन्हीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सब भावों और अभिव्यञ्जनाओं के फेर में पड़ गया है, जो उसके पूर्ववर्त्ती अनेक कवि अङ्कित कर चुके हैं, फिर भी कविताओं का प्रवाह इतना तीव्र और प्रभावोत्पादक है कि पाठक उन्हें एक साँस में पढ़ डालने का लोभ संवरण नहीं कर सकता। 'परिचय', 'दो तिनके', 'याद', 'प्रेम-नगर' शीर्षक कविताएँ पर्याप्त प्रभावोत्पादक और सुन्दर हैं।

कविताओं में व्यवहृत शब्दों का प्रयोग कहीं-कहीं चिन्त्य है। पृष्ठ ६ पर 'धनिकता', पृष्ठ १२६ पर 'इक' और पृष्ठ १४ पर एकवचन के स्थान पर अनावश्यक रूप से 'ये' का प्रयोग उचित नहीं कहा जा सकता। इसी तरह पृष्ठ १०६ पर 'जंजीरों' का प्रयोग पुँल्लिङ्ग में किया गया है। पृष्ठ ६ पर 'जाने कितनी दूर खेवैया' में खेवैया के प्रयोग से एक मात्रा अधिक हो गई है। आशा है, दूसरे संस्करण में ऐसी त्रुटियों को दूर करने का यत्न किया जायगा।

स्वर्गीय साहित्यिकों की स्मृति को अक्षुण्ण बनाए रखने की दिशा में मन्नन-साहित्य-मण्डल के इस प्रयत्न की हम सराहना करते हैं और आशा करते हैं कि हिन्दी-संसार इस मण्डल के प्रकाशनों का स्वागत कर इन्हें प्रोत्साहित करने का यत्न करेगा।

९—**बन्दी के गान** (कविता-संग्रह)—रचयिता, श्री हेमचन्द्र 'सुमन'; प्रकाशक, श्री जे० शांडिल्य, माडर्न बुकडिपो, नई सड़क, दिल्ली। पृष्ठ-संख्या ११०; मूल्य १॥) रु०।

प्रस्तुत कविता-संग्रह में कवि के ५६ स्फुट गीतों का संग्रह है। कवि ने स्वयं स्वीकार किया है कि 'बन्दी के गान' में कारावास में उद्भूत निराशा-आशा, मिलन एवं विछोह के ही चित्र-मात्र हैं। प्रस्तुत संग्रह का रचयिता न केवल एक भावुक कवि है, प्रत्युत मातृभूमि का एक क्रियाशील सेनानी भी है। तरुणाई के साथ भावुकता का संयोग रंगीन संसार में कवि को ले जाने के लिए जहाँ एक ओर अकुलाहट को आमन्त्रण दे रहा है, वहीं दूसरी ओर गुलाम देश में आजादी के दीवाने पथिक को मिलनेवाली यातनाएँ—बन्दीखाने की यातनाएँ—उसे दुनिया की कटुसत्यपूर्ण वस्तुस्थिति का भी परिज्ञान करा रही हैं। फलतः तरुण कवि का मन आन्दोलित हो उठा है—ऐसा कि किसी आशाप्रद लक्ष्य पर पहुँच सकने की क्षमता से वह अभी बहुत दूर दीखता है। हाँ, अन्याय के प्रतिकार के लिए जो स्फुलिङ्ग उसके कोमल अन्तस्तल में सुलग रहे हैं, उनका विस्फोट निस्सन्देह कल्याणकारी होगा। हम 'सुमन' जी के इस कविता-संग्रह का स्वागत करते हैं और भविष्य में अधिक विश्वस्त विचारधारा को लेकर उनके काव्य-क्षेत्र में उतरने की मंगल कामना करते हैं।

१०—**वह** (कविता-पुस्तक)—रचयिता, श्री राजाराम रावत 'पीड़ित'; प्रकाशक, भारतीय प्रकाशक मन्दिर, लश्कर। पृष्ठ-संख्या १५२; मूल्य २॥) रु०।

खण्ड-काव्य के ढङ्ग पर राजपूती शौर्य का चित्रण इस पुस्तक में किया गया है। प्रयुक्त छन्द साधारण और शब्द-सौष्ठव भी बहुत प्रभावोत्पादक नहीं बन पड़ा है। छपाई-सफाई साधारण और मूल्य काफी अधिक है। इस दशा में पुस्तक का कितना क्या प्रचार होगा और कैसा स्वागत होगा, कहने की बात नहीं। हाँ, लेखक की लगन निस्सन्देह प्रशंसनीय है।

११—**बन्दी** (कविता-संग्रह)—रचयिता, श्री रघुवीरशरण 'मित्र' और प्रकाशक, अ० भा० राष्ट्रीय साहित्य प्रकाशन-परिषद् मेरठ हैं। पृष्ठ-संख्या १७४ और मूल्य ३) है।

प्रस्तुत कविता-संग्रह में कवि की लगभग ५६ छोटी-बड़ी कविताओं का सङ्कलन है। 'बन्दी' का परिचय देते हुए कवि लिखता है—

तेरा कैसा मेला कैदी,
होली ईद, दिवाली क्या ?
काल कोठरी, 'काली टोपी'
काली रात, उजाली क्या ?

काला कम्बल, ढूला, तसला,
तेरी और कहानी क्या ?
कच्ची-पक्की सान रोटियाँ,
जीना और जवानी क्या ?

गुलाम देश के उस बन्दी का यह चित्रण है, जो आजादी हासिल करने के प्रयत्नों में अपनी जुबान नहीं खोल सकता, अपना कदम नहीं बढ़ा सकता और ऐसा करना कानून से जघन्य वर्जित करार दिया जा चुका है। लेकिन राष्ट्रीय भावनाओं की आग को कभी दबाया नहीं जा सकता। वह तो कलम और मसि के सहारे कागज पर बरबस उतरकर ही रहती है।

सरल सुबोध भाषा में कवि ने अपने जी की कसक इन कविताओं में प्रकट करने का पूर्ण प्रयास किया है। यद्यपि कुछ कविताएँ बहुत ही साधारण बन पड़ी हैं और कुछ प्रयोग भी चिन्त्य कहे जा सकते हैं, फिर भी सब मिलाकर संग्रह सुन्दर कहा जाएगा और राष्ट्रीय भावनाओं के पुजारियों में इस संग्रह का समादर किया जाएगा। पुस्तक की छपाई-सफाई और गेट-अप सुन्दर है। दो-तीन चित्र भी दिए गए हैं।

१२—**विद्यापीठ** (नाटक)—लेखक, श्री शम्भूदयाल सक्सेना और प्रकाशक, नवयुग ग्रन्थ-कुटीर, बीकानेर हैं। पृष्ठ-संख्या ७८ है। पुस्तक पर उसका मूल्य कहीं लिखा नहीं है।

श्री सकसेनाजी को एक कवि और कहानीकार के रूप में हिन्दी-संसार भली भाँति जानता है। अब वे नाटककार के रूप में हमारे सामने आए हैं। प्रस्तुत नाटक ग्यारह दृश्यों का एक छोटा-सा नाटक है। इसमें देवगुरु बृहस्पति के पुत्र क

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

र असुरों के आचार्य शुक्राचार्य की कन्या देवयानी की उस
या का चित्रण है, जिसमें देवयानी कच को अपने भावी पति
रूप में और कच देवयानी को गुरु-पुत्री होने के कारण एक
न के रूप में स्नेह करता है। कच अपनी पवित्र भावनाओं
जब अन्त में व्यक्त करता है, तब देवयानी उसे शाप दे देती
कि उसकी विद्या उसे कभी न फले। कच इस शाप को भी
र्य स्वीकार कर लेता है लेकिन गुरु-पुत्री को पत्नी बनाने का
र्म वह नहीं करता।

इसी पृष्ठभूमि पर इस नाटक का सृजन किया गया है।
योपकथन छोटे-छोटे और प्रभावोत्पादक हैं। दृश्यावलियाँ
दर और रङ्गमञ्च पर सहज ही दिखलाई जाने योग्य हैं।
ङ्गमञ्च पर यह नाटक सफलतापूर्वक अभिनीत हो सकता
। इस नाटक की विशेषता है—जाति, धर्म और सम्प्रदाय की
ीर्ण परिधि से बाहर आकर किसी विद्यापीठ में समान रूप
सबको शिक्षादान दिए जाने का संदेश।

—देवीदयाल चतुर्वेदी 'मस्त'

१३—समाज और साहित्य—लेखक, श्री रामेश्वर शुक्ल
चल' और प्रकाशक, मातृभाषा मंदिर, दारागंज, प्रयाग हैं।
संख्या २२४ और मूल्य २॥) है। छपाई-सफाई सन्तोषजनक है।

सारी पुस्तक मुझे बड़े ही काम की लगी। मैंने इस प्रकार की
क पुस्तकें नहीं पढ़ी हैं। इसलिए डरता हूँ कि पुस्तक के
ाङ्कन में कहीं कुछ भूल न कर बैठूँ, तो भी मुझे लगता है कि
प्रकार राहुलजी की 'नये भारत के नये नेता' एक नई दृष्टि
कुछ व्यक्तियों की ओर देखने का प्रयत्न है, उसी प्रकार 'समाज
र साहित्य' एक नई दृष्टि से साहित्य का मूल्याङ्कन करने का
ल है। मार्क्सवादी विचार-धारा से परिचित लोगों के लिए
ह भले ही नई न हो; किन्तु मूल्याङ्कन का प्रयत्न तो अनेक
दी पाठकों के लिए नया ही है।

न जाने क्यों 'आमुख' को छोड़कर शेष सारी पुस्तक में मुझे
प्रवाह दिखाई दिया। आमुख की शैली तथा भाव-प्रकाशन
बार-बार ऐसा लगा कि जैसे लेखक स्वयं नहीं बोल रहा है।
जैसे पतंग के डोरे में बीच-बीच में उलझन आ जाने से उड़ाने-
वाले को झुँझलाहट होती है, वैसी ही झुँझलाहट मुझे 'आमुख'
पढ़ते हुए कई बार हुई है। मुझे प्रसन्नता है कि शेष पुस्तक की
सारी भाषा अपनी निजी गति से समरस बह रही है।

पुस्तक में व्यक्त विचारों से मैं अधिकांश में सहमत हूँ। जो
साहित्य असंख्य हैवनाटों की सेवा नहीं करता, उनके लिए
कल्याणकारी सिद्ध नहीं होता और जो उँगली पर गिने जा सकने-
वाले चन्द लोगों की ठकुर-सुहाती भी करता है, वह सचमुच चूल्हे
की ही चीज है। आज का साहित्य असंख्य लोगों के लिए नहीं है,
यह तो दुःख की बात है ही; लेकिन इससे भी बड़ी दुःख की बात
यह है कि जब तक समाज का वर्तमान ढाँचा इसी प्रकार का है
जैसा वह है, तब तक हमारा साहित्य उनके काम का हो भी नहीं
सकता। इसलिए पहली आवश्यकता इस ढाँचे को बदलने की है
और इस ढाँचे को बदलनेवाला ही साहित्य लिखने की है। प्रश्न
है—यह ढाँचा किस प्रकार बदला जायगा? मैं इस बारे में स्पष्ट
हूँ। जो लोग यह जानते हैं और समझते हैं कि उनका स्वार्थ इस
ढाँचे के इसी प्रकार बने रहने में है, वे न इस ढाँचे को बदलेंगे, न
किसी को बदलने देंगे। वे 'सुधार' कर सकेंगे, 'परोपकार' कर सकेंगे,
किन्तु जिस ढाँचे में उनको करोड़पति बनने की स्वतन्त्रता है और
करोड़ों को भूखों मरने की मजबूरी है, उस ढाँचे वे को जरा आँच
न आने देंगे। तब इसे कौन बदलेगा? केवल वे ही बहुत-से लोग
जिनका स्वार्थ इसके बदलने में है। मैं चाहता हूँ कि इस ढाँचे के
बदलने की आशा मैं किसी के परमार्थ से कर सकता; किन्तु पिछले
पचीस वर्षों में मैंने व्यवहार-क्षेत्र में परमार्थ को स्वार्थ के मुँह पर
पड़ा हुआ पर्दा भर ही पाया। इतिहास में अनेक बार स्वार्थ ने
परमार्थ का रूप धारण किया, किन्तु रहा वह स्वार्थ ही। इतने पर
भी यदि बिना संघर्ष के समाज का ढाँचा बदल सके तो मुझे संघर्ष
के लिए संघर्ष का समर्थन करने का कोई शौक नहीं। लेकिन आज
की स्थिति में और संघर्ष में—दोनों में से यदि एक को चुनना है तो
संघर्ष एक बार नहीं, सौ बार स्वीकार है।

—भदन्त आनन्द कौसल्यायन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्मृति-स्पन्दन

इस मेरे सुकुमार हृदय में स्मृतियों की हलचल-सी जागी !
नयनों की अविरल-सी जड़ता, मानस से कुछ कहकर भागी !
छेड़ दिए हैं सरल प्रकृति ने तरुओं के चञ्चलतम पल्लव !
छेड़ दिए हैं इधर स्वयं ही स्मृतियों ने स्पन्दनमय कलरव !

किस स्मृति को कहकर अपनाऊँ
मैं जीवन की मधुर कहानी !
किसको भावुक आँचल पहना—
करने दूँ अपनी मनमानी !

कितनी गति-विह्वलता लेकर, मानस-पट पर नाच रही हैं ?
युग-युग से जो पाल रहा था, मेरी स्मृतियाँ सरल यहीं हैं !
मैं न सहूँगा, लेकिन जग में मेरी स्मृतियाँ व्यथा सहेंगी ?
मैं न रहूँगा, लेकिन जग में मेरी स्मृतियाँ अटल रहेंगी !

आज प्रकृति का आँगन कवि की—
व्यथा लिए चुपचाप खड़ा है !
कितना क्रन्दन, कितना स्पन्दन—
कवि के मन में आज भरा है !

ये जीवन की तरल घाटियाँ, कितनी मोहक दीख रही हैं ?
कवि ने इनको जान लिया है, कितने दुख से भरी पड़ी हैं ?
एक हृदय की मृदुतम स्मृतियाँ, स्नेह बढ़ाकर जो पाली हैं—
उस अतीत के वर्तमान में चीखा था—'सुधि से खाली हैं' !

निशि की घड़ियाँ, अथक प्रतीक्षा
में जल-जलकर काट रहा हूँ ?
स्वयं विश्व में चीख उठेंगी—
मेरी स्मृतियाँ—'व्यथा-भरा हूँ' !!

'यह जीवन अभिशाप भरा है, दुखी रहेगा, सदा जलेगा !
व्यथा-अमा की दुखद-निशा में, जल-जल, सड़-सड़ सदा पलेगा !'
जब मेरी ये मृदुतम स्मृतियाँ प्रतिपल कहकर सता रही हैं—
कैसे सोचूँ ? इस जीवन में मेरे साथी भला कहीं हैं ?

जब भी स्मृतियाँ भरे विश्व में—
चलतीं, क्रन्दन ठन जाता है !
वही बदन पर व्यथा भरा-सा—
हलका स्पन्दन बन जाता है !!

—'प्रकाश'

शंकर-दिग्विजय

वर्तमान काल के हिन्दू-धर्म के आचार्यों में आदि शङ्कराचार्य को इस कारण अधिक महत्त्व दिया जाता है कि उन्होंने भारतवर्ष से बौद्ध-धर्म को उखाड़ फेंका और वर्णाश्रम सनातन धर्म की पुनः स्थापना की। परन्तु खेद के साथ कहना पड़ता है कि ऐसे महान् आचार्य का कोई प्रामाणिक जीवन-वृत्तान्त प्राप्त नहीं है। जो तीन-चार पुस्तकें हैं उनमें 'कविता' का ही आधिक्य है और उनसे हम यह नहीं जान सकते कि आचार्य कब उत्पन्न हुए, उन्होंने किस प्रकार बौद्ध-धर्म का भारत से उन्मूलन किया तथा वर्णाश्रम धर्म की किस रूप में प्रतिष्ठा की। उन पुस्तकों में 'शङ्कर-दिग्विजय' की अधिक प्रसिद्धि है। परन्तु यह ग्रन्थ आचार्य के सैकड़ों वर्ष बाद लिखा गया है। निस्सन्देह इसके प्रणेता माधव अपने समय के बहुत बड़े विद्वान् थे और उनके ऐसे साधन भी सुलभ थे जिनसे वे आचार्य के बहुत कुछ यथार्थ चरित का वर्णन कर सकते थे। परन्तु वे भी 'दिग्विजय' में अपनी प्रतिभा का, जैसा कि उनसे आशा की जा सकती थी, परिचय नहीं दे सके।

माधव ने 'दिग्विजय' के प्रारम्भ में लिखा है कि उन्होंने अपना ग्रन्थ आनन्द गिरि के 'दिग्विजय' को देखकर लिखा है। कहा जाता है कि आनन्द गिरि आचार्य के प्रियपात्र शिष्यों में थे। यदि माधव ने आनन्द गिरि के वर्णन को आधार मानकर अपने दिग्विजय की रचना की है तो यह ग्रन्थ बहुत कुछ प्रामाणिक हो सकता है। इसके सिवा यह भी है कि इसके रचयिता माधव स्वयं भी अपने समय के एक असाधारण व्यक्ति थे। वे दक्षिण के प्रसिद्ध विजयनगर-राज्य के प्रधान मन्त्री थे और उन्हीं के समय में उस महान् राज्य का प्रताप-सूर्य दिगन्तव्यापी हुआ था। इस प्रकार राजनीति-कुशल होने के सिवा वे संस्कृत के असाधारण विद्वान् भी थे। संन्यास ग्रहण कर जब वे शृङ्गेरी मठ की गद्दी पर बैठे थे उस अवस्था के उनके लिखे वेदान्त-सम्बन्धी ग्रन्थ उनका नाम आज भी अमर किए हुए हैं। 'शंकर-दिग्विजय' ऐसे महापुरुष की रचना होने से कितना अधिक प्रामाणिक हो सकता है, यह अपने आप स्पष्ट है।

परन्तु इसके साथ ही यह भी प्रकट है कि यह न तो इतिहास है और न जीवन-चरित है। माधव ने इसे काव्य की शैली में लिखा है, अतएव इसकी प्रामाणिकता बहुत कुछ सीमित है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माधव ने इसमें श्री शङ्कराचार्य को एक अलौकिक व्यक्ति रूप में अंकित किया है। उन्होंने लिखा है कि शङ्कराचार्य ८ वर्ष के वय में वेदवेदांगों और शास्त्रों के पारगामी हो गये थे। जब वे नर्मदा-तट पर अपने गुरु की खोज में पहुँचे उन्होंने एक घड़े में नर्मदा के बढ़ते हुए जल को भर लिया। गुफा में स्वयं विश्वनाथ ने उन्हें प्रत्यक्ष दर्शन दिया। बदरिक्षेत्र में व्यासदेव ने आकर उनसे शास्त्रार्थ किया और उनके मत का पूर्ण समर्थन किया। राना अमरुक के मृत शरीर में प्रवेश कर उन्होंने कामकला का ज्ञान प्राप्त किया और पुनः अपने शरीर में प्रवेश कर मण्डन की स्त्री को शास्त्रार्थ में परास्त किया। इस प्रकार की अलौकिकता का प्रासाद उनके चारों ओर खड़ा करके माधव ने उन्हें सदाशिव का अवतार सिद्ध किया है। यह तो उनके सम्प्रदाय का था, अतएव उसे अपने आचार्य के सम्बन्ध में इस प्रकार की बातें लिखने का पूर्ण अधिकार है, किन्तु यह आवश्यक नहीं कि उसके ऐसे कथनों से सभी लोग सहमत हों। तथापि इतना तो है ही कि श्री शङ्कराचार्य ने अपने देश में एक समय अपने अद्वैतवाद का जोरों से प्रचार किया था और इस कार्य में उन्हें व्यापक सफलता भी मिली थी, जैसा कि उनके मठों और उनके अनुयायियों की बहुसंख्या से भी सिद्ध होता है।

अपने अद्वैतवाद के प्रचार के लिए श्री शङ्कराचार्य को भारत में भ्रमण कर विरोधी विचार के विद्वानों को शास्त्रार्थ में परास्त करना पड़ा था। उनकी इस भ्रमण-यात्रा का जो वर्णन इस दिग्विजय में माधव ने किया है उसमें भी कविता का अंश है। कहा जाता है कि श्री शङ्कराचार्य ने बौद्धों को शास्त्रार्थ में परास्त कर इस देश में उन्हें नामशेष कर दिया। किन्तु इस दिग्विजय में बौद्धों के साथ किए गए उनके शास्त्रार्थों का उतना उल्लेख नहीं है। हाँ, शाक्तों, वैष्णवों, शैवों आदि के साथ किए गए शास्त्रार्थों का अधिक विस्तार के साथ अवश्य वर्णन किया गया है। ऐसा जान पड़ता है कि उन्होंने बौद्धों और जैनों की अपेक्षा 'सनातनधर्मियों' को ही सर्वत्र घेर-घेरकर खड़ा किया है। उनका जिन-जिन व्यक्तियों से शास्त्रार्थ हुआ था उनमें से कुछ प्रमुख व्यक्तियों के नाम भी दिए गए हैं। माहिष्मती के मीमांसक मण्डन मिश्र, इनकी पत्नी शारदा, गोकर्ण के नीलकण्ठ, उज्जयिनी के वैदिक और दार्शनिक भट्ट भास्कर, आसाम के तान्त्रिक अभिनवगुप्त, वङ्गदेश के तांत्रिक स्वामी आनन्द, आदि इन्हीं कुछ व्यक्तियों का नामोल्लेख हुआ है। इनके सिवा कर्नाटक के कापालिक क्रकच तथा किसी उग्र भैरव का भी उल्लेख हुआ है। परन्तु ये दोनों भी 'सनातनी' ही जान पड़ते हैं। आश्चर्य है कि किसी बौद्ध या जैन विद्वान् का नाम नहीं दिया गया है! सम्भव है, उस समय उक्त धर्मों में कोई असाधारण विद्वान् न रहे हों और यदि रहे भी हों तो उन्होंने श्री शङ्कराचार्य की उपेक्षा की हो। चाहे जो हो, इन दोनों धर्मों के खण्डन-मण्डन के प्रसंग में उनके विद्वान् आचार्यों का नामोल्लेख नहीं हुआ है, साथ ही यह भी व्यक्त होता है कि बौद्ध या जैन-धर्म की अपेक्षा सारे देश में भिन्न-भिन्न सनातनी सम्प्रदायों का ही प्रचार अधिक था।

श्री शङ्कराचार्य की दिग्विजय-यात्रा दक्षिण से ही प्रारम्भ होती है। वे पहले 'सेतुबन्ध' गए और वहाँ मद्य-मांस से पूजा करनेवाले शाक्तों को परास्त किया। वहाँ से घूमते-घामते विदर्भ गए और भैरवतन्त्र के उपासकों का खण्डन किया। इसके बाद कर्नाटक जाकर उन्होंने राजा सुधन्वा की सहायता से कापालिकों का विनाश किया। इन्हीं राजा सुधन्वा ने इसके पहले कुमारिल के प्रभाव में आकर अपने यहाँ से बौद्धों को निकालकर वैदिक धर्म की प्रतिष्ठा की थी। ऐसी दशा में उनके यहाँ कापालिकों का प्रभाव ही कुछ समय के भीतर कैसे स्थापित हो गया, यह सचमुच आश्चर्य की बात है। जो हो, यहाँ के कापालिकों ने जब श्री शङ्कराचार्य तथा उनके अनुयायियों को मार डालने का उपक्रम किया तब राजा सुधन्वा ने सहायता के लिए ठीक समय पर पहुँचकर शङ्कर की रक्षा की और कापालिकों को मार भगाया।

यहाँ से आचार्य गोकर्ण गए और वहाँ द्वैतवादी शैव नीलकण्ठ को हराया। वहाँ से वे द्वारका गए, जहाँ पाञ्चरात्र वैष्णवों को हराया। द्वारका से वे उज्जैन गए। यहाँ उन्होंने भेदाभेदवादी भट्ट भास्कर को परास्त किया। यहाँ से वे भरत, शूरसेन, नैमिष आदि स्थानों से होते हुए आसाम जा पहुँचे। उनके समय में इन प्रदेशों में तंत्रों का अशुद्ध रूप प्रचलित था। आसाम में उन्होंने तन्त्राचार्य अभिनव गुप्त को हराया। वहाँ से वे वंगदेश गए जहाँ उनकी वयोवृद्ध तांत्रिक-स्वामी ब्रह्मानन्द से भेंट हुई। स्वामी ब्रह्मानन्द ने आचार्य को बुरी तरह से डाँटा और कहा कि अभी तुम बच्चे हो, जाकर अद्वैत तत्त्व का कुछ दिन और मनन करो। उनकी फटकार का आचार्य पर प्रभाव पड़ा और उन्होंने वंग में मठ स्थापित करने के विचार का ही त्याग कर दिया। यही नहीं, यहाँ से वे सीधे शृंगेरी को लौट गए।

उस दिग्विजय में वर्णित आचार्य की दिग्विजय-यात्रा का यह सारांश है। इस यात्रा में आचार्य ने कहीं भी बौद्धों या जैनों से शास्त्रार्थ नहीं किया। उसके विवरण से तो यही प्रतीत होता है कि उस समय कदाचित् देश में बौद्ध या जैन थे ही नहीं। परन्तु ऐसा नहीं था। आचार्य के सदियों बाद तक उनके दिग्विजय के क्षेत्र में बौद्ध और जैन दोनों ही फलते-फूलते रहे। अर्वाचीन अन्वेषणों से यह भले प्रकार सिद्ध है।

श्री शंकराचार्य शब्द के वास्तविक अर्थ में परिव्राजक थे। उक्त दिग्विजय-यात्रा के सिवा उन्होंने दो और लम्बी यात्राएँ की थीं। एक दिग्विजय-यात्रा के पहले और दूसरी उसके बाद। पहली यात्रा में वे कैलास तक गए थे। यह यात्रा उन्होंने उपयुक्त गुरु की खोज के उद्देश्य से की थी। उन्होंने अपने विद्या-गुरु से गोविन्दाचार्य की प्रशंसा सुनी थी। गोविन्द ने गौडपादाचार्य से अद्वैत वेदान्त का अध्ययन किया था। वे उन दिनों नर्मदा-तट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर योग की साधना कर रहे थे। उनको खोजते हुए शंकर उनके पास नर्मदा-तट पर आए और उनसे शंकर ने अद्वैत वेदान्त का तीन वर्ष तक अध्ययन किया। यहाँ से वे गुरु के आदेश से विश्वनाथ के दर्शनार्थ काशी गए। काशी में उन्होंने चोल देशवासी सनन्दन को अपना शिष्य बनाया। काशी से वे बदरिकाश्रम के व्यासाश्रम को गए, जहाँ रहकर उन्होंने ब्रह्मसूत्रों आदि पर अपने प्रसिद्ध भाष्य लिखे। यहाँ उन्होंने चार वर्ष निवास किया। इस बीच में उन्होंने बदरीनाथ की मूर्ति की पुनः स्थापना की और उसकी पूजा-अर्चा की भी व्यवस्था की।।

उत्तराखण्ड से लौटकर वे प्रयाग आए और यहाँ उनकी कुमारिल से भेंट हुई। प्रयाग से वे माहिष्मती गए और उस समय के प्रसिद्ध मीमांसक मण्डन मिश्र को परास्त कर अपना शिष्य बनाया। दिग्विजय में लिखा गया है कि मण्डन की पत्नी बड़ी विदुषी थी और उसने भी शंकर से शास्त्रार्थ किया था। उसके शास्त्रार्थ का विषय कामकला था। आश्चर्य है कि उस विदुषी महिला ने एक संन्यासी से उस विषय पर कैसे शास्त्रार्थ किया होगा। निस्सन्देह उसका साहस धन्य है। परन्तु उससे अधिक धन्य शंकर का साहस है जिन्होंने उस अबला को परास्त करने के लिए संन्यासी होकर परकाय-प्रवेश कर कामकला-विषय का अभ्यास किया।

माहिष्मती से शंकर अपने शिष्यों के साथ दक्षिण को लौट गए। मार्ग में महाराष्ट्र में उन्होंने श्री पर्वत पर निवास किया और मल्लिकार्जुन तथा भ्रमराम्बा का पूजन किया। यहाँ उग्र-भैरव नाम के कापालिक नेता का उन्होंने विनाश किया। यहाँ से वे गोकर्ण-क्षेत्र गए और महाबलेश्वर के दर्शन किए। यहाँ से हरिशंकर तीर्थ गए और हरि तथा शंकर का अर्चन किया।

यहाँ से आगे बढ़ने पर मूकाम्बा का दर्शन किया। वहाँ से श्री बलि गए, जहाँ उनकी हस्तामलक से भेंट हुई। वहाँ से शृंगेरी पहुँचे। यहाँ उन्होंने मठ की स्थापना की। मठ में उन्होंने शारदा की स्थापना की और श्री सम्प्रदायानुसार तांत्रिक पूजा-पद्धति की व्यवस्था की। इस प्रकार अपने अद्वैत-वाद के प्रचार के लिए उन्होंने शृंगेरी को केन्द्रस्थान का रूप प्रदान किया।

शृंगेरी में शंकर ने चाहा कि उनके भाष्यों पर वार्तिक लिखे जाएँ। वे चाहते थे कि सुरेश्वर (मण्डन) उनके ब्रह्मसूत्र भाष्य पर वार्तिक लिखें। परन्तु शिष्यवर्ग चाहता था कि (सनन्दन) पद्मपाद लिखें। शिष्यों का आग्रह शंकर को मानना पड़ा। पद्मपाद से उन्होंने भाष्य पर वृत्ति लिखवाई और उपनिषद् के भाष्यों पर सुरेश्वर ने वार्तिक लिखे। इस प्रकार शंकर ने अपने अद्वैतवाद के प्रचार की सुसंगठित व्यवस्था की।

परन्तु एक ओर तो 'दिग्विजय' में शंकर का अद्वैत तत्त्व के प्रति इतना आग्रह दिखाया गया है, दूसरी ओर उन्हें हम सभी देवताओं की पूजा-अर्चा ही करते नहीं देखते हैं, किन्तु अपने सर्वप्रथम मठ में शारदा की स्थापना कर उनकी तांत्रिक पद्धति के अनुसार पूजा-अर्चा की व्यवस्था करते पाते हैं। यह सब कैसा अद्वैत-तत्त्व है, हमारे जैसे साधारण लोग कदापि हृदयंगम नहीं कर सकते।

शृंगेरी का भार सुरेश्वर को सौंप शंकर अपनी जन्मभूमि केरल को चले गए।

शंकर की दूसरी यात्रा दिग्विजय-यात्रा के बाद एक विशेष कारण से हुई थी। उन्होंने सुना था कि काश्मीर के शारदा-मंदिर में चार द्वार चारों दिशाओं में हैं। उन द्वारों से उसमें सर्वज्ञ ही प्रवेश कर पाता है। उसके तीन द्वार तो खुले रहते हैं, पर दक्षिण का द्वार, उस दिशा का कोई सर्वज्ञ न होने से, सदा बन्द रहता है। है। फलतः दक्षिण के इस कलंक को धो डालने का शंकर ने निश्चय किया।

अन्त में उन्होंने काश्मीर की यात्रा की। वहाँ पहुचकर उन्होंने मन्दिर का दक्षिण का द्वार खोल दिया। इस पर पण्डितों ने उनसे शास्त्रार्थ किया और वे सर्वज्ञ माने गए।

काश्मीर से वे बदरिकाश्रम गए और वहाँ से कैलाश। यहीं उन्होंने अपना नश्वर शरीर छोड़ दिया। इस प्रकार हिन्दू धर्म के इस प्रख्यात आचार्य का अन्त हो गया।

माधव श्री शकराचार्य को शिव का अवतार मानते थे, अतएव उन्होंने उनके चरित को अपने दिग्विजय में अलौकिक रूप से चित्रित किया है। इसी से हम देखते हैं कि शंकर को कृष्ण आकाश में दर्शन देते हैं, वे बढ़ी हुई नर्मदा के प्रवाह को रोककर अपने गुरु के प्राणों की रक्षा करते हैं, वेदव्यास आकर उनके भाष्य की प्रशंसा करते हैं, स्वयं शंकर प्रकट होकर उनके प्राणों की रक्षा के लिए अपने भक्त को मार डालते हैं, वे परकाय-प्रवेश कर महीनों तक कामकला सीखते रहते हैं और उनका निर्जीव शरीर उनके उसमें पुनः प्रवेश करने के समय तक जैसे-का-तैसा बना रहता है, वे मृत बालक को पुनः जिला देते हैं। ऐसे अलौकिक वर्णनों से माधव ने उनके मानव-रूप को भले प्रकार दबा दिया है। तथापि उसकी झलक जहाँ-तहाँ मिल ही जाती है।

दिग्विजय के पढ़ने से यह तो ध्वनित हो ही जाता है कि शंकर को अपना प्रबल पाण्डित्य प्रकट करने की महत्त्वाकांक्षा थी और इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्होंने अपनी स्वाभाविक प्रतिभा द्वारा जिस नए अद्वैतवाद की उद्भावना की थी वह तत्कालीन पण्डितों को अज्ञात था। उस समय वैदिक-धर्मानुयायियों में मण्डन और उनकी विदुषी भार्या शारदा की बड़ी प्रसिद्धि थी। इधर शंकराचार्य ने काशी आदि स्थानों में शास्त्रार्थ करके जो विजय प्राप्त की थी उससे वे उस कला में अधिक कुशल हो गए थे। अतएव मण्डन मिश्र को हराना उनके लिए आवश्यक था। तभी तो वे भारत के सर्वश्रेष्ठ पण्डित माने जा सकते थे। फलतः मण्डन के यहाँ गए और उन्हें शास्त्रार्थ में पराजित किया। परन्तु यहाँ उनको मण्डन की स्त्री से भी शास्त्रार्थ करना पड़ा, जिसको परास्त करने के लिए उन्हें कामकला सीखनी पड़ी। यद्यपि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बात को महत्त्व देने को तैयार नहीं है, परन्तु दिग्विजय के क ने काश्मीर-विजय के सिलसिले में उसे महत्त्व देकर शंकर उस लांछन का आरोप किया है। चाहे जो हो, यह तो सिद्ध होता है कि उन्हें शास्त्रार्थ जीतने का इतना अधिक चस्का लग था कि उसके लिए वे बाल-ब्रह्मचारी और संन्यासी होते हुए 'कामकला' के सीखने से विरत नहीं हो सके।

उनके मानवरूप की दूसरी झाँकी हमें उनकी मातृभूमि में ती है। वे अपनी पहली यात्रा से लौटकर ठीक उसी समय ी जन्मभूमि में पहुँचते हैं जब उनकी माता मृत्यु-शय्या में पड़ी हैं। माता की मृत्यु हो जाने पर उनका अन्तिम संस्कार करने उनकी जातिवालों ने इनकार कर दिया। इस पर संन्यासी शंकर स्वयं ही उनका दाह-संस्कार करना पड़ा, यद्यपि उनका यह उनके संन्यास-धर्म के विरुद्ध था। इस अवसर पर उनकी तिवालों ने उनके साथ जो व्यवहार किया था उससे शंकर इतने हो गए कि उन्होंने उनको शाप ही नहीं दिया था, किन्तु के राजा से भी उनकी शिकायत की! उनका यह कार्य भी के संन्यास-धर्म के विरुद्ध ही माना जायगा। तीसरी बात यह उनमें अपने एक शिष्य के लिए विशेष अनुराग था, यहाँ कि इसके लिए उनके शिष्यों को शिकायत तक करनी पड़ी, का शंकर कदाचित् समाधान नहीं कर सके, क्योंकि उनके यों में ईर्ष्या का भाव बराबर बना रहा। शंकर का वह शिष्य न था, जो उनकी जन्म-भूमि के पास के चोल-प्रदेश का ासी था। क्या दक्षिणी होने से शंकर उसका पक्षपात करते थे इसलिए कि वह एक क्रियासिद्ध तांत्रिक था? बदरीनाथ के दर में नम्बूदरी ब्राह्मण को ही वहाँ का पुजारी नियुक्त करने में उनके दाक्षिणात्य-प्रेम की ही गन्ध आती है।

परन्तु ऐसी बातें किस मानव में नहीं पाई जाती हैं, और ये अपना कोई महत्त्व उस मानव के चरित में नहीं रखती हैं जब उसे इतिहास का निर्माण करते पाते हैं। श्री शंकराचार्य ऐसे मानव थे, जिन्होंने इतिहास बनाया है। उनके उस निर्माण माण उनके स्थापित किए वे चारों मठ हैं जो आज भी उनके र स्वरूप की याद दिलाया करते हैं। दुःख है कि इस इतने न्थ में उनके उसी रूप का वर्णन नहीं किया गया है।

—भारद्वाज

रेल

रेल रानी जा रही है।
जा रही है आग-पानी की जवानी जा रही है।

(१)

रोक मत सिगनल कि यह है आग का तूफान भारी,
दूर मंजिल पर पहुँचने का अडिग अरमान भारी;
रोक मत सिगनल कि यह है बन्द दिल का गान भारी,
रोक मत सिगनल कि यह है शक्ति का अपमान भारी;
हाय, निज अपमान की जलती निशानी जा रही है।

(२)

ढाल-टीले, खोह-खन्दक पार कर जाती क्षणों में,
एक क्रीड़ा कर रही है शैल पर ऊँचे वनों में;
एक कौतुक, एक विस्मय भर रही उत्सुक मनों में,
एक कम्पन भर रही है मौन धरती के कणों में;
एक जोगन-सी लटें फैला दिवानी जा रही है।

(३)

बोल तू राधे! छिपा किस कुंज में घनश्याम तेरा।
कूक भर-भर तू पुकारे कृष्ण जो सुखधाम तेरा;
रास को दौड़ी, रहा पीछे पड़ा सब काम तेरा,
क्या बजाया बाँसुरी में फिर किसी ने नाम तेरा?
कौन वह, किसके लिए यों खाक छानी जा रही है?

(४)

जा रही कितने दिलों का भार लेकर, प्यार लेकर;
जा रही कितने दृगों के स्वप्न के संसार लेकर;
जा रही कितने दुखों के अश्रु ले, चीत्कार लेकर;
जा रही कितने सुखों के हास ले अभिसार लेकर;
पाँत पर चल साँप-सी जग की कहानी जा रही है।

(५)

दौड़ता है चाँद इसके साथ तारे दौड़ते हैं;
पेड़, झुरमुट, झाड़ियाँ, नदियाँ, किनारे दौड़ते हैं;
दौड़ते हैं साथ झरनों के फुहारे दौड़ते हैं,
रेल रानी के सहारे मन हमारे दौड़ते हैं;
सृष्टि सारी साथ, फिर भी एक मानी जा रही है।

(६)

लो हुआ यह शोर दिल में याद सी वह आ रही है,
घन-घटा सी पास ही कुछ देर से घहरा रही है;
लो बजी घंटी हरी झंडी लपक लहरा रही है,
कोट सब दौड़ा रही सब साड़ियाँ फहरा रही है;
आ रही है शोर था, अब शोर रानी जा रही है।

—प्रोफेसर चन्द्रप्रकाश वर्मा, एम० ए०

हिन्दुस्तानी

हिन्दुस्तानी हिन्दू-मुस्लिम पैक्ट की भाषा है—हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य की नहीं; एकदम बनावटी। उसका उद्देश्य है—ऐसी भाषा लिखने का प्रयत्न करना, जिसमें न संस्कृत के शब्द हों न अरबी फारसी के, और जो दोनों लिपियों में लिखी जा सके। उत्तर-भारत में काफी आर्यसमाजी साहित्य प्रचलित है, जो ठेठ हिन्दी है, लेकिन उसे उर्दू लिपि में लिखकर छाप दिया है—यहाँ तक कि आर्यसमाज की संस्कृत संध्या को भी। उर्दू लिपि में लिखा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होने-मात्र से क्या वह सारा साहित्य 'हिन्दुस्तानी' समझा जाएगा ? यदि नहीं, तो इधर जो कुछ साहित्य पैदा होने लगा है, जो ठेठ उर्दू है, लेकिन जिसे देवनागरी अक्षरों में भी छाप दिया जाता है, वह कैसे हिन्दुस्तानी कहला सकता है ? मेरे एक आदरणीय मित्र हैं। उन्होंने एक किताब लिखी है जो देवनागरी अक्षरों तथा उर्दू हरफ दोनों में छपी है। मैंने उस किताब को हस्तलिपि के रूप में देखा। वह उर्दू में लिखी गई थी। और एक दिन उन्होंने मुझसे पूछा कि अब बताओ इसमें कहाँ-कहाँ, कौन-कौन शब्द काटकर बदल दिए जाएँ जिसमें यह देवनागरी में भी छप सके। मैंने कहा, मुझे यह अत्यन्त अस्वाभाविक मालूम होता है। इससे उर्दू शैली का प्रभाव नष्ट होता है और हिन्दी का तो आ ही नहीं सकता। तो भी हुआ वही, जो वे चाहते थे। जहाँ-तहाँ कुछ शब्दों की जगह 'हिन्दी' शब्द लिख दिए गए और वह पुस्तक देवनागरी अक्षरों में भी छप गई।

एक और उदाहरण—

दक्षिण-भारत हिन्दी-प्रचार-सभा ने 'हिन्दुस्तानी' नाम से एक पुस्तक प्रकाशित की है, उसमें मौलाना अब्बुलकलाम आजाद का उर्दू में लिखा हुआ एक 'दीबाचा' है जो देवनागरी अक्षरों में भी ज्यों का त्यों 'दीबाचा' ही है। 'दीबाचः' शब्द फारसी का है; उसे फारसी में जगह है और हिन्दुस्तानी की उर्दू में भी; लेकिन हिन्दुस्तान ही जिनकी जन्म-भूमि है ऐसे ये दो शब्द—'प्रस्तावना' और 'भूमिका'—आप कृपया कहें कि अब कहाँ शरण ढूँढ़ें ? हिन्दुस्तान में तो अब उनको शरण मिलेगी नहीं, क्योंकि वे 'हिन्दुस्तानी' नहीं हैं !

और क्या यह 'न संस्कृत, न अरबी फारसी' भाषा लिखने का प्रयत्न सफल होता है ? यदि आपको सारे साहित्य में "मैं जाता हूँ—मैं खाता हूँ" जैसे दो-दो शब्दों के वाक्यों से ही काम लेना हो तो बात दूसरी है, अन्यथा आप जरा भी गहराई में उतरें तो आपको अपनी 'न संस्कृत न अरबी फारसी' वाली बात तुरन्त छोड़ देनी होगी। मैं इस 'हिन्दुस्तानी' किताब से ही, जो एकदम बच्चों के लिए लिखी गई है, दो उदाहरण देता हूँ। एक जगह फुटनोट है—"मुजक्कर मुअन्नस की वजह से इफआल में जो फर्क पैदा होता है, उस्ताद उसे समझाए और मश्क कराए।" हिन्दुस्तानी-आदर्शवादियों ने उसे देवनागरी अक्षरों में कैसे लिखा है—'पुल्लिङ्ग और स्त्रीलिङ्ग की वजह से क्रियाओं में जो फर्क पैदा होता है, उस्ताद उसे समझाए और मश्क कराए।' दोनों लिपियों में लिखी जाने योग्य भाषा बनाने के फेर में देवनागरी में भी कारण न लिखकर वजह लिखा गया है; अध्यापक न लिखकर उस्ताद लिखा गया है; अभ्यास न लिखकर मश्क लिखा गया है; मानों ये शब्द पहले सब शब्दों की अपेक्षा सरल हों, 'आमफहम' हों; लेकिन तब भी क्या दोनों लिपियों में भाषा लिखी जा सकी ? देवनागरी में 'क्रियाओं' है, उर्दू में 'इफआल' है (फेल का बहुवचन फेलों हो जाता लेकिन तब तो वह हिन्दी-व्याकरण अनुसार होता), देवनागरी में पुल्लिङ्ग है तो उर्दू में मुजक्कर है देवनागरी में स्त्रीलिंग है तो उर्दू में मुवन्नस है।

दूसरा उदाहरण लें—पृष्ठ १४ पर—"मुतकल्लम-हाजिर-गाय हालतों की मश्क फेले-हाल के मुजक्कर मुवन्नस की सूरतों में क दी जाय।" दोनों लिपियों में एक ही भाषा लिखने के इच्छुक को देवनागरी में इसे यों लिखना पड़ता है—"उत्तम और मध्य पुरुष की मश्क वर्तमान काल के पुल्लिंग और स्त्रीलिङ्ग के रू में करा दी जाय।" दोनों वाक्यों में एक 'मश्क' शब्द को छो कर कौन-सा विशेष शब्द समान है ? यदि हम 'अभ्यास' जगह इस 'मश्क' शब्द को ही अपनी भाषा में जगह दें अ हिन्दुस्तानी की खातिर "अभ्यास" को देशनिकाला भी दे दें तब भी क्या इससे वह हिन्दी "हिन्दुस्तानी" हो जाती है ?

अभी-अभी दक्षिण-भारत हिन्दी-प्रचार-सभा के १२ १३वें पदवी-दान के अवसर पर जनाब सैयद अब्दुल्ला ब लवी साहब ने एक तकरीर फरमाई है। उसमें आपने दक्षि भारत हिन्दी-प्रचार-सभा को नेक सलाह दी है कि वह अप नाम 'हिन्दी-प्रचार-सभा' न रखकर उसे 'हिन्दुस्तानी-प्रचार-सभा' तबदील कर दे। आप फरमाते हैं—"हिन्दी नाम से पैदा होनेवा भ्रम को हटाने के लिए मैं अपनी अपील पर जोर दूँगा, ख करके इसलिए कि मुझे पूरा यकीन है कि इस तबादले से मुस मानों के मन पर बड़ा अच्छा असर होगा।" कुछ लोग क करते हैं कि नाम में क्या रखा है; लेकिन बरेलवी साहब नाम तबादले से ही मुसलमानों के मन पर बड़ा अच्छा असर पै करने की उम्मीद करते हैं। आपने अपनी तकरीर में फरमाया कि कौमी जबान को उसके जो तीन नाम मिले हैं—हिन्दी, उ हिन्दुस्तानी—वे तीनों मुसलमानों के दिए हुए हैं। यदि यह ठीक है तो 'हिन्दुस्तानी' नाम में वह कौन-सी खासियत है जिस वजह से मुसलमान भाई 'हिन्दी' और 'उर्दू' दोनों नामों पर तरजीह देंगे ? आज आप मुसलमानों पर 'अच्छा असर पड़ेगा' बात कहकर राष्ट्र-भाषा को 'हिंदुस्तानी' ही कहने की सलाह दे है, कल आप उसे उर्दू ही कहने की सलाह भी दे सकते हैं। १९ में गांधी जी ने जब "हिंदुस्तानी सभा" की नींव डाली तब उ ३८ बुनियादी मेम्बरों में कितने मुसलमान भाई मेम्बर बने थे स्वयं बरेलवी साहब तो खैर उसमें थे ही नहीं, कसम खाने लिए तीन नाम दिखाई देते हैं, लेकिन ऐसे, जिनमें से कोई भाषा-सम्बन्धी शोधों के लिए प्रसिद्ध नहीं—न आजाद हैं, जाकिर हुसेन हैं, न मौलाना अब्दुल हक हैं।

क्षमा कीजिए यह 'हिंदुस्तानी' आन्दोलन हमारे मान्य रा नीतिक नेताओं की सूझ है और किसी राजनीतिक आवश्यक का ही परिणाम भी। लेकिन शर्तों पर आश्रित एकता—बना एकता—स्थायी नहीं होती।

—भदन्त आनन्द कौसल्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महात्मा जी का पहला भाषण

जेल से मुक्त होने के बाद महात्मा गांधी ने उस दिन कलकत्ते में एक सार्वजनिक सभा में अपना पहला भाषण किया है। इस भाषण में उन्होंने जो महत्त्वपूर्ण उपदेश किया है, वह सर्वथा महात्मा जी के अनुरूप ही हुआ है। उक्त भाषण का सारांश 'भारत' में छपा है, जो यह है—

हिन्दू समाज से अस्पृश्यता के रोग को दूर करना नितान्त आवश्यक है। हिन्दू धर्म के लिए यह एक भयानक कलंक है। प्रत्येक हिन्दुस्तानी को एक दूसरे को अपना भाई समझना चाहिए। हिन्दुओं, मुसलमानों, हरिजनों, भीलों और सन्थालों को अपने बीच फैले हुए भेद-भाव को अपने हृदय से दूर करके सामूहिक एकता स्थापित करनी चाहिए। यदि लोग इस शिक्षा को ग्रहण करेंगे तो इसके फलस्वरूप समाज में फैली हुई बहुत सी बुराइयाँ दूर हो जाएँगी। मुझे दुख है कि आप लोगों में से अधिकांश व्यक्ति हिन्दुस्तानी नहीं समझ सकते। आपको अपनी प्रान्तीय भाषा की जानकारी आवश्यक है। किन्तु यदि आपको सारे भारतवर्ष का भ्रमण करना है और आप चाहते हैं कि दूसरे भी आपके प्रान्त में आएँ तो आपको एक सामान्य भाषा का ज्ञान होना जरूरी है और वह भाषा हिन्दुस्तानी है।

उर्दू और हिन्दी इस भाषा के दो रूप हैं। उर्दू और हिन्दी में अन्तर यह है कि उर्दू में अरबी और फारसी के अधिक शब्द हैं और वह अरबी लिपि में लिखी जाती है, जब कि हिन्दी में संस्कृत भाषा के शब्दों की प्रधानता है और वह देवनागरी लिपि में लिखी जाती है। हमेशा से यह बात ऐसी नहीं रही है। किन्तु इस विषय में मैं इस झगड़े में नहीं पड़ना चाहता और न उन कारणों की चर्चा ही करना चाहता हूँ, जिनके फलस्वरूप ऐसी स्थिति पैदा हो गई है।

जो लोग भारत की सेवा करना चाहते हैं उन्हें दोनों लिपियों और दोनों भाषाओं का जानना आवश्यक है। यदि आप भारतीय जनता की सेवा करना चाहते हैं और उससे प्रेम है तो आपको कठिनाइयों का ध्यान नहीं करना चाहिए। यह कोई कठिन बात भी नहीं है।

३० वर्ष के अनुभव के पश्चात् मैं यह कह सकता हूँ कि यदि हम अपनी आवश्यकता के लिए स्वयं वस्त्र तैयार करना शुरू कर दें तो कपड़े की कठिनाइयों को हम दूर कर सकते हैं। यह बड़े आश्चर्य की बात है कि जब अपने देश में काफी रुई पैदा होती है तो भी हम लोग अपनी आवश्यकता के लिए न तो काफी कपड़ा तैयार कर सके और न चर्खा चलाकर सूत।

मलेरिया का कारण लोगों की गरीबी है। खाली समय में लोगों को सफाई इत्यादि पर ध्यान देना चाहिए। लोगों को स्वयं इस विषय पर सोचना चाहिए कि वे जनता को इस विषय में समझाएँ। इस प्रकार हम बहुत से रोगों को स्वयं दूर कर सकते हैं।

—

भारत के सम्बन्ध में प्रो० लास्की के विचार

संसार-विख्यात राजनीतिज्ञ प्रो० हेरल्ड लास्की अपने उदार विचारों के लिए भारत में कम लोकप्रिय नहीं हैं। वे भारत के सम्बन्ध में सदैव अपनी उदार भावना का परिचय देते रहे हैं। ब्रिटेन के मजदूर-दल के अध्यक्ष पद पर आसीन हो जाने पर भी उन्होंने अपनी भारत-सम्बन्धी उदार नीति का परित्याग नहीं किया। अभी हाल में उन्होंने फिर इस बात पर जोर दिया है कि भारत के साथ न्याय होना चाहिए। उनके इस वक्तव्य का सारांश 'वर्तमान' में छपा है, जो इस प्रकार है—

अब वह समय आ गया है जब हमें भारत छोड़ देना चाहिए। भारत-स्वशासन के लिए पूर्ण योग्य है और मेरे विचार से भारत में प्रान्तीय चुनावों के समाप्त हो जाने के बाद और यह स्पष्ट हो जाने के बाद कि परिस्थिति क्या है, मजदूर सरकार को चाहिए कि वायसराय की कार्यकारिणी का पूर्ण भारतीयकरण कर दे। यह कार्यकारिणी एक छोटी-सी विधान-परिषद् बुलाए, जो गुप्त रूप से भारत का विधान तैयार करे और विधान बन जाने के बाद ब्रिटिश और भारत सरकारों के बीच संधि-वार्त्ता हो, जैसी १९२१ में आयरलैंड के साथ हुई थी। इस सन्धि को हम स्टेटयूट बुक में दर्ज करें और भारत की स्वतन्त्रता को स्वीकार करें।

मेरे विचार से सर्वदलीय शिष्टमण्डल के भारत जाने से कोई हानि न होगी। साथ ही, मैं इससे किसी लाभ की सम्भावना भी नहीं देखता हूँ। भारत-सम्बन्धी ब्रिटिश सरकार की नीति से मैं सन्तुष्ट नहीं हूँ और मैं समझता हूँ कि भारत को स्वशासन देने का प्रश्न मजदूर सरकार की परीक्षा का प्रश्न है।

उस समय यदि भारत ब्रिटिश कामनवेल्थ में रहना चाहेगा तो वह वैसा कर सकने के लिए स्वतन्त्र होगा और इसी तरह यदि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह अलग होना चाहेगा तो इसके लिए भी स्वतन्त्र होगा। मुझे यह देखकर दुःख होता है कि जहाँ प्रजातन्त्रवाद के नारे पर हमने इतना बड़ा युद्ध किया और उस युद्ध में हजारों ही भारतीय सैनिकों ने वीरतापूर्वक प्राण उत्सर्ग किए और विजय प्राप्त करने में सहायक बने, वहाँ आजादी के लिए लड़नेवाले भारतीयों को जेल में बन्द रखा जा रहा है। कोई ब्रिटिश नेता, जो भारत की स्वाधीनता में बाधक है, समाजवादी उद्देश्यों का कट्टर शत्रु है।

——

भारतमंत्री की नई घोषणा

भारतमंत्री सर पेथिक लारेंस ने हाउस आफ लार्ड्स में उस दिन भारत के सम्बन्ध में सरकार की नीति को फिर घोषित किया है। इस बार भारतमंत्री ने यह बात भी भारतीयों को बताई है कि मजदूर सरकार भूतपूर्व अनुदार दल की सरकार की तरह अपनी नीति का दृढ़तापूर्वक पालन करेगी। भारतमंत्री के उक्त भाषण का सारांश 'हिन्दी मिलाप' में छपा है, जो इस प्रकार है—

ब्रिटिश सरकार भारतीय समस्या के हल के लिए विधान-निर्मात्री समिति का बुलाया जाना आवश्यक समझती है। ब्रिटिश सरकार की राय है कि भारतीयों को ही अपना विधान बनाने का पूरा-पूरा अधिकार होना चाहिए। इस सम्बन्ध में मजदूर सरकार अपने पहले किए हुए वायदों पर पूरी तरह कायम है और भारतीयों को विश्वास दिलाती है कि वह उन वायदों को कार्य-रूप में परिणत करने में कोई कसर न उठा रखेगी।

ब्रिटिश सरकार इस सम्बन्ध की स्थिति का अध्ययन करने के लिए पार्लिमेंट के सदस्यों का एक शिष्ट-मण्डल भारत भेजेगी जिसके सदस्यों के नामों की घोषणा शीघ्र की जाएगी। यह शिष्ट-मंडल भारत के विभिन्न राजनीतिक दलों के नेताओं से भेंट करके विधान-निर्मात्री समिति की तैयारी करेगा।

ब्रिटिश सरकार को विश्वास है कि भारत शांतिपूर्वक उपायों से ही अपने उद्देश्य अर्थात् पूर्ण स्वायत्त शासन को प्राप्त कर सकेगा और कोई ऐसा कदम न उठाएगा जिसका उद्देश्य किसी अल्पमत के विरुद्ध जबर्दस्ती उस पर किसी विधान का ठूँसना हो।

सम्राट् की सरकार भारतीय सरकारी अधिकारियों व भारतीय सेना की उसके प्रति वफादारी को समाप्त कर देने के प्रयत्नों की अनुमति नहीं देगी। और भारत सरकार को उसके अधिकारियों की पूर्णरक्षा में सहयोग प्रदान करेगी। भारत का भावी विधान शक्ति या शक्ति की धमकी के बल पर नहीं दिया जाएगा।

इसके अतिरिक्त भारतीयों की जीवन-प्रणाली के स्तर को ऊँचा उठाने की आवश्यकता है, जिसके लिए योजनाएँ बनाई जा रही हैं। भारत सरकार पर और प्रांतीय सरकारों पर शांति कायम रखने की जिम्मेदारी है, अतएव वैधानिक समस्याओं के हल में बल-प्रयोग का विरोध किया जाएगा।

——

कांग्रेस का चुनाव-सम्बन्धी घोषणा-पत्र

कलकत्ते में हाल में कांग्रेस कार्य-समिति की जो बैठक हुई थी, उसमें अन्य महत्त्वपूर्ण बातों के सिवा चुनाव-सम्बन्धी घोषणा-पत्र पर भी विचार हुआ था। वह घोषणा-पत्र कांग्रेस की कार्यकारिणी-समिति ने सर्व-सम्मति से स्वीकार करके पत्रों में प्रकाशित कर दिया है। इस घोषणा-पत्र से विदित होता है कि चुनाव में कांग्रेस की जीत होने पर जब प्रांतों में तथा केन्द्र में वह शासन-भार ग्रहण करेगी तब शासन में उसके द्वारा किस प्रकार के सुधार किए जाएँगे। उस घोषणा-पत्र का परिचय 'भारत' में दिया गया है, जो संक्षेप में इस प्रकार है—

कांग्रेस घोषणा-पत्र की मुख्य बात आत्म-निर्भरता—जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में आत्म-निर्भरता—है।

राष्ट्रीय योजना, उद्योग-धन्धों पर समाज का अधिकार स्थापित करना, ग्रामीण और छोटे-मोटे उद्योग-धन्धों को प्रश्रय देना, सामूहिक खेती और गाँवों को नवजीवन प्रदान करने-वाले प्रश्नों पर विशेष ध्यान दिया गया है।

किसानों की वर्तमान शोचनीय स्थिति को दूर करने का वचन दिया गया है और विस्तार के साथ इस समस्या पर विचार किया गया है। इस सम्बन्ध में घोषणा-पत्र में कहा गया है कि किसानों की उन्नति के लिए दो बातें आवश्यक हैं :—(१) धीरे-धीरे किसानों का ऋण कम करना और (२) कृषि-सम्बन्धी पैदावार में उन्नति करना तथा उपज की कीमत में वृद्धि।

यद्यपि खेती-सम्बन्धी उपज की कीमत आजकल साधारणतः बहुत अधिक है किन्तु किसान को अपनी पैदा की हुई चीजों को अब भी बहुत कम मूल्य में बेचना पड़ता है। बीच का आदमी काफी नफा खा लेता है। यथासाध्य इस प्रणाली को समाप्त किया जाएगा। सामूहिक खेती और सामूहिक क्रय-विक्रय-सम्बन्धी व्यवस्था चालू करने के बाद ही यह सम्भव हो सकता है।

गाँव के साहूकार अथवा महाजन के ऋण के बोझ से गाँवों के किसान दबे हुए हैं। जब तक वे ऋणमुक्त नहीं होते तब तक वे अपने परिश्रम का फल नहीं प्राप्त कर सकते और न उनका रहन-सहन ही ठीक हो सकता है। गाँवों में सहयोग-समितियाँ स्थापित करके उनके द्वारा किसानों की आर्थिक कठिनाइयाँ हल की जाएँ।

गाँवों में चलते पोस्ट आफिस कायम किए जाएँ ताकि ग्रामीण क्षेत्रों में लोगों को रोज पत्र आदि मिलते रहें। केन्द्रीय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरकार को मोटरों में चलते पोस्ट आफिस की व्यवस्था करनी चाहिए ताकि ग्रामीणों को दैनिक समाचार-पत्र प्राप्त हो सकें। समाचार-पत्रों के पढ़ने से उन्हें देश की दैनिक घटनाओं के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त होगी। देश की परिस्थिति का ज्ञान होने पर उनमें जो अन्धकार फैला हुआ है, वह दूर हो जाएगा। फलतः दैनिक समस्याओं के हल करने में उन्हें सुविधा होगी।

भारतवर्ष के ७,००,००० गाँवों में नव-जीवन प्रदान करने की ओर विशेष ध्यान दिया गया है। वर्तमान युग में संसार के अन्य देशों के रहनेवालों को जो मानवीय सुविधाएँ प्राप्त हैं वे भारतवर्ष के ग्रामीणों को भी प्राप्त होनी चाहिए। अन्य उन्नतिशील राष्ट्रों की भाँति यहाँ भी उद्योग-धन्धों का विकास होना आवश्यक है। किन्तु साथ-ही-साथ ग्रामीण उद्योग-धन्धों को आश्रय देने का भी वचन दिया गया है। क्योंकि इतिहास के आरम्भ से ही किसी देश के आर्थिक जीवन में इस प्रकार के उद्योग-धन्धों का महत्त्व विशेष उल्लेखनीय रहा है। भारतवर्ष उद्योग-धन्धों की इस पुरातन प्रणाली को नहीं छोड़ सकता। बड़े उद्योग-धन्धों के साथ-ही-साथ वह ग्रामीण उद्योग-धन्धों को भी उन्नत करेगा।

बड़े-बड़े उद्योग-धन्धों पर राज्य का अधिकार रहेगा। किन्तु इसका अभिप्राय यह नहीं है कि राज्य व्यक्तिगत उद्योग-धन्धों के विकास को बिलकुल खत्म कर देगा। वस्तुतः दोनों का साथ-साथ विकास होगा और सरकार दोनों को रक्षण देगी।

भारत के सामने मुख्य प्रश्न यह है कि दरिद्रता कैसे दूर की जाए और सर्वसाधारण का जीवन-मान कैसे बढ़ाया जाए। इसके लिए आवश्यक है कि विविध क्षेत्रों में सामाजिक उन्नति की जाए।

महात्मा गांधी का राष्ट्रभाषा-सम्बन्धी वार्तालाप

महात्मा गांधी अपनी राष्ट्रभाषा हिन्दुस्तानी के प्रचार के लिए अधिक कार्य-तत्पर दिखाई दे रहे हैं। मदरास की राष्ट्रभाषा-प्रचार-सभा के अगले अधिवेशन में अध्यक्ष पद ग्रहण करने की स्वीकृति उन्होंने दे दी है और उसमें भाग लेने के लिए आसाम के दौरे के बाद वे सीधे मदरास ही जाएँगे। कलकत्ते के प्रवास-काल में उन्होंने पूर्वी प्रांतों की राष्ट्रभाषा-प्रचार-सभा की कार्यसमिति के सदस्यों से राष्ट्रभाषा के सम्बन्ध में बातचीत की है, जो काफी अधिक रोचक है। वह वार्तालाप 'वर्तमान' में इस रूप में छपा है—

राष्ट्रभाषा का उद्देश्य पूर्णरूपेण तभी सफल हो सकता है, जब हिन्दुस्तानी जबान की दोनों लिपियों—नागरी व उर्दू—को स्वीकार करें और उन्हें सीखना आवश्यक मानें। हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन देवनागरी लिपि के द्वारा हिन्दी के प्रचार को ही अपना ध्येय मानता है। यहीं मेरा सम्मेलन से मतभेद है। मेरी निगाह में दोनों लिपियाँ सीखे और सिखाए बिना राष्ट्रभाषा का उनका काम अधूरा ही रहता है। हिन्दुस्तान में काफी तादाद में ऐसे लोग हैं, जो नागरी लिपि नहीं जानते और सिर्फ उर्दू लिपि ही काम में लाते हैं। उर्दू लिपि सीखे बिना हम उनसे सम्पर्क कैसे स्थापित कर सकते हैं।

जो लोग यह पूछते हैं कि उर्दू लिपि के लिए इतना जोर क्यों दिया जाता है, उन्हें मेरा यही जवाब है कि स्वराज्य के लिए इसकी जरूरत है। लोग कहते हैं—दोनों लिपियाँ सिखाना कठिन काम है। मैं भी मानता हूँ कि यह काम कठिन है पर मुल्क की तरक्की के लिए कितने कठिन काम करने जरूरी हो जाते हैं! जिन लोगों ने यह कहा कि अगर हम राष्ट्रभाषा की परीक्षा के लिए दोनों लिपियों को अनिवार्य कर दें, तो जबरदस्ती का काम होगा। उनसे मैं कहूँगा कि मेरे काम में कोई जबरदस्ती नहीं है। अगर कोई मेरे साथ न हो तब भी मैं अकेला ही यह काम करूँगा।

यह प्रश्न पूछने पर कि सम्मेलनवाले भी अपने काम का राष्ट्रभाषा के नाम से प्रचार करते हैं, और हिन्दुस्तानी-प्रचार सभा भी राष्ट्रभाषा के नाम से प्रचार करेगी, तो लोगों में भ्रम फैलना सम्भव है, गांधी जी ने कहा कि दरअसल हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन हिन्दी का प्रचार करता है और उसे 'हिन्दी' शब्द का प्रयोग करना चाहिए। अगर यह राष्ट्रभाषा शब्द को ही ग्रहण करता है, तब भी हमें जनता के सामने दोनों संस्थाओं के कार्य का अन्तर स्पष्ट करके अपने ध्येय के अनुसार काम करते रहना चाहिए। रोमन लिपि के सम्बन्ध में प्रश्न किए जाने पर गांधी जी ने कहा कि रोमन लिपि को मैं आदर्श नहीं मानता, बल्कि मैं तो उसे हिन्दुस्तानी संस्कृति का घातक समझता हूँ।

'भारत छोड़ो' का समर्थक

कांग्रेस के 'भारत छोड़ो' के नारे को सुनकर नौकरशाही विचलित हो उठती है, परन्तु उस नारे को अँगरेजी सेना के जवानों ने भी पसन्द किया है। अभी उस दिन मध्य-प्रदेश के एक सिविल सर्विस के अधिकारी ने एक सार्वजनिक सभा में भाषण करते हुए उक्त नारे के महत्त्व को स्वीकार किया है। उस भाषण का तत्सम्बन्धी अंश 'भारत' में इस प्रकार छपा है—

"जमाना अब बिलकुल बदल गया है। मैं यहाँ पर शासन करने के लिए नहीं, सेवा करने के लिए हूँ। भारत की माँग है कि हम लोग यहाँ से चले जाएँ। यह माँग न्यायोचित है। जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, यदि मैं आप लोगों की सेवा नहीं कर सकता तो यहाँ से चला जाऊँगा।

"इसमें कोई शक नहीं कि इसके पूर्व हममें से कुछ लोगों ने निरंकुशतापूर्ण व्यवहार किए हैं, लेकिन समय ने हमें एक दूसरा सबक सिखाया है। अब कोई निरंकुश नहीं रह सकता। मैं आप लोगों की माँग से पूर्ण सहानुभूति रखता हूँ। मेरा दरवाजा सभी के लिए खुला है और जहाँ तक मुझसे हो सकेगा, मैं अपा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोगों की पूरी सहायता करूँगा। जैसा सत्कार हमारा भारत में होता है वैसा अन्य किसी देश में नहीं होता। हम भारत के अनिवार्य रूप से सदैव कृतज्ञ रहेंगे।"

गोआ के हिन्दुओं की दयनीय दशा

भारत में 'अखिल भारतीय आर्य (हिन्दू) सेवासंघ' नाम की एक संस्था है। इस संस्था के पास, कहा जाता है, काफी अधिक धन भी है। यह भी कहा जाता है कि इस संस्था का उद्देश्य आर्य-संस्कृति की रक्षा करना तथा हिन्दू-जाति का अभ्युत्थान करना है। परन्तु इसकी कार्यप्रणाली कहाँ कैसी रही है, इसका पता बहुत कम मिला करता है। हाल में उसने गोआ के हिन्दुओं की दुर्दशा का विवरण समाचार-पत्रों में छपवाया है। उक्त विवरण 'जागृति' में इस रूप में छपा है—

समस्त भारत में गोआ ही ऐसा स्थान है जहाँ हिन्दू-जाति और हिन्दू धर्म के पतन की चरम सीमा पग-पग पर दृष्टिगोचर हो सकेगी। औरंगजेब के क्रूर शासन में मथुरा के मन्दिरों को ढहाकर मस्जिदें बनवाई गईं और काशी के पवित्र विश्वनाथ मन्दिर के ध्वंस पर आकाशभेदी मस्जिद और मीनारें खड़ी की गईं, किन्तु काशी और मथुरा आज भी हिन्दुओं के पवित्रतम तीर्थ बने हुए हैं। आज भी उनके नगर-मार्ग से बाजे-गाजे के साथ धार्मिक जलूस निकलते हैं और आज भी उनके मन्दिरों में घंटा-घड़ियालों के शब्द गूँजते हैं। विजेता उनके शरीर पर अपने अस्त्र शस्त्रों के चिह्न छोड़ गए हैं किन्तु वे अब भी जीवित और गौरवशाली हैं।

इसी प्रकार यद्यपि विजयनगर का अस्तित्व नहीं रहा, किन्तु उसके भग्न मन्दिर आज भी अपनी राजकीय गरिमा में मौन और गम्भीर खड़े दीख पड़ते हैं। वे जला दिए गए हैं, तोड़ डाले गए हैं, किन्तु विरूप नहीं किए गए हैं। किन्तु गोआ की दशा ठीक इसके विपरीत है। गोआ का प्राकृतिक दृश्य एक अनोखी और अद्भुत वस्तु है। वह अपने नारिकेलवन, छाया-चित्रित तालों और नहरों, रम्य समुद्र-तट, किरणों से रँगे जलाशयों और धान के खेतों के शोभा-वैभव से बड़ा ही मनमोहक है। किन्तु गोआ के आधे से अधिक निवासियों को, जो आर्यों की सन्तान हैं, वहाँ के ईसाइयों ने पशुवत् बना रखा है। ईसाई मिशनरियों के हाथ में वे अन्धी भेड़ की तरह हो रहे हैं। वे शताब्दियों से दासता की ऐसी घोर यन्त्रणा में रखे गए हैं कि उनकी तुलना में पराधीन भारत एक स्वतन्त्र जैसा देश है।

कोई हिन्दू-संस्था गोआ में ईसाई हिन्दुओं को पुनः हिन्दू धर्म में दीक्षित नहीं कर सकती। प्रत्येक स्कूल में चाहे वे शत-प्रति-शत हिंदू बालकों के लिए ही क्यों न हों, ईसाई धर्म की शिक्षा के लिए एक ईसाई शिक्षक की नियुक्ति होती है। पुराने गोआ में सप्तनाथ मन्दिर को ढहाकर एक बड़ा गिरजाघर बनाया गया है। सप्तनाथ गोआ के कदम्बकुल के राजाओं के कुलदेवताओं का मन्दिर था। नायेस मन्दिर के अतिरिक्त गोआ के सभी मन्दिर ढहा दिए गए थे। रोडीगीज नाम के एक कट्टर ईसाई की समाधि पर यह खुदा मिलता है कि उसने अपने गोआ के प्रवासकाल में प्रायः २४७ मन्दिरों को वीरान किया और उसकी आत्मा इस कार्य के लिए ईसा की गोद में है। बहुत से मंदिरों की टूटी-फूटी दीवारें और नींव अब भी हिंदू गौरव की याद दिलाती हैं।

किन्तु ईसाइयों ने वहाँ की पाषाण-मूर्तियों और मंदिरों को ही नष्ट नहीं किया। यह क्षति कोई बड़ी क्षति नहीं होती। उन्होंने तो गोआ की आधी जनता को ही उसकी सभ्यता, संस्कृति और वेष-भूषा से पतित कर रखा है। प्रायः सभी गोआवासी अपने को गोआवासी जानते हुए भी पोर्तुगीज कहाने में गौरव मानते हैं। वे अन्य हिन्दुओं को कोकणे कहते हैं। वे योरपीय वेश-भूषा रखते हैं। उनकी स्त्रियाँ फ्राक पहनती हैं और अपने चेहरों पर पाउडर मलती हैं। वे न तो भारतीय सिनेमा-चित्र देखती हैं और न किसी हिन्दू-उत्सव में भाग लेती हैं। वे केवल ईसाई समाज की कुरूपताओं के नमूने हैं।

गोआवासी हिन्दुओं की अन्तिम आशा केवल ब्रिटिश भारतीओं की सहायता पर अवलम्बित है। ब्रिटिश भारत के हिन्दू वहाँ के निराश और दलित हिन्दुओं को आत्मविश्वास दिला सकते हैं। उनको यही विश्वास दिलाने की आवश्यकता है कि समस्त भारतीय हिन्दू जनता की सहानुभूति उनके साथ है और विशाल हिन्दुत्व के अंग बने रहने से उन्हें कोई वंचित नहीं कर सकेगा।

संघ गोआ के हिन्दुओं के अधिकारों के इस प्रकार अपहरण के प्रति भारत की समस्त हिन्दू जनता की ओर से घोर क्षोभ प्रकट करता है और वहाँ के हिन्दुओं को आश्वासन देना चाहता है कि हिन्दू-जनता उनकी इस विवशता को दूर करने का शक्ति भर प्रयत्न करेगी। आशा है हिन्दू महासभा, आर्यसमाज, सनातनधर्म सभा आदि हिन्दू संस्थाएँ अपने गोआ निवासी हिन्दू भाइयों की रक्षा और सहायता करने में कुछ उठा नहीं रखेंगी।

आजाद हिन्द सेना के अफसरों का मुकदमा

दिल्ली के लाल किले में आजाद हिंद सेना के अफसरों पर जो महत्त्वपूर्ण मुकदमे चल रहे हैं, उनमें पहले मुकदमे के सरकारी गवाह लेफ्टीनेण्ट नाग से अभियुक्त पक्ष के वकील श्री भूलाभाई देसाई ने बड़े महत्त्व की बातें अपनी जिरह द्वारा स्वीकार करवाई हैं। उससे मुकदमे का वास्तविक रूप सामने आ जाता है। उसका विवरण संक्षेपरूप में 'हिंदी-मिलाप' में इस प्रकार छपा है—

आ० हि० फौ० शुरू से अन्त तक भारतीयों-द्वारा शिक्षित की गई। जापानी अफसरों का इसकी शिक्षा में हाथ नहीं था। इस सेना के सम्पूर्ण अफसर भारतीय ही थे। भारतीय तिरङ्गा झण्डा ही इस फौज का झण्डा था। इस फौज के बैज भी जापानी बैजों से भिन्न थे। चाकलेट रङ्ग के बैजों का प्रयोग सिर्फ इसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं किया गया ताकि जापानी उगते हुए सूर्य का चिह्न वह न हो। प्रारम्भ से ही आ० हि० फौ० में यह भावना थी वह जापान की अधीनता नहीं चाहती थी और उसने उसे कभी कार भी नहीं किया। इसका मुख्य उद्देश्य भारत को भारत के स्वतन्त्र कराना था। श्री सुभाष ऐसे नेता समझे जाते थे कि जापान की अधीनता स्वीकार किए बिना भारतीय स्वतन्त्रता युद्ध लड़ सके। सिंगापुर में युद्ध-बन्दियों की एक सभा में लते हुए श्री बोस के पूर्व आ० हि० फौ० के अधिकारी कप्तान नसिंह ने घोषणा कर दी थी कि यदि आवश्यकता हुई अर्थात् जापान भी उनके रास्ते में आया, तो उससे भी वे लड़ेंगे। सेना- बनाने का उद्देश्य एक संगठित सेना बनाना था जो कि संसार अन्य कानूनों के अनुसार कार्य कर सके। अन्दमान व निकोबार आजाद सरकार को सौंप दिए गए थे और लैफ्टी० कर्नल नाथन वहाँ के आठ मास व्यवस्थापक रहे। आजाद सरकार बन के बाद आ० हि० फौ० और जापानी फौजें मित्रों की नाईं करती थीं। आजाद हिन्द सरकार ने ब्रिटेन और अमेरिका के युद्ध-घोषणा की थी। इस सरकार को जापान, इटली, आय-, फिलिपाईन्स व मांचूको ने स्वीकार किया था। आजाद कार का 'पूर्ण स्वराज' नामी दैनिक तथा 'जयहिंद' नामक साप्ता- पत्र निकलता था। 'जयहिंद' नामी एक पुस्तिका भी प्रकाशित थी, इसमें श्री बोस, कप्तान लक्ष्मी और अन्य व्यक्तियों के भाषण यह पुस्तक दुर्लभ है, लेकिन सरकार की ओर से इसको दस्ता- के रूप में पेश किया गया। एक और पुस्तक दस्तावेज के रूप थी, इसका नाम था 'अमर सैनिकों के हमले'। यह लैफ्टी० कर्नल लों की एक हवाई हमले की रिपोर्ट थी। लै० ज्ञानसिंह बिज उसके साथियों पर यह हमला हुआ था। पुस्तिका का अन्त प्रकार है कि ये लोग हमारे नेता जी के आदर्शों के अनुकूल हुए। इन्होंने लड़ते-लड़ते अपने जीवन उत्सर्ग कर एक नई रा हमारे सम्मुख रक्खी है। स्वतन्त्र भारत इनकी पूजा करेगा उसकी सन्तान को ये वीर मार्ग प्रदर्शित करेंगे।

भारत की आजादी भारतीय प्रयत्न और भारतीय फौजों-द्वारा प्राप्त की जाती। जो भी भाग कब्जे में आता, उसका प्रबन्ध जाद सरकार ही करती।

——

सर आगा खाँ का वक्तव्य

प्रख्यात मुसलिम नेता सर आगा खाँ भारत आ गए हैं। सदा भाँति यहाँ आकर उन्होंने हिन्दू-मुसलिम समस्या पर अपने ार प्रकट करना इस बार भी आरंभ कर दिया है। उन्होंने कहा है वे शीघ्र ही इस सम्बन्ध में राष्ट्रपति मौलाना अबुलकलाम और त्मा गांधी से भी मिलेंगे। उनका एक वक्तव्य भी समाचार- में छपा है, जो इस प्रकार है—

मैं नहीं चाहता कि कोई शाही कमीशन भारत के बारे में ला करे। मजदूर दल ने ब्रिटिश जनता से वादा किया है कि भारत को उत्तरदायी सरकार प्रदान की जाएगी। अब सरकार को यह जिम्मेदारी ग्रहण करनी है। इसे पार्लियामेंट पर नहीं डाला जा सकता। यदि यह शिष्टमंडल आता है तो आए, परन्तु मजदूर सरकार को भारत के विषय में अपना अन्तिम निश्चय इस मंडल पर न छोड़ देना चाहिए। यह सब तो इसी लिए हो रहा है कि कांग्रेस और मुसलिम लीग में कोई समझौता नहीं हो रहा है। हम लोगों को यह बतलाने में कोई लाभ नहीं कि ये दो संस्थाएँ बिलकुल विभिन्न हैं। अपने पुराने निश्चयों को छोड़कर दोनों संस्थाओं को दुबारा मिलना चाहिए और किसी समझौते पर पहुँचना चाहिए।

——

वर्गवादियों में फूट

भारतीय वर्गवादी दल अपनी दुहरी नीति के कारण आज संकट में पड़ गया है। कांग्रेस की कार्य-समिति की कलकत्ते की बैठक में एक प्रस्ताव पास हुआ है, जिसके अनुसार सभी वर्ग-वादी कांग्रेस के संगठन से निकाल दिए गए हैं। कांग्रेस-विरोधी रुख ग्रहण करने के कारण उनके संगठन में स्वयं मतभेद उपस्थित हो गया है। इस सम्बन्ध में 'वर्तमान' ने अच्छा प्रकाश डाला है। वह लिखता है—

भारतीय कम्यूनिस्ट पार्टी के सदस्यों में पार्टी की अगस्त-आंदोलन-विरोधी नीति तथा तानाशाही के विरुद्ध जबर्दस्त विरोध उठ खड़ा हुआ है। श्री रणदिवे जैसे प्रभावशाली नेता के नाय-कत्व में श्री पी० सी० जोशी को प्रधानमंत्रित्व से अलग करने का आंदोलन जारी हो चुका है।

यह सत्य है कि पार्टी के नियम इतने कड़े हैं कि १९४२ में पार्टी-द्वारा स्वीकार की गई नीति के विरुद्ध जबान खोलने की किसी की हिम्मत नहीं है। केवल दो-चार व्यक्तियों ने ही अपना असंतोष व्यक्त किया है। परन्तु मालूम होता है कि आपसी मतभेद अब चरम सीमा को पहुँच गया है। पार्टी का एक वर्ग लोकतन्त्र के सिद्धान्तानुसार पार्टी की रचना करने का आन्दोलन कर रहा है। किन्तु पार्टी का प्रत्येक सदस्य यह स्पष्ट समझ रहा है कि १९४२ के आन्दोलन के सम्बन्ध में गलत रुख अख्तियार करके पार्टी की प्रतिष्ठा को भारी हानि पहुँचाई गई है। विद्रोही सदस्यों का नेतृत्व श्री० टी० रणदिवे कर रहे हैं। आप पार्टी के अग्रणी नेताओं में एक तथा पार्टी के केन्द्रीय कार्यसमिति के सदस्य हैं। आप पार्टी के प्रधानमन्त्री-पद से श्री पी० सी० जोशी को हटवाने के लिए आन्दोलन कर रहे हैं।

——

भारत में अर्थसंकट की संभावना नहीं

भारत सरकार के योजना और उन्नति-सदस्य सर आर्देशिर दलाल को यह विश्वास है कि भारत में किसी प्रकार का अर्थ-संकट नहीं उपस्थित हो सकता। उन्होंने उस दिन नई दिल्ली में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस सम्बन्ध में जो वक्तव्य दिया है, वह 'हिन्दी-मिलाप' में इस रूप में छपा है—

यदि सरकार और जनता पूर्ण सहयोग दे तो कोई कारण नहीं कि भारत में किसी आर्थिक संकट की संभावना हो। फौज से निकलनेवाले लोगों की संख्या ८,५०,००० होगी। ये आदमी आठ महीने के अन्दर बेकार हो जाएँगे। फौज में जिन नौसिखिया कारीगरों के लिए स्थान नहीं, उन पर होनेवाला भारी व्यय फौज सहन नहीं कर सकती। यदि पुनर्निर्माण के कार्य के लिए भरती हो तो दो लाख लोग लिए जाएँगे। बाकी फौज से निकले लोगों की आजीविका का सवाल है। बैंकों का बढ़ता हुआ धन, अधिक लाभ पर लगा टैक्स और सेविङ्ग सर्टिफिकेटों की शकल में जमा रुपया उन बेशुमार लोगों के काम में लगाने के लिए प्रयुक्त हो सकता है।

विदेशों से मशीनरी मँगाने का काम अभी नहीं हो सकता—परन्तु कुछ समय में हो सकेगा—इस बात के लिए एक अफसर इण्डिया हाउस में काम कर रहा है।

गैर-सरकारी उद्योगों में किसी प्रकार का हस्तक्षेप किए बिना ही व्यापारिक जहाजों के निर्माण के लिए तथा भावी भारतीय नौ-सेना के लिए आवश्यक जहाजों को बनाने के लिए एक जहाज बनाने का कारखाना स्थापित करने का प्रश्न सरकार के विचाराधीन है। नागरिक उड़ान तथा शाही भारतीय वायुसेना को पूर्ण करने के लिए वायुयानों का निर्माण करने के प्रश्न पर भी सरकार गंभीरता से विचार कर रही है।

देश की राजनीतिक स्थिति अनिश्चित है। मुझे आशा थी कि शिमला सम्मेलन सफल होगा—परन्तु वह सफल न हुआ। ब्रिटिश सरकार भारतीय राजनीतिक संकट को दूर करने का एक और प्रयत्न कर रही है—मुझे आशा है कि इस बार वह सफल होगी।

——

ट्रावनकोर में प्राथमिक शिक्षा की नई व्यवस्था

ट्रावनकोर राज की सरकार ने प्राथमिक शिक्षा का सारा प्रबंध अपने हाथ में ले लेने का निश्चय किया है। वह इस निश्चय के अनुसार अपने राज्य में निःशुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था करेगी। उसकी इस व्यवस्था से उन शिक्षा-संस्थाओं के, विशेषकर मिशन स्कूलों के, अधिकारी असंतुष्ट हुए हैं क्योंकि इस नई व्यवस्था के अनुसार उन्हें सरकारी आर्थिक सहायता नहीं मिल सकेगी। इस बात को लेकर मिशनरियों ने तो आंदोलन-सा खड़ा कर दिया है, जिसका उत्तर भारत के प्रमुख शिक्षाशास्त्री श्रीनिवास शास्त्री ने बहुत उचित ढंग से दिया है। शास्त्री जी ने कहा है—

"उन्हें आर्थिक सहायता देने का अर्थ उनके इस अधिकार को स्वीकार कर लेने के समान होगा कि वे अपनी जाति के हित के लिए और ईसाई-भिन्न व्यक्तियों को भी अनिवार्य पाठ विधि के अंश के रूप में अपनी धार्मिक शिक्षा देने के लिए स्कूल व कालिज स्थापित कर सकते हैं।

"एक विचित्र दावा यह किया गया है कि जो जाति राज्य को टैक्स अदा करती है वह उन टैक्सों के अनुपात में शिक्षा-सम्बन्धी आर्थिक सहायता की भी अधिकारी है। राज्य तो उसी संस्था को सहायता कर सकता है जिसका लाभ उठाने से धार्मिक, रंग जाति-भेद के आधार पर किसी नागरिक को वंचित न रखा जाय। जात्यभिमान, राजनैतिक बड़प्पन अथवा ऐतिहासिक कारणों से भूत काल में कुछ विशिष्ट दलों का एकाधिपत्य रहा है, परन्तु उन दिन लद गए हैं।

"शेष भारत को भी इस शिक्षा-सुधार के कार्यों को प्रोत्साहित करने के लिए ट्रावनकोर सरकार का अनुकरण करना चाहिए।"

('वर्तमान' से

——

अफ्रीका छोड़ो

दक्षिण अफ्रीका में प्रवासी भारतीयों की दुरवस्था का कब अंत होगा, यह निश्चित रूप से कहना कठिन है। वायसराय महोदय की कार्यकारिणी सभा के प्रवासी विभाग के सदस्य डा० खरे ने एक बार यहाँ तक कह दिया था कि यदि भारत को अधिकार होता तो वह अपने प्रवासियों की स्वत्व-रक्षा के लिए युद्ध तक घोषित कर देता। परन्तु दक्षिण अफ्रीका के गोरे वराबर इसी बात पर दृढ़ हैं कि भारतीय प्रवासियों को बराबरी का अधिकार न दिया जाय। उस दिन दक्षिण अफ्रीका के 'यूनियन हाउस असेम्बली' के भूतपूर्व अध्यक्ष डा० जानसन ने नेशनलिस्ट कांग्रेस की बैठक में स्पष्ट ही कह दिया है कि प्रवासियों को दक्षिण अफ्रीका से चला जाना चाहिए। उन्होंने कहा है—

"नेशनलिस्ट पार्टी यहाँ के निवासियों को दबाना नहीं चाहती। उन्हें यहाँ रहने और अपनी उन्नति करने का अधिकार है।

"भारत अपनी इतनी बड़ी जन-संख्या के कारण एक शक्तिशाली देश हो जायगा। हम लोग राष्ट्रीयतावादी होने के नाते उन्हें उनकी स्वतन्त्रता की लड़ाई के लिए बधाई देते हैं। किन्तु नेशनलिस्ट पार्टी इस बात की अधिकारिणी है कि वह योरोपियन जाति की रक्षा करे।

"भारतीयों के लिए सबसे अच्छा मार्ग यही होगा कि वे अपने देश को लौट जाएँ। किन्तु जब तक वे यहाँ हैं, उन्हें इसमें आपत्ति नहीं होनी चाहिए कि उनके साथ विदेशियों का-सा व्यवहार किया जाए। इसलिए नहीं कि वे कुछ छोटे हैं, बल्कि केवल इस लिए कि हमें यूरोपियन जाति की रक्षा करनी है।

"यहाँ भारतीयों की उपस्थिति योरोपियनों और यहाँ के निवासियों के सम्बन्ध में बाधा पहुँचानेवाली है। उन्हें योरोपियनों के बराबर अधिकार देने का अर्थ परिस्थिति को बिगाड़ना होगा। साधारणतया दक्षिणी अफ्रीका में रहनेवाले भारतीयों की अवस्था भारत में रहनेवाले लाखों व्यक्तियों की अवस्था से कहीं अधिक अच्छी है।"

('प्रताप' से

——

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्व-शान्ति का संकट

ब्रिटिश पार्लियामेंट में मजदूर सरकार के वैदेशिक मन्त्री
न साहब ने ब्रिटिश सरकार की वैदेशिक नीति का स्पष्टीकरण
ते हुए जो महत्त्वपूर्ण भाषण किया है, उससे यह भले प्रकार
ट हो जाता है कि रूस का ग्रेट ब्रिटेन तथा अमेरिका से कहाँ
न बात पर मतभेद है और उस मतभेद ने उनमें कैसे भयानक
श्वास का भाव भर दिया है। आज रूस सुदूरपूर्व के मित्र-
शन से सहयोग करने से क्यों इनकार कर रहा है, इसका भी
भाषण से पता लग जाता है। रूस समझता है कि उक्त
शन-द्वारा उसके सुदूरपूर्व के हितों को आघात पहुँचेगा।
से बेविन साहब ने रूस को बार-बार इस बात का आश्वासन
है कि ब्रिटेन रूस के हितों को भूलकर भी धक्का नहीं पहुँ-
गा। परन्तु साथ ही साथ उन्होंने रूस पर यह दोषारोपण
है कि वह योरप के अधिकांश पर अपना प्रभाव बढ़ाकर ब्रिटेन
ला दबोच देना चाहता है। रूस की प्रादेशिक माँगों को
लिए वे स्वीकार करने को तैयार नहीं हैं। हाँ, वे यह अधिकार
भी रखना चाहते हैं तथा दूसरों को भी देना चाहते हैं कि अपने
ष के देशों के साथ मैत्रीपूर्ण राजनैतिक सम्बन्ध स्थापित किए
सकते हैं। पर वे यह नहीं चाहते कि उक्त सम्बन्ध ऐसा रूप
ण कर लें कि सम्बन्धित राज्य किसी महाशक्ति की संरक्षा में
जाएँ। उनके भाषण से यह स्पष्ट ध्वनि निकलती है कि रूस
ने पड़ोसी राज्यों के साथ ऐसा ही सम्बन्ध स्थापित करना
ता है। उन्होंने अपने भाषण में यह भी कहा है कि परमाणु
का भेद अमेरिका के सिवा ब्रिटेन भी जानता है और यह भी
नत किया है कि वह तीसरे को नहीं बताया जाएगा। और
उसके जानने के लिए मचल गया है। साथ ही वह योरप के
एशिया के अपने पड़ोस के देशों में से कई एक को अपने
पंजे में दाब रखना चाहता है। वस्तुतः आज योरप में इन
महाशक्तियों के बीच में जो मतभेद उपस्थित हो गया है,
का मूल कारण यही है कि दोनों ही सबसे पहले अपने स्वार्थों
बात देखना चाहते हैं और उसके बाद अपने पड़ोस के देशों
सा सम्बन्ध स्थापित करना चाहते हैं कि वे उसके होकर रहें।
शुटबन्दी की भावना रखकर एवं अपने स्वार्थों की रक्षा की
पहले चाहना कर ये महाशक्तियाँ युद्धजनित जटिल सम-
ों के सम्बन्ध में परस्पर कैसे समझौता करेंगी, यह एक टेढ़ा प्रश्न
रन्तु प्रसन्नता की बात है कि इस परिस्थिति की सम्यक रूप से
ारी रखते हुए भी ब्रिटेन एवं अमेरिका दोनों ही के वैदे-
शिक विभाग वह सद्बुद्धि अभी तक बनाए हुए हैं, जिसके द्वारा वे समझते हैं कि सारी समस्याएँ शान्तिपूर्वक निपटा ली जाएँगी और वे सब परस्पर मिलकर विश्व में शान्ति की स्थापना कर सकेंगे। ऐसी दृढ़ आशा वे रखते हैं और विश्वास भी करते हैं कि वे अपने प्रयत्न में अवश्य सफल होंगे। यह सच है कि अमेरिका और ब्रिटेन में घनिष्ठता है और रूस अकेला है। परन्तु इससे यह नहीं जान पड़ता कि रूस उन दोनों महाशक्तियों से किसी बात में दब जाएगा। इस स्थिति के कारण इन तीनों महाशक्तियों में जो तनातनी चल रही है, उसी ने संसार में ऐसी परिस्थिति उत्पन्न कर दी है, जिससे न तो युद्धजनित जटिल समस्याएँ हल हो पा रही हैं और न निरस्त्रीकरण का भाव ही किसी प्रकार कार्य का रूप ग्रहण कर रहा है। उलटा यह दिखाई दे रहा है कि शान्ति के स्थान में अशान्ति ही बढ़ती पर है। भारतीय द्वीप-पुंजों में और हिंदचीन में वहाँ के जनतन्त्र को बलपूर्वक दबाने के लिए ब्रिटिश सरकार डचों और फ्रेंचों के पक्ष में नियमपूर्वक युद्ध कर रही है। चीन के ग्यारह प्रान्तों में भीषण गृह-युद्ध छिड़ गया है। कोरिया में वहाँ की स्वतन्त्रतावादी अस्थायी सरकार रूस के अनधिकार प्रवेश के विरुद्ध रोष प्रकट कर रही है। इधर फिलस्तीन की समस्या ने अरबों को विक्षुब्ध कर दिया है और आए दिन अरब प्रदेशों में एवं फिलस्तीन में भी अरबों की यहूदियों से मुठभेड़ें होती ही रहती हैं। ये सब ऐसे लक्षण हैं, जो भविष्य की संसार-व्यापी अशान्ति के सूचक हैं। संसार की प्रमुख महाशक्तियों को इस परिस्थिति की ओर ध्यान देना चाहिए। यदि वे समय रहते सावधान नहीं होतीं तो विश्वव्यापी शान्ति की आशा करना भारी जोखिम उठाना है। लक्षणों से तो ऐसा प्रतीत होता है कि संसार में अभी व्यापक शान्ति की वैसी आशा नहीं है।

भानु जी का स्वर्गवास

बिलासपुर के हिन्दी के प्रसिद्ध महारथी रायबहादुर श्री जगन्नाथप्रदास 'भानु' का परिपक्व वय में गत अक्टूबर मास में देहावसान हो गया। आज के वयोवृद्ध हिन्दी-साहित्यिकों में वे वय में सबसे बड़े थे। यद्यपि वृद्धावस्था के कारण इधर बहुत अधिक समय से उनका साहित्यिक कार्य बन्द हो गया था, तथापि वे हिन्दी को भूल नहीं बैठे थे। वे उसकी गति-विधि से अपने को बराबर परिचित भी रखते थे। 'भानु' जी हिन्दी-काव्य-शास्त्र के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मर्मज्ञ थे। बीसवीं सदी के प्रारम्भ में जब हिन्दी का उदय हुआ था, उन्होंने छन्दः-शास्त्र और काव्यशास्त्र की दो बेजोड़ पुस्तकें लिखी थीं। उनके छन्दःप्रभाकर ने सैकड़ों हिन्दी-प्रेमियों को बिना गुरु के ही छन्द लिखने का ज्ञान प्रदान किया है। इसी प्रकार उनके काव्यप्रभाकर ने कितनों ही को काव्य का मर्मज्ञ बनाने का काम किया है। भानु जी ने इन ग्रंथों को लिखकर वस्तुतः हिन्दी की ठोस सेवा की है। यद्यपि इन दोनों विषयों की बाद को कई पुस्तकें लिखी गई हैं तथापि आज भी ये दोनों ग्रंथ पहले ही की भाँति अपना आदर बनाए हुए हैं। भानु जी की ये दोनों रचनाएँ अपनी उत्कृष्टता के कारण उनका नाम हिन्दी में सदैव अमर बनाए रहेंगी।

मास्को का सम्मेलन

लंदन में तीन महाशक्तियों के वैदेशिक मंत्रियों का जो सम्मेलन हुआ था, वह सफल नहीं हुआ और उसके बाद ऐसा जान पड़ा था कि शीघ्र ही उनकी बैठक होने की आशा नहीं है, परन्तु संसार की जटिल समस्याओं ने सम्मेलन के सूत्रधारों को बाध्य कर दिया है कि उनकी बैठक हो। फलतः अब वह इसी दिसंबर में मास्को में हो रहा है। इस सम्मेलन के आगे अनेक और नए जटिल प्रश्न उपस्थित होंगे। पहले के जिन प्रश्नों का निराकरण नहीं हो सका था, वे तो होंगे ही। इस सम्मेलन के सफल होने में मुख्य बाधा यह है कि तीन महाशक्तियों में परस्पर विश्वास का अभाव हो गया है। ब्रिटेन और अमेरिका बहुत कुछ एक साथ हैं, परन्तु रूस का इन दोनों से मतैक्य नहीं हो रहा है। रूस चाहता है कि उसके पड़ोस के देशों में ऐसे ढंग की सरकारें स्थापित हों, जो सदैव उसकी होकर रहें। रूमानिया, बल्गेरिया, यूगोस्लाविया, आस्ट्रिया, जेचोस्लोवाकिया तथा अपने अधिकार के जर्मन प्रांतों में उसने अपने अनुकूल शासन-व्यवस्थाएँ कायम भी कर ली हैं। इधर तुर्की के सीमावर्ती आर्मिनियन प्रांत को वह अपने अधिकार में ले लेना चाहता है। उत्तरी ईरान में उसके प्रभाव से एक स्वाधीन सरकार स्थापित हो जाने की हाल ही में घोषणा हो चुकी है। उधर चीन में मंगोलिया का विशाल प्रांत चीन के साथ की गई नई संधि के अनुसार उसके प्रभाव में आ ही गया है। अब रह गया चीनी तुर्किस्तान का प्रदेश, वह पहले से ही उसके प्रभाव में है। रूस की अपने चारों ओर इस प्रकार का प्रभाव-क्षेत्र बना लेने की प्रवृत्ति को ब्रिटेन और अमेरिका आशंका की दृष्टि से देख रहे हैं। यही वस्तुतः मूल कारण है, जिससे इन तीनों महाशक्तियों में अविश्वास का भाव पैदा हो गया है। और इसी कारण कदाचित् रूस को परमाणु बम का भेद बताने से संयुक्तराष्ट्र हिचक रहे हैं। मास्को-सम्मेलन में रूस की इस प्रकार की धींगाधींगियों पर विचार होगा। अपने बचाव के लिए रूस भी अपने मित्रों पर तरह-तरह के आरोप कर रहा है। फिलिस्तीन, ईरान तथा चीन में संयुक्तराष्ट्रों की सेनाएँ डटी हुई हैं तथा इंडोनेशिया आदि स्थानों में ब्रिटिश सेनाएँ युद्ध कर रही हैं, यह सब उसकी दृष्टि में अन्यायमूलक है और वह इन सब बातों के संबंध में तरह-तरह के प्रश्न उठाकर संयुक्तराष्ट्रों के प्रति घृणाव्यंजक व्यंग्य कर रहा है।

रूस के सर्वेसर्वा स्टालिन साहब ने तो पहले से ही घोषित कर दिया है कि सम्मेलन में यदि एकमत से सभी प्रश्नों का निराकरण नहीं हो जाएगा तो रूस पृथक्तावादी नीति को ग्रहण करेगा। परन्तु अमेरिका और ग्रेट ब्रिटेन के राजनीतिज्ञ इतने हीन-बल नहीं हैं कि वे उनकी धमकी में आ जाएँ। उन्हें रूस को न्याय-मार्ग पर लाना ही होगा। इसके बिना संसार में विश्वशांति की स्थापना नहीं हो सकेगी। यदि संसार की ये तीनों महाशक्तियाँ अपने-अपने प्रभाव-क्षेत्रों को बढ़ाने में संलग्न होंगी, संसार के छोटे-छोटे स्वाधीन राष्ट्रों को ये अपनी दासता के बंधन में बाँधकर अपने स्वार्थों की पूर्ति करेंगी और इस प्रकार सारे संसार को आपस में बाँटकर अपनी-अपनी राज्यसत्ता के बल को प्रबल करेंगी तो संसार में शांति की स्थापना कदापि संभव नहीं है। ऐसी दशा में इन महाशक्तियों को, यदि इन्हें संसार की सभ्यता की रक्षा करनी है और स्वयं अपने अस्तित्व की रक्षा करनी है तो प्रभाव-वृद्धि की महत्त्वाकांक्षा को छोड़कर परस्पर ऐसा सुदृढ़ समझौता करना ही पड़ेगा, जिससे संसार में शक्ति की नहीं किन्तु न्याय की प्रतिष्ठा हो सके। ऐसा होने पर इनका तथा विश्व का कल्याण हो सकेगा। परन्तु ऐसे शुभ लक्षण इस समय दृष्टिगोचर नहीं हो रहे हैं। यदि अमेरिका और ब्रिटेन के कूटनीतिज्ञों ने बार-बार अपने धैर्य का परिचय न दिया होता तो कभी का तीसरा महायुद्ध छिड़ गया होता। महायुद्ध समाप्त हो गया है। परन्तु पहले के सभी छोटे-बड़े स्वाधीन तथा पराधीन राष्ट्र युद्ध के संकट में पूर्णतया ग्रस्त हैं। कहीं सुख-शांति दिखाई नहीं दे रही है। यही क्या, अनेक स्थानों में नियमपूर्वक युद्ध हो रहे हैं और संसार की तीनों महाशक्तियाँ यह सारा दृश्य चुपचाप बैठी देख रही हैं। देखना है, मास्को का यह सम्मेलन संसार को उसकी दुर्दशा से मुक्त करने में कहाँ तक कारगर होता है।

हिन्दी का प्रचार-कार्य

उदयपुर के अपने पिछले वार्षिक अधिवेशन में सम्मेलन ने प्रस्ताव पास करके इस बात को भले प्रकार स्पष्ट कर दिया कि हिंदी का लोकमत हिंदी को हिंदुस्तानी का रूप देने के पक्ष में नहीं है। वह हिंदी को उसके उसी रूप में रखना चाहता है, जो आज उसे प्राप्त है। इसमें सन्देह नहीं कि सम्मेलन ने उदयपुर में हिंदी के लोकमत का पूर्ण रूप से नेतृत्व किया है। और जो उसे करना चाहिए था, वही काम उसने किया है। हिंदी को हिंदुस्तानी का रूप देने से हिंदी-भाषियों की संस्कृति को भारी धक्का पहुँचता साथ ही हिंदी की भी अपनी व्यापक परंपरा नष्ट हो जाती। परं

अब प्रश्न यह है कि हिंदुस्तानी के वर्तमान प्रवर्तक महात्मा गांध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या हिंदी के लोकमत का आदर करेंगे। इसका उत्तर नकारात्मक है। महात्मा गांधी तो सारे राष्ट्र को अपने दृष्टिकोण में रखकर अपना काम करते हैं। उन्होंने सारे देश के लिए एक भाषा और दो लिपियाँ होना ठीक ठहराया है और वे अपने निश्चय को कार्य का रूप दे चुके हैं। ऐसी दशा में वे हिंदी-भाषी लोकमत का कैसे आदर कर सकते हैं? तब यदि सम्मेलन हिंदी का राष्ट्रभाषा के रूप में प्रचार करेगा तो उसका महात्मा गांधी के हिंदुस्तानी के कार्यक्रम से संघर्ष होगा और इस संघर्ष में सम्मेलन के विजयी होने में संदेह है। ऐसी दशा में उसके लिए बुद्धिमत्ता की बात यही होगी कि वह ऐसे संघर्ष से दूर रहकर अपनी हिंदी के पोषण के लिए किसी दूसरी योजना को ही अपनाए। उसके लिए हिंदी के प्रचार करने के कार्य का बहुत बड़ा क्षेत्र है। कराची से आसाम तक समग्र उत्तरी भारतवर्ष में स्वतन्त्र रूप से वह अपना प्रचार-कार्य कर सकता है। और यही क्यों, हिंदी के साहित्यिक विकास का कार्य उसके लिए बहुत पर्याप्त है। हिंदी-भाषी प्रदेशों का इतना विस्तृत क्षेत्र है कि उन्हीं में यदि जमकर कार्य किया जाय तो कार्य करने को बहुत अधिक स्थान मिलेगा। संयुक्तप्रान्त, बिहार, मध्यप्रदेश, राजस्थान, और पंजाब के भूखण्ड इतने बड़े और घने आबाद हैं कि वे हिंदी के सेवकों के लिए राष्ट्रभाषा के प्रचार एवं उसके साहित्यिक विकास के लिए काफी अधिक हैं। जरूरत है काम करनेवालों की जिनका सम्मेलन के पास सदैव अभाव रहा है। यदि सम्मेलन ने इन प्रांतों में पहले से जमकर काम किया होता तो आज उसे बिहार में मैथिली के एवं राजस्थान में राजस्थानी के आंदोलनों का मुकाबिला करने का अवसर न मिला होता। इन प्रांतों में हिंदी के सम्बन्ध में उसे कहीं अधिक ठोस काम करने की आवश्यकता है। विशेषकर संयुक्तप्रांत तथा राजस्थान में, जहाँ हिंदी अपने नैसर्गिक अधिकारों से एक युग से वंचित है। अब रह गई बात उसके सारे देश की राष्ट्रभाषा बनने की, सो यह तो एक ध्रुव-सत्य है कि वही इस महादेश की एकमात्र राष्ट्रभाषा है और वह दिन किसी-न-किसी दिन अवश्य आएगा, जब सारा देश उसे राष्ट्रभाषा के रूप में ग्रहण करेगा। महात्मा गांधी की बनाई जानेवाली हिंदुस्तानी उसके इस नैसर्गिक अधिकार का अपहरण कदापि न कर सकेगी। हाँ, तब तक हिंदी के कार्यकर्त्ताओं को धैर्य के साथ उस अवसर की प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। इस प्रतीक्षा-काल में उनका एक-मात्र यह कर्त्तव्य होना चाहिए कि अपनी राष्ट्रीय भाषा हिंदी के साहित्यिक विकास को चरम सीमा तक न पहुँचाएँ किंतु उसके साथ ही समग्र हिंदी-भाषी प्रांतों में हिंदी इतना व्यापक प्रचार कर दें कि वह भारत की एक सर्वप्रधान भारतीय भाषा के पद से ऊँची उठ जाए। सम्मेलन के सूत्रधारों को चाहिए कि वे अपनी सारी शक्ति को पुंजीभूत करके लगाएँ, जिससे उनके सतत प्रयत्नों से हिंदी इतनी अधिक सशक्त तथा प्रांजल हो जाए कि उसे भारत की सर्वप्रधान-भाषा होने का गौरव प्राप्त हो।

भारतीय आत्मशासन की व्यवस्था

कांग्रेस की कार्यकारिणी समिति के सदस्य बैरिस्टर आसफअली ने कहा है कि केन्द्रीय और प्रांतीय एसेम्बलियों के चुनाव के बाद भारतीय समस्या आसानी से हल हो जायगी। बंगाल के गवर्नर केसी साहब ने कांग्रेस के नेताओं से मिलकर दृढ़ता के साथ यह बात कही है कि ब्रिटेन की मजदूर सरकार ईमानदारी के साथ भारतीय समस्या का हल करने के लिए यत्नशील है। ब्रिटिश सरकार पार्लियामेंट के सदस्यों का एक शिष्टमण्डल भारत भेज रही है, जो भारत के नेताओं से विचार-विनिमय कर यहाँ की परिस्थिति ब्रिटिश सरकार को सूचित करेगा। ये सब शुभ लक्षण हैं। भारतीय धीरता एवं प्रसन्नता के साथ उस दिन की प्रतीक्षा कर रहे हैं, जब ब्रिटिश सरकार अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार भारत में पूर्ण आत्म-शासन-विधान को कार्य का रूप प्रदान करेगी। यह कहा जा चुका है कि निर्वाचनों के बाद एक विधान-सम्मेलन संगठित किया जाएगा, जो आत्म-साधन के सिद्धान्त के अनुसार भारत के लिए एक नया शासन-विधान प्रस्तुत करेगा। ब्रिटिश सरकार ने यह नहीं बताया है कि यह विधान-सम्मेलन किस प्रकार संगठित किया जायगा तथा अल्प मतवाले संप्रदायवादियों तथा देशी राज्यों आदि की माँगों तथा कांग्रेस के राष्ट्रीयतावादी सिद्धान्तों के बीच वह किस प्रकार सामञ्जस्य पैदा कर सकेगी, क्योंकि भारत-मंत्री ने अपनी पिछली घोषणा में आत्मशासन प्रदान करने की बात कहते हुए अल्प मतवाले संप्रदायों एवं देशी राज्यों के स्वत्वों की रक्षा की जिम्मेदारी अपने ऊपर ली है। साथ ही यह भी कहा है कि वे किसी दल-विशेष को अपने बहुमत के कारण अपना बनाया हुआ शासन-विधान दूसरों पर नहीं लादने देंगे। यह सब बातें ऐसी हैं, जो परस्पर मेल नहीं खाती हैं। इन सबमें सामञ्जस्य पैदा कर सर्वसम्मत शासन-विधान प्रस्तुत करना अभी तक स्वयं ब्रिटिश सरकार तथा भारतीय नेताओं के लिए टेढ़ी खीर ही रही है। ऐसी दशा में साधारण व्यक्ति के लिए यह समझना कठिन है कि उपर्युक्त विधान-सम्मेलन सरलता से दुराग्रह-युक्त मतभेदों में सामञ्जस्य पैदा कर सकेगा। आज भी जिन्ना साहब पहले ही की तरह पाकिस्तान का राग अलाप रहे हैं; देशी राज्य अपने राज्यों के लिए उसी प्रकार का स्वराज्य चाह रहे हैं, जैसा ब्रिटिश भारत के प्रांतों को मिलेगा, परन्तु वे अपने प्रजाजनों को स्वराज्य का अधिकार देने को प्रस्तुत नहीं हैं; हरिजन, सिख आदि भी अपनी-अपनी माँगों पर दृढ़ हैं; इन सबसे अलग कांग्रेस अपनी स्वाधीनता की माँग में रत्ती भर भी बल आने देना नहीं चाहती। सरकार ने भी पुराने मताधिकार पर निर्वाचन करवाकर संप्रदायवादियों को अपनी स्थिति दृढ़ बनाए रखने का अवसर दिया है। अतएव विधान-सम्मेलन, जिसकी रूप-रेखा अभी तक निर्दिष्ट नहीं की गई है, उपर्युक्त विभिन्न दलों के मतवादों में कैसे ऐक्य स्थापित कर सकेगा! ब्रिटिश सरकार के सूत्रधार इस परिस्थिति से पूर्णतया परिचित हैं और उन्होंने इसका निराकरण करने का कोई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपाय अवश्य ही सोच लिया है, अन्यथा वे इतनी दृढ़ता के साथ भारत की राजनैतिक समस्या को हल करने का इतना उत्साह न प्रदर्शित करते। भारत-मंत्री से लेकर वायसराय तक आज भारत को पूर्ण आत्मशासन-विधान देने के लिए जो तत्परता दिखा रहे हैं, उससे यही व्यक्त होता है कि ब्रिटिश सरकार के कूटनीतिज्ञों ने उक्त समस्या का कोई हल अवश्य ही सोच लिया है। कदाचित् इसी कारण से यह नहीं बताया जा रहा है कि विधान-सम्मेलन का कैसे संगठन होगा तथा वह किस प्रकार के आत्मशासन का विधान तैयार करेगा। चाहे जो हो, सरकार के तत्संबन्धी प्रयत्न को भारतीयउत्सुकता के साथ देख रहे हैं और इस बात का विश्वास कर रहे हैं कि जो भी विधान तैयार होगा, उससे उनकी तथा उनके देश की सर्वतोमुखी उन्नति ही होगी।

ईरान का संकट

युद्ध समाप्त हो गया, परन्तु ईरान का संकट नहीं समाप्त हुआ। युद्ध-काल में इस संदेह पर कि ईरान के शाह जर्मनों के साथ षड्-यन्त्र कर रहे हैं, देश से निकाल दिए गए थे तथा मित्रराज्यों ने अपनी-अपनी सेनाएँ भेजकर ईरान को अपने नियंत्रण में कर लिया था। उस समय मित्रराज्यों के सूत्रधारों ने ईरान सरकार को इस बात का आश्वासन दिया था कि ईरान की स्वतन्त्रता अक्षुण्ण रहेगी और युद्ध के बाद मित्रराज्यों की सेनाएँ ईरान से चली जाएँगी। अब युद्ध समाप्त हो गया है और ब्रिटेन तथा अमेरिका की अधिकांश सेनाएँ ईरान से चली भी गई है, परन्तु रूस की सेनाएँ पहले ही की तरह ईरान में पड़ाव डाले हैं। यही नहीं, कहा तो यह जाता है कि रूसियों से शह पाकर उत्तरी ईरान में डिमा-क्रेटिक लोग ईरानी सरकार के विरुद्ध उठ खड़े हुए हैं और सशस्त्र विद्रोह कर उन्होंने वहाँ अपनी सरकार की स्थापना कर ली है। ईरान-सरकार ने विद्रोहियों के दमन के लिए अपनी सेनाएँ भेजने का प्रयत्न किया, परन्तु रूस के अधिकारियों ने उस दिशा में उन्हें बढ़ने से रोक दिया। इसका परिणाम यह हुआ है कि उत्तरी ईरान का अजरबैजाँ प्रदेश पूर्णरूप से स्वतन्त्र हो गया है और वहाँ की नई सरकार की सेनाएँ तेहरान की ओर बढ़ने का भाव प्रकट कर रही हैं। ईरान की सरकार रूसियों के हस्तक्षेप के डर से कुछ नहीं कर पा रही है। उसने बार-बार रूस-सरकार से कहा भी, आवेदन-निवेदन किया, परन्तु रूस की सरकार ने उसकी सेनाओं को जाने की अनुमति नहीं दी। इस भयावह परिस्थिति के समय सबसे दुःख की बात तो यह है कि ईरान की पार्लियामेंट में दो दल हो गए हैं। एक राष्ट्रवादियों का दल है, जिसके नेता सैयद जियाद हैं। ये ब्रिटेन और अमेरिका के बल पर रूस के विरोधी हैं और यह नहीं चाहते कि रूस उनके देश के भीतरी मामलों में हस्तक्षेप करे। दूसरा दल, जिसके नेता श्री साल्तनेह हैं, रूस के पक्ष में है। यह आपस की फूट ईरान को, जान पड़ता है, तबाह करके ही रहेगी। इसके फलस्वरूप कदाचित् ईरान के वर्तमान प्रधान मंत्री हकीमी साहब को त्याग-पत्र देना पड़े, क्योंकि मजलिस के उनके विरोधी लोग उनकी इस असमर्थता से लाभ उठाना चाहते हैं। स्वयं हकीमी साहब अपनी दयनीय अवस्था से दुःखी हैं। यदि वे त्यागपत्र दे देंगे तो उनके उत्तराधिकारी श्री साल्तनेह ही होंगे क्योंकि हकीमी साहब के बाद ईरान में यही एक व्यक्ति हैं, जो नई सरकार का संगठन कर सकते हैं। ये रूस के कट्टर पक्षपाती हैं और प्रधान मंत्री होते ही ये रूस से अवश्य समझौता कर लेंगे। यही नहीं, ये रूसविरोधी राष्ट्रवादियों को देश से निकाल बाहर करेंगे। परन्तु यह सब इतनी सरलता से नहीं हो जाएगा क्योंकि अँगरेज और अमेरिकन यह नहीं सह सकेंगे कि ईरान रूस का एक संरक्षित देश हो जाय। ईरान का तेल वस्तुतः इस सारे झगड़े के मूल में है। दक्षिण के तेल-कूप अमेरिका और ब्रिटेन के हाथ में हैं। रूस चाहता है कि उत्तरी ईरान के तैल-कूप उसके हाथ में आ जाएँ। कहा जाता है कि रूस ने तीस-चालीस नए तैल-कूप उत्तरी ईरान में बनवा लिए हैं और सो भी ईरान सरकार की अनुमति के बिना ही। इस तैल की समस्या ने ही वस्तुतः ईरान में वर्तमान संकट उपस्थित कर दिया है और उसके राज्य के भीतर एक नया राज्य, और सो भी स्वतन्त्र राज्य उत्पन्न कर दिया है। संयुक्त राष्ट्रों के राजनीतिज्ञ ईरान की इस अवस्था को बड़े ध्यान से देख रहे हैं। देखना है कि वे ईरान की इस संकट से कैसे रक्षा करते हैं? रूस की सेनाएँ ईरान को मार्च के बाद ही छोड़ेंगी और तब ईरान-सरकार अजरबैजाँ के विद्रोहियों का दमन करने का अवसर पाएगी। तब तक उसकी स्थिति यदि सुदृढ़ बनी रही तो उसकी कुशल है, अन्यथा यदि रूसपक्षीय प्रधान मंत्री के हाथ में ईरान का शासन चला जाएगा तो ईरान की स्थिति निस्सन्देह भयावह हो जायगी। ईरान के संकटों का अवसान ही जल्दी होता नहीं दिखाई दे रहा है, अपनी पहले की स्वतन्त्र स्थिति प्राप्त करना तो दूर की बात है।

नेपाल राज्य में नए तीन सरकार

नेपाल के तीन सरकार महामन्त्री तथा सर्वोपरि सेनाधिपति महाराजा युद्ध शमशेर जङ्ग बहादुर राणा ने अपने पद से त्यागपत्र दे दिया है। गत १३ वर्ष तक उन्होंने नेपाल का शासन-भार बहुत ही सुन्दर ढङ्ग से वहन किया। आपके ही शासनकाल में नेपाल में भीषण भूकम्प आया था। उस समय आपने प्रजा की पूर्णरूप से सहायता की थी। आपने वर्त्तमान युद्ध में ब्रिटिश सरकार की पूरे बल के साथ सहायता करके यश का अर्जन किया है। आपने अपने शासनकाल में प्रजा की तथा राज्य की भलाई के लिए बड़े महत्त्व के कार्य किए हैं, जिनसे नेपाल-राज्य उन्नति की ओर काफी बढ़ा है तथा उसकी गौरव-वृद्धि हुई है। शासन-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

र्य से अवकाश ग्रहण करते हुए अपने पद का भार आपने पने भतीजे सर पद्म शमशेर जङ्ग बहादुर राणा को प्रदान या है। तीन सरकार के राजघराने को नेपाल के पाँच सरकार यह अधिकार मिल चुका है कि तीन सरकार के राजघराने के से वयोवृद्ध व्यक्ति को ही नेपाल के शासन का राज-दण्ड ास होता रहेगा। फलतः उसी परंपरागत नियम के अनुसार र पद्म शमशेर जङ्ग बहादुर राणा नेपाल की तीन सरकार के पद- आरूढ़ हुए हैं। आपने राज्य के भिन्न-भिन्न उच्च पदों पर रह- र शासन-कार्य का गम्भीर अनुभव प्राप्त किया है। आप जिस कार राज्य-कार्य में कुशल हैं, उसी प्रकार आपमें पर्याप्त अधिक र्म-भीरुता भी है। अतएव आपके शासन-काल में नेपाल-राज्य ी अधिकाधिक सर्वतोन्मुखी उन्नति होने की पूरी आशा है। पाल एक स्वतन्त्र हिन्दू-राज्य है, साथ ही वहाँ हिन्दू-धर्म को र्ण महत्त्व दिया जाता है। अतएव भारतीय हिन्दू नेपाल-राज्य अभ्युदय को देखकर स्वभावतः प्रसन्न होते हैं। वर्तमान महा- न्त्री सर पद्म शमशेर जङ्ग बहादुर राणा के राज्य-काल में नेपाल ज्य की भूरि-भूरि उन्नति हो, ऐसी कामना सभी हिन्दू करेंगे।

——

दरे दानियाल की समस्या की मीमांसा

कृष्णसागर और भूमध्यसागर को जोड़नेवाली एक जल-प्रणाली। उसका जो मुहाना भूमध्यसागर की ओर है, उसे दरे दानियाल हते हैं। पिछले महायुद्ध में इस स्थल पर स्वर्गीय कमालपाशा नेतृत्व में तुर्की सेनाओं ने अँगरेजी सेनाओं को गहरी क्षति पहुँ- ई थी। यह जल-प्रणाली सैनिक-दृष्टि से बड़ी महत्त्वपूर्ण ती है। इस जल-प्रणाली पर तुर्की का सदियों से अधिकार है। स इसी जल-प्रणाली से होकर संसार के अन्य देशों से अपना ावसायिक सम्बन्ध स्थापित कर सकता है। इस द्वितीय महा- द्ध में विजय प्राप्त करने के बाद रूस ने तुर्की से यह माँग की ी कि दरे दानियाल का द्वार उसके लिए मुक्त कर दिया जाय। न्तु तुर्की की सरकार ने उसके प्रस्ताव को यह कहकर अस्वीकार र दिया कि यह मसला अकेले उसी के द्वारा हल नहीं किया सकता। इस सम्बन्ध में ब्रिटेन, फ्रांस आदि की भी सलाह ी पड़ेगी, क्योंकि वह मांट्रो कन्वेशन की शर्तों के विरुद्ध आच- ण नहीं कर सकता। जान पड़ता है कि रूस के प्रस्ताव से अमेरिका मत हो गया है और उसने मान्ट्रो सभझौते में सुधार करने एक योजना निश्चित की है जो तुर्की-सरकार के पास भेज दी है। हाल में तुर्की-सरकार के प्रधान मन्त्री श्री एम० सी० सरा- ग्लू ने एक पत्रकार-सभा में भाषण करते हुए उस योजना पर प्रकाश डाला है। उन्होंने कहा है कि तुर्की-सरकार ने दरे नियाल के मांट्रो समझौते में सुधार करने की अमेरिकन योजना स्वीकार कर लिया है। उस योजना के अनुसार भविष्य इस जल-प्रणाली का मार्ग सभी राष्ट्रों के व्यापारिक जहाजों के लिए सदा खुला रहेगा; इसके सिवा कृष्णसागर-तटवर्ती बल्गेरिया, रूमानिया तथा रूस के जङ्गी जहाजों के लिए भी इस जल-प्रणाली का मार्ग सदा उन्मुक्त रहेगा। परन्तु अन्य राष्ट्रों के जङ्गी जहाज इस जल-प्रणाली का तभी उपयोग कर सकेंगे जब कृष्णसागर-तटवर्ती शक्तियाँ अनुमति दें। तब प्रधान-मन्त्री ने यह भी कहा है कि अमेरिका की इस वर्तमान ग्रेट ब्रिटेन भी सहमत है। निस्संदेह अमेरिका की इस तरे प्रसिद्ध एक बहुत बड़े झगड़े का निपटारा हो गया है, कहानी-लेखक, बात के लिए तुल गया था कि वह अपने उपयोगों के अद्वितीय जल-प्रणाली का द्वार जैसे होता, खुलवाता और तुरणीय नागरिक" सरकार को रूस से सशस्त्र संघर्ष करना पड़ता, जो रचना के अन्त में राष्ट्रीय रूप ग्रहण किए बिना न रहता। अतएव विश्व की शां पूर के लिए इस झगड़े का निपटारा इस प्रकार हो जाने से अच्छा ही हुआ है।

——

सिन्ध में भूकम्प की विनाशलीला

भारत की दुरवस्था का कोई ठिकाना नहीं! तरह-तरह के संकटों से वह ग्रस्त रहता है। एक से छुटकारा पाता है तो दूसरा पीड़ित करने के लिए आगे खड़ा मिलता है। महामारियाँ और अकाल तो उसके जीवन के प्रधान अंग बन चुके हैं। अभी उस दिन कराची के सागर-तटवर्ती ग्रामों को भूकम्प ने विनष्ट कर डाला। बताया गया है कि यह भूकम्प समुद्र के गर्भ में हुआ है, जिसके प्रभाव से समुद्र की लहरों ने २० फुट ऊँचे उठकर तटवर्ती बस्तियों का सर्वनाश कर डाला। इस भूकम्प का सबसे अधिक भयावह प्रभाव कराची से लेकर केटी बन्दरगाह तक के १०० मील के क्षेत्र में पड़ा है, जिसके फलस्वरूप अनेक गाँव बह गए और उन गाँवों के ४००० निवासी मर गए तथा ४०,००० गृहहीन हो गए। धन और संपत्ति की जो अपार हानि हुई सो अलग है। सबसे अधिक दुःख की बात तो यह है कि यह सब हुआ लेकिन सिन्ध की सरकार का इस दुर्घटना की ओर ध्यान तक न गया। छः दिन के बाद कांग्रेस-कार्यकर्ताओं ने वहाँ पहुँचकर लोगों की सहायता का कार्य शुरू किया, तब कहीं उस दुर्घटना का प्रकाशन हुआ। 'श्री वेंकटेश्वर समाचार' ने इस दुर्घटना के प्रत्यक्ष-दर्शियों का जो विवरण छापा है, वह यह है—

"घटना के दिन तड़के ३॥ बजे आकाश का रङ्ग बदल गया था। पश्चिम में आकाश लाल हो गया था और पानी में से अग्निशिखा आकाश की ओर लपकी थी। चन्द्रमा के आस-पास लाल रङ्ग के बादल फैल गए थे और एक भयानक आवाज हुई थी। लोगों ने जान बचाने के लिए चिल्लाना शुरू किया और लोगों के जागने से पहले एक भीमकाय लहर उन पर आ पहुँची। यह लहर भयङ्कर रूप से आगे बढ़ रही थी। चतुर्दिक् विनाश का दृश्य उपस्थित था और पशु-पक्षी तथा मनुष्य चीत्कार कर रहे थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो लोग सोते थे, वे जागने के पहले ही विनाश के गर्भ में समा गए। लोग भय से कातर हो गए थे। मीठे पानी का एक बूँद भी कहीं मिलता न था। प्यास के मारे बहुतेरे मर गए।"

को कहा गया है कि भूकम्प-विज्ञान के विशेषज्ञों को ज्ञात हो गया है, कि २८ नवम्बर को अरब-सागर में सिन्ध के आस-पास ने उक्त हुआ है। परन्तु जिस सिन्ध-प्रदेश में यह भीषण दुर्घटना इसी कार हुई, वहाँ की स्वराज्य-प्राप्त सरकार ने उसकी छः दिन कैसे संगठन हुए तक न ली। अकर्मण्यता का यह कैसा सुन्दर तैयार करेगा। आश्चर्य तो यह है कि सर्वसाधन-सम्पन्न और भारतीयउत्सुकता वाली हमारी केन्द्रीय सरकार का भी ध्यान रहे हैं कि जो भी र नहीं गया। बाद ही को उसके जङ्गी जहाज देश सहायता के लिए दुर्घटना-स्थान पर पहुँच सके। प्रसन्नता की बात है कि कांग्रेसी लोकसेवक समाचार पाते ही, और सो भी केवल छठे दिन, वहाँ पहुँच गए और यथाशक्ति वे विपद्ग्रस्तों की सहायता कर रहे हैं।

भारतीय द्वीपपुंज में रणचंडी का नृत्य

भारतीय द्वीपपुंज, जिसका दूसरा नाम इण्डोनेशिया है, एक जमाने से डचों के अधिकार में है। इस द्वितीय महायुद्ध के पहले से इन द्वीपों में स्वतन्त्रता का आन्दोलन छिड़ गया था। द्वीपों के निवासी हालैण्ड की सरकार के अनियंत्रित शासन के विरुद्ध थे। उनके आन्दोलन को हालैण्ड की सरकार बल-पूर्वक दबाए रहती थी। इसी बीच में द्वितीय महायुद्ध प्रारम्भ हो गया और जापानियों ने बढ़कर दक्षिणी-पूर्वी एशिया के अन्य देशों के साथ-साथ इस द्वीपपुंज पर भी अधिकार कर लिया। अब जब युद्ध में हार जाने पर जापानियों ने हथियार रख दिए, तब हालैण्ड की सरकार ने अपने खोए हुए इस द्वीपपुंज पर पुनः अधिकार करने का प्रयत्न किया। परन्तु जापानियों के हथियार रखने के साथ-ही-साथ द्वीपपुंज के निवासियों ने अपनी प्रजातन्त्र सरकार वहाँ स्थापित कर ली थी। उस सरकार से डचों का संघर्ष हुआ। डच लोग नहीं चाहते कि उसके प्रजाजन उन्हें अधिकार-च्युत कर अपने मन की नई सरकार वहाँ स्थापित कर लें। इस बात का बार-बार प्रयत्न किया गया कि डच सरकार और वहाँ की नई सरकार में कोई उपयुक्त समझौता हो जाय, परन्तु इस प्रकार के प्रयत्न सफल नहीं हुए और अब नियमपूर्वक वहाँ भयानक युद्ध छिड़ा हुआ है। डचों की हित-रक्षा के लिए ब्रिटेन की सरकार पहले से ही प्रतिज्ञाबद्ध थी। अतएव अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार उसे उनकी सहायता करने को बाध्य होना पड़ा। इस समय जावा-द्वीप में ब्रिटिश सरकार की सेनाएँ राष्ट्रवादियों को कुचल रही हैं। ब्रिटेन के हस्तक्षेप से द्वीपपुंज के राष्ट्रवादी बहुत ही असन्तुष्ट हैं। ब्रिटिश सैनिकों की प्रबलता एवं वायुयानों के आक्रमणों से त्रस्त एवं विध्वस्त होकर वहाँ के नरम दलवाले लोग समझौते के लिए यद्यपि आकुल-व्याकुल हो रहे हैं तथापि उग्र राष्ट्रवादी नेता, जो वहाँ की प्रजातन्त्र की सरकार के प्रमुख स्तम्भ हैं, युद्ध जारी रखने के ही पक्ष में हैं। वहाँ की क्या परिस्थिति है, इसका ठीक ठीक विवरण नहीं मिल रहा है। हाल में रूटर के संवाददाता ने वहाँ की परिस्थिति पर कुछ प्रकाश डाला है, जो इस प्रकार है—

"सर्वप्रथम राष्ट्रवादियों का कहना है कि यद्यपि मित्रराष्ट्र हमारी सरकार को स्वीकार नहीं करते पर वास्तव में हम देश का सारा शासन चला रहे हैं और हमें जनता का समर्थन प्राप्त है। चुनाव यह बात प्रमाणित कर देंगे। हम डचों से सहयोग कर सकते हैं पर अपनी स्वतन्त्र सरकार के आधार पर ही। वे हमें उससे कम भी कम देना चाहते हैं जितना कि हमारे हाथों में है। अँगरेज यदि डचों के लिए फिर मार्ग खोलेंगे तो उनका भी विरोध किया जायगा।

"उग्रवादियों का कहना है इण्डोनेशिया इसी देशवालों के लिए है। किसी प्रकार का भी सहयोग करने से शोषण का रास्ता फिर खुल जाएगा; इसलिए न डचों से और किसी से झुकना चाहिए। उग्रवादियों में अधिकांश बीस साल तक के युवक हैं। उनमें जापानी प्रचार 'एशिया एशियावालों के लिए' की भावना भर गई है। इन लोगों को शांत करने में डा० सोइकार्नो भी असफल रहे।

"डच कहते हैं कि हमने लड़ाई में अँगरेजों का साथ दिया और अब अँगरेज हमें पूरी मदद नहीं दे रहे हैं। जापानी आत्मसमर्पण और ब्रिटिश सेनाओं के पहुँचने के बीच इण्डोनेशियनों ने जगह जगह अधिकार कर लिया। अब लगभग सवा लाख डच स्त्री-बच्चे खतरे में पड़े हुए हैं। इण्डोनेशियनों से हम अपनी बात कहने में भी असमर्थ हैं। यदि हम यहाँ पर शक्ति-प्रयोग पर झुक गए तो विद्रोह की आग फारस की खाड़ी से आस्ट्रेलिया तक फैल जाएगी।

"रहे जापानी, वे तीन श्रेणियों में विभाजित किए जा सकते हैं। उनमें से कुछ तो मित्रों की पूर्ण अधीनता में कार्य कर रहे हैं यहाँ तक कि वे इण्डोनेशियनों से लड़े भी हैं। कुछ सुविधाएँ जुटा कर इच्छापूर्वक इण्डोनेशियनों के नजरबन्द हैं और कुछ छिपकर इण्डोनेशियनों की कार्रवाइयों में मदद दे रहे हैं। ऐसे प्रमाण मिले हैं जिनसे मालूम होता है कि जापानी प्रजातन्त्र स्थापित कर फिर एक बार अपनी शक्ति स्थापित करने का स्वप्न देख रहे हैं।"

विलायत के 'इकानमिस्ट' ने उपर्युक्त परिस्थिति को अधिक स्पष्ट करते हुए लिखा है—"जावा के सम्बन्ध में ब्रिटिश नीति स्पष्ट है। इस नीति का उद्देश्य उदार दलवालों से (जिनमें अवसरवादी सोइकार्नो भी सम्मिलित हैं) समझौता करना तथा उग्रवादियों के प्रति बल-प्रयोग करना है। कुछ डचों के लिए यह नीति अत्यन्त सूक्ष्म है और तर्क की दृष्टि से यह प्रकट करना सरल है कि वास्तव में तथाकथित नरम दलवालों की वर्तमान स्थिति का कारण उग्रदलवादियों की वह हिंसात्मक कार्रवाई है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस पर वे अधिकार नहीं पा सकते और जिसके लिए वे अपने आपको उत्तरदायी नहीं ठहराते। फिर भी ऐसे लक्षण प्रकट हो रहे हैं कि राष्ट्रीय आन्दोलन के अधिक उत्तरदायी नेता समझौता करने की ओर झुकने लगे हैं। एक ओर जब कि ब्रिटिश सेना सुमात्रा में विरोधियों का सफाया करती चली जा रही है और वायुसेना के राकेट छोड़नेवाले वायुयानों ने जावा के आन्तरिक भाग में उग्रदलवादियों के दो उग्र रेडियो स्टेशनों को धराशायी कर दिया है, दूसरी ओर एक तथाकथित राष्ट्रीय सभा बाटाविया में संघटित हो गई है, जिसमें इण्डोनेशियन 'मन्त्रियों' के भाषण किए हैं। इन भाषणों में प्रयोग की गई भाषा उस भाषा से कम उन्मादपूर्ण थी, जिसे हाल तक ये लोग प्रयोग करते चले आए थे। 'प्रधान मन्त्री' शारियार ने कहा कि उन्हें डचों से समझौते की अभी आशा है। कोई कारण देखने में नहीं आता कि शीघ्र ही गम्भीर वार्तालाप प्रारम्भ न किया जाय।"

द्वीपपुंज में जो भयानक रक्तपात हो रहा है, वह बन्द हो जाना चाहिए। महाशक्तिशाली ब्रिटेन से युद्ध करना उक्त द्वीपपुंज के निवासियों के लिए अपने पैरों में कुल्हाड़ी मारना है। कौन नहीं जानता कि अन्त में उन्हें ब्रिटिश-बाहुबल के आगे एक दिन धराशायी होना पड़ेगा। तब यह अवांछनीय युद्ध क्यों? बुद्धिमत्ता इसी में है कि वहाँ के लोकनेता जैसे हो, समझौता कर लें और युद्ध की आग सुमात्रा, बोर्नियो आदि में न फैलने दें। अन्यथा अन्त में उन्हें घोर हानि ही नहीं उठानी पड़ेगी अपितु सदियों के लिए दासता की बेड़ियों से वे जकड़ भी दिए जायँगे।

कौशिक जी का देहावसान

कानपुर के प्रसिद्ध कहानी-लेखक तथा उपन्यासकार पंडित विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक का दिसम्बर के दूसरे सप्ताह में स्वर्गवास हो गया। कौशिक जी हिन्दी के उन कुछ कहानी-लेखकों में थे, जिन्होंने हिन्दी में आज की कहानियाँ लिखना प्रारम्भ किया था। उनकी कहानियाँ सदैव पत्र-पत्रिकाओं में आदर पाती रही हैं। वे एक मौलिक कलाकार थे। हिन्दी के नैष्ठिक साधक और प्रतिभाशाली लेखक थे। उनकी रचनाओं से हिन्दी-साहित्य की गौरव-वृद्धि हुई है। कानपुर में रहकर चुपचाप परम निष्ठा के साथ उन्होंने हिन्दी की सेवा की है। वे उन लेखकों में नहीं थे, जो अपने मित्रों से अपनी रचनाओं की प्रशंसा करवाकर अपना 'प्रोपेगेण्डा' करवाते हैं। यही कारण है कि वे हिन्दी के सभा-उत्सवों में प्रमुख भाग लेते हुए कभी नहीं देखे गए। हिन्दी की संस्थाओं ने सभापतित्व करने के लिए न कभी उनको बुलाया और न उन्होंने कभी उस गौरव को प्राप्त करने का प्रयत्न ही किया। वे एक साहित्यिक तपस्वी की भाँति साहित्य-रचना करने में ही लगे रहना अपना एकमात्र कर्तव्य समझते थे। उनकी अपनी एक छोटी-सी मण्डली थी, जिसमें बैठकर वे साहित्य की चर्चा करना अपने लिए अलं समझते थे। ऐसे आत्मतुष्ट साहित्यिक हिन्दी में विरले हैं। जिस निष्ठा और लगन के साथ उन्होंने हिन्दी की सेवा की है, उसका दूसरा उदाहरण नहीं है। आज जब उनका देहावसान हुआ तब कहीं उनके सम्बन्ध में हमें एक सभा करने की सूचना वर्तमान में पढ़ने को मिली है, जिसमें उनके सम्बन्ध में "हमारे प्रसिद्ध साहित्य-सेवी, हिन्दी के प्रसिद्ध उपन्यासकार और कहनी-लेखक, हमारे नगर के साहित्यिक और सांस्कृतिक कार्यों के अद्वितीय संचालक और अत्यन्त लोकप्रिय तथा परम आदरणीय नागरिक" लिखा गया है, जो अक्षर-प्रत्यक्षर सत्य है। इस सूचना के अन्त में कानपुर के ६३ नागरिकों के हस्ताक्षर हैं। वस्तुतः मरने ही पर तो हम अपने बड़ों की कद्र करते हैं! यह कैसा हमारा नागरिक गुण है! कौशिक जी तो अब चले गए! वे हमारे इस यशोगान से आत्मतृप्ति का कैसे अनुभव कर सकते हैं? जीवन भर वे हिन्दी की सेवा में कलम चलाते रहे, सदैव उत्कृष्ट-से-उत्कृष्ट मौलिक भावनाओं की उन्होंने सृष्टि की, परन्तु कभी किसी ने उनका उपयुक्त सम्मान नहीं किया। आज उनके मरने के बाद हम उनके दिव्य गुणों का बखान करते हैं!

कौशिक जी से हमारा व्यक्तिगत परिचय था। वे बड़े हँसमुख, मिलनसार, साथ ही करारे स्पष्टवादी थे। उनका स्वास्थ्य भी बहुत अच्छा था। आश्चर्य है कि वे इतनी जल्दी हम लोगों को छोड़कर दिवंगत हो गए। उनसे हिन्दी को बहुत कुछ आशाएँ थीं। वे कोरे कहानीकार ही नहीं थे, उनके हास्यरस के लेख जिन्होंने ध्यान से पढ़े हैं, वे जानते हैं कि वे देश एवं समाज के प्रति उच्च कोटि के विचार रखते थे। हिन्दी के हास्यरस के साहित्य में 'विजयानन्द दुबे' और 'दिव्यचक्षु' की अपनी छाप अलग रहेगी। कौशिक जी अपने इन दो कल्पित नामों से हास्य के बहाने देश एवं समाज की स्थिति पर जो गहरा प्रकाश डालते रहे हैं उससे उनकी हृदय की उच्च भावनाओं का पूर्ण परिचय मिलता है। कौशिक जी ने बहुत पहले, कदाचित् सन् १९१९ या २० में, 'मनोरंजन' नामक एक मासिकपत्र भी निकाला था, जो चला नहीं। उसके बाद उन्होंने उस दिशा में फिर कोई प्रयत्न नहीं किया और वे कहानियाँ ही पत्र-पत्रिकाओं के लिए लिखते रहे। साथ ही हास्यरस की लेखमालाएँ भी। वे धीर, गम्भीर एवं एकान्तप्रिय सच्चे साहित्यकार थे। उनके निधन से हिन्दी के एक सच्चे साहित्यिक का तिरोभाव हो गया है। इस अभाव की पूर्ति होनी कठिन है।

चीन के गृह-युद्ध की समाप्ति का प्रयत्न

गृह-युद्ध धीरे-धीरे चीन को सर्वनाश की ओर लिए जा रहा है, और उसके मित्र दूर से बैठे उसकी यह विनाश-लीला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चुपचाप देख रहे हैं। चीन की राष्ट्रीय सरकार के विपक्षी वहाँ के वर्गवादी चीन के भीतर अपना एक स्वतन्त्र राष्ट्र स्थापित करना चाहते हैं। जब चीन पर जापान ने आक्रमण किया था, तभी से जापान के विरुद्ध लड़ने का बहाना करके उन्होंने अपना अलग सैनिक-संगठन करना प्रारम्भ कर दिया था। आज वे इतने व्यवस्थित और सुदृढ़ हो गए हैं कि युद्ध-क्षेत्र में वे दस लाख से भी अधिक वर्गवादी सेना एकत्र कर सकते हैं। ऐसी ही अपनी विशाल सेना से वे चीन की राष्ट्रीय सरकार से युद्ध कर रहे हैं। वर्गवादी चीनियों की प्रधानता पीत नदी के तटवर्ती प्रांतों में है। दक्षिणी चीन के सारे प्रांत राष्ट्रीय सरकार के अधिकार में हैं। राष्ट्रीय सरकार जापान के साथ युद्ध करने में बहुत ही गहरी हानि उठा चुकी है और अब महायुद्ध की समाप्ति के बाद सुसज्जित तथा आधुनिक-से-आधुनिक अस्त्र-शस्त्रों से लैस वर्गवादियों से उसे लड़ना पड़ रहा है। घर का यह युद्ध दोनों ओर से उसकी अपनी हानि है, परन्तु राष्ट्र की एकता के विचार से इस युद्ध का लड़ना उसके लिए आवश्यक हो गया है। एक ओर उसे शत्रु से मुक्त प्रान्तों में अपना अधिकार जमाना तथा उन्हें सुव्यवस्थित करना है, दूसरी ओर अपने देश के एक विशाल समूह से जीवन-मरण का युद्ध भी करना है! इस युद्ध के सिलसिले में सबसे दुःखद घटना यह हुई है कि वर्गवादियों को जो आधुनिक अस्त्र-शस्त्र प्राप्त हुए हैं, वे राष्ट्रवादी सरकार के मित्रों के द्वारा ही प्राप्त हुए हैं। पहले कहा गया था कि मंचूरिया में रूसी सेना ने जापानियों के जो युद्धास्त्र अपने अधिकार में कर लिए थे, वे सबके सब नहीं तो अधिकांश वर्गवादियों को दे दिए गए हैं। अब इधर यह प्रकाश में आया है कि अमेरिका से भी वर्गवादियों को काफी अस्त्र-शस्त्र मिले हैं। इसका भेद स्वयं अमेरिका के चीन में रहनेवाले राजदूत मेजर हर्ले ने, जिन्होंने अपनी सरकार की चीन-सम्बन्धी नीति से असंतुष्ट होकर हाल ही में पदत्याग कर दिया है, खोला है। इस अवसर पर उन्होंने जो वक्तव्य दिया है, उससे प्रकट होता है कि अमेरिका के उच्चाधिकारी, जो चीन में नियुक्त हैं, उन्होंने वर्गवादियों की मदद की है। चाहे जो हो, हाल में अमेरिका के अध्यक्ष ट्रूमैन साहब ने चीन-सम्बन्धी अमेरिका की नीति को अपने वक्तव्य-द्वारा स्पष्ट करते हुए अपने उपर्युक्त अधिकारियों के सम्बन्ध में फैली हुई भ्रांतियों का निवारण कर दिया है। उन्होंने कहा है कि अमेरिकन सरकार चीन की राष्ट्रीय सरकार को ही वास्तविक सरकार मानती है। उन्होंने अपील की है कि चीन का गृह-युद्ध बन्द हो जाना चाहिए और आपसी झगड़े को अन्तराष्ट्रीय पञ्चायत-द्वारा तय कर लेना चाहिए। प्रसन्नता की बात है कि ट्रूमैन साहब की इस अपील का चीन के दोनों पक्षों पर अच्छा प्रभाव पड़ा है और उनमें समझौता हो जाने का प्रयत्न पुनः आरम्भ हो गया है। राष्ट्रीय सरकार के सूत्रधारों ने वर्गवादी नेताओं को अपने शासन-मंडल में शामिल करने की बात मान ली है, परन्तु उनका दृढ़ता-पूर्वक यह कहना है कि वर्गवादियों की अपनी कोई अलग सेना न हो। समझौता करने के लिए वर्गवादियों के नेता चुंगकिंग में आ गए हैं। ऐसी आशा की जाती है कि इस बार का समझौते का प्रयत्न सफल होगा और चीन के ये दोनों पक्ष परस्पर मिलकर अपने राष्ट्र को एकता के सूत्र में आबद्ध कर उसके अभ्युदय के लिए प्रयत्न करेंगे।

संयुक्तप्रांत के हिंदी-प्रेमियों का शैथिल्य

उस दिन हिंदी के एक प्रसिद्ध समाचारपत्र के संपादक ने एक जिला हिंदी-साहित्य-सम्मेलन के अध्यक्ष-पद से भाषण करते हुए यह कहा कि सरकारी अदालतों, म्युनिसिपैलिटियों तथा डिस्ट्रिक्ट बोर्डों में हिंदी का प्रवेश होना चाहिए। परन्तु कैसे होना चाहिए, इस सम्बन्ध में उन्होंने कोई निश्चित योजना नहीं बताई। हम चालीस वर्ष से यह सुन रहे हैं कि संयुक्तप्रांत की कचहरियों आदि में हिंदी को उचित स्थान मिलना चाहिए। यही नहीं, काशी की सभा और प्रयाग के सम्मेलन ने कहीं-कहीं कचहरियों में अपनी ओर से हिंदी के लेखक नियुक्त कर हिंदी के प्रेमियों को अवसर भी दिया कि वे कचहरियों की कार्रवाई में हिंदी का प्रयोग करें। परन्तु ये सारे प्रयत्न अब तक विफल ही रहे हैं। इसका क्या कारण है? हिंदी-प्रेमियों के एवं उनकी संस्थाओं के ऐसे प्रयत्न क्यों विफल होते रहे हैं, इसकी ओर कभी समुचित ध्यान नहीं दिया गया है। और यही एक कारण है, जिससे ये प्रयत्न कभी कारगर नहीं हुए। यदि मूल कारण की ओर समुचित ध्यान दिया जाता तो प्रयत्न कभी निष्फल न होते। इस प्रसंग में हमको पंजाब के हिंदी-प्रेमियों की दृढ़ता का ध्यान अपने आप आ जाता है। पंजाबवालों ने यह आंदोलन उठाया कि सभी लोग अपने पत्रों के पते हिंदी में लिखा करें। उन्होंने यह आंदोलन इसलिए उठाया कि पंजाब का डाक-विभाग हिंदी में लिखेवाले पतों को ठीक स्थान में नहीं पहुँचाता था। डाक-विभाग के इस व्यवहार से असंतुष्ट होकर हिंदी में पते लिखने का आंदोलन खड़ा कर दिया गया, जिसका परिणाम यह हुआ कि डाक-विभाग को अंत में झुकना पड़ा और वहाँ हिंदी के लिखे पत्र लिए जाने लगे। पंजाबी अपने इस अधिकार की रक्षा करने में इतने सजग हैं कि अभी उस दिन अमृतसर के एक सज्जन ने एक पोस्टमास्टर पर अदालत में मुकदमा दायर कर दिया है, क्योंकि उसने हिंदी में लिखे हुए पते के पार्सल को लेना अस्वीकार कर दिया था। यदि संयुक्तप्रांत के हिंदी-भाषियों में अपनी मातृभाषा के प्रति वास्तविक प्रेम होता तो वे भी अपनी मातृभाषा का सरकारी अदालतों में प्रयोग करवाने का दृढ़ता से आंदोलन करते। परन्तु यहाँ के हिंदी-भाषियों में वैसे प्रेम का यहाँ तक अभाव है कि सरकार ने कचहरियों में हिंदी के प्रवेश का जो अधिकार दिया था, उसका भी वे उपयोग नहीं करते। ऐसी दशा में संयुक्त-प्रांत के हिंदी-प्रेमियों के इस सम्बन्ध के प्रयत्न विफल हों तो कोई आश्चर्य की बात नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का सर्वप्रथम कर्तव्य यह है कि वे प्रांत की जनता को अपनी मातृभाषा से प्रेम करना सिखाएँ और उन्हें बताएँ कि उन्हें अपना सारा कारबार हिंदी में ही करना चाहिए। सरकारी अदालतों में हिंदी को जहाँ तक स्थान दिया गया है, वहाँ तक वे अपना सारा काम हिंदी में ही करें। और यदि वे ऐसा करेंगे तो सरकार भी उनकी मातृभाषा को और अधिक अधिकार प्रदान करेगी। यदि सभा और सम्मेलन के कर्णधारों ने इस सम्बन्ध में जनता का संपर्क प्राप्त किया होता तो उन्हें अपने कार्यों में विफलता का सामना कदापि न करना पड़ता। इस प्रांत में हिंदी को जो अपमानजनक स्थान प्राप्त है, उसका सारा दोष हिंदी के सूत्रधारों पर ही है। यह उनकी त्रुटि है कि उन्होंने ठीक दिशा में कभी काम नहीं किया। खैर, जो हुआ सो हुआ। अब ठीक राह पर आ जाना चाहिए और वह राह यही है कि जनता के बीच में अपना काम करना चाहिए। तभी अपनी हिंदी को इस प्रांत में उसका न्यायोचित स्थान दिलाने में सफलमनोरथ हो सकेंगे, अन्यथा नहीं।

कांग्रेस-द्वारा अपनी नीति का स्पष्टीकरण

जेल से मुक्त होने के बाद कांग्रेस के कुछ चोटी के नेताओं ने बंबई जाकर सरकार की दृष्टि में कड़े भाषण किए हैं। उन भाषणों की रिपोर्ट जब विलायत में पहुँची तब सरकारी अधिकारी एवं पार्लियामेंट के सदस्य भी चंचल हो उठे और उन्होंने भारतीय नेताओं के भाषणों के कड़े स्वर का विरोध किया। भारत के परम हितैषी एक लार्ड ने तो एक नेता का नाम लेकर कांग्रेस के नेताओं पर यह आरोप किया कि वे अहिंसा की नीति छोड़कर हिंसा की नीति अपनाने जा रहे हैं, जो भारत के लिए विघातक सिद्ध होगी। यही नहीं, उनके बाद स्वयं भारत-मन्त्री पेथिक लारेंस ने जब उस दिन भारत के सम्बन्ध में सरकारी नीति की घोषणा की तब उस अवसर पर वे इन नेताओं के भाषणों की रिपोर्ट न भूल सके और उन्होंने भी कड़े स्वर में कहा कि भारत-सरकार शान्ति कायम रखने की जिम्मेदार है और समय पर आने पर वह अपने कर्त्तव्य का पालन करेगी। उस दिन कलकत्ते में अपनी सरल नीति के लिए प्रख्यात वायसराय लार्ड वेवेल ने चैम्बर आफ कामर्स में भाषण किया, तब उन्होंने अपने मृदुल ढङ्ग से कांग्रेस नेताओं पर किए गए उस आक्षेप का संकेत किया। जान पड़ता है कि भारत की नौकरशाही कांग्रेस-नेताओं के, विशेषकर पंडित जवाहरलाल नेहरू के, देश में निराले आदर-सत्कार से आतंकित हो गई है और उनके कड़े भाषणों से उसने यह समझा है कि कांग्रेस हिंसा को अपनाने की सोच रही है। यह ऐसी रिपोर्टों का परिणाम ही है कि भारत-मन्त्री तथा वायसराय महोदय को उस प्रकार की बातें कहनी पड़ी हैं। पिछले दिनों कलकत्ते में बङ्गाल के गवर्नर केसी और वायसराय महोदय से महात्मा गांधी का जो लम्बा वार्त्तालाप हुआ है, उसमें भी यह प्रसंग अवश्य आया है। कदाचित् इसी कारण कांग्रेस को अपनी स्थिति स्पष्ट कर देनी पड़ी है। कलकत्ते में कांग्रेस की कार्यकारिणी समिति ने अहिंसा-नीति के सम्बन्ध में अपना एक प्रस्ताव पास करके अपनी नीति का पुनः स्पष्टीकरण कर दिया है। वह प्रस्ताव यह है—

अगस्त सन् १९४२ में प्रमुख कांग्रेस कार्यकर्ताओं की गिरफ्तारी के बाद नेतृत्व-विहीन जनता ने सब कुछ लगभग स्वयं ही किया। उसने कितने ही कार्य वीरता और बलिदान के भी किए, किन्तु कुछ कार्य ऐसे भी थे जिनको अहिंसा में शामिल नहीं किया जा सकता। कांग्रेस की अहिंसात्मक नीति में कोई अन्तर नहीं हुआ। अहिंसा में सार्वजनिक सम्पत्ति को जलाना, तार काटना, रेल काटना व धमकी देना नहीं शामिल है। कांग्रेस-कार्यकारिणी यह समझती है कि सन् १९२० में तैयार किए गए अहिंसात्मक प्रस्ताव को समय-समय पर स्पष्ट और विस्तृत करके उसका पालन करते हुए हमने भारत को ऊँचा उठाया है। यह कमिटी रचनात्मक कार्यों को अहिंसात्मक संकेत समझती है। सभद्र अवज्ञा आन्दोलन, सामूहिक या अन्य आंदोलन, जिनका ध्येय आजादी प्राप्त करना होगा, विस्तृत रचनात्मक कार्यों के बिना सफल नहीं हो सकते। आज कांग्रेस आजाद हिन्द सैनिकों का समर्थन कर रही है। इसके अर्थ यह नहीं हैं कि कांग्रेस ने स्वराज्य पाने के लिए अपनी शान्ति और उचित नीति का परित्याग कर दिया है। कांग्रेस विदेश में निर्मित इस आजाद हिन्द फौज की देशभक्ति, वीरता, अनुशासन, बलिदान और एकता पर गर्व करती है।

यह प्रस्ताव पास करके कांग्रेसी कार्यकारिणी ने बहुत अच्छा किया है। कांग्रेस को अपनी अहिंसा-नीति का इस समय और भी दृढ़ता से पालन करना चाहिए क्योंकि उसके पास यही एक अमोघ अस्त्र है, जिसके द्वारा वह अपने उद्देश्यों की सफलतापूर्वक पूर्ति कर सकती है। अगले छः महीने भारत के भाग्य के निर्णायक सिद्ध होंगे। अतएव ऐसे समय में उसे कहीं अधिक सजगता से काम लेना चाहिए। कांग्रेस के अनुभवी नेता देश की विकट परिस्थिति से पूर्णतया परिचित हैं और उनसे कदापि ऐसी भूल न होगी, जिसके कारण देश का भविष्य सुधरने के स्थान में बिगड़ जाय।

ऋण-सम्बन्धी एँग्लो-अमेरिकन-समझौता

महायुद्ध ने विजयी राष्ट्रों को कम क्षति नहीं पहुँचाई है। पराजित राष्ट्रों की तो कमर ही टूट गई है। जो विजयी हुए हैं, उनमें एक अमेरिका को छोड़कर शेष सभी धन-जन-हीन हो गए हैं। जो ब्रिटिश साम्राज्य अपने वैभव और शक्ति के लिए संसार में अपना सानी नहीं रखता था, आज वह इस महायुद्ध में विजयी होकर भी हारा-सा दिखाई दे रहा है। उसका सारा खजाना खाली हो गया है और अपनी स्थिति को सँभालने के लिए उसे अपने साथी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अमेरिका से ऋण लेना पड़ रहा है। युद्धकाल ही में उसे उधार लेने को बाध्य होना पड़ा था। और अब तो उसे विधिपूर्वक भारी रकम लेनी पड़ रही है। इसके लिए उसके अर्थ-विशेषज्ञ अमेरिकन सरकार से अधिक समय से वार्तालाप कर रहे थे। प्रसन्नता की बात है कि उन्हें अपने प्रयत्न में आशातीत सफलता प्राप्त हुई है, जिसका विवरण 'प्रताप' ने इस प्रकार छापा है—

अमेरिका ने ब्रिटेन को ४ अरब करोड़ डालर (१४६६ करोड़ रु०) [उधार, ३ अरब ७५ करोड़ (१२०५ करोड़ रु०) व्यापारिक कार्यों के लिए और ६५ करोड़ डालर (२१६ करोड़ रुपए) उधार पट्टा सामान के अन्तिम निबटारे के लिए देना निश्चय किया है। बदले में ब्रिटेन इस ऋण के एक साल पहले तक के रुके हुए पौण्ड पावने को साफ कर देने को तैयार हो गया है।

यह घोषणा प्रेसीडेन्ट ट्रूमैन और मि० एटली ने संयुक्त रूप से की है। इस समझौते में प्रथम अन्ताराष्ट्रीय व्यापार की नीतियों और सम्बन्धों में संयुक्त नियम लागू हुए हैं।

यह ऋण २ सैकड़ा ब्याजदर से ३१ दिसम्बर सन् १९५१ से प्रारम्भ होकर ५० वर्षों में लौटाया जाएगा। अमेरिका के उप-राष्ट्र-सचिव विलियम क्लेटन ने कहा है कि ब्रिटेन को कुल ५ अरब ९६ करोड़ २५ लाख डालर (१९८५ करोड़ रु०) देना पड़ेगा। ब्रिटेन इस बात के लिए तैयार हो गया है कि कोई भी बिना रुका हुआ स्टर्लिंग पावना समझौता होने के बारह माह पश्चात् व्यापारिक कामों के लिए मिल सकेगा। इस समझौते को ब्रिटिश पार्लामेंट तथा अमेरिका की कांग्रेस दोनों स्वीकार करेंगे। ब्रिटिश व्यक्ति इससे थोड़ा और अधिक चाहते थे किन्तु सम्भवतः यह समझौता उनके लिए सन्तोषप्रद है। इस ऋण-समझौते के साथ-साथ अमेरिका की सरकार ने एक श्वेत पत्र भी जारी किया है, जिसमें विश्व के सभी राष्ट्रों से अनुरोध किया गया है कि विश्व के व्यापार को विस्तृत किया जाय।

ट्रूमैन और एटली के संयुक्त वक्तव्य में कहा गया है कि दोनों पक्ष प्रारंभ से ही संयुक्त हितों को देखते हुए समझौते के लिए उत्सुक थे।

किसानों की दुर्दशा का अंत कब होगा ?

हमारी उदार भारत-सरकार तथा ब्रिटिश सरकार इसी बात का प्रयत्न नहीं कर रही हैं कि भारत पूर्ण आत्म-शासन प्राप्त करे, किंतु वे इस बात का भी प्रयत्न कर रही हैं कि भारत की सर्वतोमुखी उन्नति भी हो। इसके लिए सरकार के दफ़्तरों में बैठकर बड़े बड़े विशेषज्ञ तरह-तरह की योजनाएँ बना रहे हैं। उन योजनाओं पर समय-समय पर प्रकाश भी डाल दिया जाता है, जिनके पढ़कर दीन-दुखी भारतीयों के हृदय खिल उठते हैं और वे तरह तरह के मनोमोदक बनाकर भविष्य के अपने वैभवपूर्ण जीवन के सुखस्वप्न देखने लग जाते हैं। इसमें संदेह नहीं कि सरकार की योजनाएँ काफी अधिक आकर्षक हैं और यदि वे कार्य का रूप ग्रहण कर पाएँगी और उन्हें आवश्यक सफलता मिल सकेगी तो भारत सचमुच ही एक समृद्ध राष्ट्र का रूप ग्रहण कर लेगा, परन्तु विशेषज्ञों की ये योजनाएँ कब कैसे किस रूप में कार्यान्वित की जाएँगी, इसका कोई पता नहीं। साथ ही उनकी योजनाओं में इस बात का निर्देश नहीं है कि भारत के किसानों के दैन्य का कैसे तिरोभाव किया जाएगा? उनकी कृषि कैसे समुन्नत की जाएगी? तथा उनके उन्हीं की तरह दैन्यावस्था को प्राप्त पशुओं की नस्लें कैसे सुधारी जाएँगी? यह सभी जानते हैं कि सात लाख भारतीय ग्राम एकमात्र अपने कृषि-धन तथा पशुधन पर ही निर्भर करते हैं, परन्तु सरकार की ऐसी कोई योजना नहीं सुनाई पड़ी है, जो एकमात्र इन दो महत्त्वपूर्ण विषयों के समुन्नत करने के लिए निर्धारित की गई हो। हमने यह अवश्य पढ़ा है कि सरकार उद्योग-धंधों को उन्नत करने के लिए विदेशों से लाखों रुपयों की मशीनें आदि मँगवा रही है। संयुक्तप्रांत की सरकार को तो एक यही धुन है कि प्रांत में अच्छी सड़कों का जाल बिछा दिया जाए। परन्तु इसका आभास कहीं नहीं मिल रहा कि देश के जीवन-प्राण दुर्दशाग्रस्त किसानों की उन्नति करने की भी कहीं कोई प्रयत्न हो रहा है। हाँ, कांग्रेस ने हाल में अपना जो घोषणा-पत्र प्रकाशित किया है, उसमें सामूहिक खेती के व्यापक प्रसार का अवश्य संकेत किया गया गया है। परन्तु उस दशा सात लाख ग्रामों के किसानों की क्या स्थिति होगी, इसका कुछ भी संकेत नहीं किया गया है। उनको ऋण-मुक्त करने की बात भी कही गई है, परन्तु सामूहिक खेती की व्यवस्था हो जाने पर क्या ये किसान किसान रह जाएँगे? क्या वे अपने जिन खेतों को पीढ़ी दर पीढ़ी से अपनी बपौती समझते चले आ रहे हैं, सामूहिक खेती की व्यवस्था होने पर वे उनके पास उनकी बपौती के रूप में रह सकेंगे? हम तो समझते हैं कि उस दशा में किसान न रहकर वे मजदूर-मात्र रह जाएँगे। चाहे जो हो, भारतीय किसान की दयनीय अवस्था का सुधारना सरकार एवं देश के नेताओं का सर्वप्रथम कर्तव्य है। दुःख के साथ कहना पड़ता है कि इस कर्तव्य के पालन की ओर जितना अधिक ध्यान देना चाहिए, नहीं दिया जा रहा है।

Printed & Published by A. Bose, at the Indian Press, Ltd., Benares-Branch, Benares.
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विवाहित स्त्री-पुरुषों के जानने योग्य

ऑपरेशन तथा इन्जेक्शन ज़रूरी नहीं है

अप्राकृतिक रहन-सहन तथा मिथ्या आहार-विहार के कारण हमारे देश की नारियाँ अधिकांश ऐसी मिलेंगी जो एक न एक गुप्त रोग से ग्रस्त हो निराश जीवन व्यतीत कर रही हैं। अधिकतर गर्भाशय का मोटा हो जाना तथा उस पर चर्बी आ जाना एक आम रोग हो गया है जो गर्भ धारण करने में बाधक होता है तथा अन्य भयंकर रोगों की जिससे उत्पत्ति भी होती है। ऐसी अवस्था में प्रायः ऑपरेशन कराने से भी बहुत कम रोगियों को सफलता प्राप्त होती है।

यदि आपको ऑपरेशन कराने में असुविधा है या ऑपरेशन की अपेक्षा औषधियों द्वारा कष्ट दूर करने के अधिक पक्ष में हैं तो शास्त्रोक्त अंगूरों का ताज़ा रस, अशोक, अर्जुन, दशमूल, त्रिफला तथा अन्य श्रेष्ठ औषधियों से प्रस्तुत—मूँगा जिसका प्रधान अंग है—१५ वर्षों से प्रचलित **गौड़ की नारी-सुधा कॉर्डियल** सेवन करें।

नारी-सुधा एक माहवारी से दूसरी माहवारी तक सेवन करने से बिना ऑपरेशन गर्भाशय की चर्बी, उसका मुटापा तथा सपट बाँझपन नष्ट हो जाता है और सहज ही गर्भ की स्थिति हो जाती है। जहाँ इन्जेक्शन लिकोरिया (सफ़ेदे का गिरना) रोकने में असफल होते हैं वहाँ कुछ ही ख़ुराकों में यह सदैव के लिए ठीक हो जाता है। कमज़ोरी से गर्भाशय अपनी जगह से हट जाता है या गर्भपात होते रहते हैं—एक बोतल के सेवन से युक्त स्थान दृढ़ हो जाता है, फिर गर्भपात कभी नहीं होते। मासिक धर्म महीने में दो बार या दो महीने में एक बार के बजाय ठीक समय पर आकर हँसते-खेलते होने लगते हैं, जिससे हिस्टेरिया (बेहोशी) के दौरे होने बन्द हो जाते हैं। ख़ूब भूख लगती है, ख़ून एक बड़ी मात्रा में बनने लगता है। दिल की धड़कन, कमर-टाँगों का ठहरा आ दर्द केवल चौथे दिन दूर हो जाते हैं। जापे का संकट सहन करने तथा बाद की कमज़ोरी शीघ्र दूर करने की यह विशेष औषधि है। **नारी-सुधा** की २६ ख़ुराकों की एक बोतल का मूल्य—पेकिंग, वी० पी० व्यय से पृथक्—तीन रु० पाँच आने है। आवश्यकता होने पर इस मासिक पत्रिका का हवाला देकर

कुमार कुमार एन्ड को०

पोस्ट बाक्स नं० ११९ देहली

मँगाइए—

बड़े २ शहरों में हम एजेन्सी स्थापन कर रहे हैं। नियमावली के लिए पत्र-व्यवहार करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सौंदर्य की दो पीढ़ियाँ

यद्यपि इनकी उम्र में बीस साल का फ़र्क है, फिर भी माँ के सौन्दर्य में उतनी ही ताज़गी और उसकी त्वचा उतनी ही गुलाबी और मुलायम है जितनी कि उसकी सोलह वर्षीय बेटी की। इसका भेद यह है कि माँ ने, अपनी माँ की सलाह पर, बचपन से ही पियर्स साबुन और साफ़ पानी से अपनी कोमल त्वचा की रक्षा की। आज उसकी सुन्दर बेटी उसी तरीके से अपनी त्वचा की रक्षा करती है। इसलिये बीस वर्ष के बाद उसकी त्वचा भी निस्सन्देह उसी तरह सुन्दर और ताज़ा रहेगी जिस तरह आज उसकी माँ की त्वचा है।

चालीस साल से हिन्दुस्तान की सुन्दरियों ने पियर्स साबुन को ही इस्तेमाल किया है। स्वाभाविक खुशबू और रेशमी झाग के कारण यह साबुन साधारण साबुनों से कहीं बढ़चढ़ कर है।

पिअर्स साबुन

सौन्दर्य का सेवक

TG. 26-123 HJ

A. & F. PEARS, ISLEWORTH, ENGLAND

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुधासिंधु-बालसुधा

एवं प्रख्यात निजी पेटेंट तथा शुद्ध आयुर्वेदिक औषधियों के निर्माता

सुख-संचारक कम्पनी, लि०,

सुख-संचारक बिल्डिंग, सुख-संचारक पोस्ट आफ़िस,

मथुरा

युक्त प्रांत में

अपने ढंग का एकमात्र विश्वसनीय विशालकाय कार्यालय

हमारी विशेषताएँ

१—हमारा अपना निजी ५५वर्षीय अनुभव।

२—औषधें वैद्यक की ऊँचे से ऊँची उपाधि प्राप्त विशेषज्ञ और अनुभवी वैद्यराज, उपवैद्यराज के निरीक्षण में निर्माण होती हैं।

३—अप्राप्य व दुष्प्राप्य खनिज एवं वनौषधियों के प्राप्त करने के संगठित साधन।

४—कड़ी, गठीली वनस्पतियों के चूर्ण-विचूर्ण करने, गोलियाँ, टिकियाँ बनाने व कार्क फिट करने और अन्य विभिन्न कार्यों के लिये आधुनिक पद्धति की मशीनें।

५—औषधियों का अधिक परिमाण में तैयार करने तथा इकट्ठा सामान मँगाने के कारण सस्ती और सर्वोत्तम तैयार होना।

विशेष विवरण के लिए बृहत् सूचीपत्र मुफ़्त मँगाइए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिल्मस्टारोंकी तरह त्वचा की रक्षा कीजिये!

साधना बोस

"मैंने अपनी त्वचाकी निगरानी का काम लक्स टॉयलेट साबुन पर सौंप दिया है"—यह सौंदर्यवती साधना का कहना है। नहानेका यह खुशबूदार साबुन वह हमेशा इस्तेमाल करती है। उसका तेज़ फेन उसकी त्वचा सुकोमल, मृदु और निष्कलंक रखता है। अपनी त्वचा की निगरानी के लिये बहुत सी फिल्म-स्टार लक्स टॉयलेट साबुन ही पर निर्भर रहती हैं।

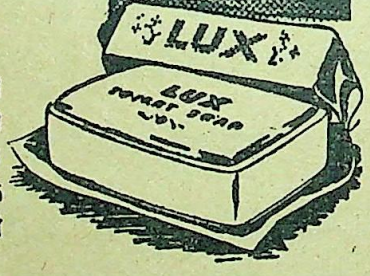

लक्स टॉयलेट साबुन

U.B. 119-111-40 HI

LEVER BROTHERS (INDIA) LIMITED

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

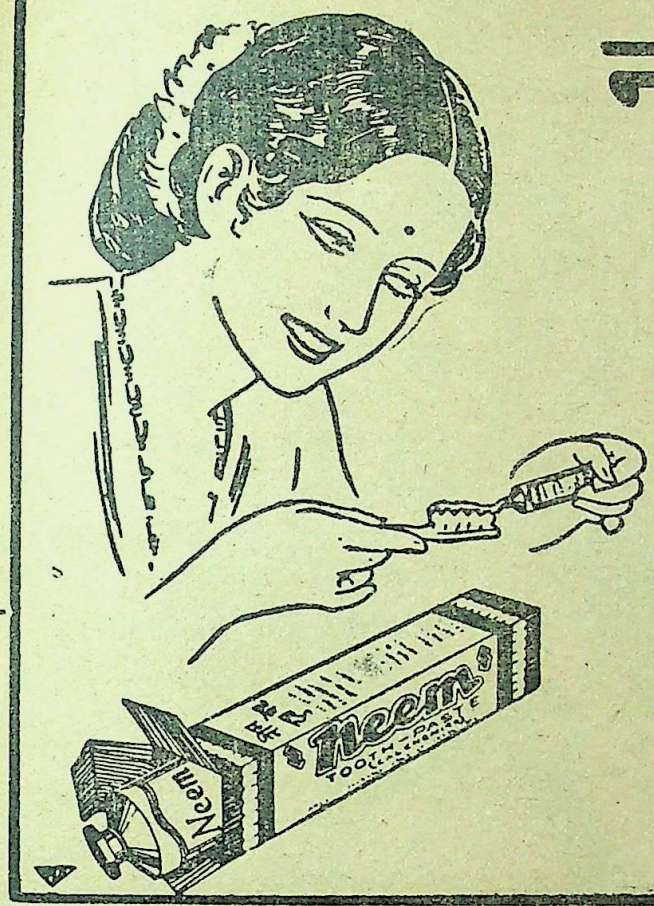

नीम
टूथ पेस्ट

नीम टूथ पेस्ट भारतवर्ष क्या विदेशी जनता की प्रशंसा प्राप्त कर अपनी उपयोगिता पूर्णतया प्रमाणित कर चुका है।

अथवा

मार्गोफ्रिस

दंतमंजन

ये दोनों ही चीज़ें उच्च कोटि की हैं।

दी कलकत्ता केमिकल कं० लि०,

पण्डितिया रोड, कलकत्ता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निश्चय उसने लाइफबॉय की आदत सीखी है!

वह स्कूल जा रहा है। वहाँ से वह अपने साथ क्या लाएगा? नया ज्ञान, नये तरीक़े—और शायद किसी रोग के कीटाणु भी! माँ अपने छोटे बच्चे को सुरक्षित रहने की शिक्षा देकर बाहर भेजती है—सब से अच्छी शिक्षा लाइफ़बॉय साबुन का दैनिक इस्तेमाल है—जो गंदगी के उस ख़त्रे से रक्षा करता है जो स्वस्थ्य से स्वस्थ बच्चे को भी रोग लगा सकता है।

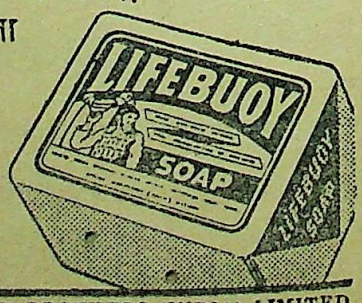

लाइफबॉय का व्यवहार करना एक ज़रूरी आदत है

L 78-23 HI

LEVER BROTHERS (INDIA) LIMITED

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न्यूटेक्स

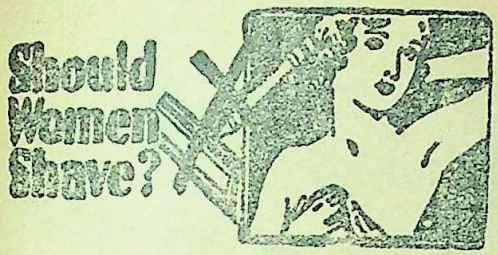

कृपया ध्यान दें

अब आप केवल ३ मिनट में भद्दे तथा अनावश्यक बालों को बिना छुए, पाउडर पेस्ट के लगाये, जिनसे बाल और जल्दी तथा घने निकलते हैं, बड़ी सरलता पूर्वक नष्ट कर सकते हैं। न्यूटेक्स वण्डस्टीट के एक आविष्कारक का सनसनीपूर्ण आविष्कार है जिसने कई वर्ष तक स्थायी तथा सुखद तरल पदार्थ के आविष्कार में व्यतीत कर दियो। उसकी खोज का परिणाम जायज़ था जो कि अब न्यूटेक्स में मिलाया जाता है और जिससे बालों की जड़ें तक बड़े सस्ते, सुन्दर तथा सुरक्षित रूप से बहुत जल्द साफ़ हो जाती हैं, किसी भी प्रकार की जलन नहीं होती और न गन्ध ही आती है।

सभी औषध-विक्रेताओं के यहाँ मिलती है। आप नीचे पते से मँगावें।

न्यूटेक्स (इंडिया) कं०,
प्रिंसेस स्ट्रीट, बम्बई।

आरोग्य वर्द्धक
५० साल से दुनिया भर में मशहूर

मदनमंजरी गोलियां

क़ब्ज़ियत दूर करके पाचन-शक्ति बढ़ाती हैं, दिल व दिमाग़ को ताक़त देती हैं और नया खून व शुद्ध वीर्य पैदा करके बल, बुद्धि व आयु बढ़ाती हैं। क़ी० ४० गोलियों की डि० रु० १।)

मदनमंजरी फ़ार्मेसी जामनगर (काठियावाड़)
इलाहाबाद एजंट - मदन स्टोर्स कैमिस्ट और एल० एम०
धोलकिया ब्रदर्स जोन्स्टनगंज

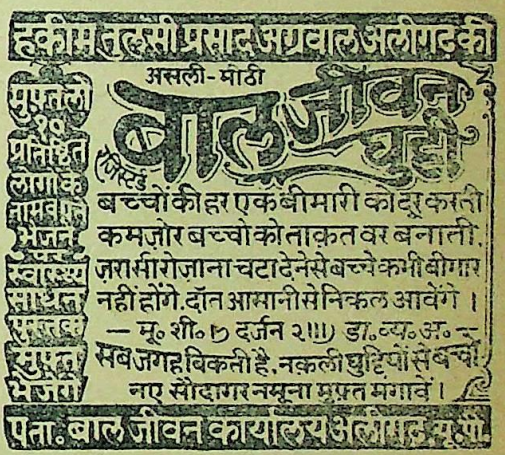

अब मैं अपने पति की प्रिय बन गई

रूप-विलास (रजिस्टर्ड)

जब मैं विवाह के अवसर पर अपने पति-गृह गई तब मेरे पतिदेव हमारे भद्दे तथा काले चेहरे को देखकर मुझसे घृणा करने लगे। मैंने अपनी सहेलियों की सलाह से **रूप-विलास** का उबटन लगाना शुरू किया। कुछ ही दिनों बाद मेरा चेहरा गुलाब के फूल की भाँति दमकने लगा और आज मैं अपने पति की प्रिय बन गई। इसके लगाने से मुँहासा, झाँई, चेचक, काले-काले दाग़, फुंसी, खुश्की, बदरौनक़ी, झुर्रियाँ वग़ैरह जल्द आराम होती हैं और थोड़े ही दिनों के लगाने से मलीन मुख चमकदार होकर चेहरे पर गुलाबी छटा दमकने लगती है। यदि आप अपना चेहरा ख़ूबसूरत बनाना चाहते हैं तो २५ वर्ष का प्रचलित जगत्प्रसिद्ध रजिस्टर्ड **रूप-विलास** उबटन लगाइए। विवाह-शादियों पर वर-वधू का सौन्दर्य बढ़ाने के लिए यह बहुत ही उपयोगी साबित हुआ है और इसकी ख़ुशबू इतनी प्यारी है कि तबियत को मस्त करती है। क़ीमत एक डिब्बा २-) तीन डिब्बा ५॥) डाक-ख़र्च माफ़, पैकिंग ख़र्च अलग।

रूप-विलास कम्पनी धनकुट्टी नं० ४२७ कानपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

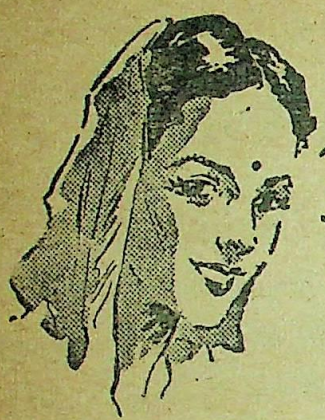

यह मुझे तर रखता है!

यह मुझे ताजा रखता है!

यह प्रफुल्लित करता है!

विनोलिया एक बड़ा ही आरामदायक साबुन है। इससे स्नान करनेपर हर बार आश्चर्य्यजनक शीतलता और निहायत ताजगी आ जाती है। और इस साबुनकी सुगंध इतनी स्फुर्तिदायक और प्रफुल्लित करनेवाली है कि विश्रान्त मस्तिष्क और शरीरको एक नवजीवन-सा प्राप्त हो जाता है।

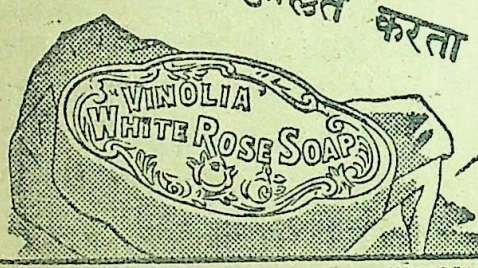

विनोलिया व्हाइट रोज साबुन

VWR. 16-221 HI

VINOLIA CO. LIMITED, LONDON, ENGLAND

प्रदर रोग स्त्रियों का भयानक शत्रु है

प्रदर रोग जिसको लोग लिकोरिया भी कहते हैं यह स्त्रियों की सुन्दरता और जवानी को नष्ट करनेवाला भयानक शत्रु है। लज्जा वश बेचारी रोग को छिपाये रहती हैं और दिन-रात घुला करती हैं। यह उनकी भूल है। भयानक रोग का इलाज कराने में लापरवाही नहीं करना चाहिये, इस बीमारी से स्त्रियों के गुप्त शरीर से लाल, काला, धुमैला या श्वेत रंग का बदबूदार पानी या लेस-सा निकलता रहता है। महीना ठीक समय पर नहीं होता है जिसके कारण कमर, रीढ़, सिर में दर्द, शरीर में जलन, मन मलीन, उठने बैठने में थकावट, भूख का कम लगना, बदन दुबला और कमज़ोर हो जाना, मूर्छा, बेहोशी आदि रोग हो जाते हैं और सन्तान नष्ट होती है और यदि होती भी है तो दुबली और कमज़ोर होती है। ऐसी अवस्था में भारतविख्यात वैद्यरत्न सत्यदेव ने अपूर्व शक्ति प्रदान करनेवाली २५ वर्ष की आज़मूदा **नारी-संजीवन** नामक दवा का आविष्कार किया जिसके द्वारा आज तक सहस्रों स्त्रियों को इस भयानक रोग के पंजे से छुड़ाया है। इस नारी-संजीवन के सेवन से तमाम बीमारियाँ दूर होकर स्त्रियाँ सुन्दर और तन्दुरुस्त हो जाती हैं और सन्तानें सुन्दर, बलवान्, दीर्घायु पैदा होती हैं। यदि आवश्यकता हो तो आज ही पत्र डालकर एक डिब्बा नारी-संजीवन मँगाकर इसके अपूर्व गुणों का चमत्कार देखें। क़ीमत एक डिब्बा ३=); डाकख़र्च माफ़; पैकिंग ख़र्च अलग।

मँगाने का पता—

रूपविलास कम्पनी नं० ४२७ धनकुट्टी,
कानपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थापना] ज़ुकाम, सर्दी पर अकसीर उपाय !! १९२६

आरादा १८६९ नीलगिरि तेल — वापरो —

हैज़ा, मलेरिया, इन्फ़्लुएंज़ा, टाइफाइड
आदि बीमारियों में बचानेवाला।
१ औं० शीशी ॥), दर्जन ५॥=), डा० ख़० अलग

युकॅलिप पेन बाम } सूचीपत्र मुफ़्त { युकलिप दाद का मरहम

खांडालेकर बन्धु, बम्बई ४.

प्रकाशित हो गई

मार्क्स का दर्शन

[लेखक—भूपेन्द्र सान्याल]

(स्वर्गीय शचीन्द्रनाथ सान्याल के भाई, अखिलभारतीय कांग्रेस कमेटी के सदस्य, युक्तप्रान्तीय ट्रेड यूनियन के भूतपूर्व उपसभापति, 'समाजवाद की ओर' आदि के प्रणेता।) मूल्य २) रु०

प्रकाशक, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद।

(REGISTERED)

हृदय की सर्दी (सर्दी और कफ)—लापरवाही करने से मामूली हृदय की सर्दी फेफड़े की सूजन (ब्रांकैटिस) हो जायगी। इससे बचे रहने का रास्ता बड़ा आसान है। थोड़ा-सा अमृतांजन लेकर छाती पर मलिए। बस, उसकी गरमी सीधे हृदय तक पहुँचती है और कफ को पिघला देती और तुरंत आराम मिलता है।

अमृतांजन—हमेशा आदी से आदी आराम पहुँचाता है।

अमृताञ्जन लिमिटेड, बम्बई और मद्रास
शाखा :—कलकत्ता, कराची, दिल्ली

कुछ यह प्रसिद्ध साहित्य-सेवी श्री पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी बी० ए० के बढ़िया निबन्धों का संग्रह है। इसमें २० निबन्ध हैं जो भाषा, भाव और विवेचन की दृष्टि से विलक्षण हैं। यह इस वर्ष की अनुपम रचना है। पृष्ठ-संख्या २०० से ऊपर। मूल्य केवल १॥) एक रुपया आठ आने।

मैनेजर बुकडिपो, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद।

क्यों आपने अभी तक नहीं पढ़ा ?

'शामूं की माँ'

माता की उदार का शिक्षा सरल, सादा और सुन्दर संस्कृतिमय एक करुण एवं मधुर कथात्मक चित्र। ३०० पृष्ठों की पुस्तक की कीमत सिर्फ १) एक रुपया। मगाने का पता—

अ० वि० गृह प्रकाशन: ६२४ सदाशिव, पुणें।

दर्जी-विज्ञान

यह पुस्तक सरल हिन्दी में शिल्प-कला के सुप्रसिद्ध प्रोफेसर द्वारा प्रकाशित हुई है। सिलाई कटाई सीखने के लिये यह सचित्र और वैज्ञानिक ढँग की नई पुस्तक है। विद्वान् लेखक ने यह सिद्ध कर दिखाया है कि इस पुस्तक के सामने किसी भी गुरु की आवश्यकता नहीं है। इसके ३ भाग हैं, तीनों भागों का लागत मूल्य ४॥) है।

पता—हिन्दू टेलरिङ्ग कालेज, पीलीभीत।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वार्षिक बाल-सखा

अपनी सन्तान को सन्तुष्ट रखने का यत्न सभी माता-पिता करते हैं। सन्तान को प्रसन्न देख माता-पिता के आनन्द का ठिकाना नहीं रहता। बच्चों को प्रसन्न रखने के लिए बढ़िया भोजन, कपड़े और खेल-कूद का सामान अपनी हैसियत के अनुसार सभी जुटाते हैं। लेकिन उनको सन्तुष्ट रखने का सबसे उत्तम साधन है उनको अच्छा साहित्य पढ़ने को देकर उनकी बुद्धि को विकसित करना।

इस काम में माता-पिताओं की सहायता करने के लिए हमने बाल-सखा का 'वार्षिक अङ्क' निकालना आरम्भ कर दिया है। सन् १९४६ के वार्षिकाङ्क में ऐसी सामग्री रहेगी, जिसको पढ़कर बालक फूले नहीं समायेंगे। बढ़िया कविताएँ, अच्छी कहानियाँ, वैज्ञानिक लेख, देश-विदेश की यात्रा, भ्रमण, उपन्यास और हास-परिहास आदि की ऐसी सामग्री रहेगी जिसको पढ़ने से बालकों की ज्ञान-वृद्धि होगी और मनोरञ्जन तो होगा ही। इसे बालक मिठाई और खिलौने से भी अधिक पसन्द करेंगे। चित्रों की अधिकता रहेगी ही।

वार्षिक बाल-सखा की माँग बहुत रहती है। कुछ घरों में तो एक से अधिक प्रतियाँ ली जाती हैं। इसमें अच्छे काग़ज़ के ३०० से भी अधिक पृष्ठ रहेंगे। लगभग चौथाई भाग रङ्गीन छपेगा। हिन्दी में यह वार्षिकाङ्क अनोखी वस्तु होगी। इसलिए आप अपने वार्षिक अङ्क की प्रति के लिए अभी से रजिस्टर में नाम लिखा लीजिए जिससे प्रतियों के बिक जाने पर आपको निराश न होना पड़े।

मूल्य ३) तीन रुपये; ग्राहकों से २॥) दो रुपये आठ आने

मैनेजर :—

बाल-सखा, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग

हिन्दी साहित्य: बीसवीं शताब्दी

(नवीन संस्करण)

वर्तमान साहित्य की वैज्ञानिक समीक्षा करनेवाली प्रमुख पुस्तक

महावीरप्रसाद द्विवेदी, रामचन्द्र शुक्ल, मैथिलीशरण गुप्त, प्रेमचन्द, प्रसाद, निराला, पन्त, महादेवी वर्मा, जैनेन्द्र कुमार आदि साहित्यिकों पर विवेचनात्मक १९ लेख।

लेखक—अध्यापक श्री नन्ददुलारे वाजपेयी

भूमिका में वर्तमान साहित्य का परिचय और प्रत्येक धारा के कवियों तथा लेखकों का समीक्षात्मक उल्लेख है। पुस्तक में काव्य, कला और साहित्य के स्थायी प्रतिमानों के आधार पर इस शताब्दी के प्रमुख साहित्यिकों की मीमांसा की गई है। वर्तमान युग की सभी रचना-धाराओं का सन्निवेश इस पुस्तक में है।

साहित्यिक और कलात्मक विवेचन की यह पुस्तक उच्च श्रेणी के विद्यार्थियों और साहित्यिकों के लिए अनिवार्य है। मूल्य पाँच रुपये

इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग

के एजेंट—इंडियन बुकडिपो, लखनऊ

केवल एक दिनमें

मेजिक मिस्मेरिज़म

द्वारा लड़के को ज़मीन पर लिटाकर और चादर से ढककर अजीब व ग़रीब प्रश्नों के सही-सही उत्तर पूछना, दहकती आग पर आप चलना व दर्शकों को चलाना, किसी भी समय सब दर्शकों की घड़ियों में ६½ इत्यादि बजा देना, दीवार आग लगा देना, मुँह में से आग की लपटें निकालना, पानी के अन्दर आग के अङ्गारों का नाच कराना और आदमी को उड़ा देना इत्यादि अनेक तिलस्मात जादू के अद्भुत, रहस्ययुक्त और रोमाञ्चकारी करिश्में सीखकर

→दूसरे ही दिन←

नवाब, राजे-महाराजे, सेठ-साहूकारों को दिखाकर बड़े-बड़े धुरन्धर विद्वानों, बुद्धिमानों और प्रोफ़ेसरों की बुद्धि चक्कर और हैरत में डालकर उनाठन रुपये पैदा करो। मामूली हिन्दी पढ़ लेनेवाला यह सब एक दिन में जान जाता है। किसी भी प्रकार के अभ्यास व सिद्धि की झंझट नहीं—ऐसा हमारा दावा और गारण्टी है। फ़िलहाल इसकी क़ीमत केवल पाँच रुपया।

देहली के प्रतिष्ठित पत्र "वीर अर्जुन" तथा कुँवरसाहब जी की ज़ोरदार सिफ़ारिश के साथ सैकड़ों प्रशंसापत्र प्राप्त।

यह सब एक दिन में न आवे तो क़ीमत वापिस।

दी यूनाइटेड वण्डरफुल मेजिकल कम्पनी

विभाग नम्बर २६, मुरादाबाद यू० पी०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जे. के. का नाम भारतीय टेक्सटाइल मिलों में अपनी उत्कृष्ट बुनाई और छपाई के कारण सारे भारतवर्ष में प्रख्यात है। अत्यंत आकर्षक नमूनों और रंगो के होते हुए भी जे. के. के कपड़े १५% से २०% तक अधिक मज़बूत होते हैं।

साड़ियाँ, कमीज के कपड़े मलमलें, छपे हुए कपड़े लट्ठे, चादरें, और खाकी कैनवस इत्यादि।

जे. के. काटन स्पीनिंग एन्ड वीविंग मिल्स कम्पनी लीमिटेड, कानपूर.

यह जे. के. इण्डस्ट्री है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

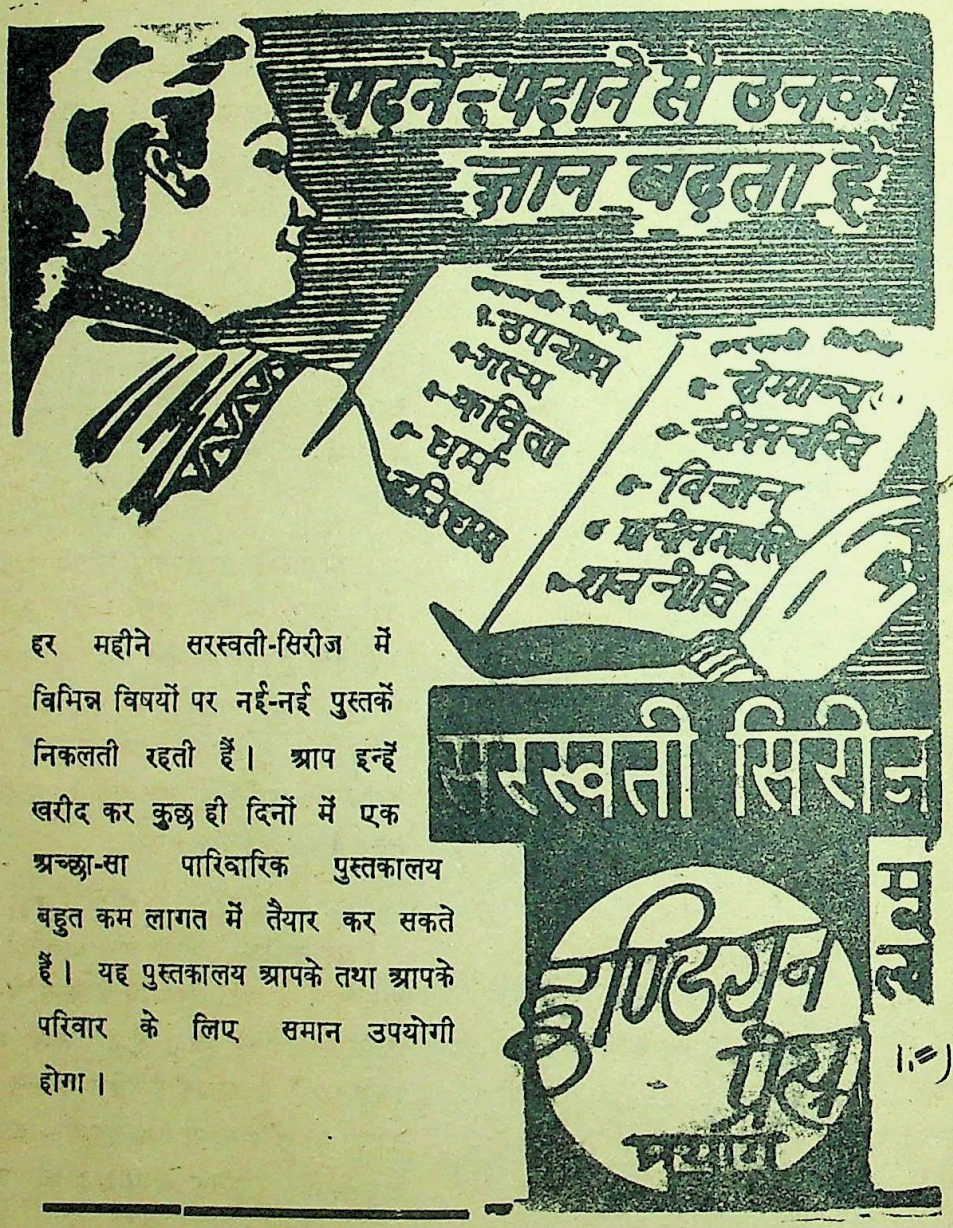

हर महीने सरस्वती-सिरीज में विभिन्न विषयों पर नई-नई पुस्तकें निकलती रहती हैं। आप इन्हें खरीद कर कुछ ही दिनों में एक अच्छा-सा पारिवारिक पुस्तकालय बहुत कम लागत में तैयार कर सकते हैं। यह पुस्तकालय आपके तथा आपके परिवार के लिए समान उपयोगी होगा।

सभी पुस्तक-विक्रेताओं तथा ह्वीलर के बुक स्टाल पर पुस्तकें मिल सकेंगी। विवरण के लिये हमारा सूची-पत्र मुफ़्त मँगावें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नई पुस्तकें

शैतान का खेल

सचित्र पुस्तक है। इसमें एक बोतल में बन्द भूत का मनोरञ्जक क़िस्सा है। यह भूत उस व्यक्ति की सब इच्छायें पूरी करता था जिसके क़ब्ज़े में यह बोतल रहती थी। इस बोतल को क़ब्ज़े में रखने में और तो सब सुबीता था, एक ही कठिनाई थी कि मरते समय जिसके अधिकार में बोतल रहती उसे नरक में गिरना पड़ता। यह बोतल जितने में मोल ली जाय उससे कम दाम में बेचने की शर्त थी। इस प्रकार यह बोतल बहुत लोगों के पास रही, पर सभी इसे दूसरों के हाथ बेचने में [illegible] रहते थ, यदपि उन्हें किसी चीज़ की कमी न थी। बड़ी रोचक कहानी है। एक बार हाथ में लेने पर बिना समाप्त किये पुस्तक छोड़ने को जी नहीं चाहता। बढ़िया काग़ज़, उत्तम छपाई। मूल्य केवल ।।।) बारह आने।

विचित्र जीव-जन्तु

यह भी सचित्र पुस्तक है। इसमें दुनिया के एक से एक अजीब जीव-धारियों का सरल भाषा में वर्णन है। इसके पढ़ने से जानकारी बढ़ती और मनोरञ्जन होता है। बालकों के लिए यह बहुत ही उपयोगी है। मूल्य केवल ।=) छः आने।

विष-पान

यह सुकवि सोहनलालजी की सुन्दर रचना है। इसमें समुद्र-मन्थन से उत्पन्न विष की पौराणिक कथा का कविताबद्ध मनोहर वर्णन है। छपाई-सफ़ाई सुन्दर है। आवरण-पृष्ठ पर शङ्करजी का, विष को पीने का भावपूर्ण चित्र है। मूल्य १) एक रुपया।

पूजागीत

वह युगकवि सोहनलालजी की ऐसी रचना है जिसमें प्रसन्नता, सजीवता, प्रभावोत्पादकता रहने से पढ़नेवाले को कविता का रस मिलता है। इसमें एक से एक बढ़ कर ५६ गीतों का संग्रह है। इस पूजागीत का बहुत आदर है। कविता-प्रेमियों को इसका संग्रह अवश्य करना चाहिए। मूल्य केवल २) दो रुपये।

झरना

इस में पण्डित सोहनलालजी की बालकोपयोगी २३ कविताएँ हैं। मातृभूमि, जय-जय स्वदेश, हवा का झोंका, तुम बढ़ो आगे ही अकेले, सुनहली धूप, लहर, सब पर जल बरसाता बादल, दूर्वा का गीत और नीम का पेड़ आदि सुन्दर कवितायें हैं। अच्छे काग़ज़ पर अच्छी स्याही में छपी पुस्तक का मूल्य ।।।) केवल बारह आने।

अमर जीवन

(दो भागों में)

इसमें संसार के सुप्रसिद्ध व्यक्तियों—कवीन्द्र रवीन्द्र, अल्फ्रेड नोबेल, हेनरी फ़ोर्ड, जगदीशचन्द्रबसु, महात्मा गाँधी, ताता, सर सैयद अहमद और आशुतोष मुकर्जी आदि के जीवनचरित का संक्षेप में वर्णन है। मूल्य प्रत्येक का ।=) छः आने।

अमर ज्योति

कहानियों का संग्रह है जिसमें अनुशोचना, तावीज़, चरित्रम्, नहीं, अमर ज्योति आदि तेरह सुन्दर कहानियाँ हैं। इन कहानियों से पढ़नेवालों का मनोरञ्जन इस कारण होगा कि लेखक ने किसी मतवाद का आग्रह न करके कथा का चित्रण किया है। पूँजीपतियों और मज़दूरों के सङ्घर्ष, साम्राज्यवाद या समाजवाद आदि की उलझन में पाठक को नहीं पड़ना पड़ेगा। मूल्य केवल १) एक रुपया।

देवयानी

यह नाटिका कुमारी तारा बाजपेयी की रचना है। इसमें शुक्राचार्य की बेटी देवयानी के कन्यात्व का आदर्श बड़ी सफलता से उपस्थित किया गया है। कथा महाभारत से ली गई है। इसमें आर्यों के व्यापक वैवाहिक सम्बन्ध के इस एक अपवाद—क्षत्रिय वर और कन्या ब्राह्मणपुत्री—का स्पष्टीकरण बड़ी सतर्कता से हुआ है। पुस्तक अपने ढङ्ग की अनूठी है। मूल्य केवल १) एक रुपया।

जीवन-कण

यह आशुकवि जगमोहननाथ अवस्थी की सुन्दर रचनाओं का संग्रह है। आपकी रचनाओं में निर्भयता है, राष्ट्रीयता है और कवि की ईमानदार छटपटाहट है। इस संग्रह की कवितायें समाज की भयङ्कर परिस्थितियों और घोर वातावरण के कारण जीवन को पहेली मानकर लिखी गई हैं। इसमें वैषम्य, भिखारिन, जेल, दीपावली आदि श्रेष्ठ २२ रचनायें संगृहीत हैं। सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल ॥=) दस आने।

मैनेजर बुकडिपो—इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूबिया

इस में रूस की ज़ारशाही के समय की दशा का चित्रण बड़ी सुन्दरता से किया गया है। पति-पत्नी के प्रेम का अनोखा चित्र-सा खींचा गया है। पुस्तक में कई चित्र हैं। जिल्द के ऊपर रङ्गीन चित्र है। मूल्य २) दो रुपये।

बड़ी दीदी

यह नामी उपन्यास-लेखक शरद बाबू की रचना है। इसमें सामाजिक दशा का चित्रण है। किसी भले घर का लड़का रूठकर घर से चल दिया और दूर गाँव में जाकर एक मालदार विधवा युवती को पढ़ाने की नौकरी करने लगा। दोनों के मन में प्रेम का उदय हुआ तो मास्टर अपने घर चला गया। बाद को एक अकल्पित ढङ्ग से उस विधवा से इस पुराने मास्टर की भेट हुई जहाँ पुरानी बीमारी से उसका प्राणान्त हो गया। बड़ा ही भावोत्पादक कथानक है। मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने।

वञ्चिता

यह रोमाञ्चकारी ऐतिहासिक उपन्यास है। अकबर के ज़माने की घटना के आधार पर इसकी रचना हुई है। इसमें बड़ी-बड़ी गुत्थियाँ हैं। दरबार के दाँव-पेंच, जासूसी चालें और प्रलोभन के बखेड़े हैं। विजय ने मित्र चम्पालाल के प्राण बचाने का पूरा उद्योग किया, किन्तु ज़रा-सी देर ने काम बिगाड़ दिया। इससे दोनों मित्र साथ ही 'जल जङ्गल' हाथी के पैर से कुचले जाकर परलोक के यात्री बने। बेचारी नन्दा अपने प्रियतम विजय से वञ्चिता होकर उसकी याद में घुल-घुलकर जीवन बिताने को रह गई। मूल्य ३॥) तीन रुपये आठ आने।

चन्द्रशेखर

यह सुप्रसिद्ध उपन्यास-लेखक बङ्किम बाबू की प्रसिद्ध रचना है। इसकी कथा बड़ी विचित्र है। घटना है बङ्गाल के अन्तिम नवाब मीर क़ासिम के समय की। नवाब और अँगरेज़ों के बीच हुए सङ्घर्ष का भी वर्णन इसमें है। कथा के नायक चन्द्रशेखर का उदार चरित्र अनूठा है। यह लेखक का बहुत ही प्रशंसित उपन्यास है। मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने।

माधवी-कङ्कण

यह सुप्रसिद्ध बाबू रमेशचन्द्र दत्त का लिखा ऐतिहासिक उपन्यास है। इसमें मुग़लों के समय की दशा के चित्रण के साथ-साथ प्रेमी-प्रेमिका की बड़ी विचित्र कथा है। यह उपन्यास बहुत लोकप्रिय है। इसका नया संस्करण अभी तैयार हुआ है। मूल्य १।-) एक रुपया पाँच आने।

देशान्वेषण की सरल कथाएँ

इसमें उन ३२ कर्मवीरों के अन्वेषण-कार्यों का वर्णन है जिन्होंने अपनी जान जोखिम में डालकर अङ्गीकार किये हुए कार्य को पूरा किया। तेरहवीं शताब्दी के मार्कोपोलो से लेकर उन्नीसवीं शताब्दी के कप्तान एमेंडसेन और कप्तान स्काट तक की दुर्गम यात्राओं का वर्णन इस पुस्तक में है। ऐसी पुस्तकों के पढ़ने से साहस बढ़ता और विविध जानकारी होती है। मूल्य ।॥-) केवल तेरह आने।

सचित्र महाभारत

यह स्वर्गीय आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी का सम्पादित प्रसिद्ध ग्रन्थ है जिसके कई संस्करण हाथोंहाथ बिक गये हैं। इसमें सम्पूर्ण महाभारत की कथायें बड़ी सुन्दर भाषा में दी गई हैं। इसके पढ़ने से महाभारत की बहुत-सी बातें मालूम हो जाती हैं। अच्छा काग़ज़, बढ़िया छपाई और सुन्दर जिल्द। पृष्ठ के चित्र हैं जिनमें से ११ रङ्गीन हैं। बड़े आकार के तीन सौ से ऊपर पृष्ठ हैं। मूल्य केवल ६) छः रुपये।

विश्व-कवि रवीन्द्रनाथ

हिन्दी में विश्वकवि रवीन्द्रनाथ के विषय में अब तक जितनी पुस्तकें लिखी गई हैं उनमें यह सबसे बड़ी है। इसमें रवीन्द्रनाथ की अन्तिम रचनाओं तक की चर्चा आ गई है। अनेक स्थानों से पुष्परस लाकर यह मधुचक्र बनाया गया है। रवीन्द्रनाथ कवि, लेखक, नाट्यकार, कहानी और उपन्यासों के लेखक सब कुछ थे। उनको समझने में यह पुस्तक बड़ा काम देगी। हिन्दी के नामी पत्रों और विद्वानों ने इस पुस्तक की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल ५) पाँच रुपये।

बाघ और भालू की कहानी

यह बालकों के बड़े काम की है। इसमें एक दशा बाघ और एक विदेशी भालू की कहानी है। दोनों कहानियाँ बाल आरण्यो-पन्यास की तरह विचित्र तो हैं पर कल्पित नहीं हैं। इनको पढ़ने से बालक-बालिकाएँ जीव-जन्तुओं के काम काज और उनकी समझ-दारी का कुछ परिचय पावेंगी। मनोरञ्जन तो होगा ही। पुस्तक सचित्र है और दो रङ्गों में छपी है। मूल्य केवल ।=) छः आने।

फ्रांस का इतिहास

इसमें ईसा पूर्व २२५ से लेकर सन् १९२० ईसवी तक का इतिहास है। इसमें वहाँ की राज्यक्रान्ति के राजवंश, फ़्यूडल प्रणाली, स्वतन्त्र राजतन्त्र, शतवर्षीय युद्ध, योरप में फ्रांस के प्रसार, राजवंश के उद्धार, सन् १८४८ की क्रान्ति, राष्ट्रीय सभा

मैनेजर बुकडिपो—इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और प्रजातन्त्र आदि का वर्णन उत्तमता से किया गया है। पुस्तक में चित्र भी हैं। अच्छे काग़ज़ पर छपे साढ़े चार सौ पृष्ठों की सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल ४) चार रुपये।

स्वदेश-विदेश-यात्रा

यह श्रीयुक्त सन्तरामजी, बी० ए० और श्रीमती रामेश्वरी नेहरू की प्रसिद्ध रचना है। देश-देशान्तर की यात्रा करने से अनेक लाभ होते हैं। व्यवहार-ज्ञान और सामान्य बुद्धि की वृद्धि होती है। परन्तु पर्यटन का सुयोग सबको सुलभ नहीं होता। इसकी रुचि भी थोड़े लोगों को होती है। ऐसे लोगों को यात्रा-विषयक पुस्तकें पढ़ने से बड़ा लाभ हो सकता है। इस पुस्तक में कश्मीर और कुल्लू की सैर तथा आस्ट्रेलिया की यात्रा का वर्णन है। पुस्तक सचित्र है। अच्छे काग़ज़ पर छपी [illegible] सौ पृष्ठों की पुस्तक का मूल्य केवल १॥=) रुपया ग्यारह आने।

आल्हा

आल्हा का थोड़ा बहुत क़िस्सा सभी हिन्दी-प्रेमी जानते हैं, पर उसका ब्योरेवार वर्णन थोड़े लोगों को ही मालूम होगा। चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्मा की कृपा से यह कथा हिन्दीवालों को सुलभ हो गई है। इसमें परमाल का ब्याह, संयुक्ता का स्वयंवर, माड़ौ की लड़ाई, आल्हा और मलखान का ब्याह, दिल्ली की लड़ाई, नायूँ गढ़ का युद्ध आदि कितनी लड़ाइयों और विवाहों का वर्णन है। बड़े आकार के सवा तीन सौ से ऊपर पृष्ठों की सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल ३।-) तीन रुपये पाँच आने।

जानवरों की मज़ेदार कहानियाँ

इसमें मोर और कौआ, लोमड़ी और गधा, चालाक बुढ़िया, सोने की चिड़िया, सिंह और गीदड़, राजकुमार और सोने की चिड़िया, चिड़िया और बुढ़िया तथा चालाक गीदड़ की कहानियाँ हैं। इनको पढ़कर लड़के और लड़कियाँ सभी प्रसन्न होते हैं। सुन्दर रङ्गीन आवरण पृष्ठ है। मूल्य केवल ।॥=) ग्यारह आने।

सच्चा सेवक

छोटा-सा नाटक है जिसमें सेवक के गुण सुन्दरता से दिखाये गये हैं। यह नाटक अभिनय करने के लिए लिखा गया है और खेला भी गया है। स्कूलों में उत्सव के समय छात्र इसका सुन्दर अभिनय करके प्रशंसा पाते हैं। मूल्य ।-) पाँच आने।

तुलसी-रत्नावली

इसका संकलन, प्रिंसिपल केदारनाथ गुप्त, एम० ए० ने किया है। इसमें गोस्वामी तुलसीदासजी के अमूल्य ग्रन्थों—रामचरित-मानस, विनयपत्रिका, कवितावली, दोहावली, गीतावली आदि—से रत्न चुने गये हैं। अनेक ग्रन्थों से अमूल्य रत्नों का संग्रह करना सचमुच बड़ा कठिन काम होता है। जो लोग गोस्वामी जी के समस्त ग्रन्थ न तो ले सकते हैं और न उनका अध्ययन कर सकते हैं उनको इस संग्रह से बड़ा लाभ होगा। मूल्य केवल १॥) एक रुपया आठ आने।

माँ और बच्चा

इसके लेखक नामी चिकित्सक डाक्टर बोधराज चोपड़ा, एम० बी०, सी-एच० बी० (एडिनबरा) हैं। यह पुस्तक अपने ढङ्ग की अनुपम है। इसके ११ प्रकरणों में छोटे बच्चों की मृत्यु और उसके कारण, गर्भिणी माता, जन्म के समय से बालक की रक्षा, बच्चों को दूध पिलाना, दूध पिलाने वाली दाई, दूध छुड़ाना आदि आवश्यक विषयों की शिक्षा दी गई है। स्त्रियों की मृत्यु और रोगों को कम करने तथा छोटे बच्चों को मृत्यु से बचाने की दृष्टि से पुस्तक लिखी है। यों लेखक ने मनुष्यमात्र का उपकार किया है। अच्छे काग़ज़ पर छपी ढाई सौ से भी अधिक पृष्ठों की सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल २) दो रुपये।

गोस्वामी तुलसीदास-संक्षिप्त रामचरितमानस (सचित्र)

यह रामचरितमानस का संक्षिप्त संस्करण है। संक्षेप ऐसी चतुराई से किया गया है कि कहीं भी कथा-भाग टूटने नहीं पाया। मँझोले आकार के ३०० पृष्ठों में यह समाप्त हुआ है। पुस्तक सचित्र और सजिल्द है। मूल्य १) एक रुपया।

अयोध्याकाण्ड (मूल)

रामायण-प्रेमियों के सुभीते के लिए यह काण्ड अलग प्रकाशित किया गया है। यह पुस्तक अनेक स्थानों के शिक्षाविभाग-द्वारा स्वीकृत है। इससे यह विद्यार्थी तथा साधारण जनता सभी के काम की चीज़ है। मूल्य १) एक रुपया। सटीक मूल्य २॥=) दो रुपये ग्यारह आने।

सुन्दरकाण्ड (मूल)

रामायण-प्रेमियों के सुभीते के लिए यह काण्ड असली रामचरितमानस से अलग छापा गया है। मूल्य ।= सात आने।

मैनेजर बुकडिपो—इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अरण्यकाण्ड (मूल)

रामायण-प्रेमियों के सुभीते के लिए यह काण्ड भी असली रामचरितमानस से अलग छापा गया है। मूल्य ।≡) सात आने।

विनयपत्रिका (सटीक)

गोस्वामी तुलसीदास की रचनाओं में विनयपत्रिका का स्थान बहुत उच्च है। इसमें गोस्वामीजी के विनय-सम्बन्धी पद्यों का संग्रह है। इसके टीकाकार हैं पण्डित रामेश्वर भट्ट। मूल्य ४) चार रुपये।

कुण्डलिया रामायण

गोस्वामी तुलसीदासजी की यह अमर रचना पिछले दिनों खोज में मिली है। इसमें उनकी अन्यान्य रचनाओं की भाँति सरस कुण्डलिया छन्दों में रामचरित-मानस के सातों काण्डों की कथा दी गई है। मूल्य ४) चार रुपये।

मानससूक्तावली

रामचरितमानस में आये हुए कण्ठस्थ करने के योग्य चौपाइयों और दोहों का संग्रह। मूल्य १'-) एक रुपया पाँच आने।

संक्षिप्त पद्मावत

(रायबहादुर बाबू श्यामसुन्दरदास, बी० ए० द्वारा सम्पादित) मलिक मुहम्मद जायसी के पद्मावत का संक्षिप्त संस्करण। मूल्य २।-) दो रुपये पाँच आने।

संक्षिप्त सूरसागर

इसमें महाकवि सूरदास के पदों का संग्रह है। इसका एक-एक पद भक्ति तथा प्रेम के रस से ओतप्रोत है। मूल्य ३।-) तीन रुपये पाँच आने।

चारण

इस पद्यमय पुस्तक में प्राकृतिक दृश्यों के मनोरञ्जक वर्णनों के अतिरिक्त राजपूताना के कुछ प्रसिद्ध वीरों का गुणगान किया गया है। मूल्य ।-) पाँच आने।

पुस्तकालय ।।२४५८

वीणा-ग्रन्थि

हिन्दी के युगान्तरकारी श्री सुमित्रानन्दन पन्त की दो पुस्तकों का सम्मिलित संस्करण। वीणा मौलिक कविताओं का संग्रह है और ग्रन्थ में कवि ने एक छोटे-से कथानक को अपनी कल्पना द्वारा विकसित कर एक खण्डकाव्य की रचना की है। मूल्य २) दो रुपये।

भैरवी

इसकी राष्ट्रीय कवितायें राष्ट्र-प्रेमियों के गौरव की वस्तु हैं। यहाँ तक कि पण्डित जवाहरलाल नेहरू तक ने इसे पसन्द किया है और खादी-प्रतिष्ठानों में इसकी हज़ारों प्रतियाँ बेची हैं। विद्वानों की सम्मति है कि भैरवी 'गांधीयुग' का सर्वश्रेष्ठ काव्य है। मूल्य २।≡) दो रुपये ग्यारह आने।

वासवदत्ता

हिन्दी का एक आधुनिक काव्य। इस काव्य की विद्वानों ने मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। मूल्य २) दो रुपये।

हिन्दी के लब्धप्रतिष्ठ कवि ठाकुर गोपालशरणसिंहजी की कृतियाँ

माधवी

माधवी का यह नया संस्करण बड़ी ही सज[illegible] साथ और बड़े आकार में प्रकाशित हुआ है। मूल्य २) [illegible] रुप[illegible]

ज्योतिष्मती

इस संग्रह में ठाकुर साहब की नवीन प्रकार की कविता संगृहीत की गई हैं, जो हिन्दी-साहित्य में अपना विशेष स्थान रखती हैं। ख़ास कर इसमें संग्रह किये गये छोटे-छोटे गीत बहुत ही मधुर और भावपूर्ण हैं। मूल्य २।-) दो रुपये पाँच आने।

मानवी

इस संग्रह में प्रकाशित कविताओं के द्वारा ठाकुर साहब ने भारतीय नारी के सुख-दुःखमय जीवन का बड़ा ही सुन्दर और मार्मिक चित्रण किया है। मूल्य २।-) दो रुपये पाँच आ[illegible]

संचिता

इस संग्रह में ठाकुर साहब ने अपनी सन् १९१४ [illegible] लेकर सन् १९३९ तक की सब प्रकार की रचनाओं का समावेश किया है। इस एक ही पुस्तक के द्वारा ठाकुर साहब के कवि-जीवन के क्रम-विकास का उत्तमतापूर्वक अध्ययन किया जा सकता है। संग्रह में कुल ७१ कवितायें हैं। मूल्य ३) तीन रुपये।

सुमना

'सुमना' ठाकुर साहब का सबसे नवीन संग्रह है जिस[illegible] ५३ गीत हैं जिनमें प्रकृति के प्रति उनका असीम अनुराग शब्द-द्वारा व्यञ्जित होता है। इस प्रकार के सरस भाव-[illegible] गीत हिन्दी-साहित्य में अन्यत्र न मिलेंगे। मूल्य २) दो रुपये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय चायों में सर्वश्रेष्ठ

तेज व बढ़िया सुगन्ध, गहरा रंग और
कम दाम इन सबने मिलकर लिपटन
की जाकूजा को बाजार भर की
सर्वश्रेष्ठ चाय बना रक्खा है।

लिपटन की जाकूजा चाय

सर्वोत्तम भारतीय चूरा चाय

LTK 84 !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

SARASWATI—Regd. No. A—2

दिन चढ़े पर

112856

सवेरे से काम करते करते ग्यारह बजने आये इस समय एक प्याला चाय पीने से आपकी स्फूर्ति और एकाग्रता दुबाला हो जाती है। आप आफिस के बाबू हों या घर की गृहिणी, मजदूर हों या कलाकार, चाय आपको आनन्द व खुशी से भर देती है। जो चाय प्रेमी हैं, चाय के गुण-अवगुण समझते हैं, उनमें से भी बहुतों को इसका पूरा पूरा आनन्द नहीं मिलता क्योंकि अच्छी चाय बनाने के सरल नियमों पर वे ठीक ठीक ध्यान नहीं देते। जब भी आप दुखी, थके हुए, उदास या अकेले हों चाय पीजिये परन्तु ख्याल रखिये चाय ठीक से बने।

अच्छी चाय बनाने का तरीका

१ केतली में चाय न सिझाइये। सिझाने का बर्तन अलग रखिये।

२ सूखी चाय डालते वक्त वह बर्तन सूखा व गर्म रहे : इससे चाय का रंग व स्वाद ठीक बनता है।

३ हर प्याले के लिये एक चम्मच, और बर्तन के लिये एक चम्मच ताजी, सूखी चाय की पत्ती उसमें डालिये।

४ उसी वक्त का उबला हुआ पानी डालिये—पहले का उबला, कम या ज्यादा उबला पानी मत डालिये। बुदबुदा उठने पर ही पानी उबलता है, उसके पहले नहीं।

५ चाय को पाँच मिनट से कम न सिझाइये।

६ प्यालों में चाय डालकर तब उसमें दूध व चीनी मिलाइये।

चाय

हर वक्त चाय का वक्त

इण्डियन टी मार्केट एक्सपैन्शन बोर्ड द्वारा प्रचारित

IK 24

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

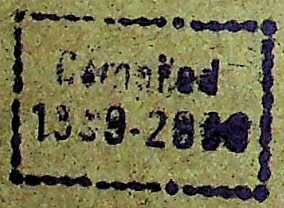

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar